

जैनचार्य-जैनभरोदाकर-पूज्य-घासीलालजी-महाराज-

निरचितया मुद्रदिनालयया व्याख्यया समलभुतं

हिन्दी-गुर्जर-भाषा-मुद्रादसहितम्-

॥ प्रश्नव्याकरण-सूत्रम् ॥

PRASHNAVYAKARANA SŪTRAM

नियोजकः

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यान-

पण्डितमुनि-श्रीकन्दैयलालजी-महाराजः

प्रकाशकः

पालि(भाषाद)निवासी-श्रेष्ठिनः श्रीमत्: मुफलचन्दजी वालिया

महाराज तथा अ. सौ. तद्वर्मपत्नी मुफलचन्द-प्रदत्त-द्रव्यसाहा-

य्येन अ० भा० भे० म्या० जैनशास्त्रोद्भासमितिप्रमुखाः

घोष्ठि-श्रीशान्तिलाल-यज्ञलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

प्रथमा-भाषाणि
प्रति १०००

श्रीर-संभव
१९८८

विश्व-संभव
१०६८

ईसवीसंवत्
१९१२

मूल्यम्-रु० २०-००

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-

विरचितया सुदर्शिन्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतं

हिन्दी-गुर्जर-भाषाऽनुवादसहितम्-

॥प्रश्न व्याकरण-सूत्रम्॥

PRASHNAVYĀKARANA
SŪTRAM

नियोजकः

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि-
पण्डितमुनि-श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

प्रकाशकः

पालि(मरवाड)निवासि-श्रेष्ठनः श्रीमतः मुकनचन्दजी बालिया
महाशय तथा अ.सौ. तद्धर्मपत्नी सुकनबाई-प्रदत्त-द्रव्यसाहा-
य्येन अ० भा० श्वे० स्था० जैनशास्त्रोद्धारसमितिप्रमुखः
श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

प्रथमा-आवृत्ति
प्रति १०००

बीर संबद्
२४८८

चिक्कम-संवत्
२०१८

ईसवीसन
१९१२

मूल्यम्-रु० २०-०-०

મળવાનું ઠેકાણું :
શ્રી અ. ભા. સ્વે. સ્થાનકવાસી
જેન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,
કે. ગરેડિયા કુવા રોડ, શ્રીન લોજ
પાસે, રાજકોટ, (સૌરાષ્ટ્ર).

Published by :
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastrodhdhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India,

X

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦

વીર સંવત્ : ૨૪૮૮

વિક્રમ સંવત્ : ૨૦૧૮

ઈસવી સન : ૧૯૯૨

X

: સુદ્રક :

મહિલાલ છાત્રલલાલ દમણ
નવપ્રભાત પ્રિન્ટિંગ પ્રેસ,
મીકાંદા રોડ : અમદાવાદ

प्रश्नव्याकरणसूत्रकी विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमणिका	विषय	पृष्ठांक
१	मङ्गलाचरण	१—२
२	अवतरणिका	३—१३
प्रथम अध्ययन-प्रथम भाग		
३	आसन्न और संवर के लक्षणों का निरूपण	१३—१८
४	पहला अधर्मद्वार का निरूपण	१९—२६
५	“ मृषावादरूप ” दूसरा अधर्मद्वार का निरूपण	२७—३५
६	“ यथाकृत् ” नामके तीसरा अधर्मद्वार का निरूपण	३६—३९
७	स्थूलचर चतुष्पद प्राणीयों का निरूपण	४०—४२
८	“ उरः परिसर्प ” के भेदों का निरूपण	४३—४४
९	भुजपरिसर्प के भेदों का निरूपण	४५—४६
१०	खेचर जीवों का निरूपण	४७—५०
११	प्राणियों के वधके प्रकार का निरूपण	४१—५३
१२	चतुर्निद्रिय जीवोंकी हिंसा करने वालोंके प्रयोजनका निरूपण	५४—६२
१३	पृथिवीकाय जीवों के हिंसा के कारण का निरूपण	६३—६७
१४	अणुकाय जीवों की हिंसा करने के प्रयोजन का निरूपण	६८—
१५	‘ वायुकाय ’ जीवों की हिंसा करनेके प्रयोजनका निरूपण	६९—७०
१६	‘ वनस्पतिकाय ’ जीवोंकी हिंसा करनेके प्रयोजनका निरूपण	७०—७४
१७	स्थावरादि जीवों को कैसे २ भावों से युक्त होकर हिंसक जन मारते हैं उनका निरूपण	७४—८४
१८	जातिनिर्देशपूर्वक मंदबुद्धि वाले लोक कौन २ जीवों को मारते हैं उनका निरूपण	८५—८६
१९	कौन २ जीव पाप करते हैं उनका निरूपण	८७—९०
२०	जैसे २ कर्म करते हैं वैसा ही फल प्राप्त होनेका निरूपण	९१—९६
२१	नरक में उत्पत्ति के अनन्तर वहां के दुःखानुभवका निरूपण	९७—१०४
२२	पापि जीव नरकों में कैसी २ वेदना को कितने काल भोगते हैं उनका निरूपण	१०५—१०६

४

२३	नारकीय जीव क्या २ कहते हैं वह वर्णन	१०६-१०८
२४	परमाधार्मिक नारकीय जीवों के प्रति क्या २ करते हैं उनका कथन	१०९-११०
२५	वेदनाओं से पीड़ित नारक जीवों के आक्रंद का निरूपण	१११-११७
२६	परमाधार्मिकों के द्वारा की गई यातनाओं के प्रकार का निरूपण	११७-११८
२७	यातना के विषय में आयुधों (शस्त्रों) के प्रकारों का निरूपण	११९-१२१
२८	परस्पर में वेदना को उत्पन्न करते हुए नारकी यों कि दशा का वर्णन	१२१-१२७
२९	नारक जीवों के पश्चात्ताप का निरूपण	१२८-१३०
३०	तिर्यग्गति जीवों के दुःखों का निरूपण	१३१-१३६
३१	चतुरिन्द्रिय जीवों के दुःख का निरूपण	१३७-१३८
३२	त्रिन्द्रिय जीवों के दुःख का निरूपण	१३८-१३९
३३	द्विन्द्रिय जीवों के दुःख का वर्णन	१४०-
३४	एकेन्द्रिय जीव के दुःख का वर्णन	१४१-१४४
३५	दुःखों के प्रकार का वर्णन	१४५-१५१
३६	मनुष्यभ्रम में दुःखों के प्रकार का निरूपण	१५२-१६३

दूसरा अध्ययन

३७	अलीकवचन का निरूपण	१६४-१६८
३८	अलीकवचन के नाम का निरूपण	१६८-१७४
३९	जिस भाष से अलीक वचन कहा जाता है उसका निरूपण	१७४-१७९
४०	नास्तिकवादियों के मत का निरूपण	१८०-२०५
४१	अन्य मनुष्यों के मृषाभाषण का निरूपण	२०६-२१४
४२	मृषावादियों के जीव वातक वचन का निरूपण	२१५-२४१
४३	मृषावादियों को नरक प्राप्तिरूप फलप्राप्ति का वर्णन	२४२-२५२
४४	अलीक वचन का फलितार्थ निरूपण	२५३-२५६

तीसरा अध्ययन

४५	अदत्तादान के स्वरूप का निरूपण	२५७-२६१

४६ अदत्तादान के तीस नामों का निरूपण	२६४-२६९
४७ यज्जम अन्तर्द्धारगत तस्करों (चोरों) का वर्णन	२७०-२७५
४८ परधनलुब्ध राजाओं के स्वरूप का निरूपण	२७६-२८२
४९ परधन में लुब्ध राजाओं के संग्राम का वर्णन	२८३-२९६
५० अदत्तादान (चोरी) के प्रकार का निरूपण	२९७-३०१
५१ सागर के स्वरूप का निरूपण	३०२-३०६
५२ तस्कर के कार्य का निरूपण	३०७-३१७
५३ अदत्तादान के फल का निरूपण	३१७-३२२
५४ चोर लोक क्या फल पाते हैं उनका निरूपण	३२२-३३०
५५ अदत्ताग्राही चोर कैसे होकर कैसे फल को पाते हैं उनका निरूपण	३३०-३४६
५६ अदत्ताग्राही चोर जिस फल को पाते हैं उसका निरूपण	३४७-३५४
५७ अदत्ताग्राही चोर की परलोक में कौन गति होती है उनका निरूपण	३५४-३६०
५८ जीव ज्ञानावरण आदि अष्टविध कर्मों से बंधदशाको प्राप्तकर संसारसागर में रहते हैं इस प्रकार का संसारसागर के स्वरूप का निरूपण	३६०-३७७
५९ किस प्रकार के अदत्ताग्राही चोरों को किस प्रकार का फल मिलते हैं उनका निरूपण	३७८-३८६
६० तीसरे अध्ययन का उपसंहार	३८७-३९०

चौथा अध्ययन

६१ अब्रह्म के स्वरूप का निरूपण	३९१-३९५
६२ अब्रह्म के नामों का और उसके लक्षणों का निरूपण	३९५-४००
६३ मोह से मोहित बुद्धिवालों से अब्रह्म के सेवन के प्रकारों का निरूपण	४००-४०३
६४ षड्वचर्यादिकों का और उनके लक्षणों का वर्णन	४०३-४१९
६५ बलदेव और वामुदेव के स्वरूप का निरूपण	४१९-४४३
६६ अब्रह्म सेवी कौन होते हैं ? उनका निरूपण	४४३-४४४

६

६७ युगलिकों के स्वरूप का निरूपण	४४५-४६७
६८ युगलिनीयों के स्वरूप का निरूपण	४६७-४८६
६९ चौथे अन्तर्द्वार का निरूपण	४८६-४९४
७० चौथा अध्ययन का उपसंहार	४९४-४९८

पाँचवा अध्ययन

७१ परिग्रह के स्वरूप का निरूपण	४९९-५०६
७२ परिग्रह के तीस नामों का निरूपण	५०७-५१२
७३ जिस प्रकार से जो जीव परिग्रह करते हैं उनका निरूपण	५१२-५२७
७४ मनुष्य के परिग्रह का निरूपण	५२८-५३९
७५ परिग्रह से जीव को किस फल की प्राप्ति होती है उनका निरूपण	५४०-५४६
७६ पाँचवा अध्ययन का उपसंहार	५४७-५५०

दूसरा भाग-पहला अध्ययन

७७ पाँचसंवर द्वारों के नाम और उनके लक्षणों का निरूपण	५५१-५५८
७८ प्रथमसंवरद्वार का निरूपण	५५९-५६९
७९ अहिंसा के महात्म्य का निरूपण	५७०-५७२
८० अहिंसा धारण करने वाले महापुरुष के स्वरूप का निरूपण	५७३-६०१
८१ अहिंसा को पालन करने को उद्यत होने वालों के कर्तव्य का निरूपण	६०२-६१६
८२ अहिंसाव्रत की 'ईयांसमिति' नाम की प्रथम भावना का निरूपण	६१७-६२२
८३ 'मनोमुक्ति' नाम की दूसरी भावना का निरूपण	६२३-६२५
८४ 'वचनसमिति' नाम की तीसरी भावना के स्वरूप का निरूपण	६२६-६२८
८५ 'एषणासमिति' नामकी चौथी भावना के स्वरूप का निरूपण	६२९-६३९
८६ 'निक्षेप' नामकी पाँचवी भावना का निरूपण	६४०-६४२
८७ प्रथम अध्ययन का उपसंहार	६४३-६४८

दूसरा अध्ययन

८८ सत्य के स्वरूप का निरूपण	६४९-६८४
८९ 'अनुवचिन्त्य समिति' नाम की प्रथम भावना के	

स्वरूप का निरूपण	६८५-६८८
९० ' क्रोधनिग्रहरूप ' दूसरी भावना का निरूपण	६८९-६९२
९१ ' क्रोधनिग्रहरूप ' तीसरी भावना का निरूपण	६९३-६९६
९२ ' धैर्य ' नाम की चौथी भावना के स्वरूप का निरूपण	६९७-७००
९३ पांचवी ' मोन ' भावना के स्वरूप का निरूपण	७००-७०४
९४ अध्ययन का उपसंहार	७०५-७१०

तीसरा अध्ययन

९५ अदत्तदानविरमण के स्वरूप का निरूपण	७११-७२१
९६ कैसा मुनि अदत्तादानादि व्रत का आराधन नहीं करते उसका निरूपण	७२२-७२७
९७ कैसा मुनि इस व्रत का पालन कर सकते है उसका निरूपण	७२७-७४०
९८ ' विविक्तवसतिवास ' नाम की प्रथम भावना का निरूपण	७४१-७४७
९९ ' अनुज्ञातसंस्तारक ' नामकी दूसरी भावना का निरूपण	७४८-७५१
१०० ' अय्यापरिकर्म वर्जन ' रूप तीसरी भावना का निरूपण	७५२-७५६
१०१ ' अनुज्ञातभक्त ' नामकी चौथी भावना का निरूपण	७५७-७६०
१०२ ' विनय ' नामकी पांचवी भावना का निरूपण	७६१-७६४
१०३ अध्ययन का उपसंहार	७६५-७७०

चौथा अध्ययन

१०४ ब्रह्मचर्यके स्वरूप का निरूपण	७७१-७८८
१०५ ब्रह्मचर्य आराधन का फल	७८९-७९५
१०६ ब्रह्मचारी को आचरणीय और अनाचरणीय आदिका निरूपण	७९६-८०३
१०७ ' असंस्तुत वासवसति ' नामकी प्रथम भावना का निरूपण	८०४-८०८
१०८ ' स्त्रीकथा विरति ' नामकी दूसरी भावना का निरूपण	८०९-८१५
१०९ ' स्त्रीरूप निरीक्षण ' वर्जन नामकी तीसरी भावना का निरूपण	८१६-८१८
११० ' पूरित पूर्वक्रीडितादि ' विरति नामकी चौथी भावना का निरूपण	८१९-८२५
१११ ' मणीतभोजनवर्जन ' नामकी पांचवी भावना का निरूपण	८२६-८२९
११२ चतुर्थ अध्ययन का उपसंहार	८३०-८३४

८

पाँचवा अध्ययन

११३ परिग्रहविरमण का निरूपण	८३५-८४५
११४ त्रसस्थावर विषयक अपरिग्रह का वर्णन	८४६-८५२
११५ अकल्पनीय वस्तु का निरूपण	८५३-८६०
११६ कल्पनीय अशनादिक का निरूपण	८६०-८७०
११७ संयत्ताचार पालक की स्थिति का निरूपण	८७१-८८९
११८ ' निस्पृहा ' नामकी पहली भावना का निरूपण	८९०-९००
११९ चक्षुरिन्द्रिय संवर ' नामकी दूसरी भावना का निरूपण	९०२-९१५
१२० ' घ्राणेन्द्रियसंवर ' नामकी तीसरी भावना का निरूपण	९१६-९२२
१२१ जिह्वेन्द्रियसंवर ' नामकी चौथी भावना का निरूपण	९२३-९२९
१२२ ' स्पर्शेन्द्रियसंवर ' नामकी पाँचवी भावना का निरूपण	९३०-९४१
१२३ अध्ययन का उपसंहार	९४२-९४८
१२४ दशमाङ्ग में श्रुतस्कंधादि का निरूपण	९४९-
१२५ शास्त्रप्रशस्ति	९५०-९५३

—:समाप्त:-

રૂા. ૫૦૦૧) આપનાર આઘ મુરખીશ્રી



સ્વ. શેઠ મુકુન્દચંદ્ર બાલીયા (પાલીવાળા)
અમદાવાદ.



શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી
રાજકોટ.



શ્રી રામજી શામજી વીરાણી
રાજકોટ.



શ્રી ભીશ્મીલાલજી અને જ્યોતરાજજી લુણીયા
અમદાવાદ.

श्रीमान् सेठसाहेब श्री मुकनचन्दजी बालियाजकी

संक्षेपमें जीवनचरित्र

श्रीमान् सेठ साहब श्री मुकनचन्दजी साहब पाली (मार-वाड़) के निवासी थे । आपका शुभ जन्म संवत् १९४० फाल्गुन कृष्ण पक्ष ६ रविवारको हुआ था । आपका पवित्र वंश सदा धर्मशील, विद्याप्रेमी और उदारचरित रहा है । आपके परम पूज्य पितामह श्रीमान् सेठ सा. श्रीपूनमचन्दजी साहब बालिया थे । सेठ सा. श्रीपूनमचन्दजी साहब बालिया के दो पुत्र थे, एक श्री राजारामजी साहब और दूसरे श्रीअगरचन्दजी साहब । आगे चलकर श्रीमान् सेठसा. श्री राजारामजी सा. के श्री ताराचन्दजी साहब और श्रीमुकनचन्दजी साहब करके दो पुत्र थे, किंतु अगरचन्दजी सा. के पुत्र नहीं था । इसी लिए श्रीमान् अगरचन्दजीसाहबने अपने भाईके ही पुत्र श्रीमुकनचन्दजी साहबको दत्तक (गोद) ले लिया । श्रीमान् सेठ साहब श्री मुकनचन्दजी शुरु से ही बड़े होनहार, धर्मशील और उदार थे । सौभाग्य से आपकी धर्मपत्नी श्रीमती श्री सुगनकुंवर बाईजी भी धर्मशीलता एवं उदार व्यवहार में आपके ही समान थीं श्रीमती श्री सुगनकुंवर बाईजी की धर्मश्रद्धा का सु प्रभाव आज भी आपके कुटुंब पर अच्छी तरह दिखाई देता है । आप दोनों ने धर्म के दीपक से न केवल अपने परिवार को ही प्रकाशित किया है, किंतु जीवन में अपने संपर्क में आनेवाले सभी धर्म प्रेमी जिज्ञासुओं को धर्म श्रद्धालु बना ने का पवित्रकार्य किया है । यों सेठ साहब श्री मुकनचन्दजी सा. बड़ी सरल प्रकृतिके सज्जन थे । व्यापार आपका समुद्रपार अनेक देशों में फैला हुआ था । आपकी जमींदारी भी खूब थी । आपके रहन-सहन और व्यवहार से सदा सादगी टपकती थी । जितने आप

२

उदार-चरित थे, उतने ही आप शास्त्रों के ज्ञाता भी थे। खास करके धर्मशास्त्रमें आपका अच्छा प्रवेश था। ज्योतिषशास्त्र के भी आप मर्मज्ञ थे कहने का तात्पर्य यह है कि सोने में सुगंध की तरह आप पर भगवती, सरस्वती और देवी लक्ष्मी दोनों का समान रूपसे आशीर्वाद का हाथ रहा। पाली के आवालवृद्ध सभी आपके गुणों को आज भी भूले नहीं है। आपकी तरफ से पालीमें कन्याशाला, हाईस्कूल आदि शैक्षणिक संस्थाएँ चल रही हैं, जिनमें प्रति वर्ष कई विद्यार्थी विद्यालाभ प्राप्त कर रहे हैं। गरीब, अपंग और अनाथों के लिए भी आपकी तरफ से सदाव्रत अनाथालय और प्याउएँ चल रही हैं। आर्यबिल खाता भी आपकी तरफ से पाली में चल रहा है आपका स्वर्गवास संवत् २०१८ कार्तिक शुद्ध द्वितीया शुक्रवारको हुआ।

श्रीमान् सेठ श्री मुकुनचन्दजी सा. के श्री हस्तिमलजी श्री मोहनराजजी श्री माणिकलालजी श्री मदनलालजी ये चार पुत्र और एक पुत्री श्री वसंतकुंवर मौजूद हैं, एवं सबसे बड़े पुत्र श्री सोहनराजजी सा. एवं सबसे छोटी पुत्री श्री सज्जनकुंवरबाई स्वर्गस्थ हुए हैं। सेठ साहब के पांच पौत्र हैं, तीन पौत्रियाँ हैं और एक प्रपौत्र है इस तरह सेठ साहबने अपने सामने चार पीढ़ियों को फलते फूलते देखा है।

पूज्य आचार्य श्री जैनधर्मदिवाकर आगमोद्धारक श्री महाराज साहब श्रीघासीलालजीकी देखरेखमें वर्षोंसे कई शास्त्र ग्रन्थोंका लेखन, प्रकाशन और संपादन हो रहा है। समस्त जैनागमोंका आप भारतकी अव्यतन भाषा में संस्कृत-प्राकृत हिन्दी-गुजरातीमें-सरल व्याख्याएं करके जैन धर्मकी अभिवृद्धि कर रहे हैं। श्रीमान् सेठसाहब के सुपुत्रोंने अपने पिताश्रीके पुण्यस्मरणार्थ शास्त्र प्रकाशनमें उदार सहायता की है।

श्रीमान् सेठ सा. की पाली-जोधपुर-व्यावर-अहमदाबाद-मुंबई में अनेक पेढ़ियाँ हैं। इश्वर कृपा से बालियाजीके परिवार सुखसंपत्ति का सदा अनुभव करते रहे।

આવમુરખીશ્રીઓ



(સ્વ.) શેઠ હરખન્દ કાલીદાસ વારીઆ
ભાણવડ.



શ્રી કેઠારી હરગોવિંદભાઈ જેથન્દ
રાજકોટ.



શેઠ શ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠ શ્રી ધારશીભાઈ જીવણભાઈ
સોલાપુર.



(સ્વ.) શેઠ આત્મારામ ભાણુકલાલ
અમદાવાદ.

આવમુરજીશ્રીઓ



(સ્વ.) શ્રી દિનેશભાઈ કાન્તિલાલ શાહ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર
અમદાવાદ.



શ્રી વિનોદકુમાર વીરાણી-રાજકોટ.
(દીક્ષા લીધાં પહેલાં શાસ્ત્રાભ્યાસ કરતા)



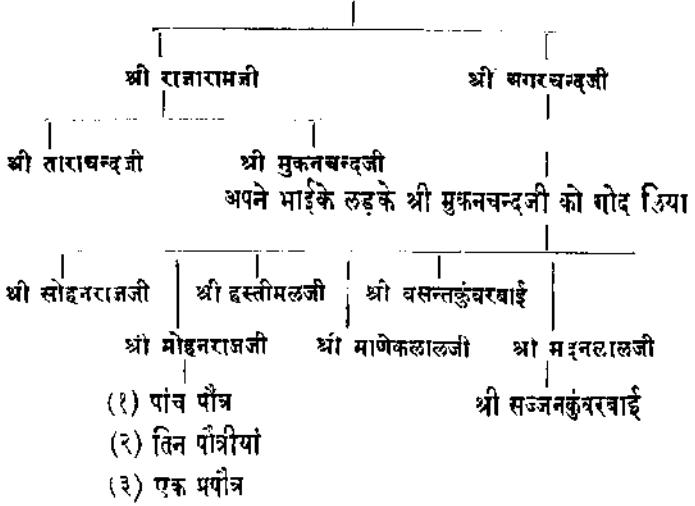
શ્રી શ્રી નેસિંગલાઈ પાંચાલાલભાઈ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શ્રી રંગજીભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ.

३

सेठ श्री पूनमचन्दजी बालिया





શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

*

ગરેડીયાકુવા રોડ—ગ્રીન લોજ પાસે,
રાજકોટ.

*

દાતાઓની નામાવલી

*

સરસ્વાત તા. ૧૮-૧૦ ૪૪થી તા. ૩૧-૧૨-૧૧ સુધીમાં
દાખલ થયેલ મેમ્બરોનાં સુખારક નામો.

*

લાઈફ મેમ્બરોનું ગામવાર ક્રમાંકવારી લિસ્ટ.

*

(નાની લેટની રકમો આપનારનું, તથા રૂ. ૨૫૦થી
ઓછી રકમ ભરનારનું નામ આ યાદીમાં સામેલ કરેલ નથી.)

આદ્યમુરખીશ્રીઓ-૧૮

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૫૦૦૦ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શેઠ શાંતીલાલ મંગળદાસભાઈ ગણીતા મીલમાત્રીક	અમદાવાદ	૧૫૦૦૦
૨	શેઠ હરખચંદ કાળીદાસભાઈ વારીયા હા. શેઠ લાલચંદભાઈ, નગીનભાઈ વૃજલાલભાઈ તથા વહલદાસભાઈ	ભાણુવડ	૬૦૦૦
૩	કેઠારી જેચંદ સમરામર હા. હરગોવિંદભાઈ જેચંદભાઈ	રાજકોટ	૫૨૫૧
૪	શેઠ ધારશીભાઈ જીવનભાઈ	ખારસી	૫૦૦૧
૫	સ્વ પિતાશ્રી છગનલાલ શામલદાસના સ્મરણાર્થે હા. શ્રી ભોગીલાલ છગનલાલભાઈ ભાવસાર	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૬	સ્વ શેઠ દિનેશભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ કાંતિલાલ મણીલાલ જેશીંગભાઈ	અમદાવાદ	૫૦૦૦
૭	શેઠ આત્મારામ માલેકલાલ હ. શેઠ. ચીમનલાલભાઈ શાંતીલાલભાઈ તથા પ્રમુખભાઈ	અમદાવાદ	૬૦૦૧
૮	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા. શેઠ શામજી વેલજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૯	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા. માતુશ્રી કડવીબાઈ વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૦	શેઠ પોચાલાલ પીતાંબરદાસ	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૧૧	શાહ રંગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ	૫૦૦૧
૧૨	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કદેવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા. શેઠ દુર્લભજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૩	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા. શ્રીમતિ મણીકુંવરબેનદુર્લભજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૪	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા. છોટાલાલ શામજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૫	સ્વ. માતુશ્રીના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ અને કુટુંબજનો	અમદાવાદ	૫૦૦૦

૩

૧૬ શેઠ મીશ્રીલાલજી જેવંતરાજજી લૂણીયા ચંડાવતવાળા અમદાવાદ ૫૫૦૨

૧૭ શેઠ રામજીભાઈ શામજી વિરાણી એન્ડ સમરતબેન

રામજી વિરાણી ટ્રસ્ટ

રાજકોટ ૫૦૦૧

૧૮ એક જૈન ગૃહસ્થ

અમદાવાદ ૫૪૨૫

નોટ :- ઘાટકોપરવાળા શેઠ માણેકલાલ એ. મહેતા તરફથી અમદાવાદમાં પાલડી બસ સ્ટેન્ડ પાસે પ્લોટ નં. ૨૫૦ વાળી ૬૬૮ ચો. વાર જમીન સમિતિને ભેટ મળેલ છે. અને જેનું રજીસ્ટર તા. ૨૩-૩-૧૦ ના રોજ થઈ ગયેલ છે.

મુરખીશ્રીઓ-૨૫

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	વકીલ જીવરાજભાઈ વર્ધમાન કોઠારી હા. કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ કોઠારી	જેતપુર	૩૬૦૫
૨	દોશી પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	રાજકોટ	૩૫૦૪
૩	મહેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	રાજકોટ	૩૨૮૬૧૧-૧૧
૪	મહેતા માણેકલાલ અમુલગરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૫	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	જામનગર	૩૧૦૧
૬	લક્ષ્મીભાઈ ગોરખનદાસ ચેરીટેબલ ટ્રસ્ટ હા. શેઠ વાડીલાલ લક્ષ્મીભાઈ	અમદાવાદ	૨૫૦૦
૭	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	મોરબી	૨૦૦૦
૮	શેઠ દહેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ દહેરચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૯	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ	૨૦૦૦
૧૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ચન્દ્રકાંત વીકમચંદ	મોરબી	૧૬૬૩
૧૧	મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	સ્તલામ	૨૦૦૦
૧૨	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામજોધપુર	૧૫૦૨
૧૩	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામભાઈ	જામજોધપુર	૧૦૦૨
૧૪	બગડીયા જગજીવનદાસ સ્તનશી	જામનગર	૧૦૦૨
૧૫	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	પોરબંદર	૧૦૦૧
૧૬	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી સાહેબ મહેતા (રિદ્દે મેનેજર) કલકત્તા		૧૦૦૧

૪

૧૭	મહેતા સોમચંદ નેણુશીભાઈ (કરાંચીવાળા)	મોરબી	૧૦૦૧
૧૮	શાહ હરિલાલ અનોપચંદ	ખંભાત	૧૦૦૧
૧૯	મોદી કેશવલાલ હરીચંદ્ર	અમદાવાદ	૧૦૦૧
૨૦	કોઠારી છબીલદાસ હરખચંદ	મુંબઈ	૧૦૦૦
૨૧	કોઠારી રંગીતદાસ હરખચંદ	લાતનગર	૧૦૦૦
૨૨	શાહ પ્રેમચંદ માણેકચંદ તથા અ. સૌ સમરતબેન	અમદાવાદ	૧૦૦૩
૨૩	શેઠ કરમશી બેઠાભાઈ સોમૈયા હા. અ. કૌ. આકરબેન	મુંબઈ	૧૦૦૦
૨૪	શેઠ પોપટલાલ ચત્રજૂય કોઠારી	સુરેન્દ્રનગર	૧૦૦૧
૨૫	શ્રી સ્થા. જૈન લીમડી સંપ્રદાયના ક્ષમાશુભુ નીધી પુત્ર્ય શ્રી લાધાણ સ્વામીના શીષ્ય પ્રખર પંડીત રત્ન શ્રી ઉત્તમચંદણ મહારાજના સ્મરણાર્થે પુત્ર્ય લાધાણ સ્વામી પુસ્તકાલય તરફથી હ. શેઠ જ્ઞેશીંગભાઈ પોચાલાલ	અમદાવાદ	૧૦૦૦

સહાયક મેમ્બરો-૧૨૫

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૫૦૦ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ જુઝાભાઈ વેલશીભાઈ વઢવાણશહેર		૭૫૦
૨	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડભાઈ	બેરાવરનગર	૭૦૦
૩	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ હા. ગોરધનભાઈ	જામજોધપુર	૫૫૫
૪	ખાટવીયા ગીરધર પરમાણુદં હા. અમીચંદભાઈ	ખાખીબળીયા	૫૨૭
૫	મોરબીવાળા સંઘવી દેવચંદ નેણુશીભાઈ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ મણીઆઈ તરફથી હા. મુળચંદ દેવચંદ સંઘવી	મલાડ	૫૧૧
૬	વોરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ	૫૦૨
૭	ગોસલ્લીયા હરીલાલ લાલચંદ તથા ચંપાબેન ગોસલ્લીયા	,,	૫૦૨
૮	શાહ મનહરલાલ પ્રાણીવનદાસ	મુંબઈ	૫૦૧
૯	શેઠ ઇન્દરલાલ પુરુષોત્તમદાસ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦	શેઠ ચંદુલાલ જગનલાલ	,,	૫૦૧
૧૧	શાહ શાંતિલાલ માણેકલાલ	,,	૫૦૧
૧૨	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ (કરાંચીવાળા)	લીમડી	૫૦૧
૧૩	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	રાજકોટ	૫૦૦
૧૪	મહેતા મોહનલાલ કપરચંદ	,,	૫૦૦

૫

૧૫ શેઠ ગોવિંદજીભાઈ પોપટભાઈ	,,	૫૦૦
૧૬ શેઠ રામજી શામજી વીરાણી	,,	૫૦૧
૧૭ સ્વ. પિતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હા. વેણીચંદ શાંતિલાલ (જાળુઆવાળા) મેઘનગર		૫૦૧
૧૮ શ્રી જૈનસ્થા. સંઘ હા. શેઠ ઠાકરશી કરશનજી	ધાનગઢ	૫૦૦
૧૯ શેઠ તારાચંદ પુખરાજજી	ઔરંગાબાદ	૫૦૦
૨૦ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ	,,	૫૦૦
૨૧ મહેતા મુળચંદ રાધવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા દુર્લભજીભાઈ ધ્રાક્ષ		૭૫૦
૨૨ શેઠ હરખચંદ પુરપોત્તમ હા. ઇન્દુકુમાર	ચૌરવાડ	૫૦૦
૨૩ ,, કેશરીમલજી વસ્તીમલજી ગુગલીયા	મલાડ	૫૦૧
૨૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. બાટવીયા અમીચંદ ગીરધરભાઈ ખાખીઅખીયા		૫૦૧
૨૫ શ્રી ખીમજીભાઈ બાવાભાઈ કુલચંદભાઈ શુલાખચંદભાઈ, નાગરદાસભાઈ જમનાદાસભાઈ મુંબઈ		૫૦૧
૨૬ શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. મુળજીભાઈ મણીલાલભાઈ મુંબઈ		૫૦૧
૨૭ સ્વ. કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાલચંદ સાકરચંદ	,,	૫૦૧
૨૮ કામદાર-રતીલાલ દુર્લભજી (જેતપુરવાળા)	,,	૫૦૧
૨૯ શાહ જયંતીલાલ અમૃતલાલ	શીવ	૫૦૧
૩૦ વેરા મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ	,,	૫૦૧
૩૧ શેઠ શુલાખચંદ ભુદરભાઈ તથા કસ્તુરબેન હા. ભાઈ અનોપચંદ ખારરોડ		૫૦૧
૩૨ મહાન ત્યાગી બેન ધીરજકુંવર ચુનીલાલ મહેતા	ધ્રાક્ષ	૫૦૧
૩૩ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ	ધ્રાક્ષ	૫૦૧
૩૪ શ્રી મગનલાલ જગનલાલ શેઠ	રાજકોટ	૫૦૧
૩૫ શેઠ ચનુરદાસ ઝકરશી તથા અ. સૌ. નંદકુવરબેન	જામનગર	૫૦૩
૩૬ શેઠ દેવચંદ અમરશી (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસંગે લેટ) ભાણુવડ		૫૦૧
૩૭ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસંગે લેટ) ભાણુવડ		૫૦૧
૩૮ વક્રીલ વાડીલાલ નેમચંદ શાહ	વીરમગામ	૫૦૧
૩૯ મહેતા શાંતિલાલ મણીલાલ હા. કમળાબેન મહેતા	અમદાવાદ	૫૫૬
૪૦ શ્રીયુત લાલચંદજી તથા અ. સૌ. ધીસાબેન	,,	૫૦૧
૪૧ શેઠ મોહનરાજજી મુકુનચંદજી બાલીયા	,,	૫૦૧
૪૨ સ્વ. થેડ ઉકાભાઈ ત્રીભોવનદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નીલક્ષ્મીબાઈ ગીરધર તરફથી હા. મરઘાબેન તથા મંચુબેન		અમદાવાદ ૫૦૧

૬

- ૪૩ પારેખ જયંતીલાલ મનમુખલાલ રાજકોટવાળા હા. વિનુભાઈ ,, ૫૦૧
- ૪૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ વાંકાનેર ૫૦૧
- ૪૫ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ બોટાદ ૫૦૧
- ૪૬ શેઠ શુદ્ધમલજી શેષમલજી જોવર (બસાર) પીપળગાંવ ૫૦૧
- ૪૭ સ્વ. તુરખીયા લહેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં
ધર્મપત્ની જીવતીબાઈ તરફથી હા. ભાઈ
જયંતીલાલ તથા પૂનમચંદભાઈ વડોદરા ૫૦૧
- ૪૮ શાહ અચલુનદાસ શુકનરાજજી હા. શુકનરાજજી અમદાવાદ ૫૦૧
- ૪૯ ભાવસાર ખોડીદાસ ગણેશભાઈ ધધુકા ૫૦૧
- ૫૦ અ. સૌ. હીરાબેન માણેકલાલ મહેતા ઘાટકોપર ૫૦૧
- ૫૧ મહેતા શાંતીલાલ મગનલાલ તથા અ. સૌ. પદમાવતી
શાંતિલાલ મહેતા અમદાવાદ ૫૦૦
- ૫૨ શેઠ હીરાચંદજી વનેચંદજી કટારીયા હુબલી ૫૦૧
- ૫૩ શેઠ છોટુભાઈ હરગોવિંદદાસ કટોનીવાળા મુંબઈ ૫૦૧
- ૫૪ પારેખ રતિલાલ નાનચંદ મોરળીવાળા તરફથી તેમના
પિતાશ્રી નાનચંદ ગોવિંદજીના સ્મરણાર્થે તથા તેમનાં
ધર્મપત્ની અ. સૌ. વસંત બહેનના અઠાઈતપ નિમિત્તે
હા. ભુપતલાલ રતિલાલ અમદાવાદ ૫૫૨
- ૫૫ સ્વ. શાહ ત્રીભોવનદાસ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
શીતલકુંવરબાઈ તરફથી હા. રતિલાલ ત્રીભોવનદાસ શાહ અમદાવાદ ૫૧૧
- ૫૬ શ્રીમાન નાથાલાલ માણેકચંદ પારેખ મુંબઈ (માઠુંગા) ૫૦૧
- ૫૭ શ્રી લીંમડી સંપ્રદાયના ગચ્છાધીપતિ પૂ. આચાર્ય
મહારાજ શ્રી લાધાજી સ્વામીના સ્મરણાર્થે હા.
શેઠ જેશીંગભાઈ પોચાલાલ (મહારાજ શ્રી
છોટાલાલજી સદાનંદીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫૦૧
- ૫૮ સ્વ. શ્રી વિનયમૂર્તિ શ્રી લક્ષ્મીચંદજી મહાસાગરના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ જેશીંગભાઈ પોચાલાલ (મહારાજશ્રી છોટાલાલજી
સદાનંદીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫૦૧
- ૫૯ બા. પ્ર. પ્રભાવર્તમેન કેશવલાલ ઉલ્લેખવાલા તરફથી
તેમની દીક્ષા પ્રસંગે વીરમગમ ૫૫૬
- ૬૦ શેઠ શ્રીયુત હરજીવનદાસ રાયચંદ હા. છબીલદાસ હરજીવન અમદાવાદ ૫૦૧
- ૬૧ શેઠ પોપટલાલ હંસરાજ તથા દિવાળીબેનના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ બાબુલાલ પોપટલાલ અમદાવાદ ૫૦૨



૬૨ અ. સૌ. લીલાવંતીબેન ઇશ્વરલાલ	” ૫૦૧
૬૩ હેમાણી પ્રભુદાસ ભાણુજી	કલકત્તા ૫૫૧
૬૪ શેઠ લક્ષ્મણદાસ સોજરામ	અમદાવાદ ૫૦૧
૬૫ શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ	રાજકોટ ૫૦૧
૬૬ શેઠ ચાંદમલ ખીરધીચંદ	નાસિક સીટી ૫૦૧
૬૭ ગવેરી માણેકચંદજી પન્નાલાલ છજલાણી	
હ. ધનવંતીબેન તથા કિરણબેન	દિલ્હી ૫૦૧
૬૮ શેઠ હંસરાજજી પૂર્ણમલજી કાંકરીયા	ગોગોળાવ ૫૦૧
૬૯ શ્રી શ્વ. સ્થા. જૈન સભા	કલકત્તા ૫૦૧
૭૦ શેઠ તેજસિંહજી કૃતેલાલજી છાજેડ	ઉદેપુર ૫૦૧
૭૧ શેઠ રતનચંદ લક્ષ્મીચંદ	મુંબઈ ૫૦૦
૭૨ શાહ ઉમરશી લીમશીભાઈ (સ્વ. પિતાશ્રી લીમશીભાઈ તથા માતૃશ્રી પાલાભાઈ તથા ધર્મપત્ની પાનળાઈના સ્મરણાર્થે) મુંબઈ	૫૫૨
૭૩ શાહ શામલભાઈ અમરસીભાઈ	અમદાવાદ ૫૦૨
૭૪ મહેતા ચન્દ્રકાન્ત નીતમલાલ	મુંબઈ ૫૦૧
૭૫ શેઠ લીંબચંદ્ર લાલચંદ્ર	પીપલગામ ૫૦૧
૭૬ બેન મોહનીબેન મટેા	મુંબઈ ૫૦૧
૭૭ શ્રીમતી મોંઘીબેન નવલચંદ શાહ	લીમડી (સૌરાષ્ટ્ર) ૫૦૧
હ. મોતીબેન	
૭૮ શ્રીમતી વિમલાજી સૂરજમલ મહેતા	બેલગામ ૫૦૧
૭૯ ઉદાણી નિહાલચંદ્ર હાંકેમચન્દ્ર વકીલ	
બી. એ. એલ. એલ. બી,	રાજકોટ ૫૦૧
૮૦ સ્વ. કોશરી મગનલાલજી કુન્દનમલજીના સ્મરણાર્થે હ. તેમનાં ધર્મપત્ની રાજકુંવરબેન	સતારા ૭૫૧
૮૧ શેઠ મોહનલાલજી મંછાલાલજી હ. રમણીકલાલ (પૂ. મુનિશ્રી કૃતેચંદ મ. ના શિષ્ય પં. મુનિશ્રી કનૈયાલાલજી મ. ના ઉપદેશથી)	જયપુર ૫૦૧
૮૨ શેઠ કનૈયાલાલજી સોહનલાલજી કાવેરિયા	ધારડી ૫૦૧
૮૩ શેઠ પ્રતાપમલજી કપુરચંદજી સાંદેરાવવાળા (પૂજ્ય કૃતેચંદજી મ. ના શિષ્ય મિશ્રીલાલજી મ. ના શિષ્ય ચાંદમલજી મ. ના ઉપદેશથી)	અમદાવાદ ૫૦૧

૯

- ૮૪ શ્રીમાન લાલાજી રોશનલાલજી સમન્દરલાલજી
હ. મોતીલાલજી બડોત ૫૦૧
- ૮૫ શ્રીમાન ભૂમલજી દલીચંદજી સાંકરિયા (પૂ. મ. શ્રી
સ્વામીદાસજીના સંપ્રદાય પૂ.મ. શ્રી કૃતેચંદજી મ. ના
શિષ્ય પં. મુની શ્રી કનૈયાલાલજી મ. ના ઉપદેશથી સાંઠરાવ ૫૦૧
- ૮૬ સ્વ. ગૌરીશંકર કાળીદાસ દેસાઈના સ્મરણાર્થે હ.
ભૂપતલાલ ગૌરીશંકર ઈંદોર ૫૦૧
- ૮૭ શેઠ સાહેબ શ્રી નર્સીરામભાઈ હંસરાજભાઈ કમાણી જમશેદપુર ૫૦૧
- ૮૮ સ્વ. મહાસજી શ્રી ધનદેવીજી મ. સા. ના સ્મરણાર્થે
સ્વ. ખૂબચંદજી સંખલાલતાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી જય-
દેવી તરફથી (મહાસતીજી શ્રી સુદર્શનામતિજી તથા
કુલમતીજીના ઉપદેશથી દિલ્હી ૫૦૧
- ૮૯ શ્રીમાન લાલાજી કપૂરચંદજી બેથરાના ધર્મપત્ની
શ્રીમતી વસંતદેવી હા. લાલા રાજમલજી હેમચંદજી
તરફથી (મહાસતી શ્રી સુદર્શનામતિજી તથા કુલમ-
તિજી મહાદેવીના ઉપદેશથી) દિલ્હી ૫૦૧
- ૯૦ સ્વ. મહાસતીજી શ્રી દ્રૌપતાદેવીજી મ. સા. ના સ્મરણાર્થે
શ્રી બસ. એસ. જૈન મહિલા સંઘ તરફથી (અનેક ગુણાલંકૃત
મહાસતીજી શ્રી મોહનદેવીજી મ. સા. ની પ્રેરણાથી) દિલ્હી ૫૦૧
- ૯૧ સ્વ. લક્ષ્મીચંદજીના સ્મરણાર્થે નગિનાદેવી મુજંતીના તરફથી હસ્તે
સંઘવી હેમંતકુમાર જૈન દિલ્હી ૫૦૧
- ૯૨ સ્વ. પિતાશ્રી કાલા ઝવેરી ઘનોમલજી મુજંતી ના સ્મરણાર્થે
હસ્તે શ્રીમતી નગીના દેવી દિલ્હી ૫૦૧
- ૯૩ લાલાજી કર્તુરચંદજી ખુશાલચંદજી સંચેતી હ. જ્ઞાનચંદજી અલવર ૫૦૧
- ૯૪ સ્વ. પૂજ્ય પિતાશ્રી દુર્લાલજી સોમચંદ દક્તરી
હ. ગૌરીશંકર દુર્લાલજી દક્તરી મુંબઈ ૫૦૦
- ૯૫ શેઠ સોમચંદ જોડાલાલ ઘોઘાણી હ.
મુનીલાલભાઈ જોડીયાવાળા મુંબઈ ૫૦૬
- ૯૬ શેઠ ફોજમલજી મુલતાનસીંહજી બોરહીયા અમદાવાદ ૫૦૧
- ૯૭ શેઠ છગનલાલ શામજીવિરાણી તથા
શ્રીમતી વૃજકુંવરબેન છગનલાલ વિશાણી ટ્રસ્ટફંડ
તરફથી શેઠ છગનલાલ ભાઈના સ્મરણાર્થે રાજકોટ ૫૦૧

૬

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૯૮	શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક ગ્રંથ હ.		
	પ્રમુખ બંસીલાલ કટારીયા	હિંગલુધાદ	૫૦૧
૯૯	લાલાજી રામલાલજી રોશનલાલજી અનેક ગુણાંલકૃત મહાસતીજી મોહનદેવીના ઉપદેશથી)	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૦	સ્વ. મહેતા મંગળજી મણીલાલજીના સ્મરણાર્થે હ. નેમના ધર્મપત્ની ગુણવંતીબહેન મહેતા	પોંડેચેરી	૫૦૧
૧૦૧	બાટવીયા અનેચંદ અમીચંદ (મહાવીર ટેક્સટાઇલ સ્ટોર્સ) બેંગલોર	૫૫૩	
૧૦૨	શ્રીચુત તારાચંદ ગેલડા ટ્રસ્ટ	મદ્રાસ	૫૦૧
૧૦૩	શેઠ ગુલરાજજી પુનમચંદજી મહેતા	ક્રીસનગઢ	૫૫૧
૧૦૪	શેઠ અગરમડલજી ત્રીકમચંદજી	ઈંદોર સીટી	૫૫૧
૧૦૫	કાતુગા શ્રીગડમલ્લજી મુક્તાનમદલજી કંવાડ ગદસીયાણા વાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૬	લાલાજી નવરતનચંદજી ચોરડીયાનાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી રાજકુમારીબેન	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૭	શેઠ ચીમનલાલ રૂપભચંદ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૮	શેઠ કાનજી પાનાચંદ બીમાણી ટ્રસ્ટ	કલકત્તા	૫૦૧
૧૦૯	શેઠ ગીરધરલાલ હંસરાજ કામાણી	,,	૫૦૧
૧૧૦	અનેક ગુણાંલકૃત મહાસતી મોહનદેવીજીના ઉપદેશથી સ્વધર્મી બંધુઓ તરફથી	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૧	સ્વ. વિનયચંદજી પારેખના સ્મરણાર્થે લાલા પૂર્ણચંદજી રતનચંદજી પારેખની વતી હ. શ્રીમતી પ્રેમાદેવી (શાંત સ્વભાવી મહાસતીજી ફલકુવરબાઈના ઉપદેશથી)	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૨	શ્રીમતી બદામબાઈ મીશ્રીલાલજી લૂણીયા ચંડાવતવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૩	શેઠ ભરતકુમાર મણીલાલ દલાલ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૪	શાહ હરખચંદ અમરચંદ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૫	શાહ જગજીવનદાસ વન્દ્રાવનદાસ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૬	શેઠ હંસરાજ લક્ષ્મીચંદ કામાણી જૈનભૂવન	કલકત્તા	૫૦૧

૧૦

૧૧૭ પૂ. દાદાજી સ્વ. કપુરચંદજી તથા દાદીજી કેસરબેન ચોરડીયાના સ્મરણાર્થે હા. લાલા ફલચંદજી અને શ્રીમતી વીમલકુંવરી જવેરી નીવતી શ્રીમતી નગીનાદેવી (મહાસતીજી કૂલમતીજીના ઉપદેશથી)	દીલ્હી ૫૦૧
૧૧૮ શેઠ નગીનદાસ છોટાલાલ	અમદાવાદ ૫૦૧
૧૧૯ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ ગણેશમલ્લ ગુલાબચંદ	બરોરા ૫૦૧
૧૨૦ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ	લહેસર ૫૦૧
૧૨૧ શ્રી સરાક જૈન વિદ્યાલય	કુમારડી ૫૦૧
૧૨૨ ગાંધી ભુરાલાલ નાનચંદ	સુબંધ ૫૦૧
૧૨૩ શ્રીમાન હિંમતસિંહજી સાહેબ ગલ્ફંડીયા એડીસનલ કમીશનર અજમેર ડીવીઝનવાળાના ધર્મપત્ની અ. સૌ. માણેકકુંવરબેન તરફથી હા. ખૂશાલસિંહજી ગૃલ્ફંડીયા	જયપુર ૫૫૧

૫૮૪—લાઈફ મેમ્બરો

અમદાવાદ તથા પરાંઓ

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ		૨૫૧
૨	શેઠ છોટાલાલ વળતચંદ હા. ફકીરચંદલાઈ		૨૫૧
૩	શાહ અંતિલાલ ત્રીભોવનદાસ		૨૫૧
૪	શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ		૨૫૧
૫	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ		૨૫૦
૬	શાહ રતીલાલ વાડીલાલ		૨૫૧
૭	શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ		૨૫૧
૮	સ્વ. અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. કાનજીભાઈ અમૃતલાલ દેશાઈ	૫૧	
૯	શાહ નટવરલાલ ચંદુલાલ		૨૫૧
૧૦	શાહ નરસિંહદાસ ત્રીભોવનદાસ		૨૫૧
૧૧	શાહ બીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી		૩૦૧
૧૨	શ્રી શાહપુર દરિયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા. વહીવટ કર્તા શેઠ ઇન્દરલાલ પુરુષોત્તમદાસ		૨૫૧

૧૧

૧૩ શ્રી છીયાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન સંઘ	
હા. શેઠ ચંદુલાલ અચરતલાલ	૨૫૧
૧૪ શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/O. શાહ બાલાભાઈ મહાસુશલાલ	૨૫૧
૧૫ શાહ ભાઈલાલ ઉબરશી	૨૫૧
૧૬ શ્રી સુખલાલ ડી. શેઠ હા. ડા. કુ. સરસ્વતીબેન શેઠ	૨૫૧
૧૭ શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ ક્રાંતિલાલ જીવજીલાલ	૨૫૧
૧૮ મોદી નાથલાલ મહાદેવદાસ	૨૫૧
૧૯ શાહ મોહનલાલ ત્રીકમલાલ	૨૫૧
૨૦ શ્રી છકોટી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ પોચાલાલ પિતાંબરદાસ	૨૫૧
૨૧ દેશાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈલાલ અમૃતલાલ	૨૫૧
૨૨ શાહ નવનીતરાય અમુલખરાય	૨૫૧
૨૩ શાહ મણીલાલ આશારામ	૨૫૧
૨૪ શેઠ ચીનુભાઈ સાકરચંદ	૨૫૧
૨૫ શાહ વરજીવનદાસ ઉમેદચંદ	૨૫૧
૨૬ શાહ રઝનીકાંત કરતુરચંદ	૨૫૧
૨૭ સંઘવી જીવજીલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૨૮ શાહ શાંતિલાલ મોહનલાલ ધ્રાંગધ્રાવાળા	૨૫૨
૨૯ અ. સૌ. બેન રતનબેન નાદેચા હા. શેઠ ધુલજી ચંપાલાલજી	૨૫૧
૩૦ શાહ હરિલાલ જોડાલાલ ભાડલાવાળા	૨૫૧
૩૧ શ્રી સરસપુર દરીયાપુરી આઠ કોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય	
હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૩૨ શેઠ પુખરાજજી સમતીરામજી પુનમિયા સાદડીવાળા	૨૫૧
૩૩ સ્વ. પિતાશ્રી જવાહરલાલજી તથા પૂજ્ય આચાર્ય હંમરીમલજી	
ખરડીયાના સ્મરણાર્થે હા. મુળચંદ જવાહરલાલ ખરડીયા	૨૫૧
૩૪ સ્વ. ભાવસાર ખબાભાઈ (મંગળદાસ) પાનાચંદના સ્મરણાર્થે	
હા. તેમનાં ધર્મપત્ની પુરીબેન	૨૫૧
૩૫ સ્વ. પિતાશ્રી સ્વજીભાઈ તથા સ્વ. માતૃશ્રી મુળીબાઈના સ્મરણાર્થે	
હા. કકલભાઈ કોઠારી	૩૦૧
૩૬ ભાવસાર કેશવલાલ મગનલાલ	૨૫૧
૩૭ શાહ કેશવલાલ નાનચંદ જાખડાવાળા હા. પાર્વતીબેન	૨૫૧

૧૨

૩૮ શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ રાજસીતાપુરવાળા	૨૫૧
૩૯ શ્રી સાબરમતી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ મણીલાલભાઈ	૨૫૦
૪૦ ભાવસાર છોટાલાલ જગનલાલ	૨૫૧
૪૧ ભાવસાર શકરાભાઈ જગનલાલ	૨૫૧
૪૨ અ. સૌ. બેન જીવીબેન રતિલાલ હા. ભાવસાર રતિલાલ હરગોવિંદદાસ	૨૫૧
૪૩ ભાવસાર ભોગીલાલ જમનાદાસ પાટણવાળા	૨૫૧
૪૪ સંઘવી બાલુભાઈ કમળશી તથા તેમનાં ધર્મપત્નીઓ અ. સૌ. ચંપાબેન તથા વસંતબેન તરફથી	૨૫૧
૪૫ અ. સૌ. વિદ્યાબેન વનેચંદ દેસાઈ વર્ષાતપ તથા અઘાઈ પ્રસંગે હા. જીવેન્દ્રકુમાર વનેચંદ દેસાઈ	૪૧૭
૪૬ શાહ નટવરલાલ ગોડળદાસ	૨૫૧
૪૭ અ. સૌ. સરસ્વતીબેન મણીલાલ જગનલાલ	૩૫૧
૪૮ અ. સૌ. કંકુબેન (ભાવસાર ભોગીલાલ જગનલાલનાં ધર્મપત્ની)	૩૦૯
૪૯ અ. સૌ. સવિતાબેન (જયંતીલાલ ભોગીલાલનાં ધર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૦ અ. સૌ. શાંતાબેન (દીનુભાઈ ભોગીલાલનાં ધર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૧ અ. સૌ. સુનંદાબેન (રમણલાલ ભોગીલાલનાં ધર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૨ શેઠ હીરાજી રૂગનાથજીના સ્મરણાર્થે હા. વાગમલજી રૂગનાથજી	૩૦૧
૫૩ શેઠ મણીલાલ બોધાભાઈ	૨૫૧
૫૪ પટવા સુમેરમલજી અનોપચંદજી જોધપુરવાળા	૩૦૧
૫૫ સ્વ. માણેકલાલ વનમાળીદાસ શેઠના સ્મરણાર્થે હા. રમણલાલ માણેકલાલ	૨૫૧
૫૬ સ્વ. શાહ ધનરાજજી ખેમરાજજીનાં સ્મરણાર્થે હા. કનૈયાલાલ ધનરાજજી	૩૦૧
૫૭ શ્રી સારંગપુર ૬. આ. કે. સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ રમણલાલ બગુભાઈ	૨૫૧
૫૮ દોશી હરજીવનદાસ જીવરાજ તથા લક્ષ્મીબાઈ લહેરચંદના સ્મરણાર્થે હા. દોશી મનહરલાલ કરશનદાસ મુળીવાળા	૨૫૧
૫૯ શાહ પુનમચંદ કૃતેહચંદ	૨૫૧
૬૦ શ્રીચુત ચતુરભાઈ નંદલાલ	૨૫૧
૬૧ શ્રીચુત અમૃતલાલ ઇશ્વરલાલ મહેતા	૨૫૧
૬૨ શાહ બદવજી મોહનલાલ તથા શાહ ચીમનલાલ અમુલખભાઈ	૨૫૧

૧૩

- ૬૩ અ. સૌ. બેન લાલુબેન મગનલાલ હ. શાહ અમૃતલાલ ધનજીભાઈ
વઢવાણ શહેરવાળા ૩૦૧
- ૬૪ અ. સૌ. બેન કાન્તાબેન ગોરધનદાસ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૬૫ દોશી કુલચંદ મુખલાલભાઈ ખોટાદવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. દોશી છબીલદાસ કુલચંદભાઈ ૨૫૧
- ૬૬ લાલાજી રામકુંવરજી જૈન ૨૫૧
- ૬૭ શેઠ છોટાલાલ ગુલાબચંદ પાલનપુરવાળા ૨૫૧
- ૬૮ શાહ ધીરજલાલ મોતીલાલ ૨૫૧
- ૬૯ સંઘવી સૂર્યકાંત ચુનીલાલના સ્મરણાર્થે
હ. સંઘવી જીવણલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧
- ૭૦ ભાવસાર મોહનલાલ અમુલખરાય ૨૫૧
- ૭૧ મહેતા મૂળચંદ મગનલાલ ૨૫૧
- ૭૨ વૈધ નરસિંહદાસ આકરચંદનાં ધર્મપત્ની દેવાબાઈના સ્મરણાર્થે
હ. હરીલાલ નરસિંહદાસ ૨૫૧
- ૭૩ શાહ કુલચંદભાઈ મુલચંદ હ. હસમુખભાઈ કુલચંદભાઈ ૨૫૧
- ૭૪ શેઠશ્રી મિશ્રીલાલજી જવાહીરલાલજી ખરડીયા ૨૫૧
- ૭૫ શાહ લલ્લુભાઈ મગનભાઈ ચુડાવાળા હ. જશવંતલાલ લલ્લુભાઈ ૩૦૧
- ૭૬ કુમારી પુષ્પાબેન હીરાલાલ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૭૭ શાહ મણીલાલ ઠાકરશી હ. કમળાબેન મણીલાલ લખતરવાળા
(ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૭૮ કુમારી નર્મીનીબેન જયંતીલાલ ૨૫૧
- ૭૯ સ્વ. ઉમેદરામ ત્રીભુવનદાસનાં ધર્મપત્ની કાશીબાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શાંતિલાલ ઉમેદરામ (ચાંદમુનિનાં ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૮૦ સ્વ. ભાવસાર મોહનલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્ની દિવાળીબાઈના
સ્મરણાર્થે હ. રતીલાલ માણેકલાલ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૮૧ મહેતા દેવીચંદજી ખુબચંદજી ધેડા ગઢસીયાણાવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. મહેતા ચુનીલાલ હરમાનચંદ ૨૫૧
- ૮૨ ઘાસીલાલજી મોહનલાલજી ઠેકારી ઠેક લક્ષ્મી પુસ્તક ભંડાર ૨૫૧
- ૮૩ સ્વ૦ શેઠ નાથાલાલ રતનાભાઈ માફતીયાના સ્મરણાર્થે
પુનાબેન તરફથી હ. કરશનભાઈ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧

૧૪

- ૮૪ શાહ મણીલાલ છગનલાલ ૨૫૧
- ૮૫ ભાવસાર જયંતીલાલ લોગીલાલ ૨૫૧
- ૮૬ ભાવસાર દિનુભાઈ લોગીલાલ ૨૫૧
- ૮૭ ભાવસાર રમણલાલ લોગીલાલ ૨૫૧
- ૮૮ ભાવસાર કનુભાઈ સાકરચંદ ૨૫૧
- ૮૯ શેઠ ભેરૂમલજી સાહેબ બેધપુરવાળા ૨૫૧
- ૯૦ સ્વ. બેનાણી વર્ધમાન રામજીભાઈ કુંઠણીવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. શાંતિલાલ વર્ધમાન ૨૫૧
- ૯૧ સ્વ. કચરાભાઈ લહેરાભાઈના સ્મરણાર્થે
હ. શાંતિભાઈ કચરાભાઈ ૨૫૧
- ૯૨ એક સ્વર્ધર્મી બંધુ હ. શાહ રીખલદાસજી જયંતિલાલજી ૨૫૧
- ૯૩ અ. સૌ. સરસ્વતીબેન મણીલાલ ચતુરભાઈ શાહ
(સદાનંદી છોટાલાલ મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૯૪ ચીમનલાલ મણીલાલ શાહ (રીયાપુરી સંપ્રદાયના પૂઠ તપસ્વી
મહારાજશ્રી માણેકચંદ્રજીના શિષ્ય મુનિશ્રી મગનલાલજી
મહારાજશ્રીના સ્મરણાર્થે) ૨૫૧
- ૯૫ બેન જોકુવર મજલાલ પારેખ ૨૫૧
- ૯૬ શેઠ પુનમચંદજી જવાહીરલાલજી બરડીયા ૨૫૧
- ૯૭ અ. સૌ. લીલાવંતી ધીરજલાલ મહેતા
કે. ડા. ધીરજલાલ ત્રીકમલાલ મહેતા ૩૦૧
- ૯૮ શેઠ રાજમલજી ઘાસીલાલજી કૌઠારી કોશીધલવાળા ૨૫૧
- ૯૯ શેઠ ચુનીલાલ ભગવાનજી કે. રતીલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧
- ૧૦૦ ભાગ્યવતી અરવીંદકુમાર કે. અરવીંદકુમાર સકરાભાઈ ભાવસાર ૨૫૧
- ૧૦૧ અ. સૌ. ચંચંગબેન મનસુખલાલ
હા. મનસુખલાલ જોડાલાલ રૂપેરા ૨૫૧
- ૧૦૨ સ્વ. આસીબાઈ તથા વસ્તીમલજી ભોમાજીના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ મીશ્રીમલજી દેવચંદજી એસવાલ કેરુવાળા ૨૫૧
- ૧૦૩ સ્વ. શેઠ કીશનમલજી માંડોતના સ્મરણાર્થે
હા. શીરેમલજી કીશનમલજી સોજતવાલા ૨૫૧
- ૧૦૪ સ્વ. શેઠ વકત:વરમલજીના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ ધીસાલાલજી મુકનરાજજી શીયારીયા (બેધપુરવાલા) ૨૫૧

૧૫

૧૦૫ શાહ મહાસુખલાલ ભાઈલાલ (સદાનંદી પંડિત મુનિશ્રી છોટાલ મહારાજના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૧૦૬ અ. સૌ. કાંતાબેન કાળીદાસ ઠે. કુમાર બુક બાઈડીંગ વર્કસ	૨૫૧
૧૦૭ સ્વ. હર્ષિમતલાલ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમના સુપુત્રો મેસર્સ દ્વારકાદાસ એન્ડ બ્રધર્સ તરફથી	૩૦૧
૧૦૮ અ. સૌ. કાંતાબેનના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર નાગરદાસ હરજીવનદાસ	૨૫૧
૧૦૯ શ્રી ઉમેશચંદ કાકરશી ઠે. યુ. ટી ગોપાણી એન્ડ સન્સ	૩૫૧
૧૧૦ પૂ. માતુશ્રીના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૧૧૧ શાહ શાંતીલાલ મોહનલાલ	૨૫૧
૧૧૨ સરસ્વતી પુસ્તકલંકાર હા. પ્રભુદાસ મહેતા	૨૫૧
૧૧૩ સરસ્વતી પુસ્તક લંકાર હા. શહ ભુરાલાલ કાળીદાસ	૨૫૧
૧૧૪ સ્વ. પિતાશ્રી મોતીલાલજીના સ્મરણાર્થે હા. મહેતા રણજીતલાલજી મોતીલાલજી ઉદેપુરવાળા	૨૫૧
૧૧૫ શેઠ પરસોત્તમદાસ અમરસીનાં ધર્મપત્ની સ્વ. કુસુમબેનના સ્મરણાર્થે તથા અ. સૌ. સવીતાબેનના માસખમણના નિમિત્તે હા. શેઠ સોમચંદ પરસોત્તમદાસ (પોટી સુદાનવાળા)	૩૦૧
૧૧૬ શ્રીમાન જોરાવરમલજી ધર્મચંદ્રજી ડુંગરવાલ રામજી કાકેરડાવાળા (મુનિશ્રી માંગીલાલજીના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૧૧૭ હા. ધનજીભાઈ પુરસોત્તમદાસ	૨૫૧
૧૧૮ સરસ્વતી પુસ્તક લંકાર	૩૫૧
૧૧૯ સરસ્વતી પુસ્તક લંકાર	૩૫૧
૧૨૦ સરસ્વતી લંકાર	૩૫૧
૧૨૧ શેઠ ગેરિલાલજી સુગનલાલજી ઉદેપુરવાળા	૨૫૧
૧૨૨ શેઠ કનૈયાલાલજી મુરાણા પીપલોદાવાળા	૨૫૨
૧૨૩ કામદાર વાડીલાલ દત્તીલાલ (સાબરમતી)	૨૫૨
૧૨૪ કુમારી ચંપાબેન ભોગીલાલ ભાવસાર	૨૮૦
૧૨૫ કુમારી ઉષાબેન જયંતીલાલ ભાવસાર	૨૫૧
૧૨૬ કુમારી ચંદ્રાબેન જયંતીલાલ ભાવસાર	૨૪૧
૧૨૭ કુમારી જયશ્રી રમણલાલ ભાવસાર	૨૫૧
૧૨૮ શાહ ડાહ્યાભાઈ અંબાલાલ	૩૫૧

૧૬

૧૨૬ ખરડિયા ચાંદમલ્લજી ઝવાહીર લાલજી	૫૧
૧૩૦ શ્રી વીજયદાન સુરેશ્વરજી જ્ઞાનમંદીર પોષધશાળા	૩૫૧
૧૩૧ શેઠ પાનાચંદ ઝવેરચંદ સારગપુર ઉપાશ્રય દૂરદ હ. વકીલ બાબુભાઈ હીમતલાલ	૩૫૧

અમલનેર

૧ શાહ નાગરદાસ વાઘજીભાઈ	૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. ગાંડાલાલ ભીખાલાલ	૨૫૧

અજમેર

૧ શેઠ ભુરાલાલ મોહનલાલ ડુંગરવાલ	૨૫૧

અલ્હર

૧ શ્રીમતી અંબાદેવી ઠે. બુદ્ધામલજી રતનમલજી સચેતી	૨૫૧
૨ શેઠ ચાંદમલ્લજી મહાવીર પ્રસાદ પાલાવત	૨૫૧
૩ શ્રીયુત રૂપભદ્રકુમાર સુમતિકુમાર જૈન	૨૫૧

આસનસોલ

૧ બાવીશી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની મણીભાઈ તરફથી હા. રસિકલાલ, અનિલકાંત, તથા વીનોદશય	૨૫૧

આટકોટ

૧ મહેતા ચુનીલાલ નારણદાસ	૩૦૧

આણંદ

શેઠ રમણીકલાલ એ. કપારી હા. મનસુખલાલભાઈ	૨૫૧

આકોલા

શેઠ ઠંચનલાલ રાઘવજી અજમેરા ડે. મેસર્સ અજમેરા પ્રાપર્સ એન્ડ કું. (પૂ. સદાનંદી મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજના ઉપદેશથી)	૨૫૧

ઠંગતપુરી

૧ શેઠ પન્નાલાલ લખીચંદ જૈન	૨૫૧

ઈન્દોર

૧ અ. સી. જૈન હયાએન મોહનલાલ દેસાઈ જેતપુરવાળા (અ. સી. જૈન વિદ્યાજેનના વર્ષોત્પ નિમિત્તે) હા અરવિંદકુમાર તથા જીતેન્દ્રકુમાર	૨૫૧
૨ શ્રીયુત ભાઈલાલ છગનલાલ તુરખીયા	૩૫૧

૧૭

ઉદયપુર

૧ શેઠ રણજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૨ શ્રીમતી સોહીનીબાઈ ઠે. રણજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૩ અ. સી. બેન ચન્દ્રાવતી તે શ્રીમાન બહોતલાલજી નાહરન.	
ધર્મપત્ની, હા. શેઠ રણજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૪ શેઠ છગનલાલજી બાગેચા	૨૫૧
૫ શેઠ મગનલાલજી બાગેચા	૨૫૧
૬ સ્વ. શેઠ કાળુલાલજી લોહાના સ્મરણાર્થે	
હા. શેઠ દોલતસિંહજી લોહા	૨૫૧
૭ સ્વ. શેઠ પ્રતાપભલજી સાળલાના સ્મરણાર્થે	
હા. પ્રાણલાલ હીરાલાલ સાળલા	૨૫૧
૮ શેઠ બીમરાજજી ધાવચંદજી બાફણા	૨૫૧
૯ શ્રીગુત સાહેબલાલજી મહેતા	૨૫૧
૧૦ શેઠ પન્નાલાલજી બહેસલાલજી હીંગડ	૨૫૧
૧૧ શેઠ દીપચંદજી પન્નાલાલજી લોહા	૨૫૧
૧૨ શેઠ કસ્તૂરચંદજી નાર્મલજી	૨૫૧
૧૩ શ્રી યુ. એલ. કેડારી	૩૦૧
૧૪ બાળુ પરશુરામ છગનલાલજી શેઠ	૨૫૦
૧૫ શેઠ કનૈયાલાલજી કાફલાલજી ભૈન	૨૫૧
૧૬ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. ભૈન શ્રાવક સંઘ આમડ	૩૫૧

ઉપલેટા

૧ શેઠ જોહાલાલ ગોરધનદાસ	૨૫૧
૨ સ્વ. બેન સતીકબેન કચરા હા. આતમચંદલાઈ, છોટાલાલભાઈ	
મથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા)	૨૫૧
૩ શેઠ ખુશાલચંદ કાનજીભાઈ હા. પ્રતાપભાઈ	૨૫૧
૪ દોશી વીરૂલજી હરભચંદ	૨૫૧
૫ સંઘાણી મુળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પુત્રો	
જયંતીલાલ રમણીકલાલ	૨૫૧
૩	

૧૮

ઉમરગાંવ રોડ

૧ શાહ મોહનલાલ પોપટલાલ પાનેલીવાળા ૨૫૧

ઐડન કેમ્પ

- ૧ મહેતા પ્રેમચંદ માણિકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. રાયચંદભાઈ, પોપટલાલભાઈ તથા રસીકલાલભાઈ ૨૫૧
- ૨ શાહ જગજીવનદાસ પુરુષોત્તમદાસ ૨૫૧
- ૩ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી ૨૫૧

કલકત્તા

૧ શ્રી કલકત્તા જૈન પ્રે. સ્થા. (શુજરાતી) સંઘ ૨૫૧

કલોલ

- ૧ શેઠ મોહનલાલ જોઠાભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ ૨૫૧
- ૨ ડૉ. મયાચંદ મગનલાલ શેઠ હા. ડૉ. રતનચંદ મયાચંદ ૨૫૧
- ૩ સ્વ. નાયાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે હા. શાહ રતીલાલ નાયાલાલ ૨૫૧
- ૪ શેઠ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. મારફતીયા ચંદુલાલ મણીલાલ ૨૫૧
- ૫ સ્વ. શ્રીધુત વાડીલાલ પરશોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે
હા. ઘેલાભાઈ તથા આત્મારામભાઈ ૨૫૧
- ૬ શાહ નાગરદાસ કેશવલાલ ૨૫૧
- ૭ શ્રી. સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ આત્મારામભાઈ મોહનલાલભાઈ ૨૫૧

કડી

- ૧ શ્રી સ્થા. હરિયાપુરી જૈન સંઘ
હા. ભાવસાર દામોદરદાસભાઈ ઇશ્વરલાલભાઈ ૨૫૧
- ૨ પાર્વતીબેન ડૉ. જેસીંગભાઈ ઇશ્વરલાલભાઈ ૨૫૧

કરજીણુ

૧ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ મીયાંયામ કરજીણુ ૨૫૧

કઠોર

- ૧ સ્થા. જૈન સંઘ હા. જેસીંગભાઈ પોચાલાલ તરફથી
(માધવસિંહજી મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી)
હા. ઠાકોરભાઈ રામચંદ્ર ૨૫૧

૧૬

કન્યાસગદ

- ૧ શ્રી શ્રવે. સ્વા. જૈન સંઘ હ. શેઠ દેવચંદ અમુલખલાઈ ૨૫૧

કલ્યાણુ

- ૧ સંઘવી ઠાકરશીલાઈ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હ. શાહ હીમતલાલ હરખચંદ ૨૫૧

કાનપુર

- ૧ શાહ રમણીકલાલ પ્રેમચંદ ૩૦૦

કુંદણી-(આટકોટ)

- ૧ દોશી રતીલાલ ટોકરશી ૨૫૧

કોલકી

- ૧ પટેલ ગોવિંદલાલ ભગવાનજી ૨૫૧
૨ પટેલ ખીમજી જોઠાભાઈ વાઘાણી
(તેમના સ્વ. સુપુત્ર રામજીભાઈના સ્મરણાર્થે) ૩૦૨

કેમપાલા

- ૧ સ્વ. શેઠ નાનચંદ મોતીચંદ ધ્રાક્ષવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. તેમના સુપુત્ર જમનાદાસ નાનચંદ શેઠ ૨૫૧
૨ શ્રીમતી હીરાબેન, રતીલાલ નાનચંદ શેઠ ધ્રાક્ષવાળા ૨૫૧

કુશળગઢ

- ૧ શેઠ ચંપાલાલજી દેવચંદજી ૨૫૧

ખાખીબળીયા

- ૧ બાટવીયા શુભાચંદ લીલાધર ૪૦૧

ખારાધોડા

- ૧ સ્વ. પિતાશ્રી હરજીવનદાસ લાલચંદ શાહ તથા
સ્વ. અ. સૌ. જૈન જમકુખાઈ તથા લીલાબાઈના
સ્મરણાર્થે હ. નરસિંહદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
૨ સ્વ. શેઠ એમણલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે હ. ભાઈચંદ એમણલાઈ ૨૫૧

૨૦

ખીચન

- ૧ શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ માલુ ૩૫૨

ખુરદારોડ

- ૧ શેઠ ગીરધારીલાલજી સીતારામજી ખેડપવાળા ૩૦૦
૨ શેઠ નરસિંહદાસ શાંતિલાલજી ભોરલાવાળા
(મુનિશ્રી ચાંદમલજીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

ખંભાત

- ૧ શેઠ માણેકલાલ લગવાનદાર ૨૫૧
૨ શેઠ ત્રીભોવનદાસ મંગળદાસ ૨૫૧
૩ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૧
૪ શાહ ચંદુલાલ હરીલાલ ૨૫૧
૫ શાહ સાંકરચંદ મોહનલાલ ૨૫૧
૬ શાહ શકરાલાલ દેવચંદ ૨૫૧
૭ શાહ સુખલાલ દોલતચંદ ૨૫૧
૮ ગાંધી બાપુલાલ મોહનલાલ ૨૫૧
૯ જૈન લલિતા માણેકલાલ ૨૫૧

ગાંધીગામ

- ૧ શાહ મોરારજી નંજીજી એન્ડ કંપની ૨૫૧

ગુંદાલા

- ૧ શાહ માલશી ઘેલાભાઈ ૨૫૧

ગુલાબપુરા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન વર્ધમાન સંઘ
હ. માંગીલાલજી ઉદારમલજી ધનોપવાળા ૨૫૧
૨ શ્રી એસરાલ પંચાયત હ. ગુલાબચંદજી ચોરડીયા ૨૫૧

ગોંડલ

- ૧ સ્વ. ભાખડા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્ની કમલબાઈ
તરફથી હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ ૨૫૧
૨ પીપળીયા સીલધર દામોદર તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ.
લીલાવતી સાકરચંદ કંઠારીના બીજા વર્ધપત્ની બુધ્ધાડીમાં ૩૦૧

૨૧

૩ કામદાર બુઢાલાલ કેશવજીના સ્મરણાર્થે હા.	
હરીલાલ બુઢાલાલ કામદાર	૩૦૧
૪ સ્વ. કોઠારી કૃપાશંકર ભાલુકચંદના સ્મરણાર્થે	
હા. તેમનાં ધર્મપત્ની પ્રભાકુવરબેન	૨૫૧
૫ કોઠારી શુભાબચંદ રાયચંદ રંગુનવાળા	૨૫૧
૬ જસાણી રૂગનાથભાઈ નાનજી હા. ચુનીલાલભાઈ	૨૫૧
૭ માસ્તર હકીમચંદ દીપચંદ શેઠ	૨૫૧

ગોંદીયા

૧ સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ પ્રેમચંદ છોટાલાલ (શેઠ પોપટલાલભાઈ તરફથી)	૨૫૧

ગોધરા

૧ શાહ ત્રીભોવનદાસ છગનલાલ	૩૦૧
૨ સ્વ. પ્રેમચંદ ઠાકરશીતા સ્મરણાર્થે હા. શાહ ચુનીલાલ પ્રેમચંદ	૩૦૧

ઘટકણુ

૧ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ	૨૫૧

ઘોડચંડ (થાણા)

૧ મહેતા શુભાબચંદ ગંભીરમલજી	૩૦૦

ઘોડનદી

૧ શેઠ ચંદ્રભાણુ શોભાચંદ ગાદીયા	૨૫૧

ચુડા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. રતીલાલ મગનલાલ ગાંધી	૨૫૧

ચોટીલા

૧ શાહ વનેચંદ જોડાલાલ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘને ભેટ	૩૦૧

ચારભુજરોડ

૧ શેઠ માંગીલાલજી હીરાચંદજી બાબેલ	૩૦૧

જમશેદપુર

૧ દોશી ઝવેરચંદ વલભજી	૨૫૧

જલેસર (બાલાસોર)

૧ સંઘવી નાનચંદ પોપટભાઈ ધાનગઢવાળા	૨૫૧

૨૨

જયપુર

૧ શ્રીમાન શેઠ શીરેમલજી નવલખાનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. પ્રેમલતાદેવી ૨૫૧

જસવન્તગઢ

૧ શ્રીમાન મુન્દરલાલજી નેમીચંદજી તકેસરા ૩૫૧

જામખંભાળીયા

૧ શેઠ વસનજી નારજી ૨૫૧

૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. મહેતા રજુછોડદાસ પરમાણુનંદ ૨૫૧

૩ સંઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ ૨૫૧

જામનગર

૧ શાહ છોટાલાલ કેશવજી ૨૫૧

૨ વોરા ચીમનલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧

૩ ડો. સાહેબ પં. પી. શેઠ ૨૫૦

૪ શાહ રંગીલદાસ પોપટલાલ ૨૫૧

૫ વકીલ મણીલાલ ખેંગારભાઈ પુનાતર ૨૫૧

જુનારદેવ

૧ ઘેલાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ ૨૫૧

જુનાગઢ

૧ શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હ. હરિલાલભાઈ (હાટીનામાળીયાવાળા) ૨૫૧

જામજોધપુર

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ ૩૮૭

૨ શાહ ત્રીભોવનદાસ ભગવાનજી પાનેલીવાળા ૨૫૧

૩ દોશી માણેકચંદ ભવાન ૨૫૧

૪ પટેલ લાલજી જુઠાભાઈ ૨૫૧

૫ શેઠ ખાવનજી જુઠાભાઈ ૨૫૧

૬ શેઠ મજલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧

જેતપુર

૧ કોઠારી ડોલરકુનાર વેણીલાલ ૨૫૧

૨ અ. સૌ. જૈન મુરજકુવર વેણીલાલ કોઠારી ૨૫૧

૨૩

- ૩ શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ હ. નરભેરામભાઈ (જસાગુરવાળા) ૨૫૧
 ૪ દોશી છોટાલાલ વનેચંદ ૨૫૧

જેતલસર

- ૧ શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ ૨૫૧
 ૨ કાઠાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
 જમકબેન તરફથી હ. શાંતિલાલભાઈ ગોંડલવાળા ૨૫૧

જેઘપુર

- ૧ શેઠ નવરતમલજી ધનવંતસિંહજી ૨૫૦
 ૨ શેઠ હરતીમલજી મનફૂલજી સામસુખા ૨૫૧
 ૩ શેઠ પુખરાજજી પદમરાજજી ભંડારી ૨૨૧
 ૪ શેઠ વસ્તીમલજી આનંદમલજી સામસુખા ૨૫૧

જેરાવરનગર

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ ચંપકલાલ ધનજીભાઈ ૨૫૧

ઝરીયા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ કનૈયાલાલ બી મોદી ૨૫૧

ડોંડાયચા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૦

ઢસા

- ૧ ઢસાગામ સ્થા. જૈન સંઘ હ. એક સદ્ગુહસ્થ તરફથી ૨૫૧
 ૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. બગડિયા નરભેરામ જેઠાલાલ (ઢસા જ'કશન) ૨૫૧

તાસગાંવ

- ૧ સ્વ. યુનીલાલજી ડુગડના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
 ઠોંઢુબાઈના તરફથી હ. શેઠ રામચંદજી ૩૫૧

થાનગઢ

- ૧ શાહ કાકરશીભાઈ કરશનજી ૨૫૧
 ૨ શેઠ જેઠાલાલ ત્રીલોચનદાસ ૨૫૧
 ૩ શાહ ધારશીભાઈ પાશવીરભાઈ હા. સુખલાલભાઈ ૨૫૧
 ૪ હંસાબેન અરવીંદ હા. ભાઈ રવીચંદ માણેકચંદ ૩૦૧

૨૪

દહ્યાણુરોડ

૧ શાહ હરજીવનદાસ ઓઘડ ખંધાર (કરાંચીવાળા) ૨૫૧

દાહોદ

૧ શેઠ માણેકલાલભાઈ ખેંગારજી ૨૫૧

દિહડી

૧ લાલાજી પૂર્ણચંદજી જૈન (સિન્દૂલ ખેંકવાળા) ૩૫૧

૨ શ્રીયુત દીશનચંદજી મહેતાબચંદજી ચોરડીયા
હા. શ્રીમતી નળીનાદેવી તથા શ્રીયુત મહેતાબચંદ જૈન ૨૫૧

૩ અ. સૌ. સમ્બજનબેન ઈંદરમલજી પારેખ ૨૫૧

૪ લાલાજી મીઠનલાલજી જૈન એન્ડ સન્સ ૩૦૧

૫ લાલાજી શુભશનલાલજી જૈન એન્ડ સન્સ ૩૦૧

૬ બેન વિન્યાકુમારી જૈન ઠે. મહેતાબચંદ જૈન
(વયોવૃદ્ધ સરત સ્વભાવી કુલમતીજી મહાસતિજીની પ્રેરણાથી) ૨૫૧

૭ શ્રીમાન લાલાજી રતનચંદજી જૈન ઠે. આઈ સી. હોઝીયરી ૨૫૧

૮ સ્વ. લાલાશ્રીચંદજી ડુંગરીયાના સ્મરણાર્થે સ્વસ્થાન ન્યાયાધિકારી
હુકમચંદજી જૈનના સુપુત્ર જીતેન્દ્રકુમાર વકીલના સુપુત્ર અનિલકુમાર
તરફથી લેટ હ. વિનયકુમારી ૩૫૧૯ સ્વ. લાંસા અંબાલાલજી ચોરડીયાના સ્મરણાર્થે લાલચંદજી
તથા હીરાલાલજી તરફથી હ. શાંતાદેવી ૩૫૧

૧૦ એક સદ્ગ્રહસ્થ તરફથી હ. મહેતાબચંદજી જૈન ૩૦૧

૧૧ એક સ્વધર્મી બંધુ તરફથી હસ્તે વિજિથાકુમારી બેન ૪૦૧

૧૨ બાળુ નિરંજન સિંહજી જૈન ૨૫૧

ધાકા

૧ શેઠ મણીલાલ જેચંદભાઈ ૨૫૧

ધાર

૧ શેઠ સાગરમલજી પનાલાલજી ૨૫૧

ધાંગધા

૧ ભાવદીક્ષિત અ. સૌ. રૂપાળીબેન હિંમતલાલ સંઘવીની તપશ્ચર્યાથી
સંઘવી ચીમનલાલ પુરસોતમદાસ સંઘવી તરફથી ૩૦૫

૨૫

૨ સંઘવી નરસિંહદાસ વખતચંદ	૩૦૧
૩ શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ હ. મંગળજી ભુવરાજ	૨૫૧
૪ ઠંકર નારણદાસ હરજોવિંદદાસ	૨૫૧
૫ કોઠારી કપુરચંદ મંગળજી	૨૫૧

ધોરાજી

૧ મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	૩૫૧
૨ અ. સૌ. ગચીબેન બાબુભાઈ	૨૫૧
૩ ધી નવસૌરાષ્ટ્ર એઈલ મીલ પ્રા. લીમીટેડ	૨૫૧
૪ સ્વ. રાયચંદ પાનાચંદના સ્મરણાર્થે હ. ચીમનલાલ રાયચંદ શાહ	૩૦૧
૫ ગાંધી પોપટલાલ જ્યેષ્ઠભાઈ	૨૫૦
૬ દેસાઈ છગનલાલ હાદ્દાભાઈ લાડવાળાનાં ધર્મપત્ની દિવાળીબેન તરફથી હ. કુમારી હંસુમતી	૨૫૧
૭ એક સદ્ગ્રહસ્થ હ. મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	૨૫૧
૮ શેઠ દલપતરામ વસનજી મહેતા	૨૫૧
૯ સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાન કચરાભાઈના તથા ચિ. હંસાના સ્મરણાર્થે હ. પટેલ દલીચંદ ભગવાનજી	૩૦૧
૧૦ મહેતા હેમચંદ કાળીદાસ જામખંભાળીયાવાળા	૨૫૧

ધંધુકા

૧ શેઠ પોપટલાલ ધારશીભાઈ	૨૫૧
૨ સ્વ. ગુલાબચંદભાઈના સ્મરણાર્થે હ. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ	૨૫૧
૩ શ્રી ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ વસાણી	૨૫૧

ધુલીયા

૧ શ્રી અમોલ જૈન જ્ઞાનાલય હ. શેઠ કનૈયાલાલ છાજેડ	૨૫૧

નડીયાદ

૧ શાહ મોહનલાલ ભુરાભાઈ	૨૫૧

નારાયણ ગામ

૧ શેઠ મોતીલાલજી હીરાચંદજી ચોરડીયા બોરીવાળા	૨૫૧

નંદુરબાર

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ	૨૫૧

૨૬

નાગોર

- ૧ શ્રીપાલભાઈ એન્ડ કું. સાગરમલજી લુન્કડ ડેરવાળા તરફથી ૨૫૧

પાલનપુર

- ૧ બેન લક્ષ્મીભાઈ હ. મહેતા હરીલાલ પીતાંબરદાસ ૨૫૧
૨ લોકાગચ્છ સ્થા. બેન પુસ્તકાલય હ. કેશવલાલ જી. શાહ ૨૫૧

પાણસણા

- ૧ શ્રી સ્થા. બેન સંઘ હ. શાહ છોટાલાલ પૂંજભાઈ ૨૫૧

પાલેજ

- ૧ સ્વ. મનસુખલાલ મોહનલાલ સંઘવીના સ્મરણાર્થે
હ. ભાઈ ધીરજલાલ મનસુખલાલ ૩૦૧

પ્રાંતીજ

- ૧ સ્થા. બેન સંઘ હ. શ્રીકૃત અંબાલાલ મહાસુખરામ ૨૫૦

પૂના

- ૧ શેઠ ઉત્તમચંદજી કેવળચંદજી ધોડા ૨૫૧

ફાલના

- ૧ મહેતા પુષ્પશાજી હસ્તીમલજી સાદડીવાલા ૩૦૧
૨ મહેતા કુન્દનમલજી અમરચંદજી સાદડીવાલા ૨૫૧

બગસરા

- ૧ શેઠ પોપટલાલ રાઘવજી રાયડીવાળા
હ. નાનચંદ પ્રેમચંદ શાહ ૨૫૧
૨ સ્વ. માતુશ્રી જળકભાઈના સ્મરણાર્થે
હ. દેશાઈ વૃજલાલ કાળીદાસ ૨૫૧

બરવાળા-ધેલાશા

- ૧ સ્વ. મોહનલાલ નરસિંહદાસના સ્મરણાર્થે
હ. તેમનાં ધર્મપત્ની સુરજબેન મોરારજી ૨૫૧

બદનાવર

- ૧ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. બેન શ્રાવક સંઘ હ. મિશ્રીલાલ બેન વકીલ ૨૫૧

૨૭

બાલોતરા

૧ શાહ જેઠમલજી હસ્તીમલજી ભગવાનદાસજી ભણુસારી ૨૫૧
બીદડા

૧ શાહ કાનજી શામજીભાઈ ૨૫૧

બીકાનેર

૧ શેઠ લેફ્ટનનજી શેઠીયા ૨૫૪

બેરાબ

૧ શેઠ ગાંગજી કેશવજી (જ્ઞાનભંડાર માટે) ૨૫૧

બેલારી

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ હજીરીમલજી હસ્તીમલજી રાંકા ૨૫૧

બેરમો

૧ શ્રી બેરમો સ્થા. જૈન સંઘ હ. મહેતા નવલચંદ હાકેમચંદ ૨૫૧

બેંગલોર

૧ શેઠ કીશનલાલજી કુલચંદજી સાહેબ ૨૫૧

૨ અજમેરા છોટાલાલ માનસિંઘ ૩૫૧

બોટાદ

૧ સ્વ. વસાણી હરગોવિંદદાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે
હા. તેમનાં ધર્મપત્ની છબલબેન ૨૫૧

બોડેલી

૧ શાહ પ્રવીણચન્દ્ર નરસિંહદાસ સાણુદવાળા ૨૫૧

૨ શાહ ગીરધરલાલ સાકરચંદ ૨૫૧

ભાણુવડ

૧ શેઠ જ્યેંદલાઈ માણેકચંદલાઈ ૩૫૨

૨ સંઘવી માણેકચંદ માધવજી ૨૫૧

૩ શેઠ લાલજી માણેકચંદ લાલપુરવાળા ૨૫૧

૪ શેઠ રામજી જીણુભાઈ ૨૫૧

૫ શેઠ પદમશી ભીમજી ફોફરીયા ૨૫૧

૬ ફોફરીયા ગાંડાલાલ કાનજીભાઈ હા. અ. સૌ. શાંતાબેન વસનજી ૨૫૧

૭ સ્વ. મહેતા પૂનમચંદ ભગવાનના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં
ધર્મપત્ની દિવાળીબેન લીલાધર (ગુંદાવાળા) ૨૫૧

૨૮

ભાવનગર

૧ સ્વ. કુંવરજી બાવાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ લહેરચંદ કુંવરજી ૩૦૧

ભાદરજી

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પટેલ ધુલાભાઈ ઝવેરભાઈ ૨૫૧

લીલવાડા

૧ શ્રી શાંતિ જૈન પુસ્તકાલય હા. ચાંદમલજી માનમલજી સંઘવી ૨૫૧

૨ શેઠ ભીમરાજજી મીશ્રીલાલજી ૩૦૧

ભીમ

૧ ચંપકલાલજી જૈન પુસ્તકાલય હા. શેઠ છોગામલજી માંગીલાલજી ૨૫૧

ભુસાવડ

૧ શેઠ રાજમલજી નંદલાલજી ચેરીટેબલટ્રસ્ટ ૨૫૧

ભોળાય

૧ જ્ઞાન મંદિરના સેક્રેટરી શાહ કુંવરજી ભુવરાજ ૨૫૧

મદ્રાસ

૧ શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી મહેતા ૨૫૧

૨ મહેતા મણીલાલ ભાઈચંદ ૨૫૧

૩ મહેતા સુરજમલ ભાઈચંદ ૨૫૧

૪ મહેતા બાપાલાલ ભાઈચંદ ૨૫૧

મનફેરા

૧ સ્થા. છકોટી સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૧

મનોર

૧ શાહ શેરમલજી દેવીચંદજી જશવંતગઢવાળા

હા. પૂનમચંદજી શેરમલજી બોલ્યા. ૨૫૧

માનકુચા

૧ સ્વ. મહેતા કુંવરજી નાથાલાલના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્ની
કુંવરબાઈ હરખચંદ (માનકુચા સ્થા. જૈન સંઘ માટે) ૨૫૧

માંડવી

૧ શ્રી. સ્થા. છકોટી જૈન સંઘ હા. મહેતા ચુનીલાલ વેલજી ૨૭૭

રહે

માંડવા

- ૧ શ્રી માંડવા સ્થા. જૈન સંઘ
હ. અ. સૌ. કંચનગૌરી રતીલાલ ગોસલ્લીયા (ગઢડાવાળા) ૨૫૧

માલેગાંવ

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. કૃતેલાલ માલુ જૈન ૨૫૧

માંગરોલ

- ૧ શાહ ત્રીભોવનદાસ નાનજી ૨૫૦
૨ દોશી ગીરધરલાલ જેઠાલાલ ૨૫૦

સુખર્ષી તથા પરાંચો

- ૧ સ્વ. શ્રી પિતાશ્રી કુંદનમલજી મોતીલાલજી સુથાના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ મોતીલાલજી બુખરમલજી (અહમદનગરવાળા) ૨૫૧
- ૨ વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ હ. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
- ૩ અ. સૌ. કમળાબેન કામદાર હ. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
- ૪ સ્વ. માતુશ્રી કડવીબાઈના સ્મરણાર્થે હ. તેમના પૌત્ર
હકમીચંદ તારાચંદ દોશી (અંધેરી) ૨૫૧
- ૫ શાહ હરજીવન કેશવજી ૨૫૧
- ૬ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૌ. કાન્તાબેન રમણીકલાલ ૨૫૧
- ૭ સંઘવી હિંમતલાલ હરજીવનદાસ ૨૫૧
- ૮ વોરા પાનાચંદ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હ. ત્રંબકલાલ પાનાચંદ એન્ડ બ્રધર્સ ૨૫૧
- ૯ શાહ રામજી કરશનજી થાનગઢવાળા ૨૫૧
- ૧૦ સ્વ. જટાશંકર દેવજીભાઈ દોશીના સ્મરણાર્થે
હ. રણછોડદાસ (ખાબુલાલ) જટાશંકર દોશી ૩૦૧
- ૧૧ ચેલાણી વલ્લભજી નરસેરામ હ. નરસીંહદાસ વલ્લભજી ૨૫૧
- ૧૨ કપાસી મોહનલાલ શીવલાલ ૨૫૧
- ૧૩ ત્રીભોવનદાસ માનસિયભાઈ દોઢીવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. શાહ હરખચંદ ત્રીભોવનદાસ ૨૫૧
- ૧૪ ખેતાણી મણીલાલ કેશવજી (વડીયાવાળા) ઘાટકોપર ૨૫૧
- ૧૫ સ્વ. પિતાશ્રી શામજી કલ્યાણજી ગોંડલવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. વૃજલાલ શામજી ખાવીસી ૩૦૧
- ૧૬ શાહ રવિચંદ સુખલાલભાઈ (દાદર) ૩૫૧

૩૦

૧૭ સ્વ. આશારામ ગીરધરલાલના સ્મરણાર્થે હા. શાંતિલાલ	
આશારામ વતી જશવંતલાલ શાંતિલાલ	૨૫૧
૧૮ ગાંધી કાંતીલાલ માણેકચંદ	૨૫૧
૧૯ શાહ રવજીભાઈ તથા ભાઈલાલભાઈની કુા. (કાંદીવલી)	૨૫૧
૨૦ અ. સૌ. લાલુખેન હ. રલજીભાઈ શામજી	૨૫૧
૨૧ સ્વ. માતુશ્રી માણેકજીના સ્મરણાર્થે હ. શેઠ વલભદાસ નાનજી	૩૦૧
૨૨ એક સદ્ગૃહસ્થ હ. શેઠ સુન્દરલાલ માણેકલાલ	૨૫૧
૨૩ શેઠ ખુશાલભાઈ ખેંગારભાઈ	૨૫૦
૨૪ શેઠ સુનીલાલ નરભોરામ વેકરીવાળા	૨૫૧
૨૫ સ્વ. માતુશ્રી જો.મતીભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શાહ પોપટલાલ પાનાચંદ	૨૫૧
૨૬ કોટેચા જયંતીલાલ રણછોડદાસ સાંભાગ્યચંદ જીનાગઢવાળા	૨૫૧
૨૭ વોરા ઠાકરશી જસરાજ	૨૫૧
૨૮ કોઠારી સુખલાલજી પુનમચંદજી	(ખારસોડ) ૨૫૧
૨૯ અ. સૌ. ખેન કુંદનગૌરી મનહરલાલ સંઘવી	૨૫૧
૩૦ કોઠારી રમણીકલાલ કસ્તુરચંદભાઈ	૨૫૧
૩૧ દેશાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે	
હ. દલીચંદ અમૃતલાલ દેસાઈ	૨૫૧
૩૨ સ્વ. ત્રીભોવનદાસ વ્રજપાળ વીઝીયાવાળાના સ્મરણાર્થે	
હા. હરગોવિંદદાસ ત્રિભોવનદાસ અજમેરા	૨૫૧
૩૩ તેજભણી કુખેરદાસ પાનાચંદ	૨૫૧
૩૪ શેઠ સરદારમલજી દેવીચંદજી કાવેડીયા (સાદડીવાળા)	૨૫૧
૩૫ શેઠ નેમચંદ સ્વરૂપચંદ ખંભાતવાળા હ. ભાઈ જોહાલાલ નેમચંદ	૨૫૧
૩૬ શાહ કોરશીભાઈ હીરજીભાઈ	૩૦૧
૩૭ શ્રીમતી મણીમાઈ વૃજલાલ પારેખ ચેરીટેબલ ટ્રસ્ટ ફંડ	
હ. વૃજલાલ હર્લંભજી પારેખ	૨૫૧
૩૮ દડિયા અમૃતલાલ મોતીચંદ	(ઘાટકોપર) ૨૫૧
૩૯ દોશી ચત્રભુજ સુન્દરજી	૪૦૧
૪૦ દોશી જીગલકિશોર ચત્રભુજ	૪૦૧
૪૧ દોશી પ્રવિણચંદ ચત્રભુજ	૩૮૧
૪૨ શેઠ મનુભાઈ માણેકચંદ હા. ઝાટકીયા નરભોરામ મોશરજી	૨૫૧
૪૩ શાહ કાંતિલાલ મગનલાલ	૨૫૧

૩૧

૪૪ શેઠ મણીલાલ શુભાખચંદ	ઘાટકોપર ૨૫૭
૪૫ શેઠ હગનલાલ નાનજીભાઈ	૨૫૧
૪૬ શાહ શીવજી માણેકભાઈ	૨૫૧
૪૭ મેસર્સ સવાણી ટ્રાન્સપાર્ટ કું. હા. શેઠ માણેકલાલ વાડીલાલ	૨૫૧
૪૮ શાહ નગીનદાસ કલ્લાણજી (વેરાવળવાળા)	૨૫૧
૪૯ મહેતા સતીલાલ ભાઈચંદ	૨૫૧
૫૦ શાહ પ્રેમજી હીરજી ગાલા	૨૫૧
૫૧ બેન કેશરભાઈ ચંદુલાલ જેશીંગભાઈ શાહ	૨૫૧
૫૨ પારેખ ચીમનલાલ લાલચંદ સાયલાવાળાના ધર્મપત્ની અ. સ્રી. ચંચળબાઈના સ્મરણાર્થે હા. સારાભાઈ ચીમનલાલ	૨૫૧
૫૩ ધી મરીના મોડન હાઈસ્કુલ ટ્રસ્ટ ફંડ હા. શાહ મણીલાલ ઠાકરશી	૨૫૧
૫૪ મહેતા મોટર સ્ટોર્સ હા. અનોપચંદ ડી. મહેતા	૨૫૧
૫૫ શેઠ રસીકલાલ પ્રભાશંકર મોરબીવાળા તરફથી તેમનાં માતૃશ્રી મણીબેનના સ્મરણાર્થે	૩૦૧
૫૬ શ્રીચુત જયવંતલાલ ચુનીલાલ વેરા	૨૫૦
૫૭ શાહ કુવરજી હંસરાજ	૨૫૧
૫૮ દડીયા જેસીંગલાલ ત્રીકમજી	૨૫૧
૫૯ મોદી અલ્લેચંદ સુરચંદ રાજકોટવાળા હા. ડોસાલાલ અલ્લેચંદ	૨૫૧
૬૦ શાહ જેઠાલાલ ડામરશી ધાંગધાવાળા હા. શાહ વાડીલાલ જેઠાલાલ	૨૫૦
૬૧ સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાનજી હીરાચંદ જસાણીના સ્મરણાર્થે હા. લક્ષ્મીચંદભાઈ તથા કેશવલાલભાઈ	૩૫૧
૬૨ સ્વ. પિતાશ્રી શાહ અંબાલાલ પુરુષોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે હા. શાહ બાપાલાલ અંબાલાલ	૨૫૧
૬૩ સ્વ. કસ્તુરચંદ અમરશીના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્ની ઝવેરબેન મગનલાલ વતી જયંતીલાલ કસ્તુરચંદ મશ્કારીયા (ચુડાવાળા)	૨૫૧
૬૪ શેઠ ડુગરશી હંસરાજ વીસરીયા	૨૫૧
૬૫ શાહ રતનશી મોણીશીની કું.	૧૫૧
૬૬ શેઠ શીવલાલ શુભાખચંદ મેવાવાળા	૨૫૧
૬૭ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ	૨૫૧
૬૮ સ્વ. પિતાશ્રી વીરચંદ જેસીંગ શેઠ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે હા. કેશવલાલ વીરચંદ	૨૫૧
૬૯ ચંદુલાલ કાનજી મહેતા	૨૫૧

૩૨

- ૭૦ શ્રી વર્ષમાન સ્થા. જૈન સંઘ
હા. કેશરીમલ્લ અનોપચંદ્ર ગુગલીયા (મલાઈ) ૨૫૧
- ૭૧ સ્વ. પિતાશ્રી પતુભાઈ મોનાભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ કાનભ પતુભાઈ ,, ૨૫૧
- ૭૨ અ. સૌ. પાનભાઈ હા, શેઠ પદમશી નરસિંહભાઈ ,, ૨૫૧
- ૭૩ સ્વ. નાગશીભાઈ સેજપાલના સ્મરણાર્થે રામભ નાગશી ,, ૩૦૧
- ૭૪ સ્વ. ગોડા વણારશી ત્રીલોચનદાસ સરસઈવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. જગજીવન વણારશી ગોડા ,, ૨૫૧
- ૭૫ સ્વ. કાનભ સુજીના સ્મરણાર્થે તથા માતુશ્રી દિવાળીબાઈના
૧૬ ઉપરાસના પારણા પ્રસંગે હા. બ્યંતિલાલ કાનભ ૨૫૧
- ૭૬ શાહ પ્રેમભ માલશી ગંગર ,, ૨૫૧
- ૭૭ શાહ વેલશી જેસીંગભાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની
સ્વ. નાનબાઈના સ્મરણાર્થે ,, ૩૦૧
- ૭૮ સ્વ. પિતાશ્રી રાયશી વેલશીના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ દામભ રાયશીભાઈ ,, ૩૦૧
- ૭૯ શાહ વરજંગભાઈ શીવભાઈ ,, ૨૫૧
- ૮૦ શાહ ખીમભ સુજી પુનંદ્ર ,, ૨૫૧
- ૮૧ અ. સૌ. સમતાબેન શાંતિલલ કે. શાંતિલાલ ઉજ્જમશી શાહ ,, ૨૫૧
- ૮૨ સ્વ. કેશવલાલ વછરાજ કાઠારીના સ્મરણાર્થે સૂરજબેન તરફથી
હા. તનસુખલાલભાઈ ,, ૨૫૧
- ૮૩ સ્વ. પિતાશ્રી હંસરાજ હીરાના સ્મરણાર્થે
હા. દેવશી હંસરાજ કચ્છ ખીદરાવાળા ,, ૨૫૧
- ૮૪ ઘેલાણી પ્રભુલાલ ત્રીકમભ (બોરીવલી) ૨૫૨
- ૮૫ શેઠ ત્રંબકલાલ કસ્તુરચંદ લીમડી અજ્ઞામર શાસનઘડારને ભેટ (માટુંગા) ૨૫૧
- ૮૬ અ. સૌ. બેન રંબનગૌરી કે. શાહ ચંદુલાલ લક્ષ્મીચંદ ,, ૨૫૧
- ૮૭ શાહ નટવરદાર દીપચંદ તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ.
સુશીલાબેનના વર્ષાતપની ખુશાલીમાં ,, ૨૫૧
- ૮૮ દોશી ભીખાલાલ વૃજલાલ પાળીયાદવાળા ,, ૨૫૧
- ૮૯ શાહ ગોપાળભ માનસંગ ,, ૨૫૧

૩૩

૯૦ દોશી કુલચંદ માણેકચંદ	”	૨૫૦
૯૧ શેઠ ચંપકલાલ ચુનીલાલ દાદભાવાળા	”	૨૫૧
૯૨ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ		
હ. શાહ રવિચંદ સુખલાલ	(દાદર)	૨૫૧
૯૩ શાંતિલાલ ડુંગરશી અદાણી	”	૨૫૧
૯૪ શાહ કરશન લખુભાઈ	”	૨૫૧
૯૫ કીસનલાલ સી. મહેતા	શીવ	૨૫૧
૯૬ માતુશ્રી જીવીભાઈના સ્મરણાર્થે		
હ. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાખાવાળા	ગોરેગાંવ	૨૫૧
૯૭ સ્વ. શાહ રાયશી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની		
નેણુભાઈ વતી હ. જેઠાલાલ રાયશી	”	૨૫૧
૯૮ શુશીલાબેન શકરાભાઈ ઠે. નવીનચંદ્ર વસંતલાલ શાહ વિલેપાર્કે		૨૫૧
૯૯ બેન ચંદનબેન અમૃતલાલ વારિયા		૨૫૧
૧૦૦ સ્વ. કાળીદાસ જેઠાલાલ શાહના સ્મરણાર્થે		
હ. સુમનલાલ કાળીદાસ (કાનપુરવાળા)		૩૦૧
૧૦૧ શાહ ત્રીભોવન ગોપાળજી તથા અ. સૌ. બેન કસુબા		
ત્રીભોવન (ચાનગઢવાળા)	શીવ	૨૫૧

સુળી

૧ શેઠ ઉજ્જમશી વીરપાળ હ. શેઠ કેશવલાલ ઉજ્જમશી	૩૦૧

મોરબી

૧ દોશી માણેકચંદ મુંદરજી	૩૫૧

મોઝાસા

૧ શ્રીચુત નાથાલાલ ડી. મહેતા	૨૫૧
૨ શાહ દેવરાજ પેથરાજ	૨૫૦

મહેસાણા

૧ શાહ પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હ. શીવલાલ પદમશી	૨૫૧

ઘાદગીરી

૧ શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બે'કર્સ	૨૫૦

૩૪

રત્નલાભ

- ૧ અનેક લકતજનો તરફથી હ. શ્રીમાન કેશરીમલજી ડક
(શ્રી કેવળચંદ્ર મુનિશ્રીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

રાણપુર

- ૧ શ્રીમતી માતૃશ્રી સમરતબાઈના સ્મરણાર્થે
હ. ડૉ. નરેત્તમદાસ ગુનીલાલ કાપડીયા ૨૫૧
- ૨ સ્વ. પિતાશ્રી લહેરાભાઈ ખીમજીના સ્મરણાર્થે
હ. શેઠ કાળીદાસ લહેરાભાઈ વસાણી ૩૦૧

રાણવાસ

- ૧ શેઠ જવાનમલજી નેમીચંદજી હા. બાબુ રીંગબચંદજી ૩૦૧

રાયચુર

- ૧ સ્વ. માતૃશ્રી મોંઘીબાઈના સ્મરણાર્થે
હ. શાહ શીવલાલ ગુલાબચંદ વઢવાણવાળા ૨૫૧
- ૨ કાળુરામજી ચાંદમલજી સંચેતી ૨૫૧

રાજકોટ

- ૧ વાડીલાલ ડાઈંગ પ્રિન્ટીંગ વર્કસ ૪૦૦
- ૨ શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ ચીત્તલીયા ૨૫૧
- ૩ શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (એન્જનીયર સાહેબ) ૨૫૧
- ૪ શેઠ શાંતિલાલ પ્રેમચંદ તેમનાં ધર્મપત્નીના વર્ષોત્તમ પ્રસંગે ૨૫૧
- ૫ શેઠ પ્રભારામ વીઠ્ઠલજી ૨૫૧
- ૬ બેન સચુબાળ. નૌતમલાલ જસાણી (વર્ષોત્તમની ખુશાલી) ૨૫૧
- ૭ મોહી સૌભાગ્યચંદ મોતીચંદ ૨૫૧
- ૮ બદાણી ભીમજી વેલજી તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ.
સમરતબેનના વર્ષોત્તમ નિમિત્તે ૨૫૧

૩૫

- ૯ દોશી મોતીચંદ ધારશીભાઈ (રીટાયર્ડ એકઝીક્યુટીવ એન્જનીયર) ૨૫૧
 ૧૦ કામદાર ચંદુલાલ જીવરાજ (ધાંધાવાળા) ૨૫૦
 ૧૧ હેમાણી ઘેલાભાઈ સવચંદ ૨૫૧
 ૧૨ દફતરી પ્રભુલાલ ન્યાલચંદ ૨૫૧
 ૧૩ સ્વ. મહેતા દેવચંદ પુરુષોત્તમના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
 હેમકુંવરભાઈ તરફથી હ. જયંતીલાલ દેવચંદ મહેતા ૨૫૧
 ૧૪ પારેખ શીવલાલ જુઝાખાઈ મોખાસાવાળા હ. અ. સૌ. કંચનબેન ૨૫૨

રાખર

- ૧ પૂજ્ય વાલજીભાઈ ન્યાલચંદભાઈ ૨૫૧

રામપુરા

- ૧ શેઠ તેજમલજી મનોહરલાલજી બેંકર ૩૫૧

રાવટી

- ૧ શેઠ મિયાચંદજી જુહારમલજી કટારિયા ૩૫૧

લખતર

- ૧ શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હ. શાંતિલાલ રાયચંદ શાહ ૨૫૧
 ૨ ભાવસાર હરજીવનદાસના સ્મરણાર્થે
 હ. ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
 ૩ શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે
 હ. ભાઈ અમૃતલાલ તલકશી ૨૫૧
 ૪ શાહ યુનીલાલ માણેકચંદ ૨૫૧
 ૫ શાહ બદવજી ઓઘડભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શાંતિલાલ બદવજી ૨૫૧
 ૬ દોશી ઠાકરશી શુલાખચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
 સમરત બહેન તરફથી હ. જયંતિલાલ ઠાકરશી ૨૫૧

લાલપુર

- ૧ નેમચંદ સવજી મોદી હ. ભાઈ મગનલાલ ૨૫૧
 ૨ શેઠ મુલચંદ પોપટલાલ હા. મણીલાલ તથા જેર્સીંગભાઈ ૨૫૧

લાખેરી

- ૧ માસ્તર જેઠાલાલ મોનજીભાઈ હ. અમૃતલાલ જેઠાલાલ
 (સીવીલ એન્જનીયર સાહેબ) ૨૫૧

લાકડીયા

- ૧ શ્રી લાકડીલા સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ રતનશી કરમજી ૨૫૧

૩૬

લીંબડી (સૌરાષ્ટ્ર)

૧ શાહ ચક્રભાઈ વખતચંદ ૨૫૧

લીંબડી (પંચમહાલ)

૧ શાહ કુંવરજી ગુલાબચંદ ૨૫૧

૨ છાજેડ ધાસીરામ ગુલાબચંદ ૨૫૧

૩ શેઠ વીરચંદ પન્નાલાલજી કરભાવટ ૨૫૧

૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ શાંતીલાલ ગુલાબચંદ ૩૫૧

લોનાવાલા

૧ શેઠ ધનરાજજી મુલચંદજી મુથા ૨૫૧

લુધયાના

૧ બાબુ રાજેન્દ્રકુમાર જૈન દિલ્હીવાળા ૨૫૧

વડવાણુ શહેર

૧ શેઠ દીલીપકુમાર સવાઈલાલ ઠેંગ શાહ સવાઈલાલ વ્રંખડલાલ ૨૫૧

૨ કામદાર મગનલાલ ગોઠલદાસ હ. રતીલાલ મગનલાલ ૨૫૧

૩ સંઘવી મુળચંદ બેચરભાઈ હ. જીવણલાલ ગફલદાસ ૨૫૧

૪ શેઠ કાંતિલાલ નાગરદાસ ૨૫૧

૫ વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ ૨૫૧

૬ સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ ૨૫૧

૭ શાહ દેવશીભાઈ દેવકરજી ૨૫૧

૮ વોરા હોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૧

હ. વોરા નાનચંદ શીવલાલ ૨૫૧

૯ વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૧

હ. વોરા પાનાચંદ ગોખરદાસ ૨૫૧

૧૦ દોશી વીરચંદ મુરચંદ હા. દોશી નાનચંદ ઉજમશી ૨૫૧

૧૧ સ્વ. વોરા માણીલાલ મગનલાલ તથા વોરા ચત્રભુજ માણીલાલ ૨૫૧

૧૨ શાહ વાઠીલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧

૧૩ કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલતાં ધર્મપત્ની ૨૫૧

અ. સૌ. કમળાજેન રંજુનવાલા ૨૫૧

૧૫ શ્રી વૃજલાલ સુખલાલ ૨૫૧

વડોદરા

૧ કામદાર કેશવલાલ હિમતરામ પ્રોફેસર ૨૫૧

૩૭

- ૨ વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ શાહ ૨૫૧
૩ સ્વ. પિતાશ્રી ફકીરચંદ પુંજભાઈના સ્મરણાર્થે ૨૫૧
હા. શાહ રમણલાલ ફકીરચંદ ૨૫૧

વડીયા

- ૪ શેઠ ભવાનભાઈ કાળાભાઈ પંચમીયા ૨૫૧

વલસાડ

- ૧ શાહ ખીમચંદ મુલતીભાઈ ૨૫૧

વણી

- ૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્ની સ્વ. ચંચળબેન તથા
પુત્રીબેનના સ્મરણાર્થે હા. મનહરલાલ નાનાલાલ મહેતા ૨૫૧

વટામણુ

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પટેલ ડાયાભાઈ હંલુભાઈ ૨૫૧

વાંડગાંવ

- ૧ શેઠ માણેકચંદજી રાજમલજી બાફળા ૨૫૧

વાંકાનેર

- ૧ ખઠોરીયા કાંતીલાલ ત્રંબકલાલ ૨૫૧
૨ દફતરી ચુનીલાલ પોપટભાઈ મોરખીવાળા
હા. પ્રાણુલાલ ચુનીલાલ દફતરી ૨૫૧

વીંછીયા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. અજમેરા રાયચંદ મજપાળ ૨૫૧

વીરમગામ

- ૧ માસ્તર વીઠલભાઈ મોદી ૨૫૧
૨ શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ ૨૫૧
૩ શાહ મણીલાલ જીવણલાલ શાહપુરવાળા ૨૫૧
૪ શાહ અમુલખ નાગરદાસનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. બેન લીલાવતીના
વર્ષાતપ નિમિત્તે હા. શાહ કાંતિલાલ નાગરદાસ ૩૦૦
૫ સ્વ. શેઠ ઉજ્જમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે હા. ચુનીલાલ નાનચંદ ૨૫૧
૬ સ્વ. શેઠ મણિલાલ લક્ષ્મીચંદ આરાધોડાવાળાના સ્મરણાર્થે
તેમના પુત્રો તરફથી હ. ખીમચંદભાઈ ૨૫૧
૭ સ્વ. શેઠ હરિલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. અનુભાઈ ૨૫૧

૩૮

- ૮ સંઘવી જેચંદલાઈ નારણદાસ ૨૫૧
- ૯ સ્વ. શાહ વેલગીલાઈ સાકરચંદ કન્યાસગહવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. ચીમનલાલભાઈ ૨૫૧
- ૧૦ પારંગ મણીલાલ ટોકરશી લાતીવાળા (મોટી ઝેનના સ્મરણાર્થે) ૨૫૧
- ૧૧ શાહ નારણદાસ નાનજીભાઈના પુત્ર વાડીલાલભાઈનાં ધર્મપત્ની
અ. સૌ. નારંગીઝેનના વર્ષાતપ નિમિત્તે હ. શાંતીલાલ નારણદાસ ૨૫૧
- ૧૨ સ્વ. છબીલાદાસ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
કમળાઝેન તરફથી હ. મંજુલાકુમારી ૨૫૧
- ૧૩ શ્રી સ્થા. જૈન શ્રાવિકા સંઘ હ. રંભાઝેન વાડીલાલ ૨૫૧
- ૧૪ સ્વ. ત્રિભોવનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. ચંચળઝેનના સ્મરણાર્થે
હ. ડો. હિમતલાલ મુળલાલ ૨૫૧
- ૧૫ શાહ મુળચંદ કાનજીભાઈ હ. શાહ નાગરદાસ ઝોઘડભાઈ ૨૫૧
- ૧૬ શેઠ મોહનલાલ પિતાંગરદાસ હ. ભાઈ કેશવલાલ તથા મનમુખલાલ ૨૫૧
- ૧૭ શ્રીમતી હીરાઝેન નથુભાઈના વર્ષાતપ નિમિત્તે
હ. નથુભાઈ નાનચંદ શાહ ૩૦૧
- ૧૮ શેઠ મણીલાલ શીવલાલ ૨૫૧
- ૧૯ સ્વ. મણીચાર પરસોતમદાસ મુંદરજીના સ્મરણાર્થે
હ. સાકરચંદ પરસોતમદાસ શાહ ૨૫૧
- ૨૦ સ્વ. મોહનદાસ ગુહાભાઈના સ્મરણાર્થે હ. તેમનાં ધર્મપત્ની
નાથીભાઈ તરફથી હ. શંકરલાલ તથા શાંતીલાલ ૨૫૧

વીજયનગર

- ૧ શ્રી વર્ધમાન સ્વ. સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ
હ. ઊંટુમલ અગ્નિતગ્નિહ ૩૫૧

વેશવળ

- ૧ શાહ કેશવલાલ જેચંદલાઈ ૨૫૧
- ૨ શાહ ખીમચંદ સૌભાગ્યચંદ ૨૫૧
- ૩ સ્વ. શેઠ મદનજી જેચંદલાઈના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
લાડકુંવરભાઈ તરફથી હ. ધીરજલાલ મદનજી ૨૫૧
- ૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ શોભેચંદ કરશનજી ૨૫૧
- ૫ શાહ હરકિશનદાસ દુલચંદ કાનપુર વાળા ૨૫૧

સરા

- ૧ શ્રી સરા સ્થા. જૈન સંઘ હ. દોશી પનાચંદ સોમચંદ ૨૫૧

૩૯

સાણુંદ

૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ	૩૦૧
૨ અ. સૌ. ચંપાબેન હા. દોશી જીવરાજ લાલચંદ	૨૫૧
૩ પટેલ મહામુખલાલ ડોસાભાઈ	૨૫૧
૪ શાહ સાકરચંદ કાનજીભાઈ	૨૫૧
૫ પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીંબડીવાળાના સ્મરણાર્થે	
હા. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી	૨૫૧
૬ પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે	૨૫૧
હા. પારેખ ભીખાલાલ નેમચંદ	
૭ સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે હા. જયતિલાલ નારણદાસ	૨૫૧
૮ શાહ કરતુરચંદ હરજીવનદાસ	
હા. ડો માણેકલાલ કરતુરચંદ શાહ	
૯ શેઠ મોહનલાલ માણેકચંદ ગાંધી સુલવાળા તરફથી	
તેમનાં ધર્મપત્ની મંછાબેન લલ્લુભાઈના સ્મરણાર્થે	૩૦૧
૧૦ સંઘવી કાન્તિલાલ હરખચંદ	૩૦૧
૧૧ શાહ ભીખાલાલ નાગરદાસ	૨૫૧

સાલબની

૧ દોશી સુનીલાલ કુલચંદ	૨૫૦

સાદડી

૧ શેઠ દેવરાજજી જીતમલજી પુનમીયા	૨૫૧

સાસવડે

૧ ચંદનમલજી મુથાનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. રંગુભાઈ મુથા તરફથી	
હા. અમરચંદજી મુથા	૨૫૧

સિંગાપુર

૧ દોશી વનેચંદ વછરાજ	૨૫૧

સુરત

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ રતિલાલ લલ્લુભાઈ	૨૫૧
૨ શ્રીશ્રુત કલ્યાણચંદ માણેકચંદ હડાલાવળા	૨૫૧
૩ શ્રી હરીપુરા છટોટી સ્થા. જૈન સંઘ હા. ખામુલાલ છોટાલાલ	૨૫૧

સુરેન્દ્રનગર

૧ શેઠ ચાંપસીભાઈ મુખલાલ	૨૫૧
૨ ભાવસાર સુનીલાલ પ્રેમચંદ	૨૫૧

૪૦

૩ ૨૧. કેશવલાલ મુળજીભાઈનાં ધર્મપત્ની અમરતબાઈના

સ્મરણાર્થે હા. ભાઈલાલ કેશવલાલ શાહ

૪ શાહ ન્યાલચંદ હરખચંદ

૨૫૧

૫ શાહ વાડીલાલ હરખચંદ

૨૫૧

૬ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ

૩૦૧

સુવર્ધ

૧ સાવળા શામજી હીરજી તરફથી સદાનંદી જૈન મુનિશ્રી છોટાલાલજી

મહારાજના ઉપદેશથી સુવર્ધ સ્થા. જૈન સંઘ જ્ઞાનભંડારને ભેટ

૨૫૧

સંગેલી

૧ શાહ લુણાજી શુક્લાચંદલાઈ

૨૫૧

૨ શ્રી. સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ પ્રેમચંદ દલીચંદ

૨૫૧

સોજત

૧ અ. સૌ. ઘીસીબેન લાલચંદજી મહેતા (ફતેહનગર સંચને ભેટ)

૩૫૧

હારીજ

૧ શાહ અમુલખ મુળજીભાઈ હા. પ્રકાશચંદ્ર અમુલખભાઈ

૩૦૧

૨ ૨૧. બેન ચન્દ્રકાંતાના સ્મરણાર્થે હા. શાહ અમુલખ મુળજીભાઈ

૩૦૧

હાટીના માળીયા

૧ શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ

૨૫૦

૨ શ્રીમતી આનંદગૌરી ભગવાનદાસના સ્મરણાર્થે

હા. તેમનાં નાનાબેન અ. સૌ. મંજુલાબેન ભગવાસદાસ ગાંધી

૨૫૧

*

તા. ૩૧-૧૨-૬૧ સુધીના મેમ્બરોની સંખ્યા

૧૭ આઘ સુરખીશ્રી

૨૫ સુરખીશ્રી

૧૨૩ સહાયક મેમ્બરો

૫૮૪ ક્રાઇફ મેમ્બરો

૫૪ બીજા કલાસના જુનો મેમ્બરો

૮૦૩

દરેક દાતાઓનો સમિતિ તરફથી આભાર માનુ છું.

લી. સેવક,

રાજકોટ તા. ૩૧-૧૨-૬૧

સાફરચંદ ભાઈચંદ શેઠ

મંત્રી,

॥ श्रीबीतरागाय नमः ॥

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलाल-व्रति-विरचितया
सुदर्शिन्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतं

श्री-प्रश्नव्याकरणसूत्रम्

(मङ्गलाचरणम्)

(इन्द्रवज्राभेद-बुद्धिप्लुत्तम्)

श्रीसिद्धराजं स्थिरसिद्धिराज्य-

प्रदं गतं सिद्धिगतिं विशुद्धम् ।

निरञ्जनं शाश्वतसौधमध्ये,

विराजमानं सततं नमामि ॥१॥

(शार्दूलविक्रीडितप्लुत्तम्)

नानालब्धिधरं सुरासुरनुतं सन्देहमोहच्छिदं-

दीप्तं शासनभास्करं गणधरं शुद्धं विपद्धारकम् ।

ज्ञाताशेषविशेषवस्तुनिचयं तेजस्विनं मुक्तिगं,

वन्दे तं सततं विशुद्धचरितं श्री गौतमं सर्वथा ॥२॥

“ प्रश्नव्याकरणसूत्रका हिन्दी अनुवाद ”

मङ्गलाचरण—

मैं उन सिद्ध भगवन्तको नित्य नमस्कार करता हूँ कि जो निरञ्जन-
अष्टकर्ममल रूप अंजन से सर्वथा विहीन-हो चुके हैं और इसी कारण
जो मुक्तिरूप सौधके मध्य में विराजमान हो रहे हैं । जिनके सम्मार्गपर
चलने से जीवोंको स्थिर सिद्धरूपी राज्यकी प्राप्ति हो जाती है । जो स्वयं
अत्यंत विशुद्ध बन चुके हैं । और सिद्धि नामक गति प्राप्तकर चुके हैं ॥१॥

प्रश्नव्याकरणसूत्रको गुजराती अनुवाद

भंगणायर—

હું તે સિદ્ધ ભગવાનોને હંમેશા નમસ્કાર કરું છું કે જે નિરંજન અષ્ટ-
કર્મભરૂપ અંજનથી તદ્દત રહિત થઈ ગયાં છે, અને એ જ કારણે જે મુક્તિરૂપ
ભવનની મધ્યમાં વિરાજમાન થયેલ છે, જેમને બતાવેલ સન્માર્ગે વાલવાથી
જીવોને સ્થિર સિદ્ધિરૂપી રાજ્યની પ્રાપ્તિ થાય છે. જેઓ પોતે અત્યંત વિશુદ્ધ
બની ગયેલ છે, અને સિદ્ધિ નામની ગતિને પ્રાપ્ત કરી ચૂક્યાં છે. ॥ ૧ ॥

પ્ર ૧

(દ્રુતવિલમ્બિતવૃત્તમ્)

કમલકોમલમઝ્જુપદામ્બુજં—

વિમલબોધિદબોધવિબોધકમ્ ।

મુલ્લમુશોમિસદોરકવલ્લિકં

ગુહ્વરં સદયં પ્રણમામ્યહમ્ ॥૩॥

(અનુદ્રુતવૃત્તમ્)

જૈનીં સરસ્વતીં નત્વા, વૃત્તિરેવા મુદર્શિની ।

પ્રશ્નવ્યાકરણે સૂત્રે, ઘાસિલાલેન તન્યતે ॥૪॥

મેં उन गौतम गणधर को मन, वचन और काय से नित्य नमस्कार करता हूँ कि जिन्होंने तपस्या के प्रभाव से अनेक लब्धियों को प्राप्त कर लिया है । जिन्हें सुर और असुर आकर नमस्कार करते हैं, जीवों के संदेह और मोह जिनके प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं, जो शरीर की कान्ति से दीप्त बने रहते हैं, जो शासन के भास्कर हैं भगवान् महावीर प्रभु के जो अन्तिम गणधर हुए हैं, रागादिक दोषों से सर्वथा विशुद्ध बन चुके हैं, जीवों की विपत्ति को जो नाश करने वाले हैं, केवलज्ञान के प्रभाव से जिन्होंने समस्त जीवादिक वस्तुओं को अच्छी तरह से जान लिया है, जो तेजस्वी हैं तथा जो मुक्ति को प्राप्त कर चुके हैं ॥२॥

મેં उन દયાળુ ગુરુવર કો નમસ્કાર કરતા હું કે જિનકે મનોહર ચરણકમલ કમલ કે જૈસે કોમલ છે ઓર જો વિમલ બોધિકો દેને વાલે બોધ કે દાતા છે તથા જિનકા મુલ્લ સદા સદોરકમુલ્લવલ્લિકા સે ચિરાજિત રહતા છે ॥૩॥

હું તે ગૌતમ ગણધરને મન, વચન અને કાયાથી નમસ્કાર કરું છું કે જેમણે તપસ્યાના પ્રભાવથી અનેક લાભિયોને પ્રાપ્ત કરી છે, સુર અને અસુરો આવીને જેમને નમન કરે છે, જેમના પ્રભાવથી જીવોના સંદેહ તથા મોહનો નાશ થઈ જાય છે, જે શરીરની કાંતિથી બાહ્યવસ્થામાં રહે છે, જે શાસનના દિવાકર સમાન છે, જે ભગવાન મહાવીરના અન્તિમ ગણધર છે, રાગાદિ દોષોથી જે તદ્દન વિશુદ્ધ બની ચૂક્યા છે, જીવોની મુશ્કેલીઓને જે દૂર કરનારા છે, કેવળજ્ઞાનના પ્રભાવથી જેમણે સમસ્ત જીવાદિક વસ્તુઓને સારી રીતે જાણી લીધી છે, જે તેજસ્વી છે તથા જેમણે મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લીધી છે. ॥ ૨ ॥

હું તે દયાળુ ગુરુવરને નમસ્કાર કરું છું કે જેમનાં મનોહર ચરણ, કમળનાં સમાન કોમળ છે, અને જે વિમળજ્ઞાન દેનાર બોધના દાતા છે, તથા જેમનું મુખ સદા દોરા સહિતની મુદપત્તિથી શોભે છે. ॥ ૩ ॥

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૧ મજ્જલાવરણમ્

૩

इह खल्वतिविचित्राकारेऽपारेऽसारे संसारे धनादिभिर्विविधोपायैः सुखार्थं प्रयत्नमाना अपि जना न केऽपि वास्तविकं सुखमनुभवन्ति किमत्र परिहारनिदानमिति, सति विचारसंचारे मोक्ष एव निरतिशयसुखसाधनमिति सिद्धयति । आसूक्ष्मैकेन्द्रियः सकलोऽपि लोकः सुखाभिलाषी दुःखविमुखश्च दृष्टोऽस्तस्य

તીર્થંકર પ્રભુની વાણીનો નમન કર મૈં ઘાસીલાલ હસ પ્રશ્નવ્યાકરણ સૂત્ર પર યહ સુદર્શિની નામ કી ટીકા બનાતા હું ॥૪॥

હસ અતિવિચિત્રતાકાર અનિયત સ્વભાવવાળે અપાર અસાર સંસાર મૈં ધન આદિ વિવિધ ઉપાયોં સે સુખપ્રાપ્તિ કે નિમિત્ત સમસ્ત સંસારી જીવ પ્રયત્ન કરતે રહતે હૈં ફિર મી યહાં સંસાર મૈં કોઈ મી જીવ વાસ્તવિક સુખ કા અનુભવ નહીં કર પાતા હૈં તો હસકા કારણ ક્યા હૈં જબ યહ વિચાર કિયા જાતા હૈં તો માલૂમ દેતા હૈં કિ યહાં પર જિતના મી સુખ હૈં વહ વાસ્તવિક સુખ નહીં હૈં-સુખાભાસ હૈં કારણ વહ હન્દ્રિય ઓર મનસે ઉત્પન્ન હોતા હૈં । વાસ્તવિક સુખ તો મોક્ષમૈં હી હૈં, ક્યોં કિ વહ સુખ નિરતિશયરૂપ આત્યંતિક હૈં । ત્રૈકાલિક દુઃખકે અત્યંતાભાવસે વિશિષ્ટ જો પરમાનંદ સદ્ભાવરૂપતા હૈં વહી નિરતિશયતા હૈં । હસ પ્રકાર કા નિરતિશયરૂપ જો સુખ હૈં વહ સંસાર મૈં નહીં હૈં । ક્યોં કિ સાંસારિક સુખ દુઃખાનુષક્ત હૈં । ઓર મોક્ષ કા સુખ દેસા નહીં હૈં । હસલિયે સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય સે લેકર સમસ્ત પંચેન્દ્રિયતક કે પ્રાણી સુખ કે અભિ-

તીર્થંકર પ્રભુની વાણીને નમન કરીને હું, 'ઘાસિલાલભુનિ' આ પ્રશ્નવ્યાકરણ સૂત્ર પર આ 'સુદર્શિની' નામની ટીકા બનાવું છું. ॥ ૪ ॥

આ અતિ વિચિત્રાકાર, અનિયત સ્વભાવવાળા, અપાર, અસાર સંસારમાં ધન આદિ વિવિધ ઉપાયોથી સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે સમસ્ત સંસારી એવો પ્રયત્ન કરતા રહે છે, છતાં પણ આ સંસારમાં કોઈપણ એવ વાસ્તવિક સુખનો અનુભવ કરી શકતો નથી. તેનું શું કારણ છે, એવો વિચાર બ્યારે કરવામાં આવે છે ત્યારે એવું લાગે છે કે આ સંસારનાં જેટલાં સુખ છે તે વાસ્તવિક સુખ નથી, પણ સુખનો આભાસ જ છે. કારણકે તે હન્દ્રિય અને મનથી ઉત્પન્ન થાય છે. વાસ્તવિક સુખ તો મોક્ષમાં જ છે. કારણકે તે સુખ નિરતિશયરૂપ છે. ત્રૈકાલિક દુઃખના અત્યંત અભાવવાળી જે પરમાનંદ સદ્ભાવરૂપતા છે, તેને જ નિરતિશયતા કહે છે. એવા પ્રકારનું નિરતિશયરૂપ જે સુખ છે તે સંસારમાં મળતું નથી. કારણકે સાંસારિક સુખ દુઃખાનુષક્ત છે. મોક્ષનું સુખ તેવું નથી. તેથી જ સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિયથી લઈને પંચેન્દ્રિય સુધીનાં સમસ્ત પ્રાણી સુખની

નિરતિશયસુખસાધનં નિર્ણેતવ્યમ્ । નિરતિશયં ચ સુખં ત્રૈકાલિકદુઃસ્વાસ્થ્યન્તાભાવ-
 વિશિષ્ટપરમાનન્દસદ્ભાવરૂપં પારમાર્થિકમેવ ન ત્વૈદિકં, તસ્યેન્દ્રિયનોદ્દન્દ્રિયસંયો-
 ગજન્યતયોત્પત્તિવિનાશયોરવિનાશભાવનિયમાદુઃસ્વાત્પક્તવાત્, મરુમરીચિચયો-
 ષ્વાવચજલતરજ્જભક્તિભ્રમવદસારત્વાન્તેતિ મોક્ષસ્યૈવ પ્રાધાન્યમામનન્તિ મહામુ-
 નયઃ, તસ્માદાત્યન્તિકસુખમધિજિગમિષુણા મોક્ષાર્થે યતિતત્ત્વમ્ । મોક્ષશ્ચ જ્ઞાન-
 ક્રિયાસેવનેનૈવ ભવતીતિ જ્ઞાનક્રિયે એવ તત્કારણં સિવાધયિષિતવ્યમ્, અન્યથા
 લાપિ ઔર દુઃખ સે વિમુક્ત્વ હોતે હુપ દિલ્લાઈ પડતે હૈ । અતઃ યહ
 નિર્ણય કરના આવશ્યક હો જાતા હૈ કિ ઉસ નિરતિશય સુખ કા
 સાધન કયા હૈ ? જચ ઇસ પ્રકાર કા વિચાર મહારાઈ કે સાથ કિયા
 જાતા હૈ તો યહી નિશ્ચિત્ત હોતા હૈ કિ ઉસ સુખ કા સાધન કેવલ એક
 મોક્ષ હી હૈ । સંસાર નહીં હૈ—ક્યોં કિ સંસાર જન્ય જો સુખ હોતા હૈ
 વહ ઇન્દ્રિય ઔર મન કે સંયોગ સે જન્ય હોને કે કારણ ઉત્પત્તિ ઔર
 વિનાશ કા અવિનાશી હોતા હૈ ઔર ઇસલિયે વહ દુઃખ સે બીચ ૨
 મેં મિશ્રિત રહા કરતા હૈ । અતઃ મૃગતૃણા મેં ઝૂંચી નીચી જલ તરંગો
 કે વિભ્રમકી તરહ યહ અસાર હોતા હૈ । ઇસલિયે નિરતિશય સુખ કા
 સાધન સંસાર નહીં હો સકતા હૈ—કેવલ એક મોક્ષ હી હો સકતા હૈ ।
 એસી હી મહામુનિયોંકી માન્યતા હૈ । ઇસલિયે જો પ્રાણી ઇસ નિરતિશય
 સુખકો પ્રાપ્ત કરનેકે અભિલાષો હૈં ઝહેં મોક્ષ પ્રાપ્તિમેં હી પ્રયત્ન કરના
 ચાહિયે, મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ જીવોંકો જ્ઞાન ઔર ક્રિયા કે સેવન કરનેસે હી
 હોતી હૈ । અતઃ જ્ઞાન ઔર ક્રિયા યે દોનોં હી ઉસકે કારણરૂપસે સાધનકે

ધન્યાવાણાં અને દુઃખથી વિમુખ થતાં દેખાય છે. તેથી તે નિર્ણય કરવો જરૂરી
 થઈ પડે છે કે તે નિરતિશય સુખનું સાધન કયું છે? બ્યારે તે પ્રકારનો જોડો
 વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે એ જ નિશ્ચય પર અવાય છે કે તે સુખનું
 સાધન કેવળ મોક્ષ જ છે, સંસાર નથી. કારણકે એ સુખ સંસારજન્ય હોય છે
 તે ઇન્દ્રિય અને મનના સંયોગથી પેદા થયેલ હોવાથી ઉત્પત્તિ અને નાશને
 પ્રાપ્ત કરનારું હોય છે, અને તેથી તે વચ્ચે વચ્ચે દુઃખથી મિશ્રિત રહ્યાં કરે છે.
 તેથી તે મૃગજળનાં ઊંચાં નીચાં જળતરંગોના વિભ્રમનાં એવું અસાર હોય છે.
 તે કારણે નિરતિશય સુખનું સાધન સંસાર થઈ શકતો નથી પણ એક માત્ર
 મોક્ષ જ તેનું સાધન બની શકે છે. એવી જ મહામુનિયોની માન્યતા છે. તેથી
 એ પ્રાણીને તે નિરતિશય સુખ પ્રાપ્ત કરવાની અભિલાષા હોય તેમણે મોક્ષ
 પ્રાપ્તિ માટે જ પ્રયત્ન કરવા જોઈએ. એવાને મોક્ષની પ્રાપ્તિ જ્ઞાન અને ક્રિયાના
 સેવનથી જ થાય છે. તેથી જ્ઞાન અને ક્રિયા એ બન્ને તેના કારણરૂપ હોવાથી

सुदृशिनी टीका अ० १ अवतरणिका

4

मोक्षस्याप्यभावात् सुखानामेदृशप्रयाणं स्यात् । सत्येव हि ज्ञाने इष्टानिष्टोपादान-
हानोपायविचारसञ्चारो भवति । तदभावे प्राणिनामास्रवेधेन नित्यं प्रवृत्तिः
स्यात् तस्मात् ज्ञानं परमादरणीयम् । तच्चात्र श्रुतरूपं गृह्यते स्वपरोपकारित्वात् ।
तदत्र प्रश्रव्याकरणमेव ।

ननु शास्त्रस्यादौ मध्येऽन्ते च कृतं महलं निर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थं भवति,
अध्वेतारश्च शास्त्रधारणावन्तः प्रथमे, शास्त्रं च शिष्योपस्थित्यपरम्परामाभिजायते-
शिष्टाचारविषयत्वाच्च भंगलं कुतो न कृतमिति चेदुच्यते-

अत्र भगवदुक्तमाश्वाञ्ज्योभूतशास्त्रस्यैव मङ्गलरूपत्वात् मङ्गलमाचरितमेव तथापि शृणु-अस्मिन् शास्त्रे आदिमङ्गलं “जंजू इणमो” इति भगवदामन्त्रणेन, लिये इष्ट हैं। अन्यथा मोक्षका अभाव हो जावेगा और इस तरह से फिर सुख की प्राप्ति होना बहुत कठिन बात हो जावेगी। ज्ञान के होने पर ही इष्ट और अनिष्ट पदार्थों के उपादान (ग्रहण) और त्याग करने में जीवों की बुद्धि लगती है। ज्ञान के अभाव में नहीं उस समय तो केवल आश्रयों में ही बे रोकटोक प्रवृत्ति होती रहती है। इसीलिये ज्ञान को परम आदरणीय कहा गया है। ऐसा वह ज्ञान स्व और पर का उपकारक होने के कारण यहां श्रुतरूप ग्रहण किया गया है। वह श्रुतरूप ज्ञान यहां प्रश्न व्याकरण ही है।

शंका—शास्त्र की आदि में, मध्य में, और अंत में किया गया मंगलाचरण निर्विघ्नरूप से उसकी परिसमाप्ति के लिये होता है—तथा जो उस शास्त्र के अध्येता होते हैं वे उस शास्त्र की धारणा से मुशोभित रहा करते हैं और इस तरह से वह शास्त्र शिष्योपशिष्य परंपरागामी बन जाता है। तथा शास्त्र की आदि में, मध्य में एवं अन्त में मंगला-

સાધન તરીકે યોગ્ય છે. નહીં તો મોક્ષની પ્રાપ્તિ થશે નહીં અને એમ થવાથી મુખની પ્રાપ્તિ ઘણી મુશ્કેલ બની જશે. જ્ઞાન હોય તો જ કન્ટ અને અનિષ્ટ પદાર્થોના ઉપાદાન-(અદાલત) અને ત્યાગ કરવા બાબતમાં જીવોની મુદ્દિ કામ કરી શકે છે, જ્ઞાન ન હોય તો નહીં. ત્યારે તો (તે જ્ઞાનના અભાવે) ફક્ત આસ-વોમાં જ રોકેટોક વિના પ્રવૃત્તિ આદ્યા કરે છે. તે કારણે જ્ઞાનને અત્યંત આદરણીય બતાવ્યું છે. એવું તે જ્ઞાન સ્વ અને પરતું ઉપકારક હોવાથી અહીં શ્રુતરૂપે અદાલત કરવામાં આવેલ છે. અહીં પ્રશ્નવાકરણ જ તે શ્રુતજ્ઞાન છે.

શકા-શાસ્ત્રની શરૂઆતમાં, મધ્યમાં, અને અન્તે કરવામાં આવેલ મંગળાચરણ નિર્વિઘ્ને તેની પરિચમાસિને માટે હોય છે. તથા જેઓ તે શાસ્ત્રનું અધ્યયન કરનાર હોય છે તેઓ તે શાસ્ત્રની ધારણાથી મુશોભિત રહ્યા કરે છે, અને એ રીતે તે શાસ્ત્ર શિષ્યોપશિષ્યની પરંપરા મુખી પહોંચે છે તથા શાસ્ત્રના આરંભમાં,

૬

પ્રશ્નાચારકેન

મધ્યમજ્ઞાન પ્રથમસંવરદ્વારે અર્હિસા ભગવતીવર્ણનેન અન્યમજ્ઞાન ચ “નાયપુત્રેણ વીરેણ ભગવત્યા પયાસિયં” ઇત્યાલાપકેન ચ વિજ્ઞેયમ્, ઇત્યલં વિસ્તરેણ ।

અથ પ્રશ્નવ્યાકરણમિત્યસ્ય કઃ શબ્દાર્થઃ ? ઉચ્યતે પ્રશ્નાઃ=અદ્વિગુષ્ઠાદિવિદ્યાઃ, તે વ્યાક્રિયન્તે=પ્રતિપાદ્યન્તે યસ્મિન્નિતિ પ્રશ્નવ્યાકરણમ્, અત્ર-અષ્ટોત્તરં પ્રશ્નશતમ્ । અષ્ટોત્તરમપ્રશ્નશતમ્ । અષ્ટોત્તરં પ્રશ્નાઽપ્રશ્નશતમ્ । યા વિદ્યાઃ, મન્ત્રા વા પૃષ્ઠા એવ ચરણ કરના એસા શિષ્ટ પુરુષોં કા આચાર ખી હૈ-તો ફિર શાસ્ત્રકાર ને હસ સૂત્ર મેં મંગલાચરણ કયોં નહીં કિયા હૈ ?

ઉત્તર—હસ પ્રકાર કી આશંકા ઠીક નહીં હૈ, કયોં કિ ભગવાન્ દ્વારા કહા ગયા યહ શાસ્ત્ર સાક્ષાત્ મંગલ સ્વરૂપ હૈ અતઃ વહ સ્વયં હી મંગલરૂપ હૈ અતઃ સ્વયં મંગલરૂપ બને હુએ શાસ્ત્ર મેં મંગલરૂપતા હોને સે શાસ્ત્રકાર ને ઉસે નિવદ્ધ કરને કી અપેક્ષા મંગલાચરણ કિયા હી હૈ । ફિર ખી સુનો-શાસ્ત્રકાર ને હસ શાસ્ત્ર મેં “જંબૂ ઇળમો” હસ ભગવાન્ કે આમંત્રણ સે આદિ મંગલ, પ્રથમ સંવર દ્વાર મેં ભગવતી અર્હિસા કા વર્ણન રૂપ મધ્યમંગલ, ઓર “નાયપુત્રેણ વીરેણ ભગવત્યા પયાસિયં” અન્તમેં હસ પ્રકાર કે કથન સે અન્યમંગલ કિયા હૈ, એસા જાનના ચાહિયે । અથ હસ વિષય મેં ઓર અધિક કહનેસે કયા લાભ ।

શંકા—“પ્રશ્નવ્યાકરણ” હસકા શબ્દાર્થ કયા હૈ ?

ઉત્તર—અંગુષ્ઠ આદિ વિદ્યાઓં કા નામ પ્રશ્ન હૈ । યે પ્રશ્ન હસમેં વિસ્તાર પૂર્વક પ્રતિપાદિત કિયે ગયે હૈ । હસલિયે હસસૂત્રકા નામ

મધ્યમાં અને અન્તે મંગલાચરણ કરવું તેવો શિષ્ટ પુરુષોનો આચાર પણ છે. છતાં પણ સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં મંગલાચરણ કેમ કયું નથી?

ઉત્તર—આ પ્રકારની આશંકા યોગ્ય નથી, કારણકે ભગવાન દ્વારા કહેવામાં આવેલ આ શાસ્ત્ર જ સાક્ષાત્ મંગલસ્વરૂપ છે, તેથી તે પોતે જ મંગલરૂપ છે. તેથી સ્વયં મંગલરૂપ બનેલ શાસ્ત્રમાં મંગલરૂપતા હોવાથી શાસ્ત્રકારે તેને સૂત્રરૂપે આધવાની અપેક્ષાએ મંગલાચરણ કયું જ છે. વળી સાંભળો શાસ્ત્રકારે આ શાસ્ત્રમાં “જંબૂ ઇળમો” આ પ્રમાણે ભગવાનના આમંત્રણથી આદિ મંગલ, પ્રથમ સંવરદ્વારમાં ભગવતી અર્હિસાના વર્ણનરૂપ મધ્યમંગલ, અને “નાયપુત્રેણ વીરેણ ભગવત્યા પયાસિયં” અન્તમાં એ પ્રકારનાં કથનથી અન્યમંગલ કયું છે, એમ સમજી લેવું. હવે આ વિષયમાં વધુ કહેવાથી શો લાભ ?

શંકા—“પ્રશ્નવ્યાકરણ”નો શબ્દાર્થ શું છે ?

ઉત્તર—અંગુષ્ઠ આદિ વિદ્યાઓનું નામ પ્રશ્ન છે. તે પ્રશ્નોનું આ સૂત્રમાં વિસ્તારથી પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. તેથી તેનું નામ પ્રશ્નવ્યાકરણ પડ્યું છે.

સુદર્શિની ટીકા અં ૧ ભવતરણિકા

૭

શુમાશુભં પ્રતિપાદયન્તિ તે પ્રશ્નાઃ । एवं ये अपृष्टा एव शुभाऽशुभं वदन्ति ते अप्रश्नाः । ये पृष्टा अपृष्टाश्च कथयन्ति ते प्रश्नाऽप्रश्नाः । तथा अन्येऽपि अति-
ज्ञयाः, नागकुमारैः सुपर्णकुमारैः अन्यैश्च भवनपतिभिः सह साधूनां संवादाः,
इत्यादयः सन्ति ।

નન્દીમૂત્રવાચનાકાલે પ્રશ્નવ્યાકરણે પશ્ચવત્ષારિસાધ્યયનનિવન્ધઃ સમુપલબ્ધ
આસીત્ । તદુક્તં નન્દીસૂત્રે—“સે કિં તં પળ્હાવાગરણાઈ? પળ્હાવાગરણેસુ ણં અટ્ટદુ-
ત્તરં પસિણસયં, અટ્ટદુત્તરં અપસિણસયં, અટ્ટદુત્તરં પસિણાઽપસિણસયં । તં જહા—અંગુઠ-
પસિણાઈ, બાહુપસિણાઈ, અદાગપસિણાઈ, અન્નેત્રિ વિચિત્તા વિઙ્ગાસયયા, નાગ-
સુવર્ણેઈ સદ્ધિ દિઘ્વા સંવાયા આઘવિઙ્ગંતિપ । પળ્હાવાગરણાં પરિત્તા ચાયણા,
સંસ્વિઙ્ગા અણુઓગદારા સંસ્વિઙ્ગા વેઠા, સંસ્વિઙ્ગા સિલોગા સંસ્વિઙ્ગાઓ નિઙ્ગુ-
લીઓ, સંસ્વિઙ્ગાઓ સંગહણીઓ, સંસ્વિઙ્ગાઓ પઢિવત્તીઓ, સે ણં અંગઠ્ઠયાપ દસમે અંગે
એગે સુયક્સંધે, પળ્યાલીસં અઙ્ગસયણા, પળ્યાલીસં ઉદ્દેસણકાલા, પળ્યાલીસં મમુદ્દે-
સણકાલા, સંસ્વિઙ્ગાઈ પયસહસ્સાઈ પયગ્ગેણ, સંસ્વેઙ્ગા અક્કવરા, અણંતાગમા,
અણંતા પઙ્ગવા, પરિત્તા તસા, અણંતા થાવરા, સાસયકદનિવદ્ધનિકાઈયા ઝિણપલ્લતા
માવા આઘવિઙ્ગંતિ, પલ્લવિઙ્ગંતિ, પલ્લવિઙ્ગંતિ, દંસિઙ્ગંતિ, નિદંસિઙ્ગંતિ, ઉવદં-
સિઙ્ગંતિ, સે एवं આયા, एवं નાયા, एवं વિઘ્નાયા, एवं ચરણકરણપલ્લવા સે
તં આઘવિઙ્ગંતિ । પળ્હા વાગરણાઈ ” ॥

પ્રશ્નવ્યાકરણ હુઆ છે । इनमें १०८प्रश्न, १०८ अप्रश्न, और १०८ही प्रश्ना-
प्रश्न हैं । जो विद्याएँ अथवा मंत्र, पूछने पर शुभ और अशुभ का कथन
करते हैं वे प्रश्न हैं । जो बिना पूछे ही शुभ और अशुभ कहते हैं वे
अप्रश्न हैं । तथा जो मिश्ररूप में पूछने पर—शुभ और अशुभ दोनों का
प्रगट करते हैं । वे प्रश्नाप्रश्न हैं । इसी तरह और भी अनिश्चय एवं नाग-
कुमार, सुवर्णकुमार तथा अन्य भवनपतियों के साथ, साधुओं के संवाद
इसमें प्रदर्शित किये गये हैं ।

નન્દીસૂત્ર કે વાચનાકાલ મેં પ્રશ્નવ્યાકરણ મેં પૈતાલીસ અધ્યયનરૂપ

તેમાં ૧૦૮ પ્રશ્ન, ૧૦૮ અપ્રશ્ન, અને ૧૦૮ પ્રશ્નાપ્રશ્ન છે. જે વિદ્યાઓ અથવા
મંત્ર, પૂછવામાં આવતાં શુભ અને અશુભનું કથન કરે છે, તેમને પ્રશ્ન કહે છે.
પૂછ્યા વિના જ શુભ અને અશુભ બતાવનારને અપ્રશ્ન કહે છે. તથા
જે મિશ્રરૂપે—પૂછવામાં આવતાં શુભ અને અશુભ બન્નેને પ્રગટ કરે છે તે
પ્રશ્નાપ્રશ્ન કહેવાય છે. એજ રીતે બીજાં પણ નાગકુમાર, સુવર્ણકુમાર તથા અન્ય
ભવનપતિઓની સાથે, સાધુઓના ઘણા સંવાદ આ સૂત્રમાં બતાવવામાં આવ્યા છે.

નન્દીસૂત્રના વાચનકાળમાં પ્રશ્નવ્યાકરણમાં પિસ્તાળીશ અધ્યયન સમુપલબ્ધ-

તદનન્તરં સ્થાનાક્ષરવાચનાવેલાયાં પञ्चवर्तारिंशदध्ययनेषु दशाध्ययनान्ये-
वोपलब्धान્યાसन्-तदुक्तं સ્થાનાક્ષર—

“પળ્હા વાગરણદસાણં દસઅજ્ઞયણા પળ્ણત્તા । તેં જહા—ઉવમા, સંભા^૧,
ઈસિમાસિયાઈ^૨, આયરિયમાસિયા^૩, મહાવીરમાસિયાઈ^૪, સોમગપસિયાઈ, કોમ-
લપસિયાઈ^૫, અદાગપસિયાઈ^૬, અંગુટ્ટપસિયાઈ^૭, વાહુપસિયાઈ^૮ ॥ સ્થા ૦ ૧૦ઠા. ।

इदानीं तु पूर्वोक्तानि अध्ययनानि विच्छेदं गतानीति हेतोः—पञ्चास्रपञ्चसं-
रात्मकदशाध्ययनानि समुपलभ्यन्ते ।

તપઃ સંયમારાધકાઃ સૌધર્મીદિદેવલોકેષુ સમુત્પદ્યન્તે, ઉત્કૃષ્ટતપઃસંયમારા-
ધકાસ્તરિમન્નેષ ભવે મોક્ષમાપ્નુવન્તિ કિન્તુ યેપામાયુષ્યં સમ્પન્નપરિમિતં હીનં તે
કર્મક્ષયાઽભાવાત્ વિજયાદિ વિમાનેષુ સમુત્પદ્યન્તે, ઇતિ નવમાક્ષે અનુત્તરોપપાતિ-
કસૂત્રે વર્ણિતમ્ ।

નિબંધ સમુપલબ્ધ થા । યહ ચાન “સે કિં તેં પળ્હાવાગરણાઈ ? સે લેકર
“સે તેં પળ્હાવાગરણાઈ” તક કે હસ નંદીસૂત્ર કે પાઠ સે પુષ્ટહોતી હૈ ।
હસકે યાદ સ્થાનાક્ષરસૂત્ર કે વાચનાકાલ મેં પૈતાલીસ અધ્યયનોં મેં સે
કેવલ ૧૦ હી અધ્યયન ઉપલબ્ધ રહ ગયે । જેસા કિ સ્થાનાક્ષરસૂત્ર કે હસ
પાઠ સે પ્રમાણિત હોતા હૈ કિ “પળ્હાવાગરણદસાણં દસ અજ્ઞયણા
પળ્ણત્તા તેંજહા” ઇત્યાદિ । પર અચ તો હમ સમય વે ઉપમા, સંભા, ઋષિભાસિત,
આચાર્યમાસિત, મહાવીરમાસિત આદિ દશ અધ્યયન મી
ઉપલબ્ધ નહોં હૈ, કયોં કિ હનકા વિચ્છેદ હો ચુકા હૈ । હસલિયે પાંચ
આસ્રવ ઓર પાંચ સંવર સંબંધી યે દશ અધ્યયન હી ઉપલબ્ધ હૈ ।

નૌમા અંગ જો અનુત્તરોપપાતિક સૂત્ર હૈ હસમેં જેસા વર્ણન કિયા
કિ તપ સંયમકે આરાધક જીવ સૌધર્મ આદિ દેવલોકોં મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈ ।

(પ્રશ્ન) હતાં. તે વાત “સે કિં તેં પળ્હાવાગરણાઈ? થી લઈને “સે તેં પળ્હાવાગરણાઈ”
સુધીના આ નંદીસૂત્રના પાઠથી સિદ્ધ થાય છે. ત્યારબાદ સ્થાનાંગસૂત્રના વાચન-
કાળમાં પિસ્તાળીસ અધ્યયનોમાંથી ફક્ત દસ જ ઉપલબ્ધ હતાં. તે વાતનું
સ્થાનાંગસૂત્રના આ પાઠથી પ્રતિપાદન થાય છે—“પળ્હાવાગરણદસાણં દસ અજ્ઞયણા
પળ્ણત્તા તેંજહા” ઇત્યાદિ. પણ અત્યારે તો ઉપમા, સંભા, ઋષિભાસિત, આચાર્ય-
માસિત, મહાવીરમાસિત આદિ દશ અધ્યયન પણ ઉપલબ્ધ નથી, કારણકે તેના
વિચ્છેદ થઈ ગયો છે. તેથી પાંચ આસ્રવ અને પાંચ સંવર સંબંધી આ દશ
અધ્યયનો જ ઉપલબ્ધ છે.

અનુત્તરોપપાતિકસૂત્ર નામનું જે નવમું અંગ છે તેમાં એવું વર્ણન
કરવામાં આવેલ છે કે તપ સંયમની આરાધના કરનાર જીવ સૌધર્મ આદિ—

સુવર્ણીની ટીકા અં ૧ અવતરણિકા

૧

ઉત્કૃષ્ટતપઃસંયમારાધનેન સંયમવતામકુષ્ઠદર્પણવિદ્યાદિસંસિદ્ધયઃ સમુત્પદ્યન્તે, તામિસ્તે પ્રતિવાદિપ્રશ્નાનુતરન્તિ । તદુપલબ્ધિઃ સમ્પ્રતિ નાસ્તિ, વિચ્છેદં ગતસ્વાત્ । इदानीं तु पञ्चास्रवपञ्चसंवरप्रतिपादनपरं प्रश्नव्याकरणमुपलभ्यते ।

ઉત્કૃષ્ટતપઃસંયમારાધનં हि पञ्चास्रवपञ्चसंवरज्ञानं विना न भवति-इति-
आस्रवसंवरस्वरूपनिरूपकमिदं प्रश्नव्याकरणं निरूप्यत इति नवमाङ्गेन सहास्य संबंधः।

અસ્મિન્ પ્રશ્નવ્યાકરણે પચ્ચાસ્રવપચ્ચસંવરાત્મકાનિ દશાધ્યયનાનિ સન્તિ, તસ્યાસ્રવસંવરભેદાભ્યાં ટૂં માર્ગો તયોરાસ્રવસ્ય બન્ધકારણત્વેન પૂર્વે નિરૂપણં, તથા જો ઉત્કૃષ્ટ તપ સંયમ કી આરાધના કરતે હૈં વે ઉસી ભવ મેં મોક્ષ કો પ્રાપ્ત કર લેતે હૈં, કિન્તુ જિનકી આયુ સાતલવ પરિમિત હૈ હીન હૈ વે કર્મભય નહીં કર સકતે હૈં ઇસલિયે કર્મક્ષય કે અભાવ સે વે વિજયાદિક વિમાનોં મેં ઉત્પન્ન હો જાતે હૈં ।

ઉત્કૃષ્ટ તપ સંયમ કે આરાધના સે સંયમશાલી જીવોં કો અંગુષ્ઠ-વિદ્યા દર્પણવિદ્યા આદિ વિદ્યાઈં સિદ્ધ હો જાતી હૈં । ઇનસે વે પ્રતિવાદિયોં કે પ્રશ્નોં કા ઉત્તર દેતે રહતે હૈં । ઇનકી ઉપલબ્ધિ ઇસ સમય ઇનકે વિચ્છેદ હો જાને કે કારણ નહીં હોતી હૈં । ઇસ સમય તો પાંચ આસ્રવ ઓર પાંચ સંવર કે પ્રતિપાદન કરને મેં તત્પર માત્ર યહ પ્રશ્નવ્યાકરણ ઉપલબ્ધ હો રહા હૈં । ઉત્કૃષ્ટ તપ સંયમ કી આરાધના પાંચ આસ્રવ ઓર પાંચ સંવર ઇનકે જ્ઞાન હુણ વિના નહીં હો સકતી હૈં । ઇસલિયે આસ્રવ ઓર સંવર કે સ્વરૂપ કો નિરૂપણ કરને ચાલા યહ પ્રશ્નવ્યાકરણ નિરૂપિત કિયા જાતા હૈં । યહી નૌવે અંગ કે સાથ ઇસકા સંબંધ હૈં ।

દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. તથા જે ઉત્કૃષ્ટ તપ સંયમની આરાધના કરે છે તેઓ એ જ જીવમાં મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે, પણ જેનું આયુષ્ય સાતલવ પરિમિત છે, હીન છે, તેઓ કર્મોના ક્ષય કરી શકતાં નથી. તેથી કર્મક્ષયને અભાવે તેઓ વિજયાદિક વિમાનોમાં ઉત્પન્ન થાય છે.

ઉત્કૃષ્ટ તપ સંયમની આરાધનાથી સંયમશાળી જીવોને અંગુષ્ઠ વિદ્યા, દર્પણ વિદ્યા આદિ વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત થાય છે. તેમની મદદથી તે પ્રતિવાદીઓના પ્રશ્નોના ઉત્તરો આપે છે. તેમની ઉપલબ્ધિ (પ્રાપ્તિ) આ સમયમાં તેમનો વિચ્છેદ થઈ જવાથી થઈ શકતી નથી. હાલમાં તો પાંચ આસ્રવ અને પાંચ સંવરનું પ્રતિપાદન કરનાર ક્રૂર આ પ્રશ્નવ્યાકરણ જ ઉપલબ્ધ થઈ શકે છે. પાંચ આસ્રવ અને પાંચ સંવરનું જ્ઞાન થયા વિના ઉત્કૃષ્ટ તપ સંયમની આરાધના થઈ શકતી નથી, તે કારણે આસ્રવ અને સંવરનાં સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરનાર આ પ્રશ્નવ્યાકરણનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે. એ જ નવમાં અંગ સાથે તેનો સંબંધ છે.

તતસ્તત્પરિહારોપાયભૂતસંચરવર્ણનં ભગવતા કૃતમ્ । નદિ કોઽપિ મેધાવી દુઃસ્વસ્વરુ-
પસ્યાઽપરિજ્ઞાને તત્પરિહારોપાયપરિમાર્ગં વિધત્તે, નશ્વસંસિદ્ધે જ્વરાદિરોગે
તત્ચિકિત્સાઽઽવશ્યકત્વમુપપદ્યતે, અતઃ પૂર્વમાસ્ત્રવપચ્ચક્રમુદ્દેશકમપ્રાપ્તં નામતઃ પ્રદ-
શ્યતિ । આસ્ત્રવેષ્વપિ પૂર્વે હિંસાનિરૂપણં કૃતમ્, અસ્ત્યાદિભિરાપિ હિંસાયા એવ
જાયમાનત્વેન હિંસાયાઃ પ્રધાનભૂતત્વાત્, અતઃ પ્રથમમાસ્ત્રવદ્વારમાહ—“જંબૂ-
હ્રણમો” ઇત્યાદિ ।

હસ પ્રશ્નવ્યાકરણ મેં પાંચ આસ્ત્રવ ઓર પાંચ સંચર કે સંબંધ કો
લેકર દસ અધ્યયન હૈં હસલિયે હસે દો ભાગોં મેં વિભક્ત કિયા ગયા હૈ ।
આસ્ત્રવ કા વર્ણન વંધ કા કારણ હોને સે પ્રથમ ભાગ મેં કિયા ગયા હૈ
ઓર સંચર કા વર્ણન આસ્ત્રવ કે પરિહાર કા ઉપાયભૂત હોને કે કારણ
ઉસકે બાદ મેં દ્વિતીય ભાગ મેં કિયા ગયા હૈ । કેસા ભી બુદ્ધિમાન પુરુષ
કયોં ન હો જવતક વહ દુઃસ્વ કે સ્વરૂપ સે અપરિજ્ઞાત રહતા હૈ તો
વહ ઉસકે પરિહાર કરને કે ઉપાયભૂત માર્ગ કી ગવેષણા નહીં કરતા હૈ,
તથા જૈસે જ્વરાદિરોગ કી સંસિદ્ધિ કે અભાવ મેં અર્થાત્ ઉસકે પૂર્ણ
નિદાન કે અભાવ મેં ઉસકે શમન કે ઉપાય કી ગવેષણા નહીં હોતી હૈ,
ઉસી તરહ જવતક આસ્ત્રવતત્ત્વ કા પરિજ્ઞાન જીવ કો નહીં હો જાતા હૈ,
તથતક સંચરરૂપ ઉસકે નિરોધકભૂત માર્ગ કો જાનને કી ભી જિજ્ઞાસા
ઉસકો ઉત્પન્ન નહીં હો સકતી હૈ । હસલિયે સચ સે પહિલે ઉદ્દેશક પ્રાપ્ત
પાંચ આસ્ત્રવોં કો ઉનકે સ્વરૂપ કો આગે વિશેષ સ્પષ્ટ કરને કે અભિપ્રાય
સે સૂત્રકાર નામ લેકર પ્રદર્શિત કરતે હૈં । ઇન પાંચ આસ્ત્રવોં મેં ભી સૂત્ર-

આ પ્રશ્નવ્યાકરણમાં પાંચ આસ્ત્રવ અને પાંચ સંચર વિષેનાં હસ અધ્યયન
છે, તેથી તેના બે ભાગ પાડવામાં આવ્યા છે. આસ્ત્રવો અંધના કારણરૂપ હોવાથી
આસ્ત્રવોનું વર્ણન પહેલા ભાગમાં કરવામાં આવ્યું છે, અને સંચર આસ્ત્રવના
પરિત્યાગને માટે ઉપાયરૂપ હોવાથી તેમનું વર્ણન આસ્ત્રવનાં વર્ણન પછી બીજા
ભાગમાં કરેલ છે. ગમે તેવો બુદ્ધિશાળી માણસ હોય પણ જો તે દુઃખના
સ્વરૂપથી અજાણ રહે તો તેના પરિહાર કરવાના ઉપાયરૂપ માર્ગની પ્રાપ્તિ તે
કરી શકતો નથી. તથા જેમ જ્વર આદિ રોગોમાં તેનું પૂર્ણ નિદાન કર્યા વિના
તેનું શમન કરવાના ઉપાય જડતો નથી તેમ આસ્ત્રવતત્ત્વનું પરિજ્ઞાન અન્યાસુધી
જીવને થાય નહીં, ત્યાંસુધી તેમને શકનાર-તેમના નિરોધક-સંચરરૂપ માર્ગને
જાણવાની જિજ્ઞાસા તેનામાં ઉત્પન્ન થઈ શકતી નથી તેથી સૌથી પહેલાં ઉદ્દેશ-
પ્રાપ્ત પાંચ આસ્ત્રવેના નામ સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે. તેમનું સ્વરૂપ આગળ જતાં
વિસ્તારથી સ્પષ્ટ કરવામાં આવશે. તે પાંચ આસ્ત્રવોમાં પણ સૂત્રકારે સૌથી

અત્ર “તેણં કાલેણં” ઇત્યાદિ ઉક્તેષ્વપવાક્યં વાચ્યમ્ । ચમ્પાનગર્યાં સુધર્મ-સ્વામિનઃ સમવસરણં, તત્ર કોણિકો નામ રાજા, ધારિણી નામ દેવી’ત્યાદિ વર્ણન-સૌપ્પાતિકસૂત્રાદવસેયમ્ । સુધર્મસ્વામિનો જમ્બૂસ્વામિનશ્ચ વર્ણનં જ્ઞાતાસૂત્રસ્ય પ્રથમાધ્યયનતો વિજ્ઞેયમ્ । જમ્બૂસ્વામિનઃ સુધર્મસ્વામિનશ્ચ પ્રશ્નોત્તરવાક્યં પ્રદર્શયતે-કાર ને પહિલે હિંસારૂપ આસ્રવ કા જો નિરૂપણ કિયા હૈ ઉસ્કા કારણ યહ હૈ કિ હિંસા સે અતિરિક્ત જો મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન, પરિગ્રહ યે આસ્રવ દ્વાર હૈ ઉનસે હિંસા હી ઉત્પન્ન હોતી હૈ । ઇસલિયે ઉસ હિંસા મેં પ્રધાનતા આને સે અબ સૂત્રકાર સર્વ પ્રથમ ઉસી હિંસા રૂપ આસ્રવ દ્વાર કા નિરૂપણ કરતે હૈ-“જંબૂ ઇણમો” ઇત્યાદિ ।

ઇસ સૂત્ર કી સંગતિ કે લિયે ઇસ મેં “તેણં કાલેણં” ઇત્યાદિ ઉક્તે-પક વાક્ય સંબંધિત કરલેનાં ચાહિયે-અર્થાત્ ઉસકાલ મેં ઔર ઉસ સમય મેં ચમ્પા નામ કી નગરી થી । ઉસકે શાસક કોણિક રાજા થે । ઉનકી રાની કા નામ ધારિણી દેવી થા । તીર્થંકર પરમ્પરાનુસાર વિહાર કરતે હુણ વહાં સુધર્માસ્વામી કા આગમન હુઆ-ઇત્યાદિ પ્રકાર કા સમસ્ત વર્ણન જૈસા ઔપપાતિક સૂત્ર મેં કિયા ગયા હૈ વૈસા હી જ્ઞાન લેનાં ચાહિયે ઔર ઉસે “જંબૂ ઇણમો” ઇસ સૂત્ર કી સંગતિ નિમિત્ત યહાં લગા લેનાં ચાહિયે । સુધર્માસ્વામી ઔર જંબૂ સ્વામી કા વર્ણન જ્ઞાતા સૂત્ર કે પ્રથમ અધ્યયન મેં કિયા હુઆ હૈ । સો યા! મી વહાં સે હી જ્ઞાન લેનાં ચાહિયે । અબ જંબૂસ્વામી ઔર સુધર્માસ્વામી કી ઇસ પ્રશ્નવ્યાકરણ

પહેલાં હિંસારૂપ આસ્રવનું નિરૂપણ કર્યું છે તેનું કારણ એ છે કે હિંસા સિવાય મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન અને પરિગ્રહ, એ જે આસ્રવ દ્વાર છે, તેમના વડે હિંસા જ ઉત્પન્ન થાય છે. તે કારણે તે હિંસામાં પ્રધાનતા આવવાથી, સૂત્રકાર સૌથી પહેલાં એજ હિંસારૂપ આસ્રવદ્વારનું નિરૂપણ કરે છે-“જંબૂ ઇણમો” ઇત્યાદિ

આ સૂત્રના સંબંધને માટે તેમાં “તેણં કાલેણં” ઇત્યાદિ ઉક્તેષ્વપક વાક્યને સંબંધ જોડી દેવો જોઈએ. એટલે કે તે કાળે અને તે સમયે ચંપા નામની એક નગરી હતી. કોણિક રાજા ત્યાંના રાજા હતા. તેમની રાણીનું નામ ધારિણી દેવી હતું. તીર્થંકર પરમ્પરાનુસાર વિહાર કરતાં કરતાં ત્યાં સુધર્માસ્વામીનું આગમન થયું. ઇત્યાદિ પ્રકારનું આણું વણું જોમ ઔપપાતિક સૂત્રમાં કરાણું છે તે પ્રમાણે સમજી લેવું અને તેને “જંબૂ ઇણમો” આ સૂત્રના સંબંધને માટે અહીં જોડી દેવું જોઈએ. સુધર્માસ્વામી અને જંબૂસ્વામીનું વણું જ્ઞાતાસૂત્રના પહેલા અધ્યયનમાં કરેલ છે. તો તે પાયા ત્યાંથી સમજી લેવું જોઈએ. હવે જંબૂસ્વામી અને સુધર્માસ્વામી વચ્ચે આ પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રને વિષે જે પ્રશ્નોત્તરરૂપે

मूलम्—“जहणं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं नवमस्स अंगस्स अनुत्तरोपवाइयदसाणं अयमट्ठे पन्नत्ते । दसमस्स णं भंते अंगस्स पण्हा-वागरणाणं समणेणं ३ जाव संपत्तेणं के अट्ठे पणत्ते ? जंबू ! दसमस्स अंगस्स समणेणं जाव संपत्तेणं दो दारा पणत्ता । आसवदारा य संवरदारा य । पदमस्स णं भंते । दारस्स समणेणं ३ जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पणत्ता ? जंबू ! पदमस्स णं दारस्स समणेणं जाव संपत्तेणं पंच अज्झयणा पणत्ता । दोच्चस्स णं भंते ! एवं चेव । एएसि णं भंते ! अज्झयणाणं अण्हय संवरणां समणेणं ३ जाव संपत्तेणं के अट्ठे पणत्ते ? । तएणं अज्जसुहम्मं थरे जंबू नामेणं अणगारेणं एवं बुत्ते समाणे जंबू अणगारं एवं वयासी ”—

छाया—यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्संप्राप्तेन नवमस्याङ्गस्य अनुत्तरोपपातिकदशानामयमर्थः प्रज्ञप्तः । दशमस्य खलु भदन्त ! अङ्गस्य प्रश्नव्याकरणानां श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्संप्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? जम्बू ! दशमस्य—अङ्गस्य श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्संप्राप्तेन द्वे द्वारे प्रज्ञप्ते—आस-सूत्र के संबंध में जो प्रश्नोत्तर रूप बातचीत हुई है उसको प्रकट करते हैं—‘जहणं भंते’ इत्यादि ।

हे भदन्त ! श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो यावत् सिद्धि-गति नामक स्थान को प्राप्त हो चुके हैं अनुत्तरोपपातिक दशाङ्ग नामके नवमे अंग का जब इस प्रकार से अर्थ प्ररूपित किया है—तो उन्हीं यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर ने प्रश्नव्याकरण नामक दशवें अंग का क्या अर्थ निरूपित किया है ? इस प्रश्न के उत्तर में सुधर्मास्वामी ने उनसे इस प्रकार कहा—हे जंबू ! तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार से है—यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर ने इस प्रश्नव्याकरणरूप दशवें अंग के दो द्वार प्ररूपित किये हैं उसमें पहिला आसव द्वार है और

वातवीत यधं छे तेने सूत्रकार प्रगट करे छे—“जहणं भंते ! ” इत्यादि.

हे भदन्त ! श्रमण भगवान् महावीर, के जेमण्णे सिद्धिगति नामना स्थानने प्राप्त करी दीधुं छे, तेमण्णे अनुत्तरोपपातिक दशाङ्ग नामना नवमा अंगना जे आ प्रमाण्णे अर्थ प्ररूपित करी छे, तो ते सिद्धि-गति नामना स्थानने प्राप्त करैल श्रमण भगवान् महावीर प्रश्नव्याकरण नामना दसमा अंगना कथा अर्थ निरूपित करी छे ? ते प्रश्नना उत्तर आपता सुधर्मा-स्वामीजे तेमने आ प्रमाण्णे कहुं—हे जंबू ! तभारा प्रश्नना जवाण आ प्रमाण्णे छे—सिद्धिगति नामना स्थानने प्राप्त करैल श्रमण भगवान् महावीर आ प्रश्नव्याकरणरूप दसमा अंगना जे द्वार प्ररूपित करी छे, तेमां पडेहुं

સુરશિની ટીકા અ૦ ૧ સુ૦ ૧ આસ્રવસંવરલક્ષણનિરૂપણમ્

૧૩

વદારં ચ સંવરદારં ચ । પ્રથમસ્ય સ્વલુ ભદન્ત ! દ્વારસ્ય શ્રમણેન ભગવતા મહાવીરેણ
યાવત્સંપ્રાપ્તેન કતિ અધ્યયનાનિ પ્રજ્ઞાનિ ? । જમ્બૂ : પ્રથમસ્ય સ્વલુ દ્વારસ્ય
શ્રમણેન ભગવતા મહાવીરેણ યાવત્સંપ્રાપ્તેન પશ્ચ-અધ્યયનાનિ પ્રજ્ઞાનિ । દ્વિતી-
યસ્ય સ્વલુ ભદન્ત ! ૦ એવમેવ । એતેષાં સ્વલુ ભદન્ત ! અધ્યયનાનામ્ આસ્રવસંવરાણાં
શ્રમણેન ભગવતા મહાવીરેણ યાવત્સંપ્રાપ્તેન કોડર્યઃ પ્રજ્ઞા : ? । તતઃ સ્વલુ આર્ય-
સુધર્મા સ્થવિરઃ જમ્બૂનામ્ના અનગારેણ એવમુક્તઃ સન્ જમ્બૂમનગારમેવમવાદીત્—
'જંબૂ ઇણમો' इत्यादि ।

મૂલમ્—“જંબૂ ઇણમો અપહય સંવર,—વિણિચ્છિયં પવયણસ્સ-
ણિસ્સંદં । વોચ્છામિ નિચ્છયત્થં સુભાસિયત્થં મહેસીહિં ॥સૂ૦૧॥

ટીકા—‘હે જંબૂ !’ इत्यामन्त्रणेन जम्बू स्वामिने प्रति सुधर्मास्वामी भाइ—
'हे जंबू ! इणमो' इदम्—अनुपदं वक्ष्यमाणं प्रश्नव्याकरणशास्त्रं 'वोच्छामि'

દસરા સંવર દ્વાર હૈ । હે ભદન્ત ! પ્રથમ દ્વાર કે શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર
ને કિ જો યાવત્ સિદ્ધિગતિ નામક સ્થાન કો પ્રાપ્ત કર લુકે હૈં કિતને
અધ્યયન પ્રરૂપિત કિયે હૈં ? હિસ પ્રકાર જંબૂસ્વામી કે પૂછને પર શ્રીસુધ-
ર્માસ્વામી ને ડનસે કહા—હે જંબૂ ! યાવત્ સિદ્ધિગતિ નામક સ્થાનકો પ્રાપ્ત
હુપ શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીરને પ્રથમ દ્વારકે પાંચ અધ્યયન પ્રરૂપિત કિયે હૈં ।

પ્રશ્ન—દ્વિતીય દ્વાર કે હે ભદન્ત ! કિનને અધ્યયન પ્રરૂપિત કિયે હૈં ।

ઉત્તર—જંબૂ ! હિતને હી અધ્યયન દ્વિતીય દ્વાર કે પ્રરૂપિત કિયે હૈં ।
જંબૂસ્વામી ને પુનઃ સુધર્માસ્વામી સે પૂછા કિ—હે ભદન્ત ! હિન આસ્રવ
એવં સંવર સંબંધી અધ્યયનોં કા અર્થ યાવત્ સિદ્ધિગતિ નામક સ્થાનોં કો
પ્રાપ્ત હુપ શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર ને કૈસા પ્રરૂપિત કિયા હૈં ? હિસ પ્રકાર
અનગાર જંબૂ સ્વામી સે પૂછે ગયે સ્થવિર આર્ય સુધર્માને ડન જંબૂ અનગાર

આસ્રવ દ્વાર છે અને બીજી સંવર દ્વાર છે. “હે ભદન્ત ! સિદ્ધિગતિને પ્રાપ્ત
કરેલ શ્રમણ ભગવાન મહાવીર કેટલાં અધ્યયન પ્રરૂપિત કર્યાં છે ?” આ પ્રમાણે
જંબૂસ્વામી વડે પૂછવામાં આવતા સુધર્માસ્વામીએ તેમને કહ્યું—“હે જંબૂ !
સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનને પામેલ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે પ્રથમ દ્વારના પાંચ
અધ્યયન પ્રરૂપિત કર્યાં છે.”

પ્રશ્ન—“બીજાં દ્વારનાં કેટલાં અધ્યયન પ્રરૂપિત કર્યાં છે ?”

ઉત્તર—“એટલાં જ અધ્યયન બીજા દ્વારના પણ પ્રરૂપિત કર્યાં છે.”
જંબૂસ્વામીએ ફરીથી સુધર્માસ્વામીને પૂછ્યું કે—હે ભદન્ત ! સિદ્ધિગતિ નામના
સ્થાનને પામેલ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે તે આસ્રવો અને સંવર સંબંધી
અધ્યયનોનો અર્થ કેવો પ્રરૂપિત કર્યો છે ? આ પ્રમાણે અનુગાર જંબૂસ્વામી

વશ્યામિ=ત્વાં પ્રતિ પ્રરૂપયિષ્યામિ। તત્ કીદશમિત્યાહ-‘અળ્હયે’ત્યાદિ-
 ‘અળ્હયસંવરવિણિચ્છિયં’ આસ્રવસંવરવિનિશ્ચિતં, આસ્રવન્તિ=આગચ્છન્તિ
 કર્મજલાનિ આત્મસરસિ ચૈસ્તે આસ્રવાઃ=કર્મવન્ધહેતુભૂતાઃ પ્રાણાતિપાતાદયઃ,
 યદ્વા-આસ્રવણમ્-આસ્રવઃ-આગમનમ્। સ દ્વિવિધઃ-દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ, તત્ત્ર દ્રવ્યતો
 યજ્જલान्तर्गतनावादौ छिद्रैर्जलागमनम्। ભાવતસ્તુ-પ્રાણાતિપાતાદિભિરાત્મનિ
 કર્માગમનમ્। સંસારસાગરાન્તર્ગતાત્મનોકાયાં પ્રાણાતિપાતાદિછિદ્રૈઃ કર્મજલાગ-
 મનમિતિ ભાવઃ। સ પ્રાણાતિપાતાદિરૂપઃ પશ્ચવિધઃ। સંત્રિયન્તે=પ્રતિરુદ્ધયન્તે
 સે એસા કહા—‘જંબૂ ઇણમો’ ઇત્યાદિ।

ટીકાર્થ-હસ સૂત્રમે “જંબૂ” યહ પદ સંવેધોન અર્થમે પ્રયુક્ત હુઆ હૈ। હસસે
 યહ લક્ષિત હોતા હૈ કિ સુધર્માસ્વામી જંબૂ સ્વામી સે કહતે હૈં કિ (જંબૂ
 ઇણમો) હે જંબૂ ! મેં અનુપદ વશ્યમાળ પ્રશ્ન વ્યાકરણરૂપ શાસ્ત્ર (વોચ્છામિ)
 તુમકો કહૂંગા। (અળ્હયસંવરવિણિચ્છિયં) હસ શાસ્ત્ર મેં આસ્રવ
 એવં સંવર કા નિર્ણય ઉનેકે લક્ષણો એવં ભેદાદિકોં કે કથન-પૂર્વક કિયા
 ગયા હૈ। “વિણિચ્છિયં” પદ કા અર્થ હે વિશેષરૂપ સે નિર્ધારિત કરના।
 તથા આસ્રવકા અર્થ હૈ કર્મવંધકે હેતુભૂત પ્રાણાતિપાતાદિક। હનકે દ્વારા
 હી આત્મરૂપી તાલાવમેં જલતુલ્ય કર્મોં કા આગમન હોતા રહતાહૈ। જિસ
 પ્રકાર તડાગ મેં જલ કે આને કે લિયે નાલે હુઆ કરતે હૈં ઉસી પ્રકાર
 આત્મા મેં ભી પ્રાણાતિપાત્ત આદિ રૂપ નાલા દ્વારા જ્ઞાનાવરણીય આદિ
 કર્મરૂપ જલ કા આના હોતા રહતા હૈ। અથવા-આના યહ-આસ્રવ હૈ
 યહ આસ્રવ દ્રવ્ય ઔર ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ।

વડે પૂછતાં સ્થવિર આર્યસુધર્માએ તે જંબૂ અણુગારને કહ્યું—“જંબૂ ઇણમો” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—આ સૂત્રમાં “જંબૂ” પદ સંબોધન અર્થમાં વપરાયું છે. તેથી
 એ લક્ષિત થાય છે કે સુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને કહે છે કે “જંબૂ
 ઇણમો” હે જંબૂ ! હું આ નીચે પ્રમાણેનું પ્રશ્નવ્યાકરણરૂપ શાસ્ત્ર
 “વોચ્છામિ” તમને કહીશ. “અળ્હયસંવરવિણિચ્છિયં” આ શાસ્ત્રમાં આસ્રવ
 અને સંવરદ્વારને નિર્ણય તેમનાં લક્ષણો અને ભેદાદિના કથનપૂર્વક કરવામાં
 આવ્યો છે. “વિણિચ્છિયં” પદનો અર્થ વિશેષરૂપે નિર્ણિત કરવો; તથા આસ્ર-
 વનો અર્થ કર્મબંધના કારણરૂપ પ્રાણાતિપાતાદિક થાય છે. તેમના દ્વારા જ
 આત્મારૂપી તળાવમાં જળ સમાન કર્મોનું આગમન થયા કરે છે, જેમ તળાવમાં
 પાણી આવવા માટે નાળાં હોય છે, તે જ પ્રમાણે આત્મામાં પણ પ્રાણાતિપાત
 આદિરૂપ નાળાં દ્વારા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મરૂપ જળનું આગમન થતું રહે છે.
 અથવા આવતું તે આસ્રવ છે. તે આસ્રવ દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી એ પ્રકારનો

પ્રવિશત્કર્મનલાનિ આત્મસરસિ યૈસ્તે સંવરાઃ-કર્મનિરોધદેતુભૂતાઃ પ્રાણાતિપાત
વિરમણાદયઃ । યદ્વા-સંવરણં સંવરઃ-સ્થગનમ્ । અયમપિ દ્વિવિધઃ દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ ।
તત્ર દ્રવ્યતસ્તથાવિધચિક્ષણમૃત્તિકાદિભિઃ સલિલોપરિ તરત્તરણ્યાદેરનાસ્તપ્રવિશશ્ચી-
રાણાં વિવરાણાં પિધાનમ્ । ભાવતઃ પ્રાણાતિપાતવિરમણાદિભિરાત્મનિ પ્રવિશત્કર્મણાં
નિરોધઃ । અસાવપિ પ્રાણાતિપાતવિરમણાદિરૂપઃ પશ્ચવિધઃ । તે વિનિશ્ચીયન્તે=

જલ કે ખીતર પડી હુઈ નૌકા મેં છિદ્રોં દ્વારા જો જલ કા આના હોતા
હૈ વહ દ્રવ્યાસ્રવ હૈ । પ્રાણાતિપાત આદિ અશુન ક્રિયાઓં દ્વારા આત્મા
મેં જો કર્મોં કા આના હોતા હૈ વહ ભાવાસ્રવ હૈ । તાત્પર્ય કેવલ ઇસ્કા
યહ હૈ કિ સંસાર રૂપ સાગર કે અન્તર્ગત ઇસ આત્મ રૂપ નાવ મેં પ્રાણા-
તિપાત આદિ છિદ્રોં દ્વારા કર્મરૂપ જલ કા આગમન હોતા રહતા હૈ વહ
આસ્રવ હૈ । કર્માગમન દેતુભૂત યહ પ્રાણાતિપાતરૂપ આસ્રવ પાંચ પ્રકાર
કા હૈ । આત્મારૂપ સરોવર મેં પ્રવેશ હોને સે કર્મરૂપ જલ જિન ક્રિયાઓં
સે રુકતા હૈ ઉનકા નામ સંવર હૈ । પ્રાણાતિપાત આદિ રૂપ ક્રિયાઓં સે
વિરમણ હોના યહી કર્મોં કે રોકને કા ઉપાય ભૂત સંવર હૈ । અથવા
રુકના ઇસ્કા નામ સંવર હૈ, યહ સંવર ખી દ્રવ્ય ઓર ભાવ કી અપેક્ષા
દો પ્રકાર કા હૈ-ચિકની મૃત્તિકા આદિ સે જલ કે ઉપર તૈરતી હુઈ
નૌકા આદિ કા છેદોં કે કિ જિનસે નિરન્તર ઉસમેં જલ આ રહા હો
ચંદ કર દેના યહ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સંવર હૈ, તથા પ્રાણાતિપાતવિરમણ
આદિ ઉપાયોં સે આત્મા મેં પ્રવિષ્ટ હોતે હુણ કર્મોં કા રોકદેના યહ ભાવ
કી અપેક્ષા સંવર હૈ । યહ સંવર ખી પ્રાણાતિપાત આદિકોં કે વિરમણ

ખતાવ્યે છે. પાણીમાં પડેલી નૌકામાં છિદ્રો દ્વારા જે જળનું આગમન થાય છે
તે દ્રવ્યાસ્રવ છે. પ્રાણાતિપાત આદિ અશુભ ક્રિયાઓ દ્વારા આત્મામાં જે કર્મોનું
આગમન થાય છે તે ભાવાસ્રવ છે. તેનું તાત્પર્ય એટલું જ છે કે સંસારરૂપી
સાગરની અંદર આ આત્મારૂપી નાવમાં પ્રાણાતિપાત આદિ છિદ્રો દ્વારા કર્મરૂપી
જળનું જે આગમન થયા કરે છે તેને આસ્રવ કહે છે કર્માગમનના કારણરૂપ
તે પ્રાણાતિપાત આદિ પાંચ પ્રકારના આસ્રવ છે. કર્મરૂપ જળ જે ક્રિયાઓથી
આત્મારૂપ સરોવરમાં પ્રવેશ પામતું એટલે છે તે ક્રિયાઓને સંવર કહે છે
પ્રાણાતિપાત આદિ ક્રિયાઓનું વિરમણ થવું એ જ કર્મોને રોકવાના ઉપાયભૂત
સંવર છે, અથવા સંવર એટલે રોકવું. તે સંવર પણ દ્રવ્ય અને ભાવની અપે-
ક્ષાએ બે પ્રકારનો છે. પાણીમાં તરતી નૌકાના જે છિદ્રોમાંથી પાણી પ્રવેશ કરતું
હોય તે છિદ્રોને ચીકણી માટિ આદિથી બંધ કરી દેવા તે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ
સંવર છે, તથા પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ ઉપાયોથી આત્મામાં પ્રવેશ કરતાં
કર્મોને રોકી લેવાં તે ભાવની અપેક્ષાએ સંવર છે. તે સંવર પણ પ્રાણાતિપાત

લક્ષણપ્રદર્શન પુરસ્સરં વિશેષેણ નિર્ધાર્યન્તે યસ્મિન્ તત્ આસ્રવસંસ્વરવિનિશ્ચિતમ્ આસ્ર-
વસંસ્વરનિર્ણયાત્મકમ્ । ‘પવચનસ્સ’ પ્રવચનસ્ય-માધુર્યપ્રસાદગુણસૌન્દર્યસ્ય
ભાવનાસુગન્ધિકસ્ય આત્મસ્વરૂપાનુભવપરમાસ્વાદવતઃ ભગવત્સુરત્કુસુમિત પ્રવચન
કુસુમસ્ય ‘નિસ્સંદં’ નિસ્પન્દં=પ્રશ્નરૂપમિવ સારભૂતં ‘નિચ્છયત્યં’ નિશ્ચયાર્થ
નિઃ=નિષ્ક્રાન્તઃ ચયઃ જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મપુજ્ઞઃ યસ્માત્ સ નિશ્ચયો=મોક્ષઃ,
સૌર્યઃ=પ્રયોજનં યસ્ય તત્ નિશ્ચયાર્થ, નિશ્ચયો મોક્ષસ્તત્પ્રાપ્ત્યર્થ વા, ‘મહેસીર્હિ’

સે પાંચ ભેદ રૂપ હૈ । इन पांच आस्रवों का और संस्वरो का इस शास्त्र
में सूत्रकार लक्षणप्रदर्शन पूर्वक विशेषरूप से स्वयं ही आगे निर्धारण
करेंगे । यही बात “अण्हयसंस्वरविणिच्छियं ” पद से सूत्रकार ने
समझाई है । यह प्रश्नव्याकरण (पवचनस्म) प्रवचनरूप पुष्प के निकले
हुए रस के समान (निस्संदं) सारभूत है । जो प्रवचनपुष्प भगवान्
तीर्थंकर प्रभु महावीर रूप कल्पवृक्ष पर प्रफुल्लित हुआ है । माधुर्य एवं
प्रसाद रूप गुण रूप विशिष्ट शोभा से संपन्न है । भावना रूप सुगंधि से
जो भरा है । आत्मानुभवनरूप परम स्वाद से जो युक्त है । तात्पर्य इसका
यह है कि जिस प्रकार पुष्प का सार उसका रस माना जाता है उसी
प्रकार यह प्रश्नव्याकरण तीर्थंकर प्रभु के प्रवचनों में सारभूत माना गया
है । भव्यजीवों का इसके अध्ययन से सर्वोत्कृष्ट यही प्रयोजन सधता
है कि वे अपनी आत्मा का अनुभव करना सीख जाते हैं । (निच्छयत्यं)
पद से यह प्रकट होना है कि इस अंग में जो भी कुछ प्रतिपादित किया
जावेगा, वह मोक्ष प्रयोजनीभूत हो इसलिये इस पद का ऐसा भी अर्थ

આહિતા વિરભાણુધી પાંચ પ્રકારનો છે. એ પાંચ આસ્રવોનું અને સંસ્વરોનું આ
શાસ્ત્રમાં સૂત્રકાર પોતે જ લક્ષણ પ્રદર્શનપૂર્વક વિસ્તારથી આગળ જતાં વર્ણન
કરશે. એજ વાત “અણહયસંસ્વરવિણિચ્છિયં ” પદથી સૂત્રકારે સમજાવી છે. આ
પ્રશ્નવ્યાકરણ “પવચનસ્સ” પ્રવચનરૂપ પુષ્પમાંથી નીકળેલ રસના બેધું સારભૂત
છે. જે પ્રવચનપુષ્પ ભગવાન તીર્થંકર મહાવીર પ્રભુરૂપી કલ્પવૃક્ષ પર વિકસિત
થયેલ છે. માધુર્ય અને પ્રસાદગુણરૂપ વિશિષ્ટ શોભાથી તે યુક્ત છે, ભાવનારૂપ
સુગંધિથી તે ભરેલું છે, આત્માનુભવરૂપ પરમ સ્વાદથી તે યુક્ત છે. તેનું તાત્પર્ય
એ છે કે જેમ પુષ્પનો સાર તેનો રસ મનાય છે, તે જ પ્રકારે આ પ્રશ્નવ્યાકરણ
તીર્થંકર પ્રભુના પ્રવચનોમાં સારરૂપ મનાયું છે. ભવ્યજીવોનું તેના અધ્યયનથી
એ સર્વોત્કૃષ્ટ પ્રયોજન સધાય છે કે તેઓ પોતાના આત્માનો અનુભવ કરતા
શીખી જાય છે. “નિચ્છયત્યં” આ પદથી એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે આ
અંગમાં જે કંઈ પ્રતિપાદિત કરવામાં આવશે, તે મોક્ષના પ્રયોજનરૂપ થશે; તે
કારણે આ પદનો એવો પણ અર્થ થઈ શકે છે કે સૂત્રકાર એનું જે પ્રતિપાદન

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦૧ આસ્રવસંવરલક્ષણનિરૂપણમ

૧૭

મહૈષિભિઃ, મહાન=હૃદય સ્વર્ગાદિફલાપેક્ષયા મોક્ષસ્તમિચ્છન્તિ=અભિલ્ષન્તીતિ મહૈષિણઃ । યદ્વા-મહાન્તશ્ચ તે સર્વજ્ઞતાન્ ક્ષપદઃ=મહર્પયન્તૈઃ મહર્ષિભિઃ પ્રવચનપ-
ણેતુમિસ્તીર્થદૂરગણધરાદિભિઃ । ‘સુભાસિયત્યં’ સુમાપિતાર્થં સુ=સુષ્ટુ સમ્યક્તયા
લોકાઽલોકાવલોકિ કેવલાઽલોકેન ચિલોક્ય માપિતઃ દ્વાદશવિધપરિપદિ કથિતઃ
અર્થઃ-અર્ચયતે ગમ્યતે જ્ઞાયતે इति અર્થઃ=આસ્રવસંવરસ્વરૂપલક્ષણઃ, યદ્વા-અર્ચયતે
સાધ્યતે इति અર્થઃ=સકલકર્મપક્ષયોપલક્ષિત નિરતિશયસુખાસ્વાદલક્ષણો નિર્વાણઃ
યસ્મિન્ તત્, ઉક્તનિશેષણવિધિષ્ટં જ્ઞાત્વં વક્ષ્યે इति પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ ॥સૂ૦૧॥

હો સકતા હૈ કિ સુપ્રકાર જો હસ કા પ્રતિપાદન કર રહે હૈં વહ હસ
અભિપ્રાય સે હી કર રહે હૈં કિ હસકા અધ્યેતા મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ કરે ।
(મહેસિહિં સુમાસિયત્યં) હન પદોંદ્વારા યદ્વા જ્ઞાન પ્રમાણિત કર પ્રકટ કી
જા રહી હૈ કિ તીર્થંકર ગણધરાદિક દેવોંને જો વિષય-આસ્રવ સંવરરૂપ
અથવા સકલ કર્મોં કે પ્રક્ષય સે ઉપલક્ષિત એવં નિરતિશયરૂપ ક્ષાયિક
સુખ કે આસ્વાદ સ્વસ્થ નિર્વાણ-મોક્ષ -હસમે કહા હૈં વહ સ્વકાપોલ કલ્પના
સે કલ્પિત કર ગ્રથિત નહીં કિયા હૈ કિન્તુ કેવલજ્ઞાન રૂપ આલોક સે
અચ્છી તરહ જ્ઞાનવીન કરકે હી ઉસ ઉસ વિષય કા નિર્દોષ પ્રતિપાદન
કિયા હૈ । તીર્થંકર સર્વજ્ઞપ્રભુ ને કેવલજ્ઞાન સે પહિલે ઉસ વિષય કો
અપને જ્ઞાન કા વિવગમૂત બનાકર ઉસે દ્વાદશવિધ પરિપદા કે બીચ મેં
કહા, ઓર ઉસે શ્રવણ કર એવં બુદ્ધિ મેં અવધૂત કર ઉસી કે અનુસાર
ગણધરાદિ દેવોં ને ગ્રથન કિયા ગયા હૈ । હસ તરહ ઉક્ત વિશેષણોં કો
સાર્થકતા ટીકાકાર ને પ્રકટ કી હૈ । સંક્ષિપ્તાર્થ કેવલ હસ ગાથાકા યહી

કરી રહ્યા છે તે એ હેતુથી જ કરી રહ્યા છે કે તેનું અધ્યયન કરનાર મુક્તિની
પ્રાપ્તિ કરે. “ મહેસિહિં સુમાસિયત્યં ” આ પદો દ્વારા એ વાત પ્રતિપાદન કરીને
પ્રગટ કરવામાં આવી રહી છે કે તીર્થંકર ગણધર આદિ દેવોએ જે વિષય-
આસ્રવ સંવરરૂપ અથવા સકળ કર્મોના ક્ષયને ઉપલક્ષિત અને નિરતિશયરૂપ
ક્ષાયિક સુખના આસ્વાદ સ્વરૂપ નિર્વાણ-મોક્ષ તેમાં ઠહેક છે, તે પોતે કલ્પનાથી
કલ્પીને ગ્રથિત ઠરેલ નથી પણ કેવળજ્ઞાનરૂપ દૃષ્ટિથી સારી રીતે ચીણીવીણીને
તે દરેક વિષયનું નિર્દોષ પ્રતિપાદન કર્યું છે. તીર્થંકર સર્વજ્ઞપ્રભુએ કેવળજ્ઞાનથી
પહેલાં તે વિષયને પોતાના જ્ઞાનના વિષયભૂત બનાવીને તેનું બાર પ્રકારની
પરિપદમાં કથન કર્યું હતું, અને તેનું શ્રવણ કરીને અને મનમાં બરાબર ઉતા-
રીને તે પ્રમાણે જ ગણધરાદિ દેવોએ ગ્રથન કર્યું છે. આ રીતે ઉક્ત વિશેષ-
ણોની સાર્થકતા ટીકાકારે પ્રગટ કરી છે. આ ગાથાનો સંક્ષેપમાં એટલો જ

હૈં કિં યહ પ્રશ્નવ્યાકરણશાસ્ત્ર પ્રવચનરૂપ પ્રફુલ્લિત પુષ્પ કે રસ જૈસા સાર ભૂત હૈં । હસમેં આસ્રવ ઓર સંવર તત્ત્વકા સુન્દર નિર્દોષ વિવેચન હુઆ હૈં । ઓર યહ વિવેચન તીર્થંકર પરંપરા કે અનુસાર જૈસા હોતા આયા હૈં વૈસા હી હુઆ હૈં ।

ભાવાર્થ—ટીકાકાર ને “આસ્રવંતિ-આગચ્છંતિ, કર્મજલોનિ યૈસ્તે આસ્રવાઃ, યદ્વા-આસ્રવણમ્ આસ્રવઃ” સંત્રિયન્તે-પ્રતિરુદ્ધ્યન્તે પ્રવિશત્કર્મ-જલોનિ યૈસ્તે સંવરાઃ, યદ્વા સંવરણં સંવરઃ” હસ પ્રકાર સે આસ્રવ ઓર સંવર કી વ્યુત્પત્તિ કી હૈં, ઉસસે પ્રથમ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર કર્મ-બંધ કે કારણભૂત પ્રાણાતિપાત આદિ ક્રિયાઓં કો આસ્રવ કહા ગયા હૈં કારણકિં ઇન્હીં કે દ્વારા જીવ નવોનર કર્મોંકા બંધ કરતા રહતા હૈં । દુસરી વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર આને માત્ર કા નામ આસ્રવ કહા ગયા હૈં સો યહ, દ્રવ્ય ઓર ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈં । દ્રવ્યાસ્રવ કર્મ-બંધ કા કારણ નહીં હૈં । કર્મબંધ કા કારણ તો ભાવાસ્રવ હી હૈં, ક્યોં કિં પ્રાણાતિપાત આદિરૂપ ભાવોં સે હી કર્મોં કા આગમન હોતા હૈં । હસીં તરહ સંવર કે વિષય મેં બી જાનનાં ચાહિયે । સંવર, આસ્રવ કા નિરોધક હોતા હૈં । છિદ્રોં કે દ્વારા નૌકા મેં જલ કા આના યહ આસ્રવ કે સ્થાનાપન્ન હૈં ઓર ઉન છિદ્રોં કો બંદ કર દેના યહ સંવરકે સ્થાનાપન્ન હૈં ।

અર્થ છે કે આ પ્રશ્નવ્યાકરણ શાસ્ત્ર પ્રવચનરૂપ વિકસિત પુષ્પના રસ જેવું સારભૂત છે. અને આ વિવેચન તીર્થંકર પરંપરા પ્રમાણે જે પ્રમાણે થતું આવ્યું છે. તે પ્રમાણે જ થયું છે.

ભાવાર્થ—ટીકાકારે આ રીતે આસ્રવ અને સંવરની વ્યુત્પત્તિ કરી છે—
“આસ્રવંતિ-આગચ્છંતિ, કર્મજલોનિ યૈસ્તે આસ્રવાઃ” (જેના દ્વારા કર્મજળ આવે છે તે આસ્રવો કહેવાય છે.) અથવા “આસ્રવણમ્ આસ્રવઃ” (આવડું એટલે આસ્રવ) “સંત્રિયન્તે-પ્રતિરુદ્ધ્યન્તે પ્રવિશત્કર્મજલોનિ યૈસ્તે સંવરાઃ” (જેના વડે કર્મજળ પ્રવેશ પામતું એટલે છે તે સંવર છે) અથવા “સંવરણં સંવરઃ” (સંવર એટલે જવું) તેમાંથી પહેલી વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે કર્મબંધનાં કારણરૂપ પ્રાણાતિપાત આદિ ક્રિયાઓને આસ્રવ યતાવ્યાં છે. બીજી વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આગમન માત્રનું નામ આસ્રવ યતાવ્યું છે. તો તે દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકારના કહેલ છે. દ્રવ્યાસ્રવ કર્મબંધનું કારણ નથી. કર્મબંધનું કારણ તો ભાવાસ્રવ જ છે, કારણકે પ્રાણાતિપાત આદિરૂપ ભાવોથી જ કર્મનું આગમન થાય છે. એ જ પ્રમાણે સંવરને વિષે પણ સમજવું. સંવર આસ્રવનો નિરોધક (રોકનાર) હોય છે, છિદ્રો દ્વારા નૌકામાં જાગતું પ્રવેશવું તે આસ્રવના સ્થાન સમાન છે અને તે છિદ્રોને બંધ કરી દેવા તે સંવરના સ્થાન

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૨ પ્રથમ અધર્મેદ્વારનિરૂપણમ્

૧૬

‘યથોદેશં નિર્દેશઃ, इति न्यायेन फलतो नामतश्चास्रवकारानाह—
‘पंचविहो’ इत्यादि।

મૂલમ્—પંચવિહો પળ્ળત્તો જિણેહિં ઇહ અળ્હઓ અળાદીઓ।

હિંસા ૧ મોસ ૨ મદત્ત ૩ અવંમં ૪ પરિગ્ગહં ૫ એવ ॥સૂ૦૨॥

ટીકા—‘જિણેહિં’ જિનેઃ=રાગાઘન્ટરક્કરિપુવિજેત્ત્વમિર્હદ્ધિઃ; ઇહ=જિન-
શાસને સંસારે વા, ‘અળ્હઓ’ આસ્રવઃ ‘અળાદીઓ’ અનાદિકઃ—નાસ્યાદિઃ
પ્રથમોત્પત્તિર્વિથતે इत्यनादिकः। उपलक्षणत्वादस्य ‘अपर्यवसितः’ इत्यपि दृश्यम्,

પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ ભાવ, પ્રાણાતિપાત આદિ વિરમણરૂપ ભાવસંવર સે
પ્રતિરુદ્ધ હોતે હેં । ઔર એસા હોને સે હી કર્મોં કા આગમન રુકના હૈ ।
“નિશ્ચયાર્થ”મેં “નિઃ” શબ્દકા અર્થ દૂર હોના હૈ । તથા ચયકા અર્થ જ્ઞાના-
વરણીયાદિ કર્મપુંજ હૈ । વહ કર્મપુંજ જિસ સ્થાનસે દૂર હો ચુકા હૈ એસા વહ
સ્થાન મોક્ષ હૈ, ઔર યહ મોક્ષ જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ નિશ્ચયાર્થ શાસ્ત્ર
હૈ । અથવા નિશ્ચય કા અર્થ મોક્ષ હૈ । હસ મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ કે લિયે હી
હસ શાસ્ત્ર કા પ્રણયન હુઆ હૈ ॥સૂ૦૧॥

ઉદ્દેશકે અનુસાર હી નિર્દેશ હુઆ કરતા હૈ ઇસ ન્યાય કો લેકર
સૂત્રકાર ફલ ઔર નામ કી અપેક્ષા અવ આસ્રવ કે પ્રકારોં કો પ્રકટ
કરતે હેં—‘પંચવિહો પળ્ળત્તો’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(જિણેહિં) જિનેન્દ્ર દેવને (ઇહ) અર્હન્ત પ્રભુકે શાસનમેં અથવા
હસ સંસારમેં (અળ્હઓ) આસ્રવ (અળાદીઓ) અનાદિ (પળ્ળત્તો)

સમાન છે. પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ ભાવ, પ્રાણાતિપાત આદિ વિરમણરૂપ ભાવસંવરથી
અટકે છે. અને એમ થયાથી જ નવીન કર્મોનું આગમન રોકાય છે.
“નિશ્ચયાર્થ” માં “નિઃ” શબ્દનો અર્થ ‘દૂર થવું’ થાય છે. તથા ‘ચય’નો
અર્થ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મપુંજ છે. તે કર્મપુંજ જે સ્થાનથી દૂર થઈ ગયો છે
તેવું સ્થાન મોક્ષ છે. અને તે મોક્ષ જેનું પ્રયોજન છે તે નિશ્ચયાર્થ શાસ્ત્ર
છે. અથવા નિશ્ચયનો અર્થ મોક્ષ પણ થાય છે. એ મોક્ષની પ્રાપ્તિને માટે જ
આં શાસ્ત્રની રચના કરવામાં આવી છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

ઉદ્દેશ પ્રમાણે જ નિર્દેશ થયા કરે છે તે ન્યાયે સૂત્રકાર ફળ અને નામની
અપેક્ષાએ હવે આસ્રવોના પ્રકારોને પ્રગટ કરે છે—‘પંચવિહો પળ્ળત્તો’ ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“જિણેહિં” જિનેન્દ્ર દેવે “ઇહ” અર્હન્ત પ્રભુના શાસનમાં, અટકે કે આ
સંસારમાં “અળ્હઓ” આસ્રવોને “અળાદીઓ” અનાદિ “પળ્ળત્તો” પ્રસન્ન

પ્રવાહાપેક્ષયા નાનાજીવાપેક્ષયા ચ સંસારસ્થાનાગપર્યવસિતત્વાત્ । આસ્રવસ્ય સાદિત્વે સપર્યવસિતત્વે ચ સ્વતઃ પરિમણે સિદ્ધાન્તામિવ સંસારિણામપિ કર્મવન્ધા-ભાવ પ્રસન્નઃ સ્યાત્ । કે તે પાસ્રવાઃ ? इत्याह-‘हिंसा’ इत्यादि, हिंसा=जीव-प्रज्ञप्त किया है । (हिंसामोक्षमदत्तं अवयवं परिग्रहं पंचविहो चेव) यह हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह, इस प्रकार से पांच तरह का ही है । रागादिक अन्तरंग रिपुओं को जो विजित कर लेते हैं उनका नाम जिन है । जिन प्रभु ने जो आस्रव को अनादि कहा है उसका कारण यह है कि यह संसार अनादि और अपर्यवसित है । यद्यपि भव्य-जीवों की अपेक्षा संसार में अनादिता होने पर भी अपर्यवसिता नहीं बनती है फिर भी नाना जीवों की अपेक्षा यह बन जाती है । आस्रव संसारी जीवों के ही होता है, मुक्त जीवों के नहीं । संसार में रहने वाले जीव ही संसारी जीव हैं । यह संसार प्रवाह एवं नानाजीवों की अपेक्षा जब अनादि अनंत है तो यह बात बन जाती है कि आस्रव ही अनादि अनंत है । अथवा यदि यों भी कह दिया जावे कि आस्रव ही संसार है और संसार ही आस्रव है । तो इस पक्षमें भी आस्रवमें अनादि अनंतता सुघटित हो जाती है । कारण इसकी प्रथमोत्पत्ति तो बनती नहीं है । यदि आस्रवको एकान्ततः सादि और सपर्यवसित ही माना जावे तो इस स्थिति में यह आस्रव जबतक संसारी जीवमें नहीं हुआ-तबतक वह जीव सिद्धों

(ખતાવ્યા) કર્તા છે. “हिंसામોક્ષમદત્તં અવયવં” પરિગ્રહં પંચવિહો ચેવ” તે હિંસા, અસત્ય, ચોરી, કુશીલ અને પરિગ્રહ એમ પાંચ પ્રકારના છે. રાગાદિ આંતરિક દુશ્મનોને જે છોડે છે તેને જિન કહે છે. જિન પ્રભુએ આસ્રવોને અનાદિ ખતાવ્યા છે તેનું કારણ એ છે કે આ સંસાર અનાદિ અને અપર્યવસિત અનંત છે. જે કે ભવ્યજીવોની અપેક્ષાએ સંસારમાં અનાદિતા હોવા છતાં પણ અપર્યવસિતા બનતી નથી, છતાં પણ નાના જીવોની અપેક્ષાએ તે બને છે. આસ્રવ સંસારી જીવોને જ થાય છે, મુક્ત જીવોને થતા નથી. સંસારમાં રહેનાર જીવો જ સંસારી જીવ છે. આ સંસાર પ્રવાહ અને નાના જીવોની અપેક્ષાએ જે અનાદિ અનંત છે તો એ વાત પણ નક્કી થઈ જાય છે કે આસ્રવ પણ અનાદિ અનંત છે. અથવા જે એમ પણ કહેવામાં આવે કે આસ્રવ જ સંસાર છે અને સંસાર જ આસ્રવ છે, તો એ રીતે પણ આસ્રવમાં અનાદિ અનંતતા સુઘટિત થઈ જાય છે. કારણકે તેની પ્રથમ ઉત્પત્તિ તો સંભવી શકતી નથી. જે આસ્રવને એકાન્તતઃ સાદિ અને સપર્યવસિત (સાન્ત) જ માનવામાં આવે તો તે પરિસ્થિતિમાં તે આસ્રવ બધાં મુખી સંસારીજીવમાં

સુદર્શિની ટીકા અං ૧ સુ૦ ૨ પ્રથમ અધર્મદ્વારનિરૂપણમ્

૨૧

વાતઃ ૧ । ‘મોસં’ મૃવા-અસત્યભાષણમ્ ૨ । ‘અદત્તં’ નદત્તમદત્તં=પરદ્રવ્યગ્રહણમ્ ૩ । ‘અર્થમં’ અબ્રહ્મ-બ્રહ્મ=કામસેવનત્યાગઃ ન બ્રહ્મ અબ્રહ્મ-અકુશલાનુષ્ઠાનં સ્ત્રી પુત્ર સહો મૈથુનમિત્યર્થઃ ૪ । ‘પરિગ્રહં’ પરિગ્રહઃ-પરિગ્રહતે=આદીયતે इति પરિગ્રહઃ સ ચ નવચિધઃ—‘ધનં ૧, ધાન્યં ૨, ક્ષેત્રં ૩, વાસ્તુકં ૪, રૂપ્યં ૫, સુવર્ણં ૬, કુપ્યં ૭, દ્વિપદઃ ૮, ચતુષ્પદઃ ૯ । ‘ચૈવ’ ચૈવ ચેતિ સમુચ્ચયાર્થઃ, एव સંવોડ-કી तरह કર્મબંધનસે સુક્ત હી રહેમાં । તથા સપર્યવસિત માનનેમંં મી યહી આપત્તિ રહેમી । હસ તરહ સંસારી જીવોં કે મી કર્મબંધન કે અભાવ કા પ્રસંગ આકર પ્રાપ્ત હોમ્ । હસલિયે યહી માનના ચાહિયે કિ યહ આસ્રવ-પ્રવાહ નાના જીવોં કી અપેક્ષા અનાદિ અનંત હૈ । અપર્યવસિત યહ પદ મૂલ ગાથા મંં નહીં હૈ । ફિર મી અનાદિ પદ સે ડસકા ઉપલક્ષણ કિયા ગમ્ । પ્રમાદ કે યોગ સે જીવ કા ઘાત હોમ્ યહ હિંસા હૈ । પ્રમાદ કે યોગ સે અસત્ય ભાષણ કરના હસકા નામ શૂઠ-મોસ હૈ । પ્રમાદ કે યોગ સે પર કે દ્રવ્ય કા ગ્રહણ કરના અદત્તાદાન ચોરી હૈ । કામ સેવન કરને કા પરિત્યાગ કરના હસકા નામ બ્રહ્મ હૈ । હસ બ્રહ્મકા નહીં હોના અબ્રહ્મ હૈ । અર્થાત્ મૈથુન સેવન કરને રૂપ અકુશલાનુષ્ઠાનમેં પ્રવૃત્ત રહના સો અબ્રહ્મ હૈ । જો ગ્રહણ કિયા જાવે ડસકા નામ પરિગ્રહ હૈ, યહ પરિગ્રહ નૌ પ્રકારકા હૈ-ધન ૧, ધાન્ય ૨, ક્ષેત્ર ૩, વાસ્તુ ૪, રૂપ્ય ૫, સુવર્ણ ૬, કુપ્ય ૭, દ્વિપદ ૮ ઓર ચતુષ્પદ ૯ । “ચ” યહ શબ્દ યહાં

ન થાય ત્યાં સુધી તે જીવ સિદ્ધોની જેમ કર્મબંધનથી મુક્ત બ રહેશે. તથા સપર્યવસિત માનવામાં પણ તે જ મુશ્કેલી નડશે. એ રીતે સંસારી જીવોમાં પણ કર્મબંધનના અભાવની સ્થિતિ આવી જશે. તેથી જેમ જ માનવું જોઈએ કે તે આસ્રવ પ્રવાહ નાના જીવોની અપેક્ષાએ અનાદિ અનંત છે. ‘અપર્યવસિત’ પદ મૂળ ગાથામાં નથી. છતાં પણ અનાદિ પદથી તેનું ઉપલક્ષણ કરવામાં આવ્યું છે. પ્રમાદના યોગથી જીવની હત્યા થવી તે હિંસા ગણાય છે. પ્રમાદના યોગથી અસત્ય બોલવું તેનું નામ શૂઠ-મોસ છે. પ્રમાદના યોગથી પારકાનું દ્રવ્ય ગ્રહણ કરવું તેને અદત્તાદાન-ચોરી કહેવાય છે કામ સેવન કરવાનો પરિત્યાગ કરવો તેનું નામ બ્રહ્મ છે. આ બ્રહ્મનો અભાવ હોવો તે અબ્રહ્મ છે. એટલે કે મૈથુન સેવન કરવા રૂપ અશુભ અનુષ્ઠાનમાં પ્રવૃત્ત રહેવું તે અબ્રહ્મ કહેવાય છે. પરિગ્રહ એટલે ગ્રહણ કરવું. તે પરિગ્રહ નવ પ્રકારનો છે—(૧) ધન, (૨) ધાન્ય, (૩) ક્ષેત્ર, (૪) વાસ્તુ, (૫) ચાંદી, (૬) સુવર્ણ, (૭) કુપ્ય, (૮) દ્વિપદ અને (૯) ચતુષ્પદ. “ચ” શબ્દ અહીં સમુચ્ચયાર્થક છે

વધારણાર્થઃ । હિંસાદિભેદતઃ પશ્ચદિથા એવ આસ્રવાઃ સન્તીત્યર્થઃ । અનેન દશાધ્ય-
યનસ્ય પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રસ્યાદ્યાનિ પશ્ચાધ્યયનાનિ સૂચિતાનિ ॥૨૦॥

અથ પ્રથમાધ્યયને કતિદ્વારાણિ ? इति द्वारनिरूपणार्थं श्री सुधर्मास्वामी
जम्बूस्वामिनं प्रत्याह—‘जारिसओ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જારિસઓ૧, જંનામા૨, જહ્યકઓ૩, જારિસં ફલં દેહ૪ ।

जेवि य करैति पाव ५, पाणवहं तं निसामेह ॥सू०३॥

ટીકા—સ પ્રાણિવધરૂપ આસ્રવઃ ‘જારિસઓ’ યાદશકઃ=યત્સ્વરૂપઃ, યાદશં
તસ્ય સ્વરૂપમસ્તિ, ‘જં નામા’ યન્નામા યાનિ=યત્સંઘ્યકાનિ નામાનિ સન્તિ
યસ્યેતિ સ યન્નામા ભવતિ । ‘જહ્યકઓ’ યથા ચ કૃતઃ=પ્રાણિભિઃ યથા યેન-
મન્દતીત્રાદિપરિણામેન કૃતઃ=સમાચરિતઃ-આચરણચિપયીકૃતઃ । આચરિતઃ સન્
‘જારિસં’ યાદશં નરકશમનાદિકં ફલં ‘દેહ’ દદાતિ । ‘જેવિ ય’ યેડપિ ચ ‘પાવા’
સમુત્ત્ત્વગાર્થકં હૈં ઓર “ એવ ” શબ્દ અવધારણાર્થકં હૈં । હમસે યહ પુષ્ટ
હોતા હૈં કિ આસ્રવ, હિંસા આદિ કે ભેદ સે પાંચ હો પ્રકાર કા હૈં ।
કમતી યદતી નહીં હૈં । હસ કથન સે સૂત્રકાર ને દસ અધ્યયનાત્મક
હસ પ્રશ્નવ્યાકરણ શાસ્ત્ર કે આદિ કે પાંચ અધ્યયન સૂચિત કિયે હૈં ॥સૂ.૨॥

અથ સુધર્માસ્વામી “ પ્રથમ અધ્યયન મેં કિતને દ્વાર હૈં ” હસ જંબૂ-
સ્વામી કે પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેને કે લિધે દ્વાર નિરૂપણ કે નિમિત્ત કહતે હૈં
‘ જારિસઓ જં નામા ’ હત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—યહ પ્રાણિવધરૂપ આસ્રવ (જારિસઓ) જૈસા હૈં (જં નામા)
જિતને હસકે નામ હૈં (જહ્યકઓ) પ્રાણિયોંદ્વારા યહ જિન મન્દ તીત્ર આદિ
પરિણામો સે કિયા જાને પર (જારિસં ફલં દેહ) જિસ પ્રકાર કા ઉન્હેં

છે, અને “ એવ ” શબ્દ અવધારણાર્થક છે. તેનાથી એ વાતને પુષ્ટિ મળે છે
કે આસ્રવ, હિંસા આદિના ભેદથી પાંચ જ પ્રકારના છે. વધારે કે ઓછા નથી.
આ કથનથી સૂત્રકારે દશ અધ્યયનવાળા આ પ્રશ્નવ્યાકરણ શાસ્ત્રના શરૂઆતનાં
પાંચ અધ્યયન સૂચિત કર્યાં છે. ॥ સૂ. ૨ ॥

હવે સુધર્માસ્વામી “ પ્રથમ અધ્યયનમાં કેટલાં દ્વાર છે. ” એ પ્રકારના
જંબૂસ્વામીના પ્રશ્નનો ઉત્તર દેવાને માટે દ્વારનિરૂપણને નિમિત્ત કહે છે—
“ જારિસઓ જં નામા ” હત્યાદિ.

ટીકાર્થ—આ પ્રાણિવધરૂપ આસ્રવ “જારિસઓ” જેવો છે, “જં નામા” જેટલાં
તેનાં નામ છે, “ જહ્યકઓ ” પ્રાણિઓ દ્વારા તે મંદ, તીવ્ર આદિ પરિણામોથી
કરાતા “ જારિસં ફલં દેહ ” જે પ્રકારનું તેમને નરકાદિરૂપ ફળ આપે છે, તથા

પાપા:-પાપકર્મશીલા: 'પાણવહં' પ્રાણવધ-માણા: સન્તિ ચેપામિતિ તે પ્રાણા: = પ્રાણિન: 'અર્શ આદિત્વાદ ચ, તેષાં વધો=હિંસા પ્રાણવધસ્તં જીવયાતં ' કરેતિ ' કુર્વન્તિ 'તં' તત્=પથમાસ્રવદ્વારં વૃક્ષ્યમાણં ' નિસામેહ ' નિઃસયત=મૃણુત । હે જંબૂ ! મમ કથયત: શ્રુણુ इत्यर्थः, અત્યારેત્વાદ્ બહુવચનમ્ ॥સૂ.૨॥

સમ્પ્રતિ 'જારિસઓ' યાદશઃ, इति द्वारं विवृण्वन् प्राणवधस्वरूपमाह— 'પાણવહો' इत्यादि ।

મૂલમ્—પાણવહો નામ एसो जिणेहिं भणिओ-पावो१, चंडो२, रुदो३, खुदो४, साहसिओ५, अणारिओ६, गिग्घिणो७, णिस्संसो८, महब्भओ९, पइभओ१० अइभओ११, वीहणओ १२, तासणओ१३, अणज्जओ१४, उव्वेयणओ य, णिरवयक्खो १६, णिद्धमो१७, णिप्पिवासो१८, णिक्कलुणो१९, निरयवास निधणगमणो२०, मोहमहब्भयपयट्ठओ२१, मरणवमणस्सो२२, पढमं अहम्मं अवयस्स ॥ सू.०४ ॥

નરકાદિરૂપ ફલ દેતા હૈ, તથા (જે વિ ચ પાણવહં કરેતિ) જે પાપી હસ પ્રાણવધ કો કરતે હૈં । યહ સઘ વિષય હસ પ્રથમ આસ્રવદ્વાર મેં કહા જાવેગા । સો (તં નિસામેહ) હે જંબૂ ! તુમ ઉસકો સુનો ।

બાવર્થ—સુધર્મા સ્વામી હસ ગાથા દ્વારા યહ સમજા રહે હૈં કિ હે જંબૂ ! અવ હસ હિંસારૂપ પ્રથમ આસ્રવદ્વાર કા સ્વરૂપ, નામ ઓર ફલ હન ત્રીન દ્વારાંસે હસ હિંસારૂપ પ્રથમ આસ્રવદ્વારકા નિરૂપણ કિયા જાયગા । તથા સાથ ૨ મેં યહ ભી સ્પષ્ટ કહા જાયગા કિ હસ પ્રાણિવધ કો કોન જીવ કરતે હૈં । હસ ગાથા મેં “પાણવહ” હસ પદ સે પ્રાણ જિનકે હોતે હૈં એસે પ્રાણી એકેન્દ્રિયાદિક ગૃહીત હુવ હૈં । ઉનકા જો વધ હૈ વહ પ્રાણવધ હૈ ॥ સૂ. ૨ ॥

“જે વિચ પાપા પાણવહં કરેતિ” એ પાપી આ પ્રાણવધ કરે છે, તે સમસ્ત વિષય આ પહેલા આસ્રવદ્વારમાં કહેવામાં આવશે. તે “સો તં નિસામેહ” હે જંબૂ ! તું તે સાંભળ.

ભાવાર્થ—સુધર્માસ્વામી આ ગાથા દ્વારા એ સમજાવે છે કે હે જંબૂ ! આ હિંસારૂપ પ્રથમ આસ્રવદ્વારનું સ્વરૂપ, નામ અને ફળ એ ત્રણેનું દ્વારો વડે નિરૂપણ કરવામાં આવશે. તથા તેની સાથે એ પણુ સ્પષ્ટ કરવામાં આવશે કે એ પ્રાણવધ કયો (પાપી) છવ કરે છે. આ ગાથામાં “પાણવહ” એ પદથી એને પ્રાણ હોય છે તેવાં એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણી અહણ કરાયેલ છે. તેમનો એ વધ છે તેને પ્રાણવધ કહે છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

टीका—‘पाणवहो’ प्राणवधो नाम ‘एसो’ एषः=वक्ष्यमाणः ‘जिणेहिं’ जिनैः ‘भणिओ’ भणितः=कथितः। स चायम्—‘पावो’ पापः=पापप्रकृतीनां बन्धकारणत्वात्। ‘चंडो’ चण्डः=क्रोधजनकत्वात् ‘रुहो’ रौद्रः=रौद्ररसप्रवर्तितत्वात्, ‘खुहो’ क्षुद्रः=क्षुद्रजनाचरितत्वात्, ‘साहसिओ’ साहसिकः=असमीक्ष्यकारि जनप्रवर्तितत्वात्। ‘अणारिओ’ अनार्यः=अनार्यपुरुषैराचरितत्वात्। ‘णिग्धिणो’ निर्घृणः=न विद्यते घृणा=पापजुगुप्सा येषां ते निर्घृणाः=चिन्दिषाः, तैराचरितत्वात्। ‘णिसंसो’ नृशंसः=क्रूरकर्माचरितत्वात्, ‘महम्मओ’ महाभयः=महाभयजनकत्वात्, ‘पहम्मओ’ प्रतिभयः=सकलप्राणिनां भयहेतुत्वात्,

अत्र सूत्रकार ‘जारिसओ’ इस द्वार का विवरण करते हुए प्राणवध के स्वरूप को कहते हैं—‘पाणवहो नाम एसो’ इत्यादि।

टीकार्थ—(एसो पाणवहो नाम) यह प्राणवध (जिणेहिं) जिनेन्द्र देवने (पावो) पाप प्रकृतियों के बंध का कारण होने से पापरूप १, (चंडो) क्रोध का जनक होने से, चंडरूप २, (रुहो) रौद्र रस से प्रवर्तित होने के कारण रौद्ररूप ६, (खुहो) क्षुद्र जनों द्वारा आचरित होने के कारण क्षुद्ररूप ४, (साहसिओ) अविचार शील मनुष्यों द्वारा किया हुआ होने के कारण साहसिक रूप ५, (अणारिओ) अनार्य जनों द्वारा विहित होने के कारण अनार्यरूप ५, (णिग्धिणो) दया विहीन हृदयवाले मनुष्यों द्वारा सेवित होने के कारण निर्घृणरूप ७, (णिसंसो) क्रूर कर्मवाले जनों द्वारा किया हुआ होने के कारण नृशंसरूप ८, (महम्मओ) महान् भयका जनक होने के कारण महा भय रूप ९, (पहम्मओ) समस्त प्राणियोंको भयका हेतु—

इसे सूत्रकार “जारिसओ” आ द्वारतुं वधुं न करतां प्राणवधतुं स्वरूप छोड़े छे—“पाणवहो नाम एसो” इत्यादि।

टीकार्थ—“एसो पाणवहो नाम” आ प्राणवध “जिणेहिं” जिनेन्द्र देवे (१) “पावो” पाप प्रकृतियोंना मधुतुं करखे डोवाथी पापइय, (२) “चंडो” क्रोधने पेदा करनार डोवाथी चंडइय, (३) “रुहो” रौद्र रसथी प्रवर्तित डोवाने करखे रौद्रइय, (४) “खुहो” क्षुद्रजने द्वारा आचरित डोवाथी क्षुद्रइय, (५) “साहसिओ” अविचारी मनुष्ये द्वारा करतो डोवाने करखे साहसिकइय, (६) “अणारिओ” अनार्य डोडो द्वारा करतो डोवाने करखे अनार्यइय, (७) “णिग्धिणो” दयारहित हृदयवाला डोडो द्वारा करतो डोवाथी निर्घृणइय, (८) “णिसंसो” क्रूर कर्मवाला डोडो द्वारा करतो डोवाने करखे नृशंसइय, (९) “महम्मओ” महान् भयने जनक डोवाथी महाभयइय, (१०) “पहम्मओ” समस्त प्राणीओने भयने हेतुभूत डोवाने करखे प्रतिभयइय, (११) “अहम्मओ”

सुवर्णिनी टीका अ० १ सू० ३-४ प्रथम अधर्मद्वारनिरूपणम्

२५

‘अहम्भओ’ अतिभयः—मरणान्तभयजनकत्वात्, ‘बीहणओ’ भवानकः भयोत्पादकत्वात् ‘तासणओ’ त्रासनकः अकस्मात्क्षोभजनकत्वात्, ‘अणज्जओ’ अन्यायः—न्यायादनपेतः=युक्तः न्यायः, न न्यायः—अन्यायः न्यायवर्जितत्वात्। ‘उब्बेयणओ य’ उद्देगजनकत्वं=उद्देगकरः—हृदयोद्देगजनकत्वात्। चकारः समुच्चयार्थः। ‘निरवयक्खो’ निरपेक्षः—निर्गता अपेक्षा परहितत्रिषया यस्य स तथा परमाण्वाणवाञ्छावर्जितत्वात्, ‘णिद्धम्मो’ निर्धर्मः—श्रुतचारित्रधर्मवर्जितत्वात्, ‘णिप्पिवासो’ निष्पिपासः—प्राणिस्नेहरहितत्वात्, ‘णिकलुणो’ निष्करुणः—दयाभाववर्जितत्वात्, ‘निरयवासनिधनगमणो’ निरयवासनिधनगमनः, निरयवासः=नरकावासः, तत्र गमनमेव निधनं=पर्यवसानं अन्तिमफलं यस्य स निरयवासनिधनगमनः नरकप्रापकत्वात्।

भूत होने के कारण प्रतिभयरूप १०, (अहम्भओ) मरणान्तभयजनक होने से अतिभयरूप ११, (बीहणओ) भय के उत्पादक होने से भयकारकरूप १२, (तासणओ) अकस्मात् क्षोभ का कारण होने से त्रासनकरूप १३, (अणज्जओ) अवैध होने के कारण—अनीति रूप होने के कारण अन्यायरूप १४, (उब्बेयणओ) हृदयमें उद्देग का जनक होने से उद्देगकर्तृरूप १५, (निरवयक्खो) परप्राणी के प्राणों की रक्षा करने की वाञ्छा से रहित होने के कारण निरपेक्षरूप १६, (णिद्धम्मो) श्रुतचारित्र रूप धर्म से वर्जित होने के कारण निर्धर्मरूप १७, (णिप्पिवासो) प्राणियों के प्राणों के प्रति ममताभाव से रहित होने के कारण निष्पिपासारूप १८, (णिकलुणो) दयाभाव से रहित होने के कारण निष्करुणारूप १९, (निरयवासनिधनगमणो) तथा नरकगमन ही जिसका अन्तिम फल है ऐसा होने के कारण निरयवास निधनगमनरूप २०, (मोहमह्भयपयट्ठओ) यह

जानना लेणमइयं होवाथी अतिभयइयं, (१२) “बीहणओ” भयने उत्पन्न करनेपर होवाथी लयकारइयं, (१३) “तासणओ” अचानक क्षोभना कारणइयं होवाथी त्रासनइयं, (१४) “अणज्जओ” अवैध होवाथी—अनीतिइयं होवाने कारणे अन्यायइयं, (१५) “उब्बेयणओ” हृदयमें उद्देग पैदा करनेपर होवाथी उद्देगकारक, (१६) “निरवयक्खो” पर प्राणीनां प्राणोनी रक्षा करवानी धञ्छाथी रहित होवाने कारणे निरपेक्षइयं, (१७) “णिद्धम्मो” श्रुत-चारित्रइयं धर्मथी रहित होवाने कारणे निर्धर्मइयं, (१८) “णिप्पिवासो” प्राणीओनां प्राणो तत्तत् ममता आवथी रहित होवाने कारणे निष्पिपासाइयं, (१९) “णिकलुणो” दया-भावथी रहित होवाथी निष्करुणइयं, (२०) “निरयवासनिधनगमणो” तथा नरक गमनपर जेतुं अन्तिम इण छे, ओवो होवाने कारणे निरयवास निधनगमनइयं,

‘મોહમહાભયપયદ્વઓ’ મોહમહાભયપ્રવર્તકઃ, મોહઃ=અજ્ઞાનમ્ સ એવ મહાભયહેતુત્વાત્ મહાભયં તસ્ય પ્રવર્તકો યઃ સ મોહમહાભયપ્રવર્તકઃ। ‘મરણવેમણસ્સો’ મરણવૈમનસ્યઃ-પરણેન=મૃત્યુરુપકારણેન પ્રાણિનાં વૈમનસ્યં=દૈન્યં યસ્માત્ સ મરણવૈમનસ્યઃ દીનમનઃ કારિત્વાત્। ‘પદ્ધમં અહમ્મં’=પ્રથમમધર્મમ્ અધર્મદ્વારમ્ ‘અવ્વયસ્સ’ અવ્રતસ્ય=વ્રતરહિતસ્ય ॥ સૂ. ૪ ॥

પ્રાણવધ મોહ-અજ્ઞાન રુપ મહાભય કા પ્રવર્તક હૈ ૨૧, ઓર (મરણવેમણસ્સો) હસ સે પ્રાણિયોં મેં મૃત્યુરુપ કારણ કો લેકર કે દીનતા આતી અતઃ યહ મરણ વૈમનસ્યરુપ હૈ ૨૨, યેસા (મણિઓ) ભગવાન ને કહા હૈ।

ભાવાર્થ—હસ સૂત્ર દ્વારા પ્રાણિહિંસારુપ આસ્રવ કેસા હૈ યહ વાત સૂત્રકાર ને સ્પષ્ટ કી હૈ, વે કહતે હૈં કિ યહ પ્રાણિહિંસારુપ આસ્રવ પાપ-પ્રકૃતિયોં કે બંધ કા કારણ હૈ। કારણ હિંસા કરનેવાળા જીવ પ્રમાદ કે યોગ સે પ્રાણોં કા વ્યપરોપક કર્તા હોને સે પાપપ્રકૃતિયોં કા હીં બંધક હોતા હૈ. અતઃ યહ પ્રાણિહિંસા પાપરુપ હૈ। પર કી હિંસા કરતે સમય આત્મા મેં ક્રોધ પરિણતિ તીવ્રરુપ સે રહતી હૈ, કયાં કિ હિંસક જીવ હિંસ્ય જીવ જૈસી ૨ અપની રક્ષા આદિ કે કારણકલાપ જુદાતા હૈ ઉન્હેં ક્રોધ કે આવેશ મેં તન્મય હોકર નષ્ટ કરતા હૈ—હસલિયે યહ પ્રાણિહિંસા ચંડરુપ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ। હસી તરફ રોદ આદિ રુપતા મી હસ મેં અપને ૨ ઉન ૨ મિલ ૨ કારણોં કો લેકર ઘટિત કર લેના વાહિયે। હસ પ્રકાર સે યે પ્રથમ આસ્રવરુપ અધર્મ દ્વાર હૈ। હસમેં પ્રાણિહિંસા કા કયા સ્વરુપ હૈ યહ સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ ॥સૂ. ૪॥

(૨૧) “મોહમહાભયપયદ્વઓ” તે પ્રાણવધ, મોહ-અજ્ઞાનરૂપ મહાભયનો પ્રવર્તક છે, અને (૨૨) “મરણવેમણસ્સો” તેનાથી પ્રાણીજીવમાં મૃત્યુરૂપ કારણને કીધે દીનતા આવે છે, તેથી તે મરણવૈમનસ્યરૂપ છે, એવું “મણિઓ” ભગવાને બોલેલ છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્રદ્વારા પ્રાણીવધરૂપ આસ્રવ કેવો છે તે વાતનું સૂત્રકારે સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. તેઓ કહે છે કે તે પ્રાણીવધરૂપ આસ્રવ પાપ પ્રકૃતિયોના બંધનું કારણ છે. કારણ કે હિંસા કરનાર છવ પ્રમાદના યોગથી પ્રાણીનો નાશ કર્તા હોવાથી પાપપ્રકૃતિયોનો બંધક હોય છે, તેથી તે પ્રાણવધ પાપરૂપ છે. પરની હિંસા કરતી વખતે આત્મામાં ક્રોધપરિણતિ તીવ્રરૂપે રહે છે, કારણ કે હિંસ્યછવ જેમ જેમ પોતાના રક્ષણ માટે પ્રયત્ન કરે છે તેમ તેમ હિંસક-છવ દોષના આવેશમાં તલલીન થઈને તેનો નાશ કરે છે, તે કારણે પ્રાણવધને ચંડરૂપ કહેલ છે. એ જ રીતે રોદરૂપતા આદિ તેનાં લક્ષણો પણ ભિન્ન ભિન્ન કારણોને લઈને પડાવી શકાય છે. આ રીતે તે પ્રથમ આસ્રવરૂપ અધર્મદ્વાર છે. તેમાં પ્રાણીવધનું કેવું સ્વરૂપ છે તે સમજાવવામાં આવ્યું છે ॥ સૂ. ૪ ॥

સુરશિની ટીકા અંક ૧ સૂ ૫ મૃગાવાદરૂપ દ્વિતિયં અધર્મદ્વારનિરૂપણમ્ ૨૭

પૂર્વ પ્રાણિવધસ્ય સ્વરૂપમુક્તમ્, इदानीं यन्मायेति प्रतिज्ञातानि तस्य नामा-
न्याह—‘तस्से’ત્યાદિ ।

મૂલમ્—તસ્સ ય ઇમાણિ નામાણિ ગોણાણિ હુંતિ તં જહા—
પાણવહ૧, ઉમ્મૂલના સરીરઓ૨, અત્રીસંભો૩, હિંસવિહિંસા૪,
તહા અકિચ્ચં ચ૫, ઘાયણાય૬, મારણાય૭, વહણા૮, ઉદવણા૯,
નિવાયણા ય૧૦, આરંભસમારંભો૧૧, આયકમ્મસ્સુવદનો ભેયાણિ-
દ્વવણગાલણા ય સંવટ્ઠમસંઘેવો૧૨, મચ્ચૂ૧૩, અસંજમો૧૪, કઙ-
ગમદ્ધં૧૫, વોરમણં૧૬, પરમવસંકામકારઓ૧૭, દુગ્ગતિપ્પવાઓ
૧૮, પાવકોવો ય૧૯, પાવલોભો ય૨૦, છવિછેઓ૨૧, જીવિયંતકરણો
૨૨, મયંકરો૨૩, અળકરો૨૪, વજ્જો૨૫, પરિતાવળ અળહઓ૨૬,
વિણાસો૨૭, નિજ્જવળો૨૮, હુંપળા૨૯, ગુણાણં વિરાહણ૩૦ તિ
વિ ય તસ્સ ઇવમાદીણિ ણામધેજ્ઞાણિ હુંતિ તીસં પાણવહસ્સ
કહુસસ્સ કહુવફલદેસગાઈં ॥ સૂ ૫ ॥

ટીકા—‘તસ્સ ય’ તસ્ય ચ પ્રાણવધસ્ય ‘ઇમાણિ’ ઇમાણિ અનુપદં વશ્ય-
માણાણિ ‘નામાણિ’ નામાણિ ‘ગોણાણિ’ ગોણાણિ-ગુણનિષ્પન્નાણિ ‘હુંતિ’
ભવન્તિ ‘તીસં’ ત્રિશત્, ‘તં જહા’ તદ્વયા—‘પાણવહ’ પ્રાણવધઃ=જીવઘાતઃ૧,
‘ઉમ્મૂલના સરીરઓ’ ઉમ્મૂલના શરીરતઃ=વૃક્ષોત્પાટનમિવ ઉમ્મૂલના જીવસ્ય

પ્રાણિહિંસાકા હસ પ્રકાર સ્વરૂપ કહકર અવ સૂત્રકાર હસકે કિતને
નામ હૈં યહ પ્રકટ કરતે હૈં—‘તસ્સ ય ઇમાણિ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(તસ્સ ગોણાણિ ઇમાણિ નામાણિ તીસં હુંતી) ઉસ પ્રાણિહિંસાકે
યે ગુણનિષ્પન્નતીસ નામ હૈં (તં જહા) વે હસ પ્રકારસેહૈં-(પા ગવહ) જીવઘાત૧,
(ઉમ્મૂલના સરીરઓ) શરીરસે વૃક્ષકો ઉત્પાડનેકો તરહ જીવકી ઉમ્મૂલના૨,

પ્રાણીવધનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ સમજાવવાને હવે સૂત્રકાર તેનાં કેટલાં
નામ છે તે પ્રગટ કરે છે—“તસ્સ ય ઇમાણિ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“તસ્સ ગોણાણિ ઇમાણિ નામાણિ તીસં હુંતિ” તે પ્રાણીવધના શુભ પ્રમાણે
ત્રીસ નામ છે “તં જહા” તે લેદ આ પ્રમાણે છે—(૧) “પાણવહ” ઇવહત્યા,
(૨) “ઉમ્મૂલના સરીરઓ” વૃક્ષને ઉપાડવાની જેમ શરીરમાંથી જીવની ઉમ્મૂલના, (૩)

शरीरादिति २ । 'अवीसंभो' अविश्रम्भः-अविश्वासः-प्राणवधकारकेषु जीवानां विश्वासे नैव भयति इति हिंसाया अविश्रम्भकारणत्वादविश्रम्भव्यवहारः ३, 'हिंसविहिंसा' हिंस्यविहिंसा हिंसयानां=जीवानां विहिंसा प्राणवियोगः अजीवानां हिंसाया अभावात् 'हिंसयाना' मितिकथितम् ४ । ननु अरुणिणः हिंसेव न सम्भवति इति हिंसविहिंसेत्युक्तावपि किमायातमिति चेन्न स्वरूपत एव प्राणवियोग-रूपहिंसायागृह्यमाणत्वात् । उक्तञ्च—

“पञ्चेन्द्रियाणि त्रिविधं बलं च उच्छ्वासनिच्छ्वासमथान्यदायुः ।

प्राणादशैते भगवद्भिस्तुक्तास्तेषां त्रियोमीकरणं तु हिंसा ॥ १ ॥”

‘तद्वा अकिञ्चं च’ तथा अकृत्यं च-तथा तेन प्रकारेण अकृत्यम्-अकरणीयं भगवता निषिद्धत्वात् ५ । ‘घायणा य’ घातना च-हननं ६ । ‘मारणा य’ मारणा च-प्राणपीडनम् ७ । ‘वहणा’ हननम् ८ । ‘उद्वणा’ उपद्रवणम् ९, ‘निवायणा’ निपातना-यस्य यावन्तः प्राणाः सन्ति तस्य तेभ्यः निपातनं=दूरीकरणम्, यद्वा-‘तिवायणा’ इति पाठे त्रिपातना-त्रयाणां मनोवाक्यायानां घातना=ध्वंसना १०, ‘आरंभसमारंभो’ आरंभ्यन्ते=विनाश्यन्ते इति आरम्भाः=प्राणिनः तेषां समारम्भः=परितापः-“परितापकरो भवे समारंभो” इति वचनात् । आरम्भो वा कृष्यादि व्यापारः तेन समारम्भः=प्राणिपीडनम् ११ । ‘आउयकम्मस्सुवहवो भेयनिद्ववण गालणा य संवट्ठगसंखेवोत्ति’ आयुःकर्मण उपद्रवः भेदः निष्ठापनं गालना च संप्रवर्तकः संक्षेपः, आयुः कर्मण उपद्रवः=समुच्छेदः, भेदः=विनाशः, निष्ठापनं=समापनम्, गालना=निस्सारणम् । संप्रवर्तकः-सर्वबलसामर्थ्यादीनां संकोचनम्, संक्षेपः-अभावकरणम् १२ । ‘मच्चू’ मृत्युः=मरणम् १३, ‘असंजमो’ असंजमः-न (अवीसंभो) अविश्रम्भः, (हिंसविहिंसा) हिंस्यविहिंसा, तथा (अकिञ्चं) अकृत्य, (घायणा) घातना, (मारणा) मारण, (वहणा) हनन, (उद्वणा) उपद्रवणा, (निवायणा) निपातना, (आरंभसमारंभो) आरंभ-समारंभ ११, (आउयकम्मस्सुवहवो भेयणिद्ववणगालणा य संवट्ठगसंखेवो) आयुःकर्म का उपद्रव, भेद, निष्ठापन, गालना, संप्रवर्तक, संक्षेप १२, (मच्चू) मृत्यु १३, (असंजमो) असंजम १४, (कडगमहणं)

“अवीसंभो” अविश्रम्भ, (४) “हिंसविहिंसा” हिंस्यविहिंसा, (५) “अकिञ्चं” अकृत्य, (६) “घायणा” घातना, (७) “मारणा” मारण, (८) “वहणा” हनन, (९) “उद्वणा” उपद्रवणा, (१०) “निवायणा” निपातना, (११) “आरंभसमारंभो” आरंभसमारंभ, (१२) “आउयकम्मस्सुवहवो भेयणिद्ववणगालणा य संवट्ठगसंखेवो” आयुःकर्मना उपद्रव, भेद, निष्ठापन, गालना, संप्रवर्तक, संक्षेप, (१३) “मच्चू” मृत्यु, (१४) “असंजमो” असंजम, (१५) “कडगमहणं” कटक

सुशिक्षिनी टीका अ० १ सू०५ मृषावादरूप द्वितीयं अधर्मद्वारनिरूपणम् २९

संयमोऽसंयमः सावधानुष्ठानम् १४। 'कडगमर्दनं' कटकमर्दनं-कटकेन-सैन्येन क्लिप्त्वेन वा आक्रम्य मर्दनं, प्राणवधकारणत्वादौषचारिकः प्राणवधे कटकमर्दनं व्यवहारः १५। 'बोरमणं' व्युपरमणं जीवस्य प्राणतो वियोजीकरणम् १६। 'पर-भवसंक्रामकारओ' परभवसंक्रमकारकः=नरकनिगोदादि चतुर्गतिसंसार पुनः पुनः परिभ्रमणहेतुत्वात् १७। 'दुग्गइप्पवाओ' दुर्गतिप्रपातः-दुर्गती नरकादि दुष्टगती प्रपातयतीति दुर्गतिप्रपातः=नरकनिगोदादि कुगति दायकः १८। 'पावकोवो य' पापकोपश्च=पापं कोपयति=प्रवर्धयति इति पापकोपः, सकलपापोत्पादकत्वात्, यद्वा-पापस्य कोपकार्यत्वात्पापकोपः क्रोधस्वरूप इत्यर्थः १९, 'पावलोभो य' पापलोभश्च-पापं लुभयति=धातुनामनेकार्थत्वात् संश्लिष्यति यस्मात् स पापलोभः=पापागमनद्वारलक्षणः २०। 'छविच्छेओ' छविच्छेदः-छविः=शरीरं तस्य छेदः=कर्तनमिति छविच्छेदः=शरीरकर्तनम्। यद्वा-शरीरावयवच्छेदनम् २१।

'जीवियंतकरणो' जीवितान्तकरणः=प्राणोच्छेदकरः २२। 'भयंकरो=भयदा-यकः २३। 'अणकरो' ऋणकरः-ऋणं=अनेकेष्वपि भवेषु नानाविधदुःखमोगैरपि दुःखनेयस्वरूपं करोतीति ऋणकरः २४। 'वज्जो' वर्ज्यः=त्याज्यः। अथवा वज्र-मिव गुरुत्वात्, तत्कारि प्राणिनामधःपातकत्वाद् वा वज्रम् २५। 'परितावण अण्हओ' परितापनाश्रवः=परितापनारूप आश्रवः। भव भव सन्तापकत्वात् २६, 'विणासो' विनाशः-प्राणविध्वंसनरूपः २७। 'निज्जवणो' निर्यापना=निर्यापयति=निर्गमयति प्राणिनः-प्राणानिति निर्यापना=प्राणनिसंसारणम् २८। 'लुंणो' लोपना-प्राणिप्राणविगमनम् २९। 'गुणाणं विराहणा' गुणानां विराधना=श्रुत-कटकमर्दन १५, (बोरमणं) व्युपरमण १६, (परभवसंक्रामकारओ) पराभव-संक्रमकारक १७, (दुग्गइप्पवाओ) दुर्गतिप्रपात १८, (पावकोवो) पापकोप १९, (पावलोभो) पापलोभ २०, (छविच्छेओ) शरीरका नाश २१, (जीवियंतकरणो) जीवितान्तकरण २२, (भयंकरो) भयंकर २३, (अणकरो) ऋणकर २४, (वज्जो) वर्ज्य २५, (परितावण अण्हओ) परितापनाश्रव २६, (विणासो) विनाश २७, (निज्जवणो) निर्यापना २८, (लुंणो) लोपना २९, (गुणाणं विराहणा)

मर्दनं, (१६) "बोरमणं" व्युपरमण, (१७) "परभवसंक्रामकारओ" परालव संक्रम २३, (१८) "दुग्गइप्पवाओ" दुर्गति प्रपात, (१९) "पावकोवो" पापकोप, (२०) "पावलोभो" पापलोभ, (२१) "छविच्छेओ" छविच्छेद, (२२) "जीवियंतकरणो" जीवितान्तकरण, (२३) "भयंकरो" भयंकर, (२४) "अणकरो" ऋणकर, (२५) "वज्जो" वर्ज्य, (२६) "परितावण अण्हओ" परितापनाश्रव, (२७) "विणासो" विनाश, (२८) "निज्जवणो" निर्यापना, (२९) "लुंणो" लोपना,

ચારિત્રગુણાનાં મજ્જના ૩૦ । ‘તિ વિ ય’ ઇત્યપિ ચ= ‘ઇતિ’ શબ્દઃ સમાસિદ્ધચક્રઃ ।
અપિ ચેતિ સમુચ્ચયાર્થઃ । ‘તસ્સ’ તસ્ય-પ્રાણિવધસ્ય ‘એવમાદીણિ’ એવમાદીનિ=
ઉક્તરૂપાણિ ‘તીસં’ ત્રિસત્ ‘નામધેજ્ઞાણિ’ નામધેયાનિ ‘પાણવહસ્સ’ પ્રાણવધસ્ય,
‘કલુસસ્સ’ કલુપસ્ય=પાપરૂપસ્ય ‘કહુયફલદેસગાઈ’ કહુકફલદેશકાનિ=અશુભન-
પરિણામબોધકાનિ ‘હંતિ’ ભવન્તિ । एतावता ‘जं नामा’ यन्नामेति, द्वितीयं
પ્રાણવધનામદ્વારમુક્તમ્ ॥સૂ.૦૫॥

ગુણોંકી વિરાધના ૩૦, । (એવમાદીણિ) ઇત્યાદિક યે (તીસં) તીસ (નામધે-
જ્ઞાઈ) નામ પ્રાણિહિંસાકે (હંતિ) હૈં । यह प्राणिहिंसा (कलुसस्स) पापरूप है।
उसके ये तीस नाम (कहुयफलदेसगाई) अशुभ परिणाम के ही बोधक
हैं। इस तरह यह ‘जं नामा’ इस नामका द्वितीय प्राणिहिंसा द्वार कहा है।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્રદ્વારા પ્રાણિહિંસાકે ગુણાનુસાર કિતને
નામ હૈં અથવા હો સકતે હૈં યહ કહા હૈ । હસ પ્રાણિહિંસાકા પ્રથમ નામ
પ્રાણિહિંસા હૈ, પ્રાણિહિંસા કા અર્થ પાંચ ઇન્દ્રિય, ત્રીનબલ, આયુ ઓર
શ્વાસોચ્છ્વાસ इन संभवित दश प्राणों का वियोग करना । एकेन्द्रिय
જીવકે ૪ ચાર પ્રાણ, દો ઇન્દ્રિય જીવકે ૬ છ પ્રાણ, ત્રીન ઇન્દ્રિયગાળે જીવકે ૭
સાત પ્રાણ, ચૌ ઇન્દ્રિય જીવકે ૮ આઠ પ્રાણ, અસંજીવંચેન્દ્રિય જીવકે ૯ નવ
પ્રાણ ઓર સંજીવંચેન્દ્રિય જીવકે ૧૦ દસ પ્રાણ હોતે હૈં । હસ તરહ મિત્ર ૨
જીવોંમેં સંભવિત इन प्राणोंका प्रमादके योगसे वियोग करना इसका नाम
પ્રાણિહિંસા હૈ, યહ પ્રથમ મેદ હુઆ ૧ । प्राणिहिंसाका यह पर्यायवाची शब्द है।

અને (૩૦) “ગુણાણં વિરાદ્ધના” ગુણોંની વિરાધના, “એવમાદીણિ” ઇત્યાદિ.
“તીસં” ત્રીસ “નામધેજ્ઞાઈ” નામ પ્રાણવધના “હંતિ” છે. તે પ્રાણવધ “કલુ-
સસ્સ” પાપરૂપ છે. તેના આ ત્રીસ નામ “કહુયફલદેસગાઈ” અશુભ પરિણા-
મના જ બોધક છે. આ પ્રકારનું આ “જંનામા” એ નામનું દ્વિતીય પ્રાણવધ
દ્વાર લાંબેલ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પ્રાણવધના ગુણાનુસાર કેટલાં નામ છે
અથવા હોઈ શકે છે તે બતાવ્યું છે. તે પ્રાણવધનું પહેલું નામ પ્રાણવધ છે.
પ્રાણવધનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—પાંચ ઇન્દ્રિય, ત્રણ બળ, આયુ અને શ્વાસો-
ચ્છ્વાસ એ સંભવિત દશ પ્રાણોનો વિયોગ કરવો તેને પ્રાણવધ કહે છે. એકે-
ન્દ્રિય જીવને ચાર પ્રાણ, દ્વિઇન્દ્રિય જીવને છ પ્રાણ, ત્રિઇન્દ્રિય જીવને સાત
પ્રાણ, ચતુરિન્દ્રિય જીવને આઠ પ્રાણ, અસંજીવ પંચેન્દ્રિય જીવને નવ પ્રાણ અને
સંજીવ પંચેન્દ્રિય જીવને દસ પ્રાણ હોય છે. આ રીતે ગુદા જુદા જીવોમાં
સંભવિત એ પ્રાણોનો પ્રમાદના યોગથી વિયોગ કરવો તેને પ્રાણવધ કહે છે.
આ પહેલો ભેદ થયો. પ્રાણવધનો તે પર્યાયવાચી શબ્દ છે. પ્રથમ પ્રાણવધ તે

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૫ મુખ્યવાદરૂપ દ્વિતીય અધર્મદ્વારનિક્ષેપનમ્ ૩૧

પ્રથમ પ્રાણિહિંસા. યહ સામાન્ય અર્થકા બોધક હોનેસે સામાન્ય શબ્દ છે ઓર હસકા પર્યાયવાચીરૂપ પ્રાણિહિંસા વિશેષ અર્થકા બોધકહોને સે વિશેષ શબ્દ છે. હસ તરહ સે ગુણ નિષ્પન્નતા હન સઘ નામોં મેં જાનના ચાહિયે. હસકા સ્ખુલાસા હસ પ્રકાર સે છે—જમીન સે જૈસા વૃક્ષ ઉસાડ દેતે હેં ડસી તરહસે શરીર સે જીવકા નિકાલ દેના યહ જીવકી શરીરસે ઉન્મૂલના (ઉસાડના) છે. હસ ઉન્મૂલનામેં જીવકી પર્યાયકા વિનાશ હોતા છે, ઓર જીવ કો કષ્ટ હોતા છે અતઃ યહ પ્રાણિહિંસા છે. યહ દૂસરા ભેદ ૨. જો જીવ હિંસક, નિર્દયી, હત્યારે હોતે હેં ડનમેં જીવોં કા વિશ્વાસ નહીં હોતા છે હસલિયે હિંસાકો અવિશ્વાસ કા કારણ હોને સે ડસમેં અવિશ્વાસ કા વ્યવહાર કરદિયા ગયા છે. યહ તૈસરા ભેદ ૩. હિંસ્ય વિહિંસા—અજીવોં કી હિંસા નહીં હોતી છે—હિંસા તો જીવોંકી હોતી છે હસલિયે યહાં પર હિંસ્ય પદ સે જિન જીવોં કી હિંસા હોતી છે વે ગ્રહણ કિયે ગયે હેં. હન હિંસ્ય જીવોં કે પ્રાણોંકા વિયોગ હસ પ્રાણિહિંસા મેં હોતા છે હસલિયે હસે હિંસ્યવિહિંસા કહા ગયા છે. યહ ચૌથા ભેદ ૪.

પ્રશ્ન—જીવ તો અરૂપી છે—જો અરૂપી હોતા છે ડસકી હિંસા હોતી નહીં છે ફિર હિંસ્યવિહિંસાકા વ્યવદેશ પ્રાણિ હિંસામેં કર્યોં કિયા ?

સામાન્ય અર્થનો બોધક હોવાથી સામાન્ય શબ્દ છે અને તેનો પર્યાયવાચી પ્રાણુવધ શબ્દ વિશેષ અર્થનો બોધક હોવાથી વિશેષ શબ્દ છે. આ રીતે એ બધાં નામોમાં ગુણયુક્તતા સમજ લેવી. તેનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે—જમીનમાંથી જેમ વૃક્ષને ઉખાડી નાખવામાં આવે છે એ જ પ્રમાણે શરીરમાંથી જીવને કાઢી નાખવાને જીવની શરીરથી ઉન્મૂલના કરી કહેવાય છે. તે ઉન્મૂલનામાં જીવની પર્યાયનો વિનાશ થાય છે, અને જીવને કષ્ટ થાય છે, તેથી તે પ્રાણુવધ ગણાય છે. આ બીજો ભેદ થયો. જે જીવ હિંસક, નિર્દય, હત્યારા હોય છે, તેમનામાં જીવને વિશ્વાસ હોતો નથી, તે કારણે હિંસાને અવિશ્વાસનું કારણ ગણીને તેમાં અવિશ્વાસનો વ્યવહાર કર્યો છે. આ ત્રીજો ભેદ થયો. હિંસ્ય-વિહિંસા—અજીવની હિંસા થતી નથી. હિંસા તો જીવની જ થાય છે, તેથી અહીં હિંસ્ય એટલે જે જીવની હિંસા થાય છે તે જીવો એ પ્રમાણેનો અર્થ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે. તે હિંસ્ય જીવના પ્રાણોનો વિયોગ તે પ્રાણુવધમાં થાય છે તેથી તેને હિંસ્યવિહિંસા કહેવામાં આવેલ છે. આ ચોથો ભેદ થયો.

પ્રશ્ન—જીવ તો અરૂપી છે—જે અરૂપી હોય છે તેની હિંસા થતી નથી. તો પછી હિંસ્યવિહિંસાનું આરોપણ પ્રાણુવધમાં કેમ કર્યું છે ?

ઉત્તર—શંકા ઠીક છે. યહ તો હમ મી કહતે હૈં કિ જીવરૂપ અરૂપી પદાર્થ કી હિંસા નહીં હોતી હૈ, પરંતુ યહાં હિંસા સે તાત્પર્ય સંબંધિત પ્રાણોં કા વિયોગ કરના લિયા ગયા હૈ. પાંચ ઇન્દ્રિય-કર્ણ, ચક્ષુ, ઘ્રાણ, રસના, સ્પર્શન, ૩ ચલ-મનચલ, વચનચલ, કાયચલ, આયુ एवं શ્વાસો-ચ્છ્વાસ, इन प्राणों का जिस प्रवृत्ति से वियोग होता हो उसका नाम हिंसा है ४। तथा-अकृत्य-सिद्धान्तों में जीवों की हिंसा करने का प्रभु ने निषेध किया है, क्योंकि यह कृत्य, अकृत्य-अकरणीय है, इसलिये उस रूप से यह अकृत्य होने के कारक प्राणिहिंसाको अकृत्य कहा है यह पांचवां भेद है ५। घातना-अर्थात्-घात करना छठा भेद है ६। प्राणों का वियोग करना केवल यही हिंसा नहीं है किन्तु जिन कृत्यों से प्राणियों के प्राणोंको पीड़ा पहुँचती हो ऐसे कृत्य भी हिंसा ही है, 'यह घात मारणा पद से सूत्रकार ने प्रदर्शित की है। सातमा भेद ७। हनन-वध करना, यह आठवां भेद ८। उपद्रवण-विनाश करना, यह नौवां भेद ९। निपातना-जिस जीव के जितने प्राण होते हैं उन जीव के उतने प्राणों का विनाश इस प्राणवध द्वारा होता है इसलिये इसे निपातना शब्द से व्यवहृत किया गया है। अथवा इस पद की जगह

ઉત્તર—શંકા બરાબર છે એ તો અમે પણ કહીએ છીએ કે જીવરૂપ અરૂપ પદાર્થની હિંસા થતી નથી. પણ અહીં સંબંધિત પ્રાણોને વિયોગ કરવો, એવું હિંસાનું તાત્પર્ય લેવામાં આવ્યું છે. પાંચ ઇન્દ્રિય-કાન, નેત્ર, નાસિકા, રસના અને સ્પર્શોન્દ્રિય, પ્રણ ઘ્રાણ-મનઘ્રાણ, વચનઘ્રાણ, કાયઘ્રાણ આયુ અને શ્વાસોચ્છ્વાસ એ પ્રાણોને જે પ્રવૃત્તિઓથી વિયોગ થાય તેનું નામ હિંસા છે.

તથા અકૃત્ય-સિદ્ધાંતોમાં પ્રભુએ જીવોની હિંસા કરવાનો નિષેધ કર્યો છે, કારણ કે તે કૃત્ય ન કરવા યોગ્ય છે, તેથી તે સીતે તે અકૃત્ય હોવાથી પ્રાણવધને અકૃત્ય કહ્યો છે. આ પાંચમો ભેદ થશે.

ઘાતના એટલે કે ઘાત કરવો તે છઠ્ઠો ભેદ છે. પ્રાણોને વિયોગ કરવો તે જ કેવળ હિંસા નથી, પણ જે કૃત્યોથી પ્રાણીઓના પ્રાણોને પીડા પહોંચે છે એવા કૃત્યો પણ હિંસા જ છે તે વાત 'મારણ' પદથી સૂત્રકારે પ્રગટ કરી છે. આ સાતમો ભેદ થશે. હનન-વધ કરવો તે આઠમો ભેદ છે. ઉપ-દ્રવણ વિનાશ કરવો તે નવમો ભેદ છે. નિપાતના-જે જીવોને જેટલાં પ્રાણ હોય છે તેટલાં પ્રાણોને વિનાશ આ પ્રાણવધ દ્વારા થાય છે તેને નિપાતના શબ્દથી ગૃહીત કરાયેલ છે. અથવા આ પદની જગ્યાએ "તિવાંગા" પદ

સુદર્શિનો ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૫ મૃણાવાદરૂપદ્વિતીયાધર્મદ્વારનિરૂપણમ્ ૩૩

“તિવાયણા” એસા પદ જવ માના જાવેગા તવ ઇસકી છાયા ત્રિપાતના હોગી ઇમકા અર્થ તવ મન વચન ઓર કાય, ઇનકા ધ્વંસ કરના એસા હોગા, દશમા ભેદ ૧૦। આરંભ સમારંભ-આરંભ શબ્દ સે જિનકા વિનાશ ક્રિયા જાવે એસે, અર્થાત્ વિનાશ ક્રિયા જાતા હૈ જિનકા વે હૈ આરંભ અર્થાત્ પ્રાણી ડનકા જો સમારંભ-પરિતાપ વહ હૈ આરંભ સમારંભા પ્રાણિહિંસામેં જીવોંકો પરિતાપ હોના હૈ યહ જ્ઞાન સ્પષ્ટ ઓર અનુભવગમ્ય હૈ। અથવા-કૃણાદિ કર્મ કા નામ આરંભ હૈ, ઇસ આરંભ સે જીવોંકે પ્રાણોંકા પીડન હોનાહૈ। યહ ગ્યારહવાં ભેદ ૧૧। ઇસી તરહ જીવકી આયુકા ઉપદ્રવ-સમુચ્છેદ, ભેદ વિનાશ, નિષ્ઠાપન-સમાસકરના, ગાલના-નિકાલના, સંવર્તક-સમસ્તબલ, સામર્થ્ય આદિ કા સંકોચ કરના, સંક્ષેપ ઇનકા અભાવ કરના, યહ ચારહવાં ભેદ ૧૨। મૃત્યુ-મરણ તેરહવાં ભેદ હૈ ૧૩। ઇન્દ્રિયસંયમ ઓર પ્રાણસંયમ ધારણ કરને સે પ્રાણીયોં કી રક્ષા હોતી રહતી હૈ। અસંયમી જીવ સે યહ રક્ષા બનતી નહીં હૈ, અતઃ અસંયમ કો પ્રાણિહિંસાકા અંગ કહા ગયા હૈ। ઇસી અભિપ્રાય સે યહાં ડસે ડસકા પર્યાયવાચી નામ કહા હૈ। સાવચ અનુષ્ઠાન કા નામ હી તો અસંયમ હૈ। યહ ચૌદહવાં ભેદ ૧૪। કટક મર્દન કા અર્થ હૈ-કટક-

માની દેશગાં આવે નો તેની છાયા “ત્રિપાતના” ધશે અને ત્યારે તેનો અર્થ મન, વચન અને કાયનો ધ્વંસ કરવો, એ પ્રમાણે ધશે. આ દસમે ભેદ છે. આરંભસમારંભ-આરંભ શબ્દથી જેમનો વિનાશ કરાય એવાં અથવા વિનાશ કરાય છે જેમનો તેવા પ્રાણી એવો અર્થ થાય છે. તેમનો જે સમારંભ પરિતાપ તેને આરંભ સમારંભ કહે છે. પ્રાણવધમાં જીવોને પરિતાપ થાય છે. તે જ્ઞાન સ્પષ્ટ તથા અનુભવગમ્ય છે. અથવા જેતી આદિ કર્મનું નામ પણ આરંભ છે. તે આરંભથી જીવોનાં પ્રાણોને પીડા પહેંચે છે. આ અગિયારમો ભેદ છે. એજ પ્રામણે જીવના આયુનો ઉપદ્રવ-સમુચ્છેદ, ભેદ-વિનાશ, નિષ્ઠાપન-અંત, ગાલના-નિકાલવું, સંવર્તક-સમસ્ત બગ સામર્થ્ય આદિનો સંકોચ કરવો, સંક્ષેપ તેમનો અભાવ કરવો, તે બારમે ભેદ છે. મૃત્યુ-મરણ તેરમે ભેદ છે. ઇન્દ્રિયસંયમ અને પ્રાણસંયમ ધારણ કરવાથી પ્રાણીઓની રક્ષા થયા કરે છે. અસંયમી જીવથી તે રક્ષા થઈ શકતી નથી, તેથી અસંયમને પ્રાણવધનું અંગ કહેલ છે. તે કારણે જ તેને અહીં પર્યાયવાચી નામ ગણેલ છે. સાવચઅનુષ્ઠાનનું નામ જ અસંયમ છે. આ ચૌદમે ભેદ છે. કટકમર્દન શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે.-કટક-સૈન્ય દ્વારા હિંસાના

સૈન્ય દ્વારા દૂસરો પર હિંસા કે અભિપ્રાય સે આક્રમણ કરના । યહ સૈન્યમર્દન પ્રાણિહિંસાકા કારણ હોતા હૈ ફિર ખી હસે જો પ્રાણિહિંસા રુપ કહા હૈ વહ ઉપચાર સે હી કહા ગયા જાનના ચાહિયે, યહ પન્નહવાં ભેદ ૧૫ । જીવ કા પ્રાણ સે વિયુક્ત કરના યહ વ્યુપરમણ હૈ । યહ સોલહવાં ભેદ ૧૬ । પ્રાણિહિંસાકો જો પરમથ સંક્રમ કારક કહા હૈ ઉસકા ભાવ યહ હૈ કિ યહ પ્રાણિહિંસા નરકનિગોદાદિ ચતુર્ગતિરુપ સંસારમેં પરિભ્રમણ કા કારણ બનતા હૈ । યહ સત્રહવાં ભેદ હુઆ ૧૭ । હસ પ્રાણિહિંસા કે પ્રભાવ સે જીવ નરકાદિ દુર્ગતિયોં મેં હી જાકર જન્મ લેના હૈ હસલિયે યહ દુર્ગતિ પ્રપાતરુપ કહા હૈ, યહ અઠારવાં ભેદ ૧૮ । સકલ પાપોંકા યહ કોપક-ઉત્પાદક હૈ, હસલિયે હસે પાપકોપ કહા ગયા હૈ । અથવા પાપ, કોપ કા કાર્ય હોતા હૈ હસ અભિપ્રાય સે યહ પ્રાણિહિંસા ક્રોધ સ્વરુપ હૈ એસા ખી કહા જા સકતા હૈ । યહ ઉઝીસવાં ભેદ ૧૯ । હસ પ્રાણિહિંસા કો કરને વાલા વ્યક્તિ કેવલ પાપ કા હી આલિંગન કરતા હૈ-પાપકર્મ કો બાંધતા હૈ, હસલિયે પ્રાણવધ પાપલોભરુપ હૈ । યહ વીસવાં ભેદ ૨૦ । છવિચ્છેદ-છવિ કા અર્થ શરીર હૈ, હસકા છેદના છવિચ્છેદ હૈ । પ્રાણવધ મેં શરીર અથવા શરીર કે અવયવોં કા છેદન હોતા હી હૈ, હસલિયે હસે

ઉદ્દેશથી બીજા ઉપર આક્રમણ કરવું. આ સૈન્યમર્દન પ્રાણિવધના કારણરૂપ હોય છે. છતાં પણ તેને જે પ્રાણવધરૂપ કહેલ છે તે ઔપચારિક રીતે જ કહેલ છે એમ સમજ લેવું. આ પંદરમો ભેદ થયો.

જીવને પ્રાણથી વિયુક્ત—રહિત કરવો તેને વ્યુપરમણ કહે છે, આ સોળમો ભેદ છે. પ્રાણવધને જે પરભવ સંક્રમકારક કહેલ છે તેનું તાર્પણ એ છે કે તે પ્રાણવધ નરકનિગોદાદિ ચાર ગતિરૂપ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરાવનાર છે. આ સત્તરમો ભેદ છે. આ પ્રાણવધના પ્રભાવથી જીવ નરકાદિ દુર્ગતિયોમાં જ જઈને જન્મ લે છે, તેથી તેને દુર્ગતિ પ્રપાતરૂપ કહેલ છે. આ અઠારમો ભેદ છે. સકલ પાપોને તે કોપક-ઉત્પાદક છે, તે કારણે તેને પાપકોપરૂપે દર્શાવ્યો છે. અથવા પાપ, કોપનું કાર્ય હોય છે. તે કારણે આ પ્રાણવધ કોપસ્વરૂપ છે, એમ પણ કહી શકાય છે. આ એઝીસમો ભેદ છે. એ પ્રાણવધ કરનાર વ્યક્તિ કેવળ પાપનું જ આલિંગન કરે છે-પાપકર્મો બાંધે છે, તે કારણે તે પ્રાણવધ પાપલોભરૂપ છે. આ વીસમો ભેદ છે. છવિચ્છેદ-છવિ એટલે શરીર, તેનું છેદન તે છવિચ્છેદ કહેવાય છે. પ્રાણવધમાં શરીર અથવા શરીરના અવયવોનું છેદન થાય છેજ તેથી તેને છવિચ્છેદરૂપ કહેલ છે. આ એકવીસમો ભેદ છે. પ્રાણવધ જીવનને

છવિચ્છેદરૂપ કહા છે । યહ ઇક્વીસવાં ભેદ ૨૧ । પ્રાણવધ જીવન કા અંત-
કર-વિનાશક હોને સે જીવિતાન્તકરણરૂપ કહા ગયા છે । યહ ધાવીસવાં
ભેદ ૨૨ । પ્રાણવધ કે અવસર ઉપસ્થિત હોને પર જીવોં કો ભય
હોતા છે અતઃ ઇસ ભય કા કારક હોને સે પ્રાણવધ ભયંકર છે, એસા કહા
ગયા છે । યહ તેવીસવાં ભેદ ૨૩ । ઇસ પ્રાણવધ કો કરને વાલા પ્રાણી
અનેક ભવોં મેં મી નાના પ્રકાર કે દુઃખોં કો ભોગતા રહતા છે ફિર મી
ઇસ સે ઉદ્ભૂત પાપરૂપ ઋણ કા વહ શોધન નહીં કર પાતા છે, ઇસલિયે
ઇસે ઋણકરૂપ કહા ગયા છે । યહ ચૌવીસવાં ભેદ ૨૪ । વિવેકી જો
વ્યક્તિ હોતે હૈં વે ઇસ પ્રાણવધ સે સદા દૂર રહતે હૈં ઇસલિયે ઇસે વર્જ્ય-
છોડને યોગ્ય-કહા છે । અથવા “વજ્ર” કી સંસ્કૃત છાયા “વજ્ર” મી હો
સકતી છે । વજ્ર જિસ પ્રકાર ગુરુ (મારી) હોતા હૈં, ડસી પ્રકાર યહ પ્રાણવધ
મી અવન કો-આચરિત કરને વાલે પ્રાણી કો અધઃપાત નરક નિગોદ
આદિ મેં પતન કા કારણ હોને સે વજ્ર કે જૈસા ખારી હોતા છે । યહ
પચ્વીસવાં ભેદ ૨૫ । ભવ ભવ મેં પ્રાણી ઇસકે કરને સે સન્તાપરૂપ
પરિતાપના કો પાતા છે ઇસલિયે ઇસે પરિતાપનારૂપ આસ્ત્રવ કહા ગયા છે ।
યહ છઠ્ઠીસવાં ભેદ ૨૬ । વિનાશ પ્રાણ કા વિધ્વંસન કરના । યહ સત્તા-
ઇસવાં ભેદ ૨૭ । નિર્ધાપના પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કો નિકાલના । યહ અઢાઇ-
સવાં ભેદ ૨૮ । લોપના-પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કા લોપ કરના-દૂર કરના ।

અંતકર-વિનાશક હોવાથી જીવિતાન્તકરણરૂપ બતાવ્યો છે. આ બાવીસમો ભેદ
છે. પ્રાણવધનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થતાં જીવોને ભય થાય છે, તેથી તે ભયકારક
હોવાથી તેને ભયંકર કહેલ છે. આ તેવીસમો ભેદ છે. એ પ્રાણવધ કરનાર
પ્રાણી અનેક ભવોમાં અનેક પ્રકારનાં દુઃખો ભોગવ્યા કરે છે, છતાં પણ તેના
કારણે ઉત્પાદિત પાપરૂપ ઋણને તે ફેડી શકતું નથી. તે કારણે તેને ઋણકર
નામ આપ્યું છે. આ ચૌવીસમો ભેદ છે. વિવેકી વ્યક્તિ એ પ્રાણવધથી સદા
દૂર રહે છે, તેથી તેને વર્જ્ય-છોડવા લાયક કહેલ છે. અથવા “વજ્ર”ની
સંસ્કૃત છાયા “વજ્ર” પણ થઈ શકે છે. વજ્ર જે રીતે મોટું હોય છે તે
પ્રકારે પ્રાણવધ પણ, તે કરનાર પ્રાણીને અધઃપાત-નરક નિગોદ આદિમાં પતન
થવાનું કારણ હોવાથી વજ્રના જેવો ભારે હોય છે. આ પચીસમો ભેદ થયો.
જે કરવાથી વ્યક્તિને દરેક ભવમાં સન્તાપરૂપ પરિતાપના-પીડા સહન કરવી પડે
છે, તેથી તેને પરિતાપનારૂપ આસ્ત્રવ કહેલ છે આ છવીસમો ભેદ છે. વિનાશ-
પ્રાણીને વિધ્વંસ કરવો, તે સત્યાવીસમો ભેદ છે. નિર્ધાપના-પ્રાણીઓના પ્રાણોને
નિકાલવા, તે અઢાયાવીસમો ભેદ છે. લોપના-પ્રાણીઓના પ્રાણોને લોપવા-દૂર

અથેદાનીં 'જહ્યકઓ' યથાકૃતઃ ઇતિ તૃતીયં દ્વારમાવષ્ટે 'તં ચ પુણે'ત્યાદિ ।

મૂલમ્—તં ચ પુણ કરેતિ કેહ પાવા અસંજયા અવિરયા અણિહુયપરિણામદુષ્પઓગા પાણવહં ભયકરં વહુવિહં વહુષ્પગારં પરદુક્કલુપ્પાયણપસત્તા ઇમેહિં તસથાવરેહિં જીવેહિં પઢિણિવિદ્ધા કિં તે? પાઠીણ-તિમિ-તિમિગિલ-અણેગસસ-વિવિહજાઇમંદુક-દુવિહ-કચ્છમ-ળક-મગરદુવિહ-ગાહ-દિલિ-વેઢય-મદુય-સીમાગાર-પુલ્હય-સુંસુમાર વહુષ્પગારા જલયરવિહાણા કણ્ય એવમાઈ ॥સૂ.૦૬॥

ટીકા—તં ચ=પ્રાણવધં 'પુણ' પુનઃ 'કેહ' કેડપિ કેચિદેવેત્યાશયઃ 'પાવા' પાપાઃ=પાપપ્રકૃતયઃ 'અસંજયા' અસંયતાઃ=અસમાહિતેન્દ્રિયાઃ 'અવિરયા' અવિરતા =પાપકર્મેનિવૃત્તિરહિતાઃ, 'અણિહુયપરિણામદુષ્પઓગા' અનિભૂતપરિણામદુષ્પયોગા =અનિભૂતઃ=ઉપશમરહિતઃ પરિણામઃ=અધ્યવસાયો યેવાં તે અનિભૂતપરિણામાઃ, દુષ્ટાઃ પ્રયોગાઃ=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયવ્યાપારાઃ યેવાં તે દુષ્પ્રયોગાઃ, અનિભૂતપરિણામાથ તે દુષ્પ્રયોગા ઇતિ અનિભૂત પરિણામદુષ્પ્રયોગાઃ, 'પરદુક્કલુપ્પાયણપસત્તા' પર-યહ ઉન્તીસનાં ભેદ હૈ ૨૯ ઓર ગુણવિરાધના-શ્રતચારિત્રગુણોં કા મજ્જ કરના યહ તોસવાં ભેદ હૈ ૩૦ ઇસ તરહ યે પ્રાણવધ કે ૩૦ પર્યાયવાચી શબ્દ ગુણનિષ્પન્ન પ્રકટ કિયે ગયે હૈ ॥સૂ.૦-૫॥

અવ સૂત્રકાર "જહ ય કઓ" ઇસ તૃતીય દ્વાર કે વિષય મેં કહતે હૈ—'તં ચ પુણ' ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(કેહ પાવા) કિતનેક પાપપ્રકૃતિવાલે (અસંજયા) અસમાહિત ઇન્દ્રિયવાલે, (અવિરયા) અવિરનિસંપન્ન, (અણિહુયપરિણામદુષ્પઓગા) ઉપશમ રહિત પરિણામોં વાલે, ઓર ઇન્દ્રિય એવં મન કે દુષ્પ્રવ્યાપાર વાલે (પરદુક્કલુપ્પાયણપસત્તા) પર પ્રાણી કે લિયે દુઃસ્વોત્પાદન મેં પરાયણ

કરવા, તે ઓગણત્રીસમે ભેદ છે. અને ગુણવિરાધના-શ્રુતચારિત્ર ગુણોને ભંગ કરવો, તે ત્રીસમે ભેદ છે. આ રીતે પ્રાણવધના ૩૦ પર્યાયવાચી શબ્દ તેમના ગુણ સહિત પ્રગટ કરવામાં આવ્યા છે. ॥ સૂ. ૫ ॥

હવે સૂત્રકાર "જહ ય કઓ" એ તૃતીય દ્વારનું વર્ણન કરે છે—"તં ચ પુણ" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"કેહ પાવા" કેટલાક પાપપ્રકૃતિવાળા "અસંજયા" અસમાહિત ઇન્દ્રિય-વાળા, "અવિરયા" અવિરતિ યુક્ત, "અણિહુયપરિણામદુષ્પઓગા" ઉપશમ રહિત પરિણામોવાળા, અને ઇન્દ્રિય અને મનના દુષ્ટ વ્યાપારવાળા "પરદુક્કલુ-પ્પાયણપસત્તા" પર પ્રાણીને ભાટે દુઃખોત્પાદનમાં પરાયણ એવા જીવો "તં ચ પુણ"

સુદર્શિનીટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૬ યથાકૃતનામકનૃતીયાધર્મદ્વારનિરૂપણમ્

૩૭

દુઃસ્વોત્પાદનપ્રપત્તાઃ=પરપીડાકરણપરાયણાઃ ‘હમેહિ’ એતેષુ=પ્રત્યક્ષે લક્ષ્યમાણેષુ ‘તસ્યાવારેહિ’ ત્રસસ્થાવરેષુ ‘જીવેહિ’ જીવેષુ ‘પઙ્કિણિવિદ્વા’ પ્રતિનિવિદ્યાઃ=તેષાં રક્ષણાદ્ દ્રેષ્યુક્તાઃ ‘બહુવિહં’ બહુવિધં ‘બહુપ્પમારં’ બહુપ્રકારમ્=અનેકભેદપ્રભેદ-સહિતં, ‘ભયંકરં’ ભયજનકં ‘પાણવહં’ પ્રાણવધં=જીવહિંસાં ‘કરેતિ’ કુર્વન્તિ । ‘કિં તે’ તે=ત્રસસ્થાવરેષુ દ્રેષ્યવન્તઃ ‘કિં’ કિં કુર્વન્તિ? પાઠીનાદિ જીવાન્ ‘દણંતિ’ ઘ્નન્તિ, ઇતિ વક્ષ્યમાણેન સમ્બન્ધઃ । તાનેવ દર્શયતિ-‘પાઠીણે’ત્યાદિ । ‘પાઠીણ-તિમિ-તિમિગિલ-અણેગ-અણગિવિહજાઈમંદુક-દુવિહક-ચ્છમ-ગક-મગર-દુવિહ-ગાહ-દિલિવેદય-મંદુય-સીમાગારપુલુય-સુસુમાર-બહુપ્પમારા’ પાઠીન-તિમિ-તિમિગિલા-ડનેકણ-વિવિધજાતિમંદુક-દ્વિવિધ-કચ્છપ-નક-મગર-દ્વિવિધ-ગ્રાહ-દિલિવેદક-મન્દુક-સીમાકાર-પુલક-સુસુમાર-પ્રકારાઃ, તત્ર-પાઠીનાઃ=તત્ત્વામકા મત્સ્યવિશેષાઃ, તિમયઃ મત્સ્યવિશેષાઃ, તિમિગિલન્તિ ઇતિ તિમિગિલાશ્ચ, મહામત્સ્યાઃ ।

“ અસ્તિમત્સ્યસ્તિમિર્નામ શતયોજનવિસ્તરઃ ।

તિમિગિલગિલોડપ્યસ્તિ તદ્વિલોડપ્યસ્તિ રાવવઃ ॥૧૧॥ ” ઇતિવચનાત્ ।

અનેકજ્ઞાપાઃ=વિવિધાઃ શુદ્ધમત્સ્યાઃ, વિવિધજાતયો મળ્લકાઃ = નાનાજા-

એસે જીવ (તેં ચ ગુણ) હસ (ભયંકરં) ભયપ્રદ, (બહુવિહં) બહુવિધ
ઔર (બહુપ્પમારં) અનેક ભેદ પ્રભેદ સહિત (પાણવહં) પ્રાણવધ કો
(કરેતિ) કરતે હૈં । (હમેહિં તસ્યાવારેહિં જીવેહિં) જન પ્રત્યક્ષોભૂત
ત્રસ ઔર સ્થાવર જીવાં કો રક્ષા કરને કે વિષય મેં (પઙ્કિણિવિદ્વા)
દેષ્યુક્ત હોતે હુણ પ્રાણવધ કરતે હૈં, (કિં તે) વે કયા ૨ કરતે હૈં હસ
વાત કો અથ સૂત્રકાર “ પાઠીણ ” હતપાદિ પદોં દ્વારા પ્રકટ કરતે હૈં-
(પાઠીણ-તિમિ-તિમિ-ગિલ-અણેગઅણ-વિવિહજાઈમંદુક-દુવિહક-
ચ્છમ-ગક-મગર-દુવિહગાહ-દિલિવેદય-મંદુય-સીમાગાર-પુલય-સુસુમાર-

આ “ભયંકર” ભયપ્રદ, “બહુવિહં” બહુ વિધ અને “બહુપ્પમારં” અનેક ભેદ પ્રભેદ સહિત, “પાણવહં” પ્રાણવધ કરે છે, “હમેહિં તસ્યાવારેહિં જીવેહિં” એ પ્રત્યક્ષીભૂત ત્રસ અને સ્થાવર જીવોની રક્ષા કરવાની બાબતમાં “પઙ્કિણિવિદ્વા” દેષ્યુક્ત થઈને પ્રાણવધ કરે છે, “કિંતે” તેઓ શું શું કરે છે એ વાતને હવે સૂત્રકાર “પાઠીણ” ઇત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે-“પાઠીણ-તિમિ-તિમિગિલ-અણેગઅણગિવિહજાઈ-મંદુક-દુવિહકચ્છમ-ગક-મગર-દુવિહગાહ-દિલિવેદય-મંદુય-સીમાગાર-પુલય-સુસુમાર-બહુપ્પમારા” એવા જીવો નીચે પ્રમાણે છે-પાઠીન, તિમિ, તિમિગિલ, અનેકઅણ, અનેક જાતિના દેડકા, અને પ્રકારનાં કાચળા, નક,

ત્રીયા:-દર્કુરા:; દિવિધા:=દિભેદા:; કચ્છપા: કૂર્મવિશેષા:-માંસકચ્છપા૧, અસ્થિકચ્છપાશ્વ૨, નક્રા:=મસ્ત્યવિશેષા:; મકરા:=જલજન્તુવિશેષા:; દિવિધા:= દ્વિપકારા: ગ્રાહા:=હુન્ડા ગ્રહા: તદ્વિચાશ્વ, દિલિવેષ્ટકા:, મન્દુકા:, સીમાકારા:, પુલકા:, શિશુમારા:, સર્વે ગ્રાહવિશેષા ૧૧, એવં-વિધા: વહુપકારા:=અનેકભેદા:, જલચરભેદા: સન્તિ, તાન્ ધનન્તીતિ। તથા 'एवमाई' एवमादीन=एवंपकारान्- પાઠીનાદિસદ્શાન્ અન્યાન્ 'जलयरविहाणाकण य' जलयरविधानककृतान्श- જલચરાણાં વિધાનાનિ-જલચરવિધાનાનિ, તાન્યેવ જલચરવિધાનકાનિ, તાનિ કૃતાનિ યૈસ્તે તથામૂતાન્-જલચરવિશેષાંશ્ચ, 'धन्ती' -ત્યગ્રેણ સંવન્ધ:। 'जलय-रविहाणाकण' इत्यत्र ककारलोपो दीर्घश्चाप्यत्वादिति ॥મુ૦૬॥

બહુપગારા) એસે જીવ પાઠીન, નિમિ, નિર્મિગિલ, અનેકકણ, અનેક જાનિ કે મંદુક, દોનો પ્રકાર કે કચ્છપ, નક્ર, મકર, દિવિધગ્રાહ, તથા દિલિ-વેષ્ટક, મન્દુક, સીમાકાર, પુલક, શિશુમાર, યે પાંચો ગ્રાહ વિશેષ, યે સમી જલચર જીવો કે પ્રકાર હૈં ઇન્હે યે દુષ્ટ મનુષ્ય મારા કરતે હૈં। તથા (एवमाई जलयरविहाणाकण य) पूर्वोक्त पाठीन आदि जीवों से भिन्न जो और जलचर जीव हैं उन्हें भी ये दुष्ट मनुष्य मारा करते हैं।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને હમ સૂત્ર દ્વારા યહ સ્પષ્ટ કિયા હૈ કિ જો પ્રાણી સ્વભાવ સે પાપી હોતે હૈં, અથવા જિનકા જીવન સંયમરૂપી લગામ સે રહિત હોતા હૈ, ઇન્દ્રિયો કે ગુલામ હોતે હૈં-પાપ કર્મ સે જિન્હે વૃણા નહીં હોતી હૈ, જિનકે પરિણામ ઉપશમ ભાવ સે રહિત હોતે હૈં, માનસિક વિચાર ધારા જિનકી સદા મલિન બની રહતી હૈ તથા જો દુસરો કો દુઃખી દેખકર અથવા દુઃખ દેકર આનંદ મગ્ન બનતે હૈં એસે જીવો કો ત્રસ સ્થા-વર જીવો કે ઉપર દયા નહીં આતી હૈ। બે અનેક સાધ મનમાની કરતે

મગર, દિવિધગ્રાહ, તથા દિલિવેષ્ટક, મન્દુક, સીમાકાર, પુલક, શિશુમાર, એ પાંચે ગ્રાહ વિશેષ, એ તથા જલચર એવોના પ્રકાર છે. તેમને એ દુષ્ટ મનુષ્યો માર્યા કરે છે. તથા “एवमजलयरविहाणाकण य” पूर्वोक्त पाठीन आदि ऐसे जियायना पीनां पशु जे जलयर एवो છે તેમની પશુ તે દુષ્ટ મનુષ્યો હત્યા કર્યા કરે છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા એ સ્પષ્ટ કર્યું છે કે જે જીવ સ્વભાવથી પાપી હોય છે, અથવા જેમનું જીવન સંયમરૂપી લગામથી રહિત હોય છે. જે ઇન્દ્રિયોના ગુલામ હોય છે. પાપકર્મ પ્રત્યે જેને વૃણા હોતી નથી, જેમની પ્રતિજ્ઞા ઉપશમ ભાવથી રહિત હોય છે, જેમની માનસિક વિચારધારા સદા મલિન હોય છે, તથા જે બીજાને દુઃખી બેઠેને અથવા દુઃખ ઇધને આનં-દિત થાય છે, એવા જીવોને ત્રસ, સ્થાવર જીવો પર દયા આવતી નથી. તેઓ

સુચિનીટીકા ચૌ ૧ સુ. ૬ યથાકૃતનામકતુતોયાધર્મદ્વારનિરૂપણમ્

૩૧

હુપ થોડા સા ભી સંકોચ નહીં કરતે હૈં । ઉનકા વિચાર યહી બના રહતા હૈં કિ મનુષ્ય કે ઉપયોગ કે લિયે હી યે સચ જીવ હૈં, અતઃ મનુષ્ય જૈસા ચાહે વૈસા ઉનકા ઉપયોગ કરે । યહ સંસાર ત્રસ ઔર સ્થાવર પ્રાણિયોં સે ભરા હુઆ હૈં । ત્રસ સ્થાવર પ્રાણી અનેક પ્રકાર કે હૈં । ઇનકી જાતિયાં ભિન્ન ૨ રૂપ સે અનેક પ્રકાર કી હૈં । તિર્યચ જાતિ કે જીવ કિ જો પંચેન્દ્રિય હૈં જલચર નભચર ઔર સ્થલચર કે ભેદ સે ૩ તીન પ્રકાર કે હૈં । ઇનમેં જલચર જીવ વે હૈં જો જલ મેં હી રહતે હૈં । ઇન્हीं કે વિષય મેં યહ સૂત્રકાર ને અપના અભિમત પ્રકટ કિયા હૈં । પાઠીન ઇમ નામકા એક મત્સ્યવિશેષ હોતા હૈં । તિમિ ભી મત્સ્યવિશેષ હોતા હૈં—ઇસકા વિસ્તાર વડા હોતા હૈં । ઇસ તિમિ કો જો મ્વા જાતે હૈં વે તિમિંગિલ હૈં ઔર યે ભી મત્સ્યજાતિ કે હી પ્રકાર હૈં । ઔર ભી જો ઢોટી ૨ મઝલિયાં હોતી હૈં વે સચ “ અનેક ક્ષપ ” ઇસ શબ્દ દ્વારા યહાં ગૃહીત કી ગઈ હૈં । કચ્છપ નામ કચ્છુપ કા હૈં । યે અસ્થિકચ્છપ ઔર માંસકચ્છપ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કે હોતે હૈં । શુળ્કાગ્રાહ ઔર અશુળ્કાગ્રાહ, ઇસ પ્રકાર સે ગ્રાહ કે ભી યે દો ભેદ હોતે હૈં । ઇમી તરહ દિલિવેષ્ટક, મન્દુક, સીમાકાર પુલક ઔર શિશુમાર ભી જલજન્તુ વિશેષ હૈં । ઇન સચ કી યે નિર્દયી જનહિંસા

તેમની સાથે મન ગમનું વર્તન કરતાં જરા પણ સંકોચ રાખતા નથી. તેઓની માન્યતા એવી જ હોય છે કે મનુષ્યના ઉપયોગને માટે જ આ બધા જીવો છે, તેથી મનુષ્ય ક્યંચે તે રીતે તેમનો ઉપયોગ કરી શકે છે. આ સંસાર ત્રસ અને સ્થાવર જીવોથી ભરેલો છે. ત્રસ સ્થાવર જીવો અનેક પ્રકારનાં હોય છે. તેમની જાતિઓ બુદ્ધી બુદ્ધી રીતે અનેક પ્રકારની છે. તિર્યચ જાતિના જીવ કે જે પંચેન્દ્રિય છે, તેમના ત્રણ પ્રકાર છે—જળચર, નભચર અને સ્થલચર. તેમાં જળમાં રહેતા જીવોને જળચર કહે છે. તેમને વિષે સૂત્રકારે અહીં પોતાનો અભિપ્રાય પ્રગટ કર્યો છે, ‘ પાઠીન ’ નામનું એક ખાસ પ્રકારનું મત્સ્ય હોય છે. તિમિ પણ એક પ્રકારના મત્સ્યનું નામ છે, તેનું કદ મોટું હોય છે. એ તિમિને જે ખાંડ જાય છે તેને તિમિંગલ કહે છે, અને તે પણ એક જાતનો મત્સ્ય જ છે. ખીણ પણ નાની નાની જે માછલીઓ હોય છે તેનું “ અનેકક્ષપ ” શબ્દ દ્વારા અહીં અડખું કરાયેલ છે. કચ્છપ એટલે કચ્છો, તેના અસ્થિકચ્છપ અને માંસ કચ્છપ એવા બે ભેદ છે. શુલ્કાગ્રાહ અને અશુલ્કાગ્રાહ, એ પ્રકારના ગ્રાહના પણ બે ભેદ હોય છે. એજ રીતે દિલિવેષ્ટક, મન્દુક, સીમાકાર પુલક, અને શિશુમાર પણ ખાસ પ્રકારનાં જળચરો છે. એ બધાંની તે નિર્દય વ્યક્તિ

અથ સ્થલચરેષુ ચતુષ્પદપ્રકારાનાઃ—‘કુરંગ૦’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ક—કુરંગ રુઠ સરભ ચમર સંવર ડરબ્ધ-સસય-પસર-ગોણ-રોહિય-હય-મય-લ્હર-કરભ-લ્હરગ-વાનર-ગવય-વિગ-સિયાલ-કોલ-મજ્જાર-કોલસુળહ-સિરિકંદલ-ગાવત્ત-કોકંતિય--ગોકળ્લ-મિય-મહિસ વિયમ્બ-લ્હગલ-દીવિય-સાળ-તરચ્છ-અચ્છમ્બલ્હ-સદૂલ-સીહ-ચિહ્નલ-ચઉષ્પય-વિહાળાકળ ય ઇવમાઈ ॥સૂ.૦૭ ॥

ટીકા કુરંગા==દરિયાઃ, રુઠો==શ્વગવિશેષાઃ, સરભા==વન્યપશુવિશેષાઃ વિશાલકાયાઃ, અષ્ટાપદાઃ ‘પરાસરે’તિ સ્વાતાઃ યે મહાગજાનપિ પૃષ્ઠે સ્થાપયન્તિ, ચમરાઃ==અન્યગાવઃ યેષાં કૈશાનાં ચામરાણિ ભવન્તિ, સંવરાઃ અનેકશાસ્ત્રજ્ઞાઃ દ્વિચુરા આરણ્યપક્ષયઃ ‘સાંભર’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાઃ ‘ડરબ્ધ’ ડરબ્ધાઃ==મેષાઃ, ‘સસય’

ક્રિયા કરતે હૈં, તથા રૂઠકે સિયાલ ઓર ભી જો જલચર જીવ હોતે હૈં-ઉન્હે ભી માર કર યે આનંદ મગ્ન થવતે હૈં ॥ સૂ. ૬ ॥

અથ સૂત્રકાર સ્થલચર નિર્યંત્રોં મેં જો ચતુષ્પદોં કે પ્રકાર હૈં ઉન્હે રૂઠ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરતે હૈં—‘કુરંગરુઠ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(કુરંગ) કુરંગ હિરણ્કો કહતે હૈં. (રુઠ) રુઠ નામ ભી સ્ત્રગકા હૈ, પરન્તુ યહ સામાન્ય સ્ત્રગ સે વિશેષ પ્રકાર કા હોતા હૈ. (સરભ) સરભ નામ અષ્ટાપદ કા હૈ. યહ શરીર મેં વિશાલ હોતા હૈ. પરાસર ભી રૂઠ કા દૂસરા નામ હૈ. યે મહાગજોં કો ભી અપની પીઠ પર થૈઠા લેતા હૈ. (ચમર) ચમરી ગાયોં કા નામ ચમર હૈ. રૂઠકે ચાલોં કે ચામર થવતે હૈં. (સંવર) સંવર કો હિન્દી ભાષા મેં સાંભર કહતે હૈં. રૂઠકે સીંગો મેં

હિસા કર્યા કરે છે, અને તે સિવાયનાં ખીજાં જે જગત્તર જીવો હોય છે, તેમની પણ હવ્યા કરવામાં તેમને મગ્ન થાય છે. ॥ સૂ. ૬ ॥

હવે સૂત્રકાર સ્થળચર નિર્યંત્રોંમાં જે જનવરોના પ્રકારો છે તેમને આ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરે છે—“કુરંગરુઠ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“કુરંગ” હિરણ્કને કુરંગ કહે છે, “રુઠ” રુઠ પણ સ્ત્રગને એક ખાસ પ્રકાર છે. “સરભ” સરભ અષ્ટાપદ નામના પ્રાણીને કહે છે. તે શરીરે વિશાળ હોય છે તેનું ખીજું નામ પરાસર પણ છે. તે થોડા હાથીઓને પણ થોડાની પીઠ પર બેસાડી શકે છે. “ચમર” ચમરી ગાયોને ચમર કહે છે. તેમના ચામરમાંથી ચામર બને છે. “સંવર” સાંભરને સાંભર કહે છે. તેના શીંગડામાંથી ખીજ

હુવર્ણિનીટીકા મં ૧ સૂ ૭ સ્થલચરચતુષ્પદજીવનિરૂપણમ્

૪૧

પ્રશકાઃ પ્રસિદ્ધાઃ । ‘પસર’ પ્રશરાઃ દ્વિસુરા વન્યપશુવિશેષાઃ, ‘ગોળા’ ગાવઃ ‘રોહિય’ રોહિતાઃ=ચતુષ્પદપશુવિશેષાઃ, ‘હયગયચર’ હયા ગજાઃ સ્વરાશ્ચ પ્રસિદ્ધાઃ । કરભાઃ=કરબાઃ ‘સ્વગ્ના’ સ્વગ્નાઃ=અકશ્મળા આટવ્યાશ્ચતુષ્પદવિશેષાઃ ‘ગેંદા’ ઇતિ લોકે સ્થાતાઃ યેષાં ગમનકાલે ઉભયોરપિ પાર્શ્વયોઃ પક્ષતુલ્યાનિ ચર્માણિ લમ્બન્તે, ‘વાનર’ વાનરાઃ=પ્રસિદ્ધાઃ, ગવયાઃ=વર્તુલકળ્પા ગો સદૃશાઃ ‘રોક્ષ’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાઃ । ‘વિગ’ વૃકાઃ=શ્વાપદજન્તુવિશેષાઃ ‘મેઢિયા’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાઃ, ‘સિયાલ’ શૃગાલાઃ પ્રસિદ્ધાઃ, ‘કોલા’ શૂકરાઃ ‘મજ્જાર’ માર્જારાઃ=વિકાલા ‘કોલમુળહ’ કોલશુભકાઃ=આટવ્યમહાશકરાઃ ‘સિરિકંદલગાવચ’ શ્રીકન્દલકા-

અનેક ઔરશૃંગજેસી શાગ્વાઈ ફૂટતી હૈં । इनके सींगोंकी जो भस्म बनती है उसे विशाण भस्म कहते हैं । इनके दो खुर होते हैं । और ये जंगल में ही रहते हैं । (उरबभ) उरभ्र नाम मेंढे का है । (ससय) शशक नाम खरगोश का है । (पसर) पशर एक जाति का जानवर होता है, इसके दो खुर हुआ करते हैं । यह जंगल में ही रहता है । (रोहिय) “रोहित” यह भी चार पैरोंवाला एक जानवर विशेष होता है । (हय) हय-नाम घोड़े का है, (गय) गय-गज नाम हाथी का है । (खर) खर नाम गधे का है । (करभ) करभ ऊँटका नाम है । (स्वग) खत्रीको हिन्दी भाषा में गेंदा कहते हैं । इसके एक ही सींग होता है, यह जंगल में ही रहता है, इस के पैर चार होते हैं, जब यह चलता है तो उस समय इसकी दोनों तरफ पंखों जैसा चमड़ा लटकने लगता है । (वानर) वानर नाम बंदर का है । (गवय) गवय रोक्षका नाम है, यह गायके जैसा होता है । और इसका कंठ गोल होता है । (विग) वृक यह हिंसक जंतु होता है और इसे हिन्दी भाषा में भेड़िया कहते हैं । (सियाल) “शृगाल” यह जंगली

અનેક ઉપશાખાઓ ફૂટે છે. તેમનાં શીંગડાંઓની જે ભસ્મ બને છે તેને વિશાણ ભસ્મ કહે છે. તેમને બે ખરી હોય છે, અને તેઓ જંગલમાં જ રહે છે. “ઉરબમ” ઉરભ્ર નામ મેંદાનું છે. “સસય” શશક નામ સસલાનું છે. “પસર” પ્રશર એક જાતનું જાનવર છે, તેને બે ખરી હોય છે. અને તે જંગલમાં રહે છે “રોહિય” ‘રોહિત’ પશુ એક ચોપણું પ્રાણી છે. “ હય ” હય એટલે ઘોડો, “ગય” ગય એટલે હાથી, “ખર” ખર એટલે ગધેડો, “કરમ” કરભ એટલે ઊંટ, “સ્વગ્ના” ખગ્ની એટલે ગેંદો, તેને એક જ શીંગડું હોય છે, તે જંગલમાં જ રહે છે, તેને ચાર પગ હોય છે. જ્યારે તે ચાલે છે ત્યારે તેની બંને તરફ પાંખો જેવી ચામડી લટકતી રહે છે. “વાનર” વાનર કપીને કહે છે. “ગવય” ગવય એટલે રોક્ષ, તે ગાયના જેવું હોય છે અને તેની કંઠ ગોળ હોય છે. “વિગ” વૃક એક જંગલી પ્રાણી છે. તેને રીંછ કહેવામાં આવે છે. “સિયાલ”

વત્તાઃ=શ્રીકન્દલકાઃ આવર્તીશ્ચ ઉભે સજાતીયા એકસુરજીવવિશેષાઃ, 'કોકંતિય' કોકંતિકાઃ=લોમટકાઃ 'લોમટ્ટી' इति भाषायाम्, 'ગોકળ્ણ' ગોકર્ણાઃ=દ્વિસુર ચતુષ્પદજન્તુવિશેષાઃ, 'મિય' મૃગાઃ, 'મહિસ' મહિષાઃ, 'વિયગ્ધ' વ્યાઘ્રાઃ, 'છગલ' અજાઃ 'દીવિય' દ્વીપિકાઃ 'દીપડા' इति भाषायाम्, 'સાળ' શ્વાનઃ= આટવ્યાઃ કુવટ્ટુરાઃ 'તરચ્છ' તરક્ષાઃ, અચ્છમલ્લાઃ=મલ્લકુજાતિવિશેષાઃ 'સદૂલ શાર્દૂલાઃ='સીહ' સિંહાઃ, 'ચિલ્લા' ચિત્રકાઃ=ધાપદજન્તુવિશેષાઃ । एषां द्वन्द्व समासः । 'चउष्यविहाणाकए य एवमाई' चतुष्पदविधानाः कृताः तांश्च एवमा- दीन=चतुष्पदविशेषान् कुरङ्गादीन् घनन्तीति परेण योजना ॥सू०७॥

જાનવર હૈ-જો રાત કો “ હુઆ હુઆ ” બોલા કરતા હૈ । (કોલ) કોલ-શૂકર એવં (મજ્જાર) માર્જાર યે હિંસક જાનવર હૈ । (કોલસુળહ) “ કોલ શૂકર ” યે શૂકર કે હી ભેદ હૈ ઓર સામાન્ય શૂકર કી અપેક્ષા શરીર મેં વિશાલ હોતા હૈ । (સિરિકંદલગાવત્ત) શ્રીકન્દલક ઓર આવર્ત યે બી જાનવર હૈ ઓર इनके एक सुर होता है । इन दोनों की जाति समान होती है । (કોકંતિય) કોકંતિકા નામ લોમટ્ટી કા હૈ, યહી ઘટ્ટી ચાલાક હોતી હૈ । (ગોકળ્ણ) ગોકર્ણ એક પ્રકાર કા જાનવર હોતા હૈ, હસકે દો સુર હોતે હૈ, ઓર પૈર ચાર હોતે હૈ । (મિય) મૃગ, (મહિસ) મહિષ, (વિયગ્ધ) વ્યાઘ્ર યહ હિંસક જીવ હૈ ઓર સિંહ જૈસા હી હોતા હૈ । (છગલ) ઘકરા ઘકરી કા નામ અજ હૈ । (દીવિય) દ્વીપિકા યહ બી માંસ-મક્ષી શિકારી જાનવર હૈ, હસે તેંદુઆ કહતે હૈ । (સાળ) જંગલી જો કુત્તે હૈ જિન્હે શુની-કુત્તા કહા જાતા હૈ યે યહાં “ સાળ ” શબ્દ સે ગૃહીત હુય હૈ । (તરચ્છ) તરક્ષ, (અચ્છમલ્લ) અચ્છમલ્લ, યહ રીછોં કા હી

‘શૃગાલ’ એક જંગલી પ્રાણી છે, જે રાત્રે “ હુઆ હુઆ ” બોલે છે. તેને સુજસાતીમાં શિયાળ કહે છે. “કોલસુળહ” કોલ-શૂકર અને “મજ્જાર” માર્જાર હિંસક જાનવરો છે. “ કોલ શૂકર ” તે શૂકરનો જ ભેદ છે, અને તે સામાન્ય શૂકર કરતા શરીરે મોટું હોય છે, “સિરિકંદલગાવત્ત” શ્રીકન્દલક અને આવર્ત એ પશુ જાનવરો છે અને તેમને એક ખરી હોય છે. તે બંને સમાન જાતિનાં છે. “કોકંતિય” લોંકડીને કોકંતિક કહે છે, તે ઘણી ચાલાક હોય છે. “ ગોકળ્ણ ” ગોકર્ણ એક પ્રકારનું પશુ છે. “મિય” મૃગ “મહિસ” મહિષ અને “વિયગ્ધ,” વ્યાઘ્ર હિંસક પ્રાણીઓ છે અને તે સિંહ જેવાં જ હોય છે. “છગલ” ઝકરા ઝકરીને અજ કહે છે. “દીવિય”દ્વીપિકા માંસાહારી શિકારી પશુ છે. તેને તેંદુઆ કહે છે. તે ચિત્તા જેવું હોય છે. જંગલી કૂતરાઓને શુની-કુત્તા કહે છે, “ સાળ ” શબ્દથી અહીં તે જંગલી કૂતરાઓ સમજવાના છે. “તરચ્છ અચ્છ

શ્રુતિની ટીકા અં ૧ સૂ૦૮ ઊર:પરિસર્પપ્રકારનિરૂપણમ્

૪૩

સામ્પત્ત્યુર:પરિસર્પપ્રકારનાહ—‘અયગર’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્મ—અયગર—ગોણસ—વરાહિ—માઝલિ—કાકોદર—દર્ભપુણ્ણ—
પુપ્ફા—આસાલિય—મહોરગા ઊરગ વિહાણા કણ્ય ઇવમાઈ॥સૂ૦૮॥

ટીકા—અજગર—ગોણશ વરાહિ મુકુલિ—કાકોદર—દર્ભપુણ્ણ—આશાલિક મહો-
રગોરગવિધાના કૃતાશ્ચ ઇવમાદીન । અજગરા:—પ્રસિદ્ધા:, ગોણશા:—ફળરહિત-
દ્વિમુખસર્પવિશેષા: ‘વરાહય:’ દષ્ટિવિષસર્પા: યેષાં દષ્ટ્યા વિષાવેશો ભવતિ । મુકુ-
લિન:—ઈષત્ફળકારકા:, કાકોદરા:—સામાન્યસર્પા:, દર્ભપુણ્ણા:—સામાન્યફળ-
નામ હૈ । (સદૂલ) શાર્દૂલ, (સીહ) સિંહ એવં (ચિલ્લ) ચિત્રક યે સઘ
માંસભક્ષી જંગલી જાનવર હૈં ઔર સ્થલચર હૈં ॥ સૂ. ૭ ॥

અથ સૂત્રકાર ઊર:પરિસર્પકે ભેદોં કો પ્રકટ કરતે હૈં—‘અયગર
ગોણસ’ ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(અયગર) અજગર યહ બહુત અધિક મોટા સર્પ હોતા હૈ, ધીરે
રસરકતા હૈ, જિસ પ્રકાર સામાન્ય સર્પ આહટ પાતે હી બહુત શીઘ્ર ભગ
જાતા હૈ વૈસે યહ નહીં ભગ સકતા હૈ । (ગોણસ) ગોણશ યહ બી એક
પ્રકાર કા સર્પ હી હોતા હૈ, પરન્તુ હિસકે ફળા નહીં હોતી હૈ, વ્યવહાર
મેં લોગ એસા કહતે હૈં કિ હિસકે દો મુખ હોતે હૈં. હિસકા દૂસરા નામ
દુમુહી બી હોતા હૈ । (વરાહી) વરાહિ—યહ વહ સર્પ હૈ કિ જિસકી દષ્ટિ
મેં વિષ રહતા હૈ, જિસે યહ દેખ હેતા હૈં ઊસકે વિષ કા આવેશ હો
જાતા હૈ, હિસકા દૂસરા નામ દષ્ટિવિષ સર્પ બી હૈ । (માઝલિ) મુકુલી-
યહ વહ સર્પ હૈં જો અપને ફળ કો ધોડા હી વિસ્તારતા હૈ, ડયાદા નહીં,

મહ” તરફ, અન્ધ લક્ષ, તે રીંછોનાં જ નામ છે. “સદૂલ” શાર્દૂલ, “સીહ” સિંહ
અને “ચિલ્લ” ચિત્રક એ સઘળાં માંસભક્ષી જાનવરો છે, અને સ્થળચર છે. ॥સૂ. ૭॥

હવે સૂત્રકાર “ઊર:પરિસર્પ” પેટે ચાલનારા સર્પોનાં લેહ બતાવે છે—

“અયગર—ગોણસ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“અયગર” અજગર—તે ખડખડ વધારે મોટો સાપ છે, તે ધીમે
ધીમે સરકે છે. જે રીતે સામાન્ય સાપો સહેજ પથુ આવળ થતાં તરતજ
ભાગી જાય છે તેમ તેઓ ભાગી શકતા નથી. “ગોણસ” ગોણશ—તે પથુ એક
પ્રકારનો સાપ જ હોય છે, પણ તેને ફેંધું હોતી નથી. વ્યવહારમાં લોકો એવું
કહે છે કે તેને બે મુખ હોય છે, તેનું બીજું નામ ‘દુમુહી’ પણ છે. “વરાહિ”
વરાહિ—તે એવો સર્પ છે કે જેની દષ્ટિમાં જ વિષ રહે છે, જેને તે જીવે છે
તેને તેનું ઝેર ચડે છે, તેનું બીજું નામ દષ્ટિવિષ સર્પ પણ છે. “માઝલી” મુકુલી
તે એવો જાતનો સર્પ છે કે જે પોતાની ફેંધુને થોડા પ્રમાણમાં જ ફેલાવે છે,

ધારિણઃ । આશાલિકાઃ, ઊરઃપરિસર્પવિશેષાઃ । એતે ચ ચક્રવર્તિવાસુદેવચ્છદેવા-
દીનાં સ્કન્ધાવારમધ્યે ગ્રામનગરાદિષુ વા પ્તેષાં વિનાશકાલે સામુદાનિક
કર્મોદયાત્-અસંચિનો મિથ્યાદૃષ્ટયઃ સંમૂર્ચ્છિમપચ્છેન્દ્રિયા અન્તર્મુહર્તાયુક્તાઃ જઘ-
ન્યેનાઽઙ્ગુલસ્યાસંખ્યેયભાગપરિમિતયાઽવગાહનયા, ઉત્કર્ષેણ દ્વાદશયોજનપરિમિતયા
ઽવગાહનયા ચિન્કમ્ભવાદહ્યેન તથાનુરૂપાં ભૂમિં વિદાર્ય સમુત્પદ્યન્તે । અન્તર્મુહર્તા-
નન્તરં તન્મરણે-સ્કન્ધાવારાદીનાં સહસ્રા વિનાશો ભવતિ । ‘મહોરગા’ યોજનસહસ્ર-

કયોં કિ ફળ કો અધિક વિસ્તાર કરને કી હસમેં શક્તિ નહીં હોતી હૈ ।
(કાકોદર) કાકોદર-સામાન્ય સર્પકા નામહૈ । હસી તરહ (દ્વમ્બપુષ્પ) દર્ભપુષ્પ
ભી વહ સર્પ હોતા હૈ જો સામાન્ય રૂપસે ફળા સે યુક્ત હોતા હૈ, પરન્તુ
યહ અપને ફળા કો તાનતા નહીં હૈ, ચીન યજાને પર ભી યહ પ્રકૃતિસ્થ
બના રહતા હૈ । (આસાલિય) આશાલિક ભી સર્પોં કી એક વિશેષ જાતી
હૈ । યે ચક્રવર્તી, વાસુદેવ, વલદેવ, આદિકોં કે સૈન્ય કે નિવાસસ્થાનમેં
અથવા ગ્રામ નગર આદિકોં મેં ભૂમિ કે નીચે ઉત્પન્ન હોતે હૈ, इनके विना-
शकालमें सामुदायिक कर्मका उदय होता है, स्कन्धावार-छावनी तथा ग्राम
नगरादि जमीन में उतर जाते हैं प्रायः मर जाते हैं ये असंजी मिथ्या-
दृष्टि होते हैं, इनका जन्म संमूर्च्छिम होता है, इनके पांचो इन्द्रियां होती
है । इनकी आयु अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होती है इनके शरीर की अवगाहना
जघन्य से अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है तथा उत्कृष्ट से
द्वादश योजनप्रमाण होती है, अन्तर्मुहूर्त के बाद इनका मरण हो जाता

કારણકે વધારે પ્રમાણમાં શ્રેવાવવાની શક્તિ તેનામાં હોતી નથી. “કાકોદર” કાકોદર
સામાન્ય સર્પનું નામ છે. એજ પ્રમાણે “દ્વમ્બપુષ્પ” દર્ભપુષ્પ પણ એક એવા
પ્રકારનો સર્પ છે કે જે સામાન્ય રીતે ફણાથી યુક્ત હોય છે, પણ તે પોતાની
ફણાને શ્રેવાવતો નથી, મોરલી જળવવામાં આવે તો પણ તે ફણાને વિસ્તાર્યા
વિના મૂળ સ્થિતિમાં જ રહે છે. “આસાલિય” આશાલિક, પણ સર્પોની એક
પ્રાસ જાતિ છે. તે ચક્રવર્તી, વાસુદેવ, વલદેવ આદિના સૈન્યના નિવાસસ્થાનમાં
અથવા ગામ નગર આદિમાં ભૂમિની નીચે ઉત્પન્ન થાય છે, તેમના વિનાશ કાળે
સામુદાયિક કર્મનો ઉદય થાય છે. સ્કન્ધાવાર-છાવણી તથા ગામ નગર આદિ
જમીનમાં ઉતરી જાય છે. સામાન્ય રીતે મરી જાય છે. તેઓ અસંજી મિથ્યા-
દૃષ્ટિ હોય છે. તેમનો જન્મ સંમૂર્ચ્છિમ થાય છે, તેમને પાંચે ઇન્દ્રિયો હોય
છે. તેમનું આયુષ્ય અન્તર્મુહૂર્ત પ્રમાણ છે, તેમના શરીરની અવગાહના જઘન્યથી
અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ હોય છે, તથા ઉત્કૃષ્ટે ત્રાર યોજન
પ્રમાણ હોય છે. અન્તર્મુહૂર્ત પછી તેમનું મરણ થઈ જાય છે. “મહોરગા”

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૧ ભુજપરિસર્પભેદનિરૂપણમ્

૪૫

પ્રમાણશરીરા મનુષ્યક્ષેત્રવદ્ધિર્ભોવિનરઃપરિસર્પવિશેષાઃ, एषां द्वन्द्वः । उरगविधानाः=उरगप्रकाराः कृताः । तान् च एवमादीन् 'घ्नन्ति' इत्यनेन सम्बन्धः ॥सू० ८॥

અથ ભુજપરિસર્પભેદનાદ—‘છીરલ૦’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્મ-છીરલ-સરંબ-સેહ-સેહગ-ગોધા-ઉંદુર-ળાલ-સરહ-જાહક-મંગુસ-લાહિલા-ચાઉપ્પહય-ઘરોલિયા-સરી-સિવ ગળે ય ઇવમાઈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા-ક્ષીરલાઃ, શરમ્ભાઃ, ‘સેહાઃ’ તીક્ષ્ણકણ્ઠકાકુલકાયાઃ, શૈલ્યકાઃ, એ તે સર્વે ભુજપરિસર્પવિશેષાઃ । ગોધાઃ=મસિદ્ધાઃ, ઉંદુરાઃ=મૂષકાઃ, નકુલાઃ મસિદ્ધાઃ ॥ હૈ । (મહોરગા) મહોરગ યે વે સર્પે હૈં કિ જિનકા શરીર એક હજાર યોજન કા હોતા હૈ, તથા યે મનુષ્ય ક્ષેત્ર સે બાહિરી ક્ષેત્રોં મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં । (ઉરગવિહાણાકણ્ય) યે સઘ ભેદ ઉરઃપરિસર્પોં કે હૈં પાપી જીવ ઇન્હેં મારતે હૈં ॥ સૂ. ૮ ॥

અથ ભુજપરિસર્પ કે ભેદોં કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં—‘છીરલ-સરંબ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ-(છીરલ-સરંબ-સેહ-ગોધા-ઉંદુર-ળાલ-સરહ-જાહક-મંગુસ-લાહિલા-ચાઉપ્પહય-ઘરોલિયા-સરીસિવ ગળે ય ઇવમાઈ) ક્ષીરલ, શરમ્ભ સેહ યે વે જીવ હૈં કિ જિનકા શરીર કાંટોં સે યુક્ત રહતા હૈં । સેહ કો હિન્દી ભાષા મેં “સેહી” કહતે હૈં, ઇસકા આકાર શ્રગાલ જૈસા હોતા હૈં, ઇસકે શરીર પર તીલે નુકીલે કાંઠે ઔર સપેદ રંગ વાલે કાંઠે હોતે હૈં । યે ભેદ ભુજપરિસર્પોં કે હૈં । ગોધા-ગુહેરેકી માંકો કહતે હૈં યહ મિત્તિ પર ઇતની મજબૂતી કે સાથ ચિપક જાતી હૈં કિ ઇસે પકડ કર ચોર

મહોરગ, તે એવા સર્પ હોય છે કે જેમનું શરીર એક હજાર યોજનનું હોય છે, તથા તે મનુષ્ય ક્ષેત્રથી બહારનાં ક્ષેત્રોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. “ઉરગવિહાણાકણ્ય” આ બધા ઉરઃપરિસર્પોના ભેદ છે. પાપી જીવો તેમની હત્યા કરે છે. ॥સૂ. ૮॥ હવે ભૂજપરિસર્પના ભેદોને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—“છીરલસરંબ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“છીરલ, સરંબ, સેહ, સેહગ ગોધા ઉંદુર, ળાલ, સરહ, જાહક, મંગુસ, લાહિલા, ચાઉપ્પહય, ઘરોલિયા, સરીસિવ, ગળે ય ઇવમાઈ” ક્ષીરલ, શરમ્ભ, સેહ, તે જીવો કાંટા થી યુક્ત શરીરવાળા હોય છે. સેહને મૂળસાતી ભાષામાં સાહુડી કહે છે. તેનો દેખાવ શિયાળા જેવો હોય છે, તેના શરીર પર તીક્ષ્ણ, અણીદાર, કાળા અને સફેદ રંગના કાંટા હોય છે. તે ભુજપરિસર્પોના ભેદ છે. “ગોધા” પાટલા થોને કહે છે. તે દિવાલ પર એટલી સબળડ ચોંટી બાય છે.

શરટા=કુકલાશા; જાહકા=કષ્ટકવ્યાસાહ્વા; મંઘુસા=ભુજપરિસર્પવિશેષા; સ્વાહિલા=શ્વેતકૃણારેસ્વાહિતદેહા; ભુજપરિસર્પવિશેષા; ચાતુષ્પદિકા=ચતુષ્-રણા ભુજપરિસર્પવિશેષા; 'ઘરોલિયા' ગૃહગોધિકા; 'છિપકલી-પરોલી' इति પ્રસિદ્ધા; एतेषां द्वन्द्वः। एवमादीन् सरीसृपगणान् 'घ्नन्ती'ति सम्बन्धः॥सू०९॥
અથ સેચરખેદાનાહ—'કાદંબ' इत्यादि।

મૂલમ્—કાદંબ—કંક—બલાકા—સારસ આડા—સેડી—કુલલ-વંજુલ—પારિપ્પવ—કીર-સડળ—દીવિય—હંસ—ધત્તરટુ—ભાસ—કુલી-રાત્રિ મેં ચોરી કરને કો ડપર ડુમંજિલે આદિ મકાન પર ચઢ જાતે હૈં યહ કમન્દ કી તરહ મિત્તી પર લટક જાતી હૈં। ઉન્દુર નામ મૂષક કા હૈં। મકુલ નૌલો કો કહતે હૈં। શરટ નામ કુકલાશ કા હૈં, યહ ગલે મેં લાલ હોતા હૈં ઓર બેઠા હુઆ અપના મસ્તક હિલાયા કરતા હૈં, છિપ-કલી જૈસા હસકા આકાર હોતા હૈં, મારવાડ આદિ રાજસ્થાન મેં 'કરં-ગેટયા' કહતે હૈં। જાહક વે ભુજપરિસર્પવિશેષ હૈં કિ જિનકે શરીર પર કાંટિ રહતે હૈં। મંઘુસ ભી હસી પ્રકાર કે ભુજપરિસર્પ વિશેષ હૈં। સ્વાહ-હિલ કો હિન્દી મેં ગિલહરી કહતે હૈં, હસકે શરીર પર જો રોમરાજી હોતી હૈં વહ સપેદ ઓર કાલી રેખા સે યુક્ત હોતી હૈં, યહ વૃક્ષો પર રહતી હૈં। ચાતુષ્પદિક ચાર પૈરોં વાલા ભુજપરિસર્પ વિશેષ હોતા હૈં। ઘરોલિયા કો હિન્દી મેં છિપકલી કહતે હૈં, યહ મકાનોં કે ખીતર ખીત પર છત પર ચિપકી રહતી હૈં। નિર્દયી હિંસક જીવ હનંહે તથા હનસે મિશ્ર જો ઓર ભી ભુજપરિસર્પ વિશેષ હૈં હનંહે મારતે હૈં॥સૂ. ૯॥

કે તેને પકડીને રાત્રે ચોર ચોરી કરવાને માટે બે ત્રણ માળના મકાનપર ચડી બાથ છે, તે કબ્બાની જેમ ભીંતપર લટકી બાથ છે. “ચંદુર” એટલે ઉંદર. “જશ્વ” એટલે નોળીયા, “સરહ” એટલે કાચિડો. તેનું ગળું લાલ હોય છે અને તે બેઠો બેઠો પોતાનું શિર હલાવ્યા કરે છે, ગરોળી જેવો તેનો આકાર હોય છે. માર-વાડ આદિ રાજસ્થાનમાં તેને “કરંગેટયા” કહે છે, બાહક, એ એક બાતના ભુજપરિસર્પનો લેહ છે. તેમના શરીર પર કાંટા હોય છે. મંઘુસ પણ એજ પ્રકારે ભુજપરિસર્પ છે, “સ્વાહિલ” એટલે ખિસકોલી તેના શરીરપર જે ફવાટી હોય છે તે સફેદ અને કાળી રેખાથી યુક્ત હોય છે, તે વૃક્ષો પર રહે છે. તે ચાતુ-ષ્પદિક, ચાર પગ વાળુ ભુજપરિસર્પ વિશેષ છે. ‘ઘરોલિયા’ તેમને ગૂજ-રાત્રીમાં ગરોળી કહે છે. તે મકાનોની અંદર ભીંત તથા છત પર ચોટી રહે છે- નિર્દય હિંસક લોકો તેમની તથા તેમના સિવાયના ઘીળાં પણ જે ભુજપ-રિસર્પ વિશેષ છે તેમની હત્યા કરે છે॥સૂ-૯॥

સુવર્ણીની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૧૦ લેખરજીવનરૂપણમ્

૫૭

કોસ-કુંચ-દગતુંડ-દેળિયાલગ-સૂઈમુહ-કવિલ-પિંગલવલ્લગ-
કારંડ-ચક્કવાગ-ઉક્કોસ-ગરુલ-પિંગલ-સુચ-વરહિણ-મયળ-
સાલ-નંદીમુહ-નંદમાળગ-કોરંગ-ભિંગારગ-કોણાલગ-જીવં
જીવક-તિત્તિર-વટ્ટગ-લાવગ-કર્પિંજલગ-કવોતગ-પારેવગ-ચડગ
ઢિંક-કુક્કુડ-મેસર-મઝર-ચઓરગ-હયપોંડરીય-કરક-ચીરહ
-સેળ-વાયસવિહાણ-સિયચાસ-વમ્બુલિ-ચમ્મદિલ-વિતતપક્કિલ
સમુગ્ગપક્કિલ-સ્વહયર વિહાણાકપ ય ઇવમાઈ જલ થલ સ્વચા-
રિણો ય પંથિદિપ્પ પસુગણે વિયતિ ય ચચરિંદિપ્પ ય વિવિહે
જીવે પિય જીવિપ્પ મરણદુક્કલપડિકૂલે વરાપ્પ હણંતિ વહુસંકિ-
લિટ્ઠ કમ્મા ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—કાદમ્બા:=કલહંસા:, કક્કા:=પક્ષિવિશેષા: ચલાકા:=‘વગલા’ इति
भाषा प्रसिद्धा:, सारसा:=प्रसिद्धा: ‘आडा’ जलचर पक्षिविशेषा: ‘आडा’ इति
भाषायाम् । ‘सेडी’ सेटी, कुलला:, वंजुला:, ‘पारिप्लव’ पारिप्लवा:=पक्षि-
विशेषा: कीरा:=शुका:, ‘सउण’ शकुना: ‘शकुनपक्षिविशेषा:, ‘दीविषा’ दीपिका:

अब लेखर जो तिर्येच हैं उनके भेदों को सूत्रकार स्पष्ट करते हैं—
‘कादंभ कंक चलाका’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(કાદંબ) કાદમ્બ-કલહંસ (કંક) કંક-પક્ષિવિશેષ
(ચલાકા) ચલાકા-વગલા (સારસ) સારસ-इसी नामका प्रसिद्ध पक्षी
है (आडा) आडा-जल में तैरने वाला पक्षी जिसे भाषामें ‘आड’ कहते
हैं (सेडी) सेटी (कुलल) कुलल (वंजुल) वंजुल (पारिप्लव) पारि-
प्लव पक्षिविशेष (कीर) कीर-तोता (सउण) शकुन-पक्षिविशेष,

હવે જે ખેચર-નભચર તિર્યંચો છે તેમના ભેદોને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે-
“કાદંબ, કંકચલાકા” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“કાદંબ” કાદમ્બ-કલહંસ “કંક” કંક-એક જાતનું પક્ષી,
“ચલાકા” ચલાકા-વગલું “સારસ” સારસ-એ નામનું પ્રસિદ્ધ પક્ષી “આડા”
આડા-જળમાં તરનારું એક પક્ષી જેને સંસ્કૃતમાં “આડા” કહે છે. “સેડી”
સેડી “કુલલ” કુલલ “વંજુલ” વંજુલ “પારિપ્લવ” પારિપ્લવ એ પક્ષીઓની
આસ જાતો છે. “કીર” કીર-પોપટ “સઝળ” શકુન-પક્ષીની એક જાત “દીવિષ”

=કૃષ્ણચટકાઃ, હંસાઃ=નીરક્ષીરવિવેચકાઃ પક્ષિણઃ ‘ધત્તરદ્વ’ ધાર્તરાષ્ટ્રકાઃ=ચ્યા-
મચરણચન્નુ હંસાઃ, ‘ભાસ’ ભાસાઃ ‘કુલીકોસ’ કુલીક્રોશઃ=પક્ષિવિશેષાઃ ‘કુંચ’
ક્રૌંચાઃ=ક્રૌંચપક્ષિણઃ યે શરદિ ઋતૌ માઘન્તિ મધુરધ્વનિ ચ કુર્વન્તિ, ‘દગતુંડ’
દક્તુષ્ઠાઃ, ‘ઢેળિયાલગ’ ઢેળિકાલકાઃ, ‘સૂઈમુહ’ સૂચીમુખાઃ ‘કવિલ’ કપિલાઃ=
પક્ષિવિશેષાઃ, ‘પિંગલક્ષગ’ પિંગ્લાક્ષાઃ=પિંગ્લે અશ્વિની યેવાં તે પિંગ્લાક્ષાઃ=
પીતલોચનપક્ષિણઃ ‘કારંડ’ કારણ્ડકાઃ=વતક ઇતિ.લોકે પ્રસિદ્ધાઃ, ‘ચક્કવાગ’
ચક્કવાકાઃ=પ્રસિદ્ધાઃ, ‘ઉક્કોસ’ ઉક્કોશાઃ=કુરરાઃ કુરજ પક્ષિવિશેષાઃ, ‘ગરુલ’
ગરુડાઃ=પ્રસિદ્ધાઃ ‘પિંગલ’ પિંગ્લાઃ=રક્તશુકાઃ ‘સૂય’ શુકાઃ=રક્તમુખશુકાઃ,
‘બરહિણ’ બર્હિણઃ=પિચ્છધારિમયૂરાઃ ‘મયણસાલ’ મદનશલાકાઃ=‘મેના’
ઇતિ માપાયામ્, ‘નંદીમુહ’ નન્દીમુખાઃ, ‘નંદમાણગ’ નન્દમાનકાશ્ચ
પક્ષિવિશેષાઃ, ‘કોરંગ’ કોરંગ્કાઃ=તત્ત્વામકાઃ પક્ષિણઃ ‘ભિંગારન’ ભૃંગારિકાઃ

(દીપિચ) દીપિકા-કાલીચિહ્નિયા (હંસ) હંસ-નીરક્ષીર કો જુદા કરને
વાલા પક્ષી (ધત્તરદ્વ) ધાર્તરાષ્ટ્રક-જિનકે ચરણ ઓર ચોંચ દોનોં કાછે
હોતે હૈં એસે હંસ (ભાસ) ભાસ ઓર (કુલી-કોસ) કુલીક્રોશ પક્ષિ-
વિશેષ હૈં (કુંચ) ક્રૌંચપક્ષી-જો શરદ ઋતુ મેં મદોન્મત્ત હોતે હૈં એવં
મધુર ધ્વનિ ક્રિયા કરતે હૈં (દગતુંડ) દગતુડ (ઢેળિયાલગ) ઢેળિકાલક
(સૂઈમુહ) સૂચીમુખ (કવિલ) કપિલ, યે બી પક્ષિ વિશેષ હૈં । (પિંગલ-
ક્ષગ) પિંગ્લાક્ષ-પીલેનેપ્રવાલા એક જાન કા પક્ષી (કારંડ) કારણ્ડક-
વતક (ચક્કવાગ) ચક્કવાક-ચકવા (ઉક્કોસ) ઉક્કોશ-કુરર, (ગરુલ)
ગરુડ (પિંગલસૂય) પિંગલમોતે, (સૂય) શુક-લાલચાંચ વાછે તોતે (બર-
હિણ) બર્હિ-પિછોંવાલે મયૂર (મયણસાલ) મદનશાલ-મેના (નંદીમુહ)
નંદીમુખ (નંદમાણગ) નન્દમાનક, ઓર (કોરંગ) કોરંક इन नाम के

દીપિકા-દેવચકલી “હંસ” હંસ-નીરક્ષીરને જુદા કરનાર પક્ષી “ધત્તરદ્વ” ધાર્ત-
રાષ્ટ્રક-જેમનાં ચરણ અને આંચ કાળા હોય છે તેવા હંસ “ભાસ” ભાસ અને
“કુલીક્રોસ” કુલીક્રોશ-પક્ષીની ખાસ બતો “કુંચ” ક્રૌંચપક્ષી-જે શરદઋતુમાં
મદોન્મત્ત થાય છે અને મધુર ધ્વનિ કર્યા કરે છે. “દગતુંડ” દગતુંડ, “ઢેળિયાલગ”
ઢેળિકાલક “સૂઈમુહ” સૂચીમુખ “કવિલ” કપિલ એ પક્ષીની ખાસ બતો છે.
“પિંગલક્ષગ” પિંગલાક્ષ-પીળાં નેપ્રવાળુ એક બતનું પક્ષી “કારંડ” કારંડક-
બતક “ચક્કવાગ” ચક્રવાક-ચકવા “ઉક્કોસ” ઉક્કોશ-કુરર “ગરુલ” ગરુડ “પિંગલ”
પિંગલ-લાલ પોપટ “સૂય” શુક-લાલ આંચવાળા પોપટ “બરહિણ” બર્હિ-
પીછા વાળો મોર “મયણસાલ” મદનશાલ-મેના “નંદીમુહ” નંદીમુખ “નંદ-
માણગ” નન્દમાનક અને “કોરંગ” કોરંક નામનાં પક્ષીઓ “ભિંગારન” ભૃંગારક-

‘ભિગોડી’ इति प्रसिद्धाः, ‘कोणालग’ कोणालकाः=जलचरपक्षिविशेषाः, जीवजीवकाः=चातकाः, तित्तिराः=‘तीतर’ इति लोके प्रसिद्धाः, ‘वट्टग’ वर्तकाः=पक्षिविशेषाः ‘वटेर’ इति भाषायाम् । ‘लावग’ लावकाः=प्रसिद्धाः, ‘कर्पिजलग’ कर्पिजलकाः=तन्नामकपक्षिणः ‘कवोतग’ कपोतकाः=‘कवूतर’ इति प्रसिद्धाः, ‘पारेवग’ पारावतकाः=तज्जातीया एव ‘चडग’ चटकाः=‘चिडी’ इति प्रसिद्धाः, ‘ढिक’ ढिङ्काः=ढिङ्कपक्षिणः, ‘कुक्कुड’ कुक्कुटाः=प्रसिद्धाः, मेसर=पक्षिविशेषाः, ‘मऊर’ मयूराः=प्रसिद्धाः, ‘चओरग’ चकोरकाः=प्रसिद्धा एव ‘हय-पोंडरीय’ हृदपुण्डरीकाः=जलचरपक्षिविशेषाः, ‘करग’ करकाः ‘चीरल्ल’ चीरल्लाश्च पक्षिविशेषाः ‘चील’ इति प्रसिद्धाः ‘सेण’ श्येनाः ‘वाज’ इति भाषायां ‘वायसविहाण’ वायसविधानाः काकपक्षिभेदाः, ‘सियाचास’ सितचाषाः=श्वेतचाषपक्षिणः, ‘वग्गुलि’ वलगुल्यः-‘वागल’ इति प्रसिद्धाः, ‘चम्मट्टिल’ चर्मास्थिलाः चर्मचटका इति भाषायां, ‘विततपक्खि’ विततपक्षिणः ‘समुग्गपक्खि’ समुद्रपक्षिणः, एते

પક્ષી (ભિગારગ) મૃદ્ધારક-ભિગોડી (કોણાલગ) કોણાલક-જલચર પક્ષિ-વિશેષ (જીવંજીવક) જીવંજીવક-ચાતક (તિત્તિર) તિત્તિર-તીતર (વટ્ટગ) વર્તક-વટેર (લાવગ) લાવક-લાવા (કર્પિજલગ) કર્પિજલક
 હસ નામ કા પક્ષી (કવોતગ) કપોતક-કવૂતર (પારેવગ) પારાપતક
 કવૂતર કે જાતિવિશેષ (ચડગ) ચટક-ચિડિયા (ઢિક) ઢિકપક્ષી (કુક્કુડ) કુક્કુટ-મુર્ગા (મેસર) મેસર (મઝર) મયૂર ઓર (ચઓ-રગ) ચકોર યે સઘ પક્ષિવિશેષ હૈ (હયપોંડોરીય) હૃદપુંડરીક-જલપક્ષિ-વિશેષ (કરક) કરક-પક્ષિવિશેષ (ચીરલ્લ) ચીરલ્લ-ચીલ, (સેણ) શ્યેન ધાજ (વાયસવિહાણ) વાયસવિધાન-કૌવા પક્ષી કે ભેદ (સિયાચાસ) શ્વેતચાષ પક્ષી (વગ્ગુલિ) વલ્ગુલી-વાગલ (ચમ્મટ્ટિલ) ચર્માસ્થિલ-ચમ-ગાદડ (વિતતપક્ખિ) વિતતપક્ષી (સમુગ્ગપક્ખિ) સમુદ્રપક્ષી, સ્વહયર-

ભિગોડી “કોણાલગ” કોણાલક એક જાતનું જળચર પક્ષી “જીવંજીવક” જીવં-જીવક-ચાતક “તિત્તિર” તિત્તિર-તેતરપક્ષી “વટ્ટગ” વર્તક-વટેર “લાવગ” લાવક-લાવા “કર્પિજલગ” કર્પિજલક-એ નામનું પક્ષી “કવોતગ” કપોતક-કવૂતર “પારેવગ” પારાવતક-પારેવું કવૂતરની જાતનું પક્ષી “ચડગ” ચટક-ચટલી “ઢિક” ઢિક પક્ષી “કુક્કુડ” કુક્કુટ-કુકડો “મેસર” મેસર “મઝર” મયૂર અને “ચઓરગ” ચકોર એ બધાં જુદી જુદી જાતનાં પક્ષીઓ છે. “હય-પોંડરીય” હૃદપુંડરીક-તે નામનું જળચર પક્ષી “કરક” કરક-પક્ષિવિશેષ “ચીરલ્લ” ચીરલ્લ-સમડી “સેણ” શ્યેન-ખાજ “વાયસવિહાણ” વાયસ વિધાન કાગડાની એક જાત “સિયાચાસ” શ્વેતચાષ પક્ષી “વગ્ગુલિ” વલ્ગુલી-વાગળ “ચમ્મટ્ટિલ” ચર્માસ્થિલ-ચમગાદડ “વિતતપક્ખિ” વિતતપક્ષી “સમુગ્ગપક્ખિ” સમુદ્રપક્ષી

મનુષ્યક્ષેત્રવહિર્માવિપક્ષિણઃ=‘સ્વયરવિઢાણકણ ય ઇવમાઈ’ સ્વચર વિઢાનાઃ કૃતાઃ, તાનેવમાડીલુક્તપ્રકારાન્ । તથા ‘જલથલસ્વચારિણો ય પંચિદિષ પસુગણે’ જલસ્થલસ્વચારિણશ્ચ પશ્ચેન્દ્રિયાન્ પશુગંણાન્ ‘વિયતિય ચ્ચરિદિષ’ દ્વિત્રિચતુરિન્દ્રિયાન્ ‘વિવિહે જીવે’ વિવિધાન્ જીવાન્ ‘પિયજીવિષ’ પ્રિયજીવિતાન્ ‘મરણદુઃસ્વપડિકૂલે’ મરણદુઃસ્વપ્રતિકૂલાન્ ‘વરાણ’ વરાકાન્=દીનાન્ ‘વહુસંકિલ્લિટ્કમ્મા’ વહુસંકલિટ્કર્માણઃ=સમપ્રિકદુષ્ટાચરણાઃ જનાઃ ‘હ્ણંતિ’ અન્તિ=મારયન્તિ॥સૂ.૧૦॥

ઇવં પ્રાણિવ્રથસ્ય પ્રકારાણ્યભિધાય સમ્પ્રતિ તત્પ્રયોજનપ્રકારાણ્યાહ— ‘ઇમેહિં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઇમેહિં વિવિહેહિં કારણેહિં, કિં તે ? ચમ્મ-વસા-મંસ-મેય-સોણિય-જગ-ફિપ્પિસ-મત્થુલિંગ-હિય-અંત-પિત્ત-પ્પોફસ-દંતઢા-અટ્ઢિ-મિંજ-નહ-નયણ-કળ્લ-પહારુણિ-નક્ક-ધમણિ-સિંગ-દાઢિ-પિચ્છ-વિસ-વિસાળ-વાલહેડં ॥ સૂ. ૧૧ ॥

વિહાણાકણ ય) યે મનુષ્ય સે વાહિર રહને વાલે પક્ષી । યે સવ સ્વેચર જાતિકે પ્રકાર હૈં । હન્હે તથા (ઇવમાઈ) ઔર ઓ હનસે ભિન્ન જો (જલથલ સ્વચારિણો ય પંચિદિષ પસુગણે) જલ-ચર, સ્થલચર, ઇવં સ્વેચર પશ્ચેન્દ્રિય પશુ હૈં ઁનકો ઇસી પ્રકાર (વિયતિ ય ચ્ચરિદિષ ય) દ્વીન્દ્રિય, તેન્દ્રિય, ઔર ચતુરિન્દ્રિય ઇસે (વિવિહે જીવે) નાનાપ્રકાર કે જીવોં કો કિ જિન્હે (પિયજીવિષ) અપને પ્રાણ પ્રિય હૈં ઔર (મરણ દુઃસ્વપડિકૂલે) મરણ જન્ય દુઃસ્વોં સે જો સદા ઢરતે રહે હૈં, યે દુઃસ્વ જિન્હે પ્રતિકૂલ હૈં, ઇવં જો (વરાણ) વીન હૈં ઁન્હે (વહુસંકિ-લિટ્કમ્મા) અત્યન્ત દુષ્ટ ઔચરણ વાલે મનુષ્ય (હ્ણંતિ) મારતે હૈં ॥સૂ. ૧૦॥

સ્વહયર, વિહાણાકણ ય” તે મનુષ્યર્થી દૂર રહેતાર પક્ષી છે. ઁ બધા બેચર જાતિના પ્રકારો છે. તેમને તથા “ઇવમાઈ” તે સિવાયના બીજા પશુ કે “જલ-થલ સ્વચારિણો ય પંચિદિષ પસુગણે” જળચર, સ્થળચર અને બેચર પશ્ચેન્દ્રિય પશુઓ છે તેમને તથા ઁજ પ્રમાણે “વિયતિય ચ્ચરિદિષ ય” દ્વીન્દ્રિય, ત્રિ-ન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય ઁવાં “વિવિહે જીવે” વિવિધ પ્રકારતાં જીવો કે બેમને “પિયજીવિષ” ચેતાના પ્રાણ પ્રિય છે અને “મરણ દુઃસ્વપડિકૂલે” મરણજન્ય દુઃખોથી કે સદા ડરતાં રહે છે, તે દુઃખો બેમને પ્રતિકૂલ છે, અને કે “વરાણ” વીન છે તેમને “વહુસંકલિટ્કમ્મા” અત્યંત દુષ્ટ આચરણ વાળા મનુષ્યો “હ્ણંતિ” ઢશે છે । સૂ.-૧૦॥

टीका—‘इमेहि’ एभिः वक्ष्यमाणैः ‘विविहेहि’ विविधैः=नानाप्रकारैः ‘कारणेहि’ कारणैः=वक्ष्यमाणप्रयोजनैः व्रसान् प्राणान् धनन्ति अबुधा जनाः इत्यग्रेण सम्बन्धः । ‘किं ते’ कानि तानि प्रयोजनानि ? इत्याह—‘चम्म’ इत्यादि । ‘चम्म’ चर्म=शरीरत्वचा, तदर्थं यथा ‘चर्मणि द्वीपिने हन्ति’ इत्यादि । ‘वसा’ वसा=शरीरस्थधातुविशेषः, ‘चर्षी’ इति भाषा, ‘मंस’ मांस, मेदो=देहस्थ चतुर्थधातु-

इस प्रकार प्राणिवध के प्रकारों को कहकर अब सूत्रकार उसके प्रयोजन के प्रकारों को कहते हैं—इमेहि विविहेहि’ इत्यादि ।

टीका—जो अबुध-अज्ञानी मनुष्य हैं वे (इमेहि) इन वक्ष्यमाण (विविहेहि) नानाप्रकार के (कारणेहि) प्रयोजनों के दशवर्ती होकर (हिसंति तसे पाणे) व्रस जीवों की घात करते हैं । इस प्रकार का संबंध १३वें सूत्र में कथित “अबुहा इह हिंसति तसे पाणे” इन पदों को लेकर यहां लगा लेना चाहिये । (किं ते) जिन प्रयोजनों को लेकर अज्ञानी-प्राणी व्रस जीवों की हिंसा करते हैं वे प्रयोजन क्या २ हैं—इसी विषय को सूत्रकार “चम्म-वसा-मंस-मेय” इत्यादि पदों द्वारा स्पष्ट करते हैं, वे कहते हैं कि (चम्म-वसा-मंस-मेय-सोणिय-जग-फिफिस-मल्लुलिंग-हिय-अंत-पित्त-फोफस-दंतद्व) अबुधजन जो इन प्राणियों की घात करते हैं उसमें कितनेक प्राणियों का उनकी (चम्म) त्वचा प्राप्त करने का प्रयोजन रहता है इसलिये वे उनका घात करते हैं, कितनेक प्राणियों का उनकी (वसा) चर्षी प्राप्त करने का उद्देश्य होता है, कितनेक

आ प्रभावे प्राणीवधना प्रकारे विधे पात करीने छे सूत्रकार तेना कथा कथा हेतुआ छे ते जतावे छे—“इमेहि विविहेहि” इत्यादि.

टीका—वे अबुध-अज्ञानी मनुष्य छे तेआ “इमेहि” आ प्रभावे “विविहेहि” विविध प्रकारना “कारणेहि” प्रयोजनने वश धरने “हिसंति तसे पाणे” व्रस एवेना घात करे छे. आ प्रकारना संबंध १३ भां सूत्रभां कहेअ “अबुहा इह हिंसति तसे पाणे” आ पदोनी साथे त्यां जेउये जेउआ. “किं ते” जे हेतुने पातर अज्ञानी-एव व्रस एवेना हिंसा करे छे ते हेतुआ कथा कथा छे—जे विषयने सूत्रकार “चम्म-वसा-मंस-मेय” इत्यादि पदे. द्वारा स्पष्ट करे छे. तेआ कहे छे के “चम्म, वसा, मंस, मेय, सोणिय, जग, फिफिस, मल्लुलिंग हिय, अंत, पित्तफोफस, दंतद्व” अबुध दोउते ते प्राणीओनी जे हिंसा करे छे तेना हेतु केउलाक प्राणीओनी पाणतमां तेमनु “चम्म” आमडुं प्राप्त करवाना छेअ छे, केउलाक प्राणीओनी “वसा” चरणी प्राप्त करवा भाटे तेमना वध कराय छे,

विशेषः, 'सोषिथ' शोषितं=द्वितीयधातुविशेषः, 'जग' यकृत्-उदरदक्षिणभागस्थ मांसग्रन्थिः, 'फिफिस' फिफिसं=अन्त्रस्थितमांसविशेषः, 'फेफड़ा' इति भाषायां, 'महधुलिंग' मस्तुलिङ्गं=मस्तक भेजकं 'हिय' हृदयं=हृदयमांसपिण्डं 'कलेजा' इति प्रसिद्धं, 'अंत' अन्त्रं 'आंत' इति भाषा, 'पित्त' पित्तं=पित्ताशयः, फोफसं=शरीरावयवविशेषः 'दंतट्टा' दन्तार्थं=दन्ताः=प्रसिद्धाः, एतेषामर्थान् य। पुनः- 'अट्टि' अस्थि प्रसिद्धा, 'मिज' मज्जा=वीर्यजनकपृष्ठातुविशेषः। उक्तञ्च—

प्राणियों का उनके (मंस) मॉस प्राप्त करने का, कितनेक प्राणियों का उनकी (मेय) मेद जो देह की चतुर्थ धातु है उसके प्राप्त करने का, कितनेक प्राणियों का उनके (सोणिय) शोणित प्राप्त करने का, कितनेक प्राणियों का उनके (जग) जकृत को-उदर के दक्षिण भाग में रही हुई मांसग्रंथि को प्राप्त करने का, कितनेक प्राणियों का उनके "फिफिस" फिफिस को आंतों में स्थिति मांस विशेष को प्राप्त करने का, कितनेक प्राणियों का उनके (मथुलिग) मस्तक के भेजे को प्राप्त करने का, कितनेक का उनके (हिय) हृदयमांसपिंड को जिसे कलेजा कहते हैं प्राप्त करने का (अंत) आंतों को प्राप्त करने का (पिस) पित्ताशय प्राप्त करने का, कितनेक का फोफस-शरीरावयव विशेष-प्राप्त करनेका, कितनेक का उनके दांतों को प्राप्त करने का प्रयोजन होता है तथा (अडि-मिजनह-नयण-कण्ण-णहारणि-नक्ष-भमणि-सिंग-दादि-पिच्छ-चिसाण-बाल हेउं) कितने का उनकी (अडि) अस्थि-हड्डी प्राप्त करनेका कितनेक का उनकी (मिज)

કેટલાક પ્રાણિયોનું “માંસ” માંસ પ્રાપ્ત કરવાના ઉદ્દેશથી તેમને વધ કરાય છે કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમની “મેય” મેદ જે હેઠની ચતુર્થ ધાતુ છે તેને પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમના “જગ” યકૃતને-પેટના જમણા ભાગમાં આવેલી માંસ ગ્રંથિને પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમના આંતરડામાં રહેલ માંસ વિશેષને પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમનાં “મથુલિંગ” માથાંમાંના મગજને પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણિયોનો વધ તેમનાં “હિય” હૃદય માંસ પિંડ કે જેને કાળજી કહે છે તેને પ્રાપ્ત કરવાને માટે કરાય છે, કેટલાક પ્રાણીઓનો વધ તેમનાં “અંત” આંતરડાં પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમનાં “પવત્ત” પિચાશય પ્રાપ્ત કરવાને માટે કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમનાં “ક્ષોક્ષ” શરીરનું એક ખાસ અવયવ પ્રાપ્ત કરવાને માટે, અને કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમનાં દાંત પ્રાપ્ત કરવાને માટે થાય છે. તથા “અદ્ધિ, મિંજનહ નયણ, કણ્ણ, પ્ઞહારુણિ, નક્ક, ધમણિ, સિંગ, વાહિ, પિચ્છ, વિસાણ, બાલહેર” કેટલાંકનો વધ તેમનાં “અદ્ધિ” અસ્થિ-હાડકાં પ્રાપ્ત કરવાને માટે કેટલાંકનો

સુદર્શિની ટીકા અ. ૧ સૂ. ૧૧ પ્રાણિવધપ્રયોજનપ્રકારવર્ણનમ્

૫૩

“રસામૃત્યુર્વાસમેદોઽસ્થિમજ્જાથુકાણિ ધાતવઃ” ઇતિ ‘નહ’ નચ્વાઃ, ‘નયણ’ નયનાનિ=નેત્રાણિ ‘કણ’ કર્ણાઃ ‘ઘ્ઠારુ’ સ્નાયુઃ=અક્ષપ્રત્યક્ષબન્ધનનાડીવિશેષઃ ‘નક્ક’ નાસિકા=‘ધમણિ’ ધમન્યો=નાડ્યઃ, ‘સિંગ’ શૃંગાણિ પ્રસિદ્ધાનિ, ‘દાદિ’ દંપ્ત્રાઃ ‘પિચ્છ’ પિચ્છં=મયૂરાદિપિચ્છં, ‘વિસ’ વિષં=કાલકૂટાદિ ‘વિસાણ’ વિષાણાનિ=ગજદન્તાઃ, ચાલો=કેશાઃ, एषां ‘હેડં’ હેતું હેતુમાશ્રિત્ય અસ્થિમજ્જાદિ-હેતોરિત્યર્થઃ, ‘હિંસતિ’ ઇતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ ॥સૂ.૧૧॥

મજ્જા નામક છઠ્ઠી ધાતુ વિશેષ કો પ્રાપ્ત કરને કા, કિતનેક કા અનેકે (નહ) નચ્વો કા પ્રાપ્ત કરને કા, કિતનેક કા અનેકે (નયણ) નયન-નેત્રો કો પ્રાપ્ત કરને કા, કિતનેક કા (કણ) કર્ણ પ્રાપ્ત કરને કા કિત-નેક કા (ઘ્ઠારુણિ) સ્નાયુઓ કો અંગ પ્રત્યંગો કો બાંધને ચાલી નાડિ વિશેષો કો પ્રાપ્ત કરને કા, કિતનેક કા અનેકી (નક્ક) નાસિકા પ્રાપ્ત કર-નેકા, કિતનેક કા અનેકી (ધમણિ) ધમનિચા-નાડિયાં પ્રાપ્ત કરને કા, કિતનેક કા અનેકે (સિંગ) શૃંગો કો પ્રાપ્ત કરને કા, કિતનેક કા અનેકી (દાદિ) દાદો કો પ્રાપ્ત કરનેકા, કિતનેક કા અનેકી (પિચ્છ) પિચ્છો કો પ્રાપ્ત કરને કા, કિતનેક કા અનેકે (વિસ) કાલકૂટ આદિ વિષ પ્રાપ્ત કરને કા, કિતનેક કા અનેકે વિષાણ-ગજ દન્તો કો પ્રાપ્ત કરને કા ઓર કિતનેક કા અનેકે (ચાલ) ચાલો કો પ્રાપ્ત કરને કા, ઉદ્દેશ્ય હોતા હૈ । इन उद्देश्यों प्रयोजनों को लेकर अयुधजन इनकी हिंसा करते हैं ॥ સૂ-૧૧ ॥

વધ તેમની “મિજ” મજ્જા નામની છઠી ધાતુને પ્રાપ્ત કરવાને માટે, કેટલાંકને વધ તેમના “નહ” નચોને પ્રાપ્ત કરવાને માટે, કેટલાંકને વધ તેમનાં “નયણ” નેત્ર પ્રાપ્ત કરવાને માટે, કેટલાંકને વધ તેમના “કણ” કર્ણ પ્રાપ્ત કરવાને માટે કેટલાંકને વધ “ઘ્ઠારુણિ” સ્નાયુઓને અંગ પ્રત્યંગોને બાંધનારી કોઈ નસ પ્રાપ્ત કરવાને માટે, કેટલાંકને વધ તેમનું “નક્ક” નાક પ્રાપ્ત કરવાને માટે કેટલાંકને વધ તેમની “ધમણિ” ધમનીઓ-નાડીઓ પ્રાપ્ત કરવાને માટે, કેટ-લાંકને વધ તેમનાં “સિંગ” શિંગડાં પ્રાપ્ત કરવા માટે, કેટલાંકને વધ તેમની “દાદિ” દાદો પ્રાપ્ત કરવાને માટે, કેટલાંકને વધ તેમનાં “પિચ્છ” પિચ્છાં પ્રાપ્ત કરવાને માટે, કેટલાંકને વધ તેમનું “વિસ” કાલકૂટ આદિ વિષ પ્રાપ્ત કરવાને માટે, કેટલાંકને વધ તેમના વિષાણ હાથી દાંતને પ્રાપ્ત કરવા માટે, અને કેટ-લાંકને વધ તેમના “ચાલ” ચાળ પ્રાપ્ત કરવાને માટે કરાય છે તે ઉદ્દેશો-પ્રયો-જનોને માટે અયુધ લોકો તેમની હિંસા કરે છે ॥ સૂ.-૧૧॥

અથ ચતુરિન્દ્રિયાદીનાં હિસામયોજનમાહ—‘હિંસંતિ ય’ इत्यादि ।

મૂલ્ય—હિંસંતિ ય ભ્રમરમહુકરિગણે રસેસુ ગિદ્ધા, તદેવ તેઈંદિય સરીરોવકરણદ્વયાય કિવણે, વેઈંદિય વહવે વસ્થોહર પરિમંડળદ્વા ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—‘યે’ ચ-પુનઃ ‘રસેસુ’ રસેષુ=મધ્વાદિષુ ‘ગિદ્ધા’=ગૃદ્ધા=તદ્રસ-લોલુપાઃ હિંસકાઃ જના મધ્વાદિ ગ્રહણાર્થે ‘ભ્રમરમહુકરિગણે’ ભ્રમરમધુકરીગણાન્-ભ્રમરાઃ=કૃષ્ણવર્ણાઃ લોકભાષયા પુંસ્વવિશિષ્ટાઃ, મધુકર્યઃ=ઝણમધુમક્ષિકાઃ લોક ભાષયા સ્ત્રીત્વવિશિષ્ટાઃ, તેષાં ગણાન્=સમૂહાન્ હિંસન્તિ । ‘તદેવ’ તદૈવ ‘તેઈંદિય’ શ્રીન્દ્રિયાન્=યુક્તમત્કુળાદીન્ ‘સરીરોવકરણદ્વયાય’ શરીરોપકરણાર્થે=શરીરસ્યોપ-કારાર્થે શયનકાલે મત્કુળાદિક્રુતદુઃસ્વનિવારણાર્થે હિંસન્તિ । તથા ‘કિવણે’ કૃપ-

અથ સૂત્રકાર ચતુરિન્દ્રિય આદિ જીવોં કી હિંસા કરને વાલોં કા કયા પ્રયોજન હોતા હૈ-હસ વાત કો પ્રકટ કરતે હૈ-‘હિંસંતિ ય ભ્રમરમહુકરિગણે’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(રસેસુ ગિદ્ધા) જો અણુધ-અજ્ઞાની જન મધુ (શહદ) આદિ રસોં મેં લોલુપ હોતે હૈં વે ઝન મધુ આદિ રસોં કો પ્રાપ્ત કરને કે અભિપ્રાય સે (ભ્રમરમહુકરિગણે હિંસંતિ) ભ્રમર ભ્રમરિયોં કે સમૂહ મારતે હૈં । ભ્રમરિયોં સે, મધુકોં એકત્રિત કરને વાલી મધુ મધુલિયોં કા યહાં ગ્રહણ કરના ચાહિયે । (તદેવ) હસી તરહ (કિવણે) દીન એસે (તેઈંદિય) જૂં સ્વદમલ આદિ તેઈન્દ્રિય જીવોં કી (સરીરોવકરણદ્વયાય) અપને શરીર કે ઉપકાર કે લિયે અર્થાત્ શયનકાલ મેં જો સ્વદમલ આદિ દ્વારા ઝનકે શરીર મેં કાટને જન્ય દુઃસ્વ હોતા હૈં ઝસ દુઃસ્વ કો, નિવારણ કરને

હવે ચતુરિન્દ્રિય આદિ જીવોંની હિંસા કરનારનું શું પ્રયોજન હોય છે, તે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—“હિંસંતિ ય ભ્રમરમહુકરિગણે” इत्यादि.

ટીકાર્થ—“રસેસુ ગિદ્ધે” જે અણુધ-અજ્ઞાની લોકો મધુ-મધ આદિ રસોંમાં લોલુપ થાય છે તેઓ તે મધ આદિ રસોંને પ્રાપ્ત કરવાને માટે “ભ્રમરમહુકરિગણે હિંસંતિ” ભ્રમરો તથા ભ્રમરીઓના સમૂહની હત્યા કરે છે. ભ્રમરીઓ એટલે અહીં મધ એકત્ર કરનારી મધમાખીઓ સમજવી “તદેવ” એજ પ્રમાણે “કિવણે” બિચારા “તેઈંદિય” જૂં, માંકડ આદિ તેઈન્દ્રિય જીવોંની હત્યા “સરી-રોવકરણદ્વયાય” પોતાના શરીરના ઉપકારને માટે એટલે કે સૂતી વખતે માંકડ આદિ જે જંતુઓ કરડે છે અને ઉંઘમાં ખલેલ પહોંચાડે છે તે દુઃખના નિવા-

સુવર્ણિની ટીકા અ. ૧ સૂ. ૧૧ ચતુરિન્દ્રિયાદિનાં હિંસાપ્રયોજનનિરૂપણમ્ ૫૧

જાન=દીનાન્ 'વહવે' વહન 'વેહંદિષ' દ્વીન્દ્રિયાન્ 'વત્થોદરપરિમંડળદ્વા' વસ્ત્રોપગૃ-
હપરિમંડનાર્થમ્, 'વત્થ' વસ્ત્રાણિ 'ઓદર' ઉપગૃહાઃ=લઘુગૃહાઃ તેષાં 'પરિમંડળદ્વા'
પરિમંડનાર્થ=શોભાર્થમ્, તત્ર વસ્ત્રાણાં પરિમંડનં કૃમિરાગેણ રક્તનમ્, ઉપગૃહાણાં
પરિમંડનં શઙ્કશુક્તિચૂર્ણનાત્વલેપનમ્ । યદ્વા-અર્થશબ્દસ્ય પ્રત્યેકમભિસમ્બન્ધે-
વસ્ત્રાર્થમ્, ઉપગૃહાર્થં, મંડનાર્થં ચેતિ । તત્ર પદસૂત્રાદિ વસ્ત્રનિર્માણે કૃમ્યાણુપ-
ધાતઃ, ઉપગૃહનિર્માણે મૃજ્જલાદિષુ પુતરકાણુપમર્દનમ્, હારાદિપરિમંડનનિર્માણે
શુભ્યાણુપદનનં ભવત્યેવ ॥સૂ. ૧૨॥

કે અભિપ્રાય સે વે ડનકી હિંસા કરતે હૈં । હસી તરહ (વેહંદિષ) શંખ
શુક્તિકા આદિ જો બિચારે દો હિન્દ્રિય જીવ હૈં ડન વહુન સે દીન જીવો
કી ખી (વત્થોદર પરિમંડળદ્વા) વસ્ત્ર, ઉપગૃહ-લઘુગૃહ કી શોભાનિમિત્ત
હિંસા કરતે હૈં । કૃમિરાગ સે વસ્ત્રોં કા રંગનાં યહ વસ્ત્રોં કા પરિમંડન હૈં ।
શંખ, શુક્તિકા કે વૂને સે છોટે રંગરોં કા પોતનાં યહ ઉપગૃહોં કા
પરિમંડન હૈં । અથવા અર્થ શબ્દ કા પ્રત્યેક કે સાથ સંબંધ કરને પર એસા
ખી હસ પદ કા અર્થ હોતા હૈં કિ વસ્ત્ર કે નિમિત્ત, ઉપગૃહ કે નિમિત્ત
ઔર મંડન-હાર આદિ ભૂષણ કે નિમિત્ત પદસૂત્ર આદિ વસ્ત્ર કે નિર્માણ
મેં કૃમ્યાદિ જીવોં કા ઉપધાત હોતા હૈં, ઉપગૃહોં કે નિર્માણ મેં મિટ્ટી
જલ આદિ મેં રહે હુપ લટ આદિ દો હિન્દ્રિય જીવોં કા ઉપમર્દન હોતા હૈં,
તથા હાર આદિ આભૂષણોં કે નિર્માણ કરને મેં શુક્તિ આદિ જીવોં કા
હનન હોતા હૈં ।

ભાવાર્થ—અમર, મધુકરી આદિ જો ચાર હિન્દ્રિય વાલે જીવ હૈં, તથા

રણુ માટે તેઓ તેમની હિંસા કરે છે. એ જ રીતે “વેહંદિષ” શંખ શુક્તિકા
આદિ જે બિચારા હિન્દ્રિય જીવોની પણ “વત્થોદરપરિમંડળદ્વા” વસ્ત્ર, ઉપગૃહ
લઘુગૃહની શોભાને નિમિત્તે હિંસા કરે છે કૃમિરાગથી વસ્ત્રોને રંગવા તે વસ્ત્રોનું
પરિમંડન કહેવાય છે શંખ, શુક્તિકાના ચૂનાથી નાનાં નાનાં ધરોને લીંપવા તે
ઉપગૃહ પરિમંડન કહેવાય છે. અથવા ‘અર્થ’ શબ્દનો દરેકની સાથે
સંબંધ જોડવાથી આ પદનો એવો પણ અર્થ થઈ શકે છે કે વસ્ત્રને માટે,
ઉપગૃહને માટે અને મંડન-હાર આદિ ભૂષણને માટે. પદસૂત્ર આદિ વસ્ત્ર
ખનાવવામાં કૃમ્યાદિ જીવોનો ઉપધાત થાય છે, ઉપગૃહોની રચનામાં મટ્ટી, જળ
આદિમાં રહેલ લટ આદિ હિન્દ્રિય જીવોને ધાત થાય છે, તથા હાર આદિ
આભૂષણો ખનાવવામાં શુક્તિ આદિ જીવોની હત્યા થાય છે.

ભાવાર્થ—અમર, મધુમાખી આદિ જે ચાર હિન્દ્રિય વાળા જીવો છે, તથા

પુનરપ્યાહ-‘અળેહિય’ કથાદિ ।

મૂલમ્—અળેહિય ય એવમાદ્યેહિય વદુર્હિ કારણેહિં અબુહા
 ઇહ હિંસતિ તસે પાળે, ઇમે ય—અર્ગિંદિય વહવે વરાણ, તસે ય
 અળે તદસ્સિય ચેવ તળુસરીરે સમારંભંતિ । અત્તાળે, અસરળે,
 અળાહે, અવંધવે, કમ્મનિગદબદ્ધે, અકુસલ-પરિણામ મંદબુદ્ધિ-
 જળદુન્નિજાળણ, પુઢવિમણ, પુઢવિસંસિય, જલમણ, જલગણ,
 અળાણિલતળવળસસઙ્ગળનિસિય ય, તમ્મય તજ્જીય ચેવ,
 તદાહારે તળ્પરિણયવળ્ળાગંધરસફાસવોંદિરૂવે અચક્કુસે ય
 ચક્કુસે ય તસકાદ્યે અસંલે થાવરકાણ ય સુહુમવાયરપત્તે
 ય સરીરનામસાધારણે અળંતે હળંતિ અવિજાળઓ ય પરિજા-
 ણઓ ય જાવ ઇમેહિં વિવિહેહિં કારણેહિં કિં તે ? ॥સૂ. ૧૩॥

જૂં જલમલ આદિ જો ત્રીન ઇન્દ્રિય વાલે જીવ હૈં, એવં શંખ શુક્તિ આદિ
 જો દો ઇન્દ્રિયવાલે જીવ હૈં, ઇનકી હિસા કરને કા ઉદ્દેશ્યજીવોં કા કથા
 હોતા હૈં યહ બાત સૂત્રકાર ને ઇસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કી હૈં । જો પ્રાણી રસ
 મેં ગૃહ બને હુય હૈં વે બ્રમર મધુકરી આદિ જો રસ કો એકત્રિત કરને
 વાલે જીવ હૈં ઇનકી તથા જો પ્રાણી અપને શરીર આદિ કે ઉપકાર કરને
 કે અભિલાષી હૈં વે લોક જૂં જલમલ આદિ જીવોં કી એવં જો વસ્ત્ર ઉપ-
 ગૃહ આદિ કે નિર્માણ કરને કે અભિલાષી હૈં વે શંખ શુક્તિ આદિ દો
 ઇન્દ્રિય જીવોં કી હિસા કરતે હુય બિલકુલ વિચાર નહીં કરતે હૈં ॥સૂ. ૧૨॥

જૂ, માકડ આદિ જે ત્રણ ઇન્દ્રિયવાળા જીવો છે, અને શંખ, છીપ આદિ જે
 બે ઇન્દ્રિયવાળા જીવો છે, તેમની હિસા કરવા પાછળ લોકોનો શો હેતુ હોય
 છે તે સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પ્રગટ કર્યું છે. જે માણસ રસમાં ગૃહ-લોકો
 અનેલ છે તેઓ બ્રમર આદિ રસ એકત્ર કરનારા જે જીવો છે તેમની તથા જે
 લોકો પોતાના શરીર આદિના સુખનો જ વિચાર કરનારા છે તેઓ જૂ, માકડ
 આદિ જીવોની અને જે લોકો વસ્ત્ર, ઉપગૃહ આદિના નિર્માણની અભિલાષાવાળા
 છે તેઓ શંખ, છીપ આદિ દ્વિન્દ્રિય જીવોની હિસા કરતાં બિલકુલ વિચાર
 કરતાં નથી. ॥ સૂ. ૧૨ ॥

સુદર્શિની ટીકા અ.૧ સુ. ૨૩ તનુરિન્દ્રિયાદિનાં હિસાપ્રયોજનનિરૂપણ ૫૭

ટીકા — ‘અળેહિ ય’ અન્યથા ‘એમાઈઈ’ એવાદિકૈઃ=પૂર્વોક્તસદૃશૈઃ ‘બહુઈ’ બહુભિઃ=નાનાવિધૈઃ ‘કારણસઈ’ કારણશતૈઃ ‘અબુહા’ અબુધાઃ=અજ્ઞાનિનો જનાઃ इह=अस्मिन् जीवलोके ‘તસે પાળે’ ત્રસાન્ પ્રાણાન્=દ્રીન્દ્રિયાદીન્ ‘હિંસંતિ’ હિંસન્તિ=ઘનન્તિ । તથા ‘इमेय’ इमांश्च=अग्रे वक्ष्यमाणान् ‘एणिदिए’ एकेन्द्रियान् पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिलक्षणान् ‘बहवे’ बहून्=अनेकान् ‘वराए’ वराकान्=दीनान्, तथा-‘तदस्सिए चेव’ तदाश्रितान् चेव=पृथिव्या केन्द्रियाश्रयस्थितानपि ‘अण्णे’ अन्यान् ‘तणुसरीरे’ तनुशरीरान्=सूक्ष्मशरीरान् ‘तसे य’ त्रसांश्च ‘समारंभंति’ समारभन्ते=उपमर्दयन्ति । कीदृशान् तान् ? इत्याह—‘अत्ताण्णे’ अत्राणान्=त्राणरहितान् रक्षकाभावात्, ‘असरणे’ असरणान्=शरणदातुरभावात् ।

ફિર ખી કહતે હૈં—‘અળેહિ ય’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(અળેહિ ય એમાઈઈ બહુઈ કારણસઈ અબુહા इह हिंसन्ति पाणे) इत्यादि और भी नानाविध इसी प्रकार के सैकड़ों कारणों से अज्ञानी जीव इस लोक में द्रीन्द्रियादिक त्रस जीवों की हिंसा करते हैं । तथा (इमेय) वक्ष्यमाण इन (बहवे) अनेक प्रकार के (वराए) दीन (एणिदिए) पृथिवीकाय, अपूकाय तेजःकाय, वायुकाय, वनस्पति काय रूप एकेन्द्रिय जीवों को और (तदस्सिए चेव) इनके आश्रित रहे हुए (अण्णे) दूसरे पूर्वोक्त त्रस जीवों से अतिरिक्त (तणुसरीरे) छोटे शरीर वाले (तसे य) त्रस जीवों की (समारंभंति) हिंसा करते हैं । इनकी हिंसा करते हुए जो इन अज्ञानी प्राणियों को संकोच नहीं होता है उसाक कारण यह है कि ये (अत्ताण्णे) इन एकेन्द्रियादिक जीवों का कोई रक्षक नहीं है इसलिये रक्षक के अभाव से ये सब त्राण रहित है । (असरणे)

હજી પણ સૂત્રકાર કહે છે—“અળેહિય” ઇત્યાદિ.

“અળેહિય એમાઈઈ બહુઈ કારણસઈ અબુહા इह हिंसन्ति तसे पाणे” ઇત્યાદિ બીજાં પણ એવાં ૪ પ્રકારનાં સેંકડા વિવિધ કારણોથી અજ્ઞાની જીવ આલોકમાં દ્રીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોની હિંસા કરે છે. તથા “इमेय” આ પ્રમાણે તે “बहवे” અનેક પ્રકારના “वराए” બિચારા “एणिदिए” પૃથિવીકાય, અપૂકાય, તેજઃકાય, વાયુકાય, વનસ્પતિકાયરૂપ એકેન્દ્રિય જીવોની અને “तदस्सिए-चेव” તેમના આશ્રયે રહેલા “अण्णे” બીજાં પૂર્વોક્ત ત્રસજીવો ઉપરાંતના “तणुसरीरे” નાનાં શરીરવાળા “तसेय” ત્રસજીવોની “समारंभंति” હિંસા કરે છે. તેમની હત્યા કરતાં તે અજ્ઞાની જીવોને સંકોચ થતો નથી કારણ કે “अत्ताण्णे” તે એકેન્દ્રિયાદિક જીવોનું રક્ષક કોઈ નથી. તેથી રક્ષકને અભાવે તે બધા ત્રાણહીન-(નિરાધાર) છે. “असरणे” તે પૃથિવ્યાદિ જીવો ભાગી નહ

‘અળાહે’ અનાથાન્=સ્વામ્યભાવાત્, ‘અવંધવે’ અવાન્ધવાન-સહાયકાભાવાત્, ‘કમ્મનિગઢવંધે’ કર્મનિગઢવંધાન્-કર્મણ્યેવ નિગઢાનિ વન્ધકત્વાત્ તૈર્વંધાન્ કર્મરાહિત્યાભાવાત્, ‘અકુસલપરિણામમંદબુદ્ધિજનદુર્વિજ્ઞાણ’ અકુસલપરિણામમંદબુદ્ધિજનદુર્વિજ્ઞેયાન્-કુશલ:=તત્ત્વાતત્ત્વવિવેકસમ્પન્નઃ, પરિણામ:=અન્ત-કરણં યેવાં તે કુશલપરિણામાઃ, ન કુશલપરિણામાઃ = અકુશલપરિણામાઃ= આત્મોપમ્યદૃષ્ટિવિકલ્પા इत्यर्थः મન્દા=હિંસાજનિતનરકનિગોદાદ્યનન્તભવભ્રમણ-કટુકફલવિવેચનશૂન્યા-બુદ્ધિર્યેવાં તે મંદબુદ્ધયસ્તે ચ જના इति અકુશલપરિ-

યે પૃથિગ્યાદિ જીવ ભગકર જા નહીં સકતે, इनके आश्रित ग्रस जीव यदि भगकर कहीं जावें भी तो कोई ऐसा नहीं है जो इन्हें शरण प्रदान करे अतःशरणदाता के अभाव से ये अशरण हैं। (अणाले) कोई इनका स्वामी नहीं है इसलिये अपने स्वामी के अभाव से ये विचारें अनाथ हैं। (अवंधवे) इनकी कष्ट में कोई सहायता करने वाला नहीं है इसलिये सहायक के अभाव से ये अवान्धव हैं। (कम्मनिगडबंधे) उस प्रकार के कर्मों का सद्भाव होने के कारण कर्मरूप निगड-बेड़ी से ये बंधे हुए हैं। (अकुसल-परिणाम-मंदबुद्धिजनदुर्विज्ञाण) अकुशल परिणाम वाले मंदबुद्धि जनों द्वारा ये दुर्विज्ञेय हैं। तत्त्व और अतत्त्व का विवेक जिनके अन्तःकरण में जगता है वे कुशल परिणाम वाले जीव हैं। इस तरह का कुशल परिणाम जिनका नहीं है अर्थात् सब जीवों के ऊपर जिनकी दृष्टि आत्मोपम्यवाली नहीं है और जो इस बात को भी नहीं जानते हैं कि हिंसा करने से नरक निगोद आदि अनंत भवों में भ्रमण करने रूप कटुकफल को

શકતાં નથી, તેમને આશ્રિત ગ્રસજીવોને ભાગીને કોઈપણ જગ્યાએ જાય તો પણ કોઈ એવું નથી કે જે તેને શરણ આપે, તેથી શરણદાતાને અભાવે તેઓ અશરણ છે. “અળાહે” કોઈ તેમનો સ્વામી નથી, તેથી સ્વામીને અભાવે તેઓ બિચારા અનાથ છે. “અવંધવે” કષ્ટમાં તેમને સહાય કરનાર કોઈ નથી, તેથી સહાયકને અભાવે તેઓ અવાન્ધવ છે. “કમ્મનિગઢવંધે” તે પ્રકારનાં કર્મોનો સદ્ભાવ થવાને કારણે કર્મરૂપી બેડી વડે તેઓ બંધાયેલ છે. “અકુસલ-પરિણામ-મંદબુદ્ધિજનદુર્વિજ્ઞાણ” અકુશલ પરિણામવાળા મંદબુદ્ધિયુક્ત લોકો દ્વારા તે દુર્વિજ્ઞેય-સમજવું-ચુસ્કેલ છે. જેમના અંતઃકરણમાં તત્ત્વ અને અતત્ત્વનો વિવેક જાગૃત થાય છે તે કુશલ પરિણામવાળા જીવ છે. આ પ્રકારનું કુશલ પરિણામ જેમનું હોતું નથી, એટલે કે સમગ્ર જીવો ઉપર જેમની દૃષ્ટિ આત્મ-વત્ નથી, અને જે એ વાતને પણ જાણતા નથી કે હિંસા કરવાથી નરક, નિગોદ આદિ અનંત ભવોમાં ભ્રમણ કરવા રૂપ કડવાં કૃષ્ણો ભોગવવા પડે છે,

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૧૩ ચતુરિન્દ્રિયાદિનાં હિંસાપ્રયોજનનિરૂપણમ્ ૫૧

નામમન્દબુદ્ધિજનાઃ તૈ મિથ્યાત્વોદયેન 'દુર્વિજ્ઞેયા' 'એતે હીનદીનાઃ પ્રાણિનો રક્ષ-
ણીયાઃ, ઇતિ જ્ઞાતમશક્ત્યાસ્તાન્, 'પુઢવિમ' પૃથિવીમયાન=પૃથિવીકાયિકાન્,
'પુઢવિ સંસિ' પૃથિવીસંશ્રિતાન્=અલસપ્રભૃતિ દ્વીન્દ્રિયાન્ 'જલમ' જલમયાન-
અપ્કાયિકાન્ 'જલમ' જલમતાન્ પૂતરકાદિ ત્રસાન્, અળાણિલતળવણસ્સઙ્ગ
ગણનિસ્સિ' ય 'અનલાઙ્ગનિલતળવણવનસ્પતિગણનિશ્રિતાંશ્ચ=અનલઃ=અગ્નિઃ, અનિલો
=વાયુઃ, ત્ણાનિ = દર્શાદીનિ વનસ્પતયઃ=વનસ્પતિકાયભેદા અગ્રવીજાદયઃ,-
ત્ણ વનસ્પતિકાયિકમેવ પુનર્વનસ્પતિગ્રહણ સ્વગત સૂક્ષ્માદિસકલભેદસ્વ્યાપનાર્થમ્,
તેષાં ગણઃ=સમૂહસ્તસ્ય નિશ્રિતાન્ અનલાઙ્ગાશ્રિતાન્ ચ શબ્દાન્-તેજઃકાયિકાદીંશ્ચ,
તથા-'તમ્મયતજ્જીવ' તમ્મય તજ્જીવાન્=તત્ત્વ તમ્મયાન્ પૃથિવી કાયિકાદીન્

યોગના પડતા હૈ, इस तरह के ज्ञान के अभाव वाले मंदबुद्धि हैं, उन जनों
द्वारा मिथ्यात्व के उदय से "ये हीन दीन प्राणी रक्षा करने योग्य हैं हिंसा
करने योग्य नहीं हैं" यह बात जानी नहीं जा सकती है इसलिये ऐसे
प्राणियों द्वारा ये जीव नहीं जाने जा सकते अतः ये अज्ञानी जीव (पुढ-
विम) पृथ्वीकायिक जीवों को तथा (पुढविसंसि) पृथिवी के आश्रय
रहे हुए अलस आदि द्वीन्द्रिय जीवों को इसी तरह (जलम) जल
कायिक जीवों को तथा (जलम) जलकायिक जीवों के सहारे रहे हुए
पूतरकादि त्रस जीवों को, तथा (अणलाणिलतण वणस्सङ्गणनिसि)
अग्निकायिक जीवों को और अग्निकाय के सहारे रहे हुए त्रस जीवों
को और वायुकायिक जीवों के सहारे रहे हुए त्रस जीवों को, तृणरूप-
वनस्पतिकायिक जीवों को, एवं वनस्पतिकाय के भेद प्रभेदों के सहारे
रहे हुए त्रस जीवों को भी मारते हैं। यही बात " तममयतज्जीव "

આ પ્રકારના જ્ઞાન વિનાના જીવો મંદબુદ્ધિ છે. તે લોકો દ્વારા મિથ્યાત્વના
ઉદયથી "આ હીન હીન પ્રાણીઓ રક્ષા કરવાને યોગ્ય છે હિંસાને યોગ્ય નથી."
એ વાત ખજી સમજી શકાતી નથી. તે કારણે એવા જીવો દ્વારા તે જીવોને
નાણી શકાતા નથી, તેથી તે અજ્ઞાની જીવ "પુઢવિમ" પૃથ્વીકાય જીવોની
તથા "પુઢવિસંસિ" પૃથ્વીને આશ્રયે રહેલ અળાણિયાં આદિ દ્વીન્દ્રિય જીવોની,
એ જ પ્રમાણે "જલમ" જલકાયિક જીવોની તથા "જલમ" જલકાયિક
જીવોને આશ્રયે રહેલ પૂતરકાદિ ત્રસજીવોની, તથા "અળાણિલ તળવણસ્સઙ્ગ
નિસ્સિ" અગ્નિકાય જીવોની અને અગ્નિકાયને આશ્રયે રહેલ ત્રસ જીવોની,
વાયુકાય જીવોની અને તેમને આશ્રયે રહેલ ત્રસ જીવોની, તૃણરૂપ વનસ્પતિકાય
જીવોની અને વનસ્પતિકાયના ભેદ પ્રભેદોના આશ્રયે રહેલ ત્રસજીવોની હિંસા
કરે છે. એ જ વાત "તમ્મય તજ્જીવ" ઇત્યાદિ પદો દ્વારા કહેવ.માં આવે

તજીવાન પૃથિવ્યાદિ નિશ્ચિતાશ્રેય, 'તદાહારે' તદાધારાન=તે પૃથિવ્યાદયઃ આધારો યેષાં તે તાન્ તદાધારાન=પૃથિવ્યાદ્યાશ્રયાન્ અથવા 'તદાહારે' તદાહારાન્ તે પૃથિવ્યપ્તેજોવાયનાં એવ આધારો યેષાં તે તાન્ તદાહારાન્ 'તત્પરિણયવર્ણગંધરસફાસર્વોદિરૂપે' તત્પરિણતર્ણગંધરસસ્પર્શોદિ (શરીર) રૂપાન્=તેષામેવ પૃથિવ્યાદીનાં પરિણતા વર્ણગંધરસસ્પર્શૈર્ યાં વૌદિઃ=શરીરં સૈવ રૂપં=સ્વભાવો યેષાં તે તથા તાન્, 'અચક્ષુસે ય' અચક્ષુપાન્=ચક્ષુરમોચરાન્ 'ચક્ષુસે ય' ચાક્ષુરાંશ્ચ ચક્ષુરિન્દ્રિયવિષયાન્ 'તપ્તકાષ્ણ' વ્રસકાયિકાન્ વ્રસન્તિ ઉષ્ણાદ્યભિત્તાઃ સન્તઃ વિવક્ષિતસ્થાનાદુદ્વિજન્તે=ગચ્છન્તિ છાયાધાસેવનાર્થ સ્થાનાન્તરમિતિ વ્રસાઃ, યદ્વા-વ્રસ નામકર્મોદયાન્ વ્રસ્યન્તિ इति વ્રસાઃ=વ્રસનામ-કર્મોદયવર્તિનિત્યર્થઃ, તેષાં કાયોરાશિસ્ત્ર ભવાત્વસકાયિકાઃ, તાન્, કિયતઃ? इत्याह-'असंखे' इत्यादि-'असंखे' असंख्यान् 'धावरकाए' स्थावरकायान्, तिष्ठ-

इत्यादि पदों द्वारा कही जाती है—(तन्मयतज्जीवए) पृथिवी कायिक आदि जीवों को तथा पृथिवी आदि के सहारे रहे हुए जीवों को, (तदाहारे) जिन जीवों के वे पृथिवी आदिक आधारभूत हैं ऐसे जीवों को अथवा पृथिवी आदिक ही जिनका आहार है ऐसे जीवों को (तत्परिणय वर्णगंधरसफासर्वोदिरूपे) तथा पृथिव्यादिकों के वर्ण, गंध, रस, स्पर्शों से जिनका शरीररूप स्वभाव परगित हो रहा है, तथा (अचक्षुसे य) जो चक्षु इन्द्रिय विषयभूत नहीं है, और (चक्षुसे य) जो चक्षु इन्द्रिय के विषयभूत भी हैं ऐसे व्रस जीवों को—उष्णादिक से संतप्त होकर जो छाया आदि के सेवन के लिये एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं, अथवा व्रस नामकर्म के उदय से जो युक्त हैं वे व्रस हैं, ऐसे व्रस जीवों को, तथा—(असंखए धावरकाए य) असंख्यात स्थावर कार्यों को, स्था-

छे—“तन्मयतज्जीवए” પૃથિવી કાયિક જીવોને તથા પૃથિવી આદિને આશ્રયે રહેલ જીવોને “તદાહારે” જે જીવોને તે પૃથિવી આદિ આધારભૂત છે એવા જીવોને અથવા પૃથિવી આદિ જે જેમનો આહાર છે એવા જીવોને “તત્પરિણય વર્ણગંધરસફાસર્વોદિરૂપે” તથા પૃથિવી આદિકોનાં વર્ણ ગંધ, રસ, સ્પર્શોથી જેમનો શરીરરૂપ સ્વભાવ પરિણત થઈ રહ્યો છે, તથા “અચક્ષુસે ય” જે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયના વિષયરૂપ નથી, અને “ચક્ષુસે ય” જે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયના વિષયરૂપ પશુ છે એવા વ્રસ જીવોને ઉષ્ણતા આદિથી દુઃખ પામીને જે છાયા આદિના સેવન માટે એક જગ્યાએથી બીજી જગ્યાએ જાય છે, અથવા વ્રસ નામકર્મના ઉદયથી જે યુક્ત છે, તેઓ વ્રસ ગણાય છે. એવા વ્રસ જીવોને, તથા “અસંખ ધાવર કાય” અસંખ્યાત સ્થાવરકાર્યોને—સ્થાવર નામકર્મના ઉદય જેમને છે તે સ્થાવર

સુદર્શનીકા અ० ૧ સ્વ ૧૩ ચતુરિન્દ્રિયાદિનાં દ્વિસાપ્રયોજનનિરૂપણમ્ ૬૧

તીતિ સ્થાવરઃ, સ એવ કાય=શરીરં યેષાં તે સ્થાવરકાયાઃ=પ્રસૂતગીતાડતપ
સન્તાપાશુપેતત્ત્વેડપિ અન્યત્ર ગન્તુમશક્તાઃ સ્થાવરનામકર્મોદયર્ચત્તિનઃ પૃથિવ્યપ્તેજો-
વાયુવનસ્પતયઃ, તાન્ ' સુદુમ-વાયર-પત્તેય-સરીરનામસાહારણે ' સૂક્ષ્મ-વાદર-
પ્રત્યેકશરીરનામસાધારણાન્, સૂક્ષ્મં ચ વાદરં ચ પ્રત્યેકશરીરં ચ-સૂક્ષ્મવાદર-
પ્રત્યેકશરીરાણિ, તાનિ નામાનિ=નામકર્માણિ યેષાં તે સૂક્ષ્મવાદરપ્રત્યેકશરીર-
નામાનઃ, તે ચ તે સાધારણાથ સૂક્ષ્મવાદરપ્રત્યેકશરીરનામસાધારણાઃ, તાન્ ।
તત્ર સૂક્ષ્માઃ=ચર્મચક્ષુગ્રાહ્યાઃ પૃથિવ્યાદિકેન્દ્રિયાઃ, વાદરાઃ=તપ્તેવ ચર્મચક્ષુગ્રાહ્યાઃ,
પ્રત્યેકશરીરાઃ=યેષામેકમેકં જીવં પ્રતિભિન્નં ભિન્નં શરીરમુપજાયતે તે પૃથિવ્યાદયઃ ।
સાધારણાઃ-યેષામનન્તાનાં જીવાનાં સાધારણમેકં શરીરં ભવતિ તે કન્દમૂલાદયઃ,
વર નામ કર્મ કા ઉદય જિનકે હૈં વે સ્થાવર હૈં અથવા જો શીત આતપ
આદિ બાધા કો સહતે હુણ્ મી અન્યથ ગમન કરને મેં અશક્ત હૈં અપની
ઇચ્છા સે ચલ ફિર નહીં સકતે હૈં-યે સ્થાવર હૈં એસે યે સ્થાવર પૃથિવી, અપ્, તેજ
વાયુ વનસ્પતિ જીવ હૈં, ઇન જીવોં કો તથા (સુદુમ-વાયર-પત્તેય-સરીર
નામ સાહારણે) સૂક્ષ્મ, વાદર, પ્રત્યેક શરીરરૂપ નામ કર્મ કે ઉદય વાલે જીવોં
કો, તથા સાધારણ શરીર નામકર્મ કે ઉદયવાલે જીવોં કો, ચર્મચક્ષુઓં
સે જો દેખને મેં નહીં આતે હૈં વે સૂક્ષ્મ જીવ હૈં, તથા જો ધર્મચક્ષુઓં
દ્વારા દેખે જાતે હૈં વે વાદર હૈં, યે સૂક્ષ્મ ઓર વાદર ભેદ પૃથિવી આદિ
એકેન્દ્રિય જીવોં કે હોતે હૈં, પ્રત્યેક વે જીવ હૈં કિ જિનકા ભિન્ન ૨ શરીર
હોતા હૈં, એસે પૃથિવ્યાદિક જીવ હોતે હૈં ક્યોં કિ ઇનકા અપના ૨ ભિન્ન
૨ શરીર હોતા હૈં ઇન જીવોં કો, તથા સાધારણ વે જીવ હૈં કિ જિન
અનંત જીવોં કા એક હી શરીર હોતા હૈં, એસે વે જીવ કંદમૂલ આદિ વન-

કહેવાય છે. અથવા જે શીત, તાપ આદિની મુશ્કેલીઓ પડવા છતાં પણ
અન્યત્ર ગમન કરવાને અશક્ત છે, ગોતાની ઇચ્છાથી હલનચલન કરી શકતાં
નથી. તે સ્થાવર છે. એવા જે સ્થાવર પૃથિવી, અપ્, તેજ, વાયુ અને વનસ્પતિ
હોયો છે તે હોયોને, તથા " સુદુમ, વાયર, પત્તેય, સરીર નામસાહારણે " સૂક્ષ્મ,
વાદર, પ્રત્યેક શરીરરૂપ નામકર્મના ઉદયવાળા હોયોને, તથા સાધારણ શરીર
નામકર્મના ઉદયવાળા હોયોને, ચર્મચક્ષુઓ વડે જે દેખી શકાતાં નથી તે સૂક્ષ્મ
હોયો છે, તથા જે ચર્મચક્ષુઓ દ્વારા ભેદ શકાય છે તે વાદર હોયો છે. તે
સૂક્ષ્મ અને વાદર પૃથિવી આદિ એકેન્દ્રિય હોયોના હોય છે. ' પ્રત્યેક હવ '
એ હોયો છે કે જેમનાં અલગ અલગ શરીર હોય છે, પૃથિવ્યાદિક હવ એવા
હોય છે કારણકે તેમને પોત પોતાનું ભિન્ન ભિન્ન શરીર હોય છે. તે હોયોને,
તથા સાધારણ હોયો એ છે કે જે અનંત હોયોનું એક જ શરીર હોય છે,
એવા હોયો કંદમૂલ આદિ વનસ્પતિકાચિક હોય છે. તે હોયો તે પ્રકારનાં કર્મો-

તે અનન્તા અપિ જીવાસ્તથાવિધકર્મોદયસામર્થ્યાત્ સમકમેવોત્પત્તિદેશમધિવસન્તિ, સમકમેવ તચ્છરીરમાશ્રિતાઃ પર્યાપ્તિ સમારભન્તે, સમકમેવ પર્યાપ્તાઃ ભવન્તિ । સમ-કમેવ ચ પ્રાણાપાનાદિ યોગ્યપુદ્ગલાન્ ગૃહ્ણન્તિ । યદ્વ-એકસ્ય જીવસ્યાહારયોગ્ય-પુદ્ગલોપાદાનં તદેવાન્યેષામનન્તાનામપિ ભવતીતિ । ‘અણંતે’ અનન્તાન્ ‘અવિજાણઓ’ અવિજાણતઃ=‘એતે ઘાતકા અસ્માન્ હનિષ્યન્તિ’ इति જ્ઞાનવિકલોન્ એકેન્દ્રિયાન્ ‘પરિજાણઓ ય’ પરિજાણતશ્ચ સ્વવધદુઃસ્વમનુભવતશ્ચ દ્વીન્દ્રિયાદીન્ ‘જીવે’ જીવાન્ ‘હમેહિ’ એભિઃ=અનુપદં વધ્યમાણેઃ ‘વિવિહેહિ’ વિવિધેઃ=નાનાપ્રકારઃ ‘કારણેહિ’ કારણેઃ=પ્રયોજનૈઃ ‘હણંતિ’ ઘ્નન્તિ=એવાં ઘાતં કરુન્વતીત્યર્થઃ । કિં તે ? કાનિ તાનિ પૃથિવ્યાદિ-હિંસાયાઃ કારણાનિ ? इत्याह-‘કરિસણ’ इत्यादिना ॥મુ० ૧ ૬॥

સ્પતિ કાયિક હોતે હૈં । યે જીવ તથાવિધ કર્મોદયોં કે વશ સે એક સાથ હી ઉત્પત્તિ દેશ મેં રહતે હૈં, એકસાથ હી હનકી શરીર પર્યાપ્તિ પૂર્ણ હોતી હૈં । ઇસ તરહ એક હી સાથ પર્યાપ્તિ હોકર અનંત જીવ એક હી સાથ પ્રાણાપાનાદિ યોગ્ય પુદ્ગલોં કો ગ્રહણ કરતે હૈં । હનમેં જો એક જીવ કા આહાર હોતા હૈં વહી અન્ય અનંત જીવોં કા ખી હોતા હૈં । ઇસ તરહ કે (અણંતે) અનંત સાધારણ જીવોં કો કિ-(અવિજાણઓ) “જો યહ નહીં જાનતે હૈં કિ યે ઘાતક જન હમે મારેંગે” ઇસ પ્રકાર કે જ્ઞાન સે વિકલ હો રહે હૈં એસે એકેન્દ્રિય જીવોં કો, તથા (પરિજાણઓ ય જીવે) જો અપને વધાદિ સંબંધી દુઃખોં કો જાનતે હૈં, એસે દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોં કો, (હમેહિ) હન અનુપદ વધ્યમાણ (વિવિહેહિ) નાના પ્રકાર કે (કારણેહિ) પ્રયોજનોં સે (હણંતિ) મારતે હૈં । (કિંતે) વે પૃથિવ્યાદિ કી હિંસા કે કારણ કોનર હૈં ? વહ ‘કરિસણ’ इत्यादि अगळे सूत्र से कहते ह॥

હયને કારણે એક સાથે જ ઉત્પત્તિ દેશમાં રહે છે, એક સાથે જ તેમની શરીર-પર્યાપ્તિ પૂર્ણ થાય છે. એ રીતે એક સાથે જ પર્યાપ્તિ થઈને તે અનંત જીવ એક સાથે જ પ્રાણાપાનાદિ પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે. તેઓમાં એક જીવનો જે આહાર હોય છે તે જ આહાર અન્ય અનંત જીવોનો પણ હોય છે. આ પ્રકારના “અણંતે” અનંત સાધારણ જીવોને કે-“અવિજાણઓ” “જે તે નથી બાણુતાં કે એ ઘાતક લોકો અમને મારી નાખશે” એ પ્રકારના જ્ઞાનથી જે રહિત છે એવા એકેન્દ્રિય જીવોને, તથા “પરિજાણઓ ય જીવે” જે પોતાના વધાદિ સંબંધી દુઃખોને બાણુ છે એવા દ્વીન્દ્રિય આદિક જીવોને, “હમેહિ” આ હવે પછીના પદોમાં દર્શાવેલ “વિવિહેહિ” વિવિધ પ્રકારનાં “કારણેહિ” પ્રયોજનોથી “હણંતિ” મારે છે. “કિંતે ?” તે પૃથ્વીકાય આદિની હિંસાનાં કયાં કયાં કારણો છે, તે “કરિસણ” ઇત્યાદિ હવે પછીના સૂત્ર દ્વારા કહેવામાં આવે છે.

સુવર્ણનો ટીકા ૪૦ ૧ સૂ૦ ૧૩ પૃથ્વીકાયર્હિસાકારણનિકરૂપણમ્

૬૩

અથ પૂર્વે પૃથ્વીકાયર્હિસાકારણાન્યાહ—‘કરિસણ’ इत्यादि० ।

મૂળ—કરિસણ-પોક્ષરણી-વાવિ-વૃષ્ણિ-કૂવ-સર-તલાગ-ચિહ્ન-
ચેદ્ય-સ્વાદ્ય-આરામ-વિહાર-થૂમ-પાગાર-દાર-ગોર-અટ્ટાલગ-
ચરિયા-સેડ-સંકમ-પાસાય-વિકલ્પ-ભવણ-ઘર-સરણ-લયણ-આવણ-
વેદ્ય-દેવકુલ-ચિત્ત-સમા-પવા-આયયણ-આવસહ-ભૂમિઘર-મંડવા-
ળકપ-ભાયળમંડોવગરણસ્સ ય વિવિહસ્સ ય અટ્ટાણ પુઢવિ
ર્હિસતિ મંદબુદ્ધિયા ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

ટીકા—‘કરિસણ’ इत्यादि । ‘કરિસણ’ કર્ષણ=કૃષિ; ‘પોક્ષરણી’ પુષ્કરિણી
=સમચતુષ્કોણા કમલકાનનકાન્તિકમનિયા પયઃપૂરપૂરિતપાતાલકુક્ષિતયા
નાનાવિધચિત્રવિચિત્રપતત્તિકુલકૂજિતપુષ્પિતપુલ્લિનમળ્ડલમળ્ડનસુરમ્યા, ‘વાવિ’

૧ ‘કેયારો વૃષ્ણિ વૃષ્ણો’ इति ‘પાદઅલચ્છીનામમાલા’ ।

ભાવાર્થ—જો આત્મબોધ સે વિકલ પ્રાણી હૈં એ સ્થાવર ઔર ઘ્રસ
જીવોં કી નાના પ્રકાર કે પ્રયોજનોં કે વશવર્તોં હોકર વિરાધના કરતે
હૈં । પૃથ્વીકાય આદિ સ્થાવર જીવ હૈં, ક્યોં કિ इनके સ્થાવર નામકર્મ
કા ઉદય હૈં । દ્વીન્દ્રિયાદિક ઘ્રસ જીવ હૈં, ક્યોં કિ इनके ઘ્રસ નામકર્મ
કા ઉદય હૈં । હમી કારણ સે સ્થાવર જીવ અપની હચ્છાનુસાર એક સ્થાન
સે દૂસરે સ્થાન પર ચલ ફિર નહીં સકતે હૈં । ઘ્રસ જીવ અપની હચ્છા-
નુસાર ચલ ફિર સકતે હૈં ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

અથ સૂત્રકાર ડન કારણોં કો કહતે હુએ પ્રથમ પૃથ્વીકાય કી
ર્હિસા કે કારણોં કો કહતે હૈં—‘કરિસણપોક્ષરણી’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(કરિસણ) કૃષિ-લેતી કે નિમિત્ત, (પોક્ષરણી) પોક્ષ-

ભાવાર્થ—એ પ્રાણીએ આત્મબોધથી રહિત છે તેઓ સ્થાવર અને ઘ્રસ
જીવોની અનેક પ્રકારના પ્રયોજનથી દોરાધને હિંસા કરે છે. પૃથ્વીકાય આદિ
સ્થાવર જીવ છે, કારણકે તેમના સ્થાવર નામકર્મનો ઉદય થયો હોય છે.
દ્વીન્દ્રિયાદિક ઘ્રસ જીવ છે, કારણકે તેમના ઘ્રસ નામકર્મનો ઉદય થયો હોય
છે. એ બે પ્રમાણે સ્થાવર જીવ પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે એક જગ્યાએથી બીજી
જગ્યાએ જઈ શકતા નથી. ઘ્રસજીવ પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે હરીફરી શકે છે. ॥સૂ. ૧૩॥
હવે સૂત્રકાર તે કારણોને બતાવતા પ્રથમ પૃથ્વીકાયની હિંસાનાં કારણો
આપે છે—“કરિસણપોક્ષરણી” इत्यादि.

ટીકાર્થ—“કરિસણ” કૃષિ-એતીને નિમિત્તે “પોક્ષરણિ” પોક્ષરણી-

वापी = दीर्घायामा 'वप्पिण' वपाणि = क्षेत्राणि, 'कूव' कूपाः 'सर' सरः—
कृत्रिमजलाशयः 'तलाग' तड़ागस्तदितरः प्रसिद्धः एव, 'चिह' चितिः, मृतकदह-
नार्थे काष्ठचयनम्, 'चेइय' चैत्यम्—मृतकोपरिस्मारकचिह्नम्, 'खाइय' खातिका=
परिखा, आरामः—गृहसमीपोपवनम्, विहारः=विह्रियतेऽत्रेति विहारः क्रीडास्थान-
विशेषः, 'धूम' स्तूपः=स्मारकस्तम्भः 'पागार' प्राकारः 'गढ़' इति भाषाप्रसिद्धः,
'दार' द्वारं प्रसिद्धम्, 'गोउर' गोपुरं=गुरद्वारम्, 'अट्टालग' अट्टालिकाः=छत' अटारी'
इति प्रसिद्धः, 'चरिया' चरिका=दुर्गनगरयोर्मध्यस्थितः अट्टहस्तप्रमाणः हस्त्यादि
संचारमार्गः, 'सेउ' सेतुः=पुल' इति प्रसिद्धः, 'संकम' संक्रमः=संक्रम्यते येन स
संक्रमः=जलगर्तपारकरणाय पाषाण काष्ठरचित मार्गः, 'पासाय' प्रासादः=नृपगृहम्
विकल्प' विकल्पाः=तदभेदाः 'भवण' भवनानि, भवनमायाभाषेक्षया किञ्चिदल्पमु-
च्छ्रयमानं भवति, प्रासादस्तु आयामद्विगुणोच्छ्रयः, इति प्रासादभवनयोर्विशेषः,

रिणी—पुष्करिणी के निमित्त (वावि) वापी—वाव के निमित्त (वप्पिण)
वावडी के निमित्त (कूव) कूप कुवा—के निमित्त (सर) सर—कृत्रिम
जलाशय के निमित्त (तलाग) तलाग—तड़ाग के निमित्त (चिह) चिति
के निमित्त (चेइय) चैत्य के निमित्त (खाइय) खातिका के निमित्त
(आराम) आराम का निमित्त (विहार) विहार के निमित्त (धूम)
स्तूप के निमित्त (पागार) प्राकार के निमित्त (दार) द्वार के निमित्त
(गोउर) गोपुर के निमित्त (अट्टालग) अट्टालिका अटारी के निमित्त
(चरिया) चरिका के निमित्त (सेउ) सेतु—पुल के निमित्त (संकम)
संक्रम के निमित्त (पासाय) प्रासाद—राजमहल के निमित्त (विकल्प)
विकल्प—विकल्प के निमित्त (भवण) राजमहल विशेष—उनके लिये

पुष्करिणीने निमित्ते "वावि" वापी—वावने निमित्ते "वप्पिण" वावडीने
निमित्ते "कूव" कूप—कुवाने निमित्ते "सर" सर—कृत्रिम जलाशयने निमित्ते
"तलाग" तलाग—तड़ागने निमित्ते "चिह" चितिने निमित्ते "चेइय" चैत्यने
निमित्ते "खाइय" खातिका—आरामने निमित्ते "आराम" आराम—अजीयाना
निमित्ते "विहार" विहारने निमित्ते "धूम" स्तूपने निमित्ते "पागार" प्राकार-
किद्वाने निमित्ते "दार" द्वारने निमित्ते "गोउर" गोपुरने निमित्ते "अट्टालग"
अट्टालिकाने निमित्ते "चरिया" चरिकाने निमित्ते "सेउ" सेतु—पुलने निमित्ते
"संकम" संक्रमने निमित्ते "पासाय" प्रासाद—राजमहलने निमित्ते "विकल्प"
विकल्प—विकल्पने निमित्ते "भवण" अट्टले के अके प्रकारना राजमहल माटे,

‘ઘર’ ઘટ્ટા:=પ્રસિદ્ધા, ‘સરણ’ શરણાનિ=સામાન્યગૃહાણિ, ‘લયણ’ લયનાનિ પર્વતવર્તિ પાપાણગૃહાણિ, ‘આવણ’ આપણા:=ઘટ્ટા:, ‘વેદ્ય’ વેદિકા=પરિવ્રુક્તા ભૂમિ:, ‘દેવકુલાનિ’=યક્ષગૃહાણિ, ‘ચિત્તસભા’ ચિત્રસભા-ચિત્રયુક્તસમાસ્થાનમ્, ‘પવા’ પ્રપા=પાનીયશાલા ‘વ્યાઝ’ ક્ષિતિ ભાષા પ્રસિદ્ધા, ‘આયયણ’ આયતન=યજ્ઞ-શાલા, ‘આવસહ’ આવસથ:-તાપસાશ્રમ:, ‘ભૂમિયર’ ભૂમિગૃહ=ગૃહારૂપં પૃથિવીગૃહમ્, ‘મંડવાણ’ મણ્ડપા:=પટનિર્મિતગૃહાસ્તેષાં, ‘કણ’ કૃતે-એતન્નિમિત્તમિત્યર્થ:। તથા ‘ભાયણ મંડોવગરણસ્સ’ ભાજનભાણ્ડોપકરણસ્ય ભાજનાનિ=સૌવર્ણરાજતાદીનિ, ભાણ્ડાનિ=શૂળમયાનિ શરાવાદીનિ, ઉપકરણાનિ=ઉદૂલ્લ મુસલાદીનિ એતેષાં સમા-શરદ્વન્દે-ભાજનભાણ્ડોપકરણમ્, તસ્ય ચ ‘વિવિહસ્સ ય’ વિવિધસ્ય ચ=અનેક પ્રકારસ્ય ‘અટ્ટાણ’ અર્થાય=પ્રયોજનાય ‘મંદબુદ્ધિયા’ મન્દબુદ્ધિકા:=સ્વપરહિતા-હિતવિષેકવિકલાજના:, ‘પુહવી’ પૃથિવી ‘હિંસંતિ’ ઘ્નન્તિ ॥મુ૦૧૪॥

(ઘર) ઘર કે નિમિત્ત (સરણ) શરણ-સામાન્યગૃહ કે નિમિત્ત (લયણ) લયન-પર્વતવર્તિ પાપાણ ઘર કે નિમિત્ત (આવણ) આપણ-ઘાટ કે નિમિત્ત (વેદ્ય) વેદિકા-ચોતરે કે નિમિત્ત (દેવકુલ) દેવકુલ-યક્ષાયતન કે નિમિત્ત (ચિત્તસભા) ચિત્રસભા-ચિત્રયુક્ત સભા કે નિમિત્ત (પવા) પ્રપા-વ્યાઝ કે નિમિત્ત “આયયણ” આયતન-યજ્ઞશાલા કે નિમિત્ત (આવસહ) આવસથ-તાપસોં કે આશ્રમ કે નિમિત્ત (ભૂમિયર) ભૂમિગૃહ કે નિમિત્ત (મંડવાણકણ) મંડપ કે નિમિત્ત તથા (‘ભાયણ મંડોવગરણસ્સ’ ય વિવિહસ્સ ય અટ્ટાણ પુહવી હિંસંતિ મંદબુદ્ધિયા) નાના પ્રકારકે ભાજન ભાણ્ડોપકરણકે નિમિત્ત મન્દબુદ્ધિજન પૃથિવીકાચ જીવોંકી હિંસા કરતેહૈં ।

આવાર્થ—પૃથિવી કાચિક એકેન્દ્રિય જીવ હૈં । હિંસ એકેન્દ્રિય જીવ કી હિંસા કરને કા નિમિત્ત-પ્રયોજન કયા હોતા હૈં-હિંસ વિષય કો સૂત્ર

“ઘર” ઘરને નિમિત્તે “સરણ” શરણ-સામાન્ય ગૃહને નિમિત્તે “લયણ” લયન-પર્વતવર્તિ પાપાણ ઘરને નિમિત્તે “આવણ” આપણ-ઘાટને નિમિત્તે “વેદ્ય” વેદિકા-ચોતરને નિમિત્તે “દેવકુલ” દેવકુલ-યક્ષાયતનને નિમિત્તે “ચિત્તસભા” ચિત્રસભા-ચિત્રયુક્ત સભાને નિમિત્તે “પવા” પ્રપા-પરપ નિમિત્તે “આયયણ” આયતન યજ્ઞશાલાને નિમિત્તે “આવસહ” આવસથ-તાપસોના અશ્રમોને નિમિત્તે “ભૂમિયર” ભૂમિગૃહને નિમિત્તે “મંડવાણકણ” મંડપને નિમિત્તે, તથા “ભાયણ મંડોવગરણસ્સ ય વિવિહસ્સ ય અટ્ટાણ પુહવી હિંસંતિ મંદબુદ્ધિયા” અનેક પ્રકારના ભાજન, ભાણ્ડોપકરણને નિમિત્તે મંદબુદ્ધિવાળા લોકો પૃથ્વીકાચ જીવોની હિંસા કરે છે.

આવાર્થ—પૃથ્વીકાચિક જીવો એકેન્દ્રિયવાળા હોય છે, એ એકેન્દ્રિય જીવની હિંસા કરવાનાં નિમિત્તો, પ્રયોજનો કયાં કયાં હોય છે, તે વિષે સૂત્ર-

કાર ને યહાં નિર્દિષ્ટ કિયા હૈ । મંદબુદ્ધિજનોં સે યહાં તાત્પર્ય સ્વપર હિત કે વિવેક સે વિકલ જનોં સે હૈ । જિन्हૈ સ્વ ઓર પર કા વિવેક નહીં હૈ એસે પ્રાણી હી કૃષી આદિ इन उपर्युक्त कारणों के वशवर्ती होकर पृथिवी कायિક जीव की हिंसा किया करते हैं । कृषीकर्म प्रसिद्ध हैं । जिसके चारो कोण समान हों, कमल जिसमें विकसित हो रहे हों, अगाध-जल जिसमें भरा हो, नाना प्रकार के कलरव से जिसके तट मण्डित हो ऐसे सुरम्य जलाशय का नाम पुष्करिणी है । जिसका विस्तार दीर्घ हो उसका नाम वापी है । हिन्दी में इसे बावडी कहते हैं । अनाज के बोने का जो स्थान होता है उसे क्षेत्र-खेत कहते हैं । कृत्रिम जलाशय का नाम सर है । स्वाभाविक जलाशय का नाम तडाग है, इसे हिन्दी में तालाब कहते हैं । चिता का नाम चिति है, जो मृतक के दाह संस्कार के निमित्त श्मशान में लकड़ियों के ढेर के रूप में चिनी जाती है । किसी मृतक की यादगार में जो उसका स्मृति चिह्न स्वरूप भवन आदि बना दिया जाता है उसका नाम चैत्य है । किले के परकोटे के चारों ओर जो गहरी खाई होती है कि जिसमें जल भी भरा रहता है उसका नाम खानिका-खाई है । घर के पास के बगीचे का नाम आराम है, नगर से कुछ दूर पर जो जनों का क्रीडा स्थान होता है उसका नाम विहार है । जो स्मारक

કાર આ સૂત્રમાં સ્પષ્ટીકરણ કરે છે. અહીં મંદબુદ્ધિજનોના અર્થ, પોતાનું અને પારકાનું હિત ન જાણનાર લોકો થાય છે. જેમને સ્વ અને પરના વિવેક હોતો નથી એવા જીવોજ કૃષિ આદિ ઉપર કહેલ કારણોને વશ થઈને પૃથિવી કાયિક જીવની હિંસા કર્યા કરે છે. કૃષિકર્મ પ્રસિદ્ધ છે. એટલે તેને વિષે સ્પષ્ટીકરણની જરૂર નથી. જેના ચારે ખણી સમાન હોય, જેમાં કમળો વિકસ્યાં હોય, જેમાં જીંડુ પાણી ભરેલું હોય વિવિધ પ્રકારના કલરવથી જેના તટ મંડિત હોય એવા સુંદર જળાશયને પુષ્કરિણી કહે છે. જેના વિસ્તાર લાંબો હોય તેવી વાવને વાપી કહે છે. હિંદીમાં તેને વાવડી કહે છે, અતઃજ વાવવાનું જે સ્થાન હોય છે તેને ક્ષેત્ર-ખેતર કહે છે. કૃત્રિમ જળાશયને સર કહે છે. ચિતાને ચિતિ કહે છે, જે મૃત શરીરને અગ્નિદાહ દેવાને માટે લાકડાંના ઢગલા રૂપે ખડકવામાં આવે છે. કોઈ મૃત વ્યક્તિના સ્મરણાર્થે જે ભવન આદિ બનાવાય છે તેને ચૈત્ય કહે છે. કિલ્લાની દિવાલની ચારે તરફ જે જાડી ખાદ હોય છે, અને જેમાં પાણી પણ ભરેલું રહે છે, તે ખાદને ખાનિકા ખાઈ કહે છે. ઘર પાસેના ખાગને આરામ કહે છે. નગરથી દૂર જે લોકોનું ક્રીડા સ્થાન હોય છે તેને

શ્રવણીની રીકા નં ૧ નું ૧૪ પૃથ્વીકાર્પાસાકારણનિકૃપણમ્

૧૭

સ્તંભ બનાવા જાતા હૈ વહ સ્તૂપ હૈ । પ્રાકાર-જિસે હિન્દી ભાષા મૈ ગદ્ કહતે હૈ । નગર મૈ પ્રવેશ કરને કા જો પ્રધાન દ્વાર હોતા હૈ ઉસકા નામ ગોપુર હૈ । દુર્ગમજિલે આદિ મકાનોં કૈ છત કો અટારી કહતે હૈ । દુર્ગ ઓર નગર કૈ બીચ મૈ જો આઠ હાથ પ્રમાણ કા માર્ગ હોતા હૈ કિ જિસસે હોકર હાથી આદિ આતે જાતે રહતે હૈ ઉસકા નામ ચરિકા હૈ । જલ કી ધારા પ્રવાહ કો પાર કરને કૈ લિયે જો પાષાણ અથવા કાષ્ઠ કા ઉસ પર માર્ગ બના દિયા જાતા હૈ ઉસકા નામ સંક્રમ હૈ । એસે સ્થાન નદી નાલોં આદિ જલાશય પ્રદેશોં પર બને છુપ રહતે હૈ । રાજમહલ પસિદ્દ હૈ, હસે સંસ્કૃત ભાષા મૈ પ્રાસાદ કહતે હૈ । ભવન-લમ્બાઈ કી અપેક્ષા કુછ થોડી કમ ડુંચાઈ ચાલા હોતા હૈ । તથા જો પ્રાસાદ હોતા હૈ વહ ભવન કી અપેક્ષા ટ્રિગુણિત ડુંચાઈ ચાલા હોતા હૈ । સામાન્યઘર કા નામ શરણ હૈ । પર્વત કૈ પાસ જો પથ્થરોં કૈ ઘર બને છુપ હોતે હૈ ઉનકા નામ લયન હૈ । દુકાન કા નામ હટ્ટ યા હાટ હૈ । પરિષ્કૃત ભૂમિ કા નામ વેદિકા હૈ । દેવકુલ-યજ્ઞાયતન-યજ્ઞ કૈ સ્થાન કો કહતે હૈ । જિસ સભા-સ્થાન મૈ ચિત્ર હોતે હૈ ઉસકા નામ ચિત્રસભા હૈ । જહાં લોગોં કો પાની પિલાયા જાતા હૈ ઉસકા નામ પ્યાઝ હૈ । યજ્ઞશાલા કા નામ આયતન, તાપસાશ્રમ કા નામ આવસથ, પૃથિવી કૈ નીચે બને છુપ ઘર કા નામ

વિહાર કહે છે. સ્મારક સ્તંભને સ્તૂપ કહે છે. કિલ્લાને પ્રાકાર કહે છે. નગરમાં પ્રવેશ કરવાનું જે મુખ્યદ્વાર હોય છે તેને ગોપુર કહે છે. જે માળના આદિ મકાનોની અગાશીને અટારી કહે છે. દુર્ગ અને નગરની વચ્ચે જે આઠ હાથ પહોળો માર્ગ હોય છે, જે ન્યાં થઈ હાથી આદિ આવે નથ છે, તે માર્ગને ચરિકા કહે છે. પાણીના પ્રવાહને ઓળંગવાને માટે તેના પર પથ્થર અથવા લાકડાનો જે માર્ગ બનાવવામાં આવે છે તેને સંક્રમ (પુલ) કહે છે. એવાં સ્થાનો નદી, નાળાં, આદિ જળાશયો પર બનાવેલાં હોય છે. રાજમહેલ શબ્દ નર્ણયિત છે. તેને સંસ્કૃત ભાષામાં પ્રાસાદ કહે છે. ભવનની ડુંચાઈ પ્રાસાદ કરતાં ઓછી હોય છે. ભવન કરતાં પ્રાસાદની ડુંચાઈ બમણી હોય છે. સામાન્ય ઘરને શરણ કહે છે. પર્વતની પાસે પથ્થરોનાં જે ઘરો હોય છે તેમને લયન કહે છે. દુકાનને હટ્ટ અથવા હાટ કહે છે. ચોતરાને વેદિકા કહે છે. દેવકુલ-યજ્ઞાયતન-યજ્ઞના સ્થાનને કહે છે. જે સભાસ્થાનમાં ચિત્રો હોય છે, તે સભાસ્થાનને ચિત્રસભા કહે છે. ન્યાં લોકોને પાણી પાવામાં આવે છે તે જગ્યાને પ્યાઝિ-પરબ કહે છે. યજ્ઞશાળાને આયતન, તાપસના આશ્રમને આવસથ, જમીનની અંદર બનાવેલ

અથાપ્કાયર્હિસાકારણાન્યાહ—‘જલં ચ’ इत्यादि ।

મૂલમ્— જલં ચ મઝ્જણય-પાણ-ભોયણ-વત્થ ધોવણ-
સોયમાહર્હિ ॥સૂ૦૧૫॥

ટીકા—‘મઝ્જણય’ મઝ્જનકં=સ્નાનં ‘પાણ’ પાનં ‘ભોયણ’ ભોજનં ‘વત્થધોવ-
ણ’ વસ્ત્રધોવનં=વસ્ત્રપ્રક્ષાલનં ‘સોય’ શૌચમ્ ‘આહર્હિ’ આદિભિઃ=મઝ્જનાદ્યનેક
કારણૈઃ ‘જલં ચ’=અપ્કાયં હિંસન્તિ ॥સૂ૦૧૫॥

અથાગ્નિકાયર્હિસાકારણાન્યાહ—‘પયણ’ इत्यादि ।

મૂલમ્— પયણ-પયાવણ-જલણ-જલાવણ-વિદંસણેર્હિ અ-
ગર્ણિ ॥સૂ૦૧૬॥

ટીકા—‘પયણ’ પચનં=સ્વયં, ‘પયાવણ’ પાચનમન્યૈઃ ‘જલણં’ જ્વલનં=સ્વહ-
સ્તેન પ્રદીપનમ્, ‘જલાવણ’ જ્વાલનમ્=અન્યૈઃ, ‘વિદંસણ’ વિદર્શનં=પ્રકાશકરણમ્,
પમિઃ કારણૈઃ=પ્રયોજનૈઃ ‘અગર્ણિ’ અર્ગિનિ હિંસન્તિ ॥સૂ૦૧૬॥

ભૂમિઘર યા તલઘર, તંબૂ કા નામ પટ્ટઘર, અથવા મંડપ હૈ । ચાંદી સોને
કે ઘને હુए વર્તનોં કા નામ યહાં ખાજન एवं મિટ્ટી કે ઘને હુए વર્તનોં કા
નામ ખાંડ હૈ । ઉડ્ઘલ (ઓઘલી) તથા મુસલ આદિ કો યહાં ઉપકરણ
સે ગ્રહણ કિયા હૈ ॥સૂ૦ ૧૪॥

અવ અપ્કાય કી હિંસા કરને કે પ્રયોજન કો સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરતે હૈ
‘જલં ચ મઝ્જણ ય’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(મઝ્જણય) સ્નાન, (પાણ) પાન, (ભોયણ) ભોજન,
(વત્થધોવણ) વસ્ત્રપ્રક્ષાલન, (સોય) શૌચ, इत्यादि કારણોં કો લેકર
(જલં ચ) અપ્કાય-જલકાય કી હિંસા કરતે હૈ ॥ સૂ૦૧૫ ॥

અવ અગ્નિકાય કી હિંસા કરને કે પ્રયોજન કો સૂત્રકાર કહતે

ઘરને ભૂમિઘર અથવા તલઘર અને તંબૂને પટ્ટઘર અથવા મંડપ કહે છે. ચાંદી
સોનામાંથી બનાવેલ વાસણોને ભાજન અને માટીમાંથી બનાવેલાં વાસણોનેખાંડ કહે
છે. ખાંડણિયો તથા સાંભેલાં આદિને અહીં ઉપકરણથી ગ્રહણ કરેલ છે ॥ સૂ.૧૪ ॥

હવે અપ્કાય (જળકાય)ની હિંસા કરવાના પ્રયોજનને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે
“જલં ચ મઝ્જણ ય” इत्यादि.

ટીકાર્થ—“ મઝ્જણય ” સ્નાન, “ પાણ ” પાન “ ભોયણ ” ભોજન,
“ વત્થધોવણ ” વસ્ત્રધોવા, “ સોયા ” શૌચ इत्यादि કારણોને લીધે અપ્કાય
જળકાયની હિંસા થાય છે ॥સૂ૦ ૧૫॥

હવે અગ્નિકાયની હિંસા કરવાનાં પ્રયોજનોને સૂત્રકાર બતાવે છે—

સૂચિની ટીકા અ.૧ સૂ. ૧૭ વાયુકાયદિસાકારણનિરૂપણ

૬૧

અથ વાયુકાયદિસાકારણાન્યાહ—‘સુપ્પ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ય—સુપ્પ-વિયળ-તાલિયંટ-પેદુળ-મુહ-કરચલ સગપત્ત-
વત્થ એવમાઇણ્હિ અણિલં ॥ સૂ. ૧૭ ॥

ટીકા—‘સુપ્પ’ શૂર્પ=અન્નશોધનોપકરણવિશેષ; ‘છાજ’ ‘મૂપડા’ ઇતિ
માષામસિદ્ધ: ‘વિયળ’વ્યજન=વંશશલાકાદિનિર્મિતમ્, ‘તાલિયંટ’ તાલદ્રવ્યં ‘તા-
લપંખા’ ઇતિ પ્રસિદ્ધમ્, ‘પેદુળગ’ પેદુળકં=મયૂરપિચ્છકૃતવ્યજનં ‘મુહ’ મુલ્લં
હૈ—‘પયળપયાવળ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(પયળ-પયાવળ-જલળ-જલાવળ-વિદંસળેહિ અગ્નિ) સ્વયં
ભોજનચનાના, દૂસરોંસે ભોજન વનવાના, સ્વયં અગ્નિ જલાના, દૂસરોંસે
અગ્નિ જલવાના, તથા દીપક જલાકર પ્રકાશ કરના, ઇત્યાદિ પ્રયોજનોં
કો લેકર અગ્નિકાય કી હિંસા કરતે હૈ ॥ સૂ. ૧૬ ॥

વાયુકાય કી હિંસા કરને કે પ્રયોજન કો સૂત્રકાર કહતે હૈ—
‘સુપ્પવિયળ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(સુપ્પ-વિયળ-તાલીયંટ-પેદુળ-મુહ-કરચલ સગપત્તવત્થએવમા-
ઇણ્હિ અણિલં) સૂપ્પસે જબ પછાડ૨ કર અન્ન આદિ શોધન કરતે હૈ તથ,
વંશશલાકા આદિસે નિર્મિત પંચે સે જબ હવા કી જાતી હે તથ, તાલ-
શૂક્ષ્ણ કે પત્તે સે બને હુણ પંચે સે જબ હવા કી જાતી હૈ તથ; મયૂર કે
પિચ્છોં સે નિર્મિત પંચે સે જબ હવા કી જાતી હૈ તથ, મુલ્લ

“પયળપયાવળ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“પયળ, પયાવળ, જલળ, જલાવળ, વિદંસળેહિ અગ્નિ” બાતે ભોજન
ખનાવવાને, ખીજા પાસે ભોજન ખનાવરાવવાને, પોતે અગ્નિ સળગાવવાને, અન્ય
પાસે અગ્નિ સળગાવરાવવાને, તથા દીવો સળગાવીને પ્રકાશ કરવા, ઇત્યાદિ પ્રયો-
જનોને માટે અગ્નિકાયની હિંસા કરે છે. ॥સૂ. ૧૬॥

હવે વાયુકાયની હિંસા કરવાનાં પ્રયોજનોને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

“સુપ્પ વિયળ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“સુપ્પ, વિયળ, તાલિયંટ, પેદુળ, મુહ, કરચલ સગપત્ત વત્થ એવમાઇણ્હિ
અણિલં” બ્યારે સૂપકા વડે ઝાટકીને અનાજ સાફ કરાય છે ત્યારે, પાંસની
સળીઆ આદિમાંથી બનાવેલા પંખા વડે બ્યારે હવા ખવાય છે ત્યારે, તાડનાં
પાનાંમાંથી બનાવેલ પંખા વડે બ્યારે પવન નખાય છે ત્યારે, મોરનાં પીછાંમાંથી
બનાવેલ પંખા વડે બ્યારે પવન નખાય છે ત્યારે, બ્યારે કોઇ નિમિત્તે મુખથી

‘કરયલ’ કરતલં=હસ્તતલં ‘સમ્ગપત્ત’ સાગપત્રં=વૃક્ષવિશેષપત્રં ‘વસ્થ’ વસ્તુ, ‘એવ-માદૃષ્ઠિ’ એવમાદિભિઃ=ઇત્યાદિમિર્વાયૂદીરકવિયુદ્વ્યજનાદિસાધનૈઃ ‘અણિલં’ અનિલં=વાયું હિંસન્તિ ॥સૂ.૦ ૧૭॥

અથ વનસ્પતિકાયહિંસાકારણાન્યાહ—‘અગારે’ર્યાદિ ।

પૂર્વમ્—અગાર-પરિચાર-ભક્ષ-ભોયણ-સયણાસણ-ફલગ-મુસલ-ઉચ્ચલ-તત-વિતતાતોજ-વહણ-વાહણ-મંડગ-વિવિહભવણ-તોરણ-વિટંગ-દેવકુલ-જાલયદ્ધચંદ-નિજ્જૂહગ-ચંદ-સાલિય-વેદ્ય-ગિસ્સે-ગિદોણિ-ચંગેરી-ચીલ-મંડવ-સમા-પવા-ડડવસહ-ગંધમણ્ણુ-લેવણં-વર-જુય-નંગલ-મેદ્ય-કુલિય-સંદણસીયા-રહ-સગડ-જાણ-જોગ-અટ્ટાલગ-ચરિઅદાર-ગોપુર-ફલિહા-જંત-સૂલિયા લડડ-મુસંઢિ-સયગ્ધી-વહુપહરણા-વરણુવક્ષરાણ કણ અણ્ણેહિં એવમા-દૃષ્ઠિં વહુહિં કારણસણ્ણિં હિંસંતિ તરુણે ભણિય અભણિય ય એવમાદૃ ॥ સૂ. ૧૮ ॥

સે જય કિસી નિમિત્ત ફૂંક મારી જાતી હૈ તથ, ઔર છુલે મુંહ બોલતે હૈં તથ, જય હાથોં સે તાલી બજાઈ જાતી હૈ તથ. જય પત્ર શાક કે પત્તોં કો સાફ કરને કે લિયે ઉન્હેં હાથ પર છટકારા જાતા હૈ તથ, ઔર જય વસ્ત્ર કે અંચલ સે હવા કી જાતી હૈ તથ, તથા ઘિજલી આદિ કે પંચોં સે જય હવા કી જાતી હૈ તથ વાયુકાય કે જીવોં કી હિંસા હોતી હૈ । તાત્પર્યેં ઇસકા યહ હૈ કિ જિતનેં મી વાયુદીરક સાધન હૈં ઉન સે વાયુ-કાય કે જીવોં કી હિંસા હોતી હૈ ॥સૂ-૧૭॥

અથ વનસ્પતિ કી હિંસા કરને કે પ્રયોજન કો સૂત્રકાર કહતે હૈં—

કુકે મારવામાં આવે છે ત્યારે, ત્યારે ખુદ્દે મોઢે બોલવામાં આવે છે ત્યારે ત્યારે હાથે વડે તાળી વગાડવામાં આવે છે ત્યારે, ત્યારે શાકનાં પાનને સાફ કરવાને મોઢે હાથથી ઝાટકવામાં આવે છે. ત્યારે, તથા વીજળી આદિના પંખા વડે ત્યારે હવા ખાવામાં આવે છે ત્યારે વાયુકાય જીવોની હિંસા થાય છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે હવા ખાવાનાં જોડલાં સાધના છે તેમનાથી વાયુકાય જીવોની હિંસા થાય છે. ॥સૂ. ૧૭॥

હવે વનસ્પતિકાયની હિંસા કરવાનાં પ્રયોજનોને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે.

टीका—‘अगार’ अगारं=गृहं ‘परियार’ परिचारः=जीविकाः, खड्गादि कोशो वा ‘भक्ख’ भक्ष्याणि=मोदकादीनि ‘भोयण’ भोजनानि=ओदनादीनि, ‘सयणासण’ शयनासनानि=शयनानि=मञ्च पर्यङ्कादिशय्याः; आसनानि=भद्रासनादीनि ‘फलग’ ‘फलकानि=काष्ठनिर्मितवस्तुविशेषाः ‘तख्ता’ इति भाषा मसिद्धानि ‘मुसलमुदखलं च मसिद्धम्, ततानि=वीणादीनि-विततानि=मुरजभेर्यादीनि, ‘आतोज्ज’ आतोद्यानि=वाद्यविशेषाः, ‘वहण’ वहनानि=पोतनौकादीनि यानपात्राणि ‘वाहण’ वाहनानि=शिबिकादीनि ‘भंडग’ भाण्डानि=गृहोपकरणानि, ‘विविहभवण’ विविध भवनानि=सर्वतोभद्रादिभवनानि, तोरणानि=द्वारशोभाकारिवन्दनमालादीनि, ‘विटंग’ विटङ्गाः=कपोतपालेयः ‘छज्जा’ इति भाषा मसिद्धाः, देवकुलानि=यक्ष-गृहाः, ‘जालय’ जालकानि=गवाक्षविशेषाः, ‘अद्धचंद’ अर्धचन्द्राः=अर्धचन्द्राकार-‘अगार-परियार-भक्ख’ इत्यादि।

टीकार्थ—(अगार) अगार-गृह, (परियार) परिचार-जीविका अथवा खड्गादिकोश-भ्यान, (भक्ख) भक्ष्य-मोदक आदि खाने योग्य द्रव्य, (भोयण) भोजन-ओदनादि द्रव्य, (सयणासण) शयनासन-मञ्च पर्यङ्क आदि शय्या, भद्रासन आदि आसन, (फलग) फलक-काष्ठनिर्मित वस्तुविशेष-तख्ता, (मुसल) मुसल, उदखल-ओखली (तत) तत-वीणा आदि वाद्य (वितत) वितत-मुरज भेरी आदि बाजे, (आतोज्ज) आतोद्य वाद्यविशेष, (वहण) वहन-पोत, नौका आदि यान पात्र, (वाहण) वाहण शिबिका आदि, (भंडग) भंडक-गृहके उपकरण, (विविहभवण) विविध भवन-सर्वतोभद्र आदि मकान, (तोरण) तोरण-द्वार की शोभा वर्धक वंदन-माला आदि, (विटंग) विटंक-कपोतपाली-छज्जा, (देवकुल) देवकुल यक्षगृह, (जालय) जालकगवाक्ष-खिडकी, (अद्धचंद) अर्धचंद्राकार

“अगार, परियार-भक्ख” इत्यादि

टीकार्थ—“आगार”अगार-गृह “परियार” परिचार-जीविका अथवा तलवार आदिनुं भ्यान “भक्ख” लक्ष्य-लाडु आदि भाषा लायक द्रव्य “भोयण” भोजन-सात आदिद्रव्य “सयणासण” शयनासन-पाटली पलंग आदि शय्यानां साधने, लद्रासन आदि आसन “फलग” इलक-लाडकानी पाट, पाटियुं “मुसल” सांघेनुं, इड्ढअल-भांडखियो “तत” तत वीणा आदि वाद्य “वितत” वितत-मुरज भेरी आदि पाणुं “आतोज्ज” आतोद्य-अेक प्रकारनुं वाद्य विशेष “वहण” वहन पोत नौका आदि; वाहन-पादपणी आदि “भंडग” लंडक गृहनां उपकरण, “विविहभवण” विविध भवन-सर्वतोभद्र आदि मकान “तोरण” द्वारनी शोभा वधारनार वंदनभाडा आदि “विटंग” विटंक-छत्र “देवकुल” यक्षगृह “जालय” गवाक्ष-गवाक्ष पारी “निज्जहण” गरी “अद्धचंद” अर्धचन्द्र-अर्धचन्द्राकार सोपान

सोपानविशेषाः, 'निज्जुहग' निर्य्यूहकाणि=द्वारोर्ध्वभागवर्हिर्निर्गताः घोटकाद्या-
काराः काष्ठविशेषाः, 'चंदसालिय' चन्द्रशालिकाः=प्रासादोपरितनशालाः 'वेइय'
वेदिका=पाङ्गणे कृतोपवेशनस्थानम्, 'णिस्सेणि' निःश्रेणिः 'सीदी' इति मसिद्धा
'दोणि' द्रोणिः=लघुनौका, 'चंगेरी' तृणादिनिर्मितपात्रविशेषः 'टोकरी' इति
भाषा प्रसिद्धा देशीशब्दोऽयम्, 'खील' कीलाः=प्रसिद्धाः, 'मंडव' मण्डपाः=पट-
गृहाः, द्राक्षादिमण्डपा वा; सभाः=जनोपवेशनस्थानानि, 'पवा' प्रपाः पानीय-
शालाः, 'आवसह' आवसथाः=तापसाश्रमाः 'गंध' गन्धाः=गन्धद्रव्याणि, 'मल्ल'
माल्यानि=कुसुमानि=माल्यं=कुसुमस्रग् वा, 'अणुलेवण' अनुलेपनं=चन्दनं,
'अम्बर' अम्बराणि=वस्त्राणि, 'जुय' युगानि 'झसरा' इति भाषा प्रसिद्धानि,
'नंगल' लाङ्गलानि हलानि, 'मेइय' मेतिकाणि यैः कृष्टक्षेत्रं मृद्यते, 'कुलिय' कुलि-
कानि हलभेदाः 'संदण' स्यन्दनो रथविशेषाः, 'सीया' शिविकाः- 'पालखी' इति

सोपानविशेष, (निज्जुहग) निर्य्यूहक-द्वारके उर्ध्वभागमें बाहर की ओर
लगे हुए घोड़ा आदि के आकार वाले काष्ठ विशेष, (चंदसालिय) चंद्रशालिका-प्रासाद के ऊपरकी शाला, (वेइय) वेदिका-आंगनमें बैठने
के लिये बना हुआ स्थान, (णिस्सेणि) निःश्रेणी-नसेनी-सीदी, (दोणि) द्रोणी-लघुनौका-होडी, (चंगेरी) चंगेरी-तृणादिसे बना हुआ पात्र विशेष,
जिसे चंगेर भी कहते हैं, (खील) कीला, (मंडव) मंडप-पटगृह अथवा
द्राक्षादि मंडप, (सभा) सभा-मनुष्योंके बैठने का स्थान, (पवा) प्रपा-
प्याऊ, (आवसह) आवसथ-तापसाश्रम, (गंध) गंध-सुगंधि द्रव्य,
(मल्ल) माल्यकुसुम आदि माला-कुसुमों की गुथी हुई पुष्पमाला, (अनु-
लेवण) अनुलेपन-चंदन, अम्बर-वस्त्र, (जरयुग) युग-झसरा-जुबारी,
(नंगल) लांगल-हल, (मेइय) मेतिक-वखर, जिससे जुता हुआ खेत

विशेष, निर्य्यूहक-आरक्षणी ऊपर अक्षरनी आनुअे लगाउल घोडा आदिना
आकारना काष्ठ विशेष "चंदसालिय" चंद्रशालिका-प्रासादना उपरनी शाला
"वेइय" वेदिका-आंगणुआं जेसवा भाटेना जेतरे, "णिस्सेणि" निःश्रेणी
निसखी, "दोणि" द्रोणी नानी नौका "चंगेरी" चंगेरी-तृणादिमांथी जनावेल पात्र-
विशेष जेने अंगेर पञ्च कडे छे, "खील" खीलो "मंडव" मंडप-तंगू अथवा
द्राक्षादिना मंडप "सभा" सभा-माणुसेने जेसवातुं स्थान "पवा" प्रपा परण
"आवसह" आवसथ-तापसेने आश्रम "गंध" गंध-सुगंधि द्रव्य "मल्लणुलेवण",
मल्ल-माल्य कुसुम आदिनी भाणा, अनुलेपन चंदन, अम्बर वस्त्र "युग" झसरा
जुबारी "नंगल" लांगल हल "मेइय" मेतिक वखर जेनाथी जेउलु जेतरे अेक

સુદર્શિનો ટીકા અં ૧ સુ ૧૮ વનરૂપતિકાપર્દિસાકારણનિરૂપણમ્ ૭૩

પ્રસિદ્ધાઃ, 'રહ' સ્થાઃ-પ્રસિદ્ધાઃ, 'સગઢ' શકટાનિ=પ્રસિદ્ધાનિ, 'જાણ' યાનાનિ=શકટવિશેષાઃ, 'જોગ' યુગ્યાનિ=જમ્પાનવિશેષાઃ, 'અટાલગ' અટાલકાઃ=પ્રાકારોપરિવર્તિ સ્થાનવિશેષાઃ 'ચરિઅ' ચરિકાઃ=નગરપ્રાકાસમધ્યસ્થાપ્તસ્તપ્રમાણમાર્ગાઃ 'દાર' દ્વારાણિ=પ્રસિદ્ધાનિ, 'ગોપુર' પુરદ્વારાણિ, 'ફલિહ' પરિઘાઃ અર્ગલાઃ 'યંત્ર' યંત્રાણિ=પ્રસિદ્ધાનિ 'સૂલિયા' શૂલિકાઃ=શૂલારોપણકાષ્ઠાનિ, 'લઝડ' લઙ્કુટાઃ=યષ્ઠ્યાઃ, 'મુસંદિ' શસ્ત્રવિશેષાઃ, 'સયમ્બી' શતઘ્ન્યાઃ=શસ્ત્ર વિશેષાઃ, મહાશિલાસુ યા ઉપરિષ્ઠાત્ પાતિતા સત્યઃ શતાનિ ધ્વનન્તિ, एवं 'બહુ' બહૂનિ=અનેકાનિ 'પહરણ' મહરણાનિ=શસ્ત્રાણિ સ્વજ્ઞતોમરતીરાદીનિ 'આવરણ' આવરણાનિ=સ્ફુરકાણિ 'છરપલા' इति प्रसिद्धानि 'उत्पक्वराण' उपस्कराणि=गृहोपकरणानि, कपाटादीनि, तेषां 'कए' कृते=एतदर्थं, तथा 'अण्णेहि' अन्वैश्व, 'एवमाइएहि' एवमादिकैः

एकसा किया जाता है, (कुलिय) कूलिक-हलविशेष, स्यंदन-रथविशेष, (सीया) शिबिका-पालखी, (रह) रथ-सामान्य रथ (सगड) शकट-गाडा, (जाण) यान-वाहन विशेष, (जोग) युग्य-जम्पान विशेष, (अटालग) अटालक-प्राकार के ऊपर का स्थान विशेष (चरिका) चरिका-नगर और कोट के मध्य का आठ हाथ प्रमाण का मार्गविशेष, (दार) द्वार, (गोपुर) गोपुर-पुरद्वार (फलिहा) परिघा-अर्गला बेंडा, (जंत) यंत्र, (सूलिया) शूलिका - शूलारोपण काष्ठ (लजड) लङ्कट-यष्टि-छडी, (मुसंदि) मुसंदी शस्त्रविशेष, (सयम्बी) शतघ्नी-शस्त्रविशेष जिससे एक ही धारमें सौ मनुष्य मार दिस जाते हैं तथा (बहुपहरणा) अनेक प्रहरण-शस्त्रस्वङ्ग, तोमर, तीर आदि, आवरण-छरपला, (वरणुक्त्तराणकए) उपस्कर-कपाट आदि गृहके उपकरण इन सबके लिये तथा (अण्णेहि एवमाइएहि)

સરખુ' કરવામાં આવે છે. "કુલિય" કુલિક એક પ્રકારનું હળ "સંવળ" સ્યંદન એક ભતનો રથ "સીયા" શિબિકા પાલખી "રહ" રથ "સગડ, શકટ ગાડું" "જાણ" યાન વાહન વિશેષ "જોગ" યુગ્ય બે પ્રાણીથી ખેંચાતાં વાહનો "અટાલગ" અટાલક કિલ્લાની ઉપરનું ખાસ પ્રકારનું સ્થાન "ચરિય" ચરિકા નગર કોટની વચ્ચેનો આઠ હાથની પહોળાઈનો માર્ગ વિશેષ "દાર" દ્વાર "ગોપુર" ગોપુર શહેરનું મુખ્ય દ્વાર "ફલિહા" પરિઘા આંગળિયો "જંત" યંત્ર શૂલિકા "સૂલિયા" શૂળીએ ચડાવવા માટેનું કાષ્ઠ "લઝડ" લઙ્કટ યષ્ઠિ છડી "મુસંદિ" મુસંદી શસ્ત્રવિશેષ "સયમ્બી" શતઘ્ની એકભતનું શસ્ત્ર જેનાથી એક જ વારમાં સો માણસો મારી શકાય છે, તથા "બહુપહરણા" અનેક પ્રહરણ શસ્ત્ર અડગ તોમર તીર આદિ "વરણુક્તરાણકર" આવરણ ઉપસ્કર કપાટ આદિ ધરમાનાં ઉપકરણો એ બધાંને માટે તથા

एवं प्रकारैः ‘ बहुहि ’ बहुभिः ‘ कारणसएहि ’ कारणशतैः=प्रयोजनव्रतैः ‘ भणिए ’ भणितान् उक्तान् ‘ अभणिए य ’ अभणितांश्च=अनुक्तांश्च, एवमादीनुक्तप्रकारान् ‘ तरुगणे ’ तरुगणान्=वनस्पतिसमूहान् ‘ हिंसति ’=विनाशयन्ति ॥सू० १८।

કોદશાન જીવાન કોદશા હિંસકાઃ કિમર્થં ઘનન્તિ ? इत्याह—‘सत्ते’ इत्यादि।

मूलम्—सत्ते सत्तपरिवज्जिए उवहणंति दढमूढा दारुण-
मई कोहा माणा माया लोभा हासा रती अरती सोय वेदत्थ
जीय धम्मत्थ कामहेऊ सवसा अवसाअट्टाएअणट्टाए य तस-
पाणे थावरे य हिंसंति ॥ सू० १९ ॥

टीका—‘दढमूढा’ दढमूढाः=सातिशयविवेकविकलाः, ‘दारुणमई’ दारु-
णमतयः=क्रुशशयाः जनाः, ‘सत्तपरिवज्जिए’ सत्तपरिवर्जितान्=बलहीनान्

और भी इनसे अतिरिक्त (बहुहि कारणसएहि) अनेक प्रयोजनों के लिये (भणिए अभणिए य) जो यहाँ पर कहे गये और जो नहीं कहे गये हैं, (एवमाई) उन सब तरुगण वनस्पति समूहकी हिंसा करते हैं। संसारी अधुधजन इन पूर्वोक्त वस्तुओं के निर्माण के लिये वृक्षों को काटते हैं। वृक्षों को काटना ही वनस्पति जीवों की हिंसा करना है। इन उपर्युक्त वस्तुओं का निर्माण वृक्षों के काष्ठ से होता है। ॥ सू० १८ ॥

પ્રસ સ્થાવર જીવોં કો કૈસે ૨ ભાવોં સે યુક્ત હોકર હિંસક જન મારતે હૈં સૂત્રકાર હસ સૂત્ર દ્વારા સ્પષ્ટ કરતે હૈં—‘સત્તે સત્તપરિ-
વજ્જિએ’ इत्यादि।

टीकार्थ—(दढमूला) जो सातिशय विवेक से विकल हैं—जिनके विवेक

“અળેહિં એવમાઈએહિં” તે સિવાયના “ બહુહિં કારણસએહિં ” બીજાં પણ અનેક પ્રયોજનોને માટે “ ભણિએ અભણિએ ય ” કે જે અહીં કહેવાયાં છે કે નથી કહેવાયાં “ એવમાઈ ” તે બધા તરુગણ વનસ્પતિ સમૂહની લોકો હિંસા કરે છે. સંસારી અબુધ લોકો પૂર્વોક્ત વસ્તુઓ બનાવવાને નિમિત્તે વૃક્ષોને કાપે છે. વૃક્ષોને કાપવા એ જ વનસ્પતિ જીવોની હિંસા છે ઉપર કહેલી વસ્તુઓ વૃક્ષોનાં કાષ્ઠભાગથી થાય છે. ॥ સૂ. ૧૮ ॥

પ્રસ સ્થાવર જીવોને કેવા કેવા ભાવોથી યુક્ત થઈને હિંસકજન મારે છે તેનું આ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકાર સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—“સત્તે સત્તપરિવજ્જિએ” इत्यादि.

टीकार्थ—“ दढमूला ” के अतिशय विवेकથી विकल છે. જેમનાં વિવેકરૂપ અણુઓ

સુદર્શિની ટીકા વ૦ ૧ સુ૦ ૧૨ કાન્ જીવાન્ કિરણાતકાન્તિ

૭૫

દીનાન્ ‘સત્તે’ સત્તાન્=પૃથિવ્યાદીન્ ‘ઉવહ્ણન્તિ’ ઉવહ્ણન્તિ=મારયન્તિ, કસ્માદિ-
ત્યાહ—‘ક્રોહા’ ક્રોધાત્, ‘માણા’ માનાત્ ‘માયા’ માયાયાઃ=કપટાત્ ‘લોભા’
લોભાત્ ‘હાસા’ હાસ્યાત્ ‘રઙ્ગ’ રત્તે=રાગાત્ ‘અરઙ્ગ’ અરત્તે=દ્વેષાત્ ‘સોય’ શોકાત્
‘ઉવહ્ણન્તિ’ ઇતિ સમ્બન્ધઃ । કિમર્થમ્ ? ઇત્યાહ—‘વેયત્થ’ જીયધમ્મત્થકામહેજ્ઞ
વેદાર્થજીવધર્માર્થકામહેતોઃ, અન્ન હેતુશબ્દસ્ય પ્રત્યેકમભિસમ્બન્ધઃ । ‘વેયત્થ’
વેદોક્તાનુષ્ઠાનં, ‘જીયઃ’ જીવઃ=જીવનં, ‘ધમ્મ’ ધર્મઃ=કુલજાત્યાદિલક્ષણઃ,
‘અર્થ’ અર્થઃ=ધનં, ‘કામ’ કામાઃ=શબ્દાદયઃ ઇત્યેતેષાં હેતોઃ=કારણાત્ ‘સવસા’
સ્વવસાઃ=સ્વાધીનાઃ સન્તઃ, ‘અવસા’ અવસાઃ=પરાધીનાઃ-પરનિર્દેશવર્તિનઃ,
‘અદ્દાપ’ અર્થાય=પ્રયોજનાય ‘અણદ્દાપ’ અનર્થાય-અપ્રયોજનાય-નિરર્થકમિત્યર્થઃ

રૂપ ચક્ષુઓ પર અજ્ઞાન કા પદા પડા હુઆ હૈ । ઓર (દારુણમર્ઝ) જિનકે
પરિણામ અત્યંત ક્રૂર બન ચુકે હૈં એસે પ્રાણી (સત્તપરિવર્જિજ) બલ-
હીન દીન (સત્તે) પૃથિવ્યાદિક જીવોં કી (ઉવહ્ણન્તિ) વિરાધના કરતે
હૈં-વહ વિરાધના કિસ કારણ સે કરતે હૈ સો કહતે હૈ (ક્રોહા, માણા,
માયા, લોભા, હાસા, રત્તિ, અરત્તિ, સોય) ક્રોધ, માન, માયા, લોભ,
હાસ્ય, રત્તિ, અરત્તિ, શોક સે કરતે હૈં । અર્થાત્ इन परिणामो से
युक्त होकर हिंसक पृथिवी आदिक जीवों की हिंसा करते हैं ।
કિસલિયે કરતે હૈ ? (વેયત્થ જીયધમ્મત્થકામહેજ્ઞ) વેદાર્થ, જીવન, ધર્મા-
ર્થકામ કે લિયે કરતે હૈં, યહાં હેતુ શબ્દ કા સંબંધ પ્રત્યેક કે સાથ મેં
કર લેના ચાહિયે-વેદાર્થ વેદોક્ત અનુષ્ઠાન કે લિયે, જીવન કે લિયે, ધર્મ
કે લિયે, અર્થ-ધન-કે લિયે, કામ-શબ્દાદિક પાંચોં ઇન્દ્રિયોં કે વિષયોં
કે લિયે, ઇન્હોં સઘ કારણ કલાર્પોં કો લેકર (સવસા) સ્વાધીન અથવા
(અવસા) પરાધીન હોકર (અદ્દાપ) પ્રયોજન કે લિયે અથવા (અણદ્દાપ ય)

પર અજ્ઞાનનો પદોં પડેલ છે, અને “દારુણમર્ઝ” જેમની વૃત્તિઓ અત્યંત ક્રૂર
બની ગઈ છે એવા છેવે “સત્તપરિવર્જિજ” બલહીન, દીન “સત્તે” પૃથ્વીકાય
આદિ છેવેની “ઉવહ્ણન્તિ” હુત્યા કરે છે. તે હિંસા ક્યાં ક્યાં કારણે કરે છે તે સૂચ-
કારક છે—“ક્રોહા, માણા, માયા, લોભા, હાસા, રત્તિ, અરત્તિ, સોય” ક્રોધ, માન,
માયા, લોભ, હાસ્ય, રત્તિ, અરત્તિ, શોક આદિ વૃત્તિઓથી યુક્ત થઈને હિંસક
છેવે પૃથિવીકાય આદિ છેવેની હિંસા કરે છે. શા માટે તેમ કરે છે? “વેયત્થ
જીય ધમ્મત્થકામહેજ્ઞ” વેદાર્થ, જીવન, ધર્માર્થકામને માટે તેમ કરે છે. વેદાર્થ-
વેદોક્ત ધર્મ ક્રિયાઓને માટે, જીવનને માટે, ધર્મને માટે, અર્થ-ધનને માટે,
કામ-પાંચે ઇન્દ્રિયોના વિષયને માટે, એ અર્થ કારણ સમૂહોને લીધે “સવસા”
સ્વાધીન અથવા “અવસા” પરાધીન ઇશામાં હોવાથી “અદ્દાપ” પ્રયોજનને

‘તસપાણે’ ત્રસપ્રાણાન્=દ્વીન્દ્રિયાદીન્ જીવાન્ ‘થાવરે ય’ સ્થાવરાંશ્ચ પૃથિવીકાયા-
દીન્ હિંસન્તિ=ઘનન્તિ ॥સૂ૦ ૧૯॥

ઉક્તાર્થમેવ વિશદયનાહ—‘મંદબુદ્ધિયા’ इत्यादि ।

મૂલ્મ-મંદબુદ્ધિયા સહસા હળંતિ, અવસા હળંતિ, સવસા
અવસા દુહઓ હળંતિ, અઢ્ઢા હળંતિ, અળઢ્ઢા હળંતિ, અઢ્ઢા અળઢ્ઢા-
દુહઓ હળંતિ, હસ્સા હળંતિ, વેરા હળંતિ, રતી હળંતિ હસ્સા
વેરા રતી હળંતિ । કુઢ્ઢા હળંતિ, લુઢ્ઢા હળંતિ, મુઢ્ઢા હળંતિ, કુઢ્ઢા-
લુઢ્ઢા મુઢ્ઢા હળંતિ, અત્થા હળંતિ, ધમ્મા હળંતિ, કામા હળંતિ,
અત્થા ધમ્મા કામા હળંતિ ॥ સૂ૦ ૨૦ ॥

ટીકા—‘મંદબુદ્ધિયા’ મન્દબુદ્ધિકાઃ=મિથ્યાત્વોદયાત્તત્ત્વાઽત્તત્ત્વવિવેકરહિ-
તમતયઃ, ‘સવસા’ સ્વવશઃ=સ્વતન્ત્રાઃ સન્તઃ, સ્વેચ્છયા ‘હળંતિ’ ઘનન્તિ, ‘અવસા’
અવશઃ=પરાધીનાઃ સન્તઃ ઘનન્તિ, ‘સવસા અવસા’ સ્વવશ અવશા ‘દુહઓ’ ઉભયતો
અનર્થ—વિના પ્રયોજન કે લિયે (તસપાણે) દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ
પ્રાણિયોં કી एवं (થાવરે ય) પૃથિવીકાયાદિક એકેન્દ્રિય સ્થાવર પ્રાણિયોં
કી (હિંસતિ) હિંસા કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૧૯ ॥

હસી ઉક્ત અર્થ કો વિસ્તાર સે સમજાને કે લિયે પુનઃ સૂત્રકાર
કહતે હૈં—‘મંદ બુદ્ધિયા સવસા હળંતિ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(મંદબુદ્ધિયા) મિથ્યાત્વ કે ઉદય સે તત્ત્વ ઓર અતત્ત્વ કે
વિવેક સે જિનકી બુદ્ધિ શૂન્ય હો રહી હૈં એસે પ્રાણી (સવસા) સ્વતંત્ર બનકર
અપની ઇચ્છાનુસાર ત્રસ સ્થાવર જીવોં કી (હળંતિ) હિંસા કરતે હૈં ।
હસી તરહ જો પ્રાણી (અવસા હળંતિ) નોકરી આદિ કે કારણ પરાધીન

ખાતર અથવા “અળઢ્ઢા” વિના પ્રયોજને “તસપાણે” દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોની
અને “થાવરે ય” પૃથિવીકાય આદિ એકેન્દ્રિય સ્થાવર જીવોની “હિંસતિ”
હિંસા કરે છે. ॥ સૂ. ૧૯ ॥

એ જ ઉપરોક્ત અર્થને સવિસ્તાર સમજાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—
“મંદબુદ્ધિયા સવસા હળંતિ” इत्यादि.

ટીકાર્થ—“મંદબુદ્ધિયા” મિથ્યાત્વના ઉદયથી બેમની બુદ્ધિ તત્ત્વ અને અતત્ત્વના
વિવેકથી રહિત થઈ ગઈ છે એવા જીવો “સવસા” સ્વતંત્ર હોવા છતાં પણ
પોતાની ઇચ્છાનુસાર ત્રસ સ્થાવર જીવોની “હળંતિ” હિંસા કરે છે. એ જ
પ્રમાણે જે માણસ “અવસા હળંતિ” નોકરી વગેરેને કારણે પરાધીન છે તેઓ

सुषुप्तिं दीक्षा म०२ सू० २० मन्त्रद्वयया कान्तर जीवान् ज्ञान्ति

७७

प्रन्ति, अर्थाय, अनर्थाय, तदुभयतो प्रन्ति । हास्यात् वेरात् रतेर्प्रन्ति, हास्यवैर-
रतिभ्यो प्रन्ति । किंभूताः सन्तो प्रन्ती? त्याह 'कुद्धा' इत्यादि । 'कुद्धा' कुद्धाः
=क्रोधयुक्ताः, 'लुद्धाः' लुब्धाः=विषयगृह्णाः । 'मुद्धा' मुग्धाः=मोहवशाः प्रन्ति ।

है-वे भी इन त्रस स्थावर जीवों की हिंसा करते हैं । (सवसा अवसा
दुहओ हणंति) तथा स्वतंत्र और परतंत्र दोनों प्रकार से होकर भी इन
जीवों की हिंसा करते हैं । तथा (अट्टा हणंति) ये जीव जीवों
की हिंसा प्रयोजन से करते हैं और (अणट्टा हणंति) अनर्थ-विना प्रयोजन
के निरर्थक भी करते हैं (अट्टा अणट्टा दुहओ हणंति) कोई २ ऐसे भी
जीव हैं । जो कुछ जीवों की हिंसा अपने स्वार्थ से करते हैं । और
कितनेक जीवों की हिंसा स्वार्थ न भी हो तो भी करते हैं । (हस्सा
हणंति) संसार में ऐसे भी हिंसक जीव हैं जो जीवों की हिंसा हास्य
के कारण ही कर डालते हैं, (वेरा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो
जीवों की हिंसा वैर के निमित्त को लेकर करते हैं । (रई हणंति)
कितनेक ऐसे भी हैं जो रति-आमोद प्रमोदके निमित्त को लेकर जीवों
की हिंसा करते हैं । (हस्सा वेरा रति हणंति) कितनेक जीव ऐसे भी
हैं जो एक ही साथ हास्य वैर और रति-आमोद प्रमोद के निमित्त को
लेकर जीवों की हिंसा करते हैं । वे कैसे होकर हिंसा करते हैं- (कुद्धा-
हणंति) कितनेक जीव ऐसे भी हैं जो क्रोधी होकर जीवों की हिंसा

पणુ એ ત્રસ સ્થાવર જીવોની હિંસા કરે છે. “સવસા અવસા દુહઓ હણંતિ”
તથા સ્વતંત્ર અને પરતંત્ર, બન્ને પ્રકારથી યુક્ત થઇને પણુ જીવોની હિંસા કરે
છે તથા “અટ્ટાહણંતિ” તે જીવોની હિંસા તેઓ અર્થ સકારણુ કરે છે અને
“અણટ્ટાહણંતિ” અનર્થ-અકારણુ-નિરર્થક પણુ કરે છે. “અટ્ટા અણટ્ટા દુહઓ
હણંતિ” કોઈ એવા પણુ જીવો હોય છે કે જેઓ કેટલાક જીવોની હિંસા પોતાના
સ્વાર્થને કારણુ કરે છે અને કેટલાક જીવોની હિંસા સ્વાર્થ ન હોવા છતાં પણુ
કરે છે. “હસ્સા હણંતિ” સંસારમાં એવા કેટલાક હિંસક જીવો પણુ છે કે
જેઓ જીવોની હિંસા હાસ્ય-આનંદને ખાતર જ કરે છે. “વેરા હણંતિ” કેટ-
લાક એવા પણુ જીવો છે કે જે જીવોની હિંસા વેરને નિમિત્તે કરે છે. “રઈ
હણંતિ” કેટલાક એવા પણુ જીવો છે કે જે રતિઆમોદ પ્રમોદને ખાતર જીવોની
હિંસા કરે છે “હસ્સા વેરા રત્તી હણંતિ” કેટલાક જીવો એવા પણુ છે કે જેઓ
એક સાથે હાસ્ય, વેર અને રતિ-આમોદ પ્રમોદને નિમિત્તે જીવોની હિંસા કરે
છે. તેઓ કેવી વૃત્તિથી જીવોની હિંસા કરે છે? “કુદ્ધા હણંતિ” કેટલાક જીવો

एवं 'कुद्धा लुद्धा मुद्धा' कुद्धाः लुब्धाः मुग्धाः—क्रोधलोभमोहवन्तः भवन्ति ।
 'अत्था' अर्थाः=धनार्थिनः, 'धम्मा' धर्माः=धर्मार्थिनः—जाति कुलधर्माभिमानवन्तः
 'कामा' कामाः=कामार्थिनो भवन्ति । एवं 'अत्था धम्मा कामा' अर्थ धर्मकामा-
 र्थिनो भवन्ति ॥सू० २०॥

करते हैं, (लुद्धा हणंति) कितनेक ऐसे हैं जो केवल लोभ के वशवर्ती होकर जीवों की हिंसा करते हैं, और (मुद्धा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो केवल मोहाधीन वृत्ति होकर जीवों की हिंसा करते हैं । (कुद्धा लुद्धा मुद्धा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो क्रोध, लोभ, मोह इन तीनों के वशवर्ती बनकर जीवों की हिंसा करते हैं । (अत्था हणंति) कितनेक ऐसे भी जीव हैं जो केवल धन के अर्थी होकर ही जीवों की हिंसा करते हैं, (धम्मा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो धर्मार्थी—जाति धर्म और कुलधर्म के अभिमानी होकर जीवों की हिंसा करते हैं । (कामा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो कामार्थी—इन्द्रियों के विषयों को भोगने की लालसा के वशवर्ती होकर जीवों की हिंसा करते हैं और (अत्था धम्मा कामा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो अर्थ, धर्म और काम, इन तीनों के वशवर्ती होकर जीवों की हिंसा करते हैं ।

भाવાર્થ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने हिंसा करने को विचारधारा वाले जीवों को कहा है, वे कहते हैं कि कितनेक जीव ऐसे भी हुआ

ક્રોધમાં આવીને જીવોની હિંસા કરે છે. “લુદ્ધા હણંતિ” કેટલાક કેવળ લોભને વશ થઈને જીવોની હિંસા કરે છે, “મુદ્ધા હણંતિ” કેટલાક એવા પણ લોકો હોય છે કે જે કેવળ મોહાધીન થઈને જીવોની હિંસા કરે છે. “કુદ્ધા લુદ્ધા મુદ્ધા હણંતિ” કેટલાક લોકો એવા પણ છે કે જેઓ ક્રોધ, લોભ, મોહ એ ત્રણને વશ થઈને જીવોની હિંસા કરે છે. “અત્થા હણંતિ” કેટલાક એવા પણ જીવો છે કે જે ધનને માટે જ જીવોની હિંસા કરે છે. “ધમ્મા હણંતિ” કેટલાક એવા પણ જીવો છે કે જે ધર્માર્થ—જાતિધર્મ અને કુળધર્મના અભિમાનને કારણે જીવોની હિંસા કરે છે. “કામા હણંતિ” કેટલાક એવા પણ જીવો હોય છે કે જે કામાર્થ—ઇન્દ્રિયોની વિષય લાલસાને વશ થઈને જીવોની હિંસા કરે છે, અને “અત્થા ધમ્મા કામા હણંતિ” કેટલાક એવા પણ જીવો હોય છે કે જે અર્થ, ધર્મ અને કામ, એ ત્રણને વશ થઈને જીવોની હિંસા કરે છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે હિંસા કરવાની વિચારધારાવાળા જીવો ખતાવ્યા છે. તેઓ કહે છે કે કેટલાક જીવો એવા પણ હોય છે કે જે સ્વાધીન

સુવર્ણિની ટીકા અ० ૧ સુ० ૨૦ મંદુક્યુદિયા કાન્દર જીવાન્ ખન્તિ

૭૧

અથ યદ્યપિ—ઉદ્દેશકમાનુસારેણ 'જારિસં ફલં દેહ' इति चतुर्थं फलद्वारं पूर्वं वक्तव्यं, तथापि फलस्य कर्त्रीभूतत्वेन कर्तुः प्राधान्यात्, अल्पवक्तव्यत्वेन सूची-कटाहन्यायाच्च पूर्वं 'जेविय करेति पावा पाणवहं' इति प्रथमप्राणवधद्वारस्य

કરતે હૈં જો સ્વાધીન હોને પર હિંસા કર્મ મેં રત હો જાતે હૈં । કિતનેક જીવ એસે ખી હોતે હૈં કિ જો હિંસક જીવોંની સંગતિ આદિ કે પરાધિન હોકર હિંસા કરને લગ જાતે હૈં । બહુત સે એસે ખી પ્રાણી હૈં જો અપને લિયે હિંસા કરતે હૈં ઓર બહુત સે જીવ એસે ખી હોતે હૈં કિ ઝઠતે બેઠતે ચલતે ફિરતે વિના કિસી પ્રયોજન કે ખી જીવોંની હિંસા કરતે હૈં । બહુત સે જીવ એસે ખી હૈં કિ વે ચાહે સ્વતંત્ર રહે યા પરતંત્ર રહે કિસી ખી સ્થિતિ મેં રહે પર ફિર ખી હિંસા કરને સે નહીં ચૂકતે હૈં । કોઈ જીવ કિસી દૂસરે જીવ કો વેર કે કારણ માર ઢાલતે હૈં, કોઈ અપની હંસી કરને કે કારણ માર ઢાલતે હૈં । ઓર કોઈ ૨ એસે ખી પ્રાણી હૈં જો રતિ કે કારણ-ચિત્ત સુખી મેં રહને કે કારણ-જીવોંની હિંસા-શિકાર કરતે હૈં । હત્યાદિ ઓર ખી હસી તરહ કે કારણ સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કિયે હૈં જો ઉપર અર્થ મેં કહદિયે હૈં । હનકે સિવાય દૂસરે કારણોં સે ખી હિંસા કરતે હૈં । સૂ०૨૦॥

अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि उद्देशकम के अनुसार यद्यपि "जारिसं फलं देह " यह चतुर्थ फलद्वार पहिले कहना चाहिये था तो

હોવા છતાં પણ હિંસા કર્મમાં લીન રહે છે. કેટલાક જીવો એવા પણ હોય છે કે જે હિંસક જીવોની સંગતિ આદિ પડે પરાધીન હોવાને કારણે હિંસા કરવા લાગે છે. કેટલાક એવા પણ જીવો છે કે જે સ્વાર્થને ખાતર હિંસા કરે છે, અને ઘણા જીવો એવા પણ હોય છે કે જે ઉઠતાં, બેસતાં, હાલતાં, ચાલતાં, કોઈપણ પ્રયોજન વિના જીવોની હિંસા કરે છે. ઘણા જીવો એવા પણ હોય છે કે તેઓ સ્વતંત્ર હોય કે પરતંત્ર હોય. કોઈપણ સ્થિતિમાં હોવા છતાં પણ હિંસા કરતા અટકતા નથી. કોઈ જીવ બીજા જીવોને વેરને કારણે મારી નાખે છે, કોઈ હંસી-મબકને ખાતર મારી નાખે છે, અને કોઈ કોઈ જીવો એવા પણ હોય છે કે જે રતિને કારણે-મનના આનંદને ખાતર જીવોની હિંસા (શિકાર) કરે છે. હત્યાદિ બીજાં પણ એ જ પ્રકારનાં કારણે સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કર્યાં છે, જે ઉપર ખતાવી દેવામાં આવ્યાં છે. તે સિવાય બીજાં કારણોથી પણ તેઓ હિંસા કરે છે. ॥ સૂ. ૨૦ ॥

હવે સૂત્રકાર એ સ્પષ્ટ કરે છે કે ઉદ્દેશોના ક્રમ પ્રમાણે એકે 'જારિસં

પશ્ચમમુખદ્વારમાહ—‘કયરેતે’ इत्यादि ।

મૂલ્મ-કયરે તે ? જે તે સોયરિયા મચ્છબંધા સાડણિય વાહા કૂરકમ્મા વાડરિયા દીવિય-બંધનપ્પઓગ-તપ્પગલ-જાલ-વીરહ્ણ-ગાયસદબ્બ-વમ્મુરા-કૂડછલિયાહત્થા હરિણસા ડણિયા યવિદંસ-ગપાસહત્થા વળચરગા લુદ્ધગા મહુઘાયા પોયઘાયા ણીયારા પણીયારા સરદહ-દીહિય-તલાગ-પહ્લગ-પરિગાલણ-મલણ સોતબંધન સલિલાસય સોસગા વિસગરસ્સ ય દાયગા ઉત્તળવહ્ણરદવ-ગિણિદ્વયપલીવકા કૂરકમ્મકારી ॥ સૂ૦ ૨૧ ॥

ટીકા—‘કયરે તે’ કતરે તે પ્રાણવધકર્તા? इति પ્રશ્ને સત્યુત્તરમાહ—‘સોયરિયા’ इत्यादि—‘જે તે’ યે તે ‘સોયરિયા’ સૌકરિકાઃ=સૂક્ષ્મચાતકાઃ ‘મચ્છબંધા’ મત્સ્ય-વન્ધાઃ=મત્સ્યચાતકા ધીવરાइत्यर्थः, ‘સાડણિયા’ શાકુનિકાઃ=પક્ષિવધોપજીવિનઃ,

મી ફલદ્વાર ન કહ કર જો પ્રથમપ્રાણવધ દ્વાર કા પંચમ ઉપદ્વાર કહા જા રહા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ ફલ, કર્તા કે આધીન હોને સે પહિલે કર્તા કી પ્રધાનતા રહતી હૈ, દૂસરે કર્તા કે વિષય મેં વક્તવ્ય મી અલ્પ હૈ તો સૂચી કઠાહન્યાય સે પહિલે “ સ વિ ય કરેતિ પાવા પાણા-વહં ” ઇસ પ્રથમપ્રાણવધ દ્વાર કા યહ પંચમ ઉપદ્વાર હી કહા જા રહા હૈ ‘કયરે તે’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—પ્રશ્ન (કયરે તે) પ્રાણવધ કરનેવાલે વે કૌન ૨ સે પ્રાણી હૈ ? ઉત્તર—(જે તે) વે યે ૨ હૈ—(સોયરિયા, મચ્છબંધા, સાડણિયા વાહાકૂર કમ્મા વાડરિયા) (સોયરિયા) સૌકારિક—સુઝર કી શિકાર કરને

ફલં વેહ ” એ થોથું ફલ દ્વાર પહેલાં કહેલું જોઈતું હતું, છતાં પણ ફલ દ્વારનું વર્ણન ન કરતાં પહેલાં પ્રાણવધદ્વારનું પાંચમું ઉપદ્વાર વર્ણવવામાં આવ્યું છે, તેનું કારણ એ છે કે ક્ષણ, કર્તાને અધીન હોવાથી પહેલાં કર્તાની પ્રધાનતા રહે છે અને બીજાનું કારણ એ છે કે કર્તાની આગતમાં વક્તવ્ય-કહેવાનું પણ થોડું છે, તેથી સૂચી કઠાહન્યાયે પહેલાં “ જે વિ ય કરેતિ પાવા પાણવહં ” આ પ્રથમ પ્રાણવધ દ્વારનું આ પાંચમું ઉપદ્વાર જ વર્ણવવામાં આવી રહ્યું છે—

“ કયરે તે ” इत्यादि.

ટીકાર્થ—પ્રશ્ન—“ કયરે તે ? ” પ્રાણવધ કરનારાં તે કયાં કયાં પ્રાણીઓ છે ?

ઉત્તર—“જે તે” તેઓ નીચે પ્રમાણે છે—“સોયરિયા, મચ્છબંધા સાડણિયા વાહા

સુદર્શિની ટીકા અં ૧ સૂં ૨૧ મન્દુબુદ્ધિયા કાન્તર જીવાન્ ખન્તિ ? ૮૧

‘વાહા’ વ્યાધાઃ=મૃગવાતકાઃ, ‘કૂરકમ્મા’ કૂરકર્માણઃ - દુષ્ટકર્મકારિણઃ, ‘વાઝરિયા’ વાગુરિકાઃ=વાગુરા=મૃગવન્ધનં તયા ચરન્તિ યે તે વાગુરિકાઃ=જાલેન મૃગવન્ધકાઃ, ‘દીવિય-વંશ્ણપ્પઓગ-તપ્પગલજાલ-ચીરહ્ણગાયસદ્ધમ-વગુરા-કૂઢ છલિયા હસ્થા’ દ્વીપિક વન્ધનપ્રયોગતરપ્પગલજાલ-ચીરહ્ણગાયસીદર્ભવા-યુરા કૂટહેલિકાદસ્તાઃ-‘દીવિય’ દ્વીપિકા=વ્યાધસ્ય કૃત્રિમા હરિણી યા મૃગાકર્ષણાર્થ સ્થાપ્યતે ‘વંશ્ણપ્પઓગ’ વન્ધનપ્રયોગઃ=મૃગાદિ વન્ધનોપકરણં, ‘તપ્પ’ તપ્પઃ=મત્સ્યગ્રહણીલઘુનોકા, ‘ગલં’ બહિશં=મત્સ્યવેધન કષ્ટક इत्यर्थः, ‘જાલં’ પ્રસિદ્ધં, વાલે મનુષ્ય, (મચ્છવંધા) મત્સ્યવંધ-મચ્છલિયોં કો મારને વાલે ધીવર (સાઝણિયા) શાકુનિક-પક્ષિયોંકી શિકાર કરને વાલે ચીઢીમાર, (વાહા) વ્યાધ-મૃગ કી શિકાર કરને વાલે વહેલિયાજન, (કૂરકમ્મા) કૂર કર્મા-દુષ્ટકર્મ કરને વાલે મનુષ્ય, (વાઝરિયા) વાગુરિકા-જાલ સે મૃગ કો વાંધને વાલે વાધરી લોગ, (દીવિય-વંશ્ણપ્પઓગતપ્પ-ગલ-જાલ ચીરહ્ણગાયસ-દ્ધમ-વગુરા-કૂઢછલિયા હસ્થા) દ્વીપિકા-વ્યાધ દ્વારા મૃગોં કો લુભાને કે લિયે બનાઈ ગઈ કૃત્રિમ હરિણી, વંધન પ્રયોગ-મૃગાદિ જીવોં કો વાંધને કે ઉપકરણ, તપ્પ મચ્છલી પકડુકર જિસમેં ધીવર રખતે જાતે હૈં એસી ટોકરી, અથવા મચ્છલી જિસ પર બૈઠકર પકડી જાતી હૈં એસી લઘુ નૌકા, ગલ-બહિશ, વંશી જિસકે અગ્રભાગ મેં આટા યા જીવ કા કહેવર આદિ લગાકર મચ્છીમાર ઉસે પાની મેં ઢાલ દેતે હૈં મચ્છલી જૈસે હી ઉસે યાતી હૈં તો ઉસકા વહનુકીલા અગ્ર-ભાગ ઉસકે કંઠ મેં વિધ જાતા હૈં, ઘસ મચ્છીમાર ફિર ડોરે સે વંધી

કૂરકમ્માવાઝરિયા” “સોઝરિયા”સૌકરિક-મુપરનેા શિકાર કરનારા મનુષ્યો, “મચ્છવંધા” મત્સ્યવંધ-માછલિયોને મારનાર માછીમારો, “સાઝણિયા” શકુનિક-પક્ષીઓને શિકાર કરનાર પારધિઓ “વાહા” વ્યાધ-મૃગનો શિકાર કરનાર શિકારીઓ, “કૂરકમ્મા” કુરકર્મા-દુષ્ટ કર્મ કરનારા મનુષ્યો. “વાઝરિયા” વાગુરિકા—વનમાં મૃગને ફસાવનારા વાધરી લોકો, “દીવિય, વંશ્ણપ્પઓગે તપ્પ, ઢાલ, જાલ, ચીરહ્ણગાયસ, દ્ધમ” વગુરા, કૂઢછલિયા હસ્થા” દ્વીપિકા-વ્યાધ દ્વારા મૃગોને લલચાવવાને માટે બનાવેલી કૃત્રિમ હરિણી, વંધનપ્રયોગ-મૃગાદિ છવોને વાંધવાના સાધનો, તપ્પ-મચ્છલીને પકડીને માછીમાર જેમાં મૂકે છે તે ટોપડી, અથવા જેમાં બેસીને માછલાં પકડવામાં આવે છે તે નાની નૌકા, ગલ-બહિશ, વંશી-જેના અગ્રભાગ પર લોટની કણેક કે અગસિયાં આદિ છવોનાં કહેવર લગાડીને માછીમાર તેને પાણીમાં નાખે છે, માછલી જેવું તે ખાવા બધ છે. કે તરતજ તેનો અણીદાર અગ્રભાગ તેના કંઠમાં પડેાવાઈ બધ છે.

‘ચીરલુગ’ ચીરલુક:-શ્વેનામિથો હિંસકપક્ષિવિશેષ:-યોડન્યપક્ષિવધાર્ય પાલયતે,
 ‘આયસ:’ લોહનિર્મિતબન્ધનવિશેષ:, ‘દન્ન’ દર્મ:-દર્મમયવન્ધનવિશેષ:, ‘વગુરા’
 વાગુરા=પાશ:, કૂટછેલિકા=કૂટાજા, સિંહાદિ પ્રલોભનાર્થ ચિત્રલેખ્યાદિમયી
 છગલિકા એને હસ્તે યેવાં તે તથામૂતા: । ‘હરિપ્સા’ હરિકેશ:-માતૃજ્ઞાષાઢલા
 इत्यर्थ:, ‘उणिषा य’ કુણિકાશ્ચ તત્સેવકા: ‘વીદંસગપાસહત્યા’ વીતંસકપાશહસ્તા:
 =વીતંસકા:=મૃગપક્ષિવન્ધનસાધનાનિ, પાશાશ્ચ, તે હસ્તે યેવાં તે વીતંસકપાશહ-
 સ્તા:, ‘વણચરગા’ વનચરકા:=કિરાતા:, ‘લુદ્ધગા’ લુધ્ધકા:=વ્યાધા:, ‘મદુઘાયા’

हुई इस वंशी को तान लेते हैं, बिभी हुई मछली इसी के साथ बाहर निकल आती है और मच्छीमार इसे पकड़ लेते हैं। जाल-मछली आदि पकड़ने की एक प्रकार की जाल, चीरलुक-हिंसकपक्षिविशेष यह पक्षी अन्य पक्षियों को मारने के लिये शिकारियों द्वारा पाला जाता है, आयस लोह का बना हुआ बंधन विशेष, दर्म-दर्ममय बंधन विशेष, वागुरा-पाश, कूट छलिका-बनावटी बकरी जो सिंहदि जानवरों को लुभाने के लिये बनाकर रखी जाती है, ये सब जिनके हाथों में हैं ऐसे प्राणी। इस सब प्राणीवध के कर्त्ता जानना चाहिये। तथा (हरिपसा) हरिकेश-चाण्डाल, (उणिषा) कुणिक-चाण्डाल के सेवकजन, (वीदंसगपासहत्या) वीतंसक-मृग एवं पक्षियों के बांधने का साधन और पाश जिनके हाथ में हैं ऐसे (वणचरगा) किरात। ये भी प्राणवध के करने वाले माने गये हैं। (लुद्धगा) लुध्धक-व्याध, (मदुघाया) मधुघातक-

ત્યાજાદ માછીમાર દોરીથી બાંધેલી તે બળને બેંચી લે છે, તેમાં ચોટી ગયેલી માછલીઓ તેની સાથે જ બહાર નીકળી આવે છે અને માછીમાર તેને પકડી લે છે. બળ-માણસાં આદિ પકડવાની એક પ્રકારની બળ, ચીરલુક-એક હિંસક પક્ષીનું નામ, તે પક્ષી બીજાં પક્ષીઓને મારવાને માટે શિકારીઓ વડે પળાય છે. આયસ-લોહનું બનાવેલું એક બળતું બંધન, ‘દન્ન’ દર્મનું એક બળતું બંધન, વાગુરા-પાશ, કૂટછલિકા-તકલી બકરી કે જે સિંહ આદિ જાનવરોને લલચાવવા માટે બનાવીને રાખવામાં આવે છે, એ સઘળી ચીજો જેમના હાથમાં છે તેવા સઘળા જીવો પ્રાણવધ કરનારા હોય છે. તથા “હરિપ્સા” હરિકેશ-ચાંડાળ, “ઉણિષા” કુણિક-ચાંડાળના સેવકો, “વીદસગપાસહત્યા” વીતંસક-મૃગ અને પક્ષીઓને બાંધવાનું એક સાધન અને પાશ જેના હાથમાં છે એવા “વણચરગા” કિરાત વગેરે પ્રાણવધ કરનારા મનાય છે. “લુદ્ધગા” લુધ્ધક-વ્યાધ, “મદુઘાયા” મધુ ઘાતક-મધ લેવાને માટે જે

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૧ સુ. ૨૧ મન્દબુદ્ધિયા કાનર જીવાન્ જનન્તિ ? ૮૩

મધુઘાતાઃ=‘મધુ’ ગ્રહણેન તન્મશિકા ઘાતકાઃ ‘પોયઘાયા’ પોતઘાતા=પક્ષિશિશુ-
 હિંસકાઃ ‘एणीयारा’ एणीचारा-एणी=हरिणीं चारयन्ति=पालयन्ति अन्यान्
 मृगान् शृहीतुं ये ते एणीचाराः, ‘पएणीयारा’ प्रैणीचाराश्च व्याधविशेषा एव ।
 ‘सरदहदीहियतलागपल्लपरिगालणमलणसोत्तबंधणसलिलासयसोसगा’ सरोद्रह
 दीर्घिका तडाग पल्ल परिगालन मलन स्रोतोबन्धन सलिलाशयशोषकाः, तत्र-
 सरः=सामान्यजलाशयः, ह्रदः=अगाधजलाशयः, दीर्घिका=वापी, तडागः=प्रसिद्धः,
 पल्लवं=अल्पसरः, एतेषां परिगालनेन=मत्स्यादि ग्रहणाय जलनिस्सारणेन, मल-
 नेन=मन्थनेन, स्रोतोबन्धनेन=जलप्रवाहनिरोधेन च ‘सलिलाशयान्=जलाशयान्
 शोषयन्ति ये ते तथाभूताः, विसगरस्सय’ विषगरस्य च-विषं=प्रसिद्धं, गरः=
 संयोगजनितं विषं, तयोः समाहारे तस्य ‘दायगा’ दायकाः जीवोपघातार्थं विष-

મધુ-શહદ કો લેને કે લિયે જો મધુમક્ષિયોં કા ઘાત કર દેતે હૈં વે,
 (પોયઘાયા) પોતઘાતક-પક્ષિયોં કે વચ્ચોં કો મારને વાલે, તથા(एणी-
 यारा) જો મૃગોં કો પકડને કે અભિપ્રાય સે મૃગી-હરિણીં કો પાલતે હૈં
 વે, તથા (पएणीयारा) જો પ્રૈણીચાર-વ્યાધવિશેષ હોતે હૈં વે, તથા-
 (सर-दह-दीहिय-तलाग-पल्ल-परिगालण-मलण-सोत्तबंधण-सलि-
 लासयसोसगा) જો સર સામાન્ય જલાશય, દ્રહ-અગાધજલાશય,
 दीर्घिका-वापी, तडाग, पल्ल-छोटाजलाशय, इनके जल को मत्स्यादि
 ग्रहण करने के अभिप्राय से जो निकाल देते हैं, तथा इनके जल का जो
 मन्थन-विलोडन करते हैं, अथवा इनमें जिन स्रोतों से जल आता है
 उन्हें बंद कर देते हैं, इस तरह से जो सलिलाशयों को सुखा देते हैं व,
 तथा (विसगरस्स य दायगा) विष-हलाहल जहर, गर-संयोग जनित

મધમાખીઓની હિંસા કરે છે તે, “ પોયઘાયા ” પોત ઘાતક-પક્ષીઓનાં અન્યાને
 મારનારા તથા- “ एणीयारा ” જે મૃગોને પકડવાને માટે મૃગી-હરિણીને પાળે
 છે તે લોકો, તથા “ पएणीयारा ” જે પૈણીચાર-એક પ્રકારના વ્યાધ-હોથ છે
 તે, તથા “ सर, दह, दीहिय, तलाग, पल्ल, परिगालण, मलण, सोत्तबंधण,
 सलिलासयसोसगा ” જે સર-સામાન્ય જળાશય દ્રહ-અગાધ જળાશય, दीर्घिका-
 वाप, तडाग, पल्ल-नातुं जलाशय, वगेरेना पाणीने माछां वगेरे अडणु
 કરવાના હેતુથી બહાર કાઢી નાખે છે. તથા તેના જળાતું ને મન્થન કરે છે.
 અથવા તેમાં જે સ્રોતો દ્વારા પાણી આવતું હોય તે સ્રોતોને બંધ કરી દે છે.
 આ રીતે જે લોકો જળાશયોને સૂકવી નાખે છે.તે લોકો તથા “ विसगरस्स य
 दायगा ” विष-હળાહળ એર, गर-સંયોગ-जनित विष आदि श्रवणे मारी

પ્રયોગકર્તાર્થઃ । ‘ઉત્તપ્તવહ્નરદ્વગ્નિણિદ્યપલીવગા’ ઉત્તપ્તવહ્નરદ્વગ્નિ-
નિર્દયપ્રદીપકાઃ-ઉત્તપ્તાનાં=વર્ધિતતૃણાનાં વનનાં, વહ્નરાણાં=ગહનવનનામરણ્યક્ષે-
ત્રાણાં વા, દ્વાગ્નિના=દાવાનલેન નિર્દયં=દયારહિતં યથાસ્યાતથા પ્રદીપકાઃ=
પ્રજ્વાલકાઃ, ‘કૂરકમ્મકારી’ કૂરકર્મકારિણઃ=કઠોરકર્મકર્તારઃ ધાતકાઃ ધ્વનન્તિ=
પ્રાણવધં કુર્વન્તીતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ ॥સૂ.૦૨૧॥

તાનેવ જાતિનિર્દેશપૂર્વકં વર્ણયતિ-‘ઇમેય વહવે’ इत्यादि ।

મૂલમ્-इमेय वहवे मिलक्खुजाईया, के ते ?, सक-जवण-
सवर-बब्बर-काय-मरुंडो-द-भटग-तित्थिय-पक्कणिय-कुलक्ख-गोड-
सिंहल-पारस-कोबंध-दविल-विछल-पुलिंद-अरोस-डोंब-पक्कण-गंध
हारग-बहलिय-जल्ल-रोम-मास-बउस-मलया-चुंचुया-य चूलियग-
कोंकणग-कणग-लेय-मेया-पणहव-मालव-महुर-आभासिय-अणक्ख
चीण-लासिय-खस-खासिया-नेट्टर-मरहट्ट-मुट्ठिअ-आरब-डोबिलग
कुहण-केकय-ट्टण-रोमग-रु-मरुया-चिलायविसयवासी य
पावमइणो ॥ सू० २२ ॥

टीका—इमेय’ इमे च-अनुपदं वक्ष्यमाणाः ‘वहवे’ वहवः ‘मिलक्खुजाईया’
म्लेच्छजातीयाः=अनार्याः सन्ति । ‘किं ते?’ के ते ? इत्याह-‘सके’ स्यादि ।

विष, इन्हें जो जीवों को मारने के अभिप्राय देते हैं वे, तथा (उत्तप-
वह्णर-द्वग-निद-पलीवगा) जो निर्दय होकर उत्तपों को-वर्धित-
तृणवाले वनों को वह्णरों को गहनवनों को अथवा अरण्य के खेतों को
दावानल से जला देते हैं वे सब (कूरकम्मकारी) कूरकर्मकारी माने
गये हैं और ऐसे प्राणी ही प्राणवध के करनेवाले होते हैं ॥सू.०२१॥

સૂત્રકાર इन्हीं प्राणियों को जाति निर्देश पूर्वक वर्णन करते हैं—

નાખવાને માટે જેઓ તેમને ખવડાવે છે તેઓ તથા ‘ઉત્તપ-વહ્નર, દ્વગ્નિ,
ણિદ્ય પલીવગા’ જે નિર્દય થઈને ઉત્તપોને વર્ધિત તૃણવાળાં વનોને, વહ્ન-
રોને, ગહન વનોને, અથવા વનનાં ક્ષેત્રોને દાવાનલ લગાડીને સળગાવે છે તે
બધાને “કૂરકમ્મકરી” કૂરકર્મ કરનારા માનવામાં આવે છે અને તેવા છવોજ
પ્રાણુવધ કરનાર છે ॥ સૂ. ૨૧ ॥

સૂત્રકાર એજ પ્રાણીઓનું જાતિના નિર્દેશ સહિત વર્ણન કરે છે “इमेय

सुशशिनीटीका अ.१ सू. २२ जातिनिर्देशपूर्वकम् मन्दबुद्धिया कान् २ जीवान् जनन्ति? ८५

‘सक’ शकाः=शकदेशोत्पन्नाः, ‘जवण’ यवनाः=मसिद्धाः, ‘सवर’ शवराः=शवर-देशोत्पन्नाः भिलाः ‘बव्वर’ बर्वराः=बर्वरोऽनादेशविशेषस्तत्र भवा बर्वराः ‘काय’ कायाः=कायदेशविशेषोद्भवाः ‘मरुंड’ मुरुण्डाः=मुरुण्डदेशीयाः, ‘उदाः’ अनार्यविशेषाः ‘भडग’ भटकाः=भटकदेशवासिनः ‘तित्तिय’ तित्तिकाः=तित्तिक-देशजाताः, ‘पक्कणिय’ पक्कणिकाः=तदेगजाताः, ‘कुलक्ख’ कुलक्षाः=अनार्य-देशोद्भवाः, ‘गोड’ गौडाः=गौडदेशोत्पन्नाः, ‘सिंहल’ सिंहलाः=सिंहलद्वीपो-त्पन्नाः, ‘पारस’ पारसाः=पारसदेशजाताः, ‘कौंच’ कौञ्चाः=कौञ्चदेशोद्भवाः, ‘अंध’ आन्धाः=अन्धदेशोत्पन्नाः, ‘दविल’ द्राविडाः=द्रविडदेशजाताः, ‘बिल्लल’ बिल्वलाः

‘इमे य बहवे मिलक्खुजाईया’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(इमे य) अनुपद वक्ष्यमाण ये (बहवे) बहुत से (मिलक्खु जाईया) म्लेच्छ-जातीय-अनार्य हैं । (किते?) वे कौन २ हैं

उत्तर—(सक) शक-शक देशवासी, (जवण) यवन-प्रसिद्ध है, (सवर) शवर-शवर देशोत्पन्न भील, (बव्वर) बव्वर-बर्वर नाम के अनार्यदेश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (काय) काय-इस नाम के देश विशेष में जन्मे मनुष्य, (मरुंड) मुरुण्ड-मुरुण्डदेश में पैदा हुए मनुष्य, (उद) उद-इस जाति के अनार्य मनुष्य, (भडग) भटक-भटक देशनिवासी मनुष्य, (तित्तिय) तित्तिय-तित्तिक देश के मनुष्य, (पक्कणिय) पक्कणिक-देश के मनुष्य, (कुलक्ख) कुलक्ख-कुलक्षनाम के अनार्यदेश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (गोड) गौड-इस जाति के मनुष्य, (सिंहल) सिंहल-सिंहल द्वीप में उत्पन्न हुए मनुष्य, (पारस) पारस-पारस देश में उत्पन्न हुए

बहवे मिलक्खुजाईया ” इत्यादि.

टीकार्थ—“इमेय” नीचे प्रमाणेनी “बहवे” धर्णीभरी “मिलक्खु जाईया” म्लेच्छ जातो-अनार्य छे. “किं ते?” ते अनार्य जाति कयी कयी छे?

उत्तर—“सक” शक-शकदेशना रहैवासी “जवण” यवन, “सवर” शवर-शवरदेशना वतनी भील, “बव्वर” बर्वर नामना अनार्य देशना वतनीयो, “काय” ओ नामना देशमां जन्मेला मनुष्य, “मरुंड” मुरुण्ड-देशमां जन्मेला लोक, “उद” ओ जातिना अनार्य लोक, “भडग” भटक देशना रहैवासी, “तित्तिय” तित्तिक देशना वतनी, “पक्कणिक” पक्कणिक देशना लोक, “कुलक्ख” कुलक्ष नामना अनार्य देशना लोक, “गोड” गौड जातिना लोक, “सिंहल” सिंहल-सिंहलद्वीपना लोक, “पारस” पारस-पारस (इरान)मां जन्मेला लोक,

बिल्वलदेशोद्भवाः, 'पुलिद' पुलिन्दाः-पुलिन्ददेशोत्पन्नाः, 'अरोस' अरोषाः= अरोषदेशजाः, 'डौव' डौवाः=डोम्बदेशोद्भवाः, 'पोक्कण' पोक्कणाः पोक्कणदेश-भवाः, 'गंधहारग' गन्धहारकाः=गन्धारदेशजाताः, 'बहलिय' बहलिकाः=बहलीदेशोद्भवाः, जल्लाः-रोमाः मासाः 'बउस' बकुशाः मलयाः 'चुंचुयाय' चुंचुकाश्च, 'चूलियग' चूलिकाः 'कौकणग' कौकणकाः 'कगग' कनकाः 'सेय' सयाः 'मेया' मेदाः, 'पण्व' पण्डवाः, 'मालव' मालवाः 'महुरा' मधुराः, 'आमासिय' आभाषिकाः, 'अणक्ख' अनक्षाः 'चीन' चीनाः 'लासिय' लासिकाः खसाः 'खासिय' खासिकाः 'नेहुर' निष्ठुराः 'मरहट्ट' महाराष्ट्राः 'मुट्ठिअ' मौष्टिकाः, 'आरवाः' 'डोविला' 'डोविलकाः, कुण्णाः केकयाः, ह्णाः, 'रोमग' 'रोमकाः 'रु' रुतः 'मरुया' मरुकाः, 'जल्लाः' इत्यारभ्य मरुकपर्यन्ताः, एतेऽपि तत्तन्नामक स्लेच्छदेशविशेषोद्भवाः, 'चिलाय

मनुष्य, (कौंच) कौच-कौंच देशमें उत्पन्न हुए मनुष्य, (अंध) आंध्र-आंध्रदेश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (दविल) द्राविड-द्राविडदेश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (बिल्लल) बिल्वल-इस नाम के देशमें उत्पन्न हुए मनुष्य, (पुलिंद) पुलिंद-पुलिंददेश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (अरोस) अरोष-अरोषदेशज (डौव) डौव-डोम्ब देशोद्भव मनुष्य, (पोक्कण) पोक्कण-पोक्कण नाम के देश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (गंध) गन्धहारक-गन्धार देश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (बहलिय) बहलिय-बहली नाम के देश में उत्पन्न हुए मनुष्य, इसी तरह (जल्ला) रोम, मास, बकुश, मलय, चुंचुक, चूलिक, कौकणक, कनक, सेय, मेद, पण्डव, मालव, मधुर, आभिषक, अनक्ष, चीन, लासिक, खस, खासिक, निष्ठुर, महाराष्ट्र, मौष्टिक, आरव, डोविलक, कुणह, केकय, ह्ण, रोमक, रु, और मरुक, ये सब उस उस नाम के स्लेच्छ देशविदेश में उत्पन्न हुए मनुष्य हैं। तथा (चिलाय-

“कौंच” कौंच-कौंच देशमां जन्मेवा लोको, “अंध” आंध्र-आंध्र देशमां जन्मेवा लोको, “दविल” द्राविड-द्राविड देशमां जन्मेवा लोको, “बिल्लल” बिल्वल-ते नामना देशमां जन्मेवा लोको, “पुलिंद” पुलिंद-पुलिंद देशना लोको, “अरोस” अरोष-अरोष देशमां जन्मेवा, “डौव” डोम्ब-डोम्ब देशमां जन्मेवा, “पोक्कण” पोक्कण- देशनां लोको, “गंध” -गन्धार देशमां जन्मेवा लोको, “बहलिय” बहलिक-बहली देशमां उत्पन्न ध्येव लोको, जेव रीते “जल्ला” रोम, मास, बकुश, मलय, चुंचुक, कौंकलुक, कनक, सय, मेद, पण्डवलु, मालव, मधुर, आभाषिक, अनक्ष, चीन, लासिक, खस, खासिक, निष्ठुर, महाराष्ट्र, मौष्टिक, आरव, डोविलक, कुण्डलु, केकय, ह्ण, रोमक, रु, अने मरुक ते अथा ते ते देशमां जन्मेवा लोको छे. तथा, “चिलाय वि सयवालो य” चिलाय

સુવર્ણિની ટીકા મં ૧ સૂં ૨૨ કે કે જીવા પાપં કુર્વન્તિ !

૮૭

વિસયવાસી ય ' ચિલાત વિષયવાસિનશ્ચ, ચિલાતદેશવાસિનોઽનાર્યાઃ, ' પાવમ-
હ્ણો ' પાપમતયઃ=પાપબુદ્ધયઃ સન્તિ ॥ સૂં ૨૨ ॥

પુનરપિ કેકે જીવાઃ પાપં કુર્વન્તીતિ તાન્ દર્શયિતુમાહ—'જલચર' इत्यादि।

મૂલ્મ—જલચર—થલચર—સળખ્ફચર—ઓરગ—સ્વહચર—સંઢાસ-
તોંડ—જીવોવધાયજીવી સળખી ય અસળખિણો પજ્જત્તે અપજ્જત્તે
ય—અસુખલેસ્સ પરિણમે ણ્ણ અળ્ણે ય ઇવમાઈ કરેતિ પાળા-
ઇવાયકરણં। પાવાપાવાભિગમાઃ પાવમઈ પાવરુઈ પાળવહકચરઈ
પાળવહરૂવાણુટ્ટાણા પાળવહકહાસુ અભિસ્મંતા તુટ્ટા પાવં
કરેત્તુ ટુંતિય ચટ્ટુપ્પગારં ॥ સૂં ૨૩ ॥

ટીકા—' જલચર—થલચર—સળખ્ફઓરગ—સ્વહચર—સંઢાસતોંડ જીવોવધાય-
જીવી ' જલચર સ્થલચર સનસ્વપદોરગ—સ્વચર સંદંશતુળ્લ જીવોવધાતજીવિનઃ=
જલચરાઃ=ગ્રાહાદયઃ, સ્થલચરાઃ=ચતુષ્પદાઃ, સનસ્વપદાઃ=નસ્વયુક્તચરણાઃ=વ્યા-

વિસયવાસી ય) ચિલાત દેશવાસી મનુષ્ય, એ સવ અનાર્ય હૈં (પાવમ-
હ્ણો) इनकी बुद्धि पापकर्म में रत रहती है। ये जितने भी नाम के
कहे हैं वे सब पापकर्म में रतमतिवाले हैं और ये प्राणवध के
करने वाले हैं ॥ સૂં ૨૨ ॥

અથ સૂત્રકાર ફિર યહ કહતે હૈં કિ કૌન૨ સે જીવ પાપ કરતેહૈં—
' જલચર થલચર ' इत्यादि।

ટીકાર્થ—(જલચર) ગ્રાહ આદિ જલચર જીવ, (થલચર) ચતુષ્પદ—ગાય,
ભેંસ, આદિ ચાર પદ વાલે સ્થલચર જીવ. (સળખ્ફચર) નસ્વયુક્ત પૈરોવાલે

દેશવાસી મનુષ્ય, એ સળખી અનાર્ય પ્રજાઓ છે. અને " પાવમહ્ણો "
તેમની બુદ્ધિ પાપકર્મમાં લીન રહે છે. આ જે જે ભતિઓ બતાવી છે
તે ભતિઓના લોકો પાપકર્મમાં રત—લીન ભતિવાળા હોય છે અને તેઓ
પ્રાણવધ કરનારા હોય છે. ॥ સૂ. ૨૨ ॥

હવે સૂત્રકાર ફરીથી એ બતાવે છે કે કયા કયા જીવો પાપ કરે છે
" જલચર થલચર " इत्यादि.

ટીકાર્થ—" જલચર " ગ્રાહ આદિ જલચર જીવ, " થલચર " ચતુષ્પદ—ગાય, ભેંસ
આદિ ચોપગા સ્થળચર જીવો, " સળખ્ફચર " નહોતર યુક્ત પગવાળા વાઘ આદિ

ઘ્રાદયઃ, ઉભ્યાઃ=સર્પાઃ, સ્વચરાઃ-પશ્ચિનઃ શ્યેનાદયઃ, સંદંશતુળ્કાઃ=સંદંશમિવ-
તુળ્કો યેષાં તે સંદંશતુળ્કાઃ=ઢઢકઢઢાદિ પશ્ચિનઃ, एषां ઢ્ઢ્ઢસ્તતઃ તે ચ તે 'જીવો-
પચાતેન=જીવર્હિમયા જીવન્તિ - ઇતિ, જીવોપચાતજીવિનશ્ચેતિ તથોક્તાઃ।
'સણ્ણીય' સંજ્ઞિનશ્ચ 'અસણ્ણિણો' અસંજ્ઞિનઃ 'પજ્જત્તે અપજ્જત્તે ય' પર્યાપ્તા
અપર્યાપ્તાશ્ચ=સર્વે જીવા-પર્યાપ્તા અપર્યાપ્તાશ્ચેતિ દ્વિવિધા ભવન્તિ તત્ર પર્યાપ્તયો
વિદ્યન્તે યેષાં તે પર્યાપ્તાઃ પર્યાપ્તનામકર્મોદયાત્ પર્યાપ્તિયુક્તા જીવાઃ, તે
દ્વિવિધાઃ લઘ્વિપર્યાપ્તાઃ, કરણપર્યાપ્તાશ્ચ। યે સર્વા અપિ પર્યાપ્તીઃ પૂરણિત્વા
મ્નિયન્તે ન તતઃ પ્રોક્તે તે લઘ્વિપર્યાપ્તાઃ, યે પુનઃ શરીરેન્દ્રિયાદોનિ કરણાનિ

વ્યાઘ્ર આદિ જીવ (ઓરગ) ઊરગ-છાતી કે સહારે ચલને વાલે સાંપ,
(સ્વહયર) શ્યેન આદિ પક્ષી સ્વચર જીવ (સંદંશતોંડ) સંદંશ-સંઢાસી
કે જૈસે મુલવાલે ઢંક કંક આદિ પક્ષી (જીવોવઘાયજીવી) યે સઑ
જીવોં કી હિંસા કરકે અપના જીવન નિર્વાહ કરને વાલે હૈં। તથા
(સણ્ણીય) જિનકે મન હૈં ઇસે સંજી પંચેન્દ્રિય જીવ ઔર (અસણ્ણિણો)
જિનકે મન નહીં હૈં ઇસે અસંજી પંચેન્દ્રિય જીવ, યે સઑ પાપ કરકે
પ્રસન્ન હોતે હૈં। જલચર સે લેકર અસંજી પર્યન્ત કે જિતને ભી જીવ
હૈં સઑ (પજ્જત્તે અપજ્જત્તે ય) પર્યાપ્ત ઔર અપર્યાપ્ત હોતે હૈં। પર્યાપ્ત
નામકર્મ કે ઉદય સે જિનકી અપનીર યોગ્ય પર્યાપ્તિયાં પૂર્ણ હો જાતી
હૈં વે પર્યાપ્ત જીવ હૈં, ઔર જિનકી પર્યાપ્તિયાં પૂર્ણ નહીં હોતી હૈં વે અપર્યાપ્ત
જીવ હૈં। યે પર્યાપ્ત જીવ લઘ્વિપર્યાપ્ત ઔર કરણપર્યાપ્ત કે ભેદ સે દો
પ્રાકાર કે હોતે હૈં। જો સમસ્ત પર્યાપ્તિયોં કો પૂરણ કરકે હી મરતે હૈં

અવો, “ઓરગ” ઊરગ-પેટે ચાલનારા સાંપ. “સ્વહયર” બાજ આદિ નભ-
ચર પક્ષી, “સંદંશતોંડ” સંદંશ-સાણસીના જેવાં મુખવાળાં ઢંક, કંક આદિ
પક્ષીઓ. “જીવોવઘાયજીવી” એ બધા અવોની હિંસા કરીને પોતાનો અવન
નિર્વાહ કરનારા અવો છે. તથા “સણ્ણીય” જેમને મન છે એવા સંજી પંચે-
ન્દ્રિય અવ, અને “અસણ્ણિણો” જેમને મન નથી એવા અસંજી પંચેન્દ્રિય
અવ, એ બધા પાપ કરીને પ્રસન્ન થાય છે. જળચરથી લઈને અસંજી મુખીના
આ જેટલા અવ છે તે બધા “પજ્જત્તે અપજ્જત્તે ય” પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત
હોય છે. પર્યાપ્ત નામકર્મના ઉદયથી જેમની પોતા પોતાની યોગ્ય પર્યાપ્તિયો
પૂર્ણ થઈ જાય છે તેમને પર્યાપ્ત અવો કહે છે. અને જેમની પર્યાપ્તિયો પૂર્ણ
થતી નથી તે અવોને અપર્યાપ્ત અવો કહે છે. પર્યાપ્ત અવોના બે ભેદ છે.

(૧) લઘ્વિ પર્યાપ્ત (૨) કરણપર્યાપ્ત જે અવો સમસ્ત પર્યાપ્તિયો પૂરી કરીને

સુદર્શિનો ટીકા અ૦ ૧ સ્ક૦ ૨૩ કે કે જીવા પાપં કુર્વન્તિ ?

૯૧

નિર્વર્તિતવન્તસ્તે કરણપર્યાપ્તાઃ । તદિતરે-અપર્યાપ્તાઃ । ‘અસુમ્ભેસ્સપરિણામે’ અશુમ્ભેદય પરિણામાઃ=અશુમ્ભેદયાઃ=સંકલ્પલેદયાયુક્તાઃ પરિણામાઃ=અધ્યવસાય યેષાં તે, એતે પૂર્વોક્તાઃ ‘અળે ય’ અન્યે ચ=અન્યેઽપિ ‘એવમાઈ’ એવમાદયઃ= એવાદયાઃ પ્રાણિનઃ, ‘પાણાદવાયકરણં’ પ્રાણાતિપાતકરણં=પ્રાણાતિપાતાનુષ્ઠાનં ‘કરેતિ’ કુર્વન્તિ, ધુનરપિ તદેવાહ-‘પાવા’ इत्यादि-‘પાવા’ પાપાઃ=પાપકર્મ-તત્પરાઃ, ‘પાવાભિગમા’ પાપાભિગમાઃ=પાપમેવ અભિગમઃ=સ્વીકારો યેષાં તે તથા ‘પાવમઈ’ પાપમતયઃ=પાપવુદ્ધયઃ, ‘પાવરુઈ’ પાપરુચયઃ=પાપે એવ રુચિ=રતુ-રાગો યેષાં તે તથા, ‘પાણવહકયરઈ’ પ્રાણવધકૃતરતયઃ=પ્રાણવધે કૃતા-રતિઃ=પીતિર્યસ્તે તથા, ‘પાણવહરુવાણુદ્વાણા’ પ્રાણવધરૂપાનુષ્ઠાના=પ્રાણવધરૂપમનુષ્ઠાનં

હસકે પહિલે નહીંવે લબ્ધિપર્યાપ્તિ જીવ હૈં । તથા જો જીવ શરીર ઇન્દ્રિય આદિ કરણોં કી રચના કો પૂર્ણ કર ચુકતે હૈં યે કરણપર્યાપ્તિ હૈ । ઇનસે ભિન્ન જો જીવ હૈં વે અપર્યાપ્તિ હૈં તથા (અસુમ્ભેસ્સપરિણામે) જિન જીવોં કો અધ્યવસાય-પરિણામ-સંકલ્પિત લેદયાયુક્ત હૈં (‘એ’ યે તથા (અળે ય એવમાઈ) ઇનસે ભિન્ન ઔર ‘મી’ એસે હો પ્રાણી (કરેતિપાણાદવાય કરણં) પ્રાણાતિપાતરૂપ પાપ કે કરને વાલે હોતે હૈં । ઇસી વાત કો સૂત્રકાર “પાવા” इत्यादिपदों द्वारा प्रकट करते हैं (पावा) जो पापकर्म करने में तत्पर हैं, (पावाभिगमा) पाप प्रवृत्ति ही जिन्हें स्वीकृत है, (पावमई) जिनकी बुद्धि पापमय हो रही है, (पावरुई) पापकर्म में जिनकी रुचि अधिक से अधिक रूप में सजग रहती है, (पाणावहकयरई) प्राणवध में जिन्हें आनंद आता है (पाणावहरुवाणु-

મરે છે-તે પહેલાં મરતાં નથી, તેમને લબ્ધિ પર્યાપ્તિ હોવા કહે છે. તથા જે હોવા શરીર ઇન્દ્રિય આદિ કરણોની રચના પૂર્ણ કરી નાખે છે, તે હોવાને કરણ પર્યાપ્તિ કહે છે. તેમનાથી જે ભિન્ન પ્રકારના હોય છે તેઓ અપર્યાપ્તિ છે, તથા “અસુમ્ભેસ્સપરિણામે” જે હોવાના અધ્યવસાય-પરિણામ-સંકલ્પિત લેદયાયુક્ત હોય છે “એ” તેઓ તથા “અળે ય એવમાઈ” તે સિવાયનાં બીજાં પણ એવાં જ પ્રાણીઓ “કરેતિ પાણાદ વાયકરણં” પ્રાણાતિપાત રૂપ પાપ કરનારાં હોય છે. એજ વાતને સૂત્રકાર “પાવા” इत्यादि पदों द्वारा प्रकट કરે છે. “પાવા” જે પાપકર્મ કરવાને તત્પર હોય છે, “પાવાભિગમા” પાપ પ્રવૃત્તિ જ જમણે સ્વીકારેલી છે, “પાવમઈ” જેમની બુદ્ધિ પાપમય થઈ ગઈ છે, “પાવરુઈ” પાપકર્મમાં જ જેમની વૃત્તિ વધારેમાં વધારે ભગૃત રહે છે, “પાણવહ કયરઈ” પ્રાણવધમાં જેમને મળ આવે છે, “પાણવહરુવાણુ-

કાર્યે યેષાં તે તથા, 'પાણવહકહાસુ' પ્રાણવધકયાસુ=પ્રાણિહિંસાવાર્તાસુ=અભિરમંતા । અભિરમંતાઃ પ્રસીદન્તઃ સન્તસ્તે 'બહુપગારં' બહુપગારં નાનાવિધં 'પાવં' પાપં 'કરેતુ' કૃત્વા 'તુદ્ધા' તુદ્ધાઃ =પ્રત્યા 'હૃતિ' ભવન્તિ ॥સૂ. ૨૩॥

પૂર્વં 'જેવિય કરેતિ પાવાપાણવહં' इति प्रतिज्ञातं पश्चमं प्राणवधकर्तृद्वारं निरूपितं, सम्पत्ति 'जहयकओ जारिसं-फलं देइ' यथा च कृतः प्राणवधो यादृशं फलं ददाति इति चतुर्थं फलद्वारं प्रतिपादयन्नाह-'तस्से' इत्यादि ।

મૂલ્ય-તસ્સ ય પાવસ્સ ફલવિવાગં અયાણમાણાવહુંતિ મહામયં અવિસ્સામવેયણં દીહકાલબહુદુક્ખસંકડં નરયતિરિક્ખજોણિં । ઇઓ આઠક્ખણં ચુયા અસુમકમ્મબહુલા ઉવવજ્ઞંતિ નરણસુ દુલિયં મહાલણસુ વયરામય કુદ્ધ-રંદનિસ્સંધિ-દાર વિરહિય-નિમ્મદવ-ભૂમિતલ-સ્વરામરિસ-વિસમણિ રયધર ચારણસું

દ્વાળા) પ્રાણવધરૂપ કાર્ય કરના હી જિનકા એક અનુષ્ઠાન હૈં ઓર (પાણાવહ કહાસુ અભિરમંતા) પ્રાણિયોં કી હિંસાત્મક વાર્તાઓં મેં જિન્હેં રસ મિલતા હૈં, એસે જીવ (બહુપગારં) નાનાવિધ (પાવં કરેતુ) પાપ કરકે (તુદ્ધા) સંતુષ્ટ (હૃતિ) હોતે હૈં ।

ભાવાર્થ—જલચર, થલચર આદિ જિતને મી તિર્યંચ હૈં, એવં પક્ષી આદિ જિતને મી સેચર જીવ હૈં—ચાહે વે સંજી હો ચાહે અસંજી હો પર્યાસ હો ચાહે અપર્યાસ હો યદિ યે જીવ ઘાત કરકે અપના નિર્વાહ કરતે હૈં તો પાપી હૈં—પાપકર્મ મેં રત હૈં । જિન જીવોં કે પરિણામોં મેં અનુભલેશ્યા વર્તતી રહતી હૈં, જો પાપમય કૃત્યોં મેં આનન્દ માનતે હૈં इत्यादि प्रकार के जीव भी पापी और पापकर्म रत हैं ॥ सू. २३ ॥

દ્વાળા ” પ્રાણવધનું કાર્ય જે જેમનું એક અનુષ્ઠાન છે, અને “ પાણવહકહાસુ અભિરમંતા ” પ્રાણીઓની હિંસાત્મક વાર્તાઓમાં જેમને રસ પડે છે, એવા છેવે “ બહુપગારં ” વિવિધ “ પાવંકરેતુ ” પાપો કરીને “ તુદ્ધા ” સંતોષ “ હૃતિ ” પામે છે.

ભાવાર્થ—જળચર, સ્થળચર આદિ જે જે તિર્યંચ છે, અને પક્ષી આદિ જેટલાં જેચર (નલચર) છેવે છે, તેઓ સંજી હોય કે અસંજી હોય, પર્યાસ હોય કે અપર્યાસ હોય પણ એ તેઓ છેવેની હત્યા કરીને પોતાનો નિર્વાહ ચલાવતાં હોય તો તેઓ પાપી છે—પાપકર્મમાં રત છે. જે છેવેનાં પરિણામોમાં અનુભલેશ્યા પ્રવર્તતિ હોય છે જેઓ પાપમય કૃત્યોમાં આનંદ માનતા હોય તો, ઇત્યાદિ પ્રકારના છેવે પણ પાપી અને પાપકર્મમાં રત હોય છે ॥સૂ. ૨૩॥

सुवर्शिनी टीका अ० १ सू० २४ यादृक्कृतकर्म तथाविधफलनिरूपणम् ११

महोसिण सयापतत्त-दुग्गंधविस्स-उव्वेयजणगेसु वीभच्छदरि-
सणिज्जेसु य निच्चं हिमपडलसीयलेसु कालोभासेसु य भीम
गंभीर लोमहरिसणेसु णिरभिरामेसु निप्पडियार बाहिरोगजरा-
पालिप्पसु अईव निच्चंधयारतमिस्सेसु पइभप्पसु ववगयगह-
चंद-सूर-णक्खत्त-जोइसेसु मेयवसामंसपडल-पोच्चड-पूय-
रुहिरुक्किण्ण-विलीण-चिक्कणरसिया वावण्णकुहिय चिक्खल्लक-
दमेसु कुकूलानल-पलित्तजालमुम्मुर असिक्खुरकरवत्तधारसु
निसिय विच्छुयडंक्क निवातोवम-फरिस अतिदुस्सहेसु य अत्ताणा
असरणा कडुयदुक्खपरितावणेसु अणुवद्ध निरंतरवेयणेसु
जमपुरिससंकुलेसु ॥ सू० २४ ॥

टीका—‘तस्स य पावस्स’ तस्य च पापस्य=प्राणवधस्वरूपस्य पाप
वृक्षस्य ‘फलविवागं’ फलविपाकं—“प्राणातिपातस्य नरकनिगोदादि दुःखरूपं
कटुकफलं भविष्यतीति” पापपरिणामं, ‘अयणमाणा’ अजानन्तः पापकर्माणः
‘नरकतिर्यग्योनिं वर्धयन्ति’ इत्यग्रेण सम्बन्धः, वेदनामेव वर्णयति—‘महन्मयं’

इस प्रकार “जे वि य करेति पावा पाणवहं” यह प्रतिज्ञात पांचवां
प्राणवधकर्तृद्वारा कह दिया-अब सूत्रकार “जह य कओ जारिसं फलं
देह” यह चतुर्थ फल द्वारा कहते हैं—‘तस्स य पावस्स’ इत्यादि।

टीकार्थ—(तस्स य पावस्स) इस प्राणवधरूप पाप वृक्षका (फलंविवागं)
नरक निगोद आदि दुःखरूप कटुक फल भोगना होगा इस बात को
(अयण माणा) नहीं जानते हुए पापीष्ट जीव (नरयतिरिक्खजोणिं

आ रीते “जे वि य करेति पावा पाणवहं” ते प्रतिज्ञात पांथभां
प्राणवधकर्तृद्वारानुं विवेथन संपूर्णं थयुं. डवे सूत्रकार “जह य कओ जारिसं
फलं देह” आ चतुर्थं इत्यद्वारानुं विवेथन करे छे “तस्स य पावस्स” इत्यादि.

टीकार्थ—“तस्स य पावस्स” आ प्राणवधरूप पापवृक्षानुं “फलविवागं” नरक
निगोद आदि दुःखरूप कटुक फल भोगवत्तुं पडथे, ते बातने “अयणमाणाः”
नहीं जानुना पापी अवे “नरयतिरिक्खजोणिं बहुंति” नरक तिथंथ

इत्यादि—‘महद्भयं’ महाभयां ‘अविस्सामवेयणं’ अविश्रामवेदनां=प्रतिसमयमनुभूयमानाऽशतवेदनां, ‘दीहकालवहुदुक्खसंकडं’ दीर्घकालवहुदुःखसंकटां=दीर्घकालमभिव्याप्यवर्तमानैः बहुभिर्नानाविधैः शारीरमानसैर्दुःखैः संकटां=संकुलां, तादृशीं ‘नरयतिरक्खजोणिं’ नरकतिर्यग्योनिं=नरकेषु तिर्यक्षु च या योनिः=उत्पत्तिस्थानं तां ‘वड्ढंति’ वर्धयन्ति=तासु तासु नानाविधासु योनिवृत्त्यश्च च महावेदनामनुभवन्तीत्यर्थः । ते प्राणवधकारकाः नरकतिर्यगादि कुयोनिषु परिभ्रमणं कुर्वन्तो जन्म मरणाद्यविच्छिन्नपरम्परया यथा घोरातिघोरदुःखमनुभवन्ति तथोच्यते—‘इओ’ इत्यादि—ते प्राणवधकारकाः ‘आउक्खए’ आयुः क्षये ‘इओ’ इतः=मनुष्य भवात् ‘जुया’ च्युताः—मृताः सन्तः ‘असुभकम्मबहुला’ अशुभकर्मबहुलाः=प्राणिवधपापकर्मप्रचुराः सन्तः ‘नरएसु’ नरकेषु=वड्ढंति) नरक तिर्यच योनि को बढाते हैं जो योनि (महद्भयं) अत्यंत-भयप्रमद, एवं (अविस्सामवेयणं) प्रतिसमय अनुभूयमान अशतवेदना सम्पन्न है—तथा (दीहकाल वहुदुक्खसंकडं) जिसमें दीर्घकालतक जीव नाना प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक दुःखों को भोगा करता है । ऐसी इस विविध शारीरिक मानसिक दुःखों से संकुल नरक तिर्यच योनि को बढाते हैं । तात्पर्य इसका यह है कि जो प्राणवध करनेवाले जीव हैं वे उन २ भाना प्रकार की योनियों में उत्पन्न होकर महान् वेदनाओंका अनुभव करते रहते हैं । इस प्रकार नरक तिर्यच आदि कुयोनिओं में परिभ्रमण करते हुए वे प्राणवधकारी जीव जन्म मरण आदि की अविच्छिन्न परम्परा से जिस प्रकार घोरातिघोर दुःखों को भोगते हैं, अब सूत्रकार इसी विषय को यहां स्पष्ट करते हैं (इओ आउक्खए जुया) आयु के क्षय होने पर मनुष्यभव से मरकर प्राणवध कारक जीव

યોનિને વધારે છે, જે યોનિ “મહદ્ભયં” અત્યંત ભયપ્રદ, અને “અવિસ્સામ વેયણં” પ્રતિકાળે અનુભવાતી આશાના વેદનાથી યુક્ત છે, તથા “દીહકાલ વહુદુક્ખસંકડં” જેમાં દીર્ઘકાળ સુધી જીવ વિવિધ પ્રકારનાં શારીરિક અને માનસિક દુઃખોને લેગાવ્યા કરે છે. એવી વિવિધ શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી યુક્ત, તે નરક તિર્યચ યોનિને તેઓ વધારે છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાણવધ કરનાર જીવો ઉપરોક્ત વિવિધ યોનિઓમાં ઉત્પન્ન થઈને મહાન વેદનાઓ અનુભવે છે. આ રીતે નરક તિર્યચ આદિ કુયોનિઓમાં પરિભ્રમણ કરતાં તે પ્રાણવધ કરનારા જીવો જન્મ મરણ આદિની અત્યંત પરંપરા પૂર્વક જે જે પ્રકારનાં ભયંકરમાં ભયંકર દુઃખો લેગાવે છે, તે વિષયનું હવે સૂત્રકાર સ્પષ્ટીકરણ કરે છે “इओ आउक्खए जुया” आयुષ્યનો क्षય થતાં પ્રાણવધકારી

મુદ્રશિની ટીકા અં ૧૨૪ સૂં યાદચક્રતકર્મ તથાવિધફલનિરૂપણમ્ ૧૩

રત્નપ્રમાદિષુ ' હુલિયં ' શીઘ્રમ્ ' ઉવવજ્જંતિ ' ઉત્પન્નંતે । કયમ્ભૂતેષુ નરકેષુ ?--
 इत्याह—' महालयेसु ' महालयेषु=क्षेत्रस्थितिभ्यां महत्सु ' वयरामयकुड्डरुंद
 निस्संधिदारविरहियनिम्मइवभूमितलखरामरिसविसमणिरयघरचारएसु ' वज्रमयकु-
 डच-रुन्द्र-निस्सन्धिदारविरहितनिर्मादवभूमितलखराऽमर्शविषमनरकघरचारकेषु
 =वज्रमयकुडयानि=वज्रभित्तयः, रुन्दाः=विस्तीर्णाः, देशी-शब्दोऽयम्, विस्तीर्ण-
 वाचकः निस्सन्धयः=सन्धिरहिताः, द्वारविरहिताः=गमनागमनद्वारवर्जिताः, निर्माद-
 वभूमितलाः=कठोरतरभूमिभागाः, तथा खरामर्शाः=कठिनस्पर्शाः, विषमाः=उच्चा-
 वचाः, नरकगृहाः=नरकवासा एव चारकाः=चन्द्रिगृहाः येषु नरकेषु ते तथा तेषु,
 ' महोसिण-सयापतत्त-दुग्गन्ध-विस्स-उब्बेयजणगेसु ' महोष्णसदाप्रतप्त-दुर्गन्ध

(અસુખ કમ્મવહુલા) પ્રાણીવધજન્ય પાપકર્મ કે ખાર સે અત્યંત દુઃખ
 હોઈ (નરણસુ) રત્નપ્રમા આદિ પૃથિવ્યોં મેં (હુલિયં) શીઘ્ર હી
 (ઉવવજ્જંતિ) ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । યે નરક (મહાલયેસુ) ક્ષેત્ર તથા
 સ્થિતિ કી અપેક્ષા મહાન હૈં તથા (વયરામયકુડુરુંદનિસ્સંધિદારવિરહિય
 નિમ્મદ્વ ભૂમિતલ સ્વરામરિસવિસમણિરયઘરચારણસુ) (નિરયઘર-
 ચારણસુ) નરકાવાસરૂપચન્દ્રિગૃહ (વયરામયકુડુ) વજ્રભિત્તિવાલે હૈં ।
 (રુંદ) અત્યંત વિસ્તૃત હૈં (નિસ્સંધિ) સન્ધિ રહિત હૈં । (દારવિરહિય)
 ગમનાગમન કે સાધનભૂત દ્વાર સે હીન ઔર (નિમ્મદ્વ) મૃદુતા રહિત
 (સ્વરામરિસ) કઠોરતર (વિસમ) ઝંચે નીચે ભૂમિભાગવાલે હૈં । (મહો-
 સિણ સયાપતત્ત-દુગ્ગંધવિસ્સ-ઉબ્બેયજણગેસુ) (મહોસિણ) ફનમેં સદા
 ઉષ્ણજન્ય વેદના રહા કરતી હૈ । (સયાપતત્ત) યે નિરન્તર તાપસે વ્યાપ્ત

જીવ મનુષ્ય લવમાર્થી મરીને “ અસુખ કમ્મવહુલા ” પ્રાણીવધને કારણે ઉત્પન્ન થયેલાં પાપકર્મના કારણે અત્યંત દુઃખાચેલ એવાં તે જીવો “ નરણસુ ” રત્ન પ્રમા આદિ પૃથ્વીઓમાં “ હુલિયં ” તરત જ “ ઉવવજ્જંતિ ” ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. તે નરક “ મહાલયેસુ ” ક્ષેત્ર અને સ્થિતિની અપેક્ષાએ મહાન છે તથા “ વયરામય કુડુ રુંદ નિસ્સંધિદાર વિરહિય નિમ્મદ્વ ભૂમિતલ સ્વરામરિસવિસમ ણિરયઘર ચારણસુ ” “ નિરયઘરચારણસુ ” નરકાવાસરૂપ અન્તિગૃહ “ વયરામય કુડુ ” વજ્રની દિવાલોવાળાં છે, “ રુંદ ” અત્યંત વિસ્તૃત છે, “ નિસ્સંધિ ” અન્ધિરહિત છે. “ દારવિરહિય ” અથર જથર માટેનાં દ્વારોથી રહિત છે, અને “ નિમ્મદ્વ ” મૃદુતાથી રહિત “ સ્વરામરિસ ” કઠોરમાં કઠોર “ વિસમ ” ઊંચા નીચા ભૂમિ ભાગવાળાં છે. “ મહોસિણ સયાપતત્ત-દુગ્ગંધવિસ્સ-ઉબ્બેયજણગેસુ ” “ મહોસિણ ” તેમાં સદા ઉષ્ણતા જન્ય વેદના રહ્યા કરે છે, “ સયાપતત્ત ”

-વિશ્રોદ્વેગજનકેષુ તત્ર મહોષ્ણાઃ=અત્યન્તોષ્ણાઃ, સદા પ્રતપ્તાઃ=નિરન્તરતાપયુક્તાઃ, દુર્ગન્ધાઃ=અનિષ્ટગન્ધયુક્તાઃ, વિશ્રાઃ=અપક્વમાંસવત્પ્રતિગન્ધાઃ, અતપ્ત-ઉદ્વેગ-જનકા=ઉદ્વેગોત્પાદકાઃ, તેષુ 'વીમચ્છદરિસણિજ્જેસુ' વીમત્સદર્શનીયેષુ=ઘૃણિ-તદર્શનેષુ 'નિચ્ચં' નિત્યં 'હિમપટલસીયલેસુ' હિમપટલશીથલેષુ=હિમપટલ-મિવ શીતલા યે તે તથા તેષુ 'કાલોભાસેસુ' કાલાવભાસેષુ, કાલઃ=શ્યામલોઽવ-ભાસઃ=કાન્તિર્યેષાં તે તથા તેષુ કૃષ્ણવર્ણેષુ 'ભીમગંભીરલોમહરિસણેસુ' ભીમગ-મ્ભીરલોમહર્ષણેષુ-તત્ર, ભીમાઃ=ભયજનકા ગંભીરાઃ=અતલસ્પર્શા અતપ્ત લોમહર્ષણાઃ=રોમાશ્ચકારિણસ્તેષુ=તત્સ્વરૂપશ્રવણમાત્રેણ-રોમાશ્ચોત્પાદકેષુ 'ગિરિભિરામેસુ' ગિરિભિરામેષુ = અશોભનેષુ 'નિષ્પટ્ટિયારવાહિરોગજરાપીલિણેસુ' નિષ્પટ્ટિકાર વ્યાધિરોગજરાપીલિતેષુ=નિષ્પટ્ટિકારાઃ=પ્રતિકારરહિતા વ્યાધયઃ=કુષ્ઠાદયઃ રોગાઃ

રહતે છે. (દુર્ગન્ધ વિસ્સઽઽવ્યેયજનકેસુ) અનિષ્ટતર દુર્ગન્ધ સે ભરપૂર રહતે છે. વિસ્સ-કચ્ચેમાંસ કે જેસી યહાં સદા દુર્ગન્ધ આતી રહતી છે, હસલિયે નારકિયોં કો યે સદા ઉદ્વેગ કે ઉત્પાદક હોતે રહતે છે. (વીમ-ચ્છદરિસણિજ્જેસુ ય) દેવને મેં યે બહે અસુહાવને ઘૃણિત પ્રતીત હોતે છે. (નિચ્ચં હિમપટલસીયલેસુ) સદા યે હીમપટલ કે જેસે શીતલ હોતે છે (કાલોભાસેસુ) ઇનકી કાંતિ કાલી હોતી છે. (ભીમગંભીરલોમહરિ-સણેસુ) ઇન નરકાવાસોં મેં જીવ કો સદા ભય હી ભય રહતા છે. યે આવાસ કિતને ગહરે છે ઇનકા પતા નહીં પડતા છે. ઇનકે સ્વરૂપ શ્રવણ માત્ર સે હી જીવોં કે શરીર મેં રોમાંવ યહે હો આતે છે. (ગિરિભિરામેસુ) યે સબ અશોભન છે. (નિષ્પટ્ટિયાર વાહિરોગજરાપીલિણેસુ) યહાં કો જો કુષ્ઠ આદિ વ્યાધિયાં છે, મસ્તકશૂલ આદિ જો રોગ છે, વાર્ધક્ય જો

તેઓ નિરંતર તાપથી વ્યાપ્ત કરે છે, “દુર્ગન્ધવિસ્સઽઽવ્યેયજનકેસુ” સૌથી ખરાબ દુર્ગન્ધથી ભરપૂર રહે છે. વિસ્સ-કાચા માંસના જેવી દુર્ગન્ધ ત્યાં સદા આવ્યા કરે છે, તેથી નારકીઓને તેઓ સદા સંતોષ પેદા કરનારા હોય છે. વીમચ્છદરિસણિજ્જેસુ ય” જેવામાં તે ઘણાં જ બેડાળ-ઘૂણા થાય તેવાં હોય છે. “નિચ્ચં હિમપટલસીયલેસુ” તેઓ સદા હિમનાં ધરે જેવાં શીતળ હોય છે. “કાલો ભાસેસુ” તેઓ દેખાવે કાળા હોય છે. “ભીમગંભીરલોમહરિસણેસુ” તે નરકવાસોમાં જીવોને સદા ભય જ રહે છે તે આવાસો કેટલાં બેડા છે, તેની ખબર પડતી નથી. તેના સ્વરૂપનું વર્ણન સાંભળતાં જ જીવોના શરીરના શાભાંચ ઉભાં થઈ જાય છે. “ગિરિભિરામેસુ” તે યહાં શેભા વિનાનાં છે. “નિષ્પટ્ટિયારવાહિરોગજરાપીલિણેસુ” અહીંની કુષ્ઠ આદિ જે વ્યાધિયો છે,

સુનશિની ટીકા અ. ૧ સૂ. ૨૪ યાદૃકૃતકર્મ તથાવિધફલનિરૂપણમ્ ૨૫

મસ્તકશૂલાદયઃ, જરા=વાર્ધક્યં ચ, તે: પીડિતેષુ=વ્યાપ્તેષુ, 'અર્થચિન્ધયાર-
તમિસ્સેસુ' અતીવનિત્યાન્ધકારતમિસ્રેષુ=અતીવ=અત્યન્તં નિત્યાન્ધકારેણ તમિ-
સ્રેષુ=ધોરાન્ધકારસ્વરૂપં-પ્રાપ્તેષુ, અતएव 'પદ્મપસુ' પ્રતિભયેષુ=પતિવસ્તુભય-
યુક્તેષુ, 'વવગયગહચંદ્રમૂરણવસ્તુત્તજોદસેસુ' વ્યપગતગ્રહચંદ્રમૂરણવસ્તુત્તજોદસેસુ
=ગ્રહચંદ્રમૂરણવસ્તુત્તજોદસેસુ, 'મેયવસામંસપટલ પોચ્ચડપૂયરુહિરુક્ષિણ-
વિલીળચિક્કણરસિયાવાવળકુહિયચિક્કણલ્લહમેસુ' મેદોવસામંસપટલપોચ્ચ-
ડપૂયરુહિરોત્કીર્ણવિલીનચિક્કણરસિકવ્યાપન્નકુથિતચિક્કણલ્લહમેસુ=મેદઃ=શરીર-
સ્નેહવિશેષઃ, વસા=ચર્વીં ઇતિ ભાષા, માંસં=પ્રસિદ્ધં તેષાં યત્પટલં=રાશિઃ
'પોચ્ચડ' ગિલગિલાયમાનં પૂયં='પીપ' 'પરુ' ઇતિ પ્રસિદ્ધં, રુધિરં=શોણિતં
તેન ઉત્કીર્ણં=વ્યાપ્તં વિલીનં=સંમૃતં, ચિક્કણં=ગુન્દ્રવત્, 'રસિકા' વિકૃતરુધિરં
વ્યાપન્નં=વિનષ્ટસ્વરૂપમ્ અતएव-કુથિતં=દુર્ગન્ધિતં 'ચિક્કણ' શિથિલકર્દમઃ,
કર્દમઃ=ઘનકર્દમશ્ચ યેષુ તે તથા તેષુ । 'કુક્કૂલાનલપલિત્તજાલમ્મમુરઅસિક્કુર

અવસ્થા હૈં इनकी पीड़ा यहां प्रतिकार-उपाय रहित होती हैं । (अर्धचिन्धयारतमिस्सेसु) यहां पर सर्वदा धोरानिधोर अधकार रहता है । (पद्मपसु) यहां की प्रत्येक वस्तु भय से भरपूर रहती है । (ववगय-गहचंदमूरणवस्त्वत्तजोदसु) न यहां पर कोई ग्रह हैं न कोई चन्द्र है, न सूर्य है, न नक्षत्र हैं । (मेयवसामंसपटल-पोच्यड-पूय-रुहिरुक्षिण-विलीण-चिक्कण-रसिया वावणकुहियचिक्कणल्लहमेसु) मेद, वसा-चर्वीं और मांस का ढेर इन स्थानों में सदा लगा रहता है । तथा पोच्यड गिलगिलायमान पूय-पीप, एवं रुधिर से व्याप्त, गौंद के समान चिकने भरे हुए व्यापन्न दुर्गन्धित ऐसे विकृत खून, से तथा चिकने घनकर्म से ये स्थान सदा व्याप्त रहते हैं । (कुक्कूलानल-पलित्तजाल-मम्मुर-

માથાનો દુઃખાવો આદિ જે રોગો છે. વૃદ્ધાવસ્થા આદિ જે અવસ્થા છે, તેમની પીડાનો ત્યાં કોઈ પણ ઇલાજ હોતો નથી. તે પ્રતિકાર રહિત હોય છે, “અર્ધચિન્ધયારતમિસ્સેસુ” અહીં કાયમ ધોરમાં ધોર અધકાર રહે છે. “પદ્મપસુ” અહીંની દરેક વસ્તુ ભયજનક હોય છે. “વવગયગહચંદ્રમૂરણવસ્તુત્તજોદસેસુ” અહીં કોઈ અહ નથી, ચંદ્ર નથી, સૂર્ય નથી કે નક્ષત્ર પણ નથી. “મેયવસા મંસપટલ-પોચ્ચડ-પૂય-રુહિ રુક્ષિણ-વિલીળ-ચિક્કણ, રસિયાવાવળકુહિય ચિક્કણલ્લહમેસુ” મેદ, વસા ચરબી અને માંસના ઢગલા તે સ્થાનોમાં સદા પડેલાં હોય છે. તથા પોચ્ચડ-કિચ્ચડ અને પૂય પીપ તથા રક્તથી વ્યાપ્ત, શુદ્ધરના જેવા ચીકણાં, ભરેલાં દુર્ગંધમય વિકૃત લોહીથી, તથા ચીકણા કાદવથી તે સ્થાનો સદા છવાયેલાં રહે છે “કુક્કૂલાનલ-પલિત્તજાલ-મમ્મુર-અસિક્કુર

કરવત્તધારસુનિસિયવિચ્છુયડંકનિવાતોવમ-ફરિસઅતિદુસ્સહેસુ ' કુકૂલાનલ
પ્રદીપ્તજ્વાલમર્મુરાસિધુરકરપત્રધારસુનિશિતવૃશ્ચિકદંશનિપાતોપમાતિદુસ્સહેપુ, કુકૂ-
લાનલ:=કરિપાગ્નિ:, સ્વદિરાગ્નિર્વા, પ્રદીપ્તા ચ જ્વાલેતિ પ્રદીપ્તજ્વાલા=પ્રવૃદ્ધ-
બહ્નિશિખા ચ, મુર્મુર:=ભસ્મમિશ્રોઽગ્નિક્ષણ:, અસિ:=તલ્લવાર, ક્ષુર:=નાપિતોપકરણ,
કરપત્ર=કાષ્ઠભેદકશસ્ત્રવિશેષ: તેવાં ધારેતિ અસિધુરકરપત્રધારા, સુનિશિતવૃશ્ચિ-
કદંશનિપાત:=સુનિશિતાસ્તીક્ષ્ણા યે વૃશ્ચિકદંશા:=તત્પુચ્છકષ્ટકાસ્તેવાં નિપાત-
શ્ચેતિ દ્વન્દ્વ: અભિરૂપમા=સાદૃશ્યં યસ્ય સ તથાવિધ: સ્પર્શ: યેવાં તે તથા અતएव
તે ચ તે અતિ દુસ્સહા:=અત્યંતદુ:સ્વેન સહનયોગ્યાસ્તેપુ, 'કહુયદુક્લપરિતા-
વણેસુ ' કટુકટુ:સ્વપરિતાપનેપુ = કટુકૈ: = દારુણૈર્દુ:સ્વેદશવિધક્ષેત્રવેદનારૂપૈ:
પરિતાપનં યેષુ તેષુ ' અણુવદ્ધનિરંતરવેયણેસુ ' અનુવદ્ધનિરંતરવેદનેષુ=અનુ-
વદ્ધા=અનુક્ષણં વ્યાપ્તા નિરંતરા=અવિચ્છિન્નવેદના=પીડા યેષુ તથા તેષુ ' જમ-
પુરિસસંકુલેસુ ' યમપુરુષસંકુલેપુ. યમસ્વ-દક્ષિણદિક્ લોકપાલસ્ય પુરુષા:-

અસિક્ષુર-કરવત્તધાર સુનિસિયવિચ્છુયડંકનિવાતોવમ-ફરિસઅતિદુ-
સ્સહેસુ) इनका स्पर्शकुकूलानल-करीषाग्नि अथवा स्वदिराग्नि के जैसा,
प्रवृद्ध-बह्नि की ज्वाला के जैसा, मुर्मुर-भस्ममिश्रित अग्निक्षण के जैसा
असि-तलवार की धार के जैसा, खुर-क्षुरा की धार के जैसा, करवत-
करीणि को धार जैसा, एवं अत्यंत तीक्ष्णवृश्चिक के डंक के द्वारा काटने
जैसा है, इसी कारण ये स्थान अत्यंत दुस्सह बन रहे हैं (कटुयदुक्ल-
परितावणेषु) दशविधक्षेत्र वेदनारूप दारुण दु:खों द्वारा जहां जीवों
को सदा संताप ही संताप भोगना पड़ता है तथा (अणुवद्व निरंतरवेय
णेषु) यहां प्रतिक्षण अविच्छिन्न असह्य पीडा होती है। एवं (जमपुरिस-
संकुलेसु) यम-दक्षिण दिशासंबंधी लोकपाल के अम्ब अम्बरीषादिक

કરવત-ધારસુનિસિયવિચ્છુયડંકનિવાતોવમ-ફરિસ અતિદુસ્સહેસુ " તેમનો સ્પર્શ
કુકૂલાનલ-કરિપાગ્નિ અથવા પ્રદિરાગ્નિ જેવો, પ્રવૃદ્ધ-અગ્નિની જ્વાળા જેવો,
મુર્મુર-ભસ્મ-મિશ્રિત અગ્નિક્ષણ જેવો; અસિ-તલવારની ધારના જેવો, ખુર-
ખરીની ધાર જેવો, કરવતની ધાર જેવો, અને અત્યંત તીક્ષ્ણ વીંછીના ડાંખ
જેવો છે. તે કારણ તે સ્થાનો અત્યંત દુ:ખદાયી હોય છે. " કહુયદુક્લ-
પારતાવણેસુ " દશ પ્રકારનાં ક્ષેત્ર વેદનારૂપ દારુણ દુ:ખો દ્વારા જ્યાં જીવોને
સદા સંતાપ જ ભોગવવો પડે છે, તથા અણુવદ્ધનિરંતરવેયણેસુ " ત્યાં દરેક
ક્ષણે અવિચ્છિન્ન અસહ્ય પીડા ભોગવવી પડે છે. અને " જમપુરિસસંકુલેસુ "
યમ દેવોથી તે સદા ઘેરાયેલાં હોય છે. યમ-દક્ષિણ દિશાના લોકપાલના અમ્બ,

મુરશિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૨૫ નરકોત્પત્યનુ દુઃસ્વાનુભવનિરૂપણમ્ ૯૭

અમ્વામ્બરીપાદયઃ પરમાધાર્મિકા અસુરકુમારદેવાસ્તૈઃ સંકુલેષુ=વ્યાપ્તેષુ-પ્રતા-
શ્ચેષુ નરકેષુ તે પ્રાણવધકર્તારઃ ‘અત્તાણા’ અત્રાણા=ત્રાણરહિતાઃ દુઃસ્વનિવારકા-
ભાવાત્, અતएव ‘અસરણા’ અશરણાઃ=શરણરહિતાઃ રક્ષકાભાવાત્, ‘ઉવવજ્જંતિ
ઉત્પદ્યન્તે’ इति सम्बन्धः ॥મુ. ૨૪॥

મૂલમ્—તત્થ ય અંતોમુહુત્તલદ્ધિભવપચ્ચણં નિઠ્ઠવત્તેતિ
ઉ તે સરીરં દુંડં વીમચ્છદરિસણિજ્જં વીહનગં અટ્ટિપહારુણહ
રોમવડિજયં અસુભગં દુક્ખવિસયં, તઓ ય પજ્જતિમુવગયા
ઈંદિઈહિં પંચહિં વેદેતિ વેદણં અસુહાए वेयणाए उज्जलवल
વિઉલ—કન્નકલ્લહરુપરુપપગાઢપયંડઘોરવીહનગદારુણાए, કિતે ૨૫।

ટીકા—‘તત્થ ય’ તત્ત્વ ચ નરકેષુ ઉત્પત્ત્યનન્તરં તે પાપકર્માણઃ ‘અંતો
મુહુત્તલદ્ધિભવપચ્ચણં’ અન્તર્મુહૂર્તઞ્ચિન્નભવપ્રત્યયેન=અન્તર્મુહૂર્તસ્ય વૈક્રિયલક્ષ્યા
પરમાધાર્મિક અસુરકુમાર જાતિ કે દેવોં સે યે સદા સંકુલ રહતે હૈં ।
એસે ઇન નરકોમાં પ્રાણવધ કે કરને વાલે જીવ (અત્તાણા) દુઃસ્વનિવા-
રક કે અભાવ સે ત્રાણ રહિત ઇવં (અસરણા) રક્ષક કોઈ ન હોને સે
અશરણ બન (ઉવવજ્જંતિ) ઉત્પન્ન હોતે હૈં ।

ભાવાર્થ—પ્રાણવધ કરનેવાલે જીવ જો પાપપુંજ કા સંચય કરતે હૈં ।
ઉસકે પ્રભાવ સે વે ઘર્યાં સે મરકર શીઘ્ર હી નરક મેં જન્મ લેતે હૈં ।
નરકોં મેં જીવ કી કૈસી હાલત હોતી હૈ ઇવં વઘ્યાં કી વ્યા સ્થિતિ હૈ યહી
બાંત સૂત્રકાર ને ઇસ સૂત્ર દ્વારા સમજાઈ હૈ ॥ સૂ. ૨૪ ॥

ટીકાર્થ—(તત્થ ય) ડન નરકોં મેં ઉત્પત્તિ કે અનન્તર (તે) વે પાપકર્મ
વાલે જીવ (અંતોમુહુત્તલદ્ધિ ભવપચ્ચણં) અન્તર્મુહૂર્ત્સ મેં પ્રાપ્ત વૈક્રિયલ-

અરણરીપ આદિ પરમ અધાર્મિક અસુર કુમાર જાતિના દેવો છે. પ્રાણુવધ
કરનારા તે જીવો અર્થી તે નરકોમાં “અત્તાણા” દુઃખ નિવારકને અભાવે પ્રાણુ
રહિત અને “અસરણા” કોઈ રક્ષક નહીં હોવાથી અશરણ દશામાં “ઉવવ-
જ્જંતિ” ઉત્પન્ન થાય છે

ભાવાર્થ—પ્રાણુવધ કરનારા જીવ જે પાપપુંજનેા સંચય કરે છે તેના
પ્રભાવે અર્થીથી મરીને તરત જ નરકમાં ઉત્પન્ન થાય છે. નરકોમાં જીવોની
કેવી હાલત થાય છે અને ત્યાંની કેવી પરિસ્થિતિ છે, એ વાત સૂત્રકારે આ
સૂત્રદ્વારા સમજાવી છે. ॥સૂ. ૨૪॥

ટીકાર્થ—“તત્થ ય” ઇત્યાદિ, “તત્થ ચ” તે નરકોમાં ઉત્પત્તિ થયા પછી “તે”
તે પાપકર્મ કરનારા જીવ “અંતોમુહુત્તલદ્ધિભવપચ્ચણં” અન્તર્મુહૂર્ત્સમાં પ્રાપ્ત વૈક્રિય

भवप्रत्ययेन च, = भवप्रत्ययः = भवन्ति कर्मवशाः जीवाः अस्मिन्निति भवः = नरकादिजन्म, भव एव प्रत्ययः=कारणं यस्य तत् भवप्रत्ययं=तेन-नरकजन्मकारणेन 'सरीरं=शरीरं नरकभवसम्बन्धिदेहं, 'निवर्त्तन्ति' निवर्त्तयन्ति=रचयन्ति । कीदृशं शरीरम् ? इत्याह—'हुंडं' अस्फुट्रावययं, बीमच्छदरिसणिज्जं' बीमत्स दर्शनीयं=विकृतस्वरूपं 'बीहणगं' भाषकं भयजनकम्, 'अट्टिण्हारुणहरोमवज्जियं' अस्थिस्नायुनखरोमवर्जितं=स्पष्टं, असुभगम्=असुन्दरम्, दुक्खविसयं' दुःखविषयं=क्लेशबहुलं शरीरं निवर्त्तयन्तीति सम्बन्धः । 'तओ य' ततश्च=शरीरनिवर्त्तनानन्तरं 'पल्लत्ति' पर्याप्ति = आहारशरीरेन्द्रिय-प्राणापानभाषामनःपर्याप्ति

બિંધી સે ઓર ભવપ્રત્યય સે-નરક જન્મ કે કારણ સે વે (સરીરં) શરીર કો-નરકભવ સંબંધી શરીર કો (નિવર્ત્તન્તિ) બના લેતે હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈં કિ નરકોં મેં જો જીવ નારકી જીવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈં ઉસકા અન્તર્મુહૂર્ત્ત મેં હી નારકી કા શરીર બન જાતા હૈં, ક્યોં કિ હિસ શરીર કે બનને કા કારણ વહાં પર જન્મ લેના હૈં । હિસ શરીર કે અવયવ અસ્ફુટ રહતે હૈં હિસલિયે હિસે (હુંડં) હુંડ કહા હૈં ઓર (બીમ-છદરિસણિજ્જં) યહ શરીર-વિકૃત સ્વરૂપવાલા હોતા હૈં હિસલિયે બીમત્સ દર્શનીય કહા હૈં । (બીહણગં) યહ શરીર ભયજનક હોતા હૈં ઓર (અટ્ટિણ્હારુણહરોમવજ્જિયં) અસ્થિ-હાડિયોં સે, સ્નાયુ-નસોં સે તથા નખ ઓર રોમ સે રહિત (અસુભગં) અમુન્દર ઓર (દુક્ખવિ-સયં) ક્લેશ બહુલ હોતા હૈં । (તઓ ય) હિસ પ્રકાર શરીર કી રચના

બાંધિથી અને ભવપ્રત્યયથી-નરકમાં જન્મ થવાને કારણે તેઓ “ સરીરં ” શરીરને-નરકભવ સંબંધી શરીરને “ નિવર્ત્તન્તિ ” બનાવી લે છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે નરકમાં જે જીવ નારકી જીવની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે, તેમનું અન્તર્મુહૂર્ત્તમાં જ નારકીનું શરીર બની જાય છે, કારણ કે ત્યાં જન્મ લેવો એજ તે શરીર બનવાનું કારણ છે તે શરીરનાં અવયવો અસ્ફુટ હોય છે તેથી તેને “ હુંડ ” હુંડ કહ્યાં છે અને “ બીમછદરિસણિજ્જં ” તે શરીર વિકૃત સ્વરૂપ વાળું હોય છે તેથી તેને બીમત્સ દર્શનીય કહેલ છે. “ બીહણગં ” તે શરીર ભયજનક હોય છે, અને “ અટ્ટિણ્હારુણહરોમવજ્જિયં ” અસ્થિ-હાડકાંઓથી સ્નાયુ-નસોથી તથા નખ અને રોમવાળી રહિત, “ અસુભગં ” અમુન્દર અને “ દુક્ખવિસયં ” ક્લેશ યુક્ત હોય છે, “ તઓ ય ” આ પ્રકારની શરીરની

‘ઉવગયા’ ઉપગતા=પ્રાપ્તા:-સન્ત: ‘પંચહિ’ પંચમિ: ‘હિંદિર્હિ’ હિન્દ્રિયૈ: = શ્રોત્રાદિમિ: ‘અમુહાણ’ અશુભયા=અશાતરૂપયા, ‘વેયણાણ’ વેદનયા=અશાત-વેદનીયકર્મોદયજનિતયા ‘વેયણં’ વેદનં=કુમ્ભીપચનાનિ દુઃખં ‘વેદંતિ’ વેદ-યન્તિ=અનુભવન્તિ । કીદશયા વેદનયા ? इत्याह—‘उज्जलबलविपुलककखडखरफरुसपगढपयंडघोरबीहणगदारुणाण’ उज्जलबलविपुलककखडखरफरुसपगढपयंडघोरबीहणगदारुणाण = उज्जला=तीव्रानुभावतात्पर्कत्वात्, बल=बलवती अनिवार्यत्वात्, विपुला=विशाला परिमाणरहितत्वात्, ककशा = कठोरा प्रत्यङ्गदुःखजनकत्वात्, खरा=तीक्ष्णा-अन्तःकरणभेदकत्वात्, परुषा=निष्ठुरा-मुखलेशरहितत्वात् प्रगाढा-प्रतिक्षणमसमाधिजनकत्वात्, प्रचण्डा=भयानका-आत्मनः-प्रतिप्रदेशव्यापित्वात्

હો જાને કે અનન્તર (પજ્જત્તિમુવગયા) આહાર, શરીર, હિન્દ્રિય, પ્રાણા-પાન, ભાષા ઓર મન, इन पर्याप्तियों को प्राप्त हुए वे नारकी जीव (हंदिर्हं पंचहिं) શ્રોત્રાદિક પાંચ હિન્દ્રિયો દ્વારા (અમુહાણ વેયણાણ) અસાતા વેદનીય કર્મ કે ઉદય સે જનિત અશુભ અશાતરૂપવેદના સે (વેયણં) કુમ્ભી પચનાદિ દુઃખોં કા (વેદંતિ) અનુભવ કરતે હૈં । यह अशातरूपवेदना उन नारकी जीवों की (उज्जलबल विपुल-ककखड खरफरुसपगढपयंडघोरबीहणगदारुणाण) उज्जल-तीव्रानुभावशाली होती है, बल-अनिवार्य होने से बलिष्ठ होती है, विपुल परिमाण रहित होने से विशाल होती है, (ककखड) प्रत्येक अंग दुःख जनक होने से ककशा-कठोर होती है । खर अंतरंग की भेदक होने से तीक्ष्ण होती है । (फरुस) मुख के लेश से रहित होने के कारण निष्ठुर होती है । (पगाढ) प्रतिक्षण असमाधि की उत्पादक होने से प्रगाढ है (पयंड) आत्मा के

રચના થઈ ગયા પછી “ પજ્જત્તિમુવગયા ” આહાર, શરીર, ઈન્દ્રિય, પ્રાણુપાન, ભાષા અને મન એ પર્યાપ્તિઓને પ્રાપ્ત કરીને નારકી જીવ “ હિંદિર્હિં પંચહિં ” શ્રોત્રાદિક પાંચ ઈન્દ્રિયો દ્વારા “ અમુહાણ વેયણાણ ” અસાતા વેદનીય કર્મના ઉદયથી જનિત અશુભ અશાતારૂપ વેદનાથી “ વેયણં ” કુમ્ભમાં રંધાવા આદિ દુઃખોનો “ વેદંતિ ” અનુભવ કરે છે. તે નારકી જીવોની તે આશાતારૂપ વેદના “ ઉજ્જલબલવિપુલ-કકખડ-ખર-ફરુસપગાઢપયંડઘોરબીહણગદારુણાણ ” ઉજ્જવળ-તીવ્ર અનુભવવાળી હોય છે. બલ-અનિવાર્ય હોવાથી પ્રબળ હોય છે, વિપુલ-પરિમાણ રહિત હોવાથી વિશાળ હોય છે. “ કકખડ ” પ્રત્યેક અંગમાં દુઃખ જનક હોવાથી કઠોર હોય છે, સ્પર્-હૃદય લેટક હોવાથી તીક્ષ્ણ હોય છે, ફરુસ-સહેજ પલુ સુખથી રહિત હોવાને કારણે નિષ્ઠુર હોય છે, પગાઢ- દરેક પળે અસમાધિની ઉત્પાદક હોવાથી પ્રગાઢ હોય છે, પયંડ -

ધોરા=વિકટા-શ્રવણેઽપિ દુઃસ્વજનકત્વાત્, ભોષણા=ભયોત્પાદિકા-પ્રતિપ્રાણિ-
ભયજનકત્વાત્ દારુણા=હૃદયસંશોભકારિણી પ્રતિકારરહિતત્વાત્, તથા-ભૂતયા
વેદનયા પાપિનો દુઃસ્વમનુભવન્તોતિ સમ્બન્ધઃ ‘કિં તે’ કાનિ તાનિ દુઃસ્વાનિ?
તાન્યગ્રેઽનુપદે વર્ણયિષ્યતે ॥ સૂ. ૨૫ ॥

અથ તાન્યેવ દુઃસ્વાનિ વર્ણયતિ-કંદુ મહાકુમ્ભીય’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્મ-કંદુમહાકુંભીય પયણ-પડલણ-તવગ-તલણ-મટ્ટુ મ-
જ્જણાણિ ય લોહકડાહુકકટ્ટુણાણિ ય કોટ્ટવલિકરણકોટ્ટણાણિ ય
સામલિ તિવલ્લગ્ગ-લોહકંટગ-અભિસારણા પસારણાણિ, ફાલણ
વિદારણાણિ ય અવકોડકવંધણાણિ, લટ્ઠિસયતાલણાણિ ય, ગલમ-
બલ્લહંબણાણિયસૂલમ્મભેયણાણિ ય, આપસપવંચણાણિ ય સ્વિસ-
ણાવમાણણાણિ ય વિઘુટ્ટપણિજ્જણાણિયવજ્જસયમાઙ્ગણાણિય ॥ ૨૬ ॥

ટીકા—‘કંદુમહાકુંભીય’ કંદુમહાકુમ્ભ્યોઃ=કંદુઃ=લોહમયવિશાલપાત્ર-

પ્રતિ પ્રદેશ મેં વ્યાપક હોને સે પ્રચ્છન્ડ-ભયાનક હોતી હૈ, ધોર-ધનને મેં
મી દુઃસ્વજનક હોને સે વિકટ હોતી હૈ, (વીહણગ) હરેક પ્રાણી મેં ભય
કી સંચારક હોને સે ભોષણ-ભયોત્પાદિકા હોતી હૈ, (દારુણા) ઇસકો
વહાં કોઈ ઇલાજ નહીં હોતા હૈ ઇસલિયે યહ હૃદય કો સંશોભકારિણી
હોને સે દારુણ હોતી હૈ । ઇસ પ્રકારકી વેદના સે પાપી જીવ નરકોં મેં
દુઃસ્વોં કા અનુભવ કરતે હૈં । (કિંતે) વે દુઃસ્વ કૌન કૌન સે હૈં વહ ઇસી
કે અગલે સૂત્ર મેં કહેંગે ॥ સૂ. ૨૫ ॥

અવ સૂત્રકાર “કિંતે” ઇન પદોં દ્વારા સૂચિત દુઃસ્વોં કો કહતે હૈં—

આત્માના દરેક પ્રદેશોમાં વ્યાપેલી હોવાથી પ્રચન્ડ ભયાનક હોય છે, ધોર-
સાંભળતા પણ દુઃખજનક હોવાથી વિકટ હોય છે, “વીહણગ” દરેક પ્રાણીમાં
ભયનો સંચાર કરનાર હોવાથી લીધણ-ભયંકર હોય છે, “દારુણા” તેનો
ત્યાં કોઈ ઇલાજ હોતો નથી, તેથી તે હૃદયમાં શ્વાલ ઉત્પન્ન કરનાર હોવાથી
દારુણ હોય છે. આ પ્રકારની વેદનાથી પાપી જીવ નરકોમાં દુઃખોનો અનુભવ
કરે છે. “કિંતે” તે દુઃખો કયાં કયાં છે તે હરે પછીના સૂત્રમાં બતા-
વવામાં આવશે ॥ સૂ. ૨૫ ॥

હવે સૂત્રકાર “કિંતે” દ્વારા સૂચિત દુઃખોનું વર્ણન કરે છે “કંદુ

વિશેષઃ, મહાકુંભી=ઘટાકૃતિપાત્રવિશેષસ્તયોર્મધ્યે, મૂત્રે જાતિત્વાદેકવચનમ્ । ‘પયણ’ પવચન-મોદનાદેરિવ ‘પડલણ’ પ્રકુલનમ્=સીસકવદ્વાઝનમ્, ‘તવગ-તલણ’ તપકતલનં=તપકો લોહપાત્રવિશેષઃ ‘તવ’ इति भाषाप्रसिद्धः, तस्मिन् तैला-दिभिरूपवत्तलनम्, ‘મટ્ઠમજ્જણ’ भ्राष्ट्रभर्जनं च-भ्राष्ट्रभर्जनपात्रं-‘ભાડ’ इति प्रसिद्धः, तत्र भर्जनं चणकादेरिव, इत्येषां द्वन्द्वस्तानि च ‘लोहकटाहुकड्डणाणि य’ लोहकटाहोत्ववथनानि च=लोहकटाहः=‘कटार्इ’ इति भाषाप्रसिद्धा, तत्र उत्प्लव-नानि=औषधिवदुत्कालानानि ‘कोट्टवलिकरणकोट्टणाणि’ ‘कोट्टवलिकरणकोट्टनानि=कुट्टेन=क्रीडया वलिकरणाय, कुट्टनानि=करचरणायवयवत्रोटनानि-शरीरं ‘खण्डसः’ कृत्वा काकादिभ्योऽर्पणानीत्यर्थः, ‘सामलितिकलमगलोहकंटगभमिसारणापसार-‘કંદુમહાકુંભી’ इत्यादि॥

ટીકાર્થ-નારકીજીવ નરકોમે (કંદુમહાકુંભી) કંદુ-લોહમય વિશાળ પાત્રવિશેષ મેં તથા ઘટાકૃતિ જૈસે મહાકુંભી મેં ઓદનાદિક કી તરહ (પયણ-પડલણ-તવગ-તલણ-મટ્ઠમજ્જણાણિ ય) (પયણ) પકાયે જાને કે (પડલણ) સીસક-રાંગ કી તરહ ગલાયે જાને કે, (તવગતલણ) ગર્મ લોહ કે તવ પર તૈલાદિક મેં તલે ગયે પૂઆ આદિ કી તરહ તલે જાને કે (મટ્ઠમજ્જણાણિ ય) ભાડ મેં ઝુંજે ગયે ચના આદિ કી તરહ ઝુંજે જાને કે દુઃખોં કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં । તથા (લોહકટાહુકડ્ડણાણિ ય) જૈસે લોહે કી કટાર્ઈ મેં ઔપધિયાં ઉબાલી જાતી હૈં ઉસી તરહ વહાં પર વે ભી વહે ૨ કટાહોં મેં ઉબાલે જાતે હૈં । (કોટ્ટવલિકરણકોટ્ટણાણિ ય) બલિ દેને કે લિયે અનાયાસ હી અનેકે કર, ચરણ આદિ અવયવોં કો વહાં તોડ દિયા જાતા હૈ-શરીર કો ખંડ ૨ કરકે વહાં કાકાદિકોં કે િયે

મહાકુંભી” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-નારકી જીવ નરકોમાં “કંદુમહાકુંભી” “કંદુ” લોહના વિશાળ પાત્ર-વિશેષમાં, તથા ઘડના આકારના મહાકુંભીમાં ઓદનાદિકની જેમ “પયણ-પડલણ, તવગ, તલણ, મટ્ઠમજ્જણાણિ ય” “પયણ” રંધાવાનાં, “પડલણ” સીસાની જેમ ઓઝળવાનાં, “તવગતલણ” લોહના ગરમ તેલના તાવડામાં તેલના માલપૂવા આદિની જેમ તળાવનાં, “મટ્ઠમજ્જણાણિ ય” તાવડામાં શેકાતા ચણા આદિની જેમ શેકવાનાં દુઃખો અનુભવે છે. તથા “લોહકટાહુકડ્ડણાણિ ય” જેવી રીતે લોહની તવીઓમાં ઔષધિયો ઉકાળાય છે એજ રીતે ત્યાં તેમને પણ મોટા તાવડાઓમાં ઉકાળવામાં આવે છે, “કોટ્ટવલિકરણકોટ્ટણાણિ ય” બલિ દેવાને માટે અત્યાંતક તેમના હાથ પગ આદિ અવયવોનું ત્યાં છેદન કરવામાં આવે છે. શરીરના ટૂકડે ટૂકડા કરી ત્યાં ડાંગડા આદિને

નાણિ 'શાલ્મલિ તોદ્ધગાગ્રહકંટકાભિસારણાપસારણાનિ=શાલ્મલિઃ=' સેમલ' ઇતિ રુચાતો વૃક્ષવિશેષસ્તસ્ય યે તોદ્ધગાયા લોહકંટકા ઇવ કંટકાઃ, તેષુ અભિસારણાપસારણાનિ ચ = કર્ષણાપકર્ષણાનિ 'ફાલગવિદારણાણિ' ફાલનાનિ=વલ્લવત્ફાલનાનિ, વિદારણાનિ=ઋકચાદિના કાષ્ઠવદ્ દ્વેધીકરણાનિ 'અવકોદગચંધનાણિ' અવકોટકચંધનાનિ=ગ્રીવાયા હસ્તયોથ પશ્ચાદ્ગામનયનેન-ચંધનાનિ, 'લઢિસયતાઢનાણિ' યદ્વિશતતાઢનાનિ=યદ્વિશતૈસ્તાઢનાનિ, 'ગલગલુલ્લંબનાણિ' ગલકલુલ્લંબનાનિ=ગલ એવ ગલકઃ=કંઠઃ, તસ્મિન્ બલાત્ =ચલપૂર્વકમ્ ઉલ્લંબનાનિ=ટક્ષશાખાદો ઉલ્લંબનાનિ, 'સૂલગ્મભેયનાણિ ચ' શૂલગ્રભેદનાનિ ચ=શૂલગ્રેગ=શૂલગ્રભાગેન ભેદનાનિ, શૂલારોપણાનિ વા, 'આર્સ પવંચનાણિ' આદેશપ્રવચ્ચનાનિ=આદેશેન=આજ્ઞયા અસત્યવસ્તુ વિષયયા

उनका वह शरीर अर्पित किया जाता है, (सामलितिक्रस्मगलोहकंटक अभिसारणा-पसारणाणि) सेमर वृक्ष के लोहकंटक के समान नुकीले कांटा के ऊपर उनका कर्षणापकर्षण किया जाता है उन्हें आगे पीछे खेंचा जाता है, (फालग विदारणाणि य) फालन-वल्ग के समान फाड़ना और करोति आदि के द्वारा काष्ठ को तरह चीरना भी उनका वहां किया जाता है। (अवकोदगचंधनाणि) उनको ग्रीवा और दोनों हाथ पीछे के भाग की तरफ करके बांधे जाते हैं। (लडिसयताडनाणि य) सैकड़ों लाठियों की उन पर वहां मार पड़ती है। (गलगलुलंबनाणि य) जबर्दस्ती उनके गलों को वृक्ष की शाखा पर बांधकर लटकाया जाता है। (सूलगमभेयणाणि य) शूल के अग्रभाग से उनके शरीर का भेदन किया जाता है। अथवा शूली के ऊपर उन्हें लटकाया जाता है। (आर्-

તેમનાં તે શરીર અર્પણ કરાય છે. “સામલિતિક્રસ્મગલોહકંટક-અભિસારણા-પસારણાણિ ચ” સેમર વૃક્ષના લોહકંટકના સમાન અણીદાર કાંટાઓ ઉપર તેમનું કર્ષણાપકર્ષણ કરાય છે-તેમને આગળ પાછળ ખેંચવામાં આવે છે. “ફાલગવિદારણાણિ ચ” ત્યાં તેમને વચ્ચની જેમ ફાડવામાં આવે છે અને કસવત આદિ દ્વારા જેમ ફાડકાને ચીરવામાં આવે છે તેમ તેમને પણ ચીર-વામાં આવે છે “અવકોદગચંધનાણિ” તેમની ડોક અને બંને હાથ પાછળના ભાગમાં રખાવીને બાંધવામાં આવે છે. “લઢિસયતાઢનાણિ ચ” ત્યાં તેમને સેકડો લાઠીઓનો માર પડે છે. “ગલગલુલંબનાણિ ચ” જોર ગુલમથી તેમનાં ગળાં બાંધીને વૃક્ષની ડાળિયો પર તેમને લટકાવવામાં આવે છે, “સૂલગમ ભેયનાણિ ચ” શૂળની અણીથી તેમનાં શરીરનું ભેદન કરવામાં આવે છે અથવા

પ્રવચ્ચનાનિ=પ્રતારણાનિ પ્રતરોષ્ણસન્તસ્રવાલુકા નિકરાનેકક્ષણપરિક્રમણોપતાપ પ્રદીપિતપાનીય પાનાતિવૃણસ્ય સમુદશ્ચજ્જલચીવિરુચિમરીચિનિચયં જલાશ્ચ ૧-
 દિશ્ય તત્ર પાનાય પ્રેષણં, 'ગચ્છ તત્ર તે પિતા 'સમાગતઃ' ઇત્યાદ્યનેકવિધઃ
 પ્રવચ્ચના ઇતિ ભાવઃ, 'ત્રિસણ વિમાણાણિ' ત્રિસણવિમાણનાનિ=ત્રિસણનાનિ=
 જાતિકુળોદિનામનિર્દેશપૂર્વકં નિન્દનાનિ, અતઃ એવં વિમાણનાનિ તિરસ્કરણાનિ
 'વિષુદ્ધપણિજ્જણાણિ' વિષુદ્ધ પ્રણયનાનિ=વિષુદ્ધાનાં="સ્વકૃતપાપકર્મણાં ફલાનિ
 શુદ્ધાં" ઇત્યાદિભિર્નિષ્ઠુરવચોર્નિર્ભર્તિસતાનાં પ્રણયનાનિ=વધ્યસ્થાનનયનાનિ ।
 એતાનિ કિં હેતુકાનિ ? ઇત્યાદિ—'વજ્જસયમાહ્યાણિ' અવધશતમાતૃકાણિ-
 અવધશતમાતૃકાણિ-અવધશતાનિ=મન્દતીત્રાદિપરિણામેન કૃતાનિ પાપશતાનિ,
 સપવંચનાણિ ય અસત્ય વસ્તુવિષયક આદેશરૂપ આજ્ઞા સે ડન્હે પ્રતારિત
 (ઠગના) ક્રિયા જાતા હૈ—વહાં પર નારકીજન પહિલે ડસ નવીન નારકી
 કો પ્રત્તર ડણ્ણ સે સન્તસ્ર વાલુકા પુંજ કી ડવર અનેકવાર ધૂમાતે હૈં ।
 ડસસે ડસકી ગર્મી સે ડસકી પ્યાસ અધિક સે અધિક માત્રા મૈં જય
 પ્રદીપિત હો જાતી હૈ તથ ડસે બનાવટી જલાશય દિખલાકર વહાં વે મેજ
 દેતે હૈં ડમ તરહ ડસે વહાં ઘાર ૨ પ્રતારિત ક્રિયા જાતા હૈ "જાઓ વહાં
 તુમ્હારા પિતા આયા હૈ" ઇત્યાદિ અનેકવિધ વચનોં દ્વારા વે ડસકી
 પ્રવચ્ચના ક્રિયા કરતે હૈં । (ત્રિસણવિમાણાણિ ય) જાતિ, કુલ આદિકે
 નામનિર્દેશપૂર્વક ડસકી વહાં નિંદા કી જાતી હૈ । તિરસ્કાર ક્રિયા જાતા
 હૈં । (વિષુદ્ધપણિજ્જણાણિ ય) "અપને કિયે હુણ પાપકર્મોં કા તુમ ફલ
 મોગો" ઇત્યાદિ નિષ્ઠુર વચનોં સે ડસે નિર્ભર્તિસતકરકે વધ્ય સ્થાનોં પર
 લાયા જાતા હૈં । (વજ્જસયમાહ્યાણિ ય) ડસ તરહ નાના પ્રકાર કે
 ડન દુઃખોં કો નરકોં મૈં મન્દ, તીવ્ર આદિ પરિણામો દ્વારા કિયે ગયે

શૂળી પર તેમને લટકાવવામાં આવે છે. "આણસપવંચનાણિ ય" અસત્ય વસ્તુ
 વિશેના આદેશ વડે તેમને ત્યાં ડગવામાં આવે છે. ત્યાં નારકીજન પહેલાં તે
 નવીન નારકી જીવેને પ્રથમ ડબ્બતાથી સારી રીતે તપેલી રેતી પર અનેક વાર
 ચલાવે છે, તેથી તેની ગરમીથી તેમની તૃષ્ણા બ્યારે વધારેમાં વધારે પ્રમાણમાં
 પ્રદીપ્ત થાય છે ત્યારે તેઓ તેમને બનાવટી જળાશય બતાવીને ત્યાં મોકલી દે
 છે, આ રીતે ત્યાં તેને વારંવાર પ્રતારિત કરાય છે—ડગવામાં આવે છે "જાઓ,
 ત્યાં તમારા પિતા આવ્યા છે" ઇત્યાદિ અનેક પ્રકારનાં વચનો દ્વારા તેઓ તેની
 હાંસી કર્યા કરે છે. "ત્રિસણવિમાણાણિ ય" જાતિ, કુળ આદિના નામને
 નિર્દેશ કરીને તેની ત્યાં નિંદા કરાય છે. તિરસ્કાર કરાય છે. "વિષુદ્ધપણિજ્જણાણિ
 ય" "તે કરેલાં કર્મોંનું ફળ તું ભોગવ" એવાં નિષ્ઠુર વચનોથી તેમને ધમ-
 કાવીને વધસ્થાનો પર લઈ જવામાં આવે છે. "વજ્જસયમાહ્યાણિ ય" આ
 રીતે પાપી જીવ મંદ, તીવ્ર આદિ પરિણામો દ્વારા કરાયેલ સેકડો પાપોને કારણે

તાન્યેવ માતૃકાણિ=ઉત્પત્તિસ્થાનાનિ યેષાં તાનિ તથા-પાપશતહેતુકાનીત્યર્થઃ ।
 દુઃસ્થાનિ વેદ્યન્તીતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ ‘ક્વ’ ઇત્યત્ર પ્રાકૃતત્ત્વાદકારણોપઃ ॥૨૬॥

एते पापकारिणः ‘कीदृशी’ वेदनां कियत्कालमनुभवन्ति ? इत्याह—
 ‘एवं ते’ इत्यादि ।

મૂલમ્—एवं ते पुर्वकम्मकयंसंचओवतत्ता निरयग्गि-
 महग्गि संपलित्ता गाढदुक्खमहब्भयं कक्कसं असायं सारीरं
 माणसं च दुविहं तिब्बं वेदेति वेयणं पावकम्मकारी । बहूणि
 पलिओवमसागरोवमाणि कलुणं पालेति ॥ सू० २७ ॥

સૈકડોં પાપોં કે કારણ પાપી જીવ ઉત્પન્ન હોકર ભોગા કરતે હૈં “માતૃક”
 પદ યહાં પર ઉત્પત્તિ સ્થાન કા વાચક હૈ । અર્થાત્ ઇન દુઃખોં કે ઉત્પત્તિ-
 સ્થાન અવગણશત સૈકડો ધોર પાપ કરનેવાલે પાપી હો જાતે હૈ ।

ભાવાર્થ—પાપી જીવ નરકોં મેં જન્મ લેકર નાના પ્રકાર કી વેદના
 ભોગા કરતે હૈં યહી વાત સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા પ્રદર્શિત કી હૈ । વહાં
 પર ઉન્હે પકાયા જાતા હૈ, ઉઘાલા જાતા હૈ, ગલાયા જાતા હૈ, તલા
 જાતા હૈ, મુંજા જાતા હૈ અનેક શરીર કે તિલ ૨ કે બરાબર ધંડ ૨ ભો
 કરદિયા જાતા હૈ । સેમર જાતિકે ઘૃક્ષોં કે નુકીલે કાટોંપર ઉન્હેઘસીટા
 ખી જાતા હૈં ઇત્યાદિ ભયંકર સે ખી ભયંકર કષ્ટ વહાં દિયે જાતે હૈં,
 તાત્પર્ય યહ હૈ કિ વેદના કે જિતને ખી પ્રકાર હો સકતે હૈં વે સવ પ્રકાર
 નરકોં મેં હોતે હૈં ઓર ઇન સવ પ્રકારોં સે હોને વાલે દુઃખોં કો મન્દ તીવ્ર
 આદિ પરિણામોંસે કિયે ગયે પાપોંકે કારણ પાપી જીવ ભોગા કરતે હૈં ॥

નરકમાં ઉત્પન્ન થઈને વિવિધ દુઃખોને ભોગવે છે. “માતૃક” પદ અહીં ઉત્પત્તિસ્થાનનું
 વાચક છે. એટલે કે તે દુઃખોનું ઉત્પત્તિસ્થાન સૈકડો પાપો અવધશત છે.

ભાવાર્થ—પાપી જીવો નરકોમાં જન્મ લઈને અનેક પ્રકારની વેદના ભોગ-
 વ્યા કરે છે. એજ વાત સૂત્રકારે સૂત્ર દ્વારા પ્રગટ કરી છે. ત્યાં તેને પકાવવામાં
 આવે છે, ઉઘાળવામાં આવે છે, ઓગાળવામાં આવે છે, તળાવામાં આવે છે,
 શેકવામાં આવે છે. તેમના શરીરના રાઈ રાઈ જેવણ ટૂકડા કરવામાં આવે છે.
 સેમર ઘૃક્ષોના અણીદાર કાંટા ઉપર તેમને ઘસડવામાં પણ આવે છે, વગેરે
 ભયંકરમાં ભયંકર કષ્ટો તેમને ત્યાં આપવામાં આવે છે- તેનું તાત્પર્ય એ છે કે
 વેદનાનો જેટલા પ્રકારો હોઈ શકે તે બધા પ્રકારો નરકોમાં હોય છે. અને તે
 બધા પ્રકારોથી થતાં દુઃખોને મંદ, તીવ્ર આદિ પરિણામોથી કરાયેલ પાપોને
 કારણે પાપી જીવ ભોગવ્યા કરે છે. ॥ સૂ. ૨૬ ॥

સુરશિની ટીકા અંક ૨૭ પાપિનો વેદનાકાલનિરૂપણ

૨૦૫

ટીકા—एवम्=उत्करीत्या ते=पापकारिणः, 'पुण्यकर्मकयसंचओववत्ता' पूर्वकर्मकृतसञ्चयोपतप्ताः=पूर्वकृतानां कर्मणां सञ्चयेन=समुपार्जनेन उपतप्ताः=सन्तापं प्राप्ताः 'निरयग्निमहग्निगसंपलिता' नरकाग्निमहाग्निसंप्रदीप्ताः=नरकएवाग्निः सन्तापकारकत्वात् नरकाग्निः, स महाग्निरिव अत्युत्कटत्वात् तेन संपदीप्ताः=संतप्ताः 'पावकम्मकारी' पापकर्मकारिणः, 'गाढदुःखमहभयं' गाढदुःखमहाभयं=गाढेन=निविद्धेन दुःखेन महाभयं=विशालभययुक्तां 'कक्कसं' कर्कशां=कठोराम् 'असाय' असाताम्=असातनामवेदनीयकर्मोद्भवां, 'सारीरं' शारीरं 'माणसं' मानसीं च दुविहं=द्विविधां 'तिव्वं' तीव्राम्=अतिशयां 'वेयणं' वेदनां=पीडां वेदयन्ति=अनुभवन्ति । कियत्कालम् ? इत्याह—'बहूणि' बहूनि 'पल्लिओवमसागरोवमाणि' पल्लयोपमसागरोपमाणि=पल्लयोपमाणां कालं,

અથ સૂત્રકાર યહ પ્રકટ કરતે હૈં કિ પાપી જીવ નરકોં મેં કેસી ૨ વેદના કો કિતને કાલતક ભોગતે હૈં—' एवं તે ' इत्यादि-

ટીકાર્થ—(एवं) इस प्रकार (ते पावकम्मकारी) वे पापकारी जीव (पुण्य-कर्मकयसंचओववत्ता) पूर्वकर्म के लिये हुए संचय से अत्यंत संतप्त होकर तथा संतापकारी होने से महाग्नि जैसी नरकरूप अग्नि से संप्रदीप्त होकर (पावयारी) पापकारी जीव (गाढ दुःखमहभयं) निविद्ध-दुःख से अतिशय दुःखवाली ऐसी (कक्कसं) कठोरानिकठोर (सारीरं) शारीरिक, एवं (माणसं) मानसिक, (दुविहं) दोनों प्रकार की (असायं वेयणं) असातना वेदनीय कर्म के उदय से जनित (तिव्वं वेयणं) तीव्र वेदना को (वेदंति) भोगते हैं ऐसी वेदना को वे कितने काल तक भोगते हैं वह कहते हैं (बहूणि पल्लिओवमसागरोवमाणि) इस तरह

હવે સૂત્રકાર એ પ્રગટ કરે છે કે પાપી જીવ નરકોમાં કેવી કેવી વેદનાને કેટલા સમય સુધી ભોગવે છે “ एवं તે ” इत्यादि.

ટીકાર્થ—“एवं” આ પ્રમાણે “ते पावकम्मकारी” તે પાપકારી જીવ “पुण्यकर्मक-यसंचओववत्ता” પૂર્વ કર્મોના સંચયથી અતિશય સંતપ્ત થઈને તથા સંતાપકારી હોવાથી મહા અગ્નિથી સંપ્રદીપ્ત થઈને, “पावयारी” પાપી જીવ “गाढदुःखमहभयं” ભયંકર દુઃખોથી અતિશય દુઃખવાળો, “कक्कसं” અતિશય કઠોર, “सारीरं” શારીરિક અને “माणसं” માનસિક “दुविहं” બંને પ્રકારની “असायं वेयणं” અસાતા વેદનીય કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થયેલ “तिव्वं वेयणं” તીવ્ર વેદનાને “वेदंति” ભોગવે છે. એવી વેદનાને તેઓ કેટલા સમય સુધી ભોગવે છે તે સૂત્રકાર બતાવે છે “बहूणि पल्लिओवमसागरोवमाणि” એ રીતે અનેક પ્રકારની વેદનાને તેઓ ઘણા જ પલ્લોપમ તથા સાગરોપમ

‘કલુષ’ કરુણ-યથાસ્થાત્થા દીનદશમાશ્રિત્યેત્યર્થઃ, ‘પાલેતિ’ પાલયન્તિ= પ્રતીક્ષન્તે ‘કદા મમાયં દુઃસ્વકાલઃ પૂર્ણો ભવિષ્યતી’તિ પ્રતીક્ષમાણા નરકજીવાઃ કાલં યાપયન્તીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૨૭ ॥

તે પુનઃ કિં કુર્વન્તી ? ત્યાહ—

મૂલમ્—તે અહાઉયં જમકાઙ્ગયતાસિયા યસદં કરેતિ ભીયા, કિંતે ? અવિ-ભાય ! સામિ ! ભાય ! વપ્પ ! તાવ ! જિતવં ! મુય મે મરામિ દુઃસ્વલો વાહિપીલિઓ હં કિં ઇદાણિ અસિ, एवं દારુણો ણિદ્ધઓ ય મા દેહિ મે પહારે, અસ્સાસેઁ મુદ્ધુત્તં મે દેહિ, પસાયં કરેહ, મા રુસહ વીસમામિ ગેવિજ્ઞં મુયહ મે, મરામિ, ગાઠં તપ્પહાઙ્ગઓ અહં, દેહિ પાણિયં ॥ સૂ. ૨૮ ॥

ટીકા—તે પૂર્વોક્તાઃ પાપકર્માણઃ ‘અહાઉયં’ યથાયુષ્કં=યથાવદાયુષ્કં= પૂર્વમવ યાવત્કાલપરિમિતમાયુર્વદમાસીત્વાત્પરિમિતં ન તુ ન્યૂનાધિકં દેવનાસ્કા-

કી વેદના વે ઘટ્ટત સે પર્યોપમ તથા સાગરોપમપ્રમાણ કાલતક (કલુષ) કરુણદશા સે, (પાલેતિ) ભોગતે હૈં । ઉસ સમય ઉનકી ઘડી દીનદશા રહતી હૈ । ઓર વે ઇસ બાત કી પ્રતીક્ષા મૈં ઉસ અસહ્ય પીડા કો ભોગતે હુપ કહા કરતે હૈં કિ “ કચ યહ હમારા દુઃસ્વકાલ સમાપ્ત હો ” । ઇસ તરહ વિચારે વે પાપી જીવ વહાં સે નિકલને કે સમય કી પ્રતીક્ષા કરતે હુપ કાલ કો વ્યતીત કરતે રહતે હૈં ॥ સૂ. ૨૭ ॥

ઓર વે કયા કરતે હૈં ? સો મુત્રકાર કહતે હે—‘ તે અહાઉયં ’ હત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—દેવ ઓર નારકીયો આદિકી આયુ નિરુપક્રમ હોતી હૈ—બીચમેં છિદતી બિદતી નહીં હૈં, તીવ્ર શસ્ત્ર, તીવ્ર વિષ, તીવ્ર અગ્નિ આદિ જિન

પ્રમાણ કાળ સુધી “ કલુષ ” કરુણાજનક દશામાં “ પાલેતિ ” ભોગવે છે. તે સમયે તેમની ઘણી દીનદશા હોય છે. અને “ ક્યારે અમારો આ દુઃખનો સમય પૂરો થાય ” એ વાતની રાહ એ અસહ્ય પીડા ભોગવતા ભોગવતા તેઓ જોયા કરે છે. આ રીતે બિચારા પાપી છવો ત્યાંથી નીકળવાના સમયની રાહ જોતાં જોતાં સમય પસાર કરે છે ॥ સૂ. ૨૭ ॥

અને તેઓ શું કરે છે ? તે સૂત્રકાર ખતાવે છે—‘ તે અહાઉયં ’ ઇત્યાદિ.

દેવ અને નારકીઓ આદિનું આયુષ્ય નિરુપક્રમ હોય છે—તે વચ્ચે અકસ્માતોથી છેદાતું છેદાતું નથી, તીવ્ર શસ્ત્ર, તીવ્ર વિષ, તીવ્ર અગ્નિ આદિ જે કારણોથી

સુશિનો ટીકા અ૦ ૧ સુ૦ ૮ નારકાઃ કિં કિં વદન્તિ ?

૧૭૭

દીનાં નિરુપક્રમાયુષ્કત્વાત્, ઉક્તઞ્ચ—

“દેવા નેરહ્યા વિ ય, અસંસ્વવાસાડયા તિરિયમણુયા ।

ઉત્તમપુરિસા ય તદ્દા, ચરમસરીરા નિરુવક્કમતી ॥ ૧ ”

નિમિત્તોસે અકાલમૃત્યુ હતી છે એ નિમિત્તોંકા પ્રાપ્ત હોના ઉપક્રમ છે. યહ ઉપક્રમ દેવ ઓર નારકિયોં કે તથા ચરમદેહધારી એવં ઉત્તમ દેહવાલોં કે પ્રાપ્ત નહીં હોતા છે । ચરમદેહ ઓર ઉત્તમપુરુષોં કે યહ ઉપક્રમ કદાચ પ્રાપ્ત હો મી જાવે તો વહુ ડન કી આયુ અનપવર્તનીય હી હોતી છે, ઇસ નિયમ કે અનુસાર (તે) વે પાપકારી જીવ (અહાડયં) ઇતને પ્રકાર કી પ્રાણાન્તક વેદના કો ભોગને પર વીચ મેં મરતે નહીં હૈં—અર્થાત્—ડનકી અકાલ મેં મૃત્યુ નહીં હોતી છે ક્યોં કિ પૂર્વભવ મેં જિતની આયુ યહાં કી ડન્હે ને વાંધલી થી ડતની આયુતક વે વહાં રહતે હૈં કમ યા જ્યાદા સમય તક નહીં રહતે । કહા મી છે—

“દેવા નેરહ્યા વિ ય, અસંસ્વવાસાડયા તિરિયમણુયા ।

ઉત્તમપુરિસા ય તદ્દા, ચરમસરીરા નિરુવક્કમતી ” ॥૧॥

ઇસ ગાથા કે અર્થકી સૂચના યદ્યપિ કુછ રૂપ મેં ડપર કર દી ગઈ છે ફિર મી સ્પષ્ટરૂપ મેં ઇસ પ્રકાર છે—દેવ, નારકી, અસંસ્વવાસવર્ષ કી આયુવાલે, તિર્યંચ ઓર મનુષ્ય—ત્રીસ અકર્મ ભૂમિયોં, છપ્પન અન્તદ્વીપોં ઓર ભરતાદિશ્ચેત્ર મેં ઉત્પન્ન યુગલિક તથા ટાઈદ્વીપ કે વાહર કે દ્વીપ

અકાળ મૃત્યુ થાય છે તે કારણેનું પ્રાપ્ત થવું તે ઉપક્રમ કહેવાય છે. તે ઉપક્રમ દેવ અને નારકીઓને તથા ચરમ દેહધારી અને ઉત્તમદેહધારીને પ્રાપ્ત થતો નથી. ચરમ દેહધારી અને ઉત્તમપુરુષોને કદાચ તે ઉપક્રમ પ્રાપ્ત થાય તો પણ તેનું આયુષ્ય અનપવર્તનીય—નિશ્ચિત કાળનું જ હોય છે. તે નિયમ પ્રમાણે ‘તે’ તે પાપકારી છોવે “અહાડયં” આટલા, પ્રકારની પ્રાણાંતક વેદના ભોગવવા છતાં પણ વચ્ચે મૃત્યુ પામતા નથી, એટલે કે તેમનું અકાળ મૃત્યુ થતું નથી કારણ કે પૂર્વભવમાં તેમણે અહીંનું જેટલું આયુષ્ય ખાંધ્યું છે તેટલું આયુષ્ય પૂરું થાય ત્યાં સુધી તેઓ અહીં જ નરકાદિમાં—રહે છે, વધારે કે ઓછો સમય રહેતો નથી. કહ્યું પણ છે—

“દેવા નેરહ્યા વિ ય, અસંસ્વવાસાડયા તિરિયમણુયા ।

ઉત્તમપુરિસા ય તદ્દા, ચરમસરીરા નિરુવક્કમતી ” ॥ ૧ ॥

આ ગાથાના અર્થનું સૂચન થોડા પ્રમાણમાં કહેવામાં આવ્યું છે. તેનો સ્પષ્ટ અર્થ આ પ્રમાણે છે. દેવ, નારકી, અસંસ્વવાસ વર્ષના આયુષ્યવાળાં તિર્યંચ અને મનુષ્ય—ત્રીસ અકર્મ ભૂમિયો, છપ્પન અન્તદ્વીપો અને ભરતાદિ ક્ષેત્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ યુગલિક તથા અહીં દ્વીપની બહારના દ્વીપ સમૂહોમાં રહેતાં

‘ जमकाइय तासिया ’ यमकायिक त्रासिताः—यमकायिकैः पञ्चदशविधैः परमाधार्मिकैः अम्बाम्बरीषादिभिर्त्रासिताः=त्रासं प्रापिताः ‘ भीया ’ भीताः=भयव्याकुलाः सन्तः ‘ सद् ’ शब्दः=वक्ष्यमाणप्रकारमार्त्तनादं ‘ करेति ’ कुर्वन्ति । ‘ किं ते ’ के ते आर्त्तशब्दाः ? इत्याह—‘ अविभाये ’त्यादि ‘ अवि ’ अपि—वाक्यालङ्कारे ‘ भाय ’ भाग—हे महाभाग=सामर्थ्यवत्त्वात्, ‘ सामि ’ हे स्वा-मिन् ! अधिपतित्वात्, ‘ भाय ’ हे भ्रातः ! — सहायकत्वात्, ‘ बप्प ’ हे पितः ! — पाळकत्वात्, ‘ ताथ ’ हे तात ! — त्रायकत्वात्, ‘ जितवं ’ हे जितवन् । =हे विजयिन् ! — विजयशालित्वात्, ‘ म्हुय मे ’ मुञ्च मां ‘ मरामि ’ म्रिये, अहं ‘ दुब्बलो ’ दुर्बलः=बलहीनः ‘ बाहि पीलिओ ’ व्याधि पीडितः, ‘ किं किमर्थं त्वम् ’ इदानीं इदानीम्=अस्मिन्-समये ‘ दारुणो ’ कटोरः, ‘ णिइओ ’ समुद्रों में भी पाये जाने वाले तिर्यच-उत्तमपुरुष-तीर्थंकर, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव, आदि, एवं चरमशरीरी-उत्सी भव से मोक्ष जाने वाले जीव, ये सब निरूपक्रम आयुवाले होते हैं ॥१॥

पापी जीव वहां (जमकाइयतासिया) यमकायिक-पन्द्रह प्रकार के परमार्थार्थिक अम्ष और अम्बरीष आदि देवों के द्वारा त्रास को प्राप्त कराये जाते हैं । (भोया) इसलिये भय से सदा व्याकुल बने हुए वे वहां पर (सहं) आर्त्तनाद (करेंति) किया करते हैं (किं ते ?) वे कौन ? शब्द करते हैं ? वही कहते हैं—(अचिभाय) हे महाभाग ! (सामि) हे स्वामिन् ! (भाय) हे भाई ! (वप्प) हे पिता ! (ताय) हे तात ! (जितवं) हे विजयन् ! (मुय मे) तू मुझे छोड़ दे, (मरामि) मैं मर रहा हूं, (दुब्बलो) मैं बलहीन हूं, (वाहिपीलिओहं) व्याधि से पीड़ित हो रहा हूं, (किं ह्याणि) क्यों इस समय तू मेरे ऊपर (एवं) इस प्रकार से (दारुणो निहओ य असि)

તિથેય, ઉત્તમ પુરૂષ-તીર્થ" કર, ચક્રવર્તી, જળદેવ, વાયુદેવ આદિ, અને ચરમ-શરીરી-એજ ભવમાં મોક્ષે જનારા જીવો, એ સઘળા નિરુપકમ આયુધ્યવાળા હોય છે. ૧૧૧ ત્યાં પાપી જીવો " જમકાચ તાવિય" યમકાયિક-પંદર પ્રકારના પરમાધાર્મિક અમ્મ અને અમ્મરીય આદિ જીવો દ્વારા ત્રાસ પામે છે, "મીયા" તેથી ભયથી વ્યાકુળ બનેલા તે જીવો ત્યાં " સદં " આર્તનાદ " કરેતિ " કરે છે. " કિંતે ? " તેઓ કેવા કેવા શબ્દો બોલે છે ? તે હવે કહેવામાં આવે છે. " અવિમાચ " હે મહાભાગ ! " સામિ " હે સ્વામિન્ ! " માય " હે ભાઈ ! " વપ્પ " હે પિતાજી ! " હે તાય " હે તાત ! " જિત્તવ " હે વિજયી ! " મુય મે" તું મને છેડી દે, " મરામિ " હું મરી રહ્યો છું, " દુલ્લલો " હું નિર્ભય છું, " વાહિપીલિઓહં " વ્યાધિથી પીડાઈ રહ્યો છું, " કિં જ્યાણિ " અત્યારે તમે મારા પ્રત્યે "ઈવં" આ રીતે "દારુણો નિદ્ધઓ ય અસિ" કંઠાર અને નિદેય

सुदर्शिनी टीका अ० १ सू० २९ यथाः नारकान् प्रति किं कुर्वन्ति ? १०९

निर्दयः—दयारहितः, 'असि' भवसि ?, मा देहि 'मे' मल्लं 'पहारे' महारान् मां
मा ताडयेत्यर्थः । 'अस्सासेउं' उच्छ्वसितुं=श्वासमात्रं ग्रहीतुं 'मे' मल्लं 'मुहुत्तं'
मुहुत्तं=क्षणमात्रं देहि, येन श्वासमात्रमपि सुखमनुभवामीति भावः, 'पसायं'
पसादम्=अनुग्रहं 'करेह' कुरुत 'मा रुसह' मा रुष्यत=क्रोधं मा कुरुत । 'वीस-
मामि' विश्रमामि=किञ्चित्कालं विश्रामं करोमि अतः 'मे' मम 'गेविज्जं'
प्रेषयेकं=ग्रीवावन्धनं 'मुयह' मुञ्चत=त्यजत यतो हि-अहं 'मरामि' म्रिये,
गाढं=अत्यधिकं 'तण्हाइओ' तृष्णादितः पिपासाकुलितोऽस्मि मे=मल्लं 'पाणिंयं'
पानीयं=जलं देहि ॥ सू० २८ ॥

एवं नारकैः कथिते सति यमपुरुषाः यत् कुर्वन्ति तदाह—'ताहे तं' इत्यादि ।

मूलम्—ताहे तं पिय इमं जलं विमलं सीयलंति घेत्तूण य
नरयपाला तवियं तउयं से दिंति कलसेण अंजलीसु दहूण य
तं पवेवियंगोवंगा अंसुपगलं तपप्पुयच्छा छिण्णा तण्हा इयम्ह
कलुणाणि जंपमाणा विप्पेक्खंता दिसोदिसिं अत्ताणा असरणा
अणाहा अबंधवा चंधुविप्पहीणा विपलायंति य मियविववेगेण
भउव्विग्गा, घेत्तण वला पलायमाणाणं निरणुकंपामुहं विहाडेउं
लोहदंडेहि कलकलण्हं वयणंसि लुभंति केइ जमकाइया हंसता॥२९

कठोर और निर्दय हो रहे हो, (मा देहि मे पहारे) मुझ पर प्रहार मत
करो (अस्सासेउं मुहुत्तं मे देहि) मुझे कम से कम मुहुत्तं=क्षण मात्र
श्वास तो लेने दो, (पसायं करेह) मेरे ऊपर दया करो, (मा रुसह) मुझ
पर क्रोध मत करो, (वीसमामि) मैं कुछ काल तक विश्राम करना चाहता
हूँ-अतः (गेविज्जं मुयह मे) मेरी ग्रीवा के बंधन को तुम छोड़ दो,
देखो (गाढं तण्हाइओ अहं) गहरी प्यास से व्याकुल होकर मैं मर रहा
हूँ अतः मेरे लिये (देहि पाणिंयं) पीने को जल दो ॥सू. २८॥

डेभ भनी रह्यो छै ? "मा देहि मे पहारे" भारा पर प्रहार न करो, "अस्सा-
सेउं मुहुत्तं मे देहि" भने आछाभां आछी ओक क्षण भाटे तो श्वास लेवा दो,
"पसायं करेह" भारा उपर दया करो, "मा रुसह" भारा उपर क्रोध न करो,
"वीसमामि" हुं थोडा समय विश्राम करवा भाशुं छुं तो "गेविज्जं मुयह मे"
भारी डोकभांनुं बंधन तमे छोडी दो, लुये "गाढं तण्हाइओ अहं" भारे
तृषाथी व्याकुल यधने हुं भरी रह्यो छुं तो भने "देहि पाणिंयं" पीवाने
भाटे जल आये।" ॥ सू. २८ ॥

ટીકા—યદિ ત્વં પિપાસિતઃ ‘તાદે’ તદા ‘તં’ ત્વં ‘ઈમં’ ‘ઈદં’ ‘વિમલં’ નિર્મલં ‘સીયલં’ શીતલં જલં ‘પિય’ પિય, ઇતિ કથયિતા ‘નરયપાલા’ નરકપાલાઃ=પરમાધાર્મિકાઃ ‘તવિયં’ તાપિતમ્=ઉત્કાલિતં ‘તડયં’ ત્રપુકં=‘કથીર’ ઇતિ પ્રસિદ્ધં સીસકં વા, ‘કલસેણ’ કલસેન=ઘટેન ‘સે’ તસ્મૈ નારકાય ‘અંજલીસુ ય’ અંજલિષુ ચ ‘દિતિ’ દદતિ । ‘તં’ તત્=તાપિતં ત્રપુ ‘દહ્નુ’ દૃષ્ટા=અવલોક્ય ‘પવેવિયંગોવંગા’ પ્રવેપિતાન્નોપાઙ્ગાઃ=પ્રકર્ષેણ વેપિતાનિ=કમ્પિતાનિ અંજ્ઞાનિ ઉપાઙ્ગાનિ ચ યેપાં તે તથા=કમ્પિતસર્વશરીરાઃ ‘અંસુ-પગલં-ત-પણુચ્છા’ પ્રગલદશ્રુપ્લુતાશ્ચાઃ=પ્રગલદ્વિઃ અશ્રુભિઃ પ્રપ્લુતે=વ્યાપ્તે અક્ષિણી=નયને યેપાં તે તથા, પ્રક્ષરત્પવલાશ્રુધારાઃ સન્તઃ ‘અમ્હ’ અસ્માકં ‘તળ્હા’ તૃષ્ણા ‘છિળ્હા’ છિન્ના=નષ્ટા ‘ઈય’ ઇતિ=એવમુક્ત્વા ‘કલુણાણિ’ કલુણાનિ

इस प्रकार नारक जीवों के कहने पर परमाधार्मिक जो कुछ उनके साथ करते हैं वह सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—‘ताहे’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(તાહે તં) યદિ તુમ પિપાસિત હો તો (ઈમં) ઇસ (વિમલં) નિર્મલ (સીયલં) શીતલ (જલં) જલ કો (પિય) પિયો એસા કહ કર (નરયપાલા) વે નરકપાલ પરમાધાર્મિક દેવ (તવિયં) ઉઘાલે હુણ કથીર કો અથવા સીસે કો (કલસેણ) કલશ મેં ખરકર (સે) ઉસ નારકી કે લિયે (અંજલીસુ) અંજલિ મેં (દિતિ) દેતે હૈ । (તં) ઉસ તપે હુણ ત્રપુ-સીસે કો (દહ્નુ ય) દેઘકર (પવેવિયંગોવંગા) ઉન નારકિયોં કા સમસ્ત શરીર-અંગ-ઉપાંગ બહુત અધિક રુપ મેં કંપને લગતે હૈ । ઓર (અંસુપગલંતપણુચ્છા) ઉસી સ્થિતિ મેં વે નિકલતે હુણ આંસુઓં સે અપની આંખોં કો વ્યાસ કરકે ઉનસે કહતે હૈ કિ (છિળ્હા તળ્હા અમ્હ) અથ હમારી પ્યાસ શાંત હો ગઈ હૈ (ઈય) ઇસ

નારકી જીવોના એ પ્રકારના શબ્દો સાંભળીને પરમાધર્મી તેમની સાથે કેવો વર્તાય કરે છે તે સૂત્રકાર બતાવે છે—“તાહે” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“તાહે તં” એ તમને તરસ લાગી હોય તો “ઈમં” આ “વિમલં” નિર્મળ, “સીયલં” શીતળ “જલં” પાણી “પિય” પીવો. એમ કહીને “નર-યપાલા” તે નરકપાલ પરમાધાર્મિક દેવો “તવિયં” ઓગાળેલ ગરમ કથીર અથવા સીસાને “કલસેણ” કળશમાં ભરીને “સે” તે નારકીને “અંજલીસુ” અંજ-લિમાં “દિતિ” આપે છે. “તં” તે ગરમ ગરમ ત્રપુ-સીસાને તૃદ્નુ ય” એકને “પવેવિયંગોવંગા” તે નારકીઓનાં અંગ ઉપાંગ અત્યંત કંપવા લાગે છે. “અંસુપગલંત પણુચ્છા” તે સ્થિતિમાં આંસુભરી આંખે તેઓ તેમને કહે છે કે “છિળ્હા તળ્હા અમ્હ” હવે હમારી તૃપા શાંત થઈ ગઈ છે. “ઈય” આ

सुदर्शनी टीका अ० १ सू० ३० वेदनापीडितनारकाकन्दनिरूपणम् १११

वचनानि 'जंपमाणा' जल्पमानाः=प्रलपन्तः 'दिसोदिसि' दिशोदिशं=एकस्याः दिशोऽन्यां दिशमितस्तत इत्यर्थः 'विप्पेक्खंता' विप्रेक्षमाणाः=समन्तात् पश्यन्तः 'अत्ताणा' अत्राणाः=रक्षाहीनाः, अतएव 'असरणा' अशरणाः=शरणरहिताः, अतएव 'अणाहा' अनाथाः=दीनाः, 'अबंधवा' अबान्धवाः=बान्धवरहिताः, 'बंधुविप्पहीणा' बन्धुविपहीणाः=विद्यमानसम्बन्धिविप्रयुक्ताः, 'मियविव' मृगा इव 'भउव्विग्गा' भयोद्विग्नाः=भयव्याकुलाः 'वेगेण' वेगेन 'विपलायंति' विपलायन्ते=प्रधावन्ति, ततः प्रधावमानान् तान् नारकान् 'बला' बलात् 'घेतूण' गृहीत्वा 'निरणुकंपा' निरनुकम्पाः=दयारहिताः 'केइ' 'केऽपि' 'जमकाइया' यमकायिकाः=परमाधार्मिकाः, हसंता' हसन्तः 'पलायमाणाणं' पलायमानानां च तेषां 'मुहं' मुखं 'लोहदंढेहि' लोहदण्डैः, 'विहाडेउं' विघाटय=उद्धाट्य 'कलकलं' अतितप्तत्वात् कल-कल शब्दयुक्तं पूर्वोक्तं त्रपुक्तं

प्रकार कहकर वे (कलुणाणि जंपमाणा) करुणा वचनोंका उच्चारण करते हुए (दिसोदिसि विप्पेक्खंता) वहां से दूसरी दिशा में इधर उधर देखते हुए (अत्ताणा) रक्षक रहित (असरणा) शरण रहित (अणाहा) विनानाथ के (अबंधवा) दीनदशा संपन्न (बंधुविप्पहीणा) बांधवों से रहित-रक्षक जनों से रहित, अतः (भउव्विग्गा) भय से व्याकुल बन कर वे (मियविव) मृगों की तरह वहां से (वेगेण) वेगपूर्वक (विप्पलायंति) भागते हैं । इसके बाद भागते हुए उन नारकियों को (बला-घेतूण) जबर्दस्ती से पकड़कर (निरणुकंपा) दयारहित बने हुए (केइ) कितनेक (जमकाइया) यमकायिक परमाधार्मिक देव (हसंता) हँस हँसकर (पलायमाणाणं) पलायन करते हुए उनके (मुहं) मुख को (लोहदंढेहि) लोहदंडों से (विहाडेउं) फाड़कर फिर उसमें (कलक-

प्रभाषे ठहीने "कलुणाणि जंपमाणा" कश्चाञ्जनक पथने भोलता, "दिसो दिसि विप्पेक्खंता" त्यांथी भीछ दिशामां आम तेम भेता, "अत्ताणा" रक्षक विनानां "असरणा", शरण विनाना, "अणाहा" अनाथ, "अबंधवा" दीनदशामां भूक्षयेला, "बंधुविप्पहीणा" बांधवो विनाना-रक्षण करनार विनाना, अथा ते नारकी ओवो "भउव्विग्गा" लयथी व्याकुण भनीने "मियविव" मृगेनी लेम त्यांथी "वेगेण" वेगथी "विप्पलायंति" लागे छे. त्याण्णाह लागतां अथा ते नारकी ओवोने "बलाघेतूण" ओर लुलभथी पकडीने "निरणुकंपा" दया रहित भनेला "केइ" डेटलाइ "जमकाइया" यमकायिक, परमाधार्मिक देवो "हसंता" हसी हसीने "पलायमाणाणं" नासता अथा तेमना "मुहं" मुणने "लोहदंढेहि" दोढाना

‘પ્હં’ ઇતિ વાક્યાલક્ષારે તેષાં ‘વયણંસિ’ વદને=મુખે ‘હુમંતિ’ સિપન્તિ= પાયયન્તીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૨૯ ॥

તતો નારકાઃ કિં કુર્વન્તિ ? તદાહ—‘તેણ દહ્વા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તેણ દહ્વા સંતો રસંતિ ય ભીમાઈં વિસ્સરાઈં રુવંતિ
ય કલુણગાઈં પારેવયગા ઇવ એવં પલવિય વિલાવ કલુણો
કાંદિય—બહુરુચ્ચ રુચ્ય સહો પરિદેવિય રુચ્ચવદ્વય નારગારવ
સંકુલો ણીસિટ્ઠો ॥ સૂ. ૩૦ ॥

ટીકા—‘તેણ’ તેન=મુખ નિશ્ચિન્તેન તપ્તેન ત્રપુણા ‘દહ્વાસંતો’ દગ્ધાઃ
સન્તઃ ‘ભીમાઈં’ ભીમાન્=ભયાનકાન્=હૃદયશ્લોભજનકાન્ ‘વિસ્સરાઈં’ વિસ્સરાન્
=આર્તનાદાન્ ‘હા ! હા !’ ‘હતાવયમ્’ ઇત્યાદિરૂપાન્ ‘રસંતિ’ રસન્તિ=
કુર્વન્તિ । મૂત્રે પ્રાકૃતત્વાન્નપુંસકમ્ । તથા ‘પારેવયગા ઇવ’ પારાવતકા ઇવ=કપોતા
ઇવ ‘કલુણગાઈં’ કલુણકાનિ હૃદયદ્રાવકાણિ ‘રુવંતિ’ રુદન્તિ । એવં ‘પલા-

લપ્પહં) કલકલાતે ઉસ અત્યંત ગરમ સીસે કો (વયણંસિ) મુખ મેં
(હુમંતિ) ડાલ દેતે હૈં, અર્થાત્ ઉન નારકિયોં કો પિલા દેતે હૈં ॥ સૂ. ૨૯ ॥

इसके बाद वे नारकी क्या करते हैं अथ सूत्रकार इस विषय को स्पष्ट करते हैं—‘तेण दह्वा संतो’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(તેણ દહ્વા સંતો) મુખ મેં જવર્દસ્તી ફાફર ડાલે ગયે ઉસ
તસ સીસેસે દગ્ધ હુવે વે નારકી (ભીમાઈં) હૃદય કો શ્લોભ પહુંચાને વાલે
પેસે (વિસ્સરાઈં) આર્તનાદોં કો (રસંતિ) કરતે હૈં— “હાય ! હાય !
માર ડાલા” હમ પ્રકાર સે ચિલ્લાતે હૈં । તથા (પારેવયગા ઇવ) કબૂ-
તરોં કી તરહ (કલુણગાઈં) હૃદય કો દ્રવીભૂત કરને વાલા આક્રંદન

દંડાઓથી “વિહાડેવ” પહોળાં કરીને તેમાં “કલકલ્પહ” કળકળતા તે અત્યંત
ગરમ સીસાને “વયણંસિ” મુખનાં “હુમંતિ” રેડી દે છે. એટલે કે તે નાર-
કીઓને પીધરાવે છે. ॥ સૂ. ૨૯ ॥

ત્યારબાદ તે નારકી જીવો શું કરે છે, વિષયને હવે સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે
“તેણ દહ્વા સંતો” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—‘તેણ દહ્વા સંતો’ બેર ગુણમયી મોહુ પહોળું કરીને રેડવામાં
આવેલ તે ગરમ સીસાથી કાઢેલા તે નારકી જીવો ‘ભીમાઈં’ હૃદયને શ્લેષ પમાડે
તેવા “વિસ્સરાઈં” અર્તનાદો “રસંતિ” કરે છે—“હાય ! હાય ! મારી નાખ્યા”
આ પ્રકારની ચીસો પાડે છે; તથા ‘પારેવયગા ઇવ’ કબૂતરોની જેમ “કલુણગાઈં”
હૃદય દ્રાવક આક્રંદ “રુવંતિ” કરે છે, “એવં” આ પ્રકારના તેમના “પલવિય

सुवर्शिनी टीका अ०१ सू० ३० वेदनापीडितनारकाकन्दनिर्घोषवर्णनम् ११३

विय विलावकलुणो' प्रलापितम्=अनर्थकवचनं 'विलापः' 'हा तात ! हा मात !' इत्यादि लक्षणं विलापकरणं, ताभ्यां करुणो यः स तथा । 'कंदिय बहुरुन्नरुह्यसदो' कन्दित-बहुरुन्नरुदितशब्दः = कन्दितम्=चीत्कारः बहु=प्रचुरं 'रुन्न' रोदनम्-सशब्दमश्रुमोचनम् 'रुह्य' रुदितम्=मस्तकादिताडनपूर्वकं रोदनम्, एतेषां शब्दो यस्मिन् स तथा 'परिदेवि य रुद्वद्वय नारयारवसंकुलो' परिदेवितरुद्वद्वयनारकारवसंकुलः = परिदेवताः = परधार्मिकैर्विलापं प्रापिताः रुद्धाः=वाटकेऽजादिवद्वरुद्धाः, वद्वकाः=बन्धनं प्राप्ताश्च ये नारकास्तेषामारवैः=शब्दैः संकुलाः=व्याप्तो यः स तथा, 'णीसिद्धो' निमृष्टः=नारकैः कृतः निर्घोषः-प्रचलदुःखजनितो महाशब्दः श्रूयते इत्यग्रेण सम्बन्धः ॥सू०३०॥

(रुचंति) करते हैं (एवं) इस प्रकार उनका (पलवियविलावकलुणो) प्रलाप-अनर्थकवचनरूप तथा विलाप रूप " हा तात ! हा मात " इत्यादि रूप तथा वहां नारकियों के मुख से जो प्रचल दुःख के वेग के समय शब्द निकला करते हैं वे प्रलाप और विलाप वाले तो होते ही हैं साथ २ में उनमें (कंदिय बहुरुन्नरुह्यसदो) चीत्कार प्रचुर रोदन एवं मस्तक आदि ताडनपूर्वक रुदित, अर्थात् नारकी जो वहां चिल्लाते विछाते हैं वह इस ढंग से होता है कि वे उसमें बोलते २ रोते हैं, आंसुओंको ढार कर बिछाते हैं । मस्तक, छाति आदिको कूटते पीटते हैं, और रोते जाते हैं । इस तरह (परिदेविय-रुद्वद्वय नारयारवसंकुलो) परधार्मिकों द्वारा वे नारकी वहां विलापाये जाते हैं । बाड़े में जिस प्रकार बकरियां आदि रोककर बांधी जाती हैं उसी प्रकार वे भी उनके द्वारा रोक लिये जाते हैं, बांध दिये जाते हैं उनके शब्द से व्यास ऐसा

विलाव कलुणो" प्रलाप-अनर्थक वचनरूप तथा विलापरूप " हे तात ! हे मा ! इत्यादि रूप तथा त्यां प्रणम दुःखना आवेगशी नारकीज्जिनां मुग्धमां जे शब्दो नीकणे छे ते प्रलाप अने विलापवाणा तो छाय ज छे, पण तेनी साथे साथे तेमा "कंदिय बहुरुन्नरुह्यसदो" चीत्कार सहिततुं इहन. अने माथुं आदि पछाडीने इहन पण थतुं छाय छे. अटले के नारकीज्जो त्यां जे चीसो पाडे छे. अने विलाप करे छे. ते जेवी रीते साथ छे के तेज्जो ते किया करती वभते ओलतां ओलतां रडे छे अने आंसु सारी सारीने आकंड करे छे. माथु, छाती आदिने कूटता पट्टता जथ छे अने रडे छे. आ प्रमाणे "परिदेविय-रुद्वद्वय नारयारवसंकुलो" परधार्मिको द्वारा ते नारकीज्जोने त्यां रडाववामां-विलाप करवामां आवे छे. जे रीते वाडाभां अकरीज्जो आदिने शैकीने आंधी देवामां आवे छे जे ज प्रमाणे तेज्जोने पण तेभना पडे रोकवामां आवे छे, बांध-

સ કીદશો નિર્ગોષઃ ? इत्याह—‘ रसिये ’ त्यादि ।

મૂલમ—રસિય—ભણિય—કુવિય—ઉક્કૂહય—નિરયપાલતજ્ઞિય—
ગેળહ કમ પહર છિંદ મિંદ ઉપાડેહુક્કયણાહિ કત્તાહિ વિકત્તાહિ
ય મંજહણ વિહણ વિચ્છુભોચ્છુભ આકહુ વિકહુ કિં ણજંપસિ?
સરાહિ પાવકમ્માઈં કિયાઈં વુક્કયાઈં એવં વયણમહપ્પગમ્મો
સંપડિ સુયસદ્સંકુલો ઉત્તાસઓ સયા નિરયગોયરાણ મહાણ-
ગરડજ્ઞમાણસરિસો નિમ્મોસો સુવ્વણ અણિટ્ટો તહિયં નેરહ-
યાણં જાહજ્જંતાણં જાયણાહિં ॥ સૂ. ૩૧ ॥

ટીકા—‘ રસિય-ભણિય - કૂહય - ઉક્કૂહયનિરયપાલતજ્ઞિય ’ રસિત-
મણિત-કુપિતોત્કૂજિત-નરકપાલ-તર્જિત-તત્ર-‘ રસિય ’ રસિતા:=અકરવદ્ ધોર-
શબ્દકારકાઃ, ‘ ભણિય ’ મણિતા:=ઉચ્ચૈઃ શબ્દકારકાઃ, ‘ કૂહય ’ કૂજિતા:=અવ્યક્ત-
ધ્વનિકારકાઃ, ‘ ઉક્કૂહય ’ ઉત્કૂજિતા:=મયજનકાવ્યક્તશબ્દકારકાઃ યે ‘ નિરય-
(ણીસિટ્ટો) પ્રબલ દુઃસ્વજનિત મહા શબ્દ વહાં ‘ સુના જાતા હૈ ’ (યહ
આગે સે સમ્બન્ધ હૈ) ॥ સૂ. ૩૦ ॥

उस समय परमाधार्मिक परस्पर में किस प्रकार की घातचीत करते है ? यह सूत्रकार कहते हैं—‘ रसिय-भणिय ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—નરકોં મેં નારકિયોં કો હરણક પ્રકારસે વ્યથા પહુંચાનેવાલે
બે પરમાધાર્મિક નારકિયોં કો ફિર અધિક કષ્ટ પહુંચાને કે અભિપ્રાયસે
(રસિય-ભણિય-કૂહય-ઉક્કૂહય-નિરયપાલતજ્ઞિય) (રસિય) સૂઅરકે જૈસે
અયંકર ધોર શબ્દોં કો (ભણિય) ઉચ્ચસ્વર સે કરતે હૈં ! ઉસ મેં બે
(કૂહય) અવ્યક્ત ધ્વનિ કરતે હૈં (ઉક્કૂહય) હસ સે નારકિયોં કો ઔર

વામાં આવે છે. અને તેના શબ્દોથી વ્યાસ એવો ‘ ણીસિટ્ટો ’ પ્રબળ દુઃખ-
જનિત ચિત્કાર ત્યાં ‘ સંભળાય છે ’ (આ પ્રમાણે આજળના શબ્દો સાથે
સંબંધ છે.) ॥ સૂ. ૩૦ ॥

તે સમયે પરમાધાર્મિકો પરસ્પર કેવી ઘાતો કરે છે તે સૂત્રકાર બતાવે
છે— ‘ રસિય-મણિય ’ इत्यादि.

ટીકાર્થ—નરકોમાં નારકીઓને દરેક રીતે વ્યથા પહોંચાડનાર તે પરમાધાર્મિકો,
નારકીઓને હજી પણ વધારે કષ્ટ આપવાને માટે “ રસિય-મણિય-કૂહય, ઉક્કૂહય
-નિરયપાલતજ્ઞિય ” “ રસિય ” સૂઅરનાં જેવાં ભયંકર ધોર ધ્વનિ “ મણિય ”
હવે સ્વરે કરે છે. તેઓ “ કૂહય ” અવ્યક્ત ધ્વનિ કરે છે. “ ઉક્કૂહય ” તે

સુદર્શિની ટીકા અં ૧ સુ૦ ૩૧ વેદનાપીઢિતનારકાકાન્દિનિર્ગોષવર્ણનમ્ ૧૧૫

પાલ' નિરુપપાલાઃ=પરમાધાર્મિકાઃ, તેણાં 'તર્જિયં' તર્જિતં=નારકજીવાન્ લક્ષી-
કૃત્ય પરસ્પરં તર્જનાઙ્ગાવાક્યં વક્ષ્યમાણપ્રકારમસ્તિ, તથાહિ-અમ્બાભિઃ પરમાધા-
ર્મિકોઽમ્બરીષઃ કથયતિ-હે અમ્બરીષ ! એને પલાયમાનં પાપિનં નારકં 'ગેહ્'
ગૃહાણ । एवं પરસ્પરમેકઃ પરમાધાર્મિકો દ્વિતીયં કથયતિ-એનં નારકં 'કમ' ક્રમ=
પાદપદારેઃ પીડય 'પહર' મહર-એનં નારકં દણ્ડાદિમિસ્તાડય 'હિદ' છિન્ધિ
=સ્વઙ્ગાદિભિઃ સ્વણ્ડશઃ કુરુ 'મિદ' ભિન્ધિ-મલ્લુકાદિભિર્મેદય 'ઉપ્પાડેહ'
ઉપ્પાટય=શરીરાત્વચાદિકં પૃથક્કુરુ 'ઉક્ષણાહિ' ઉત્પલન=નિષ્કાસય અશ્વિનો-
લાદિકમ્ 'કત્તાહિ' કૃન્ત=હેદય-હુરિકાદિભિર્નાસિકાદિકં, તથા-'વિકત્તાહિ'
વિકૃન્ત=કર્ણનાસિકાદિકં મૂલતરછેદય, 'મંજ' મઙ્ગ=શ્વતપાદાદિકં ત્રોટય, 'હળ'
ઝહિ=શ્વતઘ્ન્યાદિભિર્મારય, 'વિહળ' વિઝહિ-મહાશિલાદિ પાવનાદિભિરનેકપકારેઃ

અધિક ભય ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । હસ પ્રકાર રસિત, ભણિત, કૂજિત
એવં ઉત્કૂજિત શબ્દ કરને વાલે ડન પરમાધાર્મિકોં કી તર્જિત-નારકિયોં
કો લક્ષ્ય કરકે જો પરસ્પર મેં કપ્પાદિ પહુચાનેવાલી વાતચીત હોતી હૈ
વહ હસ પ્રકાર હૈ-(ગેહ) અમ્બ નામ કા પરમાધાર્મિક અમ્બરીષ સે
કહતા હૈ-હે અમ્બરીષ ! તૂ હસ ભાગતે હુપ પાપી નારકી કો પકડ લો
ઔર (કમ) હસ કો લાતોં સે મારોં । વાદ મેં (પહર) હસેદંડોં સે સ્ખૂષ
પીટો । (હિદ) ડ્યાદા ઔર કયા કહું-તલવાર આદિ સે હસકે શરીર
કે સ્વંડ ૨ કર ડાલો । (મિદ) ખાલા આદિ સે હસકે શરીર કો મેદ
ડાલોં (ઉપ્પાડેહ) હસકી સ્વાલ ઉતારલો, (ઉક્ષણાહિ) હસકી આંસે
નિકાલ લો, (કત્તાહિ) હસકા નાક કાટ ડાલો (વિકત્તાહિ) કર્ણ
નાસિક આદિ હિન્દ્રિયોં કો મૂલ સે વિલકુલ સાફ કર ડાલો । (મંજ)
હાથ પૈર આદિ કો મરોડ ડાલો । (હળ) શ્વતઘ્ની આદિ સે હસકો
ધુરી તરહ સે મારો । (વિહળ) મહાશિલા આદિ કે ડપર હસે
પછાર ડાલો । (વિચ્છુભ) કુપ આદિ મેં હસે પટક દો । (ઉચ્છુભ)

અરણ્યે નારકીએને વળી વધારે લખ લાગે છે. એ રીતે રસિત, લક્ષિત, કૂજિત,
અને ઉત્કૂજિત શબ્દ કરનારા તે પરમાધાર્મિકોથી તર્જિત-નારકીએને ચીંધીને,
તેમને કષ્ટ દેનારી પરસ્પરમાં જે વાતચીત થાય છે તે આ પ્રકારની હોય છે-
“ગેહ” અમ્બ નામના પરમાધાર્મિક અમ્બરીષને કહે છે-“હે અમ્બરીષ !
તું આ નાસી જતાં પાપી નારકીને પકડી લે અને “કમ” તેને લાતો માર.
પછી “પહર” તેને દંડા વડે ખૂબ ફટકાર “હિદ” વધારે શું કહું ! તલવાર
આદિથી તેના શરીરના ટૂકડે ટૂકડા કરી નાખ. “મિદ” ભાલા આદિ વડે તેના
શરીરને વીંધી નાખ. “ઉપ્પાડેહ” તેની આમડી ઉતારી નાખ. “વિકત્તાહિ” કાન,
નાક આદિ હિન્દ્રિયોને મૂળમાંથી કાપી નાખો, “મંજ” હાથ પગ આદિને મરડી
નાખ, “હળ” શ્વતઘ્ની આદિ વડે તેને ખરાબમાં ખરાબ રીતે મારો, “વિહળ”

मारय, 'विच्छुभ' विसिप=कूपादौ मसिप, 'उच्छुभ' उत् सिप=उर्ध्वसिप
 'आकड्ड' आकर्ष=कचादिकं गृहीत्वाकर्षय=कण्टकाकीर्ण भूमौ घर्षयेत्यर्थः, 'विकड्ड'
 विकर्ष=अधो मुखं कृत्वा घर्षय । एतादृशीं वेदनां दत्त्वा नारकान् प्रति वदति,
 'किं ण जंपसि' किं न जल्पसि=कथं न वदसि हे पापिन् 'सराहि' स्मर स्मरणं
 कुरु 'कियाइं' कृतानि = पूर्वभवसमाचरितानि, 'दुक्कयाइं' दुष्कृतानि=
 माणातिपातादीनि 'पावकम्माइं' पापकर्माणि । एवं=अनेन प्रकारेण 'वयणमह-
 प्पगम्भो' वचनमहाप्रगल्भः=वचनैः=नरकपालवाग्भिः महाप्रगल्भः=अतिदुर्धर्षः
 भयावह-इत्यर्थः 'संपडिसुयसइसंकुलो' संप्रतिश्रुतशब्दसंकुलः=संप्रतिश्रुतः=
 प्रतिध्वनितः यः शब्दः, तेन संकुलः=व्याप्तः । 'सया' सदा=सर्वदा 'उत्तासओ'
 उत्त्रासकः=परमत्रासजनकः 'महाणगरडज्जमाणसरिसो' महानगरदह्यमानसदृशः
 =दह्यमानस्य=प्रज्वल्यमानस्य महानगरस्य यः शब्दस्तेन तुल्यः, एतादृशः 'तहियं'
 तत्र नरके- 'निरयगोयराणं' निरयगोचराणां-निरयगौः=नरकभूमिः, तत्र चरन्ति
 =नारकत्रासार्थं विचरन्ति ये ते निरयगोचराः=परमाधार्मिकास्तेषाम्, तथा-
 ऊपर इसको उछाल दो । (आकड्ड) याल आदि पकड़ कर इसे कण्टका-
 कीर्ण भूमि में खूब खेंचों । (विकड्ड) इसे ओंघा मुख करके जमीन
 पर खूब रगड़ो । इस प्रकार की वेदना देने की बात कहकर फिर वह उन
 नारकियों से कहता है- (किं ण जंपसि) हे पापी । तू बोलता क्यों नहीं
 है (सराहि पावकम्माइं कियाइं दुक्कयाइं) पूर्वभव में समाचरित प्राणा-
 तिपात आदि अपने पापकर्मों को अब तू याद कर ले । (एवं) इस
 प्रकार का (वयणमहप्पगम्भो नरकपाल की वाणियों द्वारा अतिदुर्धर्ष
 भयंकर बना हुआ, (संपडिसुयसइसंकुलो) प्रतिध्वनि से व्याप्त हुआ,
 (सया उत्तासओ) सर्वदा दूसरों को त्रास जनक एवं (महाणगरडज्ज
 माणसरिसो) दह्यमान महानगर के शब्द के जैसा उद्भूत हुआ (निर-

भडाशिदा आदि पर तेने पछाडो "विच्छुभ" दूया पजेरेभां तेने डेडो,
 "उच्छुभ" तेने उधे उछाणो, "आकड्ड" तेने पाण आदिने पडोने डंटाणी
 जमीनभां घसडो, "विकड्ड" तेने उधे मोठे जमीन पर गूथ रगडोणो. आ
 प्रभाण्डे वेदना पछेआडधानी बात करीने ते नारकी छेवोने डडे छे "किं ण
 जंपसि" छे पापी ! तुं ओसतो केम नथी ? "सराहि पावकम्माइं कियाइं दुक्कयाइं"
 पूर्वभवभां आचरेल प्राणुतिपात आदि पापकर्मोंने तुं याद करी ले. "एवं" आ
 प्रकारेने "वयणमहप्पगम्भो" नरकपालनी वाणी पडे अतिदुर्धर्ष-भयंकर लागतो,
 "संपडिसुयसइसंकुलो" पडधाथी व्याप्त थतो, "सया उत्तासओ" सर्वदा जीवने
 त्रासजनक, अने "महाणगरडज्जमाणसरिसो" जणतां महानगरभांथी उद्वेगवतो होय

‘જાયણાદિ’ યાતનાભિઃ=કદર્થનાભિઃ ‘જાહ્જંતાણ’ યાત્યમાનાનાં=દષ્ટય-માનાનાં ‘નેરદ્યાણ’ નૈરયિકોણાં=નારકજીવાનાં ચ ઉભયેષામિત્યર્થઃ, ‘અણિદ્દો’ અનિષ્ટઃ-અપ્રીતિકારકઃ ‘ણિગ્ધોસો’ નિર્ધોષઃ-મહાનાદઃ ‘સુવ્વણ’ શ્રૂયતે। સૂ૦ ૩૧।

કાસ્તા યાતનાઃ ? इति यातना प्रकारमाह—‘किं ते’ इत्यादि—

મૂઢમ્-કિં તે? અસિવણ-દઢ્ઢવણ-જંતપત્થર-સૂઝતલ-ક્ષ્વા-રવાવિ-કલકલંતવેયરણિ-કલંબવાલુયા-જલિયગુહનિરંભણં ઉસિણોસિણ--કંટદ્દલ-દુગ્ગમરહજોયણ--તત્તલોહમગ્ગમણ વાહણાણિ ॥ સૂ૦ ૩૨॥

ટીકા—‘કિં તે’ કાસ્તા યાતનાઃ ? ઉચ્યતે—‘અસિવણ’ અસિવનં=સ્વક્ષાકારપત્રવનં, ‘દઢ્ઢવણ’ દર્ઢવનં=દર્ઢાઃ-તીક્ષ્ણમુખાત્નવિશેષાસ્તેષાં વનં, યગોયરાણં) પરમાધાર્મિકોં કા તથા (તદ્વિયં) વહાં (જાયણાદિ) યાતનાઓં દ્વારા (જાહ્જંતાણં) દષ્ટયમાન (નેરદ્યાણં) નારકિયોં કા (અણિદ્દો) અનિષ્ટ (ણિગ્ધોસો) નિર્ધોષ-શબ્દ ઉન નરકોં મેં (સુવ્વણ) સુના જાતા હૈ ॥સૂ. ૩૧॥

अब सूत्रकार पूर्वोक्त यातनाओं के प्रकारों को प्रकट करते हैं—‘किं ते’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—પ્રશ્ન—(કિં તે) વે યાતનાયેં કૌન ૨ હૈં ?

उत्तर -वे यातनाएँ इस प्रकार हैं (असिबण-दढ्ढवण-जंतपत्थर-सूझतल-क्खारवावि-कलकलंतवेयरणि-कलंब वालुया - जलियगुह-निहंभणं) अम्ब और अम्बरीष परमाधार्मिक उन नारकियों को (असिबण) तलवार की धार के आकार वाले पत्रों के वन में (दढ्ढवण)

એવો, “નિરયગોચરાણ” પરમાધાર્મિકોના તથા “તદ્વિય” ત્યાં “જાયણાદિ” યાતનાઓ વડે “જાહ્જંતાણ” શિક્ષા સહન કરતાં “નેરદ્યાણ” નારકીઓના “અણિદ્દો” અનિષ્ટ નિર્ધોષ-શબ્દ, તે નરકોમાં “સુવ્વણ” સંભળાય છે ॥સૂ. ૩૧॥

હવે સૂત્રકાર પૂર્વકથિત યાતનાઓના પ્રકાર બતાવે છે—“કિં તે ?” इत्यादि.

ટીકાર્થ—પ્રશ્ન “કિં તે ?” તે યાતનાઓ કયી કયી છે ?

उत्तर—ते यातनाओ आ प्रमाणे डेय छे

“અસિવણ, દઢ્ઢવણ, જંતપત્થર, સૂઝતલ, ક્ષ્વારવાવિ, કલકલંતવેયરણિ, કલંબ વાલુયા, જલિયગુહ, નિરંભણ” અમ્બ અને અમ્બરીષ નામના પરમાધાર્મિકો તે નારકી એવોને “અસિવણ” તલવારની ધાર જેવાં આકારનાં પત્રોનાં વનમાં, “દઢ્ઢવણ” તીક્ષ્ણ અણીવાળાં દર્ઢ વિશેષોનાં વનમાં. “જંત પત્થર” યત્ર

૧૧૮

પ્રશ્નચક્રાવલિ

‘જંત પથર’ યન્ત્ર પ્રસ્તરઃ=ધરદ્વાદયઃ ‘સૂહતલ’ સૂચીતલં=ઊર્ધ્વમુલસૂચીમય
 ભૂમિભાગઃ, ‘સ્વારવાવિ’ સ્વારવાપ્યઃ=સ્વારજલસંપ્રદવાપિકાઃ, ‘કલકલંતવેય-
 રણિ’ કલકલશબ્દાયમાનવૈતરણી = કલકલશબ્દાયમાનપ્રતપ્તવપુસીસકાદિપૂર્ણ
 વૈતરણી નામધેયા નદી, ‘કલંચવાલુયા’ કલમ્બવાલુકા=અસિસન્તપ્તવાત્કલમ્બ-
 પુષ્પવદ્ રક્તવાલુકામયી નદી, ‘જલિયગુહ’ જ્વલિતગુહા=પ્રજ્વલિતાગ્નિમયી-
 કન્દરા, इत्येतेषां द्वन्द्वः, તેષુ અસિયનાદિષુ ‘નિરંભણ’ નિરોધનમ્, તથા—
 ‘ઉસિણોસિણકંટકંદુલદુગમરહજોયણતત્તલોહમગમણવાહનાણિ’ ઉષ્ણોષ્ણકણ્ઠકા-
 કીર્ણદુર્ગમરથયોજન તપ્તલોહમાર્ગગમનવાહનાણિ=ઉષ્ણાદપ્યુષ્ણાદ્યુષ્ણોષ્ણઃ=અત્યુષ્ણાઃ
 કણ્ઠકૈઃ=સુતીક્ષ્ણકીલકૈરાકીર્ણો=ન્યાપ્તો દુર્ગમઃ=દુઃસ્વેગ ગમઃ=ગમનં યસ્ય સ
 તથા, દુર્ગમશ્ચ યો રથઃ તસ્મિન્ યોજનં=સંયોજનં બલીયર્દાનામેવેતિ તત્તથા,
 તત્ત્વ, તપ્તલોહમયમાર્ગે ગમનં=નયનં વાહનં=ભારોદ્વાહનં ચેતિ તથા તાનિ ॥મૂ.૦૨૨॥

સીક્ષણ અગ્રભાગવાઞ્ચે દર્મ વિશેષોં કે વન મેં (જંતપથર) યંત્ર પ્રસ્તરોં મેં
 (સૂહતલ) ઊર્ધ્વ સુલવાલી સૂહર્યોં સે યુક્ત ભૂમિભાગમેં, (સ્વારવાવિ) સ્વા-
 રે જલ સે પરિપૂર્ણ હુઈ વાવડિયોં મેં, (કલકલંતવેયરણિ) કલકલ
 શબ્દ સે યુક્ત એસે દ્રવીભૂત હુઈ રાંગ ઓર સીસે આદિ સે ભરી હુઈ વૈત-
 રણી નામ કી નદી મેં, (કલંચવાલુયા) અત્યંતતપ્ત હોને કે કારણ કલ-
 મ્બપુષ્પ કે સમાન રક્ત વર્ણવાલી વાલુકા સે યુક્ત નદી મેં, (જલિયગુહ) પ્રજ્વલિત
 અગ્નિમયી કન્દરાઓં મેં, (નિરંભણ) રોક દેતે હૈં. (ઉસિ-
 ણોસિણકંટકંદુલદુગમરહજોયણતત્તલોહમગમણવાહનાણિ) (ઉસિ-
 ણોસિણ) અત્યંત ઉષ્ણ, (કંટકંદુલ) સુતીક્ષ્ણકંટકોં સે આકીર્ણ, તથા
 (દુગમ) દુર્ગમ-મુશ્કિલ સ્વીચા જા સકે એસે (રહજોયણ) રથ મેં ઝન
 નારકિયોં કો ચૈલોં કી તરહ જોત દેતે હૈં. (તત્તલોહમગમણ) તપ્ત

પ્રસ્તરોમાં, “સૂહતલ” અણીવાળો ભાગ ઊર્ધ્વ સ્થિતિમાં હોય એવી સોયોથી
 યુક્ત ભૂમિ પર, “સ્વારવાવિ” ખારા જળથી ભરેલી વાવોમાં, “કલકલંતવેયરણિ”
 ખળ ખળ અવાજથી યુક્ત, ઓગાળેલા કંધીર, સીસું આદિના રસથી ભરેલ
 વૈતરણી નામની નદીમાં, “કલંચવાલુયા” અતિશય તપેલી હોવાથી કદંબ પુષ્પના
 સમાન રક્તવર્ણી રેતીથી યુક્ત નદીમાં, “જલિયગુહ” પ્રજ્વલિત અગ્નિવાળી કંદ-
 રાઓમાં “નિરંભણ” શેકી દે છે. “ઉસિણોસિણકંટકંદુલદુગમરહજોયણતત્તલોહ-
 મગમણવાહનાણિ” “ઉસિણોસિણ” અતિશય ઉષ્ણ, “કંટકંદુલ” અતિ તીક્ષ્ણ
 કાંટાથી છવાયેલ, તથા “દુગમ” દુર્ગમ-મુશ્કેલીથી ખેંચી શકાય તેવા “રહજો-
 ણ” રથ સાથે તે નારકીઓને બળદોની જેમ ખેડે છે. “તત્તલોહમગમણ”

સુવર્ણીની ટીકા અં ૧ સૂં ૩૩ યાતનાવિષયે આયુષ્યપ્રકારનિરૂપણમ્ ૧૧૯

યાતનાવિષયે આયુષ્યપ્રકારાહ—‘इमेहि’ इत्यादि—

મૂલમ્—इमेहिं विविहेहिं आउहेहिं किं ते ? मुग्गरमुसुंढि-
करकय-सत्ति-हल-गय-मुसल-चक्र-कोत-तोमर-सूल-लउल-भिंडि-
पाल-सव्वल-पट्टिस-चम्मेट्ट-दुहण-मुट्ठिय-असि-खेटग-खग्ग-चाव-
नाराय-कणक-कप्पिणि-वासिपरसु-टंक-तिक्ख-निम्मलेहिं अण्णेहिं
य एवमाइएहिं असुहेहिं वेउव्विएहिं पहरणसएहिं अणुबद्धति-
व्ववेरा परोप्परं वेयणं उईरंति अभिहणंता ॥ सू० ३३ ॥

ટીકા—‘इमेहि’ एभिः वक्ष्यमाणैः ‘विविहेहिं’ विविधैः=अनेकप्रकारैः
‘आउहेहिं’ आयुधैः=शस्त्रैः परस्परं यातनाम् उदीरयन्तीत्यग्रेण सम्बन्धः । ‘किं ते’
कानि तानि आयुधानि ? इत्याह—‘मुग्गर’ मुद्गरः प्रसिद्धः ‘मुसुंढि’ शस्त्र-
लोहमय मार्ग के ऊपर उन्हें चलाते हैं और फिर (बाह्यणाणि) उनसे
शक्ति से भी अधिक भार को वहन कराते हैं ॥सू. ३२ ॥

अब सूत्रकार यातना के विषय में आयुधों के प्रकारों को कहते
हैं—‘इमेहिं विविहेहिं’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(इमेहिं) इन वक्ष्यमाण (विविहेहिं) अनेक प्रकारके (आउहेहिं)
आयुधों-शस्त्रों से वे नारकी परस्पर में यातना (वेदना) को उत्पन्न
करते हैं । इस प्रकार से यहां संबंध घटित कर लेना चाहिये—(किं ते)
वे आयुध कौन २ से हैं ? सो उन्हें प्रकट करते हैं—(मुग्गर) मुद्गर
(मुसुंढि) मुसुंढि-शस्त्र विशेष (करकय) क्रकच-करोत (सत्ति)

તાપાવેલાં લોહાના ભાગે ઉપર તેમને ચલાવે છે અને વળી “વાહ્યનાણિ” તેમની
શક્તિ કરતાં પણ વધારે બોલો તેમની પાસે ઉપડાવે છે ॥ સૂ. ૩૨ ॥

હવે સૂત્રકાર યાતનાઓ આપવા માટે ઉપયોગમાં લેવાતાં આયુધોનું
વર્ણન કરે છે—“इमेहिं विविहेहिं” इत्यादि.

“इमेहिं विविहेहिं” नीचे दर्शाववाમાં આવેલાં અનેક પ્રકારનાં “आउहेहिं”
आयुधा-शस्त्रो वडे ते नारकीओ परस्परमां यातना “वेदना” उत्पन्न करे છે,
એ પ્રકારનો સંબંધ અહીં સમજી લેવાનો છે.

“किं ते ? ” તે આયુધો કયાં કયાં છે ? તો સૂત્રકાર તે આયુધો બતાવે છે—
“मुग्गर” મુદ્ગળ, “मुसुंढि” મુસુંદી નામનું શસ્ત્ર, “करकय” કકચ-કરવત,

विशेषः 'करकय' करकचं=परपत्रं 'करवत' इति भाषा प्रसिद्धा, 'सत्ति' शक्तिः=त्रिशूलं 'हल' प्रसिद्धा, 'गय' गदा=प्रसिद्धा, 'मुसल' प्रसिद्धमेव 'चक्र' चक्रं=शस्त्रविशेषो रथाङ्गकारः 'कोत' कुन्तः 'भाला' इति भाषाप्रसिद्धा, 'तोमर' तोमरः 'गुरजर' इति प्रसिद्धा, 'सूल' शूलं सुतीक्ष्णलोहकण्टकमय-शस्त्रविशेषः प्रसिद्धः, 'लउल' लकुटः - यष्टिः, 'भिडिपाल' भिण्डिपालः 'गोफण' इति प्रसिद्धा, 'सव्वल' शर्वलः- 'बरछी' इति प्रसिद्धा, 'पट्टिस' पट्टिशः शस्त्रविशेषः, 'चम्मेट्ट' चर्मैकटः=चर्मवेष्टितपाषाणमयशस्त्रविशेषः, 'दुहण' दुघणः=मुद्गरविशेषः 'मुट्टिय' मुष्टिकः- 'घण' इति प्रसिद्धा, 'असि' तल-वारः, 'खेटक' खेटकः=शस्त्रप्रहाररोधकशस्त्रविशेषः, 'ढाल' इति भाषा प्रसिद्धा, 'खड्ग' खड्गः=सुतीक्ष्णदीर्घाकारोऽसिरेव 'चाव' चापः=धनुः 'नाराय' नाराचः=लोहमयबाणः, 'कणक' कणकः=बाणविशेषः 'कप्पिणि' कल्पनी=कर्त्तरिका 'कैची' इति भाषा प्रसिद्धा, 'वासि' वासी=तक्षणशस्त्रविशेषः 'बसुला' इति भाषा प्रसिद्धा, 'परसु' परशुः=कुठारः, एषां द्वन्द्वः, ते च ते 'टंक तिकख' शक्ति-त्रिशूल, (हल) हल (गय) गदा (मुसल) मुसल, (चक्र) चक्र-रथाङ्ग के आकार शस्त्र विशेष, (कोत) भाला, (तोमर) तोमर-गुरजर, (सूल) अत्यन्त तीक्ष्ण धारवाले लोहे के कांटो वाला शस्त्रविशेष, (लउल) लकड़ी-लाठी (भिडिपाल) गोफण, (सव्वल) बरछी, (पट्टिस) पट्टिश, इस नाम का शस्त्रविशेष, (चम्मेट्ट) चर्मवेष्टितपाषाणमयशस्त्रविशेष, (दुहण) दुघण-एक जाति का मुद्गरविशेष, (मुट्टिय) मुष्टिक-घण-जिस पर रखकर लोहार लोहे को कूटते हैं, (असि) तल-वार (खेटक) ढाल, (खड्ग) सुतीक्ष्ण एवं दीर्घ आकार युक्त तलवार-बड़ी तलवार, (चाव) धनुष, (नाराय) लोहमय बाण, (कणक) एक प्रकार का बाण, (कप्पिणि) कर्त्तरिका-कैची, (वासि) बसुला (परसु)

"सत्ति" शक्ति-त्रिशूल, "हल" हल, "गय" गदा, "मुसल" मुसल-सांकेतिक, "चक्र" चक्र, रथनां पैडाना आकारनुं ऐक शस्त्र, "कोत" भाला, "तोमर" तोमर-गुरजर, "सूल" अत्यन्त तीक्ष्ण धारवाणां दोढाना डांटा वाणु ऐक शस्त्र "लउल" लाकड़ी-लाठी. "भिडिपाल" गोफण, "सव्वल" बरछी, "पट्टिस" पट्टिश नामनुं ऐक शस्त्र. "चम्मेट्ट" चामडांधी भट्टेनुं पथ्थरनुं ऐक प्रकारनुं शस्त्र, "दुहण" दुधण-ऐक जतनुं भगदण, "मुट्टिय" मुष्टिक-घण, जेना पर भूझीने दूकार दोढाने टीपे छे, "असि" तलवार, "खेटक" ढाल, "खड्ग" अत्यन्त तीक्ष्ण अते डांणी तलवार-भोटी तलवार, "चाव" धनुष, "नाराय" दोढानुं बाण, "कणक" ऐक विशिष्ट प्रकारनुं बाण "कप्पिणि" कतर, "वासि" वांसलो.

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦૩૪ પરસ્પરવેદનાદીરણાયાં નારકદશાવર્ણનમ્ ૧૨૧

ટક્કતીક્ષ્ણાઃ=અગ્રતીક્ષ્ણાઃ ક્ષાણોત્તેજિતત્વાન્, 'નિમ્મલ' નિર્મલાશ્ર-જાડવલ્ય-માનઃ, इत्येभिः । 'अणोहि य' अन्यैश्च 'एवमाहर्हि' एवमादिभिः 'अमु-हेहि' असुतैः=परमदुःखोत्पादकैः 'वेउज्विहर्हि' वैक्रियकैः=वैक्रियशक्तिसम्पा-दितैः 'पहरणसर्हि' प्रहरणशक्तैः=अनेकशक्तैः 'परोपरं' परस्परम्=अन्योन्यम्, 'अभिहणता' अभिघ्नन्तः 'अणुबद्धतिव्वेरा' अणुबद्धतीव्रवैराः=पूर्वभवे हिंसा-दिभिरनुबद्धं तीव्रं वैरं यैस्ते तथा=बहुवैरानुबन्धिकर्माणः नारकाः, 'वेयणं' वेदनां =पीडायां 'उईरंति' उदीरयन्ति=समुत्पादयन्ति ॥ सू० ३३ ॥

પરસ્પરં વેદનામુદીરયન્તો નારકાઃ કીદૃશા ભવન્તિ ? इत्याह—'तत्थय મોગ્ગર' હ્થ્યાદિ ।

મૂલમ્—તત્થ ય મોગ્ગર પહાર ચુણિય-મુસંઢિ સંભગ્ગમહિત-દેહા જંતોવપીલણફુરંતકપ્પિયા કેદ્દત્થ સચ્ચમ્મગા વિગત્તા ણિમ્મૂલુલ્લૂણિયકણ્ણોટ્ટ ણાસિયા છિણ્ણહત્થપાયા ॥સૂ૦૩૪॥

ટીકા—'તત્થ ય' તત્ત્વ ચ નારકે 'મોગ્ગરપહારચુણિય મુસંઢિ-સંભગ્ગ-મહિયદેહા' મુદ્દરપ્રહારચૂર્ણિત-મુસંઢિ સંભગ્નમથિત-દેહાઃ = મુદ્દરાણાં પ્રહારૈઃ=કુઠાર-કુલ્હાડી (ટંકતિક્તલ) યે સઘ શાળ પર ઉત્તેજિત કિયે હુણ હોને સે વહુત અધિક અગ્રભાગ મેં તીક્ષ્ણ હોતે હૈં, ઔર (નિમ્મલા) ચરચ્ચમાતે હૈં સો ઇન શાસ્ત્રોં સે, તથા (અણોહિં ઇવમાહર્હિં) ઇનસે ભિન્ન ઔર ભી (અમુહેહિં) પર દુઃખોત્પાદક તથા (વેઉજ્વિહર્હિં) વૈક્રિય શક્તિ સે સમ્પાદિત (પહરણસર્હિં) સૈકડોં શાસ્ત્રોં સે (પરોપરં) પર-સ્પર મેં એક દૂસરે કો (અભિહણંતા) મારતે હુણ વે (અણુબદ્ધતિવ્વેરા) પૂર્વભવ મેં હિંસાદિ પાપોં દ્વારા અણુબદ્ધ તીવ્ર વૈર વાલે નારકી (વેયણં) વેદના-પીડા કો (ઉઈરંતિ) ઉત્પન્ન કરતે હૈં ॥ સૂ. ૩૩ ॥

પરસ્પર મેં તીવ્ર વેદના કો ઉત્પન્ન કરતે હુણ વે નારકી કૈસે હો જાતે

“પરમુ” કુહાડી, “ટંકતિક્તલ” એ બધાં શસ્ત્રો સરાણુ પર સઘવેલાં હોવાને કારણે તેમની ધાર તથા અણી ઘણી તીક્ષ્ણ હોય છે, અને તે “નિમ્મલા” અળકતાં હોય છે. એ પ્રકારનાં શસ્ત્રોથી તથા “અણોહિં ઇવ માહર્હિં” તે ઉપરાંત ખીલત પણુ “અમુહેહિં” અન્યને દુઃખદાયક તથા “વેઉજ્વિહર્હિં” વૈક્રિય શક્તિથી યુક્ત “પહરણસર્હિં” સંકટો શસ્ત્રોથી “પરોપર” એક બીજાને “અભિહણંતા” મારતાં, “અણુબદ્ધતિવ્વેરા” પૂર્વભવમાં હિંસાદી પાપો દ્વારા તીવ્ર વેરથી યુક્ત, નારકી જીવો “વેયણં”, પરસ્પરમાં વેદના “ઉઈરંતિ” ઉત્પન્ન કરે છે. પરસ્પર વેદના તીવ્ર વેદના ઉત્પન્ન કરતાં કરતાં તે નારકી જીવો કેવા થઈ

મધાતૈઃ ચૂર્ણિતઃ=કુટિતઃ, મુસન્દિમિઃ=શસ્ત્રવિશેષૈઃ સંમગ્નઃ=નર્જરીકૃતઃ, મધિ-
તથ=કુમ્ભ્યાદૌ=દધિવદ્ વિલોડિતઃ દેહો યેષાં તે તથા, ‘ જંતોવપીલગપુરંત-
કપ્પિયા ’ યન્ત્રોપપીડન સ્ફુરત્કલ્પિતાઃ=યન્ત્રેષુ ઉપપીડનેન=સમ્મર્દનેન સ્ફુરન્તઃ
વેપમાનાઃ કલ્પિતાઃ=કર્તિતા યે તે તથા ‘ કેઢ્થ ’ કેચિદન્ન-કેચિત્ નારકાઃ
અન્ન=નરકેષુ ‘ સવમ્મગા ’ સર્વમર્કા=વર્મસહિતાઃ ‘ વિગત્તા ’ વિકૃત્તાઃ=છેદિતાઃ
મૃત-પશુવદ્ ઉત્પાટિતર્વમશરીરાઃ, ણિમ્મૂલ્લુક્કણિયકણોઢ્ઢાસિયા ’ નિર્મૂલોલ્લુ-
નકર્ણોષ્ઠનાસિકાઃ=નિર્મૂલ=મૂલતઃ ઉલ્લૂનાઃ=કર્તિતાઃ કર્ણો ઓઢ્ઠૌ નાસિકા ચ
યેષાં તે તથા, ‘ છિન્નહત્થપાયા ’ છિન્નહસ્તપાદાઃ=છિન્ના હસ્તાઃ પાદા યેષાં તે
તથા મૃતા નારકાઃ મવન્તિ ॥ સૂ. ૩૪ ॥

અપિ ચ—‘ તથ ય અસિ ’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—તત્થ ય અસિ-કરકય-તિલ્લકર્કોત-પરસ્સુપ્પહાર-
પાલિય-વાસીસંતચ્છિયંગમંગા કલકલમાણસ્વારપરિસિત્તગાઢ-

હેં ? હસ ઢાત કો સૂત્રકાર કહતે હેં—‘ તત્થ ય મોગ્ગર ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(મોગ્ગરપહારચુણિય-મુસંદિ સંમગ્ગ-મહિય દેહા) ડન નરકોમેં
મુદ્રરોં કે પ્રહારોં સે ચૂર્ણિત, મુસંદિ જાતિ કે શસ્ત્રવિશેષોં સે જર્જરીકૃત
અવં કુંભી આદિ મેં દહી કી તરહ મધિત હે દેહ જિન્હોં કી ંસે (કેઢ્થ)
કિતનેક નારકી નરકોં મેં (જંતોવપીલગ પુરંતકપ્પિયા) યંત્રોં મેં સંમ-
ર્દન સે કંપિત હોતે હુઅ કાઢ દિયે જાતે હેં । (સવમ્મનાવિગત્તા) ડનકે
શરીર કે ઉપર કી ચમડી મૃતપશુ કી ચમડી કીતરહ ઉસાડ લી જાતી હેં ।
(ણિમ્મૂલ્લુક્કણિયકણોઢ્ઢાસિયા) મૂલતઃ ડનકે ઓઢ્ઠ ંર નાક
કાઢ લી જાતી હેં । (છિન્ન હત્થપાયા) હાથ પૈર છિન્ન મિન્ન કર દિયે
જાતે હેં ॥ સૂ. ૩૪ ॥

અથ છે, તે ઢાત સૂત્રકાર હવે ઞતાવે છે—“તથ મોગ્ગર ” ઇત્યાદિ.
“ મોગ્ગર પહાર ચુણિય, મુસંદિ સંમગ્ગ-મહિય દેહા ” તે નરકોમાં મગ્ગળોના
મહાશયી ચૂર્ણિત, મુસંદિ નામના શસ્ત્રથી જર્જરિત કરેલ અને કુંભી આદિમાં
હર્હીની જેમ જેમનાં શરીર વલોવાય છે. તેવાં “ કેઢ્થ ” કેટલાક નારકીઓને
નરકોમાં “ જંતોવપીલગપુરંતકપ્પિયા ” યંત્રોમાં પીલવાની ખીકે કપ્તા હોય
તેવી હાલતમાં કાપી નાખવામાં આવે છે. “ સવમ્મનાવિગત્તા ” તેમનાં શરીર
ઉપરની આમડી મૃતપશુની આમડીની જેમ ઉતારી લેવામાં આવે છે. “ ણિમ્મૂલ્લુ-
ક્કણિય કણોઢ્ઢાસિયા ” તેમના હોઢ, નાક અને કાન મૂળમાંથી કાપી લેવામાં
આવે છે. “ છિન્નહત્થપાયા ” હાથ અને પગ છિન્નમિન્ન કરવામાં આવે છે ॥સૂ.૩૪॥

સુરશિનીટીકા મ. ૧ સુ. ૩૫ પરસ્પરવેદનોઢીરણ્યાં નારકદશાવર્ણનમ્ ૧૨૩

હજ્જંતગત્કુંતગમિણ-જ્જરિયસવ્વદેહા વિલોલંતિ મહીતલે
વિસૂણિયંગમંગા ॥ સૂ. ૩૫ ॥

ટીકા—‘તત્થ ય’ તત્ત્વ ચ ‘અસિકરકયતિક્વકોતપરસુપ્પહારફાલિય-
વાસીતચ્છિયંગમંગા’ અસિક્રકચતીક્ષ્ણકુન્ત પરશુપ્પહારપાટિત-વાસીસન્તક્ષિતાજ્ઞો-
પાજ્ઞા=તત્ત્વ-અસિ:=સ્વદ્ગ, ક્રકચ:=કરવત્ ‘કરવત’ ઇતિ પ્રસિદ્ધઃ, તીક્ષ્ણકુન્ત:=
તીક્ષ્ણમહ્તઃ, પરશુ - કુઠારઃ, પત્તેપાં મહારૈઃ પાટિતાનિ = વિદારિતાનિ, તથા
વાસીભિઃ સન્તક્ષિતાનિ=તત્ત્વકૃતાન્યજ્ઞોપાજ્ઞાનિ યેપાં તે તથા, ‘કલકલમાણસ્વાર-
પરિસિત્તગાદહજ્જંતગત્-કુંતગમિણજ્જરિયસવ્વદેહા’ કલકલાયમાનસ્વાર-
પરિપિત્તગાદદહમાનમાત્રકુન્તાપ્રમિશ્રજ્જરિતસર્વદેહાઃ = અત્યુત્કાલિતત્વાત્કલ-
કલાયમાનેન=ક્ષારેણ=સર્જિક્ષારાદિજલેન પરિપિત્તમ્, અતએવ-ગાદમ્-અત્યન્તં
દહમાનં ગાત્રં યેપાં તે, તથા કુન્તાનામગ્રૈઃ-નિશિતધારાભિર્મિત્તોઽત એવ જર્જરિતો

ઔર મી—‘તત્થય અસિ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(તત્થ ય) ડન નરકોં મેં (અસિ-કરકય-તિક્વકોત-પરસુ-
પ્પહારફાલિય-વાસીતચ્છિયંગમંગા) અસિ-તલવાર, ક્રકચ-કરોત, તીક્ષ્ણ
કુન્ત-તીક્ષ્ણધાર વાલે ખાલે ઔર પરશુ-કુઠાર ડનકે પ્રહારોં સે વિદા-
રિત કિયે ગયે તથા વાદ મેં વાસી-વમ્ત્રોં સે છોલ ૨ કર પતલે કિયે
ગયે હેં અંગ ઉપાંગ જિન્હોં કે એસે (કલકલમાણસ્વારપરિસિત્તગાદ
હજ્જંત ગત્-કુંતગમિણજ્જરિયસવ્વદેહા) તથા અત્યંત ડકલા
હુઆ હોને સે કલકલાયમાન સર્જિક્ષાર આદિ કે જલ સે સિશ્વિત કિયે
ગયે હોને સે જિનકા શરીર અત્યંત દહમાન હો રહા હૈ એસે, ખાલોં કે
અપ્રમાગ સે મિન્ન હોને કે કારગ જિનકા સકલ શરીર બિલકુલ જર્જ-

વળી સૂત્રકાર ડહે છે કે—“તત્થ ય અસિ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—‘તત્થ ય’ તે નરકોમાં “અસિ, કરકય, તિક્વકોત, પરસુ, પ્પહાર
ફાલિય વાસી તચ્છિયંગમંગા” અસિ-તલવાર, ક્રકચ-કરવત, તીક્ષ્ણકુન્ત-તીક્ષ્ણ
અણીવાળાં ભાલા અને પરશુ-કરશીના પ્રહારોથી ચીરવામાં આવેલ અને ત્યાર-
બાદ વાંસલા વડે છોટી છોટીને જેમનાં અંગ ઉપાંગો પાતળાં કરવામાં આવ્યાં
છે તેવાં, તથા “કલકલમાણસ્વારપરિસિત્તગાદ હજ્જંત ગત્-કુંતિગમિણજ્જરિય-
સવ્વદેહા” અત્યંત ઉડેલ ભોવાને કારણે કળકળતા સાથપાર આદિના પાણીનું
સિશ્વન કરવાના કારણે જેમનાં શરીર અત્યંત ઝળી રહ્યાં છે તેવાં, અને
ભાલાની અણીથી વીંધવાને કારણે જેમનાં શરીર બિલકુલ જર્જરિત થઈ ગયાં છે
એવા “વિસૂણિયંગમંગા” તથા વિવિધ પ્રકારના પ્રહારોથી જેનાં શરીર સૂઝી ગયાં

૨૨૪

પ્રશ્નવ્યાકળસૂત્ર

સર્વદેહઃ=સકલશરીરં યેષાં તે તથા, 'વિમૂળિયંગમંગા' વિમૂળિતાઙ્ગોપાઙ્ગા = વિમૂળિતાનિ=નાનાવિષ્ણુપ્રહારૈઃ સંજાતશોથાનિ, કલકલાયમાનજલસેચનેન સમુત્પન્નસ્ફોટકાનિ વા અઙ્ગોપાઙ્ગાનિ યેષાં તે તથા, एवं परमाधार्मिकैः कदर्थिताः सन्तो नरकजीवा महीतले=કઠોરનરકભૂમૌ વિલોલંતિ' વિલુલન્તિ=વિલુઠન્તિ ॥સૂ.૩૫॥

તતઃ કિં ભવતી ? ત્યાહ—'તત્થ ય વિગ' ઇત્યાદિ ।

મૂલ્—તત્થ ય વિગ-સુળગ-સિયાલ-કાક-મઝ્જાર-સરભ-દોવિય-વિયગ્ગ-સૂલ-સીહ-દપ્પિય-ખુહાભિભૂણ્હિં ' ણિચ્ચકાલમ-ણસિણ્હિં ધોરારસમાળભીમરૂવેહિં અકમિત્તા દઢદાઢા-ગાઢ-ડક-કઢ્ઢિય-સુતિવલ્લનહફાલિયઉદ્ધદેહા વિલ્લિણ્ણં તે સમંતઓ વિમુક્કસંધિવંધના વિયંગમંગા કંકકુરરગિદ્ધધોરકઢ્ઢવાયસગણેહિં ય પુણો સ્વરથિરદઢળક્કલ-લોહતુંડેહિં ઓવડ્ઢિત્તા પક્કલાહયતિ-ક્કલ્લણક્કલ્લવિકિલ્લજિલ્લહિયનયણનિદ્ધોલુગવિગતવયણા ઉક્કો-સંતા ય ઉપ્પયંતા નિયડંતા ભમંતા ॥ સૂ.૩૬॥

ટીકા—તથા ચ 'વિગ' ટ્વકાઃ=ઈદામુગાઃ 'ખેડિયા' ઇતિ મસિદ્ધાઃ

રિત હો ચુકા હૈ એસે (વિમૂળિયંગમંગા) તથા નાના પ્રકાર કે પ્રહારોં સે જિનમેં સૂજન આગઈ હૈ, અથવા કલકલાયમાન ક્ષાર જલ કે સિંચન સે જિન પર ફફોલે પડ ગયે હૈં એસે અંગ ઉપાંગ વાલે વે નારકી જીવ પરમાધાર્મિકોં દ્વારા કદર્થિત હોકર (મહીતલે) નરક કી કઠોર ભૂમિ પર (વિલોલંતિ) લોટતે હૈં ॥ સૂ. ૩૫ ॥

इसके बाद क्या होता है ? इस बात को सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—'तत्थ य विग-सुणग' इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(તત્થ ય) ડન નરકોંમેં (વિગ-સુળગ-સિયાલ-કાક-મઝ્જાર-

છે તેવા, અથવા કળકળતા ક્ષારયુક્ત જળના સિંચનથી જેમનાં અંગ ઉપાંગો પર ફેલાવા પડી ગયા છે. એવા નારકી છવેા પરમાધાર્મિકો દ્વારા ચાતનાઓ પામીને “ મહીતલે ” નરકની કઠોર ભૂમિ પર “ વિલોલંતિ ” પડી ગય છે. ॥સૂ.૩૫॥

ત્યારબાદ શું થાય છે. તે વાત સૂત્રકાર જતાવે છે—“તત્થ ય વિગ-સુળગ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“તત્થ ય” તે નરકોમાં “વિગ-સુળગ-સિયાલ-કાક-મઝ્જાર-સરભ-દોવિય-

સુશિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૩૬ પરસ્પરવેદનોદીરણાયાં નારકદશાવર્જનમ્ ૧૨૫

‘સુળગ’ શ્વાન: ‘સિયાલ’ શૃગાલા:, ‘કાકા’=પ્રસિદ્ધા ‘મજ્જાર’ માર્જારા: = વિહાલા:, શરભા:=અષ્ટાપદા: ‘દીવિય’ દ્વીપિકા:=ચિત્રકા: ‘વિયગ્ધ’ વ્યાગ્રા: પ્રસિદ્ધા:, ‘સહૂલ’ શાર્દૂલા:=વ્યાગ્રવિશેષા:, ‘સીહ’ સિંહા:=કેસરિણ:, તે ચ વૃકાદય: કીટશા: ? ‘દપ્પિય’ દર્પિતા:=ગર્વિતા:, તથા ‘સુહાભિભૂયા’ સુધા-ભિભૂના:=સુધાપિપાસાવ્યાકુલાસ્તૈ: ‘ગિચ્ચકાલં’ નિત્યકાલં=સર્વદા ‘અણસિ-ર્ણિ’ અનશિતૈ:=અશુન્નતૈ: ‘ઘોરાસમાણ ભીમરૂવેહિં ઘોરાSSસમાનભીમરૂવૈ:= ઘોરા:=ભયંકરકર્માણ: આસમાના:=અતીવાક્રોશન્તોભીમરૂપા:=મયાનકાકૃતયશ્ચ યે તે તથા તૈ: ‘અકમિત્તા’ આક્રમ્ય=આક્રમણં કૃત્વા ‘દદદાદાગાઢઢક-કઢ્ઢિય-સુતિક્વલનહફાલિય ઉદ્દદેહા’ દદદંદ્યા ગાઢદંદ્યકર્ષિત-સુતીક્ષ્ણલવપાટિતોર્ધ્વ-

સરભ-દીવિય-વિયગ્ધ-સહૂલ-સીહ-દપ્પિય-સુહાભિભૂર્ણિં) (દપ્પિય) દર્પિત-ગર્વિત તથા (સુહાભિભૂર્ણિં) ભૂખ પ્યાસ સે અત્યંત વ્યાકુલ તથા (ગિચ્ચકાલમણસિર્ણિં) ઉસ સમય જિન્હોં ને ચિલકુલ કુચ્છ મી નહોં છાયા હોતા હૈ એસે, ઓર હસી કારણ જો (ઘોરાસમાણભીમરૂવેહિં) ઘોર-કૂર કર્મ કરને કે લિયે તત્પર બન જુકે હૈં, અતઃ ચીત્કાર કરને સે ભીમરૂપ જિનકા રૂપ ભયંકર બન રહા હૈં એસે (વિગ) વૃક-મેહિયા, (સુળગ) શ્વાન-કુત્તે, (સિયાલ) શૃગાલ-ગીદડ (કાક) કૌવે, (મજ્જાર) માર્જાર-વિલાય, (સરભ) અષ્ટાપદ, (દીવિય) દ્વીપિક-ચિત્તા, (વિયગ્ધ) વ્યાગ્ર, (સહૂલ) શાર્દૂલ-વ્યાગ્ર વિશેષ, ઓર, સિંહ હનકે દ્વારા (અકમિત્તા) આક્રમણ કરકે (દદદાદા-ગાઢઢક-કઢ્ઢિય-સુતિક્વલ નહફાલિય ઉદ્દદેહા) પહિલે દદદંદ્યાઓં સે હસે જાતે હૈં, પશ્ચાત્ પૃથ્વી-

વિયગ્ધ-સહૂલ-સીહ-દપ્પિય-સુહાભિભૂર્ણિં ” “ દપ્પિય ” દર્પિત-ગર્વિત તથા “ સુહાભિભૂર્ણિં ” ભૂખ પ્યાસથી-અત્યંત વ્યાકુળ તથા “ગિચ્ચકાલમણસિર્ણિં” તે કાળે જેમને ગિલકુલ ખોરાક મળ્યો હોતો નથી એવા અને એજ કારણે જે “ઘોરાસમાણભીમરૂવેહિં” ઘોર-કૂર કર્મ કરવાને માટે આતુર થયેલ છે, તે કારણે ચિત્કાર કરવાથી જેમનો દેખાવ અતિ ભયંકર બની ગયો છે એવા “ વિગ ” વૃક-વડ, “સુળગ” શ્વાન-કુતરા, “સિયાલ” શિયાળ, “કાક” કાગડા, “મજ્જાર” માર્જાર ગિલાડા, સરભ અષ્ટાપદ, “દીવિય” દ્વીપિક-ચિત્તા, “વિયગ્ધ” વાઘ, “સહૂલ” શાર્દૂલ-વિશિષ્ટ પ્રકારના વાઘ, અને સિંહ વગેરે પ્રાણીઓ “અકમિત્તા” આક્રમણ કરીને “દદદાદા-ગાઢઢક-કઢ્ઢિય-સુતિક્વલ-નહફાલિય ઉદ્દદેહા” પહેલાં મજબૂત ડાહો વડે તેમને બટકાં ભરે છે,

૧૨૬

પ્રશ્નચોકસી

દેહાઃ=દેહાભિર્દંટ્રાભિઃ ગાદમ્=અત્યન્તં ' હક ' દટ્ટાઃ, કર્ષિતાઃ=પૃથ્વીતલે સ્તવઃ સમાકૃષ્ટાશ્ચ યે તે, તથા સુતીક્ષ્ણનલૈઃ પાટિતાઃ=દ્વિધા કૃતાઃ ઝર્ધ્વદેહાઃ ઝર્ધ્વશરીરાણિ યેષાં તે તથા, અત એવ-‘વિમુક્તસંધિવંધના’ વિમુક્તસંધિવંધનાઃ=વિમુક્તાનિ=શિથિલીકૃતાનિ સન્ધીનાં=અજ્ઞસન્ધાનસ્થાનાનાં વંધનાનિ યેષાં તે તથા, ‘વિયંગમંગા’ વ્યંગાઙ્ગાઃ=વ્યંગાનિ=સ્વચ્છિદતાનિ અઙ્ગાનિ=કરચરણકર્ણનાસિકાદીનિ યેષાં તે તથા, એવંભૂતા નરકજીવાઃ પરમાધાર્મિકૈઃ ‘સમંતઓ’ સમન્તતઃ=ચતુર્દિશુ ગગને ‘વિચ્છિપ્યંતે’ વિચ્છિપ્યંતે = કાકબલિવત્પ્રસિપ્યંતે, ‘પુણો ય’ પુનશ્ચ-પ્રક્ષેપણાનન્તરં તે નારકાઃ ‘કંક-કુરર-ગિદ્ધધોરકટુવાયસ-ગણેર્હિ’ કંકુરુરશ્ચધોરકટુવાયસગણૈઃ = કંકુરુઃ-કુરરાઃ પક્ષિવિશેષાઃ ગૃધ્રાઃ=પ્રસિદ્ધાઃ, ધોરકટુવાયસાઃ=ધોરકટાઃ=અસહ્યક્લેશકારકા યે વાયસાઃ=કાકાસ્તે તથા તેષાં ગણૈઃ=સમૂહૈઃ, કીદૃશૈસ્તૈઃ ? इत्याह—‘स्वरथिरददणक्खलोद्धतुं देहि’ स्वरथिरददणक्खलोद्धतुण्डैः=स्वराः=तीक्ष्णाः स्थिराः=निश्चलाः ददाः=कठोरवस्तु-

તલપર ઇધર સે ડધર સેંચે જાતે હૈં-યસીડે જાતે હૈં, તથા સુતીક્ષ્ણ નલૈં કે પ્રહારોસે ડનકે ઝર્ધ્વ શરીર કો દો ટુકડે કર દિયે જાતે હૈં । ઇસ કારણ (વિમુક્તસંધિવંધના) ડનકે સંધિયોં કે વંધન ચિલકુલ ઢીલે હો જાતે હૈં । (વિયંગમંગા) વહાં નારકિયોં કે કર, ચરણ, કર્ણ, નાસિકા આદિ અંગોં કો ચ્છિદિત કર દિયા જાતા હૈં ઓર (સમંતઓ વિચ્છિપ્યંતે) જિસ પ્રકાર કાકબલિ દિશાઓં મેં ફેંક દી જાતી હૈં વે વિચારે નારકી બી ઇસી તરહ સે આકાશ મેં ઇધર ડધર દિશાઓં મેં ફેંક દિયે જાતે હૈં । (પુણોય) ફિર પશ્ચાત્ (કંકુરુરગિદ્ધધોરકટુવાયસગણેર્હિ) કંક, કુરર, ગૃધ્ર ઓર અસહ્ય ક્લેશ કારક વાયસોં-કોઓં કા સમૂહ કિ (સ્વરથિરદદ ણક્ખલોદ્ધતુંદેર્હિ) જિનકે નલ્લીક્ષ્ણ, સ્થિર કઠોર વસ્તુ કે વિદારણ

પછી જમીન ઉપર તેમને આમ તેમ ખેંચે છે-ઘસડે છે, તથા અતિશય તીક્ષ્ણ નખ ભરાવીને તેમનાં ઝર્ધ્વ શરીરના બે ટુકડા કરી નાખે છે. તે કારણે “વિમુક્તસંધિવંધના” તેમના સાધાઓના બંધન તદન ઢીલા થઇ બાક છે. “વિયંગમંગા” ત્યાં નારકીઓના હાથ, પગ, કાન, નાક આદિ અંગોંનાં ખંડન કરવામાં આવે છે અને “સમંતઓ વિચ્છિપ્યંતે” જેમ કાકબલિને ચારે દિશામાં ફેંકવામાં આવે છે તેમ તે બિચારા નારકીઓને પણ આકાશમાં આમ તેમ ફેંકવામાં આવે છે. “પુણો ય” ત્યાર બાદ “કંકુરુરગિદ્ધધોરકટુવાયસગણેર્હિ” કંક, કુરર, ગીધ્ર, અને અસહ્ય યાતનાઓ દેનારા કાકબલિઓને સમૂહ, “સ્વરથિરદદ ણક્ખલોદ્ધતુંદેર્હિ” કે જેમના તીક્ષ્ણ નખ કંઠણ વસ્તુઓને ચીર્યાં પછી

सुदर्शिनी टीका अ० १ सू० ३६ परस्परवेदनोद्वेगनायां नारकदशावर्णनम् १२७

च्छेदनेऽपि अभगनाः नखा येषां ते तथा ते च ते लोहतुण्डाः=लोहवत्कठोरचञ्चु-
काश्च, तैः 'ओवहत्ता' अवपत्य=अन्तराल एव आक्रम्य 'पक्खाहयतिस्त्रयणक्ख
विकिन्न जिम्भस्सिञ्जनयणनिहओलुग्गविगतवयणा' पक्षाहततीक्ष्णनखविक्षिप्त
जिह्वाक्षिप्तनयननिर्दयावरुणविकृतवदनाः='पक्खाहय' पक्षाहताः-पक्षैराहताः=
ताडिताः तीक्ष्णैर्नखैर्विक्षिप्ताः=आकृष्टा मुखान्दहिर्निष्काशिता जिह्वाः येषां ते तथा,
आक्षिप्ते=बहिष्कृते नयने येषां ते तथा, अतएव निर्दयं यथास्यात्तथा अवरुणं=भग्नं
विकृतं विरुपी कृतं च वदनं येषां ते तथा, ततः सर्वेषां कर्मभारयः, उक्कोसंता 'उ-
त्कोशन्तः=हा हा शब्दैराक्रन्दं कुर्वन्तः 'उप्पयंता' उत्पतन्तः=परमवेदनाभिर्दु-
श्चिददृक्कपिवद् गगने उच्छलन्तः 'निवहंता' निपतन्तः=पृथिव्यां लुठन्तः,
'भमेता' भ्रमन्तः=इतस्ततः पलायमानाः दुःखमनुभवन्ति ॥ ३६ ॥

करने पर भी-वैसे ही बने रहते हैं-नहीं टूटते हैं तथा बाँचे जिनकी
लोह के जैसी कठोर होती है, वे उन्हें (ओवहत्ता) धींच ही में पकड़कर
(पक्खाहय - त्रिस्त्रयणक्खविकिन्नजिम्भस्सिञ्जनयणनिहओलुग्गविगत-
वयणा) अपनी पांखों से आहत करते हैं, तीक्ष्ण नखों से उनकी जीभ
को उनके मुख से बाहिर निकाल लेते हैं और दोनों आंखों को भी बाहिर
काढ लेते हैं । इस तरह निर्दयतापूर्वक विरूपरूप वाले बनाये गये वे पाप-
कारी नारकजीव (उक्कोसंता य) हाय हाय शब्द करते हुए (उप्पयंतो)
बिच्छु से काटे गये बंदर की तरह अत्यंत वेदनाओं से आकाश में ऊपर
को उछलते हैं और फिर (निवहंता) नीचे गिरते हैं । (भमेता) गिर
कर फिर इधर उधर भागते हुए दुःखों का अनुभव करते हैं ॥सू. ३६ ॥

पणु ओवाने ओवा ४ रडे छे-तूटता नथी तथा जेमनी आंखे लोढाना जेवी
कडणु डोय छे, ओवां ते पक्षीओ तेभने " ओवहत्ता " वन्धे ४ पडडीने
" पक्खाहय-तिस्त्रयणक्खविकिन्नजिम्भस्सिञ्जनयणनिहओलुग्गविगतवयणा " पोतानी
पांओ वरे भारे छे, तीक्ष्ण नओनी भददथी तेभनी छलने तेभनां
मुणभंथी णडार ओंथी कडे छे अने अने आंओने पणु णडार कडी नाओ छे. आ
दीने निर्दयताथी ओडोण णनाववामां आवेला ते पापकारी नारकी छवे " उक्को-
संता य " डाय ! डाय ! करतां " उप्पयंतो " वींछीओ उंअ भारी डोय त्यारे
इडाइइ करता वानरानी जेम, अत्यंत वेदनाथी व्याकुण धडने आकाशमां उंय-
रनी णाणु उछणे छे, अने " निवहंता " वणी पाछां नीचे पडे छे " भमेता "
नीचे पडीने वणी आभ तेभ नास साअ करतां तेओ दुःओ अनुभवे छे ॥सू. ३६॥

તતસ્તેષાં યથા ભવતિ તથા પ્રતિપાદ્યન્નાહ-‘પુવ્વકમ્મો’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પુવ્વકમ્મોદયોવગયા પચ્છાણુસણ્ણહજ્જમાણા
 ણિંદંતા પુરેકઢાઈં કમ્માઈં પાવગાઈં તહિં તહિં તારિસાણિ
 ઓસણ્ણં ચિક્કણાઈં દુક્ખાઈં અણુભવિત્તા તઓ ય આઉક્ખ-
 ણ્ણં ઉવટ્ઠિયા સમાણા વહવે ગચ્છંતિ તિરિય વસહિં દુક્ખુ-
 ત્તારં સુદારુણં જમ્મણ મરણ જરા વાહિ પરિયટ્ઠનારહટ્ઠં જલ
 થલ ચ્ચલ્લપરોપ્પરવિહિંસણપવંચં ॥ સૂ. ૩૭ ॥

ટીકા-‘પુવ્વકમ્મોદયોવગયા’ પૂર્વકર્મોદયોવગતાઃ=કૃતાનાં પૂર્વેનાં કર્મણામુદયેન
 ઉપગતાઃ તિર્યગાદિક્કુયોનિષુ ગમનોન્મુત્તાસ્તે નારકાઃ ‘પચ્છાણુસણ્ણ’ પશ્ચાદનુ-
 શયેન=પશ્ચાત્તાપેન ‘હજ્જમાણા’ દહ્મમાનાઃ=સન્તપ્યમાનાઃ ‘પુરેકઢાઈં’ પુરાકુ-
 તાનિ=પૂર્વાચરિતાનિ ‘પાવગાઈં’ પાપકાનિ પ્રાણાતિપાતાદીનિ ‘ણિંદંતા’ નિન્દ-
 ન્તઃ=મિથ્યાત્વાજ્ઞાનમોહાન્ધ્યેન મહારમ્ભમદ્વાપરિગ્રહસમાસક્તેન મયા પૂર્વભવે કુક્ષા-

इसके बाद उन नरकों की जो स्थिति होती है-विचार धारा बंधती
 है, सूत्रकार अब उसका प्रतिपादन करते हैं-‘पुव्वकम्मोदयोवगया’
 इत्यादि ।

टीकार्थ-(पुव्वकम्मोदयोवगया) कृत पूर्वकर्मों के उदय से तिर्यग् आदि
 कुयोनियों में गमनके सम्मुख बने हुए वे नारक (पच्छाणुसण्ण) पश्चात्ताप
 से (हज्जमाणा) सन्तप्यमान होकर अपने (पुरेकडाईं) पूर्वाचरित
 (पावगाईं) प्राणातिपातादिक (कम्माईं) पापकर्मों की (णिंदंता) इस
 प्रकार निंदा करने लगते हैं-“मिथ्यात्व, अज्ञान तथा मोह से अन्ध
 बने हुए मैंने महा आरंभ और महा परिग्रह में आसक्त होकर पूर्वभव

ત્યાર બાદ તે નારકી જીવોની જે વિચારધારા ચાલે છે તેનું હવે સૂત્ર-
 કાર પ્રતિપાદન કરે છે—“પુવ્વકમ્મોદયોવગયા” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-“પચ્છાણુસણ્ણ” પૂર્વે કરેલાં કર્મોના ઉદયથી તિર્યગ્ આદિ કુયોનિયોમાં
 ગમન કરવાની પરિસ્થિતિમાં મૂકાયેલ તે નારકી જીવો “પચ્છાણુસણ્ણ” પશ્ચા-
 ત્તાપથી “હજ્જમાણા” સંતપ્ત થઈને પોતે “પુરેકઢાઈં” પૂર્વાચરિત “પાવ-
 ગાઈં” પ્રાણાતિપાતાદિક “કમ્માઈં” પાપકર્મોની “ણિંદંતા” આ પ્રમાણે નિંદા
 કરવા માંડે છે-“મિથ્યાત્વ, અજ્ઞાન તથા મોહથી અંધ બનેલા એવા મેં મહા
 આરંભ અને મહાપરિગ્રહમાં આસક્ત થઈને, પૂર્વભવમાં દલ્હની આણી પર

સુદર્શિની ટોકા અ૦ ૧ સુ૦ ૩૭ નારકપશ્ચાત્તાપનિરૂપણમ્

૧૨૯

ગ્રજલચિન્દુવચ્ચજ્જલાનાં કમલદલમતજ્જચિન્દુવદાપાતરમણીયાનાં ક્ષણમાત્રસુખવાનાં
 બહુકાલદુઃખવાનાં ભોગાનાં લિપ્સયા-અર્થમનર્થ ધર્માર્થ વા અનેકે હીનાદીના અત્રાણા
 અશરણા અનાથા અસહાયાઃ પ્રિયજીવિતામરણમતિકૂલાશ્વસથાવરા જીવા નિર્દયં
 દતા ઉપદતા ઉપમર્દિતાઃ પરિતાપિતાઃ પ્રાણરહિતાઃ કૃતાઃ, સદ્ગુણા પ્રતિબોધિ-
 તોઽપિ અહં તન્નિર્દિષ્ટમાર્ગમનાદત્ય કુમાર્ગમેવ કરણીકૃતવાન્, તસ્યેદં ફલં સામ્પત-
 મનુભયામિ ” इत्यादिरूपेण स्वकृतधर्मणां निन्दां कुर्वन्तः ‘ तर्हि तर्हि ’ तत्र तत्र
 नरके रत्नप्रभादिके ‘ तारिसाणि ’ तादृशानि-तत्तन्नरकभोग्यानि ‘ ओसण्ण ’ इति
 सातिशयं देशीशब्दोऽयम्, ‘ चिक्खणाइं ’ चिक्खणानि=दुर्भेद्यानि ‘ दुक्खाइं ’ दुःखानि
 -अज्ञातावेदनीयरूपाणि ‘ अणुभवित्ता ’ अनुभूय ‘ तथो य ’ ततश्च तस्माच्चरकात्
 में कुश के अग्रभाग में स्थित जलचिन्दु के समान चंचल, कमल दल के
 ऊपर रहा हुई जलचिन्दु के समान आपातरमणीय, क्षणमात्रसुखदायी
 परन्तु बहुतकालतक दुःखप्रद, ऐसे भोगों की लिप्सा से अपने अर्थ से
 अनर्थ या धर्म के निमित्त અનેક હીન, દીન, અત્રાણ, અશરણ, અનાથ,
 અસહાય, પ્રિયજીવિત ઓર મરણ સે સદા ભયભીત ऐसे વ્રસ સ્થાવર
 જીવોં કો નિર્દય બન કર મારા, વાર ૨ ઉન્હેં કષ્ટ પહુંચાયા, ઉપમર્દિત
 ક્રિયા, ઓર પ્રાણરહિત ક્રિયા । इस विषय में मुझे सद्गुरु देव ने सम-
 ह्साया भी, तो भी मैं तन्निर्दिष्टमार्ग की अवहेलना करके कुमार्ग पर
 ही बंटा रहा । उसी का यह फल इस समय मैं भोग रहा हूं । ” इस
 प्रकार से अपने पूर्वाचरित पापकर्मों की निंदा करते हुए वे नारक जीव
 (तर्हि तर्हि) रत्नप्रभा आदि उनर नरकों में (तारिसाणि) तत्तत् नर-
 कभोग्य (ओसण्णं चिक्खणाइं) अतिशय चिक्खण-दुर्भेद्य (दुक्खाइं)

રહેલ જળચિન્દુ સમાન ચંચળ, અને કમળદલના ઉપર રહેલ જળચિન્દુઓ સમાન
 આપાતરમણીય, ક્ષણમાત્ર જ સુખદાયી પણ લાંબા સમય સુધી દુઃખદાયક,
 એવા ભાગેની લાલસાથી પોતાને માટે અથવા બિના કારણ અથવા ધર્મને
 નિમિત્તે અનેક દીન, હીન, અત્રાણ, અશરણ, અનાથ, અસહાય, એમને જીવવું
 ગમે છે અને મરણથી એ બીવે છે તેવાં વ્રસ, સ્થાવર જીવોને નિર્દય બનીને
 મેં માર્યા, વારંવાર તેમને કષ્ટ આપ્યું, ઉપમર્દિત કર્યા, પરિતાપ પહોંચાડ્યા.
 અને પ્રાણ રહિત કર્યા. તે વિષયમાં મને સદ્ગુરુએ સમજાવ્યું છતાં પણ
 તેમને બતાવેલ માર્ગની અવગણના કરીને હું કુમાર્ગમાં જ દો રહ્યો. તેનું જ
 આ ફળ અત્યારે મારે ભોગવવું પડે છે. ” આ રીતે પોતે પૂર્વે કરેલા પાપ-
 કર્મોની નિંદા કરતા તે નારકી જીવો “ તર્હિ તર્હિ ” રત્નપ્રભા આદિ તે નર-
 કોમાં “ તારિસાણિ ” તે તે નરકભોગ્ય “ ઓસણ્ણં ચિક્કણાઈ ” અતિશય દુર્ભેદ્ય

‘આઉક્ષ્વર્ણ’ ‘આયુઃ ક્ષયેણ=નરકભગ્નાયુષ્યક્ષયેણ ‘ઉગ્ધ્રિયા સમાણા’ ઉદ્ઘૃષ્ઠાઃ નિસ્સૃતાઃ સન્તઃ ‘વહવે’ વહવઃ કતિપયા નરકજીવાઃ ‘તિરિયવસર્હિ’ તિર્ય-
ગ્વસર્તિ=તિર્યગ્યોનિ ગચ્છન્તિ=પ્રાપ્નુવન્તિ, યતો નરકાન્નિઃસૃતા અત્પા એવ મનુ-
ષ્યેષૂત્પદ્યન્તે । કીદૃશીં તિર્યગ્યોનિમ્ ? ક્ષ્પાદ—‘દુક્ષુત્તરં’ દુઃખોત્તરં=દુઃખ-
પ્રકર્ષામ્ અનન્તોત્સર્પિણ્યવસર્પિણી કાયસ્થિતિકત્વાત્તસ્યાઃ, અત એવ ‘સુદારુણં’
સુદારુણાં=ભીષણાં નાનાદુઃખનિધાનત્વાત્, ‘જમ્મણમરણજરાવાહિપરિયટ્ટનારહટ્ટં’
જન્મમરણજરાવ્યાધિપરિવર્તનારઘટ્ટાં=જન્મ-મરણ જરા વ્યાધીનાં પરિવર્તનૈઃ=પુનઃ
પ્રાપ્તૈ અરઘટ્ટ ઇવ=જલચલ વિશેષ ઇવ યા સા તથા તાં ‘જલથલ સ્વહરપરો-
પ્પરવિહિસણપવંચં’ જલ સ્થલ સ્વચર પરસ્પર વિહિસનપપચ્ચાં=જલચર-સ્થલચર

અશાતાવેદનીયરૂપ દુઃખોં કો (અણુભવિત્તા) ભોગકર (તઓ ય) જન્મ
ઉપ નરક સે (આઉક્ષ્વર્ણ) નરકભવસંબંધી આયુ કે ક્ષય હોને પર
(ઉગ્ધ્રિયાસમાણા) બાહર નિકલતે હૈં તવ (વહવે) ઉન મેં સે ઘણુત
સે નારક જીવ (તિરિયવસર્હિ) તિર્યગ્ યોનિ કો (ગચ્છન્તિ) પ્રાપ્ત કરતે
હૈં, ક્યોં કિ નરકોં સે નિકલે છુપ ઘણુત થોડે જીવ હી મનુષ્યગતિ મેં
ઉત્પન્ન હોતે હૈં । વહ તિર્યગ્ યોનિ કેસી હૈં કિસ યાત કો સૂત્રકાર કહતે
હૈં કિ વહ યોનિ (દુક્ષુત્તરં) અનન્ત ઉત્સર્પિણી પ્રમાણ કાય-
સ્થિતિવાલી હોને સે દુઃખોં કે પ્રકર્ષ સે યુક્ત હૈં । (સુદારુણં) નાના દુઃખોં
કી નિધાન હોને સે સુદારુણ-ભયંકર હૈં । (જમ્મણ-મરણ-જરા-વાહિ
પરિયટ્ટનારહટ્ટ) જન્મ, મરણ, જરા એવં વ્યાધિયોં કી પુનઃપુનઃ પ્રાપ્તિ
હોને સે અરઘટ્ટ જૈસી હૈં । તથા (જલથલ સ્વહરપરોપ્પરવિહિસણપવંચં)

“દુક્ષ્પાદ” અશાતા વેદનીય ૩૫ દુઃખો “અણુભવિત્તા” ભોગવીને “તઓ ય”
બ્યારે તે નરકમાંથી “આઉક્ષ્વર્ણ” આયુષ્યને ક્ષય થાય છે ત્યારે “ઉગ્ધ્રિ-
યાસમાણા” બહાર નીકળે છે. ત્યારબાદ “વહવે” તેમનામાંથી ઘણા ખરા
નારકી એવ “તિરિયવસર્હિ” તિર્યગ્ યોનિમાં “ગચ્છન્તિ” ગત્ય છે, કારણ
કે નરકમાંથી નીકળેલા બહુ થોડા એવા જ મનુષ્ય ગતિ પ્રાપ્ત કરે છે. તે
તિર્યગ્ યોનિ કેવી છે તે યાત સૂત્રકાર દર્શાવે છે—તે યોનિ “દુક્ષુત્તરં” અન-
ન્ત ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી પ્રમાણ કાળ સ્થિતિવાળી હોવાને લીધે દુઃખોના
પ્રકર્ષવાળી છે. “સુદારુણ” વિવિધ દુઃખોનું ધામ હોવાથી ઘણી જ ઠાડણી-
ભયંકર છે. “જમ્મણ-મરણ-જરા-વાહિ પરિયટ્ટનારહટ્ટ” જન્મ, મરણ, જરા
અને વ્યાધિઓની ફરી ફરીને પ્રાપ્તિ થવાને કારણે રહેત જેવી છે. તથા
“જલથલસ્વહરપરોપ્પરવિહિસણપવંચં” જેમાં પરસ્પર જળચર, સ્થળ-

દુઃશિની ટીકા અ. ૧ સૂ. ૩: તિર્યગ્ગતિદુઃસ્થનિરૂપણમ્

૨૩૨

સ્વચરાણાં પરસ્પરં વિદ્ધિસનસ્ય=અનેકપ્રકારવધસ્ય પ્રપન્થો=વિસ્તારો યસ્યાં સા
તાં તથા, સમ્ભૂતાં તિર્યગ્ગોનિ ગચ્છન્તીતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ ॥ સૂ. ૩૭ ॥

અથ તિર્યગ્ગતિ દુઃસ્થં વર્ણયન્નાહ—‘ઇમં ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-ઇમં ચ જગપાગડં વરાગા દુઃસ્થં પાવેતિ દીહકાલં ।
કિં તે ? સીઝળહ-તળહા સુહ-વેયળ - અપ્પઈયાર-અડવિ-
જમ્મળ-ળિચ્ચભઝવિગ્ગવાસ-જગ્ગળ--વહ-વંધળ--તાડળ-
કળ નિવાયળ-અટ્ઠિ મંજળ-નાસા-મેય-પ્પહાર-દમળ-છવિચ્છયળ
અભિઓગપાવળ-કસંકુસારાનિવાય-દમળાળિ-વાહળાળિ ય ॥સૂ. ૩૮॥

ટીકા—‘ઇમં ચ’ ઇદં ચ = અનુપદવશ્યમાણ ‘જગપાગડં’ જગત્પકટં =
સકલલોકપ્રત્યક્ષં, દુઃસ્થમ્ = અગાતવેદનીય - લક્ષણં ‘દીહકાલં’ દીર્ઘકાલમ્ =
અસંસ્ક્રુપાતકાર્ણપર્યન્તં ‘પાવેતિ’ પ્રાપ્નુવન્તિ, ‘કિં તે’ કાનિ તાનિ દુઃસ્થાનિ?,
તદાહ—‘સીઝળહ’ ઇત્યાદિ—‘સીઝળહતળહાસુહવેયળ’ શીતોષ્ણતૃષ્ણા ક્ષુધા
વેદના=શીતોષ્ણતૃષ્ણા ક્ષુધાજનિત દુઃસ્થં, તથા ‘અપ્પઈયારઅડવિજમ્મળ’

જિસ મેં પરસ્પર જલચર, સ્થલચર ઓર સ્વેચરોં કે વિવિધ પ્રકાર કે વધ
કા પ્રપન્થ-વિસ્તાર હૈ, એસી તિર્યગ્ગોનિ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈ ॥સૂ. ૩૭॥
અથ સુત્રકાર તિર્યગ્ગતિકે દુઃસ્થોંકા વર્ણન કરતે હૈ—‘ઇમંચજગપાગડં’ઇત્યા.

ટીકાર્થ—(ઇમં ચ જગપાગડં) (ઇમં) અનુપદ વશ્યમાણ યહ (જગપાગડં)
સકલ લોકોં કે પ્રત્યક્ષ એસે (દુઃસ્થં) દુઃસ્થ કો (વરાગા) વે તિર્યચ-
ગતિ કે જીવ (દીહકાલં) અનંતકાલપર્યન્ત (પાવેતિ) ઓગતે હૈ
(કિં તે) વે દુઃસ્થોં કે પ્રકાર કૌન ૨ સે હૈ ? સો કહતે હૈ—ઉસ ગતિ મેં
દુઃસ્થોં કે યે ૨ પ્રકાર હૈ—(સીઝળહ) શીત-જનિત દુઃસ્થ, ઉષ્ણજનિત
દુઃસ્થ, (તળહા) પિપાસાજનિતદુઃસ્થ ઓર (સુહ) ક્ષુધાજનિતદુઃસ્થ, તથા

અર, અને નબચરોનાં વિવિધ પ્રકારના વધના પ્રપન્થ-વિસ્તાર છે. એવી તિર્યગ્ગ
ગોનિને તેઓ પ્રાપ્ત કરે છે ॥ સૂ-૩૭ ॥

હવે સુત્રકાર તિર્યગ્ગ ગતિના દુઃખોનું વર્ણન કરે છે. “ઇમં ચ જગપાગડં” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“ઇમં ચ જગપાગડં” “ઇમં” નીચે પ્રમાણેનાં “જગપાગડં” સમગ્ર
લોકોની નજરે પડે તેવાં “દુઃસ્થં” દુઃખો “વરાગા” તે બિચારા તિર્યગ્ગ
ગતિનાં જીવો “દીહકાલં” અનંતકાળ સુધી “પાવેતિ” ભોગવે છે. “કિં તે?”,
તે દુઃખોના પ્રકાર કયા કયા છે? સુત્રકાર તેનો જ્વળ આપતાં કહે છે. તે
ગતિમાં નીચે પ્રમાણે દુઃખો હોય છે “સીઝળહ” શીત જનિત દુઃખ, ઉષ્ણ-
જનિત દુઃખ “તળહા” પિપાસાજનિત દુઃખ અને “સુહ” ક્ષુધાજનિત

अप्रतीकारं=प्रतीकाररहितं-बद्धायुष्कत्वात् यद् अटव्यां=महारथे जन्म तत् तथा,
तत्र 'णिच्चभउच्चिगवास' नित्यभयोद्विग्नवासः = नित्यं = प्रतिक्षणं भयेन=
व्याधादिकर्तृकवधनिग्रहादिरूपेण उद्विग्नः=उद्वेगसहितः वासः = निवासः अतएव
'जगण' जागरणं=निद्राक्षयः 'वह' वधः=मारणं, 'बंधण' बन्धनं=रज्वादिना
नियमनं, 'ताडण' ताडनं=दण्डादिना हननम्, 'अंकण' अङ्कनं=प्रतप्तशलादिना
शरीरे चिन्हविशेषकरणं, 'निवायण' निपातनम्=उत्थाप्य गर्त्तादौ प्रक्षेपणम्
'अट्टिमंजण' अस्थिमञ्जनम्=मुद्गरादिनाऽऽस्थिनां श्रोतनं 'नासाभेय' नासामेदः =
नासिकायां रज्जुयोजनार्थं छिद्रकरणं 'प्पहारदमण' प्रहारदमनं=प्रहारैः=यष्ट्या-
दिताडनैः दमनं = स्वायत्तीकरणं, 'छविच्छेयण' छविच्छेदनं = अवयवकर्तनं
'अभिओगपावण' अभियोगप्रापणम् = अनिच्छतोऽपि शकटादौ नियोजनं,

(वेयण अप्पडियार) प्रतिकार रहित दुःख, (अट्टविजम्मण) अटवी
में जन्म होने का दुःख, (णिच्चभउच्चिगवास) प्रतिक्षण व्याध आदि
के वध-निग्रह आदि के भय से उद्विग्न चित्त होकर निवास करने का
दुःख, (जगण) इच्छानुसार निद्रा नहीं ले सकने का दुःख, (वह)
वधजन्य दुःख, (बंधण) रस्सी आदि द्वारा बांधे जाने का दुःख (ताडण)
दण्ड आदि से जर्मस्थानों में ताड़ित किये जाने का दुःख, (कण) प्रतप्त
शूल आदि द्वारा शरीर में दाग दिये जाने का दुःख, (निवायण) उठा
कर गर्त्त आदि में पटक दिये जाने का दुःख, (अट्टिमंजण) मुद्गर आदि
से हड्डियों को तोड़ दिये जाने का दुःख, (नासाभेय) नासिका के
छेदन करने का दुःख, (प्पहारदमण) लकड़ी चाबुक आदि के प्रहारों से
वशीभूत होने का दुःख (छविच्छेयण) शारीरिक अवयव काट दिये
जाने का दुःख, (अभिओगपावण) नहीं इच्छा होनेपर भी जब गाड़ी आदि

दुःख अने "वेयण अप्पडियार" प्रतिकाररहित दुःख "अट्टविजम्मण" वनभां
जन्म धवानुं दुःख, "णिच्चभउच्चिगवास" प्रत्येक क्षण व्याध आदि द्वारा
वध, निग्रह आदिना लयधी उद्विग्न चित्ते रहैवानुं दुःख "जगण" उच्छा
प्रमाद्ये निद्रा न लार्थ शकवानुं दुःख "वह" वध जन्य दुःख, "बंधण"
दोस्त्रां आदि पडे बांधवानुं दुःख, "ताडण" लाठरी आदिधी भर्मस्थाने पर
मार पडवानुं दुःख "कण" तपावेद शूल आदि द्वारा शरीरे डाम देवानुं
दुःख "निवायण" उपाडीने भाडा आदिभां डे'कवानुं दुःख "अट्टिमंजण" भग-
दण आदिधी लाठकां तोडावानुं दुःख, "नासाभेय" नाड छेदावानुं दुःख "प्पहा-
रदमण" लाठडी आणुक आदिना प्रहाराधी ताप्पे धवानुं दुःख, "छविच्छेयण"
शरीरेना अवयवे कपावानुं दुःख "अभिओगपावण" उच्छा न होय उतां पडु

સુવર્ચ્ચિની ટીકા અં ૧ સૂ. ૩૧ તિર્યગગતિદુઃખનિરૂપણમ્

૧૬૩

‘કસંકુસારનિવાય’ કશાઙ્કુશાઙ્કરનિપાતઃ = કશા = ચર્મયદિઃ ‘ચાલુક’ ઇતિ પ્રસિદ્ધા, અઙ્કુશઃ=પ્રસિદ્ધઃ, આરા=દણ્ડાન્તર્વર્તિનીતીક્ષ્ણલોહશલાકા ‘પરાણી’ ઇતિ પ્રસિદ્ધા, તેષાં નિપાતઃ=શરીરોપરિપ્રહારઃ ‘દમણ’ દમન=શિક્ષાગ્રાહનમ્, પૃતેષાં દ્રવ્યઃ, તાનિ તથા, ‘વાહનાણિ ય’ વાહનાનિ ચ=ભારોદ્વાહનાનિ, इत्येवं रूपाणि दुःखानि प्राप्नुवन्तीति सम्बन्धः ॥ सू. ३८ ॥

પુનરપિ તાન્યેવાદ—‘માયાપિઙ્’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—માયા-પિઙ્-વિષ્ણઓગ-સોયપરિપીલણાણિ ય સત્થ-ગિ-વિસાભિપ્રાય-ગલગવલાવલણમારણાણિ ય ગલજાલુચ્છિ-પ્પણાણિ ય-પડલણ વિકપ્પણાણિ ય—જાયઙ્ગીવગવંધણાણિ ય પંજરનિરોહણાણિ ય સજૂહ નિદ્ધાડણાણિ ય ધમણાણિ ય દોહણાણિ ય કુદંડગલવંધણાણિ ય વાહગ પરિવારણાણિ ય પંકજલનિમજ્જણાણિ ય વારિપ્પવેસણાણિ ય ઓવાય નિભંગવિસ-માણિ ય વડણ દવગ્ગિજાલ દહ્ણાઙ્કયાઙ્ક ય ॥ ૩૧ ॥

ટીકા—‘માયાપિઙ્ વિષ્ણઓગ’ માતાપિતૃવિષયોગઃ = માતા ચ પિતા ચ મેં જોત દિયે જાનેકા દુઃખ, (કસંકુસારનિવા ય) કશા-ચાલુક અંકુશ એવં આરા-દંડે કે અગ્રભાગમેં લગી હુઈ લોહ કી કીલ-સે પીટે જાને કા તથા ચુમો દેને કા દુઃખ, (દમણાણિ) દમન-અચ્છી ચાલ આદિ કો ચલાને કે લિયે શિક્ષા કા દુઃખ, તથા (વાહનાણિ ય) ભારોં કો વહન કરને કા દુઃખ, યે સવ દુઃખ હૈ ઓર ઝહેં તિર્યચગતિ મેં રહે હુઇ જીવ પ્રાપ્ત કરતે હૈ ॥ સૂ. ૩૮ ॥

તિર્યચગતિ કે ઓર ‘મી યે દુઃખ હૈ—‘માયા-પિય-વિષ્ણઓગ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(માયા-પિય-વિષ્ણઓગ સોયપરિપીલણાણિ ય) માતા પિતાકા

માલિક થાહે ત્યારે ગાડી આદિએ બેઠાવાનું દુઃખ, “કસંકુસારનિવાય” કશા-ચાલુક, અંકુશ અને આરા-લાકડીને છેડે ચોરેલી અણીદાર ખીલી વડે માર ખાવાનું દુઃખ, તથા તે ચીત્તેની અણી શરીરમાં લોકાવાથી દુઃખ થતું “દમણાણિ” દમન-સારી ચાલ ચલાવવા કે ગતિ વધારાવવા માટે થતી શિક્ષાનું દુઃખ તથા “વાહનાણિ ય” માર કપાડવાનું દુઃખ, એ બધાં દુઃખના વિવિધ પ્રકાર છે, અને તિર્યચ ગતિમાં જન્મેલા જીવો તે દુઃખો ભોગવે છે ॥ સૂ-૩૮ ॥

તિર્યચ ગતિના ખીજાં દુઃખો આ પ્રમાણે છે—‘માયા-પિય-વિષ્ણઓગ’ ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—‘માયા-પિય-વિષ્ણઓગ સોયપરિપીલણાણિ ય’ માતા પિતાનો જન્મતાં

● ● ●

प्रश्नव्याकरणसूत्रे

तयोर्वियोगः = वियोगः, तयोर्जन्मतो मरणे बधे व्याधादिभिर्निग्रहे वा स्वस्य निग्रहे वेति भावः 'सोयपरिपीडनाणि य' शोकपरिपीडनानि=मातापितृवियोगजनितशोकदुःखानि, अथवा-स्रोतः परिपीडनानि=स्रोतसां=नासिकादिछिद्राणां रज्जुबन्धनादिभिः परिपीडनानि=खेदोत्पादनानि। 'सत्यग्निविसाभिघायगलगवलावल्लेणमारणाणि य' शस्त्राग्निविषाभिघातगलगवलावल्लेणमारणानि च, तत्र-शस्त्रं च अग्निश्च विषं च तैरभिघातः=नाशः, तथा गलस्य = कण्ठस्य गवलस्य=शृङ्गस्य च आवलनेन=मोटनेन मारणानि 'गलजालुच्छिप्पणाणि' गलजालोत्क्षेपणानि=गलेन=बडिशेन जालेन च उत्क्षेपणानि = मत्स्यादीनां जलाद्बहिर्निस्सारणानि। पउल्लण-विकल्पणाणि' पचन विकल्पनानि='पउल्लण' पचनं विकल्पनं च=अङ्गकर्तनं तानि। जावज्जीवगबंधणाणि' यावज्जीवकबन्धनानि=आजीवन रज्जुशृङ्खलादि बन्धनानि। 'पंजरनिरोहणाणि' पञ्जरनिरोधनानि-पञ्जरं=लोहबंधशलाकादिनिर्मितं पक्षिन्यन्त्रणगृहं, तत्र निरोधनानि प्रतिरोधनानि 'सजूहनिदघाडणाणि' स्वयूथ निस्सारणानि=स्वयूथात्=स्वसार्थात्=निस्साणानि-पुनः पुनः परिवारतः जन्मते ही वियोग हो जाने से दुःख सहन करना, अथवा-नासिका आदि के छिद्रों का रज्जु आदि के द्वारा बंधन होने पर उसका कण्ठ सहना, (सत्यग्निविसाभिघायगलगवलावल्लेण मारणाणि य) शस्त्र से, अग्नि से तथा विष से मरण हो जाना, गला और सींग के मुड़ जाना और उससे मरण हो जाना, (गलजालुच्छिप्पणाणि य) बडिश-मछली मारने का कांटा एवं जाल से अपने स्थान से अलग किया जाना, (पउल्लणविकल्पणाणि य) अग्नि में पकाया जाना अंग अंग का काटा जाना (जावज्जीवगबंधणाणि य) जीवनपर्यन्त रज्जु अथवा सांकल आदि से बांधा जाना, (पंजरनिरोहणाणि य) पींजरे में बंद किया जाना, (सजूहनिदघाडणाणि य) बार २ अपने झुंड में से बाहर निकाल दिया जाना

જ વિધોગ થવાથી દુઃખ સહન કરવું પડે છે. નાક આદિના છિદ્રોનું દોરડા આદિ દ્વારા બંધન થવાથી તેનું દુઃખ સહન કરવું પડે છે. “સત્યમિવાસામિ શ્વાગલગવલાવલણમારણાણિ ચ” શસ્ત્રથી, અગ્નિથી તથા વિષથી મૃત્યુ થઈ જવાનું, ગયું અને શીંગડાં મરડાઈ જવાને કારણે મરણ થવાનું, “ગલજાલુ-ક્ષિત્વણાણિ ચ” ગલ (માછડી મારવાનો કાંટો) અને નળથી પોતાના સ્થા-નેથી અલગ કરવાનું, “વડલણવિકૃત્વણાણિ ચ” અગ્નિમાં રંધાવાનું, દરેક અંગનાં છેદાવાનું, “જાવજ્જીવગંધંબણાણિ ચ” હવે ત્યાં સુધી દોરડાં કે સાંકળ વડે બાંધાવાનું, “પેજરનિરોહણાણિ ચ” પિંજરામાં પૂરાવાનું, “સજૂહનિદ્વાહ-ણાણિ ચ” વારંવાર પોતાના સમૂહમાંથી બહાર લઈ જવાનું, “ધમણાણિ ચ”

सुवर्णिनी टीका अ० १ सू० ३९ तिर्यग्गतिदुःखनिरूपणम्

१३५

पृथकरणानीत्यर्थः, 'निः' पूर्वकस्य 'सु' धातोः 'धाड' आदेशेकृतेऽपि पुनर्निरूपसर्गपूर्वकनिर्देशः पौनः पुन्यार्थसूचकः, 'धमणाणि' अग्नीं प्रक्षिप्य भस्त्रादिभिर्धमनानि । दोहणाणि 'दोहनानि' 'कुदंडगलबंधणाणि' कुदण्डगलबंधनानि=कुदण्डस्य=वक्रकाष्ठस्य गले=कण्ठे बन्धनानि 'वाडगपरिवारणाणि य' वाटकपरिवारणानि=वाटके निरोधनानि 'पंकजलनिमज्जणाणि' पङ्कजलनिमज्जनानि=पङ्कमयजले निमज्जनानि ब्रोडनानि 'वारिष्पवेसणाणि' वारिप्रवेशनानि=जलप्रक्षेपणानि 'ओवायनिभंगविसमणिवडणदवग्गिजालदहणाइयाइं य' अवपातनिभक्षिपमनिपतनदवाग्निज्वालादहनदिकनि च-अवपातेन=मर्तादिषु निपातेन यो निभक्तः=अज्ञोपाङ्गः भञ्जनम्, अपि च-विषमेभ्यः=विषमप्रदेशेभ्यो गिरिवृक्षादिभ्यो निपतनं, तथा दवाग्निज्वालाभिर्दहनं चेति द्वन्द्वः, तानि आदिर्वेषां तानि=स्वस्वजातिरोगातङ्कादीनि तान्येवम्पकाराणि दुःखानि प्राप्नुवन्ति ॥सू० ३९॥

(धमणाणि य) अग्नि में प्रक्षिप्त करके भस्त्रा आदि से धोका जाना, (दोहणाणि य) स्तनों का दोहन होना, (कुदंड गलबंधणाणि य) कोढ़े वक्र-काष्ठ का गले में बांधा जाना-लटकाया जाना, (वाडगपरिवारणाणि य) कांटों आदि की बाड़ लगाकर किसी स्थानपर रोका जाना, (पंकजलनिमज्जणाणि य) पंक युक्त जल में फँस जाना, (वारिष्पवेसणाणि य) वारिप्रवेशन-बरसते हुए पानी में खड़े रहना अथवा तलाब वगैरह के पानी में हठात् प्रविष्ट कराया जाना, अथवा पानी में डूब कर मर जाना, (ओवायणिभंगविसमणिवडण-दवग्गिजाल दहणाइयाइं य) किसी गर्त खड्डा आदि में गिर जाने से अंग उपांगों का टूट जाना, पर्वत आदि के ऊँचे स्थानों से गिर जाना, दवाग्नि में जल जाना, हत्यादि नाना प्रकार के दुःखों को तिर्यश्च गति के जीव भोगते हैं ॥सू. ३९॥

अग्निभां नाभीने आशीदार सजिथा आदि वडे वीधिवानुं, " दोहणाणि य " आंयणेभांथी दूध दोड लेवानुं, " कुदंडगलबंधणाणि य " गणाभां आडां लटकाववानुं, " वाडगपरिवारणाणि य " डाडणवाणा जणभां भूंसी जवानुं " वारिष्पवेसणाणि य " वारि प्रवेशन-बरसता वरसाहभां उभा रडेवानुं अथवा तणाव वगेरेना पाणीभां जण जवरीथी प्रवेश करवानुं. " ओवायणिभंगविसमणिवडण-दवग्गिजालदहणाइयाइं य " डोड पाडा आदिभां पडी जवाथी अण उपांगो तूटी जवानुं, पर्वत आदि उयां स्थानो परथी पडी जवानुं, दवाग्निभां जणी जवानुं, हत्यादि विविध प्रकारनां दुःखो तिर्यश्च गतिना एवो लोगवे छासु उद॥

ઉપસંહરનાહ—‘एवं ते’ इत्यादि ।

મૂલમ્—एवं ते दुःखसयसंपलित्ता नरगाओ आगया इहं
सावसेसकम्मा तिरिक्खपंचिदिएसु पावेति पावकारी
कम्माइं, पमायरागदोसबहुसंचियाइं अइव असायक
कसाइं ॥ सू० ४० ॥

ટીકા—एवम्=उक्तप्रकारैः ते = जीवा प्राणातिपातकारकाः ‘दुःखसय-
संपलित्ता’ दुःखशतसम्प्रदीप्ताः=दुःखशतैः सम्प्रदीप्ताःसन्तप्ताः ‘नरगाओ’ नरकात्
—इह=तिर्यग्लोके ‘आगया’ आगताः=उत्पन्नाः ‘सावसेसकम्मा’ सावशेषक-
र्माणः=अवशिष्टपापकर्मणिः ‘पावकारी’ पापकारिणः ‘तिरिक्खपंचिदिएसु’
तिर्यक् पञ्चेन्द्रियेषु ‘पमाय-रागदोसबहुसंचियाइं’ प्रमादरागद्वेषबहुसञ्चितानि-
प्रमादः=विषयाद्यभिष्वङ्गलक्षणः, रागः=मायालोभलक्षणः, द्वेषःक्रोधमानलक्षणः,
तैः बहूनि सञ्चितानि=उपार्जितानि ‘अइव’ अतीव=अत्यन्तम् ‘असायककसाइं’
अशातकर्कशानि = अशातेषु=अशातवेदनीयकर्मोदयप्रभवेषु दुःखेषु कर्कशानि=
कठोराणि ‘कम्माणि’ कर्माणि=कर्मजन्यानि दुःखानि ‘पावेति’ प्राप्नुवन्ति,

अब उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘एवं ते’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(एवं) इस प्रकार से (ते) वे प्राणातिपातकारक जीव (दुःखसयसंपलित्ता) सैकड़ों दुःखों से सन्तप्त होकर (नरगाओ) नरक से (इह) इस तिर्यग्लोक में (आगया) उत्पन्न होते हैं और (सावसेस-कम्मा) पापकर्म उनका अवशेष रहने के कारण वे (तिरिक्ख पंचिदि-एसु) तिर्यक् पञ्चेन्द्रियों में (पमाय - रागदोसबहुसंचियाइं) विषयाद्यभिष्वङ्गरूप प्रमाद से मायालोभरूप राग से और क्रोधमानरूप द्वेष से उपार्जित किये गये (अइव असाय ककसाइं कम्माइं) अशात कर्कश कर्मों

હવે ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—“एवं ते” इत्यादि-

ટીકાર્થ—“एवं” આ પ્રમાણે “ते” તે પ્રાણુવધ કરનાર જીવ “दुःखसयसंप-
लित्ता” સેકડો દુઃખોથી દુઃખી થઈને “नरगाओ” નરકમાંથી “इह” આ
તિર્યગ્લોકમાં “आगया” ઉત્પન્ન થાય છે અને “सावसेसकम्मा” તેમના પાપકર્મ
બાકી રહેલ હોવાથી તેઓ “तिरिक्खपंचिदिएसु” તિર્યંચ પંચેન્દ્રિયોમાં “पमाय
रागदोसबहुसंचियाइं” વિષયાદિની અભિલાષા રૂપ પ્રમાદથી, માયા લોભ રૂપ
રાગથી, અને ક્રોધમાન રૂપ દ્વેષથી ઉપાર્જિત કરેલ “अइव असाय ककसाइं
कम्माइं” અશાતા કર્કશ કર્મોને અશાતા વેદનીય કર્મોદયને કારણે ઉપાર્જિત

સુશ્ચિનીટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૪૧ ચતુરિન્દ્રિયદુઃસ્થિતરૂપણમ્

૧૩૭

પ્રાણિવધકારકાઃ નરકાત્પત્યાગનાસ્તિત્યેકપૃષ્ઠેન્દ્રિયયોનિષુ સમુત્પન્નાઃ કઠોરત-
રાણિ દુઃસ્થાન્યતુ મવન્તીતિ સઙ્કલિતોઽર્થઃ ॥ સૂ૦ ૪૦ ॥

તિર્યક્ પૃષ્ઠેન્દ્રિયદુઃસ્થાનિ વર્ણયિત્વા સામ્પત્તં ચતુરિન્દ્રિયદુઃસ્થાનિ વર્ણ-
યન્નાહ—‘મમર’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—મમર-મસગ-મચ્છિયાહપ્સુ ય જાહકુલકોડિસય-
સહસ્સેહિં નવહિં ચઝરિંદિયાણ તહિં તહિં ચેવ જમ્મણ
મરણાણિ અણુહવંતા કાલં સંસ્થિજ્ઞં મમંતિ નેરદ્વયસમાણ
તિવ્વદુક્ખાફરિસરસણઘાણચક્ખુસહિયા ॥ સૂ૦ ૪૧ ॥

ટીકા—‘મમર-મસગ-મચ્છિયાહપ્સુ’ ભ્રમરમશકમશ્વિકાદિકેષુ =
પ્રસિદ્ધેષુ ‘ચઝરિંદિયાણ’ ચતુરિન્દ્રિયાણાં ‘નવહિં’ નવમુ=નવસંસ્થાકેષુ ‘જાહ-
કુલકોડિસયસહસ્સેહિં’ આતિકુલકોટિશતસહસ્રેષુ = જાતો = ચતુરિન્દ્રિયજાતો
યાનિ કુલાનિ=ભ્રમરાદ્યનેકાકારાણિ, તેષાં કોટયઃ=વિભાગાઃ=અન્તર્ભેદાઃ તેષાં
શતસહસ્રેષુ=લક્ષેષુ=નવલક્ષચતુરિન્દ્રિયજાતિકુલકોટિષુ ઇત્યર્થઃ, ‘તહિં તહિં ચેવ’
કો અજ્ઞાતવેદનીયકર્મોદયસે ઉદ્ભૂત હુણ દુઃસ્થો મેં ખી કઠોરતરકર્મજન્ય-
દુઃસ્થો કો (પાવેંતિ) ભોગતે હેં-અર્થાત્-વે પ્રાણિવધકારક જીવ નરકસે
નિકલકર તિર્યક્પૃષ્ઠેન્દ્રિયો મેં ઉત્પન્ન હોતે હેં ઓર વહાં કઠોર દુઃસ્થો કો
પ્રાપ્ત કરતે હેં ॥સૂ. ૪૦ ॥

વે પાપી જીવ ચતુરિન્દ્રિય જીવો મેં ઉત્પન્ન હોકર કિસ પ્રકાર કે
દુઃસ્થો કો ભોગતે હેં જિસકા વર્ણન કરતે હેં—‘મમર-મસગ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(મમર-મસગ-મચ્છિયાહપ્સુ ચઝરિંદિયાણ નવહિં જાહકુલકો-
ડિસયસહસ્સેહિં) ભ્રમર, મશક, મશ્વિકા આદિ ચતુરિન્દ્રિય જીવો કે નૌ
લાઘ્વ જાતિકુલ કોટિયો મેં (તહિં તહિં ચેવ જમ્મણમરણાણિ) વહીં વહીં

હુઃખો કરતાં યજ્ઞ વધારે કઠોર કર્મજન્ય હુઃખોને “પાવેંતિ” ભોગવે છે. એટલે
કે પ્રાણીવધ કરનાર એવા નરકમાર્થી નીકળીને તિર્યક્ પૃષ્ઠેન્દ્રિયેમાં ઉત્પન્ન
થાય છે અને ત્યાં વધારેમાં વધારે આકરાં હુઃખો પ્રાપ્ત કરે છે ॥સૂ. ૪૦॥

તે પાપી એવા ચતુરિન્દ્રિય એવામાં ઉત્પન્ન થઈને કેવા પ્રકારનાં હુઃખો
ભોગવે છે તેતું યજ્ઞ કરતાં સૂચકાર કહે છે—“મમરમસગ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“મમર, મસગ, મચ્છિયાહપ્સુ ચઝરિંદિયાણ નવહિં જાહકુલકોડિસયસહ-
સ્સેહિં” ભ્રમર, મશક, માખી આદિ ચૌદ્રિન્દ્રિય એવાની નવલક્ષણ પ્રકારની ભ્રાતિ-
ઓમાં “તહિં તહિં ચેવ જમ્મણમરણાણિ.” તે તે યોગિયોમાં ચતુરિન્દ્રિય એવામાં

તત્ર તથૈવ=ચતુરિન્દ્રિયેષ્વેવ 'જન્મમરણાણિ' જન્મમરણાણિ 'અણુહવંતા' અનુ
 ભવન્તઃ=કુર્વન્તઃ 'નેરહયસમાણતિવ્વદુક્ખા' નૈરયિકસમાનતીવ્રદુઃખાઃ=નારકૈઃ
 સમાનાનિ=નરકે નારકાઃ યાદૃશાણિ દુઃખાણિ અનુભવન્તિ તત્તુલ્યાન્યેવ
 તીવ્રાણિ=કઠોરાણિ અસહ્યાનીત્યર્થઃ દુઃખાણિ ત્રેષાં તે તથા નારકદુઃખતુલ્યા-
 સહ્યવેદનાવન્તઃ, 'ફરિસ-રસણ-ઘાણ-ચક્કુસહિયા' સ્પર્શ-રસન-ગ્રાણ-ચક્ષુઃ
 સહિતાઃ=સ્પર્શાદીન્દ્રિયચતુષ્ટયયુક્તાઃ 'સંખિજ્ઞં કાલં' સંખ્યાતં કાલં=સંખ્યાતવર્ષ-
 સહસ્રં કાલં યાવત્ 'ભમંતિ' ભ્રમન્તિ=પુનઃ પુનર્યોનિતો યોનિ પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ॥૪૧॥

અથ ત્રીન્દ્રિયદુઃખાણિ વર્ણયતિ 'તદેવે' ત્યાદિ ।

મૂલ્—તદેવ તેઈંદિયસુ કુંથુ-પિવીલિયા-ઉદેહિયાઇપસુ
 ય જાઇકુલકોહિસયસહસ્સેહિં અદ્દહિં અણૂળગેહિં તેઈંદિ-
 દિયાણ તહિં તહિં ચેવ જન્મણ મરણાણિ અણુહવંતા કાલં
 સંખેજ્ઞં ભમંતિ નેરહયસમાણતિવ્વદુક્ખા ફરિસ-રસણ
 -ઘાણ-સંપઉત્તા ॥ સૂં ૪૨ ॥

ટીકા—'તદેવ' તથૈવ=ચતુરિન્દ્રિયેષુ યથા દુઃખાન્યનુભવન્તિ તથૈવ 'તે
 ઈંદિયસુ' ત્રીન્દ્રિયેષુ 'કુંથુ-પિવીલિયા ઉદેહિયાઇપસુ' કુંથુ પિપીલિકોપદેહિ-

પર-ચતુરિન્દ્રિય જીવોં મેં હી-જન્મ મરણોં કો (અણુહવંતા) કરતે હુપ
 વે પાપી જીવ (નેરહયસમાણતિવ્વદુક્ખા) નરકગતિ જૈસે અસહ્ય
 દુઃખોં કો ભોગતે હુપ (ફરિસ-રસણ-ઘણચક્કુસહિયા) સ્પર્શન,
 રસના, ઘ્રાણ ઓર ચક્ષુ હન ઈન્દ્રિયોં સે યુક્ત હુપ યે ચતુરિન્દ્રિય જીવ
 (સંખિજ્ઞં કાલં) સંખ્યાતા હજાર વર્ષતક (ભમંતિ) ઉસી યોનિ મેં જન્મ
 મરણ કરતે રહતે હૈં ॥ સૂ. ૪૧ ॥

અથ ત્રીન્દ્રિય જીવોં કે દુઃખોં કો વે ભોગતે હૈં એસા વર્ણન સૂત્રકાર

જ જન્મ મરણ "અણુહવંતા" અનુભવતા તે પાપી જીવો "નેરહયસમાણતિવ્વ
 દુક્ખા" નરક ગતિ જેવાં અસહ્ય દુઃખો ભોગવે છે. અને "ફરિસ-રસણ-ઘાણ
 -ચક્કુસહિયા" સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, અને ચક્ષુ એ ચાર ઈન્દ્રિયોથી યુક્ત
 તે ચતુરિન્દ્રિય જીવો "સંખિજ્ઞં કાલં" સંખ્યાત હજાર વર્ષ સુધી "ભમંતિ"
 તે યોનિમાં જન્મ મરણ અનુભવ્યા કરે છે, ॥૪૧-૪૧॥

હવે તે ત્રીન્દ્રિય જીવો જે દુઃખો ભોગવે છે તેવું સૂત્રકાર વર્ણન કરે

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૪૨ તિન્દ્રિયોન્દ્રિયદુઃખનિરૂપણમ્

૧૩૬

કાદિકેષુ=કુન્થુઃ=કુન્દ્રનન્તુવિશેષઃ, પિપીલિકા=પ્રસિદ્ધા, ‘ઉદેહિયા’ ઉપદેહિકા
=‘ઉદેહી’ इति भाषा प्रसिद्धा, इत्यादिकेषु ‘तेहંદियाण’ त्रीन्द्रियाणां,
‘अणूणगेहिं’ अन्नयूनकेषु=पूर्णेष्ु ‘अट्टहिं’ अष्टसु ‘जाड्कुलकोटिसयसहस्सेहिं’
जातिकुलकोटिशतसहस्रेषु-जातौ=त्रीन्द्रियजातौ यानि कुलानि = कुन्थुपिपीलि-
काद्याकाराणि, तेषां कोटयः=विभागाः=अन्तर्भेदाः, तेषां शतसहस्रेषु लक्षेषु परि-
पूर्णाष्टलक्षत्रीन्द्रियजातिकुलकोटिषु-इत्यर्थः, ‘तहिं तहिं चैव’ तत्र तत्रैव त्रीन्द्रि-
येषु ‘जन्ममरणाणि’ जन्ममरणानि ‘अणुहवंता’ अनुभवन्तः, ‘नेरह्यसमा-
णतिव्वदुक्खा’ नैरयिकसमानतीव्रदुःखा=नरकसदृशदुःखयुक्ताः ‘फरिस-रसण-
घाण-संपउत्ता’ स्पर्श रसनघ्राणसम्प्रयुक्ता=स्पर्शादिभिस्त्रिभिर्निन्द्रियैर्युक्ताः ‘संखे-
ज्जं’ संख्यातकं=संख्यातवर्षसहस्रं कालं यावत् ‘भमंति’ भ्रमन्ति ॥सू०४२॥

કરતે હૈં-‘તહેવ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ-(તહેવ) जिस तरह पापी जीव चतुरिन्द्रिय जीवों में जन्म मरण
करके दुःखों को भोगते हैं उसी तरह वे (कुन्थु पिपीलिया उदेहियाइएसु)
कुन्थु, पिपीलिका, उदेही आदिक त्रीन्द्रिय जीवों में कि जिन (तेहंदि-
याण) तेन्द्रिय जीवों की (अणूणगेहिं अट्टहिं जाड्कुलकोटिसयसह-
स्सेहिं) उन पूर्ण आठ लाख जातिकुल कोटियों में (तहिं तहिं चैव
जन्ममरणाणि अणुहवंता) बार बार वहीं पर जन्म मरणों को करते हुए
(नेरह्यसमाणतिव्वदुक्खा) नरकगति जैसे असह्य दुःखों को भोगते
हुए इनके (फरिस-रसण-घाण संपउत्ता) स्पर्शन, रसना और घ्राण
इन तीन इन्द्रिय युक्त हुए ये तेन्द्रिय जीव (संखेज्जं कालं) संख्यात
हजार वर्षों तक (भमंति) उसी पर्याय में परिभ्रमण करते हैं ॥सू०४२॥

છે—“તહેવ” इत्यादि.

ટીકાર્થ-“તહેવ” જેમ પાપી જીવો ચતુરિન્દ્રિ જીવોમાં જન્મ મરણ પામીને
દુઃખો ભોગવે છે તેમ તેઓ “કુન્થુપિપીલિયાઉદેહિયાઈસુ” કુન્થુ, પીપીલી, ઉદેહી આદિક
ત્રિન્દ્રિય જીવોમાં જન્મ લે છે. અને ‘તેહંદિયાણ’ તેન્દ્રિય જીવોની “અણૂણગેહિં
અટ્ટહિં જાડ્કુલકોટિસયસહસ્સેહિં” આઠલાખ પ્રકારની ભતિયોનિમાં “તહિં
તહિં ચેવ જન્મમરણાણિ અણુહવંતા” વારંવાર જન્મ મરણ અનુભવતાં “નેરહ-
યસમાણતિવ્વદુક્ખા” નરક ગતિ જેવાં અસહ્ય દુઃખો ભોગવે છે. જેમને
“ફરિસ-રસણ-ઘાણ સંપઉત્તા” સ્પર્શન, રસના અને ઘ્રાણ એ ત્રણ ઇન્દ્રિયોજ
હોય છે. એવા તે તેન્દ્રિય જીવો “સંખેજ્જકાલં” સંખ્યાત હજાર વર્ષો સુધી
“ભમંતિ” તે જ યોનિમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે ॥ સૂ-૪૨ ॥

અથ દ્વીન્દ્રિયદુઃસ્થાનિ વર્ણયન્નાહ—‘ગંઢૂલય’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ગંઢૂલય—જલૂય—કિમિય—ચંદળગ—માઇણસુ ય
જાઇકુલકોડિસયસહસ્સેહિં સત્તહિં અણૂળગેહિં વેહંદિયાણ
તહિં તહિં ચેવ જમ્મમરણાણિ અણુહવંતા કાલં સંઘિજ્ઞગં
મમંતિ નેરહયસમાણતિવ્વ દુક્ખા ફરિસ-રસણ-સંપડત્તા॥સૂ૦૪૩॥

ટીકા—ત્રીન્દ્રિયાત્ સમાગતાઃ દ્વીન્દ્રિયેષ્વપિ ‘ગંઢૂલય-જલૂય કિમિય-
ચંદળગમાઇણસુ’ ગંઢોલક-જલૂક-કૃમિ-ચન્દન કાદિકેષુ-ગંઢોલાઃ=ગોમ-
યાદિષુ સમુત્પન્નાઃ કોટવિશેષાઃ, જલૂકાઃ=જલજન્તુકાઃ ‘જૌક’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાઃ
કૃમયઃ=‘લટ’ ‘ચૂરણિયા’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાઃ, ચન્દનકાઃ=શઙ્ખજાતિવિશેષાઃ, તે
આદિર્યેષાં તે તથા તેષુ ‘વેહંદિયાણ’ દ્વીન્દ્રિયાણાં ‘સત્તહિં’ ‘સમસુ જાતિકુલ-
કોટિશતસહસ્સેષુ અન્યૂનેષુ જન્મમરણાણિ અનુભવન્તો નારકસમાનતીવ્રદુઃસ્થાઃ
સ્પર્શસ્નેહીન્દ્રિયદ્વય સમ્પ્રયુક્તાઃ સંઘ્યાતવર્ષસહસ્રલક્ષણં કાલં યાવત્ શ્રમન્તિ ॥૪૩॥

અથ દ્વીન્દ્રિય જીવોં મેં ઉત્પન્ન હોકર કે વે કિન કિન દુઃખોં કો
ભોગતે હિં હસકા મ્ત્રકાર વર્ણન કરતે હિં—‘ગંઢૂલ ય’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—તેન્દ્રિય યોનિસે નિકલ કર વે પાપી જીવ દ્વીન્દ્રિય જીવોં મેં (ગંઢૂ-
લય-જલૂય-કિમિય-ચંદળગ-માઇણસુ) ગંઢોલક, જલૂક, કૃમિ, ઔર
શંખ આદિકોં મેં ખી કિ જિનકી (સત્તહિં જાઇકુલકોડિ સયસસેહિં)
સાતલાખ જાતિકુલ કોટિ હિં (તહિં ૨) વહીં વહીં વાર ૨ (જમ્મમર-
ણાણિ અણુહવંતા) જન્મ મરણ કરતે હુણ (નેરહય સમાણતિવ્વદુક્ખા)
નારકિયોં જૈસા તીવ્ર દુઃખ ભોગતે હુણ (ફરિસ-રસણ સંપડત્તા) સ્પ-

હવે દ્વીન્દ્રિય જીવોંમાં ઉત્પન્ન થઇને તેઓ ક્યાં ક્યાં દુઃખો ભોગવે છે,
તેનું સૂત્રકાર પણુન કરે છે—“ગંઢૂલય” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—તેન્દ્રિય યોનિમાંની નીકળીને તે પાપી જીવો “ગંઢૂલય-જલૂય-
કિમિય-ચંદળગ-માઇણસુ” ગંઢોલક, જલૂક, કૃમિ, શંખ આદિ દ્વીન્દ્રિય જીવોંમાં જન્મ
લે છે. તે દ્વીન્દ્રિય જીવોના પણુ ‘સત્તહિં જાઇકુલકોડિસયસહસ્સેહિં’ બહુ પ્રમાણે સાત
લાખ પ્રકારે છે. “તહિં તહિં” તે દરેક બહુમાં વારંવાર “જમ્મમરણાણિ અણુહવંતા”
જન્મ મરણ અનુભવતા “ નેરહયસમાણતિવ્વદુક્ખા ” તેઓ નારકીઓ જેવાં
આકરાં દુઃખો ભોગવે છે. “ ફરિસરસણસંપડત્તા ” સ્પર્શન અને રસના ઇન્દ્રિ-

સુશિશી ટીકા અ. ૧ સૂ. ૪૪ એકેન્દ્રિયદુઃસનિરૂપણમ્

૧૪૧

એવમેવ એકેન્દ્રિયત્વમપિ તે પ્રાપ્તાઃ યાસુ યાસુ યોનિષુ યથા ભ્રમન્તિ તદાહ—‘ પત્તા ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પત્તા એર્ગિદિયત્તણંપિ ય પુઢવિ જલ જલણ-મારુય વળપ્ફહસુહુમવાયરં ચ પજ્જત્તમપજ્જત્તં પત્તેય સરીરણામ સાહારણં ચ પત્તેયસરીરજીવેસુ ય તત્થ વિ કાલમસંસેજ્જં ભમંતિ અણંતકાલં ચ અણંતકાણ, ફાસિંદિયભાવસંપ-ઉત્તા દુક્ખસમુદયં ઇમં અણિટ્ઠં પાવંતિ પુણો પુણો તહિં તહિં ચેવ પરમ્ભવતરુણગહણે ॥ સૂ. ૪૪ ॥

ટીકા—‘ એર્ગિદિયત્તણંપિ ય ’ એકેન્દ્રિયત્વમપિ ચ=‘ અપિ ચે ’ તિ સમુ-ચ્ચયાર્થઃ । એવં ચ ન કેવલં પંચેન્દ્રિયચતુરિન્દ્રિયાદિત્વમેવ પ્રાપ્તાઃ, અપિ તુ એકેન્દ્રિયત્વમપિ ‘ પત્તા ’ પ્રાપ્તાઃ સન્તઃ દુઃસ્વસમુદયં પ્રાપ્નુવન્તીત્યગ્રેણ સમ્બન્ધઃ ।

શન ઓર રસના હન દો ઇન્દ્રિયોં સે યુક્તવાલે ચે દ્વીન્દ્રિય જીવ (સંસેજ્જં-કાલં) સંખ્યાત હજાર વર્ષ પ્રમાણ કાલતક (ભમંતિ) હસી દ્વિન્દ્રિય કી પર્યાય મેં ભ્રમણ કરતે હેં ॥ સૂ-૪૩ ॥

હસી તરહ એકેન્દ્રિય કી પર્યાય કોં ખી પ્રાપ્ત હુણ વે પાપી જીવ જિન ૨ યોનિયોં મેં જિસ ૨ તરહ સે પરિભ્રમણ કરતે હેં અબ મૂલકાર હસ ચાત કો પ્રકટ કરતે હેં—‘ પત્તા એર્ગિદિયત્તણંપિ ય ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(એર્ગિદિયત્તણંપિ ય પત્તા) વે પાપી જીવ કેવલ પંચેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય આદિ પર્યાયોંકોં હી પ્રાપ્ત નહીં કરતે હેં કિન્તુ એકેન્દ્રિય પર્યાયકોં પ્રાપ્ત કરતે હેં ઓર વહાં વે (દુઃસ્વસમુદયં પાવંતિ) દુઃસ્વ સમૂહ કોં ભોગતે

ચેથી યુક્ત તે દ્વીન્દ્રિય હવે “ સંસેજ્જકાલ ” સંખ્યાત હજાર વર્ષ સુધી “ ભમંતિ ” એજ દ્વીન્દ્રિય યોનિમાં ભ્રમણુ કરે છે ॥ સૂ-૪૩ ॥

એજ પ્રમાણે એકેન્દ્રિયની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થઈને તે પાપી હવે જે જે યોનિમાં જે જે રીતે પરિભ્રમણુ કરે છે, તે વાતનું સૂત્રકાર હવે વર્ણન કરે છે—“ એર્ગિદિયત્તણંપિ ય ” ઇત્યાદિ.

“ એર્ગિદિયત્તણંપિ ય પત્તા ” તે પાપી હવે ક્ષત પંચેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય પર્યાયોંનેજ પ્રાપ્ત કરતા નથી પણ એકેન્દ્રિય પર્યાયને પણ પ્રાપ્ત કરે છે, અને ત્યાં તેઓ “ દુઃસ્વસમુદયં પાવંતિ ” દુઃખોના સમૂહને ભોગવ્યા કરે છે, તે

કીદશમેકેન્દ્રિયશ્વમ્ ? इत्याह-पुढवीजलजलणमारुयवणप्फइ ' पृथिवी-जलज्व-
लनमारुतवनस्पतिके, पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिरूपम् । तदपि पृथिव्यादिकं कीद-
शम् ? इत्याह-' सुहुमवायरं' सूक्ष्मवादरं=सूक्ष्मवादरनामकर्मोदयसम्पाद्यम् 'पज्ज-
त्तमपज्जत्तं' पर्याप्तमपर्याप्तं-पर्याप्ताऽपर्याप्तामकर्मोदयसम्पाद्यम् । तथा 'पत्तेय
सरीरणामसाधारणं' प्रत्येकशरीरनामसाधारणं, तत्र प्रत्येकशरीरनाम-यदुद-
याज्जीवं जीवं मति भिन्नं शरीरमुपजायते तत्-पृथिव्यप्तेजोवायु-प्रत्येक वनस्प-
तिरूपं, साधारणं=साधारणनाम=यदुदयाद् अनन्तानां जीवानामेकं शरीरं भवति

रहते हैं, इस प्रकारका संबंध यहां लगा लेना चाहिये । एकेन्द्रियोंके भेद इस प्रकार हैं-(पुढविजल-जलण-मारुय-वणप्फइ सुहुमवायरं च) पृथिवी जल, अग्नि, वायु और वनस्पति ये सब एकेन्द्रिय जीव हैं इनके सूक्ष्म और बादर ये दो भेद हैं । सूक्ष्म नामकर्म के उदय से जीव पृथिव्यादि रूप सूक्ष्म एकेन्द्रिय और बादर नाम कर्म के उदय से बादर पृथिव्यादि एकेन्द्रिय होता है । (पज्जत्तमपज्जत्तं) ये दोनों प्रकार के जीव पर्याप्त और अपर्याप्त होते हैं । पर्याप्त नाम कर्म के उदय से जीव पर्याप्त होता है और अपर्याप्त नामकर्म के उदय से अपर्याप्त होता है । (पत्तेयसरीरणामसाधारणं च) जिसके उदय से जीव जीव का भिन्न २ शरीर होता है वह प्रत्येक शरीर नामकर्म है । यह प्रत्येक शरीर नामकर्म का उदय पृथिवी अप्तेज वायु और प्रत्येक वनस्पति के होता है । तथा जिस के उदय से अनंत जीवों का एक ही शरीर होता है वह साधारण नामकर्म

પ્રકારનો સંબંધ અહીં સમજી લેવાનો છે. એકેન્દ્રિયોના ભેદ આ પ્રમાણે છે-
“ પુઢવિ જલ-જલણ-મારુય-વણપ્ફઇસુહુમવાયરં ચ ” પૃથિવી, જળ, અગ્નિ, વાયુ અને વનસ્પતિ એ સઘળા એકેન્દ્રિય જીવો છે. તેના બે ભેદ છે-સૂક્ષ્મ અને ખાદર સૂક્ષ્મ નામકર્મના ઉદયથી જીવ પૃથિવી આદિરૂપ સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય અને ખાદર નામકર્મના ઉદયથી ખાદર પૃથિવી આદિ એકેન્દ્રિય થાય છે. “પજ્જત્તમપજ્જત્તં” તે બંને પ્રકારના જીવ પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત હોય છે. પર્યાપ્ત નામ કર્મના ઉદયથી જીવ પર્યાપ્ત થાય છે અને અપર્યાપ્ત નામકર્મના ઉદયથી અપર્યાપ્ત થાય છે “પત્તેયસરીરણામસાધારણં ચ” જેના ઉદયથી દરેક જીવનું ભિન્ન ભિન્ન શરીર હોય છે તે પ્રત્યેક શરીર નામકર્મ કહેવાય છે. તે પ્રત્યેક નામકર્મના ઉદય પૃથિવી, જળ, તેજ, વાયુ અને પ્રત્યેક વન-સ્પતિને હોય છે. તથા જેના ઉદયથી અનંત જીવોનું એક જ શરીર હોય છે તે સાધારણ નામકર્મ છે, અને તેના ઉદય અનન્તકાય વનસ્પતિમાં જ હોય છે.

સુદર્શિનીટીકા અવ ૧ સુ. ૪૪ એકેન્દ્રિયદુઃસ્વનિરૂપણમ્

૧૪૩

તત્-અનન્તકાયરૂપમ્ । ‘તત્થ વિ’ તત્ત્વાડપિ ‘પત્તેયસરીરજીવેસુ ય’ પ્રત્યેક-
શરીરજીવેસુ = પૂર્વોક્તપૃથિવ્યાદિપ્રત્યેકવનસ્પતિપર્યંતેષુ ‘અસંલેજ્જં’ અસં-
સ્થેયમ્ અસંસ્થાતાવસર્પિણી રૂપં કાલં યાત્ત્ ભ્રમન્તિ । ‘અણંતકાણ’ અનન્તકાયે
સાધારણવનસ્પતિશરીરે કન્દમૂલાદિષુ ‘અનંતકાલં’ અનન્તકાલમ્=અનન્તાવસ-
ર્પિણ્યુત્સર્પિણી લક્ષણં ભ્રમન્તિ=પર્યટન્તિ । ઉક્તશ્ચ—

“અસંલોસપ્પિણિ ઉસ્સપ્પિણી ઉ અગિંદિયાણ ય વડુહં ।

તાઓ ચેવ અણંતા, વણસ્સઈણ ઉ બોદ્ધવ્વા ॥ ૧ ॥” ઇતિ ॥

છાયા—અસંસ્થાતાવસર્પિણ્યુત્સર્પિણ્ય એકેન્દ્રિયાણાં ચ ચતુર્ણામ્ ।

તાથૈવાડનન્તા વનસ્પતૌ તુ બોદ્ધવ્યાઃ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

હૈ, ઓર હસકા ઉદય અનન્તકાયવનસ્પતિ કે હોતા હૈ । (તત્થવિ પત્તે-
યસરીરજીવેસુ) પાપી જીવ હન પૃથિવ્યાદિ સે લેકર પ્રત્યેક વનસ્પતિ કી
યોનિયોં મેં (અસંલેજ્જં કાલં) અસંસ્થાત અવસર્પિણી અસંસ્થાયા ઉત્સ-
ર્પિણી કાલતક જન્મ મરણ કે દુઃસ્વ ભોગતે હૈં । તથા (અણંતકાણ અણંત-
કાલં ચ) સાધારણ વનસ્પતિરૂપ કન્દ મૂલાદિકોં મેં અનંત ઉત્સર્પિણી
ઓર અનંત અવસર્પિણી કાલતક જન્મ મરણ કે કષ્ટ ભોગતે હૈં ।
કહા ઓ હૈ—

“અસંલોસપ્પિણિ ઉસ્સપ્પિણી ઉ અગિંદિયાણ ય વડુહં ।

તાઓ ચેવ અણંતા, વણસ્સઈણ ઉ બોદ્ધવ્વા ॥૧॥” ઇતિ ॥

એકેન્દ્રિય પૃથિવી આદિ ચારોં મેં ધૂમને કા કાલ અસંસ્થાત ઉત્સર્પિણી
અવસર્પિણી હૈ તથા વનસ્પતિ મેં—સાધારણ—અનંતકાય મેં—ધૂમને કા
કાલ અનંત ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણીરૂપ હૈ ॥૧॥

“તત્થવિ પત્તેયસરીરજીવેસુ” પાપી જીવ આ પૃથિવી આદિથી લઈને
પ્રત્યેક વનસ્પતિની યોનીમાં “અસંલેજ્જં કાલં” અસંસ્થાત અવસર્પિણી અસં-
સ્થાત ઉત્સર્પિણી કાળ સુધી જન્મ મરણનાં દુઃખો ભોગવે છે, તથા “અણંત
કાણ અણંતકાલં ચ” સાધારણ વનસ્પતિરૂપ કન્દમૂળ આદિમાં અનંત ઉત્સર્પિણી
અને અનંત અવસર્પિણી કાળ સુધી જન્મ મરણનાં કષ્ટો ભોગવે છે. કહું પણ છે.

“અસંલોસપ્પિણિ ઉસ્સપ્પિણી ઉ અગિંદિયાણ ય વડુહં ।

તાઓ ચેવ અણંતા, વણસ્સઈણ ઉ બોદ્ધવ્વા ॥ ૧ ॥” ઇતિ ॥

એકેન્દ્રિય પૃથિવી આદિ ચારેમાં પરિબ્રમણનો કાળ અસંસ્થાત ઉત્સર્પિણી અવ-
સર્પિણી છે, તથા વનસ્પતિમાં—સાધારણ—અનંતકાયમાં પરિબ્રમણનો કાળ અનંત
ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી રૂપ ॥૧॥

કીદશાઃ સન્તો ભ્રમન્તિ ? इत्याह—‘फासिदियभावसंपउत्ता’ स्प
 शैन्द्रियभावसम्पयुक्ता=स्पर्शमात्रैकेन्द्रियत्वं प्राप्ताः, ‘तर्हि तर्हि चेव’ तत्र तत्रैव
 =वत्स्पतिकाय एव, कीदशे ? इत्याह—‘परभवतरुगणगहणे’ परभवतरु-
 गणगहने=पराः=प्रकृष्टाः, सर्वोत्कृष्टकायस्थितिकत्वात् भवाः=उत्पत्तिस्थानानि येषु
 ते तादृशाः तरुगणाः=वृक्षगुच्छगुल्मादिसमूहास्तेर्गहने=गम्भीरे ‘पुणो पुणो’
 पुनः पुनः=मुहुर्मुहुः ‘इमं’ वक्ष्यमाणम् ‘अणिट्’ अनिष्टं=प्रतिकूलं दुःखसमुदयं
 =दुःखसमूहं=नानाविधमशातवेदनीयरूपं ‘पावन्ति’ प्राप्नुवन्ति । सर्वासां जातीनां
 कुलकोटयो यथा —

“एगिदिपसु पंचसु, बारस-सत्त-तिग-सत्त-अट्ठीसा य ।

विगलेसु सत्त अट्ठ नव, जल-खह-चउप्पय-उरग-धुयगेसु ॥ १ ॥

अट्ठचेरस बारस, दस दस नवगं नरामरे नरण ।

बारस छबीस पणवीस हुंति कुलकोटिलक्खाई ॥ २ ॥ ” इति ।

(फાસિદિય ભાવસંપવત્તા) યે સવ જીવ એક સ્પર્શન ઇન્દ્રિય વાલે

હી હોતે હૈં । ઓર (તર્હિ તર્હિ ચેવ) ડસી ઘનસ્પતિકાય મેં ફિ જહાં
 (પરભવનરુગણગહણે) વૃક્ષ, ગુચ્છ, ગુલ્મ આદિ સમૂહરૂપ ભવ સર્વોત્કૃષ્ટ
 હૈં ઓર ડનસે જો ગહન ઘના હુઆ હૈં (પુણો પુણો) વાર ૨ (ઇમં) ડન
 વક્ષ્યમાણ (અણિટ્) અનિષ્ટ-પ્રતિકૂલ (દુઃખસમુદયં) દુઃખોં કો-નાના-
 વિધ અશાત વેદનીય રૂપ કષ્ટોં કો (પાવંતિ) પાતે હૈં । સમસ્ત જાતિયોં
 કે કુલ કોટિયોં કી સંખ્યા ઇસ પ્રકાર હૈં—

પૃથ્વીકાય કે વારહ લાખ, અપૂકાય કે સાત લાખ, તેડકાય કે
 તોન લાખ, વાયુકાય કે સાત લાખ, વનસ્પતિકાય કે અઢાઈસ લાખ,

“ફાસિદિય ભાવસંપવત્તા” તે બધા જીવો એકલી સ્પર્શન ઇન્દ્રિયથી
 જ યુક્ત હોય છે, અને “તર્હિ તર્હિ ચેવ” તે જ વનસ્પતિકાયમાં કે બધાં
 “પરભવ તરુગણ ગહણે” વૃક્ષ, ગુચ્છ, ગુલ્મ આદિ સમૂહરૂપ ભવ સર્વોત્કૃષ્ટ
 છે અને તેમનાથી જે ગહન બનેલ છે “પુણો પુણો” વારંવાર “ઇમં” આ
 પ્રમાણે “અણિટ્” અનિષ્ટ-પ્રતિકૂલ “દુઃખસમુદય” દુઃખોને વિવિધ આશાતા
 વેદનીય રૂપ કષ્ટોને “પાવંતિ” અનુભવે છે. સઘળી જાતિયોની યોનિયોના
 પ્રકારોની સંખ્યા નીચે પ્રમાણે છે—

પૃથ્વીકાયના આઠ લાખ, અપૂકાયના સાત લાખ, તેડકાયના ત્રણ લાખ,
 વાયુકાયના સાત લાખ, વનસ્પતિકાયના અઢાવીસ લાખ, દ્વિઇન્દ્રિય જીવોના

સુરશિનીટીકા અ. ૧ સુ. ૪૬ મનુષ્યભવદુઃખનિરૂપણમ્

૧૫૩

ર્થમ્, 'વિકલયવિગલરૂપા' વિકૃત વિકલરૂપાઃ = વિકૃત-વીમ્ભસં વિકલં=હીનં
 ચ રૂપમ્=આકારો યેષાં તે તથા ધૂનાઃ 'દીપંતિ' દૃશ્યન્તે=દષ્ટિગોચરા ભવન્તિ ।
 તદેવ વર્ણયતે-'સુજ્જા' કુઞ્જાઃ 'કુવડા' इति भाषा प्रसिद्धाः, 'वडभा' एक
 पार्श्वहीनाः = वक्रोपरिकायाः, यद्वा-विकृतरूपेण वह्निर्निसृतहृदयोदरभागाः,
 'वामणा' वामनाः=ह्रस्वकायाः 'वहिरा' वहिराः=श्रवणशक्तिहीनाः 'काणा'
 काणा=एकाक्षाः 'कुंटा' कुण्टाः=विकृतहस्ताः 'दूंटा' इति प्रसिद्धाः 'पंगुला'
 'पङ्गवः=जङ्घाहीनाः 'पांगला' इति प्रसिद्धाः, 'विगला' विकलाः = हीनाङ्गो-
 पाङ्गाः 'मूया' मूकाः=वचनशक्तिहीनाः, 'मम्मणा' मम्मनाः=स्खलवचनाः, 'अंध-
 यगा' अन्धकाः=जन्मान्धाः, 'चक्खुविणिहया' चक्षुर्विनिहताः=विनिहतचक्षुषः=

हैं (विकल यिगलरूपा दीपंति) उनका रूप विकृत और विकल-हीन
 होता है । इसी धान को विशेषरूप से सूत्रकार समझाते हैं (सुज्जा)
 उनके शरीर में पीठ पर कुवड निकली रहनी है । (वडभा) वे एक
 पार्श्वसे हीन होते हैं, अथवा उनके हृदय और उदरका भाग विकृतरूप
 से बाहिर निकला हुआ रहता है । (वामणा) शरीर उनका बौना होता
 है । (वहिरा) उनकी श्रवणशक्ति नष्ट हो जाती है (काणा) वे आँखें
 से काने होते हैं । (कुंटा) हाथ उनका एक ठीक रहता है दूसरा टूट
 जाता है इससे वे दूँटा कहलाते हैं, (पंगुला) पांगले-जंघाहीन (विग-
 ला य) अंग और उपांगों से वे बिहीन होते हैं, (मूया) मूंगे होते हैं-
 वचनशक्ति से बीहीन होते हैं, (मम्मणा) मम्मण होते हैं-बोलते
 समय वे आडकते हैं (अंधयगा) जन्मांध होते हैं-उनकी जन्मतः दोनों
 आँखें फूटी रहती हैं, (चक्खुविणिहया) चक्खुविनिहन् होते हैं-उनकी

વિગલરૂપા દીપંતિ ” તેમનું રૂપ વિકૃત અને વિકલ-હીન હોય છે. એજ વાતને
 સૂત્રકાર વિસ્તારથી સમજાવે છે—“ સુજ્જા ” તેમના શરીરે પીઠ પર ખૂંધ
 નીકળી હોય છે, “ વડભા ” તેઓ એક પડખે ખોડવાળા હોય છે, અથવા
 તેમના હૃદય અને પેટનો ભાગ વિકૃત રીતે બહાર પડતો હોય છે. “ વામણા ”
 તેઓ વામનરૂપ ડીંગણા હોય છે, “ વહિરા ” તેમની શ્રવણ શક્તિ નાશ પામે
 છે-તેઓ ગંધેરા થાય છે “ કાણા ” તેઓ આંખે કાણા હોય છે. “ કુંટા ”
 તેમનો એક હાથ સારો હોય છે. પણ બીજો હાથ તૂટી જવાને કારણે તેઓ
 દૂંટા કહેવાય છે. “ પંગુલા ” પાંગળા-પગે લૂલા “ વિગલા ય ” અંગ અને ઉપા-
 ગોની ખોટવાળા હોય છે, “ મૂયા ” મૂંગા હોય છે-બોલવાની શક્તિ વિનાના
 હોય છે. “ મમ્મણા ” તોતડા હોય છે-બોલતા છબ અટકે તેવા હોય છે.

રોગાદિભિર્વિકૃતનેત્રાઃ, 'સંચિહ્યા' સચ્ચિહ્વકાઃ=વિર્ષ્ટનેત્રાઃ 'વાહિરોગપીલિય' વ્યાધિરોગપીડિતાઃ=વ્યાધિભિઃ=કુષ્ઠાદિભિઃ, રોગેશ્ચ=કાસશ્વાસાદિભિઃ પીડિતાઃ 'અપ્પાઝ ય' અલ્પાયુષ્કાઃ 'સત્યવજ્ઞ' શસ્ત્રવધ્યાઃ=શસ્ત્રપ્રયોગેણ મરણશીલાઃ, બાલાઃ=બુદ્ધિરહિતાઃ, 'કુલક્ષણુક્ષિન્નદેહા' કુલક્ષણોત્કીર્ણદેહાઃ=કુત્સિતલક્ષણે વ્યાપ્તશરીરાઃ-શુભરેલાદિર્વર્જિતા इत्यर्थः, 'દુઞ્બલ' દુર્બલાઃ=ચલહીનાઃ, 'કુસંઘઘણકુપ્પમાણકુસંઠિયા' કુસંઘનનકુપમાણકુસંઠિયાઃ - કુસંઘનનાઃ = કુત્સિતં સંઘનનં=અસ્થિરચનાવિશેષો યેષાં તે તથા, કુપમાણાઃ=કુત્સિતં શરીરસ્ય પ્રમાણમતિશ્ચ્ચાતિહ્રસ્વાદિલક્ષણં યેષાં તે તથા, કુસંઘિતાશ્ચ=કુત્સિતસંસ્થાનાઃ एतेषां द्वन्द्वः 'કુરુવા' કુરુવા =રૂપવર્જિતાઃ 'કિવિણા' કૃપણાઃ=દરિદ્રાઃ, દાનશક્તિ-

આંખોં મેં કોઈ ન કોઈ સ્વરાવી રહતી હૈ, (સંચિહ્યા) સંચિહ્વક હોતે હૈં. ઉનકે નેત્ર ચપડે હોતે હૈં, (વાહિરોગપીલિય) વ્યાધિ ઓર રોગ સે પીડિત રહતે હૈં-વે કુષ્ઠ આદિ વ્યાધિયોં સે, કાસ શ્વાસ આદિ રોગોં સે સદા પીડિત રહતે હૈં, (અપ્પાઝય) અલ્પાયુવાલે હોતે હૈં, (સત્ય-વજ્ઞ) શસ્ત્ર પ્રયોગ સે હનકી મૃત્યુ હોતી હૈ, (બાલા) બુદ્ધિ રહિત હોતે હૈં, (કુલક્ષણુક્ષિન્નદેહા) ઓડે ૨ લક્ષણોં વાલે હોતે હૈં, અર્થાત્-શુભ રેલાઓં સે વર્જિત હોતે હૈં, (દુઞ્બલ) દુર્બલ-ચલ હીન હોતે હૈં, (કુસંઘઘણ) હનકા સંઘનન-અસ્થિયોં કી રચના ઠીક ઠીક નહીં હોતા હૈ, (કુપ્પમાણ) શરીર કા પ્રમાણ મી યોગ્ય નહીં હોતા હૈ, યા તો વહ અત્યંત લંબા હોતા હૈ યા અતિ હ્રસ્વ હોતા હૈ. (કુસંઠિયા) સંસ્થાન-આકાર મી કુત્સિત હોતા હૈ. (કુરુવા) સુંદર રૂપ સે રહિત હોતે હૈં. (કિવિણા) દરિદ્ર હોતે હૈં, અથવા-દાન દેને કી શક્તિ કા હનકે યહાં

“અંધયગા” જન્મમાં હોય છે. જન્મથી જ તેમની આંખો કૂટી ગઈ હોય છે, “ચક્ષુવિણિહ્યા” ચક્ષુ વિનિહત હોય છે, તેમની આંખોમાં કોઈ ને કોઈ ખામી રહે છે, “સંચિહિયા” સચ્ચિહ્વક હોય છે. તેમનાં નેત્ર ચપટાં હોય છે, “વાહિરોગપીલિય” વ્યાધિ અને રોગથી પીડાયાં કરે છે-તેઓ કોઈ વ્યાધિયોથી, ખાંસી, દમ આદિ રોગોથી પીડાયા કરે છે. “અપ્પાઝય” ટૂંકા આયુષ્યવાળા હોય છે, “સત્યવજ્ઞ” શસ્ત્રપ્રયોગથી તેમનું મૃત્યુ થાય છે. “બાલા” બુદ્ધિ વિનાના હોય છે, “કુલક્ષણુક્ષિન્નદેહા” ખરાબ લક્ષણોવાળા હોય છે, એટલે કે સારી રેખાઓથી રહિત હોય છે, “દુઞ્બલ” દુર્બળ-બળ હીન હોય છે, “કુસંઘઘણ” તેમનું સંઘનન-અસ્થિયોની રચના-ખરાબર હોતી નથી, “કુપ્પમાણ” શરીર પ્રમાણસરનું હોતું નથી-કાં તો તે અતિશય લાંબા હોય છે કે અતિ નીચા હોય છે. “કુસંઠિયા” સંસ્થાન-આકાર દેખાવ પણ ખેડાળ હોય છે. “કુરુવા” સુંદર રૂપથી રહિત હોય છે. “કિવિણા” દરિદ્ર

સુરશિની ટીકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૪૭ મનુષ્યભવદુઃખનિરૂપણમ્

૧૫૫

વર્જિતા વા, 'હીના' હીનાઃ=નીચજાતિકુલા: 'હીણસત્તા' હીણસત્ત્વાઃ=ઉત્સાહ
વર્જિતાઃ, મીરવો વા, 'નિચ્ચં સોઽસ્ત્રપરિવર્જિયા' નિત્યસૌંદર્યપરિવર્જિતાઃ=
સતતદુઃખાકુલાઃ, 'અમુહદુઃખભાગી' અમુહદુઃખભાગિનઃ=અશુભાનુવન્ધિદુઃખ-
સમ્પન્નાઃ પ્રાન્તે દૃશ્યન્તે इति योगः, એવમ્ભૂતાઃ કે? इत्याह—ये 'नरगाओ' नरकात्
'इहं' इह—मर्त्यलोके 'उच्चट्टा समाणा' उच्चट्टाः=आगताः सन्तः 'सावसेस-
कम्मा' सावशेषकर्माणः=अवशिष्टाश्च भूकर्माणस्ते ॥ सू० ४६ ॥

અથોપસંદરશ્નાહ—'એવં' હત્યાદિ ।

મૂલમ્—એવં ણરમં તિરસ્કલજોણિં કુમાણુસત્તં ય હિંડમાણા
પાવંતિ અણંતાઈં દુઃખાઈં પાવકારી । एसो सो पाणवहस्स
फलविवागो इहलोइयो पारलोइयो अप्पसुहो बहुदुक्खो मह-
ब्भयो बहुयय्पगाढो दासुणो ककसो असाओ वाससहस्सेहि
मुच्चई णय अवेदइत्ता अत्थिहु मोक्खोत्ति एवमाहंसु नायकुल
नंदणो महप्पा जिणो उ वीरवरनामधेजो कहेसीय पाणवहस्स

અભાવ રહતા હૈ । (હીણા) इनका कुल एवं जाति ये दोनों ही हीन
होते हैं । (हीणसत्ता) उत्साह शक्ति से ये वर्जित होते हैं अथवा भीरु
-डरपोक-प्रकृति के होते हैं । (निच्यं सोऽस्त्रपरिवर्जिया) सुखों से
नित्य वर्जित-निरन्तर दुःखी रहते हैं । (अमुहदुःखभागी) इस प्रकार
इन अशुभानुबंधी दुःखों से वे सम्पन्न (दीसन्ति) देखे जाते हैं । जो
पापी जीव (नरगाओ) नरक से (उच्चट्टिया समाणा) निकल कर (इहं)
इस मनुष्य लोक में (सावसेसकम्मा) पाप कर्मों के भोगने पर भी अव-
शिष्ट अशुभ कर्म वाले हो कर आते हैं ॥ सू० ४६ ॥

હોય છે, અથવા તેમનામાં દાન દેવાની શક્તિ હોતી નથી. “હીણા” તેમનું
કુળ અને જાતિ બન્ને હીન હોય છે. “હીણસત્તા” તેઓ ઉત્સાહ વિનાના
હોય છે અથવા ભીરુ ડરપોક સ્વભાવના હોય છે. “નિચ્ચં સોઽસ્ત્રપરિવર્જિયા”
હંમેશા સુખથી રહિત દુઃખી હોય છે. “અમુહદુઃખભાગી” આ રીતે તેઓ
અશુભાનુબંધી દુઃખોથી યુક્ત “દીસંતિ” દેખાય છે. પાપી જીવ “નરગાઓ”
નરકમાંથી “ઉચ્ચટ્ટિયા સમાણા” નીકળીને “ઇહં” આ મનુષ્યલોકમાં “સાવ-
સેસકમ્મા” પાપ કર્મોનાં અશુભ ફળો ભોગવવા છતાં પણ બાકી રહેલ અશુભ
કર્મ સાથે લઈને આવે છે. ॥ સૂ૦ ૪૬ ॥

ફલવિવાગં । एसो सो पाणवहो चंडो रुद्धो खुद्धो साहसिओ
अणारिओ, निग्घिणो, निस्संसो महब्भओ, पइभओ अइभओ,
बीहणओ, तासणओ, अणजओ, उव्वेयणओ य-णिरवयक्खो,
णिद्धम्मो, णिप्पिवासो, निकल्लणो निरयवासगमणनिधणो
मोहमहब्भयपवहुओ मरणवेमणस्सो त्तिवेमि ॥ सू० ४७ ॥

॥ पढमं अहम्मदारं समत्तं ॥ १ ॥

टीका—‘ एवं ’ उक्तप्रकारेण ‘ णरगं ’ ‘ नरकं, मनुष्यलोके ‘ तिरिक्ख-
जोणि ’ तिर्यग्भयोनि=पञ्चेन्द्रियादिभवं ‘ कुमाणुसत्तं ’ कुमाणुपत्वं=कुब्जवामनादि
विकृताङ्गोपाङ्गरूपां मनुष्ययोनिं च ‘ हिंढमाणा ’ हिण्डमानाः=भ्रमन्तः ‘ पावकारी ’
पापकारिणः=प्राणातिपातकारकाः जीवाः ‘ अणंताइ ’ अनन्तानि ‘ दुःखाइ ’
दुःखानि ‘ पावेति ’ प्राप्नुवन्ति । ‘ एसो सो ’ एष सः प्रत्यक्षं दृश्यमानः ‘ पाण-
वहस्स ’ प्राणवधस्य=प्राणातिपातस्य ‘ फलविवागो ’ फलविपाकः=परिणामः भवति ।

अब उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘ एवं णरगं तिरिक्ख-
जोणि ’ इत्यादि० ।

टीकार्थ—(एवं) इस उक्त प्रकार से जो (णरगं) नरक में, वहां
से मनुष्यलोक में आने पर (तिरिक्खजोणि) तिर्यञ्च योनि में एवं (कुमा-
णुसत्तं) कुब्ज, वामन आदि रूप से विकृत अंगोपांगवाली मनुष्ययोनिमें
(हिंढमाणा) भ्रमण करते हुए (पावकारी) प्राणातिपातरूप पाप को
करने वाले जीव (अणंताइ दुःखाइ) अनंत दुःखों को (पावेति) पाते
हैं । (एसो सो) प्रत्यक्ष में दृष्टिभूत बना हुआ यह (पाणवहस्स) प्राण
वधरूप हिंसा का (फलविवागो) परिणाम है । प्राणवध का यह (फल-

હવે ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—“ એવં ણરગં તિરિક્ખજોણિ ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“ એવં ” ઉપરોક્ત પ્રકારે “ ણરગં ” નરકમાં, ત્યાંથી મનુષ્યલોકમાં
આવતા “ તિરિક્ખજોણિ ” તિર્યંચ યોનિમાં અને “ કુમાણુસત્તં ” કુબ્જ, વામન
આદિ રૂપે વિકૃત અંગોપાંગવાળી મનુષ્ય યોનિમાં “ હિંદમાણા ” ભ્રમણ કરતા
“ પાવકારી ” પ્રાણુતિપાતરૂપ પાપ કરનાર જીવો “ અણંતાઈદુઃખાઈ ” અનંત
દુઃખો “ પાવેતિ ” ભોગવે છે. “ એસો સો ” પ્રત્યક્ષ દૃષ્ટિગોચર થતું “ પાણવ-
હસ્સ ” પ્રાણુવધરૂપ હિંસાનું “ ફલવિવાગો ” તે પરિણામ છે. પ્રાણુવધનો આ

સ કીદશ: ? इत्याह-‘इहलोइओ’ ऐहलौकिकः=मनुष्यलोकमाश्रित्य, ‘पारलोइओ’ पारलौकिकः-नरकनिगोदादिकगत्याधाश्रित्य ‘अप्पसुहो’ कुत्तिसत्तेन्द्रियभोगे सुखजनकत्वाद् अल्पसुखः, वा ‘बहुदुक्खो’ बहुदुःखः=नरकादिदुःखकारणत्वाद् दुःखबहुलः, ‘महम्मओ’ महाभयः=महाभयस्वरूपः, तथा ‘बहुरयप्पगाहो’ बहु-रजः प्रगाहः=अशुभकर्मबहुलः, दारुणो’ दारुणः=भीषणः नरकादिभयजनकत्वात् ‘कक्कसो’ कर्कशः=कठोरः=दुर्मेघत्वात् ‘असाओ’ असातः=असातवेदनीयरूप-त्वात्, इत्येवंविधः फलविपाकः, ‘वाससहस्सेहि’ वर्षसहस्रैः=अनेक सहस्रवर्ष-भोगैः=पल्योपमसागरोपमादिलक्षणैः ‘मुच्चई’ मुच्यते=क्षीयते तदेवव्यतिरेक मुखेनाह-‘ नये ’ ति-‘ अवेयइत्ता ’ अवेदयित्वा=तं फलविपाकमनुपभुज्य ‘ नय ’

विपाक-परिणाम (इहलोइओ) ऐहलौकिक-मनुष्यलोककी अपेक्षा से (अप्पसुहो) कुत्तिसत्त इन्द्रियों के भोग जनित सुख का उत्पादक होने से अल्पसुख वाला, तथा (पारलोइओ) पारलौकिक-नरकादि गति की अपेक्षासे (बहुदुक्खो) नरकादि गति कारण होनेसे बहुत दुःख वाला, (महम्मओ) महाभयवाला, तथा (बहुरयप्पगाहो) बहुत अशुभकर्मों वाला है। यह (दारुणो) नरकादिगति का भयजनक होने से भयंकर (कक्कसो) दुर्मेघ होने से कर्कश-कठोर है। (असाओ) अशाता वेद-नीय रूप होने से स्वयं अशातारूप है। ऐसा यह प्राणवधपरिणाम (वास-सहस्सेहिं मुच्चई) पल्योपम तथा सागरोपमादिरूप वर्षसहस्रों में भोगते २ यह छूटता है-नष्ट होता है। इसी वान को अब व्यतिरेक से कहते हैं कि- (अवेयइत्ता न य हु मोक्खो अत्थि) (अवेयइत्ता) इसका फल

इणविपाક પરિણામ “ इહલોइઓ ” આ લોકની મનુષ્યલોકની અપેક્ષાએ “ અપ્પસુહો ” કુત્તિસત્ત ઇન્દ્રિયોના ભોગજનિત સુખનું ઉત્પાદક હોવાથી અલ્પ સુખવાળું, તથા “ પારલોइઓ ” પરલોકની-નરકાદિ ગતિની અપેક્ષાએ “ બહુ-દુક્ખો ” નરકાદિ ગતિના કારણરૂપ હોવાથી બહુ જ દુઃખદાયી, “ મહમ્મઓ ” મહા ભયવાળું તથા “ બહુરયપ્પગાહો ” અત્યંત અશુભ કર્મોવાળું છે. તે “ દારુણો ” નરકાદિ ગતિનો ભય પેદા કરનાર હોવાથી ભયંકર છે. “ કક્કસો ” દુર્ભેદ હોવાને કારણે કર્કશ કઠોર છે. “ અસાઓ ” અશાતા-વેદનીય રૂપ હોવાથી પોતે અશાતારૂપ છે. એવું તે પ્રાણવધ પરિણામ “ વાસસહસ્સેહિં મુચ્ચઈ ” પલ્યોપમ તથા સાગરોપમ આદિરૂપ હજારો વર્ષ સુધી ભોગવતા ભોગવતા છૂટે છે-નષ્ટ થાય છે. એ જ વાતને હવે ઘીછ રીતે પ્રગટ કરે છે-“ અવેયइत्ता न य हु मोक्खो अत्थि ” “ અવેયइत्ता ” તેનો ફલવિપાક ભોગવ્યા વિના જીવે.

ન ચ-નૈવ 'હુ' નિશ્ચયેન 'મોકલો' મોક્ષઃ 'અત્યિ' અસ્તિ, 'તિ' ઇતિ સભાસિ સૂચકઃ । તસ્ય ફલવિપાકસ્યોપભોગં વિના જીવસ્ય મોક્ષો ન ભવતીત્યર્થઃ ।

અથ ન હિ યેન કેનાપિ પ્રતિપાદિતોઽર્થઃ શ્રદ્ધેયવચનો ભવતિ પ્રામાણ્યસન્દે-
હાદિસ્યાશઙ્કાનિવર્તિયિતુમસ્ય સાક્ષાત્પ્રમાણભૂતપરમાત્મપ્રતિપાદિતત્વેન પ્રામાણ્ય
નિરૂપણાય પ્રમાણ્યન્નાદ- 'એવમાહંસુ' ઇત્યાદિ, ષ્વમ્=૩ક્તરીત્યા 'આહંસુ'
ઝચુઃ-અતીતાસ્તોર્થેઙ્કરગણધરાદયઃ । તથા 'નાયકુલનંદણો' જ્ઞાતકુલનંદનઃ=
જ્ઞાતકુલં=સિદ્ધાર્થકુલં, તસ્ય નંદનઃ=આનન્દકારકઃ 'મહપ્પા' મહાત્મા=પરમા-
ત્મરૂપઃ, 'જિણો' જિનઃ=રાગાદ્યન્તરજ્ઞશત્રુજેતા, વીરવરણામધેજ્ઞો 'વીરવરનામ-
ધેયઃ'=પ્રશસ્તનામા ભગવાન્ મહાવીરઃ, 'પાણવહસ' પ્રાણવધસ્ય 'ફલવિવાગં'
ફલવિપાકં 'કહેસીય' કથિતવાન્=યથાડતીતા જિનાઃ કથિતવન્તસ્તથૈવાયં
ભગવાન્ મહાવીરોઽપિ પ્રતિપાદયતિસ્મેત્યર્થઃ । અસ્યાધ્યયનસ્ય મહાવીરોક્તત્વ

વિપાક ભોગે વિના જીવકા (ન ય હુ મોકલોઅત્યિ) કમી ખી છુટકારા
નહીં હો સકતા હૈ । હસ કથન કો પ્રમાણભૂત સિદ્ધ કરને કે લિયે સૂત્ર-
કાર હસમેં સાક્ષાત્ પ્રમાણભૂત પરમાત્મા દ્વારા પ્રતિપાદિતતા સિદ્ધ કરને
કે લિયે કહતે હૈં કિ એસા જો મૈને કહા હૈ વહ અપની ઓર સે નહીં
કહા હૈ, કિન્તુ (એવમાહંસુ) અતીત તીર્થકર એવં ગણધર આદિ દેવોં ને
એસા કહા હૈ તથા (નાયકુલનંદણો મહપ્પા જિણો ડ વીરવર ણામધેજ્ઞો
પાણવહસ ફલવિવાગં કહેસીય) જ્ઞાતકુલનંદન-સિદ્ધાર્થ કે કુલ કો
આનંદ દેને વાલે-પરમાત્મરૂપ, જિન-રાગાદિક અંતરંગ શત્રુ કે વિજેતા
પ્રશસ્તનામ વાલે શ્રી ભગવાન્ મહાવીર ને ખી પ્રાણવધ કા ફલ એસા હી
અતીત તીર્થકરોં કે કથનાનુસાર કહા હૈ । (એસો સો પાણવહો ચંડો રુદો
હુદો સાહસિઓ અણારિઓ નિગિચો નિસ્સંસો મહવ્વમઓ પદ્મઓ

“ ન ય હુ મોકલો અત્યિ ” કહી પણ છુટકારો થઈ શકતો નથી, આ કથનને
પ્રમાણભૂત સિદ્ધ કરવાને માટે સૂત્રકાર તેનાં સાક્ષાત્ પ્રમાણરૂપ પરમાત્માદ્વારા
તેની પ્રતિપાદિતતા સિદ્ધ કરવાને માટે કહે છે કે—એવું મેં જે કહ્યું છે તે
મારી તરફથી કહ્યું નથી પણ “ એવમાહંસુ ” અતીત તીર્થકર અને ગણધર
આદિ દેવે.એ એવું કહેલ છે, તથા “ નાયકુલનંદણો મહપ્પા જિણો ડ વીરવર
ણામધેજ્ઞો પાણવહસ ફલવિવાગં કહેસીય ” જ્ઞાતકુલનંદન-સિદ્ધાર્થનાં કુળને
આનંદ દેનાર પરમાત્મરૂપ, જિન-રાગ આદિ આંતરિક શત્રુઓ પર વિજય
મેળવનાર પ્રશસ્ત નામવાળા શ્રી ભગવાન મહાવીરે પણ પ્રાણવધનું કથન એવું
જે અતીત તીર્થકરોના કથનાનુસાર જ કહેલ છે—“ એસો સો પાણવહો ચંડો
રુદો હુદો સાહસિઓ અણારિઓ નિગિચો નિસ્સંસો મહવ્વમઓ પદ્મઓ અદ્મઓ

સુવર્ણિની ટીકા ક્રમ ૧ સુ. ૪૭ મનુષ્યભવદુઃખનિરૂપણમ્

૧૫૯

નિરૂપણેનૈવ તદન્તર્ગતફલ વિપાકસ્યાપિ તદુક્તત્વસિદ્ધૌ પુનઃ પૃથક્ તસ્ય મહા-
વીરોક્તવાભિધાનં પ્રાણિવધસ્યૈકાન્તિકા શુભફલદાયકત્વાત્તસ્યાત્યન્તહેયત્વઘોત-
નાર્થમ્ । ‘ एसो सो’ एष सः=पूर्वोपदर्शित स्वरूपः ‘ पाणवहो ’ प्राणवधः ‘ चंडो ’
चण्डः=क्रोधजनकत्वाद्, ‘ रुदो ’ रौद्रः=रौद्ररसप्रवर्तितत्वात्, ‘ खुद ’ क्षुद्रः=
अधमजनाचरितत्वात् ‘ साहसिओ ’ साहसिकः=अममोक्षकारिजनप्रवर्तितत्वात्,

अङ्गभओ बीहणओ तासणओ अणज्जओ णिरवयवखो, निद्धम्मो,
निष्पिवासो, निक्कलुणो, निरयवासगमणनिधणो, मोहमहम्मयपयट्ठओ
मरणवेमणस्सो, त्ति वेमि)

શંકા—જય સૂત્રકાર ને ઈસ અધ્યયન મેં મહાવિરોક્તા નિરૂપિત
કી હૈ તવ યહ વાત તો સ્વતઃ સિદ્ધ હો હી જાની હૈ કિ તદન્તર્ગત ફલ-
વિપાક બી ઊન્હીં દ્વારા કહા ગયા હૈ, ફિર કયા વાત હૈ જો ઇસમેં પૃથક્
રૂપ સે મહાવીરોક્તા પ્રતિપાદિત કી જા રહી હૈ ?

ઉત્તર—શંકા ઠીક હૈ, પરંતુ ઇસકા અભિપ્રાય કેવલ ઇતના હી હૈ કિ
પુનઃ ઇસમેં જો તદુક્તતા પ્રતિપાદિત કી હૈ ડસસે ડસમેં—પ્રાણિવધ મેં—
એકાન્તિક અશુભફલદાયકતા હોને સે અત્યન્ત હેયતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ।
યહી વાત સૂત્રકાર ઇન આગે કે પદોં દ્વારા સ્પષ્ટ કાર્તે હૈ—(एसो सो)
पूर्वोपदर्शित स्वरूप वाला यह (पाणवहो) प्राणवध—(चंडो) क्रोधजनक
होने से चण्ड है, (रुदो) रौद्र रस द्वारा प्रवर्तित होने से रौद्र है,
(खुदो) अधमजनों द्वारा आचरित होने से क्षुद्र है. (साहसिओ)

बीहणओ तासणओ अणज्जओ णिरवयवखो, निद्धम्मो, निष्पिवासो, निक्कलुणो निर-
यवासगमणनिधणो, मोहमहम्मयपयट्ठओ मरणवेमणस्सो त्ति वेमि ”

શંકા—આરે સૂત્રકારે આ અધ્યયનમાં મહાવીરોક્તતાનું નિરૂપણ કયું
છે ત્યારે તે વાત તો આપોઆપ સિદ્ધ થઈ જાય છે કે તેમાં આવતા ફલ-
વિપાક પણ તેમના દ્વારા કહેવાયેલ છે, તો શા કારણે તેમાં અલગ રીતે
મહાવીરોક્તતાનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—શંકા યશસ્વર છે પણ તેને ઉદ્દેશ કેવળ એટલો જ છે કે ફરીથી
તેમાં જે તેમના દ્વારા કથિત હોવાનું પ્રતિપાદન કયું છે તેથી તેમાં પ્રાણી-
વધમાં એકાન્તિક અશુભ ફલદાયકતા હોવાથી અત્યંત હેયતા પ્રગટ કરાઈ છે.
એ જ વાત સૂત્રકાર આગળ આવતાં આ પદો દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે—“एसो सो”
આગળ દર્શાવવામાં આવેલ સ્વરૂપાણો તે “पाणवहो” પ્રાણવધ “चण्डो”
ક્રોધજનક હોવાથી થઈ છે, “रुदो” રૌદ્રરસ દ્વારા પ્રવર્તિત હોવાથી રૌદ્ર છે,
“खुदो” અધમ લોકો દ્વારા આચરિત હોવાને કારણે ક્ષુદ્ર છે, “साहसिओ”

‘અણારિઓ’ અનાર્યઃ=શ્લેષ્ઠજનમમાચરિતત્વાદ્, ‘નિગ્ધિઓ’ નિર્ઘનઃ=અવિગ્ધનાના ઘૃગા=પાપાનુગુપ્તા યસ્મિન્ સ તથા વિધોજનસ્તદાચરિતત્વાત્પ્રાણવધોઽપિ તથા, ‘નિસ્સંસો’ નૃશંસઃ=ક્રૂરજનાચરિતત્વાદ્ ‘મહઞ્મઓ’ મહાભયઃ=મહાભયોત્પાદકત્વાદ્, પદ્મઓ’ પ્રતિભયઃ=સકલપ્રાણિનાં ભયહેતુત્વાન્, ‘અહમઓ’ અતિભયઃ=મરણાન્તભવજનકત્વાદ્, ‘વીહણઓ’ માપનકઃ=ભયોત્પાદકત્વાદ્, ‘તાસણઓ’ ત્રાસનકઃ=અકસ્માત્-હૃદયોદ્વેગજનકત્વાન્, ‘અણજ્જઓ’ અન્યાયઃ=ન્યાયાદનપેતઃ=યુક્તઃ ન્યાયઃ, ન ન્યાયઃ અન્યાયઃ, ન્યાયવર્જિતત્વાદ્, ‘ઉચ્ચેયણઓ’ ઉદ્વેગજનકઃ મર્મપીડાકારકત્વાદ્ ‘ગિરવયવ્વઓ’ નિરપેક્ષઃ=નિર્ગતા અપેક્ષા=પરપ્રાણરક્ષાવિષયા યત્ર સ તથા, ‘નિદ્દમ્મો’ નિર્ધર્મઃ=શ્રુતચારિત્ર ધર્મરહિતત્વાદ્, ‘નિષ્વિસાઓ’ અસમીક્ષ્યકારી જનો દ્વારા ક્રિયા મયા હોને સે સાહસિક છે, (અણારિઓ) શ્લેષ્ઠજનો દ્વારા સત્તાચરિત હોને કે કારણ અનાર્ય છે. (નિગ્ધિઓ) હસે કરને ચાલે મનુષ્ય કો પાપ કે પ્રતિ ઘૃગા નહીં રહતી છે અતઃ યહ પ્રાણવધ ધી નિર્ઘનરૂપ છે (નિસ્સંસો) ક્રૂરજન હસે કરતે રહતે છે હસ લિયે યહ નૃશંસરૂપ છે. (મહઞ્મઓ) હસે કરતે સમગ્ર કરનેવાલેકો મહાન્ ભયકા કારણ હોવા છે હસલિયે યહ મહાભયરૂપ છે. (પદ્મઓ) સમસ્ત પ્રાણિયો કો ભય કા હેતુ હોને સે યહ પ્રતિભયરૂપ છે. (અહમઓ) મરણાન્તભય કા જનક હોને સે યહ અતિભયરૂપ છે. (વીહણઓ) ભયકા ઉત્પાદક હોને સે યહ ભયાનક છે. (તાસણઓ) અકસ્માત હૃદય મેં ઉદ્વેગ કા જનક હોને સે ત્રાસનકરૂપ છે (અણજ્જઓ) ન્યાયવર્જિત હોને સે યહ અન્યાયરૂપ છે. (ઉચ્ચેયણઓ) જીવોં કો ઉદ્વેગ જનક હોને સે યહ ઉદ્વેગકરૂપ છે (ગિરવયવ્વઓ) પર પ્રાણિયોં કી રક્ષા કરને કી અપેક્ષા

અસમીક્ષ્યકારી લોકો દ્વારા કરાતો હોવાથી સાહસિક છે, “અણારિઓ” શ્લેષ્ઠ લોકો દ્વારા આચરિત હોવાથી અનાર્ય છે. “નિગ્ધિઓ” પ્રાણવધ કરનાર મનુષ્યને પાપ પ્રત્યે ઘૃણા થતી નથી. તેથી તે પ્રાણવધ પણ નિઘૃણરૂપ છે, “નિસ્સંસો” ક્રૂર લોકો તેનું સેવન કરે છે તેથી તે નૃશંસરૂપ છે, “મહઞ્મઓ” તે કરતી વખતે કરનારને મહાન્ ભયનું કારણ તે બને છે તેથી તે મહા ભયરૂપ છે. “પદ્મઓ” સઘર્ષો પ્રાણીઓને તે ભયના કારણરૂપ હોવાથી પ્રતિભયરૂપ છે. “અહમઓ” મૃત્યુના ભયને જનક હોવાથી તે અતિ ભયરૂપ છે. “વીહણઓ” ભયને ઉત્પાદક હોવાથી તે ભયાનક છે. “તાસણઓ” હૃદયમાં અકસ્માત ઉદ્વેગને જનક હોવાથી તે ત્રાસનકરૂપ છે, “અણજ્જઓ” ન્યાયરહિત હોવાથી તે અન્યાયરૂપ છે, “ઉચ્ચેયણઓ” છુપેમાં ઉદ્વેગ ઉત્પન્ન કરનાર હોવાથી તે ઉદ્વેગકરૂપ છે. “ગિરવયવ્વઓ” પર પ્રાણીઓનું રક્ષણ કરવાની અપેક્ષાથી રહિત

સુધર્મિની ટીકા અ૦ ૧ સ્૦ ૪૭ મનુષ્યભવદુઃખનિરૂપણમ્

૨૧૧

નિષ્પિપાસઃ=પરજીવનસ્નેહવર્જિતત્વાત્, ‘નિક્કલુણો’ નિષ્કરુણઃ=દયાભાવવર્જિતત્વાત્
 ‘નિરયવાસગમણનિધનો’ નિરયવાસગમનનિધનઃ-નિરયાવાસઃ=નરકાવાસઃ, તન્ન
 ગમનયેવ નિધનં=પર્યવસાનમ્-અન્તિમફલં યસ્ય સ તથા, નરકપ્રાપકત્વાત્, ‘મોહ-
 મહાભયપયદ્વઓ’ મોહમહાભયપ્રવર્તકઃ=મોહઃ=અજ્ઞાનં સ એવ મહાભયં=મહાભય-
 હેતુત્વાત્, તસ્ય પ્રવર્તકઃ, ‘મરણવેમણસ્સો’ મરણવૈમનસ્યઃ = મરણેન=મૃત્યુરુપ
 કારણેન પ્રાણિનાં વૈમનસ્યં = દૈન્યં યસ્માત્સ તથા દીનમનઃ કારિત્વાત્, इत्येवं
 લક્ષણઃ પ્રાણવધઃ=જ્ઞપરિજ્ઞયા તત્સ્વરૂપં વિજ્ઞાયઃ પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા સર્વથા પરિ-
 ત્યાજ્ય इति भावः । श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामिनं कथयति—‘चित्तेमि’

સે રહિત હોને કે કારણ યહ નિરપેક્ષરૂપ હૈ । (નિદ્દમ્મો) શ્રુતાચારિત્ર
 રૂપ ધર્મ સે રહિત હોને કે કારણ યહ નિર્ધર્મરૂપ હૈ । (નિપ્પિવાસો) ઇસ
 મેં દુસરોં કે જીવન કે પ્રતિ સ્નેહભાવ નહીં રહતા હૈ ઇસલિયે યહ નિષ્પિ-
 પાસરૂપ હૈ । (નિક્કલુણો) દયાભાવ કા સર્વથા ઇસમેં અભાવ રહતા હૈ
 ઇસલિયે યહ નિષ્કરુણરૂપ હૈ । (નિરયવાસગમણનિધનો) નરક ગમન હી
 ઇસકા અન્તિમફલ હૈ, ઇસલિયે યહ નિરયવાસગમનનિધનરૂપ હૈ । (મોહ
 મહાભયપયદ્વઓ) મોહરૂપ-મહાભય કા યહ પ્રવર્તક હૈ ઇસલિયે યહ
 મોહ મહાભય પ્રવર્તકરૂપ હૈ । (મરણવેમણસ્સો) મૃત્યુરૂપ કારણ સે
 પ્રાણિયો કો ઇસસે દૈન્યભાવ હોતા હૈ ઇસ લિયે યહ મરણવૈમનસ્યરૂપ હૈ ।
 ઇસલિયે ઇસ પ્રાણવધ કા જ્ઞ પરિજ્ઞા સે સ્વરૂપ જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા
 સે સર્વથા પરિત્યાગ કર દેના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કહ કર અવ સુધર્મા-

હોવાને કારણે તે નિરપેક્ષરૂપ છે “નિદ્દમ્મો” શ્રુતાચારિત્રરૂપ ધર્મથી રહિત હોવાને
 કારણે નિર્ધર્મરૂપ છે. “નિપ્પિવાસો” તેમાં અન્યનાં છુવન પ્રત્યે સ્નેહભાવ
 રહેતો નથી તેથી તે નિષ્પિપાસરૂપ છે. “નિક્કલુણો” તેમાં દયાભાવનો તદ્દન
 અભાવ રહે છે તેથી તે નિષ્કરુણરૂપ છે. “નિરયવાસગમણનિધનો” નરક ગમન
 જ તેનું અંતિમ ફળ હોય છે, તે કારણે તે નિરયવાસગમનનિધનરૂપ છે.
 “મોહમહાભયપયદ્વઓ” મોહરૂપ મહાભયનો તે પ્રવર્તક છે, તે કારણે તે મોહ
 મહાભય પ્રવર્તક રૂપ છે. “મરણવેમણસ્સો” મરણરૂપ કારણથી પ્રાણિઓમાં
 તેનાથી દૈન્યભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તે મરણવૈમનસ્ય રૂપ છે. તે કારણે તે
 પ્રાણવધનું જ પરિજ્ઞાથી સ્વરૂપ જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેનો સર્વથા
 પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. આ પ્રમાણે કહીને હવે સુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને

इति ब्रवीमि—हे जम्बू ! इति=पूर्वोक्तं प्राणिवधस्वरूपनिरूपणं, तत्फलचतुर्गति-
भ्रमणलक्षणमर्थं चेति तीर्थङ्करस्य भगवतो महावीरस्य सकाशान्मया साक्षात् भुतं
ब्रवीमि=कथयामि न तु स्वबुद्धिपरिकल्पितम् । यतः स्वबुद्ध्या कथने श्रुतज्ञान-
स्थाविनयो भवति, किञ्च-छद्मस्थानां दृष्टयोऽप्यपूर्णा भवन्ति तस्माद् यथा भगव-
त्प्रतिपादितमेव त्वां ब्रवीमि=उपदिशामीत्यर्थः ॥ उक्तञ्च—

“सुअणणस्स अविणओ, परिहरणिज्जो सुहादिलासीहि ।

छउमस्थाणं दिट्ठी, पुण्णाणत्थि—त्ति सुइयं इहणा ॥१॥ ” इति । सू. ४९॥

इतिश्री-जैनार्चार्थ-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री वासीलालव्रतिविरचितायां

प्रश्नव्याकरणसूत्रस्य सुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां

हिसादि पञ्चास्रवद्वारेषु प्राणवधाख्यं प्रथमम्—

अधर्मद्वारं समाप्तम् ॥ १ ॥

स्वामी श्री जंबूस्वामी से कहते हैं— (सिबेमि) हे जंबू ! प्राणवध का यह
पूर्वोक्त स्वरूप निरूपण तथा चतुर्गति भ्रमणरूप उसका फव मैंने साक्षात्
तीर्थंकर भगवान् महावीर के पास सुना है सो उसी के अनुसार यह
तुमसे कहा है । इसमें मैंने अपनी ओर से कल्पित कर कुछ भी
नहीं कहा है, क्यों कि अपनी बुद्धिसे कल्पित कर कथन करने में
श्रुतज्ञान का अविनय होता है । तथा जवनक छद्मस्यावस्था रहती है
तबतक ज्ञानकी मात्रा भी अपूर्ण रहती है अतः अपनी ओर से प्रतिपा-
दित वस्तु का स्वरूप यथवत् प्रतिपादित नहीं हो सकता है, इसलिये मैंने
जो यह प्रवचन स्वरूप कहा है वह भगवान् द्वारा प्ररूपित ही
कहा है । कहा भी है—

કહે છે—“ સિબેમિ ” હે જમ્બૂ ! પ્રાણવધનું આ પૂર્વકથિત સ્વરૂપ નિરૂપણ
તથા ચાર ગતિમાં ભ્રમણરૂપ તેનું ફળ મેં સાક્ષાત્ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીર
પાસે સાંભળેલ છે, અને તેમણે કહ્યા પ્રમાણે જ તે તમને કહ્યું છે. તેની અંદર
મેં મારી પોતાની કલ્પનાનું કંઈ પણ ઉમેર્યું નથી, કારણ કે પોતાની બુદ્ધિથી
કલ્પના કરીને કહેવાથી શ્રુતજ્ઞાનનો અવિનય થાય છે તથા જ્યાં સુધી છદ્મસ્થ
રહે છે ત્યાં સુધી જ્ઞાનનું પ્રમાણ પણ અપૂર્ણ હોય છે, તેથી પોતાનાથી પ્રતિ-
પાદિત વસ્તુનું સ્વરૂપ યથાવત્ (જેવું હોય તેવું જ) પ્રતિપાદિત થઈ શકતું
નથી, તેથી મેં આ જે પ્રવચનસ્વરૂપ કહ્યું છે તે ભગવાનદ્વારા જે પ્રમાણે
પ્રરૂપિત છે તે પ્રમાણે જ કહ્યું છે. કહ્યું પણ છે—

સુદર્શિની ટોકા અ૦ ૧ સૂ૦ ૪૭ અધ્યયનસમાપ્તિ

૧૬૩

“સુઅણાણસ્સ અવિણઓ, પરિહરણિજ્જો સુહાહિલાસીર્હિં ।

છઝમત્થાણં દિટ્ઠી, પુણ્ણાણત્થિ-ત્તિ સૂદયંં ઇહ્ણા ॥૧॥” ઇતિ ।

જો સુખામિલાષી પ્રાણી છે તેનું કર્તવ્ય છે કે તેમણે શ્રુતજ્ઞાનનો અવિનય કરવાનું છોડી દેવું જોઈએ. છઝમત્થાણી દૃષ્ટિ અપૂર્ણ રહે છે, એજ વાત “ઇતિ” આ પદ સે સૂચિત્ત કી છે ॥૧॥ ॥સૂ૦૪૭॥

॥ પ્રથમ આસ્રવ—‘અધર્મ’ દ્વાર સમાપ્ત ॥

“સુઅણાણસ્સ અવિણઓ, પરિહરણિજ્જો સુહાહિલાસીર્હિં ।

છઝમત્થાણં દિટ્ઠી, પુણ્ણાણત્થિ-ત્તિ સૂદયંં ઇહ્ણા ॥૧॥ ઇતિ ॥

સુખામિલાષી જીવેતું કર્તવ્ય છે કે તેમણે શ્રુતજ્ઞાનનો અવિનય કરવાનું છોડી દેવું જોઈએ. છઝમત્થાણી દૃષ્ટિ અપૂર્ણ રહે છે, એજ વાત “ઇતિ” આ દ્વારા અહીં સૂચિત્ત કરવામાં આવી છે. ॥ સૂ. ૪૭ ॥

આ રીતે હિંસાદિ પંચાસ્રવ દ્વારમાં પ્રાણબંધ નામનું

પ્રથમ દ્વાર સમાપ્ત થયું.

અંથ દ્વિતીયમધ્યયનમ્ ।

વ્યાખ્યાતં પ્રથમમાસ્રવદ્વારં, સામ્પ્રતં દ્વિતીયમારમ્ભયતે, અસ્ય ચ પૂર્વેણ સદ્ધા-
યમભિસમ્બન્ધઃ પૂર્વે યાદશ નામ-કર્તુ-ફલાદિનિરૂપણપૂર્વકં પ્રથમાસ્રવદ્વારરૂપં
પ્રાણવધસ્વરૂપમુક્તમ્ । તસ્ય હેતુસ્વાત્ ‘યથોદેશં નિર્દેશઃ’ ઇતિ ન્યાયપ્રાપ્તવાચ્ચે-
ત્યસ્મિન્ દ્વિતીયાધ્યયનેડલીકવચનં સ્વરૂપાદિનિરૂપણપૂર્વકં પ્રદર્શયતે, તસ્યેદમાદિ-
સૂત્રમ્-‘ઇહ સ્વલુ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-ઇહ સ્વલુ જંબૂ બિઙ્ગયં ચ અલિયવયણં લહુસગ-લહુ
ચવલ ભણિયં, ભયકરં, દુહકરં, અજસકરં, વેરકારગં, રતિં-અરતિ
-રાગદોસમણસંકિલેસવિયરણં અલિયં નિયડિસાતિ જોગબહુલં
નીયજણનિસેવિયં નિસ્સંસં અપ્પચ્ચયકારગં પરમસાહુગરહણિજં

દ્વિતીય દ્વાર પ્રારંભ

પ્રથમ આસ્રવ દ્વાર કા અર્થ કહ દિયા ગયા હૈ, અવ દ્વિતીય આસ્રવ
દ્વાર પ્રારંભ હોતા હૈ । અવ આસ્રવદ્વાર કા પૂર્વ આસ્રવદ્વાર કૈ સાથ હસ
પ્રકાર સૈ સંબંધ હૈ-પૂર્વ આસ્રવદ્વાર મૈ સ્વરૂપ, નામ કર્તા ઔર ફલ
આદિ કૈ નિરૂપણ પૂર્વક પ્રથમ આસ્રવદ્વારરૂપ પ્રાણવધ કા સ્વરૂપ કહા
હૈ અવ ઉસકા હેતુ હોને સૈ તથા “યથોદેશં નિર્દેશઃ” ઉદ્દેશ કૈ અનુ-
સાર હી નિર્દેશ હોતા હૈ હસ નિયમ કૈ અનુસાર ન્યાયપ્રાપ્ત હોને સૈ હસ
દ્વિતીય આસ્રવદ્વાર મૈ અલીક વચન કા ઉસકૈ સ્વરૂપ આદિ કા નિરૂપણ
પૂર્વક કથન કિયા જાતા હૈ । હસ આસ્રવદ્વાર કા આદિમ સૂત્ર યહ હૈ-
‘ઇહ સ્વલુ જંબૂ’ ઇત્યાદિ ।

બીજા દ્વારનો પ્રારંભ

પહેલા આસ્રવદ્વારનો અર્થ કહેવાઈ ગયો, હવે બીજા આસ્રવદ્વારનું
વિવેચન શરૂ થાય છે. આ આસ્રવદ્વારનો આગળના આસ્રવદ્વાર સાથે આ પ્રકા-
રનો સંબંધ છે-આગળના આસ્રવદ્વારમાં સ્વરૂપ, નામ, કર્તા, ફળ આદિનું
નિરૂપણ કરીને આસ્રવદ્વારરૂપ પ્રાણવધનું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે. હવે તેના હેતુરૂપ
હોવાથી, તથા “યથોદેશં નિર્દેશઃ” ઉદ્દેશાનુસાર જ નિર્દેશ થાય છે તે નિય-
માનુસાર ન્યાયયુક્ત હોવાથી આ બીજા આસ્રવદ્વારમાં અત્યંત વચનનું-તેનાં સ્વ-
રૂપાદિનાં નિરૂપણ સહિત વિવેચન કરવામાં આવે છે. આ આસ્રવદ્વારનું પહેલું
સૂત્ર આ છે-“ઇહ સ્વલુ જંબૂ” ઇત્યાદિ.

સુવર્ણિનીટીકા અ૦ ૨ સૂ૦ ૧ અલીકવચનનિરૂપણમ્

૧૧૫

પરપીલાકારગં પરમકિણ્હલેસ્સસહિયં દુગ્ગઈ વિણિવાયવિવઙ્ગુણં
ભવપુણ્ભવકરં ચિરપરિચિયમણુગતં દુરંતં કિત્તિયં વિત્તિયં
અધમ્મદારં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—હે જમ્બૂ ! ઇહ=અસ્મિન્ જિનશાસને ‘સ્વલ્લિતિ’ નિશ્ચયેન ‘વિહયં
ચ’ દ્વિતીયં ચ આસ્રવદ્વારમ્ ‘અલિયવચણં’ અલીકવચનમ્=અસત્યભાષણં નામ ।
અસ્યાપિ “યાદશો ૧, યન્નામ ૨, યથાક્રુતો ૩, યાદશં ફલં દ્દાતિ ૪, યેઽપિ
ચ કુર્વન્તિ પાપાઃ ૫,” ઇતિ પશ્ચભિરન્તર્દ્વારૈઃ પૂર્વવત્ નિરૂપણં ક્રિયતે । તત્ર ચ
યથાક્રમં ‘યાદશઃ’ ઇતિ દ્વારમાશ્રિત્યાલીકવચનસ્વરૂપમાહ—‘લઘુ’ ઇત્યાદિ—
‘લઘુસગલઘુચલભણિયં’ લઘુસ્વકલઘુચલભણિતં, લઘુઃ=તુચ્છો ગૌરવવર્જિતઃ
સ્વઃ=સ્વભાવો યેષાં તે લઘુસ્વકાઃ, તેભ્યોઽપિ લઘવશ્ચપલાશ્ચ=ચચ્ચલકાયા યે તૈ

ટીકાર્થ—(જંબૂ) હે જમ્બૂ ! (ઇહ) હા જિન શાસનમેં (સ્વલ્લ) નિશ્ચયસે
(વિહયં ચ અલિયવચણં) દ્વિતીયઆસ્રવ અલીક(અસત્ય)વચન-અસત્યભાષણ
નામકા હૈ । હસકા મી યહ “અલીકવચનરૂપ આસ્રવદ્વાર જૈસા હૈ ૧, જિતને
હસકે નામહૈ ૨, પ્રાણિયોં દ્વારા યહ જિન મંદ, તીવ્ર આદિ પરિણામોં સે
કિયા જાતા હૈ ૩, જિસ પ્રકાર કા ઉન્હે નરકાદિરૂપફલ દેતા હૈ ૪,
તથા જો પાપી જીવ હસ અસત્યભાષણ કો કરતે હૈ ૫” હા પાંચ અન્ત-
ર્દ્વારોં દ્વારા પૂર્વ કી તરહ નિરૂપણ કિયા જાવેગા । અવ સૂત્રકાર ક્રમા-
નુસાર “યાદશઃ” હસ દ્વાર કો આશ્રિત કરકે અલીક(અસત્ય)વચનકે
સ્વરૂપ કો કહતે હૈ—(લઘુસગલઘુચલભણિયં) જિનકા સ્વભાવ ગૌરવ
વર્જિત હૈ એસે જીવોં સે મી જો હીન હૈ લઘુ હૈ, વે લઘુસ્વક લઘુ હૈ તથા

ટીકાર્થ—“જંબૂ” હે જમ્બૂ ! “ઇહ” આ જૈનશાસનમાં “સ્વલ્લ”
ખરેખર, “વિહયં ચ અલિયવચણં” ખીજે આસ્રવ અલીક વચન-અસત્ય ભાષણ
નામનો છે. તેનું પણ નીચે પ્રમાણેનાં પાંચ અંતર્દ્વારો દ્વારા, આગળના આસ્રવ
દ્વારની જેમ જ, નિરૂપણ કરવામાં આવશે. (૧) આ અસત્ય યથાક્રમ આસ્રવ-
દ્વાર કેવું છે ? (૨) તેના કેટલા નામ છે ? (૩) પ્રાણીઓ દ્વારા તે કયાં કયાં
મંદ, તીવ્ર આદિ પ્રરિણામોથી સેવાય છે ? (૪) કેવા પ્રકારનાં નરકાદિરૂપ ફળ
તેને આપે છે ? (૫) તથા કયા કયા પાપી જીવ અસત્ય બોલે છે ?

હવે સૂત્રકાર અનુક્રમે “યાદશઃ” આ દ્વારનો આધાર લઈને અસત્ય
વચનનું સ્વરૂપ દર્શાવે છે—“લઘુસગલઘુચલભણિયં” ગૌરવહીન સ્વભા-
વના જીવોથી પણ જે હીન છે—લઘુ છે, તેઓ ‘લઘુસ્વક લઘુ’ હીનમાં હીન
બણાય છે. એવા લઘુસ્વતક લઘુ દ્વારા તથા અંચળ મનવાળા દ્વારા બોલવામાં આવતું

મર્ણિતમ્=ઉત્તં, 'ભયકરં' ભયકરં=ભયજનકમ્, 'દુહકરં' દુઃખકરં=દુઃખજન-
કમ્, 'અજસકરં' અયશઃ કરં=અયશજનકં, 'વેરકારગં' વૈરકારકં=વૈરોત્પાદકં,
'રતિ અરતિરાગદોસમણ સંકિલેસવિયરણં' રત્યરતિરાગદ્વેષમનઃ સંકલેશવિતરણં-
રતિઃ=પ્રીતિરસંયમમાર્ગે, અરતિઃ=અપ્રીતિઃ સંયમમાર્ગે, રાગઃ = વિષયેષ્વતુરજનં
'દોસ' દ્વેષઃ=દ્રોહઃ, મનઃ સંકલેશઃ=ચિત્ત સન્તાપઃ, एतान् વિતરતિ = દદાતિ
યત્તત્થા 'અલિયં' અલીકં=નિષ્ફલં 'નિયહિ સાતિજોગવહુલં' નિકૃતિસાતિ
યોગવહુલં=નિકૃતિઃ=કૃતદુષ્કૃતકર્મપલાપનાર્થવચનં સાતિઃ=અવિશ્વાસસ્તયોર્યોગઃ
=મયોગસ્તેન વહુલં યત્તત્થા-કપટાધિશ્વાસસંભૃતમિત્યર્થઃ, 'નીયજનણિસેવયં'
નીચજનણિવેવિતં=નીચૈઃ=જાતિકુલગુણાદિભિરશ્રમૈર્જનૈર્નિવેવિતં, 'નિસ્સંસં' વૃશંસં

જો ચન્દ્રલ શરીર હૈં उनके द्वारा कहा गया यह असत्यभाषण (भयकरं)
भय देनेवाला है । (दुहकरं) दुःख उत्पन्न करने वाला है, (अजसकरं)
अयश बढ़ाने वाला है, (वेरकारगं) वैर भाव को उत्पन्न करने वाला
है, (रह अरह रागदोसमणसंकिलेसवियरणं) रति-असंयम मार्ग में
प्रीति, अरति-संयममार्ग में अप्रीति, राग-विषयों में अनुराग, दोस-
परसे द्रोह एवं मणसंकिलेस-चित्तसंताप, इन सब दुर्गुणों को 'वियरणं'
देने वाला है (अलियं) निष्फल है (नियहिसातिजोगवहुलं) किये हुए
दुष्कृतकर्म का अपलाप करने के लिए अनेक जालरचना, तथा कहीं पर
भी किसी पर विश्वास नहीं होने देना इन बातों का जिसमें अधिक से
अधिक योग रहता है ऐसे स्वभाववाला है अर्थात्-कपट एवं अविश्वास
से भरा हुआ है । (णीयजणणिसेवियं) इसका सेवन जो जाति, कुल
एवं सद्गुणों से रहित होते हैं वे जन करते हैं । (निस्संसं) यह नृशंस-

તે અસત્ય વચન “ભયંકર” ભયંકર છે, “દુહકર” દુઃખ ઉત્પન્ન કરનાર છે,
“અજસકર” અપ્રીતિ વધારનાર છે, “વૈરકારગ” વૈરભાવ પેદા કરનાર છે, “રહ
અરહ રાગદોસમણસંકિલેસવિયરણ” રહ-અસંયમમાર્ગમાં પ્રીતિ અરહ-અરતિ-સંયમ
માર્ગમાં અપ્રીતિ, રાગ-વિષયો પ્રત્યે આસક્તિ, દોસ-પારકાનો દ્રોહ, અને મનસંકિલેસ
મનમાં સંતાપ, આદિ દુર્ગુણો “વિયરણ” દેનાર છે, “અલિય” નિષ્ફળ છે,
“નિયહિસાતિજોગવહુલ” કરેલાં દુષ્કૃત્યોને છૂપાવવા માટે અનેક અળસચના,
તથા કયાંય પણ કોઈના ઉપર વિશ્વાસ ઉત્પન્ન થવા ન દેવો, વગેરે બાબતોનો
જેમાં વધારેમાં વધારે યોગ રહે છે એવા સ્વભાવવાળું, એટલે કે કપટ અને
અવિશ્વાસથી ભરેલું હોય છે. “નીયજણણિસેવિય” તેનું સેવન જાતિ, કુળ
અને સદ્ગુણોથી રહિત લોકો કરે છે. “નિસ્સંસં” તે નૃશંસ-કૂર છે, અથવા

સુદર્શિની ટીકા અં ૨ સૂ ૧ અલોકવચનનિકૂળમ્

૧૬૭

=કૂરં યદ્વા-નિશંસ-નિર્ગતા શંસા પ્રશંસા યસ્માન્નત્તથા-પ્રશંસાયર્જિતમિત્યર્થઃ,
 ‘અપ્પચ્ચયકારમં’ અપ્રત્યયકારકમ્=વિશ્વાસનાશકમ્, ‘પરમસાહુગરહણિજ્ઞં’
 પરમસાધુગર્હણીયં = પરમા=ઉત્કૃષ્ટાશ્રયે સાધવસ્તીર્થકરગણધરાદયસ્તૈર્ગર્હણીયં =
 નિન્દનીયં, ‘પરપીલાકારમં’ પરપીડાકારકં, ‘પરમકિણ્હલેસ્સહિયં’ પરમકૃષ્ણ-
 લેહ્યાસહિતં=પરમા=ઉત્કૃષ્ટા કૃષ્ણા=મલિના લેહ્યા=આત્મપરિણતિઃ, તથા સહિતં
 ‘દુગ્ગહ વિણિવાય વિવઙ્ગુણં’ દુર્ગતિવિનિપાતવિવર્ધનં=દુર્ગતૌ=નરકનિગોદાદૌ યો
 વિનિપાતઃ=નિપતનં તસ્ય વિવર્ધનં=પ્રવર્ધકં ‘ભવપુણ્નમ્ભવકરં’ ભવપુનર્ભવકરં=
 પુનઃ પુનર્જન્મકારકં ‘ચિરપરિચિયં’ ચિરપરિચિતં=ચિરાત્=અનેકજન્મજન્માન્તરાત્
 પરિચિતમ્ = અનાદિમિથ્યાત્વાવિરતિપ્રવાહવિચ્છેદા - ભાવાત્ ‘અનુગતં=ભવપર-

કૂર હૈ, અથવા નિ:શંસ હસ ભાષણ કો કોઈ બી પ્રશંસા નહીં કરતા હૈ
 હસલિયે યહ પ્રશંસા રહિત હૈ, (અપ્પચ્ચય કારમં) યહ બોલને વાલે કે
 વિશ્વાસ કા નાશક હોતા હૈ । (પરમાસાહુગરહણિજ્ઞં) પરમસાધુ જો
 તીર્થકર ગણધર આદિ હૈં ડ્રા યહ ગર્હણીય-નિંદનીય કહા
 ગયા લે । (પરપીલાકારમં) હસ વચન સે પર કો પીડા હોને કે સિવાય
 ઓર કુછ નહીં હોતા હૈ । (પરમકિણ્હલેસ્સહિયં) હસકે સેવન કરને
 વાલોં કી લેહ્યા-આત્મપરણતિ અત્યંત મલિન રહા કરતી હૈ । (દુગ્ગહ-
 વિણિવાયવિવઙ્ગુણં) નિગોદ આદિ દુર્ગતિયોં મેં યહ જીવ કે પતન કા
 વિશેષ રૂપ સે વર્ધક હોતા હૈ । (ભવપુણ્નમ્ભવકરં) હસકે બોલને વાલે
 જીવોં કા પુનઃ પુનઃ સંસાર મેં જન્મ હોતા રહતા હૈ । (ચિર પરિચિયં)
 અનેક જન્મ જન્માન્તર સે યહ પરિચિત રહતા હૈ-અર્થાત્-જન્મ જન્મા-
 ન્તરોં મેં હસકા સંસ્કાર સાથ રહે આને કે કારણ અનાદિ કાલ સે લગે

એ ભાષણની ડોઝ પ્રશંસા કરતું નથી તે કારણે તે પ્રશંસા રહિત છે, “અપ્પ-
 ચ્ચયકારમં” તે બોલનાર પ્રત્યેના અન્યના વિશ્વાસનું નાશકર્તા છે. “પરમસાહુ-
 ગરહણિજ્ઞ” પરમ સાધુ જે તીર્થકર ગણધર આદિ છે, તેમના દ્વારા તે ગર્હ-
 ãણીય-નિંદનીય બતાવવામાં આવેલ છે. “પરપીલાકારમં” તે વચનથી પરને પીડા
 થવા સિવાય બીજું કંઈપણ થતું નથી. “પરમકિણ્હ લેસસહિયં” તેનું સેવન
 કરનારની લેશ્યા-આત્મપરિણતિ અત્યંત મલિન રહ્યા કરે છે- “દુગ્ગહ વિણિવાય
 વિવઙ્ગુણં” નરક, નિગોદ આદિ દુર્ગતિયોમાં જીવને પાડવાને માટે તે વિશેષરૂપે
 વર્ધક હોય છે. “ભવપુણ્નમ્ભવકરં” તે અસત્ય બોલનાર જીવોને ફરી ફરીને
 સંસારમાં જન્મ લેવો પડે છે. “ચિરપરિચિયં” અનેક જન્મ જન્માંતરોથી તે
 પરિચિત રહે છે. એટલે કે જન્મ જન્માંતરોમાં તેના સંસ્કાર સાથે રહેતા

મ્પરાડનુગતં સમ્યગ્જ્ઞાનાભાવાત્, દુરન્તં=વિપાકદારુણત્વાત્ ‘વિહયં’ દ્વિતીયમ્ ‘અધર્મદારં’ અધર્મદ્વારં ‘કિત્તિયં’ કીર્તિતં=કથિતમ્ ॥ સૂ. ૧ ॥

એતેન યાદ્યં મૃષાવાદસ્વરૂપમસ્તિ તત્પ્રથમાન્તદ્વારે પ્રોક્તમ્ ! સામ્પતં ‘યન્નામે’તિ દ્વિતીયાન્તદ્વારે તન્નામાન્યાહ-‘તસ્સ’ ઇત્યાદિના—

મૂલમ્--તસ્સ ય ણામાણિ ગોણાણિ હંતિ તીસં તં જહા-
અલિયં ૧, સહં ૨, અણજ્જં ૩, માયામોસો ૪, અસંતકં ૫,
કૂડકવહમવત્થુગં ચ ૬, નિરત્થયમવત્થયં ચ ૭, વિદેસગરહણિજ્જં
૮, અણુજ્જુકં ૯, કક્કણા ચ ૧૦, વંચના ચ ૧૧, મિચ્છાપચ્છાકહં
ચ ૧૨, સાહ ૧૩, ઉસ્સુત્તં ૧૪, ઉવકૂલં ચ ૧૫, અટ્ટં ૧૬, અઘ્મ-
ક્ષણં ચ ૧૭, કિલ્લિસં ૧૮, વલયં ૧૯, ગહણં ચ ૨૦ મમ્મણં
ચ ૨૧, નૂમં ૨૨, નિયઈ ૨૩, અપ્પચ્ચઓ ૨૪, અસંમઓ ૨૫,
અસચ્ચસંઘત્તણં ૨૬, વિવક્ષો ૨૭, ઉવહિયં ૨૮, ઉવહિ અસુદ્ધં
૨૯, અવલોવોત્તિ ૩૦, વિહયસ્સ ઇમાણિ એવાહયાણિ નામ-
ધેજ્જાણિ હોંતિ તીસં સાવજ્જસ્સ અલિયસ્સ વયજોગસ્સ
અણેગાઈ ॥ સૂ. ૨ ॥

હુણ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ કે પ્રવાહ કા વિચ્છેદ નહીં હોતા હૈ। (અણુગયં) સમ્યગ્જ્ઞાનકા અભાવ હોને સે યહ જીવ કે સાથ ભવપરમ્પરાનુગત હોતા હૈ। (દુરંતં) વિપાક હસકા ઘટ્ટત હી અધિક દારુણ હોતા હૈ હસલિયે યહ જીવ કે લિયે દુરન્ત કહા ગયા હૈ। હસ તરહ સે (વિહયં) હસ દ્વિતીય અધર્મ દ્વાર કા (કિત્તિયં) સૂત્રકાર ને તીર્થંકર પરંપરા કે વર્ણન અનુસાર વર્ણન કિયા હૈ ॥સૂ. ૧॥

હોવાને કારણે અનાદિ કાળથી લાગેલ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ આદિનો પ્રવાહ તૂટતો નથી. “અણુગયં” સમ્યક્ જ્ઞાનનો અભાવ હોવાથી તે જીવની સાથે ભવપરંપરાનુગત હોય છે. “દુરંતં” તેનો વિપાક “પરિણામ” ધણો જ દારુણ હોય છે, તેથી તે જીવને ખાટે દુરન્ત દર્શાવાયું છે આ રીતે “વિહયં” આ બીજા અધર્મદ્વારનું ‘કિત્તિયં’ સૂત્રકારે તીર્થંકર પરંપરાએ કરેલ વર્ણન પ્રમાણેનું વર્ણન કર્યું છે. ॥ સૂ-૧ ॥

ટીકા—‘તસ્સ ય’ તસ્ય ચ મૃષાવાદસ્ય દ્વિતીયાસ્રવદ્વારસ્ય ‘ગોણાણિ’ ગોણાણિ=ગુણનિષ્પન્નાણિ ‘તોસં’ ત્રિસં ‘જામાણિ’ નામાણિ ‘હંતિ’ ભવન્તિ તં જહા’ તથા—(૧) ‘અલિયં’ અલીકં=નિષ્ફલં શુભફલવર્જિતત્વાત્, (૨) ‘સદં’ શટં=કપટિજનસમાચરિતત્વાત્, (૩) ‘અણજ્જં’ અનાર્યમ્=અનાર્યજનોક્ત-

“જારિસઓ” હાલ પ્રથમ દ્વાર મેં મૃષાવાદ કા સ્વરૂપ કહા ગયા હૈ, અથ સૂત્રકાર ‘જં નામા’ હાલ દૂસરે દ્વાર મેં હાલકે કૌન ૨ સે નામ હૈ વહ કહતે હૈ—‘તસ્સ ય જામાણિ’ હાલ્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(તસ્સ) હાલ દ્વિતીય આસ્રવદ્વાર રૂપ મૃષાવાદ કે (ગોણાણિ) ગુણ નિષ્પન્ન (તોસં) ત્રીસ (જામાણિ) નામ (હંતિ) હૈ (તં જહા) વે હાલ પ્રકાર હૈ—(અલિયં ૧, સદં ૨, અણજ્જં ૩, માયામોસો ૪, અસંતકં ૫, કૂડકવડમવત્થુગં ૬, ચ નિરત્થયમવત્થયં ૭ ચ, વિદેસગરહણિજ્જં ૮, અણજ્જુકં ૯, કક્કણા ૧૦ ચ, વંચણા ૧૧ ચ, મિચ્છાપચ્છાકઢં ૧૨ ચ, સાહ ૧૩, ઉસ્સુત્તં ૧૪, ઉક્કૂલં ૧૫ ચ, અદં ૧૬, અદમ્મક્કવણં ૧૭ ચ, કિવિવસં ૧૮, વલયં ૧૯, ગહણં ૨૦ ચ, મમ્મણં ૨૧ ચ, નૂમં ૨૨, નિયઈ, ૨૩, અપ્પચ્ચઓ ૨૪, અસંયમઓ ૨૫, અસચ્ચસંઘવણં ૨૬, વિવિચ્છો ૨૭, ઉવહિયં ૨૮, ઉવહિ અસુદ્ધં ૨૯, અવલો ૩૦ સ્તિ) યહ અસત્ય-ભાષણ શુભફલો સે રહિત હોને કે કારણ અલીકફલ રહિત હોતા હૈ હાલિયે હાલકા નામ અલીક હૈ ૧! કપટીજનો કે દ્વારા વહ અપના કામ

“જારિસઓ” આ પ્રથમ દ્વારમાં મૃષાવાદ-અસત્ય વચન-નું સ્વરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે. હવે સૂત્રકાર “જંનામા” એ પદોથી શરૂ થતા બીજા દ્વારમાં તેનાં ૧૩માં કયાં નામો છે તે બતાવે છે—“તસ્સ ય જામાણિ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“તસ્સ” આ બીજા આસ્રવદ્વારરૂપ મૃષાવાદનાં “ગોણાણિ” શુણાનુસાર “તોસં” ત્રીસ “જામાણિ” નામ “હંતિ” છે. “તં જહા” તે આ પ્રમાણે છે.

“અલિયં ૧, સદં ૨, અણજ્જં ૩, માયામોસો ૪, અસંતકં ૫, કૂડકવડમ-વત્થુગં ૬, ચ, નિરત્થયમવત્થયં ૭, ચ વિદેસગરહણિજ્જં ૮, અણજ્જુકં ૯, કક્કણા ૧૦ ચ, વંચણા ૧૧ ચ, મિચ્છાપચ્છાકઢં ૧૨ ચ, સાહ ૧૩, ઉસ્સુત્તં ૧૪, ઉક્કૂલં ૧૫ ચ, અદં ૧૬, અદમ્મક્કવણં ૧૭ ચ, કિવિવસં ૧૮, વલયં ૧૯, ગહણં ૨૦ ચ, મમ્મણં ૨૧ ચ, નૂમં ૨૨, નિયઈ ૨૩, અપ્પચ્ચઓ ૨૪, અસંયમઓ ૨૫, અસચ્ચસંઘવણં ૨૬, વિવિચ્છો ૨૭, ઉવહિયં ૨૮, ઉવહિઅસુદ્ધં ૨૯, અવલો ૩૦ સ્તિ” (૧) તે અસત્ય ભાષણ શુભ ફળોથી રહિત હોવાને કારણે “અલીક” ફળરહિત હોય છે તેથી તેનું નામ “અલીક” પડ્યું છે (૨)

ત્વાત્, (૪) 'માયામોસો' માયામૃષા=માયાપૂર્વકત્વાદસત્યભાષણસ્ય માયામૃષેતિ નામ, (૫) 'અસંતકં' અસત્કં=અવિદ્યમાનં-સત્ યસ્મિન્સતદસત્કમ્=અસત્યમ્, (૬) 'કૂટકવટમવસ્તુકં' કૂટકપટાવસ્તુકં=તત્ર કૂટં=પરવચ્ચનાર્થં ન્યૂનાધિકભાષણં કપટં ભાષાવિપર્યયકરણમ્ અવસ્તુ=અવિદ્યમાનવસ્તુ કથનમ્=યથા-'જગતઃ કર્તા ઈશ્વરઃ' હત્યાદિ કથનમ્ કૂટાદીનાં ત્રયાણાં સમાનાર્થકત્વાદેકતમત્વે નૈવ ગણનાદિદમેકં નામ, (૭) નિરત્યયમવત્યયં ચ 'નિરર્થકમપાર્થકં ચ = નિર્ગતોડર્થોયસ્મિન્સતત્ = સત્યાર્થં હીનમ્, અપાર્થમ્=અપગતાર્થમસમ્બદ્ધાર્થમિત્યર્થઃ, (૮) 'ત્રિદેસગરહણિજ્જં'

ચનાને કે લિયે પ્રયોગ સે લાયા જાતા હૈં ફસલિયે ફસકા દૂસરા નામ શઠ હૈં ૨ । અનાર્થજનોં દ્વારા યહ બોલા જાતા હૈં ફસલિયે ફસકા નામ અનાર્થ હૈં ૩ । યહ અસત્યભાષણ માયા પૂર્વક હોતા હૈં ફસલિયે ફસકા નામ માયામૃષા હૈં ૪ । અસત્યભાષણ મેં જો વિષય કહા જાતા હૈં વહ ઉસરૂપ મેં નહીં હોતા હૈં ફસલિયે ફસકા નામ અસત્ય હૈં ૫ । પરવચન કે લિયે ફસમેં ન્યૂનાધિક બોલના પડતા હૈં, તથા ફસમેં બોલને કી ભાષા કી શૈલી ભી ભિન્ન પ્રકાર કી હોતી હૈં, ઓર જો વસ્તુ ફસમેં કહી જાતી હૈં વહ અવિદ્યમાન હોતી હૈં, જૈસે યોં કહના કિ જગત કા કર્તા ઈશ્વર હૈં સો યહ કૂટકપટાવસ્તુક નામ કા અસત્ય હૈં । યહાં કૂટ કપટ અવસ્તુક, ફન તીનોં કી સમાનાર્થકતા હોને કે કારણ ઇક પદ રૂપ સે ગિનતી કરલી ગઈ હૈં ૬ । યહ ભાષણ સત્યાર્થ સે હીન હોતા હૈં ફસલિયે ફસકા નામ નિરર્થક હૈં । ફસમેં વાચ્ય અર્થ, સંબંધ વિહીન રહતા હૈં ફસ-

કપટી લોકો દ્વારા પોતતું કાર્ય સાધવા માટે તેનો પ્રયોગ કરાય છે, તેથી તેનું ખીળું નામ “શઠ” છે, (૩) અનાર્થજન દ્વારા તે બોલાય છે તેથી તેનું ત્રીળું નામ “અનાર્થ” છે (૪) તે અસત્ય ભાષણ માયા પૂર્વક થાય છે તેથી તેનું ચોથું નામ “માયામૃષા” છે. (૫) અસત્ય ભાષણમાં જે વિષયનું કથન કરાય છે તે યથાર્થ-સાચા સ્વરૂપે-કરાતું નથી તેથી તેનું પાંચમું નામ ‘અસત્ય’ છે (૬) અન્યની વચ્ચનાને માટે તેમાં ન્યૂનાધિક બોલવું પડે છે, અને તે બોલવાની શૈલી પણ જુદા જ પ્રકારની હોય છે, અને જે વસ્તુ તેમાં કહેવાય છે તે અવિદ્યમાન હોય છે, જેમ કે “જગતનો કર્તા ઈશ્વર છે” તે પ્રમાણે કહેવું તે આ પ્રકારના આ પ્રકારના અસત્યને ‘કૂટકપટાવસ્તુક અસત્ય’ કહે છે. અહીં કૂટ, કપટ અને અવસ્તુક એ ત્રણે પદોથી સમાનાર્થકતા હોવાથી એક જ પદ રૂપે ગણવામાં આવેલ છે. (૭) તે ભાષણ સત્યાર્થ રહિત હોય છે તેથી તેનું નામ નિરર્થક છે તેમાં વાચ્ય અર્થ, સંબંધ રહિત હોય છે તેથી તેનું

વિદ્વેષગર્હણીયં=વિદ્વેષાત્=વિદ્વેષસંભૂતત્વાદ્ इदमलीकवचनं गर्हणीयं=નિન્દ્યં મહા-
 પુરુષૈઃ, (૯) ‘અણુજુકં’ અનુજુકમ્ = અસરલં-સરલભાવવર્જિતમિત્યર્થઃ, (૧૦)
 ‘કલ્કના ય’ કલ્કના ચ=પાપં પ્રાણાતિપાતાદિરુપમ્, (૧૧) ‘વંચના ય’ વંચના
 =પતારણા, (૧૨) ‘મિચ્છાપચ્છાકટં ચ’ મિથ્યાપશ્ચાત્ કૃતં=મિથ્યેતિવુદ્ધ્યા
 સાધુભિઃ પશ્ચાત્ કૃતં = પૃષ્ઠે કૃતં તિરસ્કૃતમિત્યર્થઃ, (૧૩) ‘સાતિ’ સાતિઃ=
 અવિશ્વાસઃ, (૧૪) ‘ઉત્સુત્તં’ ઉત્સૂત્રમ્-વિરુદ્ધાર્થ-નિરૂપણમ્, (૧૫) ‘અકૂલં’
 ઉત્કૂલં=સન્માર્ગતટાટ પરિષ્પ્રદાકારકમ્, (૧૬) ‘આર્ત્ત’ આર્ત્તમ્, આર્ત્તધ્યાનહેતુ-
 લિયે इसका नाम अपार्थ है ७। यह विद्वेष से भरा रहने के कारण गर्ह-
 णीय होता है-महापुरुषों द्वारा निन्द्य होता है इसलिए इसका नाम
 विद्वेष गर्हणीय है ८। इसमें भावों की सरलता नहीं होती है, अर्थात्-
 यह सरल स्वभाव से वर्जित रहता है इसलिये इसका नाम अनुजुक
 है ९। कल्कना शब्द का अर्थ पाप है, यह मृषावचन प्राणान्तिपातादिरूप
 होता है इसलिये इसका नाम कल्कना है १०। इसमें दूसरों की प्रता-
 रणा होनी है इसलिये इसका नाम वंचना है ११। मिथ्या समझकर
 साधु पुरुष इसका तिरस्कार करते हैं इसलिये इसका नाम मिथ्यापश्चा-
 त्कृत है १२। साति शब्द का अर्थ अविश्वास है, मिथ्याभाषण विश्वास
 रहित होता है। इसलिए इसका नाम साति है १३। विरुद्ध अर्थ वा
 इसमें निरूपण होता है इसलिये इसका नाम उत्सूत्र है १४। जीव को
 यह सन्मार्ग रूप तट से भ्रष्टकर देता है इसलिये इसका नाम उत्कूल
 है १५। यह आर्तध्यान का हेतु होता है इसलिये इसका नाम आर्त्त है १६।

નામ “અપાર્થ” છે. (૮) તે વિદ્વેષથી પૂર્ણ હોવાથી ગર્હણીય-મહાપુરુષો
 દ્વારા નિન્દા હોય છે, તેથી તેનું નામ “વિદ્વેષ ગર્હણીય” છે. (૯) તેમાં ભાવોની
 સરલતા હોતી નથી, એટલે કે તે સરળ સ્વભાવથી રહિત હોય છે, તેથી તેનું
 નામ “અનુજુક” છે. “કલ્કના” શબ્દનો અર્થ પાપ થાય છે. (૧૦) તે
 મૃષાવચન પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ હોય છે, તેથી તેનું નામ “કલ્કના” છે. (૧૧)
 તે અસત્ય વચન વડે અન્યની પ્રતારણા થાય છે, તેથી તેનું નામ “વંચના”
 છે (૧૨) મિથ્યા સમજીને સાધુ પુરુષ તેનો તિરસ્કાર કરે છે; તેથી તેનું
 નામ “મિથ્યાપશ્ચાત્કૃત” છે (૧૩) “સાતિ” શબ્દનો અર્થ “અવિશ્વાસ” થાય
 છે, તેથી તેનું નામ “સાતિ” છે. (૧૪) વિરુદ્ધ અર્થનું તેમાં નિરૂપણ થાય
 છે, તેથી તેનું નામ “ઉત્સૂત્ર” છે. (૧૫) જીવને તે સન્માર્ગરૂપ કિનારેથી
 ભ્રષ્ટ કરે છે માટે તેનું નામ “ઉત્કૂલ” છે (૧૬) તે આર્ત્તધ્યાનના હેતુરૂપ
 હોય છે, તેથી તેનું નામ “આર્ત્ત” છે. (૧૭) તેના દ્વારા અસત-અવિદ્યમાન

ત્વાત્ (૧૭) ‘અન્મસ્ત્વાણં’ અભ્યાસ્યાનમ્=અસદોપારોપણમ્, (૧૮) ‘કિલ્વિષં’ કિલ્વિષં=પાપં-પ્રાણાતિપાતાદિહેતુત્વાત્, (૧૯) ‘વલયં’ વલયમિવ વક્રત્વાદ્ કુટિલમિત્યર્થઃ, (૨૦) ‘ગહનં’ ગહનં=ગહનમિવ ગહનં-વનમિવ દુર્વગાહમિત્યર્થઃ, (૨૧) ‘મમ્મણં’ મમ્મનમ્ = મમ્મનમિવ મમ્મનમ્ અસ્ફુટત્વાત્ । (૨૨) ‘નૂમં’ છાદનં=પરગુણાચ્છાદને પિયાનમિવ, (૨૩) ‘નિયર્ઘં’ નિકૃતિઃ=માયાચ્છાદનાર્થ-વચનં કિપ્રલમ્બનં વા, (૨૪) ‘અપ્પચ્ચઓ’ અપ્રત્યયઃ=અવિશ્વાસઃ (૨૫) ‘અસં-

૧૬। इसके द्वारा अस्त-अविद्यमान दोषों का आरोपण किया जाता है इसलिये इसका नाम अभ्याख्यान है १७। यह प्राणातिपात आदि पापों का हेतु होता है इसलिये इसका नाम किल्बिष है १८। वलय के जैसा यह कुटिल रहा करता है इसलिये इसका नाम वलय है १९। वन के समान यह दुरा वगाह होता है इसलिए इसका नाम गहन है २०। जिस प्रकार तोतली बोली में शब्दस्फुट नहीं हों पाते हैं उसी प्रकार इसमें भी वस्तु का वास्तविक भान अस्फुट रहा करता है इसलिये इसका नाम मम्मण है २१। जिस तरह ढक्कन वस्तु को ढांक देता है उसी प्रकार यह भी पर के गुणों को आच्छादन कर देता है इसलिए इसका नाम नूम है। नूम नाम छादनका है २२, इसमें बोलनेवाला अपनी मायाको ढकने का प्रयास करता है, अथवा दूसरों को ढकने का उपाय रचता है इसलिये इसका नाम निकृति है २३। कोई भी सज्जन पुरुष झूठ वचनका विश्वास नहीं करते हैं इसलिये इसका नाम अप्रत्यय-अविश्वास है २४।

દોષોનું આરોપણ કરાય છે તેથી તેનું નામ “અભ્યાસ્યાન” છે. (૧૮) તે પ્રાણાતિપાત આદિ પાપોનું કારણ હોય છે, તેથી તેનું નામ “કિલ્વિષ” છે. (૧૯) વલયના જેવું તે કુટિલ હોય છે, તેથી તેનું નામ “વલય” છે. (૨૦) વનના જેવું તે ગહન હોય છે, તેથી તેનું નામ “ગહન” છે. (૨૧) જેમ તોતડા વચનો બરાબર સમજી શકતાં નથી એજ પ્રમાણે અસત્ય ભાષણમાં પણ વાસ્તવિકભાવ અસ્ફુટ-અસ્પષ્ટ રહ્યા કરે છે, તેથી તેનું નામ “મમ્મણ” છે (૨૨) જેમ ઢાંકણા વડે વસ્તુને ઢાંકી દેવાય છે, એ જ રીતે અસત્ય વચન પણ શુભોને ઢાંકી દેનાર હોવાથી તેનું નામ ‘નૂમ’ છે. ‘નૂમ’ એટલે આચ્છાદન-આવરણ. (૨૩) અસત્ય ભાષણમાં બોલનાર પોતાની માયાને ઢાંકવાનો પ્રયાસ કરે છે, અથવા બીજાને ઢાંકી દેવાના ઉપાય રચે છે, તેથી તેનું નામ “નિકૃતિ” છે. (૨૪) કોઈ પણ સજ્જન પુરુષ અસત્ય વચન પર વિશ્વાસ ધૂકતો નથી, તેથી તેનું નામ અપ્રત્યય “અવિશ્વાસ” છે, (૨૫) ન્યાયજ્ઞ પુરુષો

મઓ ' અસમ્મતઃ=ન્યાયઔરનાચરિતઃ, (૨૬) ' અસત્યસંધત્તણં ' અસત્યસન્ધત્વમ્=અસત્યં-સન્ધપાતિ=સમિશ્રયતિ સતતં યઃ સોઽસત્યસન્ધસ્તસ્ય ભાવોઽસત્યસન્ધત્વં=મૃષાભાપિ ધર્મઃ, (૨૭) ' વિપક્ષો ' વિપક્ષઃ=સત્ય પ્રતિકૂલત્વાત્ (૨૮) ઉવહિ યં ' ઔપધિકં=માયમયમ્=કપટગુદમિત્યર્થઃ, (૨૯) ઉવહિ અપુદ્ગં ' ઉપધ્યગુદમ્=ઉપધિઃ=સાવચકર્મ તેનાશુદ્ધમ્, (૩૦) 'અવલોકોતિ' અપલોપ ઇતિ=કુર્વાણોઽપિ 'નાહં કરોમિ કિંચિદિત્યાદિભિર્વસ્તુ પ્રચ્છાદનમ્ ' ચિદ્યસ્સ ' દ્વિતીયસ્યાધર્મ-દ્વારસ્ય ' ઇમાણિ ' ઇમાનિ=પૂર્વોક્તાનિ ' એવમાદ્યાણિ ' એવમાદિકાનિ-અલીકા-દીનિ ' સાવજ્જસસ ' સાવજ્જસ્ય પાપસદ્ધિતસ્ય ' અલિયસસ ' અલીકસ્ય=મૃષાવા-

ન્યાયજ્ઞ પુરુષો દ્વારા યહ અસંમત હૈ-વે પુરુષ ઇસકા કમ્મી મો સેવન નહીં કરતે હૈં ઇસલિયે યહ અસંમત હૈ ૨૫। યહ મૃષાભાપિયોં કા ધર્મ હૈ ઇસલિયે હમકા નામ અસત્યસંધાત હૈ ૨૬। સત્યભાષણ કા યહ વિપક્ષી હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ વિપક્ષ હૈ। કપટોં કા યહ ઘર હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ ઔપધિક હૈ ૨૮। સાવચકર્મોં સે યહ સતત અપ-વિગ્ર થના રહતા હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ ઉપધ્યગુદ હૈ ૨૯। ઉપધિ શબ્દ કા અર્થ સાવચકર્મ હૈ। કાર્ય કરતા હુઆ મો વ્યક્તિ ઇસકે પ્રભાવ સે પ્રભાવિત હોકર કહદિયા કરતા હૈ કિ મૈં કુછ મો નહીં કર રહા હું। ઇસ તરહ ઇસકે દ્વારા વસ્તુ કા પ્રચ્છાદન હોતા હૈ-અતઃ ઇસકા નામ અલોપ હૈ ૩૦। (ચિદ્યસ્સ) ઇસ તરહ દ્વિતીય અધર્મદ્વાર કે (ઇમાણિ) યે પૂર્વોક્ત અલીક આદિ (તીસં નામધેજ્ઞાણિ) ગુણનિવ્વજ્ઞ તીસ નામ હૈં। તથા (એવમાદ્યાણિ) ઇનસે અતિરિક્ત ઔર મો ઇસી

તેને માન્ય કરતા નથી-તેઓ તેનું કદી પણ સેવન કરતાં નથી, તેનું નામ "અસંમત" (૨૬) તે અસત્ય વચન મૃષાવાદીઓના ધર્મ છે, તેથી તેનું નામ "અસત્યસંધાત" છે (૨૭) સત્ય ભાષણનું તે વિપક્ષી-વિરુદ્ધનું છે, તેથી તેનું નામ "વિપક્ષ" છે. (૨૮) કપટોનું તે ધામ છે, તેથી તેનું નામ "ઔપધિક" છે. (૨૯) સાવચ કર્મોથી તે સતત અપવિગ્ર રહે છે, તેથી તેનું નામ, 'ઉપ-ધ્યગુદ' છે. 'ઉપધિ' શબ્દનો અર્થ સાવચ કર્મ છે, (૩૦) કાર્ય કરતી વ્ય-ક્તિ પણ તેના પ્રભાવની અસર નીચે આવી બધને કહી દે છે કે "હું કંઈ કરતો નથી." આ રીતે તેના દ્વારા વસ્તુનું પ્રચ્છાદન થાય છે, તેથી તેનું નામ "અપલોપ" છે. "ચિદ્યસ્સ" આ રીતે બીજા અધર્મદ્વારના "ઇમાણિ" પૂર્વોક્ત અલીક આદિ "તીસં નામ ધેજ્ઞાણિ" ગુણાનુસાર ત્રીસ નામ છે. તથા "એવમાદ્યાણિ" તે ઉપશન્ત બીજાં પણ તે જ પ્રકારના "સાવજ્જસ" પાપ

૧૭૪

પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રે

દસ્ય 'વયજોગસ' વચનયોગસ્ય 'અણેગાઈ' અનેકાનિ 'તીસં' ત્રિશત્ 'નામ-
ધેજ્જાણિ' નામધેયાનિ=નામાનિ 'હોંતિ' ભવન્તિ ॥ સૂ. ૨ ॥

एवं 'यन्नामे' तिद्वारमुक्त्वा यथाकृतं=येन मन्दतीव्रादि परिणामेन अलीकं
वदन्ति ये च जना वदन्ति इति तृतीयपञ्चममन्तद्वारद्वयमाह=, तं चे 'त्यादिना—

મૂળમ્—તં ચ પુણ વદંતિ કેડ અલિયં પાવા અસંજયા, અવિ-
રયા, કવડકુડિલ કડુય ચટુલ ભાવા કુદ્દા લુદ્દા મયાય
હસ્સદિયા ય સમ્મલી ચોરા ચારમડા સ્વંડરમ્મલા જિયજૂયકરા
ય ગહિય ગહણા કક્ર ગુરુગ કારગા કુલિગી ઉવહિયા વાણિયગા
ય કૂડતૂલ-કૂડમાળી કુડકાહા-વળોવજીવિયા પડગારકા
કલાયા કારુડજ્ઞા વંચણપરા ચારિયચાટુયાર નગર ગોત્તિય
પરિયારગા હુદ્દવાડસૂયક અળવલમળિયા ય પુવ્વકાલિય વયળ
દચ્છા સાહસિયા લહુસ્સગા અસચ્ચા ગારવિયા અસચ્ચટ્ટાવ-
ળાહિ ચિત્તા ઉચ્ચચ્છંદા અણિમાહા અણિયતા છંદેણ મુક્કવાયા
ભવંતિ ॥ સૂ. ૩ ॥

टीका—'तं च' तच्च 'पुण' पुनः 'अलियं' अलीकं 'केड' केऽपि
'पावा' पापाः=पापिनो वदन्ति न तु साधवस्तेषामलीकवचननिवृत्तत्वात् ।
तरह के (सावजस) पापसहित इस (अलियस वयजोगस) अली-
कमृषावाद-वचनयोगके (अणेगाई) अनेक नाम भी (होंति) हैं ॥सू-२॥

इस प्रकार से द्वितीय द्वार द्वारा इसका कथन कर अब सूत्र-
कार “जहयकओ-यथाकृतः” जैसे यह किया गया है इस तृतीय द्वार
का, तथा “जेवि य करेन्ति पावा-येऽपि च कुर्वन्ति पापाः” जो पापी-
जन इसे करते हैं, इस पंचम द्वार का प्रतिपादन करते हैं—‘तं च पुण
वदंति’ इत्यादि ।

શુદ્ધ આ “અલિયસ વયજોગસ” અલીક-મૃષાવાદ-વચનયોગના “અણેગાઈ”
અનેક નામ પણ હોંતિ” છે ॥ સૂ-૨ ॥

આ પ્રમાણે ત્રીજા દ્વાર વડે તેનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર “જહયકઓ-
-યથાકૃતઃ” કયા રીતે તે કરાયા છે તે ત્રીજા દ્વારનું, તથા “જેવિય કરેન્તિ
પાવા-એઽપિ ચ કુર્વન્તિ પાપાઃ” કયા પાપી જીવે તેનું સેવન કરે છે, પાંચમાં
દ્વારનું પ્રતિપાદન કરે છે—“તં ચ પુણ વદંતિ” ઇત્યાદિ.

सुदर्शिनी टीका अ. २ सू० ३ येन भावेनालीकं वदन्ति तन्निरूपणम् १७५

क्रीडशास्त्रे पापिन इत्याह-‘असंजया’ असंयताः=अवशेन्द्रियाः ‘अविरया’
अविरताः=पापकर्मभ्योऽनिवृत्ताः पापकर्मरता इत्यर्थः, ‘कवडकुटिलकटुकचटुल-
भावा’ कपटकुटिलकटुकचटुल भावाः=कपटेन=छलेन हेतुना कुटिलः=वक्रः, कटुकः
=अनिष्टः चटुलः=नृष्ण्या चञ्चलो भावः=परिणामो येषां ते असत्यभाषणजनित
भावि नरकनिबोदाद्यनन्तदुःखभोगिनो जना एवासत्यं समाचरन्तीत्यर्थः । तथा
‘कुद्धा’ कुद्धाः=क्रोधिनः, ‘लुब्धा’ लुब्धाः=लोभिनः, क्रोधात् लोभाच्चासत्यं
वदन्ति एवं मुग्धादयोऽपि अस्यैव-शास्त्रस्य प्रथमद्वारस्थं विंशतितममूत्रपाठात्

टीका- (तं च पुण अलिपं केद पावा वदंति) उस अलीक वचनको जो पापी जन होते हैं वे ही बोलते हैं सब प्राणी नहीं। क्यों कि जो साधु-जन होते हैं वे इस अलीक वचन से सदा दूर रहते हैं। असत्यभाषण करने वाले कैसे होते हैं यह बात सूत्रकार इन वक्ष्यमाण विशेषणों द्वारा अब समझाते हैं- (असंजया) वे असंयत होते हैं-इन्द्रियां उनके वश में नहीं होती हैं। (अविरया) अविरत होते हैं-पापकर्मों से निवृत्त नहीं होते हैं, अर्थात्-वे पापकर्मों में निरत रहते हैं। (कवडकुटिलकडुय-चटुलभावा) वे कपटी होने से कुटिल-वक्र, कटुक-अनिष्ट, और चटुल-तृष्णा से चंचल हैं परिणाम जिनका ऐसे होते हैं, अर्थात्-असत्यभाषण जनित पाप उदय से भावी नरकनिगोद आदि के अनंत दुःखों को भोगनेवाले मनुष्य ही असत्य वचनों को बोला करते हैं। (कुद्धा लुब्धा) वे क्रोधी होते हैं, लोभी होते हैं। अर्थात्-क्रोध एवं लोभ से असत्यभा-

“તં ચ પુણ અલિયં કેદ પાત્ત વદંતિ” “અસંજયા” તે અસત્ય વચન પાપી લોકો જ બોલે છે બધા જીવો બોલતાં નથી, કારણ કે સજ્જનો તેો તે અલીક વચનથી સદા દૂર રહે છે. અસત્ય ભાષણ કરનાર લોકો કેવાં હોય છે, તે વાતને સૂત્રકાર નીચે પ્રમાણેનાં વિશેષણો દ્વારા સમજાવે છે.

ટીકાર્થ—“અસંજ્યા” તેઓ અસંયત હોય છે—ઈન્દ્રિયો તેમને વશ હોતી નથી. “અવિરયા” અવિરત હોય છે—તેઓ પાપકર્મોથી નિવૃત્ત થતાં નથી, એટલે કે તેઓ પાપકર્મોમાં જ લીન રહે છે. “કવઙકુટિલકહુચ્ચદુલભાવા” તેઓ કપટી હોવાથી કુટિલ-વક્ર, કટુકે-અનિષ્ટ, અને ચતુર-તુણ્યથી ચંચળ વૃત્તિ-વાળા હોય છે, એટલે કે અસત્ય ભાષણ જનિત પાપના ઉદયથી ભાવી નરક નિગોદ અનંત દુઃખોને લોગવનાર મનુષ્ય જ અસત્ય વચનો બોલ્યા કરે છે. “કુદ્ધા લુદ્ધા” તે ક્રોધી હોય છે તથા લોભી હોય છે. એટલે કે ક્રોધ અને લોભથી અસત્ય વચનો બોલે છે. એ જ પ્રમાણે મુગ્ધ આદિ વિશેષણોથી સુક્ત

સંગ્રાહ્યા: । ‘ભયાય=અન્યેષાં ભયોત્પાદનાય’ વ્યાઘ્ર: સમાગત: ’ ઇતિરીત્યા મૃષા-
વાદ: અથવા ભયાચ્ચ ‘હસ્તદ્વિયા ય’ હાસ્યાર્થિકા:, અથવા હાસ્યાર્થાય ચ=
હાસ્યં કર્તુમપિ તથા વદન્તિ ‘સક્ત્વી’ સાક્ષિણ:સાક્ષિભૂતાન્યાયાલયાદૌ ‘ચોરા’
ચૌરા-નિગ્રહાદૌ ‘ચારમટા’ ચારમટા:=ત્ર ચારા: ગૂઢપુરુષા:, મટા:=યોધા:,

ષણ કરતે હૈં । इसी तरह सुग्धादिक जो जीव होते हैं कि जिन्हें प्राण-
वध के प्रकरण में २० वें सूत्र में कहा गया है वे भी असत्यभाषण
करते हैं । कोई धन के लिये, कोई धर्म के लिये, कोई इन्द्रियों के भोगों
के निमित्त काम के लिये, और कोई २ अर्थ, धर्म और काम इन तीनों
के लिये असत्यभाषण करते हैं । (भयाय) कितनेक कितनेक जीव
ऐसे भी होते हैं जो दूसरों को भय उत्पन्न करने के अभिप्राय से अस-
त्यभाषण कर दिया करते हैं । “ भयाय ” की संस्कृत छाया “भयाच्च”
ऐसी भी होती है-इसका तात्पर्य तब ऐसा होगा कि कितनेक जीव भय
से भी असत्यभाषण कर दिया करते हैं । (हस्तद्वियाय) कितनेक जीव
ऐसे भी होते हैं जो हँसी मजाक में असत्यभाषण कर देते हैं, अथवा
दूसरों की हँसी उड़ाने के अभिप्राय से असत्यभाषण करने लगते हैं ।
(सक्त्वी) जो न्यायालय-कचहरी आदि में दूसरों की साक्षी देते हैं वे
भी असत्यभाषण करते हैं । (चोरा) चोरी करने वाले जो पुरुष होते
हैं वे निग्रह आदि अवस्था के उपस्थित होने पर असत्यभाषण करते हैं ।

જે જીવો હોય છે, જેમનું પ્રાણુવધના ૨૦મા પ્રકરણમાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું
છે, તે જીવો પણ અસત્ય બોલે છે. એટલે કે કેટલાક મુગ્ધ-મોહાધીન વૃત્તિ-
વાળા અસત્ય બોલે છે. કેટલાક ક્રોધ, લોભ અને મોહ એ ત્રણેને વશ થઈને
અસત્ય બોલે છે. કેટલાક લોકો ધનને માટે, કેટલાક ધર્મને માટે, કેઈ ઇન્દ્રિ-
યોના લોભોને નિમિત્તે, અને કેઈ કેઈ લોકો અર્થ, ધર્મ અને કામ, એ ત્રણેને
નિમિત્તે અસત્ય બોલે છે. “ભયાય” કેટલાક એવા જીવો પણ હોય છે કે જે
બીજાને ભય પમાડવાને માટે અસત્ય બોલે છે. “ભયાય” ની સંસ્કૃત છાયા
“ભયાચ્ચ” પણ થાય છે. ત્યારે તેનો અર્થ એવો થાય છે કે કેટલાક જીવો
ભયને કારણે પણ અસત્ય બોલે છે. “હસ્તદ્વિયા ય” કેટલાક લોકો એવા
પણ હોય છે. કે જેઓ મજાક-મશકરીમાં પણ અસત્ય બોલી નાખે છે, અથવા
બીજાની મજાક કરવાને નિમિત્તે અસત્ય બોલવા માટે છે. “સક્ત્વી” ન્યાયા-
લય આદિમાં બીજાની સાક્ષી આપનારા લોકો પણ અસત્ય બોલે છે. “ચોરા”
ચોરી કરનારા લોકો, જેલમાં જવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થતાં અસત્ય બોલે છે.

સુવર્ણિની ટીકા અ० ૨ સુ० ૩ થેન ભાવનાલીકં વદન્તિ તત્ત્વરૂપણમ્ ૧૭૭

‘ સ્વંડરક્ષા ’ સ્વંડરક્ષા=શુલ્કપાલા:—રાજગ્રાહ્યદ્રવ્યસંગ્રાહકા इत्यर्थः, ‘ जियजूयकरा ’ जितशूतकरा:=तत्र जिता:=प्रतिस्पर्द्धिशूतकरैः पराजयं प्राप्ताः, शूतकरा:=शूतक्रीडकाः ‘ गहियगहणा ’ गृहीतग्रहणाः = गृहीतानि=स्थापितानि ग्रहणानि = बन्धक द्रव्याणि यैस्ते ‘ ककगुरुगकारगा ’ कल्कगुरुगकारका = कल्कगुरुकं =माया संभारसंभृतं वाक्यं तत्कारका:=कपटिन इत्यर्थः, कुलिंगी ’ कुलिङ्गिनः=कुत्सिता लिङ्गिनः कुलिङ्गिनः=कुतीर्थिकाः ‘ उवहिया ’ औपधिकाः=मायाचारिणः कपटिन इत्यर्थः ‘ वाणियगा ’ वाणिजकाः=व्यापारकारिणः, ‘ कूडतूलकूडमाणी ’ कूटतुलाकूटमानिनः=कूटा=कपटयुक्ता-न्यूनाधिका तुला येषां ते कूटतुलाः कूटमानिनः=कूट=वैषम्ययुक्तं यन्मानं=तोलनं तदस्ति येषां ते तथा ‘ कूडकाहावणोवजीवया ’ कूटकार्षापणोपजीविताः=कूटकार्षापणेन उपजीवन्ति ये ते तथा-कूटमुद्रोपजीविनः इत्यर्थः, ‘ पटकारगा ’ पटकारकाः=तन्तुवायाः-वस्त्रनिर्मापका इत्यर्थः,

હસી તરહ (ચારમઢા) જો ચાર ગુસચર-સી. આઈ. ડી હોતે હૈં, મઢ-યોધા હોતે હૈં, (સ્વંડરક્ષા) સ્વંડરક્ષ-રાજગ્રાહ્યદ્રવ્ય કે સંગ્રાહક હોતે હે, (જિયજૂયકરા) જિતશૂતકર-પ્રતિસ્પર્ધા જુઆરિયોં દ્વારા પરાજિત હુણ જુઆરી હોતે હૈં, (ગહિયગહણા) ગૃહીતગ્રહણ-ગહના રાખકર જો દુસરોં કો વ્યાજ પર રૂપ્યા દેને વાલે હોતે હૈં (કકગુરુગકારગા) કલ્કગુરુક કારક-માયાચારી સે ભરે હુણ વચનોં કો ઘોલને વાલે હોતે હૈં, અર્થાત્ કપટી હોતે હૈં, (કુલિંગી) કુતીર્થિક હોતે હૈં, (ઉવહિયા) ઔપધિક-માયાચારી હોતે હૈં, (વાણિયગા) વાણિજનક-વ્યાપારી હોતે હૈં, અસત્યભાષણ કરતે હૈં । (કૂડતૂલતૂલમાણી) જો ન્યૂનાધિક તરાજૂ રાખતે હૈં, નાપને તોલને કે બાંટ કમતી વઢતી રહતે હૈં (કૂડકાહાવણો-વજીવિયા) વનાવટી રૂપ્યા પૈસા બનાકર જો અપના નિર્વાહ કરતે હૈં,

એજ પ્રમાણે “ચારમઢા” જે ગુસચર-સી. આઈ. ડી હોય છે, ભટ-યોદ્ધા હોય છે, જે “સ્વંડરક્ષા” ષંડરક્ષ-રાજ્ય ભાગના દ્રવ્યને સંગ્રહ કરનાર હોય છે, જે “જિયજૂયકરા” જિતશૂતકર-પ્રતિસ્પર્ધિ જુગારી દ્વારા પરાજિત થયેલ જુગારી હોય છે, “ગહિયગહણા” ગૃહીત ગ્રહણ-ધરેણું રાખીને જે બીજા લોકોને વ્યાજે નાણું ધીરનાર હોય છે, “કકગુરુગકારગા” કલ્ક ગુરુક કારક જે માયાચારી વચનો ભોલનાર હોય છે-કપટી હોય છે, “વાણિયગા” જે વ્યાપારી હોય છે, જે “કુલિંગી” કુતીર્થિક હોય છે, “ઉવહિયા” જે ઔપધિક-માયાચારી હોય છે, તે અસત્ય બોલે છે. “કૂડતૂલતૂલમાણી” જે ખોટાં ત્રાજુયાં રાખે છે, માપવા તથા ભોખવાનાં માપ વધારે કે ઓછા રાખે છે, “કૂડકાહાવણોવજીવિયા” નકલી રૂપિયા, પૈસા આદિ બનાવીને જે લોકો

૧૭ :

પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રે

‘કલાયા’ કલાદાઃ=સુવર્ણકારાઃ ‘કારુહજ્ઞા’ કારુકીયાઃ=શિલ્પિનઃ ‘વંચણપરા’ વચ્ચનપરાઃ=પ્રસારણાપરાઃ ‘ઠગ’ ઇતિપ્રસિદ્ધાઃ ‘ચારિય’ ચાદુયારનગરગોત્તિય પરિયારગા, ચારિકચાદુકારનગર ગુપ્તિકપરિચારકાઃ=તત્ર-ચારિકાઃ=ગુપ્તચરાઃ, ચાદુકારાઃ=મુલમાજ્જલિકાઃ, નગરગુપ્તિકાઃ=કોટપાલાઃ, ‘કોતવાલ’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાઃ, પરિચારકાઃ=સેવકાઃ, વિષયભોગતત્રપરાશ્ચ, ‘દુટ્ટવાઈ’ સૂચકઅણબલમણિયા ‘દુષ્ટ-વાદિ’ સૂચકઅણબલમણિતાઃ, તત્ર દુષ્ટવાદિનઃ=અસત્યપક્ષગ્રાહિણઃ સૂચકા-પિથુનાઃ, અણબલમણિતાઃ=અણે=અણગ્રહણે બલાઃ=બલવન્તસ્તૈર્મણિતાઃ=ઉક્તાઃ ‘દેહિ મેઃ અણ’ મિત્યુત્તમર્ણેનોક્તા અઘમર્ણા ઇતિ ભાવઃ ‘પુલ્લકાલિયવચનદચ્છા’ પૂર્વ-કાલિકવચનદક્ષાઃ=વક્તુકામસ્યાભિપ્રાયમાલક્ષ્ય પૂર્વમેવ બ્રુવન્તિ યે તે પૂર્વકાલિકવચનદક્ષાઃ, ‘સાહસિયા’ સહસા-અવિચાર્ય ભાષન્તે યે તે સાહસિકાઃ, ‘લહુસસગા’

(પટકારગા) જો તન્તુ વાચ-ઝુલાહે હોતે હૈં (કલાયા) કલાદ-સુવર્ણકાર-સુનાર હોતે હૈં, (કારુહજ્ઞા) કારુકીય-શિલ્પી-કારીગર હોતે હૈં, (વંચણપરા) જો ઠગ હોતે હૈં, (ચારિય) ગુપ્તચર હોતે હૈં, (ચાદુયાર) ચાદુકાર-ખુશામદી હોતે હૈં, (નગરગોત્તિય) નગરગુપ્તિક-કોતવાલ હોતે હૈં, (પરિયારગ) પરિચારક-સેવક તથા વિષયભાગોં મેં તત્તર હોતે હૈં, (દુટ્ટવાઈ) જો અસત્યપક્ષ કો ગ્રહણ કરને વાલે હોતે હૈં, (સૂચક) સૂચક-ચુગલ ધોરહોતે હૈં, (અણબલમણિયા) મેરા અણ અદા કરો. હસ પ્રકાર જિસ દેનદાર સે સાહુકાર કહતા હૈં-વે અણ બલમણિત કર્જ-દાર વ્યક્તિ કહને વાલે કે અભિપ્રાય કો લક્ષિત કરકે પહિલે સે હી બોલને વાલે (પુલ્લકાલિયવચનદચ્છા) પૂર્વકાલિક વચનદક્ષ મનુષ્ય, (સાહસિયા) વિના વિચારે બોલને વાલે મનુષ્ય, (લહુસસગા) અપને

પોતાનું શુશ્રાન થલાવે છે, “પટકારગા” ને વણકર હોય છે, “કલાયા” સોની હોય છે, “કારુહજ્ઞા” કારીગર હોય છે, “વંચણપરા” ઠગ હોય છે, “ચારિય” ગુપ્તચર હોય છે. “ચાદુયાર” ચાદુકાર-ખુશામતીયો હોય છે. “નગરગોત્તિય” નગરગુપ્તિક-કોટવાળ હોય છે, “પરિયારગ” પરિચારક-સેવક તથા વિષય ભાગોના શુભામ હોય છે, ને અસત્ય પક્ષને શ્રદ્ધા કરનાર હોય છે, “દુટ્ટવાઈ” ને અસત્યપક્ષને શ્રદ્ધા કરનાર હોય છે, “સૂચક” સૂચક-ચુગલીયોર હોય છે, “અણબલમણિયા” ‘મારૂં અણ ભરપાઈ કરો’ તે પ્રમાણે ને દેણદારને શાહુકાર કહે છે તે અણબલ ભણિત દેણદાર વ્યક્તિ, કહેનારના અભિપ્રાયને લક્ષિત કરીને પહેલેથીજ બોલી જનાર હોય છે, “પુલ્લકાલિય વચનદચ્છા” પૂર્વે આપેલ વચનથી બંધાયેલો મનુષ્ય, “સાહસિયા” વિચાર્યા વિના બોલનાર મનુષ્ય, “લહુસસગા” પોતાની બતને તુચ્છ માનનાર

सुदर्शिनी टीका अ० २ सू० ३ येन भाषनालोकं वदन्ति तिस्रिरूपणम् १७९

लघुस्वकाः=पुच्छात्मनः, 'असच्चा' असत्याः=सत्यविमुखाः 'गारविया' गौर-
विकाः=ऋद्ध्यादि गौरवयुक्ताः, 'असच्चद्वावणाहिचित्ता' असत्यस्थापनाधिचित्ताः=
असत्यानाम्=असदर्थानां स्थापनायां प्ररूपणायामधिचित्तं येषां ते तथा असत्यार्थ-
मण्डनपरा इत्यर्थः, 'उच्चच्छंदा' उच्चो=महान् स्वात्माप्रशंसापरः छन्दः=अभि-
प्रायो येषां ते तथा स्वात्मप्रशंसापरायण इत्यर्थः, 'अणिग्गहा' अनिग्रहाः=
अवशेन्द्रियाः 'अणियता' अनियताः=अनियमवन्तः छन्देन=स्वाभिप्रायेण 'मुक्क-
वाया' मुक्कवाचः=यथा तथा भाषिणः अथवा 'वयमेव सिद्धवादिनः' इति
वदन्ति, के वदन्ति? 'जे' ये 'अलियाहिं' अलीकेभ्योऽसत्येभ्यः 'अविरया'
अविरताः=अनिवृत्ताः भवन्ति ॥ सू-३ ॥

तथा—'अवरे नत्थिगवाइणो' इत्यादि—

मूलम्—अवरे नत्थिगवाइणो वामलोगवादी भणन्ति, नत्थि
जीवो, न जाइ इह परे वा लोए, नय किंचि वि फुसइ पुन्न-
पावं, नत्थिफलं सुकयदुक्कयाणं । पंचमहाभूइयं सरीरं भासन्ति

आपको तुच्छ मानने वाले मनुष्य, (असच्चा) सत्य से विमुख रहने
वाले मनुष्य, (गारविया) ऋद्ध्यादि के गौरव से युक्त बने हुए मनुष्य,
(असच्चद्वावणाहिचित्ता) असत्यपदार्थ की प्ररूपणा करने वाले मनुष्य,
(उच्चच्छंदा) अपने आपकी प्रशंसा करने वाले मनुष्य, (अणिग्गहा)
जिनकी इन्द्रियां वश में नहीं हैं ऐसे मनुष्य, (अणिययाछंदेण) नियम
से रहित मनुष्य, (मुक्कवाया) यथातथा बोलने वाले मनुष्य, और (जे य)
जो मनुष्य (अलियाहिं) असत्यभाषण से (अविरया) विरति रहित
(भवन्ति) होते हैं वे जो मन में आता है सो बोल दिया करते हैं ।
इस प्रकार के बोलने में अलीक भाषण का दोष लगा करता है ॥ सू-३ ॥

भनुष्ये, "असच्चा" सत्यथी विमुख रहनेवाले मनुष्ये, "गारविया" ऋद्धि
आदिना अभिमानथी युक्ता बनेले मनुष्ये, "असच्चद्वावणा हि चित्ता" अस-
त्य पदार्थनी व प्ररूपणा करनेवाले मनुष्ये, "उच्चच्छंदा" आप पदार्थ करनेवाले
लोको, "अणिग्गहा" जेभनी इन्द्रियो कायूमां नथी तेवा लोको, "अणियया-
छंदेण" नियम विनाना मनुष्ये—अनियमित लोको, "मुक्कवाया" जेभ तेभ
बोलनेवाले लोको, अने "जे य" जे मनुष्य "अलियाहिं" असत्य भाषणथी
"अविरया" विरति रहित "भवन्ति" होय छे, ते लोको मनमां आवे तेभ
बोली नाये छे. ते रीते बोलवाथी असत्यभाषणुने दोष दाया करे छासू-३॥

૧૮૦

પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રે

હે વાયજોગજુત્તં, પંચ ય સ્થંધે મળંતિ કેદ્, મળં મળ જીવિકા
વદંતિ, વાઝજીવો તિ એવમાહંસુ સરીરં સાદ્યં સનિધનં ઇહ
મથે એમથે, તસ્સ વિપ્પણાસંમિ સઠ્ઠનાસો તિ એવ જંપંતિ
મુસાવાઈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા — ‘અવરે’ અવરે=ઉક્તેભ્યોડન્યે ‘નત્થિગવાહ્ણો’ નાસ્તિકવાદિનઃ= ‘નાસ્તિ પરલોકઃ’ ઇતિ મતિર્થેષાં તે નાસ્તિકા સ્તે ચ તે વાદિનઃ પ્રત્યક્ષપ્રમાણ-વાદિનશ્ચાર્વાકાઃ, તથા ‘વામલોગવાઈ’ તથા વામલોકવાદિનઃ, વામં=વિરુદ્ધ લોકં-વદન્તિ યે તે તથા સતામપિ લોકવસ્તુનામસત્ત્વ પ્રતિપાદકાઃ શૂન્ય વાદિનઃ ઇત્યર્થઃ, તે હિ ‘મળન્તિ=વદન્તિ યત્ ‘નત્થિ જીવો’ નાસ્તિ જીવઃ સુખદુઃખાદિ ભોક્તા તત્સાધક પ્રમાણાભાવાત્, યતો હિ ન તત્ત્વ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણમુપક્રમતે ચક્ષુરાદિ-ન્દ્રિયવિષયત્વાત્, નાપ્યનુમાનં તત્ત્વ પ્રમાણમ્, તસ્ય વ્યાપ્તિપક્ષધર્મતાજ્ઞાનાદ્ધીનતયા

તથા—‘અવરે નત્થિગવાહ્ણો’ ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—(અવરે) ઇન પૂર્વોક્ત વ્યક્તિયોં સે ભિન્ન (નત્થિગવાહ્ણો) જો નાસ્તિકવાદી હૈં—‘પરલોક નહીં હૈં’ ઇસ પ્રકાર કી જિનકી બુદ્ધિ હૈં એસે કેવલ એક પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ માનને વાલે ચાર્વાક, તથા (વામલોગવાઈ) વામલોકવાદી-શૂન્યવાદી, યે લોક મેં રહી હુઈ વસ્તુઓં કો અસત્ત્વ સે પ્રવિપાદિત કરતે હૈં વે (મળંતિ) કહતે હૈં કિ (નત્થિજીવ) સુખ, દુઃખ આદિ અવસ્થાઓં કા ભોક્તા જીવ નામ કા કોઈ પદાર્થ નહીં હૈં, કારણ કિ ઇસકે સાધક પ્રમાણોં કા અભાવ હૈં પ્રત્યક્ષપ્રમાણ ઇસકા સાધક ઇસલિયે નહીં હોતા હૈં કિ ચક્ષુરાદિક જો ઇન્દ્રિયાં હૈં વે ઉસે અપના વિષયમ્ભૂત નહીં બનાતી હૈં. અનુમાન સે બી ઉસકા ગ્રહણ નહીં હોતા હૈં, ક્યોં કિ અનુમાન સે સાધ્ય ઓર સાધન કી વ્યાપ્તિ કા એવં પક્ષ-

તથા—“અવરે નત્થિગવાહ્ણો” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“અવરે” તે પૂર્વોક્ત વ્યક્તિયોથી બુદ્ધિજ પ્રકારના ‘નત્થિગવાહ્ણો’ જે નાસ્તિકવાદી છે—“પરલોક નથી” એ પ્રકારની જેમની માન્યતા છે એવાં, કેટલા એક પ્રત્યક્ષ પ્રમાણને જ માનનાર ચાર્વાકવાદી, તથા “વામલોગવાઈ” વામલોકવાદી-વામમાર્ગી, તેઓ સૃષ્ટિમાં રહેલ વસ્તુઓને અસત્ત્વ રૂપે પ્રતિપાદિત કરે છે તેઓ “મળંતિ” કહે છે કે “નત્થિ જીવો” સુખ દુઃખ આદિ અવસ્થાઓનો ભોક્તા એવ નામનો કોઈ પદાર્થ નથી, કારણ કે તે સિદ્ધ કરવા માટેના પ્રમાણોનો અભાવ છે. પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ તેનું સાધક તે કારણે હોતું નથી કે ચક્ષુ આદિ જે ઇન્દ્રિયો છે તે તેને યોગ્યતા વિષય રૂપ બનાવી શકતી નથી. અનુમાનથી તેને ગ્રહણ કરી શકાતું નથી કારણ કે અનુમાનમાં સાધ્ય

પ્રત્યક્ષાભાવે વ્યાપ્તિગ્રહસ્વાપ્યભાવાત્ મહાનસાદૌ સત્યેવ પર્વતાદૌ વહ્નિનુમીયતે ।
 વહ્નિભૂમયોઃ પ્રત્યક્ષેણ સાહચર્યગ્રદે પ્રત્યક્ષપ્રમાણવાદિભિરનુમાનસ્યાનદ્વીકૃતત્વાચ્ચ ।
 નાપ્યાગમગ્રાહ્યસ્તસ્ય પરસ્પરવિરુદ્ધત્વેનાપ્રમાણ્યાત્ । નાપ્યુપમાનમત્રપ્રવચ્યતે, અસ-
 ત્યદાર્થે કેનોપમીયતે । इति । एवं च जीवस्याऽसिद्धत्वात् कोऽपि इह=मनुष्यलोके
 परे वा ' लोए ' लोके=देवादिलोके वा ' न जाइ ' न याति=न गच्छति, ' न य '
 न च ' किंचिवि ' किञ्चिदपि ' पुण्यपावं , पुण्यपापं=पुण्यपापरूपं कर्म ' फुसइ '

ધર્મતા આદિ કા ગ્રહણ હોના આવશ્યકીય હોતા હૈં इसके विना । अनु-
 मान नहीं होता है । जय उस विषय में प्रत्यक्षप्रमाण ही प्रवृत्त नहीं
 होता है तब साध्य साधन की व्याप्ति का ग्राहक वहां वह कैसे हो
 सकता है । महानस आदि में साध्य साधन की व्याप्ति पहिले प्रत्यक्ष से
 ग्रहण कर लेने पर ही तो अनुमाता पर्वत आदि में बह्नि का अनुमान
 करता है । आगम प्रमाण से भी “ जीव है ” यह बात नहीं कही जाति
 है, कारण आगमों में एकमनता नहीं है । परस्पर विरुद्धार्थ का-एक
 दूसरे आगम से विरोधी तत्त्व का-ये प्रणयन करते हैं, इसलिये इनमें
 प्रमाणता ही नहीं है । उपमान प्रमाण की यहां प्रवृत्ति इसलिये नहीं हो
 सकती है कि जय ‘ जीव ’ पदार्थ ही असत् है तब वह उपमेय कैसे हो
 सकता है । इस तरह जीव नामक पदार्थ की असिद्धि होने पर (न जाइ
 इह परे वा लोए) कोई भी इस मनुष्यलोक में अथवा दूसरे देवादिलोक
 में नहीं जाना है, और (न य किंचि वि फुसइ पुण्यपावं) न वह पुण्य
 एवं पापरूप कर्म को छूता है, अर्थात्-जब जीव नाम का कोई पदार्थ ही

સાધનની વ્યાપ્તિનું અને પક્ષધર્મતા આદિનું ગ્રહણ થવું આવશ્યક હોય છે,
 તેના વગર અનુમાન થતું નથી. જો તે વિષયમાં પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ જ પ્રવૃત્ત હોતું
 નથી તો સાધ્ય સાધનની વ્યાપ્તિના ગ્રાહક ત્યાં તે કેવી રીતે થઈ શકે! મહા-
 નસ આદિમાં સાધ્ય સાધનની વ્યાપ્તિ પહેલાં પ્રત્યક્ષ રીતે ગ્રહણ કરી લીધા
 પછી તો અનુમાન કરનાર પર્વત આદિમાં અગ્નિનું અનુમાન કરે છે. આગ-
 માનું પ્રમાણ આપીને પણ “ જીવ છે ” તે વાત કહી શકાય તેમ નથી, કારણ
 કે આગમાં એક મતતા નથી. પરસ્પરથી વિરુદ્ધ અર્થનું-એક બીજાથી વિરોધી
 તત્ત્વનું-તેઓ વર્ણન-પ્રતિપાદન કરે છે, તે કારણે તેમનામાં પ્રમાણભૂતતા નથી.
 ઉપમાન પ્રમાણની અહીં પ્રવૃત્તિ તે કારણે થઈ શકતી નથી કે જો “ જીવ ”
 પદાર્થ જ અસત્ હોય તો તે ઉપમેય કેવી રીતે થઈ શકે! આ રીતે જીવ
 નામના પદાર્થની અસિદ્ધિ થતાં “ ન જાઈ ઇહ પરે વા લોए ” કોઈ પણ આ
 મનુષ્ય લોકમાં અથવા બીજાં દેવાદિ લોકમાં જતું નથી, અને “ નય કિંચિ વિ
 ફુસइ પુણ્યપાવં ” તે પુણ્ય અને પાપ રૂપ કર્મોને સ્પર્શતો નથી, એટલે કે-

સ્પૃશતિ । જીવસ્યાઽસદ્ભાવાદેવ ન શુભાશુભકર્મબન્ધનમિતિ ભાવઃ । અત एव
 ‘સુકયદુઃકયાણં’ સુકૃત દુઃકૃતાનાં=પુણ્યપાપાનાં કત્રમપિ ‘નત્થિ’ નાસ્તિ
 જીવાસરવેન તત્કલસ્યાઽપ્યસન્નાત્ । તથા ‘સરીરં’ પંચમહાભૂત્યં’ પશ્ચમહા
 ભૌતિકં=પૃથિવ્યપ્તેજોવાય્વાકાશમયં, ‘માસંતિ’ ભાવન્તે । તત્ કીદૃશં ભાવન્તે
 હત્યાહ-‘દેવાગજોગજુત્તં’ દેવાકયોગયુક્તમ્, દેવાકઃ-સ્વભાવસ્તેન યોગઃ-પરસ્પરં
 સંયોગસ્તેન યુક્તમ્, પશ્ચભૂતાનાં પરસ્પરં સંયોગો ત્રિયોગશ્ચ સ્વભાવાદ્ ભવતિ, ન
 તત્ર કિંચિદન્યત્ કર્માદિ આત્મા વા કારણમસ્તીતિ ભાવઃ । ‘કેઈ’ કેઽપિ બુદ્ધ-
 મતાનુસારિણઃ ‘પંચસંધે’ પશ્ચસ્કન્ધાન્=રૂપવેદનાવિજ્ઞાનસંજ્ઞાપ્રસ્કારરૂપાન્
 મણન્તિ=કથયન્તિ, તત્ર-રૂપસ્કન્ધઃ,-પૃથિવ્યાદયો રૂપાદયશ્ચ ૧, વેદનાસ્કન્ધઃ-

નहीं है तो मर कर वही पुनः अपने पुण्य पापकर्मों के अनुसार मनुष्य-
 लोक में अथवा देवादिलोक में जन्मता है, यह कथन असत्य है । तात्पर्य
 इसका यही है जीव का अस्तित्व न होने से उसके (नत्थिफलं
 सुकयदुक्कयाणं) शुभ और अशुभ कर्मों का बंध नहीं होता है । जब
 शुभ अशुभ कर्मों का बंध ही नहीं होता है तब उनके फल का भी
 अभाव ही है । तथा (पंचमहाभूतयं सरीरं भासंति) यह जो शरीर है
 वह पृथिवी, अप्, तेज वायु और आकाश, इन पांचभूत स्वरूप है ।
 (देवाग जोगजुत्तं) पांच भूतों का यह पारस्परिक संयोग अथवा वियोग
 स्वभाव से ही होता रहता है । इसमें न तो कोई कर्म ही कारण है और
 न आत्मा ही । (केई पंच य खंधे मणन्ति) कितनेक वादी बौद्ध-सिद्धा-
 न्तमतानुयायी-ऐसा कहते हैं कि रूप १, वेदना २, विज्ञान ३, संज्ञा ४,

જો એવ નામનો કોઈ પદાર્થ જ ન હોય તો તે મરીને પોતાના પુન્ય પાપ-
 કર્મો પ્રમાણે મનુષ્ય લોકમાં અથવા દેવાદિ લોકમાં જન્મે છે. તે કથન અસત્ય
 કરે છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જો એવનું અસ્તિત્વ ન હોય તો તેના
 “નત્થિ ફલં સુકયદુક્કયાણં” શુભ અને અશુભ કર્મોના બંધ બંધાતો નથી.
 જો શુભાશુભ કર્મોના બંધ જ બંધાતો ન હોય તો તેના ફળનો પણ અભાવ
 જ હોય. તથા “પંચમહાભૂતયં સરીરં ભાસંતિ” આ જે શરીર છે તે
 પૃથિવી, અપ્ (જળ), તેજ, વાયુ અને આકાશ, એ પાંચ ભૂત સ્વરૂપ છે.
 “દેવાગજોગજુત્તં” પાંચ ભૂતોનો આ પારસ્પરિક સંબંધ અથવા વિયોગ
 સ્વભાવથી જ ધ્યા કરે છે. તેમાં આત્મા કે કર્મ કારણરૂપ નથી.

“કેઈ પંચેય સંધે મણન્તિ” કેટલાક વાદમાં માનનારા-બૌદ્ધ સિદ્ધાન્ત
 મતાનુયાયી એવું કહે છે કે (૧) રૂપ, (૨) વેદના, (૩) વિજ્ઞાન, (૪) સંજ્ઞા

સુવર્ણિની ટીકા અંર સુ૦ ૪ નાસ્તિકવાદિમતનિરૂપણમ્

૧૮૩

સુખા ૧ દુઃખા ૨ અદુઃખસુખા ૩ ચેતિ ત્રિવિધવેદનાસ્વભાવઃ ૨, વિજ્ઞાનસ્કન્ધઃ-
રૂપાદિવિજ્ઞાનલક્ષણઃ ૩, સંજ્ઞાસ્કન્ધઃ-સંજ્ઞાનિમિત્તોઽવગ્રહણાત્મકમત્યયઃ ૪,
સંસ્કારસ્કન્ધઃ-પુણ્યાપુણ્યાદિધર્મસમુદાયથેતિ પૃથ્વ સ્કન્ધાઃ, એતે પૃથૈવ સ્કન્ધાઃ
સન્તિ, નાન્યઃ કશ્ચિત્તદ્વયતિરિક્ત આત્માઽઽસ્ત્યઃ પદાર્થોઽસ્તિ, ઇતિ તેષાં મતમ્ ।
નાન્ય આત્માભિધાનઇતિ બૌદ્ધાઃ, ‘મણંચ’ મનશ્ચ મન એવ જીવો યેષાં તે તથા
મનોજીવિકાઃ= મન આત્મવાદિનો વદન્તિ-ઇતિ મન આત્મવાદિનો મતમ્ । તથા
‘વાઝજીવોત્તિ’ વાયુર્જીવ ઇતિ ‘અહંસુ’ આહુઃ=કેચિત્, ઉચ્છ્વાસાદિરુપ એવ
જીવ ઇતિ વદન્તિ । પ્રાણવાયુના સર્વક્રિયાસુ પ્રવર્તનં જાયતે, અતએવ પ્રાણવાયુરેવ
જીવ ઇત્યર્થઃ । અથ તજ્જીવતચ્છરીરવાદિમતવાદ, તથાદિ-‘સરીરં સાદ્યં સનિધળં’

ઔર સંસ્કાર ૫, યે પાંચ સ્કંધ હૈં । પૃથિવ્યાદિક એવં રૂપાદિક યે રૂપ-
સ્કંધ હૈં ૧ । સુખ ૧, દુઃખ, ૨ ઔર સુખ દુઃખ ૩ હન ત્રિવિધરૂપવેદના-
સ્કંધ, હૈં ૨ । રૂપાદિકોં કા વિજ્ઞાન સ્વરૂપ, વિજ્ઞાનસ્કંધ હૈ ૩ । યહ
અમુક હૈ-યહ દેવદત્ત હૈ, ઇત્યાદિ-રૂપ સે જો સંજ્ઞાઓં કા ગ્રહણ હોતા
હૈ વહ સંજ્ઞાસ્કંધ હૈ ૪ । પુણ્ય અપુણ્ય આદિ રૂપ જોસમુદાય
હૈ વહ સંસ્કાર સ્કંધ હૈ । યે પાંચ સ્કંધ હી હૈં, હનસે ભિન્ન
આત્મા નામ કા કોઈ સ્વતંત્ર પદાર્થ નહીં હૈ હસ પ્રકાર કા
મંતવ્ય બૌદ્ધોં કા હૈ । (મણં ચ મણજીવિયા વયંતિ) જો મન કો હી
આત્મા માનતે હૈં વે મનોજીવિક હૈં તથા (વાઝ જીવોત્તિ એવમાહંસુ)
કોઈ ૨ ઉચ્છ્વાસ આદિ રૂપ વાયુ હી જીવ હૈં એસા માનતે હૈં, હનકા
કહના હૈં કિ પ્રાણ નામકવાયુ સે હી સમસ્ત ક્રિયાઓં મેં પ્રવર્તન હોતા હૈં
હસકે વિના નહીં, અતઃ પ્રાણવાયુ હી જીવ હૈં (સરીરં સાદ્યં સનિધળં)

અને (૫) સંસ્કાર એ પાંચ સ્કંધ છે. (૧) પૃથિવ્યાદિક અને રૂપાદિક
તે રૂપસ્કંધ છે, (૨) સુખ, દુઃખ અને સુખદુઃખ એ ત્રણ પ્રકારનો વેદના
સ્કંધ છે. (૩) ઉપાદિકોના વિજ્ઞાન સ્વરૂપ વિજ્ઞાનસ્કંધ છે. (૪) આ અમુક
છે-આ દેવદત્ત છે, ઇત્યાદિ રીતે જે સંજ્ઞાઓનું મૂલ્ય થાય છે તે સંજ્ઞાસ્કંધ
છે. (૫) પુણ્ય અપુણ્ય આદિ રૂપ જે ધર્મસમુદાય છે તે સંસ્કારસ્કંધ છે. એ
પાંચ સ્કંધ જ છે, તે ભિન્ન આત્મા નામનો કોઈ સ્વતંત્ર પદાર્થ જ નથી,
એ પ્રકારનું ખીલોનું મંતવ્ય છે. “મણં ચ મણજીવિયા વયંતિ” જે મનને જ
આત્મા માને છે તે મનોજીવિક કહેવાય છે. તથા “વાઝ જીવોત્તિ એવમાહંસુ”
કોઈ કોઈ ઉચ્છ્વાસ આદિ રૂપ વાયુ જ એવ છે તેમ માને છે, તેમનું કહેવું
એવું છે કે પ્રાણવાયુથી જ સમસ્ત ક્રિયાઓ આલ્યા કરે છે, તેના વિના ચલતી
નથી, તેથી પ્રાણવાયુ જ એવે છે. “સરીરં સાદ્યં સનિધળં” શરીરને જ જે

શરીરં સાદિકં સનિધનમ્, શરીરમ્ આદિસહિતમ્ ઉત્પત્તિમત્વાત્, સનિધનં-સવિ-
નાશમ્ અન્તયત્વાત્, 'ઇહ ભવે' અસ્મિન્ ભવે પ્રત્યક્ષં જન્મ, તસ્માત્ 'એગે ભવે'
એક એવ ભવઃ=જન્મ નાન્યો લોકઃ, 'તસ્સ વિષ્ણાસમ્મિ' તસ્ય વિષ્ણાશે સતિ=
તસ્ય શરીરસ્ય વિનાશે સતિ 'સત્ત્વનાસોત્તિ' સર્વનાશ્વિતિ નાજ્માડ્વશિષ્યતે નાડ
પિ ચ શુભાશુભરૂપંકર્મ । એવં=ઉત્તરીત્યા 'જંપંતિ' જલ્પન્તિ=કથયન્તિ તજ્જી-
વતચ્છરીરવાદિનઃ । નાસ્તિકાદારમ્ય તજ્જીવતચ્છરીરવાદિપર્યન્તાઃ સર્વે 'મુસા-
વાઈ' મૃષાવાદિનઃ સન્તિ ॥ સૂ-૪ ॥

પુનરપ્યાહ—'તમ્હા' इत्यादि ।

મૂઢમ્—તમ્હા દાળવયપોસહાણં તવસંજમવંભવેરકલ્લા-
ળમાઈયાણં નરિથિફલં, નવિ ય પાળવહે અલિયવયળં ન ચેવ
ચોરક્રકરણં પરદારસેવણં વા સપરિગ્ગહપાવકમ્મકરણં પિ

શરીર કો હી જો જીવ માનને વાલે હૈં उनका ऐसा कहना है कि यह
उत्पत्तिमान् होने से सादि है और अन्तवाश होने से विनाशसहित है ।
(इह भवे एगे भवे) इस भव में जो इसका जन्म है वही इसका भव
है, इसके अतिरिक्त और कोई दूसरा इसका भव-जन्म नहीं है, क्यों
कि (तस्स विष्ण्णासम्मि सत्त्वणासोत्ति) जब इस शरीर का विनाश
हो जाता है तब इस जीव का सर्वनाश हो जाता है फिर इसका अस्तित्व
ही नहीं रहता है, शुभ और अशुभ कर्म कुछ भी नहीं रहते हैं,
(एवं) इस तरह नास्तिक वादी से लेकर शरीर को ही जीव मानने
वाले ये सब ही (मुसावाई) मृषावादी (जंपंति) कहते हैं । अर्थात् ये
सब मृषावादी हैं ॥ सू-४॥

જીવ માનનારા છે તેમનું એવું કહેવું છે કે તે ઉત્પત્તિવાળું હોવાથી સાદિ
(આદિ સહિતનું) છે અને અન્તવાળું હોવાથી વિનાશ યુક્ત (સાન્ત) છે.
“ઇહ ભવે એગે ભવે” આ જન્મમાં જે તેનો જન્મ છે, તે જ તેનો
ભવ છે, તે ઉપરાંત બીજો કોઈ પણ તેનો ભવ—જન્મ નથી, કારણ કે
“તસ્સ વિષ્ણ્ણાસમ્મિ સત્ત્વનાસોત્તિ” બ્યારે આ શરીરનો નાશ થાય છે ત્યારે
આ જીવનો પણ સર્વનાશ થઈ બાક્ય છે—પછી તેનું અસ્તિત્વ જ રહેતું નથી,
શુભ અને અશુભ કર્મ જેવું કંઈ પણ રહેતું નથી “એવં” આ રીતે નાસ્તિક
વાદીથી લઈને શરીરને જ જીવમાનનાર તે બધાને “મુસાવાઈ” મૃષાવાદી
“જંપંતિ” કહે છે. એટલે કે તે બધા અસત્ય વદનાર છે. ॥ સૂ-૪॥

सुबर्शिनीटीका अ. २ सू. ५ नास्तिकवादिमतद्विनिरूपणम्

१८५

नत्थि किं च न नेङ्गयतिरिक्खमणुयजोणी, न देवलोगो वा
अत्थि सिद्धिगमणं, अम्मापियरो नत्थि, नवि अत्थि पुरिसकारो,
पच्चक्खाणमवि नत्थि, नवि अत्थि कालमच्चू य, अरिहंता
चक्रवट्ठी बलदेवा वासुदेवा नत्थि, नेवत्थि केइरिसओ, धम्माध-
म्मफलं वि न अत्थि किं चि बहुयं वा थोवं वा तम्हा एवं
जाणिऊणं जहा सुबहु इंदियाणुकूलेसु सव्वविसएसु वट्ठेह
नत्थिकाइ किरिया वा एवं भणंति नत्थिकवाइणो
वासलोगवाई ॥ सू० ॥५॥

टीका—यस्मात् आत्माऽपि नास्ति, शुभाशुभकर्माणि तत्फलान्यपि च न
सन्ति 'तम्हा' तस्मात् 'दाणवयपोसहाणं' दानव्रतपोषधानां=तत्र दानम्=
अभयदानसुपात्रदानादिकम्, 'वय' व्रतानि = स्थूलप्राणातिपातविरमणादीनि
पोषधः=पोष=धनस्य पुष्टिं धत्ते=करोतीति पोषधः=अष्टमीचतुर्दशीपूर्णिमाअमावा-
स्यापर्वदिनाऽनुष्ठेय आहारादिपरित्याग पूर्वकोव्रतविशेषः, उक्तं च—

आहार तनुसत्काराऽब्रह्मसावद्यकर्मणाम् ।

त्यागः पर्वचतुष्टयां तद्विदुः पौषधव्रतम् ॥

फिर भी—'तम्हा दाणवयपोसहाणं' इत्यादि ।

टीकार्थ—आत्मा शुभाशुभकर्म और इनके फल ये सब कुछ भी नहीं
हैं (तम्हा) इसलिये (दाणवयपोसहाणं) दान-अभयदान, सुपात्रदान
आदि, व्रत-स्थूलप्राणातिपात विरमण आदि, (पोसह) पोषध-अष्टमी
चतुर्दशी, पूर्णिमा एवं अमावस्या इन पर्व दिनों में आहार आदि को
परित्याग पूर्वक अनुष्ठेयव्रत विशेष, कहा भी है—

पणी—“तम्हा दाणवयपोसहाणं” इत्यादि.

टीकार्थ—आत्मा शुभाशुभ कर्म अने तेभनां इण ते णधुय नथी “तम्हा”
तेथी “दाणवयपोसहाणं” दान-अभयदान, सुपात्रदान आदि, व्रत-प्राणाति-
पात विरमण आदि “पोसह” पोषध-आठम, चौदश, पूनम, अमावस आदि
आहार आदिना परित्याग पूर्वक अनुष्ठेय व्रत अथ अनुष्ठेय कर्तव्य छे के—

“आहार, तनुसत्कारा-ऽब्रह्म-सावद्यकर्मणाम् ।

त्यागः पर्वचतुष्टयां, तद्विदुः पौषधव्रतम् ॥ १”

તેષાં નાસ્તિ ફલમિત્યગ્રિમેણ સંવ્રન્ધઃ, તથા ‘તવસંજમવંભચેરકલ્લાણ-
માદ્યાણં તપઃ સંયમબ્રહ્મચર્યકલ્યાણાદિકાનાં, તત્ર તપઃ=અનશનાદિલક્ષણં, સંયમઃ=
સાવધાનુષ્ઠાનવિરતિલક્ષણઃ સમ્પદશત્રિધઃ, બ્રહ્મચર્ય=કામસેવનપરિત્યાગઃ, તાન્યેવ
કલ્યાણકારિત્વાત્કલ્યાણં તદાદિર્યેષાં તે-તથા તેષાં ફલં=કર્મક્ષયસુગતિગમના-
દિકં, ‘નત્થિ’ નાસ્તિ, ‘નવિ’ નાપિ ‘પાણવહે’ પ્રાણવધઃ, ‘અલિયવયણં’
અલીકવચનં=પ્રાણવધે મૃષા ભાષણે ચ ન કિમપ્યશુભફલં ભવતીત્યર્થઃ, તથા
‘ચોરિક્કરણં’ ચોરિક્યકરણં=ચોરિક્યસ્ય કરણં=ચોર્યં=પરદ્રવ્યહરણમિત્યર્થઃ,
પરદારસેવનં=પરસ્ત્રીગમનં વા ન ચૈવ પાપજનકં ‘સપરિગહપાવકમ્મકરણંપિ’ સપ-

“ આહાર, તનુસંસ્કારા-ડબ્રહ્મ-સાવચકર્મણામ્ ।

ત્યાગઃ પર્વચતુષ્ટય્યાં, તદ્વિદુઃપૌષધવ્રતમ્ ॥૧॥ ”

इन पर्वचतुष्टय के दिनों में आहार, शरीर संस्कार, एवं अब्रह्म,
आदि सावचकर्मों का जो त्याग कर दिया जाता है उसका नाम
पौषधव्रत है ॥१॥

इनका तथा (तवसंजमवंभचैरकल्लाणमाद્યાणं) कल्याणकारी अन-
शन आदि बारह प्रकार के बहिरंग अंतरंग तपों का सावच अनुष्ठान से
विरति कारण करने रूप सत्रह प्रकार के संयम का तथा कामसेवन
करने के परित्याग रूप ब्रह्मचर्य का (नत्थिफलं) कर्मक्षय एवं सुगति-
गमनादिरूप कुछ भी (नत्थिफलं) फल नहीं होता है। इसी तरह
(न वि य पाणवहे अलियवयणं) प्राणवध करने पर तथा अलीकभा-
षण करने पर कुछ भी अशुभ फल नहीं प्राप्त होता है। (न चैव चोरि-
क्ककरणं परदारसेवणं वा) चोरी करना, परस्त्री सेवन करना इनसे
भी जीवों को कोई पाप नहीं लगता है क्योंकि पापरूप कोई वस्तु ही

એ ચાર પર્વદિનોમાં આહાર, શરીર સંસ્કાર અને અગ્રધ્મચર્ય આદિ
સાવધ ક્રમેની ત્ય.ગ કરાય છે. તે વ્રતનું નાણુ પૌષધવ્રત છે ॥૧॥

તેનું તથા “ તવસંજમવંભચેરકલ્લાણમાદ્યાણં ” કલ્યાણકારી અનશન
આદિ આર પ્રકારનાં બ્રહ્મ અને આંતરિક તપનું, સાવધ અનુષ્ઠાનથી વિરતિ
ધારણ કરવા રૂપ સત્તર પ્રકારના સંયમનું, તથા કામસેવન કરવાના પરિત્યાગ-
રૂપ બ્રહ્મચર્યનું “ નત્થિ ફલં ” કર્મક્ષય અને સુગતિ ગમનાદિરૂપ કોઈ પણ
“ નત્થિફલ ” ફળ હોતું નથી. એજ પ્રમાણે “ ન વિ ય પાણવહે અલિયવયણં ”
પ્રાણવધ કરતા, તથા અસત્ય બોલતા પણ કોઈ અશુદ્ધ ફળ પ્રાપ્ત થતું નથી.
“ ન ચૈવ ચોરિક્કરણં પરદારસેવણં વા ” ચોરી કરવાથી, તથા પરસ્ત્રી સેવન
કરવાથી પણ છવોને કોઈ પાપ લાગતું નથી, કારણ કે પાપરૂપ કોઈ વસ્તુ જ

સુર્વાશીની ટીકા અં ૨ સુ ૫ નાસ્તિકવાદિમતનિરૂપણમ્

૧૮૭

રિગ્રહપાપકર્મકરણમપિ=પરિગ્રહેણ=મૂર્છયા સહિતં ચત્સપરિગ્રહં તદેવ પાપકર્મ-
કરણં=પાતકકર્માનુષ્ઠાનં તદપિ 'નસ્થિ' નાસ્તિ । કિં ચ 'નેરઙ્ગયતિરિક્સમણુય
જોળી' નારકતિર્યઙ્મનુપ્યયોનિરપિ 'નસ્થિ' નાસ્તિ, અયં ભાવઃ-નારકાણાં
તિરથાં મનુષ્યાણાં ચ યોનિ રૂપચિરૂપા ન કર્મજનિતા, કિન્તુ સ્વભાવાદેવ,
અતો જગતો વિચિત્રતા સ્વાભાવિકી ન કર્મજનિતા । ઉક્તં ચ--

“ કણ્ટકસ્ય ચ તીક્ષ્ણત્વં, મયૂરસ્ય વિચિત્રતા ।

વર્ણાશ્ચ તામ્રચૂડાનાં સ્વભાવેન ભવન્તિ હિ ॥ ૧ ॥ ”

મૃણાલદિતાચૈવામેયં વિજ્ઞેયા-એતન્મતે સ્વભાવો જીવશ્ચ એક એવ, તથા પ્રાણા-
તિપાતાદિકં તજ્જનિતકર્માપિ ચ સ્વભાવ એવ । એવશ્ચ પ્રાણાતિપાતાદેઃ સ્વભાવ
નહીં હૈ । તથા (સપરિગ્રહપાવકર્મકરણંપિ નસ્થિ) પરિગ્રહ રૂપ પાપ-
કર્મ ભી કુદ્ધ નહીં હૈ । અર્થાત્ પાપકર્મ કા અનુષ્ઠાન દોષાવહ નહીં હૈ ।
(કિં ચ નેરઙ્ગયતિરિક્સમણુયજોળી નસ્થિ) નરકયોનિ, તિર્યચ્ચયોનિ,
એવં મનુષ્યયોનિ યે કર્મકૃત નહીં હૈ કિન્તુ સ્વાભાવિકી હૈ । હસલિયે
જગત કી જો યહ વિચિત્રતા દષ્ટિગત હો રહી હૈ વહ સ્વાભાવિક હિ
હૈ કર્મજનિત નહીં હૈ । કહા ભી હૈ—

“ કણ્ટકસ્ય ચ તીક્ષ્ણત્વં, મયૂરસ્ય વિચિત્રતા ।

વર્ણાશ્ચ તામ્રચૂડાનાં, સ્વભાવેન ભવન્તિ હિ ॥૧॥”

કંટક કી તીક્ષ્ણતા, મયૂર કી વિચિત્રતા ઓર મુર્ગે કી વિચિત્ર
વર્ણતા, યે સય સ્વભાવ સે હી હૈ ॥૧॥

હસ પ્રકાર યહ સ્વભાવવાદી કા કથન મૃણાલુપ હસલિયે હૈ કિં હનકે
મતાનુસાર સ્વભાવ ઓર જીવ યે કોઈ ભિન્ન ૨ પદાર્થ નહીં હૈ કિન્તુ

નથી. તથા “ સપરિગ્રહપાવકર્મકરણંપિ નસ્થિ ” પરિગ્રહરૂપ પાપકર્મ 'એવુ'
પણુ કુંઠ નથી, એટલે કે પાપકર્મનુ અનુષ્ઠાન દોષપાત્ર નથી. “ કિં ચ નેરઙ્ગ-
યતિરિક્સમણુયજોળી નસ્થિ ” નરકયોનિ, તિર્યચ્ચયોનિ અને મનુષ્યયોનિ, એ
કર્મકૃત નથી પણુ સ્વાભાવિક છે. તેથી જગતમાં આ એ વિચિત્રતા નજરે પડે
છે તે સ્વાભાવિક છે કર્મજનિત નથી. કહું પણુ છે—

“ કણ્ટકસ્ય ચ તીક્ષ્ણત્વં, મયૂરસ્ય વિચિત્રતા ।

વર્ણાશ્ચ તામ્રચૂડાનાં, સ્વભાવેન ભવન્તિ હિ ॥ ૧ ॥ ”

કાંટાની તીક્ષ્ણતા, મોરની વિચિત્રતા, અને ફૂડાની વિચિત્રવર્ણતા, તે
સમણુ સ્વભાવથી જ અનેછે. ॥૧॥

આ પ્રકારનું તે સ્વભાવવાદીઓનું કથન મૃણાલરૂપ તે કારણે છે કે તેમના
મત પ્રમાણે સ્વભાવ અને જીવ એ કોઈ ભિન્ન ભિન્ન પદાર્થ નથી, પણુ એક-

રૂપત્વે જીવરૂપત્વમપિ સ્પષ્ટમેવ સ્વાત્, સ્વભાવસ્ત્વેન સર્વેષામેકત્વાત્ તથા ચ
 એકસ્મિન્ કાર્યકારણભાવસ્ય નિરૂપણાઽસંભવાન્નરકાદિવિચિત્રતા નિષ્કારણા
 સ્વાત્ ન ચ કિમપિ નિષ્કારણં ભવતિ, તથા સતિ ઘટપટાદેરપિ નિષ્કારણતા
 સ્યાદિત્યેતેષાં મૃષાવાદિત્વં મુચ્યત્કમેવ । ‘ ન દેવલોગો વા અત્યિ ’ ન દેવલોકો
 વાઽસ્તિ । ‘ નય અત્યિ સિદ્ધિગમણં ’ ન વાસ્તિ સિદ્ધિગમનમ્ । ‘ અમ્માપિયસો
 નત્યિ ’ અમ્માપિતસૌ ન સ્તાઃ, ઉત્પત્તિમાત્રકારણત્વેન માતાપિતૃત્વ કલ્પના ન

એક રૂપ હી હૈં, તથા પ્રાણાતિપાત આદિ સે જનિત કર્મ યે બી સ્વ-
 ભાવરૂપ હૈં । હસ પ્રકાર સ્વ મેં એક સ્વ-ભાવરૂપતા માનને પર ઇન પ્રાણા-
 તિપાત આદિકોં મેં જીવરૂપતા કો પ્રશન્તિ આ જાતી હૈ, ક્યોં કિ
 સ્વ મેં બી એક સ્વ-ભાવરૂપતા કા સદ્ભાવ પાયા જાતા હૈ । હસ તરહ
 હોને પર કિસી એક મેં બી કાર્યકારણ ભાવ કા નિરૂપણ અસંભવ થન
 જાતા હૈ, અતઃ નરકાદિરૂપ વિચિત્રતા નિષ્કારણક ઠહરતી હૈ, પરન્તુ
 વિચાર કરને પર યહ વિચિત્રતા નિષ્કારણક તો હૈ નહોં । યદિ હસે
 નિષ્કારણક માના જાવે તો ઘટ પટ આદિ રૂપ જો યહ પદાર્થોં મેં વિચિ-
 ત્રતા હૈ ઉસે બી અથવા ઘટ પટ આદિ જો પદાર્થ હૈં ઉન્હેં બી નિષ્કાર-
 ણક હી માનના પડેગા પરન્તુ યે સ્વ નિષ્કારણક નહોં હૈં, -સકારણક હૈં,
 હસ તરહ સકારણક હોને પર બી હન્હેં નિષ્કારણક કહના, અસત્યભા-
 વણ હી હૈ, ઓર યહ હનકા હસ રૂપ સે સ્પષ્ટ હી હૈ । હસી તરહ (ન
 દેવલોગો વા અત્યિ) દેવલોક નહોં હૈ, (ન ય અત્યિ સિદ્ધિગમણં) સિદ્ધિ-

રૂપ જ છે, તથા પ્રાણાતિપાત આદિ અને પ્રાણાતિપાત આદિ વડે ઉપાર્જિત
 કર્મ એ બધુ સ્વભાવરૂપ છે. આ રીતે બધામાં સ્વભાવરૂપતા માની લેવામાં
 આવે તો તે પ્રાણાતિપાત આદિમાં શ્રવણરૂપતાની પ્રસન્નિ આવી બધ છે, કારણ
 કે સૌમાં એક સ્વભાવરૂપતાનો સદ્ભાવ જણાય છે. આમ હોય તો કોઈ એકમાં
 પણ કાર્યકારણ ભાવનું નિરૂપણ અસંભવિત બની બધ છે, એ રીતે તો નરકા
 દિરૂપ વિચિત્રતા નકામી કહે છે, પણ વિચાર કરવામાં આવે તો તે વિચિત્રતા
 નકામી તો નથી. એ તેને નકામી માનવામાં આવે તો પદાર્થોમાં ઘટ-ધડો,
 પટ આદિરૂપ જે વિચિત્રતા છે તેને પણ અથવા ઘટ પટ આદિ જે પદાર્થો છે
 તેમને પણ નકામી માનવા પડશે, પણ તે બધા નિષ્કારણ-નકામી-તથી, સકાર-
 ણક છે. આ રીતે સકારણક હોવા છતાં પણ તેને નિષ્કારણક કહેવી તે અસ-
 ત્યભાવણ જ છે. અને તે વાત ઉપર સમજાવ્યા પ્રમાણે સ્પષ્ટ જ છે. એ જ
 પ્રમાણે “ ન દેવલોગો વા અત્યિ ” દેવલોક નથી, “ ન ય અત્યિ સિદ્ધિગમણં ”

યુક્તા । યતો હિ સ્વભાવત એવ કુતોઽપિ કિંચિદુત્પદ્યતે, ન તત્ર કારણવિશેષ નિયમ માહાત્મ્યમન્યથા કથં ચેતનાન્મનુષ્યાદેતનં યૂકામત્કુળાદિકં ચેતનાદચેતનં મૂત્ર-પુરિષાદિકમ્, અચેતનાત્ કાષ્ઠાચેતનં ઘુળકોટાદિકમ્, અચેતનાત્કાષ્ઠાદચેતનં ચૂર્ણા-દિકં ચ જાયતે । નહિ અચેતનસ્ય ચેતનકારણતા ચેતનસ્ય ચાચેતન કારણતા યુક્તા । તસ્માજ્જન્યજનક ભાવમાત્રમેવોત્પદ્યમાના નામર્થાનામસ્તિ નાન્યો માતાપિતૃપુત્રાદિ વિશેષ इति । મૃષાવાદિતા તુ જન્યજનકભાવસ્ય સર્વેષુ તુલ્યત્વેઽપિ માતાપિત્રોરત્ય-

સ્થાન મેં ગમન કરના નહીં હૈ, (અમ્મા પિયરો નત્થિ) માતા પિતા બી નહીં હૈ-ઉત્પત્તિ માત્ર કારણતા કો લેકર માતૃત્વ પિતૃત્વ કી કલ્પના યુક્ત નહીં હૈ ક્યોં કિ સ્વભાવ સે હી યાહે જિસસે યાહે જો ઉત્પન્ન હો જાતા હસમેં કારણવિશેષ કે નિયમ કી કોઈ મહત્તા નહીં હૈ । યદિ એસી યાન માની જાવે નો ફિર જો ચેતન મનુષ્યાદિ સે ચેતન યૂકા મત્કુળ આદિ ઉત્પન્ન હોતે દેખે જાતે હૈ ચેતન સે અચેતન મૂત્ર પુત્ર પુરિષ આદિ ઉત્પન્ન હોતે દેખે જાતે હૈ, અચેતન ઘુળ કોટ આદિ ઉત્પન્ન હોતે દેખે જાતે હૈ, અચેતન કાષ્ઠ સે અચેતન ચૂર્ણ આદિ હોતે દેખે જાતે હૈ સો યે સબ કેસે ઉત્પન્ન હો સકેંગે, ક્યોં કિ અચેતન ચેતન કો ચેતન કે પ્રતિકાર ણતા નહીં હોતી હૈ ઓર ચેતન કો અચેતન કે પ્રતિકાણતા નહીં હોતી હૈ, હસલિયે ઉત્પન્નમાન પદાર્થોં મેં કેવલ જન્ય જનક સંબંધ માત્ર હી સાપેક્ષ હોતા હૈ-માતૃત્વ પિતૃત્વ આદિ સંબંધ વિશેષ નહીં । હસ પ્રકાર કે કથન મેં બી મૃષાવાદિતા હસ પ્રકાર સે આની હૈ યદાપિ જન્ય જનક

સિદ્ધિસ્થાનમાં ગમન કરવાનું નથી, “ અમ્માપિયરો નત્થિ ” માતા પિતા પણ નથી, -ઉત્પત્તિમાત્ર કારણતાને લઈને માતૃત્વ પિતૃત્વની કલ્પના યોગ્ય નથી કારણ કે સ્વભાવથી જ બે છંદો છે તે ઉત્પન્ન થઈ બંધ છે-તેમાં કોઈ કારણ વિશેષના નિયમનું મહત્ત્વ નથી. બે એવી વાત માની લેવામાં આવે તો પછી ચેતન મનુષ્ય આદિથી ચેતન જૂં માકડ આદિ ઉત્પન્ન થતા બેવામાં આવે છે, ચેતનથી અચેતન મૂત્ર, મળ આદિ ઉત્પન્ન થતાં બેવામાં આવે છે, અચેતન કાષ્ઠમાંથી ચેતન કીડા આદિ ઉત્પન્ન થતાં બેવામાં આવે છે, અચેતન કાષ્ઠમાંથી અચેતન લાકડાનો વહેર આદિ થતાં બેવામાં આવે છે. તે બધું કેવી રીતે ઉત્પન્ન થાય ? કારણ કે અચેતનને ચેતનના પ્રત્યે કારણતા હોતી નથી અને ચેતનને અચેતનના પ્રત્યે કારણતા હોતી નથી, તેથી ઉત્પન્ન થતા પદાર્થોમાં કેવળ જન્ય જનક સંબંધ જ સાપેક્ષ થાય છે-માતૃત્વ પિતૃત્વ આદિ વિશિષ્ટ સંબંધ નહીં. તે પ્રકારના કથનમાં પણ મૃષાવાદિતા એ રીતે આવે છે. બે કે જન્ય

ન્તહિતસાધનત્વેન વિશેષત્વાત્ । સ્વભાવવાદં નિરૂપ્ય નિયતિવાદમાહ—નાપિ ‘પુરિસકારો’ પુરુષકારઃ ઉદ્યોગો નાસ્તિ, ભાગ્યાધીનસકલાર્થસિદ્ધેઃ, ઉદ્યોગસ્ય સુખાદિસાધનત્વે સતિ કોઽપિ જગતીતલે દુઃખી સ્થાત્, દશ્યન્તે હિ ઉદ્યોગિનો દુઃખિનો વહવ્યેતિ ન પુરુષકારોઽર્થ સાધનમિતિ ભાવઃ ।

અસ્ય મૃષાત્વં તુ સિદ્ધમેવ લોકે અગ્રે સમુપસ્થિતસ્યાપિ ભોજ્યસ્ય નહિ હસ્તો-દ્યોગમન્તરા ભોજનં સમ્પદ્યતે અતएव કીટૅષ્વપિ ભોજ્યાનયનાદૌ પ્રવૃત્તિર્દશ્યતે ઇત્યાકીટપ્રસિદ્ધસ્ય પુરુષકારસ્યાપલાપેન પ્રમાણાતીત નિયતિમતસ્વીકારાત્ । ‘પચ્ચ-ભાવ સમસ્ત પદાર્થોં મેં તુલ્યરૂપ મેં, હૈ ફિર ભી માતૃત્વ પિતૃત્વ સંબંધ માતા પિતા મેં અત્થન્ત હિત કે સાધકકર્તા હોને સે એક વિશેષ સંબંધ હૈ ।

અવ સૂત્રકાર સ્વભાવવાદકા નિરૂપણ કર નિયતિવાદ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—(ન વિ અસ્થિ પુરિસકારો) સકલ કાર્યોં કી સિદ્ધિએક ભાગ્ય કે હી આધીન હોતી હૈં ઇસલિયે ઉદ્યોગ નામકી કોઈ વસ્તુ નહીં હૈ । યદિ ઉદ્યોગ કો સુખાદિ કાર્ય સાધક માના જાવે તો દુનિયા મેં કોઈ વ્યક્તિ દુઃખી નહીં હોના ચાહિયે પરન્તુ એસા નહીં હૈ—અનેક ઉદ્યોગી દુઃખી દેખે જાતે હૈં, ઇસલિયે પુરુષાર્થ—અર્થ સાધક નહીં હોતા હૈં । ભાગ્ય હી અર્થ સાધક હૈ એસા નિયતિવાદ ભી મૃષાવાદરૂપ ઇસલિયે હૈ કિ હમ લોક મેં યહ પ્રત્યક્ષ મેં દેખતે હૈં કિ આગે રહ્યા હુઆ ભી ભોજન જથતક હસ્તોદ્યોગરૂપ પુરુષાર્થ સે સંબંધિત નહીં કિયા જાતા હૈ નયતક વહ સુંહ મેં નહીં આતા હૈ । ઇસલિયે કીટ આદિ મેં ભી અપને ભોજ્ય-પદાર્થ કે પદાર્થ કો લાને રૂપ પુરુષાર્થ કી પ્રવૃત્તિ દેખી જાતી હૈ । ઇસ

જનક લાવ જો કે સમસ્ત પદાર્થોંમાં તુલ્યરૂપે છે, છતાં પણ માતૃત્વ પિતૃત્વ સંબંધ માતા પિતામાં અત્યંત હિતનો સાધક—કર્તા હોવાથી એક વિશિષ્ટ સંબંધ છે. સ્વભાવવાદનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર નિયતિવાદનું નિરૂપણ કરે છે—“ન વિ અસ્થિ પુરિસકારો” સઘળાં કર્મોની સફળતા એક માત્ર ભાગ્યને જ આધીન હોય છે, તેથી ઉદ્યોગ નામની કોઈ વસ્તુ નથી જો ઉદ્યોગને સુખાદિની પ્રાપ્તિનું સાધન માનવામાં આવે તો દુનિયામાં કોઈ એવું દુઃખી હોવો જોઈએ નહીં, પણ એવી પરિસ્થિતિ હોતી નથી—અનેક ઉદ્યોગી એવો પણ દુઃખી દેખાય છે, તેથી પુરુષાર્થ, અર્થસાધક નથી. ભાગ્ય જ અર્થસાધક છે એવો મત ધરાવતો નિયતિવાદ પણ એ કારણે મૃષાવાદ છે કે આપણી નજર સમક્ષ મૂકેલું ભોજન પણ જ્યાં સુધી હાથ વડે ઉદ્યોગ—પુરુષાર્થ ન કરવામાં આવે ત્યાં સુધી મોંમાં જતું નથી. તે કારણે જતુંઓમાં પણ પોતાના ભોજન માટેના પદાર્થો લાવવાના પુરુષાર્થની પ્રવૃત્તિ જોવા મળે છે. આ પ્રમાણે જતુંઓમાં

सुवर्णिनी टीका अ० २ सू० ५ नास्तिकवादितनिवृणम्

१२१

स्वाणरवि नत्थि ' प्रत्याख्यानं सावधकर्मनिवृत्तिलक्षणमपि नास्ति धर्मस्याभावे तत्साधनस्य प्रत्याख्यानस्याप्यभावः । अस्य मृषात्वं, सर्वज्ञ वचनविरोधात् । ' न वि अत्थि ' नापि च स्तः ' कालमच्चू ' कालमृत्यु=कालः=भूतभविष्यद् वर्तमान लक्षणः कालः मृत्युः=मरणं च । अथवा नापि चास्ति कालमृत्युः=काले=आयु-
ष्यकर्मदलिकक्षयाऽवसरे मृत्युर्मरणम् । 'अरिहंता' तथा अर्हन्तस्तीर्थंकराः 'चक्रवट्टी' चक्रवर्तिनः=वलदेवा वासुदेवा वा न सन्ति प्रमाणाभावात् । नापि सन्ति 'केइ' केऽपि-गौतमादयः, 'रिसओ' ऋषयः=शमदमतंयमाद्यनुष्ठानपरायणाः ऋषयो
तरह कीटतक में प्रसिद्ध पुरुषार्थ का अपलाप कर केवल प्रमाणातीत नियतिवाद स्वीकारार्ह कैसे हो सकता है । पुरुषार्थ का त्यागकर इसकी स्वीकृति से तो मृषावादिता ही इसमें आती है । (पञ्चस्त्राणमवि नत्थि) सावधकर्मों से निवृत्ति होनी इसका नाम प्रत्याख्यान है । यह कहना कि धर्म के अभाव में धर्म के साधनभूत प्रत्याख्यान का भी अभाव है । सो यह कथन भी मृषावादरूप इसलिये है कि इसमें सर्वज्ञ के वचन से विरोध आता है । तथा (न वि अत्थि कालमच्चू य) इस प्रकारकी मान्यता कि-भूत, भविष्यत् और वर्तमानकाल नहीं है, मरण भी नहीं है, अथवा आयुर्कर्म के दलिकों के क्षय होने के अवसर में भी मरण नहीं होता है, (अरिहंता चक्रवट्टी, बलदेवा वासुदेवा नत्थि) अर्हन्त-तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव ये सब प्रमाण के अभाव से कोई भी नहीं हुए हैं और (नेवत्थि के इरिसओ) न गौतम आदि ऋषि ही हुए हैं, क्यों कि-शम, दम, संयम आदि अनुष्ठानों में पराय-

पण प्रसिद्ध पुरुषार्थनुं आशेषण कथा पछी प्रमाणातीत नियतिवाद केवी रीते स्वीकार्यं जनी शके ? पुरुषार्थना त्याग करीने तेनी स्वीकृति करवाभां तो मृषा-
वादिता न रहैल छे. " पञ्चस्त्राणमवि नत्थि " सावध कर्मो-पापकर्मोधी निवृत्त
थयुं तेनुं नाम प्रत्याख्यात छे. जेम कडेयुं के धर्मना अभावे धर्मना साध-
नइय प्रत्याख्यातनो पणु अभाव छे. जेयुं कथन पणु ते कारखे मृषावादइय
छे के तेमां सर्वज्ञनां वचनोना विशेष थाय छे तथा " न वि अत्थि काल
मच्चू य " आ प्रकारनी मान्यता के भूत, भविष्य अने वर्तमानकाण नथी, मरण
पणु नथी, अथवा आयु कर्मना समूहोना क्षय थवानो अवसर आवे तो पणु
मरण थयुं नथी, " अरिहंता चक्रवट्टी, बलदेवा वासुदेवा नत्थि " प्रमाणना
अभावो, अर्हन्त-तीर्थंकर, चक्रवर्ती, गणदेव, वासुदेव वगैरे कोठ पणु थयां
नथी अने " नेवत्थि के इरिसओ " गौतम आदि ऋषि थयां नथी, कारण के-
शम, दम संयम आदि अनुष्ठानोमां परायणु डोय ते न व्यक्ताने ऋषि

વિવક્ષિતાઃ કિન્તુ શમદમાદેર્વસ્તુત્વાભાવાન્ન તસ્યાનુષ્ઠાનવતાં ઋપિત્વસિદ્ધિઃ । નેદં સત્યં, શાસ્ત્રાધ્યયનશિષ્યશિક્ષાપરમ્પરાઽનાદિપ્રવાહસ્યાર્દદાશભાવે ઉચ્છેદ પ્રસજ્ઞાત્ । ‘ધર્મમાધર્મફલં વિ’ ધર્માધર્મફલમપિ = દેવલોકનરકાદિપ્રાપ્તિલક્ષણં કિંચિત્ ‘વહુયં’ વહુકમ્=અધિકં ‘થોવં વા’ સ્તોકમત્યં નાસ્તિ, ધર્માધર્મયો-
રપ્રત્યક્ષત્વેન વસ્તુત્વાભાવાત્ ‘તમ્હા’ તસ્માત્ ન કિમપિ સુકૃતાદિકમિતિ एवं ‘જાણિક્ષણ’ જ્ઞાત્વા ‘જહા’ યથા=યેન કેનાપિ પ્રકારેણ સુવહુ=અત્યન્તમ્ ‘ઈન્દિ-
યાણુકૂલેસુ’ ઇન્દ્રિયાણુકૂલેષુ=શ્રોત્રાદીન્દ્રિયમિયેષુ ‘સન્વવિસણ્ણુ’ સર્વવિષયેષુ=
જન્યમૂળ વ્યક્તિ હી ઋપિ કહલાતે હૈં, કિન્તુ શમ, દમ આદિ હી જવ વસ્તુ
ભૂત-વાસ્તવિક-નહીં હૈં તો ફિર દનકે અનુષ્ઠાન કરને વલો મેં ઋપિત્વ
કી સિદ્ધિ કેસે હો સકની હૈ-મૃષાવાદરૂપ હી હૈ-સત્ય નહીં હૈ, કારણ-
શાસ્ત્રાધ્યયન, શિષ્યશિક્ષા આદિ કા જો યહ અનાદિકાલ સે પરમ્પરારૂપ
સે પ્રવાહ ચલા આ રહા હૈ વહ યદિ તીર્થંકર આદિ ન ઝૂળ હોતે તો
ઉચ્છેદ કો પ્રાપ્ત હો જાતા । ઇસી તરહ સે (ધર્મમાધર્મ ફલં વિ ન
અથિ કિંચિવહુયં વા થોવં વા) જો ઔર યહ કિ-“ધર્મકા ફલ સ્વર્ગાદિ
કી પ્રાપ્તિ ઔર અધર્મ કા ફલ નરક આદિ કી પ્રાપ્તિ હોના યહ ન થોઢે
રૂપ મેં હૈ ઔર ન વહુત રૂપ મેં હૈ, ક્યોં કિ ધર્મ ઔર અધર્મ યે અપ્રત્ય-
ક્ષભૂત હૈં અતઃ દનમેં વસ્તુતઃ-અર્થ ક્રિયા કારિત્વ કા અભાવ હૈ । (તમ્હા)
ઇસલિયે જવ પુણ્યપાપ આદિ કોઈ વસ્તુભૂત પદાર્થ હૈં હી તવ (एवं
જાણિક્ષણ) એસા સમમ્પ્રકર (જહા) જિસ કિસી બી તરહ સે (સુવહુ
ઈન્દિયાણુકૂલેસુ) ઇન્દ્રિયોં કો અત્યન્ત પ્રિય લગને વામેં (સન્વવિસણ્ણુ)

કહેવાય છે, પણ શમ, દમ આદિ જ ને વાસ્તવિક ન હોય તો તેનું અનુ-
ષ્ઠાન કરનારમાં ઋપિત્વની સિદ્ધિ કેવી રીતે સંભવી શકે છે-એ તો મૃષાવાદ
રૂપ જ છે-સત્ય નથી, કારણ કે શાસ્ત્રાધ્યયન, શિષ્યશિક્ષા આદિને જે પ્રવાહ
અનાદિકાળથી પરંપરા રૂપે આવેલો આવે છે તે ને તીર્થંકર આદિ ધર્મા ન
હોત તો ઉચ્છેદ-નાશ પામ્યો હોત. એ જ પ્રમાણે ‘ધર્મમાધર્મફલં’ વિ ન
અથિ કિંચિ-વહુયં વા થોવં વા ” બીજી આ પ્રકારની માન્યતા કે “ધર્મ”નું
ફળ સ્વર્ગાદિની પ્રાપ્તિ અને અધર્મનું ફળ નરકાદિથી પ્રાપ્તિ તે ઘોડા કે વધારે
પ્રમાણમાં અસ્તિત્વ ધરાવતું નથી, કારણ કે ધર્મ અને અધર્મ અપ્રત્યક્ષભૂત
છે તેથી તેમનામાં વસ્તુત્વ-અર્થ ક્રિયા કારિત્વનો અભાવ છે. “તમ્હા” તેથી
ને પુન્યપાપ આદિ કોઈ વસ્તુભૂત પદાર્થ છે જ નહીં “ एवं જાણિક્ષણ ”
એવું સમજીને “ જહા ” ને કોઈ પણ પ્રકારે “ સુવહુ ઇન્દિયાણુકૂલેસુ ” ઇન્દ્રિ-
યોને અત્યન્ત પ્રિય લાગે તેવા “ સન્વવિસણ્ણુ ” શબ્દાદિ સઘળા વિષયોમાં

सुदर्शितटीका अ० २ सू० ५-६ नास्तिकवादिमतनिरूपणम्

१९३

शब्दादिषु 'वदेह' वर्तध्वं शब्दादीन् सर्वविषयान् यथेच्छमुपभुङ्क्ष्वम्, 'नत्थि' नास्ति 'काइ' काचिदपि 'किरिया अकिरिया वा' क्रिया = तत्र - सत्क्रिया शास्त्रोक्तानुष्ठानरूपा । अक्रिया=असत्क्रिया सावधकर्मानुष्ठानरूपा, आस्तिक कल्पितेनाप्रमाणत्वात्, एवं 'नत्थिकवादिणो' नास्तिकवादिनः 'वामलोगवादी' वामलोकवादिनश्च भणन्ति=कथयन्ति ॥ सू० ५ ॥

पुनरपि तानेवाह—'इमं पि' इत्यादि—

मूलम्—इमं पि विइयं कुदंसणं असवभाववाइणो पणवेति मूढा संभूओ अंडकाओ लोगो सयंभुणा सयं च निम्मिओ एवं एयं अलिंयं पयं पंति ॥ सू० ६ ॥

टीका—इदमनुपदवक्ष्यमाणमपि 'विइयं' द्वितीयं 'कुदंसणं' कुदर्शनं = कुत्सितं दर्शनं=असत्यसिद्धान्तम् 'असवभाववाइणो' असद्भाववादिनः = असन्तो भावाः=येषां ते तथा ते च ते वादिनस्तथा मूढाः 'पणवेति' प्रज्ञापयन्ति यत् शब्दादि सव विषयो में (वदेह) इच्छानुसार प्रवृत्ति करते रहना चाहिये। (नत्थि काइ किरिया अकिरिया वा) शास्त्रोक्तानुष्ठान रूप न कोई क्रिया-सत्क्रिया है और न सावधकर्मानुष्ठान रूप कोई अक्रिया-असत्क्रिया है तो केवल आस्तिकवादियों की कोरी कल्पनाएँ हैं। इनमें वास्तविकता कुछ भी नहीं है। (नत्थियवाइणो वामलोगवाई) नास्तिकवादी और वामलोकवादी (एवं भणन्ति) इस प्रकार कहते हैं वह सब कथन मृदावादरूप है ॥ सू. ५॥

फिर कहते हैं—'इमं पि विइयं' इत्यादि ।

टीका—अनुपद वक्ष्यमाण (इमं पि विइयं) यह दूसरा कुदर्शन भी कि जिसे (असवभाववाइणो) असद्भाववादी तथा (मूढा) मूढजन "वदेह" इच्छानुसार प्रवृत्ति कर्या करवी लोछेओ. "नत्थि काइकिरिया अकिरिया वा" शास्त्रोक्त अनुष्ठानरूप कोई क्रिया सत् क्रिया नथी, के सावधकर्मानुष्ठान रूप कोई अक्रिया असत्क्रिया नथी, ते तो केवण आस्तिकवादीओनी जाली कल्पनाओ ज छे. तेमां केह पणु वास्तविकता नथी "नत्थियवाइणो वामलोगवाई" नास्तिकवादी अने वामलोकवादी "एवं भणन्ति" ते आ प्रभाछे कछे छे, ते तेमनुं कथन मृदावाद छे ॥ सू-५ ॥

पणी कछे छे—'इमं पि विइयं' इत्यादि.

टीका—तीये प्रभाछेनुं "इमं पि विइयं" भीनुं कुदर्शन के के "असवभाववाइणो" असद्भाववादी तथा "मूढा" मूढ बोडो "पणवेति" प्रज्ञपित करे

‘લોગો’ લોકઃ=પૃથિવ્યપ્તેજોવાયુવનસ્પતિતિર્યચ્છનરામરનારકરૂપઃ, ‘અંડકાઓ’ અંડકાત્ ‘સંભૂઓ’ સંભૂતઃ=ઉત્પન્નઃ, તત્ર અંડકોદ્ભૂતલોકવાદિનાં મતમિત્યં યત્ પૂર્વં પૃથિવ્યાદિપંચભૂતરહિતં જગત્ કેવલં જલમયમાસીત્ તત્ર મહદંડં ચિરકાલવિકલેદિતં સત્ સ્ફુટિતં દ્વિધાજાતં પૃથિવીરૂપમ્ આકાશરૂપં ચ, તત્ર સુરાસુરનારકતિર્યગ્ રૂપં જગત્ સર્વં સમુત્પન્નમિત્યેવમંડકાત્ સૃષ્ટિઃ । ‘સયં ભુણા’ સ્વયમ્ભુવા ચ=વ્રજાણા ‘સયં’ સ્વયં ‘નિમ્મિઓ’ નિર્મિતઃ=નિષ્પાદિતઃ इति केचित् ब्रुवन्ति । तथाहि दृश्यमान-जगदुत्पत्तेः पूर्वं पृथिव्यादि पञ्चभूतरहितं विनष्टं स्थावरजङ्गमामरनरगन्धर्वयक्षराक्षसकिन्नरगरुडमहोरगादि सकलविविध

(પણખેતિ) પ્રરૂપિત કરતે હૈં, મૃષાવારૂપ વહ દર્શન યહ હૈ-(લોગો અંડ-કાઓ સંભૂઓ) યહ પૃથિવી અપ્, તેજ, વાયુ વનસ્પતિ, તિર્યચ, મનુષ્ય, દેવ, નારકરૂપ લોક અંડે સે ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । અંડે સે લોક કો ઉત્પન્ન હુઆ માનને વાલોં કા મત હસ પ્રકાર હૈ યહ લોક પહિલે પૃથિવી આદિ પાંચભૂતોં સે રહિત થા, ઓર કેવલ જલમય હી થા । હસમેં એક ચિરકાલ સે ગીલા અંડા પડા હુઆ થા, જબ વહ ફડા તો હસકે દો ટુકડે હુએ-એક ટુકડા પૃથિવીરૂપ હુઆ ઓર દૂસરા ટુકડા આકાશરૂપ હુઆ-પૃથિવી રૂપ ટુકડે મેં મનુષ્ય, તિર્યચ, નારક આદિરૂપ તથા આકાશરૂપ ટુકડે મેં સુર અસુર આદિરૂપ સમસ્ત જગત્ ઉત્પન્ન હો ગયા । હસ તરહ અંડે સે યહ સૃષ્ટિ હુઈ વે કહતેહૈં । (સયંભૂણા સયં ચ નિમ્મિઓ) કોઈ ૨ એસા બી કહતે હૈં કિ યહ જો દૃશ્યમાન જગત્ હૈ વહ ઉત્પત્તિ સે પહિલે પહિલે પૃથિવી આદિ પંચભૂતોં સે રહિત થા । હસમેં સ્થાવર, જંગમ, અમર,

છે. તે મૃષાવાદરૂપ દર્શન આ પ્રમાણેનું છે-“ લોગો અંડકાઓ સંભૂઓ ” આ પૃથ્વી, અપ્, તેજ વાયુ, વનસ્પતિ, તિર્યચ, મનુષ્ય, દેવ અને નારકરૂપ લોકો ઇંડામાંથી ઉત્પન્ન થયા છે. ઇંડામાંથી સૃષ્ટિ ઉત્પન્ન થયેલ માનનારની આ યકા-રની માન્યતા છે-આ લોકો પહેલાં, પૃથિવી આદિ પાંચ ભૂતોથી રહિત હતા. અને દ્રક્ષ્ય જળમય જ હતો તેમાં એક ચિરકાળથી બીનું ઇંડું પડેલું હતું બ્યારે તે ફાટ્યું ત્યારે તેના બે ટુકડા થયા-એક ટુકડો તે પૃથિવીરૂપ થયો અને બીજો ટુકડો આકાશરૂપ થયો. પૃથિવીરૂપ ટુકડામાં મનુષ્ય, તિર્યચ, નારક આદિ રૂપ તથા આકાશ રૂપ ટુકડામાં સુર અસુર આદિ રૂપ સમસ્ત સૃષ્ટિ ઉત્પન્ન થઈ ગઈ. આ રીતે ઇંડામાંથી સૃષ્ટિ ઉત્પન્ન થયાનું તેઓ દર્શાવે છે. “ સયંભુણા સયં ચ નિમ્મિઓ ” કોઈ કોઈ એવું પણ કહે છે કે આ બે જગત નજરે પડે છે તે ઉત્પત્તિ પહેલાં પૃથિવી આદિ પાંચ ભૂતોથી રહિત હતું. તેમાં સ્થાવર,

सुवर्णिनी टीका अ० २ सू० ६-७ नास्तिकवादमतनिरूपणम्

१९५

भेदं केवलमर्णवस्वरूपं तमोभूतमासीत्, तत्र-तपस्तप्यमानस्य शयानस्य विभो-
र्भगवतो नाभेः कमलमुदपद्यत, तत्र ब्रह्मा समुत्पन्नस्तस्मात् सुरासुरमनुजतिर्यक्
स्थावरजङ्गमभूतमभूतभेदविशेषविशिष्टं जगदुत्पन्नम् । इति एवमुक्तरीत्या
'अलियं' अलीकम्=असत्यं 'पर्यपति' प्रजल्पन्ति । एतेषामलीकत्वं भ्रान्तज्ञा-
निभिर्निरूपितत्वाद् ॥ सू० ६ ॥

पुनरप्याह—'पयावड्णा' इत्यादि ।

मूलम्—पयावड्णा इस्सरेण य कयत्तिकेइ । एवं विण्हुमयं
कसिणमेव य जगंति केइ । एवमेके वदंति मोसं—एगो आया
अकारगो वेदगो य सुकयस्स य दुक्कयस्स य करणाणि कार-
णाणि य सव्वहा सव्वहिं च णिच्चो य णिक्किओ निग्गुणो य
अणुवलेवओ ति ॥ सू० ७ ॥

टीका—'पयावड्णा' प्रजापतिना=कृतमिदं जगदिति केचिद् । एतदलीकता
प्रमाणवादितत्वात् । तथा 'इस्सरेण' इश्वरेण च 'कयति' कृतमिति 'केइ'

नर, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नर, गरुड, महोरग आदि समस्त विविध
भेद नष्ट थे—यह तो केवल अंधकाराच्छादित अर्णव स्वरूप था ।
इसमें तपस्या करते हुए विष्णु भगवान् की नाभि से एक कमल उत्पन्न
हुआ । उस कमल में ब्रह्माजीने जन्म लिया । उनसे फिर सुर, असुर,
मनुज, तिर्यक्ष, स्थावर आदि अनेक जीवों के भेद प्रभेद वाला यह जगत्
उत्पन्न हुआ । इस प्रकार असंज्ञावादियों की ये दोनों प्रकारकी मान्यताएँ
भ्रान्त ज्ञानियों द्वारा निरूपित होने के कारण मृषावादरूप ही हैं ॥सू०५॥

फिरभी इन्हीं को कहते हैं—'पयावड्णा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(पयावड्णा इस्सरेण य कयत्तिकेइ) कितनेक व्यक्ति

जंगम अमर, नर, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नर गरुड, महोरग, आदि सम-
स्त विविध भेदनु' अस्तित्व न હતું. તે તો કેવળ અંધકારથી છવાયેલ સાગર
સ્વરૂપ હતું. તેમાં તપસ્યા કરતા વિષ્ણુ' ભગવાનની નાભિમાંથી એક કમળ
પેદા થયું' તે કમળમાં બ્રહ્માજીએ જન્મ લીધો, તેમણે સુર, અસુર, મનુષ્ય,
તિર્યંચ, સ્થાવર આદિ અनेક જીવોના ભેદ પ્રભેદથી યુક્ત આ જગત રચ્યું.
આ પ્રકારની અસંજ્ઞાવાદીઓની તે બંને પ્રકારની માન્યતાઓ ભ્રાન્તજ્ઞાનીઓ
દ્વારા નિરૂપિત થયેલ હોવાથી મૃષાવાદ રૂપ જ છે. ॥ સૂ-૫ ॥

કેચિત્ નૈયાયિકા इत्यर्थः, तद् यथा क्षित्यङ्कुरादिकं कर्तृजन्यं कार्यत्वात् घट-
वदिति । जलदबुदादौ हेतौ नैकान्तिकत्वेनास्यालीकता । एवं 'कसिणमेव'
कृत्स्नमेव=सकलमेव 'जगं' जगत् 'विण्हुमयं' विष्णुमयं = विष्णुस्वरूपमिति
'केइ' केचित् वदन्ति तन्मतानुयायिनः, यथा—

“जले विष्णुः स्थले विष्णुः-विष्णुः पर्वतमस्तके ।

ज्वालामालाकुले विष्णुः, सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥ १ ॥” इति ।

ऐसा मानते हैं कि यह जगत् प्रजापति-ब्रह्माने बनाया है । कितनेक
कहते हैं कि यह जगत् ईश्वरने बनाया है सो इस प्रकार की मान्यता में
अलीकता प्रमाणबाधित होने के कारण आती है । तथा जो नैयायिक
जन ऐसा कहते हैं कि यह जगत् ईश्वर ने बनाया है, क्यों कि यह
घटादिकी तरह कार्य है “क्षित्यङ्कुरादिकं कर्तृजन्यं कार्यत्वात् घटवत्”
सो कार्यत्वरूप हेतु में जल बुद्बुद आदि द्वारा अनैकान्तिक दोष आता है,
इसलिये यह उनका कथन असत्यरूप प्रमाणित हो जाता है । (एवं विण्हु-
मयं कसिणमेव य जगति केइ) इसी तरह यह सकल जगत् विष्णुमय
है ऐसा भी कोई २ कहते हैं, क्यों कि उनकी ऐसी मान्यता है कि—

“जले विष्णुः स्थले विष्णुः-विष्णुः पर्वतमस्तके ।

ज्वालामाला कुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥ १ ॥”

जल में विष्णુ हैं, ધલ में વિષ્ણુ हैं, પર્વત કી ઓટી ઉપર વિષ્ણુ हैं,

હજી પણ એ વિષે એ કહે છે.— ‘પયાવજ્ઞા’ ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“પયાવજ્ઞા ઇત્યેવ ચ કયત્તિ કેઈ” કેટલાક લોકો એવું માને
છે કે આ જગત પ્રજાપતિ-બ્રહ્માએ બનાવ્યું છે. કેટલાક કહે છે કે આ જગત ઇશ્વરે
બનાવ્યું છે, તો તે પ્રકારની માન્યતામાં મુખાવાદ-અસત્ય દોષ પ્રમાણબાધિત
હોવાને કારણે આવે છે. તથા જે નૈયાયિકો એવું કહે છે કે આ જગત ઇશ્વરે
બનાવ્યું છે. કારણ કે તે ઘટાદિના જેવું કાર્ય છે, “ક્ષિત્યકુરાદિકં કર્તૃજન્યં
કાર્યત્વાત્ ઘટવત્” તો કાર્યત્વરૂપ હેતુમાં બુદ્બુદ આદિ દ્વારા અનૈકાન્તિક દોષ
આવે છે, તેથી તેમનું તે કથન અસત્ય રૂપ સિદ્ધ થાય છે. “એવં વિણ્હુમયં
કસિણમેવ ચ જગતિ કેઈ” એ જ પ્રમાણે આ સમસ્ત જગત વિષ્ણુમય છે
એવું પણ કેટલાક લોકો કહે છે, કારણ કે તેમની એવી માન્યતા છે કે—

“જલે વિષ્ણુઃ સ્થલે વિષ્ણુઃ વિષ્ણુઃ પર્વતમસ્તકે ।

જ્વાલમાલાકુલે વિષ્ણુઃ, સર્વં વિષ્ણુમયં જગત્ ॥ ૧ ॥

જળમાં વિષ્ણુ છે, સ્થળમાં વિષ્ણુ છે, પર્વતનાં શિખરપર વિષ્ણુ છે,

તદલીકતા પ્રમાણભાવાત્ માતાપિત્રાદિ સકલવ્યવહારવિચ્છેદકત્વાચ્ચ ।
અથ વેદાન્તિમતમાહ—એવં=અમુના પ્રકારેણ એકે=અદ્વૈતબ્રહ્મવાદિનઃ વદન્તિ યત્
‘એગો આયા’ એક એવ આત્મા ‘મોસં’ મૃષા=જગત્ મિથ્યા તદુક્તં “બ્રહ્મસત્યં
જગન્મિથ્યા” ઇતિ, ઉક્તચ્ચ—

“એક એવ હિ ભૂતાત્મા, ભૂતે ભૂતે વ્યવસ્થિતઃ ।

એકથા વહુથા ચૈવ, દૃશ્યતે જલચન્દ્રવત્ ॥” ઇતિ ।

તદલીકતા ચ — સકલલોકપ્રત્યક્ષભેદમૂલકસુલુપ્તસ્વધર્માધર્માદિજગદ્
વ્યવહારોચ્છેદપસંજ્ઞાત્ । અથાત્માઽકર્તૃત્વમતમાહ—‘અકારગો’ અકારકઃ=

અગ્નિ મેં વિષ્ણુ હૈં, તાત્પર્યં યહ કિ યહ સવ જગત્ વિષ્ણુમય હૈ ॥૧॥

યહ માન્યતા ભી અલીકસ્વરૂપ હી હૈ, ક્યોં કિ હસ માન્યતા કો
સત્યરૂપ મેં પ્રમાણિત કરને વાલા કોઈ ભી પ્રમાણ નહીં હૈ । યદિ સવ
જગત્ કો કેવલ વિષ્ણુમય હી માના જાવે તો ફિર યહ જો ઉસમેં માતા
પિતા આદિ રૂપ સમસ્ત વ્યવહાર હૈ ઉસકા ઉચ્છેદ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।
(એવમેગે વદંતિ મોસં એગો આયા) હસી તરહ વેદાન્તિયોં કા જો યહ
કથન હૈ કિ એક હી આત્મા હૈ—જગત્ મિથ્યા હૈ—“બ્રહ્મ સત્યં જગન્મિ-
થ્યા ।” કહા ભી હૈ—

“એક એવ હિ ભૂતાત્મા, ભૂતે ભૂતે વ્યવસ્થિતઃ ।

એકથા વહુથા ચૈવ, દૃશ્યતે જલચન્દ્રવત્ ॥૧॥,, ઇતિ ।

પ્રત્યેક પ્રાણી મેં એક હી ભૂતાત્મા વ્યવસ્થિત હૈ । વહી જલચન્દ્ર કી
તરહ એકરૂપ વ અનેકરૂપ દિશ્વલાઈ દેતા હૈ ॥૧॥

અગ્નિમાં વિષ્ણુ છે. મતદાણ એ કે આ સમસ્ત જગત વિષ્ણુમય ॥૧॥

આ માન્યતા પણ અસત્ય છે કારણ કે આ માન્યતાને સત્યરૂપે સિદ્ધ
કરવાને માટે કોઈ પણ પ્રમાણ નથી. જે સમસ્ત જગતને કેવળ વિષ્ણુમય જ
માની લેવામાં આવે તો તેમાં માતા પિતા આદિ રૂપ જે વ્યવહાર છે તેનું
ખંડન થાય છે. “એવમેગે વદંતિ મોસં એગો આયા” એ જ પ્રમાણે વેદાન્તી-
ઓનું આ પ્રકારનું જે કથન છે કે “આત્મા એક જ જે-જગત મિથ્યા છે-
“બ્રહ્મસત્યં જગન્મિથ્યા” કહ્યું પણ છે—

“એક એવ હિ ભૂતાત્મા, ભૂતે ભૂતે વ્યવસ્થિતઃ ।

એકથા વહુથા ચૈવ, દૃશ્યતે જલચન્દ્રવત્” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પ્રત્યેક પ્રાણીમાં એક જ ભૂતાત્મા રહેલ છે. તે જ જલચન્દ્રની જેમ એક
રૂપે કે અનેકરૂપે દેખાય છે ॥૧॥

અયમાત્મા અકર્તા-પુણ્યપાપાદોનામ્ । વેદકઃ=મોક્તા પુણ્યપાપકર્મફલસ્ય પ્રતિ-
 ચિન્મોદયન્યાયાદિતિ ભાવઃ, તથા-‘સુકયસ્સ’ સુકૃતસ્ય-પુણ્યસ્ય ‘દુકયસ્સ’
 દુષ્કૃતસ્ય પાપસ્ય ચ ‘સવ્વહા’ સર્વથા ‘સવ્વહિં’ સર્વત્ર સર્વસ્મિન્ કાલે
 ‘કારણાણિ’ કારણાણિ=નિમિત્તભૂતાણિ ‘કરણાણિ’ કરણાણિ=ચક્ષુરાદીનીન્દ્રિયાણિ,
 નાયમાત્મા । અલીકતાચાસ્ય સંસાર્યાત્મનો મૂર્તત્વેન પરિણામિત્વેન કર્તૃત્વોપપત્તેઃ
 તથા ‘ણિચ્ચો’ નિત્ય ઇતિ=કેચિત્, તદપિ ન યુક્તમ્, એકાન્તનિત્યત્વે સુખ

યહ કથન મી મિથ્યારૂપ હી હૈ, ક્યોં કિ હસે સત્ય માનને પર જો
 સકલલોક કે પ્રત્યક્ષભૂત મૈદમૂલક ધર્મ અધર્મ આદિકા વ્યવહાર હોતા
 હૈ ઉસકે ઉચ્છેદ કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોતા હૈ । હસી તરહ જો આત્મા કો
 એકાન્તરૂપ સે અકર્તા માનતે હૈં એસે સારૂયો કો યહ માન્યતા હૈ કિ
 (અકારગો વેદગોય) યહ આત્મા પુણ્યપાપ આદિકા અકર્તા હૈ, ઓર
 ઉનકે ફલ ભૂત સુખ દુઃખ આદિકા (૧) ‘પ્રતિચિન્મોદયન્યાય’સે મોક્તા
 હૈ । તથા કોઈ કહતે હૈં કિ (સુકયસ્સ દુકયસ્સ ય સવ્વહા સવ્વહિં
 કારણાણિ ય કરણાણિ) પુણ્ય ઓર પાપ કે સર્વ પ્રકાર સે સર્વકાલ મેં
 કર્તા નિમિત્તભૂતચક્ષુરાદિ ઇન્દ્રિયાં હૈં । આત્મા નહીં હૈ, યહ ઉનકી
 માન્યતા અસત્ય હૈ, ક્યોં કિ સંસારી આત્મા કથંચિત્ મૂર્તિક હૈ ઓર
 પરિણામી હૈ હસલિયે કર્તૃત્વ ઓર મોક્તૃત્વ બન જાતા હૈ । સર્વથા અમૂ-

તે કથન પણ મિથ્યારૂપ જ છે, કારણ કે તેને સત્ય માનવામાં આવે તો
 સમસ્ત જગતમાં નજરે પડતો મૂળભૂત લેદવાળો ધર્મ અધર્મ આદિનો જે વ્ય-
 વહાર થાય છે તેનું ખંડન થવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે. એ જ રીતે
 આત્માને એકાન્તરૂપે અકર્તા માનનાર સાંખ્ય મતવાદીઓની એવી માન્યતા છે
 કે “અકારગો વેદગોય” આ આત્મા પુણ્ય પાપ આદિનો કર્તા નથી, અને
 તેમનાં ફળરૂપ સુખ દુઃખ આદિનો “પ્રતિચિન્મોદય ન્યાયથી” લોકતા છે. તથા
 કેઈ કેઈ લોકો કહે છે કે “સુકયસ્સ દુકયસ્સ ય સવ્વહા સવ્વહિં કારણાણિ ય
 કરણાણિ” પુણ્ય અને પાપના સર્વ પ્રકારનો કર્તા સર્વકાળે આત્મા નહીં પણ
 ચક્ષુ આદિ ઇન્દ્રિયો છે. તેમની તે માન્યતા અસત્ય છે, કારણ કે સંસારી
 આત્મા કેટલાક પ્રમાણમાં મૂર્તિક છે અને પરિણામી છે, તેથી તેમાં કર્તૃત્વ અને

૧ પ્રતિચિન્મોદય ન્યાય કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર સ્ફટિકમણિ કે સાથ જિસ
 વર્ણકા સંયોગ હોગા સ્ફટિક મણિ વૈસા હી વર્ણકા દીક્ષને લગ જાતા હૈ ।

૧ પ્રતિચિન્મોદય ન્યાયનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમ સ્ફટિક મણીની સાથે જે
 રંગનો સંયોગ થશે, એવા જ રંગનો સ્ફટિક મણી દેખાશે.

દુઃખબન્ધમોક્ષાદ્યભાવમસદ્ગાત્ । નિક્કિઓ ' નિક્કિયઃ ગમનાગમનાદિક્રિયાવ-
ર્જિતઃ સર્વવ્યાપિત્વેનાવકાશમાશત્, ઇતદપ્યસત્, દેહમાત્રોપલબ્ધમાનત્વાત્ ।
' નિર્ગુણો ' નિર્ગુણઃ=સત્ત્વરજસ્તમોગુણરહિતઃ, ' અણુવલેવઓ ' અણુપલેપકઃ =
નિર્લેપઃ સદ્ગર્વર્જિતઃ આત્મેતિ કાપિલાઃ, ઉક્તં ચ-“ અર્ક્ત્વા નિર્ગુણોભોક્તા, આત્મા
કપિલદર્શને ” ઇતિ । સત્ત્વરજસ્તમોગુણાનાં સામ્યાવસ્થા પ્રકૃતિઃ, સૈવ કર્ત્રી, પુરુ-
ષસત્ પુષ્કરપલાશવર્ણિલેપશ્વેતનોઽકર્તા, ઇતિ સાંખ્યાનાં મતમ્ । કુદર્શનત્વં

તિક આત્મા મેં યે નહોં થનતે હૈં । (ગિચ્ચો) કોઈ ૨ આત્મા કો સર્વથા
નિત્ય માનતે હૈં, સો આત્મા કી યહ નિત્ય માન્યતા સત્ય નહીં હૈ, ક્યોં
કિ આત્મા કો સર્વથા નિત્ય માનને પર સુખદુઃખ એવં બંધ, મોક્ષ આદિ
કે અભાવ કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોતા હૈ । (નિક્કિઓ) આત્મા કો નિક્કિય
માનના હસ અભિપ્રાય સે, કિ આત્મા વ્યાપક હૈ ઓર જો વ્યાપક હોતા
હૈ ઉસમેં અવકાશ કે અભાવ સે ગમનાગમન રૂપ ક્રિયાઈ થન નહીં
સકતી હૈં સો એસી માન્યતા બી મૃષાવાદરૂપ હી હૈ, કારણ કિ-આત્મા
શરીર મેં હી ઉપલબ્ધ હોતી હૈ અન્યત્ર નહીં । (નિર્ગુણો) તથા એસા
કહના કિ “ યહ આત્મા સત્ત્વ, રજ ઓર તમોગુણ સે રહિત હૈ ઓર
(અણુવલેવઓ) પુષ્કરપલાશવત્ નિર્લેપ-સંગર્વર્જિત હૈ । સાંખ્યોં કા
યહી કહના હૈ કિ સત્ત્વ, રજ ઓર તમોગુણ કી સામ્યાવસ્થા કા નામ
પ્રકૃતિ હૈ । યહ પ્રકૃતિ હી કરનેવાલી હોનેસે કર્ત્રી હૈ, ચેતયિતા-પ્રકૃતિ
દ્વારા કિયે ગયે કાર્યોં કા જાનને વાલા પુરુષઆત્મા તો કમલપત્ર કે

લોકતૃત્ય આવી બચ છે. સર્વથા અમૂર્તિક આત્મામાં તે બનતું નથી, “ગિચ્ચો” કોઈ
કોઈ મતવાળા આત્માને સર્વથા નિત્ય માને છે આત્માને એ રીતે નિત્ય માનવું તે
સત્ય નથી, કારણ કે આત્માને સર્વથા નિત્ય માનવામાં આવે તો મુખદુઃખ અને
બંધ મોક્ષ આદિનો અભાવ હોવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે- “નિક્કિઓ” કોઈ
કોઈ લોકો આત્માને એ કારણે નિક્કિય માને છે કે આત્મા વ્યાપક છે. અને
જે વ્યાપક હોય તેમાં અવકાશનો અભાવ હોવાથી ગમનાગમનરૂપ ક્રિયાઓ
થઈ શકતી નથી. તે માન્યતા પણ મૃષાવાદરૂપ જ છે કારણ કે આત્મા શરી-
રમાં જ હોય છે અન્યત્ર હોતો નથી. “નિર્ગુણો” તથા “આ આત્મા સત્ત્વ,
રજ અને તમોગુણથી રહિત છે” એવી માન્યતા “અણુવલેવઓ” તથા કમળ
પત્ર પર રહેલા પાણીના ઘિંદુથી કમળ પત્ર જેમ અલિપ્ત કહે છે, તેમ આત્મા
પણ તે તત્ત્વોથી નિર્લેપ રહે છે. તે માન્યતા પણ મૃષાવાદ છે. સાંખ્યોની એવી
માન્યતા છે કે સત્ત્વ, રજ અને તમોગુણની સામ્યાવસ્થાનું નામ પ્રકૃતિ છે. એ
પ્રકૃતિ જ કરનાર હોવાથી કર્ત્રી છે-પ્રકૃતિ દ્વારા કરાયેલ કાર્યોને જાણનાર પુરુષ

ચાસ્ય તથાહિ-ન તાવર્તિર્ગુણત્વં ચેતનાસ્વરૂપતામ્યુપગમાત્ । અનુપલેપકત્વમપિ ન
 બદ્ધમુક્તાવસ્થા વ્યવસ્થાવિચ્છેદપ્રસજ્ઞાત્ ॥ સૂ. ૭ ॥

પુનરપ્યાહ—‘ અવિ ય ’ ઇત્યાદિ—

મૂલ્મ-અવિ ય એવમાહંસુ અસઘ્ભાવ જંપિ એહિં કિંચિ
 જીવલોગે દોસઈ સુકયં વા દુઃકયં વા, એવં જઈચ્છાણ વા
 સહાવેણ વાવિ દયિવયપ્પભાવઓ વાવિ ભવઈ, નત્થિ તત્થ
 કિંચિકયકં તત્તં લક્ખણં વિહાણં નિયઈ કારિયા એવં કેઢ
 જંપંતિ ઇદ્દિરસસાયગારવપરાઘહવે કરણાલસા પરૂવેંતિ
 ધમ્મવીમંસણં મોસં ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘ અવિ ય ’ અપિ ચ એવં=વક્ષ્યમાણરીત્યા ‘ અસઘ્ભાવ ’ અસદ્ભાવ
 ‘ આહં સુ ’ આહુઃ=કથયન્તિ કથમિત્યાહ-‘ જંપિ ’ યદપિ કિંચિ ‘ કિંચિત્ ’ ‘ એહિં ’
 સમાન નિર્લિપ્ત છે । અતઃ કહા છે “ અકર્તા નિર્ગુણો ભોક્તા ” આત્મા
 કપિલ દર્શને ” યહ ભી યુક્તિ યુક્ત નહીં છે કારણ આત્માનો સર્વથા
 નિર્ગુણ માનને પર ઉસમેં ચેતનત્વ ગુણ કા ભી અભાવ હોને સે અચેત-
 નત્વ કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોગા, પરંતુ એસી યાત તો વહાં માની નહીં ગઈ છે,
 ક્યોં કિ આત્મા કો ચેતના ગુણ સ્વરૂપ સ્વીકાર કિયા ગયા છે । તથા
 પુઠ્ઠકર પલાશવન્ સર્વથા નિર્લિપ્ત માનને પર ઉસકી જો બદ્ધ-સંસારી-
 ઓર મુક્ત યે જો દો અવસ્થાઈ હોતી હૈં ઉનકી વ્યવસ્થા કા વિચ્છેદ પ્રાપ્ત
 હોતા છે ॥ સૂ-૬ ॥

તથા—‘ અવિ ય ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(અવિ ય એવં અસઘ્ભાવં આહંસુ) હસ પ્રકાર સે જો અસ-

આત્માતો કમળપત્ર સમાન નિર્લિપ્ત છે. તેથી જ કહ્યું છે કે “ અકર્તા નિર્ગુણો
 ભોક્તા આત્મા કપિલદર્શને ” તે પણ યુક્તિયુક્ત નથી, કારણ કે આત્માને સર્વથા
 નિર્ગુણ માનવામાં આવે તો તેમાં ચેતનત્વ ગુણનો પણ અભાવ હોવાથી અચે-
 તનત્વનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે, પણ એમ તો ત્યાં માનેલ નથી, કારણ કે
 આત્માને ચેતનગુણ સ્વરૂપ સ્વીકાર્યો છે. તથા કમળપત્ર પર રહેલ જળગિન્દુથી
 અલિપ્ત કમળ જેવો તેને માનવામાં આવે તો તેની બદ્ધ-સંસારી અને મુક્ત
 એ બે અવસ્થાઓ જે હોય છે તેની વ્યાવસ્થાનું ખંડન થશે. ॥ સૂ-૬ ॥

તથા—“ અવિ ય ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“ અવિ ય એવં અસઘ્ભાવં આહંસુ ” આ પ્રમાણે જ અસદ્ભાવ કહેવાયો

इह जीवलोक 'सुक्यं वा' सुकृतं वा=सुकृतफलं-सुखमास्तिकमतेन 'दुक्यं वा' दुष्कृतं=दुकर्मफलं दुःखं वा 'दीर्घं' दृश्यते 'जइच्छाए' यइच्छया=अकस्मात् काकतालीयन्यायेन अवितर्कितमेव सर्वं समुत्पद्यते । यथा काकागमनसमये अबुद्धिपूर्वकं काकोपरितालपतनं नहि काकस्यैवं बुद्धिरस्तियन्मदुपरितालं निपतिष्यति, तथा तालस्यापि नायमभिप्रायो यदहं काकोपरि पतिष्यामि, एवमेव सर्वं सुख-दुःखादिजातमतर्कितोपस्थितमेव न कर्तृविशेषबुद्धिपूर्वकम् । तदसत् इदमस्य कारणमिदमस्य कार्यमिति सकलचोकप्रसिद्ध व्यवस्था विच्छेदापत्तेः अन्यथा कथं ज्ञातं कहा गया है कि (जपि किंचि एहि जीव लोके सुक्यं वा दुक्यं वा दीर्घं) जो कुछ भी इस जीवलोक में सुकृत अथवा सुकृत का फलरूप सुख दुष्कृत अथवा दुष्कृत का फलरूप दुःख दिखलाई देता है वह सच (जइच्छाए वा) अकस्मात् काकतालीय न्याय से अवितर्कित ही उत्पन्न हो जाता है, जिस प्रकार उड़ता हुआ कौवा तालवृक्ष के नीचे आया और आते ही उस पर ताड़ का फल गिर पड़ा तो उसके इस पतन में न तो काकने ही ऐसा विचार किया कि मेरे ऊपर ताड़ का फल गिर पड़े, और न ताड़फल ने ही ऐसा सोचा कि मैं काक के आते ही उस पर गिर पड़ूँ किन्तु यह उसका पतन अवितर्कित ही हुआ इसी तरह सुख दुःख आदि जो कुछ भी होता है वह सच अनर्कित ही उपस्थित होता रहता है इसमें कर्ता कि विशेष बुद्धि पूर्वकता नहीं है । सो ऐसी मान्यता भी असत्य ही है कारण कि लोक में जो यह व्यवस्था बन रही है कि " यह इसका कारण है यह इसका कार्य है " वह सच इस प्रकार की मान्यता में विच्छेद को प्राप्त हो जावेगा । देखो जो

छे के ' जपि किंचि एहि जीवलोके सुक्यं वा दुक्यं वा दीर्घं " आ एवदोक्तमां के डोई पणु सुकृत अथवा सुकृतना इणइय सुण, दुष्कृत अथवा दुष्कृतना इणइय दुःख नउरे पडे छे ते अथा " जइच्छाए वा " अकस्मात् काकतालीय न्याये अवितर्कित न उत्पन्न थइ नय छे केम छेतो कागडो ताडना आउनी नीचि आरे अने आवतां न तेना ऊपर ताडनुं इण पइयुं, तेना ते पतनमां कागडाओ जेयो विचार कर्यो न छेतो के मारा ऊपर ताडनुं इण पडे अने ताडना इणे पइयुं जेयो विचार कर्यो न छेतो के कागडो आवतां न हुं तेना ऊपर पड़ुं पणु तेनुं ते पतन अवितर्कित न थयुं डोय छे, ओ न प्रकारे सुण हुण आदि के कंठ थाय छे ते पणु अवितर्कित न थया करे छे तेमां कर्तानी विशेषबुद्धि कारणइय नथी, ते जेवी मान्यता पणु असत्य न छे कारण के सृष्टिमां जेवी के व्यवस्था आवी रही छे के " ते आनुं कारण छे, ते आनुं कार्य छे " ओ अथानुं ते मान्यताथी पांडन थइ नथे, जुयो जेने तेव

તૈલાર્થી તિલમેવોપાદઘાત્ દધ્યર્થી ચ દુગ્ધં, દુગ્ધાર્થી ચ ગામ્ । અથ સ્વભાવવાદીમાહ—

“કઃ કણ્ટકાનાં પ્રકરોતિ તૈક્ષ્ણ્યં,

વિચિત્રભાવં મૃગપક્ષિણાં ચ ।

સ્વભાવતઃ સર્વમિદં પ્રવૃત્તં,

ન કામચારોઽસ્તિ કુતઃ પ્રયત્નઃ ॥ ૧ ॥”

તદપ્યસત્—અત્રાપિ કાર્યકારણવ્યવસ્થા વિચ્છેદાત્ ।

તૈલાર્થી હોતા હૈ વહ તિલોં કો હી તો ગ્રહણ કરતા હૈ, દધ્યર્થી દુગ્ધ કો ઓર દુગ્ધાર્થી ગાય કો । યહ એસા ક્યોં હોતા હૈ હસલિયે કિ યે તિલા-દિક અપને ૨ કાર્ય કે કારણ હૈ ।

અથ સ્વભાવવાદી કા સ્વરૂપ કહતે હૈ—‘સહાવેગ વાવિ’ ઇત્યાદિ ।

સ્વભાવવાદી કા એસા કહના હૈ કિ જગત્ મેં જો કુછ હોતા હૈ વહ સ્વભાવ સે હી હોતા હૈ, કહા મી હૈ—

“કઃ કણ્ટકાનાં પ્રકરોતિ તૈક્ષ્ણ્યં, વિચિત્રભાવં મૃગપક્ષિણાં ચ ।

સ્વભાવતઃ સર્વમિદં પ્રવૃત્તં, ન કામચારોઽસ્તિ કુતઃ પ્રયત્નઃ ॥ ૧ ॥”

કાંટોં મેં તીક્ષ્ણતા કૌન કરતા હૈ ? મૃગોં મેં પક્ષિયોં મેં વિચિત્રતા કૌન ઉત્પન્ન કરતા હૈ ? તો હસકા કેવલ ઉત્તર યહી હૈ કિ સ્વભાવ સે હી યહ સબ કુછ હોતા હૈ, હસમેં કામચારં-ચદ્વચ્છા-કારણ નહીં હૈ ઓર ન કોઈ પ્રયત્ન હી કારણ હૈ ॥ ૧ ॥

યહ સ્વભાવવાદી કા કથન મી ઠીક નહોં હૈ । કારણ હસમેં મી

બેઠું હોય તે તરૂને જ અહણ કરશે, હઢીની ઇચ્છાવાળો દૂધને અને દૂધની ઇચ્છાવાળો ગાયને અહણ કરશે. તે પ્રમાણે થવાનું કારણ શું છે ? કારણ એ જ છે કે તરૂ આદિ પોત પોતાના કાર્યને માટે કારણરૂપ-ઉપયોગી છે

હવે સ્વભાવવાદીનું સ્વરૂપ કહે છે—“સહાવેગ વાવિ” ઇત્યાદિ

સ્વભાવવાદીનું એવું કહેવું છે કે જગતમાં જે કંઈ થાય છે તે સ્વાભાવથી જ થાય છે, કહું પણ છે—

“કઃ કણ્ટકાનાં પ્રકરોતિ તૈક્ષ્ણ્યં, વિચિત્રભાવં મૃગપક્ષિણાં ચ ।

સ્વભાવતઃ સર્વમિદં પ્રવૃત્તં, ન કામચારોઽસ્તિ કુતઃ પ્રયત્નઃ ॥ ૧ ॥”

કાંટામાં તીક્ષ્ણતા કોણ કરે છે ? મૃગોમાં તથા પક્ષીઓમાં વિચિત્રતા કોણ ઉત્પન્ન કરે છે ? તેનો ઉત્તર એક જ ઉત્તર છે કે સ્વાભાવથી જ તે બધું થાય છે, તેમાં કામચાર-તેની ઇચ્છા-કારણરૂપ નથી કે કોઈ પ્રયત્ન કારણરૂપ નથી ॥ ૧ ॥

સ્વભાવવાદીનું તે કથન પણ બરાબર નથી. કારણ કે તેમાં પણ કાર્ય કારણ કે તેમાં પણ કાર્ય-કારણભાવનું ખંડન થાય છે.

તથા દૈવવાદિનઃ—

“પ્રાપ્તવ્યમર્થં લભતે મનુષ્યઃ, કિં કારણં દૈવમલઙ્ઘનીયમ્ ।

તસ્માન્ન શોચામિ ન વિસ્મયો મે, યદસ્મદીયં નહિ તત્પરેષામ્ ॥”

તથા ‘નસ્થિ’ નાસ્તિ ‘તસ્થ’ તત્ત્વ મર્ત્યલોકે ‘કિંચિ’ કિંચિત્ ‘કયકં’ કૃતકં=કર્મનિષ્પન્નં ‘તત્ત્વં’ તત્ત્વં=વસ્તુ । તથા ‘લક્ષણવિદ્યાણં’ લક્ષણવિધાનાં =પદાર્થસ્વરૂપપ્રકારાણાં નિયતિઃ=ભાગ્યમેવ ‘કારિયા’ કારિકા=કર્ત્રી, તથા યન્ન કાર્યકારણભાવ કા ચિચ્છેદ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

અથ દૈવવાદિયોં કા સ્વરૂપ કહતે હૈ—‘દવિયપ્પમાવઓવાવિ મવઈ’ ઇત્યાદિ । દૈવવાદિયોં કિ એસી માન્યતા હૈ—

“પ્રાપ્તવ્યમર્થં લભતે મનુષ્યઃ, કિં કારણં દૈવમલઙ્ઘનીયમ્ ।

તસ્માન્ન શોચામિ ન વિસ્મયો મે, યદસ્મદીયં નહિ તત્પરેષામ્ ॥૧॥”

જો કુછ પ્રાપ્ત હોને યોગ્ય વસ્તુ હૈ વહ હમેં ભાગ્ય કી કૃપા સે હી પ્રાપ્ત હોતી હૈ । યહ ભાગ્ય અલંઘનીય હૈ । અતઃ એસા સમજકર કિ જો હમારી હૈ વહ દુસરોં કી કમ્બી નહીં હો સકતી હૈ કમ્બી ખી કિસી પ્રાણી કો શોક ફિકર ઓર આશ્ચર્ય આદિ નહીં કરના ચાહિયે ॥૧॥

અતઃ હે ભાઈયો ! તુમ એક માત્ર દૈવ-ભાગ્ય પર હી ભરોસા રહો । (નસ્થિ તસ્સ કિંચિ કયકં તત્ત્વં) લોકમેં કોઈ એસી વસ્તુ નહીં હૈ જો કૃતક હો પરુષાર્થ રૂપ કર્મ સે પ્રાપ્ત કી જા સકે-એસી હો । હસી મકાર (લક્ષણવિદ્યાણં) પદાર્થોં કા જિતના ખી કુછ અપના રૂપ હૈ તથા ડનકે જિતને ખી પ્રકાર-ભેદ હૈ ઇન સબકી (કારિયા) કારિકા કરને

હવે દૈવવાદીઓનું સ્વરૂપ કહે છે—“દવિયપ્પમાવઓવાવિ મવઈ” ઇત્યાદિ. દૈવવાદીઓની માન્યતા છે કે—

“પ્રાપ્તવ્યમર્થં લભતે મનુષ્યઃ, કિં કારણં દૈવમલઙ્ઘનીયમ્ ।

તસ્માન્ન શોચામિ ન વિસ્મયો મે, યદસ્મદીયં નહિ તત્પરેષામ્ ॥૧॥

પ્રાપ્ત થવા લાયક જે કોઈ વસ્તુ હોય છે તે આપણને લાગ્યની કૃપાથી જ મળે છે. તે લાગ્ય અલંઘનીય-અક્ષર છે, જે અમારી સીજ છે તે બીજની કદી પણ થઈ શકતી નથી, એવું સમજીને કદીપણ કોઈ પ્રાણીએ, શોક, ચિન્તા આશ્ચર્ય આદિ કરવા જોઈએ નહીં ॥૧॥

તો છે ભાઈઓ ! તમે એક માત્ર લાગ્ય ઉપર જ વિશ્વાસ રાખો

“નસ્થિ તસ્સ કિંચિ કયકં તત્ત્વં” જગતમાં એવી કોઈ વસ્તુ નથી કે જે કૃતક હોય-પુરુષાર્થથી પ્રાપ્ત કરી શકાય તેવી હોય. એ જ રીતે “લક્ષણ-વિદ્યાણં” પદાર્થોનું જે કોઈ પોતાનું રૂપ છે તથા તેમના જેટલા પ્રકાર-ભેદ છે, તે બધાની “કારિયા” કારિકા-કરનારી “નિયઈ” આ નિયતિ-લાગ્ય-જ

ભાવ્યં તત્ કોટિ યત્નૈરપિ ન ભવતિ યદ્ ભાવ્યં તદ્ વિનાપિ યત્નેન ભવતિ, તદસન્ન-સકલપ્રત્યક્ષોદ્યમાદીનાં વ્યર્થત્વાપત્તેઃ । વા શબ્દેન-કાલવાદાદયોઽપિ વિજ્ઞેયાઃ ।

તથાહિ-“કાલઃ સૃજતિ ભૂતાનિ, કાલઃ સંહરતે પ્રજાઃ ।

કાલઃ સુપ્તેષુ જાગર્તિ કાલો હિ દુરતિક્રમઃ ॥ ૧ ॥”

ચાલી (નિચઈ) યહ નિચતિ-ભાગ્ય હી હૈ । તથા જો હોને યોગ્ય નહીં હૈ વહ કરોડ યત્નો સે ‘ભી’ નહીં હો સકતા હૈ, ઓર જો હોને યોગ્ય હૈ વહ વિના યત્ન કે ‘ભી’ હો જાતા હૈ । સો હસ પ્રકાર કી દૈવ (ભાગ્ય) વાદિયોં કી યહ માન્યતા કેવલ કલ્પનામાત્ર હૈ કારણ-હસકા હસ પ્રકાર કી એકાન્તતઃ કલ્પના માનને પર સકલ પ્રાણીયોં કે પ્રત્યક્ષ-ભૂત ઉદ્યમાદિકોં મેં વ્યર્થતા કી આપત્તિ આતી હૈ ।

‘વા’ શબ્દ સે કાલવાદિયોં કા સ્વરૂપ કહતે હૈ-‘યહાં “વા” શબ્દ સે કાલવાદ આદિ ‘ભી’ મૃષારૂપ હૈં એસા જાનના ચાહિયે । કાલ-વાદિયોં કી એસી માન્યતા હૈ કિ-

“કાલઃ સૃજતિ ભૂતાનિ, કાલઃ સંહરતે પ્રજાઃ ।

કાલઃ સુપ્તેષુ જાગર્તિ, કાલો હિ દુરતિક્રમઃ ॥૧૧॥”

કાલ હી ભૂતોં કો-જીવોં કો-વનાતા હૈ ઓર નષ્ટ કરતા હૈ । કાલ હી સોચે હુઓં મેં જગાતા હૈ હમલિયે કાલ દુરતિક્રમ-અલંબનીય હૈ । અર્થાત્-યહ અવિનશ્વર હૈ ।

છે. તથા જો થવા લાયક નથી તે કરેલ પ્રયત્ન કરવા છતાં પણ થઈ શકતું નથી, તથા જો થવા લાયક છે તે વિના પ્રયત્ને પણ થાય છે. તો આ પ્રકારની દૈવ “માગ્ય” વાદીઓની માન્યતા કેવળ કલ્પના જ છે, કારણ કે તેમની તે પ્રકારની એકાન્તતઃ કલ્પનાને માની લેવામાં આવે તો સમસ્ત પ્રાણીઓના પ્રત્યક્ષભૂત ઉદ્યમાદિમાં વ્યર્થતા હોવાની આપત્તિ ઉપસ્થિત થાય છે.

“વા” શબ્દથી કાલવાદીઓનું સ્વરૂપ કહે છે—અહીં “વા” શબ્દથી કાળવાદ આદિ પણ મૃષા-અસત્ય રૂપ છે, એમ સમજ લેવાનું છે. કાળવાદી ઓની એવી માન્યતા છે કે-

“કાલઃ સૃજતિ ભૂતાનિ, કાલઃ સંહરતે પ્રજાઃ ।

કાલઃ સુપ્તેષુ જાગર્તિ, કાલો હિ દુરતિક્રમઃ ” ॥ ૧ ॥

કાળ જ ભૂતોને-જીવોને બનાવે છે અને તેમનો નાશ કરે છે. કાળ જ સૂતેલાઓમાં બગૃત હોય છે. તેથી કાળ દુરતિક્રમ-અલંબનીય છે એટલે કે

સુદર્શિની ટીકા અં ૨ સૂં ૭-૮ અન્યેવામપિ મૃષાભાષણનિરૂણમ્

૨૦૫

તદસન્-કાલસ્યૈવ કર્તૃત્વે કાલપ્રાપ્તૌ સ્ત્રીમથુન્ધ્યા પુત્રસ્તતલકેશાદીના-
મપિ સદ્ભાવઃ સ્યાન્, इत्यपि मतवादिनो मिथ्या जल्पन्ति । तथा 'इद्विरस-
सायगारवपरा' ऋद्विरससातगौरवपराः, 'बह्वे' बहवः=अनेके करणालसाः=
कर्तव्याचरणालसाः अनुयोगिनः 'धम्मवीमंसरण' धर्मविमर्शनेन=धर्मविचारेण
'मोसं' मृषा-असत्यं वस्तु अधर्ममपि धर्ममेव 'परुवेंति' प्ररूपयन्ति=मतिपादयन्ति ॥७

અન્યેઽપિ જના યથા મૃષા ભાષણપરા ભવન્તિ તત્પરૂપયતિ 'અવરે' इत्यादि-

मूलम्-अवरे अहम्साओ रायदुष्टं अबभक्त्वाणं भणंति
अलियंचोरोत्ति अचोरियं करेंतं । डामरिओ त्ति वि य एमेव
उदासीणं । दुस्सीलोत्ति य परदारं गच्छइत्ति मइलित्ति
सीलकलियं । अयंपि गुरुतप्पओ त्ति । अण्णे एमेव भणंति

કાલવાદિયોં કી યહ માન્યતા અસત્યરૂપ હસલિયે હૈં કિ કાલ કો
હી કર્તા માનને પર સ્ત્રી જવ તરુણ અવસ્થા સંપન્ન હો જાની હૈં તો પુરુષ
કી તરહ ઉસકે ભી દાદી મૂઝ કા આના, તથા વંધ્યા કે પુત્ર હોના,
હથેલી મેં બાલ ડગના આદિ ભી હોના ચાહિયે-પરન્તુ યહ સબ કુઝ
નહીં હોતા હૈં । હસલિયે યે પૂર્વોક્ત સબ હી થાદ મિથ્યા પ્રરૂપણા કરતે
હૈં એસા જાનના ચાહિયે । (એવં) હસ પ્રકાર (કેહ) કિતનેક (કર-
ણાલસા) અપને કર્તવ્ય કરને પર યોગ્ય આચરણ મેં આલસી બને હુણ,
ઔર (इद्विरससायगारवपरा) ऋद्विर, रस, सातगौरव में तत्पर रहे
हुए, (बह्वे) अनेक अनुयोगी व्यक्ति (धम्म वीमंसरणं) धर्म के
विचार से (मोसं) मृषा-असत्यं-अधर्म को भी धर्मरूप से (परुवेंति)
प्ररूपित करते हैं ॥ सू-७ ॥

શાશ્વત છે. કાળવાદીઓની તે માન્યતા અસત્યરૂપ તે કારણે છે કે કાળને જ
એ કર્તા માનવામાં આવે તો સ્ત્રી બ્યારે તરુણ અવસ્થાએ પહોંચે ત્યારે તેને
પણ પુરુષની જેમ દાદી મૂઝ આવવી જોઈએ, તથા વંધ્યાને પુત્ર થવો જોઈએ,
હથેલીમાં બાલ ડગવા જોઈએ, પણ તેમાંનું કંઈ પણ બનતું કંઈ. તેથી પૂર્વોક્ત
એ બધા વાદ મિથ્યા પ્રરૂપણા કરે છે એમ માનવું જોઈએ, “એવં” એ જ
પ્રમાણે “કેહ” કેટલાક “કરણાલસા” પોતાના કર્તવ્ય પાત્રનમાં આગ્રહ
થઈને અને “इद्विरससायगारवपरा” ऋद्विर, रस અને सात अलिभानમાં રત
થઈને “बह्वे” અનેક અનુયોગી લોકો “धम्मवीमंसरणं” धर्मના ખ્યાલથી
“मोसं” मृषा-असत्य-अधर्मને પણ धर्मરूपે “परुवेंति” प्ररूपित કરે છે ॥સૂ-૭॥

ઉવહળંતા—મિત્તકલતાઈં સેવઈ । અયંપિ લુત્તધમ્મો । ઇમો
 વિ વીસંભઘાયઓ, પાપકમ્મકારી અગમ્મગામી । અયં
 દુરપ્પા વહુણ્ણુ ય પાતગેણુ જુત્તો ત્તિ । એવં જંપંતિ મચ્છરી
 ભદ્દગે વા યુણકિત્તિનેહપરલોગનિપ્પિવાસા । એવં એ અલિ-
 યવયણદક્ખા પરદોણુપ્પાયણ સંસત્તા વેદેતિ અક્ખઈય વીણં
 અપ્પાણં કમ્મવંધણેણ મુહરી અસમિલ્લિયપ્પલાવો ॥સૂળા૮॥

ટીકા—અવરે=અપરે અન્યે કેચિત્ ‘અહમ્માઓ’ અધર્મતઃ=અસત્યવચનરૂપમધર્મ-
 યેવ સ્વીકૃત્ય ‘રાયદુટ્ટં’ રાજદુષ્ટં=નીતિવિરુદ્ધમ્, ‘અવ્મક્કણં’ અભ્યાસ્યા-
 નમ્=અસત્યદોષારોપણં ‘અલિયં’ અલીકં ‘મળંતિ’=અકૃતમપિ કાર્યકલ્પયિત્વા
 જનસમક્ષે કથયન્તિ । કથમિત્યાહ—‘ચોરોત્તિ’ ઇત્યાદિના—‘અચોરિયં કરેતં’
 ઔચાર્યં કુર્વન્તં=અચોરયન્તં જનં પ્રતિ ‘ચોરોત્તિ’ ચોર ઇતિ કથયન્તિ । ‘એમેવ’

और भी मनुष्य जिस प्रकार असत्य भाषण करते हैं उसीको दिख-
 लाते हैं—‘अवरे अहम्माओ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(અવરે) કિતનેક મનુષ્ય (અહમ્માઓ) અસત્ય વચન-
 રૂપ અધર્મ કો હી સ્વીકાર કરકે (રાયદુટ્ટં) નીતિ વિરુદ્ધ (અવ્મક્કણં)
 અસત્ય દોષારોપણરૂપ (અલિયં) અલીક વચન કો (મળંતિ) કહતે
 હૈં, નહીં કિયે ગયે મી કાર્ય કો ઉસમેં કલ્પિત કર જન સમક્ષ મેં કહ
 દિયા કરતે હૈં કિ (અચોરિયં કરેતં ચોરોત્તિ) ચોરી નહીં કરને વાલે
 કો મી ‘યહ ચોર હૈ’ એસા કહ દેતે હૈં, અર્થાત્ જિસને કમી મી ચોરી
 નહીં કી હૈ—એસે પુરુષ કો મી ચોર દેતે હૈં, કહ તથા (એમેવ) હસી

ખીનાં મનુષ્યો પણ જે પ્રકારે અસત્ય બોલે છે તે સૂત્રકાર બતાવે છે—
 “અવરે અહમ્માઓ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“અવરે” કેટલાક માણસો ‘અહમ્માઓ’ અસત્ય વચનરૂપ અધર્મને।
 જે સ્વીકાર કરીને “રાયદુટ્ટં” નીતિવિરુદ્ધ “અવ્મક્કણં” અસત્ય દોષારોપણ
 રૂપ “અલિયં” અલીક વચન “મળંતિ” કહે છે, ન કરાયેલ કાર્યની પણ
 કલ્પના કરીને લોકોની સમક્ષ કહ્યા કરે છે. જેમકે—“અચોરિયં કરેતં ચોરોત્તિ”
 ચોરી ન કરનારને પણ “આ ચોર છે” એવું કહે છે એટલે કે જેણે કદિ
 પણ ચોરી કરી હોય તેવા પુરુષને પણ ચોર તરીકે ઓળખાવે છે, તથા “એમેવ”

સુવર્ણિની ટીકા અં ૨ સૂ ૮ અન્યેવામપિ મૃષાભાષણનિરૂપણમ્

૨૦૭

एवमेव 'उदासीणं' उदासीनं=अविग्रहकारकं तटस्थं प्रति 'डामरिउत्ति वि य' डामरिकः=विग्रहकारी=इत्यपि च भणन्ति । तथा-'दुस्सीलोत्ति' दुस्शील इति=दुष्टाचरणोऽयं जन इति, 'परदारं गच्छति' परदारान् गच्छति=परस्त्रीगमनं करोति, इति च असत्यदूषणवचनेन 'सीयकलियं' शीलकलितं=सदाचारयुक्तं जनं 'मइलित्ति' मलिनयन्ति=लोके कलङ्कयन्ति, 'अयंपि' अयमपि अपिना पूर्वोक्तोऽपि 'गुरुतप्पओ' गुरुतत्पगः कलाचार्यस्त्रीगामि इति भणन्ति । 'अण्णे' अन्ये मृषावादिनः 'उवाहणंता' उपध्नन्तः=परस्य वृत्तिं कीर्त्तिं च नाशयन्तः 'एमेव' एवमेव भणन्ति-अयं 'मित्तकत्ताइं' मित्रकलत्राणि=सुहृद्द्वारात् 'सेवइ' सेवते । 'अयंपि' अयमपि 'लुत्तधम्मा' लुप्तधर्मा=लुप्तो धर्मो यस्य स तथा=धर्मविहीनः अस्ति । तथा 'इमो वि' अयमपि 'विसंभघायओ' विसम्भघातकः=विश्वास-

તરહ (ઉદાસીણ) ઉદાસીન-તટસ્થ હોતા હૈં ઉસકો (ડામરિઓત્તિવિ ય) અર્થાત્-જાગડા નહીં કરને ચાલા 'યહ ડામરિક-વિગ્રહકારી-જાગડા કરને ચાલા હૈં' એસા કહ દિયા કરતે હૈં । (દુસ્મીલોત્તિ) યહ દુઃશીલ-દુષ્ટ આચરણ વાલા હૈં' ઓર (પરદારં ગચ્છતિ) યહ પરસ્ત્રી ગામી હૈં' ઇસ તરહ કે અસત્યદોષારોપક વચનો સે (સીલકલિયં) સદાચારી પુરુષ કો (મઈલિતિ) કલંકિત કર દેતે હૈં । ઓર (અયંપિ ગુરુતપ્પઓ) યહ ઓર વહ ભી ગુરુપત્ની કે સાથ સહવાસ કરને ચાલા હૈં । (અન્ને) કિતનેક મૃષાવાદીજન (ઉવાહણંતા) પરસ્ત્રી આજીવિકા એવં કીર્તિં કા નાશ કરતે હુણ (એમેવ) ઇસી તરહ બોલતે હૈં કિ યહ (મિત્તકલત્તાઈં સેવઈ) અપને મિત્ર કી સ્ત્રી કો સેવન કરને ચાલા હૈં તથા (અયંપિ) યહ (લુત્તધમ્મા) ધર્મ વિહીન હૈં । તથા (ઇમો વિ)

એ જ રીતે “ઉદાસીણ” ઉદાસીન-જે તટસ્થ હોય તેને “ડામરિઓત્તિવિ ય” એટલે કે જાગડો ન કરનારને “આ જાગડો કરનાર છે” એવું કહે છે. તથા “દુસ્મીલોત્તિ” “આ દુષ્ટ આચરણવાળો છે” અને “પરદારં ગચ્છતિ” “આ પરસ્ત્રીગામી છે” આ પ્રકારનાં અસત્ય દોષારોપણ યુક્ત વચનોથી “સીલકલિયં” સદાચારી પુરુષને “મઈલિતિ” તે કલંકિત કરે છે અને અયં પિ ગુરુતપ્પઓ” “તે પણ ગુરુપત્ની સાથે સહવાસ કરનારો છે” એવું ખોટું દોષારોપણ કરે છે. “અન્ને” કેટલાક મૃષાવાદી લોકો “ઉવાહણંતા” અન્યની આશુચિકા અને કીર્તિનો નાશ કરવાને માટે “એમેવ” આ પ્રમાણે બોલે છે- “મિત્તકલત્તાઈં સેવઈ” “તે પોતાની મિત્રપત્નીનું સેવન કરનાર છે” તથા “અયં પિ” તે “લુત્તધમ્મા” ધર્મરહિત છે. તથા “ઇમો

ઘાતી 'પાવકમ્મકારી' પાપકર્મકારી=દુષ્કર્મચરણશીલ: 'અકમ્મકારી' અકર્મ-
કારી=અનુચિતકર્મકારી 'અગમ્મગામી' અગમ્મગામી=ભગિન્યાદિગમનકારી,
ચાસ્તિ । અયં 'દુરપ્પા' દુરાત્મા=દુષ્ટાત્મા 'બહુણુ ય' વહુકૈ: ચ = અનેકૈ:
'પાતમેસુ' પાતકેષુ=પાપકર્મસુ 'જુત્તો' યુક્ત: =સંલગ્ન હતિ । एवं 'મદ્દમે'
મદ્દકે=નિર્દોષે 'મચ્છરી' મત્સરિણ: = પરગુણદ્વેષિણ: 'જંવંતિ' જલ્પન્તિ=
બુલન્તિ । કીદશાસ્તે મૃપાવાદિન: ? इत्याह- 'गुणकिञ्चिन्नेहपरलोकनिष्पिपासा'
વાસા' ગુણકીર્તિસ્નેહપરલોકનિષ્પિપાસા: =ગુણા: = વિનયાર્જવાદય:, કીર્તિ: =
યશ: સ્નેહ: =મૃતેષુ પ્રીતિ:, પરલોક: =જન્માન્તરં તેષુ નિષ્પિપાસા: =નિસકાંક્ષા:
एवमुक्तप्रकारेण एते 'अलिषवयणदक्ष्णा' अलीकवचनदक्ष्णा: =મૃપાભાષણનિપુણા:,
'परदोसुप्पायणसंसत्ता' परदोषोत्पादनसंसत्ता: = પરદોષાવિષ્કરણતત્પરા:

यह (विस्संभवायओ) विश्वामघाती है (पावकम्मकारी) पापकर्मकारी
है, (अकम्मकारी) अनुचित कामों को करता रहता है, तथा (अगम्म-
गामी) अगम्यगामी है-भगिनी आदिका सेवन करने वाला है । (अयं-
दुरप्पा) यह दुरात्मा (बहुएसु य पानमेसु जुत्तो) અનેક પાપકર્મોં મેં
લગા રહતા હૈ । (મદ્દમે) નિર્દોષ પુરુષ મેં (મચ્છરી) દૂસરોં કે ગુણોં સે
દ્વેષ કરને વાલે, તથા (ગુણકિન્ચિન્નેહપરલોકનિષ્પિપાસા) વિનય
આર્જવ આદિ ગુણોં મેં, કીર્તિ મેં તથા સ્નેહ-જીવોં કે ઉપર પ્રીતિ રાખને
મેં ઓર પરલોક મેં આકાંક્ષા વિહીન પુરુષ (एवं પંજંતિ) હસ પ્રકાર
બોલતે હૈ । इन्हें अपने परलोकके सुधार की भी कोई चिन्ता नहीं होती
है । (एवं एए) હસ પ્રકાર યે (અલિષવચનદક્ષ્ણા) અસત્ય બોલને મેં
બડે ચતુર, તથા (પરદોસુપ્પાયણસંસત્તા) દૂસરોં કે દોષોં કો પ્રકટ

वि विस्संभवायओ ” ते विश्वासघाती छे, “ पावकम्मकारी ” पापकृत्यो करे
छे, “ अकम्मकारी ” अनुचित कृत्यो करतारो छे, “ अगम्मगामी ” अगम्यगामी
छे-भगिनी आदिनु सेवन करतार छे, “ अयं दुरप्पा ” आ दुरात्मा “ बहुएसु
य पातमेसु जुत्तो ” अनेक पापकर्मोभां लीन रहै छे ” “ मद्दमे ” निर्दोषपुरु-
षोना “ मच्छरी ” तथा अन्यता गुणोना द्वेष करतार, तथा “ गुणकिञ्चि नेह
परलोक निष्पिपासा ” विनय आर्जव आदि गुणोथी रहित, कीर्ति तथा स्नेहथी
रहित, अने परदोसनी आकांक्षा रहित “ एवं जंवंति ” उपर प्रभाषे भोखे छे.
तेने पोताने परदोस सुधारवानी पण चिन्ता होती नथी. “ एवं एए ” आ
रीते ते “ अलिषवचनदक्ष्णा ” असत्य भोक्षवामां धणो निपुण, तथा “ पर-
दोसुप्पायणसंसत्ता ” अन्यना दोषोने नदरे करवामां न लीन ओयो ते भृषा-

સુદર્શિની ટીકા અ. ૨ સૂ. ૮-૯ અન્યેષામપિ મૃષાભાષણનિરૂપણમ્ ૨૦૯

‘અક્ષય ઇ વીણં’ અક્ષતિકવીજેન=અક્ષય દુઃસ્વકારણેન ‘કમ્મવંધણે’ કર્મ-
વંધનેન ‘અપ્પાણં’ આત્માનં ‘વેદંતિ’ વેદ્યન્તિ, નરકનિગોદાધનન્તદુઃસ્વદાયક
કર્માણિ સમુપાર્જયન્તીત્યર્થઃ । કે તે ? ક્વિદાહ-‘મુદરી’ મુસ્વારયઃ=મુસ્વમેવ અરિઃ
=શત્રુઃ-શત્રુત્વજનકવચનભાષિત્વાદ્ યેનાં તે તથા । ‘અસમિક્ષિયપ્પલાવી’
અસમીક્ષિતપ્રલાપિનઃ=અવિચારિતાનર્થવક્તાર इति ॥ સૂ. ૮ ॥

પુનસ્તે કિં કુર્વન્તિ ? તદાહ-નિક્ષેવે’ ક્વિદાદિ ।

મૂળ-નિક્ષેવે અવહરંતિ પરસ્સ અત્યમ્મિ ગદિય ગિદ્ધા
અભિજુંજંતિ ય પર અસંતર્ણિ હુદ્ધા ય કરેંતિ કૂડ સક્ષિ-
ત્તણં, અસચ્ચા અત્થાલિયં ચ કન્નાલિયં ચ, ભોમાલિયં ચ
તહા ગવાલિયં ચ, ગરુયં ભણંતિ, અહરગઈ ગમણં અણ્ણં
પિ ય જાડકુલરૂવસીલપચ્ચયમાયા નિગુણં ચવલા પિસુણં
પરમદુભેદગમસંતકં વિદેસમણત્થકારણં પાવકમ્મમૂલં
દુદિદ્ધં દુસ્સુયં અમુણિયં નિહ્જ્જં લોગગરહણિજ્જં વહવંધ
પરિકિલેસવહુલં જરામરણદુક્ખસોગનેમં અસુદ્ધં પરિણામ
સંકિલિટ્ટં ભણંતિ ॥ સૂ. ૯ ॥

કરને મેં હી લમે દુષ્ મૃષાવાદી પુરુષ (અક્ષયઈયવીણં) અક્ષતિક વીજ
અક્ષય દુઃસ્વ કે કારણપૂત (કમ્મવંધણે) કર્મવંધન સે (અપ્પાણં)
અપને આપકો (વેદંતિ) પરિવેદિત કરતે હેં, અર્થાત્-નરકનિગોદ
આદિ કે અનંત) દુઃસ્વોં કો દેનેવાલે કર્મોં કો ઉપાર્જિત કરતે હેં । વૈસે
કૌન હોતે હેં ?—(મુદરી) જિનકા મુસ્વ હી વચ્ચુ હોના હૈ, (અસમિ-
ક્ષિયપ્પલાવી) જો વિના વિચાર કિયે હી અનર્થક પ્રલાપ કરનેવાલે
હોતે હેં । વે હી પૂર્વોક્ત પ્રકાર કા અસત્યભાષણ કરતે હેં ॥ સૂ-૮ ॥

વાદી પુરુષ “અક્ષયઈયવીણ” અક્ષતિક હવ-અક્ષય દુઃસ્વને માટે કારણ રૂપ
“કમ્મવંધણે” કર્મવંધનથી “અપ્પાણં” ચોતાની વાતને “વેદંતિ” પરિવેદિત
કરે છે, એટલે કે નરક નિગોદ આદિનાં અનન્ત દુઃખો દેનાર કર્મોં ઉપાર્જન
કરે છે એવા કોણ હોય છે ?—“મુદરી” જેમનું મુણ જ તેમનો શત્રુ હોય છે,
અને “અસમિક્ષિયપ્પલાવી” જે વિના વિચારે અનર્થક પ્રલાપ કરનાર હોય
છે. તેઓ જ પૂર્વોક્ત પ્રકારનું અસત્ય ભાષણ કરે છે ॥ સૂ-૮॥

ટીકા-‘પરસ્સ’ પરસ્ય=અન્ય સમ્બન્ધિનિ ‘અત્થમ્મિ’ અર્થે=ધને ‘ગદ્ધિયગિદ્ધા’ ગ્રથિતગદ્ધા:=અત્યંતલોલુપાઃ ‘નિક્કલેવે’ નિક્કલેપાન્=ન્યાસાન્ ‘ધરોહર’ તથા ‘થાપન’ इति भाषाप्रसिद्धम्, ‘અવહરંતિ’ અવહરન્તિ ‘ન હિ તયા મત્પાર્થે સ્થાપિત’ મિત્યુત્તથા સર્વથા અપલપન્તિ । ‘અભિજુંજંતિ ય’ અભિયોજયન્તિ ચ=વરમ્ ‘અસં-તર્ણિ’ અસદ્ધિઃ=અવિદ્યમાનૈર્દોષૈઃ । તથા ‘લુદ્ધા ય’ લુઘ્વાશ્ચ=પરધનલોલુપાઃ ધનલોભેન ‘કૂઢસક્કિલ્લત્થણં’ કૂટસાક્ષિત્વં ‘કરેતિ’ કુર્વન્તિ । ચકારાદ્ ગ્રન્થિમો-ચક્ત્વપશ્યતો હરત્વાદિકમપિ વિજ્ઞેયમ્ । ‘અસચ્ચા’ અસત્ત્યાઃ = અસત્યવાદિનઃ ‘અત્થાલિયં’ અર્થાલીકં=અર્થાચ=ધનાદિ પ્રયોજનાય અલીકં, તથા ‘કન્નાલિયં’ કન્યાલીકં=કુમારી વિષયકમલીકં, યથા-સુશીલાં કન્યાં દુઃશીલાં, દુશીલાં ચ સુશીલા મિત્યાદિ કથયન્તિ । इदं लोकेऽतिगर्हितत्वाद्वाचं तेन उपलक्षणमेतत्-मनुष्यजातिविषयकमस्तालोकस्य । ‘મોમાલીયં’ ભૂમ્પલીકં=પૃથિવીનિમિત્ત-મસત્યં-‘તદ્દા’ તથા ‘ગવાલિયં’ ગવાલીકં=ગોસમ્બન્ધિકમસત્યં ‘ગરહ્યં’ ગુરુકં

फिर वे क्या करते हैं सो कहते हैं-‘निकलेवे’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ-(પરસ્સ અત્થમ્મિ ગદ્ધિયગિદ્ધા) દૂસરોં કે ધન મેં અત્યંત લોલુપ બને હુણ યે (નિકલેવે અવહરંતિ) ધરોહર કો-‘ તુમને મેરે પાસ નહીં રહી હૈ ” એસા કહકર દવા લેતે હૈ । તથા (અભિજુંજંતિ ય પરં અસંતર્ણિ) દૂસરોં કો અવિદ્યમાન દોષોં સે દૂષિત કર દેતે હૈ । (લુદ્ધા ય કૂઢસક્કિલ્લત્થણં કરેતિ) પરધન કે લોભ સે લુઘ્વ બને હુણ યે ક્ષુઢી ગવાહી દેતે હૈ તથા (ચ) શબ્દ સે દૂસરોં કી ગાંઠ કતર લેતે હૈ તથા દેખતે દેખતે ધન ભી ચુરા લેતે હૈ । (અસચ્ચા) યે અસત્યવાદી (અત્થાલિયં) અર્થાલીક, (કન્નાલિયં) કન્યાલીક, (મોમાલિયં) ભૂમ્પ-

વળી તેઓ શું કરે છે તે સૂચકાર કહે છે-“ નિકલેવે ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-“પરસ્સ અત્થમ્મિ ગદ્ધિયગિદ્ધા” બીજાના ધનને માટે લોલુપ અનેકા તે “નિકલેવે અવહરંતિ” ધરોહરને-અનામત થાપણને પચાવી પાડવા માટે આ પ્રમાણે કહે છે-“તમે મારે ત્યાં તમારી થાપણ મૂકી જ નથી.” તથા “અભિ-જુંજંતિ ય પરં અસંતર્ણિ” બીજા લોકોમાં-તેમનામાં ન હોય તેવા દોષોનું આરોપણ કરીને તેમને કલંકિત કરે છે.

“લુદ્ધા ય કૂઢસક્કિલ્લત્થણં, કરેતિ” પારકાના ધનને લોભે તેઓ ખોટી સાક્ષી આપે છે તથા “ચ” શબ્દથી બીજાનાં ખીરમાં કાપે છે અને ભેત ભેતામાં ધન પાણ ચોરી લે છે. “અસચ્ચા” તે અસત્યવાદી લોકો “અત્થા-લિયં” અર્થાલીક, “કન્નાલિયં” કન્યાલીક, “મોમાલિયં” ભૂમ્પલીક, “તદ્દા”

=મહદસત્યં ભગન્તિ યેન જિહ્વાછેદનાદિકં ભવતીત્યર્થઃ । ‘અહરગઈગમનં=અધર-ગતિગમનં=અધરગતૌ ગમનં યેન તત્ તથા=નરકાદ્યધોગતિગમનકારગમ્ । ‘અર્ણપિ ચ’ અન્યદપિ ચ અસત્યં બ્રુવન્તિ, તદેવાહ--‘ જાઙ્કુલરૂવસીલપચ્ચમાયાનિગુણં જાતિકુલરૂપસીલપત્યયમાયાનિગુણં=તત્ર જાતિઃ=માતૃપક્ષઃ, કુલં=પિતૃપક્ષઃ, રૂપમ્=લીક, (તહા) તયા (ગવાલિયં) ગવાલીક, (ગરુયં) વદૃત અધિકરૂપ મેં (અર્ણંતિ) વોલતે હૈં । ધનાદિ પ્રયોજન કે લિયે જો જૂઠ વચન બોલે જાતે હૈં । વહ અર્થાલીક હૈ, ધનાદિ પ્રયોજન કે લિયે જો જૂઠ કહના હોતા હૈ વહ કન્યાલીક હૈ-જૈસે-સુશીલા કહના, ઔર દુઃશીલા કો સુશીલા કહના આદિ । પૃથિવી નિમિત્ત જો જૂઠ બોલા જાતા- વહ ભૂમ્યલીક હૈ જૈસે-અનુર્ધરા ભૂમિકો ઊર્ધરા કહના આદિ । ગાય કે વિષય મેં જો અસત્ય બોલા જાતા હૈં ઉસકા નામ ગવાલીક હૈ, જૈસે-નહીં દૂધ દેનેવાલી ગાય કો દૂધ દેનેવાઠી કહના, કમ દૂધ દેનેવાલી ગાય કો વદૃત દૂધ દેનેવાલી કહના આદિ । ઇસ અસત્ય મેં જિહ્વાછેદ આદિ દંડ હોતા હૈં ઇસલિયે ઉસકો ગુદકબડા અસત્ય કહા હૈ, તથા (અહરગઈગમનં) નરક આદિ અધોગતિયોં મેં ગમન કારને વાલે એસે (અર્ણપિ) ઔર બી વિવિધ પ્રકાર કે (જાઙ્કુલરૂવસીલપચ્ચમાયાનિગુણં) અપની જાતિ, કુલ, રૂપ, સ્વભાવ યે હૈં કારણ જિનકે એસે તથા માયાનિગુણં-અપ્રશંનીય કી પ્રશંસા-પ્રશંસનીયજન કી નિન્દારૂપમાયા વાલા હોને સે નિગુણ-

તથા “ ગવાલિય ” ગવાલીક “ ગુરુયં ” બહુ જ વધારે પ્રમાણમાં “ મર્ણતિ ” બોલે છે. ધન આદિને ખાતર જે જૂઠાં વચનો બોલાય છે તે અર્થાલીક કહેવાય છે કન્યાની ખાળતમાં જે અસત્ય કહેવામાં આવે છે તે કન્યાલીક કહેવાય છે, જેમ કે સુશીલ કન્યાને દુઃશીલ કહેવી અને દુઃશીલને સુશીલ કહેવી. જમીન આદિને નિમિત્તે જે જૂઠાં વચનો બોલાય છે તે ભૂમ્યલીક છે જેમ કે અનુપ-બાઉ જમીનને ઉપબાઉ બતાવી આદિ. ગાયને વિષે જે અસત્ય બોલાય છે તેને ગવા-લીક કહે છે, જેમ કે દૂધ ન દેનારી ગાયને દૂધ દેનારી કહેવી, બોણું દૂધ દેનારી ગાયને વધુ દૂધ દેનારી કહેવી આદિ ગવાલિકનાં દષ્ટાંતો છે. આ અસત્યમાં છહાનું છેદન આદિ શિક્ષા થાય છે તેથી તેને ગુરુક-મોટું અસત્ય કહેલ છે. તથા “ અહરગઈગમનં ” નરક આદિ અધોગતિયોમાં ગમન કરાવનાર એવાં “ અર્ણપિ ” ખીજાં પણ વિવિધ પ્રકારનાં “ જાઙ્કુલરૂવસીલપચ્ચમાયા-નિગુણં ” પોતાની જાતિ, કુળ, રૂપ, સ્વભાવ આદિ જેનાં કારણો છે એવાં, તથા માયાનિગુણ-અપ્રશંસનીયની પ્રશંસા અને પ્રશંસનીય જનની નિન્દારૂપ-માયાવાળાં હોવાથી નિગુણ-સ્વપરહિત, એવાં વચનોને બોલ્યા કરે છે. માતૃ

આકૃતિઃ, શીલં ચ=સ્વભાવઃ, એતાનિ પ્રત્યયઃ=કારણં યસ્ય તત્ માયાનિગુણં ચ= નિન્દનીયસ્ય પ્રશંસા પ્રશંસનીયસ્ય નિન્દા માયા તત્સત્ત્વાદેય નિગુણં=ગુણરહિતે સ્વપરહિતાદિર્વર્જિતં 'ચવલા' ચવલાઃ=અસ્થિરાન્તઃકરણાઃ મૃષાવાદિનો ભળન્તિ । પુનઃ કથં ભૂતમલીકમિત્યાહ—' પિશુણં ' પિશુણં=પરદોષાવિષ્કરણરૂપં ' પરમદ્વભેદગં' પરમાર્થભેદકં=પરમાર્થો=મોક્ષઃ, તત્પ્રતિવાતકમ્ ' અસંતર્ક ' અસત્કમ્=પરમાર્થ-વર્જિતં ' વિદેસં ' વિદ્રેષ્યમ્=અપ્રિયમ્ ' અણત્થકારગં ' અનર્થકારકં=ધર્માદિપુરુષાર્થ વિવાતેન નરકગમનજનનમરણાદ્યનર્થજનકં ' પાવકમ્મમૂલં=પાપકર્મમૂલં પાપં જ્ઞાના-વરણાદિકર્મ તત્કારણં ' દુદ્દિટ્ટં દુર્દૃષ્ટં=દુષ્ટં દૃષ્ટં યત્ર તત્ દુર્દૃષ્ટં=કુત્સિતદર્શનં ' દુસ્સુયં' દુઃશ્રુતં=દુષ્ટં શ્રુતં યત્ર તત્તથા દુશ્રુતં=દુષ્ટશ્રવણમ્ ' અમુણિયં ' અજ્ઞાનં=અજ્ઞાનરૂપં

સ્વપરહિતવર્જિત એસે વચનોં કો બોલા કરતે હૈં । માતૃ પક્ષ કા નામ જાતિ, પિતૃ પક્ષ કા નામ કુલ, રૂપ કા નામ આકૃતિ ઔર શીલ કા નામ સ્વભાવ હૈ । તથા (ચવલા) જો અસ્થિર અન્તઃ કરણવાલે મૃષાવાદી જન હોતે હૈ વે પિશુનાદિ વિશેષણોં વાલે અસત્ય વચન બોલતે હૈં । વે હસ પ્રકાર જો વચન (પિશુણં) પર કે દોષોં કે પ્રકટ કરને વાલે હોતે હૈં । (પરમદ્વભેદગં) પરમાર્થ-મોક્ષ કે ભેદક હોતે હૈં । (અસંતર્ક) અસત્કં પરમાર્થ સે રહિત હોતે હૈં । (વિદેસં) વિદ્રેષ્ય-અપ્રિય હોતે હૈં । (અણ-ત્થકારગં) અનર્થકારક-ધર્માદિક પુરુષાર્થ કે વિવાતક હોને સે નરક ગમન જનન મરણાદિરૂપ અનર્થ કે ઉત્પાદક હોતે હૈં । (પાવકમ્મમૂલં) પાપકર્મ કે મૂલ-જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મ કે કારણ-હોતે હૈં । (દુદ્દિટ્ટં) દુર્દૃષ્ટ-દુષ્ટ દર્શનવાલે હૈં-અર્થાત્-હન વચનોં દ્વારા જો દર્શન પ્રતિપાદિત ક્રિયા જાતા હૈ વહ કુત્સિત-સદોષ હોતા હૈ । (દુસ્સુયં) દુઃશ્રુત હોતે હૈ-

પક્ષને જાતિ, પિતૃ પક્ષને કુળ, રૂપને આકૃતિ અને શીલને સ્વભાવ કહે છે. તથા “ચવલા” અર્થજનનવાળા મૃષાવાદી લોકો પિશુનાદિ વિશેષણોવાળાં અસત્ય વચનો બોલે છે. તે આ પ્રમાણે છે એ વચન “પિશુણં” અન્યના દોષોને પ્રગટ કરનારા હોય છે, “પરમદ્વભેદગં” પરમાર્થ-મોક્ષને ભેદનાર હોય છે. “અસંતર્ક” અસત્ક-પરમાર્થ રહિત હોય છે, “વિદેસં” વિદ્રેષ્ય-અપ્રિય હોય છે, “અણત્થકારગં” અનર્થકારક-ધર્માદિ પુરુષાર્થના વિવાતક હોવાથી નરક ગમન જનક મરણાદિરૂપ અનર્થના ઉત્પાદક હોય છે, “પાવકમ્મમૂલં” પાપ-કર્મનું મૂળ-જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મનું-કારણ હોય છે, “દુદ્દિટ્ટં” દુર્દૃષ્ટ-દુષ્ટ-દર્શનવાળાં છે, એટલે કે ને વચનો દ્વારા જે દર્શનનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે તે કુત્સિત-સદોષ હોય છે, “દુસ્સુયં” દુઃશ્રુત-જેને સાંભળવાનું પણ કોઈ

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૨ સૂ૦ ૧-૧૦ અન્યેવામપિ મૃવાભાષણનિરૂપણમ્ ૨૧૩

‘નિહ્વજ્જં’ નિર્લજ્જં=લજ્જાવર્જિતં ‘લોગગરહણિજ્જં’ લોકગર્હણીયં = સર્વજન નિન્દનીય ‘વહ્વંધપરિકિલેસવહુલં’ વધવન્ધપરિકિલેસવહુલં=તથ વધઃ=મારણં વન્ધઃ=રજ્વાદિના વન્ધનં પરિકલેશઃ=દુઃસ્વસન્તાપસ્તે વહુલા અધિકાઃ યસ્મિન્નલીકે તત્તથા મૃવાભાષણેન હિ એતે ભવન્ત્યેવ મૃવા ભાષિણાં ‘જરામરણદુઃસ્વસોગનેમં’ જરામરણદુઃસ્વશોકાનાં નેમમ્=અવધિભૂતમ્ ‘અમુદ્વપરિણામસંકિલિટ્વં’ અમુદ્વ-પરિણામસંકિલિટ્વં = અમુદ્વેન=અમુકેન પરિણામેન સંકિલિટ્વં=વ્યાપ્તમલીકં ભળન્તિ ચપલા इति પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

કીદશાસ્તે? इत्याह—‘अलिपा हि’ इत्यादि ।

મૂલમ્—અલિયાહિ સંધિસંનિવિટ્ઠા અસંતગુણુદીરગા ય સંતગુણ નાસકા ય હિંસા મૂઝોવ ઘાઇયં અલિયં સંપડત્તા વચણં

इनका सुनना भी कोई भी सत्यवादी पसंद नहीं करता है । (अमुणियं) ये अमनोज्ञ होते हैं । अथवा अज्ञानरूप होते हैं—इनसे वास्तविक वस्तु का बोध नहीं होता है । (निह्वज्जं) निर्लज्ज-लज्जावर्जित होते हैं—अर्थात् ऐसे वचन बोलने वालों को किसी भी प्रकार की लज्जा नहीं आती है । (लोगगरहणिज्जं) जिन वचनों की समस्तजन निन्दा किया करते हैं । (वह्वंधपरिकिलेसवहुलं) जो इन वचनों को बोलते हैं वे व्यक्ति इन वचनों के कारण बहुत अधिक वध, बंधन और परिकलेश को पाते हैं । (जरामरणदुःस्वसोगनेमं) ये वचन जरा, मरण, दुःस्व एवं शोक के हेतुभूत होते हैं । (अमुद्वपरिणामसंकिलिट्वं) इनके बोलने वालों के परिणाम अजुमहोते हैं । इस प्रकार के असत्य वचनों को चपल पुरुष बोलते हैं ॥सू-१॥

સત્યવાદી પસંદ કરતાં નથી “અમણુવં” તે અમનોજ્ઞ હોય છે—અજ્ઞાનરૂપ હોય છે—તેમનાથી વાસ્તવિક વસ્તુનો બોધ થતો નથી, “નિહ્વજ્જં” નિર્લજ્જ લજ્જાવર્જિત હોય છે, એટલે કે એવાં વચનો બોલનારને કોઈ પ્રકારની શરમ આવતી નથી, “લોગગરહણિજ્જં” જે વચનોની સઘળા લોકો નિન્દા કરે છે, “વહ્વંધપરિકિલેસવહુલં” એવાં વચનો બોલનાર માણસ તે વચનોને કારણે ઘણો વધારે વધ, બંધન અને પરિકલેશ પામે છે. “જરામરણદુઃસ્વ સોગનેમં” તે વચનો જરા, મરણ, દુઃસ્વ અને શોકનાં હેતુભૂત હોય છે. “અમુદ્વ પરિણામસંકિલિટ્વં” તેવાં વચનો બોલનારનાં પરિણામ—મનોભાવ—અશુભ હોય છે. આ પ્રકારનાં અસત્ય વચનો અંચળ વૃત્તિના માણસો બોલે છે. ॥ સૂ-૬ ॥

સાવજ્ઞમકુસલં સાહુગરહણિજ્ઞં અધમ્મજળણં ભળંતિ અળહિગય-
પુણ્ણપાવા પુણો વિ અહિકરણ કિરિયપાવત્તગા વહુધિહં અનરથ
અવમદં અપ્પણો પરસ્સ કરેતિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—‘અલિયાહિ સંધિ સંનિવિટ્ઠા’ અલીકામિ સન્નિવસન્નિવિટ્ઠા: = અલી-
કવાદે ચોડમિસન્ધિ: = અભિપ્રાયસ્ત્ર સન્નિવિટ્ઠા: = સંસ્થિતા: ‘અસંતગુણુદીરગા’
અસદગુણોદીરકા: = અવિદ્યમાનગુણકથકા: ‘સંતગુણનાસગા ય’ સદગુણનાશકાશ્ચ
= વિદ્યમાનગુણાપલાપકા: ‘અલિયસંપરુત્તા’ અલીકસમ્પરુત્તા: = અસત્યભાષણત-
ત્પરા: ‘હિંસા ભૂઓવઘાઈયં’ હિંસાભૂતોપઘાતિકં = યસ્ય કથનેન જાયમાનયા
હિંસયા ભૂતાનાં = પ્રાણિનામ્ = ઉપઘાત: = વિનાશો યેન ભવતિ તત્તાદૃશં ‘સાવજ્ઞં’
સાવઘં = સપાપમ્ ‘અકુસલં’ અકુશલમ્ = સર્વપ્રાણિનામહિતકરં ‘સાહુગરહણિજ્ઞં’
સાધુગર્હણીયમ્ = મહાપુરુષૈસ્તીર્થકરગણધરૈર્નિન્દિતં ‘અધમ્મજળણં’ અધર્મજનનમ્ =
પાપોત્પાદકમ્ ઇતાદૃશં ‘વયણં’ વચનં ભળન્તિ । પુનઃ કથં ભૂતાસ્તે ? ઇત્યાદ—

ફિર બે કૈસે હોતે હૈં સો કહતે હૈં—‘અલિયાહિ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(અલિયાહિ સંધિસંનિવિટ્ઠા) અલીકવાદ કે અભિપ્રાય મેં
સંસ્થિત મૃપાવધી (અસંતગુણુદીરગા) અવિદ્યમાનગુણો કે કહને વાલે
ઔર (સંતગુણનાસગા ય) વિદ્યમાન ગુણો કે લોપ કરને વાલે હોતે હૈં
(અલિય સંપરુત્તા) હસી તરહ અસત્યભાષણ કરને મેં તત્પર બને હુઈ
બે (હિંસાભૂઓવઘાઈયં) જિનવચનોં કે કહને સે પ્રાણિયોં કા હિંસા
દ્વારા વિનાશ હો જાતા હૈં ઇસે (સાવજ્ઞં, સાવઘ, (અકુસલં) સર્વ-
પ્રાણિયોં કે અહિતકારક, (સાહુગરહણિજ્ઞં) સાધુ પુરુષોં દ્વારા ગર્હણીય,
ઈબં (અધમ્મજળણં) અધર્મજનક (વયણં) વચનોં કે કહને સે (ભળંતિ)

બળી તે કેવાં હોય છે તે સૂત્રકર કહે છે—“અલિયાહિ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“અલિયાહિ સંધિસંનિવિટ્ઠા” અલીકવાદના અભિપ્રાયમાં રહેલ મૃપાવાદી
“અસંતગુણુદીરગા” અવિદ્યમાન-અસ્તિત્વ વિનાના શુભેતુ કથન કરનાર અને
“સંતગુણનાસગા ય” વિદ્યમાન શુભેતુને છુપાવનાર હોય છે, “અલિયસંપરુત્તા”
આ રીતે અસત્ય બોલવાને તત્પર થયેલ તેઓ “હિંસાભૂઓવઘાઈયં” પ્રાણી-
ઓની હિંસા થાય તેવાં “સાવજ્ઞં” સાવઘ, “અકુસલં” સમસ્ત પ્રાણીઓતું
અહિત કરનારાં “સાહુગરહણિજ્ઞં” સાધુ પુરુષો દ્વારા નિંદ અને “અધમ્મજળણં”
અધર્મજનક “વયણં” વચનો બોલે છે. “અળહિગયપુણ્ણપાવા”

શુદ્ધિની ટીકા અં ૨૨૦ ૧૦-૧૧ મૃષાવાદીનાં જીવધાનકલ્પનનિરૂપણમ્ ૨૧૫

‘અણહિગયપુણપાવાઃ અનધિગતપુણ્યપાપાઃ = પુણ્યપાપજનિતફલજ્ઞાનવિકલાઃ, ‘પુણો વિ’ પુનરવિ ‘અધિકરણકિરિયાપવત્તગા’ અધિકરણક્રિયાપ્રવર્તકાઃ—અધિકરણ પાપારમ્ભઃ તસ્ય ક્રિયા=વ્યાપારઃ તસ્ય પ્રવર્તકાઃ, ‘અપ્પણો પરસ્સ ચ’ આત્મનઃ પરસ્ય ચ ‘બહુવિહં’ બહુવિધમ્ ‘અણત્થં’ અનર્થ ‘અવમદં’ અવમર્દં = વિનાશં ‘કરેતિ’ કુર્વન્તિ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

પુનઃ કિં કુર્વન્તી ? ત્યાહ—‘એવમેવે’ ત્યાદિ ।

મૂલમ્—એવમેવ જંપમાણા મહિસે સૂચકરે ય સાહેતિ ઘાય-
ગાણં, સસપસયરોહિસે ય સાહેતિ વાગુરાણં, તિત્તિરવટ્ઠકલાવે
ય કવિંજલ-કથોયગે, ય સાહેતિ સડણીણં, ઇસમગરકચ્છમે
ય સાહેતિ મચ્છિયાણં, સંલંકે સુલ્લપ્પ ય સાહેતિ મગરાણં, અય-
ગર-ગોણસ-મંડલિ દલ્લીકર મડલી ય સાહેતિ વાલિયાણં,
ગોહા સેહા ય સલ્લગ સરડપ્પ ય સાહેતિ લુદ્ધગાણં, ગયકુલ
વાનરકુલે ય સાહેતિ પાસિયાણં, સુકવરહિણમયણસાલકોદ્દલ
હંસકુલે સારસે ય સાહેતિ પોસગાણં, વધવંધજાયણં ચ સાહેતિ
ગોમ્મિયાણં, ધણધન્નગવેલપ્પ ય સાહેતિ તક્કરાણં, ગામનગર
પટ્ટણે ય સાહેતિ ચારગાણં પારઘાયગ પંથઘાયગે સાહેતિ ગંધિ
મેયાણં, કયં ચ ચોરિયં ણગરગુત્તિયાણં સાહેતિ લંછણં નિલ્લંછણ-

બોલતે હૈં । (અણહિગયપુણપાવા) તથા જો પુણ્ય ઓર પાપ કે ફલ
જ્ઞાન સે રહિત હોતે હૈં । તથા (પુણો વિ અધિગરણકિરિયાપવત્તગા)
ધાર ૨ પાપારંભ કી ક્રિયાઓં કે પ્રવર્તક હોતે હૈં વે (અપ્પણો પરસ્સ ચ)
અપના ઓર પર કા (બહુવિહં) અનેકવિધ (અણત્થં) અનર્થ ઓર
(અવમદં) વિનાશ (વિરાધના) (કરેતિ) કરતે હૈં ॥ સૂ. ૧૦ ॥

તથા જે પુન્ય અને પાપના જ્ઞાનથી રહિત હોય છે, તથા “ પુણો વિ
અધિગરણ કિરિયાપવત્તગા ” વારંવાર પાપારંભની ક્રિયાઓનાં પ્રવર્તક હોય છે,
તે “ અપ્પણો પરસ્સ ચ ” પોતાનું અને પારકાનું “ બહુવિહં ” અનેક પ્રકારે
“ અણત્થં ” અહિત અને “ અવમદં ” વિનાશ “ વિરાધના ” “ કરેતિ ” કરે છે ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ધમણદુહણપોસળવળણદુવળવાહણાદિયાઈ સાહેતિ બહૂણિ
ગોમિયાણં, ધાડ-મણિ-સિલ-પ્પવાલ-સ્યણાગરે ય સાહેતિ
આગરીણં, પુપ્ફવિહિં ચ ફલવિહિં ચ સાહેતિ માલિયાણં
અત્થમદુહકોસણ ય સાહેતિ વળચરાણં ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકા—‘એવમેવ જંપમાણા’ એવમેવ જલ્પન્તઃ=પૂર્વોક્તરીત્યા સાવધમબુદ્ધિ-
પૂર્વકં વક્ષ્યમાણં ભાષમાણા; ‘મહિસે સૂકરે ય સાહેતિ ઘાયગાણં’ મહિષાન્
સૂકરાંશ્ચ સાધયન્તિ ઘાતકાનાં=‘તસ્મિન્ વને વહસો મહિપાસૂકરાશ્ચ સન્તિ ગચ્છ
તત્રે’ ત્યાદિ તેષાં ઘાતકાન્ પ્રતિ કથયન્તિ તથા ‘સસપસયરોહિસે ય સાહેતિ
વાગુરીણં’ શશપસયરોહિપાંશ્ચ સાધયન્તિ વાગુરીણાં=તત્ર શશા=મસિદ્ધા; પસય=
દેશી શબ્દોડયં મૃગચાક; રોહિપાઃ=મૃગવિશેષા એવ, તાન્ જાહેન મૃગઘાતકાન્
પ્રતિ ‘તત્ર મૃગાઃ-સન્તી’તિ સાધયન્તિ=કથયન્તિ, તિત્તિરવટ્ટગલાવગે ય કવિંજલ-

ફિર કપા કરતે હૈ સો કહતે હૈ—‘એવમેવ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(એવમેવ) પૂર્વોક્ત રીતિ સે અબુદ્ધિપૂર્વક (જંપમાણા) વક્ષ્ય-
માણ આગે કહે જાને વાળે સાવધ વચનોં કો કહતે હુણ વે મહિષાદિ
પ્રાણિયોં કો શિકારી કે લિયે વતલા દેતે હૈ વે હસ પ્રકાર—(મહિસે સૂકરે
ય ઘાયગાણં સાહેતિ) મહિષોં ઓર સૂકરોં કો મરવાને કે અભિપ્રાય
સે ઘાતકોં કે પ્રતિ “ ઉસ વન મેં જાઓ વહાં અનેક મહિષ ઓર સૂકર
હૈ ” હસ પ્રકાર કહતે હૈ । તથા (સસપસયરોહિસે ય સાહેતિ વાગુરીણં)
શશ-ચરગોશ, પસય-મૃગ એવં રોહિષ-મૃગ વિશેષ, હનૈ વાગુરિકોં-
જાલ સે પકડુને વાળે મૃગ ઘાતકોં સે અર્થાત્ અહેરિયોં સે-જાઓ ઉસ
વન મેં વહુત સે મૃગ આદિ જાનવર હૈ હનૈ મારો ” હસ પ્રકાર કહતે

વળી તે મૃગવાદી શું કરે છે તે કહે છે—“ એવમેવ ” इत्यादि

ટીકાર્થ—“એવમેવ” પૂર્વોક્ત પ્રકારે અબુદ્ધિપૂર્વક “જંપમાણા” આગળ કહેવામાં
આવનાર સાવધ (પાપયુક્ત) વચનો કહીને તેઓ મહિષાદિ પ્રાણીઓ શિકારીને
ખતાવી દે છે. તે આ પ્રમાણે છે.

“ મહિસે સૂકરે ય ઘાયગાણં સાહેતિ ” પાડા અને સૂવરની હત્યા કરવાને
માટે શિકારીઓને તે કહે છે કે “ આ વનમાં બહો. ત્યાં અનેક પાડા અને
સૂવર છે ” તથા “ સસપસયરોહિસે ય સાહેતિ વાગુરીણં ” તથા સસલાં, મૃગ
અને રોહિષ-મૃગ વિશેષ-ને બાગથી પકડનાર વાધરી આદિ મૃગઘાતકોને તે કહે
છે કે “ બહો, આ વનમાં બહુ મૃગાદિ જાનવરો છે, તેમને મારો ” ‘તિત્તિ-

सुदर्शिनी टीका अ० २ सू० ११ मृगवादीनां जीवघातकवचननिरूपणम् २१७

कथोप य साहेति सउणीणं ' नित्तिरवर्तकयावकांश्च कपिजलकरोतकांश्च साधय-
न्ति शाकुनिकानां, तित्तिराः—प्रसिद्धाः, वर्तकाः='वटेर' इति भाषा प्रसिद्धाः
लावकाः=लावा इति भाषा प्रसिद्धाः कपिजलाः=तन्नामकपक्षिशेषाः 'कुरञ्ज'
इति प्रसिद्धाः, क्षापोतकाः=पारापतकाः 'कवूतर' इति भाषा प्रसिद्धाः एतान्
शाकुनिकानां=पक्षिघातकान् प्रति दर्शयन्ति 'असमगरकच्छमे य साहेति मच्छि-
याणं' अयमकरकच्छपांश्च साधयन्ति मत्सिकानां=झपाः मत्स्याः मकरकच्छपाश्च
=प्रसिद्धास्तान् दन्तु मत्सिकानां=मत्स्याः एष्यं येषां ते मात्सिका धीवरास्तान्
प्रति जलाशयादिकं दर्शयन्ति 'संखंके खुल्लगे य साहेति मगराणं' शङ्खद्वान् झुल्ल-
कांश्च साधयन्ति मकराणां शङ्खाः=प्रसिद्धा अङ्गाः=तज्जातीयाः झुल्लकाः 'कोडी'
इति भाषा प्रसिद्धा एतान् मकरतुल्यजलविहारि धीवरान् कथयन्ति 'अयगर=
गोणसमंडलिदब्बीकरमंडलीय साहेति बालियाणं' अयगर गोमलमण्डलि दर्वी-
कर मुकुलिनश्च साधयन्ति झलपानां=तत्र अजगराः=पतीताः सर्पविशेषाः, गोमलाः
फणरहिताः द्विमुखमर्षाः, मण्डलिनः=सर्पविशेषाः, दर्वीकराः=फणकारकाः सर्पाः,
मुकुलिनः=ईषत् फणकारकास्तान् व्यालपानां=व्यालग्राहकान् प्रति सर्पस्थलानि
हैं (नित्तिर वट्टग लावगे य कपिजलकथोप य साहेति सउणीणं) तथा
तीतरों को, वटेरों को लावापक्षियों को, कपिजलों को और कवूतरों को
शाकुनिकों—इनके नारने वालों के लिये बनला देते हैं (असमगरकच्छमे
य साहेति मच्छियाणं) तथा धीवरों—मच्छीमारों के लिये मच्छियों, मगरों
एवं कच्छपों के जलाशयों को दिखाला देते हैं । (संखंके खुल्लगे य
साहेति मगराणं) तथा (मगराणं) जल में फिरने वाले धीवरों के
लिये ये शंखों के, अंकोंके—विशेष प्रकार के शंखों के, झुल्लकों के—कोडियों
के स्थानों को बनला देते हैं । (अयगर—गोणस—मंडलि—दब्बीकर—
मंडली य साहेति बालियाणं) तथा जो व्यालिक सपेरे—सांप पकड़ने
वाले होते हैं उन्हें अजगर के, गोमल दुल्लही के, मंडली के, दर्वीकर—
फणा फैलाने वाले सांप के, मुकुली—थोड़े रूप में फणा तानने वाले

खट्वागलवगे य कपिजलकथोप य साहेति सउणीणं " तथा तीतर, अट्टेरपक्षीओ
लावा पक्षीओ, कपिजको अने कवूतर आदि पक्षीओ शाकुनिको (पारधीओ)
ने अतावी दे छे. " असमगरकच्छमे य साहेति मच्छियाणं " तथा माछीपारने
माछडीओ, मगरओ अने अयगा के अण्णाशयोमां दीध ने अण्णाशयो अतावी दे छे.
" संखंके खुल्लगे य साहेति मगराणं " तथा " मगराणं " अण्णासां इरनारा धीवशने
अंभोनां, अटोना विशेष प्रकारना अंभडा. अने झुल्लकेनां—कोडीओनां स्थाने अतावी
दे छे " अयगर—गोणस—मंडलि—दब्बीकर मंडलीय साहेति बालियाणं " तथा व्यालि-
कने साप पकड़नारने अजगरनां, जे सुणवाणा गोमलनां, मंडलीनां, दर्वीकरनां—

કથયન્તિ, 'ગોહાસેહાયસહ્યગસરહગે ય સાહેતિ લુદ્ગકાણં' ગોધા: સેહાંશ્ચ શલ્યક શરટકાંશ્ચ સાધયન્તિ લુબ્ધકાનાં ગોધા: = મુનપરિસર્પવિશેષા: 'ગોહા: ' ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધા:; સેહાશ્ચ = મુનપરિસર્પવિશેષા એવ 'સહસહેલી' ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધાસ્તાન, શલ્યક શરટકાંશ્ચ-શલ્યકા: 'સીસોલિયા' ઇતિ પ્રસિદ્ધા:; શરટકાશ્ચ = કૂકલા-સાશ્ચ 'ગિરગિટ' કરંગેટિયા ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધાસ્તાન, લુબ્ધકાનાં = પાપર્ષિકાન્ 'શિકરી' ઇતિ પ્રસિદ્ધાન્ પ્રતિ કથયન્તિ । 'ગયકુલવાનરકુલે ય સાહેતિ પાસિયાણં' ગયકુલવાનરકુલાનિ ચ સાધયન્તિ પાશિકાનાં = ગયકુલાનિ વાનરકુલાનિ ચ પાશિકાનાં પાશેન = ગયવન્થ વિશેષેણ ચરન્તિ યે તે પાશિકા: ગયાદિવન્થનકારકાસ્તાન કથયન્તિ । 'સુકવરહિણમયણસાલકોદ્લહંસકુલે સારસે ય સાહેતિ પોમગાણં' શુકવર્દિમદનસાલકોદ્લહંસકુલાનિ સારસાંશ્ચ સાધયન્તિ પોપકાણાં = તત્ર શુકા: પ્રસિદ્ધા:; વર્દિણો મયૂરા: મદનશાલા: = સારિકા:; કોકિલા:; હંસાશ્ચ પ્રતીતા: તેષાં યાનિ કુલાનિ = વૃન્દાનિ તાનિ તથા સારસાંશ્ચ, પોપકાણાં = પક્ષિપાલકાન્ પ્રતિ કથયન્તિ । 'વથવંધજાયણં ચ સાહેતિ ગોમ્મિયાણં' વથવંધયાતનં ચ

સર્પ કે નિવાસસ્થાનોં કો વતલા દેતે હૈં । (ગોહા સેહા ય સહ્યગ સરહગે ય સાહેતિ લુદ્ગકાણં) ગોધા-ગોહ-સેહ-સહેલી, શલ્યક-સીસોલિયા, શરટક-કૂકલાસ ગિરગિટ-ગિરવીલા; इन जीवों को जो शिकारी होते हैं । उन्हें वतला दैते (गयकुल वानर कुले य साहेति पासियाणं) तथा पाशिक-जो गज आदिकों को पकड़ने वाले होते हैं उन्हें हाथियों को बंदरों को दिखला दैते हैं, अर्थात् इनके रहने के स्थानों को कह दैते हैं । (सुक वरहिण मयणसालकोदलहंसकुले सारसे य साहेति पोमगाणं) तथा-जो पक्षिपोषक होते हैं उनसे तोता, मयूर, मैना, कोकिल, हंस इनके विषय में " इनको तुम पालो " ऐसा कहते हैं और " सारसपक्षियों को भी पालो " ऐसी सलाह दैते हैं । (वथवंधजायणं च साहेति गोम्मियाणं)

દ્રષ્ટા દેલાવનાર સાપનાં, સુકુલીનાં-થોડાં પ્રમાણમાં દ્રષ્ટા દેલાવનારા સાપનાં નિવાસ સ્થાનો બતાવી દે છે " ગોહા સેહા ય સહ્યગ સરહગે ય સાહેતિ લુદ્ગકાણં " ગોધા-ધો, સેહ-સહેલી, શલ્યક-સીસોલીયા, ત શરટક-કૂકલાસ ગિરગિટ-કાયંડા વગેરે છવેા શિકારીઓને બતાવી દે છે. " ગયકુલવાનરકુલેય સાહેતિ પાસિયાણં " તથા પાશિકોને-ગય આદિને પકડનારને હાથીઓ તથા વાનરોનાં નિવાસસ્થાન બતાવી દે છે. " સુકવરહિણમયણસાલકોદ્લહંસકુલે સારસે ય સાહેતિ પોમગાણં " તથા પક્ષીઓને પાળનારને તે પોપટ, મોર, મેના કેયલ, હંસ વગેરે પાળવાનું કહે છે. અને સારસ પક્ષીઓને પણ પાળવાની સલાહ આપે છે " વથવંધજાયણં ચ સાહેતિ ગોમ્મિયાણં " અપસધોને બાહેર

સુદર્શિનીટીકા અ૦ ૨ સૂ૦ ૧૧ સૃષ્ટિવાદીનાં જીવઘાતકવચનનિરૂપણમ્ ૨૧૯

સાધયન્તિ ગૌલ્મિકાનાં-વધવન્ધયાતનં ચ-વધઃ=મારણં વન્ધઃ=વન્ધનં રજ્જ્વાદિના યાતનં=દમનં કઞ્ઞાદિભિરિત્યેતાનિ ગૌલ્મિકાનાં=કોટપાલાન્ કથયન્તિ, અપરાધાદિકં કથયિત્વા કોટપાલાદિભિઃ વધાદિકં કારયન્તીત્યર્થઃ, ધનધન્નગવેલણં ય સાહેતિ તક્ષરાણં ' ધનધાન્યગવેલકાંશ્ચ સાધયન્તિ તસ્કરાણાં=ધનધાન્યગવેલકાંશ્ચ=ધનં ચ ધાન્યં ચ ગાયશ્ચ ઇલકાઃ=મેષાશ્ચ તાન્ ચોરયિતું તસ્કરાન્ પ્રતિ કથયન્તિ, 'ગામનગરપટ્ટણે ય સાહેતિ ચારગાણં' ગ્રામનગરપત્તનાનિ સાધયન્તિ ચારકાણાં=ગ્રામાદીનિ ગુપ્તપુરુષાન્ પ્રતિ ભેદાશ્ચર્યં કથયન્તિ, 'પારઘાડ્યપંથઘાડ્યાઓ સાહેતિ ગંધિમેયાણં' પારઘાતિક પથઘાતકાન્ સાધયન્તિ ગ્રન્થિભેદકાનાં, પારઘાતિકાઃ પારે=ગ્રામનગરાદિ સીમાન્તે ઘાતકાઃ - પારઘાતિકાઃ, પથિ=માર્ગે ઘાતિકાઃ=માર્ગઘાતકાસ્તાન્ લુપ્તિતું ગ્રન્થિભેદકાન્=ચોરવિશેષાન્ પ્રતિ કથયન્તિ । 'કયં ચોરિયં નગરગુત્તિયાણં સાહેતિ' કૃતાં ચ ચૌરિકાં ચૌર્યં નગરગુત્તિકાનાં=કોટપાલાન્ સાધયન્તિ । તથા 'લંછણં નિલંછણં ધમણં દુહણં પોસણવણણદુવણવાહણાદિ-અપરાધોં કો પ્રકાશિત કરકે જીવોં કોતવાલ સે વધવન્ધન, યાતના કરવાતે હૈં । (ધનધન્નગવેલણં ય સાહેતિ તક્ષરાણં) જો ચોર હોતે હૈં ડનસે મિલકર ધન, ધાન્ય, ગાય ઓર ઇલક-મેષોં કી ચોરી કરને કો કહતે હૈં (ગામનગરપટ્ટણે ય સાહેતિ ચારગાણં) જો ગુપ્તચર હોતે હૈં-ડનહેં ગ્રામ આદિ કા ભેદ લાને કે લિયે પ્રેરિત કરતે હૈં, અથવા ડનહેં ગ્રામ આદિ કા ભેદ કહતે હૈં । (પારઘાડ્યપંથઘાડ્યાઓ સાહેતિ ગંધિમેયાણં) જો ગ્રન્થિભેદક ચોર વિશેષ-અર્થાત્-ચોરી કા માલ સ્થાને વાલે હોતે હૈં ડનસે પારઘાતિકોં-ગામ કી સીમાપર ઘાત કરને વાલોં કો માર્ગઘાતકોં માર્ગમેં લૂટને વાલોં કો લૂટનેકે લિયે કહતે હૈં (કયં ય ચોરિયં નગરગુત્તિયાણં સાહેતિ) કોટપાલોં કે લિયે નગર આદિ મેં હુઈ ચોરી કા પતા કહતે હૈં (લંછણ-નિલંછણ-ધમણ-દુહણ-પોસણ-વણણ-

કરીને કોટવાલ પાસે છવેનો વધ કરાવે છે, બંધનમઃ નખાવે છે અને પીડા પહોંચાડે છે. “ ધનધન્નગવેલણં ય સાહેતિ તક્ષરાણં ” એરોને મળી તેમને ધન, ધાન્ય, ગાય અને ઘેટાંએની ચોરી કરવાનું કહે છે “ ગામનગરપટ્ટણે ય સાહેતિ ચારગાણં ” ગુપ્તચરોને ગ્રામ આદિનો ભેદ શોધી લાવવા પ્રેરે છે, અથવા તેમને ગ્રામ આદિનો ભેદ બતાવે છે “ પારઘાડ્યપંથઘાડ્યાઓ-સાહેતિ ગંધિમેયાણં ” જે ગ્રન્થિભેદક હોય--એટલે કે ચોરીનો માલ ખાનાર હોય છે તેમને, તથા પારઘાતિકો-ગામની સીમા પર ઘાત કરનારાને તથા માગમાં લૂંટી લેનારાને “ કયં ય ચોરિયં નગરગુત્તિયાણં સાહેતિ ” કોટવાળોને નગર આદિમાં થયેલ ચોરી કરનારાને બતાવવામાં મદદ કરે છે

યાઈં સાહેંતિ વહૂણિ ગોમિયાણં ' લાઝ્ઝનનિર્લાઝ્ઝનધ્માનદોહનપોષણવનનદુવનવા-
હનાદિકાનિ સાધયન્તિ વહૂણિ ગોમિનાં, લાઝ્ઝનં=ગદાદીનાં દેહે તપ્તોદાદિમિશ્રિત્-
વિશેષકરણં, નિર્લાઝ્ઝનં=અધિષ્ઠકરણં ધ્માનં=ગદાદીનાં શરીરે વાયુપૂરણં દોહનં
=પ્રસિદ્ધપોષણં=યજ્ઞચનાદિદાનેન પુષ્ટિકરણં વનનં=અન્યમાતરિ રત્નાદિ સંયોજનં
દાવનમ્=ઉપતાપનં=રઝ્ઝાદિનાપાદવન્ધનમ્ । વાહનં=ચક્રાદિપુ યોજનમિત્યાદિ-
કાનિ ' વહૂણિ ' વહૂણિ ગોમતાં=ગોપાલાદીન્ પ્રતિ વચ્ચન્તિ, ' ધાતુમણિસિલ્પ-
વાલ રચનાગરે ય સાહેંતિ આગરીણં ' ધાતુમણિશિલાપ્રવાલરત્નાકરાન્ સાધયન્તિ
આકરિણાં=વાતવઃ=લૌહાદયો મળયઃ=ચન્દ્રકાન્તાદયઃ, શિલાઃ=પાષાણાઃ, પ્રવાલા
=પ્રસિદ્ધાઃ, રત્નાનિ=મરકતાદીનિ, તેવાસાકરાઃ=અપત્તિસ્થાનાનિ, આકરિણાં=

દુવણ-વાહણા-દિયાઈં સાહેંતિ વહૂણિ ગોમિયાણં) જો ગોપાલકજન-
ગ્વાલે હોતે હૈં-અનસે યે (લેઝ્ઝણ) ગાય આદિ જાનવરોં કે શરીર મેં
હાંમ દેને કે લિયે, (નિર્લેઝ્ઝણ) અન્હેં નિર્લાઝ્ઝણ-વધિયા કરને કે લિયે,
(ધમ્મણ) અન્હેં શરીર મેં વાયુ ભરને કે લિયે, (દુહણ) દોહન કે લિયે,
(પોસણ) પોષણ કરને કે લિયે, જવ ચના આદિ દેકર પુષ્ટ થનાને કે
લિયે, (વળણ) વનન-પ્રતવત્સા ગાય કો દોહન કરનેકે અભિપ્રાય સે
અસકે સાથ દૂસરી ગાયકા વચ્ચા ચુમ્વાને કે લિયે, (દુવણ) દાવન-
દુહતે સમય દોરી સે પૈર આદિ કો વાંધને કે લિયે ઓર (વાહણ) ગાડી
આદિ મેં જોતને કે લિયે વાર ૨ કહા કરતે હૈં (ધાતુમણિસિલ્પવાલર-
ચનાગરે ય સાહેંતિ આગરીણં) જો જ્વનિપતિ હોતે હૈં અન્હેં લૌહા-
દિક ધાતુઓં, ચન્દ્રકાન્ત આદિ મળિયોં પત્થરોં, પ્રવાલોં એવં રત્નાદિકોં

“ લેઝ્ઝણ-નિર્લેઝ્ઝણ-ધમ્મણ-દુહણ-પોસણ-વળણ-દુવણ-વાહણાદિયાઈં સાહેંતિ વહૂણિ
ગોમિયાણં ” ગોવાળોને તેઓ ગાય આદિનાં શરીર પર હામ દેવાને, “ નિર્લેઝ્ઝણ ”
તેમને નિર્લાઝ્ઝન-વધ્યા કરવાને માટે “ ધમ્મણ ” તેમનાં શરીરમાં હવા ભર-
વાને માટે, “ દુહણ ” દોહવાને માટે “ પોસણ ” પોષણ કરવાને માટે જવ,
અણા આદિ આપીને પુષ્ટ થતાવવાને માટે “ વળણ ” વનન-એ ગાયતું વાછ-
રડું મરી ગયું હોય તે ગાયને દોહવાને નિમિત્તે તેને બીજી ગાયતું બચ્યું
ધવરાવવા માટે, “ દુવણ ” દાવણ-દેવાને વખતે ડોરડા વડે પગ આદિ બાંધ-
વાને માટે અને “ વાહણ ” ગાડી આદિ વાહને બેડવાને માટે વારંવાર કહ્યા
કરે છે. “ ધાતુ મણિસિલ્પવાલરચનાગરે ય સાહેંતિ આગરીણં ” ખાણોના માલિ-
કોને લોખંડ આદિ ધાતુઓ, ચન્દ્રકાન્ત આદિ મણીઓ, પથ્થરો, પ્રવાલો અને રત્ન

સુવર્ણીનીકા અ૦ ૨ સુ૦ ૧૧-૧૨ મુવાવાદીનાં જીવ્યાતકવચ્ચત્તરૂપણમ્ ૨૨૧

સ્ત્રિપત્ની કથયન્તિ । તથા ‘પુષ્પવિર્ધિ ફલવિર્ધિ ચ સાહેતિ માલિયાણં’
પુષ્પવિર્ધિ ફલવિર્ધિ ચ=પુષ્પજાતિ ફલજાતિ ચ સાધયન્તિ માલિકાનાં=વનપાલ-
કાનામ્, ‘અગ્નમહુકોસૃય ય સાહેતિ વણચરાણં’ અગ્નમધુકોશકાંશ્ર સાધયન્તિ
વનચરાણાં=અર્ધશ્ર=મૂલ્યપ્રમાણં મધુકોશકાશ્ર=મધુત્પત્તિસ્થાનાનીત્યર્થમધુકોશકા-
સ્તાન્ વનચરાણાં=મિલ્લાન્ પ્રતિ કથયન્તિ ॥ સુ૦ ૧૧ ॥

પુનરપ્યાદ—‘જંતાઈ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-જંતાઈ વિસાઈ, મૂલકમ્મ-આહેવણ-આવિંધણ-આભિ-
ઓગ-મંતોસહિપ્પઓગે ચોરિય પરદારગમણવહુપાવકમ્મકરણં
અવચ્છંદેગામવાયણં, વણદહણતટાગભેયણે વુદ્ધિવિસય વસી-
કરણમાઝ્યાઈં ભયમરણ કિલેસુવ્વેગજણ્યાઈં ભાવવહુસંકિલિટ્ટ-

કે ઉત્પત્તિસ્થાનોં કો કહતે હૈં । તથા (પુષ્પવિર્ધિ ફલવિર્ધિ ચ સાહેતિ માલિયાણં) જો માલી હોતે હૈં ઉન્હેં યે પુષ્પજાતિ, ફલજાતિ સમજાતેહૈં-
અર્થાત્-‘વાગમેં અમુક જાતિકા ફુલ લગાઓ, અમુક જાતિ કે ફલ ઉત્પન્ન કરો’ હસ પ્રકાર સે કહા કરતે હૈં । (અગ્નમહુકોસૃય ય સાહેતિ વણચરાણં) તથા જો વનચરમીલ હૈં ડનસે યે હસ પ્રકાર કહતે હૈં કિ તુમ શહદ યા શહદ કા છાના હી લે આપા કરો અમુક મૂલ્ય તુમ્હેં મિલ જાવેગા-બૈઠે ૨ કપા કરતે રહતે હો । મુવાવાદ પાપ કરને વાલે જીવ જીવોં કો વાધા આદિ પહુંચે હમકા થોડા સા મી ધ્યાન નહીં રખતે હૈં, તથા જો જીવોં કો કષ્ટ પહુંચાને વાલે મનુષ્ય હૈં ઉન્હેં હર એક પ્રકાર સે જીવોં કો કષ્ટ પહુંચાને મેં ઉકસાયા કરતે હૈં ॥ સુ ૧૧ ॥

આદિનાં ઉત્પત્તિ સ્થાનો બતાવે છે. તથા “પુષ્પવિર્ધિ ફલવિર્ધિ ચ સાહેતિ માલિ-
યાણં” માળીઓને પુષ્પજાતિ તથા ફળજાતિ બતાવે છે, એટલે કે “આમનાં
અમુક જાતિનાં ફૂલ ઉગાડો, અમુક જાતિનાં ફળ ઉત્પન્ન કરો.” એ પ્રકારની
સલાહ આપે છે. “અગ્નમહુકોસૃય ય સાહેતિ વણચરાણં” તથા વનમાં ફરનારા
ભંડોને તે આ પ્રમાણે કહે છે. “તમે મધ અથવા મધપુડો લાવ્યા કરો.
તમને અમુક કિંમત મળશે-અમરતા યેસી રહે શું વળશે ?” મુવાવાદ પાપ
કરનાર વ્યક્તિ જીવોને કષ્ટ આદિ પહોંચશે તેનું સહેજ પણ ધ્યાન રાખતી
નથી, તથા જીવોને કષ્ટ પહોંચાડનાર જે માણસો હોય છે તેમને દરેક પ્રકારે
જીવોને કષ્ટ પહોંચાડવા ને ઉશ્કેર્યા કરે છે ॥ સુ-૧૧ ॥

मलिणाइं भूयघाओवघाइयाइं सच्चाणि वि ताइं हिंसगाइं वयणाइं उयाहरंति पुट्टा वा अपुट्टा वा ॥ सू० १२ ॥

टीका—‘जंताइं’ यन्त्राणि तिलनिष्पीडनादि यन्त्राणि उदाहरन्तीति वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः । ‘विसाइं’ विषाणि=क्षणमात्रप्राणहारकतालपुटसर्पादीनि स्थावरजङ्गमभेदानि । मूलकम्मआहेवणआविषणआभिओगसंतोसहिप्पओगे’ मूलकर्मक्षेपणावर्धनाभियोग्यमन्त्रौषधिप्रयोगान्=मूलकर्म=गर्भघातनादिकम्, अथवा मूलनक्षत्रादि जातस्य तद्दोषशान्त्यर्थं स्नानकर्मदिकम्, आक्षेपणं=नगरादि क्षोभोत्पादनम्, आवर्धनं=धनादीनां मन्त्रप्रयोगेण हरणं आभियोग्यं च=वशीकरणादि तच्च द्रव्यतो द्रव्यसंयोगजनितं भावतो विद्यामन्त्रादिसंजातं वलात्कारजनितं वा, तथा मन्त्रौषधिप्रयोगान् मन्त्रप्रयोगान् औषधिप्रयोगान्, तथा ‘चोरियपरदारगमणवहुपावकम्मकरणं’ चौर्यपरदारगमनवहुपापकर्मकरणं = चौर्यपरस्त्रीगमनादि

फिर भी कहते हैं—‘जंताइं विसाइं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(जंताइं) यंत्रों को-तिल आदि के निष्पीडक कोलह आदि पदार्थों को (विसाइं) क्षणमात्र में प्राणों को नष्ट करने वाले तालपुट, सर्प आदि स्थावर जंगम विषोंको (मूलकम्म-आहेवण-आविषण-आभिओग-संतोसहि-प्पओगे) गर्भघातन आदि रूप मूलकर्म को, अथवा मूल नक्षत्र में उत्पन्न हुए बालक के दोषशान्ति के लिये स्नान कर्म आदि को, नगरादिक में क्षोभोत्पादनरूप आक्षेपण को, मन्त्र के प्रयोग से धनादिकों के हरणरूप आवर्धन को, वशीकरणादिरूप आभियोग्य कर्म को, तथा मन्त्र प्रयोगों को, औषधि के प्रयोगों को तथा (चोरियपरदारगमणवहुपावकम्मकरणं) चोरी, परदारगमन आदि रूप पापकर्मों के

७७ पाण्डु सूत्रकार डले छे—“जंताइं विसाइं” इत्यादि.

टीकार्थ—“जंताइं” तेल आदि पीलवानां घाण्टी आदि पदार्थोंने “विसाइं” ओक क्षणमात्र प्राण डरी लेतार तालपुट, सर्प आदि स्थावरजंगम विषोंने, “मूलकम्म-आहेवण-आविषण-आभिओग-संतोसहि-प्पओगे” गर्भघातन आदि रूप मूलकर्मने, अथवा भूगनक्षत्रभां जन्मेला आगकनी दोषशान्ति माटे स्नान-कर्म आदिने, नगरादिभां क्षोभ उत्पन्न करवाइय आक्षेपणने, मन्त्रप्रयोग वडे धनादिनां हरणरूप आवर्धनने, वशीकरणादिइय आभियोग्यकर्मने, तथा मन्त्र प्रयोगोंने, औषधि प्रयोगोंने तथा “चोरियपरदारगमणवहुपावकम्मकरणं” चोरी, परदारगमन, आदि पापकर्मों करवाने, तथा ‘अवक्खंढे’ सैन्य शिबिर

सुवर्शिनी टीका अ. २ सू० १२ मृगवादीनां जीवघातकवचननिरूपणम् २२३

पापकर्मसमाचरणम्, तथा 'अवक्खंदे' अवस्कन्दान्=सैन्यशिविरादिभिराक्रमणेन-
परबलमर्दनानि घाटीकर्मकरणानि वा 'गामयायणं' ग्रामघातनं=ग्रामादिनाशनं
'वणदहणतडागभेयणए' वनदहन-तडाग-भेदनानि=वनज्वालनानि जलाशय
ध्वंसनानि च 'बुद्धिविसयवसीकरणाइयाई' बुद्धिविषयवशीकरणादिकानि परस्य
बुद्धेर्विषयस्य च शब्दादेः वशीकरणानि=मन्त्रादिप्रयोगेण स्वापचीकरणानि 'भय-
मरणकिलेसुव्वेगजणयाई' भयमरणक्लेशोद्वेगजनकानि भयं च मरणं च क्लेशश्च
शारीरिकउद्वेगश्च=हार्दिकं दुःखमित्येतेषां जनकानि तथा 'भाववहुसंकिलिट्ट-
भावमलिणाणि' भाववहुसंक्लिष्टमलिनानि=भावेन=अध्यवसायेन बहुसंक्लिष्टेन=
अतिशयपरसन्तापजनकेन मलिनानि=कलुषितानि तथा 'भूयवाओवचाइयाई'
भूतघातोपघातकानि=भूतानां प्राणिनां घातः=साक्षात् हननं उपघातश्च=परम्परया-
हननं तौ येषु तानि भूतघातोपघातकानि पूर्वोक्तानि 'सच्चाणिवि' सत्या-

करने को, तथा (अवक्खंदे) सैन्य शिविर आदिके द्वारा आक्रमण
करके पर के बलको मर्दन करने रूप कर्म को अथवा घाड़पाड़ने रूप
इकैतीकर्म को, (गामयायणं) ग्रामघातकरूपकृत्य को, (वणदहणत-
डागभेयणए) जंगलों में आग लगाने रूप, तथा जलाशयों को ध्वंस
करने रूप दुष्कृत्यों को, (बुद्धिविसयवसीकरणमाइयाई) मन्त्रादिकों के
प्रयोग से पर की बुद्धि को, एवं शब्दादिक पान्चों इन्द्रियों के विषयोंको
स्ववश करने रूप अकृत्यों को कोई पूछे अथवा न पूछे तो भी बताया
करते हैं, तथा (भयमरणकिलेसुव्वेगजणयाई) भय, मरण, क्लेश,
उद्वेग, इनके उत्पादक असत्यवचनों को, तथा (भाववहुसंकिलिट्टमलि-
णाणि) अत्यंत संक्लिष्ट अतिशयरूपमें पर को संतापजनक, ऐसे अध्य-
वसाय से मलिन हुए तथा (भूयवाओवचाइयाई) प्राणियों के साक्षात्

आदि द्वारा आक्रमण करीने अन्यना जगत्नुं मर्दन करवाइय कर्म तथा घात
पाड़वाना शब्दने, "गामयायणं" ग्राम लांगवाइय दुष्कृत्यने, "वणदहणतडाग
भेयणए" जंगलोंमें आग लगाइवाना तथा जलाशयेने तोड़ी पाड़वाना दुष्कृत्यने,
"बुद्धिविसयवसीकरणमाइयाई" मन्त्रादिना प्रयोगशील पारकानी बुद्धिने, अन्ये,
शब्दादिक पांचेइन्द्रियोना विषयोने पोताने वश करी लेवा इय दुष्कृत्यने कोछ
पूछे अथवा न पूछे तो पञ्च ते भूयावाही अतावथा करे छे, तथा "भय मरण
किलेसुव्वेगजणयाई" भय, मरण, क्लेश, उद्वेग आदि उत्पन्न करनार असत्य
वचने, तथा "भाववहुसंकिलिट्टमलिणाणि" अत्यंत संक्लिष्ट, अन्यने
अतिशय संतापजनक जेवां अध्यवसायशील मलिन थयेल तथा "भूयवाओव-

ન્યપિ=સ્વરૂપતસ્તથ્યાન્યપિ. કિન્તુ-અપિ-નિશ્ચયેન ‘હિંસગાઈ’ હિંસકાનિ=પરિણામતઃ પ્રાણિપ્રાણોપઘાતકાનિ તસ્માદસત્યસ્વરૂપાણિ, ‘વયળાઈ’ વચનાનિ. ‘પુટ્ટા વા અપુટ્ટા વા’ પુટ્ટા વા કેનાપિ, અપૃષ્ટા વાઽપિ-અલીક્રવાદિનઃ ‘ઉચાહરંતિ’ ઉચાહરન્તિ=કથયન્તિ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

અથવા પરમ્પરા રૂપ સે ઘાત કરને વાલે એસે (સચ્ચાણિ વિ) સ્વરૂપ સે સત્ય મી હોં કિન્તુ નિશ્ચય મેં (હિંસગાઈ) પરિણામતઃ પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કે ઉપઘાતક હોને કે કારણ અસત્ય સ્વરૂપ હી હોતે હેં । એસે (વયળાઈ) વચનોં કો (પુટ્ટા વા અપુટ્ટા વા) અસત્યવાદી જન વાહે ડનસે કોઈ પૂઢે અથવા ન પૂઢે તો મી (ઉચાહરંતિ) કહ દિયા કરતે હેં !

ભોવાર્થ—મૃધાવાદી જન અનેકવિધ પ્રાણિપીડક યંત્રોં કો બનાવને કે લિયે, વિવિધ પ્રાકર કે વિષોં કા નિર્માણ કરને કે લિયે દૂસરોં કો ઉપાય વતલાયા કરતે હેં । ગર્ભ કા પતન કેસે કિયા જાના હૈ, નગરાદિકોં મેં ક્ષોમ ઉત્પન્ન કેસે હો સકતા હૈ, દૂસરોં કો વશ મેં કેસે કિયા જા સકતા હૈ. ચોરી કરને કે કયા ૨ સાધન હૈ, પરસ્ત્રીગમન કરને કા કયા ઉપાય હૈ, દુમરોં કી સેના કો કેસે પરામન કિયા જાના હૈ, ગ્રામ આદિ મેં ઉપદ્રવ કેસે ઉત્પન્ન કિયા જાના હૈ, જંગલ આદિ મેં આગ લગાના, તડાગ આદિ જલાશયોં કો શુષ્ક કરના-સૂચના, इत्यादि सब प्रकार के इष्ट प्रयोगों को मृधावादी जन चाहे उनसे कोई पूछे अथवा न

ઘાઈયાઈ ” પ્રાણીઓનો સાક્ષાત ઘાત કરનાર અથવા પરમ્પરા રૂપે ઘાત કરનાર એવાં “ સચ્ચાણિ વિ ” સ્વરૂપ સત્ય હોય તો પણ અવશ્ય “ હિંસગાઈ ” પરિણામ જોતાં પ્રાણીઓનાં પ્રાણોની હત્યા કરનાર હોવાથી અસત્ય સ્વરૂપ જ હોય છે એવાં “ વયળાઈ ” વચનો “ પુટ્ટા વા અપુટ્ટા વા ” અસત્યવાદી માણસ તેને કોઈ પૂછે કે ન પૂછે છતાં પણ “ ઉચાહરંતિ ” બોલ્યા કરે છે.

ભાવાર્થ—મૃધાવાદી માણસ અનેક પ્રકારનાં પ્રાણીપીડક યંત્રો બનાવવાને માટે તથા વિવિધ પ્રકારનાં વિધ બનાવવાને માટે બીજા લોકોને ઉપાયો બતાવ્યા કરે છે. ગર્ભપાત કેવી રીતે કરાવાય છે, નગર આદિમાં કેવી રીતે ક્ષોભ ઉત્પન્ન કરી શકાય છે, બીજાને કેવી રીતે વશ કરી શકાય છે, ચોરી કરવાનાં કયાં કયાં સાધનો છે, પરસ્ત્રીગમન કરવાના કયા કયા ઉપાય છે. અન્યનાં સૈન્યને કેવી રીતે પરાન્ત્ય આપી શકાય છે, ગ્રામ આદિમાં કેવી રીતે ઉપદ્રવ પેદા કરી શકાય છે, જંગલ આદિમાં કેવી રીતે આગ લગાડાય છે, તડાગ આદિ જ્વાળાઓને કેવી રીતે સૂકવી નખાય છે, इत्यादि सर्वे प्रकारના ઈષ્ટ પ્રયોગો

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૨ સૂ૦ ૧૩ મૃગાવાદિનાં જીવઘાતકવચનનિરૂપણમ્ ૨૨૫

પુનરપ્પાદ—‘ પરતત્તિ ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—પરતત્તિવાવડાય અસમિક્ષિયભાસિણો ઉવદિસંતિ
સહસાઉદ્યા-ગોણા-ગવયા દમંતુ, પરિણયવયા અસ્તા હૃત્થીગ-
વેલગકુકડા ય કિજંતુ કિણાવેહ વિકેહય પચહ સયણસ્સ દેહ
પીયહ દાસીદાસ-ભયગ-ભાહ્લગા ય સિસ્સા ય પેસકજણો
કમ્મકરા કિકરા ય એ સયણપરિજણા ય કીસ અચ્છંતિ
ભારિયા મે કરેતુ કમ્મં, ગહણાઈ વણાઈ ચિત્તચિલભૂમિવલ્લ-
રાઈ ઉત્તણવણસંકડાઈ ડજ્જંતુ સૂડિજ્જંતુ ય રુક્ખા મિજ્જંતુ
જંતાઈ મંડાઇયસ્સ ઉવહિસ્સ કારણા, વહુવિહસ્સ અદ્દાણ
ઉચ્છૂ દુજ્જંતુ પીલિજ્જંતુ ય તિલા, પયાવેહ ઇટ્ટયાઓ મમ ઘરદ્ધ-
યાણ ચેત્તા ય કમ્મહ કસાવેહ વા, લહું ગામનગરચેડકચ્ચડે
સંનિવેસેહ, અડવીદેસેસુ વિડલસીમે, પુપ્પાણિ ફલાણિ ય કંદ-
મૂલાઈ કાલપત્તાઈ ગિણહ, કરેહ સંચયં પરિજણસ્સ અદ્દાણ ॥ ૧૩ ॥

મી પૂછે તો મી વતાયા કરતે હૈં । જિન વચનો સે ‘મય મરણ આદિ
ઉપદ્રવ સ્વદે હો જાવે, દુમરોંકો સુનકર જિન સે ચિત્ત મેં મલિનતા આ
જાવે, એસે વચન મી વે બોલ દિયા કરતે હૈં । સત્ય હોને પર મી જો
પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કો સંકટ મેં ઢાલ દેતે હોં-પ્રાણિયોં કી સાક્ષાત્ અથવા
પરસ્પરા સે હિંસા કે જો સાધનભૂત બનતે હોં એસે સવ હી વચન અસ-
ત્ય હી હૈં, ઓર ઉન્હેં વે અસત્યવાદીજન બોલા કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

વિષે મૃગાવાદી માણસને કોઈ પૂછે કે ન પૂછે તો પણ તે બતાવ્યા કરે છે.
જે વચનોથી લય, મરણ આદિ ઉપદ્રવ પેદા થાય, જે વચનો સાંભળીને અન્યનાં
મનમાં મલિનતા ઉત્પન્ન થાય, એવાં વચનો પણ તેઓ બોલ્યા કરે છે. સત્ય
હોવા છતાં પણ જે વચનોથી પ્રાણીઓનાં પ્રાણલયમાં મૂકાય-પ્રાણીઓની સાક્ષાત્
હિંસાના અથવા પરંપરાથી હિંસાના જે કારણરૂપ બનતાં હોય એવાં બધાં વચનો
અસત્ય જ છે, અને તે અસત્યવાદી માણસ તેવાં વચનો બોલ્યાં કરે છે. ॥સૂ-૧૨॥

પ્ર ૨૧

ટીકા—‘પરતત્તિવાવઢાય’ પરત્વસિન્વ્યાપૃતાશ્ચ = પરપસલતાકરણતત્પરાઃ
 અથવા પરત્વસિન્વ્યાપૃતાઃ=પરચિન્તાપરાયણા વા ‘અસમિક્લિપ્તમાસિણો’ અસમી-
 સિતમાવિણઃ=અપર્યાલોચિતવક્તારઃ ‘ઁવદિસંતિ’ ઉપદિશન્તિ=આત્રાપયન્તિ સહસા
 =અકસ્માત્ અકારણમેવેત્યર્થઃ તદેવાહ—યત્ ‘ઁટ્ટા’ ઁટ્ટાઃ=પ્રસિદ્ધાઃ ‘ગોણા’ ગાવઃ
 ચલીવદ્દાઃ, ગવયાઃ=ગોસદૃશા વન્યાઃ ‘રોણ’ ઇતિ માપા પ્રસિદ્ધાઃ પશુવિશેષાઃ
 ‘દમંતુ’ દમ્યતાં=એતે શિક્ષ્યન્તામ્ । તથા ‘પરિણયવયા’ પરિણતવયસઃ=તરુણાઃ
 ‘અસ્સા’ અશ્વાઃ ‘હત્થી’ હસ્તિનઃ=પ્રસિદ્ધાઃ ગવેલકાઃ=મેપાઃ ‘કુલ્લુડા’
 કુલ્લુડાશ્ચ=પતીતાઃ ‘કિજ્જંતુ’ ક્રોયન્તાં=મૂલ્યેન મૂલ્યન્તાં ‘કિણાવેહ’ ક્રાપયત=
 પૂર્વોક્તાનામેવ ક્રયણં કારયત ‘વિક્કેહ’ વિક્રીણીશ્વં=વિક્રયં કુરુત ‘પચ્હ’
 પચત=પાર્કં કુરુત તથા ‘સયણસ્સ’ સ્વજનાય ‘દેહ’ દત્ત=માંસાદિકં દીયતાં

ફિર ખી કહતે હૈં—‘પરતત્તિ’ ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(પરતત્તિવાવઢાય ય) જો દૂસરોં કોં પ્રસન્ન કરને મેં તત્પર
 રહતે હૈં, અથવા પર કો ચિન્તા મેં પરાયણ રહા કરતે હૈં વે (અસમિ-
 ક્લિપ્તમાસિણો) વિના વિચારે હી ચોલ દિયા કરતે હૈં, ઇસ યાત કા વે
 વિચાર નહીં કરતે હૈં કિ હમારે હન વચનોં સે દૂસરે પ્રાણિયોં કો કષ્ટ
 હોગા, (સહસા ઁવદિસંતિ) વિના કારણ કે હી યોં દૂસરોં સે કહ દેતે
 હૈં કિ તુમ લોગ (ઁટ્ટાગોણાગવયા દમંતુ) ઁટ્ટોં કો, ચેલોં કો તથા રોણોં
 કો દમનકરો-અચ્છી ચાલ ચલના સિલ્લાઓ (પરિણયવયા અસ્સા
 હત્થી ગવેલકા કુલ્લુડા કિજ્જંતુ) તરુણ, ઘોડે, હાથી, મેપ, કુલ્લુડ, હન
 જાનવરોં કો સ્વયં સ્વરીદો ઔર (કિણાવેહ) દૂસરોં કો સ્વરીદવાઓ
 તથા (વિક્કેહ ય) ચેંવો ઔર (પચ્હ) ઁદનાદિ પકાઓ (સયણસ્સ-

તે વિષે હૃદય પશુ સૂત્રકાર કહે છે— “ પરતત્તિ ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“પરતત્તિ વાવઢાય ” જે બીજા લોકોને ખુશ કરવાને આતુર
 હોય છે, અથવા પારકાની ચિન્તામાં પરાયણ રહે છે, તેઓ “ અસમિક્લિ-
 પમાસિણો ” વિચાર કર્યા વિના બોલ્યા કરે છે. તેઓ એવો વિચાર કરતાં
 નથી કે અમારાં આ વચનોથી બીજાં પ્રાણીઓને કષ્ટ પહોંચશે. “ સહસા
 ઁવદિસંતિ ” તેઓ વિના કારણ બીજા લોકોને કહે છે કે તમે “ ઁટ્ટાગોણા
 ગવયા દમંતુ ” ઁટ્ટાનું, બળદોનું તથા રોણોનું દમન કરો-સારી ચાલ ચાલતા
 શિખવો. “ પરિણયવયા અસ્સા હત્થી ગવેલકા કુલ્લુડા કિજ્જંતુ ” યુવાન, ઘોડા,
 હાથી ઘેરાં કૂકડા, આદિ તમે બલે ખરીદો અને “ કિણાવેહ ” બીજા પાસે

સુવર્ણિનો ટીકા અં ૨૨૦ ૧૦-૧૩ સુધાવાદિનાં જીવઘાતકવચનનિરૂપણમ્ ૨૨૭

‘પીયહ’ પિવત=મદિરાદિકં ‘દાસીદાસમયગમાદ્ભગા’ દાસીદાસમૃતકમા-
ગિકા:=દાસ્ય:=સેવિકા: દાસા:=પ્રસિદ્ધા:, મૃતકા:=મૃત્યા-મક્તદાનાદિના પો-
ષિતા:, માગિકા:=ધનાદેશ્વતુર્થાદિ ભાગગ્રાહકા: ‘સિસ્સા ય’ શિષ્યાશ્ચ=પ્રસિદ્ધા:
‘પેસકજ્ઞો’ પ્રેષ્યકજન:=કાર્યપ્રયોજનેષુ પ્રેષણીયો જન: ‘કમ્મકરા’ કર્મકરા=
નિયતકાલં કર્મકુર્વન્તિ યે તે કર્મકરા:, ક્રિકરાશ્ચ=પ્રશ્નપૂર્વકકાર્યકારિણ: ‘એ’
એતે ‘સયણપરિજ્ઞો’ સ્વજનપરિજ્ઞાશ્ચ સ્વજના: માતાપિતૃભ્રાત્રાદય:, પરિજ્ઞા:
=સમ્બન્ધિન: ‘કીસ’ કસ્માત્ કારણાત્ ‘અચ્છંતિ’ આસતે=કાર્ય પરિવ્યજ્ઞોપવિષ્ટા:
સન્તિ ‘મે’ ભવતાં ‘મારિયા’ મારિકા:=મારઘાતિન: ‘કમ્મ’ કર્મ ‘કરેતુ’
કુર્વન્તુ, તથા ‘ગઢનાઈં વળાઈં’ ગઢનાનિ વનાનિ ‘સ્વિત્તસ્વિત્તભૂમિવલ્લરાઈં’ ક્ષેત્ર
દેહ) માંસાદિકો અપને સ્વજન સંબંધિયોંકે લિયે દિયા કરો, (પીયહ)
મદિરાદિ કા પાન કિયા કરો, (દાસીદાસ મયગમાદ્ભગા ય સિસ્સા ય
પેસકજ્ઞો કર્મકરા ક્રિકરા ય એ સયણપરિજ્ઞા ય કીસ અચ્છંતિ)
યે તુમ્હારે દાસી, દાસ, ભૃત્ય ભાગીદાર, શિષ્યજન, પ્રેષ્યકજન, કર્મકર
ઔર ક્રિકર તથા સ્વજન પરિજન કિસ કારણ સે અપને ૨ કામ કો-
હોડ કર થેટે હુપ હૈં. ઇનમેં કઠિન શબ્દોકા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈં-અપને
ઘર પર હી જો ભોજનાદિ સે પુષ્ટ કિયે જાતે હૈં વે ભૃત્ય હૈં. કોઈ પ્રયો-
જન વશ જો કામકે લિયે મેજે જાતે હૈં વે પ્રેષ્યકજન હૈં. નિયત કાલતક
જો મજૂરી કરતે હૈં વે કર્મકર હૈં. પ્રશ્નપૂર્વક પૂછકર કામ કરનેવાલે જન
ક્રિકર હૈં. માતા પિતા ભાઈ આદિ સ્વજન સમ્બન્ધીજન આદિ પરિજન હૈં.
(મે મારિયા કર્મ કરેતુ) તુન મારિક-અપને મારહોનેવાલે મનુષ્યોં સે-

ખરીદ કરાવો, તથા “વિક્રેહય” વેચો, અને “પચહ” ઓઢનાદિ (ભાત વિગેરે)
રાધો “સયણસ્સ દેહ” માંસ આદિ તમારાં સગાં સંબંધીને લોજનમાં ખીરસો
“પીયહ” મદિરા (દારૂ) આદિ પાન કરો, “દાસીદાસમયગમાદ્ભગા ય સિસ્સા ય
પેસકજ્ઞો કર્મકરા ક્રિકરા ય એ સયણપરિજ્ઞા ય કીસ અચ્છંતિ” એ તમારા
દાસી, દાસ, ભૃત્ય, ભાગીદાર, શિષ્યજન, પ્રેષ્યકજન, કર્મકર ક્રિકર અને સ્વજન
પરિજન તથા દારણે પોત પોતાનાં કામે છોડીને બેઠા છે! ઉપરના સૂત્રમાં
આવેલ કઠિન શબ્દના અર્થ આ પ્રમાણે છે-પોતાને ઘેર જ લોજનાદિ આપીને
જેમનું પોષણ કરાય છે, તે લોકોતે ભૃત્ય કહે છે. કોઈ પ્રયોજનથી જેમને કોઈ
કામે મોકલાય છે તેમને પ્રેષ્યજન કહે છે. નક્કી કરેલા સમય સુધીને મજૂરી કરે
છે તેમને કર્મકર-કારીગર કહે છે. પૂછી પૂછીને કામ કરનારા સેવકોને ક્રિકર કહે
છે. માતા પિતા ભાઈ આદિ સ્વજન ગણાય છે, સંબંધીઓને પરિજન કહે છે.
“મે મારિયા કર્મ કરેતુ” તમે ભારિડો-આપણો ભાર વહન કરનારા ખાસે

खिलभूमिवह्वराणि=क्षेत्राणि=प्रसिद्धानि खिलभूमयः=हलाऽकृष्टभूमयः वह्वराणि=क्षेत्रविशेषाश्च तानि 'उत्तणघणसंकडाइं' उत्तणघनसंकटानि=तत्रउत्तर्णैः=उद्गतैः घासैः घनम्=अतिशयं संकटानि=व्यापनियानि तानि 'डुज्जंतु' दृढान्तां=परस्मीभूतानि क्रियताम् । रुक्खा 'वृक्षाः' 'सूडिज्जंतु' मूळ्यन्तां = मूलत उन्मूलयन्ताम् । 'जंताइ' यन्त्राणि = तिलेक्षुसर्षपादिपीडनयन्त्राणि 'भिज्जंतु' भिन्दन्तु । किमर्थमित्याह-- 'भांडाइयस्स' भाण्डादिकस्य=भाण्डपात्रादेः 'उवहिस्स' उपधेः= उपकरणस्य 'कारणाए' कारणाय=प्रयोजनाय । तथा 'वट्टुविहस्स' वट्टुविधस्य 'अनेकप्रकारस्य' अट्टाए 'अर्थाय=वक्ष्यमाणप्रयोजनस्य' सिद्धये 'उच्छ' इक्षवः 'दुज्जंतु' दूयन्तां=डिद्यन्तां 'तिलाय' तिलाय 'पीलिज्जंतु' पीडयन्तां=निष्पीडयन्तां यन्त्रे । तथा मम 'घट्टए' गृहार्थाय=गृहनिर्माणप्रयोजनाय 'इट्टयाओ' इष्टयाः='ईट' इति प्रसिद्धाः 'पचावेह' पाचयत । 'खेत्ताय कसह कसावेह' नौकर चाकरों से काम कराओ वे (गहणाइं वणाइं) गहन वनों को, (खित्तखिलभूमिवह्वराइं) खेतों को, हलाकृष्टभूमिको-वह्वरों-खेतविशेषों को (उत्तणघणसंकडाइं) घास आदिसे व्यास है, (डुज्जंतु) उनमें आग लगाकर वहांकी भूमिको साफ करें (रुक्खा सूडिज्जंतु) वहां जितने भी वृक्ष खड़े हों उन्हें जड़मूल से उखाड़ डालें (जंताइं भिज्जंतु) तिल इक्षु आदि के पीलनेके यंत्रोंको ये चीर फाड़ डालें कि जिससे (भांडाइयस्स उवहिस्स कारणाए) भांड पात्र आदि उपकरण बनाये जा सकें । तथा (वट्टुविहस्स अट्टाए उच्छ दुज्जंतु) अनेक विध प्रयोजनों की सिद्धि निमित्त ये इक्षु-गन्ना को काटें, (तिलाय पीलिज्जंतु घरट्टयाए) तिलों को घानी में पिले तथा (इट्टयाओ पचावेह) गृह निर्माण के लिये ये ईंटों को पकावें, (खेत्ताय कसह कसावेह) खेतों को जोतें व जुतवायें = हाकना और हकवाना चोकना और चोकवाना

નોંધર આકરો પાસે કામ કરાવો, “ગહનાઈ વનાઈ” ગહન વનોને, “લિત્તલિલભૂમિ વહ્વરાઈ” ખેતરો, વહ્વરો (એક પ્રકારનું ખેતર) કે જે “ ઉત્તણઘણસંકડાઈ ” ઘાસ આદિથી છવાયેલ છે, “ ડુજ્જંતુ ” તેમાં આગ લગાડીને તે જમીનને સાફ કરાવો, “ રુક્ખા સૂડિજ્જંતુ ” ત્યાં જેટલાં વૃક્ષો છે તેમને જડમૂળમાંથી ઉખેડી નાખો, “ જંતાઈ ભિજ્જંતુ ” તલ, શેરડી આદિ પીલવાના યંત્રોને તેઓ તોડી ફાડી નાખે કે જેથી “ ભાંડાઈયસ્સ . ઉવહિસ્સ કારણાએ ” ભાંડ, પાત્ર આદિ સાધનો બનાવી શકાય તથા “ વટ્ટુવિહસ્સ અટ્ટાએ ઉચ્છ દુજ્જંતુ ” અनेક પ્રકારના પ્રયોજનની સફળતા માટે તેઓ શેરડીને કાપે “ તિલાય પીલિજ્જંતુ ઘરટ્ટયાએ ” તલને ઘાણીમાં પીલે, તથા “ ઇટ્ટયાઓ પચાવેહ ” ઘર બંધાવવાને માટે ઈંટો પકાવે, “ લેત્તાય કસહ કસાવેહ ” ખેતરો ખેડે અને ખેડાવે, તથા

સુવર્ણિની ટીકા મ. ૨ સુ. ૧૩ મૃગાવાદિનાં જીવઘાતકવચનનિરૂપણમ્ ૨૨૧

ક્ષેત્રાણિ ચ 'કસ' કર્પત-કર્પયત વા । તથા 'અડવીદેસેસુ' અટવીદેશેષુ=વન પ્રદેશેષુ 'ગામનગરખેડકઘ્વઢે' ગ્રામનગરખેડકર્ષટાનિ=તત્ર ગ્રામશ્ચ નગરં ચ પ્રસિદ્ધં છેવેતં ચ=નદ્યાદિવેષ્ટિતં ધૂલિપ્રાકારરહિતં કર્ષટં ચ=કુત્સિતજનનિવાસસ્થાનમ્, તાનિ કીટશાનીત્યાહ-વિઝલસીમે 'વિપુલસીમાનિ=વિસ્તીર્ણસીમાયુક્તાનિ 'લહુ' લઘુ=સુન્દરોત્પા શીઘ્રં વા 'સંનિવેસેહ' સન્નિવેશયત=નિવાસયત તથા 'પુષ્પાણિ ફલાણિ ય' પુષ્પાણિ ફલાણિ ચ 'કંદમૂલાઈ' કન્દમૂલાનિ તત્ર કન્દા=સ્વર્ણકન્દ-શર્કરાકન્દલથુનાદયઃ મૂલાનિ=ટશ્મૂલકાનિ 'કાલપત્તાઈ' કાલપાતાનિ=ઉચિત-સમયલઘ્વાનિ 'ગિણ્હ' ગૃહીત=ગ્રહણં કુરુત, તથા 'પરિજનસ' પરિજનસ્ય=કુટુમ્બસ્ય, 'અઢાપ' અર્થાય=પ્રયોજનાય સંચયં 'કરેહ' કુરુત ॥ મુ. ૧૩ ॥

તથા (અડવીદેસેસુ ગામનગરખેડકઘ્વઢે વિઝલસીમે લહુ સંનિવેસેહ) ગ્રામ, નગર, છેવે, કર્ષટ આદિ સ્થાનોંકો વિસ્તૃત સીમાયુક્ત કર કે અટવી દેશોંમે સુન્દર રીતિ સે શીઘ્ર ચસાવે, (પુષ્પાણિ ફલાણિ ય કંદ-મૂલાઈ કાલપત્તાઈ ગિણ્હ) તુમ લોગ (કાલપત્તાઈ) કાલપ્રાસ ફૂલે હુપ (પુષ્પાઈ) ફૂલોં કો (ફલાણિ) પકે હુપ ફલોં કો તથા (કંદમૂલાઈ) પકે હુપ સ્વર્ણકન્દ, શર્કરાકંદ, લહસુન આદિ કંદોં કો ઓર પિપ્પલીમૂલ આદિ મૂલોં કો (ગિણ્હ) છે આગા કરો, તથા (કરેહ સંચયં પરિજનસ અઢાપ) કુટુમ્બ કે લિયે ધન આદિ કા સંચય કર રલ્લ જાઓ ।

ભાવાર્થ—યે અસત્યવાદી જન દૂસરે વ્યક્તિ હમસે પ્રસન્ન રહેં હસલિયે સુહાતી ઘાતેં ઉનસે કહતે રહતે હેં । ઇનકા પરિણામ કયા હોગ ? હસકા વે જરા સા બી ધ્યાન નહોં રલ્લતે । જો કુંટ પાલતે હેં અથવા કુંટસે જો

“ અડવીદેસેસુ ગામનગરખેડકઘ્વઢે વિઝલસીમે લહુ સંનિવેસેહ ” ગામ, નગર, છેવે, કર્ષટ, આદિ સ્થાનોંકો વિસ્તૃત સીમાવાળાં કરીને ઉબ્જડ પ્રદેશોંમાં સુન્દર રીતે અડધીંવસાવે, “ પુષ્પાણિ ફલાણિ ય કંદમૂલાઈ કાલપત્તાઈ ગિણ્હ ” તમે લોકો “ કાલપત્તાઈ ” વિકસવાને સમય આવતાં વિકસેલાં “ પુષ્પાઈ ” ફૂલોંને “ ફલાણિ ” પાકેલા ઇળોંને તથા “ કંદમૂલાઈ ” પાકેલાં સ્વર્ણકન્દ-શર્કરીયાં લસણુ આદિ કઢીને તથા પિપ્પલી મૂળ આદિ મૂળોંને “ ગિણ્હ ” લઈ આવ્યા કરો, તથા “ કરેહ સંચયં પરિજનસ અઢાપ ” કુટુમ્બ આદિને માટે ધન આદિને સંચય કર્યા કરો ” એ પ્રકારની સલાહ આપ્યા કરે છે.

ભાવાર્થ—તે અસત્યવાદી લોકો ખીજ લોકોને ખુશ કરવાને માટે તેમને ગમે તેવાં વાતો તેમની સાથે કર્યા કરે છે. પણ તેનું શું પરિણામ આવશે ? તે ખાખતનો તેઓ જરા પણ વિચાર કરતાં નથી. કુંટ પાળનારને અથવા કુંટનો

અપના વ્યાપાર આદિ કરતે હૈં ડનસે યે યૌં કહ દિયાં કરતે હૈં કિ તુમ્હારા યહ ઝૂંટ દેખને મેં તો વડા સુહાવના લગતા હૈં પરંતુ ઇસકી ચાલ તો કોઈ ઢંગ કી હી નહીં હૈં, ઇસે જૈસે ભી હો સુન્દર ચાલ ચલના સિંઘલાઓ ! ઇસી તરહ જો બેલૌં કે માલિક હોતે હૈં ડનસે ભી યે સમયર પર હી ઉપ-દેશ મરી યાતે વનાયા કરતે હૈં, ડનસે કહતે હૈં-તુમ્હારે બેલૌં કો યહ જોડી દેખનેમેં તો વડી સુન્દર માલૂમ પડની હૈં, પરંતુ દેખો ઇસકી ચાલ કુછ ભી નહીં હૈં, અતઃ યહ ગાડી આદિમેં જોતને પર સૂવતેજ ચાલ ચલે ઇસ તરહ કી ચાલ સીંઘાઓ, જંગલમેં ઇક ગાય જૈસા જાનવર હોતા હૈં જિસે રોઝ કહતે હૈં, યહ ચલનેમેં વડાતેજ હોતા હૈં. સો તુમ જૈસે ભી હો સકે ઇસકો પકડવા કર મંગાઓ ઔર અપને ઘર પર રાખ કર ડસરોઝકો જૈસે ભી હો સકે પહિલે વશમેં લાઓ, યાદમેં ડસકો જંગલ કી ચાલ છુડાકર અછી ચાલ ચલને મેં ઢાલો, ઇસસે તુમ્હેં આને જાનેમેં સમયકી વડી વચન હોની રહેગી. ઇસી તરહ તુમ બેઠેર કયા કરતે રહતે હો ? ઘોડૌં કે ઘઝેડૌંકો, હાથિયૌં કે ઘચ્ચૌં કો, મેષૌં (મેંદે)કો, કુવકુટૌં (મુગૌં)કો, પૈસે દેકર સ્વરીદો, ઔર પિલા પિલાકર જય યે સૂચ મસ્ત હો જાવે તથ હન્હેં વેચ દિયા કરો ઇસમેં તુમ્હેં વહુત અધિક લાભ હોગા. તથા કુછ રૂઝગાર કહીં ચલતા હો તો ઇસ પ્રકાર બેઠે રહને મેં તુમ્હેં કયા લાભ

વ્યાપારની સીંઘે લાવવા લઈ જવામાં ઉપયોગ કરનારને તે કહે છે કે તમારો આ ઊંટ દેખાવમાં તો ઘણો સુંદર લાગે છે પણ તેની ચાલ કઢંગી છે. તેને ગમે તે પ્રકારે આડી ચાલ ચાલતાં શીખવાડો. એ જ રીતે બળદોના માલિકોને પણ તે વારંવાર ઉપદેશ-સલાહ આપ્યા કરે છે કે તમારા બળદોની આ બેડી દેખાવમાં તો ઘણી સુંદર છે, પણ તેની ચાલ ઘણી ધીમી છે, તો તેને ગાડી આદિની સાથે બેડવામાં આવે તો ઝડપથી ચાલે એવી ચાલ શીખવાડો. જંગલમાં ગાય જેવું એક પ્રાણી હોય છે, તેને રોઝ કહે છે, તે ચાલવામાં ઘણું ઝડપી હોય છે. તમે ગમે તે રીતે તે રોઝને પકડી મંગાવોઃ અને તમારે ઘેર રાખીને તેને ગમે તે રીતે પહેલાં વશ કરો, પછી તેને જંગલી ચાલ છોડાવીને સારી ચાલ ચાલતા શીખવો, તેમ કરવાથી તમને અવર જવ-રમાં સમયનો મારો બચાવ થશે. એજ રીતે તે અસત્યવાદી લોકો ઓળખે કહે છે કે-તમે બેડાં બેડાં થું કરો છો ? ઘોડાનાં ઘઉંરોને, હાથીઓનાં બગ્યાંને ઘેટાંઓને, કૂકડાઓને પૈસા આપીને ખરીદ કરો, અને તેમને બવરાવી ખીવ-રાવીને જ્યારે તેઓ સારી રીતે હુદ્દ પુદ્દ થાય ત્યારે વેચી દો, તેથી તમને મારો લાભ થશે. તથા કેઈ ધર્મી ન ચાલતો હોય તો આ રીતે બેસી રહે-

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૨ સૂ૦૧૩ મૃગાવાદિનાં જીવઘાતકવચનનિરૂપણમ્ ૨૩૧

હૈ ? કમ સે કમ ચના હી ભૂંજકર બેચા કરો । તુમ તો પૈસે વાલે હો, તુમને હસ મનુષ્ય જન્મ કો પાકર ક્યા આનંદ પાયા મદિરા આદિમેં જો આનંદ હૈ વહ ઔર કહાં હો સકતા હૈ, હસલિયે इन्हें खूब खाओ पीओ और बचने पर अपने मित्र दोस्ती को भी खिलाया पिनाया करो । देखो-તુમહારે યે નૌકર ચાકર દાસી દાસ આદિ જન બેઠે ૨ ક્યા કરતે હૈં ? કમ સે કમ તુમ ઇનસે ગહન જંગલોં કો હી સાફ કરાકર ડનહેં લેત આદિ કે યોગ્ય બનવાલો । વૃક્ષ આદિ કટ જાને પર વહાં બડી અચ્છી તરહ સે લેતી કે યોગ્ય ભૂમિ તૈયાર હો સકતી હૈ । તુમહારે પાસ જો યે યંચ પડે હુર હૈં વે અચ તો કુછ કામ મેં તો નહીં આ રહે હૈં પડે ૨ ઔર खराब हो जावेंगे, अतः क्यों नहीं इनके भाजन पात्र आदि बनवा लेते हो, ताकि उनसे तुम्हारा बहुत सा काम सभ सकता है । गुड़ का बाजार इस समय बहुत तेज जा रहा है, खांड भी बहुत महंगी बिक रही है, अतः क्यों नहीं तुम समझ से काम लेते हो ? जहां तक होसके इन इक्षुओं(सेलडी)को जल्दीसे जल्दी पिलवालो, ताकि गुड़ आदि तयार होकर तुम्हें बाजार से अच्छा लाभ हो सके । सरसों का तेल भी बहुत तेज बिक रहा है सो घानी में पिलवाकर इसका तेल निकलवालो और बेच

વાથી શો લાભ ? બીજું કંઈ ન બની શકે તો ચણા શેડીને વેચ્યા કરો પૈસા ઢારોને અન્નત્યવાદી કહે છે કે-‘તમે તો પૈસાદાર છો, તમે આ મનુષ્ય અવતાર પામીને શો આનંદ લૂંટ્યો છો ! મદિરા આદિમાં જે આનંદ મળે છે તે બીજે ક્યાં મળે તેમ છે ? તો ખૂબ ખાઓ, પીઓ, તથા ખાતાં પીતાં વધે તો તમારા મિત્રોને પણ અવરાવ્યા કરો પીવરાવ્યા કરો. બુઓ ! તમારા આ નોકર ચાકર; દાસ, દાસી આદિલોદે એકાં એકાં ગું કામ કરે છે ? તો તેમની પાસે ગહન જંગલોને શાફ કરાવીને તે સ્થાનને ખેતી કરવાને લાયક બનાવરાવો. વૃક્ષ આદિ કપાવી નાખવામાં આવે તો ત્યાં સારામાં સારી ખેતી થાય જેથી જમીન તૈયાર થઈ શકે છે. તમારી પાસે જે યંત્રો છે તે હાલમાં કોઈ ઉપયોગમાં આવતાં નથી, તો પડ્યાં પડ્યાં તે ખરાબ થઈ જશે, તો તેને તોડાવીને તેમાંથી લાઝન પાત્ર આદિ કેમ બનાવરાવતા નથી ? તેમ કરવાથી તમારું ઘણું કામ સરળ થશે. હાલમાં ગોળનાં બજાર ઘણાં ચડી ગયાં છે. ખાંડ પણ ઘણી મોંઘી વેચાય છે. તો તમે બુદ્ધિ પૂર્વક કેમ કામ લેતા નથી ? બની શકે એટલી ડડપથી આ શેરડીને પીલાવી નાખો જેથી ગોળ આદિ તૈયાર કરીને વેચવાથી તમને વેપારમાં સારો લાભ મળે. સરસીયું પણ ઘણું મોંઘું વેચાય છે, તો સરસવને ઘાણીમાં પીલાવીને તેનું તેલ કઢાવો અને તે તેલ વેચીને સારી એવી

પુનરપ્યાહ—‘સાલિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ય—સાલીવીહિજવા ય લુચ્ચંતુ મલિજંતુ ઉપ્પયંતુ ય
લહું ચ પવિસંતુ કોટ્ટાગારં, અપ્પમદુક્કોસગા ય હમ્મંતુ
પોત્તસત્થા સેણાણિજ્ઞાઠ જાઠુડમરં, ઘોરા વટંતુ જયંતુ ય
સંગામા, પવહંતુ ય સગડવાહનાઈં, ઉવણયણં ચોલગં વિવાહો
જન્નો અમુગમ્મિ હોઠ દિવસે સુકરણે સુમુદુત્તે સુનક્કલ્લે
સુતિહિમ્મિ ય અજ્ઞ હોઠપ્પહવણં, મુદિયં વદુલ્લખપેજ્જકલિયં,
કોઠમ વિપ્પહાવણસંતિકમ્માણિ કુળહ સસિ-રવિ-ગહોવરાગ-
વિસમેસુ સજણસ્સ પરિજણસ્સ ય નિયયસ્સ ય જીવિયસ્સ
ય પરિરક્કણદ્વાપ્પા પડિસીસગાઈં ચ દેહ, દેહ ય સીસોવહારે
વિવિહોસહિમ્મજ્ઞમેસંભક્કલ્લણપાણમહ્છાણુલેવણ પડ્વ જલિ-
ઠ્ઠલ સુગંધધૂવોવયારપુપ્પફલસમિદ્ધે, પાયચ્છિત્તે કરેહ
પાણાહવાયકરણેણ વદુવિહેણ વિવરીઠ્ઠપ્પાયદુસ્સુવિણ
પાવસઠ્ઠાપ્પસોમ્મગ્ગહચરિયઅમંગલનિમિત્તપડિઘાયહેઠં,
વિત્તિચ્છેયં કરેહ, માદેહ કિંચિદાણં, સુદુહઠો સુદુહ્ણિણો
ભિણ્ણોત્તિ ઉવદિસંતા એવંવિહં કરેંતિ અલિયં મણેણં વાયાપ્પ
કમ્મુણા ય અકુસલા અગજ્ઞા અલિયાણા અલિયધમ્મનિરયા

કર રકમ ફકટી કર લો । ઇત્યાદિ નાના પ્રકાર કી વાતે બના ૨ કર
પૃષ્ઠાવાદી જન મિત્ર ૨ પુરુષો કો સદા પ્રસન્ન કરને કી ચેષ્ટા મેં લગે
રહતે હેં । યહી સથ વિષય ફસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ ॥સૂ-૧૩॥

રકમ એકત્ર કરી લો. ” ઇત્યાદિ વિવિધ પ્રકારની વાતો કરીને પૃષ્ઠાવાદી
માણસો જુદા જુદા પુરુષોને હંમેશાં સારી રાજવાની પ્રવૃત્તિમાં રચ્યા પચ્યા
રહે છે. એ બધી વાત સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા પ્રગટ કરી છે. ॥સૂ-૧૩॥

सुदर्शिनी टीका अ. २ सू० १४ मृगावादिनां जीवघातकवचननिरूपणम् २३३

अलियासु कहासु अभिरमंता तुहा अलियं करेउं हुंति य
वहुपगारं ॥ सू० ॥१४॥

टीका—‘सालीवीही’ इत्यादि । ‘सालीवीहीजवा य’ सालीवीहीयवाश्च=तत्र
शालयः पृथक्कोशपरिपाकयोग्या व्रीहयश्च धान्यविशेषाः यवाश्च=ज्व इति भाषा
प्रसिद्धाः एते ‘लुचंचंतु’ ल्यन्तां=छिद्यन्ताम् । ‘मलिज्जंतु’ मृद्यन्तां=पलालादिभ्यः
पृथक् कियन्ताम् । ‘उप्पयंतु’ उत्पूयन्ताम्=परिशोधयन्तां ‘लहुं च’ लघु च=शीघ्रं
सुन्दररीत्या च । ‘कोट्टागारं’ कोट्टागारं=कोष्ठेषु ‘पविसंतु’ प्रवेशयन्तां=संभ्रियन्तां
शाल्यादयः ‘अप्पमहुकोसगा हम्मंतु पोतसत्था’ अल्पमहुत्कर्षका हन्यन्तां पोतसार्थाः
तत्र अल्पाः=ह्रस्वास्तदपेक्षया महान्तश्च=मध्यमा उत्कर्षका=उत्कृष्टा पोतसार्थाः नौका-
स्थितजनसमुदायाः-पक्षिशिशुसमुदाया वा हन्यन्तां=नाश्यन्ताम् । तथा ‘सेणा-
णिज्जाउ’ सेना निर्यातु=कटकं निर्गच्छतु, निर्गत्य च ‘जाउडमरं’ यातुडमरं=

तथा—‘सालि’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(सालि व्रीहिजवा य लुचंचंतु) सालि-साठ दिनरात में
परिपाक के योग्य धान्य को तथा व्रीहि को, और जव को काट लो
(मलिज्जंतु) इन्हें पलाल आदि से पृथक् कर लो (उप्पयंतु) अच्छी तरह
से इनकी दाँय (गाइट) करवाकर उड़ावनी कर लो—(उफणलो) अभी
वायु अनुकूल अच्छी चल रही है । (लहुं च कोट्टागारं पविसंतु) जल्दी
से जल्दी कोठारमें इन्हें भरवा दो । (अप्पमहुकोसगा हम्मंतु पोतसत्था)
छोटे बीचके-मध्यम श्रेणिके, एवं उत्तम श्रेणिके पोतमार्थ-नौकास्थित
(नौकामें रहे हुए) जनसमूहको मार डालो, अथवा छोटेबड़े तथा बीचके सब

तथा—“मालि” इत्यादि

टीकार्थ—“सालीवीहिजवा य लुचंचंतु” साली (साठ) दिवसोंमें पाकतुं
अनाज) तथा व्रीहि (योग्या) अने जवनी कापखी करावि दो “मलिज्जंतु” तेमांथी
पराण वजरे छटुं पड़ावी दो, “उप्पयंतु” आरी रीते अणुं करावीने तेने
उपखी दो “उफणलो” अत्यारे अनुकूल पवन वायु छे तो तेने उपखुवातुं सरण
पड़े. “लहुं च कोट्टागारं पविसंतु” तेने बड़ेसामां बड़ेसी तडे कोठारमां भरावी दो.
“अप्पमहुकोसगा हम्मंतु पोतसत्था” नाना, मध्यम श्रेणिना अने उत्तम श्रेणिनां
पोतसार्थ-नायमां रहेल जनसमूहने भारी नाणो, अथवा नाना, मध्यम तथा
भोटा-समस्त पक्षीसमुदायने भारी नाणो. “सेणाणिज्जाउ” अहींथी सेना
प्र० ३०

ઉપદ્રવસ્થાનમ્ । ‘ ધોરા સંગામા વટંતુ ’ ધોરા સંગામા વર્તનતાં=ભવન્તુ ‘ જયંતુ ’
જયન્તુ=વિજયે પ્રાપ્તુવન્તુ ચ । ‘ સમહવાહનાઈં ય પવહંતુ ’ શકટવાહનાનિ ચ
પ્રવહન્તુ=શકટાનિ=ગન્ત્રઃ વાહનાનિ ચ=તૌકાદીનિ પ્રવહન્તુ=પચાલયન્તુ । ઉવળયણં
ચોલગં વિવાહો જન્નો અમુગમ્મિહોઽ દિવસે મુકરણે સુમુહુત્તે સુનક્ષત્તે સુતિદિમ્મિ
ય ’ તત્ર ‘ ઉવળયણં ’ ઉપનયનં=કલાગ્રહણં ‘ ચોલગં ’ ચોલકં ચાલકાનાં પ્રથમ
શિરોમુખં, વિવાહઃ=પાણિગ્રહણં પ્રસિદ્ધં ‘ જન્નો ’ યજ્ઞઃ एतत्सर्वम् ‘ અમુગમ્ ’ અમુકસ્મિન્
દિવસે મુકરણે=કર્ણાણિ એકાદશ. તત્ર-વચ-ચાલક-કૌલક-તૈત્તિલ-ગર-યજિજ
વિષ્ટયથૈતાનિ સપ્ત કર્ણાણિ, શકુનિ ચતુષ્પદ નાગકિન્તુગ્રાણિ યત્વારિ સ્થિરાણિ,
इत्येषामन्यतमकरणं शुभे ‘ સુમુહુત્તે ’ સુમુહુત્તે=શોભને રોદ્રાદિત્રિશ્વદન્યતમે ‘ સુન-
ક્ષત્તે ’ સુનક્ષત્રે=અશ્વિન્યાદિષુ શોભને પુષ્પાદિકે ‘ સુતિદિમ્મિ ’ સુતિથૌ નન્દાદિષુ
અન્યતમે ‘ દોઝ ’ ધવતુ । તથા ‘ અજ્ઞ ’ અથ અસ્મિન્નહનિ ‘ હોઝહવણં ’ ધવતુ
સ્નપનં=સૌભાગ્યસન્નતિસમુદ્વિયથૈ વધ્વાદેઃ સ્નાનં વપૃતિકાસ્નાનં ચ । કિંમૂત ?
હી પક્ષિ સમુદાય કો નષ્ટ કર દો । (સેનાણિજ્ઞાઝં) સેના યદાંસે નિકલે
ઔર નિકલ કર ડગદગ્યસ્ત સ્થાન પર જાવે (ધોરા સંગામા વટંતુ જયંતુ)
વદાં ધોર સંગામ વહ કરે ઔર વિજયશ્રી કો પાવે (સમહવાહનાઈં ય
પવહંતુ) શકટ-ગાડી ઔર વાહન-નૌકા આદિ વે ચલાવે, (ઉવળયણં
ચોલગં વિવાહો જન્નો અમુગમ્મિ હોઽ દિવસે મુકરણે સુમુહુત્તે સુનક્ષત્તે
સુતિદિમ્મિય) ઉપનયન(જનોઈ)-કલાગ્રહણ, ચોલક-પ્રથમ શિરોમુખ, વિવાહ,
યજ્ઞ યેસવ અમુક દિવસમે, અમુક વવાદિ શુભકરણ મે, રોદ્રાદિ
ત્રીસ ૩૦ મુહૂર્તો મે, અમુક અછે મુહૂર્ત મે અશ્વિની આદિ સત્તાવીસ
નક્ષત્રો મે સે કિસી અમુક શુભ નક્ષત્ર ઁ નંદા આદિ તિથિયો મે સે
કિસી અછી તિથિ મે હોના ચાહિયે । તથા (અજ્ઞ હોઝહવણં) આજ
સૌભાગ્ય ઁવં સન્નતિ સમુદ્વિ કે નિમિત્ત વધુ (વહુ) આદિ કા સ્નાન

નીકળે અને તોફાનવાળા વિસ્તારમાં જાય “ ધોરા સંગામા વટંતુ જયંતુ ” ત્યાં
તે ભયંકર યુદ્ધ કરે અને વિજય પ્રાપ્ત કરે. “ સમહવાહનાઈં ય પવહંતુ ”
શકટ-ગાડી અને વાહન-નૌકા આદિ તે ચલાવે, “ ઉવળયણં ચોલગં વિવાહો
જન્નો અમુગમ્મિ હોઽ દિવસે મુકરણે સુમુહુત્તે સુનક્ષત્તે સુતિદિમ્મિય ” ઉપનયન-
કલાગ્રહણ, ચોલક-પ્રથમ ભોવાળા ઉતરવાની ક્રિયા, વિવાહ, યજ્ઞ એ સઘળું
અમુક દિવસે, અમુક વવાદિ શુભ કરણમાં, રોદ્રાદિ ત્રીસ (૩૦) મુહૂર્તોમાંના
અશ્વિની આદિ સત્તાવીસ નક્ષત્રોમાંના કેઈ શુભ નક્ષત્રમાં, નંદા આદિ તિથિ-
યોમાંની કેઈ શુભ તિથિએ થવું જોઈએ. તથા “ અજ્ઞ હોઝહવણં ” આજે
સૌભાગ્ય અને સન્નતિ સમુદ્વિને માટે વધુ (વહુ) આદિને સ્નાન કરાવવું જોઈએ.

सुवर्शिनी टीका अ० २ सू० १४ मृषावादिनां जीवघातकवचननिरूपणम् २३५

मित्याह—सुदितं=हर्षसहितं ‘बहुत्वज्जपेज्जकलियं’ बहुखाद्यपेयकलितं=बहु=मचुरं खाद्यं = भोज्यं मोदकमांसादिकं पेयं=मदिरादिकं तेन कलितं=युक्तम् । तथा ‘कोउगविण्हावणसंतिक्कम्माणि कुण्ह ससिरविगहोवरागविसमेसु सज्जणस्स परिज्जणस्स य निययस्स य जीवियस्स य परिरक्खणट्ठाए’ तत्र कौतुकविस्नापनशान्तिकर्माणि =कौतुकं=सौभाग्यवृद्धिके दृष्टिदोषनिवृत्त्यर्थं च रक्षापोट्टलिकादोरकादिवन्धनं, विस्नापनं=विविधैर्मन्त्रोपधादिभिः संमिलितजलैः, स्नापनं शान्तिकर्म च=होमजपादिकमित्येतानि ‘सज्जणस्स’ स्वजनस्य=आत्मीयजनस्य पुत्रादेः ‘परिज्जणस्स’ परिजनस्य च=दासीदास्यादेश्च पुनः ‘निययस्स य’ निजकस्य च=स्वस्य ‘जीवियस्स’ जीवितस्य ‘परिरक्खणट्ठाए’ परिरक्षणार्थाय कदा ? इत्याह—‘ससिरविगहोवरागविसमेसु’ शशिरविग्रहोपरागविषमेषु=शशिरन्याः=तत्र चन्द्रसूर्ययोः ग्रहेण=राहुलक्षणेनोपरागः=उपरजनं ग्रहणमित्यर्थस्तेन विषमेषु=वष्ट्युक्तेषु दिवसेषु अथवा शशिरवि एव नवग्रहेषु मध्ये ग्रही तयोरुपरागः=तनुवनादिकष्टकरस्थानेषु हो, अथवा प्रसूतिका का स्नपन हो । (सुदितं बहुत्वज्जपेज्जकलियं) उसमें बड़ा हर्ष मनाया जावे, अनेक प्रकारके खाद्य-मोदक मांस आदि भोज्य, एवं मदिरा आदि पेय (पीनेयोग्य) पदार्थ रहें । तथा (कोउगविण्हावणसंतिक्कम्माणि) सौभाग्यवृद्धिके निमित्त एवं दृष्टिदोष की निवृत्ति के अर्थ रक्षापोट्टलिका, दोरक आदिके बंधनरूप कौतुकको, अनेक प्रकारके मंत्रोंसे औषध आदिकोसे मिश्रित जलसे स्नान करानेरूप विस्नापनको-होमजपादिरूप शान्ति कर्मको तुम (सज्जणस्स परिज्जणस्स य निययस्स य जीवियस्स परिरक्खणट्ठाए) सब पुत्रादिरूप आत्मीयजन की, दासीदास आदिरूप परिजनों की; तथा अपने जीवनकी रक्षाके अर्थ तथा जब (ससिरवि गहोवरागविसमेसु कुण्ह) चन्द्र और सूर्य जिन दिनों में राहु प्रसित हो रहे हों उन दिनों में करो’ अथवा इन कौतुक विस्नापन, एवं शान्तिकर्मों

अथवा प्रसूतिप्रदने आत्र स्नान करवायुं जेठजे “सुदितं बहुत्वज्जपेज्जकलियं” ते प्रसूते भूषण आनंद मनाययो जेठजे-अनेक प्रकारनां भाव-दाहु, मांस आदि खोज्य, अने मदिरा आदि पेय पदार्थोंनी अवस्था थपी जेठजे तथा “कोउग विण्हावणसंतिक्कम्माणि” सौभाग्य वृद्धिने निमित्ते, अने दृष्टिदोषना निवारणुने माटे रक्षापोट्टलिका, दोरी आदिना बंधनइय कौतुक, अनेक प्रकारनां मंत्राधी, औषधो आदिशी मिश्रित जलथी स्नान करवाइय विस्नापन, होम जपादि इय शान्ति कर्म, तमे “सज्जणस्स परिज्जणस्स य निययस्स य जीवियस्स परिरक्खणट्ठाए” पुत्रादि इय आत्मीय जननी, दास दासी आदि इय परितोनी तथा पोताना छवतनी रक्षाने माटे व्यावे “ससिरविगहोवरागविसमेसु कुण्ह”

સ્થિતિઃ, તથા વિષમાણિ ચ દુઃસ્વપ્નાદીનિ, તેષુ શાન્ત્યર્થ ' કરેહ ' કુરુત । તથા ' પહિસીસગાઈં ચ દેહ ' પ્રીતિર્શીર્ષકાણિ ચ દત્ત=પિષ્ટનિર્મિતસ્વશિરઃપ્રતિ-
રૂપકાણિ ચ મહાકાલ્યાદિભ્યો દીયન્તાં—યુષ્માભિરિતિ વદન્તિ । તથા ' દેહ ય સી-
સોવહારે વિવિહોસહિમજ્જમંસમસ્ત્રવજ્જપાણમહાણુલેવણપર્વજ્જલિઝ્જલસુગંધધૂવોવ-
યારપુષ્પફલસમિદ્ધે ' દત્ત ચ શોર્ષોપહારાન્ વિવિથૌપધિમદ્યમાંસમશ્યાન્નપાનમા-
લ્યાનુલેપનપ્રદીપજ્વલિતોજ્જ્વલસુગન્ધધૂવોપવારપુષ્પફલસમૃદ્ધાન્ , તથા વિવિધાઃ
ઔષધયશ્ચ મદ્યમાંસાનિ ચ મશ્યાણિ ચ અન્નાનિ પાનાનિ ચ માલ્યાન્યનુલેપનાનિ
ચ તાનિ, પ્રદીપાશ્ચ જ્વલિતોજ્જ્વલાશ્ચ=આરાતીક્યાદ્યાઃ, તથા—સુગન્ધાઃ=શોભનગન્ધ
કો સ્વજનાદિ કો રક્ષા કે લિયે ઉસ સમય કરો જય નવગ્રહોં મેં ચન્દ્ર
સૂર્ય યે દો ગ્રહ તનુ ધન આદિ કષ્ટ કર સ્થાનોં મેં સ્થિતિ હોં, ઓર
દુઃસ્વપ્ન આદિ વિષમ ચીજોં કા અવલોકન હુઆ હો । તથા (પહિસી-
સગાઈં ચ દેહ) તુમ લોગ પિષ્ટ નિર્મિત અપને ૨ પ્રતિનિધિરૂપ શિરોંકો
મહાકાલી આદિ દેવિયોં કે લિયે ચલિ રૂપ મેં દો, અર્થાત્ શાંતિ આદિ
કે નિમિત્ત અપને શિર કે જૈસા શિર આદે કા બનાકર કાલી આદિ
દેવિયોં કે સમક્ષ ચલિરૂપ મેં ચઢાઓ, ઇસ પ્રકાર મૃપાવાદીજન કહતે
હૈં । તથા (દેહ ય સીસોવહારે) પશુ આદિ કે શિરોં કો ચઢાઓ, જબ
તુમ લોગ પશુ આદિ કે શિરોં કો કાલી દેવી કે લિયે ખેટ મેં પ્રદાન
કરો ઉસ સમય (વિવિહોસહિમજ્જમંસમસ્ત્રવજ્જપાણમહાણુલેવણપર્વ
જ્જલિઝ્જલસુગંધધૂવોવયારપુષ્પફલસમિદ્ધે) વિવિધ પ્રકાર કી
ઔષધિયોં સે, મદ્યમાંસરૂપ મશ્યાન્નપાન સે, માલ્યોં સે, અનુલેપનોં સે,

ચન્દ્ર અને સૂર્ય જે દિવસોએ રાહુથી અસિત થાય તે દિવસોએ કરો. અથવા
તે કૌતુક, વિસ્ત્રાપન, અને શાન્તિકર્મોને સ્વજનાદિની રક્ષાને માટે તે યમયે
કરો કે જ્યારે નવગ્રહોમાંના ચન્દ્ર અને સૂર્ય એ બે ગ્રહો તનુ, ધન
આદિ કષ્ટકારી સ્થાનોમાં રહેડ હોય અને દુઃસ્વપ્ન આદિ વિષમ ચીજો જોવામાં
આવતી હોય. તથા “ પહિસીસગાઈં ચ દેહ ” તમે લોકો પિષ્ટ નિર્મિત પોત
પોતાના પ્રતિનિધિ રૂપ મસ્તકોનું મહાકાળી આદિ દેવીઓને ગણિદાન દો,
એટલે કે શાંતિ આદિ નિમિત્તે પોતાના મસ્તક જેવું લોટનું બનાવેલું મસ્તક
કાળીકા દેવીઓને ગણિદાન રૂપે અર્પણ કરો, એ પ્રમાણે મૃપાવાદી લોકો કહે
છે. “ દેહ ય સીસોવહારે ” પશુ આદિનાં મસ્તકો ચઢાવો. જ્યારે પશુ આદિનાં
મસ્તકો, કાળીકા દેવીને માટે અર્પણ કરો ત્યારે “ વિવિહોસહિમજ્જમંસ
મસ્ત્રવજ્જપાણમહાણુલેવણપર્વજ્જલિઝ્જલસુગંધધૂવોવયારપુષ્પફલસમિદ્ધે ” વિવિધ
પ્રકારની ઔષધિઓથી, મદ્યમાંસ રૂપ ભક્ષ્યાન્ન અને પીણીથી, માળાઓથી

सुदर्शिनी टीका अ० २ सू० १४ मृपावादिनां जीवघातकवचननिरूपणम् २३७

सम्पन्ना ये धूपाः=गुग्गुलादयस्तेषामुपचारः=भङ्गारे प्रक्षेपणं तथा पुष्पाणि च फलानि च तैः समृद्धान्=परिपूर्णान् शीर्षोपहारान्श्च=पश्चादिशिरोवल्लीन् दत्तं देशदिभ्यः । तथा 'पायच्छित्ते करेह पाणाइवायकरणेण बहुविहेण विवरीउप्पायदुस्सुविणपावसउण असोम्मगहचरिय अमंगलनिमित्तपडिघायहेउं' प्रायश्चित्तानि कुरुत-विपरीतोत्पातदुःस्वप्नपापशकुनासौम्यग्रहचरितामंगलनिमित्तप्रतिघातहेतुं=तत्र विपरीता ये उत्पाताः=अशुभभूचकाः धूमकेतादयः दुस्स्वप्नाश्च=अस्थिसंश्रयगर्दभारोहणादि स्वप्नदर्शनरूपाः पापशकुनाः=प्रसिद्धाः असौम्यग्रहचरितं=क्रूरग्रहदशा, अमङ्गलनिमित्तानि=अङ्गस्फुरणादीनि तेषां प्रतिघातहेतुं=निवारणनिमित्तं बहुविधेन=नानाप्रकारेण प्राणातिपातकरणेन=प्राणिहिंसया प्रायश्चित्तानि कुरुत । 'वित्तिच्छेयं करेह' वृत्तिच्छेदं कुरुत=जीविकाविनाशं कुरुत, इति किमपि निमित्तादिकमुपादाय ब्रुवन्ति 'मादेह किञ्चिदाणं' मादत्तं किञ्चिदानं 'सुट्टुहओ २' सुट्टुहत्तः सुट्टुहत्तः-सुट्टु=शोभ-

जलते हुए उज्ज्वल आरतीरूप दीपकों से, तथा शोभनगंध से संपन्न गुग्गुल आदि धूपों के उपचार से, एवं पुष्पों और फलों से परिपूर्ण वह भेट होनी चाहिये । तथा (विवरीउप्पायदुस्सुविणपावसउण असोम्मगहचरिय अमंगलनिमित्तपडिघायहेउं) अशुभभूचक धूमकेतु आदि विविध विपरीत उत्पात, अस्थिसंश्रय, गर्दभारोहण आदि दुस्स्वप्न, खोटे २ शकुन, क्रूरग्रहदशारूप असौम्यग्रहचरित, अमंगल के निमित्तभूत अंगस्फुरण आदि इन सबके निवारणके लिये (बहुविहेण पाणाइवायकरणेण पायच्छित्ते करेह) अनेक प्रकार से प्राणिहिंसा करो, इसीसे इन सबका प्रायश्चित्त होगा । (वित्तिच्छेयं करेह) हरेक व्यक्ति को जीविका का विनाश करो । (मा देह किञ्चिदाणं) किसी को भी

अनुक्षेपनेथी, जलतां तेजस्वी आरतीना दीपडोथी तथा सुंदरगंध वाणा गुग्गुल आदि धूपथी अने पुष्पो अने इणोथी परिपूर्ण ते पलितान डोवुं जेउंओ. तथा "विवरीउप्पायदुस्सुविणपावसउण असोम्मगहचरिय अमंगलनिमित्त पडिघायहेउं" अशुभ सूचक धूमकेतु आदि विविध विपरीत उत्पात, अस्थि संश्रय, गर्दभारोहण आदि दुस्स्वप्न, अशुभ शकुन क्रूरग्रहदशाइय असौम्य ग्रहचरित अमंगल घटना निमित्तइय अंगण इउंउवुं आदि अमंगल घटना निवारणने भाटे "बहुविहेण पाणाइवायकरणेण पायच्छित्ते करेह" अनेक प्रकारे प्राणिहिंसा करो, तेथी ते पश्चा अमंगलानुं निवारण धरे. "वित्तिच्छेयं करेह" हरेक व्यक्तिकी आलविकाने विनाश करो "मादेह किञ्चिदाणं"

નતયા હતો દુષ્ટઃ, અત્ર સંભ્રમે દ્વિત્વમ્' તથા 'સુદુ છિન્નો મિન્નો' સુદુ છિન્નો મિન્નશ્ચ સ દુર્જનેન' ઇતિ પૂર્વોક્તપ્રકારૈઃ 'ઉવદિસંતા' ઉપદિશન્તઃ=કથયન્તઃ 'એવં વિહં' એવંવિહં=સ્વરૂપતઃ સત્યમપિ પ્રાણિનાં હિંસાકારણત્વાત્ પરિણામતોડલીકં 'મણેજં, વાયાણ કમ્મુણા ય' મનસા-વચસા કર્મણા ચ ત્રિધા 'અલીયં' અલીકમ્=અસત્યં 'કરેતિ' કુર્ષન્તિ માપન્તે' ઇત્યર્થઃ, કીદૃશાસ્તે અલીકમાપિણઃ ? ઇત્યાહ 'અકુસલા' અકુશલાઃ=ભાષાસમિતિવિકલાઃ 'અળજ્ઞા' અનાર્થીઃ=મ્હેચ્છાઃ કુછ મી દાન મત દો । (સુદુહઓ સુદુછિન્નો મિન્નોત્તિ) 'તુમને' ઉસ દુષ્ટ કો અચ્છા મારા, વહુત અચ્છા કિયા જો' ઉસે છિન્ન મિન્ન કર ડાલા । (ત્તિ)' ઇસ પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે (ઉવદિસંતા) દૂસરોં કે પ્રતિ કહતે હુપ મુવાવાદી જન (એવં વિહં) યદ્યપિ સ્વરૂપ કી અપેક્ષા અપને વાચ્યાર્થ સે સંબંધિત હોને કે કારણ-સત્ય હોને પર મી પ્રાણિ હિંસા કે કારણ હોને સે અસત્યવાણી કો (મણેજં વાયાણ કમ્મુણા) મન સે, વચન સે ઓર કાય સે, (અલિયં કરેતિ) અલીક-ઝૂઠ બોલા કરતે હૈં । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈં કિ અપને અભિધેય(વક્તવ્ય)સે અસંબંધિત વાણી હી મુવા-સ્વરૂપ નહીં હૈં કિન્તુ જિસ સત્યવાણીસે પર પ્રાણિયોંકો કષ્ટ હો આપત્તિમેં પડે જાના પડે' ઉનકે પ્રાણોં કી હિંસા આદિ હો જાવે વહ વાણી મી અસત્ય હી હૈં । એસી વાણી કેવલ વચનયોગ કી અપેક્ષા સે હી અસત્યરૂપ નહીં માની જાવી હૈં કિન્તુ વહ મન ઓર કાય ઇન અંગોંકી અપેક્ષા મી અસત્ય માની જાતી હૈં । ઇસ તરહ કી અસત્યવાણી કા જો (અકુસલા)

કોઈને પણ કંઈ પણ દાન ન આપો " સુદુહઓ સુદુછિન્નો મિન્નોત્તિ " " તમે તે દુષ્ટને માર્યો તે દીક કહ્યું, તેને છિન્ન સિન્ન કરી નાખ્યો તે બ્રહ્મ આર્ કહ્યું " " ત્તિ " આ પૂર્વોક્ત પ્રકારે " ઉવદિસંતા " બીજને કહેતા તે અસત્ય યોક્ષનારા લોકો " એવં વિહં " જે કે સ્વરૂપની અપેક્ષાએ પોતાના વાચ્યાર્થ સાથે સાથે સંબંધિત હોવાને કારણે-સત્ય હોવા છતાં પણ પ્રાણી હિંસાના કારણે રૂપ હોવાથી અસત્યવાદીને " મણેજં વાયાણ કમ્મુણા " મનથી, વચનથી અને કાર્યથી " અલિયં કરેતિ " અલીક-અસત્ય યોદ્યા કરે છે- તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પોતાના અભિધેયથી અસંબંધિત વાણી જ મુવાવાદ રૂપ નથી પણ જે સત્ય વાણીથી બીજાં પ્રાણીએને કષ્ટ થાય, આપત્તિમાં મૂકવું પડે, તેમનાં પ્રાણોની હિંસા આદી થાય, તે વાણી પણ અસત્ય જ છે. એવી વાણી કેવળ વચનયોગની અપેક્ષાએ જ અસત્યરૂપ માનવામાં આવતી નથી પણ તે મન-યોગ અને કાયયોગની અપેક્ષાએ પણ અસત્ય મનાય છે. આ પ્રકારની અસત્ય વાણી કે જે " અકુસલા " ભાષા સમિતિથી રહિત જીવો હોય છે તથા " અલિ.

સુવર્ણીની ટીકા અ૦ ૨ સૂ૦ ૧૪ મૃગાવાદિનાં જીવ્યાતકવચનનિરૂપણમ્ ૨૩૨

‘અલિયાણા’ અલીકાજ્ઞા:=અલીકા જ્ઞાના=આગમો યેનાં તે તથા ‘અલિયધમ્મ-નિરયા’ અલીકધર્મનિરતા:=અસદ્ધર્મપરાયણા: ‘અલિયાસુ કહાસુ’ અલીકાસુ આત્મ-ગુણહાનિકારાસુ કથાસુ અભિરમન્ત:=પ્રસીદન્ત: ‘વહુપ્પગારં’ વહુપ્રકારમ્ ‘અલિયં કરેડં’ અલીકં કૃત્વા=ભાષિત્વા ‘તુટ્ટા’ તુપ્પટ્ટા:=પ્રસન્ના ભવન્તિ ॥મૂ૦ ૧૪॥

‘ભાષા સમિતિ સે રહિત પ્રાણી હોતે હૈં તથા (અલિયાણા) જિનકા આગમ મો અસત્ય હોના હૈં જો (અલિયધમ્મનિરયા) અસત્ય ધર્મ મેં નિરત રહતે હૈં, તથા (અલિયાસુ કહાસુ અભિરમન્તા) આત્મગુણ હાનિ કરાને યાલી કથાઓં મેં જિનકા મન મોદ પાતા હૈં એસે અનાર્યજન (વહુ-પ્પગારં અલિયં) इन विविध प्रकारके अलीक वचनों को (करेडं तुट्टा) बोलकर वे भविष्यमें पश्चात्ताप नहीं करते हैं प्रत्युत (उलटे)प्रसन्न होते हैं ।

‘આવાર્ય’—સૂત્રકારને હસ સૂત્રદ્વારા યહ પ્રકટ કિયા હૈં કિ જો પ્રાણી અસત્યભાષણ કરનેમેં હી આનંદ માનતા હૈં વે કિસ પ્રકારસે બૈઠે બૈઠે દૂસરે જનોંકો પ્રાણિહિંસા વર્ધક કાર્યોં મેં ઉકસાયા કરતે હૈં, જવ યે કિસીકી શાલિકી खेतीको पकी हुई देख लेते हैं तो उसके मालिकको चाहे वह माने या न माने सलाह देते हैं—तुम्हारी यह खेती एक चुकी है, तुम बैठे २ क्या करते हो ? क्यों नहीं जल्दी से जल्दी इसे काटकर और दाय (गाहटा) करके साफसूफ कर अपने घरमें भरकर रख देते हो ? ! इसे तो ‘मंडार’ में भर कर रखनेमें ही लाभ है । ये वणिक् जन बड़े स्वार्थी होते हैं—बाहर परदेशमें नौकाओं से यात्रा कर सूख कमाई

યાળા ” જેમના આગમ પણ અસત્ય હોય છે. જે “અલિય ધમ્મનિરયા ” અસત્ય ધર્મમાં શીન રહે છે, તથા “અલિયાસુ કહાસુ અભિરમન્તા ” આત્મગુણ હાનિ કરાવનાર કથાઓમાં જેમનું મન આનંદ પામે છે એવા અનાર્યજન “વહુપ્પગારં અલિયં” એ વિવિધ પ્રકારનાં અલીક વચનો “કરેડં તુટ્ટા ” બોલીને ભવિષ્યમાં પશ્ચાત્તાપ કરતા નથી પણ રાણ થાય છે.

આવાર્ય—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા એ પ્રગટ કર્યું છે કે જે જીવો અસત્ય બોલવામાં જ આનંદ માને છે જેઓ એકાંએકાં કહારીતે અન્ય જીવોને પ્રાણહિંસા વર્ધક કાર્યો કરવાને ઉશ્કેરે છે. બ્યારે તે કોઈના ખેતરમાં શાકિ ડાંગરનો પાક તૈયાર થયેલો જુવે છે ત્યારે તે તેના માલિકને તે માને કે ન માને છતાં પણ તે સલાહ આપે છે કે આ ડાંગર પાકી ગઈ છે. તમે એસી કેમ રહ્યા છો ? તેને જલ્દી કાપીને, ખાનું કરીને, ઉપજીને શા માટે ઘરમાં ભરી લેતા નથી ? તેને ઘરમાં કોઠારમાં જ ભરી રાખવી હિતાવહ છે. આ વેપારીઓ ભારે સ્વાર્થી હોય છે. બહાણીમાં પરદેશની સફર કરીને તેઓ

કરતે હૈં ઓર ફિર વૈઠે ૨ સ્નાતે હૈં, એક અપનલોગ હૈં જો રાત દિન પરિશ્રમ કરકે ખી ઉદરપૂર્તિ કે લાયક સાધન સામગ્રી નહીં જુટા પાતે હૈં, અતઃ અચ્છા હો ઇન સબકો જવ યે નૌકાઓં દ્વારા બાહર જાને લગે તબ ઇનકો નષ્ટ કર દિયા જાવે । પક્ષિ સમૂહ ખી સ્નેહી આદિકા બહુત નુકસાન કરતે હૈં અતઃ ઇન્હેં ખી માર ઢાલો । અમુક જગહ પર થડા ભારી ઉપદ્રવ ઇસ સમય હો રહા હૈં, સેના વહાં જાવે ઓર ઉપદ્રવકારિયોંકો નષ્ટ કર વહાંસે વિજયશ્રી પ્રાપ્તકર લૂટ આવે તો વહુત અચ્છી ચાત હૈં । ઇસ તરહ ફિર ઇગડા કરનેવાલે લોગ અપના માથા ભવિષ્યમેં ઝૂંચા નહીં ઉઠા સકેંગે । યદિ તુમ્હારે પાસ વ્યાપાર આદિસે ઇસ સમય કોઈ આય (આમદાની)કા સાધન નહીં હૈં તો ગાડી વાહન આદિકો ભાંડેપર ક્યોં નહીં ચલાતે હો ચલાઓ, ઇસસે હી તુમ્હેં લાભ હોગા દેવો ઉપનયન(જનોઈ), ચોલક, વિવાહ યજ્ઞ આદિ જિતને ખી યે શુભ કૃત્ય હૈં વે એસે હી થોડે કિયે જાતે હૈં, ઇન્હેં તો અમુક શુભ દિવસમેં, અમુક તિથિમેં, યવાદિ ગ્યારહ કરણોંસે અમુક શુભ કરણમેં એવં અમુક શુભમુહૂર્ત આદિમેં કિયા જાતા હૈં, ઇસલિયે ભાઈ ! તુમ્હેં એસા મોકા આવે તવ તુમ ઇન કૃત્યોંકો શુભ દિવસ આદિમેં કરના । દેવો ઘરમેં યદ નવીન વહુ

શુભ નાણું કમાય છે, અને પછી ખેડાં ખેડાં ખાય છે. આપણે જ એવા છીએ કે જે રાત દિન પરિશ્રમ કરવા જતાં પણ ભરણપોષણને લાયક વસ્તુ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, તો તે બધા બ્યારે નૌકાઓમાં સફર કરતા હોય ત્યારે તેમને નાશ કરવામાં આવે તો ઘણું સાફ થાય પક્ષિગણ પણ ખેતીના પાકને ઘણું જ નુક-શાન કરે છે, તો તેમને પણ મારી નાખો. અત્યારે અમુક જગ્યાએ ભારે તોફાન ચાલે છે, ત્યાં લશ્કર બંધ અને તોફાનીઓની કતલ કરીને ત્યાંથી વિજય પ્રપ્ત કરીને પાણું આવે તે બહુ જ ઇચ્છનીય છે. આમ કરવાથી તોફાની માણસો ભવિષ્યમાં કદી પણ શબ્દ સાંભળે માથું ઊંચકશે નહીં. જો તમારી પાસે વ્યાપાર આદિ આવકતું કોઈ પણ સાધન ન હોય તો ગાડી, વાહન આદિને ભાડે કેમ ચલાવતા નથી? તે સાધને ભાડે ચલાવશો તો તમને લાભ થશે. ઉપનયન, ચોલક-ભોવાળા ઉતરાવવાની કિયા, વિવાહ, યજ્ઞ આદિ જે શુભ કૃત્યો છે તે એમને એમ થોડાં થાય છે ! એ શુભકૃત્યો તો અમુક શુભ દિવસોએ અમુક શુભ તિથિએ, યવાદિ ગ્યારહ કરણોમાંથી અમુક શુભ કરણમાં, અને અમુક શુભ મુહૂર્ત આદિમાં કરવા જોઈએ. તો ભાઈ ! તમારે ત્યાં પણ એવા અવસર આવે ત્યારે તમે પણ તે કૃત્યો શુભ દિવસ આદિમાં કરો, શુભો !

सुदर्शनी टीका अ० २ सू० १४ मुपाचादिनां जीवघातकवचननिरूपणम् २४१

आई है—प्रथम समय जब इसका स्नान करनेका हो तब वह शुभ घड़ी आदिमें ही कराना, इससे इसका सौभाग्य सन्तति एवं समृद्धिकी वृद्धि होगी। इसी तरह प्रसूनिका का जब स्नान कराना हो तब भी इन सब बातों का ध्यान रखना। शुभ कृत्यों को करते समय इस बात का भी पूरा र ख्याल रखना चाहिये कि उस समय चित्तमें किसी प्रकारकी ग्लानिका भाव न जगने पावे, हर्षविभोर (हर्षमग्न) बन कर ही सब काम किया करो। खूब ठाटबाटसे मद्य, मांसादिकों का उपयोग करो। कौतुक, विस्मापन्न, तथा शांतिकर्म आदि सत्कृत्य अपने जीवन आदि की रक्षा के लिये शशि सूर्यग्रहों पर जब २ राहुद्वारा आक्रमण हो तब २ अवश्य करो। काली आदि देवियों की प्रसन्नता संपादन करनेके लिये बड़े आनन्दके साथ पिष्ट से अपने मस्तककी आकृति बना कर उनके समक्ष बलि चढ़ाया करो। तथा पशुबलि भी चढ़ाओ, बलि चढ़ाते समय खूब उत्सव मनाओ। उनकी आरती उतारो, उस उत्सवमें ह्छानुसार विविध औषधियोंका, चाजीकरण आदि दवाईयोंका भक्ष्यान्नपान मात्स्यानुलेपन आदि का खूब उपयोग करो। मानवजीवनका यह

घरमां नववधू आवी छे, तेने ज्यारे सौधी पछेली वणत स्नान करवानुं आवे त्यारे ते शुभ घटि आदिमां करवबुं जेठजे. तेस ठरवाधी तेनुं सौभाग्य सन्तति अने समृद्धि वधजे-जे ज प्रभाणि प्रसूनिकेने पणु ज्यारे स्नान करववानुं होय त्यारे पणु आ गंधी जाणतेनुं ध्यान राणवुं जेठजे. शुभकृत्यो करती वणते ते वातनी पणु पूरे पूरी करगछ राणवी छे त्यारे चित्तमां केठ पणु प्रकारनी ज्ञानिना लाव न जेगे, हर्षविभोर यधने ज सधणां कामे कर्पा करे. जूण छड गाडथी मांस मदिरा आदिनां उपयोग करे. ज्यारे ज्यारे सूर्य अन्द्र पर राहुनुं आक्रमण थाय-अन्द्र छे सूर्य अडणु थाय त्यारे पोताना जवन आदिनी रक्षाने माटे कौतुक, विस्मापन, शांतिकर्म आदि सत्कृत्यो अवश्य करे. कालीका आदि देवीने प्रसन्न करवा माटे घण्टा आनंद पूर्वक खोटथी पोताना भन्तछ जेवो आहार जनार्पनी तेभने जखि आभ्या करे, तथा पशु-ओनुं जखिदान पणु आपो, अने आ जखि अर्पती वणते जूण उत्सव मनावो. तेभनी आरती उतारे, ते उत्सवमां ह्छानुसार विविध औषधियोना, वालुछ-रणु आदि दवाओना, लक्ष्यान्नपानना, कूलनी माणाओना अने अनुलेपनाना जूण उपयोग करे. मानव जवनना आवो समय वारंवार श्रोते ज भले छे? ज्यारे अशुभसूचक धूमकेतु आदि अडो देणाय पराण स्वप्नां आवे, पराण

एतावता 'यथाकृत' इति तृतीयद्वारं 'येऽपि च-कुर्वन्ति' इति पञ्चमद्वारं च मिलितमुक्तम्। अथ 'जारिसं फलं देइ' इत्यलीकवचनस्य चतुर्थं फलद्वारमाह-

मूलम्-तस्स य अलियस्स फलविवागं अयाणमाणा वड्ढेंति
सहवभयं अविस्सामवेयणं दीहकालवहुदुक्खसंकडं, णरय-
तिरियजोणिं, तेण य अलिण्ण समणुवच्चा आइट्ठा पुण-
व्वबंधयारे भमंति भीमे दुग्गइवसहि सुवग्गया ते य दीसंति
इह दुग्गया दुरंता परवसां अत्थभोगपरिवज्जिया असुहिया
फुडियच्छवीवीभच्छविवण्णा, खरफरुसविरत्तज्झामज्झुसिरा
निच्छाया लल्लविफलवाया असक्कयमसक्कया अगंधा अचे-
यणा दुब्भगा अकंता कारुस्सरा हीणभिन्नघोसा विहिंसा
जडवहिरमूया य मम्मणा अकंतविकयकरणा णीया
णीयजणणिसेविणो लोगगरहिणिज्जा भिच्चा असरिसज-
णस्स पेस्सा दुम्मेहा लोगवेदअज्झप्पसमयसुइवज्जिया

समय बार २ थोड़े ही मिलता है। जब अशुभसूचक धूमकेतु आदि ग्रह हों, दुःस्वप्न आते हों, अशुभ शकुन हों, क्रूर ग्रहों की दशावर्त रही हो, अमंगलजनक निमित्त हों तो ऐसी स्थितिमें इनकी अशुभता दूर करनेके लिये प्राणियोंकी हिंसा प्रायश्चित्त करो। देखो-उसने अपने शत्रु को अच्छा किया जो मार दिया। उसे अच्छा छिन्नभिन्न किया। इत्यादि प्राणि प्राणपीडक वचनों को सृष्टावादी बोलते हैं और आनंद-मग्न बनते हैं ॥ सू० १४ ॥

झुकन थाय, डूरथडोनीदशा भेडी डोय, अने अमंगल जनक निमित्तो अज्झाय
त्थाये तेमनी अशुभता इर करवाने भाटे प्राणीआनीतडिंसा द्वारा प्रायश्चित्त
करे. जुये ! तेणे तेना शत्रुने मारी नाभ्ये ते साइं थयुं तेने छिन्न भिन्न कर्यो
ते साइं क्युं. " इत्यादि प्राणी प्राणपीडक वचनो ते सृष्टावादी बोले छे अने
तेमां आनंद अनुभवे छे. ॥ सू-१४ ॥

सुदर्शिनी टीका अ०२ सू०१५ मृषावाचिनां नरकादिप्राप्तिरूपफलनिरूपणम् २४३

नरा धम्मबुद्धिवियला अलिण्ण य तेणय उड्डमाणा असं-
तण्णं अवमाणणपिड्डिमंसाहिकखेवपिसुणभेयणगुरुबंधव-
सयणमित्ताऽवक्खारणाऽऽइं अब्भक्खाणादियाइं बहुविहाइं
पावंति, अमणोरमाइं हिययमणदूमगाइं जावज्जीवं दुरुद्धराइं,
अणिट्ठखरफरुसवयणतज्जणनिब्भच्छणदीणवदणविमणा कु-
भोयणा कुवाससा, कुवसहीसु किलिस्संता नेव सुहं नेव निब्बुइं
उवल्लभंति अचंचंत विउल्लदुक्खसय संपलित्ता ॥ सू० ॥१५॥

टीका—‘तस्स य’ तस्य च ‘अलिण्णस्स’ अलीकस्य मृषावादस्य—द्विती-
यासप्तद्वारस्य ‘फलविवागं’ फलविपाकं=फलपरिणामं ‘अमाणमाणा’ अज्ञानन्तः
‘महद्भयं’ महाभयं=महद्भयं यस्यां सा तथा ‘अविस्सामवेयणं’ अविश्रामवेद-
नाम्=निरन्तरपीडां ‘दीहकालवहुदुक्खसंकडं’ दीर्घकालवहुदुःखसंकटां—दीर्घकालं=
पल्यसागरप्रमाणां यावत् विविधदुःखसंकुला ‘निरयतिरियजोणिं’ नरकतिर्यग्योनिं

इस तरह यहाँ तक सूत्रकार ने अलीक भाषणका व्याख्यान “यथा
कृत” इस तृतीय द्वार से तथा “येऽपि च कुर्वन्ति” इस पंचम द्वारसे
मिलितरूप में किया। अब “जारिसं फलं देइ” इस चतुर्थ द्वारसे वे
इसका विवरण करते हैं—‘तस्स य’ इत्यादि।

टीकार्थ—(तस्स य अलिण्णस्स) उस मृषावादरूप द्वितीय आसन्नद्वारके
(फलविवागं) फलरूप विपाक को (अमाणमाणा) नहीं जानते हुए
मृषावादीजन (महद्भयं) अत्यंत भयवाली (अविस्सामवेयणं) निरन्तर
वेदनावाली तथा (दीहकालवहुदुक्खसंकडं) पल्य तथा सागरोपम प्रमाण
काल तक विविध प्रकारके दुःखोंवाली ऐसी (निरयतिरियजोणिं) नरक

आ श्रुति अर्ही सुधी सूत्रकारे अलीक भाषणसुनुं व्याख्यान “यथाकृत”
ओ त्रीज द्वारथी तथा “येऽपि च कुर्वन्ति” ओ पांचमा द्वारथी ओकर श्रुति
धुं हवे “जारिसं फलं देइ” ओ ओथां द्वारथी तेओ तेनुं पणुंन करे
छे “तस्स य” इत्यादि.

टीकार्थ—“तस्स य अलिण्णस्स” ते मृषावाद रूप तीज आसन्न द्वारना “फलविवागं”
इणइय विपाकने “अमाणमाणा” न ज्ञातुता ते ते मृषावादी बोडो “महद्भयं”
अत्यंत भयंकर “अविस्सामवेयणं” निरंतर वेदनामय तथा “दीहकालवहु-
दुक्खसंकडं” पल्य तथा सागरोपम प्रमाण काल सुधी विविध प्रकारनां दुःखो

નરકતિર્યગ્યોનિઃ સંખ્યાઽસંખ્યકાલપમાણા, વનસ્પત્યપેક્ષ્યાઽનન્તકાલપમાણા, તત્રોત્પત્તિરૂપાં 'વદ્ધુતિ' વર્ધયન્તિ, 'તેળ ય અલિણ' તેન ચાલીકેન=અસત્ય ભાષણકર્મણા 'સમણુવદ્ધા' સમણુવદ્ધાઃ=વન્ધ્રં પ્રાપ્તાઃ 'આદ્દા' આધિષ્ટાઃ= આશ્લિષ્ટાઃ 'પુણઞ્મબંધયારે' પૂર્વમવાન્ધકારે = પુનઃ પુનર્જન્મૈવાન્ધકારસ્તસ્મિન્ ભીમે=ભયંકરે 'ભમંતિ' ભ્રમન્તિ-મૃપાભાષિણો જીવાઃ જન્મજરામરણયોરનિચિદ્-દુઃસ્વાન્ધકારકાન્તારે નિપત્તિતાઃ સન્તો વિવિધાનિ કષ્ટાન્યનુભવન્તીત્યર્થઃ । તથા કથંચિત્ત્વમ્મનુષ્યલોકે સમુત્પન્ના અપિ 'દુર્ગહ્વસહિમુવગયા' દુર્ગતિવસતિ-મુપગતા=વલેશવદ્ધુલસ્થિતિં પ્રાપ્તા 'દીસંતિ' દશ્યન્તે । અયં ભાવઃ-મૃપાભાષિણો નરકતિર્યગ્યોનિષુ સમુત્પન્નન્તે । અથ કથશ્ચિત્તરકાદિતો નિસ્સૃત્ય મનુષ્યશરીરં તથા તિર્યચ યોનિકો (વદ્ધુતિ) વદાતે હૈં । અર્થાત્ મૃપાવાદી જન મૃપા-ભાષણસે ઉત્પન્ન પાપોં કે ઉદયસે પત્યપ્રમાણવાલી નિર્યચ યોનિકો તથા ઉત્કૃષ્ટ તેતીસ સાગરોપમ પ્રમાણકાલવાલી નરકગતિકો અગ્ની ઉત્પત્તિ સ્થાન બનાતે હૈં । વહાં વે સંખ્યાત કાલ, અસંખ્યાત કાલ એવં વનસ્પતિ અપેક્ષા અનન્તકાલ તક રહતે હૈં । (તેળ ય અલિણ) ડસ અલોક ભાષણકર્મસે (સમણુવદ્ધા) વંધ કો પ્રાપ્ત હુણ (આદ્દા) ક્ષીર નીરકી તરહ પરસ્પર એક ક્ષેત્રાવગાહરૂપ સંબંધ સે વિશિષ્ટ હુણ વે જીવ (પુણઞ્મ-બંધયારે ભીમે) પુનઃ પુનઃ જન્મરૂપ ભયંકર અંધકાર મેં (ભમંતિ) ભ્રમણ કરતે હૈં । અર્થાત્ જો મૃપાવાદી જન હોતે હૈં વે જન્મ, જરા, મરણ રૂપ ઘોર ગાદ અંધકારમેં પતિન હો કર વિવિધ કષ્ટોં જો ભોગા કરતે હૈં । તથા (દુર્ગહ્વસહિમુવગયા તેય દીસંતિ) યદિ વે કદાચ કિસીં ખી તરહસે ડસ મનુષ્યલોકમેં ઉત્પન્ન હો જાવેં તો ખી વલેશ વદ્ધુલ સ્થિતિ

વાળી "નિરયતિરિચજ્ઞોનિ" નરક તથા તિર્યચ યોનિને "વદંતિ" વધારે

છે. એટલે કે મૃપાવાદી લોકો અસત્ય વાણીથી જનિત પાપોના ઉદયથી પદ્ય પ્રમાણુવાળી તિર્યચ યોનિને તથા ઉત્કૃષ્ટ તેતીસ સાગરોપમ પ્રમાણુ વાળી નરકગતિને ખેતાળી ઉત્પત્તિનું સ્થાન બનાવે છે ત્યાં તેઓ સંખ્યાતકાળ, અસંખ્યાતકાળ અને વનસ્પતિની અપેક્ષાએ અનન્તકાળ સુધી રહે છે. "તેળ ય અલિણ" તે અસત્યભાષણ કર્મથી "સમણુવદ્ધા" અર્થાત્ "આદ્દા" હૈંધ અને પાણીની જેમ પરસ્પર એક ક્ષેત્રાવગાહરૂપ સંબંધી વિશિષ્ટ થયેલ તે જીવો "પુણઞ્મબંધયારે ભીમે" ફરી ફરીને જન્મ લેવા કૃપ લયકર અંધકારમાં "ભમંતિ" ભ્રમણ કરે છે, એટલે કે મૃપાવાદી લોકો જન્મ, જરા, અને મરણરૂપ ગાદ અંધકારમાં પડીને વિવિધ કષ્ટોને ભોગવ્યા કરે છે. તથા "દુર્ગહ્વસહિમુવગયા તેય દીસંતિ" એ કદાચ તેઓ કોઈ પણ કારણે મનુષ્ય લોકમાં

સુદર્શિનો ટીકા અ૦૨સૂ૦૧૪ મૃષાવાદિનાં નરકાદિપ્રાપ્તિરૂપફલનિરૂપણમ્ ૨૪૫

પ્રાપ્તુવન્ત્યપિચેત્ તર્હિ હીનદીનતુચ્છજાતિકુલાદિભિઃ અધન્યા એવ વક્ષ્યમાણરૂપેણ દુઃસ્વબહુલશરીરં પ્રાપ્તા દશ્યન્તે । કથંભૂતાઃ ? इत्याह—‘ दुग्गया ’ दुर्गताः=दुरवस्थां प्राप्ताः सर्वथा दस्त्रिा-इत्यर्थः, दुरन्ताः=दुःखेन अन्तः=जीवनस्यावसानं येषां ते तथा ‘ परवसा ’ परवशाः=पराधीनाः ‘ अत्थभोगपरिवज्जिया ’ अर्थ भोगपरिवर्जिताः=अर्थाः=धनानि भोगाश्च=शब्दादयो विषयास्तैः परिवर्जिताः=रहिताः । तथा ‘ असुहिया ’ असुखिताः=सुखरहिता - निरन्तरमाधिव्याध्यादि को प्राप्त हुए दृष्टिपथ होते हैं । तात्पर्य इसका यही है कि मृषावादी जन नरक तिर्थञ्च योनिमें जन्मते हैं । यदि वे किसी तरह नरकादिसे निकल कर मनुष्य भव को प्राप्त कर भी लेवें तो भी वहां वे हीन, दीन, तुच्छ जाति कुल आदि में ही जन्म धारण करते हैं और अधन्य होकर दुःस्व बहुल शरीर को धारण करते हुए दिखलाई देते हैं । यही बात सूत्रकार (दुग्गया) इत्यादि पदों द्वारा प्रकट कर रहे हैं, वे कहते हैं कि यदि वे किसी प्रकार मनुष्य पर्याय धारण भी कर लेवें तो भी वहां उनकी परिस्थिति ठीक नहीं रहनी है—वे सदा (दुग्गया) दारिद्र्यदुःस्व से सन्तप्त रहते हैं (दुरन्ता) उनके जीवन का अन्त दुःस्वों से होता है (परवसा) जीवन भर वे पराधीन बने रहते हैं । (अत्थभोगपरिवज्जिया) अर्थ संपत्ति एवं शब्दादिक भोग पनसे, रहित होते हैं । (असुहिया) निरन्तर आधि, व्याधि, उपाधियों से पीड़ित रहने के कारण उन्हें सुख का अंश भी प्राप्त नहीं होता है । अथवा “असुहिया”

ઉત્પન્ન થાય છે તો પણ અત્યંત દુઃખયુક્ત સ્થિતિમાં નરકે પડે છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે મૃષાવાદી લોકો નરક તિર્થંચ યોનિમાં જન્મ લે છે, પણ તેઓ કોઈ પણ પ્રકારે નરકાદિમાંથી બહાર નીકળીને મનુષ્યભવને પ્રાપ્ત કરે તો પણ ત્યાં તેઓ હીન, દીન, તુચ્છ જાતિ કુળ આદિમાં જ જન્મ પામે છે અને અધન્ય-તિરસ્કૃત થઈને અત્યંત દુઃખયુક્ત દશામાં મનુષ્ય જીવન વ્યતીત કરે છે. એ જ વાત સૂત્રકાર “ દુગ્ગયા ” ઇત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે. તેઓ કહે છે કે તેઓ કોઈ પણ પ્રકારે મનુષ્ય યોનિમાં જન્મ લે છે તો ત્યાં તેમની હાલત સારી હોતી નથી—તેઓ સદા “ દુગ્ગયા ” દારિદ્ર્યના દુઃખોથી પીડાય છે, “ દુરંતા ” તેમના જીવનનો અંત દુઃખોથી જ આવે છે, “ પરવસા ” આખું જીવન તેઓ પરાધીન દશા ભોગવે છે, “ અત્થભોગપરિવજ્જિયા ” અર્થ-સંપત્તિ તથા શબ્દાદિ ભોગથી તેઓ રહિત હોય છે, “ અસુહિયા ” નિરંતર આધિ, વ્યાધિ અને ઉપાધિયોથી પીડાયા કરે છે અને તે કારણે તેમને સુખનો અંશ પણ પ્રાપ્ત થતો નથી, અથવા “ અસુહિયા ” ની સંસ્કૃત છાયા “ અસુહ્યદઃ ”

પીડિતા, અથવા-અસુહૃદઃ=મિત્રાદિહીના: ‘ફુડિયચ્છવી’ સ્ફુટિતચ્છવયઃ=
 કુષ્ઠાદિભિર્ગલિતત્ત્વચ: ‘વીમચ્છવિવળ્લા’ વીમત્સવિવળ્લાઃ=વીમત્સઃ=ચિત્તોદ્દેશ-
 ગજનકો વિરૂપો વળ્લો યેષાં તે તથા ગલિતકુષ્ઠાદિભિર્ધૃણાઝનકશરીરવન્તઃ, ‘સ્વર-
 ફરુસવિરત્તજ્ઞામઙ્ગુસિરા’ સ્વરસ્પર્શવિરત્તવ્યામશુપિરાઃ=સ્વરઃ=કઠોરઃ સ્પર્શ
 યેષાં તે સ્વરસ્પર્શાઃ, તથા વિરત્તાઃ=ચિન્તાઙ્ક્રાન્તાઃ ધ્યામાઃ = કાન્તિહીનાઃ
 શુપિરાઃ=નિસ્સારશરીરવન્તશ્ચેતિ તે તથા ‘નિચ્છાયા’ નિચ્છાયાઃ = ગતમભાઃ
 ‘લલ્લવિફલવાયા’ લલ્લવિફલવાચઃ=લલ્લાઃ=અસ્પષ્ટાઃ-દેશીશબ્દોયં અસ્પષ્ટાર્થ-
 વાચકઃ, અત એવ વિફલાઃ=નિષ્ફલાવાચો યેષાં તે તથા વ્યક્તવચનરહિતાંત્યર્થઃ,
 ‘અસકયમસકયા’ અસંસ્કૃતાઙ્સંસ્કૃતાઃ=નાસ્તિ સંસ્કૃતં=સંસ્કારો યેષાં તેઙ્સંસ્કૃતા
 સ્તેષ્વપ્યસંસ્કૃતાઃ=અત્યન્તસંસ્કારરહિતા અતિમલિનશરીરાંત્યર્થઃ, અત એવ અગંધાઃ
 =દુર્ગંધાઃ=દુર્ગંધદેહાઃ ઇત્યર્થઃ ‘અચેયળા’ અચેતનાઃ = વિશિષ્ટચેતનાશૂન્યાઃ
 કી સંસ્કૃત છાયા “અસુહૃદઃ” એસી ખી હો સક્રતી હૈ, ઇસલિયે ઇસકા
 તાત્પર્ય મિત્રાદિકોં સે વે હીન હોતે હૈં એસા ખી હો જાતા હૈં । (ફુડિ-
 યચ્છવી) કુષ્ઠાદિક રોગ સે ઇનકે શરીર કી ત્વચા ગલિત હો જાતી હૈં ।
 (વીમચ્છવિવળ્લા) ઇનકા વિરૂપવર્ણ ચિત્ત કો ઉદ્દેશકારી હોતા હૈં, તથા
 ગલિત કુષ્ઠાદિસે ઇનકા શરીર ઘૃણિત હોતા હૈં (સ્વરફરુસવિરત્તજ્ઞામ-
 ઙ્ગુસિરા) ઇનકા શરીર કઠોર સ્પર્શ વાલા હોતા હૈં । યે સદા ચિન્તાઓં
 સે રાતદિન ઘિરે રહતે હૈં । કાન્તિ સે હીન હોતે હૈં । તથા ઇનકે શરીર
 મેં કુછ ખી સાર-બલ-નહોં હોતા હૈં । (નિચ્છાયા) પ્રભા ઇનકી ચલી
 જાતી હૈં (લલ્લવિફલવાયા) યે વ્યક્ત વચન રહિત ઔર નિષ્ફલ વચન
 વાલે હોતે હૈં (અસકયમસકયા) મલિનોં સે ખી યે ઔર અધિક મલિન
 હોતે હૈં (અગંધા) ઇસી કારણ ઇનકે શરીર મેં દુર્ગંધ આયા કરતી હૈં

પણુ થઈ શકે છે, તેથી તેનો અર્થ એવો પણ ઘટાયી શકાય કે તેઓ મિત્રાદિ
 વિનાના હોય છે, “ફુડિયચ્છવી” કે.ઠ આદિ રોગોથી તેમનાં શરીરની ત્વચા
 ગલિત થઈ જાય છે, “વિમચ્છવિવળ્લા” તેમનો ઉદ્દેશ દેખાવ ચિત્તને
 ઉદ્દેશકારી થાય છે, તથા ગલિત કે.ઠ આદિથી તેમનાં શરીર પ્રત્યે લોકો ધૃણાની
 નજરે દેખે છે. “સ્વરફરુસવિરત્તજ્ઞામઙ્ગુસિરા” તેમનાં શરીરનો સ્પર્શ
 કઠોર હોય છે, તેઓ સદા ચિન્તાઓથી ઘેરાયેલા રહે છે, સૌદર્ય રહિત હોય
 છે, તથા તેમનાં શરીરમાં બિલકુલ તાકાત હોતી નથી, “નિચ્છાયા” તેમનું
 તેજ આદ્યું બાક છે, “લલ્લવિફલવાયા” તેઓ વ્યક્ત-સ્પષ્ટ વચન રહિત
 અને નિષ્ફળ વચન વાળા હોય છે. “અસકયમસકયા” તેઓ મલિનો કરતાં

સુદર્શિની ટીકા અંર સૂ૦૧૫ મૃણાવાદિનાં નરકાદિપ્રાપ્તિરૂપફલનિરૂપણમ્ ૨૧૭

‘દુઃખગા’ દુઃખગાઃ=ભાગ્યહીનાઃ તથા ‘અકંતા’ અકાન્તા=અમનોજ્ઞાઃ ‘કાક-
સ્સરા’ કાકસ્સરાઃ=કાકસ્ય સ્વર ઇવ કઠોરઃ સ્વરો યેષાં તે કાકસ્સરાઃ=નીરસ-
વચનાઃ ‘હીણભિન્નઘોસા’ હીણભિન્નઘોષાઃ=હીનઃ=હ્રસ્વઃ ભિન્નઃ=ગર્દભવત્ ધ્રુટિતઃ
ઘોષઃ=સ્વરો યેષાં તે તથા મન્દઘ્રુર્ધુરિતસ્સરાઃ ‘વિહિંસા’ વિહિંસાઃ=જનૈસ્તાડ-
નતર્જનાદિભિર્વિશેષેષ દિંસ્પન્તે યે તે વિહિંસકાઃ ‘જડવહિરમૂયા’ જડવહિરમૂકાઃ
=જડાઃ=જ્ઞાનશૂન્યા વધિરાશ્ચ=શ્રવણશક્તિચિકલાઃ ‘મમ્મણા’ મમ્મનાઃ=અવ્યક્ત-
વચનાઃ ‘અકંતવિક્રયકરણા’ અકાન્તવિકૃતકરણાઃ=અકાન્તાનિ=અપનોજ્ઞાનિ
વિકૃતાનિ=વિરૂપાણિ ચ કરણાનિ=ઇન્દ્રિયાણિ ચક્ષુરાદીનિ યેષાં તે તથા વિકૃતે-
ન્દ્રિયા इत्यर्थः, ‘ળીયા’ ળીયાઃ=ળીચજ્ઞાતિકુલગોત્રાદિમિથ્યાઃ, ‘ળીયજ્ઞા-

(અચેયળા) ઇનકી ચેતના શક્તિ વિશિષ્ટ ચેતના શક્તિ સે રહિત હોતી
હૈ (દુઃખગા) યે ભાગ્ય હીન હોતે હૈં (અકંતા) મનોજ્ઞ નહીં હોતે હૈં
(કાકસ્સરા) કાક કે સ્વર જૈસા કઠોર-અરુચિકારક-ઇનકા સ્વર હોતા
હૈં ઓર વે (હીણભિન્નઘોસા) હીન હ્રસ્વ, ભિન્ન-ગધે કે સ્વર કી તરહ
ઘીચ ૨ મેં ધ્રુટિત સ્વરવાલે હોતે હૈં (વિહિંસા) મનુષ્ય ઇનસે પીછે પડ-
કાર ઇન્હે તાડન-તર્જન આદિ દ્વારા વિશેષરૂપ સે દુઃખિત કરતે રહતે હૈં
(જડવહિરમૂયા) યે જડ-જ્ઞાનશૂન્ય, વધિર-શ્રવણ શક્તિ ચિકલ ઓર
ગૂંગે હોતે હૈં (મમ્મણા) ઇનકે વચન સ્પષ્ટરૂપ મેં મુખ સે નહીં નિકલતે હૈં
અર્થાત્-બોલતે સમય તુનલાતે અથવા હલકાતે હૈં । (અકંતવિક્રયકરણા)
ઇનકી ચક્ષુરાદિક ઇન્દ્રિયાં અમનોજ્ઞ ઇવં વિકૃત રૂપ રહા કરતી હૈં
(ળીયા) ઇનકી જાતિ, કુલ ઇવં ગોત્ર આદિ સવ અધમ હોતે હૈં,

પણ વધારે મલિન હોય છે, “અર્ગળા” ઓ ડારણે તેમનાં શરીરમાં દુર્ગંધ
આવતી હોય છે; “અચેયળા” તેમની ચેતના શક્તિ વિશિષ્ટ ચેતના શક્તિથી
રહિત હોય છે, “દુઃખગા” તેઓ કમનસીબ હોય છે, “અકંતા” મનોજ્ઞ
હોતા નથી, “કાકસ્સરા” કાગડાના આવાજ જેવો કડકશ તેમને આવજ
હોય છે. અને તેઓ “હીણભિન્નઘોસા” હીન-હ્રસ્વ, ભિન્ન-ગધેડાના સ્વરની
જેમ વચ્ચે વચ્ચે ધ્રુટિત સ્વરવાળા હોય છે, “વિહિંસા” માણસો તેમની
પાછળ પડીને તેમને માર, કોથભર્યા શબ્દો આદિ દ્વારા વધારે દુઃખી કર્યા કરે
છે. “જડવહિરમૂયા” તેઓ જડ-જ્ઞાનશૂન્ય, બહેરા અને મૂળા હોય છે,
“મમ્મણા” તેઓના શબ્દો સ્પષ્ટ હોતા નથી ઓટલે તે ઓસલી વળતે તેઓ
તોતડાય છે કે અટકી અટકીને ઓલે છે. “અકંતવિક્રયકરણા” તેમની ચક્ષુ
આદિ ઇન્દ્રિયો અમનોજ્ઞ અને વિદ્યુત હોય છે, “ળીયા” તેમની જાતિ, કુળ

ણિસેવિણો ' નીચજનનિષેવિણઃ=જાતિગુણકર્મભિર્નીચા યે જનાસ્તેર્ણા નિષેવિણઃ= ઉત્થાનોપવેશનશયનભોજનપાનાદિભિઃ સદ્નિવાસિનઃ ' લોગગરહિણિજ્જા 'લોક-ગર્હણીયા=સકલજનનિન્દનીયાઃ ' ભિચ્ચા ' મૃત્યાઃ=મરણીયા એવાન્યૈઃ તથા 'અસ-રિસજણસ્સ પેસ્સા' અસદ્ગુણનસ્ય=અસમાનશીલસ્ય-મ્લેચ્છાચારલોકસ્ય 'પેસ્સા' મૈથ્યાઃ=તદાજ્ઞાકારકાઃ ' દુમ્મેદા ' દુર્મેધાઃ=સદ્બુદ્ધિવર્જિતાઃ, 'લોગવેદઅજ્ઞ-પ્પસમયસુદ્ધવજ્જિયા' લોકવેદાધ્યાત્મસમયશ્રુતિવર્જિતાઃ શ્રુતિશબ્દસ્ય મત્યેકં સમ્બન્ધાત્ લોકશ્રુતિઃ=લોકાભિમતં શાસ્ત્રં ભારતાદિઃ, વેદશ્રુતિઃ=ઋગ્યજુઃ સાપાથર્ક-વેદશાસ્ત્રમ્, અધ્યાત્મશ્રુતિઃ=આત્મસ્વરૂપનિર્ણાયકં શાસ્ત્રં, સમયશ્રુતિઃ=અર્હત્પ્રવચનં તાભિર્વર્જિતાઃ=રહિતા યે તે તથા, 'ધમ્મબુદ્ધિવિયલા' ધર્મબુદ્ધિવિકલાઃ=શ્રુત-ચારિત્રધર્મરહિતાઃ નરાઃ=મનુષ્યાઃ 'દશ્યન્તે' ઇતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ । તથા 'તેણ ય' તેન ચ=પૂર્વોક્તપ્રકારેણ 'અલિણ' અલીકેન=મૃષાવાદેન 'અસંતણ' (ળીયજ્ઞણિસેવિણો) નીચ જનોં કે સાથ હી યે ઉઠા થૈઠા કરતે હૈં ઓર ઇન્હીં કે સાથ યે યાતે પીતે હૈં તથા ઊન્હીં કે સાથ રહતે હૈં । (લોગ-ગરહણિજ્જા) મમસ્ત જન ઇનકી નિંદા કરતે રહતે હૈં । (ભિચ્ચા) દુસરોં કે દાસ હોકર રહતે હૈં (અસરિસજણસ્સ પેસ્સા) અસમાનશીલ-વાલે-મ્લેચ્છાચાર વાલે-લોગોં કે યે દાસ હોતે હૈં (દુમ્મેદા) સદ્બુદ્ધિ સે યે વર્જિત હોતે હૈં (લોગવેદઅજ્ઞપ્પસમયસુદ્ધવજ્જિયા) લોકશ્રુતિ વેદશ્રુતિ, અધ્યાત્મશ્રુતિ ઓર સમયશ્રુતિ સે યે રહિત હોતે હૈં । લોકાભિ-મત ભારત આદિ શાસ્ત્રો કા નામ લોકશ્રુતિ હૈં । ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ, સામ-વેદ, અથર્વવેદ, ઇનકા નામ વેદશ્રુતિ હૈં । આત્મા કે સ્વરૂપ કે નિર્ણ-ાયક શાસ્ત્ર અધ્યાત્મશાસ્ત્ર હૈં । અર્હત્પ્રવચન કા નામ સમયશ્રુતિ હૈં । (ધમ્મબુદ્ધિવિયલા) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ સે વિમુક્ત રહતે હૈં । તથા (તેણ

અને ઝોત્ર અધમ હોય છે, “ળીયજ્ઞણિસેવિણો” નીચ લોકો સાથે જ તે ઉઠે બેસે છે, તેમની સાથે જ તેઓ ખાય પીવે છે તથા તેમની જ સાથે રહે છે, “લોગગરહણિજ્જા” સઘળા લોકો તેમની નિંદા કરે છે. “ભિચ્ચા” અન્યના દાસ થઈને રહે છે, “અસરિસજણસ્સ પેસ્સા” અસમાન શીલવાળા-મ્લેચ્છા-ચાર વાળા લોકોના તેઓ દાસ થાય છે “દુમ્મેદા” તેઓ સદ્બુદ્ધિ રહિત હોય છે, “લોગવેદઅજ્ઞપ્પસમયસુદ્ધવજ્જિયા” લોકશ્રુતિ, વેદશ્રુતિ અધ્યા-ત્મશ્રુતિ અને સમયશ્રુતિથી તેઓ રહિત હોય છે. લોકાભિમત ભારત આદિ શાસ્ત્રોને લોકશ્રુતિ કહે છે, ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ, સામવેદ અને અથર્વવેદને વેદશ્રુતિ કહે છે આત્માના સ્વરૂપનું નિર્ણાયક શાસ્ત્ર અધ્યાત્મશાસ્ત્ર છે. અર્હત પ્રવચનને સમયશ્રુતિ કહે છે “ધમ્મબુદ્ધિવિયલા” તેઓ શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મથી

સુરજિનીટીકા અ૦ ૨ સૂ૦૧૫ મૃષાવાદિનાં સરકાદિપ્રાપ્તિરૂપફલનિરૂપણમ્ ૨૪૯

અસત્કેન-અસદ્ભૂષેણ અથવા અજ્ઞાન્તકેન=અનુપશન્તેન ‘ હજ્જમાણા ’ દશમાનાઃ= ષજ્જલ્યમાના ‘ અવમાણગા પિટ્થિમંસાદિક્ષેવપિસુળભેયણગુરુબંધવસયણમિત્તાવ-ક્ષારણાદિયાઈ ’ અપમાનનપુટ્થિમાંસાધિક્ષેવપિશુનભેદનગુરુવાન્ધવ સ્વજનમિત્રાપક્ષા-રણાદિકાનિ=તત્ર અપમાનનમ્=માનમદ્ગઃ, પુટ્થિનાંસં=પરોક્ષે દોષમાપણં, મધિક્ષેપઃ= ધિકારપૂર્વકનિન્દનં, પિશુનભેદનં=પિશુનૈઃ = સ્ત્રલૈઃ ભેદનં=પ્રેમસમ્બન્ધવિચ્છેદનં, ગુરુવાન્ધવસ્વજનમિત્રાણામપક્ષારણં=સ્ત્રક્ષવચ્ચનૈસ્તર્જનં, અથવા-મિત્રાદિભિર્વદિક્ષણં ચ ઇતાનિ આદિ યેષાં તાનિ તથા મૂલ્લાનિ, ‘ અબ્ધક્ષવાણાઈ ’ અભ્યાસ્યાનાનિ= અસત્યદોષારોપણવચ્ચનાનિ ‘ વહુચિદાઈ ’ વહુચિદાનિ=નાનાપ્રકારાણિ ‘ અમળોર-માઈ ’ અમળોરમાણિ=મનઃપ્રતિકૂલાનિ ‘ દિયયમળદૂમગાઈ ’ હૃદયમનોદાવકાનિ ય અલિણ અસંતણં) મૃષાવાદીજન હસ અસદ્ભૂ અથવા અનુપશન્ત મૃષાવાદ સે (હજ્જમાણા) રાત્રિનિ જલતે રહતે હૈં ઓર (અવમાણ-પિટ્થિમંસાદિક્ષેવપિસુળભેયણગુરુબંધવસયણમિત્તાવક્ષારણાદિયાઈ) (અવમાણ) અપમાન સહન કરતે હૈં । (પિટ્થિમંસ) હરેક કોઈ ઇનકી પીઠ પીછે નિંદા કરતે હૈં । (અદિક્ષેવ) પ્રત્યેક વ્યક્તિ ઇન્હે ધિકારતા રહનો હૈં । (પિશુન ભેયણ) દુષ્ટ લોગ ઇનકે પ્રેમસંબંધ કો વિચ્છેદ કરા દેતે હૈં ગુરુબંધવસયણમિત્તા ગુરુજન, બંધુજન, સ્વજન ઇવં મિત્ર (અવક્ષારણાદિયાઈ) સ્ત્રક્ષ વચ્ચનાં દ્વારા ઇનકા અનાદર કરતે હૈં-હાટતે હપતે રહતે હૈં, અથવા યે સવ ઇન્હે અપને મેં સે બાહર નિકાલ દેતે હૈં (અબ્ધક્ષવાણાઈ) જાહે જો મનુષ્ય ઇન પર અસત્ય દોષારોપણ કર દિયા કરતા હૈં । ઇસ પ્રકાર યે લોગ અસત્યદોષારોપણ વચ્ચનોં કો કિ જો (વહુચિદાઈ) નાના પ્રકાર કે હોતે હૈં, (અમળોરમાઈ) મન કો

વિશુળ રહે છે. તથા “ તેણ ય અલિણ અસંતણં ” મૃષાવાદીજન આ અસદ્ભૂષ અથવા અનુપશન્ત મૃષાવાદથી “ હજ્જમાણા ” રાત્રિનિ જલતા રહે છે અને “ અવમાણપિટ્થિમંસાદિક્ષેવપિસુળભેયણગુરુબંધવસયણમિત્તાવક્ષારણાદિયાઈ ” “ અવમાણ ” અપમાન સહન કરે છે, “ પિટ્થિમંસ ” દરેક વ્યક્તિ તેની પીઠ પાછળ નિંદા કરે છે, “ અદિક્ષેવ ” દરેક વ્યક્તિ તેને ધિકારે છે. “ પિસુળ ભેયણ ” દુષ્ટ લોકો તેમના પ્રેમ સંબંધમાં ભંગાણુ પડાવે છે, “ ગુરુ-બંધવસયણમિત્ત ” ગુરુજન, બંધુજન, સ્વજન અને મિત્ર “ અવક્ષારણાદિ-યાઈ ” દ્વાર વચ્ચના દ્વારા તેમનો અનાદર કરે છે-થાક ધમકી આપતા રહે છે અથવા તે અથા તેમને પોતાની વચ્ચેથી બહાર કાઢી મૂકે છે. “ અબ્ધક્ષવાણાઈ ” તેમના ઉપર લોકો ગમે તે પ્રકારનું દોષારોપણ કર્યા કરે છે. આ રીતે તે લોકો અસત્ય દોષારોપણ કરેક વચ્ચનો, કે જે “ વહુચિદાઈ ” વિવિધપ્રકારનાં હોય છે, “ અમળોરમાઈ ” મનને ન ગમે તેવાં હોય છે, તથા “ દિયયમળદૂમગાઈ ”

=હૃદયસ્ય મનપથ દાવકાનિ=તાપજનકાનિ ‘જાવજીવં’ યાવજીવં=જીવન પર્યન્તે ‘દુરુદ્ધરાઈ’ દુરુદ્ધરાણિ=દુસ્તરાણિ ‘પાવંતિ’ પ્રાપ્નુવન્તિ । પુનઃ કિ મિત્પાદ—‘અણિદ્વચરફરુસવયણતજ્જગણિઘ્મચ્છળદીપવયણવિમણા’ અમિપ્રચર-ફરુપવચનતર્જનનિર્મત્સનદીનવચનવિમનસઃ=તત્ર અનિષ્ટેત=અપ્રિયેણ સ્વરપરુષેણ=અતિકઠોરેણ વચનેન યાનિ તર્જનાનિ=‘રે નીચ ! કથમેવં કરોપિ’ इत्यादि लक्ष-णानि निर्भर्त्सनानि=‘अरे दुष्टकर्मकारिन्=गृहाचिस्सर दृष्टिपथाद्वा’ इत्यादि रूपाणि, तैर्दीनं वदनं=मुखं विकृतं-विषाक्तयुक्तं च मनो येषां ते तथा ‘कुभोयणा’ कुभोजनाः=कुत्सितम्=अस्सविरसं भोजनं येषां ते तथा तुच्छान्नाहारिणः ‘कुवाससा’ कुवाससः=कुचैलिनः ‘कुवसहीसु’ कुवसतिषु-कुत्सितस्थानेषु ‘किलिस्संता’ नहीं रुचने वाले तथा (हिययमणकुमगाईं) हृदय और चित्त को संता-पजनक होते हैं ऐसे वचन (जावज्जीवं) जीवन पर्यंत (दुरुद्वराईं) जो इन्हें आघात पहुँचाने वाले होते हैं उनको (पावन्ति) प्राप्त करते हैं अर्थात् सुना करते हैं । फिर क्या सो कहते हैं—(अणिद्वचरफरुस वयण-तज्जगणिघ्मच्छण दीपवयणविमणा) ऐसे ये लोग अप्रिय, अतिक-ठोर वचनों से तथा—“ रे नीच ! ऐसा क्यों करता है ” इत्यादिरूप तर्जना से, “ ओ दुष्टकर्मकारिन् ! तू मेरे घर से बाहिर निकलजा-मेरे साम्हने मत आ-यहां से दूर हटजा ” इत्यादि हृदय विदारक निर्भर्त्सना से अनादृत हुए ये दीन वदन और विकृत मन वाले तथा (कुभोयणा) अपनी जिन्दगी भर कभी अच्छा भोजन नहीं पाने वाले तुच्छाहारी तथा (कुवाससा) भैले कुचैले वस्त्र पहनने वाले तथा (कु वसहीसु) गन्दी जगहों में रह कर (किलिस्संता) अनेक कष्टों को

હૃદય અને ચિત્તમાં તાપ પેદા કરનાર હોય છે તથા “ દુરુદ્ધરાઈ ” જે તેમને આઘાત લગાડનાર હોય છે એવાં વચનો “ જાવજીવં ” એવે ત્યાં સુધી તેઓ “ પાવંતિ ” પ્રાપ્ત કરે છે એટલે સાંભળ્યાં કરે છે. વળી બીજું શું અને છે તે કહે છે—“ અણિદ્વચરફરુસવયણતજ્જગણિઘ્મચ્છળદીપવયણવિમણા ” તેવા એ હોડો અપ્રિય, અતિ કઠોર વચનોથી તથા “ અરે નીચ ! આતું કેમ કરે છે ? ” इत्यादि प्रकारની તર્જનાથી, “ ઓ દુષ્ટકર્મકારિન ! તું મારા ઘરમાંથી બહાર નીકળી બા-મારી સામે આવીશ મા-અહીંથી દૂર ચાલ્યો બા ” इत्यादि हृदय लेदक निर्भर्त्सनाથી અનાદર પામેલ તે દીન વદનવાળા તથા વિકૃત મન વાળા તથા “ કુભોયણા ” તથા જીવન પર્યન્તે સાડું ભોજન પ્રાપ્ત નહીં કરનારા હલકા પ્રકારનું ભોજન પ્રાપ્ત કરનારા તથા “ કુવાસસા ” મેલાં તથા કાટેલાં તૂટેલાં વસ્ત્ર પહેરનારા તથા “ કુવસહીસુ ” ગંદી જગ્યાઓમાં રહીને “ કિલિ-

સુવર્ણિની ટીકા અ.૨ સૂ. ૧૫ મૃષાવાદિનાં નરકાદિપ્રાપ્તિરૂપફલનિરૂપણમ્ ૨૫૧

‘વિલશ્યન્તઃ’=સન્તપ્યમાના અતएव ‘અચ્ચંતવિઉલ્લુક્તસ્વસયસંપલિત્તા’ અત્યન્ત વિપુલદુઃસ્વશંતસંપદીપ્તાઃ=અત્યન્ત વિપુલાનિ વિશાકાનિ યાનિ દુઃસ્વશંતાનિ તૈઃ સમ્પદીપ્તાઃ-પ્રતપ્તાઃ=‘ઉલ્લમંતિ’ ઉપલભન્તે=પાપુવન્તિ ‘નેવસુહં’ નૈવસુલ્લં ‘નેવનિવ્વુહં’ નૈવનિર્વૃત્તિઃ=મનઃ સ્વાસ્થ્યં, કિન્તુ દુઃસ્વમેવાનુભવન્તીતિ ભાવઃ ।
एवં મૃષાવાદફલમુક્તમ્ ॥ સૂ. ૧૫ ॥

ઉઠાતે હુણ (અચ્ચંતવિઉલ્લુક્તસ્વસયસંપલિત્તા) વહુત અધિક કઠિન સે કઠિન સૈકઢૌં દુઃસ્વોં સે સન્તસ બને હુણ યે લોગ (નેવસુહં) ન તો કમ્પી સુલ્લ પાતે હૈં ઓર (નેવનિવ્વુહં) ન કમ્પી નિર્વૃત્તિ-મનઃ સ્વાસ્થ્ય-શાંતિ કો (ઉલ્લમંતિ) પાતે હૈં અર્ધાન્-રાતદિન દુઃસ્વ ભોગા કરતે હૈં । હસ પ્રકાર યહ મૃષાવાદ કા ફલ કહા હૈં ।

ભાવાર્થ—મૃષાવાદ કા ફલ સ્પષ્ટ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-મૃષવાદીજન કમ્પી મ્પી અપને જીવન મેં સચ્ચી સુલ્લશાંતિ નહીં પા સકતે હૈં । યે મૃષાવાદ સે ઉપાર્જિત પાપકર્મ કે ઉદય સે મરકર તિર્યચ એવં નરકગતિકે અત્યંત કઠિન દુઃસ્વોંકો ભોગા કરતે હૈં । તિર્યચ યોનિમેં રહને વાલે જીવોં કી આયુ ઉત્કૃષ્ટ ત્રીન પલ્લ્ય કી વનસ્પતિ કી અપેક્ષા અનંતકાલ કી ઓર નરક મેં રહને વાલે જીવોં કી ઉત્કૃષ્ટ તેત્રીસ સાગર પ્રમાણ હૈં । હતને કાલ તક વહાં રહકર કષ્ટ પરસ્પરાઓં કા અનુભવ વે કરતે રહતે હૈં । ફિર મ્પી જો પાપ કર્મ ભોગને સે અવશિષ્ટ રહતા હૈં ઉસે વે વહાં સે નિકલકર કિસી તરહ મ્પી મિલી હુઈ મનુષ્ય પર્યાય મેં ભોગતે હૈં । યહાં જો હન્હેં મનુષ્ય પર્યાય પ્રાપ્ત હોતી હૈં વહ વિલકુલ જઘ-

મ્સંતા ” અનેક કષ્ટો સહન કરતા “અચ્ચંતવિઉલ્લુક્તસ્વસયસંપલિત્તા” ઘણુંજ વધારે આક્રમાં આક્રમં સેકઢો દુઃખોથી દુઃખી અનેલા તે લોકો “નેવ-સુહં” કહી પણ સુખ પ્રાપ્ત કરતાં નથી “નેવ નિવ્વુહં” કે કહી પણ નિવૃત્તિ મનની શાંતિ “ઉલ્લમંતિ” અનુભવતા નથી. એટલે કે દિનરાત દુઃખ ભોગ-વ્યા કરે છે, આ પ્રકારનું મૃષાવાદનું ફળ કહેલ છે.

ભાવાર્થ—મૃષાવાદનું ફળ બતાવતા સૂત્રકાર કહે છે કે-મૃષાવાદી વ્યક્તિ પોતાના જીવનમાં કહી પણ સાચાં સુખ શાંતિ પામી શકતો નથી. તેઓ મૃષા-વાદથી ઉપાર્જિત પાપકર્મોના ઉદયથી મરીને તિર્યચ અને નરકગતિનાં અત્યંત કઠિન દુઃખો ભોગવ્યાં કરે છે. તિર્યચ યોનિમાં જન્મ પામતા જીવોનું આયુષ્ય ઉત્કૃષ્ટ પણ પલ્લ્યનું અને વનસ્પતિની અપેક્ષાએ અનંતકાળનું અને નરકની અપેક્ષાએ ઉત્કૃષ્ટ તેત્રીસ સાગર પ્રમાણનું હોય છે. એટલો સમય ત્યાં રહીને તેઓ કષ્ટ પરપરાઓને સહન કરે છે, ત્યાર પછી પણ જે પાપકર્મો ભોગવવાનાં

ન્યસ્થિતિ કી હોલી હૈ । ડાઘ સર્વથા જઘન્ય સ્થિતિ કી મનુષ્ય પર્યાય મેં ઉત્પન્ન હોકર યે કમી ભી થોડા આનંદ ભી નહીં પ્રાપ્ત કર સકતે હૈં । સદા પરાધીનતા કી જંજીરોં મેં જકડા જાકર इनका जीवन व्यवहार चलता है । इनकी शारीरिक आकृति दुर्दृशनीय एवं उद्वेगजनक होती है । कोई भी इनसे मोह ममता नहीं रखता है । हर एक व्यक्ति इनका तिरस्कार करता रहता है । चेतनशक्ति इनकी अविकसित रहा करती है । लक्ष्मी नहीं रहने से ये सदा दुःखी बने रहते हैं । सांगसंग करके ये जो भी लाते हैं वह रस विरस होता है । भरपेट भोजन इन्हें मिलता नहीं है । कभी भी इनकी इतनी अच्छी नहीं होती जो दूसरों के चित्त को अपनी ओर आकृष्ट कर भके । काक जैसा कठोर इनका स्वर होता है । गर्दभ जैसी इनकी बोली होती है । कोई २ तो जन्मांध होते हैं । कोई २ बहिरें और गूंगे होते हैं । दुःख में भी इनका साथ देने वाला कोई नहीं होता है । इनकी मित्रता अपने जैसे नीचों से ही होती है । उन्हीं के पास ये उठा बैठा करते हैं । गन्दे स्थानों में इन्हें रहने को मिलता है । सब कोई इनकी निंदा करते हैं । दूसरों के हृदय विदारक शब्दों को सुनकर ये मनोमन दुःखित होकर रह जाते हैं । तात्पर्य यह है

ખાકી રહ્યાં હોય તેમને ત્યાંથી નીકળીને કોઈ પણ રીતે પ્રાપ્ત થયેલ મનુષ્ય યોનિમાં તેઓ લોગાયે છે. તેને જે માનવ પર્યાય પ્રાપ્ત થાય છે તે બિલકુલ જઘન્ય સ્થિતિની હોય છે. તે તદ્દન જઘન્ય સ્થિતિની મનુષ્ય પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થઈને તેઓ કહી પણ થેડો અરખોએ આનંદ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેમનો શ્વપ્ન વ્યવહાર સદા પરાધીનતાની ઘેરીમાં જકડાઈને આવે છે તેમનાં શરીરના દેખાવ ભેટાળ અને ઉદ્વેગજનક હોય છે. તેમના પ્રત્યે કોઈ પણ માહ અથવા મમતા રાખતું નથી, દરેક વ્યક્તિ તેનો તિરસ્કાર કર્યા કરે છે. તેમની ચેતના શક્તિ અવિકસિત રહે છે. લક્ષ્મી નહીં રહેવાથી તે સદા દુઃખી રહે છે. માગી કરીને તે જે કંઈ લાવે છે તે વિરસ હોય છે તેને ધરાઈને ખાવા પણ મળતું નથી. ખીબના ચિત્તને પોતાની તરફ આકર્ષી શકે તેવી મીઠી વાણી પણ તેની હોતી નથી. તેનો સ્વર શગડા જેવો કર્કશ હોય છે. ગર્દભ જેવો તેની બોલી હોય છે, કોઈ કોઈ તો જન્માંધ હોય છે. કોઈ બહેરા અને મૂર્ખા હોય છે. દુઃખમાં પણ તેને મદદ કરનાર કોઈ હોતું નથી તેને પોતાના જેવા અધમ લોકો સાથે જ મિત્રતા થાય છે તેમની પાસે જ તે ઉઠે બેસે છે. તેમને ગંદાં સ્થાનોમાં જ રહેવું પડે છે. સૌ તેમની નિંદા કરે છે. બીજા લોકો હૃદયવિદારક શબ્દો સાંભળીને તેઓ પોતાના મનમાં જ દુઃખ અનુભવીને શાંત રહે છે, તાત્પર્ય

सुदर्शिनी टीका अ० २ सू० १६ अलीकवचनस्य फलितार्थनिरूपणम् २५३

अथ प्रकृतद्वारं सा हत्येन संकलय्य निगमयति सूत्रकारः 'एसो सो' इत्यादि ।

मूलम्—एसो सो अलियवयणस्स फलविवाओ इहलोइओ परलोइओ अप्पसुहोवहुदुक्खो महब्भओ बहुरयप्पगाढो दास्सणो ककसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइणय अवेदयित्ता अत्थि हु सोक्खोत्ति, एवमाहंसु नायकुलनंदणो महप्पा जिणोउ वीरवर नामधेज्जो कहेसीयं अलियवयणस्स फलविवागं, एयं तं विइयं पि अलियवयणं लहुस्सग लहुचवलभणियं भयंकरं दुहकरं अयसकरं बेरकरं अरतिरतिरागदोसमणसंकिंलेसवियरणं अलिय- नियडिसातियोगं बहुलं नीयजणनिसेवियं निसंसं अप्पच्चयकारगं परमसाहुगरहजिअं परपीडाकारगं परमकिण्हलेससहियं दुग्गइ- विणिवायवड्डणं भवपुणब्भवकरं चिरपरिचियमणुगयं दुरंतं त्तिवेमि ॥ सू० १६ ॥

॥ विइयं अधम्मदारं समत्तं ॥ २ ॥

टीका—'एसो सो' एप स अलियवयणस्स 'अलीकवचनस्य 'फलवि- वाओ' फलविवाकः 'इहलोइओ' ऐहलौकिकः=मनुष्यसंवापेक्षया 'परलोइओ'

कि दुःखों के जितने प्रकार हैं वे सब भयंकर से भयंकर इन्हें भोगना पड़ता है । उस स्थिति में इनका कोई साथी नहीं होता है ॥ सू-१५ ॥

अथ सूत्रकार इम अलिकवचन द्वार का संपूर्णरूप से संकलन करके फलितार्थ कहते हैं—'एसो सो' इत्यादि ।

टीकार्थ—(एसो सो अलियवयणस्स फलविवाओ) अलीक वचनका यह जो मनुष्यगति की अपेक्षा इहलोक संबंधी तथा नरकनिगोदगति की

એ છે કે દુઃખોના ભયંકરમાં ભયંકર જે પ્રકારે છે, તે તેમને ભોગવવા પડે છે. એ સ્થિતિમાં તેમનું કોઈ સાથીદાર હોતું નથી ॥સૂ-૧૫॥

હવે સૂત્રકાર આ દ્વારનું સંપૂર્ણ રીતે સંકલન કરીને ફલિતાર્થ બતાવે છે—“एसो सो” इत्यादि,

टीकार्थ—“एसो सो अलियवयणस्स फलविवाओ” अलीक वचनको मनुष्यगतिनी अपेक्षाએ આલોક સંબંધી તથા નરકગતિની અપેક્ષાએ પરલોક સંબંધી આ જે ફલ-

પારલૌકિકઃ=નરકાદ્યપેક્ષયા ‘અપ્પસુહો’ અપ્પસુહઃ=સુખવર્જિતઃ ‘વહુદુક્ખો’ દુઃખવહુલઃ ‘મહ્ચ્મઓ’ મહાભયઃ=મહાભયજનકઃ ‘વહુરયપ્પગાઢો’ વહુરજઃ પ્રગાઢઃ=પ્રચુરકર્મરજોમિઃ સમ્મૃતઃ દારુણઃ=મીષણઃ ‘કક્કસો’ કર્કશઃ=કઠોરઃ ‘અસાઓ’ અસાતઃ=અમુલ્લોડશાતકર્મવેદનીયસ્વરૂપઃ इत्येवंविधः फलविपाकः ‘વાસસહસ્સેહિં’ વર્પસહસ્રૈઃ=પલ્લયોપમસાગરોપમપ્રમાણકાલૈઃ ‘મુચ્ચહ’ મુચ્યતે=શોયતે । તેદેવવ્યતિરેકમુખેનાહ-‘ળય’ ન ચ તં ફલવિપાકમ્ ‘અવેદયિતા’ અવેદયિત્વા=અનુપશુચ્ય ઉપભોગં વિનેત્યર્થઃ, ‘હુ’ નિશ્ચયેન ‘મોક્ષલો’ મોક્ષઃ ‘અત્થિ’ અસ્તિ ‘ત્તિ’ इति शब्दः समाप्तिश्रवकः । एतस्यार्थस्य साक्षात्प्रमाणभूतपरमात्मप्रतिपादितत्वेन प्रमाणनिरूपणाय प्रमाणयन्नाह-‘एवमाहसु’ इत्यादि, एवम्=અપેક્ષાસે પરલોક સંવંધી ફલરૂપ વિપાક કહા ગયા હૈ, ઉસસે યહ અચ્છી તરહ જ્ઞાત હો જાતા હૈ કિ યહ (અપ્પસુહો) સુખવર્જિત એવં (વહુદુક્ખો) દુઃખ વહુલ હૈ । (મહ્ચ્મઓ) મહાભયજનક, ઓર (વહુરયપ્પગાઢો) પ્રચુર કર્મરૂપી રજ સે ભરા હુઆ હૈ । (દારુણો) દારુણ તથા (કક્કસો) કઠોર હૈ । ઓર (અસાઓ) અસાતા વેદનીય કર્મ સ્વરૂપ હૈ । (વાસ-સહસ્સેહિં મુચ્ચહ) યહ ફલવિપાક જીવ પલ્લયોપમ એવં સાગરોપમપ્રમાણ કાલતક ભોગા કરતા હૈ તમી જાકર ઉસસે યહ છૂટકારાપાતા હૈ, અર્થાત્ યહ ફલરૂપ વિપાક નષ્ટ હો પાતા હૈ । (ળય અવેદયિતા હુ મોક્ષલો અત્થિ ત્તિ) ભોગે વિના જીવ ઇસસે મુક્ત નહીં હોતા હૈ । યહાં (ત્તિ) યહ સમાપ્તિ અર્થ કા શ્રવક હૈ ।

અવ સૂત્રકાર ઇસ અર્થ મેં સાક્ષાત્ પ્રમાણભૂત પરમાત્મા દ્વારા પ્રતિ-પાદિત હોનેકે કારણ પ્રમાણભૂતતા પ્રકટ કરને કે લિયે કહતે હૈ-‘એવ-

ફલવિપાક બતાવવામાં આવ્યો છે તેનાથી તે સારી રીતે બાણુવા મળે છે કે તે ‘અપ્પ-સુહો’ સુખવર્જિત અને ‘વહુદુક્ખો’ અત્યંત દુઃખભય છે. ‘મહ્ચ્મઓ’ મહા ભયજનક, અને ‘વહુરયપ્પગાઢો’ પ્રચુર કર્મરૂપી રજથી ભરપૂર છે. ‘દારુણો’ દારુણ તથા ‘કક્કસો’ કઠોર છે. અને ‘અસાઓ’ અસાતા વેદનીય કર્મ સ્વરૂપ છે. ‘વાસસહસ્સેહિં મુચ્ચહ’ તે ફલવિપાક પલ્લયોપમ અને સાગરોપમ પ્રમાણ કાળ સુધી જીવ ભોગવ્યા કરે છે, ત્યારે જ તે તેમાંથી છૂટી શકે છે, એટલે કે તે ફલફળ વિપાક એટલા લાંબા સમયે નષ્ટ થાય છે. ‘ળય અવે-દયિતા હુ મોક્ષલો અત્થિ ત્તિ’ તે ફલવિપાક ભોગવ્યા વિના જીવ તેનાથી મુક્ત થઈ શકતો નથી. અહીં ‘ત્તિ’ તે સમાપ્તિ અર્થનો સૂચક છે.

હવે સૂત્રકાર આ અર્થમાં પ્રત્યક્ષ પ્રમાણભૂત પરમાત્મા દ્વારા પ્રતિપાદિત હોવાને કારણે, પ્રમાણભૂતતાં દર્શાવવાને માટે કહે છે-‘‘એવમાહસુ’’ આ પૂર્વોક્ત રીતે તીર્થંકર બાણુશબ્દિકે દેવોએ તથા ‘‘નાચકુલ્લનંદણો મહાપ્પા જિણો વીરવર

સુદર્શિનીટીકા અ૦ ૨ સ્૦ ૧૬ અલીકવચનસ્ય ફલિતાર્થનિરૂપણમ ૨૫૫

ઉક્તરીત્યા ‘ આહંસુ ’ ઋચુસ્તીર્થઙ્કુસગણધરાદયઃ । તથા તદનુસારેણૈવ ‘ નાય-
કુલનંદણો ’ જ્ઞાતકુલનન્દનઃ = સિદ્ધાર્થકુલનન્દકરઃ, ‘ મહાપ્પા ’ મહાત્મા=
પરમાત્મસ્વરૂપઃ ‘ જિણો ’ જિનઃ ચીરવરનામધેજ્જો ‘ ચીરવરનામધેયઃ
પ્રત્યાતનામા મયવાન્ મહાવીર ઇમમ્ ‘ અલિયવચણસ્સ ’ અલીકવચનસ્ય ‘ ફલ-
વિવાગં ’ ફલવિષાકં ‘ કહેસી ’ કથિતવાન્ । एवं ‘ તં ’ તન્ પૂર્વોદર્શિતસ્વરૂપમ્
‘ અલિયવચણં ’ અલીકવચનં ‘ લહુસગલહુ ચવલમણિયં ’ લઘુસ્વકલઘુચપલ-
મણિતં=લઘુસ્વકા := તુચ્છાત્માનશ્ચ તે લઘવઃ અતિનીચાશ્ચપલાશ્ચ તૈ મણિતં=
જલ્પિતં ‘ મયંકરં ’ મયઙ્કરં ‘ દુહકરં ’ દુઃસ્વકરં ‘ અયસકરં ’ વૈરકરં ‘ અયસ્કરં
વૈરકરમ્, ‘ અરતિરતિરાગદોસમણસંકિલેસવિચરણં ’ અરતિરતિરાગદ્વેષમનઃ
સંક્લેશવિતરણમ્, ‘ અલિયનિયડિસાતિજોગવહુલં ’ અલીકનિકૃતિસાતિયોગ
વહુલં ‘ નીયજ્ઞનનિસેવિયં ’ નીચજ્ઞનનિષેવિતં ‘ નિસંસં ’ નૃશંસમ્ ‘ અપચ્ચકારાગં ’
માહંસુ) ઇસ પૂર્વોક્ત રીતિસે તિર્થંકર ગણધરાદિક દેવોને તથા (નાયકુલ-
નંદણો મહાપ્પા જિણો ચીરવરનામધેજ્જો) ઉન્હોં કે અનુસાર જ્ઞાતકુલનંદન
સિદ્ધાર્થકુલકે આનંદકારક-પરમાત્મસ્વરૂપ, જિન મહાવીરને કિ જિનકા
“ ચીર ” યહ ઉત્તમ નામ પ્રત્યાત હૈ ઉન્હોંને (ઇમં અલિયવચણસ્સ ફલ-
વિવાગં કહેસી) યહ મુષાવાદકા ફલ વતલાયા હૈ । અથ ઉપસંહાર કરતે હૈ-
(અયં તં વિતિયં પિ અલિયવચણં) ઇસ દ્વિતીય અલીક વચન કો જો (લહુ-
સગલહુચવલમણિયં) લઘુસ્વક-તુચ્છાત્મા હોતે હૈ અતિનીચ એવં ચપલ
હોતે હૈ વૈ હી ઘોલતે હૈ । (મયંકરં) યહ અલીક વચન મયંકર, (દુહ-
કરં) દુઃસ્વકર, (અજસકરં) અયસ્કારક, (વૈરકરં) વૈરકારક,
(અરતિરતિરાગદોસમણસંકિલેસવિચરણં) અરતિ, રતિ, રાગ, દ્વેષ ઓર
મનઃ સંક્લેશ પ્રદાતા હૈ । (અલિયનિયડિસાજોગવહુલં) અલીક-

નામધેજ્જો ” તેમના પ્રમાણે જ જ્ઞાતકુલનંદન સિદ્ધાર્થના કૃપાને આનંદદાયક
પરમાત્માસ્વરૂપ, જિન મહાવીર કે જેમનું “ ચીર ” એ ઉત્તમ નામ પ્રત્યાત
છે, તેમણે “ ઇમં અલિયવચણસ્સ ફલવિવાગં કહેસી ” આ મુષાવાદનું ૨૧૩૫
બતાવ્યું છે. હવે સૂચકાર ઉપસંહાર કરે છે—“ અયં તં વિતિયં પિ અલિય-
વચણં ” આ દ્વિતીય દ્વાર ૩૫ અધર્મ વચનને જે “ લહુસગલહુચવલમણિયં ”
લઘુસ્વક-તુચ્છાત્મા હોય છે, જે અતિ નીચ અને ચંચળ હોય છે તેઓ જ
બોલે છે. “ મયંકરં ” તે અસત્યવચન ભયકારક, “ દુહકરં ” દુઃખકર, “ અજ-
સકરં ” અપકર્તિતકારક, “ વૈરકરં ” વૈરકારક, “ અરતિરતિરાગદોસમણસંકિલે
સવિચરણં ” અરતિ, રતિ, રાગ, દ્વેષ અને મનને કલેશ કરનાર છે. “ અલિય
નિયડિસાજોગવહુલં ” અલીક—નિષ્ફળ છે, નિકૃતિ, સાતિના પ્રયોગથી શુદ્ધ

અપ્રત્યયકારકં, 'પરમસાહુગરહણિજ્જં પરમસાધુગર્હણીયં પરપીઢાકારકં' પર-
મક્ષિણ્હેસસહિયં' પરમકૃષ્ણલેસ્યાસહિતં 'દુગ્ગાદિવિણિવાયવદ્દુળં' દુર્ગતિવિનિ-
પાતવદ્દેનં 'ભવપુણઘ્મવકરં' ચિરપરિચિયં' ચિરપરિચિતમ્, 'અણુગયં'
અનુગતમ્; 'દુરંતં' દુરન્તમ્! એતાનિ સર્વાણિ પદાનિ પૂર્વમસ્યૈવ દ્વારસ્ય પ્રથમસૂત્રે
વ્યાખ્યાતાનિ તતો વિજ્ઞેયમ્ । 'તિવેમિ' પૂર્વવત્ ॥સૂ.૧૬॥

इतिश्री-जैनानार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री घासीलालव्रत्तिविरचितायां

प्रश्नव्याकरणसूत्रस्य सुदर्शिन्याख्यायां व्याख्यायां

हिंसादि पञ्चास्रवद्वारेषु मृपावादाख्यं द्वितीयम्-

आस्रव (अधर्म) द्वारं समाप्तम् ॥२॥

નિષ્ક્રુર હૈ. નિકૃતિ, સાતિ કે પ્રયોગ સે વડુલ હૈ અર્થાન્ કપટ વડુલ
હૈ । (ણીયજળનિસેવિયં) જાતિ, કુલ આદિ સે અધમ બને ત્રુપ વ્ય-
ક્તિઓ દ્વારા તિવેવિત હૈ । (નિસંસં) ક્રૂર-અથવા પ્રશંસા સે રહિત
હૈ । અપ્રત્યય-અવિશ્વાસ કા કારક હૈ । (પરમસાહુગરહણિજ્જં) પરમ-
સાધુ-તીર્થંકરો દ્વારા ગર્હણીય હૈ । (પરપીઢાકરણ) દૂસરોં કો પીઢા
પહુંચાને વાલા હૈ । (પરમક્ષિણ્હેસસહિયં) અત્યન્તમલિન આત્મ પરિ-
ણતિ સે યુક્ત હૈ (દુગ્ગાદિવિણિવાયવદ્દુળં) દુર્ગતિ કા વર્ધક હૈ । (ભવ-
પુણઘ્મવકરં) પુનઃ પુનઃ જન્મ પ્રદાતા હૈ । (ચિરપરિચયં) ચિરપરિચિત્
યજીવોં કે સાથ અનેક ભવોં કી પરમ્પરા તક રહનેવાલા હૈ । (અણુ-
ગયં) ભવ ભવ મેં સાથ ચલને વાલા હૈ । (દુરંતં) ઇસકા ફલ દુરન્ત-
કડુફલકા દેને વાલા હૈ "તિવેમિ" ઇસકી વ્યાખ્યા કી જા ચુકી હૈ ॥સૂ-૧૬॥

॥ द्वितीय आस्रव—'अधर्म' द्वार समाप्त ॥

છે એટલે કે કપટ મય છે " ણીયજળનિસેવિયં " જાતિ, કુલ આદિથી અધમ
એવી વ્યક્તિઓ દ્વારા સેવાસેલ છે. " નિસંસં " ક્રૂર-એટલે કે પ્રશંસાથી રહિત
છે અપ્રત્યય-અવિશ્વાસ ઉત્પન્ન કરનાર છે. " પરમસાહુગરહણિજ્જં " પરમસાધુ-
તીર્થંકરો દ્વારા નિંદ છે. " પરપીઢાકરણ " બીજાને પીડા પહોંચાડનાર છે.
" પરમક્ષિણ્હેસસહિયં " અત્યંત મલિન આત્મ પરિણતિથી યુક્ત છે. " દુગ્ગાદિ
વિણિવાયવદ્દુળં " દુર્ગતિનું વધારનાર છે. " ભવપુણઘ્મવકરં " ફરી ફરીને
જન્મ લેવડાવનાર છે. " ચિરપરિચયં " ચિરપરિચિત એવું તે જીવોની સાથે
અનેક ભવોની પરંપરા સુધી રહેનાર છે. " અણુગયં " ફરેક ભવમાં સાથે
આસનાઈ છે " દુરંતં " તેનું ફળ દુરન્ત છે-કડુ ફલ દેનાર છે. " તિવેમિ " આ
વાક્યનો અર્થ આવી ગયો છે (સૂ-૧૬)

આ રીતે હિંસાદિ પંચાસ્રવ દ્વારમાં પ્રાણવધ નામનું

બીજું આસ્રવ (અધર્મ) દ્વાર સમાપ્ત થયું.

અથ તૃતીયસઘ્યયનમ્ ।

વ્યાખ્યાતં દ્વિતીયમધર્મદ્વારં સાંપ્રતં તૃતીયમારમ્ભતે-અસ્ય ચ પૂર્વેણ સહાયમભિ-
સમ્બન્ધઃ । દ્વિતીયાધર્મદ્વારે યાદશનામાદિનિર્દેશપુસ્તકમલીકવચનસ્વરૂપકુક્તમ્ ।
અલીકવચનં ચ અદત્તાઽઽદામિનો વદન્ત્યેવેતિદેતોઃ સૂત્રક્રમનિર્દેશાનુસારાચ્છ
મૃણાવાદાનન્તરમુચિતમાત્મપદત્તાદાનં સ્વરૂપનામાદિનિર્દેશપૂર્વકં પ્રદર્શયતે, તત્ર
પૂર્વયોરધર્મદ્વારયોરિવાસ્યાપિ ‘યાદશ્ ૧, યન્નામ ૨, યથા ચ કૃતં ૩, યત્કલં
દદાતિ ૪, યે ચ કુર્વન્તિ ૫, દ્વિ પશ્ચભિરન્તર્દ્વારૈર્નિરૂપણં ચિકીર્ષુરાદૌ ક્રમપાતં
‘યાદશ’ इति द्वास्माभिर्य अदत्तादानस्वरूपं निरूप्यते-‘अंजू तदयं च’ इत्यादि

તૃતીય આસ્રવ-(અધર્મ) દ્વાર પ્રારંભ-

દ્વિતીય આસ્રવ-(અધર્મ) દ્વાર કહા ગયા, અવ તૃતીય આસ્રવ-
દ્વાર કી વ્યાખ્યા પ્રારંભ હોતી હૈ । ઇસ અધર્મદ્વાર કા પૂર્વ અધર્મદ્વાર કે
સાથ ઇસ પ્રકાર સે સંબંધ હૈ કિ-દ્વિતીય આસ્રવ-(અધર્મ) દ્વાર મેં
(યાદશનામાદિ નિર્દેશ પૂર્વક) અલીક (સૂત્ર)વચનકા સ્વરૂપ કહા હૈ સો
હસ અલીક વચન કો જો અદત્ત કો લેને વાલે વ્યક્તિ હોતે હૈ, વે હી
બોલતે હૈ તથા સૂત્રક્રમ નિર્દેશ મી એસા હી હૈ, ઇસલિયે મૃણાવાદ કે
અનન્તર ઉચિતરૂપ સે પ્રાપ્ત અદત્તાદાન કા સ્વરૂપ નામાદિ નિર્દેશપૂર્વક
ઇસ અધ્યયન મેં કહા જાવેગા । ઝિસ પ્રકાર પૂર્વ દો આસ્રવ (અધર્મ)
દ્વારોં કા સૂત્રકાર ને (યાદશ યન્નામ) ઇત્યાદિ પાંચ અન્તર્દ્વારોં દ્વારા
નિરૂપણ કિયા હૈ ઁસી તરહ સે વે ઇસ તૃતીય આસ્રવ (અધર્મ) દ્વાર
કા મી નિરૂપણ કરના ચાહતે હૈ ઇસલિયે વે સર્વ પ્રથમ ઇસમેં ક્રમ
પ્રાપ્ત અદત્તાદાન કા (યાદશ) ઇસ દ્વાર કો લેકર સ્વરૂપ કહતે હૈ—

ત્રીજા આસ્રવ-અધર્મ દ્વારનો પ્રારંભ

ત્રીજા આસ્રવ-(અધર્મ) દ્વારનું કથન પૃષ્ઠે થયું, હવે ત્રીજા આસ્રવ
દ્વારનું વર્ણન શરૂ થાય છે. આ અધર્મદ્વારનો આગળનાં અધર્મદ્વાર સાથે
આ રીતે સંબંધ છે--ત્રીજા આસ્રવ-(અધર્મ) દ્વારમાં “યાદશનામાદિ નિર્દે-
શપૂર્વક” અલીક વચનનું સ્વરૂપ પ્રગટ કરવામાં આવ્યું છે પણ તે અલીક
વચનો અદત્ત દીધેલું લેનારી વ્યક્તિ જ બોલે છે, તથા સૂત્રક્રમ નિર્દેશ
પણ બોરો જ છે. તે કારણે મૃણાવાદનું નિરૂપણ કર્યા પછી યોગ્ય રીતે અદ-
ત્તાદાનનું સ્વરૂપ નામાદિ નિર્દેશ પૂર્વક આ અધ્યયનમાં બતાવવામાં આવશે.
જેમ આગળના બે આસ્રવ-(અધર્મ) દ્વારનું સૂત્રકારે “યાદશ યન્નામ” ઇત્યાદિ
પાંચ અન્તર્દ્વારો દ્વારા નિરૂપણ કર્યું છે, એજ પ્રમાણે તેઓ આ ત્રીજા આસ્રવ
(અધર્મ) દ્વારનું પણ નિરૂપણ કરવા માગે છે. તેથી તેઓ સૌથી પહેલાં કેમ પ્રમાણે

મૂલમ્-જંબૂ તદ્યં ચ અદિષ્ણાદાણં હરદહમરણમયકલુસ
તાસળપરસંતગગિજિલોભમૂલં કાલવિસમસંસિયં અહો
અચ્છિન્નં તપ્પરથાળપરથોદમદ્યં અકિત્તિકરં અજ્ઞં
છિદ્રમંતરવિધુરવસળમગ્ગળઉસ્સવમત્તપ્પમત્તપ્પસુત્તવંચળાઽઽ-
સ્થિવળધાયળપરાઽણિદુયપરિણામત્તકરજળવદુમયં અકલુળં
રાયપુરિસરમ્મિલ્યં સયાસાહુમરહણિજ્ઞં પિયજળમિત્તજળ-
ભેદવિપ્પીહકારગં રાગદોસવદુલં પુળો ય ઉપ્પૂરસમરસં-
ગામહમરકલિકલહવહકરણં દુગ્ગાદિવિણિવાયવદુળં ભવપુળ-
ભવકરં ચિરપરિચિયં અણુમયં દુરંતં તદ્યં અધમ્મદારાંસૂ.૨૧॥

ટીકા—હે જંબૂ ! ‘ તદ્યં ’ તૃતીયમાસવદારં ‘ અદિષ્ણાદાણં ’ અદત્તાદા-
નમ્=અદત્તસ્ય=દેવ-ગુરુ-રાજ-ગાથાપતિ-સાધર્મિભિરસમર્પિતસ્ય સન્નિષ્ઠાવિત્ત-
મિશ્રવસ્તુવિશેષસ્ય આદાનં=ગ્રહણમદત્તાદાનં નામ ચૌર્થમિત્યર્થઃ । કીદૃશં તદિત્યાદિ
‘ જંબૂ ! તદ્યં ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જંબૂસ્વામી શ્રી સુધર્મા સ્વામી સે પૂછતે હૈં કિ-હે ભદંત !
તૃતીય આસવ દ્વાર કા સિદ્ધિગતિ કો પ્રાપ્ત હુણ શ્રી મહાવીર પ્રભુને
કયા સ્વરૂપ કહા હૈં ? ઇસકા ઉત્તર દેતે હુણ શ્રી સુધર્મા સ્વામી उनसे
કહતે હૈં કિ (જંબૂ) હે જંબૂ ! (તદ્યં ચ અદિષ્ણાદાણં) તૃતીય અદત્તા-
દાન કા સ્વરૂપ સિદ્ધિગતિ સ્થાન કો પ્રાપ્ત હુણ શ્રી મહાવીર ને ઇસ
પ્રકાર કહા હૈં । અદત્ત કા-દેવ, ગુરુ, રાજા, ગાથાપતિ ઓર સાધર્મી દ્વારા
નહીં સમર્પિત કી ગઈ વસ્તુ કા-આદાન-ગ્રહણ કરના ઇસકા નામ અદ-

અદત્તાદાનં “ચાદ્ર” એ દ્વારને લઈને સ્વરૂપ કહે છે. “ જંબૂ ! તદ્યં ” इत्यादि.

ટીકાર્થ—જંબૂ સ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીને પૂછે છે કે હે ભદંત ! સિદ્ધિ
ગતિ પામેલ શ્રી મહાવીર પ્રભુએ ત્રીજા આસવદારનું કેવું સ્વરૂપ કહેલ છે ?
તેનો ઉત્તર આપતા શ્રી સુધર્મા સ્વામી તેમને કહે છે કે-હે જંબૂ ! ‘ તદ્યં
ચ અદિષ્ણાદાણં ’ સિદ્ધિગતિને પામેલ શ્રી મહાવીર પ્રભુએ અદત્તાદાનનું આ
પ્રકારનું સ્વરૂપ કહેલ છે-

અદત્તનું-દેવ, ગુરુ, રાજા, ગાથાપતિ અને સાધર્મી દ્વારા અર્પણ ન કરા-
યેલ વસ્તુનું-આ દાન-ગ્રહણ કરવું તેને અદત્તાદાન કહે છે. તે કેવું હોય છે ?

—‘हरदह’ इत्यादि—

‘हरदहमरणभयकलुसतासणपरसंतगगिज्जलोभमूलं’ हरदहमरणभयकलुसतासण परसत्कगृद्धिलोभमूलं, तत्र हर=हरणं कुरु, दह=गृहादिकं प्रज्वालय, इति वचन-
द्वयं हरणदाहविषये चोराणां प्रवृत्तिकारकम् । तथा मरणं मृत्युः भयं=भीतिः
कलुषं च=पापं तैस्तत्सर्वं-भयजननस्वरूपं यस्य तत्तथा, तच्च परसत्कगृद्धिलोभ
मूलं च=परसत्के=परकीयधने गृद्धिः=आसक्तिः तथा लोभश्च-रौद्रध्यानयुक्ता-
मूर्च्छा मूलं=कारणं यस्य तत्तथा ‘कालविसमसंसियं’ कालविषमसंश्रितं च=कालः
अर्धरात्रादिलक्षणः, विषमाणि पर्वतादिदुर्गमस्थानानि तैः संश्रितम् = आश्रितं
यत्तत्तथा । एतादृशेषु निर्जनस्थानेषु चोराः प्रायः निवसन्ति । तथा ‘अहोअच्छि-
त्तादानं है । यह कैसा होता है ? इस पर कहते हैं—यह अदत्तादान (हर-
दहमरणभयकलुस तासणपरसंगगिज्जलोभमूलं) (हर) इसके द्रव्य का
हरण करलो, (दह) इसके गृहादिक को जलादो, (मरण) इसे मार
डालो, इत्यादि रूपसे (भय) भय दिखाकर दूसरों के द्रव्यादि का हरण
करना, (कलुस) एक दूसरों में कलुषभाव जगाकर उनके द्रव्यादिक
को छे लेना, (तासण) इत्यादि अनेक प्रकारसे त्रास पहुँचाना, तथा (पर-
संतग) दूसरों के धन में (गिज्ज) आसक्ति रखना तथा (लोभ)
रौद्रध्यानसे युक्त इसमें मूर्च्छाभाव रखना, ये सब (मूलं) अदत्तादान
के मूल कारण हैं । (कालविसमसंसियं) अर्धरात्र आदि काल तथा
विषम-पर्वतादि दुर्गमस्थान, इनके द्वारा यह अदत्तादान संश्रित-
आश्रित होता है—वनता है, तात्पर्य इसका यह है कि जो अदत्तादान-
चोरी-क्रिया करते हैं, वे चोर प्रायः अर्धरात्रि के समय में निकलते हैं,
एवं पर्वतादि दुर्गम स्थानों पर छिपे रहते हैं, इस अपेक्षा काल और

तो तेना व्यापमां छडे छे—ते अदत्तादान “हरदहमरणभयकलुसतासण-
परसंतगगिज्जलोभमूलं” “हर” “आ व्यक्तिनु द्रव्य पडावी दे। “दह”
तेना घर आदिने सणवावी दे, “मरण” तेने भारी नाणे। “भय” भय पठावीने अन्यनु द्रव्य वस्त्र आदि डरी देवु, “कलुस” ओछ भील
वस्त्रे छवेश जगाडीने तेमना द्रव्य आदिने लछ देवु, “तासण” इत्यादि रीते
त्रास पछेआउवे, तथा “परसंतग” भीलना धनमां “गिज्ज” आसक्ति
राखवी तथा “लोभ” रौद्रध्यानशी युक्त मूर्च्छाभाव तेमां राखवे। ते गंधां
“मूलं” अदत्तादाननां भूषा करणो छे। “कालविसमसंसियं” अर्धरात्री आदि
क्षण तथा पर्वतादि दुर्गमस्थान ते अदत्तादाननां आश्रय स्थानो छे, ओछवे के
जे अदत्तादानयेरी करे छे। ते चोर सामान्य रीते मध्यरात्रे चोरी करवा
नीछे छे, अने पर्वतादि दुर्गम स्थानोमां छुपाछे रह्ये छे, ते अपेक्षाओ क्षण

અતઃપ્રત્યાગપત્યોદમદ્યં ' અધોઽચ્છિન્નતુષ્ણપ્રસ્થાન-પ્રસ્તોત્તમતિકં = અધોગતો અચ્છિન્નતુષ્ણાનાં=વિષયલોલુપાનાં યત્ પ્રસ્થાનં=ગમનં તત્ પ્રસ્તોત્રી=પ્રવર્તિકા મતિઃ = બુદ્ધિરસ્તિ યસ્મિન્નદત્તાદાને તત્તથા નરકાદ્યધોગતિકારણમિત્યર્થઃ, 'અકિત્તિકરં' અકીર્તિકામ્=અયશસ્સરમ્ ' અણઙ્ગં=અનાર્યમ્ = અનાર્યોચરિતત્વાત્ અથવા અન્યાર્યં=ન્યાયચરિતં ન્યાયરહિતમિત્યર્થઃ ' છિદ્રમેતરવિધુરવસનમગ્ગન-ઉસ્સનમત્તપ્પમત્ત-પમુત્તવંચનાવિલ્લવણ-વાયણપરાણિહુય-પરિણામત્તકરજનવહુમયં ' છિદ્રાન્તરવિધુરવ્યસનમાર્ગોત્સવમત્તપ્પમત્તપ્રસુપ્પવચ્ચનાઽઽપ્પેણવાતનપરાનિમ્મત્તપરિ-ણામત્તસ્કરજનવહુમતં=તત્ત્ર છિદ્રં = ' કેન માર્ગેણ ગન્તવ્ય ' મિત્યાદિકમ્, અન્તરમ્=અવસરઃ જનાનાં નિદ્રાદિલક્ષણઃ, વિધુરં = અપાયઃ કષ્ટપ્રાપ્ત્યાદિલક્ષણઃ, વિષમસ્થાનોં કો અદત્તાદાન વા કારણ કહા ગયા છે । (અહો અચ્છિન્નતુષ્ણપ્રત્યાગપત્યોદમદ્યં) જિન વ્યક્તિયોં કી વિષય તુષ્ણા છિન્ન નહીં હોતી છે એસે વ્યક્તિ હી અધોગતિ મેં પહુંચાને વાલી અપની બુદ્ધિ કે દ્વારા ઇસ અદત્તાદાન સે પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં, અતઃ અધોગતિ મેં ગમન કી કારણભૂત જો વિષય લોલુપોં કી મતિ હૈ વહ બી ઇસ અદ-ત્તાદાન કી એક કારણભૂત હૈ । યહ અદત્તાદાન (અકિત્તિકરં) અયશ કારક હૈ । (અણઙ્ગં) અનાર્યો દ્વારા હી આચરિત કિયા જાતા હૈ ઇસ-લિયે અનાર્યરૂપ હૈ । અથવા નીતિમાર્ગ સે વિકૃદ્ધ હોને કે કારણ અન્યાય્ય હૈ । (છિદ્રં) ઇસ અદત્તાદાનકો કરને વાલે વ્યક્તિ ઇસ વાતકી ગવેષણામેં રહતે હૈં કિ હમેં ઇસ કામકો કરને કેલિયે કિસ માર્ગસે હોકર જાના ચાહિયે તથા (અંતર) અન્તર કી-કૌનસા અવસર ઇસ કામકો સિદ્ધ કરનેવાલા હોગા ઇસ તરફકે મનુષ્યોંકે નિદ્રાદિરૂપ સમયકી (વિધુર) વિધુરકી-કષ્ટ

અને દુર્ગમસ્થાનોને અદત્તાદાનનાં આશ્રયસ્થાનો બતાવ્યાં છે. 'અહો અચ્છિન્ન-તુષ્ણપ્રત્યાગપત્યોદમદ્યં' એ લોકોની વિષય વાચના નષ્ટ થતી નથી એવા લોકો જ અધોગતિમાં લઈ જનાર પોતાની બુદ્ધિ દ્વારા આ અદત્તાદાનમાં પ્રવૃત્ત રહે છે, તેથી અધોગતિમાં ગમન કરવાના કારણરૂપ વિષય લોલુપોની એ મતિ છે તે પણ આ અદત્તાદાન માટે કારણરૂપ છે, ને અદત્તાદાન "અકિત્તિ-કરં" અપકીર્તિ અપાવનાર છે, "અણઙ્ગં" અનાર્યોદ્વારા સેવાતું હોવાથી અનાર્યરૂપ છે, અથવા નીતિ માર્ગથી વિકૃદ્ધ હોવાથી અન્યાય્યુક્ત છે. "છિદ્રં" આ અદત્તાદાન સેવનાર વ્યક્તિ એ વાતની શોધમાં રહે છે કે આ કામ કરવા માટે આપણે કયા માર્ગે થઈને જવું જોઈએ તથા "અંતર" અંતરની-કથો વખત આ કામને સિદ્ધ કરવા માટે અનુકૂળ થશે તેની શોધમાં રહે છે આ રીતે માણસના નિદ્રાદિરૂપ સમયની શોધમાં

વ્યસન=રાજાદિ કૃતોપદ્રવઃ, હત્યેતેષાં માર્ગણમ્=ગવેષણમ્, તથા ઉત્સવેષુ=વિવા-
દાદિક્ષણેષુ મત્તાનાં=મથપાનાદાસક્તાનાં અત એવ પ્રમત્તાનામ્=અસાવધાનાનાં
પ્રસુતાનાં=નિદ્રિતાનાં ચ વચ્ચન=વનાપહરણં, તથા આક્ષેપણં=મન્ઔષધ્યાદિમિશ્રિત-
વિશ્લેષકરણં, ઘાતનં=તાવન્વિયોજોકરણં વ્યસ્યાદિમિસ્તાડનં વા તેષુ પરાઃ=
તથા અનિમૃતઃ=અશાન્તઃ પરિણામઃ = અન્તઃકરણવૃત્તિવિશેષઃ યેષાં તે તથા, તે
ચ તે તસ્કરાજનાઃ ચોરગણાસ્તૈર્વહુમતં=સાતિશયમાદતં સ્વીકૃતં યત્તત્તથાભૂતમદ-
ત્તાદાનમ્ 'અકલુગં' અકરુણં=દયારહિતં નિર્દયજનપ્રવર્તિતત્વાત્ 'રાયપુરિસ-

પ્રાપ્તિ આદિરૂપ આપત્તિ કી, (વસન) વ્યસન કી-રાજા આદિ દ્વારા
કૃત ઉપદ્રવ કી-મી (મગ્ગણ) ગવેષણા-તાક મેં તત્પર રહતે હૈં । તથા
(ઉત્સવ) વિવાહ આદિ ઉત્સવોં મેં (મત્તપ્પમત્ત) મથપાન આદિ કે
કર લેને સે અસાવધાની મેં પડે હુણ મસ્ત વ્યક્તિયોં કે તથા (પસુત્ત)
નિદ્રા મેં પડે હુણ વ્યક્તિયોં કે (વંચન) ધનાપહરણ કરને મેં (આશ્વિ-
વળ) આક્ષેપણમંત્ર ઔષધિ આદિદ્વારા ચિત્ત કે વિશ્લેષ કરને મેં, તથા
(ઘાયણપર) પ્રાણોં કે અપહરણ કરને મેં અથવા અપને મિત્રાદિકોં
દ્વારા તાડન કરવાને મેં તત્પર રહા કરતે હૈં । (અણિહુયપરિણામ)
હસ અદત્તાદાનરૂપ કુકૃત્ય કો કરને વાલે જીવોં કે પરિણામ-અન્તઃ
કરણ કી વૃત્તિ-અશાન્ત રહતી હૈં । (તક્કરજનવહુમયં) યહ અદત્તાદાન
ચોર વ્યક્તિયોં દ્વારા હી સાનિશયરૂપ મેં આદત હુઆ હૈં । અતઃ યહ
દુષ્કર્મ (અકલુગં) નિર્દયજનોં દ્વારા પ્રવર્તિત હોને કે કારણ સ્વયં દયા-
રહિતરૂપ હૈં હસીલિયે (રાયપુરિસરન્નિસયં) રાજપુરુષોં દ્વારા યહ નિષિદ્ધ

રહે છે. “ કિયુ ” વિધુરની-કષ્ટ પ્રાપ્તિ આદિ રૂપ આપત્તિની, “ વસન ” વ્યસ-
નની રાજાદિ દ્વારા કરાયેલ ઉપદ્રવની-પણુ “ મગ્ગણ ” ગવેષણા-તાકાસને માટે
તૈયાર રહે છે. તથા “ ઉત્સવ ” વિવાહ આદિ ઉત્સવોમાં, “ મત્તપ્પમત્ત ” મથ-
પાન આદિ કરીને અસાવધાનીમાં રહેલ મસ્ત વ્યક્તિઓના તથા “ પસુત્ત ”
નિદ્રામાં પડેલ વ્યક્તિઓના “ વંચન ” ધનને હરી લેવાને “ આશ્વિવળ ”
આક્ષેપણ-મંત્ર ઔષધિ આદિ દ્વારા ચિત્તમાં વિશ્લેષન કરવાને તથા “ ઘાયણ-
પર ” પ્રાણો હરી લેવાને અથવા પોતાના મિત્રાદિ દ્વારા માર મરાવવાને તત્પર
રહે છે. “ અણિહુયપરિણામ ” તે અદત્તાદાનરૂપ દુષ્કૃત્ય કરનાર જીવોની
મનોવૃત્તિ અશાન્ત રહે છે. “ તક્કરજનવહુમય ” આ અદત્તાદાન ચોર લોકો
દ્વારા જ વધારે પ્રમાણમાં સેવવામાં આવે છે. તેથી તે દુષ્કર્મ “ અકલુગં ”
નિર્દય જનો દ્વારા અચરિત હોવાને કારણે દયારહિત હોય છે. તેથી “ રાય-

રક્ષિત્વં ' રાજપુરુષરક્ષિતં=રાજપુરુષૈર્નિષિદ્ધં, 'સયા સાહુગરહગિજ્ઞં' સદા સાધુ
 ગર્હણીયં=નિરન્તરં મહાપુરુષૈર્નિષિદ્ધં ' પિયજનમિત્તજનભેયવિષ્ણીકારગં ' પ્રિય-
 જનમિત્રજનભેદવિધીતિકારકં=પ્રિયજનાનાં==વાત્યવાનાં મિત્રજનાનાં ચ ભેદઃ
 વિયોગઃ વિપ્રીતિઃ=દ્વેષસ્તત્કારકં ' રાગદોસવહુલં ' રાગદ્વેષવહુલં=સ્પષ્ટમ્ ।
 ' પુણો ય ' પુનથ ' ઉપ્પૂરસમરસંગામડમરકલિકલહવહકરણં ' ઉત્પૂરસમર-
 સંગામડમરકલિકલહવહકરણમ્=તત્રોત્પૂરઃ=વચુરો યઃ સમરઃ=મરેણ=મૃત્યુના
 સહિતઃ સમર एतादશઃ સંગ્રામઃ=યુદ્ધં ડમરઃ=સ્વચક્રપરચક્રભયલક્ષણઃ કલિઃ=
 સ્વપક્ષરાટિઃ કલહઃ=વાગ્યુદ્ધં વધઃ=તાડનમતેષાં કરણં=કારકં યત્તત્થા 'દુગ્મઙ્ગિ-

ક્રિયા ગયા હૈ । (સયા સાહુગરહગિજ્ઞં) તથા મહા પુરુષો દ્વારા સદા નિ-
 ન્દિત પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ । (પિયજનમિત્તજનભેયવિષ્ણીકારગં) इस
 कृत्य को करने वाले पुरुषों को अपने बंधव जनों का तथा मित्रजनों का
 वियोग हो जाता है, अर्थात् उनकी अप्रीति का भाजन बन जाता है ।
 (रागदोसवहूलं) रागद्वेषकी भाषा इसमें सबसे अधिक रहती हैं । (पुणोय)
 यह फिर (उपपूरसमरसंगाम) मृत्युसहित संग्राम का कारक है, -अर्थात्
 धन आदि हरण करने के लिए जब चोर किसी के यहां जाता है तब
 वह डटकर इसका साम्हना करता है तो ऐसी स्थिति में चोर की मृत्यु
 भी हो जाती है । (डमर) इसमें सदा स्वचक्र और परचक्रका चोरों को
 भय रहा करता है (कलि) कभी २ अपने ही पक्ष के लोगों के साथ
 तकरार भी हो जाती है । (कलह) वाग्युद्ध आपस में कहा सुनी हो
 जाती है । (वह) वध-मार पीट हो जाती है । (दुग्मङ्गि

પુરિસરક્ષિત્વં ” રાજપુરુષો દ્વારા તેનો નિષેધ કરાયેલ છે. “સયા સાહુગર-
 હગિજ્ઞં ” તથા સાધુ પુરુષો દ્વારા-મહાપુરુષો દ્વારા તે સદા નિવ્ર ગણાયેલ છે.
 “ પિયજનમિત્તજનભેયવિષ્ણીકારગં ” આ કૃત્ય કરનાર પુરુષોને પોતાના
 બંધુજનોનો તથા મિત્રજનોનો વિયોગ થાય છે, એટલે કે તેમની અપ્રીતિનું
 પાત્ર બનવું પડે છે. “રાગદોસવહુલં” તેમાં રાગદ્વેષનું પ્રમાણ સૌથી વધારે હોય છે.
 “પુણો ય” વળી તે “ઉપ્પૂરસમરસંગામ” મૃત્યુ સહિત સંગ્રામનું કારક છે-એટલે કે
 બધારે ધન આદિ ચોરવાને માટે ચોર કોઈને ઘેર જાય છે અને તે ઘર વાળો
 તેનો મજબૂત સામનો કરે તો ચોરનું મોત થાય છે. “ડમર” તેમાં સદા
 સ્વચક્ર અને પરચક્રનો ચોરી કરનારને ભય રહ્યા કરે છે, “કલિ” કોઈકોઈ
 વાર પોતાના જ પક્ષના માણસો સાથે તકરાર પણ થઈ જાય છે, “કલહ”
 આપસમાં વાગ્યુદ્ધ-બોલાચાલી પણ થાય છે. “વહ” વધ મારા મારી પણ

સુવર્ણિની ટીકા અં ૩ સૂં ૧ અવત્તાદાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૨૬૩

ણિવાયવઙ્ગુણં ' દુર્ગતિ વિનિપાતવર્ધનં=દુર્ગતી= નરકાદિકે યો વિનિપાતઃ=અવ-
શતયા ગમનં તસ્ય વર્ધનં=વર્ધકં ' ભવપુણઽભવકરં' ભવપુનર્ભવકરં=પુનઃપુનઃજન્મમર-
ણકરં ' ચિરપરિચયં ' ચિરપરિચિતં=ચિરં જન્મજન્માન્તરેણ અવિચ્છિન્નતયા પરિ-
ચિત્તમ્, ' અણુમયં ' અનુગતમ્=અનુવૃત્તમવિચ્છિન્નપ્રવાહતયા પ્રવૃત્તં, ' દુરંતં'દુરન્તં=
દુઃસ્વાવસાનં- વિપાકદારુણત્વાત્ ' તદ્યં અધર્મદારં ' તૃતીયમધર્મદ્વારમ્॥ સૂં ૧ ॥

ઢૂણં) ગ્રહ કરાને લાલોં કે દુર્ગતિ-નરકાદિ મેં અવશ હોકર ગમનરૂપ વિનિપાત કા વર્ધક હોતા હૈ । (ભવપુણઽભવકરં) પુનઃપુનઃ : હસકે પ્રભાવ સે સંસાર મેં હી જન્મ મરણ કરાને પડતે હૈ । (ચિરપરિચયં) ભવ ભવ મેં હમ કુકૃત્ય જન્ય પાપ કા ઉદય સાથ મેં રહતા હૈ । (અણુમયં) હસકા પ્રવાહ વિચ્છિન્ન ન હોને કે કારણ ગ્રહ જીવ કે સાથ અનુગત રહતા હૈ । (દુરંતં) વિપાક સમયમેં દારુણ હોનેસે ગ્રહ દુરન્ત હોતા હૈ । (તદ્યં અધર્મદારં) હસ પ્રકાર તૃતીય અધર્મદ્વારકા ગ્રહાં તક સ્વરૂપ કહા ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા તૃતીય અધર્મદ્વાર જો અવત્તા-
દાન હૈ હસકા સ્વરૂપ નિરૂપણ ક્રિયા હૈ । વેહસમેં કહ રહે હૈં કિ કીસીકે ધનાદિક દ્રવ્યકો ઁસા ભય દિસલાકર કિ ' મેં તુજે માર ઢાલુંગા, મેં તેરે ઘરમેં આગ લગા દુંગા' ઁસા કહકર ધનાદિકા હરણ કર લેના અવત્તાદાન હૈ । હસ આદત્તાદાનકા કારણ બોમ હોતા હૈં । તથા પરકે ધનમેં ગૃહ્ણિ જોતી હૈ । તાત્પર્ય હસકા કેવલ યહી હૈ કિ વિના દી હુઈ પરકી વસ્તુ કો હરણ

થઈ બય છે, “ દુગ્ધાવિણિવાયવઙ્ગુણં ” તે કરનારનું દુર્ગતિ-નરકાદિમાં અવશ થઈને ગમનરૂપ વિનિપાતનું-વર્ધક હોય છે “ ભવપુણઽભવકરં ” તેના કારણે વારંવાર સંસારમાં જન્મ મરણ અનુભવવા પડે છે. “ ચિરપરિચયં ” દરેક ભવમાં આ કુકૃત્ય જન્ય પાપનો ઉદય સાથે રહે છે. “ અણુમયં ” તેનો પ્રવાહ અનૂટ હોવાને કારણે તે જીવની સાથે અનુગત રહે છે “ દુરંતં ” વિપાકના સમયે દારુણ અને દુરન્ત હોય છે. “ તદ્યં અધર્મદારં ” આ પ્રમાણે ત્રીજા અધર્મ દ્વારનું સ્વરૂપ અહીં સુધીમાં કહેવાયું.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા અવત્તાદાન નામના ત્રીજા અધર્મદ્વારનું સ્વરૂપ પ્રગટ કર્યું છે. તેઓ તેમાં એ બતાવે છે કે કેહના ધનાદિનું એવો ભય બતાવીને કે “ હું તને મારી નાખીશ, હું તારા ઘરને આગ લગાડીશ ” એવું કહીને ધનાદિકનું હરણ કરી લેવું તે અવત્તાદાન છે. આ અવત્તાદાનનું કારણ કોલ તથા બીજાના ધન પ્રત્યેની લાલસા હોય છે આ બધી વાતનું તાત્પર્ય એ છે કે કેહ આપણને વસ્તુ ન આપે તેનું હરણ કરવું તે

અથ યન્નામેતિદ્વારમાશ્રિત્યાદત્તાદાનસ્ય નામાન્યાદ 'તસ્ય ય' ઇત્યાદિ--

મૂલ્ય-તસ્ય ય નામાણિ ગોણાણિ હુંતિ તીસં । તં જહા-
ચોરિકં ૧, પરહડં ૨, અદત્તં ૩, કૂરિકડં ૪, પરલાભો ૫, અસં-
જમો ૬, પરધનમ્મિ ગેહી ૭, લોલિકં ૮, તક્કરત્તણં તિય ૯,
અવહારો ૧૦, હત્થલહુત્તણં ૧૧, પાવકમ્મકરણં ૧૨, તેણિક્કં
૧૩, હરણવિપ્પણાસો ૧૪, આઇચણા ૧૫, હુંપણા ધણાણં ૧૬,
અપચ્ચઓ ૧૭, ઓવીલો ૧૮, ઓમ્મલેવો ૧૯, વલેવો ૨૦,
વિકલેવો ૨૧, કૂડયા ૨૨, કુલમસી ય ૨૩, કંઘા ૨૪, લાલ-
પ્પણં પત્થણા ય ૨૫, આસસણા ય વસણં ૨૬, ઇચ્છામુચ્છાય
૨૭, તપ્પહાગેહી ય ૨૮, નિયઢિકમ્મં ૨૯, અવરોચ્છ તિ વિ ય
૩૦ । તસ્ય યાણિ એવમાઈણિ નામધેજ્ઞાણિ હુંતિ તીસં અદિ-
ણાદાણસસ પાવકલિકલસકમ્મવહુલસસ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘તસ્ય ય’ તસ્ય ચ પૂર્વોપદર્શિતસ્વરૂપસ્યાદત્તાદાનસ્ય ‘ગોણાણિ’
ગોણાણિ=ગુણનિષ્પન્નાણિ નામાણિ વશ્યમાણાણિ ‘તીસં’ ત્રિશત્ ‘હુંતિ’ ભવન્તિ

કરના સચ ચોરી છે । હસ ચોરી મેં જિતને મી નિમિત્ત કારણ પડતે હેં
વે મી કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે ચોરી રૂપ હી માને જાતે હેં । દૂસરે
કી મૂલી હુઈ, વિસરી હુઈ, પડી હુઈ, ધરોહરરૂપ મેં રચી હુઈ, વસ્તુ કા
હરણ કરના ઓર દવા લેના, યે સચ અદત્તાદાન કે હી પ્રકાર હેં । યહ
અદત્તાદાન હિંમાદિ પાપોં કી તરહ ચોરો કે લિયે નરકાદિ દુર્ગતિયોં મેં
ગમન કા કારણ હોતા હે ॥સૂ૦૧॥

અવ સૂત્રકાર “ યન્નામ ” ઇસ દ્વાર કો લેકર અદત્તાદાન કે નામોં

ચોરી કહેવાય છે. તે ચોરીના બેટલા નિમિત્તો હોય છે તેમને પણ કારણમાં
કાર્યના ઉપચારથી ચોરી રૂપ જ માનવામાં આવે છે. ગ્રીજાની ભૂલથી પડી
રહેલી, ભૂલાઈ ગયેલી, પડી રહેલી, અને થાપણુ રૂપે મૂકેલી વસ્તુનું હરણ કરવું
કે તેમને પચાલી પાડવી તે બધા અદત્તાદાનના જ પ્રકાર છે. તે અદત્તાદાન
હિંસાદિ પાપોની જેમ ચોરીને નરકાદિ દુર્ગતિયોમાં ગમન કરાવનાર હોય છે ॥સૂ૦૧॥

હવે સૂત્રકાર “ યન્નામ ” એ દ્વારને લઈને અદત્તાદાનનાં નામો પ્રગટ

उपदर्शितो टीका अ० ३ सू० २ अदत्तादाननामनिरूपणम्

२६५

‘ तं जहा ’ तानि यथा—‘ चौरिक्यं ’ चौरिक्यं=चोरणं चौरिका सैवेति चौरिक्यं १, ‘ परहृडं ’ परहृतं=परस्मात्=अन्यस्मात् हृतम्=अनुमतिं विनैव गृहीतम् २, ‘ अदत्तं ’ केनापि न दत्तमदत्तं ३, ‘ कूरिकडं ’ कूरिकृतं=कूरिभिः=निर्दयैः कृतं ४, ‘ परलाभो ’ परद्रव्यस्य लाभः ५, ‘ असंजमो ’ असंयमः=आसन्नानुष्ठानं ६, ‘ परधणम्मि गेहो ’ परधने गृद्धिः=परद्रव्याऽभिकाङ्क्षा ७, ‘ लोलिकं ’ लोल्यं=लोलुपत्वं ८, ‘ तक्करत्तणं ’ तस्करत्तमिति च ‘ अवहारो ’ अपहारः=अपहरणं परधनस्य १०, ‘ हत्थलहुत्तणं ’ हस्तलघुत्वं हस्तलाघवं=हस्तचापल्यम्, अथवा हस्तयोः लघुत्वं = परद्रव्यापहरणकुत्सितत्वात् नोत्तरं ११, ‘ पावकम्मकरणं ’ पापकर्मकरणं=पापानुष्ठानं १२, ‘ तेणिकं ’ स्तेन्यं=स्तेनस्य=चोरस्य कर्म चौर्यमित्यर्थः १३, ‘ हरणविप्पणासो ’ हरणविप्रणाशः=हरणेन परद्रव्यहरणेन विप्रणाशः=नाशइत्यर्थः १४, ‘ आइयणा ’ आदानम्=अननुमतपरद्रव्यग्रहणं १५, ‘ लुपणा यणणं ’ धनानां लोपना=परद्रव्य को प्रकट करते हैं—‘ तस्स य नामाणि ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तस्स य) पूर्व में उपदर्शित स्वल्पवाले इस अदत्तादान के (गोणाणि) गुणनिष्पन्न (नामाणि) नाम (तीसं हुंति) ३० तीस होते हैं (तंजहा) वे इस प्रकार हैं—(चोरिकं) चोरी १, (परहृडं) परहृत-विना अनुमति से दूसरे से वस्तु लेना २, (अदत्तं) अदत्त ३, (कूरिकडं) कूरिकृत ४, (परलाभो) परलाभ ५, (असंजमो) असंयम ६, (परधणम्मि गेहो) परधनगृद्धि ७ (लोलिकं) लोलुपता ८, (तक्करत्तणं) तस्करता ९, (अवहारो) अपहार १०, (हत्थलहुत्तणं) हस्तलाघव ११, (पावकम्मकरणं) पापकर्मकरण १२, (तेणिकं) स्तेन्य १३, (हरणविप्पणासो) हरणविप्रणाश १४, (आइयणा) आदान १५,

३२ छे—“ तस्स य नामाणि ” इत्यादि

टीकार्थ—“ तस्स य ” आशय अतापवानां आवेश स्वर्ग्य पाणा अदत्तादाननां “ गोणाणि ” गुण प्रमाद्यु छे—(१) “ चोरिकं ” चोरी (२) “ परहृडं ” परहृत-अनुमति विना धीश्वनी वस्तु लेनी, (३) “ अदत्तं ” अदत्त, (४) “ कूरिकडं ” कूरिकृत, (५) “ परलाभो ” परलाभ, (६) “ असंजमो ” असंयम, (७) “ परधणम्मि गेहो ” परधनगृद्धि-परधननी आकांक्षा, (८) “ लोलिकं ” लोलुपता, (९) “ तक्करत्तणं ” तस्करता, (१०) “ अवहारो ” अपहार, (११) “ हत्थलहुत्तणं ” हस्तलाघव, (१२) “ पावकम्मकरणं ” पापकर्मकरण, (१३) “ तेणिकं ” स्तेन्य, (१४) “ हरणविप्पणासो ” हरणविप्रणाश, (१५) “ आइ-

विच्छेदः १६, 'अपचओ' अप्रत्ययः=अविश्वासः-अविश्वासेत्पादकत्वात् १७, 'ओवीलो' अवपीडः=पीडाजनकं १८, 'ओक्खेवो' अवक्षेपः=परद्रव्यविच्छेदः १९, 'उक्खेवो' उत्क्षेपः=परहस्तान् द्रव्यस्य निर्गमनं २०, 'विक्खेवो' विक्षेपः=परधनस्य प्रक्षेपणं २१, 'कूडया' कूटता=द्रव्यस्य कूट तुलादिभिरन्यथाकरणं २२, 'कुलमसी' कुलमपी=कुलकङ्कननकं च २३, 'कंखा' काङ्क्षा=परद्रव्यतृष्णा २४, 'लालप्पणं पत्थणा य' लालपनं प्रार्थना च=लालपनं=गर्हितजरूपनं, प्रार्थना च चौर्यकृते तदपलापकवचनविन्यासः, प्रार्थनारूपाणि वचनानि जल्पन्ति चौराः २५, 'आससणा य वसणं' आशसनाच व्यसनं=आशसना=विनाशः-विनाशहेतुत्वान्, व्यसनं=सर्वापत्तिकारणम् २६, 'इच्छामुच्छाय य' इच्छामुच्छायं च=तत्रेच्छा परधनाभिलाषः, मुच्छायं च=तत्रैव गताभिव्यङ्गरूपा २७, 'तण्हागेही य' तृष्णा गृद्धिश्च, तत्र तृष्णा=अप्राप्तद्रव्यस्य प्राप्त्याञ्छा, गृद्धिश्च=प्राप्तस्याऽविनाशेच्छा अदत्तादातस्य हेतुकत्वात् तृष्णागृद्धित्युच्यते २८ 'नियडिकम्मं' निकृतिर्कर्म=निकृतिः=कपटं तत्कर्म=कपटकार्यमित्यर्थः २९, 'अवरोच्छ त्ति त्रि य' अपरोक्षमिति च=न विद्यन्ते परेषाम् अक्षीणि द्रष्टव्यतया यत्र चौर्यकर्मणि तदपरोक्षम्=अप्रत्यक्षसम्भावमित्यर्थः ३० । तस्य 'पावकलिकलुसकम्मवहुलस्स' पापकलिकलुप-

(धणाणं लुपणा) धनकी लोपना १३, (अपचओ) अप्रत्यय(अविश्वास) १७, (ओवीलो) अवपीड-दुःखरूप १८, (ओक्खेवो) अवक्षेप १९, (उक्खेवो) उत्क्षेप २०, (विक्खेवो) विक्षेप २१, (कूडया) कूटता २२, (कुलमसी य) कुलमपी २३, (कंखा) काङ्क्षा २४, (लालप्पणं पत्थणा य) लालपन प्रार्थना २५, (आससणा य वसणं) आशसना व्यसन २६, (इच्छामुच्छाय य) इच्छामुच्छाय २७, (तण्हागेही य) तृष्णागृद्धि २८, (नियडिकम्मं) निकृतिर्कर्म (कपटकरण) २९, (अवरोच्छत्ति त्रि य) तथा अपरोक्ष ३० । (तस्स) इस तरह उस कि जिस में (पावकलिकलुसकम्मवहुलस्स)

यणा" आशसना, (१६) "धणाणं लुपणा" धनकी लोपना, (१७) "अपचओ" अप्रत्यय, (१८) "ओवीलो" अवपीड, (१९) "ओक्खेवो" अवक्षेप (२०) "उक्खेवो" उत्क्षेप, (२१) "विक्खेवो" विक्षेप, (२२) "कूडया" कूटता (२३) "कुलमसी य" कुलमपी, (२४) "कंखा" काङ्क्षा (२५) "लालप्पणं पत्थणा य" लालपन प्रार्थना (२६) "आससणा य वसणं" आशसना व्यसन, (२७) "इच्छामुच्छाय" इच्छामुच्छाय, (२८) "तण्हागेही य" तृष्णागृद्धि, (२९) "नियडिकम्मं" निकृतिर्कर्म, अने (३०) "अवरोच्छत्ति त्रि य" अपरोक्ष "तस्स" आ प्रमाणे के जेमां "पावकलिकलुसकम्मवहुलस्स" प्रमाणतिपातादि पाप, युद्ध मित्रद्रोह आदिद्वय भवितुं कर्म पश्चात् प्रमाणमां २६ छे. "अविष्णा-

કર્મવહુલસ્ય=તત્ર પાપં=પાણાતિપાતાદિકં કલિઃ=પુદ્ગલકલ્યાણિ=મલિનાનિ કર્મા-
ણિ=મિત્રદ્રોહાદિવ્યાપારરૂપાણિ વહુલ્લાનિ=વહુનિ યત્ર તત્તથા તસ્ય ' આદિષ્ણા-
દાણસ્સ' અદત્તાદાનસ્ય 'એયાણિ' 'એતાનિ પૂર્વોક્તપ્રકારાણિ 'એવમાઈણિ' એવમાદીનિ
=ચૌરિક્યાદીનિ 'તોસં' ત્રિંશત્ 'નામધેજ્જાણિ હુંતિ' નામધેયાનિ ભવન્તિ ॥૨૦૨॥

પ્રાણાતિપાતાદિક પાપ, પુદ્ગલ, મિત્રદ્રોહ આદિરૂપ મલિનકર્મ અધિકતા સે
રહતે હૈં (અદિષ્ણાદાણસ્સ) અદત્તાદાન કે (એયાણિ એવમાઈણિ) ચે
ચોરી આદિ (તોસં) ત્રીસ (નામધેજ્જાણિ) નામ (હુંતિ) હૈં ।

ભાવાર્થ—ચોરી ચોરોં કા કર્મ હૈં ઇસલિયે અદત્તાદાન કા નામ
ચૌરિક્ય હૈં ૧ । ચોરી કરને ચોલા બિના પૂછે હી દુસરોં કે દ્રવ્ય કા હરણ
કરતે હૈં ઇસલિયે ઇસકા નામ પરહત્ત હૈં ૨ । ચોરોં કો કોઈ બુલાંકર
અપના દ્રવ્ય નહીં દેતા હૈં ઇસલિયે ઇસકા નામ અદત્ત હૈં ૩ । નિર્દય બન-
કર હી યહ કર્મ કિયા જાતા હૈં સદય હોકર નહીં, ઇસલિયે ઇસકા નામ
કૂરિકૂત હૈં ૪ । ઇસમેં દુસરે કે દ્રવ્ય કા લાભ હોતા હૈં અતઃ યહ પર
લાભ કહા જાતા હૈં ૫ । ઇસ કૃત્ય મેં ન ઇન્દ્રિય સંયમ રહતા હૈં ઔર ન
પ્રાણિ સંયમ હી, અતઃ યહ અસંયમ નામ સે કહા ગયા હૈં ૬ । ઇસમેં
પરધન મેં ગૃહિ હોતી હૈં અતઃ ઇસકા નામ પરધનગૃહિ હૈં ૭ । ઇસમેં પરિ-
ણામોં મેં લોભુપતા અધિક રહતી હૈં ઇસ લિયે ઇસકા નામ લૌલ્ય હૈં ૮ ।
તસ્કરોં કા યહ ભાવ હૈં ઇસલિયે ઇસકા નામ તસ્કરતા હૈં ૯ । ઇસમેં

દાણસ્સ ” અદત્તાદાનના “ એયાણિ એવમાઈણિ ” તે ચોરી આદિ “ તોસં ” ત્રીસ
“ નામધેજ્જાણિ ” નામ “ હુંતિ ” છે,

ભાવાર્થ—(૧) ચોરી કરવી તે ચોર લોકોનું કાર્ય છે. તેથી અદત્તાદાનનું
“ચૌરિક્ય” નામ છે. (૨) ચોરી કરનારા પૂછ્યા બિના જ બીજાનાં દ્રવ્યનું
હરણ કરે છે, તેથી તેનું નામ “પરહત” છે (૩) ચોરોને બોલાવીને કોઈ
પોતાનું દ્રવ્ય હેતું નથી, તેથી તેનું નામ “અદત્ત” છે. (૪) નિર્દય બનીને જ
ચોરી કરાય છે, સદય થઈને નહીં, માટે જ તેનું નામ “કૂરિકૂત” (૫) તેમાં
બીજાના દ્રવ્યનો લાભ (પ્રાપ્તિ) થાય છે, તેથી તેને “લાભ” કહેવામાં આવે છે.
(૬) આ કૃત્ય કરતી વખતે ઇન્દ્રિયોનો સંયમ રહેતો નથી અને વાણી
સંયમ પણ રહેતો નથી. તેથી તેનું નામ “અસંયમ” છે. (૭) તે કરનારને
પરધનમાં ગૃહિ-લાલચ થાય છે, તેથી તેનું નામ “પરધનગૃહિ” છે. (૮)
તેનાથી પરિણામોમાં-વૃત્તિમાં લોભુપતા વધારે પ્રમાણમાં રહે છે, તેથી તેનું
નામ “લૌલ્ય” છે. (૯) તસ્કરોની તે વૃત્તિ ભાવના હોય છે, તેથી તેનું નામ

પરકે ધનકા અપહરણ હોતા હૈં ફસલિયે ફસકા નામ અપહરણ હૈં ૧૦ । પર-
 દ્રવ્ય ચુરાનેમેં હાથકી કુશલતા કામ દેતી હૈં, અથવા પરદ્રવ્યકે ચુરાનેસે
 હાથમેં લઘુતા-નીચતા આતી હૈં ફસલિયે ફસકા નામ ફસલલુત્વ હૈં ૧૧ ।
 યહ કૃત્ય પાપાનુષ્ઠાન સ્વરૂપ હૈં, ફસલિયે ફસકા નામ પાપકર્મકરણ હૈં
 ૧૨ । યહ ચોરોં કા કર્મ હૈં ફસલિયે ફસકા નામ સ્તેન્ય હૈં ૧૩ । પર-
 દ્રવ્યકે હરણ સે હરને વાલે કા નાશ હી હો જાના હૈં । ફસલિયે ફસકા
 નામ હરણ વિપ્રણાશ હૈં ૧૪ । દૂસરોં કી અનુમતિ વિના હી ધનાદિક કા
 ફસમેં ગ્રહણ હોતા હૈં ફસલિયે ફસકા નામ આદાન હૈં ૧૫ । દૂસરોં કે
 દ્રવ્ય કા હરણ કરના હી દ્રવ્ય કા વિનાશ કરના હૈં, ફસલિયે ફસકા
 નામ પરદ્રવ્યવિચ્છેદ હૈં ૧૬ । કોઈ બી પુરુષ ચોરોં કા વિશ્વાસ નહીં
 કરતા હૈં, અતઃ અવિશ્વાસ કા ઉત્પાદક હોને સે ફસકા નામ અપ્રત્યય
 હૈં ૧૭ । દ્રવ્ય કા હરણ હો જાને સે દૂસરોં કો પીડા હોતી હૈં ફસલિયે
 પર કો પીડા કા કારણ હોને સે ફસકા નામ અવપીડ હૈં ૧૮ । પરદ્રવ્ય
 કા ફસ ક્રિયા સે વિચ્છેદ હોતા હૈં, અર્થાત્-ચોરે ગયે દ્રવ્ય કો ચોર
 યદા તદા સર્ચ કર ડાલતે હૈં, યહી પરકે દ્રવ્ય કા વિચ્છેદ હૈં ફસલિયે
 ફસકા નામ પરદ્રવ્યવિચ્છેદ હૈં ૧૯ । સ્વામી કે હાથ સે યહ ચુરાયા હુઆ
 દ્રવ્ય નિકલ જાના હૈં-ચોરોં કે હાથોં મેં આ જાના હૈં, ફસલિયે ફસકા

“તસ્કરતા” છે. (૧૦) તેમાં ધનનું અપહરણ થાય છે, તેથી તેનું નામ
 અપહરણ છે (૧૧) પરધન ચોરવામાં હાથની કુશળતા કામ આવે છે, અથવા
 પરધનની ચોરીથી હાથમાં લઘુતા-નીચતા પ્રવેશે છે. તેથી તેનું નામ ફસલલુત્વ
 છે. (૧૨) તે કૃત્ય પાપકર્મ હોવાથી તેનું નામ પાપકર્મકરણ છે. (૧૩) પર-
 ધનનું અપહરણ કરવાથી હરનારનો નાશ થાય છે, તેથી તેનું નામ હરણ-
 વિપ્રણાશ છે (૧૪) બીજાની અનુમતિ વિના જ તેમાં ધન આદિ ગ્રહણ કરાય
 છે, તેથી તેનું નામ આદાન છે. (૧૫) બીજાના દ્રવ્યનું હરણ કરવું એ જ
 દ્રવ્યનો વિનાશ ગણાય છે, તેથી તેનું નામ પરદ્રવ્યવિચ્છેદ છે. (૧૭) કોઈપણ
 માણસ ચોરીનો વિશ્વાસ કરતો નથી એ રીતે અવિશ્વાસ જનક હોવાથી તેનું
 નામ “અપ્રત્યય” છે. (૧૮) દ્રવ્યનું અપહરણ થવાથી અન્યને પીડા થાય છે,
 તેથી પીડાનું કારણ હોવાથી તેનું નામ “અવપીડ” છે. (૧૯) પરધનનો આ
 ક્રિયાથી નાશ થાય છે, એટલે કે ચોર લોહોએ તે પ્રકારે તેને ચોરી નાખે
 છે. આ પ્રમાણે તે દ્રવ્યનો વિચ્છેદ કરાવનાર હોવાથી તેનું નામ “પરદ્રવ્ય-
 વિચ્છેદ” છે. (૨૦) તે ચોરાયેલું દ્રવ્ય તેના માલિકના હાથમાંથી ચાલુને

नाम उत्क्षेप है २०। चोर इस द्रव्य को ले जाकर असुरक्षित अवस्था में इधर उधर रख देते हैं—डाल देते हैं, इसलिये इसका नाम विक्षेप है २१। चोर चुराकर जब इस द्रव्य को विभाग करते हैं, तब तुलादिक से कमती बढ़ती तौलते हैं—एकसा हिस्सा नहीं करते हैं, इसलिये इसका नाम कूटता है २२। यह कर्म करनेवालों के कुलों को कलंक लगता है इसलिये इसका नाम कुलजघी है २३। अदत्तादानमें परके द्रव्यको हरण करने में तृष्णा रहती है इसलिये इसका नाम कांक्षा है २४। चोर गहित जल्पना करते हैं, अर्थात् चोरी करलेने पर भी “मैंने चोरी की है” इस बात को स्वीकार नहीं करते प्रत्युत उसे छुपाने की ही चेष्टा करते हैं, तथा जिस सज्जन से चोरी करने के लिये चढते हैं तो किसी अपने इष्ट की प्रार्थना करके ही चलते हैं, इसलिये इसका नाम लालपन और प्रार्थना है २५। यह कृत्य विनाश का हेतु होने से विनाशरूप एवं समस्त आपत्तियों का कारण होने से व्यसनरूप है इसलिये इसका नाम आशंसना एवं व्यसन है २६। परधन के हरण करने की अभिलाषा इसमें बनी रहती है इसलिये इसका नाम इच्छा, तथा पर के धन को हरण करने के लिये इसमें अत्यंत मूर्च्छाभाव होता है इसलिये इसका नाम मूर्च्छा है २७। अप्राप्त द्रव्य की प्राप्ति की चाहछा तथा प्राप्त द्रव्य की अविनाशेच्छा, ये दोनों अदत्तादान का हेतु हैं—इसलिये इसका नाम

थोरोना लाधमा न्यथे, तेथी तेनुं नाम उक्खेपे छे. (२१) थोर ते द्रव्यने थोरी जठने असुरक्षित लावतमां जमे त्यां भूडी दे छे. तेथी तेनुं नाम विक्षेप छे. (२२) थोर थोरी उर्या पछी न्यारे तेना लाग पाठे छे त्यारे त्राजवा आदिथी पधारे के जोछुं तोले छे—जोड अरणा लाग पाठता नथी, तेथी तेनुं नाम कूटता छे (२३) आ कृत्य करनारनां कृणने कसक लागे छे, तेथी तेनुं नाम कुलजघी छे. (२४) अदत्तादान अछण करवामां भीजनुं द्रव्य डरी लेवानी तृष्णा रहै छे, तेथी तेनुं नाम कांक्षा छे. (२५) थोर गहित जल्पना करे छे. जेठवे के थोरी उर्या पछी पणु पोते थोरी करी छे, ते पातना स्वीकार करतो नथी, पणु तेने छुपाववाने प्रयत्न करे छे, तथा न्यारे तेजो थोरी करवा छपठे छे त्यारे पोताना छेछं छपठ देवनी प्रार्थना करीने न न्यथे छे तेथी तेनुं नाम लालपन अने प्रार्थना छे. (२६) ते कृत्य विनाशनुं अरणु डोवाथी विनाशनुंअने सघणी आपत्तिथेनुं अरणु डोवाथी व्यसनअ छे, तेथी तेनुं नाम आशंसना अने व्यसन छे. (२७) ते कृत्य करनारने परधननुं अरणु करवानी अलिवाषा रहै छे, तेथी तेनुं नाम इच्छा तथा पारकानुं धन अछण करवानी

પૂર્વે ‘ યન્નામે ’ તિ દ્વિતીયમન્તર્દ્વારં નિરૂપિતમ્, સામ્પતં ‘ જે વિ ચ કરેતિ પાપા ’-ઇતિ પશ્ચમાન્તર્દ્વારગતૌસ્તસ્કરાનાદ-‘ તં પુન ’ ઇત્યાદિ.

મૂલ્ય-તં પુન કરેતિ ચોરિયં તત્કરા પરદઢવહરા છેયા કચકરણલહ્લલકલા સાહસિયા લહુસસગા અદમહિચ્છા લોભ-ઘત્થા, દદરઓવીલગા ય ગેહિયા અહિમરા અળમંજગા ભગ્ગસંધિયા રાયદુદ્ધકારી ય વિસય નિચ્છૂઢલોગવજ્ઞાઉદ્ધગ-ગામઘાયગપુરઘાયગ — પંથઘાયગ — આદીવગતિત્થમેયયા, લહુહત્થસંપડત્તા જૂયગરા સ્વંડસ્કલ્લત્થી-ચોરપુરિસ-ચોરસંધિ-ચ્છેયયા, ય માંઠિમેયગા પરધળહરણલોમાવહારઅક્કલેવી હડકારગ-નિમ્મદ્ધગ-ગૂઢચોર, ગોચોર અસ્સચોર-દાસીચોરા ય ઇગચોરા ય અકઢ્ઢગ-સંપદાયગ-ઓહિંપગ-સત્થઘાયગ-વિલકો-લીકારગા ય નિગ્ગહવિપ્પલુંપગા-વટ્ટુવિહ-તેણિક્ક-હરણબુદ્ધી, ઇતે અળ્લે ય ઇવમાદી પરસ્સ દઢવાહિં જે અવિરયા ॥સૂ-૩॥

તૃણામૃદ્ધિ હૈ ૨૮। ચોરી એક પ્રકારકા કપટરૂપ કાર્ય હૈ અતઃ ઇસ્કા નામ નિકૃતિ હૈ ૨૯। ચોરકો ચોરી કરતે સમય કોઈ દેખતા નહીં હૈ ઇસ લિયે ઇસ્કા નામ અપરોક્ષ હૈ ૩૦ ॥ સૂ-૨ ॥

‘ યન્નામ ’ નામ કા દ્વિતીય અન્તર્દ્વાર કહ કર અચ સૂત્રકાર ‘ યેઽપિ ચ કુર્વન્તિ પાપાઃ ’ ઇસ પશ્ચમ અન્તર્દ્વારગત તસ્કરોં કા ઘર્ણન કરતે

તેમાં અત્યંત આસક્તિ રહે છે, તેથી તેનું નામ મૂર્છા છે. અપ્રાપ્ત દ્રવ્ય મેળવવાની ઇચ્છા તથા પ્રાપ્ત થયેલ દ્રવ્યનો વિનાશ ન થાય તેવી ઇચ્છા, તે અદત્તાદાનના હેતુ હોવાથી તેનું નામ તૃણામૃદ્ધિ છે. (૨૬) ચોરી એક પ્રકારનું કપટ યુક્ત કૃત્ય હોવાથી તેનું નામ નિકૃતિ છે. (૩૦) ચોરી કરતી વખતે ચોર ડોહીની નજરે પડતો નથી તેથી તેનું નામ અપરોક્ષ છે ॥સૂ-૨॥

“ યન્નામ ” નામનું ળીળું અંતર્દ્વાર વર્ણવીને હવે સૂત્રકાર “ યેઽપિ ચ કુર્વન્તિ પાપાઃ ” એ પાંચમાં અન્તર્દ્વારગત ચેઃસેનું વર્ણન કરે છે.

સુદર્શિની ટીકા અં ૩ સૂ. ૩ પञ्चमान्तद्वारगततत्स्करस्वरूपनिरूपणम् ૨૭૧

ટીકા-‘તં પુણ’ તન્ પુનઃ ‘ચોરિયં’ ચૌર્યં ‘કરેતિ’ કુર્વન્તિ ‘તક્કરા’ તસ્કરાઃ કથંભૂતાઃ ? इत्याह-—‘ परद्रव्यहरा ’ परद्रव्यहराः=परेषां द्रव्याणि हरन्ति ये ते परद्रव्यहराः ‘ छेया ’ छेकाः=चौर्यकर्मनिपुणाः तथा ‘ कथकरणलद्वलक्खा ’ कृत-करणलद्वलक्खाः कृतकरणाः=पुनःपुनः कृतचौर्यानुष्ठानास्ते च ते लव्यलक्षाः=चौर्यकर्मावसरज्ञास्ते तथा ‘ साहसिया ’ साहसिकाः=परद्रव्यहरणे मनोबलयुक्ताः, ‘ लहुस्सगा ’ लघुस्वकाः=तुच्छात्मानः ‘ अइमहिच्छा ’ अतिमदेच्छा=अतिशयिता महती=मगाढा इच्छा=तृष्णा येषां ते अतिमदेच्छा=महाभिलाषिणः, ‘ लोभयत्था ’ लोभग्रस्ताः = लोभग्रथितान्तःकरणाः ‘ दहरओवीलगा ’ दर्शऽप्रवीलकाः = वचनाटोपेन स्वात्मप्रच्छादकाः, तथा ‘ गेहिया ’ गृद्धिकाः=परद्रव्यलोपुपाः हैं-‘ तं पुण ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ-‘તં પુણ ચોરિયં તક્કરા કરેતિ’ હસ ચૌર્ય કર્મકો ચોર કરતે હૈં (પરદ્રવ્યહરા) યે ચોર પરદ્રવ્ય કો હરણ કરને વાલે હોને કે કારણ પરદ્રવ્ય હર કહે જાતે હૈં (છેયા) ચોર અપને ચૌર્યકર્મ મેં નિપુણ હોતે હૈં (કથકરણલદ્વલક્ષા) વાર ૨ ચોરી કરતે રહનેસે યે ચૌર્ય કર્મકે અવસર કે જ્ઞાતા હોતે હૈં (સાહસિયા) પરદ્રવ્ય કે હરણ કરને મેં इनका मानसिक बल बहुत बढा चढा रहता है । (लहुस्सगा) इनकी आत्मा अतितुच्छ होती है । तथा पर के द्रव्य को अपहरण करने में इनकी (अइमहिच्छा) महती लालसा रहती है, इसलिये महा इच्छा वाले हैं (लोभयत्था) ये लोभ से बहुत अधिक ग्रसित अन्तःकरण वाले होते हैं । (दहरओवीलगा) इनके बोलने की पद्धति कुछ ऐसी होती है कि जिससे ये देखने वालों को सहसा चोर रूप में भासित नहीं होते पाते हैं । (गेहिया)

“ તં પુણ ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-“તં પુણ ચોરિયં તક્કરા કરેતિ ” આ ચોરીનું કૃત્વ ચોર લોકો કરે છે. “પરદ્રવ્યહરા” તે ચોરો ખીજાનું દ્રવ્ય હરી લેનાર હોવાથી તેમને પરદ્રવ્ય હર કહેવામાં આવે છે “છેયા” ચોરલોકો પોતાના ચોરી કરવાના કાર્યમાં નિપુણ હોય છે. “કથકરણલદ્વલક્ષા” વારંવાર ચોરી કરતા રહે છે તેથી તેઓ ચોરી કરવાના અવસરના તત્કાલ જાણી હોય છે. “સાહસિયા” અન્યનું દ્રવ્ય હરી લેવામાં તેમનું માનસિક બળ ઘણું જ તીવ્ર હોય છે. “લહુસ્સગા” તેમનો આત્મા અતિશય તુચ્છ હોય છે, તથા ખીજાના દ્રવ્યનું અપહરણ કરવાની તેમની “અઇમહિચ્છા” અતિશય લાલસા હોય છે, તેથી તેઓ મહેન્ટવાળા છે. “લોભયત્થા” તેઓ લોભથી અતિશય વધારે જકડાયેલાં અંતઃકરણ વાળા હોય છે. “દહરઓવીલગા” તેમની બોલવાની રીત એવી હોય છે કે જેથી તેઓ તેમને બોનારની નજરે જઈથી ચોર રૂપે દેખાતા નથી. “ગેહિયા”

‘ અહિમરા ’ અહિમરા: = ધનાદિલોભેન મરણાભિમુખા:; મરણમયરહિતા इत्यर्थ:; અથવા ચૌર્યાભિમુખા: સન્ત: પરાન્ મારયન્તિ એ તે તથા હ્રદાન્તર્માવિત્તપ્ત્યર્થ:; ‘ અણમંજગા ’ ઋણમંજગા: = ઋણં મંજન્તિ = ન દ્દતિ એ તે તથા ‘ મગસંધિયા ’ મગસન્ધિકા: = મગ્ન: સન્ધિ: = મિત્રાદિસ્નેહો યૈસ્તે તથા ઉષ્ટજનપ્રેમયજિતા: ‘ રાય-દુદ્ધગારી ’ રાજદુષ્ટકારિણ: = રાજનીતિવિરુદ્ધાચરણા: ‘ વિસયનિચ્છદલોગવજ્ઞા ’ વિષયનિષ્કિમ્લોકવાદ્યા: = વિપયાન્ = જનપદાન્ નિષિષ્ણા: = નિષ્કાસિતા: અત એવ લોકવાદ્યા: = જનવહિર્ધૂતા: ‘ ઉદ્દહગામપ્રાયગપુરધાયગપંથયાગઆદીવગતિત્થમેયગા ’ ઉદ્દોદ્ધક ગ્રામધાતક-પુરધાતક-પથિષાતક-SSદીપકર્તૃયમેદકા: = તત્ર ઉદ્દોદ્ધકાથ = દિસકા: ગ્રામધાતકા: = ગ્રામનાશકા:; પુરધાતકા: = નગરવિધ્વંસકા: પથિ-

એ પરદ્રવ્યમેં વિશેષ લોલુપ હોતે હૈં । (અહિમરા) ધનાદિક કે લોભ મેં પડકર એ મરણ કે ભી અભિમુખ રહતે હૈં-ઈન્હેં મરણ કા મય નહીં હોતા હૈ । અથવા ચૌર્ય કર્મ મેં પ્રવૃત્તિ કરને પર દુસરોં કો ભી ઉમ્મ સમય વાધા ઢાલને પર માસ્ ઢાલતે હૈં । (અણમંજગા) इनके ऊपर किसी का कर्जा हो तो भी ये उसे नहीं देते हैं । (મગસંધિયા) એ અપને ઇષ્ટ મિત્રાદિકોં સે વી પ્રેમ નહીં કરતે હૈં । उन पर स्नेह करने से अथवा उनके स्नेह से ये वञ्चित रहते हैं । (રાયદુદ્ધગારી) રાજનીતિ કે વિરુદ્ધ इनका सदा आचरण रहता है । (વિસયનિચ્છદલોગવજ્ઞા) जनपद से ये निकाल दिये जाते हैं, इसलिये ये लोकवाद्य होने हैं । (ઉદ્દહગામપ્રાયગ-પુરધાયગપંથયાગઆદીવગતિત્થમેયગા) (ઉદ્દહગ) ये बड़े भारी द्रोही होते हैं जिनपर इनकी बकटष्टि पड़ जाती है उसकी फिर कुशल नहीं । (ગામધાયગ) गांवों के गांव नष्ट कर डालते हैं । (પુરધાયગ) नगरों

તેઓ પરદ્રવ્યમાં અતિશય લોલુપ હોય છે “અહિમરા” ધનાદિના લોભમાં પડીને તેઓ મરણની પણ સન્મુખ રહે છે-તેમને મોતની ઓક ઢાગતી નથી. અથવા ચોરી કરવા જતાં તેમાં આટખીડી રૂપ થનારને મારી નાખે છે. “અણમંજગા” તેમની પાસે કોઈનું લેણું હોય તો તેઓ તે ચુકવતા નથી. “મગસંધિયા” તેઓ પોતાના ઇષ્ટ મિત્રાદિ તરફ પણ પ્રેમ રાખતા નથી, તેમના પર સ્નેહ રાખવાથી અથવા તેમનો સ્નેહ પ્રાપ્ત કરવાથી તેઓ રહિત હોય છે. “રાયદુદ્ધગારી” રાજનીતિથી વિરુદ્ધનું તેનું આચરણ હમેશાં રહે છે. “વિસયનિચ્છદલોગવજ્ઞા” સંલ્પમાંથી તેમને હાંકી કાઢવામાં આવે છે તેથી તેઓ લોકવાદ્ય હોય છે. “ઉદ્દહગામપ્રાયગ-પુરધાયગપંથયાગઆદીવગતિત્થમેયગા” “ઉદ્દહગ” તેઓ ભારે દ્રોહી હોય છે, જેમના ઉપર તેમની બકટષ્ટિ પડે છે તેમની સલામતી રહેતી નથી. “ગામધાયગા” તેઓ ગામોનાં ગામો નષ્ટ કરી નાખે છે. “પુરધાયગ” નગરોનો નાશ

સુદર્શિની ટીકા અં ૩ સૂ ૩ પञ्चमान्तर्द्धारगततत्स्करस्वरूपनिरूपणम् ૨૭૩

યાતકાઃ=પથિ=માર્ગે જનાનાં યાતકાઃ=દ્રવ્યલુપ્તનાર્થ પ્રહારકાઃ આદીપકાથ= ગૃહાદિદાહકાઃ તીર્થભેદકાથ=યાત્રિકજનધનાપહારકાથ 'લઘુદ્રવ્યસંપત્તા' લઘુ- હસ્તસમ્પ્રયુક્તાઃ લઘુઃ=પરદ્રવ્યહરણે નિપુણો હસ્તઃ=હસ્તવ્યાપારપરાયણાઃ, 'જૂય- ગણ' ધૂતકરાઃ, 'સ્વંડરસ્વસ્ત્રીચોરપુરિસચોરસંધિચ્છેયયા ય' 'સ્વંડરસ્વસ્ત્રીચોર- પુરુષચોરસંધિચ્છેદકાઃ = તત્ર સ્વંડરસ્ત્રાઃ=શુલ્કપાલાઃ ઉત્કોચગ્રાહિત્વાચીરાઃ, સ્ત્રીચોરા=સ્ત્રિયચોરકાઃ સ્ત્રીસકાશાચોરકાઃ=સ્ત્રિયમેવ ચોરયતીતિ સ્ત્રીચોરકાઃ, તથા સ્ત્રી વેશેન ચોરકા વા । તથૈવ પુરુષ ચૌરાશ્ચ સંધિચ્છેદકાઃ=સંધિ=મિત્યાદૌ વિવરં 'સંધ' 'સ્વાત્ર' ઇતિ ભાષા પ્રમિદ્વં છિન્દન્તિ=ઘનન્તિ યે તે સંધિચ્છેદકાઃ 'ગંઠિભેયગા' ગ્રન્થિભેદકાઃ=પમિદ્વાઃ 'પરધનહરણલોમાવહારશ્ચલેવી' પર- કો વિધ્વંસ કર દેતે હૈં । (પંથવાયગ) દ્રવ્ય હરણ કરને કે અભિગ્રાય સે માર્ગ મેં ચલને વાલે મનુષ્યોં કો યે દેખતે ૨ માર ઢાલતે હૈં । (આદી- વગ) ગૃહાદિકો મેં આગ લગા દેને હૈં । (નિત્યભેયગા) યાત્રિકજનોં કે મી દ્રવ્ય લૂટ લિયા કરતે હૈં । (લઘુદ્રવ્યસંપત્તા) હાથકી સફાઈ इनकी इतनी जबर्दस्त होनी है कि ये देखते २ ही दूसरों के धन को चुरा लेते हैं । (स्वंटरस्वस्त्रीचोरपुरिसचोरसंधिच्छेयया य) इसी तरह जो स्वं- रक्ष-शुल्करपाल होते हैं ये जो धूसखोरी करने वाले होते हैं वे चोर माने जाते हैं वे यहां लिये गये हैं स्त्रीचोर-स्त्रियों के पास से द्रव्यादि चुराने वाले, अथवा स्त्रियों को उठाकर ले जाने वाले, अथवा स्त्री के वेश में रहकर चोरी करने वाले होते हैं, इसी प्रकार पुरुषचोर भी होते हैं- पुरुषों के पास से द्रव्यादिक चुराने वाले होते हैं, अथवा पुरुषों को धोखा देकर इधर उधर ले जाने वाले होते हैं अथवा पुरुष के वेश में

કરી નાખે છે, “ પંથવાયગા ” દ્રવ્ય હરીલેવાને માટે તેઓ પ્રવાસીઓને ભેત ભેતામાં મારી નાખે છે. “ આદીવગ ” ઘર વગેરેમાં આગ લગાડે છે, “ નિત્ય- ભેયગા ” યાત્રાળુનાં દ્રવ્યને પગ લૂંટી લે છે, “ લઘુદ્રવ્યસંપત્તા ” ચોરી કર- વામાં તેમનો હાથ એટલો કૃશળ હોય છે કે તેઓ ભેત ભેતામાં અન્યનું ધન ચોરી લે છે. “ સ્વંડરસ્વસ્ત્રીચોરપુરિસચોરસંધિચ્છેયયા ય ” એ જ પ્રમાણે જે પંડરક્ષ-શુલ્કપાલ હોય છે-જે ધૂસખોરી કરનારા (લાંચ લેનાર) હોય છે તેમને ચોર ગણવામાં આવે છે. સ્ત્રીચોર-સ્ત્રીઓની પાસેથી દ્રવ્ય ચોરનારા, અથવા સ્ત્રીઓને ઉપાડી જનારા અથવા સ્ત્રીના વેશમાં ઝળને ચોરી કરનારા હોય છે, એ જ પ્રમાણે પુરુષચોર પણ હોય છે- પુરુષોની પાસેથી દ્રવ્યાદિકને ચોરનારા, અથવા પુરુષોને ટોળા હઠને ગમે ત્યાં લઈ જનારા, અથવા પુરુષના

ધનહરણલોમાવહારાઽઽક્ષેપિણઃ=તત્ર પરધનં હરન્તિ યે તે પરધનહરણાઃ, લોમાન્ય-
વહરન્તિ યે તે લોમાવહારાઃ=વધપૂર્વકલુપ્તનકારિણઃ આક્ષેપિણઃ=વશીકરણાદિના
ચોર્યકારિણઃ ‘ હઢકારગનિમ્મદ્ગગૂઢચોરગોચરઅસ્સચોરદાસીચોરા ય ’ હઢકાર-
રકનિર્મદ્કગૂઢચોરગોચોરાશ્વચોરદાસીચોરાશ્ચ તત્ર હઠં=વલાત્કારં કુર્વન્તીતિ
હઢકારકાઃ, નિર્મદ્કાશ્ચ=નિરનિશયેન મર્દનકારિણઃ યુદ્ધેન ધનાપહારિણઃ, ગૂઢચોરાઃ=
ગુપ્તચોરા, ગૌ ચોરા અશ્વચોરા દાસીચોરાશ્ચ=પ્રચ્ચાતાઃ=ત એવ ‘ એગચોરા ’ એક
ચોરાઃ=એકાકિન એવ ચોરવન્તિ યે તે ‘ ઓકઢૂગસંપદાયગા ઓહિંપગસત્થવાયગ,
વિલકોલીકારગા ય ’ અપકર્ષક સમ્પદાયકાવચ્છિષ્ક સાર્થધાતકવિલકોલીકાર-
રહકર ચોરી કરતે હૈં, સંધિચ્છેદક-મિત્યાદિક મેં સેંધ કરકે ચોરી
કરતે હૈ, (ગંઠિભેયગા) ગ્રન્થિભેદક - ગાંઠ કતરતે હૈં (પરધન
હરણલોમાવહારઅક્ષેવી) પરધનહરણલોમાપહારાક્ષેવી હોતે હૈં
પરકે ધન કો હરણ કરને વાલે, વધ કરકે ધનકો હરણ કરને વાલે વશી-
કરણ મંત્ર સે વશ કરકે ધન કો હરણ કરને વાલે હોતે હૈં (હઢકારગ-
નિમ્મદ્ગગૂઢચોરગોચોરઅસ્સચોરદાસીચોરા ય) (હઢકારગ) વલાત્કાર
સે ધન કો હરણ કરને વાલે, (નિમ્મદ્ગ) નિર્મદ્ક યુદ્ધ કરકે ધન કો
હરણ કરને વાલે, (ગૂઢચોર) ગુપ્તરૂપ મેં રહકર પર કે ધન કો હરણ
કરને વાલે, (ગોચોર) ગાય કો હરણ કરને વાલે, (અસ્સચોર) અશ્વ
કો હરણ કરને વાલે, (દાસીચોર) દાસી કો હરણ કરને વાલે,
(એગચોરા ય) અકેહે રહકર પર કે ધન કો હરણ કરને વાલે, (ઓક
ઢૂગસંપદાયગા ઓહિંપગસત્થવાયગવિલકોલીકારગા ય) (ઓકઢૂગ)

વેશમાં જઈને ચોરી કરનારા હોય છે, સંધિચ્છેદક-દિવાલ આદિમાં કાળું પાડીને
ચોરી કરનારા હોય છે, “ ગંઠિભેયગા ” ગ્રન્થિભેદક-ગિરિયા કાતરે છે, “ પર
ધનહરણલોમાવહારઅક્ષેવી ” પરધનહરણ લોમાપહારાક્ષેવી હોય છે-પરધ-
નનું હરણ કરનારા, હત્યાકરીને ધનનું હરણ કરનારા, વશીકરણ મંત્રથી વશ
કરીને ધનનું અપહરણ કરનારા હોય છે, “ હઢકારગ નિમ્મદ્ગ ગૂઢચોરગોચોર
અસ્સચોરદાસીચોરા ય ” “ હઢકારગ ” બળાત્કારથી ધનને હરી લેનારા, “ નિમ્મ-
દ્ગ ” નિર્મદ્ક-યુદ્ધ કરીને ધનને હરી લેનારા. “ ગૂઢચોર ” ગુપ્તરીતે રહીને
પરનું ધન હરી લેનારા, “ ગોચર ” ગાયનું અપહરણ કરનારા, “ અસ્સચોર ”
ઘોડાની ચોરી કરનારા, “ દાસીચોર ” દાસીની ચોરી કરનારા, “ એગચોરાય ”
એકલો જઈને પારકાના ધનનું હરણ કરનારા “ ઓકઢૂગસંપદાયગા ઓહિંપગ
સત્થવાયગવિલકોલીકારગા ય ” “ ઓકઢૂગ ” આકર્ષક-બીજાના ધનમાંથી

सुरशिनी टीका अ० ३ सू० ३ पञ्चमान्तद्वारगततत्स्वरस्वरूपनिरूपणम् २७५

काश्च तत्र अपकर्षकाः=अपकर्षयन्ति परगृहेषु चोरयितुं चौरानाह्वयन्ति ये तेऽपकर्षकाः यद्वा-चोरितं धनमपनीयाऽन्यस्थाने नमन्ति ये ते तथा, तथा शरीरादितो भूषणादि निष्कासका वा, सम्प्रदायकाः=चौरान् स्वगृहे संस्थाप्य भोजनादि दायकाः, अवच्छिन्नकाः=चोरविशेषाः सार्धघातकाः=प्रसिद्धाः विलकोलीकारकाश्च=परव्यामोहार्थं विश्वाप्तवचनवादिनः, देशीशब्दोऽयम् । 'निग्नहविष्पलुङ्गमा' निग्रह-विप्रलुम्बकाः=तत्र निग्रहेण=वशीकरणेन शस्त्रादिभयमदर्शनपूर्वकं परं निरुध्येत्यर्थः-विप्रलुम्बकाः=लुण्ठनकारिणः, 'बहुविहतेणिकहरणबुद्धी' बहुविधस्तेनपहरणबुद्धयः=बहुविधेन स्तेन्येन=चौर्येण हरणे=परद्रव्यापहरणे बुद्धिर्येषां ते तथा परद्रव्यहरणबुद्धिशालिनः एते=पूर्वोक्ताः 'अण्णे य' अन्ये च 'एवमादी जे' एवमादयो ये=एवमप्रकाराः ये 'परस्स दब्बाहिं अविरया' परस्य द्रव्येषु अविरताः, सूत्रे तृतीया सम्मथ्यर्थे परस्य धनधान्यादि ग्रहणे अनिवृत्ताः परद्रव्यग्रहणासक्ता इत्यर्थः सन्ति ते चौर्यं कुर्वन्तीति पूर्वेषु सम्बन्धः ॥सू०३॥

अपकर्षक-पर के घर से द्रव्यादिकों को चुराने के लिये माथ में दूसरे चोरों को बुलाकर चोरी करने वाले, अथवा चुराये हुए धन को दूसरे स्थान में ले जाने वाले, अथवा शरीर आदि से भूषण निकालने वाले, (संप्रदायक) संप्रदायक-चोरों को अपने घर में रखकर उन्हें भोजन आदि देने वाले, अवच्छिन्नक-ये भी चोर होते हैं सार्धघातक जनसमूहका घात करने वाले, विलकोलीकारक-पर को व्यामोह करने के लिये विश्वास वचन बोलने वाले (निग्नहविष्पलुङ्गमा) शस्त्रादिक का भय दिखला करके दूसरों को रोक कर लूट करने वाले (बहुविहतेणिकहरणबुद्धी) तथा अनेकविधचौर्यकर्म करने में निपुण बुद्धिवाले होते हैं ऐसे (एते अण्णे य एवमादी परस्स दब्बाहिं जे अविरया) ये सब व्यक्ति तथा इनसे

द्रव्यादिनी चोरी करवाने भाटे जीव्ज चोरानो साथ लडने चोरी करनास, अथवा चोरिसा धनने जीव्ज जग्थाजे लड जनारा, अथवा शरीर आदि परस्य आ भूषणो छरी लेनारा, "संप्रदायक" संप्रदायक-चोराने पोताना घरमा आशरीर आपीने लेजन आदि हेनारा, अवच्छिन्नक-ते पणु चोर ज होय छे, सार्धघातक-जनसमूहनी छत्या करनास, जिव्जोलीकारक-जीव्जने इसाववाने भाटे विश्वास उत्पन्न करे तेवां पथने पोतनारा, "निग्नहविष्पलुङ्गमा" शस्त्रादिनो लय जताथी जीव्जने अट्ठापीने छुट्टी लेनारा, "बहुविहतेणिकहरणबुद्धी" तथा अनेक प्रकारनी चोरी करवाभां कुशल बुद्धिवाणा होय छे. जेथा "एते अण्णे य एवमादी परस्स दब्बाहिं जे अविरया" जे जथा लोके तथा ते सिवायना जीव्ज

एवं 'येऽपि च कुर्वन्त्यदत्तादान' मिति पञ्चमान्तद्वारं निरूप्य 'यथा च कृतम्' इत्यदत्तादानस्य तृतीयान्तद्वारमाह—'विउलवलपरिगहा' इत्यादि

મૂલમ્—વિઉલવલપરિગહા ય વહવો રાયાણો પરધણમ્મિ ગિદ્ધા સળ દવ્વે અસંતુટ્ઠા પરવિસળ અહિહણંતિ લુદ્ધા પરધણ-સ્સ કણ, ચરૂરંગ સમત્તવલસમગ્ગા નિચ્છિય વરજોહજુદ્ધસદ્ધા ય અહમહમિતિદપ્પિણ્હિં સેન્નેહિં સંપરિવુડા પઠમસગડસૂહ-ચવકસાગરગલ્લબુહાદિણ્હિં અણીણ્હિં ઉચ્છરંતા અહિમૂય હરંતિ પરધણાઙ્ગે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

टीका—'विउलवलपरिगहा य' विपुलवलपरिगहाय=तत्र विपुलम्=विशालं बलं=सामर्थ्यं सैन्यं वा परिगहाः=परिवारो येषां ते तथा, वहवः=अनेके 'रायाणो' राजानः 'परधणम्मि गिद्धा' परधने गृद्धाः=परद्रव्यासक्ताः 'सल दव्वे' स्वके द्रव्ये =निजधने 'असंतुट्ठा' असंतुष्टाः 'लुद्धा' लोभवन्तः सन्तः 'परविसल' परिचर्यान्

भिन्न इसी तरह से और भी व्यक्ति जो दूसरों के द्रव्यहरण करने रूप कार्य में विरति भाव से रहित होते हैं, इन सबको चोरों की श्रेणि में ही परिगणित जानना चाहिये ॥ सू० ३ ॥

इस तरह “ जो अदत्तादान को करते हैं ” इस रूप यह पंचम अन्त-द्वार कहकर अब सूत्रकार “ यथा च कृतम् ” इस तृतीय अन्तद्वार को कहते हैं—‘ विउलवलपरिगहा ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(विउलवलपरिगहा) विपुल सैन्य एवं परिवारवाले (वहवो रायाणो) अनेक राजा लोग (परधणम्मि गिद्धा) परधन में आसक्त तथा (सल दव्वे असंतुट्ठा) अपने पास के द्रव्य में असंतुष्ट और

લોઝે કે જે બીજાના દ્રવ્યનું અપહરણ કરવાના કાર્યમાં વિરતિભાવથી રહિત હોય છે—તે કાર્યમાં લાન હોય છે—તે બધાને ચોરોની શ્રેણીમાં જ મૂકવા બોલ્યો ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આ રીતે “ જે અદત્તાદાનનું સેવન કરે છે ” તે પ્રકારના આ પાંચમાં અન્તદ્વારનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર “ યથા ચ કૃતમ્ ” તે ત્રીજા અન્તદ્વારનું કથન કરે છે—“ વિઉલવલપરિગહા ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“વિઉલવલપરિગહા” વિપુલ સૈન્ય અને પરિવાર વાળા “વહવો-રાયાણો”અનેક રાજાઓ “પરધણમ્મિ ગિદ્ધા”પરધનમાં આસક્ત તથા “સલ-દવ્વે અસંતુટ્ઠા” પોતાની ખાસેના દ્રવ્યથી અસંતુષ્ટ અને “લુદ્ધા” લોભયુક્ત

सुदर्शनी टीका अ० ३ सू० ४ परधनलुब्धनृपस्वरूपनिरूपणम्

२५७

=अन्यजनपदान् देशानित्यर्थः 'परधनस्त कए' परधनस्य कृते=परद्रव्यग्रहणार्थम् 'अहि-
हणंति' अभिघ्नन्ति=आक्रमन्ति आक्रमणं कुर्वन्ति इत्यर्थः। तथा 'चाउरंगमसत्तवल
समग्गा' चतुरङ्गसमस्तवलसमग्गाः=चतुर्भिरङ्गैः= गजरथाश्चपदातिरूपैः सेना-
वपनैः समस्तं=सम्पूर्णं बलं=सैन्यं तेन समग्गाः=युक्ताः चतुरङ्गसेनायुक्ताः 'निच्छि-
यवरजोहजुद्धसद्धा य' निश्चितवरयोधयुद्धश्रद्धाश्च=तत्र निश्चितैः=निर्भरितैः स्थायि-
रूपेण नियुक्तैर्निश्चयवद्विर्वा वरैः=प्रशस्तैः योधैः=महैर्यद् युद्धं तत्र श्रद्धा=प्रेमादरो
येषां ते तथा 'अहमह'मिति दप्पिण्हि' अहमहमितिदपितैः='अहमेवैकवीरः'
इत्येवं दपितैः=गवितैः 'सेन्नेहि' सैन्येः 'संपरिवुडा' सम्परिवृताः=सन्नद्धाः
साज्जीभूता 'पउमसगडसुइचकसागरगरुलवूहादिण्हि' पञ्चशकटसूचीचक्रसागर-
गरुडव्यूहादिकैः = पद्माकारव्यूहशकटव्यूहसूचीव्यूहचक्रव्यूहसागरव्यूहगरुडव्यूहा-
दिकाः सैन्यरचनाविशेषान्ते निवन्ते येषु तैस्तथाभूतैः, 'अणीण्हि' अनीकैः=

(लुब्धा) लुब्ध होकर (परधनस्त कए) दूसरों का धन लेने के लिये
(परविसए) दूसरे राजाओं के देशों के ऊपर (अहिहणंति) आक्रमण
करते हैं, तथा (चाउरंगमसत्तवलसमग्गा) गज, रथ, अश्व एवं पदाति
रूप चार अंगों वाली सेना से युक्त एवं (निच्छियवरजोहजुद्धसद्धा
य) स्थायी रूप से नियुक्त किये हुए अथवा अटल निश्चय से युक्त हुए
ऐसे प्रशस्त योद्धाओंके साथ युद्ध करने में आदरभाव वाले और
(अहमहमिति दप्पिण्हि) “ मैं ही एक वीर हूँ ” इस प्रकार के गर्व
वाले (सेन्नेहि) सैन्य से (संपरिवुडा) परिधृत-युक्त होकर (पउम-
सगडसुइचकसागरगरुलवूहादिण्हि) पद्माकार व्यूहवाले, शकटव्यूह-
वाले, सूचीव्यूहवाले, चक्रव्यूहवाले, सागरव्यूहवाले, एवं गरुडव्यूह
आदि वाले (अणीण्हि) सैन्य से प्रतिपक्षी के सैन्य को (उच्छरंता)

धधने “ परधनस्त कए ” जीवन्तु धन प्राप्त करवाने भावे “ परविसए ” जीवन्तु
राज्यना प्रदेशों ऊपर “ अहिहणंति ” आक्रमण करे छे, तथा “ चाउरंग समत्त-
-वलसमग्गा ” सार्थी, रथ, अश्व अने पायदण्ये ये चतुरंगी सेना सहित अने
“ निच्छियवरजोहजुद्धसद्धा य ” स्थायी रीते करेस अथवा दृढ निश्चयवाण्य
अने युद्ध करवाभां आदरभाव शान्तारा प्रशस्त योद्धाओंनी साथे अने
“ अहमहमिति दप्पिण्हि ” “ हुं ए ओक वीर हूँ ” ओ प्रकारना गर्ववाण्य
“ सेन्नेहि ” सैन्यथी “ संपरिवुडा ” परिधृत-युक्त धधने “ पउमसगडसुइचकसागर-
गरुलवूहादिण्हि ” पद्माकार व्यूहवाण्य, शकटव्यूहवाण्य, सूचीव्यूहवाण्य, चक्रव्यूह
वाण्य, सागर व्यूहवाण्य अने गरुड आदि व्यूहवाण्य, “ अणीण्हि ” सैन्यथी

२७८

प्रश्नव्याकरणसूत्रे

सैन्यैः 'उच्छ्रंता' आस्तुष्वन्तः=प्रतिपक्षसेनामाच्छादयन्तः, 'अहिभूय' अमि-
भूय=आक्रमणेन शत्रुसैन्यं पराजित्य हृष्टान् 'परधणाइं' परधनानि हरन्ति ॥सू० ४॥

तथान्ये राजादयो यथा परधनादीन्यपहरन्ति तदाह—'अवरे' इत्यादि—

मूलम्—अवरे रणसीसलद्वलकखा संगामं अइवयंति,
सपणद्धवद्धपरियरउप्पाडियचिंधपट्टगहियाउहपहरणा माढी-
वरवम्मगुंडिया, आविद्धजालिया कवयकंडगिया, उर-
सिरमुहवंद्धकंडतोणा, पासियवरफलगरइयपहकरसरभस
खरचावकरकरंचियसुनिसियसरवरिसवडकरगमुयंतघणचं-
डवेगधारानिवायमग्गे, अणेगधणुमंडलगसंधियउच्छलिय
सत्ति—कणग—वामकर—गहिय—खेडग—निम्मल—
निकिद्ध—खग—पहरंत—कुंत—तोमर—चक्र—गया—परसु—मुसल
—लंगल—सूल—लउड—भिंडिपाल—सव्वल—पट्टिस—चम्मेट्टु—
घण—मोडिय—मोगगरवर—फलिह—जंत पत्थर—दुहण—तोण
कुवेणी—पीढाकलिण ॥ सू० ५ ॥

टीका—'अवरे' अपरे=केचित् तृषाः 'रणसीसलद्वलकखा' रणशीर्षलब्धलक्ष्याः=
रणशीर्षे=संग्रामशिरसि लब्धलक्ष्याः=वैरीवेधने=सिद्धहस्ताः सन्तः स्वयमेव 'संगामं'
आच्छादित करते हुए (अहिभूय) अपने आक्रमणों से उसे पराजित
करके (परधणाइं) परधन को (हरंति) हरण करते हैं ॥ सू० ४॥

जो अन्य राजादिक पर के धन आदि हरण करते हैं उनको कहते
हैं—'अवरे' इत्यादि

टीकार्थ—(अवरे) कितनेक राजा (रणसीसलद्वलकखा) जो रण-
शीर्षलब्ध लक्ष्यवाले होते हैं—वैरी को मारने में सिद्ध हस्त होते हैं

प्रतिपक्षीना वैर्यने "उच्छ्रंता" वैरी लडने "अहिभूय" पीताना दुमवाथी
तेने डरावीने "परधणाइं" परधननु "हरंति" हरण करे छे ॥ सू० ४॥

जे भीन राजादिक परधन आदिनु हरण करे छे तेमनु वधुन करतां
सूत्रधार कहे छे—'अवरे' इत्यादि

टीकार्थ—'अवरे' भीन डेटवाक राजाओ "रणसीसलद्वलकखा" जे रणशी-
र्षलब्धलक्ष्यवाला होय छे—दुश्मननी इत्या करवाभां नियुक्त होय छे "संगामं—

સુદર્શિની ટોકા અ ૩ સુ ૪ પરધનલુઘ્નપસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૨૭૨

સંગ્રામે 'અહવ્યંતિ' અતિપતન્તિ=યુદ્ધં કર્તું પ્રવર્તન્તે । કથં ભૂતાઃ ? इत्याह—
 'सण्णद्धवद्धपडियर-उप्पाडियचिंधपट्टगहियाउहपहरणा' सन्नद्धवद्धपरिकरोत्थाटि-
 तचिन्हपट्टगृहीतायुधपहरणाः=तत्र सन्नद्धाः=युद्धसामग्रीभिः सज्जीभूतास्तथा, वद्धः
 परिकरः=कवचो यैस्ते, वद्धपरिकराः=वद्धकवचाः तथोत्थाटितः=दृढं वद्धो मस्तके
 चिन्हपटः रक्तपट्टादि स्वचिन्हविशेषो यैस्ते तथा, गृहीतानि=परिधृतानि रिपुहन्तना-
 र्थमायुधानि-बाणादीनि प्रहरणानि=खड्गादीनि यैस्ते च तथा पदत्रयस्य कर्मधा-
 रणः । 'माहीवरवम्मगुंडिया' माहीवरवर्मगुण्डिताः=तत्र-माही=शरीरत्राणविशेषाः
 देशीशब्दोऽयं वरवर्माणि=मथानकवचानि तैर्गुण्डिताः=आच्छादितशरीराः, आवि-
 द्जजालिकाः=निघट्टलोहकञ्चुकाः 'कवयकंडगिया' कवचकण्टकिताः=सकण्टक
 कवचेन कण्टकिताः, 'उरसिरमुहवद्धकंठतोणा' उरः शिरोमुखवद्धकण्टतोणाः=तत्र

(સંગ્રામં અહવ્યંતિ) વે સ્વયમેવ સંગ્રામ મેં ઉતર આતે હૈં-યુદ્ધ કરને મેં
 પ્રવૃત્તિ વાલે હો જાતે હૈં એસે વે રાજા લોગ (સળ્ણદ્ધવદ્ધપડિયર ઉપ્પા-
 ડિયચિંધપટ્ટગહિયાઉહપહરણા) (સળ્ણદ્ધ) પહિલે તો યુદ્ધસામગ્રી સે
 સજ્જીભૂત હોતે હૈં, (વદ્ધપડિયર) કવચ સે વાંધકર અપને શરીર કો
 સુરક્ષિત રખતે હૈં, (ઉપ્પાડિયચિંધપટ્ટ) મસ્તક પર રક્તપટ્ટાદિરૂપ ચિહ્ન-
 વિશેષ કો દઢતરરૂપ મેં વાંધતે હૈં, (ગહિયાઉહપહરણા) રિપુ કો નષ્ટ
 કરને કે લિયે વાળ આદિ આયુધોં કો ઔર ત્વજ્ઞ આદિ પ્રહરણોં કો
 અપને પાસમેં રખતે હૈં (માહીવરવમ્મગુંડિયા) માહી-શરીર ત્રાણવિ-
 શેષ एवं उत्तम कवच से इनका शरीर आच्छादित रहता है, (आविद-
 जालिका) इनके शरीर पर लोहनिर्मित कवच बंधा रहता है (कवय-
 कंडगिया) कण्ठों वाले कवच से ये युक्त होते हैं, (उरसिरमुहवद्ध

અહવ્યંતિ ” તેઓ જાતે જ રણસંગ્રામમાં ઉતરી પડે છે-યુદ્ધ કરવાને તૈયાર થઈ
 જાય છે, એવા તે રાજાઓ “ સળ્ણદ્ધવદ્ધપડિયરઉપ્પાડિય-ચિંધપટ્ટગહિયા-
 ઉહપહરણા ” “ સળ્ણદ્ધા ” પહેલાં તો યુદ્ધની સામગ્રી સજ્જ કરાવે છે,
 “ વદ્ધપડિયર ” અખતર પહેરીને પોતાના શરીરને સુરક્ષિતખનાવે છે. “ ઉપ્પા-
 ડિય ચિંધપટ્ટ ” મસ્તક પર લાલ પટ્ટિ આદિ ખાસ ચિહ્નને મળખૂત રીતે બાંધે
 “ ગહિયાઉહપહરણા ” હુસ્મનનો નાશ કરવાને માટે આણુ આદિ આયુધો અને
 તલવાર આદિ શસ્ત્રો પોતાની પાસે રાખે છે “ માહીવરવમ્મગુંડિયા ” માહી-
 શરીરના રક્ષણ માટેનું એક સાધન, અને ઉત્તમ અખતરથી પોતાના શરીરને
 આચ્છાદિત કરે છે, “ આવિદ્જાલિકા ” તેમના શરીર પર લોહનું અખતર
 બાંધેલું હોય છે, “ કવચકંડગિયા ” તેઓ કાંઠામાં કવચથી યુક્ત હોય છે,

उरसा=वक्षःस्थलेन सह क्षिरोमुखाः=उर्ध्वमुख बाद्धाः कण्ठे=ग्रीवायां तोणाः=तूणीराः
 'तरकस' इति 'तीरभाता' इति वा भाषाप्रतीता यैस्ते तथा एतादृशा नृपाः
 गच्छन्ति संग्रामे इत्याह — 'पासियवरफलगरइयपहकरसरमसखरचावकर-
 करंचियमुनिसियसरवरिसवड्डकरकमुयंतयगचंडवेगधारानिवायमगगे' पासित-
 वरफलकरचितमकरसरभसखरचावकरकराश्रितमुनिशितशरवर्षट्ठकरकमुच्यमानघन-
 चण्डवेगधारानिपातमार्गे=तत्र 'पासिय' इति स्पृष्टानि = हस्ते धृतानि
 वरफलकानि=परशस्त्रप्रहारप्रतिरोधकस्त्राणि 'ढाल' इतिपसिद्धानि यैस्ते,
 तथा रचितः=कृतो रिपुशस्त्रप्रतिघातार्थ 'पहकर' इति प्रकरः = रचनाविशेषेण
 सैन्यसमूहो यैस्ते, तथा सरभसाः=सहर्षाः सवेगा वा खरचापकराः=निष्ठुरधनु-

कંઠનોળા) इनके वक्षस्थल पर तूणीर-तरकस-बांधा जाता है, इनमें उर्ध्वमुख करके बाणग्रीवा के पास भरे रहते हैं। इस प्रकार से पहिले सज्जित होकर कितनेक राजा संग्रामभूमि में युद्ध करने के लिये (अह-वर्षन्ति) उतरते हैं। इस प्रकार से यहां संबंध लगा लेना चाहिये। जिस युद्ध में राजा उतरते हैं वह युद्ध किस प्रकारका होता है? सो कहते हैं-जिस संग्रामभूमिमें (पासियवरफलग) निष्ठुर धनुर्धारीजन अपने ऊपरसे परके शस्त्रप्रहारोंको रोकनेके लिये ढालोंको हाथोंमें लिये होतेहैं, (इयप-कर) शत्रु के शस्त्रों का प्रतिघात करने के लिये वे अपनी २ सेना को एक विशेष प्रकार की रचना में स्थापित किये हुए रहते हैं तथा (सर-भस) परस्पर में युद्ध करने का चाव जहां आपसमें खूब बढ़ा बढ़ा होता है-हर्ष अथवा वेग से जो युक्त होते हैं ऐसे (चावकर) धनुर्धारियों

“उरસિરુહવદ્ધકંઠનોળા” તેમનાં વક્ષસ્થળ પર તૂળીર—ભાથા બાંધેલા હોય છે. તે ભાથામાં બાહેણ ઉર્ધ્વમુખ રહે તેમ, ડોકની પાસે ભરેલાં રહે છે. આ રીતે પહેલાં સંઘર્ષ થઈને કેટલાક સબળો યુદ્ધ કરવાને માટે રણુમેદાનમાં “અહ-વર્ષન્તિ” ઉતરી પડે છે, એ પ્રકારનાં સંબંધ અહીં સમજી લેવાના છે. જે યુદ્ધમાં રાજા ઉતરે છે તે યુદ્ધ કેવું હોય છે? તેના નવાખમાં કહે છે—જે રણુમેદાનમાં “પાસિયવરફલગ” નિર્દય ધનુર્ધારીઓ દુશ્મનોના શસ્ત્ર પ્રહારોને રોકવાને માટે પોતાના હાથમાં ઢાલ રાખે છે, તથા “રઇયપહકર” યથુના શસ્ત્રોનાં મુકાબલો કરવાને માટે તેઓ પોતપોતાની સેનાને એક વિશિષ્ટ પ્રકારની બૃહદ રચનામાં ગોઠવે છે, તથા “સરભસ” અન્યોન્ય લડવાનો શોખ બધાં ખૂબ રહે છે. હર્ષ અથવા વેગથી જે યુક્ત હોય છે એવા “ચાવકર” ધનુર્ધારીઓ દ્વારા બધાં “કરચિ-

धोरिणः तैः कराञ्जिताः=कराकृष्टा ये सुनिशिताः=अतितीक्ष्णाः शराः=बाणास्तेषां
 यो वर्षः=वर्षणं स वृद्धकरकमुञ्चद् घनचण्डवेगधारानिपात इव यत्र, स तथा, यथा
 मेघस्य प्रचण्डवेगयुक्तः स्थूलोपलधारानिपातो भवति तद्वत् शरवर्षणं यत्रेत्यर्थः
 तस्य मार्गद्वारभूतस्तस्मिन् संग्रामे पुनः कीदृशे ? इत्याह—‘अणेगधणुमं-
 डलग्गसंघियउच्छलियसत्तिकणगवामकरगहियखेडगनिम्मलनिकिट्ठखग्गपहरंतकुंत
 तोमरचक्कगयापरमुमुसललंगलमूलल उडभिडिपालसन्वलपट्टिसचम्मेट्टघणमोद्धिमो-
 ग्गारवरकल्लिजंतपत्थरदुहणतोणकुवेणीपीढाकलिए’ तत्र ‘अणेगधणुमंडलग्ग’
 अनेकधनुर्मण्डलाग्राः = अनेकानि धनुषि मण्डलाग्रानि = खड्गविशेषाश्च
 तथा ‘संघियउच्छलियसत्तिकणग’ सन्धितोच्छलितशक्तिकनकाः = सन्धिताः=
 सन्धानीकृताः=सज्जीकृता इत्यर्थः उच्छलिताः=उर्ध्वगताश्च शक्तयः=शस्त्रविशेषाः
 कनकाः=बाणाश्च तथा ‘वामकरगहियखेडगनिम्मलनिकिट्ठखग्ग’ वामकरगृहीत
 खेटकनिर्मलनिकृष्टखड्गाः=तत्र वामकरे गृहीतानि खेटकानि = परप्रहारप्रतिरोधक-
 शस्त्राणि ‘ढाल’ इति प्रसिद्धानि निर्मलाः=उज्ज्वलीकृताः तीक्ष्णीकृताः खड्गाः

द्वारा जहाँ पर (करंचियसुनिसियसरवरिस) अति तीक्ष्ण बाणों की
 वर्षा मेघों के द्वारा (वड्डकरकमुयंतघणचंडवेगधारानिवायमग्गे) प्रच-
 ण्डवेगवाली स्थूल ओलों की वर्षा जैसी की जाती हैं। तथा जो संग्राम
 (अणेगधणुमंडलग्ग) अनेक धनुषों से एवं मंडलाग्रों-तलवार विशेषों
 से (संघियउच्छलियसत्ति) सज्जीकृत उच्छलित शक्तियों से-इस
 नाम के शस्त्र विशेषों से, (कणग) कनकों से-बाणों से (वामकर
 गहिय खेडग) वामकर में गृहीत ढालों से, (निम्मलनिकिट्ठखग्ग)
 तीक्ष्णीकृत खड्गों से, (पहरंत) प्रहार करनेमें व्याप्रियमाण ऐसे (कुंत)

यसुनिसियसरवरिस” अतिशय तीक्ष्ण बाणोंनी वृष्टि वाहणांशे द्वारा “ वड्डकरकमु-
 यंतघणचंडवेगधारानिवायमग्गे” प्रचंड वेगवाणां भोटा करानी वृष्टिनी जेम कराय छे.
 तथा जे संग्राम “अणेगधणुमंडलग्ग” अनेक धनुषोथी अने मंडलाग्रो (तलवारथी-
 विशेषो)थी “संघिय-उच्छलिय सत्ति” सब्ब करेले उच्छलित शक्तिथोथी
 (जे नामनां शस्त्र विशेषोथी) “कणग” कनकोथी बाणोथी, “वामकरगहिय
 खेडग” बाणा लाधम. सजेले ढालोथी, “निम्मल निकिट्ठखग्ग” तीक्ष्ण बनावेले
 अड्डोथी “पहरंत” प्रहार करवाभां वपराता “कुंत” बाढाअे.थी “तोमर”

તથા 'પહરંત' મહિયમાણાઃ=મહારે વ્યાપ્રિયમાણા યે કુન્તાઃ=મલ્લાઃ તોમરાશ્વ= 'મુરજ' ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધાઃ 'ચક્ર' ચક્રાણિ 'ગયા' ગદાઃ=પ્રસિદ્ધાઃ 'પરસુ' પરશ્વઃ =કુઠારાઃ તથા મુસલાઃ=પ્રસિદ્ધાઃ 'હલ' લાઙ્ગલાનિ=હલાનિ શૂલાનિ= લૌહાસ્ત્રવિશેષાઃ 'લુહ' લુહટ્ટાઃ=યષ્ટયઃ 'મિહિપાલ' મિન્દિપાલાઃ=ગોફળ' ઇતિ સ્થાતાઃ 'સન્વલ' ઇતિશસ્ત્રવિશેષાઃ 'પટ્તિસ' પટ્ટિશાઃ=મહત્પ્રભેદાઃ 'ચર્મેષ્ટ' ચર્મેષ્ટાઃ=ચર્મવદ્ધપાષાણમયાસ્ત્રવિશેષાઃ 'ઘળ' ઘનાઃ=અયોઘનાઃ 'ઘળ' ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધાઃ 'મોટ્ટિયા' મૌષ્ટિકાઃ=મુષ્ટિપ્રમાણાસ્ત્રવિશેષાઃ મોગર' મુદ્રરાશ્વ =પ્રતીતાઃ 'વરફલિહ' વરપરિધાઃ=લોહવદ્ધલુહટ્ટાઃ 'જંતપત્થર' યન્ત્ર પ્રસ્તરા= ગોફળાદિ યન્ત્રપાષાણાઃ 'દુઘળ' દુઘળાઃ મુદ્રરવિશેષાઃ, તોળાઃ=તૂળીરાઃ-

કુન્તાં સે-ખાલોં સે, (તોમર) તોમરોં સે-મુરજોં સે (ચક્ર)ચક્રોંસે (ગયા) ગદાઓં સે, (પરસુ) પરશુઓં સે-કુઠારોં સે (મુસલ) મુસલોં સે, (હલ) હલોં સે, (સૂલ) શૂલોં સે, (લુહ) લુહટ્ટોં-(લાઙ્ગિયોં) સે (મિહિપાલ) મિદિપાલોં સે-ગોફળોં સે, (સન્વલ) સન્વલોં સે (સન્વલ) યહ શસ્ત્ર વિશેષ હૈ જો અગ્રભાગ મેં તીક્ષ્ણ એસા લોહે કા હંડા હોતા હૈ, (હિન્દી મેં ખી હસે સન્વલ હી કહતે હૈં) (પટ્તિસ) પટ્ટિશોંસે-ખાલે કે આકાર જૈસે એક પ્રકાર કે શસ્ત્રોં સે, ચર્મેષ્ટોં સે-ચર્મવદ્ધપાષાણમય અસ્ત્રવિશેષોં સે (ઘળ) ઘળ-લોહપિંડ, હસે ખાષા મેં ખી ઘળ કહતે હૈં ઘળોં સે, (મોટ્ટિય) મૌષ્ટિકોં સે-મુષ્ટિપ્રમાણ અસ્ત્રવિશેષોં સે, (મોગર) મુદ્રરોં સે, (વરફલિહ) વરપરિધોં સે-લોહવદ્ધ લાઙ્ગિયોં સે, (જંતપત્થર) યંત્ર પ્રસ્તરોં સે, ગોફળ આદિ યંત્રોં સે, ફેંકે ગયે પત્થરોં સે, (દુઘળ) દુઘળોં સે એક પ્રકાર કે મુદ્રર વિશેષોં સે, (તોળ)

તોમરથી-શુરજોથી, “ચક્ર” ચક્રોથી, “ગયા” ગદાઓથી, “પરસુ” પરશુ-ઓથી, “મુસલ” મુસલોથી, “હલ” હલોથી, “સૂલ” ત્રિશૂળોથી, “લુહ” લાઙ્ગિયોથી, “મિહિપાલ” મિદિપાલો (ગોફળ)થી, “સન્વલ” સમ્પન્નલોથી, (તે એક શસ્ત્ર છે. તે લોહાના હંડા જેવું હોય છે અને તીક્ષ્ણ અણીવાળું હોય છે. તેને શુચરાતીમાં કોશ કહે છે) “પટ્તિસ” પટ્ટિશોથી (પટ્ટિશ ભાલાના આકારનું શસ્ત્ર હોય છે) ચર્મેષ્ટોથી (ચર્મ બદ્ધ પાષાણ મહા અસ્ત્ર વિશે-શોથી) “ઘળ” ઘળથી, “મોટ્ટિય” મૌષ્ટિકોથી (મુષ્ટિ પ્રમાણ અસ્ત્ર વિશે-“મોગર” મગદળોથી, “વરફલિહ” વર પરિધોથી-(લોહબદ્ધ લાઙ્ગિયોથી “જંતપત્થર” યંત્ર પ્રસ્તરોથી (ગોફળ આદિ સાધનોથી ફેંકાયેલા પથ્થરોથી) “દુઘળ” ઘણોથી (એક પ્રકારના મગદળોથી) “તોળ” તૂળીરોથી (ભાધા-

‘ માતા ’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાઃ કુવેણ્યઃ=શસ્ત્રવિશેષાઃ ‘ પીઠા ’ પોઠાનિ=પન્થરૂપાશ્ચ વિશેષાશ્ચ, इत्येतैश्च विशेषैः ‘ કલિણ્ ’ કલિતે=યુક્તે સંગ્રામે અતિવ્રતનીત્યન્વયઃ ॥ સૂ.૦૫ ॥
પુનરપિ સંઘ્રામં વર્ણયતિ—‘ ઇલી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ય—ઇલીપહરણમિલિમિલિતં સ્વિપ્પંતવિજ્જુજ્જલવિરચિય-
સમપ્પહનહતલકુડપહરણે, મહારણસંસ્થમેરી વરતૂપપરપડુપડહા-
હયનિનાયગંભીરણંદિયયવુભિય વિઝલધોસે, હયગયરહજોહતુ-
રિયપસરિયરયુદ્ધયતમંધયારવહુલે, કાયરનરનયણહિયયવાઝલ કરે,
વિલ્લિયઝકડવરમઝડકિરીડકુંડલોડુદામાડોવિણ, પડગવડાગ
ઝચ્છિયધયવેજયંતીચામરચલંતછત્તંધયારગંભીરે, હયહેસિયહત્થિ-
યુલયુલાઇયરહયણયણાઇયપાઇકહરહરાઇયઅપ્પોડિયસીહનાય
છિલિયવિયુદ્ધુકિકટકંઠકયસદ્ધમોમગજિણ સયરાહહસંતરુસંત-
કલકલરવે, આસૂણિય વયણરુદ્ધમીમદંસણાધરોદ્ધગાઢદઢસપ્પ-
હારકરણજ્જયકરે, અમરિસવસતિવ્વરત્તનિદારિતચ્છે, વેરદિદ્ધિ-
કુદ્ધચેદ્ધિયતિવલીકુડિલભિઝડીકયલલાડે વહ પરિણયનરસહસ-
વિક્રમવિયંભિયવલે ॥ સૂ.૦૬ ॥

ટીકા—‘ ઇલીપહરણમિલિમિલિતસ્વિપ્પંતવિજ્જુજ્જલવિરચિયસમપ્પહ-
નહતલે ’ ઇલીપહરણમિલિમિલિન્તસ્વિપ્પમાણવિયુદ્ધુજ્જલવિરચિતસમપ્રમતમતલે
તૂળીરોં સે-માતાઓં સે, (કુવેણી) કુવેણિયોં સે-એક પ્રકાર કે શસ્ત્રોં
સે, (પીઠ) પીઠોં સે-યંત્રરૂપ અશ્ત્રવિશેષોં સે (આકલિણ) યુક્ત રહતે
હૈં । એસે ઝસ અયંકર સંગ્રામ મેં કિનનેક રાજા લોક પરધન કો હરણ
કરને કે લિયે હી ઝતરતે હૈં ॥ સૂ.૦૫ ॥

બોધી) “ કુવેણી ” કુવેણીબોધી (એક પ્રકારનાં શસ્ત્રો) “ પીઠ ” પીઠીબોધી
(—યંત્રરૂપ અશ્ત્ર વિશેષોબોધી) “ આકલિણ ” યુક્ત રહે છે. એવા તે લયંકર
સંગ્રામમાં કેટલાક રાજાઓ પરધનનું હસ્ત કરવાને માટેજ ઝતરે છે. ॥ સૂ.૦૫ ॥

=ત્ર ઇલીભીઃ=દ્વિધાધારૈઃ સ્વદ્ગવિશેષૈઃ પ્રહરણૈઃ=શસ્ત્રશસ્ત્રાનેકવિધૈઃ ‘મિલિમિલિત’
 इति चाकचिक्वयुक्तैःक्षिप्यमाणैः भटैर्निपात्यमानैः प्रह्रियमाणैरित्यर्थः, पुनः
 कीदृशैः स्वद्वादिशस्त्रैः ? विद्युद्वज्ज्वलैः=विद्युद्वદ્વિદ્યોતમાનૈઃવિરચિતં=કૃતં સમપ્રભં=
 સ્વદ્દશપ્રકાશયુક્તં નમસ્તલં યત્ર સ તથા તસ્મિન્ , તથા ‘ફુડપહરણે’ સ્ફુટપ્રહરણે
 स्फुटानि=સ્પષ્ટાનિ પ્રહરણાનિ=શસ્ત્રાણિ યસ્મિન્ સ તથા તસ્મિન્ । ‘મહારણસંઘ-
 भेरिवरतूरपउरपडपडहाहयनिनायगंभीरणंदियपक्खुभियविउलघोसे’ મહાર-
 णशङ्खभेरिवरतूर्यपचुरपटुपटहाहतनिनादगम्भीरनन्दितपक्खुभितविपुत्तघोषे = ત્ર
 મહારણે=મહાગુદ્દે યે શસ્ત્રાઃ=પ્રતીતાઃ ભેર્યઃ=રણભેર્યઃ વરતૂર્યાણિ=પ્રધાનવાદિત્રાણિ
 तानि च प्रचुराणि=પ્રભૂતાનિ પટૂનિ=સ્પષ્ટધ્વનીનિ ચ પટહાશ્વ=‘દોલ’ ઇતિ પ્રસિ-
 द्धास्तेषामાહતાનાં=વાદિતાનાં નિનાદેન=શબ્દેન ગમ્ભીરેણ નન્દિતાઃ=હર્ષિતાઃ વીરાઃ

फिर भी संग्राम का वर्णन करते हैं-‘ इली पहरण ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(ઇલી) દોનોં તરફ જિનપર ધાર નિકલ રહિ હૈ એસે
 दुधारे (पहरण) स्वद्वादि अनेक शस्त्र जो (मिलिमिलित) अत्यन्त
 चमकीले हैं और (क्षिप्यंत) शत्रुओं पर फेंके जाते समय (विज्जु-
 ज्जल) बिजली जैसे चमकते हैं, ऐसे शस्त्रों ने (विरड्यसमपहनह-
 तले) नमस्तल को अपने सामान प्रकाश वाला बना दिया है अर्थात्
 जो लपलपाते हुए अति तीक्ष्ण चमकीले शस्त्रों से आकाशमण्डल चम-
 कीला बन रहा है ऐसे संग्राम में (फुडपहरणे) तथा जिसमें शस्त्र
 दिखलाई दे रहे हैं तथा जो (महारणे) महासंग्राम में बजने
 वाले (संघ) शस्त्रों से, (भेरी) रणभेरियों से (वरतूरपउरे)
 स्पष्टध्वनिसंघ प्रधान २ तूर्य-वादित्रों से, (पडुपडहाहयनिनायगंभीर)
 बजते हुए ढोलों के गंभीर शब्दों से (णंदिय) हर्षित बने हुए जोशीले

કહી પણ સૂત્રકાર સંગ્રામનું વર્ણન કરે છે-“ ઇલી પહરણ ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-“ઇલી”બન્ને તરફ બેને ધાર છે તેવાં બેધારાં ‘પહરણ’અડગ વગેરે અનેક
 શસ્ત્રો જે “મિલિમિલિત” અતિશય ચળકતાં છે, અને “ક્ષિપ્યંત” શત્રુઓ તરફ
 ફેંકવામાં આવે ત્યારે “વિજ્જુજ્જલ” વિઝળી બેવાં ચમકે છે, એવાં શસ્ત્રોએ
 “વિરદ્યસમપહનહતલે” આકાશને પોતાના બેવું પ્રકાશિત બનાવી દીધું
 છે, એટલે કે જે ચકચકિત અતિ તીક્ષ્ણ ચળકતાં શસ્ત્રોથી આકાશ મંડળ ચળ-
 કતું બની રહ્યું છે એવા સંગ્રામમાં “ફુડપહરણે” તથા જેમાં શસ્ત્રો
 નજરે પડે છે તથા જે “મહારણ” મહાસંગ્રામમાં વાગતા “સંઘ”
 શબ્દોથી, “ભેરી” રણભેરીઓથી, “વરતૂરપડર” સ્પષ્ટ ધ્વનિવાળાં મુખ્ય મુખ્ય
 તૂર્ય - વાદિત્રોથી, “પડુપડહાહયનિનાયગંભીરે” વાગતા ઢોલોના ગંભીર

પ્રશુભિતાઃ=શોભમાપનાશ્રયે કાતરા જનાસ્તેષાં વિપુલઃ=વિશાલઃ ઘોષો ધ્વનિર્યસ્મિન્
 સ તથા તસ્મિન્ ‘હયગયરહજોહતુરિયપસરિયરયુદ્ધયતમંધયારવહુલે’ હયગજ-
 રથયોધત્વરિતપસતરજનુદ્ધતતમાઽન્ધકારવહુલે=તત્ર હયાઃ = અથાઃ, ગજાઃ-
 પ્રસિદ્ધાઃ, રથાઃ=સ્પન્દનાઃ, યોધાઃ=સુભટાસ્તેષાં પાદાભિધાતેન ત્વરિતં=શીઘ્રં
 પ્રસૂતં=વિસ્તારપ્રપગતં રજઃ=ધૂલો, તદ્ ઉદ્ધતતમમ્=અવિશયેનોદ્ધૂતમુઢીયમાનં
 તેનાઽન્ધકારવહુલે । તથા “કાચરનરનયણહિયવાઝલકરે” કાતરનયન-
 હૃદયવ્યાકુલકરે, તત્ર = કાતરાઃ=અધીરાઃ યુદ્ધે પલાયનસ્વભાવા યે નરાસ્તેષાં
 નયનહૃદયયોઃ વ્યાકુલકરે=શોભનનકે તથા ‘વિલુલિયઝકઢવરમઝકિરિડ-
 કુંડલોહુદામાઢોવિષ’ વિલુલિતોત્કટવરમુકુટકિરિટકુન્ડલોહુદામાટોપિતે=તત્ર
 વિલુલિતાનિ=હતસ્તતથલિતાનિ ઉત્કટવરાણિ=ઉત્તમપ્રકૃદાનિ યાનિ મુકુટાનિ=
 પ્રસિદ્ધાનિ કિરીટાનિ=ત્રિશિખરશિરોભૂષણાનિ કુંડલાનિ=કર્ણાભરણાનિ ઝહુદા-
 માનિ=નક્ષત્રમાલાકારભૂષણાનિ ચ તૈરાટોપિતઃ=વિસ્તારિતો યઃ સ તથા તસ્મિન્
 વીરોં કે ઇવં (પક્ષ્વભિય) ક્ષુભિત હુષ કાયર જનોં કે (વિઝલયોસે)
 વિપુલ ઘોષોં સે વ્યાસ હો રહા હૈ તથા (હયગયરહજોહતુરિયપસ-
 રિયરયયુદ્ધયતમંધયારવહુલે) (હય) ઘોઢોં કે, (મય) ગજોં કે, (રહ)
 રથોં કે, (જોહ) યોદ્ધાઓં કે, (ઉદ્ધયતમ) પૈરોં કે અત્યન્ત આઘાત સે
 ઝકકર (તુરિયપસરિય) શીઘ્ર ફૈલી ઢુઈ (રય) ધૂલી સે જહાં પર
 (અંધયારવહુલે) અંધકાર હી અંધકાર હો રહા હૈ (કાચરનરનયણહિય-
 વાઝલકરે) કાચરજનોં કે નયન ઔર હૃદયકો જો વ્યાકુલ બનારહા હૈ ।
 (વિલુલિય) હધર ઝધર લટકતે હુષ (ઝકઢવર) ઉત્તમોત્તમ ઈસે
 (મઝક) મુકુટોં સે, (કિરીડ) કિરીટોં સે-ત્રીનશિખર વાલે શિરો
 ભૂષણોં સે (કુંડલ) કુન્ડલોં સે, (ઝહુદામ) નક્ષત્ર માલાકાર ભૂષણોં

નાદર્થી, “ગંદીય” આનંદિત બનેલા જોશીલા વીરોના અને “પક્ષ્વભિય”
 ક્ષોભ પામેલ કાયર બનેલા “વિઝલયોસે” વિપુલ આવાશથી વ્યાપ્ત થઈ ગયું
 છે. તથા “હયગયરહજોહતુરિયપસરિયરયુદ્ધયતમંધયારવહુલે” “હય”
 ઘોડાના, “મય” હાથીઓના, “રહ” રથોના “જોહ” યોદ્ધાઓના “ઉદ્ધય-
 તમ” યગના અત્યંત આઘાતથી ઉડીને “તુરિયપસરિય” ઝડપથી ફેલાયલી “રય”
 ધૂળથી બધાં “અંધયારવહુલે” અતિશય અંધકાર થઈ ગયો છે, “કાચરનરનયણ-
 હિયવાઝલકરે” કાચર લોકોનાં નયન અને હૃદયને જે વ્યાકુળ કરી રહેલ છે,
 ‘વિલુલિય’ અહીં તહીં લટકતા “ઝકઢવર” ઉત્તમોત્તમ “મઝક” મુગટોથી,
 ‘કિરીડ’ કિરીટોથી-ત્રણ શિખરવાળાં શિરોભૂષણોથી, “કુંડલ” કુંડલોથી “ઝહુદામ”
 નક્ષત્ર માલાકાર ભૂષણોથી, “ઝાઢોવિષ” જે ઝાઢવર યુક્ત બનેલ છે. “પગઢ”

‘ પગડપડામઝચ્છિયધયવેજયંતીચામરચલંતછસંધ્યારમંભીરે ’ પ્રકટપતાકોચ્છિત-
 ધ્વજવેજયન્તીચામરચલચ્છત્રાન્ધકારગમ્ભીરે=તત્ત્વ પ્રકટાઃ=દૂરસ્થા અપિ દૃશ્યમાના
 યાઃ પતાકાઃ=વિશાલપતાકાઃ ઉચ્છિતાઃ=અન્યુર્ઘ્નસ્થિતાઃ યે ધ્વજાઃ=લઘુપતાકાઃ
 વૈજયન્ત્યશ્ચ=વિજયપતાકા તથા ચામરાણિ ચલન્તિ છત્રાણિ ચ તૈઃ કૃતેનાન્ધકારેણ
 ગમ્ભીરે=ગહને તથા ‘ હ્યહેસિયહત્વિગુલગુલાઇયરહણવળાઇયપાઇકહરહરાઇય
 આફોડિયસીહનાયછિલિય વિષુદ્ધુકેટ્ટકંટકયસદ્ભોમગઝિજા ’ તત્ત્વ ‘ હ્યહેસિય ’
 હ્યહેષિતં=હયાનામ્=અશ્વાનાં હેપતં=શબ્દિતં ‘ હત્વિગુલગુલાઇય ’ હસ્તિગુલગુલાયિતં
 હસ્તિનાં=ગજાનાં ગુલગુલાયિતં=ગુલગુલશબ્દઃ ‘ રહણવળાઇય ’ રથવળાવનાયિતં=
 ધાવતાં રથાનાં ઘનઘનેતિ શબ્દઃ તથા ‘ પાઇકહરહરાઇય ’ પદાતિ હરહરાયિતં=
 પદાતીનાં સૈનિકાનાં હરહરેતિ શબ્દિતં ‘ આફોડિય ’ આસ્ફોટિતં=શાહુપરિસ્ફોટનં
 ‘ સીહનાય ’ સિંહનાદઃ=સિંહસ્યેવ શબ્દકરણં ‘ છિલિય ’ સળિટિતં=મીત્કારકરણં
 સે (આહોવિ) જો આહંચર યુક્ત ચના હુઆ હૈ । (પગડ) દૂર રહને પર
 ભી દૃશ્યમાન એસી (પડામ) વિશાલ પતાકાઓં સે, (ઉચ્છિય) ઝંચી
 કી હુઈ એસી (ધય) લઘુપતાકાઓં સે, (વેજયંતી) વૈજયન્તો-વિજય-
 સૂચક એસી ધ્વજાઓં સે, તથા (ચામર) ચામરાં સે એવં (ચલંતછત્ત)
 ચંચલછત્રોંસે કિયે ગપે (અંધયાર) અંધકારસે જો (ગંભીરે) ગહન હો રહાહૈ,
 તથા જહાં (હ્યહેસિય) ઘોડોં કી હિનહિનાટકે શબ્દ હો રહે હૈં, (હત્વિગુ-
 લગુલાઇય) હાથિયોં કી ગુરુગુલાહટ હો રહી હૈ, (રહણવળાઇય) રથ
 ઉપર દોડતે હુણ રથોં કા જહાં ઘનઘનાટ શબ્દ હો રહા હૈ, (પાઇકહર-
 હરાઇય) પદાતિયોં કી જહાં હર હરાટ-‘ હરહર ’ હિસ પ્રકાર કો તુમુલ
 ધ્વનિ હો રહી હૈ. (આફોડિય) ચીર અરનો ૨ મુજાઓં કા જહાં
 આસ્ફાલન-કર રહે હૈં-ફટકાર રહે હૈં, (સીહનાય) સિંહ કે જૈસી જહાં

હર હર હોવા છતાં પણ નજરે પડતી એવી “ પડામ ” વિશાળ પતાકાઓંથી,
 “ ઉચ્છિય ” ઝંચી રાખેલી એવી “ ધય ” લઘુપતાકાઓંથી, “ વેજયંતી ”
 વિજય સૂચક ધ્વજાઓંથી, તથા “ ચામર ” ચામરાંથી અને “ ચલંતછત્ત ” ચંચળ છત્રોંથી
 કરાયેલ “ અંધયાર ” અંધકારથી જે “ ગંભીરે ” ગહન થઈ ગયું છે, તથા ત્યાં
 “ હ્યહેસિય ” ઘોડાઓંની હણ હણાટીનાં આવાજ થઈ રહ્યો છે, “ હત્વિગુલગુલાઇય ”
 હાથોંઓંની ગુલગુલાહટ થઈ રહી છે, “ રહણવળાઇય ” આમ તેમ દોડતા
 રથોંનો ધણુધણુટ ત્યાં ચાલી રહ્યો છે. “ પાઇક હરહરાઇય ” પદાતી-પાયદળોંનો
 ત્યાં હર હરાટ “ હર હર ” એ પ્રકારનો ભયંકર ધ્વનિ ચાલી રહ્યો છે,
 “ આફોડિય ” ત્યાં વીંશ પોત પોતાની ભુલભોલું આસ્ફાલન કરી રહ્યા છે-
 ફટકારી રહ્યા છે “ સીહનાય ” સિંહનાં એવી ગર્જના ત્યાં થઈ રહી છે,

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૩ સૂ૦ ૬ સદ્ગ્રામવર્ણનમ્

૨૮૭

‘વિષુદ્ધ’ વિષુદ્ધ=વિરૂપગ્રોપકરણમ્ ‘ઉક્લિટકંઠકયસદ્’ ઉત્કૃષ્ટકણ્ઠકૃતશબ્દઃ= હર્ષાત્ ઉત્કૃષ્ટઃ-અતિશયિતઃ કણ્ઠેન કૃતઃ શબ્દઃ મલમલાટરૂપઃ સ એવ ‘ભીમગ-જિજ્ઞ’ ભીમગર્જિતં-મેઘધ્વનિશ્ચ, હ્યેતેતાનિ હયદેષિતાદીનિ સન્તિ યત્ર સ તથા તસ્મિન્ । પુનઃ કીદશે? તદાહ—‘સયરાહસંતરુસંતકલકલરવે’ સયરાહસન્ રુષ્યન્ કલકલરવે=‘સયરાહ’ ઇતિ યુગપન્ હસતાં રુષ્યતાં=ક્રુધ્યતાં સૈનિકાનાં કલકલરવઃ=કોલાહલો યત્ર સ તથા તત્ર । તથા—‘આસૂણિયવચણરુદ્ધીમદસળા-ધરોદ્દગાદદટ્ટસપ્પહારકરણુજ્જયકરે’ આશૂનિતવદનરોદ્ધીમદસળાધરોદ્દગાદદટ્ટસપ્પ-હારકરણોદ્યતકરે=તત્ર આશૂનિતેન=ઈપત્સ્યૂલીકૃતેન વદનેન=મુસેન યે રોદ્ધાઃ=ક્રોધ-ચળ્હાસ્તે તથા, તથા-ભીમ-ક્રોધાવેશાદ્ ભયઙ્કરં યથાસ્યાત્તથા દશનૈઃ=દત્તૈર-ધરોષ્ટં ગાઢં દટ્ટં યૈસ્તે તથા પરસુભટાસ્તેપાં સત્પહારકરણૈ = શોભનતયા શસ્ત્ર

ગર્જના હો રહી હૈ (હિલિય) ‘સી સી’ હમ પ્રકાર કા જહાં સીત્કાર શબ્દ હો રહા હૈ, (વિષુદ્ધ) ઘોઢાઘોં દ્વારા ચિરૂપગ્રોપ જહાં કિયા જા રહા હૈ, (ઉક્લિટકંઠકયસદ્) હર્ષ સે ફૂલે હુપ જહાં અપને ૨ કંઠોં સે ઉત્કૃષ્ટ મલમલાટ રૂપ શબ્દ કર રહે હૈં (ભીમગજિજ્ઞ) હમ કારણ એસા વહાં જ્ઞાત હોતા હૈ કિ માનોં મેઘ હી ઘહાં ગર્જ રહા હૈ । (સય-રાહસંતરુસંતકલકલરવે) (હસંત) હસતે તથા (રુસંત) ક્રોધ સે રુષ્ટ હુપ સૈનિક જનોં કા (સયરાહ) ઇક સાથ જહાં પર (કલકલરવે) કલકલ શબ્દ હો રહા હૈ, તથા જહાં સૈનિકજન (આસૂણિયવચણ) અપનાર મુંહ ધોડે સે રૂપમેં ફુલાકર (રુદ્ધ) ક્રોધ સે ચળ્હ ચન રહે હૈં તથા- (ભીમ) ક્રોધ કે આવેશ સે ભયઙ્કરૂપ મેં જહાં વે (દસળાધરો-દ્દગાદદટ્ટ) અપને ૨ અધરોષ્ટોં કો દટ્ટતા પૂર્યક હસ રહે હૈં, તથા (સપ્પ-

“હિલિય” ‘સીસી’ એવો જ્યાં ચિત્કાર શબ્દો થઈ રહ્યા છે. તથા “વિષુદ્ધ” ઘોઢાઘોં દ્વારા વિરૂપ ગ્રોપ જ્યાં કરાઈ રહ્યો છે, “ઉક્લિટકંઠકયસદ્” આનંદથી ફુલાઈ ગયેલા સૈનિકો જ્યાં પોત પોતાના કંઠમાંથી ઉત્કૃષ્ટ ગર્જના બેવા શબ્દો કાઢી રહ્યા છે, “ભીમગજિજ્ઞ” તે કારણે ત્યાં મેઘ જ ગર્જના કરી રહ્યો હોય તેવું લાગે છે. “સયરાહસંતરુસંતકલકલરવે” “હસંત” હસતા તથા “રુસંત” કોપાયમાન થયેલ સૈનિકોનો ‘સયરાહ’ એક સાથે જ્યાં “કલકલરવે” કલ કલ શબ્દ-ધ્વનિ થઈ રહ્યો છે, તથા જ્યાં સૈનિકો “આસૂણિયવચણ” પોત પોતાનું મુખ થોડાં પ્રમાણમાં ફુલાવીને ‘રુદ્ધ’ ક્રોધથી ઉચ્ચ બની રહેલ છે. તથા “ભીમ” ક્રોધના આવેશમાં ‘ભયંકર’ રીતે જ્યાં તેઓ “દસળાધરોદ્દગાદદટ્ટ” પોતપોતાના અધરોષ્ઠોને દબાવી કરડી રહેલ

सञ्चालने, उद्यताः=प्रवृत्ताः कराः=हस्ताः सैनिकानां यत्र स तथा तत्र, अति क्रोधशोणीकृताननाः भयङ्करस्वरूपा योधाः सततमव्यग्रा अश्रान्ता अविच्छेदेन शस्त्रप्रहरणसमापृता यस्मिन् संग्रामे सन्तीत्यर्थः । ‘अमरिसवसतिव्वरत्तनिहारि-
वच्छे’ अमर्षवशतीव्ररक्तनिर्दारिताक्षे=अमर्षवशेन=क्रोधवशेन तीव्ररक्ते=अत्यन्त लोहिते, निर्दारिते=स्फारिते चाक्षिणी योधानां यस्मिन्, तत्र । तथा ‘वेरदिट्ठि-
कुद्धचेट्ठियतिवलीकुडिलभिउडिकयललाडे’ वैरदृष्टिकुद्धचेष्टितत्रिवलीकुटिलभ्रुकुटी-
कृतललाटे=तत्र वैरदृष्ट्या=वैरभावनाया ये कुद्धा=कुपिता भटास्तैश्चेष्टिता त्रिवली=
ललाटसङ्कोचजनितत्रिरेखारूपा तथा कुटिला भ्रुकुटी कृता ललाटे=भाले यत्र स
तथा तत्र ‘वहपरिणयनरसहस्सविक्रमवियंभियवले’ वहपरिणतनरसहस्रविक्रम-
विजृम्भितवले=वधे=प्रतिपक्षिहने परिणतानां=तत्पराणां नरसहस्राणाम्=अनेक-
सहस्रसुभटानां पराक्रमेण विजृम्भितं=विश्वोभितं वलं=शत्रुसैन्यं शत्रुसामर्थ्यं वा
यत्र स तथा तस्मिन्, एतादृशे संग्रामे अतिपतन्तीत्यनेनाऽन्वयः ॥ सू० ६ ॥

हारकरणुज्जयकरे) द्विपक्षी सुभटों के ऊपर प्रहार करने के लिये जहाँ
सुभटों के हाथों का संचालन हो रहा है तथा (अमरिसवसतिव्वरत्त-
निहारितच्छे) जहाँ पर (अच्छे) वीरों के दोनों नेत्र (अमरिसवस)
क्रोधके वशसे (निहारित) अपलक-निर्निमेष होकर (तिव्वरत्ता) अत्यन्त
रक्तवर्ण के बन रहे हैं, तथा (वेरदिट्ठि) वैरकी भावनासे (कुद्ध) कुपित हुए
भटों द्वारा (चेट्ठिय) चेष्टित-की गई (तिवली) अपनी २ त्रिवली-
तीन रेखाएँ, तथा (कुडिलभिउडिकय) कुटिल- टेढ़ी भ्रुकुटी ललाट
ऊपर जहाँ की गई है, तथा (वहपरिणयनरसहस्सविक्रमवियंभियवले)
प्रतिपक्षीभूत सुभटों को मारने में तत्पर बने हुए अनेक सहस्र सुभटों
के प्रराक्रम से जहाँ पर शत्रु का सैन्य-अथवा बल-सामर्थ्य विश्वोभित

छे, तथा “ सप्पहारकरणुज्जयकरे ” दुश्मदण्डना नैनिडे। ऊपर प्रहार करनेवाले
भाटे न्यां सुभटोना लाथो खावी रह्हा छे, तथा “अमरिसवसतिव्वरत्तनिहारितच्छे”
न्यां “अच्छे” वीरोनी भन्ने आणो “अमरिसवस” डोधावेशथी “निहारित” अपलक
-पलकास रहित थधने “तिव्वरत्ता” अत्यन्त दाव गनी रहेल छे, तथा “वेरदिट्ठि”
वैरदृष्टिथी “कुद्ध” डोपायमान थयेस सुभटो द्वारा “चेट्ठिय” कराली “तिवली”
पोत पोतानी त्रषु रेखाओ “त्रिवली” (डोपायमान थतां डपायभां पडती
करवलीओ) तथा “कुडिलभिउडिकय” न्यां लभरो-भ्रुकुटी डपाणे यडी गड
छे, तथा “वहपरिणयनरसहस्सविक्रमवियंभियवले” दुश्मनोना मारवाने
आतुर गनेला अनेक डब्बर सुभटोनां पराक्रमथी न्यां दुश्मनना नैन्धने शक्ति

પુનઃ કૌદશે સંગ્રામે ? ઇત્યાદિ ' વર્ગાંતં ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—વર્ગાંતતુરંગરહપહાવિયસમરમહે આઘડિયછેયલાઘવ-
પહારસાહિય સમૂસિયવાહુજુયલે મુક્કદ્દહાસપુવકંતવોલવહુલે,
ફુરફલગાવરણગહિયગયવરપત્થંતદરિયસ્વલમ્હપરોપ્પરપલમ્ગ-
જુદ્ધગાઝિયવિવ્કોસિયવરાસિરોસતુરિયઅભિમુહપહરંતછિણ્ણકરિ-
કરિવિઅંગિયકરે, અવદ્ધનિસુદ્ધભિન્નફાલિયપગલિયરુહિરકયમૂ-
મિકદ્દમાચિલિચિલ્લપહે કુચ્છિદાલિયગલિયનિબ્ભેલિયંતફુરફુરં-
તવિગલમમ્મહયધિગયગાઢદિપ્પહારમુચ્છિયસ્લંતવિબ્ભલવિ-
લાવકલુણે, હયજોહમંતતુરગઉદ્દામમત્તકુંજરપરિસંકિય જળ-
ણિવ્વુક્કછિણ્ણજ્ઞપમ્ગરહચરનદ્ધસિરકરિકલેવરાકિપ્પગપડિયપ-
હરણવિકિન્નાભરણમૂમિમાગે નચંતકવંધપઉરે, મયંકરવાયસપ-
રિલિત્તિગિદ્ધમંડલમંતછાયંધયારંગમીરે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—“ વર્ગાંતતુરંગરહપહાવિયસમરમહે ’ વલાત્તુરંગરથપ્રધાવિતસમરમહે
=તત્ર વલાન્તઃ=દ્રેષમાણઃ યે તુસ્માઃ=અન્ધાઃ સ્થાઃ તૈઃ પ્રધાવિતાઃ = વેગેન નીતાઃ

ક્રિયા જા રહ્યા છે એસે સંગ્રામ મેં કિત્તનેક રાજા ઉતરતે હૈં એસા સંબંધ
યહાં લગા લેના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ફિર કૈસે સંગ્રામ મેં ઉતરતે હૈં સો કહતેહૈં—‘ વર્ગાંત તુરંગ ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(વર્ગાંતતુરંગરહપહાવિયસમરમહે) ઢળહળાટ કરતે હુપ
ઘોડોં સે પવં રથોં સે જહાં પર જલ્દી ૨ મટ પહુંચાયે જા રહે હૈં, તથા

હીન કરવામાં આવી રહ્યું છે, એવા સંગ્રામમાં કેટલાક રાત્રીઓ ઉતરે છે, એવો
સંબંધ સમજી લેવાનો છે ॥સૂ૦ ૬॥

તેઓ તેવા સંગ્રામમાં ઉતરે છે તેનું વધુ વર્ણન કરે છે— “ વર્ગાંત
તુરંગ ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“ વર્ગાંતતુરંગરહપહાવિયસમરમહે ” હાણુહાણુટી કરતા ઘોડા-
ઓથી અને સ્થાની મદદથી જ્યાં જલ્દીથી સૈનિકોને મોકલાર્થ રહ્યા છે, તથા

સમરે મટા યત્ર સ તથા તત્ર “ આઢવિચલેયલાઘવપદ્ધારસાહિષ ” આપતિતલેક
 લાઘવપદ્ધારસાધિતે=તત્ર આપતિતા:=યોદુમુચ્ચતા યે લેકા:=નિપુણાઃ મટાઃ, તેષાં
 તત્કર્ત્વકા इत्यर्थः, યે લાઘવપદ્ધારાઃ=ચાતુર્યપૂર્ણપદ્ધારાસ્તૈઃ સાધિતો=નિર્મિતઃ યઃ
 સ તથા તસ્મિન્ । તથા ‘ સમૂસિયવાહુજુયલે ’ સમુચ્છિતવાહુયુગલે=સમુચ્છિતાનિ
 =હર્ષાધિક્યાદુર્ધ્વીકૃતાનિ વાહુયુગલાનિ મટૈર્યત્ર સ તથા તત્ર, તથા ‘ મુકટ્ટદ્વાસપુકં-
 ત્થોલવહુલે ’ મુક્તાદ્વાસપૂત્કુર્વદ્બોલવહુલે = મુક્તાદ્વાસઃ=કૃતમદ્વાદાસધ્વનયઃ,
 પૂત્કુર્વન્તઃ=નામનિર્દેશપૂર્વકં પરમાદ્વ્યન્તો યે સુમટાસ્તેષાં બોલાઃ=કોલાહલઃ, સ
 વહુલો યસ્મિન્ સ તથા તસ્મિન્ । ‘ ફુરફલગાવરણગદિયગયવરપથંતદરિયમહ-
 સ્વલપરોપ્પરપલગગુદ્ગગવિચવિકોસિયવરાસિરોસત્તરિયઅભિમુહપદ્ધરંતલિણ્ણકરિક-
 રવિઝંમિયકરે ’ સ્ફુરફલકાવરણગદિયગયવરપથંતદરિયમહસ્વલ-પરસ્પરપલગ
 ગુદ્ગગવિચવિકોસિતવરાસિ-રોપ્તવરિતાભિમુસપદ્ધર-લિણ્ણ-કરિકર-વ્યઙ્ગિત-કરે
 તત્ર ‘ ફુરફલગાવરણગદિય ’ સ્ફુરફલકાવરણાઃ=સ્ફુરાઃ=અત્તપ્રતિઘાતનિવારકચ-
 મ્મમયપદ્ધવિશેષાઃ, ફલકાનિ=‘ ઢાલ ’ ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધાનિ આવરણાનિ ચ=
 કવચાનિ, તાનિ મૃદીતાનિ=મૃતાનિ યૈસ્તે તથા સ્ફુરકાદિ શસ્ત્રધારિણઃ, તથા

(આઢવિચલેયલાઘવપદ્ધારસાહિષ) જો યુદ્ધ કરને કે લિયે ઉચત હુપ
 એસે નિપુણ મટોં કે ચાતુર્ય પૂર્ણ પ્રહારોં સે નિર્મિત કિયા ગયા હૈ, (સમૂ-
 સિયવાહુજુયલે) તથા જિસમેં હર્ષિત બને હુપ મટ હર્ષ કી અધિકતા
 સે અપને ૨ વાહુયુગલોં કો ઝપર ઉઠા રહે હૈ (મુકટ્ટદ્વાસપુકંત્થોલવહુલે)
 તથા જિસમેં સુમટજતોં કી મદાદાસ્યધ્વનિ દ્વારા એવં દસરોં કો નામ
 નિર્દેશપૂર્વક બુલાને કે શબ્દોં દ્વારા વહુત કોલાહલ મચા રહતા હૈ
 તથા જિસમેં યોદ્ધાગણ (ફુરફલગાવરણગદિય) અસ્ત્રપ્રતિઘાતકો નિવારણ
 કરનેવાલે ચર્મમય પદ્ધવિશેષોંકો, ફલકોંકો ઢાલોંકો લિયે રહતે હૈ, તથા
 કવચ આદિ આવરણોંસે સજ્જિત રહાકરતે હૈ, તથા (ગયવરપથંત) જિસમેં

“ આઢવિચલેયલાઘવપદ્ધારસાહિષ ” જે યુદ્ધ કરવાને તૈયાર થયેલા એવા
 નિપુણ સુભટોના આતુર્યપૂર્ણ પ્રહારોથી યુક્ત છે “ સમૂસિયવાહુજુયલે ” તથા
 જેમાં આનંદિત બનેલા સુભટો આનંદની અધિકતાથી પોતા પોતાની બુદ્ધિઓ
 ઉચી કરી રહેલ છે. “ મુકટ્ટદ્વાસપુકંત્થોલવહુલે ” તથા જેમાં સુભટોના
 મુક્ત હાસ્યનો ધ્વનિ તથા બીજાને નામ દીધે બોલાવવાના શબ્દો દ્વારા ભારે
 કોલાહલ મચી રહ્યો છે, તથા જેમાં યોદ્ધાઓનો સમૂહ “ ફુરફલગાવરણ-
 ગદિય ” શસ્ત્રોના ધારે રોકવાને માટે ચર્મમય પદ્ધ વિશેષોને, ફલકોને-ઢાલોને
 ધારણ કરે છે. તથા બળતર આદિ આવરણોથી સજ્જ રહે છે. તથા “ ગયવ.

‘ગયવરપત્યંત’ ગજવરપાર્થયમાનાઃ = ગજવરાન્=શત્રુકુઝરાન્ હન્તુમારોહું વા પાર્થયમાનાઃ=અભિલપમાણા યે તે તથા ‘દરિયસ્વલમ્બ’ દસસ્વલમ્બાઃ=દસાઃ સ્વલગર્વિતાઃ, સ્વભાઃ=દુષ્ટાઃ-ભટ્ટાઃ=યોધાસ્તે, તથા ‘પરોપ્પરપલગ્મ’ પરસ્પર મલગ્માઃ=પરસ્પરં શત્રુમભિહન્તું પ્રવૃત્તાઃ ‘જુદ્ધગવિચય’ યુદ્ધગર્વિતાશ્ચ=યુદ્ધકૌશલાઽ-હઙ્કારપૂર્ણાઃ, ‘વિકોસિયવરાસિ’ વિકોશિતવરાસપઃ=વિકોશિતાઃ=હોશાન્નિકા-સિતાઃ અસપઃ=સ્વદ્વાઃ યૈસ્તે તથા, ‘રોસ’ રોષેગ=ક્રોધેન ‘તુરિય’ ત્વરિતં=શીઘ્રમ્, ‘અભિમુદ્ધ’ અભિમુલ્લં ‘પદરંત’ મહરન્તસ્તે છિન્નકરિકરાઃ=છિન્નાઃ કરિકરાઃ=ઘસિતશુષ્કાઃ યૈસ્તે તથા, વિયંગિયકરે’ વ્યક્તિતાઃ=વિકર્તિતાઃ કરાઃ યેવાં તે તથા, એતે વિચન્તે યસ્મિન્ સ તથા તસ્મિન્-પરસ્પરાભિદનમેદનહેદનમહરણ તત્પરૈર્યોથૈર્છિન્નભિન્નૈઃ-‘ હયગજરથપદાતીનાં પરિભ્રષ્ટશુષ્કાદૈસ્તવાદાદિમિ-વ્યાસં સ્થલં યૈવેનં ભૂતે સંગ્રામે હત્યર્થઃ। અવઙ્ગનિમુદ્ધમિન્નપ્રકાલિયપગલિયરુહિરકય-

અક યોધા દુસરે યોધા કે હાથીકો મારનેકે લિયે અથવા ઉસ પર સવાર હોનેકે લિયે ઉત્સુક રહતા હૈ, તથા જિસમેં (દરિયસ્વલમ્બ) દુષ્ટ યોધા ગણ અપને બલ સે અધિક ગર્વિત બને રહતે હૈ, (પરોપ્પરપલગ્મ) અક દુસરોં કો મારને કે લિયે જહાં વીર પ્રવત્નશીલ રહતે હૈ, અથવા પ્રવૃત્ત હોતે હૈ, (જુદ્ધગવિચય) યુદ્ધ કરને કા કૌશલ યોદ્ધાઓં મેં વિશેષરૂપ સે જગકર ઉન્હેં જહાં ગર્વિત બના દિયા હૈ, તથા (વિકોસિયવરાસિ) જહાં પર યોદ્ધા અપની ૨ શ્રેષ્ઠ તલવારોં કો મ્યાન સે બાહિર કિયે હુવ હીરહતે હૈ, ઓર જહાં (રોસતુરિયઅભિમુદ્ધપદરંતછિન્નકરિકર) ક્રોધ સે મર-કર અક યોધા દુસરે યોધાકે ડુપર પ્રહાર કર ઉસકે હાથી કે શુષ્કાદણ્ડ કો ભગ્ન કર દેતા હૈ, તથા (વિયંગિયકરે) પરસ્પરમેં જહાં યોદ્ધાઓદ્ધા-

રપત્યંત” જેમાં એક યોદ્ધો બીજા યોદ્ધાના હાથીને મારી નાખવાને માટે, અથવા તેના પર સવાર થવાને માટે આતુર રહે છે, તથા જેમાં “દરિયસ્વ-લમ્બ” દુષ્ટ યોદ્ધાઓ પોતાના બળને લીધે વધારે ગર્વિષ્ટ બનેલા રહે છે, “પરોપ્પરપલગ્મ” ન્યાં એક બીજાને મારવાને માટે વીર પુરુષો પ્રવત્નશીલ રહે છે, અથવા પ્રવૃત્ત હોય છે, “જુદ્ધગવિચય” ન્યાં યોદ્ધાઓતું યુદ્ધ કૌશલ્ય વધારે પ્રમાણમાં બળવત થયું છે, અને તે કારણે તેઓ વધારે ગર્વિષ્ટ બન્યા છે, તથા “વિકોસિયવરાસિ” ન્યાં યોદ્ધાઓ પોતા પોતાથી શ્રેષ્ઠ તલવારોને મ્યાનમાંથી બહાર કાઢીને લડવાને તૈયાર હોય છે, અને ન્યાં “રોસતુરિય અભિમુદ્ધપદરંતછિન્નકરિકર” ક્રોધાવમાન થઈને એક યોદ્ધો બીજા યોદ્ધાના ઉપર પ્રહાર કરીને તેના હાથીની સૂંઢને કાપી નાખે છે, તથા “વિયંગિયકરે” ન્યાં

ભૂમિકદમચિચિલ્લપદે ' અપવિદ્નિસુદ્ધમિત્તફાલિતપ્રગલિતરુધિરકૃતભૂમિકદમચિ-
ચિલ્લપદે તત્ર અપવિદ્ના=ચાણાદિભિઃ, નિસુદ્ધા=નિપતિતાઃ ગલહસ્તાદિભિઃ, મિત્તઃ
ત્રિશૂલાદિભિઃ ફલિતાઃ=સ્ફાટિતાઃ=વિદારિતાશ્ચ કુટારાદિભિર્થે, તેભ્યઃ પ્રગલિતેન
=સરિતેન રુધિરેણ કૃતઃ=જાતો યો ભૂમી=પૃથિવ્યાં કદમસ્તેન ચિલિચિલ્લાઃ=આદ્રાઃ
પન્થાનઃ = માર્ગાઃ યત્ર સ તથા તત્ર, 'કુચ્છિદાલિયગલિયનિમ્મેલિયંતપુરપુરં-
તવિગલમમ્મહયવિગયગાહદિણ્ણપ્પહારમુચ્છિપરલંતવિમ્બલવિલાવકલ્લપે ' કુચ્છિ-
દારિતગલિતનિમ્મેલિતાન્ત્રપુરપુરાયમાણવિગલમર્મદત્તવિકૃતગાહદત્તપહારમુચ્છિતલ-
ઠ્ઠવિહલવિલાપરુરુપે=દારિતાત્=વિદારિતાત્ કુચ્છેઃ ઉદરાત્ ગલિતે રુધિરં
નિમ્મેલિતાનિ = ઉદરાદ્વદ્ધિર્નિગલિતાનિ ચ અન્નાણિ = ' આંતરિષ્ઠાં ' ઇતિ
માષા પ્રસિદ્ધાનિ યેષાં તે તથા, અતપ્પ-પુરપુરાયમાણાઃ = કમ્પમાનાઃ
વિકલાઃ=નિરુદ્ધેન્દ્રિયવૃત્તિત્વેન વ્યાકુલાઃ, મર્મદતાઃ=ઋઠાદિમર્મસ્થાને દતાસ્તથા

ઓંકે હાથોં કો કાટ દિયા કરતે હૈં તથા (અવહદ્ધ) ચાણાં સે વેધે ગયે,
(નિસુદ્ધ) ગલે મેં હાથ ડાલકર હટાત્ જમીન પર પટક દિયે ગયે, (મિત્ત)
ત્રિશૂલ આદિ કે દ્વારા ભેદે ગયે એવં (ફાલિય) કુટાર આદિ દ્વારા ફાડ
દિયે ગયે-વિદારિત કિયે ગયે એસે યોદ્ધાઓં કે શરીર સે (પગલિય)
જારતે હુપ (રુહિર) રક્તસે (કયમ્મિકદમચિચિલ્લપદે) જહાં કી ભૂમિમેં
કીચડ મચ રહી હૈં ઓર હસી સે જહાંકે માર્ગ ચિકને હો રહે હૈં તથા
(કુચ્છિદાલિય) વિદારિત હુપ ઉદરસે જિનકે (ગલિય) ચૂન બહરહા હૈં ઓર
(નિમ્મેલિયત) આંતેં ખી જિનકી પેટસે બાહિર નિકલ આઈ હૈં, હસી કારણ
જો (પુરપુરં) કંપ રહે હૈં ઓર (વિગલ) વિકલ હો રહે હૈં એસે
યોધા કિ જિન પર (મમ્મહયવિગયગાહદિણ્ણપ્પહાર) ક્રોધ કે આવેશ

યોદ્ધાઓ એક બીજાના હાથ છેડી નાખે છે, તથા “અવહદ્ધ” બાણોથી વીંધાયેલા
“નિસુદ્ધ” ગળામાં હાથ ભરાવીને બળપૂર્વક જમીન પર પટકાયેલ, “મિત્ત” ત્રિશૂળ
આદિ દ્વારા ભેદાયેલા, અને “ફાલિય” ફરસી આદિ દ્વારા ચીરી નાખેલ, યોદ્ધાઓનાં
શરીરમાં “પગલિય” વહેતા “રુહિર” લોહીથી “કયમ્મિકદમચિચિલ્લપદે” બધાં
જમીનમાં ફીચક થઈ ગયો છે, અને તે કારણે બધાં માર્ગ અપસણો થઈ ગયો છે, તથા
“કુચ્છિદાલિય” જેમનાં વિદારિત થયેલાં ઉદરમાંથી “ગલિય” લોહી વહી રહ્યું છે
અને “નિમ્મેલિયંતે” જેમનાં આંતરડાં થયું પેટમાંથી બહાર નીકળી પડ્યાં છે.
એ જ કારણે જે “પુરપુરં” કંપી રહ્યા છે, અને “વિગલ” વ્યાકુળ થઈ
ગયાં છે, જેમના પર “મમ્મહયવિગયગાહદિણ્ણપ્પહાર” ક્રોધના આવેશમાં

વિકૃતઃ=ક્રોધાવેશેન વિચિત્રરૂપઃ ગાઢઃ=મર્મભેદી દત્તઃ શત્રુભિઃ પ્રહારો યેષાં તે તથા, અત એવ મૂર્ચ્છિતાઃ=મૂર્છાં પ્રાપ્તાઃ, લુઠન્તઃ = ભૂમૌ વિલુઠન્તઃ, વિદ્વલાઃ= વ્યાકુલાશ્ચ તેષાં વિલાપાઃ= ‘હા હતાવયમિ’-ત્યાદ્યાક્રન્દશબ્દાઃ, તૈઃ કરુણો= દયાજનકો યઃ સ તથા તત્ર, પુનઃ કીદૃશે ? इत्याह-‘હયજોહ-મમંત તુરગ-ઉદામમત્તકુંજરપરિસંક્રિયજળ-ણિવ્વુક્કલિણ્ણજ્ઞય-ભગ્ગ-રહવર - નટ્ટસિરકરિકલે-વરાકિણ્ણ-પહિયપહરણ-વિકિન્નામરણભૂમિભાગે’ હતયોધમ્મતુરગ્ગોદામમત્તકુંજર-પરિશક્કિતજનનિર્મૂલછિન્નધ્વજમગ્ગરથવરનષ્ટશિરઃ કરિકલેવરાકીર્ણપતિતપ્રહરણવિ-કીર્ણામરણભૂમિભાગે’ તત્ર-‘હયજોહમમંતતુરગ’-હતયોધમ્મતુરગ-હતાઃ=મૃતા યોધાઃ=અશ્વારોઢા સવાર इति भाषा प्रसिद्धाઃ યેષાં, તથામૃતા બ્રામ્હ્યન્તઃ=ઇતસ્તતો ધાવન્તઃ તુરગાઃ=અથા યસ્મિન્ સ તથા, ‘ઉદામમત્તકુંજરપરિસંક્રિયજળ’-ઉદામ-મત્તકુંજરપરિશક્કિતજનઃ-ઉદામમત્તકુંજરેભ્યો=નિરક્લુપ્તમદોન્મત્તહસ્તિભ્યઃ પરિશ-ક્કિતાઃ=વયશઙ્કાકુલાઃ જના યસ્મિન્ સ તથા, ‘ણિવ્વુક્કલિણ્ણજ્ઞયમગ્ગરહવર’-નિર્મૂલછિન્ન ધ્વજમગ્ગરથવરાઃ-તત્ર નિર્મૂલાઃ=મૂલરહિતાઃ=ધ્વજદણ્ડેભ્યો નિસ્સૃતાઃ

સે દિવિચિત્રરૂપ ગાઢ મર્મ ભેદી પ્રહાર શત્રુઓ દ્વારા દિયા ગયા હૈં ઓર ઇસીસે જો (મુર્ચ્છિય) મૂર્છાં કો પ્રાપ્ત હોકર (લુઠન્ત) ભૂમિ પર રહ્યર સે ઊધર લોટ રહે હૈં એવં (વિદ્વલ) વ્યાકુલ હોકર (વિલાપ) “ હા મૈં મારા ગયા ” इत्यादिरूप से विलाप कर रहे हैं ऐसे योद्धाओं के विलापों से जो (करुणे) दयाजनक बना हुआ है तथा जो (हयजोह-भमंततुरग) अपने सवारों के मर जाने से इच्छानुसार इधर उधर घूमते हुए घोड़ों से युक्त हो रहा है, तथा जहां (उदाममत्तकूंजरपरि-संक्रियजणे) उत्कट मदवाले हाथियों से, वध की शंका के भय से मनु-ष्य व्याकुल हो रहे हैं (णिव्वुक्कलिण्णज्झयमगगरहवरे) जहां निर्मूल दंडा रहित और छिन्न-फटी हुई ध्वजाएँ और भग्न हुए श्रेष्ठ रथ पड़े हैं

આવેલા શત્રુઓ દ્વારા વિચિત્ર રીતે ભયંકર મર્મભેદી પ્રહાર કરાયો છે અને તે કારણે જેઓ “ મુર્ચ્છિય ” મૂર્છાવશ થઈને “ લુઠન્ત ” જમીન ઉપર આમ તેમ આજોડે છે અને “ વિદ્વલ ” દયાજનક અનેલ છે, “ વિલાપ ” અરે ! મને મારી નાખ્યો ” इत्यादि प्रकारे विलाप करे છે, યોદ્ધાઓના વિલાપથી જે “ કરુણે ” દયાજનક અનેલ છે, તથા જે “ હયજોહમમંતતુરગ ” યોદ્ધાના સવારો મરી જવાથી ઇચ્છાનુસાર આમ તેમ ધૂમતા ઘોડાઓથી જે યુક્ત છે, તથા જ્યાં “ ઉદામમ-ત્તકુંજરપરિસંક્રિયજળ ” મદોન્મત્ત હાથીઓદ્વારા ઉચ્ચાર્ય જવાના ભયથી માણસો આકુળ અનેલા છે, “ ણિવ્વુક્કલિણ્ણજ્ઞયમગ્ગરહવર ” જ્યાં નિર્મૂળ દંડા રહિત

૨૫૪

પ્રશ્નચ્યાકરણસૂત્રે

છિન્ના ધ્વજાઃ, મગ્નાસ્થવરાશ્ચ યસ્મિન્ સ તથા, 'નદ્વસિરકરિકલેવરાકિણ્ણ' -નદ્વ શિરઃ
કરિકલેવરાકોર્ણઃ-નદ્વાનિ શિરાંસિ યેષામેતાદૃશા યે કરિણઃ=ઈસ્તિનઃ, તેષાં યાનિ
કલેવરાણિ=શરીરાણિ તૈઃ આકોર્ણઃ=વ્યાપ્તઃ, 'પહિયપહરણ' -પતિતપ્રહરણઃ-
પતિતાનિ પ્રહરણાનિ=શસ્ત્રાશ્ત્રાણિ યસ્મિન્ સ તથા, 'વિક્કિણ્ણામરણ' -વિકીર્ણા-
મરણઃ-વિકીર્ણાનિ=ઈતસ્તતો વિક્ષિપ્તાનિ આમરણાનિ=મૃતયોધાનામ્ અલક્કરણાનિ
યસ્મિન્ સ તથા, 'પ્તાદ્દશો ભૂમિભાગો યસ્મિન્ સ તથા તસ્મિન્, ' નચ્ચંતકચંધ-
પરે' નૃત્યત્તકચંધપચુરે=નૃત્યન્તઃ કચન્ધાઃ=મસ્તકાદિતકલેવરાણિ, પ્રચુરા યત્ર
સ તથા તત્ર, ' મયંકરવાયસપરિલિત્તગિદ્ધમંડલમમેત્તઞાયંધવારગંભીરે' મયંકરવા-
યસપરિલીયમાનશૃંગમંડલશ્રમન્તઞાયાન્યકારગમ્ભીરે=તત્ર શ્રમતામ્-આકાશે પર્ય-
ટતાં મયંકરવાયસાનાં-મયંકરકાકાનાં તથા પરલીયમાનાનાં=ગતિવિશેષૈરુદ્ધીયમા-
નાનાં શૃંગાનાં ચ યન્મંડલં=સમૂહઃ, તસ્ય ઞાયયા યોડન્ધકારસ્તેન ગમ્ભીરે=ગમ્ભીરભૂતે
યનાન્ધકારયુક્તે સંગ્રામે અતિપવન્તિ રાજાનઃ પરધનલુબ્ધા इति પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ॥૭॥

(નદ્વસિરકરિકલેવરાકિણ્ણે) તથા જો હિન્નમસ્તકવાલે દ્વાયિયોં કે કલે-
વરોં સે વ્યાપ્ત હૈ, (પહિયપહરણ) જહાં પહરણ-અશ્ત્રશસ્ત્રાદિક ઇધર
ઉધર પડે હુએ હૈ, તથા (વિક્કિણ્ણામરણ) મારેગચે દુસરે કિતનેક
યોધાઓં કે પડે હુએ આમરણોં સે વ્યાપ્ત એસે (ભૂમિભાગે) ભૂમિભાગ-
વાલે સંગ્રામ મેં (નચ્ચંતકચંધપરે) તથા જહાં પર યોદ્ધાઓં કે કચંધ
(ધડ) પ્રચુરરૂપ મેં નૃત્ય કરરહે હૈ, (મયંકરવાયસપરિલિત્તગિદ્ધમંડલ-
શ્રમન્તઞાયંધવારગંભીરે) તથા જો આકાશ મેં ઉડતે હુએ મયંકર કૌવો
કી, એવં પરિલીયમાન-ગતિવિશેષોં સે ઉદ્ધીયમાન-ગિદ્ધોં કી ઞાયાજન્ય
અંધકાર સે ગંભીર બન રહા હૈ એસે સંગ્રામ મેં પરધનલુબ્ધ બને હુએ
રાજા લોક ઉતરતે હૈ ॥ સૂ.૭ ॥

અને કુદેલી ધજાઓ તથા લાંગેલા શ્રેષ્ઠ રથો પડ્યા છે. “ નદ્વસિરકરિકલેવરા-
કિણ્ણ ” તથા જે ઉદાયેલાં મસ્તકવાળા લાથીઓનાં કલેવરોથી ઇવાયેલ છે,
“ પહિયપહરણ ” તથા અશ્ત્ર-શસ્ત્રાદિ અહીં તહીં પડેલાં છે, તથા “ વિક્કિણ્ણા-
મરણ ” મરી ગયેલ. કેટલાક યોદ્ધાઓનાં આભૂષણોથી જે ઇવાયેલ છે, “ ભૂમિ-
ભાગે ” એવા ભૂમિભાગ વાળા સંગ્રામમાં “ નચ્ચંતકચંધપરે ” તથા ત્યાં
યોદ્ધાઓનાં ધડ અતિશય નૃત્ય કરી રહેલ છે, “ મયંકરવાયસપરિલિત્તગિદ્ધ
મંડલશ્રમન્તઞાયંધવારગંભીરે ” તથા જે આકાશમાં ઉડતા લયંકર કાગડાઓની
તથા પરિલીયમાન-વિશિષ્ટ ગતિથી ઉડતાં ગીધાની ઇયાને કારણે ઉત્પન્ન થયેલ
અંધકારથી ગંભીર બેખાવ છે, એવા સંગ્રામમાં પરધન પ્રાપ્ત કરવાની લાલસા
વાળા રાજાઓ ઉતરે છે ॥ સૂ.૭ ॥

પૂર્વોદિતમેવ સંક્ષેપેણ પ્રતિપાદયન્નાદ—‘વસુ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—વસુવસુહવિકંપિયઞ્ચ—પચ્ચક્ષ્વપિઝવણં પરમરુદ્ધ-
વીહણગં દુષ્પવેસતરંગ—અભિવઙ્ઠિતિ—સંગામસંકટં, પરધળં
મહંતા । અવરે પાઙ્કચોરસંઘા સેનાવડ્ચોરવંદ—પાગઢિયાય
અડવિદેસદુર્ગવાસી કાલ-હરિય-રત્ત-પીય સુકિલ્લ-અળેગસયર્ચિધ-
પટ્ટવંધા પરવિસણ અભિહળંતિ લુદ્ધા ધળસ્ત કજે ॥ સૂ૦ ૮॥

ટીકા—‘વસુવસુહવિકંપિયઞ્ચ’ વસુવસુહાવિકમ્પિતા इत्येतत् वसवः=देवा
वसुधा=पृथ्वी च विकम्पिताः—त्रासिता यैस्ते तथा तथैवापरे राजानः ‘परधળ’
परधન ‘મહંતા’ કાઢ્હનતઃ પદ્મવ્યલુદ્ધા સન્તઃ ‘પચ્ચક્ષ્વપિઝવણં’ પ્રત્યક્ષપિ-
તૃવનં=સાક્ષાન્ ઇશાનમિવ ‘પરમરુદ્ધવીહણગં’ પરમરુદ્ધમયાનકં=અત્યંતપ્રચંડભ-
યજનકં ‘દુષ્પવેસતરંગ’ દુષ્પવેશતરંગ=અત્યંતદુર્ગમં વીરાણામપિ, કા કથા કાત-
રાણામિત્યેવંત્રિધમપિ ‘સંગામસંકટં’ સંગ્રામસંકટં=ગહનયુદ્ધં ‘અભિવઙ્ઠિતિ’
અભિપતન્તિ=પ્રવિશન્તિ । તથા ‘અવરે’ અપરે ‘પાઙ્કચોરસંઘા’ પદ્ધાતિકચૌર

ફિર इसी बात को संक्षेप से कहते हैं—‘वसुवसुह’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(વસુવસુહવિકંપિયઞ્ચ) જિન્હોને દેવોંકો एवं पृथ्वीमंडलको
भी कंपित जैसा कर दिया है ऐसे और भी अनेक राजा (परधणमहंता) दूसरों
के धनमें लुब्ध होकर (पचक्खपिउवणं) साक्षात् पितृवन जैसे—प्रत्यक्ष
में इमशान सरीखे प्रतीत होने वाले तथा (परमरुद्वीहणगं) जो अत्यंत
प्रचंड एवं भयजनक हो रहा हो, तथा (दुष्पवैसतरंगं) वीरों के लिये भी
जो अत्यंत दुर्गम बना हुआ हो ऐसे (संगामसंकटं) गहनयुद्ध में
(अभिवङ्गति) प्रवेश कर जाते हैं । तथा (अवरे) दूसरे भी (पाङ्क-

હવે એ જ વાતને સંક્ષિપ્તમાં કહે છે— “વસુવસુહ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“વસુવસુહવિકંપિયઞ્ચ” એમણે દેવોંને તથા પૃથ્વીમંડળને પણ
ખાણે કંપાયમાન કરી દીધાં છે એવાં બીજાં પણ અનેક રાજાઓ “પરધળં
મહંતા” બીજાના ધનમાં લુબ્ધ થઈને “પચ્ચક્ષ્વપિઝવણં” પ્રત્યક્ષ પિતૃવન એવા-
પ્રત્યક્ષ ઇશાન એવા લાગતા, તથા “પરમરુદ્ધવીહણ” એ અત્યંત પ્રચંડ
અને ભયંકર લાશતું હોય, તથા “દુષ્પવેસતરંગ” વીરોને માટે પણ એ
અતિશય દુર્ગમ હોય એવાં “સંગામસંકટં” ગહન યુદ્ધમાં “અભિવઙ્ઠિતિ”
પ્રવેશ કરે છે. તથા “અવરે” બીજાં પણ “પાઙ્કચોરસંઘા” પદ્ધાતિરૂપ

સજ્ઞા:=પદાતિરૂપચૌરસમૂહાઃ, ‘સેનાવૃદ્ધચૌરવંદપાગઙ્ઘિયા ય’ સેનાપતિચૌરવૃન્દ પ્રકર્ષકા=સેનાપતિચૌરસમૂહયુક્તાથ ‘અઢવીદેસદુર્ગવાસી’ અઢવીદેશદુર્ગવાસિનઃ=અઢવીદેશે=અરણ્યદેશે યાનિ દુર્ગાણિ=જલસ્થલરૂપાણિ દુર્ગમસ્થાનાનિ તેષુ નિવાસિનઃ કાલહરિયરત્તપીયસુક્લિલ્લઅણેગસયચિધપટ્ટવંધા’ કાલહરિતરત્તપીતશુક્લાનેકશતચિન્હપટ્ટવંધાઃ = કૃષ્ણહરિતરત્તપીતશુક્લવર્ણા અનેકશતસંસ્થકાઃ યે ચિન્હપટ્ટાસ્તેષાં વંધ=મસ્તકાદૌ વંધનં યેષાં તે તથા ‘ઘણસ્સ’ ધનસ્થ=પર દ્રવ્યસ્ય ‘કઙ્ગે’ કાર્યે=અર્થાય ‘લુદ્ધા’ લુદ્ધાઃ=લોલુપાઃ સન્તઃ ‘પરવિસણ’ પરવિપયાન=અન્યપૂર્ણદેશાન ‘અભિહ્ણંતિ’ અભિહ્ણન્તિ=વિનાશયન્તિ ॥ સૂ.૦૮॥

પુનરદત્તાદાનં કથં કુર્વન્તિ ? તદાહ—‘ચયણાગર’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—ચયણાગરસાગરં ચ ડમ્મીસહસ્સમાલાઽઽકુલવિગયપો-
ચકલકલંતકલિતં, પાયાલકલસસહસ્સવાયવસવેગસલિલઉદ્ધ-
મ્મમાણદગરયરયંધયારં, વરફેણપડરધવલપુલંપુલસમુદ્ધિયાદ્દહાસં,
મારુચવિક્કુલ્લમાણપાણિયજલમાલુપ્પલહુલિયં અવિચસમંત-

ચોરસંઘા) પદાતિરૂપ ચૌરસમૂહ કિ જિસમેં (સેનાવૃદ્ધ ચૌરવંદપાગ-
ઙ્ઘિયા ય) સેનાપતિ એવં ચૌરોં કા જાત્થા એકત્રિત રહ્તા હૈ, તથા (અઢ-
વીદેસદુર્ગવાસી) જો જંગલ કે બીચમેં જિતને બી પ્રાયઃ દુર્ગમસ્થાન
હોતે હૈ—ચાહે વે જલરૂપ હોં યા થલરૂપ હો—અનેમેં રહ્તે હૈં તથા (કાલ-
હરિયરત્તપીયસુક્લિલ્લઅણેગસયચિધપટ્ટવંધા) કૃષ્ણ, હરિત, રક્ત, પીત,
શુક્લ, વર્ણવાલે સૈકડોં ચિહ્નપટ્ટોં કો જો અપને મસ્તકજગર બાંધા કરતે
હૈં એસે વે પદાતિરૂપ ચૌર સમુદાય (ઘણસ્સ કઙ્ગે) પર કે દ્રવ્ય મેં
(લુદ્ધા) લોલુપ હોકર (પરવિસણ) અન્ય રાજાઓં કે દેશોં કો (અભિ-
હ્ણંતિ) વિનાશ કરતે હૈં ॥ સૂ.૦૮॥

ચોર સમૂહ કે બેમાં “ સેનાવૃદ્ધચૌરવંદપાગઙ્ઘિયા ય ” સેનાપતિ અને ચોરાનો
સમૂહ એકત્ર રહે છે, તથા “ અઢવીદેસદુર્ગવાસી ” જે જંગલની વચ્ચે જેટલાં
દુર્ગમ સ્થાનો હોય છે—પછી તે જગડપ હોય કે સ્થળડપ—તેમાં રહે છે, તથા
“ કાલહરિયરત્તપીયસુક્લિલ્લઅણેગસયચિધપટ્ટવંધા ” ડાળાં, લીલાં, લાલ,
પીળાં, સફેદ આદિ રંગની સેંકડો પટ્ટીઓને જે પોતાના મસ્તક ઉપર બાંધે
છે, એવો પદાતિ—પગપાળો—ચોર સમુદાય “ ઘણસ્સ કઙ્ગે ” પરધનમાં “ લુદ્ધા ”
લોલુપ થઈને “ પરવિસણ ” અન્ય રાજાઓના દેશોનો “ અભિહ્ણંતિ ”
વિનાશ કરે છે ॥ સૂ.૦૮॥

સુવર્ણિની ટીકા અં ૩ સુ ૧ અદ્ભુતાદાનવિષયસાગરનિરૂપણમ્

૨૧૭

ઓખુભિયલુલિયંઓખુમ્ભમાણપક્વલિયચીલિયીવિઉલજલચક્ક-
વાલમહાનદ્વેગતુરિયઆપૂરમાણગંભીરવિઉલઆવત્તચંચલભમમા-
ણગુપ્પમાણુચ્છલંતપચ્ચોણિયંતપાણિય — પહાવિયલ્લરફરુસપયંદ
વાઉલિયસલિલફુદંતવીચિકલ્લોલં સંકુલં, મહામગરમચ્છકચ્છમો-
હારગાહિતિમિસુંસુમારસાવયસમાહય સમુદ્ધાયમાણયપૂઘોરપડરં॥૧॥

ટીકા—અપિ ચ પરદ્રવ્યહરાનરાઃ ‘ રચનાગરસાગરં ચ ’ રત્નાકરસાગરં ચ= રત્નાનામાકરઃ—નિધિભૂતો યઃ સાગરઃ સમુદ્રસ્તં પ્રવિશ્ય તન્મધ્યે ગત્વા પોતાન્ વ્રન્તિ, ક્ષયપ્રેણ સમ્વન્ધઃ, કીદશં સાગરમ્ ? इत्याह—‘ उम्मीसहस्रमालाकुलविगय-पोयकलकलंतकलितं ’ उर्मिसहस्रमालाकुलविगतपोतकलकलकलितम् = उर्मिणां= तरङ्गाणां सहस्रमालाभिः=सहस्रसंख्यकपंक्तिभिराकुलत्वात् विगताः— भग्नाः ये पोताः=नौकाः ‘ जहाज—‘स्टीमर ’ इति प्रसिद्धाः तेषां=तत्र स्थितानां व्यापारि

‘ અદ્ભુતાદાન કિસ પ્રકાર ક્રિયા જાતા હૈ ? ’ અચ સૂત્રકાર હસ યાત કો સમજાતે હૈ—‘ રચનાગર ’ હત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—પર કે દ્રવ્ય કો હરણ કરને મેં તત્પર બને હુએ મનુષ્ય ચોર (રચનાગરસાગરં ચ) રત્નો કે નિધિભૂત સમુદ્ર મેં છુસ કર કે-
ઉસકે મધ્ય મેં જાકર કે જહાજોં કો નષ્ટ કર દેતે હૈ, હસ પ્રકાર કા સંબંધ ઘઘાં લગા લેના ચાહિયે । અપ સૂત્રકાર સમુદ્ર કા વર્ણન કરતે હૈ—
(ઉમ્મીસહસ્રમાલાકુલવિગયપોયકલકલંતકલિતં) હજારોં લહરોં કે સમૂહ સે આકુલ હોને કે કારણ જહાં પર વ્યાપારી આદિ જનોં કે જહાજ નષ્ટ હો જાતે હૈ, ઓર હસી કારણ ડન જહાજોં પર બેઠે હુએ વ્યક્તિયોં

“ અદ્ભુતાદાન—ચોરી કથી રીતે કરાય છે ” એ વાતને સૂત્રકાર હવે સમ-
બધે છે—“ રચનાગર ” ઇત્યાદિ

પરધનને હરી લેવાને આતુર બનેલો મનુષ્ય—ચોર “ રચનાગરસાગરં ચ ”
રત્નોના નિધિ એવા સમુદ્રની વચ્ચે બંધને બહાળોને ઢૂંધાવી દે છે, એવા
સંબંધ બહી બેડવાનો છે—હવે સૂત્રકાર સમુદ્રનું વર્ણન કરે છે—

“ ઉમ્મીસહસ્રમાલાકુલવિગયપોયકલકલંતકલિતં ” હજારોં મોબતઓનાં
સમૂહના આક્રમણને કારણે બધાં વ્યાપારી આદિ લોકોનાં બહાળો નાશ પામે
છે, અને તે કારણે તે બહાળોમાં બેઠેલા લોકોના કકળાટથી બે યુક્ત બનેલ છે,

પ્ર ૩૯

પ્રમુતીનાં કલકલેન=કોલાહલેન કલિતં=યુક્તમ્, 'પાયાલકલસસહસ્સવાયવસવે-
ગસલિલુદ્ગમ્માણદગરયરંધયારં' પાતાલકલસસહસ્સવાયવસવેગસલિલોદ્ગમ્મા-
નોદકરજોરયાન્ધકારં = તત્ર 'પાયાલકલસસહસ્સ' પાતાલકલશાનાં યાનિ
સહસ્રાણિ તૈઃ 'વાયવસવેગ' વાતવશાત્=વાયુવશાદ્ વેગયુક્તં યત્ 'સલિલુદ્ગમા-
ણદગરયરંધયારં' તત્ર સલિલં=સમુદ્રજલં તસ્માદ્દમ્પમાનમ્=ઉચ્છલદ્ યદ્દકરજઃ=
જલવિન્દુસ્તસ્ય રયો વેગસ્તેનાન્ધકારો યત્ર સ તથા તમ્, 'વરફેણપર-ધવલપુલં
પુલસમુદ્વિયાદ્દહાસં' વરફેણપર-ધવલપુલંપુલસમુદ્વિયાદ્દહાસં = વરફેણઃ =વરઃ=
અતિસ્વચ્છઃ ફેનઃ 'સમુદ્ર જ્ઞામ' ઇતિ પ્રસિદ્ધઃ સ પચુરો ધવલઃ =ધેતવર્ણઃ
'પુલંપુલ' ઇતિ નિરન્તરં સમુલ્પિતઃ=ઉદ્ગતઃ સ પ્ચ અદ્દહાસો યત્ર સ તથા તં ફેન
દ્દહાસયોઃ શુક્લત્વેન સામ્યાદ્ સ્પર્કાયદ્ધારેમ્ નિલ્પિતમ્ । 'મારુયવિક્સુમ્ભમાણ-
પાણિયં' મારુતવિક્ષોભ્યમાણપાનીયં મારુતેન=વાયુના વિક્ષોભ્યમાણમ્=આલોહ્યમાનં
પાનીયં યત્ર સ તથા તં 'જલમાલુપ્પલહુલિયં' જલમાલોત્પલહુલિયં=જલમાલાનાં
=નીરતરંગાણામુત્પલઃ=સમૂહઃ 'હુલિયં' શીઘ્રં=પુનઃ પુનસ્તરંગાન્તરમુત્પદ્યમાનં યત્ર સ
તથા તં 'અવિય' અપિ ચ 'સમંતઓચ્ચુભિય - હુલિય - સોક્ચુભમાણ-

કે કલ કલ શબ્દ સે જો યુક્ત હો રહા હૈ, તથા (પાયાલકલસસહસ્સ)
સૈકડો પાતાલ કલશોં કે (વાયુવસવેગ) વાયુ કે સંયોગ સે વેગયુક્ત
બને હુણ (સલિલ ઉદ્ગમ્માણદગરયરંધયારં) જલ કી ઉચ્છલતી હુઈ
બુન્દોં કે સમુદાય સે જો અંધકાર યુક્ત જૈમા બના છુઆ હૈ, (વરફેણ-
પર-ધવલ-પુલંપુલ-સમુદ્વિયાદ્દહાસં) જો અપને સ્વચ્છ પ્રચુર ધવલ વર્ણ-
વાલે ફેન સે માનોં નિરન્તર હૈસ હી રહા હૈ, તથા (મારુયવિક્સુમ્ભમા-
ણપાણિયં) વાયુ સે જિસકા જલ આલોહ્યમાન હો રહા હૈ, તથા (જલ-
માલુપ્પલહુલિયં) જિસમેં પાની કા સમૂહ જલ્દી સે દૂસરી તરંગ ઉત્પન્ન
કર રહા હૈ, (અવિય) તથા જો (સમંતઓચ્ચુભિય) પવન કે આવાન

તથા “ પાયાલકલસસહસ્સ ” સે કડો પાતાળ કલશોનાં “ વાયુવસવેગ ” વાયુના
સંયોગથી વેગયુક્ત અનેક “ સલિલુદ્ગમ્માણદગરયરંધયારં ” જળનાં ઉડતાં
ખિન્દુઓના સમુદાયથી જે અંધકાર યુક્ત અનેક છે, “ વરફેણ-પર-ધવલ પુલં-
પુલ-સમુદ્વિયાદ્દહાસં ” જે પાતાળ સ્વચ્છ અને અત્યંત સફેદ રંગનાં દીણ વડે
બાણે નિરંતર હસી રહ્યો છે, તથા “ મારુયવિક્સુમ્ભમાણપાણિયં ” વાયુથી
જેનું પાણી કંપી રહ્યું છે- ગતિમાન બન્યું છે. તથા “ જલમાલુપ્પલહુલિયં ”
જેમાં પાણીનો સમૂહ જલ્દીથી એક તરંગમાંથી બીજું તરંગ-(મોજા) ઉત્પન્ન
કરી રહેલ છે, “ અવિય ” તથા જે “ સમંતઓચ્ચુભિય ” પવનના આધાતથી

સુદર્શિનો ટીકા અ૦૩ સુ૦ ૧. અવત્તાદાનવિષયસાગરનિરૂપણમ્

૨૧૯

પક્ષ્વલિય - ચલિય-વિપુલજલચક્કવાલ-મહાનદીવેગ-તુરિય આપૂરમાણ-ગમીર-વિપુલ-આવત્ત-ચંચલ-ભ્રમમાણ-ગુપ્તમાણુ-ચ્છલંત-પન્ચોણિયંત -- પાણિય-પધા-વિય-ત્વર-ફરુસ-પયંડ-વાઉલિય-સલિલ-ફુટુંત-વીચિ-કહોલ-સંકુલં' સમન્તતઃ ક્ષુભિતલુલિતચોક્ષુભ્યમાણપ્રસ્વલિતચલિતવિપુલજલચક્કવાલમહાનદીવેગ-ત્વરિતાપૂર્યમાણગમીરવિપુલાનર્ત્તચચ્છલભ્રમદ્રોપ્યમાનોચ્છલત્વસ્પન્નિવૃત્તપાનીયપ્રધા-વિત્ત્વરપરુષપ્રવણ્ડવ્યાકુલિતસલિલસ્ફુટદ્વીચિકહોલસંકુલમ્, તત્ર 'સમં-તઓસુભિય' સમન્તતઃ ક્ષુભિતં=પવનાSSયાતેન સર્વતો વ્યાકુલિતં 'લુલિય' લુલિતં ચ તટપ્રદેશપાતે તથા 'લોસુભમાણ' ચોક્ષુભ્યમાણમ્=અતિશયેન પુનઃ પુનર્વા મહામત્સ્યાદિભિર્વ્યાકુલીક્રિયમાણં 'પક્ષ્વલિયં' પ્રસ્વલિતં = પર્વ-તાદીનાં મહાશિલાદિષ્વાયાતેન સ્વલિતં પશ્ચાત્ 'ચલિયં' ચલિતં=સ્વસ્થાનાદ્ ગમનં પ્રવૃત્તં 'વિઝલ' વિપુલં=વિસ્તીર્ણં 'જલચક્કવાલ' જલચક્કવાલં=જલસમૂહઃ યત્ર તાઃ — ક્ષુભિતલુલિતચોક્ષુભ્યમાણપ્રસ્વલિતચલિતવિપુલજલચક્કવાલાસ્તથા વિધાશ્ચ યા 'મહાનદીવેગ' મહાનદ્યાઃ=ગંગાચમુનાધાસ્તાસાં વેગૈઃ 'તુરિય' ત્વરિતં =શીઘ્રમ્ 'આપૂરમાણ' આપૂર્યમાણો યઃ સાગરઃ સ તથા । ગમીરાઃ=અગાધાઃ વિપુલાઃ=વિશાલાઃ યે 'આવત્ત' આવર્ત્તાઃ=ચક્રાકારજલભ્રમાઃ તથા ચચ્છલં યથાસ્યાત્તથા 'ભ્રમમાણા' ભ્રમન્તિ 'ગુપ્તમાણા' ગોપ્યમાનાનિ=વ્યાકુલી ભવન્તિ

સે ચારોં તરફ ક્ષુબ્ધ હુઆ (લુલિય) તટ પ્રદેશ કો પ્રાપ્ત હુઆ-તટતક પહુંચા હુઆ (લોક્ષુભમાણ) મહામત્સ્યાદિ જલચર જન્તુઓ સે વ્યા-કુલ ક્રિયા ગયા (પક્ષ્વલિય) પર્વતાદિ કી મહાશિલાઓં આદિ કે આઘાત સે સ્વલિત હુઆ ફિર (ચલિય) ચલિત-સ્વસ્થાન સે ચલિત હુઆ (વિઝલા) વિસ્તીર્ણ (જલચક્કવાલ) જલસમૂહ જહાં હૈ એસી (મહાનદીવેગો) ગંગા યમુના આદિ મહાનદી કે વેગોં સે (તુરિય) ત્વ-રિત-શીઘ્ર (આપૂરમાણ) જો ભરા જા રહા હૈ । તથા જો (ગમીર) અગાધ (વિઝલ) વિશાલ (આવત્ત) આવર્તો - (ચક્રાકાર જલભ્રમણોં) સે તથા (ચંચલ) ચપલ (ભ્રમમાણ) ધૂમતે હુઅ (ગુપ્તમાણ) વ્યાકુલ હુઅ

ચોમેર કુપ્ધ થઇને “લુલિય” તટપ્રદેશ સુધી પહોંચીને “લોક્ષુભમાણ” મહામત્સ્યાદિ જળચર જીવો દ્વારા વ્યાકુળ કરાયેલ “પક્ષ્વલિય” પર્વતાદિની મહાશિલાઓ આદિના આઘાતથી સ્પન્નિત થઇને પછી “ચલિય” ચલિત-સ્વસ્થાનથી ચલિત થઇને “વિઝલ” વિસ્તીર્ણ “જલચક્કવાલ” જળસમૂહ બ્યાં છે એવી ‘મહાનદીવેગો’ ગંગા યમુના આદિ મહાનદીઓના વેગથી ‘તુરિય’ ઝડપથી ‘આપૂરમાણ’ જે ભરાઈ રહેલ છે. તથા જે ‘ગમીર’ અગાધ ‘વિઝલ’ વિશાળ “આવત્ત” વખતોથી તથા “ચંચલ” ચપળ “ભ્રમમાણ” ધૂમતા

‘ ઉચ્છલંત ’ ઉચ્છલન્તિ આકાશે ઉત્પતન્તિ પુનઃ ‘ પચ્ચોણિયંત ’ પ્રત્યવનિવૃત્તાનિ= અધોગચ્છન્તિ ચ યાનિ ‘ પાણિય ’ પાનીયાનિ પ્રાણિનો વા યત્ર સ તથા ‘ પધાવિય ’ પ્રધાવિતાઃ=શીઘ્રં ગતાઃ ‘ સ્વરફરુસ ’ સ્વરપરુપાઃ=વેગાતિશયાદ્ અતિકર્કશઃ ‘ પયંડ ’ પ્રચણ્ડાઃ=દારુણાઃ ‘ વાડલિયસલિલ ’ વ્યાકુલિત સલિલાઃ=વ્યાકુલી-કૃતાનિ ઉન્મથિતાનિ સલિલાનિ=જલાનિ યૈસ્તે તથા ‘ ફુદ્દંત ’ સ્ફુટન્તઃ=પરસ્પર-સક્કર્ષે પ્રાપ્ય વિચ્છેદં ગચ્છન્તશ્ચ યે ‘ વીચિક્કલ્લોલસંકુલં ’ વીચયઃ=તરંગાઃ કલ્લોલાઃ=મહાતરંગાસ્તૈઃ સક્કુઓ યઃ સ તથેતિ પૂર્વેષાં કર્મધારયસ્તં તથાવિધં ‘મહાસા-

(ઉચ્છલંત) આકાશ મેં ઉછલતે હુણ (પચ્ચોણિયંત) ફિર નીચે ગિરતે હુણ (પાણિય) પાની અથવા પ્રાણી જિન મેં હૈ એસી, તથા (પધાવિય) શીઘ્રતા સે ઊઠી હુઈ (સ્વરફરુસ) અતિવેગ સે અત્યન્ત કઠોર (પયંડ) દારુણ-ભયંકર અતએવ (વાડલિયસલિલ) જલ કો મથિત જૈસા કર દિયા એસી, તથા (ફુદ્દંત) પરસ્પર કે સંઘર્ષસે વિચ્છિન્ન-જુદી જુદી હુઈ એસી (વીચિક્કલ્લોલ) છોટી બઢી તરંગોં સે (સંકુલ) વ્યાસ એસે સમુદ્ર કો, અર્થાત્-જો ગંગા યમુના આદિ નદિયોં કે વેગોં સે કિ જિનકા વિપુલ જલ ચક્રવાલ-સમૂહ પવન કે આઘાત સે સર્વતઃ વ્યાકુલિત હોતા રહતા હૈ, ઔર તટપ્રદેશ તક આતા રહતા હૈ, તથા મહામત્સ્ય આદિ જલચર જાનવર જિસે અત્યંત ચંચલ ઘનાતે રહતે હૈં, એવં જો પર્વત આદિકોં કી મહાશિલાઓં પર આઘાતયુક્ત હોકર અપને સ્થાન સે આગે કો બઢતા રહતા હૈ, તથા જો ગંભીર એવં વિપુલ આવર્તોં સે સદા વ્યાસ બના રહતા હૈ, તથા જિસમેં ચંચલ હોકર પાની અથવા પ્રાણી વાર ૨ હઘર સે ઊધર

“ ગુપ્તમાણ ” વ્યાકુળ “ ઉચ્છલંત ” આકાશમાં ઉછળતાં “ પચ્ચોણિયંત ” અને ફરી પાછા નીચે પડતાં “ પાણિય ” પાણી અથવા જેમાં પ્રાણી છે, એવાં તથા “ પધાવિય ” અડપથી ઉત્પન્ન થતાં, “ સ્વરફરુસ ” અતિવેગને કારણે અતિ-શય કઠોર અને “ પયંડ ” દારુણ હોવાને કારણે “ વાડલિયસલિલ ” પાણીનું મન્યન કરાતું હોય એવા, તથા “ ફુદ્દંત ” એક બીજા સાથે અથડાવાથી વિચ્છિન્ન થતાં “ વીચિક્કલ્લોલ ” નાનાં મોટાં મોંઢાં એવાં “ સંકુલ ” વ્યાસ એવા સમુદ્રને, એટલે કે જે ગંગા યમુના આદિ નદીઓના વેગથી કે જેમનું વિપુલ જળ ચક્રવાતના આઘાતથી સર્વતઃ વ્યાકુલિત થતું રહે છે, અને તટપ્રદેશ સુધી આવતું રહે છે તથા મહામત્સ્ય આદિ જળચર પશુઓ જેને અતિશય ઘના-વતાં રહે છે, અને જે પર્વત આદિની જે મહાશિલાઓ સાથે અથડાઈને પોતાના સ્થાનથી આગળ વધતું રહે છે, બઢી બસાતું રહે છે, તથા જે ગંભીર અને વિશાળ વમળોથી હમણાં વ્યાસ રહે છે, તથા જેમાં પાણી અને પ્રાણી અથવા

સુદર્શિની ટીકા અ० ૩ સૂ० ૧ અવત્તાવાનવિષયસાગરનિરૂપણમ્

૩૦૧

ગર-મચ્છ-કચ્છ-મોહારગાહ-તિમિ-સુંસુમાર-સાવય-સમાહય સમુદાયમાણય-પૂર-ધોરપડર' મહામકરમત્સ્યકચ્છપોહારગ્રાહતિમિશિશુમારશ્વાપદસમાહતસમુદ્વા-વત્પૂરધોરપચુર' મહાન્તો મકરાઃ, તથા મત્સ્યાઃ કચ્છપાશ્વ 'ઉહાર' इति जलचर-विशेषाः ग्राह्यस्तितमयः शिशुमाराः श्वापदकाश्च सर्वे जलचरविशेषाः ते च ते समाहताः=परस्परं सङ्घर्षं प्राप्ताः समुद्वावतः=अन्यान् स्वस्मान्निर्वलान् जन्तून् हन्तुं शक्नोते ये पूराः=समुदायाः ते च ते घोराः=भयङ्कराः प्रचुराः यस्मिन् स तथा तमेवविधं महासागरं धनार्थं गत्वा घ्नन्ति पोतानिति च वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः॥९॥

પુનઃ કીદૃશં સાગરમિત્યાહ— 'કાયર' इत्यादि ।

મૂલમ્—કાયરજળહિયયકંપણં ધોરમારસંતં મહાભયં ભયંકરં પડિભયં ઉત્તાસુણમં અણોરપારં આગાસં ચેવ નિરવલંબં ઉપ્પા-

પૂમતે રહતે હૈં જિસસે વહ વ્યાકુલ જૈસા હોતા રહતા હૈ, આકાશ મેં ઉછલતા રહતા હૈ, ઓર પુનઃ ડૂબરે સે નીચે આ જાતા હૈ । તથા જો શીઘ્ર ઉદ્ભૂત વેગાતિશય સે અતિકર્કશ, પ્રચંડ, વ્યાકુલિત-મથિત કિયા હૈ પાની જિન્હોં ને એવં પરસ્પર સંઘર્ષ કો પ્રાપ્ત હોકર વિચ્છેદ કો પ્રાપ્ત હુઈં એસી લહરોં સે સંકુલિત બના રહતા હૈ, (મહામગરમચ્છકચ્છમોહારગાહતિમિસુંસુમારસાવયસમાહયસમુદ્વાયમાણપૂરધોરપડરં) તથા ઘડે ૨ મકર, મત્સ્ય, કચ્છપ, ઉહાર, ગ્રાહ, તિમિ, શિશુમાર, શ્વાપદ, આદિ જલચર જન્તુવિશેષ જિસમેં પરસ્પર સંઘર્ષ કો પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈં ઓર અપને સે નિર્ધલોં કો મારને કે લિયે સદા જિસમેં દોડતે રહતે હૈં એસે મહાસાગર મેં ધન કી લાલસા સે જાકર ચોર લોગ જહાજોં કો નષ્ટ કર ડાલતે હૈં ॥ સૂ० ૯ ॥

ધધને વારંવાર આમ તેમ કર્યા કરે છે. જેથી તે બાણે વ્યાકુળ રહે છે, આકાશમાં ઉછળતું રહે છે અને ફરી પાછું નીચે આવીને પડે છે. તથા જે શીઘ્ર ઉત્પન્ન થયેલ અતિશય વેગને લીધે અતિ કર્કશ, પ્રચંડ, વ્યાકુલિત, પાણીનું મથન કરનાર, અને એક બીજાં સાથે અથડાઈને વિચ્છેદ પામેલ એવાં જેથી વ્યાપ્ત રહે છે. “મહામગરમચ્છકચ્છમોહારગાહતિમિસુંસુમારસાવયસમાહયસમુદ્વાયમાણપૂરધોરપડરં” તથા મોટા મગરો, મત્સ્ય, કાચળા, ઉહાર, ગ્રાહ, તિમિ, શિશુમાર, શ્વાપદ, આદિ જળચર પ્રાણીઓ જેમાં પરસ્પર અથડામણમાં આવ્યા કરે છે, અને પોતાના કરતાં નિર્ધાનને મારવાને માટે સદા દોડતાં હોય છે, એવા મહાસાગરમાં ધધને ચોરલોકો ધનની લાલચથી જહાજોનો નાશ કરે છે. ॥ સૂ० ૯ ॥

इय पवणधणियगोल्लियउवरुवारितरंगदरियअइवेगच्चखुपह-
 मोच्छरंतं कत्थइगंभीरविउलगजियगुंजियनिग्घायगरुय-
 निवडियसुदीह नीहारिदूरसुच्चंतगंभीरधुगधुगंति सइंपडिपह-
 रुंभंतजक्खरक्खसकुहंडपिसायरुसियतज्जायउवसग्गसहस्ससं-
 कुलं बहुप्पाइयभूयं विरइयबलिहोमधूवउवयारदिणरुहिर-
 ऽच्चणाकरणपजयजोगपययचरियं परियंतजुगंतकालक्कपोबमं
 दुरंतमहानईवइमहाभीमदरिसणिज्जं दुरणुचरं विसमप्पवेसं
 दुक्खुत्तारं दुरासयंलवणसलिल पुण्णं असियसिय समुच्छियगेहिं
 हत्थतरगेहिं वाहगेहिं अइवइत्ता समुदमज्जे हणांति गंतूण जणस्स
 पोरा परदठ्वहरा नरा निरणुकंपा गिरिवेक्खा ॥सू० १०॥

टीका—‘कायरजणहिययकंपण’ कातरजनहृदयकम्पनं=कातरजनानां = भीरुपुरु-
 षाणां हृदयस्य कम्पनं=कम्पकारकं घोरं=भयङ्करं यथास्यात्तथा आरसन्तं=शब्दाद्य-
 मानं=शब्दं कुर्वन्तं कोलाहलसङ्कुलमित्यर्थः । ‘महब्भयं’ प्रतिभयं महाभयं=अत्य-
 न्तभयजनकम्, अत एव भयङ्करं ‘पडिभयं’ प्रतिभयं=प्रतिमाधिनं भयोत्पादकम्

फिर यह समुद्र कैसा है सो कहते हैं—‘ कायरजण ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—जो समुद्र (कायरजणहिययकंपण) कायरजनों के हृदय
 को कैपा देता है (घोर) भयंकर होकर जो (आरसंत) शब्दायमान
 होता है (महब्भयं) देखते ही जिसे लोगों को भय का संचार होने
 लग जाता है (पडिभयं) हर एक प्राणी का रोम २ जिसकी आकृति
 के समक्ष भय के मारे खड़ा हो जाता है, और इस लिये जो (भयंकर)

તે સમુદ્ર કેવો હોય છે તેનું વધુ વર્ણન કરે છે—“કાયરજણ” ઇત્યાદિ
 જે સમુદ્ર “કાયરજણહિયયકંપણ” “ઘોર” કાયર લોકોના હૃદયને
 કંપાવી દે છે, “ઘોર” ભયંકર રીતે જે “આરસંત” ઘુઘપાટ કરે છે, “મહ-
 ભય” જેને જોતાં જ લોકોના હિલમાં ભય ઉત્પન્ન થાય છે, “પડિભય”
 જેનો દેખાવ જોતાં જ ભયથી દરેક પ્રાણીઓના રુપાટા ખડા થઈ જાય છે,

સુવર્ણિની ટોકા અં ૩ સૂ ૧૦ પુનરપિસાગરસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૦૩

‘ઉત્તાસણમ્’ ઉત્તાસનકં=ચિત્તક્ષોભકારકમ્ ‘અણોરપારં’ અનર્વાકપારમ્=અલ-
લ્બપારપર્યન્તં ‘આગાસં’ ચેવ નિરવલંબં ‘આકાશમિવ નિરવલ્લમ્બમ્’ આધાર-
રહિતં તત્ર પતદ્ધિર્ન કિશ્ચિદાલમ્બનમુપલમ્બ્યતે’ इति भावः, ઉપાદય પવણધણિય-
ણોલ્લિય ઉચ્ચરુવરિતરંગદરિયઅદ્વેગં’ તથા ઔત્પાતિકપવનધનોદિતો
પર્યુપરિતરજ્જ્વલ્લાતિવેગમ્=ઔત્પાતિકેન = ઉત્પાતજનિતેન પવનેન=વાયુના=
‘ધણિય’ इति अत्यन्तं नोदिताः=પ્રેરિતાઃ ઉપર્યુપરિ=ઉર્ધ્વોર્ધ્વં યે તરજ્જાસ્તે ચ
તે જ્વલાઃ=ગર્વિતા इव अतिवेगाः=મહાવેગાઃ યત્ર સ તથા તં ઉત્પાતજનિતપવનેન
અતિવેગતરજ્જ્વલ્લાતિવેગમ્=‘ચક્ષુપદમોચ્છરંતં’ ચક્ષુષ્યપદવત્પાનંતં ચક્ષુષ્યં=
દષ્ટિપથમ્ અવસ્થાનન્તમ્=આચ્છાદયન્તં દ્રષ્ટુમપ્યશક્યં કિં પુનસ્તદ્દિપ્તિર્થઃ, તથા
‘કત્યદ્’ કુચચિત્ કચચિત્પ્રદેશે ગમ્ભીરં=અલબ્ધં મધ્યં પુનઃ ‘વિઝલ-
ગઙ્ગિજયગુંજિયનિગ્યાયગરુચનિવહિયસુદીહનીહારિદ્રસુચ્ચંતંગંભીરધુગમ્ગંતિસદ્’
વિપુલગર્જિતગુઙ્ગિતનિર્વાતયુરુકનિપતિતસુદીર્ઘનિર્હાદિદૂરશ્રૂયમાણગમ્ભીરદુર્ગધુગિ-
તિશબ્દં = તત્ર વિપુલં = વિશાલં ગર્જિતં = મેઘગદ્ ધ્વનિઃ તથા ગુઙ્ગિતં=

ભય કા પ્રતિસ્વરૂપ બના રહતા હૈ (ઉત્તાસણમ્) ચિત્ત મેં જિસે અલ-
લોકન કર ક્ષોભ હો જાતા હૈ, (અણોરપારં) જિસકા દુસરા તર અલલ્બ
હોતા હૈ (આગાસં ચેવ નિરવિલંબં) આકાશ કી તરહ જિસમેં પ્રાણિયો
કો પડ જાને પર કોઈ બી આધાર પ્રાસ નહીં હોતા હૈ, (ઉપાદયપવણ)
ઉત્પાત જનિત પવન સે (ધણિય ણોલ્લિય) અતિશય વેગશાલી હોકર
(ઉચ્ચરુવરિ) એક દુસરે કે ઉપર પડતી હુઈ (તરંગદરિય) ગર્વિત તરંગો
સે (અદ્વેગં) અત્યંત વેગ હો રહા હૈ। (ચક્ષુપદમોચ્છરંતં) જિસકા
દેખના બી અશક્ય હૈ તો ફિર વહાં તૈરને કો તો બાત હી ક્યા હૈ
(કત્યદ્ગમ્ભીરં) કીસી ૨ પ્રદેશ મેં જો બહુત હી અધિક ગમ્ભીર

અને તેથી જ “મયંકર” ભયની પ્રતિભૂતિ લાગે છે, “ઉત્તાસણમ્” જેનું
અવલોકન કરીને ચિત્તમાં ક્ષોભ થાય છે, “અણોરપારં” જેનો ખીલો ડિનારો
અપ્રાપ્ય હોય છે-જેનો પાર પામવો દુષ્કર છે, “આગાસંચેવ નિરવલંબં”
આકાશની જેમ જેમાં પ્રાણીઓને પડી જતાં કોઈપણ આધાર મળતો નથી “ઉપાદ-
ય પવણ” ઉત્પાત જનિત પવનથી “ધણિય ણોલ્લિય” અતિશય વેગમાં આવી
જઈને “ઉચ્ચરુવરિ” એક બીજાના ઉપર પડતાં “તરંગદરિય” ગર્વિત મોઝા-
ઓથી “અદ્વેગં” જે અત્યંત વેગયુક્ત બની રહેલ છે, “ચક્ષુપદમોચ્છરંતં”
જેને જોઈ શકવો પણ અશક્ય છે તે ભાં તરવાની તેા વાત જ ક્યાં છે।
“કત્યદ્ગમ્ભીરં” કોઈ કોઈ પ્રદેશમાં જે ધણો વધારે ગમ્ભીર હોય છે,

ભ્રમરગુજ્જિતમિવ ગુજ્જિતં તથા નિર્ધાન્તઃ વ્યન્તરકૃતો મહાધ્વનિઃ ગુરુકનિ-
પવિત=વિશુદ્ધિશેષાદિ સંપાતેન ચ જાયમાનોધ્વનિઃ સુદીર્યઃ=અત્યર્થ નિહાદી=
પ્રતિધ્વનિયુક્તો નિર્ધોષઃ દૂરશ્રૂયમાણઃ=અતિદૂરદેશાદપિ શ્રૂયમાણઃ ગમ્भीરો ધુગ-
ધુગિતિ શબ્દશ્ચ યત્ર સ તથા તં ‘ પઙ્કિપહરુંમંત-જક્વ-રક્વસ-કુહંડ-પિસાય-
રુસિય - તજ્જાયવસગ્ગસહસસંકુલં ’ પ્રતિપથરુન્ધાનયક્ષરાક્ષસકૂષ્માણ્ડ
પિશાચરુષ્ટતજ્જાતોપસર્ગસહસસંકુલં =તત્ર પ્રતિપથં=પ્રતિમાર્ગે રુન્ધાનાઃ=પથિ-
કાનાં માર્ગાવરોધં કુર્વાણા યે યક્ષાઃ રાક્ષસાઃ કૂષ્માણ્ડાઃ પિશાચાશ્ચ સર્વે વ્યન્તર-
વિશેષાસ્તે ચ તે રુષ્ટાઃ=રોષયુક્તા સ્તૈર્જાતાનિ યાન્યુપસર્ગસહસ્રાણિ=ઉપદ્રવસહ-
સ્રાણિ તૈઃ સંકુલઃ=વ્યાપ્નો યઃ સ તથા તં ‘ બહૂષ્પાદ્યભૂયં ’ વહ્નોત્પાતિકભૂતં=
બહૂન્યોત્પાતિકાનિ=ઉત્પાતભવાનિ દુઃસ્વાનિ ભૂતાનિ યત્ર સ તથા તં ‘ વિરઙ્ય

હોતા હૈ । તથા (વિડલગજ્જિય ગુંજિય) જિસકા મેઘ કી તરહ
વિશાલ ગર્જિત એવં ભ્રમરોં કે જેસા વિશાલ ગુંજિત, (નિગ્ધાય)
નિર્ધાત-વ્યન્તરોં કી ધ્વનિ, તથા (ગરુદનિવહિય) વિજલી આદિ કા
જો હસમેં ગિરના હોતા હૈ ઉસ સમય નિલા હુઆ જો અત્યન્ત નિર્હાદી
પ્રતિધ્વનિ યુક્ત વિશેષ નિર્ધોષ (દૂરસુન્નંત) દૂર સે સુનાઈ દેને વાલે
(ગંભીર) ગમ્ભીર (ધુગધુગંતિ) ‘ ધુગ ધુગ ’ એસા શબ્દ, યે (સહ)
શબ્દ હૈં જિસમેં, તથા (પઙ્કિપહરુંમંત-જક્વ-રક્વસ-કુહંડ-પિસાય-
રુસિય-તજ્જાયવસગ્ગસહસસંકુલં) જો રુષ્ટ હોકર પથિકો કે માર્ગ
કા અવરોધ કરને વાલે યક્ષ, રાક્ષસ, કૂષ્માણ્ડ (વ્યન્તરવિશેષદેવ)
એવં પિશાચોં કે હજારોં ઉપસર્ગોં સે સદા વ્યાસ રહતા હૈ (બહૂષ્પાદ્ય
ભૂયં) તથા જિસમેં જીવોં કો અનેક ઉત્પાતજન્ય દુઃસ્વોં કા સામ્હના

તથા “ વિડલગજ્જિયગુંજિય ” જે મેઘના જેવી મોટી ગર્જના કરે છે
અને ભ્રમર જેવો વિશાળ ગુંગરવ કરે છે, “ નિગ્ધાય ” નિર્ધાત-
વ્યન્તરોનો મહાધ્વનિ તથા “ ગરુદનિવહિય ” વીજળી આદિ તેમાં પડે ત્યારે
તેમાંથી નીકળતો નિર્હાદી-પ્રતિધ્વનિ યુક્ત નિર્ધોષ, “ દૂરસુન્નંત ” દૂરથી સંભ-
ળાતો “ ગંભીર ” ગમ્ભીર “ ધુગધુગંતિ ” “ ધુગ ધુગ ” જેવો આવાજ, આદિ
“ સહ ” શબ્દો જેમાં સંભળાય છે તથા “ પઙ્કિપહરુંમંત-જક્વ-રક્વસ-કુહંડ-
પિસાય-રુસિય-તજ્જાય વસગગસહસસંકુલં ” જે રુષ્ટ થઈને મુસાફરોના
માર્ગનો અવરોધ કરનારા યક્ષ, રાક્ષસ, કુખાંડ, (વ્યન્તર વિશેષ દેવ) અને
પિશાચોના હુઆરે ઉપસર્ગોથી સદા વ્યાસ રહે છે, “ બહૂષ્પાદ્યભૂયં ” તથા
જેમાં જીવોને અનેક ઉત્પાત જન્ય દુઃસ્વોનો સામનો કરવો પડે છે, “ વિરઙ્ય

बलिहोमधूवउवयारदिण्णरुहिररूचणाकरणपययजोगपययचरियं ' विरचितबलिहोमधूपोपचारदत्तरुधिरार्चनाकरणप्रयतयोगप्रयतचरितं = तत्र विरचितः = कृतः बलिना=द्रव्योपहारेण होमेन=अग्नौ हवनेन धूपेन=धूपेनचोपचारो यैस्ते तथा दत्तं रुधिरं=समर्पितं शोणितं यत्र तदेवंभूतं यदर्चनाकरणं तत्र प्रयताः=तत्परा ये ते तथा, योगप्रयताश्च=रोतादिभिर्व्यापारे निरता ये ते तथा तैः तत्रस्थितैः चरितः संश्रितो यः स तथा तमेतादृशं सागरम् । पुनः कीदृश ? मित्याह—“ परियंतजुर्गतकालकप्पोवमं ” पर्यन्तयुगान्त कालकल्पोवमं=पर्यन्तयुगस्य=सकलेषु युगेषु मध्ये चरमयुगस्य योऽन्तकालः=प्रलयकालः स एव कल्पस्तेनोपमा=सादृश्यं यस्य स तथा तं ‘ दुरंतमहानई-नईवइ--महाभीमदरिसणिज्जं ’ दुरंतमहानदी नदीपति-महाभीमदर्शनीयं-दुरन्ताः=दुष्पाराः या महानद्यः=गङ्गाद्यानद्यश्च=अन्याः सामान्या-

करना पड़ता है (विरइयबलिहोम-धूव-उवयार-दिण्ण-रुहिर-रूचणा-करण-पयय-जोगपययचरियं) तथा (विरइयबलिहोमधूवउवयार) नौका-ओंके अटक जाने पर जहाँ जहाजों से व्यापार करने में लगे हुए मनुष्यों द्वारा-सार्थवाहो द्वारा-विविध प्रकार की भेंटें दी जाती है, अग्निमें धूप जलाया जाता है- तथा (दिण्ण रुहिररूचणाकरणपयय) रुधिर का समर्पण रूप पूजा में लगे हुए ऐसे (जोगपयय) व्यापारी लोगों से (चरियं) सेवित है । तथा (परियंत जुर्गतकालकप्पोवमं) समस्त युगों के मध्य में चरम युग का प्रलयकालरूप कल्प के जैसा तु (दुरंतमहानई नईवइ-महाभीम दरिसणिज्जं) (दुरंत) जिनका पार करना कठिन है ऐसी (महानई नईवइ) गंगा आदि महानदियों का तथा अन्यसाधारण नदियों का जो पति हैं, इसी कारण यह (महाभीमदरिसणिज्जं) देखने

बलिहोम-धूव-उवयार-दिण्ण-रुहिर-रूचणाकरण-पयय-जोगपययचरियं ” तथा “ विरइयबलिहोमधूवउवयार ” नौकाओं अटकी जाता ज्यों पड़ाखे द्वारा वेपार करतार बोडे द्वारा (सार्थवाहो द्वारा) विविध प्रकारनी बोटो देवाय छे, अग्निमां धूप जालयामां आवे छे, तथा “दिण्णरुहिररूचणाकरणपयय” रुधिरना समर्पण रूप पूजां लागेला जेवा “जोगपयय” व्यापारी बोडेथी “चरिय” जे सेवित छे, तथा “परियंतजुर्गतकालकप्पोवमं” जे सवणा युगोनी वन्धे छेस्ला युगना प्रलयकालरूप कल्पना जेवे छे, “ दुरंतमहानईनईवइ-महाभीमदरिसणिज्जं ” “ दुरंत ” जेने जोगांगथी मुश्केल छे जेवी “ महानई-नईवइ ” गंगा आदि भडा नदीओनो तथा जील सामान्य नदीओनो जे पति छे, जेने ते धारखे जे “ महाभीमदरिसणिज्जं ” जे देखावमां अथ’कर

સ્તાસાં 'વદ' પતિઃ, સ ચ મહાભીમદર્શનીયઃ સ તથા તં 'દુરણુચરં' દુઃસ્થેનાઽ
 નુચર્યતે इति दुर्नुचरं 'विसमप्पवेसं' विषमप्रवेशं=विषमः=दुस्साध्यः प्रवेशो
 यस्मिन् स तथा तं 'दुक्खोत्तारं' दुःखोत्तारं=दुःखेनोत्तरणं यस्य स तथा तं
 'दुरासयं' दुरासदं=दुष्पापं दुराश्रयं=दुःखदस्थानरूपं 'लवणसलिलपुष्णं' लवण-
 सलिलपूर्णं = क्षारजलभृतम्, 'असियसियसमुच्छिद्यगेहि' असितसितसमुच्छि-
 तकैः=तत्र असिताः=कृष्णाः सिताः=शुक्लाश्च पटाः समुच्छिन्नतकाः=उपरि बद्धा येषु
 प्रवहणेषु तानि तथा तैः 'हत्थंतरगेहि' दक्षतरकैः=अन्य यानपात्राद्यपेक्षयाऽतिक्षय-
 वेगशीलैः 'वाहणेहि' वाहनैः=स्कन्धवाहैः परद्रव्यैः 'अइवइत्ता' अतिपत्य=
 आक्रम्य 'परदव्वहरा' परद्रव्यहराः=वाचनापरशरीर्याः 'निरणुकंपा' निरनु-
 कम्पाः=कृपारहिताः 'णिरव्वक्खा' निरपेक्षाः=अपेक्षारहिताः परलोकभयरहिताः
 नराः=जना 'समुदमज्जे' समुद्रमध्ये 'गंतूण' गन्था जणस्स 'पोत्ते' पोतान्=
 नौकान् 'हणति' घ्नन्ति=विनाशयन्ति ॥ सू-१० ॥

મેં મયંકર હૈ (દુરણુચરં) તથા જિસમેં અનુચરણ કરના-ફિરના વહુત
 હી આયાસ સાધ્ય-કઠિન હૈ । હસીલિયે (વિસમપ્પવેસં) જિસમેં પ્રવેશ
 કરના વહુત કઠિન હોતા હૈ । (દુક્ખોત્તારં) જિસકા પાર કરના વઢા
 મુશ્કિલ હોતા હૈ (દુરાસયં) જો સદા દુઃખદસ્થાનરૂપ હૈ । (લવણસ-
 લિલપુષ્ણં) ક્ષાર જલ સે સદા ભરા રહતા હૈ એસે સમુદ્ર કો (અસિય-
 સિય સમુચ્છિયગેહિ) કૃષ્ણ એવં શુભ્રવસ્ત્ર જિનકે ઉપર બાંધા ગયા હૈ
 એસી (હત્થંતરગેહિ) જો અન્ય યાન પાત્રોં કીં અપેક્ષા પાની કે ઉપર
 વહુત જલ્દી તૈરતી હૈ એસે (વાહણેહિ) નૌકાઓં દ્વારા (અइवइत्ता)
 આક્રમિત કરકે (પરદવ્વહરા) પરદ્રવ્ય કો હરણ કરને વાલે (નિરણુ-
 કંપા) નિર્દયી (ણિરવ્વક્ખા) જો અપને પરમત્વ કો સુધાર ને કી
 ભાવના સે રહિત હોતે હૈં એસે (નરા) ચોર મનુષ્ય (સમુદમજ્જે ગંતૂણ)

છે, “દુરણુચર” તથા જેમાં ફરવું અતિશય કઠિન છે, “વિસમપ્પવેસં”
 જેમાં પ્રવેશ કરવો ઘણો મુશ્કેલ છે, “દુક્ખોત્તાર” જેને બેખાંડવો અતિ-
 શય મુશ્કેલ છે, “દુરાસય” જે સદા દુઃખદ સ્થાન રૂપ છે, “લવણસલિ-
 લપુષ્ણ” જે ખારાં પાણીથી સદા ભરપૂર રહે છે, એવા સમુદ્રને “અસિયસિય
 સમુચ્છિયગેહિ” જેમના ઉપર કાળા અને સફેદ વસ્ત્ર બાંધેલાં છે એવી “હત્થં-
 તરગેહિ” જે અન્ય વાહનો કરતા પાણી ઉપર વધારે ઝડપથી તરે છે એવી
 “વાહણેહિ” નૌકાઓ દ્વારા “અइवइत्ता” આક્રમણ કરીને “પરદવ્વહરા”
 પરધનનું હરણ કરનારા, “નિરણુકંપા” નિર્દય અને “ણિરવ્વક્ખા” પોતાના
 પરભવને સુધારવાની ભાવનાથી રહિત એવા ‘નરા’ ચોર લોકો “સમુદમજ્જે

सुश्रिणी टीका अ० ३ सू० ११ तस्करकार्यनिरूपणम्

१०७

पुनः किं कुर्वन्तीत्याह—‘गामागर०’ इत्यादि

मूलम्—गामागर-नगर-खेड-कवड-मडंब-दोणमुह-पट्टणा-
समणिगम-जणवए ते य धणसमिद्धे हणंति, थिर हियय-
च्छिन्नलजा वंदिग्गह-गोगाहा य गेणहंति, दारुणमई निक्किवा
णियं हणंति छिंदंति गेहसंधि निक्खित्ताणि य हरंति,
धणधणदवजायणि जणवयकुलाणं निग्घणमई पर-
दव्वाहिं जे अविरया, तहेव केइ अदिण्णादाणं गवेसमाण
कालाकालेसु संचरंता चितगपज्जलिय-सरसदर-दड्ढकड्डिय-
कलेवरे रुहरलित्तवयण-अक्खय-खादिय-पीतडाइणि-
भमंतभयंकरे जंबुयखिक्खयंते घूयकयघोरसदे वेयालुड्डिय
विसुद्धकहकहेत पहसियबीहणग निरभिरामे अइदुब्धिगंधे
बीभच्छदरिसणिजे सुसाणे वणे सुण्णधरलेणअंतरावण
गिरिकंदरेसु विसमसावय समाउलासु वसहिसु किलिस्संता
सीयायवसोसियसरीरा दड्ढच्छवीनिरय तिरिय भवसंकडदुक्ख
संभारवेयणिज्जाणि पावकम्माणि संचिणिंता दुल्लभभक्खण
पाणभोयणापिवासिया झुंझिया किलंतामंसकुणिमकंदमूलजं
किंचिकयाहारा उव्विगा उप्पुया असरणा अडवीवासं उव्वेति
वालसयसंकणीयं ॥ सू० ११ ॥

समुद्र के बीच में जाकर (जणस्स) मनुष्यों की (पोते) नौकाओं को
(हणंति) नष्ट कर डालते हैं ॥ सू० १० ॥

गंतूण ” समुद्रनी वत्थे जड्ढे “ जणस्स ” माणुसोनी “ पोते ” नौकाओने।
“ हणंति ” नाश करी नाप्ते छे ॥ सू-१० ॥

ટીકા—‘તે ય’ તે ચ=પૂર્વોક્તપ્રકારાજના: ‘ગામાગરનગરખેડકઘડ-મડંબદોળમુહપટ્ટાસમણિગમજળવણ’ ગ્રામાકરનગરખેડકર્ષટમડંબદોળમુખપત્તનાશ્રમનિગમજનપદાન્=તત્ર ગ્રામઃ, ગ્રસતિ બુદ્ધચાદિગુણાનિતિગ્રામઃ, આકરઃ=સુવર્ણરજતાદિ ધાતુનાં ચ્વનિસ્થાનં, નગરં=અઘ્રાદશકર્ષર્જિતં, ખેટં=ધૂલિપ્રાકારમયં, કર્ષટં=અલ્પજનનિવાસસ્થાનં, મડંબઃ સાર્થકોશદ્વયગ્રામાન્તરશૂન્યઃ, દ્રોણમુખં=જલસ્થલમાર્ગો યત્ર ભવેત્ તદ્દ્રોણમુખં, પત્તનં=સકલવસ્તુપ્રાપ્તિસ્થાનમ્, આશ્રમઃ=

પરદ્રવ્ય હરણ કરને વાલે તસ્કરજન ફિર કયા કરતે હૈં ? સો હસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરતે હૈં—‘ગામાગર’ હત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(ધનસમિદ્ધે ગામાગરનગર ખેડકઘડમડંબદોળમુહપટ્ટાસમણિગમજળવણ) ધનધાન્યાદિ સે સમૃદ્ધ હુએ ગ્રામ, આકર, નગર, ખેટ, કર્ષટ, મડંબ, દ્રોણમુખ, પત્તન, આશ્રમ, નિગમ એવં જનપદ, इन सब को (ते य) परद्रव्य हरण करने वाले चोर आदिक (हर्णति) नष्ट कर देते हैं । जहां बुद्ध्यादिगुणों का हास होता है वह ग्राम है । सुवर्ण रजत आदि धातुओं की उत्पत्ति का जो स्थान होता है उसका नाम आकर है । अठारह प्रकार का राजकर जिसमें नहीं लिया जाता है उसका नाम नगर है । धूलिका प्राकार जिसमें होता है उसका नाम खेट है । जिसमें थोड़ेसे मनुष्य निवास करते हैं उसका नाम कर्षट है । चारों दिशाओंमें अढाईर कोसतक जिसके आसपासमें गांव नहीं होते हैं उसका नाम मडंब है । जलमार्ग के एवं स्थलमार्ग दोनों प्रकारके मार्गसे होकर जिसमें जाया जाता हा उसका नाम द्रोणमुख है । सकल वस्तुओं की प्राप्ति का जो

પરદ્રવ્યનું હરણ કરનારા ચોરા પછી શું કરે છે ? સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા તે પ્રગટ કરે છે—“ગામાગર” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“ ધનસમિદ્ધે ગામાગરનગરખેડકઘડમડંબદોળમુહપટ્ટાસમણિગમ-જળવણ ” ધનધાન્યથી સમૃદ્ધ બનેલ ગામ, આકર, નગર, ખેટ, કર્ષટ, મડંબ, દ્રોણમુખ, પત્તન, આશ્રમ, નિગમ અને જનપદ એ બધાનો “તેચ” પરધન હરી લેનાર ચોર આદિ લોકો નાશ કરે છે. બધાં બુદ્ધિ આદિ ગુણોનો હાસ થાય છે તે ગામ છે. સોનું, ચાંદી આદિ ધાતુઓનાં ઉત્પત્તિ સ્થાનને આકાર-આણું કહે છે. અઠાર પ્રકારનો રાજકર બધાં લેવાતો નથી તેને નગર કહે છે. ધૂળનો કિલ્લો બધાં હોય છે તે સ્થાનને ખેટ કહે છે. જેમાં થોડા જ માણસો વસતા હોય તે સ્થાનને કર્ષટ કહે છે. જેની આસપાસમાં અઢી ગાઉમાં ગામ હોતાં નથી તેને મડંબ કહે છે. બધાં જળમાર્ગે તથા સ્થળમાર્ગે જઈ શકાય છે તે સ્થાનને દ્રોણમુખ કહે છે. બધાં બધી વસ્તુઓ મળી શકે છે તે

તાપસનિવાસઃ, નિગમઃ=વણિગ્જનનિવાસઃ જનપદોદ્દેશસ્તાન 'ધણસમિદ્ધે' ધન-
સમૃદ્ધાન્=ધનધાન્યસમ્પન્નાન્ 'હ્ણંતિ' ઘ્ણન્તિ=વિનાશયન્તિ તથા 'થિરહિયયા'
સ્થિરહૃદયા=અદત્તાદાને નિશ્ચલચિત્તાઃ છિન્નલજ્ઞાઃ=જાતિકુલાદિલજ્ઞાવર્જિતાઃ
'વંદિગ્ગહોગ્ગહા ય' વન્દિગ્ગહોગ્ગહાશ્ચ = વન્દિનઃ સ્તુતિપાઠોપજીવિનસ્તેષાં
પદ્ઃ=ગ્રહણં ગર્વાં ચ ગ્રહણં ચોરણમિત્યર્થઃ, 'ગેહંતિ' ગૃહ્ણન્તિ=કુર્વન્તિ તથા
'દારુણમર્દ' દારુણમતયઃ=ધોરકર્માચરણબુદ્ધયઃ 'નિક્કિવા' નિક્કૃપાઃ=નિર્દયાશ્ચ
'ણિયં' નિજં = સ્વજનમપિ 'હ્ણંતિ' ઘ્ણન્તિ = નાશયન્તિ તથા ગેહસંધિ=
ગૃહમિત્તિ 'હિંદંતિ' હિન્દન્તિ । તતશ્ચ 'જળવયકુલાણં' જનપદકુલાનાં 'નિક્કિવ-

સ્થાન હોતા હૈં ઉસકા નામ પત્તન હૈં । તાપસ લોગોં કા જો નિવાસ
સ્થાન હોતા હૈં ઉસકા નામ આશ્રમ હૈં । વણિગ્જન, જિસમેં રહતે હો
ઉસકા નામ નિગમ, એવં દેશ કા નામ જનપદ હૈં । इन स्थानों को लूटने
वाले तथा-नष्ट भ्रष्ट करने वाले ये जन (थिरहियया) अदत्तादान करने
में निश्चलचित्त रहते हैं (छिन्नलज्जा) इन्हें जाति, कुल आदिकी लज्जा
कुछ भी नहीं होती है । (वंदिगहोगगहा य) ये स्तुति पाठकों को
लूट लिया करते हैं और गायों को भी चुरा लिया करते हैं । (दारुणमर्द)
इनकी मति बड़ी दारुण (भयंकर) होती है-भयंकरसे भयंकर कर्म करनेमें
भी उन्हें संकोच नहीं होता है । (निकिवा) ये सदा दया से रहित होते
हैं । (णियं ह्णन्ति) अपने निजजन को भी ये जान से मार डालते हैं
(गेहसंधि) घरों की भित्तियों तक को भी ये (हिंदन्ति) तोड़ डालते
हैं । (जणवयकुलाणं) दूसरों की रक्खी हुई-धरोहररूप में स्थापित की

સ્થાનને પત્તન કહે છે. તાપસ લોકનાં નિવાસસ્થાનને આશ્રમ કહે છે. વણિક
લોકો જ્યાં રહે છે તે નિગમ અને દેશને જનપદ કહે છે. તે સ્થાનોને લૂટ-
નારા તથા નષ્ટભ્રષ્ટ કરનારા તે લોકો “ થિરહિયયા ” અદત્તાદાન-ચોરી કરવાને
માટે દૃઢ નિશ્ચયી હોય છે. “ છિન્નલજ્ઞા ” તેમને બળિ. કુળ આદિની સહેજ
પણ લાજ હોતી નથી. “ વંદિગ્ગહોગ્ગહાય ” તેઓ સ્તુતિ કરનારાને પણ
લૂંટી લે છે, અને ગાયોને પણ ચોરી બધ છે “ દારુણમર્દ ” તેમની બળિ
બળિ દારુણ હોય છે-ભયંકરમાં ભયંકર કૃત્ય કરતાં પણ તેમને સંકોચ થતો
નથી “ નિક્કિવા ” તેઓ સદા દયાહીન હોય છે, “ ણિયં હ્ણન્તિ ” પોતાના
સ્વજનોને પણ તેઓ મારી નાખે છે, “ ગેહસંધિ ” ઘરની દિવાલોને પણ
તેઓ “ હિંદંતિ ” ધરની દિવાલોને પણ તેઓ “ હિંદંતિ ” તોડી પાડે છે.
“ જળવયકુલાણં ” બીબાએ અનામત થાપણુ તરીકે મૂકેલ “ ઘણધણવદ્ધ-

તાણિ ' નિશ્ચિન્તાનિ=સ્થાપિતાનિ ' ધનધણ્ણદ્વજાયાણિ ' ધનધાન્યદ્રવ્યજાતાનિ= ધનધાન્યસુવર્ણરજતાદીનિ હરન્તિ ' કે' ઇત્યાહ-યે ' પરદ્વાહિં ' પરદ્રવ્યૈઃ ' અવિરયા ' અવિરતાઃ=અનિવૃત્તાઃ= ' નિગ્ધિગમઈ ' નિર્ઘૂળમતયઃ=કરુણારહિતાઃ ' તદેવ' તથૈવ-પૂર્વોક્તપ્રકારેણ ' કેઈ ' કેડપિ ' અદિણ્ણાદાણ ' અદત્તાદાનં=સ્વામ્યાદિ-ભિરવિત્તીર્ણ ધનં ગવેસમાણાઃ=અન્વેષમાણાઃ કાલાકાલેષુ=કાલેષુ=સકલલોકવ્યવ-હારોચિતકાલેષુ દિનાદિકલક્ષણેષુ તથા અકાલેષુ=અનુચિતકાલેષુ અર્ધરાત્રિદિલક્ષણેષુ ચ સચ્ચરન્તાઃ=અગ્રમન્તોડદત્તગ્રાહિણઃ, ' ચિતગપજ્જલિયસરસદરદ્વુકલ્લિયકલેવરે ' ચિતકમજ્જલિતસરસદરદ્વકલ્લિયકલેવરે=ચિતકેષુ=ચિતાસુ, :કીદશેષુ ? પજ્જલિ-

હુઈ (ધનધણ્ણદ્વજાયાણિ) ધન, ધાન્ય, સુવર્ણ રજન આદિ સંપત્તિ કો (હરન્તિ) હર લિયા કરતે હૈં । (પરદ્વાહિં અવિરયા) ક્યોં કિ યે લોગ પરકે દ્રવ્ય કો ચુરાને રૂપ કૃત્ય સે વિરક્ત નહીં હોતે હૈં-“ દુસરોં કા દ્રવ્ય વિના પૂછે નહીં લૂંઘા ” ઇસ પ્રકાર કા નિયમ ઇન્હેં નહીં હોતા હૈં । (નિગ્ધિગમઈ) યે સર્વથા દયાભાવ સે રહિત મતિ વાલે હોતે હૈં । (તદેવ કેઈ) ઇસી તરહ કિતનેક વ્યક્તિ (અદિણ્ણાદાણ) સ્વામી આદિ દ્વારા વિતોર્ણ નહીં કિયે હુઈ ધન ધન્યાદિ કી (ગવેસમાણા) ગવેષણા કરતે હુઈ (કાલાકાલેસુ) સમસ્ત લોક વ્યવહાર કે યચિત દિન આદિ રૂપકાલ મેં તથા અર્ધરાત્રિ આદિ રૂપ અકાલ-અનુચિત કાલ મેં (સચ્ચરન્તા) ઇધર ઉધર ધૂમતે હુઈ શ્મશાન શૂન્યગૃહ આદિ મેં ભટકતે રહતે હૈં, યહ સમ્બન્ધ યહાં જોડ લેના ચાહિયે । વહ શ્મશાન આદિ કેસે હૈં સો ઘર્ષન કરતે હૈં-જહાં (ચિતગપજ્જલિય) પ્રજ્વલિત ચિતાઓં મેં

જાયાણિ” ધન, ધાન્ય, સોનું, રૂપું, આદિ સંપત્તિને “હરન્તિ” પણ તેઓ હરી લે છે. “પરદ્વાહિં અવિરયા” કારણ કે તે લોકો પરધનને ચોરવાના કૃત્યથી વિરક્ત હોતા નથી, “બીબનુ દ્રવ્ય તેને પૂછ્યા વિના નહીં લઉં” એવો તેમને નિયમ હોતો નથી. “નિગ્ધિગમઈ” તેઓ સદા દયાભાવથી રહિત મતિવાળા હોય છે. “તદેવ કેઈ” એ જ પ્રમાણે કેટલાક લોકો “અદિણ્ણાદાણ” માલિક આદિ દ્વારા અર્પણ ન કરવામાં આવેલ ધન ધાન્યાદિની “ગવેસમાણા” શોધ કરતાં “કાલાકાલેસુ” બધા લોકો સાથે વ્યવહાર માટેના દિવસ આદિ ચોગ્ય સમય અથવા મધ્ય રાત્રિ આદિ અકાલ-અયોગ્ય સમયે “સચ્ચરન્તા” આમ તેમ શ્મશાન, શૂન્યગૃહ-ખાલીઘર-આદિમાં ભટક્યા કરે છે. તે શ્મશાન આદિ કેવાં હોય છે, તેનું વર્ણન કરે છે-“ચિતગપજ્જલિય” સળગતી ચિતાઓમાં “સરસ”

सुवर्शिनी टीका अ. ३ सू० ११ तत्करकार्यनिरूपणम्

१११

तेषु=प्रदीप्तेषु यानि सरसानि=रुधिरमांसादिसहितानि अतएव दग्धानि=ईषद्-
स्मीभूतानि तानि कृष्टानि=श्वशृगालादिभिश्चितानो निष्काशितानि कलेवराणि=
मृतकशरीराणि यत्र तत्तथा तत्र श्मशाने । पुनः कीदृशे- 'रुधिरलित्तवयणअक्खय-
खादियपीयडाइणिभमंतभयंकरे' रुधिरलिप्तवदनाऽऽतखादितपीतढाकिनी भ्रमद्
भयङ्करे=तत्र रुधरेण लिप्तानि वदनानि = मुखानि तथा अज्ञतानि=समप्राणि
खादितानि मृतकानां शरीराणि तथा पीतानि रुधिराणि याभिस्तास्तथा भ्रमन्त्यश्च
या ढाकिन्यस्ताभिर्भयङ्करे, 'जंबुयस्सिक्खियंते' जम्बुकानां 'सिक्खि' इति शब्दयुक्ते
तथा 'घूयकयघोरसहे' घूककृत घोरशब्दे=घूकैः=उल्लूकैः कृतः घोरः=भयङ्करः
शब्दस्तेन युक्ते तथा 'वेयालुट्टियविसुद्धकहकहेंतपहसियवीइणमनिभिरामे' वे-
तालोलुत्थितविशुद्धकहकहायमानमहसितभीषणकनिरभिरामे = वेतालेभ्यः = विकृत
पिशाचेभ्यः उत्थितं=समुत्पन्नं विशुद्धम्=अन्यशब्दाऽभिहितं यत् कहकहायमानं=
(सरस) रस-रुधिर आदिसे लिस मुदें (दरदड्ड) पूरे नहीं जल सकनेके कारण
(कड्डियकलेवरे) कुत्ते एवं शृगाल आदि द्वारा चिताओंसे बाहिर निकाल
लिये जाते हैं (रुधिरलित्तवयण) जिनके मुख रुधिरसे लिस हो रहे हैं,
तथा (अक्खयखादियपीय) जिन्होंने समग्ररूपसे मृतक कलेवरोंको खाया
है और उनकाखून पी लिया है ऐसी (डाइणीभमंतभयंकरे) घूमती हुई
ढाकिनियोंसे जो भयंकर बने हुए हैं (जंबुयस्सिक्खियंते) तथा जो गीदड़ों
के 'खि-खि' शब्दोंसे युक्त हो रहे हैं (घूयकयघोरसहे) उल्लू जहां घोर
शब्द कर रहे हैं, तथा जहां (वेयालुट्टिय) वेताल विकृत बनकर जोरर से
कह कहाय मार कर हँसा करते हैं । (विसुद्धकह कहेंत पहसिय) उनका
यह हँसना जहाँ अन्य और शब्दों से मिश्रित नहीं हो रहा है-केवल
"कह कह" ऐसी ही ध्वनि जहाँ उनके मुख से निकल रही है, इस-

रस-रुधिर आदिथी अरुअयेलां मुउठां, "दरदड्ड" पूरा भणी शकैला न डोवाथी
"कड्डियकलेवरे" दूतरां, शियाण आदि द्वारा चिताओंमांथी अडार भे'ची कहाय
छे, "रुधिरलित्तवयणअक्खयखादियपीयडाइणीभमंतभयंकरे" "रुधिरलित्तवयण"
भेमनां भुण डोहीथी अरुअयेलां छे तथा भेभणे संपूण् रीते मृतशरीरेतुं
अक्षण्कयुं छे अने तेभतुं डोही पीयुं छे अये "डाइणीभमंतभयंकरे" त्यां
भमती अड्डोथी भे अय'कर लागे ते, "जंबुयस्सिक्खियंते" तथा भे
शियाणोता "धि-धि" शब्दोथी युक्त छे, "घूयकयघोरसहे" धुपडा न्यां अय'कर
शब्दो करे छे, तथा न्यां "वेयालुट्टिय" वेताणमृत भनीने नेर शैरथी अड-
अडट इसी रह्या छे, "विसुद्धकहकहेंत पहसिय" तेभतुं ते डारय न्यां भीअ
डोअ शब्द साथे मिश्रित थतुं नथी-केवण "कड्ड कड्ड" अयेवा ध्वनिभ तेभनां

જન્યાયમાનં હસિતં=હસનં તેન મીષણકં=મયાનકમતણ્વ નિરભિરામમ્=અસુન્દરં
 યસત્તયા તત્ત, તથા ‘ અહદુઞ્ચિમંગધે ’ અતિદુરભિગન્ધે=ઘટિતગૃતકકલેવરદુર્ગન્ધ-
 યુક્તે, ‘ વીમન્છદરિસણિજ્જે ’ વીમન્સદર્શનીયે=વીમન્સં=અસ્થિમૃતકકલેવરાદિ-
 યુક્તલાજ્જુગુપ્તોત્પાદકં દર્શનીયં=દર્શનં યસ્ય તત્ત તસ્મિન્ ‘ સુસાણે ’ ઇમશાને
 ‘ વણે ’ વને=અરણ્યે ચ તથા ‘ સુણ્ણઘરલેણઅંતરાવણગિરિકંદરેસુ ’ શૂન્યગૃહલ્હય-
 નાઽન્તરાઽઽવણગિરિકંદરેષુ=શૂન્યાનિ ગૃહાણિ અન્તરાવણાઃ=અન્તરા=ગ્રામાદીના-
 મર્દેપથે વિશ્રામાર્થે નિર્મિતા આવણાઃ=ગૃહાઃ=ગ્રામાદ્વાહ્યાઃ ગિરિકંદરાણિ ચ=
 ગિરિગહ્વરાણિ, તેષુ, તથા-‘ વિસમસાવયસમાઝલાસુ ’ વિષમૈઃ શ્વાપદૈઃ હિંસપ્રાણિ-
 ભિઃ સમાકુલાઃ=વ્યાપ્તાઃ તાસ્વેવં વિધાસુ ‘ વસહિસુ ’ વસતિષુ=વાસસ્થાનેષુ ‘ કિલિ-
 સંતા ’ ક્લિષ્ટચન્તઃ=દુઃખાનિ પ્રાપ્નુવન્તઃ, ‘ સીયાયવસોસિયસરીરા ’ શીતાતપ-
 શોષિતશરીરાઃ = શીતૈરાતપૈશ્ચ શોષિતાનિ શરીરાણિ યેષાં તે તથા ‘ દહ્દહ્ચ્છવી ’

લિપે હસ વિશુદ્ધ કહ કહ ધ્વનિ સંયુક્ત પિશાચોં કે હાસ્યસે જો (વીહ-
 નગ) મયપ્રદ્દ ઓર (નિરભિરામે) અસુન્દર થને હુણે હૈં (અહદુઞ્ચિમંગધે)
 અતિદુરભિગન્ધ-સહે હુણે મૃતકોં કે કલેવરોં કી દુર્ગન્ધ સે જો યુક્ત હો
 રહા હૈં (વીમન્છદરિસણિજ્જે) તથા જો હાડ મૃતક કલેવર આદિ સે
 યુક્ત હોને કે કારણ ઘૃણોત્પાદક દિશ્વલાઈ પડતે હૈં એસે (સુસાણે) ઊન
 ઇમશાનોં મેં (સુણ્ણઘર) શૂન્ય ગૃહોં મેં, (લેણ) લયનોં મેં-પર્વતોં કે
 નિકટવર્તી પાષાણગૃહોં મેં, (અંતરાવણ) ગ્રામ આદિકોં કે આધે માર્ગે
 મેં વિશ્રામ નિમિત્ત થને હુણે ઘરોં મેં, (ગિરિકંદરેસુ) પર્વત કી ગુફાઓં
 મેં, તથા (વિસમસાવયસમાઝલાસુ) હિંસક પ્રાણીઓં સે યુક્ત (વસ-
 હિસુ) વસતિઓં મેં-વાસસ્થાનોં મેં, (કિલિસંતા) નાના પ્રકાર કે
 દુઃખોં કો સહન ક્રિયા કરતે હૈં । તથા (સીયા ય વસોસિયસરીરા) શીત
 ઓર આનવ સે હનકે શરીર શોષિત-સૂકે હુણે રહતે હૈં । (દહ્દહ્ચ્છવી

મુખમાંથી નીકળતો હોય છે, તેથી પિશાચોનાં તે વિશુદ્ધ કહકહ ધ્વનિ યુક્ત
 હાસ્યથી એ “ વીહનગ ” ભયંકર અને “ નિરભિરામે ” અસુન્દર અનેલ છે,
 “ અહદુઞ્ચિમંગધે ” સહેલાં મૃત કલેવરોની અતિશય દુર્ગન્ધથી એ યુક્ત છે,
 “ વીમન્છદરિસણિજ્જે ” તથા એ હાડકાં, મુઠકાં આદિથી યુક્ત હોવાને કારણે
 ધૃણ્ણજનક દેખાય છે, એવાં “ સુસાણે ” શ્યશાનોમાં, “ વણે ” વનોમાં,
 “ સુણ્ણઘર ” શૂન્યઘરોમાં, “ લેણ ” લયનોમાં પહોંડની સમીપનાં પાષાણગૃહોમાં
 “ ગિરિકંદરેસુ ” પર્વતની ગુફાઓમાં, તથા “ વિસમસાવયસમાઝલાસુ ” હિંસક
 પ્રાણીઓથી યુક્ત “ વસહિસુ ” નિવાસ સ્થાનોમાં, “ કિલિસંતા ” વિવિધ
 પ્રકારનાં દુઃખો સહન કર્યા કરે છે. તથા “ સીયા ય વસોસિયસરીરા ” શીત
 અને તાપથી તેમનાં શરીર સૂકાં રહે છે. “ દહ્દહ્ચ્છવી ” તેમનાં શરીરની

દગ્ધચ્છદયઃ=નષ્ટકાન્તયઃ ‘ નિરયતિરિયમ્બસંકટદુઃસ્વસંભારવેદણિજ્ઞાણિ પાવક-
મ્માણિ સંચિન્તા ’ નરકતિર્યગ્ ભવસંકટદુઃસ્વસંભારવેદનીયાણિ પાપકર્માણિ
સંચિન્વન્તઃ=તત્ર નરકવિર્યગ્ધવેષુ સંકટાનિ=વિષમાણિ દુઃસ્વાનિ=પરમાધાર્મિક-
કૃત છેદનભેદનાદિરૂપાણિ-તેષાં યઃ સંભારઃ=બહુલતા તેન વેદનીયાણિ=અનુભવની-
યાણિ ‘ પાવકમ્માણિ ’ પાપકર્માણિ=પરદ્રવ્યાપહરણાદીનિ સચિન્વન્તઃ=સમુપાર્જ-
યન્તઃ ‘ દુલ્ભમ્બક્ષણપાણમ્બોયણા ’ દુર્લભમ્બક્ષણપાણમ્બોયણાઃ - દુર્લભં=દુષ્પ્રાપ્યં
મ્બક્ષણં=અન્નાદિકં પાનં=દુગ્ધજલાદિકં ચ મ્બોયણં=કલ્યાવર્ત પાતરશનાદિકં ‘નાશતા’
‘ કલે વા ’ ઇતિ પ્રસિદ્ધં યેષાં તે તથા અતएव ‘ પિવાસિયા ’ પિવાસિતાઃ =
તૃપિતાઃ ‘ જુઞ્જિયા ’ વૃષ્ણિતાઃ ‘ કિલંતા ’ કલાન્તાઃ=ગ્લાનિયુક્તાઃ ‘ મંસકુણિ-
મ્કંદમૂલજં કિંચિકયાહારા’ માંસકુણવકન્દમૂલયત્કિશ્ચિત્ કૃતાહારાઃ=તત્ર માંસં=
પ્રસિદ્ધં કુણપઃ=મૃતકદેહઃ કન્દમૂલાનિ તેષાં યત્ કિશ્ચિત્=યથાવસરં યત્કિશ્ચિ-
ચ્છવી) શરીર કી કાંતિ ઇનકી નષ્ટ હો જાતી હૈ । (નિરયતિરિયમ્બ-
સંકટદુઃસ્વસંભારવેદણિજ્ઞાણિ) નરક તિર્યગ્ ભવોં મેં પરમાધાર્મિક
કૃત છેદન ભેદન આદિરૂપ વિષમ દુઃસ્વો કે સંભાર સે વેદનીય એસે પર-
દ્રવ્યાપહરણ આદિરૂપ (પાવકમ્માણિ) પાપકર્મોં કો (સંચિન્તા) ઉપા-
ર્જિત કરતે હુણ (દુલ્ભમ્બક્ષણપાણમ્બોયણા) યે જીવ દુર્લભ અન્નાદિ
સામગ્રી વાલે, દુર્લભદુગ્ધ જલાદિ વાલે, તથા દુર્લભ મ્બોજનાદિરૂપ કલે-
વાવાલે હોતે હૈ । (પિવાસિયા) ઇન્હેં પાની તક પીને કો નહીં મિલતા
હૈ (જુઞ્જિયા) સદા યે વૃષ્ણિત-મૂલે રહા કરતે હૈ । (કિલંતા) કલાન્ત-
હરેક કોઈ ઇનસે ગ્લાનિ કિયા કરતા હૈ । (મંસકુણિમ, કંદમૂલ જં
કિંચિ કયાહારા) અસમય મેં અથવા યથા અવસર જો કુછ ઇન્હેં સ્વાને
કો મિલ જાતા હૈ-ચાહે વહ માંસ હો, ચાહે કુણપ-મૃતકદેહ-મુર્દા હો,

કાન્તિ નાશ પામે છે. “ નિરયતિરિયમ્બસંકટદુઃસ્વસંભારવેદણિજ્ઞાણિ ”
નરક તિર્યગ્ આદિ ભવોમાં પરમાધાર્મિક દેવોદ્વારા કરાતા છેદન ભેદન આદિ
રૂપ વિષમ દુઃસ્વોના સમૂહથી વેદનીય (સંકટ કરવાં પડતાં) એવાં પરધન
હરણુ આદિરૂપ પાપકર્મોંનું “ સંચિન્તા ” ઉપાર્જન તેઓ કરે છે. “ દુલ્ભમ-
મ્બક્ષણપાણમ્બોયણા ” તે એવોને અન્નાદિ સામગ્રી ઘણી મુશ્કેલીએ પ્રાપ્ત થાય
છે, પાણી હૃદ્ય આદિ પીણાં પણ તેમને માટે દુર્લભ હોય છે, અને નાસ્તો
ભોજનાદિ પણ તેમના માટે દુર્લભ હોય છે. “ પિવાસિયા ” તેમને પીવા માટે
પાણી પણ મળતું નથી. “ જુઞ્જિયા ” તેઓ સદા ભૂખ્યા રહે છે, “ કિલંતા ”
કલાન્ત-દરેક વ્યક્તિ તેમણે ગ્લાની પમાડ્યા કરે છે. “ મંસકુણિમ્કંદમૂલ જં-
કિંચિ કયાહારા ” કાળે અથવા અકાળે તેમને જે કંઈ ખાવા મળે છે-પછી તે
માંસ હોય, કુણપમૃતશરીર હોય, કંદમૂળ હોય- તે તેઓ ખાય છે. તે ઓળે

૩૧૪

પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રે

ત્માપ્તં તદપિ સ્વલ્પમાત્રં કૃત આહારો યૈસ્તે તથા 'ઉચ્ચિગ્મા' 'ઉદ્ચિગ્મા' = ઉદ્દેગયુક્તા અશાન્તચિત્તા इत्यर्थः, 'ઉપ્પુયા' 'ઉત્પ્લુતા' = વાપશ્ચ: 'અસરણા' 'અસરણા' = પ્રાણરહિતા: ગૃહવર્જિતા વા 'અડવીવાસં' 'અડવીવાસં' = અરણ્યવાસં 'વાલસય-સંકળીયં' 'વાલસયસંકળીયં' = વ્યાલસયસંકળીયં = વ્યાલાનાં = સર્પાદિદુષ્ટશ્વાપદાનાં શતૈઃ શઙ્કનીયં શુજઙ્ગાદિભિર્મયઙ્કસ્ય 'ઉવંતિ' 'ઉપયન્તિ' = પ્રાપ્નુન્તિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

પુનસ્તે કીદૃશા ભવન્તિ ? इत्याह—'अयसकरा' इत्यादि—

મૂલમ—અયસકરાતકરા ભયંકરા કસસહરામોત્તિ અજ્ઞદવં
ઇતિ સમામંતણં કરેતિ ગુજ્ઞં, વહુયસ્સ જણસ્સ કજ્જકરણેસુ
વિગ્ધકરામત્તપ્પમત્તપસુત્તવીસત્થછિદ્ધાતી વસણ઼મુદણસુ
હરણબુદ્ધી વિગવ્વરુહિરમહિયા પરેતિ નરવર્દમજ્જાયમતિકંતા
સજ્જણજણદુગંછિયા સકમ્મેહિં પાવકમ્મકારી અસુભપરિણયા
ય દુક્ખભાગી નિચ્ચાઉલદુહમનિવ્વુદ્ધમણા ઇહલોગે ચેવ
કિલિસ્સંતા પરદવ્વહરા નરા વસણસયમાવણ્ણા ॥સૂ૦૧૨॥

चाहे कंदमूल आदि हो सो भी वह भ्रूपेट नहीं मिलता स्वल्पमात्रा में ही मिलता है, उसे ये खालिया करते हैं, (उचिगमा) इनका चित्त सदा अशान्त रहता है । (उप्पुया) ये घड़े भारी चपल होते हैं । (अस-रणा) इनका एक जगह स्थिर वास नहीं होता इसलिये ये प्राण रहित होकर इधर से उधर भागते रहते हैं और (अडवीवासं) जंगल में ही बसेरा करते हैं । (वालसयसंकलीयं) सर्पादि सैकड़ों दुष्ट जानवरों के भय से शंका शील ऐसे स्थानों को ये (उवन्ति) प्राप्त करते हैं ॥सू०११॥

પણ તેમણે ધરાઈને ખાવા મળતી નથી, થોડા પ્રમાણમાં જ મળે છે. “ઉચ્ચિગ્મા” તેમનું ચિત્ત સદા અશાન્ત રહે છે. “ઉપ્પુયા” તેઓ ધણુ જ ચપલ હોય છે. “અસરણા” તેમનું રહેઠાણ કાયમ એક જ જગ્યાએ હોતું નથી, તેથી તેઓ અશરણી જેમ આમતેમ અગ્યા કરે છે. “અડવીવાસં” જંગલમાં જ “વાલસયસંકળીય” સર્પાદિ સેકડો ભયંકર જીવોના ભયથી વ્યાપ્ત સ્થાનોએ “ઉવંતિ” તેઓ પ્રાપ્ત કરે છે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

સુદર્શિની ટીકા અ० ૩ સૂ० ૧૨ તસ્કરસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૧૫

ટીકા—‘અયસકરા’ અયસસ્કરા:=અકીર્તિમન્તઃ ભયફૂરાઃ ‘તકરા’ તસ્કરા:=અદત્તગ્રાહિણઃ ચોરા इत्यर्थः, ‘અજ્ઞ’ અય=અસ્મિન્ દિવસે ‘કસ્સ’ કસ્ય ધનિનઃ इति=एवं विधेयं यन्मनसि चिन्तितं तत् ‘દવ્વં’ દ્રવ્યં=ધનં હરામઃ=ચોરયામ इति=एवं प्रकारं ‘ગુજ્ઞં’ ગુહ્યં=गुप्तं ‘સમામંતણં’ સમામન્ત્રણં=विचारणां ‘કરેતિ’ કુર્વન્તિ । તથા ‘બહુયસ્સ જણસ્સ’ बहुकस्य जनस्य ‘કજ્જકરણેસુ’ कार्यकारणेषु=कर्मानुष्ठानेषु ‘વિગ્ગકરા’ विघ्नकरा:=विघ्नोत्पादकाः ‘મત્તપ્પ-મત્તપ્પસુત્તવીસત્થહિદ્ધાઈ’ मत्तपमत्तपसुप्रविश्वस्तछिद्रघातिनः=तत्र मद्यपानादिना-मत्तान् प्रमत्तान् प्ररूपेण मत्तान् प्रसुप्तान् विश्वस्तांश्च छिद्रेण=छिद्रं=प्राप्य घ्नन्ति

फिर वे कैसे होते हैं सो कहते हैं-‘अयसकरा’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(અયસ કરા) ફનકી ટુનિયા મેં અકીર્તિ ફેલ જાતી હૈં યે સચ જગહ ઘુગઈ સે વિશ્વ્યાત હો જાતે હૈં, (ભયંકરા) ફનકે નામ અવળ સે ખી લોગોં કે હૃદયોં મેં ભય કા સંચાર હો જાતા હૈં । ફસ તરહ કે યે (તકરા) અદત્તગ્રાહી-ચોર (અજ્ઞ કસ્સ દવ્વં હરામો ત્તિ) “આજ કિસ્સ ધની કા મન ધારા દ્રવ્ય હરણ કરના ચાહિયે” ફસ પ્રકાર કી (ગુજ્ઞં) ગુપ્ત (સમામંતણં) વિચારણા (કરેતિ) કિયા કરતે હૈં । તથા (બહુયસ્સ જણસ્સ) અનેક મનુષ્યોં કે (કજ્જકરણેસુ) કાર્યોં મેં યે (વિગ્ગકરા) વિઘ્નોત્પાદક દુઆ કરતે હૈં । (મત્ત-પ્પમત્ત-પસુત્ત વીસત્થહિદ્ધાઈ) (મત્તપ્પમત્ત) મધ્યપાનાદિક સે મત્ત તથા પ્રમત્ત યને હુઈ વ્યક્તિયોં કો (પસુત્ત) સોધે હુઈ મનુષ્યોં કો, ઇવં (વીસત્થ) અપને ઉપર વિશ્વાસ કરને વાલે પ્રાણિયોં કો યે (હિદ્ધાઈ)

તેઓ કેવાં હોય તે નું વધુ વર્ણન કરે છે—“અયસકરા” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“અયસકરા” આખી દુનિયામાં તેમની અપકીર્તિ ફેલાય છે. તેઓ દુષ્ટરૂપીથી દરેક સ્થળે પંકાય છે, “ભયંકરા” તેમનું નામ સાંભળીને પણ લોકોના હિલમાં ભય પેદા થાય છે. એવા તે “તકરા” એર “અજ્ઞકસ્સ દવ્વં હરામો ત્તિ” “અ.એ કયા ધનિકનું ધન હરી લેવું એઈ એ” એ પ્રકારની “ગુજ્ઞં” ગુપ્ત “સમામંતણં” વિચારણા “કરેતિ” કર્યા કરે છે. તથા “બહુયસ્સ જણસ્સ” અનેક માણસોનાં “કજ્જકરણેસુ” કાર્યોમાં તેઓ વિગ્ગકરા” વિઘ્નકર્તા થયા કરે છે. “મત્ત-પ્પમત્ત-પસુત્તવીસત્થહિદ્ધાઈ” “મત્તપમત્ત” ઇત્

આદિ પીને મત્ત તથા પ્રમત્ત અનેકા લોકોને “પસુત્ત” બંધતા લોકોને, અને “વીસત્થ” પોતાના ઉપર વિશ્વાસ ભૂકનાર લોકોને તેઓ “હિદ્ધાઈ”

एवं शीघ्राः 'वसणव्भुदणसु' व्यसनाभ्युदयेषु हरणबुद्धयः=व्यसनेषु=रोगाद्यवस्थायां राजादिकृतोपद्रवेषु च अभ्युदयेषु=विवाहादिमहोत्सवेषु 'हरणबुद्धी' हरणबुद्धयः 'विगव' वृका इव='भेडिया' इति प्रसिद्धा नखधारिणः श्वापदजन्तु विशेषा इव 'रुहिरमहिया' रुधिरमहिताः=रुधिरस्य=रुधिरपानस्य महः=उत्सवः रुधिरमहः, स जातो येषां ते तथा-रुधिरचूषणे तत्पराः, 'परेति' परियन्ति=पर्यटन्ति सर्वत्र भ्रमन्ति । कथं भूतास्ते इत्याह- 'नरवह्मज्ज्ञा-य मइवकंता' नरपति मर्यादामतिक्रान्ताः=राजाज्ञावर्धितानिः 'सज्जनजणदुगुंछिया' सज्जनजनजुगुप्सिताः=सत्पुरुषैर्निन्दिताः 'सक्कमेहिं' स्वकर्मभिः=अदत्तादानरूपैः 'पावकम्मकारी' पापकर्मकारिणः=चौर्यादिपापकर्मकारकाः 'असुभपरिणयाय' अशुभपरिणताश्च=शुभपरिणामवर्जिताः 'दुक्खभागी' दुःखभागिनः=

છિદ્ર પ્રાસકર ઘાત કી ઘાત મેં માર ડાલતે હૈ (વસણવ્ભુદણસુ) રોગાદિક અવસ્થારૂપ તથા રાજાદિકૃત ઉપદ્રવકૃત વ્યસન કે સમય પર, અથવા વિવાહ આદિ રૂપ મહોત્સવ કે અવસર પર મી યે (હરણબુદ્ધી) અપના કાર્ય કર દિયા કરતે હૈં । (વિગવ) ભેડિયા કી રુધિર ચૂષને મેં તત્પરતા રહતી હૈં ઈસી પ્રકાર યે ચોર જન મી (રુહિર મહિયા) પર કે સૂન ચૂસને મેં તત્પર રહતે હુએ (પરેતિ) સર્વત્ર ઘૂમતે હૈં । (નરવહ્મજ્ઞા-ય મહંતા) રાજા કી આજ્ઞા કા સદા યે ઉલ્લંઘન કિયા કરતે હૈં । (સજ્જનજણેદુગુંછિયા) સજ્જન પુરુષો કી નિંદા કરને મેં ઇન્હે આનંદ મિલતા હૈ, અથવા ઇનકે ઇસ કર્મ કી સજ્જન પુરુષ નિંદા કરતે હૈં । (સક્કમેહિં) અદત્તાદાનરૂપ અપને કર્મોં સે યે (પાવકમ્મકારી) પાપકર્મકારી પાપકર્મ કરને વાલે વે ચોર (અસુભપરિણયાય) અશુભ આત્મા પરિણતિ

ધનનું સહસ્ર બાણીને જોતજોતામાં મારી નાખે છે. “વસણવ્ભુદણસુ” રોગાદિક અવસ્થામાં, તથા રાજાદિકૃત ઉપદ્રવ રૂપ સંકટને સમયે, અથવા વિવાહ આદિ મહોત્સવને પ્રસંગે પણ તે “હરણબુદ્ધી” પોતાનું પરધન હરણનું કૃત્ય કર્યા કરે છે. “વિગવ” વરુની જેમ-એટલે કે જેમ વરુ લોહી ચૂસવાને તત્પર હોય છે તેમ ચોર પણ “રુહિરમહિયા” અન્યનું લોહી ચૂસવાને તત્પર થઈને “પરેતિ” સર્વત્ર ભ્રમણ કરે છે. “નરવહ્મજ્ઞાય મહંતા” રાજાની આજ્ઞાનું સદા ઉલ્લંઘન કરે છે; “સજ્જનજણે દુગુંછિયા” સન્નજનોની નિંદા કરવામાં તેમને મના આવે છે, અથવા તે દુષ્ટુઓની સન્નજનો નિંદા કરે છે. “સક્કમેહિં” અદત્તાદાન-ચોરી રૂપ પોતાનાં કર્મોંથી તે “પાવકમ્મકારી” પાપકૃત્યો કરનારા ચોરો “અસુભપરિણયાય” અશુભ આત્મપરિણતિ-ભાવથી યુક્ત બને છે.

સુવર્ણિની ટીકા અપ ૧ સૂ ૧૨ અદત્તાદાનફલનિરૂપણમ્

૩૧૬

નરકનિગોદાદિદુઃસ્વભાગિનઃ, 'નિચ્ચાલ્લદુહમનિવ્વુહમણા' નિત્યાકુલદુઃસ્વાડનિ-
ર્વૃત્તિકમનસઃ=નિત્યમાકુલં=વ્યાકુલિતં દુઃસ્વયુક્તમ્, અનિર્વૃત્તિકં=સ્વાસ્થ્યરહિતં
મનો યેષાં તે તથા નિરંતરસંતાપસંકુલાઃ, ઇહલોકે ચૈવ, ચાન્ પરલોકેડપિ
'કિલિસંતા' કિલિચન્તઃ=ક્લેશમનુભવન્તઃ 'પરદવ્વહરા' પરદ્રવ્યહરા=પરધ-
નાપહરણશીલાઃ નરાઃ=મનુષ્યાઃ 'વસણસયં' વ્યસનશયં=દુઃસ્વપ્રચુરમ્ 'આવણ્ણા'
આપણ્ણા=પાપ્તાઃ પરિચન્તીત્યનેન સમ્બન્ધઃ ॥ સૂ ૧૨ ॥

एवं 'यथाकृत' इत्यन्तर्द्वारमुक्तम्, अथ 'यथाफलदे' इति अदत्तादान
फलप्रतिपादकं चतुर्थद्वारं प्राह—'तद्देव केइ इत्यादि—

મૂલમ્—તહેવ કેઇ પરસ્સદવ્વં ગવેસમાણા ગહિયા ય હયા
ય વહ્ધા રુદ્ધા ય તુરિયં અહધાડિયા પુરવરં સમપ્પિયા
ચોરગ્ગાહ ચારમહચાહુકરાણ, તેહિ ય કપ્પડપ્પહારનિદ-
યાSSરક્ખિય સ્વરફરુસવયણતજ્જણગલત્થહ્લ ઉત્થલણાહિં વિ-
મણાચારગવસહિં પવેસિયા નિરયવસહિસરિસં તત્થ વિ

સે યુક્ત હોતે હૈં । (દુઃસ્વભાગી) શુભપરિણામોં સે રહિત હોને કે કારણ
યે પરભવ મેં નરક નિગોદ આદિ કે દુઃસ્વોં કો ભોગા કરતે હૈં । (નિચ્ચા-
લ્લદુહમણિવ્વુહમણા) इनका मन सदा व्याकुल बना रहता है, इसी
से ये निरन्तर मानसिक स्वास्थ्य से रहित होकर संताप से संकुल होते
रहते हैं । इस तरह (इहलोगे चैव) इस लोक में तथा 'च' शब्द से
परलोक में भी (किलिस्संता) क्लेशों का अनुभव करते हुए ये (पर
दव्वहारा) पर द्रव्यापहारी चोर (वसणसयं) अनेक दुःस्वों को (आवण्णा)
प्राप्त होकर (परंति) भ्रमण करते हैं अर्थात् अपने समय को दुर्गतियों
के भ्रमण करने में ही व्यतीत करते रहते हैं ॥ १२ ॥

“દુઃસ્વભાગી” શુભ પરિણામો-ભાવોથી રહિત હોવાને કારણે તેઓ પરભવમાં
નરક નિગોદ આદિનાં દુઃખો ભોગવ્યા કરે છે. “નિચ્ચાલ્લદુહમણિવ્વુહમણા” તેમનું
મન સદા વ્યાકુળ રહે છે, તેથી તેઓ નિરંતર માનસિક સ્વાસ્થ્યથી રહિત
બનીને સંતાપથી યુક્ત રહે છે. આ રીતે “ઇહલોગેચૈવ” આ લોકમાં તથા
'ચ' શબ્દથી પરલોકમાં પણ “કિલિસંતા” દુઃખોને અનુભવતા તે “પરદવ્વ-
હરા” પરધનનું હરણ કરનારા ચોર લોકો “વસણસયં” અનેક દુઃખો “આ-
વણ્ણા” અનુભવતા “પરંતિ” ભ્રમણ કરે છે, એટલે કે દુર્ગતિઓમાં ભ્રમણ
કરવામાં જ પોતાનો કાળ વ્યતીત કરે છે. ॥સૂ-૧૨॥

ગોમ્મિક પહારદુસ્મળા નિબ્મચ્છળકહુયવયળભેસળાગમયા-
મિભૂયા અભિલ્લત્તણિવસળા મલ્લિળડંડિલ્લંડવસળા ઉકોડાલં-
ચનપાસુમ્મગ્ગળપરાયળેહિં ગોમ્મિયમ્મંડેહિં વિવિહેહિં વંધળેહિં
કિતે-હડિનિયડવાલરજ્જુયકુંડંડગવરત્તલોહસંકલં હત્થંદુ
ય વજ્જપટ્ટદામકળિકોડળેહિં અળળેહિં ય ઇવમાડ્ડળેહિં ગો-
મ્મિયમ્મંડોવગળેહિં દુક્ખસમુદીરળેહિં સંકોડળમોડળેહિં
વજ્જંતિ મંદપુળ્લા ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ટીકા—‘તહેવ’ તથેવ=પૂર્વોક્તપ્રકારે ‘કેદ’ કેચિન્ ‘પરસ્સ’ પરસ્ય
‘દવ્વં’ દ્રવ્યં ચોરયિતું ‘ગવેસમાળા’ ગવેસયન્તઃ=અન્વેષણં કર્વન્તઃ ‘ગહિયા’
ગૃહીતાઃ=રાજપુરુષૈર્નિગૃહીતા હતાશ્ચ=તાહિતાઃ દળ્લાદિભિસ્તતોવદ્ધાઃ = રજ્જ્વાદિ-
ભિર્ધન્ધનં પ્રાપિતાઃ તથા-રુદ્ધાઃ=કારાગારાદી નિરુદ્ધાશ્ચ ‘તુરિયં’ ત્વરિતં=શીઘ્રમ્
‘અડ્ઢાડિયા’ અતિધાટિતાઃ=રાજપુરુષૈર્ભ્રામિતાઃ કુત્ર ? ઇત્યાહ-પુરવરં=સકલ
નગરમ્ । નાગરિકજનાન્ પ્રતિદર્શિતા इत्यर्थः पुनश्च ‘समपिण्या’ समर्पिताः=

અવ સૂત્રકાર “જહા ફલં દેહ” ઇસ ચતુર્થ દ્વાર કા પ્રતિપાદન
કારતે હૈ—‘તહેવકેદ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(તહેવ) ઇસી પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે (કેદ) કિતનેક વ્યક્તિ
(પરસ્સ દવ્વં ગવેસમાળા) પર કે દ્રવ્ય કો ચુરાને કો સ્વોજમેં રહતે હુ
(ગાહિયા ય) રાજપુરુષો દ્વારા નિગૃહીત હોકર (હયાય) દળ્લાદિકો
દ્વારા તાહિત કિયે જાતે હૈ (વદ્ધા) રજ્જ્વાદિકો દ્વારા વાંધ દિયે જાતે હૈ
(રુદ્ધાય) કારાગાર આદિ મેં બંદ કર દિયે જાતે હૈ । (તુરિયં અડ્ઢાડિયા
પુરવરં) ઔર નગર નિવાસિયોં કે સમક્ષ નગરખર મેં ઘુમાયે જાતે હૈ ।

હવે સૂત્રકાર “જહા ફલં દેહ” એ ચોથા દ્વારનું પ્રતિપાદન કરે છે—
“તહેવ કેદ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—‘તહેવ’ પૂર્વોક્ત પ્રકારે ‘કેદ’ કેટલાક લોકો. “પરસ્સ દવ્વં
ગવેસમાળા” પારકાનાં દ્રવ્યને ચોરાવાની શોધમાં રહે છે. “ગાહિયાય” તેઓ
રાજપુરુષો દ્વારા પકડાઈને “હયાય” દંડા વગેરે દ્વારા મરાય છે. “વદ્ધા”
ઢોરડાં આદિ વડે બંધાય છે, “રુદ્ધાય” અને જેલખાનાં આદિમાં કેદ કરાય
છે, “તુરિયં અડ્ઢાડિયા પુરવરં” અને શહેરીઓની સમક્ષ આખા શહેરમાં

ઉપસ્થાપિતા; કેભ્યઃ ? इत्याह—‘ चोरग्राहचारभटचाडुकराण ’ चौरग्राहचारभट-
चाडुकरेभ्यः=तत्र चौरग्राहिणः चारभटाः=गुप्तचराः, चाडुकरणाः=मुखमियामुद-
भाषणेन चौरग्राहका इत्यर्थः, तेभ्यः ‘ तेहि य ’ तत्र चोरग्राहादि पुरुषैः ‘ कण्-
डण्पहारनिहया रक्खियखरफरुसवणतज्जणगलत्तः उउत्थलणाहि ’ कर्पटमहार
निर्दयाऽऽरक्षिकखरपरुषवचनतर्जनगलत्थल्लउत्थलणाभिः=तत्र कर्पटैः=यष्ट्याकार-
बलितवस्त्रैः ‘ कोडा ’ इति भाषा प्रसिद्धैः प्रहाराः=ताडनानि तथा निर्दया ये
आरक्षिकाः=कोटपालपालास्तेषां खरपुरुषैः=अतिनिष्ठुरैर्वचनैस्तर्जनानि-गलत्थ-
ल्लोत्थलनाश्च=गलत्थल्लाः = गलहस्तदानानि उत्थलनाः=परिवर्तनाद्येत्येताभिः
‘ विमणा ’ विमनसः=खिन्नचित्ताः सन्तः ‘ निरयवसहि सरिसं ’ नरकवसतिसदृशां
=नरकावसतुल्यां ‘ चारगवसहि ’ चारकवसति=कारागृहं ‘ पवेसिया ’ प्रवेशिताः ।

(समप्पिया चोरगाहचारभटचाडुकराण) बाद में वे राजपुरुष उन चोरों
को चोरग्राही-चोरों को पकड़ने वाले गुप्तचरों के (कि जो मधुर बोलकर
चोरोंको पकड़ने में सिद्धहस्त होते हैं उनके) आधीन कर देते हैं (तेहि य)
वे चोरग्राही चारभट आदि उन चोरों को पहिले तो (कण्डण्पहार)
कोड़ों की मार मारते हैं, तथा (निहयारक्खिय) निर्दय होकर कोटपाल
उन्हें (खरपरुषवणतज्जिय) अतिनिष्ठुर अत्यन्त कटु वचनों से तर्जित
करते हैं, तथा (गलत्थल्ल उत्थलणाहि य) गला पकड़कर दबोच देते हैं ।
(विमणा) इस तरह की क्रियाओं से अपमान जनक व्यवहारों से-
चोरों को ये बहुत अधिक खिन्नचित्त कर डालते हैं । जब ये बहुत बुरी
तरह खिन्नचित्त हो जाते हैं तो बाद में वे उन्हें (निरयवसहि सरिसं)
नरकावास तुल्य (चारगवसहि) कारागृह में (पवेसिया) बंद कर देते हैं ।

इत्यથ છે. “ સમપ્પિયા ચોરગાહચારમટચાડુકરાણ ” ત્યાર બાદ તે રાજપુરુષો
તે ચોરોને ચોરગ્રાહી-ચોરને પકડનારા ગુપ્તચરોને સોંપી દે છે. તે ગુપ્તચરો
મીઠાં વચનો બોલીને ચોરોને પકડવામાં નિપુણ હોય છે. “ તેહિ ય ” તે
ચોરગ્રાહી-ગુપ્તચર આદિ પહેલાં તો તે ચોરોને “ કણ્ડણ્પહાર ” કોરડાઓ
પડે કટકારે છે, તથા “ નિહયારક્ખિય ” નિર્દય થઈને કોટપાલ તેમને “ લ-
પરુસવણતજ્જિય ” અતિશય નિષ્ઠુર તથા અતિશય કડવાં વચનો સંભળાવે છે,
“ ગલ્લથ્થલ્લઉત્થલણાહિય ” ગળું પકડીને ઢબાવે છે, “ વિમણા ” આ પ્રકારની
અપમાનજનક ક્રિયાઓ તથા વર્તનથી તેઓ તે ચોરના ચિત્તમાં અત્યંત
ખિન્નતા ઉત્પન્ન કરે છે. બ્યારે તેઓ અત્યંત ખિન્ન થાય છે ત્યારે તેમને તે
લોકો ‘ નિરયવસહિ સરીર ’ નરકાગાર સમાન “ ચારગવસહિ ” કારાગૃહમાં

‘તત્થ વિ’ તવાપિ ‘ગોમ્મિકપ્પહારદૂમ્મણનિભ્મચ્છળકઙ્કુવવય્ઞમેસણમભયામિ-
ભૂયા’ ગૌલ્મિકપ્પહારદવનનિર્ભત્સનકટુકવચન મીષણકમયામિભૂતાઃ=તત્ર ગૌલ્મ-
કાનાં=કોટપાલાનાં યે પ્રહારાઃ=ક્રશાધાઘાતાઃ દવનાનિ=તુર્યતાપાદૌ ઉપતાપનાનિ
નિર્ભત્સનાનિ = જાતિકુલાદિનામોચ્ચારણપૂર્વકગાલિદાનાનિ કટુકવચનાનિ ચ
‘રે નીચ ! રે દુષ્ટ !’ ઇત્યાદિ રૂપાણિ મીષણકાનિ=મયજનકાનિ ‘જીવનપર્યન્તં
કારાગૃહં એવ મ્રિયસ્વ’ ઇત્યેવમાદિરૂપાણિ તેષાં મયેન અભિભૂતા યે તે તથા
‘અસ્તિત્તણિવસણા’ આસ્તિત્તિવસનાઃ = કર્ષણઘર્ષણાદિમિરાકૃષ્ટપરિધાનવસ્ત્રા
નગ્રીકૃતા ઇત્યર્થઃ, ‘મલિગઢંડિલ્લંડવસણા’ મલ્લિનદણ્ડિલ્લંડવસનાઃ=તત્ર મલિનં
‘ડણ્ડિ’ સીવિતં ‘ડણ્ડિ’ ઇતિ સોત્રિતવસ્ત્રાચકો દેશીશબ્દઃ, લ્લંડ=ફાટિતં ચ

(તત્થ વિ) વહાં પર મી વે (ગોમ્મિકપ્પહાર) કોટપાલોંકે કશા(કોડા)દિ-
દ્વારા પ્રદક્ષ આઘાતોં કો, (દૂમ્મણ) દવનોં કો-તુર્યતાપ આદિ મેં સ્વદે
કરને રૂપ ઉપતાપનોં કો, (નિભ્મચ્છળ) નિર્ભત્સનો કો-જાતિકુલ આદિ
કે નામોચ્ચારણપૂર્વક ગાલીમલૌજ આદિકો તથા (કઙ્કુવવય્ઞ) કટુક
વચનોં કો જો કિ “અરે નીચ ! ઓ દુષ્ટ ! જીવનપર્યન્ત તૂં. આ કારા-
ગાર મેં હી સડ ૨ કર મર ” ઇત્યાદિરૂપ સે (મેસણમ) મયપ્રદર્શક
હોતે હૈં-સહતે રહતે હૈં (મભયામિભૂયા) અને મય સે અભિભૂત હોતે
હૈં, તથા (અસ્તિત્તણિવસણા) કર્ષણ ઘર્ષણ આદિ કે કરને સે આનકા
પરિધાન વસ્ત્ર સ્ત્રુલ જાતા હૈ, અર્થાત્-યે નગન હો જાતે હૈં-નંગે કર દિવે
જાતે હૈં । (મલિગઢંડિલ્લંડવસણા) એસી સ્થિતિ મેં આનહેં જો વહાં વસ્ત્ર
લ્લંડ પહિરે કો મિલતા હૈ વહ વિલકુલ મલિન હોતા હૈ । બીચ ૨ મેં સિલા
હુયા રહતા હૈ । તથા કહીં ૨ ફટા મી રહતા હૈ । યહા “ડણ્ડિ” શબ્દ

“પવેષિકા” પૂરી દે છે. “તત્થ વિ” ત્યાં પણ તે કોડો “ગોમ્મિકપ્પહાર”
કોટપાલો દ્વારા કરવામાં આવતાં ચાણુકના પ્રહારો. “દૂમ્મણ” દહન-સૂર્યના
તાપમાં ઉભા રાખીને કરવામાં આવતું દહન, “નિભ્મચ્છળ” નિર્ભત્સના—
જાતિ કુળ આદિના ઉલ્લેખ સહિત અપાતી ગાળોને, તથા “કઙ્કુવવય્ઞ” કટુ
વચનોને, જેમ કે “હે નીચ ! હે દુષ્ટ ! તું આપું છવન આ કારાગૃહમાં જ
સડીને સડીને મર !” “મેસણમ” સહન કર્યા કરે છે, “મભયામિભૂયા” તે
પ્રહારના લયથી લયભીત રહે છે, તથા “અસ્તિત્તણિવસણા” ખેંચાખેંચી કર-
વાથી તથા ઘસડવાથી તેમનાં વસ્ત્રો ખસી જાય છે-તેથી નગન થઈ જાય છે.
તેમને નગન કશય છે. “મલિગઢંડિલ્લંડવસણા” એવી હાલતમાં તેમને ત્યાં જે
વસ્ત્રખંડો પહેરવાને મળ્યાં હોય છે. વચ્ચે વચ્ચે થિંગડાં વાળાં હોય છે, તથા

વસન=વસ્ત્રં યેષાં તે તથા મલિનસ્પાટિતસીંચિતવસ્ત્રસ્પષ્ટધારિણ દ્વયર્થઃ, 'ઉત્કોટાલં ચનપાસુમ્મગ્ગપરાયણેહિ' ઉત્કોટાલચ્ચનપાશ્વોન્માર્ગપરાયણૈઃ=ઉત્કોટાલચ્ચને=ઉત્કોટવિશેષે 'લાંચ-રિશ્વત' इति भाषाप्रसिद्धभेदविशिष्टे पार्श्वोन्मार्गणं च=ચૌરપાશ્વસ્થિતચોરિતદ્રવ્યાન્વેષણં, તેષુ પરાયણાઃ=તત્પરા યે તે તથા તૈઃ 'ગોમ્મિયમહેહિ' ગૌલ્મિકમ્પટૈઃ કોટપાલૈઃ 'વિવિહેહિ વંધણેહિ' વિવિધૈઃ વંધનૈઃ હેતુભૂતૈસ્તે ચૌરપુરુષાઃ વંધ્યન્તે इति वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः 'किं ते' आर्षत्वात्तृतीयार्थे प्रथमा तेन किम्भૂतैस्તૈરિત્યર્થઃ, તથા ચ કિમ્ભૂતૈઃ = કથં ભૂતૈસ્તૈર્વંધનૈરિ-ત્યાહ— 'હડિનિયડવાલરજ્જુયકુડંડગવરત્તલોહસંકલહર્થદુયવજ્જપટ્ટદામકણિ-કોટણેહિ' હડિનિગડવાલરજ્જુયકુડંડકવસાલોહશૂક્લલક્ષ્મ્યાન્દુકવર્ત્રપટ્ટદામકણિ-કોટનૈઃ=તત્ર 'હડિ' इति काष्ठनिर्मित निगडवन्धनानि 'खोडा' इति भाषा-प्रसिद्धानि, નિગડાનિ= લોહમયબેડી 'इति प्रसिद्धानि बालरज्जुकाः=गवादि-बीच में सिले हुए पुराने जीर्ण वस्त्र का बाचक है। (उत्कोटालंचणपासु-ममगणपरायणैहि) उत्कोट, लांच-रिश्वत-में तथा चोरों के पास में रहे हुए चुराये द्रव्यकी तपास करने में परायण ऐसे (गोम्मियमहेहि) गौल्लिकम्पट-कोटपाल (विविहेहि वंधणैहि) नाना प्रकार के बंधनों से उन चोरों को बांध देते हैं, (किं ते) वे बंधन किस प्रकार के होते सो कहते हैं—(हडिनियडवालरज्जुयकुडंडगवरत्तलोह संकलहर्थदुयवज्ज-पट्टदामकणिकोटणैहि) (हडि) काष्ठ निर्मित बांधने का बंधन विशेष, जिसमें चोर के पैर डाल दिये जाते हैं—सो वह वहीं पर खड़ा रहता है इधर उधर चल फिर नहीं सकता। भाषामें इसे खोड़ा कहते हैं। (नियडि) निगड-लोहे की बनी हुई बेडी, बालरज्जुक गाय आदि के बालों से बनी हुई रस्सी, कुदण्डक-जिसके अन्तर्भाग में काष्ठ लगे हुए

કોઈ કોઈ સ્થળે કાઠેલાં હોય છે. આથી “ હડિ ” શબ્દ વચ્ચે વચ્ચે સીંચેલાં પુરાણાં છાંયું વસ્ત્રનો સૂચક છે. “ ઉત્કોટાલંચણપાસુમ્મગ્ગપરાયણેહિ ” ઉત્કોટ, લાંચ-રિશ્વત, તથા ચોરીની પાસે રહેલ ચોરાયેલ દ્રવ્યની તપાસ કરવામાં પ્રવીણ એવા “ ગોમ્મિય મહેહિ ” ગૌલ્મિક ભટ-કોટપાણ “ વિવિહેહિ વંધણેહિ ” વિવિધ પ્રકારનાં બંધનોથી તે ચોરને બાંધે છે. “ કિં તે ? ” તે બંધનો કયા કયા પ્રકારના હોય છે, તે કહે છે—“ હડિનિયડવાલરજ્જુયકુડંડગવરત્ત-લોહસંકલહર્થદુયવજ્જપટ્ટદામકણિકોટણેહિ ” “ હડિ ” હેડ — લાકડાનું એક સાધન, જેમાં ચોરના પગ રાખવામાં આવે છે. તેમાં પગનું હલનચલન થઈ શકતું નથી “ નિયડિ ” નિગડ લોહની બનાવેલી બેડી, “ બાલરજ્જુક ” ગાય આદિના વાળમાંથી બનાવેલ દોરડું, “ કુદણક ” જેને છેડે લાકડું હોય એવો

વાલમય્યોરજ્જુકા; કુદ્ડકાનિ=કાષ્ઠમયપ્રાન્તભાગારજ્જુપાશાઃ વસ્ત્રાઃ=વર્મમય્યો
મહારજ્જવઃ લોહશુદ્ધલાશ્વ = પ્રસિદ્ધાઃ હસ્તાન્દુકાઃ=હસ્તનિયન્ત્રકવન્ધનવિશેષાઃ
'હથકડી' ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધાઃ વર્ધપટ્ટા=વર્મપટ્ટિકાઃ દામકાનિ=પાદવન્ધનરજ્જુ
વિશેષાઃ નિષ્કોટનાનિ=વન્ધનવિશેષા એવ તૈઃ 'અણ્ણેહિં ય' અન્યૈશ્વાનુક્તૈઃ
'એવમાહરેહિં' એવમાદિકૈઃ=ઉક્તપ્રકારૈઃ 'ગોમ્મિયમંડોવગરણેહિં' ગોલ્મિક-
માણ્ડોપકરણૈઃ=કોટપાલાનાં ચોરવન્ધકોપકરણૈઃ, 'દુક્કલસમુદીરણેહિં' દુઃલ્લસમુ-
દીરણૈઃ = દુઃલ્લસદાયકૈઃ 'સંકોઢણમોઢણેહિં' સંકોટનમોટનૈઃ=સંકોચનાનિ
હસ્તપાદાદીનાં મોટનાનિ ગલાદીનિ તૈઃ 'મંદપુણ્ણા' મન્દપુણ્ણાઃ=પાપિનોડત્ત-
ગ્રાહિણઃ 'વજ્ઞંતિ' વજ્ઞન્તે=વન્ધનં પ્રાપ્નુવન્તિ ॥ સૂ-૧૩ ॥

પુનસ્તે કિં ફાલં પ્રાપ્નુવન્તિ ? ઇત્યાદ- 'સંકોટ' ઇત્યાદિ—

મૂલ્ય—સંપુઢકવાડલોહપંજર-ભૂમિધર-નિરોહકુવચારગ-

કીલગજૂવચક્ર-વિત્તતવંધણાલભાલણ-ઉદ્ધચલણ વંધણ વિહં-
મણાહિ ય વિહેડિયંતા અહકોઢગગાઢરસિરવદ્ધઉદ્ધપૂરિય-

હોં એસી દોરીકી ફાંસી, વરત્રા-ચમડે સે વનાઈ ગઈ રસ્સી, (લોહસંકલ)
લોહકી સાંકલ, (હથકડી) હસ્તાન્દુક-હથનકડી, (વજ્ઞપટ્ટ દામકણિકો-
હણેહિં) વર્ધપટ્ટ-ચમડેકી પટ્ટિકાઈં ઓર દામનક-પૈરોં કો વાંધને કે વંધન
વિશેષ હૈં, નિષ્કોટન-વંધનવિશેષ હૈં; ઇન વંધનોં સે (અણ્ણેહિં એવમા-
હરેહિં) તથા ઇન વંધનોંસે અનિરિત્ત જો ઓર મો (ગોમ્મિય મંડોવગરણેહિં)
અનકોતવાલોં કે ચોરોં કો વાંધનેકેલિયે ઉપકરણ વિશેષ હૈં કિં જો (દુક્કલ-
સમુદીરણેહિં) વહુત હી અધિક દુઃલ્લપ્રદ હોતે હૈં અનસે, એવં (સંકોઢણમો-
હણેહિં) હસ્ત પૈર આદિ સંકોચન સે તથા ગલે વગૈરહ કે મોટન સે (મંદપુ-
ણ્ણા) વે અભાગે ચોર (વજ્ઞંતિ) વંધનોંકો પ્રાપ્ત હોતે હૈં ॥ સૂ-૧૩ ॥

દોરડાને કાંસો વરત્રા-આમડાની દોરી, “લોહસંકલ” લોહાની સાંકળ, “હથ
કડી” હાથકડી, “વજ્ઞપટ્ટદામકણિકોહણેહિં” વર્ધપટ્ટ-આમડાની પટ્ટીઆ, અને
દામનક-પગ વાંધવાનું પાસ વંધન, નિષ્કોટન-એક પ્રકારનું વંધન-આદિ
વંધનોથી “અણ્ણેહિં એવમાહરેહિં” તથા તે સિવાયનાં બીજાં વંધનો કે
“ગોમ્મિયમંડોવગરણેહિં” જેમનાં ચોરોને વાંધવાને માટે કોટવાળો ઉપયોગ
કરે છે અને જે “દુક્કલસમુદીરણેહિં” વંધનો અત્યંત દુઃખદાયક હોય છે,
અને જેનાથી “સંકોઢણમોહણેહિં” હાથ પગ આદિનું સંકોચન તથા ગળાં
વગેરેનું મોટન (મરોડવાની ક્રિયા) તે “મંદપુણ્ણા” કમનસીબ ચોરો
“વજ્ઞંતિ” અનુભવે છે. ॥ સૂ-૧૩ ॥

સુવશિની ટીકા અં ૩ સૂં ૧૪ ચોરા: કિં ફલં પ્રાપ્નુવન્તીતિનિરૂપણમ્ ૩૨૩

ફુરંતરકંડગ-મોડળોહિં સંવદ્ધાય નીસસંતા સીસાવેઢ ઝુરુ-
યાલચપ્પડગસંધિવંધન તત્તસલાગસૂઢ આકોડળાણિ તચ્છળ
વિમાળનાણિ ય સ્વારકહુય તિત્તનાવળજાયણકારણ-સયાણિ
બહુયાણિ પાવિયંતા, ડરઘોડીદિળગગાઢપેછળ-અટ્ટિકસંભગ્ગ-
સપંસુલિયા-ગલકાલક-લોહદંડ-ડર-ડદર-વત્થિ-પિટ્ઠિ-પરિપી
લિયામત્થંતહિયય-સંચુણિયંયુવંગા આણતિ કિ કરેહિ
કેડઅવિરાહિં ય વેરિણહિ જમપુરિસસંનિભેહિં પહયા તે તરથ
મંદપુળગા ચ્ઢવેલાવદ્ધ પટ્ટપોરાચ્છિવા કસલત્તવરત્તવેત્તપહા-
રસયતાલિયંયુવગા કિવળાલંબંતવમ્મવળવેયણવિમુહિય-
મળાઘળકોટ્ટળનિયલજુચલ-સંકોડિયમોહિયા ય કીરંતિ
નિરુચ્ચારા અસંચરણા ણ્યા અળ્ળાય ઇવમાઈઓ વેયળાઓ
પાવા પાવંતિ ॥ સૂં ૧૪ ॥

ટીકા-પૂર્વોક્તા: મન્દપુળ્લા: ‘સંપુડકવાડ-લોહપંજર-ભૂમિઘરનિરોહકૂવચારગ
કીલગજૂવચકવિતતવંધળસ્વંભાલળ-ડદ્ધચલગવંધળવિહમ્મળાહિય વિદેહિયંતા’
તત્ર ‘સંપુડકવાડ’-સમ્પુટકપાટં = પિહિતકપાટં લોહપંજરં તથા ‘ભૂમિવર’
ભૂમિગૃહં=ભૂમેરન્તગૃહં ‘ભોવરા’ ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધં ચ તત્ર યો ‘નિરોહ’ નિરોધઃ=
પ્રવેશનં, તથા ‘કૂવ’ કૂપઃ=અન્ધકૂપઃ, ‘ચારગ’ ચારકઃ=વન્દિગૃહં ‘કીલગ’

ફિર વે કયા ફલ પાતે હૈં? સો કહતે હૈં-‘સંપુડકવાડ’ ઇત્યાદિ।

ટીકાર્થ-યે ચોરજન (સંપુડકવાડ લોહપંજર-ભૂમિઘરનિરોહ-કૂવ-ચારગ
કીલગ-જૂવચકવિતતવંધળ-સ્વંભાલળ-ડદ્ધચલગવંધળ-વિહમ્મળાહિય
વિદેહિયંતા) (સંપુડકવાડલોહપંજર) બંદ હૈં કપાટ-ગુગલ જિન્હોં કે એસે
લોહ કે પિજરોં મેં તથા (ભૂમિઘરનિરોહ) તલઘરોં મેં બંદ કર દિયે જાતે
હૈં, (કૂવ) અંધકૂપ મેં પટક દિયે જાતે હૈં, (ચારગકીલગ) વંદિગૃહ મેં

બીજું કયું ક્ષણ મળે છે તે સૂચકાર કહે છે-“સંપુડકવાડલોહપંજર” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-તે ચોરને “સંપુડકવાડલોહપંજર” બંધ બાંધણીવાળા લોહના પાંચ
શમાં, તથા “ ભૂમિઘરનિરોહ ” ભોંયરામાં પૂરી ડેવામાં આવે છે, “ કૂવ ”
અંધારીયા ડૂવામાં પટકવામાં આવે છે, “ ચારગકીલગ ” કારાગૃહમાં હાથકડી

કીલકા: 'સુંટા' ઇતિ પ્રસિદ્ધા: 'જૂવ' ગ્રુપા: = સ્તમ્ભવિશેષા: 'ચક્ર' ચક્રાણિ
 રયાદ્વાનિ 'પહિયા' ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધાનિ તેષુ ચિત્તવન્ધનં = વાહુનહ્વાદિવિષા-
 ટમેન નિયન્ત્રણં તથા 'લંબાલણ' સ્તમ્ભાલગનં = સ્તમ્ભૈ: - સહ રજ્જ્વાદિભિરાવેષ્ટનં
 ગલ્લે રજ્જું વદ્ધ્વા સ્તમ્ભેષુ સમાલમ્બનં વા તથા 'ઉદ્ધચલણવંધન' ઊર્ધ્વચરણવન્ધનં
 ચ = પાદયોરુપરિકૃત્ય વન્ધનમિત્યાદિર્ધ્યા 'વિહમ્મણાહિં' વિધર્ષણા: = પીડાસ્તામિ:
 'વિહેડિયંતા' વિહેડ્યમાના = પીડ્યમાના: સંકોટિતા મોટિતા: ક્રિયન્તે ઇત્યગ્રેણ
 સમ્બન્ધ: । તથા--- 'અહકોડગગાઢરસિરવદ્ધુદ્ધપૂરિયપુરંતરકંડગમોડળેહિં'
 અથ: કોટકગાદોર: શિરોવદ્ધોર્ધ્વપૂરિતસ્ફુરદુર: કાણ્ડકમોટનૈ: , તત્ર--અથ:
 કોટકેન = અથો નમયનેન ગાઢમ્ = અત્યર્થમુરસિ = વક્ષ:સ્થલે શિર: = મસ્તકં વદ્ધં યેષાં
 તે તથા અતएव ઊર્ધ્વપૂરિતા: = શ્વાસપ્રશ્વાસૈ: પૂરિતશરીરોર્ધ્વભાગાસ્તથા સ્ફુરદુર:
 કાણ્ડકાશ્વ = કમ્પમાનવક્ષ:સ્થલપૃષ્ઠાસ્થિકા યે ચૌરાસ્તેષાં યાનિ મોટનાનિ = પુન: પુન-
 હ્યકડી આદિ યૈં બાંધ દિયે જાતે હૈં, લૂટોં પર લટકા દિયે જાતે હૈં. (જૂવ)
 સ્તંભવિશેષોં સે જકડુ કર બાંધ દિયે જાતે હૈં, (ચક્ર) પહિયોં સે (વિત-
 તવંધન) હાથ પૈર બાહર નિકાલકર રસિયોં સે બહુન વુરી રતહ સે
 જકડુ દિયે જાતે હૈં, (લંબાલણ) વડે ૨ સંભોં કે ઊપર ગલે મૈં રજ્જુ
 આદિ બાંધકર લટકા દિયે જાતે હૈં । તથા (ઉદ્ધચલણવંધન) પૈરોં મૈં
 રસ્સી આદિ સે બાંધકર મુંહ નીચા કરકે વૃક્ષાદિકોં મૈં લટકા દિયે જાતે
 હૈં । (વિહમ્મણાહિંય) ઇસ પ્રકાર કી-વિવિધ પ્રકાર કી પીડાઓં સે વે
 (વિહેડિયંતા) પીડિત કિયે જાતે હૈં । તથા (અહકોડગગાઢરસિરવદ્ધુ
 ઉદ્ધપૂરિયપુરંતરકંડગમોડળેહિં) (અહકોડગગાઢરસિરવદ્ધુપૂરિય)
 ઇનકા મસ્તક ઇતને અધિક રૂપ મૈં નીચે ઝુકાયા જાતા હૈં કિ જિસસે
 વહ વક્ષસ્થલ પર આકર ચિપક જાતા હૈં, ઓર ઇસી કારણ શ્વાસ ઉચ્છ-
 વાસોં સે ઇનકા શરીર કા ઊર્ધ્વભાગ પૂરિત હોતા રહતા હૈં, (પુરંતર

આદિ વડે બાંધવામાં આવે છે, ખૂંટા ઉપર લટકાવવામાં આવે છે, “જૂવ”
 સ્થંભો સાથે બાંધવામાં આવે છે, “ચક્ર” ચક્રોથી જડકાવામાં આવે છે.
 “વિતતવંધન” હાથ પગ દોરડાં વડે ઘણી જ ખરાબ રીતે બાંધવામાં
 આવે છે. “લંબાલણ” મોટા મોટા થાંભલાઓ ઉપર ગળે દોરડાં
 બાંધીને લટકાવવામાં આવે છે, તથા “ઉદ્ધચલણવંધન” પગે દોરડાં
 બાંધીને વૃક્ષાદિ ઉપર બાંધે સાથે લટકાવવામાં આવે છે, “વિહમ્મણાહિંય” આ
 પ્રકારની વિવિધ યાતનાઓથી તેમને “વિહેડિયંતા” પીડવામાં આવે છે.
 તથા “અહકોડગગાઢરસિરવદ્ધુપૂરિય” તેમનાં મસ્તકને એટલું બધું નીચે
 નમાવવામાં આવે છે કે જેથી તે છાતી ઉપર ઘોંટી બંધ છે, અને તે કારણે
 શ્વાસોચ્છવાસથી તેમનાં શરીરનો ઊર્ધ્વભાગ ખૂણું રહે છે, “પુરંતરકંડગ”

સુરશિની ટીકા અ. ૩ સુ. ૧૪ ચૌરા: કિ ફલં પ્રાપ્તુવન્તોતિનિરુપણમ્ ૩૨૫

મર્દનપૂર્વકમુખાંધ: કરુણાદીનિ તૈર્વિદેહ્યમાનાં इति પૂર્વેણ સમ્બન્ધ: । તથા ‘સંવદ્ધા’ સંવદ્ધા: = રજ્જ્વાદિભિદ્વંદ્વદ્ધા: સન્ત: ‘નીસસંતા’ નિ:શ્વસન્ત: = નિશ્વાસં વિમુશ્ચત: ‘સીસાવેદઝરુયાલવપ્પડગસંધિવંધણતત્તસલાગમ્મદ્દાકોડણાણિ’ શીર્ષાવેષ્ટનોરુદાર-વપ્પડસંધિવન્ધનતત્તસલાકામૂરુયાકુટ્તનાનિ = શીર્ષાવેષ્ટન = આર્દ્રવર્માદિભિ: શિરોવ-ન્ધનમૂરુદાર: = જહ્વાવિદારણં વપ્પડગસન્ધિવન્ધનં = ‘વપ્પડગ’ इति કાષ્ઠયન્ત્રવિ-શેષસ્તેષાં કાષ્ઠયન્ત્રવિશેષાણાં સન્ધિસ્થાનેષુ જાનુકૂર્પરાદિષુ વન્ધનં, તથા તપ્પાનાં શલાકાનાં = લોહકીલકાનાં મૂત્રીનાં ચ = પ્રતીતાનામાકુટ્તનાનિ = શરીરે પ્રવેશનાનિ યાનિ તાન્યેતાનિ, તથા - ‘તચ્છણવિમાણણાણિ’ નક્ષણવિમાણનાનિ = વાસિમિસ્ત-કંઢગ) इनके वक्षस्थल की तथा पृष्ठभाग हड्डियां कंपित होने लग जाती हैं । (मोड़णेहिं) बार २ इन चोरों का वे कोतवाल लोग मर्दन करते हैं बार २ ऊँचे नीचे उठाते बैठाते हैं, इस तरह से बहुत दु:खित करते रहते हैं । (संवद्धा) रज्ज्वादिक से ईन्हें बहुत ही दृढ़ता के साथ हाथ पैर आदि अवयवों में बांध देते हैं (नीससंता) इस कारण जोर २ से हांकने लग जाते हैं । (सीसावेदउरुयाल-वप्पडसंधिवंधणतत्तसलाग म्मद आकोडणाणि) (सीसावेद) गीले चमड़े आदि से इनका शिर बांध दिया जाता है, (उरुयाल) ऊरुदार-जंघाएँ इनकी इतनी अधिक चौड़ी करवाई जाती हैं कि जिससे उनका विदारण (नृट जाना) हो जाता है । (वप्पडग-संधिवंधण) जानुकूर्पर (कोणी) आदि संधि स्थानोंमें एक प्रकारके काष्ठयंत्र बांध दिये जाते हैं तथा (लोहसलाग) शरीरमें तप्तलोहे की शलाईयों से दाग दिये जाते हैं और (मूर्द्ध आकोडणाणि) गरम लोहेकी मूर्द्धयां उसमें प्रविष्ट की जाती हैं, तथा (तच्छणविमाणणाणि) चमूला आदिसे

તેમની છાતી તથા પીઠના હાડકા કંપવા લાગે છે, “ માઢणेहिं ” તે ચોરોતું તે કાટયાળો વારંવાર મર્દન કરે છે. તેમને વારંવાર ઊઠ બેસ કરાવે છે, અને એ રીતે તેને ખડુ જ દુ:ખ છે. “સંવદ્ધા” તેમના હાથ પગ આદિ અવય-વોને દોરડાં આદિ વડે મજબૂત રીતે બાંધી દેવામાં આવે છે, “નીસસંતા” તે કારણે તે બિચારા હાંફી બળે છે. “સીસાવેદ” બીનાં આમડાં આદિથી તેમનાં શિર બાંધી દે છે, “ઝરુયાલ” તેમની બાંધ એટલી બધી પહોળી કરવામાં આવે છે કે તે કારણે તેમનું વિદારણ થાય છે, “વપ્પડગસંધિ-વંધણા” જાનુ કૂર્પર (ગુદા) આદિ સાંધાવાળી જગ્યાઓમાં એક પ્રકારનાં કાષ્ઠયંત્ર બાંધી દેવામાં આવે છે, તથા “લોહસલાગ” તપાવેલા લોહના સળિયાઓ વડે શરીર પર ડામ દેવામાં આવે છે, અને “મૂર્દ્ધાકોડણાણિ” ગરમ કરેલી લોહની સોયો શરીરમાં લોંકવામાં આવે છે, તથા “તચ્છણ વિમા-

333

प्रश्नव्याकरणसूत्रे

क्षणाग्निः=वासीभिः काष्ठस्येव गात्रक्षोभनानि, विमानानि=गालीप्रदानादिभिर्वि-
विधरीत्याऽपमानकरणानि तथा 'स्वारकडुयत्तित्तनावणजायणकारणसयाणि' सार-
कडुकुत्तित्तनावणयातनाकारणशतानि = तत्र क्षाराणि=सर्जीक्षारादीनि कडुकानि=
निम्बादीनि तिक्तानि च=मरीचादीनि तेषां 'नावणं' इति मृत्वनसिकादौ
प्रक्षेपणं, तदादीनि यानि यातनाकारणशतानि=विविधवेदनाकारणशतानि तानि
'बहुयाणि' बहुकानि 'पात्रियंता' प्राप्तुवन्तः, 'उरघोटीदिष्णागाढपेल्लण-
अद्विकसंभगसंपुलिया' उरघोटीदत्तगाढप्रेरणसंभगास्थिकसंपुलिकाः = तत्र
उरसि=वक्षःस्थले दत्ताः=स्थापिताः या घोटी 'घोडी' इति प्रसिद्धं महाकाष्ठं
तस्या गाढम्=अत्यर्थं यत्प्रेरणं=घर्षणपूर्वकं सञ्चालनं तेन संभगानि=वृटितानि

उनके शरीर को छीलते हैं और विमानन गाली आदि से उनको अपमानित करते हैं। (खारकडुयतित्तनावणजायणकारणसयाणि) (खार) मुख नासिका आदि में सर्जो क्षार आदि क्षार पदार्थों का (कडुय) आदि कटुक पदार्थों का एवं (तित्त) मरीचि आदि तित्त पदार्थों का चूरण (नावण) प्रक्षिप्त किया जाता है, (जायणकारणसयाणि) इत्यादि रूपसे (कारणसयाणि) वेदना प्रदानके जितने भी सैकड़ों प्रकार हैं उन सबका उन द्रव्यहरण करनेवाले चोरोपेयर प्रयोग किया जाता है। इस तरह (बहु-याणि) बहुत प्रकारकी घोरानिघोर वेदनाको (पाविघंता) प्राप्त हुए वे जीव (उरघोडीदिण्ण गाढ पेल्लण अट्टिक संभगसंपंसुलिया) (उरघोडी) जब उनके वक्षःस्थल पर बहुत अधिक थोझवाली काष्ठ की घोड़ी (दिण्णगाढपेल्लण) इधर से उधर खेंचकर फिराई जाती है इससे (अट्टिकसंभ-

ખળાણિ” વાંસલા આદિથી તેમના શરીરને છોલે છે, અને ગાળો આદિથી તેમને અપમાનિત કરે છે. “સ્વારકહુયતિત્તનાવળજાયણકારણસયાણિ” “સ્વાર” મુખ, નાક આદિમાં સાશુખાર આદિ ક્ષાર યુક્ત પદાર્થોની “કહુય” ક્ષીણાણી આદિ કડવા પદાર્થોની, અને “તિત્ત” મરચાં આદિ તીષ્ણાં પદાર્થોની ભૂદ્ધિ “નાવળ” નાખવામાં આવે છે, “જાયણકારણસયાણિ” ઇત્યાદિ પ્રકારની પીડા પહોંચાડવાની જે સંકટો પદ્ધતિયો છે, તે બધીને તે દ્રવ્ય હરણ કરનારા ચોરો ઉપર પ્રયોગ કરવામાં આવે છે, આ રીતે “બહુયાણિ” અનેક પ્રકારની ભયંકરમાં ભયંકર વેદનાઓ “પાવિયંતા” તે લોકો અનુભવે છે. “ઉરથોદીવિળ્લગાદપેતલ્લળવટ્ટિકસંભગ્ગાસપંસુલિયા” “ઉરથોદી” બન્યા

સુવર્ણિની ટીકા અં ૩ સૂં ૧૪ ચોરા: કિં કલં પ્રાપ્તુવન્તીતિનિરૂપણમ્ ૩૨૭

સપંશુલિકાનિ=પાર્શ્વોસ્થિસહિતાન્યસ્થોનિ યેષાં તે તથા ઊરસિ મહાકાષ્ઠસ્ય-
ચાલનેન ભ્રમપાર્શ્વોસ્થિકા ક્ષયર્થઃ, 'ગલકાલકલોહદંડઊરુદરવસ્થિપિટ્ટપરિપીલિયા'
ગલકાલકલોહદંડોરુદરવસ્થિપૃષ્ઠપરિપીલિતાઃ=ગલ ઇવ=મત્સ્યભેદકકંટકકથત્
કાલકલોહદંડઃ=શ્યામલોહદંડસ્તેનોરસિ=વક્ષઃસ્થલં, ઉદરે વસ્તી=નાભ્યધોગુહ્ય-
પ્રદેશે પૃષ્ઠે ચ પરિપીલિતાઃ=આહતા યે તે તથા, 'મત્યંતહિયયસંચુણિયંગુવંગા'
મધ્યમાનહૃદયસઠ્ચૂર્ણિતાઙ્ગોપાઙ્ગાઃ=તત્ર મધ્યમાનં=મહાકાષ્ઠાદિભિર્વિલોહ્યમાનં
હૃદયં=વક્ષઃસ્થલં યેષાં તે મધ્યમાનહૃદયાઃ, તથા કઠોરભૂમ્યાદૌ ઘર્ષણાદિના સઠ્ચૂ-
ર્ણિતાન્યઙ્ગાનિ=શિર ઊર ઉદર પૃષ્ઠવાહુદ્વયચરણદ્વયઙ્ગાઙ્ગાનિ ઊગઙ્ગાનિ ચ=
કર્ણનાસિકા કરચરણાઙ્ગુલાદીનિ યેષાં તે સઠ્ચૂર્ણિતાઙ્ગોપાઙ્ગાશ્ચ યે તે તથા, એતે પાપા
વેદનાઃ પ્રાપ્તુવન્તીત્યગ્રેણ સમ્બન્ધઃ । 'કેહ' કેચિન્=કેચન 'અવિરાહિય-વેરિર્ણિ'

માપંસુલિયા) उनकी पांसली सहित हड्डियां पीस जाती है तब, तथा
(गलकालकलोहदंडउरुदरवस्थिपिट्टपरीपीलिया) (गल) मत्स्य
भेदक कंटक की तरह (कालकलोहदंड) काले लोहे के दण्ड से (उर
वक्षस्थल, (उदर) पेट, (वस्थि) वस्ति-नाभि के नीचे का गुह्यप्रदेश,
एवं (पिट्ट) पृष्ठ इन स्थानों पर जब वे (परिपीलिया) आहत होते हैं
तब, तथा (मत्यंतहिययसंचुण्णियंगुवंगा) (मत्यंतहियय) जब उनका
हृदय महाकाष्ठ आदि से मथित किया जाता है तब, तथा (संचुण्णियं-
गुवंगा) कठोर भूमि के ऊपर घर्षण आदि से जब उनके अंग और
उपांग अच्छी तरह चूर्णित हो जाते हैं तब, बहुत ही अधिक दुःखी
होते हैं । शिर, उर, उदर, पृष्ठ, बाहुद्वय और चरणद्वय, ये आठ अंग
हैं । तथा कर्ण, नासिका, कराङ्गुली एवं चरणाङ्गुली आदि उपांग हैं ।
इस प्रकार ये (केह) कितनेक अदस्तग्राही चोर (अविराहियवेरिर्णि)

તેમની છાતી ઉપર ઘણા ભારે વજનવાળી હાડકાની થોડી “વિળ્ળમાઢપેલ્લળ”
ખેંચીને આમ તેમ ફેરવવામાં આવે છે, ત્યારે “અટ્ઠિક સંમગ્ગાવંસુલિયા”
તેમની પાંસળીઓનાં હાડકાં પીસાઈ બન્ય છે, તથા “ગલ” માછલીને લીધેનાર
કાંટાની જેમ “કાલકલોહદંડ” લોહાના કાળા દંડા વડે “ઉર” છાતી
“ઉદર” પેટ, “વસ્થિ” વસ્તિ-ગુહ્ય પ્રદેશ, અને “પિટ્ટ” પીઠ વગેરે સ્થાનો
પર બ્યારે “પરિપીલિયા” તેમને માર પડે છે ત્યારે, તથા “મત્યંત હિય
ય સંચુણિયંગુવંગા” “મત્યંત હિયય” બ્યારે તેમના હૃદયનું મહાકાષ્ઠ આદિ
દ્વારા મંથન કરવામાં આવે છે ત્યારે, તથા “સંચુણિયંગુવંગા” કંઠથી જમીન
ઉપર ઘસડવાને લીધે બ્યારે તેમનાં અંગ ઉપાંગોનો સારી રીતે ચૂરો થાય
છે ત્યારે તેઓ ઘણા જ દુઃખી થાય છે. શિર, ઉર, ઉદર પૃષ્ઠ, બે હાથ અને
બે પગ એ આઠ અંગો ગણાય છે. તથા કાન, નાક, હાથ પગનાં આગળનાં
વગેરે ઉપાંગો કહેવાય છે. એ પ્રમાણે તે “કેહ” કેટલાક અદસ્તગ્રાહી-ચોર,

અવિરાધિતવૈરિકૈઃ=નિરપરાદ્યા એવ વૈરિણઃ શત્રુઃ=નિષ્કારણવૈરિણ ઇત્યર્થઃ, તૈઃ
 ‘જમપુરિસસંનિભેહિ’ યમપુરુષસન્નિભૈઃ=પરમાધાર્મિકદેવસદૃશૈઃ ભવોત્પાદકત્વાતૈ-
 રેવંભૂતૈઃ ‘આણત્તિકિકરેહિ’ આણત્તિકિકરૈઃ=રાજનિદેશકારિભિઃ પુરુષૈઃ ‘પહયા’
 પ્રહતાસ્તૈઃ=અદત્તાડડાવિનઃ ‘તત્થ’ તત્ર=કારાગારે ‘મંદપુણ્ણા’ મન્દપુણ્યાઃ=
 ભાગ્યહીનાઃ ‘ચઢવેલાવદ્ધપટ્ટપોરાચ્છિવાકસલત્તવરત્તવેત્તપહારસનતાલિયંગુવંગા’
 ‘ચઢવેલાવદ્ધપટ્ટપોરાચ્છિવાકસલત્તવરત્તવેત્તપહારસનતાલિયંગુવંગા’ તત્ર-
 ચઢવેલા=ચપેટા ‘વદ્ધપટ્ટ’ વર્ધપટ્ટ ‘વદ્ધપટ્ટ’=વર્મપટ્ટઃ ‘પોરા’ લોહકીલકાઃ,
 દેશીશબ્દોડયમ્ ‘ચિવા’ ચિક્કણચર્મકશા ‘ચાબુક’ ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધા, દેશી
 શબ્દોડયં, કશાઃ=અશ્વાદિતાડનચર્મવશ્ટિઃ, ‘લયા’ લતા=અશ્વાદિતવૃક્ષશાખા-
 યશ્ટિઃ ‘છઢી’ ‘કામઢી’ ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધા ‘વરત્ત’ વરત્ત=વર્મમયીરજ્જુઃ
 ‘વેત્ત’ વેત્ત=વેત્રયશ્ટિઃ, એતેષાં ‘પહારસય’ પ્રહારશૈઃ ‘તાલિયંગુવંગા’ તાલિ-
 તાક્ષોપાક્ષાઃ=તાલિતાન્યક્ષોપાક્ષાનિ યેષાં તે તથા, ‘કિવિણા’ કૃપણાઃ=દીનાઃ,

વિના અપરાધ કે હી વૈરી બને હુણ-નિષ્કારણ શત્રુ ભાવ કો પ્રાપ્ત હુણ
 તેસે (આગત્તિકિકરેહિ) રાજનિદેશકારી પુરુષો કે દ્વારા કિ જો
 (જમપુરિસસંનિભેહિ) યમપુરુષ-પરમાધાર્મિક જેસે હોતે હૈં (તત્થ) ઉસ
 કારાગાર મેં (પહયા) આહત-દુઃખિ કિયે જાતે હૈં । વહાં પર વે (મંદ-
 પુણ્ણા) અભાગે (ચઢવેલાવદ્ધપટ્ટપોરાચ્છિવાકસલત્તવરત્તવેત્તપહારસ-
 યતાલિયંગુવંગા) (ચઢવેલા) થપ્પડોં કે, (વદ્ધપટ્ટ) ચર્મ પટ્ટોંકે, (પોરા) પોર-
 લોહે કે સ્ત્રીલોં કે, (ચિવા) ચિકને ચમડાં કે કોડોં કે (કસ) ચાબુક
 કે, (લયા) લતા-હરે વૃક્ષકી શાખા કી ‘છઢી’ કે, (વરત્ત) વરત્રા-
 ચમડે કી રસી કે, વેતોં કે (પહારસય) સૈકડોં પ્રહારોં સે (તાલિયંગુ-
 વંગા) અંગ ઉપાંગોં મેં તાલિન કિયે જાતે હૈં । (કિવિણા) દીનદશાસં-

“અવિરાધિત વૈરિકૈઃ” વિના વાંકે દુઃખન બનેલા-વિના કારણ શત્રુ બની
 બેઠેલા, “જમપુરિસસંનિભેહિ” યમ દેવ જેવા “આણત્તિકિકરેહિ” રાજ
 પુરુષો દ્વારા, તે કારાગારમાં “પહયા” પ્રહારો વડે દુઃખી કરાય છે. ત્યાં તે
 “મંદપુણ્ણા” અભાગી લોકો “ચઢવેલાવદ્ધપટ્ટપોરાચ્છિવાકસલત્તવરત્તવેત્ત-
 પહારસયતાલિયંગુવંગા” “ચઢવેલા” થપ્પડોના “વદ્ધપટ્ટ” ચર્મપટ્ટોના
 “પોરા” લોહાના ખીલાઓના, “ચિવા” ચીકણાં ચામડાના કોરડાના, “કસ”
 ચાબુકના, “લયા” લીલા વૃક્ષની ડાળીઓની સોટીઓના “વરત્ત” વરતના
 ચામડાનાં દોરડાંના અને નેતરની સોટીઓના, “પહારસય” સૈકડો પ્રહારો
 “તાલિયંગુવંગા” તેમનાં અંગ ઉપાંગો પર મારવામાં આવે છે. “કિવિણા”

સુદર્શિની ટીકા અ० ૩ સૂ०૧૪ ચૌરા: કિં ફલં પ્રાપ્તુવન્તીતિનિરૂપણમ્ ૩૨૯

તથા 'લંબંતચમ્મવળવેયણવિમુહિયમણા' લમ્બમાનવર્મવળવેદનાત્રિમુશ્વિતમનસઃ=લમ્બમાનવર્માણિ=ગલચ્ચર્માણિ યાનિ વ્રણાનિ=ક્ષતાનિ 'વાય' ઇતિ મસિદ્ધાનિ તેષાં યા વેદનાઃ=પીડાઃ તામિઃ વિમુશ્વિતં=ચોરીકરણાદ્ વિરક્તં મનો યેષાં તે તથા, 'ઘણકોટ્ટણનિયલજુયલસંકોડિયમોહિયાય' ઘનકુટ્ટુનનિગડયુગલસંકોટિતમોટિતાશ્ચ=તત્ર ઘનકુટ્ટુનેન=લોહમયમુદ્ગરતાડનેવ નિગડયુગલેન=નૃહલાદ્યવન્ધને-નેત્યર્થઃ, સંકોટિતાઃ=સક્રોચિતા મોટિતાઃ=ચક્રીકૃતાશ્ચ યે તે તથા 'કીરંતિ' 'ક્રિયન્તે=રાજપુરુષૈરિતિ ક્રૂરેણ સમ્બન્ધઃ। તથા નિરુચ્ચારાઃ=નિરુદ્ધમૂવપુરીપોત્સર્ગાઃ, યદ્વા-નિરુચ્ચારાઃ=સ્વપીડામતીકારાર્થમેકશબ્દોચ્ચારણમાત્રવપિકર્તુમશક્તાઃ, અત એવ અસંચરણાઃ=ગમનાગમનવર્જિતાઃ એકસ્થાનમતિવદ્વા એવ 'પાયા' પાયાઃ=પાપ-પત્ર યને હુએ તથા (લંબંતચમ્મવળવેયણવિમુહિયમણા) (લંબંતચમ્મ) કોઢો આદિ કી ખાર સે શરીર કી ચાલ ચિંચ જાને કે કારણ લટકતે હુએ ચમદે સે યુક્ત (વળ) વાયોં કી (વેયણ) વેદના સે (વિમુહિયમણા) જિનકા મન ચોરી કરને સે વિરક્ત હો ચુકા હૈ એસે, તથા (ઘણકોટ્ટણનિયલજુયલસંકોડિયમોહિયાય) (ઘણકોટ્ટણ લોહમય મુદ્ગરોં કી ચોટ સે, એવં (નિયલજુય) દો સાંકલોં દ્વારા કિયેગયે વંધનોં કે (સંકોડિયમોહિયા) જિનકા શરીર સંકુચિત્ત હોકર ચક્રીમૂત્ત હો ચુકા હૈ તથા (નિરુચ્ચારા) અપની પીડા કો પ્રકટ કરને કે લિયે જો એક શબ્દ કે ઉચ્ચારણ કરને મેં ખીં અસમર્થ બન ચુકે હૈં, અથવા-વેહદ માર કે કારણ મલ સૂત્રકા ઉત્સર્ગ જિનકા બંદ હો ચુકા હૈં ઓર હસી કારણ જો (અસંચરણા) એક હી સ્થાન મેં પ્રતિબદ્ધ રહને કે કારણ જો ચલને ફિરને મેં અસમર્થ બન ચુકે હૈં એસે યે અદસ્યાહી (વાવા) પાપી

એવી રીતદશાઓમાં મૂકાયેલા તથા “લંબંતચમ્મવળવેયણવિમુહિયમણા” “લંબંતચમ્મ” કારણ આદિના પ્રહારથી શરીરની આમડી ઉતરી જવાથી લટકતી આમડી વાળા “વળ” ધાવોની વેદનાથી “વિમુહિયમણા” જેમનાં મન ઓરી કરવાથી વિરક્ત થઈ ગયાં છે, તથા “ઘણકોટ્ટણ નિયલજુયલસંકોડિય મોહિયાય” “ઘણકોટ્ટણ” લોહમય મુદ્ગરોની ચોટથી અને “નિયલજુયલ” જે સાંકળો દ્વારા બંધાયેલાં બંધનોથી “સંકોડિયમોહિયા” જેમનાં શરીર સંકોચાઈને વળી ગયાં છે, તથા “નિરુચ્ચારા” પોતાની વેદનાને પ્રગટ કરવાને માટે એક શબ્દ પણ બોલવાને જે અસમર્થ છે, અથવા બેહદ મારને લીધે જેમની મળમૂત્ર આદિના ઉત્સર્ગની ક્રિયા બંધ થઈ ગઈ છે, અને “અસંચરણા” એક જ સ્થાનમાં પૂરાયેલ રહેવાને કારણે જેવો હલત ચલત કરવાને

કારકા અદત્તહારિણો જનાઃ ‘એવા અળ્યા ય એવાદીઓ વેયળાઓ’ એતાઃ પૂર્વોક્તાઃ, અન્યાથ અન્યપ્રકારા એવાદિકાઃ=એવં પ્રકારાનાનાવિધા વેદનાઃ = દુઃસ્થાનિ ‘પાવંતિ’ પ્રાપ્નુવન્તિ ॥ સૂ. ૧૪ ॥

પુનસ્તે કીદશાઃ કીદશં ફલં લભન્તે ? તદાહ—‘અદંતિંદિયા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્મ—અદંતિંદિયા વસટ્ટા વહુમોહમોહિયા પરધણમ્મિ લુદ્ધા ફાસિંદિયવિસયતિવ્વગિદ્ધા ઇત્થિમયરૂવસદ્દસગંધ-ઇટ્ટરહમહિયભોગતપ્પહાઇયા ય ધણતોસગા મહિયા ય જે નર-ગણા પુણરવિતેકમ્મદુવિયદ્ધા ઉવિણીયા રાયકિંકરાણં તેસિં વહ સત્થગ—પાઢયાણં વિલિ ઉલ્લિકારમાણં લંચસયગેપ્પહયાણં કૂડવડમાયાણિયલિ-આયરણ-પણિહિવંચણ-વિસારયાણં વહુવિહ-અલિયસયજંપગાણં પરલોગપરમ્મુહાણં નિરયગઈ ગામિયાણં તેહિ ય આણત્તજીવંદંડા તુરિયં ઉગ્ગાહિયા પુરવોરેહિં સિંઘાહ-ગતિયચ્ચઉક્કચ્ચરમહાપહપહેસુ વેત્તદંડલઉડકટ્ઠલેટ્ટપત્થર—પ-ણાલિય પ્પણોલિમુટ્ઠિલત્તપાદપણિહ જાણુકોપ્પરપ્પહરસંભગમહિ-યગત્તા અટ્ટારસકમ્મકારિણો પાઇયંયુવંગા કલ્હુળા સુક્કોટ્ઠકંઠ-ગલતાલુ જિબ્બા જાયંતા પાણિયં વિગયજીવિયાસા તપ્પહાઇયા વરાગા તંપિ ય ન લહંતિ વજ્જપુરિસેહિં ધાડિયંતા ॥સૂ.૧૫॥

જીવ (એવા) इन पूर्वोक्त वेदनाओं के तथा (अण्णाद्य एवमाईओ) इनसे अतिरिक्त और भी नाना प्रकार की (वेयणाओ) वेदनाओं के (पावन्ति) प्राप्त होते हैं ॥ सू-१४ ॥

અથ એ અદત્તાગ્રાહી ચોર કેસે હોકર કિસ પ્રકારકે ફલકો ભોગતે

અસમર્થ થઈ ગયા છે, એવાં તે અદત્તગ્રાહી “ પાવા ” પાપી બુદ્ધે “ એવા ” એ પૂર્વોક્તા વેદનાઓ તથા “ અળ્યાય એવાઈઓ ” તે ત્રિવાયની બીજી પથ્થુ અનેક પ્રકારની “ વેયળાઓ ” વેદનાઓ “ પાવંતિ ” પામે છે ॥ સૂ. ૧૪ ॥

હવે અદત્તાગ્રાહી-ચોર કેવા હોય છે અને કેવા પ્રકારનાં ફળ ભોગવે છે

સુદર્શિની ટીકા અ૦૩ સૂ૦૧૫ કીદશાશ્ચૌરાઃ કીદશ'કલ' લભન્તે ?

૩૩૧

ટીકા—‘અદંતિદિયા’ અદાન્તેન્દ્રિયાઃ=અવશેન્દ્રિયાઃ ‘વસદ્વા’ વસાતી શબ્દાદિવિષયા સક્તિપીડિતાઃ ‘વહુમોહમોહિયા’ વહુમોહમોહિતા પ્રચુરઽજ્ઞાનમૂર્છિતાઃ ‘પરધગમ્મિ લુદ્ધા’ પરધને લુદ્ધાઃ=પરદ્રવ્યતૃણાન્તરેત્યર્થઃ, ‘ફાસિદિય-વિસયતિવ્વગિદ્ધા’ સ્પર્શેન્દ્રિયવિષયતીવ્રગદ્ધા=સ્પર્શેન્દ્રિયવિષયે સ્વ્યાદૌ ગાઢાસક્તાઃ ‘ઈત્થિગયરૂવસદ્દરસગંધદ્દુરતિમહિયમોગતળ્હાઈયા ય’ સ્ત્રીગતરૂપશબ્દરસગન્ધેષ્વર-તિમહિતમોગતૃણાર્દિતાશ્ચ=તત્ર સ્ત્રીગતાઃ સ્ત્રીસમ્બન્ધિનોયે રૂપશબ્દરસગન્ધાસ્તેષુ ઇષ્ટા=અભીક્ષિતા યા રતિઃ=રમણં તથા સ્ત્રી ગત એવ મહિતઃ = વાચ્છિતો યો ભોગઃ= વિલાસઃ તયો યાં તૃણા તયા અર્દિતાઃ=પીડિતાઃ ‘ધનતોસગા’ ધનતો-

હેં ? યહ કહતે હેં—‘અદંતિદિયા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(અદંતિદિયા) યે અદત્તગ્રાહી ચોર (અદંતિદિયા) એસે હોતે હેં કિ હનકી ઇન્દ્રિયાં હનકે વશમેં નહોં રહતી હૈ, (વસદ્વા) શબ્દાદિક વિષયોં મેં યે અધિકરૂપ મેં આસક્તિવાલે હોતે હેં, (વહુમોહ-મોહિયા) અજ્ઞાનકી સત્તા હનમેં અધિકસે અધિક રહતી હૈ (પરધનમ્મિ-લુદ્ધા) પરકે દ્રવ્યમેં હનહેં વહુત ભારી તૃણા રહતી હૈ । (ફાસિ-દિયવિસયતિવ્વગિદ્ધા) સ્પર્શન ઇન્દ્રિયકે વિષયભૂત સ્ત્રી આદિ પદાર્થ મેં હનકી ગાઢ આસક્તિ હોતી હૈ । (ઈત્થિગયરૂવસદ્દરસગંધદ્દુરતિમહિય-મોગતળ્હાઈયા ય) (ઈત્થિગય) સ્ત્રી સંબંધી (રૂવસદ્દરસગંધદ્દુરતિ) રૂપ શબ્દ, રસ, ગંધમેં ઇચ્છાનુસાર રમણ કરનેકી તથા (મહિય) સ્ત્રીકે ભોગનેકી વાચ્છા હનમેં અધિક રહતી હૈ । પરન્તુ (મોગતળ્હાઈયા) હન ભોગોંકી પૂર્તિ નહોં હો સકને કે કારણ યે હનકી તૃણાસે રાતદિન

તે સૂત્રકાર ખતાવે છે—‘અદંતિદિયા’ इत्यादि—

ટીકાર્થ—“અદંતિદિયા” તે અદત્તાગ્રાહી ચોર એવા હોય છે કે તેમની ઇન્દ્રિયા ઉપર તેમને કાબૂ હોતો નથી, “વસદ્વા” શબ્દાદિક વિષયોમાં તે વધારે પ્રમાણમાં આસક્ત હોય છે, “વહુમોહમોહિયા” તેમના પર અજ્ઞાનની સત્તા વધારેમાં વધારે આવે છે, “પરધનમ્મિ લુદ્ધા” પરધનની તૃણા તેમનામાં ખુબ વધારે હોય છે, “ફાસિદિયવિસયતિવ્વગિદ્ધા” સ્પર્શેન્દ્રિયને વિષયભૂત સ્ત્રી અદિ પદાર્થોમાં તેમની તીવ્ર આસક્તિ હોય છે, “ઈત્થિગયરૂવસદ્દરસગંધદ્દુરતિમહિયમોગતળ્હાઈયા ય” “ઈત્થિગય” સ્ત્રી સંબંધી “રૂવસદ્દરસગંધ દ્દુરતિ” રૂપ, શબ્દ, અને ગંધમાં ઇચ્છાનુસાર રમણ “મહિય” કરવાની તથા સ્ત્રીઓ સાથે રતિરમણ કરવાની વાસના તેમનામાં વધારે હોય છે. પણ “મોગતળ્હાઈયા” તે ભોગો પૂરા નહીં થવાને કારણે, તેમની

ષકા=પરધનચૌર્યેણ તુષ્યન્તિ એ તે તથા રાજપુરુષૈઃ ‘ગદ્ધિયાય’ ગૃહીતાથ્યે નરગણાઃ=ચૌરજનસમૂહાઃ પૂર્વ કોટ્વાલાદિભિઃ પ્રાપ્તદંડાઃ ‘પુનરવિ તે’ પુનરપિ તે ‘કમ્મદુઘ્વિયદ્ધા’ કર્મદુર્વિદગ્ધા=અદત્તાદાનાદિકર્મજનિતકટુકફલજ્ઞાનરહિતાઃ ચૌર્યકર્માપરાધેન ‘તેસિં રાયર્કિક્કરાણં’ તેણાં પ્રસિદ્ધાનાં નિર્દયોનાં રાજર્કિક-રાણાં=રાજપુરુષાણામગ્રે ‘ઉવળીયા’ ઉપનીતાઃ=તમીપં પ્રાપિતાઃ કથં ભૂતાનાં રાજર્કિકરાણામિત્યાહ ‘વથસત્થગપાઢયાણં’ વથસાલ્લકપાઠકાનાં=વથવન્થમાર-ગયાતનમાત્રશિક્ષાશિક્ષિતાનાં ‘વિલ્લહીકારાણં’ વિલ્લહી=હીનદીનાદિવચનૈ શ્રૌરાદીનાં નિર્ણયઃ દેશી શબ્દોડયં, તત્ કારકાણાં ‘લંચસયગેપ્પહયાણં’ લંચશત-દુઃખી હોતે રહતે હૈં । (ધગતોમણા) યદિ इन्हें संतोष प्राप्त होता है तो वह एक परके धनके अपहरण करनेसे ही होता है । परन्तु यह संतोष इनका स्थायी नहीं रहता है कारण जय (जैनरगणा) ये अदत्त-ग्राही चौर लोक (गद्दिथा य) राजपुरुषों द्वारा गृहीत पकड़ लिये जाते हैं, तब (पुनरवि ते) फिर भी वे विविध प्रकारके दंडों से इन्हें विशेष दुःख भोगना पड़ता है । तथा (कम्मदुघ्वियद्धा) अदत्तादानादि कर्म-जनित कटुक फलके ज्ञानसे रहित बने हुए चौर्यकर्मरूप अपराधके कारण (तेसिं) उन (रायर्किकराणं) निर्दय राजपुरुषों के आगे जब (उवणीया) ले जाये जाते हैं तब वे इन्हें प्राणदंड की आज्ञा देते हैं, तथा और भी इनके साथ क्या २ व्यवहार करते हैं यह बात सूत्रकार स्पष्ट नीचेके अवतरणों द्वारा करते हैं—राजपुरुष कैसे होते हैं ? पहले यह बात सूत्रकार कहते हैं—(वथसत्थगपाढयाणं) वध, बंध, मारण, घातन,

તુષ્ણાને કારણે તેઓ સતતદિન દુઃખી થયા કરે છે. “ ધગતોમણા ” તેને પરધ-નનું અપહરણ કરવા સિવાય બીજા કોઈ કાર્યથી સંતોષ થતો નથી, પણ તેનો તે સંતોષ સ્થાયી હોતો નથી કારણ કે બ્યારે “ તે નરગણા ” તે અદ-ત્તાગ્રાહી ચોરો “ ગદ્ધિયાય ” રાજપુરુષો દ્વારા પકડાઈ બધ છે ત્યારે “ પુનરવિ તે ” ફરીથી પણ તેમને અનેક પ્રકારની શિક્ષાઓ દ્વારા વધારે દુઃખો ભોગ-વ્યા પડે છે, તથા “ કમ્મ દુઘ્વિયદ્ધા ” અદત્તાદાન આદિ કર્મનાં કટુ પરિણામ જ્ઞાનથી અજ્ઞાનથી એવા તે ચોરોને, ચોરીના ગુનાને કારણે “ તેસિં ” તે “ રાય-ર્કિક્કરાણં ” નિર્દય રાજપુરુષો પાસે બ્યારે “ ઉવળીયા ” લઈ જવામાં આવે છે ત્યારે તેમને મૃત્યુદંડની સજા થાય છે, તથા તેમની સાથે બીજા પણ કેવો વર્તાવ રાખવામાં આવે છે, તે વાતને સૂત્રકર નીચેનાં, વાક્યો દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે—પહેલાં તે રાજપુરુષો કેવા હોય છે, તે વાત સૂત્રકર બતાવે છે.

“ વથસત્થગપાઢયાણં ” વધ, બંધ, મારણ, ઘાતન, આદિ વિધાઓના

સુદર્શિની ટીકા અવૃ૩ સુ૦ ૧૫ કીટશાશ્વોરાં કીટશંફલં લમન્તે ? ૩૩૩

ગ્રાહકાણાં=નાનાવિધલઘ્વાહકાણાં ‘શિશ્વત્ત્વોર’ રૂપિ મોપા પ્રસિદ્ધાનાં તથા ‘કૂટકવડમાયાણિયહિ—આયરણપણિહિવંચણવિસારયાણં’ કૂટકપટમાયાનિકૃત્યાચરણપણિધિવચ્ચનવિશારદાનાં—તત્ર કૂટ=અમોત્પાદનં, કપટ=વેશભાષાનાનારૂપધારણં માયા=ચોરાદીન્ નિગ્રહીતું મિત્તાવૃત્તિાદિમિશ્ચલકરણં, મોજનાદિમિરાદરસત્કારકરણૈવચ્ચનં નિકૃતિઃ તથા પ્રણિધિવચ્ચનં પ્રણિધિના=હલેન એકાગ્રચિત્તેન વા વચ્ચનં, યદ્વા=પ્રણિધીનાં=રાજગુપ્તપુરુષાણાં યદ્વચ્ચનં તત્ર વિશારદા=માગલમા એ તે તથા તેપાં ‘બહુવિહઅલિયસયજંપમાણં’ બહુવિધાલીકશતજલ્પકાનાં=ચોરાદીનાં

આદિ કી શિક્ષા સે યે રાજપુરુષ શિક્ષિત્ત્વ હોતે હૈં (ચિલડલીકારગાણં) દીન-હીન આદિ વચનોં કો બોલ કર ચોર આદિકો કા નિર્ણય કરાને વાલે હોતે હૈં, અર્થાત્-યે રાજપુરુષ એસે નિપુણ હોતે હૈં કિ ચોરોં કા પતા બહુ જલ્દી લગા લેતે હૈં, ઇસ પ્રકાર કી ઉનકી ચાત ચીત કા ઢંગ હોતા હૈ કિ જિસસે “ યહી ચોર હૈ ” ઇસ વાત કા ઉન્હેં જ્ઞાન હો જાતા હૈ । (લંચસયગેપ્હયાણં) યે શિશ્વત્ત્વોર-પૂંસ સ્થાને વાલે હોતે હૈં । તથા (કૂટકવડમાયાણિયહિ આયરણપણિહિ-વંચણવિસારયાણં) (કૂટ) કૂટ મેં-અમોત્પાદન મેં, (કવડ) કપટ મેં-વેશ ભાષા કે નાનારૂપ ધારણ કરને મેં, (માયા) માયા મેં ચોરોંકો પકડને કે લિયે મિત્તાવૃત્તિ આદિસે છલ કરને મેં, (નિયહિ આયરણ) નિકૃત્યાચરણ મેં-મોજનાદિ દ્વારા આદર સત્કાર સે પ્રતારણા કરને મેં, તથા (પણિહિવંચણ) પ્રણિધિ-વચ્ચનમેં કોઈ વહાને સે ઠગને મેં, અથવા રાજા કે ગુપ્તચર પુરુષોં કો ઠગને મેં, (વિસારયાણં) બડે વિશારદ-ચતુર હોતે હૈં । (બહુવિહઅલિયસયજંપ-

તે બાણુકાર હોય છે “ ચિલડલીકારગાણં ” દીન-હીન આદિ વચનો બોલી ચોર આદિનો નિર્ણય કરનાર હોય છે, એટલે કે તે રાજપુરુષો ચોરોને બલ્લી શોધી કાઢવામાં નિપુણ હોય છે. તેમની વાતચીતની ઢગ એવી હોય છે કે જેથી “ આ માણસ બે ચોર છે, ” એ વાત તેમને સમજાઈ બાક છે. “ લંચસયગેપ્હયાણં ” તેવો લાંચીયા હોય છે, તથા “ કૂટકવડમાયાણિયહિ-આયરણપણિહિવંચણવિસારયાણં ” “ કૂટ ” કૂટ કરવામાં અમોત્પાદનમાં, “ કવડ ” કપટમાં-વિવિધ વેશ લેવામાં, “ માયા ” માયા ચોરોને પકડવાને માટે મિત્તાવૃત્તિ આદિ છગા એલવામાં, “ નિયહિઆયરણ ” નિકૃત્યાચરણમાં ભોજનાદિ દ્વારા આદરસત્કારથી પ્રતારણા કરવામાં. તથા “ પણિહિવંચણ ” પ્રણિધિ વચ્ચનમાં, કોઈ પણ બહાને ઠગવામાં અથવા રાજાના ગુપ્તચરને ઠગવામાં, “ વિસારયાણં ” સારે નિપુણ હોય છે. “ બહુવિહઅલિયસયજંપમાણં ”

ભેદગ્રહણાય નાનાવિશ્વ મિથ્યાભાષિણ, 'પરલોકપરમ્મુદ્ધાણ' પરલોકપરાઙ્મુલ્લાનાં=પરલોકમયરહિતાનામિત્યર્થઃ, 'નિરયગદ્ગામિયાણં' નરકગતિગામિકાનામેવંશૂ-તાનાં રાજપુરુષાણાં પુરત્ત ઉપનીતાઃ 'તેહિ ય' તૈશ્વ રાજપુરુષૈઃ 'આણત્તજીવદંડા' આણત્ત જીવદંડાઃ=આણત્ત=આણપિતઃ જીવદંડઃ=શૂલારોપગાદિકઃ યેભ્યસ્તે તથા આણત્તમૃત્યુદંડા इत्यर्थः, તથા 'તુરિયં ઉગ્ગાહિયા પુરવરેહિં સિંઘાડગતિયચઠ્ઠકચ-ચ્ચરમહાપદ્મહેસુ' શૃંગાટકત્રિકચતુષ્કચત્વરમહાપથપથેપુ=તત્ર-શૃંગાટક=ત્રિકો-ણમાર્ગઃ ત્રિકઃ=યત્ર માર્ગત્રયસંમેલનં ભવતિ, ચતુષ્કઃ=ચતુર્માર્ગસ્થાનં ચત્વરઃ=ગાણં) ચૌરાદિકોં કા ભેદ લેને કે લિયે અનેક પ્રકાર કી સૈકડોં શૂઠીર થાતેં બનાને મેં બંદે ચતુર હોતે હેં, (પરલોકપરમ્મુદ્ધાણં) પરલોકકા ભય હન્હેં ચિલકુલ નહીં હોતા હૈં । જો મનમેં આતા હૈં વહી અચ્છા માનકર કરતે રહતે હેં । (નિરયગદ્ગામિયાણં) હસી કારણ મરને પર યે નરક-ગતિ મેં જાતે હેં । અબ યે રાજપુરુષ હન્હેં કયા ૨ દંડ દેતે હેં ? સો સૂત્ર-કાર પ્રદર્શિત કરતે હેં (તેહિ ય) યે રાજપુરુષ (આણત્તજીવદંડા) હન ચોરોં કો શૂલારોપણ આદિ મૃત્યુદંડ દેતે હેં । (પુરવરેહિં) નગર કે (સિંઘાડગતિયચઠ્ઠકચચ્ચરમહાપદ્મહેસુ) શૃંગાટક, ત્રિક, ચતુષ્ક, ચત્વર, મહાપથ એવં પથ હન સય માર્ગોં મેં (તુરિયં ઉગ્ગાહિયા) શીઘ્ર ઉન્હેં દિલા ૨ કર યહ ઘોષિત કરતે હેં કિ "દેલો ભાઈયોં ! યે મહાચોર હેં ઓર આજ હી હનકો મૃત્યુદંડ દિયા જાયગા । સિંઘાડે જેસા તિકાનોં જો માર્ગ હોતા હૈં ઉસકા નામ શૃંગાટક, જહાં ત્રીન માર્ગોં કા સંમેલન હૈં હસકા નામ ત્રિક, જિસ રાસ્તે મેં ચાર રાસ્તા આકર મિલતે હેં ઉસ કા

ચોર આદિને ભેદ બાણવાને માટે અનેક પ્રકારની સેકડો બુઢી વાતો બનાવી કાઢવામાં તે નિપુણ હોય છે, "પરલોકપરમ્મુદ્ધાણં" તેમને પરલોકને ડર બિલકુલ હોતો નથી, તેમને મનમાં આવે તે જ સારું માનીને કરે છે. "નિર-યગદ્ગામિયાણં" તે કારણે મરીને તેઓ નરકગતિમાં બંધ છે. હવે તે રાજ-પુરુષો તેમને કેવી કેવી સજા કરે છે, તે સૂત્રકાર બતાવે છે— "તે હિ ય" તે રાજપુરુષો "આણત્તજીવદંડા" તે ઓરોને શૂલારોપણ આદિ મૃત્યુદંડ દે છે. "પુરવરેહિં" નગરના "સિંઘાડગતિયચઠ્ઠકચચ્ચરમહાપદ્મહેસુ" શૃંગાટક, ચતુષ્ક, ચત્વર, મહાપથ અને પથ એ બધા માર્ગો પર "તુરિયં ઉગ્ગાહિયા" તેમને ઝડપથી પતાવીને એવું જાહેર કરે છે કે "ભાઈઓ ! જુવો, આ મહાન ચોર છે, અને આજે જ તેને મૃત્યુદંડ આપવાનો છે" શિંગોશા જેવા ત્રિકોણાકાર માર્ગને શૃંગાટક કહે છે, બધાં ત્રણ રસ્તા મળે તે ત્રિક, બધાં ચાર રસ્તા મળે તે ચતુષ્ક, બધાં અનેક માર્ગો મળે તેને ચત્વર કહે

સુદર્શિનીટીકા અંક ૩ સૂ ૦ ૧૫ કીદશાચ્ચોરૈઃ કીદશ'ફલ' લભન્તે ? ૩૩૫

અનેકમાર્ગસમેલનસ્થાને મહાપથઃ=રાજમાર્ગઃ પન્થાઃ=સામાન્યમાર્ગસ્તેષુ ત્વરિતં=શીઘ્રમુદ્ધાટિતાઃ=જનસમક્ષે પ્રદર્શિતાઃ ' હમે મહાચોરૈઃ શીઘ્રમયૈવધ્યાઃ ' ઇતિ જનસમક્ષે પ્રદર્શિતાઃ, કથં મૂતાઃ ? ઇત્યાહ—' વેત્ત-દંડ-લઝડ-કટ્ટ-લેટ્ટુ-પત્થર-પળાલિય-પળોલિય-મુટ્ટિ-લત્તા-પાય-પણ્હિ-જાણુ-કોપ્પર-પ્પહાર-સંભગમ-મથિતગત્તા ' વેત્ત-દંડ-લઝડ-કાઠ-પત્થર-પળાલી-પળોદી મુટ્ટિ-લત્તા-પાદપાર્ણિ-જાનુ-કૂર્પર-પ્રહાર-સંભગમ-મથિતગત્તાઃ, તત્ર ' વેત્ત-દંડ ' વેત્ત-દંડઃ ' લઝડ ' લઝડઃ=યષ્ટિઃ ' કટ્ટ ' કાઠં ચ=પત્તિતં ' લેટ્ટુ ' લેટ્ટુઃ=મૃત્તિકા સ્વંડં ' પત્થર ' પત્થરથ્થ=પાષાણઃ ' પળાલિય ' પળાલીઃ=મક્રુષ્ટા, નાલી પુરુષપ્રમાણદીર્ઘયષ્ટિઃ ' પળોલી ' પળોદી=તાડન-દંડો, ' મુટ્ટી ' મુટ્ટિઃ ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધઃ ' લત્તા ' ગદઃ ' લાત ' ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધઃ, ' પાદપાર્ણિ ' પાદપાર્ણિઃ=ચરણપદ્માભ્યામ્ ' પદી ' ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધઃ, જાનુઃ= ' પુટના ' ઇતિ પ્રસિદ્ધઃ ' કોપ્પર ' કૂર્પરથ્થ=મુગ્ધમધ્યગ્રન્થિઃ ' કૂણિ ' ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધઃ, એતેષાં પ્રહારૈઃ ' સંભગમ ' સંભગ્નાનિ=ત્રુટિતાનિ, ' મથિય ' મથિતાનિ ચ=સમ્પ્રદિતાનિ ' ગત્ત ' ગત્તાણિ=ગરીરાણિ યેષાં તે તથા

નામ ચતુષ્ક, જ્યાં અનેક માર્ગ આકર મિલે હોં, ઉસકા નામ ચત્ત્વર, રાજમાર્ગ કા નામ મહાપથ એવં સામાન્યમાર્ગ કા નામ પથ હૈ । (વેત્ત-દંડ-લઝડ-કટ્ટ-લેટ્ટુ-પત્થર-પળાલિય-પળોલિય-મુટ્ટિ-લત્તા-પાય-પણ્હિ-જાણુ-કોપ્પર-પ્પહાર-સંભગમ-મથિતગત્તા) રાજપુરુષ ઇન ચોરોં કો (વેત્ત-દંડ) વેત્તોં કે દંડોં કી માર સે, (લઝડ) લઝડિયોં કી માર સે, (કટ્ટ) કાઠોં કી માર સે, (લેટ્ટુ) મૃત્તિકાકે સ્વંડોંકી માર સે, (પત્થર) પત્થરોં કી માર સે, (પળાલિય) પુરુષપ્રમાણદીર્ઘ યષ્ટિયોં કી માર સે, (પળોલિય) પ્રળોલી-તાડન-દંડોં કી માર સે, (મુટ્ટિ) મુટ્ટિયોં-મુક્કોં કી માર સે, (લત્તા) લાતોં કી માર સે, (પાય-પણ્હિ) પદિયોં કી માર સે, (જાણુ) પુટનોં કી માર સે તથા કોહનિયોં કી માર સે હુડી પસલી સચ એક કર દેતે હૈ—મતલબ યે કિ વે ઇન્હે જો ઇનકે હાથ મેં આ જાના હૈ ઉસી સે

છે. રાજમાર્ગને મહાપથ અને સામાન્ય માર્ગને પથ કહે છે. “ વેત્ત-દંડ-લઝડ-કટ્ટ-લેટ્ટુ-પત્થર-પળાલિય-પળોલિય-મુટ્ટિ-લત્તા-પાય-પણ્હિ-જાણુ-કોપ્પર-પ્પહાર-સંભગમ-મથિતગત્તા ” રાજપુરુષો ને ચોરોને નેતરની સોડીઓથી, લાકડીઓથી, લાકડાંથી, માટીનાં ઢેકાંથી પથ્થરોથી, “ પળાલિય ” પુરુષ માપની લાકડીથી, “ પળોલિય ” દંડોથી, મુક્રાઓથી, લાતોથી, એડીથી, પુટણથી તથા ઢોણીથી સારી રીતે મારે છે, એટલે કે તેમના હાથમાં જે સાધન આવે તેનાથી તે ઢોકો તેમને થાહુ જ ખરાબ રીતે માર મારે છે. “ અદ્વરસકમ્પકારિણો ” તે

‘અટારસકમ્મકારિણો’ અષ્ટાદશકર્મકારિણઃ=અષ્ટાદશચૌરપ્રસૂતિકારકાઃ અષ્ટાદશપકારૈશ્ચૌર્યે ભવતિ તત્કારકા इत्यर्थः । अथ चौरस्य चौर्यकर्मणश्च लक्षणमुक्तं ग्रन्थान्तरे—

“चौरः १, चौरापको २, मन्त्री ३, भेदज्ञः ४, काणकक्रयी ५ ।

अन्नदः ६, स्थानदश्चैव ७, चौरः सप्तविधः स्मृतः ॥ १ ॥”

ચૌરઃ=ચૌર્યકારકઃ ૧, ચૌરાપકઃ=ચૌરાય વસ્તુસમર્પકઃ ૨, મન્ત્રી=ચૌરાય સમ્પત્તિદાયકઃ ૩, ભેદજ્ઞઃ=‘કુત્ર કસ્ય ગૃહે કયા રીત્યા કસ્મિન્ સમયે ચૌરી કર્તવ્યે’-ત્યાદિ ભેદજ્ઞાતારઃ ૪, કાણકક્રયી=ચૌરા નીતં વહુમૂલ્યવસ્તુકાણકં દીનં કૃત્વા યઃ ક્રીણતિ સઃ ૫, અન્નદઃ=ચૌરાય-ચૌર્યર્થમન્નદાયકઃ, ૬, સ્થાનદઃ=ચૌરાય વિશ્રામાર્થે સ્વગૃહાદી સ્થાનદાયકઃ ૭, इति सप्तविधश्चौरः । अथ चौर्यकर्म यथा—

ધુરી તરહ મારતે હૈ । (અટારસકમ્મકારિણો) યે ચૌર અટારહ પ્રકાર સે જો ચૌર્યકર્મ કિયા જાના હૈ ઉસમેં નિપુણ હોતે હૈ । ગ્રન્થાન્તર મેંચોર ઓર ચોરી કે લક્ષણ હસ પ્રકાર કહે હુણ હૈ—

“चौरः १ चौरापको २ मन्त्री ३, भेदज्ञः ४, काणकक्रयी ५ ।

अन्नदः ६ स्थानदश्चैव, चौरः सप्तविधः स्मृतः ॥ ૧ ॥”

જો સ્વયં ચોરી કરતા હૈ ૧, ચોરોં કો વસ્તુ દેતા હૈ ૨, ચોરોં કો સંમતિ દેતા હૈ ૩, કિસ સમય કિમકે ઘર મેં કિસ રીતિ સે કહાં ચોરી કરની ચાહિયે હ્વાદિ રૂપ સે જો ચોરોં કો ચોરી કરને કા ભેદ દેતા હૈ ૪, ચોરોં કે ઢારા લાઈ ગઈ વહુ મૂલ્ય વસ્તુ કો જો અલ્પમૂલ્ય દેકર સ્વીકૃત્તા હૈ ૫, જો ચોરોં કે લિયે સ્થાને પીને કી વ્યવસ્થા કરતા હૈ ૬, તથા ચોરોં કે લિયે વિશ્રામનિમિત્ત જો અપને ઘર આદિ મેં સ્થાન દેતા હૈ ૭ યે સબ ચોર હૈ । હસ પ્રકાર યે સ્થાન તરહકે ચોર કહે ગયે હૈ ॥૧॥

ચોર જે અટાર પ્રકારે ચોરી કરવામાં આવે છે તેમાં નિપુણ હોય છે. બીજા અન્ધમાં ચોર અને ચોરીનાં આ પ્રમાણે લક્ષણો બતાવ્યાં છે.

“चौरः १ चौरापको २ मन्त्री ३ भेदज्ञः ४ काणकक्रयी ५ ।

अन्नदः ६ स्थानदश्चैव, चौरः सप्तविधः स्मृतः ॥ ૧ ॥”

(૧) જે પોતે જ ચોરી કરે છે, (૨) જે ચોરોને વસ્તુઓ આપે છે, (૩) જે ચોરોને સંમતિ આપે છે, (૪) ક્યારે, કેના ઘરમાં, કઈ રીતે ચોરી કરવી જોઈએ છત્યાદિ પ્રકારે જે ચોરોને ચોરી કરવાનું સહય્ય બતાવે છે, (૫) ચોરો દ્વારા ચોરી લાવવામાં આવેલી કીમતિ ચીજોને જે ચોરી કીમતે ખરીદે છે, (૬) જે ચોરોને માટે ખાવા પીવાની વ્યવસ્થા કરે છે તથા (૭) જે ચોરોને પોતાના ઘરમાં આશ્રય આપે છે, તે બધા ચોર ગણાય છે, આ રીતે સાત પ્રકારના ચોર બતાવ્યા છે ॥ ૧ ॥

सुवर्शिनी टीका अ० सू० १५ कीदृशश्चोराः कीदृशफलं लभन्ते ! निरूपणम् ३३७

भलनं १, कुशलं २, तज्जा ३, राजभागो ४, अवलोकनम् ५ ।

अमार्गदर्शनं ६, शय्या ७, पद्मङ्ग ८, स्तथैव च ॥ १ ॥

विश्रामः ९, पादपतन १०, मासनं ११, गोपनं १२ तथा ।

खण्डस्य खादनं चैव १३, तथान्यन्मोहराजिकम् १४ ॥ २ ॥

पद्या १५, ग्नु १६, दक १७ रज्जुनां १८, प्रदानं ज्ञानपूर्वकम् ।

एताः प्रसूतयो ज्ञेया अष्टादश मनीषिभिः ॥ ३ ॥

तत्र भलनं=‘न भेतव्यं भवता तत्र पक्षेऽहमपि सम्मिलिष्यामी’त्यादि वचनैः

चोरी अठारह प्रकार की इस तरह से है—

“ भलनं १ कुशलं २ तज्जा ३ । राजभागो ४ अवलोकनम् ५ ।

अमार्गदर्शनं ६ शय्या ७ पद्मङ्ग ८ स्तथैव च ॥ १ ॥

विश्रामः ९ पादपतन १० । मासनं ११ गोपनं १२ तथा ।

खण्डस्य खादनं चैव १३ । तथान्यन्मोहराजिकम् १४ ॥ २ ॥

पद्या १५ ग्नु १६ दक १७ रज्जुनां १८ । प्रदानं ज्ञानपूर्वकम् ।

एताः प्रसूतयो ज्ञेया । अष्टादश मनीषिभिः ॥ ३ ॥

भलन १, कुशल २, तज्जा ३, राजभाग ४, अवलोकन ५, अमार्ग-
दर्शन ६, शय्या ७, पद्मङ्ग ८ ॥ १ ॥ विश्राम ९, पादपतन १०, आसन ११,
गोपन १२, खण्डखादन १३, मोहराजिक १४ ॥ २ ॥ पद्यदान १५, अग्नि-
दान १६, उदकदान १७, रज्जुप्रदान १८ ॥ ३ ॥

“ तुम डरो मत-में भी तुम्हारे पक्षमें मिल जाऊंगा ” इत्यादि

चोरीना अठार प्रकार नीचे प्रमाणों से—

“ भलनं १, कुशलं २, तज्जा ३ राजभागो ४ अवलोकनम् ५ ।

अमार्गदर्शनं ६ शय्या ७ पद्मङ्ग ८ स्तथैव च ॥ १ ॥

विश्रामः ९ पादपतन १० मासनं ११ गोपनं १२ तथा ।

खण्डस्य खादनं चैव १३ तथान्यन्मोहराजिकम् १४ ॥ २ ॥

पद्या १५ ग्नु १६ दक १७ रज्जुनां १८ प्रदानं ज्ञानपूर्वकम् ।

एताः प्रसूतयो ज्ञेया अष्टादश मनीषिभिः ॥ ३ ॥

(१) भलन, (२) कुशल, (३) तज्जा (४) राजभाग (५) अवलोकन, (६)
अमार्गदर्शन, (७) शय्या, (८) पद्मङ्ग ॥ १ ॥ (९) विश्राम, (१०) पादपतन
(११) आसन, (१२) गोपन, (१३) खण्डखादन, (१४) मोहराजिक ॥ २ ॥ (१५)
पद्यदान, (१६) अग्निदान, (१७) उदकदान अने (१८) रज्जुप्रदान ॥ ३ ॥

(१) “ तमे उरशो भा-हुं पशु तभारा पक्षमां भगी श्छश ” वज्रेरे

चौराणामुत्साहदानं १, कुशलं=मुखदुःखादिपृच्छा २, तर्जा=चौरस्य हस्तादिसङ्केत-
करणं ३, राजभागः=राजकरस्याऽपदानम् ४, अवलोकनं=चौर्यं कुर्वत-उपेक्षापूर्वक
प्रेक्षणं ५, चौर्यमवलोक्याऽपि स्वामिनं प्रत्यक्ष्यनमित्यर्थः, अमार्गदर्शनं=चौराणां
रक्षार्थमुन्मार्गप्रदर्शनं, चौरमार्गप्रच्छकानामन्यमार्गदर्शनं वा ६, शय्या=चौराय श-
य्यादानं ७, पदभङ्गः=पशूनां सञ्चालनेन चौराणां गमनाऽऽगमनमार्गाङ्कितचरणचिह्न-
लुप्तकरणं ८, तथैव विश्रामः=स्वगृहे निवासदानं ९, शय्यादानमन्यत्राप्युपवेशनाद्यर्थ

ઉત્સાહ વર્ધક વચનોંસે ચોરીંકા ઉત્સાહ અધિકવધાના હસકા નામ ભલન
હૈ ૧ । ચોરીં કે સુખ-દુઃખ આદિ કે સમાચાર પૂછના હસકા નામ કુશલ
હૈ ૨, હાથ આદિ કે સંકેત સે ચોરીં કો હશારા કરના હસકા નામ તર્જા
હૈ ૩ । નિર્ધારિત રાજટેક્સ કા નહીં દેના હસકા નામ રાજભાગ હૈ ૪ ।
ચોરી કરતે હુપ ચોર કો ઉપેક્ષાપૂર્વક દેવના. હસકા નામ અવલોકન
હૈ, અર્થાત્ ચોર કો ચોરી કરતે હુપ દેવકર કે ખી અપને માલિક સે
નહીં કહના-યહ ખી ચોરી કા પ્રકાર હૈ ૫ । ચોરીં કી રક્ષા કે અભિપ્રાય
સે અન્વેષણ કારને વાલોં કો ઉન્માર્ગ પ્રદર્શન કરના હસકા નામ અમાર્ગ-
દર્શન હૈ ૬ । ચોરીં કે લિયે સોનેકો શય્યા દેના હસકા નામ શય્યા
હૈ ૭ । ચોરીં ને જહાં ચોરી કી હો વહાં ઉનકે માર્ગ મેં ચરણચિહ્ન
અંકિત હો ગયે હો તો ઉન ચિહ્નો કો નષ્ટ કરને કે લિયે ઉન પર સે
પશુઓં કો નિકાલના કિ જિસસે વે નષ્ટ હો જાવેં ઓર પહિચાનને
મેં ન આને પાવે, હસકા નામ પદભંગ હૈ ૮ । અપને ઘર મેં ચોરીં કો

ઉત્સાહ વર્ધક વચનો દ્વારા ચોરીનો ઉત્સાહ વધારવાની ક્રિયાને ભલન કહે છે.
(૨) ચોરીને સુખ દુઃખ વગેરેના સમાચાર વાવનારને કુશલ કહે છે (૩) હાથ
આદિના સંકેતથી ચોરીને ઇશારા કરવા તેનું નામ તર્જા છે. (૪) નક્કી
થયેલ રાજભાગ-રાન્યના કર ન દેવા તેનું નામ રાજભાગ છે, (૫) ચોરી
કરતાં ચોરને ઉપેક્ષાપૂર્વક બોલો તેને અવલોકન કહે છે, એટલે કે ચોરને ચોરી
કરતો બોલો છતાં પણ પોતાના માલિકને નહીં કહેવું તે પણ ચોરીનો જ
પ્રકાર છે. (૬) ચોરીની રક્ષા કરવાને માટે તેમની શોધ કરનારને ખોટો માર્ગ
બતાવવો તેને અમાર્ગદર્શન કહે છે. (૭) ચોરીને સૂવાને માટે પથારી દેવી તેને
શય્યા કહે છે. (૮) ચોરીએ જ્યાં ચોરી કરી હોય ત્યાં તેના માર્ગમાં તેનાં
પગલાં પડ્યાં હોય તો તે પગલાંનો નાશ કરવાને માટે તેમના પર પશુ-
ઓને દોડાવવા કે જેથી તે પગલાં ખૂંસાઈ જાય અને ચોળાખી ન શકાય.
આ પ્રકારે પગલાંના નિશાનનો નાશ કરવાની ક્રિયાને પદભંગ કહે છે. (૯)

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૩ સુ૦ ૧૧ કીટશાસ્ત્રીઃ કીટશાંકલં લખન્તે ! ૩૩૯

શયનીયવસ્તુદાનમિત્યુભયોર્ભેદઃ પાદપતનં=પ્રણામાદિના ચૌરાણાં સત્કારસમ્માન-
કરણમ્ ૧૦, આસનમ્=આસનદાનં ૧૧, ગોપનં=નાડ્યેન ચૌર્યં કૃતં સ્વમૃદે સ્થાપ-
યિત્વા નાસ્ત્યત્રેતિ વા કયતેન ચૌરસક્કોપનં ૧૨, સ્ખણ્ડસ્ય સ્વાદનં=ચૌરેભ્યો-
મિષ્ટાન્નાદિદાનં ૧૩, તથાડન્યન્મોહરાજિકમ્=લોકપ્રસિદ્ધયા પરરાષ્ટ્રે ગત્વા વસ્તુ
વિક્રયઃ ૧૪, તથા જ્ઞાનપૂર્વકં=‘ચોરોડય’ મિતિ બુદ્ધિપૂર્વકં પાદ્યામન્યુદકરજ્જૂનાં
પ્રદાનં=માર્ગાગમનશ્રમાપનોદાર્ય પાત્રં=પાદાય હિતમુષ્ણતૈલજલાદિ, તસ્ય દાનં ૧૫,
પાકાગ્ન્યર્થમગ્નિદાનમ્ ૧૬, ઉદકદાનં=પાનાર્થં જલદાનં ૧૭, તથા ચોરીતગોમ-

ઠહરાના-વિશ્રામ દેના હસકા નામ વિશ્રામ હૈ ૯ । શય્યાદાન ઓર
વિશ્રામ મેં અન્તર કેવલ હતના હી હૈ કિ શય્યાદાન તો દૂસરી
જગહ ઠહરને પર ભી દિયો જા સકતા હૈ પરન્તુ વિશ્રામ અપને ઘર મેં
હી દિધા જાતા હૈ ૯ । ચોરોં કે ચરણોં પર ગિરકર ડનકા આદર સત્કાર
કરના હસકા નામ પાદપતન હૈ ૧૦ । બેઠને કો આસન દેના યહ આસ-
નદાન હૈ ૧૧ । “ હસને ચોરી નહીં કી હૈ, ઘર મેં હોને પર ભી ઘર મેં
ચોર નહીં હૈ ” હસ પ્રકાર કહ કર ચોર કી રક્ષા કરના હસકા નામ
ગોપન હૈ ૧૨ । ચોરોં કે લિયે જ્વાને કોં મિષ્ટાન્ન આદિ દેના હસકા નામ
સ્ખણ્ડ સ્વાદન હૈ ૧૩ । નાકા બંદી હોને પર દૂસરે સ્થાન મેં, અથવા લોક
પ્રસિદ્ધિ સે પરરાષ્ટ્ર મેં એકદેશસે લે જાકદ દૂસરે દેશમેં વેચના હસકા
નામ મોહરાજિક હૈ ૧૪ । “ યહ ચોર હૈ ” એસા જાનકર ભી ડસે પથ,
અગ્નિ, ઉદક, રજ્જુ દેના, પૈરોં કી ધકાવટ મિટાને કે લિયે ગર્મ જલ
તૈલ આદિ કા દેના પથ હૈ ૧૫ । ખોજન વનાને કે લિયે અગ્નિ દેના ૧૬ ।

ચોરોને પોતાના ઘરમાં આશ્રય આપવો તેને વિશ્રામ કહે છે. શય્યાદાન તથા
વિશ્રામમાં તદ્વાવત એટલો જ છે કે શય્યાદાન તો બીજી જગ્યાએ રહે તો
પણ આવી શકાય છે. પણ વિશ્રામ પોતાના ઘરમાં જ આપાય છે. (૧૦)
ચોરોને ચરણે નથીને તેનો આદર સત્કાર કરવો, તેણે પાદપતન કહે છે, (૧૧)
બેસવાને આસન આપવું, તેને આસનદાન કહે છે, (૧૨) “ આ માણસે
ચોરી કરી નથી, ઘરમાં ચોર છુપાવ્યો હોય છતાં પણ ચોર ઘરમાં નથી ”
એ પ્રમાણે કહીને ચોરની રક્ષા કરવી, તેને ગોપન કહે છે. (૧૩) ચોરોને
ખાવાને માટે મિષ્ટાન્ન દેવું, તેને સ્ખણ્ડસ્વાદન કહે છે. (૧૪) નાકાબંધી હોવા
છતાં બીજી જગ્યાએ અથવા એક દેશમાંથી લઈ જઈને બીજા દેશમાં માલ
વેચવો, તેને મોહરાજિક કહે છે. (૧૫) “ આ ચોર છે ” એવી ખબર હોવા
છતાં પણ તેને પથ, અગ્નિ, ઉદક (પાણી), રજ્જુ (દોરડું) દેવું તે પણ
ચોરીના જ પ્રકારો છે, પણને ધાક દૂર કરવાને માટે ગરમ પાણી, તેલ આદિ

હિપ્માદિ વન્યતાર્થ પ્રાસાદાદિષ્વારોઢું વા રજ્જુદાનમ્ ૧૮, ક્ષ્યેતાન્યષ્ટાદશવિ-
ધાનિ પ્રશ્નતયઃ ચૌર્યકરણાનિ ।

પ્રુનઃ કીદશાસ્ત્રે પરદ્રવ્યાપહારિણઃ ? ક્ષ્યેત્—‘પાદ્યંગુલંગા’ પતિતાદ્ધો-
ષાઢ્ઢાઃ=પાલિતાનિ=શ્રોટિતાન્યજ્ઞાનિ=દસ્તપાદાદીનિ, ઉપાઢ્ઢાનિ વ=અશુદ્ધિકેશ-
શ્મશ્પાદીનિ યેષાં તે તથા, કલુણા ’કલ્પનાઃ=દીનોઃ-પાપમલિના ક્ષ્યેત્ઃ ‘સુકો-
ટ્કંઢગલ્લજિવ્મા’ શુષ્કોષ્ઠકણ્ઠગલ્લજિવ્માઃ=ઓષ્ઠૌ કણ્ઠઃ=અશ્વરોચ્ચારણસ્થાનં
મલઃ-તદધો ભાગઃ તાલુઃ=પ્રસિદ્ધં ઇતેષાં સમાદારઃ, જલં વિના શુષ્કમોષ્ઠકણ્ઠગલ-
લ્લજિવ્મં યેષાં તે તથા, ‘તળ્હા ક્ષ્યેત્’ તળ્હાદિતાઃ=પિપાસાઽઽકુલિતાઃ સન્તઃ
‘પાણિયં જાયંતા ’ પાનીયં યાચમાનઃઃ ‘વિગયજીવિયાસા ’ વિગતજીવિતાશા
=જીવિતાશારહિતાઃ ‘વરાકાઃ=મન્દપુણ્યાઃ ‘વજ્જપુરિસેહિ ઘાહિયંતા ’ વધ્યપુરુષ-
ધીધે કે લિલ્લે જલ દેના ૧૭, જુરાઈં ગઈં ભૈસ આદિકો ઘાંધને કે લિલ્લે
તથા મકાન આદિ કી જ્ઞત પર ચઢાને કે લિલ્લે રસી દેના ૧૮।યે ૧૮
પ્રકારકી કી ચોરિયાં હૈં ॥ ૩ ॥

(પાદ્યંગુલંગા) યે પરદ્રવ્યાપહારી ચોર હાથ પૈર આદિ અંગોંમેં તથા
અંશુલી, કેશ, શ્મશ્ત્રુ દાઢીમૂઢ આદિ ઉપાંગોંમેં કભી મી અક્ષત નહીં રહતે
હૈં ! (કલુણા) યે સદા પાપ સે મલિન બને રહતે હૈં । તથા (સુકોટ્કંઢગ-
લ્લજિવ્મા) પાની કે વિના ઓટ્ક કંઢ ગલ્લ તાલ તથા જિહ્વા યે સષ
કસકે શુષ્ક હોતે (યુક્તે) રહતે હૈં । (તળ્હાક્ષ્યેત્) પિપાસા સે આકુ-
લિત હોકર યે (પાણિયં જાયંતા) “ પાની લાઓ પાની લાઓ ” કસ
પ્રકાર યાચના કરતે હુઇ (વિગયજીવિયાસા) કભી ૨ અપને જીવન
કી આશા સે મી રહિત હો જાતે હૈં । (વરાગા) કન અભાગોં કો (વજ્જ-

દેવાં તે કિયાને પશ કંઢે છે, (૧૬) લોજન બનાવવાને અગ્નિ આપવો,
(૧૭) પીવાને માટે પાણી આપવું અને (૧૮) ચોરલી ગાય, ભેંસ આદિને
આંધવા માટે અને મકાન આદિના છાપરા પર ચઢવાને માટે દોરડું દેવું, એ
૧૮ (અઢાર) પ્રકારની ચોરી હોય છે. ॥૩॥

ટીકાર્થ—“ પાદ્યંગુલંગા ” તે પરધનનું અપહરણ કરનારા ચોર લોકોના
હાથ પગ આદિ અંગો, તથા આંગળીઓ, કેશ, નાક, કાન આદિ ઉપાંગો કદી
પણ અક્ષત (છેઢાયા વિનાના) હોતાં નથી. “ કલુણા ” તેઓ પાપથી સદા
મલિન રહે છે, તથા “ સુકોટ્કંઢગલ્લજિવ્મા ” તેમના હોઠ, કંઠ, ગળું,
તાળવું તથા જીભ પાણી વિના શુષ્ક (સૂકાયલા) રહે છે. “ તળ્હાક્ષ્યેત્ ” તર-
સથી વ્યાકુળ થઇને તે લોકો “ પાણિયં જાયંતા ” “ પાણી લાવો, પાણી, પાણી
લાવો ” એવી યાચના કરતા કરતા “ વિગયજીવિયાસા ” કથારેક તેા જીવવાની
આશા પણ છોડી દે છે. “ વરાગા ” તે બિચારાઓને “ વજ્જપુરિસેહિ ” વધસ્થાન

સુદર્શિની ટોકા અ૦ ૩ સૂ. ૧૬ કીડશાઝીરાઃ કોડશં કલં લખન્તે ? ૩૪૧

ધ્રાંટ્યમાનાઃ=વધ્યે=વધ્યસ્થાને=શૂલારોપણસ્થાને પુરુષૈઃ=તત્ર નિયુક્તૈઃ રાજપુરુષૈઃ
ધ્રાહ્યમાણાઃ=ધેર્યમાણાઃ નીચમાના इत्यर्थः, 'તં પિ ય ન લહંતિ' તદપિ ચ ન
લખન્તે=જલમાત્રમપિ પાતું ન પ્રાપ્નુવન્તિ, કિમન્ય? इत्यर्थः ॥ સૂ. ૧૬ ॥

અપિ ચ—'તત્થ ય' इत्यादि ।

સૂલમ્—તત્થ ય સ્વરફરુસ-પટહ-ઘટ્ટિયા-કૂડગ્ગહનાઢરુદ્ધનિસિટ્ટ
પરામટ્ટા વજ્જકરકુડિજુચનિવાસિયા સુરત્તકળવીરગઢિયવિમુકુલ
કંઠે ગુણવજ્જ-દૂય-આવિદ્ધમલ્લદામમરણ મયુપ્પણ સેયઆયતણે-
દુત્તપ્પિયકિલિણગત્તાચુણગુંડિયસરીરયરેણુભરિયકેસા કુસંભ-
યુક્કિણમુદ્ધયા છિણજીવિયાસા ઘુણંતા વજ્જપાણપ્પિયા તિલં
—તિલં ચેવ છિજ્જમાણાસરીરવિકત્તલોહિઓ-લિત્તકાગણિમંસા-
ણિલાવિયંતા પાવા સ્વરકરસણ્હિં તાલિજ્જમાણદેહા વાતિગનર-
નારિસંપરિવુડા પિચ્છિજ્જંતા ય નાગરજણેણ ધજ્જનેવત્થિયા
પણિજ્જંતિ ણગરમજ્જેણ કિવણકલુણા અત્તાણા અસરણા
અણાહા અવંધવા વંધુવિપ્પહીણા વિપિક્ખંતા દિસોદિસિમર-
ણમયુવ્વિગ્ગા અવાયણપડિદુવારસંપાવિયા અધણ્ણા સૂલગ્ગ-
વિલગ્ગમિણ્ણદેહા, તે ય તત્થ કીરંતિ પરિકપ્પિયંગુવંગા ॥સૂ. ૧૬॥

ટીકા—'તત્થ ય' તત્ર ચ વધ્યસ્થાને 'સ્વરફરુસપટહઘટ્ટિયા' સ્વરફરુપટહઘટ્ટિતાઃ—
તત્ર સ્વરપરુપઃ=શૂલારોપણાદિ સજ્જેતસૂચકત્વાદત્પન્તકઠોરો યઃ પટહઃ='ઢોલ'

પુરિસેહિં) વધ્યસ્થાન પર નિયુક્ત દુષ્ટ પુરુષ જન્મ (ઘાડિયંતા) વધ્યસ્થાન
પર લેકર ચલતે હેં તો इन्हें वहां (તંપિ ય) એક વિંદુ જલ મી પીને કો
(ન લહંતિ) નહીં મિલતા હેં । ऐसी इनकी दशा बन जाती है ॥સૂ. ૧૫॥

ફિર 'મી' કહતે હેં—'તત્થ ય' इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(તત્થ ય સ્વરફરુસ પટહઘટ્ટિયા) વહાં વધ્યસ્થાન પર એક ઢોલ

પરનિયુક્ત થયેલ પુરુષો દ્વારે "ઘાડિયંતા" વધ્યસ્થાન તરફ લઈ જાય છે, ત્યારે
તેમને ત્યાં "તંપિ ય" પીવાને પાણીનું એક ટીપું પણ "ન લહંતિ" મળતું
નથી. તેમની એવી દશા થાય છે ॥ સૂ. ૧૫ ॥

વળી સૂત્રકાર આગળ વર્ણુન કરે છે—"તત્થ ય" इत्यादि.

ટીકાર્થ—"તત્થ ય સ્વરફરુસપટહઘટ્ટિયા" ત્યાં વધ્યસ્થાને એક ઢોલ રહે છે.

ઇતિ ઢાપા પ્રસિદ્ધસ્તેન વાઘમાનેન સહ રાજપુરુષૈ નીચમાનાઃ સન્તો ઘટિતાઃ= વેષ યષ્ટયાદિભિસ્તાડિતાઃ માર્યમાણા ઇત્યર્થઃ, ‘કૂટગ્ગહગાઢરુદ્ધનિસિદ્ધપરામદ્ધા’ કૂટગ્ગહગાઢરુદ્ધનિસિદ્ધપરામદ્ધા= તથા કૂટગ્ગહત્વાત્=કૂટેન=છલપ્રપંચેન ચૌરસ્ય પરધનગ્રાહિત્વાદ્ ગાઢરુદ્ધૈઃ= અતિક્રુદ્ધૈઃ રાજપુરુષૈઃ નિસિદ્ધાઃ= અપહતધનાઃ, નિર્ધના ઇત્યર્થઃ, પુનઃ પરામદ્ધાશ્ચ=ગૃહીતા યે તે તથા ‘વજ્જકરકુડિજુય નિવસિયા’ વધ્યકરકુટીયુગનિવસિતાઃ= વધ્યાનાં યત્ કરકુટીયુગં = નિન્દ્યવસ્ત્રવિશેષદ્વયં તન્નિવસિતં=પરિધાયિતં યેપાં તે તથા વધ્યવજ્જધારિણ ઇત્યર્થઃ, ‘સુરત્તકળવીરગહિયવિમુકુલકંઠે ગુણલજ્જદૂય આવિદ્મહ્લદામા’ સુરત્તકળવીરગ્રથિતવિમુકુલકંઠે

રહતા હૈ ઓર જવ જિસકા શૂલારોપણ કા હોતા હૈ તવ વહ વજતા હૈ અતઃ શૂલારોપણ આદિ સંકેત કા સૂચક હોને સે વહ સ્વરપરુષ-અત્યંત કઠોર માના ગયા હૈ, જૈસે હી વહ વજાતા હૈ કિ રાજપુરુષ ડસ વધ્ય વ્યક્તિ કો સાથમેં લેકર ચલ દેતેં હૈં । ઓર રાસ્ટે મેં વે ડનચોરોં કો વેષ-યષ્ટયાદિ સે નાહિત ખી કરતે જાતેં હૈં । (કૂટગ્ગહગાઢરુદ્ધનિસિદ્ધ-પરામદ્ધા) યે રાજપુરુષ ડન ચોરોં પર(કૂટગ્ગહ) છલપ્રપંચ સે પરધન કો અપહરણ કરને કૈ કારણ (ગાઢરુદ્ધ) અત્યંત રુદ્ધ હો જાતેં હૈં, ઓર ઇસીસે (નિસિદ્ધ) અપહત દ્રવ્ય કો છીન ખી લેતે હૈ, ઓર ઘાદ મેં ડન્હેં (પરા-મદ્ધા) પકડ લેતે હૈં (વજ્જકર કુડિ જુયનિવસિયા) જવ વે શૂલી પર ડન્હેં વઢાને કૈ લિયે લે જાતેં હૈં તો ઇસકે પહિલે ડન્હેં વે વધ્યપુરુષોં કો (વજ્જકરકુડિજુય) પહિરાને કૈ યોગ્ય નિંચ દો વસ્ત્ર (નિવસિયા) પહિરા દેતેં હૈં (સુરત્તકળવીરગહિયવિમુકુલકંઠે ગુણલજ્જ દૂય આવિદ્મ-

બ્યારે ડોઝને શૂળી પર યડાવવાનો સમય થાય છે ત્યારે તે વગાડવામાં આવે છે. તેથી શૂલારોપણ આદિ સંકેત દર્શાવનાર ડોવાથી તેને સ્વરપરુષ અત્યંત કઠોર કહેલ છે. જોયો તે ડોલ વાગે છે, કે તે રાજપુરુષો તે વધ્ય વ્યક્તિને લઇને ઉપડે છે, અને રસ્તામાં તે ડોડો તે ચોરોને સોડી, લાડડી આદિથી ડ્રટકારે છે. “કૂટગ્ગહગાઢરુદ્ધનિસિદ્ધપરામદ્ધા” તે રાજપુરુષો તે ચોરો પર “કૂટગ્ગહ” છળકપટથી પરધનનું હરણ કરવાને સીધી “ગાઢરુદ્ધ” અત્યંત ક્રોધે ભરાય છે, અને તેમની પાસેથી તે ડોડો “નિસિદ્ધ” ચોરોનાં દ્રવ્યને છીનવી પણ લે છે, અને પછી તેમને “પરામદ્ધા” પકડી લે છે. “વજ્જકરકુડિજુયનિવસિયા” બ્યારે તેઓ તેમને શૂળીએ યડાવવા લઇ બાય છે ત્યારે વધ્ય પુરુષોને પહેરાવવા “વજ્જકરકુડિજુય” લાયક, જે નિંદ્ય વસ્ત્રો “નિવસિયા” તેમને પહેરાવે છે “સુરત્તકળવીરગહિયવિમુકુલકંઠે ગુણ-

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૩ સુ૦ ૧૬ કીટશાશ્વૌરાઃ કિટશંફલં લભન્તે ! ૩૪૩

ગુણવધ્યદૂતાવિદ્ધમાલ્યદામાનઃ, તત્ર સુરત્તૈઃ કણવીરૈઃ=પુષ્પવિશેષૈઃ પ્રથિતં= ગુમ્ફિતં ત્રિમુકુલં=વિકાસિતં કંઠે ગુણ इव=કળકમ્પમિત્ર તથા વધ સૂચકત્વાત્ વધ્યદૂતઃ=વધચિન્હ, -આવિદ્ધં=પરિહિતં માલ્યદામ=પુષ્પમાલ્યં યેષાં તે તથા, 'મરણમયુષ્પણ્ણસેયઆયત્તણેહુત્તપ્પિય કિલિણ્ણગત્તા' મરણમયોત્પન્નસ્વેદાયતસ્ને- હોત્તપિતવિલગ્નગાત્રાઃ, તત્ર મરણમયાદુત્પન્નેન સ્વેદેન=મસ્વેદેન આયતઃ=સર્વોક્તે વ્યાપ્તો યઃ સ્નેહઃ= આર્દ્રતા તેનોત્તપિતાનિ=સન્તપ્તાનિ કિલ્લાનિ=આર્દ્રીકૃતાનિ ચ ગાત્રાણિ=શરીરાણિ યેષાં તે તથા, મરણમયોત્પન્નસ્વેદાર્દ્રીભૂતશરીરા इत्यર્થઃ, 'ચુણ્ણગુંઢિયસરીરા' ચૂર્ણગુણ્ઢિતશરીરાઃ = 'ચૂના' इति ભાષાપ્રસિદ્ધચૂર્ણદ્રવ્યા- વગુણ્ઢિતસર્વાદ્ધાઃ, 'ચરેણુમરિયકેસા' રજો રેણુમરિતકેશાઃ=રજોરેણુભિઃ= ધૂલિર્મિર્મરિતાઃ=સંપ્રતાઃ કેશા યેષાં તે તથા, 'કુસુંમગુક્કિણ્ણમુદ્ધયા' કુસુંમ- મલ્લદામા) (સુરત્તકણવીરગહિય) કનેર કે લાલફૂલોં સે ગંથી હુઈ (ત્રિમુકુલ) વિકસિત કંઠે ગુણકંઠમૂત્ર તથા (વજ્જદૂય) વધસૂચક હોને સે વધ્યદૂત-વધચિહ્ન સ્વરૂપ એસી (આવિદ્ધમલ્લદામા) ફૂલમાલ જિનકો પહિનાઈ જાતી હૈ (મરણમયુષ્પણ્ણસેયઆયત્તણેહુ ત્તપ્પિય કિલિ- ણ્ણગત્તા) (મરણમયુષ્પણ્ણસેય) મરણ કે મય સે ઉત્પન્ન હુણ સ્વેદ- પસીને સે (આયત્તણેહ) ઇનકે અંગ મીલે હો જાતે હૈં હસસે ઇનકા શરીર (ઉત્તપ્પિય) જલને લગતા હૈ જિસસે (કિલિણ્ણગત્તા) ઇનકા સબ શરીર પસીને સે ઝરતા રહતા હૈ (ચુણ્ણગુંઢિયસરીરા) ઇનકે શરીર પર ચૂના લપેટ દિયા જાતા હૈ જિસસે અધિક જલન હોતી હૈ । તથા (ચરેણુમરિયકેસા) ઇનકે કેશોં પર વાહર કી ધૂલિ ઉઢકર ભર જાતી હૈ । વારણ ડનકે પાસ ડસ સમય એસે સાધન નહીં હોતે હૈં જિસસે

જાદૂચઆવિદ્ધમલ્લદામા ” “ સુરત્તકણવીરગહિય ” કરેણુના લાલ ફૂલોમાંથી ચૂંથેલી “ ત્રિમુકુલ ” કંઠમાં રહેલા કંઠભરણુ બેવી, “ વજ્જદૂય ” વધ સૂચક હોવાથી-વધ્યદૂતવધચિહ્ન બેવી “ આવિદ્ધ મલ્લદામા ” ફૂલમાળા તેમને પહેરા- વવામાં આવે છે. “ મરણમયુષ્પણ્ણસેયઆયત્તણેહુત્તપ્પિયકિલિણ્ણગત્તા ” “ મરણમયુષ્પણ્ણસેય ” મરણના લયથી ઉત્પન્ન થયેલ પસીનાથી “ આયત્તણેહ ” તેમનાં અંગ ભીનાં થાય છે, તે લયથી તેમનાં શરીર “ ઉત્તપ્પિય ” ખત્રવાં લાગે છે, અને તે કારણે “ કિલિણ્ણગત્તા ” તેમનું આયુ' શરીર તરબોળ થાય છે. “ ચુણ્ણગુંઢિય સરીરા ” તેમનાં શરીર પર ચૂનો ચોપડ્યો હોય છે, બેવી શરીરમાં વધારે ખળતરા થાય છે, તથા “ ચરેણુમરિયકેસા ” તેમના વાળમાં ખડારની ધૂળ ઉડીને બરાથ છે, કારણ કે તે સમયે વાળ ઓળવાનાં સાધનો તેમની પાસે હોતાં નથી. “ કુસુંમગુક્કિણ્ણમુદ્ધયા ” “ કુસુંમ ” કૌસુંબી

કોત્કીર્ણમૂર્ધજાઃ=કુસુમ્મકેન=રાગવિશેષેણ ઉત્કીર્ણાઃ=વ્પાત્તા મૂર્ધજાઃ કેશા યેપાં તે તથા સ્ત્રાગરજ્જિતકેશધરિણ इत्यर्थः, 'છિન્નજીવિયાસા' છિન્નજીવિતાશાઃ=જીવનાશારહિતાઃ 'છુર્ણંતા' ઘૂર્ણમાનાઃ=મરણભયવ્યાકુલત્વાત્ 'વજ્રપાણપિપ્યા' વજ્રપાણપિપ્યાઃ=વધ્યાઃ=હન્તવ્યા એવ પ્રાણાઃ પ્રિયાઃ યેપાં તે તથા, 'તિલં તિલં ચેવ છિજ્જમાણા' તિલં તિલમિવછિદ્યમાનાઃ રાજપુરુષૈઃ પ્રત્યજ્ઞોપાઙ્ગં ત્રોટયમાના इत्यर्थः, 'સરીર વિકત્તલોહિઓલિત્તકાગણિમંસાણિ સ્વાવિયંતા' શરીરવિકત્તલોહિતાવલિમ્કાકળી માંસાણિ સ્વાદ્યમાનાઃ, તત્ર-ચૌરસ્યેવ શરીરાદ્ વિકૃત્તાણિ=સ્વષ્ઠિતાણિ લોહિતાવલિમાણિ યાણિ કાકળી માંસાણિ=માંસસ્વળ્હાણિ તાણિ સ્વાદ્યમાનાઃ રાજપુરુષૈઃ શસ્ત્રાદિકર્તિતસ્વમાંસસ્વળ્હાણિ સ્વાદ્યમાના इत्यर्थः, 'પાવા' પપાઃ કેશ સંસ્કારિત કિયે જા સકે (કુસુંભમુક્ષિણમુદ્ધયા) (કુસુંભગ) કુસુમ્ભ રંગ સે (ઉક્ષિણમુદ્ધયા) इनके केश रंजित कर दिये जाते हैं। (છિન્નજીવિયાસા) યે વિચારે અપને આપકો માનને લગતે હૈં કિ અથ હમ થોડી દેર મેં હી મરને વાલે હૈં, અતઃ इनके जीवन की आशा टूट जाती है। (છુર્ણંતા) મરણભય સે વ્યાકુલ હોને કે કારણ इनका दिमाग चिक्कर खाने घूमने लग जाता है। (વજ્રપાણપિપ્યા) इन्हें बन्ध-मारें जाने वाले अपने प्राण ही पड़े प्रिय होते हैं। અર્થાત્ ઉસ સમય इन्हें कोई भी वस्तु प्रिय नहीं होती है, केवल अपने प्राण ही-जो कुछ देर बाद नष्ट हो जानेवाले हैं-सबसे अधिक प्रिय लगते हैं। (તિલં તિલં ચેવ છિજ્જમાણા) રાજપુરુષ इनके अंगोंपांगों को तिल तिल की तरह काट २ कर अलग २ कर डालते हैं। (સરીરવિકત્તલોહિઓલિત્તકાગણિમંસાણિ સ્વાવિયંતા) વે રાજપુરુષ (સરીરાવિકત્ત) કાટે ગયે इनके शरीर से निकले हुए (लोहिओवलित्त) लोही से लिप्त ऐसे (कागणिमंसाणि) मांस के छोटे छोटे टुकड़ों को (स्वावियंता) उन्हें खिलते हैं (પાવા)

રંગથી “ઉક્ષિણમુદ્ધયા” તેમના વાળ રંગી નાખવામાં આવે છે. “છિન્નજીવિયાસા” તે જિવારા સમજી બંધ છે કે હવે અમે થોડા સમયના મહેમાન છીએ, એટલે કે તેમની જીવવાની આશા તૂટી બંધ છે છુર્ણંતા” મોતના ભયથી વ્યાકુળ થવાથી તેમના મગજ ચક્કર ચક્કર ધૂમવા લાગે છે “વજ્રપાણપિપ્યા” તેને વધ-જેનો વધ થવાનો છે તેને પોતાના પ્રાણ જ સૌથી વડાલા લાગે છે, એટલે કે તે સમયે તેને બીજી કંઈ પણ ચીજ ગમતી નથી, પણ થોડા સમય પછી જેનો નાશ થવાનો છે તે પ્રાણ જ સૌથી વધારે પ્રિય લાગે છે. “તિલંતિલં ચેવ છિજ્જમાણા” રાજ પુરુષો તો તેમનાં અંગ ઉપગોના તલ તલ જેવડા ટુકડા કરે છે “સરીરવિકત્તલોહિઓલિત્તકાગણિમંસાણિસ્વાવિયંતા” તે રાજપુરુષો લોહીથી ખરડાયેલા માંસના નાના ટુકડાઓ તેમને ખવ-

સુવર્ણીકા અં ૩ સૂં ૧૬ સૌરા: કિ ફલં લભન્તે ?

૩૪૫

પાપિન: ' સ્વરકસ્પર્હિં તાલિજ્ઞમાણદેહા ' સ્વરકસ્પર્હિં સ્તાલ્યમાનદેહા: =અતિચિ-
ક્ષ્ણપાપાણમૃતવર્મકોશશતૈ: ' કેંકરમ્ભરે નાનુક ' ઇતિ માયાપ્રસિદ્ધૈ: તાલ્યમાનદેહા
=તાલ્યમાનશરીરા: તથા ' વાતિગનરનારિસંપરિવુડા ' વાતિક નરનારીસમ્પરિવૃતા:
તત્ર-વાતિકૈ: =ઉચ્છૃંહૈ: નરૈર્નારીમિથ સંપરિવૃતા: =યુક્તા: મર્યાદાવર્જિતનરનારી-
વૃન્દવેષ્ટિતા ઇત્યર્થા: ' પિચ્છિજ્ઞંતા ય નાગરજણેન ' નાગરજણેન દષ્ટું સમાગતેન
પ્રેક્ષ્યમાના: ' વજ્જનેવલ્થિયા ' વજ્જનેવલ્થિયા: =વજ્જયોગ્યં નેપથ્યં યેષાં તે વજ્જ
નેપથિયા: =પરિવૃત્તવાતવલ્થેવા: ' ળગરમજ્જેન ' નગરમધ્યેન =પુરમધ્યમાગમાર્ગેન
' પણિજ્જતિ ' પ્રણીયન્તે =મીયન્તે ' કિચ્ચિનકલુણા ' કૃપણકલુણા: =કૃપણેષ્વપિ
કલુણા અતિદીના ઇત્યર્થા: ' અન્નાગા ' અન્નાગા: =જ્ઞાનવર્જિતા: અનર્થનિવારકા-
ભાવાત્ ' અસરણા ' અસરણા: =સરણહીના: =યોગક્ષેમકારિરહિતત્વાત્ અતएव
' અગાહા ' અનાથા: =નાથવર્જિતા: ' અવંધવા ' અવાન્ધવા: =વાન્ધવરહિતા: તથા

યે વડે અધિક પાપી હોતે હૈં । (સ્વરકસ્પર્હિં) અતિચિક્ષ્ણ પાપાણ-
સ્વંદોં સે મરે કુપ પેસે સૈકડોં કોડોં કી (તાલિજ્ઞમાણદેહા) इनके शरीर
पर मारपड़ती है । तथा (वातिगनरनारिसंपरिवुडा) मर्यादा वर्जित
नरनारि गण से ये वेष्टित रहते हैं । (पिचछिज्ज्ञंता य नागरजणेन) इन्हें
देखनेके लिये नागरिकजन आते हैं । (वज्जनेवल्थिया) इनकी वेश-
भूषा वज्जयोग्य होती है । (ळगरमज्जेन पणिज्जति) राजपुरुष इन्हें नगर
के भीतर से होकर ही निकालते हैं । (किचिचिणकलुणा) उस समय ये
दीनों से भी अतिदीन होते हैं (अन्नागा) अनर्थ को निवारण करने
वाला कोई नहीं होने से इनकी कोई रक्षा करने वाला नहीं होता है, इस-
लिये ये अन्नाग होते हैं, (असरणा) योग, क्षेमकारी पुरुष से रहित
होनेके कारण ये असरण-सारण हीन होते हैं । (अगाहा) अनाथ रक्षकके
अभाव से ये अनाथ होते हैं, तथा (अवंधवा) वंधुओं के अभाव से

રાવે । "પાપા" તે ઘણા જ પાપી હોય છે. "સ્વરકસ્પર્હિં" અતિશય ચિક્ષ્ણ
પરધરના દુઃકડાઓથી ભરેલા સેકડો કોરડાઓનો "તાલિજ્ઞમાણદેહા" તેમનાં શરીર
પર માર પડે છે. તથા "વાતિગનરનારિસંપરિવુડા" મર્યાદા રહિત સ્ત્રી પુરુષોના
સમૂહથી તેઓ વીંટળાયેલા રહે છે. "પિચ્છિજ્ઞંતા ય નાગરજણેન" તેમને જોવાને
માટે નાગરિકો આવ્યા કરે છે. "વજ્જનેવલ્થિયા" તેનો પોષાક વજ્જને યોગ્ય હોય છે.
"ળગરમજ્જેન પણિજ્જતિ" રાજપુરુષો તેમને નગરની વચ્ચે થઈને લઈ જાય છે.
"કિચ્ચિનકલુણા" ત્યારે તે લોકોને અતિશય દીનદશા અનુભવે છે. "અન્નાગા" તે
યાતનામાંથી તેમને અચાવનાર કોઈ ન હોવાથી તે લોકો અન્નાગા રક્ષણવગરના હોય-
છે, "અસરણા" તેમને શરણ આપનાર કોઈ પુરુષ ન હોવાથી તેઓ અસરણ
હોય છે. "અગાહા" રક્ષકને અભાવે તેઓ અનાથ હોય છે, "અવંધવા"

૩૪૬

પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રે

‘બંધુવિપ્પહીના’ વંધુવિપ્રહીનાઃ=વંધુવિયુક્તાઃ, ‘દિસોદિસં વિપેક્ષંતા’ દિશો દિશં વિપેક્ષમાણાઃ=પ્રકારયા દિશોઽન્યાં દિશં પદ્યન્તઃ ‘મરણમયુચ્ચિગ્મા’ મરણ-મયોદ્વિગ્નાઃ=મૃત્યુઅપવચાકુલાઃ=‘આવાયણપહિદુવાસંપાવિયા’ આવાતનપતિદ્વાર-સંપાવિતાઃ=આવાતનપતિદ્વારં=વધ્યભૂમિદ્વારં તત્ર સંપાવિતાઃ=નીતા યે તે તથા, ‘અધળ્લા’ અધન્યાઃ=ભાગ્યહીનાઃ અદત્તાદાયિત્વાત્, ‘સૂલગ્મવિલગ્મભિષ્ણદેહા’ શૂલાગ્રવિલગ્નભિન્નદેહાઃ, તત્ર-શૂલાગ્રે વિલગ્નઃ=આરોપણેન સંલગ્નઃ ભિન્નથ દેહો યેષાં તે તથા ‘તે ય’ તે ચ=અદત્તાદાયિનઃ ‘તત્થ’ તત્ર=ધાતનદ્વારે વધવન્ધ-મારણનિર્મર્ત્સનશૂલારોપણાદિ યાતનાસ્થાને ‘પરિકલ્પિયંયુવંગા’ પરિકલ્પિતા-જ્ઞોપાન્નાઃ કર્ત્રીપ્રમૃતિસ્ત્વૈઃ કર્ત્તિતર્કણનાસિકાચવયવાઃ ‘કીરંતિ’ ક્રિયન્તે, દણ્ડવિધાયિરાજપુરુષૈરિતિ ॥ સૂ. ૧૬ ॥

યે વિના બંધુ કે હોતે હૈં । (વંધુવિપ્પહીના) વાંધવજન હોને પર બી વે
 હન્હે છોડ દેતે હૈં । ફસલિયે યે વંધુ હીન હોતે હૈં (દિસોદિસં વિપેક્ષંતા)
 વિચારે યે એક દિશા સે દૂસરી દિશા કા હી અવલોકન કરતે રહતે હૈં
 ઓર (મરણમયુચ્ચિગ્મા) મૃત્યુ કે મય સે વ્પાકુલ વને રહતે હૈં । ફસ
 તરહ કી સ્થિતિ સંપન્ન વને હુએ ફન અદત્તાદાયી જનૉં કો વે રાજપુરુષ
 લાકર (આવાયણપહિદુવાર સંપાવિયા) વધ્યભૂમિ કે દ્વાર પર ઉપસ્થિત
 કર દિયે જાતે હૈં । કયૉં કિ (અધળ્લા) યે અદત્તગ્રાહી જન અભાગે હોતે
 હૈં । (સૂલગ્મવિલગ્મભિષ્ણદેહા) ફન ચૉરૉં કા શરીર શૂલ કે અગ્રભાગ
 પર આરોપિત કર દેને કે કારણ છિન્ન ભિન્ન હો જાના હૈં । (તે ય તત્થ)
 વહાં ઉસ વધ, વંધ, માલગ, નિર્મર્ત્સન, શૂલારોપણ આદિ યાતના કે
 સ્થાનમૈં ઉનકે (પરિકલ્પિયંયુવંગા) અંગ એવં ઉપાંગ અર્થાત્ નાક કાન
 આદિકો કૈચી આદિ શસ્ત્રૉં સે કાટ દિયે જાતે હૈં ॥ સૂ-૧૬ ॥

ખંધુઓને અભાવે તેઓ અખંધુ હોય છે. “વંધુવિપ્પહીના” ખંધુઓને હોય
 તો પશુ તેમના દ્વારા તેમનો ત્યાગ કરાય છે, “દિસોદિસં વિપેક્ષંતા” એવી
 પરિસ્થિતિમાં તે બિચારા એક દિશા તરફથી બીજી દિશા તરફ જોયા કરે છે.
 અને “મરણમયુચ્ચિગ્મા” મરણના ભયથી વ્યાકુળ બને છે. આ પ્રકારની
 સ્થિતિમાં મૂકાયેલા તે ચોરોને રાજપુરુષો લાવીને “આવાયણપહિદુવારસંપા-
 વિયા” વધસ્થાનનાં દરવાજે લાજર કરે છે. કારણ કે “અધળ્લા” તે અદત્ત-
 ગ્રાહી-ચોર લોકો કમનસીબ હોય છે. “સૂલગ્મવિલગ્મભિષ્ણદેહા” તે ચોરોનાં
 શરીર શૂળીના અણીદાર ભાગો પર અડાવવાને કારણે છિન્ન ભિન્ન થઈ જાય
 છે. અને “તે ય તત્થ” ત્યાં તે વધ, વંધ, મારણ, નિર્મર્ત્સન, શૂલારોપણ
 આદિ યાતના દેવાને સ્થાને તેમનાં “પરિકલ્પિયંયુવંગા” અંગોઉપાંગો, એટલે
 કે નાક, કાન આદિને કાતર આદિ શસ્ત્રો વડે કાપી નાખવામાં આવે છે. ॥સૂ.૧૬॥

सुदर्शिनी टीका अ०३सू०१७ अदत्तादायिनः यत्फलं प्राप्नुवन्ति तन्निरूपणम् ३४७

पुनरप्यदत्तादायिनो यथाफलं प्राप्नुवन्ति तदाह—‘ केइ ’ इत्यादि ।

मूलम्—केइ उल्लं विज्जंति रुक्खसालेहिं कलुणाइ विलव-
माणा । अवरे चउरंगधणि य बद्धा पव्वयकडगा पमुच्चंते
दूरपातवहुविसमपत्थरसहा । अण्णे य गयचलणामिलण नि-
म्मदिया कीरंति । पावकारी अट्टारस खंडिया य कीरंति मुंड-
परसुहिं । केइ उक्कित्तरुण्णोदुनासा उप्पाडियनयण - दसण
वसणा जिब्भदियं चिया छिण्णकणसिरा पणिज्जंति । छिज्जंति य
असिणा निव्विसया छिण्णहत्थपाया य पमुच्चंति जाव जीवबंधणाय
कीरंति । केइ परदव्वहरणलुद्धा कारगलनियल—जुयलरुद्धा
चारगालये हयसारा सयणविप्पमुक्का मित्तजण निरक्रिया निरासा
वहुजण धिक्कारसदलजाइया अलजा अणुवद्ध खुहापरद्धा सीउणह
तणह्वेयण दुधद्वद्विया विवण्णमुहविच्छिविया विहलमालिण
दुव्वला किलंता कासंता वाहिया य आमाभिभूयगत्ता परूढ
नहकेसमंसुरोमामलमुत्तम्मि गियगम्मि सुत्ता तत्थेव मया
अकामना वंधिऊण पाएसु कट्टिया खाइयाए दूढा, तत्थ य
विग—सुणय—सियाल—कोलमज्जार—वंद संडासतुंडपविखगण—
विविहमुहसय—विगुत्तगत्ता कयविहंगा । केइ किमिजाय कुहिय
देहा अणिट्ट वयणेहिं सप्पमाणा सुट्टुकयं जं मओ त्ति पावो
तुट्टेण जणेण हयमाणा लज्जावणगा य हुंति सयणस्स वि य
दीहकालं ॥ सू० १७ ॥

टीका—केइ ‘ केचित्=अदत्तादायिनः महाकष्टानुभवनेन ‘ कलुणाइ विल-
वमाणा ’ करुणानि वचनानि विलपन्तः ‘ रुक्खसालेहिं ’ वृक्षशाखासु ‘ उल्लं विज्जंति ’
उल्लम्बन्ते=उज्जवादिभिर्गल्वन्धनेन वृक्षशाखासु आरोप्यन्ते इत्यर्थः । ‘ अवरे,
अपरे केचनाऽदत्तादायिनः ‘ चउरंगधणियवद्धा ’ चतुरङ्गधणियवद्धाः = चतुर-

જ્ઞાનિ=હસ્તાદ્વપાદદ્વયરૂપાણિ ‘ ધણિયં ’ અત્યર્યં વદ્ધાનિ યેષાં તે તથા દૃઢવદ્ધહ-
સ્તપદ્માઃ, ‘ પવ્વયકઢગાપમુચ્ચંતે ’ પર્વતકટકાત્ મમુચ્ચન્તે=ગિરિશિખરાભિપાત્ય-
ન્તેઽત્ત એવ ‘ દૂરપાતવહુવિસમપત્થરસહા ’ દૂરપાતવહુવિપમપ્રસ્તરસહાઃ = વહુવિ-
પમેધુ= અત્યન્તવિપમેધુ ભિન્નોગ્રતેષુ પ્રસ્તરેષુ=પાષાણેષુ યો દૂરાત્ પાતઃ નિપતનં
તં સહન્તૈ યે તે તથા મવન્તિ । ‘ અણેય ’ અન્વે ચ ‘ ગયચલ્લગમલ્લગનિમ્મદિયા
કીરંતિ ’ ગજચરણમલ્લનિર્મદિતાઃ, તન્ન - ગજચરણેન્ન=દસ્તિપાદેન યન્મલ્લનં=
મર્દનં તૈન નિર્મદિતાઃ=સમ્મદિતઃકીરાઃ ક્રિયન્તે । તથા ‘ પાવકારી ’ પાવકારિણઃ

પિત્ર વે અદસ્તગ્રાહી ચોર જિસ ફલ કો પાતે હૈ—‘ કેહ ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(કેહ) કિતનેક અદસ્તગ્રાહી મનુષ્ય (કલુગાઈ જિલ્લમાણા)
મહાકષ્ટોંકો ભોગનેકે કારણ કરુણવચનોં સે વિલાપ કરતે હુઈ (સ્વસ્વસા-
હેઈ) દૃષ્ટોંકી શાલાઓં મેં (હલં વિજ્ઞંતિ) રસસી આદિ સે બાંધકર લટકા
દિયે જાતે હૈં । તથા (અવરે) કિતનેક અદસ્તગ્રાહી મનુષ્ય (ચડરંગ
ધણિયકઢા) દોનોં હાથ પૈર યૂવ જખઢ કર બાંધકર (પવ્વયકઢગા)
પર્વત કી ઓટી સે (પમુચ્ચંતે) ગિરા દિયે જાતે હૈં, અતઃ વે (દૂરપાતવિ-
સમપત્થરસહા) વહાં સે ગિર કર નીચે ડૂંચે પથરોં પર વહુત દૂરતક
ગુઢકતે આને કે કારણ શરીર મેં વહુત ઘુરી તરહ છુટ જાતે હૈં । હસ
તરહ વે મહાભયંકર વેદના કો સહન કરતે હૈં । (અણેય) કિતનેક
અદસ્તગ્રાહી ચોર (ગયચલ્લગમલ્લગનિમ્મદિયા) હાથી કે પૈરોં કે તલે
હાલ કર મર્દિત (કીરંતિ) કરવાયે જાતે હૈં । હસ તરહ ડૂંચે શરીર

તે અદસ્તગ્રાહી ચોર જે ક્ષણ પામે છે તેનું વધું વર્ણન કરે છે—

“ કેહ ” इत्यादि

ટીકાર્થ—“કેહ” કેટલાક અદસ્તગ્રાહી માણસોને “કલુગાઈજિલ્લમાણા” મહા-
કષ્ટો ભોગવવાને કારણે કરુણ વચનોથી વિલાપ કરતા “સ્વસ્વસાહેઈ” દ્રોક્ષની
ડાળીઓ પર “હલં વિજ્ઞંતિ” દોરડા આદિથી ગાંધીને લટકાવી દેવામાં આવે
છે. તથા “અવરે” કેટલાક અદસ્તગ્રાહી માણસોને “ચડરંગધણિયકઢા”
ખન્ને હાથ પગને મચ્છૂત બાંધીને “પવ્વયકઢગા” પર્વતની ટોચેથી “પમુચ્ચંતે”
નીચે હડસેલી દેવામાં આવે છે, તેથી “દૂરપાતવિસમપત્થરસહા” ત્યાંથી ઊંચા
નીચા પથ્થર ગળાવાને કારણે તેમના શરીર ખરાબ રીતે છેલ્લાઈ બંધ છે
અને તે રીતે તે લોકો અતિ ભયંકર વેદના સહન કરે છે. તથા “અણેય”
કેટલાક અદસ્તગ્રાહી ચોરોને “ગયચલ્લગમલ્લગનિમ્મદિયા” હાથીના પગ નીચે
નાખીને “કીરંતિ” કચડાવવામાં આવે છે. એ રીતે હાથીના પગ નીચે કચ-

સુશંકિની ટોકા અંશસૂત્ર ૧૭ અદત્તાદાયિનઃ યત્કલં પ્રાપ્તુવન્તિ તત્ત્વિરૂપણમ્ ૩૪૯

‘મુંડપરસુહિ’ મુંડપરસુભિઃ=અગ્નધારકુટારૈઃ ‘અદ્વારસસ્વંહિયા’ અદ્વાર-સ્થાનેષુ સ્વંહિતા ક્ષિપન્તે કર્ણ=નયન-નાસિકો-ઠ-કર-ચરણાનાં દ્વયં દ્વયમિતિ દ્વાદશ, જિહ્વા-ગ્રીવા-કંઠ-પૃષ્ઠ-વક્ષઃ સ્થલ-ગુહ્યેન્દ્રિયમિતિ પદ્મિલિત્વાષ્ટાદશ-સ્થાનાનિ ભવન્તિ । તથા ‘કેઙ્’ કેચિત્ ‘ઉક્તકર્ણગોદ્દનાસા’ ઉત્કૃત્તકર્ણૌષ્ઠનાસાઃ=ઉત્કૃત્તાઃ=છિન્નાઃ કર્ણઃ ઓષ્ઠઃ નાસા=નાસિકા ચ યેષાં તે તથા ‘ઉપ્પાદિયનયણ-દસણવસણ’ ઉત્પાદિતનયનદસણવસણાઃ, તત્ર-ઉત્પાદિતાનિ=ઉન્મૂલિતાનિ નય-નાનિ દશનાઃ=દન્તાઃ દૃપણાઃ=અંડકોશા યેષાં તે તથા ‘જિઙ્મિદિયંચિયા’ જિઘ્રેન્દ્રિયાશ્રિતાઃ જિહ્વેન્દ્રિયં=અશ્રિતં=ગમિતમ્-આકૃષ્ટં યેષાં તે તથા આકૃષ્ટ-જિહ્વેન્દ્રિયાઃ ‘છિણ્ણકર્ણસિરા’ છિન્નકર્ણસિરાઃ=છિન્નકર્ણનાશ્ચ, ‘પણિજ્ઞંતિ’ પ્રણીયન્તે=શૂલાધારોપણાય વધ્યધૂમૌ નીયન્તે । કેચિત્ ‘અસિણા છિજ્ઞંતિ’

હાથી કે પૈરોં સે મર્દિત હોને કે કારણ હડિપસલિયાં ચૂર-ચૂર હો જાતી હૈ ઓર વે બહે દુઃખી હોતે હૈં । તથા કિતનેક (પાવકારી) પાપ-કારી અદત્તગ્રાહી જન (મુંડપરસુહિ) અગ્ન ધાર વાલે કુટારોં સે અદ્વાર-હ સ્થાનોં મેં-કર્ણ ૨, નાસિકા ૨, નયન ૨, ઓષ્ઠ ૨, કર ૨, ચરણ ૨, (૧૨) જિહ્વા ૧૨, ગ્રીવા ૧૪, કંઠ ૧૫, પૃષ્ઠ ૧૬, વક્ષસ્થલ ૧૭, एवं ગુહ્યેન્દ્રિય ૧૮, મૈં-વઢી વુરી તરહ સે સ્વંહિત કર દિયે જાતે હૈં । તથા (કેઙ્) કિતનેક ચોરોં કે (ઉક્તકર્ણગોદ્દનાસા) કાન નાક एवं ઓંઠ કાટ દિયે જાતે હૈં તથા (ઉપ્પાદિયનયણદસણવસણ) નેત્ર ફોડ દિયે જાતે હૈં દાંત ઓર અંડકોશ ઉચ્છાદ લિયે જાતે હૈં । (જિઙ્મિદિયંચિયા) જીમ સ્વેંચ લી જાતી હૈ । (છિણ્ણકર્ણસિરા) કાન કી નસેં તોડ દી જાતી હૈં । एवं ઇસ તરહ કી સ્થિતિ મેં કરકે ચોરોં કો વે રાજપુરુષ (પણિજ્ઞંતિ)

રાવાને કારણે તેમનાં શરીરનાં હાડકાં અને પાંસળીઓના ચૂરે ચૂરા થઇ જવાથી તે લોકો ઘણી પીડા અનુભવે છે. તથા કેટલાક “પાવકારી” પાપી અદત્તગ્રાહી લોકોને “મુંડપરસુહિ” ધાર વગરની (મુઠી)કુહાડીઓથી “અદ્વારસસ્વંહિયા” અદ્વાર જગ્યાએ ઘણીજ ખરાબ રીતે મારવામાં આવે છે. તે અદ્વાર અંગે આ પ્રમાણે છે કાન ૨, નાસિકા ૨, નયન ૨, હોઠ. ૨, હાથ ૨, પગ ૨, જીભ, ગ્રીવા, કંઠ, પૃષ્ઠ, વક્ષસ્થલ, અને ગુહ્યેન્દ્રિય, તથા “કેઙ્” કેટલાક ચોરોના “ઉક્તકર્ણગોદ્દનાસા” કાન, નાક અને હોઠ કાપી નાખવામાં આવે છે તથા “ઉપ્પાદિયનયણદસણવસણ” અંગે ફાડી નાખે છે, દાંત અને શુભ્ર અંગ ઉખેડી નાખે છે, “જિઙ્મિદિયંચિયા” જીભ ખેંચી કાઢવામાં આવે છે, “છિણ્ણકર્ણસિરા” કાનની નસો તોડી નાખવામાં આવે છે. તેમની એવી હાલત કરીને રાજપુરુષો તે ચોરોને “પણિજ્ઞંતિ” શૂળી પર ચડાવવાને ક્ષ

અસિના=લજ્જેન છિજ્જન્તે=લજ્જાઃ ક્રિયન્તે । તથા ‘ નિવ્વિસયા ’ નિવ્વિસયાઃ= વિષયાત્ દેશાક્રિયાસિતાઃ ક્રિયન્તે । કેચિત્ ‘ છિણ્ણહત્થપાયાય ’ છિણ્ણહત્થપાદાશ્ચ ‘ પમુચ્ચન્તિ ’ પમુચ્ચન્તે, રાજકિઙ્કરૈર્હસ્તપાદં ક્રિયા । જ્યન્તિત્યર્થઃ । કેચિત્ ‘ જાવજીવિવંધનાય કીરંતિ ’ યાવજિવવંધનાશ્ચ ક્રિયન્તે=જીવનપર્યન્તં કારાગારે વચ્ચન્તે । ‘ કેદ પરદવ્વહરણલુદ્ધા ’ કેચિત્ પરદવ્વહરણલુદ્ધાઃ= પાપિનઃ ‘ ચરગાલયે ’ ચારગાલયે=કારાગારે ‘ કરગલનિયલજુયલરુદ્ધા ’ કારાગલાનિગડયુલરુદ્ધા=કારાગાલયા=કારાગૃહાગલયા નિગડયુગછેન=હાદ-શૂદ્ધ લલાદ્વયેન રુદ્ધા=નિયન્ત્રિતાઃ ભવન્તિ । કથંમૂળાઃ ‘ ૧ ’ इत्याह — ‘ ह्यसारा ’ हतसाराः = अपहतद्रव्याः । पुनः कीदृशाः ‘ सयणविप्पमुक्का ’ स्वजनवि-प्रमुक्ताः = स्वकीयज्ञातिविरहिताः “ मित्रजननिरक्किया ” मित्रजननिराकृताः

શૂલી પર ચઢાને કે લિયે લે જાતે હૈં । કિતનેક ચોર उन राजपुरुषोंद्वारा (असिणा छिज्जन्ति) तलवारों से काटे जाते हैं (निव्विसया) कितनेक देश से बाहर निकाल दिये जाते हैं । और (छिण्णहत्थपायाय) कितनेक हाथ पैरों को काट कर यों ही (पमुच्चन्ति) छोड़ दिये जाते हैं । तथा कितनेक (जावज्जीव वंधनाय कीरंति) जीवन पर्यंत कारावास में ही रख दिये जाते हैं । (केद परदव्वहरणलुद्धा) तथा परदव्वहरण करने में लुब्धक बने हुए कितनेक चोर (करगलनियलजुयल रुद्धा) कारागार की अंगला के साथ लोह की जंजीरों से जकड़कर (चरगालये) कारागार में ही रूंद कर दिये जाते हैं । (ह्यसारा) इनका कण्ड सयण रूप से अपहृत कर लिया जाता है । (सयणविप्पमुक्का) इनके किसी भी स्वजन से इन्हें नहीं मिलने दिया जाता है । (मित्रजननिरक्किया) इनके

બંધ છે. કેટલાક ચોર તે રાજપુરુષો દ્વારા “અસિના છિજ્જન્તિ” તલવારોથી કપાઈ બંધ છે, “નિવ્વિસયા” કેટલાક દેશમાંથી હાંકી કાઢવામાં આવે છે, અને “છિણ્ણ હત્થપાયાય” કેટલાકને હાથપગ કાપી નાખીને “પમુચ્ચન્તિ” છોડી મૂકવામાં આવે છે. તથા “જાવજ્જીવિવંધનાય કીરંતિ” કેટલાકને ત્યાં ત્યાં સુધી કારાગૃહમાં પૂરી રાખે છે. “કેદ પરદવ્વહરણલુદ્ધા” તથા પરધનનું અપહરણ કરવાની લાલચ વાળા કેટલાક ચોરોને “કરગલનિયલજુયલરુદ્ધા” કારાગૃહના આંગળીયા સાથે લોહની સાંકળોથી બાંધીને “ચરગાલયે” કારા-ગારમાં જ કેદ રાખવામાં આવે છે. “હ્યસારા” તેમનું સયણ દ્રવ્ય જપ્ત કરવામાં આવે છે. “સયણવિપ્પમુક્કા” તેમના કોઈ પણ સ્વજનની મુદાકાત તેમની સાથે થવા દેતા નથી, “મિત્રજનનિરક્કિયા” તેમના મિત્રો પણ

સુદર્શિનો ટીકા અવસ્થા ૭ અવસ્થાવાચિનઃ ચત્કલં પ્રાપ્તુવન્તિ તન્નિરૂપણમ્ ૩૫૧

મિત્રૈસ્ત્યક્તાઃ ‘ નિરાસા ’ નિરાસાઃ = જીવનાઘાશારહિતાઃ ‘ બહુજન-
ધિકારસદ્લજ્ઞાદયા ’ બહુજનધિકારસદ્લજ્ઞાનિતાઃ=વહુનો જનાનો ધિકાર-
વચનૈઃ લજ્ઞાનિતાઃ=લજ્ઞા પ્રાપ્તિઃ તથાપિ અલજ્ઞાઃ = નિર્લજ્ઞાઃ ધૃષ્ટ-
ત્વાત્ ‘ અણુબદ્ધસુહારપરદ્વા ’ અણુબદ્ધસુધાપરાદ્વાઃ=અણુબદ્ધસુધયા=સતતસુધુસુધયા
અપરાદ્વાઃ=પીડિતાઃ ‘ સીઝ્ઘત્ત્વેયણદુષ્ટવટ્ટિયા ’ શીતોષ્ણતૃષ્ણાવેદનાદુર્બદ્ધ
વટ્ટિતાઃ, તત્ર શીતેન ઉષ્ણેન તથા તૃષ્ણયા=પિપાસયા સુધયાચ ચા દુર્બદ્ધાઃ=
અસહ્યાઃ વેદનાઃ=પીડાસ્તામિઃ - દુર્બદ્ધાઃ=અતિચિકટ્પૂ-અતિશયેન વટ્ટિતાઃ = પી-
ડિતાઃ ‘ ચિવળ્ણમુહચિચ્છવિયા ’ ચિવળ્ણમુહચિચ્છવિકાઃ = તત્ર ચિવળ્ણ મુહચે= ચિ-
રુપયુક્તં મુહચે તે તથા ચિચ્છવિકાઃ = કાન્તિરહિતા નિસ્તેજસઃ । ‘ ચિ-
હલમલિણદુર્બલા ’ ચિહલમલિનદુર્બલાઃ=તત્ર ચિહલા=કારાગારે નિર્ધારિત-
દનિષ્ટફલાઃ મલિણા=મલિણવેદના દુર્બલાશ્ચ=શક્તિરહિતા યે તે તથા ‘ ચિલ્લતા ’

મિત્રજન મી ઇન્હે છોડ દેતે હૈં । (નિરાસા) યે ચોર વહાં જીવત પર્યન્ત
રહને કે કારણ અપને જીવન કી આશા છોડ દેતે હૈં । (બહુજનધિકાર
સદ્લજ્ઞાદયા) અનેક જનોં દ્વારા ધિકાર કે શબ્દોં સે યે લજ્જિત કિયે
જાતે હૈં । ફિર મી ઇન્હે જેમી લજ્જા આની ચાહિયે વૈસી નહીં આતી
હૈં । કારણ યે વહુત અધિક હેટ બન જાતે હૈં । (અણુબદ્ધસુહારપરદ્વા)
રાત્રિદિન યે સુધા સે પીડિત બને રહતે હૈં । (સીઝ્ઘત્ત્વેયણદુષ્ટવટ્ટિયા)
શીત, ઉષ્ણ, તૃષ્ણા, સુધા જન્ય અસહ્યવેદનાઓંસે યે સદા (દુષ્ટવટ્ટિયા)
અત્યન્ત દુઃખિત બને રહતે હૈં । (ચિવળ્ણમુહચિચ્છવિયા) ઇનકા મુહ
સદા કુમ્હલાયા હુઆ રહતા હૈં ઓર કાન્તિ મી ઇનકી મલિન રહતી હૈં ।
(ચિહલમલિણદુર્બલા) કારાગાર મેં બંદ રહને કે કારણ યે (ચિહલ)
અનિષ્ટ ફલવાલે હોતે હૈં-અર્થાત્ જો યં ચાહતે હૈં વહ ઇન્હે નહીં મિલતા

તેમનો ત્યાગ કરે છે. “ નિરાસા ” તે ચોરે ત્યાં જીવન સુધી રહેવાના કારણે
પોતાના જીવનની આશા છોડી દે છે. “ બહુજનધિકારસદ્લજ્ઞાદયા ” અનેક લોકો
ધિકારના શબ્દથી તેમને શરમિદા કરે છે, છતાંપણ તેમને એવી શરમ થતી નથી,
કારણ કે તેઓ નષ્ટ પદ્ધતિ ગયા હોય છે, “ અણુબદ્ધસુહારપરદ્વા ” રાત્રિ દિવસ તે
બુધ્ધી પીડાયા કરે છે “ સીઝ્ઘત્ત્વેયણદુષ્ટવટ્ટિયા ” ઠંડી, ગરમી, સુધા
તૃષ્ણા આદિની અસહ્ય વેદનાથી તેઓ સદા “ દુષ્ટવટ્ટિયા ” અત્યન્ત દુઃખી રહે
છે. “ ચિવળ્ણમુહચિચ્છવિયા ” તેમનું મુખ સદા શ્વાન-ઉદાસ રહે છે અને
તેમની કાન્તિ પણ મલિન રહે છે. “ ચિહલમલિણદુર્બલા ” કારાગૃહમાં કેદ
રહેવાને કારણે તેઓ “ ચિહલ ” અનિષ્ટ ફળવાળા હોય છે, એટલે કે તેઓ

વલાન્તાઃ વ્લાનાઃ ‘કાસંતા’ કાશમાનાઃ કાશરોગે ‘સૂં સૂં’ इति शब्दाप-
 માનાઃ ‘વાહિયા ય’ વ્યાધિતાશ્ર=કુષ્ઠાદિવિવિધરોગપીડોતાઃ, ‘આમાભિભૂય-
 ગતા’ આમાભિભૂતમાત્રાઃ=આમૈઃ = મુક્તાન્નાપરિપાકજનિતૈસ્તીસારાદી નાના-
 રોગૈરભિભૂતાની માત્રાણિ=શરીરાણિ ચેવાં તે તથા । ‘પરુઢનહકેસમંસુરોમા’
 પરુઢનસ્વસ્ત્રમશ્ચુરોમાગઃ, તત્ર પરુઢાઃ । અસંસ્કારાન્ પ્રઘટ્ટાઃ નચાઃ કેશાઃ શ્મ-
 શ્રૂણિ=મુલજાતાનિ ‘દાદી’ इति भाषा प्रसिद्धानि रोमाणि च येषां ते तथा ‘मल-
 મુત્તમ્નિ પિયગમ્નિ ચુતા’ નિજકે મલમૂત્રે ચુતા=સ્વકીયે પુરોપમૂત્રે ‘ચુતા’ નિમગ્નાઃ
 ‘ચુતા’ इति देशी शब्दः, कारागारे वद्धाः अन्यत्र गन्तुमशक्यत्वात् स्वकृत-
 મલમૂત્રપુરીષપક્કુએવ નિમગ્નાસ્તિષ્ઠન્નપદવશાદિણ દ્વિત્યર્થઃ । તથા ‘અકામગા’
 અકામકાઃ = મરણેચ્છારહિતાઃ ‘તત્થેવ મયા તત્થેવ કારાગૃહે મૃતાઃ સન્તઃ
 હૈ । (મલિન) ये मलिन वदन एवं (दुष्प्रला) शक्तिविहीन बने रहते
 हैं । (किलंता) ग्लान रहते हैं । तथा (कासंता) काशरोग से “सू-
 सू” इस प्रकार का शब्द इनके मुख से निकलने लगता है । और
 (वाहिया य) कुष्ठादि विविध रोगों से ये पीड़ित होते हैं (आमा-
 भिभूयगता) इनका शरीर अतिसार आदि नाना प्रकार के रोगों का
 घर बन जाता है । (परुडनहकेसमंसुरोमा) नख, केश, तथा श्मश्रु-दादी
 के बाल समारे नहीं जानेके कारण बहुत बढ़ जाते हैं । और (नियगमि-
 मलमुत्तमि) इनकी हालत अधिक गंभीर बन जाती है कि जिससे
 कारागार में बद्ध ये विचारे अन्य जगह जाने में असमर्थ होने के कारण
 अपने ही मलमूत्र में (चुत्ता) भरे हुए पड़े रहते हैं । तथा (अकामगा)
 नहीं इच्छा होने पर भी (तत्थेव) उसी में पड़े पड़े वहीं पर (मया)

એ વસ્તુની ઇચ્છા કરે તે વસ્તુ તેમને મળતી નથી. “ મલિન ” તે લોકો
 મલિન વદન વાળા તથા “દુષ્પ્રલા” શક્તિ વિનાના થઈ જાય છે, “કિલંતા”
 ગ્લાનિયુક્ત રહે છે, તથા “કાસંતા” ઉધરસને કારણે “સૂં-સૂં” કથી
 કરતાં હોય છે. અને “વાહિયાય” તે લોકો કોઠ આદિ અનેક રોગોથી
 પીડાતાં હોય છે. “આમાભિભૂયગતા” તેમનાં શરીર અતિસાર આદિ વિવિધ
 રોગોનાં ઘર બની જાય છે, “પરુઢનહકેસમંસુરોમા” નખ, કેશ તથા દાદીના
 વાળ નહીં કપાતા હોવાથી ઘણુંજ વધી જાય છે. અને “નિયગમિ મલમુ-
 ત્તમિ” તેમની હાલત એવી ગંભીર થઈ જાય છે કે, કારાગૃહમાં પૂરાયેલા તે
 લોકો બીજી જગ્યાએ જવાને અસમર્થ હોવાથી પોતાના જ મળમૂત્રમાં
 “ચુત્તા” ભરાઈ રહે છે. તથા “અકામગા” ઇચ્છા ન હોવા છતાં પણ
 “તત્થેવ” ત્યાંજ પડ્યા પડ્યા “મયા” ભરી જાય છે. ત્યાર બાદ “વંધિ-

सुदर्शिनी टीका अ०:सू०:१७ अक्षतादायिनः यत्फलं प्राप्नुवन्ति तन्निरूपणम् ३५३

‘बन्धिऊणपाणसु कड्डिया’ पादेषु वद्ध्वा कृष्टाः=रज्ज्वादिभिर्हस्तपादभ्यन्तेन कृष्टाः = बहिर्निष्कासिता ‘खाइयाए छ्ढा’ खातायां छ्ढाः क्षिप्ताः = गते चाण्डालादिभिः प्रक्षिप्ताः क्रियन्ते। ‘तत्थय’ तत्र च विगमुणयसियालकोलमज्जारवंदसंडासतुंडपक्खिगणविहमुहसयविलुत्तगत्ता’ वृक - शुनक - शृगाल - कोल - मार्जार वृन्द - संडासतुंडपक्षिगणविविधमुखशतविलुत्तायाः, तत्र ‘विग’ वृकाः = ‘वरगडा’ इति भाषा प्रसिद्धाः, ‘सुणय’ शुनकाः = कक्कुराः ‘सियाल’ शृगालाः कोलाः सूकराः मार्जाराः, तेषां वृन्दं समूहस्तेन तथा संदंश-तुण्डैः = संदंशवत्ताक्ष्णमुखतुण्डैः-पक्षिगणानां=काकादीनां विविधमुखशतैश्च विलुत्तानि=निःशेषेण खादितत्वाद् अलक्षितानि गात्राणि येषां ते तथा वृककुक्कुर-शृगालादिभिः विविधपक्षिगणैश्च भक्षितशरीराः ‘कयविहंगा’ कृतविभङ्गाः=वृकादिभिरेव खण्डशः कृताः। तथा ‘केइ’ केचित् मृतेभ्योऽन्ये ‘किमि-मर जाते हैं। याद में (बन्धिऊणपाणसु) रज्जु आदि से पैर बांधकर (इन्हें चाण्डाल आदि जन (कड्डिया) बाहर निकाल कर (खाइयाए छ्ढा) किसी खड्डे में ले जाकर पटक देते हैं। (तत्थ य) वहां फिर उनके कले-धरों को (विगमुणयसियालकोलमज्जारवंदसंडासतुंडपक्खिगणविह-मुहसयविलुत्तगत्ता) (विग) वृक-वगैरे, (सुणय) शुनक-कुत्ते, (सियाल) शृगाल, (कोल) सुअर, (मज्जारवंद) मार्जार-वन बिलाव आदि हिंसक जानवरों के (वृन्द-समूह) एवं (संडासतुंडप-क्खिगण) संडासी के जैसे तीक्ष्ण तुण्डवाले गृध्र आदि पक्षियों के समूह (विविधमुखसय) नाना प्रकारके सैकड़ों मुखों से (विलुत्तगत्ता) तरहस तरहस कर डालते हैं जिससे ‘यह शरीर किस का है’ यह नहीं जाना जाता। (कयविहंगा) इस प्रकार वृकादिक जानवरों एवं विविधप-क्षिगणों से कितनेक इन अभागों के शरीर खाया जाकर खंड २ कर

ऊणपाणसु” दोरडां आदिथी पण आंधीने खांडल आदि दोडे तेमने “कड्डिया” બહાર કાઢીને “खाइयाए छ्ढा” કોઈ ખાડામાં લઈ જઈને ફેંકી દે છે. “તત્થ ય” ત્યાં તેમનાં મુડાને વિગમુણયસિયાલકોલમજ્જારવંદસંડાસતુંડ-પક્ખિગણવિવિહમુહસયવિલુત્તગત્તા” “વિગ” વૃક, “સુણય” શુનક-કુતરો, “સિયાલ” શિયાળ, “કોલ” સુઅર, “મજ્જારવંદ” મર્જાર-વનગલી બિલાડા, આદિ હિંસક પશુઓનો સમૂહ અને “સંડાસતુંડ પક્ખિગણ” સાણસી જેવી તીક્ષ્ણ આંગવાળા ગીધ વગેરે પક્ષીઓનો સમૂહ “વિવિહમુહ-સય” વિવિધ પ્રકારનાં સેકડો મુખો દ્વારા “વિલુગત્તા” કોલી ખાય છે, તેથી “આ કોનું શરીર છે” તે બાબી શકાતું નથી. “કયવિહંગા” આ રીતે વૃક આદિ જાનવરો તથા વિવિધ પક્ષીગણો દ્વારા તે કબલાગીઓનાં શરીર

જાય કુહિયદેહા ' ક્રમિજાતકુથિતદેહાઃ ક્રમિજાતેન = રોગાદિ કારણાત્
સમૂત્પન્નક્રમિસમૂહેન કુથિતદેહાઃ=દુર્ગન્ધયુક્તશરીરાઃ 'અણિદ્વચ્ચણેહિ' અનિદ્વચ્ચણેઃ
=અપ્રિયવચ્ચણેઃ 'સુદ્દુક્યં જં મઓત્તિ પાવો' 'સુદ્દુક્યં = શોભનં જાતં યત્
=યસ્માત્ મૃતોઽયં પાપઃ = પાપી इत्येवं रूपः 'सप्यमाणा' शप्यमानाः=
આક્રોશ્યમાનાઃ 'તુષ્ટેણ જણેણ હપ્પમાણા ' તુષ્ટેન જનેન હપ્પમાનાઃ તેણાં મારણેન
પ્રસન્નો યો જનસ્તેન તાહચમાનાઃ સન્તઃ 'સયણસ્સ વિય' સ્વજનસ્થાપિ ચ
કિં પુનરન્વેષામ્ 'દીહકાલં' દીર્ઘકાલં યાવત્ 'લઙ્ગાવગાય' લઙ્ગાવગાયાઃ=
લઙ્ગાલઙ્ગારહિતા इत्यर्थ 'हृति' भवन्ति ॥ सू० १७ ॥

एवमिह लोके दुःखमाप्नुवन्तीत्युक्तम्, अथ परलोके किं भवती ? त्याह—
'मयासंता' इत्यादि

મૂલમ્—મયાસંતા પુણો પરલોગસમાવણા નરણ ગચ્છંતિ
નિરભિરામે અંગારપલિતગકપ્પઅચ્ચત્થસીયવેયણા અસાયણો

દિયે જાતે હૈં । તથા (કેહ) કિતનેક અદત્તગ્રાહી ચાર જો મરને સે યાકી
બચે રહતે હૈં વે (કિમિજાયકુહિયદેહા) રોગાદિક કારણ કે વશ સે
અપને શરીર મેં ઉત્પન્ન હુણ કીઢીં સે દુર્ગંધિત શરીર વાલે હોકર (અણિ-
દ્વચ્ચણેહિ) લોગોં કે ઇસ પ્રકાર કે અપ્રિયવચ્ચણોં સે કિ-(સુદ્દુક્યં જં
મઓત્તિ પાવો) બલા હુઆ જો યહ પાપી મર રહા હૈ " અથવા મરે હુણ
સા હો રહા હૈ " ઇસ પ્રકાર (સપ્પમાણા) ગાલિયોં સે અપમાનિત હોતે
હૈં । તથા ડનકી મૃત્યુ સે પ્રસન્ન હોને વાલે મનુષ્યોં સે તાહિત હોકર
(સયણસ્સ વિય) સ્વજનોંસે ખી ઓર દૂસરોંસે ખી (દીહકાલં) બહુત
સમયનક (લઙ્ગાવગાય) લઙ્ગિત (હુંતિ) હોતે હૈં ॥ સૂ-૧૭ ॥

અર્થ છે અને તેના ટુકડે ટુકડા કરાય છે તથા “ કેહ ” કેટલાક અદત્ત-
ગ્રાહી ચોરા જે મોતમાંથી બચે છે તે “ કિમિજાયકુહિયદેહા ” રોગાદિક
કારણોથી તેમનાં શરીરમાં ઉત્પન્ન થયેલ કીડાઓથી દુર્ગંધ યુક્ત શરીરવાળા
થઈને “ અણિદ્વચ્ચણેહિ ” લોકોનાં આ પ્રકારનાં અપ્રિય વચ્ચણોથી “ સપ્પમાણા ”
અપમાનિત થાય છે—“ સુદ્દુક્યં જં મઓત્તિ પાવો ” “ સારું થયું કે આ પાપી
આ રીતે મરી રહ્યો છે ” અથવા “ મરેલાના જેવી સ્થિતિ અનુભવે છે. ”
તથા તેમના મૃત્યુથી પુણી થનારા માણસો દ્વારા માર ખાઈને “ સયણસ્સવિય ”
સ્વજનો તથા બીજા લોકોથી “ દીહકાલં ” લાંબા સમય સુધી “ લઙ્ગાવગાય ”
લઙ્ગા ‘ હુંતિ ’ પામે છે ॥ સૂ-૧૭ ॥

સુદ્ધિની ટીકા અં ૩ સૂ ૧૮ અદત્તાદાયિનઃ પરલોકગતિનિરૂપણમ્ ૩૫૫

દિણસયય દુઃસ્વસયસમભિભૂષ । તઓ વિઠવ્વટ્ટિયા સમાણા-
પુણો વિ પવ્વજ્ઞંતિ તિરિયજોણિં । તહિં પિ નિરઓષમં-અણુભ-
વંતિ વેયણં । તે અણંતકાલેણં જહ્ણામ કહિં વિ મણુયભાવં
લહિંતિ ણેગેહિં ણિરયગહ્ણમણ તિરિયભવસયસહસ્સપરિયટ્ઠણિં
તત્થ વિ ય ભવંત ણારિયા નીયકુલસમુપ્પણ્ણાલોચવજ્ઞાતિરિ-
ક્ખ ભૂયા ય અકુસલા કામભોગતિસિયા જહિં નિવંધંતિ નિરં-
યવત્તણી ભવપ્પવંચકરણપણોહિ પુણો વિ સંસારાવત્તણેમિમૂલે
ધમ્મસુહ વિવજિયા અણજ્ઞા કૂરા મિચ્છત્તસુહ પવણ્ણા ય હુંતિ ।
ણંતંદંડરુહ્ણો વેઢેંતિ કોસિગારકીડેવ અપ્પગં અટ્ટકમ્મ-
તંતુધણવંધણેણં ॥ સૂ ૧૮ ॥

ટીકા— ‘મયાસંતા’ મૃતાઃ સન્તઃ ‘પુણો’ પુનર્મરણાનન્તરં ‘પરલોગ-
સમાવણ્ણા’ પરલોકસમાપ્તનાઃ પરલોકં પ્રાપ્તાઃ ‘નરગે ગચ્છંતિ’ નરકે
ગચ્છન્તિ । કીદશે નરકે ? इत्याह—निरभिरामे=असुन्दरे, तथा ‘અંગારપલિત્ત
ગકપ્પ, અચ્ચત્થ સીયવેયણા આસાયણો દિણસયયદુઃસ્વસયસમભિભૂષ’

અથ સૂત્રકાર યહ કહતે હૈં કિ યે અદત્તગ્રાહી ચોર ઇસ લોક મેં
તો ઇસ પ્રકાર કે અનેક દુઃસ્વોં કો ભોગતે હૈં પરન્તુ પરલોક મેં ભી
ઇનકી કૈસી દુર્દશા હોતી હૈં સો કહતે હૈં—‘મયાસંતા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—યે અદત્તગ્રાહી ચોર જવ (મયાસંતા) મર જાતે હૈં તથ (પુણો)
ઊસકે અનન્તર (પરલોગસમાવણ્ણા) પરલોકમેં જાકર (નરગે ગચ્છંતિ)
નરક મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં । જો નરક (નિરભિરામે) સુન્દરતા સે રહિત
અર્થાત્ અસુહાવને હૈં, તથા (અંગારપલિત્તગકપ્પ) અતિપ્રગ્વલિત અંગાર

હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે તે ચોરલોક આ લોકમાં તો ઉપરોક્ત
પ્રકારનાં દુઃખો અનુભવે છે પણ પરલોકમાં પણ તેમનીકેવી દુર્દશા થાય છે—
“મયાસંતા” इत्यादि

ટીકાર્થ—તે અદત્તગ્રાહી ચોર “મયાસંતા” મરીને “પુણો” પછી “પરલોગ
સમાવણ્ણા” પરલોકમાં જઈને “નરગે ગચ્છંતિ” નરકગતિમાં ઊતર્યા થાય
છે જે નરકાગર “નિરભિરામે” સુન્દરતાથી રહિત છે, તથા “અંગારપલિત્ત

અક્ષરપદીપ્તકલ્યાડત્યર્થશીતવેદનાડડસાદનોડીર્ણસતતદુઃખજનસમભિભૂતે, તત્ત
 ‘ અક્ષરપલિત્તમકલ્પ ’ પ્રદીપ્તકઃ = અતિપ્રજ્વલિતો યોડગ્ધાઃ = ધૂમ
 રહિતવદ્ધિસ્તેન કર્ણં તત્સદ્દશમ્-ઉષ્ણં, તથા ‘ અચ્ચત્થસીયવેયણા આસાયણો ’
 અત્યર્થ શીતં=અત્યર્થ હિમકાલોદ્ભવશીતં તયોર્વેદના તસ્યાઃ આપાદનં-પ્રાપ્તં
 તેન ‘ ઉદિણ્ણસયયપુક્કલસય ’ ઉદીર્ણાનિ સમુદ્ધુતાનિ યાનિ સતત દુઃખ
 શતાનિ=અનેકશતસંખ્યકનિરન્તરદુઃખાનિ, તૈઃ ‘ સમભિભૂં ’ સમભિભૂતઃ=
 યુક્તઃ યઃ સ તથા તસ્મિન્, યદ્વા-ઉષ્ણશીતવેદના, સા કીદૃશી? ઇત્યાહ આશા-
 તનેન=ચિરકાલાનુબંધિકટુક ફલદાયકાડદત્તાડડદાનનનિતાડશ્વાતવેદનીયકર્મણા
 ઉદીર્ણા પ્રકટિભૂતા તસ્યાઃ ત્વજનિતાનિ યાનિ સતતદુઃખશતાનિ તૈઃ સમભિભૂતઃ
 =વ્યાપ્તો યઃ સ તથા તસ્મિન્નેવં ભૂતે નરકે અદત્તાડડદાણિનો મૃતાઃ સન્તો ગચ્છ-
 ન્તીતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ । તત્ર નરકે ગત્વા સન્તત્તલોહવાલુકા નિકરપ્પક્કટોરમૂચી-
 કે જૈસી ઉષ્ણતા, ઔર (અચ્ચત્થસીય) હિમકાલ જૈસા અત્યંત શીત
 હૈ । યહાં નારકિયોં કો હસ ઉષ્ણતા ઔર શીત કી (વેયણા આસાયણો-
 દિણ્ણ) વેદના કી પ્રાસિ સે ઉદીર્ણ-ઉત્પન્ન (સયયદુક્કલસય) નિરન્તર
 સૈકઢોં દુઃખ પ્રાપ્ત હોકર (સમભિભૂં) દુઃખિત કરતે હૈં । “ આસા-
 દન ” યહ પદ જો મુત્ર મેં આપા હૈં ઉસકા અર્થ એક તો પ્રાપ્ત હોના હૈં-
 જૈસા કિ અમી લિખ દિયા ગયા હૈં । તથા દૂસરા અર્થ હસકા હસ
 પ્રકાર સે હૈં-કિ વે અદત્તાગ્રાહી ચોર જો વહાં મર કર નારકી કી પર્યાય
 સે ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં ચિરકાલાનુબંધી-ભવ ભવ મેં કટુક ફલ દાયક
 અદત્તાદાન કે પ્રભાવ સે ઉત્પન્ન હુઅ અશાત વેદનીય કર્મ કે દ્વારા પ્રકટી
 ભૂત વેદના સે વ્યાપ્ત ડન નરકોં મેં નિરન્તર સૈકઢોં પ્રકાર કે દુઃખોં કો

ગકલ્પ ” અતિ પ્રજ્વલિત અગારા જેવું ઉષ્ણ અને “ અચ્ચત્થસીય ” હિમકાળ
 જેવું અત્યંત શીતળ છે. ત્યાં નારકી જીવેને તે ઉષ્ણતા અને શીતની “ વેયણા
 આસાયણો દિણ્ણ ” વેદનાની પ્રાપ્તિથી ઉત્પન્ન થયેલ “ સયયદુક્કલસય ” સૈકઢો
 દુઃખો નિરંતર “ સમભિભૂં ” દુઃખી કરે છે. “ આસાદન ” આ પદનો સૂત્રમાં
 ઉપયોગ થયો છે. તેનો એક અર્થ તો “ પ્રાપ્ત થવું ” છે, જે સૂત્રમાં હમણું
 જ આપાયો છે. તથા તેનો બીજો અર્થ આ પ્રમાણે છે—તે અદત્તાગ્રાહી ચોર
 કે જે મરીને નારકીની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યો છે, ચિરકાલાનુબંધી-
 ભવભવમાં કડવા ક્ષ્ણ દેતાર અદત્તાદાનના પ્રભાવે ઉત્પન્ન થયેલ અશાતા વેદ-
 નીય કર્મ દ્વારા ઉત્પન્ન થયેલ વેદનાથી વ્યાપ્ત તે નરકોમાં નિરંતર સૈકઢો
 દુઃખો ભોગવ્યા કરે છે.

સુદર્શિની ટીકા અઽ ૩ સૂ ૧૮ અદ્વિત્તાદાયિનઃ પરલોકગતિનિક્ષયમ ૩૫૦

સુખદુસ્તરમાર્ગસચ્ચરણવિધિયસામાસરૂપશોભિત પૂર્ણનદીનિમજ્જનપરમાધાર્મિકસંત-
સશલાકાશરીરમવેશનવિવિધશસ્ત્રાસ્ત્રભેદનચ્છેદનતાડનાપશાર્ણાદિકાનિ વિપુલાનિ
ઘોરાણિ દુઃસ્વાનિ શ્રુત્વા ‘તઓવિ ઉવ્વહિયા સમાણા, તતોઽપિ નરકાદુદ્ધત્તાઃ
સન્તઃ=નિસ્સૂતાઃ સન્તઃ ‘પુણો વિ’ પુનરપિ ‘તિરિયજોણિ પવ્વજ્ઞંતિ’ તિર્યગ્યોનિ મ-
પથન્તે ‘તહિંપિ’ તત્રાપિ ‘નિરયોવમં અણુ મંવંતિ વેયણં’ નરકોપમામનુભવન્તિ વેદનાં
=નરકસહસ્રમેવદુઃસ્વં પ્રાપ્નુવન્તિ। અથ ‘જહનામ’ યદિનામ ‘અંતકાલેન’અનન્ત-
કાલેન=નિગોદ્ધવા પેક્ષયા ‘ળેમેહિં’ અનેકેષુ=રહુષુ ‘નિરયગતિગમનતિરિયમવસય-
સહસ્સપરિયટ્ટણ્હિ’ નરકગતિગમનતિર્યગ્મવસયસહસ્રપરિવર્તેષુ=નરકગતૌ યાનિ પુનઃ
પુનર્ગમનાનિ તેષાં તથા તિર્યગ્મવાનાં=તિર્યગ્યોનીનાં ચ યે શતસહસ્રપરિવર્તાઃ=અનેક-
શતસહસ્રસંભ્રમણાનિ તેષુ અતિક્રાન્તેષુ સત્સુ ‘કહિં વિ મણુયમાવં લહિંતિ’ કથ-
ભોગા કરતે હૈં। ઇસ પ્રકાર ઇસ નરકોં મેં શીતઔર ઉષ્ણ જન્ય અનેક
પ્રકાર કી વેદનાઈ હૈં જો નારકિયોં કો વ્યથિત કરતી રહતી હૈં। (તઓ-
વિ ઉવ્વહિયા સમાણા) નરકોં મેં જાકર વહાં કેચિવિધ પ્રકાર કેદુઃસ્વોં
કો ભોગતે ૨ જવ ડન જીવોં કી ઇક સાગર આદિ અનેક સાગર પ્રમાણ-
વાલી મુજ્યમાન આયુ વહાં કી જવ સમાપ્ત હો જાતી હૈ તવ વે વહાં સે
નિકલ કર પુનરપિ (તિરિયજોણિ પવ્વજ્ઞંતિ) તિર્યગ્યોનિ મેં જન્મ
ધારણ કરતે હૈં। (તહિંપિ) વહાં પર મી વે (નિરયોવમં) નરકોપમ
(વેયણં) વેદના કો દુઃસ્વોં કો (અણુમંવંતિ) ભોગતે રહતે હૈં। (જહ-
નામળેમેહિં ણિરયગતિગમનતિરિયમવસયસહસ્સપરિયટ્ટણ્હિ) યદિ અનેક
નરકગતિ તિર્યગ્ગતિ કે લાખોં મર્વોંકો ધારણ કરતે ૨ જ્યતીત હુઈ
(અંતકાલેન) નિગોદ કી અપેક્ષા અનંતકાલ કે વાદ (કહિં વિ)
કિસી તરહ (મણુયમાવં) મનુષ્યયોનિ મી ડન્હેં (લહિંતિ) પ્રાપ્ત હો ગઈ

આ પ્રમાણે તે નરકોમાં શીત અને ઊષ્ણતા જન્ય અનેક પ્રકારની વેદ-
નાઓ નારકી જીવોને પીડા પહોંચાડ્યા કરે છે. “તઓ વિ ઉવ્વહિયા સમાણા”
નરકોમાં જઈને ત્યાંનાં વિવિધ પ્રકારનાં દુઃખો ભોગવતાં ભોગવતાં તે જીવોનું
અનેક સાગર પ્રમાણ આયુષ્ય ત્યાં પૂરું થાય છે ત્યારે તેઓ ત્યાંથી નીકળીને
વળી પાછાં “તિરિયજોણિ પવ્વજ્ઞંતિ” તિર્યગ્ યોનિમાં જન્મ ધારણ કરે છે.
“તિહિં પિ” ત્યાં પણ તેઓ “નિરયોવમં” નરક સમાન “વેયણં” વેદનાઓ
દુઃખો “અણુમંવંતિ” ભોગવે છે. “જહનામળેમેહિં ણિરયગતિગમનતિરિય-
મવસયસહસ્સપરિયટ્ટણ્હિ” એ અનેક નરક ગતિ, તિર્યગ્ગતિના લાખો લાખો
ધારણ કરતાં કરતાં નિગોદની અપેક્ષાએ પસાર થયેલ “અંતકાલેન” અનંત-
કાળ પછી “કહિં વિ” કોઈ પણ રીતે “મણુયમાવં” મનુષ્યગતિમાં તેમને

મપિ મનુજભાવં=મનુષ્યોર્નિ લભન્તે=પ્રાપ્નુવન્ત્યપિ ચેત્તર્હિ 'તત્થવિ ચ' તત્રાપિ ચ ભવન્તિ=જાયન્તે, 'અણારિયા' અનાર્યાઃ=મ્લેચ્છાઃ શકયવનાદયઃ કીદશાઃ ? इत्याह-‘नीचकुलसमुत्पण्णा’ नीचकुलसमुत्पन्नाः ‘आरियजणे वि लोयवज्झा’ आर्यजनेऽपि लोकवाह्याः=यदि कदाचिन्मगधाधार्यदेशे समुत्पन्ना अपि लोकवर्ज-नीयाः श्रृपाकादिकुलसंभूता भवन्ति जनैस्तिरस्कृता इत्यर्थः, पुनश्च ‘तिरियस भूया य’ तिर्यग्भूताश्च यशु तुल्या विवेकशून्यत्वात् ‘अकुसला’ अकुशलाः= वस्तुतत्त्वाऽनभिज्ञाः ‘कामभोगतिसिया’ कामभोगतृषिताः=तत्र कामी=शब्दरूप लक्षणौ भोगाः=गन्धरसस्पर्शलक्षणैस्तेषु तृषिताः=आसक्ताः ‘जहि’ यत्र मनुष्य भवेऽपि लोकवाह्यकुले ‘निरयवत्तणी भवप्पवंचकरणणोल्लि पुणो वि संसाराव-

તો (તત્થવિ ચ) વહાં પર મી વે (અણારિયા) અનાર્યમનુષ્યોં-મ્લેચ્છો શક યવન આદિ પર્યાયોં મેં હી (ભવંતિ) ઉત્પન્ન હોતે હેં । (નીચકુલ-સમુત્પણ્ણા) યે અનાર્યજન નીચકુલ કે હોતે હેં । (આરિયજણેવિ) યદિ કદાચિત્ મગધ આદિ આર્યદેશ મેં ઉત્પન્ન હુએ તો યે વહાં (લોયવજ્ઞા) લોકવાહ્યજનોં મેં-જાણડાલ આદિ નિંદિત નીચકુલોં મેં-ઉત્પન્નહોતે હેં । વહાં સદા યે તિરસ્કૃત હોતે રહતે હેં । (તિરિયભૂયાય) વિવેક શૂન્ય હોને કે કારણ યે તિર્યચ જૈસે હી વહાં બને રહતે હેં (અકુસલા) વસ્તુ-તત્ત્વ સે અનભિજ્ઞ રહતે હેં । (કામભોગતિસયા) શબ્દ, રૂપ લક્ષણ કામ એવં ગંધ રસ, સ્પર્શ લક્ષણ ભોગોં મેં આસક્ત રહતે હેં, (જહિં) લોક વાહ્ય કુલોં મેં મનુષ્ય ભવ પ્રાપ્ત કર લેને પર મી (નિરિયવત્તણી) નરક-ગમન કે માર્ગભૂત, (ભવપ્પવંચકરણણોલ્લિ) ભવ પરંપરારૂપ પ્રવાહ કે

“લહિતિ” જન્મ થાય તો પણ “તત્થવિ ચ” તે લોકો “અણારિયા” અનાર્ય મ્લેચ્છ, શક, યવન આદિ જાતિમાં જ “ભવંતિ” ઉત્પન્ન થાય છે. “નીચકુલ સમુત્પણ્ણા” તે અનાર્ય લોકો નીચા કુળના હોય છે. “આરિયજણેવિ” એ તેઓ કદાચ મગધ આદિ આર્યભૂમિમાં જન્મ પામે છે તો તેઓ ત્યાં “લોય-વજ્ઞા” લોકવાહ્ય જનોમાં-ચાંડાળ આદિ નિંદિત નીચકુળોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. ત્યાં તેઓ સદા તિરસ્કૃત થયા કરે છે. “તિરિય ભૂયાય” વિવેકહીન હોવાને કારણે તેઓ તે મનુષ્ય યોનિમાં હોવા છતાં પણ તિર્યચ જેવાં જ હોય છે, ‘અકુસલા’ વસ્તુ તત્ત્વથી તેઓ (અનભિજ્ઞ) અજાણ રહે છે, “કામભોગતિ-સયા” શબ્દ, કામ, રસ, ગંધ, સ્પર્શ આદિ ભોગોમાં આસક્ત રહે છે. “જહિં” લોકવાહ્ય કુળોમાં મનુષ્ય ભવ પામ્યા છતાં પણ “નિરયવત્તણી” નરક ગમનના કારણભૂત “ભવપ્પવંચકરણણોલ્લિ” ભવ પરંપરારૂપ પ્રવાહના પ્રવર્તક, તથા

For Private And Personal Use Only

યણાં ઇત્યર્થઃ ‘કોસિગારકીડે’ કોશિકારકીટ ઇત્ ‘અટ્ટકમ્મતંતુષણવંધણે’ અટ્ટકર્મતંતુષણવંધનેન=અટ્ટકર્મભિઃ=જ્ઞાનાવરણાદિલક્ષણૈઃ તંતુભિઃ = સૂત્રૈ સ્વિં યદ્ ઘનં=દૃઢં વંધનં તેન ‘અપ્પમં’ આત્માનં ‘વેદંતિ’ વેદ્યન્તિ । યથા કોશીકારકીટાઃ સૂત્રાણિ મજ્જન્તસ્તૈરે વ વંધનભૂતૈ વેદિતાઃ ભવન્તિ તથૈવ અદત્તાદાયિનઃ સ્વેનૈવ ક્રિયમાણૈઃ જ્ઞાનાવરણાદિ લક્ષણૈરટ્ટકર્મભિઃ સૂત્રસ્થાનીયૈ-વંધનૈર્વેદ્યન્તે ઇતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૧૮ ॥

અષ્ટવિધકર્મભિર્વેદ્યાઃ સન્તઃ સંસારસાગરં વસન્તીતિ તમેવ વર્ણયન્નાહ—
‘એવં નરગ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલપ—એવં નરગતિરિયનરઅમરગમણ — પેરંતચક્કવાલં
જમ્મજરામરણકરણગંભીરદુક્ખપક્ખુભિયપડરસલિલં સંજોગ
વિજોગવીચિ--ચિંતાપસંગપસારિય-વહવંધમહલ્લવિડલકલ્લોલ--
કલુણવિલલ્લિય-લોભકલકલંતવોલવટ્ટુલં અવમાણણફેણં તિલ્લ-
લિંસણ-પુલંડુલપ્પમૂય-રોગવેયણ-પરાભવવિણિવાય-ફરુસધરિસણ-

રહતી હૈ । અર્થાત્ યે સદા પરજોવૌંકો સંતાપ પહુંચાને મેં હી પરાયણ બને રહતે હૈં તથા (કોસિગારકીડેવ) કોશિકાર કીડે કી તરહ વે (અટ્ટ-કમ્મતંતુષણવંધણે) આટકર્મ રૂપ તંતુઓં કે ઘનિષ્ઠ વંધન સે (અપ્પાણં) અપને આપકો (વેદંતિ) વેદિત કરતે હૈં અર્થાત્ જિસ પ્રકાર કોશિકાર કીટ સૂત્રોં કા સર્જન કરતે હુએ વંધનભૂત ઉન્હીં સૂત્રોં સે વેદિત હો જાતે હૈં ઉસી તરહ અદત્તપ્રાહીજન અપને દ્વારા કિયે ગયે સૂત્રસ્થાનીય જ્ઞાના-વરણ આદિ અષ્ટ કર્મોં સે જો કિ આત્મા કો દૃઢરૂપ વાંધનેવાલે હૈં વંધદશા કો પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં ॥ સૂ-૧૮ ॥

પાપકૃત્યમાં જે તેમને વધારે શ્રદ્ધા હોય છે, એટલે કે અન્ય જીવોને કષ્ટ પહોંચાડવાને તેઓ સદા તત્પર રહે છે. તથા “ કોસિગારકીડેવ ” કેશેટાની જેમ તેઓ “ અટ્ટકમ્મતંતુષણવંધણે ” આઠ કર્મરૂપી તંતુઓના મજબૂત બંધનથી “ અપ્પાણં ” પોતાની જાતને “ વેદંતિ ” લેખેલી લે છે. એટલે કે જેમ રૈશમનો કીડો (કેશેટો) તંતુઓનું સર્જન કરીને તે તંતુઓને પોતાનાં શરીર ફરતા તેમાં લેખેલીને તેમાં બંધાઈ જાય છે, તેમ અદત્તાદાન લેનાર માણુસ પોતે ફરેલા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે જે આત્માને મજબૂત રીતે બાંધનારા છે, તે કર્મોંરૂપ તંતુથી બંધનની સ્થિતિ પ્રાપ્ત કરે છે ॥ સૂ- ૧૮ ॥

सुक्शिणी टीका अ० ३ सू० १९ संसारसागरस्वरूपनिरूपणम्

३६१

समावडिय-कठिणकम्मपत्थरतरंग-रिगंतनिच्चमच्चुभयतोयपट्टं
 कसायपायालकलससंकुलं भवसयसहस्सजलसंचयं अणंतं उव्वेग-
 जणयं अणोरपारं सहब्भयं भयंकरं पइभयं अपरिमियमहिच्छ
 कलुसमइ वा उव्वेग उद्धम्ममाणाऽऽसापिवासा पायालं कामरइ-
 रागदोसबंधणवटुविहसंकप्पविउलदगरयरयंधयारं, मोहम-
 हावत्तभोगमत्तमाणुप्पमाणुच्छलंतवटुगब्भवासपञ्चेणियंत-
 पाणियं पधावियवसण-समावण्णरुणचंडमारुय -समाहया-
 मणुण्णवीचिवाकुलियभंगकुट्टंतनिट्टकल्लोलसंकुलजलं पमाय-
 वटुचंडदुडुसावयसमाहयउद्धायमाणगपूरघोरविद्धंसणत्थवटुलं
 अण्णणभमंतमच्छपरिहत्थं अनिहुतिंदिय-महामगरतुरियच्च-
 रियखोक्खुब्भमाणसंतावनिच्चयचलंतचवलचंचलअत्ताणा-स-
 रणपुव्वकम्मसंचयोदिणवज्जवेदिज्जमाणदुहसयविवागघुणंत-
 जलसमूहं, इड्डिरससायगारवोहारगहिय - कम्मपडिवद्धसत्त-
 कड्डिज्जमाण-निरयतलहुत्तसण्णविसण्णवटुलं, अरइरइभय-
 विसाय-सोगमिच्छत्तसल्लसंकडं अणाइसंताणकम्मबंधणकिलेस
 चिकिखल्लदुटुत्तारं अमरनरतिरियनिरयगइगमणकुडिलपरिवट्टवि-
 उलवेलं-हिंसालियभदत्तादाणमेहुणपरिग्गहारंभकरणकारावणा-
 णुमोयण-अट्टविहअणिट्टकम्मपिंडिययुरुभाराकंतदुग्गजलोघदूर-
 निब्बोलिज्जमाणउम्मग्गनिमग्गदुल्लहतलंसरीरमणोमयाणिदुक्खा-
 णि उप्पियंता सायासायपरितावणमयं उव्वुडुनिब्बुडुयंकरेंताच-
 उरंतमहंतमणययगं रुदं संसारसायरंअद्विय अणालंबणपइट्ठाणम-
 प्पमेयं चुलसीइजोणिसयसहस्संगुविलं अणालोगमंधया अणंत-
 कालं जावणिच्चं उत्तरथसुण्णभयसण्णसंपउत्ता वसंति उव्वि-
 ग्गवासवसहिं ॥ सू० १९॥

ટીકા—‘एवम्’ અમુના પ્રકારેણ આત્મનઃ કર્મભિર્વન્ધનેન ‘નરગતિરિયનરઅમર ગમણ પેરંતચક્કવાલં’ નરકતિર્યંકનરાઽમરગમનપર્યન્તચક્કવાલં=તત્ર ‘નરકઃ, તિર્યંક, નરઃ, અમરઃ’ ઇતિ ચતુર્ગતિષુ ગમનં = તદેવ પર્યન્તચક્કવાલં=વાહ્યપરિધિમંડલં यस્ય સ તથા તમેવમ્ભૂતં સંસારસાગરં વસન્તીતિ વક્ષ્યમાણેન સમ્બન્ધઃ । પુનઃ કથં ભૂતમિત્યાહ—‘ જન્મજરામરણકરણગંભીરદુઃખસ્વપ્નસુમિયપરસલિલં ’ જન્મ-જરામરણકરણગમ્ભીરદુઃખપ્રશ્નુભિતપ્રચુરસલિલં=તત્ર જન્મજરામરણાદિભિઃ કરણૈઃ= સાધનભૂતૈર્યદ્ગમ્ભીરદુઃખમ્=અતિમહાકલેશસ્તદેવ પ્રશ્નુભિતં = અતિવેગવ્યાકુલિતં પ્રચુરં સલિલં=જલં યત્ર સ તથા તમ્, યથા સમુદ્રો વિપુલજલરાશિપૂર્ણો ભવતિ તથૈવ સમુદ્ધરૂપઃ સંસારોઽપિ જલસ્વરૂપવિવિધદુઃસ્વઝ્યાપ્ત ઇત્યર્થઃ, એવમેવાગ્રેઽપિ સમુદ્ધર્માન્ રૂપકાઽલકારેણ સંસારેઽપિ પ્રદર્શયતિ પુનર્યથા—‘ સંમોગવિજોગ

ये जीव ज्ञानावरण आदि अष्टविध कर्मों से बंधदशा को प्राप्त होकर संसार सागर में रहते हैं सूत्रकार अब वर्णन करते हैं—

‘ एवं नरग ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(एवं) इस प्रकार अपनी आत्माको कर्मोंके साथ एक क्षेत्राव-गाह्रूप बंधदशा से बांधनेके कारण ये अदत्तग्राहीजन (नरगतिरियनर अमरगमणपेरंतचक्कवालं) नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य एवं देवगतियों में परिभ्रमण हर बाह्य परिधिमंडलवाले, तथा (जन्मजरा मरणकरणगंभीर दुःखस्वप्नसुमियपउरसलिलं) जन्म, जरा, मरणजन्य अति महाकलेश-रूप प्रश्लुभित एवं प्रचुर जलवाले संसार सागर में ही चक्कर काटा करते हैं—परिभ्रमण किया करते हैं । सूत्रकार रूपकालंकार से इसी संसार

તે જીવો જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોથી બંધનની દશા પ્રાપ્ત કરીને સંસાર સાગરમાં રહે છે. હવે સૂત્રકાર તેનું વર્ણન કરે છે—

“ एवं नरग ” इत्यादि.

ટીકાર્થ—“ एवं ” તે રીતે પોતાના આત્માને કર્મોની સાથે એક ક્ષેત્રાવગાહરૂપ બંધદશાથી બાંધવાને કારણે તે અદત્તગ્રાહી માણસો “ નરગતિરિયનરઅમર-ગમણપેરંતચક્કવાલં ” નરક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવ ગતિયોમાં પરિ-ભ્રમણરૂપ બાહ્ય પરિધિમંડળવાળા, તથા “ જન્મજરામરણકરણગંભીરદુઃખ-સ્વપ્નસુમિયપરસલિલં ” જન્મ, જરા, મરણ જન્ય અતિવેગ વેગાદિ કલેશરૂપ પ્રશ્નુભિત અને પ્રચુર જળવાળા સંસાર સાગરમાં જ ચક્કર લગાવ્યા કરે છે—પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે, સૂત્રકાર રૂપક અલંકારથી આ ‘ સંસારસાગરનું ’ વર્ણન

વીચિ-ચિંતાપસંગ પસારિય - વહવંધમહલ્લવિઝલકલ્લોલકલુણવિલવિયલોભકલકલંતવોલવહુલં' તત્ર= 'સંજોગવિજોગવીચિ' સંયોગવિયોગ એવ વીચય:=તરજ્ઞા યત્ર સ તથા, સમુદ્રો યથા—જલતરજ્ઞયુક્ત એવં સંસારોઽપ્યનિષ્ઠસંયોગેષ્ટવિયોગ રૂપ-તરજ્ઞયુક્ત; તથા 'ચિંતાપસંગપસારિય' વિન્તાપસંગપસારિત:=શોકસમૂહ વિસ્તૃત: 'વહવંધમહલ્લવિઝલકલ્લોલ' વધવંધમદાવિપુલકલ્લોલા:; તત્ર વધા:= યદ્યદિ તાડનાનિ, વંધા:=રજ્જ્વાદિ વંધનાનિ તાન્યેવ મહાન્ત:=સુદીર્ઘા: વિપુલા:=વિશાળાશ્ર કલ્લોલા:=મહાતરજ્ઞા યત્ર સ તં તથા 'કલુણવિલવિયલોહ-કલકલંતવોલવહુલં' કરુણવિલપિતલોભકલકલાયમાનવોલવહુલ:=કરુણવિલપિતં=

સાગર કા વર્ણન કરતે હુણ કહ રહે હૈં કિ-જિસ પ્રકાર સમુદ્ર કા બાહ્ય પરિધિમંડલ હોતા હૈં ઉસી તરહ ઇસ સંસાર રૂપ સમુદ્ર કા બાહ્યમંડલ ચતુર્ગતિયોં મેં પરિભ્રમણ કરના રૂપ હૈં । જિસ તરહ સમુદ્ર અપાર જલ-રાશિ સે સદા પરિપૂર્ણ રહતા હૈં, ઉસી તરહ યહ સંસાર ભી જન્મ જરા એવં મરણ જન્ય ગંભીર દુઃસ્વરૂપ જલ સે પૂર્ણ ભરા હુઆ હૈં । (સંજોગ વિજોગ વીચિ-ચિંતા પસંગ-પસારિય-વહ-વંધ-મહલ્લ-વિઝલ-કલ્લોલ કલુણ-વિલવિય-લોભકલકલંતવોલવહુલં) ઇસ સંસાર મેં (સંજોગ વિજોગ વીચિ) અનિષ્ટ સંયોગ એવં ઇષ્ટવિયોગ જીવોં કો પ્રતિક્ષણ પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈં સો યે અનિષ્ટસંયોગ ઇષ્ટવિયોગ હી ઇસમેં વીચિ-લહરોં જીસે હૈં । તથા (ચિંતાપસંગપસારિય) વિવિધ પ્રકાર કે શોક સમૂહ સે યહ વિસ્તૃત હો રહા હૈં । (વહવંધ) વધ-યદ્યદિ દ્વારા બાંધના યે હી જિસમેં (મહલ્લ) બડી ૨ (વિઝલ) વિશાળ (કલ્લોલ) કલ્લોલેં હૈં ।

કરતાં કહે છે કે-જેમ સમુદ્રનું બાહ્ય પરિધિમંડળ હોય છે, એ જ પ્રમાણે આ સંસાર રૂપી સમુદ્રનું ચતુર્ગતિયોમાં ભ્રમણ કરવા રૂપ બાહ્યપરિધિમંડળ છે. જેમ સમુદ્ર અપાર જળ રાશિથી સદા પરિપૂર્ણ રહે છે, તે જ પ્રમાણે આ સંસાર પણ જન્મ, જરા અને મરણ જન્ય ગંભીર દુઃખરૂપી જળથી પૂરેપૂરા ભરેલો છે. “સંજોગવિજોગવીચિ-ચિંતા પસંગ પસારિય-વહવંધમહલ્લ વિઝલકલ્લોલકલુણવિલવિયલોભકલકલંતવોલવહુલં” આ સંસારમાં “સંજોગવિજોગવીચિ” અનિષ્ટના વિયોગ છવાને ક્ષણે ક્ષણે પ્રાપ્ત થયા કરે છે. તે અનિષ્ટ સંયોગ અને ઇષ્ટવિયોગ જ તેમાં વીચિ-લહેરો જેવો છે. તથા “ચિંતાપસંગપસારિય” વિવિધ પ્રકારના શોકસમૂહથી તે વિસ્તૃત થઈ રહેલ છે. “વહવંધ” વધ-યદ્યદિ આદિ દ્વારા બાંધના જેમાં “મહલ્લ” મોટાં મોટાં “વિઝલ” વિશાળ “કલ્લોલ” મોખાં સમાન છે. “કલુણવિલવિય”

રોગદુઃસ્વાદિજનિતદીનવિલાપપૃથ્વ લોભમોહેન કલકલ્પમાનઃ=કલકલશબ્દયુક્તો
 યો વોલઃ=ધ્વનિઃ સ વહુલો યત્ર સ તથેતિ સંયોગાદોનાં પદાનાં કર્મધારયસ્તં
 તથા ‘અવમાણજ્ઞફેણ’ અપમાનનફેણમ્=અપમાનફેનયુક્તં ‘તિવ્વસ્થિસણપુલં
 પુલપ્પભૂયરોગવેયણપરામવવિણિવાયફરુસધરિસણસમાવડિયકઠિણકમ્મપત્થરતરંગ-
 રિંગંતનિચ્ચમચ્ચુમયતોયપટ્ટં’ તત્ર ‘તિવ્વસ્થિસણ’ તીવ્રસ્થિસનમ્=તીવ્રનિન્દા તથા
 ‘પુલંપુલ’ નિરન્તરં પ્રભૂતા=વહુલા જાયમાના યા ‘રોગવેયણ’ રોગવેદનાઃ=
 નાનાવિધાઃઽધિવ્યાધિ-પીડાસ્તાઃ, તથા ‘પરામવવિણિવાય’ પરામવઃ=અના-
 દરઃ, તસ્ય વિણિપાતઃ=વિશેષેણ પ્રાણં, તથા ‘ફરુસધરિસણ’ પહાધર્વગાનિ=
 કઠોરવચનૈઃ ભર્ત્સનાનિ ચ તાનિ ‘સમાવડિય’ સમાપતિતાનિ=સમાપન્નાનિ યેભ્ય-
 સ્તાન્વેવમ્ભૂતાનિ યાનિ ‘કઠિણકમ્મ’ કઠિનકર્માણિ=જ્ઞાનાવરણાદીનિ ક્લિષ્ટ

(કલુણવિલવિપ) રોગ સે एवं दुःस्वादિ से जन्य करुण विलाप तथा
 (लोभ) लोभ एवं मोह से जन्य जो (कलकलंत) कलकल शब्द, इन
 से युक्त (वोल) ध्वनियां ही जहां (बहुलं) बहुलरूप में वर्तमान हैं
 (अवमाणज्ज्ञफेणं) अपमानरूप फेन से जो युक्त बना हुआ है, (तिव्व-
 स्स्थिसण पुलंपुल-भूयरोग-वेयणपराभव-विणिवायफरुसधरिसण-समावडि-
 यकठिणकम्म पत्थर तरंग रिंगंतनिच्चमुच्चुमयतोयपट्टं) (तिव्वस्स्थिसण)
 तीव्र निंदाएँ तथा (पभूयरोगवेयण) निरंतर जायमान अनेक रोग वेद-
 नाएँ-नाना प्रकार की आधि व्याधि रूप पीडाएँ, (पराभवविणिवाय) अनादर
 की विशेष रूप से प्राप्ति, तथा (फरुसधरिसणसमावडिय) कठोर वचनों द्वारा निर्भर्त्सन-फटकारना, ये सब जिनके उदय से जीवों
 को प्राप्त होते रहते हैं, ऐसे (कठिणकम्मपत्थर) ज्ञानावरण आदि क्लिष्ट

રોગ તથા દુઃસ્વાદિથી ઉત્પન્ન થયેલ કરુણ વિલાપ તથા “લોભ” લોભ અને
 મોહથી જન્ય જે “કલકલંત” ‘કલકલ’ શબ્દથી યુક્ત “વોલ” અવાજો
 જ ન્યાં “બહુલં” વધારે પ્રમાણમાં વિદ્યમાન છે, “અવમાણજ્ઞફેણ” અપ-
 માનરૂપ દ્રીણથી જે યુક્ત છે, “તિવ્વસ્થિસણપુલંપુલભૂયરોગવેયણપરામવ-
 વિણિવાયફરુસધરિસણસમાવડિયકઠિણકમ્મપત્થરતરંગરિંગંતનિચ્ચમચ્ચુમયતોયપટ્ટં”
 “તિવ્વસ્થિસણ” તીવ્ર નિંદાઓ તથા “પમૂયરોગવેયણ”
 નિરંતર ઉત્પન્ન થતી અનેક રોગ વેદનાઓ-વિવિધ પ્રકારની આધિ વ્યાધિ રૂપ
 પીડાઓ “પરામવવિણિવાય” મોટે ભાગે અનાદરની પ્રાપ્તિ, તથા “ફરુસ
 ધરિસણસમાવડિય” કઠોર વચનો દ્વારા નિર્ભર્ત્સનધિક્કાર, એ બધું જેમના
 ઉદયથી શુભોને પ્રાપ્ત થયા કરે છે, એવાં “કઠિણકમ્મપત્થર” જ્ઞાનાવરણ

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૩ સુ૦ ૧૧ સંસારસાગરસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૬૫

કર્મણિ તાન્યેવ ચે પ્રસ્તરાઃ=સાગરપાપાણરૂપાસ્તૈઃ કૃત્વા 'તરંગરિંગત' તરંગરિજિત્
=તરંગૈ=કલ્લોલૈઃ રિજિત્=ચલત્ 'નિચ્ચમચ્ચુભયતોયપટ્ટં' નિત્યમૃત્યુભયતોયપટ્ટં=
નિત્યં=ૃત્ મૃત્યુભયં=મરણભયમેવ તોયપટ્ટં=જલોપરિતનભાગો યત્ર સ તથા તે
મહાપાપાણાઘાતાતોત્થિતમહાતરંગચઞ્ચલજલોયમૃત્યુભયસંકુલઃ ભાગો યથા ભવતિ
તથા સંસારોઽપિ ભર્ત્સનાપમાનનાદિ નાનાદુઃખકલપદજ્ઞાનાવરણાદિ ક્લિષ્ટકર્મ-
પાપાણસમુત્થિત પુનઃ પુનર્જન્મજરામરણભયતરંગવ્યાપ્ત इत्यर्थः । 'કસાયપાયાલ-
કલસસંકુલં' કપાયપાતાલકલશસંકુલં=રૂપાયાઃ=કોધાદ્યશ્ચત્વારસ્તૈ એવ પાતા-
લકલશાસ્તૈઃ સંકુલો યઃ સ તથા તે, 'ભવસયસહસ્રજલસંચય' ભવસયસહસ્રજ-
લસંચયં=ભવસયસહસ્રાપ્થેવજલસંચયઃ = જલરાશિર્એત્ર સ તથા તમ્, 'અણંતં'

કર્મરૂપ પાપાણોં સે ડઠી હુઈ, (તરંગરિંગત) તરંગોં સે જો ચંચલ થના
હુઆ હૈ, તથા જો (નિચ્ચમચ્ચુભય) અવશ્યંભાવી મૃત્યુ કે ભયરૂપ
(તોયપટ્ટં) જલકે ઉપરિતન ભાગ સે યુક્ત હો રહા હૈ, અર્થાત્-જિસ
પ્રકાર સમુદ્ર મહાપાપાણોં આદિ કે આઘાત સે ઉત્થિત મહાતરંગોં સે
ચંચલ તથા જલ સે ભરા હુઆ હોને કે કારણ મૃત્યુ કે ભય સે સંકુલ
હોતા હૈ ઉસી તરહ સંસાર ભી ભર્ત્સના અપમાન આદિ નનાદુઃખરૂપ
ફલકો દેને વાલે ક્લિષ્ટકર્મરૂપ પાપાણોં સે સમુત્થિત વારં વાર જન્મ,
જરા, મરણ, કે ભયરૂપ તરંગોં સે વ્યાપ્ત હો રહા હૈ । (કસાયપાયાલ-
કલસસંકુલં) તથા યહ સંસાર સાગર ક્રોધાદિક ચાર કપાયરૂપ પાતાલ
કલશોં સે યુક્ત હૈ (ભવસયસહસ્રજલસંચય) લાલોં ભવરૂપ જલસંચય
સે યહ યુક્ત હૈ । (અણંતં) અનન્ત સંસારી જીવોં કી અપેક્ષા યહ અન્ત

આદિ ક્લિષ્ટ કર્મરૂપ પાપણોથી પેઠા થયેલ " તરંગ રિંગત " તરંગોથી જે ચંચળ
બનેલ છે, તથા જે " નિચ્ચમચ્ચુભય " અવશ્ય લાવી (જરૂર થનારા)
મૃત્યુના ભયરૂપી " તોયપટ્ટં " જળના ઉપરિતન ભાગથી યુક્ત છે, એવા સંસાર
સાગરમાં તે પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે- એટલે કે જેમ સમુદ્ર મહાપાપાણો
આદિના આઘાતથી ઉત્પન્ન થયેલ તરંગોથી ચંચળ બનેલ હોય છે તથા પાણીથી
ભરપૂર હોવાને કારણે તેમાં પડનારને માટે મોતનો ભય રહે છે તેમ સંસાર
પણ ભર્ત્સના અપમાન આદિ વિવિધ દુઃખરૂપ ક્ષણ દેનારા ક્લિષ્ટ કર્મરૂપ
પાપાણોથી ઉત્પન્ન થતાં, વારંવાર અનુભવાતા જન્મ, જરા, મરણ આદિના
ભયરૂપ તરંગોથી વ્યાપ્ત છે " કસાયપાયાલકલસસંકુલં " તથા આ સંસાર
સાગર ક્રોધ આદિ કપાયરૂપ પાતાળ કળશોથી યુક્ત છે. " ભવસયસહસ્રજલ
સંચય " લાખો ભવરૂપ જળસંચયથી તે યુક્ત છે. " અણંતં " અનન્ત સંસારી

અનન્તમ્=સંસારિ જીવાપેક્ષવા અન્તરહિતમ્ ‘ઉચ્ચેગજ્ઞયં’ ઉદ્દેગજનકં=પ્રાધિ-
વ્યાધિ પ્રભૃતિદુઃસ્વશ્વતયુક્તત્વાત્ ‘અજોરપારં’ અનર્વાક્ પારમ્=અદૃષ્ટપારં ‘મહ-
અભયં’ મહાભયં=મહાભયજનકં દુસ્તરત્વાત્, ભયઢ્ઢરં=કર્મપ્રકૃતિમદામત્સ્યમકરા-
દિમિઃ વ્યાપ્તત્વાત્, ‘પદ્મભયં’ પ્રતિભયં=પ્રતિપ્રાણિને ભયજનકં સકલપ્રાણિભયો
ત્પાદકત્વાત્ ‘અપરિમિય મહિચ્છકલુસમતિ વાઝવેગ ઉદ્દમ્મમાણાસાપિવાસાપાયાલં’
અપરિમિતમદેચ્છાકલુસમતિવાયુવેગોદ્દમ્મમાનાશાપિવાસાપાતાલમ્, તત્ર અપરિમિ-
તા=અપરિમાણા મહતી=વિશાલા ચેચ્છા=વિષયામિલાપા, ‘કલુસ’ કલુપા=મલિના
યા મતિઃ=બુદ્ધિઃ સા એવ ‘વાયુવેગ’ વાયુવેગસ્તેન ‘ઉદ્દમ્મમાણ’ ઉદ્દમ્મમાના=
=પ્રવર્દમાના યા આશાઃ=અપ્રાપ્તાર્થસ્ય પ્રાપ્તિ સમ્ભાવનાઃ, પિવાસાઃ=પ્રાપ્તાર્થસ્યોપ-
ભોગવાચ્છાઃ, એતા એવ પાતાલં યત્ર સ તથા તમ્, અપરિમિતમદેચ્છામલિનબુદ્ધિ-

રહિત છે । (ઉચ્ચેગજ્ઞયં) આધિ વ્યાધિ આદિ સૈકઢોં દુઃખોં સે યુક્ત
હોને કે કારણ ધત્ ઉદ્દેગજનક છે । તથા (અજોરપારં) યહ અદૃષ્ટ પાર-
વાલા છે-ઇસકા પાર અદૃષ્ટ છે । (મહઅભયં) દુસ્તર હોને સે યહ જીવોં
કો મહાભય કા જનક છે । કર્મોં કી ૧૪૮ ઉત્તર પ્રકૃતિરૂપ મહામત્સ્ય
મકર આદિ જલચર જીવોં સે યહ વ્યાપ્ત છે । સમસ્ત પ્રાણિયોં કે લિયે
ભય કા ઉત્પાદક હોને કે કારણ યહ (પદ્મભયં) હરેક જીવ કે લિયે
ભય કા જનક બના હુઆ છે । (અપરિમિયમહિચ્છકલુસમતિવાઝવેગ
ઉદ્દમ્મમાણાસાપિવાસાપાયાલં) (અપરિમિય) અપરિમિત તથા (મહિચ્છ)
મહતા વિષયાશારૂપ એવં (કલુસમતિ) મલિનબુદ્ધિરૂપ (વાઝવેગ) વાયુ
કે વેગ સે (ઉદ્દમ્મમાણ) પ્રવર્દમાન એસી (આસા) આશા-અપ્રાપ્ત અર્થ
કે પ્રાપ્ત કરને કી સંભાવનારૂપ તથા (પિવાસા) પિવાસા-અર્થ કા ઉપ-

જીવોની અપેક્ષાએ તે અન્તરહિત છે. “ ઉચ્ચેગજ્ઞયં ” આધિવ્યાધિ આદિ
સેંકડો દુઃખોથી યુક્ત હોવાથી તે ઉદ્દેગજનક છે. તથા “ અજોરપારં ” તે
અસીમ-અપાર છે “ મહઅભયં ” દુસ્તર હોવાથી તે જીવોને માટે મહાભય
પેદા કરનાર છે. કર્મોની ૧૪૮ ઉત્તર પ્રકૃતિરૂપ મહામત્સ્ય, મકર આદિ જળ-
ચર જીવોથી તે વ્યાપ્ત છે. સમસ્ત પ્રાણીઓને માટે તે ભય પેદા કરનાર
હોવાથી તે “ પદ્મભયં ” હરેક જીવને માટે ભયજન છે. “ અપરિમિય મહિ-
ચ્છકલુસમતિવાઝવેગઉદ્દમ્મમાણાસાપિવાસાપાયાલં ” “ અપરિમિય ” અપરિ-
મિત તથા “ મહિચ્છ ” મોટી વિષય વાસના રૂપ અને “ કલુસમતિ ” મલિન
મતિરૂપ, “ વાઝવેગ ” વાયુના વેગથી “ ઉદ્દમ્મમાણ ” વધતી જતી એવી
“ આસા ” આશા-અપ્રાપ્ત વસ્તુને પ્રાપ્ત કરવાની સંભાવના-તથા “ પિવાસા ”

સુવર્ણિની ટીકા અ० ૩ સૂ० ૧૨ સંસારસાગરસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૬૭

વાયુપ્રવર્દમાનાશાનૃણાદિરૂપાસ્તાયપાતાલયુક્તમિત્યર્થઃ । તથા—‘કામરહરાગદોસ-
બંધણવહુવિહસંકલ્પવિઝલદગરયરચંધયારં’ કામરતિ-રાગદ્વેષ-વંધન-વહુવિધસંક-
લ્પવિપુલદકરજોરયાન્ધકારમ્, તત્ર - કામરતિ = શબ્દાદિધ્મિરુચિઃ, રાગઃ =
અનુકૂલચિપયેષુ પ્રીતિઃ, દ્વેષઃ = તેષ્વેવપ્રતિકૂલેષ્વપ્રીતિશ્ચેત્યેતાન્યેવ વન્ધનાનિ=
વન્ધકારણાનિ તથા વહુવિધાથ સંકલ્પાઃ=મનઃ સંકલ્પા इत्येतेषां द्वन्द्वः ते काम-
रत्यादय एव विपुलदक रजांसि=विस्तीर्णजलकणिकाः तेषां यो रयः=वेगस्तद्
રૂપોऽન્ધકારો यत्र स तथा तम् । કામરત્યાદિરૂપજલકણિકા વેગ સમુત્પન્નાન્ધકા-
રયુક્તમિત્યર્થઃ । પુનઃ કોદશ ? મિત્યાહ—‘મોહમહાવત્તભોગભમમાણગુપ્પમાણુચ્છ-
લંતવહુગઢમ્ભવાસપચ્ચોણિયત્તપાણિયં’ મોહમહાવત્તભોગભ્રમદ્ગુચ્છલદ્ગુહર્મ-
વાસપત્યવનિવૃત્તપ્રાણિકમ્, તત્ર—‘મોહમહાવત્ત’ મોહમહાવત્ત=મોહ એવ મહાના-
ભોગ કરને કી વાઝ્ઞારૂપ (પાયાલં) પાતાલ સે ગ્રહ યુક્ત હૈ, તથા
(કામરહરાગદોસ બંધણ વહુવિહસંકલ્પવિઝલદગરયરચંધયારં) (કામરહ)
શબ્દાદિક વિષયોં મેં અભિરુચિરૂપ કામરતિ, (રાગ) અનુકૂલ વિષયોં
મેં પ્રીતિરૂપ રાગ, એવં (દોસ) પ્રતિકૂલ શબ્દાદિવિષયોં મેં અપ્રીતિ દ્વેષ,
જો (બંધણ) બંધ કે કારણ હૈં, તથા (વહુવિહ સંકલ્પ) વહુત પ્રકાર કે
જો મનઃ સંકલ્પ હૈં યે હી સબ હસ સંસારસમુદ્ર મેં (વિઝલ દગરય)
વીસ્તીર્ણદકરજ-જલકળ હૈં । હનકા (રચંધયારં) વેગરૂપ અંધકાર હસમેં
સદા વ્યાસ હો રહા હૈ અર્થાત્-કામરત્યાદિરૂપ જલકળોં કે વેગોં સે સમુ-
ત્પન્ન અંધકાર સે ગ્રહ યુક્ત બના હુઆ હૈ (મોહ મહાવત્ત-ભોગભમમા-
ણગુપ્પમાણુચ્છલંતવહુગઢમ્ભવાસ પચ્ચોણિયપાણિયં) તથા (મોહમહાવત્ત)
મોહરૂપ મહાન્ આવર્ત્ત હસમેં ઉઠ રહે હૈં । ઔર હન આવર્તોં મેં જહાં

પિપાસા-પ્રાપ્ત થીજનો ઉપલોગ કરવાની ઇચ્છા-રૂપ “ પાયાલં ” પાતાળથી તે
યુક્ત છે, તથા “ કામરહરાગદોસબંધણવહુવિહસંકલ્પવિઝલદગરયરચંધયારં ”
“ કમરહ ” શબ્દાદિ વિષયોમાં અભિરુચિરૂપ કામરતિ, “ રાગ ” અનુકૂળ
વિષયોમાં પ્રીતિરૂપ રાગ, અને “ દોસ ” પ્રતિકૂળ શબ્દાદિ વિષયોમાં અપ્રીતિરૂપ
દ્વેષ, જે “ બંધણ ” બંધનનાં કારણો છે, તથા “ વહુવિહસંકલ્પ ” અનેક
પ્રકારના જે મનઃચકલ્પો છે એ બધા આ સંસાર સાગરમાં “ વિઝલદગરય ”
વિસ્તીર્ણ જળ બિન્દુઓ છે. “ રચંધયાર ” તેમના વેગરૂપ અંધકારથી તે વ્યાસ
છે. એટલે કે કામરતિ આદિ રૂપ જળકણોના વેગથી ઉત્પન્ન થયેલ અંધકારથી
તે યુક્ત છે. “ મોહમહાવત્તભોગભમમાણગુપ્પમાણુચ્છલંતવહુગઢમ્ભવાસપચ્ચો-
ણિયત્તપાણિયં ” તથા “ મોહમહાવત્ત ” મોહરૂપ મહા વમળો તેમાં ઉત્પન્ન થયા
કરે છે. અને તે આવર્તોમાં-વમળમાં બધાં “ ભોગ ” વિષય-લોગ જ “ ભમ-

वर्तः=जलभ्रमस्तत्र भोगाः=विषया एव ' भ्रमसाण ' भ्रमन्तः ' गुप्समाण ' गुप्यन्तः
=व्याकुली भवन्तः, उच्छलन्तः=उत्पन्नन्तः ' बहुगवभवास ' बहुषु = बहुविधेषु
गर्भवासेषु=पशुपक्षयादिलक्षणेषु ' पञ्चोगिन्यन्त ' प्रत्यवनिवृत्ताः=उत्पन्न्य निपतिताः
' पाणिय ' प्राणिनो=जीवाः समुद्रपक्षे मकरादयः, संसारपक्षे संसारिणो यत्र तत्तथा
भूतं, तथा-पधावियवसणसमावण्णरुण्णचंडमारुय समाहयाऽमणुण्णवीचिवाकुलिय-
भंगफुड्ढंतनिदुकल्लोसंकुञ्जलं ' प्रधावितव्यसनसमापन्नरुदितचण्डमारुतसमाह-
तामनोज्ञवीचिव्याकुतितभङ्गस्फुटदनिष्टकल्लोसंकुलजलम्, तत्र - पधाविय
प्रधावितानि=प्रक्षर्येणेतस्तत्रोगतानि यानि ' वसण ' व्यसनानि=कष्टानि तानि
' समावण्ण ' समापन्नाः=प्राप्ता ये प्राणिनः तेषां ' रुण्ण ' रुदितमेव ' चंडमारुय '
चण्डमारुतः=पचण्डवायुस्तेन ' समाहय ' समाहताः=परस्परं संबद्धिता याः ' अम-
णुण्ण ' अमनोज्ञा=भयंकराः वीचयः दुःखपरम्परारूप तरङ्गास्तैः ' वाउलिय ' व्या-

(भोग) विषय-भोग ही (भ्रममाण) भ्रमण कर रहे हैं, (गुप्त्रमाण) व्याकुल हो रहे हैं तथा (उच्छलंत) उछल रहे हैं। एवं इस संसार समुद्र में (बहुगुणवत्) मनुष्य, पशु, पक्षी आदि योनिरूप नाना प्रकार के गर्भों में संसारी जीव तथा समुद्रपक्ष में मगरमच्छ आदि जलचर जीव आकर निपतित हो रहे हैं। (पञ्चाविग-वसण-समावण्ण) रुग्णचंडमारुयसमाहयाऽनुण्णवीचि वाकुलियमंगफुट्ठंतिट्ठकल्लोलसं-कुलजलं) तथा यह संसार समुद्र (पञ्चाविग) इधर उधर से संप्राप्त (वसणसमावण्ण) अनेक व्यसनों-दुःखोंसे पीड़ित हुए प्राणियोंके (रुग्ण) रुदनरूप (चंड मारुय) प्रचण्ड वायु से (समाहय) परस्पर संघर्ष को प्राप्त हुई (अमणुण्णवीचि) अमनोज्ञ दुःखों की परंपरारूप तरङ्गों से (वाकुलिय)

માણ ” બ્રમણ કરી રહ્યા છે, “ગુપ્તમાણ” વ્યાકુળ થઈ રહેલ છે, તથા “ઉચ્છલ્લંત” ઉછળી રહ્યા છે. અને તે સંસાર સાગરમાં “વદ્નુગદમવાસ” મનુષ્ય, પશુ, પક્ષી આદિ યૌનિરૂપ વિવિધ પ્રકારના ગર્ભોમાં પ્રાણીઓ-સંસારની અપેક્ષાએ જીવે તથા સમુદ્રની અપેક્ષાએ મગર મચ્છ આદિ જળચર જીવો આવી આવોને નિપતિત થઈ રહેલ છે. એટલે કે તેમાં જન્મ લઈ રહેલ છે. “પદાવિય-ધસણ-રુણ-ચંડ-માહય-સમાહયાઽમુણ્યવીચિ-વાકુલિય-મંગ-ફલ્લંત-નિટકલ્લોલ-મંકુલજલ” તથા આ સંસાર સમુદ્ર “પદાવિય” અર્થે તર્કીથી પ્રાપ્ત “વસણસમાવણ” અનેક (વ્યસનો) દુઃખોથી પીડાતાં પ્રાણીઓનાં “રુણ” રુદનરૂપ “ચંડમાહય” પ્રથંક વાયુથી “સમાહય” પરસ્પર અઘડાતાં “અમુણ્યવીચિ” અમનોદ દુઃખોની પરંપરા રૂપ તરંગોથી

સુવર્ણિની ટીકા અ. ૩ સૂ. ૧૨ સંસારસાગરસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૬૧

કુલિતં=વિક્ષોભિતં તથા મઙ્ગૈઃ=તરંગૈઃ સહ સંયદ્દનેન ‘ફુટ્ટં’ મ્ફુટન્ત=પૃથક્
 ભવન્તો યે ‘નિટ્કલ્લોલ’ અનિષ્ટકલ્લોલોઃ = દારુણ દુઃસ્વમહાતરંગાસ્તૈઃ સંકુલં
 =વ્યાપ્તં જલં = જન્મજરામરણરૂપં યત્ર સ તથા તમ્ । મોહમહાવર્તનિપતિતવિષ-
 યોપભોગભ્રમણનિમગ્નપ્રાણિયુક્તં પશુપક્ષિનરકનરામરાદિવિષમોક્તતાવનતયોનિ
 વિભ્રમણતરંગમઙ્ગયુક્તં વિવિધદારુણદુઃસ્વદુઃસ્વિતં પ્રાણિરોદનાઽઽક્રન્દનરૂપવાયુ
 સમાધાતપ્રવૃદ્ધદુઃસ્વતરંગયુક્તં પુનઃ પુનર્જન્મમરણરૂપજલં યત્ર સંસારસાગરં વસન્તીતિ
 સમ્બન્ધઃ પુનઃ કોદશ ? મિત્યાહ — ‘પમાદવહુચંડદુટ્ટસાવયસમાહયઽદ્વાયમા-
 ગણપૂરધોરવિદ્વંસણતથવહુલં’ પમાદવહુચંડદુટ્ટશ્વાપદસપાદ્મોદ્વાવપૂરધોરવિદ્વં-
 સાનતથવહુલં’ તત્ર-પમાદવહુચંડદુટ્ટશ્વાપદાઃ=મમાદાઃ = મધવિષયકપાપનિદ્રા
 વિકથારૂપાસ્તે એવ વહુચંડાઃ=અતિશયરોદ્રાઃ ‘દુટ્ટસાવય’ દુટ્ટશ્વાપદાઃ=દિસક
 ક્ષુભિત હો રહ્યા છે । એવં (મંગફુટ્ટં) તરંગોં કે સાથ સંયદ્દન સે પૃથક્
 છુટ્તીં એસી (નિટ્કલ્લોલ) અનિષ્ટકલ્લોલોં-દારુણ દુઃસ્વરૂપ મહાતરંગોં
 સે (સંકુલં) સંકુલ થના છુટ્તા એસા (જલં) જન્મ, જરા, મરણરૂપ જલ
 હસમેં મરા છુટ્તા છે । અર્થાત્ મોહરૂપ મહા આવર્ત મેં જહાં વિષયોપભોગ
 કી વાચ્છા સે હતસ્તતઃ ભ્રમણ કરતે હુણ જીવ નિમગ્ન હો રહે છે । તથા
 પશુ, પક્ષી, નરક, નર, અમર, આદિ ઝંવી નીચી યોનિયોં મેં પરિભ્રમણ
 રૂપ તરંગેં હસ મેં ઝઠ રહી છે, ઓર વિવિધ દારુણ આદિ દુઃસ્વોં સે
 દુઃસ્વિત છુણ પ્રાણિયોં કે રોદન-આક્રંદન રૂપ વાયુ કે આધાતોં સે જહાં
 દુઃસ્વરૂપ મહા તરંગેં જન્મ જરા મરણ રૂપ જલ કો આલોડિત કર રહી
 છે । (પમાદવહુચંડદુટ્ટ સાવય સમાહયઽદ્વાયમાગણપૂરધોરવિદ્વંસણતથ-
 વહુલં) તથા હસ સંસારરૂપ સમુદ્ર મેં (પમાદ) મધ, વિષય, કપાય,
 નિદ્રા, વિકથા, હન પાંચ પ્રમાદરૂપ (ચંડ) મયંકર (દુટ્ટસાવય) રોદ્ર

“વાકુલિય” ખળભળી રહ્યો છે. અને “મંગફુટ્ટં” તરંગોની સાથે અથડા-
 વાથી જુદી પડેલી “નિટ્કલ્લોલ” અનિષ્ટ કલ્લોલો-દારુણ દુઃખરૂપ મહાતર-
 ગોથી “સંકુલ” વ્યાપ્ત એવું “જલ” જન્મ, જરા, મરણ રૂપ જળ તેમાં
 ભરેલું છે. એટલે કે મોહરૂપી મહાવ્રમણમાં વિષયભોગની ધમ્મિથથી આમ તેમ
 ભ્રમણ કરતા છુટા ત્યાં દૂભેલા છે. તથા પશુ, પક્ષી નારકી, નર, દેવ આદિ
 ઊંચી નીચી યોનિઓમાં પરિભ્રમણરૂપ તરંગોમાં તેમાં ઊછળી રહ્યાં છે, અને
 વિવિધ દારુણ દુઃખોથી પીડાતા છુટોના આક્રંદ રૂપ પવનના આધાતથી
 ત્યાં દુઃખરૂપ મહાતરંગો જન્મ, જરા મરણ રૂપ જળને ખળભળાવી રહેલ
 છે. “પમાદ-વહુ-ચંડ-દુટ્ટસાવયસમાહયઽદ્વાયમાગણપૂરધોર” વિદ્વંસણતથવહુલં”
 આ સંસાર રૂપી સાગરમાં “પમાદ” મધ, વિષય કપાય. નિદ્રા અને વિકથા,
 એ પાંચ પ્રમાદરૂપી “ચંડ” લયંકર “દુટ્ટસાવય” રોદ્ર દેખાવના હિંસક

જન્તવઃ, તૈઃ 'સમાહય' સમાહતાઃ=આઘાતં પ્રાપ્તાઃ યે જીવાસ્તે 'ઉદ્ધાયમાણગ-
પૂરચોર, ઉદ્ધાપનાઃ=ત્રિમુત્તો વિવિધચેષ્ટાસુ, સમુદ્રપક્ષે મત્સ્યાદયઃ સંસારપક્ષે
પુરુષાદયઃ તેવાં પૂરઃ=સમૂહઃ તદ્વચ યે ચોરાઃ=શારુણાઃ 'વિદ્વંસણત્ય' વિશ્વંમા-
નર્થાઃ=વિનાશરૂપા અનર્થાસ્તે વહુલા યત્ર સ તથા તમ્ । 'અણ્ણાણભમંતમચ્છપરિ-
હત્યઅનિહુતિદિયમહામગરતુરિયચરિય સ્લોકસુખમાણમેતાવનિચ્ચયચલંતચલચલચલ
અત્તાણાસરણપુત્ત્યકમ્મસંચયોદિણ્ણવજ્જવેદિજ્જમાણદુહસયવિવાગધુગંતજલસમૂહં' અ-
જ્ઞાનભ્રમન્મત્સ્યપરિગ્રસ્તાનિમૃતેન્દ્રિયમહામકરત્વરિતચરિતચોભુમ્મમાણસન્તાપનિત્ય-
કચલચ્ચપલચશ્ચલાત્રાણાશરણપૂર્વકમસશ્ચયોદીર્ઘાં વદ્યવેદ્યમાનદુઃખશતવિષાકધૂર્ણ-
જ્જલસમૂહમ્, તત્ર-અણ્ણાણભમંતમચ્છપરિહત્ય' અજ્ઞાનભ્રમન્મત્સ્યપરિગ્રસ્તમ્ =
અજ્ઞાનાન્યેવ ભ્રમન્તો મત્સ્યાઃ=અજ્ઞાનરૂપમહામત્સ્યાસ્તૈઃ પરિગ્રસ્તં=વ્યાપ્તમ્. તથા
'અનિહુતિદિયમહામગર' અનિમૃતેન્દ્રિયમહામકગઃ=અનિમૃતાનિ=અનુપશાન્તાનિ
યાનિ ઇન્દ્રિયાણિ તાન્યેવ મહામકરાસ્તેષાં યાનિ 'તુરિયચરિય' ત્વસ્તિચસ્તાનિ
=શીઘ્રસંચરણાનિ તૈઃ 'સ્લોકસુખમાણ' ચોક્ષુભ્યમાણઃ = અતિશયેન વ્યાકુલી
આકૃતિચાલે હિંસક જંતુઓ દ્વારા (સમાહય) આઘાત કો પ્રાપ્ત કરતે
(ઉદ્ધાયમાણગ) વિવિધચેષ્ટાઓં મેં ઉછલતે હુપ સમુદ્રપક્ષ મેં મત્સ્યા-
દિક, સંસારપક્ષ મેં પુરુષાદિ કે (પૂર) સમૂહ સે જહાં (ચોર) ભયંકર
એસે (વિદ્વંસણત્યવહુલં) વિનાશરૂપ અનેક અનર્થ ઉત્પન્ન હોતે રહતે હેં
(અણ્ણાણભમંતમચ્છપરિહત્ય-અનિહુતિદિયમહામગર-તુરિય-ચરિય સ્લો-
કસુખમાણ-સંતાવનિચ્ચય-ચલંત-ચવલ-ચંચલ-અત્તાણાસરણપુત્ત્યકમ્મ-
સંચયો દિણ્ણવજ્જ વેદિજ્જમાણ-દુહસયવિવાગ-ધુગંત-જલસમૂહં) તથા
યહાં સંસાર સમુદ્ર (અણ્ણાણભમંતમચ્છપરિહત્ય) અજ્ઞાનરૂપ ધૂમતે હુપ
મહામત્સ્યો સે વ્યાપ્ત હો રહા હૈં ઓર (અનિહુતિદિયમહામગર)
અનુપશાન્ત ઇન્દ્રિયરૂપ મહામકરોં કે (તુરિયચરિય) શીઘ્ર સંચરણોં સે

જંતુઓ દ્વારા "સમાહય" આઘાત પામીને "ઉદ્ધાયમાણગ" વિવિધ રીતે
ઉછળતા (સમુદ્રપક્ષે) મત્સ્યાદિક. (સંસારપક્ષે) પુરુષાદિના "પૂર" સમૂહથી
આં "ચોર" ભયંકર એવા "વિદ્વંસણત્યવહુલં" વિનાશરૂપ અનેક અનર્થો
ઉત્પન્ન કરતા રહે છે. "અણ્ણાણ-ભમંત-મચ્છ પરિહત્ય-અનિહુતિદિય-મહામગર
તુરિય-ચરિય-સ્લોકસુખમાણ-સંતાવ-નિચ્ચય-ચલંત-ચવલચંચલ-અત્તાણાસરણપુત્ત્યક-
મ્મ-સંચયો-દિણ્ણવજ્જ-વેદિજ્જમાણ-દુહસય-વિવાગ-ધુગંતજલસમૂહં" તથા
આ સંસાર આગર "અણ્ણાણભમંત-મચ્છ-પરિહત્ય" અજ્ઞાનરૂપ ધૂમતા મહામ-
ત્સ્યોથી વ્યાપ્ત છે, અને "અનિહુતિદિય મહામગર" અનુપશાન્ત (ઉપશાન્ત
ન થયેલી) ઇન્દ્રિયો રૂપ મહામકરોના "તુરિયચરિય" ઝડપી હલનચલનથી

ક્રિયભાગો યઃ સઃ ‘ તથા ‘ સંતાપણિચ્ચય ’ સન્તાપનિત્યકઃ=સન્તાપઃ=વિવિધાધિ
 વ્યાધિવન્ધુવિયોગાદિ જાતઃ સાગરસ્થવદ્વાગ્નિસન્તાપરૂપો દુઃસ્વસન્તાપો નિત્ય
 યત્ર સ સન્તાપનિત્યકઃ, અતएव—‘ ચલંતચલચંચલ ’ ચલચ્ચપલચચ્ચલઃ=અત્યન્ત-
 મસ્થિરઃ, સતતપરિવર્તનશીલમિત્યર્થઃ તમ્, તથા ‘ અત્તાણાસરણ ’ અત્તાણાસર-
 ãણાનાં, અત્તાણાનામશરણાનાં ‘ પુલ્લકમ્મસંચય ’ પૂર્વકર્મસશ્ચયાનાં પ્રાણિનાં ઉદીર્ણમ્
 =ઉદયમાનં યત્ ‘ વજ્જં ’ અવજ્ઞ=પાપં તસ્ય યઃ ‘ વેદિજ્ઞમાણ ’ વેદ્યમાનઃ=ઉપ-
 ખુજ્યમાનઃ ‘ દુહસયવિવાગ ’ દુઃસ્વશતરૂપો વિપાકઃ સ एव ધુર્ણન્=ભ્રમન્ જલ
 સમૂહો અત્ર સ તથા તમ્, ઇદ્ધિરસસાયગારવોદારગદિયકમ્મપડિવદ્ધસત્તકલ્હિ-
 જ્ઞમાણનિરયતલદુત્તસણ્ણવિસણ્ણવહુલં ’ ઋદ્ધિરસસાતગૌરવોપદારગૃહીતકર્મપ્રતિ-
 વદ્ધસત્તવકુલ્લપમાણનિરયતલદુત્તસત્તવિપણ્ણવહુલમ્, તત્ર ‘ ઇદ્ધિરસસાયગારવો-
 દાર ’ ઋદ્ધિરસસાતગૌરવોપદારા=ઋદ્ધિરસસાતલક્ષણાનિ ગૌરવાણ્યેવ ઉપદારાઃ=
 જલચરવિશેષાસ્તૈઃ ‘ ગદિય ’ ગૃહીતાઃ ‘ કમ્મપડિવદ્ધ ’ કર્મપ્રતિવદ્ધાઃ=જ્ઞાનાવર-
 (સ્લોકસુદ્ધમાણ) યહ અત્યંત ક્ષુભિત વના હુઆ હૈ । (સંતાવણિચ્ચય)
 વિવિધ વ્યાધિ, વન્ધુ વિયોગ આદિ જન્ય દુઃસ્વરૂપ વડવાગ્નિ કા હસમેં
 નિત્ય સંતાપ લાયા હુઆ હૈ । ઔર યહ (ચલંતચલચંચલ) નિરન્તર
 પરિવર્તન શીલ હૈ । एवં હસ સમુદ્ર મેં (અત્તાણા સરણ) ત્રાણ एवં શરણ
 રહિત ऐसे પ્રાણિયોં કે જિનકે પાસ (પુલ્લકમ્મસંચય) પૂર્વકૃત કર્મોં
 કા સંચય મૌજૂદ હૈ (ઉદિણ્ણવજ્જ) ઉદય મેં આયા હુઆ જો પાપકર્મ કા
 (વેદિજ્ઞમાણદુહસયવિવાગ) ઉપખુજ્યમાન જો દુઃસ્વશત (સૈકઙ્ગોદુઃસ્વ)
 રૂપ ફલ હૈ વહ ફલ હો વહાં (ધુર્ણંતજલસમૂહ) ચલના હુઆ જલ ભરા
 હુઆ હૈ (ઇદ્ધિરસસાયગારવોદારગદિયકમ્મપડિવદ્ધસત્તકલ્હિજ્ઞમાણનિ-
 રયતલદુત્તસણ્ણવિસણ્ણવહુલં) ઋદ્ધિ રસસાતરૂપ ગૌરવ હી હસ
 સંસાર સમુદ્ર મેં (ઉવહાર) ઉપદાર જલચર જન્તુ વિશેષ ભરે હુए હૈ

“ સ્લોકસુદ્ધમાણ ” અત્યંત ખગભળી ઉડેલ છે, “ સંતાવણિચ્ચય ” વિવિધ આધિ
 વ્યાધિ, બંધુ વિયોગ આદિ જન્ય દુઃખરૂપ વડવાતલનો સંતાપ તેમાં નિત્ય
 વ્યાપેલો હોય છે, અને તે “ ચલંતચલચંચલ ” નિરંતર પરિવર્તન શીલ
 છે, અને આ સંસારમાં “ અત્તાણાસરણ ” ત્રાણ અને શરણ રહિત એવા છુવો
 છે કે જેમની પાસે “ પુલ્લકમ્મસંચય ” પૂર્વે કરેલાં કર્મોનાં સમૂહ રહેલો છે,
 “ ઉદિણ્ણવજ્જ ” અને જે પાપકર્મોનાં ઉદય થયો છે તે પાપકર્મોનાં “ વેદિજ્ઞમાણ-
 દુહસયવિવાગ ” ભોગવવા રૂપ સેકંદો હુખ “ સૈકઙ્ગોદુઃસ્વ ” રૂપ જે રૂણ
 છે, તે રૂણ જ ત્યાં “ ધુર્ણંતજલસમૂહ ” વહેતાં જળ સમાન છે. “ ઇદ્ધિરસ-
 સાયગારવોદાર-ગદિયકમ્મ-પડિવદ્ધ-સત્ત-કલ્હિજ્ઞમાણનિર-યતલદુત્તસણ્ણ-વિસણ્ણ-
 વહુલ ” ઋદ્ધિ રસસાત રૂપ ગૌરવ જ આ સંસાર સાગરમાં “ ઉવહાર ”

ળાદિલક્ષણૈઃ કર્મભિર્થદ્વાશ્ચ યે ‘સત્ત્વ’ સત્ત્વાઃ=પ્રાણિનસ્તથા ‘કહ્નિજ્જમાણ’ કૃષ્યમાણાઃ=કૃષ્યકર્મવન્ધનેન રજ્જુવદ્ધકાષ્ટમિવ નરકં પ્રત્યાકૃષ્યમાનાઃ ‘નિરય-તલ’ નરક એવ તલં=વાતાલં ‘દુત્ત’ તદ્ભિમુત્ત્વં ‘સણ્ણ’ સત્ત્વાઃ=નરકરૂપપા-તાલગમનાભિમુત્ત્વત્વાત્ વિષ્ણાઃ તથા ‘વિસણ્ણ’ વિષણ્ણાશ્ચ ‘શોકાતિશયં પ્રાપ્તાઃ યે પ્રાણિનસ્તૈઃ બહુલો યઃ સ તથા તમ્ । તથા ‘અરહરહમયવિસાયસોગમિચ્છત્ત-સેલસંકહં’ અરતિરતિભયવિપાદશોકમિથ્યાત્વશૈલસંકટં =તત્ર-અરતિઃ = ધર્મેષ્વ-રુચિઃ રતિઃ=વિષયેષુ રુચિઃ ભયં=હલોકાદિ સપ્તભયાનિ વિપાદઃ=અનિષ્ટસંયોગ-જનિતદુઃખં શોકઃ=દૃષ્ટવિયોગજનિતદન્યં મિથ્યાત્વં ચ કુદેવકુરુકુધર્મશ્રદ્ધાલ-ક્ષણમિત્યેતાન્યેવ શૈલાઃ=પર્વતાસ્તૈઃ સઙ્કટઃ=વિપમો યઃ સ તથા તમ્ , અસ્ત્યાદિ

और इन उपहारों से इसमें (गहियकम्मपडिबद्धसत्त) ज्ञानावरण आदि कर्मों से बद्ध प्राणी गृहीत बने हुए हैं । तथा (कह्निज्जमाण) पूर्वकृत कर्मबंधन के द्वारा रज्जु बद्ध काष्ठ की तरह यहां वह प्राणिवर्ग नरक की ओर खेंचा जा रहा है और (निरयतलदुत्त) नरकतल की ओर गमन करने में सन्मुख होनेकी त्रजह से यहां वह प्राणीवर्ग (सण्ण-विसण्णबहुलं) सन्न-खिन्न, एवं विषण्ण शोकातिशय को प्राप्त-हो रहा है । तथा (अरहरहमयविसायसोगमिच्छत्तसेलसंकहं) (अरइ) अरति-धर्ममें अरुचि, (रइ) रति-विषयों में रुचि, (भय) इहलोकभय, परलोक-भय आदि सात भय, (विसाय) विषाद-अनिष्ट संयोग जनित दुःख, (सोग) शोक-दृष्ट वियोग जनित दैन्यभाव, (मिच्छत्त) मिथ्यात्व-कुगुरु, कुदेव और कुधर्म की श्रद्धा, ये ही सब इस संसारसमुद्र में (सेल) पर्वत जैसे हैं सो इन पर्वतोंसे यह (संकहं) विषम बना हुआ है ।

ઉપહાર જળચર જન્તુ વિશેષ ભરેલ છે અને તે ઉપહારોથી તેમાં “ ગહિયકમ્મ-પડિબદ્ધસત્ત ” જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોથી બંધાયેલ પ્રાણી સપડાયેલ છે. તથા

“ કહ્નિજ્જમાણ ” પૂર્વે કરેલાં કર્મો દ્વારા, દોરડાથી બાંધેલા કાષ્ટની જેમ તે પ્રાણીઓ નરકની તરફ ખેંચાઈ રહ્યા છે, અને “ નિરયતલદુત્ત ” નરક તરફ ગમન કરવાને અભિમુખ હોવાને કારણે તે પ્રાણીઓ “ સણ્ણવિસણ્ણબહુલં ” ખિન્ન અને અતિશય શોક યુક્ત થઈ રહ્યાં છે. તથા “ અરહ-રહમય-વિસાય-સોગમિચ્છત્ત સેલસંકહં ” “ અરइ ” અરતિ-ધર્મમાં અરુચિ, “ રइ ” રતિ-વિષયોમાં રતિ, “ ભય ” આલોકનો ભય, પરલોકનો ભય આદિ સાત ભય, “ વિસાય ” વિષાદ-અનિષ્ટ સંયોગ જનિત દુઃખ “ સોગ ” શોક-દૃષ્ટ વિયોગ જનિત દૈન્યભાવ, “ મિચ્છત્ત ” મિથ્યાત્વ. કુગુરુ, કુદેવ અને કુધર્મની શ્રદ્ધા, એ બધું આ સંસારસાગરમાં “ સેલ ” પર્વત જેવું છે, એ પર્વતોથી તે “ સંકહં ” વિષમ

सुदर्शनी टीका अ० ३ सू० १९ संसारसागरस्वरूपनिरूपणम्

३७३

दुःखैर्व्याप्तमित्यर्थः। तथा 'अणाइसंताणकम्मबंधणकिलेसचिक्खिल्लदुट्टुत्तारं' अनादि सन्तानबन्धनक्लेशचिक्खिल्लदुट्टुत्तारम्, तत्र-अनादिः=आदि रहितः सन्तानः=विस्तारो यस्य तत्तथाभूतं यत् कर्मबन्धनं तद्रूप एव 'किलेस' क्लेशः=दुःखं तद्रूपमेव चिक्खिल्लं=कर्मस्तेन दुट्टुत्तारः=दुस्तरः यः स तथा तम्। तथा-अमर नरतिरियनिरयगइगमणकुडिलपरिवट्टविउलवेलं' अमरनरतिर्यङ्मरकगतिगमन-कुडिलपरिवर्तविपुलवेलं=तत्र-अमरनरतिर्यङ्मरकचतुर्गतिषु-यद् गमनं तदेव कुटिला वक्रा परिवर्ताः=गोलाकारा एव विपुला=विस्तीर्णा वेला=समुद्रजलवृद्धि-रूपा यत्र स तथा तं, नरकादि चतुर्गतिचक्रभ्रमणपरम्पराभिः समुद्रजलवृद्धिरूपा-भिर्युक्तमित्याशयः। तथा 'हिंसालियअदत्तादानमेहुणपरिग्गहारंभकरणकरावणाणुमोयण-अट्टविहअणिट्टकम्मपिडियगुरुभरकंसदुग्गजलोघदूरनिवोल्लिज्जमाणउम्मग्ग-निम्मग्गदुल्लहतलं' हिंसाऽलीकादत्तादानमैथुनपरिग्रहारम्भकरणकारणानुमोदना-ष्टविधानिष्टकर्मपिण्डितगुरुभाराक्रान्तदुर्गजलोघदूरनिवोत्यमानोन्मार्गनिमग्नदुर्लभ-तलम्, तत्र-'हिंसालियअदत्तादानमेहुणपरिग्गहारंभ' हिंसाऽलीकाऽदत्तादान-

तथा (अणाइसंताणकम्मबंधण किलेसचिक्खिल्लदुट्टुत्तारं) जिसका विस्तार आदि से रहित है ऐसे कर्मबंधन जन्य क्लेशरूप (चिक्खिल्ल) कीचड से यह (दुट्टुत्तारं) दुस्तर बना हुआ है तथा (अमरनरतिरिय-निरयगइगमणकुडिलपरिवट्टविउलवेलं) देव, नर, तिर्यक् और नरक, इन चार गतियों में जो जीवोंका गमन है वही इस समुद्र को कुटिल गोलाकार विस्तीर्ण वेला है, अर्थात् नरकादि चतुर्गतिरूप यह संसार है। इसमें जीवचक्र की तरह परिभ्रमण करते रहते हैं। यह परिभ्रमण की जो परंपरा है वही इस समुद्र की जल वृद्धि रूप वेला है। (हिंसालिय अदत्तादान मेहुणपरिग्गहारंभकरणकरावणाणुमोयण) हिंसा, झूठ, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रहरूप आरम्भों का करना

जानेला छे- तथा "अणाइ-संतण-कम्मबंधण-किलेसचिक्खिल्ल-दुट्टुत्तारं" अनादि कर्मबंधन जन्य क्लेशरूप "चिक्खिल्ल" श्रव्यश्रुति ते "दुट्टुत्तारं" दुस्तर जानेला छे, तथा "अमरनरतिरियगइगमणकुडिलपरिवट्टविउलवेलं" देव, नर, तिर्यक् अने नरक, ये चार गतियोंमें लुपेतुं के गमन थाय छे अने जे आ संसार समुद्रनी कुटिल गोलाकार विस्तीर्ण वेला छे, ओटवे के नरकादि चार गतिरूप आ संसार छे. तेमां यकणी जेम लुपे परिभ्रमण करे छे. आ परिभ्रमणनी के परंपरा छे तेज आ समुद्रनी जल वृद्धिरूप वेला छे. "हिंसालिय-अदत्तादान-मेहुणपरिग्गहारंभकरणकरावणाणुमोयण" हिंसा, झूठ, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रहरूप आरम्भ करवा, अने तेनी अनुमोदना

મૈથુનપરિગ્રહરૂપા યે આરમ્ભાઃ=વ્યાપારાસ્તેષાં યાનિ કરણકારણાનુમોદનાનિ=કરણં સ્વયં, કારણં=અન્યૈરનુષ્ઠાપનમ્, અનુમોદનં ચ=કૃતકારિતાદેઃ પ્રશંસનમિત્યેતૈઃ પ્રકારૈઃ ‘અટુવિહ’ અટુવિધં યત્ ‘અનિટુકમ્મપિંડિય’ અનિટુકમ્મપિંડિતં=દુઃસ્વદકર્મસંચયઃ તદેવગુરુભારસ્તેન ‘અવકંત’ અક્રાન્તા યે જીવાસ્તેષાં દુર્ગાપ્ત્યેવ=દુઃસ્વાપ્ત્યેવ યો ‘જલોઘ’ જલોઘઃ=જલપૂરઃ તત્ર દૂરં=અત્યર્થં ‘નિવોલિજ્જમાણ’ નિવોલ્યમાનાઃ=છુઙ્ગમાનાઃ, ‘ઉમ્મગ્ગાનિમ્મગ્ગ’ ઉમ્મગ્ગનિમ્મગ્ગાશ્ચ=દુઃસ્વરૂપજલે ઉર્ધ્વાડ્યો ગમ્યમાનાઃ યે પ્રાણિનસ્તૈઃ ‘દુલ્લહતલં’ દુર્લભતલં=દુર્લભં=દુષ્પ્રાપ્યં તલં યસ્ય સ તથા તં=હિંસાઝ્યોકાદિપશ્ચાસ્રવમ્નિતાડટ્ટવિધકર્મભારાક્રાન્તૈઃ નાનાવિધદુઃસ્વરૂપાગાધજલે નિમજ્જનોન્મજ્જનં કુર્ણદ્વિર્જોવૈદુષ્પારાડકારાના અનુમોદન કરના, ઇન પૂર્વોક્ત પ્રકારોં સે જો (અટુવિહ અણિટુકમ્મપિંડિય) દુઃસ્વદ આઠ પ્રકારકે કર્મોંકા સંચય હોતા હૈ, ઉસ કર્મ સંચય રૂપ ભાર સે (અકંત) અક્રાન્ત-ભારી ઘને હુણ તથા (દુર્ગાજલોઘ) દુઃસ્વ રૂપ જલસમૂહ મેં (દૂરનિવોલિજ્જમાણ) અત્યંત દૂરવે હુણ તથા (ઉમ્મગ્ગાનિમ્મગ્ગ) ઝૂથ દૂર કરતે હુણ અર્થાત્ ઝૂંચે નીચે આતે હુણ એસે પ્રાણિયોં કે લિયે ઘદ સંસાર સમુદ્ર (દુલ્લહતલં) અલભ્ય તલવાલા હૈ અર્થાત્ ઇસ સંસાર સમુદ્ર કો પૂર્વોક્ત પ્રકાર કે જીવ પાર નહીં કર સકતે હૈં । અર્થાત્ ઇસ સંસારસમુદ્ર કા તલ-થાહ એસે જીવોંસે અપ્રાપ્ત હૈ જો હિંસા, ઝૂઠ, અદત્તાદાન, મૈથુન, પરિગ્રહરૂપ આરંભો કે કરના, કરાના, एवं उन ही अनुमोदना में लगे हुए हैं, क्योंकि इन पूर्वोक्त प्रकारों से वे जीव दुःस्वद अष्टविध कर्मों का संचय कर लेते हैं इस कारण उन पर इसका बहुत भारी भार हो जाता है । इससे वे दब जाते

કરવી, એ પૂર્વોક્ત પ્રકારે જે “અટુવિહઅણિટુકમ્મપિંડિય” આઠ પ્રકારનાં, દુઃખદ કર્મેનાં સંચય થાય છે, તે કર્મસંચયરૂપ ભારથી “અકંત” આક્રાન્ત-ભારે અનેક તથા દુર્ગાજલોઘ ” દુઃખરૂપ જળસમૂહમાં દૂરનિવોલિજ્જમાણ ” અત્યંત દૂરતા, તથા “ઉમ્મગ્ગાનિમ્મગ્ગ” પાણીમાં ડૂબા ડૂબ કરતાં-ઝૂંચે નીચે આપતાં એવાં પ્રાણીઓને માટે આ સંસાર સમુદ્ર “દુલ્લહતલં” અલભ્ય તલવાળો છે એટલે કે આ સંસારસાગરને પૂર્વોક્ત પ્રકારનાં જીવો તરી શકતાં નથી. એટલે કે હિંસા, ઝૂઠ, અદત્તાદાન, મૈથુન, પરિગ્રહરૂપ આરંભો કરનાર, કરાવનાર અને તેમની અનુમોદના કરનાર જીવોને આ સંસારસાગરનો કિનારો પ્રાપ્ત કરવો અશક્ય છે. કાશ્યુ કે પૂર્વોક્ત પ્રકારે તે જીવો આઠ પ્રકારનાં દુઃખદ કર્મેનાં સંચય કરે છે. તેથી તેમના પર તેમનો બહોળો ભાર થોળો હોય છે. તેનાથી તેઓ દબાઈ બધ છે, અને વિવિધ પ્રકારનાં

ન્તસ્તલમિત્યર્થઃ તમેદંભૂતં સંસારસાગરં 'સરીરમણોમયાણિ દુઃખાણિ ઉપ્પિયંતા' શરીરમણોમયાણિ દુઃખાણિ ઉત્પિવન્તઃ=કાર્યિકાણિ માનસિકાણિ ચ વિવિધાણિ દુઃખાણિ આસ્વાદ્યન્તાઃ અનુભવન્ત ઇત્યર્થઃ, 'સાયાસાયપરિતાવણમયં ઉવ્વુહનિવ્વુહયં કરેંતા' સાતાસાતપરિતાપનમયમુદ્બુહનનિવ્વુહનકં કુર્વન્તઃ=મુલ્લદુઃખતાપાત્મકમુન્મજ્જનનિમજ્જનમનુભવન્તઃ સાતં=મુલ્લં તદાત્મકમુન્મજ્જનમસાતપરિતાપનં દુઃખમન્તાપસ્તદાત્મકં નિમજ્જનમનુભવન્તઃ 'ચરંતમહંતં' ચતુરંતમહાન્તં=ચતુરંતં=નરકાદિ ચતુર્વિભાગયુક્તં મહાન્તમ્ અનંતં જન્મમરણાદિદુઃખયુક્તતાત્. તથા 'અણવયમ્' અનવદગ્રં=અનન્તમ્-અન્તરહિતમિત્યર્થઃ, 'રુદ્ધં' રુદ્ધં=સફળ

હૈં ઓર નાના પ્રકાર કે દુઃખોંકો મોગા કરતે હૈં. અતઃ યદ્દુઃખ સમૂહ હી ઇસ સંસાર સવુદ્ધ મેં પ્રધાદ્ જલ ભરા હુઆ હૈ. ઉસમેં હી યે જીવ બહુત અધિક રૂપ મેં દુઃખક્રિયાં લેતે રહતે હૈં, ઉન્નગ્ન, નિમગ્ન હોતે રહતે હૈં. ફિર વે ઇસકે અન્તસ્તલ કો કૈસે પ્રાપ્ત કર સકતે હૈં? નહીં કર સકતે. ઇસલિયે સૂત્રકાર ને એસે જીવોં કે લિયે ઇસકા પાર પાના ધાદ્ પ્રાપ્ત કરના-દુઃશક્ય-અસંભવ કહા હૈ. (સરીરમણોમયાણી) ઇસ સંસાર સાગર મેં પડે હુએ જીવ શારીરિક એવં માનસિક (દુઃખાણિ) દુઃખોંકા હી (ઉપ્પિયંતા) અનુભવ કરતે હૈં. તથા (સાયાસાયપરિતાવણમયં) સાતામાત પરિતાપન રૂપ (ઉવ્વુહનિવ્વુહયં) ઉન્મજ્જન નિમજ્જન અર્થાત્ સાતાત્મક ઉન્મજ્જન તથા અસાતાત્મક એવં પરિતાપાત્મક નિમજ્જન (કરેંતા) કરને મેં તછીન હુએ યે જીવ (ચારંતમહંતં) નરકાદિ ગતિ રૂપ ચાર વિભાગોં સે યુક્ત તથા જન્મ મરણાદિ કે અનન્ત દુઃખોં સે મહાન્, (અણવયમ્) અન્તરહિન (રુદ્ધં) સમસ્ત પ્રાણિયોંકો ભયજનક,

દુઃખો ભોગવ્યા કરે છે. તેથી આ સંસારસાગરમાં દુઃખ સમૂહરૂપ અપાર જળ ભરેલું છે. તેમાં જ તે જીવો વરંવાર ડૂબકીઓ ખાધાં કરે છે. તો પછી તેઓ તેના કિનારે તો પહોંચી કેવી રીતે શકે? તે કારણે સૂત્રકારે એવા જીવોને માટે તેનો પાર પામવાનું કાર્ય અશક્ય બતાવ્યું છે. “સરીરમણોમયાણિ” આ સંસાર સાગરમાં પડેલા જીવો શારીરિક માનસિક “દુઃખાણિ” દુઃખોનો જ “ઉપ્પિયંતા” અનુભવ કરે છે. તથા “સાયાસાયપરિતાવણમયં” સાતામાત પરિતાપન રૂપ “ઉવ્વુહનિવ્વુહયં” ઉન્મજ્જન નિમજ્જન એટલે કે સાતાત્મક ઉન્મજ્જન (પાણીની ઉપર આવવું તે) તથા અસાતાત્મક અને પરિતાપાત્મક નિમજ્જન (ડૂબવું તે) “કરેંતા” કરવામાં લીન થયેલ તે જીવો “ચારંતમહંતં” નરકાદિ ગતિરૂપ ચાર વિભાગોવાળ. તથા જન્મ મરણાદિ દુઃખોથી મહાન, “અણવયમ્” અન્તરહિત, “રુદ્ધં” અર્થાં પ્રાણીઓને

પાણિભયજનક, ‘સંસારસાગરં’ સંસારસાગરં, વસન્તીત્યગ્રેણ સમ્બન્ધઃ કીદશં સંસારસાગરમિત્યાહ-‘અદ્વિય અળાલંબણપદ્ધાણં’ અસ્થિતાડનાલમ્બનમતિષ્ઠાનમ્ =અસ્થિતાનામ્=સંયમાનુષ્ઠાનરહિતાનાં ન વિદ્યતે આલમ્બનમ્=અવલમ્બઃ પ્રતિષ્ઠાનં=રક્ષાકરણં યત્ર સ તથા તં અસંપમિનાપ્રાધારવર્જિતં ત્રાણવર્જિતં ચેત્યર્થઃ. તથા ‘અપ્પમેયં’ અપમેયમ્=અસર્વજ્ઞેનાડપરિચ્છેદ્યં ‘ચુલસીયજોણિસયસહસ્સગુવિલં’ ચતુરશીતિયોનિજતસહસ્સગુપિલં=ચતુરશીતિલક્ષ્યોનિવ્યાપ્તં યોનિનામ સંખ્યાતત્વેડપિ સમવર્ણગન્ધરસસ્પર્શનામેકત્વવિવક્ષણાદુક્તસંખ્યાસામઙ્ગસ્યં બોધ્યં તત્ર ગાથા યથા-

ऐसे (संसारसागरं) संसार सागर में (वसन्ति) वसते हैं, ऐसा सम्बन्ध कर लेना चाहिये । किस प्रकार के संसारसागर में वसते हैं सो कहते हैं-(अद्वि य अणालंबणपदद्वा(गं) असंयमी जीवों के आलम्बन एवं रक्षा करने के साधनसे रहित (अप्पमेयं) कोलहू का बेल चारों तरफ फिरनेसे पार नहीं पाता वैसे ही चतुर्गतिमें जन्ममरणसे पार नहीं पानेसे अप्रमेय, (चुलसीइजोणिसयसहस्सगुविलं) चौरासीलक्ष जीव योनीयों से युक्त, (अणालोमं) प्रकाशवर्जित, एवं (अंधयारं) अंधकार से युक्त इस संसार में (अणंतकालं जाव) अनंतकाल तक (णिच्चं) सदा (उत्तत्थसुण्णभय-सण्णसंपउत्ता) भयभीत बने हुए तथा क्लिक्कत्तव्यता से विमूढ हुए भय से एवं संज्ञा-आहार, परिग्रह एवं मैथुन संज्ञाओं से सम्बद्ध बने हुए जीव (उद्विग्गवासवसहिं) उद्विग्नों के वासस्वरूप इस संसार में (वसन्ति) वसते हैं । जो अदत्तग्राही जीव हैं वे चतुर्गतिरूप तथा अनंत दुःखों से युक्त इस संसारसागर में अनंत काल तक परिभ्रमण करते रहते हैं । चौरासी लाख योनियां इस प्रकार से हैं—

भाटे ભયબ્બનક, એવા “સંસારસાગરં” સંસાર સાગરમાં “વસન્તિ” વાસ કરે છે. તેઓ કેવા પ્રકારના સંસાર સાગરમાં વસે છે? “અદ્વિય અણાલંબણ-પદ્ધાણં” અસંયમી જીવોને આધાર આપવાનો તથા તેમનું રક્ષણ કરવાના સાધનોથી રહિત, “અપ્પમેયં” અસર્વજ્ઞની અપેક્ષાએ અપ્રમેય, “ચુલસીઇ-જોણિસયસહસ્સગુવિલં” ચોર્યાશી લાખ જીવોનીયોથી યુક્ત, “અણાલોમં” પ્રકાશ રહિત, અને “અંધયારં” અંધકારથી યુક્ત આ સંસારમાં “અણંતકાલ-જાવ” અનંત કાળ સુધી “ણિચ્ચં” સદા “ઉત્તત્થસુણ્ણભયસણ્ણસંપઉત્તા” ભયભીત અનેલ, તથા ક્લિક્કત્તવ્યતાથી વિમૂઢ અનેલ, ભય સંજ્ઞા, આહાર સંજ્ઞા, મૈથુન સંજ્ઞા, અને પરિગ્રહ સંજ્ઞાઓથી યુક્ત અનેલ જીવો “ઉદ્વિગ્ગવાસવસહિં” ઉદ્વિગ્નોના-(દુઃખીયારના) વાસ બેવા આ સંસારમાં “વસન્તિ” વસે છે. અદત્તાદાન લેનાર જીવો આર ગતિરૂપ તથા અનંત દુઃખોથી યુક્ત આ સંસાર સાગરમાં અનંત કાળ સુધી પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. ચોર્યાશી લાખ યોનિયો આ પ્રમાણે છે.

सुदर्शनीटीका अ० ३ सू० १९ संसारसागरस्वरूपनिरूपणम्

३७७

“पुढवि७ दग७ अगणि७ मारुय७ एक्केक सत्तजोगि लक्खाओ ।

वणपत्तेय अणंते, दसचोइस जोगिलक्खाओ ॥ १ ॥

विगलिंदिएसु दो दो, चउरो चउरो य नारयसुरेसु ।

तिरिएसु हुंति चउरो, चोइसलक्खा य मणुएसु” ॥ २ ॥

तथा ‘अणालोकं’ अनालोकं=पकाशवर्जितम् अन्धकारम्=अन्धकारयुक्तमेव-
संसारसागरम् ‘अणंतकालं’ जाव ‘अनन्तकालं’ यावत् ‘गिन्धं’ नित्यं=सदा
‘उत्तत्थसुण्णभयसण्णसंपउत्ता’ उत्तत्थस्तशून्यभयसंज्ञासंप्रयुक्ताः=तत्र उत्त्रस्ताः=
भयभीताः शून्याः=किं कर्तव्यविमूढाः, तथा भयसंज्ञासम्प्रयुक्ताः=भयेन संज्ञाभिश्च
=आहारमैथुनपरिग्रहादिभिः सम्प्रयुक्ताः=सम्बद्धाः ‘उत्तिग्गवासवसदि’ उद्धि-
ग्नवासवसर्ति=उद्धिग्नानां वासो यत्र स तथा तं संसारं वसन्ति, अदत्तादायिनः
चतुर्गतिलक्षणमनन्तदुःखं संसारसागरमनन्तकालं भ्रमन्तीत्यर्थः, इह वसेर्निरूप्यसर्ग-
स्यापि सकर्मकत्वसार्पित्वात् ॥ सू० १९ ॥

“पुढवि७ दग७ अगणि७ मारुय७ एक्केक सत्तजोगि लक्खाओ ।

वणपत्ते य अणंते, दस चोइस जोगि लक्खाओ ॥१॥

विगलिंदिएसु दो दो, चउरो चउरो य नारयसुरेसु ।

तिरिएसु हुंति चउरो, चोइस लक्खाय मणुएसु ॥२॥” इति ।

(१) पृथिवीकाय, (२) अप्काय, (३) तेजःकाय, (४) वायुकाय (५)
इनकी सात सात लाख, प्रत्येक वनस्पति दश लाख, अनन्त (साधारण)
वनस्पति चौदह लाख, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय, चौ इन्द्रिय इनकी दो दो
२-२ लाख, नारकी तथा देव इनकी चार चार ४-४ लाख तथा तिर्यञ्च
पञ्चेन्द्रिय की चार ४ लाख और मनुष्य की चौदह १४ लाख । इस
प्रकार ये सब मिल कर चौरासी ८४ लाख योनीयां होती हैं ॥सू. १९॥

“पुढवि ७ दग ७ अगणि ७ मारुय ७ एक्केक सत्तजोगि लक्खाओ ।

वणपत्ते य अणंते, दस चोइस जोगि लक्खाओ ॥ १ ॥

विगलिंदिएसु दो दो, चउरो चउरो य नारयसुरेसु ।

तिरिएसु हुंति चउरो, चोइस लक्खाय मणुएसु ॥ २ ॥ इति ।

(१) पृथिवीकाय (२) अप्काय (३) तेजःकाय (४) वायुकाय, जे तरेकनी सात सात
लाख, प्रत्येक वनस्पतिनी दस लाख अनन्त (साधारण) वनस्पतिनी चौद
लाख जे इन्द्रिनी जे लाख, त्रीन्द्रिनी जे लाख, चतुरिन्द्रिनी जे लाख,
नारकी तथा देवनी चार चार लाख तथा तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिनी चार लाख,
अने मनुष्यनी चौद लाख जे प्रमाणे जधी भजीने चौरासी लाख योनिथे
थाय छे ॥सू० १९॥

प्र० ४८

पुनरप्यदत्तादायिनः कीदृशाः सन्तः किं फलं प्राप्नुवन्तीत्याह - 'जहि' इत्यादि

मूलम्—जहिं जहिं आउयं निवंधंति पावकम्मकारी वंध-
वज्जणसयणमित्तपरिवज्जिया अणिट्ठा भवंति अणादेज्जा दु-
व्विणीया कुट्ठाणासण कुसेज्जा कुभोयणा असुइणो कुसंघयण-
कुप्पमाणा कुसंठिया कुरूवा बहुकोहमाणमायालोभा बहुमोहा-
धम्मसण्णसम्मत्तपब्भट्ठा दारिद्दोवद्वाभिभूया निच्चं पर-
कम्मकारिणो जीवणत्थरहिया किविणा परिपिंडतक्कगा दुक्ख-
लद्धाहारा अरसविरसतुच्छकयकुक्खिपूरापरस्सपेच्छंता रि-
द्धिसक्कारभोयणविसेससमुदयविहिं निदंता अप्पयंकयं तं
च परिवयंता । इह य पुरेकडाइं कम्माइं पावगाइं विमणसो
सोएण उज्झमाणा परिभूया हुंति सत्तपरिवज्जिया य छोव्भा
सिप्पकलासमयसत्थपरिवज्जिया जहाजायपसुभूया अचि-
यत्ता निच्चं नीयकम्मोवजीविणो लोयकुच्छणिज्जा मोह-
मणोरेहा निरासवहुला आसापासपडिबद्धपाणा अत्थोप्पायण
कामसोक्खे य लोयसारेहुंति अफलवंतगा य सुदुअवि
उज्जमंता . तद्विसुज्जुत्तकम्मकयदुक्खसंठवियसिस्थपिंड-
संचयपराखीणदव्वसारा णिच्चं धणधणक्कोसपरिभोगवि-
ज्जिया रहियकामभोगपरिभोगसव्वसोक्खा परसिरि भोगोव-
भोगनिस्साणमग्गणपरायणा वरागा अकामिकाए विणि-
यंति दुक्खं, णेवसुहं णेवणिव्वुइं उवलंभति अचवंतविउल
दुक्खसयसंपालित्ता परस्स दव्वेहिं जे अविरया ॥सू० २०॥

સુદર્શિની ટીકા અ૦૨ સૂ૦૨૦ અદત્તાદાયિનઃ કીદશાંફલં લભન્તે ?

૩૭૬

ટીકા—‘પાવકર્મ્મકારી’ પાપકર્મ્મકારિણસ્તેડદત્તાદાયિનઃ ‘જહિં-જહિં આડયં નિવંધંતિ’ યત્ર યત્ર આયુર્નિવધ્નન્તિ=યત્ર યત્ર ગ્રામકુલાર્દો આયુર્નિવધ્નન્તિ તત્ર તત્ર સમુત્પન્નન્તે इत्यर्थः । તત્ર કીદશા ભવન્તી ? ત્યાહ-‘વંધવજ્જનસયણમિત્ત-પરિવજ્જિયા’ વાન્ધવસ્વજનમિત્રપરિવર્જિતાઃ = તત્ર વાન્ધવજનૈઃ=ભ્રાત્રાદિભિઃ, સ્વજનૈઃ=પુત્રાદિભિઃ, સ્નેહિજનરૂપમિત્રૈશ્ચ પરિવર્જિતાઃ=રહિતાસ્પૃક્તા વા ભવન્તિ, પુનઃ ‘અણિદ્ધા’ અનિદ્ધાઃ=સકલલોકસ્યાડમિયાઃ, તથા ‘અણાદેજ્જા’ અનાદેયાઃ=અનાદેયવચનનામગોત્રાદિમન્તઃ । તથા ‘દુવ્વિણીયા’ દુર્વિનીતાઃ = ઉદ્વૃતાઃ ‘કુદ્ધાણાસણકુસેજ્જા’ કુસ્થાનાસનકુશ્યાઃ=કુત્સિતં સ્થાનં=કુગ્રામવાસાદિરૂપ-

યે અદત્તગ્રાહી ઓર ખી કયા ફલ પ્રાપ્ત કરતે હૈ ? इसी विषय को सूत्रकार पुनः स्पष्ट करते हैं -- ‘जहिं जहिं’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(પાવકર્મ્મકારી) અદત્તાદાનરૂપ પાપ કર્મકારી મનુષ્ય (જહિં-આડયં નિવંધંતિ) જિસર પર્યાય કી આયુ વાંધતે હૈં વે ડસર પર્યાય મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં વહાં પર ડનકી સ્થિતિ કેસી હોતી હૈ ? સૂત્રકાર ઇસી વાતકો આમે કે પદોં દ્વારા પ્રકટ કરતે હૈં, વે કહતે હૈં કિ (વંધવજ્જન-સયણમિત્તપરિવજ્જિયા) વે વહાં ભ્રાતૃ આદી વાંધવજનોં સે, પુત્ર આદિ રૂપ સ્વજનોં સે ઇવં સ્નેહીજન રૂપ મિત્રોં સે સદા પરિવર્જિત હોતે હૈં । (અણિદ્ધા) કોઈ ખી લોગ ઇનસે પ્રીતિ નહીં કરતે હૈં, તથા (અણાદેજ્જા) યે ઇસે ગોત્રાદિ વાલે હોતે હૈં, કી જિનકા વચન કોઈ નહીં માનતે હૈં યહાં તક કિ જિનકા નામ લેના ખી ભલે મનુષ્ય અચ્છા નહીં સમજતે હૈં । (દુવ્વિણીયા) દુર્વિનીત-ઉદ્વૃત હોતે હૈં । (કુદ્ધાણાસણકુસેજ્જા)

તે અદત્તગ્રાહી બીજું કયું ફળ પ્રાપ્ત કરે છે, તે વિષયનું સૂત્રકાર હજી પણ વધારે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે--“જહિં જહિં” इत्यादि

ટીકાર્થ—“પાવકર્મ્મકારી” અદત્તાદાનરૂપ પાપકર્મ કરનાર મનુષ્ય “જહિં આડયં-નિવંધંતિ” જે જે પર્યાયની આયુ બાંધે છે તે તે પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થાય છે, ત્યાં તેમની કેવી હાલત થાય છે ? સૂત્રકાર એ જ વાતને હવેના પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે. તેઓ કહે છે કે— “વંધવજ્જનસયણમિત્તપરિવજ્જિયા” તે લોકો ત્યાં ભાઈ આદિ બન્ધુજનોથી, પુત્ર આદિ સ્વજનોથી, અને સ્નેહીજનરૂપ મિત્રોથી સદા ત્યજાયેલા રહે છે, “અણિદ્ધા” કોઈ પણ લોકો તેમના પ્રત્યે પ્રીતિ ધરાવતા નથી, તથા “અણાદેજ્જા” તેઓ એવાં ગોત્રાદિ વાળા હોય છે કે તેમની વાત કોઈ માનતું નથી, એટલું જ નહીં પણ તેમનું નામ લેવું તે પણ સારા માણસોને થોડા ક્ષાંતું નથી. “દુવ્વિણીયા” દુર્વિનીત-ઉદ્વૃત હોય છે, “કુદ્ધાણાસણકુસેજ્જા” કુગ્રામોમાં તેમનું રહેઠાણ હોય છે, અને તેમની રહેણી

માસનં=નીચાવસ્થાનાદિલક્ષણં તથા કુત્સિતા શય્યા વિષમભૂમ્યાદિરૂપા યેષાં તે તથા, ‘કુમોયણા’ કુમોજનાઃ ક્રોધવાદિકદશ્માશિનઃ ‘અસુહ્ણો’ અશુચયઃ=શુચિવર્જિતાઃ, ‘કુસંઘયણકુપ્પમાણા’ કુસંઘનન કુપ્રમાણાઃ=કુસંઘનનાઃ=સેવાર્તાતિ સંઘનનયુક્તાઃ કુપ્રમાણાઃ=કુત્સિત શરીરસ્ય પ્રમાણં યેષાં તે તથા અતિદીર્ઘા અતિ-હસ્વાવેત્યર્થઃ, તથા ‘કુસંઠિયા’ કુસંસ્થિતાઃ=કુત્સિતા હુણ્ઠાદિ સંસ્થાનયુક્તાઃ ‘કુરુવા’ ‘કુરુપાઃ’ बहुक्रोधमाणमायालोभा बहुक्रोधमानमायालोभा: अति-क्रोधादियुक्ताः बहुमोहाः=અતિકામાઃ ‘ધમ્મસણાસમ્મત્તપગ્ગમ્મદ્દા’ ધર્મસંજ્ઞાસમ્યક્ત્વપરિબ્રષ્ટાઃ=ધર્મસંજ્ઞાયાઃ=શ્રુતચરિત્રલક્ષણધર્મવુદ્ધેઃ સમ્યક્ત્વાચ્ચ=જિનવચનરુચેઃ પરિબ્રષ્ટાઃ=સ્વલિતાઃ ‘દારિદ્ધોવદ્વામિભૂયા’ દારિદ્ર્યોપદ્રવામિભૂતાઃ=અત્યન્તદરિદ્રાઃ, અતएव ‘णिच्चं’ નિત્યં=સદા ‘પરકમ્મકારિણઃ’ પરપૃદ્ધે

કુપ્રામોં મેં इनका वास होता है, अवस्थान=रहन सहन इनकी नीच होती है, विषमभूमि आदि रूप इनकी शय्या होती है। (कुमोयणा) को द्रव आदि कदन्न (कुत्सितअन्न) इनका भोजन होता है। (असुह्णो) शुचिता-शारिरिक एवं आत्मिक पवित्रता इनमें होती नहीं हैं ये लोग पवित्रतासे सदा रहित रहते हैं। (कुसंघयणकुपपमाणा) इनका संघनन पराश होता हैं और शरीर इनका अतिदीर्घ या अति ह्रस्व होता है। (कुसंठिया) संस्थान इनका हुण्ठादि होता है। (कुरुवा) रूप भी इनका असुहावना होता है। (बहुक्रोधमाणमायालोभा) बहुत ये क्रोधी होते है। मान, माया एवं लोभ की इनमें बहुत अधिकता रहती है। (बहुमोहा) ये बहुत कामी होते हैं। (धम्मसण्णासम्मत्तपग्गमद्दा) श्रुतचारित्र रूप धर्मवुद्धि से एवं जिन वचनों में श्रद्धारूप सम्यक्त्व रुचि से ये सदा रहित होते हैं। (दारिद्रो वदवाभिभूया) दादिद्रव इनके घरों में सदा

કરણી નીચ હોય છે, વિષમ ભૂમિ આદિ વ્યયા તેમની શય્યા બને છે.

“કુમોયણા” ક્રોધવાદિકદશ્ન (પરાશ અન્ન) તેમનું ભોજન બને છે.

“અસુહ્ણો” તેમનામાં શારીરિક અને માનસિક પવિત્રતા હોતી નથી, તે લોકો હંમેશાં તેનાથી રહિત હોય છે. “કુસંઘયણ કુપ્પમાણા” તેમનું સંઘનન પરાશ હોય છે, એટલે કે તેમનાં શરીર કાંતો અતિશય ઊંચા અને કાંતો અતિશય નીચાં હોય છે. “કુસંઠિયા” તેમનાં અંગે અપ્રમાણુસરનાં હોય છે, “કુરુવા” તેમનું રૂપ પણ સુંદર હોતું નથી. “બહુક્રોધમાણમાયા લોભા” તેઓ ઘણા ક્રોધી હોય છે, અને માન, માયા અને લોભનું પ્રમાણ તેમનામાં વધારે હોય છે. “બહુમોહા” તે ઘણા કામી હોય છે. “ધમ્મસણાસમ્મત્તપગ્ગમદ્દા” શ્રુત આરિત્રરૂપ ધર્મવુદ્ધિથી તથા જિન વચનોમાં શ્રદ્ધારૂપ સમ્યક્ત્વ રુચિથી તે લોકો સદા રહિત હોય છે. ‘દારિદ્ર્યોવદ્વામિભૂયા’ તેમનાં ઘરોમાં સદા દારિદ્ર્ય રહે છે અને તે દરિદ્ર્ય

સુવર્ણિની ટીકા અંક ૨૦ અવતારાદાયિનઃ કીદશ'કલ'લભન્તે !

૩૮૧

નીચકર્મકારકાઃ ' જીવણત્થરહિયા ' જીવનાર્થરહિતાઃ=જીવનસ્ય=મનુષ્યજન્મનઃ
અર્થઃ = પ્રયોજનં ધર્મધ્યાનાદિ સમાચરણં તદ્રહિતાઃ, જીવનયાપનદેતુદ્રવ્યહીના
વા, ' કીવિણા ' કૃપણાઃ=દીનાઃ ' પરપિંડતક્કગા ' પરપિંડતર્કકાઃ=પરદત્તભો-
જનગવેષકાઃ ' દુક્કલલદ્ધાહારા ' દુઃસ્વલલ્લાહારાઃ=દુઃસ્વાદુરપૂરકાઃ ' અરસવિરસતુ-
ચ્ચકયકુક્કિવપૂરા ' અરસવિરસતુચ્ચકૃતકુક્કિપૂરાઃ= તત્ર અરસં=નીરસં=હિઙ્ગવાદિ-
ભિરસંસ્કૃતં ચિરસં=પુરાણં તત્રાપિ પુચ્છં=કુલત્થાદ્યન્નં યેન કનાપિ પ્રકારેણ પ્રાપ્તં
તેન કૃતઃ કુક્કિપૂરાઃ=અરસપૂરણં યૈસ્તૈ તથા ' પરસ્સ ' પરસ્ય=અન્યસ્ય ' રિદ્ધિસક્કાર-
રભોયણવિસેસસમુદયવિહિં ' ઋદ્ધિસત્કારભોજનવિશેષસમુદયવિધિઃ=તત્ર ઋદ્ધિઃ=
સંપત્તિઃ સત્કારઃ=સમ્માનં તથા ભોજનં ચેત્યેતેષાં યે વિશેષાઃ પ્રકારાઃ તેષાં યઃ
સમુદયઃ ઉદયવર્તિત્વં તસ્ય યો વિધિઃ=વિધાનં સ તથા તં ' પેચ્છંતા ' પ્રેક્ષમાણાઃ=

રહતા હૈં ઔર યહ દારિદ્ર્ય હનકા સદા તિરસ્કાર કરવાયા કરતા હૈં,
હસી લિયે યે (ણિચ્ચં) સર્વદા (પરકમ્મકારિણો) પર કર્મકારો હોતે
હૈં-દૂસરોંકે ઘરોંમેં નીચ કામોં કો કરને વાલે હોતે હૈં, (જીવણત્થરહિયા)
મનુષ્ય જન્મ કે પ્રયોજનમ્ભૂત ધર્મધ્યાનાદિ સદાચારોં સે રહિત હોતે હૈં,
(કિવિણા) દીન હોતે હૈં, (પરપિંડતક્કગા) પરપિંડ કે ઝપર આશ્રિત
રહા કરતે હૈં પરદત્ત ભોજન કી હચ્છા મેં રહતે હૈં, (દુક્કલલદ્ધાહારા)
બડી મુશ્કિલ સે અપને ઉદર કી પૂર્તિ કર પાતે હૈં, (અરસવિરસતુચ્ચ-
કયકુક્કિવપૂરા) અરસ-હિંગ્વાદિ કે વધાર સે રહિત, ચિરસ-પુરાના-
અતિ પુરાના, ઉસમેં ખી તુચ્છ-કુલત્થાદિ અન્ન જો હન્હે બડી કઠિનાઈસે
પ્રાપ્ત હોતા હૈં ઉસસે હી યે અપને ઉદર કી પૂર્તિ કરતે હૈં ! (પરસ્સ-
રિદ્ધિસક્કારભોગણવિસેસસમુદયવિહિં પેચ્છંતા) દૂસરોંકી ઋદ્ધિ-

તેમનો સદા તિરસ્કાર કરાવે છે, તેથી તેઓ “જિચ્ચં” સદા “પરકમ્મકારિણો”
પારકાની નોકરી કરનાર હોય છે, બીજાનાં ઘરોમાં નીચ કામ કરનારા હોય
છે, “જીવણત્થરહિયા” મનુષ્ય જન્મના પ્રયોજન કે પ્રધર્મધ્યાન આદિ
સદાચારોથી રહિત હોય છે, “કિવિણા” દીન હોય છે, “પરપિંડતક્કગા”
પરપિંડ ઉપર સદા આધાર રાખનાર હોય છે-પરદત્ત ભોજનની કચ્છા રાખનાર
હોય છે, “દુક્કલલદ્ધાહારા” મહા મુશ્કેલીથી પોતાનું પેટ ભરી શકે છે.
“અરસવિરસતુચ્ચકયકુક્કિવપૂરા” અરસ-હિંગ આદિના વધાર રહિત, ચિરસ-
પુરાણ-અતિપુરાણ અને બધી તુચ્છ કળથી આદિ અન્ન, કે જે તેને ઘણી
મુશ્કેલીએ મળે છે, તેના પડે જ તેઓ પોતાનું પેટ ભરે છે. “પરસ્સ રિદ્ધિસક્કાર-
ભોગણવિસેસસમુદયવિહિં પેચ્છંતા” બીજાની ઋદ્ધિ — સંપત્તિ, સત્કાર

ઈર્ષ્યાબુદ્ધ્યાપશ્યન્તઃ, તતથ ‘અપ્સ્યં’ આત્માનં ‘કર્ત્યં’ કૃતાન્તં=કર્તવ્યં ચ
 ‘નિંદંતા’ નિન્દન્તઃ=નિન્દાં કુર્વન્તઃ, ‘ઇહ ય પુરે કઢાઈ કમ્માઈ પાવગાઈ’ ઇહ=
 લોકે પુરા=જન્માન્તરે ચ કૃતાનિ પાપકાનિ=પાપાનિ કર્માણિ ‘પરિવચંતા’ પરિવ-
 દન્તઃ=નિન્દન્તઃ ‘વિમણસો’ વિમનસઃ=દીનાઃ સન્તઃ ‘સોણ હજ્જમાણા’
 શોકેન દહમાનાઃ=અમીષ્ટવસ્તુનામપ્રાપ્તિદુઃખેન સન્તપ્તમાનાઃ સન્તઃ ‘પરિભૂયા-
 હંતિ’ પરિભૂતાઃ=જનૈરનાદતાદુઃખમાપ્તાશ્ચ ભવન્તિ । તથા ‘સત્તપરિવજ્જિયા ય’
 સત્તપરિવર્જિતાશ્ચ મનોબલહીનાઃ ‘છોવ્મા’ છોભ્યાઃ=નિસ્સહાયત્વાત્પરિભવનીયાઃ,
 ‘સિપ્પકલાસમયસત્થપરિવજ્જિયા’ શિલ્પકલાસમયશાસ્ત્રપરિવર્જિતાઃ=તત્ર શિલ્પં

સંપત્તિ, સત્કાર, સન્માન, તથા ભોજન, इनके विशेष प्रकारों की समुद्रय
 विधिको ईर्ष्याभाव से देखते हैं और अपने भाग्यकी आत्माकी तथा
 अपने पापकारी कर्तव्य की निंदा करते हैं । हमने (इह य) इस
 संसार में (पुरे) पूर्वभव में (पावगाई कडाई) पापकर्म किये हैं उनका
 ही यह फल हमें भोगने को मिला है इस प्रकार (परिवचंता) दूसरों से
 कहते हुए (विमणसो) स्वयं दीन होकर (सोएण हज्जमाणा) शोक
 से जलते हुए (परिभूया) दुःखी (हंति) होते हैं अर्थात् अभीष्ट वस्तु
 की अप्राप्ति के दुःख से निरन्तर सन्तप्यमान होते हुए भीतर ही भीतर
 खेद खीन्न बने हुए ये दूसरों के द्वारा अनादृत होते रहते हैं एवं
 दुःखों को भोगते रहते हैं । तथा (सत्तपरिवज्जिયા य) मनोबल
 से रहित बने हुए ये (छोव्मा) निस्सहाय होनेके कारण हरएक व्यक्ति
 के द्वारा अनारणीय होते रहते हैं । तथा (सिप्प) चित्रादिकों को

સન્માન, તથા ભોજન, તથા તેના સદ્ભાગ્ય પ્રત્યે તેઓ ઈર્ષ્યા ભાવથી બેઢે
 છે, તથા પોતાના ભાગ્યની, આત્માની તથા પોતાનાં પાપકૃત્યોની નિંદા કરે
 છે. ‘અમે “ઇહય” આ સંસારમાં “પુરે” પૂર્વભવમાં “પાવગાઈ” કઢાઈ”
 પાપકર્મો કર્યા’ છે. એનું જ આ ફળ અમારે ભોગવવું પડે છે,’ એ પ્રમાણે
 “પરિવચંતા” બીજાને કહેતા “વિમણસો” પોતે દીન થઈને “સોણ હજ્જમાણા”
 શોકથી જળતા “પરિભૂયા” દુઃખી “હંતિ” થાય છે. એટલે કે ઇચ્છિત
 વસ્તુની પ્રાપ્તિ ન થવાના દુઃખથી નિરંતર સંતાપયુક્ત થઈને મનમાં ને મનમાં
 ઉદ્વિગ્ન બનીને તેઓ બીજા લોકો દ્વારા તિરસ્કૃત થયા કરે છે; અને દુઃખો
 ભોગવ્યા કરે છે. તથા “સત્તપરિવજ્જિયા ય” મનોબળથી રહિત એવાં તે
 “છોવ્મા” અસહાય હોવાને કારણે દરેક વ્યક્તિ દ્વારા અનાદરણીય (તિરસ્કૃત)
 થયા કરે છે. તથા “સિપ્પ” ચિત્રાદિની રચના કરવાના વિજ્ઞાનથી, “કલા”

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૩ સૂ. ૨૭ અદત્તાદાયિન કોદશં ફલં લભન્તે ? ૩૮૩

ચિત્રાદિ વિજ્ઞાનં કલા=ધનુર્વેદાદિકા સમયશાસ્ત્રં=આર્હતાદિકં, તૈઃ પરિવર્જિતાઃ=રહિતાઃ ‘જહાજાયપસુભૂયા’ યથાજાતપશુભૂતાઃ=યથા જાતા=જન્મકાળે યાદશગુણવિશિષ્ટાસ્તયૈવ સ્થિતા નતુ શિક્ષાદિના વિશેષતાં પ્રાપ્તાઃ એવંભૂતા યે પશવઃ=બલોવર્દાદયસ્તદ્વદ્ભૂતાઃ=તત્સદૃશાઃ ‘અવિચ્છા’ અયં દેશોશ્વરઃ અપીતિકાઃ=અપીતિકારકાઃ ‘નિચ્ચં નીયકમ્મોવજીવિણો’ નિત્યં નીચકર્મોપજીવિનઃ = સદા હિંસાદિવ્યુપજીવિનઃ ‘લોયકુચ્છણિજ્જા’ લોકકુત્સનીયાઃ = સર્વજનૈર્નિન્દનીયાઃ ‘મોહમણોરહા’ મોઘમનોરથાઃ = નિષ્ફલમનોરથાઃ,

ઝરકીર્ણ કરાને રૂપ વિજ્ઞાન સે, (કલા) ધનુર્વેદ આદિ રૂપ કલાઓં સે એવં (સમય સત્થ) અર્હત પ્રણીત શાસ્ત્રોં કે અભ્યાસ સે, (પરિવર્જિતયા) રહિત હોકર (જહા જાયપસુભૂયા) યથાજાત પશુ જૈસે બને હુએ યે (અવિચ્છા) કિસી કે ખી સાથ પ્રીતિ નહીં કરતે હૈં ક્યોં કિ યે (નિચ્ચં નીયકમ્મોવજીવિણો) નિત્ય હી નીચ કર્મોપજીવી હોતે હૈં । યથા જાત પશુભૂતકા વાચ્યાર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ—ઉત્પન્ન હોતે સમય પશુ જિન ગુણોં સે યુક્ત રહતા હૈ આગે ખી વહ બડા હોને પર ખી શિક્ષાદિક કી પ્રાપ્તિ સે અપની તરફી નહીં કર સકને કે કારણ વૈસા હી બના રહતા હૈં, ઇસી તરહ યે અદત્તગ્રાહી વ્યક્તિ ખી હોતે હૈ હેય ઓર ઉપાદેય કે જ્ઞાન સે વિકલ જૈસે યે જન્મતે સમય મેં યે વૈસે હી યે વડે હોને પર ખી રહતે હૈં, અતઃહન્ને યથા જાત પશુભૂત કહા ગયા હૈ । (લોય કુચ્છણિજ્જા) સમસ્તજન ઇનકી નિંદા કિયા કરતે હૈં । (મોહમણોરહા) ઇનકે જિતને ખી મનોરથ હોતે હૈં વે સબ મોઘ-અસફલ હી રહતે હૈં ।

ધનુર્વેદ આદિ કલાઓથી, અને “સમયસત્થ” અર્હત પ્રણીત શાસ્ત્રોના અભ્યાસથી. “પરિવર્જિતયા” રહિત હોવાને કારણે “જહા જાય પસુભૂયા” યથાજાત પશુના જેવા લાગતા તેઓ “અવિચ્છા” કોઈની પણ સાથે પ્રીતિ રાખતા નથી, કારણ કે તેઓ “નિચ્ચં નીયકમ્મોવજીવિણો” હંમેશા નીચ કર્મોપજીવી હોય છે. ‘યથા જાત પશુભૂત’ નો વાચ્યાર્થ આ પ્રમાણે છે—ઉત્પન્ન થતી વખતે પશુ જે ગુણોથી યુક્ત હોય છે એ જ ગુણોથી યુક્ત મોટું થતાં પણ રહે છે—તે મોટું થાય તો પણ શિક્ષાદિક ની પ્રાપ્તિ વડે પોતાની ઉન્નતિ કરી શકતું નથી. એ જ રીતે અદત્તાદાન લેનાર વ્યક્તિ પણ જન્મ સમયે હેય અને ઉપાદેયના જ્ઞાનથી એટલી રહિત હોય છે એટલી જ મોટી ઉંમરે પણ તે જ્ઞાનથી રહિત રહે છે. તેથી તેને “યથા જાત પશુભૂત” કહેવ છે “લોયકુચ્છણિજ્જા” સઘળા લોકો તેમની નિંદા કરે છે, “મોહમણોરહા” તેમના સઘળા મનોરથો અપૂર્ણ રહે છે. “નિરાસબહુલ” ઇચ્છિત વસ્તુ ન

નિરાશબહુલાઃ = इष्टवस्तुमात्रमात्रादतिनिराशाः, 'आसपासपडिबद्ध-
पाणा' आशापाशप्रतिबद्धमाणाः=आशैव पाशाः=बन्धनं तेन प्रतिबद्धाः=निरुद्धाः
=पाणा येपांते तथा आशामात्रजीविनः, 'लोकसारे' लोकसारे=लोकसारभूते
'अत्थोप्पायणकामसोक्खे' अर्थोत्पादनकामसौख्ये=तत्र अर्थोत्पादन=उद्योगोपाज्जनं
कामसौख्यं=इन्द्रियजनित सौख्यं तत्र 'सुहुअवि उज्जमंता' सुहु अवि उद्यमन्तः
=उद्योगं कुर्वन्तः 'अफलवंतगा' अफलवन्तश्च=अभिलषितवस्तुप्राप्तिरहिताः 'हुंति'
भवन्ति । पुनः कीदृशा भवन्ति ? त्याह 'तद्वि सुज्जुत्तकम्मकयदुक्खसंठविगि-
सिथिपिंडसंचयपरा' तद्वि सुज्जुत्तकर्मकयदुक्खसंस्थापितसिक्थपिण्डसञ्चयपराः,
तत्र तद्विसेपु=तच्चदिनेषु उद्युक्तैः=उद्योगवद्भिः सद्भिः कर्मणा=व्यापारेण कृते-
नापि दुःखेन=अतिक्लेशेन संस्थापितः = प्राप्तो यः सिक्थानां=धान्यकणानां
पिण्डस्तस्य सञ्चये पराः=तत्परा ये ते तथा-सम्पूर्णदिनमुद्योगपराः सन्तोऽपि-

(निरास बहુલા) इष्टवस्तुकी प्राप्ति नहीं होने के कारण ये सदा निराश
ही बने रहते हैं । (आसपासपडिबद्धपाणा) फिर भी ये जो जीते हैं
उसका कारण इनकी आशा है । इसी आशाकी पाशमें ही इनके
प्राग ही बंधे हुए रहते हैं । (लोकसारे) यद्यपि ये लोक में
सारभूत माने गये (अत्थोप्पायणकामसोक्खे) अर्थार्जन एवं इन्द्रिय
जनित सुख में (सुहुअविउज्जमंता) अच्छी तरह से उद्यमशील
रहते हैं, परन्तु फिर भी (अफलवंतगा) इन्हें अभिलषित वस्तुकी
प्राप्ति नहीं होती है । उससे ये रहित (हुंति) बने रहते हैं । (तद्वि-
सुज्जुत्तकम्मकयदुक्खसंठविगिसिथिपिंडसंचयपरा) (तद्विसुज्जत्त)
प्रतिदिन उद्योग करते रहने पर भी (कम्मकय) किये गये काम से
(दुक्खसंठविगि) मुश्किल से प्राप्त हुए (सिक्थपिंड संचयपरा) धान्य-

મળવાને કારણે તેઓ સદા નિરાશ જ રહે છે. “ આસપાસપડિબદ્ધપાણો ”
છતાં પણ તેઓ જીવી શકે છે તેનું કારણ તેમની આશા છે. તે આશાના
પાશમાં જ તેમના પ્રાણ બંધાયેલા રહે છે “ લોકસારે ” જો કે તેઓ
લોકોમાં સારભૂત મનાતા “ અત્થોપ્પાયણકામસોક્ખે ” અર્થાર્જન (ધન કમાવામાં)
તથા ઇન્દ્રિય જનિત સુખમાં “ સુહુઅવિઉજ્જમંતા ” સારી રીતે પ્રયત્નશીલ રહે
છે, પણ “ અફલવંતગા ” તેમને ઇચ્છિત વસ્તુ મળતી નથી. તેનાથી તેઓ
રહિત “ હુંતિ ” રહે છે. “ તદ્વિ સુજ્જુત્તકમ્મકયદુક્ખસંઠવિગિ સિથિપિંડસંચયપરા ”
“ તદ્વિ સુજ્જુત્ત ” દરરોજ ઉદ્યોગ કરવા છતાં પણ “ કમ્મકય ” કરેલા કામથી
“ દુક્ખસંઠવિગિ ” મુશ્કેલીથી મળેલ “ સિથિપિંડસંચયપરા ” ધાન્યકણોનાં

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૩ સૂ. ૨૦ અવત્તાદાયિનઃ કોદશં ફલં લભન્તે ? ૩૯૫

કઠિનપરિશ્રમેણાપિ દિનમાત્રાદારયોગ્યમેવકથશ્ચિત્ અન્નાદિકં પાત્રુવન્તીત્યર્થઃ, ' સ્ત્રીણદ્વચસારા ' સ્ત્રીણદ્વચસારાઃ=દરિદ્રાઃ ણિચ્ચં ધણધણકોસપરિભોગવિવર્જિજ્ઞયા ' નિત્યં ધનધાન્યકોસપરિભોગવિવર્જિતાઃ=તત્ર નિત્યં=સદા ધન-ગણિમાદિકં ધાન્યં શાલ્યાદિકં કોદાઃ=ખાણડાગારાસ્તેષાં પરિભોગેન=ઉપભોગેન વિવર્જિતાઃ, રહિતાઃ, તથા 'રહિયકામભોગપરિભોગસચ્ચસોક્ત્વા' રહિતકામભોગપરિભોગસર્વસોક્ત્વાઃ=રહિતં કામયોઃ=શબ્દરૂપયોઃ ભોગાતાં=ગન્ધરૂપસ્પર્શનાં પરિભોગસૌખ્ય-ઉપભોગ જનિત આનન્દઃ=યેષાં તે તથા કામભોગસુખવર્જિતા इत्यર્થઃ, ' પરસિરિભોગોવ-ભોગનિસ્સાણમગ્ગણપરાયણા ' પરશ્રી ભોગોપભોગનિશ્વાણમાર્ગણપરાયણાઃ, તત્ર-પરેયામ્=અન્યેષાં શ્રિયાઃ=સમ્પત્તેઃ ચૌ ભોગોપભોગૌ=ભોગઃ=સકૃત્ સુજ્યતે યઃ સઃ=આહાર પુષ્પાદિરૂપઃ, ઉપભોગશ્ચ=ગૃહસ્થાદિલક્ષણઃ તયોર્ચિશ્રાણં તસ્ય માર્ગણં=

કળોં કે પિણ્ડ કે સંચય કરને મેં હી લગે રહતે હૈં' અર્થાત્ સમ્પૂર્ણ દિન ઉચ્ચોગ મેં તત્પર રહને પર ખી યે બહે કઠિન પરિશ્રમ સે કેવલ ઉસી દિન કે યોગ્ય અન્નાદિ સામગ્રી કો જિસ કિસી પ્રકાર સે અર્જિત કર પાતે હૈં' । (સ્ત્રીણદ્વચસારા) દ્વચ સ્વ સાર સે રહિત ન હોને કે કારણ યે દરિદ્ર હોતે હૈં' । (ણિચ્ચં ધણધણકોસપરિભોગવિવર્જિજ્ઞયા) સર્વદા યે ગણિમાદિ રૂપ ધન, શાલી આદિ ધાન્ય એવં ખાણડાગાર इनके परि-ભોગ-ઉપભોગસે રહિત હોતે હૈં' । (રહિયકામભોગપરિભોગસચ્ચસોક્ત્વા) શબ્દ એવં રૂપ સ્વરૂપ કામકે, ગન્ધ રસ ઓર સ્પર્શ સ્વરૂપ ભોગોં કે પરિભોગ કે સુખોં સે રહિત હોતે હૈં, (પરસિરિભોગોવભોગનિસ્સાણમગ્ગણપરાયણા) (પરસિરિ) દૂસરે વ્યક્તિયોંની લક્ષ્મી કે (ભોગોવભોગ) ભોગ ઓર ઉપભોગ કે (નિસ્સાણમગ્ગણપરાયણા) આશ્રય કી વાંછા મેં હી સદા લગે રહતે હૈં' । જોં એક વાર ભોગને મેં આતે હૈં' એસે આહાર,

સમૂહનો સંગ્રહ કરવામાં જ લાગ્યા રહે છે. એટલે કે આખો દિવસ મહેનત કરવા છતાં પણ તેઓ અતિ ભારે પરિશ્રમથી દ્રુતએ એક દિવસ ચાલે એટલી અત્ર સામગ્રી માંડ માંડ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. "સ્ત્રીણ દ્વચસારા" દ્વચરૂપ સારથી રહિત હોવાને કારણે તેઓ દરિદ્ર હોય છે. " ણિચ્ચં ધણધણકોસપરિભોગવિવર્જિજ્ઞયા સર્વદા તેઓ સોનામહેરો આદિ ધન, શાલી આદિ ધાન્ય અને વાસણોના ભંડારની તેમના ઉપલોગથી રહિત રહે છે, " રહિયકામભોગપરિભોગસચ્ચસોક્ત્વા " શબ્દ અને રૂપ સ્વરૂપ કામના, ગંધ, રસ, અને સ્પર્શસ્વરૂપ પરિભોગના સુખોથી તેઓ રહિત હોય છે " પરસિરિભોગોવભોગનિસ્સાણમગ્ગણપરાયણા " " પરસિરિ " તેઓ અન્ય વ્યક્તિઓની લક્ષ્મીના " ભોગવભોગ " ભોગ તથા ઉપલોગના " નિસ્સાણ-મગ્ગણપરાયણા " આશ્રયની વાસનામાં જ સદા લીન રહે છે, જે

गवेषणं तत्र परायणाः परसम्पत्तिभोगाभिलाषका इत्यर्थः, 'वरागा' वराकाः= दीनाः 'अकामियाए' अकामिकया=अनिच्छयाऽपि 'विणिहुंतिदुःखं' विनय-
न्ति दुःखं=दुःखं प्राप्नुवन्ति तथा 'णैव सुहं णेव णिव्वुइं उवलमंति' नैवसुखं
नैव निवृत्तिः=मनः शान्तिमुपलभन्ते=प्राप्नुवन्ति, ते के ? इत्याह—'अच्चंतविउ-
लदुक्खसयसंपलित्ता' अत्यन्तविपुलदुःखव्रतसम्पदीप्ताः = अत्यन्तविपुलम्=अति-
विस्तीर्णं यद् दुःखव्रतं तेन सम्पदीप्ताः=संतप्ताः 'परस्स दव्वेहिं-जे अविरया'
परस्य द्रव्येषु ये अविरताः=निवृत्तिमावहरहिताम्नेऽत्र परत्र च नैव सुखं नैव शान्ति
चोपलभन्ते इति सम्बन्धः सू० २० ॥

પુષ્પ આદિ પદાર્થ ભોગ ઔર જો વાર ૨ ભોગને મેં આતે હે' ऐसे गृह
वस्त्र आदि पदार्थ उपभोग हैं । (वरागा) ये सदा दीनावस्था संपन्न
होते हैं । (अकामियाए) इनकी यह अभिलाषा नहीं होती है की
हम दुःख भोगे परन्तु इन्हें बिना इच्छा के भी (विणिहुति दुःखं)
दुःख सहना पड़ता है । इन्हे (णैव सुहं णैवणिव्वुइं उवलमंति)
जीवनभर कभी भी सुख नहीं मिलता और न कभी निवृत्ति मनको
शान्ति ही इन्हे प्राप्त होती है । कारण की ये (अच्चंत विउलदुक्ख-
सयसंपलित्ता) अत्यंत विपुल सैकड़ों दुःखों से संतप्त होते रहते हैं ।
इन दुःखों से भी संतप्त होने का कारण यह है कि ये (परस्स दव्वेहिं-
जे अविरया) परके द्रव्य को अपहरण करने रूप कुकृत्य से विरति-
भाव धारण करने से रहित होते हैं । इसी कारण इन विचारों को न
सुख मिलता है और न शान्ति ही मिलती है ॥ सू० ૨૦ ॥

એક વાર ભોગવવામાં આવે છે એવા આહાર પુષ્પ આદિ પદાર્થ ભોગ
ગણાય છે, અને જે વરંવાર ભોગવાય છે એવાં ઘર, વસ્ત્ર આદિ પદાર્થોને
ઉપભોગ કહે છે “વરાગા” તેઓ હંમેશ દીન દશામાં રહે છે, “અકામિયાએ”
તેમને દુઃખ ભોગવવાની ઇચ્છા હોતી નથી, પણ તેમને ઇચ્છ્યા વિના પણ
“વિણિહુતિ દુઃખં” દુઃખો સહન કરવા પડે છે તેમને “જેવ સુહં જેવ ણિવ્વુઈં ઉવલ-
મંતિ” આખું જીવન કદી પણ સુખ મળતું નથી, અને તેમને કદી નિવૃત્તિ-(મનની
શાંતિ) પણ પ્રાપ્ત થતી નથી, કારણ કે તે લોકો “અચ્ચંતવિઉલદુક્ખસય-
સંપલિત્તા” અત્યંત વિપુલ, સેકંડો દુઃખોથી દુઃખી થયા કરે છે, એ દુઃખોથી
પણ દુઃખી થવાનું કારણ એ છે કે તેઓ “પરસસ દવ્વેહિં જે અવિરયા”
પરધનનું અપહરણ કરવા રૂપ કુકૃત્યથી વિકૃત થઈ શકતાં નથી, તે કારણે
તે બિચારાઓને સુખ મળતું નથી અને શાંતિ પણ મળતી નથી ॥ સૂ૦ ૨૦ ॥

सुदर्शनी टीका अ० ३ सू० २१ अध्ययनोपसंहारः

३८७

एवमदत्तादानस्य चतुर्थे फलद्वारं निरूपितम् । साम्प्रतमध्ययनार्थमुपसंहारमाह
—‘ एसो सो ’ इत्यादि ।

मूलम्—एसो सो अदिण्णादानस्स फलविवागो इहलो-
इयो परलोइओ अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भओ बहुरयप्प-
गाढो दाहणो ककसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइ, न
य अवेयइत्ता अत्थिहुं भोक्खोत्ति, एवमाहंसु णायकुलनंदणो
महप्पा जिणो उ वीरवरनामधेज्जो कहेसी अदिण्णादानस्स
फलविवागं एवं तं तइयंपि अदिण्णादानं हर-दर-मरण-कलुस
—तासण-परसंति भेज्जलोभमूलं एवं जाव चिरपरिचिय-
मणुगतं दुरंतं तिवेमि ॥ सू० २१ ॥

॥ तइयं अहम्मद्वारं सम्मत्तं ॥

टीका—‘ एसो सो ’ एषः स=इक्षितस्वरूपः ‘ अदिण्णादानस्य ’ अदत्ता-
दानस्य ‘ फलविवागो, फलविपाकः ‘ इहलोइओ ’ ऐहलौकिकः=मनुष्यभवापेक्षया
‘ परलोइओ ’ पारलौकिकः=नरकाद्यपेक्षया ‘ अप्पसुहो ’ अल्पसुख=आपातमात्र-

इस प्रकार यह अदत्तादान के चौथे फल द्वार का निरूपण किया
गया है, अब सूत्रकार इस अध्ययन के अर्थका उपसंहार करते हुए
कहते हैं — ‘ एसो सो ’ इत्यादि० ।

टीकार्थ—(एसोसो) जिसका इस प्रकारसे स्वरूप प्रदर्शित किया जा
चुका है ऐसा (अदिण्णादानस्स फलविवागो) अदत्तादानका यह फलरूप
विपाक (इहलोइओ) मनुष्य भवकी अपेक्षा तथा (परलोइओ) नर-
कादि गतिर्योकी अपेक्षासे प्रदर्शित किया गया है । इससे हम यह बात
भली भाँती जान सकते हैं कि यह फलरूप विपाक (अप्पसुहो)

आ प्रमाणे अदत्तादानता यथा इत्यद्वारं निरूपणं करवामां आलुं; इवे
सूत्रकार आ अध्ययनना अर्थना उपसंहार करतां छे छे—“ एसो सो ” इत्यादि
टीकार्थ—“ एसो सो ” नेनुं उपरोक्त प्रकारे स्वल्प प्रगट करवामां आलुं ते
“ अदिण्णादानस्स फलविवागो ” अदत्तादानना ते इत्यल्प विपाक “ इह-
लोइओ ” मनुष्यसवनी अपेक्षाये तथा “ परलोइओ ” नरकादि गतिथोनी
अपेक्षाये अताववामां आलुं छे. तेनी भट्ठथी आपणु ते वात सारी रीते
समञ्ज शक्तीये छीये

સુખजनकः, 'बहुदुःखो' बहुदुःखः=दुःखबहुलः 'महभयो' महाभयः=महा-
भयजनकः 'बहुरयप्पाढो' बहुरजः प्रगाढः=प्रचुरकर्मरजोभिः सम्भूतः 'दारुणो'
दारुणः=भीषणः 'कक्को' कक्कोशः=कठोरः 'असाओ' अशातः=असुखोऽशात-
कर्मवेदनीयस्वरूपः इत्येवंविधफलविपाकः 'वाससहस्सेहि' वर्षसहस्रैः=पल्लो-
पमसागरप्रमाणकालैः 'मुच्चह' मुच्यते=क्षीयते । तदेव व्यतिरेकमुखेनाह—'नय'
न च तं फल-विपाकम्, 'अवेयइत्ता' अवेदयित्वा = अनुपसृज्य उपभोगं
विनेत्यर्थः 'हु' निश्चयेन 'मोक्खो' मोक्षः 'अत्थि' अस्ति 'त्ति' इति शब्दः
समाप्ति सूचकः ।

एतस्यार्थस्य साक्षात्प्रमाणभूतपरमात्मप्रतिपादितत्वेन प्रमाणयच्चाह—
'एवमाहंसु' इत्यादि ।

एवम्=उक्तरीत्या 'आहंसु' ऊचुः कृपभादि तीर्थङ्करगणधरादय । तथा
केवल आपातमात्र सुख जनक है । (बहु दुःखो) जीवों के इससे
वास्तविक सुख नहीं मिलता है किन्तु भयंकर से भयंकर दुःखों का
ही यह प्रदाता है । (बहुभयो) यह महा भयजनक है (बहुरयप्प-
गाढो) प्रचुर कर्म रूपी रज से यह भरा हुआ है । (दारुणो) बड़ा
भीषण है । (कक्को) कठोर है । (असाओ) अशात कर्म वेदनीय
स्वरूप है । इस तरह का यह फलविपाक (वाससहस्सेहि) हजारों
वर्षों में अर्थात् पल्लोपम तथा सागरोपर प्रमाणकाल में (मुच्चह)
छूटता है ॥ (न य अवेयइत्ता हु मोक्खो अत्थि त्ति) बिना इसका
फल भोगे जीव इससे मुक्त नहीं होता है । इस अर्थ में प्रमाणात् प्रति-
पादन करने के लिये सूत्रकारइसमें साक्षात्प्रमाणभूतपरमात्म के द्वारा
प्रतिपादितता प्रकट करते हैं, वे कहते हैं— (एवमाहंसु) कृपभ आदि

તે ફલરૂપ વિપાક “અપ્પમુહો” કેવળ ક્ષણિક સુખજનક છે. “બહુદુઃખો”
જીવોને તેનાથી વાસ્તવિક સુખ મળતું નથી, પણ તે ભયંકરમાં ભયંકર
દુઃખો દેનાર છે. “બહુભયો” તે મહા ભયજનક છે. “બહુરયપ્પગાઢો” વિપુલ
કર્મરૂપી રજાથી તે પૂર્ણ છે, “દારુણો” ઘણો ભીષણ છે, “કક્કો” કઠોર
છે, “અસાઓ”, અશાતકર્મવેદનીય સ્વરૂપ છે. આ પ્રકારનો આ ફળવિપાક
“વાસસહસ્સેહિ” હજારો વર્ષો એટલે કે પલ્લોપમ તથા સાગરોપમ પ્રમાણ
કાળો છૂટે છે. “નય અવેયઇત્તાં હુ મોક્કો અત્થિ ત્તિ” તેનું ફળ ભોગવ્યા
બિના જીવ તેનાથી મુક્ત થતાં નથી. તે અર્થમાં પ્રમાણ ભૂતના પ્રતિપાદિત
કરવાને માટે સૂત્રકાર તેમાં સાક્ષાત્ પ્રમાણયૂત પરમાત્મા દ્વારા પ્રતિપાદિતતા
પ્રગટ કરે છે. તેજો કહે છે—

सुवर्चिनीटीका अ०३ सू० २१ अध्वयनोपसंहारः

३८९

तदनुसारेणैव 'णायकुलनन्दणो' ज्ञातकुलनन्दनः=सिद्धार्थकुलानन्दकरः 'महप्पा' महात्मा=परमात्मरूपः 'जिणो' जिणो-रामद्वेषविजेता 'वीरवरनामधेज्जो' वीरवरनामधेज्जो=प्रख्यातनामा भगवान् महावीरः 'अदिण्णादाणस्स' अदत्तादानस्य फलविवागं 'फलविपाकं' कहेसी 'कथितवान्। एवं 'तं' तत् पूर्वोपदर्शित स्वरूपम्, 'तइयं पि अदिण्णादाणं' तृतीयमध्यदत्तादानं- 'हर-दह-मरण-कलुस-तासण-परसंतिगिज्जलोभमूलं' हर-दह-मरण-कलुष-त्रासनपरसत्कग्राह्यलोभ-मूलम्, तत्र 'हर' इति हरणं=परद्रव्यापहरणं, 'दह' दहनं=दाहः-हृदयसन्तापः, 'मरणं' मृत्युः, 'कलुस' कलुषं=मनोमालिन्यं, 'तासण' त्रासनं=त्रासः-अकस्मात्पण्यम् 'परसंतिगिज्जलोभ' परसत्कग्राह्यलोभः=परवस्तुग्राहको लोभः, एतेषां मूलं=मूलकारणमिदमदत्तादानम्। एवं 'जाव' यावत्-यावच्छब्देन द्वितीयालीक-

तीर्थं करो ने इस अदत्तादान का ऐसा ही फल कहा है तथा उन्हीं तीर्थ-करो के अनुसार (णायकुलनन्दणो) ज्ञातकुलनन्दन-सिद्धार्थ के कुलको आनन्द कारक (महप्पा) परमात्मरूप (जिणो) रामद्वेष विजेता (वीरवरनामधेज्जो) श्री भगवान् महावीर ने भी (अदिण्णादाणस्स) इस अदत्तादान का (फलविवागं) ऐसा ही फल (कहेसी) कहा है। (एवं) इस प्रकार (तं) पूर्वोपदर्शित स्वरूपवाला यह (तइ-यं पि) तीसरा अदत्तादान भी (हर-दह-मरण-कलुस-परसंतिगिज्ज-लोभमूलं) (हर) परद्रव्य का हरण करना, (दह) हृदय में संताप पहुँचाना, (मरण) मृत्यु (कलुस) मनोमालिन्य (तासण) अकस्मात् भय होना, (परसंतिगिज्ज लोभमूलं) दूसरे की वस्तु का हरण कराने वाला लोभ इन सबका मूल-कारण यह अदत्तादान है। यहां पर

“एवमाहुं” ऋषभदेव आदि तीर्थं करोणे आ अदत्तादानं आहुं अ इण्डेउ छे तथा ते तीर्थं करोणा प्रभावे “णायकुलनन्दणो” ज्ञातकुल नन्दन-सिद्धार्थना पुणने आनन्द दायक “महप्पा” परमात्म रूप, “जिणो” रामद्वेष विजेता, “वीरवरनामधेज्जो” श्री भगवान् महावीरे पणु “अदिण्णादाणस्स” आ अदत्तादानं “फलविवागं” अणुं अ इण्डेउ छे. “एवं” आ प्रभावे “तं” पूर्वोपदर्शित स्वरूपवाहुं ते “तइयं पि” त्रीणुं अदत्तादान पणु “हर-दह-मरण-कलुस-तासण-परसंति गिज्ज लोभमूलं” “हर” परद्रव्यं उरुणु करुणु. “दह” हृदयमां संताप पणुं आउवे, “मरण” मृत्यु, “कलुस” मननी भसिन्ता, “तासण” अकस्मात् लय थवे, “परसंतिगिज्ज लोभमूलं”

૩૧૦

પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રે

વચનાધ્યયનોક્તવિશેષણાણિ યથાયોગ્યાનિ સંગ્રાહ્યાણિ । ચિરપરિચિયં ' ચિરપરિ-
ચિત્તમ્=અનાદિકાલાદનુભૂયમાનમ્, ' અણુગયં ' અનુગતં=પ્રાણિનાં પૃથ્વતો લમ્નમ્,
' દુરંતં ' દુરન્તમ્=દુઃસ્વાસાનમ્, ' ત્તિબેમિ ' इति ब्रवीमि = एतद् जम्बूस्वामिनि
प्रति सुधर्मस्वामिवाक्यम् ॥ सू० २१ ॥

इति श्रीश्रम्व्याकरणस्य सुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां द्विसादि पञ्चासवद्वारेषु
अदत्तादानाख्यं तृतीयधर्मद्वारं समाप्तम् ॥ ३ ॥

‘ યાવત્ ’ શબ્દ સે દ્વિતીય અલીક વચન સંબંધી અધ્યયન મેં જો વિશે-
ષણ કહ ગયે હેં उनका यहाँ यथायोग्यरूप में संग्रह कर लेना चाहिये ।
यह अदत्तादान (चिरपरिचियं) अनादिकाल से जीवों के अनुभव में
आ रहा है (अणुगयं (मिथ्यात्व) के कारण यह आत्मा के पीछे लगा
हुआ है । (दुरंतं) दुःखप्रद हो इसका परिणाम-फल है । (त्तिबेमि)
ऐसा मैं कहता हूं । इस प्रकार से यह जंबू स्वामी के प्रति सुधर्मा
स्वामी ने कहा है ॥ सू० २१ ॥

॥ तीસરા આસવ— ‘ અધર્મ ’ દ્વાર સમાપ્ત ॥

ખીબની વસ્તુનું હરણ કરાવનાર દોલ, વગેરે સધળી બાબતોનું મૂળ કારણ
આ અદત્તાદાન છે, અહીં “ યાવત્ ” શબ્દથી અલીક વચન વિધેના ખીબ
અધ્યયનમાં જે વિશેષણોના ઉપયોગ કરાયો છે, તેમનો સંગ્રહ અહીં યોગ્ય
રીતે કરી લેવાનો છે, આ અદત્તાદાન “ ચિરપરિચિયં ” અનાદિકાળથી જીવોના
અનુભવમાં આવી રહ્યું છે, (અણુગયં) મિથ્યાત્વને કારણે તે આત્માની પાછળ
લાગેલું છે, (દુરંતં) તેનું રૂઝ-પરિણામ દુઃખદાયી છે, (ત્તિબેમિ) એવું હું કહું
છું, આ પ્રમાણે સુધર્મસ્વામીએ જંબૂસ્વામીને કહ્યું, ॥ સૂ, ૨૧ ॥

॥ ત્રીજો આસવ — ‘ અધર્મ ’ દ્વાર સમાપ્ત ॥

અથ ચતુર્થમધ્યયનમ્ ।

વ્યાખ્યાતં તૃતીયમધ્યયનં સામ્પતં ચતુર્થમારભ્યતે અસ્ય ચ પૂર્વેણ સહાયમભિ-
સમ્બન્ધઃ । તૃતીયાધ્યયને યાદશ નામાદિનિર્દેશપુરસ્સરમદત્તાદાનસ્વરૂપમુક્તમ્ ।
અદત્તાદાનં ચ પ્રાયોઽબ્રહ્માસક્તચિત્તાઃ કુર્વન્ત્યેવેતિ હેતોઃ સૂત્રક્રમનિર્દેશાનુસારા-
ચ્ચાઽદત્તાદાનનિરૂપણાનન્તરમુચિતપ્રાપ્તમબ્રહ્મસ્વરૂપં નામાદિનિર્દેશપૂર્વકં પ્રદર્શ્યતે
તસ્યેદમાર્થં સૂત્રમ્—‘જંબૂ અવંભં ચ ચક્રતં’ ઇત્યાદિ—તત્ર પૂર્વેવામિવાસ્થાપિ
‘યાદશં ૧ યજ્ઞામ ૨ યથા ચક્રતં ૩ યત્ ફલં દદાતિ ૪ યે ચ કુર્વન્તિ ૫’ ઇતિ-
પદ્યમિરન્તર્દ્વારૈર્નિરૂપણં ચિકીર્ષુ રાદૌ ક્રમપાત્તં યાદશદ્વારમાશ્રિત્ય અબ્રહ્મ-
સ્વરૂપં નિરૂપ્યતે—‘જંબૂ અવંભં’ ઇત્યાદિ ।

ચતુર્થ અધર્મદ્વાર પ્રારંભ—

તૃતીય અધર્મદ્વાર સમાપ્ત હો જુકા । અવ ચતુર્થ અધર્મદ્વાર પ્રારંભ
હોતા હૈ । હસ અર્ધમદ્વાર કે સાથ હસ પ્રકાર કા સંબંધ હૈ —તૃતીય-
અધર્મદ્વારમે યાદશનામાદિ નિર્દેશપૂર્વક જો અદત્તાદાનકા સ્વરૂપ કહા હૈ
સો હસ અદત્તાદાન કો જો અબ્રહ્મમે આસક્ત ચિત્તવાલે પ્રાણી હોતે હૈ
પ્રાયઃ વે કરતે હી હૈ હસ કારણ સે, તથા સૂત્રક્રમ કે નિર્દેશ કે
અનુસાર સે અદત્તાદાન કે નિરૂપણ કે બાદ અબ્રહ્મકા સ્વરૂપ નામાદિનિ-
ર્દેશક કહના યહ અવસર પ્રાપ્ત હૈ । અતઃ સૂત્રકાર હસે અધર્મદ્વાર મે
પ્રદર્શિત કરતે હૈ । જિસ તરહ પૂર્વ અધ્યયનો કા નિરૂપણ સૂત્રકાર ને
“ યાદશં, ૧ યજ્ઞામ, ૨ યથા ચક્રતં, ૩ યત્ ફલં દદાતિ, ૪ યે ચ
કુર્વન્તિ ૫ ” હન પાંચ અન્તર્દ્વારો સે કિયા હૈ હસી તરહ વે હસકા બી

ચોથા અધર્મદ્વારની શરૂઆત

ત્રીજા અધર્મદ્વાર પૂરું થયું, સવે ચોથા અધર્મદ્વારનું વર્ણન શરૂ થાય
છે, આ અધર્મદ્વારનો આગળના અધર્મદ્વાર સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે

ત્રીજા અધર્મદ્વારમાં પ્રકાર નામો આદિના નિર્દેશ પૂર્વક અદત્તાદાનનું
સ્વરૂપ બતાવવામાં આવ્યું છે. તે અદત્તાદાન જે અબ્રહ્મમાં આવડત પ્રાણીઓ
હોય તે સામાન્ય રીતે આચરે છે, એ કારણે તથા સૂત્રક્રમના નિર્દેશ પ્રમાણે
અદત્તાદાનના નિરૂપણ પછી અબ્રહ્મનું સ્વરૂપ નામાદિના નિર્દેશ પૂર્વક કહેવું
તે યોગ્ય જ છે. તેથી સૂત્રકાર તેને આ અધર્મદ્વારમાં પ્રગટ કરે છે. જે રીતે
આગળનાં અધ્યયનોનું નિરૂપણ સૂત્રકારે “ યાદશં ” ૧ (કેવા પ્રકારનું) “ યજ્ઞામ ” ૨
(ક્યાં ક્યાં નામો) “ યથા ચ ક્રતં ” ૩ (ક્યારે કરાય છે.) “ યત્ ફલં દદાતિ ” ૪
(કયું ફળ આપે છે) “ યે ચ કુર્વન્તિ ” ૫ (કોણ તે આચરે છે) આ પાંચ
અંતર્દ્વારો દ્વારા કહ્યું છે, એ જ પ્રમાણે આ અધર્મદ્વારનું પણ નિરૂપણ કરવા

મૂલમ્—જંબૂ ! અવંમં ચ ચઉત્યં સદેવમણ્યાસુરસ્સ
 લોયસ્સ પત્થણિઙ્ગં પંકવણગપાસજાલમ્મૂયં હત્થીપુરિસન-
 પુંસગવેદચિહ્નં તવસંજમવંમચેરવિગ્ધં મેદાયયણવહુપમાદ-
 મૂલં કાયરકાપુરિસસેવિયં સુવણજણવજ્જણિઙ્ગં ઉઢ્ઢ-નરય-
 તિરિય-તિલોક્કપટ્ટાણં જરાનરણરોગસોગવહુલં વધવંધ-
 વિધાયદુગ્ધિધાયં દંસણચરિત્તમોહસ્સ હેઊમ્મૂયં ચિરપરિ-
 ચિયં મણુગયં દુરંતં ચઉત્યં અહમ્મદારં ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા:—હે જંબૂ ! ‘ચઉત્યં’ ચતુર્થ=હિંસામૃષાઅદત્તાદાનાપેક્ષયા ચતુર્થ-
 માસવદ્વારમ્ ‘અવંમં ચ’ અબ્રહ્મ=અકુશલં કર્મ તત્ત્વેહ મૈથુનમ્-અધર્મહેતુત્વેન
 સકલનર્થજનકત્વાત્ । ચકાર: પુનર્થ: કીદૃશં તદિત્યાહ-‘સદેવમણ્યાસુરસ્સ
 લોયસ્સપત્થણિઙ્ગં’ સદેવમનુજાસુરસ્ય લોકસ્ય પાર્થનીયં=દેવમનુજાસુરલોકસ્ય પાર્થ-
 નિરૂપણ કરનાં चाहते हैं । अतः सर्वं प्रथमं वे क्रमं प्राप्तं “यादृशं”
 इस द्वार को लेकर अब्रह्म के स्वरूप का निरूपण करते हैं—‘जंबू-
 अवंमं’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ-શ્રીસુધર્મા સ્વામી જંબૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ હે જંબૂ ! (ચઉત્યં)
 હિંસા, મૃષા અને અદત્તાદાન ઇન ત્રીન કી અપેક્ષા યહ ચતુર્થ આંશવ
 દ્વાર (અવંમં ચ) અબ્રહ્મ હૈં । યહ અબ્રહ્મ અકુશલ કર્મ હૈં ઓર વહ
 યહાં સ્વરૂપ સે ગૃહિત હુઆ હૈં । ક્યોંકિ યહ અધર્મ કા હેતુ હોને સે
 સકલ અનર્થોં કા જનક હોતા હૈં ।

અચ સૂત્રકાર હસી અબ્રહ્મકા આગેકે વિશેષણોં દ્વારા વિશેષ સ્પષ્ટી-
 કરણ કારતે હૈં, વે કહતે હૈં કિ-યહ અબ્રહ્મ-મૈથુનસેવનરૂપ અકુશલ કર્મ

મળે છે. તેથી સૌથી પહેલાં તેઓ અનુક્રમે આવતા “યાદૃશ” એ નામના
 દ્વારને લઇને અબ્રહ્મના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે, “જંબૂ અવંમં” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-શ્રી. સુધર્મા સ્વામી જંબૂ સ્વામીને કહે છે કે હે જંબૂ ! “ચઉત્યં”
 હિંસા, મૃષા અને અદત્તાદાન એ ત્રણની અપેક્ષાએ ચોથું અધર્મદ્વાર
 “અવંમં ચ” અબ્રહ્મ છે. તે અબ્રહ્મ અયોગ્ય કૃત્ય છે અને તે અહીં મૈથુનરૂપે
 જે ગૃહિત થયેલ છે, કારણ કે તે અધર્મનું કારણ હોવાથી સઘળા અનર્થનું
 ઉત્પાદક છે. હવે સૂત્રકાર એ જ અબ્રહ્મનું આગળ આવતાં વિશેષણો દ્વારા
 વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે, તેઓ કહે છે કે-તે અબ્રહ્મ-મૈથુન સેવનરૂપ પાપકર્મ

સુદર્શિની ટીકા અં ૪ સૂં ૧ અબ્રહ્મસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૧૩

નીયમ્=અભિલષણીયમ્ । ‘પંકપણમપાસજાલમૂયં’ પદ્મપનકપાસજાલમૂતં=તત્ર પદ્મઃ
=કર્દમઃ-નિમજ્જનહેતુવાત્, પનકઃ=શૈવાલં-ચરણન્યાસમાત્રેણ સ્વલનહેતુવાત્,
પાશઃ=ચન્દનવિશેષઃ, જાલં ચ=પ્રતીતં તદ્ભૂતં=તત્સદશમ્ । તથા ‘હૃત્થીપુરિસનપુંસગ
-વેદર્ચિહ્નં’ સ્ત્રી પુરુષનપુંસકવેદર્ચિહ્નં=સ્ત્રીપુરુષનપુંસકવેદલક્ષણં, તત્ર સ્ત્રી-વેદઃ=
પુરુષામિલાપલક્ષણઃ પુરુષવેદઃ સ્ત્રિયોઽમિલાપલક્ષણઃ, નપુંસકવેદઃ= ઉભયામિલાપ-
લક્ષણઃ । ‘તવસંજમવંમચેરવિર્ગ્યં’ તપઃસંયમબ્રહ્મચર્યવિધિઃ=તપઃ સંયમ બ્રહ્મચર્ય-
વિધાતરૂપમ્, ‘ભેદાયયળવહુપમાદમૂલં’ ભેદાયતનવહુપમાદમૂલં=ભેદઃ=ચારિત્ર-
વિનાશઃ તસ્ય આયાતનાતિ=સ્થાનાતિ યે વહનઃ=અનેકવિધાઃ પ્રમાદાઃ=મધ્યવિકથા
દયઃ, તેષાં મૂલં=કારણં યત્તત્તથા । ‘કાયરકાપુરિસસેવિયં’ કાતરકાપુરુષસેવિતં=
કાતરાઃ=પરીપદ્મીરચઃ, અતણ્વ કાપુરુષાઃ = ધૈર્યવર્જિતાસૈઃ સેવિતં યત્તત્તથા ।
‘સુયળજળયજ્જણિજ્જં’ સુજનનનવર્જનીયં=સુજનનનાઃ=સાધુજનાસૈઃ વર્જનિયં

(સદેવ મણુયાસુરસ્સ લોચસ્સ પત્થણિજ્જં) દેવ, મનુષ્ય, અંધ અસુર લોક
દ્વારા અભિલષણીય છે-ચાહે દેવ હો ચાહે મનુષ્ય હો યા અસુર હો કોઈ
भी क्यों न हो सब ही इसे चाहते हैं । यह कर्म (पंकपणमपासजालमूयं)
पंककर्दम, पनकशैवाल-काई, पाश और जाल के जैसा है । तथा (हृत्थी-
पुरिसनपुंसगवेदर्चिं) पुरुष अभिलाष रूप स्त्रीवेद स्त्रीचाहनारूप-
पुरुषवेदउभयकी वाञ्छारूप नपुंसकवेद, ये जिसके चिह्न हैं । यह (तवसं-
जमवमचेरविर्ग्यं) तप, संयम, और ब्रह्मचर्य का विधातक है । (भेदा-
ययणवहुपमादमूलं) चारित्र को विनाश करने वाले जो मध्य विकथादिक
अनेक प्रमाद हैं उनका यह मूल कारण है । (कायरकापुरिससेवियं)
जो व्यक्ति कातर परीपद सहने में भीरु होते हैं, और इसीसे जिनका
धैर्य नष्ट हो जाता है ऐसे व्यक्ति ही इसका सेवन करते हैं । तथा (सुय-

“સદેવમણુયા સુરસ્સ પત્થણિજ્જં” દેવ, મનુષ્ય અને અસુર લોકો દ્વારા અભિલાષણીય
છે. ભક્તે દેવ હોય, મનુષ્ય હોય કે અસુર હોય-દરેક તેને ચાહેછે. તે કર્મ
“પંકપણમપાસજાલમૂયં” પંક-કર્દમ, પનક-શૈવાળ, પાશ અનેજાળ જેવું છે.
તથા “હૃત્થીપુરિસનપુંસગવેદર્ચિં” પુરુષ અભિલાષણ સ્ત્રી વેદ સ્ત્રીચાહનારૂપ પુરુષ
વેદ, અને બન્નેની ચાહનારૂપ નપુંસક વેદ બેનાં ચિહ્નો છે, તે “તવસંજમવંમચેર
વિર્ગ્યં” તપ, સંયમ અને બ્રહ્મચર્યનું વિધાતક છે “ભેદાયયળ વહુપમાદમૂલં” ચારિત્રનો
નાશ કરનાર જે મધ્ય, વિકથા આદિ અનેક પ્રમાદ છે, “કાયરકાપુરિસસેવિયં”
જે વ્યક્તિ કાયર-પરીપદો સહન કરવામાં ભીરુ હોય છે, અને તેથી જ
જેમનું ધૈર્ય નષ્ટ થયું હોય છે એવી વ્યક્તિઓ જ તેનું સેવન કરે છે. તથા

=ત્યાજ્યમ્, 'ઉદ્ધુનરયતિરિયતિલોકપદ્ધાણ' ઝર્વ નરકતિર્યક્ત્રિલોકપ્રતિ-
 ણ્ઠાનમ્=ઝર્વલોકો નરકલોકસ્તિર્યગ્લોક એત્યેતદૂપં યન્ ત્રૈલોક્યં તથ પ્રતિઘ્ઠાનમ્
 =અવસ્થિતિ યેન મૈથુનેન યત્તત્તથા લોકત્રયે ચતુર્ગતિશ્રામકમિત્યર્થઃ, તથા 'જરા
 મરણરોગસોગમૂલં' જન્મજરામરણરોગશોકાધનન્તદુઃસ્વસમ્બુતમ્, 'વધ-
 નંધવિધાયદુઃસ્વિધાયં' વધવન્ધવિધાતદુર્વિધાતમ્=તત્ર વધઃ=ઢનનં વન્ધઃ=રજ્જ્વા-
 દિભિઃ સંયમનં, વિધાતઃ=મારણં ચેત્યેતૈઃ દુર્વિધાતઃ=દુસ્મહો વિધાતો=દુઃસ્વં
 યસ્મિન્ તત્તથા વધવન્ધાદિવિવિધદુઃસ્વજનકમિત્યર્થઃ, 'દંસણચરિત્તમોહસ્સ-
 હેઝભૂયં' દર્શનચારિત્રમોહસ્ય હેતુભૂતં=દર્શનમોહસ્ય ચારિત્રમોહસ્ય ચ વન્ધકાર-
 ãમ્=ઇદમબ્રહ્મજિનવચને શઙ્ગકાઙ્ગાદિદોષોદ્વાવકત્વાદ્ દર્શનમોહસ્ય કારણં,
 ચારિત્રભેદજનકત્વાચ્ચારિત્રમોહસ્યેતિ ભાવઃ । તથા 'ચિરપચિયં' ચિરપરિચિત્તં=

જાજનવઝજણિઝં) જો સાધુજન હૈં વે તો ઇસ કૃત્ય કો સદા ત્યાજ્ય હી
 માનતે હૈં (ઉદ્ધુ નરયનિરિયતિલોકપદ્ધાણ) ઇસ મૈથુન સેવન સે જીવકા
 પરિભ્રમણ ઉર્ધ્વલોક મધ્યલોક એવં પાતાલલોકે રૂપ ત્રૈલોક્ય મેં હોતા
 હૈં । (જરામરણ રોગસોગમૂલં) યહ કર્મ જન્મ, જરા, મરણ, શોક આદિ
 અનંત દુઃસ્વોસે ભરા હુઆ હૈં । (વધવંધવિધાયદુઃસ્વિધાયં) ઇસમેં વધ,
 વંધન એવં મરણ જન્ય દુઃ સહ દુઃસ્વ ભરે હુપ હૈં । (દંસણચરિત્તમો
 હસ્સ હેઝભૂયં) દર્શન મોહનીય તથા ચારિત્રમોહનીય કા યહ હેતુભૂત
 હૈં । અર્થાત-યહ અબ્રહ્મ જિનવચન મેં શંકા કાંક્ષા આદિ દોષોં કા
 જનક હોને કે કારણ દર્શન મોહકા ઔર ચારિત્રકા વિનાશક હોને સે
 ચારિત્ર મોહનીય કર્મ કે વંધ કો કારણ માના ગયા હૈં । (ચિરપરિચિયં)
 જીવોં કે સાથ ઇસકા પરિચય ચિરકાલ સે જન્મ જન્માન્તરોં મેં આસે-
 વિત હોતે રહને કે કારણ ચલા આ રહા હૈં । ઇસીલિયે (અણુગયં) યહ

“સુયજ્જગવઝજણિઝં” પણ સંતપુરુષો તો એ કૃત્યને સદા ત્યાજ્યાં યોગ્ય
 માને છે, ‘ઉદ્ધુનરયતિરિયતિલોકપદ્ધાણ’ એ મૈથુનના સેવનથી જીવને
 ઉર્ધ્વલોક અને પાતાલલોક, એ રીતે ત્રણલોકમાં પરિભ્રમણ કરવું પડે છે,
 “જરામરણરોગસોગમૂલં” તે કર્મ જન્મ, જરા, મરણ, શોક આદિ અનંત
 દુઃખોથી ભરેલું છે, “વધવંધવિધાયદુઃસ્વિધાયં” તેમાં વધ, વંધન અને
 મરણ જન્ય દુઃસહ દુઃખો ભરેલાં છે, “દંસણચરિત્ત મોહસ્સ હેઝભૂયં” તે દર્શન
 મોહનીય તથા ચારિત્ર મોહનીયના કારણરૂપ છે, એટલે કે તે અબ્રહ્મ જિન-
 વચનોમાં શંકા કાંક્ષા આદિ દોષોનું જનક હોવાથી દર્શનમોહનીય અને ચારિત્રનું
 વિનાશક હોવાથી ચારિત્ર મોહનીય કર્મનાં વંધનું કારણ મનાયું છે ‘ચિરપરિ-
 ચિયં’ તે જન્મ જન્માન્તરોથી સેવાનું હોવાને કારણે તેના જીવોની સથે

સુદર્શિની ટીકા અ. ૪ સૂ. ૨ અબ્રહ્મનામાનિ તલ્લક્ષણનિરૂપણં ચ

૩૧૫

જન્મજન્માન્તરાસેવિતમ્, 'અણુગયં' અણુગતમ્ = અનાદિકાલતઃ સમન્તુ-
ગતમ્, 'દુરંતં' દુરંતમ્=દુઃસ્વાવસાનમ્, દુષ્ટફલમિત્યર્થઃ । 'ચઉત્થં અહમ્મ-
દારં' ચતુર્થમધર્મદ્વારમ્=આસ્રવદ્વારમબ્રહ્મેતિ નામકમ્ ॥ ૧ ॥ સૂ. ૦ ॥

एवमब्रह्मस्वरूपमुक्तं साम्प्रतं 'यन्नामे' ति द्वितीयान्तद्वारमाश्रित्य तस्य
नामान्याह 'तस्स य णामाणि' इत्यादि—

મૂલમ્—તસ્સ ય ણામાણિ ગોણાણિ ઇમાણિ હુંતિ તીસં—
અબંભં ૧ મેહુણં ૨ ચરંતં ૩ સંસગ્ગિ ૪ સેવણાહિગારો ૫
સંકપ્પો ૬ વાહણાપદાણ ૭ દપ્પો ૮ મોહો ૯ મળસંઘોભો
૧૦ અણિગ્ગહો ૧૧ વિગ્ગહો ૧૨ વિઘાઓ ૧૩ વિભંગો ૧૪
વિઘ્ભમ્મો ૧૫ અહમ્મો ૧૬ અસીલયા ૧૭ ગામધમ્મતત્તો ૧૮
રત્તી ૧૯ રાગચિંતા ૨૦ કામભોગમારો ૨૧ વેરં ૨૨ રહસ્સં
૨૩ ગુજ્ઞં ૨૪ બહુમાણો ૨૫ વંભચેરં વિગ્ધો ૨૬ વાવત્તી ૨૭
વિરાહણા ૨૮ પસંગો ૨૯ કામગુણોત્તિ ૩૦ કિય । તસ્સ
एयाणि एवमाइणि नामधेज्जाणि हुंति तीसं ॥ सू. २ ॥

ટીકા—‘ તસ્સ ય ’ તસ્ય ચ=અબ્રહ્મણો મૈથુનસ્યેત્યર્થઃ, ‘ ગોણાણિ ’
गौणानि=गुणनिष्पन्नानि ‘ ણામાણિ ’ નામાનિ ‘ ઇમાણિ ઇમાનિ=વક્ષ્યમાણાનિ
जीवों के पीछे अनादिकाल से पडा हुआ है । (दुरंतं) इसका अवसान
(अंत) बहुत ही अधीक कष्टप्रद होता है । (चउत्थं अहम्मदारं) इस प्रकार
यह चतुर्थ अब्रह्म नामका अधर्मद्वार है ॥ सू. १ ॥

इस तरह सूत्रकार अब्रह्म के स्वरूप का प्रतिपादन कर अब
“ यन्नाम ” नामक द्वितीय अन्तद्वार से उसका प्रतिपादन करते हैं—
‘ तस्स य ’ इत्यादि ० ।

ટીકાર્થ—(તસ્સ ય) उस अब्रह्म रूप मैथुन कर्मके (गोणाणि)

ચિરકાળથી પરિચય આપ્યો આવે છે. તેથી “અણુગયં” તે અનાદિકાળથી
જીવોની પાછળ પડેલું છે. “દુરંતં” તેનો નાશ થવો અતિશય ડુષ્ટર છે.
“ચઉત્થં અહમ્મદારં” આ પ્રકારનું તે ચોથું અબ્રહ્મ નામનું અધર્મદ્વાર છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

ઉપરોક્ત રીતે અબ્રહ્મના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર “ય-
ન્નામ” નામના બીજા અન્તદ્વારથી તેનું પ્રતિપાદન કરે છે. “તસ્સ ય” ઇત્યાદિ
ટીકાર્થ—“તસ્સ ય” તે અબ્રહ્મરૂપ મૈથુન કર્મના “ગોણાણિ” શુભાનુસાર “ણામાણિ”

‘તીસં હુંતિ’ ત્રિશદ્ ભવન્તિ ‘તંજહા’ તાનિ યથા ‘અવંમં’ અબ્રહ્મ=અકુશલા-
નુષ્ઠાનમ્ ૧, ‘મેહુળં’ મૈથુનં=મિથુનસ્ય=સ્ત્રીપુંસયુગલસ્ય કર્મ મૈથુનમ્ ૨, ‘ચરંતં’
ચરત્=સંસારવ્યાપકમ્ ૩, ‘સંસર્ગિં’ સંસર્ગિં=સ્ત્રીપુંસસમ્બન્ધસંજાતમ્ ૪, ‘સેવણાહિ-
ગારો’ સેવનાધિકારઃ=સેવનાયાં=ચૌર્યાદિપ્રતિસેવનાયામાધિકારઃ, મૈથુનસેવી
પ્રાયશ્ચૌર્યાદિષુ પ્રવૃત્તો ભવતિ ૫, ‘સંકળ્પો’ સંકલ્પઃ = સંકલ્પવિકલ્પજાતત્વાત્
સંકલ્પઃ ૬, ઉક્તં ચ—

ગુણનિષ્પન્ન (ળામાણિ) નામ (હમાણિ) યે (તીસં) તોસ (હુંતિ) હૈં । (તં
જહા) વે હસ પ્રકાર હૈં—(અવંમં ૧, મેહુળં ૨, ચરંતં ૩, સંસર્ગિ ૪, સેવણા-
હિગારો ૫, સંકળ્પો ૬, વાહણાપદાણ ૭, દળ્પો ૮, મોહો ૯, મળસંસ્થોમો ૧૦,
અળિગ્ગહો ૧૧, વિગ્ગહો ૧૨ વિઘાઓ ૧૩, વિભંગો ૧૪, વિઘ્ભમો ૧૫,
અહમ્મો ૧૬, અસીલયા ૧૭, ગામધમ્મતત્તી ૧૮, રત્તી ૧૯, રાગચિંતા
૨૦, કામભોગમારો ૨૧, વેરં ૨૨, રહસ્સં ૨૩, ગુજ્જં ૨૪, બહુમાળો ૨૫,
બંમચેરવિમ્મો ૨૬, વાવત્તી ૨૭, વિરાહણા ૨૮, પસંગો ૨૯, કામગુણો
૩૦ ત્તિ વિ ય । તસ્સ ણ્યાણિ ઇવમાહિણિ નામધેજ્જાણિ તીસં-
હુંતિ) યહ કર્મ અકુશલાનુષ્ઠાનરૂપ હૈં, હસલિયે હસકા નામ અબ્રહ્મ
હૈં ૧ । સ્ત્રી ઓર પુરુષ રૂપ મિથુન પરસ્પર મિલકર હસે કરતે હૈં, હસ-
લિયે હસકા નામ મૈથુન હૈં ૨ । યહ સમસ્ત સંસાર મેં વ્યાપક હૈં હસ-
લિયે હસકા નામ ચરંત હૈં ૩ । સ્ત્રી ઓર પુરુષોં કે પારસ્પરિક સંસર્ગ સે
યહ ઉત્પન્ન હોતા હૈં હસલિયે હસકા નામ સંસર્ગી હૈં ૪ । જો મૈથુન સેવી
હોતા હૈં વહ પ્રાયઃચૌર્યાદિકુકર્મો મેં પ્રવૃત્ત હો જાતા હૈં હસલિયે હસકા

“હમાણિ” આ “તીસં” ત્રીસ નામ “હુંતિ” છે. “તંજહા” તે આ
પ્રમાણે છે. “અવંમં ૧, મેહુળં ૨, ચરંતં ૩, સંસર્ગિ ૪, સેવણાહિગારો ૫, સંકળ્પો ૬,
વાહણાપદાણ ૭ દળ્પો ૮, મોહો ૯, મળસંસ્થોમો ૧૦, અળિગ્ગહો ૧૧, વિગ્ગહો ૧૨,
વિઘાઓ ૧૩, વિભંગો ૧૪, વિઘ્ભમો ૧૫, અહમ્મો ૧૬, અસીલયા ૧૭,
ગામધમ્મતત્તી ૧૮, રત્તી ૧૯, રાગચિંતા ૨૦, કામભોગમારો ૨૧, વેરં ૨૨,
રહસ્સં ૨૩ ગુજ્જં ૨૪, બહુમાળો ૨૫, બંમચેરવિમ્મો ૨૬, વાવત્તી ૨૭,
વિરાહણા ૨૮, પસંગો ૨૯, કામગુણો ૩૦ ત્તિ વિ ય । તસ્સ ણ્યાણિ ઇવમાહિણિ
નામધેજ્જાણિ તીસં હુંતિ ? (૧) આ કર્મ અકુશલ અનુષ્ઠાન હોવાથી તેનું
નામ “અબ્રહ્મ” છે. (૨) સ્ત્રી અને પુરુષનું “મિથુન” (જોડું) પરસ્પર મળીને
તેનું સેવન કરે છે, તે કારણે તેનું નામ “મૈથુન” છે. (૩) તે સમસ્ત
સંસારમાં વ્યાપક હોવાથી તેનું નામ “ચરંત” છે (૪) સ્ત્રી અને પુરુષના
અરસ પરસના સંસર્ગથી તે ઉત્પન્ન થતું હોવાથી તેનું નામ “સંસર્ગી” છે,
, ૫’ મૈથુન સેવનાર હોય છે તે સામાન્ય રીતે ચોરી આદિ કુકર્મો પણ સેવવા

સુદર્શિની ટીકા અંક સૂ. ૨ અવ્યયનામાનિ તત્ત્વલક્ષણનિરૂપણં ચ

૩૧૭

કામ ? જાનામિ તે રૂપં, સંકલ્પાત્ કિલ જાયસે ।

ન ત્વાં સંકલ્પયિષ્યામિ, તતો મે ન ભવિષ્યસિ । ૧ ॥

‘વાદના પદાણ’ વાધના પદાનાં=પદાનાં=સંયમસ્થાનાનાં વાધના વાધો-
ત્પાદકત્વાત્ ૭ । ‘દર્પો’ દર્પઃ=દક્ષજનૈરાચરિત્ત્વાત્ ૮, મોહઃ=મોહજનનાત્-
વેદમોહનીયકર્મોદયસમ્પાદ્યત્વાદ્વા મોહસ્વરૂપઃ ૧, ‘મનઃસંશોભો’ મનઃ સંશોભઃ
=ચિત્તવ્યાકુલતોત્પાદકત્વાત્ ૧૦, ‘અણિગ્ગહો’ અણિગ્ગહઃ=વિપર્યેષુ પ્રવર્તમાનસ્ય-

નામ સેવનાધિકાર હૈ ૫ । સંકલ્પ વિકલ્પોં સે યહ ઉત્પન્ન હોતા હૈ
इसलिये इसका नाम संकल्प है ६ । कहाँ भी है--

“કામ ! જાનામિ તે રૂપં, સંકલ્પાત્ કિલ જાયસે ।

ન ત્વાં સંકલ્પયિષ્યામિ, તતો મે ન ભવિષ્યસિ ॥ ૧ ॥

હે કામ ! મੈં તેરે સ્વરૂપકો જાનતા હૂં, તું નિશ્ચયતઃમાનસિક સંકલ્પ
સે ઉદ્ભૂત હોતા હૈ । અતઃ મેં જવ તેરા સંકલ્પ હી નહીં કરૂંગા તો
ફિર તું કૈસે ઉત્પન્ન હોગા ? ॥

યહ સંયમ કે સ્થાનોં મેં વાધા કા ઉત્પાદક હોતા હૈ इसलिये इसका
नाम पद वाधना है ७ । जो मनुष्य इस-मदोन्मत्त होते हैं-उन्हीं के
द्वारा यह आचरित किया जाता है अतः इसका नाम दर्प है । यह
वेदरूप मोहनीय कर्म के उदय से उद्भूत होता है इसलिये इसका नाम
मोह है ९ । इसके निमित्त से चित्त में एक प्रकार की व्याकुलता उत्पन्न
होती है इसलिये इसका नाम मनःसंशोभ है १० । जिस समय इसका

લાગે છે, તેથી તેનું નામ “સેવનાધિકાર” છે, ‘૬’ સંકલ્પ વિકલ્પોથી તે ઉત્પન્ન
થાય છે, તેથી તેનું નામ “સંકલ્પ” છે, કહ્યું પણ છે--

“કામ ! જાનામિ તે રૂપં, સંકલ્પાત્ કિલ જાયસે ।

ન ત્વાં સંકલ્પયિષ્યામિ, તતો મે ન ભવિષ્યસિ । ૧ ॥ ”

હે કામ ! હું તારા સ્વરૂપને ઓળખું છું, તું અવશ્ય માનસિક સંકલ્પોથી
જ ઉત્પન્ન થાય છે, તો હું તારો સંકલ્પ જ નહીં કરું તો તું ક્યાંથી
ઉત્પન્ન થઈશ ? ॥ ૨ ॥

‘૭’ તે અયમનાં સ્થાનોમાં મુશ્કેલીઓ પેદા કરનાર છે, તેથી તેનું નામ
“પદવાધના” છે, ‘૮’ મદોન્મત્ત મનુષ્ય દ્વારા જ તે સેવાય છે, તેથી તેનું
“દર્પ” છે, ‘૯’ તે વેદરૂપ મોહનીય કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી
તેનું નામ “મોહ” છે, ‘૧૦’ તેને કારણે ચિત્તમાં એક પ્રકારની વ્યાકુલતા ઉત્પન્ન
થાય છે તેથી તેનું નામ “મનઃસંશોભ” છે ‘૧૧’ બ્યારે શરીરમાં તેનો

મનસોઽનિવેષઃ ૧૧ । ‘વિગ્રહો’ વિગ્રહઃ=વિગ્રહકારિત્વાત્ ૧૨, ‘વિઘાતો’ વિઘાતઃ=ચારિત્રવિનાશરૂપઃ ૧૩, ‘વિભંગો’ વિભક્તઃ=સંયમાદિગુણાનાં વિશેષેણ મજ્જકૃત્વાત્ ૧૪, ‘વિભ્રમો’ વિભ્રમઃ=અનુપાદેયેષ્યપ્પુપાદેયત્વેન નાનાવિધ-
 આન્તિજનકૃત્વાત્ ૧૫, ‘અધર્મો’ અધર્મઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણધર્મપ્રતિકૂલત્વાત્ ૧૬, ‘અશીલયા’ અશીલતા=ચારિત્ર વર્જિતત્વાત્ ૧૭, ‘ગ્રામધર્મતત્ત્વો’ ગ્રામધર્મ-
 ત્વત્ત્વિઃ=ગ્રામધર્મીઃ=શબ્દાદયઃ કામગુણસ્તેષાં તત્ત્વિઃ=આસેવનમ્ ૧૮, ‘રત્તી’ રત્તિઃ
 =અશુભરાગઃ ૧૯, રામચિન્તા=રાગઃ=રાગકારણત્વાત્ સ્ત્રીશૃંગારરૂપલાભ્યાદિઃ તસ્ય

આવેગ શરીર મેં જાગૃત હોતા હૈં उस समय इन्द्रियां अथवा मन बेकाबू हो जाता है अतः इसका नाम अनिग्रह है ११। इसके पीछे ही भयंकरसे भयंकर विग्रह उत्पन्न खड़े होते हैं इसलिये इसका नाम विग्रह है १२। यह चारित्रिका विघातक होता है । इसलिये इसका नाम विघात है १३ । संयम आदि गुणोंका यह विशेषरूपसे भंजक होता है इसलिये इसका नाम विभंग है १४ जो अनुपादेय पदार्थ होते हैं उनमें भी यह उपादेयरूपसे नानाप्रकार की आन्ति का जनक होता है इसलिये इसका नाम विभ्रम है १५ । श्रुतचारित्र रूप धर्म से यह प्रतिकूल है इसलिये इसका नाम अधर्म है १६ । इसमें चारित्र नहीं होता है इसलिये इसका नाम अशीलता है १७ । इसमें ग्रामधर्म जो शब्दादिक काम गुण हैं उनका सेवन होता है इसलिये इसका नाम ग्रामधर्म है १८। यह अशुभ रामरूप है इसलिये इसका नाम रति है १९ । इसमें स्त्रियों के शृंगार

આવેગ જાગૃત થાય છે ત્યારે ઈન્દ્રિયો તથા મન કાબૂમાં રહેતા નથી, તેથી તેનું નામ “અનિગ્રહ” છે ‘૧૨’ તેને કારણે જ ભયંકરમાં ભયંકર વિગ્રહ-
 ઉત્પાત ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તેનું નામ “વિગ્રહ” છે, ‘૧૩’ તે ચારિત્રનું વિઘાતક હોવાથી તેનું નામ “વિઘાત” છે, ‘૧૪’ સંયમ આદિ ગુણોનું ભંજક ‘નાશ કરનાર’ હોવાથી તેનું નામ “વિભંગ” છે, ‘૧૫’ જે અનુપા-
 દેય પદાર્થો હોય છે તેમાં પણ ઉપાદેયરૂપે વિવિધ પ્રકારની આન્તિ ‘ભ્રમ’ નું જનક હોવાથી તેને “વિભ્રમ” કહે છે ‘૧૬’, શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની વિરૂદ્ધ હોવાને કારણે તેને “અધર્મ” કહે છે ‘૧૭’ તેનું સેવન કરનારમાં ચારિત્ર હોતું નથી, તેથી તેનું નામ “અશીલતા” છે, ‘૧૮’ તેમાં ગ્રામધર્મ કે જે શબ્દાદિક કામગુણ છે તેમનું સેવન થાય છે તેથી તેનું નામ “ગ્રામધર્મત્વત્ત્વિ” છે, ‘૧૯’ છે અશુભ રાગ રૂપ હોવાથી તેનું નામ “રત્તિ” છે ‘૨૦’ તેમાં સ્ત્રીઓના શૃંગારનું, તથા તેમનાં રૂપ લાવણ્ય આદિનું ચિન્તન થાય છે, તેથી

सुदर्शनी टीका अ० ४ सू० २ अवस्थानामानि तत्त्वक्षणनिरूपणं च

३९९

चिन्ता-चिन्तनम् २०, कामभोगमारः=कामभोगमाररूपम्-कारूपं, भोगरूपं, माररूपं, चेत्यर्थः २१, 'वैर' वैरं=शत्रुत्वोत्पादकत्वात् २२, 'रहस्य' रहस्यम् =एकान्तसम्पादनीयत्वात् २३, 'गुह्यं' गुह्यं=गोपनीयत्वात् २४, 'बहुमानो' बहुमानः=बहु-अतिशयेन मानः=आदरो यस्मिन् प्राणिनां सः २५, 'ब्रह्मचर्यविघ्नो' ब्रह्मचर्यविघ्नं=ब्रह्मचर्यस्य=विघातकत्वाद् विघ्नः=विघ्नभूतः २६, 'व्यापत्ति' व्यापत्तिः=विनाशः आत्मगुणविनाशकत्वात् २७, 'विराधना' विराधना=चारित्र्यधर्मस्य विराधकत्वात् २८, 'प्रसंगो' प्रसङ्गः=स्त्रीपुंससंयोगः २९, कामगुणः = शब्दादिविषयभोगजनकत्वात् ३० 'चित् विषय' इत्यपि च त्रिशतमं नाम ।

का उनके रूप लावण्य आदिका चिन्तन होता है इसलिये इसका नाम रागचिन्ता है २० । यह कारूप, भोगरूप और माररूप होता है इसलिये इसका नाम कामभोगमार हैं २१ । इसके निमित्त से जीवों में परस्पर शत्रुता उत्पन्न हो जाती है इसलिये इसका नाम वैर है २२ । यह कर्म एकान्त में किया जाता है इसलिये इसका नाम रहस्य है २३ । यह सदा गोपनीय होता है इसलिये इसका नाम गुह्य है २४ । इसमें प्राणीयाँ को अतिशय आदर भाव-सेवन करने में लालसा-रहता है, इसलिये इसका नाम बहुमान है २५ । यह ब्रह्मचर्य व्रतका विघातक होता है इसलिये इसका नाम ब्रह्मचर्य विघ्न है २६ । आत्मगुणों का इसमें विनाश हो जाता है इसलिये इसका नाम व्यापत्ति है २७ । चारित्र्य धर्मका यह विराधक होता है इसलिये इसका नाम विराधना है २८ । इसमें स्त्री और पुरुष दोनों के शरीर का संयोग होता है इसलिये इसका नाम प्रसंग है २९ । शब्दादिक विषयों में यह भोगने की रुचिका जनक होता है इसलिये इसका नाम कामगुण है ३० । इस

तेनुं नाम " रागचिन्ता " छे, '२१' ते कामरूप, भोगरूप अने माररूप छेय छे, तेथी तेनुं नाम " कामभोगमार " छे '२२' तेने शत्रुते जेवोभां परस्पर दुश्मनावष्ट पेदा थाय छे, तेथी तेनुं नाम " वैर " छे '२३' ते कर्म एकान्तभां कसतुं छेवाथी तेनुं नाम " रहस्य " छे, '२४' ते सदा गोपनीय छेय छे, तेथी तेनुं नाम " गुह्य " छे, '२५' तेना प्रत्ये प्राणीअने अत्यंत आदरभाव-लावसा रहे छे, तेथी तेनुं नाम " बहुमान " छे, '२६' ते ब्रह्मचर्यव्रतनुं विघातक 'तोअवनार' छेवाथी तेनुं नाम " ब्रह्मचर्यविघ्न " छे '२७' तेना सेवनथी आत्मगुणोना नाश थाय छे, तेथी तेनुं नाम " व्यापत्ति " छे (२८) ते चारित्र्यधर्मनुं विराधक छेवाथी तेनुं नाम " विराधना " छे. (२९) तेभां स्त्री तथा पुरुषनां शरीरने संयोग थाय छे, तेथी तेनुं नाम " प्रसंग " छे '३०' शब्दादिक विषयाना उपभोगनी रुचिनुं जनक छेवाथी तेनुं नाम " कामगुण " छे, आ

‘एयाणि’ एतानि = पूर्वोक्तानि ‘एवमाईणि’ एवमादीनि=अब्रह्मेत्यादीनि
‘तस्स’ तस्य=अब्रह्मणः ‘नामधेज्जाणि’ नामधेयानि=नामानि ‘तीसं’ त्रिंशद्
‘हुंति’ भवन्ति ॥ सू० २ ॥

एवमब्रह्मणः ‘यन्नामे’ ति द्वितीयमन्तद्वारमुक्तम् । अथ तृतीयं चतुर्थचान्त-
द्वारमनुक्त्वा साम्प्रतं ये च कुर्यन्ती’ इत्येतत्पञ्चममन्तद्वारमाह-‘तं च पुण’ इत्यादि

मूलम्—तं च पुण निसेविति सुरगणा स अच्छरा मोह-
मोहियमई-असुर-भुयग-गरुल-विज्जु-जलण-दीव-उदहि-
दिसिपवण-थणिय अणपन्निय-पणपन्निय-इसिवाइय-भूय-
वादूय-कंदिय-महाकंदिय-कूहंड-पयंगदेवा, पिसायभूय-जक्ख-
रक्खस-किणर-किंपुरिस-महोरग - गंधवा, तिरिय-
जोइसविमाणवासि - मणुयगणा जल - यर - थलयर
खहयरा य मोहपडियद्धचित्ता अवितण्हा कामभोगतिसि-
या तण्हाए बलवइए महईए समभिभूया गठिया य अति-
मुच्छियाय अवंभे ओसण्णा तामसेण भावेण अणुमुक्का दंसण
अरित्तमोहस्स पंजरंपिव करेति अण्णमण्णं सेवमाणा ॥सू० ३॥

टीका—‘तं च पुण’ तच्चपुनरब्रह्म ‘निसेવિતિ’ નિષેવન્તે । કે તે ?
इत्याह-सुरगणाः=देवसमूहाः ‘स अच्छरा’ साप्सरसः=अप्सरोग्भिः सहिताः
‘मोहमहिय’ मोहमोहितमतयः=मोहेन-मोहिता मतिः=बुद्धिर्येषां ते तथा । पुनः

प्रकार ये अब्रह्म आदि पूर्वोक्त तीस नाम इस चतुर्थद्वारके हैं ॥ सू० २॥

अथ सूत्रकार तृतीय चतुर्थ द्वार को न कह कर पंचम अन्तद्वारको
कहते हैं— ‘तंच पुण’ इत्यादि ० ।

टीकार्थः—(तंच पुण) इस चतुर्थ द्वार अब्रह्म का(सुरगणा) सुरगण की
जिनकी (मोहमोहियमई) मति मोह से मोहित हो रही है (स अच्छरा)

પ્રમાણે ચોથા અધર્મ દ્વારનાં અબ્રહ્મ આદિ ત્રીજા પૂર્વોક્તનામ છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

હવે સૂત્રકાર ત્રીજા તથા ચોથા દ્વારનું વર્ણન ન કરતાં પહેલાં પાંચમાં
અન્તદ્વારનું વર્ણન કરે છે— “તં ચ પુણ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“તં ચ પુણ” તે ચોથા દ્વારેથી અબ્રહ્મનું “સુરગણા” સુરગણ છે
જેમની “મોહમોહિયમઈ” મતિ મોહથી મોહિત થયેલ હોય છે “સઅચ્છ-

सुहृद्दिनी टीका अ०४ सू० ३ मोहमयमतिमिस्रत्सेवनप्रकारनिरूपणम् ४०१

के ? इत्याह-‘असुर-भुयग-गरुल-विज्जु-जलण-दीव-उदहि-दिसि-पवण-थणिय-अणपन्निय-पणपन्निय-इसिवाइय-भूयजाइय-कंदिय-महाकंदिय-कूहंड-पयंग-देवा’ तत्र असुराः=असुरकुमाराः, ‘भुयग’ भुजगाः=नागकुमाराः ‘गरुल’ गरुडाः=सुपर्णकुमाराः ‘विज्जु’ विजृत् कुमाराः ‘जलण’ ज्वलनाः=अग्नि-कुमाराः ‘दीव’ द्वीपाः=द्वीपकुमाराः ‘उदधिकुमाराः ‘दिसि’ दिकुक्कुमाराः ‘पवण’ वायुकुमाराः ‘थणिय’ स्तनितकुमाराः, दशैते भवनपतिदेवाः । ‘अण-पन्निय पणपन्निय’ अणपन्निकाः पणपन्निताः ‘इसिवाइय’ ऋषिवादिकाः ‘भूय-वाइय’ भूतवादिकाः ‘कंदिय’ क्रन्दिताः ‘महाकंदिय’ महाक्रन्दिताः ‘कूहंड’ कुष्माण्डाः ‘पयंग’ पतङ्गाश्च ते च ते देवाः, एतेऽष्टौ व्यन्तरनिकायोपरिवर्तिनः । व्यन्तरदेवजातिविशेषाः । तथा ‘पिसाय-भूय-जक्ख-रक्खस-किण्णर-किपुरिस-महोरग-गंधव्व-तिरिय-जोइस-विमाणवासि-मणुयगणा’ तत्र ‘पिसाय’ पिशाचाः १ । ‘भूय’ भूताः २ । ‘जक्ख’ यक्षाः ३, ‘रक्खस’ राक्षसाः ४, ‘किण्णर’ किन्नराः ५, ‘किं पुरिस’ किम्पुरुषाः ६, ‘महोरग’ महोरगाः ७, ‘गंधव्व’ गन्धर्वाश्च अप्सराओं के साथ (निसेविति) सेवन करते हैं । तथा (असुर-भुयग-गरुल-विज्जु-जलण-दीव-उदहि-दिसि-पवण-थणिय-अणपन्निय-पणपन्निय-इसिवाइय-भूयवाइय-कंदिय-महाकंदिय-कूहंड-पयंग-देवा) असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार, विजृत्कुमार, अग्निकुमार, द्वीप-कुमार, उदधिकुमार, दिकुमार, वायुकुमार, स्तनितकुमार, ये १० दस भवन-पति देव, तथा-अणपन्निक, पणपन्निक, ऋषिवादिक, भूतवादिक, क्रन्दिता महाक्रन्दिता कुष्माण्ड, पतंग, ये आठ व्यन्तर जातिके देव विशेष, (पिसाय भूय-जक्ख-रक्खस-किन्नर-किपुरिस-महोरग-गंधव्व-तिरिय-जोइस-विमाणवासि-मणुयगणा) तथा पिशाच, भूत, यक्ष, राक्षस, किन्नर,

रा” अप्सराओं साथे “ निसेविति ” सेवन करते हैं । तथा “ असुर, गरुल, विज्जु, जलण, दीवउदहि, दिसि, पवण, थणिय, अणपन्निय, पणपन्निय, इसिवा-इय, भूयवाइस, कंदिय, महाकंदिय, कूहंड पयंग-देवा ” असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार, विजृत्कुमार, अग्निकुमार, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, दिकुमार, वायुकुमार, स्तनितकुमार, ये दस भवनपति देव, तथा अणपन्निक, पण-पन्निक ऋषिवादिक, भूतवादिक, क्रन्दिता, महाक्रन्दिता, अने पतंग । ते आठ व्यन्तर जातिना देव, “ पिसाय, भूय, जक्ख, रक्खस, किन्नर, किपुरिस, महोरग, गंधव्व, तिरिय, जोइस, विमाणवासि, मणुयगणा ” तथा पिशाच, भूत, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किंपुरुष, महोरग गंधर्व अने आठ व्यन्तर देव तथा तिर्थञ्च
प्र० ५१

૮, એતેડટ્ટૌ વ્યન્નરમેદાઃ । તથા તિરિય-જોડસ-વિમાળ-વાસિ' તિર્યગ્જ્યોતિર્વિ-
માનવાસિનઃ=તિરિશ્ચ=તિર્યગ્લોકે યાનિજ્યોતિર્વિમાનાનિ તેષુ નિવાસિનોડસંખ્યાતા
જ્યોતિષ્કાઃ ' મણુય ' મનુજાઃ=મનુષ્યાશ્ચ તેષાં ગણાઃ=સમૂહાઃ । તથા ' જલચર
થલચર સ્વહ-ચરાય ' જલચર સ્થલચર સ્વેચરાશ્ચ, તત્ર જલચરાઃ = મત્સ્યાદયઃ,
સ્થલચરાઃ=ગોમહિષ્યાદયઃ સ્વેચરાશ્ચ=પશ્ચિણસ્તે તથા, એતે સર્વે મૈથુનં નિપેક્ત
હિતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ । કીદશાસ્તે ઇત્યાહ—' મોહપલ્લિવદ્વચિત્તા ' મોહપ્રતિવદ્-
ચિત્તાઃ=મોહેન=અજ્ઞાનેન પ્રતિવદ્=પ્રસિતં ચિત્તં યેષાં તે તથા ' અવિતળ્હા '
અવિતૃણાઃ=વિષયલોલુપાઃ=પ્રાપ્તકામોપભોગેનાપ્યનુપશાન્તચિત્તા ઇત્યર્થઃ, ' કામ-
મોગતિસિયા ' કામમોગતૃપિતાઃ=અપ્રાપ્તકામભોગેષુ તત્પ્રાપ્તિચિન્તાપરાયણાઃ,
એતાદશાસ્તે ' વલવર્ડે ' વલવત્યા=પ્રમાદચા ' મહર્ડે ' મહત્યા વિશાલયા
' તળ્હા ' તૃણયા=વિષયવાઙ્મય ' અભિભૂયા ' અભિભૂતાઃ=અક્રાન્તાઃ ' ગદિયા

કિ પુરુષ, મહોરગ, ગંધર્વ, યે આઠ વ્યન્નર દેવ, તથા તિર્યગ્લોક મેં જિતને
જ્યોતિષિયોં કે વિમાન હેં ઉન વિમાનોં મેં રહને ચાલે અસંખ્યાત જ્યો-
તિષી દેવ, તથા મનુષ્યોં કા સમૂહ, (જલચરથલચરસ્વહચરા ચ)
મત્સ્ય આદિ જલચર જીવ, ગોમહિષી આદિ સ્થલચર જીવ, એવં આકાશ
મેં ઉડને ચાલે પક્ષી, સચ મૈથુન સેવન કરતે હેં । કયોં કિ યે સચ
(મોહપલ્લિવદ્વચિત્તા) અજ્ઞાન સે પ્રસિત હેં ચિત્ત જિમ્હોં કા એસે હોતે
હેં । એવં (અવિતળ્હા) પ્રાપ્તકામોપભોગ મેં બી ઇનકા ચિત્ત શાંત નહીં
હો પાતા હે । કારણ (કામ મોગતિસિયા) જો કામભોગ ઇન્હે પ્રાપ્ત
નહીં હોતે હેં ઇનમેં ઇનકી પ્રાપ્તિકી આજ્ઞાસે ચિન્તા સે ઇનકા ચિત્ત
ચલાપમાન હોના રહતા હે । એસા હસલિયે હોતા હે કિ યે (વલવર્ડે)
પ્રમાદ એવં (મહર્ડે) વિશાલ (તળ્હા) વિષયાભિલાષા સે (અભિ-
ભૂયા) આક્રાન્ત હો જાતે હેં । ઇસીલિયે યે (ગદિયાય) વિષયોં કે

લોકમાં જેટલાં જ્યોતિષીઓનાં વિમાન છે તે વિમાનોમાં રહેતા અસંખ્યાત
જ્યોતિષદેવ, તથા મનુષ્યોના સમૂહ, તથા “ જલચર, થલચર, સ્વહચરાય ”
મત્સ્ય આદિ જળચર જીવો, ગાય ભેંસ આદિ સ્થળચર જીવ, અને આકાશમાં
ઉડતાં પક્ષીઓ, તે સૌ મૈથુનનું સેવન કરે છે; કારણ કે તે સૌનાં ચિત્ત
“ મોહપલ્લિવદ્વચિત્તા ” અજ્ઞાનથી જડાયેલાં હોય છે, અને “ અવિતળ્હા ”
કામભોગ લોગવવા મળે તો પણ તેમના ચિત્તને શાંતિ મળતી નથી. કારણ
કે “ કામભોગ તિસિયા ” જે કામભોગ તેમને પ્રાપ્ત થતા નથી તેની લાલસાથી
તેમનાં ચિત્ત નિરાશમાન રહે છે. એમ થવાનું કારણ એ છે કે “ વલવર્ડે ”
પ્રમાદ અને “ મહર્ડે ” વિશાળ “ તળ્હા ” વિષયાભિલાષાથી “ અભિભૂયા ”

સુરેશનો ટીકા અં ૪ સૂં ૩ ચક્રવર્ત્યાદિ વર્ણનમ્

૪૦૩

ય' પ્રથિતાશ્વ=વિષયગુમ્ફિતમાનસાઃ, તથા 'અશ્મુચ્છિયાય' અતિમૂર્છિતાશ્વ= અતિમોહાતિશયમુપગતાઃ 'અંબે ઓસળા' અબ્રહ્મણિ અવસન્નાઃ=મૈથુને સમાસક્તાઃ, 'તામસેળ ભાવેળ અણુમુક્કા' તામસેન ભાવેન=અણુમુક્તાઃ, તામસેન ભાવેન= અજ્ઞાનપ્રવર્તિતેન પરિણામેન અણુમુક્તાઃ=આવદ્ધાઃ સન્તઃ, અવ- 'અન્નોન્નં સેવ- માણા' इत्यग्रेण सम्बन्धः अन्योन्यं=परस्परं पुरुषैः सह स्त्रियः, स्त्रीभिः सह पुरुषा इत्यर्थः सेवमानाः=अब्रह्मसमाचरन्तः, 'दंसणचरित्तमोहस्स' दर्शनचारित्रमोह- स्य= 'अत्र कर्मणः सम्बन्धमात्रविवक्षायां पण्डो, दर्शनमोहनीयचारित्रमोहनीयरूपं द्विविधं कर्म 'पंजरं पिव' पञ्जरमिव 'करे'ति' कुर्वन्ति-अब्रह्मसेविनो देवादयः खलु दर्शनमोहनीय-चारित्रमोहनीयरूपपञ्जरे स्वात्मानं नयन्तीति भावः ॥सू० ३॥

સામ્પ્રતં ચક્રવર્ત્યાદીન વર્ણયતિ 'શુજો અસુરપુર' इत्यादि—

મૂળ—શુજો અસુર-સુર-તિરિય-મણુય-ભોગરતિ-વિહાર

સંપડતા ચ ચક્રવટી-સુર-નરવાઈ-સક્રયા, સુરવરઠ્ઠ દેવલોણ

સેવન કરને કી આજ્ઞા સે ગુમ્ફિત મન હોકર (અશ્મુચ્છિયા ય) ઉન વિષયોં મેં અત્યંત મોહકો પ્રાપ્ત હોતે રહતે હેં ઔર (અંબે ઓસળા) અબ્રહ્મ કે સેવન કરને કે લિયે અત્યંત આસક્ત હો જાતે હેં। (તામસેળ-ભાવેળ અણુમુક્કા) તામસ-ભાવ સે-અજ્ઞાનપ્રવર્તિત પરિણામ સે-આવદ્ધ હોકર પરસ્પર મેં-એક દૂસરે કે સાથ પુરુષ કે સાથ સ્ત્રી, ઔર સ્ત્રી કે સાથ પુરુષ રમણ કરને લગ જાતે હેં। ઇસ તરહ (અન્નોન્નં સેવમાણા) ઇસ અબ્રહ્મરૂપ પાપકર્મકોં સેવન કરને ચાલે યે દેવાદિક અપની આત્મા કો (દંસણચરિત્તમોહસ્સ પંજરં પિ વ કરેતિ) પંજર કે જીસે દર્શન મોહ-નીય એવં ચારિત્ર મોહનીય કર્મ મેં નિશ્ચિસ કર દેતે હેં। અર્થાત્ ઇન કર્મોં કા બંધ કરતે હેં ॥ સૂં ૩ ॥

તેઓ વ્યાકુળ થાય છે. તેથી “ ગદ્ધિયાય ” વિષયોનું સેવન કરવાની આશામાં લીન થઈને “ અશ્મુચ્છિયાય, ” તેમનું મન તે વિષયો પ્રત્યે અત્યંત મોહાસક્ત થયા કરે છે, અને “ અંબેઓસળા ” તેઓ મૈથુનનું સેવન કરવાને અત્યંત આસક્ત થાય છે. ભાવેળ અણુમુક્કા ” તામસ લાવથી-અજ્ઞાન પ્રવર્તિત પારણામથી-જકડાઈને પરસ્પરમાં-પુરુષની સાથે સ્ત્રી, અને સ્ત્રીની સાથે પુરુષ-રમણ કરવા લાગી જાય છે. આ રીતે “ અન્નોન્નં સેવમાણ ” આ અબ્રહ્મચર્યરૂપ પાપકર્મનું સેવન કરનાર દેવાદિક પોતાના આત્માને “ દંસણચરિત્તમોહસ્સ પંજરં પિ વ કરેતિ- ” પિંજરા જેવાં દર્શનમોહનીય અને ચારિત્ર મોહનીય કર્મમાં નાખી દે છે. એટલે કે તે કર્મોના બંધ બાંધે છે ॥ સૂં ૩ ॥

भरह-नग-णगर-निगमजणवय-पुरवणदोणमुह-खेड-कब्बड-
मडंवंसंवाहपट्टणसहस्स-मंडिय-थिमिय-मेयणियं एगच्छत्तं
ससागरं भुंजिऊणवसुहं नरसीहा-नरवई-नरिंदा-नरवसहा
मरुयवसभकप्पा अब्भहियं रायतेयलच्छीए दीप्पमाणा सोम्मा
रायवंसतिलगा रवि-ससि-संख-वरचक्क-सोत्थिय-पडाग-जव-
मच्छकुम्मरहवर-भग-भवण-विश्राण-तुरंग-तोरण-गोपुर-मणि-
रणय-नंदियावत्त-मुसल-लंगल-सुरइयवरकप्प रुक्ख मिगवइ
-भदासण-सुरुइ-थूभ-वरमउड-सरिय-कुंडल-कुंजर-वरवसभ-
दीव-मंदर-गरुलज्झय-इंदकेउ-दप्पण-अट्टा-वय-चाव-वाण-
नक्खत्त-मेह-मेहल-वीणा-जुग-छत्त-दाम-दामिणि कमंडलु-
कमल-घंटा-वरपोत-सूची-सागर-कुमुदागर-मगर-हार-गागर-
नेउर-णग-णगर-वइर-किण्णर-मयूर-वररायहंस-सारस-चकोर-
चक्कवाग-मिहुण-ग्रामर-खेडग-पव्वीसग-विपंघि-वरतालियंद-
सिरिया-भिसेय-मेयणि-खगं-कुस-विमल-कलस-भिंजार-वद्ध-
माणगपसत्थउत्तमविभत्तवरपुरिसलक्खणधरा ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘भुज्जो’ भूयः=पुनरपि ‘असुर-सुर-तिरिय मणुय भोगरइ-विहा-
संपउत्ताय’ असुरसुरतिर्यइमनुजभोगरतिविहारसंपयुक्ताश्च तत्र असुराः=व्यन्तराः
अत्र-असुरशब्देन व्यन्तरा गृह्यन्ते, सुराः=यक्षाः, तिर्यञ्चः=अश्वरत्नगजरत्नादयः,

अथ सूत्रकार चकवर्त्ती आदि को का वर्णन करते हैं—‘भुज्जो
असुर०’ इत्यादि० ।

टीकार्थः—(असुर-सुर-तिरिय मणुय भोगरइ विहारसंपउत्ताय)
असुरो - व्यन्तरदेवो, सुरो - यक्षो तिर्यञ्चो-अश्वरत्न गजरत्न आदि

इवे सूत्रकार चकवर्त्ती आदितुं पशुन करे छे—“भुज्जो असुर” इत्यादि
“असुर, सुर, तिरिय मणुय, भोगरइविहारसंपउत्ताय” असुरो-व्यन्तर देवो,
सुरो, यक्षो, तिर्यञ्चो-अश्वरत्न, गजरत्न, आदि प्राणिभ्यो, मनुष्यो भांडसिद्ध

મનુજાઃ=મનુષ્યા-માંડલિકાદયશ્ચ તેભ્યઃ-તત્સકાશ્વાદ્ યે ભોગાઃ=શબ્દાદયઃ,
તેષુ યા રતિઃ=અનુરાગસ્તેન યે વિહારાઃ=વિવિધપ્રકારચેષ્ટારૂપાઃ ક્રીડાઃ, તૈઃ
સમ્પ્રયુક્તાઃ=સહિતાઃ યે તે તથા કે તે ? इत्याह—‘ ચક્રવટ્ટી ’ ચક્રવર્તિનઃ,
ક્રીડાસ્તેચક્રવર્તિનઃ ? इत्याह—‘ સુરનરવાઈ સકયા ’ સુરનરપતિસત્ક્રુતાઃ=
સુરૈઃ=દેવૈઃ નરપતિભિઃ=નૃપૈશ્ચ, યદ્વા ‘ પતિ ’ શબ્દસ્ય પ્રત્યેકં સમ્બન્ધાન્ સુરપ-
તિર્નિનરપતિભિશ્ચેત્યર્થઃ, સત્ક્રુતાઃ=સન્માનિતાઃ, ‘ દેવલોઽ ’ દેવલોકે ‘ સુરવર-
વ્વ ’ સુરવરા ઇવ=મહદ્દિક દેવા ઇવ । દેવલોકે યથા દેવાઃ સુખમનુભવન્તઃ ‘ ભર-
હનગનગર — નિગમજળવયપુરવરદોળમુહુર્લેહકલ્લવ્વડમડંબસંવાહપટ્ટણસહસ્તમંડિયં ’
તત્ર ‘ ભરહ ’ ભરતસ્ય=ભારતવર્ષસ્ય સમ્બન્ધિનો યે નગાઃ=પર્વતાઃ ‘ નગર-
રાણિ=અષ્ટાદશકર્ણવર્જિતાનિ, ‘ નિગમ ’ નિગમાઃ=વણિગ્જનનિવાસાઃ ‘ જળવય ’
જનપદાઃ=દેશાઃ, પુરવરાણિ=રાજધાનીરૂપાણિ, ‘ દોળમુહ ’ દ્રોણમુગ્ધાનિ=જલ-
સ્થલમાર્ગયુક્તાનિ ‘ લેહ ’ લેટાનિ=ધૂલિપ્રાકારમયાનિ ‘ કલ્લવ્વડ ’ કર્ણટાનિ=

પ્રાણિયો મનુષ્યો-માંડલિક રાજા આદિ જનોં કે દ્વારા સંપાદિત શબ્દાદિક
ભોગો મેં અનુરાગ જન્ય વિવિધ પ્રકારકી ચેષ્ટારૂપ ક્રીડાઓં સે યુક્ત
એસે(ચક્રવટ્ટી)ચક્રવર્તીં મીં ઇન કામભોગોં સે નૃસ નહીં હોતે હીં (સુરનર-
વહસકયા) જો ચક્રવર્તીં સુરોં સે-દેવતાઓં સે, અથવા સુરપતિયોં-
ઇન્દ્રોં સે‘એવં નરપતિયોં-રાજાઓં સે વિશેષરૂપ મેં સદા સન્માનિત કિયે
જાતે હીં તથા (દેવલોઽ સુરવરવ્વ) જિસ પ્રકાર દેવલોક મેં મહદ્દિક
દેવ સુખોંકોં ભોગ કરતે હીં ડસી પ્રકાર જો સુખોંકોં ભોગતે હીં । તથા જો
(ભરહનમ-નગર-નિગમ-જળવય-પુરવર-દોળમુહ-લેહકલ્લવ્વ-મડંબ
સંવાહપટ્ટણ-સહસ્ત-મંડિયં) ભારતવર્ષ સંબંધી હજારોં ૧૮અઠારહપ્રકાર કે
કરોં સે રહિત નગરોં સે, વણિગ્જનનિવાસમૂત હજારોં નિગમોં સે,
હજારોં દેશોં સે, રાજધાનિયાંરૂપ શ્રેષ્ઠ પુરોં સે, જલમાર્ગ સ્થલમાર્ગ

રાજા આદિ લોકો દ્વારા સંપાદિત શબ્દાદિક ભોગોમાં અનુરાગ જન્ય વિવિધ
પ્રકારની ચેષ્ટારૂપ ક્રીડાઓથી યુક્ત એવા “ ચક્રવટ્ટી ” ચક્રવર્તીં પણ
કામભોગોથી નૃસ થતા નથી. “ સુરનરવહસકયા ” જે ચક્રવર્તીંઓનું દેવતાઓ
વડે, સુરપતિઓ ઇન્દ્રો વડે અને નૃપતિઓ વડે સદા વિશેષરૂપે સન્માન કરાય
છે, તથા “ દેવલોઽ સુરવરવ્વ ” દેવલોકમાં જેમ મહદ્દિક દેવો સુખો ભોગવ્યા
કરે છે, એજ પ્રમાણે જે સુખો ભોગવે છે, એવા ચક્રવર્તીંઓ પણ કામભોગોથી
નૃસિ પામતા નથી, તથા જે “ ભરહ-નગ-નગર-નિગમ-જળવય-પુરવર-દોળમુહ-
લેહકલ્લવ્વ-મડંબ-સંવાહ-પટ્ટણ-સહસ્ત-મંડિયં ” ભારતવર્ષના હજારોં પર્વતોથી,
અઠાર પ્રકારના કરોથી રહિત નગરોથી, વહ્નિક લોકો રહેતા હોય એવાં હજારો
નિગમોથી, હજારો દેશોથી, હજારો રાજધાનીરૂપ શ્રેષ્ઠ શહેરોથી, જળમાર્ગ

અલ્પજનનિવાસસ્થાનાનિ ‘ મહંવ ’ મહંવાઃ=સાર્થકોશદ્વયગ્રામાન્તરશૂન્યાઃ, સંવાહાઃ
 =ધાન્યાદિરક્ષણદુર્ગવિશેષા ‘ પટ્ટણ ’ પત્તનાનિ=સકલવસ્તુપ્રાપ્તિસ્થાનાનિ ચેત્યે-
 તેષાં યાનિ સહસ્રાણિ તૈઃ ‘ મંડિયં ’ મણ્ડિતા યા સા તથા તાં ‘ ધિમિયમેયણિયં ’
 સ્તિમિતમેદનીકાં = નિશ્ચલપ્રજાં નિરસ્તસમસ્તશત્રુજનાદિભયરહિતજનયુક્તામ્,
 ‘ એગચ્છત્તં ’ એકચ્છત્તમ્=હતરભૂપતીનાં તદ્વશવર્તિત્વાદેકસ્યૈવ રાજ્ઞઃ સ્વાતન્ત્ર્યેણ
 પ્રાધાન્યાદેકમેવ છત્રં યત્ર સા તથા તાં, તથા ‘ સસાગરં ’ સસાગરાં=સમુદ્રસહિતાં
 ‘ વસુહં ’ વસુધાં=પૃથિવી-ભરતાદ્વાદિરૂપાં ‘ મુંજિઝ્ઞણ ’ મુંજિત્વા હં ચક્રવર્તિનો-
 વાલે હજારોં દ્રોણમુખોસે સે, ધૂલિપ્રાકારમય હજારોં સ્વેદોં સે, અલ્પજન-
 નિવાસભૂત હજારોં કર્વટોં સે, અઢાઈકોશતક ગ્રામાન્તરોં સે શૂન્ય
 હજારોં મહંયોં સે, હજારોં સંવાહોં સે-ધાન્યાદિકોંકી જિનકેદ્રારા રક્ષા
 કી જાતી હૈ એસે દુર્ગવિશેષોં સે એવં સકલ વસ્તુઓં કી પ્રાપ્તિ કે સ્થાન-
 ભૂત હજારોં પત્તનોં સે મંડિત (ધિમિય મેયણિયં) તથા શત્રુ આદિ કે
 ભય સે રહિત હોકર પ્રજાજન જિસમેં આનંદ કે સાથ નિવાસ કર રહે
 હૈ (એગચ્છત્તં) ઓર જિસ મેં કિસી અન્ય રાજા કીસ્વતંત્ર આજ્ઞા નહીં
 ચલતી હૈ-દુસરે રાજાઓં કે હોનેપર ભી ઉસી એક કે વશવર્તી હોને કે
 કારણ સ્વતંત્રરૂપ સે અપની આજ્ઞા નહીં ચલા સકતે હૈ-કિન્તુ ઉસી એક
 કી આજ્ઞા કે અનુસાર હી અપની આજ્ઞા ચલાતે હૈ, એસી સ્થિતિ વાલા
 સામ્રાજ્ય જહાં હોતા હૈ-ઉસ સામ્રાજ્ય સંપન્નભૂમિ કો એકચ્છત્રવાલી
 ભૂમિ કહી જાતી હૈ । એસી (સસાગરાં) આસમુદ્રાન્ત- (વસુહં) પૃથિવી
 કો-ભરતાદ્વૈ રૂપ ભૂમિ કો (મુંજિઝ્ઞણ) ભોગકર કે (નરસીહા) જો

સ્થળભાગ વાણે હબરો દ્રોણમુખોથી, ધૂળના કિલ્લાવાળા હબરો ખેટોથી, થોડી
 વસ્તીવાળા હબરો કળંટોથી, ન્યાંથી અઢી ગાઉ સુધી ઘીનં ગામો ન હોય
 તેવાં હબરો મહંઓથી, હબરો સંવાહોથી- (ધાન્યાદિની જેનાથી રક્ષા કરાય
 છે એવા દુર્ગ વિશેષો) અને સઘળી વસ્તુના પ્રાપ્તિ સ્થાનરૂપ હબરો પત્તનોથી
 યુક્ત, તથા “ ધિમિયમેયણિય ” શત્રુ આદિ ભયથી રહિત બનીને પ્રબળને
 જેમાં આનંદપૂર્વક રહે છે, “ એગચ્છત્ત ” અને જેમાં ખીલ કાંઈ રાજાની
 સ્વતંત્ર આજ્ઞા ચાલતી નથી-ખીલ રાજાઓ હોવાછતાં પણ તેઓ તે એકને જ
 “ ચક્રવર્તી ” રાજાને ” વશ હોવાને કારણે સ્વતંત્ર રીતે પોતાની આજ્ઞા ચલાવી
 શકતાં નથી. પણ તે એકની આજ્ઞા પ્રમાણે તેમને વર્તવું પડે છે, એવી સ્થિતિવાળું
 સામ્રાજ્ય ન્યાં હોય છે, એ પ્રકારનાં સામ્રાજ્યવાળી ભૂમિને એક છત્ર
 નીચેની ભૂમિ કહે છે. એવી “ સસાગર ” સમુદ્રના અન્ત સુધીની “ વસુહં ”
 પૃથ્વીને- ભરતાદ્વૈરૂપ ભૂમિને “ મુંજિઝ્ઞણ ” ભોગવીને “ નરસીહા ” જે વિશિષ્ટ

સુદર્શનીટીકા અં ૪ સૂં ૪ ચક્રવર્ત્યાદિ વર્ણનમ્

૫૦૭

માળ્ડલિકાવસ્થાપેક્ષયોક્તમ્ । અગ્રે તુ ‘ હિમવંતસાગરં તં ધીરા મોત્તૂળભરહવાસં ’
 इत्युक्तं तत् चक्रवर्त्तिपदमाप्त्यनन्तरं समस्तभरतक्षेत्रभोक्तृत्वापेक्षया प्रोक्तमिति
 बोध्यत् चक्रवर्त्तिन एव विशिनष्टि, ‘ नरसींહા ’ નરસિંહા: = નરેષુ સિંહા ઇવ શૌર્યા-
 દિમત્વાત્ ‘ નરવર્હ ’ નરવર્તય: = નરાણાં સ્વામિકત્વાત્ ‘ નરિંદા ’ નરેન્દ્રા: = નરેષુ
 इन्द्रभूतत्वात् ‘ નરવસહા ’ નરવૃષભા: = રાજ્યધુરાધરણસામર્થ્યાત્ ‘ મરુયવસમકળ્પા ’
 मरुजवृषभकल्पा: = મરુજા: = મરુદેશોત્પન્ના: વૃષભા: = ચલિવર્દા:, તત્કલ્પા: = તત્સ-
 માના: યે તે તથા મરુદેશવૃષભાદિ શરીરસમ્પત્ત્યા વહુભારવહનસમર્થા ભવન્તીતિ
 तैः सहोपमानम् । ‘ અવ્મહિયં ’ અવ્મધિકમ્-અત્યધિકં યથાસ્થાત્તથા ‘ રાય-
 तेयलच्छीए दीप्यमाणा ’ રાજતેજોલક્ષ્મ્યા દીપ્યમાના: = રાજવ્રતાવશ્રિયા દેદીપ્ય-
 માના: ‘ સોમ્મા ’ સૌમ્યા: = શાન્તસ્વરૂપા: ‘ રાયવંસતિલગા ’ રાજવંસતિલકા: =
 राजकुलमण्डनभूता:, તથા ‘ રવિ: = સૂર્ય: ૧, ‘ સસિ ’ શશી = ચન્દ્ર: ૨, ‘ શંઘ ’
 विशिष्ट शौर्यादि संपन्न होने के कारण नरों में सिंह की तरह होकर
 नरसिंह (नरवर्ह) मनुष्यों के स्वामी होने के कारण नरों केपति (नरिंदा)
 नरों में इन्द्र जैसे होने के कारण नरेन्द्र (नरवसहा) समस्त राज्य
 धुराके धारण करने में सामर्थ्यशाली होने के कारण मरुज वृषभ जैसे-
 मारवाड़ के बलीवर्द जैसे-मारवाड़ के बैल अपनी शरीररूपी संपत्ति
 से बहुत अधिक भार कों वहन करने वाले होते हैं-इसलिये उन के
 साथ यह सादृश्य घटित किया है । तथा (अव्महियं रायतेयलच्छीए
 दीप्यमाणा) बहुत अधिकरूप में राजलक्ष्मी से देदीप्यमान, (सोममा)
 शांतस्वरूप और (रायवंसतिलगा) राजकुल के मंडनभूत होते हैं एवं
 जो (रविससिसंखवरचक्र) रवि शशि शंख चक्र इत्यादि-लक्षणों
 के धारण करनेवाले, अर्थात्-रवि-सूर्य शशि-चंद्रमा तथा शंख, श्रेष्ठचक्र

શૌર્ય આદિથી યુક્ત હોવાને કારણે નરેશો સિંહ જેવા હોવાથી નરસિંહ,
 “ નરવર્હ ” મનુષ્યોના સ્વામી હોવાને કારણે નૃપતિ, “ નરિંદા ” નરેશો ઇન્દ્ર
 સમાન હોવાથી નરેન્દ્ર, “ નરવસહા ” સમસ્ત રાજ્યધુરાનું વહન કરવાને
 સમર્થ હોવાને કારણે નરવૃષભ અથવા મરુજવૃષભ જેવા, -મારવાડના બળદ
 જેવા- “ મારવાડના બળદ મજબૂત હોવાને કારણે વધારે ભાર ઉપાડી શકે છે
 તેથી તેમની સાથે આ સરખામણી કરવામાં આવી છે ’ તથા ‘ અવ્મહિયં-
 રાયતેયલછીએ દીપ્યમાણા ” રાજલક્ષ્મી વડે બહુ જ વધારે દેદીપ્યમાન,
 “ સોમ્મા ” શાન્ત સ્વરૂપ સૌમ્ય, અને “ રાયવંસતિલગા ” રાજવંશોની શરૂઆત
 કરનારા, અને જે “ રવિસસિસંઘવરચક્ર ” “ સૂર્ય, ચન્દ્ર, શંખ ચક્ર ”
 ઇત્યાદિ લક્ષણોને ધારણ કરનારા, એટલે કે સૂર્ય ચન્દ્ર, શંખ, શ્રેષ્ઠ ચક્ર,

शङ्खः=प्रतीतः ३, 'वसचक' वसचकं=श्रेष्ठचक्रं ४, 'सोत्थिय' स्वस्तिकः=चतुष्कविशेषः ५, 'पडाग' पताका=ध्वजा ६, 'जव' यवः=स्वनामक्यातो धान्य-विशेषः ७, 'मच्छ' मत्स्यः=प्रसिद्धः 'कुम्भ' कूर्मः=कच्छपः ८, 'रहवर' रथवरः=विशिष्ट रथः १०, 'भग' योनिः ११ 'भवन' भवनं=पासादः १२ 'विमाणा' विमानं=प्रतीतं १३, 'तुरंग' तुरङ्गः=अश्वः १४, 'तोरण' तोरणं=बहिर्द्वारं १५, गोपुरं=नगरद्वारं १६, मणिः=चन्द्रकान्तादिकः १७, 'रथण' रत्नं=कर्केतनादिकं १८, 'नंदियावत्त' नन्द्यावर्त्तः=नवकोणस्त्रस्तीकविशेषः १९, 'मुसल' मुसलं=प्रसिद्धं २०, 'लांगल' लाङ्गलं=हलं २१, 'सुरइयवरक' पुरुषक' सुरचितवरकल्पवृक्षः=सुरचितः=गुण्डु कृतो यो वरः=श्रेष्ठः कल्पवृक्षः अथवा सुरतिदः=सुखप्रदः कल्पवृक्षः २२, 'सिगवड' मृगपतिः=सिंहः २३, 'भद्रामण' भद्रासनं=सिंहासनं २४, 'सुरुड' सुरुचिः=आभूषणविशेषः २५, 'भूम' स्तूपः=स्तम्भाविशेषः २६, 'वरमउड' वरमुकुटं=श्रेष्ठमुकुटं २७, 'सरिय' मुक्तावली देसी शङ्खोऽयं २८, 'कुंडल' कुण्डलं=कर्णामरणं २९, 'कुंजर' कुञ्जरः=हस्ती ३०, 'वर-वसम' वरवृषभः ३१, 'दीव' द्वीपः ३२, 'मंदर' मन्दराः=मन्दराचलः ३३, 'गरुड' गरुडः=प्रसिद्धः ३४, 'उज्जय' ध्वजः=प्रतीतः ३५, 'इंदकेरु' इन्द्र-केतुः=इन्द्रध्वजः ३६, 'दपण' दर्पणः=प्रसिद्धः ३७ 'अट्टापद' अष्टापदं=द्युतफलकं ३८, 'चाप' चापः=धनुः ३९, बाणः=प्रतीतः ४०, 'नक्षत्र' नक्षत्रं ४१, 'मेघ' मेघः=प्रसिद्धः ४२, 'मेखल' मेखला=काञ्ची ४३, वीणा=प्रतीता ४४, 'जुग' जुगं=वृषभस्कन्धे स्थाप्यमानः शकटाङ्गविशेषः, 'जुहाडा' इति भाषा

स्वस्तिक, पताका, यव मत्स्य, कूर्म, विशिष्ट रथ, योनि, भवन, विमान, तुरंग, तोरण, गोपुर, चन्द्रकान्तादिकमणि, कर्केतनादिरत्न, नवकोणवाले स्वस्तिक, मुसल, लांगल, सुरचित-सुन्दर श्रेष्ठकल्पवृक्ष, सिंह, भद्रासन, सिंहासन, सुरुचि इसनामका एक आभूषण विशेष, स्तूप, -स्तम्भविशेष, श्रेष्ठमुकुट, मुक्तावली, कुंडल, कुंजर हाथी, सुन्दरबैल, द्वीप, मंदराचल, गरुड, ध्वजा, इन्द्रध्वजा, दर्पण, अष्टापद-द्युतफलक, चाप-धनुष, बाण, नक्षत्र, मेघ, मेखला-काञ्ची, वीणा, जुग-गाड़ी का जुआ-जो बैलों के

स्वस्तिक, पताका, यव, मत्स्य, कूर्म, विशिष्ट रथ, योनि, भवन, विमान, तुरंग, तोरण, गोपुर, चन्द्रकान्ता आदि मणि-कर्केतनादि रत्न, नवकोणवाला स्वस्तिक, मुसल, लांगल, सुरचित सुन्दर श्रेष्ठ कल्पवृक्ष, सिंह, भद्रासन-सिंहासन, सुरुचि-श्रेष्ठ आभूषण, स्तूप-स्तम्भ विशेष, श्रेष्ठ मुकुट, मुक्तावली, कुंडल, कुंजर-हाथी, सुन्दर वृषभ, द्वीप, मंदराचल, गरुड, ध्वज, इन्द्रध्वज, दर्पण, अष्टापद-द्युत इलक, धनुष्य, बाण, नक्षत्र, मेघ, मेखला-काञ्ची, वीणा, जुग-गाड़ीनी-

सुदर्शिनी टीका अ० ४ सू० ४ चक्रवर्तिलक्षणनिरूपणम्

४०९

प्रसिद्धं ४५, 'छत्त' छत्रं=प्रसिद्धं ४५, दाम=माला ४७, 'दामिणि' दामनी=रज्जुः ४८, 'कमंडलु' कमण्डलु=जलपात्रविशेषः, प्रतीतः ४९, कमलं=प्रतीतं-५०, घण्टा=प्रतीता ५१, 'वरपोय' वरपोतः=नौका ५२, 'सुई' सूची=वस्त्र-सीवनसाधनं ५३, 'सागर' सागरः=समुद्रः ५४, 'कुमुदागर' कुमुदाकरः=कुमुदवनं ५५, 'मगर' मकरः ५६, हारः=प्रतीतः ५७, 'गागर' इति स्त्रिय आभरणविशेषः, ५८, 'नेउर' नूपुरं=पदभूषण ५९, 'णग' नगः=पर्वतः ६०, 'णगर' नगरं=प्रसिद्धं ६१, 'वज्र' वज्रं ६२, 'किण्णर' किन्नरः=व्यन्तरदेव विशेषः ६३, मयूरः=प्रसिद्धः ६४, 'वरराजहंस' वरराजहंसः=प्रशस्तराजहंसः ६५, सारसः=प्रसिद्धः-पक्षिविशेषः ६६, 'चकोर' चकोरः ६७, 'चक्रवागमिहुण' चक्रवाकमिथुनं=चक्रवाकयुगलं ६८, चामरं=प्रतीतं ६९, 'खेडग' खेटकं= 'ढाल' इति भाषा प्रसिद्धं ७०, 'पञ्चोसग' इति वाद्यविशेषः देशी शब्दोऽयं ७१, 'विपञ्चि' विपञ्ची=सप्ततन्त्रीवीणा ७२, 'वरतालियंट' वरतालवृन्तं=प्रशस्तं-तालव्यजनं ७३, 'सिरियाभिसेय' श्रीकाऽभिषेकः=लक्ष्म्या अभिषेकः ७४, 'मेयणि' मेदिनी=पृथ्वी ७५, 'खग' खड्गः ७६, 'अंकुस' अङ्कुशः=प्रसिद्धः ७७, 'विमलकलश' विमलकलश-उज्ज्वलकलशः-७८, 'भिगार' भृङ्गारः=पात्रविशेषः 'झारी' इति भाषा प्रसिद्धः ७९, 'वर्द्धमाणग' वर्द्धमानकः=शरावः ८०, चेत्ये-

कंधो पर रक्खा जाता है, छत्त-छत्र, दाममाला, दामनी-रस्सी, कमंडलु कमल, घंटा, नौका, सुई, समुद्र, कुमुदवन, मकर, हार, गागर-स्त्रियोंका एक प्रकार का आभूषण, नूपुर-पदभूषण, पर्वत, नगर, वज्र, किन्नर जातिके व्यन्तरदेव, मयूर, प्रशस्त राजहंस, सारसपक्षी, चकोर, चक्रवाक का जोड़ा, चामर, खेटक-ढाल, पञ्चोसग-इस नामका एक वाद्यविशेष, विपञ्ची-सात तार वाली वीणा, सुन्दरताडवृक्ष का पंखा, लक्ष्मी का अभिषेक, पृथिवी, खड्ग-तलवार, अंकुश, उज्ज्वलकलश भृङ्गार, वर्द्धमानक-शराव, इन सब के चिन्हों को कि जो प्रशस्त चक्रवर्तित्व के सूचक

धूसरी, छत्र, दाममाला, दामनी-रस्सी, कमंडलु, कमल, घंटा, नौका, सोय, समुद्र, कुमुदवन, मगर, हार, गागर-स्त्रियोंका एक प्रकारतु आभूषण, नूपुर-आंठर, पर्वत, नगर, वज्र, किन्नर जातीना व्यन्तर देव, मयूर, प्रशस्त राजहंस, सारसपक्षी, चकोर, चक्रवाकतु जोड़ा, चामर, ढाल, पञ्चीसग-एक वाद्यविशेष, विपञ्ची-सात तार वाली वीणा, सुन्दर ताडवृक्षना पंखा, लक्ष्मीना अभिषेक, पृथिवी, तलवार, अंकुश, उज्ज्वल कलश, भृङ्गार, वर्द्धमानक-शराव, ये अर्थां चिन्हो के ने प्रशस्त चक्रवर्तित्वना सूचक अने श्रेष्ठ होय छे तथा ने

૪૧૦

પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રે

તાનિ, 'પસત્થ' પ્રશસ્તાનિ=ચક્રવર્તિત્યમૂલકાનિ ઉત્તમાનિ=અક્રુષ્ટાનિ 'વિભક્ત' વિભક્તાનિ=સ્પષ્ટાનિ યાનિ 'વરપુરિસલક્ષણ' વરપુરુષલક્ષણાનિ-વરપુરુષાણાં-મહાપુરુષાણાં લક્ષણાનિ=હસ્તરેખાદિરૂપાણિ મહત્ત્વમૂલકાનિ તાનિ ધારયન્તિ યે તે તથા સૂર્યચન્દ્રશઙ્ગચક્રાદિરૂપવિશિષ્ટચક્રવર્તિલક્ષણવન્તઃ તેઽપિ કામભોગૈરવિ-તૃપ્તા એવ મરણધર્મ પ્રાપ્તુવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પુનસ્તે ચક્રવર્તિનઃ કીદૃશાઃ? इत्याह-‘वत्तीस’ इत्यादि—

મૂલ્મ-વત્તીસ-રાયવર-સહસ્તાણુજાયમગ્ગા ચડસટ્ઠિસહસ્સ પવરજુવતીણયણકંતા રત્તાભા પડમપમ્હકોરંટગદામચંપંગસુ-તવિયવરકળક-નિઘસવળ્ળા સુજાય સઢ્ઢંગંસુદરંગા મહગ્ધ-વરપટ્ટણુગ્ગયવિચિત્ત-રામણી-પણી-નિમ્મિય-દુગુહ્લ-વરચી-ળપટ્ટકોસેજ્જ-સોળીસુત્તકવિભૂસિયંગા-વરસુરભિગંધ-વરચુળ્ળ-વાસવરકુસુમભરિય-સિરિયાકપ્પિયલ્લેયા-યરિયસુકયરડ્યમાલ-કડગંગયતુડિયવર-ભૂસળપિળદ્ધદેહા ઇગાવલિકંઠસુરડ્યવ-ચ્છા પાલંઘ પલંબમાણસુકયપડઉત્તરિજ્ઞામુદિયા પિંગલંગુલિયા ઉજ્જલ નેવત્થરડ્યચિહ્નગવિરાયમાણા તેણ દિવાકરોઢ્ઢ-દિત્તા સારયનવત્થળિય-મહુર-ગંભીર-નિદ્ધઘોસા ઉપ્પળ્ળ સમત્તરયળચક્કરયળપહાણા નવનિહિવડ્ઢોસમિદ્ધકોસા ચા-

एवं उत्कृष्ट होते हैं तथा जो रेखारूप में स्पष्ट झलकते थे-और जो महापुरुषों के हस्त आदिकों में रेखादि रूप में पाये जाते हैं इन सब को धारण करने वाले होते हैं । ऐसे महाभाग्य शाली चक्रवर्ती भी काम-भोगों से अतृप्त होकर ही मृत्यु को प्राप्त करते हैं । इस प्रकार का संबंध इस सूत्र की व्याख्या करते समय लगा लेना चाहिये ॥ सू० ४ ॥

મહાપુરુષોના હાથ આદિમાં રેખાઓ રૂપે ભેવા મળે છે, તે બધાં ચિહ્નોને ધારણ કરનારા હોય છે. એવા મહાભાગ્યશાળી ચક્રવર્તી રાજાઓ પણ કામ-ભોગોથી અતૃપ્ત રહીને જ મૃત્યુ પામે છે. એ પ્રકારનો સંબંધ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા કરતી વખતે સમજી લેવાનો છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

અરતાઘાઝરાહિં સેણાહિં સમણુજાઈ જમાણમગ્ગા તુરંગવર્ડે ગય-
વર્ડે રહવર્ડે નરવર્ડે વિઝલકુલા વીસુયજસા સારયસસિસકલ
સોમ્મવયણા, સૂરા, તિલોક નિમ્મયપભાવા લદ્ધસદ્ધા સમત્ત
મરહાહિવા નરિંદા સસેલવળકાણણં ચ હિમવંતસાગરં તં
ધીરા મોત્તૂણં મરહવાસં જિયસત્તપવરરાયસીહાપુલ્લકડતવ-
પ્પભાવા નિવિટ્ઠસંચિયસુહા અણેગવાસસયમાઝઘંતો મજ્ઞાહિ
ય જયવયપ્પહાણાહિં લાલિયંતા અતુલ સદ્ધરિસરસરૂવગંધે
ય અણુમવિત્તા તેવિ ઝવળમંતિ મરણધમ્મં અવિત્તિત્તા
કામાણં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા:—‘વત્તીસરાયવરસહસ્સાણુજાયમગ્ગા’ દ્વાવિંશદ્ રાજવરસહસ્રા-
નુયાતમાર્ગી:—દ્વાવિંશદ્ યાનિ રાજવરણાં=રાજપ્રમુખાનાં સહસ્રાણિ તૈરનુયાત:=
અનુગતો માર્ગોં યેષાં તે તથા અનુગામિ દ્વાવિંશત્સહસ્રરાજપ્રમુખાનામધિપતય
इत्यर्थ:; ‘ચઝસદ્ધિસહસ્સપવરજુવતીનયણકંતા’ ચતુ:—પષ્ઠિસદ્ધસપવરયુવતિ-
નયનકાન્તા:—ચતુ:પષ્ઠિસદ્ધસપ્રૌઢતરુણીનાં નયનકાન્તા:—નયનપ્રિયા: સ્વામીન
इत्यर्थ: ‘રત્તામા’ રક્તામા:—રક્તા=વિમલશોભીતવાહુલ્યાદ્ રક્તવર્ણા આમા=

ફિર વે ચક્રવર્તી કેસે હોતે હૈં સો કહતે હૈં—‘વત્તીસરાયવર૦’
इत्यादि०।

ટીકાર્થ:— (વત્તીસરાયવરસહસ્સાણુજાયમગ્ગા) જિનકે પીછે ૨
વત્તીસ હજાર મુકુટથદ્ધ રાજા ચલા કરતે હૈં, અર્થાત્—જો અપને અનુગામી
૩૨ હજાર નરેશોં કે અધિપતિ હોતે હૈં। (ચઝસદ્ધિસહસ્સપવરજુવતીનય-
ણકંતા) તથા ૬૪ ચોસઠ હજાર સર્વશ્રેષ્ઠ યુવતી સ્ત્રિયોં કે નયનોં કો જો
આનંદપ્રદ હોતે હૈં અર્થાત્—અનેકે સ્વામી હોતે હૈં, તથા (રત્તામા) જિનકે

તે ચક્રવર્તિઓ કેવા હોય છે તેનું સૂત્રકાર વધુ વર્ણન કરે છે—“વત્તીસ-
રાયવર” ઇત્યાદી.

ટીકાર્થ—“વત્તીસરાયવરસહસ્સાણુજાયમગ્ગા” જેમની પાછળ ખત્રીસ હજાર મુગટ-
ધારી શબ્દો આવે છે—એટલે કે જેવો તેમના અનુગામી ખત્રીસ હજાર નૃપ-
તિથોના અધિપતિ હોય છે “ચઝસદ્ધિસહસ્સપવરજુવતીનયણકંતા” એસઠ
હજાર સર્વશ્રેષ્ઠ યુવતીઓનાં નયનોને જે આનંદદાયી હોય છે, એટલે કે તેમના
સ્વામી હોય છે, તથા “રત્તામા” જેમના શરીરની આસા વિમળ રક્તાની

શરીરપ્રભા યેષાં તે તથા વિશિષ્ટલાવણ્યસંપન્ના इत्यर्थः, ‘पञ्चपद्मकोरंटगदाम चंपगसुतवियवरकणगनिधसवण्णा’ पद्मपद्मकोरंटगदामचम्पकसुतप्त-वरकनक-निकषवर्णाः, तत्र पद्मपद्म = कमलकेशरः कोरंटकदाम=कोरंटकपुष्पमाला चम्पकः = पुष्पविशेषः तथा सुतप्तवरकनकस्य=सुतप्तसुवर्णस्य यो निकषः= रेखा चेत्येतेषां वर्ण इव वर्णो येषां ते तथा पद्मकेशरसुवर्णादिवद् भास्वरकान्त्य इत्यर्थः, ‘सुजायसव्वंगमुंदरंगा’ सुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः=सुजातानि= शोभनं पुष्टानि सर्वाङ्गेण=सर्वप्रकारेण सुन्दराण्यङ्गानि=अवयवा येषां ते तथा सुपुष्टशोभनाङ्गोपाङ्गसम्पन्नाः तथा ‘महग्घवरपट्टणुगयविचित्तरागणीपणी-निम्मिय दुग्गुल्लवरचीणपट्टकोसेज्जसोणीमुत्तकविभूसियंगा’ महार्यवरपत्तनोद्गत-विचित्ररागैणीप्रैणीनिर्मितदुकूलवरचीनगङ्गकौशेयश्रेणीवृत्रकविभूषिताङ्गाः = तत्र महार्घाणि = बहुमूल्यानि वरपत्तनोद्गतानि=प्रधाननगरसमुत्पन्नानि तथा विचित्र-रागाणि=अनेकविधरङ्गरङ्गितानि एणी प्रैणी निर्मितानि=पणी = मृगी प्रैणी शरीर की आभा बिमल शोणित की बहुलता से रक्तवर्ण की सी होती हैं, अर्थात् जो विशिष्ट लावण्य से युक्त होता हैं। तथा (पञ्चपद्मकोरंट गदामचंपगसुतवियवरकणगनिधसवण्णा) पद्मपद्म-कमलकेशर, कोर-ण्टकदाम-कोरंटपुष्पों की माला, चम्पक-पुष्पविशेष, एवं तापे हुए सुवर्ण की रेखा इनके वर्ण के समान जिनका वर्ण होता है, अर्थात्-पद्मकेशर तप्तसुवर्ण आदि के समान भास्वर कान्ति से जो युक्त होते हैं, तथा (सुजायसव्वंग मुंदरंगा) जिनके शारीरिक अवयव अच्छीतरह से पुष्ट एवं सय प्रकार से सुन्दर होते हैं (महग्घवरपट्टणुगयविचित्तराग एणी पणी निम्मियदुग्गुल्ल वरचीणपट्टकोसेज्ज सोणीमुत्तगविभूसियंगा) तथा जिनका शरीर बहुमूल्य वस्त्रों से कि जो वस्त्र प्रधान नगरों के जो बने हुए होते हैं, विविध रंगों से रंगे रहते हैं, एणी प्रैणी-मृगी और

અધિકતાને લીધે રતાશ પડતી હોય છે, તથા જે વિશિષ્ટ લાવણ્યથી યુક્ત હોય છે, તથા “ પંચમ-પદ્મકોરંટ-ગદામ-ચંપગ-સુતવિયવર-કણક-નિધસવવણ્ણા” પદ્મપદ્મ-કમળ કેશર, કોરંટકદામ-કોરંટ પુષ્પોની માલા, ચંપાના ફૂલ, અને તથાવેલ સુવર્ણની રેખા જેવો જેમનો વર્ણ હોય છે. એટલે કે જે પદ્મકેશર તપ્ત સુવર્ણ આદિનાં જેવી સુંદર કંતિવાળા હોય છે, તથા સુજાયસવ્વંગમુંદ-રંગા” જેમનાં શરીરનાં અંગો સારી રીતે પુષ્ટ અને દરેક રીતે સુંદર હોય છે, “મહગ્ઘવર-પટ્ટણુગય-વિચિત્તરાગ-એણી-પણી દુગ્ગુલ્લવરચીણ-પટ્ટકોસેજ્જ સોણીસુ-ત્તાવિભૂસિયંગા” તથા જેમનાં શરીર બહુ કીમતી વસ્ત્રોથી સુશોભિત રહે છે. જે સુખ્ય શહેરોમાં બનેલાં હોય છે, વિવિધ રંગોથી રંગેલાં હોય છે,

સુશૌચીની ટીકા અઠ ૪ સુઠ ૫ ચક્રવર્તીલક્ષણનિરૂપણમ્

૪૧૩

ચ=મૃગીવિશેષ એવ તદ્રોમનિર્મિતાનિ યાનિ વસ્ત્રાણિ તાનિ, તથા દુક્કલાનિ=દુક્કલો વૃક્ષવિશેષઃ, તર્નિર્મિતાનિ વસ્ત્રાણિ, વલ્કલમુલ્લસલે જલેન સદ કુટ્ટયિત્વા ચૂર્ણીકૃત્ય સૂત્રાણિ નિર્માય ડતાનિ દુક્કલાનીત્યુચ્યન્તે તાનિ । તથા વરચીનાનિ=ચીનદેશોત્પન્નાનિ ‘પટ્ટ’ પટ્ટ સૂત્રમયાનિ-મલયદેશવિશેષસમુત્પન્નાનિ કૌશેયાનિ=કૃમિકોપસૂત્રનીર્મિતાનિ ‘રેશમી’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાનિ વસ્ત્રાણિ તથા શ્રોણીસૂત્રકં=કટિસૂત્રકં ‘ઋણદોરા’ ઇતિ પ્રસિદ્ધં ચેત્યેતૈઃ વિભૂષિતાનિ=અલંકૃતાનિ અજ્ઞાનિ યેપાં તે તથા વહુમૂલ્યસુકોમલાઽતિમૃક્ષ્મતમરંગ્ગવિરંગ્ગવિવિધવસ્ત્રકટિસૂત્ર-સુશોભિતશરીરા ઇત્યર્થઃ, ‘વરસુરભિગંધવરચુળ્લવાસવરકુસુમમરિયસિરયા’ વરસુરભિગંધવરચૂર્ણવાસવરકુસુમમૃતશિરસઃ=વરસુરભિગંધઃ=ઉત્તમ સુગંધયુક્તગંધદ્રવ્યં, તથા વરચૂર્ણવાસાઃ=વરાઃ=શ્રેષ્ઠાઃ=ચૂર્ણવાસાઃ=ચૂર્ણરૂપાણિ ગંધદ્રવ્યાણિ, વરકુસુમાનિ ચ-ચંપક માલતી પ્રમૃતીતિ તૈર્મૃતાનિ=વ્યાપ્તાનિ શિરાંસિ=મસ્તકાની મૃગીવિશેષ કે રોમોં સે નિર્મિત હોતે હૈં ડનસે સુશોભિત રહતે હૈં । યે વસ્ત્ર ધોતી કે સ્થાનાપત્ર હોતે હૈં । તથા જિસ દુક્કલ-દુપટ્ટ-કો યે ઓઢતે હૈં વહ રેશમી હોતા હૈ, એવં ચીન દેશકા બના હુઆ હોતા હૈ । દુક્કલવૃક્ષ કે વલ્કલ કો ઓઢલી મેં જલ કે સાથ પહિલે મૂસલ સે સ્ખૂબ કૂટા જાતા હૈ, યાદ મેં જબ વહ ચૂર્ણરૂપ મેં હો જાતા હૈ તબ ડસકે સૂત્ર તૈયાર ક્રિયે જાતે હૈં ઓર ફિર ડન્હે અચ્છી તરહ બુનકર યહ દુક્કલ બનાવા જાતા હૈ । એસે દુક્કલોં સે એવં કટિસૂત્ર સે જિનકા શરીર સદા અલંકૃત રહા કરતા હૈ, અર્થાત્ જો વહુમૂલ્ય, સુકોમલ, અતિમૃક્ષ્મતમ-એવં રંગવિરંગેં અનેકવિધવસ્ત્રોં સે, તથા કટિસૂત્ર સે વિભૂષિત શરીર રહતે હૈં (વરસુરભિગંધવરચુળ્લવાસવરકુસુમમરિયસિરયા) તથા ઉત્તમ સુગંધ યુક્ત ગંધદ્રવ્યોં સે, શ્રેષ્ઠચૂર્ણ વાસોં સે ચંપક, માલતી આદિ

એણી પ્રૈણી-મૃગલી અને વિશિષ્ટ પ્રકારની મૃગલીની ડંવાટીમાંથી બનાવેલાં હોય છે. તે વસ્ત્રો ધોતીની બજાએ પહેરાય છે. તથા તેમના દુપટ્ટા રેશમી હોય છે, અને તે ચીનમાં બનેલા હોય છે. દુક્કલ-વૃક્ષની છાલને પાણી નાખીને પહેલાં ખાંડણીયામાં સાંધેલાથી ખૂબ ખાંડવામાં આવે છે, બ્યારે તેનો ભૂકો થઈ બથ ત્યારે તેમાંથી તાર કાઢવામાં આવે છે, પછી તેને સારી રીતે વણીને તે દુક્કલ-દુપટ્ટા બનાવવામાં આવે છે. એવા દુપટ્ટા અને કટિસૂત્રથી જેમનાં શરીર સદા આભૂષિત રહે છે, એટલે કે જેમનાં શરીર બહુ મુલ્ય, સુકોમળ, અતિશય બારીક અને રંગબેરંગી અનેક પ્રકારનાં વસ્ત્રોથી, તથા કટિસૂત્રથી વિભૂષિત રહે છે, “વરસુરભિ-ગંધવર-ચુળ્લવાસવર-કુસુમ-મરિયસિરયા” તથા ઉત્તમ સુગંધવાળા દ્રવ્યોથી, શ્રેષ્ઠચૂર્ણની સુગંધથી, ચંપક, માલતિ આદિ

યેષાં તે તથા પરમસુગન્ધિદ્રવ્યચન્દનચૂર્ણચમ્પકાદિકુસુમસમ્ભારસમ્ભૂતમસ્તકા
 ઇત્યર્થઃ, ‘ કપ્પિયછેયાયરિયસુકયરહ્યમાલકડંગયતુડિયવરભૂસણપિણદ્દેહા ’
 —કલ્પિતછેકાચાર્યસુકુતરતિદમાલાકટકાઢ્ઢુટિતવરભૂપણપિણદ્દેહાઃ = તત્ર
 કાલ્પિતાનિ = પરિશ્રુતાનિ છેકાચાર્યેણ = શિલ્પિવરેણ સુકુતાનિ = સુદ્ધ
 રચિતાનિ રતિદાનિ = પ્રેમજનકાનિ યાનિ માલા કટકાઢ્ઢુટિતવરભૂપણાનિ=
 માલાઃ=સુવર્ણમાલાઃકટકાઃ=કઢ્ઢુણાનિ ‘ કઢા ’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાનિ, અઢ્ઢુદાનિ=
 કેયૂરાણિ ટુટિતાઃ=વાહુરક્ષિકાઃ, તથા વરભૂપણાનિ=સુકુટકુન્ડલાદિનિ ચ તૈઃ
 પિણદ્દઃ=વ્યાસો દેહો યેષાં તે તથા સુકુટકેયૂરકઢ્ઢુણાદિવિવિધભૂષણભૂષિતદેહા
 ઇત્યર્થઃ, ‘ ંકાવલિકંઠસુરહ્યવચ્છપાલંવપલંવમાણસુકયપહડત્તરિજ્જમુદિયાપિગલં-
 ગુલિયા ’ તત્ર—‘ ંકાવલિકંઠસુરહ્યવચ્છા ’ ંકાવલિકંઠસુરચિતવક્ષસ્કાઃ=
 ંકાવલી=વિવિધમણિપ્રથિતદારઃ કંઠે=કંઠપદેશે સુરચિતા=પરિશ્રુતા વક્ષસિ=વક્ષઃ
 સ્થલે યેષાં તે તથા ‘ પાલંવપલંવમાણસુકયપહડત્તરિજ્જા ’ પ્રાલમ્બપલમ્બમાન-

કે પુષ્પોં સે જિનકા મસ્તક સદા શોભિત રહતા હૈ, અર્થાત્-પરમસુગં-
 ધિત દ્રવ્યોં સે ચંદન કે ચૂર્ણ સે ચમ્પકાદિ કુસુમોં કે સંભાર સે જિનકા
 મસ્તક નિરન્તર ભરા રહતા હૈ । તથા (કપ્પિય છેયાયરિય-સુકય-રહ્ય
 માલ-કડંગ ગય-તુડિય-વર ભૂસણપિણદ્દેહા) જિનકી દેહ અચ્છી તરહ
 સે પહિરે ગયે આભૂષણોં સે, સુવર્ણ કી માલાઓં સે, કટકોં કઢોં સે,
 અંગદોં- (ભુજવંધોં) સે, ટુટિતોં સે વાહુરક્ષિકોં સે, ંવં સુકુટ કુંડલ
 આદિ ઉત્તમ અલંકારોં સે, કિ જો કારીગરોં કે દ્વારા વહુત હી અચ્છી
 તરહ બનાયે હુપ હોતે હૈં તથા પ્રેમોત્પાદક હોતે હૈં ઇનસે ઇનકી દેહ વ્યાસ
 રહતી હૈ (ંકાવલિકંઠ સુરહ્ય વચ્છપાલંવપલંવમાણસુકયપહડત્તરિજ્જ-

પુષ્પોઢી જોમનાં મસ્તક સદા સુશોભિત રહે છે, એટલે કે અતિશય સુગંધ-
 યુક્ત દ્રવ્યોઢી, ચન્દનના ચૂર્ણોઢી, ચંપક આદિ પુષ્પોના સંભારઢી જોમનાં
 મસ્તક સદા યુક્ત રહે છે, તથા “ કપ્પિય છેયાયરિય-સુકય-રહ્ય-માલ,
 કડંગ-ગય, તુડિય, વર ભૂસણપિણદ્દેહા ” જોમનાં શરીર સારી રીતે પહેરેલ
 આભૂષણોઢી, સુવર્ણની માળાઓઢી, કડાંઓઢી, “ અંગદો ” ‘ ભૂજવંધો ’
 ઢી, ટુટિતોઢી-વાહુરક્ષિકોઢી, અને સુગટ કુંડળ આદિ ઉત્તમ અલંકારોઢી
 આભૂષિત રહે છે. જે અલંકારો સારા કારીગરોએ સારી રીતે બનાવેલાં હોય
 છે તથા પ્રેમોત્પાદક હોય છે. “ ંકાવલિ-કંઠ-સુરહ્યવચ્છ-પાલંવ-પલંવમાણ-સુકય
 પહડત્તરિજ્જ-મુદિય-પિગલંગુલિયા ” તથા વિવિધ મણીઓ જેડેલા હોય જોમની

સુવર્ણિની ટીકા અંક ૪૨૦ ૫ ચક્રવર્તીલક્ષણનિરૂપણમ્

૪૧૫

મુકુતપટોતરીયા=પાલમ્બવત્=આનામિલમ્બિતકણ્ઠિકાવત્ પલમ્બમાનઃ, તથા મુકુતઃ=શોભનરચનાવિશેષયુક્તઃ પટઃ=શાટકઃ ઉત્તરીયમ્=ઉત્તરીયવસ્ત્રં ચ યેષાં તે તથા રચનાવિશેષેણ પરિધૃતશાટકોત્તરીયા इत्यर्थः, 'મુદિયાપિંગલંગુલિયા' મુદિકાપિંગ્લાક્ષુલિકા=મુદિકાભિઃ=અક્ષુલીયકૈઃ પિંગ્લાઃ=સ્વર્ણાદિમયત્વાત્ પીત-કાન્તયોઽક્ષુલયો યેષાં તે તથા 'ઉજ્જલનેવત્થરદ્યચિહ્નગવિરાયમાણા' ઉજ્જવલ-નેપથ્યરતિદ્ચિહ્નગવિરાજમાનાઃ = ઉજ્જવલં=નિર્મલં નેપથ્યં=વેષઃ 'પોશાક' इति प्रसिद्धः रतिदं=आनन्दजनकं 'ચિહ્નં' इति वस्त्रं चाकचिक्यं, તેન વિરાજ-માનાઃ=શોભમાનાઃ, તથા 'તેણ દિવાકરોઽવદિતા' તેજસા દિવાકરોઽવદિતાઃ=પ્રતાપેન સૂર્યસદૃશઃ 'સારયનવત્થણિયમહુરંગંભીરનિદ્ધયોસા' શારદનવસ્ત્રનિત્ત-મધુરગમ્ભીરસ્તિગ્ધયોપાઃ=શારદં=શરત્કાલિકં યન્નવસ્ત્રનિતં=નૂતનમેઘધ્વનિઃ તદ્-ન્મધુરો ગમ્ભીરઃ સ્તિગ્ધશ્ચ=હૃદયાહ્વાદકરો યોપઃ=શબ્દો યેષાં તે તથા 'ઉપ્પણ સમત્તરયણચક્રરયણપહાણા' ઉત્પન્નસમસ્તરત્નચક્રરત્નપ્રધાનાઃ=ઉત્પન્નાનિ=પાપાનિ મુદિયાપિંગલંગુલિયા) તથા કંઠ મેં વિવિધમણિયોં સે ગ્રથિત પહિરા હુઆ હાર જિનકે વક્ષસ્થલ પર લટકતા રહતા હૈ, તથા નાભિપ્રદેશ પર્યંત કંઠી કે સમાન લટકતે હુણ ઉત્તરીયવસ્ત્રકો એવં શોભન રચના વિશેષ સે યુક્ત કરકે ધોતી કો જો ધારણ કરતે હૈ। સ્વર્ણ આદિકી બની હુઈ અંગૂઠિયોં સે યુક્ત હોને કે કારણ જિનકી હાથોં કી અંગુલિયાં સદા પીલી કાંતિવાલી બની રહતી હૈ (ઉજ્જલનેવત્થ રદ્યચિહ્નગવિરાયમાણા) ઉજ્જવલ, આનંદજનક એવં ચિલકતી હુઈ પોશાક સે જો સદા વિરાજમાન રહતે હૈ (તેણ-દિવાકરોઽવદિતા સારય-નવત્થણિય-મહુર-ગંભીર-નિદ્ધયોસા) તથા જો અપને તેજ સે સૂર્ય કે જૈસે પ્રતાપશાલી હોતે હૈ। તથા જિનકા શબ્દ શરત્કાલ કે મેઘ કી નવીન ધ્વનિ કે જૈસા ગંભીર ઓર હૃદયાહ્વાદક હોતા હૈ (ઉપ્પણસમત્તરયણચક્રરયણપહાણા) તથા

ઝાકમાં પહેરેલી હોય છે અને વક્ષસ્થળ પર લટકતો હોય છે તથા નાભિ-પ્રદેશ સુધી કંઠીની જેમ લટકતાં ઉત્તરીય વસ્ત્રોને તથા મુંઢર વિશિષ્ટ રચનાથી યુક્ત થોતીને જેઓ ધારણ કરે છે, સુવર્ણ આદિમાંથી બનાવેલી ચીટીઓથી યુક્ત હોવાને લીધે જેમનાં હાથની આંગળીઓ સદા પીળા તેજથી યુક્ત રહે છે, “ ઉજ્જલનેવત્થરદ્યચિહ્નગવિરાયમાણા ” ઉજ્જવળ, આનંદદાયક અને ચળકતા પોષાકથી જેઓ સદા શોભી રહ્યા હોય છે, “ તેણ-દિવાકરોઽવદિતા સારય-નવત્થણિય-મહુર-ગંભીર-નિદ્ધયોસા ” તથા જે પોતાના તેજથી સૂર્ય સમાન પ્રતાપશાળી હોય છે, તથા જેમના શબ્દો શરદ્ગતુના મેઘના નવીન ધ્વનિના જેવા ગંભીર અને હૃદયમાં આનંદ ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે, “ ઉપ્પણ

સમસ્તરત્નાનિ ચક્રરત્નાનિ ચ યેસ્તે તથા, અત્ર એવ મથાનાઃ=પ્રધાનભૂતાઃ ચતુર્દશ રત્નાનિ યથા “સેનાવદ્ ૧ ગાઘાવદ્ ૨ પુરોહિત ૩ તુરગ ૪ વહ્નિ ૫ ગજ ૬ સ્ત્રી ૭ । ચક્રં ૮ છત્રં ૯ ચર્મ ૧૦, મણિ ૧૧ કાકિણી ૧૨ સ્વઙ્ગ ૧૩ દંડો ય ૧૪ ॥”
 છાયા-સેનાપતિ ૧ ગૃહપતિ ૨ પુરોહિત ૩ તુરગ ૪ વર્ષકિ ૫ ગજ ૬ સ્ત્રિય ૭ ।
 ચક્રં ૮ છત્રં ૯ ચર્મ ૧૦ મણિ ૧૧ કાકિણી ૧૨ સ્વઙ્ગ ૧૩ દંડથ ૧૪ ॥”
 ઇતિ ચતુર્દશરત્નાનિ । તથા ‘નવનિદિપણો’ નવનિધિપતયઃ=નવનિધિનાં સ્વા-
 મિનઃ । નવનિધયો યથા—

“ નૈસર્ગ્ય ૧ પંડુક ૨ પિંગલ ૩ સર્વરત્ન ૪ તદ્દામહાપદ્મ ૫ ।

કાલેય ૬ મહાકાલ ૭ માણવકમહાનિધિ ૮ સંઘ ૯ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ,
 છાયા-નૈસર્ગ્ય ૧ પંડુક ૨ પિંગલ ૩ સર્વરત્ન ૪ તથા મહાપદ્મ ૫ ।

કાલ ૬ મહાકાલ ૭ માણવકમહાનિધિ ૮ શંખ ૯ ॥ ૧ ॥ ”

‘ સમિદ્ધકોસા ’ સમૃદ્ધકોશઃ=પરિપૂર્ણભાણ્ડાગારઃ, ‘ચાઝરંતા’ ચતુરંતાઃ=
 ત્રિષ્વન્તેષુ સમૃદ્ધઃ, ચતુર્થેઽન્તે ચ હિમવાન પર્વતઃ, એવં ચત્વારોઽન્તાઃ=ભૂવિભાગઃ

જો પ્રાપ્ત સમસ્ત રત્નોં સે એવં ચક્રરત્ન સે પુરુષોં મેં પ્રધાનભૂત માને જાતે
 હૈં ચક્રવર્તી મિન ૧૪ ચૌરહ રત્નોં કે અધિપતિ માને જાતે હૈં—વે રત્ન યે
 હૈં—(૧) સેનાપતિ, (૨) ગાઘાપતિ, (૩) પુરોહિત (૪) તુરંગ (૫) વર્ષકિ,
 (૬) ગજ, (૭) સ્ત્રી, (૮) ચક્ર, (૯) છત્ર, (૧૦) ચર્મ, (૧૧) મણિ, (૧૨)
 કાકિણી, (૧૩) સ્વઙ્ગ (૧૪) દંડ । (નવનિદિપણો) તથા નવનિધિયોં કે
 જો ભોક્તા હોતે હૈં, નવનિધિયાં હસ પ્રકાર હૈં—(૧) નૈસર્ગ્ય, (૨) પંડુક,
 (૩) પિંગલ, (૪) સર્વરત્ન, (૫) મહાપદ્મ, (૬) કાલ, (૭) મહાકાલ (૮)
 માણવક ઓર (૯) શંખ । (સમિદ્ધ કોસા) ભાણ્ડાગાર સદા હરેક
 વસ્તુ સે ભરપુર બના રહતા હૈ, તથા (ચાઝરંતા) જો હિમવત્ પર્વત

સમત્તરયણચક્રત્વણપદ્ધાના ” તથા જે પ્રાપ્ત થયેલાં સમસ્ત રત્નોથી અને
 ચક્રરત્નથી પુરુષોમાં શ્રેષ્ઠ ગણાય છે. ચક્રવર્તિ જે ૧૪ ‘ચૌદ’ રત્નોના
 અધિપતિ મનાય છે, તે ચૌદ રત્નો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) સેનાપતિ, (૨)
 ગાઘાપતિ, (૩) પુરોહિત, (૪) તુરંગ, (૫) વર્ષકિ, (૬) ગજ, (૭) સ્ત્રી, (૮)
 ચક્ર, (૯) છત્ર, (૧૦) ચર્મ, (૧૧) મણિ, (૧૨) કાકિણી, (૧૩) અશ્વ અને
 (૧૪) દંડ. તથા તે ચક્રવર્તિ રાજાઓ નવનિધિયોને ભોગવે છે. તે નવનિધિ
 નીચે પ્રમાણે છે—(૧) નૈસર્ગ્ય, (૨) પંડુક (૩) પિંગલ, (૪) સર્વરત્ન, ૫
 મહાપદ્મ, (૬) કાલ, (૭) મહાકાલ, (૮) માણવક અને (૯) શંખ. “ સમિદ્ધ-
 કોસા ” તેમના ભંડાર સદા દરેક વસ્તુથી ભરપૂર રહે છે, “ ચાઝરંતા ”

येषां ते तथा हिमवत्समुद्रपर्यन्तपृथिवीशासकाः ‘चाउराहिं सेणाहिं समणुजाइजमा-
णमग्गा’ चतस्रभिः सेनाभिः समनुयायमानमार्गाः=हस्त्यश्वाथपदातिरूपचतुरङ्गसे-
नाभिः समनुयायमानः=अनुगम्यमानो मार्गो येषां ते तथा तदेव दर्शयति ‘तुरं-
गवई-गयवई-रहवई-नरवई’ तत्र ‘तुरंगवई’ तुरङ्गपतयः ‘गयवई’ गजपतयः
‘रहवई’ रथपतयः ‘नरवई’ नरपतयः=यदाति सेनापतयः ‘विउलकुला’
विपुलकुलाः=उच्चकुलाः, विश्रुतयशसः=विख्यातकीर्तयः ‘सारयससिसकल-
सोम्मवयणा’ शारदशसिसकलसौम्यवयनाः=शारदाः=शरत्कालिको यशः=चन्द्रः
कीदृशः सकलः=सम्पूर्णकलायुक्तः शरत्पूर्णिमाचन्द्र इत्यर्थः, तद्वत् सौम्यं=सुन्दरं,
वदनं=मुखं येषां ते तथा । ‘सूरा’ शूराः=शत्रुमर्दकाः ‘तिलोकनिगयपभावा’
त्रैलोक्यनिर्गतप्रभावाः=त्रिलोकव्यापिप्रभावसम्पन्नाः, ‘लद्धसद्धा’ लब्धशब्दाः=

पर्यंत तक की भूमि के शासक होते हैं, (चाउराहिं सेणाहिं समणुजाइ-
जमाणमग्गा) हस्ती, अश्व, रथ एवं पैदल सैन्य, इन चार अंगों वाली
सेना से जो सदा अनुगम्यमान मार्गवाले होते हैं, अर्थात् वे (तुरंगवई-
गयवई-रहवई-नरवई) अश्वपति, गजपति, रथपति, और नरपति होते हैं।
(विउलकुला) तथा उनका कूल बहुत ऊँचा होता है, (वीसुयजसा)
कीर्ति भी उनकी चारों दिशाओं में व्याप्त होती है। तथा (सारयससि-
सकलसोम्मवयणा) उनकी मुख शरत्काल की पूर्णिमा के चन्द्रमा जैसा
सौम्य होता है तथा वे (सूरा) अपने शत्रुओं के मर्दक होने से शूर-
वीर होते हैं, तथा (तिलोकनिगयपभावा) उनका प्रभाव तीनलोक
में व्याप्त रहता है, इसलिये वे (लद्धसद्धा) उनकी प्रसिद्धि तीनों लोकों

તેઓનું હિમાલય પર્વત મુખીના પ્રદેશ પર શાસન ચાલે છે. “ચાઉરાહિ-સેનાહિં
મમણુજાઇજમાણમગ્ગા” તથા તે ચક્રવર્તિ રાજાઓ ગજદળ, અશ્વદળ,
રથદળ, અને પાયદળ, એ ચતુરંગી સેના સહિત માર્ગ પર ક્યૂં કરનારા હોય
છે, એટલે કે “તુરંગવઈ ગયવઈ રહવઈ નરવઈ” તેઓ અશ્વપતિ, ગજપતિ,
રથપતિ અને નરપતિ હોય છે. “વિઉલકુલા” તથા તેઓ ઊંચાં ડુંગરા
હોય છે. “વિસુયજસા” તેમની કીર્તિ ચારે દિશાઓમાં ફેલાયેલી હોય છે.
તથા “સારયસસિસકલસોમ્મવયણા” તેમનાં મુખ શરદ ઋતુની
પૂર્ણિમાના ચન્દ્ર સમાન સૌમ્ય હોય છે, તથા તેઓ “સૂરા” પોતાના
શત્રુઓનું મર્દન કરનાર હોવાથી શૂરવીર હોય છે, “તિલોકનિગયપભાવા”
તેમનો પ્રભાવ ત્રણે લોકમાં વ્યાપેલો હોય છે. તેથી “લદ્ધસદ્ધા” તેઓ ત્રણે

ત્રિજગત્પસિદ્ધાઃ, ' સમત્તમરહાદિ વા ' સમસ્તમરતાધિપાઃ=દક્ષિણોત્તરમરતાધિ-
પતયઃ ' નારિદા ' નરેન્દ્રાઃ, ધીરાઃ=સંગ્રામાદિષ્વપતિહતશક્તિસમ્પન્નાઃ. સમેલવળ-
કાણળં ' સસૈલવળકાનનં=સૈલૈઃ=પર્વતૈઃવનૈઃ=નગરદરસ્થૈઃ, કાનનૈઃ=નગરસમીપસ્થૈઃ
સહ=સહિતં યત્તત્થાવિધં ' હિમવંતસાગરંતં ' હિમવત્સાગરાન્તં=હિમવાન્=શુભ્ર-
હિમવત્પર્વતઃ સાગરશ્ચ=સમુદ્રઃ તદન્તં=ત્વાવત્પર્યન્તં 'મરહવાસં' ભારતવર્ષ ' ભોત્તૂળ '
શુક્ત્વા=ઉપશુબ્ધ ' જિયસત્તૂ ' જિતશત્રવઃ=પરાજિતસમસ્તશત્રવઃ, 'પવરાયસીદ્ધા '
પવરરાજસિદ્ધાઃ=પવરેષુ=મહાપરાક્રમેષ્વપિ રાજસુ મધ્યે સિદ્ધાઃ=સિદ્ધસદશાઃ, પ્રવ-
રાશ્વતે રાજસિદ્ધા ઇતિ વા વિગ્રહઃ= ' પુન્વકહતવળમાવા ' પૂર્વકૃતતપઃપ્રભાવાત્=
પૂર્વજન્મકૃતતપો માદાત્મ્યાત્ ' નિવિદ્ધસંચિયમુદ્ધા ' નિર્વિદ્ધ સચિતસુભાઃ=
ઉપશુક્તસચિતસુભારાશયઃ ' અણેગવાસસયમાઊવંતો ' અનેકવર્ષશતાયુષ્મન્તઃ,

મેં હો જાતી હૈ, ઓર વે (સમત્તમરહાદિ વા) સમસ્ત મરતસ્વંદ કે
અધિપતિ હોતે હૈ, અર્થાત્-૫ સ્લેચ્છસ્વંદ ઓર ૧ આર્યસ્વંદ હિસ
પ્રકાર સંપૂર્ણમરતક્ષેત્ર કે સ્વામી હોતે હૈ, (નરિંદા) તથા વે મનુષ્યોં કે
હન્દ્ર માને જાતે હૈ (ધીરા) તથા વે સંગ્રામ આદિ મેં અપ્રતિહત શક્તિ
સે સંપન્ન હોતે હૈ (સસૈલવળકાણળં ચ હિમવંતસાગરંતં ભોત્તૂળ મર-
હવાસં જિયસત્તૂ પવરરાયસીદ્ધા) તથા વે પર્વતોં, વનોં-નગર સે દૂર
રહે હુણ જંગલોં, એવં કાનનોં-નગર સમીપસ્થ જંગલોં સે યુક્ત તથા
શુભ્રહિમવાન્ પર્વત ઓર સમુદ્રપર્યંત પ્રસૂત એસે ભારતવર્ષ કા ઉપભોગ
કરકે સમસ્ત શત્રુઓં કો પરાજિત કરને કે કારણ મહાપરાક્રમ શાલી
રાજાઓં કે બીચ મેં કેશરી કે સમાન ચમકતે હૈ, ઓર (પુન્વકહતવળ
માવા નિવિદ્ધ સંચિયમુદ્ધા) પૂર્વજન્મ મેં આચરિત તપ કે પ્રભાવ સે વે

લોકમાં પ્રસિદ્ધ હોય છે, અને તેઓ “ સમત્તમરહાદિવા ” સમસ્ત ભરતખંડના
અધિપતિ હોય છે, એટલે કે પાંચ મ્લેચ્છ ખંડ અને એક આર્યખંડ. એ રીતે
સંપૂર્ણ ભરતક્ષેત્રના અધિપતિ હોય છે. “ નરિંદા ” તથા તેમને મનુષ્યોના
હન્દ્ર ગણવામાં આવે છે, “ ધીરા ” તેઓ સંગ્રામ આદિમાં અશ્વત શક્તિ
ધરાવનાર હોય છે, “ સસૈલવળકાણળં ચ હિમવંતસાગરંતં ભોત્તૂળમરહવાસં-
જિયસત્તૂ પવરરાયસીદ્ધા ” તથા તેઓ પર્વતો, વનો-નગરથી દૂર આવેલાં જંગલો,
કાનનો-નગરની પાસેનાં જંગલોથી યુક્ત તથા હિમાલય પર્વતથી સમુદ્ર સુધી
વિસ્તૃત એવા ભારત વર્ષના ઉપભોગ કરીને સઘળા શત્રુઓને માઠન કરવાને
કારણે મહાપરાક્રમી રાજાઓની વચ્ચે કેશરી “ સિંહ ” સમાન ચમકે છે, અને
“ પુન્વકહતવળમાવા નિવિદ્ધ સંચિયમુદ્ધા ” પૂર્વજન્મમાં કરેલાં તપના પ્રભા-

સુદર્શિની ટોકા અ૦ ૪ સૂ૦ ૬ બલદેવવાસુદેવસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૧૬

‘જળવયપ્પહાણાહિ’ જનપદપ્રધાનાભિઃ=જનપદેષુ=દેશેષુ પ્રધાનાભિઃ=સર્વોત્કૃષ્ટ-
ષ્ટાભિઃ ‘મજ્જાહિ’ માર્યાભિઃ=સ્ત્રીભિઃ ‘લાલિયંતા’ લાલ્યમાનાઃ=ક્રીડયમાનાઃ
‘અતુલસદ્ધર્મસરસ્વગંધેય અણુભવિત્તા’ અતુલશબ્દસ્પર્શસરૂપગન્ધાંશ્ચાઽ-
નુભવન્તઃ=અનુપમશબ્દાદિ વિષયસુખાન્યાસ્વાદયન્તઃ ‘તે વિ’ તેઽપિ=તાદૃશ
અપિ ચક્રવર્તિનઃ, ‘કામાણં અવિતિત્તા’ કામાનામવિત્તમાઃ=કામભોગેષુ ટુસિરહિતા
एव, ‘મરણધર્મં’ મરણધર્મ=મૃત્યું ‘ઊવળમંતિ’ ઉપનમન્તિ=પ્રાન્યુવન્તિ ત્રિયન્તે
इत्यर्थः ॥ સૂ૦ ૫ ॥

પુનઃ કે ઇત્યાહ— ‘મુજ્જો’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—મુજ્જોબલદેવા વાસુદેવા ય પવરપુરિસા મહાબલ-
પરક્કમા મહાધણુવિયટ્ટગા મહાસત્તસાગરા દુહ્ધરા ધણુધરાનર-
વસહા રામકેસવા ભાયરો સપરિસા સમુદવિજયમાઝ્યદસા-
રાણં પઞ્જુણ—પયિવસંચઅનિરુદ્ધા નિસદ્ધઉમ્મુય—સારણગય
સુમહદુમ્મુહાદીર્ણં જાયવાણં અધ્ધુટ્ટાણવિકુમારકોડીં હિય-
યદઙ્ગયા દેવીણ રોહિણીણ દેવીણ દેવઙ્ગેય ય આણંદહિયમા-

સંચિત સુખ કી રાશિકો ભોગતે હૈં, તથા उनकी (अणेगवाससयमाउ-
व्वंतो) सैकड़ों वर्षों की आयु होती है (जणवयप्पहाणाहि मज्जाहि लालि-
यंता) तथा वे समस्त देशों में सर्वोत्कृष्ट ऐसी ६४ चौसठ हजार स्त्रियों
के साथ क्रीडा किया करते हैं (अतुलसदधर्मसरस्वगंध य अणु-
भवित्ता) और उनके साथ जो अनुपम शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध
आदि पांचो इन्द्रियों के विषयों से जन्य सुखों का आस्वादन करते रहते
हैं ऐसे (ते वि) वे चक्रवर्त्ती आदी भी (कामाणं अवितित्ता मरण-
धम्मं उवणमंति) कामसुखों से अतृप्त ही बने रहते हैं और अन्त में
मरण को प्राप्त हो जाते हैं ॥ सू० ५ ॥

પથી પ્રાપ્ત કરેલ સુખની રાશિનો ઉપભોગ કરે છે, તથા “અણેગવાસસયમા-
ઉવ્વંતો” તેમનું આયુષ્ય સેકડો વર્ષનું હોય છે, તથા “જળવયપ્પહાણાહિ-
લાલિયંતા” સમસ્ત દેશોમાં અનુપમ એવી ચોસઠ હજાર સ્ત્રીઓ સાથે ક્રીડા
કરે છે, અને “અતુલસદ્ધર્મસરસ્વગંધેયઅણુભવિત્તા” તેમની સાથે અનુપમ
શબ્દ, સ્પર્શ, રસ, રૂપ, ગંધ આદિ પાંચે ઇન્દ્રિયના વિષયોથી જનિત સુખો
અનુભવે છે. એવા તે “તે વિ” ચક્રવર્તિ આદિ પણ ‘કામાણં’ અવિતિત્તા મરણ-
ધર્મં ઉવળમંતિ” કામભોગથી અતૃપ્ત રહે છે અને અંતે મરણ પામે છે ॥સૂ.પા॥

વનંદળકરા સોલસરાયવરસહસ્સાણુજાયમગ્ગા સોલસદેવી સહ-
સ્સવરણયણહિયયદડયા ણાણામણિકળગરયણમૌત્તિયપવાલ
ધળધળસંચયા રિદ્ધિસમિદ્ધકોસા હય-ગય-રહસહસ્સસામી
ગામાગર-ળગર-લેહ-કઠ્ઠવડ-મડંવ-દોળમુહ-પટ્ટણા-સમસંવાહ-સહ-
સ્સથિમિય નિવ્વુયપ્પમુદ્ધયજળવિવિહસહસ્સનિપ્પજ્ઞમાણમેદ-
ળી સરસરિયતલાગ-સેલકાળળ-આરામુજ્ઞાળમળાભિરામ-
પરિમંડિયસ્સ દાહિણદ્વ-વેયદ્વ-ગિરિવિભત્તસ્સલવળજલપરિગયસ્સ-
છવિવહ-કાલગુળકમજુત્તસ્સ અદ્ધભરહસ્સ સામિયા ધીરકિત્તિ
પુરિસા ઓહબલા અતિવલા અનિહયા ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકા:-‘મુજ્જો’ ભૂય:=પુનઃચલદેવા વાસુદેવાશ્ચ તેડપિ મરણધર્મક્રુપનમન્તીતિ
સસ્વન્ધઃકીદ્દશાસ્તે इत्याह-‘પવરપુરિસા’ પ્રવરપુરુષા:=પ્રધાનપુરુષા ‘મહાચલપર-
કમો’ મહાચલપરાક્રમા:=મહાચલા મહાપરાક્રમાશ્ચ તેવ ચલં=માનસિકશક્તિઃ પરા-
ક્રમઃ=કાયિકશક્તિઃ । ‘મહાધણુવિયટ્ટગા’ મહાધનુર્વિવર્તકાઃ-શાર્ઙ્ગાદિધનુર્વિકર્ષકાઃ,

ફિર હસ પ્રકારકે કૌન હોતે હૈં ? સો કહતે હૈં-‘ મુજ્જો ચલદેવા ’
હત્યાદિ ૦ ।

ટીકાર્થ-(મુજ્જો ચલદેવા વાસુદેવા ય) દેલ્લો-ફિર જો ચલદેવ ઔર
વાસુદેવ હોતે હૈં વે ખી કામ સે અતુષ્ઠ હી મરણધર્મ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં;
હસ પ્રકાર સે હસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા મેં સંબંધ લગા લેના ચાહીયે । અબ
વે ચલદેવ ઔર વાસુદેવ કૈસે હોતે હૈં હસકા વર્ણન સૂત્રકાર કારતે હૈં
(પવરપુરિસા) વે ચલદેવ ઔર વાસુદેવ પ્રવર પુરુષ-પ્રધાનપુરુષ હોતે હૈં
(મહાચલપરકમો) હનકી માનસિક શક્તિ તથા કાયિકશક્તિ
અનોલ્લી હોતી હૈ(મહાધણુવિયટ્ટગા) શાર્ઙ્ગ આદિ ધનુષ્યકે વે વિકર્ષક હોતે

વળી એવા કેણુ હોય છે ? તો કહે છે કે “ મુજ્જોચલદેવા ” ધત્યાદિ

ટીકાર્થ-“મુજ્જો ચલદેવા વાસુદેવા ય” વળી જે ણાણદેવા અને વાસુદેવા હોય
છે; તેઓ પણ કામથી અતૃપ્ત રહીને જે મૃત્યુ પામે છે, આ પ્રમાણે આ સૂત્રની
વ્યાખ્યાનાં સંબંધ સમજવાના છે. હવે તે ણાણદેવ અને વાસુદેવ કેવા હોયછે,
તે સૂત્રકાર વર્ણવે છે- “ પવરપુરિસા ” તે ણાણદેવ અને વાસુદેવ પ્રવર પુરુષ-
પ્રધાન પુરુષ હોય છે “મહાચલપરકમો” તેમની માનસિક અને શારીરિક શક્તિ
અદ્ભુત હોય છે “મહાધણુવિયટ્ટગા” તેઓ શાર્ઙ્ગ આદિ ધનુષ્યના વિકર્ષક

સુરશિની ટીકા અં ૪ સુ. ૬ ચલદેવવાસુદેવસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૨૧

‘મહાસત્તસાગરા’ મહાસત્તસાગરાઃ = મહાચલસ્ય વિશાલચલસ્ય સાગરા इव
સાગરાઃ પ્રભૃતચલસમ્પન્ના इत्यर्थः ‘દુદ્ધરા’ દુર્ધરાઃ = દુર્ધર્ષાઃ - શત્રુભિરનિવાર્યાઃ
‘ધનુધરા’ ધનુર્ધરાઃ = શાર્ક્ષાદિધનુર્ધારિણઃ ‘નરવસભા’ નરવૃષભાઃ = પુરુષેષુ
શ્રેષ્ઠાઃ ‘રામકેસવા’ રામકેશવાઃ = ચલદેવવાસુદેવા ‘ભાયરો’ ભ્રાતરઃ ‘સપ-
રિસા’ સપર્પદઃ = સપરિવારાઃ ‘સમુદ્રવિજયમાદિયદસારાણં’ સમુદ્રવિજયાદિદશા-
ર્હાણાં = સમુદ્રવિજય આદિર્યેષાં તે તથા તે ચ તે દશાર્હસ્તેષાં તે ચ યથા—

સમુદ્રવિજયો ૧ ઁશ્વોભ્યઃ ૨ સ્તિમિતઃ ૩ સાગરસ્તથા ૪ ।

હિમવાન ૫ ચલ ૬ ધરણઃ ૭ પૂરણસ્તથા ૮ ॥

અભિચન્દ્રશ્ચ ૯ નવમો વસુદેવશ્ચ ૧૦ ચીર્યવાન્ ॥

તથા— ‘પઞ્જુણપયિવસંવઅનિરુદ્ધનિસદઽમ્મુયસારણગયસુમુહદુમ્મુહાદીણ’

હૈ—ચઢાને વાલે હોતે હૈ, (મહાસત્તસાગરા) વિશાલચલ કે યે સાગર હોતે હૈ
અર્થાત્ બહૂત અધિકચલ કે યે અધિપતિ હોતે હૈ, (દુદ્ધરા) શત્રુઓ દ્વારા
યે અનિવાર્ય હોતે હૈ (ધનુધરા) શાર્ક્ષ આદિ ધનુષોં કે યે ધારણ—
કરને વાલે હોતે હૈ, (નરવસભા) પુરુષોં મેં શ્રેષ્ઠ હોતે હૈ (રામકેસવા)
ચલદેવ કી અપર સંજ્ઞા રામ ઓર વાસુદેવ કી કેશવ હોતી હૈ । (ભાયરો)
યે સંબંધ મેં ભાઈ ભાઈ હોતે હૈ । (સપરિસા) પરિવારસહિત હોતે હૈ ।
(સમુદ્રવિજય માદિયદસારાણં પઞ્જુણ પદ્મ સંવ અનિરુદ્ધા નિસદ ઽમ્મુય
સારણગય સુમુહદુમ્મુહાદીણં જાયવણં અદ્ધુદ્ધાણ વિ કુમારકોડીણં હિયય-
દદ્યા) તથા સમુદ્રવિજય ૧, અશ્વોભ્ય ૨, સ્તિમિત ૩, સાગર ૪, હિમ-
વાન ૫, ચલ ૬, ધરણ ૭, પૂરણ ૮, અભિચન્દ્ર ૯ ઓર વસુદેવ જન સમુ-
દ્રવિજય આદિ ૧૦ દશાર્હોં કે લિયે તથા પ્રશુન્ન પ્રતિવસાંચ, અનિરુદ્ધ,

(અસાવનારા) હોય છે, “મહાસત્તસાગરા” વિશાળ ળળાતા સાગર હોય છે,
એટલે કે ધણુ જ ળળવાળા હોય છે, અથવા મોટા સૈન્યના અધિપતિ હોય
છે. “દુદ્ધરા” શત્રુઓ દ્વારા અપરાજિત હોય છે, “ધનુધરા” શાર્ક્ષ આદિ
ધનુષ્યોને ધારણ કરનારા હોય છે, “નરવસભા” પુરુષોમાં શ્રેષ્ઠ હોય છે.
“રામકેસવા” ળળાદેવનુ ળીતુ નામ રામ અને વાસુદેવનુ ળીતુ નામ કેશવ
હોય છે. “ભાયરો” તેઓ ભાઈઓનું સગપણ ધરાવે છે, અને “સપરિસા”
પરિવાર વાળા હોય છે. ‘સમુદ્રવિજયમાદિય દસારાણં પઞ્જુણ પદ્મ સંવ-
અનિરુદ્ધા નિસદ ઽમ્મુયસારણગયસુમુહદુમ્મુહાદીણં જાયવણં અદ્ધુદ્ધાણ વિ કુમારકોડીણં
હિયયદદ્યા” તથા (૧) સમુદ્ર વિજય, (૨) અશ્વોભ્ય, (૩) સ્તિમિત
(૪) સાગર (૫) હિમવાન, (૬) ચલ, (૭) ધરણ (૮) પૂરણ (૯) અભિચન્દ્ર-
અને (૧૦) વસુદેવ, તે સમુદ્ર વિજય આદિ ૧૦ દશાર્હોને, તથા પ્રશુન્ન,

પ્રશુભ્ન — પ્રતિવસાંવાઽનિરુદ્ધનિષ્કોલ્મુક — સારણ — ગજ — સુમુખ, દુર્મુખ, દુર્મુખાદીનાં
 ‘જાયવાળાં’ યાદવાનાં = યદુવંશિનાં ‘અદ્વદ્વાણ વિ’ અર્દ્ધચતુર્થાનામપિ =
 સાર્થતિસૂનામપિ ‘કુમારકોટીણ’ કુમારકોટીનાં ‘હિયયદ્વયા’ હૃદયદયિતાઃ =
 હૃદયપ્રિયાઃ ‘દેવીણ રોહિણીણ દેવીણ દેવઈણ ય આણંદહિયમાવનંદણકરા’ દેવ્યા
 રોહિણ્યાઃ = વલદેવમાતુઃ દેવ્યાદેવક્યાઃ = કૃષ્ણમાતૃશ્ચ આનંદરૂપો યો હૃદયમાવ-
 સ્તસ્ય નન્દનકરાઃ = વૃદ્ધિકારકાઃ ‘સોલસરાયવરસહસ્તાણુજાયમગ્ગા’ પોઢશ-
 રાજવરસહસ્તાણુયાતમાર્ગાઃ = પોઢશસહસ્રસંખ્યકા રાજવરા અનુમતા ભવન્તિ
 માર્ગે યેષાં તે તથા । તત્પદશિતનીતિમાર્ગાનુવર્તિન इत्यर्थः तदाज्ञाकारिण इति
 યાવત્ । સોલસદેવીસહસ્રસવરણયણહિયયદ્વયા’ પોઢશદેવીસહસ્રવરનયનહૃદય-
 દયિતાઃ = પોઢશસહસ્રદેવીનાં વરનયનાનાં = ચારુ લોચનાનાં સુન્દરીનાં હૃદયદયિતાઃ =
 હૃદયચલભાઃ, વિશેષજમિદં વાસુદેવપ્રેક્ષયા । ‘જાણામણિકણગરયણમોત્તિયપ-
 નિષધ, ઉલ્મુક, સારણ, ગજ, સુમુખ, દુર્મુખ આદિ સાઢાતીન ૩॥ કરોડ
 યાદવકુમારોં કે લિયે યે હૃદય સે અધિક પ્યારે હોતે હૈં । (દેવીણ રોહિ-
 ણીણ દેવીણ દેવઈણ ય આણંદહિય માવનંદણકરા) દેવી રોહિણી કે તથા
 દેવી દેવકી કે આનંદરૂપ હૃદયભાવ કી યે વૃદ્ધિ કરનેવાલે હોતે હૈં, દેવી
 રોહિણી યે વલદેવ કી માતા તથા દેવી દેવકી યે કૃષ્ણકી માતા હૈં ।
 (સોલસરાયવરસહસ્તાણુજાયમગ્ગા) ૧૬ સોલ હજાર રાજા જિનકે પીછેર
 માર્ગ મેં ચલા કરતે હૈં, અર્થાત્ જિસ પ્રકાર વે હન્હેં નીતિમાર્ગ કા પ્રદ-
 ર્શન કરતે હૈં ડસી નીતિમાર્ગકા યે અનુસરણ કરતે હૈં, અથવા ડનકી
 આજ્ઞાનુસાર ચલતે હૈં । (સોલસ દેવીસહસ્રસવરણયણહિયયદ્વયા) ૧૬ સોલ
 હજાર સ્ત્રિયોં કે નયનોં કો ઓર હૃદયોંકો યે અત્યંતપ્રિય હોતે હૈં, યહ
 વિશેષણ વાસુદેવકી અપેક્ષા સે કહા ગયા જાનના ચાહિયે । (જાણામ-

પ્રતિવસાંબ, અનિરુદ્ધ, નિષધ, ઉલ્મુક, સારણ, ગજ, સુમુખ, દુર્મુખ આદિ
 સાઢા ત્રણ કરોડ યાદવ કુમારોને તે પ્રાણુથી પણ અધિક વહાણા હોય છે,
 “દેવીણ રોહિણીણ દેવીણ દેવઈણ ય આણંદહિયમાવનંદણકરા” દેવી રોહિણી
 તથા દેવી દેવકીના હૃદયના આનંદમાં તેઓ વૃદ્ધિ કરનારા હોય છે. દેવી
 રોહિણી જળદેવની માતા તથા દેવી દેવકી કૃષ્ણની માતા છે. “સોલસરાય-
 સહસ્તાણુજાયમગ્ગા” ૧૬ સોળ હજાર રાજાઓ તેમને અનુસરે છે, એટલે કે તેમના
 દ્વારા જે નીતિમાર્ગ તેઓ બતાવે છે, એ જ નીતિમાર્ગનું તેઓ અનુસરણ
 કરે છે, અથવા તેમની આજ્ઞા પ્રમાણે તે બધા ચાલે છે. “સોલસ દેવીસહસ્રસ-
 વરણયણહિયયદ્વયા” ૧૬ સોળ હજાર સ્ત્રીઓનાં નયનો તથા હૃદયને તેઓ અત્યંત
 પ્રિય હોય છે. આ વિશેષણ વાસુદેવને અનુલક્ષી અપાયેલું છે. “જાણામણિ-

બાલધનધણસંચયા ' નાનામણિકનકરત્નમૌક્તિકપત્તાલધનધાન્યસશ્ચયા; , તત્ર નાનાવિધા મણયઃ=ચન્દ્રકાન્તાદયઃ કનકાનિ=સુવર્ણાનિ રત્નાનિ=કર્કેતનાદીનિ મૌક્તિકાનિ=મુક્તાફલાનિ પ્રવાલાનિ=' મુંગા ' इति पसिद्धानि धनानि=गणिमादीनि, તત્ર ગણિમં-ગણયિત્વા યદીયતે તદ્વસ્તુ ગણિમયિત્યુચ્યતે નાલિકેરપૂર્ણ-ફલાદિકમ્ , एवं धरिमं-यत्तुलायां धृत्वा दीयते तत्. सुवर्णरजतादिकम्, मेयं-कुडवेन-मानविशेषेण ' पायली ' इति प्रसिद्धेन परिमीय यदीयते तत्, શાલીગો-ધૂમાદિકમ્ , परिच्छेद्यं परीक्ष्य यदीयते तत् , રત્નવસ્ત્રાદિકમ્ , धान्यानि शालियवादीनि तेषां सश्रयो येषां ते तथा 'रिद्धसमिद्धकोसा' कदि समृद्धकोशाः=विविधसंपत्तिपूर्णभाण्डागाराः ' हयगयरहसहससामी ' हयगजरथसहस्रस्वामिनः=स्पष्टम् । ' गामागरणगरखेडकव्वडमडंबदोणमुहपट्टणाऽऽसमसंबाह सहस्र थिमियनिव्वुयप्पमुइयज्जणविविह-सस्सनिप्फज्जमाणमेइणि सरसरियतत्ता-णिकणम-रयण-मोत्तिय पत्तालधणधणसंचया) चन्द्रकान्त आदि नाना प्रकारके मणियों की, सुवर्ण की, कर्कैतनादि रत्नों की, मुक्ताफलों की, मंगाओं की, तथा धन-गणिमादि, तथा गणिम-मिनकर दी जानेवाली नालिकेर पूर्णफल आदि वस्तुओं की, तथा धरिम-तुला से तौल कर दी जानेयोग्य सुवर्ण रजत आदि द्रव्यों की, तथा मेय-कुडव 'पायली' नापके नामविशेष से नापकर दिये जानेयोग्य शालि गोधूम आदि अनाजों की, तथा परिच्छेद्य-परीक्षा करके दी जानेयोग्य रत्न वस्त्र आदि चीजों की तथा धान्य शालि यव आदि धान्यों की इनके यहां राशि रहा करती है । तथा—(रिद्धसमिद्धकोसा) विविध संपत्तिसे इनका भाण्डागार (भंडार) पूर्ण भरा रहता है । तथा (हयगयरहसहससामी) हयों के घोड़ों के, हाथियों के एवं रथों के ये स्वामी होते हैं । (गामागरणगरखेडकव्वडमडंबदोणमुहपट्टणासम

કળગરયણમોત્તિય પત્તાલધણધણસંચયા ” ચન્દ્રકાન્ત આદિ વિવિધ મણી-ઓનો, સુવર્ણનો, કર્કેતનાદિ રત્નોનો, સાથા મોતીનો, મુંગાઓનો, તથા, ધન-ગણિમાદિનો, (ગણિમ-ગણીને અપાતી નાણથેર પૂર્ણિક્ષા આદિ વસ્તુઓનો) ધરિમનો (“ ધરિમ—ત્રાજવાથી ભેળીને આપવા યોગ્ય સુવર્ણ, ચાંદી આદિ દ્રવ્ય) મેય-કુડવનો (“ પાયલી ” (માણ) આદિથી ભરીને આપવા યોગ્ય ચોખા, ઘઉં આદિ અનાજ) પરિચ્છેદ—પરીક્ષા કરીને આપવા યોગ્ય રત્ન-વસ્ત્ર આદિ ચીજોનો, તથા ધાન્યનો (ચોખા યવ આદિ અનાજનો) તેમને ત્યાં ભંડાર ભરેલ હોય છે. તથા “ રિદ્ધિસમિદ્ધકોસા ” વિવિધ સંપત્તિથી તેમનો ભંડાર સદા ભરપૂર રહે છે. તથા “ હયગયરહસહસસામી ” ઘોડા, હાથી અને રથોના તેઓ અધિપતિ હોય છે “ ગામાગરણગરખેડકવ્વડમડંબ

मसेलकागणआरामुज्जागमणाभिरामपरिमंडियस्स ' तत्र ग्रामाऽऽगरनगर
 खेटकर्वटमडंबद्रोगमुखपत्तनाऽऽश्रमसंवाहाः = तत्र ग्रामः = ग्रसते बुद्ध्यादि
 गुणानिति ग्रामःपृथोदरादित्वात्सकारस्य मकारः । अन्ये संवाहपर्यन्ताः पूर्वस्मिन्
 चक्रवर्त्तिभूत्रे व्याख्यातपूर्वाः, तेषां यानि सहस्राणि तैः, ' धिमिय ' स्तिमिताः=
 स्वचक्रपरचक्रभयरहिताः ' निव्वुय ' निर्वृताः=सुशान्तचित्ताः तथा ' प्रमुइय ' प्रमुदि-
 ताश्च=अतिप्रसन्ना ये जनास्तैः, तथा ' विविहमस्सनिष्पज्जमाणमेइणी ' विविधसस्य-
 निष्पद्यमानमेदिनी-विविधानि सस्यानि=धान्यानि तैःनिष्पद्यमाना सम्पद्यमाना या
 ' मेइणी ' मेदिनी=पृथिवी तथा तथा ' सर ' सरांसि=जलाशयविशेषाः, ' सरिय'
 सरितः=नद्यः ' तलाग ' तडाकाः=महाजलाशयाः ' सेल ' शैलाः=पर्वताः'काणण'
 काननानि=सामान्यवृक्षोपेतानि नगरासन्नवर्त्तिवनानि, आरामाः=ठनामण्डपाद्युपे-
 तानि, राज्ञामन्तः पुरेधानानि उद्यानानि=विविधपादपकुसुमसमृद्धसितसर्वजनविहारो-
 संवाहसहस्रधिमियनिव्वुयप्पमुइयजण-विविहसस्सनिष्पज्जमाणमेइणि-
 सर सरियनलागसेलकागण आरामुज्जागमणाभिरामपरिमंडियस्स) ग्राम
 आकर, नगर, खेट, कर्वट, मडंब, द्रोगमुख, पत्तन, आश्रम, संवाह इन
 सबकी हजारोंकी संख्यासे स्वचक्र एवं परचक्रके भयसे रहित ऐसे तथा
 जिनका चित्त सदा सुशान्त बना हुआ रहना है ऐसे अति प्रमुदित
 मनुष्यों से तथा विविध प्रकारकी धान्य राशि जिसमें उत्पन्न होती है
 ऐसी मेदिनीसे, तथा मनोहर जलाशय विशेषोंसे, नदियोंसे, तलावों से,
 पर्वतों से, सामान्य वृक्षोंसे युक्त, एवं नगरके पास रहे हुए ऐसे काननों(वनों)
 से तथा लतामण्डप आदि से युक्त ऐसे राजाओं के अन्तःपुरके उद्यानों
 से, तथा अनेक प्रकार के वृक्षोंसे एवं कुसुमों से समृद्धसित एवं सर्व
 जनों के विहार योग्य ऐसे उपवनों से परिमंडित हुए, तथा (दाणिद्वे-

दोणमुहपट्ठणासमसंवाह-सहस्स-धिमिय-निव्वुयप्पमुइयजणविविहसस्स निष्पज्जमाण
 मेइणिसर—सरिय—तलाग—सेल—काणण—आरामुज्जागमणाभिरामपरिमंडियस्स ”
 गाभ, आकर नगर, खेट, कर्वट, मडंब, द्रोगमुख, पत्तन, आश्रम, संवाह,
 वगेरे हजारोंकी संख्यामें तैयारी सत्ता नीचे होय छे. स्वचक्र अने परचक्रना
 भयभी रहित तथा सदा शांत अने अति आनंदित चित्तवाणा मनुष्योधी, तथा
 विविध प्रकारना धान्य राशि (दण्डा) जेवां उत्पन्न थाय छे ओवी लूमिधी, तथा
 मनोहर जलाशयोधी, नदीओधी, तलायोधी, पर्वतोधी. सामान्य वृक्षोधी
 नगरनी पास आवेडां काननोधी, तथा लतामण्डप आदिधी युक्त जेवां राजाओनां
 अन्तःपुरनां उद्यानोधी, तथा अनेक प्रकारनां वृक्षोधी, अने विकसित कुसुमोधी
 शोभतां अने सर्वे लोकोंने इरवाने योग्य जेवां उपवनोधी पीठणायेडा, तथा

સુવર્ણિની ટીકા અં ૪ સૂં ૬ થલદેવવાજદેવસ્વરૂપનિરૂપણ

૪૨૫

પવનાનિ તાનિ ચ 'મગાભિરામ' મનોઽભિરામાણિ=મનોહરાણિ તૈથ 'પરિમંદિયસ્સ' પરિમંદિતસ્ય=શોભિતસ્ય 'દાદિગઢ્ઠુવેયદ્દુગિરિવિભક્તસ્સ' દક્ષિણાર્ધ વૈતાદ્ય ગિરિવિભક્તસ્ય=દક્ષિણાર્ધે યો વૈતાદ્યઃ = તત્કામકો ગિરિઃ = પર્વતવિશેષસ્તેન વિભક્તસ્ય=કૃતવિભાગસ્ય 'લવણજલપરિગયસ્સ' લવણજલપરિગયસ્ય=લવણ-જલેન=લવણસાગ્રેન પરિગતસ્ય=વેષ્ટિતસ્ય 'છવ્વિહકાલગુણકમ્મજુત્તસ્સ' પદવિથ-કાલગુણકમ્મયુક્તસ્ય=પદવિથસ્ય કાલસ્ય=વર્ષા શરદ્ હેમન્ત શિશિર વસન્ત ગ્રીષ્માભિ-પદ્ધન્તુમયસ્ય યે ગુણઃ=કાર્યાણિ નાનુલ્લક્ષ્યમવિશિષ્ટફલસમુદયાદિ રૂપાણિ, તેષાં યઃ ક્રમઃ=યથોચિત્તરૂપેણ ભવનં તેન યુક્તસ્ય=સમુપેતસ્ય એવંવિથસ્ય 'અદ્ધમર-હસ્સ' અર્ધમરતસ્ય=દક્ષિણમરતસ્ય 'સામિયા' સ્વામિકાઃ=અધિપતયઃ 'ધીરા', ધીરાઃ=શત્રુભિરપરિભવનીયાઃ 'કિત્તિ પુરિસા' કીર્તિપુરુષાઃકીર્તિપ્રધાનાઃપુરુષાઃ 'ઓહ્વલા' ઓઘ્વલાઃ=ઓઘેન=મવાહેળાચ્છિન્નં વલં યેષાં તે તથા અવિચ્છિન્ન વલા इत्यर्थः, 'અહ્વલા' અતિવલાઃ=અન્યવલાન્યતિક્રાન્તાઃ, 'અનિહ્યા' અનિહતાઃ = શત્રુશસ્ત્રાઘાતવર્જિતાઃ એવંભૂતાઃથલદેવવાસુદેવા અપિ કામભોગવર્ષિ રહિતા એવ મરણધર્મપુપનમન્તીતિ સમ્બન્ધઃ ॥ ૬ ॥ સૂં ॥

યદુગિરિવિભક્તસ્સ) દક્ષિણાર્ધ મેં વૈતાદ્ય પર્વતસે વિભક્ત હુણ (લવણ-જલપરિગયસ્સ) લવણ સમુદ્ર સે વેષ્ટિત હુણ તથા (છવ્વિહકાલગુણકમ્મ-જુત્તસ્સ) વર્ષા, શરદ્, હેમન્ત, શિશિર, વસન્ત, ગ્રીષ્મ, इन छह ऋतु-औरूप समय के नवीन पत्तों, कुमुमों, एवं फलों के आगमनरूप कार्यों के क्रम से युक्त बने हुए ऐसे (अद्धमरहस्स) दक्षिण भारतके ये (सामिया) स्वामी होते हैं (धीरा) धीर होते हैं अर्थात्-शत्रुओं द्वारा अपरिभवनीय होते हैं। तथा (कित्तिपुरिसा) कीर्ति ही है प्रधान जिन्होंकी ऐसे ये कीर्त्ति पुरुष होते हैं। (ओह्वला) इनका बल कभी नष्ट नहीं होना है अतः ये (अह्वला) अविच्छिन्न बलवाले होते हैं,

“દાદિગઢ્ઠુવેયદ્દુગિરિવિભક્તસ્સ” દક્ષિણાર્ધમાં વૈતાદ્ય પર્વતથી વિભક્ત થયેલ “લવણજલપરિગયસ્સ” લવણસમુદ્રથી ઘેરાયેલા તથા “છવ્વિહકાલગુણકમ્મજુત્તસ્સ” વર્ષા, શરદ, હેમન્ત શિશિર, વસન્ત અને ગ્રીષ્મ એ છએ ઋતુઓને અનુરૂપ નવીન પાન, ફૂલો, અને ફળોના આગમનરૂપ કાર્યોથી યુક્ત અનેલ એવા “અદ્ધમરહસ્સ” દક્ષિણ ભારતનાં તેઓ “સામિયા” સ્વામી હોય છે. “ધીરા” તેઓ ધીર હોય છે એટલે કે શત્રુઓ દ્વારા અપરંજિત હોય છે તથા “કિ-ત્તિપુરિસા” કીર્તિ જે પ્રધાન છે એમની એવા કીર્તિપુરુષ હોય છે-કીર્તિશાળી હોય છે. “ઓહ્વલા” તેમનું બળ કદી નાશ પામતું નથી તેથી તેઓ “અ-હ્વલા” અવિચ્છિન્ન બળવાળા હોય છે, તથા “અનિહ્યા” શત્રુઓનાં શસ્ત્રોના

પુનસ્તે કીદશાઃ ? इत्याह— ‘अपराजियं’ इत्यादि—

મૂલમ્—અપરાજિય સત્તુમદ્દના રિઝસહસ્સમાળમદ્દના સાણુ-
ક્રોસા અમચ્છરી અચ્ચલા અચંડામિયમંજુલપ્પલાવા હસિય
ગંભીરમહુરભણિયા અબ્ભુવગયવચ્છલા સરણા લક્ષણ-
વંજણગુણોવવેયા સાણુમ્માણપપ્પાણપટિપુણ સુજાયસવ્વંગ-
સુંદરંગા સસિસોમગારા કંતા પિયદંસણા અમરિસણા પયંડ
દંડપ્પયારગંભીરદરિસિણજા તાલજ્ઞયા ઉદિવજ્ઞગરુલ
કેઝુવલવગગજ્જંત-દરિય-દપ્પિયમુટ્ટિયચાણૂરચૂરગારિટ્ઠવસમ
ઘાઈણો કેસરિમુહવિપ્પાડગા દરિય નાગદપ્પમહ્ણાજમલ-
જ્જુણમંજગા મહાસઽણિપૂયણરિપૂ કંસમઽડમોડગા જરાસંધ-
માળમહ્ણા તેહિય અવિરલસમસંહિયચંદમંડલસમપ્પભેહિં-
સૂરમરિઙ્કવયં વિણિમુયંતેહિં સપ્પટ્ટિદંડેહિં આયવત્તેહિં
ધરિજ્જંતેહિં વિરાયંતા ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા:—‘અપરાજિયસત્તુમદ્દના અપરાજિતશત્રુમર્દનાઃ = અપરાજિતાન્ =
અન્યૈરનિર્જિતાન્ શત્રૂન્ મર્દયન્તિ યે તે તથા પ્રવલશત્રુવિનાશકા इत्यर्थः, અતएव
દૂસરોં કા બલ इनके समक्ष टिक नहीं सकता है, इसलिये ये अतिबल
वाले होते हैं, तथा (अनिहया) शत्रुओं के शस्त्रके आघात से ये वर्जित
रहते हैं, ऐसे ये बलदेव और वासुदेव भी काम-भोगों की तृप्तिसे विहीन
बनकर ही मरणधर्म को प्राप्त करते हैं ॥ સૂ. ૬ ॥

फिर वे कैसे होते हैं सो कहते हैं—‘अपराजिय’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(અપરાજિય સત્તુમદ્દના) જો થલમદ્દ્ર ઓર નારાયણ

આધાતથી તેઓ રહિત હોય છે. એવા એ બળદેવ અને વાસુદેવ પણ કામભો-
ગોની તૃપ્તિથી રહિત બનીને જ-અતૃપ્ત રહીને જ મરતુ પામે છે ॥ સૂ. ૬ ॥
તેઓ કેવા હોય છે તેનું વધુ વર્ણન કરતાં કહે છે— “અપરાજિય” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“અપરાજિય સત્તુમદ્દના” તે થળમદ્દ્ર અને નારાયણ અપરાજિત

‘રિઝસહસ્સમાળમદ્દના, રિઝસહસ્સમાનમથના:=રિઝસહસ્સાણાં માનં=ગર્વં મથનન્તિ યે તે તથા શત્રુદર્પવિધ્વંસકા: ‘સાણુકોસા’ સાનુકોશ:=આશ્રિતરક્ષકા: ‘અમચ્છરી’ અમત્સરિણ:=પરશુમર્યાડદેપિણ:—પરમુલ્લેન સુલ્લિન ક્ષ્યર્થ:; ‘અચવલા’ અચ-પલા:—મનોવાકાવચપલતારહિતા, અચંડા:=અકારણક્રોધવર્જિતા: ‘મિયમંજુલપ્પલાવા’ મિતમંજુલપ્પલાવા:=મિત:=પરિમિત: સાર્થક: મજુલ્લ:=મનોહર: પ્રલાપ:=આલાપો યેષાં તે તથા પરિમિતસત્યમધુરભાષિણ: ‘હસિયગંભીરમહુરમણિયા’ હસિતગમ્ભીરમધુરમણિતા:=હસિતમ્=હાસ્યયુક્તં ગમ્ભીરં=સારગર્ભં મધુરં ચ મણિતં=ભાષણં યેષાં તે તથા ‘અબ્બુવગયવચ્છલા’ અબ્બુવગતવત્સલા:=અબ્બુવગતેષુ-સમીપમાગતેષુ વત્સલા: સ્નેહયુક્તા: ‘સરણ્ણા’ શરણ્યા:=શરણે સાધવ:શરણાગત-રક્ષકા: ‘લક્ષણવંજણગુણોવવેયા’ લક્ષણવ્યંજનગુણોપેતા: = તત્ર લક્ષણાનિ=અપરાજિત શત્રુઓં કે માન કો ગલિત કર દેતે હૈં, અર્થાત્ પ્રબલ સે બી પ્રબલ વિરોધિયોં કે વે વિનાશક હોતે હૈં, તથા (રિઝસહસ્સમાળમદ્દના) હજારોં શત્રુઓં કે માન કો જો દેસતે ૨ ક્ષણભર મેં નષ્ટ કર હાલતે હૈં। એવં (સાણુકોસા) અપને આશ્રિત વ્યક્તિયોં કી સદા રક્ષણ કરતે રહતે હૈં (અમચ્છરી) દુસરોં કે શુભ સે જિનકે ચિત્ત મેં થોડા સા બી દ્રેષ નહીં જગતા હૈ, અર્થાત્ પરકે સુખસે સુખી હોતે હૈં (અચવલા) મન, વચન એવં કાવકી ચંચલતાસે જો રહિત હોતે હૈં (અચંડા) વિના કારણકે જિન્હોં ક્રોધ નહીં આતા હૈ (મિયમંજુલપ્પલાવા) મિત-સાર્થક તથા મનોહર જિનકા આલાપ હોતા હૈ, અર્થાત્-જો પરિમિત સત્ય મધુર ભાષી હોતે હૈં। (હસિયગંભીરમહુરમણિયા) જો હાસ્યયુક્ત, સારગર્ભિત ઓર મધુર ભાષણ કરતે હૈં (અબ્બુવગયવચ્છલા) જો અપને નિકટ આવે દુષ્ટ પ્રાણિયોંકે સાથ

શત્રુઓતું માનમર્દન કરી નાખે છે, એટલે કે પ્રબળમાં પ્રબળ શત્રુનો પણ તેઓ નાશ કરનાર હોય છે, તથા “રિઝસહસ્સમાળમદ્દના” હજારો શત્રુઓને જે જોત બેતામાં-ક્ષણવારમાં મહાત કરે છે, અને એ રીતે તેમનું માનમર્દન કરે છે, “સાણુકોસા” પોતાના આશ્રિતોનું સદા રક્ષણ કરે છે, “અમચ્છરો” અન્યને લાભ થતો જોઈને જેમના ચિત્તમાં સહેજ પણ દ્રેષ થતો નથી, એટલે કે તેઓ પરના સુખે સુખી થનાર હોય છે, “અચવલા” મન, વચન કાયાની ચંચળતાથી જે રહિત હોય છે, “અચંડા” વિના કારણ જેમને ક્રોધ થતો નથી, “મિયમંજુલપ્પલાવા” મિત-સાર્થક તથા મનોહર જેમનાં વચન હોય છે, અથવા જે પરિમિત સત્ય મધુર વાણી વાળા હોય છે, “હસિયગંભીરમહુરમણિયા” જે હાસ્યયુક્ત સારગર્ભિત અને મધુર ભાષણ કરે છે “અબ્બુવગયવચ્છલા” જે પોતાની પાસે આવતા પ્રાણીઓ તરફ સ્નેહાળ હોય છે, “સરણ્ણા” શરણે આવેલની

इस्तरेखादीनि सामुद्रिकशास्त्रोक्तानि, तथा व्यञ्जनानि च=मषातिलकादीनि गुणाः= शौर्यादयस्तैरुपेताः युक्ताः, 'माणुन्माणपमाणपडिपुण्णा सुजायसव्वंगमुंदरंगा' मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गमुन्दराङ्गाः=मानोन्मानः प्रमाणैः=तत्र मानं-शरीरभारः, उन्मानं=शरीरोच्छ्रयः, प्रमाणं=समुचितशरीरावयवरूपं, तैः प्रतिपूर्णानि=सुजातानि=सुष्ठुवाया समुत्पन्नानि सर्वाण्यङ्गानि=अवयव यस्मिन् तदेवं विधं सुन्दरमङ्गं=शरीरं येषां ते तथा सकलसुलक्षणलक्षितसुपुष्टसप्रमाणसुन्दरशरीरा इत्यर्थः 'ससिसोमागारा' शशिसौम्याक्षरा-वन्द-वत्सौम्याकृतिसम्पन्नाः, 'कंता' 'कान्ताः=कमनीयाः 'पियदंसेणा' भिनदर्शनाः=प्रयोजरूपाः 'अमरिसणा' अमर्षणः = अत्याचाराऽसहिष्णुवः 'पयंडदंडणपारागंभीरदरिसणिज्जा'

સ્નેહશીલ હોતે હૈં (સરળતા) ઘરણામતકી રક્ષા કરતે હૈં (લક્ષણવંજન ગુણોવચેયા) જો સામુદ્રિક શાસ્ત્રોક્ત રેખા આદિ શુભચિન્હોંસે, તથા મષા તિલક આદિ શુભ વ્યંજનોંસે એવં શૌર્યાદિક સદ્ગુણોંસે યુક્ત હોતે હૈં માણુન્માણપમાણપડિપુણ્ણા સુજાય સવ્વંગમુંદરંગા) શરીર ભારરૂપ માનસે, શરીરકી ઝંચાઈ રૂપ ઉન્માનસે તથા સમુચિત શરીરાવયવરૂપ પ્રમાણસે, પ્રતિપૂર્ણ, એવં સુન્દર રૂપવાલે સમસ્ત અવયવ જિસયેં હૈં 'એસે સુહાવને શરીર સે જો યુક્ત હોતે હૈં અર્થાત્ ઉનકા શરીર સમસ્ત સુલક્ષણોં સે યુક્ત, સુપુષ્ટ ઓર પ્રમાણોપેત હોને સે પૂર્ણ સુન્દર હોતા હૈ, (સસિ-સોમાગારા) ઝિનકી આકૃતી ચંદ્રના કે જેસી સૌમ્ય હોતી હૈ, (કંતા) જો સબકે લિયે બડે પ્રિય લગતે હૈં (પિયદંસણા) ઉનકા દર્શન મન કો બહુત અધિક આહાદ્ જનક હોતા હૈ (અમરિસણા) જો અત્યાચાર કો સહન બહુત હી ઘુરા માનતે હૈ-અર્થાત્-જો અત્યાચાર કો સહન નહીં

જે રક્ષા કરનાર હોય છે, “લક્ષણવંજનગુણોવચેયા” જેવો સામુદ્રિક શાસ્ત્રોક્ત રેખા આદિ શુભ ચિન્હોથી તથા મષા તિલક આદિ શુભ વ્યંજનોથી અને શૌર્યાદિક સદ્ગુણોથી યુક્ત હોય છે, “માણુન્માણપમાણ પડિપુણ્ણાસુજાયસવ્વંગ-મુંદરંગા” શરીરભાર રૂપ માનથી, શરીરની ઝંચાઈરૂપ ઉન્માનથી, તથા સપ્રમાણ શરીરાવયવરૂપ પ્રમાણથી, પ્રતિપૂર્ણ અને સુંદર શરીરથી જે યુક્ત છે, એટલે કે તેમનું શરીર સમસ્ત સુલક્ષણો વાળું, સુપુષ્ટ અને સપ્રમાણ હોવાથી સંપૂર્ણ રીતે સુંદર હોય છે, “સસિસોમાગારા” જેમની આકૃતિ ચંદ્રમાના જેવી સૌમ્ય હોય છે, “કંતા” જે સૌને ઘણા જ પ્રિય લાગે છે. “પિયદંસણા” જેમનાં દર્શન મનને અત્યંત આનંદદાયક હોય છે. “અમરિસણા” જે અત્યાચારને સહન કરવો તે બહુજ ખરાબ ગણે છે એટલે કે અત્યાચારને સહન કરી શકતા

પ્રવણ્ડઃ = દારુણોદ્દંડપ્રચારઃ = દુષ્ટદમનઃSSજ્ઞાતિશેષસ્ત્ર ગમ્भीરદર્શનીયાઃ
 = ગમ્भीરં = દુષ્ટજનચિત્તક્ષોભોત્પાદકં દર્શનીયં = સ્વરૂપં યેષાં તે તથા
 સત્પુરુષાણાં કૃતે ચન્દ્રવત્ પ્રિયદર્શનાઃ, હર્જનાનાં કૃતેષુ કાલસદૃશાં ઇતિ
 માવઃ 'તાલજ્ઞયા' તાલધ્વજાઃ=તાલઃ=તાલવૃક્ષાદ્વિજિતો ધ્વજો યેષાં તે તથા તાલ-
 ધ્વજા ચલદેવાઃ, 'તાલાદ્વો મુસલીદલો' ઇત્યમરઃ, તથા 'ઉચ્ચિજ્ઞગરુલકેઙ્ઙ'
 ઉદ્ધિદ્વગરુલકેતવઃ-ઉદ્ધિદ્વઃ=અત્યુચ્છિતો ગરુલકેતુઃ=ગરુડાદ્વિજિતો ધ્વજો યેષાં તે
 તથા વાસુદેવાઃ 'વચ્ચગગજંતદરિયદપ્પિયમુદ્ધિચાણૂરચૂરમા' ચલવદ્ ગર્જદ્
 દ્વપ્પદર્પિતમૌષ્ટિકચાણૂરચૂરમાઃ = તત્ર ચલવન્તં — મહાશક્તિસમ્પન્નં ગર્જન્તં=
 'કોડન્યોડ્માદશો મલ્લઃ, ઇતિ મહાધોષં કુર્વન્તઃ, તથા દ્વપ્પદર્પિતં=દ્વપ્પેષ્વપિ
 દર્પિતં=અતિગર્વયુક્તં મૌષ્ટિકં ચાણૂરં ચ=તત્તત્ત્વામકં મલ્લં ચુરયન્તિ યે તે તથા

કર સકતે હૈ—(પયંડદંડપ્પચારગંભીરદરિસણિજ્ઞા) દારુણ દંડ કે
 પ્રચાર મેં જિનકી આકૃતિ વહુતભારી ગંભીર બન જાતી હૈ, અર્થાત્
 દુષ્ટોં કો દમન કરને રૂપ આજ્ઞા મેં જિનકી આકૃતિ દુષ્ટજનોં કે લિધે
 ચિત્તમેં કાલકી તરહ ક્ષોભોત્પાદક બનતી હૈ ઓર સજ્જનોંકે લિધે ચન્દ્ર
 કી તરહ પ્રિયદર્શન વાલી હોતી હૈ । (તાલજ્ઞયા ઉચ્ચિજ્ઞગરુલકેઙ્ઙ-
 ગલગજંતદરિયદપ્પિઅમુદ્ધિચાણૂરચૂરમા) તથા હનમેં ચલદેવ કી ધ્વજા
 તાલવૃક્ષ કે ચિહ્ન સે અંકિત હોતી હૈ ઓર વાસુદેવ કી ધ્વજા ગરુડ કે
 ચિહ્ન સે અંકિત રહતી હૈ ઓર વહુત ઝૂંચી હોતી હૈ । ચલદેવ ને કૃષ્ણ
 કો મારને કે લિધે કંસ દ્વારા પ્રવર્તિત કિયે હુણ મલ્લયુદ્ધ મેં 'કૌન હમારે
 જૈસા પહલવાન હૈ' હસ અભીમાન સે જો મદોન્મત્ત બનકર ઘોષણા કર
 રહે—અર્થ અત્યંત મદ સે ઝન્મત્ત બને હુણ થે—એસે મૌષ્ટિક નામકે મલ્લ કો

નથી. “ પયંડ-દંડપ્પચાર-ગંભીર-દરિસણિજ્ઞા ” ઠાણુ ઠંડ પ્રદાન કરતી વખતે
 જેમનો દેખાવ ઘણો ગંભીર થઈ બધ છે. એટલે કે હુષ્ટોને શિક્ષા કરવાની
 આજ્ઞા આપતી વખતે જેમનો દેખાવ હુષ્ટ લોકોને માટે યમદેવના જેવો ક્રોધ
 ઉત્પાદક બની બધ છે. અને સજ્જનો માટે તેમની મુખાદૃતિ ચન્દ્રની જેમ
 પ્રિયદર્શનવાળી હોય છે. “ તાલજ્ઞયા ઉચ્ચિજ્ઞ ગરુલ કેઙ્ઙલગગજંતદરિયદપ્પિય
 મુદ્ધિચાણૂરચૂરમા ” તેઓમાંના બળદેવની ધ્વજા તાલવૃક્ષની નિશાની વાળી હોય
 છે. અને વાસુદેવની ધ્વજા ગરુડના નિશાનવાળી હોય છે અને ઘણી ઉંચી
 હોય છે. કૃષ્ણને મારવા માટે કંસ દ્વારા કરવાયેલ મલ્લયુદ્ધમાં બળદેવે “મારા
 જેવો પહેલવાન કોણ છે.” એવા અભિમાનથી જે મદોન્મત્ત બનીને ઘોષણા
 કરી રહ્યો હતો એવા મૌષ્ટિક નામના મલ્લને મારી નાખ્યો અને વાસુદેવ

મહાવલમૌષ્ટિકચાણૂરાદિમલ્લવિધ્વંસકાઃ કૃષ્ણવધાર્થ કંસેન પ્રવર્તિતે મલ્લ-
યુદ્ધે બલરામેણ મૌષ્ટિકાભિધાના મલ્લો વાસુદેવેન ચ ચાણૂરાભિધાનો મલ્લો નિહતઃ
ઈતિ । ‘રિદ્ધવસમઘાઈણો’ રિદ્ધવસમઘાતિનઃ = રિદ્ધાભિધાનકંસવલીર્વદ્ધાતકાઃ,
‘કેસરિમુહવિષ્ફાઙ્ગા’ કેસરિમુખવિસ્ફાટકાઃ = રૂદ્ધ વિશેષણ ત્રિપૃષ્ઠકાભિધપ્રયમ-
વાસુદેવાપેક્ષયા બોધ્યમ્ । સ હિ નગરોપદ્રવકારિ ઘનકાનનનિવાસિ મહાસિંહ
મુખં વિદારિતવાન્ । ‘દરિયનાગદપ્પમહ્ણા’ દૃપ્તનાગદર્પમથનાઃ = યમુના નિવાસિ
મહાવિષ્કાલનામર્ગવિનાશકાઃ, ‘જમલજ્જુણમંજણા’ યમલાર્જુનમંજ્રકાઃ =
યમલાર્જુનવૃક્ષવિનાશકાઃ તૌં હિ પિતૃવૈરિણો વિદ્યાધરૌ યમલાર્જુનનામકૌ વૃક્ષરૂપં
વિકુર્ચ્ય પથિ સ્થિતૌ તુર્ણિતવન્તઃ । ‘મહાસઽણિપૂયણરિક્ક’ મહાશકુનિપૂતના-
રિપવઃ = મહાશકુનિઃ પૂતના ચ વિદ્યાધરપત્ન્યૌ, તયોઃ રિપવઃ । બાલ્યાવસ્થાયાં
મારા, તથા વાસુદેવ કૃષ્ણ ને ચાણૂર નામકે મલ્લ કો મારા યહી ધાત
“બલવગમઝ્જંત” એ પદ દ્વારા પ્રદર્શિત કી ગઈ છે । તથા (રિદ્ધવ-
સમઘાઈણો) જો કંસ કે રિદ્ધ નામ કે માયાવો વલીર્વદ્ કે ઘાતક થે
તથા (કેસરિમુહવિષ્ફાઙ્ગા) કેશરી સિંહ કે મુખ કો ખી ફાફ દેતે થે,
યહ વિશેષણ ત્રિપૃષ્ઠ નારાયણ કી અપેક્ષા કહા ગયા જાનના ચાહિયે,
કયોં કિ ઉન્હોં ને નગર મેં ઉપદ્રવ મચાને વાલે જંગલી સિંહ કે મુખ કો
વિદારિત કિયા છે । (દરિયનાગદપ્પમહ્ણા) તથા જિસ નારાયણને
યમુના નિવાસી મહાવિષ્ફાળે કાલી નામકસર્પ કા વિનાશ કિયા છે-તથા
(જમલજ્જુણમંજણા) નારાયણ ને પિતા કે વૈરી દો વિદ્યાધરોં કો કી
જિનકા નામ યમલ ઓર અર્જુન શ્રા ઓર જો માર્ગ મેં વૃક્ષ કા રૂપ
અપની વિક્રિયા સે બનાકર સ્વહે હો ગયે થે ઉનકો મારા છે (મહાસઽ-
ણિ પૂયણરિક્ક) તથા જો વિદ્યાધર કી મહાશકુનિ ઇયં પૂતના નામક દો

કૃષ્ણે ચાણૂર નામના મલ્લને માર્યો એ જ ધાત “બલવગમઝ્જંત” પદ દ્વારા
અતાવવામાં આવી છે. તથા “રિદ્ધવસમઘાઈણો” એ કંસના રિદ્ધ નામના
માયાવી બર્હવર્દના ધાતક હતા તથા “કેસરીમુહવિષ્ફાઙ્ગા” સિંહના
મુખને પથ્થુ ફાડી નાખતા હતા. તે વિશેષણ ત્રિપૃષ્ઠ નારાયણને અનુલક્ષીને
વપરાયું છે, કારણ કે તેમણે નગરમાં ઉપદ્રવ મચાવનાર જંગલી સિંહના મુખને
ચીરી નાખ્યું હતું. “દરિયનાગદપ્પમહ્ણા” તથા જે નારાયણે યમુનામાં રહેતા
અતિશય ઝેરી કાળીનાગને વશ કર્યો છે, તથા “જમલજ્જુણમંજણા” નારા-
યણે તેમના પિતા યમળ અને અર્જુન નામના બે હુશ્મન વિદ્યાધરો, કે જે
માર્ગમાં પોતાની વૈકિંચ શક્તિથી વૃક્ષના રૂપ લઈ ઉભા થઈ ગયા હતા
તેમને માર્યા હતા. “મહાસઽણિપૂયણરિક્ક” તથા જે વિદ્યાધરની મહાશકુનિ અને

कृष्णस्ते दत्तवानित्यर्थः 'कंसमउडमोडगा' कंसमुकुटमोटकाः=कंसमुकुटसञ्चरकाः, कृष्णो हि चाणूरप्रधानन्तरं कुपितं कंसं युयुत्सं मुकुटदेशं गृहीत्वा सिंहासनादाकृष्य भुविनिपात्य जवान् । तथा 'जरासंधमाणमहणा' जरासन्धमानमथनाः=जरासन्धग-
र्भविनाशकाः, जरासन्धवानका इत्यर्थः, कंसवधकुपितं राजगृहनगरपतिं जरासन्धा-
भिधानं युद्धायोद्यतं दत्तवान् । पुनः कीदृशाः ? इत्याह—'तेहि य अविरलसम-
संहिय चंदमंडलसमपभेहिं सूरमरीइ कवयं विणिमुयंतेहिं सप्पडिं दंडेहिं आयवत्तेहिं
धरिज्जंतेहिं विरायंता ' तत्र 'तेहिं' तैश्चातिशयवज्जिह्वैर्विराजमानाः, इति
सम्बन्धः कीदृशैश्छत्रैः ? इत्याह—अविरलसमसंहितचन्द्रमण्डलसमप्रभैः=अविरलानि
=घनानि—घनशलाकावस्तात्, समानि = तुल्यानि स्थूलत्वेन दीर्घत्वेन च शलाका-
स्त्रियों के रिपु थे—क्यों कि बाल्यावस्था में कृष्ण ने इन दोनों को मारा
था, तथा (कंसमउडमोडगा) कृष्ण ने कंस के मुकुट को चूर २ कर
दिया था—अर्थात्—चाणूर मल्ल के वध करने के अनन्तर जब कंस युद्ध
करनेकी इच्छावाला हो गया—तो उसे मुकुट को पकड़ कर कृष्णने सिंहा-
सन से नीचे खेंच लिया और जमीन पर पटक कर मार डाला, इसी तरह
(जरासंधमाणमहणा) कृष्णने—राजगृह नगर के अधिपति जरासंध
नाम के राजाओं को मारा हैं, कंस के वध हो जाने के बाद जब
जरासंध कुपित होकर युद्ध करने के लिये उद्यत हो गया था तो कृष्ण
ने उसे बानकी—बात में संग्राम भूमि में नष्ट कर दिया था, तथा (तेहि-
य अविरल समसंहियचंद मंडलसमपभेहिं सूरमरीइकवयं विणिमुयंते-
हिं सप्पडिंदंडेहिं आयवत्तेहिं धरिज्जंतेहिं विरायंता) जो अतिशय शाली
छत्रों से विराजमान होते हैं अर्थात्—जिन छत्रों से बलदेव और वासुदेव
सुशोभित होते हैं उन छत्रों की शलाईयां बहुत अधिक घनीभूत होती

पूतना नाम्नी ये स्त्रीभेदानां दुश्मन इति अने ते कारणे आणपणुमां तेमणे
ये अनेने मारी इती, तथा " कंसमउडमोडगा " कृष्णे कंसना मुगटना चूरे
चूरा करी नाप्पया इति. आणुर मडलना कृष्णे वध कर्या पछी न्यारे कसे
कृष्णे साथे लडवानी दुश्मन भतावी त्यारे कृष्णे तेना मुगट पडईने तेने सिंहा-
सन उपरथी नीचे भेथीने अभीन उपर पछाडीने मारी नाप्पये, आ रीते
" जरासंधमाणमहणा " कृष्णे राजगृह नगरना राजा जरासंधना वध कर्यो
इति. कंसना वध थया पछी न्यारे जरासंध कोधे लराधने लडवने तैथार
थयो त्यारे कृष्णे ओइ धडीमां तेनो रणुभेदानमां वध कर्यो इति. तथा " तेहि य
अविरलसमसंहियचंदमंडलसमपभेहिं सूरमरीइ कवयं विणिमुयंतेहिं दंडेहिं
आयवत्तेहिं धरिज्जंतेहिं विरायंता " तेभ्यो धणुा सणिया वाणां छत्राथी शोभता

નાં સમત્વાત્ દ્વયોર્દ્વયોઃ શલાકયોરન્તરાલસ્યાપિ સમત્વાચ્ચ, સંહિતાનિ-શલાકાનાં નિમ્નોન્નતરદિત્ત્વાત્, તાનિ તથા-ચન્દ્રમણ્ડલસમપ્રમાણિ દૃત્તત્વેન ચન્દ્રમણ્ડલ-સમા પ્રમા યેવાં તાનિ તથા તૈઃ-તથા 'સૂરમરીચકવ્યં વિનિર્મુચ્યંતેદિ' સૂરમરી-ત્રિ કવચં વિનિર્મુચ્ચદ્વિઃ-સૂરમરીચયઃ=સૂર્યકિરણાસ્તેવ મરીચયઃ દેરીપ્યમાનપ્રભૂત મણિરત્નૈઃ સર્વતઃ સ્વચિત્ત્વાત્, તેષાં કવચમિત્ર કવચં=પરિકરઃમણ્ડલાકારપરિણ-તત્વાત્, તે વિનિર્મુચ્ચદ્વિઃ=વસારયદ્વિઃ, તથા 'સપ્પદિદંદેદિ' સપત્તિરુષ્ઠેઃ=અતિવિ-શાલત્વાદેકેન દાંડેન ધારણા શમ્યત્વાત્પતિરુષ્ઠસદિતૈઃ 'આગવત્તેદિ' આતપત્તૈઃ=

હૈં, સ્થૂલતા एवं દોર્યતા में समान होती हैं तथा दो दो शलाकाओं का अन्तराल भी सम होता है तथा ये सब शलाकाएँ ऊँची नीची नहीं होने के कारण, अर्थात्-एक सी होने के कारण परस्पर में संहति-मिली हुई होती हैं, इसलिये ये छत्र अविरल, सम और संहति होते हैं। तथा इन सब छत्रों की प्रभावृत्त-गोल-होने के कारण पूर्णचंद्र मंडल जैसी होती है। तथा-ये समस्त छत्र देदीप्यमान अनेक मणिगों एवं रत्नों से जड़े हुए होने के कारण जिस किरण जाल को छोड़ते हैं वह ऐसा मालूम पड़ता है कि यह सूर्य की किरणों का ही जाल है, क्योंकि कि वह आसपास में मंडलाकार से परिणत बना रहता है। तथा इन छत्रों में विशाल आकारवाले होने के कारण भिन्न २ दंडे लगे रहते हैं-एक ही दंडे के सहारे ये नहीं रहते हैं, क्योंकि कि एक ही दंडे से इनका अति विशाल होने के कारण संभालना अशक्य होता है। ऐसे त्रिय-

હોય છે. એટલે કે જે છત્રો બળદેવ અને વાસુદેવ ઉપર ધરવામાં આવે છે, તે છત્રોના સળિયાઓ ઘણી જ પાસે પાસે હોય છે, બાકાઈ અને લાંબાઈમાં સરખા હોય છે, તથા બે સળિયાઓ વચ્ચેનું અંતર પણ સરખું હોય છે. તથા તે સળિયા લાંબા દૂંકા નહીં હોવાને કારણે, એક સરખા હોવાને કારણે પર-સ્પર બેઠાયેલ હોય છે, તેથી તે છત્ર અવિરલ, સમ અને સંહિત હોય છે. અને તે સઘળાં છત્રોના પરીધ ગોળ હોવાને કારણે તે પૂર્ણચન્દ્ર જેવાં લાગે છે. તથા તે છત્રો પર અનેક તેજસ્વી મણીઓ અને રત્નો જડેલાં હોય છે તેથી તેમાંથી જે કિરણ બાળ નિકળે છે તે સૂર્યની કિરણબાળ જેવી લાગે છે, કારણ કે તે આસપાસમાં મંડલાકારે પથરાયા કરે છે. તે છત્રો ઘણાં વિશાળ હોવાથી તેને આધાર આપવાને અનેક દંડા સખ્યા હોય છે. એક જ દંડાને આધારે તે રહી શકતાં નથી, કારણ કે તે છત્રો એટલાં વિશાળ હોય છે કે એક જ દંડા વડે તેને સંભાળવા અશક્ય થઈ પડે છે. એવા પ્રકારનાં છત્રોથી

सुवर्शिनी टीका अ० ४ सू० ८ बलदेववासुदेवस्वरूपनिरूपणम्

४३३

महाछत्रैः 'धस्त्रिजंवेहि' धार्यमाणैः 'विरायंता' विराजमानाः । ये एतादृशा-
स्तेऽपि कामभोगानृप्ता एव मरणधर्मदुपनमन्तीति योगः ॥ सू० ७ ॥

पुनः कीदृशास्ते ? इत्याह— 'ताहिय' इत्यादि—

मूलम्—ताहिय पवरगिरिकुहर-विहरण-समुद्रियाहिं निरु-
वहयचमरिपच्छिमसरीरसंजाग्राहिं अमडल-मियकमल-
विमुकुलुज्जलियरययगिरि-सिहरविमलससिकिरण-सरिसक-
होयनिम्मलाहिं पवणाहयचवलचलिय—सललियनच्चिय-
वीइपसरिय-खीरोदमपवर-सागरुप्पूर-चवलाहिं माणससर-
पसर-परिचियावास-विसय-वसाहिं कणगगिरि-सिहर-संसि-
याहिं ओवाउप्पाय-चवल-जविय-सिग्घवेगाहिं हंसवधूयाहिं
चेव नानामणिकणग-महरिह-तवणिज्जुज्जल-विचित्तदंडाहिं
सललियाहिं नरवइसिरिसमुदयणगासणकराहिं वरपटणु-
ग्गयाहिं समिद्धरायकुलसेवियाहिं कालायुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्क
धूववासविसिद्धगंधुद्धूयाभिरामाहिं चिल्लियाहिं उभओ पासंपि
चामराहिं उक्खिप्पमाणाहिं सुहसीयलवायवीयियंगाअजिया
अजियरहा हलमुसलकणगपाणी संखचक्कगयसत्तिणं दग-
धरा पवरुज्जलसुकय-विमलकोथुभ-किरीडधारी कुंडल उज्जो-
इयाणणा पुंडरीयणयणा एगावलिकंठ राइयवच्छा सिरिवच्छ
सुलंछणा वरजसा सव्वोउय-सुरभि-कुसुमरइयपलंव-सोहंत

माण छत्रों से ये विराजमान रहते हैं । ऐसे ये बलदेव और वासुदेव
भी कामभोगों से अतृप्त बने रहते हैं और इसी स्थिति में मरणधर्म
को प्राप्त करते हैं ॥ सू० ७ ॥

शेकता जगदेव अने वासुदेव पण कामभोगोधी अतृप्त रहे छे ओ स्थितिमां
भरणु पावे छे ॥ सू०-७ ।

વિયસંત-વિચિતવળમાલ-રઝયવચ્છા અદ્ભુતયવિભત્તલક્ષણ-
પસત્થસુંદર - વિરાઝયંયુવંગા મત્તગયવરિંદ-લલિય - વિક્રમ
વિલસિય-ગઈકડિસુત્તકનીલ પીય-કોસેઝ્જવાસસા પવરદિ-
ત્તતેયા સારયળવથળિય-મહુરગંભીર-ગિહ્વોસા નરસીહા
સીહવિક્રમગઈ અત્થમિય પવરરાયસીહા સોમ્મા વારવઈ પુળળ
ચંદા પુલ્લકયતવપ્પભાવા નિવિટ્ઠસંચિયસુહા અળેગવાસ
સયમાઠવંતો ભઝ્જાહિયજળવયપ્પહાળાહિં લાલિયંતા
અઠલ-સદ્ધારિસ-રસરુવગંધે ય અણુભવિત્તા તે વિ ઉવળ-
મંતિ મરણધમ્મં અવિતિત્તા કામાણં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા:— ‘તાહિય’ તામિથ વક્ષ્યમાણવિશેષણવિશિષ્ટામિશ્રામરામિકૃત્તિ-
પ્યમાનામિઃ સુખ શીતલજ્વાતવીજિતાજ્વાલદેવતાસુદેવાઃ, इति सम्बन्धः । कथ-
म्भूतामिश्रामराभिः ? इत्याह—‘पवरगिरिकुहरविहरणसमुद्भियाहिं’ पवर-
गिरिकुहरविहरणसमुद्भूताभिः=पवरगिरिणां यानि कुहराणि=गङ्गराणि तेषु यद्

फिर वे कैसे होते हैं सो कहते हैं—‘ताहि य’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ:— (તાહિ ય ઉન્નિલ્પમાણાહિં ચામરાહિં સુહસીયલ-
વાય વીઝયંગા) इन वक्ष्यमाण विशेषणों से विशिष्ट होले गये चामरों
की सुखप्रद शीतल वायु से जिनका अंग वीजित होता रहता है ऐसे
बलदेव और वासुदेव भी काम से अनृतस ही मरण को प्राप्त करते हैं-
ऐसा संबंध यहाँ भी लगा लेना चाहिये। अब सूत्रकार चामरों के
विशेषणों को स्पष्ट करते हैं -- (पवरगिरिकुहरविहरणसमुद्भियाहिं)
जब चमरी गाय उत्तम पर्वतों की गुफाओं में विचरण करती हैं तब वह

હજી તેઓ કેવા હોય છે તેનું વધુ વર્ણન કરે છે—“તાહિય” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ:—“તાહિ ય ઉન્નિલ્પમાણાહિં ચામરાહિં સુહસીયલવાયવીઝ યંગા” આ
પ્રમાણેના વિશેષણવાળા, આમરોપડે ઢોળવામાં આવતાં આનંદદાયક શીતળવાયુ
વડે જેમના અંગો વાયુનું સેવન કરી રહેલાં છે એવા તે બળદેવ અને વાસુ-
દેવ પણ કામલોગથી અનૃત્ત રહીને જ મૃત્યુને પથે પળે છે. એવો સંબંધ
અહીં પણ સમજી લેવો. હવે સૂત્રકર આમરોનાં વિશેષણોની સ્પષ્ટ કરે છે.
“પવરગિરિકુહરવિહરણસમુદ્ભિયાહિં” બન્યારે ચમરી ગાય ઉત્તમ પર્વતોની

વિહરણ = ચમર્યાચલગાવીનાં વિચરણ તસ્મિન્ કાલે સમુદ્ભૂતાઃ કણ્ઠકટુશ સંલગ્નમયાદ્ ઝર્ષીકૃતા યાસ્તાસ્તથા, તામિઃ, 'નિરુવહ્યવમરીપચ્છિમસરીર-સંજાયાહિં' નિરુપહતચમરીપશ્ચિમશરીરસંજાતામિઃ = નિરુપહતાનાં = નીરોગાણાં ચમરીનાં=ગો વિશેષાણાં પશ્ચિમશરીરે=પુચ્છપ્રદેશે સંજાતામિઃ = સમુત્પન્નામિઃ 'અમહલસિયકમલવિમુકુલુઝ્જલિયરયયગિરિસિહરવિમલસસિકિરણસરિસ કલધો યનિમ્મલાહિં' અમલિનસિતકમલવિમુકુલોઝ્જલિતરજતગિરિશિખર—વિમલ-શશિકિરણસદૃશકલધૌતનિર્મલામિઃ તત્ત્વ 'અમહલસિયકમલ' અમલિનસિત-કમલમ્=અમલિન=અમ્લાનં શીતાતપાદિમિઃ યત્ સિતકમલં=શ્વેતકમલં ઘુન્ડરીકં તત્ત્વ વિમુકુલં=વિકસિતં તથા 'ઝ્જલિયરયયગિરિસિહર' ઝ્જલિતરજતગિરિ શિખરમ્=ઝ્જલિતં=ભાસ્વરં યદ્ રજતગિરિશિખરં તથા વિમલશશિકિરણાઃ = વિમલાઃ=નિર્મલા યે શશિનઃ=ચન્દ્રસ્ય કિરણાશ્ચ તત્સદૃશાઃ કલધૌતવત્=ધુન્નરજતવ-ચિર્મલાઃ=ધવલાયાસ્તાસ્તથા તામિઃ—અમ્લાનવિકસિતશ્વેતકમલોઝ્જલિતરજતપર્વત-શિખરવિમલચન્દ્રકિરણશુદ્ધરજતવદુઝ્જલાભિરિત્યર્થઃ । તથા 'પવણાહ્યચવ-ઉસ સમય કણ્ઠકમય વૃક્ષોં મેં લગ જાને કે ભય સે અપની પૂંછ કો ઝૂંચા ઉઠા લેતી હૈ—'ઇસલિયે યહાં પ્રકટ કિયા રહા હૈ કિ જો ચામર ચમરી ગાયકી પૂંછ મેં ઉત્પન્ન હોને કે કારણ પ્રવરગિરિ કે કુહરોં મેં ભ્રમણ કાલ કે સમય મેં ઝૂંચે ઉઠાયે ગયે થે તથા (નિરુવહ્યવમરીપચ્છિમસરીર-સંજાયાહિં) જો નિરુપહત-નિરોગ અવસ્થાવાલી ચમરી ગાયોં કી પૂંછ મેં ઉત્પન્ન હુએ હૈ, તથા (અમહલસિયકમલવિમુકુલુઝ્જલિય રયયગિરિ-સિહરવિમલસસિકિરણસરિસકલધોયનિમ્મલાહિં) જો શીત આતપ આદિસે મ્લન નહીં હુએ વિકસિત શ્વેત કમલ કે સમાન, ભાસ્વર, રજત ગિરિ કે શિખર કે સમાન, નિર્મલચન્દ્ર કી કિરણોં કે સમાન, એવં શુદ્ધ ચાંદી કે સમાન નિર્મલ હોતે હૈં । તથા (પવણા હ્યચવલ ચલિય સલલિ-

શુશ્રોભામાં ફરતી હોય છે ત્યારે કાંટાળાં વૃક્ષમાં ભરાઈ જવાની બીકે તે પોતાની પૂંછડીને ઊંચી રાખે છે. તે કારણે અહીં એમ બતાવવામાં આવ્યું છે કે જે ચામર ચમરી ગાયની પૂંછડીમાં ઉત્પન્ન થવાને કારણે ઉત્તમ પર્વતની શુશ્રો-ભામાં ભ્રમણ કરતી વખતે ઊંચાં ઉઠાવેલાં હતા, તથા “ નિરુવહ્યવમરી-પચ્છિમસરીરસંજાયાહિં ” જે નીશાની શરીર વાળી ચમરી ગાયની પૂંછડીમાં ઉત્પન્ન થયેલ છે, તથા “ અમહલ-સિયકમલ-વિમુકુલુઝ્જલિય-રયયગિરિસિહર-વિમલસસિ-કિરણસરિસકલધોયનિમ્મલાહિં ” જે શીત, તાપ આદિના ઝાંખા ન પડેલ વિકસિત શ્વેત કમળ સમાન, ભાસ્વર, રજતગિરિના શિખર સમાન, નિર્મળ ચન્દ્રનાં કિરણો સમાન, અને શુદ્ધ ચાંદીના જેવાં નિર્મળ હોય છે,

લચલિયસલલિયનચિયવીયપસરિય-સ્રીરોદગપવરસાગરુપૂરચ્ચલાહિં ' પવનાહત-
 ચપલચલિતસલલિતનર્ણિતવીચિપસ્રુતક્ષીરોદકપવરસાગરોત્પૂરચપયામિઃ = તત્ર
 પવનેન = વાયુના આદંતઃ = પ્રદિતઃ, અતएव ચપલં યથાસ્યાસ્તથા
 ચલિતઃ સલલિતં=સચિલમિતં ચ નર્ણિતઃ=મતિવિશેષં પ્રાપ્તઃ, તથા વીચિમિઃ=તરંગૈઃ
 પ્રસ્રુતઃ ક્ષીરોદકપવરસાગરસ્ય = ક્ષીર સાગરસ્ય ય ઉત્પૂરઃ=જલસમૂહસ્તદ્વત્ ચપ-
 ણામિઃ =ચચ્ચલામિઃ વહુલધવલતરંગયુક્તક્ષીરસાગરનીરપ્રવાહવપ્રતીયમાનામિઃ,
 અથ હંસવધુમિરુપમયઞ્નાહ ' માણસસરપસરપરિચિયાવાસવિસયવેસાહિં ' માનસ
 સરઃ પસરપરિચિતાવાસ વિશદવેષામિઃ=માનસસરસઃ પસરે=વિસ્તૃતપ્રદેશે પરિચિતઃ
 =અભ્યસ્ત આવાસઃ=નિરન્તરનિવાસઃ, અતएव વિશદઃ=ધવલશ્ચ વેષો=વર્ણો યાસાં
 તાસ્તથાવિધામિઃ, ' કળગગિરિસિહરસંસિયાહિં ' કળગગિરિશિખરસંશ્રિતામિઃ =
 સુમેઘતટવિહારિણીમિઃ, અતएव ' ઓવાડપાયચવલજવિયસિગ્ધવેગાહિં ' અવ-
 યનચ્ચિયદ્યપસરીયસ્રીરોદગપવરસાગરુપૂરચ્ચલાહિં) વાયુ સે આહત
 હોને કે કારણ અત્યંત ચપલ બને હુણે ઓરે હસી સે જો માનો વિલાસ-
 સહિત હોકર નૃત્ય કર રહ્યા હૈ, તથા તરંગોને જિસે વિશેષ વિસ્તૃત કર
 દિયા હૈ એસે ક્ષીરસાગર કે પ્રવાહ કે સમાન જો ચંચલ હૈ અર્થાત્
 અત્યંત ધવલ તરંગોં સે યુક્ત ક્ષીરસાગર કે પ્રવાહ કે જૈસે જો દિશ્યાઈ
 હે રહે હૈં । તથા (માણસસરપસરપરિચિયાવાસવિસયવેસાહિં) જો
 હંસવધુ કે સમાન પ્રતીત હો રહે હૈં, હંસો માનસરોવર મેં રહતી હૈં-હસી
 વિષય કો લેકર સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ માનસરોવર કે વિસ્તૃત પ્રદેશ મેં
 અભ્યસ્ત નિરન્તર નિવાસ કે વશ સે જિન હંસવધુઓં કા વર્ણ ધવલ
 હો ગયા હૈ, ઓર (કળગગિરિસિહરસંસિયાહિં) જો સુમેરુપર્વત કે
 તટોં પર વિહાર કરતી હૈં, તથા (ઓવાડપાયચવલજવિયસિગ્ધવેગાહિં)

તથા “ પવનાહતચપલ-ચલિય-સલલિય-નચ્ચિયવીહ-પસરિય-સ્રીરોદગપવર-સાગ-
 રુપૂરચ્ચલાહિં ” પવન આવવાને કારણે ચપલ અનેક અને તે કારણે બાણે
 ચિલાસી બનીને નૃત્ય કરતાં હોય તેવાં તથા તરંગોએ બેને વધારે વિસ્તૃત
 કરી નાખેલ છે એવાં ક્ષિર સાગરના પૂર સમાન જે અંગણ છે.—એટલે કે
 સદૃશ તરંગોથી યુક્ત ક્ષીરસાગરના પ્રવાહ જેવા જે કોઈ દેખાઈ રહ્યાં છે, તથા
 “ માણસસર-પસર-પરિચિયાવાસવિસય-વેસાહિં ” જે હંસલીઓના જેવા લાગે
 છે, હંસલી માનસરોવરમાં રહે છે. તે વિષયને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર કહે છે કે
 માનસરોવરના વિસ્તૃત પ્રદેશમાં હંમેશાં રહેવાને કારણે ને હંસલીઓના રંગ
 પ્રવેત થઈ ગયેા હોય છે, અને—“ કળગગિરિસિહરસંસિયાહિં ” જે સુમેરુ
 પર્વતનાં શિખરો પર વિહાર કરે છે, તથા “ ઓવાડપાયચવલજવિયસિગ્ધ-

સુવર્ણિની ટીકા ધૃ ૪ સુ ૮ ચલદેવવાસુદેવસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૩૭

પાતોત્પાત ચપલ જવિત શીઘ્રવેગાભિઃ=અવપાતઃ-ઝૂઘીંધૂયાધઃપતનમ્, ઉત્પાતઃ=અધોભૂત્વોર્ધ્વગમનં, તયોઃ ચપલઃ=ચञ्चलઃ જવિતઃ=વેગયુક્તઃઅતएव શીઘ્રઃવેગો=ગતિયાંસાં તાસ્તથા તાભિઃ ‘ હંસવધૂયાહિં ચેવ ’ હંસવધૂભિરિવ=હંસીભિરિવ-હંસીવત્પ્રતીયમાનાભિરિત્યર્થઃ । પુનઃ કથમ્ભૂતાભિશ્ચામરાભિઃ ? દિશ્યાદ—‘ નાનામણિક્ષ્ણગમહરિદ્રતવણિજ્જુજ્જલવિચિત્તદંડાહિં ’ નાનામણિ-કનક મહાદૈતપની-યોજ્જ્વલવિચિત્રદણ્ડાભિઃ-તત્ર નાનાવિધામણયઃ = ચન્દ્રકાન્તાદયઃ કનકં=પીત-વર્ણ સુવર્ણ તથા મહાહં=વહુમૂલ્યં યત્ તપનીયં ચ=રક્તવર્ણ સુવર્ણ તૈરૈતૈરુજ્જ્વલાઃ=ભાસ્વરાઃ વિચિત્રાઃ = મણિસુવર્ણાદીનાં સમ્મિશ્રિતકાન્તિભિશ્ચિત્રઃ વિચિત્રા દણ્ડાયાસાં તાસ્તથા તાભિઃ વિવિધમણિસ્વચિત્રરક્તપીતસુવર્ણદણ્ડયુક્તાભિઃ, યથા સુવર્ણગિરિશિખરે સ્થિતા હંસ્યઃ શ્રોભમાના સમુલ્લસતિ તથા સુવર્ણગિરિસ્થાનીય સુવર્ણદણ્ડોપરિસ્થિતાભિઃ ધવલત્વાત્ હંસીભિરિતિભાવઃ । તથા ‘ સલલિયાહિં ’ સલલિ-

અવપાત-ઝૂંચે જાને મેં જિન કી ગતિ બહુત અધિક વેગ કો લિયે હો રહી હૈં એસી (હંસવધૂયાહિં ચેવ) હંસ વધૂઓં કે સમાન જો ચામર અપની શુભ્રતા કે કારણ જ્ઞાત હો રહે હૈં । તથા (નાનામણિક્ષ્ણગમહરિદ્રતવણિજ્જુજ્જલવિચિત્તદંડાહિં) જિન ચામરોં કે દંડ ચંદ્રકાન્ત આદિ નાના પ્રકાર કી મણિયોં કી કાંતિ સે, પીતસુવર્ણ કી પ્રભા સે, ઇવં વહુમૂલ્ય તપે હુए રક્તવર્ણ વાલે સુવર્ણકી આભાસે-इन सबकी परस्पर मिश्रित कान्ति कछटा से-અધિક ઉજ્જલ ઓર રંગ ચિરંગે માલૂમ દે રહેં હૈં, અર્થાત્ જિસ પ્રકાર સુમેરુપર્વત કે તટ પર સ્થિત હૈંસ કામનિયાં સુહાવની લગતી હૈં ઉસી પ્રકાર યે ચામર ભી સુવર્ણગિરિ કે શિખર-તટ જૈસે દંડોં પર સ્થિત હોને કે કારણ અપની ધવલતા કે કારણ હંસનિયોં કે સમાન પ્રતીત હોતે હૈં (સલલિયાહિં) યે ચામર

બેગાહિં ” જો ચેથી નીચે આવવામાં અને નીચેથી જો ચે જવામાં જેની ગતિ ઘણી ઝડપી હોય છે એવી “ હંસવધૂયાહિં ચેવ ” હંસવધૂઓ (હંસડીઓ) જેવાં જે ચામરો પોતાની શ્વેતતાને કારણે લાગે છે. તથા “ નાનામણિક્ષ્ણગમહરિદ્રતવણિજ્જુજ્જલવિચિત્તદંડાહિં ” જે ચામરોના દંડો અન્દ્રકાન્ત આદિ વિવિધ પ્રકારના મણીઓની કાંતિથી, પીતસુવર્ણની પ્રભાથી, અને તપાવેલા બહુમૂલ્યવાન રક્તવર્ણના સુવર્ણની આભાથી એ બધાની પરસ્પર મિશ્રિત કાન્તિથી-અધિક ઉજ્જ્વળ અને રંગ એ રંગી લાગે છે, એટલે કે જેમ સુમેરુ પર્વતનાં શિખરો પર રહેલી હંસડીઓ સુંદર લાગે છે એ જ પ્રમાણે તે ચામરો પણ સુવર્ણગિરિનાં શિખર જેવાં દંડો ઉપર આવેલા હોવાથી પોતાની શ્વેતતાને કારણે હંસડીઓ જેવાં લાગે છે. “ સલલિયાહિં ” તે ચામરો લાલિત્ય વાળાં હતાં.

તામિઃ = લાલિત્યયુક્તામિઃ, ‘નરવહસિરિસમુદયપ્પગાસણકરાહિં’ નરપતિ શ્રી સમુદયપ્રકાશકરામિઃ = રાજલક્ષ્મી પ્રકર્ષ સૂચિકામિઃ, ‘વરપટ્ટણુગયાહિં’ વરપત્ત નોદગતામિઃ = શિલિપ્રધાનનગરનિમિત્તામિઃ, ‘સમિદ્ધરાયકુલસેવિયાહિં’ સમુદ્ધરાયકુલસેવિતામિઃ = વિદ્યુષિતામહાદિ પરમ્વરયા સમાગતામિઃ, તૈઃ પરિધૂતામિરિત્યર્થઃ, ‘કાલાગુરુપવરકંદુરુકતુરુકધૂવાસવિસિદ્ધગંધુદ્ધૂયામિરામાહિં’ કાલાગુરુપવરકુંદુરુકતુરુકધૂપવિશિષ્ટગન્ધોદ્ધૂતામિરામામિઃ = તત્ર કાલાગુરુઃ = કૃષ્ણાગુરુઃ પ્રવરં = પ્રધાનં - સર્વોત્તમં, કુંદુરુકં = ચીડાગન્ધગન્ધદ્રવ્યં, તુરુકં = તુરુકદેશોદ્ભવં - સિંહકામિધગન્ધદ્રવ્યં ‘લોવાન’ ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધમ્, ઇત્યેતલ્લક્ષણા યો ધૂપાઃ = ધૂપવિશેવાસ્તેષાં યો વાસઃ = વાસના તેન વિશિષ્ટઃ = વિસ્પષ્ટો ગન્ધઃ સઃ ઉદ્ધૂતઃ = પરિતો વિસારી તેન અમિરામાઃ = મનોહ્રા યાસ્તાસ્તથા તામિઃ, નાનાવિધધૂપગન્ધયુક્તામિરિત્યર્થઃ ‘ચિલિયાહિં’ દેદીપ્યમાનામિઃ દેશીશબ્દોડયમ્,

લાલિત્ય સે યુક્ત થે । તથા (નરવહસિરિસમુદયપ્પગાસણકરાહિં) જિનકે ડપર યે ઢોરે જાતે હૈં ડનકી યે રાજલક્ષ્મી કે પ્રકર્ષ કે સૂચક હોતે હૈં । તથા (વરપટ્ટણુગયાહિં) સાધારણ સ્થાનોં મૈં યે નહીં બનાયે જાતે હૈં કિન્તુજો શિલિપ્રધાન નગર હોતે હૈં ડન્હીં મૈં યે નિમિત્ત હોતે હૈં । તથા (સમિદ્ધરાયકુલસેવિયાહિં) બલદેવ ઓર વાસુદેવ પર જો ચામર ઢોરે જા રહે થે - વે ડનકી વંશપરંપરા સે ચલે ઢૂપ આ રહે થે । (કાલાગુરુપવરકુંદુરુક તુરુકધૂવાસવિસિદ્ધગંધુદ્ધૂયામિરામાહિં) યે ચામર કાલાગુરુ ઉત્તમ ચીડા નામકગંધદ્રવ્ય તથા લોવાન કો જલાકર ડનકી ગંધ સે વાસિત કિયે ઢૂપ થે, અતઃ ડનકી ચારોં ઓર સુગંધ નિકલ કર કૈલ રહી થી ડસસે યે વડે મનોહર લગતે થે । તથા (ચિલિયાહિં)

તથા “ નરવહસિરિસમુદયપ્પગાસણકરાહિં ” ઝેમની ઉપર તે ઢોગાય છે, તેમની રાજલક્ષ્મીની ત્રિપુરતાના તે સૂચક હોય છે. તથા “ વરપટ્ટણુગયાહિં ” સાધારણ સ્થાનોમાં તે બનતાં નથી પણ જે શિલ્પ પ્રધાન નગરો હોય છે, તેમાં જ તે ચામરો બનાવવામાં આવે છે. તથા “ સમિદ્ધરાયકુલસેવિયાહિં ” બલદેવ અને વાસુદેવ પર જે ચામરો ઢોગવામાં આવતાં તે તેમની વંશપરંપરાથી ચાલ્યા આવતાં હતાં. “ કાલાગુરુ - પવરકુંદુરુક - તુરુક - ધૂવાસ - વિસિદ્ધ - ગંધુદ્ધૂયામિરામાહિં ” તે ચામરોને ઢાળા અગર, ઉત્તમ ચીડા નામનું સુગંધીદાર દ્રવ્ય, તથા ઢોળાનનો ધૂપ દઈને તેમના ગંધથી સુગંધ સુક્ત બનાવ્યાં હતાં, તેથી તેમની સુગંધ ચામેર ફેલાઈ રહી હતી તેથી તે મનોહર લાગતાં હતાં. તથા

‘ उभओ पार्सपि ’ उभयोरपि पार्श्वयोः, ‘ उक्लिप्पमाणाहिं ’ उक्लिप्पमाणाभिः= वीज्यमानाभिः-सञ्चाल्यमानाभिरित्यर्थः, ‘ चामराहिं ’ चामराभिः=बालव्यजनैः, चामरशब्दःस्त्रीलिङ्गोऽपि ‘ चामरं चमराऽपि च ’ इति मेदनी कोषात्, ‘ सुहसीयलवा-य ’ मुख शीतलवाताभिः सूत्रे लुप्तविभक्तिकं पदम्, सुखदः शीतलश्च वातः=वायुर्यासां तास्तथा ताभिः ‘ वीह्यंगा ’ वीजीताङ्गाः=वीजीतान्यङ्गानि येषां ते तथा ‘ अजिया ’ अजिताः=अन्यैरपराजिताः ‘ अजियरहा ’ अजितस्थाः=अपराजितस्थाः ‘ हलमु-सलकणगपाणी ’ हलमुसलकनकपाणयः= हलं च मुसलं च कनकं=कनकामरण वलय इत्यर्थः=हस्ते येषां ते तथा हलमुसल कनक पाणयो बलदेवः । वासुदेवश्च ‘ संख चक्रगयसत्तिणंदगधरा ’ शङ्खः चक्रगदाशक्ति नन्दनधराः=अङ्गः=पाञ्चजन्या-भिःचक्रं=सुदर्शनाख्यं, गदा=कौमोदकी शक्तिः=शस्त्रविशेषः, नन्दकश्च=खड्गः, एतान् धरन्ति ये ते तथा, वासुदेवविशेषणमिदं, ‘ पवरुज्जलसुकयविमलकोधुम किरीडधारी ’ प्रवरुज्ज्वलसुकृतविमलकौस्तुभकिरीटधारिणः = प्रवरुज्ज्वलः =

ये अपनी कान्ति से बहुत अधिक देदीप्यमान हो रहे थे। ऐसे ये (चामराहिं) चामर कृष्ण और बलदेव की (उभओ पार्सपि) आजू बाजू में-दोनों पार्श्वभागों में-ढोले जा रहे थे। (सुहसीयल वायवीह्यंगा) इनसे निर्गत सुखद और शीतल वायु से इनका शरीर बीजा जाता था (अजिया) ये बलदेव और वासुदेव अन्य व्यक्तियों द्वारा अपराजित थे। (अजियरहा) इनके रथ को रोकने की किसी भी व्यक्ति में शक्ति नहीं थी, इसलिये ये अजित रथ थे। (हलमुसलकणगपाणी) बलदेव के हाथ में हल मुसल तथा सोने के आभरण अर्थात् कड़े रहते थे। पांचजन्य नामका शंख, सुदर्शन नामका चक्र, कौमोदकी नामकी गदा, शक्ति नामका शस्त्र और नन्दक नामकी तलवार, ये सब कृष्ण वासुदेव के पास रहते थे। अत्यंत भास्वर, (पवरुज्जलसुकयविमलको-

“ चिल्लियाहिं ” तेओ तेमनी कान्तिथी धण्ण व तेवस्वी लागतां हतां. ओवा ते “ चामराहिं ” चामरा कृष्ण अने अणदेवनी “ उभयो पार्सपि ” आजुआ-जुओ अन्ने पडजे दोणवामां आवतां हतां. “ सुहसीयलवायवीह्यंगा ” तेनाथी उत्पन्न वतो शीतल अने सुखद वायु तेमनां शरीरपर वीजतां हतां. “ अजिया ” ते अणदेव अने वासुदेव गीमा दोडा द्वारा अपराजित हतां. “ अजियरहा ” तेमना रथोने रोकवानी ताकात कोर्ध पण व्यक्तिमां न हती. तेथी तेओ अजितरथ हतां. “ हलमुसलकणगपाणी ” अणदेवना हाथमां हण, मुसण अने सोनानां कडां रहेतां हतां. पांचजन्य नामने शंख, सुदर्शनचक्र, कौमोदकी नामनी गदा, शक्ति नामनुं शस्त्र अने नन्दक नामनी तलवार ओ अधुं कृष्ण वासुदेव पासे रहेतुं हतुं. “ पवरुज्जलसुकय-विमल-कोधुम-किरीडधारी ”

અતિમાસ્વરઃ સુકૃતઃ=મુકુટ રચિતો વિમલઃ=સ્વચ્છો યઃ કૌસ્તુભો મણિવિશેષસ્તં તથા કિરીટં=મુકુટં ચ ધારયન્તિ યે તે તથા इदमपि वामुदेव विशेषणम् । कुंडल उज्जो वियाणणा ' कुण्डलोद्द्योतिताननाः=कुण्डलैः=कर्णभूषणैः-उद्द्योतितं=प्रकाशित-माननं=मुखं येषां ते तथा, 'पुंडरीयणयणा' पुण्डरीकनयनाः =कमलाक्षाः ' एगा-वलिकंठरइयवच्छा ' एकावलीकंठरचितवक्षसः=एकावलीकंठे रचिताः=कण्ठाव-लम्बिनी सतीकृता वक्षसि=वक्षःस्थले येषां ते तथा ' सिरिवच्छसुलंछणा ' श्री-वत्समुळाच्छनाः=श्रीवत्सः=श्रीवत्सःस्वस्तિકविशेषः स एव शोभनं लाम्छनं येषां ते तथा ' वरजसा ' वरयज्ञसः=विश्रुतकीर्तयः ' सव्वोउयसुरभिकुसुमरइय-पलंब-सोहंत-वियसंत-विचित्तवणमालरइय-वच्छा ' सर्वतુકુમુરભિકુસુમરચિત-પ્રલમ્બ-શોભમાનવિકસદ્વિચિત્રવનમાલા રચિતવક્ષસઃ=સર્વતુકૈઃ=સર્વતુકૈઃ સુરભિકુસુમૈઃ=સુગન્ધિપુષ્પૈઃ રચિતાઃ=નિર્મિતા પ્રાલમ્બશોભમાના-પ્રલમ્બમાનત્વેન સુશોભના

ધુમકિરિડધારી) અત્યંત માસ્વર અચ્છી તરહ સે રચિત, તથા સ્વચ્છ એસા કૌસ્તુભ રત્ન તથા કિરીટ-મુકુટ इहे कृष्ण वामुदेव धारण करते थे । तथा (कुंडल उज्जोइयाणणा) इन दोनों भाईयों का मुख कर्णा-भूषणों से सदा प्रकाशित रहता था । (पुंडरीयणयणा) इनके नयन पुंडरिक- (श्वेतकमल) जैसे शोभायमान थे । (एगावलिकंठरइयवच्छा) कंठ में जो ये एकावली हार पहिने हुए थे वह छाती तक लटकता था । (सिरिवच्छ सुलंछणा) श्रीवत्स नामक स्वस्तिक विशेष चिह्न इनके वक्षस्थल में था (वरजसा) चारों तरफ इनकी कीर्ति फैली हुई थी, (सव्वोउयसुरभिकुसुमरइयपलंबसोहंतवियसंतविचित्तवणमालरइयवच्छा) इनके वक्षःस्थल पर जो वनमाला लटक रही थी वह समस्त ऋतु संबंधी सुरभितपुष्पों से गुंथी हुई थी, एवं बहुत लंबी थी, इसलीये बड़ी

અત્યંત ભાસ્વર-સુંદર રીતે તૈયાર કરેલ, સ્વચ્છ કૌસ્તુભ રત્ન તથા કિરીટ-મુકુટ કૃષ્ણવામુદેવ ધારણ કરતા હતા. તથા “ કુંડલઉજ્જોइयाणणा ” તે બંને ભાઈઓનાં મુખ કર્ણભૂષણોથી સદા પ્રકાશિત રહેતાં હતાં, “ પુંડરીયણયણા ” તેમનાં નયન પુંડરીક (સફેદ કમળ) જેવાં સુંદર હતાં. “ એગાવલીકંઠરइयववच्छा ” કંઠમાં જે એક સરવાળો હાર પહેર્યો હતા તે છાતી સુધી લટકતા હતા. “ સિરિવચ્છસુલંછણા ” તેમના વક્ષસ્થળ ઉપર શ્રી વત્સ નામનું સ્વસ્તિક વિશેષ ચિહ્ન હતું, “ વરજસા ” તેમની કીર્તિ ચોમેર વ્યાપી હતી, “ સવ્વોउय-સુર-ભિકુસુમરइय-પલંબ-સોહંત-વિયસંત-વિચિત્તવણમાલ-રइयववच्छा ” તેમના વક્ષસ્થળ પર જે પુષ્પમાળા લટકતી હતી તે બધી ઋતુઓનાં સુગંધિદાર ફૂલો વડે ગુથેલી હતી, અને બહુ લાંબી હતી, તેથી તે ઘણી સુંદર લાગતી હતી, તથા

सुदर्शनी टीका अ० ४ सू० ८ बलदेववासुदेवस्वरूपनिरूपणम्

४४१

विकसन्ती-विकसायमाना विचित्रा-नानारूपकुमुदप्रथितत्वाच्चित्ररूपा या वन-माला सा रचिता वक्षसि-वक्षःस्थले येषां ते तथा, 'अट्टसयविभक्तलक्षणपसत्थ सुंदरविराड्यंगुवंगा' अष्टसयविभक्तलक्षणप्रशस्तसुन्दरविराजिताङ्गोपाङ्गा = अष्ट-सयविभक्तलक्षणैः-अष्टोत्तरशतप्रकारलक्षणैः प्रशस्तैः = श्लाघनीयैः सुन्दरैः-नय-नाह्लादजनकैः विराजितान्यङ्गोपाङ्गानि येषां ते तथा अष्टसयविभक्तलक्षणलसित शरीरा इत्यर्थः, 'मत्तगयवरिदललियविक्रमविलसियगई' मत्तगयवरिदललित विक्रमविलसितगतयः=मत्तगयवरिदलस्य=ऐरावतस्येव ललितः-सुविलासः यो विक्रमः चङ्क्रमणं-गमनं तद्वत्, विलसिता=विलासयुक्ताः गतिर्येषां ते तथा 'कडिसुत्तग-नीलपीयकोसेज्जवाससा' कटिसूत्रकनीलपीतकौशेयवाससः = कटिसूत्रकानि = कटिसूत्रप्रधानानि नीलपीतानि कौशेय वासांसि=कौशेयवस्त्राणि 'रेशमीवस्त्र' इति भाषा प्रसिद्धानि येषां ते तथा नीलाम्बराः बलदेवाः, पीताम्बराः वासुदेवाः इति बोध्यं 'पवरदित्तेया' पवरदीप्तनेजसः = महातेजस्विनः, 'सारयण-

सुहावनी लगती थी, तथा विकसायमान थी, तथा विविध प्रकार के पुष्पों से ग्रथित होने के कारण वह रंग विरंगी थी,। (अट्टसयविभक्त-लक्षणपसत्थसुंदरविराड्यंगुवंगा) प्रशस्त-श्लाघनीय-एवं सुन्दर-नेत्रों को आह्लादजनक ऐसे एक सौ आठ (१०८) भिन्नप्रकार के लक्षणों से जिनके अंग और उपांग सुशोभित होते थे, तथा (भक्तगयवरिदललियविक्रमविलसियगई) ऐरावत के विलासयुक्त गमन के समान जिनकी गति विलास सहित होती थी, तथा (कडिसुत्तगनीलपीयको-सेज्जवाससा) जिनके पहिरे हुए नीले पीले रेशमी वस्त्रों (पीत अम्बर धारी वासुदेव एवं नील अम्बर धारी बलदेव होते हैं) पर कटिसूत्र बहुत ही अधिक सुहावना प्रतीत होता है-अर्थात् जिन के नीले पीले रेशमी वस्त्र और कटिसूत्र प्रधान होते हैं। तथा (पवरदित्तेया) जो

विकसित होती, तथा विविध आतनां कृलोभांथी गुथेलां डोवाथा रंगभेरंगी होती.

“अट्टसयविभक्त-लक्षणपसत्थ-सुंदर-विराड्यंगुवंगा” प्रशस्त-वशाधुवादायक अने सुंदर नेत्राने आनंददायक अने अंग से आठ (१०८) गुदा गुदा प्रकारनां लक्षणोत्थी नेभनां अंग उपांगो शोभतां होती, तथा “मत्तगयवरिदललियविक्रमविलसियगई” ऐरावतना विलासयुक्त गमन समान नेभनी गति विलासयुक्त होती, तथा “कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा” नेभले पड़ेरेला वाहणी अने पीजां वस्त्रो “पीताम्बर धारी वासुदेव अने नीलाम्बर धारी वाहदेव” पर कटिसूत्र अत्यंत सुंदर लागतुं छतुं. तथा “पवरदित्तेया” ने भडोतेजस्वी होता तथा “सारयणव-थणिव-महुर-गंभीर-जिद्ध घोसा”

વથળિયમહુરંગમીરણિદ્વધોસા ' શારદનવસ્તનિતમધુરગમ્મીરસ્તિગ્ધયોષાઃ = શારદં=શરત્કાલિકં યત્રવસ્તનિતં = નૂતનો મેઘધ્વનિઃ તદ્વન્મધુરઃ-કર્ણસુસ્વકરઃ ગમ્મીરઃ સ્તિગ્ધઃ=સ્નેહજનકઃ યોષઃ=શબ્દો યેષાં તે તથા, 'નરસીંહા' નરસિંહાઃ= નરેષુ સિંહાદિવ, एतत्साधर्म्यमाह—'सीहविक्रमगई' सिंहविक्रमगतयः= सिंहस्येव विक्रमः=पराक्रमः गतिश्च येषां ते तथा 'अथमियपवररायसीहा' अस्तमित पवरराजसिंहाः=अस्तमिताः=अस्तं प्रापिताः पराजिताः प्रवसाः=विशिष्टाः राजसिंहाः=शूरराजानो यैस्ते तथा । 'सौम्मा' सौम्याः=सौम्यरूपाः 'वारवई-पुण्णचંदा' द्वारावती पूर्णचन्द्राः=द्वારकापुर्याः आहादकत्वात् पूर्णचन्द्रस्वरूपाः, 'पुव्वकयतवप्पभावा' पूर्वकृततपःप्रभावात् = पूर्वभवकृततपो माहात्म्यात् 'नि-विट्ठસંચિયસુહા' નિવિટ્ઠ સચ્ચિત્સુખાઃ=નિવિટ્ઠાનિ=લઘ્વાનિ સચ્ચિતાનિ=પૂર્વ-ભવોપાર્જિતાનિ સુખાનિ યૈસ્તે તથા 'અણેગવાસસયમાઝ્ઞંતો' અનેક વર્ષસતા-યુષ્મન્તઃવર્ષસદસ્રાઘાપુષ્કાઃ, 'મજ્ઞાહિય જાણવયપ્પહાણાદિ' માર્યામિથ જનપદ-મહાતેજસ્વી હોતે હૈં તથા (સારચળવથળિયમહુરંગમીરણિદ્વધોસા) જિનકા થોલના શરદકાલીન નવીનમેઘધ્વનિ કે જૈસા કર્ણસુસ્વકર એવં સ્તિગ્ધ-સ્નેહજનક હોતા હૈં, તથા (નરસીંહા) જો મનુષ્યોં કે યોચ મેં સિંહ કે જૈસે હોતે હૈં તથા (સીહવિક્રમગઈ) જિનકા પરાક્રમ ઓર ગમન સિંહ કે સમાન હોતા હૈં, તથા (અથમિયપવરરાયસીહા) જો અપને પરાક્રમ સે-પવર રાજસિંહોં કો અસ્તમિત-પરાજિત-કર દેતે હૈં । તથા જો (સોમ્મા) સૌમ્યરૂપ હોતે હૈં, એવં (વારવઈપુણ્ણચંદા) દ્વારકાપુરી કે આહ્વાદક હોનેકે કારણ જો પૂર્ણચન્દ્રસ્વરૂપ હોતે હૈં (પુવ્વકયતવપ્પભાવા-નિવિટ્ઠસંચિયસુહા) તથા-જો પૂર્વકૃત તપ કે પ્રભાવ સે પહિલે ભવોં મેં ઉપાર્જિત સુખોં કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં, તથા (અણેગવાસસયમાઝ્ઞંતો) જો સૈકડો વર્ષોં કી આયુવાલે હોતે હૈં, તથા (મજ્ઞાહિય જાણવયપ્પહાણા-

જેમના શબ્દો શરદઋતુના મેઘધ્વનિ જેવા મધુર અને સ્તિગ્ધ-સ્નેહ જનક હતા, તેથી “ નરસિંહા ” જે માણસોની વચ્ચે સિંહ સમાન હતા. તથા “ સીહ-વિક્રમગઈ ” જેમની ગતિ અને જેમનું પરાક્રમ સિંહ સમાન હતાં, તથા “ અથમિયપવરરાયસીહા ” જે પોતાના પરાક્રમ વડે શ્રેષ્ઠ રાજસિંહોને મહાત કરતા હતા. તથા જે “ સોમ્મા ” સૌમ્ય હતા, અને “ વારવઈ પુણ્ણચંદા ” દારિકાનગરીને આનંદ આપનાર હોવાને કારણે જે પૂર્ણચન્દ્ર હતા, “ પુવ્વકય તવપ્પભાવા નિવિટ્ઠસંચિયસુહા ” તથા જે પૂર્વે કરેલાં તપના પ્રભાવથી આગળના ભવોમાં ઉપાર્જિત સુખો પ્રાપ્ત કરે છે. તથા “ અણેગવાસસયમાઝ્ઞંતો ” જે સેંકડો વર્ષના આયુષ્ય વાળા હોય છે, તથા “ મજ્ઞાહિયજાણવયપ્પહાણાદિ

સુવર્ણસીદ્ધીકા અ० ૪ સૂ० ૧ અબ્રહ્મસેવિસ્વરૂપમિરૂપણમ્

૪૪૩

પ્રધાનાભિઃ=દેશ રત્ન રૂપાભિઃ = ‘લાલિયંતા’ લાલ્યમાનાઃ = વિલાસ્યમાનાઃ
‘અતુલસદ્ધર્મસરસરૂવગંધેયઅણુમવિત્તા’ અતુલશબ્દરસરૂવગંધાથ અણુમૂય
‘તે વિ’ તેડપિ=તાદૃશા અપિ ‘અવિતિત્તા કામાણ’ અવિત્તમાઃ કાનાનાં=કામભોગેષુ
તૃપ્તિરહિતા એવ ‘ઉવળમંતિ મરણધર્મમ્’ મરણધર્મમ્ભુપનમન્તિ ॥ સૂ० ૮ ॥

પુનઃ કેડબ્રહ્મસેવિનઃ ૧ ક્ષ્યાદ્ ‘શુઙ્ગો મંડલિય’ ક્ષ્યાદિ—

મૂલમ્—શુઙ્ગો મંડલિયણરવરિંદા સવલા સઅંતેઝરા સપ-
રિસા સપુરોહિયાડમચ્છડંડણાયગસેણાવઙ્ — મંતિણીઙ્ — કુસલા
ણાણામણિ—રયણ-વિઝલધણધણસંચય-નિહિસમિદ્ધકોસા, રજ્જ-
સિરિવિઝલમણુમવિત્તા વિક્કોસંતા બલેણમત્તા તે વિ ઉવળ-
મંતિ મરણધર્મમ્ અવિત્તતા કામાણં ॥ સૂ० ૧ ॥

ટીકા—‘શુઙ્ગો’ મૂયઃ=પુનરપિ ‘મંડલિય ણરવરિંદા’ માણ્ડલિકનર
વરેન્દ્રાઃ=માણ્ડલાધિપતયઃ (સવલા) સવલાઃ=સેના સહિતાઃ ‘સ અંતેઝરા’
હિ લાલિયંતા) જો જનપદપ્રધાનભૂત દેશોં મેં રત્નરૂપ તે માની ગઈ
અર્થાત્—સર્વોત્કૃષ્ટ સ્ત્રિયોં કે સાથ આનંદ કરતે હૈં—વૈષયિક મુલ્યોં કો
ભોગતે હૈં (તેવિ) એસે વે ચલદેવ ઓર વાસુદેવ મો (અતુલસદ્ધર્મસ-
રસરૂવગંધે ય અણુમવિત્તા) અતુલ શબ્દ, સ્પર્શ, રસ રૂપ, એવં ગંધ રૂપ
વિષયોંકા અણુમવ કરકે મો (અવિત્તકામાણં) કામભોગોં કી તૃપ્તિસે
વિહીન હી (ઉવળમંતિમરણધર્મમ્) મરણધર્મકો પ્રાપ્ત કરતે હૈં ॥સૂ० ૮॥

અથ સૂત્રકાર “ઔર કૌન અબ્રહ્મસેવી હોતે હૈં” હસ વાત કો
કહતે હૈં—‘શુઙ્ગો મંડલિયણરવરિંદા’ ક્ષ્યાદિ ॥

ટીકાર્થઃ—(શુઙ્ગો મંડલિય ણરવરિંદા) ફિર જો મંડલાધિપતિ

લાલિયંતા” જે મુખ્ય મુખ્ય દેશોમાં રત્નસમાન ગણાતી એટલે કે અણુમ
શ્રીઓ સાથે આનંદ કરે છે વૈષયિક મુખોને ભોગવે છે “તે વિ” એવા તે
બાહ્યદેવ અને વાસુદેવ પણ “અતુલસદ્ધર્મસરસરૂવગંધે ય અણુમવિત્તા”
અણુમ શબ્દ, સ્પર્શ, રસ, રૂપ અને ગંધ રૂપ વિષયોનો ઉપભોગ કરવા
છતાં પણ “અવિત્તકામાણં” કામભોગોથી અતૃપ્ત એવી હાલતમાં જે “ઉવ-
ળમંતિ મરણધર્મમ્” મૃત્યુ પામે છે ॥ સૂ. ૮ ॥

હવે સૂત્રકાર ખતાવે છે કે બીજા અબ્રહ્મસેવી કોણ હોય છે? “શુઙ્ગો
મંડલિયણરવરિંદા” ક્ષ્યાદિ.

ટીકાર્થ—“શુઙ્ગો મંડલિયણરવરિંદા” અને જે માંડલિકો હોય છે, તેઓ કેવાં

સાન્તઃ પુરાઃ=સહીકાઃ ‘ સપરિસા ’ સપરિષદઃ=સપરિવારાઃ ‘ સપુરોહિયા મચ્ચ-
 ડંડનાયગસેનાવહમંતિણીકુસલા ’ સપુરોહિતામાત્ય-દણ્ડનાયકસેનાપતિ મન્ત્રિ-
 નીતિકુસલાઃ = તત્ર પુરોહિતાઃ = શાન્તિકર્મકારિણઃ અમાત્યાઃ=મન્ત્રિણઃ દણ્ડ-
 નાયકાઃ=કોટ્ટપાલાદયઃ સેનાપતયઃ મન્ત્રિણશ્ચ કીદૃશાસ્તે ? ઇત્યાદ-નીતિકુસલાઃ
 નીતૌ=સામદામાદિ રૂપાયાં કુસલાઃ=નિષુણાઃ, તૈઃ સહિતાઃ ‘ ગાણામણિરયણ
 વિઝલધણધણસંચયનિહિસમિદ્કોસા ’ નાનામણિરત્નવિપુલધનધાન્યસશ્ચય-નિધિ
 સમૃદ્ધકોસાઃ = ચક્રવર્તિવર્ણને કૃતવ્યાસ્વાનભિદમ્ । ‘ વિઝલં ’ વિપુલાં =
 મહતીં ‘ રજ્જસિરિં ’ રાજ્યશ્રિયં=રાજ્યલક્ષ્મીમ્ ‘ અણુભવિત્તા ’ અનુભૂય=ઉપભુજ્ય
 ‘ વિક્કોસંતા ’ વિકોશન્તઃ=અન્યાન્ પીડયન્તઃ ‘ બલેણ મત્તા ’ બલેન મત્તાઃ=બલગ-
 વિંતાઃ, ‘ તે વિ ’ તેડપિ-માંડલિકાદયઃ, ‘ અવિત્તા કામાણં ’ કામાનામવિત્તાઃ=
 કામોપભોગેષુ તૃપ્તિરહિતા એવ, ‘ ઉવણમંતિ મરણધમ્મં ’ મરણધર્મમુપનમન્તિ॥મૂ.૭.૧॥

હોતે હૈં, વે કૈસે હોતે હૈં ? સો કહતે હૈં— (સવલા) સેના સહિત હોતે
 હૈં, (સઅંતેડરા) અંતઃપુરસે જો યુક્ત હોતે હૈં, (સપરિસા) પરિવાર
 સહિત હોતે હૈં, (સપુરોહિયામચ્ચંડડનાયગસેનાવહમંતિણીકુસલા)
 જિનકે શાન્તિકર્મ કરાને વાલે પુરોહિત અમાત્ય, દંડનાયક ઓર સેના-
 પતિ સામ દાન આદિ રૂપ રાજનીતિ મેં કુશલ હુઆ કરતે હૈં । તથા—
 (ગાણામણિરયણવિઝલધણધણસંચયનિહિસમિદ્કોસા) નાનામણિ-
 યોં સે, રત્નોં સે, વિપુલ ધન ધાન્ય કે સંચય સે ઓર નિધિયોં સે જિન
 કા કોશ સમૃદ્ધ રહતા હૈ, તથા જો (વિઝલં) વિપુલ (રજ્જસિરિં)
 રાજ્યશ્રી કો (અણુભવિત્તા) ભોગ કરકે (વિક્કોસંતા) દૂસરે વ્યક્તિયોં
 કો રાતદિન પીડિત કિયા કરનેવાલે તથા (બલેણ મત્તા) અપને બલ સે
 ગર્વિત બને હુણ (તે વિ) હસ પ્રકાર કે વે ભી માંડલિક આદિ રાજા

હોય છે, તે કહે છે—“ સવલા ” તેઓ સેનાયુક્ત હોય છે, “ સ અંતેડરા ”
 અંતઃપુરથી યુક્ત હોય છે, “ સપરિવારા ” પરિવાર યુક્ત હોય છે, “ સપુરોહિયા
 મચ્ચંડનાયગસેનાવહમંતિણીકુસલા ” જેમના શાંતિ કર્મ કરાવનારા પુરોહિત
 અમાત્ય દંડનાયક અને સેનાપતિ સાન, દામ, આદિ રૂપ રાજનીતિ બાણકાર
 હોય છે. તથા “ ગાણામણિરયણવિઝલધણધણસંચયનિહિસમિદ્કોસા ” વિવિધ
 મણિયો, રત્નો, વિપુલ ધન-ધાન્ય આદિના સંચયથી તથા નિધિયોથી
 જેમના ખજાને સદા સમૃદ્ધ રહે છે તથા જે “ વિઝલં ” વિપુલ “ રજ્જસિરિં ”
 રાજ્ય લક્ષ્મીના “ અણુભવિત્તા ” ઉપભોગ કરે છે, “ વિક્કોસંતા ” બીબા કોડોને
 શતદિવસ પીડનારા તથા “ બલેણ મત્તા ” પોતાના બળથી ગર્વિત અનેલા એવા

सुवर्णिनी टीका अ०४ सू० ९ १. युगलिकस्वरूपनिरूपणम्

४४५

अथ युगलिकानामपि तदेव वर्णयति—‘ भुज्जो उत्तरकुरु ’ इत्यादि—

मूलम्—भुज्जो उत्तरकुरु—देवकुरु—वणविवर—पायचारिणो नर-
गणा भोगुत्तमा भोगलक्खणधरा भोगसस्तिरीया पसत्थ सोम-
पडिपुण्णरूवदरिसणिज्जा सुजायसव्वंगसुंदरंगा रत्तुप्पलपत्त-
कंतकरचरणकोमलतला सुपइट्ठियकुम्मचारुचलणा आणुपुब्ब-
सुसंहयंगुलया उण्णय—तणु—तंब—निद्ध—नखा संठियसुसिलि-
ट्ठगूढगोफा एणीकुरुविंदवत्तावट्ठाणुपुब्बजंघा समुग्गनिमग्गगू-
ढजाणू गयससणसुजायसंनिभोरू वरवारणमत्ततुल्लविक्रम
विलासियगई वरतुरगसुजायगुज्झदेसा आइण्णहयोव्वनिरुव-
लेवा पमुइयवरतुरयसीहअइरेगवट्ठिय कडींगंगावत्तगदाहिणा—
वत्ततरंगभंगुररविकिरणवोहियविकोसायंत — पम्ह — गंभीर-
वियडनाभी साहयसोणंदमुसलदप्पणनिगरियवरकणगळरू
सरिसवरवइरवलियमज्झा उज्जगसमसंहियजच्चतणुकसिणनिद्ध
आदिज्जलडहसुकुमाल मउयरोमराई, इसविहगसुजायपीणकु-
च्छी इसोदरा पम्ह वियडणाभी संनयपासा संगयपासा सुंदर-
पासासुजायपासामितमाइय पीणरइयपासा अकरंडुय कणगरुयग
निम्मलसुजायनिरुवहयदेहधारी कणगसिलातलपसत्थसम-
तलउवइयवित्थिण्णपिट्ठुलवच्छा जुयसणिग्गभ — पीणरइय

(अवितत्ता कामार्ण) कामभोगों में अतृप्त बने रहकर ही (मरणधम्म-
उवणमंति) मरणधर्म को प्राप्त करते हैं ॥ सू०९ ॥

“ ते वि ” ते भांडविक आदि राजाओं पणु “ अवितत्ताकामार्ण ” कामभोगोंधी
अतृप्त रहने व “ मरण धम्म उवणमंति ” मृत्यु पाने छे ॥ सू० ९ ॥

પીવર પડદસંઠિય સુસિલિદ્ધ વિસિદ્ધલદ્ધસુણિચિય ધનથિરસુ-
વિદ્ધસંધીપુરવરફાલિહવદ્ધિય મુજા ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટીકા:— ‘ મુજ્જો ’ મૂય: = પુનરપિ ‘ ઉત્તરકુરુદેવકુરુવણવિવરપાયચારિણો ’
ઉત્તરકુરુ-દેવકુરુ - વનવિવરપાદચારિણ: = ઉત્તરકુરુણાં દેવકુરુણાં : ચ ક્ષેત્ર
વિશેષાણાં યાનિ વનવિવરાણિ = વનસ્થલી કન્દરાદિસ્થાનાનિ તત્ર વાહનાભાવાત્
પાદૈ: = વરણૈશ્ચરન્તિ યે તે તથા, નરગણા: = યુગલિકા: , ‘ મોગુત્તમા ’ મોગોત્તમા: =
મોગપ્રધાના: ‘ મોગલક્ષણધરા ’ મોગલક્ષણધરા: = સ્વસ્તિકાદિ મોગસૂચકલક્ષ-
વન્ત: , ‘ મોગસસ્તિરીયા ’ મોગસશ્રીકા: = મોગશોભાશાલિન: ‘ પસત્થસોમ્મપઢિ-
પુણ્ણરૂવદરિસણિજ્ઞા ’ પશસ્તસૌમ્યપતિપૂર્ણરૂપદર્શનીયા: = પશસ્તં સૌમ્યમ્ = અતિ-
મનોજ્ઞં પ્રતિપૂર્ણં = સુપૂર્ણં રૂપમ્ = આકૃતિર્યેવાં તે તથા ‘ સુજાયસઙ્ગમુંદરંગા ’

અવ સૂત્રકાર “ મોગભૂમિયોં કે જીવોં કી ખી યહી હાલત હોતી
હે ” યહ કહતે હે— ‘ મુજ્જો ઉત્તરકુરુદેવકુરુ ’ ૦ ઇત્યાદિ ૦ ।

ટીકાર્થ:— (ઉત્તરકુરુદેવકુરુવણવિવરપાયચારિણો) ઉત્તરકુરુ તથા
દેવકુરુ યે મોગભૂમિયાં હે । इन भोगभूमियों में वाहन-सवारी-के
अभाव से पैरों से ही वहां की वनस्थलियों में—कन्दरा आदि स्थानों में-
भ्रमण किया करते हैं । (नरगणा) ये युगलिक मनुष्यगण (भोगुत्तमा)
उत्तम भोगवाले होते हैं । (भोगलक्षणधरा) स्वस्तिक आदि जो
भोगसूचक चिन्ह हैं उनसे ये विशिष्ट होते हैं । अतः वे (भोगसस्ति-
रीया) भोगों को भोगना इसी में ये अपनी शोभा मानते हैं । (पस-
त्थसोमपडिपुण्णरूवदरिणिज्ज्ञा) अतिमनोज्ञ पूर्णरूप से ये दर्शनीय-

હવે સૂત્રકાર “ ભોગ ભૂમિયોના જીવોની પણ એ જ હાલત હોય છે ”
તે બતાવે છે. “ મુજ્જો ઉત્તરકુરુ દેવકુરુ ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ:— “ ઉત્તરકુરુદેવકુરુવણવિવરપાયચારિણો ” ઉત્તર કુરુ તથા દેવકુરુ, એ
ભોગ ભૂમિયો છે. તે ભોગ ભૂમિયોમાં વાહનને બાલાવે પગપાગા જ મુસાફરી
થઈ શકે છે. તે પ્રદેશમાં રહેતાં “ નરગણા ” યુગલિકો “ મોગુત્તમા ” ઉત્તમ
ભોગ વિલાસ સેવનારા હોય છે. “ મોગલક્ષણધરા ” સ્વસ્તિક આદિ જે ભોગ
સૂચક ચિહ્નો હોય છે તેમનાથી તેઓ શુદ્ધ હોય છે. તેથી તેઓ “ મોગસ-
સ્તિરીયા ” ભોગોનો ઉપભોગ કરવામાં જ પોતાની શોભા માને છે. “ પસત્થ
સોમ્મપઢિપુણ્ણરૂવદરિણિજ્ઞા ” તેઓ અતિશય મનોહર અને સર્વાંગ સુંદર
હોય છે. “ સુજાયસઙ્ગમુંદરંગા ” તેમના દરેક શારીરિક અંગ સુંદર અને

સુરશિની ટીકા અંક ૪ સુ. ૪ ૧, યુગલિકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૫૭

સુજાતસર્વાંગસુન્દરાક્ષા: = સુષુપ્તસુન્દરાડવયવા: ‘ રત્નપ્લપત્તકંતકરચરણકોમલ-
તક્ષા ’ રક્તોત્પલપત્રકાન્તકરચરણકોમલતલા: = રક્તોત્પલસ્ય પત્રમિવ કાન્તાનિ=
સુન્દરાણિ કરચરણાનાં કોમલાનિ તલાનિ યેષાં તે તથા રક્તકમલદલતુલ્ય
સુકોમલસુરક્ત હસ્તપાદતલા: ‘ સુપદ્મિયકુમ્મચારુચરણા ’ સુપતિષ્ઠિતકૂર્મ-
ચારુચરણા: = સુપતિષ્ઠિતૌ = શોભનાકૃતિકૌ કૂર્મચત્=ઉચ્ચતસ્ત્રેન યચ્છપીઠવત્
ચારુ=સુન્દરી ચરણૌ યેષાં તે તથા, તથા ‘ અણુપુલ્લસુસંહયંગુલિયા ’ અનુપૂર્વસુસં-
હતાક્લિકા: = અનુપૂર્વ=અનુક્રમેણ=ગુરુલઘુક્રમેણ સુસંહતા: = સુમજ્જઠિતા અજુલ્ય: =
હસ્તપાદાક્લિયો યેષાં તે તથા ગુરુલઘુન્યુનાધિકદોષરહિતાક્લિકા: ‘ ઉષ્ણય-
તણુતંબનિદ્વનસ્વા ’ ઉચ્ચતતનુતામ્રસ્નિગ્ધનસ્વા: = તચ ઉચ્ચતા: = મધ્યોચ્ચતા:
તનવ: = પ્રતલા રતામ્રા: = વામ્રવર્ણા: સ્નિગ્ધા: = સુકોમલા: કાન્તિયુક્તાશ્ચ નસ્વા યેષાં
તે તથા, ‘ સંઠિયસુસિલિદ્વગૃહગોપા ’ સંસ્થિત સુશ્ચિષ્ટગૃહગુલ્ફા: = સંસ્થિતૌ=
સમ્યક્ સંસ્થાનવન્તૌ સુશ્ચિલૌ=પુષ્ટત્વાત્ સુસંહતૌ અતઃપ ગૃહૌ=અલક્ષિતૌ ગુલ્ફૌ=
ઘુટિકે યેષાં તે તથા ‘ ણીકુરુર્વિદવત્તાવદ્દાણુપુલ્લજંઘા ’ ણી કુરુર્વિદવત્તા

બહે સુન્દર હોતે હૈં । (સુજાતસર્વવંગસુન્દરાક્ષા) इनके प्रत्येक शारीरिक
अवयव सुन्दर एवं पुष्ट होते हैं । (रत्नप्लपत्तकंतकर चरणकोमलतला)
इनके हाथ और पैरों के तलिये रक्तकमल के पत्रों के समान लाल और
कोमल होते हैं । (सुपद्विद्यकुम्भचारुचरणा) इनके दोनों चरण
शोभन आकृतिवाले एवं कूर्म की पीठ की तरह उन्नत होने से बड़े
सुहावने होते हैं । (अणुपुल्लसुसंहयंगुलिया) हाथ और पैरों की अंगुलिया
इनकी गुरु लघु के क्रम से सुसंगठित रहती हैं, अर्थात् इनके हाथ
पैरों की अंगुलियां गुरु, लघु-तथा न्यूनाधिक दोष से रहित होती हैं ।
(उष्णयतणुतंबनिद्वनस्वा) नख इन्हों के मध्य में उन्नत, पतले और
ताम्रवर्ण के होते हैं । तथा कोमल और कान्ति सहित होते हैं ।
(संठियसुसिलिद्वगृहगोपा) इनके दोनों घुटने सुसंस्थान वाले, पुष्ट

પુષ્ટ હોય છે. “ રત્નપ્લપત્તકંતકરચરણકોમલતલા ” તેમની હથેળી તથા
પગનાં તળિયાં લાલ કમલ પત્ર સમાન લાલ રંગનાં અને કોમળ હોય છે.
“ સુપદ્મિયકુમ્મચારુચરણા ” તેમના અને પગ સુંદર ઘાટવાળા, તથા કાચાનાં
પીઠ જેવા ઉચ્ચત હોવાથી ધણી શોભિત હોય છે. “ અણુપુલ્લસુસંહયંગુલિયા ” તેમના
હાથપગની આંગળીઓ સુસંગઠિત હોય છે. એટલે કે ગુરુતા લઘુતા આદિ દોષોથી
રહિત હોય છે, સપ્રમાણ હોય છે “ ઉષ્ણયતણુતંબનિદ્વનસ્વા ” તેમના નખ
મધ્યમાં ઉન્નત, પાતળા, તામ્રવર્ણ, કોમળ અને કાન્તિયુક્ત હોય છે. “ સંઠિય
સુસિલિદ્વગૃહગોપા ” તેમની ળ અને ઘૂંટણો સપ્રમાણ, પુષ્ટ અને સંહત તથા

વૃત્તાનુપૂર્વજઙ્ગાઃ=તત્ર-एणी=हरिणी, तस्याश्चेह जङ्गम ग्राह्या, ते इव, तथा कुरु-
विन्दः=तृणविशेषः, 'वत्ता'-अयं-देशीशब्दः स्त्रीलिङ्गः सूत्रवलनकं सूत्रवेष्टन-
यन्त्रमित्यर्थः 'ताकला' 'तकली' इति भाषा प्रसिद्धा, ते इव वृत्ते=वर्तुले
अनुपूर्वे=आनुपूर्व्येण-अनुक्रमेण ऊर्ध्वोर्ध्वस्थूले जङ्घ्ये येषां ते तथा । 'समुग्ग-
निसग्गगूढजाणू' समुद्रनिमग्नगूढजानवः=समुद्रः=सपिधानःपिटकस्तद्वत् निमग्ने=
पुष्ट्यादन्तः संलीने अत एव गूढे=अलक्षिते जानुनी येषां ते तथा सुपुष्ट्यादन्त-
पलक्ष्य जानुका इत्यर्थः, 'गयससण सुजायसंनिभोरू' गजश्वसनसुजातसंनिभो-
रुः-गजश्वसनं = हस्तिशुण्डादंढः सः सुजात=सुसंस्थानयुक्तः तस्यसंनिभे=
सदृशे ऊरुणी=जानूपरिभागौ येषां ते तथा । 'वरवारणमत्ततुल्लविक्रमविलासि-
यगई' वरवारणमत्ततुल्यविक्रमविलासितगतयः = गजेन्द्रः स चासौ मत्तः =

होने से संहन तथा अलक्षित होते हैं । अर्थात् दिखलाई नहीं पड़ते हैं
(एणीकुरुविंदवत्तावट्टाण पुव्वजंघा) इनकी दोनों जंघाएँ हरिणी की
जंघाओं के समान तथा कुरुविंद तृणविशेष के समान एवं वत्ता-तकली
के समान वृत्त-गोलरहोती हैं । और क्रमशः वे ऊपरस्थूल रहती हैं ।
(समुग्गनिसग्गगूढजाणू) इनके दोनों जानु पिधान-ढक्कन-महित
पिटारे के समान पुष्ट होने के कारण भीतर ही भीतर छुपे हुए होते हैं
अर्थात् गहरे होते हैं इसीलिये गूढ रहते हैं । (गय-ससण-सुजाय-
संनिभोरू) सुसंस्थानयुक्त हस्तिशुण्डादंढ के समान जिनकी दोनों ऊरु-
साथलें होती हैं, अर्थात्-जानु के उपर का भाग जिनका सुसंस्थान युक्त
हाथी के शुण्डादंढ के समान होता है (वर-वारण-मत्त-तुल्ल-विक्रम-
विलासिय-गई) मदमत्त गजेन्द्र के सदृश जिनका विक्रम-पराक्रम और

અલક્ષિત હોય છે, એટલે કે નજરે પડતી નથી. “ एणीकुरुविंदवत्तावट्टाण पु-
व्वजंघा ” તેમની બંને જઘાઓ હરણીની બંને જઘાઓ સમાન તથા કુરુવિંદ
(તૃણવિશેષ) સમાન અને તકલી સમાન ગોળ ગોળ હોય છે, એને તે ઉપર
જતાં થીમે થીમે વધારે બાંધી થતી બાય છે. “ समुग्गनिसग्गगूढजाणू ” તેમના
બંને જાનુઓ ઠાંકણાથી યુક્ત પટારાના જેવાં પુષ્ટ હોવાને કારણે અંદરને
અંદર છુપાયેલા રહે છે-એટલે કે ઊંડાં હોવાને કારણે ચૂંદ રહે છે. “ गय-
ससण-सुजायसंनिभोरू ” જેમના બંને સાથળા સુધટિત હસ્તિશુણ્ડાદંડ સમાન
હોય છે, એટલે કે જાનુની ઉપરનો ભાગ સુવ્યવસ્થિત હસ્તિસૂંઢ જેવો હોય છે.
“ वर-वारण-मत्त-तुल्ल-विक्रम-विलासिय-गई ” મદોન્મત્ત ગજેન્દ્રનાં જેવું
જેમનું પરાક્રમ હોય છે, અને તેને અનુરૂપ જ જેમની વિલાસયુક્ત ગતિ

सुवर्दिनी टीका अ. ४ सू० १० युगलिकस्वरूपनिरूपणम्

४४२

मदान्वितस्तेन तुल्यः=सदृशो विक्रमः=पराक्रमः, तद्वदेव विलासिता=विलास-
युक्ता गति येषां ते तथा अत्र गजस्य पराक्रमेण गत्वा च सादृश्यं प्रदर्शितम्,
तथा ' वरतुरगसुजायगुञ्जदेसा ' वरतुरगसुजातगुह्यदेशाः = वरतुरगस्येव =
प्रशस्ताऽश्वस्येव सुजातः=सुसंस्थितः लघुत्वेन गुप्त इत्यर्थः, गुह्यदेशो येषां ते तथा
' आङ्गणहयोच्च निरुवलेवा ' आकीर्णहयइव = जातिमानश्च इव निरुपलेपाः=
मललेपविवर्जिताः ' पमुइयवरतुरयसीयअइरेगवट्टियकडी ' प्रमुदिततुरगसिंहा-
तिरेकवर्तितकटयः=प्रमुदिताः = प्रहृष्टा वरतुरगाः = जात्यश्वाः सिंहाः = केस-
रिणस्तेभ्योऽतिरेकेण = आधिक्येन वर्तिता = वर्तुला कटिः = कटिप्रदेशो
येषां ते तथा ' गंगावत्तगदाहिणावत्तरंगभंगुररविकिरणबोहियविकोसायंतपम्ह-
गंभीरवियडनाभी ' गङ्गाऽऽवर्तकदक्षिणाऽवर्ततरङ्गभङ्गुररविकिरणबोधितविकोशा-
यमानपद्मगम्भीरविकटनाभयः, तत्र — गङ्गावर्तकाः = गङ्गा नद्या जलभ्रमः,
स च दक्षिणावर्तः तरङ्गभङ्गुरः तरङ्गैर्भङ्गुरः = वक्रश्च तद्वत्, तथा रविकिरणैः=
सूर्यकिरणैर्बोधितं=विकासितं विकासवस्थां प्राप्नुयस् इत्यर्थः, अत एव-विकोशा-
वसी अनुरूप ही जिनकी विलासयुक्त गति होती है, तथा (वर-तुरग-
सुजाय-गुञ्जदेसा) प्रशस्त घोड़ेके गुह्यभागके समान जिनका गुह्यभाग लघु
होनेके कारण गुप्त रहता है। (आङ्गणहयोच्चनिरुवलेवा) तथा जानिमान्
अश्वकी तरह वह गुह्यभाग जिनका मलके लेपसे विवर्जित रहता है।
(पमुइयवरतुरयसीयअइरेगवट्टियकडी) अत्यंत हर्ष संपन्न जात्यश्वकी तथा
सिंहकी कटिसे भी अधिक गोल जिनकी कटि होती है, तथा (गंगाव-
त्तगदाहिणावत्तरंगभंगुर रविकिरण बोहियविकोसायंतपम्हगंभीरविय-
डनाभी) दक्षिणावर्त एवं तरङ्गोसे भंगुर गंगा नदी के जलभ्रम-जलावर्त
के समान, तथा--सूर्यकिरणों से मुकुलित अवस्था को छोड़कर विका-
सावस्था को प्राप्त हुए पद्म के समान गंभीर और विक्रान्तर जिनका

होय छे, " वरतुरग--सुजायगुञ्जदेसा " तेभनो गुह्य भाग प्रशस्त घोडाना
गुह्यभाग समान लघु होवाने कारणे गुप्त रहे छे, " आङ्गणहयोच्च निरुव-
लेवा " अतवान घोडाना गुह्यभागनी जेभ तेभनो गुह्य भाग पण भणना
क्षेपथी रहित होय छे. " पमुइयवरतुरयसीयअइरेगवट्टियकडी " अतिशय
हर्षसंपन्न. अतवान घोडा तथा सिंहनी कटि करतां पण जेभनी कटि पधारे
गोल होय छे, तथा " गंगावत्तग-दाहिणावत्तरंग-भंगुर-रविकिरण-बोहिय
विकोसायंतपम्हगंभीरवियडनाभी " दक्षिणता पवनेधरी तथा तरंगोत्री भंगुर
गंगा नदीना जलभ्रम-जल पमण समान, तथा ओडयेदी अवस्थाने त्याग
करीने सूर्यना छिरणोने कारणे विकासवस्थाने पावेल कमणा समान गलीर

યમાનં મુકુલાવસ્થાં ત્રિમુશ્વત્યત્ પથં તદ્વદ્ ગમ્ભીરા વિકટા = સુન્દરા ચ નાભિ
 યેષાં તે તથા, 'સાહ્ય સોળંદ મુસલદપ્પણનિગરિયવરકળગછરુસરિસવરવડર
 ચલિયમજ્જા' સંહતસૌનન્દમુસલદર્પણનિગરિતવરકનકત્સરુસદ્દશવરવજ્જ ચલિત-
 મધ્યાઃ = તત્ર સંદ્ધતં = સંકોચિતં સૌનન્દં = ત્રિકાષ્ઠિકા 'તિપાર્હ' ઇતિપ્રસિદ્ધં
 મુસલં=પ્રસિદ્ધં. દર્પણં = દર્પણગણ્ઢઃ--દર્પણદણ્ઢઃ નિગરિતવરકનકત્સરુઃ=નિગરિતં=
 સર્વથા શોધિતમ્, અતएव-વરકનકં=જાત્યમુવર્ણ તસ્ય ત્સરુઃ = સ્વદ્વમુષ્ટિશ્ચેત્યેતેઃ
 સદ્દશો વરવજ્જવચ્ચચલિતઃ = વક્રઃ કુશશ્ચ મધ્યઃ=તનુમધ્યભાગો યેષાં તે તથા
 પ્રતલ કટય ઇત્યર્થઃ, 'ઉજ્જગસમસંહિયજન્નતણુકસિણણિદ્ધાદિજ્જલહહ
 મુકુમાલમઝયરોમરાઈ' ક્રજુકસમસંહિતજાત્યતનુકુષ્ણસિન્ધ્યાસદ્દેયલહહ
 મુકુમાલમૃદુકારોમરાજયઃ = તત્ર ક્રજુકાઃ=અકુટિલાઃ સમાઃ=સમુચિત-પ્રમાણાઃ
 સંહિતાઃ=સુપન્નાઃ જાત્યતનવઃ = સ્વભાવતોઽતિસૂક્ષ્માઃ કૃષ્ણાઃ = કૃષ્ણવર્ણાઃ
 સિન્ધ્યાઃ=ચિક્ષણઃઆદેયાઃ=પ્રશસ્તાઃલહહાઃ=સુન્દરાઃ મુકુમાલાઃ=કમલવત્કોમલાઃ
 મૃદુકાઃ= અતિ કોમલાઃ રોમરાજયઃ=રોમ્ણાં શ્રેણયો યેષાં તે તથા, 'હસવિહગમુ-
 જાયપીણકુચ્છી' હપવિહગમુજાતપીનકુક્ષયઃ = હપવિહગવત્-મત્સ્યવત્ પશ્ચિવચ્ચ

નાભિપ્રદેશ હોતા હૈ । તથા-(સાહ્ય સોળંદમુસલદપ્પણનિગરિયવરકળગ
 છરુ સરિસ વરવડર ચલિયમજ્જા) જિનકા મધ્યભાગ સંકોચિત તિપાર્હ
 કે સમાન, દર્પણદણ્ઢ કે સમાન, એવં શોધિત જાત્યસ્વર્ણ કી ચ્ચમુષ્ટિ
 કે સમાન, તથા ઉત્તમ વજ્જ કે સમાન વક્ર ઓર કુશ હોતા હૈ । તથા
 (ઉજ્જગ-સમ-સંહિય-જન્ન-તણુ-કસિણ-ણિદ્ધ-આદિજ્જ-લહહ-મુકુ-
 માલ-મઝય-રોમરાઈ) જિનની રોમરાજિ અકુટિલ, સમુચિતપ્રમાણોપેત,
 ઘનીભૂત, સ્વભાવતઃઅતિસૂક્ષ્મ, કાલી, ચિકની, આદેય, સુન્દર, કમલ
 કે સમાન કોમલ ઓર અત્યંત કોમલ હોતી હૈ । (હસવિહગમુજાયપી-
 ણકુચ્છી) તથા-જિનકી કુક્ષિ-ઉદર કા એક વેશ મત્સ્ય કો ઓર પક્ષી

અને વિકટ-સુંદર જેમનો નાભિ પ્રદેશ હોય છે, તથા “સાહ્યસોળંદમુસલ
 દપ્પણનિગરિયવરકળગછરુસરિસવરવડરચલિયમજ્જા” જેમનો મધ્ય ભાગ
 સંકોચિત તિપાર્હ સમાન, દર્પણ દંડ સમાન, તાવેલા સુવર્ણની તલવારની મૂઠ
 સમાન, તથા ઉત્તમ વજ્જ સમાન વક્ર અને પાતળો હોય છે. “ઉજ્જગ-સમ-
 સંહિય-જન્ન-તણુ-કસિણ-ણિદ્ધ-આદિજ્જ-લહહ-મુકુમાલ-મઝય-રોમરાઈ” તથા
 જેમની રોમરાજિ અકુટિલ, સમપ્રમાણ, ઘનીભૂત કુદરતી રીતે જ અતિ સૂક્ષ્મ,
 કાળી, સુવાળી, આદેય, સુંદર, કમળ સમાન કોમળ અને અત્યંત કોમળ
 હોય છે. “હસવિહગમુજાયપીણકુચ્છી” તથા જેમની કુક્ષિ (ઉદરનો એક

સુરશિની ટીકા અ० ૪ સુ० ૧૦ યુગલિકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૫૧

સુજાતઃ=સુન્દરઃ પીનઃ=પુષ્ટશ્ચ કુક્ષિઃ=ઉદરૈકદેશો યેષાં તે તથા । તથા ‘શ્લષોચરા’ શ્લષોદરાઃ=શ્લપસ્યોદરવદુદર=યેષાં તે તથા કુશોદરા इत्यर्थः, ‘પમ્હવિયડળામી’ પચ્ચવિકટનામયઃ=પચ્ચવત્=કમલકોષવત્ વિકટા=સુન્દરા નામિ યેષાં તે તથા, ‘સંનયપાસા’ સન્નતપાશ્વાઃ=પુષ્ટત્વાદધો નમત્પાર્શ્વમાગાઃ ‘સંગયપાસા’ સજ્જત-પાશ્વાઃ=સુમિલિતપાર્શ્વમાગાઃ, અતएव ‘સુંદરપાસા’ સુન્દરપાશ્વાઃ ‘સુજાયપાસા’ સુજાતપાશ્વાઃ = સુસ્થિતપાશ્વાઃ ‘મિયમાહ્યપીળગૃહ્યપાસા’ મિતમાત્રિકપીત-રતિદપાશ્વાઃ=મિતૌ=માનોપેતૌ, માત્રિકો = માત્રાયુક્તો-પરિમાણસંપન્નો પીનો= સુપુષ્ટૌ રતિદૌ = રમણીયૌ પાર્શ્વમાગૌ યેષાં તે તથા ‘અકરંડુચકળગરુયગ-નિમ્મલસુજાયનિરુવહયદેહધારી’ અકરણ્ડુકનકરુચકર્નિર્મલસુજાતનિરૂપ — હતદેહધારિણઃ = તત્ર અકરણ્ડુકં = પુષ્ટત્વાદનુપલક્ષ્યપૃષ્ઠપાર્શ્વોદ્યસ્થિકં તથા કનકરુચકર્નિર્મલં, કનકરુચકં=સુવર્ણાભરણં તદ્વત્ નિર્મલં સુજાતં શોભનં નિરૂપદતં ચ=નીરોગં દેહં=શરીરં ધારયન્તિ યે તે તથા । તથા ‘કળગસિલ્લાતલપસત્થસમ-કી કુક્ષિ કે સમાન સુન્દર ઓર પુષ્ટ હોતી હૈ । તથા (શ્લસોચરા) જિનકા ઉદર મત્સ્ય કે ઉદર કે સમાન કુશ હોતા હૈ । તથા (પમ્હવિ-યડળામી) જિનકી નામિ કમલ કે કોષ કી તરહ ગંભીર હોતી હૈ । તથા (સંનયપાસા) પુષ્ટ હોને કે કારણ જિનકે દોનો પાર્શ્વભાગ નીચે કી ઓર જુકે રહતે હૈ । હસીલિયે (સંગયપાસા) જો પરસ્પરમેં મિલે જુए जैसे પ્રતીત હોતે હૈ । ઓર ઘડે સુહાવને લગતે હૈ । તથા (સુજાયપાસા) જિનકે દોનો પાંદર્વ ભાગોંકા આકાર ખી ઘડા સુહાવના લગતા હૈ, તથા (મિયમાહ્ય પીળગૃહ્ય પાસા) વે દોનો પાર્શ્વભાગ માન ઓર પ્રમાણસે યુક્ત ઓર પીન પુષ્ટ હોતે હૈ તથા રમણી હોતે હૈ । તથા (અકરંડુ-કળ-ગરુયગ-નિમ્મલ સુજાય-નિરુવહય-દેહધારી) પુષ્ટ હોને કે કારણ જિનકી રીઢકી ઓર પાર્શ્વ-ભાગ કી અસ્થિયાં દિશ્વલાઈ નહીં દેની હૈ, તથા જો સુવર્ણાભરણ કે

લાગ) મત્સ્ય તથા પક્ષીની કુક્ષિ સમાન સુંદર અને પુષ્ટ હોય છે. તથા “શ્લસોચરા” જેમનું ઉદર મત્સ્યના ઉદર સમાન કુશ હોય છે. તથા “પમ્હ-વિયડળામી” જેમની નામિ કમળના જેવી ગંભીર હોય છે, તથા “સંનય-પાસા” પુષ્ટ હોવાને જેમના અને પાર્શ્વ ભાગો નીચેની બાજુએ જુકેલા રહે છે, અને તેથી “સંગયપાસા” આપસમાં મળી ગયા હોવા બાબે છે તથા ઘણા સુંદર લાગે છે. તથા “સુજાયપાસા” તેમના અને પાર્શ્વ ભાગો પડખાંના આકાર પણ ઘણા સુંદર લાગે છે, તથા “મિયમાહ્યપીનગૃહ્યપાસા” તે અને પાર્શ્વભાગો પ્રમાણ અને માનથી યુક્ત-પ્રમાણસરનાં, અને પીન-પુષ્ટ અને રમણીય હોય છે. “અકરંડુ-કળ-ગરુયગ-નિમ્મલ-સુજાય-નિરુવહય-દેહધારી” શરીરે પુષ્ટ હોવાને કારણે જેમની કરોડ તથા પાંચળીનાં હાડકાં દેખાતાં નથી

તત્ત્વત્વયદ્વિત્થિષ્ણ પિહુલવચ્છા 'કનકશિલાતલ-પ્રશસ્ત સમતલોપચિત વિસ્તીર્ણ
 પૃથુલવક્ષસઃ=કનકશિલાતલ = સુવર્ણશિલાપટ્ટકમિત્વ પ્રશસ્ત સમતલમ્=અવિષમ
 ઉપચિત=પુષ્ટ-વિસ્તીર્ણ=વિશાલં તથા પૃથુલં=સ્થૂલં વક્ષઃ=વક્ષઃ સ્થલં યેષાં તે તથા
 'જુયસંણિમપીણરહ્ય-પીવર-પઞ્ડ-સંઠિય-સુસિલિટ્વ-વિસિદ્ધલટ્વ-સુણિચિય-ઘણ થિર
 સુવંધ, સંધી ' તત્ર ' જુયસંણિમ ' યુગસન્નિમ્નો=યુગકાણ્ડતુલ્યો ' પીણ ' પીનો=સ્થૂલો
 ' રહ્ય ' રતિદો=રમણીયો પીવરો=પુષ્ટો ' પઞ્ડ ' પ્રકોષ્ઠો=હસ્તમણિવન્ધમદેશો-
 તથા ' સંઠિય ' સંસ્થિતાઃ=સંસ્થાનવિશેષયુક્તાઃ ' સુસિલિટ્વ ' સુશ્લિષ્ટાઃ=સુમિલિતાઃ
 ' વિસિદ્ધલટ્વ ' વિશિષ્ટલટ્વાઃ=સુમનોહરાઃ ' સુણિચિય ' સુનિચિતાઃ = સુસંગઠિતાઃ
 ઘનાઃ ' થિર ' સ્થિરાઃ=સુદઢાઃ સુવન્ધાઃ =શોભનાવયવસન્નિવેશયુક્તાઃ સન્ધયઃ =
 અસ્થિ સન્ધાનાનિ યેષાં તે તથા, ' પુરવરફલિહ-વટ્ટિયમુયા ' પુરવરપરિચવર્તિત
 મુજાઃ=પુરવરપરિચવત્=નગરદ્વારકપાટરોધનકાષ્ટવદ્ વર્તિતો=વર્તુલો મુજો=વાહુ
 યેષાં તે તથા । એતાદશાસ્તેઽપિ કામમોગૈરત્તા એવ મરણધર્મસુપનમન્તીતિ-
 સમ્બન્ધઃ ॥ મુ. ૧૦ ॥

સમાન નિર્મલ, સુન્દર રોગરહિત શરીર કે ધારી હોતે હૈં (કળગસિલા-
 તલપસત્થસમતલત્વદ્વયવિત્થિષ્ણપિહુલવચ્છા) તથા જિનકા વક્ષ-
 સ્થલ સુવર્ણશિલા કે પટ્ટક સમાન પ્રશસ્ત એવં સમતલ વાલા હોતા હૈં
 ઉપચિત-પુષ્ટ હોતા હૈં, વિસ્તીર્ણ હોતા હૈં તથા પૃથુલ-સ્થૂલ-મોટા-
 હોતા હૈં (જુયસંણિમપીણ-રહ્યપીવરપઞ્ડસંઠિયસુસિલિટ્વવિસિદ્ધલટ્વસુણિ-
 ચિયઘણથિરસુવંધસંધી) ઇનકા મણિવંધ પ્રદેશ જુઆ કે સમાન સ્થૂલ,
 રમણીય ઓર પુષ્ટ હોતા હૈં । તથા ઇનકે હાડોં કી સંધિયાં સંસ્થાન-
 વિશેષ સે યુક્ત, પરસ્પર અચ્છી તરહ મિલી હુદ્, મનોહર, સુસંગઠિત,
 ઘનીભૂત, સુદઢ એવં અચ્છી અવયવોં કી રચના સે યુક્ત હોતી હૈં ।
 (પુરવરફલિહવટ્ટિયમુયા) ઇનકે દોનોં વાહુ નગર કે દ્વાર કે ઉત્તમ

“ એવો સૂવર્ણના આભૂષણો એવું નિર્માણ, સુંદર અને નીરોગી શરીર ધરાવે
 છે, “ કળગસિલાતલપસત્થસમતલત્વદ્વયવિત્થિષ્ણપિહુલવચ્છા ” તથા જેમની
 છાતીનો ભાગ સુવર્ણશિલા જેવો પ્રશસ્ત સમતલ, ઉપચિત-પુષ્ટ, વિસ્તીર્ણ
 વિશાળ તથા પૃથુલ-મોટો હોય છે, “ જુયસંણિમ-પીણ-રહ્ય-પીવર-પઞ્ડ-સંઠિય
 સુસિલિટ્વ-વિસિદ્ધ-લટ્વ-સુણિચિય-ઘણથિર-સુવંધસંધી ” તેમના બધા ખૂંસરી જેવા
 સ્થૂળ, રમણીય અને પુષ્ટ હોય છે. તથા તેમનાં અસ્થિયોના સાંધા સુવ્યવસ્થિત
 અરસ્પરસ સારી રીતે જોડાયેલ, મનોહર, સુસંગઠિત, ઘનીભૂત, સુદઢ, અને
 અવયવોની સુંદર રચના વાળા હોય છે “ પુરવરફલિહવટ્ટિયમુયા ” તેમની
 અને ભુજા નગરના દરવાજાના ઉત્તમ ભાગો જેવી ગોળાકાર હોય છે. એવા

पुनस्ते कीदृशाः ? इत्याह—‘भुयगीसर’ इत्यादि ।

मूलम्—भुयगीसर-विउल-भोग-आयाण-फलिह-उच्छूढदी-
हवाहू-रत्ततलोवइय-मउय-मंसल-सुजाय-लक्खणपसत्थ-अच्छि-
इजालपाणी पीवर-सुजाय-कोमल-वरंगुली तंवतलिणसुइरुइल
निद्धणखा निद्धपाणिलेहा चंदपाणिलेहा सूरपाणिलेहा संख-
पाणिलेहा चक्कपाणिलेहा दिसा सोवत्थियपाणिलेहा रवि
ससि-संख-वरचक्कदिसा सोवत्थिय-विभत्त-सुरइय-पाणिलेहा
वरमहिसवराहसीह-सइलरिसह नागवर-पडिपुण्ण-विउल-खंधा
चउरंगुलप्पमाणकंबुवरसरिसगीवा अवट्ठिय-सुविभत्त-चित्त
समंसुउवचियमंसल-पसत्थ-सइल-विउल-हणुया ओयचिय
सिलप्पवालबिंबफलसंनिभाऽधरोट्टा पंडुर-ससि-सकल-विमल
संखगोखीर-फेणकुंददगरयमुणालिया घवल-दंतसेढी अखंड
दंता अफुडियदंता अविरलदंता सुणिद्धदंता सुजायदंता
एगदंतसेढिंवा अणेगदंता हुयवहनिद्धंत-धोयतत्ततवणिज्जर-
त्ततलतालुज्जिहा गरुलायय उज्जुतुंगनासा अवदालियपुंडरीय
णयणा विकोसियधवलपत्तलच्छा आणामिय - चावरुइल
किण्हम्भराइ-संठिय-संगयाययं-सुजाय-भूमगा-अल्लीणपमाण-
जुत्तसवणा सुस्तवणा पीयमंसलकबोलदेसभागा अविरुगय
बालचंदसंठियमहानिलाडा उडुवइ-पडिपुण्ण-सोम्मवयणा
छत्तागारुत्तमंगदेसा घणनिचिय सुबद्धलक्खणुण्णय-कूडागार
निभर्पिडियग्ग-सिराहुयवहनिद्धंत - धोयतत्ततवणिज्जरत्तकेसंत-

परिधा (भोगल) के समान गोल१होते हैं । ऐसे ये भोगभूमिके मनुष्य
भी कामभोगोंसे अतृप्त होकर ही मरण धर्मको प्राप्त करते हैं ॥सू०१०॥

ते लोगभूमिनां बोधे । पञ्च काम भोगेभी अतृप्त रह्योने न भूत्यु पाये छे ॥सू०१०॥

કેસભૂમી સામલિ-પોંઢઘણ-નિચિચ્છોડિય-મિઝવિસય પસ-
ત્થસુહુમલક્ષણસુગંધિસુંદરમુયમોયગર્ભિગ-નીલકજ્જલપહિદ્ધ
મમરગણ-નિદ્ધનિઝરંબ-નિચિચકુંચિય - પયાહિણાવત્તમુદ્ધસિ-
રયા સુજાય-સુવિભત્ત-સંગયંગા-લક્ષણવંજણગુણોવવેયા પસ-
ત્થવત્તીસલક્ષણધરા હંસસ્સરા કોચસ્સરા દુંદુહિસ્સરા સીહસ્સરા
મેહસ્સરા ઓઘસ્સરા સુસ્સરા સુસ્સરનિઘોસા વજ્જરિસહ
નારાયસંઘયણા સમચરંસસંઠાણસંઠિયા ઘાયઝઝજો
વિયંગમંગાપસત્થલ્લવી નિરાયંકા કંકગહણી કવોયપરિણામા
સઝણિપોસાપિટ્ટંતરોરુપરિણયા પઝમુપ્પલ-સારસગંધ-સાસસુર-
ભિવયણા અણુલોમવાઝવેગા અવદાયનિદ્ધકોસા વિમ્માહિય-
ઝણાય કુચ્છીઅમયરસફલાહારી તિગાઝય સમુચ્છિયાતિપ-
લિઓવમઢિતિયા તિણિય પલિઓવમાઢં પરમાઝ પાલઢત્તા
તેવિ ઝવણમંતિ મરણધમ્મં અવિત્તિતા કામાણં ॥ સૂ ૧૧ ॥

ટીકા:-‘મુયગી-સા-વિઝલ-મોગ-આયાણ-ફલિહ-ઝચ્છદ્દીહવાહ’ તત્ર-
‘મુયગીસર’ મુજગેશ્વર:=સર્પરાજસ્તસ્ય ચો વિપુલો મોગ:=મદાન્ કાય: તદ્વત્
તથા ‘આયાણ’ આનં=આદીયત્ત ઇત્યાદાનમ્=આદેય: =સુન્દરો ય: ‘ફલિહ’
પરિધ: =રૂપાદરોધનકાષ્ઠં, સ ચ ‘ઝચ્છદ્દ’ ઝત્તિસ્સ: =સ્વસ્થાનાદ્ વઢિર્નિર્વાસિતઃ,
તદ્વત્ ‘દીહ’ દોર્થો વાહ યેષાં તે તથા મુજગતુલ્યપરિધતુલ્યલમ્બમાન-

ફિર યે મોગભૂમિ કે જીવ કેસે હોતે હૈં ? ઇસી વિવચ કો સૂત્રકાર
પુન:સ્પષ્ટ કરતે હૈં—‘મુયગીસર ૦’ ઇત્યાદિ ૦ ।

ટીકાર્થ:- (મુયગીસર-વિઝલમોગ-આયાણ-ફલિહ-ઝચ્છદ્દીહ-
વાહ) સર્પરાજ કે વિપુલ શરીર કે સમાન તથા અગ્ને સ્થાન સે વહાર
કિયે હુણ સુન્દર પરિધા કે સમાન, જિનકી દોનો મુજાયે દોર્થ-લંબી

તે ભોગભૂમિના છવો કેવા હોય છે, તેનું સૂત્રકાર ૬૭ વધુ સ્પષ્ટીકરણ
કરે છે “મુયગીસર” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ:- ‘મુયગીસર-વિઝલ-મોગ-આયાણફલિહ-ઝચ્છદ્દીહ-વાહ’ જેમની જન્મે
જીભજ્યો સર્પરાજના વિશાળ શરીર જેવી, તથા તેના સ્થાનેથી બહાર કાઢવામાં

સુવર્ણિની ટીકા અં ૪ સૂં ૧૧ યુગલિકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૫૫

બુજાઇત્યર્થઃ, ‘ રક્તતલોવદ્યમઝયમંસલસુજાયલક્ષણપસત્થઅચ્છિદ્દજાલપાણી ’ તત્ત- ‘ રક્તતલ ’ રક્તતલો=લોહિતકરતલો ‘ ઝવડ્ય ’ ઝરચિતો=પુષ્ટો ‘ મઝય ’ મૃદુકો=કોમલો ‘ મંસલ ’ માંસલો=અદૃષ્ટ નાડી જાલો ‘ સુજાય ’ સુજાતો= સુનિષ્પન્નો ‘ લક્ષણપસત્થ ’ લક્ષણ પ્રશસ્તો=અનેક શુભલક્ષણેઃ પ્રકૃષ્ટો ‘ અચ્છિદ્દજાલા- અચ્છિદ્દજાલો = પરસ્પરં મિશ્રિતત્વાત્ છિદ્દરહિતાઙ્ગુલિસમુદાયવન્તો પાણી = હસ્તો યેષાં તે તથા ‘ પીવરસુજાયકોમલવરંગુલિ ’ પીવરસુજાતકોમલવાઙ્ગુ- લયઃ = સુપુષ્પસુન્દરકોમલાઙ્ગુલિવન્તઃ ‘ તંતલિણસુદ્ધરુહલનિદ્ધનત્વા ’ તામ્રત- લિનશુચિરચિરરિન્મથ નત્વાઃ=તામ્રાઃ = રક્તાઃ તલિનાઃ=પતલાઃ શુચયઃ=નિર્મલાઃ રુચિરાઃ=કાન્તિમન્તઃ સ્નિગ્ધાથ્થ=ચિક્ષ્ણા નત્વા યેષાં તે તથા, ‘ નિદ્ધપાણિલેહા ’ સ્નિગ્ધપાણિરેત્વાઃ = ચિક્ષ્ણાહસ્તરેત્વાવન્તઃ ‘ ચંદપાણિલેહા ’ ચન્દપાણિરેત્વાઃ= ચન્દ્રઃ=ચન્દ્રાકારા પાણી રેત્વા યેષાં તે તથા ‘ સૂરપાણિલેહા ’ સૂરપાણિરેત્વાઃ=

હોતી હૈં તથા—(રક્તતલોવ દ્યમઝયમંસલસુજાયલક્ષણપસત્થ અચ્છિદ્દ જાલપાણી) જિનકે દોનોં હાથ લોહિત તલિયોં વાલે, પુષ્ટ ભરે હુણ- કોમલવાસે યુક્ત, માંસલ-પુષ્ટઅદૃષ્ટનાડીજાલવાલે, અન્હે રૂપમેં નિષ્પન્ન હુણ, અનેક શુભલક્ષણોં સે પ્રશસ્ત ઇવં છિદ્દરહિત અંગુલિયોં વાલે હોતે હૈં તથા—(પીવરસુજાયકોમલવરંગુલી) ઇનકી જો અંગુલિયાં હોતી હૈં વે સુપુષ્પ, સુન્દર ઇવં કોમલ હોતી હૈં ! (તંતલિણસુદ્ધરુહલનિદ્ધનત્વા) ઇન અંગુલિયોં કે જો નવ હોતે હૈં વે તામ્ર વર્ણવાલે હોતે હૈં તલિન- પતલે હોતે હૈં, નિર્મલ હોતે હૈં, કાન્તિમાન્ હોતે હૈં તથા સ્નિગ્ધ-ચિક્ષ્ણે હોતે હૈં ! (નિદ્ધપાણિલેહા) હાથોં મેં જો રેત્વાઈ હોતી હૈં વે બી ચિકની હોતી હૈં ! (ચંદપાણિલેહા) તથા ઇનકે હાથોં કી વે રેત્વાઈ કિતનીક નો ચન્દ્રાકાર હોતી હૈં (સૂરપાણિલેહા) કિતનીક મૂર્ચ કે આકાર કી હોતી

પરિધા (ભોગજો) સમાન દીર્ઘ-લાંબી હોય છે, તથા “ રક્તતલોવદ્યમઝયમંસલ સુજાય-લક્ષણ-પસત્થ-અચ્છિદ્દ-જાલપાણી ” જેમના બંને હાથ લાલ હરેગીવાળા, પુષ્ટ, કોમળ, માંસલ-નસો તથા કેશવાહિનીઓની નાળ ન દેખી શકાય તેવા સુષ્ટિત, અનેક શુભ લક્ષણોથી પ્રશસ્ત, અને છિદ્દ રહિત આંગળીયો વાળા હોય છે, તથા “ પીવર-સુજાય-કોમલ-કરંગુલી ” તેમના હાથની આંગળીયો સુપુષ્ટ, સુંદર અને કોમળ હોય છે. “ તંત્રતલિણસુદ્ધરુહલનિદ્ધનત્વા ” તે આંગ- ળિયોના નાળ તામ્રવર્ણી હોય છે ‘ તલિન-પાતળા હોય છે. નિર્મળ હોય છે. સુંવાળા અને કાન્તિ યુક્ત હોય છે. “ નિદ્ધપાણિલેહા ” તેમના હાથમાં જે રેખાઓ હોય છે તે પણ સ્નિગ્ધ, સુંવાળી હોય છે. “ ચંદપાણિલેહા ” તેમના ઉપરની કેટલીક રેખાઓ અન્દ્રાકાર, “ સૂરપાણિલેહા ” કેટલીક સૂર્યાકાર, કેટલીક

સૂર્યાકારહસ્તરેखावन्तः ‘संखपाणिलेहा’ शङ्खपाणिरेखाः=शङ्खाकारहस्तरेखा-
वन्तः ‘चक्रपाणिलेहा’ चक्रपाणिरेखाः=चक्राकारहस्तरेखावन्तः ‘दिसासोत्रिय-
पाणिलेहा’ दिक्स्वस्तिकपाणिरेखाः=दिक्स्वस्तिकः=दक्षिणावर्तस्वस्तिकः=दक्षि-
णास्वस्तिकः तदाकारा पाणिरेखा येषां ते तथा ‘रविमसिसंखवरचक्रदिसा
सोत्रियविभक्तमुण्डपाणिलेहा’ रविशशिशङ्खवरचक्रदिक्स्वस्तिकविभक्तमुण्ड-
पाणिरेखाः=सूर्यचन्द्रशङ्खचक्रदक्षिणावर्तस्वस्तिकलक्षणाः विभक्ताः=स्पष्टाः सुरतिदाः
सुखदाः पाणिरेखाः=हस्तरेखा येषां ते तथा ‘वरमहिसवराहसीहसङ्खलसिहना-
गवरपडिपुण्ण-विउल-खंधा’ वरमहिषवराहसिंहशार्दूलकपभनागवरप्रतिपूर्णा पुल-
स्कन्धाः = तत्र वरमहिषाः=पुष्टशरीरमहिषाः वराहाः शूकराः सिंहाः = प्रसिद्धाः
शार्दूलाः=व्याघ्रविशेषाः ऋषभाः=बलीवर्दाः नागवराः=प्रधानहस्तिनः तेपामिव
प्रतिपूर्णः = परिणद्धो विपुलः=विशालः स्कन्धो येषां ते तथा ‘चउरंगुलपमाण-
कंबुवरसरिसगीवा’ चतुरङ्गुलिप्रमाणकम्बुवरसदृशग्रीवाः - चतुरङ्गुलिप्रमाणा
कम्बुवरेण=प्रधानशङ्खेन सदृशी=तुल्या च ग्रीवा=येषां ते तथा, ‘अवद्विय सुविभ-

हैं, तथा (संखपाणिलेहा) कितनिक शंख के आकार जैसा होनी हैं ।
(चक्रपाणिगेहा) कितनीक ऐसी होती हैं कि जिनका आकार चक्र के
जैसा होना है । तथा (दिसासोत्रियपाणिलेहा) कितनीक ऐसी होनी
है जो दक्षिणावर्त स्वस्तिक के आकार में रहती हैं । इस तरह इनके
हाथों की सूर्य, चंद्र, शंख, चक्र तथा दक्षिणावर्तस्वस्तिक के आकार की
ये रेखाएँ स्पष्ट होनी हैं और सुख देनेवाली होती हैं । तथा-(वरमहिस
वराह - सीहसङ्खलसिहनागवरपडिपुण्णविउलखंधा) इनके जो स्कंध
होते हैं वे पुष्टशरीरवाले महिष, वराह, सिंह, बैल, प्रधान हाथी इनके
स्कंधों के समान परिणद्ध-पुष्ट और विशाल होते हैं । तथा- (चउरंगुल-
पमाणकंबुवरसरिसगीवा) चार अंगुल प्रमाणवाले उत्तम शंख के
समान इनकी ग्रीवा होती है । (अवद्वियुविभक्तचित्तसमंस्) तथा

“संखपाणिलेहा” श’આકાર, “ચક્ષપાણિલેહા” કેટલીક ચક્ષાકાર અને “દિસા-
સોત્રિયપાણિલેહા” કેટલીક દક્ષિણાવર્ત સ્વસ્તિકના આકારની હોય છે. તેમના
હાથની તે ચન્દ્રાકાર આદિ રેખાઓ સ્પષ્ટ અને સુખદ હોય છે. તથા “વર-
મહિસ-વરાહ-સીહ-સદ્ગુરિસહ-નાગવર-પડિપુણ્ણ-વિઝલખંધા” તેમના અંભા
પુષ્ટ શરીર વાળા પાડા, વરાહ, સિંહ, બળદ અને ગજેન્દ્રના સ્કંધો જેવાં
પુષ્ટ અને વિશાળ હોય છે. તથા “ચઉરંગુલપ્રમાણકંબુવરસરિસગીવા” તેમની
ગ્રીવા ચાર અંગુલ પ્રમાણ વાળા ઉત્તમ શંખ જેવી હોય છે. “અવદ્વિય-

સુરશિની ટીકા ૦ ૪ સુ. ૧૧ યુગલિકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૫૭

ત્તચિત્તસમંસુ' અવસ્થિતમુવિતકવિવરૂપશ્રુકાઃ - અવસ્થિતાનિ=સન્યક્તયા યથા-
સ્થાનં જાતાનિ સુરિક્તાનિ=શોભનતયા વિભાગેન સ્થિતાનિ ચિત્રાણિ=શોભયા
વિસ્મયજનકાનિ કમશ્રૂણિ યેવાં તે તથા । 'ઉવચિયમંસલપસત્થ સદૂલવિઝલહણુયા'
ઉપચિત્તમાંસલપસત્થાશાર્દૂલવિપુલહનુકાઃ=ઉપચિત્ત=હુષ્ટઃ અતएव માંસલ=માંસ-
યુક્તઃ પ્રશસ્તઃ તથા શાર્દૂલસ્યેવ વિપુલશ્ચ હનુઃ=ઓષઠાઽક્રોમાગો યેવાં તે તથા
'ઓયવિયસિલપ્પવાલવિવિવલસંનિભાધોદ્ઘા' ઓયવિયસિલાપ્રવાલવિવિવલસ-
ન્નિભાધોદ્ઘા='ઓયવિય' ઇતિ વિરિષ્ટપરિકર્મિતં સુમંસૂતં ચચ્છિલાપ્રવાલં=
વિદુમઃ, તથા વિવિવલં ચ તાપ્થ્યાં સન્નિભઃ=સદૃશો રક્તોઽધરોષ્ટ્રો યેવાં તે તથા
'પંદુરસસિસકલ-વિમલસંઘગોસ્તીર - ફેળકુંદદમરયમુણાલિયા - ધવલદંતસેદી'
પાણ્દુરશશિશવલવિમલસંઘગોસ્તીરફેનકુંદદકરજોમૃણાલિકાધવલદન્તાશ્રેણયઃ=તપ્ર-
પાણ્દુરં=શ્વેતં યન્ અસિશકલં=ચન્દ્રચળં તથા વિમલસઙ્ગઃ પ્રતીતઃ ગોસ્તીરં=ગોદુરઘં
ફેનઃ=વર્દાજલાદિફેનઃ કુંદં=શ્વેતપુષ્પવિશેષઃ દકરજઃ=જલવિન્દુઃ મૃણાલિકા=
इनकी दाढ़ी के जो बाल होते हैं वे अच्छी तरह से जहां जिन्हें उत्पन्न
होना चाहिये वहां उत्पन्न होते हैं, अच्छी तरह विभागरूप से स्थित
रहते हैं, और अपनी शोभा से विस्मयजनक होते हैं। तथा (उवचिय-
मंसलपसतथमदूलविजलहणुया) इनके होठों के नीचे का जो भाग होता
है वह पृष्ठ होता है, मांसल होता है, प्रशस्त-सुहावना होता है और
सिंह की दाढ़ी के समान विपुल-विस्तृत होता है। (ओयवियसिलप्प-
वालविविफलसंनिभाधोद्घा) तथा इनके जो अधरोष्ठ होते हैं वे अच्छी
तरह परिकर्मित किये हुए मूंगे के समान और विव्वफल-कुंदरु के
समान रक्त होते हैं (पंदुरससिसकलविमल संघगोस्तीरफेणकुंददगर-
यमुणालियाधवलदंतसेदी) तथा-इनका जो दांतों की पंक्ति होती है
वह शुभ्रचंद्रमा के खंड जैसी, निर्मल शंख जैसी, गाय के दूध जैसी,

સુવિભત્તચિત્તસમંસુ" તથા તેમની દાઢીના વાળ ત્યાં જેમને હાથે બેઠા છે ત્યાં જે હાથે બેઠો છે, સારી રીતે વિભાજિત હોય છે, અને તેમની શોભા અદ્ભુત હોય છે, તથા "ઉવચિયમંસલ પસત્થસદૂલવિઝલ હણુયા" તેમના હોઠની નીચેના ભાગ પુષ્પ, માંસલ, શોભિતો, અને ચિહ્નની દાઢીના જેવો વિપુલવિસ્તૃત હોય છે. "ઓયવિયસિલપ્પવાલવિવિવલસંનિભાધોદ્ઘા" તેમના અધર-હોઠ સારી રીતે તેવાર ડહેલ પરવાળા જેવા તથા ગિરમદ્ધ-કુંદરા જેવા લાલ હોય છે. "પંદુરસસિ-વકલ-વિમલ-સંઘ-ગોસ્તીર-ફેન કુંદદમરયમુણાલિયા ધવલદંતસેદી" તેમની દંત પંક્તિઓ શુભ્ર ચંદ્ર ખંડ જેવી, નિર્મળ શંખ જેવી, ગાયના દૂધ જેવી, નદી જળ આદિનાં શીણ જેવી, શ્વેત પુષ્પ જેવી, જળનાં

કમલનાલતન્તુશ્ચ તદ્વધ્વલા દન્તશ્રેણી=દન્તપ્રકૃતિયેષાં તે તથા અલંકરણાઃ= પરિપૂર્ણદન્તાઃ ‘અફુલ્લિયદંતા’ અપ્ફુલ્લિયદન્તાઃ=અનુપદ્મદન્તાઃ અવિરલદન્તાઃ= અચ્છિદ્રદન્તાઃ મુખનદન્તા ઇત્યર્થઃ ‘મુણિદ્વદંતા’ મુલ્લિગ્ધદન્તાઃ ‘અશ્વદન્તવન્તાઃ મુજાયદન્તા’ મુજાનદન્તાઃ = મુસંસ્થિતદન્તાઃ ‘અગદંતસેદિવ્યઅગેમદંતા’ એકદન્તશ્રેણિરિય અનેકદન્તાઃ યેષાં દ્વાવિગદન્ત અપિ મુશ્લિષ્ટવાદેકદન્તવદ્- દશ્યન્તે ઇત્યર્થઃ । ‘હુવચ્ચહનિદ્વંતધોયતત્તવણિજ્ઞરત્તલ્લાલુગ્ગીહા’ હુતવહ- નિધ્માતધોયતત્તવણીયરત્તલ્લાલુગ્ગીહાઃ = હુતવહેન = વહિના નિધ્માતે = તાપિતં ધૌતં=વિશોધિતં તમ્નં ચ યત્તપનીયં=સુવર્ણં તેન તુલ્યં રક્તાલં=રક્તર્ણ તાલુ-

નદી જલ આદિ કે ફેન જેવી, શ્વેનપુષ્પવિશેષ જેવી, જલ કી ચિન્દુ જેવી, તથા મૃગાલિકા-કમલ નાલ કે તન્તુ જેવી ધવલ હોતી હૈ (અલંકરણાઃ) તથા इनके दाँत परिपूर्ण होते हैं-(अफुल्लियदंता) તથા ये અપ્ફુલ્લિય દાંતોવાલે હોતે હૈ-અવદ્ ટવાવદ્-इनके दाँत नहीं होते हैं । और न टूटे कूटे ही होते हैं (अविरलदंता) તથા इनके दाँत अचछिद्र होते हैं-દૂર ૨ નહોં હોતે હૈ । अर्थात्-परस्पर में एक दूसरे दाँत के साथ मिळे हुए रहते हैं । तथा (मुणिद्वदंता) ये दाँत इनके कक्षणा से विहीन होते हैं अर्थात् चिहने होते हैं (मुजाय दंता) बहुत अच्छी तरहसे ये संस्थित-मण्डों में गड़े हुए रहते हैं (अगदंतसेदिव्यअगेमदंता) यद्यपि ये दाँत इनके बत्तीस ही होते हैं फिर भी परस्पर में मुश्लिष्ट होने के कारण एक दाँत की तरह ही दिखते हैं तथा-(हवचचहनिद्वंतधोयतत्त-तवणिज्ज्ञ रत्तल्ला लुगगीह) जिनको तालु एवं जिह्वा बहि से तपाये गये

ખિન્દુ જેવી, તથા કમળનાલના તંતુ જેવી, ધવલ હોય છે. “અલંકરણાઃ” તેમના દાંત પરિપૂર્ણ હોય છે. એછા કે વધારે હોતા નથી. “અફુલ્લિયદંતા” તેમના દાંત અપ્ફુલ્લિય હોય છે-પોદાણુ વાળા હોતા નથી. અને તૂટેલા પણ હોતા નથી. “અવિરલદંતા” તથા તે દાંત પાસે પાસે હોય છે. દૂર દૂર હોતા નથી. એટલે કે પરસ્પર એક બીજા સાથે અડધીને રહેલા હોય છે, તથા “મુણિદ્વદંતા” તેમના બે દાંત રક્ષતાથી રહિત એટલે કે મુખવાળા હોય છે. “મુજાયદંતા” તે ઘણી સારી રીતે પેઢાંમાં રહેલા હોય છે. “અગદંતસેદિવ્ય અગેમદંતા” એ કે તેમને બત્તીસ દાંત હોય છે, છતાં પણ પરસ્પર એવી રીતે અડધા અડધા હોય છે કે તે એક દાંત હોય તેવા દેખાય છે. તથા “હુવચ્ચહનિદ્વંતધોયતત્તવણિજ્ઞરત્તલ્લાલુગ્ગીહા” જેમનું તાળુ અને જીભ આગમાં તપાવેલ શુદ્ધ સુવર્ણના જેવા લાલ સપાટી વાળા હોય છે. તથા

સુરશિનો ટીકા અ૦૪ સૂ. ૧૧ ગુણલિઙ્ગસ્વરૂપનિરૂપણમ્

જિહ્વં યેષાં તે તથા 'ગરુડાયમગ્ગજતુંગનાસા' ગરુડાયતત્તજ્જુનઙ્ગનાસાઃ=ગરુડાયેવ
 આપતા=દીર્ઘા કઙ્ગી=સરલા તુઙ્ગા=સમુન્નતા નાસા યેષાં તે તથા અવદાલિયપુંડરીય
 ણયના ' અવદાલિતપુન્ડરીકનયનાઃ=વિકસિતસિતકમલતુલ્યનેત્રાઃ ' વિકોસિય-
 ધવલપત્તલચ્છા ' વિકોસિતધવલપત્તલાક્ષાઃ=વિકોસિતે=વિકાસિતે પ્રસન્ને સદા
 પ્રમુદિતચાતેષાં, ધવલે=શ્વેતે પવલે=પદ્મવતી ચ અક્ષીણિ=નેત્રે યેષાં તે તથા ।
 ' આણમિય ચાવરુલ્લક્ષિહ્રસ્વરાઈસંઠિયસંગયાયમુજાયમૂમગા ' આનામિત
 ચાપરુચિસ્કુળાન્નમરાજિસંસ્થિતસજ્જતાયતમુજાતમ્બુઃ = આનામિતૌ = વક્રીકૃતૌ
 ચાપૌ = ધનુષી તદ્વત્સુચિરે કુળાન્નરાજિસંસ્થિતે=કુળમેષરેલાસદ્દેશે સજ્જતે=
 સમુચિતે આયતે=દીર્ઘે મુજાતે=સ્વભાવતઃસુન્દરાકારે ચ મુખૌ યેષાં તે તથા ।
 ' અલ્લીપમાણજુતસવળા ' આલીનપમાણયુક્તશ્રવળાઃ = આલોનો=સ્તવ્યો પ્રમાણ-
 યુક્તૌ=સમુચિતપમાણી શ્રવણૌ=કર્ણૌ યેષાં તે તથા ઇતાવદેવ ન કિન્તુ ' સુસ્સવળા'
 મુશ્રવળાઃ = શબ્દગ્રહણશક્તિસમ્પન્નર્ણયુક્તાઃ, ' પીનમંસલકલ્પોલદેસમાગા ' પીન

શુદ્ધ તસ સુવર્ણ કે સમાનરક્ત તલવાલી હોતી છે । તથા (ગરુડાયમ
 ગ્ગજતુંગનાસા) જિનકી નાસિકા ગરુડ કી નાસિકા કે સમાન દીર્ઘ,
 સરલઔર સમુન્નત હોતી છે । તથા (અવદાલિયપુંડરીયણયના) જિનકે
 નેત્ર વિકસિત શુભ્ર કમલ કે સમાન હોતે છે । તથા-(વિકોસિયધવલ-
 પત્તલચ્છા) જિનકી દોનોં આંખે વિકસિત ધવલવર્ણોપેત, एवं પદ્મવાલી
 હોતી છે । (આણમિયચાવરુલ્લક્ષિહ્રસ્વરાઈ સંઠિયસંગયાયમુજાયમૂમગા)
 તથા જિનકી 'મોઢેં વક્રીકૃત ધનુષ્ય કે સનાન રુચિર કુળમેષવંકિત કે
 જૈસી અત્યંતકાળો, સંગત-લંબી ૨ एवं સ્વભાવતઃઆકાર મેં સુન્દર હોતી
 છે' (અલ્લીપમાણજુતસવળા) તથા-જિનકે દોનોં કાન સ્તવ્ય ઔર
 સમુચિત પ્રમાણવાળે હોતે છે' (સુસ્સવળા) તથા-શબ્દગ્રહણ કરને કી
 શક્તિસે સંપન્ન હોનેકે કારણ જિનકે દોનોં કાન સત્ત્વે અર્થમેં મુપ્રવળ

“ ગરુડાયમગ્ગજતુંગનાસા ” જેમની નાસિકા ગરુડની આંધ જેવી લાંબી, સરલ
 અને ઉન્નત હોય છે. તથા “ અવદાલિયપુંડરીયણયના ” જેમનાં નયન વિકસિત
 શ્વેત કમળ જેવાં હોય છે, તથા “ વિકોસિયધવલપત્તલચ્છા ” જેમની બંને
 આંખો વિકસિત, શ્વેતવર્ણની અને પદ્મવર્ણી હોય છે. “ આણમિય ચાવરુલ્લ
 લક્ષિહ્રસ્વરાઈસંઠિયસંગયાય મુજાયમૂમગા ” તથા તેમની બ્રમરે વક્ર ધનુષ્યના
 જેવી મનેહર, કાળાં વાદળોની પંક્તિ સમાન અત્યંત કાળી, સંગત-લાંબી
 અને સ્વાભાવિક રીતેજ દેખાવામાં સુંદર હોય છે. “ અલ્લીપમાણજુતસવળા ”
 તથા જેમના બંને કાન સ્તવ્ય અને પ્રમાણસરના હોય છે. “ સુસ્સવળા ”
 શબ્દ સાંભળવાની શક્તિવાળા હોવાને કારણે જે બરા અર્થમાં સુશ્રવણ છે,

मांसलकपोलदेशभागाः=पीनौ = पीवरौ-मांसलौ= पुष्टौ च कपोलदेशभागौ = कपोलौ येषां ते तथा 'अचिरुगमय-वालचंद-संठियमहानिलाडा' अचिरोद्वत वालचन्द्रमंस्थितमहाललाटा = अचिरोद्वकः=अष्टदिवसमात्रोदितः=अष्टमोतिथिसम्बन्धीत्यर्थः, अतएव वालचन्द्रः अपूर्णचन्द्रः अर्द्धचन्द्र इत्यर्थः, तत्संस्थितं = तत्संस्थानयुक्तं तदाकारकं महत् = विशालम् अष्टाङ्गुलप्रमाणं ललाटं येषां ते तथा अर्द्धचन्द्राकारललाटा इत्यर्थः । 'उडुवइपडिपुण्णसोम्मवयणा' उडुप-तिप्रतिपूर्णसौम्यवदनाः=पूर्णचन्द्रवदाह्लादकमुखाः 'छत्तागारुत्तमंगदेसा' छा-कारोत्तमाङ्गदेशाः = छत्रवद्वृत्तोन्नतमस्तकाः 'घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णकूडा-गारनिभपिंडियग्गसिरा' घननिचितगुबद्धलक्षणोन्नतकूटाकारनिभपिंडिकाग्रशिरसः =घनवत्=लोहमुद्गरवनिचितं=सम्भृतं सुवद्धं=स्नायुभिः लक्षणोन्नतं = विशिष्टलक्ष-णयुक्तं तथाकूटाकारनिभं=प्रासादशिखरसदृशं वर्तुलत्वात् पिण्डिकेव अग्रशिरः = मस्तकाग्रभागो येषां ते तथा सुन्दरलक्षणयुक्तपुविशालपुर्वुलवन्तकाग्रभागा

हैं ऐसे कानों से जो युक्त होते हैं । तथा-पोणमंजलकपोलदेशभागा) जिनके दोनों कोनों पीवर, और मांसल होते हैं (अचिरुगमयवालचंद-संठियमहानिला) तथा-जिनका महाललाट अट्टनों के अर्धचन्द्र के समान आकार का होता है अर्थात् आठ अंगुल प्रमाण आकार वाला होता है । (उडुवइपडिपुण्णसोम्मवयणा) तथा जिनका मुख, पूर्णचन्द्र के समान आह्लादकारक होता है । (छत्तागारुत्तमंगदेसा) तथा-मस्तक छत्र की तरह वृत्त-गोल और उन्नत होता है (घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णयकूडागारनिभपिंडियग्गसिरा) तथा मस्तक का अग्रभाग लोहमुद्गर की तरह निचित-गाढ़-भरा हुआ-तथा स्नायुओं से अच्छी तरह जकड़ा हुआ, तथा अनेक विध विशिष्ट लक्षणों से युक्त तथा प्रासाद के शिखर के समान उन्नत तथा पिण्डिका-पिंडी के जैसा-गोल

ऐसा कान पडे के युक्त होय छे. " पीणमंसलकपोलदेशभागा " जेभना भने गास पीवर, अने मांसल होय छे. " अचिरुगमयवालचंदसंठियमहानिलाडा " तथा जेभनां विशाल ललाट आठभना चंद्रना जेवा आकारना होय छे ओटही डे आठ आंगण पडोया होय छे. " उडुवइपडिपुण्णसोम्मवयणा " तथा जेभनुं मुख पूर्णचन्द्रना जेवुं आह्लाद कारक होय छे, " छत्तागारुत्तमंगदेसा " तेभनुं मुख छत्रना जेवुं गोल अने उन्नत होय छे. " घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णयकूडागारनिभपिंडियग्गसिरा " तथा तेभनां मस्तकनो अग्र भाग भगद-जना जेवो निश्चित-गाढ़-लदेवी तथा स्नायुओ पडे सारी रीते बांधयेवो; तथा अनेक प्रकारना भास वक्षयेवोथी युक्त तथा प्रासादनी देख जेवो उन्नत तथा पिंडीना

સુદર્શિની ટીકા અંક ૪૨૦ ૧૧ યુગલિકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૬૧

इत्यर्थः, ' हुतवहनिद्वंद्वोयततनवणिज्जरत्तकेसंकेसभूमी ' हुतवहनिर्धर्मात्
 धौततमनानोपरक्तकेशान्तकेशभूमयः=तत्र हुतवहनेन=वह्नेना निर्धर्मांत=तापि-
 तम् अतएव-धौतं=विशोधितं तप्तं च यत्तपनीयं=सुवर्णं तद्वद् रक्ताः=रक्तवर्णाः
 केशान्ताः=केशसमीपस्था केशभूमीः मस्तकत्वचा येषां ते तथा तमसुवर्णसदृश-
 रक्तवर्ण शिरस्तरू मन्पन्नाः। 'सामलिपोंडवणनिचियच्छोडियमिउविसयपसत्थ-
 सुहुमलक्खणमुगंधमुंदरभुयमोयगभिगनीलकज्जलपहिट्ट भमरगणनिद्वनिउरंवनिचिय
 कुंविचययाहिणावत्तमुदमुदसिरया ' शास्मलीपोंडघननिचितमोटितमृदुविशदप्रशस्त-
 सूक्ष्मलक्षणसुगन्धसुन्दरभुजमोचकभृत्नीलकज्जलमहृष्टभ्रमरगणस्तिग्धनिकुरुम्बनि-
 चितकुञ्चितप्रदक्षिणावर्त्तमूर्धशिरोजाः, तत्र-'सामलि' शास्मलि=वृक्षविशेस्तस्य यत्
 ' पोंड ' फलं तच्च ' घणनिचिय ' घणनिचितम् = आभ्यन्तरभागसंभृततयाऽति
 कठिनं तत् ' छोडिय ' छोडितं=विदारितं तद्वत् ' मिउ ' मृदवः=कोमलः ' विसय'
 विशदाः=सुस्पष्टताः ' पसत्थ ' प्रशस्ताः=श्रेष्ठाः ' सुहुम ' सूक्ष्माः=मृत्वाः
 ' लक्खण ' लक्षणाः=शुभ लक्षणयुक्ताः सगन्धयः=सुरभिगन्धविशिष्टाः=मनोहराः

૨ હોતા છે। (હુયવહનિદ્વંતધાયતસતવણિજ્જરત્તકેસંતકેસભૂમી)
 તથા જિનકી કેશાન્તભૂમિ-મસ્તક કી ત્વચા-અગ્નિ સે તપાયે હુણ શુદ્ધ
 તમ સુવર્ણ જૈસી રક્તવર્ણવાલી હોતી છે (સામલિપોંડવણનિચયચ્છોડિય-
 મિઝવિસયપસત્થસુહુમલક્ષણમુગંધમુંદરભુયમોયગભિગનીલકજ્જલપહિટ્ટ-
 ભમરગણનિદ્વનિઝરંવ નિચિયકુંચિયયાહિણાવત્તમુદસિરયા) તથા જિનકે
 કેશ, શાસ્મલિવૃક્ષ કે-ઠાં સે ખીતર સે ભરે હુણ તથા કઠિન બને હુણ
 વિદારિત ફલ કે સમાન મૃદુ હોતે હૈં, શાસ્મલો વૃક્ષ કા ફલ જય પક
 જાતા હૈં તો વહ કઠિન હો જાતા હૈં, ઓર ઉસકી ખીતર કી ભરી હુઈ
 રૂઈ યહુત અધિક ચિકની હો જાતી હૈં ! યહ થડી નરમ ઓર ચિકની
 રહતી હૈં । ઇસલિયે સૂત્રકાર ને ઉસકે સાથ ચાલોં કો ઉપમિત કિયા હૈં ।

જેવો ગોળ ગોળ ડોય છે. “હુયવહનિદ્વંતધાયતસતવણિજ્જરત્તકેસંતકેસભૂમિ” તથા
 જેમની કેશાન્તભૂમિ-માથાની ત્વચા-અગ્નિથી તપાવેલા શુદ્ધ સુવર્ણ જેવા લાલ
 વર્ણની ડોય છે. “સામલિપોંડવણનિચયચ્છોડિયમિઝવિસયપસત્થસુહુમલક્ષણમુગંધમું-
 દરભુયમોયગભિગનીલકજ્જલપહિટ્ટભમરગણનિદ્વનિઝરંવ નિચિયકુંચિયયાહિણાવત્તમુદસિરયા”
 તથા જેમના કેશ. શાસ્મલિ વૃક્ષના, (શીમળો) અંદરથી ડંવાટીથી ભરેલા
 તથા કણ બનેલ કપિલાં ફળ સમાન મૃદુ ડોય છે. શીમળાનાં ફળ બ્યારે
 પાકે છે ત્યારે કણ થઈ જાય છે, અને તેની અંદર રહેલ ડંવાટી ઘણી સુલા-
 યમ થઈ જાય છે. તે ઘણી નરમ અને સુંવાળી રહે છે. તેથી સૂત્રકાર તે
 ડંવાટી સાથે કેશની સરખામણી કરે છે. તેમના કેશ વિશદ-સુસ્પષ્ટ, પ્રશસ્ત-

તથા ' મુચ્ચમોચમ ' મુજમોચમઃ=કૃષ્ણવર્ણો રત્નવિશેષઃ મિમ ' મુદ્ધાઃ=ચૂર્ણિતાક્ષરઃ
' કોલસા ' ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધઃ, નીલઃ=નીલમણિઃ, ' નીલમ ' ઇતિ પ્રસિદ્ધઃ,
કજ્જલમ્=અંજનં ' પદિદ્ધમમરગણ ' પદ્મટમ્રમરગણ=પ્રમુદિત મ્રમરસમૂહશ્ચ, इत्येतैः
सदृशाः स्निग्धाः=कृष्णकान्तवः ' निउरंव ' निकुरम्बाणि=समूहरूपाः निचिताः=
संबद्धाः ' कुंचिय ' कुञ्चिताः=कुटिलाः ' पयाहिणावत्त ' पदक्षिणावर्त्तश्च=दक्षि-
णावर्त्तयुक्ता ' मुदसिरया ' मूर्धशिरोजाः=मस्तककेता येषां ते तथा । ' सुजा-
यमुविभक्तसंगयंगा ' सुजातमुविभक्तसंगताङ्गा : = सुनिष्पन्नसुस्पष्टसमुचितशरी-
रावयवाः, ' लक्खणवज्जनगुणोववेया ' लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेताः = लक्षणानि =
स्वस्तिकादीनि व्यञ्जनानि=मर्षातिलकादीनि गुणानि=सौभाग्यादीनि तैरूपेताः
' पसत्थवत्तोसलक्खणधरा ' पश्चस्तद्वात्रिशल्लक्षणधरा ? =प्रशस्तानि यानि द्वात्रि-
शल्लक्षणानि छत्र कमलादिरूपाणि येषां ते तथा, द्वात्रिशल्लक्षणानि यथा—

તથા તેનકે કેશ વિશદ-સુસ્પષ્ટ, પ્રશસ્ત-શ્રેષ્ઠ, સૂક્ષ્મ પતલે, શુભલક્ષણો
સેં યુક્ત, અચ્છી ગંધવાલે ઓર મનોહર હોતે હૈં । તથા હનકા વર્ણ કૃષ્ણ-
વર્ણ નામક રત્નાવશેષ કે જૈસા, મુંગ-ચૂર્ણિત કોલસા કે જૈસે, નીલ-
નીલમણિ જૈસે, કજ્જલ-અંજન કે જૈસે ઓર પ્રમુદિત મ્રમરોં કે સમૂહ
જૈસે, કાલે હોતે હૈં । યે કેશ મસ્તક મેં વિરલે નહોં હોતે હૈં-કિન્તુ
સમુદાય રુપ મેં સઘન રહતે હૈં । એક દૂસરે સે સંબદ્ધ હોતે હૈં, કુટિલ-
બુંધરાલે હોતે હૈં ઓર દક્ષિણાવર્ત વાલે હોતે હૈં । (સુજાયમુવિભક્તસંગ-
યંગા) હનકે શારીરિક અવયવ સુનિષ્પન્ન, સુસ્પષ્ટ એવં સમુચિત સંનિવે-
શવાલે હોતે હૈં (લક્ષણવંજનગુણોવવેયા) સ્વસ્તિક આદિ લક્ષણોં સે
મષા, તિલક આદિ વ્યંજનોં સે એવં સૌભાગ્ય આદિ સદ્ગુણોં સે યે યુક્ત
હોતે હૈં । (પસત્થવત્તોસલક્ષણધરા) પ્રશસ્ત વત્તોમ લક્ષણોં કો યે

શ્રેષ્ઠ, સૂક્ષ્મ-પાતળાં, શુભલક્ષણો વાળાં, સુંદર ગંધવાળાં અને મનોહર હોય છે. તથા તેમના રંગ કૃષ્ણવર્ણ નામના રત્ન જેવો. કોલસાની રંગ જેવો, નીલ-મણી જેવો, કાજળ જેવો, અને પ્રમુદિત ભ્રમરવૃન્દ જેવો કાળો હોય છે. તે કેશ મસ્તક ઉપર વિખરાયેલાં હોતાં નથી પણ સમુદાય રૂપે સઘન હોય છે, એક બીજા સાથે મળેલાં હોય છે, શુચળાં વાળાં હોય છે, અને દક્ષિણાવર્ત વાળા (જમણી તરફ વળેલાં) હોય છે. “સુજાયમુવિભક્તસંગયંગા” તેમનાં શરીરનાં અંગો સુહોળ, સુસ્પષ્ટ અને પ્રમાણુસરનાં હોય છે. “લક્ષણવંજન-ગુણોવવેયા” સ્વસ્તિક આદિ લક્ષણોથી, મષ, તિલક આદિ વ્યંજનોથી અને સૌભાગ્ય આદિ સદ્ગુણોથી તેઓ યુક્ત હોય છે, “પસત્થવત્તોસલક્ષણધરા”

सुवर्णिनी टीका अ० ४ सू० ११ युगलिकस्वरूपनिरूपणम्

४६३

“छत्रं १ तामरसं २ धनु ३ स्थवरोष्ठ दम्भोलि ५ कूर्मा ६ ५ कुशाः ७ ।

वापी ८ स्वस्तिक ९ तोरणानि १० य सरः ११ पञ्चाननः १२ पादपः १३ ॥
चक्रं १४ शङ्ख १५ गज १६ समुद्र १७ कलश १८ प्रासाद १९ मत्स्य २० यव २१
यूप २२ स्तूप २३ कमण्डलू २४ अवनिभृत् २५ सन्धापरो २६ दर्पणम् २७ ॥१॥
उक्षा २८ पताका २९ कमलाभिषेक ३० सुदाम ३१ केकी ३२ घनपुष्पभाजाम् ॥

‘हंसस्वरा’ हंसस्वराः-हंसवत्स्वराः-स्निग्धत्वान् ‘कोचस्वरा’ कौञ्चस्वराः=
कौञ्चपक्षिवत्स्वराः सूक्ष्मपटुत्वात्, ‘हुंहुहिस्वरा’ हुन्दुभिक्तवाः-गम्भीरत्वान्

धारण करने वाले होते हैं। प्रशस्त यत्तीस लक्षणों के नाम इस प्रकार हैं-
(१) छत्र, (२) कमल, (३) धनुष, (४) उत्तमरथ, (५) दम्भोलि-वज्र,
(६) कूर्म-कच्छप, (७) कुश, (८) वापी, (९) स्वस्तिक, (१०) तोरण,
(११) तालाव, (१२) पञ्चानन-सिंह, (१३) पादप, (१४) चक्र, (१५) शंख,
(१६) गज, (१७) समुद्र, (१८) प्रासाद, (१९) मत्स्य, (२०) यव, (२१)
यूप-स्तंभ (२२) स्तूप, (२३) कमण्डलु, (२४) अवनिभृत्-पहाड़-पर्वत,
(२५) सुन्दर चामर, (२६) दर्पण, (२७) उक्षा-बेल, (२८) पताका, (२९)
अभिषेकयुक्त लक्ष्मी (३०) सुदाम-सुन्दरमाला (३१) केकी-मयूर और
(३२) पुष्प (हंसस्वरा) इनका स्वर स्निग्ध होने से हंस के स्वर के समान
होता है। (कोचस्वरा) सूक्ष्म और मृदु होने के कारण कौञ्चपक्षी के

श्रेष्ठ अर्थात् लक्षणों धारण करनेवाले होय छे, श्रेष्ठ अर्थात् लक्षणोंना
नाम आ प्रमाण है—

(१) छत्र (२) कमल (३) धनुष (४) उत्तमरथ (५) दम्भोलि-वज्र (६)
कूर्म-कच्छप (७) कुश (८) वापी (९) स्वस्तिक (१०) तोरण (११) तालाव
(१२) पञ्चाननसिंह (१३) पादप (१४) चक्र (१५) शंख (१६) गज
(१७) समुद्र (१८) प्रासाद (१९) मत्स्य (२०) यव (२१) यूप-स्तंभ (२२)
स्तूप (२३) कमण्डलु (२४) अवनिभृत्पहाड़ (२५) सुन्दर चामर (२६) दर्पण
(२७) उक्षा-बेल (२८) पताका (२९) अभिषेक युक्त लक्ष्मी (३०) सुदाम-
सुन्दर माला (३१) केकी मयूर (३२) पुष्प ‘हंसस्वरा’ तेमने स्वर मृदु
छेवाधी हुंसना जेवा होय छे, “कोचस्वरा” सूक्ष्म अने मृदु छेवाधी कौच
पक्षीना स्वर जेवा होय छे, “हुंहुहिस्वरा” गंभीर छेवाधी हुंहुभिना अवाज

१, तामरसं=कमलम् २, २ दम्भोलिः=वज्रम् ३ पञ्चाननः=सिंह ४ यवः=स्तम्भ ५ यूपः=‘चोतरा’ इति भाषा प्रसिद्धाः ६ अवनिभृत्=
पर्वतः ७ उक्षा=बेलोवर्दः ८ कमलाभिषेकः-अभिषेकयुक्ता लक्ष्मीः ९ सुदाम=माला १० केकी=मयूरः ११ ।

‘સીહસ્સરા’, સિહસ્સરા:-મિહવત્સ્સરા:-અવ્યાહતપ્રવર્ધમાનત્વાત્, ન તુ સ્વરવદ્, હીનસ્સરા:; ‘મેઘસ્સરા’ મેઘસ્સરા:=મેઘત્સ્સરા:-દૂરદેશવ્યાપિત્વાત્ ‘ઓષસ્સરા’ ઓષસ્સરા:-, અનુદિતસ્સરા:; ‘સુસ્સરા’ સુસ્સરા:-કર્ણસુસ્વજનકત્વાત્ ‘સુસ્સરનિર્ઘોસા’ સુસ્સરનિર્ઘોવા:-સુસ્સરા:=પ્રિય: નિર્ઘોષ:=શબ્દો યેષાં તે તથા મધુરભાષિણ इत्यर्थ:; ‘વજ્જરિસહનારાયસંવયણા’ વજ્જ - ઋષભ-નારાચસંહનના:; તત્ર નારાચસ્=ઉભયતો મર્કટબંધ:; ઋષભ:=તદુપરિ વેષ્ટનપટ્ટ:; વજ્જ=કીલીકા-ઉભયત્રાપિ ભેદકમસ્થિ ॥ ઉક્તञ्च—

“રિસહો ઉ હોઈ પટ્ટો, વજ્જં પુણ કીલીયા ધિયાણાહિ ।

ઉભત્થો મઋઢવંથો નારાયં તં ધિયાણાહિ ॥ ૧ ॥” इति,

સ્વર કે જૈસા હોતા હૈ । (હુંદુહિસ્સરા) ગંભીર હોને સે હુંદુમિ કે સ્વર જૈસા હોતા હૈ, (સીહસ્સરા) અવ્યાહતરૂપ સે પ્રવર્ધમાન હોને કે કારણ મિહ કે સ્વર જૈસા, (મેઘસ્સરા) દૂર દેશ તક મેં ભી વ્યાપ્ત હોને કે કારણ મેઘકી ધ્વનિ જૈસા હોતા હૈ । (ઓષસ્સરા) વહ સ્વર ધીચ મેં ટૂટના નહીં હૈ, (સુસ્સરા) તથા કાનોં કો સુસ્વકારી હોતા હૈ । તથા- (સુસ્સરનિર્ઘોસા) વે જો ભી ગવ્દ બોલતે હૈં વે ભી બડે પ્રિય હોતે હૈં, અર્થાત્ વે મધુરભાષી હોતે હૈં (વજ્જરિસહનારાયસંવયણા) હનકા વજ્જ ઋષભ નારાચ સંહનન હોના હૈં ઓર (સમચચરંસંસંઠાણમંઠિયા) સમચચતુરસ સંસ્થાન હોતા હૈં । જો સંહનન ઉભયન: મર્કટબંધસે, ઋષભ-ઉસકે ઉપર વેષ્ટનપટ્ટ સે એવં વજ્જ-કીલીકા સે યુક્ત હોતા હૈં ઉસકા નામ વજ્જ-ઋષભનારાચ સંહનન હૈં । યહી બાત ગાથા દ્વારા પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈં ।

એવો હોય છે, “સીહસ્સરા” અવિસ્ત પ્રવર્ધમાન હોવાને કારણે સિંહના સ્વર એવો, અને “મેઘસ્સરા” દૂર દૂર સુધી ફેલાતો હોવાથી મેઘના ધ્વનિ એવો લાગે છે. “ઓષસ્સરા” તે સ્વર વચ્ચે તૂટતો નથી અને “સુસ્સરા” કર્ણને સુખદ લાગે છે. તથા “સુસ્સરનિર્ઘોસા” તેઓ જે શબ્દો બોલે છે તે પણ ઘણા મધુર હોય છે એટલે કે મીઠા બોલા હોય છે. “વજ્જરિસહ નારાચસંવયણા” તેમનું વજ્જ ઋષભ નારાચ સંહનન હોય છે અને “સમચચરંસંસંઠાણ મંઠિયા” સમચોત્સ સંસ્થાન હોય છે. જે સંહનન બંને તરફ મર્કટ બંધથી, ઋષભ-તેના ઉપર લપટાયેલા પટ્ટથી અને વજ્જ-કીલીકાથી યુક્ત હોય છે તેનું નામ વજ્જઋષભનારાચસંહનન છે. એ જ વાત ગાથા દ્વારા દર્શાવવામાં આવી છે—

सुरभिनी टीका अ० ४ सू० ११ गुणलक्षणरूपनिरूपणम्

४६५

एवं रूपं संजनन्-अस्थिरचनाविशेषो येषां ते तथा । 'समचतुरस्रसंठाण संठिया' समचतुरस्रसंस्थावदस्थिताः = यत्र समाः = अन्युनाधिकाः चतस्रः अस्यः चतुर्दिग्विभागोपलक्षिताः शरीरावयवा यत्र तत्, समचतुरस्रत्वं च पर्यङ्कासनोपविष्टस्य दक्षिणस्कन्धाद् वामजानुपर्यन्तं, तथा वामस्कन्धाद् दक्षिण जानुपर्यन्तं समत्वं, तदेव संस्थानं = शरीररचनाविशेषः, तेन संस्थिताः = युक्ता स्ते तथा 'छायउज्जोविशंगमंगा' छायोद्योतितान्दोषाद्वा - छायायाः = शरीरकान्त्या उद्योतिमानि देदीप्यमानानि अहोपाङ्गानि येषां ते तथा देदीप्यमानशरीराः, 'पसत्थच्छवी' पश्यस्तच्छवः = सुन्दराकृतयः 'निरायंका' निरातङ्काः = रोमरहिताः 'कंकगहणी' कङ्कप्रदणाः = कङ्कस्थः = पक्षिविशेषः यत्र ग्रहणं-गुदाशयो येषां ते तथा-तीरोगवर्चस्का 'कपोतपरिणामा' कपोतपरिणामाः = कपोततुल्या जैसे—“रिसहो उ होइ पट्टो वज्जं पुण कीलिया वियाणाहि ।

उभओ मक्कहवंधो, नारायं तं वियाणाहि” ॥ १ ॥

जिस संस्थान में चतुर्दिग्विभागोपलक्षित शारीरिक अवयव न्युनाधिकतारूप दोष से वर्जित होते हैं—अर्थात्-पर्यङ्कासन से उपविष्ट पुरुष के दक्षिणस्कंध से लेकर वामजानुपर्यन्त और वामस्कंध से लेकर दक्षिण जानुपर्यन्त जो समोन्नता रूप से शारीरिक अवयवों की रचना है उसका नाम समचतुरस्रसंस्थान है। (छायउज्जोविशंगमंगा) इनके शारीरिक अवयव अपने शरीर की कान्तिरूप छाया से सदा देदीप्यमान बने रहते हैं (पसत्थच्छवी) इनकी आकृति यही मनोज्ञ सुन्दर होती है। (निरायंका) इन्हें कोई भी रोग नहीं होता है। (कंकगहणी) इनका गुदाशय-गुह्यप्रदेश पक्षी के गुह्यभाग की तरह लेपरहित मलवाला होता है। (कपोतपरिणामा) इनका आहार कबूतर के आहार के परिपाक जैसा

“रिसहो उ होइ पट्टो वज्जं पुण कीलिया वियाणाहि ।

उभओ मक्कहवंधो, नारायं तं वियाणाहि” ॥ १ ॥

ये ज्ञापयामां आरे निशाने अनुसक्षीने शारीरिक अवयवो न्यूनता अथवा अधिकताना दोषार्थी रक्षित होय छे, अरेवे के पर्यङ्कासने बैठेवा पुत्रपत्नी जमझा जमझी सर्वने जामा दीवण सुधी अने जामा जमझी सर्वने जमझा दीवण सुधी जमान उये शारीरिक अवयवोनी जे स्थित होय छे तेने समचतुरस्रसंस्थान छे छे. “छायउज्जोविशंगमंगा” तेमनां शरीरनां अंगे तेमनां शरीरनी अतिउप छायाथी नया देदीप्यमान जनी रहे छे “पसत्थच्छवी” तेमनी आकृति धल्ली मनोज्ञ-सुन्दर होय छे. “निरायंका” तेमने कोई रोग थतो नथी. “कंकगहणी” तेमनां गुदाशय-गुह्यभाग पक्षीनां गुह्यभागनी जेभ रोगरक्षित भणवाणे होय छे. “कपोतपरिणामा” तेमनां आहार कबूतरना

55દારપરિણાકાઃ ‘સડગ્નિપોસા’ શકુનિપોસાઃ-શકુનેરિત્ત=ચક્ષિણ इव पोसः=
 અપાનસ્થાનં નિરૂપલેપતયા યેષાં તે તથા, નિરૂપલેપમુદાશવાઃ, ‘પિટ્વં તરોરૂપરિ-
 ણયા’ પૃષ્ઠાન્તરોરૂપરિણતાઃ = પૃષ્ઠં = પૃષ્ઠદેશઃ, અન્તરે = પૃષ્ઠોદરયો-
 રન્તરાલે પાશ્ચાતિત્યર્થઃ ઉરુ = જઙ્ગે ચ, ઇત્યેતે પરિણતાઃ = સુદૃઢા યેષાં તે
 તથા ‘પડમુપ્પલસરિસગંધસાસસુરભિવયણા’ પદ્મોત્પલસદૃશગન્ધસાસસુરભિ-
 વદનાઃ-તત્ર - પદ્મં = કમલમ્ ઉત્પલં = નીલકમલં ચ તત્સદૃશો ગન્ધો यस્ય સ
 તથામ્ભૂતો યઃ શ્વાસઃ તેન મુરભિ=મુગન્ધયુક્તં વદનં=મુખં યેષાં તે તથા ‘અણુ-
 લોભવાઽવેગા’ અનુલોભવાયુવેગાઃ = અનુકૂલશરીરોદ્ભવાયુવેગવન્તઃ ‘અવદાય
 નિદ્વકેસા’ અવદાતસ્તિગ્ધકેશાઃ = અવદાતાઃ કાન્તિયુક્તાઃ મિન્ધાઃ=ચિક્ષણાઃ
 કેશાઃ=રોમાણિ યેષાં તે તથા, ‘વિગ્ગહિયઽપ્પયકુચ્છી’ વૈગ્રહિકોષ્ઠતકુક્ષયઃ
 વૈગ્રહિકો=શરીરાનુરૂપો ઉન્નતો=પુષ્ટો કુક્ષી=ઉદરદેશો યેષાં તે તથા સરીાનુ
 પપુષ્ટોદરાઃ ‘અમયરસફલાહારી’ અમૃતરસકમહારિણઃ = અમૃતતુલ્યરસ
 હોતા હૈ । (સડગ્નિપોસા) પક્ષી કી તરહ્ ઇનકા અપાનસ્થાન મલ કે
 ઉપલેપ સે રહિત્ત હોતા હૈ । (પિટ્વંતરોરૂપરિણયા) ઇનકે પૃષ્ઠ ઓર ઉદર
 કે અંતરાલ-પાશ્ચ્વભાગ એવં જંઘાઈ સુદૃઢ્ હોની હૈ, (પડમુપ્પલસરિસર્ગ-
 ધસાસસુરભિવયણા) પદ્મ-કમલ, ઉત્પલ-નીલ કમલ, ઇનકે જૈસે
 ગંધવાલા ઇનકા શ્વાસ હોતા હૈ । ડસ શ્વાસ સે મુગંધ યુક્ત ઇનકા
 મુખ હોતા હૈ । (અણુલોભવાઽવેગા) ઇનકી શારીરિક વાયુ કા વેગ
 ઇનકે અનુકૂલ હી રહતા હૈ-પ્રતિકૂલ નહીં । (અવદાયનિદ્વકોસા)
 ઇનકે કેશ-રોમ અવદાત કાન્તિયુક્ત એવં ચિક્ષને હોતે હૈ (વિગ્ગહિય-
 ઽપ્પયકુચ્છી) ઇનકે પેટ કે દોનોં આજુ વાજુ કે ભાગ શરીર કે
 અનુરૂપ હી પુષ્ટ રહતે હૈ । (અમયરસફલાહારી) યે અમૃત કે જૈસે રસ-

આહાર લેવો નિર્દોષ હોય છે. “સડગ્નિપોસા” પક્ષીની જેમ તેમનો ગુપ્તભાગ
 મળથી ખરડાયા વિનાનો હોય છે. “પિટ્વંતરોરૂપરિણયો” તેમની પીઠ અને
 ઉદરની અંદરનો તથા પાસેનો ભાગ અને જંઘાઓ મજબૂત હોય છે. “પડ-
 મુપ્પલસરિસ ગંધસાસ સુરભિવયણા” પદ્મ-કમળ, અને ઉત્પલ-નીલકમળ જેવી
 ગંધવાળો તેમનો શ્વાસ હોય છે. તે શ્વાસથી તેમનું મુખ મુગંધયુક્ત થાય છે.
 છે. “અણુલોભવાઽવેગા” તેમના શરીરના વાયુનો વેગ તેમને અનુકૂળ જ રહે
 છે-પ્રતિકૂળ રહેતો નથી. “અવદાયનિદ્વકોસા” તેમના શેષ અવદાત-કાન્તિ
 યુક્ત અને મુલાયમ હોય છે. “વિગ્ગહિયઽપ્પય કુચ્છી” તેમના પેટની આજુ-
 વાજુના બંને ભાગ શરીરને અનુરૂપ જ પુષ્ટ રહે . “અમયરસફલાહારી”

સુદર્શિની ટીકા અ० ૪ સૂ० ૧૧ યુગલિકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૨૭

યુક્તાનિ યાનિ ફલાનિ તેષાન્નાદારિણઃ, 'તિગાઝય સમુચ્છિયા' ત્રિ ગવ્યૂત સમુચ્છિતાઃ-ત્રિ ગવ્યૂતિપરિમાણોન્નતરીરાઃ, તિપલિઓવમદ્વિદ્યા 'ત્રિપલ્યોપમ-સ્થિતિકાઃ=ત્રિપલ્યોપમકાલપ્થિતિમન્તઃ 'તિન્નિ ય પલિ ઓવમાઈ પરમાઝ પાલ-હત્તા 'ત્રીણિ ચ પલ્યોપમાનિ પરમાયૂંપિ=પરમાયુષ્કાલં પાલયિત્વા-ઉપભુઝ્ય 'તે વિ' તેઽપિ=ઉત્તરકુરુદેવકુરુનિવાસિનો યુગલિકા મનુષ્યા અપિ, 'કામાણં અવિ-તિત્તા' કામાનામવિત્ત્વાઃ-અવિત્ત્વાકામભોગા એવ, 'ઉવ્વળમંતિ મરણધમ્મં' મરણધર્મમ્હુપનમન્તિ-ઇતિ પૂર્વવત્ ॥ સૂ० ૧૧ ॥

સામ્પ્રતં તેષાં સ્ત્રી વિપચેપ્યાહ—'પમયા વિ' ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—પમયાવિય તેસિં હુંતિ સોમ્મા સુજાયસવંગ-સુંદરીઓ પહાણમહિલાગુણેહિં જુત્તા અઢકંત-વિસપ્પમાણ મઝયસુકુમાલ-કુમ્મસંઠિય-સિલિદ્ધચલણા ઉજ્જુમઝયપીવર સુસંહતંગુલીઓ અવ્ભુણાય । રઢયતલિણ-તંત્રસુદ-નિદ્ધ-નચ્ચા રોમરહિયવટ્ઠસંઠિય-અજહણ્ણ-પસત્થલચ્ચણ-અકોપ્પ ચાલે ફલોં કા આદાર કરતે હિં । (તિગાઝયસમુચ્છિયા) ત્રીન કોશકા ઇનકા શરીર હોતા હિં । (તિપલિઓવમાઈ પરમાઝ પાલહત્તા) ત્રીન પલ્ય કી ઇનકી ઉત્કૃષ્ટ આયુ હોતી હિં । ઇસ પ્રકાર કી સ્થિતિ સે યુક્ત થને હુણ યે ઉત્તરકુરુ ઓર દેવકુરુ કે નિવાસો મનુષ્ય મી ત્રીન પલ્ય કી ઉત્કૃષ્ટ અપની આયુ કા ભોગ કરકે મી (કામાણં અવિતિત્તા) કામ-સુખોં મેં અતૃપ્ત થને રહતે હિં । અર્થાત્-ત્રીન પલ્ય કાલતરુ કામસુખોં-કો ભોગતે રહતે હિં ફિર મી ઇનકી કામસુખોં કો ભોગને કી લાલસા શાંત નહીં હો પાની હિં । અન્ત મેં (તે વિ) વે મી કામ સે અતૃપ્ત હી મરણ ધર્મકો પ્રાપ્ત કરતે હિં ॥ સૂ० ૧૧ ॥

તેઓ અમૃત બેસાં રસવાળાં ફળોનો આદાર કરે છે. “તિગાઝયસમુચ્છિયા” ત્રણ ગાવનું તેમનું શરીર હોય છે. “તિપલિઓવમાઈ પરમાઝ પાલહત્તા” ત્રણ પદ્યનું તેમનું ઉત્કૃષ્ટ આયુષ્ય હોય છે. આ પ્રકારની સ્થિતિ વાળા તે ઉત્તર કુરુ અને દેવકુરુ નિવાસી લોકો પણ ત્રણ પદ્યનું પોતાનું આયુષ્ય ભોગવવા છતાં પણ “કામાણં અવિતિત્તા” કામ ભોગેથી અતૃપ્ત રહે છે. એટલે કે ત્રણ પદ્ય કાળ સુધી કામ ભોગે ભોગવ્યા છતાં પણ કામભોગે ભોગવવાની તેમની લાલસા શાંત થઈ શકતી નથી. છેવટે “તે વિ” તેઓ પણ કામભો-ગેથી અતૃપ્ત રહીને જ મૃત્યુ પામે છે. ॥ સૂ-૧૧ ॥

જંઘજુયલા સુણિમ્મિય સુણિગૂઢજાનુ મંસલપસત્થ-સુવદ્ધસંધી
 કયલી-લ્ખંભાદરેગ-સંઠિયનિવ્વણસુકુમાલમડય-કોમલ-અ-
 વિરલ-સમસંહિયસુજાયવટ્ટપીવરનિરંતરોરૂ અદ્દાવયવીડપદ્
 સંઠિયપસત્થ-વિસ્થિવળ પિટ્ટુલ-સોળીવયળરયામપ્પમાળદુ-
 ગુણિય-વિસાલ-મંસલ-સુવદ્ધ-જહગવર--ધારિણીઓ વજ્જવિ-
 રાદ્દયપસત્થલક્ષણનિરોદરીઓ તિવલિવલિયતણુનમિય
 મજ્ઞિયાઓ ઉજ્જુય-સમસંહિય-જચ્ચતણુકસિળ નિદ્ધઆદે-
 જ્જલહસુકુમાલમડય સુવિભત્તરોમરાઈઓ ગંગાવત્તગદાહિ-
 ણાવત્તતરંગ-ભંગુરરવિકિરણતરુણવોહિય વિકોસાયંતપડમ-
 ગંભીર વિગદંનાર્મીઓ અણુભમ્મડપસત્થસુજાય પીણકુચ્છીઓ
 સન્નયપાસાસંગયપાસા સુંદરપામા સુજાયપાસા મિયમાદ્દય
 પીણરદ્દયપાસા અકરંડુયકળગરુયગાનિમ્મલસુજાય નિરુવહય-
 ગાયલટ્ટીઓ કંચળકલસપ્પમાળસમસંહિતલટ્ટુચુચુ આમે-
 લગજમલ, જુયલવટ્ટિયપઓહરાઓ ભુયંગ-અણુપુવ્વ-તણુય
 ગોપુચ્છવટ્ટસમસંહિય-નમિય-આદેજ્જલહવાહાતંબનહા મંસ-
 લગ્ગહસ્થા કોમલપોવરવરંગુલીયા ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—‘તેસિ’ તેષામ્ = ઉત્તરકુરુદેવકુરુનિવાસિયુગલિકાનાં ‘પમયા-
 વિય’ પ્રમદા અપિ ચ=સ્ત્રિયોડપિ ‘હોતિ’ ભવન્તિ । કીદશ્યો ભવન્તિ ? इत्याह

અવ સૂત્રકાર इन युगलिकों की स्त्रियों के विषय में कथन करते हैं
 ‘पमया वि य तेसि’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(તેસિ) उन उत्तरकुरु निवासी युगलिकों की (पमयाविय)
 स्त्रियां भी (होति) ऐसी होती हैं। कैसी होती हैं? सो कहते हैं—(सोम्मा)

હવે સૂત્રકાર એ યુગલિકોની સ્ત્રીઓનું વર્ણન કરે છે “પમયા વિ ય
 તેસિ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“તેસિ” તે ઉત્તર કુરુ અને દેવકુરુ નિવાસી યુગલિકોની “પમયાવિય”
 સ્ત્રીઓ પણ “હોતિ” એવી જ હોય છે, તે સ્ત્રીઓ કેવી હોય છે ? તે

—‘ સોમ્મા ’ સૌમ્યા: = સૌમ્યવદના: ‘ સુજાયસઘ્વંગસુંદરીઓ ’ સુજાતસર્વાન્ગ-
 સુંદર્ય: = સુજાતાનિ = સુનિષ્પન્નાનિ સર્વાણ્યર્થાનિ સુંદરાણિ યાસાં તાસ્તથા ‘ પદાણ
 મહિલા ગુણેહિ જુતા ’ પ્રધાનમહિલાગુણૈર્યુક્તા: = હાવભાવવિલાસાદિ સ્ત્રીગુણૈર્યુક્તા:
 ‘ અતિકંતવિસપ્પમાણમઝય-મુકુમાલકુમ્મસંઠિયસિલિટ્ટચરણા ’ અતિકાન્ત વિસર્પ-
 માણમૃદુકસુકુમારકૂર્મસંસ્થિતશ્લિષ્ટચરણા: = અતિકાન્તો = અતિસુંદરો વિસર્પન્તો
 ગમનક્રિયાયુક્તો મૃદુકસુકુમારો = અત્યન્તકોમલો કૂર્મસંસ્થિતો = ઉચ્ચતત્વાત્ કચ્છ-
 પપૃષ્ઠતુલ્યસંસ્થાનો તથા શ્લિષ્ઠો = સંમિલિતો ચરણો યાસાં તાસ્તથા ‘ ડઙ્ગુમઝય-
 પીવરસુસંહયંગુલીઓ ’ ઋજુમૃદુકપીવરસુસંહતાશ્લેષ: = તત્ર-ઋજવ: = સરલા:, મૃદુ-
 કા: = કોમલા:, પીવરા: = પુષ્પટા: સુસંહતા: = અન્તર રહિતા: અશુભ્યો યાસાં તા: તથા
 સરલકોમલપીનસુસંહૃતિતપાદાશ્લેષગુલિકા: ‘ અઞ્ચુણયરહ્યતલિણતંબસુહૃણિદ્વનસા ’
 અમ્યુગ્ધરતિદતલિનતાન્નશુચિસ્તિગ્ધનસા: = અમ્યુગ્ધતા: = મધ્યોગ્ધતા રતિદા: =
 इनका मुख सौम्य होता है (सुजायसघ्वंगसुंदरीओ) इनके समस्त
 अंग सुनिष्पन्न और सुन्दर होते हैं। (पदाणमहिलागुणेहि संजुता) हाव,
 भाव विलास आदि प्रधान छियोचिन गुणों से युक्त होती हैं (अतिकं-
 तविसपपमाणमउयमुकुमालकुम्मसंठियसिलिट्टचलणा) इनके दोनों
 चरण अतिशय सुंदर होते हैं, गमन क्रिया में धकते नहीं हैं, मृदुक मुकु-
 मार-अत्यंत कोमल होते हैं, उन्नत होने के कारण कच्छप की पीठ के
 समान आकार वाले होते हैं एवं सुसंमिलित होते हैं। (डङ्गुमउयपीवर-
 सुसंहयंगुलीओ) इन चारणों की अंगुलियां ऋजु-सरल, मृदुक-कोमल,
 पीवर-पुष्प और सुसंहत-अन्तरहिन होती हैं। (अञ्चुणयरह्यतलिण-
 तंघसुहृणिद्वणसा) इन अंगुलियों के मध्य भाग में उन्नत, रतिद-

કહે છે કે “સોમ્મા” તેમનાં મુખ સૌમ્ય હોય છે, “ સુજાયસઘ્વંગ સુંદરીઓ ”
 તેમનાં સઘળાં અંગો સુવર્ણિત અને સુંદર હોય છે. “ પદાણ મહિલા ગુણેહિ
 સંજુતા ” હાવ, ભાવ, વિલાસ આદિ મુખ્ય મુખ્ય અંશોચિત શુભોવાળી
 હોય છે. “ અતિકંતવિસપ્પમાણમઝયમુકુમાલકુમ્મસંઠિયસિલિટ્ટચરણા ” તેમના
 અને ચરણ અતિશય સુંદર હોય છે. ચાલતા ધાકતા નથી. તે અત્યંત કોમળ
 હોય છે, ઉન્નત હોવાને કારણે કાચબાની પીડના જેવા આકાર વાળા હોય
 છે અને સુસંમિલિત હોય છે. “ ડઙ્ગુમઝય પીવરસુસંહયંગુલીઓ ” તે ચરણોની
 આંગળિયો ઋજુ-સરલ, કોમળ, પુષ્પ અને સુસંહૃત-અન્તરહિત હોય છે.
 “ અઞ્ચુણયરહ્ય તલિણતંબસુહૃણિદ્વનસા ” તે આંગળીથેના નમ્ર મધ્ય ભાગમાં
 ઉન્નત, રતિદ-મનોહર, તલિન-પાતળા, તાન્ન-લાલ, શુચિ-સ્વચ્છ અને સ્તિગ્ધ-

મનોજ્ઞાઃ તલિનાઃ=પતલાઃ તામ્રાઃ=તામ્રવર્ણાઃ શુચયઃ=સ્વચ્છાઃ સ્નિગ્ધાઃ=ચિક્ણાઃ નસ્યા યાસાં તાસ્તથા । ‘ રોમરહિયવટ્ટસંઠિયઅજઙ્ઘણપસત્થલક્ષણઅકોપ્પજંઘજુ-યલા ’ રોમરહિતવૃત્તસંસ્થિતઅજઘન્યપશસ્તલક્ષણાઽકોપ્પજઙ્ઘાયુગલાઃ = રોમર-રહિતે=નિર્લોભકં વૃત્તસંસ્થિતે=વર્તુલાકારમ્ અજઘન્યમ્=ઉત્તમં પ્રશસ્તલક્ષણં=સૌભા-ગ્યચિહ્નયુક્તમ્, અકોપ્પં=સર્વપ્રિયં ચ જઙ્ઘાયુગલં યાસાં તાસ્તથા, ‘ સુણિમ્મિય-સુણિગૂઢજાણુમંસલપસત્થસુવદ્ધસંધી ’ સુનિર્મિતસુનિગૂઢજાણુમંસલપશસ્તસુવ-દ્ધસંધયઃ=તત્ર સુનિર્મિતૌ=શોભનસંસ્થાનર્થિશિષ્ટૌ સુનિગૂઢૌ = દુર્લભૌ જાણુનોઃ= જાણુદ્વયસ્ય માંસલૌ=પુષ્ટૌ પ્રશસ્તૌ=સુન્દરાકારૌ સુવદ્ધૌ=સુદૃઢૌ સન્ધી=સંધાન સ્થાને યાસાં તાસ્તથા ‘ કયલી-લંખાદરેગ-સંઠિય-નિવ્વણ-સુકુમાલ-મડવ કોમલ અવિરલ - સમસંહિયવટ્ટપીવરનિરંતરોહ ’ કદલીસ્તમ્ભાતિરેશસંસ્થિતનિર્વ્રજસુકુમાર મૃદુકકોમલાઽવિરલસમસંહિયવટ્ટપીવરનિરંતરોહઃ = તત્ર કદલી સ્તમ્ભાદ-તિરેકેણ = અવિશ્યેન શોભનાઽરોહાઽવરોહસુપેશલમ્ કોમલત્વાદિગુણમર્પરૂપેણ સંસ્થિતૌ-સુન્દરસંસ્થાનવર્ત્તૌ નિર્વ્રજૌ = નિરુપદૌ મુકુમારમૃદુકકોમલૌ-અત્યન્ત-મનોજ્ઞ તલિન-પતલે, તામ્ર-લાલ શુચિ-સ્વચ્છ એવં સ્નિગ્ધ-ચિક્ણે હોતે હૈ । (રોમરહિયવટ્ટસંઠિય-અજઙ્ઘણપસત્થલક્ષણ-અકોપ્પજંઘજુયલા)

इनका जंघा युगल रोगरहित, वर्तुलाकार वाला अजघन्य-उत्तम सौ-भाग्यचिह्नो से युक्त एवं अकोपपसर्वप्रिय होता है (सुणिमिम्यसु-णिगूढजाणु मंसलपसत्थसुवद्वसंधी) इनकी दोनों जालु की संधियां शोभन संस्थान निशिष्ट, तथा सुनिगूढ होती है । पुष्ट और सुंदराकार से युक्त होती हैं । मजबूत होती हैं । (कयलीलंखादरेगसंठियनिव्वण सुकुमाल मडव कोमल अविरल समसंहियवट्टपीवरनिरंतरोह) इनकी दोनों जालु का उपरितन भाग कदली के स्तंभ से नी अधिक सुन्दर संस्थानवाला होता है । निर्व्रज-घाव आदि की निशानी से विहीन

સુવાળા હોય છે. “ રોમરહિયવટ્ટસંઠિય-અજઙ્ઘણ-પસત્થ-લક્ષણ-અકોપ્પ-જંઘ-જુયલા ” તેમની બંને જંઘાઓ રોમ રહિત, ગોળાકાર, અજઘન્ય-ઉત્તમ, સૌભાગ્ય ચિહ્નોથી યુક્ત અને અકોપ સર્વપ્રિય હોય છે, “ સુણિમિય-સુણિગૂઢ જાણુમંસલપસત્થ સુવદ્ધસંધી ” તેમની બંને જંઘાઓના સંધાનો ભાગ મુઠોળ, વ્યવસ્થિત તથા સુનિગૂઢ હોય છે. તે જંઘાઓ પુષ્ટ અને સુંદર આકારની હોય છે અને મજબૂત હોય છે. “ કયલી લંખાદરેગસંઠિય-નિવ્વણ-સુકુમાલમ-ડવ-કોમલ-અવિરલ-સમસંહિયવટ્ટપીવરનિરંતરોહ ” તેમની બંને જંઘાઓની ઉપરનો ભાગ કદલીના સ્તંભથી પણ વધારે સુંદર આકારનો હોય છે, “ નિર્વ્રજ ” ઘાવ આદિની નિશાની વિનાનો હોય છે; અત્યંત કોમળ હોય છે, અવિરલ

સુદર્શિની ટીકા અં ૪ સૂ ૪ ૧૨ યુગલિતીસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૭૧

કૌમલ અચિરલી=પરસ્પરવિલિતો સમસંહિતો=ઉચિતપ્રમાણયુક્તો વૃત્તૌ=વર્તુલો પીવ-
રૌ=પીનો નિરન્તરૌ=પરસ્પરસંબદ્ધો ઝરુ=જાન્યારીતનભાગો યાસાં તાસ્તથા
'અદ્વાચયવીદ-પદ્મ-સંઠિયપસત્થ વિત્થિળ્ણપિહુલસોળી' અઘાપદ્વોચિષુષ્ઠ સંસ્થિત-
પ્રશસ્તવિસ્તીર્ણપૃથુલ-પ્રોણ્યઃ=અઘાપદસ્ય=જૂનવિશેષસ્ય વીચય ઇવ વીચયા=તર-
જ્ઞાકૃતિરેલાઃ તથુકં પદ્ પદ્મ-ફલકઃ, તદ્વત્ સંસ્થિતા=તત્સંસ્થાતયુક્તા તદાકૃ-
તિકા પ્રશસ્તા વિસ્તીર્ણા પૃથુલા=વિશાલા શ્રોણિઃ=કટિભાગા યાસાં તાસ્તથા
'વયળાયામ્પમાણદુગુણિયવિસાલમંસલમુવદ્વજહ્ણવરધારિણીઓ' વદનાયામપ્ર-
માણાદ્વિગુણિતવિશાલમાંસલમુવદ્વજનવનવરધારિણ્યઃ = વદનમ્ય = મુવસ્ય યઃ
આગમઃ વિસ્તારસ્તસ્ય યત્ પ્રમાણં તસ્માદ્વિગુણિતં ચતુર્વિંશતપદ્મગુલમિત્યર્થઃ,
વિશાલં=તથા માંસલં=પુષ્પં મુવદ્=શૈથિલ્યવર્જિતં જયન્નવરં=વરજયન્નં=કટિયાઃ
પુરોભાગં ધારયન્તિ યાસ્તાસ્તથા 'વજ્જિરિરિદ્યપસત્થલચ્છળનિરોદરીઓ' વજ્જ
હોતા હૈં । અત્યંત કોમલ હોતા હૈં । અચિરલ-પરસ્પર મિલ્યા હુઆ હોના
હૈં । સમસંહિત-ઉચિતપ્રમાણ સે યુક્ટ હોના હૈં । વૃત-વર્તુલ-મોડ હોના
હૈં । પીવર-પીન-પુષ્પ હોના હૈં । નિરન્તર પરસ્પર સંબદ્ધ હોના હૈં ।
(અદ્વાચયવીદપદ્મસંઠિયપસત્થવિત્થિળ્ણપિહુલસોળી) इनका कटिभाग
जूनविशेष की वीचियों के समान तरङ्गाकृति रेखाओं से युक्त फलक
के जैसे आकार वाला होता है । प्रशस्त होता है, विस्तीर्ण होता है तथा
पृथुल विशाल होता है । (वयणायामप्रमाणदुगुणियविमालमंसलमुव-
द्वजह्णवरधारिणीओ) इनकी कटिका पुरोभाग-जघन प्रदेश-मुख के
विस्तार के प्रमाण से द्विगुणित होता है-अर्थात्-चौबीस अंगुलका
होता है, विशाल-पृथुल, एवं मांसल-पुष्प होता है । सुवद्व-शैथिल्य
विहीन- होता है । (वज्जिबिरिद्यपसत्थलच्छलगनिरोदरीओ) इनका

પરસ્પર બેસાયેલ હોય છે, સમસંહિત-યોગ્ય પ્રમાણવાળો.-પ્રમાણસરનો હોય છે,
ગોળ હોય છે, પીવર-પુષ્પ હોય છે, અને નિરન્તર-પરસ્પર સંબદ્ધ હોય છે.
“અદ્વાચયવીદપદ્મ-સંઠિય-પસત્થ વિત્થિળ્ણ-પિહુલસોળી” તેમનો કટિભાગ તત્
વિશેષની વીચિઓના સમાન તરંગાકૃતિ રેખાઓથી યુક્ત ફલકના જેવા આકાર-
વાળો હોય છે, પ્રશસ્ત હોય છે. વિસ્તીર્ણ હોય છે તથા પૃથુલ-વિશાળ
હોય છે. “વયળાયામ્પમાણદુગુણિય વિસાલમંસલમુવદ્વજહ્ણવરધારિણીઓ”
તેમની કટિનો આગળનો ભાગ જઘન પ્રદેશ-મુખના વિસ્તાર કરતાં બે
ગણા માપનો હોય છે, એટલે કે ચોવીસ આંગળનો હોય છે. વિશાળ અને
માંસલ પુષ્પ હોય છે, સુવદ્વ શૈથિલ્ય વિહીન હોય છે, “વજ્જિરિરિદ્ય પસત્થ-
લચ્છળનિરોદરીઓ” તેમના ઉદરનો ભાગ વળ જેવો સુદૃઢ, એટલે કે

વિરાજિતપ્રગ્લભલક્ષણં નિરોદ્યઃ = વજ્રવત્ વિરાજિતં = મધ્યપ્રતલં પ્રગ્લભલક્ષણં = શુભલક્ષણવિશિષ્ટમ્ અતિ પ્રતલસ્વાન્નિર્ગતમિવોદરં યાસાં તાસ્તથા કૃશોદર્યં इत्यर्थः ત્રિવલિવલિયતણુનમિયમઙ્ગિયાઓ ' ત્રિવલિવલિતતનુનમિતમધ્યકાઃ = ત્રિવલિભીઃ = ઉદરસ્થરેસ્વાત્રયરૂપામિઃ વલિત૧ઃ = વલનયુક્ત૨ઃ = તનુનમિત૪ઃ = કિશ્કિદવનતાઃ૪, મધ્યં = મધ્યભાગઃ = કટિપ્રદેશો યાસાં તાસ્તથા ' ઉજ્જુયસમસંહિય જચ્ચતણુકસિણનિદ્ધઆદેજ્જલહ્હમુકુમાલમઝયમુવિભત્તરોમરાઈઓ ' તત્ર ' ઉજ્જુય ' ઋજુકાનિ ' સમસંહિય ' સમાનિ-તુલ્યાનિ સંહિતાનિ = ઘનનિ ' જચ્ચ ' જાત્યાનિ-સ્વાભાવિકાનિ ' તણુ ' તનૂનિ-સૂક્ષ્માણિ ' કસિણ ' કૃષ્ણાણિ ' નિદ્ધ ' સ્નિગ્ધાનિ-ઋક્ષાણિ ' આદેજ્જ ' આદેયાનિ-શ્લાઘનીયાનિ ' લહ્હ ' इति सुन्दाराणि ' मुकुमारमृदुकानि = अत्यन्त कोमलानि ' सुविभक्त ' सुविभक्तानि = यथास्थानशोभितानि च यानि रोमाणि तेषां राजयः = पङ्क्तयो यासां तास्तथा ' गंगावत्तमदाहिणावत्तरंगभंगुररविकिरणतरुमवोदित उदरभाग वज्र के जैसा सुन्दर, अर्थात्-मध्य में पतला होता है । शुभलक्षणों से विशिष्ट होता है । तथा अतिपतला कृश-होने के कारण अनुदर-निर्गत उदर जैसा होता है — अर्थात् ये कृशोदरी होती हैं । (त्रिबलिवलियतणुनमियमङ्गियाओ) इन का मध्यभाग उदरप्रदेश त्रिवलियों से वलित-युक्त - होता है । और तनूनमित - कुछ झुका हुआ सा रहता है । (उज्जुयसमसंहिय जचचतणु कसिणनिद्वआदेज्जलह्हमुकुमालमउयमुविभत्तरोमराईओ) इन की रोमराजि ऋजु-सरल, सम एकसी संहित घनीभूत, जात्य-स्वाभाविक, तनु-पतली, कृष्ण-काली, निद्व-स्निग्ध, चिकनी-रक्षतारहित, आदेय-श्लाघनीय, लहह-सुन्दर मुकुमारमृदुक-अत्यंत कोमल तथा सुविभक्त-यथास्थान शोभित होती है । (गंगावत्तम-दाहिणावत्-तरंग-भंगुर-रवि-

મધ્યમાં પાતળો હોય છે. અને શુભ લક્ષણોવાળો હોય છે, તથા અતિશય પાતળો હોવાથી અનુદર-પેટ જ ન હોય તેવો હોય છે. એટલે કે તે ક્ષીઓ કૃશોદરી હોય છે. “ ત્રિવલિવલિયતણુનમિયમઙ્ગિયાઓ ” તેમનો મધ્યભાગ-ઉદર પ્રદેશ ત્રિવલિયો વાળો હોય છે, અને સહેજે ઝુકેલો રહે છે. “ ઉજ્જુય સમસંહિય-જચ્ચ-તણુ-કસિણ-નિદ્ધ-આદેજ્જ-લહ્હ-મુકુમાલ-મઝય-મુવિભત્તરોમ-રાઈઓ ” તેમની રોમરાજિ ઋજુ-સરલ, સમ-એક સરખી, સંહિત-ઘનીભૂત, જાત્ય-સ્વાભાવિક; તનુ-પાતળી, કાળી, સુવાળી, આદેય-વળાણુવા થોડા, લહહ-સુંદર મુકુમાર, મૃદુક-અતિ કોમળ તથા સુવિભક્ત-યથાસ્થાન શોભિત હોય છે, (“ ગંગાવત્તમદાહિણાવત્ત-તરંગભંગુરરવિકિરણતરુમવોદિય-અકોસાયંતવમમં

સુદર્શિની ટીકા અ૦૪ સુ૦ ૧૨. યુગલિનીસ્વરૂપનિરૂપણમ

૪૭૩

અકોસાયંતપડમર્ગમીરવિગડનામીઓ ' ગજાવર્તકદક્ષિણાવર્તેતરંગમજુર - રવિ -
કરણતરુગવોધિતવિકોશાવમાનપદ્મગમ્ભીરવિકટનામિકાઃ. તત્ર ગજાવર્તકઃ
=ગજાનવામ્લભ્રમઃ, સ ચ દક્ષિણાવર્તઃ તરંગમજુરઃ- તરંગૈઃ મજુરઃ વક્રમ્,
તદ્વત્, તથા રવિકિરણૈઃ=સ્પર્શકિરણૈ વોધિતં વિકાસિતં-વિકાસાવરથાંપ્રાપ્તુવદિ-
ત્યર્થઃ, અતएव વિકોશાવમાનં મુકુટાવસ્થાં વિમુચ્ચત્ યત્ પદ્મં તદ્વદ્ ગમ્ભીરા
વિકટા-સુન્દરા ચ નામિયોસાં તાસ્તથા । ' અણુવ્મહપસત્યસુજાયપીળકુચ્છી '
અનુદ્રટપણ્ણાસુજાતવીનકુચ્ચઃ=અનુદ્રટઃ=વદ્રટરહિતૌ સમૌ, પ્રશસ્તૌ સુજાતૌ
સુસંસ્થિતૌ પીનૌ સુપુટી કુશી=ઉદરોમયધામૌ યાસાં તાસ્તથા ' સંનયપાસા '
સંનયપાર્થાઃ = પુષ્ટત્વાદ્યોનમત્પાર્થમાગાઃ, ' સંગયપાસા ' સજ્જતપાર્થાઃ=સુમિ-
લિતપાર્થમાગાઃ, આદર્ ' સુંદરપાસા ' સુન્દરપાર્થાઃ = મનોહરપાર્થમાગાઃ,
' સુજાયપાસા ' સુજાતપાર્થાઃ=સુસંસ્થિતપાર્થા, 'મિયમાદ્યવીળરૂપપાસા' મિત-
કિરણ તરુગવોધિય અકોસાયંતપડમર્ગમીરવિગડનામીઓ) इनकी नाभि
तरंगों से वक्र बने हुए ऐसे दक्षिणावर्तवाले गंगानदी के जलभ्रम-
भँवर के समान होती है । तथा सूर्य की किरणों के संपर्क से अपनी
मुकुलित अवस्था का परित्याग कर विक्रमिन्त अवस्था को प्राप्त हुए पद्म
के समान गंभीर होती है और विकट षड़ी सुन्दर होती हैं । (अणु-
व्महपसत्यसुजायपीणकुच्छी) इनके उदर के दोनों पार्श्वभाग अनुद्वट-
अनुलवण-बराबर-एक से होते हैं । प्रशस्त-सुहावने होते हैं । सुजात-
अच्छे संस्थानवाले होते हैं । पीन-पुष्ट होते हैं । (संनयपासा) तथा
पुष्ट होने के कारण इनके दोनों तरफ के वे पार्श्वभाग नीचे की ओर
झुके हुए रहते हैं । (संगयपासा) वे दोनों उनके पार्श्वभाग परस्पर में
संगत मिले रहते हैं । अतएव वे (सुंदरपासा) बड़े सुन्दर होते हैं ।
तथा (सुजायपासा) अच्छे संस्थान से युक्त कहे जाते हैं । (मियमा-

મીરવિગડનામીઓ " તેમની નાભિ તરંગોથી વક્ર અનેક દક્ષિણાવર્ત વાળા
ગંગા નદીના જલભ્રમ-વમળ જેવી હોય છે, અને સૂર્યના કિરણોના સંપર્કથી
પ્રેરિતની ખીણપેલી અવસ્થા છેડીને વિદ્રસિત થયેલાં કમળના જેવી ગંભીર
અને વિક્રમિત અવસ્થા સુંદર હોય છે. " અણુવ્મહપ સત્યસુજાયપાળકુચ્છી "
તેમના ઉદરની યાનુના અને ભાગો (કુશીઓ) એક સરખા હોય છે,
પ્રશસ્ત, પુષ્ટ અને સુદેખ હોય છે. " સંનયપાસા " તે અને કુશી પુષ્ટ
હોવાને કારણે નીચેની યાત્રુ ઝુકેલા રહે છે. " સંગયપાસા " તેમની તે
અને કુશીઓ પરસ્પરમાં સંગત- મળેલી હોય છે, તેથી તે " સુંદરપાસા "
ઘણી સુંદર હોય છે. તથા " સુજાયપાસા " સુધટિત હોય છે. " મિયમાદ્યવીળ-

માત્રિક પીનરતિદપાશ્વી:-મિતૌ=માનોપેતૌ માત્રિકૌ પરિમાણસમ્પન્નો પીનો=સુપુ-
ષ્ટૌ રતિદૌ - રમણીયૌ પાર્શ્વભાગૌ યાસાં તાસ્તથા ' અવરંદ્રયકળગરુચગનિ
મ્મલ સુજાયનિરુવહયગાયલટ્ટી ' અકરંદ્રકનનરુચકનિર્મલસુજાતનિરુપહત
ગાત્રપદ્મયઃ તત્ર અકરંદ્રકા = પુષ્ટત્યાદનુપલક્ષ્યપુષ્ટપાશ્વાંશરિધિકાઃ, તથા
કનકરુચકનિર્મલા = સુવર્ણ સમાનકાન્તિમતીસુજાતા નિરુપહતા = રોગરહિતા
ચ ગાત્રપદ્મિ યાસાં તાસ્તથા ' કંચનકલસપ્પમાણસમસંહિતલટ્ટચ્ચુચ આમેલગ
જમલ જુયલ વદિયપઓહરાઓ ' કાશ્ચનકલસપ્પમાણસમસંહિતલટ્ટચ્ચુચકાઽસમેલક
યમલયુગલવર્તિતપયોધરાઃ=તત્ર કાશ્ચનકલસપ્પમાણી=ઉચ્ચતત્ત્વેન વર્તુલત્ત્વેન ચ સુવર્ણ
ઘટાકારૌ સમૌ=તુલ્યૌ સંહિતૌ=અનિપતિતત્ત્વેનાઽશિથિલૌ લટ્ટચ્ચુચકામેલકૌ=મનોહ-
રકૃષ્ણસ્તનમુલ્યશિખરે યમઠૌ=મહોત્પન્નો યુગ્મઠૌ=યુગ્મૌ ધાનિતૌ=વર્તુલૌ પયોધરૌ=
સ્તનો યાસાં તાસ્તથા ' ભુયંગઅણુપુન્વતણુયગોપુન્વત્ત્વમ્મસંહિયનામિય આદે-
હ્યપીનરદ્યપાસા) ઇસીલિયે અનેકે વે દોનોં પાર્શ્વભાગ મિત-માન સે
યુક્ત, માત્રિક-પ્રમાણસંપન્ન, પીન-સુપુષ્ટ એવં રતિદ-રમણીય લગતે હૈં ।
(અકરંદ્રયકળગરુચગનિમ્મલસુજાયનિરુવહયગાયલટ્ટી) પુષ્ટ હોને કે
કારણ અનેકી ન તો પીઠકી દૃઢિયાં દિશ્વતી હૈં ઓર ન દોનોં પાર્શ્વભાગો
કી । અનેકા શરીર સુવર્ણ કે સમાન કાન્તિવાલા એવં રોગરહિત હોતા
હૈં । (કંચનકલસપ્પમાણ સમસંહિતલટ્ટચ્ચુચ આમેલગ જમલજુયલવદિય-
પયોહરાઓ) અનેકે દોનોં સ્તન ઉચ્ચત ઓર ગોલ હોને કે કારણ સુવર્ણ-
નિર્મિત ઘટ કે આકાર જૈસે હોતે હૈં-કમતી વદતી નહીં । સંહિત અશિ-
થિલ હોતે હૈં । નીચે કી ઓર કુકે કુપ નહીં રહતે મામ્હને ડઠે કુપ
રહતે હૈં । અનેકે દાનોં ચ્ચુચ મનોહર એવં અત્યંત કાલે સુગ્રવાલે હોતે
હૈં । યે સાથ ૨ ઉત્પન્ન હોતે હૈં । ગોલ રહતે હૈં, (ભુયંગ અણુપુન્વતણુય-

રદ્યપાસા ” તે કારણે તેમની બન્ને કુશીઓ મિતમાત્રિક સપ્રમાણ, પીન-સુપુષ્ટ
અને રતિદ-રમણીય લાગે છે. “અક દ્રવ્યકળગરુચગનિમ્મલ સુજાય નિરુવહયગાયલટ્ટી”
તે પુષ્ટ હોવાને કારણે તેમની પીઠતાં હાડકાં દેખાતાં નથી અને છત્તાંતા
હાડકાં પણ દેખાતાં નથી, તેમના શરીર સુવર્ણની જેવી કાન્તિવાળાં અને નીરોગી
હોય છે. “ કંચન કલસપ્પમાણસમસંહિતલટ્ટચ્ચુચઆમેલગજમલજુયલવદિય
પયોહરાઓ ” તેમનાં બન્ને સ્તન ગોળ અને ઉચ્ચતા હોવાને કારણે, સોનાના
ઘડા જેવા લાગે છે, બન્ને સ્તન બરાબર સરખા હોય છે-નાના મોટા હોતા
નથી,, સંહિત-અશિથિલ હોય છે. નીચેની બાજુ નમેલા રહેતાં નથી પણ
ઉચ્ચત હોય છે. તેમની બન્ને ડીંઠીઓ મનોહર અને અત્યંત શ્યામ સુખવાળી
હોય છે. તે બન્ને સાથે જ ઉત્પન્ન થાય છે અને ગોળાકારનાં હોય છે.

સુદર્શિની ટીકા અ० ૪ સૂ० ૧૨ યુગલિનીસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૭૧

જલડહવાહા ' ધ્રુજજ્ઞાનુપૂર્વતનુક ગોપુચ્છવૃત્તસમસંહિતનમિતાદેયલડહવાહવાઃ = ધ્રુજજ્ઞવત્ = સર્પવત્ આનુપૂર્વેણ તનુકી = ક્રમશઃ કૃશો તથા ગોપુચ્છવદ્ વૃત્તો = વર્તુલી સમસંહિતો-સમત્રયુક્તો મુગુઠિતો ચ નમિતૌ=મુદીર્ધલમ્બમાની આદેયૌ=શ્લાઘનીયૌ ' લડહ ' इति मुन्दरी बाहू=ध्रुजौ यासां तास्तथा ' तंवनहा ' ताम्र-नखाः-रक्तवर्णनखसम्पन्नाः ' मंसलमगहत्था ' मांसलग्रहस्ताः-मांसलो-पुष्टौ अग्रहस्तौ-दस्ताग्रभागौ ' पोंचा ' इति प्रसिद्धौ यासां तास्तथा, तथा ' कोमल पीवरवरंगुलीया ' कोमल पीवरवराङ्गुलिकाः, तेषां मरणधर्ममुपनमन्तीतिव-क्ष्यमाणेन सम्बन्धः ॥ सू०-१२ ॥

પુનસ્તાઃ ક્રીદક્યઃ ? इत्याह—' निद्रपाणि लेहा ' इत्यादि-

મૂલ્ય—નિદ્રપાણિલેહા સસિ—સૂરસંલ્લચક્રવર-સોતિથય

વિભક્ત — સુરદય-પાણિલેહા પીણુળય કક્લવધિષ્પપ્સ

ગોપુચ્છવદ્સમસંહિયનામિય આદેજ્જલડહવાહા) इनकी दोनों भुजाएँ सर्पकी तरह क्रमशः कृशदुई होती है। तथा गाय की पूंछ की तरह वर्तुल होती हैं। सम-एकसी तथा संहित-संगठित होती हैं। नमित-घुटनों तक लयी रहती हैं। आदेय-देखने में प्रशंसनीय एवं बड़ी सुहावनी लगती हैं। (तंवनहा) इनकी अंगुलियों के नख लाल वर्ण वाले होते हैं। तथा (मंसलग्रहत्था) इनका चोंचा मांसल-पुष्ट होता है। तथा (कोमलपीवरवरंगुलीया) इनकी हाथों की अंगुलियां कोमल पीवर-पुष्ट एवं वर-उत्तम होती हैं। ऐसी ये स्त्रियां भी कामभोग से अतृप्त ही मरणधर्म को प्राप्त करती हैं। ऐसा संबंध आगे के वाक्य से जोड़ लेना चाहिये ॥ सू० १२ ॥

“ સુયંગ-અણુપુદ્વ-તલુય ગોપુચ્છવદ્-સમસંહિય-નામિય-આદેજ્જલ-ડહવાહા ” તેમની બન્ને ભુજાઓ સર્પની જેમ ક્રમશઃકૃશ થતી બાય છે, તે ભુજાઓ ગાયની પૂંછડી જેવી વર્તુળ સમ-એક સરખી, તથા સંહિત-યુગલિત, ઘુટણો સુધી લાંબી, અને આદેય-પ્રશસ્ત, અને શોભિતી લાગે છે “ તંવનહા ” તેમની આંગળીઓના નખ લાલ રંગના હોય છે, તથા “ મંસલગ્રહત્થા ” તેમના પોંચા માંસલ-પુષ્ટ હોય છે, તથા “ કોમલપીવરવરંગુલીયા ” તેમના હાથની આંગળિયો પીવર-પુષ્ટ અને ઉત્તમ હોય છે. એવી તે યુગલિક સ્ત્રીઓ પણ કામભોગથી અતૃપ્ત રહીને જ મૃત્યુ પામે છે એવો સંબંધ આગળનાં વાક્યો સાથે સમજી લેવો. ॥ સૂ० ૧૨ ॥

पडिपुण्णगल्लकवोल-चउरंगुल-सुप्पमाण-कंबुधरसरिस-गीवा
मंसल --संठिय -- पसत्थहणुया दालिमपुप्फप्पगासपीवर-
पलंब कोंचियवरा धरा सुंदरोतरुद्धा दहिदगरय कुंदचंदवासंति
मउल-अछिइ - विमलदसणा रत्तुप्पलरत्तपउमपत्तसुकुमाल
तालुजोहा कणवीरमउलकुडिल अब्भुण्णयउज्जुतुंगनासा
सारथनवकमल-कुमुय--कुवलयदल-निगर--सरिस-लक्खण
पसत्थ-निम्मल--कंतनयणा--आनामिय-चावरु- कणहब्भ-
राइसंठिय--संगयायय---सुजाय---तणु-कसिण--निद्धभूमगा
अल्लीण--पमाण- जुत्तसवणा सुस्सवणा पीणमट्ठ-गंडलेहा
चउरंगुल - विसाल - समनिडाला कोमुईरयणियर - विमल
पडिपुण्णा सोम्मवयणा छत्तुण्णयउत्तमंगा अविकल सुसि-
णिद्ध-दीह-सिरया छत्त २ उज्जय २ जुव ३ धूम ४ दामाणि ५
कमंडलु ६ कलस ७ वाघि ८ सोत्थिय ९ पडाम १० जव ११
मच्छ १२ कुम्भ १३ रहवर १४ मयर १५ अंक १६ थाल
१७ अंकुस १८ अट्ठावय १९ सुपइइ २० अमर २१ सिरिया-
भिसेय २२ तोरण २३ मेइणि २४ उदधिवर २५ पवरभवण
२६ गिरिवर २७ वरायंस २८ सुललियगय २९ वसभ ३०
सीह ३१ चामर ३२ पसत्थ वत्तीसलक्खणधराओ हंसस-
रिच्छगईओ कोइलमहुरगिराओ कंता सव्वस्स अणुमयाओ,
ववगयवली-पलिय-वंगदुवण - वाहि दोभग्ग--सोयमुक्काओ-
उच्चत्तेणय नरथोवूणमूसियाओ सिंगारागारचारुवेसा सुंदर-
थणजहणवयणकरचलणयणा लावणरूवजोव्वणगुणोव-

સુદર્શિની ટીકા અં ૪ સુ ૧૩ યુગલિનીસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૭૭

વેયા, પંદળવળવિવરચારિણીઓ ઓઢવઅચ્છરાઓ ઉત્તર-
કુરુમાણસચ્છરાઓ આચ્છર મયેચ્છણિજ્ઞાઓ તિણિણપલિ
ઓવમાઈં પરમાડં પાલહત્તા તાઓ વિ ઉવળમંતિ મરણધર્મં
અતિત્તા કામાણં ॥ સૂ૦૧૩ ॥

વીકા—‘નિદ્વપાણિલેહા’ સ્નિગ્ધપાણિરેખાઃ = સુસ્પષ્ટરેખાઃ ‘સસિ-
સૂરસંઘચક્રવરસોત્થિયવિભક્તસુવિરહ્યપાણિલેહા’ શશિ—સૂર્ય—શઙ્ગ—ચક્ર-
વર સ્વસ્તિકવિભક્તસુરતિદપાણિરેખાઃ = ચંદ્રસૂર્યશઙ્ગચક્રદક્ષિણાવર્તસ્વસ્તિક-
લક્ષણાઃ વિભક્તાઃ=સુસ્પષ્ટાઃ રતિદાઃ=સુસ્વદાઃ પાણિરેખાઃ=રેખા યાસાં
તાસ્તથા । ‘પીણુણ્યકક્ષવત્થિપ્પદેસપટ્ટિપુણ્ણગલકવોલા’ પીનોદ્ગતકક્ષવસ્તિ-
પદેશપ્રતિપૂર્ણગલકવોલાઃ = પીનાબુદ્ગતો ચ કક્ષો = વાહુમૂલો વસ્તિઃ = નાભ્ય-
ધોભાગ સ્તથા પ્રતિપૂર્ણો ગલકવોલો યાસાં તાસ્તથા ‘ચરંરંગુલસુપ્પમાણકંબુવર
સરિસગીવા’ ચતુરંગુલસુપ્પમાણકમ્બુવરસદશગ્રીવાઃ = ચતુરંગુલપ્રમાણા કમ્બુવર—

ફિર વે કૈસી હોની હૈં સો કહતે હૈં—‘નિદ્વપાણિલેહા’ ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થઃ—(નિદ્વપાણિલેહા) इनके दोनों हाथों की रेखाएँ स्निग्ध-
सुस्पष्ट होती हैं। (ससिसूरसंघचक्रवरसोत्थियविभक्तसुविरह्यपाणिलेहा)
उनके हाथों में शशि—चंद्र रवि, शंख, चक्र और दक्षिणावर्त स्वस्तिक,
इन आकार की रेखाएँ होती हैं । और ये सब रेखाएँ सुस्पष्ट रहती हैं,
सुस्वद होती हैं । (पीणुण्यकक्खवत्थिप्पदेसपट्टिपुण्णगलकवोला)
इनकी दोनों कक्षाएँ—वाहुमूल—पीन—पुष्ट और उन्नत होता है । वस्ती
नाभि का अधोभाग भी ऐसा ही होती है । तथा गला और कपोल ये
दोनों इनके प्रतिपूर्ण—भरे हुए रहते हैं । (चउरंरंगुलसुप्पमाणकंबुवर—

તે યુગલિક સ્ત્રીઓનું વધુ વર્ણન કરે છે—“નિદ્વપાણિલેહા” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થઃ—“નિદ્વપાણિલેહા” તેમના બન્ને હાથની રેખાઓ સ્નિગ્ધ—સુસ્પષ્ટ
હોય છે. “સસિસૂરસંઘચક્રવરસોત્થિયવિભક્તસુવિરહ્યપાણિલેહા” તેમના હાથોમાં
ચંદ્ર,સૂર્ય,શંખ,ચક્ર,દક્ષિણાવર્ત સ્વસ્તિક આદિના આકારની રેખાઓ હોયછે.
તે બધી રેખાઓ સુસ્પષ્ટ અને સુખદ હોય છે. “પીણુણ્યકક્ષવત્થિપ્પ-
દેસપટ્ટિપુણ્ણગલકવોલા” તેમની બન્ને ડૂળો પુષ્ટ અને ઉન્નત હોય છે. વસ્તિ-
નાભિની નીચેનો ભાગ પણ એવો જ હોય છે, તથા તેમનું ગળું અને ગાલ પ્રતિ-
પૂર્ણ ભરાવદાર હોય છે. “ચરંરંગુલસુપ્પમાણકંબુવરસરિસગીવા” તેમની શ્રીવા

સદશી=પ્રધાનશક્તિતુલ્યા ચ ગ્રીવા યાસાં તાસ્તથા ' મંસલસંઠિયપસ્થહણુયા ' માંસલસંસ્થિતપશસ્તહણુકાઃ = માંસલ-પુષ્ટઃ સંસ્થિતઃ = સુસંસ્થાનયુક્તઃ આશ્ર-
 ફલાકારઃ પ્રશસ્તાઃ=સુન્દરો હનુઃ=ઓષ્ઠાશ્રોભાગો યાસાં તાસ્તથા । ' દાહિમપુ-
 પ્ષપ્પમાસપીવરપલંબકોચિય વરાધરા = દાહિમપુષ્પમકાશ્રપીવરમાલમ્બવરા-
 ધરા:=તત્ર-દાહિમપુષ્પપકાશઃ = દાહિમપુષ્પમપમો રક્ત इत्यर्थः, પીવરઃ =
 પુષ્ટઃ પ્રાલમ્બઃ = ફલમ્બમાનઃ કુશ્ચિતઃ = વલિતઃ વરઃ = પ્રશસ્તોઽધરો યાસ
 તાસ્તથા ' સુંદરોત્તરુદ્ધા ' સુન્દરોત્તરોષ્ઠા=સન્દરોત્તરોષ્ઠપરિતન ઓષ્ઠો યાસાં
 તાસ્તથા ' દધિદગરયકુંદચંદ્રવાસંતિમલઅચ્છિદ્ધવિમલદસણા ' દધિદકરજઃ
 કુંદચન્દ્ર વાસન્તીમુકુલછિદ્ધવિમલદસણા:=તત્ર-દધિદકરજઃ = જલવિન્દુઃ કુંદઃ=
 પુષ્પવિશેષઃ ચન્દ્રઃ=મતીતઃ વાસન્તીમુકુલઃ=વાસન્તીનામક પુષ્પ કુંદમન્થ इत्येतैः
 સદશાઃ શુક્લાઃ અછિદ્ધાઃ=અવિરલાઃ યુમિલિતા દસણાઃ=દન્તાઃ યાસાં તાસ્તથા
 ' રતુપ્પલરત્તપઝમપત્તસુકુમાલતાલુજીહા ' રક્તોત્પલરત્તપઞ્ચત્રપુકુમારતાલુજિહ્વાઃ

સરિસર્ગીવા) इनकी गर्दन चार अंगुल की तथा प्रधान-उत्तम शंख के
 जैसी होती है । (मंसलसंठियपस्थहणुया) इनके ओष्ठ का अश्रोभाग
 रूप दाढ़ी मांसल-मज्ज्वत पुष्ट, संस्थित-आश्र फल के जैसी सुन्दर आ-
 कार वाली और प्रशस्त-सुहावनी होती है । (दाहिमपुष्पफपमासपीवर-
 पलंबकोचियवराधरा) इनका अधरोष्ठ दाहिम-अनार के पुष्प के
 समान लाल वर्ण वाला होता है । पीवर-मांसादि से भरा हुआ होने के
 कारण पुष्ट होता है । तथा प्रालम्ब-कुछ २ लम्बास रहता है । कुश्लित-
 वलिन एवं प्रशस्त होता है । (सुंदरोत्तरुद्धा) जिनके ऊपर का ओष्ठ
 सुन्दर होना है । (दधिदगरयकंदचंद्रवासंतिमलअच्छिद्विमलदसणा)
 इनके निर्मल दांत-दही, जलविन्दु, कुंदपुष्प, चन्द्र, वासन्ती पुष्पकी
 कली, इनके जैसे शुभ्र होते हैं । विरले नहीं होते हैं किन्तु अविरल-
 परस्पर में मिछे हुए रहते हैं । (रतुप्लरत्तपजमपत्तसुकुमालतालुजीहा)

આર આંગળની તથા ઉત્તમ શંખ જેવી હોય છે. “મંસલ સંઠિયપસ્થહણુયા”
 તેમના હોડાન. નીચેના ભાગપર દાઢી માંસલ મજ્જવત, સંસ્થિત-આશ્રણના
 જેવા સુંદર આકારવાળી અને પ્રશસ્ત સુંદર હોય છે. “દાહિમપુષ્પમાસ-
 પીવરપલંબકોચિયવરાધરા” જેમને અધરોષ્ઠ હોડામના ફૂલ જેવો લાલ રંગનો,
 પુષ્ટ, તથા સહેજ લંબાયેલો રહે છે. તે અધરોષ્ઠ કુશ્ચિત વળેલો અને
 ઉત્તમ હોય છે “સુંદરોત્તરુદ્ધા” તેમને ઉપરનો હોડ સુંદર હોય છે. “દધિ-
 દગરયકુંદચંદ્રવાસંતિમલઅચ્છિદ્ધવિમલદસણા” તેમના નિર્મળ દાંત દહીં,
 જળવિન્દુ, કુંદપુષ્પ, ચન્દ્ર અને વાસન્તી પુષ્પની ઢળી, જેવા મૈદ્દ હોય છે.
 તે દાંત છટા છટા હોતા નથી પણ પરસ્પરમાં મળીને આવેલા હોય છે.
 “રતુપ્પલરત્તપઝમપત્તસુકુમાલતાલુજીહા” તેમનું તાણું અને શુભ લાલ

સુરશિની ટીકા અ. ૪ સૂ. ૧૧ યુગલિનીસ્વરૂપનિરૂપણમ

૪૭૧

=ત્ર રક્તોત્પન્ન = રક્ત કમલં તદ્વત્ રક્તપદ્મપત્રવચ્ચ સુકુમારં તાલુજિહ્વાં યાસાં તાસ્તથા, ' કળવીરમઝલકુટિલ અઘ્મુળાય ડ્ઝ્ઝુતુંગનાસા ' કરવીરમુકુલડ કુટિલાઽઘ્મુત્રનઋજુતુંગનાસાઃ = કરવીરમુકુલં = કર્ષિકારકલિકા તદ્વત્ અકુટિલા=અવક્રા અઘ્મુત્રતા=અમિતઃ ઉચ્ચતા ઋઙ્ગી=સરલા તુઙ્ગા મધ્યોચ્ચતા ચ નાસા= નાસિકા યાસાં તાસ્તથા ' સારયનવકમલકુમુયકુવલયદલનિગરસરિસલક્ષણપસત્થ નિમ્મલકંતનયના ' શારદનવકમલ કુમુદકુવલયદલનિકરસદશલક્ષણપશસ્તનિર્મલકાન્તનયનાઃ = શારદં = શરતકાલિકં યત્ કમલં = સૂર્યવિકાસિપદ્મં, કુમુદં=ચન્દ્રવિકાસિપદ્મં કુવલયદલં=નીલકમલપત્રં ચ તેષાં નિકરઃ=સમૂહઃ તેન સદશે લક્ષણપ્રશસ્તે=પ્રશસ્તલક્ષણોપેતે નિર્મલે=ઉઙ્ગવલે કાન્તે=મનોહરે ચ નયને યાસાં તાસ્તથા ' આનામિય ચાવરુહલ કિપ્પહમરાઈ સંઠિય સંગયા પય સુજાયતણુકસિણનિદ્ધૂમગા ' આનામિતચાવરુચિરકૃષ્ણાભ્રાજિસંસ્થિતસંગતસુજાતતણુકૃષ્ણસ્તિગધ્મુત્રઃ=આનામિતૌ=વક્રીકૃતૌ ચાપૌ = ધનુષી તદ્વત્ રુચિરે કૃષ્ણાભ્રાજિસંસ્થિતે=કૃષ્ણોચ્ચેસ્વાસદશે સંગતે=સમુદિને આયતે=દીર્ઘે સુજાતે સ્વમાતાલુ ઓર જિહ્વા જિનકા રક્ત કમલ કે સમાન, તથા રક્તપદ્મપત્ર કે સમાન સુકુમાર હોતી હૈ । (કળવીરમઝલકુટિલ અઘ્મુળાયડ્ઝ્ઝુતુંગનાસા નાસિકા કર્ષિકાર કનેર-કી કલિકા-કલી-કે સમાન અકુટિલ તથા અઘ્મુત્રત, ઋઙ્ગી-સરલ, ઓર તુઙ્ગ-મધ્ય મેં ઉચ્ચત હોતી હૈ । (સારયનવકમલ કુમુયકુવલયદલનિગરસરિસલક્ષણપસત્થનિમ્મલકંતનયના । જિનકે દોનોં નયન શરદકાલસંબંધિ સૂર્યવિકાસી કમલ કે તથા ચન્દ્ર વિકાસી પદ્મ કે, કુવલય દલ કે, નીલ કમલ કે પત્રકે સમૂહ જૈસે હોતે હૈં । પ્રશસ્ત લક્ષણોં સે યુક્ત, નિર્મલ-ઉઙ્ગવલ, एवं કાન્ત-મનોહર હોતે હૈં । (આનામિયચાવરુહલ કિપ્પહમરાઈસંઠિયસંગયાયસુજાયતણુકસિણનિદ્ધૂમગા) જિનકી દોનોં 'બોહે વક્રીકૃત ધનુષ

કમળ જેવી તથા લાલ કમળ પત્ર જેવી સુકુમાર હોય છે, “ કળવીરમઝલ-કુટિલઅઘ્મુળાયડ્ઝ્ઝુતુંગનાસા ” તેમની નાસિકા કરેણી ડાબી જેવી અકુટિલ તથા ઉચ્ચત, ઋઙ્ગી-સરળ અને તુઙ્ગ-મધ્યમાં ડાબી હોય છે, “ સારય-નવકમલકુમુયકુવલય - દલનિગર-સરિસ - લક્ષણપસત્થ-નિમ્મલ-કંતનયના ” જેમનાં બન્ને નયન શરદનયના સૂર્ય વિકસિત કમળ તથા ચન્દ્ર વિકસિત પદ્મની પાંખડીઓ જેવાં તથા નીલકમલના પત્રસમૂહ જેવાં, પ્રશસ્ત લક્ષણો-વાળાં, નિર્મળ-ઉચ્ચવળ, અને મનોહર હોય છે. “ આનામિયચાવરુહલ-કિપ્પહમરાઈસંઠિયસંગયાયસુજાયતણુકસિણ નિદ્ધૂમગા ” જેમની બન્ને- બ્રમરો વક્રીકૃત ધનુષ્યના જેવી મનોહર, શ્યામ વાળોના સમૂહ જેવી, સંસ્થિત,

વતઃ સુન્દરે તન્નુ=પ્રતલે કૃષ્ણે=કૃષ્ણવર્ણે સ્નિગ્ધે=ચિક્ષ્ણે શ્રુતૌ યાસાં તાસ્તથા ।
 ‘અલીણપમાણજુત્તસવળા’ આલીણપમાણયુક્તશ્રવણાઃ = આલીનો=સ્તવ્યો
 પ્રમાણયુક્તૌ=સમુચિતપ્રમાણો શ્રવણૌ=કર્ણૌ યાસાં તાસ્તથા એતાવદેવ ન ? કિન્તુ
 “સુસ્તવળા” સુશ્રવણાઃ = શબ્દગ્રહણશક્તિસમ્પન્નયુક્તાઃ, ‘પીળમટ્ટગંડલેહા’
 પીનમૃષ્ટ ગંડરેશ્વાઃ=પીના=પુષ્ટામૃષ્ટા=મમૃણા સુકુમારા ગંડરેશ્વા=કપોલ પાલી
 યાસાં તાસ્તથા ‘ચરંગુલવિસાલસમનિહાલા’ ચતુરંગુલવિશાલસમનિહાલા =
 ચતુરંગુલ=ચતુરંગુલપ્રમાણ વિશાલ=વિસ્તીર્ણ સમ=સમતલ લલાટ યાસાં તાસ્તથા
 ‘કોમુર્દ રચનિયરવિમલપટિપુણસોમ્મવયળા’ કોમુર્દી રચનીકર વિમલપ્રતિપૂર્ણ
 સૌમ્યવદનાઃ=કોમુર્દી=કાર્તિકી પૂર્ણિમા તસ્યા ચો રચનીકરઃ =ચન્દ્ર તદ્વત્
 વિમલ=નિર્મલ પ્રતિપૂર્ણ સૌમ્ય=સુભગ વદન યાસાં તાસ્તથા કાર્તિકીપૂર્ણચન્દ્રવ-
 દનાઃ, ‘છતુણ્ણયઉત્તમંગા’ છત્રોચ્ચતોત્તમાઙ્ગાઃ છત્રવત્સમુદ્ધિતમસ્તકાઃ ‘અકવિ-
 લસુમિણિદ્વદીહસિરિયા’ અકપિલસુસ્નિગ્ધદીર્ઘસિરોઙ્ગાઃ = અકપિલા = અપિ
 કેસમાન રુશ્મિર, કૃષ્ણમેઘરાજિ કે સમાન, સંશિથ, મંગલ-ઉચિત
 આકાશયુક્ત, આયત-દીર્ઘ, સુજાત-સ્વભાવતઃ સુન્દર, તન્નુ-પતલી,
 કૃષ્ણ-કૃષ્ણવર્ણોપેત, ઔર સ્નિગ્ધ-ચિક્ષ્ણી હોતી હૈં । (અલીણપમાણ-
 જુત્તસવળા) આલીણ-સ્તવ્ય એવં સમુચિત પ્રમાણ સે યુક્ત इनके
 दोनों कान होते हैं । (सुस्तवणा) तथा ये दोनों ही कान शब्दग्रहण-
 करने की शक्ति से युक्त होते हैं । (पीणमट्टगंडलेहा) इनकी कपोल-
 पाली पीन-पुष्ट और मृष्ट—सकुमार होती है । (चरंगुलविसाल सम-
 निहाला) इनका विस्तीर्ण ललाट चार अंगुल प्रमाणवाला होता है तथा
 सम-समतल होता है । (कोमुर्दरचनियर विमल पटिपुण सौम्यवयणा)
 इनका मुख कार्तिकी पूर्णिमा के चंद्रमंडल के समान निर्मल तथा पूर्ण
 होता है । सुभग होता है । (छतुण्णयउत्तमंगा) समुच्छिन्न विस्तारित
 छत्र के समान इनका मस्तक उन्नत होता है ! (अकविल सुमिणिद्व-

સંગત-સુડોળ, આયત-લાંબી, સુજાત-કુદરતી રીતે જ સુંદર, તન્નુ-પતળી,
 કાળા રંગની અને સ્નિગ્ધ-શ્રુણ્ણયમ હોય છે. “અલીણપમાણજુત્તસવળા”
 તેમના બન્ને કાન સ્તવ્ય અને સપ્રમાણ હોય છે. “સુસ્તવળા” તે બન્ને
 કાનની શ્રવણશક્તિ ઘણી સરસ હોય છે. “પીળમટ્ટગંડલેહા” તેમના ગાલ
 પુષ્ટ અને સુકુમાર હોય છે. “ચરંગુલવિસાલસમનિહાલા” તેમનું વિશાળ
 લલાટ ચાર અંગુળ પહોળું અને સમતલ હોય છે. “કોમુર્દ-રચ-નિયરવિમલ
 પટિપુણસોમ્મવયળા” તેમનું મુખ કાર્તિકી પૂર્ણિમા ચન્દ્રમંડળ જેવું નિર્મળ
 તથા પૂર્ણ હોય છે. “છતુણ્ણયઉત્તમંગા” વિસ્તીર્ણ છત્ર સમાન ઉચ્ચત
 તેમનું મસ્તક હોય છે. “અકવિલસુમિણિદ્વદીહસિરિયા” તેમનાં માથા પરના

સુદર્શિની ટીકા અ. ૪ સુ. ૧૩ યુગલિકીશ્વરપ્રતિરૂપણય

૪૮૧

મજ્ઞાઃ કૃષ્ણા ઇત્યર્થઃ સુસ્નિગ્ધાઃ=સુકોમલાઃ દીર્ઘાશ્ચ શિરોજાઃ=કેશા યામાં
તાસ્તથા ' છત્ત ૧ જ્ઞય ૨ જૂવ ૩ ધૂમ ૪ દામણિ ૫ કમંડલુ ૬ કલસ ૭ વાવિ
૮ સોત્થિય ૯ પઢાગ ૧૦ જવ ૧૧ મચ્છ ૧૨ કુમ્મ ૧૩ રહવર ૧૪ મગર ૧૫
અંક ૧૬ થાલ ૧૭ અંકુસ ૧૮ અદ્વાવય ૧૯ સુપદ્મ ૨૦ અમર ૨૧ સિરિયામિ-
સેય ૨૨ તોરણ ૨૩ મેઢણિ ૨૪ ઉદહિવર ૨૫ પવરભવણ ૨૬ ગિરિવર ૨૭
વરાયસ ૨૮ સુલલિયગય ૨૯ વસમ ૩૦ સીહ ૩૧ ચામર ૩૨ વસત્થ વત્તીસ-
લક્ષણધરાઓ ' છત્ર ૧ ધ્વજ ૨ યુપ ૩ સ્તૂપ ૪ દામની ૫ કમણ્ડલુ ૬ કલસ ૭
વાપી ૮ સ્વસ્તિક ૯ પતાકા ૧૦ યવ ૧૧ મસ્ય ૧૨ કૂર્મ ૧૩ રથવર ૧૪
મકરા ૧૫ ડહ્ક ૧૬ સ્થાલા ૧૭ કુશ ૧૮ ડપ્પાપદ ૧૯ સુમતિઘ્ના ૨૦
અમર ૨૧ શ્રીકામિષેક ૨૨ તોરણ ૨૩ મેદિન્યુ ૨૪ દધિવર ૨૫ પવરભવન ૨૬
ગિરિવર ૨૭ વરાદર્શ ૨૮ સુઝ્ઞિતગજ ૨૯ દ્વામ ૩૦ તિહ ૩૧ ચામર ૩૨
મજ્ઞસ્ત દ્વાત્રિશલ્લક્ષણધરાઃ, તત્ર—' છત્ત ' છત્રં ? ' જ્ઞય ' ધ્વજઃ ? ' જૂવ '
યુપઃ=દારુસ્તમ્ભવિશેષઃ ? ' ધૂમ ' સ્તૂપઃ= ' ચોતરા ' इति भाषा प्रसिद्धः?,
' દામણિ ' દામની = રજ્જુઃ-તદાકારેસ્થેત્યર્થઃ ? ' કમણ્ડલુઃ = પ્રસિદ્ધઃ ?,

લીલસિરયા) इनके मस्तक के केश बिलकुल काले होते हैं ! सुस्निग्ध-
सुकोमल एवं दीर्घ-लंबे होते हैं । (छत्त १ ज्ञय २ जूव ३ धूम ४ दाम-
णि ५ कमंडलु ६ कलस ७ वावि ८ सोत्थिय ९ पडाग १० जव ११ मच्छ
१२ कुंभ १३ रहवर १४ मगर १५ अंक १६ थाल १७ अंकुस १८ अद्वा-
वय १९ सुपद्म २० अमर २१ सिरियामिसे य २२ तोरण २३ मेडणि
२४ उदहिवर २५ पवरभवण २६ गिरि वर २७ वरायंस २८ सुललिय-
गय २९ वसम ३० सीह ३१ चामर ३२ वसतथ वत्तीसलक्ष्णधराओ)
ये इन प्रदास्त वत्तीस ३२ लक्षणों को धारण करती हैं—छत्र १-
ध्वजा २, यूप-स्तंभ २, स्तूप-चोतरा ४, दामनी-रस्सी ५, कमण्डलु

વાળ તદન કાળાં, સુકોમળ અને લાંબાં હોય છે. " છત્ત ૧ જ્ઞય ૨ જૂવ ૩ ધૂમ
૪ દામણિ ૫ કમંડલુ ૬ કલસ ૭ વાવિ ૮ સોત્થિય ૯ પઢાગ ૧૦ જવ ૧૧ મચ્છ
૧૨ કુંભ ૧૩ રહવર ૧૪ મગર ૧૫ અંક ૧૬ થાલ ૧૭ અંકુસ ૧૮ અદ્વા-
વય ૧૯ સુપદ્મ ૨૦ અમર ૨૧ સિરિયામિસેય ૨૨ તોરણ ૨૩ મેઢણિ ૨૪ ઉદહિવર ૨૫-
પવરભવણ ૨૬ ગિરિવર ૨૭ વરાયસ ૨૮ સુલલિયગય ૨૯ વસમ ૩૦ સીહ
૩૧ ચામર ૩૨ વસત્થવત્તીસલક્ષણધરાઓ " તે યુગલિક લલનાઓ. આ
પ્રમાણે ૩૨ (બત્રીસ) ઉત્તમ લક્ષણો ધારણ કરે છે—

(૧) છત્ર (૨) ધ્વજ (૩) યુપ-સ્તંભ (૪) સ્તૂપ-ચોતરા (૫) દામની-
રોસ્સી, (૬) કમંડળ, (૭) કળશ (૮) વાપી (૯) વસ્ત્રિક (૧૦) પતાકા

‘કલશ’ કલશઃ= ઘટઃ ૭ ‘વાવિ’ વાપી ૮ ‘સોસ્થિય’ સ્વસ્તીકઃ ૯ ‘પટાગ’ પતાકા ૧૦ ‘યવ’ યવઃ ૧૧ ‘મત્સ્ય’ મત્સ્યઃ ૧૨ ‘કુમ્મ’ કૂર્મઃ-કચ્છપઃ ૧૩, રથવરઃ-પ્રધાનરથઃ ૧૪ ‘મગર’ મકરઃ ૧૫, અંકઃ=રત્નાકરચિહ્નવિશેષઃ ૧૬, ‘થાલ’ સ્થાલઃ=પાત્રવિશેષઃ ૧૭ અંકુશઃ ૧૮ ‘અષ્ટાપદ’ અષ્ટાપદઃ=ચૂતફલકં ૧૯ ‘સુપ્રતિષ્ઠ’ સુપ્રતિષ્ઠકં=સ્થાપનકં પાત્રવિશેષઃ ૨૦ અમરઃ=દેવ-વિશેષઃ ૨૧ ‘સિરિયાભિસેય’ શ્રીકાભિષેકઃ ૨૨ તોરણં ૨૩ ‘મેદિની’ મેદિની=પૃથ્વી ૨૪ ઉદધિવરઃ ૨૫ ‘પવરભવન’ મવરભવનં ૨૬ ગિરિવરઃ ૨૭ ‘વરાયંસ’ વરાદર્શઃ=પદ્મસ્તદર્પણઃ ૨૮ સુલલિતગય’ સુલલિતગજઃ ૨૯ ‘વૃષભ’ વૃષભઃ ૩૦, ‘સિંહ’ સિંહઃ ૩૧ ચામરં ૩૨ ચ ઇત્યેતાનિ પદ્મસ્તાનિ દ્વાત્રિશલ્લક્ષણાનિ તેષાં ધરા યાસ્તાસ્તથાઃ, ‘હંસસરિચ્છગઈ’ હંસપદ્મશગતયઃ, ‘કોઈલ-મહુરગિરાઓ’ કોકિલમધુરગિરાઃ=કોકિલમધુરસ્વારાઃ, ‘કંતા’ કાન્તાઃ=મનોહ્રાઃ, ‘સન્વસ્સ અણુમયાઓ’ સર્વસ્થાડ્ઞુમતાઃ - સવત્તનમિયાઃ ‘વવગયવલીપલિય-

૬, કલશ ૭, વાપી ૮, સ્વસ્તિક ૯, પતાકા, ૧૦, યવ, ૧૧, મત્સ્ય ૧૨, કૂર્મ-કચ્છપ ૧૩, રથવર-પ્રધાનરથ ૧૪, મકર ૧૫, અંક-રત્ન કે આકાર જેવા ચિહ્ન ૧૬, સ્થાલ-થાલ ૧૭, અંકુશ ૧૮, અષ્ટાપદ-ચૂતફલક ૧૯, સુપ્રતિષ્ઠક-ઢોળા ૨૦, અમરદેવવિશેષ ૨૧, અભિષેક કરતી હુઈ લક્ષ્મી ૨૨, તોરણ ૨૩, મેદિની-પૃથ્વી ૨૪, ઉદધિવર-સમુદ્ર ૨૫, ઉત્તમભવન ૨૬, ઉત્તમપર્વત ૨૭, સુંદર દર્પણ ૨૮, સુલલિતગજ ૨૯, વૃષભ-બૈલ ૩૦, સિંહ ૩૧, ઓર ચામર ૩૨ । (હંસસરિચ્છગઈ) इनकी गति-पाल-हंस की गति जैसी होती है । (कौइलमहुरगिराओ) उनकी बाणी-कोयल की बाणी जैसी मधुर होती है । (कंता) ये अत्यंत मनोज्ञ होती हैं । (सन्वस्स अणुमयाओ) समस्त जनों को प्रिय लगती हैं ।

(૧૧) યવ (૧૨) મત્સ્ય, (૧૩) કૂર્મ-કચ્છપ, (૧૪) ઉત્તમ રથ (૧૫) મગર (૧૬) અંક-રત્નના આકારનું ચિહ્ન (૧૭) થાળ (૧૮) અંકુશ (૧૯) અષ્ટાપદ-ચૂતફલક, (૨૦) સુપ્રતિષ્ઠ-ઢોળા (૨૧) અમર-દેવવિશેષ (૨૨) અભિષેક કરતી-લક્ષ્મી (૨૩) તોરણ (૨૪) મેદિની-પૃથ્વી, (૨૫) ઉદધિવર-સમુદ્ર (૨૬) ઉત્તમ ભવન (૨૭) ઉત્તમ પર્વત (૨૮) સુંદર દર્પણ (૨૯) સુંદર ગજ (૩૦) વૃષભ (૩૧) સિંહ અને (૩૨) ચામર. “હંસસરિચ્છગઈ” તેમની ચાલ હંસની ચાલ જેવી હોય છે, “કોઈલમહુરગિરાઓ” તેમની વાણી કોયલની વાણી જેવી મીઠી હોય છે, “કંતા” તે અત્યંત મનોહર હોય છે, અને “સન્વસ્સ અણુમયાઓ” સધાના લોકોને પ્રિય લાગે છે. “વવગયવલી પલિયવં-

સુરશિતો ટીકા અ૦ ૪ સુ. ૧૩ યુગલિનીસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૮૩

વંગદુઃસ્વળવાહિદોભગસોયમુક્તાઓ ' વ્યવગતવલીપલિત વ્યજ્જદુર્વળવ્યાધિ-
 દૌર્ભાગ્યશોકમુક્તાઃ=અયગતા=નટા વલી = ચર્મશિથિલતા તથા પલિત=કેશશુકલત્વં
 વ્યજ્જ=અજ્ઞવિકલતા દુર્વળઃ=વૈરુપ્યં વ્યાધિઃ શરીરવ્યથા, દૌર્ભાગ્યં=વૈધન્યં શોકઃ=
 સેદશ્ચ દૌર્મુક્તાઃ = રતિદા યાસ્તાસ્તથા ' ઉચ્ચત્તેજ ય નરથોવૂળમૂસિયાઓ '
 ઉચ્ચત્વેન ચ નરસ્તોકેનોચ્છિતાઃ=ઉચ્ચત્વેન શરીરોચ્ચત્વેન ચ નરેભ્યઃ=પુરુષેભ્યઃ
 સ્તોકોનં=કિશ્ચિન્નયૂનં યયાસ્યાત્તથા ઉચ્છિતાઃ=ઉચ્ચાયાસ્તાઃ તથા-પુરુષપ્રમા-
 ãાત્ કિશ્ચિદ્વ્યપ્રમાણોક્તતાઃ, ' સિંગારાઽઽગારચારુવેસા ' શૃંગારાઽઽગારચારુ-
 વેષાઃ, શૃંગારસ્ય=શૃંગારરસસ્ય આગારમિત્વ=ગૃહમિત્વ ચારુઃ=સુન્દરઃ વેષઃ=વસ્ત્રાદિ-
 વિભૂષા યાસાં તાસ્તથા ' સુન્દર યજઙ્ઘવયજનકરચલણનયના ' સુન્દરસ્તન-
 જવનવદનકરચરણનયનાઃ = સુન્દરાણિ સ્તન-જયન-વદન-કર-ચરણ - નયના-
 નિ યાસાં તાસ્તથા ' લાવણરૂઢજોઽવગુણોવવેયા ' લાવણ્યદ્વયયૌવનગુણોપેતાઃ=
 લાવણ્યં = શરીરસૌન્દર્યવૈશિષ્ટ્યં નિલિલાવયવાતિરેકિસ્વરૂપશોભાવિશેષઃ રૂપં

(વચગયવલીપલિયવંગદુઃસ્વળવાહિદોભગ સોયમુક્તાઓ) इनकी चमड़ीमें शिथिलता कहीं नहीं आती है । वालों में सफेदी नहीं आती है । इनका कोई भी अंग विकल नहीं होता है । विरूपता इनमें बिलकुल नहीं होती है । व्याधि का इनमें अभाव होता है । वैधव्य रूप दौर्भाग्य से रहित होती हैं । शोक और खेद से वर्जित होती हैं । (उच्चत्तेज य नरथोवू-
 लमूसियाओ) ऊँचाई में ये मनुष्यों से कुछ ही कम होती हैं । (सिंगारा-
 गारचारुवेसा) शृंगाररस के घर जैसा इनका सुन्दर वेष-वस्त्रादि वेष-
 भूषा होता है । (सुन्दर यजङ्घवयजकचलणनयणा) इनके स्तन,
 जघन, वदन, कर, चरण, और नयन सुन्दर होते हैं । (लावणरूढजो-
 षवगुणोववेया) इनमें लावण्य, रूप, यौवन एवं गुण अस्तारण होते हैं ।

दुःस्वળवाहिदोभगसोयमुक्ताओ ” तेमની આમડીમાં શિથિલતા આવતી નથી, વાળ સફેદ થતા નથી, તેમને કોઈ પણ અંગે ખોડ હોતી નથી, તેમનામાં વિરૂપતા બિલકુલ હોતી નથી, વ્યાધિ તેમને પીડતી નથી કારણ કે તેઓ નીરાશી હોય છે, તેઓ વૈધવ્ય રૂપ દુર્ભાગ્યથી રહિત હોય છે. અને શોક અને ખેદથી રહિત હોય છે. “ ઉચ્ચત્તેજ ય નરથોવૂળ મૂસિયાઓ ” મનુષ્યો કરતાં તેમની ઊંચાઈ થોડી હોય છે. “ સિંગારાગારચારુવેસા ” તેમની વેષભૂષા શૃંગાર રસના ઘર જેવી હોય છે. “ સુન્દરયજઙ્ઘવયજનકરચલણ-
 નયના ” તેમના સ્તન, જઘા, વદન, કર, ચરણ, અને નયન સુંદર હોય છે. “ લાવણરૂઢજોઽવગુણોવવેયા ” તેમનામાં લાવણ્ય, રૂપ, યૌવન અને શુભ

= નાસિકા નયનાશ્રાકારઃ યૌવનં = તરુણાવસ્થા, ગુણાઃ=ઔદાર્યમાધુર્યસૌકુમાર્યાદયસ્તૈરુપેતાઃ = યુવતા યા સ્તાસ્તથા, 'ગંદગવગવિચરચારિણીઓઽવચ્છરાઓ' નન્દનવનવિચરચારિણ્યજ્ઞાપ્તસસઃ = નન્દનવનપદેશસશ્ચરણશીલા અપ્તસસ ઇત્ર, ઉત્તરકુરુમાણસચ્છરાઓ 'ઉત્તરકુરુમાણુપાપ્તસસઃ = ઉત્તરકુરુષુ માનુષ સ્વરૂપા અપ્તસસઃ 'અચ્છરગપેચ્છણિજ્ઞાઓ' આશ્ચર્ય પ્રેક્ષણીયાઃ=અદ્ભુતરૂપત્વાદાશ્ચર્યેણ પ્રેક્ષણીયાઃ, તિણિ પલિઓવમાઈ પરમાઉં પાલહતા 'ત્રીણિ પર્યોપમાનિ પરમાયુઃ પાલયિત્વા' તા અપિ - ઉત્તરકુરુદેવકુરુવનવિચરનિવાસી નરગણપ્રમદા

શારીરિક વિશિષ્ટ સૌન્દર્ય કા નામ લાવણ્ય હૈ । યહ લાવણ્ય સમસ્ત અવયવોં કે સૌન્દર્ય સે ખી પરે સ્વરૂપ કી શોભા વિશેષ રૂપ હોતા હૈ । નાસિકા, નયન, આદિ કી સમુચિત જો આકાર રચના હૈ વહ રૂપ હૈ । તરુણ અવસ્થા કા નામ યૌવન હૈ । ઔદાર્ય, માધુર્ય સૌકુમાર્ય આદિ કા નામ ગુણ હૈ । (ગંદગવગવિચરચારિણીઓઽવચ્છરાઓ ઉત્તરકુરુમાણ-સચ્છરાઓ) નંદનવન મેં વિચરનેવાલી અપ્તસરાઓં કે સમાન યે ઉત્તરકુરુ કી ભૂમિ મેં મનુષ્ય રૂપિણી અપ્તસરાઈ હૈ । (અચ્છરગપેચ્છણિજ્ઞાઓ) અદ્ભુતરૂપ શાલિની હોને કે કારણ યે આશ્ચર્ય સે દેલ્ખને યોગ્ય હોતી હૈ, અર્થાત્—ઇનકો દેલ્ખને સે મનુષ્ય કો વહુત અધિક આશ્ચર્ય હોતા હૈ । કારણ ઇનકી રૂપ સંપત્તિ ઈસી અદ્ભુત હોતી હૈ જો મનુષ્યોં મેં ઔર જગહ નહોં પાઈ જાતી હૈ । (તિણિપલિઓવમાઈ પરમાઉં પાલહતા-તાઓ વિ અવિતિત્તા કામાણં ઉવગમંતિ મરણધમ્મં) ઇનકી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીન પર્ય કી હોતી હૈ । ઇતને કાલતક યે દેવકુરુ ઉત્તરકુરુ

અસાધારણ હોય છે. શારિરિક વિશિષ્ટ ઔદર્યને લાવણ્ય કહે છે. તે લાવણ્ય સમસ્ત અવયવોન. સૌંદર્ય ઉપરાંત સ્વરૂપની વિશિષ્ટ શૈલારૂપ હોય છે. નાસિકા, નયન આદિની મુડોળ આકાર વાળી રચનાને રૂપ કહે છે. તરુણ અવસ્થાને યૌવન કહે છે. ઉદારતા, માધુર્ય, કેમળતા આદિ ગુણ ગણાય છે. “ગંદગવગવિચરચારિણીઓઽવચ્છરાઓ ઉત્તરકુરુમાણસચ્છરાઓ” નંદન વનમાં વિચરતી અપ્તસરાઓ જેવી તે ઉત્તરકુરુની ભૂમિમાં મનુષ્યરૂપિણી અપ્તસરાઓ છે. “અચ્છરગપેચ્છણિજ્ઞાઓ” અદ્ભુત સૌંદર્યવાળી હોવાને કારણે તે સ્ત્રીઓ આશ્ચર્યથી ભેવા જેવી હોય છે, એટલે કે તેમને ભેળને મનુષ્યોને અત્યંત આશ્ચર્ય થાય છે કારણ કે તેમનું રૂપ એટલું બધું અપૂર્વ હોય છે. કે તે રૂપ મનુષ્યોમાં કેઈ પણ જગ્યાએ ભેવા મળતું નથી. “તિણિપલિ-ઓવમાઈ પરમાઉં પાલહતા તાઓ વિ અવિતિત્તા કામાણં ઉવગમંતિ મરણધમ્મં” તેમની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ પદ્યની હોય છે. એટલા સમય સુધી તે દેવકુરુ

सुशिक्षिनी टोका अ०४ सू० १४ चतुर्थमन्तद्वारं निरूपणम्

४८५

अपि, 'अवितित्ता कामाणं' अतृप्ता कामानाम्=कामोपभोगेष्वतृप्ता एव 'उवणमंति-
मरणधम्मं' उपनमन्ति मरणधर्म-स्त्रियन्त इत्यर्थः ॥ सू० १३ ॥

एतावताऽब्रह्माख्यचतुर्थधर्मद्वारस्य 'ये च कुर्वन्ति' इति पञ्चममन्तद्वारं-
निरूपितम् । साम्प्रतं पूर्वमनुक्तं 'यथाकृतम्' इति तृतीयमन्तद्वारं 'यत्फलं
ददाति' इति चतुर्थमन्तद्वारं च वर्णयन्नाह—'मेहुण' इत्यादि—

मूलम्—मेहुणसन्नासं पगिद्धाय मोहभरिया सत्थेहिं
हणंति एकमेकं विसय-विस-उदीरणहिं अवरे परदारेहिं
हम्मंति विसुणिया धमनासं सयणविप्पणासं च पाउणंति
परस्स दाराओ जे अविरया । मेहुणसण्णा संपगिद्धाय
मोहभरिया अस्साहत्थी गवाय महिसा मिगाय मारिंति
एकमेकं । मणुयगणा बानरा य पक्खी य विरुज्झंति मि-
त्ताणि खिप्पं भवंति सत्तु । समयधम्मे गणे य भिंदाति
पारदारी धम्मगुणरयाय बंभयारी खणेग उल्लोहंति चरि-
त्ताओ । जसमंता सुव्वया य पावंति अजसकिंति । रोगत्ता
वाहिया बड्ढंति रोयवाही, दुवेय लोए दुराराहगा भवंति
इहलोए चेव परलोए परस्स दाराओ जे अविरया । तहेव
केइ परस्स दारं गवेसमाणा गहिया य हयायबद्धारुद्धा य
एवं जावगच्छंति विउल मोहाभिभूयसण्णा । मेहुण मूला
य सव्वंति तत्थ तत्थ वत्तपुव्वा संगामा जणक्खयकरा

निवासिनी स्त्रियां काममुखों को भोगती रहनी हैं । परन्तु फिर भी
उनसे ये तृप्त नहीं होती हैं । इस तरह कामभोगों में अतृप्त बनकर ही ये
अन्त में मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं ॥ सू० १३ ॥

निवासिनी वज्रनाथो कामलोको लोकाव्या करे छे, छातां पणु तेमनाथी तेओ
तृप्ति अनुभवति नहीं, आ प्रभावे कामलोकाथी अतृप्त रहिने न तेओ मृत्यु
पामे छे ॥ सू० १३ ॥

सीयाए दोवईएयकए, रूपिणीए पउमावईए ताराए
 कंचणाए रत्तसुभदाए अहिन्नियाए सुवण्णगुलियाए
 किन्नरीए य सुरूव विज्जुमईए रोहिणीए य, अण्णे य
 एवमाइया बहवोमहिलाकए सुव्वंति अइकंतासंगामा गाम
 धम्ममूला । अर्धभसेविणो इहलोए तावनट्ठा परलोए
 य नट्ठा महया मोहतिमिरंधयारे घोरे तसथावरसुहुम
 वायरेसु पज्जत्तमपज्जत्तसाहारणसरीरपत्तेय सरीरेसु य अंडय
 पोथय जराउय रसय संसेइम संमुच्छिम उट्ठिभज्ज उववाइएसु
 य नरग तिरियदेवमाणुसेसु जरामरणरोगसोगवहुलेसु
 पलिओवमसागरोवनाइं अणादीपं अणवदग्गं दीहमद्वं चाउ-
 रंतसंसारकंतारं अणुपरियट्ठोति जीवा महामोहवससंनिविट्ठा॥१४

टीका—‘ मेहुणसण्णासंपगिद्धाय ’ मैथुनसंज्ञासम्पगुद्धाश्च=मैथुनाऽऽसक्ताः
 ‘ मोहभरिया ’ मोहनृताः=अज्ञानपूर्णाः, ‘ विसयविसउदीरएहि वपयविपोदीरकैः=

इस तरह यहाँ तक सूत्रकार ने अब्रह्म नामके चतुर्थ द्वार का यह
 पाँचवा अन्तर्द्वार कहा, अब वे पूर्व में अनुक्त “ यथा कृतम् ” इस तृतीय
 अन्तर्द्वार को और “ यत्फलं ददाति ” इस चतुर्थ अन्तर्द्वार को प्ररूपित
 करते हैं—‘ मेहुणे सण्णा संपगिद्धाय ’ इत्यादि० ।

टीकार्थः—(मेहुणसण्णा संपगिद्धाय) जो प्राणी मैथुन संज्ञा में
 आसक्ति से युक्त होते हैं अर्थात् मैथुन में अत्यंत आसक्त रहते हैं वे

आ रीते अही भुधी सूत्रकारे अग्रह नामना बोधा अधर्माद्वारं
 पांचसु अन्तर्द्वार वणुंयुं, हवे नेनुं वणुंन करवानुं आझी राअयुं हनुं ते
 “ यथा कृतम् ” नामना त्रीणा अन्तर्द्वारिनुं तथा “ यत्फलं ददाति ” ते बोधा
 अन्तर्द्वारिनुं प्ररूपयुं करे छे—“ मेहुणसण्णा-संपगिद्धाय ” इत्यादि

टीकार्थः—“ मेहुणसण्णा संपगिद्धाय ” के लिये मैथुनमां अत्यंत
 आसक्त रहे छे तेओ “ मोहभरिया ” ते मैथुनइय कर्मा बोद्धी लक्ष्म

શબ્દાદિ ત્રિપદવિષયસ્ય પ્રવર્તકૈઃ 'સત્થેહિ' શસ્ત્રૈઃ 'एकमेवकं' एकैकं = प्रत्येकं 'हणंति' घ्नन्ति। 'अवरे' अवरे=केचित् 'परदारैर्हि' परदारैः=परस्त्रीभिः 'हम्मंति' हन्यन्ते=मार्यन्ते, 'परदारै'—रित्यत्र कर्त्तरि तृतीया। यद्वा हेतौ तृतीया—परदारा-
भिर्मित्तीकृत्य अन्यैर्बलवद्भिः पारदारिकैर्हन्यन्ते। 'विमुणिया' विश्रुताः=पार-
दारिकत्वेन प्रसिद्धाः सन्तः केचित् 'घणणासं' घननाशं = 'सयणविष्णणासं' स्वजनविघ्णनाशं=स्वजनवियोगं 'पाउणंति' प्राप्नुवन्ति, अयं भावः—राजपुरुषा-
स्तत्रागत्य परदारिकाणां धनं गृह्णन्ति, परदारिकं बद्धा दण्डनार्थं दण्डस्थानं
नयन्ति च। यद्वा—परदारप्रसादनार्थं स्वकीयं पित्राद्युपार्जितं धनं परदारैर्भ्यः प्रय-

(મોહભરિયા) उस मैथुकरूप कर्म के मोहसे भरे हुए होने के कारण,
अथवा—विवेक से विकल बने रहने के कारण (विसयविस उदीरएहि-
सत्थेहि एकमेकं हणंति) शब्दादि विषयरूप विषय के प्रवर्त्तक शस्त्रों से
आपस में एक दूसरे को मार डालते हैं। (अवरे) कितनेक प्राणी (पर-
दारेहि हम्मंति) परस्त्रियों द्वारा मार दिये जाते हैं। अथवा परस्त्री को
निमित्त करके अन्य बलशाली पारदारिक पुरुषों द्वारा मैथुनसेजा में
आसक्त मतिवाले व्यक्ति मार दिये जाते हैं। (विमुणिया) पारदारिक
परस्त्री—लम्पट रूप से प्रसिद्ध हुए कितनेक मनुष्य (घणणासं) अपने
धनके बिनाश को और (सयणविष्णणासं) आत्मोपजनों के बिनाशको
(पाउणंति) प्राप्त करते हैं। तात्पर्य इसका यह है की परस्त्रीलंपट व्यक्ति
के पास राजपुरुष आकर उसके धन को छीन लेते हैं। और बांधकर
उसे दंड देने के निमित्त कारागार में ले जाते हैं। अथवा—परस्त्री को
प्रसन्न करने के लिये पारदारिक मनुष्य अपने पिता आदि द्वारा उपार्जित

હોવાને કારણે અથવા વિવેક રહિત બની જવાને કારણે 'વિસયવિસઉદીર-
પહિ સત્થેહિ એકમેકં હણંતિ' શબ્દાદિ વિષયરૂપ વિષયના અત્યારક શસ્ત્રો વડે
અંદરે અંદર લડીને એક ધીલને મારી નાખે છે. "અવરે" કેટલાક લોકો
"પરદારેહિ હમ્મંતિ" પરસ્ત્રીઓ દ્વારા હણાય છે. અથવા પરસ્ત્રીને કારણે
બીજા બળવાન પરસ્ત્રીગમન કરનારા પુરુષો દ્વારા મૈથુન સેવનમાં આસક્ત
પુરુષોને મારી નાખવામાં આવે છે. "વિમુણિયા" પરસ્ત્રી લંપટ ગણાતા
કેટલાક પુરુષો "ઘણનાસં" પોતાના ધનનો નાશ અને "સયણ વિષ્ણનાસં"
આત્મીય જનોનો નાશ "પાઉણંતિ" નોતરે છે. તેનો ભાવાર્થ એ છે કે
પરસ્ત્રીગામી પુરુષની પાસેથી રાજપુરુષો તેમનું ધન જપ્ત કરે છે, અને તેને
બાંધીને શિક્ષા કરવાને માટે કેદખાનામાં લઇ જાય છે. અથવા પરસ્ત્રીને રીઝ-
વવા માટે પરસ્ત્રીગામી પુરુષ પોતાના પિતા આદિ દ્વારા ઉપાર્જિત ધન તે

જીવંતિ, તત્ર પ્રતિબંધકાનુ સ્વજનાનપિ પારદારિકા નિજનતીતિ । કે દ્રવ્યઃ—
 'પરસ્પદારાઓ જે અવિરયા' પરસ્પ દારેભ્યો યેઽવિરતાઃ=પરસ્પી પ્રસ્પાશ્ચ વિરતાઃ
 પરસ્પીસજ્જપરાચ્ચાદ્યર્થઃ । તથા 'મેઢુણસજ્જાસંપગિદ્વાય' મૈથુનસજ્જાસમ્પ-
 ગુદ્ધાશ્ચ 'મોહમરિયા' મોહમૃતાઃ = મોહમૃતાઃ 'અસ્માદ્ધીગવાય' અશ્વાઃ
 હસ્તિનો ગાદશ્ચ 'મહિસા' મહિષાઃ 'મિગાય' મૃગાશ્ચ 'એકમેવકં' એકમેવકં =
 પ્રત્યેકં પરસ્પરમિત્યર્થઃ 'મારે'તિ' મારયન્તિ । 'મણુયગણા' મનુજગણા 'વા-
 નરાય' વાનરાશ્ચ 'પક્ષીય' પક્ષિણશ્ચ 'વિરુજ્ઞન્તિ' વિરુદ્ધ્યન્તે=પરસ્પરં વિરોધં
 પ્રાપ્નુવન્તિ । તથા મૈથુનમેવનાત્ 'મિત્તાણિ' મિત્રાણિ 'સ્ત્રિપ્પં' સ્ત્રિપ્પં=સ્ત્રીપ્પં
 'સત્ત્' શત્રુઓ ભવન્તિ, પુનશ્ચ 'સમયધર્મગણેયમિદંતિ' સમયધર્મગણાંશ્ચ

કિયે હુપ દ્રવ્ય કો ઉસકે લિયે દે દેતે હૈ, ઓર જો હમ વિષય મૈં વનકે
 લિયે કોઈ આત્મીય બંધુ પ્રતિબંધક હોતા હૈ ઉસે બે માર ઢાલતે હૈ ।
 (પરસ્પદારાઓ જે અવિરયા) યહ સબ કુકૃત્ય વે શ્રી વ્યક્તિ કરતે હૈ ।
 જો પર કી સ્ત્રીયોં કે સેવન કરને રુપ અકૃત્ય સે વિરત નહીં હોતે હૈ ।
 તથા—હસી તરહ (મેઢુણસજ્જાસંપગિદ્વાય) મૈથુનસંજ્ઞા મૈં આસક્ત
 (મોહમરિયા) મૈથુનસંજ્ઞા સે વિમોહિત મતિવાલે અજ્ઞાની પ્રાણી
 (અસ્માદ્ધી ગવા ચ મહિસા મિગા ચ) અશ્વ, હસ્તી, ગાય, મહિષ,
 મૃગ હૈં વે ભી (એકમેવકં મારે'તિ) આપસ મૈં એક દૂસરે કો પ્રાર ઢાલતે
 હૈ । હસી તરહ (મણુયગણા) મનુષ્યગણ (વાનરાય) વંદર એવં (પક્ષીય)
 પક્ષી ભી (વિરુજ્ઞન્તિ) એક દૂસરે કા વિરોધ કરતે હૈ તથા (મિત્તાણિ-
 સ્ત્રિપ્પં ભવંતિ સત્ત્) હસી કર્મ કે સેવન સે મિત્રજન ભી શીઘ્ર શત્રુ
 બન જાતે હૈ । ફિર જો પારદારિક પરસ્પી મૈં આસક્ત—હોતે હૈં વે (સમય)

હીને આપી દે છે, અને તેના એ પરસ્પીગમનના કૃત્યમાં જે કોઈ સંબંધીઓ
 આડખીલી રૂપ થાય છે તેમને મારી નાખે છે. “પરસ્પદારાઓ જે અવિરયા”
 જે લોકો પરસ્પીગમન રૂપ કુકૃત્યથી વિરક્ત થઈ શકતા નથી તે લોકો જ આ
 બધાં કુકૃત્યો કરે છે. તથા એ જ પ્રમાણે “મેઢુણસજ્જા સંપગિદ્વાય” મૈથુન
 સંજ્ઞામાં આસક્ત, “મોહમરિયા” મૈથુન સંજ્ઞામાં વિમોહિત મનવાળા અજ્ઞાની
 “અસ્માદ્ધી ગવા ચ મહિસા મિગા ચ” અશ્વ, હાથી, ગાય, હેંસ, મૃગ,
 આદિ પ્રાણીઓ પણ “એકમેવકં મારે'તિ” આપસમાં લડીને એક બીજાને
 મારી નાખે છે. એ જ રીતે “મણુયગણા” મનુષ્યો, “વાનરા ચ” વાનરો,
 “પક્ષી ચ” અને પક્ષીઓ પણ એક બીજાને વિરોધ કરે છે. “મિત્તાણિ-
 સ્ત્રિપ્પં ભવંતિ સત્ત્” એ કર્મના સેવનથી મિત્રો પણ જલ્દી તેમના શત્રુ બની
 જાય છે. વળી પરસ્પીમાં આસક્ત લોકો “સમય” પોતાના સિદ્ધાંતોને,

કુદરિત્તી ટીકા અઠ ૪ સુ ૧૪ ઇત્યુચ્ચારિત્રનિરૂપણમ

૪૯૧

મિન્દન્તિ=સમયાન્ = સિદ્ધાન્તાન્ ધર્માન્=શ્રુતચારિત્રલક્ષણાન્-ગણાન્-સમસામા-
 ચારિજનસમૂહાન્ વિનાશયન્તિ 'પરદારી' પરદારિણઃ=પરસ્ત્રીસક્તાઃ । તથા 'ધમ્મ-
 ગુણરયાય' 'ધર્મગુણરતાશ્ચ = સદાચારપરાયણાઃ 'બંધયારી' બ્રહ્મચારિણઃ
 'સ્વળેખ' ક્ષણેનૈવ = અલ્પકાલેનૈવ - બહુકાલરક્ષિતાદપિ 'ચરિત્તાઓ' ચારિત્રાત્
 'ઉલ્લોટંતિ' ઉલ્લોટયન્તિ=નિપતન્તિ । 'જસમન્તો' યશસ્વિનઃ
 'સુવ્વયા ય સુવ્રતાશ્ચ = વ્રતપરિપાલકાઃ અપિ 'અજસકિત્તિ' અયશઃકીર્તિઃ
 'પાવેતિ' પ્રાપ્નુવન્તિ । 'રોગત્તા' રોગાર્તા=ક્ષયાદિરોગવ્રસ્તાઃ 'વાહિયા' વ્યાધિતાઃ=કુઠાદિવીડિતાઃ 'રોગવાદી' રોગવ્યાધીન્ 'શ્લંઘિ' વર્ધયન્તિ તેન
 'દુવેચલોપ દુરાસાહયા ભવંતિ' દ્વયોશ્ચ લોકયોર્દુસારાધકાઃ = આત્મચિરાધકા
 અપને સિદ્ધાન્તોં કો, (ધમ્મે) શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મકો, એવં (ગળે ય) સમાન સામાચારી વાલે ગણ કો (મિન્દન્તિ) નષ્ટ કાર ઢાલતે હૈં । તથા-
 (ધમ્મગુણરયા ય) જો ધર્મગુણ રત-સદાચારપરાયણ (બંધયારી) બ્રહ્મચારી હોતે હૈં વે ખી (સ્વળેખ) ક્ષણ ખર મેં (ચરિત્તાઓ) બહુકાલ
 કે સુરક્ષિત અપને ચરિત્ર સે इसी एक दुर्गुण के वज से (उल्लोटन्ति) નિપતિત હો જાતે હૈં । તથા (જસમન્તો) જો યશસ્વી એવં (સુવ્વયા ય) વ્રતોં
 કે આરાધક હોતે હૈં વે ખી इसी कारण (अजसकित्ति) અપકીર્તિ કો (પાવેતિ) પ્રાપ્ત કરતે હૈં (પરસ્મ દારાઓ જે અવિરયા) इस परदार
 सेवन से जो प्राणी अविरत होते हैं वे (रोगत्ता) क्षयादि रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं और (वाहिया) कुष्ठ आदि व्याधिर्गों से पीड़ित होते रहते हैं, इतना ही नहीं फिर आगे के लिये वे रोगों को और व्याधि-
 यों को बढा भी लेते हैं । इस तरह (दुवे य लोप इहलोप परलोप चेव)

“ધમ્મે” શ્રુત ચારિત્ર રૂપ ધર્મના અને “ગળે ય” સમાન સામાચારીવાળા સમૂહોનો “મિન્દન્તિ” નાશ કરી નાખે છે. તથા “ધમ્મગુણરયા ય” જે લોકો ધર્મગુણ રતત્વદાચાર પરાયણ, “બંધયારી” બ્રહ્મચારી હોય છે, તેઓ પણ “સ્વળેખ” ક્ષણવારમાં “ચરિત્તાઓ” લાંબા સમયની સુરક્ષિત રાખેલા પોતાના ચારિત્રથી એ એક જ દુર્ગુણને અધીન થઈને “ઉલ્લોટન્તિ” બ્રષ્ટ થઈ જાય છે, તથા “જસમન્તો” જે યશસ્વી અને “સુવ્વયા ય” વ્રતોના આરાધક હોય છે, તેઓ પણ એજ કારણે “અજસકિત્તિ” અપકીર્તિ “પાવેતિ” પ્રાપ્ત કરે છે. “પરસ્મદારાઓ જે અવિરયા” એ પરસ્ત્રીગમનમાં જે જીવો સતત આસક્ત રહે છે તેઓ “રોગના” ક્ષયાદિ રોગોના પંખમાં સપડાય છે અને “વાહિયા” કુષ્ઠ આદિ વ્યાધિઓથી પીડાયા કરે છે એટલું જ નહીં પણ ભવિષ્યમાં તેમના તે રોગો અને વ્યાધિઓ વધતા જાય છે. આ રીતે તેઓ “દુવેચ લોપ-પરલોપ ચેવ” બન્ને લોકમાં આલોકમાં અને પરલોકમાં

भवन्ति । कयोर्द्वयोर्लोकयोः इत्याह इहलोए चेव परलोए ' इहलोके चेव=इह-
जन्मनि परलोके च परजन्मनि । के ते? इत्याह—'परस्स दाराओ जे अविरया'
परस्य दारेभो वेऽविरताः=परस्त्रीवरायणाः । 'तहेव' तथैव 'केइ' केचित्
'परस्स दारं गवेसमाणा' परस्य दारान् गवेसमाणाः = परस्त्रियमन्वेषयन्तः,
'गहिया य' गृहीताश्च जनैः 'हयाय' हताश्च=ताडिताः 'बद्धरुद्धा य' बद्ध-
रुद्धाश्च=रज्ज्वादिभिर्विद्धाः सन्तः पञ्जरादौ निरुद्धाश्च एवं 'जाव' गच्छन्ति
यावत्-अयोगादि प्राप्नुवन्ति 'अत्र यावत्पदग्रहणेन तृतीयाध्ययनस्थितः ' गहि-
याय बद्धरुद्धा य' इत्याख्य 'नए' गच्छन्ति गिरभिरामे' इत्येतदन्तः पाठोत्र-
बोध्य इति सूचितम् । के ते इत्याह—ये 'मोहाभिभूयसणा' मोहाभिभूतसंज्ञाः=
मोहोन्मत्तमेन कामान्धतया वा अभिभूता-परीभूता नष्टा संज्ञा=सदसद्विवेकपद्मा
दोनों लोकों में—इस लोक और परलोक (दुराराहगा) आत्मविरोधक
(भवन्ति) बनते हैं । तथा (तहेव) इसी प्रकार (केइ परस्सदारं गवे-
समाणा) जो परस्त्री की गवेसणा करने में रत रहते हैं वे यदि उस
कार्य को करते समय (गहिया य) पकड़ लिये जाते हैं तो (हयाय)
बहुत धुरी तरह ताड़ित किये जाते हैं । और (बद्ध रुद्धा य) रस्सी
आदि से बांधे जाकर पंजर आदि में बंध कर दिये जाते हैं । (एवं)
इस तरह (जाव) यावत् यहां यावत् शब्द से तृतीय अध्ययन में
कथित "गहिया य बद्धरुद्धाय" इस पाठ से लगाकर "नए गच्छन्ति-
गिरभिरामे" यहाँतक का पाठ लिया गया है । जिससे यह समझाया
गया है कि अन्त में ऐसे जोवोंकी बड़ी दुर्दशा होनी है और वे मर कर
नरक में जाते हैं । क्योंकि (विउलमोहाभूयसणा) ऐसे मनुष्यों का
त्रिपुण अज्ञान से अथवा कामान्धता से मद्सद्विवेक बिलकूल नष्ट होना

"दुराराहगा" આત્મવિરોધક "ભવન્તિ" બને છે. "તહેવ" એ જ પ્રમાણે
"કેઇ પરસ્સદારં ગવેસમાણા" એ પરસ્ત્રીની શોધમાં લીન રહે છે, તેઓ
ને તે કાર્ય કરતી વખતે "ગહિયા ય" પકડાઈ બાંધે તો "હયાય" ઘણી
જ ખરાબ રીતે તેમને મારવામાં આવે છે, અને "બદ્ધરુદ્ધાય" દોરણ
આદિથી જકડીત પાંજરાં આદિમાં પૂરી દેવામાં આવે છે. "એવં" આ રીતે
"જાવ" યાવત્-અહીં યાવત્ શબ્દ વડે ત્રીજા અધ્યયનમાં કહેલ "ગહિયા-
ય વદ્ધરુદ્ધાય" થી લઈને "નરણ ગચ્છન્તિ ગિરભિરામે" સુધીનો પાઠ લેવામાં
આવેલ છે. તેમાં એ સમજાવવામાં આવ્યું છે કે છેવટે તે જીવોની દશા ખૂરી
થાવ છે અને તેઓ મરીને નરકમાં બાંધે છે, કારણ કે "વિઝલમોહાભૂયસણા"
એવા મનુષ્યોનો મદ્સદ્વિવેક, અજ્ઞાનથી અથવા કામાન્ધતા ને લીધે બિલકુલ

યેષાંતે તથા । તથા ‘મેઢુનમૂલા ય’ મૈથુનમૂલાશ્ચ સ્ત્રી દેવત એવેત્યર્થઃ ‘તત્થ તત્થ’ તત્ર તત્ર લોકે શાસ્ત્રે ચ ‘વત્તપુલ્લા’ વૃત્તપૂર્વાઃ=પૂનપૂર્વોઃ ‘જગત્તલચકરા’ જન ક્ષયકરાઃ=જનસંહારકારકાઃ-રામરાવણાદીનાં ‘સંગામા’ સંગ્રામાઃ ‘સુઞ્ચંતિ’ શ્રૂયન્તે । કસ્યાઃ કસ્યાઃ સ્ત્રિયો-નિમિત્તં સંગ્રામા જાતાઃ ? इत्याह—

‘સીયાણ દોઝઈણ કણ’ સીતાયાઃ દ્રૌપદાશ્ચ ક્રુતે-સીતાદ્રૌપદોનિમિત્તમિત્યર્થઃ એવં ‘રુદ્ધિગીણ પડમાઝઈર-તારાણ કંચનાણ રત્તસુમદાણ અહિન્નિયાણ સુવળ્લગુલિયાણ કિન્નરીર ય સુલ્લવિજ્જુમઈણ રોદ્ધિગીણ ય’ રુદ્ધિમળ્યાઃ, પદ્માવત્યાઃ, તારાયાઃ, કાન્ચનાયાઃ, રત્તસુમદાયાઃ, અહિન્નિયાયાઃ સુર્યગુટિકાયાઃ કિન્નર્યાશ્ચ જાતા હૈ । તથા (મેઢુનમૂલા ય તત્થ તત્થ વત્તપુલ્લા, જગત્તલચકરા સંગામા સુઞ્ચંતિ) લોક ઓર શાસ્ત્ર મેં જિતને ખી પહિછે રામ રાવણ આદિ કે જનક્ષય કારક સંગ્રામ હુણ સુને જાતે હૈ ઘે સબ મૈથુનમૂલક હી હુણ હૈ । इन सब लोक और शास्त्र प्रसिद्ध यत्र तत्र हुए संग्रामों का मूल कारण एक स्त्री हुई है ॥

અવ સૂત્રકાર હસી યાન કો વિશેષ સ્ફુટ કરતે હૈં કિસ ૨ સ્ત્રી કે નિમિત્ત સંગ્રામ હુણ હૈં इस विषय को कहते हैं-‘सीयाण’ इत्यादि ।

ટીકાર્થઃ-(સીયાણ, દોઝઈણ ય કણ) સીતા ઓર દ્રૌપદી કે નિમિત્ત (રુદ્ધિગીણ, પડમાઝઈર, તારાણ, કંચનાણ, રત્તસુમદાણે અહિન્નિયાણ સુવળ્લગુલિયાણ, કિન્નરીણ, સુલ્લવિજ્જુમઈણ, રોદ્ધિગીણ ય) રુદ્ધિમળી કે નિમિત્ત, પદ્માવતી કે નિમિત્ત, તારા કે નિમિત્ત, કાંચના કે નિમિત્ત, રત્ત સુમદા કે નિમિત્ત, સુવર્ણ ગુટિકા કે નિમિત્ત, કિન્નરી કે નિમિત્ત,

તાથા પામ્યો હોય છે. તત્ર “મેઢુનમૂલા ય તત્થ તત્થ વત્તપુલ્લા જગત્તલચકરા સંગામા સુઞ્ચંતિ” આ સંદિમાં રામ રાવણ આદિ વચ્ચેના માણસોનો ક્ષય કરનારા જે સંગ્રામો થયા છે. તથા શાસ્ત્રોમાં જે સંગ્રામો વર્ણવવામાં આે છે તે બધાનું મૂળ કારણ મૈથુન જ છે. તે બધા લોકપ્રસિદ્ધ તથા શાસ્ત્રપ્રસિદ્ધ સ્થળે સ્થળે થયેલા સંગ્રામોનું મૂળ કારણ કોઈ ને કોઈ દેવી જ હતી.

હવે સૂત્રકાર એ બાબતનું વધુ સ્પષ્ટિકરણ કરે છે-કયાં કયાં સ્ત્રીઓને કારણે સંગ્રામો થયા તે બતાવે છે—“સીયાણ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થઃ—“સીયાણ, દોઝઈણ ય કણ” સીતા અને દ્રૌપદીને કારણે “રુદ્ધિગીણ, પડમાઝઈર, તારાણ, કંચનાણ, રત્તસુમદાણ, અહિન્નિયાર સુવળ્લગુલિયાણ, કિન્નરીણ, સુલ્લવિજ્જુમઈણ, રોદ્ધિગીણ ય” રુદ્ધિમળીને નિમિત્તે, પદ્માવતીને નિમિત્તે, તારામતીને નિમિત્તે, કાંચનાને નિમિત્તે, રત્તસુમદાને નિમિત્તે, અહિન્નિકાને નિમિત્તે, સુવર્ણ ગુટિકાને નિમિત્તે, કિન્નરીને નિમિત્તે, સૌંદર્યવતી

મુરુપચિત્તમસ્થાઃ, રોહિણ્યાશ્ચ, તત્તસ્થાનપ્રસિદ્ધાયાઃ ક્રુતે સંગ્રામા અભૂવન્ ।
 આસાં ચરિતં તુ તત્તદ્ગ્રન્થેભ્યાંડવસેયમ્ । 'અણે ય ઇવમાદ્યા બહવો મહિલા-
 કણ' અન્યે ચૈવતાદિકાઃ = એવં પ્રકારાઃ=બહવઃ=અનેકે મહિલાક્રુતે=સ્ત્રીનિમિત્તે
 'અતિક્રંતા' અતિક્રાન્તાઃ=ભૂતપૂર્વાઃ 'ગામધર્મમૂલા' ગ્રામધર્મમૂલાઃ= મૈથુન
 મૂલકાઃ 'સંગ્રામા' સંગ્રામા જાતા ઇતિ, 'સુવંતિ' શ્રૂયન્તે=લોકે શાસ્ત્રે ચ ।
 તે ચાત્રસેવિનઃ 'ઇહલોષ તાવનદ્વા' ઇહલોકે તાવનદ્વાઃ = પરસ્ત્રીયમનેનાડ-
 ત્મવિરાધકા જાતાઃ, 'પરલોષ ય નદ્વા' પરલોકે ચ નદ્વાઃ અસદ્વતિ માતાઃ
 કેન કેન પ્રકારેણ પરલોકો નદ્વામવન્તીત્યાદ—ઇતો મૃત્વા 'મહયામોહતિમિરં-
 ધવારે' મહામોહતિમિરાન્ધકારે-મહામોહ એવ તિમિરાન્ધકારઃ=નાદાન્ધકારો
 યત્ર સ તથા તસ્મિન્ ઘોરે=ભયઢ્ઢરે ઇતાદ્યે નરકે ગચ્છન્તિ । તત્તો નિઃસૃત્ય
 'તસથાવરમુદ્ધમશાયરેમુ' તસથાવરમુદ્ધમશાયરેમુ ' તથા 'પઙ્ગવનપઙ્ગતમ-

સરુપ વિચુન્મતી કે નિમિત્ત ઓર રોહિણી કે નિમિત્ત સંગ્રામ હુપ હૈ
 (અણે ય ઇવમાદ્યા બહવો) તથા ઇસી તરહ કે ઓર બી અનેક
 (અક્રંતા) ભૂતપૂર્વ સંગ્રામ (મહિલાકણ) ઇસી મૈથુન સેવન નિમિત્તક
 હુપ (સુવંતિ) લોક ઓર શાસ્ત્ર મેં સુને ગયે હૈ । (અવંમસેવિણો ઇહ-
 લોષ તાવનદ્વા પરલોષ ય નદ્વા) યે અવ્રત્તસેવીજન ઇસલોક મેં તો નદ્વા
 હોતે હી હૈ, સાથ ૨ મેં પરલોક મેં બી નદ્વા હોતે હૈ, અર્થાત્ પરસ્ત્રી
 સેવન સે જીવ ઇસલોક મેં આત્મવિરાધક હોકર પરલોક મેં બી અસ-
 વ્રતિ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈ । જવ વે ઘડાં સે મરતે હૈ તથ (મહયા મોહ
 તિમિરંધવારે) મહામોહરુપ ગાઢ અંધકાર સે આન્ધાદિન હુપ (ઘોરે)
 ભયંકર નરક મેં જાકર ઉત્પન્ન હોતે હૈ । વહાં સે જવ વે નિકલતે હે તથ

વિચુન્મતીને નિમિત્તે, અને રોહિણીને નિમિત્તે સંગ્રામો થયા હતા, “અણેય-
 ઇવમાદ્યા બહવો” તથા તે પ્રકારના બીજા પણ અનેક “અક્રંતા” ભૂત-
 કાળના સંગ્રામો “મહિલાકણ” એ જ મૈથુન સેવનને નિમિત્તે થયાનું
 “સુવંતિ” લોકોમાં તથા શાસ્ત્રોમાં સાંભળવામાં આવે છે.

“અવંમસેવિણો ઇહલોષ તાવનદ્વા પરલોષ ય નદ્વા” તે મૈથુન-
 સેવી લોકો આ લોકમાં તો નાશ દુર્દશા પામે જ છે પણ પરલોકમાં
 પણ નદ્વા થાય છે, એટલે કે પરસ્ત્રીસેવનથી લોકો આ લોકમાં આત્મવિરાધક
 થઈને પરલોકમાં પણ હુર્ગતિ પ્રાપ્ત કરે છે, બ્યારે તેઓ અહીંથી મરણ પામે
 છે ત્યારે “મહયા મોહતિમિરંધવારે” મહામોહરૂપ ગાઢ અંધકારથી છવાયેલા
 “ઘોરે” ભયંકર નરકમાં જઈને ઉત્પન્ન થાય છે. ત્યાંથી નીકળીને તેઓ

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૪ સુ૦ ૪ ૧૪ ચતુર્થમન્તર્વારનિકરણમ્

૪૧૩

સાહારણસરીરપત્તેયસરીરેસુ' પર્યાપ્તાપર્યાપ્તકસાધારણશરીરપ્રત્યેકશરીરેસુ ચ જન્મમરણં કુર્વન્તિ । તતોડપિ નિઃસ્રુત્ય ' અંડ ય પોયય જરાઉય રસ ય-સંસેદ્મ સંમુચ્છિમ ઉચ્ચિજ્જ ઉવવાહસુ ય ' તત્ર અણ્ડજાઃ=પક્ષિ મત્સ્યાદયઃ ' પોયજ ' પોતજાઃ=હસ્ત્યાદયઃ ' જરાઉય ' જરાયુજાઃ=મનુષ્યાદયઃ, ' રસ ય ' રસજાઃ=વિકૃતરસેષુ સમુત્પન્નાઃ ' સંસેદ્મ ' સંસ્વેદિમાઃ=સંસ્વેદાત્ જાતા યુક્તા મત્કુળાદયઃ ' સંમુચ્છિમ ' સંમૂચ્છિમાઃ=સંમૂચ્છિન જાતાઃ દર્દુણાદયઃ ' ઉચ્ચિજ્જ ' ઉચ્ચિજ્જાઃ=પૃથિવીમુદ્ગિય જાતાઃ=શલભાદયઃ ' ઉવવાહસુ ' ઔપપાતિકાઃ=દેવ નારકાદયશ્ચ, દૃત્યેતેષુ ચ ' નરગતિરિયદેવમાણુસેસુ ' નરકતિરિયદેવમાણુસેસુ કીદશેષુ ? इत्याह—' जरामरणरोगसोगबहुलेसु ' जरामरणरोगशोकबहुलेषु- (तसथावरसुवुमवावरेसु) व्रस, स्थावर, सूक्ष्म, वादर इन कार्योंमें, तथा (पञ्चतमपञ्चतसाहारणपत्तेय सरीरेसु य) पर्याप्तक अपर्याप्तक, साधारण-शरीर, प्रत्येक शरीर इन पर्यायोंमें जन्म मरण करते हैं। वहां से भी निकल कर वे (अंड य पोयय जराउय रस य संसेदम संमुच्छियउच्चि-ज्जउववाहसु य) अंडज जीवोंमें-पक्षी भत्स्य आदिकोंमें, पोटजजीवोंमें हस्ती आदिकोंमें, जरायुजमें-जरा से पैदा होने वाले मनुष्य आदिकोंमें, रसज जीवोंमें-विकृत रसोंमें उत्पन्न होने वाले कृमि आदि जीवोंमें, संस्वेदिमोंमें पत्मीनेसे होनेवाले युक्ता, मत्कुण आदि जीवोंमें, संमूच्छिम जन्मवाले दर्दुर (मेढक) आदि जीवोंमें, उच्चिज्ज जीवोंमें-पृथिवि को भेदकर उत्पन्न होने वाले शलभ आदि जीवोंमें औपपातिक जन्म धारी देव और नारकीयोंमें उत्पन्न होते हैं। तथा वे (जरामरणरोगसोग-बहुलेषु नरगतिरियदेवमाणुसेसु) जरा, मरण, रोग, शोक बहुत, नरक,

“ तसथावरसुवुमवावरेसु ” व्रसकाय, स्थावरकाय, सूक्ष्मकाय અને બાદરકાયોમાં તથા “ પચ્ચત્તમપચ્ચત્તસાહારણસરીરપત્તેયસરીરેસુ ય ” પર્યાપ્તક, અપર્યાપ્તક, સાધારણ શરીર, પ્રત્યેક શરીર આદિ પર્યાયોમાં જન્મ મરણ અનુભવે છે. ત્યાંથી પણ નીકળીને તેઓ “ અંડય-પોયય-જરાઉય-રસય સંસેદમ-સંમુચ્છિય-ઉચ્ચિજ્જઉવવાહસુ ય ” અંડજ જીવોમાં-પક્ષી ભત્સ્ય આદિમાં, પોતજ જીવોમાં હાથી આદિમાં જરાયુજમાં મનુષ્ય આદિકોમાં રસજ જીવોમાં વિકૃત રસોમાં ઉત્પન્ન થનાર કૃમિ આદિ જીવોમાં, સંસ્વેદિમોં માં-પરસેવાથી ઉત્પન્ન થનાર જૂ, માંકડ આદિ જીવોમાં, સંમૂચ્છિમ જન્મવાળા દેડકા આદિ જીવોમાં, ઉચ્ચિજ્જજીવોમાં-પૃથ્વીને ભેદીને ઉત્પન્ન થનાર તીડ આદિ જીવોમાં, ઔપપાતિક દેવ અને નારકીઓમાં ઉત્પન્ન થાય છે. તથા તેઓ “ जरामरण-रोगसोगबहुलेसु नरगतिरियदेवमाणुसेसु ” જરા, મરણ, રોગ અને વિષુલ

ચોત્પચન્તે, તત્ર ‘ પલિઓવમસગરોવમાઈ ’ પર્યોપસાગરોપમાનિ = પર્યોપમ-
સાગરોપમકાલં યાવત્ કેચિત્પરિભ્રમન્તિ ! યે તુ ‘ અણાદિયં ’ અનાદિકં =
આદિવર્જિતં ‘ અણવદ્ગમં ’ અનવદગ્રમ્ = અનન્તં ‘ દીહમદ્દં ’ દીર્ઘાઽધ્યાનં = દીર્ઘ-
માર્ગં ‘ ચાઉરંતસંસારકંતારં ’ ચતુરન્તસંસારકાન્તારં = દેવમનુષ્યનારકતિર્ય-
ગ્લક્ષગચતુર્ગતિકસંસારમદારણ્યં, ‘ મહામોહવસસંનિવિટ્ટા જના ’ મહામોહવશ-
સંનિવિટ્ટાજનાઃ = મહામોહવશંજાતા અવ્રત્તસેવિના જનાઃ ‘ અણુપરિયદંતિ ’ અણુ-
પર્યટન્તિ = અનન્તકાલપર્યન્તં પરિભ્રમન્તિ ॥ સૂ. ૧૪ ॥

પૂર્વોક્તં નિગમયન્નાહ—‘ एसो सो ’ इत्यादि—

મૂલ્ય—एसो सो अवंमस्स फलविवागो इहलोइओ पर-
लोइओ य अप्पसुइ बहुदुक्खो महम्मओ बहुरयणगाढो
दारुणो ककसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइ, नय अवेद-
इत्ता अत्थिहु मोक्खो त्ति। एवमाहंसु नायकुलनंदणो महप्पा
जिणो उ वीरवरनाम धेज्जा कहेसि य अवंमस्स-फलविवागं।

તિર્યંચ દેવ એવં મનુષ્યોં મેં જન્મતે હૈં । इनमें (पलिओवमसागरोवमाई)
किननेक जीव पर्योपमप्रमाण कालतक और किननेक सागरोपम प्रमाण
काल तक ब्रजते रहते हैं । और किननेक ऐसे भी होते हैं जो (महा-
मोहवससंनिविट्टा) महामोह के वशवर्ती होकर (अणादियं अणवदग्मं)
अनादि अनंत (दीहमदं) उत्सर्णिणो अवसर्पिणीरूप दीर्घमार्गं युक्त
(चाउरंतसंसारकंतारं) देव-मनुष्य नरक एवं तिर्यञ्चगतिरूप चारगति-
वाले संसार कान्तार में अजंतकालतक (अणुपरियदंति), परिभ्रमण करते
रहते हैं ॥ सू. १४ ॥

શોકમય નરક, તિર્યંચ, દેવ અને મનુષ્ય યોનિમાં જન્મ પામે છે, તેમાંના
“ પલિઓવસાગરોવમાઈ ” કેટલાક જીવો પર્યોપમ પ્રમાણકાલ સુધી અને
કેટલાક સાગરોપમ પ્રમાણ કાળ સુધી તે યોનિયોમાં ભ્રમણ કર્યા કરે છે. અને
કેટલાક જીવો એવા પણ હોય છે કે જે “ મહામોહવસસંનિવિટ્ટા ” મહામોહને
અધીન થઈને “ અણાદિયં અણવદ્ગમં ” અનાદિ અનંત “ દીહમદ્દં ” ઉત્સર્પિણી
અવસર્પિણી રૂપ દીર્ઘમાર્ગં યુક્ત “ ચાઉરંતસંસારકંતારં ” દેવ, મનુષ્ય, નરક
અને તિર્યંચ એ ચાર ગતિવાળા સંસાર કાંતારમાં અનંતકાળ સુધી “ અણુપરિ-
યદંતિ ” પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. ॥ સૂ. ૧૪ ॥

શ્રુતિની ટીકા અં ૪ સૂં ૧૫ અર્થગ્રનોપસંહાર :

૪૧૫

एयं तं अवंभपि चउत्थं सदेव मणुयासुरस्स लोंगस्स
पत्थणिजं एवं चिरपरिचियमणुगयं दुरंतं तिवेमि ॥सू०१५॥

॥ चउत्थं अहम्मन्दारं समत्तं ॥

ટીકા—‘ एमो सो ’ एय सः पूर्वोक्तः ‘ अवंभस्स फलविवागो ’ अवग्रहणः फलविवाकः ‘ इह लोइओ ’ ऐहलौकिकः—मनुष्यभवापेक्षया, ‘ परलोइओ य ’ पारलौकिकश्च नरकाद्यपेक्षया ‘ अप्पसुहो ’ अल्पसुखाः — क्षणमात्रसुखजनकत्वात् ‘ बहुदुक्खो ’ बहुदुक्खः—प्रचुरदुःखहेतुत्वात् ‘ महम्मओ ’ महाभयोः—बन्धवन्धन जन्ममरणादिभयोत्पादकत्वात् ‘ बहुरयप्पगाहो ’ बहुरजः प्रगाढः—कर्मदलिकरदुःखात् ‘ दारुणो ’ दारुणः—चतुर्गतिसंसारभ्रामकत्वात् ‘ कक्खो ’ कर्कशः दशविध-

अव इस पूर्वोक्त अवग्रह विषय का उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘ एमो सो ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(एमो सो) यह पूर्वोक्त (अवंभस्स) अवग्रह-कुलीत सेवन का (फलविवागो) फलरूपविपाक (इहलोइयपरलोइओ य) मनुष्य भव की अपेक्षा तथा नरकादि गति की अपेक्षा (अप्पसुहो) क्षणमात्र सुख का जनक होने से अल्पसुखरूप है तथा (बहुदुक्खो) प्रचुर दुःख का हेतु होने से महादुःखप्रद है, (महम्मओ) बन्ध, बंधन, जन्म, मरणादि के भय का उत्पादक होने से महाभय स्वरूप है । (बहुरयप्पगाहो) ऐसे कर्म करने वालों को कर्मों की स्थिति और अनु-भाग बहुत अधिक मात्रामें बंधाता है इसलिये वह बहुरजःप्रगाढरूप है । (दारुणो) चतुर्गति रूप संसारमें ऐसे जीवोंका ही भ्रमण होना है—अतः

હવે આ પૂર્વોક્ત અવગ્રહ વિષયનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે—

“ एमो सो ” इत्यादि

ટીકાર્થ—“ एमो सो ” આ પૂર્વોક્ત “ अवंभस्स ” અવગ્રહ કુલીતરિત્તિ સેવનનો “ फलविवागो ” ફલવિવાક “ इहलोइयपरलोइओ य ” મનુષ્ય ભવની અપેક્ષાએ “ अप्पसुहो ” ક્ષણમાત્ર સુખનો જનક હોવાને કારણે અલ્પસુખરૂપ છે, તથા “ बहुदुक्खो ” અત્યંત દુઃખનો હેતુ હોવાથી મહાદુઃખપ્રદ છે, “ महम्मओ ” બન્ધ, બંધન, જન્મ, મરણ આદિ ભયનો ઉત્પાદક હોવાથી મહાભય સ્વરૂપ છે, “ बहुरयप्पगाहो ” એવાં કર્મો કરનારને કર્મોની સ્થિતિ અને અનુભાગ ખુબ જ વધારે પ્રમાણમાં બંધાય છે તેથી તે ખુબ રજઃપ્રગાઢરૂપ છે, “ दारुणो ” એવા જીવોને જ ચાર ગતિ રૂપ સંસારમાં ભ્રમણ કરવું

ક્ષેત્રવેદનાજનકતાત્ 'અસામો' અસાતઃ=અસાતવેદનીયઃ=કર્મોત્પાદકત્વાત્
'વાસસહસ્રેર્હિ' વર્ષસહસ્રૈઃ = અનેકપલ્લયોપમસાગરોપમાદિકાઓરૂપભોગેન
'મુચ્ચઈ' મુચ્યતે । તદેવ વ્યતિરેકમુખેનાહ—નયઅવેદજ્ઞાત્ નવાડવેદયિત્વા=
ઉપભોગં વિના ન 'યોક્ત્વોત્તિ' મોક્ષોઽસ્તિ । 'એવં' ઉક્તરીત્યા 'આહંમુ' ઋતુઃ=
કથિતવન્ત ભૂતપૂર્વાસ્તીર્થદ્વરગણધરાદયઃ । તથા—તદનુસારેણૈવ 'નાયકુચ્ચનંદગો'
જ્ઞાતકુલનન્દનઃ—સિદ્ધાર્થકુલાનન્દકરઃ 'મહૃષ્ણ' મહાત્મા=પરમાત્મરૂપઃ 'જિણો'

ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમેં ભ્રમણ કરવાનેકા કારણ હોનેસે યહ દારુણ હૈ ।
(કક્કસો) દશ પ્રકાર કાં ક્ષેત્રવેદના કા જનક હોને સે યહ ફલવિપાક
કર્કશ હૈ । (અસામો) અસાતવેદનીયરૂપ હોને સે યહ અસાત હૈ—અર્થાત્
અસાતા વેદનીય કર્મ કે ઉદ્ભવ સે યહ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । સલિયે અસાતા-
વેદનીયકર્મ કે દ્વારા ઉત્પાદ્ય હોને કે કારણ યહ સ્વયં અસાતસ્વરૂપ હૈ ।
અથવા હસ પ્રકાર કે કર્મ કરને વાલે જીવ જો ફલવિપાક ભોગતે હૈ ।
ઊસ સમય વે અસાતાવેદનીય કર્મ કા બંધ કરતે હૈ,—કારણ ફલવિપાક
ભોગતે સમય ઊનકી આત્મા મેં દુઃખ શોક-તાપ આદિ ભાવ હોતે હૈ
હન ભાવોં સે જીવ અસાતાવેદનીય કર્મ કા આસ્રવ કરતા હૈ । હસ
અપેક્ષા સે અસાતાવેદનીય કર્મ કા ઉત્પાદક હોને સે યહ ફલવિપાક
અસારૂપ માના ગયા હૈ । (વાસસહસ્રેર્હિ) યહ ફલવિપાક જીવ પલ્લો
પમકાલતક ભોગને સે (મુચ્ચઈ) છૂટતા હૈ । (નયઅવેદજ્ઞાત્ અત્થિ હુ
મોક્ષોત્તિ) હસ ફલવિપાક કા ઉપભોગ કિયે વિના યહ નહીં છૂટના હૈ ।

પડે છે, તેથી ચાર ગતિરાજા સંસારમાં બ્રમણ કરાવનાર હોવાથી તે દારુણ છે.
“કક્કસો” દસ પ્રકારની ક્ષેત્ર વેદનાનો જનક હોવાથી તે ફલવિપાક કર્કશ-
કઠોર છે. “અસામો” અસાત વેદનીય રૂપ હોવાથી તે અસાત છે—એટલે કે
અસાતાવેદનીય કર્મના ઉદ્ભવથી તે ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી અસાતા વેદનીય
કર્મદ્વારા ઉત્પાદ્ય હોવાને કારણે તે ચોતે અસાતસ્વરૂપ છે. અથવા આ પ્રકારનાં
કર્મ કરનારા જીવો એ ફલવિપાક ભોગવે છે, તે ભોગવતી વખતે અસાતા-
વેદનીય કર્મનો અધ બાધે છે, કારણ કે ફલવિપાક ભોગવતી વખતે તેમના
આત્મામાં દુઃખ શોક તાપ આદિ ભાવ હોય છે, તે ભાવોથી જીવ અસાતા-
વેદનીય કર્મનો આસ્રવ કરે છે. આ અપેક્ષાએ અસાતાવેદનીય કર્મને ઉત્પાદક
હોવાથી આ ફલવિપાક અસાતરૂપ માન્યો છે. “વાસસહસ્રેર્હિ” આ ફલવિપાક
પલ્લોપમ કાળ સુધી અથવા સાગરોપમ કાળ સુધી ભોગવ્યા પછી જ જીવ
“મુચ્ચઈ” તેનાથી મુક્ત થાય છે. ‘નય અવેદજ્ઞાત્ અત્થિ હુ મોક્ષોત્તિ’
આ ફલવિપાકનો ઉપભોગ કર્યા વિના તે મુક્ત થઈ શકતો નથી. “એવં”

સુરસિની ટીકા અં ૪ સૂ ૧૫ અધ્યયનોપસંહાર:

૫૨૭

જિનઃ વીરવરનામધેયઃ-શ્રવ્યાતનામા ભગવાન્ શ્રીમહાવીરોઽપિ 'અવંમસ્સ' અબ્રહ્મણઃ 'ફલવિવામં' ફલવિપાકં 'કહેસિય' કથિતવાંશ્ર 'એયં તં' એત તત્=ઉપદર્શિત સ્વરૂપમ્ 'અવંમં' અબ્રહ્મ-અબ્રહ્મનામકં 'ચઉત્થં' ચતુર્થમધર્મ-દ્વારં 'સદેવમણ્યામુરસ્સ લોગસ્સ' સદેવમનુજાસુરસ્ય લોકસ્ય 'પત્થણિજ્જં' પ્રાર્થનીયમ્। એવં 'ચિરપરિચિયં' ચિરપરિચિતમ્, અનાદિ કાલાદનુભૂયમાનમ્ 'અણુગયં' અનુગતં=પ્રાણિનાં પૃષ્ઠતોલનં, દુરન્તં-દુઃસ્વાક્ષાનં ચ । 'તિ વેમિ' હતિ પ્રવીમિ, એતદ્ જમ્બૂસ્વામિનં પ્રતિ સુધર્મસ્વાદિ વાક્યમ્ ॥ સૂ ૧૫ ॥

હતિ શ્રીપ્રશ્નવ્યાકરણસ્ય સુદર્શન્યાલ્યાયાં વ્યાલ્યાયાં હિસાદિ પશ્ચાત્ત્વદારેષુ
અદ્વાદાનાલ્યં ચતુર્થમધર્મદ્વારં સમાપ્તમ્ ॥ ૩ ॥

(એવં) હસ પ્રકાર કા કથન (આહંસુ) ભૂતપૂર્વ તીર્થંકર ગણધરાદિક દેવોં કા હૈ । ઓર હસી પ્રકાર સે અબ્રહ્મ કે ફલવિપાક ડન્હી તીર્થંકરોં કે કહે અનુમાર (નાયકુલનંદણો) મિદ્ધાર્થકુલકો આનંદ દેનેવાલે (મહપ્પા જિણો ડ) મહાત્મા જિનેન્દ્ર (વીરવરનામધેજ્ઞ) વીરવરને-શ્રી વર્ધમાનસ્વામી ને ખી (અવંમસ્સ) અબ્રહ્મ કે (ફલવિવામં) ફલવિપાક કો (કહેસિય) કહા હૈ (એયં તં) યહ વહ (અવંમં) અબ્રહ્મ નામ કા (ચઉત્થં) ચતુર્થ અધર્મદ્વાર (દેવમણ્યામુરસ્સ લોગસ્સ) દેવ મનુષ્ય ઓર અસુર લોક હન મચ કે યહ (પત્થણિજ્જં) પ્રાર્થનીય હૈ, અર્થાન્ હસ અબ્રહ્મ કા યે દેવાદિ સેવન કરતે હૈ । (એવં) હસ પ્રકાર યહ (ચિર-પરિચિયં) જોગોં કે પીછે અનાદિકાલ સે લગા હુઆ ચચા આને કે કારણ (અણુગયં) અનુભૂયમાન હૈ ઓર (દુરંતં) હસકા અવસાન (અન્ન)સે દુરન્ત

આ પ્રકારનું કથન “આહંસુ” ભૂતપૂર્વ તીર્થંકર ગણધરાદિક દેવોનું છે. અને તે રીતેજ અબ્રહ્મના ફલવિપાકનું કથન તે તીર્થંકરોના કહેવા પ્રમાણે: “નાયકુલ-નંદણો” મિદ્ધાર્થના કુળને આનંદ દેનાર “મહપ્પાજિણો ડ” મહાત્મા જિનેન્દ્ર “વીરવરનામધેજ્ઞ” વીરવર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીએ પણ “અવંમસ્સ” અબ્રહ્મનો “ફલવિવામં” ફલવિપાક “કહેસિય” કહેલ છે. “એયં તં” આ તે “અવંમં” અબ્રહ્મ નામનું “ચઉત્થં” ચોથું અધર્મદ્વાર “દેવમણ્યામુરસ્સ લોગસ્સ” દેવ, મનુષ્ય, અને અસુર તે બધાને તે “પત્થણિજ્જં” પ્રાર્થનીય છે, એટલે કે દેવાદિ તે અબ્રહ્મનું સેવન કરે છે. “એવં” આ રીતે તે “ચિરપરિચયં” જોવાની પાછળ અનાદિ કાળથી આવ્યું આવે છે. તેથી “અણુગયં” અનુભૂય-
પ્ર ૦ ૬૩

૪૨૮

પ્રત્યયોક્તિ

है नाना प्रकार के दुःखों का दाता है । (त्ति वेमि) ऐसा हे जंजू ! मैं कहता हूँ । इस प्रकार सुधर्मास्वामीने जंजूस्वामी को इसके विषय में समझाया है ॥ सू० १५ ॥

॥ चतुर्थ अधर्मद्वार समाप्त ॥

માન છે, અને “ દુરંતે ” તેનું અવસ્થાન દુરંત છે—નાના પ્રકારના દુઃખો દેનાર છે. “ ત્તિવેમિ ” એવું હે જંજૂ ! હું કહું છું. આ જંજૂસ્વામીને સુધર્મસ્વામીએ અપ્રદાનના વિષે સમજાવ્યું છે. ॥ સૂ. ૧૫ ॥

ચોથું આસવ (અધર્મ) દ્વાર સમાપ્ત થયું.

अथ पञ्चमाध्ययनम् ।

अथ चतुर्थास्त्रवद्धारसमाप्त्यनन्तरं पञ्चममास्त्रवद्धारं प्रारभ्यते, अस्य पूर्वैण सहायमभिसंबन्धः । अनन्तराध्ययनेऽब्रह्मस्वरूपं प्रोक्तं, तच्च परिग्रहे सत्येव भवतीति परिग्रहस्वरूपं निरूप्यते—‘जम्बू’ इत्यादि ।

मूलम्—जंबू ! एत्तो परिग्रहो पंचमो उ नियमा पाणाम-
णिकणगरयण महारिह परिमल-सुपुत्तदार-परिजण-दासीदास-
भयग-पेस्त-हय-गय-गो-महिस-उट्ट-खर-अय-गवेलग-सीया-
सगड-रह-जाण-जुग-संदण-सयणासण-बाहण-कुविय-धण-धन्न-
पाणभोयणाच्छायण-गंधमल्ल-भायण-भवणविहिं चेव बहुविहियं
भरहं णगणगर-णियम-जणवय-पुरवर-दोणमुह-खेड-कब्बड-
मंडव-संवाह-पट्टण-सहस्सपरिमंडियं थिमियमेणीयं एगच्छत्तं
ससागरं भुंजिऊण वसुहं अपरिमियमेणंततण्हमणुगयमहिच्छ-
सारनिरयमूलो, लोभकलिकसायमहक्खंधो, चिंतासयनिचिय
विउलसालो, गारवपविरल्लियग्गविडवो, नियडितया पत्तपल्लवधरो,
पुप्फफलं जस्स कामभोगा आयासविसूरणाकलहपकंपियग्ग-
सिहरो नरवइसंपूजिओ, बहुजणस्स हिययदइओ, इमस्स
मोक्खवरमुत्तिमग्गस्स फलिहभूओ चरिमं अहम्मदारं ॥सू०१॥

पांचवा आस्त्रवद्धार प्रारंभ—

चतुर्थ आस्त्रवद्धार की समाप्ति के बाद अब पांचवा आस्त्रवद्धार प्रारंभ होता है । इसका पूर्व आस्त्रवद्धार के साथ इस प्रकार से संबंध है—चतुर्थ द्वार में जो अब्रह्म का स्वरूप कहा है वह अब्रह्म, परिग्रह के होने पर ही होता है इसलिये सूत्रकार इस द्वार में परिग्रह का स्वरूप

पांचमा आस्त्रव-द्वारनो प्रारंभ

आथुं आवस्स द्वार पूरं कयां पछी डवे पांचमा आस्त्रव द्वारनुं पणुनं शइं थाय छे. तेनो आगणना आस्त्रवद्वार साथे आ प्रकारनो सयंध छे—

आथा द्वारमां अब्रह्मनुं के स्वइप कहुं छे ते अब्रह्म, परिग्रह होय तो क थाय छे तेथी सूत्रकार आ द्वारमां परिग्रहना स्वइपनुं निइपलु करे छे—

ટીકા—‘જંબૂ’ હત્યાદિ—

સુધર્મા સ્વામી પશ્ચમાશ્વદ્વારસ્વરૂપે જિજ્ઞાસમાને જમ્બૂસ્વામિનં પ્રતિ પ્રાહ—
‘જંબૂ’ હે જમ્બૂઃ । ‘એતો’ દત્તચતુર્થાશ્વદ્વારાદનન્તરં ‘પરિગ્રહો’ પરિગ્રહઃ—
પરિગ્રહણં પરિગૃહ્યતે મૂર્છારૂપેણ મૂર્છાપરિગ્રહોવુતો इति वचनात् धर्मोपकरणं
त्रिनेत्यर्थ इति वा परिग्रहः = परिग्रहतस्मान्મ વક્ષ્યમાણવિશેષણાનુરોધાત્
પરિગ્રહશબ્દોઽવ પરિગ્રહતરુપરકો દ્રષ્ટવ્યઃ । ‘પંચમો’ પશ્ચમઆશ્વતો ‘નિયમા’
નિયમાત્-નિશ્ચયેન ભવતિ, નાન્યઃકશ્ચનાતઃ પરઃ આશ્વતઃ ! અયં પરિગ્રહઃકથમ્ભૂતઃ
इत्याह—‘णाणामणि’ इत्यादि । ‘णाणामणि-कणम-रयण-महरिह-परिमल-
सपुत्तदार-परिजण-दासी-दास-भयग-पेस-हय-गय-गो-महिस-उट-खर-

નિરૂપિત કરતે હૈ—‘જંબૂ એતો’ હત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—શ્રી સુધર્મા સ્વામી પાંચવે આશ્વ દ્વાર કે સ્વરૂપ કો
જાનને કી રૂચ્છવાલે શ્રી જંબૂસ્વામી સે કહતે હૈ—(જંબૂ) હે જમ્બૂ ।
(એતો) ચતુર્થ આશ્વ દ્વાર કે વાદ (પરિગ્રહો પંચમો આશ્વો નિયમા)
પરિગ્રહ પાંચવાં આશ્વ દ્વાર નિયમ સે હૈ । રૂચ્છવાલે આશ્વ દ્વાર નહીં હૈ યહ વાત “ નિયમ ” શબ્દ સે સૂત્રકાર ને પ્રદર્શિત
કી હૈ ‘ ગ્રહણ કરના ’ અથવા ‘ જો મૂર્છાવૃદ્ધિ સે ગ્રહણ કિયા
જાવે ’ વહ પરિગ્રહ હૈ ક્યોં કિ શાસ્ત્ર મેં મૂર્છાકો પરિગ્રહ કહા હૈ
એસી રૂચ્છ પરિગ્રહ શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ હૈ । રૂચ્છ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર યહ
પરિગ્રહ શબ્દ યહાં પરિગ્રહ રૂપ વૃક્ષ કે અર્થ વાલા જાનના વાહિયે ક્યોં
કિ રૂચ્છ સ્પષ્ટ કરને કે લિયે જો સૂત્રકાર વિશેષણ ઇમી સૂત્ર મેં કહ
રહે હૈં વે રૂચ્છ વાત કી પુષ્ટિ કરતે હૈં । (ણાણામણિ-કણમ-રયણ-
મહરિય-પરિમલ-સપુત્તદાર-પરિજણ-દાસી-દાસ-ભયગ-પેસ-હય-ગો

“ જંબૂ એતો ” હત્યાદિ.

પાંચમા આશ્વતું સ્વરૂપ જાણવાની ઇચ્છાવાળા જંબૂસ્વામીને શ્રી સુધર્મા
સ્વામી કહે છે—“ જંબૂ ” હે જંબૂ ! “ એતો ” એવા આશ્વ દ્વાર પછી “ પરિ-
ગ્રહો પંચમો આશ્વો નિયમા ” નિયમ પ્રમાણે જ પાંચમું આશ્વ દ્વાર પરિ-
ગ્રહ આવે છે ત્યાર પછી બીજું કોઈ પણ આશ્વદ્વાર નથી તે જાણતું
“ નિયમ ” શબ્દથી સૂત્રકારે બતાવેલ છે. “ મહેલુ કરવું ” અથવા ‘ જે
ગ્રહણ કરાય તે પરિગ્રહ છે, એવી આ પરિગ્રહ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ છે. તે
વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આ પરિગ્રહ શબ્દ આહીં પરિગ્રહરૂપ વૃક્ષના અર્થવાળો
સમજવાનો છે કારણ કે તે વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે સૂત્રકાર જે વિશેષણો
આ સૂત્રમાં કહી રહ્યા છે તે જ એ વાતને ટેકા આપે છે. “ ણાણામણિ-
કણય-રયણ-મહરિહ-પરિમલ-સપુત્તદાર-પરિજણ-દાસી-દાસ-ભયગ-પેસ-હય-ગો-

सुवर्शिनी टीका अ. ५ सू० १ परिग्रहस्वरूपनिरूपणम्

५०१

अय-गवेलग-सीयासगड-रह-जाण-जुग-संदण-सयणा-सण-वाहण-कुविय-
धण-धण-पाण-भोयण-च्छायण-गंध-मल्ल-भायण-भवणविहिं ' नानामणि—
कनक-रत्न-महार्ह-परिमल-सपुत्रदार-परिजन-दासी-दास-भृतक-प्रेष्य-हय-
गज-गो-महिषो-ष्ट्र-खरा-ज-गवेलक - शिविका - शकट-रथ-यान-युग्य-
स्पन्दन-शयनाऽऽसन-वाहन-कुप्य-धन-धान्य-पान-भोजना-ऽऽच्छादन-गन्ध-
माल्य-भाजन-भवनविधिम् । तत्र- ' णाणामणि ' नानामणयः-नाना=अनेक
प्रकारा ये मणयः=चन्द्रकान्तादयः, ' कणग ' कनकं=सुवर्ण ' रयणं ' रत्नानि=
कर्केतनादीनि, ' महारिह परिमल ' महार्ह परिमलाः - बहुमूल्यसुगन्धिपदार्थाः,
तथा ' सपुत्रदार ' सपुत्रदाराः-पुत्रसहिताः स्त्रियः, तथा ' परिण ' परिजनः-
परिवारः=पौत्रादिरूपः, ' दासीदासं ' दासीदासं=दास्यो दास्यश्च ' भयग '
भृतकाः=कर्मकराः, ' पेस ' प्रेष्याः-प्रयोजनेषु प्रेषणीयाः, ' हय ' हयाः-अश्वाः
' गय ' गजाः ' गी ' गावः ' महिस ' महिषाः ' उट्ट ' उष्ट्राः, ' खर ' खराः
गर्दभाः ' अय ' अजाः ' गवेलग ' गवेषकाः=मेघाः, ' सीया ' शिविकाः, ' सगड ' शक-
टानि=गन्धः, ' रह ' रथाः ' जाण ' यानानि यानपात्राणि ' जुग ' युग्यानि-गोल-
देश प्रसिद्ध जम्पानविशेषाः ' संदण ' स्पन्दनाः-रथविशेषाः, ' सयणासण '
शयनासनानि=शय्या आसनानि च ' वाहण ' वाहनानि- ' तामजाम ' इति देशी

-महिस-उट्ट-खर-अय-गवेलग-सीया-सगड-रह-जाण-जुग-संदण-
सयणा-ऽऽसण-वाहण-कुविय-धण-धण-पाण-भोयण-च्छायण-गंध-
मल्ल-भायण-भवण-विहिं) चन्द्र कान्त आदि विविध प्रकार के मणि,
कनक-सुवर्ण, कर्केतनादि रत्न, बहुमूल्य परिमल-सुगन्धित पदार्थ,
पुत्रसहित स्त्रीजन, पौत्रादिरूप परिजन, दासी दास, भृतक-कर्मकर,
प्रयोजन के अवसर पर भेजने योग्य प्रेष्य, हय-अश्व, गज-हाथी, गाय,
महिष, ऊँट, खर-गधा, अज-बकरावकरी, गवेलक-मेघ-मेंढा, शिविका-
पालखी, शकट-गाड़ी, रथ, यानपात्र, युग्य-गोलदेश प्रसिद्ध जम्पाविशेष
स्पन्दन-रथ, शय्या, आसन, वाहन-तामजान, कुप्य-गृह के उपकरण

महिस-उट्ट-खर-अय-गवेलग-सीया-सगड-रह-जाण-जुग-संदण-सयणा-ऽऽसण-
वाहण-कुविय-धण-धण-पाण-भोयण-च्छायण-गंध-मल्ल-भायण-भवण-विहिं ”
चन्द्रकान्त आदि विविध प्रकारना मणि, कनक-सुवर्ण, कर्केतना आदि रत्न,
बहुमूल्य परिमल-सुगन्धित पदार्थ, सपुत्र स्त्रीजन, पौत्रादिरूप परिजन, दास-
दासी, भृतक-कर्मकर, प्रयोजनने भाटे भोक्तव्यमां आपनार प्रेष्य (हत)
हय-अश्व, गज-हाथी, गाय, ऊँट, अज-बकरी, अज-अकरी, अकरी,
गवेषक घेरा, शिविका-पालखी, शकट-गाड़ी, रथ, यानपात्र, युग्य, स्पन्दन-रथ

भाषा प्रसिद्धानि, 'कुत्रिय' कुप्यानि-गृहोपकरणानि आसन्दीपल्यङ्कादीनि 'धन' धनानि-गणिमादीनि 'धन्न' धान्यानि-शाल्यादीनि, 'पाण' पानानि=दुग्धादीनि, 'भोग' भोजनानि-अग्रादीनि 'आच्छादय' आच्छादनानि-वस्त्रकम्बलादीनि, 'गंध' गन्धा-कोष्ठपुटादि सुगन्धिद्रव्यविशेषाः, 'मल्ल' माल्यानि=पुष्पादीनि 'गंध' गन्धाः-कोष्ठपुटादि सुगन्धिद्रव्यविशेषाः, 'मल्ल' माल्यानि=पुष्पादीनि, 'भायण' भाजनानि-स्थलीकटोरादीनि, 'भवन' भवनानि-प्रासादगृहादीनि, एतेषां द्वन्द्वः, तेषां यो 'विधि' विधिः-विधानम्-उपार्जनं लक्षणं, तं 'चेव' एव=अपि, एव शब्दोऽप्यर्थकः, तमपि 'बहुविधियं' बहुविधिकम्-अनेकप्रकारम् 'भुंजिऊण' भुक्त्वा=उपभुज्य इत्यग्रेण संयन्तः, तथा 'भरं' भरतं=भरतक्षेत्रं च भुक्त्वा=कोटं भरतक्षेत्रमित्याह ? — 'नग' नगर 'इत्यादि । 'नगनगरनिगमजणवयपुरवरदोणमुहखेडकब्बडमडंवसंवाहणपट्टणसहस्सपरिमंडियं' नग-नगर-निगम-जनपद-पुरवर-दोणमुहखेड-कर्वट-मडम्ब-संवाह-पत्तन सहस्रपरिमण्डितम्, तत्र- 'णग' नगाः-पर्वताः 'गगर' नगराणि करवर्जितपुराणि, 'निगम' निगमाः=वणिग्निवासस्थानानि, 'जणवय' जनपदाः=देशाः 'पुरवर' पुरवराणि=नगरस्थानानि राजधान्यादीनि, 'दोणमुह' कुरसी पलंग आदि, गणिमादिक धन, शाल्यादिक धान्य, दुग्धादिरूप पान, भोजन, वस्त्र, कम्बल आदि आच्छादन, कोष्ठपुट आदि सुगन्धित द्रव्यविशेष, पुष्प, स्थली कटोरा आदि भाजन, प्रासाद गृह आदि भवन, इन सब पदार्थों को उपार्जन आदि करने रूप (बहुविधियं चेव) अनेक प्रकार की विधि को भी (भुंजिऊण) भोग करके, तथा (नगनगर-निगमजणवय पुरवर-दोणमुह-खेड-कब्बड-मडंव-संवाह-पट्टणसहस्स परिमंडियं) नग-पर्वत, नगर-अष्टादश प्रकार के कर से रहित पुर, वणिग्जनों के निवास स्थानरूप निगम, जनपद-देश, राजधानी आदि

शय्या, आसन, वाहन, कुप्य-भुरसी पलंग आदि धरतुं रात्रि शयितुं, सोना भंडार आदि धन, शोभा आदि धान्य, दूध आदि पेय द्रव्य, स्नान, वस्त्र, कामण आदि ओढवाना साधना, कोष्ठपुट आदि सुगन्धित द्रव्य, पुष्प, थाणी पाटका आदिवासण, प्रासाद गृह अने भवन, ये सधना पदार्थोंतुं उपार्जन करवाइय " बहुविधियं चेव " अनेक प्रकार तेनो " भुंजिऊण " उपभोग करीने, तथा " नगनगरनिगमजणवय - पुरवर - दोणमुह - खेड - कब्बडमडंव - संवाह - पट्टण - सहस्स - परिमंडियं " नग-पर्वत, नगर अठार प्रकारना करशी रहित शहर, वेपारीजाना निवासस्थानइय निगम, जनपद-देश, राजधानी

सुवर्णिनी टीका अ० ५ सू० १ परिग्रहस्वरूपनिरूपणम्

५०३

द्रोणमुखानि= जलपथ-स्थलपथगम्याः पुरविशेषाः, 'खेड' खेडानि-धूलीप्राकार युक्तानि, 'कर्वड' कर्वटानि=कुस्सितनगराणि 'मडं' मडम्बानि-दूर दूर वसति युक्ताः प्रदेशाः, 'संवाह' संवाहाः=यत्र कृषका धान्यादिकमानीय स्थापयन्ति ते 'पट्टण' पत्तनानि-जलस्थल पथान्यतरपथयुक्तानि निवासस्थलानि, एतेषां द्रव्यः, एषां यत्सहस्रं तेन मण्डितं-शोभितं यत्तत्तादृशं, तथा 'थिमियमेयणीयं' स्तिमितमेदिनीकं-स्तिमिता = स्वचक्रपरचक्रभयवर्जिता, मेदिनी-भूमि र्यस्मिन् तत्तादृशम्, तथा 'एगच्छत्तं' एकच्छत्रम्-एकराजकमित्यर्थः, चक्रवर्त्तिपदप्राप्तेः प्राक् माण्डलिकत्वे एतादृशं भरतक्षेत्रं परिभुज्येत्यर्थः, तथा 'ससागरं' सागरसहितम् 'वसुहं' वसुधां-समग्रां पृथ्वीं च चक्रवर्त्तिपदप्राप्त्यनन्तरं भुक्त्वा, एतद्भोगेऽपीत्यर्थः, 'अपरिमियमणंततण्हमणुगयमहिच्छसारनि-

धेष्ठनगर, जलपथ, स्थलपथ इन दोनों से गम्य स्थान रूप पुरविशेष धूली प्राकार से युक्त खेड, कुस्सितनगररूप कर्वट, दूर दूर वसति से युक्त प्रदेशरूप मडं, संवाह-जहां पर कृषकजन धान्यादि लाकर रखते हैं ऐसे प्रदेश, जल पथ तथा स्थलपथ इन दोनों में किसी एक पथ से युक्त पत्तन, इन सब की हजारों की संख्या से मंडित, तथा (थिमिय-मेयणीयं) स्वचक्र और परचक्र के भय से वर्जित भूमि से युक्त तथा (एगच्छत्तं) एक राजा वाले, चक्रवर्त्ति पद की प्राप्ति के पहिले माण्डलिकपनेमें नगनगरादि सहित (भरह) भरतक्षेत्र को भोग करके, तथा (ससागरं वसुहं वुंजि ऊण) चक्रवर्त्ति पद की प्राप्ति के अनन्तर समुद्र-सहित समस्त पृथ्वीको घटखंड मंडित भरतक्षेत्र को भी भोग करके (अपरिमियमणंततण्हमणुगयमहिच्छारनिरयमूलो) अपरिमित-प्रमाण

आदि श्रेष्ठ नगर, जलमार्ग तथा जमीनमार्ग प्रवेश करी शक्य अबु शहेर पूजना छिला वाणुं भेड, कुस्सित नगर रूप कर्वट जेनी आसपास धण्डे इर सुधी आगे न होय अबु मडं, संवाह-ज्यां भेडूतो धान्यादि लावीने राखे अबु प्रदेश, जलमार्ग तथा स्थलमार्ग जे भन्नेमांथी जेक मार्ग वाणुं पत्तन, जे अधानी हुन्दोनी संज्याथी युक्त, तथा " थिमिय मेयणीय " स्वयंके अने परचक्रना लयथी रहित भूमिवाणा तथा " एगच्छत्तं " जेक राजवाणा, चक्रवर्त्ति पद प्राप्त कर्या पड़ेवां मांडलिक राजा तरीके पर्वतो तथा नगरे रहित " भरह " भरतक्षेत्र पर सत्ता लोगवीने, तथा " ससागरं वसुहं वुंजिऊण " चक्रवर्त्ति पद प्राप्त कर्या पछी समुद्र सहित आभी पृथ्वीने-छ पांड वाणा भरत क्षेत्रने पछु लोगवीने " अपरि-मियमणंत-तण्ह-मणुगय-महिसार-निरयमूलो " अपरि-

રમૂલો ' અપરિમિતાનન્તતૃષ્ણાનુગતમહેચ્છાસારનિરમૂલઃ, અપરિમિતા=પ્રમાણ-
રહિતા યાડનન્તતૃષ્ણા તયાડનુગતા યા મહેચ્છા = અપ્રાપ્તાર્થાભિલાષરૂપા તસ્યાઃ
સારઃ=સ્થિરાંશરૂપો યો નિરમ્યો દુર્ગતિઃ સ એવં મૂલં યસ્ય પરિગ્રહતરો યઃ સઃ
તથોક્તઃ, પુનઃ કીદૃશઃ પરિગ્રહતરુરિત્યાહ—'લોભકલિકસાયમહક્વંધો' લોભ-
કલિકપાયમહાસ્કન્ધઃ=લોભઃ, કલિઃ=યુદ્ધમ્, કપાયઃ - ક્રોધમાનમાયારૂપથ
મહાન્ સ્કન્ધો યસ્ય સઃ, યદપિ કપાય ગ્રહણેનૈવ લોભો મતાર્થઃ, તથાપિ તસ્ય પ્રાધા-
ન્ય રૂપાવનાર્થે પૃથગુપાદાનમ્ । તથા 'ચિન્તાસયનિચિયવિઙ્ગસાલો' ચિન્તાશત-
નિચિતવિપુલશાખઃ-ચિન્તાશતનિ નિચિતાનિ-અક્રમીકૃતાન્યેવ વિપુલાઃ-વિશાલાઃ
શાલાઃ-શાખા યસ્ય સઃ 'ચિન્તાશતરૂપવિપુલશાખાસમન્વિતઃ । તથા- 'ગારવ
પવિરલ્લિયમા વિઙ્ગો' ગૌરવપવિરલ્લિયાગ્રવિટપઃ - 'ગારવ' ગૌરવાણિ=
ઋદ્ધિરસસસાતરૂપાણ્યેવ 'પવિરલ્લિય' વિસ્તારવન્તઃ, અયં દેશીશબ્દઃ 'અગ્ર-
વિઙ્ગ' અગ્ર વિટપાઃ=શાખામધ્યમામાગ્રાણિ યસ્ય સઃ, તથા 'નિયદિતયા પત્ત
પલ્લવધરો' નિકૃતિત્વકૂપત્રપલ્લવધરઃ-નિકૃતિઃ-માયા, સૈવ 'તયાપત્તપલ્લવ' '

રહિત-એસી અનંતતૃષ્ણા સે અનુગત અપ્રાપ્ત અર્થે કી અભિલાષ રૂપ
મહેચ્છા કા સાર-સ્થિરાંશરૂપ જો નિરમ્ય-દુર્ગતિ હૈ વહ દુર્ગતિ હી જિસ
પરિગ્રહરૂપ તરુ કા મૂલ હૈ (લોભકલિકસાયમહક્વંધો) તથા જિસકે
મહાન્ સ્કંધ, લોભ-લાલચ. કલિ-યુદ્ધ એવં ક્રોધ, માન, માયા, કપાય
યે હૈ । યદપિ કપાય કે ગ્રહણ સે લોભ કા ગ્રહણ હો જાતા હૈ ફિર બી
ઉસકા જો યહાં પૃથક્ રૂપ સે ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ ઉસકા તાત્પર્ય ઉસકો
પ્રધાનતા દિખલાને કા હૈ । તથા (ચિન્તાસયનિચિયવિઙ્ગ સાલો) જિસકી
વિશાલ શાખાઈ અક્રમીમૂત સંકુલો ચિન્તઈ હૈ । તથા (ગારવપવિરલ્લિયમા-
વિઙ્ગો) ઋદ્ધિ રસસાતરૂપ ગૌરવ હી જિસકે વિસ્તાર યુક્ત અગ્રવિટપ હૈ-
શાખા કે મધ્યભાગ એવં અગ્રભાગ હૈ । (નિયદિતયાપત્તપલ્લવધરો) નિકૃતિ-

મિત-પ્રમાણુ રહિત તૃષ્ણાથી અપ્રાપ્ત વસ્તુ પ્રાપ્ત કરવાની અભિલાષા રૂપ મહે-
ચ્છાનો સાર-સ્થિરાંશરૂપ જો દુર્ગતિ છે તે દુર્ગતિ જ તે પરિગ્રહરૂપી વૃક્ષનું
મૂળ છે, “લોભકલિકસાયમહક્વંધો” લોભ, -લાલચ, કલિ-યુદ્ધ અને ક્રોધ,
માન, માયા, કપાય આદિ તે વૃક્ષના મહાન સ્કંધો છે. જો કે કપાયમાં લોભનો
સમાવેશ થઈ જાય છે છતાં પણ તેને આહી' અલગ રીતે ગ્રહણ કરવામાં
આવેલ છે તેનો હેતુ તેની પ્રધાનતા બતાવવાનો તથા “ચિન્તાસય નિચિય વિઙ્ગ
સાલો” સેકંડો એકત્રિત ચિન્તાઓ તેની શાખાઓ છે તથા “ગારવ પવિરલ્લિ-
યમાવિઙ્ગો” ઋદ્ધિરસ સાતરૂપ ગૌરવ જ તેના વિસ્તાર યુક્ત અગ્રવિટપ છે-
શાખાના મધ્ય ભાગ અને અગ્રભાગ છે. “નિયદિતયાપત્તપલ્લવધરો” નિકૃતિ-

સ્વરૂપવપલ્લવાઃ, તેવાં વરા-ધારકાઃ । તથા 'જસ્મ' યસ્ય પરિગ્રહતરોઃ 'કામ-
ભોગા' કામાભોગા એવ 'પુષ્પફલં' પુષ્પફલાનિ । તથા-આયાસવિસૂરણા-
કલહપકંપિયમ્સિદ્ધરો ' આયાસવિસૂરણાકલહપ્રકમ્પિતાગ્રશિસ્તરઃ-આયાસઃ=
શરીરશ્રમઃ, વિસૂરણ=માનસી પીડા, કલહઃ=વચનમ્પ્રહનમ્. એવ એવ પ્રકમ્પિત-
મગ્રશિસ્તરમ્=અગ્રભાગો યસ્ય સઃ, તથા 'નરવહસંપૂજિઓ' નરપતિસંપૂજિતઃ=
ભૂતિપરિસેવિતઃ, તથા -'વહુજનસ્સ હિયયદ્દઓ' વહુજનસ્ય હૃદયદધિતઃ-
અનેકજનવલ્લભઃ इत्यर्थः, તથા-અગ્રે પરિગ્રહ તરુઃ-'ઇમસ્સ' અસ્ય-પ્રત્યક્ષસ્ય
'મોક્ષવરમુત્તિમગ્ગસ્સ' મોક્ષવરમુક્તિમાર્ગસ્ય-મોક્ષસ્ય વરઃ-શ્રેષ્ઠો યો મુક્તિરૂપો
નિર્લોભતારૂપો માર્ગઃ=ઉપાયસ્તસ્ય 'ફલિહ્મૂઓ' અર્ગલાભૂતઃ-મોક્ષસ્યાવરોધક-
કાષ્ટભૂતો વર્ત્તને, इत्येवं સ્વરૂપં 'ચરિમં અહમ્મદારં' ચરમમર્મદારમ્=અન્તિમ-
મર્મર્થદામ્ । એતદ્ધતેન યાદયેતિ પ્રથમમન્તરદ્વારમુક્તમ્ ॥ સુ. ૧ ॥

માયાચારી હી जिसकी छाल है, पत्र हैं और पड़व हैं । (जस्स पुष्पफलं-
कामभोगा) कामभोग ही जिसके पुष्प और फल हैं । (आयासविसूर-
णाकलहपकंपियमसिहरी) आयास शारीरिकश्रम विसूरणा-मानसिक
पीडा, और कलह, ये ही जिस के प्रकंपित अग्रभाग हैं (नरवहसंपूजिओ)
तथा यह परिग्रहरूप वृक्ष भूतियों द्वारा परिसेवित है, -और (वहुजन-
स्सहिययददओ) अनेक जनों को अत्यंत प्यारा है, (इमस्स मोक्खवर
मुत्तिमगगस्स फलिह्मूओ) तथा यह परिग्रहरूप वृक्ष मोक्ष के श्रेष्ठ
मुक्तिरूप-निर्लोभतारूप-मार्ग का अर्गला रूप है । (चरिमं अहम्मदारं)
ऐसा यह पांचवां अन्तिम अधर्मद्वार है ।

भावार्थ—परिग्रह मात्र भ्रमत्वभाव का है । इसकी दूसरी संज्ञा
मूर्च्छा भी है । इस मूर्च्छारूप तृष्णा का अन्त नहीं है । परिग्रह के

માયાચારી જ તેની છાલ પાન અને પડવ છે. “ જસ્સ પુષ્પફલં કામભોગા ”
કામભોગ જ તેનાં પુષ્પ અને ફળ છે. “ આયાસ વિસૂરણાકલહપકંપિયમ
સિદ્ધરો ” આયાસ-શારીરિકશ્રમ, વિસૂરણા-માનસિક પીડા અને કલહ, એ જ
તેના ઊદાશ્યમાન અગ્રભાગો છે. “ નરવહ સંપૂજિઓ ” તથા આ પરિગ્રહરૂપ
વૃક્ષનું નૃપે. સેવન કરે છે. અને “ વહુજનસ્સ હિયયદ્દઓ ” તે અનેક લોકોને
અત્યંત પ્રિય લાગે છે, “ ઇમસ્સ મોક્ષવરમુત્તિમગ્ગસ્સ ફલિહ્મૂઓ ” તથા આ
પરિગ્રહ રૂપ વૃક્ષ મોક્ષના શ્રેષ્ઠ મુક્તિરૂપ-નિર્લોભતારૂપ માર્ગના આડે આંજ-
ળીયા બેવું છે. “ ચરિમં અહમ્મદારં ” એવું આ પાંચમું અધર્મ દ્વાર છે.

ભાવાર્થ—ભ્રમત્વ ભાવને પરિગ્રહ કહે છે. તેનું ત્રામ મૂર્ચ્છા પણ છે. આ
મૂર્ચ્છારૂપ તૃષ્ણાનો પાર જ હોતો નથી. પરિગ્રહના પંજામાં ફસાયેલ જીવ

ફંદે મેં ફંસા હુઆ પ્રાણી અપની અનંત તૃષ્ણાઓં કી પૂર્તિ કરને મેં હી લગા રહના હૈ । ઉસકી કોઈં ભી તૃષ્ણા શાંત નહીં હોતી હૈં । યદિકદા-ચિત્ કોઈં તૃષ્ણા શાંત ભી હો જાવે તો દૂમરી તૃષ્ણા ઉસકે સમક્ષ મુંહ ફાઢકર આ જાતી હૈ, ઓર ઉસકી પૂર્તિ કરને મેં યહ લગ જાતે હૈ । હસ તરહ કરતે ૨ યહ પ્રાણી ઉનકી પૂર્તિ કરને મેં આસ-ક્તિ સે બંધ હોતા જાતા હૈ ઓર અપના વિવેક સ્ત્રો બૈઠતા હૈ । વિવેક કા સ્ત્રો બૈઠના પરિગ્રહ હૈ । યહાં પર સૂત્રકાર ને હસ પરિગ્રહરૂપ પંચમ આસ્રવ દ્વાર કા વર્ણન વૃક્ષ કે રૂપક સે કિયા હૈ । પરિગ્રહી જીવ છોટી, બડી, જઢ, ચેતન, બાહ્ય યા આન્તરિક ચાહે જો વસ્તુ હો, ઓર કદાચિત્ ન ભી હો તો ભી ઉસમેં બંધ જાતા હૈ । નાના પ્રકાર કે મણિ આદિ પદાર્થોં કો ભરતલુંડ કી પૂર્ણ વિમૂત્તિ કો ભોગ કરકે ભી પરિગ્રહી જીવ કી તૃષ્ણા અનવરત અશાંત હી રહતી હૈ । હસ વૃક્ષ કી જઢ, સંકંઘ, વિશાલ શાખાઈ, અગ્રવિટપ, છાલ, પત્ર, પલ્લવ, પુષ્પ, ફલ, આદિ ક્યા ૨ હૈં યહ સવ વિષય હી હસ સૂત્ર મેં વિવેચિત્ કિયા ગયા હૈ । હસ તરહ કે કથન સે સૂત્રકાર ને પરિગ્રહ કા યાદશ નામકા જો પ્રથમ અન્તર્દાર હૈ ઉસકા વર્ણન કિયા હૈં, ક્યોંકિ હસ દ્વાર મેં સ્વરૂપ કા કથન હોતા હૈ, વહ યહાં પર અચ્છી તરહ સે દિલ્લા દિયા ગયા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

પોતાની અનંત તૃષ્ણાઓ પૂરી કરવામાં જ મગ્ન રહે છે. તેની કોઈ પણ તૃષ્ણા શાંત પડતી નથી. જો કોઈ તૃષ્ણા શાંત પડી તો તેની જગ્યાએ બીજી તૃષ્ણા મોઢું ફાડીને તૈયાર થઈ જાય છે, અને તે સંતોષવાને તે જીવ પ્રવૃત્ત થાય છે. આમ કરતાં કરતાં તેની પૂર્તિ કરવામાં આગ્રહિતથી બંધાય જાય છે અને પોતાની વિવેક બુદ્ધિ ગુમાવી દે છે. વિવેકને જોઈ નાખવો તે પરિગ્રહ છે. અહીં સૂત્રકારે પરિગ્રહ નામના પાંચમા આસ્રવ દ્વારનું વર્ણન પરિગ્રહને વૃક્ષનું રૂપક રૂઢિને કયું છે. પરિગ્રહી જીવ, નાની, મોટી, જઢ, ચેતન, બાહ્ય કે આંતરિક ગમે તે પ્રકારની સ્ત્રીજમાં આસ્રજા બની જાય છે. વિવિધ પ્રકારના મણિ આદિ પદાર્થોના તથા ભરતળુંડની સંપૂર્ણ સંમુદ્ધિને ઉપભોગ કરીને પણ પરિગ્રહી જીવની તૃષ્ણા સતત અશાંત જ રહે છે આ પરિગ્રહરૂપ વૃક્ષનાં મૂળ, ઘડ, વિશાળ શાખાઓ, અગ્રવિટપ, છાલ, પાત્ર, પલ્લવ; પુષ્પ, ફળ વગેરે શું શું છે, તે બધાનું વિવેચન આ સૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણેના કથન વડે સૂત્રકારે પરિગ્રહના યાદશ (કેવા પ્રકારનું) નામના પહેલાં અંતર્દારનું વર્ણન કયું છે, કારણ કે આ દ્વારમાં સ્વરૂપનું કથન થાય છે. તે સ્વરૂપનું વર્ણન અહીં સુંદર રીતે કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ-૧ ॥

सुदर्शिनी टीका अ० ५ सू० २ परिग्रहस्य त्रिश्रामनिरूपणम्

५०४

अधुना यन्नामेति द्वितीयमन्तरद्वारमाह—

मूलम्—तस्स नामाणि गोणाणि हुंति तीसं, तं जहा—
परिग्रहो १, संचयो २, चयो ३, उवचयो ४, निहाणं ५,
संभारो ६, संकरो ७ एवं आयारो ८, पिंडो ९, दव्वसारो
१०, तहा महिच्छा ११, पडिवंधो १२, लोहप्पा १३, महट्ठी
१४, उवगरणं १५, संरक्खणाय १६, भारो १७, संपायुपायको
१८, कलिकरंडी १९, पविस्थरो २०, अणत्थो २१, संथवो २२
अयुत्ती २३, आयासो २४, अविओगो २५, अमुत्ती २६, तण्हा
२७, अणत्थगो २८, असत्थी २९, असंतोसे ३०, त्तिविय,
तस्स एयाणि एवमादी नामधेजाणि हुंतितीसं ॥ सू० २॥

टीका—‘तस्य य’ इत्यादि—

‘तस्स’ तस्य—परिग्रह नामक पञ्चमार्थद्वारस्य च ‘नामाणि’ नामानि
‘इमानि—अनुपदं वक्ष्यमाणानि ‘गोणाणि’ गौणानि—गुणनिष्पन्नानि ‘हुंति’
भवन्ति, कियत्संख्यकानि भवन्ति? इत्याह—‘तीसं’ त्रिंशत्संख्यकानीति,
‘तंजहा’ तद्यथा—‘परिग्रहो’ परिग्रहः—परिश्रुयते इति परिग्रहः—हिरण्य
सुवर्ण धनधान्यादिः, १ ‘संचयो’ संचयः—धनधान्यादि राशीनां समूहीकरणम् २
‘चयो’ चयः—एकैकमिति कृत्वाऽऽदानम् ३, ‘उवचयो’ उपचयः—एकैकमिति
कृत्वाऽऽदानां धनधान्यादिनां राशिकरणम् ४, ‘निहाणं’ निधानं भुम्पादौ

अथ “यन्नाम” इति द्वितीय अन्तर्द्वार को सूत्रकार कहते है—
‘तस्स नामाणि’ इत्यादि० ।

टीकार्थ—(तस्स) इस परिग्रह के (गोणाणि नामाणि तीसं हुंति)
गुण निष्पन्न तीस नाम हैं । (तंजहा) वे इस प्रकार हैं—(परिग्रहो १,
संचयो २, चयो ३, उवचयो ४, निहाणं ५, संभारो ६, संकरो ७, एवं—

इये “यन्नाम” ओ पीछे अन्तर्द्वारतुं सूत्रकार वर्णन करे छे—

“तस्स नामाणि” इत्यादि.

टीकार्थ—“तस्स” आ परिग्रहनां “गोणाणि नामाणि तीसं हुंति” गुणा-
नुसार तीस नामो छे. “तंजहा” ते तीस नामो आ प्रमाणे छे—“परि-
ग्रहो १ संचयो २ चयो ३ उवचयो ४ निहाणं ५ संभारो ६ संकरो ७ एवं आयारो ८

નિધાનરૂપેણ સ્થાપનમ્ ૫, 'સંમારો' સંમાર:-સંશ્રિયતે સંમરણં વા સંમાર:-કોષ્ટાદૌ
મરણમિત્યર્થઃ ૬, 'સંકરો' સંકર:-સંકીર્યતે=સંપિન્દ્યતે इति, સડ્ઘર:-સુવર્ણ
રજતાદીન્ વક્તૌ પરિદ્રવ્ય પાશકાદિરૂપકરણમ્ ૭, 'એવં આયારો' એવમાચાર:-

આયારો ૮, પિંડો ૯, દ્વચસારો ૧૦, તહા મહિચ્છા ૧૧, પડિચંધો ૧૨,
લોહપ્પા ૧૩, મહટ્ટો ૧૪, ઉવગરણં ૧૫, સંરક્ષણા ય ૧૬, મારો ૧૭, સંપાયુપાયકો, ૧૮, કલિકરંડી ૧૯, પવિત્થરો ૨૦, અણત્થો ૨૧, સંથવો
૨૨, અમુત્તી ૨૩, આયાસો ૨૪, અવિઓગો ૨૫, અમુત્તી ૨૬, તણ્હા ૨૭,
અણત્થગો ૨૮, આસત્થી ૨૯, અસંતોસે ૩૦, તિ ત્રિય, તસ્સ ઇયાણિ
એવમાઈ નામધેજ્જાણિ હંતિ તીસં) હિરણ્ય, સુવર્ણ, ધન, ધાન્ય આદિ,
પદાર્થ ગ્રહણ કિયે જાતે હેં હસલિયે યે પરિગ્રહ હેં અતઃ હસકા પ્રથમ
નામ પરિગ્રહ હેં ૧ । ધન ધાન્ય આદિકી રાશિયાં હસમેં એકત્રિત કી
જાતી હે અતઃ હસ અપેક્ષા હસકા દૂસરા નામ સંચય હે ૨ । પરીગ્રહી
જીવ એક એક કરકે વસ્તુઓં કા સંગ્રહ યા ગ્રહણ કરતા હે, હસ અપેક્ષા
હસકા તીસરા નામ ચય હે ૩ । ઉપચય શબ્દ કા અર્થ વૃદ્ધિ હે, ક્રમ ક્રમ
કરકે કમાયે મધે ધન ધાન્ય આદિ પદાર્થોં કા હસ ઉપચય મેં વર્ધન
હોતા હે હસલિયે હસકા ચૌથા નામ ઉપચય હે ૪ । જમીન આદિ મેં
ધનાદિદ્રવ્ય કો પરિગ્રહી જીવ ગાડુ દિયા કરતે હે, તાકિ ચૌર આદિ
સે ડસકી રક્ષા હોતી રહે, હસલિયે હસકા પાંચવા નામ નિધાન હે ૫,
કોષ્ટ આદિ મેં જો વર્દિત ધાન્ય આદિ પદાર્થ ભરકર રાખ દિયે જાતે હે,

પિંડો ૯ દ્વચસારો ૧૦ તહા-મહિચ્છા ૧૧ પડિચંધો ૧૨ લોહપ્પા ૧૩ મહટ્ટો ૧૪
ઉવગરણં ૧૫ સંરક્ષણાય ૧૬ મારો ૧૭ સંપાયુપાયકો ૧૮ કલિકરંડી ૧૯
પવિત્થરો ૨૦ અણત્થો ૨૧ સંથવો ૨૨ અમુત્તી ૨૩ આયાસો ૨૪ અવિઓગો ૨૫
અમુત્તી ૨૬ તણ્હા ૨૭ અણત્થગો ૨૮ આસત્થી ૨૯ અસંતોસે ૩૦ તિ ત્રિય
તસ્સ ઇયાણિ એવમાઈ નામધેજ્જાણિ હંતિ તીસં ” (૧) હિરણ્ય, સુવર્ણ, ધન,
ધાન્ય આદિ પદાર્થોં ગ્રહણ કરવામાં આવે છે તેથી તે પરિગ્રહ છે તેથી તેનું
નામ ‘પરિગ્રહ’ છે (૨) ધન ધાન્ય આદિના ઢગલા તેમાં એકત્ર કરાતા
હોવાથી તેનું બીજું નામ ‘સંચય’ છે. (૩) પરિગ્રહી જીવ એકે એકે વસ્તુ-
ઓના સંગ્રહ કરે છે અથવા તેને ગ્રહણ કરે છે, તેથી તેનું ત્રીજું નામ ‘ચય’
છે. (૪) ઉપચય શબ્દનો અર્થ વૃદ્ધિ થાય છે. ક્રમે ક્રમે કમાયેલ ધન ધાન્ય
આદિ પદાર્થોંમાં આ ઉપચયમાં વર્ધન થાય છે, તેથી તેનું ચોથું નામ ‘ઉપ-
ચય’ (૫) ચોર આદિથી રક્ષણ કરવા માટે ધન આદિ દ્રવ્યને પરિગ્રહી લોકો
દ્વારા દે છે. તેથી તેનું પાંચમું નામ ‘નિધાન’ છે. (૬) કોડી આદિમાં વધેલ

સુદર્શિની ટીકા અં ૫ સૂ ૨ પરિગ્રહસ્ય ત્રિજન્માનિરૂપણમ્

૫૦૬

एवम्-यथा धनप्राप्तिर्भवेदेवम्, आचारः-आचरणम् ८, ' पिण्डो ' पिण्डः=धन-
धान्यादीनां समुदायः ९, ' द्रव्यसरो ' द्रव्यसारः-द्रव्याणामेव सर्वोत्कृष्टपदार्थ-
त्वेन परिज्ञानम् १०, ' तदा ' तथा ' महेच्छा ' महेच्छा-अपरिमितवाञ्छा ११,
' पटिवंधो ' प्रतिबन्धः-आसक्तिकारकः १२, ' लोहपा ' लोभात्मा-लोभ-

અતઃ: હસકા નામ સંભાર હૈ । પરિગ્રહી જીવ ધાન્ય આદિ પદાર્થોં કો કોષ્ઠ આદિ મેં ભરકર રાખ દેતા હૈ-તાકિ આવશ્યકતા પડને પર વેકામ મેં લાયે જા સકે-હસલિયે હસકા છઠા નામ સંભાર હૈ ૬ । પરિગ્રહી જીવ સુવર્ણ આદિ દ્રવ્યકે અધિક હો જાને પર ઊનકા અગ્નિ મેં ગલવા-કર પાશા કરવા લેતા હૈ, હસલિયે હસકા સાતવાં નામ સંકર હૈ ૭ । ધન કમાને કી લાલસા સે પરિગ્રહી જીવ ંસા આચરણ કરતાહૈ કિ જિસસે ધન કાલામ અધિકમાત્રા મેં હોતારહે, હસલિયે હસકા આઠવા નામ એવમાચાર હૈ ૮ । પિણ્ડ હસકા નામ હસલિયે હૈ કિ હસ મેં ધન ધાન્યાદિ પદાર્થોં કા સમુદાય પિણ્ડરૂપ સે ઘર મેં રહા કરતા હૈ ૯ । પરિગ્રહી જીવ ધનાદિ પદાર્થોં કો હી સર્વોત્તમ માનતા હૈ હસલિયે ઇનકા નૌવાં નામ દ્રવ્યસાર હૈ ૧૦ । પરિગ્રહી જીવ કી ઇચ્છાએં આકાશ કી તરહ અનંત હુઆ કરતી હૈં હસલિયે હસ કા નામ મહેચ્છા હૈ ૧૧ । મણુષ્યોં મેં હસ પરિ-ગ્રહ સે હી પર કે દ્રવ્યોં મેં આસક્તિ જગતી હૈ હસલિયે હસકા નામ પ્રતિબંધ હૈ ૧૨ । પરિગ્રહી જીવ મેં લોભ કી માત્રા વહુત અધિક હોતી

ધાન્ય આદિ પદાર્થોં ભરીને સખી મૂકાય છે, તેથી તેનું નામ ' સંભાર ' છે. પરિગ્રહી એવ ધાન્યાદિ પદાર્થોંને કોઠી આદિમાં ભરી રાખે છે કે જેથી જરૂર પડે ત્યારે તેનો ઉપયોગ કરી શકાય, તેથી તેનું છઠું નામ ' સંભાર ' છે. (૭) પરિગ્રહી એવ મુચ્છુ આદિ દ્રવ્ય વધી વતય છે ત્યારે તેને અગ્નિમાં ગળાવીને તેના પાશા પડાવી લે છે, તેથી તેનું સાતમું નામ ' સંકર ' છે. (૮) ધન કમાવાની લાલસાથી પરિગ્રહી એવ એવુ આચરણ કરે છે કે જે આચરણથી ધન પ્રાપ્તિ વધુ પ્રમાણમાં થતી રહે, તેથી તેનું આઠમું નામ એવમાચાર છે. (૯) તેનું નવમું નામ ' પિંડ ' એ કારણે છે કે પરિગ્રહી એવ ધન ધાન્યાદિ પદાર્થોંના જથ્થો પિંડરૂપે ઘરમાં રાખ્યા કરે છે. (૧૦) પરિ-ગ્રહી એવ ધનાદિ પદાર્થોંને જ સર્વોત્તમ માને છે, તેથી તેનું દસમું નામ ' દ્રવ્યસાર ' છે. (૧૧) પરિગ્રહી એવાની ઇચ્છાએ આકાશની જેમ અનંત હોય છે, તેથી તેનું નામ " મહેચ્છા " છે. (૧૨) આ પરિગ્રહને કારણે જ પર દ્રવ્યમાં માણસોને આસક્તિ પેદા થાય છે. તેથી તેનું નામ ' પ્રતિબંધ ' છે. (૧૩) પરિગ્રહી એવમાં કોભની માત્રા ઘણી જ વધારે હોય છે, તેથી તે

સ્વભાવઃ ૧૩, 'મહત્તી' મહાત્તિઃ, મહાત્તેઃકાઘ્નત્વાત્ ૧૪, 'ઉપકરણ' ઉપકરણ= સામગ્રી ૧૫, 'સંરક્ષણય' સંરક્ષણ ચ-શરીરાદીનાં સંરક્ષણમિત્યર્થઃ ૧૬, 'ભારો' ભારઃ-અણ્ કર્મભારકારણમ્ ૧૭, 'સંપાતોપાયકો' સંપાતોપાયકઃ-સંપાતાનાં-દુર્ગતૌ પ્રસ્થિતાનામ્ ઉપાયકો માર્ગભૂતઃ ૧૮, 'કલિકરંડો' કલિકરણ્ડઃ-કલીનાં-કલદ્વાનાં કરણ્ડ ઇવપાત્રવિશેષ ઇવ કલિકરણ્ડઃ ૧૯, 'પવિત્ર્યો' પ્રવિસ્તરઃ-ધનધાન્યાદિવિસ્તારઃ ૨૦, 'અણત્યો' અનર્થઃ-અનર્થકારણત્વાત્ ૨૧, 'સંધવો' હૈ, ઇસલિયે યહ પરિગ્રહ લોભાત્મા લોભ સ્વભાવ હૈ ૧૩। ઇસ પરિગ્રહ સે જીવ કો વડી સે વડી આર્તિયોં કા સામના કરના પડતા હૈ અતઃ ડન આર્તિયોં કા કરણ હાને સે યહ પરિગ્રહ મહાનિરૂપ હૈ ૧૪। ઇસ પરિગ્રહ કે પ્રભાવ સે હી વિવિધ પ્રકાર કી સામગ્રી જીવ એકત્રિત કરતા હૈ અતઃ ઇસકા નામ ઉપકરણ હૈ ૧૫। પરિગ્રહી જીવ અપનેશરીર આદિ પદાર્થોં કી રક્ષા કરને મેં વિશેષ સાવધાન રહતા હૈ। ઇસલિયે ઇસકા નામ સંરક્ષણ હૈ ૧૬। પરિગ્રહી જીવ કે પરિણામોં કી સંકલેશ-તા કે કારણ અણ્વિધ કર્મોં કા બંધ વહુત તીવ્ર હોતા હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ ભાર હૈ ૧૭। પરિગ્રહી જીવ કા પતન દુર્ગતિ મેં હોતા હૈ અતઃ દુર્ગતિ મેં પતન હોને કા યહ માર્ગભૂત હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ સંપાતોપાયક હૈ ૧૮। પરિગ્રહી જીવ કે અનેક શત્રુ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ હર એક કે સાથ કલહ આદિ હોને લગતે હૈ ઇસલિયે યહ પરિગ્રહ કલહોં કા એક પ્રકાર કા કરણ્ડપિટારા હૈ-ઇસલિયે ઇસકા નામ કલહકરણ્ડ હૈ ૧૯। પરિગ્રહી જીવ અપને ધન ધાન્ય આદિ પદાર્થોં કા વિસ્તાર કરને

પરિગ્રહ લોભાત્મા લોભ સ્વભાવ છે. (૧૪) આ પરિગ્રહને લીધે જીવને મોટામાં મોટી આફતોને સામનો કરવો પડે છે, તેથી એ આર્તિયો (આફતો) નું કારણ હોવાથી તેપરિગ્રહ મહાત્તિરૂપ છે. (૧૫) તે પરિગ્રહના પ્રભાવથી જ વિવિધ પ્રકારની સામગ્રી જીવ એકત્રિત કરે છે, તેથી તેનું નામ 'ઉપકરણ' છે. (૧૬) પરિગ્રહી જીવ પોતાના શરીર આદિ પદાર્થોના રક્ષાણુને માટે વધારે સાવધાન રહે છે, તેથી તેનું નામ 'સંરક્ષણ' છે. (૧૭) પરિગ્રહી જીવની વૃત્તિઓની સંકુચિત-તાને કારણે અણ્વિધ કર્મોના બંધ ઘણો જ તીવ્ર હોય છે, તેથી તેનું નામ 'ભાર' છે. પરિગ્રહી જીવ દુર્ગતિમાં પડે છે. દુર્ગતિમાં પતન કાવવાના રાહરૂપ હોવાને કારણે તેનું નામ 'સંપાતોપાયક' છે. (૧૮) પરિગ્રહી જીવના અનેક શત્રુઓ પેદા થાય છે. દરેકની સાથે તેને કલહ આદિ થયા કરે છે. તે કારણે ને પરિગ્રહ કલહોના એક પ્રકારના કરડિયા જેવો હોવાથી તેનું નામ 'કલહકરણ્ડ' છે. (૨૦) પરિગ્રહ જીવ પોતાના ધન ધાન્ય આદિ પદાર્થોને

संस्तवः=परिचयः=परिचयकारणत्वात् २२, 'अगुप्ति' अगुप्तिः=तृष्णाया अगोपनम् २३, 'आयासो' आयासः=दुःखम्, आयासहेतुत्वात्परिग्रहोऽप्यायासः—
 उक्तः २४, 'अविओगो' अवियोगः=धनादपरित्यागः २५ 'अमुक्ती' अमुक्तिः=अनिर्लोभता २६, 'तृष्णा' तृष्णा=धनादेराकाङ्क्षा २७, 'अनर्थको' अनर्थकः=अनर्थकारणत्वात् २८, 'आसक्ती' आसक्तिः=मूर्च्छा, तत्कारणत्वात् २९,
 में लगा रहता है इसलिये इसका नाम प्रविस्तर है २०। परिग्रह अनेक अनर्थों का कारण रहता है इसलिये इसका नाम अनर्थ है २१। परिग्रही जीवका अनेक जीवों के साथ संस्तवपरिचय रहता है। इसलिये परिचय का कारण होने से इसका नाम संस्तव है २२। इसमें तृष्णाका गोपन नहीं होता है—अतः इसका नाम अगुप्ति है २३। परिग्रह की ज्वाला में जलते हुए जीव को बहुत अधिक आयासों दुःखों को भोगना पड़ता है इसलिये उनका हेतु होने से परिग्रह का नाम भी आयास है २४। परिग्रही जीव में लोभ की अधिक से अधिक मात्रा होने के कारण वह धनादिक का परित्याग दान आदि सत्कृत्यों में भी नहीं कर सकता है इसलिये इसका नाम अवियोग है २५। इस परिग्रही जीव में निर्लोभता नहीं होती है इसलिये इसका नाम अमुक्ति है २६। धनादिक के आगमन-आय की आकांक्षा परिग्रही जीव के सदाकाल रहती है इसलिये इसका नाम तृष्णा है २७। परिग्रह अनेक अनर्थों का कारण है इसलिये इसका नाम अनर्थक है २८। मूर्च्छा का कारण होने से इसका

विस्तार करवामां वाञ्छे रडे छे, छेथी तेनुं नाम 'प्रविस्तर' छे. (२१) परिग्रह अनेक आर्थानुं कारणु भने छे, तेथी तेनुं नाम 'अनर्थ' छे. (२२) परिग्रही लवने अनेक लवनी साथे 'संस्तव' परिचय थतो रडे छे, तेथी परिचयनुं कारणु होवथी तेनुं नाम 'संस्तव' छे. (२३) तेमां तृष्णानुं गोपन थतुं नथी, तेथी तेनुं नाम 'अगुप्ति' छे. (२४) परिग्रहनी ज्वालामां जणता लवने धणु वधारे आयासो-दुःखो भोगववा पडे छे. तेथी ते आयासोना कारणरूप होवथी परिग्रहनुं नाम पणु "आयास" छे. (२५) परिग्रही लवमां लोलनी मात्रा वधारेमां वधारे होवने कारणु तेओ दान आदि सत्कृत्योमां धनने परित्याग करी शकता नथी. तेथी तेनुं नाम 'अवियोग' छे. (२६) ते परिग्रही लवमां निर्लोभता होती नथी, तेथी तेनुं नाम 'अमुक्ति' छे. (२७) धनादि पदार्थो भोगववानी आकांक्षा परिग्रही लवने सदाकाल रडे छे, तेथी तेनुं नाम 'तृष्णा' छे. (२८) परिग्रह अनेक अनर्थोने माटे कारणरूप होय छे, तेथी तेनुं नाम 'अनर्थक' छे. (२९) मूर्च्छा 'आसक्ति' नुं कारण

‘અસંતોસેત્તિ વિ ય’ અસંતોષઃ ૩૦, इत्यपि च ‘तस्स’ तस्य-परिग्रहस्य ‘एयाणि’ एतानि ‘एवमादि’ एवमादीनि-उक्तप्रकाराणि ‘नामधेज्जाणि’ नामधेयानि=नामानि ‘हुंति’, भवन्ति ‘तीसं’ त्रिशत् । परिग्रहस्य परिग्रहाद्य-संतोषान्तानि त्रिंशन्नामधेयानि भवन्तीत्यर्थः । अनेन ‘यन्नामेती’ द्वितीयमन्तर-द्वारमुक्तम् ॥ सू० ૨ ॥

અથ યથા યે પરિગ્રહં કર્વન્તિ તાનાહ—‘તં ચપુણે’ इत्यादि—

મૂલમ્—ત ચ પુણ પરિગ્રહં મમાયંતિ લોભઘટથા ભવણવર
ત્રિમાણવાસિણો પરિગ્રહ રૂઢિયા પરિગ્રહે ત્રિવિહકરણબુદ્ધી
દેવનિકાયા ય અસુરભુયગસુવન્નવિજ્જુજલણ-દીવ-ઉદહિ
દિસિ-પવળ-ધણિય-અળપન્નિયપળપન્નિય ઇસિયાઇય ભૂયવા-
ઇય કંદિય મહાકંદિયકુહળ પતંગ દેવાપિસાય-ભૂય-જયલ-
રક્ષલ-કિંનર કિંપુરિસ-મહોરગગંધલ્લાય તિરિયવાસી । પંચ-

નામ આસક્તિ હૈ ૨૯ । પરિગ્રહી જીવ કો જીવનભર સુખપ્રદ સંતોષ નહીં હોતા હૈ અતઃ અસંતોષકા હેતુ હોને સે ઇસકા નામ મી અસંતોષ હૈ ૩૦ । ઇસ પ્રકાર ઇસ પરિગ્રહ કે યે પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે તીસ નામ હૈ । ઇસ તરહ ઇસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ને “યન્નામ” યહ દ્વિતીય અન્તર-દ્વાર કહા હૈ ।

ભાવાર્થ—પરિગ્રહ નામકે પંચમ આશ્રય દ્વાર કે કિતને નામ ગુણ નિષ્પન્ન હો સકતે હૈ યહ બાલ સૂત્રકાર ને ઇસ સૂત્ર દ્વારા પ્રદર્શિત કી હૈ । પરિગ્રહ સે છેકર અસંતોષ પર્યન્ત જો યે તીસ નામ પ્રકટ કિયે હૈ વે કહીં તો કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે ઓર કહીં કાર્ય મેં ૨ કારણ કે ઉપચાર સે બનાયે ગયે હૈ, એસા જાનના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

હોવાથી તેનું નામ ‘આસક્તિ’ છે. (૩૦) પરિગ્રહી જીવને જીવનભર સુખપ્રદ સંતોષ થતો નથી, તેથી અસંતોષના કારણરૂપ હોવાથી તેનું નામ ‘અસંતોષ’ છે. આ પ્રમાણે પરિગ્રહના પૂર્વોક્ત ત્રીસ નામ છે. આ રીતે આ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકારે ‘યન્નામ’ નામના બીજા અન્તર દ્વારનું કથન કર્યું છે.

ભાવાર્થ—પરિગ્રહ નામના પાંચમા આશ્રય દ્વારના ગુણ પ્રમાણે કેટલાં નામ હોઈ શકે છે તે બાબત સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં દર્શાવી છે. પરિગ્રહથી લઈને અસંતોષ સુધીના જે ત્રીસ નામો પ્રકટ કર્યા છે તેમાંનાં કેટલાક કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી અને કેટલાંક કાર્યમાં કારણના ઉપચારથી બતાવવામાં આવેલ છે, જેમ સમજવાનું છે. ॥ સૂ-૧ ॥

सुशशिनी टीका अ०५सू० ३ यथा ये परिग्रहं कुर्वन्ति तन्निरूपणम् ५१३

विहा जोड़सिया य देवा वहसइ चंदसूर सुकसणिचलरा
 राहुभूमकेउ बुहा य अंगारका य तत्ततवणिजकणगवण्णा
 जेयगहा जोड़सियम्मि चारं चरंति, केऊय गइरइया अट्टावी-
 सति विहा य नक्खत्त देवगणा णाणासंठाणसंठियाओ य
 तारगाओ, ठियलेस्साचारिणो य अविस्साममंडलगई ।
 उवरिचरा-उड्डलंगवासी दुविहा वेमाणिया य देवा सोहम्मी-
 साण-सणकुमार-माहिंद-वंभलोगलंतक-महासुकसहस्सार-
 आणयपाणय आणच्चुया कप्पवरविमाणवासिणो-
 सुरगणा । गेवेज्जा अणुत्तरा य दुविहा कप्पातीया विमाण-
 वासी महिद्धिया उत्तमा सुरवरा एवं चेते चिउद्विहासपरिसा
 वि देवा समायंति । भवण वाहणजाणविमाणसयणासणाणि
 य णाणाविहवरथभूसणाणि य पवरपहरणाणि य णाणा-
 मणि पंचवण्णदिव्वं य भायणाविहिं नाणाविहकामरुववेउ-
 विव अच्छरगणसंघाए दीवसमुदे दिसाओ विदिसाओ
 चेइआणि य वणसंडे पव्वए गामनगराणि य आरामुजाण-
 काणणाणि य कूवसरतलायवाविदीहिं य देवकुलसभप्पवाव-
 सहिमाइथाइं कित्तिणाणि य पणिणित्ता परिग्गहं विउलदव्व-
 सारं देवा वि सइंदगा न तित्तिं न तुट्ठि उवलब्भंति, अच्चंत
 विउललोभाभिभूयसन्ना ।

वासहर इक्खुगारवट्ठपव्वयकुंडलरुयगवरमाणुसुत्तरका-
 लोदहिलवणसलिलदहपतिरतिकरअंजणकसेलदहिमुह ओवा-
 युप्पायकंचणकविचित्तजमकवरसिहरिकूडवासी ॥सू०३॥

टीका—' तं च पुण परिग्रहं ' तं च पुनः परिग्रहं ' पुनः ' शब्दोऽत्र

વાક્યાલક્ષણે, ઉપર્યુક્તં ત્રિવિધિં પરિગ્રહં ‘મમાયંતિ’ મમાયન્તે=પરિગ્રહમમત્વં કુર્વન્તિ, મમત્વં કુર્વન્તીત્યાદ — ‘લોભવસ્થા’ લોભવસ્તાઃ, કે કે ચ તે ? इत्याह—‘भवणवरविमाणवासिणो’ भवनवरविमाणवासिनः=‘भवन’ इत्यत्र ‘वासिनः’ इत्यस्य सम्बन्धाद् भवनवासिनः=मयनपतयः, अत आरभ्य यावद् वरविमाणवासिनः=अनुत्तरविमाणवासिनः, भवनपतिवानव्यन्तर — ज्योतिष्क-वैमानिकाश्चतुर्विधा अपि देवा इत्यर्थः, कीदृशाते ? इत्याह—‘परिगृहर्ह’

અથ સૂત્રકાર જિસ પ્રકાર સે જો જીવ હસ પરિગ્રહ કો કરતે હૈં
उनका कथन करते हैं—‘तं च पुण’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(તં ચ પુણ પરિગ્રહં લોભવસ્થા મમાયંતિ) હસ ઉપર્યુક્ત
तीस प्रकार के नाम वाले परिग्रह में लोभ से ग्रस्त हुए जीव ममत्व
करते हैं । वे जीव कौन २ से हैं ? सूत्रकार अब इस बात को प्रदर्शित
करते हैं—(भवणवरविमाणवासिणो) भवनवासी देव, वानव्यन्तरदेव,
ज्योतिष्कदेव और वैमानिक देव ये चारों प्रकार के देव परिग्रह में
ममत्व करते हैं—अर्थात्—परिग्रह प्राप्त करके भी इन्हें संतोष नहीं होता
है । (भवणवरविमाणवासिणो) यहां पर इस पद से भवनवासी और
वरविमाणवासी ऐसा शब्दबोध होता है । भवनवासी शब्द से असु-
रकुमार आदि देव तथा वरविमाणवासी शब्द से अनुत्तरविमाणवासी
देव अभिहित हुए हैं । इस तरह देवों के इन दो निकायों का वर्णन-
कथन—आने से इनके बीच के वानव्यन्तर और ज्योतिष्क इन दो

હવે સૂત્રકાર એ પ્રગટ કરે છે કે કયા છવ કદ રીતે પરિગ્રહ કરે
છે—“તં ચ પુણ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“તં ચ પુણ પરિગ્રહં લોભવસ્થા મમાયંતિ” ઉપર કહેલ ત્રીસ નામ
વાળા પરિગ્રહમાં લોભને વશ થયેલ છવે મમત્વ કરે છે. તે છવે કયા કયા
છે ? હવે સૂત્રકાર તે દર્શાવે છે. “ભવણવરવિમાણવાસિણો” ભવનવાસી
દેવ, વાનવ્યન્તર દેવ, જ્યોતિષ્ક દેવ, અને વૈમાનિક દેવ, એ ચારે પ્રકારના
દેવ પરિગ્રહમાં મમત્વ કરે છે—એટલે કે પરિગ્રહમાં પ્રાપ્ત કરવા છતાં પણ
તેમને સંતોષ થતો નથી. “ભવણવરવિમાણવાસિણો” અહીં આ પદથી ભવ-
નવાસી અને ઉત્તમવિમાનવાસી એવો અર્થ અમલ થાય છે. ભવનવાસી’ શબ્દથી
અસુરકુમાર દેવ આદિ તથા ‘ઉત્તમવિમાનવાસી’ શબ્દથી અનુત્તરવિમાનવાસી
દેવ ગ્રહણ થાય છે. આ પ્રમાણે દેવોના તે બે નિકાયોનું (પ્રકારનું) વર્ણન
આવવાથી તેમની વચ્ચેના વાનવ્યન્તર અને જ્યોતિષ્ક એ બે નિકાયો (બંતો)

સુરશિની ટીકા ૦ ૫ સુ. ૩ યથા ચે પરિગ્રહં કુર્વન્તિ તચિરુપણમ્ ૫૧૫

પરિગ્રહરુવગ:-પરિગ્રહે રુચિ:-આસક્તિયેષાં તે તથોક્તાઃ, તથા ‘પરિગ્રહો’ પરિગ્રહે-પરિગ્રહવિષયે ‘વિવિહકરણવુદ્ધો’ વિવિધરુગવુદ્ધય:-વિવિધાનિ કરણાનિ ક્રિયાઃ વુદ્ધિશ્ચ યેષાં તે તથોક્તાઃ, પરિગ્રહોપાર્જનમતય ઇત્યર્થઃ, એતાદશા ઇન્દ્રસહિતા દેવાઃપરિગ્રહં પરિગ્રહ ન તૃપ્તિ, ન તૃષ્ટિમુપલભન્તે, ઇત્યગ્રેણ સમ્બન્ધઃ, તથા ‘દેવનિકાયા યદેવનિકાયાશ્ચ વશ્યમાણા તા નેવ ભવનપત્યાદીન્ નાશનિર્દેશપુરસ્સર માહ- ‘અસુર’ અસુરાઃ=અસુરકુમારાઃ ‘ભુયગ’ ભુયગાઃ=નાગકુમારાઃ ‘સુવન્ન’ સુવર્ણાઃ-સુવર્ણકુમારાઃ, ‘વિજ્જુ’ વિદ્યુતઃ-વિદ્યુતકુમારાઃ ‘જલણ’ જ્વલનાઃ-અગ્નિકુમારાઃ ‘દીવ’ દ્વીપાઃ-દ્વીપકુમારાઃ ‘ઉદહિ’ ઉદધિકુમારાઃ ‘દિસિ’ ડિશાકુમારાઃ ‘પવણ’ પવનાઃ=વાયુકુમારાઃ ‘થણિય’ સ્તનિતકુમારાઃ, એતે ભવનપતયઃ ?, તથા-‘અગપન્નિ ય’ અનપન્નિ ક્રાઃ ‘અપગ્નિકાઃ’ ‘પણપન્નિ ય’ પણપન્નિકાઃ (પચ્છગ્નિકા) ‘ઈસિવાહ ય’ ઋષિવાદિકાઃ ‘ભૂયવાહ ય’ ભૂતવાદિકાઃ ‘કંદિ ય’ કન્દિતાઃ ‘મહાકંદિય’ મહાકન્દિતાઃ ‘કુહંડ’ કુમાળાઃ ‘પતંગદેવ’ પતંગદેવાઃ, એતેઽષ્ટૌ વ્યન્તરનિકાયદેવાઃ ૨, અસુરાધારમ્ય પતંગ-દેવપર્યન્તાનામિતરેતરથોગદ્વન્દ્વઃ । તથા ‘પિસાય’ પિણાચાઃ ‘ભૂય’ ભૂતાઃ ‘જક્લ’ યક્ષાઃ ‘સ્ક્લસ’ રાક્ષસાઃ ‘કિનર’ કિન્નરાઃ ‘કિંપુરિસ’ કિમ્પુરુષાઃ

નિકાર્યો કા બોધ સ્વયં હો જાતા હૈ । ઇસલિયે યહાં ચારોં પ્રકાર કે દેવ ગૃહીત છુગ હૈં । ક્યોં કિ યે દેવ (પરિગ્રહે વિવિહ કરણવુદ્ધો) પરિગ્રહ કે વિષય ઝેં હનકી વિવિધ પ્રકાર કી ક્રિયાઈ હોની હૈં, તથા ઉસમેં હનકી વુદ્ધિ-બી સદા સચેષ્ટ રહતી હૈં । અર્થાન્ પરિગ્રહ કે ઉપાર્જન કરને મેં હનકી મતિ ખૂબ નિપુણ હોતી હૈં । ઇસ તરહ ઇન્દ્રસહિત યે ચારોં પ્રકાર કે દેવનિકાય પરિગ્રહ કો પ્રાપ્ત કરકે બી ઉસમેં તૃપ્તિ સે વિહૂને હી બને રહતે હૈં । (દેવનિકાયા ય-અસુર-ભુયગ-સુવન્ન-વિજ્જુ-જલણ-દીવ ઉદહિ-દિસિ-પવણ-થણિય-અણપન્નિય-પણપન્નિય-ઈસિવાહય-ભૂયવાહય-કંદિય-મહાકંદિય-કુહળ-પંગમ-દેવા પિસાય-ભૂય-જક્લ-

નો બોધ આપો આપ થઈ જાય છે. તે કારણે અહીં ચારે પ્રકારના દેવો અહણ કરેલ છે, કારણ કે તે દેવો “ પરિગ્રહ રૂઠ્ઠી” પરિગ્રહમાં રુચિ-આસક્તિ વાળા હોય છે, અને “ પરિગ્રહે વિવિહકરણ વુદ્ધો” પરિગ્રહના વિષયમાં તેમની વિવિધ પ્રકારની ક્રિયાઓ થાય છે, અને તેમાં તેમની બુદ્ધિ પણ સદા સચેષ્ટ રહે છે. એટલે તે પરિગ્રહને પ્રાપ્ત કરવામાં તેમની બુદ્ધિ ઘણી જ નિપુણ હોય છે. આ રીતે ઇન્દ્ર સહિત તે ચારે પ્રકારના દેવનિકાય પરિગ્રહને પ્રાપ્ત કરીને પણ તેનાથી અતૃપ્ત રહે છે. “ દેવનિકાયા ય-અસુર-ભુયગ-સુવન્ન-વિજ્જુ-જલણ-દીવ-ઉદહિ-દિસિ-પવણ-થણિય-અણપન્નિય-પણપન્નિય-ઈસિવાહય-ભૂયવાહય-કંદિય-

‘મહોરગ’ મહોરગા: ‘ગંધર્વા’ ગન્ધર્વાશ્ચ, એતેવાં દ્વન્દ્વ: । એતેઽષ્ટો વ્યન્તરભેદા: એતે દિ ‘તિરિયવાસી’ તિર્યગવાસિન:-મનુષ્યલોકવાસિન:, તથા ‘પંચવિદ્યા’ પશ્ચવિદ્યા:=ચન્દ્રસૂર્ય-ગ્રહ-નક્ષત્ર-તારારૂપા:, ‘જોહસિયાય’ ઝ્યોતિષિકાશ્ચ દેવા:, તે કે ? इत्याह—‘बहस्सइ चंदमूरसुकसनिच्छरा’ वृहस्पतिचन्द्रमूरशुकशनिेश्वरा:, तथा ‘राहुधूमकेतुबुहा य’ राहुधूमकेतुबुधाश्च तथा—‘अंगारका य’अङ्गारकश्च ‘मंगलनामको गृहविशेष’ कीदृश: ? एष: ? इत्याह—‘तत्तत्तवणिज्जकणमवण्णा’ तप्त-

રક્ષસ-કિનર-કિપુરિસ-મહોરગ-ગંધર્વા ય તિરિયવાસી) અવ સૂત્ર-કાર ડન દેવનિકાયોં કો નામનિર્દેશ પૂર્વક પ્રકટ કરતે હૈં, ડનમેં વે સઘ સે પહિલે ભવનપતિયોં કે ભેદોં કે નામોં કો કહતે હૈં-અસુરકુમાર, નાગકુમાર, સુપર્ણકુમાર, વિદ્યુત્કુમાર, જ્વલન-અગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમાર, ઉદધિકુમાર, દિશાકુમાર, વાયુકુમાર ઓર સ્તનિતકુમાર યે દશ પ્રકારકે ભવનપતિ હૈં । તથા અપ્રજસિક, પશ્ચપ્રજસિક, કષિવાદિક, ભૂતવાદિ કંદિત, મહાકંદિત કૂષ્માંડ, પતંગદેવ, આઠપ્રકાર કે યે વ્યન્તર નિકાય કે દેવ હૈં । તથા પિશાચ, ભૂત, યક્ષ, રાક્ષસ, કિત્તર, કિપુરુષ, મહોરગ, ગંધર્વ યે આઠ વ્યન્તર દેવોં કે ભેદ હૈં । યે વ્યન્તરદેવતિર્યગ્લોક-મનુષ્યલોક વાસી હૈં । તથા- (પંચવિદ્યા જોહસિયાય દેવા વહસ્સઈ ચંદમૂરસુકસનિચ્છરા) ચન્દ્ર, સૂર્ય, ગ્રહ, નક્ષત્ર ઇવં તારા યે પાંચ પ્રકાર કે ઝ્યોતિષિક દેવ હૈં । ઇન મેં જો ગ્રહ જાતી કે દેવ હૈં ડનકે યે વૃહસ્પતિ ચંદ્ર, સૂર્ય, શુક્ર, શનૈશ્વર તથા (રાહુધૂમકેડ બુહા ય અંગારગા ય) રાહુ, ધૂમ, કેતુ, બુધ

મહાકંદિય-કુહ્ણડ-પયંગ-દેવા પિસાયભૂય-જક્ષ-રક્ષસ-કિનર-કિપુરિસ-મહોરગ ગંધર્વાય તિરિયવાસી ” હવે સૂત્રકાર તે દેવ નિશ્ચયોને નામના નિર્દેશ સહિત પ્રગટ કરે છે. તેમનામાંથી સૌથી પહેલા ભવનપતિયોના ભેદોનાં નામો બતાવે છે—અસુરકુમાર, નાગકુમાર, સુપર્ણકુમાર, વિદ્યુત્કુમાર, જ્વલનઅગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમાર, ઉદધિકુમાર, દિશાકુમાર, વાયુકુમાર અને સ્તનિતકુમાર, એ દસ પ્રકારના ભવનપતિ છે. તથા અપ્રજસિક, પંચપ્રજસિક, કષિવાદિક, ભૂતવાદિક, કંદિત, મહાકંદિત, કૂષ્માંડ, અને પતંગદેવ, એ આઠ પ્રકારના વ્યન્તર નિકાય દેવો છે. તથા પિશાચ, ભૂત, યક્ષ, રાક્ષસ, કિત્તર, કિપુરુષ, મહોરગ અને ગંધર્વ, એ આઠ વ્યન્તરદેવ તિર્યગ્લોક-મનુષ્યલોક વાસી છે. તથા “ પંચવિદ્યા-જોહસિયાય દેવા વહસ્સઈ ચંદ્ર મૂર સુકસનિચ્છરા ” ચન્દ્ર, સૂર્ય, ગ્રહ, નક્ષત્ર અને તારા એ પાંચ પ્રકારના ઝ્યોતિષિક દેવો છે, તેમાં ગ્રહ બીજાના જે દેવો છે તેમના બૃહસ્પતિ ચંદ્ર, સૂર્ય, શુક્ર, શનિ તથા “રાહુધુમકેડ-બુહા ય અંગા-

સુવર્ણની ટીકા અ૦૫ સૂ૦૩ યથા યે પરિગ્રહં કુર્વન્તિ તત્તિરૂપણમ્

૫૧૭

પનીયકનકવર્ણઃ=તત્ત્વં યત્તપનીયકનકં=તપનીયસુવર્ણં તસ્ય વર્ણં ઇવ વર્ણોયસ્ય સ-
તથોક્તઃ-અગ્નો પરિતાપનેન સુવર્ણસ્ય યાદૃશો વર્ણો ભવતિ, તાદૃશ વર્ણં યુક્તં ઇત્યર્થઃ,
આર્ષત્વાત્મુત્રે બહુવચનમ્ । તથા ઇમ્યં ઇતરે ‘ જે ગદા ’ યે ગ્રહાઃ સમ્પ્રતિકાલ-
પ્રસિદ્ધા નેપ્ચ્યુલહર્ષલાદયઃ, ‘ જોહસમ્મિ ’ જ્યોતિષિ-જ્યોતિશ્ચક્રે ‘ ચારં ચરંતિ ’
-પરિભ્રમ્યન્તિ, તે ગ્રહાઃ, તથા ‘ કેઽ ય ’ કેતુશ્ચ-જ્યોતિષ્કવિશેષા યે જગતઃ
શુભાશુભનિમિત્તમથ્લમ્બ્યોદયં પ્રાપ્નુવન્તિ ‘ પૂંછડિયાતારા ’ ‘ ચોટીવાલા તારા ’
ઇત્યાદિ નામ્ના ભાષાપ્રસિદ્ધાઃ, કીદૃશા ઇતે ? ઇત્યાહ ‘ ગહરહ્યા ’ ગતિરતિકાઃ-
ગમનશીલાષ્કરાશિતોઽન્યરાશી ગમનસ્વભાવાઃ । ઇતે ચન્દ્રસૂર્યગ્રહાસ્ત્રિવિધાજ્યો-
તિષ્કદેવા ઉક્તાઃ । તથા ‘ અદ્વાવીસહવિહા ય ’ અદ્વાવિંશતિવિધાશ્ચ ‘ નક્ષત્રદેવ-
ગણા ’ નક્ષત્રદેવગણાઃ, કીદૃશાઃ ? ઇત્યાહ-તથા ‘ નાનાસંઠાણસંઠિયાઓવ’

ઔર અંગારક-મંગલ યે ભેદ હૈ । यहअंगारक (तत्तनवणिज्जकणगवण्णा)
तसतपनीय-तपाये हुए सुवर्ण के वर्ण के जैसा वर्ण वाला है । अर्थात्-
अग्नि में तपाने से सुवर्ण का जैसा रंग होता है वैसा ही इसका रंग
है । तथा (जे य गहा जोहसियम्मि चारं चरंति) इनसे अनिरिक्त जो
हस समय में प्रसिद्ध नेपच्युल हर्षल आदि ग्रह हैं कि जो ज्योतिश्चक्र में
परिभ्रमण करते हैं वे ग्रह तथा-(केऊ य) केतु ग्रह जो जगत के शुभ
अशुभ निमित्त को लेकर उदित होता है और जिसे “पूँछडिया-
तारा” चोटीवाला तारा” इत्यादि नाम से लोग कहा करते हैं ये सब
ही (गहरइया) गमनशील है-एक राशि से अन्यराशि पर गमन
करने के स्वभाववाले हैं । ये उक्त (त्रिविहा) तीन प्रकार के
चंद्र, सूर्य, ग्रहस्व ज्योतिषी देव तथा (अद्वीसह विहा) अट्ठाईस
प्रकार के (नक्षत्रदेवगणा) नक्षत्र (नाणासंठाणसंठियाओ) नाना

रगाय ” राहु, धूमकेतु, બુધ અને અંગારક-મંગળ એ પ્રકારે છે. તે અંગારક-મંગળ “ તત્તતવણિજ્જકણગવણ્ણા ” તપાવેલા સુવર્ણના રંગ જેવા વર્ણ-વાળો છે. તથા “ જે ય ગદા જોહસિયમ્મિ ચારં ચરંતિ ” તે સિવાયના હાલના સમયમાં પ્રસિદ્ધ નેપચ્યુલ, હર્ષલ આદિ ગ્રહો કે જે જ્યોતિશ્ચક્રમાં પરિભ્રમણ કરે છે તે ગ્રહો તથા “ કેઽય ” કેતુગ્રહો જે જગતના શુભ અશુભ નિમિત્ત દર્શાવવાને ઉગે છે અને જેને પૂંછડિયા તારાને નામે ઓળખે છે, એ બધા જ “ ગહરહ્યા ” ગમનશીલ છે-એક રાશિમાંથી અન્ય રાશિમાં ગમન કરવાના સ્વભાવવાળા છે. તે ઉપરાંત “ ત્રિવિહા ” ત્રણ પ્રકારના ચન્દ્ર, સૂર્ય અને અદ્વૈપ જ્યોતિષી દેવ, તથા “ અદ્વાવીસહવિહા ” અઠ્યાવીસ પ્રકારના “ નક્ષત્ર દેવગણા ” નક્ષત્ર, “ નાનાસંઠાણસંઠિયાઓ ” વિવિધ પ્રકારના સંસ્થાનોમાં

નાનાસંસ્થાનસંસ્થિતાથ ' તારાઓ ' તારકાઃ, કથં મૂતાસ્તારકાઃ ? ઇત્યાદ—
' ઠિયલેસ્સા ' સ્થિતલેશ્યાઃ-સ્થિતાઃ સ્થિરાઃ લેશ્યાઃ-દીપ્તયાઃ યાસાં તાઃ, નક્ષત્ર-
તારકાણામેકસ્થાનસ્થિતિપત્ત્યાદ, યદ્વા — મનુષ્યક્ષેત્રાદ્ વહિર્વ્યવસ્થિતત્વાત્
સ્થિતલેશ્યાવચ્ચં તાગામ્, ' ચારિણો ય ' ચારિશ્ચ યઃ=સંચરણશીલાઃચન્દ્રસૂર્યગ્ર-
હાશ્ચ, ' અવિસ્સંતમંડલગર્હ ' અવિશ્રાન્તમણ્ડલમતયઃ-અવિશ્રાન્તા-વિશ્રામયર્જિતા
મણ્ડલેન-ચક્રવાલેન ગતિ રેખાં તે તથા=સતતપરિભ્રમણશીલાઃ સન્તીત્યર્થઃ, એતે

પ્રકાર કે સંસ્થાન સે સંસ્થિત એસે તારાગણ કિ જિનકી (ઠિયલેસ્સા)
લેશ્યા-દાસિ-સ્થિર હૈ। યે નક્ષત્ર ઓર તારાગણ એક સ્થાન મેં સ્થિત હૈં,
અથવા મનુષ્યલોક સે બાહર યે અવસ્થિત હૈં-ગતિ રહિત હૈં-હસલિયે
યહાં ઇન્હેં સ્થિર દોસિ વાલા કહા ગયા હૈ। તથા (ચારિણો ય અવિ-
સ્સામમંડલગર્હ) સંચરણશીલ ચંદ્ર, સૂર્ય, ગ્રહ યે સવ સતત પરિભ્રમણ
શીલ હૈં। તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિ યે પાંચ પ્રકાર કે જ્યોતિષી દેશ
માનુષોત્તર નામક પર્વત રૂપ જો મનુષ્ય લોક હૈં ઉસ મનુષ્યલોક મેં
સદા ભ્રમણ કીયા કરતે હૈં। ઉનકા ભ્રમણ મેરુપર્વત કે ચારો ઓર
હોતા હૈ। મેરુ કે સમતલભૂમાળ સે સાતસો ગજોન ની ડુંચાઈ પર
જ્યોતિશ્ચક્ર ક્ષેત્ર કા આરંભ હોતા હૈ। જો વહાં સે ડુંચાઈ મેં એક સો
દશ ગોજન પરિમાણ હૈ ઓર તિરછા અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્ર પરિમાણ
હૈ। ઉસ મેં દશ ગોજન કો ડુંચાઈ પર અર્થાત્ ઉક્ત સમતલ સે આઠ
સો ગોજન કી ડુંચાઈ પર સૂર્ય કે વિમાન હૈં, વહાં સે અસી ગોજન કી
ડુંચાઈ પર અર્થાત્ સમતલ સે આઠ મો અસી ગોજન કી ડુંચાઈ પર

રહેલા " ઠિયલેસ્સા " સ્થિર તેજવાળાં તારાગણો છે, તે નક્ષત્રો અને તારા-
ગણ એક જ સ્થાને રહેલા છે, અથવા તેઓ મનુષ્યલોકની બહાર
આવેલા છે—અતિરહિત છે તે કારણે આવી તેમને સ્થિર દીપ્તિ (તેજ) વાળા
બતાવ્યા છે તથા " ચારિણો ય અવિસ્સામમંડલગર્હ " સંચરણશીલ ચંદ્ર, સૂર્ય,
ગ્રહ એ બધા સતત પરિભ્રમણશીલ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે એ પાંચ પ્રકાર-
ના જ્યોતિર્વાદિવ માનુષોત્તર નામના પર્વતરૂપ જે મનુષ્યલોક છે, તે મનુષ્ય-
લોકમાં સદા પરિભ્રમણ કરી કરે છે. તેમનું ભ્રમણ મેરુ પર્વતની ચારે તરફ
થાય છે. મેરુના સમતલ ભૂભાગથી સાતસો નેવું ગોજનની ઊંચાઈ પર જ્યો-
તિશ્ચક્રના ક્ષેત્રનો આરંભ થાય છે. જે ત્યાંથી ઊંચાઈમાં એકસો દશ ગોજન
પરિમાણ છે અને તિરક્ક ઊંચાઈ અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્ર પરિમાણ છે. તેમાં
હસ ગોજનની ઊંચાઈએ એટલે કે ઉપરોક્ત સમતલ ભૂમિથી આઠસો ગોજનની
ઊંચાઈ પર સૂર્યનાં વિમાન છે, ત્યાંથી એસી ગોજનની ઊંચાઈ પર અથવા
સમતલથી આઠસો. એસી ગોજનની ઊંચાઈ પર ચન્દ્રના વિમાન છે ત્યાંથી

સુદર્શિની ટીકા અવ્ય સ્તુત્ર યથા યે પરિગ્રહં કુર્વન્તિ તન્નિરૂપણમ્ ૫૧૧

ચંદ્ર કે વિમાન હૈં । વહાં સે વીસ યોજન પર કી ઉંચાઈ તક મેં અર્થાત્ સમતલ સે નવપોં યોજન કી ઉંચાઈ તક મેં ગ્રહ, નક્ષત્ર ઓર તારે હૈં । ચંદ્ર કે ઉપર વોસ યોજન કી ઉંચાઈ મેં પહિલે ચાર યોજન કી ઉંચાઈ પર નક્ષત્ર હૈં, હસકે બાદ ચાર ચાર યોજન કી ઉંચાઈ પર બુધગ્રહ, બુધગ્રહ સે ત્રીન યોજન કી ઉંચાઈ પર શુક્ર, શુક્ર સે ત્રીન યોજન ઉંચે ગુરુ, ગુરુ સે ત્રીન યોજન ઉંચે મંગલ ઓર મંગલ સે ત્રીન યોજન ઉંચે શનૈશ્વર હૈં । હસ પ્રકાર યહ ચન્દ્ર કે ઉપર કા વીસ યોજન કા ક્ષેત્ર નક્ષત્ર આદિકોં દ્વારા ઘિરાં હુઆ રહતા હૈં । હસ તરહ હસસે હમેં યહ વાત જાનને મેં દેરી નહીં લગતી હૈં કિ મનુષ્ય ક્ષેત્ર મેં જો કાલ કા-સુદર્ત-અહોરાત્ર-પક્ષ, માસ આદિ કા જિતના બી વ્યવહાર હોના હૈં વહ સવહસ જ્યોતિશ્વક્ર કી ચાલ સે હી હોતા હૈં । યહ જ્યોતિશ્વક્ર કી ચાલ હસ દ્વાદ્વીપરૂપ મનુષ્યક્ષેત્ર મેં અવિશ્રાન્ત રૂપ સે હી હોતી રહતી હૈં । મનુષ્ય ક્ષેત્ર કે બાહર કે જ્યોતિષક વિમાન-સ્થિર હૈં । યે વહાં સ્વભાવતઃ હિર ઉધર ભ્રમણ નહોં કરતે । હસી કારણ સે હનકી હેડ્યા ઓર હનકા પ્રકાશ બી ઈક રૂપ-સ્થિર હૈં । અર્થાત્ વહાં રાહુ આદિ કી છાયા પડને સે જ્યોતિષકોં કા સ્વાભાવિક પીતલ્લવ્ણ જ્યોં કા ત્યોં થના રહતા હૈં । ઓર ઉદય અસ્તન હોને કે કારણ

વીસ યોજનની ઊંચાઈ પર એટલે કે સમતલથી નવસો યોજનની ઊંચાઈ સુધીમાં ગ્રહો, નક્ષત્રો અને તારા છે. ચન્દ્રથી ઉપરની વીસ યોજનની ઊંચાઈમાં પહેલાં ચાર યોજનની ઊંચાઈ પર નક્ષત્રો છે, ત્યાર બાદ ચાર યોજનની ઊંચાઈ પર બુધ નામનો ગ્રહ છે. બુધ ગ્રહથી ત્રણ યોજનની ઊંચાઈ પર શુક્ર છે. શુક્રથી ત્રણ યોજન ઊંચે ગુરુ છે. ગુરુથી ત્રણ યોજન ઊંચે મંગલ છે, મંગલથી ત્રણ યોજન ઊંચે શનિ છે. આ પ્રમાણે ચન્દ્રની ઉપરનું વીસ યોજનનું ક્ષેત્ર નક્ષત્ર આદિ દ્વારા ઘેરાયેલું રહે છે. આ રીતે આપણને એ વાત સમજતા વાર લાગે તેમ નથી કે મનુષ્યક્ષેત્રમાં જે કાળનો સુદર્ત, દિવસ રાત, પળવાડિયાં, માસ આદિનો-જે વ્યવહાર થાય છે તે સવળો આ જ્યોતિશ્વકની આદથી જ થાય છે. તે જ્યોતિશ્વકની ચાલ આ અદ્વીતીપરૂપ મનુષ્ય ક્ષેત્રમાં અવિરત ચાલ્યા કરે છે. મનુષ્ય ક્ષેત્રની બહારનાં જ્યોતિષક વિમાન સ્થિર છે. તેઓ ત્યાં સ્વભાવિક રીતે જ આમ તેમ ભ્રમણ કરતાં નથી. એ જ કારણે તેમની હેડ્યા અને તેમનો પ્રકાશ પણ સ્થિર છે. એટલે કે ત્યાં રાહુ આદિની છાયા પડવાથી જ્યોતિષકોનો સાધારણ પીળો રંગ એવાને એવા રહે છે. અને ઉદય અસ્ત ન થવાને કારણે તેમનો પ્રકાશ પણ એક સરખો

પન્નવિધા જ્યોતિષિકદેવાઃ ૩ । અથ વૈમાનિકાનાહ—‘ ઉવરિચરા ’ ઉવરિચરાઃ—
તિર્યગ્લોકસ્થોપરિવર્તિનઃ, ‘ ઉદ્ઘ્લોગવાસિણો ’ ઉર્ધ્વલોકવાસિનઃ ‘ વૈમાણિયા ય
દેવા ’ વમાનિકાશ્ચ દેવા ‘ દુવિહા ’ દ્વિવિધાઃ=દ્વિપકારાઃ, કલ્પોપપન્ન કલ્પાતીત
ભેદાત્ । તત્ર-કલ્પોપપન્ના દ્વાદશયા, તાતાહ—‘ સોહમ્મી-સાણ-સળંકુમાર-માહિંદ-
ચંમલોગ-લંતગ-મહાશુક-સહસ્રાર-આણય-પાણય-આરણ-ચ્ચુયા ’ સૌધર્મેશાન
સનત્કુમારમાહેન્દ્રબ્રહ્મલોકલાન્તકમદાશુક—સહસ્રારાન્તમાણતારણાચ્ચુતાઃ, એતે
‘ કલ્પવરવિમાણવાસિણો ’ કલ્પવરવિમાણવાસિનઃ-કલ્પોપપન્નાઃ, ‘ સુરગણા ’
સુરગણાઃ । અથ કલ્પાતીતાનાહ—‘ મેવેજ્ઞા ’ પ્રેવેયકાઃ ‘ અણુત્તરા ’ અણુત્તરા-

उनका प्रकाश भी एकसा स्थिर ही रहता है । इस प्रकार यह पांच प्रकार के ज्योतिषिक देवों के विषय में भावार्थ रूप से यत् किञ्चित् कथन किया है । अब सूत्रकार वैमानिक देवों के विषय में कहते हैं—(उवरिचरा उद्घ्लोगवासी वैमाणिया देवा दुविहा) तिर्यग्लोक हैं । ये वैमानिक के ऊपर जो ऊर्ध्वलोक है उसमें ये देव रहते हैं । इनका नाम वैमानिक देव कल्पोपपन्न और कल्पातीत के भेद से दो प्रकार के होते हैं । इनमें कल्पोपपन्न बारह प्रकार के हैं, वे ये हैं—(सोहम्मी-साण-सलंकुमार-माहिंद-चंमलोग-लंतग-महाशुक-सहस्रार-आणय-पाणय-आरण-ऽचुया) सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्मलोक, लान्तक, महाशुक, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण और अच्युत । इन (कल्पवरविमाणवासिणो सुरगणा) कल्पवरविमानों में रहनेवाले सुरगण कल्पोपपन्न कहलाते हैं । (मेवेज्ज्ञा अणुत्तरा य दुविहा कल्पातीया विमाण-

જ સ્થિર રહે છે. આ પ્રમાણે પાંચ પ્રકારના જ્યોતિષિક દેવોને વિષે ભાવાર્થ રૂપે થોડું કથન કરવામાં આવ્યું છે, હવે સૂત્રકાર વૈમાનિક દેવો વિષે કહે છે—
“ ઉવરિચરા ઉદ્ઘ્લોગવાસી વૈમાણિયાદેવા દુવિહા ” તિર્યગ્લોકની ઉપર જે ઉર્ધ્વ લોક છે તેમાં તે દેવો રહે છે, અને તેમને વૈમાનિક કહે છે. તે વૈમાનિક દેવોના એ ભેદ છે—કલ્પાતીત અને કલ્પોપપન્ન તેમાંના કલ્પોપપન્ન નીચે પ્રમાણે બાર પ્રકારના છે—“ સોહમ્મી-સાણ-સળંકુમાર-માહિંદ-ચંમલોગ-લંતગ-મહાશુક-સહસ્રાર-આણય-વારણ-આરણઽચ્ચુયા ” સૌધર્મ, ઇશાન, સનત્કુમાર, માહેન્દ્ર, બ્રહ્મલોક લાન્તક, મહાશુક, સહસ્રાર, આનત, પ્રાણત, આરણ અચ્યુત. એ “ કલ્પવર-વિમાણવાસિણો સુરગણા ” કલ્પવર વિમાનોમાં રહેનાર સુરગણને કલ્પોપપન્ન કહે છે. “ મેવેજ્ઞા અણુત્તરા ય દુવિહા કલ્પાતીયા વિમાણવાસી મહદ્દિવ્યા ઉત્તમા

सुदर्शनी टीका अ०५ सू०१ यथा ये परिग्रहं कुर्वन्ति तन्निरूपणम् ५२१

श्रेति 'दुर्विहा' द्विविधाः 'कल्पावीया' कल्पावीताः 'विमानवासी' विमानवासीनः—अनुत्तरविमानवासिनः 'महद्भिः' महद्भिकाः 'उत्तमा' उत्तमाः श्रेष्ठाः सुखराः—सर्वदेवेषु प्रधानाः, 'एवं च' इत्युक्तप्रकारेण 'चउच्चिहा' चतुर्विधाः—भवनविमानव्यन्तरज्योतिष्कवैमानिकरूपः, 'सपरिसावि' सपरिपदोऽपि—न केवलमेते किन्तु एषां परिपदोऽपीत्यर्थः, देवाः 'ममायन्ति' ममायन्ते=ममत्वं कुर्वन्ति । कस्मिन् विषये ममत्वं कुर्वन्तीति तान्याह—'भवनवाहनजाणविमाणस्यणासनानि य' भवनवाहनयानविमानशयनासनानि च, तथा 'नाणाविहवत्थभूसणाणि य' नाणाविहवत्थभूषणानि च 'परपरणाणि य'

वासीमहद्भिः उत्तमा सुखरा एवं चेते चउच्चिहा सपरिसा वि देवा ममायन्ति) कल्पावीन के दो भेद है (१) ग्रैवेयक विमानवासी और (२) अनुत्तर विमानवासी इनमें जो पांच अनुत्तर विमानों में—विजय, वैजयन्त, अपराजित और सर्वार्थ सिद्ध इनमें—रहनेवाले देव हैं वे महद्भिक कहलाते हैं और सब देवों में उत्तम-श्रेष्ठ-एवं प्रधान माने जाते हैं । कल्पोपपन्न देवों में स्वामिसेवक भाव होता है । कल्पातीत में नहीं । ये तो सभी इन्द्रवत् होने से अहमिन्द्र कहलाते हैं । मनुष्यलोक में किसी निमित्त पर कल्पोपपन्न देव ही आते हैं—कल्पातीत नहीं । इस प्रकार भवनपति, वानव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकरूप चारों प्रकार के देव अपनी २ परिपदासहित इन भवन आदि पदार्थों में ममत्व करते हैं । सूत्रकार अब इन्हीं ममत्व के विषयभूत पदार्थों को कहते हैं — (भवन-वाहन-जाणविमाण-स्यणासणाणि) भवन, वाहन, यान, विमान, शयन, आसन तथा—(नाणाविहवत्थभूषणाणि य)

सुखरा एवं चउच्चिहा सपरिसा वि देवा ममायन्ति ” कल्पातीतता ये लेह छे.

(१) ग्रैवेयक विमानवासी अने (२) अनुत्तर विमानवासी. तेमांन विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित अने सर्वार्थ सिद्ध. ये पांच अनुत्तर विमानोमां रखेनार जे देवो छे तेमने महद्भिः कह्ये छे, ते देवो अथा देवोमां श्रेष्ठ गणाय छे. मनुष्यलोकां डोह पञ्च निमित्ते कल्पोपपन्न देवो ज आवे छे, कल्पातीत आवता नथी. आ रीते भवनपति, वानव्यन्तर, ज्योतिष्क अने वैमानिक, ये चार प्रकारन देवो पोत पोतानी परिपद साथे ते भवन आदि पदार्थोमां ममत्व राखे छे. सूत्रकार उये ते ममत्वना विषय ३५ पदार्थो दृष्टावे छे—

“ भवन-वाहन-जाण-विमाण-स्यणा-सणाणि ” भवन, वाहन, यान, विमान, शयन, आसन, तथा “ नाणाविहवत्थभूषणाणि य ” विविध वस्त्रो, आभूषणो

पवरपहरणाणि च=प्रवराणि-श्रेष्ठानि यानि प्रहरणानि-आयुधानि तानि च, तथा-
 ' नाणामणिपंचवर्णदिव्यं च भायणविद्दि ' नानामणिपञ्चवर्णदिव्यं च भाजन-
 विधिम्-नानामणीनां-चन्द्रकान्तसूर्यकान्तादिमणीनां ये पञ्चवर्णा स्तै दिव्यं श्रेष्ठं
 विविधभाजनसमूहम्, तथा-' नाणाविहकामरूपवेउन्विय अच्छरणसंघाए य '
 नानाविधकामरूपविकुर्विताप्सरोगणसंघातांश्च - नानाविधानि- अनेकपकाराणि
 यानि कामरूपाणि स्वेच्छारूपाणि नानि विकुर्वितानि यैस्ते तथाभूता येऽप्सरो-
 गणास्तेषां संघातास्तान्=अप्सरः समूहानित्यर्थः, तथा ' दीवसमुद्दे ' द्वीपसमुद्रान्,
 ' दिसाओ विदिसाओ ' दिशाविदिशाः ' चेइयाणि ' चैत्यानि=वृक्षान् कल्पतरु-
 रूपान् ' वनसंडे ' वनपण्डानि-अनेकविधवृक्षसमूहान् ' पव्वते ' पर्वतान् ' गाम-
 नगराणि य ' ग्रामनगराणि च, तथा ' आरामुज्जाणकाणणाणि य ' आरामो-
 धानकाननानि च-आरामाः-उपवनानि, उद्यानानि=पुष्पप्रधानवनानि, काननानि
 अरण्यानि, एतेषामितरेतरयोर्मद्वन्द्वः, तथा - ' कूवसरतलागवाविदीहिय
 देवकुलसभप्पवावसिमाइयाई ' कूवसरस्तडागवापीदीर्घिकादेवकुलसभाप्रपा

नानाविध वस्त्र, आभूषण, (पवरपहरणाणि य) श्रेष्ठ आयुध, (नाना-
 मणि पंचवर्णदिव्यं य) चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त आदि नानामणियों के
 पंचवर्णवाले श्रेष्ठ भाजन , तथा (नाणाविहकामरूपवेउन्वियअच्छरग-
 णसंघाए य) नाना प्रकार के स्वेछानुसार जिन्हों ने रूपों को बनाया है
 ऐसी अप्सराओं का समूह (दीवसमुद्दे) द्वीप, समुद्र (दिसाओ-
 विदिसाओ) दिशा, विदिशा, (चेइयाणि) कल्पवृक्षरूप चैत्यवृक्ष, (वन-
 संडे) अनेक विध वृक्ष समूह (पव्वते) पर्वत (गामनगराणि य) ग्राम,
 नगर, (आरामुज्जाणकाणणाणि य) आराम-उपवन, उद्यान-पुष्पप्रधान-
 वन, कानन-अरण्य, (कूवसरतलागवाविदीहियदेवकुलसभप्पवावसहि-

“ पवरपहरणाणि य ” श्रेष्ठ आयुधा, “ नानामणि पंचवर्णदिव्यं य ” चन्द्रकान्त,
 सूर्यकान्त आदि विविध मणियोंना पांच वर्णवाणां पात्रो, तथा “ नाणाविह
 कामरूप-वेउन्विय-अच्छरणसंघाए य ” जेभने छच्छरानुसार विविध रूपे धारण
 कर्या छे ओवी अप्सराओनो समूह, “ दीवसमुद्दे ” द्वीप, समुद्र दिसाओ
 विदिसाओ ” दिशाओ विदिशाओ, “ चेइयाणि ” कल्पवृक्षश्च चैत्यवृक्ष, “ वन-
 संडे ” अनेक विध वृक्ष समूह, “ पव्वते ” पर्वतो, “ गामनगराणि य ” ग्रामो
 नगरो, “ आरामुज्जाणकाणणाणि य ” आराम स्थानो-उपवन, उद्यान, पुष्प,
 प्रधान वन, कानन-अरण्य, “ कूवसरतलागवाविदीहियदेवकुलसभप्पवावसहि
 माइयाई ” दूवा, सरोवर, तलावो, -उत्सवयुक्त अगाध जगत्स्थ, रात्र, दीर्घिका

શ્રીની ટીકા અ૦ ૫ સુ. ૩૨ યથા યે પરિગ્રહં કુર્વન્તિ તત્ત્વરૂપણમ્ ૫૨૩

વસત્યાદિકાનિ, તત્ર-રૂપ:-પ્રસિદ્ધઃ, સર:-પ્રસિદ્ધમ્, તટાગ:-સપ્તઞ્જગાથ-જલાશયઃ, વાપી - આયતજલાશયવિશેષઃ - દીર્ઘિકા-ચતુષ્કોણજલાશયરૂપા-
'દેવકુલાનિ' દેવગૃહા:-સમાપ્રસિદ્ધા, પ્રવા:-પાનીયશાલાઃ, વસતયઃ-સામાન્ય-
ગૃહાણિ, एतान्वादौ યેવાં તાનિ તથોક્તાનિ, 'બહુકાઈ' બહુકાનિ વહુનિ 'કિત્ત-
ણાનિ ચ' કીર્તનાનિ ચ "અયં દેવો દિવ્યદેવઋદ્ધિ સંપન્નઃ" इत्येवं પ્રશંસા
વાક્યાનિ ચ પરિગ્રહત્ત્વેન મમાયન્તે। તત્ત્વ પ્રકૃતં 'પરિગ્રહં' પરિગ્રહં, કીદૃશં
પરિગ્રહમ્? 'વિઝલદ્વચસારં' વિપુલદ્વચસારં=વિપુલાનિ દ્રવ્યાણ્યેવ સારો
યસ્મિન્સ્તં તથોક્તં, 'પરિગિઠિતા' પરિગૃહ્ય 'સંદંભા' સેન્દ્રકા:-ઇન્દ્રસહિતાઃ
'દેવા વિ' દેવા અપિ 'ન તિત્તિ' ન તૃપ્તિ-નૈવેચ્છાવિનિવૃત્તિ 'ન તુટ્ઠિ' ન
તુટ્ઠિ=નાપિ સન્તોષમ્ 'ઊલભન્તિ' ઊપલભન્તે=પ્રાપ્નુવન્તિ, આકાંક્ષાયા નિરા-
વાપ્તવાત્। અયં ભાવઃ-દેવા દિ મહર્દ્યો વાચ્છિકાર્થલાભે સમર્થાઃદીર્ઘાંયુષશ્ચ
ભવન્તિ પરન્તુ તેઽપિ પરિગ્રહવિષયે ન સંતોષં પ્રાપ્નુવન્તિ इतरेषां पुनः का कथा? ॥

માહયાઈ) કૃવાં સર, તટાગ-પદ્મસહિત અગાથ જલાશય, વાપી,
દીર્ઘિકા-ચતુષ્કોણવાલી ધાવડી, દેવકુલ-દેવગૃહ, સભા, પ્રવા-પ્યાજ,
વસતિ સામાન્યઘર, इत्यादि और भी बहुत सी वस्तुएं हैं जिनमें इन
देवों का ममत्व होता है। तथा (बहुयाई कित्ताणाणि य) अनेक विध
कीर्तनों में "यह देव दिव्य ऋद्धि संपन्न है" इत्यादि रूप प्रशंसा वाक्यों
में इनका परिग्रहरूप से ममत्व होता है। (विजलद्वचसारंपरिगहं परिग-
णिहता संदंभा देवा वि न तित्ति न तुट्ठि अचंचत विजललोभाभिभूयसन्ना
उलभन्ति) इस प्रकार विपुल सार वाले परिग्रह को ग्रहण करके इन्द्र-
सहित देव भी इच्छाविनिवृत्तिरूप तृप्ति को तथा संतोष रूप तुष्टि को
आकांक्षा की निरावाधता के कारण प्राप्त नहीं कर पाते हैं। तात्पर्य इसका
यह है कि महर्द्धिक देव यद्यपि इच्छित अर्थ के लाभ करने में समर्थ

થોપ્પણ વાવડી, દેવકુલ-દેવગૃહ, સભા, પ્રવા-હવાડા, વસતિ-સામાન્ય ઘર,
વગેરે વસ્તુઓમાં તથા એ સિવાયની બીજી પણ અનેક વસ્તુઓમાં દેવો મમ-
ત્વ રાખે છે. તથા "બહુયાઈ કિત્તાણાણિ ય" અનેક પ્રકારની પ્રશંસામાં "આ
દેવ દિવ્ય ઋદ્ધિ વાળા છે" इत्यादिप्र प्रशंसाना शब्दोंमें તેમનું પરિગ્રહરૂપે
મમત્વ હોય છે. "વિઝલદ્વચસારં પરિગ્રહં પર્ગિઠિતા સંદંભા દેવા વિ ન
તિત્તિ ન તુટ્ઠિ અચંચતવિઝલલોભાભિભૂયસન્ના ઊલભન્તિ" આ પ્રમાણે વિપુલ
સારવાળા પરિગ્રહને ગ્રહણ કરવા છતાં પણ ઇન્દ્ર સહિત દેવો પણ ઇચ્છામાંથી
નિવૃત્તિ રૂપ તૃપ્તિને તથા સંતોષ રૂપ તુષ્ટિને આકાંક્ષાની અપરિમિતતાને કારણે
પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે મહર્દિક દેવો એ કે ઇચ્છિત
વસ્તુ પ્રાપ્ત કરવાને સમર્થ તથા લાંબા આયુષ્ય વાળા હોય છે તો પણ તેઓ

પૂર્વોક્તા દેવાઃ કથમ્ભૂતા ? इत्याह- 'अचंतविउललोभाभिभूयसणा' अत्यन्तविपुललोभाभिभूतसंज्ञा- अत्यन्तः-अतिशयः विपुलो गो लोभस्तेन अभिभूता संज्ञा=संज्ञानं=मनो येषां ते तथोक्ताः=संग्रहैकशीला इत्यर्थः, के ते देवाः ? इत्याह-'वासहरइक्खुगार वट्ट पणवयकुंडल-रुचग वरमाणुसोत्तर-कालो-दधि क्वण-सलिल-दहपति-रतिकर अंजणक-सेल-दहिमुह-वपातुप्पाय-कंचण-क-चित्तविचित्त-जमक-वरसिहरकूडवासी' वर्षधरेपुकारवृत्तपर्वतकुण्डल रुचक वरमाणुसोत्तरकालोदधिलवणसलिलदहपतिरतिकर अंजनकसेलदहिमुह-ओवा युप्पायकंचणकविचित्तजमकवरसिहरिकूडवासी) तथा हिमवत् आदि वर्षधरों में, इषुकारों में-घातकीखंड तथा आवे पुष्करवरद्वीप के पूर्वार्ध और पश्चिमार्ध रूप दो भागों की मर्यादाकारी तथा दक्षिणोत्तर तक लंबे ऐसे पर्वतों में, वृत्तपर्वतों में शब्दापाति, विकटापाति, गन्धापाति तथा माध्यवान इन नामके वर्तुल चैतादय पर्वतों में, कुंडलों में ग्यारह जम्बू

પરિબ્રહ્મા વિષયમાં સંતોષ રહિત જ રહે છે. તો બ્યારે એ દેવોની એવી હાલત છે તો બીજા દેવોની તો વાત જ શી કરવી ! એ બધા દેવો અત્યંત લોભી વૃત્તિના હોય છે, એટલે કે તેઓ સંગ્રહશીલ હોય છે. “વાસહર-इक्खुगारवट्ट-पणवय-कुंडल-रुचगवर-माणुसुत्तर-कालोदधि- लवणसलिल- दहपति रतिकर-अंजणकसेलदहिमुहओवायुप्पायकंचणकविचित्त जमकवरसिहरि कूडवासी” तथा हिमवत् आदि वर्षधरेशां षषुधरेशां, घातकी अउ तथा अर्धा पुष्करवर द्वीपना पूर्वार्ध अने पश्चिमार्धद्वीप ये लागोनी मर्यादा दर्शावता तथा दक्षिण्युथी उत्तर सुधी लाग्ता एव पर्वतामां, वृत्तपर्वतामां-शब्दापाति, विकटापाति, गन्धापाति, तथा माध्यवान ये नामना वर्तुल चैतादय पर्वतामां कुंडलां-अगियार जम्बूद्वीपार्था कुंडला नामना द्वीपनी अंदर आवेल कुंडला-

સુદર્શિની ટીકાં ૪૦૫ સૂ૦૩ યથા યે પરિગ્રહં કુર્વન્તિ તદ્વિરૂપણમ્ ૫૧૫

કાદશકુણ્ડલનામકદ્વીપાન્તર્વર્તિનઃ કુણ્ડલાકારાઃ પર્વતાઃ, રુચકવરાઃ=મનુ-
દ્વીપાત્ત્રયોદશ રુચકવર નામક દ્વીપાન્તર્ગત મણ્ડલાકારાઃ પર્વતાઃ, માનુષોત્તરાઃ=
મનુષ્યક્ષેત્રસીમાકારણોમણ્ડલાકારિપર્વતાઃ, કાલોદધિઃ=દ્વિતીયઃ સમુદ્રઃ, લવણઃ-
લવણસમુદ્રઃ, સલિલાઃ=સલિલાનિ સન્ત્યાસુ સલિલાઃ, ગદ્ગાદિમહાનદયઃ, હ્રદપતયા-
નદમધાનાઃ પદ્મમહાપદ્માદિ મહાહ્રદાઃ, રતિકરાઃ=નન્દીશ્વરનામકાષ્ટમદ્વીપચક્રવાલ
વિદિક્ચતુષ્ટયવ્યવસ્થિતાઃ સહસ્રયોજનોચ્છિન્નતાઃ દશશતમવ્યૂતભૂમિગતમૂલભાગાઃ,
સર્વત્ર સમાશ્રત્વારો જ્ઞહરી સંસ્થાનવન્તઃ પર્વતાઃ, અંજનક શૈલાઃ=અંજન-
પર્વતાઃ= નન્દીશ્વરચક્રવાલમધ્યભાગવર્તિનો દિક્ ચતુષ્ટયસંસ્થિતા અંજનરત્નમયા-
શ્રત્વારઃ પર્વતાઃ, સર્વે કૃણ્ણવર્ણાઃ સન્તિ । તથા-દધિમૂલ્લાઃ=અંજનરુચતુષ્ટય પાર્શ્વ-
વર્તિ પુષ્કરિણીપોદશમધ્યભાગવર્તિનઃ પોદશશ્ચેતપર્વતાઃ, તથા-અવપાતોત્પાતાઃ=

દ્વીપ સે વે કુંડલનામક દ્વીપ કે અન્તર્વર્તી કુણ્ડલાકારવાલે પર્વ-
તોં મેં, રુચકવરપર્વતોં મેં-જંબુદ્વીપ સે તેરહવાં રુચકવર નામકા જો-
દ્વીપ હૈં ઉસકે અન્તર્ગત મંડલાકાર પર્વતોં મેં, માનુષોત્તર પર્વતોં મેં-
મનુષ્ય ક્ષેત્ર કી સીમા કરને વાલે મંડલાકાર પર્વતોં મેં, કાલોદધિ
નામકે દ્વીતીયસમુદ્ર મેં, લવણસમુદ્ર, મેં ગંગા આદિ મહાનદિયોં મેં, નદ-
પ્રધાનોં મેં પદ્મ, મહાપદ્મ આદિ મહા હ્રદોં મેં, રતિકરોં મેં-જો નંદીશ્વર
નામ કે આઠવેં દ્વીપ ત્રી ચાર વિદિશાઓં મેં સ્થિત હૈં એક હજાર યોજન
ઉંચે હૈં તથા એક હજાર કોશતક જિનકા મૂલભાગ પૃથ્વી મેં હૈં-અદશ્ય
હૈં, ઓર જો સર્વત્ર સમાન હૈં એસે જ્ઞહરી કે આકારવાલે ચાર પર્વતોં મેં,
અંજનક ગિરિયોં મેં નંદીશ્વર દ્વીપ કે મધ્યભાગ મેં રહે હુએ, ચાર પર્વતોં
મેં કિ જો અંજન રત્નમય હોને સે કાલે હૈં ઓર ચારોં દિશાઓં મેં સ્થિત
હૈં દધિમૂલ્લોં મેં-ચારોં અંજનગિરિયોં કે પાસમેં રહી હુઈં સોલહ પુષ્કરિ-

કાર પર્વતોમાં, રુચકવર પર્વતોમાં-જંબુદ્વીપથી તેરમે જે રુચકવર નામનો
દ્વીપ છે તેની અંદર મંડલાકાર પર્વતોમાં, માનુષોત્તર પર્વતોમાં, મનુષ્ય ક્ષેત્રની
સીમા કરનારા મંડલાકાર પર્વતોમાં, કાલોદધિ નામના ખીલ સમુદ્રમાં, લવણ
સમુદ્રમાં, ગંગા આદિ મહા નદીયોમાં; નદ પ્રધાનોમાં-પદ્મ; મહાપદ્મ આદિ
મહા હ્રદોમાં, રતિકરોમાં-નંદીશ્વર નામના આઠમાં દ્વીપની ચાર વિદિશાઓમાં
રહેલ, એક હજાર યોજન ઊંચા તથા એક હજાર કોશ સુધીનો જેનો મૂળ-
ભાગ પૃથ્વીમાં છે-અદશ્ય છે, અને જે સર્વત્ર સમાન છે, એવા ઝાલરના
આકારના ચાર પર્વતોમાં, અંજનગિરિયોમાં-નંદીશ્વર દ્વીપના મધ્ય ભાગમાં
આવેલ ચાર પર્વતોમાં કે જે અંજન રત્નમય હોવાથી કાળા છે, અને ચારે
દિશાઓમાં ઉભેલા છે, દધિમૂળોમાં-ચારે અંજનગિરિયોની પાસે આવેલ

અવપતન્તિ વૈમાનિકા દેવા યેષુ તેઽવપાતાઃ, યત્રાવપત્ય વૈમાનિકા દેવા મનુષ્ય-
 ક્ષેત્રેષુ સમાગચ્છન્તિ, ઉત્પતન્તિ યેભ્યસ્તે ઉત્પાતાઃ, યેભ્ય ઉત્પત્ય ભવનપતયો
 મનુષ્યક્ષેત્રે સમાગચ્છન્તિ, અવપાતાશ્ચોત્પાતાશ્ચેતિ દ્વન્દ્વઃ, તિગિચ્છકૂટાદયઃ
 પર્વતા इत्यर्थः, તથા-કાશ્ચનકાઃ=ઉત્તરકુરુમધ્યે દેવકુરુમધ્યે ચ પ્રત્યેકં પશ્ચાનાં
 મહાહ્વાદીનાં પ્રત્યેકમુભયોઃ પાર્શ્વયોઃ દશદશ કાશ્ચનકપર્વતાઃ સન્તિ, इति सर्व
 संकलनया द्विशतसंख्यकाः काश्चनकपर्वता भवन्ति। तदा-चित्रविचित्रौ=निषध
 નામક વર્ષધર સમીપવર્તિનો શીતોદાભિધાનમહાનદ્યુભયતટવર્તિનો ચિત્રવિચિત્રકૂ-
 ટાભિધાનપર્વતો, યમકવરો=નીલવદ્ વર્ષધર પ્રત્યાગાત્નો શીતાભિધાનમહાનદ્યુભયત-
 ટવર્તિનો યમકવરનામકો પર્વતો, શિશ્વરિણઃ=સમુદ્રમધ્યવર્તિનો ગોસ્તૂભાદિ-
 પર્વતાઃ, કૂટાઃ=ચન્દનવનકૂટાદયઃ, एतेषां द्वन्द्वः, एषु वस्तुं शीलं येषां ते तथोक्ताः,
 દેવાઃ પરિગ્રહે તૃપ્તિ ન લમન્તે ॥ સૂ. ૩ ॥

ગિયોં કે મધ્યભાગ મેં જો સોલહ સોલહ શ્વેત પર્વત હૈં उनमें, अवपात-
 पर्वतों में—जहाँ उतर कर वैमानिक देव मनुष्य क्षेत्र में आते हैं उन स्थानों
 में (ये स्थान त्रिगिच्छकूट आदि नाम वाले पर्वत कहलाते हैं) काव-
 नपर्वतों में—ये पर्वत उत्तरकुरु तथा देवकुरु के बीच में हर एक पांच
 महाह्रदों के प्रत्येक के दोनों कोनों पर दश दश हैं। इस तरह से ये
 दोनों दोसों की संख्या में हैं उन पर्वतों में, चित्रविचित्र कूट नाम के
 पर्वतों में—ये दोनों पर्वत निषध नामके वर्षधर के समीप में हैं, तथा
 शीतोदा नामकी महानदी के दोनों तट पर वर्तमान नील वर्षधर के
 पास रहे हुए तथा शीता महा नदी के दोनों तट परवर्तमान ऐसे यम-
 कवर नाम के पर्वतों में, शिश्वरी—समुद्रमध्यवर्ती गोस्तूभ आदि पर्वतों में,

સોળ પુષ્કરજિથોનાં મધ્ય ભાગમાં જે સોળ સોળ શ્વેત પર્વત છે તેમાં, અવ-
 પાત પર્વતોમાં—જ્યાં ઉતરીને વૈમાનિક દેવો મનુષ્ય ક્ષેત્રમાં આવે છે એ સ્થા-
 નોમાં, ઉત્પાત પર્વતોમાં—જ્યાં ઉતરીને ભવનપતિ મનુષ્યક્ષેત્રમાં આવે છે તે
 સ્થાનેમાં (તે સ્થાને તિગિચ્છકૂટ આદિ નામના પર્વતો કહેવાય છે) કાંચનક
 પર્વતોમાં—તે પર્વતો ઉત્તરકુરુ તથા દેવકુરુની વચ્ચેમાં દરેક પાંચ મહાહ્વાદોમાંના
 પ્રત્યેકના બંને ખૂણા પર દશ દશ છે, અને એ રીતે તે બંને બંનેની સંખ્યામાં
 છે, તે પર્વતોમાં, ચિત્રવિચિત્રકૂટ નામના પર્વતોમાં—એ બંને પર્વતો નિષધ
 નામના વર્ષધરની પાસે છે, તથા શીતોદા નામની ઓડી નદીના બંને કિનારા
 પર આવેલા છે, નીલ વર્ષધરની પાસે આવેલ તથા શીતા મહાનદીના કિનારા
 પર આવેલ યમકવર નામના પર્વતોમાં શિશ્વરી—સમુદ્રની વચ્ચેના ગોસ્તૂભ આદિ

સુદર્શિનીટીકા અ. ૫ સુ. ૩ યથા યે પરિગ્રહં કુર્વન્તિ તન્નિરૂપણમ્

૫૨૭

તથા ચન્દનવનકૂટ આદિકોં મેં इनके वसने का स्वभाव होता है । ऐसे ये चारों प्रकार के देव परिग्रह में तृप्ति धारण नहीं करते हैं ।

ભાવાર્થ—ભવનવાસી, વ્યન્તર, જ્યોતિષી एवं कल्पवासी, इस प्रकार से ये दोनों के मूल चार भेद हैं इनमें भवनपति देवों के असुर-कुमार आदि दश भेद, व्यन्तरनिकाय के-पिशाच, भूत आदि सोलह भेद, ज्योतिष्क निकाय के सूर्य, चन्द्र आदि पांचभेद, तथा कल्पवासियों के कल्पोपपन्न और कल्पातीत ऐसे दो भेद हैं । सौधर्म ईशान आदि बारह कल्पों में रहने वाले कल्पोपपन्न, और नवग्रैवेयक तथा पंच अनुत्तर विमानों में रहने वाले कल्पातीत हैं । मनुष्यक्षेत्र में रहने वाले ज्योतिषी देव भ्रमणशील हैं तथा मनुष्यक्षेत्र से बाहिर के ज्योतिषी देव अवस्थित हैं । इन सब देवों के भवन, वाहन आदि विशिष्ट प्रकार का परिग्रह रहता है । उसके रहने पर भी इनकी भावना फिर अधिक परिग्रह की ओर संग्रहशील रहती है । इन सब देवों का हिमवन् आदि पर्वतों में रहने का होता है । सब प्रकार की इन्हें सुख-सामग्री प्राप्त रहती है फिर भी इनकी वाञ्छा परिग्रह की ओर से तृप्त नहीं होती है । संतोषवृत्ति इनके चित्त में नहीं जगती है ॥ सू० ३ ॥

પર્વતોમાં ચન્દનવનકૂટ આદિમાં વસવાનો જેમનો સ્વભાવ છે એ ચારે પ્રકારના દેવો પણ પરિગ્રહથી તૃપ્ત થતાં નથી.

ભાવાર્થ—ભવનવાસી, વ્યન્તર, જ્યોતિષી અને કલ્પવાસી, એ રીતે દેવોના મૂળ ચાર ભેદ છે. તેમાં ભવનપતિ દેવોના અસુરકુમાર આદિ દશ ભેદ, વ્યન્તર દેવોના પિશાચ, ભૂત આદિ સોળ ભેદ, જ્યોતિષી દેવોના સૂર્ય, ચન્દ્ર આદિ પાંચ ભેદ, તથા કલ્પવાસીઓના કલ્પોપપન્ન, અને કલ્પાતીત એવા બે ભેદ. સૌધર્મ, ઇશાન આદિ બાર કલ્પોમાં રહેનાર કલ્પોપપન્ન, અને નવગ્રૈવેયક તથા પાંચ અનુત્તર વિમાનોમાં રહેનાર કલ્પાતીત દેવો છે. મનુષ્ય ક્ષેત્રમાં રહેનારા જ્યોતિષીદેવો ભ્રમણશીલ છે તથા મનુષ્ય ક્ષેત્રની બહારના જ્યોતિષી દેવો સ્થિર છે. એ બધા દેવોનો ભવન, વાહન આદિ વિશિષ્ટ પ્રકારનો પરિગ્રહ રહે છે. તે બધી વસ્તુઓ હોવા છતાં પણ તેમની વૃત્તિ અધિક પરિગ્રહને માટે સંગ્રહશીલ રહ્યા કરે છે, તે બધા દેવોનું નિવાસસ્થાન હિમવાન આદિ પર્વતો છે. તેમને બધા પ્રકારની સુખસામગ્રીઓ મળે છે છતાં પણ પરિગ્રહ માટેની તેમની વાસના તૃપ્ત થતી નથી. તેમના ચિત્તમાં સંતોષ વૃત્તિ જાગતી નથી ॥સૂ. ૩॥

अथ मनुष्यपरिग्रहं वर्णयति—‘वक्खार’ इत्यादि—

मूलम्—वक्खार अकम्मभूमीसु सुविभत्तभागदेसासु क-
म्मभूमीसु । जे वि य नरा चाउरंतचक्कवट्ठी वासुदेवा बल-
देवा मंडलिया इस्सरा तलवरा सेणावई इच्चा सेट्टिया
रट्टिया पुरोहिया कुमारा दंडणायगा मणणायगा माडंबिया
सत्थवाहा कोडुंबिया अमच्चा एए अण्णे य एवमादी
परिग्गहं संचिणंति—अणांतमस्सरां दुरंतं अधुवमणिच्चं
असासयं पावकम्मनेमं अवकिरियव्वं विणासमूलं वहवंध
परिकिलेसबहुलमणांतसंकिलेसकरणं । ते तं धगकणगरय-
णानिचियपंडिया चैव लोभघत्था संसारं अतिवयंति सव्व-
दुक्खसंनिलयण । परिग्गहस्सेव य अट्टाएसिप्पसयं सिक्खए
यहुंज्जणो कलाओ य वावत्तरिसुनिउणाओ लेहादियाओ
सउणरुआवसाणाओ गणियप्पहाणाओ चउसट्ठिं च महि-
लागुणे रइज्जणणे सिप्पसेवं असिमसि किसिवाणिजं वव्वहारं
अत्थसत्थं इसुसत्थं च्छरुप्पगयं विविहाओ य जोगजुंज-
णाओ । अन्नेसु य एवमाइएसु बहुकारणसएसु जावजीवं
नडिज्जए संचिणंति मंदबुद्धी परिग्गहस्सेव य अट्टाए करेति
पाणाणवहकरणं, अलियनियडि साइसंपओगे परदव्व-
अभिज्जं सपरदार-गमणासेवणाए आयासविसूरणं कलह-
भंडणवेराणि य अवमाणविमाणणाओ । इच्छमहिच्छपिवा-
ससतत तिसिया तण्हगेहिलोभघत्था अत्ताण अनिग्गहिया
करेति कोहमाणमायालोभे अकित्तणिज्जे । परिग्गहे चवे

सुविंशती टीका अ० ५ सू० ४ मनुष्यपरिग्रहनिरूपणम्

५२९

हुंति, नियमा सल्ला दंडा य गारवा य कसाया य सन्ना य
कामगुणअण्हगा य इंदियलेसाओ, सयणसंपओगा सचि-
त्ताचित्तमीसगाइं दब्बाइं अणंतगाइं इच्छंति परिघेत्तुं
सदेवमणुयासुरम्मि लोए । लोभपरिग्गहो जिणवरेहिं
भणिओ, नत्थि एरिसो पासो पडिबंघो अत्थि सव्वे जीवाणं
सव्वलोए ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘वक्खार अकम्मभूमीसु’ वक्षस्काराकर्मभूमिसु वक्षस्कारा=चित्रकू-
टादयो विजयविभागकारिणश्च, अकर्मभूमयः=हैमवतिका भोगभूमयश्च तासु तयो
क्तासु ये वर्तन्ते तथा ‘सुविभक्तभागदेशासु’ सुविभक्तभागदेशासु सुविभक्ता
भागदेशा जनपदा यासु तास्तथोक्तासु ‘कम्मभूमिसु’ कर्मभूमीसु—कृष्यादि
कर्मस्थानभूतेषु भारतादिषु ‘जे वि य’ येऽपि च नराः ‘चाउरंतचक्कवट्ठी’ वा
तुरन्तचक्रवर्तिनो वासुदेवाः बलदेवाः ‘मंडलिया’ माण्डलिकाः ‘इस्सरा’ ईश्वराः
‘तलवराः’ तलवराः, ‘सेणावई’ सेनापतयः, ‘इब्भा’ इभ्याः ‘सेट्ठी’ श्रेष्ठिनः

अब सूत्रकार मनुष्य के परिग्रह का वर्णन करते हैं—‘वक्खार’
इत्यादि (वक्खार अकम्मभूमीसु) विजय विभागकारी चित्रकूट आदि
वक्षस्कारों में, अकर्मभूमियों में—हैमवतिक आदि युगलिक धर्मवाले
क्षेत्रों में, तथा (सुविभक्तभागदेशासु कम्मभूमीसु) सुविभक्त भाग
देशवाली कर्म भूमियों में—कृष्यादि कर्म के स्थानभूत भरत आदि क्षेत्रों
में (जे वि य नरा चाउरंत चक्कवट्ठी वासुदेवावलदेवा मंडलिया इस्सरा
तलवरा सेणावईइब्भा सेट्ठिया रट्ठिया पुरोहियाकुमारा दंडणायगा
गणणायगा मांडविया सत्थवाहा कोट्टुविया अमच्चा एए अण्णे य एव-
मादी परिग्ग संचिणंति) जो भी मनुष्य हैं, चातुरन्तचक्रवर्ती हैं,

इसे सूत्रकार मनुष्याना परिग्रहणं वर्णन करे छे—“वक्खार” इत्यादि

“वक्खार—अकम्म भूमीसु” विजय विभागकारी चित्रकूट आदि वक्षस्का-
रों में, अकर्मभूमियों में—हैमवतिक आदि युगलिक धर्मवालों क्षेत्रों में, तथा
“सुविभक्तभागदेशासु कम्मभूमीसु” सुविभक्त भाग देशवाली कर्मभूमियों में—
भेटी आदि कर्मना स्थानभूत भरत आदि क्षेत्रों में “जेवि य नरा चाउरंतचक्कवट्ठी
वासुदेवावलदेवा मंडलिया इस्सरा तलवरा सेणावई इब्भा सेट्ठिया रट्ठिया पुरोहिया
कुमारा दंडणायगा गणणायगा मांडविया सत्थवाहा कोट्टुविया अमच्चा ए ए
अण्णे य एवमादी परिग्ग संचिणंति” जे मनुष्यो छे, चातुरन्त चक्रवर्ति छे.

‘रद्विया’ राष्ट्रियाः ‘पुरोद्विया’ पुरोहिताः ‘कुमारा’ कुमाराः दंडनायकाः ‘दण्डनायकाः’ गणनायकाः ‘गणनायकाः’ ‘माडंविद्या’ माडम्बिकाः ‘सार्थवाहा’ सार्थवाहाः ‘कुडंविद्या’ कौटुम्बिकाः, ‘अमच्चा’ अमात्याः, ‘एए’ एते चानु-
रन्तचक्रवर्त्याधमास्यान्ताः तथा ‘अन्ने य एवमाई’ अन्ये च एवमादयः=पूर्वो-
क्तेभ्यः इतरे च तत्सदृशा ये नराः ‘परिग्रहं’ परिग्रहं ‘संचिणंति’ संचिन्वन्ति
-परिग्रहस्य संचयं कुर्वन्तीत्यर्थः कीदृशं परिग्रहम् ? इत्याह-‘अणंतं’ अनन्तम्-
अपरिमाणत्वात्, ‘असरणं’ अशरणं-रक्षणममर्थत्वात्, ‘दुरंतं’ दुरन्तं=पर्यव-
सानदारुणम् ‘अधुवं’ अधुवं-विनश्वरम्, ‘अणिच्चं’ अनित्यम्=अस्थिरम्,
‘असासयं’ अशाश्वतं=प्रतिक्षणं विनाशणशीलम्, ‘पावकर्मणेमं’ पापकर्मणेमं-

वासुदेव हैं, बलदेव हैं, माण्डलिक हैं, ईश्वर हैं, तलवर हैं, सेनापति हैं,
इभ्य हैं, श्रेष्ठी हैं, राष्ट्रिय हैं, पुरोहित हैं, कुमार हैं, दंडनायक हैं, गण-
नायक हैं, माडम्बिक हैं, सार्थवाह हैं, कौटुम्बिक हैं, अमात्य हैं, तथा
इनसे भिन्न जो और भी इन्हीं जैसे मनुष्य हैं वे सब परिग्रह का संचय
करते हैं। अब सूत्रकार विशेषणों द्वारा परिग्रह में विशेषता प्रकट करते
हैं वे कहते हैं कि यह परिग्रह (अणंत) अपरिमित होने से अनंत है।
(असरण) रक्षा करने में असमर्थ होने से अशरणरूप है। (दुरंत) अन्त में इसका विपाक जीवों को बहुत ही भयंकर रूप में भोगना पड़ता
है-इसलिये दुरन्तविपाक वाला होने के कारण यह दुरन्त है। (अधुवं)
विनश्वर स्वभाव वाला होने के कारण यह अधुव है। (अणिच्चं)
अस्थिर होने से यह अनित्य है। (असासयं) प्रतिक्षण खिरने का स्व-

वासुदेव छे, बलदेव छे, मांडलिक छे, ईश्वर छे, तलवर छे, सेनापति छे, इभ्य
छे, श्रेष्ठी छे, राष्ट्रिय छे, पुरोहित छे, कुमार छे, दंडनायक छे, गणनायक छे,
माडम्बिक छे, सार्थवाह छे, कौटुम्बिक छे, अमात्य छे, तथा ते
सिवायना भीन पणु तेमना जेवा जे लोक छे ते अथा परिग्रहो संचय
कर छे. एवे सूत्रकार विशेषणों द्वारा परिग्रहों में विशेषता प्रकट करवाने भाटे
कहे छे ई-आ परिग्रह “अणंत” अणंत होवाथी अनंत छे. “असरण”
रक्षा करवाने असमर्थ होवाथी अशरणरूप छे, “दुरंत” एवेने तेना
विपाक (क्षण) पणु जे लयंकर रीते भोगवणु पड़े-छे-तेथी दुरन्त विपाक-
वाणो होवाने कारणे ते दुरन्त छे. “अधुवं” नाशवंत स्वभावना होवाथी
ते अधुव छे, “अणिच्चं” अस्थिर होवाथी ते अनित्य छे, “असासयं”
प्रतिक्षण हाथमांथी भरी पड़वाना स्वभाववाणो होवाथी ते नाशाश्वत छे,

सुदर्शनी टीका अ० ५ सू० ४ मनुष्यपरिग्रहनिरूपणम्

५३१

पापकर्मणां=विनष्टज्ञानावरणोपादिकर्मणां मूलमित्यर्थः, तथा 'अवकिरियच्चं' अवकिरितव्यम्, -त्याज्यम्, 'विणासमूलम्' विनाशमूलम्=ज्ञानादिगुणनाशकारकम्, 'वहबंधपरिक्लेशबहुलं' बंधबन्धपरिक्लेशबहुलम्=बन्धो-हिंसा, बन्धो-बन्धनम्, तज्जनिता परिक्लेशास्ताराः बहुलाः=प्रचुरा यस्मिन् तथोक्तम्, तथा -'अणंतसंकलेशकारणं' अनन्तसंकलेशकारणम्=अनन्ता ये संक्लेशाः=दुःस्वानि-तेषां कारणम् । एतादृशं परिग्रहं चक्रवर्तीदयस्तद्विनाश नराः संचिन्वन्ति । ते-पूर्वोक्ताः 'लोभग्रथा' लोभग्रस्ताः 'तं धनकणगरयणनिचयं' तं धनकनक रत्ननिचयं 'पंडियाचेव' पिण्डयन्तश्चैव संसारं=चतुर्गतिलक्ष्णम्, 'अतिवयंति'

भाव वाला होने के कारण यह अशाश्वत है । (पापकर्मनेमं) ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का कारण मूल होने से यह पापकर्म का नेमभूत है । (अवकिरियच्चं) मुमुक्षुओं को छोड़ने योग्य होने के कारण यह अवकिरितव्यं-त्याज्य है । (विणासमूलं) ज्ञानादिगुणों के नाश का हेतु होने से यह विनाशमूल है । (वहबंधपरिक्लेशबहुलं) इसके भीतर बंध-हिंसा, बंध-बंधन, और परिक्लेश-संताप ये सब बहुत अधिक रूप में हुए हैं । (अणंतसंकलेशकारणं) इसीलिये यह जीवों को अनन्तसंकलेश कारण होता है । ऐसे इस परिग्रह को चक्रवर्ती जन आदि तथा इनसे भिन्न जो और मनुष्य हैं वे संचित करते रहते हैं । क्यों कि ये समस्त ही जन (लोभग्रथा) लोभरूप कषाय से ग्रसित होते हैं । (तं धनकणगरयणनिचयं) इसी कारण उस धन, कनक एवं रत्न के निचय को (पंडियाचेव) संग्रह करने में ही लगा रहा करते हैं । इसी कारण

“ पापकर्मनेमं ” ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का मूल कारण होवाधी ते पापकर्मोना निमित्त उप छे, “ अवकिरियच्चं ” मुमुक्षुने ते छोडवा योग्य होवाधी ते “ अवकिरितव्यं ” त्याज्य छे, “ विणासमूलं ” ज्ञानादि गुणोना नाश ने भाटे कारण उप होवाधी ते विनाशमूल छे. “ वहबंधपरिक्लेशकारणं ” तेनी अंदर बंध-हिंसा, बंध-बंधन, अने परिक्लेश-संताप. अने अधु बंधादि प्रमाणों में देखे छे. “ लोभग्रथा ” ते कारण ते जीवने अनन्त संक्लेश-संतापन कारण अने छे. अथवा ते परिग्रहने अकर्मिता आदि तथा ते सिवा-यना भील के भावोंसे होय छे, तेओ संशय करता रहे छे, कारण के ते संशय होके “ तं धनकणगरयणनिचयं ” ते कारण तेओ धन, कनक, अने रत्नना समूहना “ पंडियाचेव ” संग्रह करवाभां न लीन रहे छे. अथ

અતિવ્રજન્તિ-પ્રાપ્તુવન્તોત્યર્થઃ, કીદંશં સંસારમ્ ? इत्याह—‘सच्चदुक्खसंनिलयणं’ सर्वदुःखसंनिलयनम्=सर्वदुःखानां संनिलयनम्=आश्रयभूतम्। तथा—‘परिग्रहस्स य अट्टाए’ परिग्रहस्य च अर्थोय=परिग्रहं लक्षिकृत्येत्यर्थः, ‘बहुजणो’ बहुजनः=जनसमुदायः ‘सिप्पसयं’ शिल्पज्ञतं=आचार्योपदेशगम्यमनेकविधं शिल्पं ‘सि क्खते’ शिक्षते। तथा ‘सुनिउणहओ’ सुनिपुणाः=शिक्षार्थिनां मुनैपुण्याधायकाः ‘लेहाइयाओ’ लेखादिकाः=लेख आदौ यासां तास्तथोक्ताः, ‘सउणरूयावसाणाओ’ शकुनरूतावसानाः=शकुनानां=पक्षिणां रूतं जल्पितमवसानेऽन्ते यासां तास्तथोक्ताः, ‘गणियप्पहाणाओ’ गणितप्रधानः=गणितं प्रधानं यामु तास्तथोक्ताः, ‘वावत्तरि’ द्विसप्ततिं ‘कळाओय’ कलाश्च शिक्षते। तथा—‘रत्तिजणणे’ रत्तिजननान्=रत्ति=रागं जनयन्ति ये ते रत्तिजननास्तांस्तथोक्तान् ‘चउसट्ठिं च महिला गुणे’ चतुः पठ्ठिं च महिलागुणान्=वात्स्यायन प्रोक्तान् नृत्यगीतादीन्, तथा ‘सिप्पसेवं’ शिल्पसेवां=शिल्पेन सेवा तां तथोक्ताम्, येन शिल्पेन राजसेवा

પરિગ્રહી જીવ (સચ્ચદુક્ખસંનિલયણં) સમસ્ત દુઃખોના આશ્રયભૂત હસ (સંસાર) ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં (અતિવ્રજન્તિ) ખટકતે રહતે હૈં । તથા (પરિગ્રહસ્સય અટ્ટાએ વહુ જણો સિપ્પસયં સિક્ખણ) હસ પરિગ્રહ કે નિમિત્ત કો લેકર હી વહુત સે લીગ કલાચાર્ય કે ઉપદેશ સે પ્રાપ્ત હોને વાલે અનેક શિલ્પોં કો સીખતે હૈં તથા (સુનિઉણાઓ લેહાઇયાઓ સઠ-ણરૂયાવસાયાઓ ગણિયપ્પહાણાઓ વાવત્તરિકલાઓ) અપને મેં અચ્છી તરહ સે નિપુણતા વધાને વાલી લેખકલા સે લેકર શકુનરૂત પર્યંય ૭૨ બહત્તર કલાઓં કો જિને કિમેં ગણિતપ્રધાન હોતા હૈં સીખતે હૈં તથા (રહજણે ચઉસટ્ઠિં ચ મહિલાગુણે) રાગજનક નૃત્ય, ગીત આદિ સ્ત્રીઓં સે સંબંધ રાખને વાલી ચૌસઠ કલાઓં કો કિ જિનકે પ્રદર્શક વાત્સ્યાયન ઋષિ

કારણે પરિગ્રહી જીવ “ સચ્ચદુક્ખસંનિલયણં ” સમસ્ત દુઃખોના આશ્રયભૂત આ “ સંસાર ” આર ગતિવાળા સંસારમાં “ અતિવ્રજન્તિ ” ભટકતા કરે છે, તથા “ પરિગ્રહસ્સય અટ્ટાએ વહુ જણો સિપ્પસયં સિક્ખણ ” આ પરિગ્રહને નિમિત્તે જ ધણા લોકો કલાચાર્યના ઉપદેશથી પ્રાપ્ત થતી અનેક કળાઓ શીખે છે, તથા “ સુનિઉણાઓ લેહાઇયાઓ સ ણરૂયાવસાયાઓ ગણિયપ્પહાણાઓ વાવત્તરિકલાઓ ” પોતાની નિપુણતા સારી રીતે વધારનારી લેખન કળાથી લઈને શકુનરૂત મુધીની ૭૨ બેતર કલાઓ કે જેમાં ગણિત મુખ્ય હોય છે. તે બધી કળાઓ શીખે છે, તથા “ રહજણે ચઉસટ્ઠિં ચ મહિલાગુણે ” રાગ જનક નૃત્ય, ગીત આદિ સ્ત્રીઓ સાથે સંબંધ રાખનારી ચૌસઠ કલાઓ શીખે છે. એ કલાઓના મદદથી વાત્સ્યાયન ઋષિ હતા. તથા “ સિપ્પસેવ ” એવી શિલ્પ વિદ્યાઓ શીખે છે કે જેને પ્રભાવે

ડવસરો લખ્યે તત્ શિલ્પ ' શિલ્પસેવા ' ઇત્યુચ્યે, તથા ' અસિમસિકિસિવા-
 ણિજ્ઞ ' અસિમવીકૃષિવાણિજ્યમ્=અસિઃસ્વજ્ઞામ્યાસઃ, મસિઃ=મસિકૃત્યમક્ષરલેખ-
 નાદિ, કૃષિઃ=કર્ષણમ્, ' વાણિજ્ઞ ' વાણિજ્યમ્=વણિકર્મ, એતેવાં સમાહારદ્વન્દ્ઃ,
 તત્ ' વ્યવહાર ' વ્યવહારં=વ્યવહારશાસ્ત્રમ્, તથા ' અત્યસત્યં ' અર્થશાસ્ત્રમ્, અર્થો-
 પાયપ્રતિપાદકં કૌટિલ્યવાર્હસ્પત્યાધશાસ્ત્રમ્, ' ઇસુસત્યં ' હ્ણુશાસ્ત્રમ્-ધનુર્વેદં
 ' છરૂપગયં ' ત્સરૂપગતં=સ્વરૂપુષ્ટિગ્રહણોપાયં, તથા ' વિવિહાઓ ' વિવિધાઃ
 ' જોગજુંજણાઓ ય ' યોગયોજનાશ્ચ=વશીકરણાદિપ્રયોગાંશ્ચ શિક્ષતે । તથા
 હુપ હૈં સીખતે હૈં । તથા (સિપ્પસેવં) એસી શિલ્પ વિદ્યા કો સીખતે હૈં
 કિ જિસકે ઘલ પર ઉન્હેં રાજા કો સેવા કરને કા અવસર પ્રાપ્ત હો જાતા
 હૈં । તથા અસિ, મષી, કૃષિ એવં વાણિજ્યવ્યાપાર, (વ્યવહારં) વ્યવહાર
 શાસ્ત્ર ઇન કર્મો કો સીખતે હૈં । તલવાર વગેરહ અસ્ત્ર શસ્ત્રાદિ સે
 આજીવિકા ચલાના ઇસકા નામ અસિકર્મ હૈં । લેખન આદિ કરકે જીવન
 નિર્વાહ કરના ઇસકા નામ મષીકર્મ હૈં । ખેતી કિસાની કરકે જીવિકા
 ચલાના ઇસકા નામ કૃષિકર્મ હૈં । વ્યાપાર ધંદા કરના ઇસકા નામ વાણિ-
 જ્ય કર્મ હૈં । જિસસે લોક વ્યવહાર ચલતા હૈં વહ વ્યવહારશાસ્ત્ર હૈં ।
 પરિગ્રહી જીવ (અત્યસત્યં) અર્થશાસ્ત્ર કા ખી અધ્યયન કરતે હૈં । ઇસ
 અર્થ શાસ્ત્ર કે પ્રણેતા કૌટિલ્ય, વૃહસ્પતિ આદિ હુપ હૈં । ઇસકે અધ્યયન
 સે વ્યાપારિક ક્ષેત્ર મેં વ્યાપારિયોં કો પૈસેકી આયકે સાધન કૈસેર ક્યાર
 હોતે હૈં ઇસ સર્વ વિષય કા ઘોષ હો જાતા હૈં । ઇસી પરિગ્રહ કી મમતા
 સે જીવ (ઇસુસત્યં) ધનુર્વેદ કો (છરૂપગયં) તલવાર આદિ કે ચલાને
 કી કલા કો તથા (વિવિહાઓ જોગજુંજણાઓ) વશીકરણ આદિ

તેમને રાજની સેવા કરવાની તક મળે તથા અસિ, મષી, કૃષિ અને વાણિજ્ય
 વ્યાપાર, “ વ્યવહાર ” વ્યવહાર શાસ્ત્ર વગેરે કાર્યો શીખે છે. તલવાર આદિ
 અસ્ત્ર શસ્ત્રાદિથી નિર્વાહ ચલાવવો તેનું નામ અસિકર્મ છે, લેખન આદિ
 કરીને જીવન નિર્વાહ ચલાવવો તેનું નામ મષીકર્મ છે. ખેતી કરીને નિર્વાહ
 ચલાવવો તેનું નામ કૃષિકર્મ છે. વ્યાપાર સંજ્ઞાગાર કરવો તેનું નામ વાણિજ્ય
 કર્મ છે. બેનાથી લોકવ્યવહાર ચાલે છે તે વ્યવહારશાસ્ત્ર છે. પદિગ્રહી જીવ
 “ અત્યસત્ય ” અર્થશાસ્ત્રનું પણ અધ્યયન કરે છે. તે અર્થશાસ્ત્રના પ્રણેતા
 કૌટિલ્ય, વૃહસ્પતિ આદિ થયા છે. તેને અભ્યાસ કરવાથી વ્યાપારના ક્ષેત્રમાં
 પૈસા કમાવવાના સાધનો કેવાં કેવાં હોય છે, અને કયાં કયાં હોય છે. એ
 ખી આજત વેપારીઓને બાણુવા મળે છે. એ જ પરિગ્રહની મમતાથી જીવ
 “ ઇસુસત્ય ” ધનુર્વેદ, “ છરૂપગયં ” તલવાર આદિ વાપરવાની કળા, તથા

‘અન્નેસુ એવમાઇસુ’ વહુસુકારણસાસુ’ અન્યેસુ એવમાદિકેષુ વહુસુ કારણશ તેષુ=શિલ્પાદિભિન્નેષુ પરિગ્રહોપાદાનશતેષુ ‘જાવજીવં’ યાવજ્જીવં ‘નહિજ્જણ’ નિમજ્જતે=નિમગ્ની ભવતિ । તથા ‘સંચિણંતિ મંદવુદ્ધી’ સંચિ-ન્વન્તિ મંદવુદ્ધયઃ પરિગ્રહમ્ । તથા ‘પરિગ્રહસ્સેવ ય અદ્ધાણ કરેતિ’ પરિગ્રહસ્યૈવ ચ અર્થાય કુર્વન્તિ, ‘પાળાણવહકરણં’ પાળાણાં વધકરમ્=પરિગ્રહં કર્તું પાળિનાં વધં કુર્વન્તીત્યર્થઃ, તથા—‘અલિયનિયડિસાઇસંપઓગે’ અલીકનિકૃતિસાતિ સંપ્રયોગાન્, અધિકમ્=અસત્યમ્, નિકૃતિઃ=મધુરશ્વનાદિમિરાશ્વાસ્ય વજ્રનમ્, સાતિસંપ્રયોગઃ=વિશુદ્ધદ્રવ્યેષુ દ્રવ્યાન્તરં સંયોજ્ય પ્રશસ્તમુખમ્ભોત્પાદનમ્, એતેષાં દ્વન્દ્વઃ, તાંસ્તથોક્તાન્, ‘પરદવ્વ અમિજ્ઞં’ પરદ્રવ્યામિધ્યામ્=પરદ્રવ્યેષુ=રસધનેષુ

અનેકવિધ પ્રયોગોં કોં ભી (સિક્કવણ) સીન્વતે હેં । (અન્નેસુ ય એવ-માઇસુ) તથા ઇસી તરહ કે ઓર ભી ઇન્ શિલ્પાદિકોં સે ભિન્ન અનેક (વહુકારણસાસુ) પરિગ્રહ કે સેકડોં કારણોં મેં પરિગ્રહ કોં ઈર્જન કરને કી લાલસાવાલા પ્રાણી (જાવજીવં) જીવન પર્યંત (નહિજ્જણ) મગ્ન હોના રહતા હૈ । (સંચિણંતિ મંદવુદ્ધી) ઇસલિયે ઇસ કથન સે યહી નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ જો મંદવુદ્ધિ હોતે હેં વે હી ઉત્કટ પરિગ્રહ કા સંચય કરતે હેં । તથા (પરિગ્રહસ્સેવ ય અદ્ધાણ પાળાણવહકરણં કરેતિ) પરિ-ગ્રહ કે નિમિત્ત હી પ્રાણી પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કો વધ કરતે હેં તથા (અલિ-યનિયડિ-સાઇ સંપઓગે) ઇસ પરિગ્રહ કો લક્ષ્ય કરકે હી વે (અલિયં) અસત્યભાષણ કરતે હેં (નિયડિ) મધુર ૨ ભાષણોં સે દુસરોં કો વિશ્વાસ દિલાકર ફિર ઉન્હેં ઠગતે હેં, (સાઇસંપઓગે) ઓછી કીમત કી વસ્તુ મેં વહુમૂલ્યવાલી વસ્તુ કો મિલાકર ઉસે અધિક મૂલ્યવાલી બનાદિયા

“વિવિહાઓ જોગજુજાઓ” વશીકરણ આદિ અનેક વિધ પ્રયોગો પણ શીખે “અન્નેસુ ય એવમાઇસુ” તથા તે કળાઓ સિવાયના એ જ પ્રકારના ખીજા અનેક “વહુકારણસાસુ” પરિગ્રહોના સેકડો કારણોમાં પરિગ્રહને પ્રાપ્ત કરવાની લાલસા પાળા છવે “જાવજીવં” આખું જીવન “નહિજ્જણ” લીન રહે છે. “સંચિણંતિ મંદવુદ્ધી” તેથી આ કથનથી એ જ ફલિત થાય છે તથા કે જે લોકો મંદબુદ્ધિવાળા હોય છે તેઓ જ ઉત્કટ પરિગ્રહનો સંચય કરે છે. તથા “પરિગ્રહસ્સેવ ય અદ્ધાણ પાળાણવહકરણં કરેતિ” પરિગ્રહને નિમિત્તે જ પ્રાણી અથવા પ્રાણીઓના પ્રાણોનો વધ કરે છે, તથા “અલિય-નિયડિ-સાઇ સંપઓગે” આ પરિગ્રહને લક્ષ્ય કરીને જ તેઓ “અલિયં” અસત્ય બોલે છે, “નિયડિ” મીઠાં મીઠાં વચનોથી ખીજામાં પોતાના પ્રત્યે વિશ્વાસ જમાવીને પાછળથી તેને ઠગે છે. “સાઇસંપઓગે” ઓછી કીમતની વસ્તુનું ભારે કીમતની વસ્તુ સાથે મિશ્રણ કરીને તેનો વધારે ભાવ ઉપજાવે છે, “પરદવ્વ

सुवर्शिनी टीका अ० ५ सू० ४ मनुष्यपरिग्रहनिरूपणम्

५३५

‘अभिज्ञा’ अभिध्या-आसक्तिः तथा ‘सपरदारगमणासेवणाए’ स्वदारगमनसेवनायाम् ‘आयासविसृण’ आयासखेदं, स्वदारगमने आयास-शारीरं मानसं च श्रमम्, परदारासेवने खेदम्=परदाराप्राप्तिं मनः खेदं च कुवन्तीत्यर्थः, तथा ‘कलहभेडणवेराणि य’ कलहभण्डनवेराणि च तत्र-कलहो-वाचिकं युद्धम्, भण्डनम्-परदोषोद्घाटनं गालीप्रदानं वा, वैरं=चित्तेऽमर्षाऽनुबन्धः, तथा ‘अवमाणविमाणणाओ’ अपमानविमानने, अपमानं-विनयध्वंसः, विमानना=तिरस्करणम्, एतानि सर्वाणि परिग्रहवैवाध्यायं कुर्वन्ति । तथा ‘इच्छमहिच्छ-प्पिवाससकयतिसिया’ इच्छामहेच्छापिपासासतततृपिताः, तत्र इच्छा=अभिलाषमा-त्रम्, महेच्छा=महाभिलाषश्चक्रवर्त्यादिप्रदानां पिपासा=विषयसुखपानेच्छा, ताभ्यः तृपिता इव तृपिताः तथा ‘तण्हगेहिलोभघत्था’ तृष्णागृद्धिलोभग्रस्ताः, तृष्णा=अप्राप्तद्रव्यस्य लाभेच्छा, गृद्धिः=प्राप्तद्रव्यासक्तिः, लोभः=चित्तविमोहनम्, तैर्ग्र-करते हैं । (परद्वयअभिज्ञं) दूसरों के द्रव्य में आसक्ति भाव करते हैं । (सपरदारगमणा सेवणाए आयास विसृण) अपनी स्त्री के सेवन में शारीरिक एवं मानसिक परिश्रम करते हैं, परस्त्री के अप्राप्ति में मनखेद किया करते हैं । तथा (कलहभेडणवेराणि) कलह-वाचिक युद्ध, भेडन-असभ्य शब्दों का प्रयोग-गाली देना आदि, वैर-चित्त में क्रोध करना तथा (अवमाणविमाणणाओ) दूसरों का अपमान करना, तिरस्कार करना ये सब बातें इस एक परिग्रह के निमित्त ही पापियों द्वारा की जाती हैं । तथा (इच्छमहिच्छप्पिवाससकयतिसिया) परिग्रही जीव इच्छाओं से, बड़ी २ अभिलाषाओं से, एवं विषय सुखपान की कामनाओं से सदा तृपित व्यक्ति की तरह तृपित ही बने रहते हैं । तथा (तण्हगेहिं लोभ-घत्था) तृष्णा-अप्राप्त-द्रव्य को प्राप्त करने की भावना, गृद्धि-प्राप्तद्रव्य में

અમિત્ઘ” ધીબનાં દ્રવ્યમાં આસક્તિ રાખે છે. “સપરવારગમણાસેવનાપ
આયાસવિસૂરણ” પોતાની સ્ત્રીને સેવવાનો શારીરિક અને માનસિક પરિશ્રમ
કરે છે, એને પરસ્ત્રીની અપ્રાપ્તિથી મનમાં ખેદ અનુભવે છે. તથા “કલહ
મંદ્રણવેરાણિય” કલહ-વાંચુદ્ધ, ભંડન-ગાળો આદિ અસભ્ય શબ્દોનો ઉપયોગ
પૈર-મતમાં કોષ્ટ કરવો તથા “અવમાણવિમાણનામો” ધીબતું આપમાન,
તિરસ્કાર વગેરે બધી બાબતો એક પરિચહને ડારણે જ લોહો દ્વારા કરાય છે,
તથા “ઇચ્છમહિચ્છપિવાસસયતિસિયા” પરિચહી જીવ ઇચ્છાઓથી, મોટી
મોટી અસિલાખાઓથી, અને વિષય સુખપાનની કામનાઓથી સદા તૃપિત માણુ-
સતી જેમ તૃપિત જ રહ્યા કરે છે. તથા “તળ્લામોદિ લોમચત્થા” તૃણા-અપ્રાપ્ત
દ્રવ્યને પ્રાપ્ત કરવાની લાવના, ગૃહિ-પ્રાપ્ત દ્રવ્યમાં વધારે પડતી આસક્તિ અને

સ્તાઃ=વ્યાપ્તાઃ, તથા ‘અત્તાણ અણિગ્ગહિયા’ આત્મનાઽનિગૃહીતાઃ=અવશીકૃતા-
ત્માનઃ ‘કરેતિ’ કુર્વન્તિ । કિં કુર્વન્તિ ? इत्याह—‘કોહમાણમાયાલોભે’
ક્રોધમાનમાયાલોભાન્, ક્રોદશાન્ ? ‘અકિત્તણિજ્જે’ અકીર્તનિયાન્-અવાચ્યાન્ ।
તથા ‘પરિગ્ગહે ચેવ’ પરિગ્રહે एव ‘હુંતિ’ ભવન્તિ, ‘નિયમા’ નિયમાત્-
નિશ્ચયતઃ, કાનિ કાનિ ભવન્તિ ? ત્યાહ ‘સલ્લા’ શલ્યાનિ = માયાનિદાનમિથ્યા-
દર્શનરૂપાણિ ત્રીણિ, ‘દણ્ડ ય’ દણ્ડાશ્ચ-દુષ્પ્રણિહિતમનોવાક્યાયરૂપાઃ, ‘ગાર-
વાય’ ગૌરવાણિ ચ=ઋદ્ધિરસસાતરૂપાણિ ચ ‘કસાયસણ્ણા ય’ કષાયસંજ્ઞાશ્ચ,
કષાયાઃ=પ્રતિતાઃ, સંજ્ઞાઃ=આહાર મૈથુનભયપરિગ્રહાદયઃ, તથા-‘કામગુણ-
અણ્હમા ય’ કામગુણાશ્રવાશ્ચ કામગુણાઃ=શબ્દાદયસ્ત एव આશ્રવાઃ=આશ્રવદ્વારાણિ
‘ઈંદિય’ ઇન્દ્રિયાણિ=અસંવૃત્તાનિ ઇન્દ્રિયાણિ, ‘લેસાઓ’ લેશ્યાઃ=અપ્રશસ્તા

અધિક આસક્તિ, લોભ-લાલચ, इन सब से घिरे रहते हैं (अत्ताणा
अणिग्गहिया) इन की आत्मा इनके वश में नहीं हो पाती है। और इस
तरह ये परिग्रह की ममता में फँसकर (कोहमाणमायालोभे) क्रोध, मान
माया और लोभ जैसी कषायों को कि जो (अकित्तणिज्जे) शब्दों से
प्रकट नहीं की जा सकती हैं (करेति) करते रहते हैं। (परिगगहे चैव
हुंति नियमा सल्ला, दंडा य गार वा य कसायसण्णा य कामगुणअण्हमा
य इंदिय लेसाओ सयणसंपओगा सचित्ताचित्तमीसगाइं दव्वाइं अणंत-
गाइं परिचेतुं इच्छंति) इस परिग्रह में ही नियम से माया, मिथ्यादर्शन
और निदान, ये तीन शल्य रहते हैं। मन, वचन और काय की दुष्ट-
तारूप व्यापार रहता है। ऋद्धि रस सातरूप गौरव रहता है। अनंता-
नुबंधी आदि कषायें, आहार, भय, मैथुन, और परिग्रह ये चार संज्ञाएँ,

લોભ, એ બધાથી ઘેરાયેલ રહે છે. “અત્તાણ અણિગ્ગહિયા” તેમનું મન તેમના
કાબૂમાં હોતું નથી, અને આ રીતે પરિગ્રહની મમતામાં ફસાઈને “કોહમાણ
માયાલોભે” ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ જેવા કષાયો કે જે “અકિત્તણિજ્જે”
શબ્દો દ્વારા પ્રગટ કરી શકાતા નથી. “કરેતિ” તેમનું સેવન કરે છે. “પરિ-
ગગહે ચેવ હુંતિ નિયમા સલ્લા, દંડાય ગારવા ય કસાય સણ્ણાય કામગુણઅણ્હ-
માય ઇંદિયલેસાઓ સયણસંપઓગા સચિત્તાચિત્તમીસગાઈં દવ્વાઈં અણંતગાઈં
પરિચેતું ઇચ્છંતિ” આ પરિગ્રહમાં જ નિયમથી જ માયા, મિથ્યાદર્શન અને
નિદાન, એ ત્રણ શલ્ય રહે છે. મન, વચન અને કાયની દુષ્ટતારૂપ પ્રવૃત્તિ
રહે છે. ઋદ્ધિ રસ સાતરૂપ ગૌરવ રહે છે. અનંતાનુબંધી આદિ કષાયો, આહાર
ભય, મૈથુન અને પરિગ્રહ એ ચાર સંજ્ઞાઓ, શબ્દાદિ વિષયરૂપ આશ્રવ,

લેશ્યાશ્ચ ભવન્તિ । તથા - ‘ સયણસંપયોગા ’ સ્વજનસંપયોગાઃ=સ્વજનૈઃ=પુત્રદા-
રાદિભિઃ સહ સંપયોગઃ=સંયોગાશ્ચ ભવન્તિ । તે ચક્રવર્ત્યાદયઃ ‘ અણંતગાઈ ’
અનન્તવાનિ=પર્યવસાન્નરહિતાનિ ‘ સચિત્તાચિત્તમીસગાઈ ’ સચિત્તાચિત્તમિશ્રકાણિ
=તત્ત્વ સચિત્તાનિ સજીવાનિ=પુત્રાદીનિ અચિત્તાનિ=અજીવાનિ=હિરણ્યસુવર્ણરત્ના-
દીનિ, મિશ્રકાણિ=સચિત્તાચિત્તરૂપાણિ હિરણ્યસુવર્ણાધામરણસંદેહાનિ પુત્રકલત્રા-
શબ્દાદિ વિષયરૂપ આસ્ત્ર, ઇન્દ્રિયોં કી અનર્ગલ પ્રવૃત્તિયાં, કૃષ્ણ, નીલ
આદિ અપ્રકાશ લેહ્યાઈ રહતી હૈં । અર્થાત્ પરિગ્રહ પાપ કે સદ્ભાવ મેં
હી નિયમતઃ માયાદિ શલ્યોં કા સદ્ભાવ જીવોં મેં પાયા જાતા હૈ । મન
વચન આદિ યોગોં કી પ્રવૃત્તિ રૂતી કે હોને પર અશુભ રૂપ મેં રહતી હૈં ।
ગૌરવોં કા અસ્તિત્વ તથા કષાયોં કી સત્તા એવં આહાર આદિ ચાર
પ્રકાર કી સંજ્ઞાઓં કા સદ્ભાવ હસ એક પરિગ્રહ કી ભૌજૂદગી મેં હી જીવોં
મેં પાયે જાતે હૈં । ઇન્દ્રિયોં કી સ્વચ્છંદ પ્રવૃત્તિ એવં કૃષ્ણ આદિ અશુભ
લેહ્યાઓં કા સંબંધ રૂસી પરિગ્રહ સે જીવોં મેં પાયા જાતા હૈ । તથા સ્વજન
આદિ કે સાથ કા સંબંધ ભી રૂસી પરિગ્રહ કે ઉપર નિર્ભર હૈ । ચક્રવર્તી
આદિ સમી મનુષ્ય યહી યાહતે હૈં કિ હમારે પાસ અનંત સચિત્ત, અચિત્ત
ઔર મિશ્ર પરિગ્રહરૂપ દ્રવ્ય બના રહે । પુત્ર આદિ સચિત્ત પરિગ્રહ, હિર-
ણ્ય, સુવર્ણ, રત્ન આદિ અચિત્ત પરિગ્રહ, એવં હિરણ્ય, સુવર્ણ, રત્ન આદિ
કે આમરણ સહિત પુત્રાદિ મિશ્ર પરિગ્રહ હૈ । તાત્પર્ય રૂસકા યહી હૈ
કિ ચક્રવર્તી સે લેકર છોટે સે છોટા પ્રાણી યહી યાહતા રહતા હૈ કિ

ઇન્દ્રિયોની અનર્ગલ પ્રવૃત્તિયો, તથા કૃષ્ણ, નીલ આદિ અપ્રકાશ લેશ્યાઓ
રહે છે. એટલે કે પરિગ્રહ પાપની હાજરીમાં નિયમથી માયાદિ શલ્યોનો સહ-
ભાવ જીવોમાં આવે છે. તે હોય તો મન વચન આદિ યોગોની પ્રવૃત્તિયો
અશુભ રૂપે રહે છે. ગૌરવોનું અસ્તિત્વ તથા કષાયોની સત્તા, તથા આહાર
આદિ ચાર પ્રકારની સંજ્ઞાઓ આદિનો સદ્ભાવ એક પરિગ્રહની હાજરી હોય
તો જ જીવોમાં જોવા મળે છે. ઇન્દ્રિયોની સ્વચ્છંદી પ્રવૃત્તિ અને કૃષ્ણ આદિ
અશુભ લેશ્યાઓનું અસ્તિત્વ આ પરિગ્રહને કારણે જ જીવોમાં હોય છે. તથા
સ્વજન આદિ સાથેનો સંબંધ પણ આ પરિગ્રહ પર આધાર રાખે છે. ચક્ર-
વર્તી આદિ સઘળા લોકો એ જ ચાહે છે કે અમારી પાસે અનંત સચિત્ત,
અચિત્ત અને મિશ્ર પરિગ્રહરૂપ દ્રવ્ય કાયમ રહે. પુત્ર આદિ સચિત્ત પરિગ્રહ
છે. હિરણ્ય, સુવર્ણ, રત્ન આદિ અચિત્ત પરિગ્રહ છે. અને સુવર્ણ, રત્ન આદિના
આભૂષણો સહિત પુત્રાદિ, તે મિશ્ર પરિગ્રહ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ચક્ર-

દીનિ, 'દ્રવ્યાં' દ્રવ્યાણિ 'પરિધેતું' પરિગ્રહીતુમ્ ઇચ્છન્તિ । 'સદેવમનુયા-
સુરમ્મિ લોગે' સદેવમનુજાસુરે લોકે 'લોભપરિગ્રહો' લોભપરિગ્રહઃ=લોભાત્પરિ-
ગ્રહો લોભરૂપો વા પરિગ્રહી ભવતિ, 'જિળવરેહિં' જિનવરે 'ભણિઓ' ભણિતઃ=
પ્રોક્તઃ 'નત્થિ' નાસ્તિ 'પરિસો' રૂદ્ધઃ=પરિગ્રહસદ્દશોડન્યઃ કથિદપિ 'પાસો'
પાશઃ=બંધનમ્, 'પહિંબંધો' પ્રતિબંધઃ=પ્રતિરોધઃ । અયં પરિગ્રહઃ 'સત્ત્વલોપ'
સર્વલોકે=ત્રિષુ લોકેષુ 'સત્ત્વ જીવાણં' સર્વજીવાનામ્=સર્વપ્રાણિનામ્ 'અત્થિ'
'અસ્તિ=વિદ્યતે । સૂક્ષ્મજીવાનામપિ પરિગ્રહસંજ્ઞા ભવતીતિ સર્વશબ્દગ્રહણમ્ ॥મુ.૪॥

જો 'ભી' પરિગ્રહરૂપવસ્તુ જિતની 'ભી' માત્રા મેં હમારે પાસ હૈ વહ જ્યોં કિ
લ્યો બની રહે-નષ્ટ ન હો, ઓર ઉતની માત્રા સે 'ભી' ફિર અધિક માત્રા
મેં ઘટિંગત હીતી રહે તો અચ્છી વાત હૈ (સદેવમનુયાસુરમ્મિ લોગે)
દેવલોક મેં, મનુષ્યલોક મેં, તથા અસુર લોક મેં (લોભપરિગ્રહો)
લોભ પરિગ્રહ-લોભ સે પરિગ્રહ અથવા લોભરૂપ પરિગ્રહ-હોતા હૈ ।
(જિળવરેહિં ભણિઓ) એસા જિનેન્દ્ર દેવોંને કહ્વા હૈ । (નત્થિ પરિસોપાસો
-પહિંબંધો સત્ત્વલોપ સત્ત્વજીવાણં અત્થિ) હસ પરિગ્રહ કે જૈસા દૂસરા
ઔર કોઈ 'ભી' પાસ-બંધન, તથા પ્રતિબંધ-પ્રતિરોધ-આત્મકલ્યાણ રોધક
પદાર્થ નહીં હૈ । યહ પરિગ્રહ ત્રીનોં લોકોં મેં સમસ્ત જીવોં કે હૈ । પ્રશ્ન-
સૂક્ષ્મ જીવોં કે યહ પરિગ્રહ કિસ રૂપ મેં હૈ ? ઉત્તર-યહ પરિગ્રહ ઉનમેં
પરિગ્રહ સંજ્ઞા રૂપ મેં હૈ । હસી વાત કો કહને કે લિયે સૂત્ર મેં 'સર્વ'
શબ્દ કા ગ્રહણ કિયા હૈ ।

વર્તિથી લઈને નાનામાં નાનો જીવ એ જ આહ છે કે જે કોઈ પરિગ્રહરૂપ
જેટલા પ્રમાણમાં અમારી પાસે છે તે તેમને તેમ રહે-નાશ ન પામે, અને
છે તે કરતાં પણ તેમાં વધારો થતો રહે તો બહુ જ સારું. “સદેવમનુયા
સુરમ્મિલોગે” દેવલોકમાં, મનુષ્યલોકમાં તથા અસુરલોકમાં “લોભ પરિગ્રહો”
લોભ પરિગ્રહ-લોભથી પરિગ્રહ અથવા લોભરૂપ પરિગ્રહ હોય છે “જિળવરેહિં
ભણિઓ” એવું જિનેન્દ્ર દેવોએ કહેલ છે. “નત્થિ પરિસો પાસો પહિંબંધો સત્ત્વ-
લોપ સત્ત્વજીવાણં અત્થિ” આ પરિગ્રહ એવું બીજું કોઈ પણ બંધન નથી,
તથા પ્રતિરોધક-આત્મકલ્યાણ રોધક પદાર્થ નથી. આ પરિગ્રહ ત્રણે લોકમાં
સઘળા જીવોને હોય છે.

પ્રશ્ન-સૂક્ષ્મ જીવોમાં આ પરિગ્રહ કેવી રીતે છે ?

ઉત્તર-આ પરિગ્રહ તેમનામાં પરિગ્રહ સંજ્ઞારૂપે છે. એ વાત દર્શાવવાને
માટે સૂત્રમાં 'સર્વ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે.

ભાવાર્થ—અદાઈ દ્રીપ કે ખીતર હી મનુષ્યોં કા નિવાસ હૈ, અતઃ સમી મનુષ્ય ચાહે વે ચક્રવર્તી આદી વિશિષ્ટ વ્યક્તિ મી કયોં ન હોં इस परिग्रह संचय की तृष्णा से रहित नहीं हैं। सभी अपनी र योग्यता और पद के अनुसार इसके संचय में लगे रहते हैं। कोई भी जीव इस बात का विचार नहीं करता कि इस परिग्रह के संचय का अंतिम परिणाम कैसा होता है। जीव जीतने भी कष्टों को भोगता है वह इस परिग्रह के संचय निमित्त ही भोगता है, क्योंकि यह परिग्रह स्वयं अनंतकलेशों का घर है। इस परिग्रह को लोभकषाय के आवेश में ही जीव संचित कीया करते हैं। यह महान् से महान् अन्तर्धों की जड़ कही गई है। पुरुष संबंधी ७२ बहत्तर कलाएँ तथा स्त्री संबंधी ६४ चौसठ कलाओं को प्राणी इसी परिग्रह के निमित्त सीखता है। असि, मयी, कृषि, आदि कर्म इसी के लिये मनुष्यों को करने पड़ते हैं। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को इसी की लालसा से बद्ध होकर हड़पना चाहता है। मनुष्यों में दानवता का रूप इसी की कृपा से आता है। आदमीयतको मुलानेवाली यही एक बीज है। माया मिथ्या आदि दार्यों का घर यही एक परिग्रह है। इसकी ज्वाला में झलता हुआ प्राणी सदा हेय और उपादेय के विवेकसे विहीन बना रहता है। मन वचन और काय

ભાવાર્થ—અદા દ્રીપની અંદર જ માણસોના વસવાટ છે, અથવા મનુષ્યો ભલે ચક્રવર્તિ આદિ વિશિષ્ટ વ્યક્તિ હોય તો પણ તેઓ પરિગ્રહ સંચયની તૃષ્ણા વિનાના હોતા નથી. બધા પોત પોતાની યોગ્યતા અને પદ પ્રમાણે તેના સંચય, પ્રયત્નશીલ રહે છે. કોઈ પણ જીવ એ વાતનો વિચાર કરતો નથી કે આ પરિગ્રહના સંચયનું આખરી પરિણામ કેવું હોય છે. જીવ જોટલાં કષ્ટો ભોગવે છે તે આ પરિગ્રહના સંચયને માટે જ ભોગવે છે, કારણ કે આ પરિગ્રહ પોતે જ અનંત કલેશોનું ધામ છે. આ પરિગ્રહનો લોભ (કષાય) ના આવેશમાં જ જીવ સંચય કર્યા કરે છે. તે મોટામાં મોટા અન્તર્યોનું મૂળ ગણાય છે. પુરુષ સંબંધી ૭૨ ઓતેરકલાઓ તથા સ્ત્રી વિષયક ૬૪થોસક કલાઓ માણસો આ અપરિગ્રહને નિમિત્તે જ શીખે છે. અસી, મયી, કૃષિ આદિ કર્મો પણ તેને જ માટે લોકોને કરવા પડે છે. તેની લાલસાએ જ એક રાષ્ટ્ર બીજા રાષ્ટ્રને ગળી જવા માગે છે. મનુષ્યમાં દાનવતા તે પરિગ્રહને કારણે જ આવે છે, માનવતાને ભુલાવનારી તે એક ચીજ છે. તે પરિગ્રહ જ માયા મિથ્યા આદિ શક્યોનું ધામ છે. તેની જ્વાળામાં ફસાયેલ જીવો સદા હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી રહિત બની બંધ છે. આ પરિગ્રહને કારણે જ મન, વચન અને કાયાની કુટિલ

‘યે યથા કુર્વન્તીતિ દ્વાર મુક્તમ્’ અથ પરિગ્રહો યાદશ્ચ ફલં દદાતિ તદુચ્યતે—
‘પરલોગમ્મિ’ इत्यादि—

મૂલમ્—પરલોગમ્મિ ય નદ્દા તમપવિદ્વા મહયામોહમોહિય
મર્ઈ તમોસંધયોર તસથાવર સુદુમવાયરેસુ પજ્જત્તમપજ્જત્તગ એવં
જાવ પરિયદંતિ જીવા લોભવસસંનિવિદ્દા । एसो सो परिग-
हस्स फलविवागो इहलोइओ परलोइओ अप्पसुहो बहुदुक्खो

કી કુટિલ પ્રવૃત્તિ इसी परिग्रह के प्रभाव से जीवन को तहस नहस करती रहती है। कषायों की उत्कटता इसीके कारण जीवन में उतरती है। आहार आदि संज्ञाएँ इसी के प्रभाव से जीवन के पीछे पड़ी रहनी हैं। मारव और इन्द्रियों की स्वच्छंद प्रवृत्ति का कारण इसी परिग्रह की कामना है। कर्मों का अधिकरूप में आश्रव और कृष्णादि अशुभलेश्याओं का संघ इसी परिग्रह के बल पर होता है। संसारका कोई भी प्राणी यह नहीं जानता है कि मेरे पास जितना भी परिग्रह है उसका वियोग हो। भले ही मुनिजन इसकी कामना न करें-फिर भी प्रत्येक सचेतन व्यक्ति सचित्त आदि परिग्रह की पोट से बंधा ही रहता है। समस्तलोक में इस परिग्रह का अल्पाधिकरूप में साम्राज्य छाया हुआ है। यही आत्मकल्याण का निरोधक है। इसीलिये श्रावक जन इसका प्रमाण और मुनिजनसकल संयमी जीव-इशका सर्वथा परिहार कर देते हैं ॥ सू० ४ ॥

પ્રવૃત્તિયો જીવનને અરણ્ય કરે છે. તેને જ દારણે જીવનમાં કષાયોની ઉત્કટતા ઉતરે છે. તેના જ પ્રભાવથી આહાર આદિ સંજ્ઞાઓ જીવનમાં પીડા પકડ્યા કરે છે. મારવ (અભિમાન) અને ઇન્દ્રિયોની સ્વચ્છંદી પ્રવૃત્તિયોનું દારણ આ પરિગ્રહની કામના જ છે. આ પરિગ્રહને દારણેજ કર્મેના અધિક પ્રમાણમાં આશ્રવ અને કૃષ્ણાદિ અશુભ લેશ્યાઓનો સંઘ થાય છે. સંસારમાં કોઈ પણ જીવ એ નથી ચાલતો કે તેની પાસે બેટલો પરિગ્રહ હોય તેનો વિચાર થાય. કદાચ મુનિજન તેની કામના ન કરે, તો પણ પ્રત્યેક સચેતન વ્યક્તિ સચિત્ત આદિ પરિગ્રહના સંયયથી બંધાયેલ રહે છે. સમગ્ર લોકમાં આ પરિગ્રહનું થોડા કે વધુ પ્રમાણમાં સામ્રાજ્ય બનેલું છે. તે જ આત્મકલ્યાણનું નિરોધક છે. તેથી શ્રાવકોએ તેની મર્યાદા બાંધવી બેઠીએ અને મુનિજનોએ-સકલ સંયમી જીવે-તેનો તદ્દન ત્યાગ કરવો બેઠીએ ॥ સૂ. ૪ ॥

સુદર્શિની ટીકા અ० ૧ સૂ०૫ પરિગ્રહો યત્કલં દદાતિજ્ઞિરુપ્પન્નમ્

૫૫૧

મહાભઓ વહુરયપ્પગાઢો દારુણો કક્કસો, અસાઓ વાસસ-
હસ્સેહિં મુચ્ચઇ, ન ય અવેદહ્તા અરિથ હુ મોક્કસોત્તિ એવમા-
હંસુ નાયકુલનંદણો મહપ્પા જિણો વીરવરનામધેજ્ઞો કહેસિ
ય પરિગ્ગહસ્સ ફલવિવાગં। एसो सो परिगहो पंचमो नियमा
नाणामणिकणमरयणमहरिह० जीव इमस्स मोक्खवरमु-
त्तिमग्गस्स फलिहभूओ ॥ सू० ५ ॥

॥ चरिमं अहम्मदारं समत्तं ॥

‘ ટીકા—‘ પરલોગમ્મિ ’ ઇત્યાદિ—

જીવાઃ=પ્રાણિનઃ લોભવસસંનિવિટ્ઠા’ લોભવશસંનિવિટ્ઠાઃ=લોભવશેન પરિગ્રહે
સંનિવિટ્ઠાઃ=અભિનિવિટ્ઠાઃ=લોભવશપરિગ્રહગ્રહિલાઃ ‘પરલોગમ્મિ’ પરલોકે=નન્મા-
ન્તરવિષયે ચકારાત્ ઇહલોકે ચ ‘ નટ્ટા ’ નટ્ટાઃ=વિનટ્ટાઃ સુગતિનાશાન્ સત્પથ-
શ્ચંશાચ, તથા ‘ તમં ’ તમઃ=અજ્ઞાનાન્ધકારં ‘ પવિટ્ઠા ’ પ્રવિટ્ઠા ‘મદયા મોદમોદિ-

પૂર્વ સેં ‘ યે યથા કુર્વન્તિ ’ યદ્ દ્વાર કહ્યા અવ સૂત્રકાર પરિગ્રહ
જિસ પ્રકાર કા ફલ દેતા હૈં ઇસ વિષય કો કહતે હૈં—‘ પરલોગમ્મિ
ય ’ ઇત્યાદિ ૦ ।

ટીકાર્થ—(લોભવસસંનિવિટ્ઠા જીવા) લોભ કે વશ સે પરિગ્રહ
કે વશવર્તી બને હુએ જીવ (પરલોગમ્મિ ય નટ્ટા) અપને પરભવ કો મી
નષ્ટ કર ઢાલતે હૈં । અર્થાત્ ઉનકા યહ લોક તો નષ્ટ હો હી જાતા હૈં,
સાથ મેં પરભવ મી ઉનકા ધીગડ્ડ જાતા હૈં । ક્યોં કિ એસે જીવોં કો
સુગતિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈં, તથા ઇસભવ મેં વે સત્પથ સે વિહીન
બને રહતે હૈં । તથા (તમપવિટ્ઠા) અજ્ઞાનરૂપ અંધકાર મેં પ્રવિટ્ઠ હીકર

આગળ “ યે યથા કુર્વન્તિ ” તે અન્તર્દાર વર્ણવ્યું હવે સૂત્રકાર પરિગ્રહ
કેવું ક્ષણ આપે છે, તે બતાવે છે—“ પરલોગમ્મિય ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“ લોભવસસંનિવિટ્ઠા જાવા ” લોભને અધીન થઇને પરિગ્રહને
તાણે થયેલા છેવે “ પરલોગમ્મિ ય નટ્ટા ” પોતાના પરભવને પશુ નષ્ટ કરી
નાખે છે, એટલે કે તેમનો આ લોક બરબાદ થાય છે જ, પણ સાથે સાથે
તેમનો પરભવ પણ બગડે છે કારણ કે એવા છેવેને સુગતિ પ્રાપ્ત થતી નથી,
અને આ લવમાં તેઓ સન્માર્ગથી દૂર જ રહે, તથા “ તમપવિટ્ઠા ” અજ્ઞાન

યમર્દ' મહામોહમોહિતમતયઃ—મહામોહેન—પ્રકૃષ્ટોદયચારિત્રમોહનીયેન મોહિતા મતિર્યેષાં તે તથોક્તાઃ, 'તમોસંધયારે' તમિસાન્ધકારે, તમિસાન્ધકારની તદ્વદ્ યોજ્યકારી આજ્ઞાનાન્ધકારસ્તસ્મિન્ 'તસ થાવરસુદુમ્બાયરેસુ' ત્રસસ્થાવરમૂક્ષ-વાદરેષુ તથા 'પજ્જત્તમપજ્જત્તગ એવં જાવ' પર્યાપ્તાપર્યાપ્તક એવં યાવત્ અત્ર-યાવન્નહદાદિદં સંગ્રાહ્યમ્—પર્યાપ્તાપર્યાપ્તકસાધારણપ્રત્યેકશરીરેષુ તથા-અંડજ પોતજ-રસજ-જરાયુજ-સંસ્વેદજોદ્વિજ્જોપપાતિકેષુ નારકતિર્યગ્દેવમનુષ્યેષુ યથાસમ્ભવં જરામરણરોગવદુલેષુ પલ્યોપમસામરોપમાણિ યાવત્ આનાદિકમનવદ્યં દીર્ઘમ-ધ્વાનં ચાતુસ્તસંસારકાન્તારં 'પરિચટ્ટંતિ' પર્યટન્તિ । 'એસો સો' એવ સઃ

(મહામોહમોહિતમર્દ) उनकी मति प्रकृष्ट चारित्र मोहनीय कर्म के उदय से मोहित बनी रहती है। इससे वे न तो एकदेशरूप चारित्र अंगीकार कर सकते हैं और न सकलरूप चारित्र ही। अतः ऐसे प्राणी (तमोसंधयारे) रात्रि के गाढ अंधकार जैसे अज्ञानान्धकार में ही पड़े रहते हैं। (तसथावरसुदुम्बायरेसु) और त्रस, स्थावर, सूक्ष्म, वादर इनमें तथा (पज्जत्तमपज्जत्तग) पर्याप्तक अपर्याप्तक (एवंजाव) इसी प्रकार यावत् शब्द से साधारण प्रत्येक शरीर इन जीवों में तथा अंडज, पोतज, रसज, जरायुज, संस्वेदज, उद्विज्ज जीवों में एवं औप-पातिक देव और नारकिर्यों में (परिचट्टंति) जन्म मरण करते हैं। स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण ये पांच इन्द्रियां जिन जीवों में होती हैं वे त्रस हैं। त्रस नामकर्म के उदय से यह पर्याय जीवों को प्राप्त होती है। सिर्फ एक स्पर्शन इन्द्रिय जिन जीवों में होती है वे

૩૫ી અંધકારમાં પ્રવેશ કરીને “મહયા મોહમોહિયમર્દ” તેમની મતિ પ્રકૃષ્ટ ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદયથી મોહિત થયેલી રહે છે. તેથી તેઓ અંશતઃ ચારિત્ર અંગીકાર કરી શકતા નથી અને સકલરૂપ (સંપૂર્ણ) ચારિત્ર પણ અંગીકાર કરી શકતા નથી. તેથી એવા એવા “તમોસંધયારે” રાત્રિના ગાઢ અંધકાર એવા અજ્ઞાનાન્ધકારમાં જ પડ્યા રહે છે, “તસથાવરસુદુમ્બાય-રેસુ” અને ત્રસ, સ્થાવર, સૂક્ષ્મ, અરે બાદરમાં, તથા “પજ્જત્તમપજ્જત્તગ” પર્યાપ્તક, અપર્યાપ્તક, “એવં જાવ” એ જ પ્રમાણે યાવત્ શબ્દથી સાધારણ પ્રત્યેક શરીર એવામાં; તથા અંડજ, પોતજ, રસજ, જરાયુજ, સંસ્વેદજ, ઉદ્વિજ્જ એવામાં અને ઔપપાતિક દેવ અને નારકીઓમાં “પરિચટ્ટંતિ” પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. જન્મ મરણ કર્યા કરે છે. જે એવાને સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ અને કર્ણ, એ પાંચ ઇન્દ્રિયો હોય છે તેમને ત્રસ કહે છે ત્રસ નામ કર્મના

સુદર્શિની ટીકા અબ્ધ સૂબ્ધ પરિવ્રજો યત્કલે દ્વાતિ તત્ત્વરૂપણમ્

૫૪૩

સ્થાવર હૈં । સ્થાવર નામ કર્મ કે ઉદય સે હિ ઘહ પર્યાય જીવોં કો પ્રાપ્ત હૌની હૈં । દ્વીન્દ્રિય સે લેકર પંચેન્દ્રિયતક કે જીવ હી વ્રસ માને ગયે હૈં । સૂક્ષ્મ નામ કર્મ કે ઉદય સે જીવ સૂક્ષ્મ હોતા હૈ । સૂક્ષ્મ ઓર બાદર યે દો ભેદ એકેન્દ્રિય જીવોં કે હોતે હૈં । બાદર નામકર્મ કે ઉદય સે જીવ બાદર પર્યાયવાલા હોતા હૈ । બાદર નામકર્મ કે ઉદય સે જીવોં કો એસે શરીર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ કિ જો શરીર ચર્મ ચક્ષુઓં કા વિષયભૂત ઘનતા હૈ । હસકે બિપરીત સૂક્ષ્મ નામ કર્મ હોતા હૈ । જિન જીવોં કી અપની યોગ્ય પર્યાસિયાં પૂર્ણ હો ગઈ હોતી હૈં વે પર્યાસક જીવ હૈં । તથા જિનકી યે પર્યાસિયાં પૂર્ણ જવ તક નહીં હોતી હૈં વે અપર્યાસક જીવ હૈં । જિન અનંત જીવોં કા એક હી સાધારણ શરીર હોતા હૈ વે સાધારણ જીવ હૈં ઓર જિન જીવોં કા બિન્ન ૨ શરીર હોતા હૈ વે વે પ્રત્યેક જીવ હૈં । સાધારણ નામકર્મકે ઉદયસે જીવ સાધારણ ઓર પ્રત્યેક નામકર્મકે ઉદય સે જીવ પ્રત્યેક શરીર હોતા હૈ । અંદેસે જો જીવ ઉત્પન્ન હોતે હૈં વે અંદજ કહલાતે હૈં । જૈસે મયૂર, કવૂતર, આદિ જીવ । જો કિસી પ્રકારકે આચરણ સે વેદિત ન હોકર હી પૈદા હોતે હૈં વે પોનજ હૈં જૈસે હાથી શશક, નેવલા, ચૂહા શેર વગેરહ જીવ । આસવ અરિષ્ટ તથા વિગડે હુપ આચાર, મુરબ્બા

ઉદયથી જીવોને તે પર્યાય (યોનિ) પ્રાપ્ત થાય છે. જે જીવોને દ્વિજ એક સ્પર્શત ઈન્દ્રિય જ હોય છે, તેમને સ્થાવર કહે છે. સ્થાવર નામ કર્મના ઉદયથી જ તે પર્યાય જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે. દ્વીન્દ્રિયથી લઈને પંચેન્દ્રિય સુધીના જીવોને જ ‘ વ્રસ ’ માનવામાં આવે છે. સૂક્ષ્મ નામ કર્મના ઉદયથી જ સૂક્ષ્મ થાય છે. સૂક્ષ્મ અને બાદર એ બે ભેદ એકેન્દ્રિય જીવોના હોય છે. બાદર નામકર્મના ઉદયથી જ બાદર પર્યાયવાળા થાય છે. બાદર નામકર્મના ઉદયથી જીવોને એવા શરીરની પ્રાપ્તિ થાય છે કે તે શરીર ચર્મચક્ષુઓ વડે ભેદી શકાય છે. તેનાથી ઉલ્લુ સૂક્ષ્મ નામકર્મ છે જે જીવોની યોગ્ય પર્યાસિયો પૂરી થઈ ગઈ હોય છે તે જીવો પર્યાસક કહેવાય છે તથા તેમની તે પર્યાસિયો ન્યાંસુધી પૂરી થતી નથી ત્યાંસુધી તેઓ અપર્યાસક જીવો છે. જે અનંત જીવોનું એકજ સાધારણ શરીર હોય છે, તે સાધારણ જીવો છે, અને જે જીવોનાં બિન્ન બિન્ન શરીર હોય છે, તે પ્રત્યેક જીવ કહેવાય છે. સાધારણ નામ કર્મના ઉદયથી જ સાધારણ શરીર થાય છે અને પ્રત્યેક નામકર્મના ઉદયથી જ પ્રત્યેક શરીર થાય છે. ઇંડાંમાંથી ઉત્પન્ન થતા જીવોને અંદજ કહે છે, જેવાં કે મોર કવૂતર આદિ જીવ જે જીવો કોઈ પણ પ્રકારના આવરણથી ઢંકાયા વિના જ જન્મે છે-એટલે કે અચ્ચાં રૂપે જન્મે છે તેમને પોત જ કહે છે, જેમકે હાથી, સસંત્રું, નોળિયો, ઉંદર, સિંહ વગેરે જીવો. આસવો, અરિષ્ટો, અગડેલાં

આદિમાં જો જીવ ફુલ ન આદિ ઉત્પન્ન થોતે રહતે હૈં વે રસજ જીવ હૈં । જો જીવ જરાયુસે વેષ્ટિન હોકર વત્પન્ન થોતે હૈં વે જરાયુજ હૈં જૈસે મનુષ્ય બંદર આદિ જીવ । જરાયુ એક પ્રકારકા જાલ જૈસા આવરણ હોતા હૈ, જો રક્ત ઓર માંસ સે ભરા રહતા હૈ । ઇસ મેં પૈદા હોને વાલા યજ્ઞા લિપટા રહતા હૈ । જરાયુજ, અંહજ ઓર પોતજ ઇન જીવોં કે ગર્ભ જન્મ હોતા હૈ । જો જીવ પસીનેસે ઉત્પન્ન થોતે હૈં વે સંસ્વેદજ હૈં જૈસે જૂ આદિ જીવ । જો જમીનકો ફોલકર ઉત્પન્ન થોતે હૈં વે ઉદ્વિજ્જજીવ હૈં । જૈસે શલભ (પતંગી યા તીડ) આદિ જીવ । દેવ ઓર નારકી યે ઉપપાત જન્મસે ઉત્પન્ન થોતે હૈં । ઇસ કથનસે નિર્યચગતિ, મનુષ્ય ગતિ, દેવગતિ ઓર નરક ગતિ ઇન ચારો ગતિયોં કે જીવોંકા ગ્રહણ હો જાતા હૈ । ઇન ગતિયોં કે જીવોં મેં યથા-સંભવ જરા, મરણ ઓર રોગ કી બહુલતા રહતી હૈ । ઇન ગતિયોં મેં જીવ પલ્લોપમ પ્રમાણ એવં સાગરોપમ પ્રમાણ કાલ તક પરિભ્રમણ કિયા કરતે હૈં । પરિભ્રમણકા નામ હી સંસાર હૈ । યહ સંસાર કાન્તાર (અટકી) અનાદિ અનંત સ્વભાવવાલા હૈ । ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી રૂપકાલ હી ઇસ મેં બડે લમ્બે ચોડે માર્ગે હૈં । તથા યહ ચતુર્ગતિ રૂપ હૈ । એસે ઇસ સંસાર રૂપ ગહન વન મેં યહ જીવ પરિગ્રહ કે ઉપાર્જન જનિત પાપસે પલ્લોપમ તથા

અથાણાં મુરખા આદિમાં એ ફૂલ આદિ ઉત્પન્ન થાય છે તે રસજ જીવો કહેવાય છે. એ જીવો જરાયુથી વીંટળાઈને પેદા થાય છે તેમને જરાયુજ કહે છે, જેમકે મનુષ્ય બંદર આદિ જીવો. જરાયુ એક પ્રકારનું બળ જેવું આવરણ હોય છે, જે રક્ત અને માંસથી ભરેલા રહે છે, તેમાં જન્મનારું બાલક વીંટળાઈ રહે છે. જરાયુજ, અને પોતજ જીવોના જન્મ ગર્ભમાં થાય છે, જે જીવો પરસ્પરથી પેદા થાય છે તેમને સંસ્વેદજ કહે છે, જેમકે જૂ આદિ જીવો. જે જીવો જમીનને ખોદીને ઉત્પન્ન થાય છે તેમને ઉદ્વિજ્જ જીવો કહે છે જેમ કે તીડ આદિ જીવો. દેવ અને નારકી એ બંને ઉપપાત જન્મથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ કથનથી નિર્યચગતિ, મનુષ્યગતિ દેવગતિ, અને નરકગતિ એ ચારે ગતિયોના જીવો ગ્રહણ થઈ જાય છે, તે ગતિયોના જીવોમાં યથા સંભવ જરા; રોગ અને મરણની અધિકતા રહે છે, તે ગતિયોમાં જીવ પલ્લોપમ પ્રમાણ અને સાગરોપમ પ્રમાણ કાળ સુધી પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. પરિભ્રમણ એટલે જ સંસાર, તે સંસારકાન્તાર અનાદિ અનંત સ્વભાવવાળો છે. ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી રૂપ કાળ જ જેમાં ઘણા લાંબા પહોળા માર્ગો છે. તથા તે ચારગતિ રૂપ છે. એવા આ સંસાર રૂપ ગહન વનમાં આ જીવ પરિગ્રહને કારણે ઉપાર્જિત પાપથી પલ્લોપમ તથા સાગરોપમ પ્રમાણ કાળ સુધી

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૫ સૂ૦ ૫ પરિગ્રહો યત્ફલં વદાતિ તદ્વિરૂપણમ્ ૫૪૫

‘ પરિગ્રહસ્ત ’ પરિગ્રહમ્ ‘ ફલવિવાગો ’ ફલવિપાકઃ ‘ ફહલોહઓ ’ ફહલૌકિકઃ, મનુષ્યભવાપેક્ષયા, ‘ પરલોહઓ ’ પરલૌકિકઃ, નરકતિર્યમાત્યાગ્રપેક્ષયા ‘ અપ્પ-સુહો ’ અપ્પસુહઃ-અપ્પસુહં યસ્મિન્ સ તથોક્તઃ, ‘ બહુદુઃખો ’ બહુદુઃખઃ-બહૂનિ દુઃખાનિ યસ્મિન્ સ તથોક્તઃ, ‘ મહઞ્મઓ ’ મહાભયઃ ‘ બહુરયપ્પગાહો ’ બહુ-રજઃ પ્રગાહઃ=વહુરજઃ-પ્રભૂતકર્મ પ્રગાહં=દુર્મોહં યસ્મિન્ સ તથોક્તઃ, દારુણો=રૌદ્રઃ, ‘ કકકસો ’ કર્કશઃ=કઠિનઃ, ‘ અસાઓ ’ અશાતઃ-અશાતવેદનીયરૂપઃ અસ્તિ, અપ્પ પરિગ્રહઃ ‘ વાસસહસ્સેહિ ’ વર્ષસહસ્રૈઃ = અનેકપલ્લોપમસાગરોપમ-કાલૈરૂપભોગેન ‘ મુચ્છઈ ’ મુચ્યતે । ‘ ન અવેયહતા અત્થિહ મોક્કસોતિ ’ ન અવે દપિત્થા ઽસ્તિ ચલુ મોક્ષઃ=પરિગ્રહફલમનુપભુજ્ય નાસ્તિ મોક્ષઃ ‘ તિ એવમાહંસુ ’

સાગરોપમ પ્રમાણકાલતક ધૂમના રહતા હૈ । (एसो सो परिग्राहस्त-फलविवागो) परिग्रह का यह फलविपाक (इहलोइओ) मनुष्यभव की अपेक्षा तथा (परलोइओ) परलोक-नरक-तिर्यव गति की अपेक्षा (अप्सुहो) अप्सुसुख वाला तथा (बहुदुःखो) बहु दुःखवाला है । (महंमओ) महाभयंकर है । (बहुरयप्पगाहो) इसमें जो प्रभूत कर्मरूप रज का बंध होता है वह प्रगाढ-बड़ो मुश्किल से दूर किया जाय, ऐसे होता है । तथा (दारुणो) यह फलरूप विपाक दारुण-भयानक (ककसो) कर्कश-कठिन एवं(असाओ)अशात-अशातवेदनीयरूप-होता है । (वासस-हस्सेहि)इसी परिग्रह रूप पाप का फल અનેક પલ્લોપમ एवं સાગરોપમ પ્રમા-ણ કાલતક ભોગને સે (મુચ્છઈ) છૂટતા હૈ । (અવેહતા) વિના હસકા ફલ ભોગે ડન જીવોં કો (ન અત્થિ મોક્કસો) મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી

અમ્યા ડરે છે. “ एसो सो परिग्राहस्त फलविवागो ” પરિગ્રહનો આ ફલવિ-પાક “ इहलोइओ ” મનુષ્ય ભવની અવેક્ષાએ તથા “ परलोइओ ” પરલોક નરગતિ અને તિર્યચગતિની અપેક્ષાએ “ अप्सुहो ” અપ્પસુખ વાળો તથા “ बहुदुःखो ” વધારે દુઃખવાળો છે, “ महंमओ ” મહા ભયંકર છે, “ बहुरयप्पगाहो ” તેમાં જે વિપુલ કર્મરૂપ રજનો બંધ હોય છે તે પ્રગાઢ-મહા મુશ્કેલીએ નિવારી શકાય તેવો-હોય છે, તથા “ दारुणो ” તે ફલરૂપ વિપાક દારૂણ-ભયંકર “ ककसो ” કર્કશ-કઠિન, અને “ असाओ ” અશાત-અશાત વેદનીયરૂપ હોય છે. “ वाससहस्सेहि ” તે પરિગ્રહરૂપ પાપનું ફળ અનેક પલ્લો-પમ અને સાગરોપમ પ્રમાણ કાળ સુધી ભોગવવાથી જ “ मुचछई ” છૂટો તેમાંથી છૂટી શકે છે. “ अवेयहता ” તેનું ફળ ભોગવ્યા વિના છૂટાને “ न अत्थि मोक्कसो ” મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી. “ ति एवमाहंसु ” તે પ્રકારનું કથન

इत्येवमूचुस्तीर्थङ्करगणधरादयः, तथा: 'कहेसिय' कथितवांश्च 'नायकुलनंदणो' ज्ञातकुलनन्दनः 'महप्पा' महात्मा 'जिणो' जिनः 'वीरवरनामधेज्जो' वीर-
वरनामधेयः । 'परिगहस्स' परिग्रहस्य 'फलविवागं' फलविपाकम् । 'एसो
सो परिग्गहो पंचमो' एष सः पूर्वोक्तप्रकारः परिग्रहः पञ्चमः 'नियमा' नियमाद्
विज्ञेयः, कथंभूतो विज्ञेयः ? इत्याह—'नाणामणिकणगरयणमहरिहं' नानामणि-
कनकरत्नमहाहं. 'जाव' यावत्, अत्र यावच्छब्दादध्ययनप्रारंभपाठः, 'हियय-
दइओ' इत्यन्तं यावत्संग्राह्यः, 'इमस्स' अस्य प्रत्यक्षीभूतस्य 'मोक्खवरमुत्तिम-
ग्गस्स' मोक्षवरमुक्तिमार्गस्य 'फलिहभूओ' परिचभूतोऽर्गलासदृशोऽस्ति ॥सू१॥

॥ चरमम् अधर्मद्वारं समाप्तम् ॥

है । (ति एवमाहंसु) ऐसा इस प्रकार का कथन तीर्थंकर एवं गणध-
रादिक देवों का है । तथा उन्हीं के कथनानुसार (नायकुलनंदणो)
ज्ञातकुलनंदन (महप्पा) महापुरुष (जिणो वीर वर नामधेज्जो) प्रभु
जिनेन्द्र देवने भी (परिगहस्स) परिग्रह का (फलविवागं) ऐसा ही
फलरूप विपाक (कहेसिय) कहा है । (एसो सो) इस तरह यह (परि-
ग्गहपंचमो) पंचम परिग्रह (नियमा) नियम से (नाणामणिकणग-
रयणमहरिहं जाव) नानामणि कनक रत्न आदिरूप है । यहां पर यावत्
शब्द से इस द्वार को प्रारंभ करते समय जो पाठ ' हिययदइओ ' तक
इस परिग्रहरूप वृक्ष के विषय में कहा है वह सब गृहीत किया गया है ।
यह परिग्रह (इमस्स मोक्खवरमुत्तिमग्गस्स) इस मोक्ष का जो निर्लो-
भतारूप श्रेष्ठ मार्ग है उसका (फलिहभूओ) अर्गला रूप है ॥ सू०५॥

॥ परिग्रह नामका यह अन्तिमद्वार समाप्त हुआ ॥

તીર્થંકરો અને ગણધર આદિ દેવાનું છે. તથા તેમના કથન પ્રમાણે જ “નાય-
કુલનંદણો” જ્ઞાતકુલ નંદન “મહપ્પા” મહાપુરુષ, “જીણો-વીરવરનામધેજ્જો”
પ્રભુ જિનેન્દ્ર દેવે પણ “પરિગહસ્સ” પરિગ્રહનો “ફલવિવાગં” એવો જ
ફળવિપાક “કહેસિય” કહેલ છે. “એસો સો” આ રીતે તે “પરિગહો
પંચમો” પાંચમો પરિગ્રહ આશ્રય “નિયમા” નિયમથી “નાણામણિકણ-
રયણ મહરિહં જાવ” વિવિધ મણિ, કનક, રત્ન આદિ રૂપ છે. અહીં ‘યાવત્’
શબ્દથી આ દ્વારના પ્રારંભે “હિયયદિઓ” સુધીના જે પાઠ પરિગ્રહરૂપ વૃક્ષના
વિષયમાં કહેવામાં આવેલ છે તે આખો પાઠ ગ્રહણ કરાયેલ છે. આ પરિગ્રહ
“ઇમસ્સ મોક્ખવરમુત્તિમગ્ગસ્સ” મોક્ષનો જે નિર્લોભતા શ્રેષ્ઠ માર્ગ છે. તેના
“ફલિહ ભૂઓ” આગળિયા સમાન છે ॥ સૂ-૫ ॥

॥ પરિગ્રહ નામનું આ છેવટનું દ્વાર સંપૂર્ણ થયું ॥

सुदर्शिनी टीका अ० ५ सू० ५ अध्यायनोपसंहारः

५४७

उक्तास्रपञ्चक निगमनाय गाथापञ्चकमाह 'एएहिं' इत्यादि—
 मूलम्—एएहिं पंचहिं आसवेहिं रयमाचिणित्तु अणुसमयं ।
 चउविहगइ पेरंतं, अणुपरियट्ठंति संसारं ॥ १ ॥
 सव्वगइ पक्खंदे, काहिति अणंतगे अकयपुण्णा ।
 जेय न सुणंति धम्मं, सोऊण य जे पमायंति ॥ २ ॥
 अणुसिट्ठंपि बहुविहं, मिच्छदिट्ठी य जे नरा अबुद्धीया ।
 वद्धनिकाइयकम्मा, सुणंति धम्मं न य करेति ॥ ३ ॥
 किं सक्का काउं जे, जं नेच्छइ ओसहं मुहा पाउं ।
 जिणवयणं गुणमहुरं, विरेयणं सव्वदुक्खाणं ॥ ४ ॥
 पंचेव य उज्झिऊणं, पंचेव य रक्खिऊण भावेणं ।
 कम्मरयविप्पमुक्का, सिद्धिवरमणुत्तरं जंति ॥ ५ ॥ सू० ६ ॥

॥ इय पंच आसवदारा समत्ता ॥

छाया—एतैः पञ्चभिरास्रै रज आचित्यानुसमयम् ।
 चतुर्विधगतिपर्यन्तमनुपर्यटन्ति संसारम् ॥ १ ॥
 सर्वगतिपस्कन्दात्, करिष्यन्ति अनन्तकालं अकृतपुण्याः ।
 ये च न शृण्वन्ति धर्मं, श्रुत्वा च ये प्रमाथन्ति ॥ २ ॥
 अनुशिष्टमपि बहुविधं, मिथ्यादृष्टिक्का ये च नरा अबुद्धिकाः ।
 वद्धनिकाचितकर्माणः, शृण्वन्ति धर्मं न च कुर्वन्ति ॥ ३ ॥
 किं शक्ताः कर्तुं ये, यन्नेच्छन्ति औषधं मुधा पातुम् ।
 जिनवचनं गुणमहुरं, विरेचनं सर्वदुःखानाम् मे ॥ ४ ॥
 पञ्चैव च उज्झित्वा, पञ्चैव च रक्षित्वा भावेन ।
 कर्मरजो विममुक्ताः, सिद्धिवरमनुत्तरां यान्ति ॥ ५ ॥

टीका—एतैः = अनन्तरोपवर्णितस्वरूपैः पञ्चभिः = पञ्चसंख्यकैरास्रैः =
 प्राणातिपातदिरूपैः 'रयं' रजः=ज्ञानावरणीयादि कर्ममलम्, आत्मनो मलिन-
 कारकत्वात् 'अणुसमयं' अनुसमयं = प्रतिक्षणम् 'आचिणित्तु' आचित्य-

अथ सूत्रकार उक्तं इह पांच आस्रवों के विषय में पांच गाथाओं द्वारा संक्षिप्त रूप से उपसंहार करते हुए अपने विचार प्रदर्शित करते

इसे सूत्रकार उपशेकत पांच आस्रवों विषे पांच गाथाओं द्वारा संक्षिप्त

આત્મપ્રદેશૈઃ સદોષચિત્ય 'ચતુર્વિહગર્હપેરંતં' ચતુર્વિધગતિપર્યન્તમ્, ચતુર્વિધા=ચતુઃપ્રકારા ગતિઃ=નરકાદિરૂપા પર્યન્તો=વિભાગો यस્ય સ તં તથોક્તં સંસારમ્ 'અણુપરિયટ્નંતિ' અણુપર્યટન્તિ=પરિભ્રમન્તિ ॥ ૧ ॥

ये च प्राणिनो धर्मं न शृण्वन्ति, तथा ये च श्रुत्वापि प्रमादयन्ति=प्रमादं कुर्वन्ति ते उभयेऽपि 'अकल्पपुण्या' अकृतपुण्याः=प्राणातिपातादिपापपरायणत्वात् हीनपुण्या 'अनंतए' अनन्तरकान्=अनन्तान् 'सर्वगर्हपक्ष्वदे' सर्वगतिपक्षकन्दान्=नरकनिगोदादि चतुर्गतिभ्रमणानि 'काहिंति' करिष्यन्ति ॥ २ ॥

ये च मिथ્યાદृष्टિકાઃ અવુદ્ધિકાઃ=વિવેકબુદ્ધિવિકલાઃ વદ્ધનિકાચિત્કર્માણઃ હૈં- 'एएहिं', इत्यादि ।

(एएहिं) इन हिंसा आदिरूप (पंचहिं) पांच (आसवेहिं) आस-
वों के आचरण करने से जीव (अणुसमयं) प्रतिक्षण (रयं आचिणित्तु)
ज्ञानावरणीय आदि कर्ममल का बंद करके-आत्मप्रदेशों के साथ एक
क्षेत्रावगाहरूप संबंध करके (चतुर्विहगर्हपेरं) नरकादिरूप चार प्रका-
रकी गतिवाले (संसारं) संसार में (अणुपरियट्ति) परिभ्रमण किया
करते हैं ॥ १ ॥ (जे य न सुणंति धम्मं) जो प्राणी श्रुतचारित्ररूप धर्म
का श्रवण नहीं करते हैं तथा (सोऊण य जे पमायंति) जो सुनकर के
भी प्रमाद पतित होते रहते हैं, ये दोनों (अकल्पपुण्या) प्राणातिपात
आदिकों में परायण रहने के कारण हीन पुण्यवाले हैं । (अनंतए सर्व-
गर्हपक्ष्वदे काहिंति) अतः अनन्तरूप में नरकनिगोद आदि चारोगतियों
में परिभ्रमण करते रहेंगे ॥ २ ॥ (जे नरा निज्झादिट्ठी अणुद्वीया मनु-

ઉપસંહાર કરીને પોતાના વિચારે દર્શાવે છે—“ ए ए हिं ” ઇત્યાદિ—

“ एएहिं ” હિંસા આદિ રૂપ “ પંચહિં ” તે પાંચ “ આસવેહિં ” આસ-
વોને આચરવાથી જીવો “ અણુસમયં ” પ્રત્યેક ક્ષણે “ રયં આચિણિત્તુ ” જ્ઞાના-
વરણીય આદિ કર્મમલનો બંધ બાંધીને-આત્મ પ્રદેશોની સાથે એક ક્ષેત્રાવગાહરૂપ
સંબંધ કરીને “ ચતુર્વિહગર્હપેરં ” નરકાદિ રૂપ ચાર ગતિ વાળા “ સંસારં ”
સંસારમાં “ અણુપરિયટ્તિ ” પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે ॥ ૧ ॥

“ जेय न सुणंति धम्मं ” જે જીવો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું શ્રવણ કરતાં
નથી, તથા “ सोऊण य जे पमायंति ” સાંભળીને પણ જે પ્રમાદમાં રૂબેલા
રહે છે, તે બંને “ અકલ્પપુણ્યા ” પ્રાણાતિપાત આદિમાં હીન રહેવાને કારણે
પુનઃહીન હોય છે, “ अनंतए सर्वगर्ह पक्ष्वदेकाहिंति ” તેથી અનન્તરૂપે નર-
કનિગોદ આદિ ચારે ગતિઓમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરશે. ॥૨॥

વદ્નં=સ્વાત્મપ્રદેશેષુ સંલેખિતં, નિકાચિતં=દૃઢત્વં વદ્નમ્=ઉપરમનાદિકરણાનામ-
વિષયોક્તં કર્મ યૈસ્તે તથોક્તાઃ, નરાઃ ગુરુણાં વહુવિધમ્=અનેકપ્રકારમ્=વિવિધ-
હેતુદૃષ્ટાન્તપૂર્વકમ્ અનુશિષ્ટમપિ=ઉપદિષ્ટમપિધર્મ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણં શ્રુવન્તિ
કિન્તુ ન ચ કુર્વન્તિ=ન ચ સમાચરન્તિ ॥ ૩ ॥

‘ જે ’ એ મનુષ્યાઃ સર્વદુઃખાનાં=જન્મજરામરણાદિરૂપાણાં ‘ વિરેચણં ’ વિરે-
ચનં=કોષ્ટબુદ્ધિરૂપવિરેચનમિવવિરેચનં નિવારકં ‘ ગુણમહુરં ’ ગુણમધુરં ગુણઃ=
આત્મવિકાસિગુણૈર્મધુરં=મિષ્ટમ્, एतादृशं ‘ જિગ્વયણં ’ જિનવચનં=વચનં=જિન-
વચનરૂપમ્ ‘ ઓમહં ’ ઔપધં ‘ મુઢા ’ મુઢા=ઉપકારબુદ્ધિયા ‘ જે ’ યત્ ‘ નેચ્છઈ ’
નેચ્છન્તિ=નપિવન્તિ તે ‘ કિં કાઁ ’ કિં કર્તું ‘ સક્કા ’ સક્તાઃ=સમર્થા ભવન્તિ
અમિત્યાદિદિ દોતે હૈં વિવેક બુદ્ધિ સે વિહીન દોતે હૈં તથા (વદ્નનિકાઙ્ક-
કમ્મા) નિકાચિત કર્મોં કા ચંધ કિં હુઈ હોતે હૈં, એસે મનુષ્ય વહુવિહં
(અનુદિદ્ધિ) ગુરુઓં દ્વારા વિવિધહેતુ તથા દૃષ્ટાન્ત આદિસે વહુત પ્રકારસે
સામદ્વાયે ગયે બી શ્રુત ચારિત્રરૂપ (ધર્મ) ધર્મકો (સુગતિ) સુન તો લેતે હૈં
પરન્તુ (ન ચ કરેતિ) ઉસે અપને આચરણ મેં નહીં લાતે હૈં ॥૩॥ રોગી
હોકર બી જો રોગ નિવારણાર્થ ઔપધિ કા પાન નહીં કરતે હૈં તો જૈસે
વે અપને રોગ કો દૂર કરને મેં સમર્થ નહીં હો સકતે હૈં ઇસી તરહ (યે)
જો સંસારી પ્રાણી (સત્ત્વ દુઃકલ્પાણ વિરેચણં (જરા, મરણ આદિ સમસ્ત
દુઃખોં કો જહમૂલ સે ઉત્ખાલ દેને વાલે તથા (ગુણમહુર) આત્મવિકાસી
ગુણો સે મીઠે એસે (જિગ્વયણં) જિનેન્દ્ર પ્રભુ કે વચન રૂપ (ઓમહં)
ઔપધિ કો (મુઢા) ઉપકાર બુદ્ધિ સે (પાઁ નેચ્છઈ) નહીં પાતે હૈં વે
(કિં કાઁ સક્કા) કુછ બી કરને કે લિયે સમર્થ નહીં હો સકતે હૈં ।

“ જે નરા મિચ્છાદિદૃઢી અબુઢીયા ” જે મનુષ્યો મિચ્છાદિદૃષ્ટિ વાળા
હોય છે, વિવેકબુદ્ધિ વિતાના હોય છે તથા “ વદ્નનિકાઙ્કકમ્મા ” નિકાચિત
કર્મોના અંધ વાળા હોય છે, એવા મનુષ્યો “ વહુવિહં અનુદિદ્ધિ ” ગુરુઓ
દ્વારા વિવિધ હેતુ તથા દૃષ્ટાન્તો આદિ દ્વારા બહુજ સમજાવવામાં આવે છે
છતાં પણ શ્રુતચારિત્રરૂપ “ ધર્મ ” ધર્મનું “ સુગતિ ” શ્રવણ તો કરે છે, પણ
“ ન ચ કરેતિ ” પણ તેને પોતાના આચરણમાં ઉતરતા નથી ॥૩॥

જેમ રોગી માણસ રોગના નિવારણ માટે ઔપધિ ન પીવે તો તેનો
રોગ દૂર કરવાને શક્તિમાન થતો નથી, એ જ પ્રમાણે “ જે ” જે સંસારી
“ સત્ત્વદુઃકલ્પાણવિરેચણં ” જરા, મરણ આદિ સમસ્ત દુઃખોને નિર્મૂળ કરનાર
તથા “ ગુણમહુર ” આત્મવિકાસી ગુણોથી મધુર એવાં “ જિગ્વયણં ” જિનેન્દ્ર
ભગવાનનાં વચનરૂપ “ ઓમહં ” ઔપધિને “ મુઢા ” ઉપકાર બુદ્ધિથી “ પાઁ-
નેચ્છઈ ” પ્રાપ્ત કરતા નથી, તેઓ “ કિં કાઁસક્કા ” કંઈ પણ કરવાને સમર્થ

અપિ તુ નૈવ કિમપિ । યે ઔષધં ન પિવન્તિ તે રોગનિવારણે કથમપિ સમર્થા ન ભવન્તીતિ ભાવઃ । સૂત્રે ‘ નેચ્છડ ’ इत्यत्रैकवचनमार्पत्वात् ॥ ૪ ॥

ભાવેન=અન્તઃકરણેન: પશ્ચૈવ ચ પ્રાણાતિપાતાદાસ્રવદ્વારાણિ ‘ ઉચ્છિઝ્ઞઞ ’ ઉચ્છિઝ્ઞત્વા=ત્યક્ત્વા તથા પશ્ચૈવ ચ પ્રાણાતિપાતાદિવિરમણલક્ષણાનિ સંવરદ્વારાણિ ‘ રક્ષિત્વઞ્જન ’ રક્ષિત્વા=પાલયિત્વા=કર્મરજોવિપ્રમુક્તાઃ સન્તઃ સિદ્ધિવરાં=સિદ્ધીનાં મધ્યે વરા શ્રેષ્ઠા સકલકર્મલક્ષણભ્યા ભાવસિદ્ધિસ્તાં તથોક્તામ્, અતएव अनुत्तरां सर्वोत्तमां ‘ જંતિ ’ યાન્તિ-અપુનરાવૃત્તિ સિદ્ધિગતિ ગચ્છન્તીત્યર્થઃ ॥ ૫ ॥

इति श्रीविश्वधिरूपाय-जगदवलम्ब-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापाळापक-प्रविशुद्भगवगघनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहूखपतिको-ल्हापुर राजपदत्त-‘ जैनशास्त्राचार्य ’ पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालवज्रचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-वासीलाठ - व्रतिविरचितायां दशमाहस्य श्री मश्रव्याकरणसूत्रस्य सुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां हिंसादिपञ्चास्रवद्वाररूपः प्रथमो विभागः समाप्तः ॥ १ ॥

ચિરેચન ઔષધિ જિસ પ્રકાર કોષ્ઠ કી શુદ્ધિ કર દેતી હૈં उसी प्रकार प्रभु के वचनरूपः औषध भी कोष्ठरूप आत्मा की शुद्धि विधायक होती हैं, इसलिये इन्हें विरेचक चूर्ण के जैसा कहा है ॥ ४ ॥ जी भव्य जीव (भावेण पंचेव उचिञ्जऊण) भावपूर्वक इन पूर्वोक्त प्राणानिपात आदि पांच आस्रव द्वारों को छोड़ करके और (पंचेव रक्षिञ्जऊण) प्राणातिपातादिविरमणरूप पांच संवरद्वारों पाल करके (कम्मरयविपमुक्ता) कर्मरूप रज से सर्वथा रहित हो जाते हैं, वे (अनुत्तरं सिद्धवरं जंति) अपुनरावृत्तिरूप सर्वोत्तम भावसिद्धि सिद्धिगति-को प्राप्त करते हैं ॥५॥

॥ ये पांच आस्रव- ‘ अधर्म ’ द्वार समाप्त हुए ॥

॥ प्रश्नव्याकरण सूत्र का प्रथम विभाग समाप्त ॥

થઈ શકતા નથી જેમ વિરેચન ઔષધિ કોઠો સાફ કરી નાખે છે તેમ પ્રભુનાં વચનરૂપી ઔષધ પણ આત્મ રૂપી કોઠાની શુદ્ધિ કરનાર છે, તેથી તેને વિરેચન ચૂર્ણ સમાન કહેલ છે ॥ ૪ ॥

જે ભવ્ય જીવો “ ભાવેણ પંચેવ રક્ષિઞ્જઞ ” ભાવ પૂર્વક તે પૂર્વોક્ત પ્રાણાતિપાત આદિ પાંચ આસ્રવ દ્વારોને છોડીને, “ પંચેવ રક્ષિઞ્જઞ ” પ્રાણાતિપાતાદિ વિરમણરૂપ પાંચ સંવરદ્વારોનું પાલન કરીને “ કમ્મરયવિપમુક્તા ” કર્મરૂપ રજથી તદ્દન રહિત થઈ બચે છે. તેઓ “ અનુત્તરં સિદ્ધિવરં જંતિ ” બન્યાંથી આ સંસારમાં પાછા આવવું યડતું નથી એવું સર્વોત્તમ ભાવસિદ્ધિ-સિદ્ધિગતિ-ભોક્ષ-પ્રાપ્ત કરે છે, ૫૫૥

॥ પાંચ આસ્રવદ્વાર સમાપ્ત ॥

॥ પ્રશ્નવ્યાકરણ સૂત્રનો ૫૬૯નો વિભાગ સમાપ્ત ॥

—द्वितीयो भागः—

अत्र प्रथमभागे पञ्चास्रवा वर्णिताः, द्वितीयभागे तु तत्प्रतिपक्षभूतान् पञ्च संवरानभिधित्सुः। श्रीसुधर्मास्वामी तेषु प्रथममर्हिसालक्षणसंवरद्वारं विवृण्वन् शिष्यमामन्त्रयेदमाह—‘जम्बू’ इत्यादि—

मूलम्—जम्बू ! एत्तो संवरदाराइं पंच वोच्छामि आणुपुट्ठीए ।

जह भणियाणि भगवया, सव्वदुक्खविमोक्खणट्ठाए ॥ १ ॥

पढमं होइ अहिंसा १, चितियं सच्चवयणं इति पण्णत्तं ।

दत्तमणुन्नाय ३ संवरो य वंभचेर ५ मपरिगहत्तं ५ च ॥ २ ॥

तत्थ पढमं अहिंसा, तसथावरसव्वभूयस्सेमकरी ।

तीसे सभावणाए कच्चिवोच्छं गुणुदेसं ॥ ३ ॥

ताणि उइमाणि सुव्वय ! महव्वयाइं लोगहियसव्वयाइं
सुयसागरदेसियाइं तवसंजममहव्वयाइं सीलगुणवरव्वयाइं
सच्चज्जव्वयाइं नरगतिरियमणुयदेवगइविवज्जगाइं सव्व-
जणसासणगाइं कम्मरयविदारगाइं भवसयविणासगाइं
दुहसयविमोयगाइं सुहसयपव्वत्तगाइं कापुरिसदुरुत्तराइं
सप्पुरिसनिसेवियाइं निव्वाणगमणमग्गसग्गप्पणायगाइं संव-
रदाराइं पंच कहियाणि भगवया ॥ सू० १ ॥

द्वितीय विभाग प्रारंभ—

प्रथम विभाग में पांच आस्रवों का वर्णन किया गया है। अब इस द्वितीय विभाग में इन पांच आस्रवों के प्रतिपक्षभूत पांच संवरों को कहने की कामनावाले श्री सुधर्मास्वामी सब से पहिले उनमें से अर्हिसालक्षण संवरद्वार का विवेचन करने के निमित्त जम्बूस्वामी को

भीजेभाग—

पडेइ विभागमां पांच आस्रवोनुं वणुंन करायुं छे डवे आ भीज विभागमां ते पांच आस्रवोथी विइदना पांच संवरो विवे वणुंन करवानी छिछावाणा श्री सुधर्मास्वामी सौथी पडेलां तेओमांता अर्हिसालक्षण संवरद्वारनुं

ટીકા—‘જંબૂ’ ઇત્યાદિ—

હે જમ્બૂઃ । — ઇતઃ સંસ્વરદારાણિ પશ્ચ વક્ષ્યામિ આનુપૂર્વ્યાં યથા મળિતાનિ મળવતા સર્વદુઃસ્વલ્પિમોક્ષણાર્થાય ॥ ૧ ॥

પ્રથમં સ્વત્યહિંસા, દ્વિતીયં સત્યવચનમિતિ મજ્જતમ્ ।

દત્તાનુજ્ઞાતસંસ્વરશ્ચ, બ્રહ્મચર્યપરિગ્રહત્વં ચ ॥ ૨ ॥

તત્ર પ્રથમમહિંસા, ત્રસસ્થાવરસર્વભૂતક્ષેમકરી ।

તસ્યા સમાવનાયાઃ, કિંચિદ્ વક્ષ્યામિ મુળોદ્દેશમ્ ॥ ૩ ॥ ઇતિ છાયા ।

તત્ર હે જમ્બૂઃ । ઇતઃ=આસ્ત્રવદ્વારકથનાનન્તરં ‘આણુપુર્વીય’ આનુપૂર્વ્યાં-અનુક્રમેણ પશ્ચ ‘સંસ્વરદારાઈ’ સંસ્વરદારાણિ, સંત્રિયતે=નિરુદ્ધયતે કર્મ કારણે પ્રાણાતિપાતાદિકં યેનાત્મપરિણામેન :સ સંસ્વરસ્તસ્ય દ્વારાણિ = ઉપાયભૂતાનિ = અહિંસાદીનિ ‘વોચ્છામિ’ વક્ષ્યામિ=કથયિષ્યામિ । નાઈં સ્વયદ્વચા વક્ષ્યામિ, કિન્તુ મળવતા મહાવીરેણ સર્વમાણિનાં ‘સન્વદુઃસ્વલ્પિમોક્ષણદ્વાર’ સર્વદુઃસ્વ-

સંવોધન કરકે પ્રથમસૂત્ર કહતે હૈ—‘જંબૂ’ ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(જંબૂ) હે જંબૂ ! (એત્તો) આસ્ત્રવદ્વાર કહને કે વાદ મૈં અવ (આણુપુર્વીય) અનુક્રમ સે (પંચ સંસ્વરદારાઈ) પાંચ સંવાદારોં કો (વોચ્છામિ) કહુંગા । જિસ આત્મપરિણામ સે કર્મોં કે આસ્ત્રવ કે કારણભૂત પ્રાણાતિપાતાદિક પરિણામ રોક દિયે જાતે હૈં ઉસકા નામ સંસ્વર હૈ । ઉસકે ઉપાયભૂત દ્વાર અહિંસાદિક પરિણામ હૈં । ઇન્હીં પરિ-ણામોં કા નામ સંસ્વર દ્વાર હૈ । મૈં ઇન સંસ્વરદારોં કા કથન અપની બુદ્ધિ કે અનુસાર નહીં કરુંગા—કિન્તુ (મળવયા) મળવાન મહાવીર ને (સન્વદુઃસ્વલ્પિમોક્ષણદ્વાર) સમસ્ત પ્રાણિયોં કે દુઃખોં કો દૂર કરને કે

વિવેચન કરવાને માટે જંબૂસ્વામીને સંબોધીને પહેલું સૂત્ર કહે છે —

“જંબૂ” ઇત્યાદિ

“જંબૂ” હે જંબૂ ! “એત્તો” આસ્ત્રવદ્વાર વિષે વર્ણન કર્યા પછી હવે હું “આણુપુર્વીય” અનુક્રમે ‘પંચસંસ્વરદારાઈ’ પાંચસંસ્વર દ્વારે “વોચ્છામિ” કહીશ. એ આત્મપરિણામથી કર્મોના આસ્ત્રવના કારણભૂત પ્રાણાતિપાતાદિક પરિણામને રોકવામાં આવે છે તેનું નામ સંસ્વર છે. તેના ઉપાયરૂપ દ્વારે અહિંસા વગેરે પરિણામ છે. એ જ પરિણામોને સંસ્વરદ્વાર કહે છે. હું તે સંસ્વરદ્વારોનું વર્ણન મારી બુદ્ધિ પ્રમાણે કરીશ નહીં—પણ “મળવયા” ભગવાન મહાવીરે “સન્વ દુઃસ્વલ્પિમોક્ષણદ્વાર” સમસ્ત પ્રાણીઓનાં દુઃખો દૂર કરવાને

સુદર્શિની ટીકાઅં ૧ સુ. ૧ પञ्चमसंवरद्वारनामानि

૫૫૩

વિમોક્ષણાર્થાય ‘જહ’ યથા-યદ્વાણિ ભણિતાનિ, તથૈવ વક્ષ્યામિ ॥ ૧ ॥
પંચસંવર દ્વારાણિ વક્ષ્યામીતિ પ્રતિજ્ઞાય તન્નામાન્યાહ-‘પદમં હોઝ અહિંસા’ ઇત્યાદિ।
પશ્ચસંવર દ્વારેષુ ‘પદમં’ પ્રથમમહિંસા સંવરદ્વારં ભવતિ, દ્વિતીયં સત્યવચનનામકં,
ત્રીતીયં દત્તાનુજ્ઞાતગ્રહણલક્ષણં, ચતુર્થં વ્રત્તચર્યં, ચ=પુનઃ પશ્ચમમપરિગ્રહત્વં સંવર-
દ્વારમ્ ॥૨॥ પશ્ચ સંવરદ્વારનામાન્યુક્તાનિ, સંપ્રતિ પ્રથમમહિંસાસંવરદ્વારં વર્ણયિતુ-
માહ-‘તત્થ પદમં અહિંસા’ ઇત્યાદિ-

‘તત્થ’ તત્ત્વ સંવરપશ્ચક્રમધ્યે પ્રથમં સંવરદ્વારમહિંસા ભવતિ, સા ણિ
‘તસથાવરસવ્વભૂયત્તેમકરી’ તસથાવરસર્વભૂતક્ષેમકરી=તસથાવરાદિ સર્વ
લિયે (જહ) જિસ રૂપ સે ઇનકા (ભાણિયાણી) પ્રરૂપણ કિયા હૈ ડસી
તરહ સે મૈં ઇનકા પ્રરૂપણ-વર્ણન કરૂંગા ॥ ૧ ॥

અથ વે પાંચ સંવર દ્વાર કૌન ૨ સે હૈં ? સૂત્રકાર ડનકા ક્રમશઃ
નામનિર્દેશ કરને કે લિયે કહતે હૈં-‘પદમં હોઝ અહિંસા’ ઇત્યાદિ।

ડન પાંચ સંવર દ્વારોં મૈં સે (પદમં) સબ સે પહિલા સંવર
દ્વાર (અહિંસા હોઝ) અહિંસા હૈ। (ચિતિયં) ડસરા સંવર દ્વાર
(સચ્ચવયણં) સત્યવચન હૈ (દત્તમણુજ્ઞાય) તીસરા સંવર દ્વાર દત્તાનુ-
જ્ઞાતગ્રહણ હૈ। ચૌથા સંવર દ્વાર (વંમચેરં) વ્રત્તચર્ય હૈ। ઓર પાંચવા
સંવર દ્વાર (અપરિગ્ગહત્તં) અપરિગ્રહત્વ હૈ ॥ ૨ ॥ ડસ પ્રકાર પાંચ
સંવર દ્વારોં કે નામ કહ કર અથ સૂત્રકાર સર્વપ્રથમ અહિંસા રૂપ સંવર
દ્વાર કો વર્ણન કરને કે વિષે તીસરી ગાથા કહતે હૈં-(તત્થ) ડન પાંચ
સંવર દ્વારોં કે બીચ મૈં (પદમં) પહિલા સંવરદ્વાર (અહિંસા) અહિંસા

માટે “જહ” ઁ રીતે તેતું “ભાણિયાણિ” પ્રરૂપણુ કર્યું છે. ઁજ રીતે હું
તેતું પ્રરૂપણુ-વર્ણન કરીશ. ॥ ૧ ॥

હવે તે પાંચ સંવરદ્વાર કયાં કયાં છે ? તેના અનુક્રમે નામ નિર્દેશ
કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે-“પદમં હોઝ અહિંસા” ઇત્યાદિ

તે પાંચ સંવરદ્વારોમાં “પદમં” સૌથી પહેલું સંવરદ્વાર “અહિંસા
હોઝ અહિંસા” છે, “ચિતિયં” બીજું સંવરદ્વાર “સચ્ચવયણં” સત્ય વચન
“દત્તમણુજ્ઞાય” ત્રીજું સંવરદ્વાર દત્તાનુગ્રહણ છે, ચોથું સંવરદ્વાર “વંમચેરં”
બ્રત્તચર્ય છે, અને પાંચમું સંવરદ્વાર “અપરિગ્ગહત્તં” અપરિગ્રહત્વ છે ॥૨॥

આ પ્રમાણે પાંચ સંવરદ્વારોનાં નામ કહીને હવે સૂત્રકાર સૌથી પહેલાં
સંવરદ્વાર અહિંસાનું વર્ણન કરવાને માટે ત્રીજી ગાથા કહે છે. “તત્થ” ઁ
પાંચ સંવરદ્વારોમાં “પદમં” પહેલું સંવરદ્વાર “અહિંસા” અહિંસા છે.

જીવાનાં કુશલકારિણી । ‘તીસે’ તસ્યા અહિંસાયાઃ ‘સમાવનાણ’ સમાવનાયાઃ=ભાવનાપશ્ચકસહિતાયાઃ ‘કિંચિ’ કિંચિત્ ‘ગુણુદેસં’ ગુણોદેસં=ગુણાનાં પરિચયં હે જમ્બૂઃ । અહં ત્વાં પ્રતિ ‘વોચ્છં’ વક્ષ્યે=કથયિષ્યામિ ॥ ૩ ॥ પૂર્વોક્તમેવાર્થે વિશદયન્નાહ—‘તાણિ ઉ ઇમાણિ’ इत्यादि—‘સુવ્વય’ હે સુવ્રત ! =શોભનવ્રતશાલિન્ ! જમ્બૂઃ ! ધાનિ સંવરશબ્દનોક્તાનિ ‘તાણિ ઉ’ તાનિ તુ ઇમાનિ=વક્ષ્યમાણાનિ સન્તિ । તાનિ કીદૃશાનિ ? इत्याह—‘મહવ્વયાહં’ મહાવ્રતાનિ=કરણત્રયયોગત્રયેણ યાવજ્જીવં સર્વવિષયનિવૃત્તયાऽણુવ્રતાપેક્ષયા વા મહાન્તિ=બૃહન્તિ યાનિ વ્રતાનિ સાવધવિરતિલક્ષણાનિ તાનિ તથોક્તાનિ, પુનઃ ‘લોગદિયસચ્ચયાહં’ લોકદિતસદ્વ્રતાનિ=લોકેભ્યઃ=વહ્જીવનિકાયરૂપેભ્યો

હે (તસ યાવરમૂયલેમકરી) યહ અહિંસા ત્રસ ઓર સ્થાવર આદિ સમસ્ત જીવોં કી કુશલ કારિણી હૈ । (સ માવનાણ તીસે) મૈં ઉસ પાંચ ભાવનાઓં સહિત અહિંસા કે (કિંચિ) કુછ (ગુણુદેસં) ગુણોં કા પરિચય હે જંબૂ ! તુમકો (વોચ્છં) કહૂંગા ॥ ૩ ॥

હસી પૂર્વોક્ત અર્થકો સૂત્રકાર અવ વિશદરૂપમેં સમજાતે હૈ—(સુવ્વય !) હે શોભનવ્રતશાલિન્ જંબૂ ! જો સંવર શબ્દ સે કહે ગયે હૈં (તાણિઉહમાણિ) વે હસ પ્રકાર સે હૈં—(મહવ્વયાહં) યે મહાવ્રતરૂપ હૈં—ઇન સંવરરૂપ મહાવ્રતોં મૈં હિંસા આદિ પાંચોં પાપ કૃત, કાસ્તિ, અનુમોદના તથા મન, વચન ઓર કાય સે યાવજ્જીવ—જીવનપર્યંત—છોડ દિયે જાતે હૈં, હસલિયે યે વડે વ્રત કહલાતે હૈં । અથવા અણુવ્રતી કી અપેક્ષા યે અહિંસા સત્ય આદિ સંવરરૂપ વ્રત મહાવ્રત કહલાતે હૈં, અર્થાત્ ઇન

“તસયાવરમૂયલેમકરી” તે અહિંસા ત્રસ, સ્થાવર વગેરે સમસ્ત જીવોનાં કલ્યાણ કરનારી છે. “સમાવનાણ તીસે” હે જંબૂ ! તે પાંચ ભાવનાઓ સહિત અહિંસાના “કિંચિ” કેટલાક “ગુણુદેસં” શુભોને પરિચય હું તમને “વોચ્છં” કહીશ ॥૩॥

એ જ પૂર્વેક્ત અર્થને હવે સૂત્રકાર લંબાણ પૂર્વક સમજાવે છે—“સુવ્વય !” હે સુંદર વ્રતધારી જંબૂ ! જે સંવરો કહેવામાં આવ્યા છે “તાણિ ઉ ઇમાણિ” તે આ પ્રકારે છે—“મહવ્વયાયં” તે મહાવ્રતરૂપ છે—તે સંવરરૂપ મહાવ્રતોમાં હિંસા આદિ પાંચે પાપો મન, વચન અને કાયાથી કરવાનું, કરાવવાનું અને તેને અનુમોદવાનું જીવનપર્યંત છોડી દેવામાં આવે છે. તે કારણે તે મહાવ્રતો કહેવાય છે. અથવા અણુવ્રતોની અપેક્ષાએ અહિંસા, સત્ય આદિ સંવરરૂપ વ્રતોને મહાવ્રતો કહેવામાં આવે છે, એટલે કે તે મહા-

સુવર્ણિની ટીકા અ ૦ ૧ સુ ૦ ૧ વશ્વસંવરદ્વારલક્ષણનિરૂપણમ્

૫૨૫

હિતાનિ=હિતકરાણિ યાનિ સદ્વ્રતાનિ=શ્રેષ્ઠવ્રતાનિ તાનિ તથોક્તાનિ, તથા-સુ‘ય-
સાગરદેસિયાઈ’ શ્રુતસાગરદેશિતાનિ-શ્રુતું=કલ્પવ્યવહારાદિરૂપં, તદેવ ગંભીર-
સ્વાદિગુણૈઃ સાગરઃ શ્રુતમાગરસ્તત્ર દેશિતાનિ=પ્રોક્તાનિ યાનિ તાનિ તથોક્તાનિ,
તથા-‘તવ સંજમવયાઈ’ તપઃ સંયમવ્રતાનિ=તપઃ-અનશનાદિ, પૂર્વકર્મનિર્જરણ-
ફલમ્, સંયમઃ=પૃથિવ્યાદિ સંરક્ષણલક્ષણોઽભિનવકર્માગ્રહણફલઃ, તદ્ગુણિ યાનિ
મહાવ્રતોં મે સર્વ સાધ્ય યોગોં કા ત્યાગ જીવન પર્યંત કર દિયા જાના
હૈ । હસીલિયે યે સંવર દ્વાર (લોગહિયસવ્વયાઈ) લોકહિત સદ્વ્રત હૈ-
લોકહિત કે લિયે સદ્વ્રત-શ્રેષ્ઠ વ્રત હૈ અર્થાત્-ત્રસકાય, પૃથિવીકાય,
અપ્કાય તેજસ્કાય, વાયુકાય, વનસ્પતિ કાય, જન છહ નિકાય રૂપ લોક
કા જનસે હિત સધતા હૈ, હસલિયે યે સદ્વ્રત હૈ અર્થાત્ જન સંવરદ્વારોં
મેં પ્રવૃત્ત હુઆ સાધુ સદા છહ કાય કે જીવોં કી રક્ષા કરને મેં તત્પર
રહતા હૈ, જેસી વહ કોઈ બી પ્રવૃત્તિ નહીં કરતા હૈ કિ જિસસે છહ કાય
કે જીવોં કી વિરાધના હો । યે સંવર દ્વાર (સુયસાગરદેસિયાઈ) શ્રુત-
સાગર દેશિત હૈ-ગંભીરત્વાદિ ગુણોં સે સાગર જેસે કલ્પવ્યવહારાદિશ્રુત
મેં યે કથિત હુએ હૈ । તથા યે સંવર દ્વાર (તવસંજમમહ્વયાઈ) તપઃ
સંયમ મહાવ્રત રૂપ હૈ-અનશન આદિ જો ધારહ પ્રકાર કી તપસ્યાઈ
હૈ ઉનકા નામ તપ હૈ । યે તપ પૂર્વસંચિત કર્મોં કી નિર્જરા કરાતે હૈ
અર્થાત્-જનકા યહી ફલ હૈ કિ જનકે આચરણ સે પૂર્વસંચિત કર્મોં કી
નિર્જરા હોતી હૈ । પૃથિવ્યાદિ છહ કાય કે જીવોં કી રક્ષા કરના હસકા

મતોમાં જીવન પર્યંત સર્વ સાધ્યયોગોના ત્યાગ કરવામાં આવે છે. તેથી તે
સંવરદ્વાર “લોગહિયસવ્વયાઈ” લોકહિત સદ્વ્રત છે-લોકહિતને માટે સદ્વ્રત
શ્રેષ્ઠ વ્રત છે, એટલે કે ત્રસકાય પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય,
અને વનસ્પતિકાય એ છ નિકાયરૂપ લોકજનું તેનાથી હિત સધાય છે, તેથી તે
સદ્વ્રતો છે. એટલે કે એ સંવરદ્વારોમાં પ્રવૃત્ત થયેલ સાધુ સદા છકાયના
જીવોની રક્ષા કરવાને તત્પર રહે છે, જેથી છકાયના જીવોની વિરાધના થાય
એવી કોઈ પણ પ્રવૃત્તિ તે કરતો નથી. તે સંવરદ્વાર “સુયસાગરદેસિયાઈ”
શ્રુતસાગર દેશિત છે-ગંભીરતા આદિ ગુણોથી ‘કલ્પવ્યવહારાદિશ્રુતમાં’ તેમને
સાગર જેવાં કહેલ છે. તથા તે સંવરદ્વાર “તવ સંજમમહ્વયાઈ” તપઃ
સંયમ મહાવ્રતરૂપ છે-અનશન આદિ આર પ્રકારની જે તપસ્યાઓ છે તેને
તપ કહે છે. તે તપ પૂર્વ સંચિત કર્મોની નિર્જરા કરાવે છે, એટલે કે તેનું
એજ ફળ મળે છે કે તે આચરવાથી પૂર્વસંચિત કર્મોની નિર્જરા થાય છે
પૃથિવીકાય આદિ છકાયના જીવોનું રક્ષણ કરવું તેને સંયમ કહે છે, તેમાં

વ્રતાનિ તાનિ તથોક્તાનિ, તથા- ' સીલગુણવરવ્યાઈ ' શીલગુણવરવ્રતાનિ= શીલ=ચિત્તસમાધિઃ ગુણાઃ=વિનયાદયઃ તૈર્ધરાણિ=શ્રેષ્ઠાનિ યાનિ વ્રતાનિ તાનિ તથોક્તાનિ- ' સચ્ચજ્ઞવચ્ચ્યાઈ ' સત્યાર્જવવ્રતાનિ, તત્ર=સત્યમ્=મૃષાવાદવર્જનમ્, આર્જવમ્=માયાવર્જનમ્, તદ્વાણિ યાનિ વ્રતાનિ તાનિ તથોક્તાનિ, તથા- ' નરગતિરિયમણુયદેવગતિચિવ્વજ્ઞગાઈ ' નરકતિર્યક્મનુજદેવગતિચિવર્જકાનિ= નરકતિર્યક્મનુજદેવાભિધાશ્રતસ્ત્રોગતીર્ચિવર્જયન્તિ મોક્ષગતિપાપકલ્પેન યાનિ તાનિ તથોક્તાનિ, તથા- ' સ્વજ્ઞિગ્ગસાસગગાઈ ' સર્વજ્ઞિનશાસનકાનિ=સર્વજ્ઞિનૈઃ શિષ્યન્તે =ઉપદિશ્યન્તે યામિ તાનિ તથોક્તાનિ, તથા- ' કમ્મરયવિચારગાઈ ' કર્મરત્નો-

નામ સંયમ છે, इसमें प्रवृत्त साधु के नवीन कर्मों का आगमन रुक जाता है अर्थात् नवीन कर्मों के आस्रव का निरोध होना यह इस संयम ना फल है। इसलिये ये संवरद्वार तपसंयम रूप महाव्रत हैं। तथा ये संवरद्वार- (सीलगुणवरव्याई) शील गुणवर व्रतरूपहैं-चित्त की समाधि का नाम शील है, विनय आदि का नामगुण है। इनसे श्रेष्ठ जोव्रत हैं तद्रूप ये संवरद्वार हैं। (सच्चज्जवव्यायाई) सत्य-मृषावादका परित्याग, आर्जव-माया का त्याग, इन रूप जो व्रत हैं तद्रूप ये संवरद्वार हैं। (नरग-तिरियमणुयदेवाइविवज्जगाइ) इनकी आराधना से आराधक जीव को मोक्षगति की प्राप्ति होती है इसलिये ये संवर द्वार नरक, तिर्यश्च, मनु-ष्य और देव, इन चारों गतियों से अपने आराधक जीव को दूर कर देते हैं इसलिये ये नरक तिर्यक् मनुज देवगति विवर्जक हैं। (स्वज्जि ग्गसासगगगई) इन संवरद्वारों का उपदेश अभी तक जितने भी जिन हो

પ્રવૃત્ત થયેલ સાધુને નવાં કર્મોનું આગમન અટકી જાય છે. એટલે કે નવાં કર્મોના અસ્રવને નિરોધ થવો એ જ આ સંયમનું ફળ છે, તેથી તે સંવર-દ્વાર તપ સંયમરૂપ મહાવ્રત છે. તથા તે સંવરદ્વાર-“ સીલગુણવરવ્યાઈ ” શીલગુણવરવ્રત રૂપ છે-શીલ એટલે ચિત્તની સમાધિ, વિનય આદિ ગુણો કહે-વાય છે, તેમના વડે શ્રેષ્ઠ જે વ્રતો છે તે પ્રકારના તે સંવરદ્વાર છે. “ સચ્ચ જ્ઞવચ્ચ્યાઈ ” સત્ય-મૃષાવાદનો પરિત્યાગ, આર્જવ-માયાનો ત્યાગ, એ પ્રકારનાં જે વ્રતો છે તે તે પ્રકારનાં તે સંવરદ્વાર છે. “ નરગતિરિયમણુયદેવાઈ-વિવજ્જગાઈ ” તેમની આરાધનાથી આરાધક જીવને મોક્ષગતિ પ્રાપ્ત થાય છે તેથી તે તે સંવરદ્વાર પોતાની આરાધના કરનાર જીવોને નરક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવ એ ચારે ગતિમાં જતાં રોકે છે; તેથી તેઓ નરક, તિર્યંચ, મનુ-ષ્ય અને દેવગતિના વિવર્જક છે.

सुवर्शिनी टीका अ० १ सू० १ पञ्चसंवरद्वारलक्षणनिरूपणम्

५५७

दातकाणि=कर्म=ज्ञानावरणाद्यष्टप्रकारकं, तदेव जीवस्य गुणनेन मालिन्यापाद-
कत्वेन रजः=धूलिः, तद् विदारयन्ति=निवारयन्ति यानि तानि तथोक्तानि,
तथा-भवस्यविनाशगाई' भवशतविनाशकानि = भवशतानि=जन्मशतानि
विनाशयन्ति यानि तानि तथोक्तानि, भवपरम्पराविच्छेदकानीत्यर्थः, अत एव
'दुःखसयविमोचगाई' दुःखशतविमोचकानि=दुःखशतानि विमोचयन्ति यानि
तानि तथोक्तानि, तथा - 'सुखसयपवत्तगाई' सुखशतवर्तकानि=सुखशतानि
प्रवर्तयन्ति यानि ताति तथोक्तानि, तथा-'कापुरिसदुरुत्तराई' कापुरुष
चुके हैं उन सबने दीया है। (कम्मरयविदारगाई) ये संवरद्वारकर्मरज के
विदारक हैं-ज्ञानावरण आदि आठ प्रकार की कर्मरूप धूलि को ये उड़ाने-
नष्ट करने वाले हैं। ज्ञानावरण आदि कर्मों को धूलि की उपमा इस-
लिये दी है कि धूलि जिस प्रकार मलिनता आदि करती है उसी प्रकार
ये कर्म भी जीव में व्यवहार नष्ट की अपेक्षा से मलिनता करते हैं,
अर्थात् ज्ञानादिक गुणों का आवरण आदि कर देने से जीव में अज्ञान
आदि विभाव भावों के वर्धक होते हैं। (भवसयविनाशगाई) ये
संवरद्वार भवशतविनाशक हैं-अर्थात्-इनकी आराधना करने से आरा-
धक, जीवों के जो इनकी आराधना के विना सैकड़ों भव-जन्म-होने
वाले थे वे सब नष्ट हो जाते हैं। (दुःखसयविमोचगाई) भवपरं-
परा इनके प्रभाव से विच्छिन्न हो जाती है, इसीलिये इन्हें दुःखशत
विमोचक कहा है। (सुख सयपवत्तगाई) जब सैकड़ों दुःख इनकी

“सच्च जिणसासणगाई” आज सुधीमां बैठला जिनेश्वर। थई गथां
ते अधांये ते संवरद्वारेनो उपदेश आये। छे “कम्मरयविदारगाई” ते
संवरद्वार कर्मरजनो नाश करनार छे-ज्ञानावरण आदि आठ प्रकारनां कर्मरूपी
रजनो नाश करे छे। ज्ञानावरण आदि कर्मोने धूण-रजनी उपमा देवानुं करण
ये छे के धूण जेम मलिनता आदि करे छे तेम ये कर्मो पणु एवमा
व्यवहार नयनी अपेक्षाये मलिनता करे छे, ओठवे के ज्ञानादिक आदि शुष्णानुं
आवरण करी नामवाथी एवमां अज्ञान आदि उतरा भावोनां वर्धक थाय छे,
“भवसयविनाशगाई” ते संवरद्वार भवशत विनाशक छे-ओठवे के तेमनी
आराधना करवाथी आराधक एवोना तेमनी आराधना कर्वा विना जे सैकड़ा
भव थवाना उतरा ते अधा नष्ट थई जय छे “दुःखसयविमोचगाई” तेमना
प्रभावथी एवोनी परंपरा छे। जय छे, ते करणु तेमने दुःख शत विभा-
यक दर्शाव्या छे। “सुखसयपवत्तगाई” जे तेमनी आराधनाधी सैकड़ा

दुरुत्तराणि= कापुरुषैः= कातरैः दुःखेन उत्तोर्यन्ते यानि तानि तथोक्तानि= कापुरुषैः प्रतिप-तुमशक्त्यानोत्तर्यः, तथा- ' सत्पुरुषितनिसेविषाह् ' सत्पुरुषैर्निषे-
वितानि=आश्रितानि, तथा- ' निर्वृणमगमणमगसम्पणायगाह् ' निर्वृणमगमन-
मार्गस्वर्गप्रणायकानि=निर्वाणं=मोक्षस्तस्य गमने मार्ग इव मार्गा यानि तानि
निर्वृणमगमनमार्गाणि, तथा- स्वर्गे प्रकर्षेण नयन्ति जीवान् यानि तानि स्वर्गप्र-
णायकानि, उभयोः कर्मधारयस्तानि तथोक्तानि, पञ्चसंवरद्वाराणि ' भगवत्या '
भगवता महावीरेण ' उ ' तु-निश्चयेन ' कथिथाणि ' कथितानि=प्रोक्तानि, अत
इमान्यवश्यं श्रद्धेयानीति भावः ॥ सू० १ ॥

इति प्रथमसंस्कारद्वार प्रस्तावना ।

आराधना से विनष्ट हो जाते हैं तो यह बात भी निश्चित हो जाती है कि ये सैकड़ों सुखों के प्रवर्तक होते हैं। जब इनका इतना विशिष्ट प्रभाव है तो फिर क्या है हर एक प्राणी इनकी आराधना करने लगेगा- इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि ये संवरद्वार (कापुरिसदुत्तराई) का पुरुष दुरुत्तर हैं-जो कायरपुरुष हैं-उनके द्वारा तो धारण करने के लिये अशक्य हैं। परन्तु (सत्पुरिसनिसेविगाई) सत्पुरुषों से ये सेविन-आचरित होते हैं, अर्थात् जो सत्पुरुष हैं-अन्त-रात्मा जीव है-वे ही उन्हें धारण करते हैं। अधिक क्या कहा जाय ये संवरद्वार (निव्वाणगमणमग-मगप्ययाणागाई) मोक्ष के गमन में मार्गरूप है, अगर जीव में इतनी योग्यता नहीं हो तो स्वर्ग में प्रयाण कराने वाला जहर होता है। इस प्रकार के (पेपंच संवरदाराई कहियाणि) पांच संवर द्वार भगवान महावीर ने कहे हैं। इसलिये प्रत्येक भव्य जीव को इन्हे अपनी श्रद्धा का विषय अवश्य बनाना चाहिये ॥सू०१॥

હુઝ નપ્ત થઈ બંધ છે તો એ વાત પણ નક્કી થઈ બંધ છે કે તે સેકડો સુખના પ્રવર્તક થાય છે. બ્યારે તેમનો આટલો બધો વધારે પ્રભાવ છે તો દરેક પ્રાણી તેની આરાધના કરવા માંડશે. તેથી સૂત્રકાર બતાવે છે તે તે સંવરદ્વાર “કા પુરિસદુરુત્તરાઈ” કાપુરુહરુત્તાર છે-એ કાયર પુરુષ છે-મહિ. સાત્મા જીવ છે, તેમના કાશ તે ધારણ કરવાને માટે અશક્ય છે. પણ “સપ્પુ-રિત્તિસેવિયાઈ” પણ સત્પુરુષો વડે તેનું સેવન-આચરણ કરાય છે. વધુ શું કહું! તે સંવરદ્વાર “નિવ્વાળનમળમગ સમગ્ધયાળગાઈ” મોક્ષગમનના માર્ગ-રૂપ છે, જો જીવમાં એટલી યોગ્યતા હોય તો તે તેને માટે અવશ્ય સ્વર્ગ પ્રાપ્તિ કરાવનારા નિવડે છે, આ પ્રકારના તે “પંચસંવરદારાઈ” કહિયાણિ” પાંચ સંવરદ્વાર લગવાન મહાવીરે કહેલ છે. તો દરેક જીવજીવે તેમને અવશ્ય થોતાની અદ્વાનો વિષય બનાવવો જોઈએ. ॥ સુ. ૧ ॥

अथ प्रथमसंवरनिरूपणायाह—‘तत्थ पढमं’ इत्यादि—

मूलम्—तत्थ पढमं अहिंसा जा सा सदेव मणुयासुरस्स
 लोगस्स भवइ दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा, निव्वाणं १,
 निव्वुई २, समाही ३, संती ४, किच्ची ५, कंती ६, रइय ७, विरइय ८,
 सुयंग ९, तिच्ची १०, दया ११, विमुत्ती १२, खंती १३, सम्मत्ताराहणा १४,
 महंती १५, बोही १६, बुद्धी १७, धितीय १८, समिद्धी १९, रिद्धी २०,
 विद्धी २१, ठिई २२, पुट्ठी २३, नंदा २४, भद्दा २५, विसुद्धी २६,
 लद्धी २७, विसिट्ठदिट्ठी २८, कल्लाणं २९, मंगलं ३०, पमाओ ३१,
 विभूई ३२, रक्खा ३३, सिद्धवासो ३४, अणासवो ३५, केवलीण-
 ठाणं ३६, सिवं ३७, समिई ३८, सील ३९, संजमो ४०, त्ति य,
 सीलघरो ४१, संवरोय ४२, गुत्ती ४३, ववसाओ ४४, उस्सओ ४५,
 जन्नो ४६, आयतणं ४७, जंतण ४८, मप्पमाओ ४९, अस्साओ ५०,
 वीसासो ५१, अभओ ५२, सव्वस्स ५३, वि अमघाओ, चोक्ख
 ५४, पवित्तो ५५, सुई ५६, पूया ५७, विमल ५८, पभासा ५९,
 य, निम्मल ६० तरत्ति। एवमादीणि नियगुणनिम्मियाइं पज्जव-
 नामाणि होति अहिंसाए, भगवईए ॥ सू० २ ॥

टीका—‘तत्थ’ इत्यादि—

‘तत्थ’ तत्र=तेषु पञ्चसु संवरद्वारेषु मध्ये ‘पढमं’ प्रथमम्=आद्यम्
 ‘अहिंसा’ अहिंसालक्षणं संवरद्वारं भवति। अहिंसा कीदृशी? इत्याह—‘जा सा’
 या सा सुप्रसिद्धा-अहिंसा ‘सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स’ सदेवमनुजासुरस्य

इस प्रकार यह प्रथम संवर द्वार की प्रस्तावना है। अब सूत्रकार

આ પ્રમાણે આ પ્રથમ સંવરદ્વારની પ્રસ્તાવના છે. હવે સૂત્રકાર પ્રથમ

લોકસ્ય ‘દીવો’ દ્વીપો ભવતિ, અયં ભાવઃ—સંયોગવિયોગચિન્તાસન્તાનવિતાન તરજ્ઞાયમાણમોહમહાવર્ત્તપર્ત કપાયશ્વાપદકર્થિતમધ્યમાનગાત્રાણામત્રાણાનાં પ્રાણા-નામિયમર્હિસાઽઽશ્વાસસ્થાનરૂપો દ્વીપો ભવતિ, તથા—‘તાણં’ ત્રાણમ્, આપદ્મ્યો રક્ષણાત્રાણસ્વરૂપાઽસ્તિ । તથા—‘સરણં’ શરણમ્—વિવિદવિપદવ્યાકુલ્લાનામાશ્રય-પ્રથમ સંવરઁ દ્વાર કે નિરૂપણ કે લિયે સૂત્ર કહતે હૈં—‘તત્થ પદમં’ ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(તત્થ) ડન પાંચ સંવરદ્વારોં મેં સે (પદમં અહિંસા) પહિલા સંવરદ્વાર અહિંસા હૈ । (જા સા સદેવમણુયામુરસ્મ લોગસ્સ-દીવો ભવઁ) યહ સુપ્રસિદ્ધ અહિંસા દેવલોક, મનુષ્યલોક ઓર અમુર-લોક કે લિયે ઁક દ્વીપ જેસી હૈ । ઇસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ સંયોગ ઓર વિયોગ કી સન્તાનપરંપરારૂપ તરજ્ઞો સે યહ મોહમહાવર્ત્તરૂપ ગર્ત કિ જિસમેં સમસ્ત સંસારી જીવ સર્વથા મગ્ન હો રહે હૈં, વ્યાસ હો રહા હૈં ડસમેં પડે હુઁ ઇન સંસારી જીવોં કો કષાયરૂપ શ્વાપદ—હિંમક જાનવર રાતડિન ઢુઃખિત કરતે રહતે હૈં ઓર ડનકે શરીર કો મથતે રહતે હૈં । વહાં ડનકી રક્ષા કરને વાલા કોઈ નહીં હૈ । ઇસ તરહ અશરણમૂત હુઁ ઇન પ્રાણીયોં કી રક્ષા કરને વાલી યહ ઁક અહિંસા હી હૈ । અતઃ યહ અહિંસા ડનકે લિયે આશ્વાસન કે સ્થાનરૂપ ઁક દ્વીપ કે જેસી હૈ । તથા (તાણં) જીવોં કી યહ આપત્તિ વિપત્તિ સે રક્ષા કરતી હૈ ઇસલિયે યહ ત્રાણરૂપ હૈ । તથા (સરણં) ડનેક વિપદાઓં સે ઘિરે હુઁ જીવોં

સંવરદ્વારનાં નિરૂપણને માટે સૂત્ર કહે છે—“તત્થ પદમં” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“તત્થ” તે પાંચ સંવરદ્વારોંમાંથી પ્રથમ અહિંસા ” પહેલું સંવરદ્વાર અહિંસા છે. “જા સા સદેવમણુયામુરસ્સ લોગસ્સ દીવો ભવઁ” તે સુપ્રસિદ્ધ અહિંસા દેવલોક, મનુષ્યલોક, અને અમુરલોકને માટે ઁક દ્વીપ જેવી છે. તેનો ભાવાર્થ ઁ છે કે સંયોગ અને વિયોગરૂપ સંતાન પરંપરા રૂપ મોહાશ્વા પડે આ મોહ મહાવર્ત્તરૂપ ખાઈ કે જેમાં સર્વે સંસારી જીવો સંપૂર્ણ રીતે મગ્ન થઈ ગયેલા છે, રૂખી ગયા છે, તે સંસારી જીવોને કષાયરૂપ શ્વાપદ હિંમક પશુ નિશદિન ઢુઃખી કરે છે અને તેમનાં શરીરને વલોડ્યા કરે છે ત્યાં તેમનું રક્ષણ કરનાર કોઈ નથી. આ રીતે નિશધાર જોવાં તે પ્રાણીઓની રક્ષા કરનાર આ ઁક અહિંસા જ છે તેથી આ અહિંસા તેમને માટે આશ્રય સ્થાનરૂપ ઁક દ્વીપ સમાન છે. તથા “તાણં” તે જીવોનું આપત્તિ—વિપત્તિ સામે રક્ષણ કરે છે. તેથી તે ત્રાણરૂપ છે. તથા “સરણં” અનેક વિપદોથી ઘેરાયેલા જીવોને

સુવર્ણીમી ટીકા અ૦ ૧ સુ૦૨ પ્રથમસંવરદ્વારનિરૂપણમ્

૫૬૧

સ્થાનમ્, 'ગઈ' ગતિઃ=ગમ્યતે=મોક્ષાર્થિભિરાશ્રીયતે इति गतिः= प्राप्यस्थानं
તથા- 'પડદ્વા' પ્રતિષ્ઠા પ્રતિષ્ઠન્તે-આસતે યસ્યાં સર્વે ગુણાઃ સા પ્રતિષ્ઠા=સર્વગુણા-
નામાધારસ્વરૂપા। સામ્પ્રતમર્હિસાયાઃ ગુણનિષ્પન્નાનિ પશ્ચિનામાન્યાહ 'નિવ્વાણં'
इत्यादि- 'નિવ્વાણં' નિર્વાણં=મોક્ષઃ, તદ્દેતુત્વાત્ ૧, 'નિવ્વુઈ' નિર્વૃત્તિઃ=સ્વાસ્થ્ય-
મ્-કર્મવ્યાધિવર્જિતત્વાત્ ૨, 'સમાહી' સમાધિઃ=સમતા, સમભાવદેતુત્વાત્ ૩,
'સંતી' શાન્તિઃ=દ્રોહવર્જિતત્વાત્ ૪, 'કિર્તી' કીર્ત્તિઃ=યશઃ તદ્દેતુત્વાત્ ૫,

કો યહ એક ઉત્તમ આશ્રય સ્થાન રૂપ હૈ। તથા (ગઈ) જો મોક્ષ કે
અભિલાશી જીવ હૈં વે હસકા આશ્રય કરતે હૈં હસલિયે ડનકી અપેક્ષા
યહ ગતિરૂપ હૈ। તથા (પડદ્વા) સંસાર મેં જિતને મો સદ્ગુણ હૈં ડન
સબ કી પ્રતિષ્ઠા-આધારભૂત યહી એક અર્હિસા હૈ, હસકે અભાવ મેં અન્ય
વિદ્યમાન સદ્ગુણોં કી પ્રતિષ્ઠા-કીમત-નહોં હોતી હૈ। અબ સૂત્રકાર
હસ અર્હિસા ભગવતી કે ગુણ-નિષ્પન્ન સાઠ નામોં કો કહતે હૈં।
ડનમેં પહિલા નામ (નિવ્વાણં) નિર્વાણ-મોક્ષ હૈ। કયોં કિ યહ ડસકી
હેતુભૂત હોતી હૈ ૧। ડૂસરા નામ હસકા (નિવ્વુઈ) નિવૃત્તિ હૈ, નિવૃત્તિ
શબ્દ કા અર્થ સ્વાસ્થ્ય હૈ- કર્મોં કે આત્યંતિક અભાવ હોને સે હી
જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ ૨। અર્હિસા કા ત્રીસરા નામ (સમાહી) સમાધિ હૈ,
સમાધિ કા અર્થ સમતા હૈ, યહ અર્હિસા સમભાવ કી કારણ હોતી હૈ
હસલિયે કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે હસે સ્વયં સમાધિરૂપ કહ દિયા
હૈ ૩। અર્હિસા કા ચોથા નામ (સંતિ) શાન્તિ હૈ, -કયોં કિ જહાં દ્રોહ

માટે તે એક આશ્રયસ્થાનરૂપ છે. તથા “ ગઈ ” મોક્ષના અભિલાષી જે
જીવો છે તેઓ તેનો આશ્રય લે છે, તેથી તેમની અપેક્ષાએ તે ગતિરૂપ છે,
તથા “ પડદ્વા ” સંસારમાં જેટલા સદ્ગુણ છે તે બધાના આધાર રૂપ આ એક
અર્હિસા જ છે, તેના અભાવે બીજાં વિદ્યમાન સદ્ગુણોની કેમ પ્રતિષ્ઠા-કિંમત
થતી નથી. હવે સૂત્રકાર આ અર્હિસા ભગવતીના ગુણ પ્રતિપાદિત સાઠ નામો
ખતાવે છે. તેમાં પહેલું નામ “ નિવ્વાણં ” નિર્વાણ-મોક્ષ છે. કારણ કે તે તેના
કારણરૂપ હોય છે. (૧) તેનું બીજું નામ “ નિવ્વુઈ ” નિર્વૃત્તિ છે, નિર્વૃત્તિ
શબ્દનો અર્થ સ્વાસ્થ્ય થાય છે-કર્મોના અત્યંત અભાવ હોવાથી તે જીવોને
થાય છે. (૨) અર્હિસાનું ત્રીજું નામ “ સમાહી ” સમાધિ છે, સમાધિનો અર્થ
સમતા છે, આ અર્હિસા સમભાવનું કારણ હોય છે તેથી કારણમાં કર્મના ઉપચારથી
તેને સ્વયં સમાધિરૂપ કહેવામાં આવેલ છે. (૩) અર્હિસાનું ચોથું નામ “ સંતી ”
શાન્તિ છે, કારણ કે ત્યાં દ્રોહનો અભાવ હોય છે ત્યાં શાંત હોય છે. અર્હિ-

‘કંતી’ કાન્તિઃ=પ્રસન્નતા તદ્દેતુત્વાન્ ૬, ‘રઈ ય’ રતિઃ=આનન્દસ્તજ્જનકત્વાન્ ૭,
 ‘વિરઈ ય’ વિરતિઃ=વિરાગઃ સાવચકર્મવર્જિતત્વાન્,=‘સુયંગ’ શ્રુતાજ્ઞા=શ્રુત=
 શ્રુતજ્ઞાનાજ્ઞં કારણં યસ્યાઃ સા તથોક્તા, ઉક્તમપિ—“પદમં નાણં તઓ દયા”
 इति ९, ‘તિત્તી’ તૃપ્તિઃ=સંતોષઃ સર્વપ્રાણિસંતોષજનકત્વાન્ ૧૦, દયા=પ્રાણિરક્ષા-
 ઉપમર્દનવર્જિતત્વાન્ ૧૧, ‘વિમુત્તી’ વિમુક્તિઃ-વિરુચ્યન્તે પ્રાણિનઃ સકલવધ-

કા અભાવ હોતા હૈ વહીં શાંતિ હોતી હૈ, અહિંસા મેં દ્રોહ કા લેશ
 બી નહીં હોના હૈ, इसलिये इसे शांति शब्द से व्यवहृत किया गया
 है ४। (किन्ती) यशकी हेतुभूत होने से इसका पांचवां नाम कीर्ति है।
 अहिंसक जीव की कीर्ति का सर्वत्र विस्तार होता है यह बात सुप्रसिद्ध
 ही है ५। (कंती) प्रसन्नता की हेतुभूत होने से इसका नाम कान्ति
 भी है ६। (रई य) आनन्द की उत्पादक होने से इसका नाम रति
 है ७। (विरई य) सावचकर्मों से वर्जित होने के कारण इसका नाम
 विरति भी है ८। (सुयंग) इस अहिंसा का कारण श्रुतज्ञान होता है
 इसलिये इसका नाम श्रुताङ्ग है। क्योंकि ऐसा कहा है कि पहिले ज्ञान
 होता है बाद में दया ९। (तित्ती) समस्त प्राणियों के लिये यह संतोष-
 जनक होती है इसलिये इसका नाम तृप्ति है १०। इस अहिंसा में
 प्राणियों की रक्षा होती है इसलिये प्राणियों के प्राणों के उपमर्दन
 कृत्य से रहित होने के कारण यह (दया) दयारूप है ११। इसके
 प्रभाव से प्राणी समस्त प्रकार के वध एवं बंधनों से छूट जाता है

સામાં દ્રોહનું નામ માત્ર પણ હોતું નથી તેથી તેને શાન્તિ શબ્દથી વર્ણવેલ છે.

(૪) “કિન્તી” યશના કારણે રૂપ હોવાથી તેનું પાંચમું નામ કીર્તિ છે. અહિંસક જીવની કીર્તિ સર્વત્ર ફેલાય છે તે વાત સુપ્રસિદ્ધ છે. (૫) “કંતી” પ્રસન્નતાના કારણે રૂપ હોવાથી તેનું નામ કાન્તિ પણ છે. (૬) “રઈય” આનન્દ ઉત્પન્ન કરનાર હોવાથી તેનું નામ રતિ છે. (૭) “વિરઈય” સાવચક કર્મોથી રહિત હોવાથી તેનું નામ વિરતિ પણ છે. (૮) “સુયંગ” આ હિંસાને કારણે શ્રુતજ્ઞાન થાય છે, તેથી તેનું નામ શ્રુતાંગ છે, કારણ કે પહેલા જ્ઞાન થાય છે, અને ત્યાર પછી દયા એવું ભાંખેલ છે. (૯) “તિત્તી” સમસ્ત પ્રાણીઓને માટે તે સંતોષ જનક હોય છે તેથી તેનું નામ તૃપ્તિ છે. (૧૦) આ અહિંસાથી પ્રાણીઓની રક્ષા થાય છે, તેથી પ્રાણીઓનાં પ્રાણસંહારનાં કૃત્યથી તે રહિત હોવાથી તે “દયા” દયારૂપ છે. (૧૧) તેના પ્રભાવથી પ્રાણીઓ સમસ્ત પ્રકારના વધ અને બંધનોમાંથી મુક્ત થાય છે, તેથી સકળ વધબંધનોથી પ્રાણીઓને મુક્ત કરાવનાર હોવાથી

બન્ધનેખ્યો યયા સા તથોક્તા, -સકલવધબન્ધનચિમોચકત્વાત્ ૧૨, 'ચંત્તી' ક્ષાન્તિઃ=ક્રોધાદિનિગ્રહકારકત્વાત્ ૧૩, 'સમ્મત્તારાહણા' સમ્યક્ત્વારાધના=સમ્યક્-સમ્યક્વોધરૂપમારાધ્યતે યયા સા તથોક્તા, જિનશાસનાધાનકારણત્વાદ્ ૧૪, 'મહત્તી' મહત્તી=સર્વધર્માનુષ્ઠાનશ્રેષ્ઠત્વાત્ ૧૫, 'વોહી' વોધિઃ=સર્વજ્ઞી-ક્ષર્મમાપ્તિરૂપત્વાત્ ૧૬, 'બુદ્ધી' બુદ્ધિઃ, પરદુઃસ્વાવોધકત્વાત્ ૧૭, 'ધિર્હી' ધૃતિઃ, પ્રિયમાણજીવયાભયમદાયકત્વાત્, યદ્વા-ધૃતિશ્ચિત્તાદર્શ્યમ્, અહિંસયા ચિત્તે દાદર્શ્ય સમુત્પન્નમાનત્વાત્ ૧૮, 'સમિદ્ધી' સમુદ્ધિઃ, આનન્દજનકત્વાત્
 હસલિયે પ્રાણીયોં કી સકલ વધ બન્ધનોં સે ચિમોંચ કા હોને કે કારણ
 હસકા નામ (ચિમુત્તી) ચિમુત્તી હૈ ૧૨ । યહ સમસ્ત ક્રોધાદિ કષાયોં
 કી નિગ્રહ કારિકા હૈ હસલિયે હસકા નામ (ચંત્તી) ક્ષાન્તિ હૈ ૧૩ ।
 સમ્યક્ વોધરૂપ સમ્યક્ત્વ હસકે હોને પર હી આરાધિત હોતા હૈ, અર્થાત્
 યહ જિનશાસન કી કારણ હોતી હૈ હસલિયે હસકા નામ (સમ્મત્તારા-
 હણા) સમ્યક્ત્વારાધના હૈ ૧૪ । ધર્મકે સમસ્ત અનુષ્ઠાનોં મેં યહ
 શ્રેષ્ઠ હૈ હસલિયે હસકા નામ (મહત્તી) મહત્તી હૈ ૧૫ । સર્વજ્ઞપ્રતિપાદિત
 ધર્મકી પ્રાપ્તિરૂપ હોને સે હસકા નામ (વોહી) વોધિ હૈ ૧૬ । પરદુઃસ્વોં
 કી અવબોધિકા હોને સે, અર્થાત્ પરકીય દુઃસ્વોં કો વતલારે વાલી હોને
 સે હસકા નામ (બુદ્ધી) બુદ્ધિ હૈ ૧૭ । મરતે હુણ જીવોં કો હમકે
 પ્રભાવ સે અભય કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ હસલિયે હસકા નામ (ધિર્હી)
 ધૃતિ હૈ । અથવા-ધૃતિ શબ્દ કા અર્થ ચિત્ત કી દૃઢતા હૈ, સો અહિંસા
 સે ચિત્ત મેં દૃઢતા ઉત્પન્ન હોતી હૈ યહ ઘાત નિર્વિવાદ હૈ ૧૮ । આનન્દ

તેનું નામ “ચિમુત્તી” ચિમુક્તિ છે, (૧૨) તે સમસ્ત ક્રોધાદિક કષાયોનો નિગ્રહ કરનાર છે, તથા તેનું નામ “ચંત્તી” ક્ષાન્તિ છે. (૧૩) સમ્યક્વોધ રૂપ સમ્યક્ત્વ તે વિધિમાન હોય તો જ આરાધાય છે, એટલે કે તે જિનશાસનની આરાધનાનાં કારણરૂપ હોય છે તેથી તેનું નામ “સમ્મત્તારાહણા” સમ્યક્ત્વારાધના છે. (૧૪) ધર્મના સમસ્ત અનુષ્ઠાનોમાં તે શ્રેષ્ઠ છે તેથી તેનું નામ “મહત્તી” મહત્તી છે (૧૫) સર્વજ્ઞ પ્રતિપાદિત ધર્મની પ્રાપ્તિરૂપ હોવાથી તેનું નામ “વોહી” વોધિ છે. (૧૬) પરદુઃખોની અવબોધિકા હોવાથી એટલે કે પારકાનાં દુઃખો ખતાવનારી હોવાથી તેનું નામ “બુદ્ધી” બુદ્ધિ છે (૧૭) મરતાં જીવોને તેના પ્રભાવથી અભયની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તેનું નામ “ધિર્હી” ધૃતિ છે. અથવા ધૃતિ શબ્દનો અર્થ ચિત્તની દૃઢતા છે, તો અહિંસાથી ચિત્તમાં દૃઢતા ઉત્પન્ન થાય છે તે વાત નિર્વિવાદ છે. (૧૮) આનંદની વતક હોવાથી

૧૦, 'રિદ્ધી' ઋદ્ધિઃ, લક્ષ્મીહેતુત્વાત્ ૨૦, 'વિદ્ધી' વૃદ્ધિઃ, તીર્થંકુરાદિપુણ્યપ્રકૃતિપુણ્યસંપાદકત્વાત્ ૨૧, 'ઠિદ્ધી' સ્થિતિઃ-સાધ્યપર્યવસિતમોક્ષસ્થિતિસમ્પાદકત્વાત્ ૨૨, 'પુદ્ધી' પુષ્ટિઃ-પુણ્યપુષ્ટિકારકત્વાત્ ૨૩, 'નંદા' નન્દા=નન્દયતિ આનન્દયતીતિ નન્દા, સ્વર્ગાપવર્ગસુખપ્રાપ્તકત્વાત્ ૨૪, 'ભદ્દા' ભદ્રા=ભન્દતે=કલ્યાણ કરોતીતિ ભદ્રા ૨૫, 'વિમુદ્ધી' વિશુદ્ધિઃ-પાપમલવિશોધકત્વાત્ ૨૬, 'લદ્ધી' લબ્ધિઃ=કેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનાદિ લબ્ધહેતુત્વાત્ ૨૭, 'વિસિદ્ધિદિદ્ધી' વિશિષ્ટદિષ્ટિઃ=પ્રધાનદર્શનમતમિત્યર્થઃ, ઉક્તં ચ—

કી જનક હોને સે इसका नाम (समिद्धी) समृद्धि है १०। लक्ष्मी की हेतुभूत होने से इसका नाम (रिद्धी) ऋद्धि है २०। इसके प्रभाव से तीर्थकर आदि पुण्य प्रकृतियों का जीवों को बन्ध होता है इसलिये इसका नाम (विद्धि) वृद्धि है २१। इसके आचरण करने से मोक्ष में प्राप्त हुए जीवों की स्थिति आदि अनन्त होती है इसलिये इसका नाम (ठिई) स्थिति है २२। पुण्य की पुष्टि का कारण होने से इसका नाम (पुट्टी) पुष्टि है २३। स्वर्ग और मोक्षके सुख जीवों को इसकी कृपा से प्राप्त होते हैं अतः वे उन सुखों की प्राप्ति से वहां आनन्द करते हैं इसलिये इसका नाम (नंदा) नन्दा है २४। यह जीवों का कल्याण कराती है इसलिये इसका नाम (भद्दा) है २५। पापमल का इससे विशोधन होता है इसलिये इसका नाम (विमुद्धी) विशुद्धी है २६। केवलज्ञान, केवलदर्शन, आदि लब्धिग्यां इसके ही प्रभाव से होती हैं, इसलिये इसका नाम (लद्धी) लब्धि है २७। (विसिद्धिदिद्धी) अहिंसा

તેનું નામ “સમિદ્ધી” સમૃદ્ધિ છે. (૧૦) લક્ષ્મીના કારણરૂપ હોવાથી તેનું નામ “રિદ્ધી” ઋદ્ધિ છે. (૨૦) તેના પ્રભાવથી તીર્થંકર આદિ પુણ્યપ્રકૃતિઓનો જીવોને બંધ થાય છે તેથી તેનું નામ “વિદ્ધી” (૨૧) તેના આચરણથી મોક્ષ પ્રાપ્ત કરેલ જીવોની સ્થિતિ આદિ અનંત થાય છે, તેથી તેનું નામ “ઠિદ્ધી” સ્થિતિ છે (૨૨) પુણ્યની પુષ્ટિનું તે કારણ હોવાથી તેનું નામ “પુટ્ટી” પુષ્ટિ છે. (૨૩) તેની કૃપાથી જીવોને સ્વર્ગ અને મોક્ષનાં સુખો પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી તે સુખોની પ્રાપ્તિથી તેઓ ત્યાં આનંદ કરે છે. તે કારણે તેનું નામ “નંદા” છે (૨૪) તે જીવોનું કલ્યાણ કરાવે છે. તેથી તેનું નામ “ભદ્દા” ભદ્રા છે. (૨૫) પાપમળની તેનાથી વિશુદ્ધિ થાય છે, તેથી તેનું નામ “વિમુદ્ધી” વિશુદ્ધિ છે. (૨૬) કેવલજ્ઞાન, કેવલદર્શન આદિ લબ્ધિઓ તેના પ્રભાવથી જ જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી તેનું નામ “લદ્ધી” લબ્ધિ છે. (૨૭) “વિસિદ્ધિદિદ્ધી” અહિંસા જ પ્રધાન દર્શન છે તેથી તેનું નામ

સુવર્ણિની ટીકા અ० ૧ સૂ० ૨ પ્રથમસંવરદ્વારનિરૂપણમ્

૫૬૫

“ કિં તયા પઠિતયા, પદકોટયા પલ્લભૂતયા ।

યત્ર યત્ ન જ્ઞાતં, પરસ્ય પીઢા ન કર્તવ્યા ? ॥ ૧ ॥

પદકોટિમિત્તાનેકશાસ્ત્રાધ્યયનૈઃકિમ્ ? યત્ર દયા ન વર્તેતે । દયાવર્જિતાનિ સકલ્યાન્યપિ શાસ્ત્રાણિ પલ્લભૂતાનીત્યર્થઃ ૨૮, ‘ કલ્લાણં ’ કલ્યાણમ્, કલ્યં મોક્ષસ્તત્પાપકત્વાત્ ૨૯, મંગલમ્ દુરિતોપશમનકારકત્વાત્ ૩૦, ‘ પમોઓ ’ પ્રમોદઃ=હર્ષજનકત્વાત્ ૩૧, ‘ વિભૂઈ વિભૂતિઃ=સકલસંપત્તિહેતુત્વાત્ ૩૨, ‘ રક્ષા ’ રક્ષા જીવરક્ષણસ્વભાવાત્ ૩૩, ‘ સિદ્ધાવાસો ’ સિદ્ધાવાસઃ=સાધપર્ય

હી પ્રધાન દર્શન હૈ इसलिये इसका नाम विशिष्ट दृष्टि है २८ ।

कहा भी है—

“ કિં તયા પઠિતયા, પદકોટયા પલ્લભૂતયા ।

યત્ર યત્ ન જ્ઞાતં, પરસ્ય પીઢા ન કર્તવ્યા ॥ ૧ ॥

“ પદ કોટિ પરિમિત અનેક શાસ્ત્રોં કે અધ્યયન સે કયા લાભ હો સકતા હૈ જબ કિ જીવ કો इतना ही ज्ञान न हो पावेकि पर प्राणी को पीड़ा नहीं करना चाहिये ॥ १ ॥

દયોપદેશ વિહીન શાસ્ત્ર પલ્લભૂત જૈસે નિઃસાર હૈ ૨૮ । મોક્ષ-પ્રદાન કરાને વાલી હોને સે इसका नाम (कल्लाणं) कल्याण है २९ । પાપોં કા-इससे उपशमन होता है इसलिये यह (मंगलं) मंगलरूप है ३० । હર્ષ કી જનક હોનેસે यह (पमाओ) प्रमादरूप है ३१ । સકલ સંપત્તિયોં કી હેતુભૂત હોને સે इसका नाम (विभूई) विभूति है ३२ । (सक्खा) जीवों

विशिष्ट दृष्टि છે. ડહું પણ છે—

“ કિં તયા પઠિતયા, પદકોટયા પલ્લભૂતયા ।

યત્ર યત્ ન જ્ઞાતં, પરસ્ય પીઢા ન કર્તવ્યા ॥ ૧ ॥

“ કોટિ પદો વાળાં અનેક શાસ્ત્રોનો અભ્યાસ કરવા છતાં પણ જો જીવને એટલું પણ જ્ઞાન ન પ્રાપ્ત થાય કે બીજા પ્રાણીઓને પીડવા જોઈએ નહીં, તો તેનાં અધ્યયનથી શો લાભ ? ॥ ૧ ॥

દયાના ઉપદેશ વિનાનાં શાસ્ત્રો પલાલ જેવાં નિઃસાર છે. (૨૮) મોક્ષ પ્રાપ્ત કરાવનાર હોવાથી તેનું નામ “ કલ્લાણં ” કલ્યાણ છે. (૨૯) તેના વડે પાપોનો ક્ષય થાય છે તેથી તે “ મંગલ ” મંગળરૂપ છે. (૩૦) હર્ષની જનક હોવાથી તે “ પમોઓ ” પ્રમોદરૂપ છે. (૩૧) સકલ સંપત્તિઓના કારણરૂપ હોવાથી તેનું નામ “ વિભૂઈ ” વિભૂતિ છે. (૩૨) “ રક્ષા ” જીવોની રક્ષા કરવાનો તેનો સ્વભાવ હોવાથી તેનું નામ રક્ષા છે. (૩૩) તેની આરાધના

વસિતમોક્ષગતિનિવાસહેતુત્વાત્ ૩૪, 'અણાસવો' અનાશ્રવ:-કર્માગમનનિરોધક-
ત્વાત્ ૩૫, 'કેવલીણં ઠાણં' કેવલિણં સ્થાનમ્-તેપામાશ્રયભૂતત્વાત્, અહિંસકસ્યે-
વકેવલજ્ઞાનં સમુત્પદ્યતે इत्यर्थः ૩૬, 'સિવં' શિવમ્-ઉપદ્રવવર્જિતત્વાત્ ૩૭,
'સમિર્દં' સમિતિ:-સમ્યક્પ્રવૃત્તિઃ, તદ્વૃત્તત્વાત્ ૩૮, 'સીલં' શીલં=સમાધિઃ,
તદ્વૃત્તત્વાત્ ૩૯, 'સંજમોત્તિયં' સંયમઃइति च-સંયમ:-હિંસા નિવૃત્તિસ્તદ્વૃત્તત્વાત્
૪૦, 'સીલવરો' શીલવૃદ્ધમ્-શીલં=સદાચારો, યદ્વા વ્રદ્ધાચર્યં, તસ્ય ગૃહં=

કી રક્ષા કરને કા હી ઇસકા સ્વભાવ હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ રક્ષા હૈ
૩૨ । ઇસકી આરાધના કરતે હી જીવસિદ્ધોં કૈ આવાસ મૈં સિદ્ધિગતિ
નામક સ્થાન વિશેષ મૈં નિવાસ કરને લગ જાતા હૈ ઇસલિયે ઇસકા
નામ (સિદ્ધાવાસો) સિદ્ધાવાસ હૈ ૩૪ । (અણાસવો) કર્મોં કૈ
આગમન દ્વાર કી યહ નિરોધિકા હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ અનાશ્રવ હૈ
૩૫ । (કેવલીણં ઠાણં) કેવલજ્ઞાની-ઇસકા આશ્રય કરતે હૈં ઇસલિયે
ઇસકા નામ કેવલિ સ્થાન હૈ । અર્થાત્ જો અહિંસક હોના હૈં ઉસે હી કેવલ
જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈં ૩૬ । અહિંસક જીવ કો કહ્નિં સે બી કિસી બી
પ્રકાર કૈ ઉપદ્રવ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતે હૈં ઇસલિયે ઉપદ્રવવર્જિન હોને સે
ઇસકા નામ (સીવ) શિવ હૈ ૩૭ । સમ્યક્ પ્રવૃત્તિ કા નામ સમિતિ હૈ.
યહ અહિંસા સમિતિરૂપ હોતી હૈં ઇસલિયે ઇસકા નામ (સમિર્દં)
સમિતિ હૈ ૩૮ । શીલ-સમાધિ-કા યહ કારણ હોતી હૈં ઇસલિયે ઇસકા
નામ (સીલ) શીલ હૈ ૩૯ । (સંજમોત્તિય) સંયમ-હિંસા કી નિવૃત્તિ
હોનારૂપ સંયમ કી યહ સાધક હૈં ઇસલિયે ઇસકા નામ સંયમ હૈ ।
૪૦ । શીલ-સદાચાર અથવા વ્રદ્ધાચર્યકી યહ સ્થાન હૈં ઇસલિયે ઇસકા નામ

કરતાં કરતાં જ છવ સિદ્ધોના આવાસમાં સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનમાં નિવાસ
કરવા લાગે છે તેથી તેનું નામ “ સિદ્ધાવાસો ” સિદ્ધાવાસ છે. (૩૪) “ અણ-
સવો ” કર્મોના આગમન દ્વારની તે નિરોધક છે, તેથી તેનું નામ અનાશ્રવ છે.
(૩૫) “ કેવલીણં ઠાણં ” કેવલજ્ઞાની તેના આશ્રય છે તેથી તેનું નામ કેવલી-
સ્થાન છે એટલે કે જે અહિંસક હોય છે તેને જ કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે.
(૩૬) અહિંસક હવને કોઈ પણ સ્થળેથી કોઈ પણ પ્રકારના ઉપદ્રવ થઈ
શકતા નથી. તેથી ઉપદ્રવ રહિત હોવાથી તેનું નામ “ સિવ ” શિવ છે. (૩૭)
સમ્યક્ પ્રવૃત્તિને સમિતિ કહે છે. આ અહિંસા સમિતિશ્ચ હોય છે તેથી તેને
“ સમિર્દં ” સમિતિ કહે છે. (૩૮) શીલ-સમાધિના તે કારણરૂપ હોય છે
તેથી તેનું નામ “ સીલ ” શીલ છે. (૩૯) “ સંજમોત્તિય ” સંયમ-હિંસાથી
નિવૃત્ત થવા રૂપ સંયમની તે સાધક છે, તેથી તેનું નામ સંયમ છે. (૪૦)
શીલ સદાચાર અથવા વ્રદ્ધાચર્યનું તે સ્થાન છે તેથી તેનું નામ “ સીલવરો ”

સુદર્શિની ટીકા અ. ૧ સુ. ૩૧૪મસંવરદ્વારનિરૂપણમ્

૫૧૭

સ્થાનમ્ ૪૧, ' સંવરો ય ' સંવરશ્વ=કર્માગમકારણસંવરણાત્ ૪૨, ' ગુત્તી ' ગુપ્તિઃ=જીવસ્યાશુભપ્રવૃત્તિનિરોધકત્વાત્ ૪૪, ' વવમાઓ ' વ્યવસાયઃ-વિ=વિશિષ્ટો-
વ્યસાયઃ=અધ્યવસાયઃ-આત્મપરિણામઃ ૪૪, 'ઉસ્મઓય ' ઉચ્ચક્ષયશ્ચ-દ્રવ્યમાવો-
ન્નતિહેતુત્વાત્ ૪૬, ' જણ્ણો ' યજ્ઞઃ-સ્વર્ગોદિસદ્ગતિદાયકત્વાત્ ૪૬, ' આયત્તળં ' આયતનમ્-ગુણાનામાશ્રયઃ ૪૭, ' જયણં ' યત્નઃ-નિરવધાનુષ્ઠાનત્વાત્ ૪૮, ' અપ્પમાઓ ' અપમાદઃ=પ્રમાદવર્જનમ્ ૪૯, ' અસ્સાઓ ' આશ્વાસઃ-પરત્સિદ્ધેતુ-

(સીલધરો) શીલગૃહ છે ૪૧. કર્મોંકે આગમન ભૂત કારણોંંકા વહ નિરોધ કર દેતી છે ઇમલિયે ઇસકા કામ (સંવરો) સંવર છે ૪૨. ઇસકે આચરણ કરને સે જીવોંંકી અશુભ પ્રવૃત્તિ રુક જાતી છે ઇમલિયે ઇસકા નામ (ગુપ્તિ) ગુપ્તિ છે ૪૩. યહ આત્મા કા વિશિષ્ટ પ્રકાર કા એક પરિણામ છે ઇસલિયે ઇસકા નામ (વ્યવમાઓ) વ્યવસાય-વિ-અવમાય અધ્યવસાય છે ૪૪. યહ દ્રવ્ય ઓર ભાવ ઇન દોનોંંકી ઉચ્ચ કરાને વાલી હોંંતી છે ઇસલિયે ઇસકા નામ (ઉસ્મઓ ય) ઉચ્ચ છે ૪૫. સ્વર્ગ આદિઃ સદ્ગતિ કી પ્રાપ્તિ જીવોંંકો ઇમકે સેવન કરને સે હોતી છે ઇસલિયે ઇસકા નામ (જણ્ણો) યજ્ઞ છે ૪૬. સમી સદ્ગુણોંંકા ઘટ્ટી એક આશ્રયસ્થાન-ભૂત છે ઇસલિયે ઇસકા નામ (આયતળં) આયતન છે ૪૭. યહ નિરવધ અનુષ્ઠાનરૂપ છે ઇસલિયે ઇસકા નામ (જયણં) યત્ન છે ૪૮. ઇસ પ્રમાદ અસાવધાનતાકા પરિત્યાગ હો જાતાછે ઇસલિયે ઇસકા નામ(અપ્પમાઓ)/અ-

શીલગૃહ છે. (૪૧) કર્મના આગમન રૂપ કારણોના તે નિરોધ કરી નાખે છે. તેથી તેનું નામ “ સંવરો ” સંવર છે. (૪૨) તેને આવરવાથી જીવોની અશુભ પ્રવૃત્તિ અટકી બચ છે તેથી તેનું નામ “ ગુપ્તિ ” ગુપ્તિ છે. (૪૩) તે આત્માનું વિશિષ્ટ પ્રકારનું એક પરિણામ છે, તેથી તેનું નામ “ વ્યવમાઓ ” વ્યવસાય-વિ. અવમાય-અધ્યવસાય છે. (૪૪) તે દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બન્નેની ઉન્નતિ કરનારી છે તેથી તેનું નામ “ ઉસ્મઓય ” ઉચ્ચ છે. (૪૫) તેના સેવનથી જીવોને સ્વર્ગ આદિ સદ્ગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તેનું નામ “ જણ્ણો ” યજ્ઞ છે. (૪૬) સપથા સદ્ગુણોનું તેજ એક આશ્રયસ્થાન છે, તેથી તેનું નામ “ આયત્તળં ” આયતન છે (૪૭) તે નિરવધ અનુષ્ઠાનરૂપ છે તેથી તેનું નામ “ જયણં ” યત્ન છે. (૪૮) તેમાં પ્રમાદ-અસાવધાનતાનો પરિત્યાગ થઈ બચ છે, તેથી તેનું નામ “ અપ્પમાઓ ” અપ્રમાદ છે. (૪૯) પર પ્રાણીઓને તે પુષિના કારણરૂપ હોય છે, તેથી તેનું નામ “ અસ્સાઓ ” આશ્વાસ છે. (૫૦)

ત્વાત્ ૫૦, 'વીસાઓ' વિશ્વાસઃપ્રાણિનાં પ્રતીતિજનકૃત્વાત્, યદ્વા-પ્રાણિપ્રાણ-
સ્યાવિરુદ્ધસમાચરણલક્ષણઃ ૫૧, 'અમઓ' અમયઃ-નિર્ભયહેતુત્વાત્ ૫૦, 'સંવસ્તવિ-
અમાયાઓ' સર્વસ્યાપિ સકલપ્રાણિગણસ્ય અમાયાતઃ-મા=લક્ષ્મીઃ, સા ચ દ્વેધા-
ધનલક્ષ્મીઃ પ્રાણલક્ષ્મીશ્ચ, તસ્યા યાતો દનનં માયાતો, ન માયાતઃ અમાયાતઃ-
અમારિઃ સ્વપદદ્વારા પ્રાણિનાં પ્રાણત્રાણકરણાત્ ૫૪, 'ચોક્ષ્વ' ચોક્ષા=પવિત્રાદપિ
પવિત્રા-કર્મમલાપદારકત્વાત્ ૫૪, 'પવિત્રા' પવિત્રા=આત્મતૈર્મહેતુત્વાત્ ૫૫,

પ્રમાદ હૈ ૪૯। પર પ્રાણિયોં કો યહ ત્વસિ કા કારણ હોતી હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ
(અસાઓ) આશ્વાસ હૈ ૫૦। પ્રાણિયોં મેં યહ પ્રતીતિ ઉત્પન્ન કરા દેતી
હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ (વીસાઓ) વિશ્વાસ હૈ । અથવા પ્રાણિયોં કે
પ્રાણોં કે વિરુદ્ધ આચરણ ઇસમેં નહોં હોતા હૈ ઇસલિયે મી ઇસકા નામ
વિશ્વાસ હૈ ૫૧। પ્રાણિયો કો યહ ભયરહિત બનો દેતી હૈ । ઇસલિયે
નિર્ભય કી હેતુ હોને સે ઇસકા નામ અમય હૈ ૫૨। દૂસરે જીવોં કી
મા-ધન-લક્ષ્મી ઓર પ્રાણરૂપલક્ષ્મી કા ઇસમેં યાત નહોં હોતા હૈ ઇસ
લિયે ઇસકા નામ (અમાયાય) અમાયાત હૈ । મા શબ્દ કા અર્થ લક્ષ્મી
હોતા હૈ-ધન રૂપ લક્ષ્મી ઓર પ્રાણરૂપ લક્ષ્મી કે ભેદ સે યહ લક્ષ્મી દો
પ્રકાર કી હોતી હૈ । અહિંસા સે ઇન દોનોં કા સંરક્ષણ હોતા હૈ યહ
બાન પ્રત્યક્ષ હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ અમાયાત હૈ ૫૩। યહ અહિંસા પવિત્ર
વસ્તુઓં સે મી હૈ અતિપવિત્ર હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ (ચોક્ષ્વા) ચોક્ષા
હૈ ૫૪। ઇસસે આત્મા કે ઉપર જમા દુઝા અનાદિકાલ કા મૈલ-વિભાવ
પરિણતિ દૂર હો જાતી હૈ । અતઃઆત્મા નિર્મલ-અપને સ્વરૂપ મેં મગ્ન-હો

પ્રાણીઓનાં તે પ્રતીતિ ઉત્પન્ન કરે છે. તેથી તેનું નામ “વીસાઓ” વિશ્વાસ
છે. અથવા પ્રાણીઓનાં પ્રાણોનાં વિરુદ્ધ આચરણ તેમાં થતું નથી, તેથી પણ
તેનું નામ વિશ્વાસ છે. (૫૧) પ્રાણીઓને તે ભય રહિત કરે. તેથી નિર્ભ-
યતાને માટે કારણભૂત હોવાથી તેનું નામ “અમય” છે. (૫૨) ધનીય જીવોની
મા-ધન-લક્ષ્મી અને પ્રાણરૂપ લક્ષ્મીનાં તેમાં યાત થતો નથી, તેથી તેનું નામ
“અમાયાય” અમાયાત છે. ‘મા’ શબ્દનો અર્થ લક્ષ્મી થાય છે-ધનરૂપ
લક્ષ્મી અને પ્રાણરૂપ લક્ષ્મી, એ રીતે તેના બે પ્રકાર પડે છે. અહિંસાને એ
બંનેનું સંરક્ષણ થાય છે તે વાત પ્રત્યક્ષ છે. (૫૩) તે અહિંસા પવિત્ર વસ્તુઓ
કરતાં પણ વધારે પવિત્ર છે, તેથી તેનું નામ “ચોક્ષ્વા” ચોક્ષા છે. (૫૪)
તેનાથી આત્મા ઉપર બનેલો અનાદિકાળનો મૈલ-વિભાવ પરિણતિ-દૂર થઈ
જાય છે, તેથી આત્મા પોતાનાં નિર્મળ સ્વરૂપમાં મગ્ન થઈ જાય છે. તે કારણે

સુરશિની ટીકા અંક ૨ સૂં ૨ પ્રથમવંચરદ્વાર નિરૂપણ

૫૬૬

‘ સુરે ’ શુચિ: = ભાવપૂજા હેતુત્વાત્ ૫૬, ‘ પૂજા ’ પૂજા = ભાવપૂજા-પ્રાણ્યુપમર્દન-રહિતત્વાત્ ૫૭ ‘ વિમલ ’ વિમલા-મિથ્યાત્વાધિરત્યાદિમલવર્જિતત્વાત્, ૫૮, ‘ પમાસા ય ’ પ્રમાસા ચ-પ્રકાશરૂપા કેવલજ્ઞાનવ્યોતીરૂપત્વાત્, સર્વપ્રાણિનાં સુખપ્રકાશકત્વાચ ૫૯, ‘ નિમ્મલતરા ’ નિર્મલતરા-સકલકર્મમલ્લવર્જિતત્વાત્ ૬૦, ‘ તિ એવાદીણિ ’ રૂપેવનાદીતિ ‘ નિયમુણનિમ્મિયાઈ ’ નિયમુણનિર્મિતાનિ = ગુણલક્ષિનાનિ ‘ પજ્જવનામાણિ ’ પર્યાયનામાનિ = તત્તત્તદ્વર્માશ્રિતામિથાનાનિ, ‘ હંતિ ’ મગન્તિ ‘ અહિંસાપ મગવર્દેપ ’ અહિંસાયા મગવત્થા: ॥ સૂં ૨ ॥

જાતી છે-ફળિયેઈસ આત્માની નિર્મલતાના કારણ હોને તે ફલ અહિંસાના નામ (પવિત્રતા: પવિત્ર છે ૫૫) આવ શુચિતાના કારણ હોને તે ફલના નામ (સુરે) શુચિ છે ૫૬ । ફલ અહિંસામાં પ્રાણિયોનાં પ્રાણોનાં ઉપમર્દન નહીં હોના છે અતઃ યદ્ ભાવપૂજારૂપ હોને તે ફલના નામ (પૂજા) પૂજા-ભાવપૂજા છે । ૫૭ । ફલની જો આરાધના કરતે છે તે મિથ્યાત્વ અધિરતિ આદિ વર્તોનાં સે વર્જિત હો જાતે છે ફલિયે ફલના નામ (વિમલ) વિમલા છે ૫૮ । યદ્ અહિંસા કેવલજ્ઞાનરૂપ વ્યોતિ સ્વરૂપ હોને તે (પમાસા ય) એક પ્રકાશરૂપા છે । ફલિયે ફલના નામ પ્રમાસ છે ૫૯ । ફલની પ્રાદુર્ભૂત હોતે હી આત્માનાં સકલ કર્મોનાં અભાવ હો જાતો છે અતઃ ફલના નામ (નિમ્મલતરા) નિર્મલતરા છે ૬૦ । (એવાદીણિ નિયમુણનિમ્મિયાઈ પજ્જવનામાણિ હોતિ અહિંસાપ મગવર્દેપ) ફલ પ્રકાર ફલ અહિંસા મગવતીનાં કે વે માઠ નામ ગુણાનુસાર છે । વે નામ ફલ અહિંસા મગવતીનાં પર્યાયવાચી-તત્તત્તદ્વર્માનાં અપેક્ષાનાં લેકર-શબ્દ છે ॥ સૂં ૨ ॥

આત્માની નિર્મલતાનાં કારણશૂત હોવાથી તે અહિંસાનાં નામ “ પવિત્રતા ” પવિત્રતા છે. (૫૫) ભાવ શુચિતાના કારણશૂત હોવાથી તેનું “ સુરે ” શુચિ છે. (૫૬) આ અહિંસામાં પ્રાણીઓના પ્રાણોનું ઉપમર્દન થતું નથી તેથી તે ભાવપૂજારૂપ હોવાથી તેનું નામ “ પૂજા ” પૂજા ભાવપૂજા છે. (૫૭) જે તેની આરાધના કરે છે તેઓ મિથ્યાત્વ, અધિરતિ આદિ ગણોથી રહિત થઈ જાય છે, તેથી તેનું નામ “ વિમલ ” વિમલા છે. (૫૮) આ અહિંસા કેવળ જ્ઞાનરૂપ વ્યોતિસ્વરૂપ હોવાથી “ પ્રમાસાય ” એક પ્રકાશરૂપ છે, તેથી તેનું નામ પ્રમાસ છે, (૫૯) તેના પ્રાદુર્ભાવ થતાં જ આત્મામાંથી ધીરે ધીરે સવળા કર્મોના અભાવ થઈ જાય છે, તેથી તેનું નામ “ નિમ્મલતરા ” નિર્મલતરા છે. (૬૦) ‘ એવાદીણિ નિયમુણનિમ્મિયાઈ પજ્જવનામાણિ હોતિ અહિંસાપ મગવર્દેપ ’ આ પ્રમાણે આ અહિંસા ભગવતીના ગુણ પ્રમાણે સાઠ નામ છે. તે નામો આ અહિંસા ભગવતીના પર્યાયવાચી-તે તે ધર્મની અપેક્ષાએ શબ્દ છે ॥ સૂં ૨ ॥

સંપતિ અહિંસામાહાત્મ્યમાહ—

પૂર્ણ—એસા ભગવર્દ અહિંસા, જા સા ભીયાણં પિવ સરણં
પક્ષીણં પિવ ગયણં, તિસિયાણં પિવ સલિલં, સુહિયાણં
પિવ અસણં, સમુદ્ધમજ્ઞેવ પોષવહણં, ચતુષ્પયાણં ચ આસ-
મપયં, દુહટ્ટિયાણં ચ ઓસહિવલં, અડવીમજ્ઞે ચ સત્થ-
ગમણં, એત્તો વિસિટ્ટુતરિયા અહિંસા જા સા પુઢવીજલ
અગણિ મારુયવળસ્સઈ — વીય — હરિય — જલચર—
થલચર—લ્હયર તસ—થાવર—સઘ્વમૂયલ્લેમકરી ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા—‘ એસા ભગવર્દ ’ ઇત્યાદિ—

એસા=જિનશાસનપ્રસિદ્ધા—અહિંસા ભગવતી યા સા ‘ ભીયાણં પિવ સરણં ’
ભીતાનામિવ શરણમ્=ભય ભીતાનાં પ્રાણિનાં ત્રાણાથ ગૃહમિત્રાસ્તિ, ‘ પક્ષીણં-
પિવ ગયણં ’ પક્ષિણામિવ ગગનમ્=પક્ષિણાં ગગનમિવ, યથા પક્ષિણાં ગમને ગગન-
માધારો ભવતિ, તથૈવ સર્વધર્માણામિયમહિંસાઽધારઃ । ‘ તિસિયાણં પિવ સલિલમ્=

અવ સૂત્રકાર ઇસ અહિંસા કે માહાત્મ્ય કો પ્રદર્શિત કરતે હૈ—
‘ એસા ભગવર્દ ’ ઇત્યાદિ. ।

ટીકાર્થ—(એસા) જિનશાસન મેં પ્રસિદ્ધ યહ (અહિંસા ભગવર્દ)
અહિંસા ભગવતી (જા સા) જો વહ અહિંસા (ભીયાણં પિવ સરણં)
ભયભીત હુણ પ્રાણિયોં કી રક્ષા કરને કે લિયે ઘર જૈસી હૈ । (પક્ષીણં
પિવ ગગણં) તથા જિસ પ્રકાર પક્ષિયોં કો ગમન કરને મેં આધારભૂત
આકાશ હોતા હૈ ઊસી તરહ સમસ્ત ધર્મોં કી આધારભૂત યહ અહિંસા
હી હૈ । (તિસિયાણં પિવ સલિલં) જિસ પ્રકાર ટુપિન વ્યક્તિયોં કી

હવે સૂત્રકાર આ અહિંસાનું મહાત્મ્ય દર્શાવે છે—“ એસા ભગવર્દ ” ઇત્યાદિ.

“ એસા ” જિનશાસનમાં પ્રસિદ્ધ તે “ અહિંસા ભગવર્દ ” અહિંસા ભગવતી,
“ જા સા ” જે “ ભીયાણં પિવ સરણં ” ભયભીત અનેલ પ્રાણીઓની રક્ષા કર-
વાને માટે ઘર સમાન છે, “ પક્ષીણં પિવ ગગણં ” તથા જેમ પક્ષીઓને
ગમન કરવામાં આકાશ આધારભૂત થાય છે, એજ પ્રમાણે સમસ્ત ધર્મોને
માટે આધારભૂત આ અહિંસા જ છે, “ તિસિયાણં પિવ સલિલં ” જેમ તર-

સુદર્શિની ટોકા અઽ ૧ સૂ ૩ અહિંસામાહાત્મ્યનિરૂપણમ્

૫૭૧

તૃપિતામિવ સલિલમ્=જલમ્, પ્રાણરક્ષકત્વાત્, ‘સુદિયાણં પિવ અસર્ણ’ ક્ષુધિતા-
નામિવાશનમ્=ક્ષુધાર્તપ્રાણિનાં કૃતેઽશનં ભોજનમિવ, અન્નપ્રાણાઃ इति વચનાત્ ।
તથા-‘સમુદ્દમઙ્ગેવ પોયવહ્ણં’ સમુદ્રમધ્યે इव પોતવદનમ્-યથા સમુદ્રમધ્યે નૌઃ
પ્રાણિનાં ત્રાણાય ભવતિ, તથૈવ સંસારસમુદ્રમધ્યે इयમહિંસા પ્રાણિનાં ત્રાણાય
પોતાયતે इति ભાવઃ । તથા-‘ચતુષ્પયાણં ચ આસમપયં’ ચતુષ્પદાનાં ચ આશ્રમ-
પદમ્-યથા ચતુષ્પદપ્રાણિનાં કૃતે ગોષ્ઠં વિશ્રામસ્થાનં તથૈવાહિંસાપિ સર્વપ્રાણિનાં

પ્રાણરક્ષા का साधनभूत जल होता है उसी प्रकार यह अहिंसा भी प्राणियों के प्राणों की रक्षा का एक साधन है । (सुद्वियाणं पिव असर्ण)
“अन्न ही प्राण है ” इस उक्ति के अनुसार जिस प्रकार भूख से पीड़ित हुए प्राणियों के लिये भोजन एक मात्र आधारभूत होता है उसी प्रकार यह अहिंसा भी जीवों की रक्षा करने का एक सर्वोत्तम साधन है । (समुद्दमङ्गेव पोयवह्णं) समुद्र के बीच में नौका जिस प्रकार प्राणियों की रक्षा करने वाली होती है उसी प्रकार संसार समुद्र के बीच में पतित हुए प्राणियों की रक्षा करने के लिये यह अहिंसा ही एक सर्वोत्तम द्रव नौका जैसी है । (चतुष्पदा-जानवरो के लिये जिस प्रकार विश्रामस्थल गोष्ठ होता है उसी प्रकार यह भगवती अहिंसा भी सर्वप्राणियों के लिये सर्वोत्तम विश्रामस्थल है । (दुहद्वियाणं च ओसहिबलं) रोगग्रस्त व्यक्तियों को जिस प्रकार ओषधि का सहारा होता है उसी प्रकार कर्मरोगग्रस्त भव्य जीवों के

સ્યાઓની પ્રાણરક્ષા માટે પાણી સાધનરૂપ બને છે, એ જ પ્રમાણે આ અહિંસા પણ પ્રાણીઓના પ્રાણ બચાવવાનું એક સાધન છે. “સુદિયાણં પિવ અસર્ણ” “અન્ન જ પ્રાણ છે” તે કથન પ્રમાણે જેમ ક્ષુધાર્થી પીડાતા પ્રાણીઓ માટે ભોજન જ એક માત્ર આધાર હોય છે એ જ પ્રમાણે આ અહિંસા પણ જીવોનું રક્ષણ કરવાનું એક સર્વોત્તમ સાધન છે. “સમુદ્દમઙ્ગેવ પોય વહ્ણં” સમુદ્રની વચ્ચે જેમ નૌકા પ્રાણીઓનું રક્ષણ કરે છે તેમ સંસાર સાગરમાં ડૂબેલા પ્રાણીઓની રક્ષા કરવાને માટે આ અહિંસા જ મનજૂત નૌકા જેવી છે. “ચતુષ્પયાણં ચ આસમપયં” ચતુષ્પદ-જાનવરોને માટે જેમ ગોષ્ઠ (વાઠા) વિશ્રામસ્થાન હોય છે એ જ પ્રમાણે આ ભગવતી અહિંસા પણ સમસ્ત પ્રાણીઓને માટે સર્વોત્તમ વિશ્રામસ્થાન છે. “દુહદ્વિયાણં ચ ઓસહિ બલં” રોગીને જેમ ઔષધિનો સહારો હોય છે તેમ કર્મરોગગ્રસ્ત ભવ્ય જીવોને

विश्रामस्थानम् । तथा—‘दुहद्विपाणं च ओसदिवलं’ दुःखस्थितानां च ओषधि-
बलम्-रोगग्रस्तानां प्राणिनां कृते धर्थापधम् ॥ १ ॥
धम्, तथा—‘अटवीमज्जे च सत्यगमणं’ अटवीमध्ये इव सार्थगमनम्-यथा—अट-
वीमध्ये सार्थेन सह गमनं सुखकरं भवति, तथैव मोक्षमार्गप्रस्थितानामहिंसा-क्रिम-
धिकम् ? ‘एत्तो’ इतः-एभ्यः पूर्वोक्तेभ्योऽपि अहिंसा ‘विसिद्धतरिया’ विशिष्ट-
तरिकाविशिष्टतरा । ‘जासा’ वा साप्रहिंसा ‘पुढवी’-जल-अगणि-मारुत-वगस्सइ-
बीय-हरिय-जलवर-थलवर-खहयर-तस-थावर-सव्वभूय-खेमकरी’ पृथिवी—
जलाग्नि-मारुत-वनस्पति-बीज-हरित-जलवर-स्थलवर-खेवर-वस-स्थारसरसवभू-
तक्षेमकरी । पृथिव्यादिपट्कायजीवानां कल्याणकारी वरीरत्तिं दयामगवती ॥ सु-४॥

अहिंसा ही एक परम औपधीरूप है। (अडबोमज्जे वसत्थममणं) जंगल के बीच में जिस प्रकार सार्थ-समुदाय-के साथ चलना सुखप्रद होता है उसी प्रकार मोक्षमार्ग में प्रस्थित हुए मनुष्य को यह अहिंसा है अर्थात्-सार्थ का काम देती है। और अधिक क्या कहें- (एत्तो) इस पूर्वोक्त उपमानों से भी (विसिद्धतरिया) अहिंसा विशिष्टतर है। क्यों की (जा सा अहिंसा) यह जो अहिंसा है वह (पुढवी जल-अगणि-मारुय-वणस्सइ-बीय-हरिय-जलचर-थलचर-खहयर तस-थावर सव्वभूयखेमकरी) पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, धीज, हरित, जलचर, थलचर, खेचर, प्रस और स्थावर इन सब भूतों की-पृथिव्यादि छह काय के जीवों की-कल्याणकरी-रक्षा करने वाली है।

भावार्थ—इस अहिंसा भगवती के समक्ष संसार के सभी विशिष्ट जड़ पदार्थ तुच्छ हैं। क्योंकि उनसे जीवों की यथार्थरूप में रक्षा नहीं

સાટે અહિંસા જ એક મોટું ઔપચર્ય છે. “અહીંમજ્જે વસત્થ ગમણ” જેમ જગદની વચ્ચે આર્થ-સગુણની સાથે જવાનું ગુણકારી હોય છે તે જ પ્રમાણે મોક્ષ માર્ગે પ્રયાણ કરતા મનુષ્યોને સાટે અહિંસા ચાર્યની ગરજ સારે છે. વધારે શું કહું! “સ્તો” પૂર્વ કથિત ઉપમાનો કરતાં પણ ‘વિસિદ્ધતરિયા’ અહિંસા અધિકતર છે કારણ કે “જા સા અહિંસા” આ જે અહિંસા છે તે “પુહવીજલઅગ્નિ-માઠ્ય-વણસ્વહ-વીય-હરિય-જલ્લયર-સ્વહયર-તસ-ધાવર સન્નભૂય-સેમકરી” પૃથિવી, જલ, અગ્નિ, વાયુ વનસ્પતિ, ખીજ, હરિત, જલ્લયર, યલ્લયર, ખયર, ત્રસ, અને સ્થાવર તે બધા ભૂતોની પૃથિવ્યાદિ છ કાયનાં જીવોની કલ્યાણકારી-રક્ષા કરનારી છે.

ભાવાર્થ—આ ભગવતી અહિંસાની આગળ સંસારના સઘળા વિશિષ્ટ જડ
પદાર્થો તથા છે દારણ કે તેમનાથી યથાર્થ રીતે ઇચ્છાની રક્ષા થતી નથી જે

सुवर्णिनी टीका अ० १सू० ४ अहिंसाधारकपुरुषस्वरूपनिरूपणम्

५७३

अथ ये महापुरुषैरियमहिंसोपलब्ध्या सेविता च तानाह— ' एसा भगवई ' इत्यादि—

मूलम्—एसा भगवई अहिंसा जा सा अपरिमिय नाण दंसणधरोहिं सीलवुण-विणय-तव-संजम नायगेहिं तित्थक-रेहिं सब्वजगजीववच्छलेहिं तिलोगमहिण्हिं जिणचंदेहिं सुट्ठु दिट्ठा, ओहि जिणेहिं विण्णाया, उज्जुमईहिं विदिट्ठा विउलमईहिं विदिता, पुव्वधरोहिं अधीया, वेउव्वीहिं पइ-ण्णा, आभिणिबोहियनाणीहिं सुयनार्णहिं मणपज्जवनाणी-हिं केवलणाणीहिं आमोसहिपत्तेहिं खेलोसहिपत्तेहिं विण्णो-सहिपत्तेहिं जल्लोसहिपत्तेहिं सब्बोसहिपत्तेहिं वीयबुद्धिण्हिं कोट्टबुद्धीहिं पथाणुसारीहिं संभिण्णसोएहिं सुयधरेहिं मण-बलिण्हिं वयबलिण्हिं कायबलिण्हिं नाणबलिण्हिं दंसण-बलिण्हिं चरित्तबलिण्हिं खीरासवेहिं महुआसवेहिं सण्णि-यासवेहिं अखीण महाणसिण्हिं चारणेहिं विज्जाहरेहिं च-उत्थभत्तिण्हिं छट्ठभत्तिण्हिं दसमभत्तिण्हिं एवं दुवालस-चउदससोलस-अद्धमास-मास-दोमास तिमास-चउमास-पंचमास-छम्मासभत्तिण्हिं उक्खित्तचरण्हिं एवं निक्खित्त-चरण्हिं अंतचरण्हिं पंतचरण्हिं लूहचरण्हिं समुदाणि-

होनी है। यदि यथार्थरूप में जीवों की रक्षा करने वाली-अभयप्रदान करने वाली यदि कोई सर्वोत्तम वस्तु है तो वह एक अहिंसा ही है ॥सू० ३॥

अथ सूत्रकार जिन महा पुरुषों ने इस भगवती अहिंसा की प्राप्ति

यथार्थ रीति छेवोनी रक्षा करनारी-अभयप्रदान करनारी केउं यणु सर्वोत्तम वस्तु छेय तो ते जेक मात्र अहिंसा ज छे. ॥ सू-३ ॥

इये सूत्रकार जे महापुरुषोजे आ भगवती अहिंसानी प्राप्ति तथा सेवा

ચરણ્હિં અણગિલાઇણ્હિં મોણચરણ્હિં સંસદ્ઠકપ્પિણ્હિં
 તજ્ઞાયસંસદ્ઠકપ્પિણ્હિં ઉવનિહિણ્હિં સુદ્ધેસણિણ્હિં સંસ્વાદ-
 ત્તિણ્હિં દિટ્ઠલાભિણ્હિં અદિટ્ઠલાભિણ્હિં આયંબિલિણ્હિં
 પુટ્ઠલાભિણ્હિં આયંબિલિણ્હિં પુરિમદ્વિણ્હિં એકાસણિણ્હિં
 નિઘ્વિણ્હિં ભિન્નપિંડવાઇણ્હિં પરિમિયપિંડવાઇણ્હિં અંતહા-
 રેહિં પંતાહારેહિં અરસાહારેહિં વિરસાહારેહિં લૂહાહારેહિં તુચ્છા-
 હારેહિં અંતજીવિહિં પંતજીવિણ્હિં લૂહજીવિહિં ઉવસંતજી-
 વિણ્હિં પસંતજીવિહિં વિવિત્તજીવિહિં અસ્વીરમદુસપ્પિણ્હિં
 અમજ્ઞમસાસિણ્હિં પડિમદ્વાઇણ્હિં ઠાણુકાઢિણ્હિં વોરાસણિ-
 ણ્હિં ણેસજ્ઞિણ્હિં ડંડાયઇણ્હિં લગંડસાઈહિં એગપસિણ્હિં
 આયાવણ્હિં અવાડણ્હિં અણિદુયણ્હિં અકંડુયણ્હિં ધુય-
 કેસમંસુલોમનહેહિં સઠ્ઠગાયપડિકમ્મવિપ્પમુક્કેહિં સમણુ-
 ચિન્ના, સુયધરવિદિયત્થકાયવુદ્ધિણો ધીરમદ્વુદ્ધિણો ય જે
 તે આસીવિસુગ્ગતેયકપ્પા નિચ્છયવવસાય પજ્જત્તકયમદ્વય-
 ણિચ્ચં સઙ્ગાયજ્ઞાણા અણુવદ્ધધમ્મજ્ઞાણપંચમહવ્વયષ-
 રિત્તિજુત્તા, સમિયા સમિર્ડસુ, સમિયપાવા, છવિહ જગવચ્છલા,
 નિચ્ચમપ્પમત્તા, એણ્હિં અન્નેહિં ય જા સા અણુપાલિયા
 ભગવર્દ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—‘ એસા ભગવર્દ ’ इत्यादि—

‘ એસા ભગવર્દ અહિંસા ’ એવા ભગવતી અહિંસા=એવા પૂર્વોક્તા ભગવતી=
 પૂજનીયા સર્વજ્ઞપરુપિતાઽહિંસૈવ સમ્યગહિંસાઽસ્તિ, ન તુ સર્વજ્ઞેતરકલ્પિતા । ‘જા’
 કી હૈ, તથા સેવા કી હૈ ઉન મહાપુરુષોં કો પ્રકટ કરતે હૈ—‘ એસા ભગ-
 વર્દ ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(એસા ભગવર્દ અહિંસા) યદ્ પૂર્વોક્ત ભગવતિ અહિંસા
 સર્વજ્ઞ દ્વારા પ્રરૂપિત અહિંસા—હી સચી અહિંસાહૈ, સર્વજ્ઞ સે ભિન્ન હિતર

કરી છે તે મહાપુરુષોનાં નામ પ્રગટ કરે છે—“ એસા ભગવર્દ ” इत्यादि

ટીકાર્થ—“એસા ભગવર્દ અહિંસા” આ પૂર્વોક્ત ભગવતી અહિંસા—સર્વજ્ઞ દ્વારા
 પ્રરૂપિત અહિંસા જ સાચી અહિંસા છે, સર્વજ્ઞ સિવાયના બીજા છદ્મસ્થ

सुदर्शिनीटीका अ० १ सू० ४ अहिंसाधारकपुण्यस्वरूपनिरूपणम्

५७५

या=जिनसिद्धान्तोक्ता अहिंसा 'सा' सा 'अपरिमियनाणदंसणधरेहि' अपरिमित-
तद्दानदर्शनधारकैः 'शीलगुणविणयतवसंजमनायगेहि' शीलगुणविनयतपः
संयमनायकैः, शीलं=चित्तसमाधानं तदेवगुणस्तं, तथा विनयतपः संयमांश्च स्वस्य
परेषां च नयन्ति=प्रापयन्ति ये ते तैस्तथोक्तैः 'तित्थंकरेहि' तीर्थङ्करैः=
चतुर्विधसंयमनायकैः 'सन्वजगज्जीववच्छलेहि' सर्वजगज्जीववत्सलैः=सकलप्राणि-
कारुण्योपेतैः=योगक्षेमकारिस्त्वात्, 'तिलोगमहिणहि' त्रिलोकमहितैः=त्रिलो-
कपूजितैः=तीर्थकरनामकर्मणो जगत्पूजनीयत्वात्, 'जिणचंदेहि' जिनचंद्रैः=
जिनानां सामान्यजिनानां मध्ये चन्द्रा इव तैः, कारुणिकनिशंकुरैरित्यर्थः, 'सुट्ठु-
दिद्वा' सुट्ठु दृष्टा=केवलालोकैः कारणतः स्वरूपतः कार्यतश्च सम्यग विनिश्चिता,
छद्मस्थ प्राणियों द्वारा कथित अहिंसा सच्ची अहिंसा नहीं है- इस तरह
(जा ; जिन सिद्धान्तोक्तजो अहिंसा है (सा) वह (अपरिमियनाण-
दंसणधरेहि) अपरिमित-अनंत-ज्ञान और दर्शन के धारण करने
वाले (शीलगुणविणयतवसंजमनायगेहि) शील रूपगुण विनय एवं
तप, इनका स्वयं आचरण करने वाले और परको आचरण कराने वाले
(तित्थंकरेहि) तीर्थकर-चतुर्विध संघ का नेतृत्व करनेवाले (सन्वजगज्जी-
ववच्छलेहि) समस्त जगत के जीवों के प्रतिवात्सल्यभाव रखने वाले
और (तिलोगमहिणहि) तीर्थकर नामकर्म जगत्पूज्य होने के कारण
तीनों लोकों द्वारा पूजे जाने वाले, ऐसे (जिणचंदेहि) जिन चंद्रोने
सामान्य जिनों की बीच में चंद्रमा के तुल्य तीर्थकर महाप्रभुओं ने यह
अहिंसा भगवनी को पूर्वोक्त प्रकार से (सुट्ठुदिद्वा) अपने केवला-
लोक से कारण स्वरूप को, एवं कार्य की अपेक्षा को लेकर अच्छी

शुद्धि द्वारा उचित अहिंसा साथी अहिंसा नहीं, आ रीते " जा " जिन-
सिद्धान्तोक्त जो अहिंसा छे " सा " ते " अपरिमियनाणदंसणधरेहि " अप-
रिमित-अनंत-ज्ञान अने दर्शनना धारक " शीलगुणविणयतवसंजमनायगेहि " शील-
गुणगुण, विनय अने तपसुं बने आचरण करनारा अने भीजने तेनुं
आचरण करानारा " तित्थंकरेहि " तीर्थंकर-चतुर्विध संघतुं नेतृत्व करनारा
" सन्वजगज्जीववच्छलेहि " जगतना समस्त शुद्धि अने वात्सल्यभाव राख-
नारा अने " तिलोगमहिणहि " तीर्थंकर नामकर्म जगत्पूज्य होवाने कारणे
त्रेणुं लोक द्वारा पूजानारा, अथ " जिणचंदेहि " जिनचंद्रोने-सामान्य जिनेनी
अंदर अंदरमा समान तीर्थंकर महाप्रभुओंअने आ भगवती अहिंसाने पूर्वोक्त
रीते " सुट्ठु दिद्वा " पोटाना केवलालोकशी धारण स्वइपे, अने कार्यनी अपे-
क्षाअने सारी रीते देणी छे-निश्चित करी छे, तेमणुं तेना आद्य अने अव्य-

તત્ર ગુરુપદેશઃ, કર્મશયોપશમાદિ વાદ્યાભ્યન્તરં કારણમસ્યાઃ પ્રમત્તઓગાત્રાણવ્યપ-
રોપગલક્ષણહિંસાપતિપક્ષરૂપં સ્વરૂપમ્, સ્વર્ગોપવર્ગપ્રાપ્તિલક્ષણં ચ કાર્યમ્, ઇતિ ।
તથા—‘ઓહિજિગેહિં’ અવધિજિનૈઃ=વિશિષ્ટાવધિજ્ઞાનિભિઃ ‘વિજ્ઞાયા’ વિજ્ઞાતા=
ભેદપ્રભેદૈર્વિદિતા, તથા ‘ઉજ્જુમઈહિં’ ઋજુમતિભિરપિ=યતનં મતિઃ-સંવેદન-
મિત્યર્થઃ, ઋજ્વીસામાન્યગ્રાહિણી મતિર્બુદ્ધિર્યેષાં તે ઋજુમતયઃ=અર્ધતૃતીયાઙ્ગુલ-
ન્યૂનમનુષ્યક્ષેત્રવાર્તિ સંજ્ઞિ પદ્ધેન્દ્રિયમનોદ્રવ્યપ્રત્યક્ષીકરણદેતુમનઃપર્યાયજ્ઞાનભેદ-
વન્તસ્તૈરપિ, ‘દિદ્ધા’ દૃષ્ટા, તથા—‘વિપુલમઈહિં’ વિપુલમતિભિઃ=પર્યાયજ્ઞાતોપેતા
વિન્તનીય ઘટાદિવસ્તુવિશેષગ્રાહિણી મતિર્બુદ્ધિર્યેષાં તે વિપુલમતયઃ=વિદિતા=

તરહ દેખી હૈ—નેશ્ચિત્ત કી હૈ । उन्हों ने इसके बाह्य और आभ्यन्तर
कारण गुरुपदेश, कर्मशयोपशम आदि कहे हैं । इसका स्वरूप-
प्रमत्तयोग से जो प्राणव्यपरोपशरूप हिंसा का स्वरूप है उससे विपरीत
स्वरूप प्रकट किया है । तथा स्वर्ग और अवर्ग की प्राप्ति होना इसका
कार्य कहा है । (ओहिजिगेहिं विज्जाया) विशिष्ट अवधि ज्ञानियों
द्वारा यह अहिंसा भगवती भेद प्रभेदों सहित विदित हुई है । तथा
(उज्जुमईहिं विदिद्धा) ऋजुमति भनः पर्याय ज्ञानियों द्वारा यह प्रत्यक्ष
रूप में देखी गई है । जो विषय को सामान्यरूप से जानता है वह
ऋजुमतिमनः पर्याय है । यहां पर ऐसी आशंका नहीं करना चाहिये कि
“ जब ऋजुमति सामान्यग्राही है तब तो वह दर्शन ही कृत्रिम-उसे ज्ञान
क्यों कहा क्यों कि यह सामान्यग्राही है ” इसका तात्पर्य इतना ही है कि
वह विशेषोको जानता है पर विपुलमति जितने विशेषों को नहीं जानता ।
अर्धतृतीयअङ्गुल न्यून-अर्थात् ढाई अंगुल कम मनुष्य क्षेत्र में रहे

ન્તર કારણ ગુરુપદેશ, કર્મશયોપશમ આદિ ખતાવેલ છે. તેનું સ્વરૂપ-પ્રમત્ત-
યોગથી જે પ્રાણ હરનાર હિંસાનું સ્વરૂપ છે તેના કરતાં ઉલટું સ્વરૂપ પ્રગટ
કરેલ છે. તથા સ્વર્ગ અને અવવર્ગની પ્રાપ્તિ થવી તે તેનું કાર્ય કહેલ છે.
“ ઓહિજિગેહિં વિજ્જાયા ” વિશિષ્ટ અવધિજ્ઞાનીઓ દ્વારા તે ભગવતી
અહિંસા ભેદ, પ્રભેદો સહિત સમજવામાં આવેલ છે. તથા “ ઉજ્જુમઈહિં વિ-
દિદ્ધા ” ઋજુમતિ મનઃ પર્યાયજ્ઞાનીઓ દ્વારા તે પ્રત્યક્ષ રૂપે જોવામાં આવેલ
છે. જે વિષયને સામાન્ય રીતે જાણે છે તે ઋજુમતિ મનઃ પર્યાય છે. અહીં
એવી શંકા ન કરવી જોઈ એ કે “ જે ઋજુમતિ સામાન્યગ્રાહી છે તે તે
“ દર્શન ” જ ગણાય. તેને જ્ઞાન કેમ કહ્યું ? કારણ કે તે સામાન્યગ્રાહી છે ”
તેના ભાવાર્થ એટલો જ છે કે તે વિશેષોને જાણે છે પણ વિપુલમતિ જેટલા
વિશેષોને જાણતો નથી. “ અર્ધતૃતીયઅઙ્ગુલન્યૂન ” એટલે કે અહીં આંગળ

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૫ સૂ૦ ૪ અહિંસાપાત્રમહાપુરુષનિરૂપણમ્

૫૭૭

વિશેષતો દૃષ્ટા. એતે ઉભયેઽપિ મનઃ પર્યયજ્ઞાનિનઃ । તથા — ‘પુન્નવધરેહિં’
પૂર્વધરે=ઉસાદાગ્રાયણીયચીર્વાદિ ચતુર્દશ પૂર્વધરૈઃ । અધીયાઃ અધીતા=શ્રુતનિવદ્ધા
પઠિતા, તથા ‘વેઽઽવીહિં’ વૈક્રિયલઙ્ઘિધારિભિઃ, ‘વેઽઽણ્ણા’ પ્રતીર્ણા=
નિસ્તીર્ણા-આજન્મપરિપાલિતેત્યર્થઃ, તથા—‘આભિણિવોહિયનાળીહિં’ આભિ-
નિવોધિકજ્ઞાનિભિઃ, અભિ=અર્થાભિમુખઃ-અવિપર્યયરૂપન્વાન્, નિ=નિયતોઽસંશય-
રૂપતાન્, વોયઃ=મનેદનમ્=અભિનિવોધઃ, મ એવ આભિનિવોધિકમ્, જ્ઞાયતેઽ-
નેદેતિ જ્ઞાનન્, આભિનિવોધિકં ચ તઽજ્ઞાનમ્-આભિનિવોધિકજ્ઞાનમ્-ઇન્દ્રિય નો-
ઇન્દ્રિય નિમિત્તો વોધ હન્યર્થઃ, સોઽસ્તિ યેવાં તૈસ્તથોક્તૈઃ, મતિજ્ઞાનવદ્ધિરિત્યર્થઃ,

હુપસંજી પંચેન્દ્રિય જીવોં કે મનોદ્રવ્યોં કો મહઃકલુમતિ સાક્ષાત્ જાનતા
હૈ । મહઃજ્ઞાન કા મનઃપર્યયઽક ભેદ હૈ । (વિઝલમહિં વિદિયા) મનઃ
પર્યય જ્ઞાનકા દુસરા ભેદવિપુલમતિ હૈ । હસ વિપુલમતિ મનઃ પર્ય-
યજ્ઞાનવાલા પદાર્થોં કો કલુમતિ કો અપેક્ષા વિશુદ્ધતર આદિ
રૂપ સે જાનતા હૈ । વયોં કિ મહઃમતિ પર્યાપ્રજ્ઞાતોપેત્ હોતી હૈ, તથા
ચિન્તનીય ઘટાદિ વસ્તુઓં મેં સૂક્ષ્મતર આદિ રૂપ સે વર્તમાનધર્મોં કો
જાનતો હૈ । ઇત્તે પેસે વિપુલમતિ મનઃપર્યય જ્ઞાનિયોં દ્વારા મહઃભગવતી
અહિંસા કલુમતિ કો અપેક્ષા અધિક ઓર વિશેષરૂપ સે વિદિત-જ્ઞાન-
દૃષ્ટ હૈ હૈ । તથા (પુન્નવધરેહિં અધીયા) ઉત્પદપૂર્વ, અગ્રાયણીપૂર્વ,
વીર્યપ્રવાદ આદિ ચતુર્દશપૂર્વ કે ધારી મહાત્માઓં ને-શ્રુતજ્ઞાનિયોં ને-
શ્રુત મેં નિવદ્ધ હૈ હસ અહિંસા ભગવતી કો પદા હૈ (વેઽઽવીહિ-
વેઽઽણ્ણા) વૈક્રિયલઙ્ઘિધારી મુનિજનોં ને હસે આજન્મ પાલા હૈ ।
(આભિણિવોહિયનાળીહિં, મુગનાળીહિં, મળાજ્ઞવનાળીહિં કેવલનાળીહિં)

એ.છા મનુષ્યક્ષેત્રમાં રહેલ સંજી પંચેન્દ્રિય છત્રોનાં મનોદ્રવ્યોને તે કલુમતિ
સાક્ષાત જાણે છે. મનઃપર્યયજ્ઞાનનો આ એક ભેદ છે. “ વિઝલમહિં વિદિયા”
મનઃપર્યય જ્ઞાનનો બીજો ભેદ વિપુલમતિ છે આ વિપુલમતિ મનઃપર્યય
જ્ઞાનવાળો પદાર્થોને કલુમતિના કરતા વધારે વિશુદ્ધ રૂપે જાણે છે. કારણ કે
મતિપર્યય જ્ઞાતોપેત હોય છે, તથા સૂક્ષ્મનીય ઘટાદિ વસ્તુઓમાં સૂક્ષ્મતર આદિ
રૂપે વર્તમાન ધર્મોને જાણે છે. એવા તે વિપુલમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાનીઓ
દ્વારા આ ભગવતી અહિંસા કલુમતિના કરતાં અધિક અને વિશેષ રૂપે વિદિત
-જ્ઞાત-દૃષ્ટ થઈ છે. તથા “ પુન્નવધરેહિં અધીયા ” ઉત્પદપૂર્વ; અગ્રાયણીપૂર્વ,
વીર્યપ્રવાદ આદિ ચૌદ પૂર્વના ધારક મહાત્માઓએ-શ્રુતજ્ઞાનીઓએ-શ્રુતમાં
શ્રુતાર્થેલ આ ભગવતી અહિંસાનું અધ્યયન કર્યું છે, “ વેઽઽવીહિં વેઽઽણ્ણા ”
વૈક્રિયલઙ્ઘિધારી મુનિજનોએ તેનું આજન્મ પાલન કર્યું છે. ‘ આભિણિવો-
હિયનાળીહિં મુગનાળીહિં, મળાજ્ઞવનાળીહિં કેવલનાળીહિં ’ ઇન્દ્રિય અને નોઽ-

તથા-‘ સુચનાણીર્હિ ’ શ્રુતતાનિભિઃ=શ્રુતમ્-આચારાદ્વાર્દિ, તદ્દેદિમિરિત્યર્થઃ, તથા-‘ મનપર્યવજ્ઞનાણીર્હિ ’ મનઃપર્યવજ્ઞાનિભિઃ-મનસા મન્યમાનમદોદ્વચાણાં પર્યવઃ=પરિચ્છેદો મનઃ-પર્યવઃ, સ એવ જ્ઞાનમ્. મનઃપર્યવજ્ઞાનમ્, તદસ્તિ યેષાં તે તથોક્તાસ્તૈઃ, તથા-‘ કેવલનાણીર્હિ ’ કેવલજ્ઞાનિભિઃ=કેવલમેકમાહાયમનન્તં પરિપૂર્ણં યદ્ જ્ઞાનં તત્કેવલજ્ઞાનં, તદ્સ્યાસ્તિ યેષાં તે તથોક્તાઃ, તથા-‘ આમોસ-હિપત્તેર્હિ ’ આમક્ષોપધિપાતૈઃ,-આપર્ણઃ=સરીસંસ્પર્શઃ, સ ઔરધિઃ-સર્વરોગાપ-હારિત્યાન્-તપશ્ચાણપ્રમાણો લઘ્વિવિશેષતાં પ્રાપ્તા યે તે તથોક્તાસ્તૈઃ, તથા-‘ શ્લેષ્મોપધિપાતૈઃ ’ શ્લેષ્મા એવ ઓપધિર્ભવતિ યવ લઘ્વો સા

इन्द्रिय और नो इन्द्रिय इनसे उत्पन्न जो ज्ञान होता है उसका नाम आभिनिबोधक ज्ञान है। ‘ अमि ’ और ‘ जि ’ ये दो उपसर्ग यह प्रकट करते हैं कि यह ज्ञान सन्मुख रखे हुए नियमित क्षेत्रवर्ती पदार्थ को ही जान सकता है। इस आभिनिबोधिक ज्ञानियों द्वारा मतिज्ञान-धारियों द्वारा, तथा आचारांग आदि श्रुत के जानने वालों द्वारा, तथा मनःपर्यवज्ज्ञानियों द्वारा,-मनवाले-संज्ञि प्राणी-किसी भी वस्तु का चिन्तन मनसे करते हैं। चिन्तन के समय चिन्तनीय वस्तु के भेद के अनुसार चिन्तनकार्य में प्रवृत्तमन भिन्न २ आकृतियों को धारण करता रहता है वे आकृतियाँ ही मन की पर्याये हैं, और उन मानसिक आकृतियों को साक्षात् जानने वाला ज्ञान मनःपर्यव ज्ञान है, इस मनःपर्यव ज्ञान को धारण करने वाले मुनिजनों द्वारा, तथा केवल ज्ञानियों द्वारा-असहाय, एक, अनन्त, परिपूर्ण यह केवल शब्द का अर्थ है, ऐसा जो ज्ञान होता है वह केवल ज्ञान है, यह ज्ञान जिस आत्मा में होता है उसका नाम केवलज्ञानि है ऐसे केवल ज्ञानि आत्माओं द्वारा

ન્દ્રિય વડે ઉત્પન્ન થયેલ જે જ્ઞાન છે તેનું નામ આભિનિબોધક જ્ઞાન છે “અમિ” અને “ જિ ” એ બંને ઉપસર્ગો જે પ્રગટ કરે છે કે તે જ્ઞાન સન્મુખ રાખેલ નિયમિત ક્ષેત્રવર્તી પદાર્થને જ જાણી શકે છે. તે આભિનિબોધિક જ્ઞાનીઓ દ્વારા, મતિજ્ઞાનધારીઓ દ્વારા. તથા આચારાંગ આદિ શ્રુતેના જાણકાર દ્વારા તથા મનઃપર્યવ જ્ઞાનીઓ દ્વારા-મનવાળા-સંજ્ઞી પ્રાણી-દેહી પણ વસ્તુનું મન વડે ચિન્તન કરે છે. ચિન્તનને વખતે જેનું ચિન્તન કરવામાં આવે છે તે વસ્તુના કોઈ પ્રમાણે ચિન્તનકાર્યમાં પ્રવૃત્ત થયેલ મન બુદ્ધી બુદ્ધી આકૃતિયોને ધારણ કરતું શકે છે; તે આકૃતિયો જ મનની પર્યાયો છે. અને તે માનસિક આકૃતિયોને પ્રત્યક્ષ જાણનાર જ્ઞાન મનઃપર્યવ જ્ઞાન છે, તે મનઃપર્યવ જ્ઞાનને ધારણ કરનાર મુનિઓ દ્વારા, તથા કેવલજ્ઞાનીઓ દ્વારા-અસહાય, એક, અનન્ત, પરિપૂર્ણ તે “ કેવલ ” શબ્દના અર્થો છે, એવું જે જ્ઞાન છે તેને કેવલ-

વર્ણિની ટીકા મ૦ ૧ સ્. ૪ અર્ધિસાપ્રાસમહાપુરુષનિરૂપણમ્

૫૭૯

‘લેખ્મૌષધિસ્તાં પ્રાપ્તા અધિગતા યે તે તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા ‘જલ્હોસહિપત્તેહિ’ જલ્હોષધિપ્રાપ્તૈઃ, જલ્હઃ= શરીરસમુદ્ભવશ્વમઃ, સર્વોષધિસ્તાં પ્રાપ્તા યે તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા ‘વિપ્પોસહિપત્તેહિ’ વિપ્પોષધિપ્રાપ્તૈઃ, વિપ્પુઃ=દુઃસ્વખિન્દવઃ, ત એવ ઓષધિર્વિપ્પોષધિસ્તાં પ્રાપ્તાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા-‘ સર્વોસહિપત્તેહિ’ સર્વમ્=કર્ણવદ-નનાસિકાનયનજિહ્વાપુદ્ગલ મલં તદેવ ઓષધિસ્તામ્પ્રાપ્તાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા-‘વીજ-બુદ્ધિર્દિ’ વીજબુદ્ધિકઃ, વીજમિત્ર વિવિધાર્થાધિગમરૂપમહાતરુજનનાદ્ બુદ્ધિર્યેષાં તે વીજબુદ્ધયસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, અર્થ માત્રઃ-ઉત્પાદવ્યયગ્રોવ્યયુક્તં સદિત્યાદિવદ્યપ્રધાનં પદમર્થપદં, તેનૈકેનાપિ વીજમૂતેનાધિગતેન યેઽન્યં પ્રભૂતમર્થ્યમનુસરન્તિ તે વીજબુદ્ધયઃ ઉચ્યન્તે, તથા ‘કોઠ્ઠબુદ્ધિર્દિ’ કોઠ્ઠબુદ્ધિકૈઃ-કોઠ્ઠપ્રભિન્નધાન્યમિત્ર યેષાં સૂત્રાર્થો મુચિરમપિ તિષ્ઠતસ્તે કોઠ્ઠ બુદ્ધયસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, ‘પયાણુસારીર્દિ’ પદાનુસારિભિઃ=પદેન સૂત્રાવયવેન એકેનોપલબ્ધેન તદનુકૂલાને પદશતાન્યનુસર-ન્તિ યે તે પદાનુસારિણસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા ‘સંભિન્નસોર્દિ’ સંભિન્નશ્રોતોભિઃ-સંભિન્નાનિ સમાનાર્થગ્રાહીણિ શ્રોતાંસિ=ઇન્દ્રિયાણિ યેષાં તે સંભિન્નશ્રોતસસ્તૈસ્ત-થોક્તૈઃ, ‘યે એકતરેણાપીન્દ્રિયેષ સર્વેન્દ્રિયગમ્યાન્ વિષયાન્ અવગચ્છન્તિ તે સંભિ-

(સમણુચિન્ના) સેવિત હુઈ હૈ, એસા સંબન્ધ આગે સે જોડ લેના ચાહિયે । તથા (આમોસહિપત્તેહિ, સેલોસહિપત્તેહિ, જલ્હોસહિપત્તેહિ, વિપ્પોસહિપત્તેહિ, સર્વોસહિપત્તેહિ, વીજબુદ્ધિર્દિ, કોઠ્ઠબુદ્ધિર્દિ, પયાણુસારીર્દિ, સંભિન્નસોર્દિ) આમશૌષધિલલ્લિખિ જિન્હે પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ, ‘લેખ્મૌષધિ લલ્લિખિ જિન્હે પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ, જલ્હોષધિ લલ્લિખિ જિન્હે પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ, વિપ્પોષધિ લલ્લિખિ જિન્હે પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ, સર્વોષધિ લલ્લિખિ જિન્હે પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ, તથા વીજબુદ્ધિ લલ્લિખિ-વીજ સમાન બુદ્ધિ વાલી લલ્લિખિ જિન્હે પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ, કોઠ્ઠ બુદ્ધિલલ્લિખિ જિન્હે પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ, પદાનુસારી લલ્લિખિ જિન્હે પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ, સંભિન્ન-શ્રોતસ લલ્લિખિ જિન્હે પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ, અનેક દ્વારા સેવિત હુઈ હૈ, તથા

જ્ઞાની કહે છે. એવાં કેવળજ્ઞાની આત્માઓ દ્વારા “ સમણુચિન્ના ” સેવાયેલી છે એવા સંબન્ધ આગળના વાક્ય સાથે બેઠી લેવાનો છે. તથા “ આમોસહિ-પત્તેહિ, સેલોસહિપત્તેહિ, જલ્હોસહિપત્તેહિ, વિપ્પોસહિપત્તેહિ, સર્વોસહિપત્તેહિ, વીજ-બુદ્ધિર્દિ, કોઠ્ઠબુદ્ધિર્દિ, પયાણુસારીર્દિ, સંભિન્નસોર્દિ ” આમશૌષધિલલ્લિખિ જેમને પ્રાપ્ત થઈ ગઈ છે. જલ્હોષધિલલ્લિખિ જેમને પ્રાપ્ત થઈ ગઈ છે, વિપ્પોષ-ધિલલ્લિખિ જેમને પ્રાપ્ત થઈ ગઈ છે, તથા વીજબુદ્ધિ લલ્લિખિ-વીજના સમાન બુદ્ધિવાળી લલ્લિખિ જેમને પ્રાપ્ત થઈ ગઈ છે. કોઠ્ઠબુદ્ધિ લલ્લિખિ જેમને પ્રાપ્ત થઈ ગઈ છે. પદાનુસારી લલ્લિખિ જેમને પ્રાપ્ત થઈ ગઈ છે, સંભિન્નશ્રોતસ લલ્લિખિ જેમને પ્રાપ્ત થઈ ચુકી છે, તેઓ વડે (અર્ધિસા સેવાયેલ છે. તથા

અયોતસ ઉચ્યન્તે, તથા- સુયધરેહિં શ્રુતધરૈઃ=આચારાઙ્ગાદિવ્યધારકૈઃ, તથા-
 'મળવલિર્ણિ' મનોવલિકૈઃ-દૃઢમનસકૈઃ નાનાવિધપરીપત્તોપસર્ગસંપાતેઽપિ યેષાં
 મનો ધર્માત્મિકશિક્ષમાત્રમપિ ન ચલતિ તૈરિત્યર્થઃ, 'વયવલિર્ણિ' વચોવલિકૈઃ=
 વાગ્મલ્યુક્તૈઃ દુર્બોદિસાર્થોપદાર્થનિરાકરણસમર્થવાગ્મીવલોષેતૈરિત્યર્થઃ, 'કાયવલિ-
 ણિર્ણિ' કાયવલિકૈઃ=પરીપત્તોપસર્ગસંપાતસમર્થકાયવલ્યુક્તૈરિત્યર્થઃ, 'નાળવલિર્ણિ'
 જ્ઞાનવલિકૈઃ=જ્ઞાનેન મત્યાદિના ચલિતસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ-દૃઢજ્ઞાનયુક્તૈરિત્યર્થઃ, 'દંસ-
 ણવલિર્ણિ' દર્શનવલિકૈઃ-દર્શન-નિ શક્ષિતાદિતત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપં, તેન ચલ્યન્તસ્તૈસ્ત-
 થોક્તૈઃ, 'ચરિત્તવલિર્ણિ' ચારિત્રવલિકૈઃ, ચારિત્રં=સ્તુકાયસંયમઃ, તદ્ભૂપં યદ્વ-
 લ્લમ્, તદ્વદ્ધિરિત્યર્થઃ, તથા 'સ્ત્રીરાસવેહિં' સ્ત્રીરાસૃચૈઃ=સત્તાસૃચલવિધધરૈઃ, યેષાં
 વચનમાકર્ષ્યમાનં મનઃ શરીરસુખોત્પાદનાય પ્રમથતિ તે સ્ત્રીરાસૃચા ઉચ્યન્તે, તથા
 'મહુઆસવેહિં' મધ્વાસૃચૈઃ=શર્કરાદ્યપેત્રયાપિ મધુરં દ્રવ્યં મધુ 'શદ્દ' इति भाषाप्रसिद्धं,
 તાદિવ વચનમ્ આસૃચન્તિ=ણિસ્સયન્તિ યે તે મધ્યાસૃચાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા 'સપ્પિ-
 આસવેહિં' સર્પિરાસૃચૈઃ=સર્પિઃ=અત્યન્તસુરભિયુક્તં સ્નેહયુક્તં ચ યુગ્મિભિઃ વચનમાસ-
 વન્તિ=નિસ્સારયન્તિ યે સર્પિરાસૃચાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા 'અક્ષીળમહાણસિર્ણિ' અ-
 ક્ષીળમહાનસિકૈઃ=મહાનસમ્=અન્નપાકસ્થાનં, તદાશ્રિતત્વાદન્નમપિ મહાનસમુચ્યતે
 અક્ષીળં મહાનસં યેષાં તે અક્ષીળમહાનસિકાસ્તૈન્તથોક્તૈઃ, યેષામસાધારણાન્તરાયક્ષયો-
 પશમાદલ્પમાત્રમપિ પાત્રયતિતમન્નં ગૌતમાદીનામિવ લક્ષસંલ્પકેભ્યોઽપિ દીયમાનં

(સુયધરેહિં) જો આચારાંગ આદિ શ્રુત કે ધારક હૈં, અનેક દ્વારા સેવિત
 હુઈ હૈં તથા (મળવલિર્ણિ, વયવલિર્ણિ, કાયવલિર્ણિ) જો મનબલ
 સે યુક્ત હૈં, વાગ્મલ સે યુક્ત હૈં, કાયબલ સે યુક્ત હૈં અનેક દ્વારા સેવિત
 હુઈ હૈં । તથા (નાળવલિર્ણિ, દંસણવલિર્ણિ ચરિત્તવલિર્ણિ) મત્યા-
 દિક જ્ઞાન સે જો ચલિષ્ઠ હૈં, દર્શનવલિક હૈં, ચારિત્રવલિક હૈં અનેક દ્વારા
 સેવિત હુઈ હૈં, તથા (સ્ત્રીરાસવેહિં, મહુઆસવેહિં, સપ્પિઆસવેહિં, અ-
 ક્ષીળમહાણસિર્ણિ) સ્ત્રીરાસૃચલવિધધારી હૈં, મધ્વાસૃચલવિધધારી હૈં
 અક્ષીળમહાનસ કદિધારી હૈં, અનેક દ્વારા સેવિત હુઈ હૈં, તથા (ચાર-

“સુયધરેહિં” આચારાંગ આદિ સૂત્રના જેઓ ધારક છે તેમના દ્વારા તે સેવા-
 થેલ છે, તથા “મળવલિર્ણિ, વયવલિર્ણિ, કાયવલિર્ણિ” જે મનોબળવાળા
 છે, વાગ્મળ વાળા છે, અને કાયગળવાળા છે તેમના દ્વારા તે સેવાથેલ છે, તથા
 “નાળવલિર્ણિ, દંસણવલિર્ણિ, ચરિત્તવલિર્ણિ” મત્યાદિક જ્ઞાન વડે જે અલિષ્ઠ
 છે, જે દર્શનબળયુક્ત તથા ચારિત્રબળયુક્ત છે તેમના વડે તે સેવાથેલ છે,
 તથા “સ્ત્રીરાસવેહિં, મહુઆસવેહિં, સપ્પિઆસવેહિં, અક્ષીળમહાણસિર્ણિ” સ્ત્રીરાસૃચ
 લવિધધારી, મધ્વાસૃચલવિધધારી, સર્પિરાસૃચલવિધધારી, અક્ષીળમહાનસકદિ-
 ધારી દ્વારા જે સેવાથેલ છે, તથા “ચારણેહિં વિજ્ઞાહરેહિં” ચરણકદિ ધારી

સુવર્ણીનીડીકા અ૦૫ સૂ. ૪ અહિંસાપ્રાપ્તમહાપુરુષનિરૂપણમ્

૫૮૧

સ્વયમેવાશુક્ત' ન ક્ષીયતે તે અક્ષીણમદાનસા ઉચ્યન્તે । તથા 'ચારણેહિ' ચારણૈઃ= ચરણ-ગમનં તદ્વિચયે તેષાં તે ચારણાઃ ચરણમિદ્વિચિષ્ટમાકાશગમનાગમન-ગૃહ્યતે, તે દ્વિવિધાઃ વિદ્યાચારણાઃ જહ્વાચારણાશ્ચ, તત્ર-વિદ્યાચલેન સમુપજાકાશ-ગમનાગમનલબ્ધિમન્તો વિદ્યાચારણાઃ । इयं लब्धिर्निरन्तरपष्टपष्टपश्चरण कर्तुर्जायते । તથા યે પુનઃપશ્ચારિત્રતયોવિશેષમભાવેણ જહ્વોપરિ હસ્તસ્થાપનમાત્રેણ ગગનગમ-નાગમનલબ્ધિસંપન્ના ભવન્તિ તે જહ્વાચારણા ઉચ્યન્તે । इयं लब्धिर्निरन्तराष्टमाष्ट-मतपश्चरणकर्तुर्जायते । તત્ર-વિદ્યાચારણા જમ્બૂદ્વીપાપેક્ષયાઽષ્ટમં નન્દીશ્વરનામ-દ્વીપં જહ્વાચારણાશ્ચ ત્રયોદશં રુચકવરદ્વીપં ગન્તું સમર્થાઃ । વિદ્યાચારણાઃપ્રથમો-ક્ષાતેન માનુષોત્તરં પર્વતં ગચ્છન્તિ, દ્વિતીયેનોત્પાતેન નન્દીશ્વરમ્, પ્રતિનિવર્તમાન એકેનોત્પાતેન સ્વસ્થાનમાગચ્છન્તિ । तथा-मेकं गच्छन्तः प्रथमेनोत्पातेन नन्दन-वनं गच्छन्ति, द्वितीयेनोत्पातेन पण्डकवनम्, ततः प्रतिनिवर्तमाना एकेनोत्पातेन स्वस्थानमागच्छन्ति । જહ્વાચારણા હિ એકેનોક્ષાતેન જમ્બૂદ્વીપાપેક્ષયા ત્રયોદશ-રુચકવરદ્વીપં ગચ્છન્તિ । પ્રતિનિવર્તમાના એકેનોત્પાદેન નન્દીશ્વરમાયાન્તિ દ્વિતી-યેન સ્વસ્થાનમ્ । यदि पुनर्मैरुशिखरं जिगमिषवस्तदा प्रथमेनोत्पातेन पण्डक-वनमधिरोहन्ति । પ્રતિનિવર્તમાનાશ્ચ એકેનોત્પાતેન નન્દનવનમાગચ્છન્તિ, દ્વિતીયેન સ્વસ્થાનમ્ । तथा 'विज्जाहरेहि' विद्याधरैः, रोहिणीप्रज्ञप्त्यादिविद्याधारकैः= तथा 'चउत्थभत्तिएहि' चतुर्थभक्तिकैः=एकोपवासकारकैः, 'छट्ठभत्तिएहि' षष्ठभक्तिकैः, उपवासद्वयकारकैः, 'अट्ठमभत्तिएहि' अष्टमभक्तिकैः=उपवासत्रय-कारकैः, तथा-'दसमभत्तिएहि' दशमभक्तिकैः=उपवासचतुष्टयकारकैः, 'एवं णेहिंविज्जाहरेहिं' चारणकुद्विधारी हैं, रोहिणीप्रज्ञप्त आदि विद्या के धारी हैं उनके द्वारा सेचित हुई है । तथा (चउत्थभत्तिएहि, छट्ठभत्तिएहि, अट्ठ-मभत्तिएहिं दसमभत्तिएहि एवं दुवालस-चउदस-सोलस-अट्ठमास-मास-दोमास-तिमास-चउमास-पंचमास-छम्मास भत्तिएहिं) चतुर्थभक्तिक-जो एक उपवास करने वाले हैं, षष्ठिभक्तिक-दो उपवास के करने वाले हैं, अष्टम भक्तिक-तीन उपवास करने वाले हैं, दसभक्तिक-चार उपवास

શેહિણીપ્રજ્ઞપ્તિ આદિ વિદ્યાના ધારક દ્વારા જે સેવાયેલ છે, તથા “ ચઉત્થભ-ત્તિએહિં, છટ્ઠભત્તિએહિં, અટ્ઠમભત્તિએહિં દસમભત્તિએહિં એવં દુવાલસ-ચઉદસ-સોલસ-અટ્ઠમાસ-માસ-દોમાસ-તિમાસ-ચઉમાસ-પંચમાસ-છમ્માસ ભત્તિએહિં ” ચતુર્થ-ભક્તિ-જે એક ઉપવાસ કરનાર છે, ષષ્ઠભક્તિક-જે બે ઉપવાસ કરનાર છે, અટ્ઠમભક્તિક-ત્રણ ઉપવાસ કરનારા, દસમભક્તિક-ચાર ઉપવાસ કરનારા, એજ પ્રમાણે દ્વાદશ-પાંચ ઉપવાસ, ચતુર્દશ-છ ઉપવાસ, ષોડશ-સાત ઉપવાસ, અને

દુવાલસ-ચઉદસ-સોલસ-અઢમાસ-માસ-દોમાસ-તિમાસ-ચઉમાસ - પંચમાસ
છમ્માસમત્તિર્ણિ' एवं द्वादशचतुर्दश षोडशार्द्धमास मासद्विमासत्रिमासचतुर्मासपञ्च-
मासषण्मासमत्तिकैः= द्वादशादि षण्मासान्तभक्ततपश्चक्षणयुक्तैः, तथा-‘उक्त्वि-
त्तचरर्णहि’ उक्त्विप्तचरकैः=उक्त्विप्तं=गृहस्थेन स्वप्रयोजनाय पाकपात्राद्दुधृतमन्य-
पात्रास्थापितमेवास्नादिकं चरन्ति+अभिग्रहविशेषात्तद्वेषणाय गच्छन्तीति-उक्त्वि-
प्तचरकास्तैः=रायकेन पूर्वमेवपाकभाजनादुद्धृतस्य गवेपकैरित्यर्थः, तथा ‘निकृत्सी-
त्तचरर्णहि’ निक्षिप्तचरकैः-निक्षिप्तं=गृहस्थेन स्वार्थं पाकपात्राद्दुधृतान्यपात्रे
स्थापितमन्नादिकं चरन्ति+तथाविधाभिग्रहवशात्तद्वेषणाय गच्छन्तीति निक्षिप्त
चरकास्तैः=पाकपात्रोद्धृतान्यपात्रस्थापिताहारग्रहणाभिग्रहवद्भिरित्यर्थः । तथा-
‘अंतचरर्णहि’ अन्तचरकैः=अन्तं=नीरसं तक्रमिश्रितं पर्युषितं च बल्लचणकाद्यन्नं-
चरन्ति=गवेपयन्ति, ये ते तथा तैस्तथोक्तैः अन्ताहारग्रहणाभिग्रहवद्भिरित्यर्थः ।
तथा-‘पंतचरर्णहि’ प्रान्तचरकैः=प्रान्तं=पुराणकुलस्थस्त्रचणकाद्यन्नं चरन्ति=
गवेपयन्ति ये ते तथा तैस्तथोक्तैः=प्रान्ताहारग्रहणाभिग्रहवद्भिरित्यर्थः । तथा-
‘लूहचरर्णहि’ रुक्षचरकैः=रुक्षभोजनग्रहणाभिग्रहवद्भिः, तथा-‘समुदाणचरर्णहि’
समुदानचरकैः=उच्चावचकुलेषु सामान्यरूपेण भिक्षाग्रहणशीलैः, तथा-‘अण्णगि-
लाइर्णहि’ अन्नग्लायकैः-अन्नेन=अभि यह विशेषात् पर्युषितान्नभोजनेन भाय-
क=ग्लानिमापन्न कृश इत्यर्थस्तैः । तथा-‘मोणचरर्णहि’ मौनचरकैः=मौनं-
मौनव्रतं तेन चरन्ति ये ते मौनव्रतकाः, तथाविधाभिग्रहवशाद् भिक्षादिशुद्धिप्रश्ना-
के करने वाले हैं, इसी तरह द्वादश-पांच उपवास, चतुर्दश-छह उप-
वास, षोडश-सात उपवास, एवं अर्द्धमास, मास, द्विमास, त्रिमास,
चतुर्मास, पञ्चमास, षण्मासभक्तिक-छ महीने के उपवास करनेवाले हैं
उनके द्वारा यह सेवित हुई है, तथा (उक्त्विप्तचरर्णहि, एवं निकृत्तचर-
र्णहि, अंतचरर्णहि, पंतचरर्णहि, लूहचरर्णहि, समुदाणिचरर्णहि, अण्णगि-
लाइर्णहि, मोणचरर्णहि) उक्त्विप्तचरक हैं, निक्षिप्तचरक, अन्तचरक हैं, प्रान्त-
चरक हैं, रुक्षचरक हैं, समुदानचरक हैं, अन्नग्लायक हैं, मौनचरक हैं,

અર્ધમાસ, માસ, બે માસ, ત્રણ માસ, ચાર માસ, પાંચ માસ, અને ષણ્મા-
સમત્તિક-છ માસના ઉપવાસ કરનારા દ્વારા તે સેવાયેલ છે. તથા ‘ઉક્ત્વિત્ત-
ચરર્ણહિ. एवं નિકૃત્તચરર્ણહિ, અંતચરર્ણહિ, પંતચરર્ણહિ, લૂહચરર્ણહિ, સમુદાચર-
ર્ણહિ, અણ્ણગિલાઈર્ણહિ, મોણચરર્ણહિ” જે ઉક્તિપ્તચરક છે, જે નિક્ષિપ્તચરક છે,
જે અંતચરક છે, જે પ્રાન્તચરક છે, જે રૂક્ષચરક છે, જે સમુદાનચરક છે, જે
અન્નગ્લાયક છે, જે મૌનચરક છે. તેઓના દ્વારા તે સેવાયેલ છે. તથા ‘સંસ-

તિરિક્તં મૌનમાસ્થાય સંચરણશીલાઃ, તથા-‘ સંસદ્ગુણિયર્હિં ’ સંસૃષ્ટકલ્પિકૈઃ-
 ‘ સંસૃષ્ટેન હસ્તેન ભાજનેન ચ દીયમાનમન્નાદિ ગ્રાહ્ય ’ મિત્યેવરૂપઃ કલ્પ આચારો
 યેષાં તે સંસૃષ્ટકલ્પિકાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા-‘ તજ્જાયસંસદ્ગુણિયર્હિં ’ તજ્જાતસંસૃ-
 ષ્ટકલ્પિકૈઃ=યત્પ્રકારં દેયદ્રવ્યં તજ્જાતેન-તત્પ્રકારેણ દ્રવ્યેણ સંસૃષ્ટે હસ્તભાજને
 તાભ્યાં દીયમાનં ગ્રાહ્યમિત્યેવંરૂપઃકલ્પઃ=સમાચારો યેષાં તે તજ્જાતસંસૃષ્ટકલ્પ-
 કાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા ‘ ઉવનિહિયર્હિં ’ ઉપનિહિતકૈઃ=ઉપનિહિતં=દાયકેન સ્વયં
 મોક્તું સમીપે સ્થાપિતમ્, તેન ચરન્તિ ચે તે ઉપનિહિતકાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ તથા=
 ‘ સુદ્વેસણિયર્હિં ’ શુદ્વૈષણિકૈઃ-શઙ્કાદિદોષપરિહારતઃ પિષ્ઠગ્રહણં શુદ્વૈષણા, તદ્વન્તઃ
 શુદ્વૈષણિકાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા ‘ સંસ્વાદત્તિયર્હિં ’ સંસ્વાદત્તિકૈઃ=સંસ્વાદપ્રધાનાભિઃ
 પશ્ચાદિપરિણામવત્તીભિઃ દત્તિભિઃ સકૃદ્ભક્તાદિપાત્રપાતલક્ષણાભિશ્ચરન્તિ ચે તે
 સંસ્વાદત્તિકાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા=‘ દિદૃશામિયર્હિં ’ દૃષ્ટિલાભિકૈઃ=દૃષ્ટસ્ય=દૃષ્ટિ-
 ગોચરીભૂતસ્વયંવાન્નપાનાદેઃ લાભો યેષાં તે દૃષ્ટિલાભિકાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા-
 ‘ અદિદૃશામિયર્હિં ’ અદૃષ્ટલાભિકૈઃ=અદૃષ્ટસ્યાપિ પાત્રગૃહમધ્યાગ્નિગતસ્ય કર્ણાન્
 શ્રુતસ્ય ભક્તાદેરદૃષ્ટાઢા પૂર્વમનુપલબ્ધાદ્ દાયકાદ્ લાભો યેષામસ્તિ તેઽદૃષ્ટલા-
 ભિકાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા=‘ પુદ્ગલામિયર્હિં ’ પૃષ્ઠલાભિકૈઃ=પૃષ્ઠસ્ય=હે સાથો ! કિં
 તે દીયતે ઇત્યાદિ રૂપેણ પ્રશ્નવિષયી કૃતસ્ય યો ભિક્ષાપ્રાપ્તિરૂપી લાભસ્તદાયગ્ર-
 હિતૈઃ, તથા-‘ આયંબિલિયર્હિં ’ આચામામ્લિકૈઃ=આચામામ્લવ્રતયુક્તૈઃ, તથા-
 ‘ પુરિમદ્વિયર્હિં ’ પૂર્વાદ્વિકૈઃ=પારણાયામપિ પૂર્વાદ્વિદિનેઽશનપાનાદિ પ્રત્યાભ્યાસ-
 શીલૈઃ, તથા-‘ એકામણિયર્હિં ’ એકાશનિકૈઃ, પારણાયામપિ એકાશનવ્રતધારિભિઃ,
 અનેકે દ્વારા સેવિત્વાદે । તથા (સંસદ્ગુણિયર્હિં, તજ્જાયસંસદ્ગુણિયર્હિં,
 ઉવનિહિયર્હિં, સુદ્વેસણિયર્હિં, સંસ્વાદત્તિયર્હિં, દિદૃશામિયર્હિં, અદિદૃશા-
 મિયર્હિં, પુદ્ગલામિયર્હિં, આયંબિલિયર્હિં, પુરિમદ્વિયર્હિં) સંસૃષ્ટકલ્પિકા હૈં,
 તજ્જાતસંસૃષ્ટકલ્પિકા હૈં, ઉપનિહિતકા હૈં, શુદ્વૈષણિકા હૈં, સંસ્વાદત્તિકા
 હૈં, દૃષ્ટિલાભિકા હૈં, અદૃષ્ટિલાભિકા હૈં, પૃષ્ઠલાભિકા હૈં, આચામામ્લવ્રત-
 યુક્તા હૈં, પૂર્વાદ્વિકા હૈં, અનેકે દ્વારા યદ્ અહિંસા પાલી ગઈ હૈ । તથા
 (એકામણિયર્હિં, નિલ્લિઙ્ગયર્હિં, મિત્રપિંડવાદયર્હિં, પરિમિતપિંડવાદયર્હિં-

દુઃકથિયર્હિં, તજ્જાયસંસદ્ ગુણિયર્હિં, ઉવનિહિયર્હિં, સુદ્વેસણિયર્હિં, સંસ્વાદત્તિયર્હિં
 દિદૃશામિયર્હિં, અદિદૃશામિયર્હિં, પુદ્ગલામિયર્હિં, આયંબિલિયર્હિં, પુરિમદ્વિયર્હિં ” એ
 સંસૃષ્ટ કલ્પિક છે તજ્જાત સંસૃષ્ટ કલ્પિક છે, ઉપનિહિતક છે, શુદ્વેષણિક
 સંસ્વાદત્તિક છે, દૃષ્ટિલાભિક છે, અદૃષ્ટિલાભિક છે, પૃષ્ઠલાભિક છે, આચામામ્લ
 વ્રત યુક્ત છે, પૂર્વાદ્વિક છે, તેમના દ્વારા આ અહિંસા પાળવામાં આવે છે તથા
 “ એકામણિયર્હિં, નિલ્લિઙ્ગયર્હિં, મિત્રપિંડવાદયર્હિં, પરિમિતપિંડવાદયર્હિં, અંતાહરેહિં,

તથા-‘ નિવિઙ્ગિદ્દર્શિં ’ નિવિઙ્ગુત્તિકૈઃ=વિકૃતિભ્યો ધૃતાદિપદાર્થેભ્યો નિર્ગતા યે તે નિવૃત્તિકાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ-વિકૃતિપ્રત્યાખ્યાનશીલૈસ્તિયર્થઃ, તથા ‘ મિષ્ણપિંડવાદ-ર્શિં ’ મિષ્ણપિંડપાતિકૈઃ-મિષ્ણસ્ય=વૃદ્ધિતસ્ય પિંડસ્ય=સક્તુકાદિરૂપસ્ય મોદ-કસ્ય સ્વતો મિષ્ણાત્ પિંડાત્ યઃ પાતઃ-પાત્રે પતનં યેષાં તે મિષ્ણપિંડપાતિકા-સ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા ‘ પરિમિતપિંડવાદર્શિં ’ પરિમિતપિંડપાતિકૈઃ-પરિમિતો દ્રવ્યાદિઃ પિંડવાતો મક્તાદિભ્રામો યેષામસ્તિ, તે પરિમિતપિંડપાતિકાસ્તૈસ્તથો-ક્તૈઃ, તથા-‘ અંતાહારેદિં ’ અંતાહારૈઃ=અન્તં=નીરસં તક્રમિશ્રિતપર્યુપિતં ચ વલ્લ-ચળકાચન્નમાહરન્તિ યે તે તૈઃ, તથા-‘ પંતાહારેદિં ’ પ્રાન્તાહારૈઃ=પ્રાન્તં=પુસાતન-કુલસ્યવલ્લચળકાચન્નમ્ આહરન્તિ યે તે તૈઃ, તથા-‘ અરસાહારેદિં ’ અરસાહારૈઃ=અરસો રસવર્જિત આહારો યેષાં તેડરસાહારાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ-દિગ્ધાદિ સંસ્કાર-વર્જિતાહારમદ્રઘવદ્ભિઃ, તથા-‘ વિરસાહારેદિં ’ વિરસાહારૈઃ-વિરસં=વિગતરસં પુસાનધાન્યોદનાદિ આહરન્તીતિ વિરસાહારાસ્તૈઃ, ‘ લૂહાહારેદિં ’ રૂક્ષાહારૈઃ=રૂક્ષં ધૃતાદિવર્જિતમાહરન્તીતિ રૂક્ષાહારાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા ‘ તુચ્છાહારેદિં ’ તુચ્છાહારૈઃ=તુચ્છં=વદરીચૂર્ણાદિકં કુલ્લથકોદ્રવાદિકં ચ આહરન્તિ યે તે તુચ્છાહારાસ્તૈઃ, તથા-‘ અંતજીવેદિં ’ અન્તજીવિભિઃ-અન્તેન જીવન્તિ યે તેડન્તજીવિનસ્તૈઃ, ‘ પંતજીવેદિં ’ પ્રાન્તજીવિભિઃ ‘ લૂહજીવેદિં ’ રૂક્ષજીવિભીઃ=‘ તુચ્છજીવેદિં ’ તુચ્છજીવિભિઃ, તથા ‘ ઉવસંતજીવેદિં ’ ઉપશાન્તજીવિભિઃ-અશનાદીનાં પ્રાપ્ત-અંતાહારેદિં, પંતાહારેદિં, અરસાહારેદિં, વિરસાહારેદિં, લૂહાહારેદિં, તુચ્છાહારેદિં, અંતજીવેદિં, પંતજીવેદિં, લૂહજીવેદિં, તુચ્છજીવેદિં, ઉવસંત-જીવેદિં, પસંતજીવેદિં, વિવિત્તજીવેદિં, અશ્વીરમદુસપ્પિણ્દિ, અમજ્જ-મંસાસિદ્દિં) એકાશનિકા હૈં, વિકૃતિપ્રત્યાખ્યાનશીલા હૈં મિષ્ણપિંડપાતિકા હૈં, પરિમિતપિંડપાતિકા હૈં, અન્તાહાર વાલે હૈં, પ્રાન્તાહાર વાલે હૈં, અર-સાહાર વાલે હૈં, વિરસાહાર વાલે હૈં, રૂક્ષ આહાર કરને વાલે હૈં, તુચ્છાહાર વાલે હે, અંતજીવી હૈં, પ્રાન્તજીવી હૈં, રૂક્ષજીવી હૈં, તુચ્છ જીવી હૈં, ઉપશાન્ત જીવી હૈં, પ્રશાન્ત જીવી હૈં, વિવિત્ત જીવી હૈં, અશ્વીર મધુસ-

પંતાહારેદિં, અરસાહારેદિં, વિરસાહારેદિં, લૂહાહારેદિં, તુચ્છાહારેદિં, અંતજીવેદિં, પંતજીવેદિં, લૂહજીવેદિં, તુચ્છજીવેદિં, ઉવસંતજીવેદિં, પસંતજીવેદિં, વિવિત્ત-જીવેદિં, અશ્વીરમદુસપ્પિણ્દિ, અમજ્જ મંસાસિદ્દિં ” એ એકાશનિકા છે, વિકૃતિ પ્રત્યાખ્યાનશીલા છે, મિષ્ણપિંડ પાતિકા છે, પરિમિતપિંડ પાતિકા છે, અન્ત-હાર વાળા છે, પ્રાન્તાહાર વાળા છે, અરસાહારવાળા છે, વિરસાહાર વાળા છે, રૂક્ષ આહાર કરનારા છે, તુચ્છ આહાર કરના વાળા છે, અન્તજીવી છે, પ્રાન્તજીવી છે, રૂક્ષજીવી છે, તુચ્છજીવી છે, ઉપશાન્તજીવી છે, પ્રશાન્તજીવી છે, વિવિત્ત-

સુદર્શિની ટીકા અંક ૧ સૂચક અદિસાપ્રાપ્તમહાપુરુષનિરૂપણમ્

૫૮૫

પ્રાપ્તૌ ચ સત્પ્રાપ્તપ્રશાન્તત્વા જીવિભિઃ યે તે ઉપશાન્તજીવિનસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ વહિ-
 ર્વૃત્પાવદનચક્ષુરુપાદીનામસ્થાનસ્વપુષ્પશાન્તત્વમ્ । તથા ‘ પદ્મવજીવિર્દિ ’ પ્રશાન્ત-
 જીવિભિઃ-અન્તર્દૃશ્ય ક્રોધાદીનામુપશમનં પ્રશાન્તત્વમ્ । તથા-‘ વિવિક્તજીવિર્દિ ’
 વિવિક્તજીવિભિઃ=વિવિક્ત દૌર્બગ્ધિતૈરભાદિભિર્જીવન્તિ યે તે વિવિક્તજીવિનસ્તૈ-
 સ્તથોક્તૈઃ, તથા-‘ અક્ષીરમધુસર્પિર્દિ ’ અક્ષીરમધુસર્પિકૈઃ-શ્વઃકીરં=દુગ્ધં, મધુ-
 શર્કરાદિમધુરદ્રવ્યમ્, મર્પિઃ=ધૃતમ્, એતાનિ ન સન્તિ અજનતયા યેષાં તેડક્ષીરમધુસ-
 ર્પિષ્કાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા-‘ અમઙ્ગમંસાસિર્દિ ’ અમઙ્ગમાંસાશિકૈઃ-મઘમાંસં ચ
 યેરાનાદારો નાસર્પિભિઃ માંસાદાર્યર્થકૈન્થા-‘ ઠાણાદિર્દિ ’ સ્થાનાતિગૈઃ=સ્થાનં=
 કાયોત્તર્ગાદિકમતિશયેન ગચ્છન્તિ=પ્રાપ્નુવન્તિ યે તે સ્થાનાતિગૈઃ કાયોત્તર્ગકા-
 રિપ્તૈઃ ‘ પઢિમટ્ટાદિર્દિ ’ પ્રતિમાસ્થાયિકૈઃ-પ્રતિમયા = એકરાત્રિક્યાદિકયા
 કાયોત્તર્ગવિશેષેભ્યં તિષ્ઠન્તીત્યેવં શીલા યે તે પ્રતિમાસ્થાયિનસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ,
 તથા ‘ ઠાણુકદિર્દિ ’ સ્થાનુત્કુટિકૈઃ=સ્થાનમુત્કુટિકં યેપાં તે સ્થાનોત્કુટિકાસ્તૈસ્ત-
 થોક્તૈઃ, તથા-‘ વીરાસનિર્દિ ’ વીરાસનિકૈઃ=મિહાસનોપવિષ્ટસ્ય ભુવિન્યસ્તપા-
 દસ્ય અપનોત્મિહાસનસ્યેવ યદ્વસ્થાનં તદ્ વીરાસનં, તદસ્તિ યેપાં તે વીરાસ-
 નિકાસ્તૈઃ, તથા-‘ જોસજ્જિર્દિ ’ નૈષધિકૈઃ, નિષધા=સમપુતતયાડવસ્થાનં, તયા
 ચરન્તિ યે તે નૈષધિકાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ, તથા-‘ હંડાદિર્દિ ’ દળ્ડાયતિકૈઃ=દળ્ડા ઇવ
 ભૂન્યસ્તતયા આયતં શરીરં દળ્ડાયતં તદસ્તિ યેપાં તે દળ્ડાયતિકાસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ,
 દળ્ડાસનકારિભિરિત્યર્થઃ, તથા-‘ લગ્ગણ્ડસાદિર્દિ ’ લગ્ગણ્ડશાયિકૈઃ=લગ્ગણ્ડ=વક્ત્ર
 કાષ્ઠં, તદ્વત્ મસ્તકસ્ય પાશ્વર્થીનાં ‘ ફટ્ટી ’ इति लोकप्रसिद्धानां च भुविलगनेन

પિષ્કા હૈં, અમઙ્ગમાંસાદિકા (મઘમાંસાદિકા કા સેવન નહીં કરનેચાલે)
 હૈં. ઉન્હોને ઉનકા સેવન કિયા હૈં । તથા જો (ઠાણાદિર્દિ, પઢિમટ્ટાદિર્દિ,
 ઠાણુકદિર્દિ, વીરાસનિર્દિ, જોસજ્જિર્દિ હંડાદિર્દિ, લગ્ગણ્ડસાદિર્દિ,
 જગપાસમેર્દિ, આગાવર્દિ; અપ્પાવર્દિ; અણિટ્ટમર્દિ, અંકુડુયર્દિ, ધુય-
 કેસમંસજોમનર્દિ, સવ્વગાયપદિકમ્મવિપ્પમુલ્લકેર્દિ સમણુવિન્ના) સ્થાના-
 તિગ હૈં, પ્રતિમાસ્થાયિક હૈં, સ્થાનોત્કુટિક હૈં, વીરાસનિક હૈં, નૈષધિક
 હૈં, દળ્ડાયતિક હૈં, લગ્ગણ્ડશાયિક હૈં, એકપાર્શ્વક હૈં; આતાપક હૈં; અપ્રાવૃત

છત્રી છે, અક્ષીર મધુ સર્પિષ્ક છે અમઙ્ગમાંસાશિક છે, તેમણે તેનું સેવન કર્યું
 છે તથા જે ‘ ઠાણાદિર્દિ, પઢિમટ્ટાદિર્દિ, ઠાણુકદિર્દિ, વીરાસનિર્દિ, જોસજ્જિર્દિ,
 હંડાદિર્દિ, લગ્ગણ્ડસાદિર્દિ, જગપાસમેર્દિ, આગાવર્દિ, અપ્પાવર્દિ, અણિટ્ટમર્દિ અંકુડ-
 યર્દિ, ધુયકેસમંસજોમનર્દિ, સવ્વગાયપદિકમ્મવિપ્પમુલ્લકેર્દિ સમણુવિન્ના ” સ્થાના-
 તિગ છે, પ્રતિમાસ્થાયિક છે, સ્થાનોત્કુટિક છે, વીરાસનિક છે, નૈષધિક છે,
 છે, દળ્ડાયતિક છે, લગ્ગણ્ડશાયિક છે, એક પાર્શ્વક છે, આતાપક છે, અપ્રાવૃત

પૃષ્ઠસ્ય ચાલગતેન યે શેરતે તે લગ્નદશાયિનસ્તૈઃ, તથા-‘ એગપાસિગેહિ ’ એકપાર્શ્વિકૈઃ-એક એવ પાર્શ્વો ધૂમૌ શયનાવસ્થાયાં યેપાં તે એકપાર્શ્વિકાઃ=એકપાર્શ્વશાયિનસ્તૈઃ, તથા ‘ આયાવર્હિ ’ આતાપકૈઃ=આતાપન્તિ યે તે આતાપકાઃ=શીતોષ્ણાદ્યાતાપનાકારિણસ્તૈઃ, તથા-‘ અચાઉહર્હિ ’ અપ્રાવૃતૈઃ=દેમન્તે માવરણરહિતૈરિત્યર્થઃ, ‘ અણિહુયર્હિ ’ અનિષ્ઠીવકૈઃ=મુગ્ધશ્લેષ્મણામપરિષ્ઠાપકૈરિત્યર્થઃ, તથા ‘ અકંહુયર્હિ ’ અકણ્ઢ્યકૈઃ=ગાત્રકણ્ઢ્યનાકારકૈરિત્યર્થઃ, તથા-‘ ધુયકેસમંસુલોમનહેહિ ’ ધૂતકેશશ્મશ્રુલોમનરૈઃ=ધૂતાઃ=સંસ્કારાપેક્ષયાત્પક્તાઃ કેશાઃ શ્મશ્રૂણિ=‘ દાઢી ’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાનિ=લોમાનિ=રોમાણિ નચાઃ=ચૈસ્તે તથોક્તાસ્તૈઃ, સંસ્કારવર્જિતકેશશ્મશ્રુલોમનસ્વાધારિભિરિત્યર્થઃ, તથા-‘ મવગાયપઢિકમ્મવિપ્પમુકેહિ ’ સર્વગાત્રપ્રતિકર્મવિપ્રમુક્તૈઃ=સર્વગાત્રાણાં યત્પ્રતિકર્મ=સંસ્કારાગ્નેન વિમુક્તાસ્તૈઃ=સર્વવિધગાત્રસંસ્કારવર્જિતૈઃ, આભિનિયોધિકજ્ઞાનિનમારભ્ય સર્વગાત્રપ્રતિકર્મવિપ્રમુક્તૈરનેકમહાપરુષૈરિયમહિંસા ભગવતી, ‘સમણુચિણ્ણા’ સમનુચીર્ણા=આસેવિતા।

હૈં, અનિષ્ઠીવક હૈં, અકણ્ઢ્યક હૈં, ધૂતકેશશ્મશ્રુલોમનસ્વાધારિ (સંસ્કારરહિત કેશશ્મશ્રુલોમનસ્વાધારિ) હૈં, તથા સર્વગાત્રપ્રતિકર્મ વિમુક્ત હૈં એસે ઇન આભિનિયોધિક જ્ઞાનિયોં સે લેકર સર્વગાત્રપ્રતિકર્મ વિમુક્ત તક કે અનેક મહાપુરુષ કે યહ અહિંસા ભગવતી આસેવિન હુઈ હૈં । આમશૌષધિ આદિકા અર્થ હસ કાર હૈં તપશ્ચરણ કે પ્રભાવ સે મુનિજનોં કો એસી લઘ્વિ ઉત્પન્ન હો જાતી હૈં કિજિસસે અનેક શરીર કા સ્પર્શ હી સમસ્ત રોગોં કા અપહારક હો જાતા હૈં । હસ લઘ્વિ કે ધારી જો મુનિજન હોતે હૈં વે આમશૌષધિ પ્રાપ્ત કહે જાતે હૈં । હસી તરહ તપશ્ચરણ સે શ્લેષ્મણોપધિલઘ્વિ પ્રાપ્ત હોતી હૈં । હસી લઘ્વિ મેં મુનિજનોં કા શ્લેષ્મા હી (કફ, ઔષધિ) કા કામ કરતા હૈં । જહ્નુ નામ શરીર સે ઉત્પન્ન હુઈ મેલ કા હૈં । જિનકા મેલ હી ઔષધિ

છે, અનિષ્ઠીવક છે, અકણ્ઢ્યક છે, ધૂતકેશશ્મશ્રુ નખવાળા છે, તથા સર્વગાત્ર પ્રતિકર્મ વિમુક્ત છે, એવા તે આભિનિયોધિક જ્ઞાનીઓથી શરૂ કરીને સર્વગાત્ર પ્રતિકર્મ વિમુક્ત સુધીના અનેક મહાપુરુષો દ્વારા ભગવતી અહિંસાનું સેવન થયું છે. “ અમશૌષધિ ” વગેરેનો અર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

તપસ્યાના પ્રભાવથી મુનિજનોને એવી લઘ્વિ પ્રાપ્ત થાય છે કે જેના પ્રભાવથી તેઓના શરીરનો સ્પર્શ જ સમસ્ત રોગોનો નાશ કરે છે આ લઘ્વિવાળા જે મુનિ હોય છે તેમને “ અમશૌષધિ પ્રાપ્ત ” મુનિ કહેવાય છે. એ જ પ્રમાણે તપશ્ચર્યાના પ્રભાવથી ‘ શ્લેષ્મણોપધિલઘ્વિ ’ પ્રાપ્ત થાય છે. આ લઘ્વિથી મુનિજનોનું શ્લેષ્મા જ ઔષધિનું કામ કરે છે. શરીરમાંથી ઉત્પન્ન થયેલું મેલને ‘ જહ્નુ ’ કહે છે, જેમનો મેલ જ ઔષધિની ગરજ પારે છે તેઓ

કા કામ દેતા હૈં વે જહૌપધિ પ્રાપ્ત મુનિવર હૈં । મુખ સે નિર્ગત થૂક
કી છોટી ૨ ચિન્દુઓં કા નામ વિપ્રુડ હૈં । તપસ્યા કે પ્રભાવ સે વે મુખ
કી ચિન્દુઁ જિનકી રોગોં કો નષ્ટ કરદેતી હૈં વે મુનિજન વિપ્રુહોષધિ
પ્રાપ્ત કહે જાતે હૈં । મુનિજનોં કી વિશિષ્ટ તપસ્યાં કે અનુષ્ઠાન સે કર્ણ,
વદન, નાસિકા, જિહ્વા ઔર નયન इन सब इन्द्रियों का मेल औषधि
કા કામ દેતા હૈં । ઇસ લઘ્વિ કા નામ સર્વૌષધિ લઘ્વિ હૈં । યહ લઘ્વિ
જિન મુનિજનોં કો પ્રાપ્ત હોતી હૈં उनका नाम सर्वौषधि लघ्वि प्राप्त है ।
જિસ પ્રકાર બીજ સે વિશાલ કાય તરુ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં उसी तरह
जिस एक पद वाली बुद्धि से विविध अर्थों का बोध मुनिजनों को हो
જાતા હૈં । ઇસકા નામ બીજબુદ્ધિ હૈં । યહ બુદ્ધિ બી વિશિષ્ટ તપસ્યાં કે
પ્રભાવ સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે વિશિષ્ટ ક્ષયોપશમ સે મુનિજન પ્રાપ્ત
કરતે હૈં । तात्पर्य इसका इस प्रकार है कि जैसे मानों इस लघ्वि के
ધારી મુનિજન કો “ ઉત્પાદ વ્યય ધ્રૌવ્યયુક્તં સત્ ” (તત્ત્વાર્થ સૂત્ર ૨૯
વાં સૂત્ર) ઇસ સૂત્ર કા બોધ હો ગયા, એસે પદ અર્થપદ કહલાતેહૈં, બીજ-
ભૂત ઇસ એક હી અર્થપદ કે અવગત હોને પર વે અપની બુદ્ધિ કે પ્રભાવ
સે અન્ય ઔર બી વિશેષ અર્થ કા બોધ કર લિયા કરતે હૈં । जिस

“ અલ્પૌષધિ પ્રાપ્ત ” મુનિવરે કહેવાય છે. મોઢામાંથી નીકળતા થૂકનાં નાનાં
નાનાં મિંદુઓને ‘ વિપ્રુડ ’ કહે છે. તપસ્યાના પ્રભાવથી જેમના મુખના એ
ચિન્દુઓ રોગોના નાશ કરી નાખે છે તેવા મુનિવરોને ‘ વિપ્રુહૌષધિ પ્રાપ્ત ’
કહે છે. મુનિજનોની વિશિષ્ટ તપસ્યાના આચરણથી, કાન, મુખ, નાક, જીભ
અને આંખો એ બધી ઈન્દ્રિયોના મેલ ઔષધિ જેવું કામ આપે છે. આ
લઘ્વિને “ સર્વૌષધિલઘ્વિ ” કહે છે. આ લઘ્વિ જે મુનિવરોને પ્રાપ્ત થાય છે
તેમનું નામ “ સર્વૌષધિલઘ્વિપ્રાપ્ત ” છે. જેમ બીજમાંથી વિશાળકાય વૃક્ષ
ઉત્પન્ન થાય છે, એ જ પ્રકારે જે એક પદ વાળી બુદ્ધિથી મુનિજનોને વિવિધ
અર્થોના બોધ થાય તે, તેનું નામ ‘ બીજબુદ્ધિ ’ છે. તે બુદ્ધિ પણ વિશિષ્ટ
તપસ્યાના પ્રભાવથી જ્ઞાનાવરણીય કર્મના વિશિષ્ટ ક્ષયોપશમથી મુનિજનો પ્રાપ્ત
કરે છે તેનું તાત્પર્ય એવું છે કે-જેવું એ લઘ્વિના ધારક મુનિવરને “ ઉત્પાદ-
વ્યયધ્રૌવ્યયુક્તં સત્ ” “ તત્ત્વાર્થસૂત્ર ૨૯ મું સૂત્ર ” આ સૂત્રનો બોધ થઈ
ગયો, એનાં પદને અર્થપદ કહે છે, બીજભૂત આ એક જ અર્થપદનો બોધ
થતાં તેઓ પોતાની બુદ્ધિના પ્રભાવથી વળી બીજાં વિશેષ અર્થોના પણ બોધ
કરી લીધા કરે છે. જેમ કોપ્કન્ડોહીમાં નાખેલું અનાજ લાંબા સમય સુધી

પ્રકાર કોષ્ઠ-કોઠી મેં પ્રક્ષિપ્ત અનાજ વૃત્ત સમયતક મુરક્ષિત રહ્યા કરતા હૈં ઉસી પ્રકાર પ્રાપ્ત હ્ય લઘ્વિ કે પ્રભાવ સે અવગત સૂત્ર ઓર અર્થ યે દોનો વૃત્ત સમય તક મુનિજનોં કો ધારણારૂપ મેં સ્થિર રહતે હૈં-વે ઉન્હેં વિસ્મૃત નહીં હોતે। યહ બુદ્ધિ જિન મુનિજનોં કો પ્રાપ્ત હો જાતી હૈં વે કોષ્ઠબુદ્ધિ કે ધારી મુનિજન હૈં। સૂત્રાવયવ રૂપ એક હી પદ કે ઉપલબ્ધ હોને પર જો સૈકહોં પદોં કા અનુસરણ કર લેતે હૈં વે મુનિજન પદાનુસારી લઘ્વિ કે ધારી કહે જાતે હૈં। જિસ લઘ્વિ સે એક હી કિસી ઇન્દ્રિય સે મુનિજન સર્વેન્દ્રિયગમ્ય વિષયોં કો જાન લેતે હૈં ઉસ લઘ્વિ કા નામ સંમિશ્રશ્રોતસ્ હૈં। યહ લઘ્વિ જિન મુનિજનોં કો પ્રાપ્ત હોતી હૈં વે મુનિજન સંમિશ્રશ્રોતા હૈં। આચારાંગ આદિ સૂત્રોં કે પાઠોં જો મુનિજન હોતે હૈં વે શ્રુતધર કહે જાતે હૈં। અનેક પ્રકાર કે પરીપહ ઓર ઉપસર્ગોં કે આતે પર મોં જિન મુનિજનોં કા મન ધર્મ સે થોડા સા મોં વિચલિત નહીં હોતા હૈં ઉનકા નામ મનોચલિક હૈં। જો મુનિજન અપની વાણી કે દ્વારા દુર્વાદિયોં દ્વારા પ્રરૂપિત મિથ્યાપ્રરૂપણાઓં કો ધ્વસ્ત કરને મેં સમર્થ બનતે હૈં ઉન મુનિયોં કો વચોચલિક કહા જાતા હૈં। જો મુનિજન કઠિન સે કઠિન પરીપહ ઓર ઉપસર્ગોં કો સહન કર-નેમેં શક્તિ શાલી હોતે હૈં વે કાયચલિક હૈં। મર્યાદિ જ્ઞાન સે મિનકા

મુરક્ષિત રહે છે તેમ પ્રાપ્ત થયેલી આ લઘ્વિના પ્રભાવથી અવગતસૂત્ર અને અર્થ તે જાને ઘણા સમય સુધી મુનિજનોને ધારણા રૂપે સ્થિર રહે છે-તેમને તે ભૂલતો નથી. આ બુદ્ધિ જે મુનિજનોને પ્રાપ્ત થાય છે તેઓ કોષ્ઠબુદ્ધિના ધારક મુનિવરો છે. સૂત્રના અવયવરૂપ એક જ પદ ઉપલબ્ધ થતાં જેઓ સૈકહો પદોનું અનુસરણ કરી લે છે, તેવા મુનિજનોને પદાનુસારીલઘ્વિના ધારક કહેવાય છે. જે લઘ્વિના પ્રભાવથી કોઈ એક જ ઇન્દ્રિય વડે મુનિજન સર્વેન્દ્રિયગમ્ય વિષયોને જાણી લે છે તે લઘ્વિનું નામ સંમિશ્રશ્રોતસ છે. આ લઘ્વિ જે મુનિજનોને પ્રાપ્ત થાય છે તે મુનિજન સંમિશ્રશ્રોતા કહેવાય છે, આચારાંગ આદિ સૂત્રોનું પઠન કરનારા જે મુનિજન હોય છે તેમને શ્રુતધર કહે છે. અનેક પ્રકારના પરીપહ અને ઉપસર્ગોં નડતા છતાં પણ જે મુનિજનોનું મન ધર્મનાંથી તલભાર પણ વિચલિત થતું નથી તેમને મનોચલિક કહે જે મુનિજનો દુર્વાદિઓ દ્વારા પ્રરૂપિત મિથ્યા પ્રરૂપણાઓનું ખંડન કરવાને સમર્થ થાય છે તે મુનિવરોને વચોચલિક કહે છે. જે મુનિજનો આકરામાં આકરા પરીપહો અને ઉપસર્ગોંને સહન કરવાને શક્તિમાન હોય છે તેઓ

સુદર્શિની ટીકા અ૦ । સૂ૦ ૪ અર્દિસાશત્રમહાપુરુષલ્પિણમ્

૫૮૯

આત્મવલ્લિ ચઢાવદા હોતા હૈ વે જ્ઞાનવલ્લિક હૈ । નિઃશંકિત આદિ અપને અંગોં સે યુક્ત જિનકા તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપ દર્શન હોના હૈ ઓર હસ દર્શન સે જિનકી આત્મા વલ્લિષ્ટ વની રહતી હૈ વે દર્શનવલ્લિક હૈ । પદ્મસાગર કે જીવોં કા સંરક્ષણ કરના હસકા નામ સંયમ હૈ, હસ સંયમરૂપચારિત્ર કે વલ્લ સે જિનકી આત્મા વલ્લશાલી હોતી હૈ વે ચારિત્રવલ્લિક હૈ । જિનકે મુખ સે નિકલા હુઆ વચન સુનતે હી મન ઓર શરીર કો સુખોત્પાદક હોતા હૈ વે ક્ષીરાસ્ત્રવલ્લિધિ કે ધારી મુનિજન હૈ । મિસરી આદિ મિષ્ટ દ્રવ્ય સે બી અધિક મિષ્ટ-મધુ શહદ હોતા હૈ, શહદ જેસા મીઠા જો વચન નિકાલતે હૈ બોલતે હૈ વે મધ્વાસ્ત્રવલ્લિધિ કે ધારી મુનિજન કહલાતે હૈ । સર્પિરાસ્ત્રવલ્લિધિ કે પ્રભાવ સે મુનિજનોં કા વચન અત્યંતસુરભિ-યુક્ત એવં સ્નેહયુક્ત ઘૃત કે જેસા બોલને પર સુનને વાલોં કો લગતો હૈ । મહાનસ શબ્દ કા અર્થ ભોજન બનાવે કા સ્થાન હૈ, ઉસકે આશ્રિત હોને સે ભોજન કો બી મહાનસ કહતે હૈ ! જિનમુનિજનોં કો યહ અક્ષીણ-મહાનસ નામકી લલિધિ ઉત્પન્ન હો જાતી હૈ ઉનકે અસાધારણ, અન્તરાય કે ક્ષયોપશમ સે અલ્પમાત્ર બી પાત્રપતિત અન્ન ગૌતમાદિક ઋષિયોં કી તરહ એક લાખ વ્યક્તિયોં કો દે દેને પર બી જવ તક વહ સ્વયં ન સ્વાસ્થ્યે

કાચવલ્લિક કહેવાય છે મત્યાદિ જ્ઞાનથી જેનું આત્મભગ્ન વૃદ્ધિ પામ્યું હોય છે તેમને જ્ઞાનવલ્લિક કહે છે, નિઃશંકિત આદિ અંગો વડે યુક્ત જેમનું તત્ત્વ-શ્રદ્ધાનરૂપ દર્શન હોય છે અને એ દર્શનથી જેમનો આત્મા ભગવાન બનેલા હોય છે તેવા મુનિવરોને દર્શનવલ્લિક કહે છે. છકાયના જીવોનું રક્ષણ કરવું તે સંયમ કહેવાય છે તે સંયમરૂપ ચારિત્રના ભગથી જેમનો આત્મા ભગવાન હોય છે તેમને ચારિત્રવલ્લિક કહે છે જેમના મુખમાંથી નીકળેલ વચન સાંભળતાં જ મન અને શરીરને સુખ થાય છે તેમને ક્ષીરાસ્ત્રવલ્લિધિ ધારી મુનિ કહેવાય છે. સાકર વગેરે મિષ્ટ દ્રવ્યો કરતાં પણ વધારે મિષ્ટ મધ હોય છે મધ જેવાં મીઠાં વચન જે બોલે છે તેવા મુનિજનોને મધ્વાસ્ત્રવલ્લિધિ ધારક કહેવાય છે. સર્પિરાસ્ત્રવલ્લિધિના પ્રભાવથી મુનિજનોનાં વચન અત્યંત સુરભિ-વાળાં તથા સ્નિગ્ધ થીના જેવાં શ્રોતાજનોને લાગે છે મહાનસ શબ્દનો અર્થ ભોજન બનાવવાનું સ્થાન છે, તેનું આશ્રિત હોવાથી ભોજનને પણ મહાનસ કહે છે. જે મુનિજનોને આ અક્ષીણમહાનસ નામની લલિધિ ઉત્પન્ન થાય છે તેમના અસાધારણ અન્તરાયના ક્ષયોપશમથી સહેજ પણ પાત્રમાં પડેલું અન્ન ગૌતમાદિ ઋષિયોની જેમ એક લાખ વ્યક્તિઓને આપી દેવાં છતાં પણ વ્યાં મુઠ્ઠી તેઓ પોતે ખાઈ લેતાં નથી ત્યાં મુઠ્ઠી પૂરું થતું નથી. તેનો ભાવાર્થ

—તથતક સમાસ નહીં હોતા હૈ । તત્પર્યં ઇસકા યહ હૈ કિ ઇસ લઘ્વિ ધારી મુનિજનોં કે પાત્ર મેં દિયા થોડાં બી અબ લાઘ્વોં મુનિજન બી ડસસે આહાર કર લે બેં પરન્તુ વહ તથતક સમાસ નહીં હોતા હૈ કિ જથતક વહ લઘ્વિ ધારી ડસે સ્વયં નહીં સ્થા લેતા હૈ । ઇસી પ્રકાર ઇસકે દાતા કે વિષય મેં બી સમસ્ટ લેનાં ચાહિયે । યહ લઘ્વિ ગૌતમાદિ ઋષિ-જનોં કો થી । ચારણલઘ્વિ કા યહ મતલબ હૈ કિ જિસ લઘ્વિ કે પ્રભાવ સે આકાશ મેં મુનિજનોં કા આના જાના હોતા હૈ । ચરણ-ગમન-યહ ગમન જિનકે હોતા હૈ ડનકા નામ ચારણ હૈ । ઇસ લઘ્વિ કે ધારી મુનિ-જન ડો પ્રકાર કે હોતે હૈ—(૧) વિદ્યાચારણ (૨) જંઘાચરણ । જિન્હેં વિદ્યા કે બલ સે યહ આકાશ મેં ગમનાગમનરૂપલઘ્વિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ વે વિદ્યાચારણ મુનિજન હૈ । યહ લઘ્વિ ડન મુનિરાજોં કો ઉત્પન્ન હોતી હૈ જો નિરન્તર ષઠ ષઠ કી તપશ્ચર્યા કરતે રહતે હૈ । તથા જો મુનિ ચારિત્રરૂપ તપવિશેષ કે પ્રભાવ સે ઐમી લઘ્વિ સંપન્ન બન જાતે હૈ કિ વે જંઘા કે ડપર હાથ રખતે હી આકાશ મેં ડડ જાતે હૈ, ઇસી લઘ્વિ કા નામ જંઘા ચારણ હૈ । યહ લઘ્વિ ડન મુનિરાજોં કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ જો નિરન્તર અષ્ટમ અષ્ટમ કી તપસ્યા કરતે હૈ । ડનમેં જો વિદ્યાચારણ મુનિજન હોતે હૈ વે ઇસકે બલ પર જંઘુદ્રીપ કી અપેક્ષા સે આઠઠાં

એ છે કે આ લઘ્વિધારી મુનિવરોનાં પાત્રમાં પડેલ અન્ન, તેમાંથી લાખો મુનિજનો આહાર લે તો પણ બ્યાં મુધી તે લઘ્વિધારી મુનિ પોતે જ તે ખાઈ જતા નથી ત્યાં મુધી તે સમાસ થતું નથી. આ પ્રભાવે તેના દાતાને વિષે પણ સ્મરણ લેવું આ લઘ્વિ ગૌતમાદિ ઋષિજનોને પ્રાપ્ત થયેલ હતી. “ચરણલઘ્વિ” એવા પ્રકારની લઘ્વિ છે કે જેના પ્રભાવથી મુનિજનો આકાશમાં અવર જવર કરી શકે છે, ચરણ-ગમન-તે ગમન- તે જેમનું હોય છે તેમને ચારણ કહે છે. આ લઘ્વિધારી બે પ્રકારના મુનિજન છે (૧) વિદ્યાચરણ (૨) જંઘાચરણ જેમને વિદ્યાના પ્રભાવથી આકાશમાં ગમનાગમતરૂપ લઘ્વિ પ્રાપ્ત થાય છે તેઓ “વિદ્યાચારણ” મુનિજન કહેવાય છે. આ લઘ્વિ નિરંતર છઠ, છઠની તપસ્યા કરનાર મુનિજનોને પ્રાપ્ત થાય છે. તથા જે મુનિયો ચારિત્રરૂપ તપ વિશેષના પ્રભાવથી એવી લઘ્વિયુક્ત થઈ જાય છે કે તેઓ જંઘા પર હાથ મૂકતા જ આકાશમાં ઉડી જાય છે, એ લઘ્વિનું નામ જંઘાચારણ છે. નિરંતર આઠમ, આઠમની તપસ્યા કરનાર મુનિજનોને આ લઘ્વિ પ્રાપ્ત થાય છે તેઓમાં જેઓ વિદ્યાચારણ મુનિજન છે તેઓ તેના પ્રભાવથી જંઘુદ્રીપની અપેક્ષાએ આઠમો જે નંદીશ્વર નામનો દ્વીપ છે ત્યાં મુધી જઈ

જો નંદીશ્વર નામ કી દ્વીપ હૈ વહાં તક આ જા સકતે હૈ । તથા જો - જંઘાચારણ મુનિજન હૈ વે તેરહવાં દ્વીપ જો રુચકવર દ્વીપ હૈ વહાં તક આ જા સકતે હૈ । વિદ્યાચારણ પ્રથમ ઉડાન મેં માનુષોત્તર પર્વત તક ચલે જાતે હૈ, ઓર દૂસરી ઉડાન મેં નંદીશ્વર દ્વીપ તક, ફિર વે જબ વહાં સે હોતે હૈ તો એક હી ઉડાન મેં અપને સ્થાન પર વાપિસ આજાતે હૈ । તથા મેરુ પર જાતે હુણ વે પ્રથમ ઉત્પાત સે નંદનવન તક જાતે હૈ ઓર દ્વિતીય ઉત્પાત સે પંડક વનતક જાતે હૈ, ફિર વે જબ વહાં સે વાપિસ હોતે હૈ તો એક હી ઉત્પાત મેં અપને સ્થાન પર આ જાતે હૈ । જંઘાચારણ જો મુનિ-જન હોતે હૈ વેં જંઘૂદ્વીપ કી અપેક્ષા એક હી ઉડાન મેં તેરહવેં રુચકવર દ્વીપ મેં પહુંચ જાતે હૈ, ઓર વહાં સે વાપિસ હોતે સમય એક હી ઉડાન મેં નંદીશ્વરદ્વીપ મેં આ જાતે હૈ । ઓર દૂસરી ઉડાન મેં અપને સ્થાન પર આ પહુંચતે હૈ । યદિ વે સુમેરુપર્વત પર જાને કે અભિલાષી હોતે હૈ તથા પ્રથમ ઉત્પાતમેં પંડકવન મેં જાતે હૈ । ફિર વાપિસ હોતે સમય એક હી ઉત્પાત સે નંદનવન મેં ઓર દ્વિતીય ઉત્પાતમેં અપને સ્થાન પર આ જાતે હૈ । રોહિણી પ્રજ્ઞસિ આદિ વિદ્યાઓં કે જો ધારણ કરને ચાહે હોતે હૈ વે વિદ્યાધારક હૈ । એક ઉપવાસ કા નામ ચતુર્થભક્ત, દો ઉપવાસ કા નામ વષ્ટભક્ત, ત્રીન ઉપવાસકા નામ અષ્ટભક્ત, ચાર ઉપવાસ કા નામ દશ-

આવી શકે છે, તથા જે જંઘાચરણ મુનિજનો છે તેઓ તેરમો રુચકવર નામનો દ્વીપ છે ત્યાં સુધી જઈ આવે શકે છે. વિદ્યાચારણ પહેલાં ઉડ્યનમાં માનુષોત્તર પર્વત સુધી ચાલ્યા જાય છે, બીજાં ઉડ્યનમાં નંદીશ્વર દ્વીપ સુધી જાય છે. પછી જ્યારે તેઓ ત્યાંથી પાછા ફરે છે ત્યારે એક જ ઉડ્યનમાં પોતાના સ્થાને આવી જાય કરે તથા મેરુ જતાં તેઓ પહેલાં ઉડ્યનમાં નંદનવન સુધી જાય છે. અને બીજાં ઉડ્યને પંડક વન સુધી જાય છે. પછી જ્યારે તેઓ ત્યાંથી પાછા આવે છે. ત્યારે એક જ ઉડ્યનમાં પોતાના સ્થાને આવી જાય છે. જંઘા-ચરણ મુનિજન જંઘૂદ્વીપની અપેક્ષાએ એક જ ઉડ્યનમાં તેરમાં રુચકવર દ્વીપમાં પહોંચી જાય છે, અને ત્યાંથી પાછા ફરતા એક જ ઉડ્યને તેઓ નંદીશ્વર દ્વીપમાં આવી જાય છે. અને બીજાં ઉડ્યને પોતાને સ્થાને પહોંચી જાય છે. જો તેઓ સુમેરુ પર્વત પર જવાની ઇચ્છા કરે તો પહેલાં ઉત્પાતથી પંડક વનમાં જાય છે, પછી પાછાં ફરતી વખતે એક જ ઉત્પાતે નંદન વનમાં અને બીજે ઉત્પાતે પોતાના સ્થાનમાં આવી જાય છે. રોહિણી પ્રજ્ઞસિ આદિ વિદ્યાઓ ધારણ કરનારને વિદ્યાધારક કહે છે. એક ઉપવાસને ચતુર્થભક્ત, બે ઉપવાસને વષ્ટભક્ત, ત્રણ ઉપવાસને અષ્ટભક્ત, ચાર ઉપવાસને દશભક્ત,

મમ્ભક્ત, પાંચઉપવાસ કા નામ દ્વાદશમ્ભક્ત, છઠ્ઠ ઉપવાસ કા નામ ચતુર્દશમ્ભક્ત, સાત ઉપવાસ કા નામ ષોડશમ્ભક્ત, હૈં. ઇન ઉપવાસોં કો જો મુનિજન કરતે હૈં વે ચતુર્થ મ્ભક્તિક આદિ મુનિજન હૈં । ઇસી તરહ જો અર્ધમાસ આદિકે ઉપવાસોં કો કરતે હૈં વે અર્ધમાસ આદિ મ્ભક્તિક હૈં । જો મુનિજન ઇસ પ્રકાર કા અભિગ્રહ વિશેષ ધારણ કર લેતે હૈં કિ હમ ઊસી આહાર કો લેવેગે કિ જો આહાર ગૃહસ્થને અપને પ્રયોજન કે લિયે પાકપાત્ર સે ઉઠાકર દુસરે પાત્ર મેં નહીં રહ્યા હોગા । ઇસ પ્રકાર કા અભિગ્રહ વદ્ધ હોકર જો આહાર કી ગવેષણા કરને કે લિયે અપને સ્થાન સે યદિ ગમન કરતે હૈં વે ઉત્ક્લિષ્ઠ ચરક મુનિરાજ હૈં । તથા જો ઇસ પ્રકાર કા અભિગ્રહ કરકે આહાર લેને કે લિયે અપને સ્થાન સે જાતે હૈં કિ મેં વહી આહાર ગ્રહણ કરૂંગા જો ગૃહસ્થ ને અપને લિયે પાક પાત્ર સે નિકાલ કર દુસરે પાત્ર મેં રહ્યા હોગા । ઇસ પ્રકાર કે અભિગ્રહ કો ધારણ કર જો આહાર કી ગવેષણા કરને કે લિયે અપને સ્થાન સે બાહર ઇનગણ કરતે હૈં વે નિશ્ક્લિષ્ઠચરક હૈં । તથા જો મુનિજન અન્ત-નીરસ, તક્કણાહમિશ્રિત ઔર પર્યુષિત (વાસી) વહ્લ, ચળક-ચના આદિ

પાંચ ઉપવાસને દ્વાદશભક્ત, છ ઉપવાસને ચતુર્દશભક્ત, સાત ઉપવાસને ષોડશભક્ત, કહે છે. એ ઉપવાસો કરનાર જે મુનિજનો છે તે ચતુર્ભક્તિક આદિ મુનિજનો કહેવાય છે. એ જ પ્રમાણે જે અર્ધમાસ આદિ સમયના ઉપવાસો કરે છે તેમને અર્ધમાસમ્ભક્તિક આદિ કહે છે. જે મુનિજન એવા પ્રકારનો અભિગ્રહ ધારણ કરે છે કે અમે એવો જ આહાર લઈશું કે જે ગૃહસ્થો પોતાના ઉપયોગને માટે સંધવાના વાસણમાંથી લઈ ને બીજા પાત્રમાં નહીં રાખ્યો હોય. આ પ્રમાણે અભિગ્રહ બાંધીને જે આહારની શોધમાં પોતાને સ્થાનેથી બહાર નીકળે છે તેમને ઉત્ક્લિષ્ઠચરક મુનિરાજ કહે છે. તથા જે મુનિરાજ એવા પ્રકારનો અભિગ્રહ ધારણ કરીને પોતાને સ્થાનેથી આહાર લેવા નીકળે છે કે “હું” એવો જ આહાર વહોરીશ કે જે ગૃહસ્થે સંધવાના પાત્રમાંથી પોતાના ઉપયોગ માટે બીજા પાત્રમાં કાઢી રાખ્યો હોય. આ પ્રકારનો અભિગ્રહ કરીને જે આહારની શોધ કરવાને માટે પોતાને સ્થાનેથી બહાર નીકળે છે તે મુનિજન નિશ્ક્લિષ્ઠચરક કહેવાય છે. તથા જે મુનિરાજ અન્ત-નીરસ, છાશમિશ્રિત અને પર્યુષિત-વાસી વસ્ત, ચણક-ચણા આદિ આહાર લેવાનો અભિગ્રહ ધારણ કરીને તેની શોધ કરે છે તેઓ અન્તચરક છે. તથા

આહાર લેને કા અભિગ્રહ ધારણ કર ઉત્તરી ગવેષણા કરતે હૈં વે અન્ન-
ચરક હૈં । તથા પ્રાન્તચરક વે મુનિરાજ હૈં જો પુરાને વલ્લ, ચળક અને
કુલ્મથી આદિ અન્ન કો લેને કા અભિગ્રહ ચલ્લ હોકર મોચરી કરતે હૈં ।
તથા જો રુક્ષ મોજન હી મૈં લૂંગા, હસ પ્રકાર કી પ્રતિક્ષા ધારણ કરતે
હૈં । જો ડુંચે નીચે કુલોં મૈં સામાન્ય રૂપ સે ભિક્ષા ગ્રહણ કરને કે
સ્વભાવવાલે હોતે હૈં વે સમુદાનચરક હૈં અન્નગ્લાયક-અન્નસે, અર્થાત્
અભિગ્રહ વિશેષ કે કારણ વાસી અન્ન જાને સે ગ્લાન અર્થાત્ કૃશ-
દુષ્ણે જો હૈં વે અન્નગ્લાયક હૈં । ભિક્ષા વિશુદ્ધિ કે સિવાય જો મૌન-
વ્રત કો ધારણ કર આહાર કે લિયે જાતે હૈં વે મૌનચરક સાધુ હૈં । તથા
જિનકા પેમા કલ્પ હોતા હૈં કિ જો આહાર હમૈં સંસૃષ્ટ-ભરે હુણ હાથ
ઔર ખાજન-પાત્ર સે દિયા જાવેમા વહી મૈં લૂંગા વે સંસૃષ્ટ કલ્પિક હૈં ।
તથા-તજ્ઞાનસંસૃષ્ટ કલ્પિક વે મુનિજન હૈં જો હસપ્રકાર કા નિયમ લેતે હૈં
કિ જિસ પ્રકાર કા દેયદ્રવ્ય દેને યોગ્ય હૈં વહ ઉસી પ્રકાર કે દ્રવ્ય સે સંસૃષ્ટ
હસ ખાજન સે દિયા જાવેમા તો હી લેગે । જો હસ પ્રકાર કા નિયમ
ધારણ કરતે હૈં કિ દાતા ને જિસ આહાર કો અપને આપ અપને પાસ
જાને કે લિયે સ્વા હોગા વહી હમ લેગે । હસ પ્રકાર કે અભિગ્રહ વાલે

પ્રાન્તચરક મુનિરાજ તેમને કહે છે કે જોગ્ય જૂનાં વાલ, ચણા, કળથી આદિ
અન્ન લેવાનો અભિગ્રહ કરીને મોચરી કરે છે. તથા જે મોચી પ્રતિક્ષા ધારણ
કરે છે કે હું કૃશ (લૂણ) લોજન ન લઈશ તેમને રુક્ષચરક કહે છે. જે
એક સરળી રીતે કાચા તથા નીચા ફળમાં ભિક્ષા ગ્રહણ કરવાના સ્વભાવવાળા
છે તેઓ સમુદાનચરક છે. અન્નગ્લાયક-આસ અભિગ્રહને કારણે વાસી અન્ન
ખાવાથી ગ્લાન એટલે કે કૃશ-દુષ્ણા પડી ગયેલાં હોય તેમને અન્નગ્લાયક
કહે છે. ભિક્ષા વિશુદ્ધિના સિવાય, જે સાધુ મૌનવ્રત ધારણ કરીને આહારને
માટે બંધ છે તેમને મૌનચરક કહે છે. તથા જેમનો એવો નિશ્ચય-ધારણા
હોય છે કે “જે આહાર અમને સંસૃષ્ટ-ભરેલા હાથ તથા ખાજન પાત્રમાંથી
વહેરાવાશે તેજ અમે લઈશું” એવાં મુનિઓને સંસૃષ્ટકલ્પિક કહે છે. તથા
જે મુનિઓનો એવા પ્રકારનો નિયમ કરે છે કે વહેરાવવાનું જે દ્રવ્ય હોય તે
એજ પ્રકારના દ્રવ્યથી ભરેલ પાત્રમાંથી વહેરાવવામાં આવશે તો ન લઈશ,
તે મુનિઓને તજ્ઞાનસંસૃષ્ટકલ્પિક કહે છે. જે મુનિઓનો એવો નિયમ ધારણ
કરે છે કે દાતાએ પોતે ન પાતાને ખાવા માટે જે આહાર પોતાની પાસે
રાખ્યો હોય તે ન હું લઈશ. આ પ્રકારના અભિગ્રહ ધારી મુનિઓ સ્વનિ-

ઉપનિહિતક હૈં । શંકા આદિ દોષોં કે પરિહાર સે શુદ્ધ આહાર કા ગ્રહણ કરના । સ્કા નામ શુદ્ધૈષણા હૈં । સ્કા શુદ્ધૈષણા સે જો સંપન્ન હોતે હૈં વે શુદ્ધૈષણિક હૈં । અર્થાત્ શંકા આદિ દોષોં સે રહિત શુદ્ધ આહાર કો ગ્રહણ કરને કા જિનકા અભિગ્રહ હોતા હૈં વે શુદ્ધૈષણિક હૈં । સંખ્યાપ્રધાનવાલી દત્તિયોં સે જો ગોચરી કે લિપે જાતે હૈં અર્થાત્ દાતા કે હાથ સે દેતે સમય સાધુ કે પાત્ર મેં ભક્તયાન આદિ કા જો ઁક વાર અવિચ્છિન્નરૂપ સે મિરના ઉસે દત્તિ કહતે હૈં, સ્કા પ્રકાર કો પાંચ છ આદિ દત્તિયોં કે લેને કા અભિગ્રહ જિન્હેં હોતા હૈં વે સંખ્યાદત્તિક હૈં । જિન સાધુઓં કો ઁશા નિયમ હોતા હૈં કિ હમ ઉસી આહાર કો લેંગે જો હમરે દૃષ્ટિ ગોચર હોગા । સ્કા પ્રકાર કે નિયમવાલે સાધુ દૃષ્ટિલામિક કહે જાતે હૈં । તથા અદૃષ્ટિલામિક વે સાધુજન હૈં જો પાકગૃહ કે મીતર સે નિકલે હુણ ઁસે ભોજન કો કિ જો દૃષ્ટિ મેં નાં આયા નહીં હૈં કેવલ કાન સે હી ઉસકા નામ સુન લિયા હૈં ઉસે લેને કા નિયમ ધારણ કરતે હૈં । અથવા—‘ પૂર્વ મેં અનુપલબ્ધ દાતા સે હી મેં મિશ્કા લૂંગા ’ સ્કા પ્રકાર કા જો નિયમવિશેષ રખતે હૈં વે અદૃષ્ટિલામિક મુનિ હૈં । ‘ હે-સાધો ! મેં આપ કે લિપે કયા દં અર્થાત્ આપકે લિપે કિસ વસ્તુ કી હ્મ સમય વાહના હૈં ’ સ્કા પ્રકાર દાતા કે દ્વારા પ્રશ્નવિષયીકૃત વસ્તુ

હિતક કહેવાય છે. શુદ્ધૈષણા એટલે શંકા આદિ દોષો રહિત શુદ્ધ આહાર ગ્રહણ કરવો. તે આ શુદ્ધૈષણાયુક્ત મુનિજનોને શુદ્ધૈષણિક કહે છે એટલે કે શંકા આદિ દોષોથી રહિત શુદ્ધ આહાર ગ્રહણ કરવાનો જેમનો અભિગ્રહ છે તેઓ. શુદ્ધૈષણિક છે, સંખ્યા પ્રધાનવાળી દત્તિયોથી જે ગોચરીને માટે લાયક છે એટલે કે દાતાના હાથથી આપતી વખતે સાધુના પાત્રમાં ભક્ત-પાન આદિનું ધારાવળી તૃપ્તિ વાના એક વખતમાં જેટલું પ્રવાહી રેડાય તેને દત્તિ કહે છે. આ પ્રકારની પાંચ, છ આદિ દત્તિયો લેવાનો જેમનો અભિગ્રહ હોય છે તેમને સંખ્યાદત્તિક કહે છે. જે સાધુઓને એવો નિયમ હોય છે કે જે આહાર અમારી નજરે પડશે તે જ આહાર અમે લઈશું, એવા નિયમ વાળા સાધુઓને દૃષ્ટિલામિક કહે છે. તથા અદૃષ્ટિલામિક મુનિજનો તેમને કહે છે કે જેઓ રસોડામાંથી ગઢારકાઢવામાં આવેલ એવું ભોજન સ્વીકારે છે કે જે નજરે પડ્યું હોતું નથી પણ તેનું નામ જ કહ્યું પડ્યું હોય છે. અથવા “અગાઉ જેની પાસેથી દાન ગ્રહણ ન કર્યું હોય એવા દાતા પાસેથી જ દાન ગ્રહણ કરીશ” એવા મુનિને અદૃષ્ટિલામિક કહે છે. “ હે મુનિરાજ ! હું આપને માટે શું આપુ ” એટલે કે “ આપ અત્યારે શી વસ્તુ લેવા માંગો છો ” આ

સુદર્શિની ટીકા અં ૧ સૂ. ૪ અહિંસાપ્રાપ્તમહાપુરુષનિરૂપણમ્

૫૬૫

કોલેને કા જિનકે અભિગ્રહ હોતા હૈ વે પૃષ્ઠલામ્લિક મુનિ હૈ જો આચામા-
મ્લવ્રત (આયંચિલ) સે યુક્ત હોતે હૈ વે આચામ્લિક મુનિ હૈ । પારણા કે
દિવસ મી જો પૂર્વાદિ કે સમય જ્ઞાને પીને કા ત્યાગ કર દેતે હૈ વે પુરિમદ્દુ-
પૂર્વાદિક મુનિ હૈ । તથા જો પારણા કે દિન મી એકાશનવ્રત કે ધારી
હોતે હૈ વે એકાશનિક હૈ । જો ઘૂન આદિ પદાર્થરૂપ વિકૃતિયોં સે વિહીન
હી ભોજન લેતે હૈ વે નિર્વિકૃતિક મુનિ હૈ । ‘ પાત્ર મેં ગિરને પહિલે જો
ભિક્ષા કી વસ્તુ સક્તુકાદિ રૂપ મોદક આદિ પિષ્ઠ અર્પિત કરતે સમય
બીચ મેં હી ફૂટકર પાત્ર મે પડેમી ઉસે હી મેં લૂગા ’ હિસ પ્રકાર જો
નિયમ ધારણ કરતે હૈ વે મિત્રપિંડપાતિક મુનિ હૈ । ‘ ઇતની હી વસ્તુ
-મહ્યપદાર્થ-જ્ઞાને યોગ્ય હમ ભોજન મેં જાવેગે ’ એસા નિયમ જિન
સાધુઓં કે હોતા હૈ વે પરિમિતપિંડપાતિક મુનિ હૈ । નીરસ, તક્ક (છાછ)-
મિશ્રિત ઓર પર્યુષિત ચણક આદિ અન્ન કા જો આહાર કરતે હૈ
વે અન્તાહારી મુનિ હૈ । પુરાનીં કુલથી, ચણ, ચના આદિ અન્ન કા જો
આહાર કરતે હૈ વે પ્રાન્તાહારી મુનિ હૈ । જો રસવર્જિત આહાર લેતે હૈ-
અર્થાત્ જો મુનિ હિંગ આદિ કે વધાર સે વર્જિત આહાર કો લેને કે
નિયમવાલે હોતે હૈ વે અરસાહારી હૈ । જિનમેં રસ નહીં હોતા એસે

પ્રમાણે દાતા દ્વારા પ્રશ્નવિપ્યીકૃત વસ્તુ લેવાનો જેમને અભિગ્રહ હોય છે તેમને પૃષ્ઠલામ્લિક મુનિ કહે છે. જે મુનિ આચામામ્લવ્રત યુક્ત હોય છે તેમને આચામામ્લિક મુનિ કહે છે. પારણાને દિવસે પણ જે પૂર્વાદિ મધ્યાહ્ન પહેલાં આવાપીવાનો ત્યાગ કરે છે તેમને પરિમદ્દુ-પૂર્વાદિક મુનિ કહે છે. તથા જે પારણાને દિવસે પણ એકાશન વ્રત ધારી હોય છે તેમને એકાશનિક કહે છે. જે ઘી આદિ પદાર્થરૂપ વિકૃતિયોથી રહિત ભોજન લે છે તેમને નિર્વિકૃતિક મુનિ કહે છે “ પાત્રમાં પડ્યા પહેલાં જે ભિક્ષાની વસ્તુ-સક્તુ કાદિરૂપ મોદક આદિ પિંડ અર્પણ કરતી વખતે વચ્ચેજ સાંચી જઈને પાત્રમાં પડશે તેને જ હું લઈશ ” આ પ્રકારનો નિયમ ધારણ કરનાર મુનિને મિત્રપિંડપાતિક મુનિ કહે છે. “ આટલી જ વસ્તુ ખાધ પદાર્થ-હું ભોજનમાં ખાઈશ ” એવો નિયમ ધારણ કરનાર મુનિજનોને પરિમિતપિંડપાતિક કહે છે. નીરસ, છાશ-મિશ્રિત, અને પર્યુષિત વાસી વાલ, ચણા આદિ અન્નનો આહાર કરનાર મુનિજનોને અન્તાહારી કહે છે. જૂની કળથી, વાલ ચણા આદિ અન્નનો આહાર કરનાર મુનિજનોને પ્રાન્તાહારી કહે છે. જે રસરહિત આહાર લે છે એટલે કે જે મુનિ હિંગ આદિના વધારથી રહિત આહાર લેવાના નિયમવાળા હોય છે

પુરાને ધાન્ય ઓદન આદિ અન્ન સે નિષ્પન્ન હુણ આહાર કો લેનેકા જિનકા નિયમ હોતા હૈ વે વિરસાહારી મુનિ હૈં । કૃતાદિ કે સંબંધ સે વર્જિત હુણ રુખે લૂખે આહાર કો લેનેકા જિનકા નિયમ હોતા હૈ વે રુક્ષાહારી મુનિ હૈં । વદરી ફલ ઘોર કે પિસે હુણ ચૂર્મ આદિ કા, તથા કુલ્મથી કોદ્રવ આદિ સે બને હુણ આહાર કા જો સેવન કરતે હૈં વે તુચ્છાહારી મુનિ હૈં । इसी तरह अन्न आहार से जो जीते हैं वे अन्नजीवी, प्रान्त आहार से जो जीते हैं वे प्रान्तजीवी, रुक्षाहार से जो जीते हैं वे रुक्षजीवी, तुच्छाहार से जो जीते हैं वे तुच्छजीवी मुनि हैं । अशन आदि की प्राप्ति होने पर अथवा नहीं होने पर जिनकी बाहिरी चेष्टा में—मुख में चक्षुरादि इन्द्रियों में म्लानता नहीं आती है वे उपशान्तजीवी मुनि हैं । तथा अन्तरंग में जिन साधुओं के आहार आदि की अप्राप्ति में क्रोधादि रुषायाँ का उपशमन रहता है वे प्रशान्तजीवी मुनि हैं । दोषवर्जित अन्नादि के खाने से ही जो अपना जीवन निर्वाह करते हैं वे त्रिविक्तजीवी मुनि हैं । क्षीर-दुग्ध, मधु-शर्करा आदि मधुरद्रव्य और सर्पि-भृत, इनपदार्थों का जो आहार नहीं करते हैं वे अक्षीरमधुसर्पिष्क मुनि हैं । मद्य और मांस का आहार नहीं करने अमद्यमांसाशिक मुनि कहलाते हैं । जो अतिशयरूप

તેમને અરસાહારી કહે છે. જેમાં રસ હોતો નથી એવા જૂના ધાન્ય, ચોખા આદિ અન્નમાંથી તૈયાર થયેલા આહાર લેવાના નિયમવાળા મુનિઓને વિરસાહારી કહે છે. ઘી વિનાનો દુધો આહાર લેવાનો જેમનો નિયમ છે તેમને રુક્ષાહારી મુનિ કહે છે. ઘોર આદિ ફળોનું ચૂર્ણ આદિ તથા કળર્થી, કોદરા વગેરેમાંથી બનેલા આહારનું જે સેવન કરે છે તેમને તુચ્છાહારી કહે છે, એજ પ્રમાણે અન્ન આહારથી જે છુવે છે તેમને અન્નજીવી, પ્રાન્ત આહારથી જે છુવે છે તેમને પ્રાન્તજીવી, રુક્ષ આહારથી જે છુવે છે તેમને રુક્ષજીવી અને તુચ્છ આહારથી જે છુવે છે તેમને તુચ્છજીવી મુનિ કહે છે. ભોજન આદિ પ્રાપ્ત થાય કે ન થાય છતાં પણ જેમની મુખમુદ્રામાં, ચક્ષુરાદિ ઇન્દ્રિયોમા મ્લાનતા દેખાતી નથી તેમને ઉપશાન્તજીવી મુનિ કહે છે. તથા અન્નરંજમાં જે સાધુઓને આહારહિની અપ્રાપ્તિમાં ક્રોધાદિ કષયોનું ઉપશમન રહે છે તેઓ પ્રશાન્તજીવી મુનિ છે, દોષારહિત અન્નાદિ ખાઈને જ જે પોતાનો જીવન નિર્વાહ ચલાવે છે તેમને ત્રિવિક્તજીવી મુનિ કહે છે. ક્ષીર-દુધ, મધુ-શર્કરા આદિ મધુર દ્રવ્ય તથા સર્પિ-ભૂત એ પદાર્થોનો જે આહાર નથી કરતા તેમને અક્ષીરમધુસર્પિષ્ક મુનિ કહે છે. મધ અને માંસનો જે આહાર કરતા નથી તેમને અમદ્યમાંસાશિક મુનિ

સુરિગિની ટીકા અ૦ ૧ સુ૦૪ અર્ધસાપ્રાપ્તમહાપુરુષનિરૂપણમ્

૫૧૭

મેં કાર્યોત્સર્ગ આદિ તપશ્ચરણ કરતે હું વે સ્થાનાતિગ મુનિ હું । એક રાત્રિકી આદિ પ્રતિમાધારણ કર કાર્યોત્સર્ગ વિશેષરૂપ મેં હી રહતે હું વે પ્રતિમા-સ્થાયી મુનિ હું । જિનકા સ્થાન ઉત્કુટુક હોતા હૈ, અર્થાત્ જો ઉત્કુટ આસન સે બેઠતે હું વે સ્થાનોત્કુટુક હું । સિંહાસન પર બેઠે હુણ વ્યક્તિ કા કિ જિસકે દોનોં પૈર નીચે ટિકે હુણ હોં જબ વે સિંહાસન નીચે સે હટા લિયા જાતા હૈ તો વહ ઉસ સમય ઉસી સ્થિતિ મેં-અર્થાત્-અપની પૂર્વ કી સ્થિતિ મેં હી રહે તો ઉસ આસન કા નામ વીરાસન હૈ । હસ આસન કો જો આચરિત કરતે હું વે વીરાસનિક મુનિ હું । જિસ આસન મેં દોનોં પુત સમાનરૂપ સે જમે રહતે હૈ ઉસ આસન કા નામ નિષધ્યા હૈ । હસ નિષધ્યા સે જો બેઠતે હું વે નૈપચિક હૈ । દંડ કી તરહ જિનકા શરીર ભૂમિપર આપત-લંબા-જિસ આસન મેં રહતા હૈ-ઉસકા નામ દંડાપત આસન હૈ । હસ આસન કો જો આચરિત કરતે હું વે દળ્ડાયતિક હું । અર્થાત્-જિસ મેં જમીન પર દંડ કી તરહ લંબા હોકર સોયા જાતા હૈ ઉસ આસન કો જો મુનિ કરતે હું વે દળ્ડાયતિક મુનિ કહલાતે હું । જિસ આસન મેં દોનોં પૈરોં કી ઇડી ઓર મસ્તક કા પૃષ્ઠભાગ જમીન પર લગા રહતા હૈ, તથા પીઠ કા ભાગ જમીન સે ઉઠા

કહે છે. જે અતિથય પ્રમાણમાં કાર્યોત્સર્ગ આદિ તપશ્ચરણ કરે છે તેમને સ્થાનાતિગ મુનિ કહે છે. જે એક રાત્રિની આદિ પ્રતિમા ધારણ કરીને કાર્યોત્સર્ગના વિશેષરૂપમાં રહે છે તેમને પ્રતિમાસ્થાયી મુનિ કહે છે. જેમનું સ્થાન ઉત્કુટુક હોય છે, એટલે કે જે ઉત્કુટુક આસને બેસે છે તેમને સ્થાનોત્કુટુક મુનિ કહે છે. સિંહાસન પર બેઠેલ વ્યક્તિ કે જેના બંને પગ નીચે ટેકવેલા હોય, તેની નીચેથી સિંહાસન ખસેડી લેવામાં આવે છતાં પણ તે બે પોતાની એજ સ્થિતિમાં-એટલે કે પોતાની અગાઉની સ્થિતિમાં રહે તો તે આસનને વીરાસન કહે છે. આ આસનનું સેવન કરનાર મુનિને વીરાસનિક કહે છે. જે આસનમાં બંને પુત સમાન રીતે દંડ રહે છે તે આસનનું નામ નિષધ્યા છે. આ નિષધ્યાથી જે બેસે છે તેને નૈપચિક કહે છે દંડની જેમ જેમનું શરીર જમીન પર આપત-લંબાયેલ સ્થિતિમાં જે આસનમાં રહે છે તે આસનને દંડાપત આસન કહે છે. આ આસન કરનારને દળ્ડાયતિક મુનિ કહે છે. એટલે કે જેમાં જમીન પર દંડની જેમ લાંબા થઈને સૂઈ જવાય છે, તે આસન જે મુનિ કરે છે તેમને દળ્ડાયતિક મુનિ કહે છે જે આસનમાં બંને પગની એડી તથા મસ્તકનો પાછળનો ભાગ જમીન પર લાગી રહે છે તથા પીઠનો

તથા-‘ સુયથરવિદિતત્થકાયબુદ્ધિણો ’ શ્રુતથરવિદિતાર્થકાયબુદ્ધયઃ=શ્રુતથરા:-
શ્રુતજ્ઞાનિનસૈવિદિતો જ્ઞાતોઽથેકઃ યઃ=તત્ત્વજ્ઞાનરાશિઃ શ્રુતસમૂહો યથા સા
શ્રુતથરવિદિતાર્થકાયા, તાદશી બુદ્ધિયેષાં તે તથોક્તાઃ, તથા-‘ ધીરમહુબુદ્ધિણો

રહતા હૈં-ઉસ આસન કો લગંડાસન કહતે હૈં । ઇસ આસન સે જો મુનિ
શયન કરતે હૈં વે લગંડશાયી મુનિ હૈં । સોતે સમય જો એક હી કરબટ
સે સોતે હૈં-કરબટ નહીં બદલતે હૈં-એસે મુનિ એક પાર્શ્વિક હૈં । જો
સાધુજન, શિતિ, ઉષ્ણ આદિ કી આતાપના લેતે હૈં વે આતાપક મુનિ હૈં ।
હેમન્ત ઋતુ મેં જો પ્રાવરણ સે રહિત હોતે હૈં વે અપ્રાવૃત મુનિ હૈં । જો મુનિ
અપને મુખ કે શ્લેષ્મા કે અપરિષ્ઠાપક હોતે હૈં વે અનિષ્ઠીવક મુનિ હૈં ।
જો મુનિ શરીર મેં સુજલો ચલને પર સી ઉસે નહીં જુગાતે હૈં વે મુનિ અકળ્હ-
યક હૈં । તથા જો અપને કેશોં કા મૂછ ઢાઢી આદિ કે ચાલોં કા-તથા નણો
કા સંસ્કાર નહીં કરતે હૈં-જૈસે હૈં વૈસા હી ઉન્હેં રાખે રહતે હૈં એસે મુનિ ધૃત-
કેશદ્વમશ્રુલોમનચવાલે કહલાતે હૈં યહ જિન કલ્પિક મુનિયોંકા તથા
જો મુનિ અપને સમસ્ત શરીર કા સંસ્કાર નહીં કરતે હૈં વે મુનિ સર્વ,
ગાત્રપ્રતિકર્મવિમુક્ત હૈં । તથા (સુયથરવિદિતત્થકાયબુદ્ધિણો) શ્રુતજ્ઞા-
નિયોં દ્વારા તત્ત્વજ્ઞાનરાશિરૂપ શ્રુતસમૂહ જિસકે પ્રભાવ સે વિદિત હોતા
હૈં એસા જિન્હોં કી બુદ્ધિ હૈં તથા (ધીરમહુબુદ્ધિણો) અવગ્રહાદિરૂપમતિ

ભાગ જમીનથી અદ્ધર રહે છે, તે આસનને લગુડાસન કહે છે. તે આસને
જે મુનિ શયન કરે છે તેમને લગંડશાયી મુનિ કહે કહે છે. સૂતી વખતે જે
એકજ પડખે શયન કરે છે-પડખું ફેરવતા નથી-તેવા મુનિઓ એકપાર્શ્વિક કહે-
વાય છે. જે મુનિઓ શીત, ગરમી આદિની આતાપના લે છે તેમને આતા-
પક મુનિ કહે છે, હેમન્ત ઋતુમાં જે પ્રાવરણથી રહિત હોય છે. તેમને
અપ્રાવૃત મુનિ કહે છે. જે મુનિ પોતાના મુખના શ્લેષ્માના
અપરિષ્ઠાપક હોય છે તેમને અનિષ્ઠીવક કહે છે જે મુનિ શરીરનાં ખુજલી
થળ આવવા છતાં પણ તેને ખજવાળતા નથી તેમને અકળ્હયક મુનિ કહે છે.
જે મુનિ પોતાના કેશના-મૂંછ, ઢાઢી આદિના વાળના તથા નખના સંસ્કાર
(છેદન) કરતા નથી, જેવા હોય તેવાજ તેને રહેવા દે છે. એવા મુનિઓને
ધૃતકેશદ્વમશ્રુલોમનચા કહે છે. તથા જે મુનિ પોતાનાં ગતસ્ત શરીરનાં સંસ્કાર
કરતા નથી તે મુનિઓને સર્વગાત્રપ્રતિકર્મવિમુક્ત ” કહે છે તથા “ સુયથર
વિદિતત્થકાયબુદ્ધિણો ” શ્રુતજ્ઞાનીઓ દ્વારા તત્ત્વજ્ઞાનરાશિ શ્રુતસમૂહ જેના પ્રભા-
વથી વિદિત થાય છે એવી જેમની બુદ્ધિ છે તથા “ ધીરમહુબુદ્ધિણો ” જેમની

ય ' ધીરમતિવુદ્ધયશ્ચ=ધીરા-સ્થિરામતિઃ અવગ્રહાદિકાઃ. બુદ્ધિઃ=ઔત્પત્તિકયા-
યેષાં તે તથોક્તાઃ, તથા ' જે તે ' એ તે, ' આસીવિસડગ્ગતેયકપ્પા ' આશીવિષો-
ગ્રતેજઃ કલ્પાઃ=આશીવિષાઃ=સર્પાસ્તે ચ તે ઉગ્રતેજસઃ ઘોરવિષધરાશ્ચ આશીવિ-
ષોગ્રતેજસસ્તત્તલ્પાઃ યે તે-આશીવિષોગ્રતેજઃ કલ્પાઃ ! તથા ' નિચ્છયવવસાયપ-જ્ઞ-
ત્તકયમરૂપા ' નિશ્ચયવ્યવસાયપર્યાપ્તકૃતમતયઃ=નિશ્ચયઃ=વસ્તુનિર્ણયો, વ્યવસાયઃ=
ઉદ્યમઃ પુરુષકારણિતિ યાવત્ તદ્વિષયે પર્યાપ્તા=પરિપૂર્ણા કૃતા=વિક્રિતા મતિર્બુદ્ધિર્યે-
સ્તે તથોક્તાઃ=સકલવસ્તુનિર્ણાયકા इत्यर्थः. તથા- ' જિચ્ચં સજ્ઞાયજ્ઞાણા ' નિત્યં
સ્વાધ્યાયધ્યાનાઃ-નિત્યં-સર્વદા સ્વાધ્યાયો-વાચનાદિકમ્, ધ્યાનં=દુર્ધ્યાનતશ્ચિ-
ત્તિનોદ્ધરૂપં યેષાં તથોક્તાઃ, અતएव ' અણુબદ્ધધમ્મજ્ઞાણા ' અણુબદ્ધધર્મધ્યાનાઃ=
અણુબદ્ધ-ધારાપ્રવાહન્યાયેન નિરન્તરં ધૃતં ધર્મધ્યાનમ્-આજ્ઞાવિચયાપાયવિચયવિષા-
કવિચયસંસ્થાનવિચયરૂપં યૈસ્તે, તથા- ' પંચમહાવ્યવચરિત્તજુત્તા ' પશ્ચમહાવ્રતચારિત્ર-
યુક્તાઃ=પશ્ચમહાવ્રતાનિ=પ્રાણાતિપાતાદિવિરમણલક્ષણાનિ તદ્દૂપં યચ્ચારિત્રં તેન

एवं औत्पत्तिकी आदि बुद्धि जिनकी धीर-स्थिर है, तथा (जे ते आसी
विसडगगतेयकपपा) जो सर्प के समान उग्रतेज वाले है, (निच्छयवव-
सायपज्जत्तकयमइया) निश्चयवस्तुनिर्णय करने में एवं उद्यम-पुरुषार्थ
करनेमें जिन्होंने अपनी बुद्धि को परिपूर्ण बना लिया है, अर्थात् जो अच्छी
तरह से समस्त वस्तुओं का निर्णय करने वाले हैं तथा (निचच्चं सज्झा-
यज्झाणा) जो नित्य ही वाचनादिरूप स्वाध्याय में एवं आर्चरौद्ररूप
दुर्ध्यान से चित्त निरोधरूप ध्यान में मग्न रहते हैं, इसीलिये (अणुबद-
धम्मज्झाणा) धारा प्रवाह न्याय से जिनका निरन्तर आज्ञाविचय,
अपायविचय, संस्थानविचय रूप धर्मध्यान होता रहता है, तथा (पंच-
महव्वय चरित्तजुत्ता) जो प्राणातिपातादि विरमणरूप पंचमहाव्रतों से

અવગ્રાહાદિરૂપ મતિ અને ઔત્પત્તિકી આદિ બુદ્ધિ ધીર-સ્થિર છે, તથા “ જે
તે આસી વિસડગ્ગતેયકપ્પા ” જે સર્પના સમાન ઉગ્ર તેજવાળા છે, “ નિચ્છય
વવસાય પજ્જત્તકયમહયા ” નિશ્ચયવસ્તુ નિર્ણય કરવામાં અને ઉદ્યમ-પુરુષાર્થ
કરવામાં જેમણે પોતાની બુદ્ધિને પરિપૂર્ણ બનાવી લીધી છે, એટલે કે જે
સારી રીતે સમસ્ત વસ્તુઓનો નિર્ણય કરનાર છે, તથા “ નિચ્ચં સજ્ઞાય-
જ્ઞાણા ” જે નિત્યવાચનાદિરૂપ સ્વાધ્યાયમાં અને આર્ચરૌદ્રરૂપ દુર્ધ્યાનમાંથી
ચિત્તનિરોધરૂપ જ્ઞાનમાં લીન રહે છે, તેથી “ અણુબદ્ધધમ્મજ્ઞાણા ” ધારા પ્રવાહ
ન્યાયથી જેમનું નિરન્તર આજ્ઞાવિચય, અપાય વિચય, સંસ્થાન વિચયરૂપ ધર્મ-
ધ્યાન રહ્યાં કરે છે, તથા “ પંચમહાવ્યવચરિત્તજુત્તા ” જે પ્રાણાતિપાતાદિ વિર-

યુક્તા યેતે તથા—‘ સમિયાસમિર્દિસુ ’ સમિતાઃ સમિતિપુ=ઈર્વાદિપદ્ધસમિતિભિર્યુક્તા
 इत्यर्थः, तथा—‘ समिपपावा ’ समितपापाः=समिते=शान्तं पापं=प्राणातिपातादि-
 रूपं येषां ते तथोक्ताः, तथा ‘ छविवहजगवच्छला ’ पड्विवजगद्वत्सलाः=पह
 जीवनिकावहिता इत्यर्थः, तथा—येते ‘ निच्चमप्पमत्ता ’ नित्यमप्रमत्ताः=सर्वदा
 प्रमादरहिताः सन्ति, ‘ एएहि’ एतैश्च पूर्वोक्तगुणविशिष्टैः, तथा—‘ अण्णेहि य’
 अन्यैश्च अनुकूललक्षणैर्गुणवद्भिर्या सा=जगत्प्रसिद्धा एषा भगवती अहिंसा
 ‘ अणुपालिया ’ अनुपालिता— वाङ्मनःकाययोगैराश्रितेत्यर्थः ॥ सू-४ ॥

યુક્ત બને હુણ હૈં, તથા (સમિહસુસમિયા (જો ઈર્વા આદિ પાંચ સમિ-
 તિયોં સે યુક્ત હૈં ઓર इसी कारण से (समिइपावा) जिन्हों के
 प्राणानिपातादिरूप पार शान्त हो चुके हैं, तथा (छविवह जगवच्छला)
 जो सदा छहकाय के जीवों की रक्षा करने में बत्सल भाववाले होते हैं
 तथा (निच्चमप्पमत्ता) जो पांच प्रमादों से नित्य रहित होते हैं (एएहि)
 ऐसे इन पूर्वोक्त गुणों से विशिष्ट महात्माजनों द्वारा तथा (अण्णेहि)
 इस प्रकार के लक्षणों से युक्त अन्य गुणवालों द्वारा (जा सा भगवई)
 यह जगत्प्रसिद्ध भगवती अहिंसा (अणुपालिया) मन, वचन, और
 काय, इन तीन योगों की एकाग्रता से अच्छी तरह आराधित की गई है।

भावार्थ—અહિંસા તત્ત્વ કો યદ્યપિ પ્રત્યેક સિદ્ધાન્તકારોને અપને ૨
 સિદ્ધાન્તાનુસાર અપનાયા હૈં । પરન્તુ इस तत्त्व का बाहिरी स्वरूप
 विवेचन करते ही वे रह गये हैं । अन्तरंग स्वरूप विवेचन उनकी दृष्टि

મણરૂપ પાંચ મહાવ્રતોથી યુક્ત થયેલ છે, તથા “ સમિહ સુસમિયા ” જે ઈર્વા
 આદિ પાંચ સમિતિયોથી યુક્ત છે અને એ જ કારણથી “ સમિપાવા ”
 જેમનાં પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ પાપ શાન્ત થઈ ગયાં છે, તથા “ છવિવહજગવ-
 ચ્છલા ” જે સદા છકાયના જીવોની રક્ષા કરવામાં વત્સલ ભાવ વાળા હોય
 છે, તથા “ નિચ્ચમપ્પમત્તા ” જે સદા પાંચ પ્રમાદોથી રહિત હોય છે “ એએહિ ”
 એવા એ પૂર્વોક્ત ગુણોથી યુક્ત મહાત્માજનો દ્વારા તથા “ અણ્ણેહિય ” આ
 પ્રકારના ગુણોથી યુક્ત અન્ય ગુણવાનો દ્વારા “ જા સા ભગવઈ ” આ જગત્પ્ર-
 સિદ્ધાત ભગવતી અહિંસા “ અણુપાલિયા ” મન, વચન, અને કાય, એ ત્રણે
 યોગોની એકાગ્રતાથી સારી રીતે આરાધવામાં આવી છે.

ભાવાર્થ—અહિંસા તત્ત્વને જે કે દરેક સિદ્ધાન્તકારોએ પોત પોતાના
 સિદ્ધાન્તાનુસાર અપનાવેલ છે, પણ આ તત્ત્વના બાહ્ય સ્વરૂપનું જ વિવેચન
 તેમણે કયું છે, અન્તરંગ સ્વરૂપ વિવેચન તેમની નજરે ન પડ્યું, તેનું પરિ-

सुदर्शनी टीका अ. १ सू० ४ अहिंसाप्राप्तमहापुरुषनिरूपणम्

१०१

में नहीं आया। इसका कारण केवल यही हुआ कि उनकी अन्तरंग दृष्टि इस महनीय तत्त्व तक गहराई के साथ नहीं पहुँच पाई। इसके वास्तविक अन्तरंग स्वरूप का विवेचन यदि हमें कहीं मिलता है तो वह एक बीतराग परंपरा में ही मिलता है। इसका कारण यहाँ यह हुआ कि जिन तीर्थंकर गणधर आदिकों ने इस तत्त्व का विवेचन किया वे बहुत ही बड़ी सूक्ष्मदृष्टिवाले थे। ज्ञान के पूर्ण विकास से वे इतने अधिक विज्ञानी बन चुके थे कि प्रत्येक पदार्थ अपनी समस्त अवस्थाओं के साथ उनके उस विशिष्ट ज्ञान में दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित झलकता रहता था। अतः इस प्रकार के ज्ञान से उन्होंने अहिंसा भागवती के वास्तविक स्वरूप का दर्शन किया है तभी जाकर उन्होंने अपने सिद्धान्तों में इसका सूक्ष्मानिर्गुण विवेचन किया है। यह विवेचन उद्देश्यों से नहीं हो सका। यही बात सूत्रकारने अपने इस सूत्र द्वारा प्रदर्शित की है वे कहते हैं कि इस अहिंसा भागवती के दर्शन उन महापुरुषों ने किये हैं कि जो अपरिमित केवल ज्ञान और दर्शन के अधिपति थे। शील, विनय, तप और संयम से जिन्होंने अपनी आत्मा को फिलकुल 'सौटंची के' सोने जैसा बना लिया था। जिनके पास राग द्वेष जैसे विषमाल भोग्य पण्डित ग्राह्य सर्वथा विनष्ट हो चुके

क्षाम केवल ज्ञेय आचार्य के तेमनी अन्तरंग दृष्टि या मझान तत्त्वमां उडाखुथी प्रयेशी नथी. तेना वास्तविक अन्तरंग स्वस्वतुं विवेचन आपणुने बीतराग परंपरा सिवाय अन्य सिद्धांतोमां गणतुं नथी. तेतुं कारण ज्ञेय छे के जे तीर्थंकर, गणधर आदिज्जे आ तत्त्वतुं विवेचन क्युं छे तेज्जे गहु ज हीर्घदृष्टिवाला हुता. ज्ञानना पूरुं विज्ञायथी तेज्जे ओरका अथा विज्ञानी भनी गया हुता के प्रत्येक पदार्थ तेनी समस्त अवस्थाज्जे सद्धित तेमना ज्ञेय विशिष्ट ज्ञानथी जेमदर्पणमां प्रतिबिम्ब देणाय तेम स्पष्टरूपे देणाता हुता, तेथी ज्ञेय प्रकारनां ज्ञानथी तेमज्जे भगवती अहिंसाज्जे वास्तविक स्वस्वतुं दर्शन क्युं हुतुं, तेथी ज्ञेय तेज्जेज्जे पोताना सिद्धांतोमां तेतुं सूक्ष्ममां सूक्ष्म विवेचन क्युं ज्ञेय, आविवेचन हज्जेज्जे वटे थर्क शक्युं नही ज्ञेय ज्ञेय वात सूत्रकारे पोताना या सूत्र द्वारा प्रदर्शित करी छे. तेज्जे उछे छे के आ भगवती अहिंसानां दर्शन ते महापुरुषोमां क्यो छे के ज्ञेय अन्त ज्ञान अने दर्शनना अधिपति हुता, जेमज्जे शील, विनय, तप अने संयम द्वारा पोताना आत्माने " सो टयना " सोना ज्ञेय विशुद्ध बनाये हुतो. जेमनी पासे रागद्वेषपी समर्थ योद्धा लो लोगा थर्कने तदन नष्ट थया हुता. ज्ञेयलोड जेमनी

अथ ने-अहिंसारूपप्रथमसंस्कारं पालयितुमुद्यतास्तेषां यद्विधेयं तदाह—
 मूलम्-इमं च पुढवी-दग्-अगणि-आरुय-तरुण-तसथावर-
 सव्वभूयसंजयदयद्वयाए सुद्धं उच्छं गवेसियव्वं अकयमकारिय-
 मणाहुयमणुद्विद्धं अकीयकडं नवकोटिहिं परिसुद्धं दसहिं यदो-
 सेहिं विपमुक्कं उग्गम उप्पायणेसणासुद्धववगयचुय च्चइयचत्त-
 देहं च फासुयं च न निसिज्जकहापयोयणक्खासु ओवणियं न
 तिगिच्छासंतमूलभेसज्जकज्जेउं न लक्खणुप्पाय सुमिणजोइ-
 सनिमित्त-कहकुहकप्पउत्तं न विडंभणाए न विरक्खणाए न
 वि सासणाए न विडंभणरक्खणसासणाए भिक्खंगवेसियव्वं,
 न वि वंदणाए न विमाणाए न वि पूयणाए न वि वंदणमाणा-
 णपूयणाए भिक्खं गवेसियव्वं, न वि हीलणाए न वि निंदणाए

थे । तीन लोक जिनकी चरण सेवा कर अपने आपको धन्य मानता था । उन्हीं के आदेशानुसार उनकी शिष्यप्रशिष्य परंपरा में हुए मनः पर्यय और अविधिज्ञानधारियों ने इस अहिंसा भगवती को भेद प्रभेदों से जाना, और उसे विशेषरूप से देखा । पूर्वधरो ने इसे श्रुत-निषद् किया । वैकियलब्धिधारियों ने इस भगवती का अजन्म पालन किया । एवं आभिनिबोधिक ज्ञानियों से लेकर सर्वगात्रप्रतिकर्म विमुक्तादि अनेक महापुरुषों ने इस अहिंसा भगवती को अपनी २ शक्ति के अनुसार बहुतही अच्छी तरह से पाला है ॥ सू० ४

सेवा करीने पोतानी जतने धन्य मानता होता. ज्येयना च आदेश प्रभावे तेमनी शिष्य-प्रशिष्य परंपरा धर्त गयेत मनः पर्ययज्जे अविधिज्ञानीज्येय आ भगवती अहिंसाने भेद-प्रभेदो सद्धि जाणी अने तेनु' विशेषरूपे दर्शय कथु'. वैकिय लब्धिधारीज्येय आ भगवतीनु' अपनपर्यंत पालन कथु'. अने आभिनिबोधिक ज्ञानीज्येय लब्धिने सर्वगात्र प्रतिकर्म विमुक्ता आदि अनेक महापुरुषो ज्येय आ भगवती अहिंसानु' पोत पोतानी शक्ति प्रभावे धर्त च सारी रीते पालन कथु' छे. ॥ सू. ४ ॥

न वि गरिहणाए न वि हीलणानिंदणा गरिहणाए भिक्खं
गवेसियव्वं, न वि भेसणाए न वि तज्जणाए न वि ताल-
णाए न वि भेसणतज्जणतालणाए भिक्खं गवेसियव्वं, न
वि गारवेणं न वि कुहणाए न वि वणीमगयाए न वि
गारवकुहणवणीमगयाए भिक्खं गवेसियव्वं, न वि मित्तयाए
न वि पत्थणाए न वि सेवणाए न वि मित्तयपत्थणसेवणाए
भिक्खं गवेसियव्वं, अण्णाए अगट्ठिए अदुट्ठे अदीणे-
अविमणे अकल्लणे अविसाई अपरितंतजोगी जयणघडण-
करणचरियविनयगुणजोगसंपउत्ते भिक्खू भिक्खेसणाए
गिरए । इमं च णं सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठणाए पावयणं
भगवया सुकहियं अत्तहियं पेच्चा भवियं आगमेसिभदं सुद्धं
नेयाउयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खपावाण विउसमणं ॥५॥

टीका—‘ इमं च पुढवी ’ इत्यादि—

‘ पुढवीदगअगणिमारुयतरुगणतसथावरसव्वभूयसंजमदयट्ठयाए ’ पृथ्वीद-
काग्निमारुततरुगणत्रसस्थावरसर्वभूतसंजमदयार्थ, तत्र-पृथिवी-प्रसिद्धा, दकं=
पानीयम्, अग्निः, मारुतो=वायुः, तरुगणः=वनस्पतिसमूहः, त्रसाः=द्वीन्द्रियादयः,
स्थावराः=पृथिव्यादिपञ्चकम्, एतेषां सर्वभूतानां=सर्वमाणिनां संयमो रक्षणं

जो इस अहिंसारूपप्रथमसंवरद्वार को पालन करने के लिये उद्यत
हैं उन्हें क्या करना चाहिये सो कहते हैं—‘ इमं च ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(पुढवी-दग-अगणि-मारुय-तरुगण-तस-थावर-सव्वभूय
संजम दयट्ठयाए) पृथिवी, दक-जल, अग्नि, वायु, वनस्पति समूह,
द्वीन्द्रियादिक पांच स्थावर, इन सब प्राणियों की रक्षा निमित्त दयारूप

जेओ आ अहिंसाइप प्रथम संवरद्वारतुं पालन करवाने भाटे तैथार
थथा छे तेमणे शुं करवुं जेधे ते कहे छे— “ इमं च ” इत्यादि

टीकार्थ—(पुढवी, दग, अगणि, मारुय, तरुगण, तस, थावर, सव्वभूय, संजमदयट्ठयाए)
पृथिवी, दक, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति समूह, द्वीन्द्रियादिक त्रस, पृथि-
व्यादिक पांच स्थावर, जे गंधा प्राणीओनी रक्षा निमित्त दयाइप प्रयोजनने

तिन्निमित्ता या दकाया तस्या अर्थे=प्रयोजने तस्मै, ' इमं च ' इदं च-वक्ष्यमाण
' सुद्धं ' शुद्धं=निर्दोष ' उच्छं उच्छं=स्तोकं स्तोके ग्रहणरूपमज्ञादिकं ' गवेसप-
व्वं ' गवेषितव्यम्, यथा-लूनावज्ञेनात्कणादानं तथैव साधुनाऽपि गृहस्थार्थं
निष्पादितमन्नादिकस्तोकं स्तोके गवेषणीयमिति भावः । कीदृशम्-उच्छं गवेषि-
तव्यम्? इत्याह—' अकयं ' अकृतं=साधु निमित्तमनिष्पादितम्, ' अकारियं '
अकारितम्=अन्यद्वारा न कारितम्, तथा-' अणाहुयं ' अनाहुतम्=गृहस्थेन साधो-
रनिमन्त्रणपूर्वकं दीयमानम्, ' अणुहिट्टं ' अनुहिष्टम्=औद्देशिकादि दोषवर्जितम्,
तथा-' अकीयकडं ' अकीतकृतं=साधूनां कृते मूल्येनानिष्पादितम् । एतदेव
वर्णयन्नाह—' नवकोडोहिं ' नवकोटिभिः, न इन्ति १, न घातयति २, धनन्तं

प्रयोजन के लिये (इमं च) इम वक्ष्यमाण (सुद्धं उच्छं गवेसपव्वं)
शुद्ध-निर्दोष, आहार आदि को उच्छ थोड़े २ रूप में गवेषणा करना
चाहिये, अर्थात् जिस प्रकार काटे गये खेत से कर्णों का आदान किया
जाता है उसी प्रकार साधु को गृहस्थ ने अपने लिये बनाये हुए
भोजन आदि में से थोड़ी थोड़ी मात्रा में उसके यहां से आहार आदि
लेना चाहिये। आहारादि (अकयं) साधु के निमित्त उसने नहीं बनाया
हो और (अकारियं) न दूसरों से उसने बनवाया हो (अणाहुयं)
बुलाकर-अर्थात्-निमन्त्रण करके जो न दिया जाय, (अणुहिट्टं) औद्दे-
शिक आदि दोषों से जो वर्जित हो, तथा (अकीयकडं) साधुओं के
निमित्त मूल्य देकर जो नहीं खरीदा गया हो तथा (नव कोडिहिं-
परिसुद्धं) नवकोटियों से अर्थात् नौ प्रकार से जो परिशुद्ध हो, अर्थात्
जिस आहार में साधु के निमित्त जीवों को हिंसा नहीं हुई हो, न

भाटे (इमं च) इसवक्ष्यमाण, (सुद्धं उच्छं गवेसपव्वं) शुद्ध, निर्दोष आहार
आदिनी थोडा थोडा प्रमाणमां गवेषणा करनी जेधजे, जेठले के जेम लखुयेस
जेतरसमांथी क्खुलुं आदान कराय छे, जे २ प्रमाणे साधुजे, गृहस्थ द्वारा
पोताने भाटे अनावयेस जोजन आदिमांथी थोडां थोडां प्रमाणमां आहार
आदि लेवे जेधजे. तेहे ते आहारादि (अकयं) साधुने भाटे अनाव्या होवां
जेधजे नही, अने (अकारियं) जीजनी पास अनावराव्या होवा जेधजे नही.
(अणाहुयं) आलावीने जेठले ते निमन्त्रीने जे न अपाय, (अणुहिट्टं)
औद्देशिक आदि दोषोथी जे रहित होय, तथा (अकीयकडं) साधुने भाटे
भूख आपीने ते खरीदयेस न होय, तथा (नवकोडिहिं परिसुद्धं) नव कोटीओ
वडे-नव प्रकारे जे परिशुद्ध होय, जेठले के तेहे साधुने निमित्ते जीज पास छिसा

नानुजानाति ३, न पचति ४, न पाचयति ५, पचन्तं नानुजानाति ६, न क्रीणाति ७, न क्रापयति ७, क्रीणन्तं नानुजानाति ९, इत्येता नवकोटयः, आभिः 'परिशुद्धं' परिशुद्धं, तथा—'दसहिं य दोसेहिं' दशभिश्च दोषैः—शङ्कितादिदश-दोषैः 'विषमुक्तं' विषमुक्तम्, 'उगमउत्पायणेनणामुद्धं' उद्गमोत्पादनै-षणामुद्धं=आधाकर्मादयः षोडश उद्गमदोषाः, धात्र्यादयश्च षोडश उत्पादना-दोषाः, तदूपाया एषणा=गवेषणा, तथा शुद्धम्, तथा—'वचगयचुयचइय-चत्तदेहं च' व्यपगतच्युतत्याजितत्यक्तदेहं च=तत्र व्यपगताः=स्वयं पृथग्भूता आगन्तुका पिपीलिकादयः, च्युताः=मृताः स्वतः परतोवा दातव्यवस्थाश्रिताः

उसने साधु के निमित्त दूसरों से हिंसा कराई हो २, और न साधु के निमित्त हिंसा करने वाले की अनुमोदना की गई हो ३। तथा साधु के निमित्त जो स्वयं न पकाया हो १, दूसरों से नहीं पकाया गया हो २ और न जिसमें पकाने वाले की अनुमोदना की गई हो ३, तथा साधु के निमित्त जो पैसा देकर न खरीदा गया हो १, न दूसरों से खरीदवाया गया हो २ और न जिसमें खरीदने वाले की अनुमोदना की गई हो ३। इस प्रकार की इन नव कोटियों से विशुद्ध आहार आदि की गवेषणा साधु को करनी चाहिये। (दसहिय दोसेहिं विषमुक्तं) जो आहार शंकिन आदि दश दोषों से परि वर्जित हो (उगम उत्पायणेनणामुद्धं) उद्गम, उत्पादनरूप एषणा-गवेषणा से शुद्ध हो-आधाकर्म आदि सोलह उद्गमदोष हैं, धात्री आदि सोलह उत्पादना दोषों हैं। इन बत्तीस दोषों से जो रहित हो तथा (वचगयचुयचइयचत्तदेहं) (व्यपगत) जिस

करावी न होय, के साधुने निमित्ते हिंसा करवानी अनुमोदना धर्म न होय, तथा साधुने निमित्ते के तेषु गते जनाव्यु न होय, भीन पासे जनावराव्यु न होय, के जेने पचववानी अनुमोदना अपाध न होय तथा साधुने निमित्ते के पैसा आपीने भरीद क्यु न होय, के भीन पासे भरीद करावायु न होय, के भरीदनारने भरीदवानी अनुमोदना करार्ध न होय, जे रीते नव प्रकारे विशुद्ध आहार आदिनी साधुजे गवेषणुका स्वी जेधजे. (दसहिय दोसेहिं विषमुक्तं) के आहार शक्ति आदि हस दोषोथी रहित होय, (उगमउत्पायणेनणामुद्धं) उद्गम, उत्पादनरूप एषणा-गवेषणाथी शुद्ध होय,—आधाकर्म आदि सोलह उद्गम दोष छे, धात्री आदि सोलह उत्पादना दोष छे-जेधत्रीस दोषोथी के रहित होय, तथा (वचगयचुयचइयचत्तदेहं) (व्यपगत) के आहारमांथी डीडी आदि जेवा जते के अलग धर्म गया होय, तथा (चुय) जेवा स्वयं चव गया

पृथिवीकायिकादयः 'चइय' त्याजिताः=दातव्यपदार्थात् दायकेन भृत्यादि द्वारा पृथकारिताः, अथवा 'चत्ता' स्वयमेव दायकेन त्यक्ताः=पृथक्कृता देहाः=जीवशरीराणि यस्मादाहारान् नयोक्तम्, अतएव 'फासुयं च' प्रासुकं च=व्यपगतजीवं च, एतादृशम्-आहारजननादिकं गवेषितव्यम्। तथा कीदृशं भैक्षं न गवेषितव्यम्? इत्याह—'न निसिज्जकहापभोगणक्खामु ओवणीयं' न निषद्य कथाप्रयोजनाख्याश्रुतोपनीतं, तत्र-निषद्य आसने उपविश्य यत् कथा-प्रयोजनं=धर्मकथानिमित्तम् आख्या=श्रुताम्=आख्यानं प्रतिपदशास्त्रं, तेन तथा-विधकथाकरणेन, यत् उपनीतम्=धर्मकथाकर्त्रे दायकेन दातुमानोतमशनादिकं, तन्न गवेषितव्यमित्यग्रेण सम्बन्धः। तथा—'न तिमिच्छामंनमूलभेसज्जकज्जहेउं' न चिकित्सा मन्त्रमूलभैषज्यकार्यहेतु = चिकित्सा=रोगनिवारणलक्षणा, मन्त्रः=आहार से पिपीलिकादिक जीव स्वयं अलग हो गए हों तथा (चुय) जीव स्वयं चव गये हों अथवा अग्न्यादि के संयोग से चवगये हों, (चइय) दाता ने भृत्यादि द्वारा पृथक् करा दिये हों, (चत्ता) स्वयं दाता ने पृथक् करदिये हों, (फासुयं च) प्रासुक ऐसा अशन आदि मुनिजनों को कल्प्य है और ऐसे ही आहार की उन्हें गवेषणा करनी चाहिये। तथा जो ऐसा न हो उसकी उन्हें गवेषणा नहीं करनी चाहिये, इसी विषयको अब सूत्रकार "न निसिज्ज" इत्यादि पदों द्वारा प्रकट करते हैं, वे कहते हैं कि (न निसिज्जकहापभोगणक्खामु ओवणीयं) आसन पर बैठ कर धर्म कथा सुनाते समय यदि कोई दाता उन मुनिजन के पास देने के लिये अशनादि देय द्रव्य लाया हो तो वह उन मुनिजनों को कल्पना नहीं लेना है। तथा—(न तिमिच्छामंनमूलभेसज्जकज्जहेउं) जिस भैक्ष्य की प्राप्ति में मुनि को चिकित्सा-रोगनिवारण के निमित्त

छोय अथवा अग्नि आदिना संयोगशी नाश पाभ्या छोय, (चइय) दाताએ નોકરાદિ દ્વારા અલગ કરાવ્યા છોય, (ચત્તા) દાતાએ બંતે તેમને અલગ કર્યા છોય, (ફાસુયંચ) પ્રાસુક એવો આહાર આદિ મુનિઓને કહે છે અને એવા જ આહારની તેમણે ગવેષણા કરવી બેઠએ, તથા જે આહાર એવો ન છોય તેની ગવેષણા તેમણે કરવી બેઠએ નહીં. એ જ વિષયને હવે સૂત્રકાર "ન નિસિજ્જ" ઇત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે. તેઓ બતાવે છે કે (ન નિસિજ્જ-કહાપભોગણક્કામુઓવણીયં) આસને બેસીને ધર્મકથા સંભળાવતી વખતે બે ઢોઇ દાતા તે મુનિને આપવાને માટે અશનાદિ દેયદ્રવ્ય લાવ્યો છોય તો તે નિજનેાને કહેવતા નથી, તથા (નતિમિચ્છામંનમૂલભેસજ્જકજ્જહેઉં) જે આહારની પ્રાપ્તિ માટે મુનિને ચિકિત્સા-રોગ નિવારણને માટે ઇલાજ, મંત્ર-

भूतादिनिग्रहलक्षणः, मूलम् वृक्षवल्लयादीनां, भैषज्यं=द्रव्यसंयोगरूपम्, एतच्च-
तुष्टयरूपं कार्यमेव हेतु यत्र तत्तयो भैक्षं न भवेत्तत्तयमित्यग्रेण सम्बन्धः ।
तथा-‘ न लक्ष्णुण्णपायसुमिण जोइस निमित्तकहकुहकणउत्तं ’ न लक्षणोत्पात
स्वप्नज्योतिष निमित्तकथाकुहक प्रयुक्तं=तत्र-लक्षणं=स्त्रीपुरुषादि लक्षणं, उत्पाताः
=भूकम्पादिशास्त्राणि, स्वप्नः=स्वप्नशास्त्रम्, ज्योतिषं नक्षत्रादि शुभाशुभसूचकं
शास्त्रम् निमित्तं=भूतभविष्यदादि सूचकं शास्त्रम्, कथा=कामकथा सूचकं शास्त्रम्,
कुहकं=परेषां विस्मयोत्पादकप्रयोगः, एभिः प्रयोगैर्विस्मितेन दायकेन प्रयुक्तं

इलाज, मंत्र-भूतादि ग्रह के निग्रह निमित्त उपायभूत मंत्र का प्रयोग,
मूल-वनौषधि, एवं भैषज्य-अनेक औषधि मिश्रित दवा, ऐसी भिक्षा
मुनिजनों को कल्प्य नहीं होती है । तथा न लक्ष्णुण्णपायसुमिणजो-
इसनिमित्तकहकुहकणउत्तं) जिस भिक्षा की प्राप्ति मुनि को लक्षणों
के स्त्री पुरुष आदि के चिह्नादिकों के-दिखाने का प्रदर्शन करना पड़े,
भूकंप आदि के शास्त्र का कथन करना पड़े, स्वप्नशास्त्र का, ज्योतिष-
शास्त्र का, निमित्त शास्त्र का, काम कथा सूचक शास्त्र का, तथा दूसरों
के लिये आश्चर्योत्पादक प्रयोगों का सहारा लेना पड़े, ऐसी भिक्षा
मुनिजन के लिये कल्प्य नहीं है । तात्पर्य इसका यह है कि दाता को
उनके हस्त आदि की रेखाओं से प्रसन्न करके, भूकंप आदि का शुभा-
शुभफल कथन करके, काम वर्द्धक कथाओं को कह करके, स्वप्न शास्त्र
का प्ररूपण करके, ज्योतिषशास्त्र में अपनी विद्वत्ता का प्रदर्शन करके
तथा आश्चर्यकारी प्रयोगों को दिग्वा करके यह कहना कि मैं बहुत

भूतादिग्रहना निग्रहने भाटे उपायभूत मंत्रने प्रयोग, मूल-वनौषधि, अने
भैषज्य-अनेक औषधि मिश्रित दवा, आदि अतावपुं पडे जेवो आहार मुनि-
जनोने कडेपे नही तथा (नलक्ष्णुण्णपायसुमिणजोइसनिमित्त कह कुहकणउत्तं)
जे भिक्षानी प्राप्तिने भाटे मुनिने स्त्री-पुरुष आदिना चिह्नादिकोने अतावपानुं
प्रदर्शन करवुं पडे. भूकंप आदिना शास्त्रोनुं कथन करवुं पडे, स्वप्न शास्त्र,
ज्योतिषशास्त्र, निमित्त शास्त्र, कामकथा सूचक शास्त्र, तथा भीजने भाटे
आश्चर्योत्पादक प्रयोगो वगेरेनी महह लेवी पडे जेवी भिक्षा मुनिजनोने कडेपे
नही तेनुं तात्पर्य जे छे के दाताने तेमना हस्त आदिनि रेखाओ पडे पुश
करीने, भूकंप आदिनुं शुभाशुभ क्षण कहीने, कामवर्धन कथाओ कहीने, स्वप्न
शास्त्रनुं प्ररूपण करीने, ज्योतिषशास्त्रमां पोतानी विद्व-ता अतावीने, तथा
आश्चर्यकारक प्रयोगो अतावीने पोते बहुत अ महान विद्वान छे जेवी छाप

भैक्षं न गवेषितव्यम् । तथा—‘ न विडम्बणाए ’ नापि दम्भनया=मायाप्रयोगेण भैक्षं गवेषितव्यम्, एवं ‘ नचि रक्खणाए ’ नापि रक्षणया=दायकवस्तुरक्षणेन, ‘ न वि सासणाए ’ नापि शासनया=शिक्षणेन=तत्र पुत्रपौत्रादिकं शिक्षयिष्यामीति कथनेन समुदायेनाह—‘ न विडम्भणरक्खणसासणाए ’ नापि दम्भन-
वद्वा भारी विद्वान् हं अतः मुझे यह अच्छी तरह अच्छी भिक्षा देगा, इस प्रकार के उपायों का जिस भिक्षा की प्राप्ति में सहारा लेना पड़े वह भिक्षा मुनि को कल्प नहीं कहीं गई है, अर्थात् इस प्रकार की क्रिया से मुनि को भिक्षा लेने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये । तथा (न विडम्बणाए) मायाचारी का सहारा लेकर भी भिक्षा वृत्ति मुनि को नहीं करनी चाहिये, अर्थात् जिस भिक्षा की गवेषणा करने में माया का प्रयोग करना पड़े ऐसी भिक्षा भी मुनिजन को कल्प नहीं है । (नचि रक्खणाए, न वि सासणाए, न विडम्भण रक्खणसासणाए भिक्खं गवेसियच्चं) इसी तरह जिस भिक्षा की गवेषणा करने में—प्राप्ति करने में—दायक की वस्तु के संरक्षण का भार अपने ऊपर आया हो, अर्थात्—दाता यह कहे कि “ महाराज ! आप इस वस्तु को देखे रहना मैं अभी आकर आपको भिक्षा देता हूँ—इस प्रकार दाता अपनी वस्तु के संरक्षण करने का भार मुनि को सौंपता हो और पीछे आकर भिक्षा देता हो तो वह भिक्षा मुनि को कल्प नहीं है । इसी तरह जिस भिक्षा की प्राप्ति में मुनि को यह भाव जगे कि “ मैं इस दाता के पुत्र पौत्र

पाडीने दाता पासेथी सास प्रभाषुमां भारी लिक्षानी आशा राखवी, वजेरे उपायेना के लिक्षामां सहासे देखे पडे तेवी लिक्षा साधुओने कहे नही. ओटले के ओ प्रकारना उपायेथी साधुओओ लिक्षा देवाना प्रयत्न करवा ओछओ नही. तथा (नचिडम्बणाए) मायाचारीनी मदद लधने पणु मुनिओ लिक्षावृत्ति करवी ओछओ नही. ओटले के के लिक्षानी प्राप्ति भाटे मायाने प्रयोग करयो पडे ओवी लिक्षा मुनिओनेने कहे नही. (न विरक्खणाए, न विसासणाए, न विडम्भण रक्खण सासणाए भिक्खं गवेसियच्चं) ओ ओ प्रभाषे के लिक्षानी प्राप्तिमां, दातानी वस्तुना संरक्षणेने सार पोताना पर आओ होय, ओटले के दाता ओम कडे के “ महाराज ! आप आ वस्तुनुं ध्यान राखजे हुं आपने लिक्षा आपु छुं ” आ रीते दाता पोतानी वस्तुना संरक्षणेनी जवाबदारी मुनिने सोपे अने पछी आवीने लिक्षा अर्पण करे तो ते लिक्षा मुनिनेकहे नही. ओ ओ प्रभाषे के लिक्षानी प्राप्तिमां मुनिना मनमां ओयो भाव जगे के “ हुं आ दाताना पुत्र, पौत्र आदिने लक्ष्मीश तो मने

सुवर्णिनी टीका अ० १ सू० ५ अहिंसापालककर्त्तव्यनिरूपणम्

६०९

रक्षणशासनेन ' भिक्षं ' भैक्षं ' गवेसियव्वं ' गवेपितव्वम् । तथा- ' न वि वंदणाए ' नापि वन्दनया-नापि प्रशंसया " दिग्ग्यापिनो भवद्गुणाः पूर्वश्रुताः, परमद्यभवानस्माभिःप्रत्यक्षीकृतः ' इत्येवं रूपया, वन्दनशब्दोऽत्र प्रशंसावाचकः, ' न वि माणण्या ' नापि माननया आसनादि प्रदानेन ' न वि पूयणाए ' नापि पूजनया-दायकाय किंचिद्वस्तुप्रदानरूपया एतदेव समुदायेनाह- ' न वि वंदण-माणण्याणाए ' नापि वन्दनमाननपूजनया ' भिक्षं गवेसियव्वं ' भैक्षं गवेपित-आदि को पढ़ा दंगा तो मुझे इसके यहां से भिक्षा मिलती रहेगी " ऐसे विचार से जो भिक्षा प्राप्त हो तो वह भिक्षा भी मुनि को नहीं लेनी चाहिये । इसी तरह जिस भिक्षा की प्राप्ति में युगपत् दंभन, रक्षण और शासन इनका प्रयोग करना पड़ता हो उस तरह से भी मुनि को भिक्षा की गवेषा नहीं करनी चाहिये । तथा (न वि वंदणाए, न विमाणणाए, न वि पूयणाए, न वि वंदणमाणणपूयणाए, न वि हीलणाए, न वि निंदणाए, न वि गरिहणाए, न वि हीलणा निंदणा गरिहणाए भिक्षं गवेसियव्वं) जिस भिक्षा की गवेषा करने में साधु को दाता की " आप की गुणराजि दिगन्तनक फैली हुई है- आपकी प्रशंसा मैं ने पहिले से ही सुन रखी है परन्तु साक्षात्कार आप का आज ही हुआ है " इस प्रकार से वंदना-प्रशंसा करनी पड़े ऐसी भिक्षा साधु को कल्प नहीं है । यहां वंदन शब्द प्रशंसार्थक है । जिस भिक्षा की प्राप्ति में दाता को आसन आदि का प्रदान पूर्वक सन्मान करके अर्थात् आसनादि प्रदान द्वारा दाता को प्रसन्न करके भिक्षा की प्राप्ति करनी पड़े-ऐसी भिक्षा भी साधु को लेना उचित नहीं है । इसी तरह दाता

तेने त्यांची शिक्षा मज्या करशे, " जेवा विचारथी जे शिक्षा प्राप्तथाय ते शिक्षा पणु साधुने कडेपे नही वणी जे शिक्षानी प्राप्तिमां युगपत्, दंभ, रक्षण अने शासनने प्रयोग करये पडे जे प्रकारनी शिक्षानी प्राप्ति मुनिने कडेपे नही. तथा (न वि वंदणाए, न विमाणणाए, न वि पूयणाए, न वंदणमाणणपूयणाए, न वि हीलणाए न वि निंदणाए, न वि गरिहणाए. न वि हिलणा निंदणा गरिहणाए भिक्षं गवेसियव्वं) जे शिक्षानी प्राप्ति भाटे साधुने दातानी " आपनी गुणराशि दिगन्त सुधी व्यापेल छे, मे आपनी प्रशंसा पडेलेथी जे सांजणी डती पणु आपने साक्षात्कार तो आजे ज थये " जे रीते वंदणा-प्रशंसा करवी पडे जेवी शिक्षा साधुने कडेपे नही. अही वंदन शब्द प्रशंसाना अर्थमां वपरथे छे. आसनादि आपनीने दातानुं सन्मान करवुं पडे अथवा ते रीते तेमने प्रसन्न करवा पडे ते प्रकारनी शिक्षा पणु साधुने कडेपे नही वणी दाताने चेतानी तरक्षी

व्यम् । तथा- 'नवि हीलणाए' नापि हीलनया="त्वं जात्या नीचोऽसि कथं त्वया भिक्षादीयते" इत्यादि दायक जात्युद्धाटनरूपावमाननया 'नवि निदणाए' नापि निन्दनया="त्वं कृपणोऽसि, वनीपकोऽसि" इति दायकदोषोद्धाटनया, 'न वि गरिहणाए' नापि गर्हणया=जनसमक्षं दायकनिन्दया, समुदायेनाह- 'न वि हीलगनिश्चणगरिहणाए' नापि हीलगनिन्दनगर्हणया 'मिक्खि-
को अपनी और से कुछ वस्तु देकर उससे भिक्षा की चाहना राज भिक्षा की गवेषणा करने का तरीका उचित नहीं है । अर्थात् इस तरीके से भिक्षा की चाहना करना योग्य नहीं है । इसी तरह युगपत्-एक ही दाता के प्रति वन्दन, मानन और पूजन का प्रयोग कर के साधु को भिक्षा की गवेषणा करना योग्य नहीं है । तथा दाता की जातिका उद्धाटनरूप अवमानना करके कि "तुम तो जाति में नीच हो भिक्षा कैसे दोगे" इस प्रकार से कहकर के उसे भिक्षा देने के लिये ऋजु करना और फिर भिक्षा कि गवेषणा निमित्त उसके यहां जाना यह भी साधु का भिक्षा प्राप्ति का तरीका साधु समाचारी के योग्य नहीं है । इसी तरह "तुम कृपण हो वनीपक हो" इस प्रकार से दाता के दोषों को उद्धाटन करना और फिर उसे भिक्षा देने के लिये ऋजु करना यह भी साधु के लिये भिक्षा की गवेषणा करने का तरीका कल्प्य नहीं है । जनता के समक्ष दायककी निन्दा करके, तथा एक ही साधु एक ही (दाता दायक के प्रति हीलना, निन्दना तथा गर्हणा करके भिक्षा की गवेषणा

कोई वस्तु आपोने तेनी भासेथी भिक्षा भोगववानी आशा राणीने भिक्षानी गवेषणा करवी ते युक्ति पण साधुने भाटे योग्य नथी. ओइसे के आ युक्तिथी भिक्षा भोगववानी ध्विछा राणीने ते योग्य नथी. वणी युगपत्-ओक ज दाता प्रति वन्दन, मानन, पूजन, आदिने प्रयोग करीने भिक्षानी गवेषणा करवी ते साधुने भाटे उचित नथी. तथा दातानी जातिना उद्धाटनरूप तिरस्कार करीने दा. त. "तु तो नीच छे, भिक्षा केवी रीते दइछि" आ रीते कहीने तेने भिक्षा अर्पण करवाने भाटे ऋजु करवो अने पछी भिक्षानी प्राप्ति भाटे तेने त्यां जवु, ओ भिक्षा प्राप्तिने उपाय सारा आधार वाणा साधुने भाटे उचित नथी. ओ ज प्रमाणे "तमे कंगुस छे वनीपक छे" ओ रीते दाताना दोषो लखेर करीने पछी तेने भिक्षा देवा भाटे ऋजु करवो ओ उपाय पण साधुने भिक्षाप्राप्ति भाटे कल्पतो नथी, बोडानी समक्ष दातानी निन्दा करीने तथा ओक साथे दातानी डिडना (तिरस्कार) निन्दा, तथा गर्हणा करीने भिक्षानी गवेषणा करवी ते साधुने भाटे उचित नथी. ओज प्रमाणे (न वि भेसणाए,

गवेसियच्चं ' भैक्षं गवेपितव्यम् । तथा ' न वि भेसणाए ' नापि भीषणया= दायकभयोत्पादनया, ' न वि तज्जणाए ' नापि तर्जनया—" ज्ञास्यसि रे दुष्ट ! इत्यादि तिरस्काररूपया ' न वि तालणाए ' नापि ताडनया=वपेटादिदान-रूपया, समुदायेनोच्यते—" न वि भेसणतज्जणतालणाए ' नापि भीषणतर्जन ताडनया भैक्षं गवेपितव्यम् । तथा ' न वि गारवेणं ' नापि गौरवेण ' अहं क्षत्रियोऽस्मीत्याद्यभिमानेन, ' न वि कुहणाए ' नापि कुहनया क्रोधेन, ' न वि वणीमगायाए ' नापि वनीपकतया=याचकवृत्त्या, समुदायेनाह—" न वि गारवकुहणवणीमगायाए ' नापि गौरवक्रोधवनीपकतया भैक्षं गवेपितव्यम् । तथा—" न वि मित्तयाए ' नापि मित्रतया=दायकेन सह मैत्रीभावोत्पादनेन, ' न वि पत्थणाए ' नापि प्रार्थनया, " यूयं दायकाः, याचकरक्षकाः वयं याचकाः, करना साधु को योग्य नहीं है । इसी तरह (न वि भेसणाए, न वि-तज्जणाए, न वि तालणाए, न वि भेसण-तज्जण-तालणाए भिक्खं गवे-सियच्चं) दायक (दाता) को भय का उत्पादन करके, " रे, दुष्ट मैं तुझे बतलाऊंगा " इस प्रकार दाता का तिरस्कार करके, दायक (दाता) को मोरपीट करके, तथा एक ही साथ एक ही दायक (दाता) के साथ भीषणा, तर्जना और ताडना करके भिक्षा की गवेषणा नहीं करनी चाहिये । तथा-(न वि गारवेणं न वि कुहणाए, न वि वणीमगायाए न वि गारवकुहणवणीमगायाए भिक्खं गवेसियच्चं) " मैं क्षत्रिय हूँ " इत्यादि अभिमान रूप गौरव से, क्रोध से, एवं याचक वृत्ति से, तथा एक ही साथ गौरव क्रोध एवं याचक वृत्ति से ओ भिक्षा की गवेषणा नहीं करनी चाहिये । (न वि मित्तयाए न वि पत्थणाए न वि सेवणाए न वि मित्तय-पत्थण-सेवणाए भिक्खं गवेसियच्चं) तथा

न वि तज्जणाए, न वि तालणाए, न वि भेसण-तज्जण-तालणाए भिक्खं गवेसियच्चं " दाताने अथ णतापीने " रे दुष्ट हुं तने बतावी दहथि " એ રીતે દાતાને તિરસ્કાર કરીને, દાતાને માર મારીને તથા એક સાથે દાતા પ્રત્યે બીષણ તર્જના અને તાડતા કરીને ભિક્ષાની ગવેષણા કરવી ગ્રંથ એ નહીં તથા " ન વિ ગારવેણં, ન વિ કુહणाए, न वि वणीमगायाए न वि गारवकुहण-वणीमगायाए भिक्खं गवेसियच्चं " " हुं क्षत्रीय छुं " આદિ અભિમાનરૂપ ગૌરવથી, ક્રોધથી, અને યાચક વૃત્તિથી તથા એક સાથે ગૌરવ, ક્રોધ અને યાચક વૃત્તિથી પણ ભિક્ષાની ગવેષણા કરવી ગ્રંથ એ નહીં. " ન વિ મિત્તયાए, न वि पत्थणाए, न वि सेवणाए, न वि मित्तय-पत्थण-सेवणाए भिक्खं गवे-सियच्चं " તથા દાતાની સાથે મિત્રતા કરીને, " આપ દાતા છો, ચાચકોના

દીયતામસ્મય ' નિત્યાદિરૂપયા, ' નવિ સેવણયા ' નાપિ સેવનયા=નાપિ સેવાવૃત્ત્યા, સમુદાયેનાહ- ' ન વિ મિત્તયપત્થણ સેવણા ' નાપિ મિત્રતા પ્રાર્થના સેવનયા ભૈશ્વં ગવેષિતવ્યમ્ । તર્હિ કથં ગવેષિતવ્યમ્ ? इत्याह- 'अण्णा ' अज्ञातः= ' धनिकोऽयं प्रव्रजितः ' इति दायकजनैरज्ञातः, ' अगद्धी ' अगृद्धाः= आहारादिषु गृद्धभाववर्जितः, ' अदुट्ठे ' अद्विष्टः-आहारेषु दायकेषु वा द्वेषभाववर्जितः, ' अदीणे ' अदीनः=दीनतावर्जितः, ' अविमणे ' 'अविमनाः=अलाभादिप्रयुक्तमान-सिकविकाररहितः, ' अकलुणे ' अकरुणः=स्वदुःखाप्रदर्शकः ' अविसाई ' अविषादी=

दायक-दाता के साथ मित्रता करके, " आप दाता हैं—याचकों के संरक्षक हैं, हम याचक हैं अतःआप हमें भिक्षा दीजिये " ऐसी दाता से प्रार्थना करके तथा दाता की सेवा वृत्ति करके भिक्षा की गवेषणा नहीं करनी चाहिये । इसी तरह इन तीनों बातों को एक साथ किसी दाता के साथ प्रयुक्त करके भिक्षा की गवेषणा साधु को नहीं करनी चाहिये । किन्तु (अण्णा अगद्धी अदुट्ठे अदीणे अविमणे अकलुणे अविसाई अपरित्तजोगी-जयण-घटण-करणचरिय विनय गुणजोग संपउत्ते भिक्खु भिक्खेसणाए णिरए) अज्ञात-दायक (दाता) जनों से " यह साधु धनिक थे और धनिक अवस्था से दीक्षित हुए हैं" इस रूप से अज्ञात बनकर अगृद्ध-आहार आदि में गृद्धभाव से वर्जित होकर, अद्विष्ट-आहार अथवा दाता में द्वेषभाव से विहीन होकर, अदीन-दीनता के भाव से रहित होकर, अविमना-भिक्षा के नहीं मिलने पर मानसिक विकार से

સંરક્ષક છે, અમે યાચક છીએ, તો આપ અમને ભિક્ષા આપો " એવી દાતાને પ્રાર્થના કરીને તથા દાતાની સેવાવૃત્તિ કરીને ભિક્ષા પ્રાપ્ત કરવી બેઠએ નહીં. એ જ રીતે એ ત્રણે જાણતોના દાતા પાસે એક સાથે પ્રયોગ કરીને સાધુએ ભિક્ષાની ગવેષણા કરવી બેઠએ નહીં પણ " અણ્ણા અગદ્ધિ અદુટ્ઠે અદીણે અવિમણે અકલુણે અવિસાઈ અપરિત્તજોગી જયણઘટણકરણચરિયવિનયગુણ જોગસંપડતે ભિક્કુ-ભિક્કેસણાણે નિરણે " અજ્ઞાત- "આ સાધુ ધનિક હતાં અટલે કે ધનિક સ્થિતિમાંથી દીક્ષિત થયેલ છે " એ વિષે દાતાઓથી અજ્ઞાત રહીને. અગૃદ્ધ-આહાર આદિમાં ગૃદ્ધ લાવથી રહિત બનીને, અદ્વિષ્ટ-આહાર અથવા દાતા પ્રત્યે દ્વેષ લાવ રહિત થઈને, અદીન-દીનતાના લાવથી રહિત થઈને, અવિમના-ભિક્ષા ન મળવા છતાં પણ માનસિક વિકારથી રહિત થઈને અકરુણ-કેઈ પણ પ્રકારે પોતાનાં દુઃખને કેઈ પણ રીતે પ્રગટ નહીં કરીને,

‘મિશ્કાલામો મવિષ્યાતિ ન વે’ ત્યાદિ વિષાદરહિતઃ, તથા—‘અપરિતંત જોગી’ અપરિતાન્તયોગી=અભાદિપુ તન્તનાટાદિ શબ્દવર્જિતઃ, તથા—‘જયણ-ઘટનકરણચરિયવિણયગુણજોગસંપડત્તે’ યતનઘટનકરણચરિતવિનયગુણયોગ-સંપ્રયુક્તઃ, તત્ર-યતનં પ્રાપ્તેષુ સંયમયોગેષુ ઉદ્યમઃ, ઘટનમ્=અપ્રાપ્તસંયમયોગપ્રાપ્તિ-ચેષ્ટનમ્, એતદ્ દ્વયં કુરુતે યઃ સ યતનઘટનકરણઃ, તથા—‘ચરિતવિનયઃ=સેવિતો યેન સ ચરિતવિનયઃ, તથા-ગુણયોગેન=સમાધિગુણયોગેન સંપ્રયુક્તો યઃ સ-ગુણ-યોગસંપ્રયુક્તઃ, એતેષાં કર્મધારયઃ, એતાદશો ‘મિક્ષુ’ મિશ્નુઃ=સાધુઃ મિક્ષે-સણાનિરપ્’ મિશ્નૌષણાનિરતઃ=મિશ્નાગવેષણાયાં નિરતો મવેદિતિ સમ્બન્ધઃ, એવમ્મૂતેન મિશ્નુણા મૈશ્નં ગવેષિતવ્યમિતિ ભાવઃ। અધોપસંહરન્નાહ—‘ઈમં ચ’ इत्यादि—‘ઈમં ચ ણં સર્વજગજીવરક્ષણદયદ્વ્યાપ્’ પાવયણં’ इदं च खलु ‘पावयणं’ प्रवचनं ‘सर्वजगज्जीवरक्खणदयद्वयाप’ सर्वे ये जगज्जीवाः=षड्-જીવનિકાયાઃ, તેષાં રક્ષણરૂપા યા દયા=અનુકમ્પા તદર્થ-સર્વજગજીવરક્ષણદયા-ર્થમ્ ‘મગવયા’ મગવતા મહાવીરેણ ‘સુકહિયં’ સુકથિતં ન્યાયાવાધિતત્વાન્, રહિત હોકર, અકરુણ-અપને દુઃખ કો કિસી કે પાસ કિસી મો રૂપ મેં પ્રકટ નહીં કરકે, અવિષાદી—“મિશ્કા કા લાભ મુશ્કે હોગા યા નહીં હોગા” હિસ પ્રકાર કે વિષાદ ભાવ કો છોડ કરકે અપરિતંતજોગી-મિશ્કાવૃત્તિ નહીં મિલને પર તનતનાને કો વૃત્તિ કા પરિત્યાગ કરકે, તથા- યતનઘટનકરણ-પ્રાપ્ત સંયમ મેં ઉદ્યમશીલ તથા અપ્રાપ્ત-સંયમ કી પ્રાપ્તિ કરને મેં નિરન્તર ચેષ્ટાશીલ, એસા સાધુ કિ જો ચરિત વિનય-વિનય સે યુક્ત વના હુઆ હૈ, તથા ગુણયોગસંપ્રયુક્ત-સમાધિગુણ કે યોગ સે જો યુક્ત હો રહા હૈ એસા હોકર મિશ્નુ-મુનિ મિશ્નૌષણા મેં-મિશ્કા કી ગવેષણા કરને મેં નિરત હોવે। (ઈમં ચ ણં પાવયણં) યહ પ્રવચન (સર્વજગજીવરક્ષણદયદ્વ્યાપ) ષડ્ નિકાયરૂપ જગત કે જીવોં કી રક્ષણરૂપ દયા કે નિમિત્ત (મગવયા સુકહિયં) મગવાન્

અવિષાદી—“મને મિશ્કાનો લાભ મગશે કે નહીં મળે” એ પ્રકારના વિષાદ લાવને છોડીને, અપરિતંતજોગી-મિશ્કા નહીં મળતા તનતનાવની વૃત્તિનો પરિ-ત્યાગ કરીને, તથા યતનઘટનકરણ-પ્રાપ્ત સંયમમાં ઉદ્યમશીલ તથા અપ્રાપ્ત સંયમની પ્રાપ્તિ કરવામાં નિરન્તર પ્રયત્નશીલ, એવા સાધુ કે જે ચરિતવિનય વિનયથી યુક્ત થયેલ છે, તથા ગુણયોગસંપ્રયુક્ત-સમાધિ ગુણના યોગથી જે યુક્ત થયેલ છે, એવા થઈને મિશ્નુ-મુનિ મિશ્કાની ગવેષણા કરવાને પ્રયત્નશીલ થાય. “ઈમંચ ણં પાવયણં” આ પ્રવચન “સર્વજગજીવ રક્ષણદયદ્વ્યાપ” જગતના છકાયના છકાયની રક્ષાકૃપ કરવાને નિમિત્તે “મગવયા સુકહિયં”

‘અત્તહિયં’ આત્મહિતમ્=આત્મનાં જીવાનાં હિતં-હિતકારણાત્, ‘પેચ્ચાભાવિયં’ પ્રેત્યભાવિકં-પ્રેત્ય = જન્માન્તરે ભવતિ=શુભફલતયા પરિણમતીત્યેવં શીલમ્, તથા-‘આગમેસિ મદં’ આગમિષ્યદ્ મદમ્=ભાવિકલ્યાણજનકમ્ ‘સુદં’ શુદં=નિર્દોષમ્ ‘નેયાઝયં’ નૈયાયિકં=ન્યાયયુક્તમ્ ‘અકુટિલં’ અકુટિલમ્ ક્ષુભોક્ષપાપકત્વાત્, ‘અણુતરં’ અણુતરમ્-સર્વપ્રધાનત્વાત્, તથા-‘સન્વ-દુક્ષલપાવાળં’ સર્વદુઃખપાપાનાં ‘વિઝસમણં’ વ્યુપશનમ્=ઉપશમકારકમિદં પ્રવચનમિદં પ્રવચનમિતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ ॥ સૂ.૫ ॥

મહાવીર ને કહા હૈ-હસ કથન મેં કિસી બી તરહ સે યુક્તિ ઓર શાસ્ત્ર સે વાધા નહીં આતી હૈ । (અત્તહિયં) યહ જીવોં કા હિતકારક હૈ ઓર (પેચ્ચાભાવિયં) પરભવ મેં શુભ ફલરૂપ સે યહ પરિણમતા હૈ । હસીલિયે (આગમેસિમદં) ભવિષ્યકાલ મેં યહ કલ્યાણજનક હૈ । (સુદં) ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત હોને કે કારણ હસમેં કિસી બો તરહ સે કોઈ પૂર્વાપરવિરોધરૂપ દોષ નહીં આતા હૈ-હસલિયે શુદ્ધ-નિર્દોષ હૈ, તથા (નેયાઝયં) ન્યાયયુક્ત હૈ । (અકુટિલં) હસકી આરાધના કરને સે જીવ મોક્ષ કો પ્રાપ્ત કરલેતે હૈં હસલિયે યહ અકુટિલ-ક્ષુભ હૈ । (અણુતરં) સમસ્ત સિદ્ધાન્તોં મેં હસકી પ્રધાનતા હોને સે યહ અણુતર હૈ । તથા (સન્વદુક્ષલપાવાળવિઝસમણં) સમસ્ત દુઃખોં કા ઓર પાપોં કા યહ ઉપશમકારક હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર હસ સૂત્ર દ્વારા યહ પ્રકટ કર રહે હૈં કિ જો અહિંસારૂપ સંવરદ્વાર કો પાલન કરને કે લિયે ઉચ્ચત હૈં ઝનકા યહ

ભગવાન મહાવીરે કહેલ છે-આ કથનમાં કોઈ પણ પ્રકારે-યુક્તિ અને શાસ્ત્રથી વાધો આવતો નથી. “અત્તહિયં” તે જીવોનું હિતકર્તા છે અને “પેચ્ચાભાવિયં” પરભવમાં શુભ ફળરૂપે તે પરિણમે છે. તેથી “આગમેસિમદં” ભવિષ્યકાળમાં તે કલ્યાણજનક છે. “સુદં” ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત હોવાથી તેમાં કોઈ પણ પ્રકારે કોઈ પૂર્વાપર વિરોધરૂપ દોષ આવતો નથી તેથી શુદ્ધ-નિર્દોષ છે, તથા “નેયાઝયં” ન્યાયયુક્ત છે. “અકુટિલં” તેની આરાધના કરવાથી જીવ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે તે કારણે તે અકુટિલ-ક્ષુભ છે, (અણુતરં) સમસ્ત સિદ્ધાન્તોમાં તે મુખ્ય હોવાથી તે અણુતર-સર્વોત્તમ છે. તથા “સન્વદુક્ષલપાવાળ વિઝસમણં” સમસ્ત દુઃખો તથા પાપોનું તે ઉપશમન કરનાર છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ સૂત્ર દ્વારા એ પ્રગટ કરે છે કે જેઓ અહિંસા રૂપ સંવરદ્વારનું પાલન કરવાને તત્પર છે, તેમનું એ કર્તવ્ય છે કે છાયાના

सुदर्शिनी टीका अ० १ सू० ५ अहिंसापालककर्तव्यनिरूपणम्

५१५

कर्तव्य है कि छहकाय के जीवों की रक्षा करें। क्यों कि यह लोक इन्हीं जीवों से भरा हुआ है अतः अपनी प्रत्येक प्रवृत्ति संयमित रखने से छहकाय के जीवों की रक्षा होती है। मुनिजन इस अहिंसा महाव्रत के पालक होते हैं अतः उनके लिये प्रभु का आदेश है कि वे ऐसे उच्छ आहार आदि की गवेषणा करने में निरत रहें कि जो शुद्ध हो, अकृत, अकारित, अननुमोदित, अनाहूत, अनुदिष्ट, अक्रीतकृत, कणकोटिविशुद्ध, शंकितादिदोषवर्जित, आधाकर्मादि दोषों से विहीन एवं जीवजन्तु रहित हो। ऐसा ही आहारादि उन्हें उनकी सामाचारी के अनुसार कल्पित कहा गया है। इससे विपरीत उनके अहिंसामहाव्रत के प्रतिकूल कहा गया है। इसलिये उन्हें उपश्रय में दाता द्वारा देने के लिये लाये गये आहार को कभी नहीं लेना चाहिये। चिकित्सा आदि करके जिसभिक्षा की प्राप्ति हो वह भी उन्हें वर्जनीय कही गई है। कारण मुनिजन सिंहवृत्ति के धारक होते हैं और अयाचक-वृत्ति वाले होते हैं, इस प्रकार के व्यवहार से प्राप्त भिक्षा में सिंहवृत्ति का संरक्षण नहीं होता है। भिक्षा की गवेषणा में दंभ का आचरण नहीं होना चाहिये, दायक (दाता) की वस्तु के रक्षण का प्रश्न नहीं होना चाहिये और न कोई एसी चान ही होना चाहिये कि जिससे मुनि के

ज्योती रक्षा करे. कारण के आ लोड के ज्योती लवेले छे, तेथी पोतानी हरेक प्रवृत्ति संयमित राखवाथी छायना ज्योती रक्षा थाय छे. मुनिजन आ अहिंसा महाव्रतना पालक होय छे, तेथी तेमने माटे लजयानने आदेश छे के तेमो जेवा उच्छ आहार आदिनी गवेषणा करे के जे शुद्ध होय, अकृत, अकारित, अननुमोदित,, अनाहूत, अनुदिष्ट, अक्रीतकृत, नवकोटि विशुद्ध शंकिता आदि दोष रहित, आधाकर्मादि दोषोथी रहित अने ज्यजन्तु रहित होय. जेवा आहार ज तेमनी समाचारी अनुसार तेमने माटे कवये तेवा कहेले छे. तेनाथी लवेले आहार अहिंसा महाव्रतने प्रतिकूल गणायो छे. तेथी तेमले उपश्रयमां दाता द्वारा अर्पण करवा माटे लेवायेले आहार कही लेवा लेईये नही. चिकित्सा आदि करीने जे बिज्ञानी प्राप्ति थाय ते पण तेमने माटे त्याज्य गणेल छे, कारण के मुनिजन सिंघवृत्तिना धारक होय छे तथा अयाचक वृत्ति वाणा होय छे. आ रीते भेजवेले आहारमां सिंघवृत्ति तथा अयाचकवृत्तिनुं संरक्षण थनुं नथी बिज्ञानी गवेषणां हंसनुं आयरण थनुं लेईये नही, दातानी वस्तुना रक्षणुने प्रश्न ललेो थयो लेईये नही के कोई वात न जनयी लेईये के जेथी मुनिना आचारविचारमां अन्तर पडे.

आचार विचार में अन्तर पड़ता हो। मैं तुम्हारे पुत्र को पढ़ा दूंगा, आप के गुण दिगन्ततक व्यापक हो रहे हैं आप बड़े दानी हैं, मैं ने आप को आज ही देखा है वैसे तो आपकी कीर्ति कई बार सुन चुका हूँ, ये सब बातें ऐसी हैं जो मुनि की आत्मा को हीन बनाती हैं उसे अपने कर्तव्य से गिराता हैं। इन सब बातों से जो आत्मा का पतन होता है वह सबसे बड़ी हिंसा है। इसीलिये मुनि को इस प्रकार के व्यवहार से प्राप्त होने वाली भिक्षा की गवेषणा करने का निषेध किया गया है। तथा दाता के प्रति मुनि को ऐसा भी व्यवहार नहीं करना चाहिये कि जिससे उसकी आत्मा में क्लेश भाव जगे, जैसे—‘तू कृपण है, वनीपक-याचक है तू क्या भिक्षा देगा, नीच व्यक्ति जो होते हैं वे भिक्षा नहीं देते हैं’ इत्यादि अपमान जनक शब्दों में एक तो भाषा समिति नहीं पलती है, तथा ऐसे व्यक्तियों में जिस किसी प्रकार से भिक्षा देने का जोश जागता है जो उस भिक्षा में शुद्धि का बाधक होता है, भिक्षा देते समय जिस आत्मा में संकलेश जगे वह भिक्षा मुनिजनों को अग्राह्य कही गई है। जिस प्रकार फूल को चाधा न पहुँचाकर उससे भ्रमर रस पी लेता है उसी प्रकार दाता को किसी भी प्रकार का संकलेशन न

“હું તમારા પુત્રને લાણીનીશ. આપના ગુણો દિગ્ગન્ત ગુપ્તી દેહાયેલ છે, આપ મોટા દાતા છો, આપની કીર્તિ તો મેં ઘણીવાર સાંભળી છે પણ આપને જોવાનો લાલ તો આજ જ મળ્યો.” આ બધી વાતો એવી છે કે જે મુનિના આત્માને હીન બનાવે છે. તેને પોતાની ફરજ ચૂકાવે છે. આ બધી વાતોથી આત્માનું જે પતન થાય છે તે સૌથી મોટી હિંસા છે, તે કારણે એવા પ્રકારના વ્યવહારની પ્રાંત થતી લિક્ષા પ્રહુષ્ટ કરવાનો મુનિને માટે નિષેધ છે— તથા મુનિએ દાતા પ્રત્યે એવો વ્યવહાર પણ ન કરવો જોઈએ કે જેથી તેના આત્મામાં કલેશ થાય, દા. ત. “તું કૃપણ છે, વનીપક થાયક છે, તું શુ લિક્ષા આપી શકવાનો છે, જે નીચ વ્યક્તિ હોય છે તે લિક્ષા દેતી નથી.” કૃત્યાદિ અપમાન જનક શબ્દોમાં એક તો લાપા સમિતિનું પાકન થતું નથી, તથા એવી વ્યક્તિઓમાં ગમે તે રીતે લિક્ષા આપવાનો બુદ્ધિસે પેદા થાય છે, જે તે લિક્ષાની શુદ્ધિમાં બાધક થાય છે. લિક્ષા દેતી વખતે દાતાના આત્માને કલેશ થતો હોય તો એવી લિક્ષા મુનિજનોને માટે અગ્રાહ્ય—(ન સ્વિકારવાને યોગ્ય) દર્શાયેલ છે. જેમ ફૂલને નુકશાન પહોંચાડ્યા વિના ભરતો તેમાંથી રસપાન કરે છે તેમ દાતાને કોઈ પણ પ્રકારનો કલેશ પહોંચાડ્યા વિના તેમની

સુવર્ણિની ટીકા અ૦૧ સૂ૦૬ ભાવનાસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૧૭

અર્હિસાયા: ૧૩ ભાવના ભવન્તીતિ તા: પ્રતિપાદયન્ પ્રથમામીર્યાસમિતિરૂપાં
માવનામાહ—‘તસ્મ દમા’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—તસ્મા દમા પંચ ભાવનાઓ પદમસ્સ વયસ્સ હુંતિ,
પાણાઙ્વાયવેરમાણં પરિવજ્જણદ્વયાણ ૧ પદમં-ઠાણ-ગમણ
ગુણજોગજુંજણજુગંતર-નિવદ્વયાણ દિટ્ઠીણ ફરિયઠ્ઠં કીડ-
પયંગતસુથાવરદયાવેરણ નિચ્ચં પુપ્પફલતતયપવાલકંદમૂલ-
દગમટ્ઠિયત્રીયહરિય પરિવજ્જણણ સમ્મં, एवं खु सन्वे पाणा
ण हीलियव्वा न नदियव्वा न गरहियव्वा न हिंसियव्वा
न छिंदियव्वा न भिंदियव्वा न वेहेयव्वा न अयं दुक्खं
च किंचिलव्वा पावेउं जे एवं इरियामुमियजोगेण भाविओ
भवइ अंतरप्पा असवलमसंकिलियुनिव्वणचरित्तभावणाए
अहिसए संजए सुसाहू ॥ सू० ६ ॥

પટ્ટેચાકર ઉસસે મુનિજન યાત્રા મેં ભિક્ષા લેતે હેં । હમી તરદ્ધ ઓર મી
કૌન ૨ સી પ્રવૃત્તિયાં ભિક્ષા કી ગવેષણા કરને મેં બાધક હોતી હેં— વે
સય હસ સૂત્ર મેં પ્રદર્શિત કી ગઈ હેં, । મુનિ કો ભિક્ષા કી ગવેષણા
કરતે સમય અજ્ઞાન, અગૃહ, અદ્વિષ્ટ, અદીન, અવિમન, અકરુણ, અવિષાદી
ઓર અપરિતાંતયોગી આદિ સ્થિતિ ચાલા રહના ચાહિયે । તમી જાકર
પૂર્ણરૂપ સે અર્હિસા મહાવ્રતરૂપ સંવરદ્વારપલતા હૈ ॥—॥ સૂ ૦ ૫ ॥

પાસેથી મુનિજન પરિમિત પ્રમાણમાં ભિક્ષા અરૂણ કરે છે એ જ પ્રકારે
બીજી કઈ કઈ પ્રવૃત્તિઓ ભિક્ષાની ગવેષણા કરવામાં બાધક થાય છે તે બધું
આ સૂત્રમાં બતાવ્યું છે, ભિક્ષાની ગવેષણા કરતી વખતે મુનિએ અજ્ઞાત,
અગૃહ, અદ્વિષ્ટ, અદીન, અવિમન, અકરુણ, અવિષાદી, અને અપરિતાંતયોગી
આદિ સ્થિતિ વાળા રહેવું જોઈએ. ત્યારે જ પૂણું રીતે અર્હિસા મહાવ્રતરૂપ
સંવરદ્વારનું પાલન થાય છે. ॥ સૂ-૫ ॥

પ્ર૦ ૭૮

ટીકા—‘તસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

‘તસ્સ’ તસ્ય પ્રસિદ્ધસ્ય ‘પદમસ્સ વયસ્સ’ પ્રથમસ્ય વ્રતસ્ય = અહિંસા વ્રતસ્ય ‘ઇમા પંચ’ ઇમાઃ પંચ ‘ભાવનાઓ’ ભાવનાઃ=ભાવ્યતે વાસ્યતે આત્મા યામિસ્તાઃ ઈર્થાસમિત્યાદયઃ ‘હંતિ’ ભવન્તિ । કિમર્થે પંચ ભાવના ભવન્તી ? —ત્યાહ — ‘પાણાદિવાયવેરમણપરિસ્ત્વણદ્વાદ્વા’ પ્રાણાતિપાત-વિરમણપરિરક્ષણાર્થાય = પ્રાણાતિપાતવિરમણલક્ષણસ્ય પ્રથમમદ્વાવ્રતસ્ય પરિરક્ષણાર્થાય । તત્ર

इन व्रतों को स्थिर रखने के लिये प्रत्येक व्रत की पांच २ भावनाएँ हैं सो अब सूत्रकार अहिंसाव्रत की जो पांच भावनाएँ होती हैं उनमें सब से पहिली ईर्ष्या समितिरूप पहिली भावना को प्रकट करते हैं— ‘तस्स इमा’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(તસ્સ) ઉસ પ્રસિદ્ધ (પદમસ્સ વયસ્સ) પ્રથમવ્રત કી (ઇમા પંચ ભાવનાઓ હંતિ) યે ઈર્થાસમિતિ આદિ પાંચ ભાવનાઈ હોતી હૈ । ક્યોં કિ इन भावनाओं से (पाणादिवायवेरमणपरिस्त्वणद्वद्वा) प्राणातिपातविरमण रूप जो अहिंसा व्रत है उसकी अच्छी तरह रक्षा होती है । तात्पर्य कहने का यह हैं कि अत्यन्त सावधानी के साथ विशेष २ प्रकार की अनुकूल प्रवृत्तियों का सेवन न किया जाय तो स्वीकार करने मात्र से ही व्रत आत्माको अपने रूप नहीं बना सकते हैं, अर्थात् वे आत्मा में चिरस्थायी नहीं रह सकते हैं, निर्दोषत्व से सावधानी के साथ उनका पालन नहीं हो सकता है—वे यथार्थरूप में आत्मा में नहीं उतर सकते । ग्रहण किये हुए व्रत जीवन को यथार्थरूप से अपने रूप में रंग सके—अपनी अटल छाप आत्मा पर जमा सके इसलिये प्रत्येक व्रत के

એ પાંચ વ્રતોને સ્થિર રાખવા માટે પ્રત્યેક વ્રતની પાંચ પાંચ ભાવના છે.

હવે સૂત્રકાર અહિંસાવ્રતની એ પાંચ ભાવના છે તેમાંની ચૌથી પહેલી ઈર્ષ્યા સમિતિ આદિ આ પાંચ ભાવના પ્રગટ કરે છે—“તસ્સ ઇમા” ઇત્યાદિ

“તસ્સ” તે પ્રસિદ્ધ “પદમસ્સ વયસ્સ” પ્રથમ વ્રતની “ઇમા પંચ ભાવના-હંતિ” ઈર્ષ્યાસમિતિ આદિ આ પાંચ ભાવનાઓ હોય છે. કારણ કે તે ભાવનાઓથી “પાણાદિવાયવેરમણપરિસ્ત્વણદ્વાદ્વા” પ્રાણાતિપાત વિરમણરૂપ એ અહિંસાવ્રત છે તેની આરી રીતે રક્ષા થાય છે. કહેવાનો ભાવ એ છે કે અત્યંત સાવધાનીથી ખાસ ખાસ પ્રકારની અનુકૂળ પ્રવૃત્તિઓનું સેવન ન કરાય તો સ્વીકાર કરવા માત્રથી જ વ્રત આત્મામાં ચિરસ્થાયી રહી શકતું નથી—નિર્દોષ રીતે સાવધાનીથી તેનું પાલન થઈ શકતું નથી. તે યથાર્થ રૂપે આત્મામાં ઉતરી શકતાં નથી. કહણ કરાયેલ વ્રતો જીવનને યથાર્થ રીતે પોતાના રંગે રંગી શકી-પોતાની અટલ છાપ આત્મા પર જમાવી શકે—આત્મામાં ઊંડાણથી પ્રવેશી શકે, તે માટે પ્રત્યેક વ્રતને અનુકૂળ

‘પદમં’ પ્રથમમ્=ઈર્વાસમિતિ ભાવનામાદ—‘ ઠાળગમનગુણજોગજુંજણજુગંતરનિ-
વહ્યાપ ’ સ્થાનગમનગુણયોગયોજનયુગાન્તર-નિપાતિકયા—‘ ઠાળ ’ સ્થાનમ્ =
ઉપવેશનમિત્યર્થ; ‘ ગમન ’ ગમનં=ચલનમ્, તત્ર ગુણઃ=ત્રસસ્થાવરોપધાત્વર્જન-
રૂપ; તસ્ય યોગઃ=સમ્બન્ધસ્તં યોજયતિ=કરોતિ યા સા સ્થાનગમનગુણયોગયો-
જના, તથા-યુગાન્તરે=યુગપ્રમાણભૂમાને નિપતતિ યા સા યુગાન્તરનિપાતિકા,

અનુકૂળ પડેનેવાલી થોડી વહુત પ્રવૃત્તિયાં સ્થૂલ દૃષ્ટિ સે વિશેષ રૂપ મેં
ગિનાઈ ગઈ હૈં । જો ભાવના કે નામ સે પ્રસિદ્ધ હૈં । યદિ ઇન ભાવ-
નાઓં કે અનુસાર વરાધર વર્તાવ કિયા જાય તો ગૃહીત વ્રત ઉત્તમ
ઓપધિ કે સમાન પ્રયત્નશીલ કે લિયે સુંદર પરિણામ કારક સિદ્ધ
હોતે હૈં । ગદી વાત “ પરિકલ્પણદ્વાપ ” ઇસ શ્દ દ્વારા યહાં ધ્વનિત કી
ગઈ હૈં । ઇન પાંચ ભાવનાઓં મેં જો (પદમં) પહેલી ઈર્વાસમિતિ
નામકી જો ભાવના હૈં વહ ઇસ પ્રકાર હૈં (ઠાળગમનગુણજોગજુંજણ-
જુંગંતર નિવહ્યાપ) સ્વ પર કાં કલેશ ન હો ઇસ પ્રકાર યત્ન પૂર્વક
ગમન કરના ઇસકા નામ ઈર્વાસમિતિ હૈં । ઇસી કા વિશેષ સુલાશા
સૂત્રકાર ઇસપદ દ્વારા કર રહે હૈં-સ્થાન-બૈઠના ઓર ગમન-ચલના
ઇનમેં જિસકે દ્વારા ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ હોની વાહિયે કિ જિસસે
ત્રસ ઓર સ્થાવર જીવોંકા ઉપચારક ન હો, ઇસ ગુણરૂપ સંબંધ કી જો
જોડને ને વાલી હો તથા જિસસે યુગપ્રમાણ ભૂમિભાગ કા અવલોકન
હો રહા હો, અર્થાત્ ચલતે ૨ સાધુ અપને આમે કી યુગપ્રમાણ ભૂમિ કા

ભાવનારી થોડી ઘણી પ્રવૃત્તિયો સ્થૂલ દૃષ્ટિથી વિશેષ રૂપે ગણાવવામાં આવેલ
છે, જે ભાવનાને નામે પ્રસિદ્ધ છે. જે તે ભાવનાઓ પ્રમાણે ધરાધર વર્તન
કરાય તો ગ્રહણ કરાયેલ વ્રત પ્રયત્નથીત વ્યક્તિને માટે ઉત્તમ ઓપધિ સમાન
કાર્ય સાધક સિદ્ધ થાય છે. એ જ વાત “ પરિકલ્પણદ્વાપ ” પદ દ્વારા અહીં
દર્શાવવામાં આવી છે. એ પાંચ ભાવનાઓમાં જે “ પદમં ” પહેલી ઈર્વાસમિતિ
નામની જે ભાવના છે તે આ પ્રમાણે છે “ ઠાળગમનજોગજુંજણજુંગંતરનિવહ-
યાપ ” પોતાને કે પરને કલેશ ન થાય તે પ્રમાણે જતન પૂર્વક ગમન કરવું
તેનું નામ ઈર્વાસમિતિ છે. તેનું વધારે સ્પષ્ટીકરણ સૂત્રકાર આ પદ દ્વારા કરે
છે-સ્થાન-બેસવું અને ગમન-ચાલવાની ક્રિયામાં તેમના દ્વારા એ રીતની પ્રવૃત્તિ
થવી જોઈએ કે જેથી ત્રસ અને સ્થાવર જીવોની હલ્ત ન થાય, આ ગુણ
રૂપ સંબંધને જે જોડનારી હોય તથા જેથી યુગ પ્રમાણ ભૂમિભાગનું અવલો-
કન થતું હોય એટલે કે ચાલતી વખતે પોતાની આગળથી યુગ પ્રમાણ ભૂમિનું

६२०

प्रश्नव्याकरणसूत्रे

अनयोः कर्मधारयः, तथा, 'दिद्वीए' दृष्ट्या, 'कीडपयंगतसथावरदयावरेण' कीटपतंगत्रसमथावरदयावरेण, तत्र-कीटाः=क्षुद्रजन्तवो नीलकु 'लट' शब्दादयः, पतङ्गाः=प्रसिद्धाः, इत्यादयः, त्रसमथावरदयावरेण=त्रिन्द्रियाः, तेषु दयापरस्तेन, तथा- 'पुष्पफलतयपत्रालकंदमूलदगमद्विषयीयहरियपरिवर्जिण' पुष्पफलत्वक्-प्रवाल-कन्दमूलदकमृत्तिकावीजहरितपरिवर्जितेन-तत्र-पुष्पं फलं च प्रसिद्धम्, त्वक्=पुष्पफलादीनां त्वचा, प्रवालः=पत्राङ्कुरः, कन्दः, मूलादिकः, मूलम् = मूलकं 'दगं' दकं=जलम्, मृत्तिका, बीजम्, हरितः=हरितकायः, एते परिवर्जिता येन स तेन, मुनिना 'निच्चं' नित्यं 'सम्मं' सम्यक्=यतनापूर्वकम्, ईरियच्चं 'ईरितव्यं-मार्गे गन्तव्यम्। 'एवं-सु' एवं=अमुना प्रकारेण प्रवर्त्तनेन खलु तस्य मुनेः 'सच्चे' सर्वे 'पाणाः' प्राणाः=प्राणिनः 'न हीलियच्चा' न हीलयितव्याः

जिससे अच्छी तरह अवलोकन कर चल रहा हो ऐसी (दिद्वीए) दृष्टि से (कीडपयंगतसथावरदयावरेण पुष्पफलतयपत्रालकंदमूलदगम-द्विषयीयहरियपरिवर्जिण निच्चं सम्मं ईरियच्चं) लट शब्द आदि क्षुद्र जन्तुरूप कीटों के ऊपर तथा पतंगों आदि जानवरों के ऊपर, एवं एके-न्द्रिय स्थावर जीवों के ऊपर दया रखने में तत्पर बने हुए, तथा पुष्प, फल' त्वक्-छाल, प्रवाल, -कोपल-पत्राङ्कुर, सूरण आदि कंद मूल दक-सचित्त जल, मृत्तिका-सचित्तमिष्टी, बीज और हरितकाय, इन सब सचित्तपदार्थों को अपने और पर के उपयोग में लाने का जीवनपर्यंत परित्याग का चुकने वाले ऐसे मुनिजनों को देख २ बार सदा यतना पूर्वक मार्ग में गमन करना चाहिये। (एवं सु) इस तरह यतनापूर्वक दृष्टि से देख देख कर चलने वाले मुनिजन के (सच्चेपाणा) समस्त प्राणी (न हीलियच्चा) अवज्ञा के विषयभूत नहीं बनते हैं। (न निदि-

वेषी सारी रीति अवलोक करीने साधु आलता होय ओवी "दिद्वीए" दृष्टिओ "कीडपयंगतसथावरदयावरेण पुष्पफलतयपत्रालकंदमूलदगमद्विषयीयहरियपरिवर्जिण निच्चं सम्मं ईरियच्चं" लट शब्द आदि क्षुद्र जन्तुओं कीजाओ उपर तथा पतंगियां आदि जन्तुओं उपर, अने ऐकेन्द्रिय स्थावर लोवानो उपर दया राखवाने तत्पर बनेल, तथा पुष्प, दग, त्वक्-छाल, प्रवाल-कोपल-पत्रा-ङ्कुर, सूरण आदि कंदमूल, आ अथ अर्थत पदार्थोनि पोताना के जीवनत उप-योगमां लेवानो आलवन परित्याग करी नाय्यो होय ओवा मुनिजनोने लोभेश लोभोने यतना पूर्वक रस्ता पर आलवुं लोभो. "एवं सु" आ रीते यतनापूर्वक नजर वडे लोभ लोभोने आलनार मुनिजनने "सच्चे पाणा"

भावज्ञातव्या भवन्ति, मुनिः प्राणि प्राणसंरक्षणपरत्वात्तानावज्ञा विषयीकरो-
तीति भावः, एवमग्रेऽपि सर्वत्र वाक्यरचना कार्या । ' न निन्दियव्या ' न निन्दि-
तव्या भवन्ति-परपीडावर्जनपरत्वात्, ' न गरहियव्या ' न गरहितव्याः भवन्ति-
लोकसमक्षे दोषोद्घाटनपूर्वकं गर्हाविषयभूता न भवन्तीत्यर्थः, तथा-' न हिंसि-
यव्या ' न हिंसितव्याः-पादाक्रमणादिना न हन्तव्याः, भवन्ति, एवं ' न छिदि-
यव्या ' न छेत्तव्याः खट्वादिना, ' न भिन्दियव्या ' न भेद्यव्याः -कुन्तादिना,
' न वहेयव्या ' न व्यथनीयाः पीडोत्पादनादिना भवन्ति । तथा - ' न भय
दुक्खं च लब्धा पावेउं ' न भयं दुक्खं च लब्धाः प्रापयितुम्, दुःखं भयं च प्राप-
यितुं योग्या न भवन्तीति भावः । एदम्-अनेन प्रकारेण ' ईरिया समिज्जोगेण '
ईर्यासमिधियोगेन ' भाविओ ' भाविनी-वासितो भवति ' अंतरप्पा ' अन्तरात्मा
=जीवः, स भावितात्मा-भवतीत्यर्थः, कीदृशो भवति ? इत्याह-'असवलमसंकिलि-
ट्टनिव्वणचरित्तभावणाए ' अश्वलातंविन्दु निर्व्रजचारित्रभावनयाः, अश्वला=
यव्या) जिंदा के विषयभूतनहीं बनते हैं । (न गरहियव्या) लोगों के
समक्ष दोषोद्घाटन पूर्वक गर्हा के विषयभूत नहीं बनते हैं । (न हिंसियव्या)
पादादि द्वारा आक्रमित होकर हिंसा के विषयभूत नहीं बनते हैं, (न
छिदियव्या) छेदन करने के विषयभूत नहीं बनते हैं, (न भिन्दिय-
व्या) भेदन करने के विषयभूत नहीं बनते हैं । (न-वहेयव्या)
पीडोत्पादनादि द्वारा व्यथा कष्ट पहुँचाने के योग्य नहीं बनते हैं । (न
भयं दुक्खं च किञ्चि लब्धा पावेउं) और न किसी भी तरह से
भय और दुःख को प्राप्त कराने के योग्य बनते हैं । (एवं) इस प्रकार
(ईरियासमिधजोगेण) ईर्यासमिध के योग से (भाविओ अंतरप्पा)
वासित हुआ अन्तरात्मा-जीव-भावितात्मा कहलाता है और यह—
(असवलमसंकिलिट्टनिव्वण चरित्त भावणाए) अश्वला-मलितान रहित

समस्त प्राणी " न हीलवव्या " अवज्ञाना विषयभूत अनता नथी, " न निन्दि-
यव्या " निन्दाना विषयभूत अनता नथी, " न गरहियव्या " दोषोद्घाटी समक्ष
दोषोद्घाटनपूर्वक गर्हाना विषयभूत अनता नथी, " न हिंसियव्या " पादादि वडे
आक्रमित अर्थने हिंसाना विषयभूत अनता नथी, " न छिदियव्या " छेदन
करवाना विषयभूत अनता नथी, " न भिन्दियव्या " भेदन करवाना विषयभूत
अनता नथी, " न वहेयव्या " पीडा उत्पादन आदि द्वारा व्यथा पहुँचावने
योग्य अनता नथी, " न भयं दुक्खं च किञ्चिलब्धा पावेउं " अने कोष्ठ पण्य
प्रकारे लय अने दुःख प्राप्त करवाने योग्य अनता नथी, ' एवं ' आ प्रकारे
" ईरियासमिधजोगेण " धियासमिधना योगधी " भाविओ अंतरप्पा " युक्त
आत्मा-एव-भावितात्मा कहवाय छे अने ते "असवलमसंकिलिट्टनिव्वणचरित्त-

માલિન્યરહિતા, અસંકલિષ્ટા=વિશુદ્ધમાનમનઃપરિણામયુક્તા, નિર્ગ્ણા=અક્ષતા યા ચારિત્રભાવના તથા હેતુભૂતયા 'અહિંસા' અહિંસકઃ - સમાવનાયા અહિંસાયાઃ પરિપાલકત્વાત્, 'સંજ્ઞ' સંવતઃ=સમ્યગ્જીવરક્ષાયતનોદ્યતત્વાત્, 'સુસાહુ' સુસાધુઃ=મોક્ષસાધકો મુનિર્ભવતિ ॥ સૂ. ૬ ॥

તથા વિશુદ્ધમાન મનઃપરિણામ સે યુક્ત એવી હેતુભૂત અશ્વંડ ચારિત્ર ભાવના કે પ્રભાવ સે (અહિંસા) અહિંસક હોતા હૈં, અર્થાત્ ભાવના-સહિત અહિંસા કા પરિપાલક હોને કે કારણ વહ હિંસાવૃત્તિ સે રહિત હોતા હૈ । તથા (સંજ્ઞ) અચ્છી તરહ સે જીવ રક્ષા કી યતના મૈં ઉઘાત હોને કે કારણ સંજત હોતા હૈ । ઓર (સુસાહુ) એસા હોને કે કારણ હી વહ સાધુ-સચ્ચા સાધુ-મોક્ષ સાધક મુનિ-હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ-- ઇસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ને અહિંસાવ્રત કી રક્ષા ઓર સ્થિરતા કે નિમિત્ત પાંચ ભાવનાઓ મૈં સે ઈર્ષા સમિતિ નામકી પ્રથમ ભાવના કહી હૈ, । ઇસ ભાવના મૈં ઉઘાત ને વહ પ્રકટ ક્રિયા હૈ કિ અહિંસાવ્રત કા આરાધક પ્રાણી યદિ ભાવના કા નિમિત્ત નહીં મિલતા હૈ તો ઇસ વ્રત કા મહારાઈ કે સાથ પરિપાલન નહીં હો સકતા હૈ । અહિંસા આદિ વ્રતો કે રંગ મૈં આત્મા કો રંગ દેનેવાલી યે ભાવના હી હૈ । ઇસલિયે સચ્ચે અર્થ મૈં અહિંસક બનને કે લિયે મુનિ કો સવસે પહિલે ઈર્ષા સમિતિ કા પાલન કરના ચાહિયે । ઇસ સમિતિ કે પાલન કરને સે

ભાવનાઈ " અશ્વઠ-ગસિનના રહિત તથા વિશુદ્ધ મનઃ પરિણામયી યુક્ત એવી હેતુભૂત અક્ષત-ચારિત્રભાવનાના પ્રભાવથી ' અહિંસા ' અહિંસક થાય છે, એટલે કે ભાવનાપૂર્વક અહિંસાના પરિપાલક હોવાથી તે હિંસાવૃત્તિથી રહિત બને છે. તથા " સંજ્ઞ " સારી રીતે જીવ રક્ષાની યતનામાં તત્પર હોવાને કારણે સંવત થાય છે. અને " સુસાહુ " એવા થવાને કારણે તે સુસાધુ-સાચા સાધુ-મોક્ષ સાધક મુનિ-થાય છે.

ભાવાર્થ--આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે અહિંસા મતની રક્ષા અને સ્થિરતાને માટે જે પાંચ ભાવના છે તેમાંની ઇર્ષાસમિતિ નામની પહેલી ભાવના બતાવી છે. આ ભાવનામાં તેમણે એ પ્રગટ કર્યું છે કે અહિંસા વ્રતના આરાધક પ્રાણીને જો ભાવનાનું નિમિત્ત ન મળે તો તે મતનું સૂક્ષ્મ રીતે પાલન થઈ શકતું નથી. અહિંસા આદિ વ્રતાના રંગમાં આત્માને રંગી દેનારી આ ભાવનાઓ જ છે. તેથી સાચા અર્થમાં અહિંસક બનવાને માટે મુનિએ સૌથી પહેલાં ઇર્ષાસમિતિનું પાલન કરવું જોઈ એ. આ સમિતિનું પાલન કરવાથી ત્રસ

દ્વિતીયાં મનોભાવનામાહ—

મૂલમ્—વીર્યં ચ મણેણ પાવણેણ પાવગં આહમ્મિયં દારુણં
નિસંસં વહ્વંધપરિકિલેસથદ્દુલં જરામરણપરિકિલેસસંકિ-
લિટ્ઠં, ન કયાવિ મણેણ પાવણં પાવગં કિંચિ વિજ્ઞાયઠ્ઠં
એવં મણસમિદ્ધજોગેણ ભાવિઓ ભવદ્ અંતરપ્પા અસવલમસં-
કિલિટ્ઠનિવ્વણચરિત્ત ભાવણાણ અહિસણ્ણેજણ સુસાદ્દુ ॥સૂ૦૭॥

ટીકા—‘વીર્યં ચ’ इत्यादि ।

‘વીર્યં ચ’ દ્વિતીયાં ચ પુનર્ભાવના મનઃ સમિતિરૂપમાહ—‘પાવણં’

વ્રતસાધન અને સ્થાવર જીવોની રક્ષા હોતી રહતી છે । ઉઠને બેઠને મેં ગમન કરવાને મેં સાધુ ‘જીવોની વિરોધના ન થો’ એવું વ્રતની વિશેષ સાધ-
ધાની રાખતા છે । યુગપ્રમાણ ભૂમિકા અવલોકન કરતા હોવા આગે ૨ કે
માર્ગ મેં ચડતા રહતા છે । એવું તરફ ઉત્તરે દ્વારા ન કોઈ પ્રાણી હીલયિ-
તવ્ય હોતા છે ન નિન્દિતવ્ય હોતા છે ન મહિતવ્ય હોતા છે, અને ન
હિંસિતવ્ય હોતા છે । ન હેતવ્ય હોતા છે, ન વ્યથિતવ્ય હોતા છે અને ન
દુઃખ કો પ્રાપ્ત કરાવવાના કે યોગ્ય હોતા છે । એવું પ્રકાર ઈર્શ્યામિત્તિ કે
યોગ સે ભાવિતાત્મા થતા હોવા મુનિજન અપને અહિંસાવ્રત કો નિર્દોષ
રીતિ સે પાલન કરતા હોવા સર્વથા અહિંસક બન જાતા છે । તથા એ
પ્રકાર કો પ્રવૃત્તિશાલી હોવાના કે કારણ વધુ સુસાધુ-મોક્ષ કો સાધન
કરવાના મુનિ એ અર્થ કો ચરિતાર્થ કરતા છે ॥ સૂ૦૬ ॥

અથ સૂત્રકાર એવંત્ર કો દ્વિતી ભાવના જો મનોશુષ્કિ છે એ પ્રકટ

અને સ્થાવર જીવોની રક્ષણ થાય છે. ઉઠવા બેસવામાં તથા ગમન કરવામાં
‘વધારે જીવોની વિરોધના ન થાય’ તેનું મુનિ વધારે ધ્યાન રાખે છે. યુગ
પ્રમાણ ભૂમિનું અવલોકન કરતા કરતા સાધુ માર્ગે આગળ વધે છે. આમ
થવાથી તેના દ્વારા કેઈ પ્રાણી હીલયિતવ્ય, નિન્દિતવ્ય, મહિતવ્ય, અને હિંસિ-
તવ્ય થતું નથી. તેનું હેતુ થતું નથી કે તેને વ્યથા પહોંચતી નથી, તથા
દુઃખને પ્રાપ્ત થતું નથી. આ રીતે ઈર્શ્યામિત્તિના યોગથી ભાવિતાત્મા અનેક મુનિ-
જન પાતાના અહિંસાવ્રતનું નિર્દોષ રીતે પાલન કરતા કરતા તથા અહિંસક
થઈ જાય છે. તથા આ રીતે પ્રવર્તનથીજ હોવાને કારણે તે સુસાધુ-મોક્ષને
સાધનારા મુનિ, એ અર્થને ચરિતાર્થ કરે છે ॥ સૂ-૬ ॥

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની મનોશુષ્કિ નામની બીજી ભાવના છે તેનું સ્પ-

પાપકેન=અશુભેન 'મળસા' મનસા 'પાયમં' પાપકમ્=અશુભ મનતિ, 'અહમ્મિયં' અધાર્મિકં દુર્ગતિજનકત્વાત્, દારુણં=વિપમમ્, તીવ્રદુઃસ્વજનકત્વાત્, 'નિસંસં' નૃશંસમ્ આત્મહિતઘાતકત્વાત્, તથા- 'વદ્વંધપરિકલેસવહુલં' વધ-વંધપરિકલેશવહુલમ્, તત્ર-વંધો-મારણમ્, વંધઃ=નિગહાદિવંધઃ, તજ્જનિતઃ પરિકલેશઃ=પરિતાપસ્તેન વહુલં=વ્યાપ્તં-સંભૃતમ્, પ્રતિસમયમગત્યંતાપજનકત્વાત્, તથા - 'મરણમયપરિકલેસસંકિલિટ્વં' મરણમયપરિકલેશસંકિલિટ્વમ્-મરણં=માણવિયોગસ્તસ્ય યદ્ ભયં તજ્જનિતો યઃ પરિકલેશઃ=પરમસંતાપસ્તેન સંકિલિટ્વં=સંવ્યાપ્તમ્, નરકનિગોદાદ્યનન્તદુઃસ્વજનકત્વાત્, एतादृश-વિશેષણવિશિષ્ટં

કરતે હૈ—'બીયં ચ' इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(બીયં) દુસરી મનોગુપ્તિ નામની ભાવના હસ પ્રકાર સે હૈ (પાવણ મણેજ) અશુભ મન સે અશુભ હોના હૈ-અર્થાત્-અશુભ-મન સે જીવ પાપ કા ઉપાર્જન કરતા હૈ । યહ પાપ (અહમ્મિયં) દુર્ગતિ કા જનક હોને સે અર્થર્થ રૂપ હૈ । (દારુણં) તીવ્ર દુઃખોં કા ઉત્પદક હોને સે દારુણ-વિષમ અર્થાત્-કષ્ટકારક-હોના હૈ । તથા (નિસંસં) હસમેં આત્મા કે હિતકા ઘાત હોના હૈ હસલિયે નૃશંસ હૈ । (વદ્વંધ-પરિકલેસવહુલં) વધ, વંધન ઓર હનસે ઉત્પદ્ય પરિકલેશ-પરિતાપ-સે યહ સદા ભરા રહના હૈ । અર્થાત્ પ્રતિ સમય યહ અભય મંનાય કા જનક હોના હૈ । (મરણમયપરિકલેસસંકિલિટ્વં) મરણ કે ભય સે જનિત પરમ સંતાપ સે યહ વ્યાપ્ત રહ્યા કરતા હૈ । અર્થાત્-પાપ સે જીવ નરક નિગોદ આદિ કે અનંત દુઃખોં કોં ભોગા કરતા હૈ । હસલિયે યહ

પ્રીકરણુ કરે છે —“બીયં ચ” इत्यादि

ટીકાર્થ—“બીયં” બીજી મનોગુપ્તિ નામની ભાવના આ પ્રકારની છે—“પાવણ મણેજ” અશુભ મનથી અશુભ થાય છે-એટલું કે અશુભ મનથી જીવ પાપનું ઉપાર્જન કરે છે આ પાપ “અહમ્મિયં” દુર્ગતિનું જનક હોવાથી અધર્મરૂપ છે. “દારુણં” તીવ્ર દુઃખોનું ઉત્પાદક હોવાથી દારુણ-વિપમ એટલે કે કષ્ટકારક હોય છે. તથા “નિસંસં” તેમાં આત્માના હિતનો ઘાત થાય છે તેથી તે નૃશંસ છે. “વદ્વંધપરિકલેસવહુલં” વધ, વંધન અને તેમના કારણે ઉદ્ભવેલ પરિકલેશ-પરિતાપથી તે સદા ભરેલ રહે છે, એટલે કે પ્રતિસમય તે અભય સંતાપ પેદા કરનાર હોય છે. “મરણમયપરિકલેસસંકિલિટ્વં” મરણના ભયથી ઉત્પદ્ય થયેલ પરમ સંતાપથી તે વ્યાપ્ત રહ્યા કરે છે. એટલે કે પાપથી જીવ નરક નિગોદ આદિના અનંત દુઃખને ભોગવ્યા કરે છે. તે

સુદર્શિની ટોકા અ૦ ૧ સૂ.૭ ભાવનાસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૨૫

પાપં-પાપેન મનસા ભવતિ, અતएव-તત્ 'કયાવિ' કદાપિ=કસ્મિન્નપિ કાલે 'કિંચિ વિ' કિંચિદપિ=સ્વરૂપમપિ 'પાવગં' પાપકમ્=અશુભં ન 'જ્ઞાયઞ્વં' જ્ઞાતવ્યં=ન ચિન્તનીયમિત્યર્થઃ । एवम्=અમુના પ્રકારેણ 'અંતરપ્પા' અન્તરાત્મા જીવઃ 'મળસમિદ્જોમેણં' મનઃ સમિતિયોગેન ભાવિતો ભવતિ । ભાવિતાત્મા કોદશો ભવતિ ? इत्याह — અસવલસંકિલ્પનિર્વ્રજચારિત્રભાવનયા હેતુભૂતયા અહિંસકઃસંયતઃ સુસાધુર્ભવતિ । एषामर्थो द्वितीयभावना व्याख्यायां द्रष्टव्यः ॥મૂ.૭॥

પાપ નરક નિગોદ આદિ દુર્ગતિયોં કે અનંત દુઃખોં કા જનક હોને સે उनसे सदा भरा रहना है ऐसा कहा गया है । इस प्रकार के विशेषणों से विशिष्ट पाप यह जीव पापयुक्त मन से करता है । ऐसा समझ कर (कयावि किंचि वि) किसी भी काल में कुछ भी थोड़ा सा भी (पावणं मणेणं) पापकारी मन से (पावगं) पाप-अशुभ (न ज्ञायञ्चं) नहीं विचरना चाहिये । (एवं मणसमिद्वजोमेण अंतरप्पा भाविओ भवइ) इस प्रकार से अंतरात्मा-जीव मनःसमिति के योग से भावित होता है । (असवलमसंकिल्पनिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसए संजए-सुसाह) यह भावित आत्मा मलिनता से रहित तथा विशुद्धमान मनःपरिणाम से युक्त ऐसी हेतुभूत चरित्र भावना के प्रभाव से अहिंसक होना है । और संयत होता है । और ऐसा होने के कारण ही वह सच्चा साधु-मोक्ष साधक मुनि-कहलाता है ॥—

ભાવાર્થ—મન કો અશુભ ધ્યાન સે વચાકર શુભ ધ્યાન મેં લગાના

કારણે તે પાપ નરક નિગોદ આદિ દુર્ગતિયોના અનંત દુઃખોનું જનક હોવાથી તેનાથી સદા ભરેલ રહે છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. આ પ્રકારના વિશેષ-જોવાથી યુક્ત પાપ આ જીવ પાપયુક્ત મનથી કરે છે. એવું સમજીને “કયાવિ કિંચિ વિ” કોઈ પણ કાળે સહેજ પણ “પાવણં મણેણ” પાપકારી મનથી “પાવગં” પાપ-અશુભ “ન જ્ઞાયઞ્વં” વિચારવું જોઈએ નહીં “एवं मण-समिद्वजोमेण अंतरप्पा भाविओ भवइ” આ પ્રકારે અંતરાત્મા-જીવ મનઃ સમિ-તિના યોગથી ભાવિત થાય છે. “असवलमसंकिल्पनिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसए संजए सुसाह” તે ભાવિત આત્મા મલિનતાથી રહિત તથા વિશુદ્ધ મનઃ પરિણામથી યુક્ત એવી હેતુભૂત ચારિત્ર ભાવનાના પ્રભાવથી અહિંસક થાય છે અને સંયત બને છે. અને એવું થવાથી જ તે સાચો સાધુ-મોક્ષ સાધક મુનિ કહેવાય છે.

ભાવાર્થ-મનને અશુભ ધ્યાનથી બચાવીને શુભ ધ્યાનમાં લગાડવું તેને

તૃતીયા વચનસમિતિરૂપાં ભાવનામાદ—‘તદ્યં ચ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—તદ્યં ચ—વર્ઘે પાવિયાસા પાવગં અહમ્મિયં દારુણં
નિસંસં વહ્વંધપરિકિલેસવહુલં જરામરણપરિકિલેસસંકિલિટ્વં
ન કયાવિ વર્ઘે પાવિયા પાવગં કિચિ વિ ભાસિયવ્વં,
એવં વહ્સમિદ્ધજોગેણ ભાવિઓ ભવદ્ધ અંતરપ્પા અસવલમસં-
કિલિટ્વનિવ્વણચરિત્તભાવણાએ અહિંસઓ સંજઓ સુસાદ્દુ ॥૮॥

મનોગુપ્તિ હૈ । शुभ ध्यान में लगाने का उपदेश इस लिये दिया जाता है
अथवा मन को शुभ ध्यान में इसलिये लगाया जाता है कि मन स्वयं
अशुभ बनने न पावे । अशुभ ध्यान के संपर्क संबंध से मन अशुभ बन
जाता है । और अशुभ मन से पाप का ही उपार्जन होता है । पाप से जीवों
को नाना प्रकार के कष्टों को भोगना पड़ता है । क्योंकि पाप स्वयं
एक अधर्म है । अधर्म होने से ही वह आत्मा के हित का घातक
बनता है । और इसी कारण से जीवों को नाना प्रकार के दुःखों को
देता है । इस प्रकार विचार कर जो मुनिजन अपने मन को अशुभ
ध्यान में किसी भी समय नहीं लगता है उससे बचता रहता है
ऐसा वह मुनि उस मनः समिति से आविर्त बनकर अपने अहिंसा
व्रत को निर्दोष रूप से पालन करता हुआ आदर्श अहिंसक बन जाता
है । और इस प्रकार की प्रवृत्ति करने के रंग में रंगा हुआ वह-
सूचे अर्थ में साधुपद को सार्थक करता है ॥ सू० ७ ॥

મનોગુપ્તિ કહે છે શુભ ધ્યાનમાં લગાડવાનો ઉપદેશ એ માટે અપાય છે.
અથવા મનને શુભ ધ્યાનમાં તે કારણે લગાડાય છે કે મન પોતે જ અશુભ
બનવા પામે નહીં અશુભ ધ્યાનના સંપર્કથી મન અશુભ બની જાય છે, અને
અશુભ મનથી પાપનું જ ઉપાર્જન થાય છે. પાપથી જીવને વિવિધ પ્રકારનાં
કષ્ટો ભોગવવાં પડે છે. કારણ કે પાપ પોતે જ એક અધર્મ છે. અધર્મ
હોવાથી જ તે આત્માના કિતનું ઘાતક બને છે, એને એજ કારણથી જીવને
વિવિધ પ્રકારનાં દુઃખો દે છે. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને જે મુનિજન પોતાના
મનને કદી પણ અશુભ ધ્યાનમાં લગાડતા નથી, તેનાથી બચતા રહે છે, એવા
તે મુનિ તે મના સમિતિથી ભાવિત બનીને પોતાના અહિંસાવ્રતનું નિર્દોષ
પાલન કરીને અહિંસક બની જાય છે, અને તે રીતની પ્રવૃત્તિ કરવાના રંગે
રંગાયેલ તે મુનિ આજી અર્થમાં સાધુનાં પદને સાર્થક કરે છે ॥ સૂ. ૭ ॥

ટોકા—' તદ્યં ચ ' ઇત્યાદિ ।

' તદ્યં ચ ' તૃતીયાં ચ માત્રનાં વચનસમિતિરૂપમાદ—' વર્ણ પાવિયાળ ' વાચા પાપિક્યા—સાવધમાપણરૂપેત્યર્થઃ પાવકમાધાર્મિકં દારુણં નૃશંસં વધ-

અચ સૂત્રકાર હસ અહિંસાવ્રત કી તીસરી વચન સમિતિરૂપ માવનાં કા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે સૂત્ર કહતે હૈ—' તદ્યં ચ ' ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(તદ્યં) વચનસમિતિરૂપ તૃતીયા માવના હસ પ્રકાર સે હૈ—(પાવિયાળ વર્ણ) સાવધમાપણરૂપ વાળી સે (પાવગં) જીવપાપ કા બંધ કરતા હૈ । યહ પાપ (અહમ્મિયં દારુણં નિસંસંવહ બંધપરિકિલેસવહુલં જરામરણપરિકિલેસસંકિલિટં ભવઈ) અધર્મરૂપ હૈ ક્યોં કિ હસસે જીવોં કો દુર્ગતિ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ તથા હસસે તીવ્રદુઃખોં કો જીવ ભોગતે હૈ હસલિયે યહ દારુણ-વિપમ હૈ । આત્માકે હિતકા હસસે ઘાત હોતા હૈ હસલિયે યહ નૃશંસ હૈ । વધ, બંધન ઔર હનસે જન્ય પરિકલેશ-પરિતાપ સે યહ પાપ સદા ભરા રહતા હૈ । જરા ઔર મરણ કે ભય સે જનિત સંતાપ સે યહ સદા વ્યાપ્ત રહતા હૈ । એસા વિચાર કર જો મુનિ (ન કયાવિ વર્ણ પાવિયાળ કિંચિવિ પાવગં માસિયવ્વં) હસ પાપ વાળી કો સાવધ-માપણરૂપ વચન કો-કિસીં ભી સમય થોડા સા ભી નહીં ચોલતે હૈ વે હસ વચનસમિતિ કે યોગ સે માવિતાત્મા બન જાતે હૈ । (એવં વચ-

હવે સૂત્રકાર આ અહિંસાવ્રતની વચન સમિતિ નામની ત્રીજી ભાવનાનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે સૂત્ર કહે છે—“ તદ્યં ચ ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“ તદ્યં ” વચનસમિતિરૂપ ત્રીજી ભાવના આ પ્રમાણે છે—“ પાવિયાળ વર્ણ ” સાવધ ભાવણરૂપ વાણીથી “ પાવગં ” જીવ પાપને બંધ બાંધે છે. તે પાપ “ અહમ્મિયં દારુણં નિસંસં વહંત્રપરિકિલેસવહુલં જરામરણ પરિકિલેસસંકિલિટં ભવઈ ” અધર્મ રૂપ છે તેનાથી જીવને દુર્ગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે. તથા તેનાથી જીવ તીવ્ર દુઃખો ભોગવે છે તેથી તે દારુણ-વિપમ છે. તેનાથી આત્માના હિતનો ઘાત થાય છે તેથી તે નૃશંસ છે. વધ, બંધન અને તેના વડે ઉત્પન્ન થયેલ પરિકલેશ-પરિતાપથી તે પાપ સદા ભરેલ રહે છે. જરા અને મરણના ભયથી જનિત સંતાપ વડે તે સદા વ્યાપ્ત રહે છે. એવો વિચાર કરીને જે મુનિ “ ન કયાવિ વર્ણ પાવિયાળ કિંચિવિ પાવગં માસિયવ્વં ” આ પાપવાણીને સાવધ ભાવણરૂપ વચનને—કોઈ પણ કાળે થોડું પણ ભોલતા નથી, તેઓ આ વચનસમિતિના યોગથી ભાવિતાત્મા બની જાય છે. “ એવં

૧૨૮

પ્રશ્નચક્રવર્તી

વન્ધપરિચ્છેદશબ્દુલં ત્રામરણપરિચ્છેદ સંકિલ્પં ભવતિ, અતએવ ન વદાપિ
વાચા પાપિક્યા પાપકં કિંચિદપિ ભાવિતવ્યમ્ । એવં વાયસમિતિયોગેન ભાવિતો
ભવતિ અન્તરાત્મા । ભાવિતાત્મા કીદશો ભવતિ ? ઇત્યાહ—અશવલાસંકિલ્પ-
નિર્વ્રણચરિત્રભાવનયા હેતુભૂતયા—અહિંસકઃ સંયતઃ સુસાધુર્ભવતિ । એવામર્થો
દ્વિતીયભાવનાઢ્યાખ્યાયાં દ્રષ્ટવ્યઃ ॥ સૂ. ૮ ॥

સમિદ્ગોગેન ભાવિઓઅંતરપ્પા અસવલમસંકિલ્પનિવ્રણચરિત્ત-
ભાવળાપ અહિંસઓ સંજઓ સુસાહુ ભવઈ) ઇમ પ્રકાર વચન સમિતિ
કે યોગ સે ભાવિતાત્મા વના હુઆ અંતરાત્મા—જીવ—અશવલ, અસંકિલ્પ
એવં નિર્વ્રણ નિરતિચાર ચારિત્ર કી ભાવના સે અહિંસક ઓર સંયતવન
જાતા હૈ । ઓર સચ્ચે રૂપ મેં સાધુ—મોક્ષ કો સાધન કરને વાલે—
ઇસ નામ કો ચરિતાર્થ કર લેતા હે ।

ભાવાર્થ—સાવધ ભાષણ નહીં કરના ઇસકા નામ વચન સમિતિ હૈ ।
સાવધ ભાષણ કરને સે પાપ કા વંધ હોતા હૈ ! પાપ અધર્મ હોને સે
વિવિધ પ્રકાર કે દુઃખોં કા દાતા હોતા હૈ । વધ વંધન આદિ વિવિધકષ્ટ
જીવ કો ઇસી કે ઉદય સે ભોગને પડતે હૈં । ઇસલિપ સાધુ કા કર્તવ્ય
હૈ કિ વહ કમી ભો કહીં પર ભો કિચિન્ રૂપ મેં ભો અસત્યભાષણ નહીં
કરેં । એસા વિચાર કર જો મુનિ ઇમ પાપવાળી સે નિવૃત્ત હો જાતે હૈં
વે હી અપને અહિંસાવ્રત કો નિર્દોષ રૂપ મેં પાલતે હૈં । ઇસ પ્રકાર અપને
અહિંસાવ્રત કો પાલન કરને વાલે સાધુ હી સચ્ચે સાધુ—મોક્ષકો સાધન
કરને વાલે કહલાતે હૈં ॥ સૂ. ૮ ॥

વયસમિદ્ગોગેન ભાવિઓ અંતરપ્પા અસવલમસંકિલ્પનિવ્રણચરિત્તભાવળાપ અહિંસઓ
સંજઓ સુસાહુ ભવઈ ” આ પ્રકારે વચન સમિતિના યોગથી ભવિ-
તાત્મા અનેક અંતરાત્મા—જીવ—અશવલ, અસંકિલ્પ અને નિર્વ્રણચરિત્રની
ભાવનાથી અહિંસક અને સંયત બની જાય છે. અને સાચા અર્થમાં સાધુ-
મોક્ષને સાધનારા—એ નામને ચરિતાર્થ કરી લે છે.

ભાવાર્થ—સાવધભાષણ ન કરવું તેનું નામ વચન સમિતિ છે. સાવધ
ભાષણ કરવાથી પાપનો વંધ બંધાય છે. પાપ અધર્મ હોવાથી વિવિધ પ્રકારના
દુઃખનું જનક છે. તેના ઉદયથી વધ બંધન આદિ વિવિધ કષ્ટ જીવને ભોગ-
વવાં પડે છે. તેથી સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે કરી પણ, કયાંય પણ, થોડા પ્રમા-
ણમાં પણ અસત્ય ભાષણ ન કરે. એવો વિચાર કરીને જે મુનિ આ પાપવા-
ળીથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે તેઓ જ પોતાના અહિંસાવ્રતનું નિર્દોષ રીતે
પાલન કરે છે. આ પ્રમાણે પોતાના અહિંસાવ્રતનું પાલન કરનાર સાધુ જ
સાચા સાધુ—મોક્ષને સાધન કરનાર સાધુ—કહેવાય છે ॥ સૂ. ૮ ॥

सुवर्णिनी टीका अ० १ सू० ९ भावनास्वरूपनिरूपणम्

६२९

चतुर्थीमेव भावनामाह—' चउत्थं ' इत्यादि ।

मूलम्—चउत्थं आहारएसणाए सुद्धं उंछं गवेसियव्वं.
अण्णाए अकहिए आसिट्ठे अदीणे अकलुणे अविसाई
अपरितंतजोगी जयणघडणकरणचरियविनयगुणजोगसंप-
उत्ते भिक्खू भिक्खेसणाए जुत्ते समुदाणेऊण भिक्खायरियं
उंछं घेतूणं आगए गुरुजणस्स पासं गमणागमणाइं यार-
पडिक्कमणपडिक्कंते आलोचण दायणं च दाऊण गुरुजणस्स
गुरुसंदिट्ठस्स वा जहोवणसं निरइयारं च अप्पमत्ते पुण-
रवि अणेसणाए पयत्ते पडिक्कमित्ता पसंते । आसीणसुह
निसण्णे सुहुत्तमेत्तं च ज्ञाणसुहजोगनाणसज्झायगोवियमणे
धम्ममणे अविमणे सुहमणे अविग्गहमणे समाहियमणे
सद्धासंवेगनिज्जरमणे पवयणवच्छल्लभावियमणे उट्ठेऊण
य पहेट्ठे तुट्ठे जहराइणियं निमंतइत्ता य साहवे भावओ य
विइण्णे गुरुजणेणं उवविट्ठे संपमज्जिऊण ससीसं कायं तहा
करयलं अमुच्छिण्ण अगिट्ठे अगरहिए अणज्झोववण्णे अणा-
इले अलुद्धे अणत्तट्ठिण्ण असुरसुरं अचवचवं अदुयमविलं-
वियमपरिसाडियं आलोचभायणे जयमप्पमत्तेण ववगयसं-
जोगमणिगालं विगयधूमं अक्खोवंजणवणाणुलेवणभूयसं-
जमजायामायानिमित्तं संजमभारवहणट्ठयाए भुंजेज्जा पाण-
धारणट्ठयाए संजएणं समियं । एवमाहारसमिइ जोगेण
भाविओ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्तभाव-
णाए अहिंसए संजए सुसाहू ॥ सू०९ ॥

ટીકા — ‘ચઉત્થં’ ચતુર્થી ભાવનામેષણાસ્વામાહ — ‘આહારણસણાણ’ આહારૈષણયા ‘સુદ્ધં’ શુદ્ધં=નિર્દોષ ‘ઉચ્છં’ ઉચ્છં=મૈશ્વં ‘ગવેસિયચ્ચં’ ગવેષિત-વ્યમ્ । યથા—લૂનાન્નક્ષેત્રાત્કળાદાનં, તથૈવ સાધુનાપિ ગૃહસ્થાર્થં નિષ્પાદિતમન્નં સ્તોકં સ્તોકં એવેષણીયમિતિ ભાવઃ । કીદૃશઃ સન ગવેષયેત્ ? इत्याह—‘अण्णाण’ अज्ञातः—‘धनिकोऽयं प्रव्रजितः’ इत्यादिरूपेण दायकैरज्ञातः, ‘अकहिए’ अक-थितः=‘धनिकोऽहं प्रव्रजितः’ इत्याद्यप्रकटितः, ‘असिद्धे’ अशिष्टाः=‘उग्रवं-शीयोऽयं भोगवंशीयोऽय’ मिति दायकायाप्रतिबोधितः, तथा—‘अदीणे’ अदीनः

અવ સૂત્રકાર ચૌથી એષણા સમિતિરૂપ ભાવના કો કહતે છે - ‘ચઉત્થં’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(આહારણસણાણ સુદ્ધં ઉચ્છં ગવેસિયચ્ચં) સાધુ આહાર-ણસે શુદ્ધ-નિર્દોષ ઉચ્છ-થોડા થોડા લેને રૂપ ભિક્ષા કી ગવેષણા કરે । તાત્પર્યે इसका यह है कि जैसे-लूने गये क्षेत्र से कर्णों का आदान होता है उसी तरह साधु को भी गृहस्थ के लिये निष्पादिन अन्न की स्तोक २ अल्प २ रूप में गवेषणा करनी चाहिये । जबव ह भिक्षा की गवेषणा करे तब उसे (अण्णाण) अज्ञात होना चाहिये-दाता उसे यों न समझे-कि यह धनिक होकर प्रव्रजित हुआ है, इत्यादिरूप से दाता से उन्हें अपरिचित रहना चाहिये । (अकहिए) अकथित होना चाहिये-में धनिक था गरीब नहीं था फिर भी दीक्षित हुआ हूं इस प्रकार का अपना परिचय उसे दाता को नहीं देना चाहिये । (असिद्धे) अशिष्ट रहना चाहिये-यह साधु उग्रवंशीय है, भोगवंशीय है, इस रूप से दाता के

હવે સૂત્રકાર એણા સમિતિ નામની ચાથી ભાવના બતાવે છે “ચઉત્થં” इत्यादि

ટીકાર્થ—“ આહારણસણાણ સુદ્ધં ઉચ્છં ગવેસિયચ્ચં ” સાધુ આહારણસણાર્થી શુદ્ધ-નિર્દોષ ઉચ્છ થોડી થોડી માત્રામાં ભિક્ષાની ગવેષણા કરે. તેનામાં ‘વાર્થ’ એ છે કે જેમ લાણીયેલ ખેતરમાંથી કણોનું આદાન થાય છે, એ જ રીતે સાધુએ પણ ગૃહસ્થને માટે તૈયાર કરેલ અગ્નિ થોડી થોડી માત્રામાં ગવેષણા કરવી જોઈએ. બ્યારે તે ભિક્ષાની ગવેષણા કરે ત્યારે તેણે “ અણ્ણાણ ” અજ્ઞાત રહેવું જોઈએ. દાતાને તે વાતની ખબર ન પડવી જોઈએ કે તે ધનિક સ્થિતિમાંથી દીક્ષિત થયેલ છે. આ પ્રકારે તેણે દાતાર્થી અપરિચિત રહેવું જોઈએ. “ અકહિયે ” અકથિત રહેવું જોઈએ—“ હું ” ધનિક હતો ” ગરીબ ન હતો છતાં પણ મેં દીક્ષા લીધેલ છે ” એ પ્રકારનો પોતાનો પરિચય તેણે દાતાને દેવો જોઈએ. નહીં “ અસિદ્ધે ” અશિષ્ટ રહેવું જોઈએ. “ આ સાધુ ઉગ્રવંશીય છે, ભોગવંશીય છે, ” તે પ્રકારે દાતા આગળ તેણે પ્રગટ થવું

સુવર્ણિની ટીકા અં ૧ સુ ૧. ખાવનાસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૩૧

=દીનતાવર્જિતઃ ‘અકલુષે’ અકલુષઃ=ન્યમૃત્તિરહિતઃ, ‘અવિસૈર્હ’ અવિષાદી= ‘ભિક્ષાલાભો મધિષ્યતિ ન વે’ત્યાદિ વિષાદવર્જિતઃ, તથા-‘અપરિતંતજોગી’ અપરિતાન્તયોગી-અલાભાદિષુ તન્તનાદિ શબ્દવર્જિતઃ, તથા-‘જયણઘટ્ટણ કરણ ચરિય વિનયગુણજોગસંપડત્તે’ યતન ઘટનકરણચરિતવિનયગુણયોગસંપ્રયુક્તઃ, તત્ર યતન-પ્રાપ્તેષુ સંયમયોગેષુ ઉદયમઃ, ઘટન-અપ્રાપ્તિ સંજન-યોગપ્રાપ્તિવેષ્ટનમ્, एतद्द्वयं કુરુતે યઃ સ યતનઘટનકરણઃ, તથા-ચરિતઃ=સેવિતો વિનયો યેન સ ચરિતવિનયઃ, તથા ગુણયોગેન=સમાધિગુણયોગેન સંપ્રયુક્તો યઃ સઃ-ગુણયોગ સંપ્રયુક્તઃ, एतेषां કર્મધારયઃ, एतादृशो ‘મિલ્લ’ મિલ્લુઃ=સાધુઃ ‘મિલ્લેસણા’ પ્રતિ ઉસે પ્રકટિત નહીં હોના ચાહિયે । (અદીણે) અદીન હોના ચાહિયે-દીનતા કે ભાવ સે રહિત રહના ચાહિયે અપને વ્યવહાર સે દાતા કે પ્રતિ ઉસે દીનતા કા ભાવ પ્રકટ નહીં કરના ચાહિયે । (અકલુષે) અકલુષ-ઓછીવૃત્તિ સે રહિત હોના ચાહિયે । ઉમકી વૃત્તિ એસી ન હો કિ જિસ સે વહ દાતા કે દષ્ટિ મેં ઓછી પ્રતીત હો । (અવિસૈર્હ) વિષાદ સે ઉસે રહિત હોના ચાહિયે-ભિક્ષા કા લાભ હોગા યા નહીં હોગા હિસ પ્રકાર કા વિષાદ ઉસે નહીં કરના ચાહિયે । (અપરિતંતજોગી) અપરિતાન્તયોગી-અલાભ આદિ કી અવસ્થા મેં ઉસે તન-તનાટ નહીં કરના ચાહિયે । (જયણ-ઘટ્ટણ-કરણ-ચરિય વિનયગુણ-જોગસંપડત્તે) પ્રાપ્ત સંયમયોગ મેં ઉદયમ કરના હિસકા નામ યતન હૈ હિસ યતન કો તથા અપ્રાપ્ત સંયમયોગ કો પ્રાપ્તિ મેં ચેષ્ટા કરના હિસકા નામ ઘટન હૈ, હિસ ઘટન કો જો કરને વાલા હૈ વહ યતન ઘટન કરણ હૈ તથા વિનયગુણ કો પહિલે સે જિમને આચરિત કિયા હૈ એવં સમાધિ-
 જોઈએ નહી. “અદીણે” અદીન રહેવું જોઈએ-દીનતાના ભાવથી રહિત રહેવું જોઈએ-પોતાના વ્યવહારથી દાતા આગળ તેણે દીનતાનો ભાવ પ્રગટ કરવો જોઈએ નહી. “અકલુષે” અકલુષ-ઓછી વૃત્તિથી રહિત થવું જોઈએ, તેની વૃત્તિ એવી ન હોવી જોઈએ કે તે દાતાની દષ્ટિએ ઓછી જણાય, “અવિસૈર્હ” તેણે વિષાદ રહિત રહેવું જોઈએ. ભિક્ષાલાભ મળશે કે નહીં એવો વિષાદ તેણે કરવો જોઈએ નહી. “અપરિતંતજોગી” અપરિતાન્તયોગી-અલાભ આદિ અવસ્થામાં પણ તેણે તનતનાટ ન કરવો જોઈએ. “જયણ, ઘટ્ટણ-કરણ-ચરિય-વિનયજોગસંપડત્તે” પ્રાપ્ત સંયમ યોગમાં ઉદયમ કરવો તેને ‘યતન’ કહે છે. આ યતનને તથા અપ્રાપ્ત સંયમ યોગની પ્રાપ્તિની ચેષ્ટા કરવી તેને ઘટન કહે છે. આ ઘટનને જો કરનાર છે તે યતનઘટનકરણ છે. તથા વિનયગુણને પહેલેથી જ જોમણે આચર્યો છે તથા સમાધિગુણના યોગથી જો યુક્ત બનેલ

મિશ્રેષ્ણાયાં 'જુત્તે' યુક્તઃ=સંલગ્નઃ 'સમુદાણેઝ્ઞ' સમુદાનોય=મિશ્રાર્થમનેક-
 ગ્રહેષુ અમિત્વા 'મિક્ષાચરિયં ડંઙ' મિક્ષાચર્પામુઙ્ગામ્=અલ્પાલ્પગ્રહણરૂપાં મિક્ષાં-
 'ચેતૂળ' ગૃહીત્વા ગુરુજનસ્ય 'પાસં' પાર્થ-સમીપં 'આગ' સમાગતઃ 'ગમ-
 નાગમનાદ્યારપડિકમણપડિકંતે' ગમનાગમનાતિચારપ્રતિક્રમણપ્રતિક્રાન્તઃ=
 ગમનાગમનાતિચારાણાં પ્રતિક્રમણેન=ઈર્યાપથિકીપ્રાયશ્ચિત્તેન પ્રતિક્રાન્તઃ=નિચર્તિ-
 તપાપઃ, 'ગુરુજણસસ' ગુરુજનસ્ય 'ગુરુસંદિદ્વસ' ગુરુસંદિદ્વસ્ય=ગુરુના નિ-
 ર્દિષ્ટસ્ય રત્નાધિકસ્યાન્યમુનેરન્તિકે વા 'જહોવણસં' યથોપદેશમ્=ઉપદેશાનતિ-
 ક્રમેણ 'નિરહ્યારં' નિરતિચારં ચ 'આલોચના દાયણં ચ દાઝળ' આલોચના
 દાનં ચ દત્ત્વા=યથા યથા શિક્ષા ગૃહીતા તથા તથા સર્વં સમાલોચ્ય 'અપ્પમત્તે'
 અપ્રમત્તઃ=પ્રમાદવર્જિતઃ 'પુણરવિ' પુનરપિ ચામામિકાલે 'અણેસણા' અણેવ-
 ગુણ કે યોગ સે જો યુક્ત ચના હુઆ હૈ વહ વિનયગુણ સંપ્રયુક્ત કહ-
 લાતા હૈ એસા (મિક્ષુ) સાધુ (મિક્ષેસણા' જુત્તે) મિશ્રેષ્ણા મેં
 સંલગ્ન હોકર વહ (સમુદાણેઝ્ઞ) મિશ્રાર્થ અનેક ઘરોં મેં ધૂમેં, ઓર
 વહાં સે (મિક્ષાચરિયં ડંઙ) અલ્પ અલ્પ રૂપ મેં મિક્ષા (ચેતૂળ)
 ગ્રહણ કરકે ફિર વહ (ગુરુજણસસ પાસં આગ) અપને ગુરુજન કે
 પાસ મેં આવે. (ગમનાગમનાદ્યારપડિકમણપડિકંતે આલોચના દાયણ-
 ચ દાઝળ): ઓર વહ ગમનાગમન કે અતિચારોં કે પ્રતિક્રમણ સે ઈર્યા-
 પથિકી પ્રાયશ્ચિત્ત સે પ્રતિક્રાન્ત બને હસ તરહ નિચર્તિતપાપ હોકર વહ
 (ગુરુજણસસ) ગુરુજન કે (વા) અથવા (ગુરુસંદિદ્વસ) ગુરુ સે સંદિષ્ટ
 અન્ય રત્ન ત્રયાધિક મુનિકે (જહોવણસં) ઉપદેશ કે અનુસાર જહાં ૨ સે
 મિક્ષા ઉસને લી હૈ ઉસ ઉસ પ્રકાર સે સવકી (નિરહ્યારં) નિરતિચાર-
 આલોચના કરે આલોચના કરકે (અપ્પમત્તે) પ્રમાદ વર્જિત, ચના હુઆ તથા

છે તે 'વિનયગુણ સંપ્રયુક્ત' કહેવાય છે. એવા "મિક્ષુ" સાધુ "મિક્ષે
 સણા' જુત્તે" શિક્ષાની એવણામાં "સમુદાણેઝ્ઞ" શિક્ષાને ભાટે અનેક ઘરે
 ફેરે, અને ત્યાંથી "મિક્ષાચરિયં ડંઙ" અલ્પ અલ્પ માત્રામાં મિક્ષા 'ચેતૂળ'
 ગ્રહણ કરીને તે "ગુરુજણસસ પાસં આગ" પોતાના ગુરુજનની પાસે આવે,
 "ગમનાગમનાદ્યારપડિકમણપડિકંતઆલોચનાદાયણં ચ દાઝળ" અને તે
 ગમનાગમનના અતિચારોના પ્રતિક્રમણ વડે ઈર્યાપથિકી પ્રાયશ્ચિત્તથી પ્રતિક્રાન્ત
 થાય અને એ રીતે પાપની નિર્વૃત્ત થઈને તે "ગુરુજણસસ" ગુરુજનને "વા"
 અથવા "ગુરુસંદિદ્વસ" ગુરુથી નિર્દિષ્ટ અન્ય રત્નત્રયધારી મુનિની "જહોવણસં"
 ઉપદેશ પ્રમાણે ન્યાં ન્યાંથી તેણે મિક્ષા મેળવીહોય તે તે પ્રકારે તે સૌની
 "નિરહ્યારં" નિરતિચાર આલોચના કરે. આલોચના કરીને "અપ્પમત્તે"

णायाम्=उद्गमादिदोषरूपायाम्, 'पयस्' प्रयतः=प्रयत्नवान्-तद्गतदोषपरिहारे उद्यमवानित्यर्थः, 'पडिकमिता' प्रतिग्रन्थ=कायोत्सर्गं कृत्वा 'पसंते' प्रशान्तः=आहारेऽनातुरः तथा-'आसीणसुहृन्निषण्णे' आसीनसुखनिषण्णः, तत्र-आसीनः=उपविष्टः, सुखनिषण्णः=गमनागमनजनितपरिश्रममवेदयन् सुखपूर्वकं स्थितः, पुनः कीदृशः ? 'सुहृत्तमेत्तं च' सुहृत्तमात्रं च, 'ज्ञाणसुभजोगन्ताणसज्जायगोविमणे' ध्यानशुभयोग ज्ञानस्वाध्यायगोपितमनाः, तत्र ध्याने=धर्मध्यानादिलक्षणम्, शुभयोगः=संयमव्यापारः, ज्ञानम्=भगवदुपदिष्टमोक्षहेतुनिरवयवसाधुवृत्तिपरिचिन्तनम्, तथा-स्वाध्यायः=मूलसूत्रपरिगुणनम्, एतैर्गोपितं = विषयान्तरगमनेन निरुद्धं मनो येन सः, अतएव 'धम्ममणे' धर्ममनाः=श्रुतचारित्र्यलक्षणधर्मयुक्ताः, तथा-'अविमणे' अविमनाः=अरसचिरसादित्वाभेऽपि विषादवर्जितचित्तः, तथा 'सुह-

(पुणरवि अणेसणाए पयस्) आगामी काल में उद्गमादि दोष रूप अने-षणा में प्रयत्नशील बना हुआ-अर्थात्-एषणानन्त दोषों के परिहार में सदा सावधान बना हुआ वह मुनि (पडिकमिता) कायोत्सर्ग करके (पसंते) प्रशान्त बने-आहार में आतुर न बने (आसीणसुहृन्निषण्णे) बैठ जावे और भिक्षा के निमित्त गमनागमन में होने वाले परिश्रम का कुछ भी खयाल न करे प्रत्युत सुखपूर्वक-अच्छी तरह से बैठे। (सुहृत्तमेत्तं च ज्ञाणसुभजोगन्ताणसज्जायगोविमणे) उक्त भगवत् वह एक सुहृत्तवत् धर्मध्यानादिरूप ध्यान से, शुभयोग से, संयमन के द्वारा कथित मोक्ष की हेतुभूत निरवयव साधुवृत्ति के विचार से, तथा मूल-सूत्र के परिगुणन से विषयान्तर में जाते हुए अपने मन को रोके और श्रुतचारित्र्यरूप धर्म से युक्त अपने मन को रखे। इस तरह (धम्ममणे) धर्म मार्ग वाला तथा (अविमणे) अविमन-अरस चिरस आदि आहार

प्रमाद रहित अनेक तथा "पुणरवि अणेसणाए पयस्" अन्विष्यक्रमों उद्गमादि दोषरूप अनेषणामां प्रयत्नशील बनाने-अर्थात् उद्गमोत्पत्ति दोषानां त्यागमां सावधान बनाने से मुनि "पडिकमिता" कायोत्सर्ग करीने "पसंते" प्रशान्त बने-आहारने भाटे आतुर न बने, "आसीणसुहृन्निषण्णे" ऐसी जगत् अपने ज्ञानने निमित्त गमनागमनमां यतां परिश्रमनां सहज पशु विचार न करे प्रत्युत शुभ पूर्वक-अरारर रीते ऐसे "सुहृत्तमेत्तं च ज्ञाणसुभजोगन्ताणसज्जायगोविमणे" से समझे से एक सुहृत्त सुधी धर्मध्यानादिरूप ध्यानधी, शुभ योगधी, अगवान द्वारा कथित मोक्षनी हेतुभूत निरवयव साधु वृत्तिना विचारधी, तथा भगवत्सूत्रना परिगुणननी गहाराता विषयमां सोताना मनने जता रोके अपने सोताना मनने श्रुतचारित्र्यरूप धर्ममां परोये, आ रीते "धम्ममणे" धर्ममनवाणा तथा "अविमणे" अविमन-अरस, नीरस आदि आहार आसिमां

मणे ' सुखमनाः=संयमानुरक्तचित्तः, तथा- 'अविग्गहमणे' अविग्रहमनाः=संक्षि-
 ष्टमनोभाववर्जितचित्तः, तथा- 'समाहियमणे' समाहितमनाः=समाहितं=रागद्वेष-
 राहित्येन आत्मनि सम्यगुपनीतं मनो येन सः, उपशान्तचित्त इत्यर्थः, तथा—
 'सद्धासंवेगनिज्जरमणे' श्रद्धासंवेगनिर्जरामना, तत्र-श्रद्धा=जिनमताभिरुचिः,
 संवेगः=मोक्षभिलाषः, निर्जरा=कर्मक्षपणं च मनसि यस्य सः, तत्त्वार्थश्रद्धानामो-
 क्षरुचिस्ततो निर्जरा, तद्धानित्यर्थः, तथा- 'पवयणवच्छट्टभाविमणे' प्रवचनवा-
 त्सल्यभाषितमनाः=प्रवचनानुरागरञ्जितचित्तः, 'उट्टेऊण य' उत्था य च 'पहट्टे'
 प्रहृष्टः=अतिशयप्रमुदितः, अतएव- 'तुट्टे' तुष्टः 'जहाराइणियं' यथारात्मिकं=
 यथापर्यायं लघु पर्यायानुसारेण 'साहवे' साधुन्=समानसमाचारिकान् मुनीन्
 'भावओ' भावतः=अन्तःकरणेन ननुष्युषितया 'निमंतइत्ता य' निमन्त्र्य=
 आहारग्रहणार्थं संप्राप्य अनन्तरं 'गुरुजणेणं' गुरुजनेन 'विइण्णे य' विनीर्णच=
 के लाभ में भी विषाद से विहीन चित्त वाला, (सुहमणे) सुखमन-
 संयम में अनुरक्त चित्त वाला, तथा (अविग्गहमणे) संक्षिप्त मनोभाव
 से वर्जित हृदयवाला, और (समाहियमणे) रागद्वेष से रहित होने के
 कारण उपशान्त मनवाला तथा (सद्धा संवेगनिज्जरमणे) श्रद्धा-
 तत्त्वार्थ-श्रद्धान, संवेग-मोक्ष में रुचि और निर्जराकर्मक्षपण इन्हीं मन
 रखनेवाला, (पवयणवच्छट्टभाविमणे) प्रवचनानुराग से जिसका
 चित्त अनुरजित बना हुआ है ऐसा वह साधु (उट्टेऊण य) अपने
 स्थान से उठकर (पहट्टे) अतिशय प्रमुदित एवं (तुट्टि) संतुष्ट होता
 हुआ (जहाराइणियं साहवे) यथापर्याय-वडे छोटे के क्रमानुसार
 साधुओं से भावपूर्वक (निमंतइत्ता य) आहार ग्रहण करने के लिये
 मार्थना करे। इसके बाद (गुरुजणेणं विइण्णे य) गुरुजनों बड़े का
 पक्ष विषाद रहित चित्तवाला, "सुहमणे" सुखमन-संयममां अनुरक्त चित्त
 वाला, तथा "अविग्गहमणे" संक्षिप्त मनोभाव रहित हृदयवाला, अने
 "समाहियमणे" रागद्वेष रहित होवाने दीधे उपशान्त मनवाला, तथा "सद्धा
 संवेगनिज्जरमणे" श्रद्धा-तत्त्वार्थमां श्रद्धा, संवेग-मोक्षनी रुचि अने निर्जरा
 कर्मक्षपणमां मन रागनार "पवयणवच्छट्टभाविमणे" प्रवचनानुरागदी लेनुं
 चित्त अनुरजित गन्धुं छे ओवा ते साधु "ऊट्टेऊणव" पोताना स्थानेथी छिडीने
 "पहट्टे" अतिशय आनंदित अने "तुट्टि" संतुष्ट थईने "जहाराइणियं-
 साहवे" यथा पर्याय-नाना मोटाना डम प्रमाणे साधुओने भावपूर्वक "निमं-
 तइत्ता य" आहार अल्लु करवाने भाटे विनंति करे त्सार आद "गुरुजणेणं
 विइण्णेय" गुरुजनो वडे अपायेव आहार "तमे लोअन करे" ओपी आज्ञा

दत्ते सति 'सुखश्च त्वमश्नादिक' मित्यनुज्ञाते वा सति, 'उपविष्टे' उचितासने उपविष्टः सन् 'समीसें कायं' 'सशीषं कायं' = सपूर्णं शरीरं, तथा = 'करयलं' करतलं च 'संपमज्जिऊण' 'संपमाज्जं' 'अमुच्छिण्' 'अमूच्छितः' = आहारविषये मूच्छीरहितः 'अगिधे' 'अगुद्धः' - अप्राप्त रसेऽप्याङ्क्षा रहितः, 'अगट्ठि' 'अग्रथितः' = रसानुगताकाङ्क्षारूपतन्तुजालैरानाबद्धः, तथा - 'अगरहिण्' 'अगहितः' = आहारविषये अकृतादाहगर्हः, अकृतदाहगर्हश्चेत्यर्थः, तथा - 'अणज्झोवण्णे' 'अनध्युपपन्नः' = रसविषये लोलुपताग्रहितः, तथा - 'अणाइले' 'अनाविलः' = अकलुपः 'अलुद्धे' 'अलुब्धो' - लोभरहितः, तथा 'अणतट्ठिण्' 'अनात्मार्थिकः' = न केवलमात्मस्वार्थी - परमार्थकारीत्यर्थः, असुरसुरं 'सुरसुरसञ्चरहितम्', 'अवचवचम्' चपड चपड

दिया हुआ आहार "तुम भोजन करो" इस प्रकार आज्ञा मिलने पर वह साधु (उपविष्टे) उचित आसन पर बैठ कर (समीसें कायं करयलं संपमज्जिऊण) मस्तक से लेकर अपने समस्त शरीर को और करतल को अच्छी तरह प्रमाजित करे। प्रमाजित करके (अमुच्छिण्) आहार के विषय में अमूच्छित बना हुआ वह साधु (अगिधे) अप्राप्त रस में आकांक्षा से रहित, तथा (अगट्ठि) रसानुगत आकांक्षा रूप तन्तुजाल से, अनाबद्ध तथा (अगरहिण्) - आहार के विषय में अथवा दाना के विषय में गर्हा करने से रहित और (अणज्झोवण्णे) रस के विषय में लोलुपता से विहीन बन कर आहार करें। उस समय वह (अणाइले) अनाविल - अकलुप और (अलुद्धे) अलुब्ध - लोभरहित होकर (अणतट्ठिण्) अनात्मार्थिक - केवल आत्मस्वार्थी न बनता हुआ आहार करते समय वह (असुरसुरं) सुर सुर

भगता ते साधु "उपविष्टे" योग्य आसन पर बैसीने "समीसें कायं करयलं संपमज्जिऊण" शिरसी दहने पीताना आप्ता शरीरने तथा हथेणीने सारी रीते प्रमाजित करीने "अमुच्छिण्" आहारना विषयमां अभूच्छित जनीने ते साधु "अगिधे" अप्राप्त रसनी आकांक्षार्थी रहित तथा "अगट्ठि" रसानुगत आकांक्षाइपी तन्तुजालार्थी अनाबद्ध-मुद्ध तथा "अगरहिण्" आहारना विषयमां के दाताना विषयमां अर्हा करवानी क्रियार्थी रहित तथा "अणज्झोवण्णे" रसनी आणतमां लोलुपता रहित जनीने आहार करये जेहण्णे, ते समये ते "अणाइले" अनाविल-अकलुप रहित अने "अलुद्धे" अलुब्ध-लोभरहित थहने "अणतट्ठिण्" अनात्मार्थिक-केवल आत्मस्वार्थी न अने आहार करती वधते ते "असुरसुरं" "सुर सुर" शब्द न करे, "अवचवचं"

शब्दरहितम्. 'अदुयं' अद्रुतम्-नातिशीघ्रम् 'अविलंबियं' अविलम्बितम्-ना-
तिगन्धम् 'अपरिसाडियं' अपरिश्राटितम्-परिश्राटनवर्जितम्, चिन्दापातयन्निवर्त्यः,
तथा-'आलोयभायणे' आलोकभाजने=प्रकाशयुक्तपात्रे 'जयं' यतं=यतनापूर्व-
कम् 'अप्पमत्तेण' अप्रमत्तेन-सावधानेन 'वयगयसंजोगं' व्यगगतसंयोगम्=
संयोजनादोषरहितम् अधिकलवणादियुक्तवस्तुनोऽल्पलवणादियुक्तवस्तुनि संमेलन-
संयोगस्तद्विवक्षितवर्त्यः, 'अणिगालम्' अंगारम्=अङ्गारदोषवर्जितं रागरहित-
मित्यर्थः, तथा-'विगयधूमं' विगतधूमं-धूमदोषवर्जितं द्वेषरहितमित्यर्थः, तदुक्तम्-
'रागेण सङ्गालं दोसेण सधूमं विगयाणादि' इति, तथा-'अक्खोवंजणवणाणुलेवण-
भूयं' अक्षोपाञ्जनव्रणानुलेपनभूतम्=तत्र-अक्षस्य=शकटपुरः, उपाञ्जनम्=तैलाभ्यञ्ज-
नम् तथा-'वणाणुलेवणं' व्रणाणुलेपनं=व्रणस्य=स्फोटकस्य अनुलेपनम्=श्लेषलेप-
नम्, तयोर्भूतं=सदृशं यत्नम्, तथा-संजपजायामावातिमित्तं=संययाया मात्रा निमित्तं

शब्द न करे (अचवचलं) चपड चपड शब्द न करे। (अदुयं) न
बहुत जल्दी जल्दी (अविलंबियं) न बहुत धीरातथा (अपरिसाडियं)
खाते समय आहार के लीप को जमीन पर नहीं गिराता हुआ (आलो-
यभायणे) प्रकाशयुक्त पात्र में (जयं) यतना पूर्वक (अप्पमत्तेण) बड़ी
सावधानी के साथ (वयगय संजोग) संयोजनादि दोषरहित-अर्थात्-
अधिक लवण आदि से युक्त वस्तु को अल्प लवण आदि से युक्त वस्तु
के साथ न मिलाकर (अणिगालं च) अंगार दोष रहित आहारसामग्री
में राग रहित तथा (विगयधूमं) धूमदोषरहित-द्वेषरहित (अक्खोवं-
जणवणाणु लेवणभूयं) जिस प्रकार शकट की धुरा में तैल का लगाना
भारवहन के निमित्त ही किया जाता है और दूसरे किसी प्रयोजन के
लिये नहीं किया जाता है तथा व्रण-घाव-पर मरहमपट्टी आदि का

“चपड चपड” शब्द न करे. “अदुयं” वधारे अउपथी जाय नहीं, “अवि-
लंबियं” वधारे धीमेधी जाय नहीं तथा “अपरिसाडियं” जाती वजते
आहारना पदार्थने जमीन पर पडवा दीधा विना “आलोयभायणे” प्रकाश
वाजा पात्रमां “जयं” यतना पूर्वक “अप्पमत्तेणं” बड़ी सावधानीधी “वय-
गयसंजोगं” संयोजनादि दोष रहित-ओटवे के वधारे भीडा आदि वाणी
वस्तुने थोडा भीडा आदि वाणी वस्तु साथे ओकन कर्था विना “अणिगालं च”
अंगार दोष रहित आहार सामग्रीमां राग रहित तथा “विगयधूमं” धूम
दोष रहित द्वेष रहित “अक्खोवंजणवणाणुलेवणभूयं” जेम गाजानी धरीमां
तेलतुं सिंथन बारवहनने भाटे ज कराय छे. पाणु धीव्वा केरि करायुं करायुं

સુદર્શિની ટીકા અં ૧ સૂ ૧ ભાવનાસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૩૭

સંયમયાત્રા-સંયમપરિપાલનં સૈવ માત્રા-આલમ્બનં તન્નિમિત્તં=તદ્વેતોઃ સંયમયા-
ત્રાનિર્વાહાર્થમેવેત્યર્થઃ, તથા-‘ સંજમભારવહ્નદ્વાય ’ સંયમભારવહ્નદ્વાય=સંય-
મભારવહ્નદ્વાય, તથા-‘ પ્રાણધારણદ્વાય ’ પ્રાણધારણાર્થતથા=પ્રાણધારણાર્થ ચ
‘ સંજણ ’ સંયતઃ સ્વલુ ‘ સમિય ’ સમ્યક્-યતના પૂર્વકં-સમિકં ચા=સમભા-
વેન, ‘ મુંજેજ્જા ’ શુદ્ધીત । યથા અક્ષસ્યોપાહ્નનં ભારવહ્નદ્વાયમેવ વિધીયતે, નાન્ય-
પ્રયોજનાર્થમ્, યથા ચ વ્રણાનુલેપનં તન્નિમિત્ત્યર્થમેવ વિધીયતે, તથૈવ-સંયમયાત્રાનિ-
ર્વાહાર્થ-સંયમભારવહ્નદ્વાય પ્રાણધારણાર્થ ચ સાધુશુદ્ધીત, ન તુ શરીરવલવૃદ્ધ્યર્થ
રૂપલાવણ્યવૃદ્ધ્યર્થ ચેત્યાશયઃ । એવમ્-અમુના પ્રકારેણ આહારસમિતિયોગેન ભાવિતો
ભવતિ અંતરાત્મા । ભાવિતાત્મા કીદૃશો ભવતિ ? इत्याह-અશ્વલાસંક્રિષ્ટનિર્વ્રજ-
ચરિત્રભાવનયા હેતુભૂતયા અહિંસકઃસંયતઃસુસાધુર્ભવતિ । एषां पदानामर्थो द्वितीय-
भावनायां व्याख्यातस्ततोऽवगन्तव्यः ॥ સૂ ૧ ॥

પ્રયોગ उसकी निवृत्ति के लिये किया जाता है उसी तरह (संजमजा-
यामाया निमित्तं) संयमयात्रा के निर्वाह के लिये (संजमभार वह्ण-
द्वाय) संयम रूप भार को ढोने के लिये और (प्राणधारणद्वाय) प्राण
धारण के लिये (संजण) संयत-मुनि (समिष) यतना पूर्वक सम-
भाव से (मુંजेज्जा) आहार करे । किन्तु शारीरिक बलवृद्धि के लिये
तथा रूपलावण्य की वृद्धि के लिये नहीं करे । (एवमाहारसमिहजोगेण
भाविओअंतरप्पा असबलमसंकिलिठ निव्वणचरित्त भावणाए अहिंसए
संजए सुसाह) इस प्रकार का आहार समिति के योग से अंतरात्मा
भावित हो जाता है । भावित हुआ वह अन्तरात्मा अशब्द, असंक्रिष्ट
एवं निर्व्रज (निरतिचार)चरित्रकी भावना के कारण अहिंसक और संयत
बन जाता है, और सच्चे रूप में साधु-मोक्ष को साधन करने वाले-इस
नाम को चरितार्थ कर लेता है ।

તથી એજ પ્રમાણે “ સંજમજાયામાયાનિમિત્તં ” સંયમયાત્રાના નિર્વાહને માટે
“ સંજમભારવહ્નદ્વાય ” અંયમરૂપી ભારનું વહન કરવાને માટે અને “ પ્રાણધા-
રણદ્વાય ” પ્રાણધારણને માટે “ સંજણ ” સંત-મુનિ “ સમિય ” યતના
પૂર્વક સમભાવથી “ મુંજેજ્જા ” આહાર કરે. પણ શારીરિક બળ વધારવાને
માટે તથા રૂપલાવણ્યની વૃદ્ધિને માટે ન કરે. “ એવમાહારસમિહજોગેણ ભાવેણ
અંતરપ્પા અસબલમસંકિલિઠનિવ્વણચરિત્તભાવણાએ અહિંસએ સંજએ સુસાહ ”
આ રીતે આહાર સમિતિના યોગથી અંતરાત્મા ભાવિત થયે બળ છે. ભાવિત
થયેલ તે અંતરાત્મા અશબ્દ, અસંક્રિષ્ટ અને નિર્વાણ ચારિત્રની ભાવનાને
કારણે અહિંસક તથા સંયત બની બળ છે, અને સાથા અર્થમાં સાધુ મોક્ષને
સાધન કરનાર-તે નામને ચરિતાર્થ કરે છે.

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने एषणा समिति नाम की चतुर्थ भावना का स्पष्टीकरण किया है। इसमें वस्तु का गवेषण, उसका ग्रहण तथा उपयोग, इत तीन बातों का विचार किया जाता है। उच्छ आहार की गवेषणा करते समय साधु को अज्ञात, अकथित आदि रूप में रह कर ही विचरना चाहिये। आहार प्राप्त होगा या नहीं होगा। इस प्रकार के संदेहयुक्त विचार से उसे विषाद भावसंयम नहीं होना चाहिये। अपने द्वारा गृहीत संयम की जिस प्रकार रक्षा हो ऐसा ही प्रयत्न उसको करते रहना चाहिये तथा जो संयम भाव प्राप्त नहीं हुआ है उसकी प्राप्ति में उसका सनत उद्योगी रहना चाहिये। भिक्षा का लाभ न होने पर उसके चित्त में ग्लानि का भाव नहीं जगना चाहिये। और न क्रोधादि के आवेश में आकर तनतनाट करना चाहिये। भिक्षा प्राप्ति के निमित्त उसे अनेक गृहस्थों के घर पर जाना अनिवार्य है। वहां से वह अल्परूप में प्रत्येक घर से भिक्षा ले। जब देखे की भिक्षा की पूर्ति हो गई है तो वह वापिस उपाश्रय में आवे और गुरु के समक्ष प्राप्त भिक्षा को रखकर गमनागमनजन्य अनिचारों की प्रतिक्रमण करके शुद्धि करे। फिर गुरु के पास अथवा गुरुनिर्दिष्ट अन्य और रत्नाधिक मुनि के समीप जिस २ प्रकार से उसने गोचरी-

भावार्थ—आ सूत्र द्वारा सूत्रकारे एषणासमिति नामानी साथे चौथी भावनातुं स्पष्टीकरणु कथुं छे. तेमां वस्तुना गवेषण, तेनुं ग्रहण, तथा उप-योग, अथे प्रहण वातना विचार करायो छे. उच्छ आहारनी गवेषणा करती वणते साधुअये अज्ञात, अकथित, आदि रूपमां रहिने न विचरवुं जेठअये. “आहार प्राप्त थये के नहीं थाय” अथे संदिग्ध विचारथी तेले विषाद करयो जेठअये. नही. पोते ग्रहण करेल संयमनी के प्रकारे रक्षा थाय अथे न प्रयत्न तेले करता रहवुं जेठअये तथा के संयम भाव प्राप्त थयो नथी तेनी प्राप्ति माटे प्रयत्नशील रहवुं जेठअये, भिक्षा प्राप्त न थता तेना मनमां ग्लानिना भाव उत्पन्न थयो जेठअये नही. अने क्रोधादिना आवेशमां आवीने तनतनाट करयो जेठअये नही भिक्षा प्राप्तिने माटे अनेक गृहस्थोने घर नवुं ते तेने माटे अनिवार्य गणाय छे. त्याथी-प्रत्येक घरथी ते थोड़ी थोड़ी भिक्षा ग्रहण करे. न्यारे भिक्षानी प्राप्ति पूर्ण थअ गयेली लागे त्यारे ते उपाश्रयमां आवीने गुरुनी समक्ष प्राप्त थयेल भिक्षाने भूमीने गमनागमन जन्य अति-आरानी प्रतिक्रमण करीने शुद्धि करे. पछी गुरुनी पासे अथवा गुरुनिर्दिष्ट भोजन कोष त्रिरत्नधारी साधुनी भासे तेले के के प्रकारे गोचरी प्राप्त करी

भिक्षा प्राप्त की है उसकी आलोचना करें। इस तरह प्रमाद वर्जित बनकर वह आगामी काल में इस बातकी विशेष सावधानी रखे की जिससे उद्गमादि दोषों का आहार में परिहार (निवारण) होता रहे। कायोत्सर्गकरके वह आहार में अनातुर बनकर शान्ति-सुखपूर्वक बैठ जावे। और जयन्त आहार करने का समय न आवे इसके पहिले अपने मन को ध्यान, शुभयोग, ज्ञान, और स्वाध्याय में लगावे। किसी भी प्रकार का संकल्पित भाव अपने मन में न आने देवे। बाद में—जब आहार का समय आ जावे तब उठकर यथापर्याय अर्थात् बड़े छोटी के क्रम से समस्त साधूजनों को योग की अवकृतापूर्वक आहार के लिये आमंत्रित करे। गुरुजन जब भोजन करने की आज्ञा प्रदान करें तब अपने सशीर्ष शरीर आदिका प्रमार्जन कर, अमूर्च्छित आदि भाव संपन्न बनकर यतनापूर्वक आगमोक्त विधि के अनुसार आहार करें। आहार करते समय इस बात का वह ध्यान रखे कि यह आहार में शरीर में बलवृद्धि के निमित्त अथवा कांति आदि बढ़ाने के निमित्त नहीं कर रहा हूं किन्तु संप्रमयात्रा के निर्वाह के निमित्त संयमभार वहन करने के निमित्त, और प्राणधारण के निमित्त ही कर रहा हूं। इस प्रकार आहारसमितिके योग से यह जीव वासित हो जाता है—तो वह अपने यूहीन जन के अहिंसा अतिचार आदि दोषों से रक्षित करता हुआ सच्चा अहिंसक संयत

होगा तेनी आलोचना करे, आरीते प्रमाद रहित जनीने ते अवध्यमां ते बातनी वधारे काण्ठ राणे के जेधी उद्गमादि दोषोने आहारमां त्याग थतो रहे, कायोत्सर्ग करीने आहार भाटे आतुर जन्या विना ते शांतिधी जेसी जाय, अने आहार करवाने समय न थाय त्यां सुधी पोताना मनने ध्यान, शुभयोग, ज्ञान अने स्वाध्यायमां लीन करे, कोछ पणु प्रकारने संकल्पितभाव पोताना मनमां थवा हे नही, पछी ज्यारे आहार करवाने समय थाय तारे उहीने पर्याय प्रमाणे ज्येते के मोटा-नानाना कभमां समस्त साधुजोने विनय पूर्वक आहारने भाटे आमंत्रे, गुरुजन ज्यारे भोजन लेवानी आज्ञा आपे तारे पोताना शिर शरीर आदितुं प्रमार्जन करीने, अमूर्च्छित आदि लावयुक्त जनीने यतना पूर्वक आगमोक्त विधि प्रमाणे आहार करे आहार करती वजते तेजे ते बातनुं ध्यान राखतुं के हुं आ आहार शरीरमां जग वधारवा भाटे के इप वधारवा भाटे करतो नथी पणु संप्रमयात्राना निर्वाहने भाटे संप्रभार वहनने भाटे, अने प्राणधारणने भाटे न कइं छुं, आ प्रमाणे आहार समितिना योगधी ते जव वासित थई जाय छे तो ते पोते

અથ પશ્ચમીં નિશ્લેષમાદનામાહ-‘ પંચમં ’ इत्याह-

મૂલમ્-પંચમં પીઠફલગ સેઝા સંધારગવત્થપત્તકંવલદંડગરય-
હરણ ચોલપટ્ટગમુહપત્તિગપાયપુંછળાદિ, ઇયંપિ સંજમસ્સ
ઉવવૂહણટ્ટયાણ વાયાતવદંસમસગસીયપરિવક્ષણાટ્ટયાણ ઉવ-
ગરણં રાગદોસરહિયં પરિહરિયવ્વં, સંજણં નિચ્ચં પહિલેહણ
પપ્પોહણાપમજ્જણાણ અહો ય રાઓ ય અપ્પમત્તેણ હોઈ સયયં
નિવક્ષિયવ્વં ચ ગિણિહયવ્વં ચ ભાયણ મંડોવહિ ઉવગરણં ।
એવં આયણમંડણિક્ષેવણાસમિદ્ધજોગેણ ભાવિઓ ભવઈ
અંતરપ્પા અસવલમસંકિલિટ્ઠનિવ્વણચરિત્ત ભાવણાણ અર્હિ-
સણ સંજણ સુસાહુ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટકા—‘ પંચમં ’ इत्यादि—

‘ પંચમં ’ પશ્ચમીમાદાનનિશ્લેષસમિતિરૂપાં ભાવનામાહ-‘ પીઠફલગસેઝા
સંધારગવત્થપત્તકંવલદંડગરયહરણચોલપટ્ટગમુહપોત્તિગપાયપુંછળાદિ ’ પીઠફલક-
શય્યાસંસ્તારકવસ્ત્રપાત્રકમ્બલદંડકરજોહરણચોલપટ્ટકપુત્રપોતિકાપાદપોચ્છનાદિ,
તત્ર-પીઠં=કાષ્ઠમયં ‘ પાટ ’ इति પ્રસિદ્ધમામનમ્-‘ ફલક= ‘ વાજોટ ’
મન જાતા હૈ । ઓર સુસાધુ નામનો સફલ કરતા હૈ । ॥ સૂ. ૯ ॥

અવ સૂત્રકાર પાંચવી જો નિશ્લેષભાવના હૈ ઉસે પ્રકટ કરને કે લિયે
સૂત્ર કહતે હૈ—‘ પંચમં ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(પંચમં) પાંચવીં ભાવના આદાનનિશ્લેષસમિતિરૂપ હૈ વહ
હસ પ્રકાર હૈ (પીઠફલગસેઝાસંધારગવત્થપત્તકંવલદંડગરયહરણચોલ-

અહણુ કરેલ અહિંસામનનું અતિચાર આદિ દોષોથી રક્ષણુ કરતો થકો
સાચો અહિંસક સંત બની જાય છે અને સુસાધુ નામને સફળ કરે છે।સૂ.૯।

હવે સૂત્રકાર પાંચમી જે નિશ્લેષ ભાવના છે તેનું વર્ણન કરવાને માટે
કહે છે-“ પંચમં ” इत्यादि

ટીકાર્થ—“ પંચમં ” પાંચમી ભાવના આદાનનિશ્લેષસમિતિ નામની છે તે
આ પ્રમાણે છે-પીઠ ફલગ સેઝાસંધારગવત્થપત્તકંવલ દંડગરયહરણચોલપટ્ટગમુહપત્તિગ

સુવર્ણિની ટીકા અ૦૧ સૂ૦૧૦ ભાવનાસ્વરૂપનિરૂપણ

૬૪૧

હતિ પ્રસિદ્ધઃ, શય્યા=શરીરપ્રમાણલક્ષણા, સંસ્તારકઃ=સાદૃશસ્તદ્વયપ્રમાણઆસન-
વિશેષઃ, વસ્ત્રં, પાત્રં, કમ્બલશ્ચ પ્રસિદ્ધાઃ, દળકઃ=રોગિભિર્વૃદ્ધૈશ્ચ ગમનાગમાનર્થે
રક્ષિતા યદિઃ, રજોહરણં, ચોલપટકઃ, તથા-મુખપોતિકા=સદોરમુખવશ્ત્રિકા,
પાદપ્રોચ્છનં=પ્રમાર્જિકા, એતાન્યાદૌ યસ્ય તત્, इत्यादिकम्, 'ઉવગરણં' ઉપકરણ
સાધોરસ્તિ । 'एयंपि' આહારવદેતદપિ પીઠફલકાદિકં 'સંજમસ્સ' સંયમ-
સ્ય-સમદશચિદ્રસ્ય 'ઉવવૃહણદ્વયા' ઉવવૃહણાર્થમ્-પોષણાર્થમ્-भवति । अतः
'वायातवर्दंसमसगसीयपरिरक्षणद्वया' वातातपदंसमशक्तीतरिरक्षणार्थं 'सं-
जणं' संयतेन=मुनिना 'रागदोसरहियं' रागद्वेषरहितं यथा स्यात्तयेदम् उपक-
रणं 'परिहरियच्चं' परिधर्तव्यम् धारणीयमित्यर्थः । तथा 'निच्चं' नित्यं तेषां
यथायोग्यं 'पडिलेहणा पण्फोडणा पमज्जणा' प्रतिलेखना प्रस्फोटना पमार्जनामु-
त्त-प्रतिलेखना-उभयकारं प्रकुपेक्षणा, प्रस्फोटना=यतनया विधूननम्, प्रमार्जना
पટगानુद્ધપत्तिमपायपुंछणाइ) પીઠ-પાટ, ફલક-બાજોટ-શય્યા-શરીરપ્રમાણ-
ચિહ્નોના, સંસ્તારક-અદાર્દ્રહાથપ્રમાણઆસનવિશેષ, વસ્ત્ર, પાત્ર, કમ્બલ,
દળ-રોગી અથવા વૃદ્ધ સાધુઓ દ્વારા અપને પાસે ગમનાગમનાર્થે રક્ષતી
હુડે લકડી, રજો હરણ, ચોલપટક, મુખપોતિકા-સદોરમુખવશ્ત્રિકા
ઔર પાદપ્રોચ્છન-પ્રમાર્જિકા इत्यादि उपकरण साधु के हैं । (एयंपि-
संजमस्स उववृहणद्वया) आहार की तरह ये भी सतरह प्रकार के
संयम का पोषण के लिये हैं । इसलिये इनका (वायातवर्दंसमसग सीय-
परिरक्षणद्वया संजणं रागदोसरहियं परिहरियच्चं) वात-(पवन)
आतप-भूप, दंश, मशक एवं शीत से रक्षित होने के लिये मुनि को
रागद्वेषरहित होकर धारण करना चाहिये । तथा (निच्चं) नित्य ही
(पडिलेहणा पण्फोडणा पमज्जणा) इन उपकरणों में से भाजन भाण्ड

પાવપુંછણાઈ ” પીઠ-પાટ, ફલક-બાજોટ, શય્યા-શરીરના પ્રમાણનું પાથરણું
સંસ્તારક-અડી હાથના માપનું આસનવિશેષ, વસ્ત્ર, પાત્ર, કમ્બલ, દળ-રોગી
અથવા વૃદ્ધ સાધુઓ દ્વારા પોતાની પાસે આવવા જવા (ટેકા માટે) રાખેલી
લાકડી, રજોહરણ, ચોલપટક, મુખપોતિકા દોરા સહિત મુદ્રપત્તિ, અને પાદપ્રોચ્છન-
પ્રમાર્જિકા इत्यादि साधुनां उपकरणे छे. 'एयंपि संजमस्स उववृहणद्वया'
આહારની જેમ એ પણ સત્તર પ્રકારના સંયમના પોષણ માટે છે. તેથી તેમને
“વાયાતવર્દંસમસગસીયપરિરક્ષણદ્વયા સંજણં રાગદોસરહિયં પરિહરિયચ્ચ”
વાત-પવન, આતપ, તરુકો, દંશ, મશક અને શીતથી રક્ષણ પામવાને માટે
મુનિએ રાગદ્વેષ રહિત થઈને તેમને ધારણ કરવા જોઈએ. તથા “નિચ્ચં” હમેશા
“પડિલેહણાપમજ્જણા” એ ઉપકરણોમાંથી ભાજન ભાંડ અને ઉપધિની પ્રતિ-
પ્ર ૮૧

—રજોહરણાદિમિઃ સંમાર્જના, તામુ કૃતામુ—પ્રતિલેખનાદિકરણાનન્તરમિત્યર્થ—
 ‘અહો ય રાઓ ય’ અહશ્ચ રોત્રૌ ચ ‘ભાયણ મંડોવહિત્તવગરણ’ ભાજન-માણ્ડો-
 પદ્યુપકરણ—તત્ર-ભાજન=પાત્રમ્, માણ્ડમ્=ઉન્દકમ્, ઉપધિઃ=વસ્ત્રમ્, એતત્ત્રિત-
 યરૂપં યદુપકરણં તત્, ‘અપ્પમત્તેણ’ અપ્રમત્તેન સતા ‘સયયં’ સતતં=નિરન્તરં
 ‘નિક્કિલ્લયવ્વં’ નિક્ષેપવ્યવસ્થાપનીયં ‘ગિણ્ઠિયવ્વં’ ગ્રંથીતવ્યં ચ ‘હોઈ’ ભવતિ
 એવામાદાનમાણ્ડનિક્ષેપણાસમિતિયોગેન ભાવિતો ભવતિ અન્તરાત્મા=જીવઃ । ભાવિ-
 તાન્તરત્મા કીટશો ભવતિ ? इत्याह—अश्वलासंक्रिष्टनिर्त्रणचारित्र भावनया हेतु-
 भूतया अहिसकः संयतः सुसाधुर्भवति, एतेषामर्थः पूर्वमुक्तः, तत एवावगन्तव्यः॥५१॥

और उपधि की प्रतिलेखना प्रस्फोटना प्रमार्जना कर लेने पर—प्रतिलेखना
 दोनों समय प्रत्युपेक्षणा प्रस्फोटना, प्रमार्जना—रजोहरणादि से पुंजना
 करके (अहोय राओ य) दिन में और रात्रि में (भायण मंडोवही-
 ऊवगरण) भाजन-पात्र, भाण्ड उन्दक, और उपधि-वस्त्र । इन उप-
 करणों को जमीन पर रखना पड़ता है, उठाना पड़ता है । सो ऐसी
 स्थिति में साधु का यह कर्तव्य है कि वह इन सबको धरते उठाते
 (सययं) निरन्तर (अप्पमत्तेण) अप्रमत्त रहे । (निक्लियव्वं गिण्ह-
 यव्वं होइ) इन उपकरणों को जब भूमि पर धरे तब उसकी प्रमार्जना
 करे फिर धरे, उठावे तब उन उपकरणों की प्रमार्जना करके उठावे । इस
 तरह करने से जीवों की विराधना नहीं हो सकती है । यही साधु की
 अप्रमत्त अवस्था है । (एवं) इस तरह (आयाण मंडनिक्लेषणासमिद्ध-
 जोगेण) आदान भाण्डनिक्लेषणासमिति के योग से (अंतरप्पा) जीव

લેખના પ્રસ્ફોટના પ્રમાર્જના કરી લીધા પછી—પ્રતિલેખના—બંને સમય પ્રત્યુપે-
 ક્ષણા, પ્રસ્ફોટના—ચતતા ખાંચેરવું, પ્રમાર્જના—રજોહરણ આદિથી પૂંજવું વગેરે
 કર્યા પછી “અહોય રાઓય” દિવસે તથા રાત્રે “ભાયણ મંડોવહિત્તવગરણ”
 ભાજન-પાત્ર, માણ્ડ-ઉન્દક અને ઉપધિ-વસ્ત્ર, એ ઉપકરણોને જમીન ઉપર
 રાખવા પડે છે, તથા ઉંપાડવા પડે છે. તે બેવી પરિસ્થિતિમાં સાધુનું એ
 કર્તવ્ય છે કે તે એ બધાને લેતા, મૂકતા “સયય” નિરન્તર “અપ્પમ ન”
 અપ્રમાદી રહે “નિક્કિલ્લયવ્વં ગિણ્ઠિયવ્વં હોઈ” એ ઉપકરણોને ન્યારે જમીન
 પર મૂકે ત્યારે તેની પ્રમાર્જના કરે અને ફરીથી ત્યાંથી ઉઠાવે ત્યારે તે ઉપ-
 કરણોની પ્રમાર્જના કરીને ઉઠાવે, આ પ્રમાણે કરવાથી જીવોની વિરાધના થઈ
 શકતી નથી. એ જ સાધુની અપ્રમત્ત અવસ્થા છે. “એવ” આ રીતે “આયાણ-
 મંડ નિક્લેષણાસમિદ્જોગેણ” આદાન બાંડ નિક્ષેપણા સમિતિના યોગથી “અં-

સુવર્ણિની ટીકા અ० ૧ સૂ० ૧૧ અધ્યયનોપસંહાર:

૬૪૩

સમ્પત્તે સૂત્રકારઃ પ્રથમસંવરદ્વારમુપસંહરન્નાહ—‘ એવં ’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—એવમિણં સંવરદારં સમ્મં સંવરિયં હોઈ, સુપ્પણિહિયં, ઇમેહિં પંચહિં વિ કારણેહિં મળવચ્ચળકાયપરિરત્થિવ્વહિં, ણિચ્ચં આમરણંતં ચ એસ જોગો ણેયવ્વો ધિદ્મયા મદ્મયા અણાસવો અકલ્લસો અચ્છિદ્ધો અપરિસાદં અસંકિલિદ્ધો સુદ્ધો સવ્વજિણ-મણુણ્ણાઓ । એવં પઢમં સંવરદારં ફાસિયં પાલિયં સોહિયં તીરિયં કિટ્ઠિયં આરાહિયં આણાપ્પ અણુપાલિયં ભવઈ । એવં ણાયમુંણિણા ભગવયા પળ્લવિયં પરૂવિયં પસિદ્ધં સિદ્ધં સિદ્ધ-વરસાસણમિણં આઘવિયં સુદેસિયં પસત્થં પઢમં સંવરદારં સમત્તં ત્તિ વેમિ ॥ સૂ-૧૧ ॥

ટીકા—‘ એવમિણં ’ ઇત્યાદિ—

‘ એવમિણં ’ એવમ્—ઉત્તક્રમેણ ઇદમ્—અર્હિસાલક્ષણં ‘સંવરદારં’ સંવરદ્વારમ્= સંવરસ્ય=અનાશ્રવસ્ય દ્વારમ્=ઉપાયઃ ‘ સમ્મં ’ સમ્યક્ ‘ સંવરિયં ’ સંવૃતમ્—સંસે-

(ભાવિઓ ભવઈ) વાવિત બના દુઝા વહ જીવ હેતુભૂત અશબલ, અસંક્લિ-ષ્ટ, નિર્વ્રણ (નિરતિચાર) ચારીત્ર કી ભાવના સે અર્હિસક સંયત બન જાતા હૈ । ઓર સચ્ચેરૂપ મેં અપને સાધુપદ કો સાર્થક કર લેતા હૈ । નિર્જન્તુ ભૂમિ પર ઉપકરણોં કા ધરના ઓર ઉઠાના ઇસકા નામ આદાનખાણ્ડ-નિક્ષેપણા સમિતિ હૈ । ઇસ સમિતિ કે યોગ સે આત્મા-મુનિ અપને અર્હિસા મહાવ્રત કી રક્ષા ઓર સ્થિરતા કરના રહતા હૈ ॥ ૧૦ ॥

અવ સૂત્રકાર પ્રથમ સંવર દ્વાર કા ઉપસંહાર કરતે હુણ કહતે હૈ—

તરપ્પા ” એવ “ ભાવિઓ ભવઈ ” લાવિત બની બય છે. લાવિત બનેલ તે એવ હેતુભૂત અશબલ, અસંક્લિષ્ટ, નિર્વ્રણ ચારિત્રની લાવનાથી અર્હિસક સંયત બની બય છે. અને સાચા અર્થમાં પોતાના સાધુ પદને સાર્થક કરે છે. ભૂમિ પર ઉપકરણોને મૂકવા તથા ઉપાડવા તેનું નામ આદાન ભાંડ નિક્ષેપણા સમિતિ છે. આ સમિતિના યોગથી આત્મા મુનિ-પોતાના અર્હિસા મહાવ્રતની રક્ષા તથા સ્થિરતા કરતા રહે છે ॥ સૂ-૧૦ ॥

હવે સૂત્રકાર પ્રથમ સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે—‘એવમિણં’ ઇત્યાદિ

રિતં સન્ ' સુપણિહિયં ' સુપણિહિતં=સુરક્ષિતં ' હોઃ ' ભવતિ । ' મળવયળકાયપ-
રિરિક્ષણ્ઠિ' મનોવચનકાયપરિરક્ષિતૈઃ-યોગત્રયપરિરક્ષિતૈઃ ' હમેહિં પંચહિં વિ કાર-
ણેહિં ' એમિઃ પશ્ચમિરપિ કારણૈઃ=પૂર્વોક્તામિઃ પશ્ચમિર્માવનામિઃ ' નિચ્ચં ' નિત્યમ્
' આમરણંતં ' આમરણાન્તં=મરણપર્યન્તં ચ ' એસજોમો ' એવ યોગઃ=અહિંસારૂપ-
ણસંવરરૂપવ્યાપારઃ ' ધિહમયા ' ધૃતિમયા=સ્વસ્થચિત્તેન ' મહમયા ' મતિમતા=
દેવોપાદેયમેધાયુક્તેન ' નેયવ્વો ' નેતવ્વઃ=રોહવ્યઃપરિપાલનોય્વ ઇત્યર્થઃ । કીદ-
શ્ચોડયં યોગઃ ? ઇત્યાહ-અયં યોગઃ- ' અણાસવો ' અનાશ્રવઃ-નૂતનકર્માગમનરહિત-
ત્વાત્ ' અકલુસો ' અકલુપઃ=અશુભાધ્યવસાયરહિતત્વાત્, ' અચ્છિદો ' અચ્છિદ્રઃ-
છિન્નપાપસ્રોતત્વાત્, અપરિસ્સાઈ ' અપરિસ્તાત્રીચિન્દુરૂપેણાપિ કર્મજાતપ્રવેશરહિ-
' એવમિણં ' ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ | (એવમિણં સંવરદારં સમ્મં સંવરિયં સુપણિહિયં હોઃ)
ઉક્ત ક્રમસે યહ અહિંસારૂપ પ્રથમ સંવરદ્વાર સેવિત કિયે જાને પર
સુરક્ષિત હો જાતા હૈ । (મળવયળકાયપરિરિક્ષણ્ઠિ) ઇત્થલિયે મન
વચન ઔર કાય્વ ઇન તીનૌં યોગૌં સે અચ્છી તરહ સુરક્ષિત કિયે ગયે
(હમેહિં પંચહિં વિ કારણેહિં) ઇન પૂર્વોક્ત પાંચ ભાવનારૂપ કારણૌં સે
(નિચ્ચં) નિત્ય (આમરણંતં) મરણપર્યંત-જીવન ભરતક (એસ જોમો)
હસ અહિંસારૂપ સંવરદ્વાર કા (ધિહમયા) સ્વસ્થચિત્ત સે યુક્ત એવં
(મહમયા) દેવોપાદેય કૌ બુદ્ધિ સે સંપન્ન હોકર સુનિ કૌ (નેયવ્વો)
પરિપાલન કરના ચાહિયે । ક્યૌં કિ યહ અહિંસારૂપ સંવર યોગ (અણા-
સવો) નૂતન કર્માગમન કૌ રોકને કા કારણ હોને સે અનાશ્રવહા હૈ ।
(અકલુસો) અશુભ અધ્યવસાય સે રહિત હોને કે વારણ અકલુપ રૂપ
હૈ । (અચ્છિદો) હસસે પાપકા સ્રોત નષ્ટ હો જાતા હૈ હસ કારણ સે યહ

ટીકાર્થ-“એવમિણં સંવરદારં સમ્મં સંવરિયં સુપણિહિયં હોઃ” કહ્યા પ્રમાણેના
ક્રમથી આ અહિંસારૂપ પ્રથમ સંવરદ્વારનું સેવન કરવાથી તે સુરક્ષિત થઈ બીજા
છે “મળવયળકાયપરિરિક્ષણ્ઠિ” તેથી મન, વચન અને કાય એ ત્રણે યોગેથી
સારી રીતે સુરક્ષિત કરાયેલ “હમેહિં પંચહિં વિકારણેહિં” એ પૂર્વોક્ત પાંચ
ભાવનારૂપ કારણેથી “નિચ્ચં” હમેશા “આમરણંતં” મરણપર્યંત-આશ્રવન,
“એસજોમો” આ અહિંસારૂપ સંવરદ્વારનું “ધિહમયા” સ્વસ્થ ચિત્તથી અને
“મહમયા” દેવોપાદેયની બુદ્ધિથી યુક્ત થઈને મુનિએ “નેયવ્વો” પરિપા-
લન કરવું જોઈએ. કારણ કે આ અહિંસારૂપ સંવરયોગ “અણાસવો” નવા
કર્માગમનને રોકવાને કારણભૂત હોવાથી તે અનાશ્રવ રૂપ છે. “અકલુસો”
અશુભ અધ્યવસાયથી રહિત હોવાને કારણે અકલુપરૂપ છે. “અચ્છિદો” તેનાથી
પાપનો પ્રવાહ નાશ પામે છે તે કારણે તે અચ્છિદ્રરૂપ છે. “અપરિસ્સાઈ”

સુદર્શિની ટીકા અં ૫ સૂં ૧૧ અધ્યયનોપસંહાર:

૬૪૫

તત્વાત્, ‘અસંકલિદ્રો’ અસંકલિદ્ર:-અસમાધિમાવર્જિતત્વાત્ ‘સુદ્રો’ શુદ્ધ:-કર્મમલવર્જિતત્વાત્ ‘સવ્વજિનમણુણાઓ’ સર્વજિનાનુજ્ઞાત:-સકલપ્રાણિહિતકાર-કત્વાત્ સર્વેષામર્હતામનુમતશ્ચાસ્તિ । એવમ્-ઉક્તપ્રકારેણ ‘પદમં સંવરદારં’ પ્રથમં સંવરદારં, ‘કાસિયં’ સ્પૃષ્ટં કાયેન, ‘પાલિયં’ પાલિતં સતતમુપયોગેન સે-વિતમ્, ‘સોહિયં’ શોધિતમ્-અતિચારવર્જનન, ‘તીરિયં’ તીરિતં=તીરં પ્રાપિતં પૂર્ણરૂપેણ સેવિતમ્, ‘કિટ્ટિયં’ કીર્તિતમ્=અન્યેવામુપદિષ્ટમ્, તથા ‘આરાહિયં’ આરાધિતં-ત્રિકરણત્રિયોગે: સમ્યગાચરિતમ્, ‘આણાણ’ આજ્ઞાયા=સર્વજ્ઞવચનન, ‘અણુપાલિયં’ અણુપાલિતં ચ ભવતિ । એવમ્-ઉક્તરૂપં સંવરદારં કેન કથિતમ્ ?

અચ્છિદ્રરૂપ છે । (અપરિસ્સાઈ) એક બિન્દુ માત્ર મી કર્મરૂપ જલ કા હસ મેં પ્રવેશ નહીં હો સકતા છે અતઃ ઉસસે રહિન હોને કે કારણ યહ અપરિસ્સાચી છે । (અસંકલિદ્રો) અસમાધિરૂપ માવ સે યહ વર્જિત હોતા છે હસલિયે અસંકલિદ્ર છે । તથા (સુદ્રો) કર્મમલ સે સર્વથા વિહીન હોને કે કારણ યહ શુદ્ધ છે । હસીલિયે યહ (સવ્વજિનમણુણાઓ) સમસ્ત અર્હત ભગવંતોં કો અનુમત-માન્ય હુઆ છે ક્યોં કિ હસીસે સકલ પ્રાણિયોં કા હિત હુઆ છે । (એવં પદમં સંવરદારં) ઉક્ત પ્રકાર સે પ્રથમ સંવરદાર કો (કાસિયં) જો અપને કાય સે સ્પર્શ કરતે હેં (પાલિયં) નિરન્તર ધ્યાન પૂર્વક હસકા સેવન કરતે હેં (સોહિયં) અતિચારોં સે હસે રહિત બનાતે હેં (તીરિયં) પૂર્ણરૂપ સે હસે અપને જીવન મેં ઉતારતે હેં (કિટ્ટિયં) દૂસરોં કો હસે ધારણ કરને કા ઉપદેશ દેતે હેં તથા (આરાહિયં) ત્રીન કરણ ત્રીન યોગોં સે જો હસે અચ્છી તરહ આચરિત કરતે હેં (આણાણઅણુપાલિયં ભવઈ) સર્વજ્ઞ કે વચન

એક બિન્દુ જેટલા પણ કણીંડી બળને તેમાં પ્રવેશ થઈ શકતા નથી, તેથી તેનાથી રહિત હોવાને કારણે તે અપરિસ્સાચી છે, “અસંકલિદ્રો” અસમાધિ-રૂપ ભાવથી તે રહિત હોય છે તેથી તે અસંકલિદ્ર છે. તથા “સુદ્રો” કર્મ-મળથી સર્વથા રહિત હોવાને કારણે તે શુદ્ધ છે. તેથી તે “સવ્વજનમણુ-ણાઓ” સમસ્ત અર્હત ભગવાનોને માન્ય થયેલ છે, કારણ કે તેનાથી સઘળા પ્રાણીઓનું હિત થયું છે. “એવં પદમં સંવરદારં” ઉક્ત પ્રકારે પ્રથમ સંવરદારને “કાસિયં” જે પોતાના શરીરથી સ્પર્શ કરે છે “પાલિયં” નિરન્તર ધ્યાનપૂર્વક તેનું પાલન કરે છે “સોહિયં” અતિચારથી તેને રહિત બનાવે છે “તીરિયં” પૂર્ણ રીતે તેને પોતાના જીવનમાં ઉતારે છે, “કિટ્ટિયં” બીજાને તે પાળવાનો ઉપદેશ આપે છે, તથા “આરાહિયં” ત્રણ કારણ ત્રણ યોગથી જે તેને સારી રીતે આચરે છે “આણાણ અણુપાલિયં ભવઈ” સર્વજ્ઞનાં

इत्याह—‘णायमुणिणा’ ज्ञातमुनिना—प्रसिद्धक्षत्रियवंशोद्भवेन मुनिना भगवता महावीरेण ‘पणवियं’ प्रज्ञापितम्=शिष्येभ्यः सामान्यतया कथितम्, ‘परुवियं’ प्ररूपितं=भेदानुभेदप्रदर्शनपूर्वकं कथितम्, ‘पसिद्धं’ प्रसिद्धम्=प्रख्यातम्, सिद्धं—प्रमाणप्रतिष्ठितम्, ‘सिद्धवरसासणं’ सिद्धवरसासनम्=सिद्धानां-निष्ठितार्थानां वरशासनं=प्रधानाज्ञानारूपम्, ‘इणं’ इदम् ‘आघवियं’ आख्यातं=सर्वतो भावेन कथितम्, ‘सुदेसियं’ सुदेशितम्=सदेवमनुजासुरायां परिषदि सुण्ठूपदिष्टं ‘पसत्थं

के अनुसार ही पालते हैं। (एवं) इस प्रकार उक्त रूप यह संवर द्वार (णायमुणिणा) प्रसिद्ध क्षत्रिय वंश में उत्पन्न हुए मुनि (भगवता) भगवान् महावीर ने (पणवियं) प्रज्ञापित किया है—शिष्यों के लिये सामान्यरूप से कहा है। (परुवियं) प्ररूपित किया है—भेदानुभेद प्रदर्शन पूर्वक कथित किया है। इसलिये यह (पसिद्धं) प्रसिद्ध है—आचार्यादिकी परंपरा से इसका पालन करना इसीरूप में चला आ रहा है। तथा (सिद्धं) सिद्ध है—इसमें किसी भी प्रमाण से बाधा नहीं आती है अतः प्रमाणप्रतिष्ठित है। तथा (सिद्धवरसासणमिणं) जो सिद्ध हो चुके हैं—कृतकृत्य बन चुके हैं—उनका यह वर शासन रूप है सो इसी को (आघवियं) प्रभु महावीर ने कहा है। और (सुदेसियं) इसका उपदेश उन्होंने ने देव, मनुज एवं असुरों सहित परिषदा में अच्छी तरह दिया है। (पसत्थं) यह प्रथम संवर द्वार समस्त प्राणियों का हितकारक होने से भंगलभय है। (पढमं संवरदारं समत्तं) इस तरह का

વચન પ્રમાણે જ પાળે છે, “એવં” આ પ્રમાણે કહ્યા પ્રમાણેનાં સ્વરૂપનું તે સંવરદ્વાર “ણાયમુણિના” પ્રસિદ્ધ ક્ષત્રિય વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ મુનિ “ભગવતા” ભગવાન મહાવીરે “પણવિયં” પ્રજ્ઞાપિત કરેલ છે—શિષ્યોને માટે સામાન્ય રૂપે કહ્યું છે “પરુવિયં” પ્રરૂપિત કરેલ છે—ભેદાનુભેદ બતાવીને કહેલ છે. તેથી તે “પસિદ્ધં” પ્રસિદ્ધ છે—આચાર્યાદિની પરંપરા દ્વારા આ જ રીતે તેનું પાલન કરવાનું આવ્યું આવે છે એવું “સિદ્ધં” સિદ્ધ થયેલ છે—તેમાં કોઈ પણ પ્રમાણથી બાધા (બુદ્ધેલી) આવતી નથી તેથી તે પ્રમાણપ્રતિષ્ઠિત છે. તથા “સિદ્ધવરસાસણમિણં” જે સિદ્ધ થઈ ગયાં છે, કૃતકૃત્ય બની ગયાં છે—તેમનું તે શ્રેષ્ઠ શાસન રૂપ છે કારણ કે તે “આઘવિયં” મહાવીર પ્રભુએ કહેલ છે. “સુદેસિયં” તેને ઉપદેશ તેમણે દેવ, માનવ અને અસુરો સહિતની પરિષદોમાં સારી રીતે આપેલ છે. “પસત્થં” આ પ્રથમ સંવરદ્વાર સંમત પ્રાણીઓને માટે હિતસાધક હોવાથી ભંગલભય છે. “પદમં સંવરદારં સમત્તં” આ

સુદર્શિનીટીકા અંક ૪ સુ. ૪ અધ્યયનોપસંહાર:

૬૪૭

‘પસસ્ત’ પ્રશસ્ત—સર્વપ્રાણિહિતકર્ત્તાન્મુગુલમયમ્, પદમં સંવરદારં’ પ્રથમસંવરદારં
‘સમત્તં’ સમાપ્તમ્, ‘તિવેમિ’ ઇતિ ત્રીતીયમિ—અસ્યાર્થઃપૂર્વશ્ચુક્તઃ ॥ સુ. ૧૧ ॥

॥ ઇતિ પ્રથમં સંવરદારં સમાપ્તમ્ ॥

॥ ઇતિ શ્રી વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્વલ્લભ - પ્રસિદ્ધવાચકપદ્મદશભાષાકલિ-
તલલિતકલાપાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક-વાદિમાનમર્દક-
શ્રીશાહુ છત્રપતિકોરહાપુરરાજપ્રદત્ત ‘જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય’ પદભૂષિત-
કોલહાપુરરાજગુરુ-વાલબ્રહ્મચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકરપૂજ્યશ્રી
ધાસીલાલત્રિવિરચિતા શ્રી પ્રશ્નવ્યાકરણમુત્રસુદર્શન્યા
રૂપાયાં વ્યાખ્યાયાં સંવરાત્માકે દ્વીતીયે-ભાગેર્હિંસાનામકં
પ્રથમં સંવરદારં સમાપ્તમ્ ॥ ૧ ॥

यह प्रथम संवर द्वार समाप्त हुआ! (ति वेमि) हे जंबू। जैसा मैं ने भगवान् महावीर के मुख से इसे सुना है वैसा ही यह मैंने तुम से कहा है—अपनी कल्पना से इसमें कुछ भी नहीं कहा है ॥

ભાવાર્થ—પ્રથમ સંવરદ્વાર કા ઉપસંહાર કરતે હૂં સૂત્રકાર કહતે હું કે આ સંવરદ્વાર કો પ્રત્યેક મુનિજન કે લિયે અચ્છી તરહ ઉપયોગ પૂર્વક પાંચભાવનાઓ સહિત યાવજીવ પાલન કરના ચાહિયે। આસકે પાલન કરને મેં યદિ કોઈ પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ આવેં તો અન્હેં ધૈર્યપૂર્વક સહલેના ચાહિયે, કયોં કે યહ સંવર દ્વાર નવીન કર્મો કે આસ્રવ કો રોકતા હૈં। આસકે પાલન કરને સે અશુભ અધ્યવસાય ઉત્પન્ન નહીં હોને પાતે હૈં। પાપોં કા સ્રોત આસકે પ્રભાવ સે બંધ હો જાતા હૈં। યહ

પ્રકારનું આ પ્રથમ સંવરદ્વાર સંપૂર્ણ થયું. “તિવેમિ” હે જંબૂ! જેવું મેં ભગવાન મહાવીરના મુખેથી સાંભળ્યું છે એવું જ તે મેં તમને કહ્યું છે—મારી કલ્પનાથી તેમાં મેં કંઈ પણ કહ્યું નથી.

ભાવાર્થ—પ્રથમ સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે આ સંવરદ્વારનું પ્રત્યેક મુનિએ સારી રીતે ઉપયોગ પૂર્વક પાંચ ભાવનાઓ સહિત જીવનપર્યંત પાલન કરવું જોઈએ. તેનું પાલન કરતાં જો કોઈ પરીષદ તથા ઉપસર્ગ નડે તો ધૈર્યથી તેને સહન કરી લેવા જોઈએ, કારણ કે આ સંવરદ્વાર નવીન કર્મોના આસ્રવ થતો રોકે છે. તેનું પાલન કરવાથી અશુભ અધ્યવસાય ઉત્પન્ન થવા પામતો નથી. તેના પ્રભાવથી પાપોના પ્રવાહથી બંધ થઈ બચ છે

અપરિણામી આદિ વિશેષણોં વાળા છે. અર્હત ભગવાનોં ને હસે અપને જીવન મેં ઉતાર કર હી સમસ્ત જીવોં કો હસે ધારણ-સેવન કરને કા આદેશ દિયા છે. ભગવાન મહાવીર ને ખી એસી હી હસ પ્રથમ સંવર-દ્વાર કી પ્રશંસા કી છે. ઓર તીર્થંકર પરંપરા કે અનુસાર હી ઉન્હોં ને હસે પાલન કરને આદિ કા આદેશ દિયા છે. તથા હસકા દેવમનુષાદિ સહિત પરિષદા મેં ઉપદેશ દિયા છે, અતઃ યહ પ્રમાણપ્રતિષ્ઠિત છે. ઓર મંગલમય છે ॥ સૂ. ૧૧ ॥

॥ હસ પ્રકાર યહ પ્રથમ સંવરદ્વાર સમાપ્ત હુઆ ॥

તે અપરિણામી આદિ વિશેષણોં વાળું છે. અર્હત ભગવાને તેને પોતાના જીવનમાં ઉતારીને જ સમસ્ત જીવોને તેને ધારણ કરવાનો-તેનું સેવન કરવાનો આદેશ આપ્યો છે ભગવાન મહાવીરે પણ આ પ્રથમ સંવરદ્વારની એવી જ પ્રશંસા કરી છે અને તીર્થંકર પરંપરા અનુસાર જ તેમણે તેનું પાલન કરવા આદિનો આદેશ દીધો છે તથા તેનો દેવ, મનુષ્યાદિ સહિતની પરિષદોમાં ઉપદેશ આપ્યો છે, તેથી તે પ્રમાણભૂત છે અને મંગલમય છે ॥ સૂ-૧૧ ॥

આ રીતે આ પ્રથમ સંવરદ્વાર સમાપ્ત થાય છે.

॥ सत्यवचनं नाम द्वितीयं संवरद्वारम् ॥

गतं प्राणातिपातविरमणं, सम्प्रति सत्यवचनं प्रारभ्यते । अस्य पूर्वाध्ययनेन सहायं संबन्धः—पूर्वं प्राणातिपातविरतिरभिहिता, सा तु अलीकवचनविरत्यैव संभवति, इत्येनेन संयन्त्रेणायातं सत्यवचनारूपं द्वितीयमध्ययनं प्रारभ्यते, तस्येदमादिमं सूत्रम्—‘ जंबू एतो वितियं च ’ इत्यादि—

मूलम्—जंबू ! एतो विइयं च सच्चवयणं सुद्धं सुइयं सिवं सुजायं सुभासियं सुकहियं सुव्वयं सुदिद्धं सुपइद्वियं सुपइद्वियजसं सुसंजमियवयणदुइयं सुरवरनरवसभपवर—बलवग सुविहिय-जण-वहुमयं परमसाहुधम्मचरणतवनियम-परिगहिय सुगइ-पहदेसगं च लोयुत्तमं च वयमिणं विज्जाहरमगणग-मणविज्जाणसाहगं सग्गमग्गसिद्धिपहदेसगं अवितहं तं सच्च उच्चुयं अकुडिलं भूयत्थं अत्थओ विसुद्धं उज्जोयगं पभासगं भवइ, सव्वभावाण-जीवलोगे अविसंवाइजहत्यमहूरं पच्चक्खं

सत्यवचन नामक द्वितीय संवरद्वार प्रारंभ—

प्राणातिपातविरमण नाम का संवरद्वार कहा जो शुका है। अब सत्यवचन नामका द्वितीय संवरद्वार प्रारंभ होता है। इसका पूर्व अध्ययन के साथ संबंध इस प्रकार से है—जबतक अलीकवचनों से जीव की विरति नहीं होगी—तबतक प्राणातिपात का विरमण संभव नहीं हो सकता। इसी संबंध को लेकर सूत्रकार ने इस द्वितीय सत्यवचन नामक अध्ययन को प्रारंभ करते हैं। इसका यह प्रथमसूत्र है—

सत्य वचन नामनुं णीज्ज संवरद्वारो प्रारंभ

प्राणातिपात विरमण नामनुं पड़ेला संवरद्वारनुं पड़ुन पृथुं यथुं, हवे सत्यवचन नामना णीज्ज संवरद्वारना पड़ुननी शइयात थाय छे, तेना आ प्रकारे आगजना अध्ययन साथे संबंध छे, त्यां सुधी असत्य वचनोधी लवनी विरति थती नथी त्यां सुधी प्राणातिपातनुं विरमण संभवी शकतुं नथी, ओ संबंधने दर्शावीने सूत्रकारे आ द्वितीय सत्यवचन नामना अध्ययनना प्रारंभ करे छे, तेतुं पड़ेतुं सूत्र आ प्रमाणे छे—“जंबू ! एतो विइयं च” ४०

૬૫૦

પ્રશ્નઢયાકરણસૂત્રે

દેવયં ચ જંતં અચ્છેરકારગં અવરંથંતરેસુ વહુણસુ માણુસાણં
 સચ્ચેણં મહાસમુદ્દમજ્ઞે વિ ચિદ્દંતિ, ન નિમજ્ઞંતિ મૂઢાણિયા
 વિ પોયા સચ્ચેણ ય ઉદગસંભમંમિ વિ ન ડુઢ્ઢંતિ, ન ય મરંતિ
 યાહં ચ તે લઢ્ઢંતિ, સચ્ચેણ ય અગણિ સંભમંમિ વિ ન ઢજ્ઞંતિ
 ઉજ્જુગા મણુસસા । સચ્ચેણ ય તત્તતેલ્લતલોહસીસકાઈં
 છિવ્વંતિ, ધરેંતિ ન ઢજ્ઞંતિ મણુસસા । પવ્વયકઢગાહિં મુચ્ચંતે
 ન ય મરંતિ સચ્ચેણ ય પરિગ્ગહિયા અસિપંજરગયા સમરાઓ
 વિ ણિદ્દંતિ અણહાય સચ્ચવાઈં, વહવંધાભિઓગવેરધોરેહિં
 પમુચ્ચંતિ ય, અમિત્તમજ્ઞાહિં નિદ્દંતિ અણહાય સચ્ચવાઈં ।
 સા દેવ્વાણિ ય દેવયાઓ કરેંતિ સચ્ચવયણે રયાણં ॥સૂ.૦૧॥

ટીકા—‘ જંબૂ ’ ઇત્યાદિ—

સુધર્મા સ્વામી જંબૂ સ્વામિને પ્રત્યાહ-હે જંબૂ: ! ‘ ઇત્તો ’ ઇતઃ-પ્રથમસંવર-
 દ્વારાનન્તરમ્ ‘ વિદ્ધયં ચ ’ દ્વિતીયં સ્વલુ સંવરદ્વારં ‘ સચ્ચવયણં ’ સત્યવચનમ્=
 સદ્બ્યો-મુનિબ્યો ગુણેભ્યઃ પદાર્થેભ્યો વા હિતમ્=ઉપકારકં સત્યમ્, ઉક્તંચ—

‘ જંબૂ ! ઇત્તો વિદ્ધયં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—શ્રી સુધર્મા સ્વામી જંબૂસ્વામી સે વરૂતે હૈં (જંબૂ !) હે
 જંબૂ ! (ઇત્તો) હસ પ્રથમસંવરદ્વાર કે બાદ વહ (વિદ્ધયં ચ) દૂસરા સંવર
 દ્વાર સત્ય નામકા હૈ સો મૈં હસે કહતા હં, તુમ સુનો—(સચ્ચ વયણં)
 “ સદ્બ્યો હિતં ” સત્યં અર્થાત્ સત્ કા મુનિજન કા અથવા ગુણોં કા યા
 પદાર્થોં કા જો વચન હિત-ઉપકારક હોતા હૈ વહ સત્ય વચન હૈ ।
 કહા બી હૈ—

ટીકાર્થ—શ્રી સુધર્માસ્વામી જંબૂ સ્વામીને કહે છે ‘ જંબૂ ! ’ હે જંબૂ ! ‘ ઇત્તો ’
 આ પહેલા સંવરદ્વાર પછી “ વિદ્ધયં ચ ” બીજું સત્ય નામનું જે સંવરદ્વાર
 છે તેનું હું વર્ણન કરું છું તે તમે સાંભળો. “ સચ્ચવયણં ” “ સદ્બ્યો હિતં ”
 સત્ય એટલે કે સત્ નું મુનિજનનું અથવા ગુણોનું અથવા પદાર્થોનું જે વચન
 હિત-ઉપકારક હોય છે તે સત્યવચન ગણાય છે કહ્યું પણ છે—

सुवर्शिनी टीका अ० २ सू० १ सत्यस्वरूपनिरूपणम्

६५१,

“सत्त्वं हि यं सयामिह, संतो मुणउ गुणा पयत्था वा” छाया—सत्यं हितं सता-
मिह, सन्तो मुनयो गुणाः पदार्था वा” इति। सत्सु तिष्ठतीति वा, सत्यम्,
सत्यं च तद्वचनं च सत्यवचनम्, पराणानां परायणं हितकरं सुखादहमनुद्वेगजनकं
सुधावत्स्वादीयं वचनं सत्यवचनमित्यर्थः। कीदृशं सत्यवचनम् ? तदाह—‘सुद्धं’
शुद्धं—निर्दोषत्वात्, ‘सुचियं’ शुचिकं पवित्रत्वात्, ‘सिवं’ शिवं=मोक्षजनक-
त्वम्, ‘सुजायं’ सुजातं=शुभविवक्षया समुत्पन्नत्वात्, ‘सुमासियं’ सुभाषितम्—

“सत्त्वं हि यं सयामिह, संतो मुणउ गुणा पयत्था वा”।

संतों का हित जिससे होता है वह सत्य मुनि होते हैं या गुण
अथवा पदार्थ होते हैं। सत्य की दूसरी व्युत्पत्ति इस प्रकार से भी है
“सत्सु तिष्ठतीति सत्यं, सत्यं च तद्वचनं च सत्यवचनं” जो वचन
सज्जन पुरुषों में रहता है वह सत्यवचन है। यह सत्यवचन पर के
प्राणों के प्राण करने में परायण होता है, सब के हितकारी होता है,
सुखदायक होता है, उद्वेगजनक नहीं होता है, और सुधा के जैसे
स्वादीय—अत्यंत मधुर होता है। (सुद्धं) सत्यवचन में किसी भी
प्रकार का दोष नहीं होता है—अतः निर्दोष होने से यह शुद्ध है (सुइयं)
इसमें किसी भी प्रकार की अपवित्रता नहीं होती है अतः यह पवित्र
होने से शुचिक है। (सिवं) इस वचन से जीवों को मोक्ष की प्राप्ति
होती है—इसलिये मोक्षजनक होने से यह शिवरूप है। (सुजायं)
हार्दिक शुभ भावना से प्रेरित होकर ही ऐसा वचन बोला जाता है

“सत्त्वं हि यं सयामिह, संतो मुणउ गुणा पयत्था वा”

संतोनुं हित जेनाथी थाय छे ते सत्य छे, मुनि अथवा शुणु अथवा पदार्थ
जे प्रकारनां सत्य छे. सत्यनी भीउ व्युत्पत्ति आ प्रमाणे पणु छे—“सत्सु
तिष्ठतीति सत्यं, सत्यं च तद्वचनं च सत्यवचनं” सज्जन पुरुषोभां जे वचन
रहे छे ते सत्यवचन छे. ते सत्यवचन अन्यनां प्राणोनुं रक्षणु करवाने समर्थ
होय छे, बधाने नाटे हितकारी होय छे, सुखदायक होय छे, उद्वेगजनक
होतुं नथी, अमृत जेवुं अतिशय भीउं होय छे. “सुद्धं” सत्यवचनभां कोउ
पणु प्रकारनां दोष होतो नथी, तेथी निर्दोष होवाथी ते शुद्ध छे. “सुइयं”
तेभां कोउपणु प्रकारनां अपवित्रता होती नथी तेथी ते पवित्र होवाथी शुचिक
छे. “सिवं” ते वचनथी जेवोने मोक्षनी प्राप्ति थाय छे, तेथी मोक्षजनक
होवाथी ते शिवरूप छे. “सुजायं” हार्दिक शुभ भावनाथी प्रेरार्थने जे जेवुं
वचन बोलाय छे. तेथी शुभ भावनाभांथी उद्भवेल होवाथी ते सुजात छे.

પ્રમોદજક્તવાન્, તથા ‘ સુકહિયં ’ સુકથિતમ્—ચીતરાગપ્રતિપાદિતત્વાત્, ‘ સુશ્વયં ’ સુશ્વતં—સર્વવ્રતપ્રધાનત્વાત્, તથા—‘ સુદિદ્ધં ’ સુદૃષ્ટમ્—અતીન્દ્રિયાર્થદર્શિભિરપવર્ગાદિહેતુતયા દૃષ્ટત્વાદ્, ‘ સુપૃથ્વિયં ’ સુપ્રતિષ્ઠિતમ્—સમસ્તપ્રમાણેરુપપાદિતત્વાત્, ‘ સુપૃથ્વિયજસં ’ સુપ્રતિષ્ઠિતયજસઃ—સુપ્રતિષ્ઠિતં યજો યસ્ય તત્, લોકત્રયપ્રસિદ્ધત્વાત્, તથા—‘ સુસંજમિયવચનબુદ્ધ્યં ’ સુસંયમિતવચનોદિતે—સુસંયમિતં=સમ્યગ્નિયત્રિતં યદવચનં તેનોદિતં=કથિતમ્, નિર્દોષવચનૈઃ કથિતમિત્યર્થઃ, તથા ‘ સુરવર નરવસમ્પવરવલ્લભગસુવિહિય જળબહુમયં ’ ‘ સુરવરનરવસમ્પવરવલ્લભગસુવિહિતજનબહુમતમ્ -- સુરવરાણામ્ -- ઇન્દ્રાદીનાં, નરવૃષભાણાં = ચક્રવર્ત્યાં.

અતઃ શુભ વિવક્ષા સે સમુત્પન્ન હોને કે કારણ યહ મુજાત હૈ । (સુભાસિયં) યહ પ્રમોદ કા જનક હોતા હૈં ફસલિયે યહ સુભાષિત હૈં (સુકહિયં) ફસકા પ્રતિપાદન વીતરાગ આત્માઓં ને કિયા હૈં ફસલિયે યહ સુકથિત હૈં (સુશ્વયં) સર્વવ્રતોં મેં ફસકી પ્રધાનતા માની ગઈ હૈં ફસલિયે યહ સુશ્વતરૂપ હૈં । (સુદિદ્ધં) અતીન્દ્રિય અર્થોં કો જાનને વાલે સર્વજ્ઞ પ્રભુઓં ને ફસે અપવર્ગ (મોક્ષ) આદિ કે હેતુ રૂપ સે દેખા હૈં ફસલિયે યહ સુદૃષ્ટ હૈં । (સુપૃથ્વિયં) સમસ્ત પ્રમાણો દ્વારા ઉપપાદિત હોને સે યહ સુપ્રતિષ્ઠિત હૈં । (સુપૃથ્વિયજસં) તીનોં લોકોં મેં ફસ વચન કા યજ સુપ્રસિદ્ધ હૈં ફસલિયે યહ સુપ્રતિષ્ઠિત યજાવાલા હૈં । (સુસંજમિયવચનબુદ્ધ્યં) ફસે સલ્લવચન કો વે હી મનુષ્ય બોલ સકતે હૈં કિ જિનકા વચન સુસંયમિત હોતા હૈં અચ્છી તરહ સે નિયત્રિત હોતા હૈં । (સુરવરનરવસમ્પવરવલ્લભગસુવિહિયજળબહુમયં) યહ વચન ઇન્દ્રાદિક ઉત્તમ દેવોં કો,

“ સુભાસિયં ” તે પ્રમોદ ઉત્પન્ન કરનાર હોવાથી સુભાષિત છે. “ સુકહિયં ” વીતરાગ આત્માઓએ તેનું પ્રતિપાદન કર્યું છે, તેથી તે સુકથિત છે. “ સુશ્વયં ” સર્વે વ્રતોમાં તે સુખ્ય મનાયું છે તેથી તે સુશ્વત છે. “ સુદિદ્ધં ” અતીન્દ્રિય અર્થોને બાહ્યના સર્વજ્ઞ પ્રભુઓએ તે અપવર્ગ આદિના હેતુરૂપથી બોલ્યું છે, તેથી તે સુદૃષ્ટ છે. “ સુપૃથ્વિયં ” સમસ્ત પ્રમાણો દ્વારા તેનું પ્રતિપાદન થયેલું હોવાથી તે પ્રમાણબૂત-સુપ્રતિષ્ઠિત છે. “ સુપૃથ્વિયજસં ” ત્રણે લોકમાં આ વચનનો યજ સુપ્રસિદ્ધ છે તેથી તે સુપ્રતિષ્ઠિત યજાવાળું છે. “ સુસંજમિયવચનબુદ્ધ્યં ” આ સત્ય વચન એ જ માણસો બોલી શકે છે કે જેમનાં વચન સુસંયમિત હોય છે—સારી રીતે નિયત્રિત હોય છે. “ સુરવર નરવસમ્પવરવલ્લભગસુવિહિયજળબહુમયં ” આ વચન ઇન્દ્ર આદિ ઉત્તમ દેવોને

દોનાં, પ્રવરવલવતામ્-વાસુદેવપ્રતિવાસુદેવાદિ યોદ્ધપુરુષાણાં, તથા-સુવિહિતજ-
નાનાં=મહાપુરુષાણાં ચ વહુમતં સમતં યત્ત, તથા-‘ પરમસાદુધમ્મચરણં ’ પરમ-
સાધુધર્મચરણમ્=પરમસાધૂનાં = ઉત્કૃષ્ટક્રિયાવતાં મુનીનાં ધર્મચરણં=ધર્માનુષ્ઠાનં
યત્ત, તથા-‘ તવનિયમપરિગ્રહિયં ’ તપો નિયમપરિગ્રહીતમ્=તપો નિયમાભ્યાં
પરિગ્રહીતમ્=અક્ષીકૃતં યત્તતથા, તપોનિયમો દિ સત્યવાદિનામેવ ભવતો નેતરેષામ્,
તથા-‘ મુગત્પથદેસગં ’ મુગતિપથદેશકં=મુગતે: પન્થા: મુગતિપથ:, તસ્ય દેશ-
કમ્, પ્રજ્ઞાપકમ્, ચ=પુન: ‘ હ્ણં ’ इदं ‘ લોગુત્તમં ’ લોકોત્તમં=લોકેષુ=લોક-
ત્રયેષુ ઉત્તમં=શ્રેષ્ઠમ્ ‘ વયં ’ વ્રતમ્ અસ્તિ । તથા-इदं સત્યવચનં ‘ વિજ્ઞાહરગમ-
ણમણવિજ્ઞાણ ’ વિદ્યાધરગમનગમનવિદ્યાનાં=વિદ્યાધરાણાં યા ગગનગમનવિદ્યા-
સ્તાસાં ‘ સાહગં ’ સાધકં=સત્યવાદિનામેવ ! વિદ્યા: સિધ્યન્તીત્યાશય:, તથા—
‘ સગમગ્ગસિદ્ધિપદ્દેસગં ’ સ્વર્ગમાર્ગસિદ્ધિપથદેશકં=સ્વર્ગમાર્ગસિદ્ધિપથયોદેશકં=
નિર્દેશકં યત્તતથા, તથા-‘ અવિનહં ’ અવિતથં=મિથ્યાભાવરહિતં યન્ ‘ તં ’ તત્
ચક્રવર્તી આદિ શ્રેષ્ઠ પુરુષોં કો, વલદેવ, પ્રતિવાસુદેવ આદિ સુખદ-
યોદ્ધાઓં કો ઓર મહાપુરુષરૂપ સુવિહિતજનોં કો વહુમાન્ય હુઆ હૈ ।
(પરસાદુધમ્મચરણતવનિયમપરિગ્રહિયમુગત્પદ્દેસગં ચ હ્ણં લોગુ-
ત્તમં ચ વયં) ઉત્કૃષ્ટ ક્રિયા શાલી મુનિજનોં કા યહ ધર્માચરણ-ધર્મા-
નુષ્ઠાન હૈ । તથા-તપ ઓર નિયમોં સે યે પરિગ્રહીત હોના હૈ-અર્થાત્-
તપ ઓર નિયમ સત્યવાદી કે હી હોતે હૈ । ઇતર જીવોં કે નહીં । મુગતિ
કે પથ કા પદ પ્રજ્ઞાપક-નિર્દેશક હોતા હૈ । ઓર ત્રીનોં લોકોં મેં યહ
સત્યવચન શ્રેષ્ઠ વ્રત હૈ । તથા-યહ સત્યવચન (વિજ્ઞાહરગમણ-ગમણ-
વિજ્ઞાણસાહગં) વિદ્યાધરોં કી ગગન મેં ગમન કરને વાલી જો વિદ્યાઈ
હૈં ડનકા સાધક હૈ । (સગમગ્ગસિદ્ધિપદ્દેસગં) સ્વર્ગ કે માર્ગ કા
ઓર મિદ્ધિ કે પથ કા પ્રદર્શક હૈ । (અવિનહં) અવિતથ-મિથ્યાભાવ

ચક્રવર્તી આદિ શ્રેષ્ઠ પુરુષોને વાસુદેવ, પ્રતિવાસુદેવ આદિ સુખદોને અને મહા-
પુરુષ સુવિકિત જનોને બહુ જ માન્ય છે. “પરસાદુધમ્મચરણતવનિયમપરિ-
ગ્રહિયમુગત્પદ્દેસગં ચ હ્ણં લોગુત્તમં ચ વયં” શ્રેષ્ઠ ક્રિયાશાળી મુનિજનોનું
તે ધર્માચરણ-ધર્માનુષ્ઠાન છે. તથા તપ અને નિયમોથી તેઓ પરિગ્રહીત થાય
છે-એટલે કે તપ અને નિયમ સત્યવાદીઓ માટે જ શક્ય હોય છે અને
માટે નહીં. મુગતિના માર્ગનું તે પ્રજ્ઞાપક-નિર્દેશક હોય છે, અને ત્રણે લોકમાં
આ સત્ય વચન શ્રેષ્ઠ વ્રત છે. તથા આ સત્યવચન “વિજ્ઞાહરગમણગમણ
વિજ્ઞાણ સાહગં” વિદ્યાધરોની આકાશમાં ગમન કરવાની જે વિદ્યાઓ છે,
તેમનું સાધક છે. “સગમગ્ગસિદ્ધિપદ્દેસગં” સ્વર્ગના માર્ગનું પ્રદર્શક છે.

‘ સચ્ચં ’ સત્યમ્=સત્યવચનનામકં દ્વિતીયં સંવરદ્વારમ્ । પુનઃ કોદશમ્ ? ઇત્યાહ-
 ‘ ઉજ્જુયં ’ ઋજુકમ્-સરલભાવપ્રવર્તકત્વાત્, તથા ‘ અકુડિલં ’ અકુટિલં=કુટિ-
 લભાવવર્જિતત્વાત્, તથા-‘ ભૂયત્થં ’ ભૂતાર્થમ્=વાસ્તવિકમ્, તથા ‘ અત્યઓ ’
 અર્થતઃ-પરમાર્થતઃ વિશુદ્ધમ્, તથા-જીવલોકે ‘ સચ્ચભાવાણં ’ સર્વભાવાનાં-
 જીવાદિસકલપદાર્થોનામ્ ‘ ઉજ્જોયગં ’ ઉદ્યોતકં=પ્રકાશકમ્, અતઃપ્રત્ય ‘ પમાસગં ’
 પ્રમાણકં=પ્રતિપાદકં ભવતિ, પુનઃ ‘ અવિસંવાદઃ ’ અવિસંવાદિ=અવિરુદ્ધવાદિ, તથા
 ‘ જહત્યમહુરં ’ યથાર્થમધુરમ્, યથાર્થમિતિ કૃત્વા મધુરં યથાર્થમધુરં વાસ્તવિકમ્-
 મધુરમિત્યર્થઃ, તથા-‘ પચ્ચક્કલં દેવયં ચ ’ પ્રત્યક્ષં દૈવતં ચ, સત્યં પ્રત્યક્ષો દેવ ઇત્યર્થઃ ।
 एतादृशं ‘ जं ’ यत् सत्यम्, ‘ तं ’ तत् ‘ अच्छेरकारणं ’ आश्रयकारकं भवति,

સે રહિત હૈ । (તં સચ્ચં) એસા સત્યવચન નામકા દ્વિતીય સંવરદ્વાર
 (ઉજ્જુયં) સરલ ભાવ કા પ્રવર્તક હોને સે ઋજુક હૈ । તથા (અકુડિલં)
 હસમેં ભાવોં કી કુટિલતા નહીં હોતી હૈ હસલિયે કુટિલ ભાવોં સે વર્જિત
 હોને કે કારણ યહ અકુટિલ હૈ (ભૂયત્થં) યથાર્થ અર્થ કા હસકે દ્વારા
 પ્રતિપાદન હોતા હૈ હસલિયે યહ ભૂતાર્થ હૈ । (અત્યઓ વિશુદ્ધ) પરમાર્થ
 દષ્ટિ સે યહ વિશુદ્ધ હૈ હસલિયે યહ અર્થનો વિશુદ્ધ હૈ । તથા-(સચ્ચભા-
 વાણં ઉજ્જોયગં) જીવલોકમેં યહ સમસ્ત જીવાદિપદાર્થોં કા પ્રકાશક હૈ
 હસલિયે યહ (પમાસગં ભવઈ) ડનકા પ્રતિપાદક (પ્રમાણક) ભી હૈ । યહ
 સત્યવચન (અવિસંવાદઃ) અવિરુદ્ધ રૂપસે અપને સ્વરૂપકો કહને ચાલા હૈ
 હસલિયે (જહત્યમહુરં) વાસ્તવોકરૂપ મેં મધુર હૈ । ઓર (પચ્ચક્કલં દેવ-
 યં ચ) પ્રત્યક્ષદેવ હૈ-સાક્ષાત્ દેવ જૈસા હૈ (જં તં) જો યહ સત્યવચન

“ અવિતહં ” અવિતથ-મિથ્યાભાવથી રહિત છે, “ તં સચ્ચં ” આપું સત્ય નામનું બીજું સંવરદ્વાર “ ઉજ્જુયં ” સરલ ભાવનું પ્રવર્તક હોવાથી ઋજુક છે, તથા “ અકુડિલં ” તેમાં ભાવોની કુટિલતા હોતી નથી તેથી કુટિલ ભાવોથી રહિત હોવાને કારણે તે અકુટિલ છે, “ ભૂયત્થં ” યથાર્થ અર્થનું તેના દ્વારા પ્રતિપાદન થાય છે તેથી તે ભૂતાર્થ છે, “ અત્યઓ વિશુદ્ધ ” પરમાર્થ દષ્ટિથી તે વિશુદ્ધ છે તેથી તે “ અર્થતોવિશુદ્ધ ” છે, તથા “ સચ્ચભાવાણં ઉજ્જોયગં ” જીવલોકમાં તે સમસ્ત જીવાદિ પદાર્થોનું તે પ્રકાશક છે તેથી તે “ પ્રમાસગં ભવઈ ” તેમનું પ્રતિપાદક પણ છે, આ સત્યવચન “ અવિસંવાદઃ ” અવિરુદ્ધરૂપે પોતાના સ્વરૂપને કહેનાઈ છે, તેથી “ જહત્યમહુરં ” વાસ્તવિક રીતે મધુર છે, અને “ પચ્ચક્કલં દેવયં ચ ” પ્રત્યક્ષ દેવ છે-સાક્ષાત્ દેવ જેવું છે “ જં તં ” આ જે સત્યવચન છે તે “ અચ્છેરકારણં અવત્યં-

सुदर्शिनी टीका अ० २ सू० १ सत्यस्वरूपनिरूपणम्

६५५

‘माणुस्साणं’ मनुष्याणां कुत्र ? ‘बहुएसु’ बहुकेषु-अनेकेषु ‘अवत्यंतरेसु’ अवस्थान्तरेषु = अवस्थाविशेषेषु । तदेवाश्चर्यकारित्वमाह—‘सच्चेणं’ सत्येन ‘महासमुद्रमज्जे वि’ महासमुद्रमध्येऽपि ‘चिद्धंति’ तिष्ठन्ति, न निमज्जन्ति=न बुडन्ति, ‘मूढाणिआ वि’ मूढानीका अपि=मूढाः=नियतदिशामनं प्रति मूढतां प्राप्ता-अनीकाः=नाविकाः येषां ते तथोक्ताः अपि ‘पोया’ पोता = नावः ‘सच्चेण य’ सत्येन च ‘उदगसंभममि’ वि’ उदगसंभ्रमेऽपि=आ-धर्तेऽपि ‘न बुडंति’ न बुडन्ति, तथा-तत्रस्था जना अपि ‘नय मरंति’ न च म्रियन्ते, ‘थाहं’ स्तावर्धे=तत्र च ते ‘लम्भंति’ लभन्ते । तथा—‘सच्चेण य सत्येन च’ अगणिसंभ्रममि वि अग्निसंभ्रमेऽपि=ज्वालाप्रासासंकुलेऽप्यनले ‘उज्जुगा’ ऋजुकाः=सत्यवादिनो ‘मणुस्सा’ मनुष्या ‘न डज्जंति’ न दहन्ते=न दग्धा भवन्ति । तथा—‘मणुस्सा’ सत्यवादिनो मनुष्याः ‘सच्चेण य’

है वह (अच्छेस्कारगं अवत्यंतरेसु बहुएसु माणुसाणं) अनेक अवस्थाओं में मनुष्यों के लिये आश्चर्य पैदा करने वाला है, जैसे—(सच्चेणं महासमुद्रमज्जे वि चिद्धंति न निमज्जंति मूढा णियाविपोया) जिननौकाओं के नाविक जन जब नियत दिशाओं में जाने के ज्ञान से विकल हो जाते हैं तब उनकी वे नौकाएँ महासमुद्र के बीच में भी इस सत्य के बल पर ही तैर जाती हैं डूबती नहीं है । (सच्चेण य उदगसंभममि वि न बुडंति न य मरंति, थाहं च ते लम्भंति) सत्य के प्रभाव से, जल की भ्रमर में कैसे हुए भी मनुष्य न डूबते हैं और न मरते हैं प्रत्युत उन्हें वहाँ भी धाह मिल जाती है । (सच्चेण य अगणिसंभ्रममि वि न डज्जंति उज्जुगा मणुस्सा) सत्य का ही ऐसा प्रभाव है कि जिससे ज्वालाओं से धधकती हुई अग्नि में भी ऋजुक सत्यवादो-मनुष्य जलता

तरेसु बहुएसु माणुसाणं ” अनेक अवस्थाओं मनुष्योंने भाटे आश्चर्य पैदा करने के, जैसे “ सच्चेणं महासमुद्रमज्जे वि चिद्धंति न निमज्जंति मूढा णियावि पोया ” ये नौकाओंना नाविकों के लिये नियत दिशाओं में जाने के ज्ञान से विकल हो जाते थे तब भी ते नौकाओं महासमुद्रनी वर्ये पणु आ सत्यना प्रभावधरी डूबती न अटके थे. “ सच्चेण य उदगसंभ्रममि वि न बुडंति न य मरंति, थाहं च ते लम्भंति ” सत्यना प्रभावधरी पाणुनी वमजगं इसायेक मनुष्य पणु डूबतां नदी के भरतां नदी. अटके के त्यां पणु तेने रक्षण भणी अथ थे. “ सच्चेण य अगणिसंभ्रममि वि न डज्जंति उज्जुगा मणुस्सा ” सत्यने न येवो प्रभाव थे के ज्वालाओं वटे प्रनयलित अग्निभां ऋजुक-सत्यवादी

સત્યેન ચ 'તત્તતેલતલ્લોહસીસગાઈ' તત્તતેલત્રપુલોહશીશકાનિ, તૈલં પ્રસિદ્ધમ્
 ત્રપુ=ત્રફ્તમ્, લોહમ્=અયં, શીશકં પ્રસિદ્ધમ્, તત્તાનિ=તત્કલિત્તાનિ યાનિ તૈલ-
 ત્રપુલોહશીશકાનિ તાનિ તથોક્તાનિ 'છિવંતિ' સ્પૃશન્તિ, 'ધરેતિ' ધારયન્તિ હસ્તે
 કિન્તુ તેન 'ન હજ્જંતિ' ન દહ્યન્તે। તથા- 'સચ્ચેણ પરિગ્ગહિયા' સત્યેન પરિ-
 ગ્રહિતા મનુષ્યાઃ, 'પવ્વયકકઢગાઈ' પર્વતકટકેભ્યઃ=પર્વતપદ્મેભ્યઃ 'મુચ્ચંતે'
 મુચ્યન્તે=પાત્યન્તે, તથાપિ 'ન ય મરંતિ' ન ચ મ્રિયન્તે। તથા- 'સચ્ચવાઈ'
 સત્યવાદિનઃ 'અસિપંજરગયા વિ' અસિપંજરગતા અપિ=ચતુર્દિશુ મ્બદ્ધહસ્તશનુ-
 પુરુષપરિવેષિતા અપિ સર્વતઃ સ્વદ્ગેષુ પતત્સ્વપીત્યર્થઃ, 'અણહાય ય' અનથા એવ=
 અક્ષતશરીરાણવ 'સમરાઓ' સમરાત્, 'ગિયંતિ' નિર્ણતિ=નિર્ગમ્યન્તિ। તથા
 'સચ્ચવાઈ' સત્યવાદિનઃ પુરુષાઃ 'વહવંધાભિઓમવેરયોરેઈ' વધવંધાભિયોગ

નહીં હૈં। (સચ્ચેણ ય મણુસા તત્તતેલતલ્લોહસીસગાઈ) સત્ય સે મનુષ્ય
 તસ ઉબલતે હુણ તૈલહો, પિયલે હુણ રાંગે કો, લાલ હુણ લોહે કો, ગલે હુણ
 શીશે કો (છિવંતિ) છુ છેતે હૈં, અથાન્-શીતલ કરતા હૈં (ધરેતિ) ઉન્હૈં હાથમેં
 છે લેતા હૈં, પરન્તુ (ન હજ્જંતિ) યે ડનસે જલતે નહીં હૈં। (પવ્વયકકઢ-
 ગાઈ મુચ્ચંતે ન ય મરંતિ સચ્ચેણ પરિગ્ગહિયા) સત્યવાદી મનુષ્ય કો
 યદિ પર્વત કે ઉપર સે ખી નીચે ધકેલ દિયા જાવે તો ખી વહ
 સત્ય કે પ્રભાવ સે મરતા નહીં હૈં-સર્વથા ધચ જાતા હૈં। હસી તરહ જો
 (સચ્ચવાઈ) સત્યવાદી મનુષ્ય હોતે હૈં વે (અસિપંજરગયા) ચારોં ઓર
 સે યુદ્ધ મેં તલવારોં કો લિયે હુણ અપને શત્રુઓં દ્વારા ધેર ખી લિયે
 જાવે તો ખી વે (અણહાય) અક્ષત શરીર હી (ગિયંતિ) ચાહે કિતની
 હી તલવારોં કે ચાર ડન પર પડ રહે હોં, ઓર વે ડસ યુદ્ધભૂમિ મેં સુર-
 ક્ષિત નિકલ આતે હૈં। ઓર (વહવંધાભિઓમવેરયોરેઈ પમુચંતિ ય)

માણુસ અજાતો નથી. "સચ્ચેણ ય મણુસા તત્તતેલતલ્લોહસીસગાઈ" સત્યથી
 માણુસ ઉદ્ગતા તેલને, લાલચેણ લોહાને અને ઓગાળેલ શીસાને પણ સ્પર્શ
 કરી શકે છે. "ધરેતિ" તેમને હાથમાં લઈ લે છે પણ "ન હજ્જંતિ" તેઓ
 તેનાથી દાઝતા નથી. "પવ્વયકકઢગાઈ મુચ્ચંતે ન ય મરંતિ સચ્ચેણ પરિગ્ગહિયા"
 સત્યવાદી મનુષ્યને જો પર્વતના ઉપરથી નીચે ધકેલી દેવામાં આવે તો પણ
 સત્યના પ્રભાવથી મરતો નથી-તેના વાળ પણ બાંધો થઈ શકતો નથી.
 આ રીતે જો "સચ્ચવાઈ" સત્યવાદી મનુષ્યો હોય છે "અસિપંજરગયા" યુદ્ધમાં
 ચોમેરથી હાથમાં તલવાર ધારણ કરેલ શત્રુઓ વડે ઘેરાઈ જાય તો પણ
 'અણહાય' અક્ષત શરીરે જ "ગિયંતિ" ગમે તેટલી તલવારોના ધા તેના
 પર પડવા છતાં પણ તે રણમેદાનમાંથી સુરક્ષિત બહાર આવે છે. આને તે

સુવર્ણિનીટીકા અં ૨ સ્ ૦ ૧ સત્યસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૫૭

વૈરધોરૈઃ- વધો=વાતઃ વન્ધઃ=નિગઢાદિ વન્ધઃ, ‘અભિઓગો’ અભિયોગઃ=અપરાધારોપઃ, વૈરધોરઃ=ધોરશત્રુતાઃ; एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, एभ्यः ‘પમુચ્ચંતિ’ પ્રમુચ્યન્તે, ચ= પુનઃ ‘અમિત્તમજ્ઞાદિ’ અમિત્તમધ્યાત્=શત્રુમધ્યાત્=‘અણહા ય’ અનધાત્=અક્ષતશરીરાશ્ચ, ‘નિદંતિ’ નિર્યાન્તિ=નિર્ગચ્છન્તિ । ઉક્તમપિ—

“સત્યેનાગ્નિર્ભવેચ્છીતોઽગાધામ્બુધિરપિ સ્થલમ્ ।

નાસિચ્છિનન્તિ સત્યેન સત્યાન્ન દશતે ફળી ॥”

તથા ‘દેવયાઓય’ દેવતાશ્ચ ‘સચ્ચવયણે રયાણં’ સત્યલચ્ચને રતાનાં=સત્યવાદિનાં મનુષ્યાણાં ‘સાદેવ્વાણિ’ સાદિવ્વાણિ=સાંનિધ્યાણિ ‘કરેતિ’ કુર્વન્તિ।
વધ-ધાત, વંધ નિગઢ (વેડી)આદિ વંધન અભિયોગ અપરાધારોપ, एवं धोर शत्रुता. इनसे भी बच जाते हैं । (અમિત્તમજ્ઞાદિનિદંતિ અણહા ય સચ્ચવાઈ) यदि कदाचित् ये शत्रुओं के बीच में आ भी जायें तो भी शत्रु उनका कुछ भी बिगाड़ नहीं का पाते हैं—उनके बीच से वे अन-
अक्षत शरीर ही निकल आते हैं । कहा भी है—

“સત્યેનાગ્નિર્ભવેચ્છીતોઽગાધામ્બુધિરપિ સ્થલમ્ ।

નાસિચ્છિનન્તિ સત્યેન, સત્યાન્ન દશતે ફળી ॥”

સત્યવાદી પુરુષોં કે સમક્ષ અગ્નિ શીતલ હો જાતી હૈ, અગાધ-સમુદ્ર ખી સ્થલ જેવા હો જાતા હૈ, તલવાર કી ધાર બોંધરી હો જાતી હૈ ઓર ફળી-સર્પ ઉસે હસ નહીં પાતા હૈ ।

અધિક કયા કહા જાય (સચ્ચવયણે રયાણં) જો સત્યવચન મેં રત હોતે હૈં ડન સત્યવાદી મનુષ્યોં કા (દેવયાઓ ય) દેવતા (સાદિ-

“વહ વંધામિઓગવૈરધોરૈઃપમુચ્ચંતિ ય” વધ-ધાત, વંધ-નિગઢ આદિ વંધન, અભિયોગ-અપરાધારોપ, અને ધોર શત્રુતા એ બધાથી પણ બચી બચ છે “અમિત્તમજ્ઞાદિનિદંતિ અણહાય સચ્ચવાઈ” જો કદાચ તે શત્રુઓની વચ્ચે આવી બચે તો પણ શત્રુ તેને કોઈ ઇલા કરી શકતા નથી-તેમની વચ્ચેથી તે અક્ષત શરીરે જ બહાર નીકળી બચે છે. કહ્યું પણ છે—

“સત્યેનાગ્નિર્ભવેચ્છીતોઽગાધામ્બુધિરપિ સ્થલમ્ ।

નાસિચ્છિનન્તિ સત્યેન સત્યાન્ન દશતે ફળી ॥”

સત્યવાદી પુરુષો પાસે અગ્નિ શીતળ થઈ બચે છે, અગાધ સમુદ્ર પણ સ્થળ સમાન થઈ બચે છે, તલવારની ધાર છૂંદી થઈ બચે છે અને સર્પ તેને હંસે છઈ શકતો નથી.

પથુ શું કહ્યું “સચ્ચવયણે રયાણં” સત્ય વચનમાં જે લીન રહે છે તે સત્યવાદી મનુષ્યોનું “દેવયાઓય” દેવતા “સાદિવ્વાણિ કરેતિ” સાંનિધ્ય

સત્યવાદિનાં વચનમનન્યથાકર્તુઃ દેવાસ્તસાન્નિધૌ તિષ્ઠન્તીતિ ભાવઃ । ઉક્તમપિ—

પ્રિયં સત્યં વાક્યં હરતિ હૃદયં કસ્ય ન જને ।

ગિરં સત્યાં લોકઃ પ્રતિપદમિમામર્થયતિ ચ ॥

સુરા સત્યાદ્ વાક્યાદ્ દદતિ મુદિતાઃ કામિતફલમ્ ।

અતઃ સત્યાદ્ વાક્યાદ્ વ્રતમભિમતં નાસ્તિ ભુવને ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ॥ સૂ૦૧ ॥

વ્યાખ્યા કરેતિ) સાન્નિધ્ય કરતે હૈ, અર્થાત્ સત્યવાદી કે વચનોં કો અનન્યથા-સત્ય કરને કે લિયે દેવ અનેકે નિકટ રહતે હૈં । કહા ખી હૈ—

“ પ્રિયં સત્યં વાક્યં હરતિ હૃદયં કસ્ય ન જને,

ગિરં સત્યાં લોકઃ પ્રતિપદમિમામર્થયતિ ચ ।

સુરાઃ સત્યાદ્ વાક્યાદ્ દદતિ મુદિતાઃ કામિતફલમ્,

અતઃ સત્યાદ્ વાક્યાદ્ વ્રતમભિમતં નાસ્તિ ભુવને ॥ ૧ ॥

પ્રિય સત્ય વચન કિમ સહૃદય વ્યક્તિ કે હૃદય કો હરણ નહીં કર લેતા હૈ । અર્થાત્ સવકે હૃદય કો હરણ કર લેતા હૈ । લોક દર એક સમય દર એક વાત મેં ઇસ સત્ય વચન કે હી અભિલાષી હોતે હૈં । સત્યવચન સે દેવતા ખી પ્રસન્ન રહતે હૈં, ઓર વે સત્યવાદી કે ઇચ્છિત મનોરથ કી પૂર્તિ કરતે રહતે હૈં । ઇમલિયે સત્યવચન કે સમાન અભિમતવ્રત લોક મેં ઓર કોઈ નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને ઇસ દ્વિતીય સંવર દ્વાર મેં સત્યવચન રૂપ મહાવ્રત કે સ્વરૂપ કા કથન કિયા હૈ । જ્યોં કિ પ્રથમ સંવરદ્વાર કે સાથ સેવે છે, એટલે કે સત્યવાદીના વચનોને અનન્યથા-સાચા પાડવાને માટે દેવો તેમની પાસે રહે છે. કહું પણુ છે—

“ પ્રિયં સત્યં વાક્યં હરતિ હૃદયં કસ્ય ન જને,

ગિરં સત્યાં લોકઃ પ્રતિપદમિમામર્થયતિ ચ ।

સુરાઃ સત્યાદ્ વાક્યાદ્ દદતિ મુદિતાઃ કામિતફલમ્,

અતઃ સત્યાદ્ વાક્યાદ્ વ્રતમભિમતં નાસ્તિ ભુવને ॥ ૧ ॥ ”

પ્રિય સત્યવચન કઇ સહૃદયી વ્યક્તિનું મન હરતું નથી ! એટલે કે સૌનાં મનને હરી લે છે. લોકો દરેક વખતે દરેક વાતમાં આ સત્ય વચનના જ અભિલાષી હોય છે. સત્ય વચનથી દેવતા પણુ પ્રસન્ન રહે છે અને તેઓ સત્યવાદીનાં ઇચ્છિત મનોરથો પૂરા કરે છે. તે કારણે સત્ય વચન જેવું શ્રેષ્ઠ વચન જગતમાં બીજું કોઈ પણુ નથી.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ બીજા સંવરદ્વારમાં સત્ય વચન નામના મહામ્તના સ્વરૂપનું વર્ણન કર્યું છે. કારણ કે પ્રથમ સંવરદ્વાર સાથે તેનો ઘાટ

સુરશિની ટીકા અ૦૨ સુ.૧ સત્યસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૫૧

હસકા ધનિષ્ઠ સંબંધ છે ઓર વહ્ હસ પ્રકાર સે હૈ કિ જવ તક જીવ અલીક (અસત્ય) વચનો સે નિવૃત્ત નહીં હોતા તવનક વહ પ્રાણાતિપાત વિરમણ રૂપ પ્રથમસંવરદ્વાર કા આરાધક નહીં બન સકતા હૈ। યહ સત્યવચન શુદ્ધ, શુચિક, શિવ, સુજાત આદિ અનેક વિશેષણો સે સંપન્ન હોતા હૈ। સત્યવાદી કી સર્વત્ર પ્રતિષ્ઠા હોતી હૈ। ઇન્દ્રાદિક દેવો કો, તથા ચક્ર-વર્તી આદિ શ્રેષ્ઠ પુરુષો કો સત્યવચન વહુમાન્ય હોતે હૈ। સમસ્ત વિદ્યા-ઓ કી સિદ્ધિ ઇન્હીં સત્યવચનો સે હોતી હૈ। સ્વર્ગ, મોક્ષ કી સિદ્ધિ કે યહ પથ પ્રદર્શક હોતા હૈ। સત્ય હોરુર ખી જો અપ્રિય હોતે હૈં વે વચન સત્યવાદિ કો ચોલને યોગ્ય નહીં હોતે હૈં। કિન્તુ પ્રિય સત્યવચન હી સત્યવાદી ચોલા કરતે હૈં। સત્યવાદિયોં કે સમક્ષ સંસાર કી સમસ્ત શક્તિયાં નતમસ્તક હો જાયા કરતી હૈં અર્થાન્-શિરૈ-જુકાતા હૈ। મનસા વાચા કર્મણા જો હસ સત્ય કી આરાધના મેં લીન હોતે હૈં વે હસ ભવ મેં તો સુખી હોતે હી હૈં પરન્તુ પરભવ મેં ખી ઇન્હેં સુખોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈં। તપ નિયમ સે સવ સત્યવચન સે હી શોભિત ઓર ફલપ્રદ હોતે હૈં। પરિણામોં મેં જિનકે જિતની અધિક સરલતા હોગી ડમકે વચનોં મેં ડતની અધિક સત્યતા હોગી। સત્યવાદિયોં કે દેવતા તક સેવક હોતે હૈં। સત્ય મેં સાવચભાષણ કા સર્વથા પરિત્યાગ હી જાતા હૈ। ઇન વચનોં

સંજંધ છે. તે આ પ્રકારે છે. ત્યાં સુધી જવ અસત્ય વચનોથી સુક્ષ્મ થતો નથી ત્યાં સુધી તે પ્રાણાતિપાત વિરમણરૂપ પ્રથમ સંવરદ્વારને આરાધક બની શકતો નથી. આ સત્ય વચન શુદ્ધ, શુચિક, શિવ, સુજાત આદિ અનેક વિશેષણોથી સુક્ષ્મ હોય છે. સત્યવાદીની હંમેશા પ્રતિષ્ઠા થાય છે. ઇન્દ્રાદિક દેવોને તથા ચક્રવર્તી આદિ શ્રેષ્ઠ પુરુષોને સત્યવચન બહુ માનને યોગ્ય લાગે છે. એ સત્ય વચનથી જ સઘળી વિદ્યાઓ સિદ્ધ થાય છે. સ્વર્ગ, મોક્ષની પ્રાપ્તિમાં તે માર્ગદર્શક હોય છે. સત્ય હોવા છતાં પણ અપ્રિય લાગે તેવાં વચનો સત્યવાદીઓએ બોલવાં બોધે નહીં, પણ સત્યવાદી પ્રિય સત્ય વચન જ બોલે છે. સત્યવાદીઓ આગળ સંસારની સમસ્ત શક્તિઓ માથું નમાવે છે. મન, વચન અને ક્રિયાથી જે આ સત્યની આરાધનામાં લીન રહે છે તેઓ આ ભવમાં તો સુખી થાય છે પણ પરભવમાં પણ તેમને સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે. તપ નિયમ એ સૌ સત્ય વચનથી જ શોભે છે અને ક્ષણભાવી નિવડે છે. પરિણામોમાં જેમની બેટલી વધારે સરળતા હશે તેટલી તેમનાં વચનોમાં વધારે સત્યતા હશે. દેવતા પણ સત્યવાદીઓની સેવા કરે છે. સત્યમાં સાવચ ભાષણનો સર્વથા પરિત્યાગ થઈ જાય છે. આ વચનોથી જવને સૌથી મોટો આધ્યાત્મિક

મૂલમ્—તં સચ્ચં ભગવં તિત્થયરસુમાસિયં દસવિહં
 ચોદસપુઞ્વીહિં પાહુટ્થવિહયં, મહરિસીણ ય સમયપ્પઙ્ગં,
 દેવિંદનરિંદમાસિયત્થં વેમાણિયસાહિયં, મહત્થં, મંતોસાહિ
 વિજ્ઞાસાહણત્થં, ચારણગણસમણસિદ્ધવિજ્ઞં, મણુયગણાણં
 વંદણિજ્ઞં, અમરગણાણં અચ્છણિજ્ઞં, અસુરગણાણં પૂયણિજ્ઞં,
 અણેગપાલંડિપરિગ્ગહિયં, જં તં લોગમ્મિ સારભૂયં, ગંભીરયરં
 મહાસમુદ્દાઓ, થિરયરં મેરુપઠ્ઠવાઓ, સોમયરં ચંદમં-
 ડલાઓ, દિત્તયરં સૂરમંડલાઓ, વિમલયરં સરયનહયલાઓ,
 સુરભિયરં ગંધમાયણાઓ, જે વિ ય લોગમ્મિ અપરિસેસા
 મંતજોગા જવા ય વિજ્ઞા ય જંભગા ય અત્થાણિ ય સત્થાણિ
 ય સિલ્લાઓ આગમા ય સવ્વાઈં વિતાઈં સચ્ચે પઙ્કિયાઈં ॥૨॥

ટીકા—‘તં’ ‘ત’ ‘ત્વ’ આદિ—

‘તં’ તત્=પૂર્વોક્ત મહામહિમાન્વિતં; ‘ભગવં’ ભગવત્=પૂજ્યં ‘સચ્ચં’ સત્યં—
 સત્યનામકં દ્વિતીયં મહાવ્રતં ‘તિત્થયરસુમાસિયં’ તીર્થંકરસુમાધિતં ‘દસવિહં’

સે જીવ કો સય સે ષઢા આધ્યાત્મિક દૃષ્ટિ સે યહ લાભ હોતા હૈ કિ
 ઉસકે નવીન કર્મોં કા આગમન રુક જાતા હૈ ઔર સંચિત કર્મોં કી
 નિર્જરા હોને લગતી હૈ। ઇસીલિયે વીતરાગપ્રભુ ને ઇન્હેં ઉપાદેય કહા
 હૈ ઔર મહાવ્રત કી કોટિ મેં રહ્યા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

‘તં સચ્ચં ભગવં’ ‘ત’ આદિ—

ટીકાર્થ—(તં સચ્ચં તિત્થયરસુમાસિયં) પૂર્વોક્ત મહિમા સે સમ-
 ન્યિત વહ સત્ય નામકાદ્વિતીયમહાવ્રત તીર્થંકર પ્રભુ કે દ્વારા કહા ગયા

દૃષ્ટિએ શાલ એ થાય છે કે તેનું નવા કર્મનું આગમન અટકી ગય છે, અને
 સૂચિત કર્મોની નિર્જરા થવા માટે છે. તે કારણે વીતરાગ પ્રભુએ તેમને ઉપા-
 દેય તરીકે બતાવ્યાં છે અને મહાવ્રતની કોટિમાં મૂક્યાં છે ॥ સૂ. ૧ ॥

“તં સચ્ચં ભગવં” ‘ત’ આદિ—

ટીકાર્થ—“તં સચ્ચં ભગવં તિત્થયરસુમાસિયં” પૂર્વોક્ત મહિમાથી યુક્ત તે સત્ય
 નામનું બીજું મહાવ્રત તીર્થંકર પ્રભુદ્વારા જ કહેવાયેલ છે. તે “દસવિહં” ૬૪

दशविधं स्थानाङ्गस्य दशमस्थाने प्रोक्तम् । तथाहि—

“जगत्त्रय १ सम्मय २ उवणा ३, नाम ४ रूपे ५ पटुच्च सत्त्वे ६ य। व्यवहार ७ भाव ८ योगे ९ इसमे ओवम्मसत्त्वे य १० ॥

छाया—जनपद १ संमत २ स्थापना ३ नाम ४ रूपं ५ प्रतीत्यसत्यं ६ च। व्यवहार ७ भाव ८ योगः ९ दशमसौपम्यसत्यं च १० ॥ इति।

सत्र—जनपदसत्यम्—यथा वङ्गदेशे गौरिति ‘गाभी’ शब्देन व्यपदिश्यते ॥ १ ॥ संमतसत्यम्—संमतं च तत्सत्यं च—संमतसत्यम् = लोकसंमत्या प्रसिद्धं, तथाहि—कुमुदकुवलयोत्पलतामरसानां समानेऽपि पङ्कसंभवे सर्वसंमतमरविन्दमेव पङ्कजम् ॥ २ ॥ स्थापनासत्यम्—यथा—एक संख्यायाः पुरतो विन्दुद्वयस्थापनेन

है। यह (दसविहं) दश प्रकार होता है, इसके ये दश प्रकार स्थानांग के दशम स्थान में इस प्रकार कहे हैं—

जनपदसत्य १, संमतसत्य २, स्थापनासत्य ३, नामसत्य ४, रूपसत्य ५, प्रतीत्यसत्य ६, व्यवहारसत्य ७, भावसत्य ८, योगसत्य ९, और उपमासत्य १० ॥

तत्तद्देशवासी मनुष्यों के व्यवहार में जो शब्द रूढ़ हो रहा है वह जनपदसत्य है जैसे बंगाल में गाय को “गाभी” कहते हैं। अतः “गाभी” यह शब्द जनपदसत्य है १। बहुत मनुष्यों की संमति से जो शब्द साधारण में रूढ़ हो उसे सम्मत्तिसत्य कहते हैं, जैसे कुमुद, कुवलय, उत्पल तथा तामरस इनमें पङ्क संभावना की सज्जानता होने पर भी सर्वसंमति से अरविन्द को ही पङ्कज मानना, अर्थात् कुवलय, उत्पल आदि सब ही पङ्कज हैं फिर भी पङ्कज शब्द अरविन्द में ही रूढ़ हुआ है। इसलिये अरविन्द को ही पङ्कज मानना यह सम्मत-

प्रकारनुं छे. तेना ते दश प्रकार स्थानांगनां दशमां स्थानमां या प्रमाणे कडेल छे.

(१) जनपद सत्य (२) संमत सत्य (३) स्थापना सत्य (४) नामसत्य (५) रूपसत्य (६) प्रतीत्य सत्य (७) व्यवहार सत्य (८) भावसत्य (९) योग सत्य अने (१०) उपमासत्य.

(१) देशवासी मनुष्यानां व्यवहारमां जे शब्द रूढ़ भइ गये। छे। ते देशवासी भाटे जनपद सत्य छे. जेभके जायने अजायमां “गाभी” कहे छे तेथी “गाभी” शब्द जनपद सत्य छे. (२) वधादे भाषसोनी संमतिथी जे शब्द साधारणु रीते रूढ़ थाय ते संमति सत्य कडेलाय छे. जेभके कुमुद कुवलय, उत्पल, तथा तामरस तेथीमां पङ्क संभावनानी समानता छे। वा छतां पणु अरविन्दने न पङ्कज मानवु, अटवे डे कुवलय, उत्पल, आदि पधां पङ्कज छे छतां पणु पङ्कज शब्द अरविन्दमां न रूढ़ थये छे. ते कारणे अरविन्दने न

શતમ્, ચિન્દુત્રયસ્થાપનેન સહસ્રં ભવતિ ॥ ૩ ॥ ઇતિ સ્થાપનાસત્યમ્ ॥ નામસત્યમ્
 યથા-કુલમવર્ધન્યપિ કુલવર્દનં ઇત્યાદિ ॥ ૪ ॥ રૂપસત્યમ્-યથા-સાધુરૂપ-
 ધારણેન સાધુરિતિ ॥ ૫ ॥ પ્રતીત્યસત્યમ્-યથા મધ્યમાં પ્રતીત્ય=આશ્રિત્ય અના-
 મિકા હસ્વા, કનિષ્ઠિકામાશ્રિત્ય તુ દીર્ઘાં ॥ ઇતિ પ્રતીત્યસત્યમ્ ॥ ૬ ॥ વ્યવહાર-

સત્યહૈં ૨। ભિન્ન વસ્તુમેં ભિન્ન વસ્તુકે આગેપ કરનેવાલે વચનકો સ્થાપના
 સત્ય કહતે હૈં, જૈસે ઇક કે આગે દો ચિન્દુઓં કી સ્થાપના કરકે ઉસે
 ૧૦૦ કહના, તથા ચિન્દુત્રય કી સ્થાપના કરકે ઉસે ઇક હજાર કહના ૩।
 દૂસરી કોઈ અપેક્ષાન રચ્ચકર કેવલ વ્યવહાર કે લિયે કિસી કા સંજ્ઞાકર્મ
 કરના હસકા નામ નામસત્યહૈં-જૈસે કિસી લટકે કો કુલવર્ધન રચ્ચલેના।
 કુલ વર્ધન કા તાત્પર્યહોના હૈં-કુલ કો બઢાને વાલા, પરન્તુ વ્યવહાર
 ચલાને કૈં લિયે જો સંજ્ઞાકર્મ કિયા જાતા હૈં-નામ રચ્ચા જાના હૈં-ઉસમેં
 હસકી અપેક્ષા સાપેક્ષ નહીં હુઆ કરતી હૈં, હસી કા નામ નામસત્ય હૈં
 ૪। પુદ્ગલ કે રૂપાદિક અનેક ગુણોં મેં સે રૂપ કી પ્રધાનતા કો લેકર જો
 વચન કહા જાતા હૈં ઉસે રૂપ સત્ય કહતે હૈં-જૈસે કેશોંકો કાલા કહના,
 અથવા રૂપ સ્વરૂપ ધારણ કી મુખ્યતા કો લેકર જો વચન કહા જાતા
 હૈં વહ બી રૂપસત્ય હૈં- જૈસે-સાધુ કે સ્વરૂપ કો ધારણ કરને વાલે
 વ્યક્તિ કો સાધુ કહના ૫। કિસી વિવક્ષિત પદાર્થ કી અપેક્ષા સે દૂસરે
 પદાર્થ કે સ્વરૂપ કા કથન કરના હસે પ્રતીત્યસત્ય યા આપેક્ષિકસત્ય

પંકજ માનવું તે સમત સત્ય છે. (૩) ભિન્ન વસ્તુમાં ભિન્ન વસ્તુનો આરોપ
 કરનાર વચનને સ્થાપના સત્ય કહે છે. જેમકે એકની સામે બે ચિન્દુઓની સ્થા-
 પના કરીને તેને સો (૧૦૦) કહેવા તથા ત્રણ ચિન્દુઓની સ્થાપના કરીને હજાર-
 (૧૦૦૦) કહેવાં. (૪) બીજી કોઈ પણ અપેક્ષા રાખ્યા વિના કૃત્ર વ્યવહારને
 માટે જ કોઈને કોઈ સંજ્ઞા આપવી તેને નામ સત્ય કહે છે. જેમકે કુળને
 વધારે નહીં છતાં પણ કોઈનું નામ કુળવર્ધન રાખવું. કુળવર્ધનનો અર્થ થાય
 છે કુળને વધારનાર, પણ વ્યવહાર ચલાવવાને માટે જે નામ રાખવામાં આવે
 છે તેમાં કોઈ અપેક્ષા સાપેક્ષ થતી નથી, તેનું જ નામ નામસત્ય છે. (૫)
 પુદ્ગલમાં રૂપાદિક અનેક ગુણોમાંથી રૂપની પ્રધાનતાને લીધે જે વચન કહેવાય
 તેને રૂપસત્ય કહે છે, જેમકે વાળને કાળાં કહેવાં, અથવા રૂપ-સ્વરૂપ ધારણની
 મુખ્યતાને લઈને જે વચન કહેવામાં આવે છે તે પણ રૂપસત્ય છે. જેમ કે
 સાધુનાં સ્વરૂપને ધારણ કરનાર વ્યક્તિને સાધુ કહેવાં તે રૂપસત્ય છે.
 (૬) કોઈ વિવક્ષિત પદાર્થની અપેક્ષાએ બીજા પદાર્થના સ્વરૂપનું કથન કરવું તેને
 પ્રતીત્ય સત્ય અથવા આપેક્ષિક સત્ય કહે છે. જેમ કે વચલી આંગળીના કરતાં

સત્યમ્ - યથા ગિરિગતતૃણાદેદ્દહનેઽપિ ઘટગત - જલસ્ય મલનેઽપિ ગિરિર્દેશ્વતે
 ઘટો મલતીતિ વ્યવહારો ભવતિ ॥ ૭ ॥ ભાવસત્યમ્-યસ્મિન્ વસ્તુનિ યસ્ય
 ધર્મસ્યાધિક્યમ્, તદ્વેલેખા સત્યમ્=ભાવસત્યમ્, યથા વ્યવહાર-પદ્મવર્ણસંભવેઽપિ
 વક્રઃ શુક્રઃ શુક્રો દરિતિ ઇત્યાદિ ॥ ૮ ॥ યોગસત્યમ્=યોગેન=વસ્તુસંયોગેન સત્યં-યોગ-
 સત્યમ્ યથા-છત્રયોગાચ્છત્રી દણ્ડયોગાદ્ દણ્ડીતિ ॥ ૯ ॥ ઔપમ્યસત્યમ્=ઉપમા-
 સત્યમ્-યથા-ચન્દ્રવન્મુખમ્, સમુદ્રવત્તટાગ ઇત્યાદિ ॥ ૧૦ ॥ ઇતિ । તથા 'ચોદ-
 કહતે હૈં જૈસે સઘયમા કી અપેક્ષા અનામિકા અંગુલી કો હ્રસ્વકહના ઔર
 ફનિષ્ટિકા અંગુલો કી અપેક્ષા વીર્ય કહના ૬ । નૈગમ આદિ નયોં કી
 પ્રધાનતા સે જો વચન બોલા જાતા હૈં ઉસે વ્યવહાર સત્ય કહતે હૈં, જૈસે
 પર્વત કે ડાપર કી ઘાસ આદિ કે જલને પરેસા કહના કિ પર્વતજલ રહા હૈં,
 ઘટસે જલ કે નિકલને પરેસા કહના કિ ઘટાં ગલ રહા હૈં, યહ સબ
 વ્યવહાર સત્ય હૈં, કયોં કિ વ્યવહાર મેં એસે વચનોં કો સત્ય માના ગયા,
 હૈં ૭ । જિસ વસ્તુ મેં જિસ ધર્મ કી અધિકતા હો ઉસકો લેકર જો
 વચન કહા જાય વહ ભાવસત્ય હૈં, જૈસે પાંચોં વર્ગોં કી સંભવતા
 હોને પર ખી વગલે કો શુક્લ કહના, તોતે કો હરા કહના । વસ્તુ કે
 સંયોગ સે જો વચન બોલા જાતા હૈં વહ યોગસત્ય હૈં, જૈસે છતાં કે
 સંબંધ સે પુરખ કો છત્રી કહના, દણ્ડ કે સંબંધ સે દણ્ડી કહના ૯ ।
 દુસરે પ્રસિદ્ધ સદૃશ પદાર્થ કો ઉપમા કહતે હૈં, હસકે આશ્રય સે જો
 વચન બોલા જાતા હૈં વહ ઉપમાસત્ય હૈં, જૈસે ચન્દ્ર કે સમાન મુખ,
 સમુદ્ર કે સમાન તટાગ હોતા હૈં, એસા વચન કહના । (ચોદસ પુર્વોહિ

અનામિકા આંગળીને નાની કહેવી અને ટચલી આંગળીની અપેક્ષાએ તેને મોટી
 કહેવી. (૭) નૈગમ આદિ નયોની પ્રધાનતાથી જે વચન બોલાવામાં આવે છે
 તે વચનને વ્યવહાર સત્ય કહે છે. જેમ કે પર્વત ઉપરનાં ઘાસ આદિને આગ
 લાગે તો પર્વત સળગી રહ્યો છે તેમ કહેવું, ઘડામાંથી પાણી ટપકતું હોય તો
 ઘડો ટપકે છે તેમ કહેવું, એ બધાં વ્યવહાર સત્ય ઉદાહરણ છે, કારણ કે
 વ્યવહારમાં એવાં વચનોને સત્ય માનવામાં આવે છે. (૮) જે વસ્તુમાં જે
 ધર્મની વિશેષતા હોય તેને લઈને જે વચન કહેવાય તે ભાવ સત્ય છે જેમ
 કે પાંચે વર્ણોની સંભવિતતા હોવા છતાં પણ બગલાંને સફેદ કહેવા, પોપટને
 લીલા કહેવા તે ભાવસત્ય છે. (૯) વસ્તુના સંયોગથી જે વચન બોલાય છે તે
 યોગસત્ય છે જેમકે છત્રીના સંબંધથી પુરુષને છત્રી કહેવું, દડના સંબંધથી
 દડો કહેવું (૧૦) બીજા પ્રસિદ્ધ સદૃશ પદાર્થને ઉપમા કહે છે, તેનો આશ્રય
 લઈને જે વચન બોલાય છે તે ઉપમા સત્ય છે. જેમ કે ચન્દ્રમાના સમાન મુખ,
 સમુદ્રના જેવું તળાવ હોય છે, એવાં વચન કહેવા તે ઉપમા સત્ય છે “ચોદસ

સપુત્રીર્હિ' ચતુર્દશપૂર્વિભિઃ 'પાહુહત્યવિદ્યં' પ્રાશ્નતાર્થવિદિતમ્-પૂર્વગતાંશવિ-
શેષાભિધેયતયા સત્યવાદપૂર્વનામ્ના જ્ઞાતમ્. તથા- 'મહરિસીળં ચં' મહર્ષિણાં
ચ 'સમયપદ્ધત્' સમપ્રદત્તં સમયેન-સિદ્ધાન્તેન પ્રદત્તં=વિતોર્ણ, મહર્ષિભિઃ સિદ્ધા-
ન્તરૂપતયા મૃદીતમિત્યર્થઃ, તથા 'દેવનરિદ્ધાસિયત્થં' દેવનરેન્દ્રમાપિતાર્થમ્ દેવા-
નામ્=ઇન્દ્રાદીનાં નરેન્દ્રાણાં=ચક્રવર્તિપ્રભુતીનાં માપિતઃ=પ્રતિમાપિતોઽર્થઃ=પ્રયોજનં
યસ્ય તન્, તથા- 'વેમાણિયસાહિયં' વૈમાનિકસાધિતં વૈમાનિકૈઃ=વેમાનિકદેવૈઃ
સાધિતં=સાધનાવિષયીકૃતં, સેવિતમિત્યર્થઃ, તથા- 'મહત્થં' મહાર્થમ્=મહાન્ અર્થઃ
=પ્રયોજનં યસ્ય તન્, તથા 'મંતોસહિવિજ્ઞાસાહણત્થં' મન્ત્રૌષધિવિદ્યાસાધનાર્થમ્=
મન્ત્રૌષધિવિદ્યાનાં સાધનસર્થઃ=પ્રયોજનં યસ્ય તન્, તેન વિના તન્નિશ્ચયનાવાત્,
તથા- 'ચારણગણસમગસિદ્ધવિજ્ઞં' ચારણગણશ્રમગસિદ્ધિદ્ધિમ્=ચારણગણાનાં=

પાહુહત્યવિદ્યં) હસ સત્ય કો ચતુર્દશ પૂર્વધારિયો ને પ્રાશ્નતાર્થ રૂપ સે
વિદિત કિયા હૈ અર્થાત્ પૂર્વગત અંશવિશેષ કી અભિધેયતા સે સત્ય-
વાદપૂર્વ હસ નામ સે જાના હૈ, (મહરિસીળં ચ સમયપદ્ધત્) મહર્ષિયો
ને હસે સિદ્ધાન્તરૂપ સે સ્વીકાર કિયા હૈ, (દેવનરિદ્ધાસિયત્થં)
ઇન્દ્રાદિકો કે લિયે તથા ચક્રવર્તી આદિ (રાજાઓ) કે લિયે હસકા
પ્રયોજન ઉપાદેયરૂપ સે કહા ગયા હૈ. (વેમાણિયસાહિયં) વૈમાનિક
દેવો ને હમ સત્ય કો અપની સાધના કા વિષયમૂલ ચનાયા હૈ અર્થાત્
હસકા સેવન કિયા હૈ (મહત્થં) મહ મહાન્ અર્થ-પ્રયોજન વાચા હૈ
(મંતોસહિવિજ્ઞાસાહણત્થં) મન્ત્રઔષધિ ગેઝં વિદ્યાઓં કા સાધન હસકા
પ્રયોજન હૈ કયોં કિ સત્ય કે વિનામંત્રાદિ સિદ્ધ નહીં હોતેહૈ, (ચારણગણ-
સમગસિદ્ધવિજ્ઞં) હસી કે પ્રભાવ સે હસી ચારણગણોં કો આકાશગા-

પુત્રીર્હિ પાહુહત્યવિદ્યં” આ સત્યને ઔદ પૂર્વધારીઓએ પ્રાશ્નતાર્થરૂપે વિદિત
કયું છે એટલે કે પૂર્વગત અંશવિશેષની અભિધેયતાથી સત્યવાદ પૂર્વ એ
નામથી બાધયું છે. “મહરિસીળં ચ સમયપદ્ધત્” મહર્ષિઓએ તેને સિદ્ધાન્ત-
રૂપે સ્વીકાયું છે “દેવનરિદ્ધાસિયત્થં” ઇન્દ્રાદિકોને તથા ચક્રવર્તી અ.તિ
નરેન્દ્રોને માટે તેનું પ્રયોજન ઉપાદેયરૂપે કહેવાયું છે, “વેમાણિયસાહિયં”
વૈમાનિક દેવોએ આ સત્યને પોતાની સાધનાનો વિષય બનાવ્યો છે એટલે કે
તેનું સેવન કયું છે, “મહત્થં” તે મહાન અર્થ-પ્રયોજનવાળું છે. “મંતો
સહિવિજ્ઞાસાહણત્થં” તે મંત્ર-ઔષધિ અને વિદ્યાઓનું સાધન તેનું પ્રયોજન
છે કારણ કે સત્ય વિના મંત્રાદિ સિદ્ધ થતાં નથી, “ચારણગણસમગસિદ્ધ
વિજ્ઞં” તેના પ્રભાવથી ચારણ ગણોને આકાશગામિની વિદ્યાની તથા શ્રમણોને

સુવર્ણિની ટીકા અંર સ્ૃ ૨ સત્યસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૬૫

વિદ્યાચારણાદીનાં શ્રમણાનાં ચ સિદ્ધિવિદ્યા=આકાશગામિની વૈક્રિયાદિ રૂપા ચ
 યસ્માત્તત્તથોક્તમ્, તથા-‘મણુયગણાણં’ મનુજગણાનાં ‘વંદણિજ્જં’ વંદનીયં=
 સ્તવનીયમ્, તથા-‘અમરગણાણં’ અમરગણાનાં=દેવાનામ્ ‘અન્વણિજ્જં’
 અર્ચનીયમ્=સત્કારયોગ્યમ્, તથા-‘અસુરગણાણં ચ’ અસુરગણાનાં ચ ‘પૂયણીયં’
 પૂજનીયં=પ્રશંસનીયમ્, તથા ‘અણેગપાલંડિપરિગ્ગહિયં’ અનેકપાલંડિ-
 પરિશુદ્ધીતમ્=અનેકધર્માનુયાયીભિરપિ સ્વીકૃતં ‘જં’ યત્સત્યં ‘તં’ તત્ ‘લોક-
 મ્મિ’ લોકે ‘સારભૂયં’ સારભૂતં=સારભૂતં=સર્વપ્રધાનત્વાત્ પુનરત્તત્યં કીદ-
 શ્મ? इत्याह-‘ગંભીરયરં મહાસમુદ્દાઓ’ ગંભીરતરં મહાસમુદ્દાત્, અશોભ્યત્વાત્,
 તથા-‘થિરયરં મેરુપન્વયાઓ’ સ્થિરતરકં મેરુપર્વતાત્=નિશ્ચલત્વાત્, તથા-
 ‘સોમ્મયરં ચંદ્રમંડલાઓ’ સૌમ્યતરકં ચંદ્રમંડલાત્=સંતાપશમનહેતુત્વાત્,
 તથા-‘દિત્તયરં સૂરમંડલાઓ’ દીપ્તતરં સૂરમંડલાત્=યથાવદ્વસ્તુ પ્રકાશકત્વાત્,
 મિતી વિદ્યા કી તથા શ્રમણોં કોં વૈક્રિયાદિરૂપ વિદ્યાઓં-લઙ્ઘિયોં કીસિદ્ધિ
 હોતી હૈ। (મણુયગણાણં વંદણિજ્જં) મનુજોં કે લિયે યહ સત્ત્વ વંદનીય
 હૈ, (અમરગણાણં અન્વણિજ્જં) અમરગણોં કે લિયે યહ અર્ચનીય હૈ,
 તથા (અસુરગણાણં પૂયણિજ્જં) અસુરગણોં કે લિયે યહ પૂજનીય પ્રશં-
 સનીય હૈ (અણેગપાલંડિપરિગ્ગહિયં) અનેક ધર્માનુયાયિયોં ને ખી
 હસ્કો સ્વીકાર કિયા હૈ। (જં તં લોગમ્મિ સારભૂયં) એના યહ સત્યવ્રત
 લોકમ્ સર્વપ્રધાન હોને સે સારભૂત હૈ। (ગંભીરયરં મહાસમુદ્દાઓ)
 યહ સત્ય અશોભ્ય હોને સે મહાસમુદ્ર કી અપેક્ષા અત્યંત ગંભીર હૈ।
 (થિરયરં મેરુપન્વયાઓ) નિશ્ચલ હોનેસે મેરુપર્વત કી અપેક્ષા અત્યંત
 સ્થિર હૈ (સોમ્મયરં ચંદ્રમંડલાઓ) સંતાપ કે શમન કા હેતુ હોને સે
 ચંદ્રમંડલ કી અપેક્ષા અત્યંત સૌમ્ય હૈ। (દિત્તયરં સૂરમંડલાઓ) યથા-
 વત્ત વસ્તુ કા પ્રકાશક હોને સે યહ સત્ય સૂર્ય મંડલ કી અપેક્ષા અધિક

વૈક્રિયાદિરૂપ વિદ્યાઓ-લઙ્ઘિઓની પ્રાપ્તિ થાય છે. “મણુયગણાણં વંદણિજ્જં”
 મનુજોને માટે આ સત્ય વંદનીય છે તથા “અસુરગણાણં પૂયણિજ્જં” અસુર-
 ગણોને માટે તે પૂજનીય-પ્રશંસનીય છે. “અણેગપાલંડિ પરિગ્ગહિયં” અનેક
 ધર્માના અનુયાયીઓએ પણ તેનો સ્વીકાર કર્યો છે, “જં તં લોગમ્મિ સારભૂયં”
 એવું આ સત્યવ્રત લોકમાં સર્વ પ્રધાન હોવાથી ગ્રાહ્ય હોય છે. “ગંભીરયરં
 મહાસમુદ્દાઓ” આ સત્ય અશોભ્ય હોવાથી સમુદ્ર કરતાં પણ વધારે ગંભીર
 છે. “થિરયરં મેરુપન્વયાઓ” નિશ્ચલ હોવાથી તે મેરુપર્વત કરતાં પણ વધારે
 સ્થિર છે. “સોમ્મયરં ચંદ્રમંડલાઓ” સંતાપનું શમન કરનાર હોવાથી ચંદ્ર-
 મંડળ કરતાં પણ વધારે સૌમ્ય છે. “દિત્તયરં સૂરમંડલાઓ” વસ્તુના સાચા
 સ્વરૂપનું પ્રકાશક હોવાથી આ સત્ય સૂર્યમંડળ કરતાં પણ વધારે સ્થિર છે.

તથા-‘વિમલયરં સરયનહયલાઓ’ વિમલતરં. શરન્નમસ્તલાત્=શરત્કાલિકં ગગન-
તલાદપ્પથિકં નિર્મલં, માલિન્યરહિતત્વાત્. તથા-‘સુરભિયરં ગંધમાયણાઓ’
સુરમિતરં ગન્ધમાદનાત્=ગન્ધમાદનપર્વતાત્ અયં હિ-નીલવદ્ વર્ષધરપર્વતસ્ય
દક્ષિણદિશિ, મેરોર્વાયવ્યકોણે, શીતોદાનદ્યુત્તરકૂલવર્તિનો ગંધિલાવતીનામ્નોઽ-
ષ્ટમવિજયસ્ય પૂર્વદિશિ, તથા-ઉત્તરકુરુણાં સર્વોત્કૃષ્ટભોગભૂમિક્ષેત્રાત્ પશ્ચિમ-
દિશિ મહાવિદેહક્ષેત્રસ્યો ગજદન્તસંસ્થાનસંસ્થિતો ગન્ધમાદનનામા વક્ષસ્કાર-
પર્વતોઽસ્તિ । ગન્ધેન સ્વયં માદ્યતિ મદયતિ વા સ્વનિવાસિદેવદેવીનાં મનાંભીતિ
ગન્ધમાદનઃ । યથા પિપ્પયમાણાનાં સંચૂર્ણમાનાનામ્-ઉત્કોર્યમાણાનાં વિકીર્યમા-

દીસ છે । (વિમલયરં સરયનહયલાઓ) મલિનતા સે વિહીન હોને કે
કારણ શરત્કાલિક આકાશતલ કી અપેક્ષા અધિક નિર્મલ છે । તથા
(સુરભિયરં ગંધમાયણાઓ) જનોં કે હૃદયોં કો આકર્ષણ કરને વાલા
હોનેકે કારણ યહ સત્ય ગંધમાદન નામક પર્વત કી અપેક્ષા અત્યન્ત સુગ-
ન્ધિત છે । યહ ગંધમાદન નામ કા વક્ષસ્કાર પર્વત નીલવર્ષધર પર્વત કી
દક્ષિણદિશા મેં, મેરુ કે વાયવ્યકોણ મેં, શીતોદાનદી’કે ઉત્તર તટ પર
રહે હુણ ગન્ધિલાવતી નામક અષ્ટમવિજય કો પૂર્વદિશા મેં. તથા ઉત્તર-
કુરુ કે સર્વોત્કૃષ્ટ ભોગભૂમિક્ષેત્ર સે પશ્ચિમદિશા મેં મહાવિદેહક્ષેત્ર મેં
છે । હસકા સંસ્થાન આકાર-ગજદંત જૈસા છે અર્થાત્-ગજદંત
કે આકાર મેં યહ સ્થિત છે । અપની ગંધ સે સ્વયં કો સુગંધિત
કરતા છે તથા અપને ઉપર રહેને વાલે દેવદેવિયોં કે મન કો મદો-
ન્મત્ત ચના દેતા છે હસકા નામ ગંધમાદક છે એસા યહ પર્વત છે ।
જૈસે પિસતે હુણ, ફેલે હુણ, અથવા એક વર્તન સે દસરે વર્તન

“ વિમલયરં સરયનહયલાઓ ” મલિનતાથી રહિત હોવાથી તે શરદ્ઋતુનાં
આકાશતલ કરતાં પણ વધારે નિર્મળ છે. “ સુરભિયરં ગંધમાયણાઓ ” માણ-
સોનાં ચિત્તાનું આકર્ષણ કરનાર હોવાથી આ સત્ય ગંધમાદન નામના પર્વત
કરતાં પણ અધિક સુગન્ધિત છે. તે ગન્ધમાદન નામનો વક્ષસ્કાર પર્વત નીલ-
વર્ષધર પર્વતની દક્ષિણ દિશામાં, મેરુ, વાયવ્ય કોણમાં, શીતોદા નદીના ઉત્તર
કિનારે રહેલ ગન્ધિલાવતી નામના અષ્ટમવિજયની પૂર્વ દિશામાં, તથા ઉત્તર
કુરુના સર્વોત્કૃષ્ટ ભોગભૂમિક્ષેત્રની પશ્ચિમ દિશામાં મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં છે.
તેનો આકાર ગજદંત જેવો છે એટલે કે તે ગજદંતના આકારે હોયો છે.
પોતાની ગંધવડે જે પોતે વાસ્યુક્ત અને છે અને પોતાની ઉપર વાસ કરતા
દેવદેવીઓનાં મનને જે મદોન્મત્ત કરી નાંખે છે, તેનું નામ ગંધમાદન છે.

સુરશિની ટીકા અ. ૨ સૂ. ૨ સત્યસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૬૭

ળાનાં ખાખડાદ્ ખાખડાન્તરં વા સંહ્રિયમાળાનાં કોસ્ટપુટાનાં યાવત્તગરપુટાદીનાં મનોજ્ઞા ઉદારા ગન્ધા અભિનિઃસ્રવન્તિ, તદપેક્ષયાડ્યુદારગન્ધયુક્તોડ્યં પર્વતઃ । તતોડ્યધિકતરમુરભિમત્સત્યમિતિ ભાવઃ, જનાનાં હૃદયાવર્જકત્વાન્ । તથા- 'જે વિ ય' એડવિ ચ 'લોગમ્મિ' લોકે 'અપરિસેસા' અપરિશેષાઃ=સકલાઃ 'મંતજોગ' મન્ત્રયોગાઃ-મન્ત્રાઃ-હરિણેગમેષિદેવાદિ મન્ત્રાઃ-યોગા વશીકરણાદિ-પ્રયોજના દ્રવ્યસંયોગાઃ, 'જવા ય' જપાશ્ચ-મન્ત્રવિદ્યાજપનાનિ 'વિજ્ઞા ય' વિદ્યાશ્ચ-રોહિણીપ્રજ્ઞાપ્ત્યાદયઃ, 'જંમકા ય' જન્મકાશ્ચ=તિર્યગ્લોકવાસિનોડ્મ જન્મકાદિ ભેદેન દશવિદ્યા દેવવિશેષાઃ 'અત્યાણિય' અસ્થાણિ ચ-બાળાદીનિ 'સત્યાણિય' શત્રાણિ ચ સ્વદ્વાનિ 'સિક્કાઓ ય' શિક્ષાશ્ચ-કલાપ્રહ્ણાદીનિ 'આગમા ય' આગમાશ્ચ સન્તિ । 'સવ્વાઈં વિ તાઈં' સર્વાણ્યપિ તાનિ 'સચ્ચે' સત્યે 'પહટ્ટિયાઈં' પ્રતિષ્ઠિતાનિ, સત્યમાશ્રિત્યૈવ સર્વાણિ તિષ્ઠતીતિ ભાવઃ ॥૨॥

મેં રલ્લે જાતે હુપ્પ સુગંધિત તગર આદિ દ્રવ્યોં કી મનોજ્ઞ ઉદાર ગંધ ચારોં ઓર ફેલાતિ હૈં ડસસે ભી અધિક ઉદાર ગંધ સે યુક્ત યહ પર્વત હૈં । હસ પર્વત સે ભી અધિકતર સુગંધિ સંપન્ન યહ સત્ય હૈં । (જે વિ ય લોગમ્મિ અપરિસેસા મંતજોગા જવા ય વિજ્ઞા ય જંમકા ય અત્યાણિય સત્યાણિય સિક્કાઓ આગમા ય સવ્વાઈં વિતાઈં સચ્ચે પહટ્ટિયાઈં) તથા લોક મેં જો ભી સમસ્સ મન્ત્ર-હરિણેગમેષિદેવાદિમંત્ર, ઓર યોગ વશીકરણ આદિ પ્રયોજનવાલે દ્રવ્યસંયોગ હૈં, મંત્રવિદ્યા કે જાપ હૈં, રોહિણીપ્રજ્ઞાસિ આદિ વિદ્યાઈં હૈં, તિર્યગ્લોકવાસી અન્નજંમક પાનજંમક આદિ દશપ્રકાર કે દેવવિશેષ હૈં, બાળાદિક અસ્ત્ર, સ્વદ્વ આદિ શસ્ત્ર, કલાપ્રહ્ણ આદિ શિક્ષાઈં ઓર આગમ હૈં વે સબ હસ સત્ય કે હી આશ્રય સે હૈં ।

એવો તે પર્વત છે. જેમ ઘસાતા ફેલાતા અથવા એક પાત્રમાંથી બીજા પાત્રમાં ફેલાતા સુગંધિત તગર આદિ દ્રવ્યોની મનોજ્ઞ ઉદાર ગન્ધ ચારે તરફ ફેલાય છે, તે કરતાં પણ વધારે ઉદાર ગંધવાળો આ પર્વત છે. તે પર્વત કરતાં પણ ઘણું વધારે સુગંધિયુક્ત આ સત્ય છે. “જે વિય લોગમ્મિ અપરિસેસા મંતજોગા જવાય વિજ્ઞા ય જંગમાય અત્યાણિય સત્યાણિય સિક્કાઓ આગમા ય સવ્વાઈં વિતાઈં સચ્ચે પહટ્ટિયાઈં” તથા લોકમાં જે કોઈ મંત્ર-હરિણેગમેષિદેવાદિ મંત્ર, અને યોગ-વશીકરણ આદિ પ્રયોજનવાળા દ્રવ્યસંયોગ છે, મંત્રવિદ્યાના બાપ છે, રોહિણીપ્રજ્ઞાસિ આદિ વિદ્યાઓ છે, તિર્યગ્લોકવાસી અન્નજંમક, પાનજંમક, આદિ દશ પ્રકારના દેવવિશેષ છે, બાણાદિ અસ્ત્ર, તલવાર આદિ શસ્ત્ર, કલાપ્રહ્ણ આદિ શિક્ષાઓ અને આગમ છે, તે યહુ આ સત્યને જ આશ્રયે છે.

સત્યમપિ વીદસં ન વક્તવ્યં, કીદસં વક્તવ્ય ? મિત્યાહ—‘ મત્ત્વંપિ ય ’
 ક્ત્યાદિ—

મૂલમ્—સત્ત્વં પિ ય સંજમસ્ત ઉવરોહકારગં કિંચિ ન
 વત્તવ્વં, હિંસાસાવજ્જસંપટત્તં, મેયવિકહકારગં, અણતથવાય
 કલહકારગં, અણજ્જં, અવવાયવિવાયસંપટત્તં વેલંચં,
 ઓજધેજ્જયહુલં નિહ્લજ્જં, લોયગરહણિજ્જં, દુદ્ધિટ્ઠં, દુસ્સુયં,

ભાવાર્થ—યહ સત્ય તીર્થકરો કા સુભાષિત હૈ । હસે વ્યવહાર દષ્ટિ-
 સે જનપદ સત્ય આદિ કે ભેદ સે યહ દશ પ્રકાર કા કહા હૈ ।
 પૂર્વધરો ને હસ સત્ય કો સત્યપ્રવાદપૂર્વ કે નામ સે અભિહિત કિયા હૈ ।
 ઋષિયો ને હસે સિદ્ધાન્ત કા રૂપ દિયા હૈ । દેવેન્દ્ર નરેન્દ્ર આદિ કોં કે
 ભાષણ કા મહત્ત્વ હસી સત્ય કે સહારે માના ગયા હૈ । મંત્ર ઔષધિ
 આદિ વિદ્યાઓં કી સાધના સત્ય કે પ્રભાવ સે સફલિત હોતી હૈ ।
 આકાશગોમિની વિદ્યા-ચારણઋદ્ધિ-અંબં વૈક્રિયલબ્ધિ યે, સવ હસી સત્ય
 કે પ્રભાવ સે જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ । મનુષ્ય, દેવ અંબં અસુર, સવ કે
 લિયે યહ વંદનીય હૈ । અનેકધર્માનુયાયિયોં ને ભી હસે માન્ય કિયા હૈ ।
 સમસ્ત વસ્તુઓં મેં યહ એક સારભૂત-શ્રેષ્ઠ-વસ્તુ હૈ । હસકા પ્રભાવ અનિ-
 વર્ત્તનીય હૈ । મહાસમુદ્ર આદિ કી અપેક્ષા ભી યહ ગંભીરતર આદિ
 ધર્મોં વાલા હૈ । લોક મેં જિતને ભી મંત્ર યોગ આદિ હૈં વે સવ હસી
 સત્ય કે સહારે ટિકે હુગ હૈં ॥ સૂ. ૨ ॥

ભાવાર્થ—આ સત્ય તીર્થકરોનું સુભાષિત છે. વ્યવહાર દષ્ટિએ જન-
 પદ સત્ય આદિના લેહથી તે દશ પ્રકારનું બતાવ્યું છે, પૂર્વધરોએ આ સત્યને
 સત્યપ્રવાદ પૂર્વના નામથી ઓળખાવ્યું છે. ઋષિઓએ તેને સિદ્ધાન્તનું રૂપ
 આપ્યું છે. દેવેન્દ્ર નરેન્દ્ર વગેરેના ભાષણની મહત્તા આ સત્યની મહત્ત્વથી જ
 મનાયેલ છે. મંત્ર ઔષધિ આદિ વિદ્યાઓની સાધના આ સત્યના પ્રભાવથીજ
 સફળ થાય છે. આકાશગોમિની વિદ્યા-ચારણઋદ્ધિ અને વૈક્રિયલબ્ધિ એ બધું
 આ સત્યના પ્રભાવથી જ જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે. માનવ, દેવ અને અસુર સૌને
 માટે તે વંદનીય છે. અનેક ધર્મના અનુયાયીઓએ પણ તેને માન્ય કર્યું છે
 સમસ્ત વસ્તુઓમાં તે એક સારભૂત-શ્રેષ્ઠ વસ્તુ છે. તેનો પ્રભાવ અવર્ત્તનીય
 છે. મહાસાગર આદિનાં કરતાં પણ તે વધારે ગંભીરતા આદિ ગુણોવાળું છે.
 જગતમાં બેટલા મંત્ર યોગ આદિ છે તે બધા આ સત્યને આધારે જ ટકેલાં છે ॥૨॥

सुदर्शिनी टीका अ० २ सू० ३ सत्यस्वरूपनिर्णयम्

६६९

अमुणियं । अप्पणो थवणा परेसिं निंदा-न तंसि नेहावी,
 ण तंसि धण्णो न तंसि पियधम्मो, न तंसि कुलीणो, न
 तंसि दाणवई, न तंसि सूरु, न तंसि पडिरुवो, न तंसि
 लट्ठो, न पंडिओ, न बहुस्सुओ, न वि य तंसि तवस्सी,
 ण यावि परलोगणिच्छियमईऽसि, सव्वकालं जाइकुलरूव-
 वाहिरोगेण वावि जं होइ वज्जणिज्जंदुहओ उवयारमइकंतं
 एवंविहं सच्चंपि न वत्तव्वं । अह केरिसयं पुणाइ सच्चं तु
 भासियव्वं ? जं तं दव्वेहिं पज्जवेहि य गुणेहिं कम्मेहिं
 बहुविहेहिं सिप्पेहिं आगमेहि य नामक्खाय निवाय उवसग्ग-
 ताद्वियसमाससंधिपयंहउ-जोगिय-उणाइ-किरिया-विहाण
 धाउसरविभत्तिवन्नजुत्तंतिकल्लं दसविहंपि सच्चं जह भणियं
 तह य कम्मुणा होइ । दुवालसविहा होइ, भासा वयणं
 पि य होइ सोलसविहं । एवं अरहंतमणुत्तायं समिक्खियं
 संजएणं य कालम्मि वत्तव्वं । इमं च अलिच-पिसुण-
 फरुस-कडुय-चवल-वयणपरिक्खणट्ठयाए पावयणं भगदया
 सुकहियं, अत्तहियं, पेच्च भावियं, आगमेसिभदं, सुद्धं नेयाउयं,
 अकुडिलं, अणुत्तरं, सव्वदुक्खपावाणविउ समणं ॥सू० ३॥

टीका—‘सच्चं पि य’ सत्यमपि च तत् ‘संजमस्त’ संयमस्य ‘उवरोह-
 कारणं’ उपरोधकारकं-बाधकं भवेत्, तत् ‘किं वि’ किमपि ‘न वत्तव्वं’ न
 वक्तव्यम् । किं भूतं तत्-सत्यं यन्न वक्तव्यम् ? इत्याह—‘हिंसा प्रायज्जसंपउत्तं’

किस प्रकार का सत्य नहीं बोलना चाहिये और किस प्रकार का

केवा प्रकारनुं सत्य बोलवुं न जाधये आने केवा प्रकारनुं बोलवुं नोधये ?

બોલના चाहिये? इस बात को सूत्रकार कहते हैं—‘सच्चं पि य’ इत्यादि ० ।

ટીકાર્થ—(સચ્ચં પિ ય સંજમસ્સ ઉવરોહકારગં કિંવિ ન વત્તવ્વં) સત્ય હોને પર ખી જો વચન સંયમ કા બાધક હો વહ મુનિજન કો થોડા સા ખી નહીં બોલના चाहिये । સત્ય હોને પર ખી જો વચન સંયમ કે બાધક હોતે હૈં વે હસ પ્રકાર સે હૈં—(હિંસાસાવજ્જસંપડત્તં) હિંસા ઓર સાવધ જો વચન હૈં વે સત્ય હોને પર ખી સંયમ કે બાધક હોને કે કારણ નહીં બોલના चाहिये । હિંસા કા તાત્પર્ય યહાં પ્રાણિવધ સે ઓર સાવધ કા તાત્પર્ય પાપયુક્ત સંભાપ સે હૈં । ઇન સહિત જો વચન હોતે હૈં વે હિંસાસાવધ સંપ્રયુક્ત વચન હૈં । જિન સત્યવચનો સે પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કા વધ હોતા હો, તથા જિનસે પોપ મેં જીવોં કી પ્રવૃત્તિ હોતી હો એસે વચન સત્યમહાવ્રતી કે લિયે કમી ખી ભાષણ કરને યોગ્ય નહીં હૈં । (મેયવિકહકારગં) હસી તરહ જો સત્યવચન ચારિત્ર કે ધ્વંસક હો, રાજકથા આદિ સે સંબંધ રખતે હોં, તથા (અણત્યવાયકલહકારગં) જિન સત્ય વચનોં કો કોઈ પ્રયોજન સિદ્ધ નહીં હોના હો અર્થાત્ જો નિરર્થક હો, જિન સત્ય વચનોં સે પરસ્પર મેં વાદ વિવાદ ઓર કલહ વઢતા હો, તથા

તે વાત સૂત્રકાર બતાવે છે—“સચ્ચં પિ ય” ઇત્યાદિ.

“સચ્ચં પિ ય સંજમસ્સ ઉવરોહકારગં કિં વિ ન વત્તવ્વં” સત્ય હોવા છતાં પણ જે વચન સંયમમાં બાધક હોય તે મુનિજને જરા પણ બોલવું જોઈએ નહીં. સત્ય હોવા છતાં પણ જે વચન સંયમમાં બાધક હોય છે તે આ પ્રમાણે છે—“હિંસા સાવજ્જસંપડત્તં” હિંસા અને આવધ જે વચન છે તે સત્ય હોવા છતાં પણ સંયમનાં બાધક હોવાથી બોલવાં જોઈએ નહીં. હિંસા એટલે આ જગ્યાએ પ્રાણિવધ સમજવો અને આવધને અર્થ પાપયુક્ત સંભાપ છે. હિંસા અને સાવધયુક્ત જે વચનો છે તે હિંસાસાવધ સંપ્રયુક્ત વચન કહેવાય છે. જે સત્ય વચનોથી પ્રાણીઓનાં પ્રાણોનાં વધ થતો હોય તથા જે વચનોથી પાપમાં જીવોની પ્રવૃત્તિ થતી હોય એવાં વચન સત્યમહાવ્રતીને માટે કદી પણ બોલવાને યોગ્ય હોતાં નથી, “મેયવિકહકારગં” એ જ પ્રમાણે જે સત્ય વચન ચારિત્રના ઘાતક હોય, રાજકથા આદિ સાથે સંબંધ રાખતાં હોય, તથા “અણત્યવાયકલહકારગં” જે સત્ય વચનોનું કોઈ પ્રયોજન સિદ્ધ થતું ન હોય એટલે કે જે નિર્ર્થક હોય, જે સત્ય વચનોથી પરસ્પરમાં વાદવિવાદ અને કલહ વધતો હોય તથા “અણજ્ઞ” જે

હિંસાસાવધ સંપ્રયુક્તં, તત્ર-હિંસા=પ્રાણિવધઃ, સાવધમ્=પાપયુક્તસંભાપાદિ, તાભ્યાં સંપ્રયુક્તં=સહિતં યત્, પુનઃ કિંમૂતમ્ ? 'ભેદવિકલ્પકારકં' ભેદવિકલ્પકારકમ્, ભેદઃ = ચારિત્રભેદઃ, વિકલ્પા = રાજકથાદિઃ, તત્કારકં યત્ તત્, તથા- 'અણત્યવાયકલ્પકારકં' અનર્થવાદકલ્પકારકમ્ = તત્ર - અનર્થો = નિર્રર્થકો યો વાદઃ સોડનર્થવાદઃ=નિષ્પ્રયોજનો અલ્પઃ, કલ્પો=વિગ્રહઃ, તત્કારકં યત્, તથા-'અણજ્ઞં' અન્યાયમ્=ન્યાયવર્જિતમ્, તથા 'અવવાયવિવાયસંપડત્' અપવાદ વિવાદસંપ્રયુક્તમ્, અપવાદઃ=પરદૂષણકથનં, વિવાદઃ=વાકલ્પઃ, તાભ્યાં સંપ્રયુક્તં યત્, તથા 'વેલંબં' વિહમ્બકં=પરવિહમ્બનાકારકમ્, તથા-'ઓજ-ધેજ્જવહુલં' ઓજો ધૈર્યવહુલમ્-ઓજઃ=અહંકારઃ, આવેશો વા, ધૈર્યં=ધૃષ્ટતા, તાભ્યાં વહુલં=વ્યાપ્તમ્, અત એવં નિહજ્ઞં' નિર્લજ્ઞં=લજ્જા રહિતમ્, પુનઃ 'લોગ-ગરહણિજ્ઞં' લોકગર્હણીયમ્=સાધુજનનિન્દિતમ્, યેન સત્યેન પરસ્ય હિંસા મર્મો-દ્વાટનાદિકં વા ભવેત્તત્ 'દુહિટ્ટં' દુર્દૃષ્ટમ્=અસમ્યગ્દૃષ્ટમ્, 'દુઃશ્રુતમ્' =

(અણજ્ઞં) જો ન્યાયાનુકૂલ ન હોય, (અવવાયવિવાય સંપડત્) અપવાદ, વિવાદ સે યુક્ત હોય વે ભી નહીં બોલના ચાહિયે। પર કે દૂષણોં કા કહના યહ અપવાદ હૈ, વાકલ્પ કા નામ વિવાદ હૈ। હમી તરહ (વેલંબં) જો પર કી વિહમ્બના કે કારક હોય તથા (ઓજધેજ્જવહુલં) જિન સત્ય વચનોં કે બોલને મેં બોલને વોલે કા અહંકાર ભાવજ્ઞાત હોના હો અથવા આવેશ પ્રકટ હોતા હોય, ધૃષ્ટતા જ્ઞાત હોતી હો એસે વચન ભી નહીં બોલના ચાહિયે। તથા (નિહજ્ઞં) જિન સત્યવચનોં કે બોલને મેં લજ્જા જાતી હો ઓર (લોકગરહણિજ્ઞં) સાધુજન જિન વચનોં કી નિંદા કરતે હો એસે વચન સત્ય હોને પર ભી નહીં બોલના ચાહિયે। તથા (દુહિટ્ટં) જિન સત્ય વચનોં સે પરપ્રાણી કી હિંસા અથવા મર્મકા ઉદ્ધા-

ન્યાયાનુકૂળ ન હોય, “અવવાયવિવાયસંપડત્” અપવાદ, વિવાદથી યુક્ત હોય તે પણ બોલવાં જોઈએ નહીં. પારકાં દૂષણોને કહેવાં તે અપવાદ છે અને વાણીના કલહને વિવાદ કહે છે, એ જ પ્રમાણે “વેલંબં” જે પરની વિહમ્બના કરનાર હોય તથા “ઓજધેજ્જવહુલં” જે સત્ય વચનો બોલવાથી બોલનારનો અહંકાર ભાવ જણાતો હોય અથવા આવેશ પ્રગટ થતો હોય, ધૃષ્ટતા જણાતી હોય, એવાં વચન પણ ન બોલવાં જોઈએ તથા “નિહજ્ઞં” જે સત્ય વચન બોલવામાં લજ્જા જતી હોય અને “લોકગરહણિજ્ઞં” સાધુજન જે વચનોની નિંદા કરતાં હોય એવાં વચન સત્ય હોય તો પણ બોલવાં જોઈએ નહીં, તથા “દુહિટ્ટં” જે સત્ય વચનથી પર પ્રાણીની હિંસા થતી હોય, અથવા

અસમ્યક્ શ્રુતમ્, તથા-‘અમુણિયં’ અજ્ઞાતમ્=અસમ્યગ્જ્ઞાતમ્, એતાદૃશં સત્યમ-
પિ ન વક્તવ્યમિતિ ભાવઃ। પુનઃ કીદૃશં સત્યં ન વક્તવ્યમ્? इत्याह—‘अप्यणो
धवणा’ आत्मनः स्तवना-प्रशंसा यत्र भवेत्तत्, स्वस्तुतिरूपं यत्सत्यं तत्र वक्तव्य-
मित्यर्थः। तथा-‘परेसि निंदा’ परेषां निन्दा- अन्येषां विषये सत्याऽपि नि-
न्दा यस्मिन् भवेत्तत्र वक्तव्यमिति भावः, कथम्? इत्याह-‘न तंसि मेहावि’
न त्वमसि मेधावी=अपूर्वश्रुतदृष्टग्रहणशक्तियुक्तः प्राज्ञो मेधावीत्युच्यते, एतादृश-
स्त्वं नासि तव-‘णं तंसि धणो’ न त्वमसि धन्यः=धनवान्, धन्यवादपात्रं
वा, ‘णं तंसि विचधम्मो’ न त्वमसि विचधर्मा=धर्मपरायणः, तव-‘न तंसि
कुलीनो’ न त्वमसि कुलीनः=उच्चकुलीनः=उच्चकुलजातः, ‘न तंसि दाणवई’

તન કોના હો વે દુર્દૃષ્ટ વચન હૈં ઓર (દુસ્સુયં) જો અઢી તરહ સે સુને
ગયે હો વે કુઃશ્રુત વચન હૈં, તથા (અમુણિયં) જો અઢી તરહ સે જ્ઞાનને
મેં નહીં આપે હો વે અસમ્યક્ જ્ઞાન વચન હૈં, ઇન દુર્દૃષ્ટાદિ વચનોં કો
ચાહે વે વચન સત્ય મી હોં તો મી નહોં ઘોલનાં ચાહિયે। (અપ્યણો
ધવણા પરેસિ નિંદા) ઇમી તરહ જિન સત્યવચનોં મેં આત્મપ્રશંસા-
આત્મશ્લાઘા ભરી હોયે, ઓર જિન સત્યવચનોં મેં પર કી નિંદા હોવી
હો વે સત્યવચન મી નહોં ઘોલનાં ચાહિયે, કિસ પ્રકાર નહોં ઘોલના
ચાહિયે સો કરતે હૈં-(ન તંસિ મેહાવી) તુમ મેધાવી નહોં હો, અર્થાત્
જો વ્યક્તિ અપૂર્વ, અશ્રુત एवं અદૃષ્ટ પદાર્થ કો ગ્રહણ કરને કી શક્તિ
સે યુક્ત હોતા હૈં ડસકા નામ મેધાવી હૈં એસે મેધાવી તુમ નહોં હો,
તથા (ણં તંસિ ધણો) તુમ ધનવાન્ યા ધન્યવાદ કે પાત્ર નહોં હો,
(ન તંસિ વિચધમ્મો) તુમ વિષદર્માધર્મપરાયણ-નહોં હો, (ન તંસિ-

મમ્ ખૂડો પાતો હોય તેવાં વચનો દુર્દૃષ્ટ વચન છે અને “દુસ્સુયં” જે
બરાબર સંભળાયું ન હોય તે કુઃશ્રુતવચન કહેવાય છે, તથા “અમુણિયં”
જે બરાબર બાબુતમાં આવ્યું ન હોય તેના વિષે વચન બોલવાં તે અસમ્યક્
જ્ઞાત વચન છે, એ દુર્દૃષ્ટ આદિ વચનો સત્ય હોય તો પણ બોલવાં બેઠએ
નહીં. “અપ્યણો ધવણા પરસેનિંદા” એ જ પ્રમાણે સત્ય વચનોમાં આત્મપ્રશંસા
આત્મશ્લાઘા-ભરી હોય તથા જે સત્ય વચનોમાં બીજાની નિંદા થતી હોય તે
સત્ય વચન પણ બોલવાં બેઠએ નહીં. કઈ રીતે બોલવાં ન બેઠએ તે હવે
કહે છે-“ન તંસિ મેહાવી” તમે મેધાવી નથી. જે વ્યક્તિ અપૂર્વ, અશ્રુત અને
અદૃષ્ટ પદાર્થને બરાબર કરવાની શક્તિવાળી હોય છે તેને મેધાવી કહે છે. તથા
“ણં તંસિ ધણો” તમે ધનવાન યા ધન્યવાદને પાત્ર નથી. “ન તંસિ
વિચધમ્મો” તમે ધર્મપરાયણ નથી, “ન તંસિ કુલીનો” તમે કુલીન નથી.

सुदर्शिनी टीका अ० २ सू० ३ सत्यस्वरूपनिरूपणम्

६७३

न त्वमसि दानपतिः=दाता, 'न तंसि सूरौ' न त्वमसि शूरः=पराक्रमशाली,
 'न तंसि पण्डितो' न त्वमसि पण्डितः=सुन्दरः, 'न तंसि लट्ठो' न त्वमसि
 लट्ठः=सौभाग्यवान्, 'न पण्डितो' न पण्डितः=विद्वान् त्वमसि, न च त्वं 'बहु-
 स्सुओ' बहुश्रुतः=बहुविद्योऽसि, 'न वि य तंसि तवस्सी' नापी च त्वमसि तपस्वी
 'ण यावि परलोणिच्छिमईसि' परलोके निश्चिता संशयरहिता मतिर्यस्य सः=
 परलोकनिश्चयनिश्चायि त्वं नासि। मेधादिर्वानेतान् प्रत्यपि एवंरूपा निन्दा न
 कर्तव्येति भावः। किं बहुना, 'जाडकुलरुववाहिरोगेण वा वि' जातिकुलरूप व्या-
 थिरोगेण वाऽपि वा=अथवा जातिः=मातृवंशः, कुलं=पितृवंशः, रूपं=सौन्दर्यं,
 व्याधिः=चिरस्थायी कुष्ठानि, रोगः=क्षीघ्रघातक ज्वरादिः, एतेषामितरेतरयोग-
 द्वन्द्वः, तेन कारणेनापि जात्यापि कारणप्रबलव्याधि 'जं' तत् 'सव्वकालं'
 कुलीणो) तुम कुलिन नहीं हो, (न तंसि दाणवई) तुम दानपति-दाता
 नहीं हो, (न तंसि सूरौ) तुम पराक्रमशाली नहीं हो, (न तंसि-
 पण्डितो) तुम पण्डित-सुन्दर-नहीं हो, (न तंसि लट्ठो) तुम लट्ठ-
 सौभाग्यसंपन्न नहीं हो, (न पण्डितो) तुम पण्डित नहीं हो (न बहुस्सुओ)
 तुम बहुश्रुत-अनेक विद्याओं के वेत्ता नहीं हो, और (न वि य तंसि
 तवस्सी) न तुम तपस्वी हो। और (न यावि परलोणिच्छिमईसि)
 न तुम परलोक में संशय रहित मतिवाले ही हो, " इस प्रकार के वचन
 अविवेकी व्यक्तियों से नहीं कहना चाहिये, क्यों कि इस प्रकार
 के वचनों से उनकी निन्दा होती है। (सव्वं कालं जाडकुलरुववाहिरोगेण
 जं होइ वज्जणिज्जं) इसी तरह जानि-मातृवंश, कुल-पितृवंश, रूप-
 सौन्दर्य, व्याधि-चिरस्थायी कुष्ठानि, तथा क्षीघ्रघातक ज्वरादि रोग, इन

'न तंसि दाणवई' तमे दाता नहीं, 'न तंसि सूरौ' तमे पराक्रमी
 नहीं "न तंसि पण्डितो" तमे सुन्दर नहीं "न तंसि लट्ठो" तमे लट्ठ
 सौभाग्यशाली नहीं, "न पण्डितो" तमे पण्डित नहीं, "न बहुस्सुओ" तमे
 बहुश्रुत-अनेक विद्याओंवाला भाषुकार नहीं, अने "न वि य तंसि तवस्सी"
 तमे तपस्वी नहीं, अने "न यावि परलोणिच्छिमईसि" तमे परलोकने
 विषे अशयरहित मतिवाला नहीं " ये प्रकारनां वचनेनां भाषुसेअे ओअवां
 जेअेअे नहीं कारणे के ते प्रकारनां वचनेनां तेमनी " श्रोतानी निन्दा थाय
 थाय अे. " सव्वं कालं जाडकुलं रुववाहिरोगेण जं होइ वज्जणिज्जं " अे ज
 प्रकारे जति-मातृवंश, कुल-पितृवंश रूप-सौन्दर्य, व्याधि-आयभी ठाठ वजरे
 तथा क्षीघ्रघातक ज्वरादि रोग अे अथां कारणेने जेअे पणु कही अेवां

સર્વકાલં=સર્વદા 'વજ્રગિજ્ઞ' વર્જનીયં=ત્યાજ્યં લોકે 'દોહ' ભવતિ, 'एवं विद्' एवंविधં 'दुहओ' उभयतः=લોકતઃ સામ્યતઃ, 'उच्यारमङ्कतं' उपचार पतिक्रान्तं=व्यवहारविरुद्धं 'सच्चंपि' सत्यमपि 'न वत्तत्वं' न वक्तव्यम् ।

'अह' अथ 'केरिसयं' कौटुंबं तु 'पुणाइं' पुनः 'सच्चं भासियच्चं' सत्यं भाषितव्यम् ? आह- 'जं तं' यत्तन् 'दव्वेहिं' द्रव्यैः=त्रिकालवर्तिभिः पुद्गलादिभिः 'पज्जवेहिं' पर्यायैः नवपुराणादिभिः क्रमवर्तिभिर्धर्मैः, च=पुनः 'गुणेहिं' गुणैः=पदभूतैर्गणादिभिः, 'कम्मेहिं' कर्मभिः=कृष्यादि व्यापारैः,

સર્વ કારણોં કો લેકર મી કમી એસે વચન નહીં કહનાં ચાહિયે કિ તુમ્હારા માતૃવંશ અછા નહીં હૈ, પિતૃવંશ તુમ્હારા શુદ્ધ નહીં હૈ, તુમમે સૌંદર્ય નહીં હૈ, તુમ વ્યાધિ સંપન્ન હો-કુષ્ટી આદિ હો । તાત્પર્ય-ઇસકા યહી હૈં કિ માતૃવંશાદિ સે વિહીન તથા કુષ્ટાદિ સંપન્ન વ્યક્તિયોં સે એસે વચન નહીં કહનાં ચાહિયે । વર્થોં કિ ઇસ પ્રકાર કે વચનોં સે ઉન્હેં દુઃખ હોતા હૈ । (દુહઓ ઉચ્યારમઙ્કતં) ઇસી તરહ જો વચન લોક તથા આગમ, એસે દોનોં કી અપેક્ષા વ્યવહાર વિરુદ્ધ હોં (एवंविद्-सच्चं पि-न वत्तत्वं) એસે વચન સત્ય હોને પર મી નહીં ચોલનાં ચાહિયે । (अह-केरिसयं पुणाइं जच्चं तु भासियच्चं) અથ સૂત્રકાર ગદ્ય કહતે હૈ કિ સાધુજનોં કો-મહાત્મનારાયક સંયમી જનોં કો-કિસ પ્રકાર કે સત્ય-વચન ચોલનાં ચાહિયે-(जं तं) જો વચન (दव्वेहिं) ત્રિકાલવર્તી પુદ્ગ-લાદિ દ્રવ્યોં સે (पज्जवेहिं) નવીન પુરાની આદિ ક્રમવર્તી પર્યાયોં સે (गुणेहिं) દ્રવ્ય કે સાથ અવિનાશાવ રૂપ સંબંધ રચનેવાંલે ગણોં

વચન ન કહેવાં જોઇએ કે “ તમારો માતૃવંશ સારો નથી, તમારો પિતૃવંશ શુદ્ધ નથી, તમારામાં સૌંદર્ય નથી, તમે વ્યાધિયુક્ત ડોહ વગેરે રોગયુક્ત-છો ” તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જેનો માતૃવંશ આદિ હીન હોય, ડોહ આદિ રોગોથી જે યુક્ત હોય તેને તેવાં વચનો કહેવાં જોઇએ નહી, કારણ કે તેવાં વચનોથી તેને દુઃખ થાય છે-“ દુહઓ અવ્યારમઙ્કતં ” એ જ પ્રમાણે જે વચન લોક તથા આગમ, જાનેની અપેક્ષાએ વ્યવહાર વિરુદ્ધ હોય “ एवं विद् सच्चंपि न वत्तत्वं ” એમાં વચન સત્ય હોય તો પણ ખોલવાં જોઇએ નહીં “ अहकेरिसयं पुणाइ सच्चंतु भासियच्चं ” હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે સાધુજનોએ-મહાત્મનારાયક સંયમીજનોએ કેવા પ્રકારનાં સત્યવચન ખોલવાં જોઇએ. “ जं तं ” જે વચન “ दव्वेहिं ” ત્રિકાલવર્તી પુદ્ગલાદિ દ્રવ્યોથી “ पज्जवेहिं ” નવી યુની આદિ ક્રમવર્તી પર્યાયોથી “ गुणेहिं ” દ્રવ્યની સાથે અવિ-નાશાવરૂપ-સંબંધ રાખનાર ગણોંદિ ગુણોથી “ कम्मेहिं ” કૃષ્યાદિ વ્યાપાર રૂપ

સુવર્ણિની ટોકા અં ૨ સૂં ૩ સત્યસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૭૫

તથા-‘વહુવિહેદિં સિપ્પેદિં’ વહુવિધેઃ શિલ્પૈઃ= આચાર્યાધિગતૈઃ ચિત્રકર્માદિભિઃ ક્રિયાવિશેષૈઃ, ‘આગમેદિ’ આગમૈઃ=સિદ્ધાન્તૈશ્ચ યુક્તં સત્યં વક્તવ્યમ્। પુનઃ કીદૃશં સત્યં વક્તવ્યમ્? ક્ત્યાદિ—‘નામકલાય નિવાય ઉવસગતદ્વિયસમાસસંધિ પયહેઽજોગિયઽણાઈકિરિયાવિહાણઘાઽસરવિમત્તજુત્તં’ નામાખ્યાતનિપાતો—પસર્ગતદ્વિતસમાસસન્ધિપદદેતુયૌગિકોણાદિક્રિયાવિધાનઘાતુસ્વરવિમત્તિયુક્તં—તત્ર-નામ-વ્યુત્પન્નમવ્યુત્પન્નં ચ દ્વિવિધં, તત્ર-વ્યુત્પન્નં-જિનદત્તજિનદાસાદિ, અવ્યુત્પન્નં-કિત્થકિત્થાદિ, આખ્યાતમ્=ક્રિયાપદં ભૂતભવિષ્યદ્વર્તમાનરૂપમ્,

સે (કર્મેદિં) કૃષ્યાદિ વ્યાપારરૂપ કર્મોં સે (વહુવિહેદિં સિપ્પેદિં) આચાર્યાધિગત ચિત્રકર્માદિરૂપ ક્રિયા વિશેષોં સે, તથા (આગમેદિય) આગમ-સિદ્ધાન્તોં-સે યુક્ત હોં એસે સત્યવચન ચોલનાં ચાહિયે। (નામકલાયનિવાયઉવસગતદ્વિયસમાસસંધિયહેઽજોગિયઽણાઈકિરિયાવિહાણઘાઽસરવિમત્તિયુક્તં) હસીં તરહ, નામ, આખ્યાત, નિપાત, ઉપસર્ગ, તદ્વિત, સમાસ, સન્ધિ, પદ, હેતુ, યોગ, ણાદિપ્રત્યય, ક્રિયા-વિધાન, ઘાતુ, સ્વર, વિમત્તિ ઓર વર્ણં ઇનસે યુક્ત હો (તિકલ્લં દસવિહં પિસચ્ચં) ત્રિકાલ વિષયવાલાં જનપદ સત્ય આદિ દસ પ્રકાર કાં બી સત્યવચન ચોલનાં ચાહિયે। વ્યુત્પન્ન ઓર અવ્યુત્પન્ન કેં ભેદ સે નામ દો પ્રકાર કાં હોતાં હૈં। જિનદત્ત, જિનદાસ આદિ નામ વ્યુત્પન્ન નામ હૈં, ઓર કિત્થ, કિત્થાદિ નામ અવ્યુત્પન્ન નામ હૈં। આખ્યાત નામ ક્રિયાપદ કાં હૈં। યહ ભૂત ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાન કેં ભેદ સે ત્રીન પ્રકાર કાં હોતાં હૈં, જૈસે-અમવત્, ભવિષ્યતિ ઓર ભવતિ। અર્થે મેં

કર્મેદી, “વહુવિહેદિં સિપ્પેદિં” આચાર્યાધિગત ચિત્રકર્માદિરૂપ ક્રિયાવિશેષેદી, તથા “આગમેદિય” આગમ-સિદ્ધાન્તોદી યુક્ત હોય એવાં સત્યવચન બોલનાં બોલે છે. “નામકલાયનિવાય—ઉવસગતદ્વિય—સમાસસંધિયહેઽજોગિય—ણાઈ કિરિયાવિહાણઘાઽસરવિમત્તિયુક્તં” એ જ પ્રમાણે નામ, આખ્યાત, નિપાત, ઉપસર્ગ, તદ્વિત, સમાસ, સન્ધિ, પદ, હેતુ, યોગ, ણાદિ, પ્રત્યય, ક્રિયાવિધાન, ઘાતુ, સ્વર, વિમત્તિ, અને વર્ણ એ બધાંદી યુક્ત હોય “તિકલ્લં દસ-વિહં પિ સચ્ચં” ત્રિકાલ વિષયવાળાં જનપદ સત્ય આદિ દસ પ્રકારનાં પણ સત્યવચન બોલનાં બોલે છે. વ્યુત્પન્ન અને અવ્યુત્પન્ન ભેદથી નામ એ પ્રકારનાં હોય છે. જિનદત્ત, જિનદાસ આદિ વ્યુત્પન્ન નામ છે, અને કિત્થ, કિત્થાદિ આદિ અવ્યુત્પન્ન નામ છે. આખ્યાત નામ ક્રિયાપદનું છે. તે ભૂત ભવિષ્ય અને વર્તમાનના ભેદથી ત્રણ પ્રકારનાં છે, જેમકે અમવત્ (થયો) ભવિષ્યતિ (થશે)

નિપાતાઃ=અર્થઘોતકાઃ સ્વલુ ઇવાદયઃ, ઉપસર્ગાઃ=પ્રપરાદયઃ, તદ્વિતાઃ=અપ્રત્યય-
ર્થાભિધાયકપ્રત્યયાન્તાઃ શબ્દાઃ, યથા-નાભેરપ્રત્યયનાભેયઃ ક્રપમઃ, સિદ્ધાર્થસ્યા-
પત્યં સૈદ્ધાર્થો મહાવીરઃ' ઇતિ । સમાસઃ=અનેકપદાનામેકીકરણમ્, સ ચાવ્યયી-
માવાદિભેદાદનેકવિધઃ, સંધિઃ=વર્ણાન્તં સંધાં જામ્, યથા 'શ્રાવકોડ્ગ્રે'-ત્યાદિ,

વિશેષતા કે ઘોતક જો હોતે હૈં વે નિપાત હૈં જૈસે સ્વલુ ઇવ આદિ શબ્દ,
પ્ર, પરા આદિ ઉપસર્ગ કદલાતે હૈં । इनके संबंध से एक ही धातुके अर्थ
में भिन्नता आ जाती है, जैसे 'हृ' धातु के साथ जब 'प्र' उपसर्ग का
संबंध होता है-तब उसका अर्थ प्रहार हो जाता है, और जब 'आ'
का संबंध होता है तब आहार हो जाता है, इत्यादि । अपत्य आदि
अर्थ के अभिधायक जो प्रत्यय है वे प्रत्यय वाले शब्द यहां तद्विन्न शब्द
से गृहीत हुए हैं जैसे--“नाभेःअपत्यं पुमान् नाभेयः” यहां नाभि
शब्द से तद्विन्न प्रत्यय होने पर नाभेय बनता है तथा सिद्धार्थ शब्दसे
अण् प्रत्यय होने पर 'सैद्धार्थ' बनता है, ये तद्विन्न शब्द हैं । इसी प्रकार
और भी तद्विन्न शब्द जान लेना चाहिये । परस्पर संबंध रखने वाले दो वा
दो से अधिक पदोंकी बीच की बिभक्ति का लोप करकेमिले हुए अनेक
पदों का नामसमास है । समास अव्ययी भाव आदि के भेद से अनेक
प्रकार का होता है । संधि शब्द का अर्थ मेल होता है-अर्थात्-वर्णों की

અને મળતી (છે). જે શબ્દો અર્થમાં વિશેષતાને દર્શાવે છે તેમને નિપાત
કહે છે. જેમ કે “ સ્વલુ ” “ ઇવ ” આદિ શબ્દ. “ પ્ર ” “ પરા ” આદિ
ઉપસર્ગો છે. તેમના ઉપયોગથી એક જ ધાતુના અર્થમાં ફેર પડી જાય છે,
જેમકે “ હ ” ધાતુ સાથે જ્યારે “ પ્ર ” ઉપસર્ગ મૂકવામાં આવે છે ત્યારે
તેનો અર્થ “ પ્રહાર ” થઈ જાય છે, અને જ્યારે તેની આગળ “ આ ” ઉપ-
સર્ગ મૂકવામાં આવે ત્યારે તેનો અર્થ “ આહાર ” થઈ જાય છે, અપ્રત્ય આદિ
અર્થને દર્શાવનાર જે પ્રત્યયો છે તે પ્રત્યયવાળા શબ્દોને અહીં “ તદ્વિત ”
શબ્દથી કહેલ છે, જેમ કે--“ નાભેઃ અપત્યં પુમાન્ નાભેયઃ ” “ નાભિ ” શબ્દને
તદ્વિત પ્રત્યય લાગવાથી “ નાભેય ” શબ્દ બન્યો છે, તથા ‘ સિદ્ધાર્થ ’
શબ્દને ‘ અણ્ ’ પ્રત્યય લાગતા “ સૈદ્ધાર્થ ” બને છે, તે તદ્વિત શબ્દો છે.
આ પ્રકારે જ બીજા તદ્વિત શબ્દો પણ સમજી લેતા પરસ્પર સંબંધ રાખ-
નાર જે કે બેથી વધારે પદોની રચેલી વિભક્તિનો લોપ કરીને બેઝયેલાં
અનેક પદોને સમાસ કહે છે. અવ્યયી ભાવ આદિ લેટથી સમાસ અનેક પ્રકા-
રના છે. ‘ સંધિ ’ શબ્દનો અર્થ ‘ બેઝાણુ ’ થાય છે-એટલે કે પછોની અતિ

પદં=સુવન્તં તિજ્ઞન્તં ચ-યથા-‘ જિનઃ ભવતિ ’ ઇત્યાદિ, હેતુઃ=સાધ્યજાવિનામ્ભૂત-
ત્વલક્ષણઃ, યથા-‘ પર્વતોડયં રહિમાન્ ધૂમા ’ ઇત્યાદિ, યૌગિકં=યોગનિષ્પન્નં
પદં ‘ પચનામ્ભો નીલકાન્તઃ ’ ઇત્યાદિ-ઉણાદિઃ ઉણાદિપ્રત્યયનિષ્પન્નં પદમ્,
‘ કરોતિ વિત્રકાર્યમિતિ કારુઃ ’ સાધ્નો તિસ્વપર-કાર્યમિતિ સાધુઃ ’ ઇત્યાદિ.
ક્રિયાવિગ્રાહનં = કૃદન્તપ્રત્યયનિષ્પન્નં ‘ પાઠકઃ, પાચકઃ, પાકઃ ’ ઇત્યાદિ-
રૂપં પદમ્, ધાતવઃ=ક્રિયાવાચિનો ભ્વાદયઃ, સ્વરાઃ= અકારાદયઃ ષડ્જાદયઃ,
અતિસમીપતા હોને પર ઉનકે મેલ સે જો ધ્વનિ મેં ચિઆર હોતા હૈં ઉસકા
નામ સંધિ હૈં-જૈસે ‘ શ્રાવકઃ અત્ર ’ એસી સ્થિતિ મેં ‘ શ્રાવકોડત્ર ’ એસી
સંધિ હોતી હૈં, ઇસ સંધિ કા નામ પૂર્વરૂપ સંધિ હૈં । સુવન્ન ઓર તિજ્ઞન્ત
કો પદ કહતે હૈં, જૈસે-‘ જિનઃ ’ યહ સુવન્ત પદ હૈં ઓર ‘ ભવતિ ’
યહ તિજ્ઞન્ત પદ હૈં । જો સાધ્ય કે સાથ અવિનાભાવ સંબંધ સે ઘંધા
હાતા હૈં ઉસકા નામ હેતુ હૈં, જૈસે ધૂમવાજા હોને સે યહ પર્વત અગ્નિ-
વાલા હૈં, યહાં પર સાધ્ય-અગ્નિ હૈં ઓર ઉસકે વિના મહીં હોને વાલા
ધૂમ હૈં । યોગ સે જો શબ્દ નિષ્પન્ન હોતે હૈં વે યૌગિક શબ્દ હૈં, જૈસે
પચનામ, નીલકાન્ત આદિ શબ્દ । ઉણાદિ પ્રત્યય સં જો શબ્દ બનતે હૈં વે
ઉણાદિ હૈં, જૈસે-કારુ (શિલ્પી) સાધુ આદિ શબ્દ । ધાતુ કે અન્ત મેં
પ્રત્યય લગાકર જો શબ્દ બનતે હૈં વે કૃદન્ત હૈં, જૈસે-પાઠક, પાચક, પાક
આદિ શબ્દ । ક્રિયા કે વાચક જો શ્રૂ આદિ શબ્દ હૈં વે ધાતુ કહલાતે
હૈં । દુસરે વર્ણો કી સહાયતા કે વિના જિનકા ઉચ્ચારણ હોતા હૈં એસે

સમીપતા હોય ત્યારે તેમના બેડાણથી ધ્વનિમાં જે નિકાર ઉત્પન્ન થાય છે તેને સન્ધિ કહે છે. જેમ કે “ શ્રાવકઃ અત્ર ” ની “ શ્રાવકોડત્ર ” એ પ્રકારની સન્ધિ થાય છે, આ સન્ધિને પૂર્વરૂપ સન્ધિ કહે છે. સુવન્ત અને તિજ્ઞન્ત ને પદ કહે છે, જેમ કે-‘ જિનઃ ’ તે સુવન્ત પદ છે અને “ ભવતિ ” તે તિજ્ઞન્ત પદ છે, જે સાધ્યની સાથે અવિનાભાવ સંબંધથી બંધાયેલ હોય છે. તેને હેતુ કહે છે. જેમ કે ધૂમવાજો હોવાથી આ પર્વત અગ્નિવાજો છે, અહીં સાધ્ય અગ્નિ છે, અને તેના વિના ન પેદા થનાર ધુમાડો છે. યોગથી જે શબ્દો બને છે તેમને યૌગિક શબ્દ કહે છે. જેમ કે પચનામ, નીલકાન્ત, આદિ યૌગિક શબ્દો છે “ ઉણાદિ ” પ્રત્યયથી જે શબ્દો બને છે તે “ ઉણાદિ ” કહેવાય છે, જેમ કે કારુ (શિલ્પી) સાધુ આદિ શબ્દ ધાતુને અન્તે પ્રત્યય લગાડીને જે શબ્દ બને છે તેને કૃદન્ત કહે છે, જેમકે પાઠક, પાચક, પાક આદિ શબ્દ ક્રિયાના વાચક “ શ્રૂ ” આદિ જે શબ્દો છે તેમને ધાતુ કહે છે. બીજાં વર્ણોની મદદ વિના જેનું ઉચ્ચારણ થાય છે એવાં ‘ અ’

વા, વિભક્તયઃ=સ્વાદ્યસ્તિવાદ્યથ, વર્ણાઃ = કવર્ગાદયઃ, એમિયુક્તં ‘તિક્કલં’ ત્રૈકાલ્યં=ત્રિકાલવિપયં ‘દસવિહં પિ’ દશવિધમપિ જનપદાદિસ્યં ‘સત્ત્વં’ સત્યં=વક્તવ્યમ્ । તથા યત્સત્યં ‘જહ’ યયા=યેન પ્રકારેણ ‘મણિયં’ મણિતમ્-ઉચ્ચારિતં ‘તહ ય’ તથા ચ=તેનૈવ પ્રકારેણ ‘કમ્મુણા’ કર્મણાપિ-કાર્યેણાપિ પરિણતં ‘હોઈ’ ભવતિ, તત્સત્યં વક્તવ્યમિતિ ભાવઃ, તથા-‘દુવાલસવિહા’ દ્વાદશવિધા=પ્રાકૃત સંસ્કૃતમાગધપિશાચસૌરસેનોપખંશભેદાત્ પદ્ધવિધા, સા પુનઃ મધ્યપદ્યભેદાદ્ દ્વિવિધેતિ દ્વાદશવિધા ‘ભાસા’ ભાષા ‘હોઈ’ ભવતિ, તથા—‘વયણં પિ ય’ વચનમપિ ચ ‘હોઈ’ ભવતિ ‘સોલસવિહં’ પોઢશવિધત્વમેવં વિજ્ઞેયમ્—

અકાર આદિ શબ્દ, અથવા પહજ આદિ સ્વર સ્વર કહલાતે હૈં । ‘સુ, ઔ, જસ્, આદિ વિભક્તિયાં તથા ‘તિપ્, તસ્, જી’ આદિ પ્રત્યય યે સઘ વિભક્તિયાં કહલાતી હૈં, ઔર કવર્ગ આદિ વર્ગ કહલાતે હૈં । (જહ-મણિયં તહ ય કમ્મુણા હોઈ) તથા જો સત્ય જિસ પ્રકાર સે કહા ગયા હૈ વહ સત્ય ડસી પ્રકાર સે કાર્ય સે બી પરિણત હો જાતા હૈ એસા સત્ય બોલના ચાહિયે । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ જિસ સત્ય કો, બોલને વાલા વ્યક્તિ કાર્ય રૂપ મેં પરિણત કર સકે એસા સત્ય બોલના ચાહિયે । (દુવાલસવિહા હોઈ ભાસા) ભાષા વારહ પ્રકાર કી હોતા હૈ—વહ ઇસ પ્રકાર સે—પ્રાકૃત, સંસ્કૃત, માગધી, પૈશાચી, સૌરસેની ઔર અપખંશ । યહ છઠો પ્રકાર કી ભાષા ગચ ઔર પદ્ય કે ભેદ સે વારહ પ્રકાર કી હો જાતી હૈ । (વયણં પિય હોઈ સોલસવિહં) વચન કે સોલહ પ્રકાર હોતે હૈં, વે ઇસ પ્રકાર સે હૈં—

કાર આદિ શબ્દ અથવા ષહ્વ આદિ સ્વરને સ્વર કહે છે, “સુ, ઔ, જસ્” આદિ વિભક્તિયો તથા “તિપ્ તસ્ જી” આદિ પ્રત્યય એ સૌને વિભક્તિયો કહે છે; (શુદ્ધશતીમાં એ, ને, થી, નો, ની, તું, ના, માં આદિ વિભક્તિના પ્રત્યયો છે) અને ‘ક સ’ આદિ વર્ણો કહેવાય છે “જહમણિયં તહય કમ્મુણા હોઈ” તથા જે સત્ય જે પ્રકારે કહેવાયું હોય તે સત્ય તે જ પ્રકારે કાર્યમાં પણ પરિણમતું હોય તેવું સત્ય બોલવું જોઈએ, તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે સત્યને બોલનાર વ્યક્તિ કાર્ય રૂપે અન્યમાં મૂકી શકે તેવું સત્ય બોલવું જોઈએ, “દુવાલસુવિહા હોઈ ભાસા” ભાષા બાર પ્રકારની હોય છે તે આ પ્રમાણે છે—પ્રાકૃત, સંસ્કૃત, માગધી, પૈશાચી, સૌરસેની, અને અપખંશ આ છ પ્રકારની. ભાષા ગદ્ય અને પદ્યના ભેદથી બાર પ્રકારની થઈ ગઈ છે, “વયણં પિય હોઈ સોલસવિહં” વચનના સોળ પ્રકાર હોય છે, તે નીચે પ્રમાણે છે.

“વયણતિયં લિંગતિયં કાલતિયં તદ્દ પરોક્ષપચ્ચક્ષં । ઉવળીયાઃ-
ચઙ્કર્ક અઙ્ગત્થં ચેવ સોલસમં મે ”

જાયા-વચનત્રિકં લિંગત્રિકં કાલત્રિકં તથા પરોક્ષ-મત્યક્ષમ્ । ઉવળીતાદિ
ચતુષ્કમધ્યાત્મં ચૈવ ષોડશમ્ ॥ ૬ ॥ હિતિ, તત્ર-વચનમ્ = એકવચનં દ્વિવચનં बहुवचनं
ચ, યથા-‘ ઘટઃ ઘટૌ ઘટાઃ ’ ‘ ભવતિ, ભવતઃ ભવન્તી ’ ત્યાદિ । ત્રિલિંગમ્=
સ્ત્રીપુંસકરૂપમ્, યથા-‘ પ્રકૃતિઃ આત્મા મનઃ ’ રૂપાદિ । કાલત્રિકં ભૂતભવિષ્યદ્
વર્તમાનરૂપમ્, યથા ‘ અભૂત, ભવિષ્યતિ, ભવતિ ’ ઇતિ । તથા-પરોક્ષમ્-ભૂતા-
નઘતનકાલિકમિન્દ્રિયાગોચરમ્-પથા-રૂપભો વખૂવે ’ ત્યાદિ । મત્યક્ષમ્-વર્તમા-

“વયણતિયં ૩ લિંગતિયં ૬ કાલતિયં ૯ તદ્દ પરોક્ષ ૧૦ પચ્ચક્ષં ૧૧ ।

ઉવળીયાઃ ચઙ્કર્ક ૧૫, અઙ્ગત્થં ચેવ સોલસમં ॥ ૧ ॥ ”

એકવચન, દ્વિવચન ઓર बहुवचन ૩ । પુર્લિંગ, સ્ત્રીલિંગ ઓર નપું-
સકલિંગ ૬ । ભૂતકાલ, ભવિષ્યત્કાલ ઓર વર્તમાનકાલ ૯ । હસ પ્રકાર
યે સઘ વચન કે વચન. લિંગ ઓર કાલ ત્રીન ત્રીન હોતે હૈ, હસ તરહ
વચન કે યે નૌ ભેદ હો જાતે હૈ ૧ । ‘ ઘટઃ, ઘટૌ, ઘટાઃ ’ યે ઘટ શબ્દ
કે એકવચન, દ્વિવચન ઓર बहुवचन હૈ ૩ । હસી તરહ “ ભવતિ ભવતઃ
ભવન્તિ ” હનમેં ભી જાનનાં ચાહિયે ૩ । ‘ પ્રકૃતિઃ, આત્મા, મનઃ, યે
શબ્દ કે ત્રીન લિંગ હૈ, પ્રકૃતિઃ સ્ત્રીલિંગ, ઓર મનઃ, યહ નપુંસકલિંગ હૈ
૬ । અભૂત, ભવિષ્યતિ ભવતિ યે ત્રીન કાલ હૈ ‘ અભૂત ’ યહ ભૂત કાલ હૈ,
‘ ભવિષ્યતિ ’ યહ ભવિષ્યત્ કાલ હૈ ઓર ‘ ભવતિ ’ યહ વર્તમાન કાલ
હૈ ૯ । ભૂતકાલીન એવં અનઘતનકાલીન વચન ઇન્દ્રિય કે અગોચર હોતા

“વયણતિયં ૩ લિંગતિયં ૬ કાલતિયં ૯ તદ્દ પરોક્ષ ૧૦ પચ્ચક્ષં ૧૧ ।

ઉવળીયાઃ ચઙ્કર્ક ૧૫ અઙ્ગત્થં ચેવ સોલસમં ॥ ૧ ॥ ”

એકવચન, દ્વિવચન અને बहुवचन ૩, પુર્લિંગ, સ્ત્રીલિંગ અને નપુંસ-
કલિંગ ૬, ભૂતકાળ, ભવિષ્યકાળ અને વર્તમાનકાળ ૯, આ રીતે તે બધા
વચનના પ્રકારો, લિંગ (ભતિ) અને કાળ ત્રણ ત્રણ હોય છે આ રીતે વચ-
નના તે નવ ભેદ થાય છે; “ ઘટઃ, ઘટૌ, ઘટાઃ ” તે ‘ ઘટ ’ શબ્દના એક વચન,
દ્વિવચન; અને बहुवचन છે ૩ એજ પ્રમાણે “ ભવતિ ભવતઃ ભવન્તિ ” એ
રૂપોમાં પણ સમજવાનું છે ૩, “ પ્રકૃતિઃ આત્મા મનઃ ” તે ત્રણે જુદી જુદી
ભતિ (લિંગ) ના શબ્દો છે. પ્રકૃતિ સ્ત્રીલિંગ છે આત્મા પુર્લિંગ છે અને
મનઃ નપુંસકલિંગ છે ૬, વર્તમાન, ભૂત અને ભવિષ્ય એ ત્રણ કાળ છે ‘ અ-
ભૂત ’ તે ભૂતકાળ છે, “ ભવિષ્યતિ ” તે ભવિષ્યકાળ છે અને “ ભવતિ ” તે
વર્તમાનકાળ છે ૯, ભૂતકાલીન અને ભવિષ્યકાલીન વચનો ઇન્દ્રિયને અગોચર

નકાલિકમિન્દ્રિયગોચરમ્-યથા-‘મુનિરયં શાસ્ત્રં પઠતીત્યાદિ । તથા-ઉપનીતાદિ ચતુષ્કં વચનમ્, તત્ર-ઉપનીતવચનમ્=ગુણારોપણવચનમ્, યથા-‘રૂપવાનયં મનસ્વી ’ ત્યાદિ ! અપનીતવચનમ્=ગુણાપનયનવચનમ્, યથા-‘દુઃશીલોઽયં દુર્વચનોઽય ’ મિત્યાદિ । ઉપનીતાપનીતવચનમ્=કંચિદ્ ગુણમારોપ્ય કોઽપિ ગુણોઽપનીયતે યેન વચનેન તદુપનીતાપનીતવચનમ્, યથા-‘રૂપવાનયં કિન્તુ દુઃશીલઃ ’ इत्यादि । एतद्विपर्ययेणअपनीतोपनीतवचनमपि भवति । येन वचनेन पूर्वं कसपि गुणमपनीय पश्चादपरः कोऽपि गुण उपनीयते तदपनीतोपनीतवचनम्, यथा-‘दुःशीलोऽयं किन्तुरुपरा’ नित्यादि । तथा-पोडशं वचनम्-‘अञ्जत्थं’ अध्या-

है, जैसे “ ऋषभो बभूव ” यह वाक्य परोक्ष अर्थ को विषय करनेवाला होने से परोक्ष माना जाता है १० । जो वाक्य वर्तमान काल को विषय करता है वह प्रत्यक्ष वाक्य माना जाता है जैसे “मुनिरयं शास्त्रं पठति” यह प्रत्यक्ष वाक्य है ११ । उपनीतवचन १२, अपनीतवचन १३, उपनीतापनीतवचन १४ और अपनीतोपनीतवचन १५, इस प्रकार ये उपनीतादि चार हैं । इनमें जो वचन गुणों का आरोपण करता है वह उपनीत वचन है-जैसे “ यह मनस्वी अच्छे रूप वाला है १ । जो वचन गुणों का अपनयन करता है वह अपनीत वचन है-जैसे यह दुःशील है २ । जो वचन किसीगुणको आरोपित करके किसी गुण का अपनयन करता है वह उपनीतापनीतवचन है, जैसे यह रूपवाला तो है परन्तु दुःशील है ३ । इसी तरह जो किसी गुण का अपनयन करके गुण का आरोपक होता है वह वह अपनीतोपनीतवचन है; जैसे यह दुःशील

હોય છે, જેમકે “ ઋષભા બભૂવ ” “ ઋષભ થઈ ગયો ” આ વાક્ય પરોક્ષ અર્થને વિષય કરતાઈ હોવાથી પરોક્ષ મનાય છે ૧૦ જે વાક્ય વર્તમાન કાળને વિષય કરે છે તે પ્રત્યક્ષ મનાય છે “ મુનિ આ શાસ્ત્ર વાંચે છે ૧૧ (૧૨) ઉપનીતવચન, (૧૩) અપનીતવચન, (૧૪) ઉપનીતાપનીતવચન અને (૧૫) અપનીતોપનીતવચન એ રીતે ઉપનીતાદિ ચાર વચન છે. (૧) તેમાં શુણ્ણનું આરોપણ કરનાર વચનને ઉપનીત વચન કહે છે જેમ કે “ આ મનસ્વી સારા રૂપવાળો છે ” (૨) જે વચન શુણ્ણનું અપનયન કરે છે તે અપનીત વચન છે, જેમ કે “ આ દુઃશીલ છે ” (૩) જે વચન કોઈ શુણ્ણનું આરોપણ કરીને કોઈ શુણ્ણનું અપનયન કરે છે તે ઉપનીતાપનીત વચન છે, જેમકે “ તે રૂપવાળો છે પણ દુઃશીલ છે ” એ જ રીતે જે વાક્ય કોઈ શુણ્ણનું અપનયન કરીને કોઈ શુણ્ણનું આરોપણ કરતું હોય તે અપનીતોપનીત વચન છે

સુદર્શિની ટીકા અ. ૨ સુ. ૩ સત્યસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૮૧

ત્મમ્=આત્માનમધિકૃત્ય યદ્વચનં તદધ્યાત્મપ્રવચનમ્ યથા - જ્ઞાનસ્વરૂપોઽયમાત્મે ત્વાદિ । इति षोडशविधं वचनम् । एवम्=उक्तत्वं सत्यम् 'अरहंतमणुणाय' अर्हदनुज्ञातम्=तीर्थङ्करोपदिष्टं 'समिक्खियं' समीक्षितं=पर्यालोचितं सदेव 'संजण' संयतेन=साधुना 'कालે य, કાલે ચ' અવસરે સમાગતે એવ 'વત્તવ્વં' વક્તવ્યમ્ । મગયદાજ્ઞાવર્ધિભૂતં સ્વયમપર્યાલોચિતં વચનં સાધુનાઽવસરં વિના ન વક્તવ્યમિતિ ભાવઃ । અથોપમંદારમાદ= 'ઈમં ચ' इत्यादि—

'ઈમં ચ' इदं च=પૂર્વેનન્તર્તીર્થકરણધરૈઃ પ્રોક્તમિદં=પ્રત્યક્ષં 'પાવચણં' પ્રવચનમ્, 'અલિય-પિસુણ-ફરુસ-કહુય--ચવલવચણપરિવક્ષણદ્વયાપ' અલીકપિ-શુન-પરુષ કહુક-ચપલવચનપરિવક્ષણાર્થ--તત્ર અલીકમ્ અસદ્ભૂતાર્થ પિશુનં=પર-તો હૈ પાન્તુ અચ્છે રૂપ વાચ્ય હૈ ૪। વચન કા સોલહવાં ભેદ વહ હૈ, જો અધ્યાત્મ હોના હૈ, જો આત્મા કો અધિકૃત કરકે બોલા જાતા હૈ જૈસે "યહ આત્મા જ્ઞાન સ્વરૂપ હૈ" इत्यादि १६ । (એવં અરહંત મણુણાય) ઇસ પ્રકાર ઇન સોલહ તરહ કે વચનોં કો બોલને મેં તીર્થકર પ્રભુ કી આજ્ઞા હૈ । ઔર જો વચન (સમિક્કિયં) પર્યાલોચિત હૈં અર્થાત્ અચ્છી તરહ સે વિચાર કરકે નિકાલે ગયેહો એસે વચન (સંજણ) સાધુ કો (કાલમ્મિ) અવસર આને પર (વત્તવ્વં) બોલને ચાહિયે, પરન્તુ જિન વચનોં કો બોલને કી પ્રભુ કી આજ્ઞા નહીં હૈ ઔર જો અપર્યાલોચિત હોં એસે વચન સાધુ કો નહીં બોલના ચાહિયે । અપ્પ ઇસકા ઉપસંહાર કરતે હુપ સૂત્રકાર કહતેં હૈં--(ઈમંચપાવચણં) પૂર્વકાલિક અનંત તીર્થ-કરોં કે દ્વારા કહા હુઆ યહ પ્રત્યક્ષીભૂત પ્રવચન (અલિય-પિસુણ-ફરુસ-કહુય-ચવલવચણપરિવક્ષણદ્વયાપ) અલીક, પિશુન, પરુષ,

જેમ કે "આ હુઃશીલ તો છે પણ સુંદર રૂપવાળો છે" (૧૬) વચનને સોળમે ભેદ તો છે કે જે અધ્યાત્મ હોય છે, જે આત્માને ઉદ્દેશીને બોલાય છે. જેમ કે "આ આત્મા જ્ઞાનસ્વરૂપ છે" इत्यादि, "એવં અરહંત મણુણાય" આ રીતે તે સોળ પ્રકારનાં વચનો બોલવાની તીર્થકર પ્રભુની આજ્ઞા છે. અને જે વચન "સમિક્કિયં" પર્યાલોચિત છે--સારી રીતે વિચાર કરીને ઉચ્ચારાયેલો હોય, એવાં વચન "સંજણ" સાધુએ "કાલમ્મિ" અવસર આવતા "વત્તવ્વં" બોલવાં જોઈએ, પણ જે વચનો બોલવાની ભગવાનની આજ્ઞા નથી, અને જે અપર્યાલોચિત હોય તેવાં વચનો સાધુએ બોલવા જોઈએ નહીં. હવે તેનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે -- 'ઈમંચ પાવચર્ણ' પૂર્વકાલીન અનંત તીર્થકરો દ્વારા કહેવાયેલ આ પ્રત્યક્ષીભૂત પ્રવચન, "અલિય-પિસુણ-ફરુસ-કહુય-ચવલ-વચણ-પરિવક્ષણદ્વયાપ" અલીક-અસત્ય, પિશુન, પરુષ-

દોષસૂચક, પરુપં=પરમર્ષોદ્ઘાટક, કટુકમ્=ઉદ્વેગજનકમ્, ચપલમ્=અસમીક્ષ્ય પ્રોક્તં
 યદ્ વચનં તસ્માત્-મુનીનાં પરિરક્ષણાર્થમ્, અર્થાત્-મુનિભિરીદશં વચનં ન વાચ્ય-
 મિતિ હેતોઃ 'ભગવયા' ભગવતા 'સુકલ્પિયં' સુકલ્પિતમ્ । કથમ્ભૂતં પ્રવચનં
 સુકલ્પિતમ્ ? इत्याह- 'अतर्हियं' आत्महितम् आत्मनो हितकारकम्, 'पेच्चा-
 भावियं' प्रेत्य भाविकं=जन्मान्तरेऽपि शुभफलदायकम्, अतएव 'आगमेसिभद्'
 आगमिष्यद् भद्रम्=भविष्यत्कल्याणकारकम्, तथा- 'सुद्धं' शुद्धं=निर्दोषत्वात्,
 पुनः 'नेयाउयं' नैयायिकं=न्याययुक्तम्, वीतरागभाषितत्वात्, तथा- 'अकु-
 ङिलं' अकुटिलम्=अजुभावजनकत्वात्, 'अणुत्तरं' अनुत्तरम्=तर्कश्रेष्ठत्वात्,
 तथा-सर्वदुःखपाषाणं' सर्वदुःखपाषाणां=सकलदुःखजनकज्ञानावरणीयाद्यष्टविध-
 कर्मणां 'विउसमणं' व्युपशमनम्=सर्वथाप्रशमनकारकम् । एतादृशं प्रवचनं भगवता
 कथितमित्यर्थः ॥ सू-३ ॥

કટુક, ચપલ, વચનોં સે મુનિજકોં કી રક્ષા હોતી રહે इस अभिप्राय से
 (भगवया) भगवान् ने (सुकलपियं) अच्छी तरह से प्रतिपादित किया है ।
 असद्भूत अर्थ को कहने वाला वचन अलीक, पर दोष सूचकवचन-
 पिशुन. पर के मर्मका उद्घाटक वचन परुष, उद्वेग को पैदा करने
 वाला वचन कटुक, और विषा विचारे बोला गया वचन चपल कह-
 लाता है । यह प्रवचन (अतर्हियं) आत्मा का हितकारक है तथा (पेच्चा-
 भावियं) जन्मान्तर में भी शुभफल का देनेवाला है । (आगमेसिभद्)
 इसीलिये इसे भविष्यत् में कल्याणकारक कहा गया है । (सुद्धं)
 इस प्रवचन में किसी भी प्रकार का पूर्वापरविरोधरूप दोष नहीं होने
 से ये शुद्ध हैं । (नेयाउयं) यह वीतराग द्वारा भाषित होने के कारण
 न्याययुक्त है । तथा (अकुङिलं) इससे कजुभाव उत्पन्न हो जाता है
 इसलिये यह अकुटिल है । (अणुत्तरं) इस के जैसा उत्तम और कोई

કોર, કડવાં, ચપલ વચનોથી મુનિજનોની રક્ષા થવા કરે તે ઉદ્દેશથી
 "ભગવયા" ભગવાને "સુકલ્પિયં" સારી રીતે પ્રતિપાદન કર્યું છે અસદ્ભૂત
 અર્થને કહેનારું વચન અલીક, પરદોષ સૂચક વચન પિશુન, ખીલનાં મર્મને
 ખુલ્લો પાડતું વચન પરુષ, ઉદ્વેગ પેદા કરનાર વચન કટુક અને વિચાર્યા વિના
 બોલાયેલ વચન ચપલ કહેવાય છે. આ પ્રવચન "અતર્હિયં" આત્માને માટે
 હિતકારક છે તથા "પેચ્ચાભાવિયં" જન્માન્તરમાં પણ શુભ ફળ દેનારું છે.
 "આગમેસિભદ્" તે કારણે તેને ભવિષ્યમાં કલ્યાણકારક દર્શાવ્યું છે. "સુદ્ધં"
 આ પ્રવચનમાં કોઈ પણ પ્રકારે પૂર્વાપરવિરોધરૂપ દોષ નહીં હોવાથી તે
 શુદ્ધ છે. "નેયાઉયં" તે વીતરાગ દ્વારા કહેવાયેલ હોવાથી ન્યાયયુક્ત છે.
 તથા "અકુઙિલં" તેનાથી કજુભાવ-સરળતા-ઉત્પન્ન થાય છે તેથી તે અકુટિલ
 છે, "અણુત્તરં" તેનાજેવું શ્રેષ્ઠ બીજાં કંઈ પણ નથી તેથી તે અનુત્તર છે.

નहीं है इसलिये यह अनुत्तर है। और यह (सन्वदुक्खपावाणं विउसमणं) अनेक विध दुःखों के देने वाले ज्ञानावरणीयादि अष्टप्रकार के कर्मों का सर्वथा उपशम करने वाला है। ऐसे विशेषणों से विशिष्ट इस प्रवचन को भगवान् ने कहा है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा यह प्रकट किया है कि सत्य होने पर भी किस प्रकार के वचन नहीं बोलना चाहिये और किस प्रकार के वचन बोलना चाहिये। उन्होंने कहा है कि जिन सत्यवचनों से संयम में बाधा आवेवे वचन कभी नहीं कहना चाहिये, क्यों कि ऐसे वचन सत्य होने पर भी असत्य के जैसे होने से हेय त्याज्य हैं। जिन सत्य वचनों से हिंसा हो जावे, पाप में जीवों की प्रवृत्ति हो जावे, चारित्र से भ्रष्ट हो जावे, अथवा अपने चारित्र में किसीप्रकार की बाधा उपस्थित हो जावे, राजकथा आदिका प्रसंग जिनमें होवे, जो प्रयोजन शून्य हों, जिनसे कलह उत्पन्न हो जावे, न्यायानुकूल जो न हों, अपवाद विवाद से जो युक्त हो, पर की विडम्बनाकारक हो, जिनके बोलने में अपनी आत्मप्रशंसा भरी हो, अथवा किसी प्रकार का आवेश भाव झलकता हो, सुनने वालों को जिनमें अपनी धृष्टता प्रकाशित

અને તે “સન્વદુક્ખપાવાણં વિઉસમણં” અનેક પ્રકારનાં દુઃખો દેનાર જ્ઞાનાવરણી આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોનો સર્વથા ઉપશમ કરનાર છે, એવાં વિશેષણોથી યુક્ત આ પ્રવચન ભગવાન મહાવીર દ્વારા કથિત છે.

ભાવાર્થ:—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા એ સ્પષ્ટ કર્યું છે કે સત્ય હોય તો પણ કેવા પ્રકારનાં વચન બોલવાં બેઈએ, તેમણે એ બતાવ્યું છે કે જે સત્ય વચનોથી સંયમમાં બાધા નડે, તેવા વચનો કદી પણ ન બોલવાં બેઈએ, કારણ કે તેવાં વચનો સત્ય હોય તો પણ અસત્ય જેવાં હોવાથી હેય છે. જે સત્યવચનોથી હિંસા થઈ જાય, જીવોની પાપમાં પ્રવૃત્તિ થાય, ચારિત્રમાં ભ્રષ્ટતા આવે, અથવા પોતાના ચારિત્રમાં કોઈ પ્રકારની બાધા ઉપસ્થિત થાય, જેમાં રાજકથા આદિનું વર્ણન આવે, જે પ્રયોજન વિનાનું હોય, જેનાથી કલહ પેદા થાય, જે ન્યાયાનુકૂળ ન હોય, જે અપવાદ વિવાદથી યુક્ત, પારકાની વિડંબના કરનાર હોય, જે બોલવામાં આત્મશ્લોધ થતી હોય, અથવા કોઈ પ્રકારનો આવેશ ભાવ જણાતો હોય, જેમાં સાંભળનાર આગળ પોતાની

હોતી હો, જિનકે બોલને મેં લજ્ઞા કીં મીં લાજ જાતી હો, લોક મેં જો નિન્દિત માને જાતે હોં, પર કે સર્મ કો જો છેદતે હોં, દુર્દષ્ટ, દુઃશ્રુત એવં જો અજ્ઞાત હોં એસે સત્યવચન મીં નહીંં બોલનાં ચાહિયે । તથા ભાષાસમિતિ કે વિરોધી હોને સે એસે વચન મીં નહીંં કહનાં ચાહિયે ફિ જો દૂસરોં કીં નિંદા કારક હોં, કર્ણકટુ તથા દુઃસ્વપ્રદ હોં, જૈસે-તૂ મહામૂર્ખ હૈ, મેઘાવી નહીંં હૈ, ધર્મપ્રિય નહીંં હૈ ઇત્યાદિ । તથા જો દ્રવ્ય જૈસા હૈ, જૈસે આકાર કા હૈ, જિસ ક્ષેત્ર કાલ આદિ સે સંબંધ રખતા હૈ, એસા હીંં ઉસકા પ્રતિપાદન કરનેવાલી અવિસંવાદી વચન જો હોતા હૈંં વહ વચન દ્રવ્ય સે યુક્ત કહલાતા હૈ, ઇસી પ્રકાર ઉસ દ્રવ્ય મેં જો પર્યાયેં હો રહીંં હોં, અથવા- જિસ પર્યાય સે વહ યુક્ત હો-ઉસ પર્યાય કા પ્રદર્શક વચન પર્યાય સે યુક્ત વચન કહલાતા હૈ । ગુણોં કીં અપેક્ષા કો લેકર જો વચન બોલા જાતા હૈંં વહ ગુણ સે યુક્ત વચન કહલાતા હૈ । કૃષ્યાદિ વ્યાપારોં કો લેકર જો વચન કહે જાતે હૈંં વે કર્મયુક્ત વચન કહલાતે હૈં । “ વે શિલ્પી હૈંં વે ચિત્રકાર હૈંં ” ઇત્યાદિ જો ક્રિયાવિશેષોં કો લેકર જો વચન કહે જાતે હૈંં વે બહુવિધશિલ્પયુક્ત વચન કહલાતે હૈં । તથા સિદ્ધાન્ત કે અનુસાર જો વચન કહે જાતે હૈંં વે સિદ્ધાન્તયુક્ત વચન કહલાતે હૈં । ઇસી તરહ નામ આદિ સે યુક્ત જો

ધૃષ્ટતાનું પ્રદર્શન થતું હોય, જે બોલવામાં કાળ લેખાતી હોય, જગનામાં જે નિન્દાપાત્ર મનાતાં હોય, ખીજના મર્મને જે છેદતાં હોય, દુર્દષ્ટ, દુઃશ્રુત, અને જે અજ્ઞાત હોય એવાં સત્યવચન પણ બોલવાં ભેદીએ નહીં. તથા ભાષાસમિતિના વિરોધી હોવાથી એવાં વચનો પણ ન બોલવાં ભેદીએ કે જે ખીજની નિન્દાકારક હોય, કર્ણકટુ તથા દુઃસ્વપ્રદ હોય જેમ કે “ તું મહા-મૂર્ખ છે, મેઘાવી નથી, ધર્મપ્રિય નથી ” ઇત્યાદિ, તથા જે દ્રવ્ય એવું છે એવા આકારનું છે, ક્ષેત્ર કાળ આદિ સાથે સંબંધ રાખે છે, એવું જ તેનું પ્રતિપાદન કરનારાં અવિસંવાદી જે વચનો હોય છે તે વચનો દ્રવ્યયુક્ત કહેવાય છે એ જ પ્રમાણે તે દ્રવ્યમાં જે પર્યાયો થઈ રહી છે, અથવા જે પર્યાયથી તે યુક્ત હોય, તે પર્યાયને દર્શાવનારું વચન પર્યાયયુક્ત વચન કહેવાય છે. ગુણોની અપેક્ષાએ જે વચન બોલાય છે તે ગુણયુક્ત વચન કહેવાય છે, કૃષ્યાદિ વ્યાપારોની અપેક્ષાએ જે વચન બોલાય છે તે કર્મયુક્ત વચન કહેવાય છે. “ તેઓ શિલ્પી છે, તેઓ ચિત્રકાર છે ” ઇત્યાદિ ક્રિયા-વિશેષોની અપેક્ષાએ જે વચન કહેવાય છે તે બહુવિધ શિલ્પયુક્ત વચન કહેવાય છે. એ જ પ્રમાણે નામ આદિથી યુક્ત જે વચન કહેવાય છે તે

સુવર્ણિની ટીકા અ० ૨ સૂ૦૪ પ્રથમભાવનાસ્વર્ણનરૂપણમ્

૧૮૫

સંપતિ સત્યવચનસ્ય પશ્ચ ભાવનાઃ પ્રતિપાદયન્ પૂર્વ સમિતિયોગલક્ષણાં
પ્રથમાં ભાવનામાહ—‘ તસ્સ ઇમા ’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—તસ્સ ઇમા પંચ ભાવનાઓ બીયસ્સ વયસ્સ
અલિયવચણ—વેરમણ—પરિરક્ષણદ્વયાણ । પઢમં સોઝુણ
સંવરટ્ટં પરમટ્ટં સુટ્ટુ જાણિઝુણ ન વેમિયં, ન તુરિયં, ન ચવલં
ન કહુયં, ન ફરુસં, ન સાહસં, ન ય પરસ્સ પીલાકરં
સાવજ્જં સચ્ચં ચ મિયં ચ ગાહમં ચ સુહં સંગયમકાહલં
ચ સમીચ્છિયં સંજણ કાલમ્મિય વત્તઠ્ઠવં । एवं અણુર્વાઈ-
સમિઙ્ગોગેણ ભાવિઓ ભવઈ અંતરપ્પાસંજયકરચરણનયણ-
વચણો સૂરો સચ્ચજ્જવસંપણો ॥ સૂ૦૪ ॥

ટીકા—‘ તસ્સ ’ તસ્ય પ્રસિદ્ધસ્ય ‘ બીયસ્સ વયસ્સ ’ દ્વિતીયસ્ય વ્રતસ્ય
ઇમાઃ=વક્ષ્યમાણાઃ પશ્ચ ‘ ભાવનાઓ ’ ભાવનાઃ ‘ અલિયવચણવેરમણપરિરક્ષણ-

વચન કહેજાતે હૈં વે નામાદિયુક્ત વચન કહલાતે હૈં । હસ પ્રકાર કે યે
સત્યવચન સંયમ આદિ કે બાધક નહીં હોતે હૈ । એસે વચન સવ્યવ્રતી
બોલ સકતા હૈ । તથા વહ પ્રાકૃત આદિ ભેદ સે વારહ પ્રકાર કી ભાષા
ઔર ઇકવચન આદિ કે ભેદ સે સોલહ પ્રકાર કા વચન ભી બોલ
સકતા હૈ । હસ પ્રકાર કે વચન બોલને મેં પ્રશુ કી આજ્ઞા હૈ । એસે
વચન બોલને મેં કિસી ભી જીવ કો બાધા નહીં પહુંચતી હૈ ॥ સૂ૦૩ ॥

અવ સૂત્રકાર સત્યવચન કી પાંચ ભાવનાઓં કો કહને કે
અભિપ્રાય સે સર્વપ્રથમ વે અનુવિચિન્ત્ય સમિતિ નામ કી પ્રથમ ભાવના

નામાદિયુક્ત વચન કહેવાય છે, આ પ્રકારનાં તે સત્યવચનો સંયમ આદિમાં
બાધક થતાં નથી. એવાં વચન સત્યવ્રતી બોલી શકે છે. તથા તે પ્રાકૃત આદિ
ભેદથી બાર પ્રકારની ભાષા અને એક વચન આદિ ભેદથી સોળ પ્રકારના વચન
પણ બોલી શકે છે, આ પ્રકારનાં વચન બોલવાની પ્રભુની આજ્ઞા છે. એવાં
વચનો બોલવાથી કોઈપણ જીવને બાધા પહોંચતી નથી । સૂ. ૩ ॥

હવે સૂત્રકાર સત્યવચનની પાંચ ભાવનાઓ દર્શાવવાને માટે સૌથી
પહેલાં તેઓ અનુવિચિન્ત્ય સમિતિ નામની પહેલી ભાવનાનું વર્ણન કરે છે-

૬૮૬

પ્રશ્ન વ્યાકરણસૂત્રે

દ્વયાણ 'અલીકવચનવિરમણપરિરક્ષણાર્થમ્-મૃષાવાદવિરમણવ્રતપરિરક્ષણાર્થ સન્તિ । તાસુ 'પદમં' પ્રથમાં સમિતિયોગલક્ષણાં ભાવનામાહ- 'સોઝણ' શ્રુત્વા=સુગુરુ સમીપે સમાકર્ષ્ય, તથા- 'પરમદ્વં' પરમાર્થ-પરમતત્ત્વં પ્રથમભાવનારહસ્યં 'સંવરદ્વં' સંવરાર્થ-સંવરસ્ય-મૃષાવાદવિરતિલક્ષણસ્ય અર્થ=પ્રયોજન-મોક્ષલક્ષણમ્, અથવા-સંવર=કર્મનિરોધણ અર્થ: પ્રયોજનં यस્ય સ તં તથોક્તમ્, યદ્વા-સંવરસ્ય=પ્રસ્તુતસંવરાધ્યયનસ્ય અર્થ=વાચ્યં 'સુદ્દુ' મુદ્દુ-સમ્યક્ 'જાણિઝણ' જ્ઞાત્વા ન=નૈવ 'વેગિયં' વેગિતં=નદીપ્રવાહ વદ્વેગયુક્તં વચનં વક્તવ્યમિત્યગ્રેણ સમ્બન્ધઃ, તથા-ન નૈવ 'તુરિયં' તરિતં=વાત્યાવત્ ત્વરાયુક્તં વચનવાશ્ચલ્યાત્, ન=નૈવ

કહતે હૈ- 'તસ્સ હમા' હત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(તસ્સ બીયસ્સ વયસ્સ હમા પંચ ભાવનાઓ) ઉસ પ્રસિદ્ધ દ્વિતીય મહાવ્રત કી યે વક્ષ્યમાણ પાંચ ભાવનાણે (અલિયવચણવેરમણ પરિરક્ષણદ્વયાણ) ઉસ અલીકવચન વિરમણરૂપ સત્યવ્રત કી રક્ષા કે લિયે હૈં । ઉનમેં (પદમં) પ્રથમ ભાવના હસ પ્રકાર હૈં (પરમદ્વં સંવરદ્વં સોઝણ) સુગુરુ કે સમીપ પ્રથમ ભાવના કે રહસ્ય કી કિ જો રહસ્ય મૃષાવાદ વિરતિરૂપ પ્રયોજન વાલા હૈ, અથવા કર્મનિરોધરૂપ સંવર હી જિસ્કા પ્રયોજન હૈ, અથવા હસ પ્રસ્તુત સંવરાધ્યયન કે વાચ્યાર્થ કી સુનકરકે (સુદ્દુ જાણિઝણ) અઠ્ઠી તરહ જાન કરકે (ન વેગિયં) નદી કે પ્રવાહ કી તરહ વેગયુક્ત વચન સાધુ કી નહીં બોલના ચાહિયે હસ પ્રકાર "વક્તવ્ય" શબ્દ કા સંબંધ સય કે સાથ લગા લેના ચાહિયે । (ન તુરિયં) વાત્યા-વધુરે-કી તરહ ત્વરાયુક્ત વચન ચંચલતા સે યુક્ત

"તસ્સ હમા" હત્યાદિ—

ટીકાર્થ—"તસ્સ બીયસ્સ વયસ્સ હમા પંચ ભાવનાઓ" તે પ્રસિદ્ધ ખીલ્લ મહાવ્રતની આ વક્ષ્યમાણ પાંચ ભાવનાઓ "અલિયવચણવેરમણપરિરક્ષણ-જદ્વયાણ" તે અલીક-અસત્ય-વિરમણરૂપ સત્યવ્રતની પરિરક્ષાને માટે છે. તેમાં "પદમં" પહેલી ભાવના આ પ્રમાણે છે- "પરમદ્વં સંવરદ્વં સોઝણ" સફુરુ પાસે પહેલી ભાવનાનું રહસ્ય કે જે મૃષાવાદ વિરતિરૂપ પ્રયોજનવાળું છે, અથવા કર્મ નિરોધરૂપ સંવર જેનું પ્રયોજન છે, અથવા આ પ્રસ્તુત સંવરાધ્યયનનો વાચ્યાર્થ સાંભળીને "સુદ્દુજાણિઝણ" સારી રીતે જાણીને "ન વેગિયં" નદીના પ્રવાહની જેમ વેગયુક્ત વચન સાધુએ બોલવાં બોધ્યે નહીં આ રીતે "વક્તવ્ય" શબ્દનો સંબંધ બધા સાથે બેઠી લેવો. "ન તુરિયં" વાત્યા-વધુરે-ની જેવું ત્વરાયુક્ત "ન ચલં" ઘોડાની ગતિ

सुवर्दिनीटीका अ० २ सू. ४ प्रथमभावनास्वरूपनिरूपणम्

६८७

‘चवलं’ चपलं=हयगमनवच्चपलभावगमनवितम्, न=नैव ‘कडुयं’ निम्बवत् कटुकम् अर्थतः, न=नैव ‘फरुसं’ परुषं-कठोरं-पाषाणवत्कठोरभावयुक्तं, तथा न=नैव ‘साहसम्’-उन्मत्तवत् अविचारितं, तथा-‘न य’ न च ‘परस्स’ परस्य पीडाकरं=दुःखजनकं ‘सावज्जं’ सावयं=सपापं वचनं वक्तव्यम् । उक्त-दोषदुष्टं वचनं न वक्तव्यमित्यर्थः । तर्हि कीदृशं वचनं वक्तव्यम् ? इत्याह-‘सच्चं च=सद्भूतार्थत्वात् ‘हियं च-परिणाममुखजनकत्वात्, ‘मियं’ मितं च, परि-मिताक्षरत्वात्, तथा-‘गाहयं’ ग्राहकं=श्रोतुरर्थप्रतीतिजनकत्वात्, प्रीतिजनक-त्वात्, ‘सुद्धं’ शुद्धं=वेगित्वादिदोषरहितत्वात्, तथा-‘संगयं’ संगतम्=युक्तियुक्तत्वात्, ‘अकाहलं’ अकाहलं=मन्मनाक्षररहितत्वात्, च=पुनः ‘समि-क्खयं’ समीक्षितं=पूर्वं बुद्ध्या पर्यालोचितत्वात्, एतादृशं वचनं ‘संज्ञण’

(न चवले) धोड़े के गमन की तरह चपलभाव से युक्त (न कडुयं) नीम की तरह अर्थतः कटुक, इसी तरह (फरुसं) पाषाण की तरह कठोर (न साहसं) उन्मत्त के वचन की तरह अविचारित, और (न य परस्स पीलाकरं) पर को पीडाजनक (सावज्जा) सावय-पापयुक्त ऐसे वचन नहीं बोलना चाहिये। किन्तु जो वचन (सच्चं च) सद्भूत अर्थ को विषय करने वाले होने से सत्य हों, (हियं च) परिणाम में सुखजनक होने से हितकारक हों, (मियं च) परिमित अक्षरों से युक्त होने से जो मित हों, (गाहयं च) श्रोता को अर्थ की प्रतीति एवं प्रीति के कराने वाले होने से ग्राहक हों, (सुद्धं) वेगित्वादि दोषों से रहित होने से शुद्ध हों, तथा (संगयं) संगतयुक्ति युक्त हों, (अकाहलं) अकाहल हो मन्मन अक्षर से रहित हों, (समिक्खयं) समीक्षित हों-बुद्धि से पहिले जिनका विचार अच्छी तरह कर लिया

येषु अथगभाव युक्त वचन, “न कडुयं” नीमनां येषु अष्टले के कटुक, ये अस्तीति “फरुसं” पथर येषु कठोर “न साहसं” उन्मत्तनां वचन येषु अविचारी, अने “न य परस्स पीलाकरं” पीलाने पीडाजनक “सावज्जा” सावय-पापयुक्त वचन बोलवां अर्थ अने नहीं। पण ये वचन “सच्चं च” यथार्थ अर्थने विषय करनार होवाथी सत्य होय, “हियं च” परिणामे सुखजनक होवाथी हितकारक होय “मियं च” परिमित अक्षरवाणु होवाथी अमित होय, “गाहयं च” श्रोताने अर्थनी प्रतीति अने प्रीति करवनार होवाथी ग्राह्य होय, “सुद्धं” वेगित्व आदि दोषरहित होवाथी शुद्ध होय, तथा “संगयं” संगत-युक्तियुक्त होय, “अकाहलं” अकाहल होय-मन्मन अक्षरों विनानु होय, “समिक्खयं” समीक्षित होय-बुद्धिशी अने पडेली

સંયતેન=સાધુના 'કાલમ્મિ ય' કાલે ચ=અવસરે 'વત્તવ્વં' વત્તવ્યમ્ । एवाग्=अनेन प्रकारेण 'अणुवीड् समिद्जोगेण' अनुविचिन्त्यसमितियोगेन अनुविचिन्त्य=पर्या लोच्य या समितियोगेन=भाषारूपासमितिः, तस्या योगेन 'भाविओ' भावितःअन्तरात्पा 'अन्तरात्मा=जीवः- 'संजयकरचरणनयणवयणो' संयतकरचरणनयनवदनः संयतं = सम्यग्यतनायुक्तं करचरणनयनवदनं यस्य स तथोक्तःसन् समाहितेन्द्रियः सन्नित्यर्थः, 'सूरो' शूरः=पराक्रमशाली, 'सच्चज्जवसंपन्नो' सत्या-जवसंपन्नः-सत्यम्=अमृता आजवम्=ऋजुता, ताभ्यां संपन्नो-युक्तो भवति । इत्येषामथमा भावना ॥ सू-४ ॥

ગયા હો એસે હો, એસે હી વચન સાધુ કો અવસર આને પર-જશ તજ નહીં કિન્તુ ચોલને કા જશ સમય ઉપસ્થિત હો તજ ચોલના ચાહિયે । (એવં) હસ પ્રકાર (અણુવીડ્સમિદ્ જોગેણ)અનુવિચિન્ત્ય ભાષાસમિતિ કે યોગ સે-વિચાર કર ચોલને રૂપ ભાષાસમિતિ કે સંબંધ સે (ભાવિઓ અંતરપ્પા) ભાવિત હુઆ જીવ (સંજયકરચરણનયણવયણો) અચ્છી તરહ યતના સે યુક્ત કર-હાથ, ચરણ-પૈર, નયન-નેત્ર એવં વદન-મુલ્લ વાલા થનકર અર્થાત્ સમાહિત ઇન્દ્રિયોં વાલા હોકર (સૂરો) પરાક્રમ-શાલી બન જાતા હૈ, અર્થાત્ સત્યમહાવ્રત કી આરાધના મેં આવે હુપ ઉપસર્ગોં ઔર પરીષહોં કો જીતને મેં શક્તિશાલી હો જાતા હૈ । તથા (સચ્ચજ્જવસંપન્નો ભવહ) સત્ય ઔર ઋજુતા સે સંપન્ન થન જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—અહિંસા વ્રત કી તરહ સત્યવ્રત કી ણી પાંચ ભાવનાઈ હૈ । ઝનમેં પહિલી ભાવના અનુવિચિન્ત્ય ભાષા સમિતિ હૈ । વિચાર-

સારી રીતે વિચાર કરી લીધો હોય, એવાં વચનો ૪ સાધુએ અવસરે-ગમે ત્યારે નહીં, પણ બોલવાનો સમય ઉપસ્થિત થાય ત્યારે બોલવાં બોધ્યે. “એવં” આ પ્રકારે “અણુવીડ્ સમિદ્ જોગેણ” અનુવિચિન્ત્ય ભાષા સમિતિના યોગથી - વિચાર કરીને બોલવારૂપ ભાષા સમિતિના સંબંધથી “ભાવિઓ અંતરપ્પા” ભાવિત અનેક શબ્દ “સંજયકરચરણનયણવયણો” સારી રીતે યતનાયુક્ત હાથ, પગ, નેત્ર અને મુખવાળા થઈને, અથવા સમાહિત ઇન્દ્રિયોવાળા થઈને “સૂરો” પરાક્રમશાળી બની બંધ છે એટલે કે સત્ય મહાવ્રતની આરાધનામાં નરેલ ઉપસર્ગો અને પરીષદોને શ્રુતવાને સમર્થ બની બંધ છે, તથા “સચ્ચજ્જવસંપન્નો ભવહ” સત્ય અને ઋજુતાથી યુક્ત બની બંધ છે.

ભાવાર્થ—અહિંસાવ્રતની જેમ સત્યવ્રતની પણ પાંચ ભાવનાઓ છે. તેમાં પહેલી ભાવના અનુવિચિન્ત્ય ભાષાસમિતિ છે. વિચારપૂર્વક બોલવું તેને અનુ-

સુવર્ણિની ટીકા અં ૨ સૂ ૫ દ્વિતીયભાવનાસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૮૯

અથ ક્રોધનિગ્રહરૂપાં દ્વિતીયાં ભાવનામાહ--‘વીર્યં કોહો’ ઇત્યાદિ

મૂલમ્--વીર્યં કોહો ણસેવિયઞ્વો, કુહ્હો ચંડિક્કિઓ માણસો
અલિયં ભણેજ, પિસુણં ભણેજ, ફરસં ભણેજ, અલિયં પિસુણં
ફરસં ભણેજ, કલહં કરેજ, વેરં કરેજ, વિગહં કરેજ, કલહં
વેરં વિગહં કરેજ, સત્ત્વં હણેજ, સીલં હણેજ, વિણયં હણેજ
સત્ત્વં સીલં વિણયં હણેજ, વેસો ભવેજ, વત્થું ભવેજ્જ, ગમ્મો
ભવેજ્જ, વેસો વત્થું ગમ્મો ભવેજ્જ, एवं અન્નં ચ એવમાદ્ધયં

પૂર્વક બોલના ઇસ્કા લાભ અણુવિચિત્ત્ય ભાષણ છે. યહ ભાષા સમિતિ-
રૂપ છે. સત્ય મેં ઓર ભાષા સમિતિ મેં કુછ ભેદ કહા ગયા છે વહ
યહ છે કિ હરણક કે સાથ સંભાષણ વ્યવહાર મેં વિવેક રહના તો ભાષા
સમિતિ છે. ઓર અપને સમક્ષીલ સાધુ પુરુષો કે સાથ સંભાષણ
વ્યવહાર મેં હિત મિત ઓર યથાર્થવચન કા ઉપયોગ કરના સત્યવ્રતરૂપ
યતિધર્મ છે. ઇસ ભાવના સે ઇસ સત્યવ્રત કી સ્થિરતા હોતી છે. બોલતે
સમય સાધુ કો વેગ સે, ત્વરા સે ઓર ચપલતા સે નહીં બોલના ચાહિયે.
ઓર ન વિના વિચારે હી બોલના ચાહિયે. બોલને કા જબ સમય આવે
તબ હી સત્ય, હિત, મિત વચન બોલના ચાહિયે. અવિચારિત ઓર
અસ્પષ્ટ વચન નહીં બોલના ચાહિયે. ઇસ તરહ કી વચન પ્રવૃત્તિ મેં
સાવધાન બના હુઆ સાધુ સત્યવ્રત કો સુશોભિત કરના હુઆ પ્રત્યેક
અપની કર ચરણ આદિ કી પ્રવૃત્તિ કો યતનાપૂર્વક કરતા રહતા છે ॥સૂ.૦૪॥

વિચિત્ત્ય ભાષણ કહે છે. તે ભાષાસમિતિરૂપ છે. સત્યમાં અને સાધુસમિતિમાં
કેટલાક ભેદ બતાવવામાં આવ્યા છે. તે એવા પ્રકારના છે કે હરેકની સાથે
વાતચીતમાં વિવેક રાખવો એ તો ભાષાસમિતિ છે. અને પોતાનાં સમક્ષીલ
સાધુજનો સાથે વાતચીતમાં હિત, મિત અને યથાર્થ વચનનો ઉપયોગ કરવો
તે સત્યવ્રતરૂપ યતિધર્મ છે. આ ભાવનાથી તે સત્યવ્રત દૃઢ થાય છે. બોલતી
વખતે સાધુએ વેગથી ત્વરાથી અને ચપલતાથી બોલવું જોઈએ નહીં. વિના
વિચારે પણ બોલવું જોઈએ નહીં જ્યારે બોલવાનો અવસર આવે ત્યારે
જ સત્ય, હિત, મિત વચન બોલવાં જોઈએ. અવિચારિત અને અસ્પષ્ટ વચન
બોલવાં જોઈએ નહીં. આ પ્રકારની વચન પ્રવૃત્તિમાં સાવધાન બનેલ સાધુ
સત્ય વ્રતને સુશોભિત કરતા, પોતાની કરુણ ચરણ આદિની પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિને
યતનાપૂર્વક કરતા રહે છે ॥ સૂ. ૪ ॥

મળેજ્જ, કોહમ્મિસંપલિત્તો, તમ્હા કોહો ન સેવિયન્વો ।
 एवं खंतीइ भाविओ भवइ अंतरप्पा संजयकरचरणनयण-
 वयणो सूरौ सच्चज्जवसंपन्नो ॥ सू० ५ ॥

ટીકા—‘વીયં’ દ્વિતીયાં ભાવનામહ—‘કોહો’ ક્રોધઃ=ક્ષમાદિક્ષાન્તિ=
 અક્ષાન્તિપરિણતિરૂપો ‘ન સેવિયન્વો’ ન સેવિતવ્યઃ । કથં ન સેવિતવ્યઃ? इत्याह
 —‘કુદ્ધો’ કુદ્ધ=ક્રોધયુક્તઃ, ‘ચંડકિઓ’ ચાણ્ડિક્રિયતઃ=વાણ્ડિકવ્યં=રૌદ્રરૂપત્વં
 સંજાતમસ્ય ચાણ્ડિક્રિયતઃ=રૌદ્રરૂપયુક્તઃ, ‘માણુસો’ માનુષઃ, ‘અલિયં’ અલીકમ્=
 અસત્યં ‘મળેજ્જ’ મળેત્=માપેત, તથા—‘પિસુણં’ પિશુનં=પરદોષમૂલકં વચનં
 મળેત્, ‘ફરુસં’ પરુપં=પરમર્મોદ્ધાટકં મળેત્, તથા—‘અલિયં પિસુણં ફરુસં’
 અલીકં પિશુનં પરુપમેતત્ત્રિતયમપિ મળેત્ । તથા—કલહં=વાગ્યુદ્ધં ‘કરેજ્જ’
 કુર્યાત્, ‘વેરં’ વૈરં=શત્રુતાં ‘કરેજ્જ’ કુર્યાત્, ‘વિગહં’ વિકથાં=વિગતાર્થી

अथ सूत्रकार क्रोधनिग्रहरूप द्वितीयभावना को प्रकट करते हैं—
 ‘वीयं कौहो’ इत्यादि,

ટીકાર્થ—ક્રોધ નિગ્રહરૂપ જો દ્વિતીય ભાવના હૈ ઉસમેં (કોહો ન
 સેવિયન્વો) ક્રોધ કા સેવન નહીં કિયા જાતા હૈ । ક્યોં કિ જો (કુદ્ધો
 મણુસો) ક્રોધયુક્ત પુરુષ હોના હૈ બહ (ચંડકિઓ) રૌદ્રરૂપ સે યુક્ત
 બન જાતા હૈ । એસા મનુષ્ય (અલિયં મળેજ્જ) જૂઠ વોલ દેતા હૈ (પિ-
 સુણં મળેજ્જ) પર કે દોષો કે સૂચક વચન વોલ દેતા હૈ (ફરુસં મળેજ્જ)
 દૂસરોં કે મર્મકો છેદને વાલે વચનોં કો કહ દેતા હૈ, તથા (અલિયં
 પિસુણં ફરુસં મળેજ્જ) અલીક, પિશુન ઓર પરુપ, इन तीनों तरह के
 वचनों का भी प्रयोग कर देता है । (कलहं करेज्ज) परस्पर में वाग्युद्ध

હવે સૂત્રકાર ક્રોધનિગ્રહરૂપ બીજી ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે.

“વીયં કોહો” इत्यादि—

ટીકાર્થ—ક્રોધનિગ્રહરૂપ જે બીજી ભાવના છે તેમાં “કોહો ન સેવિય-
 ન્વો” ક્રોધનું સેવન ન કરવું એકાએક કરણ કે જે “કુદ્ધો મણુસો” ક્રોધી પુરુષો
 હોય છે તેઓ “ચંડકિઓ” રૌદ્રરૂપવાળા બની જાય છે. એવો મનુષ્ય
 “અલિયં મળેજ્જ” જૂઠું બોલી નાંખે છે. “પિસુણં મળેજ્જ” બીજાના દોષ-
 હર્શક વચનો બોલી નાંખે છે “ફરુસં મળેજ્જ” બીજા લોકોનાં મર્મને છેદ-
 નાશ વચનો બોલી લાય છે, તથા “અલિયં પિસુણં ફરુસં મળેજ્જ” અસત્ય
 પિશુન અને પરુપ, એ ત્રણે પ્રકારના વચનોના પ્રયોગ કરી નાંખે છે. “કલહં

શાસ્ત્રવિરુદ્ધાં કથાં=વાર્તાં કુર્યાત્, ‘કલહં વેરં વિગ્રહં’ કલહં વેરં વિકથાં ચ કુર્યાત્, તથા-‘સચ્ચં’ સત્યં=સદ્ભૂતાર્થ ‘હ્રોજ્જ’ હન્યાત્=નાશયેત્, ‘સીલં’ શીલં=સદાચારં હન્યાત્, ‘વિણયં’ વિનયં=વિનીતભાવં હન્યાત્। તથા-ક્રોધ-યુક્તો માનવઃ ‘વેસો’ દ્વેષ્યઃ=સર્વેષામપ્રિયો ‘ભવેજ્જ’ ભવેત્, તથા-‘વત્થું’ વાસ્તુ=ગૃહં, દોષગૃહં=દોષપાત્રં ‘ભવેજ્જ’ ભવેત્, તથા-‘ગમ્મો’ ગમ્યઃ=અના-દરસ્થાનં ભવેત્, તથા-‘વેસો વત્થું ગમ્મો’ દ્વેષ્યો વાસ્તુગમ્ય એતત્ત્રિતયોઽપિ ભવેત્। ‘અન્નં’ એતત્=પૂર્વોક્તમ્, ‘અન્યચ્ચ’ એવમાદ્યં એવમાદિકમ્=

મી ઠાન દેતા હૈ, (વેર કરેજ્ઞા) દૂસરોં સે શત્રુતા મી કર લેતા હૈ, તથા (વિગ્રહં કરેજ્ઞા) જો કથા શાસ્ત્ર સે વિરુદ્ધ હોતી હૈ ઉસે મી કહ દેતા હૈ। તથા (કલહં વેરં વિગ્રહં કરેજ્ઞા) કલહ વૈર ઓર વિકથા, ઇન ત્રીનોં કો મી કરતા હૈ। તથા (સચ્ચં હ્રોજ્ઞા) સત્ય-સદ્ભૂત અર્થ કા અપલાપ કર દેતા હૈ। તથા (સીલં હ્રોજ્ઞા) શીલ-સદાચાર કો નષ્ટકર દેતા હૈ, (વિણયં હ્રોજ્ઞા) વિનીત ભાવ કો ધિક્કાર દેતા હૈ। તથા (સચ્ચં સીલં વિણયં હ્રોજ્ઞા) સત્ય શીલ ઓર વિનય, ઇન ત્રીનોં કો નષ્ટ કર દેતા હૈ। તથા (વેસો ભવેજ્ઞા) જો માનવ ક્રોધ સે યુક્ત હોતા હૈ વહ દૂસરો કો અપ્રિય બન જાતા હૈ, (વત્થું ભવેજ્ઞા) દ્વેષ પાત્ર બન જાતા હૈ ઓર (ગમ્મો ભવેજ્ઞા) સબ કે અનાદરણીય હોતા હૈ। (વેસો વત્થું ગમ્મો ભવેજ્ઞા) વહ દૂસરોં કો અપ્રિય દ્વેષપાત્ર ઓર અનાદર ઇન ત્રીનોં કા સ્થાન બન જાતા હૈ। ઇન પૂર્વોક્ત વચનો કો તથા (અન્નં અન્યચ્ચ એવમાદ્યં) ઇસી પ્રકાર કે ઓર મી દૂસરી તરહ કે અસત્ય-

કરેજ્ઞા ” પરસ્પરમાં વાગ્યુદ્ધ પણ વહેરે છે “વેરં કરેજ્ઞા ” બીબ્બ લોકો સાથે શત્રુતા પણ કરે છે, તથા “વિગ્રહં કરેજ્ઞા ” તથા જે કથા શાસ્ત્રની વિરુદ્ધ હોય છે તે પણ કરે છે. તથા “કલહં, વેરં વિગ્રહં કરેજ્ઞા ” કલહ, વૈર અને વિકથા એ ત્રણે કરે છે તથા “સચ્ચં હ્રોજ્ઞા ” સત્ય-યથાર્થ અર્થનો અપલાપ કરી નાખે છે, “સીલં હ્રોજ્ઞા ” શીલ-સદાચારનો નાશ કરી નાખે છે, “વિણયં હ્રોજ્ઞા ” વિનીત ભાવને ધિક્કારે છે, તથા “સચ્ચં સીલં વિણયં હ્રોજ્ઞા ” સત્ય, શીલ અને વિનય એ ત્રણેને નષ્ટ કરી નાખે છે. તથા “વેસો ભવેજ્ઞા ” જે માનવ ક્રોધયુક્ત બને છે તે બીબ્બને અપ્રિય થાય છે, “વત્થું ભવેજ્ઞા ” દ્વેષપાત્ર બને છે અને “ગમ્મો ભવેજ્ઞા ” બધાને માટે અનાદરપાત્ર બને છે. “વેસો વત્થું ગમ્મો ભવેજ્ઞા ” તે બીબ્બને અપ્રિય દ્વેષપાત્ર અને અનાદરપાત્ર એ ત્રણેનું સ્થાન બને છે. એ પૂર્વોક્ત વચનો તથા “અન્નં અન્યચ્ચ એવમાદ્યં”

एवं जातीयं वचनं 'कोहगिसंपलितो' क्रोधाग्निमंप्रदीप्तो नतो 'भणेज्ज' भणेत्=कथयेत्, 'तम्हा' तस्मात् कारणात् 'कोहो न सेवियच्चो' क्रोधो न सेवितव्यः। एवम्=अनेन प्रकारेण 'खंतीइ' क्षान्त्या=उपशमेन 'भाविओ' भावितः 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः संयतकरचरणनयनवदनः सूरः सत्या-ज्वसंपन्नो भवति ॥ ५ ॥ इति द्वितीया भावना ॥ २ ॥

વચનોં કો (કોહગિસંપલિતો ભવેજ્જ) ક્રોધાગ્નિ સે સંતસ્ટ હુઆ મનુષ્ય કહ દિધા કરતા હૈ । (તમ્હા કોહો ન સેવિયચ્ચો) હસલિયે ક્રોધ કા કમો મો સંયમીજન કો સેવન નહી કરના ચાહિયે । (એવં-ખંતીઈ ભાવિઓ અંતરપ્પા) હસ પ્રકાર ક્ષાન્તિપરિણતિ સે વાસિત હુઆ જીવ (સંજયકરચરણનયનવધણો) સંયત કર, ચરણ, નયન વદન ચાલા હો જાતા હૈં ઓર (સૂરો) અપને સત્યવ્રત કી આરાધના મેં પરા-ક્રમશાલી હોતા હુઆ (સચ્ચજ્જવસંપન્નો ભવઈ) સત્ય ઓર આર્જવ હન દોનોં સે સંપન્ન વન જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા સત્યવ્રત કો દૂસરી ભાવના કા વર્ણન કિયા હૈ । વહ ભાવના ક્રોધ નિગ્રહ રૂપ હૈ । ક્ષાન્તિપરિણતિ ક્રોધ કી હોતી હૈ । મનુષ્ય પર જય હસકા આવેશ આ જાતા હૈ તો વસકી આકૃતિ બદલ જાતી હૈ ઉસકા રૂપ રૌદ્ર હો જાતા હૈ । હસ સ્થિતિ મેં વસ કા વચન વ્યવહાર સત્યધર્મ સે પ્રતિકૂલ હો જાતા હૈ ! વહ હસકે આવેશ મેં યદ્વા તદ્વા ઘોલને લગ જાતા હૈ । ઉસકો હસ વાત કા

एवमाहुयं ” એજ પ્રકારનાં બીજાં પણ અસત્ય વચનો “કોહગિસંપલિતો ભવેજ્જ” ક્રોધાગ્નિયુક્ત મનુષ્ય બોલી બાય છે “તમ્હા કોહો ન સેવિયચ્ચો” તે કારણે સંયમી લોકોએ કદી પણ ક્રોધ કરવો એઈએ નહીં. “એવં ખંતીઈ ભાવિઓ અંતરપ્પા” આ રીતે ક્ષાન્તિપરિણિતિથી ભાવિત થયેલ શ્રવ “સંજય કરચરણનયનવધણો” સંયત, હાથ, પગ, નયન, વદનવધણો થઈ બાય છે અને “સૂરો” પોતાના સત્યવ્રતની આરાધનામાં પ્રશક્રમ “સચ્ચજ્જવસંપન્નો ભવઈ” સત્ય અને આર્જવ, એ બન્નેથી યુક્ત બની બાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા સત્યવ્રતની બીજી ભાવનાનું વર્ણન કર્યું છે. તે ભાવના ક્રોધનિગ્રહરૂપ છે. ક્ષાન્તિપરિણિતિથી ઉલટી પરિણિતિ ક્રોધની હોય છે, મનુષ્ય પર વ્યારે તેનો આવેશ આવે છે ત્યારે તેની આકૃતિ બદલાઈ બાય છે, તે રૌદ્રરૂપ ધારણ કરે છે, આ પરિસ્થિતિમાં તેનાં વચનો તથા વ્યવહાર સત્ય ધર્મથી પ્રતિકૂળ થઈ બાય છે. તે તેના આવેશમાં ગમે તેલું

અથ તૃતીયાં લોભનિગ્રહરૂપાં ભાવનામાહ—‘તદયં લોહો’ इत्यादि ।

મૂલમ—તદયં લોહો ન સેવિયઠ્ઠો, લુહ્લો લોલો ભળેજ્જ
અલિયં । ચેત્તસ્સ વેત્થુસ્સ વા કણ્ણ લુહ્લો લોલો ભળેજ્જ

જ્ઞાન નહીં રહતા હૈં કિં ઇન હમારે વચનોં સં દૂસરે પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં પર કયા બીતેગી । ક્ષુઠ બોલને મેં ઉસે થોડા સાં મી સંકોચ નહીં હોતા । દૂસરે કી ચુગલી કરને સે વહ નહીં ચુકતા—પર કે ઝપર અસત્યદોષા-રોપ કરને સે વહ પીછે નહીં હઠતા । હર કિસી કે સાથ કલહ કરતા રહતા હૈં । શત્રુતા કરને મેં વહ બડા નિપુણ હોતા હૈં । શાસ્ત્ર વિરુદ્ધ બોલને કી ઇસે થોડી સીં મી ચિન્તા નહીં હોતી । જો પદાર્થ જિમ રૂપ મેં હોતા હૈં ઉસે ઉસ રૂપ મેં કહને મેં ઇસે શર્મ આતી હૈં । ત્રિનીત ભાવ કી ઇસકો દૃષ્ટિ મેં કોઈ કીમત નહીં હોતી હૈં । જય યહ ક્રોધરૂપી અગ્નિ સે સંતપ્ત હો ઉઠતા હૈં—તવ ઇસકી પરીસ્થિતિ પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે તો હોતી હૈં પરંતુ ઇસસે અધિક મી કમી ૨ વન જાતી હૈં । એસી સ્થિતિ મેં ઇસકા કોઈ હિતૈષી નહીં રહતા હૈં । સવ હી ઇસકા અનાદર કરને લગતે હૈં । ઇસલિયે ઇસ ક્રોધ કા પરિહાર કરના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર વિચાર કર જો મુનિજન ક્ષાન્તિ પરિણતિ સે ઇસ ક્રોધ કો જીતતે હૈં અર્થાત્ ક્રોધ નહીં કરતે હૈં વે હી ઇસ દ્વિતીયભાવના સે અપને અન્તઃકરણ કો વાસિત કર સત્યવ્રત કો સ્થિર બના લેતે હૈં ॥ મૂ૦ ૫ ॥

બોલવા લાગે છે. તેને તે વાતનું પણ જ્ઞાન રહેતું નથી કે મનમાં વચનોથી બીજાં પ્રાણીઓનાં જીવને કેટલું દુઃખ થાય છે. અસત્ય બોલવામાં તેને જરા પણ સંકોચ થતો નથી. બીજાની નિંદા કરતાં પણ તે અટકતો નથી—અન્યની ઉપર અસત્ય દોષારોપ કરતા તે પાછો હઠતો નથી. હરકોઈ સાથે તે કલહ કરતો રહે છે. દુશ્મનાવટ કરવામાં તે નિપુણ હોય છે. શાસ્ત્રવિરુદ્ધ બોલવામાં તેને જરા પણ દુઃખ થતું નથી. જે પદાર્થ જે રૂપે હોય છે તે રૂપે તેને કહેવામાં તેને શરમ લાગે છે. તેની દૃષ્ટિએ વિનીત ભાવની કોઈ કીમત હોતી નથી. જ્યારે ક્રોધરૂપી અગ્નિથી સંતપ્ત થઈ જાય છે ત્યારે તેની હાલત પૂર્વોક્ત પ્રકારની તો થાય જ છે પણ તેનાથી અધિક પણ કોઈ કોઈ વાર બને છે એવી સ્થિતિમાં તેનો કોઈ હિતૈષી રહેતો નથી. સૌ તેનો અનાદર કરવા માંડે છે. તેથી તે ક્રોધનો ત્યાગ કરવો એકએ. આ રીતે વિચારીને જે મુનિજન ક્ષાન્તિ પરિણતિથી એ ક્રોધને જીતે છે, એટલે કે ક્રોધ કરતા નથી, તેઓ જ આ બીજી ભાવનાથી પોતાના અંતઃકરણને ભાવિત કરીને સત્યવ્રતને સ્થિર કરી લે છે।મૂ૦ ૫।

અલિયં ૧, કિત્તીણ લાભસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો ભનેજ્જ
 અલિયં ૨, ઇટ્ઠીણ સોક્ખસ્સ વા કણ, લુદ્ધો લોલો ભ-
 નેજ્જ અલિયં ૩, ભત્તસ્સ પાણસ્સ વા કણ, લુદ્ધો લોલો
 ભનેજ્જ અલિયં ૪, પીઢસ્સ ફલગસ્સ વા કણ, લુદ્ધો
 લોલો ભનેજ્જ અલિયં ૫, સેજ્જાણ સંધારણસ્સ વા કણ,
 લુદ્ધો લોલો ભનેજ્જ અલિયં ૬, વત્થસ્સ પત્તસ્સ વા કણ,
 લુદ્ધો લોલો ભનેજ્જ અલિયં ૭, કંવલસ્સ પાથપુંછણસ્સ
 વા કણ, લુદ્ધો લોલો ભનેજ્જ અલિયં ૮, સોસસ્સ સોસ-
 ણીણ વા કણ, લુદ્ધો લોલો ભનેજ્જ અલિયં ૯, અન્નેસુ
 એવમાઇસુ વહુસુ કારણસણ્ણેસુ લુદ્ધો લોલો ભનેજ્જ અલિયં ૧૦
 તમ્હા લોહો ન સેવિયઙ્ગો, એવં મુત્તીણ ભાવિઓ ભવઈ અં-
 તરપ્પા સંજયકરચરણનયણવયણો સૂરો સચ્ચજ્જવસંપન્નો ॥૬॥

ટાકા—‘તદ્યં’ તૃતીયાં ભાવનામાહ—‘લોહો ન સેવિયઙ્ગો’ લોભો ન
 સેવિતવ્યઃ । લોભસેવનેન કિં ભવેત્ ? इत्याह—‘લુદ્ધો’ લુદ્ધો=લોભયુક્તો નરો
 ‘લોલો’ લોલઃ=વશ્વલઃ=પન્ ‘અલિયં’ અલીકં=કૂટાવતં ‘ભનેજ્જ’ ભનેજ્ઞ=
 કથયેત્ । કેન નિમિત્તેન લુદ્ધોઽલીકં ભનેજ્ઞ ? इत्याह—‘સેત્તસ્સ’ ક્ષેત્રસ્ય

અથ સૂત્રકાર તૃતીય ભાવના જો લોભનિગ્રહ રૂપ છે उसे પ્રકટ
 करते हैं—‘तदयं लोहो’ इत्यादि ० ।

ટીકાર્થ—(તદ્યં) લોભ નિગ્રહરૂપ તૃતીય ભાવના હસ પ્રકાર સે છે—
 (લોહો ન સેવિયઙ્ગો) લોભ સેવન કરને યોગ્ય નહીં છે । કયોં કિ
 (લુદ્ધો લોલો અલિયં ભનેજ્જ) લોભ કે સેવન કરને તે પ્રાણી લુદ્ધ
 કહલાતા છે, ઓર વહ લોભ યુક્ત થના હુઆ મનુષ્ય ચશ્વલચિત્ત હોકર

હવે સૂત્રકાર લોભનિગ્રહ નામની ત્રીજી ભાવનાનું વર્ણન કરે છે “તદ્યં લોહો” ઈ.

ટીકાર્થ—“તદ્યં” લોભનિગ્રહરૂપ ત્રીજી ભાવના આ પ્રમાણે છે—“લોહો
 ન સેવિયઙ્ગો” લોભ સેવન કરવાને યોગ્ય નથી. કારણ કે “લુદ્ધો લોલો અલિયં
 ભનેજ્જ” લોભનું સેવન કરવાથી પ્રાણી લુદ્ધ કહેવાય છે, અને તે લોભયુક્ત
 મનુષ્ય અંચળ ચિત્તાવાળો થઈને હૃદ વચ્ચે બોલી શકે છે, “સેત્તસ્સ વત્થુસ્સ

સુવર્ણિની ટીકા અ૦ ૨ સુ.૫ તૃતીયભાવનાસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૧૫

‘વત્થુસ્સ’ વાસ્તુનઃ=વાસભૂમે વાં ‘કણ’ કૃતેન-કૃતે इत्यर्थः, અત્ર દેવત્વે તૃતીયા, એવં સર્વત્ર દ્વેયમ્ । લુબ્ધો લોલોડ્ડીકં મળેત્ ॥ ૧ ॥ તથા-‘કિત્તીય’ કીર્ત્તિઃ ‘લાભસ્સ’ લાભસ્ય વા કૃતે લુબ્ધો લોલોડ્ડીકં મળેત્ ॥ ૨ ॥ ‘હટ્ઠીય’ ક્રદ્ધે=સંપત્તેઃ ‘સૌખ્યસ્સ’ સૌખ્યસ્ય વા કૃતે લુબ્ધો લોલોડ્ડીકં મળેત્ ॥ ૩ ॥ મત્તસ્ય પાનસ્ય વા કૃતે લુબ્ધો લોલોડ્ડીકં મળેત્ ॥ ૪ ॥ ‘પીઠસ્સ’ પીઠસ્ય ‘ફલગસ્સ’ ફલકસ્ય વા કૃતે લુબ્ધો લોલોડ્ડીકં મળેત્ ॥ ૫ ॥ તથા— ‘સંજ્ઞાણ’ શય્યાયાઃ ‘સંધારગસ્સ’ સંસ્તારકસ્ય વા કૃતે લુબ્ધો લોલોડ્ડીકં મળેત્ । ૬ ॥ ‘વત્થસ્સ’ વત્થસ્ય=વોલ્લપટ્ટાદેઃ ‘પત્તસ્ય’ પાત્રસ્ય વા કૃતે લુબ્ધો કૃત વચન બોલ સકતા હૈ (લેત્તસ્ય વત્થુસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ) કૃતવચન-શ્રુતવચન બોલને કે નિમિત્ત યે ઉસે હોતે હૈં-વહ લોભી મનુષ્ય ચચ્ચલચિત્ત હોતા હુઆ લેત અથવા નિવાસભૂમિ-ગૃહ કે નિમિત્ત શ્રુતવચન કહ સકતા હૈ (કિત્તીય લાભસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ) અપની કીર્તિ અથવા લાભ કે નિમિત્ત અસત્ય-ભાષણ કાર સકતા હૈ (હટ્ઠીય સૌખ્યસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ) કદ્દિ-સંપત્તિ અથવા સૌખ્યકે નિમિત્ત અસત્યવચન બોલ સકતા હૈ । (મત્તસ્ય પાણસ્ય વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ) આહાર અથવા પાની કે નિમિત્ત અસત્યવચન કહ સકતા હૈ (પીઠસ્સ ફલગસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ) પાટ અથવા ષાજોઠ કે નિમિત્ત અસત્યવચન કહ સકતા હૈ; (સંજ્ઞાણ સંધારગસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ) શય્યા અથવા સંસ્તારક કે લિયે વહ લોભ વચ્ચલચિત્ત હોકાર અસત્ય બોલ સકતા હૈ (વત્થસ્સ પત્તસ્ય વા કણ

વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” તેને કૃત વચન-અસત્ય વચન બોલવાનાં નિમિત્ત આવાં હોય છે-તે લોભી મનુષ્ય ચચ્ચલ ચિત્ત થતા ખેતર અથવા નિવાસભૂમિ-ઘરને નિમિત્તે અસત્ય વચન કહી શકે છે. “કિત્તીય લાભસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” તે ખેતાની કીર્તિ અથવા લાભને માટે અસત્ય બોલી શકે છે “હટ્ઠીય સૌખ્યસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” કદ્દિ સંપત્તિ અથવા મુખને માટે તે અસત્ય વચન બોલી શકે છે “મત્તસ્ય પાણસ્ય વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” આહાર અથવા પાણીને માટે તે અસત્ય વચન કહી શકે છે “પીઠસ્સ ફલગસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” પાટ અથવા ફલકને નિમિત્તે તે અસત્ય વચન બોલી શકે છે. “સંજ્ઞાણ સંધારગસ્સ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” શય્યા અથવા સંસ્તાર માટે તે લોભી ચચ્ચલ ચિત્ત થતાં અસત્ય બોલી શકે છે. “વત્થસ્સ

લોલોડ્ડીકં મળેત્ ॥૭॥ 'કંવલસ્મ' કમ્બલસ્ય 'પાયપુંછણસ્મ' પાદપ્રોછનસ્ય
 વા કૃતે લુબ્ધો લોલોડ્ડીકં મળેત્ ॥૮॥ તથા 'સીસસ્મ' શિષ્યસ્ય 'સીસળી' શિષ્યાયા
 વા કૃતે લુબ્ધો લોલોડ્ડીકં મળેત્ ॥૯॥ 'અન્નેસુ' અન્નેસુ 'એવમાઇસુ' એવમાદિકેષુ
 ॥ ૧૦ ॥ 'તમ્હા' તસ્માન્ કારણાત્ લોભો ન સેવિત્ત્વઃ । એવમ્-અમુના પ્રકારે
 'મુત્તી' યુક્ત્યા=નિર્લોભતારૂપયા ભાવિતઃ 'અંતરપ્પા' અંતરાત્મા=જીવઃ
 સંયતકરચરણનયનવદનઃ શૂરઃ સત્યાર્જવસંપન્નો ભવતિ ॥ ૧૦૬ ॥

॥ ઇતિ તૃતીયા ભાવના ॥

લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ) इसी तरह वस्त्र अथवा पात्र के लिये
 चंचल चित्त बना हुआ वह लोभी झूठ वचन बोल सकता है (कंवलस्म
 पायपुंछणस्म वा कण लुद्धो लोलो अलियं मणैज्ज) कम्बल अथवा
 पादप्रोछन के निमित्त को लेकर वह चंचल चित्त बना हुआ लोभी मृषा-
 वादि कह सकता है (सीसस्म सीसणीए वा कण लुद्धो लोलो अलियं
 मणैज्ज) शिष्य अथवा शिष्या के निमित्त लुब्ध वह चंचलचित्त होकर
 मृषाभाषण करता है (अन्नेसु एवमाइसु बहुसु कारणसएसु लुद्धो
 लोलो अलियं मणैज्ज) इसी तरह और भी इनसे सैकड़ों कारणों को
 निमित्त करके वह लोभी चंचल चित्त होकर झूठ बोल सकता है
 (तमहा लोहो न सेवियव्वो) इसलिए लोभ सेवन करने योग्य नहीं है ।
 (एवं मुत्तीए भाविओ अंतरप्पा) इस प्रकार निर्लोभतारूप तृतीय
 भावना से वासित हुआ अंतरात्मा-जीव (संजयकरचरणनयनवपणो)
 अपने कर, चरण, नयन और मुखकी प्रवृत्ति को यत्नावार से संयमित

પત્તસ્મ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” એજ પ્રમાણે વસ્ત્ર કે પાત્રને
 માટે ચંચલ ચિત્ત થયેલ તે લોભી અસત્ય વચન બોલી શકે છે. “ કંવલસ્મ
 પાયપુંછણસ્મ વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” કમ્બલ કે પાદપ્રોછનથી
 માટે તે ચંચલ ચિત્ત બનેલ લોભી મૃષાવાદ કરી શકે છે. “ સીસસ્મ સીસળી
 વા કણ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” શિષ્ય અથવા શિષ્યાને નિમિત્તે લુબ્ધ
 તે ચંચલ ચિત્ત મૃષાભાષણ કરી શકે તે. “ અન્નેસુ એવમાઇસુ વહુસુ કારણ-
 સસુ લુદ્ધો લોલો અલિયં મળેજ્જ ” આ રીતે આ સિવાયનાં એકદોઢ કારણોને
 નિમિત્તે તે લોભી ચંચલચિત્ત થઈને અસત્ય બોલી શકે છે. “ તમ્હાલોહો ન
 સેવિયવ્વો ” તેથી લોભ સેવન કરવાયોગ્ય નથી. “ એવં મુત્તીએ ભાવિઓ અંત-
 રપ્પા ” આ રીતે નિર્લોભતારૂપ ત્રીજી ભાવનાથી ભાવિત બનેલ અંતરાત્મા-જીવ
 “ સંજયકરચરણનયનવપણો ” પોતાના હાથ, પગ, નયન અને મુખની પ્રવૃત્તિને
 યતનાપૂર્વક સંયમિત કરી લે છે. અને “ શૂરો ” પોતાના સત્યપ્રતના પાલનમાં

દર્શિની ટીકા અ૦ ૨ સ્૦ ૭ ચતુર્થીભાવનાસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૧૧૭

અથ ચતુર્થી ધૈર્યભાવનાગ્રહ-‘ ચઠ્ઠથ્થં ’ ઇત્યાદિ--

મૂલમ્-ચઠ્ઠથ્થં ન મીઠ્યવ્વં, મીયં સુ મયા અઙ્ઠિંતિ લહુઅં, મીઓ અવિનિજ્જઓ મણૂસો, મીઓ મૂણ્હિં ઘિપ્પદ્, મીઓ અન્નં પિ હુ મેસેજ્જા; મીઓ તવસંજમં પિ હુ મુણ્જ્જા, મીઓ ય કર લેતા હૈં ઓર (સૂરો) અપને સત્યવ્રત કે પાલન મેં પરાક્રમશાલી બન કર (સચ્ચક્કવસંજો મવ્વદ્) સત્ય ઓર આર્જવ ધર્મ સે સંપન્ન હો જાના હૈં ।

ભાવાર્થ-સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા સત્યવ્રત કી તૃતીય ભાવના કો કહા હૈં । હસ તૃતીય ભાવના કા નામ લોભનિગ્રહ હૈં । લોભ કે નિગ્રહ કરને કે લિયે વિચારધારા હસમેં પ્રકટ કી હૈં । ‘ લોભ હી પાપ કા વાપ હૈં ’ એસા ક્યાલ કર લોભ કે પંદે મેં નહીં ફેસના ચાહિયે । જો લોભી હોતા હૈં વહ લુઘ્વક કહલાતા હૈં । લોભી કા ચિત્ત હરેક વસ્તુ કો પ્રાપ્તિ કે નિમિત્ત ચંચલ હો ઊઠતા હૈં । લોભી વ્યક્તિ અપની સ્વાર્થસિદ્ધિ કે નિમિત્ત ઝૂઠ ચોલ સકતા હૈં । સેત, મકાન, ઋદ્ધિ, સુલ, મક્ત, પાન આદિ કો નિમિત્ત લેકર અસત્ય ભાષણ કરતા હૈં । અતઃલોભ કા નિગ્રહ કરના હી ઊચિત હૈં હસ પ્રકાર ભાવના ભા કર જો હસ લોભ કો પરિત્યાગ સે અપની આત્મા કો વાસિત બનાતા હૈં વહ અપને સત્યમહાવ્રત કો સ્થિર કર લેતા હૈં । હસકી પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિ સંયમિત હોતી હૈં ॥ સૂ ૦ ૬ ॥

પરાક્રમશાળી બનીને ‘ સચ્ચક્કવસંજો મવ્વદ્ ’ સત્ય અને આર્જવ ધર્મથી યુક્ત થઈ બચ છે.

ભાવાર્થ--સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં સત્યવ્રતની ત્રીજી ભાવનાનું વર્ણન કર્યું છે. આ ત્રીજી ભાવનાનું નામ લોભનિગ્રહ છે. લોભનો નિગ્રહ કરવાને માટે વિચારધારા આમાં પ્રગટ કરી છે. “ લોભજ પાપનો વાપ છે. ” આવો વિચાર કરીને લોભની બળમાં દુઆનું બેઠ્ઠો નહીં, જે લોભી હોય છે તે બુદ્ધક કહેવાય છે. લોભીનું ચિત્ત દરેક વસ્તુની પ્રાપ્તિ માટે ચંચલ થઈ બચ છે. લોભી વ્યક્તિ પોતાનો સ્વાર્થ સાધવાને માટે અસત્ય બોલી શકે છે. ખેતર, મકાન, સંપત્તિ, સુખ, આહાર, પાણી આદિને નિગિતે પણ તે અસત્યપચનો શ્રેણે છે. તેથી લોભનો નિગ્રહ કરવો તે જ મોઝ્ય છે એવા પ્રકારની ભાવના સેવાને જે આ લોભના પરિત્યાગથી પોતાના આત્માને વાસિત બનાવે છે, તેઓ પોતાના સત્ય મહાવ્રતને સ્થિર કરી લે છે તેમની દરેક પ્રવૃત્તિ સંયમિત હોય છે ॥ સૂ ૦ ૬ ॥

ભરં ન નિસ્થરેજ્જા, સપ્પુરિસનિસેવિયં ચ મગ્ગં મીઓ ન સમસ્થો
અણુચરિટં । તમ્હા ન મીઙ્ગવ્વં મયસ્સ વા વાહિસ્સ વા
રોગસ્સ વા જરાણ વા મચ્ચુસ્સ વા અન્નસ્સ વા એવમાઙ્ગયસ્સ ।
એવં ધિજ્જેણ ભાવિઓ અંતરપ્પા સંજયકરચરણનયણવયણો સૂરો
સચ્ચજ્જવસંપન્નો ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા—‘ચડ્ઠ્યં’ ચતુર્થી’ ધાવનામાદ—‘ ન મીઙ્ગવ્વં ’ ન પેતવ્યં=મયં
ન કર્તવ્યમ્ । કયં મયં ન કર્તવ્યમ્ ? इत्याह—‘ મીયં ’ મીતં મયયુક્તં પ્રાણિનં
સ્વહુ ‘ મયા ’ મયાનિ ‘ લહુયં ’ લહુકં=શીઘ્રમ્ ‘ અહંતિ ’ આયન્તિ=પ્રાપ્નુવન્તિ,
તથા ‘ મીઓ ’ મીતઃ ‘ મણૂસો ’ મનુષ્યઃ ‘ અવિતિજ્જઓ ’ અદ્વિતીયઃ=અસ-
હાયો ભવતિ, અયં ભાવઃ—મીતો મનુષ્યો ન કસ્યાપિ સહાયકો ભવતિ. ન કોઽપિ
તસ્ય સહાયકો વા ભવતિ । તથા—‘ મીઓ ’ મીતો મનુષ્યઃ ‘ મૂણ્હિં ’ મૂતૈઃ=
પ્રેતૈઃ ‘ ઘિપ્પહ ’ ગૃહ્યતે, મૂતાવિષ્ઠો મવત્તીત્પર્યઃ । તથા—મીતઃ ‘ અન્નં પિ ’
અન્યમપિ ‘ મેસેજ્જા ’ મીપયતે । તથા—મીતઃ ‘ તવસંજનં પિ ’ તપઃ સંયમમપિ=

અથ સૂત્રકાર ચૌથી ભાવના જો ધૈર્ય ભાવના હૈં ઉસે કહતે હૈં—
‘ ચડ્ઠ્યં ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(ચડ્ઠ્યં) વહ ચૌથી ધૈર્ય ભાવના હસ પ્રકાર સે હૈં (ન
મીઙ્ગવ્વં) મય નહીં કરના ચાહિયે । કયોં કિ (મીયંસ્વ મયા અહંતિ
લહુઅં) જો મયયુક્ત હોતા હૈં ઉમ પ્રાણી કે પાસ નિશ્ચય સે મય શીઘ્ર
આતે હૈં । (મીઓ અવિતિજ્જઓ મણૂસો) તથા જો મય સે ડરતા હૈં
એસા મનુષ્ય અદ્વિતીય હોતા હૈં—વહ ન કિસી કી સહાયતા કર સકતા
હૈં ઓર ન કોઈ દૂસરા મનુષ્ય ઉસકા હી સહાયક હોના હૈં । (મીઓ
મૂણ્હિં ઘિપ્પહ) મીત મનુષ્ય કો મૂત પકડ લેતે હૈં । મીઓ અન્નં
પિ હુ મેસેજ્જા) મય સે મીત હુઆ મનુષ્ય દૂસરોં કો મી મયયુક્ત

હવે સૂત્રકાર ચૌથી ધૈર્યભાવના નામની ભાવના વિષે કહે છે—“ ચડ્ઠ્યં ” इत्यादि

ટીકાર્થ—‘ ચડ્ઠ્યં ’ તે ચૌથી ધૈર્યભાવના આ પ્રમાણે છે—“ ન મીઙ્ગવ્વં ” અથ
પામયો ભેદએ નહીં. કારણ કે “ મીયં સ્વ મયા અહંતિ લહુઅં ” એ બીકણ હોય
છે તે વ્યક્તિ પાસે ચોક્કસ અથ શીઘ્ર આવે છે. “ મીઓ અવિતિજ્જઓ
મણૂસો ” તથા એ અર્થથી ડરે છે એવો મનુષ્ય અદ્વિતીય હોય છે—તે કોઈને
મદદ કરી શકતો નથી અને કોઈ બીજો મનુષ્ય તેનો સહાયક થતો નથી.
“ મીઓ મૂણ્હિં ઘિપ્પહ ” અર્થભીત મનુષ્યને ભૂત પકડી લે છે. “ મીઓ અન્નં
પિ હુ મેસેજ્જા ” અર્થભીત મનુષ્ય બીજા લોકોને પણ અર્થભીત કરે છે, તથા “ મીઓ

तपः संयमं चापि 'मुण्डजा' मुञ्चति=परित्यजति। तथा-भीतः 'भरं' भारम् =कार्यभारं 'न नित्यरेज्जा' न निस्तारयति=न निर्वाहयति। तथा-'सप्पुरिस-निसेवियं' सत्पुरुषनिपेचितं च 'मगं' मार्गं भीतो न 'समत्थो' समर्थः=पर्याप्तः 'अणुवरिउं' अनुचरितुम्, सत्पुरुषासेवितं मार्गं भयवस्तो न गन्तुं शक्नोतीति भावः। 'तम्हा' तस्माद् हेतोः 'भयस्स वा' भयस्य=भीते वा 'वाहिस्स' व्याधेः=क्रमेण प्राणापहारिणः कुष्ठादे वा, 'रोगस्स' रोगस्य=शीघ्रतया प्राणापहारिणो ज्वरादे वा 'जराए' जरायाः वा 'मच्चुस्स' मृत्यो वा 'अन्नस्स' अन्यस्य=एभ्य इतरस्य वा 'एवमाइयस्स' एवमादिकस्य-एवं

वना देता है, तथा (भीओ तवसंजमं पिहुमुण्डजा) वह तप संयम का भी परित्याग कर देता है। (भीओ य भरं न नित्यरेज्जा) भीत मनुष्य शक्ति से इतना अधिक विहीन बन जाता है, अर्थात् उसमें इतनी अधिक मानसिक दुर्बलता आ जाती है कि जिसकी वजह से वह किसी भी कार्यभार को वहन नहीं कर सकता, अर्थात् किसी भी काम को वह पूरा नहीं कर सकता। (सप्पुरिसनिसेवियं च मगं भीओ न समत्थो अणुवरिउं) सत्पुरुष जिस मार्ग का सेवन करते आये हैं उस मार्ग पर चलने के लिये भी वह विचारा समर्थ नहीं हो सकता है। (तम्हा न भीइयव्वं भयस्स वा वाहिस्स वा रोगस्स वा जराए वा मच्चुस्स वा अन्नस्स वा एवमाइयस्स) इसलिये किसी भी प्रकार के भय के, क्रम २ से प्राणों को अपहरण करनेवाली व्याधि के, अथवा कुष्ठादिके, शीघ्रता से प्राणों का अपहरण करनेवाले ज्वर आदि रोग के, वृद्धावस्था के, तथा मृत्यु के अथवा इन्हीं जैसी अन्य और कोई

तवसंजमं पिहुमुण्डजा" ते तप संयमनो पणु परित्याग करी दे छे "भीओ य भरं न नित्यरेज्जा" अथलीत भाणुसो अट्ठा अथा शक्तिहीन थय अथ छे, अट्ठे के तेनाभां अट्ठा अथी मानसिक दुर्बलता आवी अथ छे के जेना धारखे ते कोछं पणु धायने। ओओ उअणी शरतो नथी. अट्ठे के कोछं पणु कामने ते पूइं करी शक्ती नथी. "सप्पुरिसनिसेवियं च मगं भीओ न समत्थो अणुवरिउं" सत्पुरुषो जे मार्गनु सेवन करता आव्या छे, ते मार्गे याववाने पणु ते समर्थ गनी शक्ती नथी. "तम्हा न भीइयव्वं भयस्स वा वाहिस्स वा रोगस्स वा जराए वा मच्चुस्स वा अन्नस्स वा एवमाइयस्स" तेथी कोछं पणु प्रक्षारता अथथी, कमे कमे प्राणुने डरी लेनार व्याधिना, अथवा कुष्ठादिना, शीघ्रताथी प्राणु डरी लेनार ज्वर आदि रोगना, वृद्धावस्थाना तथा मृत्युना अथवा तेमना जेथी कोछं पणु प्रक्ष-

વિધસ્ય મઘ્યજનકસ્ય વસ્તુનો વશાત્ ન ‘ મીડયઢ્વં ’ મેતઢ્વમ્ એવમ્=અનેન પ્રકારે
 રેણ ‘ ધિઝ્જેજ્ઞ ’ ધૈર્યેણ ‘ માવિઓ ’ માવિતઃ ‘ અંતરપ્પા ’ અંતરાત્મા=નીવઃ
 સંયતકરચરણનયવદનઃ શૂરઃ સત્યાર્જવસંપન્નો ભવતિ ॥ ૭ ॥

॥ ઇતિ ચતુર્થી ભાવના ॥

અથ પશ્ચર્મી મૌનભાવનામાહ—‘ પંચમં ’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—પંચમં હાસં ન સેવિયઢ્વં । અલિગાઢ્ઠં અસંતગાઢ્ઠં
 જંપંતિ હાસઢ્ઠતા પરપરિભવકારણં ચ હાસં, પરપરિવાય-
 પ્પિયં ચ હાસં, પરપીલાકારણં ચ હાસં, મેયવિમુત્તિકારણં

મઘ્યજનક વસ્તુ કે વશ સે નહીં ઢરના ચાહિયે । (એવં ધેઝ્જેજ્ઞ માવિઓ અંતરપ્પા સંજય કરચરણનયવદયણો સૂરો સચ્ચઝ્ઝવસંપન્નો ભવઢ્ઠ) હસ પ્રકાર ધૈર્ય સે માવિત હુઢા જીવ અપને કર, ચરણ, નયન એવં વદન કી પ્રવૃત્તિ કો સંયમિત રલ્લતા હુઢા સત્યવ્રત કે પાલનમેં પરાક્રમશાલી બન જાતા હૈ ઓર સત્ય એવં આર્જવ ભાવ સે સંપન્ન હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર ઢ્વારા સત્યવ્રત કી ચૌથી ભાવના કહા હૈ । હસ ભાવના કા નામ ધૈર્યભાવના હૈ । હસ ભાવના મેં ધૈર્ય કે અભાવ મેં કયા ૨ હાનિ હોની હૈ ઓર ધૈર્ય રલ્લને સે કયા ૨ લાભ હોતે હૈ, ઢન સબ બાતોંકા વિચાર કિયા જાના હૈ । ઢન વિચારોં સે આત્મા જલ્ ધૈર્ય શાલી બન જાની હૈ તો વહ અપને ઢ્વારા ગૃહીત સત્યવ્રત કો પૂર્ણરૂપ સે સુરક્ષિત રલ્લતિ હુઢ સ્થિર બના લેતી હૈ ॥ મૂ० ૭ ॥

૨ની ભથજનક વસ્તુના ભથથી ડરણું બેઢ્ઠએ નહીં, “ એવં ધેઝ્જેજ્ઞ માવિઓ અંતરપ્પા સંજયકરચરણનયવદયણો સૂરો સચ્ચઝ્ઝવસંપન્નો ભવઢ્ઠ ” આ પ્રકારે ધૈર્યથી ભાવિત ધથેલ્લ એવ પોતાના કર, ચરણ, નયન, અને વદનની પ્રવૃત્તિને સંયમિત રાખીને સત્યવ્રતના પાલનમાં પરાક્રમશાળી બની બથ છે અને સત્ય તથા આર્જવના ભાવશુક્ત બની બથ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ વ્રતઢ્વારા સત્યવ્રતની ચોથી ભાવના બતાવી છે. તે ભાવનાનું નામ ધૈર્યભાવના છે. આ ભાવનાનું વર્ણન કરતાં ધૈર્યના અભાવે કયી કયી હાનિ થાય છે. અને ધૈર્ય રાખવાથી કયા કયા લાભ થાય છે તે બધાનો વિચાર કરાયો છે. આ વિચારથી આત્મા બ્યારે ધૈર્યવાન બને છે ત્યારે તે પોતે ઝકણ કરેલ સત્યવ્રતને સંપૂર્ણ રીતે સુરક્ષિત અને સ્થિર બનાવી લે છે ॥ મૂ० ૭ ॥

सुदर्शिनी टीका अ० २ सू० ८ पञ्चमीभावनास्वरूपनिरूपणम्

७०१

हासं, अण्णोणजणियं च होज्ज हासं, अण्णोणजगमणं च होज्ज मम्मं, अण्णोणजगमणं च होज्ज कम्मं कंदप्पभिओग-
गमणं च होज्ज हासं, आसुरियं किट्ठिसत्तणं च जणेज्ज हासं, तम्हा हासं न सेवियव्वं । एवं मोणेण य भाविओ भवइ, अंतरप्पा संजयकरं चरणनयणवयगो सूरौ सच्चज्जवसंपन्नो ॥ सू० ८ ॥

टीका—‘पंचमं’ पञ्चमी भावनामाह—‘हासं’ हास्यं नोकषायमोहोदया-
त्सनिमित्तमनिमित्तं वा विवृतवर्णपुरस्सरं मुखव्यादानं हास्यम्, न ‘सेवियव्वं’ सेवि-
तव्यम् । किमर्थं न सेवितव्यम् ? इत्याह—‘हासइत्ता’ हासयितारः—परिहासकारिणः
‘अलिआइ’ अलिकानि=सद्भूतार्थगोपनरूपाणि ‘असंतगाइ’ असत्कानि=

अब सूत्रकार पंचमी मौन भावना को कहते हैं—‘पंचमं,
इत्यादि ० ।

टीकार्थ—(पंचमं) पांचवी मौन भावना इस प्रकार है । (हासं
न सेवियव्वं) इस भावना में हास्य के सेवन का परित्याग कर दिया
जाता है । जब जीव को हास्यनो कषाक मोह का उदय होता है तब
वह हास्य का निमित्त मिले अथवा न भी मिले तो भी वह ही-
ही वरता हुआ हँसने लग जाता है । हँसते समय उसका मुख खुल
जाना है दांत स्पष्ट दिखलाइ देने लगते हैं । संयमी जन को इस हास्य
का सेवन नहीं करना चाहिये । क्यों कि (हासइत्ता) जो परिहास
करने वाले व्यक्ति होते हैं वे (अलिआइ असंतगाइ जंपंति) सद्भूत

इसे सूत्रकार पांचमी मौनभावना बतावे छे—“ पंचमं ” इत्यादि—

टीकार्थ—“ पंचमं ” पांचमी मौनभावना आ प्रभाण्णं छे—“ हासं न
सेवियव्वं ” आ लायनामां हास्यनो परित्याग उराय छे. न्यारे लपने ‘ हास्य-
नोकषाय ’ मोहोने उदय थाय छे त्यारे ते हास्यनुं निमित्त भणे के न भणे
छतां यण्णु ते ‘ ही-ही ’ करतो हासवा भंडी जय छे. इसती वपत्ते तेनुं भुअ
उधडी जय छे अने दांत स्पष्ट रीते देणाय छे. संयमी जने आ हास्यनुं
सेवन करनुं ओछंअे नही करण्णु के “ हासइत्ता ” के परिहास करनार व्यक्ति
छाय छे ते “ अलिआइ असंतगाइ जंपंति ” यथार्थ अर्थने छूपावनार अने

અસદ્ભૂતાર્થાનિ વચનાનિ 'જંપંતિ' જલ્પન્તિ=જુવતે । હાસ્યકારિણો દ્વિતીયમહા-
વ્રતનાશકા ભવન્તીત્યર્થઃ । કીદંશં હાસ્યમ્ ? इत्याह—' परपरिभवकारणं=पराप-
मानहेतुकं च हास्यं भवति । तथा—'परपरिवायपियं' परपरिवादप्रियं=परपरिवादः
=अन्यदूषणाविधानं प्रिय इष्टो यस्मिस्तत्तादृशं च हास्यं भवति । तथा—'परपी-
लाकारणं' परपीडाकारकं च हास्यं भवति । तथा—'मेयविमुक्तिकारणं' भेद-
विमूर्त्तिकारकं=भेदः=चारित्रभङ्गः; विमूर्त्तिः=विकृतनयनवदनादित्वेन विकृतश-
रीराकृतिस्तयोः कारकं च हास्यम् । 'अण्णोणजणियं च होज्ज हासं' अन्योन्य-
अर्थको गोपन करने वाले एवं असद्भूत अर्थ को प्रकट करने वाले
वचनों को बोला करते हैं । सत्यमहाव्रत में सद्भूत अर्थका प्रकाशन
और असद्भूत अर्थ का प्रकट करना हेय कहा है, अतःहास्य
में जब इस प्रकार की परिस्थिति रहती हैं कि उसमें असद्भूत अर्थ
का प्रकटन और सद्भूत अर्थ का गोपन होता है, तो द्वितीय महाव्रत
का संरक्षण इस अवस्था में कैसे हो सकता है नहीं हो सकता, इसलिये
हास्य का त्याग कहा गया है । (परपरिभवकारणं च हासं) हास्य
पर के अपमान का कारण होता है । (परपरिवायपियं च हासं) हास्य
में पर के दूषण का कथन करना प्रीय लगता है । (परपीलाकारणं च
हासं) हास्य में इस बातका भी ध्यान नहीं रहता है कि इस हास्य से
अन्य को कष्ट हो रहा है । (मेयविमुक्तिकारणं च हासं) हास्य
चारित्र के भंग का हेतु हो जाता है । इसमें नयन वदन आदि शारीरिक
अवयव विकृत बन जाते हैं । (अण्णोणजणियं च होज्ज हासं) हास्य

અસદ્ભૂત અર્થને પ્રગટ કરનારાં વચનો બોલ્યા કરે છે. સત્યમહાવ્રતમાં સદ્ભૂત
અર્થનું ગોપન તથા અસદ્ભૂત અર્થનું પ્રકાશન હેય ગણાવેલ છે. તો હાસ્યમાં
ન્યારે એવા પ્રકારની પરિસ્થિતિ રહે છે કે તેમાં અસદ્ભૂત અર્થ પ્રગટ કરાય
છે અને સદ્ભૂત અર્થનું ગોપન કરાય છે, તો એ પરિસ્થિતિમાં દ્વિતીય મહા-
વ્રતનું રક્ષણ કેવી રીતે થઈ શકે ? થઈ શકે જ નહીં માટે હાસ્યનો પરિત્યાગ
કરવો એમ એમ સૂત્રકારે બતાવ્યું છે. “ પરપરિભવકારણં ચ હાસં ” હાસ્ય
અન્યના અપમાનનું કારણ બને છે. “ પરપરિવાયપિયં ચ હાસં ” હાસ્યમાં
અન્યનાં દૂષણોનું કથન કરવું પ્રિય લાગે છે. “ પરપીલાકારણં ચ હાસં ”
હાસ્યમાં તે વાતનું પણ બાન રહેતું નથી કે તે હાસ્યથી કોઈ બીજાને કષ્ટ
થઈ રહ્યું છે. “ મેયવિમુક્તિકારણં ચ હાસં ” હાસ્યને લીધે ચારિત્રનો લોપ
થાય છે. તેમાં નયન, વદન આદિ શરીરના અવયવો વિકૃત થઈ જાય છે.
“ અણ્ણોણજણિયં ચ હોજ્જ હાસં ” હાસ્ય એ કે વધારે માણસ અન્યોન્ય મળ-

જનિતં=પરસ્પરકૃતં ચ ભવતિ હાસ્યમ્, તથા હાસ્યે ‘અળોળગમણં’ અન્યોન્ય-
 ગમનં=પરસ્પરાધિગમનીયં ચ ‘મમ્મં’ મર્મ=પ્રચ્છન્નપારદાર્યાદિદુષ્ટિત્વં ભવતિ ।
 તથા-‘અળોળગમણં’ ‘અન્યોન્યગમનં=પરસ્પરવિજ્ઞેયં ચ ‘કમ્મ’ કર્મ=લોક-
 નિન્દાદિરૂપં ‘હોજ્જ’ ભવતિ । હાસ્યેન પ્રચ્છન્નમપિ કર્મ પ્રકાશિતં ભવતીતિ ભાવઃ ।
 તથા-‘કંદપ્પાભિઓગમણં’ કન્દર્પાભિયોગમનમ્=કન્દર્પાઃ=કાન્દર્પિકા દેવ-
 વિશેષા હાસ્યકારિણો મળડપ્રાયાઃ, અભિયોગાઃ=આજ્ઞાકારિણો દેવાઃ, તેષુ ગમનં=
 ગમનકારણમ્=તત્તદેવવિશેષેષ્ટત્વત્તિકારણં ચ ભવતિ હાસ્યમ્ । હાસ્યકારી સાધુચા-
 રિત્રલેશદેવત્વં પ્રાપ્તોઽપિ તત્ર કાન્દર્પિકેષુ આભિયોગિકેષુ દેવેષુત્પદ્યતે ન તુ
 મહદ્વિકેષુ હત્યર્થઃ । તથા-‘આસુરિયં’ અસુરત્વં ‘કિલ્લિવસત્તળં’ કિલ્લિવસત્ત્વં=
 ચાળાલપ્રાયદેવવિશેષત્વં ચ ‘જળેજ્જ’ જનયેત્ ‘હાસં’ હાસ્યમ્ । યતો હાસ્યા
 દીદૃશો ગતિર્ભવતિ જીવસ્ય, ‘તમ્હા’ તસ્માત્ ‘હાસં’ હાસ્યં ન સેવિતવ્યમ્ ।

આપસ મેં દો આદિ જન મિલને સે હોતા હૈ । (અળોળગમણં ચ હોજ્જ
 મમ્મં) હસ હંસી મેં પરદારરમણ આદિ દુષ્ટેષ્ટાચે પ્રચ્છન્ન રહા કરતી
 હૈં । તથા (અળોળગમણં ચ હોજ્જ કમ્મં) હસી હંસી મેં પરસ્પર મેં
 હોનેવાલે દુષ્કૃત્યોં સે ડનકી લોક મેં નિંદા હોતી હૈ ઉસે બાહર બે અપને
 મુલ્ક યદ્યપિ નહોં કહા કરતે હૈ ફિર બી આપસ કી હંસી સે હી ડનકા
 દુષ્કૃત્ય લોકોં કે સમક્ષ પ્રકાશિત હો જાતા હૈ । (કંદપ્પાભિઓગ-
 ગમણં) તથા હાસ્યકારી સાધુ ચારિત્ર કે લેશ સે યદિ દેવગતિ મેં ઉત્પન્ન
 હોવે તો બી વહ બાંડ જૈસે કાન્દર્પિક તથા આજ્ઞાકારી આભિયોગિક
 દેવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ મહદ્વિક દેવોં મેં નહીં । (આસુરિયં કિલ્લિવસત્તળં
 ચજળેજ્જ હાસં) યહ હાસ્ય ચાંડાલપ્રાય અસુરદેવોં મેં કિલ્લિવસજાતિ કે
 દેવોં મેં ઉત્પત્તિ કા કારણ હોતા હૈ । (તમ્હા હાસં ન સેવિતવ્વં) હસ-

વાથી થાય છે. “અળોળગમણં ચ હોજ્જ મમ્મં” એ હાસ્યમાં પરદારરમણ
 આદિ દુષ્ટેષ્ટાચે પ્રચ્છન્ન રહેતી હોય છે. તથા “અળોળગમણં ચ હોજ્જ
 કમ્મં” આ હાસ્યમાં અન્યોન્ય થતાં દુષ્કૃત્યોને લીધે તેની બેઠકમાં નિંદા થાય
 છે, તેને તેઓ પોતાનાં મુખથી બહાર કહ્યા કરતાં નથી તો પણ અન્યોન્યની
 હંસી-મબ્બકથી જ તેમનું દુષ્કૃત્ય લોકો સમક્ષ બહાર થઈ જાય છે. “કંદપ્પાભિ
 ઓગમણં” તથા હાસ્યકારી સાધુ બે દેવગતિમાં ઉત્પન્ન થાય તો પણ
 ચારિત્રતાની ન્યૂનતાને કારણે તેઓ બાંડ જેવા કાંદર્પિક તથા આજ્ઞાકારી આભિ-
 યોગિક દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, મહદ્વિક દેવોમાં નહીં. “આસુરિયં કિલ્લિ-
 વસત્તળં ચ જળેજ્જ હાસં” તે હાસ્ય ચાંડાલ આદિ જાતિમાં અસુરદેવોમાં કિલ્લિ-
 વસજાતિના દેવોમાં ઉત્પત્તિનું કારણ બને છે. “તમ્હા હાસં ન સેવિતવ્વં” તે

एवम्=अनेन प्रकारेण हास्यवर्जनरूपेण, 'मोणेण' मौनेन=वचनसंयमेन 'भाविओ' भावितः 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः संयतकरचरणनयनवदनः शूरः सत्यार्ज-वसंपन्नो भवति ॥ सू. ० ८ ॥

લિધે જશ હાસ્ય સે જીવ કી એસી ગતી હોતી હૈ કિ વહ્ હસ હાસ્ય કા સેવન નહી કરે । (एवं) હસ પ્રકાર (મોણેણ ય ભાવિઓ અંતરપ્પા સંજય કરચરણનયણવયણો સૂરો સચ્ચજ્જવસંપન્નો ભવહ) હાસ્યવર્જનરૂપ મૌન સે-વચન સંયમ સે-ભાવિત્ હુઆ જાવ અપને કર, ચરણ, નયણ ઓર વદન-મુખ કી પ્રવૃત્તિ કો સંયમિત બનાતા હુઆ સત્યવ્રત કે પાલન મેં પરાક્રમશાલી બન જાતા હૈ ઓર સત્ય એવં આર્જવભાવ સે સંપન્ન હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા પાંચવી મૌન ભાવના કા સ્વરૂપ કહ્યા હૈ । મૌન ભાવના કા તાત્પર્ય હાસ્ય કા પરિત્યાગ કરના હૈ । હાંસી કરને વાલા પ્રાણી છૂટ વચન કા પ્રયોગ મી પ્રસંગવશ કરતા હૈ । તથા હસ કૃત્ય સે દૂસરોં કા અપમાન મી હોતા હૈ । હાસ્ય મનો-વિનોદ કા કારણ હોતા હૈ સહી પરન્તુ સંયમી કે લિધે હાસ્ય સે મનો-વિનોદ કરને કી વ્યગ્ર આવશ્યકતા હૈ । હાસ્ય સે દૂસરોં કે મનોં મેં ઘોટ પહુંચે હસસે ઓર અધિક અશોભનીય થાત વ્યા હો સકતી હૈ । અધ્યાત્મ કે માર્ગ મેં હાંસી મજા કરને કા સર્વથા પરિત્યાગ કહ્યા હૈ । હાસ્ય મેં પર કે દૂષણોં કા કથન પ્રિય લગતા હૈ । યહ હાસ્ય નો

કારણ-હાસ્યથી જીવની એવી ગતિ થાય છે તેથી જીવનું તે કર્તવ્ય છે કે તે હાસ્યનું સેવન ન કરે. “ एवं ” આ પ્રકારે “ મોણેણ ય ભાવિઓ અંતરપ્પા સંજયકર-ચરણનયણવયણો સૂરો સચ્ચજ્જવસંપન્નો ભવહ ” હાસ્ય ત્યાગરૂપ મૌનથી વચન સંયમથી ભાવિત થયેલ જીવ પોતાના કર, ચરણ, નયન અને વદનની પ્રવૃત્તિને સંયમિત કરીને સત્યવ્રતના પાલનમાં પરાક્રમશાળી બની જાય છે અને સત્ય તથા આર્જવ ભાવથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પાંચમી મૌન ભાવનાનું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે. મૌન ભાવનાનું તાત્પર્ય હાસ્યનો પરિત્યાગ છે. હાંસી કરનાર માણસ પ્રસંગ-વશાત્ અસત્ય વચનનો પ્રયોગ પણ કરે છે, તથા તે કૃત્યથી બીજાનું અપમાન પણ થાય છે. હાસ્ય-મનોવિનોદને માટે કારણ જરૂર હોય છે. પણ સંયમીને હાસ્યની મદદથી મનોવિનોદ કરવાની શી આવશ્યકતા છે? હાસ્યને કારણે અન્યમાં દિલમાં થોડા દાગે તેનાથી વધારે ખરાબ વાત બીજી કઈ હોઈ શકે? અધ્યાત્મ માર્ગમાં હાંસી મબકનો સર્વથા ત્યાગ બતાવ્યો છે. હાસ્યમાં બીજાનાં

દ્વિતીય સંવરદારમુપસંહરણાદ—‘ એવમિણં ’ इत्यादि—

મૂલ્મ—એવમિણં સંવરસ્સ દારં સન્નં સંચરિયં હોઙ્ગ સુપ્પ-
ણિહિયં ઇમેહિં પંચહિં તિ કારણેહિં મળવયણકાયપરિરક્ખિ-
ણ્હિં નિચ્ચં આમરણંતં ચ એસ જોગો ણેયઠ્ઠવો થિઙ્ગમયા મઙ્ગમયા
અણામુવો અકલુસો અચ્છિદ્ધો અપરિસ્સાવી અસંકિલિટ્ઠો સન્ન-
જિણમણુગ્ગાઓ । एवं वीयं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं
तीरियं किट्टियं अणुपालियं आणाए आराहियं भवइ, एवं
કષાય કે વ્હય સે હોતા હૈ ! जिससे चारित्र का भंग होता है । दूसरे
व्यक्तियों की गुप्त चेष्टाएँ भी इस हास्य के द्वारा प्रकट हो जाया करती
हैं । यद्यपि चारित्र का इससे पूर्णरूप से भंग नहीं भी होता है—तो भी
साधु इसके प्रभाव से महद्विक् द्वेवों में उत्पन्न नहीं होता है । कान्दर्पिक
आभियोगिक आदि देवों में ही उत्पन्न होता है, अतः हास्य का सेवन
करना सत्यव्रती के लिये सर्वथा त्याज्य है, ऐसा समझ कर जो इसका
परित्याग कर देता है वह सत्यव्रती अपने व्रत को पूर्णरूप से स्थिर कर
पालन करता है । इस प्रकार हास्य जन्य दोषों का विचार कर हास्यव-
र्जनरूप वचनसंग्रम से अपनी आत्मा को आवृत्त करके साधु अपने
व्रताराधन में पराक्रमशाली बन जाता है और गृहीत सत्यव्रत को पूर्ण-
रूप से सुरक्षित कर स्थिर बना लेता है ॥ सू० ८ ॥

દ્રુપણો બહાર કરવા તે પ્રિય લાગે છે, તે હાસ્ય નેકપ્રયત્ના ઉદયથી થાય છે,
જેના કારણે ચારિત્રનો ભંગ થાય છે, બીજી વ્યક્તિઓની ગુપ્ત ચેષ્ટાઓ પણ
તે હાસ્ય દ્વારા પ્રગટ થયા કરે છે. ભલે તેનાથી ચારિત્રનો પૂર્ણતઃ ભંગ થતો
ન હોય, તે છતાં પણ સાધુ તેના કારણે મહદ્વિક્ દેવોમાં ઉત્પન્ન થતો નથી.
કાન્દર્પિક, અભિયોગિક આદિ દેવોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે. તેથી હાસ્યનું સેવન
કરવું તે સત્યવ્રતીને માટે સર્વથા ત્યાજ્ય છે, એવું સમજીને જે તેના પરિ-
ત્યાગ કરે છે, તે સત્યવ્રતી પોતાના વ્રતને સંપૂર્ણ રીતે સ્થિર કરે છે. અને
તેનું પાલન કરે છે. આ રીતે હાસ્યમાંથી ઉદ્ભવતા દોષોનો વિચાર કરી હાસ્ય
વર્જનરૂપ વચનસંગ્રમથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરીને સાધુ પોતાના વ્રતની
આરાધનામાં સમર્થ બની બાધ છે અને શ્રદ્ધા કરેલ સત્યવ્રતનું સંપૂર્ણ રીતે
સુરક્ષિત કરીને સ્થિર બનાવી લે છે ॥ સૂ. ૮ ॥

નાયમુણિના ભગવયા પન્નવિયં પરુવિયં પસિદ્ધં સિદ્ધવરસામુણમિણં
આઘવિયં સુદેસિયં પસત્થં । વીયં સંવરદારં સમત્તંતિ વેમિાસૂં ૧૥

॥ इय पणहादागरणे वीयं संवरदारं समत्तं ॥

ટીકા—‘એવં’ પૂર્વોક્તપ્રકારે ‘ઇણં’ ‘ઇદં’ ‘સંવરસ્ય’ સંવરસ્ય ‘દારં’
દારં=સત્યવચનં નામ દ્વિતીયં દારપિત્યર્થઃ, ‘સમ્મં’ સમ્યક્ ‘સંચરિયં’ સંચ-
રિતં સત્ ‘હોઈ’ મવતિ, ‘સુપ્પણિદિયં’ ‘સુપ્પણિદિતં=સમાપાદિતમ્ । તથા—‘ઈમેહિં’
એમિઃ ‘પંચહિં વિ’ પંચમિરપિ ‘કારણેહિં’ કારણૈઃ=માવનામિઃ, કીદશૈઃ કા-
રણૈઃ ? इत्याह—‘मणवयणकायपरिरक्षिणहिं’ मणवयणकायपरिरक्षितैः=मनोवा-
कायपरिरक्षितपञ्चभावनाभिरित्यर्थः, ‘निच्चं’ नित्यम् ‘आमरणं तं च’ आमर-
णान्तं=मरणपर्यन्तं च ‘एस जोगो’ एष योगः=सत्यवचनरूपो योगः ‘णेषव्वो’

इस प्रकार सत्यव्रत की स्थिरता के निमित्त पांच भावनाओं को
कहकर अब सूत्रकार इस द्वितीय संवरद्वार का उपलंकार करते हुए
कहते हैं—‘एवमिणं’, इत्यादि ।

टीकार्थ—(एवं) पूर्वोक्त प्रकार से (इणं) यह (संवरदारं) सत्यवचन
नामक द्वितीय संवरद्वार (सम्मं-संचरियं) अच्छी तरह से पाले जाने
पर (सुप्पणिदियं) सुरक्षित (होइ) हो जाता है । (इमेहिं पंचहिं वि
कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्षिणहिं) इसलिये मन वचन और काय
इन तीन योगों से अच्छी तरह सुरक्षित किये गये इन पांच भावनारूप
कारणों से (निच्चं) सदा (आमरणं तं च) जीवनभर तक (एसजोगो)
यह सत्यवचनरूप योग (धिइमया मइमया) स्वस्थचित्त से एवं हेयो-

આ રીતે સત્યવ્રતની સ્થિરતાને માટેની પાંચ ભાવનાઓ વળીનીને હવે
સૂત્રકાર આ બીજા સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતા કહે છે—“એવમિણં” ઇત્યાદિ
ટીકાર્થ—“એવં” પૂર્વોક્ત પ્રકારે “ “ઇણં” આ “સંવરસ્યદારં” સત્ય
વચન નામનું બીજું સંવરદ્વાર “સમ્મં-સંચરિયં” સારી રીતે ખખાય તો
“સુપ્પણિદિયં” સુરક્ષિત “હોઈ” થઈ જાય છે. “ઈમેહિં પંચહિં વિ કારણેહિં”
મણવયણકાયપરિરક્ષિણહિં” તે કારણે મન, વચન અને કાય એ ત્રણેયોગોથી
સારી રીતે સુરક્ષિત કરાયેલ આ પાંચ ભાવનારૂપ કારણોથી “નિચ્ચં” સદા
“આમરણં તં ચ” જીવન પર્યન્ત “एसજોગો” આ સત્યવચનરૂપ યોગ
“ધિइमया मइमया” સ્વસ્થ ચિત્તે અને હેયોમાદેયના વિવેકથી શુદ્ધ થયેલ
મુનિજનોએ “ણેવવ્વો” પાલન કરતા યોગ્ય છે. કારણ કે આ સત્યમહાવ્રત

નેતવ્ય:—પાલનીય: ‘ ધિશ્વયા ’ ધૃતિમતા ‘ મશ્વયા ’ મતિમતા—મેથાવિના કથં-
 મૂતોડ્યં યોગ: ? इत्याह—‘ અણાસવો ’ અનાશ્રવ: ‘ અકલુસો ’ અકલુપ: ‘ અ-
 ચ્છિદ્ધો ’ અચ્છિદ્ર: ‘ અપરિસ્સાવો ’ અપરિસ્સાવી ‘ અસંકિલિદ્ધો ’ અસંકિલિષ્ઠ: ‘ સ-
 વ્વજિણમણુણાઓ ’ સર્વજિનાનુજ્ઞાતશ્ર. એવમ્—એનાદશમિદં ‘ વીયં ’ દ્વિતીયં
 ‘ સંવરદારં ’ સંવરદારં ‘ ફાસિયં ’ સ્પૃષ્ટં ‘ પાલિયં ’ પાલિતં ‘ સોહિયં ’ શોષિતં
 ‘ તીરિયં ’ તીરિતં ‘ કિટ્ટિયં ’ કીર્તિતમ્ ‘ આરાહિયં ’ આરાધિતમ્ ‘ આણા’ આ-
 જ્ઞયા યથાવત્ ‘ અણુપાલિયં ’ અનુપાલિતં ભવતિ. એવમ્—અણુના પ્રકારેણ ‘ જ્ઞા-
 પાદેય કે દિવેક સે યુક્ત હુણ મુનિજન કો (જોયવ્યો) પાલન કરને
 યોગ્ય હૈ, કયોં કિ. યહ સ્તમ્પ મહામ્બતરૂપ યોગ (અણાસવો) નૂતનકર્મો
 કે આત્મવ કો રોકને વાલા હોને સે અનાત્મવ રૂપ હૈ, (અકલુસો)
 અશુભ અધ્યવસાય સં રહિત હોને કે કારણ અકલુપરૂપ હૈં (અચ્છિદ્ધો)
 પાપ કા સ્ત્રોત ઇસસે બંદ હો જાતા હૈ ઇસલિયે અચ્છિદ્રરૂપ હૈં, (અપરિ-
 સ્સાવો) એક ચિન્દુમાત્ર મો કર્મરૂપ જલ ઇસમેં પ્રવિષ્ટ નહીં હો સકતા
 હૈ ઇસલિયે યહ અપરિસ્સાવો હૈ, (અસંકિલિદ્ધો) અસમાધિરૂપ ભાવસે યહ
 વર્જિત હોતા હૈ ઇસલિયે અસંકલિષ્ઠ હૈ. (સવ્વજિણમણુણાઓ)
 ઇસીલિયે યહ સમસ્ત મૂત, મવિષ્યન્, ઔર વર્તમાન કાલ કે તીર્થકરોં
 કો માન્ય હુઆ હૈ. (એવં) ઇસ ઉક્ત પ્રકાર સે (વીયં) દ્વિતીય સંવર
 દ્વાર કો જો મુનિજન (ફાસિયં) અપને શરીર સે સ્પર્શ કરતે હૈં, (પા-
 લિયં) નિરન્તર ધ્યાનપૂર્વક ઇસકા સેવન કરતે હૈં, (સોહિયં) અતિચારોં
 સે ઇસે રહિત બનાતે હૈં, (તીરિયં) પૂર્ણરૂપ સે ઇસે અપને જીવન મેં ઉ-
 તારતે હૈં, (કિટ્ટિયં) દુસરોં કો ઇસે ધારણ કરને કા ઉપદેશ દેતે

૩૫ યોગ “ અણાસવો ” તથાં કર્મોના આત્મવને રોકનાર હોવાથી અનાત્મવરૂપ
 “ અકલુસો ” અશુભ અધ્યવસાયરહિત હોવાથી અકલુપરૂપ “ અચ્છિદ્ધો ” પાપનો
 સ્ત્રોત તેનાથી બંધ થઈ નથ છે તેથી અચ્છિદ્રરૂપ છે, “ અપરિસ્સાવો ” એક
 બિન્દુ પશ્ચ કર્મરૂપી જળ તેમાં પ્રવેશી શકતું નથી, તેથી તે અપરિસ્સાવો છે,
 “ અસંકિલિદ્ધો ” અસમાધિરૂપ ભાવથી તે રહિત હોય છે તેથી તે અસંકલિષ્ઠ
 છે. “ સવ્વજિણમણુણાઓ ” તેથી તે સમસ્ત ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન-
 કાળના તીર્થકરોએ માન્ય કરેલ છે. “ એવં ” આ કહ્યું હોતે પ્રકારે “ વીયં ”
 બીજા સંવરદારને જે મુનિજન “ ફાસિયં ” પોતાના શરીરથી સ્પર્શે છે,
 “ પાલિયં ” નિરન્તર ધ્યાનપૂર્વક તેનું સેવન કરે છે, “ સોહિયં ” અતિચારથી
 રહિત બનાવે છે, “ તીરિયં ” પૂર્ણ રીતે તેને પોતાના જીવનમાં ઉતારે છે.
 “ કિટ્ટિયં ” અન્યને તેનું સેવન કરવાનો ઉપદેશ આપે છે, તથા “ અણુપા-

યમુણિણા ' જ્ઞાતમુનિના ભગવતા મહાવીરેણ ' ' પળ્લવિયં ' પ્રજ્ઞાપિતં ' પરુલ્લવિયં ' પ્રલુપિતં ' પસિદ્ધં ' પ્રસિદ્ધમ્ ' સિદ્ધવરસાસનમિણં ' સિદ્ધવરસાસનમિદમ્ ' આઘવિયં ' આઘ્યાતં ' મુદેસિયં ' મુદેશિતં ' પસત્થં ' પ્રસસ્તં ' વીયં સંવરદારં ' દ્વિતીયં સંવરદારં ' સમત્તં ' સમાપ્તમ્ । एषां सर्वेषां पदानां व्याख्या प्रथमसंवरद्वारोपसंहारे द्रष्टव्या । ' चिबेमि ' इति व्रयीमि-अस्यार्थः पूर्वमुक्तः ॥मू-९॥

॥ इति श्री विश्वविरूपात-जगद्बल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्भगवत्पद्यनेकग्रन्थनिर्मायक- वादिमानमर्दक- श्रीशाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य- जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री वासीलालव्रतिरिचितायां श्री प्रश्नव्याकरणमूत्रस्य मुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां संचरात्माके द्वितीये-भागे सत्यवचननामकं द्वितीय संवरद्वारं समाप्तम् ॥ २ ॥

हैं तथा (अणुपालियं) त्रिकरण त्रियोगों से जो इसका अच्छी तरह से आचरण करते हैं वे (अणाए आराहियं भवइ) इसकी आराधना सर्वज्ञ भगवान् के वचनों से ही करते हैं ऐसा जानना चाहिये । (एवं) इस प्रकार से यह उक्तरूप संवरद्वार (णायमुणिणा) प्रसिद्धक्षत्रियवंश में उत्पन्न हुए मुनि भगवान् महावीर ने (पण्णवियं) प्रज्ञापित किया है शिष्यों के लिये सामान्य रूप से कहा है । (परुल्लवियं) प्रलुपित किया है- भेदानुभेदप्रदर्शन पूर्वक कथित किया है । इसलिये यह (पसिद्धं) प्रसिद्ध है-आचार्यादिपरंपरा से इसका पालन इसी रूप से चला आ रहा है अतः निर्दोष है । तथा (सिद्धवरसासणमिणं) भूतकाल में जितने भी सिद्ध हो चुके हैं उनका यह उत्कृष्ट शासनरूप है सो (आघवियं)

લિયં ” ત્રિકરણ યોગેથી જેઓ તેમનું સારી રીતે આચરણ કરે છે તેઓ “ અણાએ આરાહિયં ભવઈ ” તેની આરાધના સર્વજ્ઞ ભગવાનનાં વચનોથીજ કરે છે એમ સમજવું, “ એવં ” આ પ્રકારે આ (વર્ણવ્યા પ્રમાણેનું) સંવરદ્વાર “ ણાયમુણિણા ” પ્રસિદ્ધ ક્ષત્રિય વંશમાં જન્મેલા મહાવીર ભગવાને “ પળ્લવિયં ” પ્રજ્ઞાપિત કર્યું છે. શિષ્યોને માટે સામાન્ય રૂપે કહ્યું છે. ‘ પરુલ્લવિયં ’ પ્રલુપિત કર્યું છે. ભેદાનુભેદ દર્શાવીને વર્ણવ્યું છે. તેથી તે “ સિદ્ધં ” પ્રસિદ્ધ છે. આચાર્યાદિ પરંપરાથી તેનું આ રૂપેજ પાલન થતું આવ્યું છે, તેથી તે નિર્દોષ છે તથા “ સિદ્ધવરસાસનમિયં ” ભૂતકાળમાં જેટલા સિદ્ધો થઈ ગયા છે તેમનાં ઉત્કૃષ્ટ શાસનરૂપ વળી “ આઘવિયં ” તેનું કથન ભગવાન

સુધર્શિનીટીકા અ૦ ૨ સુ૦ ૧ અધ્યયનોપસંહાર

૭૦૬

इसी का कथन भगवान् महावीर प्रभुने किया है और (सुदेसियं) ऐसा ही उपदेश इसका उन्होंने देव, मनुज एवं असुरों सहित परिषदा में दिया है । (पसत्थं) यह द्वितीय संवरद्वार समस्त प्राणियों का हितकारक होने से प्रशस्त-मंगलमय है । (बीयं संवरदारं समत्तं) इस तरह का यह द्वितीय संवरद्वार समाप्त हुआ । (त्तिवेमि) हे जंबू मेंने जैसा यह श्री महावीर प्रभु के मुख से सुना है उसी तरह का यह तुमसे कहा है । अपनी तरफ से इसमें कुछ भी कल्पित करके नहीं कहा है ॥

भावार्थ—दूसरे संवर द्वार का उपसंहार करते हुए सूत्रकार कह रहे हैं कि इस द्वितीय संवरद्वार को कि जिसका नाम सत्यमहाव्रत है जो मुनिजन इन कथित पंच भावनाओं की दृढ़ता पूर्वक पालते हैं—जीवन भरनक—इसके अनुसार अपनी कर, चरण आदि की प्रवृत्ति को करते रहते हैं उनके अशुभ अध्यवसाय रुक जाते हैं, नवीन कर्मों का बंध होता नहीं है । पापों का स्रोत इसके प्रभाव से उनका रुक जाता है यह अपरिस्त्रावी आदि विशेषणों वाला है । त्रिकालवर्ती समस्त अरिहंत भगवंतों ने इसका स्वयं पालन किया है, और जीवों को इसके पालने का उपदेश आदेश उन्होंने ने परिषदा में दिया है । भगवान् महावीर ने

મહાવીરે કહેલ છે અને “સુદેસિય” તેમણે તેના આ પ્રમાણે જ ઉપદેશ દેવ, મનુષ્ય અને અસુરો સહિતની પરિષદોમાં આપ્યો છે. “પસત્થં” આ દ્વિતીય સંવરદ્વાર સઘળા પ્રાણીઓનું હિત કરનાર હોવાથી પ્રશસ્ત-મંગલમય છે. “બીયં સંવરદારં સમત્તં” આ બીજું સંવરદ્વાર સમાપ્ત થયું “ત્તિવેમિ” હે જંબૂ ! મેં જેવું મહાવીર પ્રભુના મુખથી સાંભળ્યું છે, મારી તરફથી તેમાં કલ્પિત કંઈ પણ ઉમેરીને તે કહેવાયું નથી.

ભાવાર્થ—બીજા સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—સત્ય મહાવ્રત નામના બીજા સંવરદ્વારનું જે મુનિજન ઉપરોક્ત પાંચ ભાવનાઓનું જીવન પર્યાંત દૃઢતાપૂર્વક પાલન કરે છે, તેના પ્રમાણે પોતાની કર ચરણ આદિની પ્રવૃત્તિ કર્યા કરે છે તેમના અશુભ અધ્યવસાય અટકી જાય છે, તેમને નવાં કર્મોનો બંધ બાંધાતો નથી, તેના પ્રભાવથી તેમનો પાપોનો સ્રોત અટકી જાય છે, તેથી તે અપરિસ્ત્રાવી આદિ વિશેષણોવાળું છે. ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત અરિહંત ભગવાનોએ તેનું પોતે પાલન કર્યું છે, અને તેના પાલનનો પરિપક્વોને ઉપદેશ આપ્યો છે ભગવાન મહાવીરે પણ તેમના પ્રમાણે જ

૩૧૦

પ્રશ્નચક્રાવલિસૂત્ર

भी उन्हीं के अनुसार इस द्वितीय संवरद्वार की प्रशंसा की है स्वयं भी इसका पालन किया है । अतः यह मंगलमय है । निर्दोष है । बाधा-वर्जित है । इसे धारण कर प्रत्येक संज्ञी पथसि पंचेन्द्रिय मनुष्य को अपना जीवन सफल बनाना चाहिये । इस प्रकार जंबू स्वामी से श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा ॥ सू-९ ।

॥ द्वितीय संवरद्वार समाप्त ॥

આ બીજા સંવરદ્વારની પ્રશંસા કરી છે અને બીજા પશુ તેનું પાલન કર્યું છે તેથી તે મંગલમય છે, નિર્દોષ છે, આધારહિત છે, તેને ધારણ કરીને પ્રત્યેક સંજ્ઞી પથસિ પંચેન્દ્રિય મનુષ્યે પોતાનું જીવન સફળ બનાવવું બોધ્યું. આ પ્રમાણે શ્રી સુધર્માસ્વામીએ જંબૂસ્વામીને કહ્યું ॥ સૂ-૯ ॥

॥ બીજું સંવરદ્વાર સમાપ્ત ॥

अथ तृतीय संवरद्वारं प्रारभ्यते

पूर्वस्मिन्नध्ययरे मृषावादविरमण नामकं द्वितीयं संवरद्वारं प्रोक्तम्, तच्चाद-
त्तादानविरमणं विना न संभवतीत्यतः क्रमप्राप्ते तृतीयेऽध्ययनेऽदत्तादानविरम-
णनामकं तृतीयं संवरद्वारमभिधीयते—‘जंबू’ इत्यादि—

मूलम्—जंबू ! दत्तमणुन्नायसंवरो नाम होइ तइयं सुव्वय !
महव्वयं गुणव्वयं परदव्वहरणपडिविरइकरणजुत्तं अपरिमिय-
मणंततणहाणुगय—महिच्छमणव्रयणकल्लस—आयाणसुनिग्गहियं,
सुसंजमियमणहतथयायनिहुयं निहुयं निग्गंथं, णोट्टियं, निरुत्तं,
निरासवं, निव्वभयं, विमुत्तं उत्तमनरवसभ—पवर—बलवग—
सुविहियजणसंमयं—परमसाहुधम्मचरणं, जत्थ य गामागर—
नगर—निगम—खेड—कब्बड—मडंव—दोणमुह—संवाह—पट्टणा
समगयं च किंचि दव्वं मणि—सुत्त—सिलप्पवाल—कंस दूस—रयय
वरकणग—रयणमाइं पडियं पम्हट्ठं विप्पणट्ठं न कप्पइ कस्सइ
कहेउं वा गेणहेउं वा अहिरन्न सुव्वण्णाएणं समलेट्ठु कंचणेणं
अपरिग्गहसंबुडेणं लोगम्मि विहरियव्वं ॥ सू० १ ॥

टीका—‘सुव्वय’ सु=शोभनं व्रतं=चारित्रपावनरूपं यस्य तत्संबुद्धौ हे
सुव्रत !—शोभनव्रतशालिन् ! ‘जंबू’ हे जम्बू ! इदं प्रारभ्यमाणं ‘तइयं’ तृती-

तृतीय संवरद्वार प्रारंभ

पूर्व अध्ययनमें मृषावाद विरमण नाम का जो दूसरा संवरद्वार
कहा गया है, अदत्तादानविरमण के बिना नहीं हो सकता है, इसलिये
सूत्रकार क्रमप्राप्त इस तृतीय अध्ययन में अदत्तादानविरमण नाम का

श्रील संवरद्वारनो प्रारंभ

आगजना अध्ययनमां मृषावाद विरमणु नामना श्रील संवरद्वार विषे
णे इडेवामां आव्थुं तेनुं पावन अदत्तादान विरमणु विना यधं शकतुं नथी,
तेथी सूत्रकार अनुक्रमे आपता आ तृतीय अध्ययनमां अदत्तादान विरमणु

યમધ્યયનં 'દત્તમણુજ્ઞાયસંવરો' દત્તાનુજ્ઞાતસંવરઃ=દત્તં=દાપૈત્રિતીર્ણમ્ અન્નપાના-
વિક્રમ્, અનુજ્ઞાતં=પ્રાતિહારકપીઠફલકાદિકં ચ ગ્રાહ્યમિત્યેવંરૂપઃ સંવરો=દત્તા-
નુજ્ઞાતસંવરો નામ 'હોઈ મવતિ' । 'મહાવ્યયં' મહાવ્રતમિદમ્, તથા-'ગુણવ્યયં'
ગુણવ્રતં=ગુણાનામ્ પેદિકપારલૌકિકોષકારાણાં કારણભૂતં વ્રતં-ગુણવ્રતમ્ । કીદ-
શમિદમ્ ? इत्याह—' परद्रव्यहरणपडिविरइकरणजुत्तं ' परद्रव्यहरणप्रतिविरतिकर-
णयुक्तं=परेषां यद् द्रव्यं=धनं तस्य यद् हरणम्=आदानं, तत्प्रति या विरतिः=विर-
मणं तस्याः कारणम्=आचरणं, तेन युक्तं=सहितम्, परद्रव्यादानविमुखकारकमि-
त्यर्थः, तथा—' अपरिमियमणंततण्हाणुगयमहिच्छमणवयणकलुसआयाणमुनिग्ग-
हियं ' अपरिमितानन्तकृष्णानुगातमहेच्छमनोवचनकलुपादानमुनिगृहीतम्=अपरि-
तीसरा संवरद्वार कहते हैं—' जंबू ' इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(સુવ્યય) હે શોભન વ્રત શાલિન જંબૂ ! (તદ્યં) યહ પ્રારબ્ધમાગ તૃતીય અધ્યયન (દત્તમણુજ્ઞાયસંવરો) દત્તાનુજ્ઞાત સંવર નામકા હૈ । હસ દત્તાનુજ્ઞાત (દિયા હુઆ) મેં દાતા કે દ્વારા ત્રિતીર્ણ અન્નપાન કા તથા અનુજ્ઞાત પીઠફલક આદિ કે છેને કા વિધાન કિયા ગયા હૈ । યહ (મહાવ્યયં) દત્તાનુજ્ઞાતસંવર મહાવ્રત હૈ । (ગુણવ્યયં) તથા ગુણવ્રતહૈ—હહ લોક સંવંધી તથા પરલોકસંવંધીગુણો કા યહ કાર-
ણભૂત વ્રત હૈ । અથવા સમસ્તવ્રતોં કા યહ ઉપકારક હૈ હમલિયે ગુણ-
વ્રત હૈ (પરદ્રવ્યહરણપડિવિરइकरणजुत्तं) હમ વ્રત કે આરાધન સે જીવ
કા આચરણ દૂસરોં કે દ્રવ્ય કો ગ્રહણ કરને કી પ્રવૃત્તિ સે સર્વથા
વિરક્ત હોતા હૈ (અપરિમિયમણંતતण्हाणुगयमहिच्छमणवयणकलुस-
आयाणमुनिग्गहियं) તથા હસ મહાવ્રત કી આરાધના સે, વિચમાન-

નામના ત્રીજા સંવરદ્વારનું વર્ણન કરે છે—“ જંબૂ ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“ સુવ્યય ” હે શોભનવ્રતશાળી જંબૂ ! “ તદ્યં ” આ શરૂ કરેલ ત્રીજું અધ્યયન “ દત્તમણુજ્ઞાયસંવરો ” દત્તાનુજ્ઞાત સંવર નામનું છે. દત્તાનુજ્ઞાત (દીધેલું) માં દાતાદ્વારા ત્રિતીર્ણ અન્નપાન તથા અનુજ્ઞાત પીઠફલક આદિલેવાનું વિધાન કરેલ છે. તે “ મહાવ્યયં ” દત્તાનુજ્ઞાત સંવર મહાવ્રત કહેવાય છે. “ ગુણવ્યયં ” તથા શુભ્રવ્રત છે—આલોક અને પરલોક સંબંધી શુભ્રોનું કારણ-
ભૂત આ વ્રત છે, અથવા સમસ્ત વ્રતોને માટે તે ઉપકારક હોવાથી તેને શુભ્રવ્રત કહ્યું છે. “ પરદ્રવ્યહરણપડિવિરइकरणजुत्तं ” આ વ્રતની આરાધના કરવાથી અન્યનું દ્રવ્ય ગ્રહણ કરવાની પ્રવૃત્તિથી છવેા સર્વથા વિરક્ત રહે છે. “ અપરિમિયમણંત તણ્હાણુગયમहिच्छ मणवयणकलुस-आयाणमुनिग्गहियं ” નજરે અડતા દ્રવ્યને પ્રાપ્ત કરવાની જે અસીમ તથા અશ્વય સ્પૃહા-લાલસા થાય છે

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૩ સૂ૦ ૧ અદત્તાદાનવિરમણસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૭૧૩

મિતા=પરિમાણરહિતા, અનન્તા=અક્ષયા યા તૃષ્ણા=સ્પૃહા=ચિદ્વિજ્ઞાનદ્રવ્યાવ્યયેચ્છા, તયાડનુગતે યે મહેચ્છે=અવિદ્યમાનદ્રવ્યલાભવિષયે મહેચ્છાયુક્તે મનોવચને=મનોવાણી ચ, તાભ્યાં યત્ કલુષં=પરધનવિષયત્વેન પાપરૂપમ્ આદાનં=ગ્રહણં તત્સુનિશ્ચીતં =સુનિયન્ત્રિતં યત્ર તમ્, તથા-‘ સુસંજમિયમણહત્થપાપનિહુયં ’ સુસંયમિતમનોહસ્તપાદનિશ્ચૂતં-સુસંયમિતેન સમ્યગ્નિયન્ત્રિતેન મનસા હસ્તૌ પાદૌ ચ પરદ્રવ્યાદાનવ્યારાત્ નિશ્ચૂતૌ=ઉપરતૌ યત્ર તત્ । ઉક્તવિશેષણદ્વયેન પરદ્રવ્યાદાને મનોવાક્યાનિરોધઃ પ્રદર્શિતઃ । પુનઃ કથંભૂતમિત્ ? इत्याह-‘ નિર્ગમ્યં ’ નિર્ગમ્યં=નિર્ગતૌ વાહ્યાભ્યન્તરો ગ્રન્થો યસ્માન્નત્, વાહ્યભ્યન્તરગ્રન્થિરહિતમિત્યર્થઃ, તથા-‘ જેઠિંગી ’ દ્રવ્ય કે અવ્યય હોને કી જો અપરિમિત एवं અક્ષય સ્પૃહાલાલસા હોતી હૈ વહ, તથા હસ સ્પૃહા-લાલસા-સે જો બડી ? ઔર અવિદ્યમાન દ્રવ્ય કે લાભ વિષયક ઇચ્છાઓં કી પરંપરા ચલતી હૈ કિ જિસસે મનવચન કી પર ધન કો લેને-ગ્રહણ કરને કી જો કલુષિત પ્રવૃત્તિ હોતી રહતી હૈ વહ સુનિયન્ત્રિત હો જાતી હૈ । તથા જય મન કી પરધન કો હરણ કરને કી કલુષિત વિચારધારા સુનિયન્ત્રિત હો જાતી હૈ ફિર (સુસંજમિયમણહત્થપાપનિહુયં) હસ મન કે નિયન્ત્રિત હોતે હી પરદ્રવ્ય કે ગ્રહણ કરને કે નિમિત્ત જો હાથ પૈરોં કા વ્યાપાર હોતા હૈ વહ બી ઉપરત-બંદ હો જાતા હૈ । હસ તરહ હન દોનોં વિશેષણોં સે યહ કહા હૈ કિ હસ મહાવ્રત કે સેવન કરને સે, પરદ્રવ્યહરણ કરને કે લિયે જો મનવચન ઔર કાય કા વ્યાપાર પહિલે હોતા થા વહ સર્વથા બંદ હો જાતા હૈ । (અદત્તાદાનવિરમણસંવર) યહ દત્તાનુજ્ઞાત સંવર કેસા હૈ સો કહતે હૈન- (નિર્ગમ્યં) હસ મહાવ્રત કી આરાધના સે વાહ્ય ઔર

તથા તે લાલસાથી ભીજા અવિદ્યમાન દ્રવ્યની પ્રાપ્તિ માટેની મોટી મોટી ઇચ્છાઓની જે પરંપરા વાસે છે કે જેથી મન વચનની પારકાનું ધન લેવાની જે દોષપૂર્ણ પ્રવૃત્તિ ચાલુ રહે છે તેનું આ મહાવ્રતની આરાધનાથી નિયંત્રણ થાય છે, તથા બ્યારે પારકાનું ધન હરી લેવાની મનની કલુષિત વિચારધારા સુનિયંત્રિત થઈ જાય છે ત્યારે ‘ સુસંજમિયમણહત્થપાપનિહુયં ’ તે મનનું નિયમન થતાં જ પારકાનું દ્રવ્ય ગ્રહણ કરવા માટે હાથ-પગની જે પ્રવૃત્તિ ચાલે છે તે પણ બંધ પડી જાય છે. આ રીતે એ અને વિશેષણોથી એ દર્શાવવામાં આવ્યું છે કે આ મહાવ્રતનું સેવન કરવાથી પરદ્રવ્ય લેવાને માટે મન, વચન અને કાયાની જે પ્રવૃત્તિ પહેલાં ચાલતી હતી તે તદ્દન બંધ પડી જાય છે.

“ અદત્તાદાનવિરમણસંવર ” આ દત્તાનુજ્ઞાત સંવર કેટલું છે તે હવે કહે છે—
“ નિર્ગમ્યં ” આ મહાવ્રતની આરાધનાથી બાહ્ય અને આંતર્યન્તર પરિશ્રદ્ધ હર

નૈષ્ઠિકં=સર્વધર્મપ્રકર્ષપર્યન્તર્વર્તિ, ' નિરુત્તં ' નિરુત્તં=સર્વજ્ઞરૂપાદેયત્વેન નિરુત્તમ્, અવ્યભિચરિતં વા તથા-નિરાસવં ' નિરાશ્રવં=કર્માદાનરહિતમ્, ' નિઘ્મયં ' નિર્ભયં=નૃપાદિમયરહિતં ' વિમુત્તં ' વિમુત્તં=લોભદોષાદિરહિતમ્, તથા- ' ઉત્તમનરવસમ-પવરબલવગ-સુવિહિયજણસંમયં ' ઉત્તમનરવૃષભ-પવરબલવત્સુવિહિતજનસ-મ્મતમ્-ઉત્તમા=ઉત્કૃષ્ટા યે નરવૃષભાઃ-નરશ્રેષ્ઠાઃ=જિનોઃ તથા-પવરબલવન્તઃ=ચક્રવર્તિવાસુદેવાદયઃ, સુવિહિતજનાઃ=સાધુલોકાસ્તેષાં સંમતમ્-અભિમતં યત્તત્તથા તથા- ' પરમસાધુધર્મચરણં ' પરમસાધુધર્મચરણં=પરમસાધુનામ્=ઉત્કૃષ્ટતત્ત્વિજ્ઞાન ધર્મચરણં=ધર્મપાલનમ્ યત્તત્તથા, एतादृशमिदं दत्तानुज्ञातमंसद्वारम् । अत्र तृतीये आभ्यन्तर परिग्रह दूर हो जाता है, अर्थात् यह ग्रन्थ बाह्य और आभ्यन्तर की ग्रन्थि से रहित होता है तथा (गेष्टियं) समस्तधर्मों के प्रकर्षपर्यन्त यह रहता है, एवं (निरुतं) सर्वज्ञ प्रभुने इसे उपादेयरूप से कहा है, अथवा यह अव्यभिचरित है, अर्थात् जितना भी सकल-संगमी का धर्म है उसके साथ यह अविनाभावी है । (नीरासवं) इसमें नवीन कर्मों का आदान नहीं होता है । (निघ्मयं) नृपादि का भय इसके आचरण में साधु को नहीं रहता है इसलिये यह निर्भय है । (विमुत्तं) लोभ दोष आदि से यह रहित होता है । (उत्तमनरवसम, पवरबलवग-सुविहियजणसंमयं) उत्कृष्ट जो नरवृषभ-जिनदेव हैं तथा बलदेव वासुदेव आदि जो पवरबलवंत व्यक्ति हैं, तथा सुविहित-जन जो साधु लोक हैं, इन सब के लिये यह मान्य है । तथा (परमसाधुधर्मचरणं) परमसाधुजनो-उत्कृष्टतत्त्वस्विकर्षणों का यह धर्माचरणरूप है । (अदत्तादानविरमण) ऐसा यह दत्तानुज्ञातसंवरद्वार है । इस

થઈ બન્ય છે. એટલે કે આ વાત બાહ્ય અને આભ્યન્તરની ગ્રન્થિથી રહિત હોય છે, તથા “ ગેટ્ટિયં ” તે સમસ્ત ધર્મોનું પ્રકર્ષપર્યન્ત છે, અને “ નિરુત્તં ” સર્વજ્ઞ પ્રભુએ તેને ઉપાદેયરૂપે બતાવ્યું છે, અથવા તે અવ્યભિચરિત છે, એટલે કે સંયમીનાં બેટલાં કર્તવ્યો છે તેની સાથે તે સુસંગત છે. “ નિરાસવં ” તેનાથી નવીન કર્મો બંધાતા નથી. “ નિઘ્મયં ” તેને આચરવામાં સાધુને નૃપાદિનો ભય રહેતો નથી તેથી તે નિર્ભય છે. “ વિમુત્તં ” લોભ, દોષ આદિથી તે રહિત હોય છે. “ ઉત્તમનરવસમ, પવરબલવગ-સુવિહિય જણસંમયં ” જે શ્રેષ્ઠ નરવૃષભ-જિનદેવ છે, તથા બળદેવ વાસુદેવ આદિ જે પ્રબળ બળવાન પુરુષો છે, તથા સુવિહિત જન જે સાધુલોક છે, તે સૌને માટે તે માન્ય છે. તથા “ પરમસાધુધર્મચરણં ” જે પરમ સાધુજનો ઉત્કૃષ્ટ તત્ત્વસ્વીકરણોને માટે તે ધર્માચરણરૂપ છે, એવું આ અદત્તાદાન વિરમણ-દત્તાનુજ્ઞાત સંવરદ્વાર છે. આ

सुद्धाशनीटीका अ० ३ सू० १ अदत्तादानविरमणस्वरूपनिरूपणम्

७१५

संवरे साधुभिः किं कर्तव्यम् ? इत्याह—‘ जत्थ य ’ यत्र च-तृतीयसंवरद्वारे
 ‘ गामागर-नगर-निगम-खेट-कव्वड-मडंब-दोणमुख-संवाह-पट्टणासमगयं च
 = ग्रामाकर-नगरनिगम-खेट-कर्षट-मडम्ब-द्रोणमुख-संवाध-पत्तनाश्रमगतं च-
 ग्रामाकरनगरनिगमखेटकर्षटमडम्बद्रोणमुखसंवाधपट्टनाश्रमाणां व्याख्या पूर्वमुक्ताः,
 तद् गतं च ‘ किंचिद्व्यं ’ किंचिद्व्यं = किमपिद्रव्यम्, तदेवाह—‘ मणिमुत्त-
 सिलप्पवालकंस - दूम-रयक - वरकणग - रयणमाइ ’ मणिमुक्ताशिला-मवाल
 कांस्य-दूष्य-रजत-वरकनक-रत्नादि- मणिः-पद्मारागादिः, मुक्ता=मुक्ताफलं,
 ‘ शिला ’ बहुमूल्यपाषाणवण्डम्, मवाल=विद्रुमः ‘ मंगा ’ इति भाषाप्रसिद्धः,
 ‘ कंस ’ कांस्य-‘ कांसा ’ इति प्रसिद्धम् ‘ दूष्य ’ वस्त्रविशेषः, रजतं=‘ चान्दी’
 इति भाषाप्रसिद्धावरकनकं = धातुवन्तरापेक्षया श्रेष्ठं सुवर्णं, रत्नं=कर्केतनादिकम्
 आदि यस्य तत्तथाभूतं द्रव्यं ‘ पडियं ’ पतितं-वस्त्राञ्चलादेः, ‘ पम्हट्टं ’ प्रस्मृतं=कुत्रापि
 विस्मृतं ‘ विप्पणट्टं ’ विप्रणष्टं=गवेपकद्विरपि न प्राप्तम्, तथाभूतं मणिमुक्तादिकं

तृतीय संवरद्वार में साधुजनों को क्या करना चाहिये इसके लिये सूत्र-
 कार कहते हैं—(जत्थ य) इस तृतीय संवरद्वार में (गामागरनगर-
 निगमखेटकव्वड मडंब दोणमुखसंवाहपट्टणासमगयं च) साधुजनों को
 ग्राम, आकर, नगर, निगम, खेट, कर्षट, मडम्ब, द्रोणमुख, संवाह,
 पट्टन, आश्रम, इन स्थानों में, रही हुई (किंचि द्व्यं) कुछ भी वस्तु
 (मणिमुत्तसिलप्पवालकंसदूमरयकवरकणगरयणमाइ) मणि, मुक्ता,
 शिला, मवाल, कांस्य, दूष्य-वस्त्रविशेष, रजत-चान्दी, सुवर्ण, रत्न आदि
 वस्तु (पडियं) किसी की गिर गई हो, (पम्हट्टं) भूली हुई हो, (वि-
 प्पणट्टं) ढूँढने पर भी नहीं मिली हो, (न कप्पइ कस्सइ कहेउं वा गे-

तृतीय संवरद्वारमां साधुजनोऽपि शुं करं अर्थो ते अताववाने भाटे सूत्रकार
 कहे छे—“ जत्थ य ” आ श्रीआः संवरद्वारमां “ गामागरनगरनिगम खेटकव्वड
 मडंबदोणामुहसंवाहपट्टणासमगयं च ” साधुजनोऽपि ग्राम, नगर, आकर
 निगम, खेट, कर्षट, मडम्ब, द्रोणमुख, संवाह, पट्टन, आश्रम, ये स्थानोमां
 रहेली “ किंचि द्व्यं ” कोछ पणु वस्तु “ मणिमुत्तसिलप्पवालकंसदूमरयकवर
 कणगरयणमाइ ” मणि, मुक्ता, शिला, मवाल, कांस्य, दूष्य अर्थ प्रकारनुं
 वस्त्र, रजत-आदि, सुवर्ण रत्न आदि वस्तुओ “ पडियं ” कोछनी पडी गछ
 होथ, “ पम्हट्टं ” कोछ भूली गथुं होथ, “ विप्पणट्टं ” शोधवा छातां पणु जडी
 न होथ, “ न कप्पइ कस्सइ कहेउं वा गेण्हेउं वा ” तेने लेवानुं संथत के असं-

દ્રવ્યં ન 'કસ્પદ્' કસ્પાપિ સંયતમ્યાઽસંયતસ્ય વા 'કહેડ' કથયિતું વા, 'મે
 પ્હેડં' સ્વયં પ્રહીતું પરેણ ગ્રાહયિતું વા 'ન કસ્પદ્' ન કસ્પતે, સાથોનિવૃત્તિત્ત્વાત્ ।
 પરદ્રવ્યં દૃષ્ટ્વા સાધુના કિં કર્તવ્યમ્, ? इत्याह—‘अहिरण्यसुवर्णणं’ अहिरण्य-
 सुवर्णकेन=हिरण्यसुवर्णवर्जकेन ‘समलेट्टुकंचणेण’ समलेट्टुकाञ्चनेन=समः=
 तुल्यः लेट्टुः=मृत्वण्डं काञ्चनं=सुवर्णं च उपेक्षणीयतया यस्य तेन तथोक्तं=
 मृत्वण्डे सुवर्णं च समभावतेत्यर्थः, ‘अपरिग्रहसंबुडेण’ अपरिग्रहसंवृततेन=
 नास्ति परग्रहो यस्य सोऽपरिग्रहः, अत एव संवृतः=समत्वभाववर्जितस्तेन तथो-
 क्तं साधुना ‘लोगम्मि’ लोके मर्त्यलोके ‘विहरियव्वं’ विहर्तव्यम्, साधु-
 भिरुक्तरीत्या विहरणीयमिति भावः ॥ मृ० १ ॥

પ્હેડં વા)और न स्वयं लेना चाहिये उसको संयत अथवा असंयत से लेने
 के लिये नहीं कहना चाहिये। क्योंकि इस प्रकार की प्रवृत्ति मुनिमार्ग में
 कल्पित नहीं कही है । कारण कि साधु (अहिरण्यसुवर्णणं) हिरण्य और
 सुवर्ण इन सब से निवृत्तिवाला होता है साधु को न हिरण्य की चाहना
 होती है और न सुवर्ण की । (समलेट्टुकंचणेण) उसकी दृष्टि में तो
 उपेक्षणीय होने के कारण मृत्वंड मिट्टी का ढेला और कांचन दोनों
 बराबर होते हैं । अर्थात् वह इन दोनों में समभाव वाला होता है ।
 (अपरिग्रहसंबुडेण) इस तरह समत्वभाव से वर्जित होने के कारण
 अपरिग्रह से युक्त होते हैं साधु को इस प्रकार का होकर इस लोक
 में विचरना चारिये ।

ભાવાર્થ—સંસાર મેં નિર્ભય હોકર વિચરણ કરને કે લિયે સબ સે
 ઉત્કૃષ્ટ સાધન યદિ કોઈ હૈ કિ જિસસે લોગોં કી દૃષ્ટિ કા આકર્ષણ હો

યતને કહેવું ન જોઈએ, અને પોતે કોવી જોઈએ નહીં. કારણ કે એવા
 પ્રકારની પ્રવૃત્તિ મુનીમાર્ગમાં ઉચિત ગણાવી નથી. કારણ કે સાધુ “અહિરણ્ય
 સુવર્ણણ” હિરણ્ય અને સુવર્ણ એ બંધાની નિવૃત્તિ હોય છે. સાધુને હિર-
 ણ્યની ઇચ્છા હોતી નથી કે સુવર્ણની ઇચ્છા હોતી નથી. “સમલેટ્ટુકંચણે”
 તેની દૃષ્ટિએ ઉપેક્ષા પાત્ર હોવાથી મારીતું ‘દેકુ’ અને કાંચન બંને સમાન
 છે એટલે કે બંનેમાં તે સમભાવવાળો હોય છે. “અપરિગ્રહસંબુડેણ” આ
 રીતે મમત્વભાવથી રહિત હોવાથી તે અપરિગ્રહી હોય છે. સાધુએ એ પ્રકારે
 અપરિગ્રહવ્રત યુક્ત બનીને આ લોકમાં વિચરવું જોઈએ.

ભાવાર્થ—સંસારમાં નિર્ભય થઈને ફરવાને માટે જો કોઈ સર્વશ્રેષ્ઠ સાધન
 હોય કે જેનાથી લોકોની દૃષ્ટિ આકર્ષાય અને સાધુત્વ પર વિશ્વાસ જામે તો

મુદર્શિની ટીકા અ. ૩ સુ. ૧ અસાદાનવિરમણસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૭૧૭

ઔર સાધુત્વ પર વિશ્વાસ-શ્રદ્ધા જમે-તો વહ એક અપરિગ્રહત્વ કા હી સિદ્ધાન્ત હૈ । इसमें अन्तरंग और बहिरंग, इन दोनों प्रकार के परिग्रह का सैधान्तिक दृष्टि से परित्याग होता है । साधु के पास-निर्ग्रन्थ मुनि के पास इन दोनों प्रकार के परिग्रह का अभाव होता है । बाहिरी दृष्टि में जो कुछ उसके पास में है वह सध संयमधर्मोपकरण है, परिग्रह नहीं हैं । सूत्रकार ने यही बात साधु के लिये इस तृतीय संवरद्वार में समझाई है । पूर्व अध्ययन में-द्वितीय अध्ययन में मृपावाद का नौकोटियों से साधु को जो त्याग करना कहा है वह तबतक पूर्णरूप से पालित नहीं हो सकता कि जबतक अन्तरंग और बहिरंग का त्याग नहीं हो जाता । अपरिमित अनंत तृष्णाओं पर अंकुश करने वाली यही एक अपरिग्रहता है । मन, वचन और काय की परके द्रव्य को आदान (गृहण) करने की प्रवृत्ति पर रोक लगा देने वाली यही अपरिग्रहता है । इस अपरिग्रहता की छत्रच्छाया में पलने वाला साधु नवीन कर्मों के बंध से रहित हो जाता है, तथा सबका विश्वासपात्र बन जाता है । उसे किसी भी प्रकार का किसी का भय नहीं रहता है । ग्राम आकर आदि किसी भी स्थान में भूली हुई, पड़ी हुई, रखी हुई, किसी भी तरह की वस्तु वह न स्वयं लेता है और न दूसरों से उसे लेने को कहता है ।

તે એક માત્ર અપરિગ્રહત્વનો સિદ્ધાંત જ છે. તેમાં આંતરિક તથા બાહ્ય એ બંને પ્રકારના પરિગ્રહનો સૈદ્ધાન્તિક દૃષ્ટિએ પરિત્યાગ થાય છે. સાધુની પાસે નિર્ગ્રન્થ મુનિની પાસે આ બંને પ્રકારના પરિગ્રહનો અભાવ હોય છે. બાહ્ય રીતે જોતાં તેમની પાસે જે કંઈ હોય છે તે બધું સંયમ ધર્મોપકરણ છે, પરિગ્રહ નથી, સૂત્રકારે એ જ વાત સાધુને માટે આ ત્રીજા સંવરદ્વારમાં સમજાવી છે. આગળના અધ્યયનમાં બીજા અધ્યયનમાં મૃપાવાદનો નવ પ્રકારે ત્યાગ કરવાનું સાધુઓને જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું અંતરંગ તથા બહિરંગ પરિગ્રહનો ત્યાગ ન થાય ત્યાં સુધી પાલન થઈ શકતું નથી. અપરિમિત-અનંત તૃષ્ણાઓ પર અંકુશ રાખનાર આ એક અપરિગ્રહતા જ છે. આ અપરિગ્રહતા જ, મન, વચન અને કાયાથી અન્યનું દ્રવ્ય પકાવી લેવાની પ્રવૃત્તિ પર એક (અંકુશ) નું કામ કરે છે. આ અપરિગ્રહતાની છત્રછાયામાં રહેતો સાધુ નવાં કર્મોનાં બાંધથી રહિત બની બચે છે તથા સૌને માટે વિશ્વાસપાત્ર બની બચે છે. તેને કોઈનો પણ કોઈ પણ પ્રકારનો લથ રહેતો નથી. ગ્રામ, આકર આદિ કોઈ પણ સ્થાનમાં ભૂલથી રહેલી, પડી રહેલી, મૂકી રાખેલી કોઈ પણ પ્રકારની વસ્તુ તે પોતે લેતો નથી કે લેવાનું બીજાને કહેતો નથી. આ તત્તને લીધે

પુનર્મુનિકર્તવ્યમાદ—‘ જંપિય ’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—જં પિ ય હોજ્જા હિ દવ્વજાયં સ્વલગયં સ્વેત્તગયં રત્ન-
મંતરગયં વા કિંચિ પુષ્પફલતયપ્પવાલકંદમૂલતળકટ્ઠસક-
રાઈં અપ્પં વા વહું વા અણું વા થૂલં વા ન કપ્પઈ ઉગ્ગહે
અદિણ્ણમ્મિ ગેળહેડ । જે હણિ હણિ ઉગ્ગહે અણુણ્ણાવિય
ગેણિહયઠ્ઠવં. વજ્જેયઠ્ઠવો ય સઘ્વકાલં અચિયત્તઘરપ્પવેસો
અચિયત્તભત્તપાણં અચિયત્તપીઢફલગસેજાસંથારગવત્થપા-
યકંબલ-દંડગ-સ્યહરણ-નિસેજ્જ ચોલપટ્ટગ મુહમોત્તિયપાય-
પુંછળાઈમાયળમંડોવહિડવગરણં । પરપરિવાઓ પરસ્સ દોસો
પરવવણ્ણેણ જં ચ ગેળહેંતિ, પરસ્સ નાસેઈ જં ચ સુકયં દાણસ્સ
ય અંતરાઈયં, દાણવિપ્પણાસો પેસુણ્ણં ચેવ મચ્છરિયં ચ ॥૨૧॥

ટીકા—‘ જં પિ ય ’ યદપિ ચ ‘ હોજ્જા ’ મવેત્, હિ=નિશ્ચિતં ‘ દવ્વજાયં’
દ્રવ્યજાતં, તદેવાદ= ‘ સ્વલગયં ’ સ્વલગતં=સ્વલં ધાન્યરાશીકરણભૂમિસ્તત્ર ગતં=
સ્થિતં, તથા—‘ સ્વેત્તગયં ’ ક્ષેત્રગતમ્=ક્ષેત્રસ્થિતં ‘ રત્નમંતરગયં ’ અરણ્યાન્તરગતં=
વનાન્તઃ સ્થિતં વા ‘ કિંચિ ’ કિંચિત્=કિમપિ ‘ પુષ્પફલતયપ્પવાલકંદમૂલ-

ઈસ વ્રત સે સાધુ કી આત્મા સમસ્ત વસ્તુઓં મેં અસારતા કે દર્શન કર
લેને સે ઢેલા ઓર કાંચન મેં સમાન બુદ્ધિ વાલા બન જાતા હૈ ॥ સૂ-૧ ॥

સૂત્રકાર પુનઃ મુનિજન કે હી કર્તવ્ય કો કહતે હૈં—‘ જંપિ ય ’ ૬૦

ટીકાર્થ—(જંપિ ય હોજ્જા હિ દવ્વજાયં) જો કુછ ભી દ્રવ્ય હો
ચાહે વ (સ્વલગયં) સ્વલિહોન મેં પડા હો ચાહે (સ્વેત્તગયં) સ્વેત મેં
પડા હો, યા (રત્નમંતરગયં વા) જંલગ મેં પડા હો (કિંચિ)

સાધુનો આત્મા સમસ્ત વસ્તુઓમાં અસારતાનું દર્શન કરી લેવાથી સોનું અને
માટીના ઢેફાને સમાન લાવે બેનાર બની જાય છે ॥ સૂ. ૧ ॥

સૂત્રકાર ફરીથી મુનિજનનાં કર્તવ્યો જ દર્શાવે છે—“ જંપિ ય ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“ જંપિ ય હોજ્જા હિ દવ્વજાયં ” જે કોઈ પણ દ્રવ્ય હોય, ભલે
તે “ સ્વલગયં ” યાળામાં પરચું હોય ભલે “ સ્વેત્તગયં ” તે ખેતરમાં પરચું
હોય, “ રત્નમંતરગયં વા ” જંગલની અંદર પરચું હોય. “ કિંચિ ” ગમે તે

सुवर्णिनी टीका अ०३ सू०२ अदस्तादानविरमणस्वरूपनिरूपणम्

७१९

तणकट्टसकराड् ' पुष्पफलवत् प्रवालकन्दमूलतणकाष्ठशर्करादि, तत्र-पुष्प-
फले प्रतीते, त्वक्=त्वचा, प्रवालोऽङ्कुरः, कन्दः=मूलादिः, मूलम्=मूलकादि,
तण काष्ठं च प्रतीतम्, शर्कराः= ' कंकर ' इति भाषा प्रसिद्धाः, एतान्यादौ यस्य
तत्तथोक्तं द्रव्यम् अप्यं ' अल्पं=स्तोकं वा ' बहु ' बहु=प्रचुरं वा ' अणुं ' अणु=
आकारेण सूक्ष्मं वा ' थूलं ' स्थूलम्-आकारेण बृहद् वा, तत् ' न कण्ड ' न
कल्पते ' उग्राहे ' अवग्रहे ' अदिण्णे ' अदत्ते तत्तद्वस्तुस्वामिनिदेशमप्येत्यर्थः,
' गेण्हेउं ' ग्रहीतुम्, किन्तु ' जे ' यद् ग्राह्यं भवेत्, तत् ' हणि हणि ' अहन्य-
हनि=प्रतिदिनम् ' उग्राहं ' अवग्रहं-तत्स्वामिनिदेशम्, ' अणुणवि य ' अनु-
ज्ञाप्य=प्राप्य ' गेण्हियव्वं ' ग्रहीतव्यम्। तथा ' सव्वकालं ' सर्वकालं=सर्वदा
' अचियत्तवरूपवेसो ' अभीतिकारकगृहप्रवेशः ' वज्जेयव्वो ' वर्जितव्यः तथा-

कुछ भी हो जैसे (पुष्पफलवत्प्रवालकंदमूलतणकट्टसकराड्) चाहे वह
वस्तु पुष्परूप में हो, फलरूप में हो, छालरूप में हो, प्रवाल-कोपल रूप
में हो, मूल आदि कंद रूप में हो, मूलक आदि रूप में हो, तण काष्ठ
आदि के रूप हो चाहे कंकर आदि के रूप में भी क्यों न हो। ये सब
वस्तुएँ वहां (अप्यं वा) थोड़ी हो या (बहुं वा) बहुत हो (अणुं वा)
आकार से छोटी हो या (थूलं वा) बड़ी हो, किसी भी तरह से वह
इन वस्तुओं को (न कण्ड उग्राहे अदिण्णम्मि गेण्हेउं) बिना उनके
मालिक की आज्ञाप्राप्त किये किसी भी रूप में लेना नहीं कल्पता है।
तथा (जे) जो वस्तुएँ साधु के लिये ग्राह्य हैं वे भी (हणि हणि)
प्रतिदिन (उग्राहं अणुणावि य) उनके स्वामी की आज्ञा प्राप्त कर ही
(गेण्हियव्वं) ग्रहण करने योग्य हैं। तथा (वज्जेयव्वो य सव्वकालं

द्रव्य होय, " पुष्पफलवत्प्रवालकंदमूलतणकट्टसकराड् " सबे ते वस्तु पुष्परूपे
होय, फलरूपे होय, छालरूपे होय, प्रवाल-कोपणना रूपमां होय, मूल आदि
कंदरूपे होय, मूल आदि रूपमां होय, तण काष्ठ आदिरूपे होय, सबे कंकर
आदिरूपे होय, ते गंधी वस्तुओ त्यां " अप्यं वा " थोड़ी होय के " बहुं वा "
वधारे होय, " अणुं वा " कदमां नानी होय के " थूलं वा " मोठी होय,
कोई पक्ष रीते ओ वस्तुओने " न कण्ड उग्राहे अदिण्णम्मि गेण्हेउं " तेना
मालिकनी आज्ञा दीधा बिना कोई पक्ष रीते तेने ग्रहण करवातुं मुनिने
कल्पतुं नथी. तथा " जे " वस्तुओ साधुओने ग्रहण करवा योग्य छे ते पक्ष
" हणिहणि " प्रतिदिन " उग्राहे अणुणा वि य " तेमना मालिकनी आज्ञा
सधने न " गेण्हियव्वं " ग्रहण करवा योग्य छे. तथा " वज्जेयव्वो य सव्व-

‘अचियत्तभक्तपाणं’ अप्रतीतिकारकभक्तपानं वर्जितव्यम्, अविश्वासभाजनस्य भक्तपानं न ग्राह्यमित्यर्थः, तथा—‘अचियत्तपीठफलमसेज्जासंथारगवत्थपाय—कंबलदंडगरओहरणनिसेज्जचोलपट्टगमुहपोत्तियपायपुंछणाइभायणभंडोवहिउवगरणं’ अप्रतीतिकारकपीठफलशय्यासंस्तारकवस्त्रपात्रकव्यलदण्डकरजोहरणनिपद्याचोलपट्टकसदोरकमुखवस्त्रिका पादरोज्जनादिभाजनमाण्डोपधुषकरणं वर्जितव्यम्, अविश्वासभाजनस्य पीठफलकादिकं न ग्राह्यमित्यर्थः, तथा ‘परपरिवाओ’ परपरिवादः—काक्वा परदोषप्रकटनम्, वर्जितव्यः, ‘परस्स’ परस्य ‘दोसो’ दोषश्च वर्जनीयः, परोक्षे निन्दा, प्रत्यक्षे दोषकथनम्, इत्युभयं च

अचियत्तघरप्पवेसो) जो अपनी प्रतीति-विश्वास-नहीं करता हो उसके घर पर साधु को सर्वदा नहीं जाना चाहिये, तथा (अचियत्त-भक्तपाणं) जो अपनी प्रतीति नहीं करता हो उसके यहां से साधु को भक्तपान नहीं लेना चाहिये। इसी तरह (अचियत्तपीठफलमसेज्जासं-थारगवत्थपायकंबल दंडगरओहरणनिसेज्जचोलपट्टगमुहपोत्तियपायपुं-छणाइ) जो व्यक्ति अपने ऊपर विश्वास नहीं रखता हो उसके द्वारा प्रदत्त-(दिगा हुआ) पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक, वस्त्र, पात्र, कव्यल, दण्डक,, रजोहरण, निपद्या, चोलपट्टक, सदोरकमुखवस्त्रिका, पादप्रो-च्छन आदि, तथा (भायणभंडोवहिउवगरणं) भाजन, भांड, उपधि, ये सब उपकरण नहीं लेना चाहिये। (परपरिवाओ) तथा काकुरूप से साधु को पर के दोषों को प्रकट नहीं करना चाहिये। तथा (परस्स-दोसो) परोक्ष में निन्दा करना और साम्प्रदोषों को कहना ये दोनों

का ‘अचियत्तघरप्पवेसो’ ने पोतानो विश्वास न करते होय, तेना धरे साधुओ कही अबु जेठओ नही, तथा “अचियत्तभक्तपाणं” ने पोताना पर विश्वास न भूकते होय तेने त्यांथी साधुओ आधार पाणी स्वीकारवा जेठओ नही ओ ए रीते “अचियत्तपीठफलमसेज्जासंथारगवत्थपायकंबलदंडगरओ-हरणनिसेज्जचोलपट्टगमुहपोत्तियपायपुंछणाइ” ने व्यक्ति पोताना पर विश्वास न राखती होय तेना द्वारा आपयेस पीठ, इलक, शय्या, संस्तारक, वस्त्र, पात्र कंबल, दंडक, रजोहरण, निपद्या, चोलपट्टक, दोरायडित मुहपत्ति, पाद प्रोच्छन आदि तथा “भायणभंडोवहिउवगरणं” लाजन, (पात्रा लांड, उपधि, ओ अधां साधनो देवां जेठओ नही. “परपरिवाओ” तथा काकुरानी जेभ साधु-ओओ भीजना देवो प्रगट करवा जेठओ नही. तथा “परस्सदोसो” परोक्ष रीते निन्दा करवानी तथा आमे ए दोषो कहेवानी प्रवृत्ति साधुओ छोडवी

वर्जनीयम् । तथा—‘परवचणसेण’ परवचणदेशेन वाङ्मलानादीनां निमित्तेन ‘जं च’ यच्च=अज्ञानादिकं, ‘गेणहंति’ गृह्णाति=वैयावृत्त्यकारकः, तदन्यैर्नोपभोक्तव्यम् । बालग्लानादिनिमित्तमानि तं वस्तु यद्यवशिष्टं भवेत्, तथा तद् वस्तु स्वामिनि-देशेन संभोक्तव्यमित्यर्थः, ‘दाणस्स’ दानस्य तथा ‘जं च’ यच्च ‘सुकयं’ सुकृतं=पुण्यादिकं, ‘नाणैस्स’ नाशयति, अवहनुत्ते, येन वचनादिना परकृतपुण्यादेरपसृति-र्भवति, तद् विसर्ज्यमित्यर्थः, तथा—‘दाणस्स य’ दानस्य च ‘अंतराण्यं’ अन्तराण्यिकम्=येन वचनादिना दानान्तराण्यो भवेत्तद् वर्जनीयम्, तथा—‘दाण-विष्णणासो’ दानविष्णणाशः=येन वचनादिना दानस्य विनाशो भवति, तद् वर्जनीयम्, तथा—‘पेसुण्णं चेव’ पैशुण्यं=परोक्षे परदोषाविष्करणं ‘चुगली’ इति माया प्राप्तं चेव ‘मण्डारिं च’ मात्सर्यम्=ईर्ष्या च वर्जनीयम् ॥ सू०२ ॥

बातें भी साधु को छोड़ देनी चाहिये । तथा—(परवचणसेण जं च गेणहंति) बाल ग्लान आदि के निमित्त से जो अज्ञान आदि वैयावृत्त्यकारक साधु लाया होवे वह दूसरे साधुओं को अपने उपयोग में नहीं लेना चाहिये । तात्पर्य इसका यह है कि बाल ग्लान आदि अवस्थापन्न साधुजन के लिये जो वस्तु लाई गई हो वह उनके उपयोग से यदि बच जाय तो वह उस वस्तु के स्वामी की आज्ञा लेकर ही दूसरे साधुओं को अपने उपयोग में लानी चाहिये । तथा (परस्स जं च सुकयं) जिस वचन से दूसरे के सुकृत आदि पुण्यकर्मा का अवहनुत्त होता हो ऐसा वचन साधु को त्याग कर देना चाहिये । तथा (दाणस्स अंतराण्यं) जिस वचन से दान में अंतराय हो जावे तो ऐसा वचन भी नहीं कहना चाहिये । तथा (दाणविष्णणासो) जिस वचन से दान का विनाश होना हो ऐसा वचन भी नहीं बोलना चाहिये । तथा (पेसुण्णं) साधु को

नोध्थे. तथा “परवचणसेण जं च गेणहंति” बालग्लान आदिने निमित्तो ने आहार आदि वैयावृत्त्यकारक साधु लाव्या होय ते भीअ साधुओओ पोताना उपयोगमां देखो नोध्थे नही. तेनुं तात्पर्य ओ.छे के बाल ग्लान आदि अवस्थापन्न साधुजनने माटे ओ वस्तु लाववाभां आवी होय.ते.तेओओ वापर्या पछी वधे ते. ते वस्तुना भासिकनी आज्ञा लधने अ भीअ साधुओओ तेने पोताना उपयोगमां देखी नोध्थे ओ. तथा “परस्स जं च सुकयं” ओ वच-नोथी धीमनां सुकृत आदि पुण्यभोना नाश थतो होय तेवां वचनो साधुओ ओलवां नोध्थे नही. अटवे के तेवा वचनो ओलवानुं साधुओ अं ध करवु नोध्थे. तथा “दाणस्स अंतराण्यं” ओ वचनथी दानमां अंतराक नडे ओवां वचनो पणुं छडेवां नोध्थे नही. तथा “दाणविष्णणासो” ओ. वचनोथी दाननो विनाश थतो होय ते वचनो पणुं ओलवां नोध्थे नही. तथा “पेसु-

कीदृशो मुनिरिदं व्रतं नाराधयती ? त्याह—‘ जे वि य ’ इत्यादि—

मूलम्—जे वि य पीठफलकसेजासंधारगवत्थपायकंबल-
दंडभरयहरणानिसेज चोलपट्टगमुहपोत्तियशाय पुंछणाइ भायण
भंडोवहिउवगरणं असंविभागी असंगहरुई, तवतेणे य वइतेणे
य रुवतेणे य आचारतेणे य भावतेणे य सदकरे झंझकरे
कलहकरे वेरकरे विकहकरे असम्पाहिकरे तथा अप्पमाणभोई
सययं अणुवद्धवेरे य निच्चरोसी से तारिसए नाराहए
वयमिणं ॥ सू० ३ ॥

टीका—‘ जे वि य ’ योऽपि च मुनिः ‘ पीठफलकसेजासंधारगवत्थपाय-
कंबलचोलपट्टभरयहरणमुहपोत्तियशायपुंछणाइभायणभंडोवहिउवगरणं ’ पीठ-
फलकशय्यासंस्तारकवस्त्रपात्रकंबलचोलपट्टकरजोदरणमुखवस्त्रिकापादप्रोच्छनादि-
भाजनभाण्डोपधुपकरणम्=षण्णागुणविशुद्धिलब्धं पीठफलकादिकं लब्ध्वेति
गम्यते, तस्य असंविभागी=अविभागकारी-आचार्यगलानादिभ्यः पीठफलकादीन्
अविभज्यैव स्वार्थबुद्धया स्वयमुक्तो भवति स इदं व्रतं नाराधयतीत्यग्रेण

किसीकी चुगली नहीं करना चाहिये । तथा (मच्छरियं) साधु को हर्ष्या-
भाव का भी परित्याग कर देना चाहिये ॥ सू-२ ॥

किस प्रकार का मुनि इस व्रत की आराधना नहीं कर सकता है
इस बात को कहते हैं—‘ जे वि य ’ इत्यादि० ।

टीकार्थ—(जे वि य) जो मुनि षण्णागुण की विशुद्धि से
प्राप्त पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक, वस्त्र, पात्र, कंबल, दंड, रजोहरण,
निषद्या, चोलपट्टक, सदोरकमुखवस्त्रिका, पादप्रोच्छन आदि, तथा
भाजन, भांड, उपधि, इन सब उपकरणों को प्राप्त करके उनका विभाग

णं” साधुએ કેઈની આડી કરી બેઠો એ નહીં તથા “મચ્છરિયં” સાધુએ
ઘર્ષ્યાભાવનો પણ પરિત્યાગ કરવો બેઠો એ ॥ સૂ-૨ ॥

કેવા મુનિ આ વ્રતની આરાધના કરી શકતા નથી તે વાત હવે સૂત્ર-
કાર કહે છે—“જે વિ ચ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“જે વિ ચ” જે મુનિ એપણા ગુણની વિશુદ્ધિથી પ્રાપ્ત થયેલ પીઠ ફલક,
શય્યા સંસ્તારક, વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, દંડ રજોહરણ, નિષદ્યા, ચોલપટ્ટ, ઢોરા
સહિતની મુદ્ધપત્તિ, પાદપ્રોચ્છન આદિ તથા ભાજન, ભાંડ, ઉપધિ એ અર્થ

સુવર્ણિની ટીકા અ ૨ સુ ૩ કિદગુમુનિઅવત્તાવાનાવિવતં નારાધયતિ ૭૨૩

સમ્બન્ધઃ । તથા-‘અસંગહરૂઈ’ અસંગહરૂચિઃ-ન સંગ્રહે રુચિર્યસ્ય સ તથોક્તઃ-
ગચ્છોપગ્રહકસ્ય ઇષણાદોષરહિતસ્ય લભ્યમાનસ્ય વસ્ત્રપાત્રાદિકસ્ય સ્વાર્થ-
પરાયણત્વેન-‘સમ પ્રચુર’ વસ્ત્રપાત્રાદિકં વિદ્યતે કિમન્યેષાં ચિન્તયા ’ इति वि-
चिन्त्य સંગ્રહયુદ્ધિવર્જિત इत्यर्थः । अत्र मूर्च्छया संग्रहकरणं निषिद्धम् । तथा ‘तव-
तेणे’ तपः स्तेनः=तपश्चौरः=यथा स्वभावतः कृदाशरीरकश्चिदनगारं दृष्ट्वा
कश्चित्पृच्छति-‘ भो मुने ! यो मासक्षपणको मुनिः श्रूयते स भवानेव ’ तदा स
स्वमानाद्यर्थमाह-‘ साधवः क्षपका एव भवन्ति ’ अथवा तूष्णीमास्ते. स तपः-

नहीं करता है-अर्थात् आचार्य, ग्लान आदि मुनिजनों को इन पीठ, फलक आदि का विभाग न करके स्वार्थयुद्धि से जो स्वयं इनका उप-
भोक्ता होता है, वह साधु इस व्रत की आराधना नहीं कर सकता है ।
तथा (असंगहरूई) जिसकी संग्रह में रुचि नहीं होती है, अर्थात् जो
साधु स्वार्थ में परायण होने के कारण इन पीठ फलक, वस्त्र, पात्र
आदि उपकरणों को कि जो अपने गच्छ के उपकारक और इषणादोष
से विशुद्ध हैं मिलते हुए भी इस भावना से कि मेरे पास तो ये वस्त्र
पात्रादि उपकरण हैं मुझे दूसरों की चिन्ता से क्या काम है ” इस
विचार से संग्रह करने की बुद्धि से वर्जित होता है वह साधु इस व्रत
का आराधक नहीं हो सकता है । मूर्च्छा भाव से ही संग्रह करने का
निषेध है । तथा जो साधु (तवतेणे य) इसी तरह जो तपः स्तेन है,
अर्थात् जैसे कोई साधु स्वभावतः कृदा शरीर हो और कोई दूसरा इस
प्रकार पूछे कि हे मुने ! जो मास क्षपण आदि करने वाले तपस्वी मुनि-

ઉપકરણોને પ્રાપ્ત કરીને તેના વિભાગ કરતા નથી એટલે કે આચાર્ય, ગ્લાન
આદિ મુનિજનોને માટે એ પીઠ, ફલક આદિના વિભાગ કર્યા વિના સ્વાર્થ
બુદ્ધિથી પોતે જ તેનો ઉપભોગ કર્યા કરે છે, તે સાધુ આ વ્રતની આરાધના
કરી શકતો નથી. તથા “ અસંગહરૂઈ ” જેની સંગ્રહમાં રુચિ હોતી નથી,
એટલે કે જે સાધુ સ્વાર્થ પરાયણ હોવાથી એ વસ્ત્ર, ફલક, પાત્ર, વસ્ત્ર, આદિ
ઉપકરણો, કે જે પોતાના ગચ્છના ઉપકારક અને ઇષણાદોષથી રહિત છે.
તેની પ્રાપ્તિ થવા છતાં પણ “ મારી પાસે તો આ વસ્ત્ર. પાત્રાદિ ઉપકરણ છે
મારે બીજાની ચિન્તા શા માટે કરવી જોઈએ ? ” એવી લાગનાથી સંગ્રહ
કરવાની બુદ્ધિથી રહિત થઈ બળ છે, તેવો સાધુ પણ આ વ્રતનો આરાધક
થઈ શકતો નથી. મૂર્છાલાવથી જ સંગ્રહ કરવાનો નિષેધ છે. તથા જે સાધુ
“ તવતેણેય ” એ જ રીતે તપચોર છે, દાખલા તરીકે કેઈ સ.ધુ સ્વાભાવિક
રીતે જ દુબળા શરીર વાળો હોય અને તેને જોઈને બીજાં કેઈ એમ પૂછે
કે-“ હે મુનિ ! માસખમણુ આદિ કરનાર મુનિજન વિષે સાંભળવામાં આવ્યું

સ્તેનઃ પ્રાપ્યતે, 'વૃહતેણે' વચઃ સ્તેનઃ=ચાક્રચૌરઃ-યથા-કંચિત્ વ્યાખ્યાતાત્ સાધુમવલોક્ય કથિત્ પૂછતિ—'વ્યાખ્યાનવાચસ્પતિર્યઃ શ્રુતઃ સ ભવાનેવ' इति पृष्ठः स ब्रूते—'मुनयस्तादृशा भवन्त्येव' यदा मौनमास्ते, इत्येव यः परस्य ख्यातिं स्वात्मनि स्थापयति स वाक्स्तेनः, 'रुक्तेणे य' रूपस्तेनश्च—एतद्विष-वेऽपि पूर्ववद्योजना कर्तव्या । तथा 'आचारे चैव' आचारे=साधुसमाचार्यादि

રાજ સુને જાતે હૈં વે આપ હી હૈં क्या ? इस प्रकार सुनकर वह अपने मान के निमित्त ऐसा कहें कि साधु तो तपस्वी ही होते हैं, अथवा सुनकर चुप रहे, इस प्रकार से वर्तन करने वाला वह मुनि तपश्चौर- (तप का चोर) कहा जाता है । (तप का चोर) तपश्चौर-मुनि इस व्रत की आराधना करनेवाला नहीं होता है । इसी तरह (वृहतेणे) व्याख्यान करते हुए किसी मुनिराज को देखकर कोई उससे इस प्रकार पूछे कि जो व्याख्यानवाचस्पति मुनिराज सुने जाते हैं वे आप ही हैं क्या ? इस प्रकार सुनकर वह मुनिराज उसके समाधान निमित्त यह कह दे कि महानुभाव ! मुनिजन् तो व्याख्यानवाचस्पति ही होते हैं, अथवा कुछ न कह कर चुप रहे इस प्रकार का व्यवहार करनेसे वह मुनि वचन का चोर वचस्तेन-माना जाता है, क्योंकि उसने पर की ख्यातिको अपनेमें स्थापित किया है, इस तरहसे पद कि ख्याति को अपनेमें स्थापित करने वाला साधु वाक् चौर कहा जाता है । इसी तरह (रुक्तेणे) रूपस्तेन की भी व्याख्या जान लेनी चाहिये, अर्थात्-विशिष्ट रूप

છે તે શું આપ જ છે ? ” આ પ્રકારને પ્રશ્ન સાંભળીને તે પોતાના માનને માટે એવું કહે કે “ સાધુ તો તપસ્વી હોય જ છે ” અથવા તે વાત સાંભળીને મૌન રહે, એ પ્રકારનું વર્તન કરનાર મુનિને તપચૌર કહે છે. તપચૌર મુનિ આ વ્રતની આરાધના કરી શકતો નથી. એ જ રીતે “વૃહતેણે” વ્યાખ્યાન કરતા કોઈ મુનિરાજને એમને કોઈ તેમને આ પ્રમાણે પૂછે કે વ્યાખ્યાન વાચસ્પતિ જે મુનિરાજ ગણાય છે તે શું આપ જ છે ? આ પ્રમાણે સાંભળતા તેના સમાધાનને માટે એમ કહે છે કે “ હે મહાનુભાવ ! મુનિજન તો વ્યાખ્યાન વાચસ્પતિ જ હોય છે ” અથવા તેને કંઈ પણ જવાબ ન આપતાં ચૂપ રહે, એવા પ્રકારના મુનિને વચસ્તેન-વચનચૌર કહેવાય છે, કારણ કે તેણે બીજાની ખ્યાતિનું પોતાનામાં આરોપણ કર્યું છે— આ રીતે પારદાની ખ્યાતિનું પોતાનામાં આરોપણ કરનાર સાધુને વચનચૌર કહેવાય છે, એ જ પ્રમાણે “રુક્તેણે” રૂપસ્તેન-રૂપચૌરની વ્યાખ્યા પણ સમજવી. એટલે કે વિશિષ્ટ રૂપયુક્ત કોઈ સાધુની ખ્યાતિ સાંભળીને કોઈ

सुवर्णिनी टीका अ० २ सू० ३ किङ्कमुनिप्रदत्तावानादिकं व्रतं नारायणति ७२५

विषये स्तेनः=चौरः, यथा=स यः ' उत्कृष्टाचारवान् साधुः श्रूयते, स भशनेव ?' तदा वक्ति 'साधुस्तु-उत्कृष्टाचारवान् भवन्त्येव' मौनं वा समालम्ब्यते इत्येष स्वात्मनि अविद्यमानामुत्कृष्टाचारवतां स्थापयन्साधुराचारस्तेनो भवति, तथा- 'भावतेणे य' भावस्तेनश्च=भावस्य=श्रुतज्ञानादि विशेषस्य स्तेनः=चौरो भाव-

संपन्न किसी साधु की ख्याति सुनकर कोई रूपवान् मुनि से ऐसा पूछे कि महाराज ! जिनकी रूप में ख्याति हम सुन रहे हैं वे आप ही है क्या ? तो इस प्रकार की बात सुनकर वह ऐसा कहे कि साधुजन तो विशिष्टरूप शाली होते ही हैं, अथवा कुछ न कहे-चुपचाप रह जावे, तो "मौनं सम्मत्तिलक्षणं" के हिसाब से पर के विशिष्ट रूपशालित्व का अपने में आरोप करने की भावना से वह रूपस्तेन कहलावेगा। इस तरह जो साधु रूपस्तेन होता है वह इस व्रत को नहीं पाल सकता है। इसी तरह (आचारतेणे) जो साधु समाचारी आदिके विषयमें स्तेन होता है वह आचारस्तेन कहा जाता है, जैसे किसी साधुकी आचार विषय में उत्कृष्ट ख्याति सुनकर दूसरा कोई ऐसा पूछे कि भो मुने ! जिन साधु-राजकी आचार में विशेष ख्याति सुनी जाती है क्या वे आपही है ?, इस प्रकार सुनकर वह साधु प्रत्युत्तर रूप में ऐसा कहे कि महानुभाव ! साधु तो उत्कृष्ट आचार वाले होते ही हैं, इस प्रकार कहने वाला साधु आचारस्तेन कहलाता है, क्योंकि कि इस तरह की स्थिति से उसने

भाषुसु कुछ रूपवान् मुनिने એવું પૂછે કે "મહારાજ ! અમે રૂપને વિષે જેની ખ્યાતિ સાંભળી છે તે મુનિ શું આપ જ છો ?" આ પ્રકારની વાત સાંભળીને તે એવું કહે છે કે સાધુજન તો વિશિષ્ટ રૂપયુક્ત હોય જ છે " અથવા કંઈ પણ જવાબ ન આપે તો "મૌનને સંમતિનું લક્ષણ" માનીને બીજાના વિશિષ્ટ રૂપનું પોતાની અંદર આરોપણ કરવાની ભાવનાથી તે રૂપચોર કહેવાય છે આ રીતે જે સાધુ રૂપચોર હોય છે તે આ વ્રતને પાળી શકતા નથી. આ રીતે "આચારતેણે" જે સાધુ સમાચારી આદિ બાબતમાં ચોર હોય છે તે આચાર ચોર કહેવાય છે. જેમ કે કેઈ સાધુની આચારની બાબતમાં ઉત્કૃષ્ટ ખ્યાતિ સાંભળીને બીજી કોઈ વ્યક્તિ તેને એવું પૂછે કે "હે મુનિ ! જે મુનિરાજની આચારમાં ખાસ ખ્યાતિ સંભળાય છે, તે શું આપ પોતે જ છો ?" આ પ્રમાણે સાંભળીને જે મુનિ એવો પ્રત્યુત્તર વાળે કે મહાનુભાવ ! સાધુઓ તો ઉત્કૃષ્ટ આચારવાળા જ હોય છે" અ.મ કહેનાર સાધુને આચારચોર કહેવાય છે કારણ કે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિમાં તેણે પોતાનામાં જે

સ્તેનઃ, કસ્યાપિ શ્રુતવિશેષસ્યાપૂર્વે વ્યાખ્યાનં કસ્યાપિ મુલાદુપશ્રુત્ય જનસમક્ષે સ્વકીયસ્તેન તં રૂપાપયન સાધુર્ભાવસ્તેન ઉચ્યતે । તથા યઃ સાધુઃ ‘સદ્કરે’ શબ્દકરઃ=પ્રહરરાત્રિગમનાનન્તરં યો મહતા મહતા શબ્દેન ભાષતે સ શબ્દકર ઉચ્યતે । ‘જ્ઞકરે’ જ્ઞકારકઃ=યેન કાર્યેણ ગણસ્ય ભેદો ભવતિ તત્કાર્યકારી ‘કલહકરે’ કલહકરઃ=વાકિકમળનકારી ‘વેરકરે’ વૈરકરઃ=પરસ્પરશત્રુભાવોત્પાદકઃ, તથા-‘વિકહકરે’ વિકથાકરઃ=સ્વ્યાદિકથાકારી, ‘અસમાહિકારકે’ અસમાધિકારકઃ=સ્વપરવિત્તોદ્દેગકારકઃ, તથા-‘સયા’ સદા ‘અપમાણમોર્ષ’

અપને મેં અવિદ્યમાન ઉત્કૃષ્ટ આચારવત્તા સ્થાપિત કી હૈ અતઃ જો એસે આચારસ્તેન હોતે હૈં ઉનસે હસ મહાવ્રત કી આરાધના નહીં હો સકતી હૈ, (ભાવતેણે) જો શ્રુતજ્ઞાન આદિ ભાવ કી ચોરી કરતા હૈ વહ ભાવસ્તેન કહલાતા હૈ, જૈસે કિસી કે મુલ્લ સે કિસી સાધુ કા શ્રુત વિશેષસંબંધી અપૂર્વ વ્યાખ્યાન સુનકર કહતા હૈ કિ યહ વ્યાખ્યાન તો મેરા હી દિયા હુઆ હૈં, હસ પ્રકાર કા ભાવસ્તેન સાધુ મી હસ મહા-વ્રતકી આરાધના નહીં કર સકના હૈ । હસી તાહ (સદ્કરે) જો સાધુ એક પ્રહર રાત્રિ કે ચલે જાને કે બાદ બહે જોર ૨ સે બોલતા હૈં ઉસકા નામ શબ્દકર હૈ । (જ્ઞકરે) જિસ કાર્ય સે ગણ મેં ભેદ હો જાય ઉસ કામ કો કરને વાલા સાધુ જ્ઞકારક હૈ । (કલહકરે) આપસ મેં જો વાક્કલહ કર બેઠતા હૈ ઉસકા નામ કલહકર હૈ, (વેરકરે) પરસ્પર મેં જો શત્રુતા કા ઉત્પાદક હોના હૈ વહ વૈરકર હૈ, (વિકહકરે) સ્ત્રી આદિ વિકથાઓ કો કરનેવાલા સાધુ વિકથાકર હૈ, (અસમાહિકરે)

અવિદ્યમાન છે તે ઉત્કૃષ્ટ આચારવત્તાનું આરોપણ કર્યું છે. તેથી જે સાધુઓ એવાં આચાર ચોર હોય છે તેમનાથી આ મહાવ્રતની આરાધના થઈ શકતી નથી. “ભાવતેણે” જે શ્રુતજ્ઞાન આદિ ભાવની ચોરી કરે છે તે ભાવચોર કહેવાય છે. જેમ કે કેદારન. મોઢે કોઈ સાધુનું કોઈ શાસ્ત્ર અંગથી અપૂર્વ વ્યાખ્યાન સાંભળીને જે સાધુ એમકહે કે આ વ્યાખ્યાન તો મેં જ આપેલું છે.” આ પ્રકારનો ભાવચોર સાધુ પણ આવ્રતની આરાધના કરી શકતો નથી, એ જ પ્રમાણે “સદ્કરે” શબ્દકર-જે સાધુ એક પ્રહર રાત્રિ પ્રત્યાર થયા પછી ઘણું બેરથી બોલે છે તેને શબ્દકર કહે છે, “જ્ઞકરે” જે કાર્યથી સમૂહમાં ભેદભાવ થાય તે કાર્ય કરનાર સાધુ જ્ઞકારક કહેવાય છે, “કલહકરે” આપસમાં જે વાક્કલહ કરી બેસે છે તેને કલહકર કહે છે, “વેરકરે” આપસમાં જે વેર પેદા કરાવનાર હોય તે વેરકર કહે છે, “વિકહકરે” સ્ત્રી આદિ વિકથાઓ કરનાર સાધુને વિકથાકર કહે

દશિની ટીકા અ૦ ૩ સુ. ૪ કોમુનિરવ્ત્તાદાનાવિવ્રતમારાધયતિ

૬૨૭

અપ્રમાણભોજી=દ્વાવિંશત્કચલાધિકાદારી. 'સયયં' સતત=નિરન્તરમ્ 'અણુવદ્ધ-
વૈરે' અણુવદ્ધવૈર=અણુવદ્ધિચ્છવૈરભાવઃ, ચ=પુનઃ 'નિચ્ચરોસી' નીત્યરોપી=
સદાકોપક્ષીલઃ, 'સે તારિસણ' સ તાદશઃ સાધુઃ 'નારાહણ' નારાધયતિ 'ઇણ'
ઇદમ્=પૂર્વોક્તં, વ્રતમ્=વ્રતસાધયતિત્વસ્વરૂપમ્ ॥ સૂ. ૩ ॥

કઃ પુનરિદં વ્રતસાધયતિત્વં સમર્થઃ ? इत्याह—'अह केरिसण' इत्यादि-

મૂલમ્—અહ કેરિસણ પુણાઈ આરાહણ વયામિણં ? જે સે
ઉવહિ ભત્તપાણસંગહણદાણકુસલે અચ્ચંત બાલ દુબ્બલ
ગિલાણ બુદ્ધિસ્વવગપવત્તયઆયરિય ઉવજ્ઞાણ સેહે સાહમ્મિણ
તવસ્સિકુલગણસંઘે ય ચેદ્ધયદ્ધે નિજ્જરટ્ઠી વેયાવચ્ચં અણિ-
સ્સિયં દસવિહં વદ્ધુવિહં કરેદ્ધ, નય અવિયત્તસ્સ ધં પવિ-
સદ્ધ, ન ય અચિયત્તસ્સ ભત્તપાણં ગિણહદ્ધ, ન ય અચિયત્તસ્સ
સેવદ્ધ પાંઠિફલગ--સેજ્જા-સંથારગ--વરથપાય-કંબલ--દંડગર-
ઓહરણ-નિસજ્જચોલપટ્ટગમુહપોત્તિયપાયપુંછળાઈ -- ભાયણ

अपने और पर के चित्त में उद्वेगभाव पैदा कर देने वाला साधु अस-
माधिकारक है, (सया अप्रमाणभोई) सदा बत्तीसग्रास से अधिक
भोजन करने वाला साधु अप्रमाणभोजी कहलाता है (सययं अणुवद-
धेरे य) जिसका वैर भाव कभी भी शान्त न हो वह साधु सततानु-
वद धैर कहलाता है, (निचचरोसी) जो नित्य ही कुपि स्थिति में
रहता है वह नित्यरोपी कहलाता है। (से तारिमण) इस प्रकार तप-
स्तेन आदि विशेषणवाला साधु (इणं वयं गाराहण) इस महाव्रत की
आराधना नहीं कर सकता है ॥ ३ ॥

છે, “અસમાધિકારક” થાતાના તથા અન્યના ચિત્તમાં ઉદ્વેગ પેદા કરનાર સાધુને
અસમાધિકારક કહે છે, “સયા અપ્રમાણભોઈ” સદા બત્તીસ ગ્રાસ કરતાં
વધારે આહાર લેનાર સાધુને અપ્રમાણ ભોજી કહે છે, “સયયં અણુવદ્ધવૈરય”
જેની વેર ભાવના કદી પણ શાન્ત ન થાય તે સાધુને સતતાનુવદ્ધ વૈર કહે-
વાય છે. “નિચ્ચરોસી” જે હિંમેશાં ક્રોધમાં જ રહે છે તેને નિત્યરોપી કહે
છે, “સે તારિસણ” આ રીતે તપથેાર આદિ વિશેષણો વાળો સાધુ “ઇણવયં
નારાહણ” આ મહાવ્રતની આરાધના કરી શકતો નથી ॥ ૩ ॥

મંડોવહિતવગરણ, નય પરિવાય પરસ્સ ઝંપડ, ન યાવિ દોસે
પરસ્મ ગેપહડ, પર વવણસેણ ત્રિ ન કિચિં ગેપહડ, ણ ય વિ-
પરિમાણદ્ધ કંચિઝ્ઞણં, ણ યાવિ ણાસેદ્ધ દિણ્ણસુનયં, દાઠ્ઠણ
ય કાઠ્ઠણ ય ણ હોદ્ધ; પચ્છાતાવિણ, સંવિભાગ-સીલે, સંગહો
વગ્ગહકુસલે, સે તારિસણ આરાહેદ્ધ વયમિણં ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—‘અહ’ અથેતિ પ્રશ્ને, ‘કેરિસણ’ કીદશઃ સાધુઃ ‘પુણાઈ’
‘વયમિણં’ વ્રતમિદમ્=અદત્તાદાનવિરમણરૂપમિદં વ્રતમ્, ‘આરાહણ’ આરાધ-
યતિ? इति प्रश्ने सति प्राह—‘जे से’ यः सः ‘उवहिभत्तपाणसंगहणदाणकुसले’
उपधिभक्तपानसंग्रहणदानकुशलः=उत्र उपधिः=स्वस्वपात्रादिः, भक्तपाने मसिद्धे तेषां
संग्रहणे=आदाने साधर्मिकेभ्यो दाने च कुशलो विधिज्ञो मुनिः। ‘अचंचंतवाल
दुब्बलगिलाणबुद्धु खवणवत्तय आवरिय उज्झाण सेद्वे साहम्मिण तयस्सि कुल
गण संघे य’ अत्यन्त दातृदुर्बलानदृढपासक्षपकप्रवृत्ताचार्योपाध्याये शैक्षे—

અવ સૂત્રકાર હસ મહાવ્રતની આરાધના કરને કે લિયે કેસા
સાધુ સમર્થ હો મકતા હૈ? यह कहते हैं—‘अह केरिसण’ इत्यादि०।

ટીકાર્થ—(અહ કેરિસણ પુણાઈ વયમિણં આરાહણ?) કેસા સાધુ
હમ અદત્તાદાનવિરમણરૂપ મહાવ્રતની આરાધના કર સકતા હૈ? હમને
ઉત્તર મેં કહતે હૈ (જે સે) જો સાધુ (ઉવહિભત્તગણ સંગહણદાણ-
કુસલે) ઉપધિ વજ્ર પાત્ર આદિ, એવં ભક્તપાન, इनको अपने साधर्मिक
साधुओं के लिये लेने में और उन्हें इन वस्तुओं के देने में कुशल-
विधिज्ञ-होना है, तथा (अचंचंतवालदुब्बलगिलाणबुद्धुखवणवत्तय
आवरियउज्झाण) जो संघ में अत्यंत बाल हैं—आठ वर्ष के

હવે આ મહાવ્રતની આરાધના કરવાને માટે કેવો સાધુ સમર્થ હોઈ
શકે છે તે સૂત્રકાર બતાવે છે “અહ કેરિસણ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“અહ કેરિસણ પુણાઈવયમિણં આરાહણ?” કેવો સાધુ આ અદત્તાદાન
વિરમણરૂપ મહાવ્રતની આરાધના કરી શકે છે? તેના જવાબમાં સૂત્રકાર કહે
છે—“જે સે” જે સાધુ “ઉવહિભત્તગણસંગહણદાણકુસલે” ઉપધિ, વજ્ર,
પાત્ર આદિ અને આહાર પાણી, પોતાના સાધર્મિક સાધુઓને માટે લેવામાં
અને નેમને તે વસ્તુઓ દેવામાં દુશ્ચાલ-વિધિજ્ઞ-હોય છે, તથા “અચંચંતવાલ
દુબ્બલગિલાણબુદ્ધસ્વગવત્તયઆવરિયઊજ્જાણ” જે જે સંઘમાં અત્યંત
બાળ છે—આઠ વર્ષના બાળ સાધુ છે, તથા જે દુર્બલ છે—કમજોર હોવાથી

સુરસિની ડીકા અ. ૩ સૂ. ૭૪ કોમુનિરદત્તાવાનાદિવ્રતમારાધયતિ ?

૭૨૨

સાધર્મિકે તપસ્વિકુલગણસદ્ધે, તત્ર અત્પન્તવાલઃ=વપ્તવપોયોવાલઃ, અત્પન્ત દુર્બલઃ=કૃશાકૃત્ત્વેન સ્વકાર્યકરણાક્ષમઃ, 'ગિલ્લાન' ગ્લાનઃ=વ્યાધ્યાદિના મિશ્ના-ટનાદાવસમર્થઃ, 'વૃદ્ધ' વૃદ્ધઃ=સ્થવિર જ્ઞાનવૃદ્ધઃ, પર્ણપૃથ્વઃ, વર્ણપૃથ્વઃ, 'સ્વર્ગ' સ્વર્ગઃ=માસક્ષપણાદ્યુપ્રતપઃકારિત્વેન પ્રવચનપ્રધાવકઃ, 'પર્વતય' પર્વર્તકઃ-પ્રશસ્તયોગેષુ યથાયોગ્યનયા સાધુન્ પર્વર્તપ્રતીતિ પ્રવર્તકઃ, આચાર્યઃ=ગણનેતા-યો હિ જ્ઞાનાનુસારેણ સ્વયમાચરતિ, અન્યાશ્રાચારયતિ સ આચાર્યઃ, તદુક્તમ્-

‘આચિનોતિ ચ જ્ઞાસ્ત્રાણિ, આચારં પ્રાહયત્યપિ ।

સ્વયમાચરતે યસ્માન્તસ્માદાચાર્યુચ્યતે ” ઈતિ ।

ઉપાધ્યાયઃ-ઉપ-સમીપે આગતાન્=શિષ્યાન્ સૂત્રાર્થમધ્યાપયતિ યઃ સ ઉપાધ્યાયઃ, એવાં પ્રમાદારકચ્છઃ. તસ્મિન્. તથોક્તે, તથા ‘સેહે’ શૈશે=નવ-દીક્ષિતે સાધુ, તથા-‘સાદમ્મિ’ સાધર્મિકે=શ્રુતલિંગપ્રવચનૈઃ સમાનશ્રદ્ધાવાન વાલક સાધુ હૈં તથા જો દુર્બલ હૈં—કમ જોર હોને સે જો અપને કાર્ય કરને મેં અક્ષમ હૈ, જો ગ્લાન હૈં-વ્યાધિ આદિ કે નિમિત્ત કો હેકર જો મિશ્નાવૃત્તિ આદિ કરને મેં અસમર્થ હૈં, જો વૃદ્ધ હૈં-સ્થવિર-જરા સે જર્જરિત શરીર વાલે હૈં જ્ઞાન કી અપેક્ષા દીક્ષાપર્યાપ કી અપેક્ષા ઓર આયુ કી અપેક્ષા જો વૃદ્ધ-ચહે હૈં, જો ક્ષપક હૈં માસક્ષપક આદિ ઉગ્ર તપસ્યા કરનેવાલે હૈં, જો પર્વર્તક હૈં-પ્રશસ્ત-યોગોમેં સાધુજનો કો ડનકી યોગ્યતા કે અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરાને વાલે હૈં.-જો આચાર્ય હૈં-ગણ કે નેતા હૈં-અર્થાત્-સાધુ સંબંધી આચાર કો જો સ્વયં પાલતે હૈં, ઓર દુસરે સાધુઓ સે પલાતે હૈં, જો ઉપાધ્યાય હૈં-અપને પાસમેં આયે છુપ સાધુઓ કો-શિષ્યજનોં કો જો સૂત્ર પઢાતે હૈં, જો (સે હે) શિષ્ય હૈં-નવ દીક્ષિત સાધુજન હૈં, જો (સાદમ્મિ) સાધર્મિક હૈં-શ્રુત લિંગ ઓર પ્રવચન-પ્રરુપણા ઇનકો લેકર જિનકીશ્રદ્ધા સમાન હૈ જો

જે પોતાનાં કામ કરવાને અસમર્થ છે, જે ગ્લાન છે વ્યાધિ આદિ ને કારણે જે મિશ્નાવૃત્તિ આદિ કરવાને અસમર્થ છે, જે વૃદ્ધ છે-સ્થવિર-જરાને કારણે જર્જરિત શરીરવાળાં છે, જ્ઞાનની અપેક્ષાએ; દીક્ષા પર્યાપની અપેક્ષાએ અને આયુની અપેક્ષાએ જે વૃદ્ધ મોટાં છે, જે ક્ષપક છે માસઅમયુ આદિ ઉગ્ર તપસ્યા કરનાર છે, જે પર્વર્તક છે-પ્રશસ્ત યોગોમાં સાધુજનોને તેમની યોગ્યતા અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરાવનાર છે, જે આચાર્ય છે-ગણના નેતા છે એટલે કે સાધુનાં આચારોને જે બાંહે પાળે છે અને બીજા સાધુઓ પાસે પળાવે છે, જે ઉપાધ્યાય છે-પોતાની પાસે આવેલા સાધુઓનાં-શિષ્યજનોને જેઓ સૂત્રો ભણાવે છે, જે “સેહે” શિષ્યો છે-નવદીક્ષિત સાધુઓ છે, જે “સા-

સાધર્મિક ઉચ્ચતે, તસ્મિન્, તથા-‘તવસ્મિ કુલગણસંઘે ય’ તપસ્વિકુલગણસંઘે ચ, તત્ર-તપસ્વી=વિકૃતિ વર્જક; ચતુર્થઢક્તઃદિકાશી વા, કુલમ્ = ઁકગુરુકશિષ્ય-સમુદાયરુપમ્, ગણઃ=કુલસમુદાયઃ;સંઘઃ=ગણસમુદાયરુપઃ, ઁતેવાં મમાહારદ્વન્દ્ઃ, તસ્મિન્સ્તથોક્તે ચ, અત્ર સર્વત્ર વિવચાર્થે સત્તપી, તેન તસદ્વિપચક નિત્યર્થઃ, ‘ચેદ્-યદ્દે’ ચૈત્યાર્થઃ-ચૈત્ય=જ્ઞાનં ‘વિવોસંજ્ઞાને’ ઇત્યસ્માન્ સંસદાદિત્વાદ્ ઢાવે ક્વિપિ ‘ચિન્’ સંજ્ઞાનં સમ્યગ્જ્ઞાનં, ચિદેદ ચૈત્યં, સ્વાર્થે વ્યજ્, તદેવ અર્થઃ-વયોજનં યસ્ય સ તથોક્તઃ સમ્યગ્ જ્ઞાનામિ પ્રાપીત્યર્થઃ. તથા-‘નિઝ્જગટ્ટી’ નિર્જરાર્થો- (તવસ્મિકુલગણસંઘે ય) તપસ્વી હૈં-વિકૃતિ (વિગય) કે સ્વાગી હૈં અથવા ચતુર્થ ઢક્ત આદિ તપસ્વાઓ કે કરતે વાલે હૈં. તથા જો ઁક હી ગુરુ કે શિષ્યો વા સમુદાય હૈં વહ કુલ હૈં, કુલ કે સમુદાય કા નામ ગણ હૈં, ગણસમુદાય કો સંઘ કહતે હૈં સો ઇવ સચકો (ચેદ્યદ્દે) સમ્યક્ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ કા અમિલાધી તથઃ (નિઝ્જગટ્ટી) કર્મો કી નિર્જરા કા ઇચ્છુક મુનિ (અણિસ્મિયં) ઇહલોક ઁર પરલોક સંઘધી આકાંક્ષા રહિત હોકર (દસવિહં) દશ પ્રકાર કી (ઘટ્ટુવિહં) ઢક્ત-પાન આદિ વિવિધ પ્રકાર સે (વેયાવચ્ચં કરેહ) વેયાવચ્ચ કરતા હૈં- - ઁનકી સહાયતા કરતા હૈં વહ ઇસ મહાંઘનકો પાલ સકતા હૈં ।

યહાં જા ‘ચેદ્યદ્દે’ પદ આયા હૈં ઁસકી છાયા ‘ચૈત્યાર્થ’ ઁસી હૈં । સંજ્ઞાનાર્થક ચિન્ ધાતુ સે “સંસદાદિત્વાન્” ઇમ સૂત્ર છાયા ઢાવ મેં ક્વિપ્ પ્રત્યય હોને પર ચિન્ ઁસા શબ્દ ઢન જાતા હૈં, ઇસ કા અર્થ સંજ્ઞાન-સમ્યગ્જ્ઞાન-હોતા હૈં । ફિર સ્વાર્થ મેં ‘વ્યજ્’ પ્રત્યય હોને પર

હન્મિ” સાધર્મિક છે, જે “તવસ્મિ કુલગણસંઘે ય” તપસ્વી છે. વિકૃતિ-“વિગય” ના ત્યાગી છે, અથવા ચતુર્થઢક્ત આદિ તપસ્વા કરનાર છે, તથા જે ઁક જે ગુરુનો શિષ્ય સમુદાય “કુલ” છે. કુલના સમુદાયને ગણ કહે છે, ગણના સમુદાયને સંઘ કહે છે. તો ઁ સૌની “ચેદ્યદ્દે” સમ્યક્જ્ઞાનની પ્રાપ્તિના અભિલાષી તથા “નિઝ્જગટ્ટી” કર્મોની નિર્જરા માટે ઇચ્છુક મુનિ ‘અણિ-સ્મિયં’ આલોક અને પરલોક સંઘધી આકાંક્ષા રહિત ઢમને “દસવિહં” ઇસ પ્રકારની “ઘટ્ટુવિચ” આધાર પાણી આદિ વિવિધ પ્રકારે “વેયાવચ્ચં કરેહ” વેયાવચ્ચ કરે છે-તેમની જે સાધુ સહાયતા કરે છે તે આ મહાંઘન પાળી શકે છે.

અહીં જે “ચેદ્યદ્દે” પદ આવ્યું છે તેની છાયા “ચૈત્યાર્થ” છે. સંજ્ઞા-નાર્થક ‘ચિન્’ ધાતુથી “ક્વિપ્” પ્રત્યય લાગતા ‘ચિન્’ ઁવેા શબ્દ ઢની ઢત્ય છે, તેનો અર્થ સંજ્ઞાન-સમ્યગ્ જ્ઞાન-ધાય છે. છતાં સ્વાર્થવાં ‘વ્યજ્’ પ્રત્યય લાગતા ચૈત્ય શબ્દ સિદ્ધ થઈ ઢત્ય છે. તો ચિન્ ઁ ચૈત્ય છે ઁવેા

મુક્તત્વાદ્ દશવિધં વૈયાવૃત્યમિતિ કથનં કથં ન વિરુદ્ધયતે ? અત્રોચ્ય - વૈયાવૃત્યસ્ય સ્થાનં દશવિધં વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ (શ. ૨૫ ઉ. ૭) વ્યવહારસૂત્ર. (૩. ૧૦) યાગમેષુ સર્વત્ર પ્રસિદ્ધં, તત્રૈવ તદ્વદિર્ભૂતાનામન્તર્ભાવઃ, તથાદિ-અત્યન્તચાલ દુર્બ-ક્ષયોઘ્નીનેસમાવેશઃ, તયોસ્તત્સંનિહિતત્ત્વેનોક્તત્વાદ્ ભક્તપાનાનયનાદાવક્ષમત્ત્વેન તત્સાદૃશ્યાન્વ. । ક્ષપક-પ્રવર્તકયોરાચાર્યે સંનિવેશઃ, તયોસ્તત્સંનિહિતત્ત્વેનોક્તત્વાત્-જેકર સંઘ તક ચૌદહ વૈયાવૃત્ય કે સ્થાન હોતે હૈં અતઃ વૈયાવૃત્ય કે સ્થાન હોને સે વૈયાવૃત્ય મી ચૌદહ પ્રકાર કા હી હોના ચાહિયે ફિર યહાં જો ઉસમેં દશ વિધતા પ્રકટ કી હૈ સો યહ કથન પરસ્પર મેં ક્યા વિરુદ્ધ નહીં હૈ ? અવશ્ય વિરુદ્ધ હૈ ।

ઉત્તર—શોકા ઠીક હૈ, પરન્તુ વિચાર કરને પર હસકા સમાધાન અચ્છી તરહ સે હો જાતા હૈ—વૈયાવૃત્ય કે યે દશપકાર કે હી સ્થાન વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ (શ. ૨૫ ઉ. ૭) વ્યવહારસૂત્ર (૩. ૧૦) આદિ આગમેં મેં સર્વત્ર પ્રસિદ્ધ હૈં । इनमें ही इनसे यहिर्भूत भेदों का अन्तर्भाव हो जाता है । जैसे जो साधु अत्यन्तचाल एवं दुर्बल हैं इन दोनों का समावेश ग्लान साधुओं में हो जाता है क्योंकि ये उन्हीं जैसे होते हैं इसीलिये उनका पाठ उनके साथ रखा है । जिस प्रकार ग्लान साधु भक्तपान आदि के लाने में असमर्थ होना है उसी प्रकार से ये भी हैं । इस तरह इनमें परस्पर में सहशाना आने से इन दोनों का समावेश ग्लान में हो जाता है । इसी तरह से जो क्षपक और प्रवर्तक हैं उनका

સુખી વૈયાવૃત્યનાં ચૌદ સ્થાનો થાય છે, તો તે બધાં વૈયાવૃત્યનાં સ્થાન હોવાથી વૈયાવૃત્ય પણ ચૌદ પ્રકારનાં થવાં બેઠંએ. છતાં અહીં નેનાં દસ પ્રકાર બતાવ્યા છે તો તે દ્યન શુ પરસ્પરમાં વિરોધાભાસ દર્શાવતું નથી ? અવશ્ય વિરોધાભાસ દર્શાવે છે.

ઉત્તર—શોકા બરાબર છે પણ વિચાર કરતાં તેનું સારી રીતે સમાધાન થઈ બચ છે. વૈયાવૃત્યનાં એ દશ પ્રકારનાં જ સ્થાન વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ (શ. ૨૫ ઉ-૭) વ્યવહારસૂત્ર (૩-૧૦) આદિ આગમેમાં સર્વત્ર પ્રસિદ્ધ છે. તેમનામાં જ તેમનાથી બાહ્ય હોદોનો સમાવેશ થઈ બચ છે. જેમ કે જે સાધુ અત્યંત બાલ અને દુર્બલ છે તે બંનેનો સમાવેશ ગ્લાન સાધુઓમાં થઈ બચ છે, કારણ કે તેઓ તેમના જેવાં જ હોય છે તેથી તેમનો પાઠ તેમની સાથે રાખ્યો છે જેમ ગ્લાન સાધુ આકાર પાણી આદિ લાવવાને અસમર્થ હોય છે તેમ તેઓ પણ અસમર્થ છે. એજ રીતે તેઓની વચ્ચે પરસ્પરમાં સમાનતા આવવાથી તે બંનેનો સમાવેશ ‘ગ્લાન’ માં થઈ બચ છે, એ જ રીતે જે

સુશિની ટીકા અવ૩ સુ. ૪ કોનુતિવૃત્તાશનાવિવ્રનમાગધઅતિ?

૭૩૩

પ્રવચનપ્રભાવકત્વેન તત્સાદૃશ્યાચ્ચ । एवं च वैद्यावृत्यस्य-आचार्योऽपि स्थानभेदेन दशविधत्वकथनमविरुद्धम् ।

યતુ-‘ચેદ્વદ્વે’ ઇત્યસ્ય વ્યાખ્યાનમ્-“ ચૈત્યાનિ=જિનપ્રતિમાઃ, એતાસાં યોઽર્થઃ=પ્રયોજનં યસ્ય સ તથા, તત્ર ” ઇતિ ટીકાન્તરે લખ્યતે તદ્બ્રાન્તિમૂલ-કમ્, વૈયાવૃત્યસ્ય જિન પ્રતિમાં પ્રતિ વિધાનાભાવાન્ । જિનપ્રતિમાયા અપિ વૈયા-વૃત્ય સ્વીકારે વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્રધાન્યાગમેષુ વૈયા વૃત્યસ્ય દશવિધત્વપ્રકરણં વિરુદ્ધયતે-તદ્દહણેન વૈયાવૃત્યસ્યૈકાદશસંખ્યાઽતિ પ્રસજ્ઞાત્ ।

અન્તર્ભાવ આચાર્ય મેં કર દિયા જાતા હૈ । जिस प्रकार आचार्य प्रवचन के प्रभावक होते हैं उसी प्रकार से ये दोनों भी होते हैं, अतः उनके जैसे इन्हें प्रभावक होने से परस्पर में इनमें सदृशता आ जाती है यही बात प्रकट करने के लिये सूत्रकार ने इन दोनों का पाठ आचार्य के पास रखा है । इस तरह से विचार करने से वैयावृत्य के स्थान दस ही प्रकार के सिद्ध होते हैं, इसलिये इनके भेद से वैयावृत्य में दश-विधत्व कथन विरुद्ध नहीं है ऐसा जोनना चाहिये ।

તથા-જો “ચેદ્વદ્વે” હસ પદકા વ્યાખ્યાન-“ ચૈત્યાનાં અર્થઃ પ્રયો-જનમ્ યસ્ય સઃ ચૈત્યાર્થઃ ” ચૈત્ય જિન પ્રતિમા હૈ પ્રયોજન જિસકો એસા સાધુ ” એસા કહતે હૈ-અનકા યહ વ્યાખ્યાન બ્રાન્તિ મૂલક હૈ । કારણ જિન પ્રતિમા કે પ્રતિ વૈયાવૃત્ય કરને કા વિધાન નહીં હૈ । યદિ યહ વિધાન માના જાવે તો ફિર વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞસિ આદિ આગમોં મેં જો વૈયા-વૃત્ય કે યે પૂર્વોક્ત દશ ભેદ માને ગયે હૈ અનમેં વિરોધ આતા હૈ, કયોં

ક્ષપક અને પ્રવર્તક છે તેમનો સમાવેશ આચાર્યમાં કરી દેવાય છે. એમ આચાર્ય પ્રવચનના પ્રભાવક હોય છે તેમ તેઓ અને પણ હોય છે, તથા તેમના એવા તેઓ પ્રભાવક હોવાથી પરસ્પરમાં તે બાબતની નમ્રાનતા આવી જાય છે. એ જ વાત પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રકારે તે બંનેનો પાઠ આચાર્ય સાથે કર્યો છે. આ રીતે વિચાર કરતાં વૈયાવૃત્યનાં દસ પ્રકારનાં જ સ્થાન સિદ્ધ થાય છે, તેથી તેમના ભેદને કરણે વૈયાવૃત્યમાં દશ વિધતાનું કથન વિરુદ્ધ પડતું નથી એમ સમજવું જોઈએ.

તથા- જો “ચેદ્વદ્વે” આ પદનું વ્યાખ્યાન “ચૈત્યાનાં અર્થઃ પ્રયોજનમ્ યસ્ય સઃ ચૈત્યાર્થઃ” ચૈત્ય જિન પ્રતિમાં છે. તેનું પ્રયોજન એને છે એવો સાધુ” એવું જ કહે છે. તેમનું તે કથન બ્રાન્તિમૂલક છે. કારણ કે જિન પ્રતિમાનું વૈયાવૃત્ય કરવાનું વિધાન નથી. જો આ વિધાન માની લેવામા આવે તો વ્યા-ખ્યાપ્રજ્ઞસિ આદિ આગમોમાં વૈયાવૃત્યનાં જો પૂર્વોક્ત દસ ભેદ ખતાવ્યા છે

૭૧૫

પ્રશ્નચક્રાકરણસૂત્ર

કિંચ—જ્ઞાનાદિગુણરહિતાયા જહાત્મિકાયા જિનપ્રતિમાયા ભક્તપાનાદિ સાધાર્યાનપેક્ષણાનાસ્તિ વૈયાવૃત્યસ્થાનપ્રાપ્તિયોગ્યતા, અત એવ—વૈયાવૃત્યદશવિધ-ત્વપ્રતિપાદકાગમવિરોધવારણાર્થમાચાર્યે જિનપ્રતિમાયાઃ સમાવેશનમપિ ભ્રાન્તિ-મૂલકમેવ ।

इह चैत्यशब्दस्य ज्ञानार्थकत्वमागमानुकूलम्, वैयावृत्येन श्रुतादिज्ञानं जायते लभ्यते वर्धते च, तथा तीर्थंकरनामगोत्रकर्मोपाजितं भवति । तीर्थंकरत्वं च केवलज्ञानानन्तरोपक्रमम्, अतः ज्ञानार्थी वैयावृत्यं करोतीत्यर्थः सम्यगेव, उक्त-

किं जिन प्रतिमा वैयावृत्य नामका एक और ग्यारहवां भेद उत्पन्न हो जाता है । दूसरी बात एक यह भी है कि जो जिन प्रतिमा होती है उसमें वैयावृत्य के स्थान प्राप्ति की योग्यता हो नहीं है, क्योंकि कि उसमें ज्ञानादिगुण तो कोई हैं ही नहीं वह तो जड़ पत्थरकी बनी हुई होती है, उसे भक्तपान आदि द्वारा सहायता पहुँचाने रूप वैयावृत्य की क्या आवश्यकता है ? । तथा जो वैयावृत्य में दशविधत्व का प्रतिपादन करने वाला आगम है उसमें विरोध न आवे इस अभिप्राय से प्रेरित होकर जो आचार्य में जिन प्रतिमा का समावेश करते हैं उनका ऐसा करना भी भ्रान्तिमूलक ही है । चैत्य शब्द में ज्ञानार्थकताको यह हमारी मान्यता आगमनुकूल है, क्यों कि वैयावृत्य से श्रुतज्ञान की प्राप्ति होती है, और उसकी वृद्धि होती है । तीर्थंकर नामगोत्र कर्मका उपाजन होता है तीर्थंकर प्रकृति का वंश जिस जिव के हो जाता है वह अवश्य ही केवलज्ञान का अधिकारी बन जायगा । क्यों कि यह प्रकृति केवल

તેમાં વિશેષ આવી નય છે, કારણ કે જિન પ્રતિમા વૈયાવૃત્ય નામનો એક અગ્યારમો ભેદ ઉત્પન્ન થઈ નય છે. અને યીજ એક એ પણ વાત છે કે જે જિન પ્રતિમા હોય છે તેમાં વૈયાવૃત્યના સ્થાન પ્રાપ્તિની યોગ્યતા જ નથી, કારણ કે તેમાં જ્ઞાનાદિ કેઈ શુદ્ધ તો છે જ નહીં—તેતો જડ પથ્થરની બનેલી છે, તો આહાર પાણી દ્વારા તેને સહાયતા પહોંચાડવાની શી આવશ્યકતા છે? તથા વૈયાવૃત્યમાં 'દશવિધતાનુ' પ્રતિપાદન કરનાર જે આગમ છે તેમાં વિશેષાભાસ ન લાગે તે અભિપ્રાયથી પ્રેરાઈને જે આચાર્યમાં જિન પ્રતિ-માનો સમાવેશ કરે છે, તેમનું તે પ્રમાણે કરવું તે પણ ભ્રાન્તિમૂલક જ છે. ચૈત્ય શબ્દમાં જ્ઞાનાર્થકતાની અમારી આ માન્યતા આગમનુકૂલ છે, કારણ કે વૈયાવૃત્યથી શ્રુતજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે, અને તેની વૃદ્ધિ થાય છે. તથા તીર્થ-ંકર નામગોત્ર કર્મનું ઉપાર્જન થાય છે. તીર્થંકર પ્રકૃતિનો બંધ જે જીવને બંધાય છે તે અવશ્ય કેવળ જ્ઞાનનો અધિકારી બનશે. કારણ કે તે કેવળજ્ઞા-

સુવર્ણમી ટીકા અ. ૩ સુ. ૪ કોમુનિરવસ્થાદાતાવિવ્રતમાગધયતિ ?

૭૩૫

શ્લોકશાધ્યયનસુત્રે—“ વેયાવચ્ચેણં મંતે ! જીવે કિં જગયહ ? વેયાવચ્ચેણં તિથયર નામગોયં કમ્મં નિવંધહ ॥ ” (ઉત્ત.અધ્ય. ૨૯)

ટીકાર્થ—‘ ન ય ’ ન ચ ‘ અચિયત્તસ્સ ’ અપ્રીતિક્સ=પ્રીતિરહિતસ્ય પ્રતીતિ-રહિતસ્ય વા સાધ્વાગમનમનિચ્છત્ત્વ ક્ષયર્થઃ, ‘ ઘરં ’ ગૃહં ‘ પવિસહ ’ પ્રવિશતિ, ન ચ અપ્રતીતિક્સ્ય ‘ મત્તપાણં ’ મત્તપાનં ‘ મેણ્હહ ’ મૃદ્ધાતિ, ન ચ અપ્રીતિક્સ્ય અપ્રતીતિક્સ્ય વા પીઠફલકશય્યાસંસ્તારકપટ્ટપાદકમ્બલદંડકમ્બલરજોહરણ-નિપઘાચોલપટ્ટમદોરવમુલવલ્લિકા પાદપોઝ્ઝનાદિ ભાજનમાળ્હોપધ્યુપકરણં, જ્ઞાન કી અવિનાશાવિની છે. તીર્થંકર પ્રકૃતિ નિયમનઃ કેવળજ્ઞાન કો ઉત્પન્ન કરનેવાચી હોવી છે, ઇમલિયે જ્ઞાનાર્થી હોકર વૈયાવૃત્ત્ય કરતા છે એસા અર્થ હમારા નિર્દોષ હી છે. ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રમાં એ વાત કરી છે—“ વેયાવચ્ચેણં મંતે ! જીવે કિં જગયહ ? વેયાવચ્ચેણં તિથયર નામગોયં કમ્મં નિવંધહ ” (ઉત્તરાધ્ય. અ. ૨૯ શ્લોક ૪૩)

તથા જો સાધુ (ન ય અચિયત્તસ્સ ઘરં પવિસહ) સાધુ કે અપને ઘર પર આને સે અપ્રીતિ અથવા અપ્રતીતિ-અવિશ્વાસ વાલા હોતા છે વહ અચિયત્ત કહલાતા છે-એસે વ્યક્તિ કે ઘર મેં સાધુ પ્રવેશ નહીં કરતા છે, તથા (ન ચ અચિયત્તસ્સ મત્તપાણં મિણ્હહ) उस अપ्रीति और अप्रतीति-अविश्वास वाले के घर से मत्त पान नहीं लेता है, और (न य अचियत्तस्स पीढ फलकसेज्जसांस्धारगवत्थपायकंबल दंडग रजो-हरण निसेज्ज चोलपट्टममुहपोत्तियपायपुंछणाइ भायणमंडीवहि उवगं-रणं सेवह) न उव अप्रीति और अप्रतीति वाले के पीठ, फलक, शय्या,

નની અવિનાશાવિની પ્રકૃતિ છે. તીર્થંકર પ્રકૃતિ સ્વાભાવિક રીતે જ કેવળજ્ઞા-નને ઉત્પન્ન કરનારી હોય છે, તેથી જ્ઞાનાર્થી ઘરં ને વૈયાવૃત્ત્ય કરે છે એવો અમે દર્શાવેલો અર્થ નિર્દોષ જ છે. ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રમાં એ જ વાત કરી છે—“ વેયાવચ્ચેણં મંતે ! જીવે કિં જગયહ ? વેયાવચ્ચેણં તિથયર નામગોયં કમ્મં નિવંધહ ” (ઉત્તરાધ્ય. અ. ૨૯ શ્લોક ૪૩) તથા જે સાધુ “ ન ય અચિયત્ત-સ્સ ઘરં પવિસહ ” સાધુ પોતાને ઘર આવવાથી જે વ્યક્તિ અપ્રીતિ અથવા અવિશ્વાસ વાળો થાય છે તે અચિયત્ત કહેવાય છે-એવી વ્યક્તિના ઘરમાં સાધુ પ્રવેશ કરતા નથી, તથા “ ન ચ અચિયત્તસ્સ મત્તપાણં મિણ્હહ ” તે અપ્રીતિ અને અવિશ્વાસવાળાના ઘરેથી આહારપાણી લેતા નથી, અને “ ન ય અચિયત્તસ્સ પીઠફલકન સેજ્જાસંસ્થારગવત્થપાયકંબલદંડગરજોહરણનિસેજ્જચોલપટ્ટમમુહપોત્તિય પાયપુ-છણાઈભાયણમંદોવહિદગરણં સેવહ ” તે અપ્રીતિ અને અવિશ્વાસ-વાળાનાં

‘સેવહ’ સેવતે, ન ચ ‘પરસ્સ’ પરસ્ય ‘પરિનાયં’ પરિવાદં=નિન્દાં ‘જંપહ’ જલ્પતિ, ‘ન યાવિ’ ન ચાપિ પરસ્ય ‘દોસે’ દોપાન્ ‘ગેળહ’ શુક્લાતિ. પરદોષદર્શી ન ભવતીત્યર્થઃ, તથા-‘ પરવવણેણ વિ’ પરવ્યવદેશેનાપિ=વાલગ્લાનાદિનિમિત્તે નાપિ સ્વાર્થમન્યાર્થે વા ‘ન કિંચિ’ ન કિંચિદ્ ઔષધભૈષજ્યાદ્યપિ, ‘ગેળહ’ શુક્લાતિ, તથા ‘ળ ય’ ન ચ ‘વિપરિણામેહ’ વિપરિણમયતિ=ધર્મોદ્ ગુણોદિ-ભ્યશ્ચ વિમુક્તી કરોતી ‘કંચિ જળં’ કચ્ચિદપિ જનં શિષ્યાદિકમ્ । ‘ન યાવિ’ ન ચાપિ ‘ળાસેહ નાશયતિ’ દિણ્ણમુકયં’ દત્તમુકૃતમ્, દત્તમ્=અભયદાનાદિકં, સુકૃતં=વ્રતપ્રત્યાખ્યાનાદિકં અપિ તુ તદનુસોદયતીત્યર્થઃ, પરકૃતં શુભકૃત્યં ન પચ્છાદયન્તિ, તથા-‘ દાઝળ ય’ દત્ત્વા ચ દેયં વસ્તુ, ‘કાઝળ ય’ કૃત્વા ચ

સંસ્તારક, વસ્ત્ર, પાદકંચલ, દંડક, રજોહરણ, નિષઘા, ચોલપટ્ટક, સદો-રકમુખવસ્ત્રિકા, પાદપ્રોચ્છન આદિ તથા ભાજન, ખાણ્ડ, ઉપધિ, ઉપ-કરણ, ફનકા સેવન કરતા હૈ, (ન ય પરિવાયપરસ્સ જંપહ) દુસરોં કી નિંદા નહીં કરતા હૈ, (ન યાવિ પરસ્સ દોસે ગેળહ) દુસરોં કે દોષોં કો નહીં દેખના હૈ. (પર વવણેણવિ ન કિંચિ ગેળહ) બાલ, ગ્લાન આદિ કે નિમિત્ત સે લાગે હુણ ઔષધ, ભૈષજ્ય આદિ કુછ ભી વસ્તુ અપને અથવા દુસરે કે કામ મેં નહીં લેતા હૈ, (ળ ય વિપરિ-ણામેહ કંચિ જળં) ધર્મ સે તથા અપને મુરુજનોં સે જો શિષ્યાદિકોં કો વિમુક્ત નહીં કરતા હૈ, (ળ યાવિ ળાસેહ દિણ્ણ મુકયં) દત્ત-અભય દાનાદિક કા. સુકૃત-વ્રત પ્રત્યાખ્યાન આદિ કા જો નાશ નહીં કરતા હૈં ધિન્તુ ઉનકો અનુસોદના હી કરતા હૈ, અર્થાત્ પરકૃત શુભકૃત્યોં કો જો પચ્છાદિત નહીં કરતા હૈ (દાઝળ ય કાઝળ ય ળ ય પચ્છાત્તા-

પીઠ, ફલક, શય્યા સંસ્તારક, વસ્ત્ર, પાદકંચલ, દંડક, રજોહરણ, ચોલપટ્ટક, દોરા સાથેની મુકપત્તિ, પાદપ્રોચ્છન આદિ તથા ભાજન, ભાંડ, ઉપધિ આદિ ઉપકરણનું સેવન કરતો નથી, “ન ય વિ પરિવાયપરસ્સ જંપહ” બીબ્બની નિંદા કરતો નથી, “ન યાવિ પરસ્સ દોસે ગેળહ” બીબ્બના દોષોને બેતો નથી, “પરવવણેણ વિ ન કિંચિ ગેળહ” બાળ, ગ્લાન આદિને નિમિત્તે લાવેલા ઔષધ, ભૈષજ્ય, આદિ કોઈ પણ વસ્તુ પોતાના અથવા બીબ્બના ઉપ-યોગમાં લેતો નથી. “ળ ય વિપરિણામેહ કિંચિ જળં” જે શિષ્યાદિને ધર્મથી કે મુક્તિનેથી મુક્ત કરતો નથી, “ળ યાવિ ળાસેહ દિણ્ણ મુકયં” દત્ત-અભયદાનાદિકનું સુકૃત-વ્રત પ્રત્યાખ્યાન આદિને જે નાશ કરતો નથી-પણ તેની અનુસોદના જ કરે છે, એટલે કે અન્ય વડે કરાયેલ શુભકૃત્યોને જે ઢાંકતો નથી “દાઝળય કાઝળય ળ ય પચ્છાત્તાવિદ્દહા” હેય વસ્તુને ઢાંકે અને

સુદર્શનીટીકા અ० ૩ સૂ० ૪ કોમુનિરક્તાદાનાવિવ્રતમારાધયતિ ?

૭૩૭

વૈયાવૃત્યાદિકાર્ય, 'જા હોઈ' ન ભવતિ 'પચ્છાત્તાપિ' પશ્ચાત્તાપિકા: = પશ્ચાત્તાપકારી । તથા- 'સંવિભાગસીલે' સંવિભાગસીલા: - લબ્ધ ભક્તાદે: સંવિભાગકારી 'સંગહોવગ્ગહકુસલે' સંગ્રહોપગ્રહકુસલ, તત્ર-સંગ્રહ: = શિષ્યાદિપરિવર્દનમ્, ઉપગ્રહ: = તેષામેવ ભક્તશ્રુતાદિદાનપૂર્વકમુપપદ્મભનમ્, તત્ર કુશલો દક્ષો ભવતિ, 'સે તારિસે' સ તારિસ: સાધુ: 'ઈણ' ઇદમ્ = અદત્તાદાનવિરમણરૂપ 'વયં' વ્રતમ્ 'આરાહેઈ' આરાધયતિ, નાન્ય: ॥ મૂ० ૪ ॥

વિષ્ણુ હોઈ) વેદવસ્તુ કો દેકર એવં વૈયાવૃત્ય આદિ કાર્ય કો કરકે જો પશ્ચાત્તાપ નહીં કરતા હૈ, (સંવિભાગસીલે) લબ્ધ ભક્તાદિક કા જો સંવિભાગકારી હોતા હૈ, ઓર (સંગહોવગ્ગહકુસલે) શિષ્યાદિ કે પરિવર્દન મેં ઓર उनके भक्त श्रुत आदि दानपूर्वक उपपदंभन में दक्ष होता है, (સે તારિસે) એસા વહ સાધુ (ઈણં વયં આરાહેઈ) ઇસ અદ-ત્તાદાનવિરમણરૂપ વ્રત કો આરાધિત કરતા હૈ, દૂસરા નહીં ॥

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને ઇસ સૂત્ર દ્વારા વહ સમજાયા હૈ કિ કિસ પ્રકાર કા કાર્ય કરને વાલા સાધુ ઇસ મહાવ્રત કા આરાધક હોતા હૈ । उनके कहना है कि जो साधु पीछे के दूसरे सूत्र में कही गईं बातों के अनुसार आचरण करता है वही साधु इस महाव्रत का आराधक बनता है, वे घाते इस प्रकार से हैं—जो साधु उपधि और भक्तपान के संग्रहण एवं दान करने में दक्ष होता है, अत्यंत बाल, दुर्बल, ग्लान, वृद्ध, क्षपक, प्रवर्त्तक, आचार्य, उपाध्याय आदि का वैयावृत्य करता है ।

વૈયાવૃત્ય આદિ કાર્ય કરીને જે પશ્ચાત્તાપ કરતા નથી, “સંવિભાગસીલે” પ્રાપ્ત આહારાદિના જે સંવિભાગકારી હોય છે, અને “સંગહોવગ્ગહકુસલે” શિષ્યાદિના પરિવર્દનમાં અને તેમના ભક્ત શ્રુત આદિ દાન પૂર્વક ઉપપદંભનમાં દક્ષ હોય છે “સે તારિસે” એવો તે સાધુ “ઈણં વયં આરાહેઈ” આ અદત્તાદાન વિરમણરૂપ વ્રતનું આરાધન કરી શકે છે, બીજાં કરી શકતાં નથી,

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા સમજાવ્યું છે કે કેવું કાર્ય કરનાર સાધુ આ મહાવ્રતનો આરાધક થાય છે. તેમનું એવું કથન છે કે જે સાધુ આગળ બીજાં સૂત્રમાં બતાવેલ વાત અનુસાર આચરણ કરે છે તે જ સાધુ આ મહાવ્રતનો આરાધક બને છે તે વાતો આ પ્રમાણે છે—જે સાધુ ઉપધિ અને ભક્તપાન (આહારપાણી) નો સંગ્રહ અને દાન કરવામાં દક્ષ હોય છે, અત્યંત બાળ, દુર્બલ, ગ્લાન, વૃદ્ધ ક્ષપક, પ્રવર્તક, આચાર્ય ઉપાધ્યાય આદિની વૈયાવૃત્ય-વૈયાવૃત્ય કરે છે, અપ્રીતિક બનને ત્યાં જોયરીને માટે જતો નથી, તેના દ્વારા

અપ્રીતીકર્મન કે ઘર પર ગોચરી કે લિપે નહીં જાતા હૈ, અનેક દ્વારા પ્રદત્ત પીઠ ફલક આદિ કા ઉપયોગ નહીં કરતા હૈ' દૂસરોં કિ નિંદા નહીં કરતા હૈ, પર કે દોષોં કી તરફ દષ્ટિપાત નહીં કરતા હૈ, પર કે વ્યવસ્થા સે અપને લિપે તથા દૂસરોં કે લિપે કુછ મી વસ્તુ નહીં લેતા હૈ, શુર્વાદિક સે અનેક શિષ્યાદિકોં કા મેદ નહીં કરતા હૈ. અભયદાનાદિક કો દે કરકે, વૈયાવૃત્ય કો કરકે જો પોછે સે પછતાતા નહીં હૈ, સંગ્રહશીલ હોતા હૈ-સંવિભાગદારી હોતા હૈ, શિષ્યાદિ સંપત્તિ વધાને મેં કુશલ હોતા હૈ એસા સાધુ હી મહાવ્રત કા આરાધક હોતા હૈ । વૈયાવૃત્ય જો આચાર્ય આદિ કી કરતા હૈ-અમમેં અસકા અભિપ્રાય અપને મેં જ્ઞાનવૃદ્ધિ ઓર કર્મોં કી નિર્જરા હોનેકા હોતા હૈ । વૈયાવૃત્ય આચાર્ય આદિ દસ પ્રકાર કે સ્થાન સેવ્ય હોને કે કારણ દસ પ્રકાર કા હૈ । સૂત્ર મેં યજ્ઞપિ ચૌદ પ્રકાર કે વૈયાવૃત્ય કે સ્થાન પ્રકટ કિયે હૈ પર અત્યંત ઘાલ ઓર દુર્બલ હન સાધુઓં કા અન્તર્ભાવ ગ્લાન મેં એવં ક્ષપક ઓર પ્રભાવક સાધુઓં કા અન્તર્ભાવ આચાર્ય મેં કર દિયા જાતા હૈ, હસલિયે હસ પ્રકાર સે યે દસ હી હોતે હૈ । મુખ્ય રૂપ સે જિસકા કાર્ય આચાર ઓર વ્રત ગ્રહણ કરાને કા હોતા હૈ વહ આચાર્ય હૈ, મુખ્યરૂપ સે જિસકા કાર્ય મૂલ સૂત્ર કા અભ્યાસ કરાને કા હોતા

અપાયેલ પીઠ, ફલક આદિનો ઉપયોગ કરતો નથી. અન્યની નિંદા કરતો નથી અન્યના દોષો તરફ નજર નાખતો નથી બીજાનું નિમિત્ત બતાવીને પોતાને માટે તથા અન્યને માટે હોઈ પણ વસ્તુ લેતો નથી, શુર્વાદિક સાથે તેમના શિષ્યાદિકામાં ભેદભાવ પડાવતો નથી, અભયદાન આદિ દઈને, વૈયાવૃત્ય કરીને જે પાછળથી પસ્તાતો નથી, સંગ્રહશીલ હોય છે-સંવિભાગદારી હોય છે, શિષ્યાદિય સંપત્તિ વધારવામાં કુશળ હોય છે, એવો સાધુ જ આ મહાવ્રતનો આરાધક થઈ શકે છે. તે આચાર્ય આદિની જે વૈયાવૃત્ય કરે છે તેમાં તેનો હેતુ પોતાના જ્ઞાનની વૃદ્ધિ તથા કર્મોની નિર્જરા કરવાનો જ હોય છે. વૈયાવૃત્ય આચાર્ય આદિ દસ પ્રકારનાં સેવાને પાત્ર સ્થાન હોવાથી દસ પ્રકારનું છે. સૂત્રમાં જે કે ચૌદ પ્રકારનાં વૈયાવૃત્યના સ્થાન બતાવ્યાં છે પણ અત્યંત ગળ અને દુર્બળ સાધુઓનો સમાવેશ ગ્લાનમાં. અને ક્ષપક અને પ્રભાવક સાધુઓનો સમાવેશ આચાર્યમાં કરી દેવામાં આવેલ છે, તેથી આ રીતે તેના દસ પ્રકાર જ થાય છે. મુખ્યત્વે જેનું કાર્ય આચાર અને વ્રત ગ્રહણ કરાવવાનું હોય છે તે આચાર્ય કહેવાય છે, મુખ્યત્વે જેનું કાર્ય મૂળ સૂત્રનો અભ્યાસ

સુદર્શિની ટીકા મં ૩ સૂ ૫ ઉપસંહાર:

૭૩૧

અથોપસંહારમાદ—‘ હમં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—હમં ચ પરદવ્વહરણવેરમણપરિરક્ષણદ્વયાણ પાવચણં
ભગવયા સુકહિયં અત્તહિયં પેચ્ચાભાવિયં આગમેસિભદં સુદ્ધં
નેયાઉયં અકુહિલં અણુત્તરં સવ્વદુક્ખં પાવાણં વિઉસમણં ॥ સૂ ૫ ॥

ટીકા—‘ હમં ચ ’ હં ચ-પૂર્વેરનન્તતીર્થકરમણધરૈઃ પ્રોક્તમિદં પ્રત્યક્ષં
‘ પાવચણં ’ પ્રવચનં ‘ પરદવ્વહરણવેરમણપરિરક્ષણદ્વયાણ ’ પરદવ્વહરણવિર-
મણપરિરક્ષણાર્થ=પરદવ્વહરણવિરમણસ્ય=અદ્યાદાનવિરમણવ્રતસ્ય પરિરક્ષણાર્થ =

હૈ વહ ઉપાધ્યાય હૈ, જો વિગય આદિ કે ત્યાગરૂપ તપોં કો તપતા હૈ
વહ તપસ્વી હૈ, જો નવદીક્ષિત હોકર શિક્ષણ પ્રાપ્ત કરને કા ઉમ્મીદવાર
હોતા હૈ વહ શૈક્ષ હૈ, રોગ આદિ સે જિસકા શરીર ક્ષીણ હો ગયા હો
વહ જ્ઞાન હૈ, એક હી દીક્ષાચાર્ય કા શિષ્યપરિવાર કુલ હૈ, જુદે ૨
આચાર્યોં કે શિષ્યરૂપ સાધુ યદિ પરસ્પર સહાધ્યાયી હોને સે સમાન-
વાચના વાલે હો તો ઉનકા સમુદાય ગણ હૈ, ગણ કા સમુદાય સંઘ
કહલાતા હૈ । જો પ્રવ્રજ્યાધારી હોતા હૈ વહ સાધુ હૈ । શ્રુતલિંગ ઓર
પ્રવચન મેં જો સમાન હોં વે સાધર્મિક હેં ॥ સૂ ૪ ॥

અવ સૂત્રકાર હસ પ્રકરણ કા ઉપસંહાર કરતે હુવ કહતે હેં—
‘ હમં ચ ’ ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(હમં ચ પરદવ્વહરણવેરમણપરિરક્ષણદ્વયાણ પાવચણં
ભગવયા સુકહિયં) પૂર્વ મેં અનન્ત તીર્થકરોં ણ્વં ગણધર દેવોં દ્વારા કહા

કરાવચાનું હોય છે તે ઉપાધ્યાય કહેવાય છે. જે વિગય આદિના ત્યાગરૂપ તપો
કરે છે તે તપસ્વી કહેવાય છે, જે નવદીક્ષિત થઈને શિક્ષણ પ્રાપ્ત કરવાને
માટે ઉમેદવાર હોય છે તેને શૈક્ષ કહે છે. રોગ આદિથી જેનું શરીર ક્ષીણ થઈ
જાયું હોય તેને જ્ઞાન કહે છે. એક જ દીક્ષાચાર્યના શિષ્ય પરિવારને કુલ કહે
છે, જુદા જુદા આચાર્યોના શિષ્યરૂપ સાધુ જે પરસ્પર સહાધ્યાયી હોવાથી
સમાન વાચનાવાળા હોય તો તેમના સમુદાયને ગણ કહે છે. ગણના સમુદાયને
સંઘ કહે છે. જે પ્રવ્રજ્યા (દીક્ષા) ધારી હોય તે સાધુ કહેવાય છે. શ્રુતલિંગ
અને પ્રવચનમાં જે સમાન હોય તે સાધર્મિક કહેવાય છે. ॥ સૂ ૪ ॥

હવે સૂત્રકાર આ પ્રકરણનો ઉપસંહાર કરતા કહે છે—“ હમં ચ ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“ હમં ચ પરદવ્વહરણવેરમણપરિરક્ષણદ્વયાણ પાવચણં ભગવયા
સુકહિયં ” પૂર્વે અનન્ત તીર્થકરો અને ગણધરો દ્વારા કહેવાયેલ આ પ્રત્યક્ષી-

રક્ષણનિમિત્તં ' ભગવતા ' ભગવતા ' સુહૃદિયં ' સુહૃદિયં=તવિસ્તરં પ્રરૂપિતમ્ ।
 કથં ભૂતં પ્રવચનં ભગવતા સુહૃદિયમ્ ? इत्याह—“ अत्तहियं ” आत्महितम्=आत्मनो
 हितकारकम्, तथा—“ पेच्चाभाविणं ” प्रेत्यभाविकं=जन्मान्तरेऽपि शुभफलदायकम्,
 अत एव—“ आगमेसिभदं ” आगमिष्यद् भद्रं=भविष्यकाले-कल्याणकारकम्,
 तथा ‘ सुद्धं ’ शुद्धं=निर्दोषत्वात्, पुनः—‘ नेयाउयं ’ नैयायिकम्, वीतरागभाषि
 तत्वाद्-तथा—‘ अकुडिलं ’ अकुटिलम्=ऋजुभावजनकत्वात् ‘ अणुत्तरं ’ अनुत्तरम्-सर्व-
 श्रेष्ठत्वात्, तथा ‘ सव्वदुक्खपावाण ’ सर्वदुःखपापानां=सकलदुःखजनकज्ञानावर-
 णीयाद्यष्टविधकर्मणां ‘ विउसमणं ’ व्युपशमनं=सर्वथा प्रशमनकारकम् । एतादृशं
 प्रवचनं भगवता सुहृदितमित्यर्थः ॥ सू० ५ ॥

अस्य तृतीयव्रतस्य पञ्चभावनाः प्रतिपादयन् सम्प्रति विविक्तवसतिवासाभिर्ना
 प्रथमां भावनामाह—‘ तस्स इमा ’ इत्यादि ।

मूलम्—तस्स इमा पंचभावणाओ तइयस्स वयस्स हुंति,
 परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणट्टयाए । पढमं देवकुलसभा-प्पवा-

गया यह प्रत्यक्षीभूत प्रवचन, परद्रव्यविरमणरूप महाव्रत की परिरक्षा
 के निमित्त भगवान् ने विस्तारपूर्वक प्ररूपित किया है । यह प्रवचन
 (अत्तहियं) आत्मा का हितकारक है, (पेच्चाभाविणं) जन्मान्तर में
 भी शुभफल का प्रदाता है, इसीलिये यह (आगमेसिभदं) भविष्यत्
 काल में कल्याण कारक कहा गया है । (सुद्धं) यह निर्दोष होने से
 शुद्ध है, (नेयाउयं) वीतराग प्रभु द्वारा भाषित होने से न्यायसंपन्न है,
 (अकुडिलं) ऋजुभावका जनक होनेसे अकुटिल है, (अणुत्तरं) सर्वश्रेष्ठ
 होनेसे अणुत्तर है तथा (सव्वदुक्खपावाणं विउसमणं) सकल दुःखजनक
 ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों का सर्वथा प्रशमनकारक है ॥ सू० ५ ॥

ભૂત પ્રવચન. પરદ્રવ્ય વિરમણરૂપ મહાવ્રતની પરિરક્ષાને નિમિત્તે ભગવાને
 વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપિત કરેલ છે. આ પ્રવચન “ અત્તહિયં ” આત્માનું હિતકારક
 છે, “ પેચ્છાભાવિણ ” જન્માન્તરમાં પણ શુભ ફળનું દેનારું છે, તેથી તે
 “ આગમેસિભદં ” ભવિષ્યકાળમાં કલ્યાણકારક બતાવવામાં આવ્યું છે. “ સુદ્ધં ”
 તે નિર્દોષ હોવાથી શુદ્ધ છે, “ નેયાઉયં ” વીતરાગ પ્રભુદ્વારા કથિત હોવાથી
 ન્યાયયુક્ત છે, “ અકુડિલં ” ઋજુભાવનું જનક હોવાથી અકુટિલ છે, “ અણુત્તરં ”
 સર્વશ્રેષ્ઠ હોવાથી અનુત્તર છે તથા “ સવ્વદુક્ખપાવાણં વિસમણં ” સકળ
 દુઃખજનક જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોનું સર્વથા પ્રશમનકારક છે. સૂ. ૫

सुदर्शिनी टीका अ०३ सू०६ 'विविक्तवसतिवास' नामक प्रथम भावना निरूपणम् ७४१

बसहरूखमूल-आराम-कंदराऽऽगर-गिरिगुहा-कम्मंतुजाण-जाण-
साला-कुवियसाला-मंडव-सुन्नघर-सुसाणलेण आवणे अन्नम्मि
य एवमाइयम्मि दग-माट्टिय-बीय-हरिय-तसपाण असंसत्ते
अहाकडे फासुए विविक्ते पसत्थे उवस्सए होइ विहरियव्वं ।
आहाकम्मबहुले य जेसे आसि य संमज्जिओसित्तसोहिय छाण
दुमणलिंपण अणुलिंपण जलगभंडचालणं अंतोवाहिं मज्जे य
असंजमो जत्थ वट्ठइ, संजयाणं अट्ठा वज्जेयव्वे हु उवस्सए
से तारिसे सुत्तपरिकुट्ठे । एवं विविक्त वासवसहि समिइ जोगेण
भाविओ भवइ अंतरप्पा, निच्छं अहिगरणकरणकारावण पाव-
कम्म विरए दत्तमणुणाय उग्गहरूई ॥ सू० ६ ॥

टीका-‘तस्स’ तस्य=प्रसिद्धस्य ‘तइयस्स वयस्स’ तृतीयव्रतस्य=
अदत्तादानविरमणनामकतृतीयव्रतस्य ‘इमा’ इमाः-वक्ष्यमाणाः ‘पंच भाव-
णाओ’ पञ्चभावनाः ‘परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणद्वयाए’ परदव्वहरणविरमण-
परिरक्षणार्थाय अदत्तादानविरमणव्रतस्य रक्षानिमित्तं ‘हुंति’ भवन्ति । तासु
‘पढं’ प्रथमां=विविक्तवसतिवासलक्षणां भावनामाह-साधुभिः कविहर्तव्यमिति,

अथ सूत्रकार इस तृतीय व्रत की पांच भावनाओं को समझाने की
इच्छासे सब से प्रथम विविक्तवसतिवास नाम की पहिली भावना
को प्रकट करते हैं--‘तस्स इमा’ इत्यादि० ।

टीकार्थ—(तस्स) उस प्रसिद्ध (तइयस्स वयस्स) तृतीय अदत्ता-
दान विरमण व्रत की (इमा) ये वक्ष्यमाण (पंच भावणाओ हुंति) पांच
भावनाएँ हैं । ये भावनाएँ (परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणद्वयाए) इस

छेवे सूत्रकार आ त्रीज व्रतनी पांच भावनाओ समझववाने भाटे सौथी
प्रथम विवक्तवसतिवास नामनी पहिली भावनाने प्रकट करे छे--“तस्स इमा” छे.

टीकार्थ—“ तस्स ” ते प्रसिद्ध “ तइयस्स वयस्स ” त्रीज अदत्तादान
विरमण व्रतनी “ इमा ” आ प्रभाषे “ “ पंच भावणाओ ति ” पांच भाव-
नाओ छे. ओ भावनाओ “ परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणद्वयाए ” आ अदत्ता-

તદેવ સ્પષ્ટયતિ-‘ દેવકુલ-સમા-પ્પવા-વસહ-રુક્ષમૂલ-આરામકંદરાઽઽગર-
ગિરિગુહા-કર્મનુ-જ્ઞાણ-જાણસાલા-કુવિયસાલા-મંડવ-સુન્નવર-સુસાણ-લેણ
આવળે ’ દેવકુલસમાપ્પવાઽઽવસહ-રુક્ષમૂલ-આરામકંદરાઽઽગરગિરિગુહા-કર્મનુ-જ્ઞા-
નયાનશાલા કુવિયસાલામંડવ-સુન્નવર-સુસાણ-લેણ-આવળે-તથ-દેવકુલમ્=વ્યન્તરાદિ
દેવગૃહમ્, સમા=સમાગૃહં યત્ સમયે સમયે મન્ત્રણાર્થે જના આગત્ય સંમિલન્ટિ
તત્, પ્રવા=પાનીયશાલા, આવસથઃ=પરિવ્રાજકગૃહમ્, વૃક્ષમૂલં=મસિદ્ધમ્, આરામઃ
માધવીલતાદિપરિમંડિતોરમણીયો વનવિશેષઃ, કન્દરા-દરી, આકરો=લોહાદ્ય-
ત્પત્તિસ્થાનમ્, ગિરિગુહા-પર્વતી, કર્મનુ=લોહાકારાદિશાલા ‘ કારખાના ’
‘ મીલ ’ ‘ ઝીણ ’ इत्यादि नाम्ना प्रसिद्धं स्थानम् । उद्यानम्=उपवनम्, यान-

અદ્ભુતાદાન વિરમણ વ્રતની પરિરક્ષા કે નિમિત્ત કહી ગઈ છે (પદ્યમ)
उनमें प्रथम भावना इस प्रकार है-इस प्रथम भावना का नाम विविक्त-
वसतिवास है । इसमें साधुओं को कहाँ निवास करना चाहिये यह प्रकट
किया गया है, (देवकुलसमा-प्पवा-वसह-रुक्खमूल-आराम-कंदरागार-
गिरिगुहा-कर्मनु-ज्ञाण-जाणसाला-कुवियसाला-मंडव-सुन्नवर-सुसा-
ण-लेण-आवणे) देवकुल में-व्यन्तर आदि देवों के स्थान में, समा
में-जहाँ पर मंत्रणा के लिये आकर समय २ पर मनुष्य एकत्रित होते
हैं ऐसे स्थान में, प्रवा में-पानीयशाला में, आवसथ में-परिव्राजकों के
घरों में, वृक्षमूल में-तरु के नीचे में, आराम में-माधवीलता आदि से
परिमंडित रम्यवन में, कन्दरा में-गुफा में, आकर में-लोहादिक धातु-
ओं के उत्पत्ति स्थान में, गिरिगुहा में-पर्वत की गुफा में, कर्मनू में-
लोहकार आदि की शाला में, कारखाना-मील-इत्यादि नाम से प्रसिद्ध

ઠાન વિરમણ વ્રતની પરિરક્ષાને માટે બતાવવામાં આવી છે. “ પદ્યમ ” તેમાંની
પહેલી બાબતનું નામ ‘ વિવિક્તવસતિવાસ ’ તેમાં સાધુઓએ કયાં વાસ કરવો
તે બતાવ્યું છે. “ દેવકુલ સમા-પ્પવા-વસહ-રુક્ષમૂલ-આરામ-કંદરાગાર-ગિરિ-
ગુહા-કર્મનુ-જ્ઞાણ-જાણસાલા-કુવિયસાલા-મંડવ-સુન્નવર-સુસાણ-લેણ-આવળે ”
દેવકુલમાં-વ્યન્તર આદિ દેવોનાં સ્થાનમાં, સમામાં કયાં મંત્રણાને માટે આવીને
વળતોવળત માણસો એકઠા થાય છે એવા સ્થાનમાં, પ્રવામાં-પાનીયશાળામાં,
આવસથમાં-પરિવ્રાજકોનાં ઘરોમાં, વૃક્ષમૂલમાં-ઝાડની નીચે, આરામમાં-માધવી
લતા આદિથી આચ્છાદિત રમ્યવનમાં, કન્દરામાં-ગુફામાં, આકરમાં-લોહાદિ
ધાતુઓની ખાણમાં, ગિરિગુહામાં-પર્વતની ગુફામાં, કર્મનૂમાં-લોહાર આદિની
શાલામાં, કારખાના-મીલ આદિ નામે પ્રસિદ્ધ સ્થાનોમાં, ઉદ્યાનમાં-બાગમાં,

सुदर्शनी टीका अ०३ सू०६ 'विविक्तव्यतिवास' नामकप्रथमभावनानिरूपणम् ७४३

शाला=रथादिगृहम्, कुप्यशाला=गृहोपकरणशाला, मण्डपः=विश्रामस्थानम्, शून्य-
गृहं=प्रसिद्धं, शमशानम्=प्रसिद्धम्, लवनं=गृहम्, आपणः=पण्यस्थानम्, 'हाट'
इति भाषा प्रसिद्धम्, एषां समाहार द्वन्द्वस्तस्मिन्तथाक्ते, अर्थात्-देवकुलादिरूपे-
ऽष्टादशविधे, तथा- 'अन्नमिय' अन्यस्मिन् 'एवमाइयमि' एवमादिके=एवं
विधे कथं भूते ? इत्याह- 'दगमद्विय-वीय-हरिय-तस पाण असंसत्ते' द-
मृत्तिका बीजहरितव्रसप्रपासंभक्ते-दकम्=जलम्, मृत्तिका=प्रतीता, बीजानि=
शाल्यादीनि, हरितानि=दूर्वादीनि व्रसपासाः=द्विन्द्रियादयः, तैरपसंभक्ते=रहिते,
पुनः कीदृशे ? 'अहाकडे' यथाकृते=गृहस्थेन स्वार्थं निर्मिते 'फासुए' फासुके
=निर्दोषे 'विविक्ते=स्त्रीपशुपण्डकरहिते, अत एव- 'पसत्ये' प्रशस्ते=श्रेष्ठे
साधुनिवासयोग्ये 'उवसाए' उपाश्रये-साधुभिः 'विहरियव्वं' विहर्तव्यं=
आश्रयितव्यं 'होइ' भवति । एतादृशे उपाश्रये साधुभिर्निवासः कर्तव्य इत्यर्थः ।

स्थान में, उद्यान में-उपवन में, गानशाला में-रथादि गृह में, कुप्यशाला
में-गृहोपकरण रखने के स्थान में, मंडप में-विश्राम स्थान में-शून्य गृह
में-सूने घर में, शमशान में-मरघट में, लवन में-पर्वत की तलहटी में
निर्मित पाषाण घर में, आपण में-हाट में (अन्नमिय एवमाइयमि) तथा
इसी तरह के दूसरे स्थान में कि जो (दगमद्विय-वीय-हरिय-तसपाण
असंसत्ते) जल, मृत्तिका, बीज, दूर्वा, द्विन्द्रियादिक व्रस, इन से रहित
हो, तथा (अहाकडे) जिस गृहस्थ ने अपने निमित्त बनवाया हो, एवं
जो (फासुए) निर्दोष हो, तथा (विविक्त) स्त्री, पशु, पंडक से रहित
हो और (पसत्ये) प्रशस्त-साधुजनों के निवास योग्य हो (उवसाए)
ऐसे उपाश्रय में (होइविहरियव्वं) साधुओं को रहना चाहिये । (अहा-

यानशालामां-रथादि गृहमां, कुप्यशालामां-गृहोपकरण राजधानी जग्यामां,
मण्डपमां-विश्राम स्थानमां, शून्यगृहमां-सूना घरमां, शमशानमां (मरघरमां),
लवनमां-पर्वतनी तणेटीमां रखे पाषाणघरमां, आपणमां-हाटमां, "अन्नमि
य एवमाइयमि" तथा ये व प्रकारनां अन्य स्थानोमां के ने "दगमद्विय-वीय
-हरिय-तसपाणअसंसत्ते" वण भाटी, बीज, दूर्वा, द्विन्द्रियादिक व्रस ये
अधाधी रहित होय. तथा "अहाकडे" ने गृहस्थे पोताने माटे अनाव-
राव्युं होय, अने ने "फासुए" निर्दोष होय. तथा "विविक्त" स्त्री, पशु,
पंडकधी रहित होय. अने "पसत्ये" प्रशस्त-साधुजनोना निवासने माटे
योग्य होय "उवसाए" येवा उपाश्रयमां "होइ विहरियव्वं" साधुओंके
रहेवुं जोईये. 'अहाकम्मवहुके य जेसे' अने ने उपाश्रय आधाकर्म अहुव होय

અથ કથમ્બૂતે ઉપાશ્રયે સાધુમિર્ન વસ્તવ્યમ્ ? इत्याह—‘आहाकम्मबहुले ’ आश-
कर्मबहुलः=आशोनम्-आधातया, अर्थात् साध्वर्थं यत्पट्कायोपमर्दनरूपं कर्म तेन
बहुलो व्याप्तो ‘ जे ’ यः एवं विधे उपाश्रयो ‘ से ’ स वर्जयितव्यः । अनेन अद-
त्तादानविरमणलक्षणमूलगुणाशुद्धेः परिहारः उक्तः । स दोषवस्त्युपभोगेन मूल-
गुणहानिर्भवतीति भावः । तथा ‘ जत्थ ’ यत्र-‘ अंतो ’ अन्तर्भागे ‘ बहिं ’
बहिर्भागे, ‘ मज्झे य ’ मध्ये च ‘ आसियसम्मज्जि ओसित्त सोहियछाणदुमण-
लिपण अणुलिपण जलगमंडचालण ’ आसक्ति संमार्जितोत्तिक्तसोधितछाण-
धवलनलेपनानुलेपनज्वलनभाण्डचालनम्-तत्र-आसिक्तम्=आसेचनम्=उदकादि-
च्छोटनमित्यर्थः, सम्मार्जितम्=शलाका हस्तेन-मार्जन्येत्यर्थः, कचवरसंशोधनम्,
शोधितं=भित्त्यादि संलग्नजालाद्यपनयनेन शुद्धीकृतं ‘ छाण ’ छाणं=छगणनं-
गोमयेन संस्करणम्, दुमणं ‘ धवलनं-सेटिकादिना भित्त्यादेरुज्ज्वलीकरणम्,

कम्मबहुले य जे से) और जो उपाश्रय आधाकर्म बहुत हो-साधु के
निमित्त पट्कायमर्दनरूप कर्म से व्याप्त हो-उसमें साधु को नहीं वसना
चाहिये । क्यों कि ऐसे उपाश्रय में रहने से साधु के इस अदत्तादान-
विरमणरूपमूलगुण की शुद्धि नहीं रहती है । और नहीं रहने से इस
मूलगुण की शुद्धि रहती हैं । तात्पर्य इसका यह है कि सदोषवस्तु के
उपभोग से साधु के मूलगुणों की हानि होती है यही बात “अहाकम्म-
बहुले य जे से” इस सूत्रांश द्वारा प्रदर्शित की गई है । तथा (जत्थ
अंतो बहिं मज्झे य) जो उपाश्रय भीतर में बाहिर में और मध्यभाग
में (आसियसम्मज्जि ओसित्तसोहिय-छाण-दुमणलिपण-अणुलिपण-जल-
गमंडचालण) पानी से छिड़का हुआ हो, बुहार-संमार्जनी से जहां का कूड़ा
कचरा साफ कर दिया गया हो, भीत आदि पर लगे हुए जाले जहाँ
उतार दिये गये हों, जो माय के गोबर से लीपा गया हो, चुने आदि से

સાધુને નિમિત્તે છાયા મર્દનરૂપ કર્મથી વ્યાપ્ત હોય, તેમાં સાધુએ રહેવું
એમથી નહીં. કારણ કે એવા ઉપાશ્રયમાં રહેવાથી સાધુના આ અદત્તાદાન વિરમણરૂપ
મૂળ ગુણોને હાનિ થાય છે, એ જ વાત “અહાકમ્મ-બહુલે ય જેસે” આ
સૂત્રાંશ દ્વારા પ્રગટ કરેલ છે. તથા “જત્થ અંતો બહિં મજ્જે ચ” એ ઉપાશ્રય
અંદર, બહાર અને મધ્ય ભાગમાં “આસિયસમ્મજ્જિઓસિત્તસોહિયછાણ
દુમણલિપણઅણુલિપણજલગમંડચાલણ” પાણી છાંટેલ હોય, સાવરણીથી વ્યાપ્ત
કચરા સાફ કર્યો હોય, ફીલાલ આદિ પર લાગેલાં જાળાં વ્યાપ્તી ઉતારી
લીધાં હોય, એ ગાયનાં છાણથી લીપેલ હોય, ચુના વગેરેથી એની ફીલાલો

सुवर्शिनी टीका अ. ३ सू०६ 'विविक्तवसति' नामकप्रथमभावनानिरूपणम् ७८५

‘लिपणं’ लेपनम्=मृत्तिकामिश्रितगोमयादिना रन्त्रादिपूरणेन सकल्लेपनम्, ‘अणुलिपणं’ अनुलेपनम्=शोभायै पुनः पुनर्लेपनम्, ज्वलनं=शीतापनोदनाय वह्नेः प्रज्वलीकरणम्, भाण्डचालनम्=गृहस्थितभाण्डानामपरत्र स्थापनम्, उपलक्षणमेतदव्यवस्तूनामपि, एतेषां समाहारद्वन्द्वः, एतद्रूपः—‘असंजमो’ असंजमः=जीव-विराधनारूपः साधुनिमित्तं ‘वृद्ध’ वर्तते ‘से तारिसे’ स तादृशः ‘सुत्तपरिकुट्टे’ सूत्रपरिकुट्टः—आगमनिषिद्धः, ‘हु’ निश्चयेन ‘उवस्सए’ उपाश्रयः ‘संजयाणं’ संयतानाम् ‘अट्ठा’ अर्थात् ‘वज्जेयव्वो’ वर्जितव्यः। संयमि-भिरेतादृशे जीवविराधनायुक्ते उपाश्रये न कदापि वस्तव्यमिति भावः। प्रथमभा-वनामुपसंहरन्नाह—‘एवं’ एवम्-उक्तरूपेण ‘विविक्तवासवसहिसमिहजोगेण’ विविक्तवासवमतिसमितियोगेन—विवक्ता=स्त्रीपशुपण्डकरहिता जनरहिता वा या

जिसकी भीति पोतकर उज्ज्वल कर दी गई हों, जिसमें छेद वगैरह गोबरमिश्रित मिट्टी से पूर दिये गये हों, तथा जो बार २ सुन्दर दिखाने के निमित्त गोमयादि मिश्रित मृत्तिका से लीपा गया हो, जहां शीत को दूर करने के लिये अग्नि जल रही हो और जहां से रक्खे हुए गृहस्थ-जनों के वर्तन उठा २ कर दूसरी जगह रखे जा रहे हों इस प्रकार का (असंजमो वृद्ध) जीवविराधना रूप असंयम जहां साधु के निमित्त हो रहा हो (से तारिसे) इस प्रकार का जो (सुत्तपरिकुट्टे) आगम से निषिद्ध है (उवस्सए) वह उपाश्रय (संजयाणं अट्ठा) साधुओं के लिये (वज्जेयव्वो) वर्जनीय है, अर्थात् इस प्रकार के उपाश्रय में साधु को नहीं बसना चाहिये। अब सूत्रकार प्रथम भावना का उपसंहार करते हुए कहते हैं—(एवं) उक्तरूप से इस (विविक्तवासवसहिसमिह-जोगेण) विविक्तवासवसतिसमिति के योग से - स्त्री पशु पण्डक से

उल्लेख अनावधानों आयी होय, जेमाना छिद्रो आदि छाणुमिश्रित माटीथी पूरी दीधो होय, तथा जे सुंदर देखाय ते भाटे बारंवार छाणु आदि मिश्रित माटीथी लीपवानां आवेय होय, न्यां शीत दूर करवाने भाटे अग्नि अणतो होय, अने न्यांथी गृहस्थानां वासणु उपाडी उपाडीने भीष्ण न्यांथे भूषवानां आवतां होय, आ प्रकारेना “असंजमोवृद्ध” एव विराधनारूप असंयम न्यां साधुने निमित्तो यत्त रह्यो होय, “से तारिसे” आ प्रकारेनु जे “सुत्त-परिकुट्टे” आगमद्वारा निषिद्ध छे, “उवस्सए” ते उपाश्रय “संजयाणं अट्ठा” साधुआने भाटे “वज्जेयव्वो” वर्जनीय छे अत्रेवे के ते प्रकारेना उपाश्रयभां साधुअे रहेवुं जेअंथे नहीं. हुवे सूत्रकार पण्डेवी लावताने उपसंहार करता छे छे—“एवं” उपर कहा प्रमाणे आ “विविक्तवासवसहिसमिहजोगेण”

વાસવસતિ=નિવાસસ્થાન તદ્વિષયા યા સમિતિ:=સમ્યક્ પ્રવૃત્તિસ્તયા યો યોગ:=
 સમ્બન્ધસ્તેન 'ભાવિઓ' ભાવિત:-વાસિત: 'અંતરપ્પા' અન્તરાત્મા=જીવ:
 'નિચ્ચં' નિત્યં=સદા 'અહિગરણકરણકારાવળપાવકમ્મવિરણ' અધિકરણકરણ-
 કારણપાપકર્મવિરત:-અધિક્રિયતે=અધિકારી ક્રિયતે દુર્ગતાવાત્મા યેન તદ્ધિકર-
 ãમ્=આસિચ્ચનાદિરૂપં સાવધાનુષ્ઠાનમ્, તસ્ય ચત્સવ્યંકરણમન્યતો વા કારણમ્
 -ઉપલક્ષણાદનુમોદનં ચ તદેવ પાપકર્મ=તસ્માદ્ વિરતો=નિવૃત્તો ય: સ: તથોક્ત:,
 તથા-'દત્તમણુણાય ઉગ્ગહરુઈ' દત્તાનુજ્ઞાતોદ્ગ્રહરુચિ: 'તત્ત-દત્તસ્ય = દાત્રા
 વિતીર્ણસ્ય ઇષળીયસ્ય અનુજ્ઞાતસ્ય=તીર્થકરણધરૈદત્તાજ્ઞસ્ય દેવકુલાદે: ઉદુગ્રહે=
 ગ્રહણે રુચિ:=પ્રીતિર્યસ્ય સ તથોક્ત: અદત્તાનનુજ્ઞાતવસતેરપરિમોક્તેત્યર્થ:,
 'ભવઈ' ભવતિ ॥ મૂ.૬ ॥

રહિત એસે એકાન્ત નિવાસ સ્થાન મેં વસતે રૂપ સમિતિ કે સંબંધ સે
 (ભાવિઓ અંતરપ્પા) ભવિત જીવ (નિચ્ચં) સદા (અહિગરણકરણ
 કારાવળપાવકમ્મવિરણ) આસિચ્ચનાદિ સાવધાનુષ્ઠાન કે કરને, કરાને
 ઓર ડસકી અનુમોદનારૂપ પાપકર્મ સે નિવૃત્ત બના રહતા હૈં । તથા
 (દત્તમણુણાય ઉગ્ગહરુઈ) દાતા સે વિતીર્ણ, ઇવં તીર્થકર ગણધર આદિ
 દેવોં દ્વારા વસને કે લિયે અનુજ્ઞાત દુણેસે દેવકુલ આદિ સ્થાન કે
 ગ્રહણ મેં પ્રીતિવાલા હોને સે વહ દત્તાનુજ્ઞાત વસતિ કે ગ્રહણ કી રુચિ
 વાલા અર્થાત્ અદત્ત અનનુજ્ઞાત વસતિ કા અપરિમોક્તા હોતા હૈં ।

ભાવાર્થ—અદત્તાદાનવિરમણવ્રત કી રક્ષા ઓર સુસ્થિરતા કે નિમિત્ત
 સૂત્રકાર હસ સૂત્ર દ્વારા હસકી પાંચ ભાવનાઓં મેં સે વિવિક્તવાસ-
 વસતિ નામ કી પ્રથમ ભાવના કા સ્વરૂપ પ્રકટ કરતે દુણે કહતે હૈં

વિવિક્તવાસવસતિ સમિતિનાં યોગથી સ્ત્રી, પશુ, પંડકથી રહિત એવા એકાન્ત
 નિવાસ સ્થાનમાં વસવાડુપ સમિતિના સંબંધથી “ભાવિઓ અંતરપ્પા” ભાવિત
 છુવ “નિચ્ચં” સદા “અહિગરણકરણકારાવળપાવકમ્મવિરણ” આસિચ્ચનાદિ
 સાવધ અનુષ્ઠાન કરવાથી, કરાવવાથી અને તેની અનુમોદનાડુપ પાપકર્મથી નિવૃત્ત
 થઈ બાપ છે. તથા “દત્તમણુણાયઉગ્ગહરુઈ” દાતાની વિતીર્ણ, અને તીર્થકર
 ગણધર આદિ દેવોદ્વારા વસવાને માટે અનુજ્ઞા મળેલ એવાં દેવકુલ આદિ
 સ્થાન ગ્રહણ કરવામાં પ્રીતિયુક્ત હોવાથી તે દત્તાનુજ્ઞાત વસતિને ગ્રહણ કરવાની
 રુચિવાળો એટલે અદત્ત અનનુજ્ઞાત વસતિને ઉપભોગ કરનાર બને છે.

ભાવાર્થ—અદત્તાદાન વિરમણ વ્રતની રક્ષા અને સુસ્થિરતાને નિમિત્ત
 સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા તેની પાંચ ભાવનાઓમાંથી “વિવિક્તવાસવસતિ” નામની
 પહેલી ભાવનાનું સ્વરૂપ પ્રગટ કરતાં બતાવે છેકે સાધુઓએ દેવકુલ આદિ

સુદર્શની ૩ અંક ૨ ટીકા સૂત્ર ૨૬ 'વિવિક્તપ્રસતિ'નામક પ્રથમ ભાવનાનિરૂપણમ્ ૭૪૭

કિ સાધુ કો દેવકુલ આદિ સ્થાનો મે જો કિ ઉસકે નિમત્ત કો લેકર નહીં બને છુપ હોતે હૈં ઠહરના ચાહિયે યા કિસી ઉપાશ્રય મેં। યહ ઉપાશ્રય સાધુ કે નિમિત્ત બના નહીં હોના ચાહિયે, ગૃહસ્થ ને હસે અપને નિમિત્ત બનાયા હો એસા હોના ચાહિયે। સાધુ કે નિમિત્ત બનાને મેં સાધુ કો સાવધાનુષ્ઠાન કરાને રૂપ અસંયમ કા દોષ લગતા હૈ। સ્ત્રી પશુ પંડક સે હસ સ્થાન કો વર્જિત હોના ચાહિયે। તથા 'સાધુ મહારાજ આ રહે હૈં' હસ ક્યાલ સે સાધુ કા નિમિત્ત લેકર વહ પાની સે છિઢકા છુઆ નહીં હોના ચાહિયે, વહાં કે જાલે વગેરહ ઉતારે હુપ નહીં હોના ચાહિયે। ગોચર આદિ સે લીપ પોત કર ઉસે સાફ સુથરા કિયા ગયા નહીં હોના ચાહિયે। ઉસમેં કો શીત કો દૂર કરને કે લિયે વહાં અગ્નિ વગેરહ જલાકર ઉસે ગરમ કિયા હુઆ નહીં હોના ચાહિયે, હત્યાદિ જિસ રૂપ સે આગમ મેં સાધુ કે લિયે નિવાસ યોગ્ય વસતિ રહને કે લાયક કહી ગઈ હૈ વહ ઉસ રૂપ કા હોના ચાહિયે। તમી જાકર યહ પ્રથમ ભાવના પલ સકતી હૈ। ઓર હસ તરહ કી પ્રવૃત્તિ કરને વાલા સાધુ અપને અદત્તાદાનચિરમણવ્રત કી રક્ષા ઓર સુસ્થિરતા કર સકતા હૈ। સૂત્ર મેં જો અધિકરણ શબ્દ આયા હૈં ઉસકા વ્યુત્પત્તિ-લભ્ય અર્થ "દુર્ગતિ મેં જાને યોગ્ય આત્મા જિસકે બલ પર બનતા હૈ"

સ્થાનો, કે જે તેમને નિમિત્તે બનાવ્યાં હોતાં નથી, તેમાં વસવું બેઠએ અથવા તે કોઈ ઉપાશ્રયમાં વસવું બેઠએ. તે ઉપાશ્રય સાધુને નિમિત્તે બનાવેલ હોવાં બેઠએ નહીં, પણ ગૃહસ્થે પોતાને નિમિત્તે જે તે બધાં વેલાં હોવાં બેઠએ. સાધુને નિમિત્તે બનાવવામાં સાધુને સાવધ અનુષ્ઠાન કરાવવા રૂપ અસંયમને દોષ લાગે છે. સ્ત્રી, પશુ પંડકથી તે સ્થાન રહિત હોવું બેઠએ. તથા "સાધુ મહારાજ પધારવાના છે" એવા ખ્યાલથી સાધુને નિમિત્તે તેના પર પાણી છંટાવવું હોવું બેઠએ નહીં, ત્યાંના વળાં વગેરે ઉતારેલ હોવાં બેઠએ નહીં છાણ આદિથી લીપાંને તેને સ્વચ્છ અને સુવ્યવસ્થિત હોવો બેઠએ નહીં. ત્યાંની શીતને દૂર કરવા માટે ત્યાં અગ્નિ વગેરે સજ્જાવીને તેને ગરમ કરેલ હોવો બેઠએ નહીં, છત્યાદિ પ્રકારે જે રીતે આગમમાં સાધુને માટે યોગ્ય નિવાસ બતાવવામાં આવેલ છે તે પ્રકારનું તે નિવાસસ્થાન હોવું બેઠએ. ત્યારે આ પહેલી ભાવના સફળ થાય છે અને તે પ્રકારની આ પ્રવૃત્તિ કરનાર સાધુ પોતાના અદત્તાદાન ચિરમણવ્રતની રક્ષા અને સુસ્થિરતા રાખી શકે છે. સૂત્રમાં જે અધિકરણ શબ્દ આવ્યો છે તેનો વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે મળતો અર્થ "જેના પ્રભાવથી આત્મા દુર્ગતિમાં જવાને પાત્ર બને છે" તે પ્રમાણે થાય છે. આ

દ્વિતીયાં ભાવનામાહ—‘ વીયં ’ ઇત્યાદિ :

મૂલ્મ—વીયં આરામુજ્જાણકાણવળવળપ્પદેસમાગે જં કિંચિ-
ઇક્કં વા કઢિણગં વા જંતુગં વા પરમેરકુચ્ચકુસડબ્ભપ્પલાલ-
ભૂયગવલ્લયપુપ્ફફલતયપ્પવાલકંદમૂલતણકટ્ટસક્કરાઈં ગેપ્પહૃ
સેજ્જોવહિસ્સ અટ્ટા, ન કપ્પઈ ઉગ્ગહે અદિણ્ણમ્મિ ગેપ્પિહંતં,
જે હણિ હણિ ઉગ્ગહં અણ્ણવિય ગેપ્પિહયઠ્ઠં । एवं ઉગ્ગહસ-
મિહજોગેણ ભાવિઓ ભવઈ અંતરપ્પા ણિચ્ચં અહિકરણકરણ-
કારાવળવાવકમ્મવિરપ્પ દત્તમણ્ણાય ઉગ્ગહરૂઈ ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા—વીયં દ્વિતીયામ્ અનુજ્ઞાતસંસ્તારકગ્રહણરૂપાં ભાવનામાહ તત્ર—‘આરા-
મુજ્જાણકાણવળવળપ્પદેસમાગે ’ આરામોદ્યાનકાનનયનપ્રદેશમાગે—તત્ર—આરામઃ =

इस प्रकार है । आसिञ्चनादिकर्म ऐसे ही है, क्यों की ये सावधानुष्ठान हैं । करना, कराना और अनुमोदना करना इनका व्रतादि के विचार में समानकोटि का स्थान कहा गया है, अतः साधु के लिये आसिञ्चनादि कर्म यदि साधु के निमित्त को लेकर किये जा रहे हैं तो वह भी सावधानुष्ठानरूप असंयम का भागी बनता है ! अतः साधु को ऐसे सावधानुष्ठानरूप असंयमभावसे दूर रहनेका प्रभुका आदेश है ॥सू. ६॥

अब सूत्रकार द्वितीयभावना को प्रकट करते हैं—‘ वीयं आरामु-
ज्जाण०’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(વીયં) इस व्रत की दूसरी भावना अनुज्ञातसंस्तारक-
ग्रहण रूप है । वह इस प्रकार है—(आरामुज्ज्जाणकાણવળવળપ્પદેસમાગે)

સિંચનાદિ કર્મ એવાં જ છે. કારણ કે તે સાવધ અનુષ્ઠાન છે. કરવું, કરાવવું અને અનુમોદના આપવી એ ત્રણેનું વ્રતાદિકના વિચારમાં સમાન કોટિનું સ્થાન આપ્યું છે, આસિંચનાદિ કર્મ જો સાધુને નિમિત્તે કરવામાં આવતાં હોય તો તે સાધુને માટે પણ સાવધાનુષ્ઠાનરૂપ અસંયમના ભાગીદાર બને છે. તેથી પ્રભુને એવો આદેશ છે કે સાધુઓએ તેવાં સાવધાનુષ્ઠાનરૂપ અસંયમભાવથી દૂર રહેવું જોઈએ ॥ સૂ. ૬ ॥

હવે સૂત્રકાર બીજી ભાવનાને પ્રગટ કરે છે—‘વીયં આરમુજ્જાણ’ ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—“ વીયં ” આ વ્રતની બીજી ભાવના “અનુજ્ઞાત સંસ્તારક ગ્રહણ રૂપ છે, તે આ પ્રમાણે છે—“ આરમુજ્જાણકાણવળવળપ્પદેસમાગે ” આરામ—

सुवर्शिनी टीका अ० ३ सू. ७ 'यत्तुजातसंस्तारकग्रहण' नाम २ भाषानातिरूपणम् ७५९

माधवीलतादिपरिमण्डितवनविशेषः, उद्यानम्=उपवनम्, काननं=सामान्यवृक्षोपेतं वनम्, वनम्=नगरदूरवर्तिवनम्, एतेषां यः प्रदेशः=स्थानं तस्य यो भागः=एकदेशस्तत्र स्थितं 'इक्कडं' 'ढाटूण' इति भाषा प्रसिद्धं तृणविशेषं वा=अथवा 'कठिणगं' कठिनकं='रोइस' इति भाषा प्रसिद्धं तृणविशेषः वा, यद्वा-'जंतुगं' जंतुकं=जलाशयोत्पन्नतृणविशेषम्, वा=अथवा 'परमेरकुच्चकुसडम्भपलालमूयगवल्लयपुष्पफलतयप्पवालकंदमूलतणकट्टसक्कराई' परमेरकूचकुशदर्भपलालमूयकवल्लजपुष्पफलत्वक्प्रवालकंदमूलतृणकाष्ठशर्करादि, तत्र-पराः=तृणविशेषः, मेराः=मृजसरिकाः कूर्वाणि यैस्तृणविशेषैः भित्तौ सेटिकावलेपनार्थं कूर्वा (कूची) निर्मायन्ते ते तृणविशेषाः कुशाः=ह्रस्वाकारास्तृणविशेषाः, दर्भाः=दीर्घाकाराः कुशाएव दर्भा उच्यन्ते, पलालः='पुआल' इति भाषाप्रसिद्धः, मूयकः='मोतिगा' इति भाषा प्रसिद्धस्तृणविशेषः, वल्लजः=दर्भजातीयतृणविशेषः, पुष्पफलत्वक्प्रवालकंदमूलतृणकाष्ठशर्कराः प्रतीताः, एता आदौ यस्य तत्त्वोक्तं 'जं

आराम-माधवीलता आदि से परिमंडित वनविशेष में, उद्यान-उपवन में, कानन-सामान्य वृक्षों से युक्त वन में, वन-नगर से दूरवर्ती जंगल में, अर्थात् इन स्थानों के प्रदेशों के एकदेश में, स्थित (जं किंचि) जो कुछ (इक्कडं वा) ढाटूण-तृणविशेष, अथवा (कठिणगं वा) कठिनक-रोइस नामक तृणविशेष, अथवा (जंतुगं वा) जंतुक-जलाशय में-उत्पन्न हुए जंतुक नाम के तृणविशेष, (पर-मेर-कुच-कुस-डम्भ-पलाल-मूयग-वल्लय-पुष्प-फल-तय-प्पवाल-कंद-मूल-तण-कट्ट-सक्कराई) पर नाम के तृणविशेष, कुश नामक तृणविशेष, दर्भनामक तृणविशेष, पलाल नामक तृणविशेष, मोतिग नामक तृणविशेष, वल्लज-दर्भ-जाति का तृणविशेष, पुष्प, फल, त्वक्-छाल, प्रवाल-

माधवीलता आदिथी व्याख्यात वनमां, उद्यान-आगमां, कानन-सामान्य वृक्षोथी युक्त वनमां, वन-नगरथी दूर आवेक्षा जंगलमां, ओटले के ते स्थानाना प्रदेशमांना ओक देशमां, स्थित "जं किंचि" जे कोठ "इक्कडं वा" ढाटूण-ओक प्रकारनुं धास, अथवा "कठिणगं वा" कठिनक-रोइस नामनुं ओक प्रकारनुं धास अथवा "जंतुगं वा" जंतुक-जलाशयमां पेदा थयेल जंतुक नामनुं धास "पर, मेर, कुच, कुस, डम्भ, पलाल, मूयग, वल्लय, पुष्प, फल, तय, प्पवाल, कंद, मूल, तण, कट्ट, सक्कराई" पर नामनुं धास, मेर-मुंज नामनुं धास, कुश नामनुं धास, दर्भ नामनुं धास पलाल नामनुं धास, मोतिग नामनुं धास, वल्लज-दर्भ-जाति जंतुनुं धास, पुष्प, इण, त्वक्-छाल, प्रवाल-कुंभण,

किंचि 'यत्किंचित्' 'सेज्जोवहिस्स' शय्योपधेः=शय्योपकरणस्य 'अट्टा' अर्था-
य=हेतवे 'गेण्हइ' गृह्णाति, तत् 'उग्गहे' अवग्रहे=आज्ञायाम् 'अदिण्णे' अ-
दत्ते=अदत्तायाम्, अर्थात् तत्तद्वस्तु स्वामिन आज्ञायामप्राप्तयां सत्यां 'गेण्हिउं'
ग्रहीतुं साधूनां 'न कप्पइ' न कल्पते, 'जे' यत्=यस्मात् कारणात् 'हणिहणि'
अहन्यहनि प्रतिदिनम् 'उग्गहं' अवग्रहम् 'अणुणविय' अनुज्ञाप्य=प्राप्य तत्तद्व-
स्तु साधुभिः 'गेण्हियच्चं' ग्रहीतव्यं भवति । उपसंहरन्नाह-एवम्=अनेन प्रकारेण
'उग्गहसमिज्जोगेण' अवग्रहसमितियोगेन-भवग्रहः=शय्योपधेयर्थं तृणाद्यादा-
नस्य तत्तत्स्वामिन आज्ञा तत्र या समितिः=सम्यक्प्रवृत्तितया यो योगः=संब-
न्धस्तेन भावितो=वासितः 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवो नित्यम्, 'अहिकर-

कौपल, कन्द, मूल, तृण-सामान्य तृणविशेष, काष्ठ-लकड़ी, शर्करा-
कंकड, इनमें से जिस किसी पदार्थ को जो (सेज्जोवहिस्स अट्टाए
गेण्हइ) शय्योपकरण के निमित्त लेता है, परन्तु (उग्गहे अदिण्णम्मि
गेण्हिउं न कप्पइ) इन २ वस्तुओं के स्वामी यदि उन २ वस्तुओंको लेने
की आज्ञा नहीं देते हैं तो साधुको इन वस्तुओंका लेना नहीं कल्पता है
(जे) इसलिये जो (हणि हणि उग्गहं अणुणविय गेण्हियच्चं) प्रतिदिन उन
२ वस्तुओं को लेनेके लिये उन २ वस्तुओंके स्वामी की आज्ञा साधु को
लेनी चाहिये, और आज्ञा प्राप्त हो जाने पर ही उन २ वस्तुओं को लेना
चाहिये। (एवं उग्गहसमिज्जोगेण भाविओ अंतरप्पा निच्चं अहिकरण,
करण कारावरणपावकम्मविरए दत्तमणुणाय उग्गहरुई भवइ) इस प्रकार
से अवग्रहसमितिके योग से-शय्योपधिके निमित्त तत्तद्वस्तुओं के स्वामी
की आज्ञा प्राप्तकर तृणादि को के लेने में सम्यक् प्रवृत्ति के साथ संबंध

कंद, मूल, तृण-सामान्य घास, काष्ठ-लाकड़ों, शर्करा-कंकड, ते अध्याभांथी कोष्ठ
पशु पदार्थने जे "सेज्जोवहिस्स अट्टाए गेण्हइ" शय्या पनाववाना साधन
तरीके ले छे, पशु "उग्गहे अदिण्णम्मि गेण्हिउं न कप्पइ" ते ते वस्तुओना
मालिक जे ते ते वस्तुओ देवाने रज्ज न आपे तो साधुओने ते वस्तुओ
देवी कल्पती नथी. "जे" तेथी जे "हणिहणि उग्गहं अणुणविय गेण्हियच्चं" प्रति-
दिन ते ते वस्तुओ देवाने भाटे ते ते वस्तुओना मालिकनीं मंजूरी साधुओ
देवी जेछंओ, आने मंजूरी मग्ग्या पछी ज ते ते वस्तुओ देवी जेछंओ. "एवं
उग्गह समिज्जोगेण भाविओ अंतरप्पा निच्चं अहिकरण, करणकारावरणपावकम्म-
विरए दत्तमणुणाय उग्गहरुई भवइ" आ प्रभावे अपचछ समितिना योगथी-
शय्योपधिने निमित्ते ते ते वस्तुओना मालिकनी आज्ञा मेणर्थने तृणादिओने

સુદર્શિની ટોકા અંકે સૂ૦૭ 'અનુજ્ઞાતસંસ્તારકગ્રહણ'નામરે ભાવનાનિરૂપણમ્ ૭૫૧

ળકરણકારાવળવાવકર્મવિરણ ' અધિકરણકરણકારણપાપકર્મવિરતઃ=તત્ર અધિ-
કરણમ્=અનુજ્ઞાતેકઢાદીનામાદાનરૂપં સાવચંકર્મ તસ્ય યત્સ્વયં કરણમ્ અન્યતથ
કારણમ્ ઉપલક્ષણાદનુમોદનં ચ, ઇતદ્રૂપં યત્પાપકર્મતસ્માદ્ વિરતો=નિવૃત્તો યઃ સ
તથોક્તઃ, તથા—' દત્તમણુણાયઽગ્ગહરુદ્ ' દત્તાનુજ્ઞાતાવગ્રહરુચિઃ=દત્તસ્ય=વસ્તુ
સ્વામિના ચિત્તીર્ણસ્ય, અનુજ્ઞાતસ્ય=ગ્રહણાર્થં કથિતસ્ય તીર્થકરણધરૈરાજ્ઞસ્ય વા
ત્તુણાદિવસ્તુનઃ ઉદ્ગ્રહઃ=ગ્રહણં, તસ્મિન્ રુચિઃ અભિપ્રાયો યસ્ય સ તથોક્તઃ,
' ભવદ્ ' ભવતિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

સે, ભાવિત હુઆ જીવ સદા સાવધાનુષ્ઠાન કે કરને, કરાને ઓર ઉસકી
અનુમોદનાજન્ય પાપકર્મ સે નિવૃત્ત બના રહતા હૈ। તથા દાતા સે વિત્તી-
ર્ણ એવં તીર્થકર ગણધર આદિ દેવોં દ્વારા 'ગ્રહણ' કરને કે લિયે કથિત
ઈક્કડ આદિ વસ્તુ કે ગ્રહણ કરને કે અભિપ્રાય વાલા હોતા હૈ। ઇસ તરહ
ઉસકી અનુજ્ઞાત સંસ્તારક ગ્રહણરૂપ દ્વિતીય ભાવના સધ જાતી હૈ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને ઇસસૂત્ર દ્વારા ઇસ વ્રત કી અનુજ્ઞાત સંસ્તારક
ગ્રહણ નામક દસરી ભાવના કા ઉલ્લેખ કિયા હૈ। ઇસમેં યહ સ્પષ્ટ કિયા
ગયા હૈ કિ સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ શય્યોપકરણ કે નિમિત્ત આરામ
આદિ સ્થાનોં કે કિસી મી ભાગ સે જો ઇક્કડ આદિ વસ્તુ લેવે વહ
ઉનકે સ્વામિયોં કી આજ્ઞા પ્રાપ્ત કર હી લેવે। અન્યથા ઉસે અદત્તાદાન
ગ્રહણ કરને કા દોષ લગેગા જો ઇસ મૂલગુણ કી અશુદ્ધિ કા કારણ
બનેગા। અતઃ જો શય્યા સંસ્તારક કે નિમિત્ત ઇક્કડ આદિ તૃણવિશેષોં

લેવાની સમ્યક્ પ્રવૃત્તિના યોગથી, ભાવિત થયેલ ઊવ સદા સાવધાનુષ્ઠાન કરા-
વવાના અને તેની અનુમોદના કરવાના પાપકર્મથી નિવૃત્ત રહ્યા કરે છે. તથા
દાતા વડે વિત્તીર્ણ અને તીર્થકર ગણધર આદિ દેવો દ્વારા ગ્રહણ કરવાને
યોગ્ય કહેલ ઇક્કડ આદિ વસ્તુ ગ્રહણ કરવાના અભિપ્રાયવાળા થાય છે. આ
રીતે તેની અનુજ્ઞાત સંસ્તારક ગ્રહણરૂપ બીજી ભાવના સાધ્ય બને છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા આ વ્રતની 'અનુજ્ઞાત સંસ્તારક ગ્રહણ'
નામની બીજી ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. તેમાં એ સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યું
છે કે સાધુનું તે કર્તવ્ય છે કે તે શય્યાના સાધન નિમિત્તે આરામ આદિ
સ્થાનોના કોઈ પણ ભાગમાંથી ઇક્કડ આદિ જે વસ્તુઓ લે તે તેના માલિકની
રજા મેળવીને જ લે. નહીં તો તેમને અદત્તાદાન ગ્રહણ કરવાનો દોષ લાગે
છે, જે આ મૂલગુણની અશુદ્ધિનું કારણ બનશે. તેથી શય્યા સંસ્તારકને નિમિત્તે
ઇક્કડ આદિ પ્રકારના તૃણ વિશેષને પ્રાપ્ત કરવાને માટે જે સાધુઓ તેના માલિકની

અથ તૃતીયાં ભાવનામાહ—‘તદ્યં’ ઇત્યાદિ—

મૂલ્મ્—તદ્યં પીઠફલગસેજાસંથારગટ્ટયાણ સ્વસ્થા ન છિંદિ-
યઢ્વા, ન ય છેયણ ભેયણેણ ય સેજા કારિયઢ્વા, જસ્સેવ ઉવ-
સ્સણ વસેજ્જા, સેઝજં તત્થેવ ગવેસેજ્જા, ન ય વિસમં સમં
કરેજ્જા, ન ય નિવાયપવાયઉસ્સુગત્તં, ન ડંસમસગેસુ સુભિયઢ્વં,
અગ્ગીધૂમો ય ન કાયઢ્વો । एवं संजमवहुले संवरवहुले संबुड-
वहुले समाहिवहुले धीरे काएण फासयंते सययं अज्झाणजुत्ते
समिए एगे चरेज्ज धम्मं, एवं समिइजोगेण भाविओ भवइ
अंतरप्पा निच्चं अहिकरणकरणकारावणपावकम्मविरए दत्त-
मणुन्नाय उग्गहरुई ॥ सू० ८ ॥

ટીકા—‘તદ્યં’ તૃતીયાં શય્યાપરિકર્મવર્જનરૂપાં ભાવનામાહ—તત્ર—‘પીઠફલગ-
સેજાસંથારગટ્ટયાણ’ પીઠફલગશય્યાસંસ્તારકાર્યતાયૈ—તત્ર—પીઠં= ‘બાજોટ’

કો પ્રાપ્ત કરને કે ઝિયે. ઉનકે સ્વામીયોં કી આજ્ઞા પ્રાપ્તકર ઉન ૨ વસ્તુ-
ઓં કો લેતા; હૈ વહ હસ દ્વિતીય ભાવના કા પાલક હોતા હૈ । હસ
તરહ કે વિચાર સે જો સાધુ અપની પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ અધિકરણ
કરણ કારણ પાપકર્મ સે નિવૃત્ત બનકર હસ વ્રત કો હસ ભાવના દ્વારા
સ્થિર કરને વાલા હો જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

અથ સૂત્રકાર હસ વ્રત કી તૃતીય ભાવના કો કહતે હૈ—‘તદ્યં
પીઠફલગ’ ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(તદ્યં) હસ વ્રત કી તીસરી ભાવના શય્યાપરિકર્મ-
વર્જનરૂપ હૈ । વહ હસ પ્રકાર સે હૈ—(પીઠફલગસેજા સંથારગટ્ટયાણ)

આજ્ઞા લઈને તે વસ્તુઓ અહણ કરે છે તેઓ આ બીજી ભાવનાના પાલક
હોય છે. આ પ્રકારના વિચારથી જે સાધુ પોતાની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે અધિકરણ
કરણકારણ પાપકર્મથી નિવૃત્ત થઈને આ વ્રતને આ ભાવના દ્વારા સ્થિર
કરનાર બની જાય છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની ત્રીજી ભાવના બતાવે છે—“તદ્યં પીઠફલગ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“ તદ્યં ” આ વ્રતની ત્રીજી ભાવના “ શય્યાપરિકર્મવર્જન ”
નામની છે. તે આ પ્રમાણે છે—“ પીઠફલગસેજાસંથારગટ્ટયાણ ” પીઠ—આજોડ,

सुदर्शिनी टीका अ०३ सू०८ शय्यापरिकर्मवर्जनं नाम कृततीयभाषनानिरूपणम् ७५३

इति भाषा प्रसिद्धं, फलकः=‘पाट’ इति भाषा प्रसिद्धः, शय्या=शरीरप्रमाण, संस्तारकाः=सार्द्धद्वस्तद्वयप्रमाण आसनविशेषः, तदर्थं ‘रक्खा’ वृक्षाः ‘छिदियव्या’ छेत्तव्य । ‘न य’ न च ‘छेयणभेदणेण’ छेदनभेदनेन=छेदनं=तद्भूम्याश्रितवृक्षाणां कर्तव्यम्, भेदनं=आपाणादीनां द्विधाकरणम्, अनयो समाहारः तेन तथोक्तेन च ‘सेज्जा’ शय्या ‘न कारियव्या’ न कारयितव्या परः । तथा ‘जस्सेव’ यस्मैव गृहपतेः ‘उवस्सए’ उपाश्रये=वसतो ‘वसेज्जा’ वसेत्, ‘तत्थेव’ तथैव ‘सेज्जं’ शय्यां—शयनीयं ‘गवेसेज्जा’ गवेषयेत्=कुर्यादित्यर्थः । च=चुनः ‘नय वि समंसं करेज्जा’ विषमां भूमिं समां कुर्यात् । ‘न य’ न च ‘निवायपवाय उस्सुगत्तं’ निवातप्रवातोत्सुकत्वम्—निवातं=निर्वातस्थानम्, प्रवातं=प्रकृष्टगुहस्थानम्, तत्र-उत्सुकत्वम्=उत्सुकतां ‘न करेज्जा’ पीठ-राजोष्ठ, फलक-पाट, शय्या-शरीरप्रमाण, संस्तारक-ढाई हाथ-प्रमाण आसनविशेष, साधु संबंधी इन वस्तुओं को बनवाने के निमित्त (रक्खा न छिदियव्या) वृक्षों को नहीं काटना चाहिये । और (न य छेयण-भेदणेण सेज्जा कारियव्या) न उनके छेदन, भेदन से शय्या करवानी चाहिये । वृक्षों का कटवाना इसका नाम छेदन है और उनका फटवाना इसका नाम भेदन है । तथा (जस्सेव उवस्सए वसेज्जा सेज्जं-तथेव गवेसेज्जा) जिस गृहपति के (उवस्सए) उपाश्रय में-वसति-स्थान में साधु (वसेज्जा) वसे-रहे, (तत्थेव) वहीं पर अर्थात्-उसी मकान मालिक से अथवा उसी वस्ती से (सेज्जं गवेसेज्जा) शय्या की गवेषणा करे न य विसमं समं करेज्जा) वहां की भूमि को यदि वह विषम-ऊंची नीची होवे तो उसे सम-एकसी न करे, और (न य निवाय पवाय उस्सुगत्तं) न वह निर्वात स्थान की तथा प्रवात स्थान की

इसक-पाट, शय्या-शरीरप्रमाण, संस्तारक-ढाई हाथका भापनुं जेक आसन, आदि साधुने उपयेगी थीले बनाववाने भटे “रक्खा न छिदियव्या” वृक्षोने कपवां जेधजे नहीं, अने “न य छेयण भेदणेण सेज्जा कारियव्या” तेभने छेदायी छेदायीने शय्या करवयी जेधजे नहीं, वृक्षोने कपाववा जेटले तेभनुं छेदन अने तेभने वेराववा तेनुं नाम भेदन छे, तथा “जस्सेव उवस्सए वसेज्जा सेज्जं तत्थेव गवेसेज्जा” जे गृहपतिना “उवस्सए” उपाश्रयभां वसतिस्थानभां साधु “वसेज्जा” वसे-रहे, “तत्थेव” त्यां जे जेटले डे ते जे मकानमालिक पासथी अथवा ते जे वस्तीभांथी “सेज्जं गवेसेज्जा” शय्यानी गवेषणा करे “न य विसमं समं करेज्जा” जे त्यांनी जमीन विषम-छिंथी नीथी छाय तो तेने जेकसरथी न करे अने “न य निवाय पवाय उस्सुगत्तं”

न कुर्यात् । अयं भावः—शीतर्तौ निर्वातस्थानस्य ग्रीष्मर्तौ सवातस्थानस्य वाञ्छां न कुर्यात् । इति । ‘न य’ न च ‘डंसमगेषु’ दंशमशकेषु सत्सु ‘खुभियव्वं’ क्षोभितव्यम्, दंशमशकादीनामुपद्रवे सत्यपि श्रोत्रो न कर्तव्य इति भावः । तथा—‘अग्गीधूमो य’ अग्निर्धूमश्च=दंशमशकादीनां निवारणार्थमग्निर्धूमो वा ‘न कायव्वो’ न कर्तव्यः । एवम्=उक्तरूपेण ‘संजमबहुले’ संयमबहुलः=संयमः=षट्काय रक्षणलक्षणः, स बहुलः=प्रचुरो यस्य स तथोक्तः, तथा—‘संवरबहुले’ संवर बहुलः=संवरः=प्राणतिपाताद्यास्रवद्वारनिरोधः, स बहुलः=प्रचुरो यस्य स तथोक्तः, तथा—‘संबुडबहुले’ संवृतबहुलः=संवृतः=कषायेन्द्रियजयः, तद् बहुलं प्रचुरं यस्य स तथोक्तः, तथा—‘समाधिबहुले’ समाधिबहुलः=समाधिः=चित्तस्वास्थ्यं, स बहुलः प्रचुरो यस्य स तथोक्तः, एतादृशो ‘धीरे’ धीरः=अश्रोत्र्यः ‘काएण’ कायेन ‘फासयंते’ स्पृशन्=परीपहन् सहमानहःपर्यः, तथा—‘सययं’

उत्सुकता-भावना रखे अर्थात् शीतऋतु में निर्वातस्थान की और ग्रीष्म ऋतुमें हवादार स्थान की इच्छा न करे । तथा—(न डंसमगेषु-खुभियव्वं) ठहरे हुए स्थान में दंशमशक आदि का उपद्रव होवे तो उससे उसको क्षुभित नहीं होना चाहिये । और (अग्गीधूमो न कायव्वो) न उक्त स्थान पर उन दंशमशक आदि को भगाने के निमित्त अग्नि वा धूआँ करवाना चाहिये । (एवं) इस प्रकार की प्रवृत्ति रखने से (संजमबहुले) षट्काय रक्षणरूप संयम की प्रचुर मात्रा से युक्त संयम बहुल, तथा (संवरबहुले) प्राणतिपात आदि आस्रव द्वार के निरोध रूप संवर की प्रचुर मात्रा से सहित होने के कारण संवर बहुल, तथा (संबुडबहुले) कषाय और इन्द्रियों के जीतने रूप संवृत की प्रचुर मात्रा से रहित होने के कारण संवृतबहुले, तथा

ते निर्वात स्थाननी के प्रवातस्थाननी उत्सुकता रखे नहीं, अतः के शिवाणामां पवन विनाश स्थाननी अने उताणामां हुवा आवे तेरा स्थाननी तेले छँछा करवी नहीं. तथा “न डंसमगेषु खुभियव्वं” तेभने थोपवाना स्थानमां अंस, मच्छर आदिनो उपद्रव होय तो तेथी तेले क्षोभ पावये नहीं. अने “अग्गी धूमो न कायव्वो” तेभले ते अंस, मच्छर आदिने नसाइरा भाटे ते स्थानमां अग्नि के धुमांडो करववा लेईये नहीं. “एवं” आ प्रकारनी प्रवृत्ति राखवाथी “संजम बहुले” छडाय रक्षणरूप संयमनी अत्यंत मात्राथी युक्त संयमबहुल तथा “संवरबहुले” प्राणतिपात आदि आस्रवद्वारना निरोधरूप संवरनी वृष्ठी मात्राथी युक्त होवने धरले संवरबहुल, तथा “संबुडबहुले” कषाय अने इन्द्रियेने छतनार संवृतनी अनि अधिक मात्राथी युक्त होवने

સુદર્શિની ટીકા અ૦૩ મૂ૦૮ 'શય્યાપરિકર્મવર્જન'નામ૦ તૃતીયભાવનાનિરૂપણમ્ ૭૫૧

સતતમ્=નિરન્તરમ્, 'અજ્ઞપ્પજ્ઞાણજુત્તે' અધ્યાત્મધ્યાનયુક્તઃ=આત્માનમધિકૃત્ય
અધ્યાત્મમ્=આત્માલમ્બનરૂપં યદ્ધ્યાનં તેન યુક્તઃ=સમન્વિતઃ, તથા-'સમિષ્'
સમિતઃ=સમિતિર્મિયુક્તઃ 'એ' એકઃ= એકાકી રાગદ્વેષરહિતઃ, 'ધમ્મ' ધર્મ=
શ્રુતચારિત્રલક્ષણં 'ચરેજ્જ' ચરેત્=આચરેત્ । ઉપસંહરઆદ્-'એવમ્' પ્રકારેણ
'સિજ્જાસમિદ્ધજોમેણ' શય્યાસમિતિયોગેન ભાવિતોઽન્તરાત્માનિત્યમ્, 'અદિક-
રણ કરણકરાવણપાવકમ્મવિરણ' અધિકરણકરણકારણપાપકર્મવિરતઃ-અધિકરણ=
શય્યાપરિકલ્પનાર્થં વૃક્ષાદીનાં છેદનમેદનરૂપં યત્સાવચં કર્મ, તસ્ય યત્સ્વયં કર-
ણમ્, અન્યતથા કારણં ઉપલક્ષણત્વાદનુમોદનં ચ તદ્ભૂયં યત્પાપકર્મ તતો વિરતો=
નિવૃત્તો યઃ સ તથોક્તઃ, તથા-દત્તાનુજ્ઞાતાવગ્રહરુચિઃ=દત્તાનુજ્ઞાતૈષ્ણીયપોઠફલ-
કાદેરૂપભોગકારી ભવતિ ॥ મૂ-૮ ॥

(સમાહિચ્છુલે) ચિત્તની સ્વસ્થતારૂપ સમાધિની પ્રવુર માત્રા સે સહિત હોને કે કારણ સમાધિ ચ્છુલ, બના હુઆ વહ સાધુ (ફાસયંતે-કાણધીરે) પરીવહોં કો સહતે હુણ શરીર સે ધીર-અક્ષોભ્ય બના રહતા હૈ। તથા (સયયં અજ્ઞપ્પજ્ઞાણજુત્તે) નિરન્તર આત્માવલમ્બન રૂપ ધ્યાન સે યુક્ત બના હુઆ વહ સાધુ (સમિષ્) પાંચ સમિતિ કે પાલન સે (એ) અકેલા રાગદ્વેષ રહિત હોકર (ધમ્મં ચરેજ્જ) શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મ કા આચરણ કરતા રહતા હૈ (એવં) હસ પ્રકાર સે (સેજ્જાસમિદ્ધજોમેણ) શય્યાસમિતિ કે યોગ સે (ભાવિઓ અંતરણ્યા) ભાવિત હુઆ જીવ (નિચ્ચં) નિત્ય (અદિકરણકરણકારણપાવકમ્મ-વિરણ) શય્યાપરિકલ્પનાર્થં વૃક્ષાદિકોં કે છેદન મેદન રૂપ સાવચ અનુ-ષ્ઠાન કે કરને દૂસરોં દ્વારા કરાને તથા અનુમોદના રૂપ પાપકર્મ સે નિવૃત્ત

કારણે સંવૃતબહુલ, તથા: “સમાહિચ્છુલે” ચિત્તની સ્વસ્થતારૂપ સમાધિથી અત્યંત પ્રમાણમાં યુક્ત હોવાને કારણે સમાધિબહુલ, બનેલ તે સાધુ “ફાસયંતે કાણધીરે” પરીવહોને સહન કરતાં કરતાં શરીરથી ધીર-ક્ષોભરહિત રહે છે તથા “સયયં અજ્ઞપ્પજ્ઞાણજુત્તે” નિરંતર આત્માવલંબનરૂપ ધ્યાનથી યુક્ત બનેલ તે સાધુ “સમિષ્” પાંચ સમિતિના પાલનથી “એ” એકલો રાગદ્વેષ રહિત થઈને “ધમ્મં ચરેજ્જ” શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું આચરણ કર્યા કરે છે “એવં” આ રીતે “સેજ્જા સમિદ્ધ જોમેણ” શય્યાસમિતિના યોગથી “ભાવિઓ અંતરણ્યા” ભાવિત થયેલ શુદ્ધ “નિચ્ચં” નિત્ય “અદિકરણકરણકારણપાવકમ્મવિરણ” શય્યા-પરિકલ્પનાર્થે વૃક્ષાદિના છેદન ભેદનરૂપ સાવચ અનુષ્ઠાન કરતાં, બીજા પાસે કરાવતાં તથા અનુમોદનારૂપ પાપકર્મથી નિવૃત્ત થઈ બાકી છે. તથા “દસમ-

હો જાતા હૈં । તથા (દત્તમણુળ્યાય ડગહરુઈ ભવઈ) દત્તાનુજ્ઞાતાવગ્રહ-
રુચિવાળા-દત્તાનુજ્ઞાતૈષણીય પીઠ ફલક આદિકા ઉપભોગકારી હોતા હૈં ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા શઘ્યાપરિકર્મવર્જન નામક ત્રીસરી ભાવના કા સ્પષ્ટી કરણ ક્રિયા હૈં । ડન્હોં ને હસ મેં યહ સમ-
જ્ઞાયા હૈં કિ જો સાધુ હસ ભાવના કો ખાતા હૈ-સેવન કરતા હૈ-ડસકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ અપને નિમિત્ત કાટે ગયે ઘૃક્ષ સે ઘને હુપ પીઠ ફલક આદિ કે ઉપભોગ કરને કા પરિત્યાગ કર દેવે । તથા જિસ ગૃહપતિ કે યહાં વહ ઠહરે વહોં પર અર્થાત્ ડસી મકાન માલિક સે અથવા વસ્તી સે વહ અપની શઘ્યા કી ગવેષણા કરે । યદિ વહાં કી ભૂમિ નીચી ડેચી હોવે તો વહ ડસે સમ ન કરે । યદિ ગર્મીં કે સમય મેં કિસી ગૃહપતિ કી વસતી મેં ઠહરને કા અવસર પ્રાપ્ત હૂઆ હો ઓર વહાં હયા આને કા સાધન ન હો તો વહ સદાન સ્થાન કી ઇાહના ન કરે તથા યદિ શીતઋતુ મેં કિસી ગૃહપતિ કે યહાં યા કિસી ઉપાશ્રય આદિ મેં ઠહરને કા મોકા આ ગયા હોવે ઓર વહ સ્થાન સવાત હો તો ડસે નિર્વાત-સ્થાન કી કામના નહીં કરની ઇાહિયે । દંશમજક પીઢિત કરેં મી-તો મી ડસે ક્ષુભિતચિત્ત નહીં હોના ઇાહિયે-ઓર ન ડન્હેં મગાને કા ડસે કોઈ ઉપાય હી ઇિચારના યા કરના ઇાહિયે । હસ તરહ સે વહ

ણુળ્યાયડગહરુઈ ભવઈ ” દત્તાનુજ્ઞાતાવગ્રહ રુચિવાળો-દત્તાનુજ્ઞાતૈષણીય પીઠ, ફલક આદિકો ઉપભોગકર્તા બને છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા શઘ્યાપરિકર્મવર્જન નામની ત્રીજી ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. તેમણે તેમાં એ સમજાવ્યું છે કે જે સાધુ આ ભાવનાનું સેવન કરે છે, તેનું કર્તવ્ય એ છે કે તે પોતાને નિમિત્ત કપાયેલ ઘૃક્ષમાંથી બનાવેલ પીઠ, ફલક આદિકો ઉપભોગ કરવાનો પરિત્યાગ કરે. તથા જે ગૃહપતિને ત્યાં તે ઉતરે ત્યાં જ એટલે કે એ જ મકાનમાલિક પાસેથી અથવા વસ્તીનાંથી તે પોતાની શઘ્યાની ગવેષણા કરે. જો ત્યાંની જમીન ઊંચી નીચી હોય તો તેને સમતલ ન કરે. જો ઉનાળાની ઋતુમાં ડોઈ ગૃહપતિના આવાસમાં થોડાવાની જરૂર પડી હોય અને ત્યાં હવા આવવાની વ્યવસ્થા ન હોય તો તે હવા આવે તેવા સ્થાનની ઇચ્છા ન કરે તથા જો શિયાળામાં ડોઈ ગૃહપતિને ત્યાં અથવા ડોઈ ઉપાશ્રય આદિમાં ઉતરવાનો અવસર આવે અને તે સ્થાનમાં પવન આવતો હોય તો તેણે પવન ન આવે એવા સ્થાનની ઇચ્છા જોઈએ નહીં. ડાંસ, મચ્છર આદિ સતાવે તો પણ તેણે ચિત્તમાં ક્ષોભ પામવો જોઈએ નહીં. અને તેને નસાડવાનો તેણે વિચાર કે ઉપાય કરવો જોઈએ

સુવર્ણિની ટીકા થ્ર ૩ સૂ૦૧. 'અનુજ્ઞાતમક્તાનામકચતુર્થીભાવનાનિરૂપણમ્ ૭૫૭

ચતુર્થી ભાવનામાહ—'ચૃત્યં' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ચૃત્યં સાહારણપિંડવાયલામે સહ ભોક્તૃત્વં, સંજણ સમિયં, ન સાગસૂવાહિયં, ન સ્વદ્ધં, ન વેગિયં, ન તુરિયં, ન ચવલં, ન સાહસં, ન ય પરસ્સ પીલાકરંસાવજ્જં । તહ ભોક્તૃત્વં જહસે તદ્યં વયં ન સીયહ સાહારણપિંડવાયલામે સુદુમં અદિણ્ણાદાણવિરમણવયનિયમણં, એવં સાહારણપિંડવાયલામે સમિહજોગેણ ભાવિઓ ભવહ અંતરણ્ણા ણિચ્ચં અહિકરણકર-
ણકારાવણવાવકમ્મવિરણ દત્તમણુન્નાય ઉગ્ગહરુહં ॥સૂ૦૧॥

ટીકા—'ચૃત્યં' ચતુર્થીમ્ અનુજ્ઞાતમક્તાદિભોજનલક્ષણાં ભાવનામાહ—
તત્ત્વ—'સાહારણપિંડવાયલામે' સાધારણપિંડવાતલામે સાધારણ=કલ્પનીય ઉ-
સાધુ સંયમ વહુલ આદિ હોકર પરીષદ્દ ઓર ઉપસર્ગોં સે અડોલ બનતા
હુઆ શ્રુત ચારિત્ર રૂપ ધર્મ કી આરાધના મેં સાવધાન બન જાતા હૈ ।
હસ તરહ શય્યાપરિકર્મવર્જન રૂપ શય્યાસમિતિ કે યોગ સે ભાવિત
આત્મા શય્યાપરિકલ્પનાર્થ વૃક્ષાદિકોં કે છેદન ભેદન આદિ રૂપ સાવચ
કર્મ કે કરને કરાને ઓર અનુમોદનાજન્ય પાપકર્મ સે બચ જાતા હૈ ।
ઓર હસ તૃતીયભાવના કા પાલક હો જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

અવ સૂત્રકાર ચૌથી ભાવના કો પ્રદર્શિત કરતે હૈ—'ચૃત્યં સાહાર-
ણ' ઇત્યાદિ ૦ ।

ટીકાર્થ—(ચૃત્યં) ચૌથી ભાવના અનુજ્ઞાતમક્તાદિ ભોજનરૂપ હૈ
જો હસ પ્રકાર હૈ—(સાહારણપિંડવાયલામે સહ) ઉચ્ચ નીચ કુલ સે

નહીં. આ રીતે તે સાધુ સંયમગુહલ, સંવરણગુહલ આદિ થઈને પરીષદો તથા
ઉપસર્ગોં સામે અચળ બનીને શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં સાવધાન બની
જાય છે. આ રીતે શય્યાપરિકર્મવર્જનરૂપ શય્યાસમિતિના યોગથી ભાવિત
આત્મા શય્યા પરિકલ્પનાર્થે વૃક્ષાદિના છેદન ભેદન આદિરૂપ સાવચ કર્મ કરા-
વવાથી અને અનુમોદનાજન્ય પાપકર્મથી બચી જાય છે અને આ ભાવનાનો
પાલક થઈ જાય છે. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

હવે સૂત્રકાર ચૌથી ભાવના બતાવે છે—“ચૃત્યં સાહારણ” ઇત્યાદિ.
“ચૃત્યં” ચૌથી ભાવના અનુજ્ઞાત ભક્તાદિ ભોજન રૂપ છે. તે આ પ્રમાણે
છે “સાહારણપિંડવાયલામે સહ” ઉચ્ચ નીચ કુળમાંથી કલ્પે તેવી શિક્ષા તથા

સ્વાવચકુલગ્રાહો યઃ પિષ્ઠપાતઃ મિશ્રા, ઉપલક્ષણાદ્ વસ્ત્રપાત્રાદ્યન્યોપધિરપિગૃહ્યતે, તસ્ય લાભઃ = દાયકાત્માસિસ્તસ્મિન્ ' સદ્ ' સતિ ' સંજ્ઞણ ' સંયતેન = સાધુના ' ભોક્તૃવ્વં ભોક્તૃવ્યમ્ = પરિભોક્તૃવ્યં । ' ભોક્તૃવ્યમ્ ' इत्यग्रेऽपि सर्वत्र योज्यम्, कथं भोक्तव्यम् ? इत्याह- ' समियं ' सम्यक् = अदत्तादानं यथा न भवति तथेत्यर्थः । सम्यक्त्वमेवाद- ' न सागसूत्रहियं ' न शाकमूपाधिकं = भोक्त-
व्यम् । शाकमूपाधिके भोजने कृते सति प्रमाणादधिकाहारो भवति, तेनादत्तादा-
नदोषापत्तिर्भवति, तथा ' खद्वं ' प्रचुरं भोक्तव्यम् । ' न वेगियं ' न वेगितं =
वेगयुक्तं वेगेन ग्रासं मुखे प्रक्षिप्य भोक्तव्यम्, ' न तुरियं ' त्वरितं = त्वरायुक्तं ગ્રાસસ્ય
ગિલને શીઘ્રતાં કૃત્વા ભોક્તવ્યમ્ । તથા-ન ' ચલં ' ચપલં = હસ્તગ્રીવાદિકાય,

કલ્પનીય મિશ્રા તથા વ્રતપાત્ર આદિ ઉપધિ કા લાભ હોને પર (સંજ-
ણં ભોક્તૃવ્વં) મુનિ કો ઉસે અપને ખાને આદિ કે ઉપયોગ મેં લેના
ચાહિયે । સાધુ કો આહાર કિસ પ્રકાર સે કેસા લેના ચાહિયે સૂત્રકાર
અવ હસ વાત કો કહતે હૈં- (સમિયં) અદત્તાદાન કા દોષ ન લગે
હસ પ્રકાર સે યતના રાખતે હુએ (ન સાગ સૂત્રાહિયં) શાક ઓર દાલ
કો અધિકતા કે સાથ ભોજન નહીં કરના ચાહિયે-અર્થાત્-શાક ઓર
દાલ કો અધિકતા વાલા ભોજન પ્રમાણ સે અધિક ખા લિયા જાતા હૈ,
હસલિયે વત્તીસ ગ્રાસ લેને કો અપેક્ષા ભોજન મેં અધિકતા આને સે
સાધુ કો અદત્તાદાન દોષ કો આપત્તિ આતી હૈ । (ન ખદ્વં) ઊચિત
માત્રા મેં ઓ દાલ શાક કે સાથ પ્રચુર માત્રા મેં આહાર નહીં કરના
ચાહિયે । તથા (ન વેગિયં) જલ્દીર ઉનાવલી કે સાથ ઓ ભોજન નહીં
કરના ચાહિયે । તથા (ન તુરિયં) ત્વરાયુક્ત હોકર ગ્રાસ કે ગિલને મેં

વસ્ત્ર પાત્ર આદિ ઉપધિના લાભ થતાં “સંજ્ઞણં ભોક્તૃવ્વ” મુનિએ તે પોતાને
માટે ખાવા આદિના ઉપયોગમાં લેવું જોઈએ. હવે સૂત્રકાર એ વાત બતાવે
છે કે મુનિએ ભોજન કેવી રીતે ખાવું જોઈએ અને કેવું ન ખાવું જોઈએ.
“સમિયં” અદત્તાદાનનો દોષ ન લાગે તે પ્રમાણે યતના પૂર્વક “ન સાગસૂત્રહિયં”
શાક અને દાળની અધિકતા વાળું ભોજન કરવું નહીં, એટલે કે શાક અને
દાળની અધિકતા વાળું ભોજન પ્રમાણમાં વધારે ખવાય છે, તે કારણે અત્રીશ
ગ્રાસ કરતાં ભોજન વધારે લેવાથી સાધુને અદત્તાદાન દોષ નડે છે. “ન ખદ્વં”
પ્રમાણમાં દાળ શાકની સાથે વધારે પ્રમાણમાં પણ આહાર લેવો જોઈએ નહીં, તથા
“ન વેગિયવ્વં” જલ્દી જલ્દી ઝડપથી પણ ભોજન કરવું જોઈએ નહીં, તથા “ન તુ-
રિય” ત્વરા સહિત કોગિયો ગયો ઉતારવામાં ઝડપ કરીને પણ ભોજન નહીં કરવું

सुदर्शिनी टीका अ० ३ सू०९ 'अनुत्तादानक'नामकचतुर्थीभाषनानिरूपणम् ७१९

चालनरूपचापल्ययुक्तं भोक्तव्यम् । न साहसम्-अप्रतिलेखितं भोक्तव्यम्, तथा-
'न य' न च 'परस्स' परस्य एकेन्द्रियादेः 'पीलाकरं' पीडाकरं 'सावज्जं'
सावज्जं=सचित्तं भोक्तव्यम्, एवमुपलक्षणाद्वस्त्रपात्रादिपरिभोगोऽपि ग्राह्यः । तर्हि-
कथं भोक्तव्यम् ? इत्याह । 'तद् भोक्तव्यं' तथा भोक्तव्यं 'जह' यथा 'से'
तस्य=संयतस्य 'तइयं' तृतीयं 'वयं' व्रतं अदत्तादानविरमणरूपं 'नसीयइ'
न सीदति=न नश्यति यथा-अदत्तादानविरमणरूपं व्रतं न विनश्येत्तथा भोक्तव्य-
मित्यर्थः, 'साधारणपिंडवायलाभे' साधारणपिण्डपातलाभे सति 'सुहुमं' सूक्ष्मं=
दुर्निरीक्षम्, -पूर्णरूपेणेत्यर्थः, 'अदिण्णादाणविरमणवयनियमणं' अदत्तादानविर-

शीघ्रता करके भोजन नहीं करना चाहिये । तथा (न चवलं) हाथ,
गर्दन आदि अवयवों को चलाते हुए भोजन नहीं करना चाहिये ।
तथा न साहसं अप्रतिलेखित भोजन नहीं करना चाहिये । और
(न य परस्स पीलाकरं सावज्जं) एकेन्द्रियादिक जीवों को पीडा कारक
सावध-सचित्त-भोजन न करना चाहिये । इसी तरहसे वस्त्र पात्रादिकके
परिभोग में भी यही बात समझ लेनी चाहिये । तो फिर कैसे भोजन
करना चाहिये ? इस बात को अब सूत्रकार प्रकट करते हैं, वे कहते हैं
कि (से) उस संयत को (तद् भोक्तव्यं) इस प्रकार से भोजन करना
चाहिये कि (जह) जिससे (तइयं वयं) अनत्तादानविरमणरूप तीसरा
व्रत (न सीयइ) नष्ट न होवे (साधारणपिंडवायलाभे) इस तरह पूर्वोक्त
साधारण कल्पनीय-पिंडपात-भिक्षा की प्राप्ति होने पर (सुहुमं) सूक्ष्म
रूप से अर्थात्-पूर्णरूप से (अदिण्णादाणविरमणवयनियमण) इस

लोभ्ये. तथा "नचवलं" हाथ, डोके आदि अवयवोंने डोलावता डोलावता पशु
भोजन करवुं लोभ्ये नहीं. तथा "नसाहसं" अप्रति लेखित भोजन न करवुं
लोभ्ये नहीं. अने "न य परस्स पीलाकरं सावज्जं" एकेन्द्रिय आदि एवोंने
पीडा कारक सावध-सचित्त-भोजन न करवुं लोभ्ये. ये व रीते वस्त्र, पात्र
आदिना परिभोगमां पशु ये व बात समझ लेवी. तो पछी डेवुं भोजन
करवुं लोभ्ये ? ते बातने प्रकट करतां सूत्रकार कहे छे के "से" ते संयते
"तद् भोक्तव्यं" आ प्रमाणे भोजन करवुं लोभ्ये. "जह" वेथी "तइयं
वयं" अदत्तादान विरमण इय त्रीणुं व्रत "न सीयइ" नष्ट न
थाय "साधारणपिंडवायलाभे" आ रीते पूर्वोक्त साधारण कल्पनीय
पिंडपात-भिक्षानी प्राप्ति थतां "सुहुमं" सूक्ष्मइये अटले के पूरुंइये "अदि-
ण्णादाणविरमणवयनियमण" अदत्तादान विरमण व्रत पर नियंत्रण-अधिकार

મગ્નવ્રતનિયમનમ્=અદત્તાદાનવિરમણવ્રતસ્ય યદ્નિયમનં=નિયત્રણં તદ્ ભવતિ ।
 एवम्=અનેન પ્રકારેણ ‘ સાહારણપિંડવાયલાભસમિદ્જોગેણ ’ સાધારણપિંડપાત-
 लाभसमितियोगेन=સાધારણપિંડપાતલાભે યા સમિતિઃ=સમ્યક્પ્રવૃત્તિઃ તસ્યા
 યોગેન=સમ્બન્ધેન ભાવિતોઽન્તરાત્માનિત્યં=સદા અધિકરણકરણકારણપાપકર્મવિરતઃ
 =અધિકરણસ્ય=અનનુજ્ઞાતભક્તાદિભોજનલક્ષણસાવચ્ચકર્મણોયત્કરણં કારણમુપચ્છ-
 णत्वादनुमोदनं ચ તદેવ યત્પાપકર્મ તતો વિરતો=નિવૃત્તઃ, દત્તાનુજ્ઞાતાવગ્રહરુચિ
 भवति । एतद् व्याख्या पूर्ववद्विज्ञेया ॥ સુ ૯ ॥

અદત્તાદાનવિરમણ વ્રત પર નિયત્રણ-અધિકાર હો જાતા હૈં । (एवं)
 इस प्रकार से (साधारणपिंडवायलाभे) साधारणपिंडपातलाभ में
 (समिद्वजोगेण) सम्यक् प्रवृत्ति के संबंध से (भाविओ अंतरणा)
 भावित अन्तरात्मा (निच्चं) नित्य-सदा (अधिकरण करणकारावण-
 पापकम्मविरण) अननुज्ञात भक्तादि भोजनरूप सावच्यकर्म के करने, कराने
 और उसकी अनुमोदनारूप पापकर्मसे विरत हो जाता है । और (दत्तम-
 गुण्णाय उगग्रहर्ह भवइ) दत्तानुज्ञात अवग्रह में रुचिवादी हो जाता है ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા અદત્તાદાનવિરમણ વ્રતની ચોથી ભાવના કો કહતે હૈ । હસ કા નામ અનુજ્ઞાતભક્તાદિ ભોજન
 है । साधु के लिये दाता द्वारा कल्पनीय शिक्षा अथवा उपधि की प्राप्ति
 हो जाने पर उसे किस तरह से अपने उपयोग में लाना चाहिये इसका
 इसमें विचार किया गया है । आहार के विचार में साधु को दाल
 शाक की अधिकता के साथ में आहार करने का त्याग कहा गया

થઈ જાય છે. “ एवं ” આ પ્રકારે “ સાહારણ પિંડવાયલાભે ” સાધારણ શિક્ષાની
 प्राप्ति થતાં “ समिद्वजोगेण ” सम्यक् प्रवृत्तिना योगથી, “ भाविओ अं-
 तरणा ” ભાવિત અંતરાત્મા “ निच्चं ” નિત્ય “ अधिकरणકરણકારાવણપાપ-
 कम्मविरण ” અનનુજ્ઞાત ભક્તાદિ ભોજન રૂપ સાવચકર્મ કરવાથી, કરાવવાથી,
 અને તેની અનુમોદના રૂપ પાપકર્મથી મુક્ત થઈ જાય છે. અને “ दत्तमगुण्णाय-
 उगग्रहर्ह भवइ ” दत्तानुज्ञात अवग्रहમાં रुचिवादी થઈ જાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા અદત્તાદાન વિરમણ વ્રતની ચોથી
 ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. તે ભાવના અનુજ્ઞાત ભક્તાદિ ભોજન નામની છે.
 दाता द्वारा साधुने कहे तेवी शिक्षा अथवा उपधिनी प्राप्ति થઈ જાય ત્યારે
 તેણે કેવી રીતે તે પોતાના ઉપયોગમાં લેવી જોઈએ તે બાબતનો આ ભાવનામાં
 વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. વધારે દાળ શાક આદિનો આહાર લેવાનો સાધુએ

સુવર્ણીની ટીકા અ૦૩ સૂ૦ ૫ પદ્યમ 'વિનય' ભાવનાનિરૂપણમ

૭૬૧

પદ્યમીં ભાવનામાહ--' પંચમં ' इत्यादि

મૂલમ--પંચમં સાહમ્જિણસુ વિણઓ પંડંજિયવ્વો । ઉવગરણ
પારણાસુ વિણઓ પંડંજિયવ્વો, વાયણપરિયટ્ટણાસુ વિણઓ
પંડંજિયવ્વો । દાણમ્મહણપુચ્છણાસુ વિણઓ પંડંજિયવ્વો ।
નિમ્મલ્લમણપવેસણાસુ વિણઓ પંડંજિયવ્વો । અણ્ણેસુ ય એવ-
માહણસુ વહુસુ કારણસણસુ વિણઓ પંડંજિયવ્વો । વિણઓ
વિ તવો, તવો વિ ધમ્મો, તમ્હા વિણઓ પંડંજિયવ્વો ગુરુસુ
સાહુસુ તવલિસુ ય । एवं विणएण भाविओ भवइ अंतरप्या
निच्चं अहिकरणकरणकारावणपापकम्मविरए दत्तमणुण्णा य
उग्गहसई ॥ सू० १० ॥

है, क्यों कि ऐसा आहार प्रमाण से अधिक कर लिया जाता है, जिससे
अदत्तादान का दोष आता है । आहार करते समय इस बात का विशेष
ध्यान रखना योग्य है कि हाथ, पैर, गर्दन आदि अवयव अनावश्यक
रूप से न चले । आहार करते समय आहार जल्दी २ से न किया जावे ।
प्रास जल्दी २ से न गिला जावे । एकेन्द्रियादिक जीवों को बाधाकारी
आहार--सचित्त आहार न लिया जावे । तात्पर्य कहने का यह है कि
अदत्तादानविरमणञ्चत नष्ट न हो इस प्रकार से साधु को आहार करना
चाहिये । इस तरह की प्रवृत्ति से इस ज्ञान पर पूर्ण रूप से नियंत्रण-
काय हो जाता है । वह साधु अननुज्ञानभक्तादि भोजन रूप सावधकर्म
के करने, कराने और अनुमोदनारूप पापकर्म से विरत बन जाता है ॥सू० १॥

ત્યાગ કરવું બેઠએ એવું તેમાં દર્શાવ્યું છે, કારણ કે તેવો આહાર વધારે
પ્રમાણમાં લેવાય છે તેથી સાધુને અદત્તાદાનનો દોષ લાગે છે. આહાર કરતી
વખતે એ વાતનું ખાસ ધ્યાન રાખવું બેઠએ કે હાથ, પગ ડોક આદિ અવયવો
ખીન જરૂરી રીતે હાલે ચાલે નહીં. આહાર કરતી વખતે અડપથી આહાર લેવો
બેઠએ નહીં, કોળિયો જલ્દી ગળાવી નીચે ઉતરવો નહીં. એકેન્દ્રિયાદિઓને
પીડાકારી આહાર--અચિત્ત આહાર લેવો બેઠએ નહીં. એ કહેવાનું તાત્પર્ય
એ છે કે અદત્તાદાન વિરમણ રૂપ નષ્ટ ન થાય તે પ્રકારે સાધુએ આહાર
કરવો બેઠએ. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી આ જ્ઞાન પર સંપૂર્ણ રીતે અંકુશ
આવી જાય છે. તે સાધુ અનનુજ્ઞાન ભક્તાદિ ભોજનરૂપ સાવધ કર્મ કરતા,
કરાવતા અને અનુમોદના થતાં પાપકર્મથી મુક્ત થઈ જાય છે. ॥ સૂ. ૬ ॥

પ્ર૦ ૧૬

ટીકા—‘પંચમં’ પંચમીં વિનયપ્રાપ્તિનાપાદ—‘સાહમ્મિણ્ણુ’ સાધર્મિકેષુ પર્યાયડ્યેષ્ઠ ‘વિણઓ’ વિનયઃ ‘પંડજિયવ્વો’ પ્રયોક્તવ્યઃ=કરણીયઃ । તથા—‘ઉવગારણપારણાસુ’ ઉપકારણપારણયોઃતત્ર-ઉપકારણં=સ્વપર્યોરુપકારકરણં, તત્ર-સ્વસ્ય સંયમવાલનેન, પરસ્ય ગ્લાનાદ્યવસ્થાયાં વૈયાગ્રસ્યાદિ કરણેન, પારણા=તપસઃ પારણા શ્રુતસ્ય પારગમનં વા પારણા, તયોઃવિનયઃ પ્રયોક્તવ્યઃ=દ્વયોરપિ મૃદુસ્વાભાવતઃ સ્થાતવ્યમિત્યર્થઃ, તથા—‘વાયણપરિયટ્ટણાસુ’ વાચનાપરિવર્તનયોઃ=વાચના મૃત્યગ્રહણમ્, પરિવર્તના=તસ્યૈવગુણતમ્, તયોઃ વિનયઃ=વન્દનાદિક-

અથ સૂત્રકાર પાંચમીં ભાવના કો કરતે હૈં—‘પંચમં સાહમ્મિણ્ણુ’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(પંચમં) હસ ત્રાત્ર કી પાંચમીં ભાવના વિનય હૈ—જિમ્મકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—(સાહમ્મિણ્ણુ વિણઓ પંડજિયવ્વો) અપને સમાન ધર્મવાલોં મેં જો દીક્ષા પર્યાય કી અપેક્ષા ડ્યેષ્ઠ હૈં ઉત્તમેં વિનય વૃત્તિ રલ્હની ચાહિયે। તથા (ઉવગારણપારણાસુ વિણઓ પંડજિયવ્વો) સ્વ ઓર પર કે ઉપકાર કરને મેં ઓર પારણા કરને મેં વિનય રલ્હના ચાહિયે, સંયમ કી આરાધના કરના યહ નિજ કા ઉપકાર કરના હૈ ઓર ગ્લાન આદિ અવસ્થા મેં અન્ય સાધુ કા વૈયાગ્રત્વ આદિ કરના યહ પર કા ઉપકાર કરના હૈ, તપસ્યા કા પારણા કરના અથવા શ્રુત કે પાર પઢ્ઢવના યહ પારણા હૈં હન દોનોં સ્થિતિયોં મેં મૃદુ સ્વભાવ સે રલ્હના યહી ઉપકારણ પારણા કા વિનય કરના હૈં। હસી તરહ (વાયણપરિયટ્ટણાસુ) સૂત્ર કી વાચના મેં ઓર ઉસકે પરિવર્તન કરને મેં—સ્વાધ્યાય

હે સૂત્રકાર પાંચમી ભાવના બતાવે છે—“પંચમં સાહમ્મિણ્ણુ” इत्यादि-

ટીકા—“પંચમં” આ ત્રતની પાંચમી ભાવના વિનય છે, જેનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—“સાહમ્મિણ્ણુ વિણઓ પંડજિયવ્વો” પોતાના સાધર્મીઓમાં જે દીક્ષા પર્યાયની અપેક્ષા એ મોટા હોય તેમના પર વિનયવૃત્તિ રાખવી જોઈએ. તથા “ઉવગારણપારણાસુ વિણઓ ઉપકારણયો” સ્વ અને પરનો ઉપકાર કરવામાં અને પારણા કરવામાં વિનય રાખવો જોઈએ. સંયમની આરાધના કરવી તે પોતાના ઉપર ઉપકાર કર્યો ગણાય છે અને ગ્લાન આદિ અવસ્થામાં અન્ય સાધુઓનું વૈયાગ્રત્વ-વૈયાવચ્ચ-કરવી તે પરનો ઉપકાર છે. તપનું પારણા કરવું અથવા શ્રુતને પાર પઢોવું તે પણ પારણા છે. એ બંને સ્થિતિમાં મૃદુ સ્વભાવથી રહેવું તે જ પારણાનો વિનય કરવાની રીત છે. એ જ રીતે “વાયણપરિયટ્ટણાસુ” સૂત્રની વાચનામાં અને તેનું પરિવર્તન કરવામાં—સ્વાધ્યાય કરવામાં સાધુએ “વિણઓ પંડજિયવ્વો” વંદણા

सुरशिनी टीका अ०३ सू०१० 'विनय' नामरूपश्चमभावनास्वरूपनिरूपणम् ७६६

क्षणः प्रयोक्तव्यः । तथा—'दागमगृहणपुच्छणासु' दानग्रहणप्रच्छनासु=दानं=लब्ध-
स्वात्मादे ग्लानादिभ्यो वितरणत्, ग्रहणम्-परेण दीयमानस्यैवात्मादेर्ग्रहणम्,
प्रच्छना=विस्मृतसूत्रार्थविषये प्रश्नः, एतासु 'विणओ' विनयः=दानग्रहणयोर्गुर्वा-
लक्षणः, प्रच्छनायां वन्दनादिरूपः प्रयोक्तव्यः ।

तथा—'निक्खमणपवेसणासु' निक्खमणप्रवेशनयोः = गमनागमनयोः
विनयः = गमने आवश्यकरीरूपः, आगमने नैपेधिकीरूपः प्रयोक्तव्यः, किं
बहुना 'अण्णेषु य' अन्येषु च 'एवमाइणसु' एवमादिकेषु=एवंविधेषु
बहुषु 'कारणसणसु' कारणशतेषु विनयः प्रयोक्तव्यः । कस्मात्कारणाद् विनयः
प्रयोक्तव्यः ? इत्याह—'विणओवि' विनयोऽपि तपः=न केवलमनशनादिकमेव

करने में साधु को (विणओ पउजियव्वो) वन्दनादिरूप विनय करना
चाहिये । तथा (दागमगृहणपुच्छणासु विणओ पउजियव्वो) दान में-
दाता द्वारा दिये हुए अन्नादि को का ग्लान आदि साधुओं के लिये
वितरण करने में-दाता द्वारा दिये गये अन्नादिक के लेने में गुरु की
आज्ञा प्राप्त करना रूप विनय, प्रच्छना में-विस्मृत हुए सूत्रार्थ को
गुर्वादिकों से पूछने में-वन्दनादि रूप विनय भाव रखना चाहिये । तथा
(निक्खमणपवेसणासु) निक्खमण और प्रवेशन में-गमन और आग-
मन में-(विणओ पउजियव्वो) आवश्यकरी रूप और नैपेधिकी रूप
विनय करना चाहिये अर्थात्-गमन में आवश्यकरीरूप और आगमन
में नैपेधिकीरूप विनय भाव साधु को रखना चाहिये । (अण्णेषु एव-
माइणसु सुबहुसु कारणेसु इसी तरह के और भी बहुत से सैकड़ों
कारणों में (विणओ पउजियव्वो) विनय भाव का आचरण करते

आदि करीने विनय दर्शावये । जेधये, तथा "दागमगृहणपुच्छणासु विणओ
पउजियव्वो" दानमां-दाता द्वारा अपायैव अन्नादिनुं ग्लान आदि साधुओमां
वितरण करवामां विनय राखये जेधये, प्रच्छ करवामां-दाता द्वारा अपायैव
अन्न आदि देवा माटे गुरुनी आज्ञा प्राप्त करवा इय विनय पाणवे । जेधये,
प्रच्छनामां-बुद्धाई गयेल सूत्रार्थ गुरु आदिने पछती वण्णते वदंथु आदि इय
विनय लाव राखये जेधये, तथा "निक्खमणपवेसणासु" निक्खमणु अने
प्रवेशनां-गमन अने आगमनमां "विणओ पउजियव्वो" आवश्यकरी इय
नैपेधिकी इय विनय लाव साधुये राखये जेधये, जेठले के गमनमां आवश्यकरी
इय अने आगमनमां नैपेधिकी इय विनय लाव साधुये राखये जेधये,
"अण्णेषु एवमाइणसु बहुसु कारणेसु" आ प्रहानी अन्य सेठ्ठो आभतोमां
पणु "विणओ पउजियव्वो" विनय लाव आचरये जेधये, कारण के "विणओ

૭૬૪

પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રે

તર્થેઃ અપિ તુ વિનયોઽપિ આભ્યાન્તરતપોભેદેષુ પઠિતઃ, તથા—‘તવો વિ’ તપોઽપિ ‘ધમ્મો’ ધર્મઃ=ન કેવલં સંયમએવ ધર્મઃ, કિન્તુ તપોઽપિ ધર્મઃ, તસ્ય ચારિત્રાંશત્વાત્, ‘તમ્હા’ તસ્માત્ ‘ગુરુસુ’ ગુરુયુ ‘સાહુસુ’ સાધુયુ ‘તવસ્સિસુ ય’ તપસ્વિયુ ચ વિનયઃ પ્રયોક્તવ્યઃ । એવં વિનયેન ભાવિતોઽન્તરાત્મા નિત્ય-મધિકરણકરણકારણપાપકર્મવિરતોઽધિકરણસ્ય = અવિનયરૂપસાવચકર્મણો યત્કરણં કારણમુપલક્ષણત્વાદનુમોદનં ચ, એતદ્ભૂપં યત્પાપકર્મ, તતોવિરતો=નિવૃત્તો દત્તાનુજ્ઞાતાવગ્રહરુચિ ભવતિ । એતદ્ વ્યાખ્યાપૂર્વમુક્ત્તા ॥ મૃ૦૧૦ ॥

રહના ચાહિયે । કયોં કિ (વિળઓ વિ તવો) યહ વિનય મી આભ્યંતર તપ હૈ—કેવલ અનશન આદિ હી તપ નહી હૈં । તથા (તવો વિ ધમ્મો) ચારિત્ર કા અંશ હોને સે તપ મી ધર્મ હૈ, કેવલ સંયમ હી ધર્મ નહીં હૈ (તમ્હો વિળઓ પઝંજિયવ્વો ગુરુસુ સાહુસુ તવસ્સિસુ ય) ફસલિયે ગુરુજનોં કે વિષય મેં, સાધુજનોં કે વિષય મેં ઓર તપસ્વી જનોં કે વિષય મેં વિનય ધર્મ કા વ્યવહાર અવશ્ય હી કરના ચાહિયે । (એવં-વિળણ ભાવિઓ અન્તરણા નિચ્ચં અધિકરણકરણકારાવળપાવ-કર્મવિરણ દત્તમળુળણાય ડગ્ગહરૂઈ ભવહ) ફસ પ્રકાર વિનય ધર્મ સે ભાવિત જીવ નિત્ય અવિનયરૂપ સાવચકર્મ કે કરને, કરાને ઓર ઉસકી અનુમોદનારૂપ પાપકર્મ સે નિવૃત્ત હો જાતા હૈ ઓર દત્તાનુજ્ઞાત અવગ્રહ મેં રુચિવાલા બન જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને ફસ સૂત્ર દ્વારા અદત્તાદાનવિરમળ રૂપ કી પાંચવી ભાવના કા સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કિયા હૈ ફસ ભાવના કા નામવિનય

વિ તવો ” આ વિનય પળુ અભ્યંતર તપ છે; ઉપવાસ આદિ જ તપ નથી. “તવો વિ ધમ્મો” ચારિત્રનેા અંશ હોવાથી તપ પળુ ધર્મ છે, દ્રશ્યા સંયમ જ ધર્મ નથી. “તમ્હા વિળઓ પઝંજિયવ્વો ગુરુસુ તવસ્સિસુ ય” તે કારણે ગુરુ-જનેા પ્રત્યે, સાધુજનેા પ્રત્યે, અને તપસ્વીજનેા પ્રત્યે વિનય ધર્મનેા વહેવાર અવશ્ય રાખયેા જોઈએ. “એવં વિળણ ભાવિઓ અંતરણા નિચ્ચં અધિકરણ કરણકારાવળપાવકર્મવિરણ દત્તમળુળણાય ડગ્ગહરૂઈ ભવહ” આ પ્રકારે વિનય ધર્મથી ભાવિત એવ નિત્ય અવિનયરૂપ સાવચકર્મ કરતાં, કરાવતાં અને તેની અનુમોદનારૂપ પાપકર્મથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે અને દત્તાનુજ્ઞાત અવગ્રહમાં રુચિવાળો થની જાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા અદત્તાદાનવિરમળ મતની પાંચમી ભાવનાનું સ્વરૂપ દર્શાવ્યું છે. તે ભાવનાનું નામ “વિનય ભાવના” છે. દીક્ષા-

सुवर्णिनी टीका अ० ३ सू० ११ अध्ययनोपसंहारः

७६५

अध्ययनमुपसंहरति—‘ एवमिणं ’ इत्यादि ।

मूलम्—एवमिणं संवरस्सदारं सम्मं चरियं होइ सुपणिहियं, इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्खिण्हिं निच्चं आमरणंतंच एसो जोगो नेयवो धिइमया मइमया अणासवो अकलुसो अच्छिदो अपरिस्सावी असंकिलिट्ठो सुद्धो सव्वजिण-मणुण्णाओ । एवं तइयं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्ठियं सम्मं आराहियं आणाए अणुपालियं भवइ । एवं नायमुणिणा भगवया पणवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धि-

भावना हैं । अपने से जो दीक्षा पर्याय में ज्येष्ठ हैं, उन साधुओं में विनय धर्म का पालन करना तथा स्वयं संयम के पालन करने में और पारणा में मृदु स्वभाव रखना, इत्यादि विनय संबंधी जितनी भी क्रियाएँ हैं उन्हें मोक्षमार्ग के साधनों में यथायोग्यरूप से पालन करते रहना उनके प्रति अविनयरूपता का भाव चित्त में नहीं आने देना यह विनय भावना है । तात्पर्य यह है कि ज्ञानादि मोक्षमार्ग और उसके साधनों के प्रति योग्यरीति से बहुमान रखना यह विनयधर्म है । इस धर्म से भावित हुआ अंतरात्मा अविनय रूप सावध कर्म के करने कराने, और उसकी अनुमोदना अन्य पापक्रिया से विरक्त हो जाता है और इस भावना का पालक बन जाता है ॥ सू० १० ॥

पर्यायों में जो बातें कर्तव्य माना जाता है, उनमें विनयधर्मों का पालन करना, तथा निज संयम का पालन करना तथा पारणा में मृदु स्वभाव राखना, इत्यादि विनय संबंधी जितनी भी क्रियाएँ हैं, उनमें मोक्षमार्गों के साधनों में योग्य रीति पालन करना देखें, उनमें अविनय भावने चित्त में प्रवेशना न देना, ते विनय भावना गणाय है, तेन तात्पर्य है कि ज्ञानादि मोक्षमार्गों में तेना साधनों में योग्य रीति बहुमान राखें, ते विनय धर्म है, आ धर्मशी भावित धर्मेष्ट आत्मा अविनय रूप सावध कर्म करता, करावता, अने तेनी अनुमोदनाशी परिलुभती पाप कियाती अशी जाय है, अने आ भावना नो पालक जनी जाय है, ॥ सू० १० ॥

વરસાસળામિણં આઘવિયં સુંદેસિયપસત્થં તદ્વયં સંવરદારં
સમત્તં તિલેમિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ઇય પળહાવાગરણે તદ્વયં સંવરદારં સમત્તં॥

ટીકા—એવં પૂર્વોક્તપ્રકારેણ ‘ઇણં’ इदं ‘સંવરસ્સ’ संवरस्य ‘દારં’
द्वारम् अदत्तादानविरमणनामकं तृतीयं द्वारमित्यर्थः, ‘सम्मं’ सम्पक् ‘चरियं’
चरितं सत् ‘होइ’ भवति ‘सुपणिहियं’ सुपणिहितं=समाराधितम् । तथा—‘इ-
मेहि’ एभिः ‘पंचहि’ वि=पञ्चभिरपि ‘कारणेहि’ कारणैः=भावनाभिः, की-
दृशैः कारणैः ? इत्याह—‘मणवयणकायपरिरक्खिण्हि’ मनोवचनकायपरिरक्षितैः=
मनोवाक्कायैः परिरक्षितैः, मनोवाक्काययोगयुक्ताभिः पञ्चभावनाभिरित्यर्थः, ‘निच्चं’
नित्यम् ‘आमरणं तं च’ आमरणान्तं=मरणपर्यन्तं च । एस जोगो’ एष योगः=
अदत्तादानविरमणरूपो योगः ‘णेयच्चो’ नेतव्यः=पालनीयः ‘धिइमया’ धृति-
मता ‘मइमया’ मतिमता । कथं भूतोऽयं योगः ? इत्याह—‘अणाससो’ अना-

અવ સૂત્રકાર હસ અધ્યયન કા ઉપસંહાર કરતે હુણ કહતે હૈ—
‘એવમિણં’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(એવં) પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે (ઇણં) યહ (સંવરસ્સ દારં
अदत्तादानविरमण नाम का तृतीय संवरद्वार (सम्मं चरियं) अच्छी तरह
સે પાલે જાને પર (સુપણિહિયં) સુરક્ષિત (હોઈ) હો જાતા હૈ । હસ-
લિયે (મણવયણકાયપરિ રક્ષિણ્ણહિ) મન, વચન, કાય इन तीन
યોગોં સે અચ્છી તરહ સુરક્ષિત કીયે ગયે (इमेहि) इन (पंचहि वि-
કારણેહિ) પાંચ ભાવના રૂપ કારણોં સે (निच्चं) सदा (आमरणं तं च)
જીવન ભર તક (एस जोगो) यह अदत्तादानविरमण रूप योग (धि-
इमया मइमया) चित्त स्वस्थता से तथा हेयोपादेय की विवेकता से

હવે સૂત્રકાર આ અધ્યયનનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે—“એવમિણં”
इत्यादि—

ટીકાર્થ—“એવં” પૂર્વોક્ત પ્રકારે “इणं” आ “સંવરસ્સદારં” अदत्ता-
दान विरमण नामकं तृतीयं संवरद्वार “सम्मं चरियं” सारी रीते पाणवामां
આવે તો “સુપણિહિયં” सुरक्षित થઈ जाय છે. તેથી “મણવયણકાય-
પરિરક્ષિણ્ણહિ” मन, वचन અને कायाना योगोથી सारी रीते सुरक्षित कश्चेत्
“इमेहि” आ “पंचहि वि कारणेहि” पांच भावनाइय कारणोથી “निच्चं”
सदा “आमरणं तं च” जीवन पर्यंत “एसजोगो” आ अदत्तादान विरम-
णरूप योग “धिइमया मइमया” चित्तनी स्वस्था तथा हेयोपादेयना विवेकशी

સુદર્શિની ટીકા અ૦ ૩ સૂ૦ ૧૧ અધ્યયનોપસંહાર:

૭૬૭

સ્રવઃ=નૂતનકર્માગમનરહિતત્વાત્, 'અકલુસો' અકલુષઃ = અશુભાધ્યવસાયરહિતત્વાત્, 'અચ્છિદ્ધો' અચ્છિદ્રઃ=છિન્નપાપસ્રોતસ્ત્વાત્ 'અપરિસ્સાવી' અપરિસ્સાવી=વિન્દુરૂપેણાપિ કર્મજલપ્રવેશરહિતત્વાત્, 'અસંકલિદ્ધો' અસંકલિષ્ઠઃ=અસમાધિભાવવર્જિતત્વાત્, 'સુદ્ધો' શુદ્ધઃ=કર્મમલવર્જિતત્વાત્, 'સત્ત્વજિણમણુણાઓ' સર્વજિનાનુજ્ઞાતઃ=સકલપ્રાણિદિતકારકત્વાત્સર્વેષામર્હતામનુમતશ્ચાસ્તિ । એવમ્=એતાદશમિદં 'તદ્યં' તૃતીયં સંવરદ્વારમ્ 'ફાસિયં' સ્પૃષ્ટં કાયેનાચરિતં, 'પાલિયં' પાલિતં=સતતમુશયોગેનસેવિતં 'સોહિયં' સોહિતં=અતીચારવર્જનેન શુદ્ધીયુક્ત ક્રુપ મુનિજન કો (નેયવ્વો) પાલન કરને યોગ્ય છે । કર્યો કિં ગ્રહ અદત્તાદાનવિરમણ રૂપ યોગ (અણામવો) નૂતનકર્મોં કે આગમન સે રહિત હોને કે કારણ અનાસ્રવરૂપ છે, (અકલુસો) અશુભ અધ્યવસાય સે વર્જિત હોને કે કારણ અકલુષ છે, (અચ્છિદ્ધો) પાપ કા સ્રોત ઇસસે છિન્ન હો જાતા છે અતઃ અચ્છિદ્ર છે (અપરિસ્સાવી) વિન્દુરૂપ સે મ્હી કર્મરૂપજલ ઇસમેં પ્રવેશ નહીં કર સકતા છે ઇમલિયે યદ્ અપરિસ્સાવી છે । (અસંકલિદ્ધો) અસમાધિભાવ સે વર્જિત હોને કે કારણ યદ્ અસંકલિષ્ઠ છે । (સુદ્ધો) કર્મમલ સે રહિત હોને કે કારણ શુદ્ધ છે (સત્ત્વજિણમણુણાઓ સમસ્ત પ્રાણિયોં કા ઇસસે હિત હોતા છે ઇસલિયે સમસ્ત અરહંત ભગવંતો કો યદ્ માન્ય ક્રુઆ છે । (એવં) એસા યદ્ (તદ્યં) તૃતીય સંવર દ્વાર છે । ઇસ સંવરદ્વાર કો જો (ફાસિયં) અપને શરીર સે આચરિત કરતે હૈં, (પાલિયં) નિરન્તર ઉપયોગ પૂર્વક ઇસે સેવિત કરતે હૈં (સોહિયં) અતિચારોં સે ઇસે રહિત કરતે હૈં

યુક્ત મુનિજનોને “ નેયવ્વો ” પાલન કરવા યોગ્ય છે. આ અદત્તાદાન વિરમણ રૂપ યોગ “ અણામવો ” નવાં કર્મોના આગમનથી રહિત હોવાને કારણે અનાસ્રવરૂપ છે, “ અકલુસો ” અશુભ અધ્યવસાયથી રહિત હોવાને કારણે અકલુષ છે, “ અચ્છિદ્ધો ” પાપના સ્રોતોનાથી છિન્ન થઇ ગય છે તેથી અચ્છિદ્ર છે, “ અપરિસ્સાવી ” કર્મ રૂપ જળનું બિંદુ પણ તેમાં પ્રવેશી શકતું નથી તેથી તે અપરિસ્સાવી છે, “ અસંકલિદ્ધો ” અસમાધિ ભાવ રહિત હોવાને કારણે તે અસંકલિષ્ઠ છે, “ સુદ્ધો ” કર્મ મળથી રહિત હોવાને કારણે તે દ્વ શુદ્ધ છે, “ સત્ત્વજિણમણુણાઓ ” સમસ્ત પ્રાણીઓનું તેનાથી કલ્યાણ થાય છે, તે કારણે સમસ્ત અર્હંત ભગવાનોને તે માન્ય થયેલ છે, “ એવં ” એવું “ તદ્યં ” આ તૃતીય સંવરદ્વાર છે. આ સંવરદ્વારને જે “ ફાસિયં ” યોગાના શરીરથી આવરે છે, “ પાલિયં ” નિરન્તર ઉપયોગ પૂર્વક તેનું સેવન કરે છે, “ સોહિયં ” અતિચારથી તેને રહિત કરે છે. “ તીરિયં ” પૂર્ણ રૂપથી તેનું સેવન કરે છે. “ કિહિયં ” તેનું

કૃતં ' ' તીરિયં ' તીરિતં=તીરં પ્રાપિતં પૂર્ણરૂપેણ સેવિતં, ' કિદ્વિયં ' કીર્તિતમ્-
અન્યેષામુપદિષ્ટમ્, ' આરાહિયં ' આરાધિતમ્ ત્રિકરણત્રિયોગે:-સમ્યગાચરિતમ્,
' આણાપ ' આજ્ઞયા=સર્વજ્ઞવચનાનુસારેણ ' અણુપાલિયં ' અણુપાલિતં ભવતિ ।
एवम्=अमुना प्रकारेण ' नायमुणिणा ' ज्ञातमुनिना=ज्ञाताख्यप्रसिद्धक्षत्रियवंशोद्भ-
वेन मुनिना भगवता महावीरेण ' पण्णवियं ' प्रज्ञापितं=शिष्येभ्यः सामान्यतया
कथितं, ' परुवियं ' परुपितं=भेदानुभेदप्रदर्शनपूर्वकं कथितं, ' पसिद्धं ' प्रसिद्धं=
जिनवचने प्रख्यातं, ' सिद्धवरसासनमिणं ' सिद्धवरशासनभिदं, सिद्धानां=निष्ठी-
तार्थानां वरशासनं-प्रधानाज्ञारूपम्, ' आघवियं ' आख्यातं=सर्वतोभावेन कथितं,

(તીરિયં) પૂર્ણરૂપ સે इसका सेवन करते हैं (किद्विं) दूसरों को
इसके पालन करने का उपदेश देते हैं, (सम्मं) तीन काण तीन योगों
से इस की भली प्रकार से (आराहियं) अनुपालना करते हैं (आणाए
अणुपालियं भवइ) उन के द्वारा यह योग तीर्थंकर प्रभु की आज्ञानु-
सार ही पालित होता माना जाता है । (एवं) इस प्रकार से (णाय-
मुणिणा भगवया) ज्ञातनामक प्रसिद्ध क्षत्रियवंश में उत्पन्न हुए मुनि-
राज भगवान महावीर ने (पण्णवियं) शिष्यों के लिये इस विषय का
सामान्यरूप से समझाया है । (परुवियं) बाद में भेद प्रभेद पूर्वक
उसका कथन किया है । इसीलिये (पसिद्धे) जिनवचन में यह प्रख्यात
हुवा है अर्थात् जिनवचन के अनुसार ही आचार्य परंपरा से इसका
पालन करना इसी रूप से चला आ रहा है । तथा (सिद्धवरसासन-
मिणं) भूतकाल में जितने भी सिद्ध हो चुके हैं उनका यह प्रधान
आज्ञारूप शासन है । (आघवियं) ऐसा भगवान महावीर प्रभु ने

પાલન કરવાનો અન્યને ઉપદેશ આપે છે. “ સમ્મં ” ત્રણ કરણ ત્રણ યોગેથી
તેનું સારી રીતે “ આરાહિયં ” અનુપાલન કરે છે, “ આણાપ અણુપાલિયં ભવइ ”
તેમના દ્વારા આ યોગનું, તીર્થંકર પ્રભુની આજ્ઞા અનુસાર પાલન થાય છે
એમ માનવામાં આવે છે. “ એવં ” આ પ્રકારે “ ણાયમુણિણા ભગવયા ”
જ્ઞાત નામના પ્રસિદ્ધ ક્ષત્રિય વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ મુનિરાજ ભગવાન મહાવીરે
“ પણ્ણવિયં ” શિષ્યોને માટે આ વિષય સામાન્ય રૂપે સમજાવ્યો છે, “ પરુવિયં ”
ત્યાર બાદ ભેદ પ્રભેદ સહિત તેનું કથન કર્યું છે. તેથી “ પસિદ્ધે ” જિનવ-
ચનમાં તે પ્રખ્યાત થયેલ છે એટલે કે જિનવચન અનુસાર જ આચાર્ય પરં-
પરાથી તેનું આ રીતે પાલન કરવાનું આદ્યું આવે છે. તેથી “ સિદ્ધવરસા-
સનમિણં ” ભૂતકાળમાં જેટલા સિદ્ધો ધર્મ ગયા છે તેમનું આ મુખ્ય આજ્ઞા
રૂપ શાસન છે. “ આઘવિયં ” એવું ભગવાન મહાવીરે સર્વ કાવધી તેને

सुदेशनीटीका अ० ३ सू० ११ अध्ययनोपसंहारः

७६९

‘सुदेशियं’ सुदेशितं=तदेवमनुनामुरायां यर्पदि सुदृष्टदिष्टम् ‘पसत्थं’ प्रशस्तं=सर्वप्राणिहितकरत्वात्मङ्गलमयं ‘तदयं संवरदारं’ तृतीयं संवरदारं ‘समत्तं’ समाप्तम् । ‘त्तिवेमि’ इति ब्रवीमि । अस्यार्थः पूर्वमुक्तः ॥ सू० ११ ॥

इति श्रीविश्वविरूपात-जगद्गुरु-प्रसिद्धादकपञ्चदशभाषाकलितललितकला
पालावरु-प्रविशुद्धमद्यमयनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहलक्ष्मण-
तिकोल्हापुराजपत्त-‘जैनशास्त्राचार्य’ पदभूषित-कोल्हापुरराज-
गुरु-गालवज्रचारि-जैनार्थ-जैतर्मदिवाकरपूज्यश्री-वासोला-
व्रतिविरचितायां दशमाङ्गल्य श्री प्रश्नव्याकरणसूत्रका सुदर्शन्या-
ख्यायां व्याख्यायां संवत्समाके द्वितीयेभागेऽदत्तादान-
विरचनामकं तृतीयं संवरदारं समाप्तम् ॥

सर्व भाव से इसके विषय में कहा है और (सुदेशियं) देवों, मनुजों तथा असुरों से युक्त परिपदा में इसका उपदेश दिया है । (पसत्थं) सर्वप्राणीयों का हितकारक होने से मंगलमय है (तदयं संवरदारं समत्तं) यह तृतीय संवर द्वार समाप्त हुआ (त्ति वेमि) ऐसा मैं कहता हूँ । अर्थात् हे जन्म ! इस तृतीय संवर द्वार का जैसा कथन मैंने साक्षात् भगवान् महावीर के मुख से सुना है वैसा ही मैंने तुम से कहा है-अपनी तरफ से इसमें मैंने कुछ ओ मिश्रित नहीं किया है ।

भावार्थ- इस तृतीय संवर द्वार का उपसंहार करते हुए सूत्रकार समझा रहे हैं कि इस तृतीय संवर द्वार का जो मुनिजन तीन करण तीनयोग से सुरक्षित की गई पांच भावनाओं से जीवन भर पालते हैं-

विषे कहुं छे अने ‘सुदेशियं’ देवे.. मनुष्यो अने असुरेशी युक्त परिपदाभां तेना उपदेश दीया छे “ पसत्थं ” सर्वे प्राणीओनुं हितकरनार होवाधी ते मंगलमय छे, “ तदयं संवरदारं समत्तं ” आ तृतीय संवरदार समाप्त थियुं, त्तिवेमि ” ओतुं हुं कहुं छुं. ओटसी के रे ज’ग’ ! आ तृतीयसंवरदारनुं कथन के प्रमाणे साक्षात् जगान महावीरना मुखे सांशजुं छनुं ते ज प्रमाणे तमने कहुं छुं-भास तरईसी तियां क’र’ पणुं उभेरवा आओनुं नथी.

भावार्थः --आ त्रीज संवरदारना उपसंहार करता सूत्रकार समझावे छे. के आ त्रीज संवरदारनुं के मुनिजन त्रय करण त्रय योगशी सुरक्षित करवाभां आवेस पांच भावनाओ सहित पावन करे छे-ते प्रमाणे पोटानी इरेक

इसके अनुसार अपनी प्रत्येक प्रवृत्ति पर अंकुश रखते हैं उनके अशुभ अध्यवसाय रुक जाते हैं, नवीन कर्मों का उनको बंध नहीं होता है और संचित कर्मों की निर्जरा होती रहती है। पापों का स्रोत इसके प्रभावसे बंध हो जाता है। यह अपरिस्त्रावी आदि विशेषणोंवाला है। त्रिकालवर्ती समस्त अरिहंत भगवंतोंने इसका पालन किया है। उन्हीं के अनुसार भगवान् महावीर प्रभु ने भी इसका उन्हीं की मान्यतानुसार स्वरूपादि प्रदर्शन द्वारा कथन किया है। अपनी परिषदा में आये हुए समस्त जीवों को इसी प्रकार से इसका विवेचन किया है, अतः यह भगवत्प्रमय है इसे धारण कर प्रत्येक जीव को-समस्त संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त मनुष्यों को-अपना जन्म सफल बना लेना चाहिये। इस प्रकार जब स्वामी को इस तृतीय संवर द्वार के विषय में सुधर्मास्वामी ने समझाया है ॥ सू० ११ ॥

॥ तृतीय संवरद्वार समाप्त ॥

પ્રવૃત્તિ પર અંકુશ મૂકે છે, તેમના અશુભ અધ્યવસાય અટકી જાય છે, તેમને નવાં કર્મોનો બંધ બંધાતો નથી, અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા થતી રહે છે. તેના પ્રભાવથી પાપોનો સ્રોત બંધ પડી જાય છે તે અપરિસ્ત્રાવી આદિ વિશેષણોથી યુક્ત છે. ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત અરિહંતોએ તેનું પાલન કરેલ છે. તેમના પ્રમાણે જ ભગવાન મહાવીરે તેનું તેમની માન્યતા અનુસાર સ્વરૂપાદિ પ્રદર્શન દ્વારા કથન કર્યું છે. પોતાની પરિષદામાં આવેલ સમસ્ત જીવો સમીપ એ જ પ્રકારે તેનું વિવેચન કર્યું છે, તેથી તે ભગવત્પ્રમય છે. તેને ધારણ કરીને પ્રત્યેક જીવે-સમસ્ત પંચેન્દ્રિય પ્રધાત મનુષ્યોએ-પોતાનો જન્મ સફળ કરવો જોઈએ. આ પ્રમાણે સુધર્મા સ્વામીએ જન્મસ્વામીને આ ત્રીજા સંવર-દ્વાર વિષે સમજાવ્યું છે. ॥ સૂ. ૧૧ ॥

॥ તૃતીય સંવરદ્વાર સમાપ્ત ॥

॥ अथ चतुर्थ संवरद्वारं प्रारभ्यते ॥

व्याख्याते तृतीयमदत्तादानविरमणनामकं संवरद्वारम् । अथ ब्रह्मचर्यं नामकं क्रमप्राप्तं चतुर्थं संवरद्वारमभिधीयते । अस्य पूर्वेण सहायमभिसंवन्धः—पूर्वत्रादत्तादानविरमणमुक्तं तच्च मैथुनविरमणमन्तरेण न संभवतीत्यनेन संबन्धेनायातमिदं चतुर्थं संवरद्वारम् । तस्येदमादिमं सूत्रम्—‘जंबू’ इत्यादि ।

मूलम्—जंबू ! एत्तो य वंभचेरं उत्तमतवनियमनाणदंसण-
चरित्तसमंतविणयमूलं जम नियमगुणप्पहाणजुत्तं हिमवंतमहं-
ततेयमंतं पसत्थगंभीरथिमियमज्झं अज्जवत्ताहुजणाचरियं मो-
क्खग्गं विसुद्धसिद्धगइनिलयं सासयमव्वावाहमपुणवभवं पसत्थं
सोम्मं सुहं सिवमचलमक्खयकरं जइवरसारक्खियं सुचरियं
सुभासियं नवरिं मुणिवेहिं महापुरिसधीरसूरधम्मियधिइमंताण
य सया विसुद्धं भववं भव्वजणाणुचरियं निस्संकिंयं निब्भयं
नित्तुसं निरायासं निरुवलेवं निव्वुइघरं नियमनिप्पकंपं तव-

चतुर्थ संवर द्वार प्रारंभ—

तृतीय अदत्तादान विरमण नामक संवरद्वार का व्याख्यान हो चुका, अब क्रम प्राप्त चतुर्थ ब्रह्मचर्य नामका संवरद्वार का व्याख्यान प्रारंभ किया जाता है । इसका पूर्व संवरद्वार के साथ इस प्रकार से संबंध है—जबतक मैथुन विरमण नहीं होगा तब तक तृतीय संवरद्वार की संभवता नहीं हो सकती, इसलिये उसके अनन्तर सूत्रकार अब इस चतुर्थ संवरद्वार को प्रारंभ कर रहे हैं । उसका यह सर्व प्रथम सूत्र है—‘जंबू’ इत्यादि ० ।

थोथा संवरद्वारनो प्रारंभ

थोथा अदत्तादाननो विरमणु नामना संवरद्वारंतुं वणुंन पूइं थयुं, डवे अनुकमे आवता थोथा ब्रह्मचर्यं नामना संवरद्वारंतुं वणुंन शइं करवाभां आवे छे. तेनो आगणना संवरद्वार साथे आ प्रमाळे संवधे छे—ज्यां सुधी मैथुन विरमणु थाय नहीं त्यां सुधी त्रीणुं संवरद्वार संवधित थळ शक्तुं नथी, तेथी तेतुं कथन डवीं पत्ती डवे सूत्रकार आ थोथा संवरद्वारनी शइयात करे छे. तेतुं सौधी थळेणुं सूत्र आ प्रमाळे छे—“जंबू” इत्यादि—

૬૭૨

પ્રશ્નચર્યાકરણસૂત્રે

સંજમમૂલદલિયણિમં પંચમહવ્વયસુરક્ષિયં સમિદ્દગુત્તિગુત્તં
જ્ઞાણવરકવાડસુકયરક્ષણમજ્ઞપ્પદિણ્ણફલિહં સન્નદ્ધવદ્ધોચ્છદ્ધય
દુગ્ગદ્ધપહં સુગદ્ધપહદેસગં ચ લોગુત્તમં ચ વયમિણં પડમસરતલા-
ગપાલિભૂયં મહાસગડઅરગતુંવભૂયં મહાવિડિમરુક્કલ્લક્કલ્લભૂયં
મહાનગરપાગારકવાડફલિહભૂયં રજ્જુપિણ્ણદ્ધોવ્વદ્ધંદકેઠ વિસુ-
ળેગગુણસંપિણ્ણદ્ધં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—‘જંઘુ’ હે જમ્ઘુ : । ‘એતો ય’ એતથ=અદત્તાદાનવિરમણસંવરદ્વાર-
સમાપ્ત્યનન્તરં ચ ‘બંધવેરં’ બ્રહ્મચર્યં નામ ચતુર્થં સંવરદ્વારમભિધીયતે । તત્કિ
સ્વરૂપમિત્યાહ—‘ઉત્તમતત્તવનિયમનાણદંસણચરિત્તવિણયમૂલં’ ઉત્તમતત્તોનિયમજ્ઞાનદ-
ર્શનચારિત્રવિનયમૂલમ્=તત્ત ઉત્તમાઃ=પ્રધાનાઃ યે તપો નિયમજ્ઞાનદર્શનચારિત્રવિનયાઃ
તત્ત-તપાઃ=અનશનાદિકં દ્વાદશવિધમ્, નિયમા=અભિગ્રહાદયઃ, જ્ઞાનં=પદાર્થાનાં
વિશિષ્ટબોધઃ, દર્શનમ્=તત્તશ્રદ્ધાનરૂપમ્, ચારિત્રં=સાવધયોગવિરતિરક્ષણમ્, વિ-
નયઃ=અમ્યુત્થાનાદિલક્ષણઃ, એતેવાં દ્વન્દ્વાઃ, તેવાં મૂલમિવમૂલં કારણં યત્તત્તથોક્તમ્,

ટીકાર્થ—(જંઘુ) હે જમ્ઘુ ! (એતો ય) અદત્તાદાનવિરમણ નામક
સંવરદ્વાર કી સમાપ્તિ કે અનન્તર અવ મેં (બંધવેરં) બ્રહ્મચર્ય નામક
ચતુર્થ સંવર દ્વાર કો કહતા હું । ઉસ્કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર હૈ—(ઉત્તમ-
તત્તવનિયમનાણદંસણચરિત્તવિણયમૂલં) અનશન આદિ ચારહ પ્રકાર કે
ઉત્તમતપોં કા, ઉત્તમ અભિગ્રહ આદિ રૂપ નિયમોં કા, પદાર્થોં કા
વિશિષ્ટબોધ રૂપ ઉત્તમજ્ઞાન કા; પદાર્થોં કા શ્રદ્ધાનરૂપ ઉત્તમદર્શન કા
સાવધયોગ વિરતિરૂપ ઉત્તમ ચારિત્ર કા, ઓર અમ્યુત્થાન આદિ રૂપ
ઉત્તમ વિનય કા, મૂલ કી તરહ યહ બ્રહ્મચર્ય મૂલ કારણ હૈ, તથા—

ટીકાર્થ—“જંઘુ” હે જમ્ઘુ ! “એતો ય” અદત્તાદાન વિરમણ નામના
સંવરદ્વારની સમાપ્તિ પછી હવે હું “બંધવેરં” બ્રહ્મચર્ય નામના ચોથા સંવર-
દ્વારનું વર્ણન કરું. તેનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે “ઉત્તમતત્તવનિયમનાણદંસણચરિત્ત
વિણયમૂલં” અનશન આદિ આર પ્રકારનાં ઉત્તમ તપનું, ઉત્તમ અભિગ્રહ આદિ
રૂપ નિયમોનું, પદાર્થોના વિશિષ્ટ બોધરૂપ ઉત્તમ જ્ઞાનનું, પદાર્થોના શ્રદ્ધાન
રૂપ ઉત્તમ દર્શનનું સાવધયોગ વિરતિરૂપ ઉત્તમ ચારિત્રનું, અને અમ્યુત્થાન
આદિ રૂપ ઉત્તમ વિનયનું, મૂળની જેમ આ બ્રહ્મચર્ય મૂળકારણ છે. તથા

સુર્વશિની ટીકા અંક ૨ સૂ.૧ બ્રહ્મચર્યસ્વરૂપનિકાષણમ

૯૭૩

તથા—‘જમનિયમગુણપદ્ધાનજુતં’ યમનિયમગુણપ્રધાનયુક્તમ્—તત્ર—યમાઃ=પ્રાણાતિ-
પાતવિરમણાદયઃ, નિયમાઃ=અભિગ્રહાદયસ્તે ચ તે ગુણપ્રધાનાઃ = ગુણમુખ્યાઃ—
ગુણાનાં મધ્યે યમા નિયમાશ્ચ સર્વતઃ શ્રેષ્ઠ ઇત્યર્થઃ, તૈયુક્તમ્, તથા—‘હિમવંતમહંતતેય-
મંતં’ હિમવન્મહંતેજસ્વી=હિમવાનિવ=પર્વતવિશેષ इव મહદ્=વિશાલં તેજસ્વી ચ
યત્તત્થોક્તં, અયં ભાશઃ—યથા હિમવાન્ સકલપર્વતાપેક્ષયા મહાન્ તેજસ્વી ચ
વર્તેતે, તથૈવેદં બ્રહ્મચ સકલવ્રતાપેક્ષયા વિશાલં તેજસ્વીવેતિ । ઉક્તં ચ—

“વ્રતાનાં બ્રહ્મચર્યં હિ, નિર્દિષ્ટં ગુરુકં વ્રતમ્ ।

તજ્જન્યપુણ્યસંભાર, સંયોગાદ્ ગુરુ રુચ્યતે ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

તથા—‘પસત્થર્ગભીરશ્ચિમિયમજ્ઞં’ પ્રશસ્તર્ગભીરસ્તિમિતમધ્યં પ્રશસ્તે=શુભં
ગમ્ભીરમ્=અગાધમ્, સ્તિમિતં=સ્થિરં ચ મધ્યમ્—અન્તઃ કરણં યસ્મિન્ સતિ તત્તથો-
(જમનિયમગુણપદ્ધાનજુતં) યહ પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ યમોં સે
एवं અભિગ્રહ આદિ નિયમોં સે કિ જો સમસ્તગુણોં મેં શ્રેષ્ઠ માને ગયે
हैं યુક્ત હૈ, તથા (હિમવંતમહંતતેયમંતં) જો હિમવાન્ પર્વત કી તરહ
विशाल और तेजस्वी है, અર્થાત્ જિસ પ્રકાર હિમવાન્ પર્વત સકલ
पर्वतों की अपेक्षा महान् और तेजस्वी माना जाता है, उसी प्रकार यह
ब्रह्मचर्य व्रत भी सकलव्रतों की अपेक्षा विशाल तेजस्वी व्रत माना गया
है। कहा भी है—

“વ્રતાનાં બ્રહ્મચર્યં હિ, નિર્દિષ્ટં ગુરુકં વ્રતમ્ ।

તજ્જન્ય પુણ્યસંભાર, —સંયોગાદ્ ગુરુરુચ્યતે ॥ ૧ ॥

વ્રતાં મેં સબ સે વડા વ્રત બ્રહ્મચર્ય હૈ । કયોં કિ બ્રહ્મચર્ય કે પાલન
करने से जो पुण्यसंचूह प्राप्त होता है—उसी के संबंध से गुरु माना जाता
है । अर्थात्— इसी ब्रह्मचर्य का पालक ही सच्चा गुरु कहलाता है ।
तथा—(पसत्थर्गभीरश्चिमियमज्ज्ञं) इस ब्रह्मचर्य के सञ्चाय से पालन

“જમનિયમગુણપદ્ધાનજુતં” પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ યમોથી અને અભિ-
ગ્રહ આદિ નિયમોમાંથી, કે જે સર્વે શુભોમાં શ્રેષ્ઠ મનાય છે. યુક્ત છે. તથા
“હિમવંતમહંતતેયમંતં” જે હિમાલય પર્વતની જેમ વિશાળ અને તેજસ્વી
છે, એટલે કે જેમ હિમાલય પર્વત સઘળા પર્વતો કરતાં મહાન અને તેજસ્વી
મનાય છે તેમ આ બ્રહ્મચર્ય વ્રતને પણ સઘળાં વ્રતોના કરતાં વિશાળ તેજસ્વી
વ્રત માનવામાં આવે છે. કહ્યું પણ છે—

“વ્રતાનાં બ્રહ્મચર્યં હિ, નિર્દિષ્ટં ગુરુકં વ્રતમ્ ।

તજ્જન્યપુણ્યસંભાર, —સંયોગાદ્ ગુરુરુચ્યતે ॥ ૧ ॥

વ્રતોમાં સૌથી મોટું વ્રત બ્રહ્મચર્ય છે. કારણ કે બ્રહ્મચર્યના પાલનથી
જે પુન્ય સમૂહ પ્રાપ્ત થાય છે—તેના કારણે તેને ગુરુ મનાય છે. એટલે કે
આ બ્રહ્મચર્યના પાલક જ સાચો ગુરુ કહેવાય છે. તથા “પસત્થર્ગભીરશ્ચિ-

ક્તમ્, બ્રહ્મચારિણોઽન્તઃકરણં પ્રશસ્તતાગામ્યીર્યસ્થૈર્યયુક્તં ભવતીતિ ભાવઃ । તથા - ‘ અઙ્ગવસાહુજગાચરિયં ’ આર્જવસાધુજનાચરિતમ્=આર્જવે=સરલભાવે સંલગ્ના યે સાધુજનાસ્તૈરાચરિતમ્ । તથા ‘ મોક્ષમર્ગે ’ મોક્ષમાર્ગઃ=મોક્ષસ્થાનપ્રાપક इत्यर्थः તથા ‘ વિશુદ્ધસિદ્ધિગઈનિલયે ’ વિશુદ્ધસિદ્ધિગતિનિલયઃ=વિશુદ્ધા=રાગાદિદોષવર્જિતત્વાન્નિર્મલાયા સિદ્ધિઃ=કૃતકૃત્યતા, સૈવ ગમ્યમાનત્વાદ્ ભવિત્તસ્યા નિલયો-શુદ્ધમ્=સિદ્ધિગતિપ્રાપકત્વાત્સિદ્ધિસ્થાનમિત્યર્થઃ, તથા ‘ સાસયં ’ શાશ્વતં=સાધ્યપર્યવસિતશિવસુખજનકત્વાત્, ‘ અવ્વાવાહં ’ અવ્યાવાધં=શારીરિકમાનસિકદુઃસ્વર્જિતત્વાત્ ‘ અપુણઞ્મયં ’ અપુનર્ભવમ્=પુનર્જન્મપ્રતિરોધકત્વાત્, ‘ પસત્યં ’ પ્રશસ્તમ્-નિર્મલત્વાત્, તથા- ‘ સૌમ્યં ’ સૌમ્યમ્--સકલજનમનોમોદજનકત્વાત્, કર્તા કા અંતઃકરણ શુભ, ગંભીર-અગાધ, एवं स्थिर हो जाता है । तथा (अङ्गवसाहुजगाचरियं) यह ब्रह्मचर्य, आर्जव में-सरलभाव में-संलग्न बने हुए साधुजनों के द्वारा आचरित किया जाता है । तथा-(मोक़्खमर्गे) यह ब्रह्मचर्य अपने पालनकर्ता को मोक्ष स्थान की प्राप्ति कराने वाला होता है तथा (विशुद्धसिद्धिगईनिलये) यह ब्रह्मचर्य विशुद्ध-रागादि दोषों से वर्जित होने के कारण निर्मल जो कृतकृत्यता रूप गति है उसका घर है-सिद्धि गति का प्रापक होने से सिद्धि का स्थान है तथा (सासयं) साध्यपर्यवसित शिव सुख का जनक होने से यह ब्रह्मचर्य शाश्वत है (अक्वावाहं) शारीरिक एवं मानसिक दुःखों से रहित होने के कारण यह ब्रह्मचर्य अव्यावाध-याधा से रहित है । (अपुणञ्मयं) इसके प्रभाव से संसार में जीव का पुनर्जन्म नहीं होता, उसका यह प्रतिरोधक है इसलिये यह अपुनर्भवरूप है । (पसत्यं, निर्मल

મિયમઙ્ગલ ” તે બ્રહ્મચર્યના પાલનથી તેનું પાલન કરનારનું અતઃકરણ શુભ, ગંભીર, અગાધ, અને સ્થિર થઈ બન્ય છે. તથા “ અઙ્ગવસાહુજગાચરિયં ” આ બ્રહ્મચર્ય, આર્જવ, સરલ ભાવમાં લીન થયેલ સાધુજનો દ્વારા આચરવામાં આવે છે. તથા “ મોક્ષમર્ગે ” આ બ્રહ્મચર્ય, તેનું પાલન કરનારને મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરાવનાર હોય છે. તથા “ વિશુદ્ધસિદ્ધિગઈનિલયે ” આ બ્રહ્મચર્ય વિશુદ્ધ રાગાદિ દોષોથી રહિત હોવાને લીધે નિર્મળ-કે કૃતકૃત્યતા રૂપ ગતિ છે તેનું ઘર છે-સિદ્ધિગતિ પ્રાપ્ત કરાવનાર હોવાથી સિદ્ધિનું સ્થાન છે, તથા “ સાસયં ” કાચમી શિવ સુખનું જનક હોવાથી આ બ્રહ્મચર્ય શાશ્વત છે “ અવ્વાવાહં ” શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી રહિત હોવાને કારણે આ બ્રહ્મચર્ય અવ્યા-વાધ-વાધાથી રહિત છે, “ અપુણઞ્મયં ” તેના પ્રભાવથી સંસારમાં જીવને પુનર્જન્મ લેવો પડતો નથી. તેનું તે પ્રતિરોધક છે તેથી તે અપુનર્ભવરૂપ છે.

સુવર્ણિની ટીકા અ० ૪ સૂ० ૧ બ્રહ્મચર્યસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૭૭૫

તથા-‘ સુહં ’ સુખં-સુખસ્વરૂપત્વાત્, ‘ મિયં ’ શિવમ્=નિરુપદ્રવત્વાત્, તથા-
 ‘ અચલં ’ અચલમ્=સ્પન્દનાદિવર્જિતત્વાત્, તથા ‘ અક્ષયકરં ’ અક્ષયકરમ્=અક્ષ-
 યો મોક્ષસ્તંકરમ્=મવવીજાકુરાજનનાત્, તથા-‘ જઘ્નસારક્ષિયં ’ યતિવરસં-
 રક્ષિતમ્=યતિવરૈઃ= મુનિપ્રધાનૈઃ તીર્થઙ્કરગણધરાદિભિઃ સંરક્ષિતં=પરિપાલિતમ્,
 તથા-‘ સુચરિયં ’ સુચરિતમ્=શોભનાનુષ્ઠાનમ્, તથા-‘ મુનિવરેહિં ’ મુનિવરૈઃ=
 તીર્થંકરાદિભિઃ ‘ નવરિં ’ કેવલં ‘ સુમાસિયં ’ સુમાપિતં=મુદ્ધુ પ્રતિપાદિતમ્, ચ
 =પુનઃ-ઇદં બ્રહ્મચર્યં ‘ મહાપુરિસવીરસૂરધમ્મિયધિદ્મંતાણ ’ મહાપુરુષધીર શૂરાધા-
 મિકઠૃતિમતામ્=મહાપુરુષાઃ=પુરુષશ્રેષ્ઠાઃ, ધીરશૂરાઃ=ધીરાણાં મધ્યે શૂરાઃ=અત્ય-
 ન્તમાદસંપન્નાઃ, ધાર્મિકાઃ=ધર્મપરાયણાઃ, ધૃતિમન્તો=ધૈર્યવન્તઃ, एषां કર્મધાર-
 યઃ, તેષાં તથોક્તાનામ્ ‘ સયા ’ સદા=કુમારાદિસર્વોપસ્થાસુ ‘ સુવિસુદ્ધં ’ સુ-
 હોને સે યહ પ્રશસ્ત હૈ । (સોમ્મં) સમસ્ત મનુષ્યોં કે મન કો પ્રફુલ્લિત
 કરને વાલા હોને સે યહ સૌમ્ય હૈ । (સુહં) સુખસ્વરૂપ હોને સે યહ
 એક સુખ હૈ । (સિવમયલમક્ષયકરં) ઉપદ્રવ રહિત હોને સે યહ
 શિવરૂપ હૈ । સ્પન્દનાદિ ક્રિયા સે વર્જિત હોને કે કારણ યહ અચલ હૈ ।
 મવરૂપ બીજ કે અંકુરકા ઉત્પાદક નહીં હોને સે અક્ષય-મોક્ષ વા કારક
 હૈ અતઃ યહ અક્ષયકર હૈ-। (જઘ્નસારક્ષિયં) મુનિપ્રધાન-તીર્થંકર
 એવં ગણધર આદિ દેવોં દ્વારા પાલા ગયા હોને સે યહ યતિવર સંરક્ષિત
 હૈ । (સુચરિયં) શોભન આચાર રૂપ હોને સે યહ સુચરિત હૈ । (નવરિં
 મુનિવરેહિં સુમાસિયં) કેવલ મુનિવરોં-તીર્થંકરોં દ્વારા હી યહ અચ્છી
 તરહ સે પ્રતિપાદિત ક્રિયા ગયા હૈ । તથા યહ બ્રહ્મચર્યં) મહાપુરિસ-
 ધીર-સૂર-ધમ્મિય-ધિદ્મંતાણ ય સયા વિસુદ્ધં) મહાપુરુષોં કા, ધીરોં કે

“ પસત્થ ” નિર્ભગ હોવાથી તે પ્રશસ્ત છે. “ સોમ્મં ” સમસ્ત મનુષ્યોનાં
 મનને પ્રફુલ્લિત કરનાર હોવાથી તે સૌમ્ય છે. “ સુહં ” સુખસ્વરૂપ હોવાથી તે
 એક સુખ છે. “ સિવમયલમક્ષયકરં ” ઉપદ્રવ રહિત હોવાથી તે શિવ-
 રૂપ છે સ્પન્દનાદિ ક્રિયાથી રહિત હોવાથી તે અચળ છે. ભવરૂપ બીજના
 અંકુરનું ઉત્પાદક નહીં હોવાથી તે અક્ષય-મોક્ષકારક છે, તેથી તે અક્ષયકર
 “ જઘ્નસારક્ષિયં ” મુનિપ્રધાન-તીર્થંકર અને ગણધરો આદિ દેવો દ્વારા
 પાળાયેલ હોવાથી તે યતિવર સંરક્ષિત છે. “ સુચરિયં ” સુદર આચારરૂપ
 તે સુચરિત છે. “ નવરિં મુનિવરેહિં સુમાસિયં ” કેવળ મુનિવરો-તીર્થંકરો
 દ્વારા જ તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરાયું છે તથા “ મહાપુરિસ-ધીર-સૂર-
 ધમ્મિય-ધિદ્મંતાણ ય સયા વિસુદ્ધં ” મહાપુરુષો, ધીરોની વચ્ચે પણ ધીર

વિશુદ્ધ-નિર્દોષમ્, એવામેવ બ્રહ્મચર્યં નિર્દોષં ભવતીતિ માયઃ, તથા-‘ ભવ્યં
 ભવ્ય=કલ્યાણરૂપમ્, ‘ ભવ્યજનાણુચરિયં ’ ભવ્યજનાતુચરિત્તમ્=ભવ્યજનસમારો-
 ઘિતમ્, તથા-‘ નિસ્સંકિયં ’ નિઃશંકિતં, બ્રહ્મચારી હિ વિષયસ્પૃહાશૂન્યત્વાઞ્જ-
 નાનાં મધ્યે નિઃશંકનીયો ભવતીતિ બ્રહ્મચર્યમપિ નિઃશંકિતમ્, તથા ‘ નિઃભયં ’
 નિર્ભયં, બ્રહ્મચારિણો હિ નિર્ભયા ભવન્તિ, નિર્ભયતાકારણત્વાત્ બ્રહ્મચર્યમપિ નિર્ભ-
 યમ્ તથા-‘ નિતુષં ’ નિસ્તુષં-વિશુદ્ધમિત્યર્થઃ, યથા-તુષનિર્ગતે તણ્ડુલં શુષ્કં ભવતિ
 મી બીચ મેં ધીર કહે જાને વાલે શૂરોં કા અત્યંત સાહસસંપન્ન વ્યક્તિયોં
 કે, ધાર્મિક પુરુષોં કે, ઔર ધૈર્યશાલી પુરુષોં કો યહ સદા-કુમાર આદિ
 અવસ્થાઓં મેં મી સુવિશુદ્ધ-નિર્દોષ રહના હૈ । (ભવ્યં) યહ બ્રહ્મચર્ય
 કલ્યાણરૂપ હૈ । (ભવ્યજનાણુચરિયં) ભવ્યપુરુષોં દ્વારા યહ આરાધિત
 કિયોં હુઆ હૈ । (નિસ્સંકિયં) યહ બ્રહ્મચર્ય નિઃશંકિત હોતા હૈ । ક્યોં
 કિ બ્રહ્મચારી વિષયલાલસા સે શૂન્ય હોને કે કારણ મનુષ્યોં કે મીતર
 કિસી મી તરહ સે શંકાસ્પદ નહીં હોના હૈ અતઃ યહ પ્રભાવ ઉસકે
 બ્રહ્મચર્ય કા હી હૈ હસીલિયે યહાં પર સૂત્રકાર ને નિશંકિત વૃત્તિ કા
 કારણ હોને સે બ્રહ્મચર્ય કો મી નિશંકિત કહા હૈ । હસી તરહ યહ
 બ્રહ્મચર્ય (નિઃભયં) નિર્ભય હોતા હૈ । ક્યોં કિ બ્રહ્મચર્ય કો પાલન
 કરને વાલે પુરુષ રત્ન સર્વત્ર નિર્ભય રહા કરતે હૈં, અતઃ નિર્ભયતા કા
 કારણ હોને સે બ્રહ્મચર્ય કો નિર્ભય વિશેષણ સે સૂત્રકાર ને વિશિષ્ટ
 કિયા હૈ । તથા યહ બ્રહ્મચર્ય (નિતુષં) નિસ્તુષ હૈ-તુષવિહીન તણ્ડુલ
 જિસ પ્રકાર શુષ્ક હોના હૈં ઉસી પ્રકાર યહ બ્રહ્મચર્ય મી વિષય લાલસા

તરીકે ઓળખાતા શૂરો, અત્યંત સાહસયુક્ત વ્યક્તિઓ, ધાર્મિક પુરુષો, અને
 ધૈર્યશાળી પુરુષોને તે સદા કુમાર આદિ અવસ્થાઓમાં પણ સુવિશુદ્ધ નિર્દોષ
 રહે છે. “ ભવ્ય ” આ પ્રશ્નચર્ય કલ્યાણરૂપ છે. “ ભવ્યજનાણુચરિયં ” ભવ્ય
 પુરુષો દ્વારા તેનું અરાધન થાય છે “ નિસ્સંકિય ” આ પ્રશ્નચર્ય નિશંકિત
 હોય છે, કારણ કે પ્રશ્નચારી વિષય લાલસા રહિત હોવાથી મનુષ્યોમાં કોઈ
 પણ પ્રકારે શંકાને પાત્ર થતો નથી. આ તેના પ્રશ્નચર્યનો જ પ્રભાવ હોવાથી
 અહીં સૂત્રકારે નિશંકિત વૃત્તિનું કારણ હોવાથી પ્રશ્નચર્યને પણ નિશંકિત
 કહ્યું છે. એ જ પ્રમાણે આ પ્રશ્નચર્ય “ નિઃભય ” નિર્ભય હોય છે. કારણ કે
 પ્રશ્નચર્યનું પાલન કરનાર પુરુષો સર્વત્ર નિર્ભય રહી શકે છે. તેથી નિર્ભ-
 યતાનું કારણ હોવાથી પ્રશ્નચર્યને સૂત્રકારે નિર્ભય વિશેષણ લગાડ્યું છે. તથા
 આ પ્રશ્નચર્ય “ નિતુષં ” નિસ્તુષ-તુષ વિહીન (ફેતરા પિનાના) ચોખા
 જેમ શુષ્ક હોય છે તેમ આ પ્રશ્નચર્ય પણ વિષય લાલસા રૂપી તુષ વિહીન

सुदर्शिनी टीका अ०४ सू०१ ब्रह्मचर्यस्वरूपनिरूपणम्

७७७

तथवेदं ब्रह्मचर्यमपि शुभ्रमिति भावः, तथा-‘ निरायासं ’ निरायासं=लो (अजन-
कम्, ‘ निरुवलेवं ’ निरुपलेपम्-विषयस्नेहवर्जितम्, तथा-‘ निव्युद्धरं ’ नि-
र्वृत्तिगृहम्=निवृत्तेः=चित्तसमाधेः गृहं=स्थानम्, ‘ नियमनिष्कम्पं ’ नियमनिष्प्र-
कम्पं=नियमेन=निश्चयेन, निष्प्रकम्पं=अविचलम्-निरतिचारत्वात्, तथा-‘ तव-
रूप तुष से विहीन होने के कारण बिलकुल शुभ्र-पवित्र है । (निरायासं)
इसके पालन करने से किसी भी प्रकार का पालनकर्ता को आयास-
अर्थात्-कष्ट नहीं उठाना पड़ता है इसलिये खेद का अजनक होने से
यह निरायासरूप है । (निरुवलेवं) वैषयिक पदार्थों को ओर ब्रह्म-
चारी के चित्त में थोड़ा सा भी स्नेह-रागभाव नहीं होता है, अतः
विषय स्नेहवर्जित होने से यह ब्रह्मचर्य निरुपलेप है । (निव्युद्धरं)
ब्रह्मचारी के हि चित्त की स्वस्थता रहती है, क्यों कि विषयों की ओर
उसकी लालसा नहीं जाती हैं, अतः उस संबंध को लेकर उसके चित्त
में असमाधिरूप आकुल व्याकुल परिणति नहीं रहती है इसलिये यह
ब्रह्मचर्य चित्त समाधि का एक घर है । (नियमनिष्कम्पं) अतिचारों से
विहीन होने के कारण यह ब्रह्मचर्य नियम से-निश्चय से निष्प्रकम्प-
अविचलित होता है । तात्पर्य यह है कि गृहस्थों के ब्रह्मचर्य व्रत में
अतिचार लग सकने के कारण उनका वह ब्रह्मचर्य विचलित नहीं
होता है परन्तु सकल संयमी जनों का ब्रह्मचर्य अतिचारों से विहीन
होता है, इसलिये यह यहां अविचलित कहा गया है । (तवसंजम-

डोवाथी तदन शुभ्र पवित्र छे. “ निरायासं ” तेनुं पालन करवाथी पालन
इताने कोष्ठ पणु प्रकारने आयास-भेद ओठवे के कष्ट उठाववे परतुं नथी
तेथी भेदनुं जनक न डोवाने कारखे ते निरायासइय छे. “ निरुवलेवं ” वैषयिक
पदार्थोनी तरइ ब्रह्मचारीना चित्तमां नरी पणु स्नेह-रागभाव थतो नथी,
तेथी विषयस्नेह रहित डोवाथी ब्रह्मचर्यने निरुपलेप छे. “ निव्युद्धरं ”
ब्रह्मचारीना चित्तनी स्वस्थता रहै छे, कारखे विषयोनी प्रत्ये तेने लाससा
थती नथी. ते संभंधने दीये तेना चित्तमां असमाधिइय आकुण व्याकुणताना
इय परिणुति रहेती नथी. तेथी आ ब्रह्मचर्य चित्त समाधिनुं ओक घर छे,
“ नियमनिष्कम्पं ” अतिचारोथी रहित डोवाने कारखे आ ब्रह्मचर्य अवस्थ
निष्प्रकम्प-अविचलित डोय छे तेनुं तात्पर्य ओ छे के गृहस्थोना ब्रह्मचर्य
व्रतमां अतिचार लागी शके छे ते कारखे तेमनुं ब्रह्मचर्य अविचलित डोतुं
नथी, पणु सकल संयमीजनोनुं ब्रह्मचर्य अतिचारोथी रहित डोय छे, ते

સંજમમૂલદલિયણિમં ' તપ:-સંયમમૂલદલિકનિમમ=તપ: સંયમયો: મૂલદલિક=મૂલદ્રવ્યમ્=મૂલધર્મતિયર્થ:, તસ્ય નિમં=પદ્મસં યત્તત્થા, તથા-' પંચમહાવ્યસુર-ક્લિયં ' પશ્ચમહાવ્રતમુરક્ષિતં=પશ્ચમહાવ્રતાનાં મધ્યસ્થિતત્વેન મુદ્ગુરુરક્ષિતમિવ યત્ત-ત્થોક્તમ્, તથા ' સમિદ્ગુત્તિગુત્તં ' સમિતિગુપ્તિગુપ્તમ્-સમિતિભિઃ=ઈર્યાસમિત્યા-દિભિઃ, ગુપ્તિભિઃ=મનોગુપ્ત્યાદિભિશ્ચ ગુપ્તમ્=રક્ષિતમ્, તથા-' જ્ઞાણવરકવાટ સુકય-રક્ષણં ' ધ્યાનવરસેવ=ધર્મધ્યાનમેવ કપાટમ્-તેન મુદ્ગુ=શોભનતયા કૃતં રક્ષણં યસ્ય તત્, તથા-' અજ્ઞપદિણ્ણકલિહં' અધ્યાત્મદત્તપરિયમ્=અધ્યાત્મમેવ સદ્ધા-વણ્ણવ કપાટદહીકરણાર્થં દત્ત: પરિય:-અર્ગલા રક્ષાયે યસ્ય તત્, તથા-' સંનદ્ધવ-દ્ધોચ્છદ્યદુગ્ગદ્ધપહં ' સંનદ્ધવદ્ધાવચ્છાદિતદ્ધર્મતિપ્થમ્--સંનદ્ધોવદ્ધાવચ્છાદિતશ્ચ અર્થાત્ સર્વતો નિરુદ્ધો દુર્ગતિપથો=દુર્ગતિમાર્ગો યેન તત્તથોક્તમ્, તથા-' સુગદ્ધ-

મૂલદલિયણિમં) તપ ઓર સંયમ કા યહ બ્રહ્મચર્ય મૂલ ધન જેસા હૈ । (પંચમહાવ્યસુરક્લિયં) જિસ પ્રકાર પાંચ પુરુષોં કે વીચ મેં રહા હુઆ પુરુષ સુરક્ષિત રહતા હૈ ડસી પ્રકાર યહ બ્રહ્મચર્ય બી પાંચ મહાવ્રતોં કે ષાચ મેં સ્થિત હોને કે કારણ સુરક્ષિત કે જેસા હૈ । (સમિદ્ગુત્તિગુત્તં) ઈર્યાસમિતિ આદિ પાંચ સમિતિયોં સે ઇવં મનોગુપ્તિ આદિ ત્રીન ગુપ્તિયોં સે બી હસકી સદા રક્ષા હોની રહતી હૈ ઇસણિયે યહ સમિતિ ઓર ગુપ્તિયોં સે બી ગુપ્ત-સુરક્ષિત કહા ગયા હૈ । તથા (જ્ઞાણવરકવાટ સુકયરક્ષણં) હસકી રક્ષા સદા ધર્મધ્યાન રૂપ મજબૂત કિવાડોં સે બી વહુત અચ્છી તરહ હોતી રહતી હૈ (અજ્ઞપદિણ્ણકલિહં હસકી રક્ષા કે નિમિત્ત ઇન કિવાડોં મેં મજબૂતી લાને વાલા અર્ગલા જેસા અધ્યાત્મ-સદ્ધાવ વહાં કામ કરતા હૈ । (સંનદ્ધવદ્ધોચ્છદ્યદુગ્ગદ્ધપહં) યહ બ્રહ્મચર્ય અપને પાલક કે દુર્ગતિમાર્ગોં કો સર્વથા રોક દેતા હૈ, (સુગદ્ધ-

કારણુ તેને અહીં અવિચલિત દર્શાવ્યું છે. “ તવસંજમમૂલદલિયણિમં ” તપ અને સંયમનું આ બ્રહ્મચર્ય મૂળધર્મ સમાન છે. “ પંચમહાવ્યસુરક્લિયં ” જે રીતે પાંચ પુરુષોની વચ્ચે રહેતો પુરુષ સુરક્ષિત રહે છે, તે જ પ્રમાણે આ બ્રહ્મચર્ય પણ પાંચ મહાવ્રતોની વચ્ચે રહેતો હોવાથી સુરક્ષિત છે. “ સમિદ્ગુત્તિગુત્તં ” “ જ્ઞા ઈર્યા સમિતિ આદિ પાંચ સમિતિઓથી અને મનોગુપ્તિ આદિ ત્રણ ગુપ્તિથી પણ તેનું સદા રક્ષણ થતું રહે છે, તે કારણુ તે સમિતિ અને ગુપ્તિઓથી પણ ગુપ્ત-સુરક્ષિત કહેવાયું છે. તથા “ જ્ઞાણવરકવાટસુકય રક્ષણં ” તેનું રક્ષણ હંશા ધર્મ ધ્યાનરૂપી મજબૂત કમાડોથી પણ થતું આવી રીતે રીતે થતા કરે છે “ અજ્ઞપદિણ્ણકલિહં ” તેની રક્ષાને નિમિત્તે તે કમાડોમાં મજબૂતી હોવાનાર આગળીયા જેવું અધ્યાત્મ-સદ્ભાવ ત્યાં કામ આપે છે. “ સંનદ્ધવદ્ધોચ્છદ્યદુગ્ગદ્ધપહં ” આ બ્રહ્મચર્ય તેનું સેવન કરનારના દુર્ગતિમાર્ગને

હૃદયસંગ ચ ' સુગતિપથદેશકં ચ=સુગતેઃ=સ્વર્ગાપવર્ગસ્ય પન્થાઃ-સુગતિપથસ્તસ્ય દેશકં=દર્શકં યત્ત્વ તથા- ' લોગુત્તમં ચ ' લોકોત્તમં ચ=લોકત્રયશ્રેષ્ઠથ 'વયમિણં' વ્રતમિદમ્-ઈદં ગ્રંથચર્યરૂપં વ્રતં 'પદ્મસરસ્તલાગપાલિયભૂયં' પદ્મસરસ્તલાગપાલિભૂતમ્ -પદ્મપ્રધાનઃ સરસ્તલાગઃ-પદ્મસરસ્તલાગઃ, પદ્મસરસ્તલાગઃવ મુલ્લદત્ત્વેન પ્રમોદકત્ત્વેન હસ્ત્વેન ચ સમુપાદેયત્વાદ્ ધર્મોડિપિ પદ્મસરસ્તલાગઃ, તસ્ય 'પાલિભૂતં=રક્ષકત્ત્વેન પાલિકત્વં યત્ત્વ, તથા ' મહાસગઢઅગર તુંવભૂયં' મહાશકટારકતુમ્બભૂતમ્-મહા-શકટસ્ય=અરકાઇવ-અરાઇવ અરકાઃ ક્ષાન્તાદયોગુણાસ્તેષાં તુમ્બભૂતમ્-આધાર ભૂતમ્ તથા- 'મહાવિલિમરુલ્લક્ષ્યંધભૂયં' મહાવિટપવૃક્ષસ્કન્ધભૂતમ્-મહાન્તો વિટપાઃ શાસ્ત્રા

પદેસંગ ચ) ઔર ઉસે સ્વર્ગ ઔર અપવર્ગરૂપ સુગતિ કે માર્ગી કો દિલ્લાતા રહતા હૈ । હસીલિયે (વયમિણં) યદ્ વ્રત (લોગુત્તમં ચ) લોકત્રય મેં શ્રેષ્ઠ હૈ । તથા યદ્ વ્રત (પદ્મસરસ્તલાગ પાલિભૂયં) પદ્મપ્રધાન સરોવર ઔર તલાગ કી પાલિ જૈસા હૈ, અર્થાત્ મુલ્લદ હોને કે કારણ, પ્રમોદ કારક હોને કે કારણ, ઔર મન કો હરણ કરને વાલા હોને કે કારણ જૈસે પદ્મપ્રધાન સરોવર ઔર તલાગ સમુપાદેય હોતે હૈ । ઉસી પ્રકાર મુલ્લદાતા પ્રમોદક ઔર મનોહર હોને કે નાતે ધર્મ ભી સમુપાદેય હોતા હૈ-અતઃ ધર્મ ભી પદ્મપ્રધાન સરોવર ઔર તલાગ જૈસા હૈ । ઉસ ધર્મ રૂપ સરોવર ઔર તલાગ કા યદ્ રક્ષક હોને કે કારણ પાલિ-પાલ જૈસા હૈ । તથા (મહાસગઢઅગરતુંવભૂયં) મહાશકટ કે આરોં કે સમાન ક્ષાન્ત્યાદિક ગુણોં કા યદ્ તુમ્બભૂત-આધારભૂત હૈ । તથા (મ-હાવિલિમરુલ્લક્ષ્યંધભૂયં) મહાશાસ્ત્રા શાલી વૃક્ષ કે સમાન આશ્રિતોં

સદંતર રોકી દે છે. “સુગતિપથદેશકં” અને તેને સ્વર્ગ અને અપવર્ગો રૂપ સુગતિને માર્ગ દર્શાવતું રહે છે. તેથી “વયમિણં” આવત “લોગુત્તમં” ત્રણે લોકમાં શ્રેષ્ઠ છે. તથા આવત “પદ્મસરસ્તલાગપાલિભૂયં” કમળોથી યુક્ત સરોવર અને તળાવની પાળ જેવું છે. એટલે કે સુખદ હોવાને કારણે, પ્રમોદકારક હોવાને કારણે, અને મનોહર હોવાને કારણે જેમ પદ્મપ્રધાન સરોવર અને તળાવ સમુપાદેય હોય છે તે જ પ્રકાર સુખદાતા, પ્રમોદક અને મનોહર હોવાને કારણે ધર્મ પણ સમુપાદેય હોય છે. તેથી ધર્મ પદ્મયુક્ત સરોવર અને તળાવ જેવો છે. તે ધર્મરૂપ સરોવર અને તળાવનું તે (ગ્રંથચર્ય રક્ષક હોવાથી પાળ જેવું છે. તથા “મહાસગઢઅગરતુંવભૂયં” મહા શકટ-ગાડા-ની ધરીના સમાન ક્ષાન્ત્યાદિ ગુણોંનું તે તુમ્બભૂત છે. તથા “મહાવિલિમરુલ્લક્ષ્ય-ધર્મ” મહા શાસ્ત્રાવાળા વૃક્ષની જેમ આશ્રિતોનું પરમ સુખકારી હોવાથી

યસ્ય સ મહાવિટપઃ, સ વાસૌ વૃક્ષશ્ચ આશ્રિતાનાં પરમોપકારકત્વસાધર્મ્યાદ્ ધર્મસ્તસ્ય સ્કન્ધભૂતં યત્તત્તથોક્તમ્, અયં ભાવઃ—યથા-સ્કન્ધોવૃક્ષશાખાઽઽધારભૂતસ્તથૈવબ્રહ્મ-ચર્યં ધર્મશાખાઽઽધારભૂતમ્ । તથા-‘ મહાનગરપાગારકવાહફલિહ્ભૂયં ’ મહાનગર-પ્રાકારકપાટપરિધિભૂતમ્—મહાનગરમિવ મહાનગરં વિવિધસુખહેતુ સાધર્મ્યાદ્ ધર્મઃ, તસ્ય રક્ષકત્વાત્ પ્રાકારરૂપં, કપાટરૂપં પરિધિભૂતમ્ = અર્ગલરૂપમ્, યત્તત્તથો-ક્તમ્ તથા-‘ રજ્જુપિણદ્વોઽન્વદંકેઞ્ચ ’ રજ્જુપિણદ્વઽન્વ દન્દ્રકેતુઃ=યથા-રજ્જુવદ્દન્દ્ર-ધ્વજો મહોત્સવે સર્વોપરિ વર્તમાનઃ પરમશોભાં જનયતિ, તથૈવેદં સર્વવ્રતશ્રેષ્ઠં બ્રહ્મચર્યમ્ । તથા-‘ વિસુદ્ધનેગગુણસંપિણદ્વં = વિશુદ્ધાનેકગુણસંપિણદ્વં વિશુદ્ધા-યેઽ નેકગુણાસૈઃ સંપિણદ્વં સંગ્રથિતમિદં બ્રહ્મચર્યમસ્તિ ॥ મૂ૦૧ ॥

કા પરમ ઉપકારી હોને સે ધર્મ કા યહ સ્કંધ જૈસા હૈ । અર્થાત્ જિસ પ્રકાર સ્કંધ વૃક્ષ કી શાખાઓ કા આધારભૂત હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર યહ બ્રહ્મચર્ય ભી ધર્મ કી શાખાઓ કા આધારભૂત હૈ । તથા (મહા-નગરપાગારકવાહફલિહ્ભૂયં) મહાનગર કે સમાન વિવિધ સુખો કા હેતુભૂત હોને કે કારણ ધર્મરૂપ નગર કા યહ રક્ષક હોને સે પ્રાકાર જૈસા, કપાટ જૈસા ઓર અર્ગલા જૈસા હૈ । તથા (રજ્જુપિણદ્વોઽન્વદંકેઞ્ચ) જિસ પ્રકાર રજ્જુ બદ્ધ દન્દ્રધ્વજ મહોત્સવ મેં સર્વોપરિ વર્તમાન હોતા હુઆ પરમ શોભા કો વિસ્તારતા હૈ ઉસી તરહ યહ બ્રહ્મચર્યવ્રત ભી સર્વવ્રતોં મેં શ્રેષ્ઠ હૈ ઓર પરમ શોભા કા જનક હોતા હૈ । તથા (વિસુદ્ધનેગગુણસંપિણદ્વં) વિશુદ્ધ અનેક ગુણોં સે યહ બ્રહ્મચર્ય અચ્છી રીતિ સે (સંપિણદ્વં) ગ્રથિત-યુક્ત હૈ ।

તે ધર્મના સ્કંધ જેવું છે. એટલે કે જેમ થડ વૃક્ષની શાખાઓને માટે આધાર રૂપ હોય છે એ જ પ્રકારે બ્રહ્મચર્ય પણ ધર્મની શાખાઓના આધાર રૂપ છે. તથા “ મહાનગર પાગાર કવાહ ફલિહ્ભૂયં ” મહાનગરના સમાન વિવિધ સુખોનું હેતુભૂત હોવાને કારણે ધર્મનગરનું તે રક્ષક હોવાના પ્રકાર જેવું, કંબાટ જેવું અને અર્ગલા જેવું છે. તથા “ રજ્જુપિણદ્વોઽન્વદંકેઞ્ચ ” જેમ રજ્જુ (દોરડું) બદ્ધ દન્દ્રધ્વજ મહોત્સવમાં સર્વોપરિ દેખાતો પરમ શોભાને વિસ્તારે છે તે જ પ્રમાણે આ બ્રહ્મચર્ય વ્રત પણ સર્વવ્રતોમાં શ્રેષ્ઠ છે અને પરમ શોભાનું જનક હોય છે તથા “ વિસુદ્ધનેગગુણસંપિણદ્વં ” વિશુદ્ધ અનેક ગુણોથી આ બ્રહ્મચર્ય સારી રીતે “ સંપિણદ્વં ” ગ્રથિત-યુક્ત છે.

સુવર્ણિની ટીકા અં ૪ સ્કં ૨ બ્રહ્મચર્યસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૭૮૧

પુનરપિ બ્રહ્મચર્યમાહાત્મ્યમાહ—‘ જન્મિય ભગ્ને ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જન્મિય ય ભગ્ને હોઝ સહસા સઠ્ઠં સેભગ્ગમહિયચુ-
ળિયકુસલ્લિયપલ્લટ્ટપડિય-સ્વંડિયપરિસડિયવિળાસિયં વિળયસીલ-
તવનિયમગુણસમૂહં તં વંભં ભગવંતં મહગણણકસ્વત્તારાગાળં
ચ જહા ઉડુવડ્ઝ મણિમુત્તસિલપ્પવાલારત્તરયણાગરણં ચ જહા
સમુદ્ધો, વેરુલિઓ ચેવ જહા મળીણં, જહ મડડો ચેવ મૂસણાણં
વત્થાણં ચેવ ક્ખોમજુયલં અરવિંદં ચેવ પુપ્ફજેટ્ટં ગોસીસં ચેવ
ચંદનાણં હિમવંતો ચેવ ઓસહીણં સીતોદા ચેવ નિન્નગાણં
ઉદહીસુ જહા સયંમૂરમણોરુયગવરો ચેવ મંડલિગપઠ્ઠવાણપવરે

ભાવાર્થ—હસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ચતુર્થ સંવરદ્વાર કા વિવેચન કર
રહે હૈં । હસમેં નૌ કોટિ સે અબ્રહ્મ કા પૂર્ણ ત્યાગ હો જાતા હૈ, હસ-
લિયે યહ બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત કહલાતા હૈ । વ્રત કા તાત્પર્ય યહી હૈ કિ
દોષોં કો સમજ કર અનેકે ત્યાગ કા નિયમ કરને કે બાદ ફિર સે
અનકા સેવન નહીં કરના । બ્રહ્મચર્ય વ્રત કો પરિપાલન કરને કે લિયે
અતિશય ઉપકારક કિતને હી ગુણ હૈં, જૈસે આકર્ષક સ્પર્શ, રસ, ગંધ,
રૂપ, શબ્દ ઔર શરીરસંસ્કાર આદિ મેં ન ફેસના, ત્રુટિયોં કો હટાને
કે લિયે જ્ઞાનાદિ સદ્ગુણોં કા અભ્યાસ કરના, એવં ગુરુકી આધીનતા કે
લિયે ગુરુકુલ મેં વાસ કરના । હસ સૂત્ર મેં હસી બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત કે
ગુણ ગૌરવ કા વ્યાખ્યાન સૂત્રકાર ને કિયા હૈ ॥ સ્કં ૧ ॥

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ચોથા સંવરદ્વારનું વિવેચન કરેછે.
તેમાં નવ પ્રકારે અબ્રહ્મનો સંપૂર્ણ ત્યાગ થઈ જાય છે. તેથી તે બ્રહ્મચર્ય મહા-
વ્રત કહેવાય છે. વ્રતનું તાત્પર્ય એ છે કે દોષોને સમજીને તેમના ત્યાગનો નિયમ
કર્યા પછી ફરીથી તેનું સેવન ન કરવું. બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું પરિપાલન કરવાને માટે
અતિશય ઉપકારક કેટલાક ગુણો છે, જેમાં કે આકર્ષક સ્પર્શ, રસ, ગંધ, રૂપ
શબ્દ અને શરીર સંસ્કાર આદિમાં ફસાવું નહીં, ત્રુટિયોને દૂર કરવા માટે
જ્ઞાનાદિ સદ્ગુણોનો અભ્યાસ કરવો, અને ગુરુની આધીનતાના સેવનને માટે
ગુરુકુલમાં વાસ કરવો. આ સૂત્રમાં એ જ બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રતના ગુણ ગૌરવનું
વર્ણન સૂત્રકારે કર્યું છે. ॥ ૧ ॥

एरावण इवकुंजराणं सीहो जहा भिगाण पवरो सुपन्नमाणं च
वेणुदेव धरेण जहा पण्णम इंदराया कप्पाणं चेव वंभलोए,
सभासु य जहा भवे सुहम्भा ठिईसु लवसत्तमव्वपवरा दाणाणं
चेव अभओ दाणं किमिराओ चेव कंवलाणं संघयणे चेव
बज्जरिसभे संठाणे चेव समचउरंसे ज्ञाणेसु य परं सुक्कज्झाणं
नाणेसु य परमकेवलं तु सिद्धं लेसासु य परमसुक्कलेसा तित्थ-
करो चेव जहा सुणीणं वासेसु जहा विदेहे गिरिराया चेव
मंदरवरे वणेसु जहा णंदणवणं पवरं दुमेसु जहा जंबू सुदंसणा
वीस्सुयजसा जीयानामेणं अयं दीवो, तुरगवई गयवई रह-
वई नरवई जह वीसुए चेव राया रहिए चेव जहा महारहगए
एवमणेगगुणा अहीणा भवंति एगम्मि वंभचेरे ॥ सू० २ ॥

टीका—‘जम्मि य’ इत्यादि । ‘जम्मि य’ यम्मिश्च ब्रह्मचर्ये ‘भग्गे’
भग्ने=विराधिते सति ‘सब्बं’ सर्वं ‘विणयसीलतवणियमगुणसमूहं’ विनयशील-
तपोनियमगुणसमूहः—विनयो=गुरुपतिपत्तिश्रवणः, शीलं=सदाचारः, तपः=अन-
शनादिकं द्वादशविधं, नियमः=अभिग्रहः, गुणसमूहः=त्रागादिगुणसमुदायः, एषां
समाहारे विनयशीलतपोनियमगुणसमूहं क्रियाज्ञानं चेतिद्वयमपीत्यर्थः, सहसा=
स्मृतिरिति ‘संभग्गमहियचुण्णिय कुसल्लियपल्लट्टपडिय खंडियपरिसडियविणासिय’ संभ-

फिर ब्रह्मचर्य का माहत्म्य कहते हैं—‘जम्मिय भग्गे’ इत्यादि० ।

टीकार्थ—(जम्मिय भग्गे) जिस ब्रह्मचर्य के विराधित होने पर
(सब्बं विणयसीलतवणियमगुणसमूहं) समस्त विनय, शील, तप,
नियम और गुण समूह—अर्थात्—क्रिया और ज्ञान ये दोनोंही (सहसा)
इकदम (संभग्गमहिय-चुण्णिय-कुसल्लिय-पल्लट्ट-पडिय-खंडिय-परिस

डये सूत्रकार प्रह्लादचर्यनुं भडात्थ्य डडे छे— “ जम्मिय भग्गे ” ४०

टीकार्थ—“जम्मिय भग्गे” जे प्रह्लादचर्य विराधना थतां “सब्बं विणय
सीलतवणियमगुणसमूहं” समस्त विनय, शील, तप, नियम अने गुणसमूह
ज्येष्ठे के क्रिया अने ज्ञान जे अने “सहसा” अथानक “संभग्गमहियचु-
ण्णियकुसल्लिय-पल्लट्ट-पडिय खंडिय-परिसडिय-विणासिय” होइ” इत्येला प्रशान्ति

નમથિતચૂર્ણિતકુશલિયતપર્યસ્તપતિતલ્વણ્ડિત-પરિશટિતવિનાશિતમ્=તત્ર 'સંભગ્ન' સંભગ્ન=પટ્ટ ઇવ, 'મદિય' મથિત=દધીવ વિલોડિતં 'ચુળિયં' ચૂર્ણિત=ચણક-ચન્ પિષ્ટમ્ 'કુશલિય' કુશલિયતમ્=કુ=કુત્સિતમ્-અન્તઃ પ્રવિષ્ટતોમરાદિ શલ્ય-મિવ શલ્યં, યન્ પ્રવિષ્ટં સ્ત, કેનાપ્યુપાયેન ન નિઃસરતિ તત્કુશલ્યં, તત્સંજાતં યસ્યેતિ કુશલિયતં દુષ્ટશલ્યયુક્તં, યથા વક્તયા પ્રવિષ્ટેન શલ્યેન શરીરં વિદારિતં ભવતિ. તથૈવ વિનવાદિકં વિદારિતં ભવતિ, 'પલ્લવ' પર્યસ્તં=પર્વતશિખરાદ્ સ્થૂલપાષાણલ્વણ્ડ ઇવ સ્વસ્થાનાલ્લિતમ્, 'પલ્લવ' પતિતમ્=પ્રાસાદશિખરાન્કલશ્ચ ઇવાધોનિપતિતમ્ 'લ્લવિય' લ્લવિતમ્=લ્લવ ઇવ વિભાગેન લ્લિતમ્, 'પરિશલિય' પરિશલિતં = કુષ્ટાદ્યુપહતાઙ્ગમિવલિતમ્, 'વિનાસિયં' વિનાશિતં=વિનષ્ટમ્, 'હોઃ' ભવતિ । અયોપમસા બ્રહ્મચર્યસ્ય માદામ્યં વર્ણયે- 'તં વંશં ભગવંતં' ઇત્યાદિ । 'તં'=તત્-પ્રસિદ્ધં 'ભગવંતં' ભગવદ્=સર્વોત્કૃષ્ટૈશ્વર્યશાલિ 'વંશં' બ્રહ્મ=બ્રહ્મચર્ય 'મહાગણનક્ષત્તારાગણં ચ' મહાગણનક્ષત્તારાકાણાં ચ, મહાગણઃ=મહાલાદિઃ, નક્ષત્રાણિ=અશ્વિન્યાદયઃ, તારકાઃ=પ્રસિદ્ધાઃ, આસાં મધ્યે 'જહા'

લિય વિનાસિયં હોઃ) ઘટકી તરહ સંભગ્ન ટુકડે ૨ હો જાતે હૈ- નષ્ટ હો જાતે હૈ, દધિ કી તરહ વિલોડિત-અસ્તવ્યસ્ત હો જાતે હૈ, ચના આદિ કી તરહ-ચૂર્ણિત-પિસે જાતે હૈ, કુશલ્ય-ટેટે-વક વાળ સે વિદારિત છુપ શરીર કી તરહ વિદારિત હો જાતે હૈ, પર્વત કી ચોટી સે પતિત પાષાણલ્વણ્ડ કી તરહ અપને સ્થાન સે ચ્યુત હો જાતે હૈ, પતિત પ્રાસાદ કી ક્લ સે ગિરે છુપ કલશ કી તરહ અધોનિપતિત હો જાતે હૈ, ફાટે ગયે ડંડ કી તરહ લ્લવિત હો જાતે હૈ, પરિશલિ-કુષ્ટાદિ સે ઉપહત અંગ કી તરહ ગલિત હો જાતે હૈ, ઓર વિનાશિત-વિનષ્ટ-હો જાતે હૈ । (તં વંશં ભગવંતં) સર્વોત્કૃષ્ટ શૈશ્વર્યશાલી પ્રસિદ્ધ મહા બ્રહ્મચર્ય (મહાગણનક્ષત્તારાગણં ચ જહા ઉદુર્ધ્વ) મંગલ આદિ

જેમ ટુકડે ટુકડા થઈ જાય છે, નષ્ટ થઈ જાય છે, દહીંની જેમ વિલોડિત-અસ્તવ્યસ્ત થઈ જાય છે, ચણા આદિની જેમ ચૂરે ચૂરા થઈ જાય છે, કુશલ્ય-વકમાણુથી વીંધાયેલ શરીરની જેમ વિદારિત થઈ જાય છે, પર્વતના શિખર પરથી પાષાણખંડની જેમ પોતાને સ્થાનેથી ખસી જાય છે, પતિત-મહેલની છત ઉપરથી પડેલા કલશની જેમ અધોનિપતિત થઈ જાય છે, ચીરાયેલ લાકડીની જેમ ખણિત થઈ જાય છે, પરિશલિ-કોઠ આદિથી ઉપહત અંગની જેમ ગલિત થઈ જાય છે અને વિનષ્ટ થઈ જાય છે. " તં વંશં ભગવંતં " સર્વોત્કૃષ્ટ શૈશ્વર્યશાળી પ્રસિદ્ધ છે બ્રહ્મચર્ય " મહાગણનક્ષત્તારાગણં ચ જહા ઉદુર્ધ્વ "

યથા 'ઉડુર્વ' ઉડુપતિઃ=ચન્દ્રઃ સર્વશ્રેષ્ઠસ્તથૈવવ્રતનાં મધ્યે સર્વશ્રેષ્ઠમસ્તિ । તથા-
 'મણિમુક્તસિલ્પ્પવાલરત્તરયણાગરાણં' મણિમુક્તાશિલામવાલરકરત્નાકરાણાં=મણયઃ
 =ચન્દ્રકાન્તાદ્યાઃ, મુક્તાફળાનિ=શિલામવાલાનિ વિદ્યુમાણિ, રક્તરત્નાનિ=પદ્મરાગા-
 દીનિ તેષામાકરા ઉત્પત્તિભૂમયઃ, યે તે તથા, તેષાં મધ્યે 'જહા' યથા 'સમુદ્રો' સમુદ્રઃ,
 શ્રેષ્ઠસ્તથૈવેદં વ્રતનાં મધ્યે શ્રેષ્ઠમ્, एवं सर्वसंयोज्यम् । તથા- 'જહ ચેવ' યથા
 ચૈવ 'મણીણં' મણીનાં મધ્યે 'વેરુલિઓ' વૈરૂયં વૈરૂયમણિઃ । 'જહ ચેવ' યથા
 ચૈવ 'આભૂસણાણં' આભૂષણાનાં મધ્યે 'મઝહો' મુકુટઃ । 'વત્થાણં' વસ્ત્રાણાં
 મધ્યે 'સોમયુગલં ચેવ' સૌમયુગમિવ । 'અરવિંદં ચેવ' અરવિન્દમિવ=કમલમિવ
 'પુપ્ફજેટ્ટં' પુષ્પજેષ્ઠમ્-પુષ્પેષુ અરવિન્દં શ્રેષ્ઠમિત્યર્થઃ । 'ગોસીસં ચેવ' ગોશીર્ષ
 હરિચન્દનમિવ 'ચંદણાણં' ચંદનાનાં મધ્યે 'હિમવંતો ચેવ' હિમવાનિવ 'ઓસ-

ગ્રહો મેં, અશ્વિની આદિ નક્ષત્રોં મેં, ઓર તારાઓં મેં જૈસે ચંદ્રમા સર્વ
 શ્રેષ્ઠ માના જાતા હૈં उसी तरह सर्व व्रतों में श्रेष्ठ माना गया है । तथा
 (મણિમુક્તસિલ્પ્પવાલરત્તરયણાગરાણં ચ જહા સમુદ્રો) ચન્દ્રકાન્ત
 આદિ મણિયોં કી, મુક્તાફળોં કી, મૂર્ગોં કી ઓર પદ્મરાગ આદિ રક્ત-
 રત્નોં કી ઉત્પત્તિ સ્થાનોં મેં જૈસે સમુદ્ર શ્રેષ્ઠ હોતા હૈં उसी तरह यह
 व्रत भी सर्वव्रतों में श्रेष्ठ माना गया है । तथा-(जह चैव मणीणं वेरु-
 लियो) જૈસે મણિયોં મેં વૈરૂયમણિ, (જહ ચેવ આભૂસણાણં મઝહો)
 આભૂષણોં મેં જૈસે મુકુટ, (વત્થાણં સોમયુગલં ચેવ) વસ્ત્રોં મેં જૈસે
 સૌમ યુગલ, (અરવિંદંચેવ પુપ્ફજેટ્ટં) પુષ્પોં મેં જૈસે અરવિંદ
 (કમલ) (ચંદણાણં ગોસીસં ચેવ) ચંદનોં મેં જૈસે હરિચંદન, (ઓસ-
 હીર્ષ હિમવંતો ચેવ) ઔષધિયોં કી ઉત્પત્તિ કે સ્થાનોં મેં જૈસે હિમવાન

મંજળ આદિ શ્રેષ્ઠોમાં, અશ્વિની આદિ નક્ષત્રોમાં, અને તારાઓમાં જેમ ચં-
 દ્રમા સર્વશ્રેષ્ઠ મનાય છે જેમ પ્રમાણે સર્વવ્રતોમાં શ્રેષ્ઠ માનવામાં આવ્યું છે.
 તથા “ મણિમુક્તસિલ્પ્પવાલરત્તરયણાગરાણં ચ જહા સમુદ્રો ” ચન્દ્રકાન્ત આદિ
 મણિઓની, મોતીની, મૂંગોની અને પદ્મરાગ આદિ રક્તરત્નોની ઉત્પત્તિ
 કરવાના સ્થાનોમાં જેમ સમુદ્ર શ્રેષ્ઠ મનાય છે. જેમ પ્રમાણે આ વ્રત
 પણ સર્વ વ્રતોમાં શ્રેષ્ઠ મનાય છે તથા “ જહચેવ મણીણં વેરુલિઓ ” જેમ
 મણિઓમાં વૈરૂયમણી, “ જહ ચેવ આભૂસણાણં મઝહો ” આભૂષણોમાં જેમ મુકુટ
 “ વત્થાણં સોમયુગલં ચેવ ” વસ્ત્રોમાં જેમ સૌમયુગલ “ અરવિંદં ચેવ પુપ્ફજેટ્ટં ”
 પુષ્પોમાં જેમ અરવિંદ, “ ચંદણાણં ગોસીસં ચેવ ” ચંદનોમાં જેમ હરિચંદન.

હિણં ' ઓપધીતામ્=ઓપધુત્તિસ્થાનાનાં મધ્યે હિમવાન પર્વત इव । ' સીતોદા
 ચેવ ' સીતોદેવ=સ્વનામસ્વાવા મહાનદીચ ' નિન્નગાનાં ' નિમ્નગાનામ્=નદીનાં
 મધ્યે । ' ઉદ્દહીસુ ' ઉદધિપુ=સમુદ્રેષુ ' સયંભૂરમણો ' સયંભૂરમણ: સમુદ્ર: ' રુચ-
 ગવરો ચેવ ' રુચકવર इव-यथा रुचकवरः=રુચકાભિધાનસ્વપોદશદ્વીપવર્તીપર્વત-
 વિશેષ: , ' મંડલિકપન્ચયાણં ' માંડલિકપર્વતાનાં માનુષોત્તરકુણ્ડલવરરુચકવરા-
 મિથાનાં મધ્યે ' પવરે ' પ્રવર: શ્રેષ્ઠ: । ' ઇરાવણ इव ' ઇરાવણ इव ' કુંજરાણં '
 કુંજરાણાં મધ્યે, યથા હસ્તિનાં મધ્યે ઇરાવત: પ્રવર इत्यर्थ: । ' જહા ' વથા
 ' સીહો ' સિંહ: ' મિગાણં ' મૃગાણામ્=ધરણ્યપશુનાં મધ્યે ' પવરો ' પ્રવર: યથા-
 ' સુપ્તગાણં ચ ' સુપ્તગાનાં=સુપ્તકુમારાણાં મધ્યે ' વેણુદેવે ' વેણુદેવ: પ્રવર:
 યથા ચ ' પન્નગ इंदराया ' પન્નમેન્દ્રરાજ:, ' ધરણે ' ધરણો=ધરણેન્દ્રો નાગકુમા-
 રાણાં મધ્યે પ્રવર:, તથૈવેદં બ્રહ્મચર્ય વ્રતાનાં મધ્યે પ્રવરમ્ । તથા-'કપ્પાણં '
 કલ્પાનાં=દેવલોકાનાં મધ્યે ' વંમલોણ ચેવ ' બ્રહ્મલોક इव=પશ્ચમો દેવલોક:
 પર્વત, (નિન્નગાણં સીતોદા ચેવ) નદિયોં મેં જૈસે સીતોદા નદી, (ઉદ-
 હીસુ જહા સયંભૂરમણો) સમુદ્રોં મેં જૈસે સયંભૂરમણસમુદ્ર, (મંડલિક-
 પન્ચયાણ રુચગવરો ચેવ) માંડલિક પર્વતોં મેં જૈસે રુચક વરપર્વત,
 (પવરે) શ્રેષ્ઠ માના જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર સમસ્તવતોં મેં યહ વત શ્રેષ્ઠ
 માના ગયા હૈ । તથા (કુંજરાણં ઇરાવણ इव) હાથીઓં મેં જૈસે ઇરાવત
 હાથી શ્રેષ્ઠ હોતા હૈ (મિગાણ જહા સીહો પવરો) જૂનોં કે ચીચ મેં-
 જંગલા જાનવરોં મેં-જૈસે સિંહ શ્રેષ્ઠ હોતા હૈ (સુપ્તગાણં ચ વેણુદેવે
 સુપ્તકુમારોં મેં જૈસે વેણુદેવ શ્રેષ્ઠ હોતા હૈ, (જહા પન્નગ इंदराया-
 ધરણે) પન્નગોં કા ઇન્દ્રરાજ ધરણેન્દ્ર જૈસે નાગકુમારોં મેં શ્રેષ્ઠ હોતા હૈ,
 (કપ્પાણં ચેવ વંમલોણ) કલ્પોં મેં જૈસે પાંચવા બ્રહ્મલોક પ્રવર હોતા હૈ,

“ ઓપધીનાં હિમવતો ચેવ ” ઓપધિઓનાં ઉત્પત્તિ સ્થાનોમાં જેમ હિમાલય
 પર્વત, “ નિન્નગાણં સીતોદા ચેવ ” નદીઓમાં જેમ સીતોદા નદી, “ ઉદ્દહી સુજહા
 સયંભૂરમણો ” સમુદ્રોમાં જેમ સયંભૂરમણ સમુદ્ર “ મંડલિકપન્ચયાણરુચગવરો
 ચેવ ” માંડલિક પર્વતોમાં જેમ રુચકવર પર્વત, “ પવરે ” શ્રેષ્ઠ મનાય છે,
 તે જ પ્રકારે સપ્તમાં વ્રતોમાં આ બ્રહ્મચર્યવ્રત શ્રેષ્ઠ મનાય છે તથા “ કુંજ-
 રાણં ઇરાવણ इव ” હાથીઓમાં જેમ ઐરાવત હાથી શ્રેષ્ઠ હોય છે, “ મિગાણં
 જહા સીહો પવરો ” મૃગોની વચ્ચે-જંગલી જાનવરોની વચ્ચે-જેમ સિંહ શ્રેષ્ઠ
 હોય તે, “ સુપ્તગાણં ચ વેણુદેવે ” સુપ્તકુમારોમાં જેમ વેણુદેવ શ્રેષ્ઠ હોય
 છે, “ જહા પન્નગ इंदराया ધરણે ” પન્નગોના ઇન્દ્રરાજ ધરણેન્દ્ર જેમ નાગકુ-
 મારોમાં શ્રેષ્ઠ હોય છે, “ કપ્પાણં ચ વંમલોણ ” દેવોમાં જેમ પાંચથો

ક્ષેત્રસ્ય મહત્ત્વાદિન્દ્રિયસ્યાતિ શુભપરિણામત્વાત્ત્વ પ્રવરઃ । ‘સમાસુય’ સમાસુ=પ્રતિભવનવિમાન ભાવિનીષુ સુધર્મસમોત્પાતસમાઽમિષેકસમાઽલંકારસમાઽવ્યવસાયસમાસુ ચ મધ્યે ‘જહા’ યથા ‘સુહમ્મા’ સુધર્મા સમા પ્રવરા ‘ભવે’ ભવતિ તથૈવેદં બ્રહ્મચર્યં વ્રતેષુ પ્રવરં ભવતિ । તથા-‘ઠિઠ્ઠુ’ સ્થિતિષુ=આયુષ્કેષુ મધ્યે ‘લવસત્તમવ્વ’ લવસત્તમેવ=અનુત્તરદેવભવસ્થિતિર્યથા પ્રવરા । ‘દાણાણં ચેવ અભયોદાણં’ દાનાનાં મધ્યે અભયદાનમિવેદં બ્રહ્મચર્યં પ્રવરમ્ । ‘કંવલાણં’ કમ્બલાનાં મધ્યે ‘કિમિરાઓ ચેવ’ કુમિરાગ ઇવ-કુમિરાગકમ્બલ ઇવ કુમે=રક્તકીટ વિશેષસ્ય રાગ ઇવ રાગો यस્ય કમ્બલસ્ય ભવતિ સ કમ્બલઃ કુમિ રાગ કમ્બલ પ્રોચ્યતે, રક્તકમ્બલ इत्यर्थः, તથા-‘સંઘયણે’ સંઘનને=સંઘનનમધ્યે વજ્ર-ઋષભાદીનાં પળ્લાં સંઘનનાનાં મધ્યે ‘વજ્જરિસમે’ વજ્રકુપભં સંઘનનં પ્રવરમ્ ‘સંઠાણે’ સંસ્થાને=પદ્ધવિધસંસ્થાનમધ્યે યથા ‘સમચરસં’ સમચતુરસં સંસ્થાનં (સમાસુ જહા સુહમ્મા ભવે) સમાઓ મેં જૈસે સુધર્મા સમા શ્રેષ્ઠ હોતી હૈં, અર્થાત્ સુધર્મા સમા ઉત્પાત સમા, અમિષેકસમા, અલંકાર-સમા, વ્યવસાયસમા, ઇન સમાઓં મેં જૈસે સુધર્મા સમા સવ સે શ્રેષ્ઠ માની જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર યહ બ્રહ્મચર્યવ્રત ભી સમસ્ત વ્રતોં મેં શ્રેષ્ઠ માના જાતા હૈં । તથા (ઠિઠ્ઠુ જહા લવસત્તમવ્વપવરા) આયુઓં મેં અનુત્તરવિમાનવાસી દેવોં કી જૈસે આયુ ઉત્તમ માની જાતી હૈં ઓર (દાણાણં ચેવ અભયો દાણં) દાનોં કે બીચ મેં જૈસે અભયદાન શ્રેષ્ઠ માના જાતા હૈં ઉસી તરહ યહ બ્રહ્મચર્યવ્રત ભી સમસ્તવ્રતોં મેં પ્રધાન વ્રત માના જાતા હૈં । તથા (કંવલાણં કિમિરાઓ ચેવ) કંવલોં મેં જૈસે રક્ત કમ્બલ, (સંઘયણે ચેવ વજ્જરિસમે) છહ સંઘનનોં મેં જૈસે વજ્રકુપમ-સંઘનન, (સંઠાણે ચેવ સમચરસં) છહ સંસ્થાનોં મેં જૈસે સમચતુર-

બ્રહ્મલોક શ્રેષ્ઠ હોય છે, “સમાસુ જહા સુહમ્મા ભવે” સમાઓમાં જેમ સુધર્મા સમા શ્રેષ્ઠ હોય છે, એટલે કે સુધર્માસમા, ઉત્પાદસમા, અમિષેકસમા, અલંકારસમા, વ્યવસાયસમા, જે સમાઓમાં જેમ સુધર્માસમાને શ્રેષ્ઠ માનવામાં આવે છે; જે જ પ્રકારે આ બ્રહ્મચર્ય વ્રતને પણ અર્થે વ્રતોમાં શ્રેષ્ઠ માનવામાં આવે છે. તથા “ઠિઠ્ઠુ જહા લવસત્તમવ્વપવરા” આયુઓમાં જેમ અનુત્તર વિમાનવાસી દેવોનું આયુષ્ય જેમ ઉત્તમ મનાય છે, અને “દાણાણં ચેવ અભયોદાણં” દાનોમાં જેમ અભયદાન શ્રેષ્ઠ મનાય છે, જે જ પ્રમાણે આ બ્રહ્મચર્ય વ્રત પણ સમસ્ત વ્રતોમાં શ્રેષ્ઠ મનાય છે. તથા “કંવલાણં કિમિરાઓ ચેવ” કમ્બલોમાં જેમ રક્ત કમ્બલ સંઘયણે ચેવ વજ્જરિસમે” છ સંઘનનોમાં જેમ વજ્રકુપમ સંઘનન, “સંઠાણે ચેવ સમચરસં” છ સંસ્થાનોમાં જેમ સમચતુરસ

પ્રવરં તથૈવ વ્રતાનાં મધ્યે શ્દં બ્રહ્મચર્યં પ્રવરમ્ । તથા-‘ જ્ઞાણેસુ ય ’ ધ્યાનેષુ ચ-
ધ્યાનમધ્યે યથા ‘ પરમશુક્લજ્ઞાણં ’ પરમશુક્લધ્યાનં-શુક્લધ્યાનસ્ય ચતુર્થપાદરૂપં
પ્રવરમ્, તથા-નાળેસુ ય ’ જ્ઞાનેષુ ચ યથા પરમકેવલં તુ પરિપૂર્ણવિશુદ્ધકેવલ-
જ્ઞાનં અર્થાત્-જ્ઞાપિકજ્ઞાનં સિદ્ધં-પ્રવરત્વેન પ્રસિદ્ધમ્, તથૈવેદં બ્રહ્મચર્યં વ્રતાનાં-
મધ્યે પ્રસિદ્ધમ્-તથા-‘ લેશાસુ ય ’ લેશ્યાસુ=કૃષ્ણાઘાસુ ચ યથા, ‘ પરમશુક્લ-
લેશ્યા ’ પરમશુક્લલેશ્યા-શુક્લધ્યાનસ્ય તૃતીયભેદવર્તિની પ્રવરા । ‘ તિથ્યયરો
ચૈવ ’ તીર્થકરત્તૈવ ‘ જહા ’ યથા ‘ મુળીણં ’ મુળીનાં મધ્યે પ્રવરઃ ‘ વાસેસુ ’ વર્ષેષુ
ક્ષેત્રેષુ ‘ જહા ’ યથા ‘ વિદેહે ’ વિદેહઃ-મહાવિદેહક્ષેત્રે પ્રવરમ્, તથૈવેદં વ્રતં=
વ્રતાનાં મધ્યે પ્રવરમ્ । યથા જમ્બૂદ્વીપે ‘ મંદરચરે ’ મંદરચરો ‘ ગિરિરાયા ’
ગિરિરાજો=પર્વતપર્વતત્તૈવ પર્વતનાં મધ્યે પ્રવરઃ, ‘ વણેસુ ’ વણેષુ ‘ જહા ’ યથા-

સ્વસ્થાન પ્રવર માના જાતા હૈ-ઉસી પ્રકાર યહ બ્રહ્મચર્ય વ્રતોં મેં પ્રધાન
વ્રત માના જાતા હૈ । હસી તરહ (જ્ઞાણેસુ વરં શુક્લજ્ઞાણં) ચાર ધ્યાનોં
મેં જૈસે પરમ શુક્લધ્યાન શુક્લધ્યાનકા ચૌથા ભેદ, ઉત્તમ હોતા હૈ ઓર
(નાળેસુ ય પરમકેવલં સિદ્ધં) આભિનિબોધિક આદિ પાંચ જ્ઞાનોં મેં જૈસા
કેવલજ્ઞાન ઉત્તમ હોતા હૈ (લેશ્યાસુ ય પરમશુક્લેશ્યા) કૃષ્ણ આદિ છહ
લેશ્યાઓં મેં જૈસે પરમશુક્લેશ્યા-શુક્લધ્યાન કે તીસરે (પાયે) પાદમેં
હોનેવાલી લેશ્યા-ઉત્તમ હોતી હૈ (જહા મુળીણં તિથ્યયરો) મુનિયોં કે
બીચ મેં જૈસે તીર્થકર સર્વોત્તમ હોતે હેં, તથા (વાસેસુ જહા વિદેહે)
ક્ષેત્રોં મેં જૈસે વિદેહક્ષેત્ર સ્વ સે ઉત્તમ ક્ષેત્ર હોતા હૈ, ઉસી તરહ વ્રતોં
મેં યહ બ્રહ્મચર્ય વ્રત સ્પષ્ટે પ્રધાન વ્રત હેં । તથા-(મંદરચરે ગિરિ-
રાયા) જૈસે જંબૂદ્વીપ મેં પર્વતોં કે મધ્ય મેં મંદર ચર ગિરિરાજ શ્રેષ્ઠ હૈ,

સંસ્થાન જેમ શ્રેષ્ઠ મનાય છે તેમ આ બ્રહ્મચર્ય વ્રત પણ સઘળા વ્રતોમાં
મુખ્ય મનાય છે. એ જ પ્રમાણે “ જ્ઞાણેસુ વરં શુક્લજ્ઞાણં ” ચાર ધ્યાનોમાં
જેમ પરમ શુક્લધ્યાનનો ચોથો ભેદ ઉત્તમ હોય છે, અને “ નાળેસુ ય પરમ-
કેવલં સિદ્ધં ” આભિનિબોધિક આદિ પાંચ જ્ઞાનોમાં જેમ કેવલજ્ઞાન ઉત્તમ
હોય છે, “ લેશ્યાસુ ય પરમશુક્લેશ્યા ” કૃષ્ણ આદિ છ લેશ્યાઓમાં જેમ શુક્લ-
લેશ્યા-શુક્લધ્યાનના ત્રીજા પદમાં-પાયમાં ધનારી લેશ્યા-ઉત્તમ હોય છે. “ જહા
મુળીણં તિથ્યયરો ” મુનિઓની વચ્ચે જેમ તીર્થકર સર્વોત્તમ હોય છે, “ વાસેસુ
જહા વિદેહે ” ક્ષેત્રોમાં જેમ વિદેહ ક્ષેત્ર સર્વોત્તમ છે, એ જ પ્રમાણે આ
બ્રહ્મચર્ય વ્રત સઘળા વ્રતોમાં પ્રધાન વ્રત છે. તથા “ મંદરચરે ગિરિરાયા ”
જેમ જંબૂદ્વીપમાં પર્વતોમાં ગિરિરાજ મંદરચર શ્રેષ્ઠ છે, “ વણેસુ જહા પાંચ-

‘ખંડનવણ’ નન્દનવન ‘પવર’ પ્રવર ‘દુમેસુ’ દુમેસુ-વૃક્ષેષુ ‘જહા’ યથા-
 ‘સુદંસણા’ સુદર્શના-સુદર્શનાસ્થા ‘જંબૂ’ જમ્બૂ=જ્ઞીવિક્તઃ વૃક્ષવિશેષઃ, સા
 ‘વિસ્મયજસા’ વિશ્રુતયજાઃ-યજસા વિસ્થાતા । જમ્બૂનાં કિં નામ યજઃ ? ઇત્યાદિ
 —‘જીય’ યજ્યાઃ ‘નામેણ’ નામ્ના અયં ‘દીવે’ દ્વીપો=નસ્વદ્વીપોડસ્તિ,
 તથૈવેદં વ્રહ્મચર્યં વ્રતાનાં મધ્યે વિસ્થાતમ્ । તથા-‘જહા ચેવ’ યથા ચૈવ ‘તુર-
 ગવર્દ’ તુરગપતિઃ=અશ્વસેનાયુક્તઃ ‘ગયવર્દ’ ગજપતિઃ=ગજસેનાયુક્તઃ ‘રહવર્દ’
 રથપતિઃ=રથસેનાયુક્તઃ ‘નરવર્દ’ નરપતિઃ=નરસેનાયુક્તો ‘રાયા’ રાજા વિશ્રુતઃ,
 ‘જહા ચેવ’ યથા ચૈવ ‘રહિષ’ રથિકે=સ્થારોહિમધ્યે ‘મહારહગણ’ મહાર-
 ધગતઃ=મહારથારોહી વિશ્રુતઃ । તથૈવ વ્રતાનાં મધ્યે ઇદં વ્રતં વિશ્રુતમ્=પ્રસિદ્ધમ્
 एवम्=एवम्प्रकाराः ‘અળેગગુણા’ અનેકગુણાઃ=પ્રવરત્વવિશ્રુતત્વાદયોડનેકેગુણા
 ‘एगमि बंभचेरे’ एकस्मिन् ब्रह्मचर्ये ‘અહીના’ અધીનાઃ=સ્વાધીનાઃ ભવન્તિ,
 एकस्मिन् ब्रह्मचर्ये समाराधिते सति सर्वे गुणाः समागत्य तस्मिन् पुरुषे समावि-

(વળેસુ જહા ખંડનવણ પવર) વનોં મેં જૈસે નંદનવન શ્રેષ્ઠ હૈ, (દુમે-
 સુ જહા સુદંસણા જંબૂવિસ્મયજસા) વૃક્ષોં મેં જૈસે જંબૂ વૃક્ષ પ્રસિદ્ધયજા
 સંપન્ન હૈ કિ (જીયનામેણ અયં દીવો) જિસકે નામ સે યહ દ્વીપ જંબુ-
 દ્વીપ કહલાતા હૈ, ડસી પ્રકાર વ્રતોં મેં વ્રહ્મચર્ય વ્રતશ્રેષ્ઠ હૈ । તથા (તુર-
 ગવર્દ, ગયવર્દ, રહવર્દ, નરવર્દ, રાયા જહાચેવ રહિષ મહારહગણ, એવ-
 મળેગગુણા એગમિ બંમચેરે અહીના ભવન્તિ) જૈસે અશ્વસેનાયુક્ત, ગજ-
 સેનાયુક્ત, રથસેનાયુક્ત, નરસેનાયુક્ત, રાજા પ્રસિદ્ધ હોતા હૈ, તથા
 રથારોહિયોં કે બીચ મેં મહારથારોહી પ્રસ્થાત હોતા હૈ, ડસી તરહ
 વ્રતોં મેં યહ વ્રહ્મચર્યવ્રત પ્રસ્થાત હૈ । ઇત્થ તરહ પ્રવરત્વ, વિશ્રુતત્વ આદિ
 અનેક ગુણ એક ઇસ વ્રહ્મચર્ય મેં અધીન હોતે હૈં, અર્થાત્ એક વ્રહ્મચર્ય
 કે આરાધિત કર લેને પર સમસ્તગુણ આકાર ડસ પુરુષ મેં આશ્રિત હો

વળં પવર ” વનોનાં જેમ નંદનવન શ્રેષ્ઠ છે, “ દુમેસુ જહા સુદંસણા જંબૂ વિ-
 સ્મયજસા ” વૃક્ષોનાં જેમ જંબૂવૃક્ષ પ્રસિદ્ધ યજા સંપન્ન છે, કે “ જીય નામેણ
 અયં દીવો ” જેના નામથી આ દ્વીપ જંબૂદ્વીપ કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે
 વ્રતોનાં બ્રહ્મચર્ય વ્રત શ્રેષ્ઠ છે. તથા “ તુરગવર્દ, ગયવર્દ, રહવર્દ, નરવર્દ, રાયા,
 જહા ચેવ રહિષ મહારહગણ, એવમળેગગુણા એગમિ બંમચેરે અહીના ભવન્તિ ” જેમ
 હયદળવાળો, ગજદળવાળો, રથદળવાળો અને પાયદળવાળો રાજા પ્રસિદ્ધ હોય
 છે તથા રથારોહિયોની વચ્ચે મહારથારોહી પ્રખ્યાત હોય છે, એજ પ્રમાણે
 વ્રતોનાં પણ બ્રહ્મચર્ય વ્રત પ્રખ્યાત છે. આ પ્રમાણે શ્રેષ્ઠતા, વિશ્રુતત્વ, આદિ
 અનેક ગુણ આ એક બ્રહ્મચર્યને આધીન હોય છે, એટલે કે એક બ્રહ્મચર્ય

સુવર્ણીની ટીકા અ० ૪ સુ० ૩ બ્રહ્મચર્યારાધનફલમ્

૭૮૭

શન્તીત્યર્થઃ । અયમાશયઃ—વ્રતાનાં મધ્યે બ્રહ્મચર્ય વ્રતં સર્વતઃ શ્રેષ્ઠમ્ । અતસ્ત-
દારાધકાઃ સર્વતઃ શ્રેષ્ઠા ભવન્તીતિ ॥ સુ० ૨ ॥

મૂલમ્—જમ્મિ ય આહિયં વયમિણં સન્નં સીલં તવો ય
વિણયો ય સંજમો ય યંતી ગુત્તી મુત્તી, તદેવ ઇહલોક્ય
પરલોક્યજસો ય કિત્તી ય પચ્છાઓ ય, તમ્હા નિહુણં વંભ-
ચેરં ચરિયવ્વં સવ્વઓ વિસુદ્ધં જાવજ્જીવાણ જાવસેયદ્દી
સંજઓત્તિ, એવં મણિયં વયં ભગવયા । તં ચ હમં—“પંચમ-
હવ્વયસુવ્વયમૂલં સમણમણાહલસાહુસુચિણં । વેરવિરામ-
ણપજ્જવસાણં સવ્વસમુદ્દમહોદહિતિત્થં ॥ ૧ ॥ તિત્થગરેહિં
સુદેસિયમગ્ગં નરગતિરિચ્છવિવજ્જિયમગ્ગં । સવ્વપવિત્તસુનિ-
મ્મિયસારં સિદ્ધિવિમાણઅવંગુયદારાં ॥ ૨ ॥ દેવનરિંદનમંસિ-
યપુજ્જં સવ્વજગુત્તમમંગલમગ્ગં । દુદ્ધરિસં ગુણનાયગમેક્કં
મોક્કવપહસ્સ વડિંસગમ્ભૂયં” ॥ ૩ ॥ જેણ સુદ્ધચરિણં ભવઈ
સુવંમણો સુસમણો સુસાહૂ સુહસો સુમુણી સુસંજણ સ એવ
ભિક્ખૂ, જો સુદ્ધ ચરઈ વંભચેરં ॥ ૩ ॥

જાતે છે । ફસલિયે વ્રતોં કે બીચ મેં યહ બ્રહ્મચર્યવ્રત સર્વ શ્રેષ્ઠ વ્રત છે,
અતઃ ફસકે આરાધકજન ભી સર્વતઃશ્રેષ્ઠ હોતે છે ।

ભાવાર્થ—ફસ એક બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત કે આરાધિત હોને પર સમસ્ત
સદ્ગુણ સ્વયં આરાધિતહો જાતે છે ઓર ફસકે વિનષ્ટ હોનેપર વે સમસ્ત
સદ્ગુણ નષ્ટ હો જાતે છે । અતઃસમસ્ત વ્રતોંમેં યહ વ્રત સર્વશ્રેષ્ઠ છે । સૂ०૨॥

વ્રતને આચરવાથી સમસ્ત ગુણુ તે પુરુષમાં આવીજાય છે, તે કારણે વ્રતો મધ્યે આ
બ્રહ્મચર્યવ્રત સર્વ શ્રેષ્ઠ વ્રત છે, તેથી તેની આરાધના કરનાર વ્યક્તિ સર્વ શ્રેષ્ઠ હોય છે.

ભાવાર્થ—આ એક બ્રહ્મચર્ય વ્રતની આરાધના કરવામાં આવે તો સમસ્ત
સદ્ગુણુ તેની જાતે જ આરાધિત થઈ જાય છે અને તેનો નાશ થતા તે સમસ્ત
સદ્ગુણુનો નાશ થઈ જાય છે. તેથી સદ્ગુણાં વ્રતોમાં આ વ્રત સર્વશ્રેષ્ઠ છે ॥સ્ક૨॥

ટીકા—‘જમ્મિય’ ઇત્યાદિ—

‘જમ્મિય’ યસ્મિંશ્ચ=બ્રહ્મચર્યે આરાધિતે ‘ઈણ’ હૃદં પ્રવ્રજ્યા—લક્ષણં ‘વયં’ વ્રતમ્ ‘આરાહિયં’ આરાધિતં ભવતિ । તથા પુનરપિ યદારાધિતં ભવતિ, તદાહ—‘સચ્ચં’ સત્યં ‘સીલં’ શીલં=સાધ્વાચારઃ—‘તવો ય’ તપશ્ચ ‘વિણઓ ય’ વિનયશ્ચ ‘સંજમો ય’ સંયમશ્ચ, તથા—‘સ્વંતી’ ક્ષાન્તિઃ ‘ગુત્તી’ ગુપ્તિઃ—મનોગુપ્ત્યાદિકા, ‘મુત્તી’ મુક્તિઃ—નિર્લોભતા ‘તહેવ’ તથૈવ ‘ઈહલોહ્ય પરલોહ્ય’ દેહલૌકિકપારલૌકિકં ‘જસો ય’ યશશ્ચ—યશઃ=એકદિગ્મામિનીસ્થાતિઃ ‘કિત્તીય’ કીર્તિશ્ચ=સર્વદિગ્મામિનીપ્રસિદ્ધિઃ, ‘પચ્ચઓ ય’ પ્રત્યયશ્ચ=સાધુરયમ્’ એવં રૂપો વિશ્વાસઃ, એતસર્વે બ્રહ્મચર્યે સમારાધિતે ભવતીતિ ભાવઃ । ‘તમ્હા’ તસ્માદ્ હેતોઃ ‘નિહુણં’ નિમૃતેન=નિશ્ચલભાવેન ‘વંમચેરં’ બ્રહ્મચર્યં ‘ચરિ-

‘જમ્મિય’ ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(જમ્મિય આરાહિય) જિસ બ્રહ્મચર્ય વ્રત કે આરાધિત કર લેને પર (ઈણ વયં આરાહિયં) યહ પ્રવ્રજ્યારૂપવ્રત આરાધિત હો જાતા હૈ તથા—(સચ્ચં સીલંતવો ય વિણયો ય સંજમો ય સ્વંતિ, ગુત્તી, મુત્તી, તહેવ ઇહલોહ્ય, પરલોહ્ય, જસો ય કિત્તી ય પચ્ચઓ ય) સત્ય, શીલ—સદાચાર, (મુનિ કા આચાર) તપ, વિનય, સંયમ, ક્ષાન્તિ મનોગુપ્તિ આદિ ત્રીન ગુપ્તિયાં, નિર્લોભનારૂપ મુક્તિ, તથા ઇહલોક સંબંધી, ઓર પરલોક સંબંધી યશ—એક દિશામેં ફેલાનેવાલી પ્રસિદ્ધિ, કીર્તિ—સઘ દિશા મેં ફેલાને વાલી પ્રસિદ્ધિ, તથા—પ્રત્યય—“યહ સાધુ હૈ” ઇસ રૂપ વિશ્વાસ, યે સઘ આરાધિત હો જાતે હૈ । (તમ્હા) ઇસલિયે (સવ્વઓ વિસુદ્ધ) નૌ કોટિ—ત્રિકરણ ત્રિયોગ સે નિર્મલ ચનાકર (નિહુ-

“જમ્મિય” ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—“જમ્મિય આરાહિય” જે બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું સેવન કરવાથી “ઈણ વયં આરાહિયં” આ પ્રવ્રજ્યારૂપ વ્રત આરાધિત થઈ જાય છે, તથા “સચ્ચં સીલં તવો ય વિણયો ય સંજમો ય સ્વંતી, ગુત્તી, મુત્તી ઇહલોહ્ય, પરલોહ્ય જસો ય કિત્તી ય પચ્ચઓ ય” સત્ય, શીલ, સદાચાર, (મુનિને આચાર) તપ, વિનય, સંયમ, ક્ષાન્તિ, મનોગુપ્તિ અદિ ત્રણ ગુપ્તિ, નિર્લોભનારૂપ મુક્તિ, તથા આલોક સંબંધી તથા પરલોક સંબંધી યશ—એક દિશામાં ફેલાનાર પ્રસિદ્ધિ, કીર્તિ—સઘળી દિશાઓમાં ફેલાનાર પ્રસિદ્ધિ, તથા પ્રત્યય—“આ સાધુ છે” એ પ્રકારનો વિશ્વાસ, એ બધાં આરાધિત થઈ જાય છે. “તમ્હા” તેથી “સવ્વઓ વિસુદ્ધ” તપ પ્રકારે—ત્રિકરણ ત્રિયોગથી નિર્મળ બનાવીને “નિહુણં”

યવ્વં ' ચરિતવ્યમ્=આસેવિતવ્યમ્ કીદશં બ્રહ્મચર્યમાસેવિતવ્યમ્ ? इत्याह—
' सन्वओ विसुद्धं ' सर्वतो विशुद्धम् ? मनः प्रभृति विकरणत्रियोगनिर्मलं, किय-
त्कालमासेवितव्यम् ? इत्याह—'जावज्जीवाए' यावज्जीवया प्रतिज्ञया यावज्जी-
वतया वा जीवनपर्यन्तमित्यर्थः, तथा—'जावसेयद्वि संजओत्ति ' यावत् श्वेतास्थि
संयत, इति, श्वेतानि=दुष्कर तपः करणाद्रुधिराभावेन शुक्लानि अस्थीनि
यस्मिंस्तत्-श्वेतास्थि=अस्थिपञ्जरप्रायं शरीरं तच्च संयतः प्रतिबद्धो जीवो यावद्
भवेत् ; मरणपर्यन्तमित्यर्थः । अयं भावः—साधुना दुश्चर तपश्चरणादिना स्वशरीर
रुधिरं विशोष्य मग्नावधि ब्रह्मचर्यं पालनीयमिति । अथवा यावच्छ्रेयोऽर्थि संयतः'
इतिच्छाया, श्रेयो मोक्षस्तदर्थयितुं शीलं यस्य स श्रेयोऽर्थी, स चासौ संयतश्चेति
कर्मधारयः अयं भावः—साधुर्वावत्कालं मोक्षं न प्राप्नोति, तावत्कालं तेन ब्रह्मचर्यं
पालनीयमिति । ' एवं ' इत्येवं ' भणियं ' भणितं ' भगवया ' भगवता महा-

एणं) निश्चलभाव से (बंभचेरं) इस ब्रह्मचर्य महाव्रत का (जावज्जी-
वाए) जीवनपर्यन्त (चरियव्वं) पालन करना चाहिये । (जाव सेयद्वि-
संजयोत्ति) यावत् श्वेतास्थि संयतः अर्थात् चाहे भले ही दुश्चर तपश्चरण
आदि द्वारा अपने शरीर का खून सूक जाने से श्वेत हड्डियां ही उसमें
अवशेष रह गईं हो तपनक । अथवा यावत् श्रेयोऽर्थि संयतः—अर्थात्—
साधु को जबतक मुक्ति की प्राप्ति न हो जावे, तबतक इस महाव्रत का
अवश्य पालन करते रहना चाहिये । “ जाव सेयद्वि संजओ ” इसकी
एक तो श्वेतास्थिसंयतः ” ऐसी संस्कृत छाया होती है और दूसरी—
“ श्रेयोऽर्थिसंयतः ” ऐसी भी होती है । (एवं भणियं वयं भगवया)
इस प्रकार से इस व्रत का भगवान् महावीर ने जो कि अन्तिम तीर्थ-

निश्चल जावર્था “ बंभचेर ” આ પ્રહ્મચર્ય મહાવ્રતનું “ જાવજ્જીવાએ ” જીવન-
પર્યન્ત ચરિયવ્વં ” પાલન કરવું જોઈએ. જાવ સેયદ્વિસંજઓત્તિ ” “ યાવત્
શ્વેતાસ્થિસંયતઃ ” એટલે કે કઠોર તપશ્ચરણ આદિ દ્વારા પોતાના શરીરનું સોડી
સૂકાઈ જવાથી સફેદ હાડકાં જ તેમાં બાકી રહ્યા હોય એવી સ્થિતિમાં પણ
આ વ્રતનું પાલન કરવું જોઈએ. અથવા યાવત્ શ્રેયોર્થિ સંયતઃ—એટલે કે જ્યાં
સુધી સાધુને મોક્ષની પ્રાપ્તિ ન થાય ત્યાં સુધી આ મહાવ્રતનું પાલન કરતાં
રહેવું જોઈએ. “ જાવ સેયદ્વિસંજઓ ” તેની એક સંસ્કૃત છાયા “ શ્વેતાસ્થિસંયતઃ ”
થાય છે, અને બીજી “ શ્રેયોર્થિસંયતઃ ” એવી પણ છાયા થાય છે. “ એવં
ભણિયં વયં ભગવયા ” આ પ્રમાણે અન્તિમ તીર્થં કર ભગવાન મહાવીરે આ વ્રતનું

ચીરેણ ચરમતીર્થક્કરેણ । ‘ તં ચ ’ તત્ત્વત્રયમ્ ‘ હમં ’ હદમ્=અગ્રે-વડયમાણસ્વરૂ-
પમસ્તિ । તદાહ તિસુભિર્ગાથામિઃ—

‘ પંચમહાવ્યયમ્ ’ હત્યાદિ ।

‘ પંચમહાવ્યયમુચ્ચયમૂલં ’ પંચમહાવ્રતસુવ્રતમૂલમ્=પંચ=પંચસંસ્કૃતકાનિ યાનિ
મહાવ્રતાનિ=માણાતિપાતવિરમણાદિ લક્ષણાનિ, તાન્યેવ સુવ્રતાનિ તેષાં મૂલમ્=
કારણમ્ હદં બ્રહ્મચર્યવ્રતમસ્તિ । તથા-હદં બ્રહ્મચર્યવ્રતં, ‘ સમણં ’ શમનં=ચિત્ત-
સમ ધિજનકં, તથા-‘ અનાવિલસાધુસુચીર્ણમ્=અનાવિલાઃ = અફલુપાઃ—નિર્મલ-
ચારિત્રા યે સાધવસ્તૈઃ સુચીર્ણં=સમારાધિતમ્, તથા-‘ વૈરવિરામણપજ્જવસાણં ’
વૈરવિરમણપર્યવસાનમ્=વૈરં=ત્રુનાવસ્તસ્ય વિરમણં=નિવૃત્તિઃ પર્યવસાનેઽન્તે યસ્ય
તત્, બ્રહ્મચર્યં હિ વૈરં વિનિવાર્ય પરમપ્રીતિમુપજનયતીતિ ભાવઃ ।

ઉક્તં ચ—

સપ્પો હારાયણ તસ્સ, વિસં ચાવિ સુહાયણ ।

બંધવેરપ્પભાવેણં, રિઝ મિત્તાયણ સયા ॥ ૧ ॥

છાયા —સપ્પો હારાયણે તસ્ય વિસં ચાવિ સુહાયણે ।

બ્રહ્મચર્યપ્રભાવેણ રિપુર્મિત્રાયણે સદા ॥ ૧ ॥ इति ।

કર હુણ હૈં કથન ક્રિયા હૈ । (તં ચ હમં) હસ મહાવ્રત કા સ્વરૂપ ત્રીન
ગાથાઓ સે કહતે હૈ—

(પંચમહાવ્યયમુચ્ચયમૂલં) યહ બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રતરૂપ સુવ્રતોં કા મૂલ-
કારણ હૈ, (સમણં) ચિત્તસમાધિ કા જનક હૈ, (અનાવિલસાધુસુચિર્ણં)
નિર્મલ ચારિત્રધારી સાધુઓં દ્વારા અચ્છી તરહ આરાધિત ક્રિયા હુઆ
હૈ (વૈરવિરામણપજ્જવસાણં) વૈરવિરોધ કા યહ અંત કરકે પરમ પ્રીતી
કા જનક હોતા હૈ । કહા બી હૈ—

“ સપ્પો હારાયણ તસ્સ, વિસં ચાવિ સુહાયણ ।

બંધવેરપ્પભાવેણં, રિઝ મિત્તાયણ સયા ॥ ૧ ॥

કથન કથું છે. “તં ચ હમં” આ મહા વ્રતનું સ્વરૂપ ત્રણ ગાથાઓ દ્વારા કહે છે.

“ પંચમહાવ્યયમુચ્ચયમૂલં ” આ બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત પ્રાણુતિપાત
વિરમણ આદિ પાંચ મહાવ્રતરૂપ સુવ્રતોંનું મૂળકારણ છે. “ સમણં ” ચિત્ત
સમાધિનું જનક છે, “ અનાવિલસાધુસુચિર્ણં ” નિર્મલ ચરિત્રધારી સાધુઓ
દ્વારા આરી રીતે આરાધિત થયેલ છે, “ વૈરવિરામણપજ્જવસાણં ” વૈર વિરોધનો
અન્ત લાવીને તે પરમ પ્રીતિનું જનક થાય છે. કહું પણ છે—

“ સપ્પો હારાયણ તસ્સ, વિસં ચાવિ સુહાયણ ।

બંધવેરપ્પભાવેણં, રિઝ મિત્તાયણ સયા ॥ ૧ ॥

સુદર્શિની ટીકા અઃ ૪ સૂઃ ૩ બ્રહ્મચર્યારાધનફલમ્

૯૨૩

તથા—‘ સત્ત્વસમુદ્ગમહોદહિતિથં ’ સર્વ સુદ્ગમહોદધિર્ધમ્-ત્વે ચ તે સમુદ્રાઃ સર્વ સમુદ્રાસ્તેષુ મહાત્મ ઉદયિઃ=સંત્યાગ્યૂરમણ સમુદ્રસ્તુત્ય વિશાલત્વાત્સં-સારોઽપિ મહોદધિસ્તસ્ય લીર્થઃ, મૃગ=પારગમનાય નૌકેવ યત્તત્તથાઽતિ ॥ ૧ ॥

‘ તિથ્યગરેહિ ’ ક્ષયાદિ-‘ તિથ્યગરેહિ ’ લીર્થકરૈઃ=ઝિનૈઃ ‘ સુદેસિયમગ્નં ’ સુદેશિતમાર્ગમ્-સુદેશિતઃ=સુદર્શિતઃ માર્ગઃ=ગુપ્તયાદિ તત્પાલનોપાયો યસ્મિન્-ત્તથા, તથા-‘ નરગતિરિચ્છવિવજ્ઞિયમગ્નં ’ નરકતિર્યગિવિવર્જિતમાર્ગ-નરકસ્ય=નરકમતેઃ, તિરશ્ચ=તિર્યગતેશ્ચ વિવર્જિતઃ=પ્રતિરોધિતો માર્ગો મર્ચિયેત તાદૃશમ્ । તથા-‘ સત્ત્વપવિત્તસુનિમ્મિયસારં ’ સર્વપવિત્તસુનિર્મિતસારં=સર્વપવિત્રાણિ=સર્વાણિ પાવનાનિ ઝુનિર્જિતાનિ=સુર્વિદ્ધતાનિ મારાણિ=પ્રધાનાનિ યેન તત્તથા, સકલવ્રત-

મર્પ એસકેલિયે હાર જેસા વન જાતા હૈ ઓર વિષ ખી સુસાધુ જેસા હો જાતા હૈ-જો નૌ કોટિ સે શુદ્ધ બ્રહ્મચર્ય વ્રત કા પાલક હોતા હૈ । યહ બ્રહ્મચર્ય કા હી પ્રભાવ હૈ જો શરૂ ખી મિશ્ર વન જાતા હૈ ।

(સત્ત્વસમુદ્ગમહોદહિતિથં) સમસ્ત સતુદ્રોં મેં અંતિમ સ્વયંભૂર-મણસમુદ્ર એક વહુત વિશાલ સમુદ્ર હૈ-હસકે જેસે વિશાલ હોને સે સંસાર ખી એક મહોદધિ જેસા હૈ, ઉસસે પાર હોને કે લિયે યહ બ્રહ્મ-ચર્ય એક નૌકા કે સમાન હૈ ॥ ૧ ॥ (તિથ્યગરેહિ સુદેસિયમગ્નં) લીર્થકર ભગવંતો ને હસકે પાલને કા ગુપ્તિ આદિ રૂપ ઉપાય કહા હૈ । (નરગતિરિચ્છવિવજ્ઞિયમગ્નં) હસકે પ્રભાવ સે નરકગતિ ઓર તિર્યગ્ગતિ કા માર્ગ રક્ક જાતા હૈ (સત્ત્વપવિત્તસુનિમ્મિયસારં) તથા

જે તપ પ્રકારે શુદ્ધ બ્રહ્મચર્ય વ્રતનો આરાધક હોય છે તેને માટે સાપ હાર જેવો બની જાય છે અને વિષ પણ અમૃત જેવું થઈ જાય છે. બ્રહ્મચર્યનો જ આ પ્રભાવ છે કે શત્રુ પણ મિત્ર બની જાય છે, “ સત્ત્વસમુદ્ગ-મહોદહિતિથં ” સધળાં સમુદ્રોમાં અંતિમ સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર એક ધણો વિશાળ સમુદ્ર છે-તેના જેવો વિશાળ હોવાથી સંસાર પણ એક મહાસાગર જેવો છે, તેને પાર જવાને માટે આ બ્રહ્મચર્ય એ એક નૌકા જેવું છે ॥ ૧ ॥ “ તિથ્યગરેહિ સુદેસિયમગ્નં ” લીર્થકર ભગવાનોએ તેના પાલન માટે શુભિ આદિ ઉપાય બતાવ્યા છે. “ નરગતિરિચ્છવિવજ્ઞિયમગ્નં ” તેના પ્રભાવથી નરકગતિ અને તિર્યગ્ગતિને માર્ગ અટકી જાય છે. “ સત્ત્વપવિત્ત સુનિ-મ્મિયસારં ” અને તેના જ પ્રભાવ સૌને પવિત્ર અને સારભૂત બનાવી દે છે, એટલે કે આ વ્રત સધળાં વ્રતોને પવિત્ર દઢ કરનાર છે. “ સિદ્ધિવિમાળઅ-વંગુચાર ” તથા ભોક્ષ ગતિનું અને અનુત્તર વિમાનોનું દ્વાર તેનાથી ઉઘડી જાય

પવિત્રદ્વકારીત્વર્થઃ, તથા-‘ સિદ્ધિવિમાણઅવંગુયદારં ’ સિદ્ધિવિમાનાપાત્રતદ્વા-
રમ્=સિદ્ધિઃ-મોક્ષગતેઃ, વિમાનોનામ્=અનુત્તરવિમાનાનામ્ ચ, અશ્વત્થમ્=ઉદ્ઘાટિતં
દ્વારં=પ્રવેશમુલં જેન તત્તથા, સ્વર્ગપર્વદ્વારોદ્ઘાટકમિત્યર્થઃ ॥ ૨ ॥ પુનઃ ક્ષીદશં
બ્રહ્મચર્યમ્ ? इत्याह-‘ દેવનરિંદ્ર ’ इत्यादि । ‘દેવનરિંદ્રનમંસિયપુજ્જં’ દેવનરેન્દ્ર-
નમસ્યિતપૂજ્યમ્=દેવાઃ=ભવનપત્યાદયઃ, નરેન્દ્રાઃ=ચક્રવર્ત્યાદિયસ્તૈઃ નમસ્યિતાઃ=
નમસ્કૃતા યે મહાપુરુષાસ્તેષાં પૂજ્યમ્=આદરણીયમ્ । તથા-‘ સર્વજગુત્તમમંગલ-
મર્ગં ’ સર્વજગદુત્તમમંગલમાર્ગઃ=સર્વજગત્તુ=ત્રિષુ લોકેષુ ઉત્તમો મહાન્નશ્ચ યો માર્ગઃ
ચપાયઃ, સોઽસ્તિ । તથા-‘ દુદ્ધરિસં ’ દુર્ધર્મમ્=દેવદાનવૈરખ્યપરિશ્રવનીયમ્, ‘ગુણ-
નાયગં ’ ગુણનાયકં=ગુણાનં=જ્ઞાનાદિરૂપાન નદતિ=પ્રાપ્નતિ યત્તદાદશમ્=ગુણથા-
યકમિત્યર્થઃ, તથા-‘ એકકં ’ એકં પ્રધાનમ્=નિરુપમમ્ इत्यर्थः, તથા ‘ મોક્ષ-
પહસ ’ મોક્ષપથસ્ય=મોક્ષમાર્ગસ્ય ‘ વહિસગમ્યં ’ અપતંસકમૂતમ્=વિરોભૂષણ-
સદશમિદં બ્રહ્મચર્યમસ્તિ ॥ ૨ ॥

इसका ही प्रभाव सब को पवित्र और सारभूत बना देता है । अर्थात् यह व्रत समस्त व्रतों को पवित्र और दृढ़ करने वाला है । (सिद्धिवि-
माणअवंगुयदारं) तथा मोक्षगति का और अनुत्तर विमानों का द्वार
इससे खुल जाता है, अर्थात् स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) के द्वारका यह
उद्घाटक है-खोलनेवाला है ॥ २ ॥ (देवनरिंद्रनमंसियपुज्जं) भवनपति
आदि देवों द्वारा चक्रवर्ती आदि नरेन्द्रों द्वारा, नमस्कृत हुए ऐसे महा-
पुरुषों के यह पूजनीय-आदरणीय है । तथा-(सर्वजगुत्तममंगलमर्गं)
यह तीनों लोकों में उत्तम और मंगलकारी मार्ग है । तथा (दुद्धरिसं)
देव और दानवोंसे भी यह पराजित होनेवाला नहीं है (गुणनायगं)ज्ञानादि
सद्गुणों को यह प्राप्त कराने वाला है । (एककं) यह प्रधाननिरुपम है
(मोक्षपहस वडिसगम्यं) और मोक्ष मार्गका यह शिरोभूषणरूप है ॥३॥

છે એટલે સ્વર્ગ અને અપવર્ગનાં દ્વારનું તે ઉદ્ઘાટન કરનાર છે-ઉઘાડનાર છે ॥૨॥
“ દેવનરિંદ્રનમંસિયપુજ્જં ” ભવનપતિ આદિ દેવો અને ચક્રવર્તી આદિ નરેન્દ્રો પણ
જેમને નમન કરે છે એવા મહાપુરુષોને તે પૂજનીય અને આદરણીય છે. તથા
“ સર્વજગુત્તમમંગલમર્ગ ” તે ત્રણે લોકમાં ઉત્તમ અને મંગલકારી માર્ગ છે,
તથા “ દુદ્ધરિસં ” દેવો અને દાનવો દ્વારા પણ તે પરાજિત થાય એવું નથી.
“ ગુણનાયગં ” જ્ઞાનાદિ સદ્ગુણોને તે પ્રાપ્ત કરાવનાર છે. “ એકકં ” તે પ્રધાન
-શ્રેષ્ઠ-અનુપમ છે. “ મોક્ષપહસ વહિસગમ્યં ” અને મોક્ષમાર્ગનું તે શિરો-
ભૂષણ રૂપ છે ॥ ૩ ॥

સુરશિની ટીકાઃ અ૦ ૪ સૂ.૨૨ બ્રહ્મવર્ણાધનફલમ્

૭૯૫

તથા—‘સુદ્ધચરિણં’ શુદ્ધચરિતેન=સમ્યગાચરિતેન ‘જેળ’ યેન=બ્રહ્મ-
ચર્યેણ, ‘ભવઈ’ ભવતિ ‘સુવંમણો’ સુદ્ધાભ્યણ=આત્મજ્ઞાનતત્ત્વપરઃ, ‘સુસમણો’
સુશ્રમણ=સુતપસ્વી ‘સુસાહૂ’ સુસાધુ=નિર્વાણસાધકઃ ‘સુઈસી’ સુકપિઃ,
યથાદૃસ્તુદર્શકઃ, ‘સુમુળી’ સુમુનિ=જિનાજ્ઞાધારકઃ, ‘સુસંજણ’ સુસંયતઃ=
પરમયતનાપરાયણઃ । તથા સ એવ ‘ભિક્ષૂ’ ભિક્ષુઃ=સર્વત્યાગી પરમપુરુષાર્થ-
સાધકો વા, ‘જો’ યઃ ‘સુદ્ધં’ શુદ્ધં ‘વંમચેરં’ બ્રહ્મચર્યં ‘ચરઈ’ ચરતિ=પાલયતિ ॥૨૩॥

(સુદ્ધચરિણં જેળ સુવંમણો ભવઈ) અચ્છી તરહ આચરિત ક્રુણ
હસ બ્રહ્મચર્ય સે હી મનુષ્ય સુદ્ધાભ્યણ-આત્મ જ્ઞાન મેં તત્ત્વ-હોતા હૈ,
(સુસમણો) સુશ્રમણ-સુતપસ્વી, (સુસાહૂ) સુસાધુ-નિર્વાણ સાધક,
(સુઈસી) સુકપિ-યથાવત્ વસ્તુદર્શક (સુમુળી) સુમુનિ-જિનાજ્ઞાના
આરાધક, ઓર (સુસંજણ) સુસંયત પરમ યતના મેં પરાયણ હોતા હૈ ।
તથા (સ એવ ભિક્ષૂ) વહી સચા ભિક્ષૂ હૈ-સર્વ ત્યાગી-અથવા-
પરમ પુરુષાર્થ સાધક હૈ, (જો સુદ્ધં વંમચેરં ચરઈ) જો હસ બ્રહ્મચર્ય કો
શુદ્ધ રીતિ સે પાલતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા હસ બ્રહ્મચર્ય કી ગુણગરિમા
(મહિમા) કા હી કથન કિયા હૈ । બે કહતે હૈં કિ હસ એક બ્રહ્મચર્ય વ્રતકે
પૂર્ણરૂપસે આરાધિક હોનેપર સત્ય, શીલ આદિ જિતને બી સદ્ગુણ હૈં બે
સબ આરાધિત હો જાતે હૈં । યહ બ્રહ્મચર્ય પંચમહાવ્રતોં કા મૂલકારણ
હૈ । અતઃયાવજ્જીવ સાધુ કો હસકા સેવન કરતે રહના ચાહિયે । જિસ

“સુદ્ધચરિણં જેળ સુવંમણો ભવઈ” સારી રીતે આચરવામાં આવેલ
આ બ્રહ્મચર્યથીજ મનુષ્ય સુદ્ધાભ્યણ-આત્મ જ્ઞાનમાં તત્ત્વ ધાય છે, “સુસમણો”
સુશ્રમણ-સુતપસ્વી—“સુસાહૂ” સુસાધુ-નિર્વાણ સાધક, “સુઈસી” સુકપિ-યથાવત્
વસ્તુ દર્શક, “સુમુળી” જિન આશાનો આરાધક, અને “સુસંજણ” સુસંયત-
પરમ યતનામાં પરાયણ થાય છે, તથા “સ એવ ભિક્ષૂ” તે જ સાચો ભિક્ષુ
છે-સર્વત્યાગી અથવા પરમ પુરુષાર્થ સાધક છે, “જો સુદ્ધં વંમચેરં ચરઈ” જે
આ બ્રહ્મચર્યને શુદ્ધ રીતે પાળે છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા બ્રહ્મચર્યના શુભ ગૌરવનુંજ વર્ણન કર્યું
છે. તેઓ કહે છે કે આ એક બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું પૂર્ણ સ્વરૂપે આરાધના કરવામાં
આવે તો સત્ય, શીલ આદિ જેટલા સદ્ગુણો છે તેમનું આરાધન આપોઆપ થઈ
જાય છે. આ બ્રહ્મચર્ય પાંચ મહાવ્રતોનું મૂળ કારણ છે. તેથી સાધુએ જીવન-
પર્યાંત તેનું સેવન કરવું જોઈએ. જે રીતે મૂળ વિના કોઈ પણ વસ્તુની

બ્રહ્મચારિણાં કિં કિમ્નાચરણીયમ્ ? કિં કિં વાચરણીયમ્ ? इति दर्शयति-
' इमं च ' इत्यादि ।

મૂલમ્—इमं च रइरागदोसमोहपवङ्गणकरं किं मज्झप्पमाय
दोसपासत्थसीलकरणं अब्भंगणाणि य तेहमज्झणाणि य
अभिकखणं कक्खसीसकरचरणवयणधोवणसंबाहणगायकम्मप-
रिमइणाणुलेवणचुण्णवासधूवणसरीरपरिमंडणवाउसि य हसिय-
भणिय-नट्ट-गीय-वाइयनडनट्टग-जल्लमल्ल-पेच्छणवेलंवगजाणिय
सिंगारागाणि अण्णाणि य एवमाइयाणि तवसंजमवंभचेर-
घाओवघाइयाइं अणुचरमाणेणं वंभचेरं वज्जेयव्वाइं सव्वकालं।
भावेयव्वो भवइ अंतरप्पा इमेहिं तवनियमसीलजोगेहिं णिच्च-
कालं, किं ते, अण्हाणक अदंतधोवणसेयसल्लधारणमूणवयकेस-
लोयखमदमअचेलगखुप्पिवासलाघवसीतोसिणकट्टमेज्जाभूमिनि-
सेज्जपरघरप्पवेसलद्धावलद्धमाणावमाणनिंदण-दंसमसकफास-
नियमतवगुणविणयसाइएहिं जहा से थिरतरगं होइ वंभचेरं॥सू.४॥

टीका—‘ इमं च ’ इत्यादि । ‘ इमं च ’ इदं च उक्तमागम्—असन्नार्थ-
स्थादीनामाचरणीयमाचारजातम्, ‘ रइरागदोसमोहपवङ्गणकरं ’ रतिरागद्वेषमो-

प्रकार मूल के बिना किसी भी वस्तु की स्थिरता नहीं होती है—उसी
प्रकार इस एक व्रत के अभाव में किसी भी व्रत की किसी भी सद्गुण
की स्थिरता और शोभा नहीं होती है । इत्यादि रूप से इस सूत्र में
इसकी महत्ता का प्रदर्शन किया गया है ॥ सू० ३ ॥

अथ सूत्रकार ब्रह्मचारी को किस किस बात का आचरण करना

स्थिरતા સંભવી શકતી નથી, એ જ રીતે આ એક વ્રતનો અભાવ હોય તો
બીજા કોઈ વ્રત કે સદ્ગુણની સ્થિરતા અને શોભા સંભવતી નથી. ઇત્યાદિ
રીતે આ સૂત્રમાં બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું મહત્ત્વ બતાવવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

હવે બ્રહ્મચારીએ કેવા પ્રકારનું આચરણ કરવું જોઈએ અને કેવા

સુવર્ણિની ટીકા અવં સુબ્રહ્મચારીનામાવરણીયાદિનિરૂપણમ્

૩૧૭

હમવર્દનકરં, તત્ર-રતિઃ=વિષયાનુરાગઃ, રાગઃ=સ્વજનેષુ સ્નેહઃ, દ્રેષઃ=શત્રુભાવઃ, મોહઃ=અજ્ઞાનમ્, ણાં યત્પ્રવર્તનં=પ્રવૃદ્ધિસ્તસ્ય કરં=કારકમ્. પુનઃ 'કિમજ્ઞ-પ-માયદોસ-પાસત્યશીલ-કરણ' કિમધ્યપ્રમાદદોષપાર્શ્વસ્થશીલકરણમ્-તત્ર-કિ-મધ્યં=કિ=કુત્સિતં મધ્યે યસ્ય તત્તથોક્તમ્-અસારમિત્યર્થઃ, તથા-પ્રમાદદોષઃ, પ્ર-માદોઽસાવધાનતા, સપ્ત દોષઃ=પ્રમાદદોષઃ, પાર્શ્વસ્થશીલ=પાર્શ્વસ્થાનાં-જ્ઞાના-ચારાદિ વહિર્વર્તિનાં સાધવાભામાનાં શીલમ્=અનુષ્ઠાનં નિષ્કારણનિત્યપિણ્ડપરિભો-ગાદિ, એતેષાં કરણમ્=કારકં ભવતિ । સમ્પ્રતિ તદેવ વિશદયતિ- 'અઞ્મંગણાણિ ય' અભ્યજ્ઞનાનિ ચ=ધૃતનવનીતાદિના શરીરમર્દનાનિ 'તેલ્લમજ્જનાણિ ય' તેલમજ્જનાનિ ચ=તૈલાભ્યજ્ઞપૂર્વકસ્નાનાનિ, તથા-તથા-'અભિવચ્ચનં' અભોક્ષણમ્-

ચાહિયે ઓર કિસ કિસ કા નહીં ? હસ ઘાત કો પ્રદર્શિત કરતે હૈ—
' હમં ચ' હત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(હમં ચ) યહ વક્ષ્યમાણ અવસજન, પાર્શ્વસ્થ, કુશીલ, સંસક્ત, યથાછંદ સાધુઓં કા આચાર (રહરાગદોસમોહપવહૂળકરં) રતિ-વિષયોં મેં અનુરાગ, રાગ-સ્વજનોં મેં સ્નેહ, દ્રેષ-શત્રુતા, ઓર મોહ-અજ્ઞાન, હનકી વૃદ્ધિ કરને વાલા હોતા હૈ ઓર (કિમજ્ઞ-પમાય-દોસ-પાસત્ય-શીલ-કરણ) કિ મધ્ય-અસાર પ્રમાદદોષઅસાવધાનતા-રૂપ દોષ કા, પાર્શ્વસ્થ શીલ-જ્ઞાનાચારાદિ સે વહિર્ભૂત શિથિલાચારિયોં કે અનુષ્ઠાન કા-નિષ્કારણ નિત્ય પિણ્ડપરિભોગાદિરૂપ સ્વભાવ કા, જનક હોતા હૈ । અવ સૂત્રકાર હસી પાર્શ્વસ્થ આદિ કે આચાર કો વિશ-દરૂપ સે સમજાતે હૈ—(અઞ્મંગણાણિ ય) અભ્યંગન-ધૃત નવનીત આદિસે શરીર કા મર્દન કરના (તેલ્લમજ્જનાણિય) તેલકા માલોસ કરના તથા

પ્રકારનું ન કરવું જોઈ એ તે સૂત્રકાર બતાવે છે- ' હમં ચ ' ઇત્યાદિ-

ટીકાર્થ—“ હમં ચ ” આ પ્રમાણે જોવામાં આવતાં અવસજન, પાર્શ્વસ્થ, કુશીલ, સંસક્ત, સ્વછંદી સાધુઓના આચાર “ રહરાગદોસમોહપવહૂળકરં ” રતિ-વિષયોમાં આસક્તિ, રાગ-સ્વજનો પર સ્નેહ, દ્રેષ-શત્રુતા અને મોહ-અજ્ઞાન, એ સૌની વૃદ્ધિ કરનાર હોય છે. અને “ કિમજ્ઞ-પમાયદોસ-પાસત્ય-શીલકરણ ” કિ મધ્ય-અસાર, પ્રમાદદોષ, અસાવધાનતારૂપ દોષનું પાર્શ્વસ્થશીલ-જ્ઞાનાચારાદિથી બાહ્ય શિથિલતા આરીઓનાં અનુષ્ઠાનનું, નિષ્કારણ નિત્ય પરિભોગાદિ રૂપ સ્વભાવનું જનક થાય છે. હવે સૂત્રકાર આ પાર્શ્વસ્થ આદિના આચારને વિસ્તારપૂર્વક સમજાવે છે—“ અઞ્મંગણાણિય ” અભ્યંગન-ધી, માખણ આદિથી શરીરને માલીસ કરવું, “ તેલ્લમજ્જનાણિય ” તેલનું માલીસ કરીને

૬૨૮

પ્રજ્ઞવ્યાકરણસૂત્રે

=વારંવારમ્, ‘કન્નસીસકરચરણવયણધોવણસંવાહણગાયકમ્મપરિમહ્ણાણુલેવણ-
 ચુણ્ણવાસધૂવણસરીરપરિમંડળવાઝસિય-હસિય-મણિય-નદ્દગીયવાહ્યનડ-નદ્દગજલ્લ-
 મ્લપેચ્છણવેલંબગં’ કક્ષાશીર્ષકરચરણવદનધાવનસંવાહનગાત્રકર્મપરિમર્દનાનુલેપન-
 ચૂર્ણવાસધૂપનશરીરપરિમંડનવાકુશિદ્દસિતમણિતનાઝ્યગીતવાદિતનટનત્તર્કજલ્લમલ્લ-
 પ્રેક્ષણવિદમ્બકં તત્ર-કક્ષા=વાહુદ્વયમૂલાધોવત્તિસ્થાનમ્, શીર્ષ=શિરઃ, કરચરણ=
 પ્રસિદ્ધમ્, વદનં=મુખં, તેષાં યદ્ ધાવનં=મશ્કાલનં, સંવાધનં=દ્વસ્વાભ્યાં પાદપીડનં
 ગાત્રકર્મ=શરીરપરિકર્મ=સંમર્દનાદિ કર્મપરિમર્દનં=સર્વતઃ શરીરમર્દનમ્, તથા-અનુલે-
 પનચૂર્ણવાસધૂપનશરીરપરિમંડનમ્, તત્ર અનુલેપનમ્=શરીરે ચન્દનાનુલેપનમ્, ચૂર્ણવાસઃ
 =સુગન્ધિદ્રવ્યચૂર્ણમ્, ધૂપનમ્=અગુરુધૂપાદિકરણમ્, શરીરપરિમંડનમ્=વસ્ત્રાદિભિઃ
 શરીરશ્રુત્તારકરણમ્, તથા-વાકુશિકં નચ્ચક્ષેશસમારચનમ્=વકુશં=કર્કુરવાચિત્રં
 તદેવમયોજનં યસ્ય તદ્ વાકુશિકં શ્રુત્તારપ્રયોજનકં નચ્ચક્ષેશસમારચનાદિકં,
 હસિતં=હાસઃ, મણિતં=સ્ત્રીણાં વિકૃતમ્બનમ્, નાઝ્ય=નટકર્મ, ગીતં=ગાનમ્, વાદિ-

(અભિક્ષણં કન્નસીસ કર-ચરણ-વયણ-ધોવણ-સંવાહણ-ગાયકમ્મપરિ-
 મહ્ણાણુલેવેણ ચુણ્ણવાસધૂવણસરીરપરિમંડળવાઝસિય-હસિય-મણિય-ન-
 દ્દ-ગીય-વાહ્ય-નડ-નદ્દગ-જલ્લ-મલ્લ-પેચ્છણ-વેલંબગં) વારંવાર કાંચ-મસ્તક-
 હાથ-પૈર ઓર મુંદકા ધોના, દોનોં હાથોંસે શરીરકા દાવના, ગાત્રકર્મ-
 શરીર કી સફાઈ પર વિશેષ ધ્યાન રખના પરિમર્દક-દૂસરોં સે શરીર કો
 રાતદિન દબવાના, અનુલેપન-શરીર પર ચંદન કા ચાર ૨ લેપ કરના, ચૂર્ણવાસ-
 સુગન્ધિત દ્રવ્યોં કે ચૂર્ણ સે, ધૂપન-અગુરુ આદિ કે ધૂપ સે શરીર કો અલંકૃત
 કરના, તથા વાકુશિક-શ્રુંગાર કે પ્રયોજન કો લેકર નચ્ચ, વચ્ચ ઓર-
 કેશોં કો સમારના તથા હસિત-હાસકા હૈસો મજાક-મજકરી આદિ
 કા કરના, મણિત-સ્ત્રિયોં કે જૈસા ગાલી આદિ ખાળક વચનોં કા બોલના

સ્નાન કરવું, તથા ‘અભિક્ષણં કન્નસીસ, કર, ચરણનયણ-ધોવણ-સંવાહણ-
 ગાયકમ્મપરિમહ્ણાણુલેવણ-ચુણ્ણ-વાસધૂવણ-સરીર-પરિમંડળવાઝસિય-હસિય-મણિય-
 નદ્દ-ગીય-વાહ્ય-નડ-નદ્દગ-જલ્લ-મલ્લ-પેચ્છણ-વેલંબગ’ વારંવાર બગલ, માથું,
 હાથ-પગ અને મોને ધોવું, બન્ને હાથથી શરીરને ઢખાવવું, ગાત્રકર્મ-શરીરની
 સ્વચ્છતા પર વધારે ધ્યાન આપવું, પરિમર્દન-બીજ પાસે શરીરને સતદિવસ
 ઢખાવવું, અનુલેપન-વારંવાર શરીરે ચંદનનો લેપ કરવો, ચૂર્ણવાસ-સુગન્ધિત
 દ્રવ્યોના ચૂર્ણથી, ધૂપન અગુરુ આદિના ધૂપથી શરીરને અલંકૃત કરવું, તથા
 વાકુશિક-શ્રુંગારને માટે નખ, વચ્ચ અને કેશને સમારવા તથા હસિત-કઠ્ઠા
 મજકરી આદિ કરવું, મણિત-સ્ત્રીઓના જેવી ગાળો આદિ અશિષ્ટ વચનો

सुदर्शनीटीका अ० ४ सू० ४ ब्रह्मचारीणाभावरणीयाद्विनिरूपणम्

७९९

तम्=पटहादिवादनम् तथा-नटाः=नाटयितारः, नर्तकाः=नृत्यकारिणः, जल्लाः=चर्ममयरज्जुपरिभृत्यकारकाः, मल्लाः=मल्लयुद्धकारिणः, तेषां प्रेक्षणम्=अवलोकनम् तथा-विडम्बकाः=विदूषकाः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, वर्जयितव्या इति योगः । तथा-‘जाणिय सिंगारागाराणि य’ यानि च शृङ्गारागाराणि च=शृङ्गाराधारभूतानि अङ्गचेष्टादीनि तानि तथा-‘अण्णाणि य’ अन्धानि च=एवमाइयाणि च ‘एवमाइयाणि’ एवमादिकानि=एवं प्रकाराणि यानि ‘तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाइं’ तपः संयमब्रह्मचर्यघातोपघातकानि, तत्र तपः संयमब्रह्मचर्याणां घातो देशतः, उपघातःसर्वतो जायते यद्वशात् तानि तथोक्तानि ‘बंभचेरं’ ब्रह्मचर्यम्, ‘अणुचरमाणेण’ अनुचरता=पालयता ‘सव्वकालं’ सर्वकालं-सर्वदा ‘वज्जेयव्वाइं’ वर्जितव्यानि=त्याज्यानिभवन्ति, वर्जितव्यानीत्यस्यैकवचनविपरिणामेनान्यत्राप्यन्वयो बोध्यः । तथा-‘भावेयव्वो य’ भावितव्यश्च भवति ‘अंतरप्पा’ अन्तरात्मा=जीवः । कै भावितव्यो भवति ? इत्याह-‘इमेहि’ एभिः ‘तवणियमसीलनाटय-नाटक का देखना, गीत-गान का, वादित-पटह आदि बजते हुए बाजों का सुनना, नट-नटों का, नर्तक-नृत्यकारी जनों का जल्ल-जल्लों का-चर्ममयरज्जु के ऊपर नाचने वालों का, मल्ल-मल्लों के-बाहु-युद्ध का प्रेक्षण-रुचिपूर्वक अवलोकन करना, तथा-विडम्बकों-विदूषकों को देखना यह सब वर्जना चाहिये तथा ‘जाणिय’ जो भी (सिंगारागाराणि) शृंगार के आधारभूत ऐसे, तथा (एवमाइयाणि अण्णाणि य) इसी तरह के और भी जो (तव संजमबंभचेरघाओवघाइयाइं) तपः, संयम एवं ब्रह्मचर्य में एक देश से दूषण लगाने वाले हो अथवा सर्व-देश से उनका घात करने वाले हों, इन सब को (बंभचेरं अणुचरमाणेण) जो इस ब्रह्मचर्य महाव्रत के पालन करने वाले संयमी जन हैं उन्हें (सव्वकालं वज्जेयव्वाइं) सदा के लिये छोड़ देना चाहिये ।

भोलवा, नाटको जेवां, गीत तथा पटह आदि वाजितेनो अवाज सांभणवे, नटोन्, नृत्य करना, नर्तक नृत्य करनेवाले, पर नाचनेवाले, मल्लोना द्दंष्ट्रुद्धनुं निरीक्षण करवानुं, तथा विदूषकोने जेवानुं ओ अधानो त्याग करवे जेधओ. तथा “जाणिय” ओ कोठ “सिंगारागाराणि” शृंगारना साधनरूप जेवां तथा “एवमाइयाणि अण्णाणिय” जेवां प्रकारनुं भीलुं पथु ओ कंठ “तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाइं” तप संयम अने ब्रह्मचर्यभां ओक देशथी दूषणु लगानार डोय अथवा सर्व देशनी तेमना घात करना डोय, ते अधानो “बंभचेरअणुचरमाणेण” ओ आ ब्रह्मचर्य महाव्रतनुं पालन करना संयमी जेनो छे तेमओ “सव्वकालं वज्जेयव्वाइं” सदाने भाटे त्याग करवे।

ઓમેહિં ' તપોનિયમશીલયોગૈઃ=તપઃ પ્રભૃતિવ્યાપારૈઃ ' નિચ્ચકાલં ' નિત્યકાલં=સર્વદા=અંતરાત્મા ભાવિતવ્યઃ । 'કિં તે' કે તે=કથમ્ભૂતાસ્તે તપોનિયમશીલયોગાઃ? इत्याह—' अण्णाणम अदंतधोवणसेयमलजल्लधारणमूणवयकेसलोयखमदमअचेलम खुप्पिवासलाघवसीतोसिणकट्टु—सेज्जाभूमिनिसेज्जापरघरप्पवेसलद्धावलद्धमाणावमाण निंदणदंसमसगफासनियमतवगुणविणयमाइएहिं ' अस्नानકાદન્તધાવનસ્વેદમલજ-લ્લધારણમૌનવ્રતકેશલોચ ક્ષમાદમાવેલકષ્ટુપિપાસાલાઘવશીતોષ્ણકાષ્ટશર્યાભૂમિ-નિપધારગૃહપવેશલઘ્વાપલઘ્વમાનાપમાનનિન્દનદંશમશ્કસ્પર્શનિયમતપોગુણવિનયા-દિકૈઃ-તત્ર-અસ્નનકં=સ્નનવર્જનમ્, અદન્તધાવનં=દન્તધાવનવર્જનમ્, તથા-સ્વે-દમલજલ્લધારણં, તત્ર-સ્વેદઃ=પ્રસ્વેદઃ, મલં=સ્વેદરજઃ સંસર્ગૌત્સમુત્પન્નં ઘનીભૂતમ્ તથા (इमेहिं तवणियमशीलजोगे हिं) इन तप, नियम और शील-सदाचार, इन सबसे उस ब्रह्मचर्य महाव्रतधारी को (अंतरप्पा) अपनी अन्तरात्मा (निचचकालं) सर्वदा (भावियन्वो भवइ) भाविन करना चाहिये । (किं ते) वे तप नियम शील योग कौन हैं ? उन्हें दिखलाते हैं— अण्णाणम-अदंतधोवणसेय-मल्ल-जल्ल-धारण-मूणवय-केसलोय-खमदम-अचेलम-खुप्पिवासलाघवसीतोमिणकट्टु सेज्जा भूमिनिसेज्ज-परघरप्पवेस-लद्धावलद्ध-माणावमाण-निंदणदंसजभगफासनियमतव-गुणविणयमाइएहिं) उस साधुके तप, नियम और शील इस प्रकारके होना चाहिये-वह साधु यावज्जीव स्नान न करे, अर्थात् उस महाव्रती को जीवन भर तक स्नान करने का त्याग कर देना चाहिये, कभी भी देतौन नहीं करना चाहिये, शरीर में प्रस्वेद-पसीना आता हो, तो उसे वायु आदि करके नहीं सुखाना चाहिये । इस पसीने में आकर

જોઈએ. તથા: 'इमेहिं तवणियमशीलजोगेहिं' એ તપ, નિયમ, અને શીલ-સદાચાર એ અર્થાથી તે બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રતધારીએ " અંતરપ્પા " પેતાનો અંતરાત્મા " નિચ્ચકાલં " સદા " ભાવિયન્વો ભવइ " ભાવિત કરવો જોઈએ. " કિં તે " તે તપ નિયમ-શીલયોગ કેવો હોય છે તે બતાવે છે—" અણ્ણાણમ-અદંતધોવણ-સેય-મલ્લ-જલ્લ-ધારણ-મૂળવય-કેસલોચ-ખમદમ-અચેલમ - ખુપ્પિવાસ - લાઘવ સીતોસિણકટ્ટુસેજ્જાભૂમિ-નિસેજ્જ -પરઘરપ્પવેસલદ્ધાવલદ્ધામાણાવમાણ નિંદણદંસમ-સગફાસનિયમતવગુણવિણયમાइएहिं " તે સાધનનું તપ, નિયમ અને શીલ આ પ્રકારનું હોયું જોઈએ-તે સાધુ જીવન પર્યન્ત સ્નાન ન કરે એટલે કે આ મહાવ્રતધારીએ જીવે ત્યા સુધી સ્નાન કરવાનો ત્યાગ કરવો જોઈએ, કદી પણ દાંતણુ કરવું જોઈએ નહીં, શરીરે પરસેવો વળતો હોય તો યવન નાખીને તેને સૂકવવો જોઈએ નહીં, તે પરસેવામાં રજકણો થોડી ગયાં હોય તો તેને શરીર પરથી દૂર કરવાં જોઈએ નહીં. કાન, નાક આદિ ઇન્દ્રિયોમાં

सुदर्शनी टीका अ०४ सू०४ ब्रह्मरीणमाचरणीयादिनिरूपणम्

८०१

जल्लं=कर्णनासिकादि समुत्थं मलम्, तेषां धारणम्, तथा-मौनव्रतम्, केश-
लोचः, एतौ प्रसिद्धौ, क्षमा=क्रोधनिग्रहः, दमः=इन्द्रियनिग्रहः, अचेलकम्=धर्मोप-
करणातिरिक्तवस्त्राभावः, क्षुत्पिपासे प्रसिद्धे, लाघवम्=अल्पोपाधित्वम्, शीतोष्णे
प्रसिद्धे, काष्ठशय्या=काष्ठफलकशयनम्, भूमिनिपद्या=भूमावुपवेशनम्, तथा-पर-
गृहप्रवेशलब्धापलब्धमानापमाननिन्दनानि, भिक्षार्थं परगृहप्रवेशः, तत्रापि लब्धा-
पलब्धौ=लाभालाभौ, मानः=सम्मानः, अपमानः=अवमानना, निन्दनं=कुत्सितव-
चनं च, तथा-दंशमशकस्पर्शः=दंशमशकदशनम्, तथा-नियमः=द्रव्याद्यभिग्रहः,
यदि रजःकण संसक्त हो गये हों तो उन्हें शरीर से नहीं छुड़ाना
चाहिये। कर्ण, नासिका आदि इन्द्रियों में लगे हुए मैल को भी दूर नहीं
करना चाहिये। मौनव्रत रखना चाहिये तथा अपने केशों का लौंच
करना चाहिये। क्षमा-क्रोध का निग्रह करना दम-इन्द्रियों का निग्रह
करना चाहिये। अचेलक-धर्मोपकरणों के सिवाय अतिरिक्त वस्त्र नहीं
रखना चाहिये क्षुधा और पिपासा कि बाधा को सहना चाहिये। अल्प
उपधिरखना चाहिये, शीत और उष्ण जन्य परीषद् को सहन करना
चाहिये। काष्ठ के फलक पर शयन करना चाहिये। जमीन पर बैठना
चाहिये। भिक्षा के निमित्त पर घर जाना चाहिये। भिक्षा का लाभ
हो अथवा न हो दोनो अवस्थाओं में समताभाव रखना चाहिये। मान
और अपमान में समवृत्ति रहना चाहिये। कीर्द अपनी निंदा करता
हो तो उसमें अक्षमता नहीं आनी चाहिये। दंशमशकों को दशन-
रूपबाधा से उद्दिग्ग्न नहीं होना चाहिये। द्रव्यादि का अभिग्रह रूप
नियम का, अनशन आदि तपस्याओं का मूलगुणों का और अभ्युत्था-

लागेला भेदने उभेउये न जेउये मौनव्रत राखवुं जेउये तथा पोताना
केशनो लाच करवो जेउये. क्षमा-क्रोधनो निग्रह करवो जेउये, दम-इन्द्रि-
योनो निग्रह करवो जेउये. अचेलक-धर्मनां उपदरखो सिवाय व्धारानां वस्त्रादि
राखवां जेउये नही, भूथ अते तरसनी मुश्केली सहन करवी जेउये,
शीत अने उष्णता जन्य परिषदा सहन
करवां जेउये. काष्ठजानी पाट पर सूवुं जेउये, जमीन पर भेसवुं जेउये.
भिक्षाने निमित्त पर घर वुं जेउये. भिक्षानो लाभ मणे के न मणे छतां
पणु आ जन्ने परिस्थितिमां ब्रमलाव राखवो जेउये. मान अने अपमानमां
समवृत्तिथी रहवुं जेउये. कौड पोतानी निंदा करवुं छाय तो तेथी अक्षमता
थवी जेउये नही. दंश, भच्छरना दंशरूप मुश्केलीथी उद्दिग्ग्न थवुं जेउये
नही. द्रव्यादिना अलिग्रह रूप नियमनुं अनशन आदि तपस्यायोना मूज

प्र १०१

તપઃ=અનશનાદિ ગુણાઃ=મૂલગુણાદયઃ, ચિનયઃ=અભ્યુત્થાનાદિઃ, એવાં દ્વન્દ્વઃ. એ-
તાન્યાદો યેવાં તૈસ્તથોક્તૈર્યોગૈરયમાત્મા ભાવિતવ્યઃ ।

અસ્નાનાદન્તધાવનાદીનાં સદનેન નિયમાદીનામાચરણેન ચ સહાત્મા સંયો-
જિતવ્યં इत्यर्थः । किमर्थमित्याह—‘जहा’ यथा—येन कृत्वा ‘बंभचेरं’ ब्रह्मचर्यं
‘थिरतरगं’ स्थिरतरकं=सुस्थिरं ‘होइ’ भवति ॥ सू० ४ ॥

નાદિરૂપ ચિનય કા પાલન કરવા જાણિયે । યે સવ વાતે સાધુ કે આચાર
કે અન્તર્હિત રહતી હે । સો વદ્દે ઇન મગ વાતોં સે ઓતપોત હુણ તપ,
નિયમ ઓર શીલ સે અપની આત્મા કો ભાવિત કરતા રહે અર્થાત્
અસ્નાન, અદન્તધાવન આદિ જો સાધુ કે મૂલગુણ હેં ડનકા વહ
શાસ્ત્રોક્ત વિધિ કે અનુસાર પાલન કરતા હુઆ ઓર નિયમાદિકોં કા
આચરણ કરતા હુઆ અપની આત્મા કો વિશુદ્ધ કરતા રહે કિ (જહા
સે બંમચેરં થિરતરગં હોઈ) જિસસે ડસકા બ્રહ્મચર્યં સુસ્થિર બના રહે ।

ભાવાર્થ—બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત ધારી સકલ સંયમી જન અપને આચાર
ચિવાર કો ઇસ પ્રકાર કા સ્વચ્છ ઓર નિર્મલ બનાવે કિ જિસસે
ડનમેં અવસન્ન પાર્શ્વસ્થ કુશીલ આદિપના લેશમાત્ર ખો ન આને
પાવે । સાધુ પદ પ્રાપ્ત કરકે ખો વિષયોં મેં અનુરોગ બના રખના સ્વજ-
નોં મેં સ્નેહ રખના તથા દ્રેષી કે પ્રતિ દ્રેષભાવના રખના, આદિ પરિણતિ
અવસન્ન પાર્શ્વસ્થ સાધુઓં કી હે । શારીરિક સંસ્કાર મેં હી વિશેષ
ધ્યાન રખના, ગીત નૃત્ય, વાદિત્ર આદિ મેં ચિત્ત કી પ્રવૃત્તિ કરના,
તપ સંયમ આદિ કી આરાધના સિર્ફ લક્ષ્ય ન હોના, યે સવ બ્રહ્મચર્ય

શુભેાનું અને અભ્યુત્થાનાદિરૂપ ચિનયનું પાલન કરવું જોઈએ. આ બધી વાતો
સાધુના આચારમાં આવી જાય છે. તે તે એ બધી વાતોમાં યોગપ્રોત થઈને
તપ, નિયમ અને શીલથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતો રહે એટલે કે
અસ્નાન, અદન્તધાવન આદિ જે સાધુના મૂળગુણ છે તેમનું શાસ્ત્રોક્ત વિધિ પ્રમાણે
પાલન કરીને નિયમાક્તિનું આચરણ કરીને તે પોતાના આત્માને વિશુદ્ધ કરતો રહે
“ જહા સે બંમચેરં થિરતરગં હોઈ ” બેથી તેનું બ્રહ્મચર્ય સુસ્થિર બનતું રહે.

ભાવાર્થ.—બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત ધારી સકલ સંયમી જન પોતાના આચાર
વિચારને એવાં સ્વચ્છ અને નિર્મળ બનાવે કે બેથી તેમનામાં અવસન્ન
પાર્શ્વસ્થ આદિ સાધુઓનાં આચાર વિચારની જલક લેશમાત્ર પણ ન આવી
શકે. સાધુનું પદ પ્રાપ્ત કરીને પણ વિષયોમાં અનુરોગ વાલુ રાખવો, સ્વજનો
પ્રત્યે સ્નેહ અને હુશ્મનો પ્રત્યે દ્રેષ રાખવો આદિ પરિણતિ અવસન્ન પાર્શ્વસ્થ
સાધુઓની છે. શારીરિક સંસ્કારોનું જ વધારે ધ્યાન રાખવું, ગીત, નૃત્ય,
વાદિત્ર આદિમાં ચિત્તને રોકવું, તપ, સંયમ આદિની આરાધનાને જ લક્ષ્ય

શુદ્ધિની ટીકા અ. ૧ સૂ. ૪ બ્રહ્મચારીનામનાચરણીયાદિનિરૂપણમ્

૮૦૩

મૂલમ્—इमं च अवंभचेरवेरमणपरिरक्खणद्वयाए पावयणं
भगवया सुकहियं अत्तहियं पेच्चाभावियं आगमेसिभइं सुद्धं नेया-
उयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खपापाणं विउसमणं ॥सू० ५॥

ટીકા—‘ इमं च ’ इत्यादि—

‘ इमं च ’ इदं च ‘ पावयणं ’ प्रवचनम् ‘ अवंभचेरवेरमणपरिरक्खणद्वयाए ’
अब्रह्मचर्यविरमणपरिरक्षणार्थं=चतुर्थमहाव्रतरक्षणनिमित्तं भगवता सुकथितम् आत्म-
हितं, आत्महितकारकम्, आगमिष्यद् भटं शुद्धं नैयायिकम् अकुटिलम् अनुत्तरं
सर्वदुःखपापानां व्युपशमनम् । एषामर्थः पूर्वं तृतीयसंवरद्वारे प्रोक्तः ॥सू० ५॥

કે ઘાતક હૈં. અતઃ સાધુ કો અપને મૂલ ગુણોં કી રક્ષા કરતે હુએ તપ
સંયમ एवं બ્રહ્મચર્ય સે અપની આત્મા કો ભાવિત કરતે રહના ચાહિયે ।
ઇસ તરહ સે ડસકા બ્રહ્મચર્ય વ્રત દૃઢતર હો જાતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

ફિર કહતે હૈં—‘ इमं च ’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(इमं च पावयणं) यह प्रवचन (अवंभचेर वेरमणपरि-
रक्खणद्वयाए भगवया सुकहियं) अब्रह्मचर्य विरमण की परिरक्षा के
निमित्त भगवान् ने कहा है । (अत्तहियं) यह आत्मा का हितकारक है,
(पेच्चाभावियं) परलोक में भी शुभफल का दाता है । (आगमेसि-
भइं) इसी कारण यह भविष्यत् काल में कल्याणप्रद कहा गया है ।
(सुद्धं) निर्दोष होने से यह शुद्ध है । (नेयाउयं) वीतराग, सर्वज्ञ और
हितोपदेशक प्रभु द्वारा भाषित होने से न्यायसंपन्न है । (अकुडिलं)

ન ગણુકું, એ બધું બ્રહ્મચર્ય પ્રતિનું ઘાતક થાય છે. તે સાધુએ પોતાના મૂળ ગુણોની
રક્ષા કરતાં કરતાં તપ, સંયમ અને બ્રહ્મચર્યવ્રતથી આત્માને ભાવિત કરતાં રહેવું
જોઈ એ. આ પ્રમાણે કરવાથી તેનું બ્રહ્મચર્યવ્રત વધારે દૃઢ થતું વળે છે ॥સૂ. ૪ ॥

વળી સૂત્રકાર કહે છે— “ इमं च ” इत्यादि

ટીકાર્થ—“ इमं च पावयणं ” આ પ્રવચન “ अवंभचेरविरमणपरि-
रक्खणद्वयाए भगवया सुकहियं ” આ બ્રહ્મચર્ય વિરમણની પરિરક્ષાને નિમિત્તે
ભગવાને કહેલ છે “अत्तहियं” તે આત્માને માટે હિતકારક છે, “पेच्चाभा-
वियं” પરલોકમાં પણ શુભ ફળ દેનાર છે “आगमेसिभइं” તે કારણે તે
ભવિષ્યકાળમાં કલ્યાણ દાયક બતાવવામાં આવ્યું છે. “सुद्धं” નિર્દોષ હોવાથી
તે શુદ્ધ છે. “नेयाउयं” વીતરાગ, સર્વજ્ઞ અને હિતોપદેશક પ્રભુ દ્વારા કથિત
હોવાથી ન્યાય યુક્ત છે, “अकुडिलं” અનુભાવનું જનક હોવાથી અકુટિલ છે,

અથ ચતુર્થવ્રતસ્ય પञ्चभावनाः प्रतिपादयन् तत्र पूर्वमसंस्कृतासवसति नाम्नीं
प्रथमां भावनामाह—‘ एयस्स ’ इत्यादि—

મૂલમ્—एयस्स इमा पंचभावणा चउत्थवयस्स हुंति
अवंभचेरवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए । पढमं सयणासणघरदुवार
अंगणआगासगवक्खसाला अहिलोयणपच्छवत्थुकपसाहण
गणहाणिकावगासा अवगासा जे य वेसियाणं अत्थंतिट्ठंति य
जत्थ इत्थियाओ अभिक्खणं मोहदोसरइरागवड्ढणाओ कहंति
य कहाओ बहुविहाओ ते हु वज्जणिजा इत्थिसंसत्तसंकिलिट्ठा ।
अण्णे वि य एवमाई य अवगासा ते हु वज्जणिजा, जत्थ
मणोविब्भमो वा भंगो वा भंसणा वा अट्ठं रुद्धं च होज्जा ज्ञाणं
तं तं च वजेज्जवज्जाभीरू अणायतणअंतपंतवासी । एवमसंस-
त्तवासवसहीसमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा आरयमणा
विरयगामधम्मो जिइंदिए वंभचेरगुत्ते ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘ एयस्स ’ एतस्य ‘ चउत्थवयस्स ’ चतुर्थव्रतस्य ब्रह्मचर्याभिधेयस्य

ક્રજુભાવ કા જનક હોને સે અકુટિલ હૈ । (અનુત્તર) સર્વશ્રેષ્ઠ હોનેસે
અનુત્તર હૈ । તથા (સવ્વદુક્ખપાવાણં વિડસમણં) સમસ્ત દુઃખોંકે જનક
જ્ઞાનાવરણીય આદિ અઘ્રવિધ કર્મોં કા યહ ઉપશમકારક હૈ ॥મૂ.૫ ॥

અવ સૂત્રકાર હસ ચતુર્થ મહાવ્રત કી પાંચ ભાવનાઓં કો પ્રતિ-
પાદન કરને કે અભિપ્રાય સે સર્વપ્રથમ અસંસકૃતાસવસતિ નામ કી
પહિલી ભાવના કો પ્રકટ કરતે હૈ—‘ એયસ્સ ’ ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(એયસ્સ ચउत्थवयस्स इमा पंच भावणा हुंति) હસ

“અનુત્તર” સર્વ શ્રેષ્ઠ હોવાથી અનુત્તર છે, તથા “સવ્વદુક્ખપાવાણં વિડસમણં” સમસ્ત
દુઃખોના જનક જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોંનું તેઉપશમ કરનાર છે. સૂ. ૫

હવે સૂત્રકાર આ ચોથા મહા વ્રતની પાંચ ભાવનાઓંનું પ્રતિપાદન કર-
વાને માટે સૌથી પહેલાં “ અસંસકૃતાસવસતિ ” નામની પહેલી ભાવનાનું
સ્પષ્ટીકરણ કરે છે— “ એયસ્સ ” ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—“ એયસ્સ ચउत्थवयस्स इमा पंच भावणा हुंति ” આ પ્રકારથી

સુવર્ણિની ટીકામ-૪ સુ. ૬ 'અસંસક્તવાસવસતિ'નામકપ્રથમભાવનાતિરૂપણમ્ ૮૦૫

इमाः=वक्ष्यमाणाः पञ्चभावनाः, 'अवंभचेरविरमणपरिरक्खणद्वयाए' अवब्रह्मचर्य-
विरमणपरिरक्षणार्थे=चतुर्थव्रतरक्षणनिमित्तं, 'हुंति' भवन्ति । तत्र- 'पढमं'
प्रथमां=स्त्रीपशुपण्डकसंस्क्ताश्रयवर्जनलक्षणा भावनामाह-'सयणासणघरदुवारअंगण
आगासगवक्खसाला अहिलोयणपच्छवत्थुमपसाहणगण्हाणिकावासा' शयनासन-
गृहद्वाराङ्गनाकाशगवाक्षशालाऽभिलोकनपश्चाद् वास्तुकप्रसाधनकस्नानिकावकाशाः
तत्र-शयनं=शय्या, आसनं=मसिद्धम्, गृहं=गेहम्, द्वारम्=गृहद्वारम्, अङ्गणं=
गृहाङ्गणम्, आकाशः=अनावृतं स्थानम्, गवाक्षो=वातायनम्, शालाः=माण्ड-
शालादयः, अभिलोकनम्=अभिलोक्यते दूरस्थितं वस्तु यदास्थाय तद् अभिलोक-
नम्=उन्नतं स्थानम्, तथा-पश्चाद्-वास्तुकं=पृष्ठभागवर्तिगृहं, तथा-प्रसाधनकस्य
मण्डनस्य स्नानिकायाः=स्नानक्रियायाश्च येऽवकाशाः=गृहाः, एषां द्वन्द्वः, एते
स्त्रीसंस्क्तेन संक्लिष्टा वर्जनीयाः । तथा-'जे य' ये च 'अवकासा' अवकाशा

ब्रह्मचर्य नामक चतुर्थव्रत की ये वक्ष्यमाण पांच भावनाएँ हैं । इनसे
(अवंभचेरविरमणपरिरक्खणद्वयाए) अवब्रह्मचर्य विरमण रूप ब्रह्मचर्य-
व्रत की अच्छी तरह से रक्षा होती है । (पढमं) इनमें स्त्री, पशु, पण्डक
से संसक्त वसति का वर्जन करने रूप प्रथम भावना है । वह इस
प्रकार है—(सयणासणघरदुवारअंगणआगासगवक्खसाला अहि-
लोयणपच्छवत्थुम) शयन-शय्या, आसन, गृह द्वार, आंगन, खुला,
हुआ स्थान, झरोखा, शाला, अभिलोकन-वह स्थान कि जिसके
सहारे से दूर की वस्तु देखी जा सके ऐसी ऊँची जगह पश्चाद् वास्तूक-
पीछे के भाग में रहा हुआ घर, तथा (पसाहणग-ण्हाणीकावासा)
मंडन घर और नहाने के घर, ये सब यदि स्त्रियों से संसक्त हों तो
साधु का कर्त्तव्य है कि वह इनका परित्याग करे । तथा-(जे य अव-

નામના ચોથા વ્રતની આ પ્રમાણે પાંચ ભાવનાઓ છે. તેમનાથી “અવંભચેર
વિરમણપરિરક્ખણદ્વયાએ” આ બ્રહ્મચર્ય વિરમણ રૂપ બ્રહ્મચર્ય વ્રતની સારી
રીતે રક્ષા થાય છે. “પઢમં” તેમાં સ્ત્રી, પશુ, પંડકના સંસર્ગથી યુક્ત
વસવાટનો ત્યાગ કરવા રૂપ પહેલી ભાવના છે. તે આ પ્રમાણે છે-“સયણા-
સણઘરદુવારઅંગણઆગાસગવક્ખસાલા અહિલોયણપચ્છવત્થુમ” શયન--શય્યા,
આસન, ગૃહ, દ્વાર, આંગણ, ખુલ્લી જગ્યા, ઝરોખે, શાલા, અભિલોકન-એવી
ઉંચી જગ્યા કે જ્યાંથી દૂરની વસ્તુઓ દેખી શકાય, પશ્ચાદ્વાસ્તુક-પાછળના
ભાગમાં આવેલું ઘર, તથા “પસાહણગ-ણ્હાણિકાવાસા” મંડન ઘર અને
નહાવાનાં ઘર, એ બધાં સ્થાનો એ સ્ત્રીઓથી યુક્ત હોય તો તેમનો પરિ-
ત્યાગ કરવો તે સાધુનું કર્તવ્ય છે. તથા “જે ય અવગાસા” જે સ્થાન

ગૃહાઃ=સ્થાનાનીત્યર્થઃ, 'વેસિયાણં' વેશ્યાનામ્ 'અટ્ટં' અર્થ=નિમિત્તં 'તિટ્ઠંતિ' તિષ્ઠન્તિ=સન્તિ, તથા—'જત્ય' યત્ર 'ઇત્થિયાઓ' સ્ત્રિયો હિ 'અભિક્ષણં' અભીક્ષ્ણં=મુહુર્મુહુઃ 'મોહદોસરર્રાગવહુણાઓ' મોહદોષરતિરાગવર્ધનાઃ=મોહદોષ-ર્રાગાન્ વર્દયન્તિ યાસ્તાઃ=મોહાદિગ્રહિકારિણ્ય इत्यर्थः, 'વહુવિહાઓ' વહુ-વિધાઃ=આતિકુલરૂપનેપથ્યવિષયાઃ 'કહાઓ' કથાઃ 'કહેતિ' કથયન્તિ, 'તે સ્વહુ' 'ઇત્થી સંસત્તસંકિલિટ્ટા' સ્ત્રીસંસત્તસંકિલિટ્ટાઃ = સ્ત્રીસંસર્ગયુક્તાઃ ગૃહાઃ, 'વજ્જણિજ્જા' વર્જનીયા ભવન્તિ । તથા—'અણે વિ' અણેऽપિ ચ 'એવમાઈ' એવમાદયઃ—એવં પ્રકારા યેઽવકાશા ભવન્તિ, 'તે હુ' તે સ્વહુ 'વજ્જણિજ્જા' વર્જનીયા ભવન્તિ । કિં વહુના—'જત્ય' યત્ર યત્ર—ઉત્તરત્ર 'તં તં' इति वीप्सा-प्रयोगादत्रापि वीप्सा बोद्धव्या, જાયતે, 'મળો વિભ્રમો વા' મનો વિભ્રમો વા =શ્રુદ્ધારરસસમુત્પન્નં ચિત્તસ્યાઽસ્થિરત્વમ્, 'ભંગો વા' વ્રત્તચર્યસ્ય સર્વભક્તઃ,

ગાસા) જો સ્થાન (વેસિયાણં અટ્ટં-તિટ્ઠંતિ) વેદ્યાઓં કે નિમિત્ત બને હુપ હોં તથા (જત્ય) જિન સ્થાનોં પર બેઠ કર (ઇત્થિયાઓ) સ્ત્રિયાં (અભિક્ષણં) વાર વાર (મોહદોસરર્રાગ વહુણાઓ) મોહ દોષરતિ ઔર રાગકો વઢાનેવાલી (વહુવિહાઓ) વિવિધ પ્રકારકી (કહાઓ) કથાઓંકો (કહેતિ) કહતી હોં, (તે હુ) વે સ્થાન (ઇત્થી સંસત્ત સંકિલિટ્ટા) સ્ત્રીયોંસે સંસત્ત હોનેકે કારણ સાધુકો ઁનકા પરિત્યાગ કર દેના ઁહિયે । તથા (અણે વિ) ઔર ઁી કોઈ (એવમાઈ ય અવગાસા) ઁેસે સ્થાન હોં તો (તે હુ) ઁનકા ઁી સાધુ કો (વજ્જણિજ્જા) પરિત્યાગ કર દેના ઁહિયે । અધિક ઔર કયા કહા જાય (જત્ય જત્ય) જિસ ૨ સ્થાન પર સાધુ કા (મળોવિભ્રમો) મન વિભ્રમ યુક્ત બન જાવે (વા) અથવા (ભંગો) ઁસકે વ્રત્તચર્ય વ્રત કા ભંગ હોને કી સંભાવના (વા) અથવા

“વેસિયાણંઅટ્ટં-તિટ્ઠંતિ” વેશ્યાઓને નિમિત્તે બનેલાં હોય, તથા “જત્ય” જે સ્થાનો પર બેસીને “ઇત્થિયાઓ” સ્ત્રીઓ “અભિક્ષણ” વારં વાર “મોહદોસર્રાગવહુણાઓ” મોહ, દોષ, રતિ અને રાગરે વધાવનારી “વહુવિહાઓ” વિવિધ પ્રકારની “કહાઓ” કથાઓ “કહેતિ” કહેતી હોય “તે હુ” તે સ્થાનો “ઇત્થી સંસત્ત સંકિલિટ્ટા” સ્ત્રીઓથી યુક્ત હોવાને કારણે સાધુઓએ તેમનો પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. તથા “અણે વિ” એવાં બીજાં પણ કોઈ “એવ માઈય અવગાસા” સ્થાન હોય તો “તે હુ” તેમનો પણ સાધુએ “વજ્જણિજ્જા” પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ. વધુ શું કહું ! “જત્ય જત્ય” જે જે સ્થાન પર સાધુનું “મળોવિભ્રમો” મન વિભ્રમયુક્ત બની જાય “વા” અથવા “ભંગો” તેના બ્રહ્મચર્ય વ્રતના ભંગની શક્યતા

સુદર્શની ટીકા અ૦૪ સૂ૦૬ 'અસંસક્તવાસવસતિ' નામક પ્રથમ ભાવનાનિરૂપણમ્ ૮૦૭

‘ મંસણા વા ’ મંસના વા=વ્રત્તચર્યસ્ય દેશતો મજ્જો વા, તથા-‘ અટ્ટ ’ આર્તમ્=
 ઇષ્ટ સંયોગાભિલાષરૂપમ્, ‘ રુદ્ધ ’ રૌદ્ર તદુપાયભૂતહિંસાઝૂતાદત્તાદાનપ્રહ્ણાનુ-
 વન્ધરૂપમ્, ‘ જ્ઞાણ ’ ધ્યાન ‘ હોઝ્જા ’ ભવેત્ ‘ તં તં ચ ’ તત્તચ્ચ ‘ વજ્જેજ્જ ’
 વર્જયેત્, કઃ ? इत्याह-यः ‘ વજ્જમીરુઃ ’ અવજ્જમીરુઃ=સાવધવસતિવાસજન્ય-
 પાપમીરુઃ, અત એવ-‘ અણાયતળઅંતપંતવાસી ’ અનાયતનાન્તપ્રાન્તવાસી ન આય-
 તનં સ્ત્રીપથુપ્પંડકાનામિત્યનાયતનમ્, સ્ત્રીપથુપ્પંડકરહિતમિત્યર્થઃ, અન્તમ્=ઇન્દ્રિયા-
 નનુકૂલં, પર્ણકુટવાદિ, પ્રાન્ત=તદેવ પ્રકુપ્તં ઇમશાનશૂન્યગૃહવૃક્ષમૂળાદિકં વા સ્થાનં
 તત્ર વસ્તું શીલં યસ્યાસી-નિર્દોષ વસતિવાસીત્યર્થઃ, સ તાદૃશં સ્થાનં વર્જયેદિતિ
 માત્રઃ । ઉપસંહરશ્ચાહ—‘ એવં ’ એવમ્=અનેન પ્રકારેણ ‘ અસંસક્તવાસવસતિસમિદ્ધિ-
 જોગેણ ’ અસંસક્તવાસવસતિસમિતિયોગેન=અસંસક્તઃ=સ્ત્રીપથુપ્પંડકસંસર્ગરહિતો યો
 (મંસણા) એક દેશ સે વહ ભંગ હોને કી સંભાવના હો તથા (અટ્ટ
 રુદ્ધ ચ જ્ઞાણ હોઝ્જા) ઇષ્ટ સંયોગાભિલાષરૂપ આર્તધ્યાન, હિંસા, ઝૂઠ, ચોરી
 આદિ મેં આનંદ માનને રૂપ રૌદ્રધ્યાન, ઉસકે ચિત્ત મેં જગ જાને
 કી સંભાવના હો, તો સાધુ કો (તં તં ચ) ઉસ સ્થાન કા (વજ્જેજ્જ)
 પરિત્યાગ કર દેના ચાહિયે । ક્યોં કિ સાધુ (અવજ્જમીરુ) સાવધ-
 વસતિ વાસ જન્ય પાપ સે સદા મીરુ-ઢરને વાલા હોના હે । (અણાય-
 તળઅંતપંતવાસી) ઑર વહ એસે હી નિર્દોષ સ્થાન મેં ઠહરતા હૈ કિ
 જહાં સ્ત્રી, પથુ, પંડક નહીં રહતે હોં, તથા જો અપનીં ઇન્દ્રિયોં કે અનુ-
 કૂલ ન હો, કિન્તુ ઇમશાન, શૂન્યગૃહ, વૃક્ષમૂળ આદિરૂપ હો । ઇસલિયે
 જબ સિદ્ધાન્ત મેં નિર્દોષ વસતિ મેં ઠહરને કી આજ્ઞા પ્રભુ કી હૈં તો યહ
 વાતનિશ્ચિન હૈ કિ વહ સદોષવસતિ મેં ન ઠહરે । (એવં અસંસક્તવાસ-

“ વા ” અથવા “ મંસણા ” એક દેશથી તેમાં ભંગ થવાની સંભવિતતા હોય
 તથા “ અટ્ટ રુદ્ધ ચ જ્ઞાણ હોઝ્જા ” ઇષ્ટ સંયોગાભિલાષ રૂપ આર્તધ્યાન,
 હિંસા, ઝૂઠ, ચોરી આદિમાં આનંદ માનવારૂપ રૌદ્રધ્યાન, તેના ચિત્તમાં ઉત્પન્ન
 થવાની શક્યતા હોય તો સાધુએ “ તં તં ચ ” તે તે સ્થાનને “ વજ્જેજ્જ ”
 પરિત્યાગ કરી દેવો ભેદએ. કારણ કે સાધુ “ અવજ્જ-મીરુ ” સાવધ વસતિ-
 વાસ જન્ય પાપોથી સદા ડરનાર હોય છે, “ અણાયતળ અંતપંતવાસી ” અને
 તે એવા નિર્દોષ સ્થાનમાં રહે છે કે જ્યાં સ્ત્રી, પથુ, પંડક રહેતા હોય નહીં
 તથા જે પોતાની ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ ન હોય, પણ ઇમશાન, ખાલી મકાન,
 વૃક્ષમૂળ આદિ રૂપે હોય. તેથી નિર્દોષ વસતિ (વસવાટ) માં રહેવાની
 સિદ્ધાંતમાં પ્રભુએ આજ્ઞા આપેલી છે તો એ વાત નિશ્ચય જ છે કે તેમણે
 સદોષ વસતિમાં રહેવું ભેદ એ નહીં. “ એવં અસંસક્તવાસવસતિસમિદ્ધિજોગેણ ”

वासः=स्थानम् तत्र या वसतिः=निवासस्तद्रूपो यः समितियोगस्तेन 'भाविओ'
 भावितः=वासितः 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः 'आरयमणा' आरतमनाः-
 आ=समन्तात् रतं=ब्रह्मचर्ये संसक्तं मनो यस्य स तथा, पुनः-विरयगामधम्मो '
 विरतग्रामधर्मः=निवृत्तो ग्रामधर्मात्=मैथुनाद् यः स तथा, अत एव- 'जिइंदिण'
 जितेन्द्रियः=वशीकृतेन्द्रियः, 'वंभचेरगुत्ते' ब्रह्मचर्यगुप्तः=नवविध ब्रह्मचर्यसहितः
 दशविधब्रह्मचर्य-समाधिस्थानयुक्तो वा 'भवइ' भवति ॥सू० ६ ॥

वसति समिहजोगेण) इस प्रकार स्त्री, पशु, पंडक के संसर्ग से रहित
 स्थान में ठहरने रूप समिति के योग से (भाविओ अंतरप्पा) भावित
 अंतरात्मा-मुनि (आरयमणा) सर्व प्रकार से ब्रह्मचर्य व्रत में संसक्त
 मन वाला हो जाना है और—(विरयगामधम्मो) ग्रामधर्म-मैथुन से
 विरत हो जाता है। अतएव-वह (जिइंदिण वंभचेरगुत्तेभवइ) जिते-
 न्द्रिय बनकर नवविधब्रह्मचर्य की गुप्ति से अथवा दशविध ब्रह्मचर्य
 समाधी स्थान से युक्त बन जाता है।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने ब्रह्मचर्य व्रत को स्थिर रखने
 वाली पांच भावनाओं में से प्रथम स्त्रीपशु पंडक सेवित शयनासन
 वर्जन रूप भावना का स्वरूप स्पष्ट किया है। साधुजन को ऐसी ही
 वसति-स्थान में निवास करने को प्रभु की आज्ञा है कि जो निर्दोष
 हो। स्त्री पशु पंडक आदि के संसर्ग से रहित हो। क्योंकि ऐसे स्थान
 में निवास करने से साधु के ब्रह्मचर्य व्रत का देश से भंग अथवा
 सर्वथा भंग हो सकता है। तथा जिस स्थान पर बैठकर स्त्रियां विविध

આ રીતે સ્ત્રી, પશુ, અને પંડકના સંસર્ગથી રહિત સ્થાનમાં રહેવા રૂપ
 સમિતિના યોગથી “ભાવિઓ અંતરપ્પા” ભાવિત અંતરાત્મા-મુનિ “આરયમણા”
 દરેક પ્રકારે બ્રહ્મચર્ય વ્રતમાં દૃઢ મનવાળા થઈ જાય છે અને “વિરયગામધમ્મો”
 ગ્રામધર્મ-મૈથુનથી મુક્ત થઈ જાય છે. તેથી તે “જિંદિયવંભચેરગુત્તે ભવઈ”
 જિતેન્દ્રિય થઈને નવ વિધ બ્રહ્મચર્યની ગુપ્તિથી અથવા દશવિધ બ્રહ્મચર્યસમાધિ
 સ્થાનથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે બ્રહ્મચર્ય વ્રતને સ્થિર રાખવાની પાંચ
 ભાવનાઓમાંથી સૌથી પહેલી સ્ત્રી, પશુ, પંડક સેવિત શયનાસન વર્જનરૂપ
 ભાવનાનું સ્વરૂપ સ્પષ્ટ કર્યું છે. સાધુજનોને એવા સ્થાનમાં વસવાની પ્રભુની
 આજ્ઞા છે કે જે નિર્દોષ હોય, સ્ત્રી, પશુ, પંડક આદિના સંસર્ગથી રહિત
 હોય. કારણ કે એવા સ્થાનમાં વસવાથી સાધુના બ્રહ્મચર્ય વ્રતનો અંશતઃ
 ભંગ થાય છે અથવા સર્વથા ભંગ થઈ શકે છે, તથા જે સ્થાને બેસીને

सुबिंशनी टीकाम०४ सू०७ 'स्त्रीकथाविरती'नामक द्वीतियभावनानिरूपणम्८०९

द्वितीयां स्त्रीकथाविरतिनाम्नीं भावनामाह—'वीयं' इत्यादि—

मूलम्—वीयं नारीजणस्स मज्झे न कहेयव्वा कहा विचिता विव्वोकविलाससंपउत्ता हास सिंगार लोइयकहव्व मोहजणणी न आवाहवरकहाविय इत्थीणं वा सुभगदुब्भ-
गकहाचउसट्ठिं महिलागुणाणं च न देसजातिकुलरूवणाम-
नेवत्थपरिजणकहाओ इत्थियाणं अण्णावि य एवमाइयाओ
कहाओ सिंगारकलुणाओ तवसंजमवंभचेरघाओवघाइयाओ
अणुचरमाणेणं वंभचेरं न कहेयव्वा न सुणेयव्वा न चित्ति-
यव्वा । एवं इत्थीकहा विरइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा
आरयमणा विरयगामधम्मं जित्तिदि ए वंभचेरगुत्ते ॥सू०७॥

प्रकार की शृंगार आदि वर्धक कथाएँ किया करती हों, जो स्थान
वेश्याओं के लिये निर्मित हुए हो, जो मनःक्षोभ कारक हो, आर्त्तरी-
द्रध्यान के प्रवर्त्तक हों, ऐसे भी स्थानों में साधु को नहीं ठहरना
चाहिये, किन्तु जो स्त्री आदि के संसर्ग से रहित हों, इन्द्रियों में क्षोभ
कारक न हों ऐसे स्मशान, शून्य गृह आदि स्थानों में ही साधु को
निवास करना चाहिये । इस प्रकार इस असंसक्तवासवसति नामक
प्रथम भावना से भावित हुआ जीव ब्रह्मचर्य व्रत की सर्वप्रकार से
रक्षा करता हुआ मैथुन से विरक्त होकर उसकी नौ कोटि से पूर्ण-
पालना करने में सावधान रहना है ॥ सू०६ ॥

स्त्रीयो विविध प्रकारनी शृंगार आदि वर्धक कथाओ कडेती होय, जे स्थान
वेश्याओ माटे ज गताव्या होय, जे मनमां क्षोभ करनार होय, आर्त्त रौद्र
ध्यान तरङ्ग दोरनार होय, ओवां स्थानोमां पणु साधुओओ वसवुं जेधओ
नही, पणु जे स्थान स्त्री आदिना संसर्गाथी रहित होय, इन्द्रियोमां क्षोभ
करनार न होय ओवां स्मशान, भादी घर आदि स्थानोमां साधुओ निवास
करवा जेधओ. आ प्रकारे आ “असंसक्त वास वसती” नामनी भावनाथी
भावित थयेल एव ब्रह्मचर्य व्रतनी दरेक रीते रक्षा करतो मैथुनथी रहित
अनीने तेजुं नव प्रकारे पालन करवासां सावधान रहे छे. ॥ सू. ६ ॥

प्र १०२

ટીકા—‘વીયં’ દ્વિતીયાં સ્ત્રીકથાવિરતિલક્ષણાં ભાવનામાહ—

‘નારીજનસ્સ’ નારીજનસ્ય=સ્ત્રીપર્વદો ‘મજ્ઞે’ મધ્યેડન્તરાલે ન=નૈવ ‘કહેયન્વા’ કથયિત્વ્યા ‘કહા’ કથા=વાક્યપ્રબન્ધરૂપા । કથામેવ વિશિનટ્ટિ-
‘વિચિત્તા’ વિચિત્રા=વિચિત્રવૃત્તાન્તસમન્વિતા, તથા—‘વિવ્વોકવિલાસસંપટ્તા’
‘વિવ્વોકવિલાસસંપ્રયુક્તા’—‘વિવ્વોક’=અત્યભિમાનવશાદિષ્ટેડપિ વસ્તુન્યનાદર-
કરણમ્, તદુક્તમ્—‘વિવ્વોકસ્ત્યતિર્ગર્વેણ વસ્તુનીષ્ટેડપ્યનાદરઃ, ઇતિ । વિલાસઃ=સ્થાનાસનગમનાનાં હસ્તભૂનેત્રકર્મણાં ચૈવ યો વિશેષઃ સઃ,તદુક્તમ્—“સ્થાનાસન-
ગમનાનાં હસ્તભૂનેત્રકર્મણાં ચૈવ !

ઉત્પદ્યતે વિશેષો યઃ શ્લષ્ટઃ સ તુ વિલાસઃ સ્યાત્ ॥ ” ઇતિ । વિવ્વોકવિ-

અવ સૂત્રકાર સ્ત્રીકથાવિરતિ નામકી દ્વિતીય ભાવના કો પ્રદર્શિત કરતે હૈં—‘વીયં નારીજનસ્સ’ ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ--(વીયં દૂસરી સ્ત્રીકથાવિરતિ નામકી ભાવના હસ પ્રકાર સે હૈ-- (નારીજનસ્સ મજ્ઞે) સ્ત્રીયોં કે બીચ મેં બેઠકર સાધુ કો (કહા) કથાઈં કિ જો (વિચિત્તા) વિચિત્ર વૃત્તાન્તોં સે યુક્ત હોં (વિવ્વોકવિલાસસંપટ્તા) ઇષ્ટ વસ્તુ મેં બી અનાદર કરાને વાલી હોં તથા વિલાસભાવ બઢાનેવાલી હોં (ન કહેયન્વા) નહીં કરના ચાહિયે । અતિ અભિમાન કે વશ સે ઇષ્ટ વસ્તુ મેં બી અનાદર કરના હસકા નામ વિવ્વોક હૈ, તથા સ્થાન, આસન, ગમન મેં ઈવં હસ્ત, ભૂ, નેત્ર હન કી ક્રિયાઓં મેં વિશેષતા આના હસકા નામ વિલાસ હૈ । યે દોનોં પ્રકાર કી વિશેષ ચેષ્ટાઈં સ્ત્રીયોં મેં શૃંગારભાવજનિત હુઆ કરતી હૈં । વિવ્વોક ઔર વિલાસ હન દોનોં સે જો કથાઈં યુક્ત હોં વે સાધુ કો

હવે સૂત્રકાર “સ્ત્રીકથાવિરતિ” નામની બીજી ભાવના બતાવે છે—
“વીયં નારી જનસ્સ” ઇત્ય દ્વિ—

ટીકાર્થ—“વીયં” સ્ત્રી કથા નામની ભાવના આ પ્રમાણે છે—“નારીજનસ્સ મજ્ઞે” સ્ત્રીઓની વચ્ચે બેસીને સાધુએ એવી “કહા” કથાઓ કે જે “વિચિત્તા” વિચિત્ર વર્ણનો વાળી હોય “વિવ્વોકવિલાસસંપટ્તા” ઇષ્ટવસ્તુમાં પણ અનાદર કરાવનારી હોય તથા વિલાસભાવ વધાવનારી હોય “ન કહેયન્વા” તે કહેવી જોઈએ નહીં અતિ અભિમાનને વશ થઈ તે ઇષ્ટ વસ્તુનો પણ અનાદર કરવો તેને વિવ્વોક કહે છે, તથા સ્થાન, આસન, ગમનમાં અને, હાથ, ભૂ નેત્ર વગેરેની ક્રિયામાં વિશેષતા આવે તે વિલાસ ગણાય છે. એ બંને પ્રકારની વિશેષ ચેષ્ટાઓથી સ્ત્રીઓમાં શૃંગાર ભાવ પેદા થાય છે. વિવ્વોક અને વિલાસ એ બંનેથી

સુર્વાશિની શીકા અઽઽ સૂઽ૭ 'શ્લોકથાવિરતિ'નામકદ્વિતીયભાવનાતિરૂપણમ્ ૮૧૧

લાસૌ=સ્ત્રીणां શ્રૃંગારભાવજનિતૌ ચેષ્ટાવિશેષૌ, તામ્યાં સંપ્રયુક્તાઃ, તથા-‘હાસસિંગાર-
રલોડ્યકહા ’ તત્ર હાસશ્રૃંગારલૌકિકકથા=હાસ્યઃ=હાસ્યસ્થાયિભાવો રસવિશેષઃ,
શ્રૃંગારઃ=રતિસ્થાયિભાવોરસવિશેષઃ, એતત્પ્રધાના યા લૌકિકીકથા સા તથા, ‘મો-
હજનણી’ મોહજનની=મોહોદીરિકા કથા ન વક્તવ્યા । તથા-‘આવાહવિવાહવરક-
હાવિ ય ’ આવાહવિવાહવરકથાપિ ચ=આવાહઃ=અભિનવપરિણીતસ્ય વધૂવરસ્ય આ-
નયનમ્, વિવાહઃ=પાણિગ્રહણમ્, તત્પ્રધાના યા વરકથા=પરિણેતૃકથા સાઽપિ ચ ન
વક્તવ્યા । તથા-‘ ઇત્થીણં ’ સ્ત્રીणां ‘ સુભગદુર્ભગકહા ’ સુભગદુર્ભગકથા=“ઈદ-
ગ્નેત્રનાસિકાકપાલાદિયુકા ચ સ્ત્રી દુર્ભગા ભવતિ ” ઇત્યાદિરૂપા કથા વા ન
સ્ત્રિયોં કે બીચ બેઠકર કમી નહીં કહના ચાહિયે, ક્યોં કિ એસી કથાઓં
કે કહને મેં રાગભાવ કી સંયુક્તતા સાધુ કે જાની જાતી હૈ । હસસે
તસકે ત્રલ્યચર્યવ્રત મેં દોષ આના હૈ । ઇતી તરહ (હાસસિંગારરલોડ્યકહા)
જો લૌકિક કથા હાસ્ય ઓર શ્રૃંગારરસ પ્રધાન હો, તથા (મોહજનણી)
મોહ કી જનક હો વહ બી નહીં કહના ચાહિયે । તથા (આવાહવિવાહ-
વરકહાવિય) જો કથા નવ દંપતિયોં કે આગમન સે સંબંધ રલ્લતી હોં,
અર્થાત્-જિસ કથા કા વિષય નવ પરિણિત વધૂ ઓર વર કે સંબંધ કો
લિયે હુઅ તથા જિસ કથા મેં વિવાહ સંબંધી ચર્ચા હો, એસી આવાહ
ઓર વિવાહ પ્રધાન બાલી વરકથા બી સાધુ કો નહીં કહની ચાહિયે ।
ઇતી તરહ (ઇત્થીણં વા સુભગદુર્ભગકહા) સ્ત્રિયોં સંબંધી સુભગ દુર્ભગ
કથા બી નહીં કહના ચાહિયે, અર્થાત્-‘ઇસ પ્રકારકે નેત્ર, નાસિકા ઓર
કપાલ આદિવાલી સ્ત્રી સુભગ હોતી હૈ ઓર ઇસ પ્રકારકે નેત્ર, નાસિકા,

યુક્ત હોય તેવી કથાઓ સાધુએ સ્ત્રીઓની વચ્ચે બેસાને કદી પણ કહેવી
ભાઈએ નહીં, કારણ કે એવી કથાઓ કહેવામાં રાગ ભાવની સંયુક્તતા
આવી જાય છે. તેથી પ્રહસ્યર્થ ત્રતમાં દોષ આવી જાય છે. એ જ રીતે “હાસ
સિંગારરલોડ્યકહા” જે લૌકિક કથા હાસ્ય અને શ્રૃંગાર રસ પ્રધાન હોય,
તથા “મોહજનણી” મોહ પેદા કરનાર હોય, તે પણ કહેવી બેઠકએ નહીં,
તથા “આવાહવિવાહવરકહાવિય” જે કથા નવ દંપતિઓના આગમન
સાથે સંબંધ ધરાવતી હોય, એટલે કે જે કથાનો વિષય નવ પરિણિત વધૂ
અને વરના સંબંધમાં હોય, તથા જે કથામાં વિવાહ સંબંધી અર્થા આવતી
હોય, એવી આવાહ અને વિવાહ પ્રધાન વર કથા પણ સાધુએ કહેવી બેઠકએ
નહીં. એ જ પ્રમાણે “ઇત્થીણં વા સુભગદુર્ભગકહા” સ્ત્રીઓ સંબંધી સુભગ,
[વર] કથાઓ પણ કહેવી બેઠકએ નહીં, એટલે કે “આ પ્રકારનાં નેત્ર, નાક
અને કપાળવાળી સ્ત્રી સુભગ હોય છે અને આ પ્રકારનાં નેત્ર, નાક અને

વક્તવ્યા । તથા-‘ચૃસદ્વિમહિલાગુણા’ ચતુષ્પદ્વિમહિલાગુણા=આલિંગનાદીનામદ્વાનાં પ્રત્યેકસ્યાદ્વિધત્વેન યે ચતુષ્પદ્વિસંસ્કૃતયા મહિલાગુણાસ્તેऽપિ ચ ન વક્તવ્યાઃ । તથા-‘દેસજાતિકુલરૂપનામનેવત્યપરિજનકદ્વાઓ’ દેશજાતિકુલરૂપનામનેવત્યપરિજનકયાઃ તત્ર-દેશકથા=લાટાદિદેશસમ્બન્ધિસ્ત્રીણાં વર્ણનમ્, યથા-‘લાટથઃ

और कपाल आदि से युक्त स्त्री दुर्भग होती है, इस प्रकार ये स्त्रियों की सुभगता और दुर्भगता से संबंध रखने वाली कथा भी साधु को नहीं कहना चाहिये । तथा (चउसद्वि महिलागुणं च) जिस कथा में स्त्रियों के चौसठ गुणों से संबंध हो, अर्थात् स्त्रियों के चौसठ गुणों को लेकर जो कथा चलती हो वह भी साधु को नहीं कहनी चाहिये । आलिङ्गन आदि आठ गुण प्रत्येक आठ २ प्रकार के होते हैं, इस तरह ८×८=६४ प्रकार के महिलाओं के गुण कहे गये हैं । सो ये चौसठ ६४ प्रकार के महिलाओं के गुण भी कथामें चर्चनीय नहीं होनी चाहिये । तथा (देसजाति कुलरूपनामनेवत्यपरिजणकद्वआओ इत्थियाणं अण्णावि य एवमाइयाओ सिंगारकलुणाओ संजमवंचेर घाओवघाइयाओ वंमचेरं अणुचरमाणेणं न कहेयव्वा न सुणेयव्वा न चित्तिवव्वा) देश,जाति, कुल, रूप, नाम, नेपथ्य, परिजन, इनसे संबंध रखनेवाली स्त्रियोंकी कथायें भी नहीं कहनी चाहिये-लाटादि-देश संबंधी स्त्रियों का वर्णन जिस कथामें होता है वह देश कथा है, जैसे-लाट देश की स्त्रियां बहुत ही कौमल-

કષાણ વાળી સ્ત્રી વિરલ હોય છે ” આ રીતે સ્ત્રીઓની સુભગતા કે વિરલતા સાથે સંબંધ રાખતી કથા પણ સાધુએ કહેવી જોઈએ નહીં. “ચૃસદ્વિ મહિલા ગુણાં ચ ” જે કથાના સ્ત્રીઓના ચોસઠ ગુણો સાથે સંબંધ હોય એટલે કે સ્ત્રીઓના ચોસઠ ગુણોને અનુલક્ષીને જે કથા ચાલતી હોય તે પણ સાધુએ કહેવી જોઈએ નહીં. આલિંગન આદિ આઠ ગુણોમાંના પ્રત્યેક ગુણ આઠ આઠ પ્રકારનો હોય છે, આ રીતે ૮×૮=૬૪ પ્રકારના સ્ત્રીઓના ગુણ બતાવ્યા છે. તે તે ચોસઠ પ્રકારના સ્ત્રીઓના ગુણ પણ કથામાં ચર્ચવાને યોગ્ય નથી. તથા “દેસજાતિકુલરૂપનામ-નેવત્ય-પરિજન-કદ્વાઓ” ઇતિયાણં અણ્ણા વિ ય એવમાઈયાઓ કદ્વાઓ સિંગારકલુણાઓ સંજમવંચેરઘા ઓવઘાઈયાઓ વંમચેરં અણુ ચરમાણેણં ન કહેયવ્વા ન સુણેયવ્વા નચિત્તિવવ્વા” દેશ, જાતિ, ગુણ, રૂપ, નામ, નેપથ્ય, પરિજન, વગેરે સાથે સંબંધ રાખનારી સ્ત્રીઓની કથાઓ પણ કહેવી જોઈએ નહીં. લાટાદિ દેશની સ્ત્રીઓનાં વર્ણન જે કથામાં હોય તે દેશ કથા છે, જેમકે “લાટ દેશની સ્ત્રીઓ બહુ જ મૃદુ વચન વાળી અને નિયુષ્ઠ હોય

सुदर्शिनी टीका अ०४ सू० ७ स्त्रीकथाविरतिनामकद्वितीयभावनानिरूपणम् ८१३

कोमलवचनाः इति निपुणा वा भवन्ती ” त्यादि । जातिकथा=ब्राह्मणादिजाति संबंधिका, यथा-“ धिग्ब्राह्मणीर्धवामावे या जीवन्तिमृता इव । धन्यामन्ये शूद्रीः पतिलक्षेऽप्यनिन्दिताः ॥

कुलकथा, यथा-अहो चौलुक्यपुत्रीणां साहसं जगतोऽधिकम् ।

पत्यो मृते विशन्त्वग्निं याः प्रेमरहिता अपि” इति । रूपकथा-

यथा-चन्द्रवक्त्रा सरोजाक्षी, सङ्गीः पीनवनस्तनी ।

किंलाटीनो मता सा स्या, देवानामपि दुर्लभा ॥ १॥ ” इति ।

वचनवाली और निपुणता युक्त हुआ करती हैं ब्राह्मण आदि जाति से संबंध रखनेवाली स्त्रियों की कथा कहना इसका नाम जाति कथा है । जैसे पति के अभाव में जीवन व्यतीत करने वाली ब्राह्मणियों को धिक्कार हैं-क्यों कि ये जीती हुई भी एक तरह से मरी हुई जैसी हैं । और वे शूद्र जाति की स्त्रियां धन्य हैं जो लाख पतिवाली होने पर भी निन्दित नहीं होती हैं । कुल से संबंध रखनेवाली स्त्री संबंधी कथा कुल कथा है-जैसे-अहो ! चौलुक्यवंश की स्त्रियों का साहस जगत में सबसे अधिक होता है-क्यों कि ये पति के मर जाने पर प्रेम से विहीन होती हुई जीती २ अग्नि में जल जाती हैं । स्त्रियों के रूप से संबंध रखने वाली कथारूप कथा है-जैसे लाटदेश की स्त्रियां चन्द्रमा के जैसी सुखवाली होती हैं कमल जैसी आँखों वाली होती हैं बाणी में इनके मिठास रहता है, इनके दोनो कूच पुष्ट और स्थूल होते हैं । भला ऐसी सुन्दर स्त्री किसको नहीं अच्छी लगेगी ? ऐसी स्त्रीतो देवों को भी दुर्लभ हुआ करती

छे. ” ब्राह्मण आदि जाति साथे संबंध राखनार स्त्रीओंनी कथा कहेवी ते जाति कथा कहेवाय छे. ‘ जेम के ’ पति बिना एवन व्यतीत करनार ब्राह्मणीओने धिक्कार छे, कारण के तेओ एवती होवा छतां पणु ओक रीते तो मृत जेवीज छे. ” “ ते शूद्र जातिनी स्त्रीओने धन्य छे के जे लाअपति होवा छतां पणु निहित थती नथी. ” आ भीछ जाति कथाना दृष्टांति छे. जे कुण साथे संबंध राखनारी स्त्री विधेनी कथाने कुण कथा कहे छे. जेम के “ अहो ! चाडुकथ वंशनी स्त्रीओनां साहस जगतमां सौथी पधारे होय छे, कारण के पतिनुं मृत्यु तथा ते प्रेमलग्न थवाथी एवती अग्निमां प्रवेश करी जगी भरे छे. ” स्त्रीओनां इप साथे संबंध राखनारी कथाओने इपकथा कहे छे. जेम के लाट देशनी स्त्रीओ चन्द्रसुभी होय छे, कमलनयनी होय छे, तेमनी बाणीमां मिठास होय छे, तेमना जन्मे कुच पुष्ट अने स्थूल होय छे. जेवी सुंदर स्त्री कोने न गमे ? जेवी स्त्रीओ तो देवाने पणु

નામકથા-યથા-ઇયં યથા નામ્ના સુંદરી, તથા-રૂપગુણાભ્યામપિ ! નેપથ્ય-કથા, યથા-“ ધિજ્ઞનારીસૌદીચ્યા વહુવસનાચ્છાદિતાજ્જલતિકત્તરાત્ । યદ્યોવનં ન યૂનાં ચશુર્મોદાય સંભવતિ ॥ ” इति ।

પરિજનકથા—યથા—“ चेष्टिकापरिवारोऽपि तस्याः कान्तो विचक्षणः । भावज्ञाः स्नेहवान् दक्षो विनीतः सुकुलस्तथा ॥ ” इति ।

एताः कथा न कर्तव्याः । तथा-‘ इत्थियाणं’ स्त्रीणाम् ‘अण्णावि य ’ अन्या अचि च ‘ एवमाइयाओ कहाओ ’ एवमादिकाः कथाः या हि ‘ सिंगारकु-णाओ ’ शृङ्गारकरुणाः=शृङ्गाररसकरुणरसयुक्ताः, तथा ‘ संजदधंभचेरघाभोव-

हैं । नाम को लेकर जिस कथा में स्त्री संबंधी सौन्दर्य का वर्णन किया जाता है वह नाम कथा है, जैसे-यह स्त्री जैसे नाम से सुन्दर है वैसे ही यह रूप और गुणों से भी सुन्दर है, स्त्री संबंधी वेशभूषा आदी की चर्चा-जिस कथा में रहती है वह नेपथ्यकथा है, जैसे-उत्तरदिशा की स्त्रियों को धिक्कार है-जो अनेक वस्त्रों से आच्छादित रहा करती हैं, क्यों कि इस तरह रहने से इनका गौवन युवापुरुषों की आंखों को आनंदप्रदान नहीं करता है । स्त्रियों के परिजनों को लेकर जो कथाएँ कही जाती हैं वे परिजन कथाएँ हैं, जैसे-उस स्त्री का चेष्टिका जन-दासी जन रूप परि वार-भी बड़ा सुन्दर, निपुण, भावज्ञ, स्नेहयुक्त, दक्ष-व्यवहार-कुशल, विनीत एवं कुलीन है । साधु को ऐसी स्त्री संबंधी देशादि कथाएँ रागभाव से युक्त होकर नहीं करना चाहिये । तथा इसी तरह की और भी स्त्रियों से संबंध रखने वाली शृङ्गार रस एवं करुण रस

દુર્લભ છે. નામને અનુલક્ષીને જે કથામાં સ્ત્રી સંબંધી સૌંદર્યનું વર્ણન કરાયું હોય છે તે નામ કથા કહેવાય છે. કે “ આ સ્ત્રીનું નામ જોટું સુંદર છે જોટલી જ તે રૂપ અને ગુણમાં પણ સુંદર છે. સ્ત્રીની વેશભૂષા આદિની ચર્ચા જે કથામાં હોય છે તે નેપથ્ય કથા કહેવાય છે. જેમ કે “ ઉત્તરની સ્ત્રીઓને ધિક્કાર છે, જે અનેક વસ્ત્રોથી અ.અ.અ.દિત રહે છે, કારણ કે તે પ્રમાણે રહેવાથી તેમનું યૌવન યુવાનોની આંખોને આનંદ પ્રદાન કરતું નથી. ” સ્ત્રીઓનાં પરિજનોને અનુલક્ષીને જે કથા કહેવાય છે તે પરિજન કથાઓ છે. જેમ કે તે સ્ત્રીના ઠાસિજન રૂપ પરિવાર પણ ઘણો સુંદર, નિપુણ, ભાવજ્ઞ, સ્નેહાળુ, દક્ષ-વ્યવહાર કુશળ, વિનીત અને કુલીન છે ” સાધુએ એવી સ્ત્રી સંબંધી દેશાદિ કથાઓ રાગ ભાવથી યુક્ત થઈને કહેવી જોઈએ નહીં. તથા એ જ પ્રકારની સ્ત્રીઓ સાથે સંબંધ રાખનારી શૃંગાર રસ અને કરુણ રસ

સુદર્શિની ટીકા અંક ૪૪ સૂચી 'સ્ત્રીકથાવિરતિ'નામકદ્વિતીયભાવનાનિરૂપણમ્ ૮૧૫

ઘાડ્યાઓ ' સંયમબ્રહ્મવર્ચયાતોપવાતિકાસ્તાઃ કથાઃ, ' વંમચેરં ' વ્રહ્મચર્યમ્, 'અણુચરમાણેનં' અનુચરતા ન કહેવડા ' સ્વયં કથિતવ્યાઃ, ન=નાપિ ચ ' સુણે-યવ્યા ' અન્યસ્ય કથયતઃ શ્રોતવ્યાઃ ન ' ચિતિયવ્યા' ચિન્તિતવ્યાઃ, ન ચિન્તા-વિષયીકર્તવ્યાઃ । એવમ્ ' હત્થીકઠાવિરહસમિદ્જોગેન ' સ્ત્રીકથાવિરતિયમિતિયો-ગેન=સ્ત્રીણાં યાઃ કથાસ્તતો યા વિરતિસ્તદ્ભૂયો યઃ સમિતિયોગસ્તેન ભાવિતોઽન્ત-રાત્મા આરતમનાઃ-વ્રહ્મચર્યાસક્તમનાઃ, વિરતગ્રામધર્મઃ=નિવૃત્તમૈથુનભાવઃ । જિતેન્દ્રિયઃ=વશીકૃતેન્દ્રિયઃ, વ્રહ્મચર્યગુણઃ=નવવિધવ્રહ્મચર્યગુણિસહિતઃ, ઉત્તરાધ્યયનમૂ-ત્રપોદશાધ્યયનોક્ત દશવિધવ્રહ્મચર્ય સમાવિસ્થાનયુક્તો વા ભવતિ ॥ સૂચી ૭ ॥

પ્રધાનકથાઓં કો નહીં કહનાં ચાહિયે । તથા જિન કથાઓં સે સંયમ ઓર વ્રહ્મચર્ય કા ઘાન ઓર ઉપવાત હોતા હો એસી કથાઓં ભી વ્રહ્મચર્ય કો પાલન કરને વાલે સાધુ કો ન સ્વયં કહનાં ચાહિયે, ન સુનનાં ચાહિયે ઓર ન એસી કથાઓં કા વિચાર હી કરનાં ચાહિયે । (એવં હત્થી કઠાવિરહ સમિદ્જોગેન ભાવિઓં અંતરણ્યા વિરયગામધર્મમે જિંદિયે વંમચેર ગુત્તે ભવઈ) ઇસ પ્રકાર સે સ્ત્રીકથાવિરતિરૂપ સમિતિ કે સંબંધ સે ભાવિ-ત હુઆ જીવ વ્રહ્મચર્ય મેં આસક્ત મનવાલા હો જાતા હૈ ઓર ગ્રામધર્મ-મૈથુન ક્રિયા સે નિવૃત્ત હો જાતા હૈ, અતઃપ્રવ વહ જીવ જિતેન્દ્રિય બનકર નવવિધ વ્રહ્મચર્ય કી ગુણિ સે અથવા ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર કે સોઢહેવં અ-ધ્યયન મેં કહે હુઈ દશવિધ વ્રહ્મચર્ય સમાવિસ્થાન સે યુક્ત બન જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—ઇસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ને વ્રહ્મચર્ય વ્રત કી દ્વિતીય-ભાવના કા સ્વરૂપ પ્રકટ કિયા હૈ । ઇસમેં ઉન્હો ને રાગભાવ સે સ્ત્રીમાત્ર

પ્રધાન કથાઓ પણ કહેવી જોઈએ નહીં તથા જે કથાઓથી સંયમ અને બ્રહ્મચર્યના ઘાત અને ઉપવાત થતો હોય એવી કથાઓ પણ બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરનાર સાધુએ કહેવી ન જોઈએ સાંભળવી ન જોઈએ અને એવી કથાઓનો વિચાર પણ કરવો જોઈએ નહિ. “ એવં હત્થીકઠાવિરહસમિદ્જોગેન ભાવિઓ અંતરણ્યા વિરયગામધર્મમે જિંદિયે વંમચેરગુત્તે ભવઈ ” આ પ્રમાણે સ્ત્રી કથા વિરતિરૂપ સમિતિના યોગથી ભાવિત થયેલ જીવ બ્રહ્મચર્યમાં આસક્ત-મનવાળો બની જાય છે અને ગ્રામધર્મ-મૈથુનક્રિયાથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે, તેથી તે જીવ જિતેન્દ્રિય બનીને નવવિધ બ્રહ્મચર્યની શુભિથી અથવા ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના સોળમાં અધ્યયનમાં કહેલ દશવિધ બ્રહ્મચર્ય સમાવિસ્થાનથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે બ્રહ્મચર્ય વ્રતની ગીજી ભાવનાનું સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યું છે. તેમાં તેમણે રાગભાવથી સ્ત્રી માત્રની કથાઓ કહેવાનો

તૃતીયાં ભાવનામાહ—‘તદ્યં’ ઇત્યાદિ—

મૂલ્ય—તદ્યં નારીણં હસિય--ભણિય-ચિદ્વિય-વિષ્ણેક્ષિય
ગદ્વિલાસકીલિયં વિવ્વોદ્ ય નદ્ગીયવાદ્ય સરીર-સંટાણ
વળ્ણકરચરણનયણલાવળ્ણરૂવજોવળપયોધરાધરવથાલંકાર-
મૂસળાણિ ય ગુજ્જોવકાસિયાઈ અળ્ણાણિ ય એવમાદ્યાણિ
તવ સંજમવંભચેરથાઓવઘાદ્યાઈ અળ્ણચરમાણેણં વંભચેરં
ન ચક્ખુસા ન મળસા ન વયસા પત્થેયવ્વાઈ પાવકમ્માઈ
એવં ઇત્થીરૂવ વિરદ્ સમિદ્જોગેણ ભાવિઓ ભવદ્ અંતરપ્પા
આરયમળા વિરયગામધમ્મે જિદ્દિદ્દિ એવંભચેરગુત્તે ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘તદ્યં’ તૃતીયાં સ્ત્રીરૂપનિરીક્ષણવર્જનરૂપાં ભાવનામાહ—‘નારીણં’ નારીણાં
‘હસિયભણિયચિદ્વિયવિષ્ણેક્ષિયગદ્વિલાસકીલિયં’ હસિતભણિતચેષ્ટિતવિષેક્ષિત-

કી કથા કહને કા નિષેધ કિયા હૈ, કયોં કિ એસી વાતેં કામવર્ધક
હુથા કરતી હૈ, અતઃ બ્રહ્મચારી કો અપને બ્રહ્મચર્ય વ્રત મેં એકદેશ
અથવા સર્વદેશ સે વાધક એસી કોઈ બી વાત સ્ત્રિયોં કે બીચ મેં ઘેટકર
નહીં કાતી વાદિયે । હસ પ્રહાસ હસ બ્રહ્મચારી કા વ્રત હર સમય
સુરક્ષિત બના રહતા હૈ ॥ સૂ.૭ ॥

અવ સૂત્રકાર હસ વ્રત કી તૃતીય ભાવના કો કહતે હૈ—‘તદ્યં
નારીણં’ ઇત્યાદિ ॥

ટીકાર્થ—(તદ્યં) હસ વ્રત કી રક્ષા કરને વાની તૃતીય ભાવના
સ્ત્રી રૂપ નિરીક્ષણવર્જન કરને રૂપ હૈ । હસ મેં (નારીણં) સ્ત્રિયોં કે

નિષેધ કયોં છે, કારણ કે એવી વાત કામ વર્ધક હોય છે, તેથી બ્રહ્મચારીએ
પોતાના બ્રહ્મચર્ય વ્રતમાં એક દેશથી અથવા સર્વદેશથી વાધક એવી કોઈ
પણ વાત સ્ત્રીઓની વચ્ચે બેસીને કહેવી બેઠકો નહીં. આમ કરવાથી તે
બ્રહ્મચારીનું વ્રત સદાકાળ સુરક્ષિત બની બાકી છે ॥ સૂ. ૭ ॥

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની ત્રીજી ભાવના બતાવે છે. “તદ્યં નારીણં” ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—“તદ્યં” આ વ્રતનું રક્ષણ કરનારી ત્રીજી ભાવના સ્ત્રીનાં
રૂપનું નિરીક્ષણ કરવાનો પરિવાચ કરવાની છે. તેમાં “નારીણં” સ્ત્રીઓનાં

सुवर्णिनी टीका अ-४ सू ८ 'स्त्रीरूपनिरीक्षवर्जन' नामक दृतीयभावनानिरूपणम् ८१७

गतिविलासकीर्तितम्, तत्र हसितं=हास्यम्, भणितं=जल्पितम्, चेष्टितम्=हस्तपाद-
दम्पासादि, विमोक्षितम्=निरीक्षितम्, गतिः=गमनम्, विलासः=नेत्रजनितचेष्टा-
विशेषः, क्रीडितं=स्वसखीभिः सह खेलनम्, एषां समाहरद्वन्द्वः, तथा--
' विव्वोइयनदृगीयवाइयसरीरसंठाणवण्णकरचरणनयणलावण्यरूवजोवणपयोधराधर-
वत्थालंकारभूषणाणि य ' विव्वोक्तिनाट्यगीतवादित्रशरीरसंस्थानवर्णकरचरण-
नयनलावण्यरूपयौवनपयोधराधरवत्थालङ्कारभूषणाणि च, तत्र-विव्वोक्तिं=पूर्वो-
क्तलक्षणोविव्वोक्तः, नृत्यं=नर्तनम्, गीतं=गानम्, वादितं=वीणादिवादनम्, श-
रीरसंस्थानं=हस्तदीर्घादिशरीराकृतिः, वर्णः=गौरत्वादिलक्षणः, तथा-करचरणनय-
नलावण्यम्=करचरणनयनानां लावण्यं=सौन्दर्यम्, रूपं=स्वरूपम्, यौवनं=तारुण्यम्
पयोधरं=स्तनौ, अधरः=अधरोष्ठः, वस्त्राणि=प्रसिद्धानि, अलङ्काराः = हारादयः,
भूषणानि=मण्डनानि, एतेषां द्वन्द्वः, तानि । तथा-गुज्झोवकासियाई ' गुह्यावका-
शिकानि=गुह्यभूतालज्जनीयत्वान् स्थगनीया अवकाशा=सरीरावयवा इत्यर्थः, त
(हसितभणितचेष्टितविव्वोक्त्विष्वयगदविलासकीर्तियं) हास्य का, भणित
बोलने का, उनकी चेष्टाओं का, चितवन का, चाल का, नेत्र जनितचे-
ष्टाविशेषरूप विलास का, अपनीसखियों के साथ उनके खेल खेलने
का, तथा उनके (विव्वोइ य नदृगीइ-वाइय-सरीर-संठाणवण्णकरचरण-
नयण-लावण्यरूवजोवणपयोधराधरवत्थालंकारभूषणाणि य) विव्वोक्त
का, नृत्य का, उनके द्वारा गाये गये गीतों का उनके वीणादिवादन का,
उनके हस्त, दीर्घ आदि शारीरिक संस्थान का उनके गौर आदि वर्ण
का, कर-हाथ, चरण-पैर, नयन-नेत्र इनके लावण्य-सौन्दर्य का, रूप
का, यौवन का, उनके स्तनों का, उनके अधरों का, उनके द्वारा पहरे
हुए वस्त्रों का हार आदि अलंकारों का, भूषणों का तथा (गुज्झोव-
कासियाई) उनके कामोद्दीपक गुप्त अंगों का, तथा (एवमाइयाणि

“ हसितभणितचेष्टितविव्वोक्त्विष्वयगदविलासकीर्तियं ” हास्यतुं, अक्षित-आक्षीतुं,
तेमना हावलावतुं, चितवतुं, आलतुं, आंभिना धशाराइप विहासतुं, पोतानी
अभिधा साधेनी तेनी कीडतुं, तथा तेमना “ विव्वोइय नदृगीइवाइय
सरीर-संठाणवण्णकरचरणनयणलावण्यरूवजोवणपयोधराधरवत्थालंकारभूषणाणि य ”
विव्वोक्तुं, नृत्यतुं तेमना द्वारा गवातां गीततुं, तेमना वीष्वादि
वादतुं, तेमना हस्त, दीर्घ आदि शरीर आधारतुं, तेमना गौर आदि
वर्णतुं, कर-हाथ, अधर, नेत्र, आदिना सौंदर्यतुं, इयतुं, यौवनतुं तेमना
स्तनोतुं, तेमने पलेहेल वस्त्रतुं, हार आदि अलंकारतुं, आभूषणोतुं तथा
“ गुज्झोवकासियाई ” तेमना कामोत्तेजक गुप्त अंगोतुं, तथा “ एवमाइयाणि

एव गुह्यावकाशिकानि स्त्रीणां गुप्ताङ्गानीत्यर्थः । तथा-‘अण्णाणि य एवमाइयाणि’
अन्यानि च एवमादिकानि हस्मितादिसदृशान्यन्यान्यपि, ‘तवसंजमवंभवेरघाओव-
घाइयाइं’ तपः संयमब्रह्मचर्यघातोपघातकानि, ‘पावकम्माइं’ पापकर्माणि ‘वं-
भवेरं’ ब्रह्मचर्यम् ‘अणुचरमाणेणं’ अनुचरता ‘न चक्खुसा’ न चक्षुषा ‘न
मणसा’ न मनसा ‘न वयसा’ न वचसा ‘पत्थेयव्वाइं’ प्रार्थयितव्यानि=न
चक्षुषा द्रष्टव्यानि, न मनसा चिन्तयितव्यानि, न वचसा प्रार्थयितव्यानीत्यर्थः ।
एवम्=अनेन प्रकारेण ‘इत्थीरूवविरइसमिइजोगेण’ स्त्रीरूपविरतिसमितियोगेन=
स्त्रीणां यद् रूपं ततो या विरतिस्तद्गो यः समितिद्योगस्तेन भाविताऽन्तरात्मा=
जीवः ‘आरयमणा’ आरतमनाः=ब्रह्मचर्यासत्तचित्तो विरतग्रामधर्मो जितेन्द्रियो
ब्रह्मचर्यगुप्तश्च भवति ॥सू०८॥

पावकम्माइं તવસંજમવંભવેરઘાઓવઘાઈયાઈં) इसी प्रकार की और
भी पाप कर्मरूप बातों का कि जो तप, संजम एवं ब्रह्मचर्य व्रत को
एकदेश से अथवा सर्वदेश से घात करने वाली हों (वंभवेरं अणुचर-
माणेणं) ब्रह्मचर्य व्रत की आराधना करने वाले साधु को (न चक्खुसा)
राग संयुक्त होकर न आंखों से निरीक्षण करना चाहिये, (न मणसा)
न मन से विचार करना चाहिये, और (न वयसा) न वचन से
(पत्थेयव्वाइं) प्रार्थना करना चाहिये । (एवं इत्थीरूवविरइसमिइ
जोगेण भाविओ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मो जिइदिण वंभवेर-
गुत्ते भवइ) इस तरह से स्त्रीरूप निरीक्षण विरगिरूप समिति के योग
से संबंधित जीव ब्रह्मचर्य व्रत में आसक्त मनवाला ही जाता है और
ग्रामधर्म-भैशुन सेवन से निवृत्त हो जाता है । अन एव वह जीव-
जितेन्द्रिय बनकर नव विध ब्रह्मचर्य को गुप्ति से अथवा दशविध ब्रह्म-

પાવકમ્માઈં તવસંજમવંભવેરઘાઓવઘાઈયાઈં” એ પ્રકારની બીજી પણ પાપ
કર્મરૂપ વાતો કે જે તપ, સંયમ અને બ્રહ્મચર્યવ્રતનો એક દેશથી અથવા
સર્વદેશથી ઘાત કરનારી હોય “વંભવેરઅણુચરમાણેણં” બ્રહ્મચર્યવ્રતનું પાલન કરનાર
સાધુએ “ન ચક્ખુસા” રાગ યુક્ત ધર્મને તેમનું નિરીક્ષણ કરવું જોઈએ નહીં,
“ન મણસા” મનથી વિચાર કરવો જોઈએ નહીં અને “ન વયસા” વચનથી ન
“પત્થેયવ્વાઈં” પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. “એવં ઇત્થીરૂવ વિરસમિહજોગેણ ભાવિઓ
અંતરપ્પા આરયમણા વિરયગામધમ્મે જિહંદિણ વંભવેરગુત્તે ભવઈ” આ પ્રમાણે સ્ત્રીરૂપ
નિરીક્ષણ વિરતિરૂપ સમિતિના યોગથી ભાવિત એવ બ્રહ્મચર્યવ્રતમાં આસક્ત
મનવાળો ધર્મ બંધ છે, અને ગામધર્મ ભૈશુનના સેવનથી નિવૃત્ત ધર્મ બંધ છે.
તેથી તે એવ જિતેન્દ્રિય બનીને નવવિધ બ્રહ્મચર્યની સુપ્તિથી અથવા દશવિધ

સુદર્શિની ટીકા અ૦૪ સૂ૦૧, 'પૂર્વરતાદિવિરતિ'નામકચતુર્થભાવનાનિરૂપણમ્ ૮૧૧.

ચતુર્થભાવનામાહ—'ચઉત્થં' રૂપાદિ ।

સૂત્રમ્—ચઉત્થં પુઠ્ઠવરય—પુઠ્ઠવકીલિયપુઠ્ઠવસંગંથસંધુયા જે તે આવાહયિવાહચ્છોલકેસુ ય તિહિસુ જણેસુ ઉસ્સવેસુ ય સિંગારાગારચારુવેસાહિં હાવભાવલલિયવિકલેવવિલાસ સાલિણીહિં અણુકૂલભેમિયાહિં સદ્ધિ અણુમૂયા સયણસંપ-ઓગા ઉ ઉ મુહવરકુસુમસુરભિચંદણસુગંધવરવાસધૂવસુહફ-રિસવત્થમૂસગણુગોવવેયા રમ્મણિજ્ઞા :ઉજ્જગેજપરણહણદ્વગ-જહ્મહ્મમુદ્ધિયવેલંબગકહગપવગલાસગઆઙ્કલંલંખમંલતૂ-ણહ્લતુંવવીણિયતાલાયરપકરણાણિ ય વહૂણિ મહુર-સર-મીય-સુસ્સરાહં અણ્ણાણિ ય એવમાહયાણિ તવ-સંજમવંભ-ચેરઘાઓવઘાહયાહં અણુચરમાણેણં વંભચેરં ન તાહં સંમણેણ લંભા દ્ધું ન કહેઉં ન વિ ય સુમરેઉં જે, એવં પુઠ્ઠવરય પુઠ્ઠવ-કીલિય વિરહસમિહજોગેણ ભાવિઓ ભવહ અંતરપ્પા આર-યમણા વિરયગામધમ્મે જિહંદિણ વંભચેરગુત્તે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—'ચઉત્થં' ચતુર્થી—પૂર્વરતપૂર્વક્રોડિતસ્પરણવિરતિરૂપાં ભાવનામાહ—'પુઠ્ઠ-રયપુઠ્ઠવકીલિયપુઠ્ઠવસંગંથસંધુયા' પૂર્વરતપૂર્વક્રોડિતપૂર્વસંગ્રન્ધસંસ્તુતાઃ તવ-પૂર્વ તમ્-

વર્થ સમાધિ સ્થાન સે યુક્ત વન જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—ઇસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ને બ્રહ્મવર્થ વ્રત કી તૃતીય ભાવના કા કથન કિયા હૈ । ઇસ મેં રાગભાવ સે યુક્ત થનકર સાધુ કો સ્ત્રી કે રૂપાદિ નિરીક્ષણ કરને કા સર્વથા ત્યાગ કરના કહાગયા હૈ ॥સૂ૦ ૮॥

સમાધિસ્થાનર્થા યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—આ વ્રતદ્વારા સૂત્રકારે બ્રહ્મવર્થ વ્રતની ત્રીજી ભાવનાનું વર્ણન કર્યું છે. તેમાં રાગ ભાવથી યુક્ત થઈને બીના રૂપાદિનું નિરીક્ષણ કરવાનો સાધુએ પરિચાગ કરવો બેઠકે તે બતાવ્યું છે ॥ સૂ. ૮ ॥

=ગૃહસ્થાવસ્થાકાલિકી કામરતિઃ, પૂર્વક્રીડિતમ્=ગૃહસ્થાવસ્થાશ્રિતં સ્ત્રીભિઃ સદ્ ક્રીડનમ્, પૂર્વસંગ્રન્થસંસ્તુતાઃ=પૂર્વે=ગૃહસ્થાવસ્થાયાં યે સંગ્રન્થાઃ=શ્વસુરકુલસંબન્ધ-સંવદ્ધાઃ શ્યાલકચ્યાલિકાદયઃ શ્યાલકમાર્યાદયથ, તથા-સંસ્તુતાઃ દર્શનભાવ-ણાદિભિઃ પરિચિતાઃ, एषां द्वन्द्वः, एते श्रमणेन न द्रष्टुं न कथयितुं न वा स्मृतं लभ्याः इति परेण संबन्धः । तथा-‘ जे ते ’ ये ते ‘ आवाहविवाहचोलकेसु’ आवाहवि-वाहचूलकेषु, तत्र-आवाहो-वधावसगृहानयनम्, विवाहः=राणिग्रहणं, चूलकं

અથ હસ વ્રત કી ચૌથી ભાવના કો કહતે હૈં--‘ ચરત્યં પુન્વરયઃ’
 इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(ચરત્યં) બ્રહ્મચર્ય વ્રત કી પૂર્વરત પૂર્વક્રીડિત સ્મરણ-
 विरतिनाम की चौथी भावना इस प्रकार है—(जे ते) जो वे (पुन्वरय
 पुन्वकीलियपुन्वसंगंथसंयुरा) पूर्वरत गृहस्थावस्था में जो कामकेलि
 की गई हो वह पूर्वरत है । गृहस्थावस्था में जो स्त्रियों के साथक्रीडा की
 गई हो वह पूर्वक्रीडित है । तथा-गृहस्थावस्था में जिनके साथ श्वसुर,
 साले, साली, आदि का संबंध रहा हो, वे पूर्व संग्रन्थ हैं और जिनके
 साथ दर्शन भाषण आदि से अधिक परिचय रहा हो वे पूर्वसंस्तुत हैं ।
 इन सब का ब्रह्मचर्य महाव्रत धारण करने बाद साधु को न स्मरण
 करना चाहिये, न उनका कथन करना चाहिये और न संबंधी आदि
 जनों को देखने की लालसा ही रखनी चाहिये ! तथा (आवाहविवाह

હવે આ 'તની ચૌથી ભાવનાનું કથન કરે છે. "ચરત્યં પુન્વરય" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“ ચરત્યં ” બ્રહ્મચર્ય વ્રતની ચૌથી ભાવના “ પૂર્વરતપૂર્વક્રીડિત
 स्मरणविरति ’ નામની છે. તે આ પ્રમાણે છે--“ જે તે પુન્વરયપુન્વકીલિય
 पुन्वसंगंथसंयुरा ” પૂર્વરત-ગૃહસ્થાવસ્થામાં જે કામક્રીડા કરાઈ હોય તે પૂર્વરત
 કહેવાય છે. ગૃહસ્થાવસ્થામાં સ્ત્રીઓની સાથે જે ક્રીડા કરાઈ હોય તે પૂર્વક્રીડિત
 કહેવાય છે. તથા ગૃહસ્થાવસ્થામાં જેમની સાથે શ્વસુર, સાળા, સાળી આદિનો
 સંબંધ રહ્યો હોય તે પૂર્વ સંગ્રન્થ કહેવાય છે અને જેમની સાથે દર્શન,
 ભાષણ આદિથી વધારે પરિચય રહ્યો હોય તેઓ પૂર્વ સંસ્તુત કહેવાય છે.
 બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત ધારણ કર્યા પછી સાધુએ એ બધાનું સ્મરણ કરવું જોઈએ
 નહીં, તેમની વાત કરવી જોઈએ નહીં અને સંબંધી આદિ જનોને જોવાની
 લાલસા રાખવી જોઈએ નહીં. તથા આવાહવિવાહચોલકેસુ’ આવાહ--વધૂને વરના
 ઘેર લાવતી વખતે, વિવાહ પ્રસંગે, તથા બાગડોના ચૂડકમ’ સંસ્કારના

सुदर्शिनी टीका अ०३ भू०८ 'पूर्वतादिविरति' नामकचतुर्थभावनानिरूपणम् ८२१

=चूडारूपं=वालानां शिखाधारणम्, एषां द्वन्द्वः, तेषु तयोक्तेषु च=पुनः 'तिहिमु' तिथिषु=मदनत्रयोदशीप्रभृतिषु, तथा-'जण्णेषु' यज्ञेषु = नागादिपूजाप्रकरणेषु, तथा 'उत्सवेषु' उत्सवेषु=इन्द्रोत्सवादिषु च 'सिंगारामारचारुवेसाहि' शृङ्गारामारचारुवेसाभिः=शृङ्गाररस्य आगारभूता याधारुवेसाः=शोभन नैषध्यसंपञ्चास्ताभिः, तथा-'हावभावललियविक्खेवविलासमालिणीहिं' हावभावललितविश्लेषविलासशालिनीभिः-तत्र हावः=कामजनितो मुखविकारः, भावः=कामजनिताःचित्तसमुद्भातिः,तदुक्तम् 'हावो मुखविकारः स्याद् भावश्चित्तसमुद्भातिः' इति ललितम्=चेष्टाविशेषः, तदुक्तम्—

“ हस्तपादाङ्गविन्यासो भ्रूनेत्रौष्ठप्रयोजितः ।

सुकुमारो विधानेन ललितं तत्प्रकीर्तितम् ॥ १ ॥ ” इति ।

विश्लेषः—चेष्टाविशेषः, तल्लक्षणं त्विदम्—

अप्रयत्नेन रचितो, धम्मिल्लः श्लध्वन्धनः ।

एकांशदेशधरणैस्ताम्बुलललाञ्छनम् ॥ १ ॥

ललाटैकान्तलिखितां, विषमां पत्रलेखिकाम् ।

असमञ्जसविन्यस्त मज्जनं नयनावज्रयोः ॥ २ ॥

तथा—अनादर्यद्वत्वाद् ग्रन्थेर्जघनवाससः ।

वमुधालम्बितः प्रान्तः, स्कन्धात्स्वस्तस्तथाऽश्रुकः ॥ ३ ॥

जघने हारविन्यासो रक्षनायास्तथोरसि ।

इत्यवज्ञाकृतं यत्स्यादज्ञानादिवनण्डनम् ॥ ४ ॥

वितनोति परां शोभां स विश्लेष इति स्मृतः ॥ ”

विलासः—चेष्टाविशेषः, सतु—“ स्थानासनगमनानां हस्तभ्रूनेत्रकर्मणां चैव । उत्पद्यते विशेषो यः श्लिष्टः स तु विलासः स्यात् ॥ १ ॥ ” इति ।

चोलकेसु य) आवाह—बधू को घर के घर पर लाने के समय में, विवाह के अवसर में, चालको के चूड़ा (चोटी) बर्म संस्कार के प्रसंग में, तथा (तिहिमु) मदनत्रयोदशी आदि तिथियों में, तथा (जण्णेषु) नागादिकों की पूजा के अवसर रूप यज्ञों में, तथा (उत्सवेषु य) इन्द्रोत्सव आदि उत्सवों में, (सिंगारामारचारुवेसाहिं) शृंगाररस की घरभूतवनी हुई तथा सुन्दर वेषभूषा से सज्जित हुई ऐसी तथा (हावभावललिय-

प्रसंगमें तथा “तिहिमु” मदन त्रयोदशी आदि तिथियोंमें, तथा “जण्णेषु” नागादि केनी पूजना अवसररूप यज्ञोंमें तथा “उत्सवेषु य” इन्द्रोत्सव आदि उत्सवोंमें, “सिंगारामारचारुवेसाहिं” शृंगार रसना आगाररूप अनेसी तथा सुन्दर वेषभूषाथी सुसज्जित थयेसी तथा “हावभावललियविक्खेवविलाससा-

प्रांभः शाल्यन्ते शोभन्ते यास्तामिः, तथा-‘अणुकूलपेमिवाहिं’ अनुकूल-
प्रेमिकाभिः=अणुकूल=मनोऽभिरुचिकरं प्रेम=प्रीतिर्यासां ताभिः, एतादृशीभिः
‘सद्भि’ मार्धम्, ‘अणुभूया’ अनुभूताः=अनुभवविषयीकृताः ‘सम्पन्नसंप्रयोगा’
शयनसंप्रयोगाः=शयनानि च संप्रयोगाः=सम्पन्नार्थेति इतरेतरयोगद्वन्द्वः, शयन-
संप्रयोगाः ? इत्याह-‘उ उ मुहवरकुसुमसुरभिचंदनसुगंध-वरसाधूव-सुहकरिस-
वत्थभूसण-गुणोदवेया’ ऋतुमुखवरकुसुमसुरभिचन्दनसुगन्धवरसाधूव सुहकरिस-
वत्थभूसण-गुणोदवेयाः, तत्र-ऋतुमुखानि=ललोचितानि यानि वरकुसुमानि तथा-सुरभि-
चन्दनस्य सुगन्धो शोभनामोदयुक्तो वरः=श्रेष्ठो यो वासः=गन्धः सः, तथा-धूपः,
तथा-सुखस्पर्शानि यानि वस्त्राणि, तथा-धूपणानि च, तेषां च गुणास्त्वरूपेता-
स्ते श्रमणेन द्रष्टुं कथयितुं स्मर्तुं वा न योग्याः । तथा-‘रमणिज्जा उज्ज-गेज्ज-प-

विक्खेवविलाससालिणीहिं) हाव, भाव, ललित, विक्षेप और विलास
से सुहावना स्त्रियों के साथ तथा (अणुकूलपेमिवाहिं) जिनकी प्रीति
मन को सुदित करने वाली होती है ऐसी (इथीहिंसद्भि) स्त्रीयों के साथ
भोगे गये शयन संबंधी और संपर्क संबंधी पूर्वकालिक भोगों का कि
जो (उ उ मुहवरकुसुमसुरभिचंदन-सुगंध-वर-वासधूव-सुहकरिस-
वत्थभूसण-गुणोदवेया) ललोचित कुसुमों की सुगंधि आदि रूप गुणों
से विशेष रूप में आकर्षक होते थे, सुरभिचंदन की श्रेष्ठ गंध से जो
मनोमोहक बने रहते थे, कृष्णासुर आदि सुगंधित द्रव्यों की धूप के
संस्पर्श से जिनमें से महक उड़ा करती थी तथा वस्त्र और आभूषणों
के आडम्बर की छटा से जिन्हे भोगने लिए चित्त परबस लालायित
पन जाया करता था, उन सब साधु को कभी भी स्मरण नहीं करना
चाहिये, किसी से ऐसे भोगों की बातें नहीं करना चाहिये और न ऐसे

लिणीहिं ” हाव, भाव, विक्षेप अने विवशय्य शोभनी स्त्रीयोंनी साथे तथा
“अणुकूलपेमिवाहिं” जेनी प्रीति मनने आनंदित करनारी छेथ छे जेथी
“इथीहिंसद्भि” स्त्रीयोंनी साथे लोगयेल शयन संबंधी के संसर्ग संबंधी
पूर्व शक्ति लोगेतुं के जे ‘उ उ मुहवर-कुसुमसुरभिचंदन-सुगंध-वरसाधूवसुह-
करिसवत्थ-भूसण-गुणोदवेया ” ललोचित पुष्पोंना सुगंधी आदिरूप सुखेथी
विशेष आशर्पके थतुं छतुं, सुरभि चंदननी श्रेष्ठ गंधथी जे मनोहर गन्तुं
छतुं, कृष्णासुर आदि सुगंधित द्रव्योंना धूपना संसर्गथी जेनामां महक उछथा
करती छती तथा वस्त्र अने आभूषणोंना आडम्बरनी छथाथी जेने लोगवचने
भाटे मन ललचार्थ गथां करतुं छतुं, जे गंधी वाततुं साधुजे कदीपणु स्मरण
करवुं जेथजे नही, कोछनी साथे जेवा लोगोनी बात करवी जेथजे नही,

સુરશિની ટીકા અંબ સૂત્ર 'પૂર્વેતાદિવિતિ'નામકચતુર્થભાવનાનિરૂપણમ ૮૪૩

ભોગાંની ઓર લક્ષ્ય હી રખના ચાદિયે। કામ સે જો મુખ પર એક પ્રકાર
કી વિકૃતિ આ જાતી હૈં ઉસકા નામ હાવ હૈં। કામ સે ઉદ્ભવ જો ચિત્ત
મેં એક પ્રકાર કી ઉન્નતિ આ જાતી હૈં ઉસકા નામ ભાવ હૈં। એક વિશેષ
પ્રકાર કી ચેષ્ટા કા નામ લલિત હૈં। યહ ચેષ્ટા સ્ત્રિયોં કે હસ્ત, પાદ, શરીર,
ધૂ, નેત્ર ઓર ઓષ્ઠ આદિ મેં હોતી હૈં। વિશેષ નામ ચિત્ત કી અસાધધાની
કા હૈં। જય લલના જનોં કા ચિત્ત ઇમ વિશેષનામ કી ચેષ્ટાવિશેષ સે
યુક્ત હો જાતા હૈં તો ઉનમેં વિશેષ પ્રકાર કી ચેષ્ટાઈ જાગ્રન હોને
લગતી હૈં જૈસે વે અગની ચોટી કો ટીલી બાંધ હેતી હૈં। નીચી ઉનકી
શિથિલ વંચ વાલી હો જાતી હૈં। મસ્તક પર સિન્દૂર ચિન્દુ કી તગહ
કજ્જલ કી રેખા ઓર આંલોં મેં સિન્દૂર કી રેખા લગાલી જાતી હૈં।
અથવા આંલોં મેં જો અંત્રન લગતી હૈં વહ 'મી અન્ન વપન્ન રૂપ મેં લગ
હેતી હૈં'। ઇત્યાદિ સવ પ્રકાર કી ઉનકી અગ્રહન વિધિ અવજ્ઞા હુત હોતી
હૈં। ફિર 'મી' ઇસ સ્થિતિ મેં ઉનકી શોભા મેં ન્યૂનતા નહીં આતી હૈં।
સ્થાન, આસન, ગમન આદિ મેં જો એક પ્રકાર કી વિશેષતા આ જાતી
હૈં વહ વિલાસ હૈં। ઇસી તગહ (રમણિજ્ઞા-ઉજ્જયેજ્ઞા-પરણહણજ્ઞા-
જલમહાનુષ્ટિકવેલંગ-કહગપહગ-લાસગ-આદ્યસગ-લંક મંત્ર-તૂળદહ)

અને એવા ભોગોની તરફ લક્ષ્ય પણ રાખવું બેઠએ નહીં। કામ ભાવથી મૂખ
પર જે એક પ્રકારની વિકૃતિ આવી બંધ છે તેને 'હાવ' કહે છે. કામાતુર
ચિત્તમાં જે એક પ્રકારની ઉન્નતિ આવી બંધ છે તેને 'ભાવ' કહે છે એક
વિશેષ પ્રકારની ચેષ્ટાનું નામ લલિત છે. તે ચેષ્ટા સ્ત્રીઓના હાથ, પગ, શરીર
જૂ, નેત્ર અને ઓષ્ઠ આદિમાં થાય છે. ચિત્તની અસાધધાનીને વિશેષ કહે છે.
બ્યારે સ્ત્રીઓનું ચિત્ત આ વિશેષ નામની વિશિષ્ટ ચેષ્ટાથી યુક્ત થઈ બંધ છે
ત્યારે તેમનામાં વિશેષ પ્રકારની ચેષ્ટાઓ જાગૃત થવા માંડે છે. જેમ કે તેઓ
પોતાના ચોટલાને ઢીલો બાંધી લે છે, તેની નાડીનું અંધન શિથિલ થઈ બંધ
છે. મસ્તક પર સિન્દૂરની ચિન્દુની જગ્યાએ કાજળની રેખા અને આંખોમાં
કાજળને બદલે સિન્દૂરની રેખા લાગી બંધ છે. અથવા આંખોમાં જે આંજણ
આંજવામાં આવે છે તે પણ અસ્તવ્યસત રીતે અંજક બંધ છે. ઇત્યાદિ અથા
પ્રકારની તેમની મંડવવિધિ અવગણવાને યાત્ર છે છતાં પણ એની પરિસ્થિતિમાં
પણ તેમનાં રૂપમાં ન્યૂનતા આવતી નથી. સ્થાન, આસન, ગમન, આદિમાં જે
એક પ્રકારની વિશિષ્ટતા આવી બંધ છે તેનું નામ વિલાસ છે. એ જ રીતે
“રમણિજ્ઞા -- ઉજ્જયેજ્ઞા -- પરણહણજ્ઞા-જલમહાનુષ્ટિકવેલંગ-કહગપહગ લાસગ
આદ્યસગ-લંકમંત્ર-તૂળદહ-તુંવ વીળિય તાલાયર-પરણાણિય” સુંદર વાદ્ય અને

उरणडणट्टगजल्लमल्लमुट्टियवेल्लदगकहगपवगलासग— आइखवगल्लंखमंखतूण—इल्ल
तुंववीणिण्य तालायरपकरणाणि य' रमणीयातोद्यगेयप्रचुरनटनर्त्तकजल्लमल्लमी-
ष्टिकविडम्बककथकण्डकलासकाल्यायकलङ्ख-मङ्खल्लुणिक-तुम्भ-वीणिक-ता-
लाचरपकरणाणि च, तत्र-रमणीयं=मनोहरं यन् आनोयं=वाद्यं, गेयं=गानं, तथा
प्रचुराः ये नटाः=नाट्यकारकाः, नर्त्तकाः=नृत्यकारिणः, जल्लाः=चर्मरज्जुमन्त्र-
लम्ब्यक्रीडाकारकाः, मल्लाः=मल्लयुद्धकारिणः, मौष्टिकाः=मुष्टियुद्धकारिणः,
विडम्बकाः=विदूषकाः, कथकाः='कथक' इति प्रसिद्धाः, गान्धर्वविद्याविशारदाः,
प्लवकाः=कूटनकारकाः, लासकाः='लास्ये' इति नाटकविशेषकारिणः, आख्या-
यकाः=कथाकारकाः, लङ्खाः=महावंशाग्रभागमधिकृत्य क्रीडाकारिणः, मङ्खाः=
चित्रफलकहस्ताः भिक्षुकाः, तूणाः=तूणाभिधानवाद्यनियेषवादकाः, तुम्बवी-

तुंव-वीणिण्यतालाचरपकरणाणि य) रमणीय वाद्य और गेय की प्रक्रिया
को, तथा-नट-नाटककरने वाले नटों के, नाचने वाले नर्त्तकों के,
चर्म रज्जु का सहारा लेकर विविध प्रकार की क्रीडा करने वालों जहाँ
के, मल्ल युद्ध करने वाले मल्लों के, मुष्टि से युद्ध करने वाले मौष्टिकों के,
अनेक प्रकार के स्वांग धर कर जनता के चित्त को रंजित करने वाले
विदूषकों के, विविध प्रकार की लौकिक कथा कहने वाले कथकजनों
के, अथवा गान्धर्व विद्या में निपुण जनों के, कूटने, उड़लने में विशेष
निपुणता प्राप्त प्लवक जनों के, विशेष नाटकों को करने वाले लासक
जनों के, कहानी अथवा उपन्यास को कहने वाले आख्यायक मनुष्यों
के, बड़े २ वांसों के अग्रभाग पर चढ़कर विविध प्रकार की नटक्रीडा
करने वाले लङ्खजनों के, चित्रफलक, हाथ में लेकर इधर उधर फिरने
वाले भिक्षुक रूप मंखजनों के, तूणनामक वाद्य विशेष को बजाने वाले

गेयनी प्रक्रियाने, तथा नट-नाटक करनेवाले नटोंने नृत्यकारोंने, चर्मरज्जुमुनी
महदधी विविध प्रकारनी क्रीडा करनेवाले जड्डोंने, मल्लयुद्ध करनेवाले मल्लोंने,
मुष्टिधी युद्ध करनेवाले मौष्टिकोंने, अनेक प्रकारना वेप लधने जनतातुं मनोरं-
जन करनेवाले विदूषकोंने, विविध प्रकारनी लोककथा कहेनार कथाकारोंने, अथवा
गान्धर्व विद्यानां निपुण लोकोने, कूटनामां प्राप्त निपुणता धरावनार प्लवकोंने,
आस उत्सव प्रसंगे आस नाटको करनेवाले लासकोंने, कथा अथवा नवलकथा
कहेनार आख्यायकोंने, मोटां मोटा वांसनी रोधे बडीने विविध प्रकारना
नाट्य प्रयोगो करनेवाले लङ्खजनोंने, चित्रफलक हाथमां लधने आस तेज करनेवाले
भिक्षुकरूप मंखजनोंने, तूणनामनां ओक वाद्यने बजानेवाले तूणिकजनोंने, ताव

સુવર્ણીની ટીકા અં ૪ સુ. ૯૧ 'પૂર્વેતાદિવિરતિ'નામકચતુર્થભાષનાનિરૂપણમ્ ૮૨૫

જિકાઃ=તુમ્બવીણાવાદકાઃ, તાલચરાઃ=તાલં=હસ્તઘાતરૂપમાધરન્તિ ચે તે તથો-
ક્તાઃ, તાલવાદિનિ ઇત્યર્થઃ, એષાં દ્વન્દ્વઃ, તેષાં યાનિ પ્રકરણાનિ= પ્રક્રિયાઃ તાનિ,
તથા- 'વહ્નિ' વહ્નિ=વહ્નિવાનિ, 'મહુરસરગીયસુસરાઈ' મધુરસ્વરગીતસુ-
સ્વરાણિ=મધુરાઃ સ્વરાઃ ચેષાં તેષાં ગાયકાનાં યાનિ સુસ્વરાણિ ગીતાનિ તાનિ,
નિષ્ઠાન્તસ્ય પૂર્વનિષ્ઠાતઃ, કિં વહુના 'અળ્લાણિ ચ' અન્યાનિ ચ 'એવમાઈયાણિ'
એવમાદિકાનિ=એવમ્પ્રકારાણિ યાનિ તપઃ સંયમબ્રહ્મચર્યઘાતોપઘાતકાનિ 'તાઈ'
તાનિ બ્રહ્મચર્યમનુચરતા શ્રમણેન 'ન દદ્દું' ન દ્રદ્દું 'કહેડું' ન કથયિતું
'ન વિ ચ' નાપિ ચ 'સુમરેડું' સ્મરતું 'લઝ્મા' લઝ્માનિ=ઉચિતાનિ એવં 'પુ-
ન્વરચપુન્વકીલિયવિરહસમિદ્જોગે' પૂર્વતપૂર્વક્રોડિતવિરતિસમિતિયોગેન=તત્ત્વ,
પૂર્વત પૂર્વક્રોડિતાભ્યાં યા વિરતિસ્તદ્વ્યો યઃ સમિતિયોગસ્તેન ભાવિતોઽન્તરાત્મા
આસ્તમનાઃ=બ્રહ્મચર્યાસક્તમનાઃ=વિરતગ્રામ્યધર્મો જિતેન્દ્રિયો વ્રતચર્યગુપ્તશ્ચભવતિ ૧

તૃણિકજનોં કે, તુંબડી કી ચીંણાકો ચજાનેવાલે તુમ્બવીણાકોં કે, તાલ
ચજાકર જનતાકા ચિત્તરંજિત કરનેવાલે તાલચરોં કે, જિતને ભી કાર્ય હૈં
उनको. तथी-१ बहूणि महुरसरगीयसुसराई) और भी अनेकविध मधुर
स्वर वालोंके जितने भो सुस्वर संपन्न गीत हैं उनको तथा (अण्णाणि य
एवमाइयाणि) और अधिक क्या कहे इसी प्रकारके और भी जो (तव-
संजमयंभचेरवाओववाइयाइ) तप, संयम और ब्रह्मचर्य के घातक,
उपघातक कार्य हैं-उन्हें (बंभचेरं अणुचरमाणेणं समणेणं) ब्रह्मचर्यका
पालन करने वाले साधुजन को (न ताइ ददुं) नहीं देखना कल्पता है
(न कहे डं) न उनका कहना योग्य है और (न वि च सुमरेडं लज्मा)
न पूर्व में देखे गये ऐसे कार्यों को याद करना ही उचित है । (एवं
पुन्वरचपुन्वकीलियविरहसमिदजोगेण भाविओ अंतरप्पा आरयमणा

अल्लवीने जन्तातुं मनोरजन करनार तालचरो ते सौना लेटवां कार्यो छे तथा
“ बहूणिमहुरसरगीयसुसराई ” गीत पणु अनेक विध मधुर स्वरवाणाना
ले ले सुस्वर युक्त गीत छे तेभने तथा “ अण्णाणि य एव माइयाणि ” को
प्रकारना गीत पणु ले “ तवसंजमयंभचेरवाओववाइयाइ ” तप, संयम
अने ब्रह्मचर्यना घातक उपघातक कार्यो छे तेभने “ बंभचेरं अणुचरमाणेणं
समणेणं ” ब्रह्मचर्यनु पालन करनार साधुजनोअ “ न ताइ ददुं ” ओवा ते
कल्पतुं नथी. “ न कहेडं ” तेतुं कथन करतुं ते पणु अथोअ छे अने “ न
वि च सुमरे डं लज्मा ” पूर्वे देखेव तेवा कार्योनु स्मरण करतुं ते पणु अथोअ
छे. “ एवं पुन्वरच-पुन्व-कीलिय-विरह-समिद-जोगेण भाविओ अंतरप्पा आर-

અથ પશ્ચમી ભાવનામાહ—‘પંચમં’ इत्यादि—

મૂલમ્—પંચમં આહારપણીયણિદ્ધમોયણવિવજ્ઞણ સંજ્ઞણ
સુસાહૂ વવગયલ્લીરદહિસપ્પિનવણીયતેલગુડલંડમચ્છંડિય-
મહુલજ્ઞગવિગઈપરિચત્તકયાહારો ન દપ્પણં નવહુસો
ન નિહંગં ન સાયસૂવાધિયં ન લલ્લં તહા મોત્તવં
જહા સે જાયામાયાણ ભવઈ, ન ય ભવઈ વિવ્ભમો ય મંસણા
ય ધમ્મસ્સ, एवं पणीयाहारविरइसमिइजोगेणं भाविओ

વિરયગામધમ્મે જિહંદિણ વંમચેરગુત્તે ભવઈ) હસ પ્રકાર સે પૂર્વરત, પૂર્વક્રીડીતોં મેં વિરતિરૂપ સમિતિ કે યોગ સે ભાવિત અંતરાત્મા-જીવ-બ્રહ્મચર્ય મેં સ્થિર મન લાલ બન જાતા હૈ ઓર ગ્રામધર્મ સે મૈથુન-કૃત્ય સે-વિરક્ત હો જાતા હૈ । એસા વહ મહાત્મા અપની ઇન્દ્રિયોં કો જીત કર નવવિધ બ્રહ્મચર્ય કી ગુત્તિ સે અથવા દશવિધ બ્રહ્મચર્ય કે સમાધિસ્થાન સે યુક્ત બન જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—હસ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકાર ને બ્રહ્મચર્ય વ્રત કી ચૌથી ભાવના પ્રકટ કી હૈ । હસ મેં યહ કહા ગયા હૈ કિ બ્રહ્મચર્ય વ્રત કા પાલન કરને લાલે સાધુ કો પ્રવ્રજ્યા લેને કે પહિલે ગૃહસ્થાશ્રમ મેં ભોગે ગયે વિવિધ પ્રકાર કે ભોગોં કી યાદ નહીં કરની લાહિયે ! હસ ભાવના કા નામ પૂર્વરત પૂર્વક્રીડીત સ્મરણવિરતિ હૈ । હસી વિષય કા વિશેષ વર્ણન હસ સૂત્ર મેં કિયા ગયા હૈ ॥ સૂ. ૧. ॥

યમણા વિરયગામધમ્મે જિહંદિણ વંમચેરગુત્તે ભવઈ ” આ પ્રકારે પૂર્વરત, પૂર્વ-ક્રીડીતોંમાં વિરતિરૂપ સમિતિના યોગથી ભાવિત થયેલ અંતરાત્મા-જીવ બ્રહ્મ-ચર્યમાં આસક્ત મનવાણો બની બંધ છે અને ગ્રામધર્મથી-મૈથુન ક્રિયાથી વિરક્ત થઈ બંધ છે. એરો તે મહાત્મા પોતાની ઇન્દ્રિયોંને જીતીને બ્રહ્મચર્યની ગુત્તિથી અથવા દશવિધ બ્રહ્મચર્યના સમાધિસ્થાનથી યુક્ત થઈ બંધ છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે બ્રહ્મચર્ય વ્રતની ચોથી ભાવના પ્રકટ કરી છે. તેમાં એ બતાવવામાં આવ્યું છે કે બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું પાલન કરનાર સાધુએ કીધા લીધા ચઢી પડેલાં ગૃહસ્થાશ્રમમાં ભોગલેલ વિવિધ પ્રકારના ભોગોંને યાદ કરવા બેઠેલો નહીં. આ ભાવનાનું નામ “ પૂર્વરત પૂર્વક્રીડીત સ્મરણ વિરતિ ” છે. આ જ વિષયનું વધુ વર્ણન આ સૂત્રમાં કર્યું છે. ॥ સૂ. ૬. ॥

સુવર્ણી ટીકામં ૪ સૂ૦૧૦ પ્રણીતભોજનવર્જનનામકળામ્રમાવનાનિકૂળમ્ ૮૨૭

भवइ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जिइंदिए
बंभचेरगुत्ते ॥ सू० १० ॥

ટીકા—‘પંચમં’ પશ્ચમી પ્રણીતભોજનવર્જનરૂપાં ભાવનામાહ—‘આહારપ-
ણીયનિદ્ધમોયણવિવજ્જણ’ આહારપ્રણીતસ્નિગ્ધભોજનવિવર્જનઃ—આહારઃ = અન્ન-
નાદિઃ, સ ચ પ્રણીતઃ=પ્રગલ્ભસ્નેહચિન્દુશ્ચ, તથા—સ્નિગ્ધ=ચિક્ણં ચ તદ્ ભોજનં
ચ=સ્નિગ્ધભોજનમ્, અનયો દ્વિન્દુઃ, તસ્ય વિવર્જકઃ=પરિત્યક્તા, તથા ‘સંજણ’
સંયતઃ=સંયમવાન ‘સુસાહુ’ સુમાયુઃ=નિર્વાણસાધક યોગસાધનતત્પરઃ, તથા—
‘વચગયસ્તીરદહિસપ્પિનવણીયતેલગુડલ્લંઘમચ્છંદિયમ્હુલ્લગ્ગવિગિપરિચત્તકયાહારો’
વ્યપગતસ્તીરદધિતર્પિર્નવનીતતૈલગુડલ્લંઘમત્સ્યણિકમધુલાઘકવિકૃતિપસ્તિયત્તકૃતા
હારઃ—તત્ર—વ્યપગતાઃ=પરિહૃતાઃ ધીરં=દુધં, દધિ=પ્રસિદ્ધમ્, સર્પિઃ=ધૃતમ્,
નવનીતં=‘મક્કલન’ ઇતિ માપાપ્રસિદ્ધમ્, તૈલં પ્રસિદ્ધમ્, ગુડઃ=પસિદ્ધઃ લ્લંઘઃ=શર્કરા,

अब सूत्रकार इस व्रत की पांचवी भावना को कहते हैं—‘पंचमं-
आहारपणीय’ इत्यादि॥

ટીકાર્થ—(પંચમં) પાંચવીં ભાવના હસ વ્રત કી પ્રણીત ભોજન
વર્જન રૂપ હૈ, વહ હસ પ્રકાર સે હૈ—(આહારપણીયનિદ્ધમોયણવિવજ્જણ)
જો આહાર પ્રણીત—જિસમેં સે ઘૃત કી વિન્દુઈ નીચે ટપક રહી હૈં એસે
કામોદીપક તથા સ્નિગ્ધ—રસયુક્ત હો સાધુ કો વહ નહીં સ્નાના ચાહિયે।
કયોં કિ વહ (સંજણ) વહ સંયમવાલા હોતા હૈં ઓર (સુસાહુ) નિર્વાણ
સાધક મનોવાક્ષાય યોગ કે સાધન કરને મેં તત્પર રહતા હૈં,
હસલિયે ઉસકો (વચગયસ્તીરદહિસપ્પિનવણીયતેલગુડલ્લંઘમચ્છંદિય
મંહુલ્લગ્ગવિગિપરિચત્તકયાહારો) દૂધ, દહી, ધૃત, મક્કલન, તૈલ, ગુડ,

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની પાંચમી ભાવના બતાવે છે—“પંચમં આહારપણીય” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—“પંચમં” આ વ્રતની પાંચમી ભાવના “પ્રણીતભોજન” ત્યાગ
નામની છે. તે આ પ્રમાણે છે—“આહારપણીયનિદ્ધમોયણવિવજ્જણ” જે પ્રણીત, એટલે
કે જેમાંથી થીનાં ટીપાં નીચે ટપકતાં હોય એવો કામોદીપક તથા સ્નિગ્ધરસ
યુક્ત આહાર સાધુએ ખાવો બેઠે એ નહીં. કારણ કે તે “સંજણ” સંયમી હોય
છે અને “સુસાહુ” નિવાણના સાધક મનોવાક્ષાય યોગ સાધવાને તત્પર હોય છે
તેથી તેમણે “વચગયસ્તીરદહિસપ્પિનવણીયતેલગુડલ્લંઘમચ્છંદિયમ્હુલ્લગ્ગવિગિ-
પરિચત્તકયાહારો” દૂધ, દહીં, ધી, માખણ, તેલ, ગોળ, શર્કર, ખાંડ વગેરેથી

मत्स्यण्डिका=‘मिश्री’ति प्रसिद्धा च यस्मात्सः, तथा-मधुप्रसिद्धम्, खाद्यकं=‘खाजा’ इति प्रसिद्धम्, इत्यादि लक्षणाभिः विकृतिभिः परित्यक्तो यः सः, अन्योः कर्मधारयः, एतदूपो यः आहारः सकृतो येन स तथोक्तः, अन्तःप्रान्तभोजीत्यर्थः निष्ठान्तस्य पूर्वनिवातः, एतादृशः साधुः ‘न’ नैव ‘दर्पणं’ दर्पणं=दर्पकारकं भोजनं भुञ्जीत । तथा-‘न’ बहुसो ‘बहुसः’=दिनमध्येऽनेकवारं भोजनं कुर्वीत । तथा-‘न निद्रां’ नैत्यिकं-नित्यपिण्डं भुञ्जीत, तथा-‘न सायम्वाहिगं’ शाकस्यवाहिकं भोजनं भुञ्जीत । तथा-‘न खद्वं’ प्रचुरं भुञ्जीत । कथं तर्हि भोक्तव्यम्? इत्याह-‘तदा’ तथा ‘भोक्तव्यं’ भोक्तव्यम्, ‘जहा’ यथा—तद् भोजनं ‘से’ तस्य ब्रह्मचारिणः, ‘जायमायाए’ यात्रामात्रायै, यात्रायै=संयमयात्रानिर्वाहार्थं या मात्रा=आहारपरिमाणरूपा भगवन्निर्दिष्टा या यात्रामात्रा तस्यै,

शर्करा, मिश्री, इनसे रहित तथा मधु खाजा, इत्यादिरूप विकृतियोंसे रहित आहार करना चाहिये। अर्थात् साधुको अन्तःप्रान्तभोजी होना चाहिये। जो साधु इस प्रकार का आहार लेता है वह युक्त नहीं है—उसे (न दर्पणं) दर्पकारक भोजन नहीं करना चाहिये (न बहुसो) न दिन में अनेक बार भोजन करना चाहिये (न निद्रां) न उसे नित्य पिण्ड भोजी ही होना चाहिये और (न सायम्वाहिगं) न उसे शाक और दाल की अधिकतावाला भोजन ही करना चाहिये (न खद्वं) न उसको प्रचुरमात्रा में भोजन करना चाहिये। किन्तु इस प्रकार से भोजन करना चाहिये कि (जहा) जिससे वह भोजन (से) उस ब्रह्मचारी की (जायमायाए भवइ) यात्रा मात्रा के लिये हो अर्थात् संयम के निर्वाह के लिये हो। यात्रामात्रा का तात्पर्य है कि संयमनिर्वाह रूप यात्रा के लिये आहार का परिमाण जितना प्रसु ने निर्दिष्ट किया है वह आहार

रहित। तथा मधु, खाजा इत्यादि विकृतियोंसे रहित आहार करवे। ओंछे ओंछे ओंछे के साधुसे अन्तःप्रान्तभोजी थवुं ओंछे ओंछे। ओंछे साधु आ प्रकारने आहार ले छे तेले “न दर्पणं” दर्पकारक भोजन लेवुं ओंछे ओंछे नहीं। “न बहुसो” दिवसमां अनेक बार भोजन लेवुं ओंछे ओंछे नहीं। “न निद्रां” तेले नित्यपिण्ड भोजी थवुं ओंछे ओंछे नहीं, अने “न सायम्वाहिगं” तेले पधारे रात्रिशाक युक्त भोजन लेवुं नहीं। “न खद्वं” तेले पधारे प्रमाणमां भोजन करवुं ओंछे ओंछे नहीं। पछे ओंछी रीति भोजन करवुं ओंछे ओंछे के “जहा” ओंछी ते भोजन “से” ते अन्नचारीनी “जायमायाए भवइ” यात्रामात्राने भाटे ज होय, ओंछे के संयमना निर्वाहने भाटे ज होय। यात्रामात्रातुं तात्पर्य ओंछुं छे के संयम निर्वाहइय यात्राने भाटे लगवाने आहारतुं ओंछुं प्रमाण दर्शावुं

सुदर्शिनी टीका अ०४ सू०१० प्रणीतभोजनवर्जनं नामकपञ्चमभावनारूपणम् ८२९

संयमयात्रार्थमित्यर्थः, 'भवइ' भवति । एवं सति 'धम्मस्स' धर्मस्य विषये, 'विष्ममो ना' विभ्रमो=धातूपचयेन मनसोऽस्थिरत्वाद् भ्रतन्तिश्च न भवति, तथा—धर्मस्य 'भंसणा' भ्रंशना नाशश्च न भवति । एवम्=अनेन प्रकारेण 'पणीयाहारविरइसमिइजोगेण' पणीयाहारविरतिसमिति योगेन=पणीतो य आहारस्तस्माद् या विरतिस्तद्रूपो यः समितियोगस्तेन भावितोऽन्तरात्मा आरतमना विरतग्रामधर्मो जितेन्द्रियो ब्रह्मचर्यगुप्तश्च भवति ॥ सू०१० ॥

उतना ही होना चाहिये । ऐसा होने पर (धम्मस्स विष्ममो वा भंसणा य न य भवइ) धर्म के विषय में, धातु के उपचय से मानसिक अस्थिरता होने के कारण जो भ्रान्ति होती है वह नहीं हो सकती है, और न उसके धर्म का ध्वंस (नाश) ही हो सकता है । (एवं पणीयाहार-विरइसमिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्ममे जिइंदिण वंभचेरगुते भवइ) इस प्रकार प्रणीताहारविरतिरूप समिति के योग से भावित बना हुआ मुनि अपने द्वारा ग्रहीत ब्रह्मचर्य में संलग्न मनवाला बन जाता है और ग्रामधर्म-मैथुन से-विरत हो जाता है । इस प्रकार अपनी इन्द्रियों को जीत कर वह महात्मा नवविध ब्रह्मचर्य की गुप्तिसे अथवा दशविध ब्रह्मचर्यके समाधिस्थानसे युक्त बन जाता है ।

भावार्थ—इस सूत्रद्वारा सूत्रकार ने ब्रह्मचर्य व्रत को पांचवीं भावना प्रकट की है । इस भावना का नाम प्रणीताहार वर्जन है । ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने वाले साधु को ऐसा भोजन नहीं करना चाहिये जो

छे तेटला प्रभाणुभां ज तेआहार डोवो जेधंये. जेयुं थलां " धम्मस्स विष्ममो वा भंसणा य न य भवइ " धर्माना विषयभां, धातुना संअड थवाने कारणे मानसिक अस्थिरता थवार्थी जे भ्रान्ति थाय छे, ते थधं शक्ती नथी, " एवं पणीयाहारविरइसमिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्ममे जिइंदिण वंभचेरगुते भवइ " या प्रकारे प्रणीताहार विरतिरूप समितिना योगार्थी भावित थयेल मुनि पोते अडणु करेल प्रह्लचर्य व्रतभां आसक्त मनवाणो थधं जय छे जने ग्रामधर्म-मैथुनार्थी विरक्त थधं जय छे. या रीते पोतानी इन्द्रियोने उतानि ते महात्मा नवविध प्रह्लचर्यनी गुप्तिओ अथवा दशविध प्रह्लचर्यना समाधिस्थानार्थी युक्त जनी जय छे.

भावार्थः—या सूत्रद्वारा सूत्रकारे प्रह्लचर्यव्रतार्थी पांचमी भावनानुं स्पष्टीकरणु क्युं छे. या भावनानुं नाम " प्रणीताहार वर्जन " छे. प्रह्लचर्यव्रत धारणु करनार साधुज्ये जेयुं लोचन लेवुं न जेधंये के जे कामोदीपक रस युक्ता

અથોપસંહરન્નાહ—‘ એવમિણં ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—એવમિણં સંવરસ્સ દારં સમ્મં સંચરિયં હોઈ સુપ્પ-
ણિહિયં ઇમેહિં પંચહિં વિ કારણેહિં મળવયણકાયપરિરક્ખિ-
ણ્હિં ણિચ્ચં આસરણંતં एसो जोगो णेयव्वो पिइमया
મહમયા અળાસવો અકલુસો અચ્છિદ્ધો અપરિસ્સાઈ અસંકિ-
લિદ્ધો સુદ્ધો સવ્વજિણમણુણ્ણાઓ । एवं चउत्थं संवरदारं
ફાસિયં પાલિયં સોહિયં તીરિયં કિટ્ઠિયં સમ્મં આરાહિયં
આળાણ અણુપાલિયં ભવઈ । एवं नायमुणिणा भगवया
પણ્ણવિયં પરૂવિયં પસિદ્ધં સિદ્ધવરસાત્તણમિણં આઘવિયં
સુદેસિયં પસત્થં ચઉત્થં સંવરદારં સમત્તં તિવેમિ ॥સૂ૦૧૧॥

॥ इय पणहावागरणाणं चउत्थं संवरदारं समत्तं ॥

ટીકા—‘ एवं ’ એવમ્=પૂર્વોક્તપ્રકારેણ ‘ ઇણં ’ इदम् ‘ સંવરસ્સ ’ संवर-
स्य=वर्तुष्यस्य ब्रह्मचर्यनामकस्य संवरस्य ‘ દારં ’ द्वारं ‘ સમ્મં ’ सम्मन् ‘ સંચરિયં ’

कामोदीपक रसयुक्त हो । साधु तो अन्त प्रान्त भोजी होता है, अतः
उसको दर्पकारक भोजन का परित्याग करते हुए दिन में अनेक बार
भी भोजन नहीं करना चाहिये और न उसे नित्यपिंड भोजी ही होना
चाहिये । अधिक भोजन संयमाचार में प्रमाद और प्रणीत रसवाला
भोजन मानसिक अस्थिरताका कारण बनता है इसलिये उसे नित्य इस
प्रणीताहार विरतिरूप समितिके योगसे अवश्य भाविन रहना चाहिये॥१०॥

अथ सूत्रकार इस विषय का उपसंहार करते हुए कहते हैं—‘एव-

હોય. સાધુ તો અન્તપ્રાન્ત ભોજી હોય છે. તેથી તેણે દર્પકારક ભોજનનો
પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. દિવસમાં અनेક વાર ભોજન લેવું જોઈએ નહીં અને
તેણે નિત્ય પિંડ ભોજી પણ થવું જોઈએ નહીં. અધિક ભોજન સંયમાચારમાં
પ્રમાદ અને પ્રહીન રસવાળું ભોજન માનસિક અસ્થિરતાનું કારણ બને છે.
તેથી તેણે હંમેશા આ પ્રહીનાહાર વિરતિરૂપ સમિતિના યોગથી અવશ્ય
ભાવિત રહેવું જોઈએ. ॥ સૂ. ૧૦ ॥

સંચરિતં=સમ્યગાચરિતં, ‘ સુપ્પણિહિયં ’ સુપ્પણિહિતમ્ - એકાગ્રતયા સમારાધિતં ‘ હોઈ ’ ભવતિ । ‘ ઇમેહિ પંચહિં વિ ’ એમિઃ=અનુપદં પ્રોક્તૈર્પશ્ચભિરપિ ‘ કારણેહિં ’ કારણૈઃ=ભાવનારૂપૈઃ, કીદશૈઃ કારણૈરિત્યાહ— ‘ મળવચનકાયપરિરક્ષિણ્ણહિં ’ મનોવચનકાયપરિરક્ષિતૈઃ મનોશકાયૈઃ સમ્યક્ સમારાધિતૈઃ । ક્રિયત્કાલમ્ ? इत्याह—‘ णिच्चं ’ नित्यं=सर्वदा ‘ आमरणंतं ’ आमरणान्तं=मरणपर्यन्तम् ‘ एसो ’ एषः=पूर्वोक्तो ‘ जोगो ’ योगः=ब्रह्मचर्यरूपो ‘ जेयव्वो ’ नेतव्यः=पालनीयः, केन ? इत्याह—‘ अणासवो ’ अनाश्रवः ‘ अकलुसो ’ अकलुषः ‘ अच्छिदो ’ अच्छिद्रः ‘ अपरिस्ताई ’ अपरिस्तावी ‘ अरांकिञ्चिदो ’ असंक्षिप्तः ‘ सुद्धो ’ शुद्धः ‘ सब्ब-मिणं ’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(એવમિણં) इस प्रकार से यह (संवरस्स दारं) चौथा ब्रह्मचर्य नामका संवरद्वार (सम्मं संचरियं) अच्छी तरह से पाछे जाने पर (सुप्पणिहियं भवइ) स्थिर हो जाता है । इसलिये (इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवचनकायपरिरक्षिण्णहिं) मन, वचन और काय, इन तीनों योगों से अच्छी तरह सुरक्षित किये गये इन पांच — भावनारूप कारणों से (निच्चं) सदा (आमरणंतं) जीवनभरतक (एसोजोगो) यह ब्रह्मचर्यरूप योग (जेयव्वो) चित्त की स्वस्थता एवं हेयोपादेय की विवेकता से युक्त हुए मुनिजन को पालन करना चाहिये । क्योंकि कि यह ब्रह्मचर्यरूप योग (अणासवो) नूतनकर्मों के आगमन से रहित होने के कारण अनाश्रवरूप है, (अकलुसो) अशुभ अध्यवसाय से वर्जित होनेके कारण अकलुष है, (अच्छिदो) पाप का स्रोत

હયે સૂત્રદાર આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે—“ એવમિણં ” પ્રત્યાદિ ટીકાર્થ—“ એવમિણં ” આ પ્રકારે આ “ સંવરસ્સ દારં ” ચોથું બ્રહ્મચર્ય નામનું સંવરદ્વાર “ સમ્મં સંચરિયં ” સારી રીતે પાળવામાં આવે તો “ સુપ્પણિહિયં ભવઈ ” સ્થિર થઈ જાય છે. “ ઇમેહિં પંચહિં વિ કારણેહિં મળવચનકાયપરિરક્ષિણ્ણહિં ” મન, વચન અને કાય, એ ત્રણે યોગથી સારી રીતે સુરક્ષિત કરાયેલ એ પાંચ ભાવના રૂપ કરણોથી “ નિચ્ચં ” સદા આમરણંતં ” જીવન પર્યન્તના “ એસો જોગો ” આ બ્રહ્મચર્યરૂપ યોગ “ જેયવ્વો ” ચિત્તની સ્વસ્થતા અને હેયોપાદેયની વિવેકતાપૂર્વક મુનિ બનેલાં પાળવો એટલે, કારણ કે આ બ્રહ્મચર્યરૂપ યોગ “ અણાસવો ” નૂતન કર્મોનાં આગમન રહિત હોવાને કારણે અનાસવ છે “ અકલુસો ” અશુભ અધ્યવસાયથી રહિત હોવાથી અકલુષ છે, “ અચ્છિદો ” પાપનો સ્રોત તેનાથી છિન્ન થવાને કારણે અચ્છિદ્ર છે. “ અપરિસ્તાઈ ”

જિણમણુણાઓ ' સર્વજિનાનુજ્ઞાતઃ । એવમ્-એનેન પ્રકારે ' ચતુર્થં ' ચતુર્થં ' સં-
વરદારં ' સંવરદારં ' સંવરદારં ' ફાસિયં ' સ્પૃષ્ટં ' પાલિયં ' પાલિતં ' સોદિયં'
શોધિતં ' તીરિયં ' તીરિતં ' કિદિયં ' કીર્તિતમ્ , ' સમ્મં ' સમ્યક્ ' આરાદિયં'
આરાધિતમ્ ' આણા ' આજ્ઞાયા ' અનુપાલિયં ' અનુપાલિતં ' ભવઈ ' ભવતિ ।
એવમ્-એનેન પ્રકારે ' નાયમુણિયા ' જ્ઞાતમુનિના=જ્ઞાતવંશોદ્ભવેન મુનિના ' ભગ-
વયા ' ભગવતા મહાવીરેણ ' પ્ણવિયં ' પ્રજ્ઞાપિતં ' પરુદિયં પરુપિતં ' પસિદ્ધં'
ઇસસે છિન્ન હો જાને કે કારણ અછિદ્ર છે । (અપરિસ્માઈ) ચિન્દુરુપ
સે ભી કર્મરૂપ જલ ઇસમેં પ્રવેશ નહીં કર સક્તા છે ઇસલિયે યહ અપ-
રિસ્તાવી છે (અસંકલિદ્ધો) અસમાધિભાવ સે વર્જિત હોને સે યહ
અસંકલિદ્ધ છે (સુદ્ધો) કર્મમલ સે રહિત હોને કે કારણ શુદ્ધ છે, (સ-
વ્વજિણમણુણાઓ) સમસ્ત પ્રાણિયો કા ઇસસે હિત હોને કે કારણ
સમસ્ત અરહંત ભગવંતોં કા યહ માન્ય હુઆ છે. (એવં) ઇસ પ્રકાર સે
જો ઇસ (ચતુર્થં સંવરદારં) ચતુર્થ સંવર દાર કો (ફાસિયં) અપને
શરીર સે સ્પૃષ્ટ કરતે હેં, (પાલિયં) નિરંતર ઉપયોગપૂર્વક ઇસ કા સેવન
કરતે હેં (સોદિયં) અતિચારોં સે ઇસકો રહિત કરતે હેં, (તીરિયં)
પૂર્ણરૂપ સે ઇસકા સેવન કરતે હેં, (કિદિયં) દુમરોં કો ઇસકે પાલન
કરને કા ઉપદેશ દેને હેં (સમ્મં) ત્રીન કરણ ત્રીન યોગોં સે ઇસકો
ભલ્લીપ્રકાર સે (આણા) અનુપાલિયં ભવઈ) તીર્થંકર પ્રશ્નકો આજ્ઞાનુમાર હી
પાલિત હોતા છે । (એવં) ઇસ પ્રકાર સે (નાયમુણિયા ' ભગવયા મહા-

કર્મરૂપ જાણતું બિંદુ પણ તેમાં પ્રવેશ કરી શકતું નથી તેથી તે અપરિસ્તાવી છે.
“ અસંકલિદ્ધો ” અસમાધિ ભાવથી રહિત હોવાથી તે અસંકલિદ્ધ છે, “ સુદ્ધો ”
કર્મભગથી રહિત હોવાને કારણે શુદ્ધ છે. “ સવ્વજિણમણુણાઓ ” સમસ્ત
જીવોનું તેનાથી હિત થવાને કારણે સમસ્ત અર્હંત ભગવાનો દ્વારા તે માન્ય
થયેલ છે, “ એવં ” આ પ્રકારે જે આ “ ચતુર્થં સંવરદારં ” એવા સંવરદારને
“ ફાસિયં ” પેતાના શરીરથી સ્પર્શ કરે છે, “ પાલિયં ” નિરંતર ઉપયોગ
પૂર્વક તેનું સેવન કરે છે, “ સોદિયં ” અતિચારથી તેનું રક્ષણ કરે છે, “ તીરિયં ”
પૂર્ણ રીતે તેનું સેવન કરે છે, “ કિદિયં ” બીજાને તેનું પાલન કરવાનો ઉપદેશ
આપે છે, “ સમ્મં ” ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી તેનું સારી રીતે “ આરાદિયં ”
અનુપાલન કરે છે, તેમના દ્વારા આ યોગનું “ આણા અનુપાલિયં ભવઈ ”
તીર્થંકર ભગવાનની આજ્ઞાનુમાર પાલન થાય છે “ એવં ” આ પ્રકારે “ નાય
મુણિયા ભગવયા મહાવીરેણ ” જ્ઞાત વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ મુનિ ભગવાન મહા-

સુવર્ણિની ટીકા અં ૪ સૂં ૧૧ અધ્યયનોપસંહાર:

૮૩૩

પસિદ્ધં 'સિદ્ધવરસાસનમિગં' સિદ્ધવરસાસનમિદમ્, 'આવવિયં' આસ્થાતં
'સુદેસિયં' સુદેશિતં 'પસત્થં' પ્રશસ્તં 'ચરત્થં' સંવરદારં 'ચતુર્થં' સંવરદારં
'સમત્તં' સમાપ્તમ્ । 'તિથેમિ' ઇતિ વ્રવીમિ । અસ્ય સૂત્રસ્ય વ્યાખ્યાડ
પૂર્વવદ્ બોધ્યા ॥ સૂં ૧૧ ॥

॥ ઇતિ શ્રી વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્ગુહ્ય - પ્રસિદ્ધવાચકપદ્મદશભાષાકલિ-
તલલિતકલાપાલાપક-પ્રવિશુદ્ધમધ્યપથનૈકગ્રન્થનિર્માપક- આદિમાનમર્દક-
શ્રીશાહુ લઘ્વપતિકોલ્હાપુરરાજપ્રદત્ત 'જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય' પદભૂષિત-
કોલ્હાપુરરાજગુરુ-વાલબ્રહ્મચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકરપૂજ્યશ્રી
વાસીલાલવ્રતિરિચિતાયાં શ્રી પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રસ્ય સુદર્શન્યા
સ્થાયાં વ્યાખ્યાયાં સંસ્કૃતભાષાકે દ્વીતીયે-ભાગે વ્રહ્મચર્યનામકં
ચતુર્થ સંવરદારં સમાપ્તમ્ ॥ ૪ ॥

વીરેણ) જ્ઞાતવંશા મેં ઉત્પન્ન હુર મુનિ ભગવાન્ મહાવીર ને (પણ્ણવિયં)
ઇસ ચતુર્થ સંવરદાર કો શિષ્યોં કેલિયે સામાન્યરૂપ સે સમજાયા હૈ ।
(પરુવિયં) વાર મેં ભેદ-પ્રભેદ પૂર્વક ઉલ્લેખ કથન કિયા હૈ । (પસિદ્ધં)
ઇસીલિયે જિનવચન મેં ગ્રહ પ્રસિદ્ધ હુઆ હૈ । તથા (સિદ્ધવરસાસન-
મિગં) ભૂતકાલ મેં જિતને ખો સિદ્ધ હો ચુકે હૈં ઉનકા યહ પ્રધાન
આજ્ઞારૂપ શાસન હૈ । (આવવિયં) જેસા ભગવાન્ મહાવીર પ્રભુને
ઇસકે વિષય મેં સર્વભાવ સે કહ્તા હૈં ઓર (સુદેસિયં) દેવોં મનુજોં
તથા અસુરોં સે યુક્ત પરિપદા મેં ઇસકા ઉપદેશ દિયા હૈ । (પસત્થં)
સમસ્ત પ્રાણિયોં કા હિતકારક હોને સે પ્રશસ્ત-મંગલમય હૈ (ચરત્થં
સંવરદારં સમત્તં) યહ ચતુર્થ સંવરદાર સમાપ્ત હુઆ (તિથેમિ) હે
જંબૂ ! જૈસા મૈને ભગવાન સે સુના હૈં વૈસા હી મેં કહ્તા હું ।

વીરે “પણ્ણવિયં” આ ઓથા દારને શિષ્યોને માટે સામાન્ય રૂપે સમબોધુ
છે. “પરુવિયં” ત્યાર બાદ ભેદ પ્રભેદ પૂર્વક તેનું કથન કર્યું છે. “પસિદ્ધં”
તે કારણે જિનવચનમાં તે પ્રસિદ્ધ થયેલ છે. તથા “સિદ્ધવરસાસનમિગં”
ભૂતકાળમાં બેઠેલા સિદ્ધ થઈ ગયા છે તેમનું આ મુખ્ય આજ્ઞા રૂપ શાસન
છે. “આવવિયં” એવું ભગવાન મહાવીરે તેને વિષે સર્વે ભાવથી કહ્યું છે
અને “સુદેસિયં” દેવો, માણસો તથા અસુરોથી યુક્ત પરિપદામાં તેને
ઉપદેશ આપ્યો છે. “પસત્થ” સમસ્ત પ્રાણીઓને માટે હિતકારક હોવાથી પ્રશસ્ત
મંગલમય છે. “ચરત્થ” સંવરદાર સમત્તં” આ ઓથું સંવરદાર સમાપ્ત થયું. “તિથેમિ”
હે જંબૂ ! જેવું ભગવાનને મુખે સાંભળ્યું હતું તેવું જ તેનું કથન કર્યું છે.

પ્ર ૧૦૫

ભાવાર્થ—ઇસ ચતુર્થ સંવરદ્વાર કા ઉપસંહાર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ જો મુનિજન ઇસ ચતુર્થ સંવરદ્વાર કો મન વચન ઓર કાય, ઇન ત્રીન યોગોં સે શુદ્ધિપૂર્વક પાંચ ભાવનાઓં સહિત મરણપર્યંત પાલતે હૈં ઉનકે અશુભ અધ્યવસાય રુક જાતે હૈં । નવીન કર્મોં કા બંધ બંદ હો જાતા હૈ । સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા હોને લગતી હૈ । પાપોં કા સ્રોત રુક જાતા હૈ । યહ અપરિસ્ત્રાવી આદિ વિશેષણોં વાલા હૈ ત્રિકાલ-સમસ્ત અરહંત ભગવંતોં ને ઇસકા પાલન ક્રિયા હૈ । ઉન્હોં કે કથનાનુ-સાર ભગવાન મહાવીર પ્રમુને બી ઇસકા સ્વરૂપાદિ પ્રદર્શન પૂર્વકકથન ક્રિયા હૈ । ઇસ પ્રકાર શ્રી સુધર્માસ્વામી ને અપને શિષ્ય અંતિમ કેવલી શ્રી જંબૂ સ્વામી કો સમજાયા હૈ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

॥ ચતુર્થ સંવરદ્વાર સમાપ્ત ॥ ૪ ॥

ભાવાર્થ:—આ ચોથા સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે જે મુનિજન આ ચોથા સંવરદ્વારનો મન, વચન અને કાય એ ત્રણે યોગોની શુદ્ધિ પૂર્વક પાંચ ભાવનાઓ સહિત મરણ સુધી પાળે છે તેમનાં અશુભ અધ્યવસાય બંધ થઈ જાય છે. નવીન કર્મોનો બંધ પણ અટકી જાય છે. સંચિત કર્મોની નિર્જરા થવા માટે છે, પાપોનો સ્રોત અટકી જાય છે. તે અપરિસ્ત્રાવી આદિ વિશેષણો વાળું છે. ત્રિકાળવર્તી સમસ્ત અર્હંત ભગવાનોએ તેનું પાલન કરેલ છે. તેમના કથનાનુસાર ભગવાન મહાવીરે પણ તેના સ્વરૂપ આદિ દર્શાવીને તેનું કથન કર્યું છે. આ પ્રમાણે શ્રી સુધર્મા સ્વામીએ પોતાના શિષ્ય અંતિમ કેવલી શ્રી જંબૂસ્વામીને સમજાવ્યું છે. ॥ સૂ. ૧૧ ॥

॥ ચોથું સંવરદ્વાર સમાપ્ત ॥ ૪ ॥

॥ अथ पञ्चमं संवरद्वारं प्रारभ्यते ॥

व्याख्यातं ब्रह्मचर्यं नामकं चतुर्थं संवरद्वारम्, तद्धि सर्वथा परिग्रहविरत-
स्यैव संभवतीति क्रमप्राप्तं परिग्रहविरमणनामकं पञ्चमं संवरद्वारमभिधीयते ।
तस्येदमादिमं सूत्रम्—‘ जंबू ’ इत्यादि ।

मूलम्—जंबू ! अपरिग्रहसंबुद्धे य समणै आरंभपरिग्रा-
हाओ विरए कोहमाणमायालोभा, एगे असंजमे, दोचेव
रागदोसा, तिणिण य दंडा, गारवाय गुत्तीओ तिणिण,
तिणिण य विराहणाओ, चत्तारि कसाया, ज्ञाणसण्णा,
विगहा तहा य हुंति चउरो, पंच—किरियाओ, समिइ, इंदिय,
महव्वयाइं य ५, छल्लीवनिकाय, छच्चलेसाओ, सत्तभया,
अट्टमया, नवचेव य वंभचेरगुत्ती, दसप्पकारे य समणधम्ममे
एक्कारस उवासगाणं, बारस य भिक्खूणं पडिमा, तेरस
किरियाट्ठाणाइं, चउइस भूयगामा, पन्नरस परमाहम्मिया,
सोलस गाहा सोलस य, असंजम १७, अवंभ १८, णाय १९,
असमाहिट्ठाणा २०, सवला २१, य पेरीसहा २२ य, सूयगड-
ज्जयणा २३, देव २४, भावणा २५, उइस २६, गुण २७, कप्प २८,
पावसुय २९, मोहणिज्जं ३०, सिद्धाइगुणा ३१, य जोगसंगह
३२, सुरिणा ३३, तिच्चीसासायणा । आदि एक्काइयं करेत्ता
एगुत्तरियाए बुद्धीए वड्डिएसु तीसाओ जाव य भवेतिगाहिया ।
विरइपणिहिसु अविरईसु य अण्णेसु य एवमाइसु बहुसु ट्ठा-
णेसु जिणप्पसत्थेसु अवितहेसु सासयभावेसु अवट्ठिएसु संकं
कंखं निराकरित्ता सद्दहइ सासणं भगवओ अणिआणे अगारवे

અલુદ્ધે અમૂઢે મળવયળકાયગુત્તે જો સો વીર-વરવયળ-વિરઙ્ગ
પવિત્થર વહુવિહપગારો સંમત્તવિસુદ્ધવદ્ધમૂલો ધિડકંદો વિળય
વેડો નિગયતેલોક્ક વિડલજસનિચિયપીળપીવર-સુજાય-
સ્વંધો પંચમહવ્વયવિસાલસાલો ભાવળાતયંતજ્ઞાણસુભગ
જોગનાણપહ્લવરંકુરધરો વહુગુણકુસુમસમિદ્ધો સીલસુગંધો
અણળહયફલો પુળો ચ મોક્ષવરત્રીયસારો મંદરગિરિસિહર-
ચૂલિયા ઇવ ઇમસ્સ મોક્ષવરમુત્તિમગ્ગસ્સ સિહરમૂઠો સંવર-
પાયવો ચરિમં સંવરદારં ॥ ૧ ॥

ટીકા—‘જંબૂ’ હે જંબૂ ! ‘અપરિગ્ગહસંબુદ્ધે’ અપરિગ્રહસંવૃત્તઃ=પરિગ્રહઃ=
ધર્મોપકરણાતિરિક્ત વસ્તુગ્રહણમ્, ધર્મોપકરણે મૂર્છા ચ, તદ્વિચ્છોડપરિગ્રહાઃ,
તત્ર-સંવૃત્તઃ=સંલગ્નો યઃ સ ચકારાદ્ બ્રહ્મચર્યાદિ ગુણયુક્તશ્ચ યઃ સ, ‘સમણે’

પાંચર્વા સંવરદ્વાર પ્રારંભ

બ્રહ્મચર્ય નામ કા ચતુર્થ સંવરદ્વાર સમાપ્ત હો ચુકા । યહ બ્રહ્મચર્ય
નામકા ચતુર્થ સંવર ઉસો વ્યક્તિ કે હોતા હૈ જો પરિગ્રહ સે સર્વથા
ચિરત હોતા હૈ । ફસલિયે ક્રમ પ્રાપ્ત પરિગ્રહ વિરમણ નામ કા પાંચર્વા
સંવર દ્વાર કહા જાતા હૈ, ઉસકા યહ પ્રથમ સૂત્ર હૈ—‘જંબૂ’ ઇત્યાદિ ।

ધર્મોપકરણો સે અતિરિક્ત વસ્તુઓં કા ગ્રહણ કરના ઓર ધર્મોપકરણો
મેં મૂર્છાભાવ કા રાખના ફસકા નામ પરિગ્રહ હૈ । ફસ પરિગ્રહ સે જો
મિત્ર હૈ વહ અપરિગ્રહ હૈ । (જંબૂ) હે જંબૂ ! (અપરિગ્ગહસંબુદ્ધે ચ
સમણે) જો ફસ અપરિગ્રહ મેં સંલગ્નચિત્ત હોના હૈ ઇથે બ્રહ્મચર્ય આદિ

પાંચમા સંવરદ્વારનો પ્રારંભ

બ્રહ્મચર્ય નામનું ઓથું સંવત્તદ્વાર સમાપ્ત થયું. તે બ્રહ્મચર્ય નામનો
ચતુર્થ સંવર એ જ વ્યક્તિને થાય છે કે જે પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત બને
છે. તે કારણે અત્યુક્તમે આવતા પરિગ્રહ વિરમણ નામના પાંચમાં સંવરદ્વારનું
વર્ણન કરવામાં આવે છે, તેનું આ પહેલું સૂત્ર છે—“જંબૂ” ઇત્યાદિ—

ધર્મોપકરણો કરતાં વધારે વસ્તુઓ ગ્રહણ કરવી અને ધર્મોપકરણોમાં
મૂર્છાભાવ રાખવો તેને પરિગ્રહ કહે છે. આ પરિગ્રહથી જે ઉલટું છે તે
અપરિગ્રહ કહેવાય છે—“જંબૂ” ! “અપરિગ્ગહસંબુદ્ધે સમણે” જે આ અપરિ-
ગ્રહમાં આસક્ત ચિત્તવાળા હોય છે અને બ્રહ્મચર્ય આદિ શુભોર્થો યુક્ત હોય

શ્રમણો ભવતિ । એતદેવ વર્ણયેતે—‘આરંભ પરિગ્રહાઓ’ આરંભપરિગ્રહાન્-આરંભઃ =પૃથિવ્યાદ્યુપમર્દઃ, પરિગ્રહઃ=વાહ્યાભ્યન્તરભેદાદ્ દ્વિવિધઃ, તત્ત્વ-વાહ્યઃ પરિગ્રહઃ ધર્મોપકરણાતિરિક્તમિન્નવસ્તુગ્રહણં, ધર્મોપકરણેષુ મૂર્છાં ચ । આન્તરઃ પરિગ્રહ-સ્તુ-મિથ્યાવિરતિક્ષ્ણપ્રમાદાશુભયોગરૂપઃ, અનયોઃ સમાહારદ્વન્દ્વઃ, તસ્માદ્ ‘વિરણ’ વિરતો યઃ સ શ્રમણો ભવતિ । તથા યઃ ‘કોહમાણમાયાલોભા’ ક્રોધ-માનમાયાલોભાત્, અત્ર-સમાહારત્વાદેકત્વમ્ ‘વિરણ’ વિરતઃ સ શ્રમણો ભવતિ । અથૈકાદિ સંસ્થયા મિથ્યાત્વાદિ લક્ષણાઽઽભ્યન્તરપરિગ્રહવિરતિં વિશ્વદયન્નાદ્—‘એમે’ ઇત્યાદિ, ‘એમે અસંજમે’ એકોઽસંયમઃ—અવિરતિલક્ષણઃ, ‘દો ચેવ રાગ-દોસા’ દ્વો ચેવ રાગદ્વેષો । તથા—‘તિણિ ય’ ત્રયશ્ચ ‘દંડા’ દ્વન્દ્વઃ, તથા—ત્રીણિ ‘ગારવા ય’ ગૌરવાણિ ચ, ‘ગુત્તીઓ’ ગુપ્તયઃ, ‘તિણિ ય’ તિસ્રશ્ચ । તથા—ગુણો સે યુક્ત હોતા હૈ વહી શ્રમણ હૈ । યહ શ્રમણ (આરંભપરિગ્રહા-ઓ વિરણ) આરંભ ઓર પરિગ્રહ સે સર્વથા વિરત હોના હૈ । પૃથિવી આદિ જીવોં કા ઉપમર્દન જિન ક્રિયાઓં સે હોતા હૈ એ સ્વયં આરંભ હૈ । પરિગ્રહ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । ધર્મો-પકરણોં સે સિદ્ધ વસ્તુઓં કા અપનાના-પાસ મેં રાખના-તથા ધર્મોપક-રણોં પર મૂર્છાભાવ-મમત્વભાવ રાખના યહ વાહ્યપરિગ્રહ હૈ । મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય, પ્રમાદ ઓર અશુભયોગ, યે સઘ અભ્યન્તર પરિગ્રહ હૈ । શ્રમણ વહી હો સકતા હૈ જો આરંભ ઓર વાહ્યાભ્યન્તર પરિગ્રહ સે સર્વથા વિરત હોતા હૈ । (વિરણ કોહમાણલોભા) ઇસી તરહ જો ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ, ઇનસે વિરત હોતા હૈ વહી શ્રમણ કહલાના હૈ । (એમે અસંજમે, દો ચેવ રાગદોસા, તિણિ ય દંડા-ગારવાય, ગુત્તીઓ તિણિ, તિણિ ય વિરાહનાઓ, ચત્તારિકસાયા, જ્ઞાણસરણા, વિગદા તદ્વા

છે એ જ શ્રમણ છે. તે શ્રમણ “આરંભપરિગ્રહાઓ વિરણ” આરંભ અને પરિગ્રહથી તદ્દન વિરક્ત હોય છે. પૃથિવી આદિ જીવોનું ઉપમર્દન જે ક્રિયા-ઓથી થાય છે તે સઘજાને આરંભ કહે છે. પરિગ્રહના જે ભેદ છે—વાહ્ય પરિ-ગ્રહ અને અભ્યાન્તર પરિગ્રહ ધર્મોપકરણો સિવાયની વસ્તુઓ પાસે રાખવી તથા ધર્મોપકરણો ઉપર મૂર્છાભાવ, મમત્વભાવ રાખવો તે વાહ્યપરિગ્રહ છે. મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય, પ્રમાદ અને અશુભ યોગ એ જીવા અભ્યાન્તર પરિગ્રહ છે. જે વાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત હોય છે તે શ્રમણ ધર્મ શકે છે. “વિરણ કોહમાણમાયાલોભા” એ જ પ્રમાણે જ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભથી રહિત હોય છે તે જ શ્રમણ કહેવાય છે. “એમે અસંજમે, દોચેવ રાગદોસા, તિણિયદંડા-ગારવાય, ગુત્તીઓ તિણિ, તિણિ ય વિરાહનાઓ,

‘ तिणि य ’ तिस्रश्च ‘ विराहणाओ ’ विराधनाः । तथा-‘ चत्तारि ’ चत्वारः
 ‘ कसाया ’ कषायाः । तथा-चत्तारि ‘ ज्ञाणा ’ ध्यानानि, ‘ तहा य ’ तथा च
 ‘ चउरो ’ चत्तस्रः ‘ विगहा ’ विकथाः, ‘ हुंति ’ भवन्ति । तथा-‘ पंच ’ पञ्च
 ‘ किरियाओ ’ क्रियाः, तथा-पञ्च ‘ समिइंदियमहव्याइं य ’ समिणीन्द्रियमहा-
 व्रतानि च । पञ्च समितयः, पञ्चेन्द्रियाणि, पञ्च महाव्रतानि च । तथा-‘ छज्जी-
 यनिकाया ’ पञ्जीवनिकायाः । छच्चलेसाओ ’ पइ च लेख्याः । तथा-‘ सत्त-
 भया ’ सप्त भयानि । तथा-‘ अट्टमया ’ अष्टमदाः । ‘ नव चेव य ’ नव चैव च
 ‘ बंभचेरगुत्तीओ ’ ब्रह्मचर्यगुप्तयः । ‘ दसप्पकारे य ’ दशपकारश्च = दशविधः,
 ‘ समणधम्मै ’ श्रमण धर्मः । तथा-‘ एकारस ’ एकादश ‘ उवासगानं ’ उवास-
 कानां ‘ बारस य ’ द्वादश च ‘ भिक्खूणं ’ भिक्षुणां ‘ पडिमा ’ प्रतिमाः । ‘ तेरस ’
 त्रयोदश ‘ किरियाठाणाइं ’ क्रियास्थानानि । ‘ चउइस ’ चतुर्दश ‘ भूयगामा ’
 भूतग्रामाः । ‘ ‘ पन्नरस ’ परमाहम्मिया ’ पञ्चदश परमाधार्मिकाः । ‘ सोलसगाहा
 य हुंति चउरो) तथा ये जो असंयमादिक एक से लेकर तेतीस बोल
 है, जैसे-अविरतिरूप एक असंयम, दो राग और द्वेष तीन दण्ड, तीन
 गौरव, तीन गुप्ति, तीन विराधना, चार कषाय, चार ध्यान, चार संज्ञो,
 चार विकथा, (पंचकिरियाओ) पांच क्रिया, (समिइंदियमहव्याइं)
 पांच समिति, पांच इन्द्रिय, पांच महाव्रत, (छज्जीवनिकायछच्चलेसा-
 ओ सत्तभयाअट्टमया नव चेव य बंभचेरगुत्ती, दसप्पकारे य समण-
 धम्मै, एकारस उवासगानं बारसय भिक्खूणं पडिमा) छहजीवनिकाय
 छह लेख्या, सात भय, आठ मद, नौ ब्रह्मचर्य गुप्ति, दश प्रकार का
 श्रमणधर्म, ग्यारहश्रावकों की, बारह भिक्षुओं की प्रतिमाएँ, (तेरस
 किरियाठाणाइं, चउइस-भूयगामा, पन्नपरसरमाहम्मिया, सोलसगाहा-

चत्तारि कसाया, ज्ञाणसण्णा विगहातहा य हुंति चउरो ” तथा आ ओ असंय-
 मादिक ओकथी लछिने तेतीस ओल छे, ओवां के-अविरतिरूप ओक असंयम,
 ओ राग ओने द्वेष, त्रणु दंड, त्रणु गौरव, त्रणु गुप्ति, त्रणु विराधना, चार
 कषाय, चार ध्यान, चार संज्ञा, चार विकथा, “ पंच किरियाओ ” पांच क्रिया
 “ समिइंदियमहव्याइं ” पांच समिति पांच इन्द्रिय, पांच महाव्रत,
 छज्जीवनिकाय छच्चलेसाओ सत्तभया अट्टमया नवचैव य बंभचेरगुत्ती, दसप्पकारे
 य समणधम्मै, एकारस, उवासगानं बारसयभिक्खूणं पडिमा ” छ उपनिशय,
 छ लेख्या, सात लय. आठ मद, नव ब्रह्मचर्य गुप्ति, दश प्रकारनो श्रमण-
 धर्म, अगिआर श्रावकानी, बार भिक्षुओंनी प्रतिमाओ, “ तेरस किरियाठाणाइं,
 चउइस-भूयगामा पन्नपरसरमाहम्मिया, सोलसगाहा सोइसा य असंजम १७,

सुदर्शिनी टीका अ. ५ सू०१ परिग्रहविगमननिरूपणम्

८३९

य' षोडशगणा षोडशकानि च=माथेति षोडशमध्ययनं येषां तानि गाथाषोड-
शकानि सूत्रकृताङ्गस्य प्रथमश्रुतस्कन्धाध्ययनानि, तानि च षोडशसंख्यकानि । तथा
-सप्तदशविधः 'असंजमे' असंयमः । अष्टादशविधम्, 'अवंभ' अव्रत्तचर्यम् ।
तथा-एकोनविंशति संख्यकानि, 'णाय' ज्ञातानि=ज्ञाताध्ययनानि । विंशतिः
'असमाहिट्टाणा' असमाधिस्थानानि, एकविंशतिः 'सवला य' सवलाश्च ।
द्वाविंशतिः 'परीसहा य' परीपहाश्च । तथा-त्रयोविंशति संख्यकानि, 'सूयग-
डज्झयणा' सूत्रकृताध्ययनानि । चतुर्विंशतिः 'देवा' देवाः । पञ्चविंशतिः
'भावणा' भावनाः षड्विंशतिः 'उद्देश' उद्देशाः । सप्तविंशतिः 'गुण'
गुणाः=अनगारगुणाः । अष्टविंशतिः 'कप्पा' कल्पाः-आचारप्रकल्पाः ।
एकोनविंशतिः 'पावसुय' पापश्रुतानि । त्रिंशत्-'मोहणिज्जं' मोहनीयानि=
मोहनीयस्थानानि । एकविंशत्-'सिद्धाङ्गुणा' य' सिद्धादिगुणाश्च सिद्धसहभा-
विगुणाः । द्वाविंशत्-'जोगसंगह' योगसंग्रहाः, तथा-द्वाविंशत्-'सुरिदा'

सोलसा य असंजम १७, अवंभ १८, णाय १९, असमाहिट्टाणा २०,
सवला २१, य परीसहा २२ य, सूयगडज्झयणा २३) १३ क्रियास्थान,
१४ भूतग्राम, १५ परमाधार्मिक, १६ सूत्रकृताङ्गके प्रथम श्रुतस्कंधके अध्ययन,
१७ प्रकारका असंयम, १८ प्रकारका अव्रत्तचर्य, १९ ज्ञानाके अध्ययन,
२० प्रकारके असमाधिस्थान, २१ प्रकारके शवल, २२ परीपह, २३ सूत्र-
कृताङ्गके अध्ययन (देव २४, भावणा २५, उद्देश २६, गुण २७, कप्प
२८ पावसुय २९, मोहणिज्जं ३०, सिद्धाङ्गुणा ३१, य जोगसंगह ३२,
सुरिदा ३३, तिस्सीसासायणा) २४ देव, २५ भावना, २६ उद्देश, २७
अनगार गुण, २८ आचारप्रकल्प, २९ पापश्रुत, ३० मोहनीयस्थान, ३१
सिद्धसहभाविगुण, ३२ योगसंग्रह, ३३ सुरेन्द्र-भवनपरिचयों में २०,

अवंभ १८, णाय १९, असमाहिट्टाणा २०, सवला २१, य परीसहा २२ य,
सूयगडज्झयणा २३ " क्रियास्थान, १४ भूतग्राम, १५ परमाधार्मिक, १६
सूत्रकृताङ्गना प्रथम श्रुतस्कंधना अध्ययन, १७ प्रकारना असंयम, १८ प्रकारनुं
अव्रत्तचर्य, १९ ज्ञातानां अध्ययन, २० प्रकारना असमाधि स्थान, २१ प्रका-
रना शवल, २२ परीपह, २३ सूत्रकृताङ्गना अध्ययन, " देव २४, भावणा
२५, उद्देश २६, गुण २७, कप्प २८, पाव सुय २९, मोहणिज्जं ३०, सिद्धा-
ङ्गुणा ३१, य जोगसंगह ३२, सुरिदा ३३ तिस्सीसासायणा " २४ देव, २५
भावना, २६ उद्देश, २७ अनुगार गुण, २८ आचार प्रकल्प, २९ पापश्रुत,
३० मोहनीय स्थान, ३१ सिद्ध सहभावि गुण, ३२ योग संग्रह, ३३ सुरेन्द्र,

સુરેન્દ્રાઃ, ઢિશતિર્ભવનપતિષુ, દ્વાદશસુ કલ્પેષુ દશ, તત્ર-અષ્ટનુ કલ્પેષ્વઢ્રી, નવમ-
દશમયોરેકઃ, ંકાદશ દ્વાદશયોશ્ચેક ંતિ, ઢ્રી જ્યોતિષ્કેષુ, ચન્દ્રમૂર્યાનામસંખ્યા-
તત્ત્વેડપિ જાતિપ્રઢ્ણાદ દ્વાવેવ, ંવં દ્વાત્રિશદિન્દ્રાઃ । ‘તિત્તોસાધાયણા’ ત્રય-
શ્ચિંશદાશતનાઃ, અસંયમાધાશતનાન્તોનામેષાં વ્યાખ્યાસસ્યકસૂત્રસ્યારમસકૃત-
મુનિતોષળ્યાખ્યાયાં વ્યાખ્યાયાં દ્રઢ્ણ્યા । ંતે હિ ‘આદિ ંકાઇયં’ આઢ્રેકા-
દિકમ્=આઢ્રેઃ=પ્રથમતઃ ંકાદિકમ્=ંકદ્વિત્રિયાદિકં ‘કરેત્તા’ કૃત્વા=આશ્રિત્ય
‘ંકુત્તરિયાં’ ંકોત્તરિકયા=ંકઃ ઉત્તરે ઢસ્યાઃ સા તયા ‘વુઢ્ઢિં’ વુઢ્ઢયા
ક્રમશઃ ંકૈક વુઢ્ઢેત્ચત્યર્થઃ, ‘વુઢ્ઢિંસુ’ વર્ઢ્ઢિતેષુવુઢ્ઢિપ્રાપ્તેષુ સત્સુ ‘જાવ ઢ’
યાવચ્ચ ‘તિગાહિયા’ ત્રિકાધિકાઃ=ત્ર્યધિકાઃ ‘તોસં’ ત્રિશદ્=ત્રયશ્ચિંશદ્ ‘ભવે’
ભવન્તિ । અત્ર ‘ંંસુ’ ંતિ ગમ્યમ્, ંતેષ્વનુપદમુક્તેષુ અસંયમાદિષુ, તથા—
‘વિરઢ્ણપણિહિસુ’ વિરતિપણિધિષુ=વિરતયઃ=પ્રાણાતિપાતવિરમણાનિ, પ્રણિધયઃ=
પ્રણિધાનાનિ ચિત્તૈકાગ્રતારૂપાણિ, અનયોઢ્ઢન્દ્રઃ, તેષુ તથોક્તેષુ, તથા ‘અવિરઢ્ણ’
વારહ્કલ્પો મેં ૧૦=૮ આઢ કલ્પો મેં ૮; નવમેં દસવેં કલ્પમેં ૧ ગ્યારહ્કવેં
વારહ્કવેં ૧) જ્યોતિષિયોં મેં જાતિ કી અપેક્ષા ચંદ્ર ંરુર ંપ પ્રકાર
૩૨ । ંરુર આશાતના ૩૩ । ંન સઢકી વ્યાખ્યા આગ્રહ્યક સૂત્ર કી
પૂજ્યશ્રી ઢાસીલાલજી મહારાજદ્વારા કી ગઈ મુનિ-તોષળી નામકી ઢીકા
મેં કી ગઈ હૈ—અનઃ જિઢ્ઢાસુજન ંસ વિષયકો વઢાં સે ઢેખલેં । (આદિ
ંકાઇયં કરેત્તા) ંસ પ્રકાર ઢે પ્રથમ ંકાદિ સંખ્યાકો લેકર કે ક્રમશઃ
(ંગુત્તરિયાં વુઢ્ઢિં વુઢ્ઢિંસુ) ંકર કી વુઢ્ઢિસે વર્ઢ્ઢિત હોતે ૨ (તી-
સાંજાવ ઢ ભવે તિગાહિયા) તીન અધિક તોસ અર્થાન્ તેતીસ હો
જાતે હૈં । ંન અસંયમાદિ તેતીસ પ્રકાર તક કે સંખ્યા સ્થાનોં મેં તથા
(વિરઢ્ણપણિહિસુ) પ્રાણાતિપાત વિરમણરૂપ વિરતિયોં મેં, ચિત્ત કી

લગનપતિંઆમાં૨૦, આર કલ્પોમાં૧૦ (આઢ કલ્પોમાં૮, નવમાં અને દશમાં કલ્પમાં
૧ અને અગિયારં તથા આરમાં કલ્પમાં ંકે) જ્યોતિષિયોંમાં બતિની અપેક્ષાં
સૂર્ય અને ચંદ્ર ંસ ંે સુરેન્દ્ર. ંે રીતે કુલ ૩૨ સુરેન્દ્રો થયાં. અને
અશાતનાં ૩૩. આ બધાની વ્યાખ્યા આવશ્યક સૂત્રની પૂજ્ય શ્રી. ઢાસીલાલજી
મહારાજ દ્વારા કરાશેક મુનિતોષળી નામની ઢીકામાં આપેલ છે. તો જિઢ્ઢાસુ-
જન તે વિષયને તેમાંથી ંકેલ લે. “ આદિ ંકાઇયં કરેત્તા ” આ રીતે પહેલેથી
ંકાદિ સંખ્યાને લઢને ક્રમશઃ “ ંગુત્તરિયાં વુઢ્ઢિં વુઢ્ઢિંસુ ” ંકે ંકે
વધારતા જતાં “ તોસાંજાવ ઢ ભવેતિગાહિયા ” તેતીસ થઈ જાય છે. ંે
અસંયમાદિ તેતીસમાં પ્રકાર સુધીના સંખ્યા સ્થાનોમાં તથા “ વિરઢ્ણ પણિહિસુ ”
પ્રાણાતિપાત વિરમણરૂપ વિરતિંઆમાં, ચિત્તની ંકેશવ્રતારૂપ પ્રણિધાનોમાં

અવિરતિષુ=અવિરતિરૂપેણ ભગવતા કથિતેષુ પ્રાણાતિપાતાદિષુ ચ, તથા-‘અણેસુ
 ય’ અન્યેષુ ચ ‘એવમાદિષુ’ એવમાદિકેષુ=એવં વિષેષુ ‘વહુસુ દ્વાણેસુ’ વહુસુ
 સ્થાનેષુ=અનેકવિષેષુ પદાર્થેષુ સંસ્થાસ્થાનેષુ વા ચતુસ્ત્રિંશદાદિષુ, કીદૃશેષ્વેષુ ?
 ‘જિણપસન્થેસુ’ જિનમયસ્તેષુ=જિનકથિતેષુ, અતએ-‘અવિતહેસુ’ અવિત-
 થેષુ=સત્યેષુ, એન:-‘સાસયભાવેસુ’ શાશ્વતભાવેષુ=ઓષતોઽશ્વયસ્વભાવેષુ, અત-
 એ-‘અવટ્ટિએસુ’ અવસ્થિતેષુ=સર્વદા ભાવિષુ ‘સંકં’ શઙ્કાં=સન્દેહં, ‘કંલં’
 કાંક્ષા=પરમતવાંછાં ‘નિરાકરિત્તા’ નિરાકૃત્ય=દૂરીકૃત્ય શ્રમણે, ‘સદ્ધતિ’
 શ્રદ્ધાતિ ‘ભગવઓ’ ભગવતો જિનસ્ય ‘સાસણં’ શાસનમ્ કીદૃશઃ
 સન્ શ્રમણો જિનસ્ય શાસનં શ્રદ્ધાતીત્યાદ્ — ‘અનિયાણે’ અનિદાનઃ
 =દેવદુર્યાદિવાંછારહિતઃ, ‘અગારવે’ અગૌરવઃ=ઋદ્ધ્યાદિગૌરવવર્જિતઃ,
 ‘અલુદ્ધે’ અલુદ્ધઃ=વિષયેષ્વલમ્પટઃ ‘અમૂદે’ અમૂઢઃ, તથા-‘મળોચયણકાય-
 એકાગ્રતાચ્ચ પ્રણિધાનોં મેં (અવિરદસુ) ભગવાન કે દ્વારા અવિરતરૂપસે
 કથિત પ્રાણાતિપાત આદિકોં મેં તથા (અણેસુ ય એવમાદિષુ) ઓર
 ખી ઇસી તરફકે દૂસરે (વહુસુ દ્વાણેસુ) અનેક પદાર્થોં મેં અથવા (જિણ
 પસન્થેસુ) ચોતીસ આદિ સંસ્થાસ્થાનોં મેં જો કિ જિનકથિન હેં ઓર
 ઇસી કારણ (અવિતહેસુ) જિન મેં અસત્યતા કા થોડા સારખી સ્થાન
 નહીં, અર્થાત્ સર્વથા સત્ય હેં, તથા (સાસયભાવેસુ) સામાન્યકી અપેક્ષા
 જિનકા અશ્વય સ્વભાવ હેં, ઓર ઇસીસે (અવટ્ટિએસુ) જિનકી સત્તા
 સદા રહતી હેં ઉત્તમેં (સંકં) શંકા-સન્દેહો (કંલં) કાંક્ષા-પરમતવાંછા
 કો (નિરાકરિત્તા) દૂર કરકે જો શ્રમણ (અનિયાણે) નિદાન-દેવ-
 દુર્યાદિ પ્રાસિકી ઇચ્છા સે વિહીન બન કર (અગારવે) ઋદ્ધ્યાદિ ગૌરવ
 સે રહિત હો કર (અલુદ્ધે) વિષયોં મેં લમ્પટાસે રિત્ત હોકર ઓર

“અવિરદસુ” ભગવાન દ્વારા અવિરતરૂપે કથિત પ્રાણાતિપાત આદિ તથા
 “અણેસુ ય એવમાદિષુ” ખીલ્લ પણ એ જ પ્રકારના “વહુસુ દ્વાણેસુ”
 અનેક પદાર્થોંમાં અથવા “જિણપસન્થેસુ” ચોતીસ આદિ સંખ્યા સ્થાનોંમાં
 કે જે જિન કથિત છે અને એ જ કારણે “અવિતહેસુ” જેમનામાં અસત્ય-
 તાનું જરા પણ સ્થાન નથી એટલે કે જે સર્વથા સત્ય છે, તથા “સાસય
 ભાવેસુ” સામાન્યની અપેક્ષાએ જિનનો અશ્વય સ્વભાવ છે, અને તેથી જ
 “અવટ્ટિએસુ” જેની સત્તા સદા રહે છે, તેમનામાં “સંકં” શંકા-સન્દેહને
 “કંલં” કાંક્ષા-પરમત વાંચનાને ‘નિરાકરિત્તા’ દૂર કરીને જે શ્રમણ
 “અનિયાણે” નિદાન-દેવદુર્યાદિ પ્રાસિકી ઇચ્છાથી રહિત બનીને “અગારવે”
 ઋદ્ધ્યાદિ ગૌરવથી રહિત થઈને “અલુદ્ધે” વિષયોની લાલસાથી રહિત

ગુત્તે' મનોવચનકાયગુપ્તશ્ચ શ્રવણો ભવતિ । અથાપરિગ્રહસંવરં વૃક્ષોપમયા વર્ણયન્નાહ
 - ' જો સો ' યઃ સઃ=સંવરપાદપો યઃ સઃ સ ચરમં સંવરદ્વારમિતિ યોગઃ કીદશઃ
 સંવરપાદપઃ ઇત્યાહ—'વીરવરવચનવિરહપવિથરવહુવિહપ્પગારો ' વીરવરવચન-
 વિરતિપ્રવિસ્તરવહુવિવષકારઃ=વીરવરસ્ય=ભગવતો મહાવીરસ્ય યદવચનમ્=આજ્ઞા,
 તતઃ સકાશાદ યા વિરતિઃ=પરિગ્રહાન્નિવૃત્તિઃ સૈવ પ્રવિસ્તરો વિસ્તરયુક્તો વહુ-
 વિધઃ=અનેકવિધઃ—વિચિત્રવિવિધાપેક્ષયા ક્ષાયોપશમાદપેક્ષયા ચ પાદપપક્ષે મૂલક-
 ન્દાદપેક્ષયાજ્ઞેકવિધઃ પ્રકારઃ ભેદો યસ્ય સઃ, તથા—'સંમત્તવિસુદ્ધવદ્મૂલો '
 સમ્યક્તવવિશુદ્ધવદ્મૂલઃ=સમ્યક્તવમેવ=સમ્યગ્દર્શનમેવ વિશુદ્ધ = વદ્દ મૂલ યસ્ય
 (અમૂઢે) મૂઢતા સે વર્જિત હોકર તથા (મળવચનકાયગુત્તે) મન,
 વચન ઓર કાય કી સરલતા સે સંપન્ન વનકર (ભગવઓ) ભગવાન્
 જિનેન્દ્ર કે (સાસણ) શાસન કા (સદ્દહૃ) શ્રદ્ધાન કરતા હૈ વહી
 શ્રમણ સચ્ચા શ્રમણ હૈ । અવ સૂત્રકાર ઇસ અપરિગ્રહસંવર કા વૃક્ષ
 કી ઉપમા દેકર વર્ણત્ર કરતે હૈ—(જોસો) જો યહ અન્તિમ સંવરદ્વાર
 રૂપ સંવરવૃક્ષ હૈ વહ (વીરવરવચનવિરહપવિથરવહુવિહપ્પગારો)
 અન્તિમ તીર્થકર ભગવાન્ મહાવીર કી આજ્ઞા સે જો પરિગ્રહ સે જીવ
 કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ ઉમ રૂપ હૈ । યહ પરિગ્રહ સે નિવૃત્તિ હી ઇસ વૃક્ષ
 કે વિસ્તૃત અનેક પ્રકાર-ભેદ હૈ । તાત્પર્ય ઇસ કા યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર
 મૂલ, કન્દ આદિ કી અપેક્ષા કો લેહર પક હી વૃક્ષ વિવિધ પ્રકારો
 વાલા માના જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર યહ પરિભાગરૂપ અપરિગ્રહ બી વિચિત્ર
 વિવિધો કે ત્યાગ કી અપેક્ષા ઓર કર્મો કે ક્ષયોપશમ આદિ કી અપેક્ષા
 સે અનેક પ્રકાર કા હોતા હૈ । (સંમત્તવિસુદ્ધવદ્મૂલો) ઇસ વૃક્ષ કા-

બનીને અને “ અમૂઢે ” મૂઢતાથી રહિત થઈને તથા “ મળવચનકાયગુત્તે ”
 મન, વચન અને કાયની સરળતાથી યુક્ત બનીને “ ભગવઓ ” ભગવાન જિને-
 ન્દ્રના “ સાસણ ” શાસનનું “ સદ્દહૃ ” શ્રદ્ધાન કરે છે તે શ્રમણ જ સાચોશ્રમણ છે.

હવે સૂત્રકાર આ અપરિગ્રહ સંવરને વૃક્ષની ઉપમા આપીને તેનું વર્ણન
 કરે છે—“ જો સો ” જે આ છેવરના પરિગ્રહદ્વાર રૂપ અપરિગ્રહ સંવર વૃક્ષ
 છે તે “ વીરવરવચનવિરહપવિથરવહુવિહપ્પગારો ” અતિમ તીર્થકર ભગવાન
 મહાવીરની આજ્ઞાથી જે પરિગ્રહથી જીવની નિવૃત્તિ થાય છે તે રૂપ છે. તે
 પરિગ્રહથી નિવૃત્તિ લેવી એ જ આ વૃક્ષના વિસ્તૃત અનેક પ્રકાર-ભેદ છે. તેનું
 તાત્પર્ય એ છે કે જેમ મૂળ, કંદ આદિની અપેક્ષાએ એક જ વૃક્ષ જેમ અનેક
 પ્રકારે વાળું મનાય છે તેમ આ પરિભાગરૂપ અપરિગ્રહ પણ વિચિત્ર વિવ-
 યોના ત્યાગની અપેક્ષાએ તથા કર્મોના ક્ષયોપશમ આદિની અપેક્ષાએ અનેક
 પ્રકારનું હોય છે. “ સંમત્તવિસુદ્ધવદ્મૂલો ” સમ્યગ્દર્શન આ વૃક્ષનું વિશુદ્ધ

સુદર્શિની ટીકા ૪૦ ૫ સ્ક૦૨ પરિબ્રહ્મવિરમણનિરૂપણમ્

૮૪૩

સઃ, તથા-‘ ધિઃકંદો ’ ધૃતિકન્દઃ=ધૃતિઃ=ચિત્તસ્વાસ્થ્ય સૈવ કન્દો મૂલાધોભાગ-
રૂપો યસ્ય સઃ, તથા-‘ વિણયવેદ્ઓ ’ વિનયવેદિકઃ=વિનય એવ વેદિકા=વેદિ-
ર્યસ્ય સઃ, તથા-‘ નિગમયતેલ્લોકવિપુલજસનિચિપ્પીણપીઠરસુજાયસ્વંધો ’ નિર્ગત-
ત્રૈલોક્યવિપુલયશોનિચિત્તપીઠપીઠરસુજાતસ્કન્ધઃ=તત્ર નિર્ગતે=કાપ્તે ત્રૈલોક્યે યત્ત-
ન્નિર્ગતૈત્રૈલોક્યં લોકત્રયવ્યાપ્તમિત્યર્થઃ, एतादृशं यद् विपुलं=વિશાલં યશઃ=હયા-
તિસ્તદેવ નિચિત્તો=નિવિહઃ પીનો=મહાન્ પીઠર=પુષ્ટા મુજાત=સુનિષ્પન્નઃ સ્કન્ધો
યસ્ય સઃ, તથા-‘ પંચમહાવ્યવિસાલસાલો ’ પञ्चमहाव्रतविशालशालः=પંચમહા-
વ્રતાન્યેવ વિશાલાઃ=વિસ્તૃતાઃ શાલાઃ=શાસ્ત્રા યસ્ય સઃ, તથા-‘ ભાવનાતયંતઃજ્ઞા-
ણસુભગજોગનાણપલ્લવધરંકુરધરો ’ भावनातयंतज्ज्ञाणसुभगजोगनाणपल्लवधरंकुर-
धरः, તત્ર-ભાવનૈવ=અનિત્યત્વાદિચિન્તનલક્ષણૈવ ત્વગન્તઃ=ત્વમ્ભૂવોડવયશો યસ્ય
સઃ, ભાવનારૂપત્વચાસંપન્નઇત્યર્થઃ, તથા-‘ ધ્યાનમ્=ધર્મધ્યાનાદિ, શુભયોગાઃ=શુભ-
મનોશક્ત્યાવ્યાપારાઃ, જ્ઞાનં=બોધ્યઃ તામ્યેવ પલ્લવાદરાહુગશ્ચ તેપાં ધરો યઃ સઃ,
અનયોઃ કર્મધારયઃ, તથા-‘ વહુગુણકુસુમસમિદ્ધો ’ बहुगुणकुसुमसमृद्धः=વહ્યો યે

વિશુદ્ધ મૂલ સમ્યગ્દર્શન હૈ । (ધિઃકંદો) ચિત્તસ્વાસ્થ્યરૂપ ધૈર્ય હી ઇસ
કા કંદ હૈ, (વિણયવેદ્ઓ) વિનય હી ઇસકી વેદિકા-ઉત્પત્તિ ભૂમિ
હૈ । (નિગમય-તેલ્લોકવિપુલજસનિચિપ્પીણપીઠરસુજાયસ્વંધો) ત્રૈલોક્ય
મેં વ્યાપ્ત યશ હી ઇસકા નિવિહ, પીન-મહા-પીઠર-પુષ્ટા ઓર મુજાત-
સુહાવના-સ્કન્ધ હૈ । (પંચમહાવ્યવિસાલસાલો) પાંચ મહાવ્રત હી ઇસકી
વિશાલ શાસ્ત્રાઈ હૈ । (ભાવનાતયંતઃજ્ઞાણસુભગજોગનાણપલ્લવધરંકુર-
ધરો) અનિત્ય આદિ ભાવનાઈ હી ઇસકી ત્વચા-છાલ હૈ, ધર્મધ્યાન
આદિ ધ્યાન, મન, વચન ઓર કામ્ય કી શુભ પ્રવૃત્તિરૂપ, વ્યાપાર એવં
સમ્યક્જ્ઞાન, યે સચ હી ઇસકે પત્તે ઓર ઉત્તમ પલ્લવાહુર હૈ, (વહુગુણ
કુસુમસમિદ્ધો) ક્ષાન્ત્યાદિ અનેક ગુણોરૂપી પુણ્ય સે યહ સદા સમૃદ્ધ

મૂળ છે. “ ધિઃકંદો ” ચિત્ત સ્વસ્થતારૂપ ધૈર્ય જ તેતું કંદ છે. “ વિણય વેદ્ઓ ”
વિનય જ તેની વેદિકા ઉત્પત્તિની ભૂમિકા છે. “ નિગમયતેલ્લોકવિપુલજસ
નિચિપ્પીણપીઠરસુજાયસ્વંધો ” ત્રિલોકમાં વ્યાપ્ત યશ જ તેતું નિવિહ, પીન-મોટું-
પીઠર-મજબૂત અને સુખત-સુંદર થડ છે. “ પંચમહાવ્યવિસાલસાલો ” પાંચ
મહાવ્રત જ તેની વિશાળ શાખાઓ છે. “ ભાવનાતયંતઃજ્ઞાણસુભગજોગનાણ
પલ્લવધરંકુરધરો ” અનિત્ય આદિ ભાવના જ તેની છાલ છે, ધર્મધ્યાન આદિ
ધ્યાન, મન, વચન અને કામ્યની શુભ પ્રવૃત્તિરૂપ વ્યાપાર, અને જ્ઞાન, એ સૌ
તેના પત્તાં, અને ઉત્તમ પલ્લવાહુર છે. “ વહુગુણકુસુમસમિદ્ધો ” ક્ષાન્ત્યાદિ

ગુણાઃ ક્ષાન્ત્યાદિરૂપાસ્ત એવ કુમુમાનિ=પુષ્પાણિ તૈઃ સમૃદ્ધઃ, તથા ‘સીલસુગંધો’ શીલસુગન્ધઃ, શીલં સદાચારો વ્રહ્મચર્યં વા, તદેવ શોધનો ગન્ધો યસ્મિન્ સઃ, તથા—‘અણ્ઘ્વફલો’ અનાશ્રવફલઃ=આશ્રવો=નવકર્મોદયઃ, ન આશ્રવોડનાશ્રવઃ, સ એવ ફલં યસ્ય સઃ, આસ્રવનિરોધરૂપફલસમ્પન્ન इत्यर्थः, ‘પુણો ય’ પુનશ્ચ ‘મોક્ષવરવીયસારો’ મોક્ષવરવીજસારઃ=મોક્ષવરઃ=વરમોક્ષઃ=અવ્યાવાધ સુખ-રૂપઃ, તસ્ય વીજસારઃ=શ્રેષ્ઠ વીજરૂપઃ, તથા—‘મંદરગિરિસિંહરચૂલિયા ઇવ’ મન્દરગિરિશિંહરચૂલિકેવ મન્દરગિરેઃ=મેરુપર્વતસ્ય ચત્ શિખરં તસ્ય યા ચૂલિકા=ચૂડા સેવ, તથા ‘ઇમસ’ અસ્ય—પ્રસિદ્ધસ્ય ‘મોક્ષવરમુક્તિમગ્ગસ’ મોક્ષવર-મુક્તિમાર્ગસ્ય=મોક્ષઃ=સકલકર્મક્ષયલક્ષણઃ, તદર્થો વરઃ=શ્રેષ્ઠો મુક્તિરૂપો=નિર્લોભતા રૂપેવ માર્ગઃ=પન્થાસ્તસ્ય ‘સિંહરમૂઝો’ શિખરભૂતઃ एतादृशः ‘સંવરવરપાયવો’ સંવરવરપાદપઃ=સંવરઃ=આસ્રવનિરોધઃ, સ એવ વરપાદપઃ=શ્રેષ્ઠવૃક્ષોડસ્તિ । एता-दृशमिदं ‘ચરિમં’ ચરમમ્ = પશ્ચમ્ સંવરદ્વારેષ્વન્તિમમ્, ‘સંવરદારં’ સંવરદ્વારમ્, અસ્તિ ॥ મુ૦ ૧ ॥

બના રહતા હૈં । (સીલસુગંધો) સદાચાર અથવા વ્રહ્મચર્ય ઇત્યેકી સુહાવની ગંધ હૈ, અણ્ઘ્વફલો) આસ્રવ-નવીન કર્મોં કે આગમન કા જો રુકના હોતા હૈ વહી ઇસકા ફલ હૈ—ઇન ફળોં સે હી યહ યુક્ત બના હુઆ હૈ । (પુણો ય) ફિર (મોક્ષવરવીયસારો) અવ્યાવાધ સુખવાલે મોક્ષ કા યહ એક શ્રેષ્ઠ વીજ હૈ । (મંદરગિરિસિંહ ચૂલિયા ઇવ) સુમેરુ પર્વત કે શિખર કી ચૂલિકા કે સમાન હૈ (ઇમસ મોક્ષવરમુક્તિમગ્ગસ સિંહ-રમૂઝો) ઇસ પ્રસિદ્ધ સકલ કર્મક્ષય મોક્ષ કા જો નિર્લોભતારૂપ માર્ગ હૈ ઇસકા શિખરભૂત હૈ । (સંવરપાયવો) ઇસ તરહ કા યહ સંવરરૂપ શ્રેષ્ઠ વૃક્ષ હૈ । ઇસ પ્રકાર (ચરિમં સંવરદારં) પાંચ સંવર દ્વારોં મેં યહ અન્તિમ સંવર દ્વાર કહા ગયા હૈ ।

અનેક શુભો ઇધી પુષ્પોથી તે સદા સમૃદ્ધ રહે છે “ સીલસુગંધો ” સદાચાર અથવા વ્રહ્મચર્ય ન તેની સુંદર ગંધ છે, “ અણ્ઘ્વફલો ” આસ્રવ-નવા કર્મોના આગમનનું અટકવું-એજ તેનાં ફળ છે. એ ઇષોથી ન તે યુક્ત હોય છે. “ પુણોય ” વર્ણ. “ મોક્ષવરવીયસારો ” અવ્યાવાધ મુખવાળા મોક્ષનું તે એક શ્રેષ્ઠ વીજ છે. “ મંદરગિરિસિંહરચૂલિયાઇવ ” સુમેરુ પર્વતના શિખરની ટોચ સમાન છે, “ ઇમસ મોક્ષવરમુક્તિમગ્ગસ સિંહરમૂઝો ” એ પ્રસિદ્ધ સકળ કર્મક્ષય મોક્ષનો જે નિર્લોભતા રૂપ માર્ગ છે તે તના શિખર સમાન છે. “ સંવરપાયવો ” આ પ્રકારનું આ સંવરરૂપ હવે વૃક્ષ છે. આ પ્રકારે “ ચરિમં સંવરદારં ” પાંચ સંવરદ્વારમાંનું આ અન્તિમ સંવરદ્વાર કહેવાયું છે.

ભાવાર્થ—ચતુર્થ સંવર દ્વારા કે પ્રરૂપણ કે બાદ અવ સૂત્રકાર પંચમ સંવર દ્વારકા વર્ણન કર રહે છે. इसके वर्णन करने का प्रयोजन उन्होंने ने इस प्रकार कहा है कि जब तक जीव की बाह्याभ्यन्तर रूप परिग्रहसे निवृत्ति नहीं होती तब तक वह चतुर्थ संवरद्वाराका पूर्ण रूप से आराधक नहीं बनता है। धर्मोपकरणों के सिवाय अन्य पदार्थों का ग्रहण करना अथवा धर्मोपकरणों में मूर्च्छाभाव रखना इसका नाम परिग्रह है। मूर्च्छा का नाम आसक्ति है। वस्तु छोटी हो, बड़ी हो, चेतन हो चाहे अचेतन हो बाह्य हो या आन्तरिक हो कैसी ही हो, चाहे न भी हो, तो भी उसमें आसक्तिसे बंधे रहना—उसकी लगन में विवेक खो बैठना परिग्रह है। इस परिग्रहसे युक्त हुआ प्राणी क्रोध, मान, माया और लोभ कषायों से बंधा रहता है। राग द्वेष उसकी आत्मा में हिलोरे छेते रहते हैं। संयमके महत्त्व की गणना उसके चित्त में नहीं होती है। प्रभु द्वारा प्रतिपादित अपरिग्रह के सिद्धान्त की प्रतिष्ठा वह विचार नहीं कर सरता है, अतः सच्चे अर्थ में श्रमण वही है जो इस परिग्रह से दूर है—विरक्त है। अपरिग्रही जीवके लिये प्रभुका आदेश है कि वह प्रभु द्वारा प्रतिपादित शासन में न शंका करे न कांक्षा करे—

ભાવાર્થ—ચોથા સંવરદ્વારનું વર્ણન કર્યા પછી હવે સૂત્રકાર પાંચમાં સંવરદ્વારનું વર્ણન કરે છે. તેનું વર્ણન કરવાનો હેતુ તેમણે એવો બતાવ્યો છે કે જ્યાં સુધી બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી છવ નિવૃત્ત થતો નથી ત્યાં સુધી તે ચોથા સંવરદ્વારનો પૂર્ણ રીતે આરાધક બની શકતો નથી. ધર્મોપકરણો સિવાયના અન્ય પદાર્થોને અપનાવવા અથવા ધર્મોપકરણોમાં (મૂર્છા-ભાવ) મમત્ત્વભાવ રાખવો તેનું નામ પરિગ્રહ છે. મૂર્છા એટલે આસક્તિ. વસ્તુ નાની હોય કે મોટી હોય, જડ હોય કે ચેતન હોય, બાહ્ય હોય કે આન્તરિક હોય, ભલે જન્મ તેવી હોય, ભલે ન પણ હોય, તો પણ તેમાં અસંકલિતથી બંધાયે રહેવું—તેની લગનમાં વિવેકને શુભાવી બેસવો તે પરિગ્રહ ગણાય છે. આ પરિગ્રહ વાળો માણસ ક્રોધ, માન, માયા, અને લોભ કષાયો વડે બંધાયેલો રહે છે. રાગદ્વેષ તેના આત્મામાં તોફાન મચાવે છે. સંયમનું મહત્ત્વ તેના ચિત્તમાં નહીં જેવું હોય છે. પ્રભુ દ્વારા પ્રતિપાદિત અપરિગ્રહના સિદ્ધાન્તની પ્રતિષ્ઠાનો તે વિચાર કરી શકતો નથી, તેથી સાચો શ્રમણ તો એ જ છે કે જે આ પરિગ્રહથી વિરક્ત છે. અપરિગ્રહી છવને માટે પ્રભુનો આદેશ છે કે તે પ્રભુ દ્વારા પ્રતિપાદિત શાસનમાં શંકા ન કરે કે કાંક્ષા ન

वसस्थावरादि विषयकापरिग्रहं वर्णयति—‘उत्थ न’ इत्यादि ।

मूलम्—जस्थ न कप्पइ गान्नागरणगर—खेडकव्वडगडंब-
दोणमुहपट्टणासमगयं च किंचि अप्पं वा वट्ठं वा अणुं वा
थूलं वा तसथावरकायदव्वजायं मणसा वि परिघेत्तुं न
धनहिरण्णसुवण्णखेत्तवत्थुं, न दासीदास—भयक —पेसहय
गयगवेलगं वा, न जाणजुग्गसयणासणाइं, न छत्तकं,
न कोडिकं, नोवाणहं, न पेहुणवीयणतालियंटगा, ण यावि
अयतउयतंवसीसगकंसरयय—जायरूवमणिमुत्ताहारपुडग-
संखदंतमणिसिंसगसेलकायवरचेलचम्मपत्ताइं महारिहाइं पर-
स्म अज्झोववायलोभजणणाइं परिकड्डिउं गुणवओ; न यावि
पुप्फफलकंदमूलादिकाइं सणसत्तरसाइं सव्वधणणाइं तीहिं
वि जोगेहिं परिघेत्तुं ओसहभेसजभोयणट्ठयाए संजयाणं
किं कारणं अपरिमियणाणदंसणधरेहिं सीलगुगविगयतव-

केवल इनसे बिहीन होकर वह उनके द्वारा प्रतिपादित तत्त्वोंमें अपनी पूर्ण अडिग श्रद्धा रखे । प्रभुने जो यहाँ पर एक आदिसे लेकर तेनीस तक के संख्यास्थान कहे हैं, उनमें तथा अविरति आदि जो और भी स्थान कहे हैं उनमें निःशङ्कि भावसे श्रद्धा करनी चाहिए, तभी जा कर वह सच्चा श्रमण कहला सकता है । इत्यादि विषय को प्रतिपादन करते हुए सूत्रकारने इस अपरिग्रहरूप संवर द्वारकी विवेचना वृक्षकी उपमा समता लेकर की है ॥ सू० १ ॥

कहे. इकत तेनाथी रहित थईने ते तेमना द्वारा प्रतिपादित तत्त्वोंमें पोतानी पूर्ण तथा अडिग श्रद्धा रखे. प्रभुजी अर्द्धी के ओके आदिथी तकने तेनीस सुधीना संख्यास्थान बताव्या छे तेमनासां, तथा अविरति आदि के भीद पथु स्थान बताव्या छे तेमां निःशङ्कि भावथी श्रद्धा राखथी जेईजे, त्यारेज तेने साथी श्रमण कही शकय छे. इत्यादि विषयनुं प्रतिपादन करतां सूत्रकारे आ अपरिग्रह इय संवरद्वारने वृक्षनी उपमा आपनी तेनुं विवेचन कथुं छे. सू० १

સુવર્ણિની ટીકા અ૦૫ સૂ૦ ૨ ત્રસસ્થાવરાયપરિગ્રહનિરૂપણમ્

૮૪૭

સંજમનાયમેહિં તિત્થંકરેહિં સત્વજગજીવચ્છલેહિં તિલોય-
મહિણ્હિં જિણવરિંદિહિં એસ જોણી જગાણં દિટ્ઠા. ન કપ્પઈ
જોણી સમુચ્છિદોત્તિ । તેણ હિ વર્જેતિ સમણસીહા ॥સૂ૦૨॥

ટીકા—‘ જત્થ ’ યત્ર=પરિગ્રહવિરમણલક્ષણે ચરમસંવરદ્વારે ‘ ગામાગરણગ-
રસ્થેડકઞ્ચડમહંવદોણમુહપટ્ટણાસમગયં ’ ગ્રામાકરનગરસ્થેડકર્ષટમહમ્બદ્રોણમુખપ-
ત્તનાશ્રમગતં ચ, ગ્રામાદીનાં વ્યાપ્ત્યા પૂર્વવદ્ વોધ્યા, તેષુ મતં=સ્થિતં ચ ‘ કિંચિ ’
કિંચિત્=યિમપિ વસ્તુ ‘ અપ્પં વા ’ અપ્પં વા=અલ્પમૂલ્યકર્પદિકાદિકં વા ‘ વહું
વા ’ વહું વા=વહુમૂલ્યં રત્નાદિકં વા ‘ અણું વા ’ અણુ વા=પ્રમાણતો લઘુ મુક્તા
ફલાદિકં વા, ‘ થૂલં વા ’ સ્થૂલં વા=પ્રમાણતઃ સ્થૂલં કાષ્ટાદિકં વા, અન્ન સર્વં
ચ શબ્દો ત્રાડ્યકઃ, ‘ તસથાવરકાયદ્વજ્જાયં ’ ત્રસસ્થાવરકાયદ્વજ્જનાતં=તત્ર-
ત્રસકાય=શિષ્યાદિકં સ્થાવરકાયં=રત્નાદિકં. તદ્વપ્ દ્રવ્યજાતં ‘ મણસા વિ ’ મન-

અય સૂત્રકાર ત્રસ સ્થાવરવિષયક અપરિગ્રહ કા વર્ગન કરતે હૈ—

‘ જત્થ ન કપ્પઈ ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(જત્થ) જિસ પરિગ્રહવિરમણરૂપ અંતિમચરમસંવરદ્વારએ સ્થિત
સાધુ કો (ગામાગરનગરસ્થેડકઞ્ચડમહંવદોણમુહપટ્ટણાસમગયં ચ) ગ્રામ,
આકર, નગર, સ્થેડ, કર્ષટ, મહંબ, દ્રોણમુખ, પત્તન ઓર આશ્રમ, इनमें
रक्खी हुई, भूली हुई, पड़ी हुई (किं चि वि) कुछ भी चीज (अप्पं वा)
चाहे वह कोई आदि जैसी अल्पमूल्यवाली हो (वहुं वा) चाहे रत्ना-
दिक जैसी बहुमूल्यवाली हो (अणुं वा) चाहे छोटी हो (थूलं वा)
चाहे बड़ी हो, (तसथावरकायद्वज्जायं) चाहे त्रस, स्थावरकायरूप
द्रव्य जात हो—शिष्यादिक त्रसकाय हैं, रत्नादिक स्थावरकाय हैं’ उ-हें

હવે સૂત્રકાર ત્રસ સ્થાવર સળાંથી અપરિગ્રહનું વર્ણન કરે છે—

‘ જત્થ ન કપ્પઈ ’ ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—‘ જત્થ ’ જે પરિગ્રહ વિરમણરૂપ અંતિમ સંવરદ્વારનું આરાધન
કરતાં સાધુને “ ગામાગરનગરસ્થેડકઞ્ચડમહંવદોણમુહપટ્ટણાસમગયં ચ ” ગ્રામ,
આકર, નગર, સ્થેડ, કર્ષટ, મહંબ, દ્રોણમુખ, પત્તન અને આશ્રમ, તેમાં
રક્ષેલી, ભૂલી પડી રહેલી, પડી રહેલી “ કિંચિ વિ ” કેટલી પણ ચીજ
“ અપ્પં વા ” ભલે તે કોઈ આદિ જેવી નજીવી કીમતની હોય, “ વહુંવા ”
ભલે તે રત્નાદિ બહુ મૂલ્યવાન હોય, “ અણુંવા ” ભલે નાની હોય,
“ થૂલંવા ” કે મોટી હોય, “ તસથાવરકાયદ્વજ્જાયં ” ભલે ત્રસ, સ્થાવરકાય
રૂપ દ્રવ્ય જાત હોય—શિષ્યાદિક ત્રસકાય ગણાય છે, રત્નાદિક સ્થાવરકાય ગણાય

‘સાઽપિ પરિવેત્તું’ પરિગ્રહીતું ‘ન કપ્પઈ’ ન કલ્પતે ઇમમેવાર્થે વિશદયતિ. ‘હિર-
ણ્યસુવર્ણાલેષત્તવત્થું’ હિરણ્યસુવર્ણક્ષેત્રવસ્તુ મનસાઽપિ પરિગ્રહીતું ન કલ્પતે, તથા-
‘દાસીદાસમયકપેસહયગયગવેલગં વા’ દાસીદાસમૃતકપ્રૈષ્ઠ્યહયનજગવેલકં વા,
દાસીદાસ=મસિદ્ધમ્, મૃતકાઃ=વેતનં ગૃહીત્વા કાર્યકરઃ, પ્રૈષ્ઠ્યાઃ=કાર્યે સમુપ-
સ્થિતે ગ્રામાન્તરે પ્રેષणीય મૃત્યાઃ, હયાઃ=અશ્વાઃ, ગજાઃ પ્રસિદ્ધાઃ, ગવેલકાઃ=
મેવાઃ, एषां समाहार इन्द्राः, મનસાઽપિ પરિગ્રહીતું ન કલ્પતે. તથા-‘જાણજુગ-
સચળાસળાઈ’ યાન યુગ્યશયનાસનાનિ, યાન=સ્થાદિકમ્, યુગ્ય=વાહનયાત્રમ્,
શયન=શય્યા, આસન=પ્રસિદ્ધમ્, एतानि मनसापि परिग्रहीतुं न कल्पते। तथा-
‘ન છત્તકં’ ન છત્રકમ્=ન છત્રમ્, ‘ન કોડિકા’ ન કુણ્ડિકા=તમ્બુલુઃ મન-

(મળસા વિ પરિવેત્તું ન કપ્પઈ) સાધુ કો મન સે બી ગ્રહણ કરના યોગ્ય નહીં હૈ । અવ ઇસી વિષય કો સૂત્રકાર વિવદસ્વ સે સમજાતે હૈ-
જો અપરિગ્રહી સાધુ હૈ ડસકો (ન ધનહિરણ્યસુવર્ણલેષત્તવત્થું) હિર-
ણ્ય, સુવર્ણ, ક્ષેત્ર, વાસ્તુ તથા (ન દાસીદાસ મયક-પેસ-હય ગય-ગ-
વેલગંવા) દાસી, દાસ, મૃતક, પ્રૈષ્ઠ્ય, હય, ગજ, ગવેલક તથા-(ન જાણ
જુગસચળાસળાઈ) યાન, યુગ્ય, શયન, આસન, યે સવ વસ્તુનું મન
સે બી ચાહવે યોગ્ય નહીં હોતી હૈ । ગ્રામાદિક શબ્દોં કી વ્યાખ્યા
પહિલે સંબર હાસોં મેં કી જા ચુકી હૈ । વેતન લેકર જો કામ કરતે હૈ
વે મૃતક કહલાતે હૈ । તથા કાર્ય આને પર જો ડસકો નિમિત્ત બાહર
ગાંવ ભેજી જાલે હે વે પ્રૈષ્ઠ્ય કહલાતે હૈ । ગવેલક નામ મેવ કા હૈ । રથ
આદિ યાન ઔર વાહનમાત્ર યુગ્ય હૈ । ઇસી તરહ (ન છત્તકં) ધૂપનિવા-
રણ કરને કે લિયે છત્ર કો, (ન કોડિકં) પાની આદિ રમ્બને કે લિયે

છે, તેમને “મળસા વિ પરિવેત્તું ન કપ્પઈ” મનથી ગ્રહણ કરવાનું સાધુને માટે
યોગ્ય નથી. હવે એ જ વિષયને સૂત્રકાર વિસ્તારથી સમજાવે છે-એ સાધુ અપ-
રિગ્રહી છે તેણે “ ન ધનહિરણ્યસુવર્ણલેષત્તવત્થું ” હિરણ્ય, સુવર્ણ, ક્ષેત્ર, વસ્તુ
તથા “ ન દાસીદાસ મયક-પેસ-હય-ગય-ગવેલગંવા ” દાસ, દાસી, મૃતક, પ્રૈષ્ઠ્ય
હય, ગજ, ગવેલક તથા “ ન જાણજુગસચળાસળાઈ ” યાન, યુગ્ય, શયન,
આસન, એ વધી વસ્તુઓ મનથી પણ ગ્રહણ યોગ્ય છે.તી નથી. ગ્રામાદિક
શબ્દોની વ્યાખ્યા આગળના અવસ્થારોમાં આપવામાં આવી છે. પગાર લઈને
કામ કરનારને “મૃતક” નોકર કહે છે. તથા કામ પરતાં જેમને કાર્યને
નિમિત્ત ગહાર ગામ મોકલાય છે તેમને “પ્રૈષ્ઠ્ય” (હત) કહે છે. વેટાને
ગવેલક કહે છે. રથ આદિ યાન અથવા દરેક વાહનને “યુગ્ય” કહે છે. એ
જ પ્રકારે “ ન છત્તકં ” તડકારી અથવા માટે છત્રને તથા “ ન કોડિકં ”

सुहृदिनी दीका अ०५ सू०२ असंस्थावराद्यपरिग्रहरूपणम्

८४९

सोऽपि परिग्रहीतुं कल्पते । तथा न ' उवाणहं ' उपानहम्-उपलक्षणत्वात्पादुका-
मोजादिकं चाऽपि परिग्रहीतुं न कल्पते, तथा-न 'पेहुणवीयणतालियंटगा' पेहुण
व्यजनतालवृत्तकानि, पेहुणं=मयूरपिच्छम्, व्यजनं=वंशादि निर्मितम्, ताल-
वृत्तकं=तालपत्रनिर्मितं व्यजनम्, एतानि ' पंवा ' इति भाषाप्रसिद्धानि, एषामि-
तरेतरयोर्मन्त्रः तानि मनसापि परिग्रहीतुं न कल्पन्ते, तथा-'ण यावि' न
चापि ' अयत्तउयत्तंसीसकंसरययजायरुवमणिमुत्ताहारपुडगसंखदंतमणिसिंगसेल-
कायवरचेलचम्मपत्ताहं ' अयत्तुताग्रसीसकंसरययजतरुवरूपमणिमुत्ताहारपुटक-
शङ्खदंतमणिशृङ्खलीकान्तश्चेलचम्मपात्राणि, तत्र = अयो = लोहः, त्रपु=वज्रम्,
' कथीर ' ' रांगा ' प्रति प्रसिद्धम्, ताग्रं=प्रसिद्धम्, सीसं=' सीसा ' इति प्र-
सिद्धम्, दांस्यम्=त्रपुताग्रयोर्मणं द्रव्यम्, रजतम्=' चान्दी ' प्रसिद्धम्, जात-
रूपम्=सुवर्णम्, मणयः=इन्द्रनीलाद्याः, मुक्ताः=मुक्ताफलानि, हारपुटकं=लोह-
विशेषः, शङ्ख=प्रसिद्धः, दन्तमणिः=गजमस्तकसमुत्पन्नोमणिः, शृङ्खलं=हरिणमभुतीनां
कमण्डलु भी वह नहीं रखता है । (नोवाणहं) जूते, खडाऊँ आदि भी
वह रखने की इच्छातक नहीं करता है । (न पेहुण वीयण तालियंटगा)
पेहुणमयूरपिच्छ, वंश शलाकादिनिर्मित वीजना, तालपत्र निर्मित व्यजन
-पंवा, इन्हें भी वह रखने की मन से भी चाहन नहीं करता है । (ण
यावि अयत्तउयत्तंसीसकंसरययजायरुवमणिमुत्ताहारपु-
डगसंखदंतमणि-दिम-सेल-कायवर-चेल-चम्म-पत्ताहं गुणवओ
परिकङ्कितं) लोहे का पात्र, त्रपु-रांगा का पात्र, ताँबे का पात्र, सीसा
का पात्र, काँसे का पात्र, चाँदी का पात्र, सुवर्ण का पात्र, इन्द्रनील आदि
मणि का पात्र, मुक्ताफल-नोती का पात्र, हारपुटक-लोहविशेष का
पात्र, शंख का पात्र, गजमोती का पात्र, हरिण आदि पशुओं के श्रृंग

पाखी आदि राखवा माटे कमण्डले पशु ते राखी शकता नथी. "नो वाणहं"
भाडा, आदि राखवाणी ते छुट्टा पशु करता नथी. "न पेहुणवीयणतालि-
यंटगा" पेहुण-मयूरपिच्छ, वंश शलाकादि निर्मित विंजळु, तालपत्र निर्मित
पण्ये, तेमने राखवाणी ते मनथी पशु ते छुट्टा करता नथी. "ण यावि अय-
त्तउयत्तंसीसकंसरययजायरुवमणिमुत्ताहारपुडगसंखदंतमणि-सिंग-
सेल-कायवर-चेलचम्म-पत्ताहं गुणवओ परिकङ्कितं" लोहानु पात्र, त्रपु-रांगानु
पात्र, तांगानु पात्र, सींगानु पात्र, शंखानु पात्र, आँदीनु पात्र, सोनानु पात्र,
इन्द्रनील आदि मणिनु पात्र, मोतीनु पात्र, हारपुटक-लोहविशेषनु पात्र,
गजमोतीनु पात्र, शंखनु पात्र, हरण आदि पशुओंनां शिङ्गानु पात्र,

શૃંગમ્, શૈલઃ=શિલેવ શૈલઃ=પાષાણઃ, કાચઃ=પસિદ્ધઃ, વરચૈલં=ત્રેષ્ઠવસ્ત્રમ્, ચર્મ=વ્યાઘ્રાદિચર્મં એમિનિર્મિતાનિ પાત્રાણિ કીદશાનોમાનિ ? 'મહારિહાઈ' મહાર્હાણિ વહુમૂલ્યાનિ તથા- 'પરસ્સ' પરસ્ય-સ્વમિનન્નજસ્ય 'અજ્ઞોવવાયલોમજનણાઈ' અધ્યુપપાતલોમજનનાનિ, તત્ર-અધ્યુપપાતઃ=ગ્રહણૈકાગ્રચિત્તતા, લોભઃ=મૂર્છાં તયોર્જનનાનિ=ઉત્પાદકાનિ યાનિ તાનિ એતાનિ 'ગુણવત્' ગુણવતઃ=મૂલગુણાદિ સમ્પન્નસ્ય મનસાપિ 'પરિકલ્પિત્વં' પરિકર્ષયિતૃમ્=આદાતું ન કલ્પન્તે, તથા- 'ન યાવિ' ન ચાપિ=નૈવ 'સંજયાણં' સંયતાનાં, 'ઓસહમેસજ્જમોયણદ્વાય' ઔષધમૈષડ્યમોજનાર્થતયા, તત્ર ઔષધમ્-એકદ્રવ્યનિષ્પાદિતમ્, મૈષડ્યમ્=અનેક દ્રવ્યનિષ્પાદિતમ્, મોજનં ચ પ્રતીતમેક, એપામર્થતયા=પ્રયોજનાય, 'પુષ્પફલકંદ' કા પાત્ર, શૈલ-પાષાણ કા પાત્ર, કાંચ કા પાત્ર, સુન્દર વસ્ત્ર કા ઓર વ્યાઘ્ર આદિ કે ચર્મ કા પાત્ર, વહ જો સાધુ કે મૂલગુણોં સે યુક્ત હૈ મન સે રચ્ચને કી વાહના નહી કરતા હૈ । અર્થાન્ મૈં ઇન લોહાદિકોં સે નિર્મિત હુપ પાત્રોં કો રાલૂં ઇસ પ્રકાર કા વહ વિચાર મો મન મૈં નહીં લાતા હૈ, ક્યોં કિ ધાતુ અથવા મણિ આદિકોં કે બને હુપ પાત્ર (મહારિહાઈ) વહુમૂલ્ય વાલે હોતે હૈં તથા (પરસ્સ અજ્ઞોવવાયલોમજનણાઈ) દુસરોં મૈં અધ્યુપપાત ઓર લોભ ઇનકે ઉત્પાદક હોતે હૈં । ચિત્ત મૈં ગ્રહણ કરને કી એકાગ્રતા કા બના રહના ઇસકા નામ અધ્યુપપાત ઓર ડનમૈં મૂર્છાંભાવ કા હોના ઇસકા નામ લોભ હૈ । હમી તરહ (સંજયાણં) સકલસંયમીજનોં કો (ઓસહમેસજ્જમોયણદ્વાય) ઔષધ એક દ્રવ્ય સે બનાઈ ગઈ દવા, મૈષડ્ય-અનેક દ્રવ્યોં કે મેલ સે બનાઈ ગઈ દવા, તથા મોજન-આહાર ઇનકે પ્રયોજન કે નિમિત્ત (પુષ્પફલકંદમૂલાદ્યાઈ)

શૈલ પથ્થરનું પાત્ર, કાચનું પાત્ર, સુંદર વસ્ત્રનું કે વ્યાઘ્રચર્મ આદિનું પાત્ર, તે પ્રકારના પાત્રને સાધુને મૂળ ગુણોથી યુક્ત હોય તેવા સાધુ રાખવાની મનમાં ઇચ્છા પણ કરતો નથી. એટલે કે આ લોહાદિકથી નિર્મિત પાત્રને ઇચ્છુ કંઈ તે પ્રકારને વિચાર પણ તેના મનમાં થતો નથી, કારણ કે ધાતુ અથવા મણિ આદિમાંથી બનાવેલ પાત્ર "મહારિહાઈ" ઘણાં મૂલ્યવાન હોય છે, તથા "પરસ્સ અજ્ઞોવવાયલોમજનણાઈ" બીજામાં અધ્યુપપાત અને લોભના ઉત્પાદક હોય છે. તે પ્રાપ્ત કરવાની ચિત્તમાં ઇત્સૂકતા રહ્યા કરવી તેનું નામ અધ્યુપપાત છે અને તેમનામાં મૂર્છાં ભાવ હોવો તે લોભ કહેવાય છે. એ જ પ્રમાણે "સંજયાણં" એકાગ્ર સંયમી બનાવે "ઓસહમેસજ્જમોયણદ્વાય" ઔષધ-એક દ્રવ્યમાંથી બનાવેલી દવા, મૈષડ્ય અનેક દ્રવ્યોના મિશ્રણથી બનાવેલી દવા, તથા લોભન આહાર, આદિ ઉપયોગને નિમિત્ત "પુષ્પફલકંદમૂલા

मूलादिपाइं' पुष्पफलकन्दमूलादिकानि प्रनीतानि, तथा-सणसत्तरसाईं' शण-
सप्तदशानि=शणः=त्वक् प्रधाननालो धान्यविशेषः स सप्तदशो येषां तानि तथोक्तानि
सप्तदशसंख्यकानि, 'सव्व धण्णाइं' सर्वधान्यानि 'तीहिं वि' जोगेहिं' त्रिभि-
रपि योगैः=वाडूमनःकायलक्षणैस्त्रिभिरपि योगैः, 'परिघेत्तुं' परिग्रहीतुं न
कल्पन्ते । 'किं कारणं' किमर्थं परिग्रहीतुं न कल्पन्ते ? इत्याह—'अपरिमिय
णाणदंसणधरेहिं' अपरिमितज्ञानदर्शनधरैः=अपरिमितानि यानि ज्ञानदर्शनानि तानि
धारन्ति ये ते तैः, केवलज्ञानकेवलदर्शनधरैरित्यर्थः पुनः—'सीलगुणविणयतवसं-
जमनायकेहिं' शीलगुणविनयतपः संयमनायकैः, तत्र-शीलम् = आत्मसमाधिः,
गुणाः=ज्ञानादयः, विनयः अभ्युत्थानादिकः, तपः संयमो प्रतीती, तानवन्ति=
वर्द्धयन्ति ये ते तैः, पुनः-तित्थंकरेहिं' तीर्थङ्करैः=शासनप्रवर्तकैः, पुनः—'सव्व
जगजीववच्छलेहिं' सर्वजगज्जीववत्सलैः=सर्वजगतां ये जीवास्तेषु तदुपरि वत्सलैः
=परमकारुणिकैः, पुनः कीदृशैः ? 'तिलोयमहिण्णिं' त्रिलोकमहितैः=लोकत्रय-

पुष्प, फल, कन्द, मूल आदिकों को तथा (सणसत्तरसाईं) शण-त्वक्
प्रधान नालो धान्य विशेष यह है सत्रहवां जिन्हों का ऐसे (सव्वधण्णाइं
समस्त धान्यों को (न यावि तीहिंविजोगेहिं परिघेत्तुं) मन, वचन और
काय, इन तीनों योगों से ग्रहण करना कल्पित नहीं है । (किं कारणं)
क्या कारण है कि वे नहीं कल्पता है ? इस पर कहते हैं (अपरिमिय-
णाणदंसणधरेहिं) अपरिमित-अंपार-अनंत-केवलज्ञान, केवलदर्शन,
को धारण करने वाले, (सीलगुणविणयतवसंजमनायगेहिं) शील-
आत्मसमाधि, ज्ञानादिगुण अभ्युत्थानादिरूप विनय, तप और संयम
इनको बढ़ाने वाले, (तित्थंकरेहिं) तीर्थंकर-शासन प्रवर्तक, (सव्वजग-
जीववच्छलेहिं) समस्त जगत के जीवों के ऊपर परमकरुणाशील, (ति-

इयाइं " पुष्प, फल, कंद, मूल, आदिने तथा " सणसत्तरसाईं " शणु-रेशा-
वाणी वाणोधी युक्त धान्य विशेष जेभां सत्तरमुं छे जेवां " सव्वधण्णाइं "
समस्त धान्येने " न यावि तीहिं विजोगेहिं परिघेत्तुं " मन, वचन अने
काय, जे त्रजेना योगधी भइछु करवानुं कल्पतुं नथी. " किंकारणं " ते नही
कल्पवानुं करछु शुं छे? ते सुत्रकार कहे छे- " अपरिमियणाणदंसणधरेहिं "
अपरिमित-अंपार-अनंत केवलज्ञान, केवल दर्शनने धारणु करनार " सील-गु
णविणयतवसंजमनायगेहिं " शील-आत्म समाधि, ज्ञानादिक गुण, अभ्युत्था-
नादिकरूप विनय, तप अने संयम, जेने पद्मावानार, " तित्थंकरेहिं " तीर्थं-
कर शासन प्रवर्तक, " सव्वजगजीववच्छलेहिं " समस्त जगतनां जेवां प्रत्ये
अत्यंतकरुणाशील, " तिलोयमहिण्णिं " त्रिलोकां भांन्य जेवां " त्रिजगति-

માન્યૈઃ, એતાદૈઃ 'જિણવરિંદિહિ' જિનવરેન્દ્રૈઃ=જિનાઃ=અવધિજ્ઞાનમનઃ પર્યય-જ્ઞાનધરાશ્ચક્રસ્થજિનાઃ, તેષુ વરાઃ=શ્રેષ્ઠાઃ કેવલિનસ્તેષામિન્દ્રાસ્તીર્થકર નામ કર્મોદયવર્તિત્વાદ્યેતે તૈઃ 'એસ' એવા=પુષ્પફલકન્દમૂલ્યાદિસર્વધાન્યરૂપા 'જોળી' યોનિરુપત્તિસ્થાનમ્, 'જળાણ' જગતામ્ = પ્રાણિનાં 'દિદ્ધા' દદ્ધા કેવલેન્દ્રા-નેન, તસ્માદ્-કારણત્વેષાં પ્રાણિનાં 'ન કપ્પઇ' ન કલ્પતે 'જોળીસમુચ્છિદોત્તિ' યોનિસમુચ્છેદઃ ઇતિ = યોનિધ્વંસં કર્તુમિતિ, 'હિ' યતઃ- 'તેણ' ન હેતુના એતાનિ પુષ્પફલાદિ સર્વધાન્યાનિ 'સમણસોદ્ધા' શ્રમણસિંઘાઃ શ્રમણેષુ સિંઘાઃ મુનિશ્રેષ્ઠાઃ 'વર્જંતિ' વર્જયન્તિ-ન સંઘટ્ટયન્તિ ॥ ૫૦ ૨ ॥

લોચમહિષિં) ત્રીનો લોકોં મેં માન્ય એસે (જિણવરેંદ્રિં જિનવરેન્દ્રોંને-અવધિજ્ઞાની ઓર મનઃ પર્યયજ્ઞાનીરૂપ શ્રક્ષસ્થજિનોં મેં શ્રેષ્ઠ જો કેવલી ભગવાન હૈ, અનેકોં ભી તીર્થકર નામકર્મ કે ઉદય સે યુક્ત હોને કે કારણ જો હિન્દુ મને હુપ હૈ એસે જિનવરેન્દ્રોં ને (એસ) તે પુષ્પ, ફલ, કન્દ, મૂલ, આદિ સર્વધાન્ય (જળાણં જોળીદિદ્ધા) જીવોં કી ઉત્પત્તિસ્થાન હોને સે યોનિ-રૂપ દેખે હૈં । હસલિયે સકલ સંઘમી જન કો (ન કપ્પઇજોળી સમુચ્છિ-દોત્તિ) જીવોં કી યોનિરૂપ પુષ્પફલાદિકોં કા ધ્વંસ કરના કલ્પન નહીં હૈ । (તેણ હિ) હસલિયે યે પુષ્પફલાદિ સમસ્ત ધાન્ય (સમણસિંઘા) મુનિસિંહોં કે લિયે (વર્જંતિ) વર્જનોય હૈ અતઃ હસી કારણ સે ઇનકી સંઘટ્ટના નહીં કરતે હૈં ।

ભાવર્થ—હસ પરિશદ્ધિરમણરૂપ અન્તિમ સંવત્સરમાં સૂત્રકાર ને સકલ સંઘમી અપરિશદ્ધી શ્રમણ કે લિયે યહ કહા હૈં કિ વહ યદિ

વેહિં " જિનવરેન્દ્રોંએ-અવધિજ્ઞાની અને મનઃ પર્યયજ્ઞાનીરૂપ શ્રક્ષસ્થ જિનોમાં શ્રેષ્ઠ જે કેવલી જગવાન છે, તેમના પણ તીર્થકર નામકર્મના ઉદયથી શુદ્ધ હોવાને કારણે જેઓ હિન્દુ બન્યા છે એવાં જિનવરેન્દ્રોંએ " એસ " તે પુષ્પ, ફળ, કંદ, મૂળ આદિ સર્વ ધાન્યને " જળાણં જોળી દિદ્ધાં " હોવાનું ઉત્પત્તિ સ્થાન હોવાથી યોનિરૂપે દેખ્યાં છે. તે કારણે સકલ સંઘમી અને " ન કપ્પઇ જોળીસમુચ્છિદોત્તિ " હોવાની યોની રૂપ પુષ્પ, ફળ આદિનો ધ્વંસ કરવો કલ્પના નથી. " તેણ હિ " તેજ કારણે પુષ્પ, ફળ આદિ સમસ્ત ધાન્ય " સમણ સિંઘા " શિવ, સમાન મુનિઓને માટે " વર્જંતિ " ત્યાજ કરવાને યોગ્ય બતાવ્યા છે, તેા તેજ કારણે તેઓ તેમને શ્રદ્ધા કરતાં નથી.

ભાવાર્થ—આ પરિશદ્ધિ રમણરૂપ અન્તિમ સંવત્સરમાં સૂત્રકારે સકલ સંઘમી અપરિશદ્ધી શ્રાધુને માટે તે બતાવ્યું છે. કે જે તે પોતાના મૂળશુ-

पुनरप्यकल्पनीयानि प्रदर्शयति—‘ जंपि य ’ इत्यादि ।

मूलम्—जंपि य ओदाणकुम्मासुगंजतप्पण-मथु-भज्जिय-
पलल-सूपसंकुलि-वेढिम-वरिसोलम- चुण्णकोसग-पिंड-सिह-
रिणीवट्टग-सोयक- खीर-दहि-सप्पि नवणीय-तिह-गुड-खंड-
मच्छंडिय-मधु-खज्जक-वंजण-विहिमाइयं पणोयं उवस्सए
परचरे रण्णे वा न कप्पइ तंपि संनिहीकाउं सुवि-
हियाणं, जं पिय उडिट्टुविय रइयग पज्जवजाययकिण्णपा-

अपने मूलपुष्पों की रक्षा करना चाहता है तो ग्राम आदि स्थानों में पड़ी हुई, भूली हुई, रसी हुई, किसी भी वस्तु को चाहे वह थोड़ी हो, बहुत हो, कीमती हो या कीमती न भी हो, उठाने का विचार तक भी नहीं करे । इसी तरह वह धातु की किसी भी वस्तु को ग्रहण करने की भी इच्छा न करे । दासीदास आदि रूप किसी भी प्रकार का वह परिग्रह रखने का विचार तक भी न करे । न वह औषध भैक्ष्य और आहार आदि के निमित्त फल पुष्पादिकों को अपने उपयोग में लावे । समस्त प्रकार के सच्चित्तपदार्थों का उसको तीनकरण तीनघोमों से परित्याग कर देना चाहिये । क्यों कि ऐसे पदार्थ ज्ञानियों ने जीवों की उत्पत्ति के गोनि भूत कहे हैं । मधूरपिच्छ आदि का भी उसे रखने का प्रभु का आदेश नहीं है । लोहे वस्त्र आदि के पात्र को भी उसको रखना साधु-चर्या में कल्पित नहीं है ॥ सू-२ ॥

जोनी रक्षा करवा मागतो होय तो ग्राम आदि स्थानों में पड़ेगी, लूथी रही गयेगी, भूँडेली, डोढ पणु वस्तुने-अबो ते नानी होय के मोटी होय, कीमती होय के कीमती पणु न होय, उपाडी देवानो विचार पणु करवो जेठओ नहीं. ओ न प्रमाणि तेणु धातुनी डोढ पणु वस्तुने अछणु करवानी पणु छिछा करवी जेठओ नहीं. दासदासी आदि डोढ पणु प्रकारनो परित्रड राखवानो तेणु विचार पणु करवो जेठओ नहीं. तेणु औषध, भैषज्य अने आहार आदिने निमित्त इण, पुण्य आदिने पोताना उपयोगमा लेवा जेठओ नहीं. समस्त प्रकारना सच्चित्त पदार्थोने तेणु त्रणु योगथी परित्याग करवो जेठओ. डारणु के ओवां पदार्थोना ज्ञानीओओ छेयानी उत्पत्तिना स्थानइय-योनीइय जतावां छे. मधूरपिच्छ आदि राखवानो पणु प्रभुनो आदेश नहीं. दोढुं, -वस्त्र आदिनां पात्र राखवां ते पणु साधुने छपतुं नहीं. ॥ सू. २ ॥

ओकरणपाभित्व मीसगकोयगडं पाट्टुडं वा दाणट्ट-पुण्णट्टप-
गडं समणवणीमगट्टयाए वा कयं पच्छाकम्मं पुणेकम्मं
नितिगमुदगमक्खियं अइरित्तं मोहरं सयगाहं आहडं मट्टि-
ओवलित्तं अच्छेज्जं चेव अणिसिट्ठं, जं तं तिहिसु जण्णेसु
उत्सवेसु य अंतो वा वहिं वा होज समणट्टयाए ठवियं
ठवियं हिंसासावजसंपउत्ते न कप्पइ तं पिय परिघेत्तुं ॥सू०२॥

टीका—‘ जंपि य ’ इत्यादि ।

‘ जंपि य ’ यदपि च ‘ ओदणकुम्मासंगंजतप्पणमंधुभज्जितपललसूवसं-
कुलिवेढिमवरिसोलगचुण्णकोसगपिंडसिहरिणीवट्टगमोयगखीरदहिसप्पिनवणीय-
तिलगुडखंडमच्छंडियमंधुखज्जकवेंजणविहिमाइयं ’ ओदनकुलमापगज्जतर्पणमन्धु-
—भज्जितपललमपगकुलिवेढिमर्पोलकर्णकोसकपिण्डसिखरिणीवत्तंमोदकखीर-
दधिसर्पिर्नवनीततिलगुडखण्डमत्स्यण्डिकामंधुखाद्यकव्यज्जनविध्यादिकम्, तत्र —
ओदनाः—प्रसिद्धाः, कुलमापाः = मापाईपस्त्विन्ना मुद्रादयो वा, गज्जः =
भोज्यविशेषः, तर्पणाः = सक्तवः, मन्धुः = वदरादिचूर्णम्, भजितं=कव्या-
ग्निपक्वयवगोधूमशानादिकम्, पललम् = तिलपिष्टम्, सूवः = मुद्रादिदालिः,

फिर भी अकल्पनीय वस्तुओं को कहते हैं—‘ जंपिय ’ इ०

टीकार्थ—(जंपि य—ओदण—कुम्मास—गंज—तप्पण—मंधु—भज्जिय—
पलल—सूव—संकुलि—वेढिम—वरिसोलग—चुण्णकोसग—पिंड—सिहरिणी -
वट्टग—मोयग—खीर—दहि—सप्पि—नवणीय—तिल—गुड—खंड—मच्छंडिय—
मंधु—खज्जक—वेंजण—विहिमाइयं—पणीयं) जो भी ओदन—
भात, कुलमाष—माष—उड्ड अथवा कुल २ पके हुए मूंग आदि अन्न
गज्ज—भोज्यविशेष, तर्पण—सक्त, मंधु—वदर (बेर) आदि का चूर्ण,

पणी पीछे पाषु अकल्पनीय वस्तुओं सूत्रकार अतः ये छे—‘ जंपिय ’ इत्यादि—

टीकार्थ—‘ जंपिय—ओदण—कुम्मासं—गंज—तप्पण—मंधु—भज्जिय—पलल—सूव—सं-
कुलिवेढिम—वरिसोलग—पिंड—सिहरिणी—वट्टग—मोयग—खीर—दहि—सप्पि—नवणीय—तिल-
—गुड—मच्छंडिय—सं—खज्जक—वेंजण—विहिमाइयं पणीयं ’ ये ओदन—भात,
कुलमाष—माष—उड्ड अथवा धातुं धातुं पशवेत्तुं मग आदि अन्न, गज्ज-
येदं प्रशस्तं लोबन, तर्पण—सक्त, मंधु—ओर आदिनुं सूयुं, भजित अग्निमां

શંકુલી=' પુડી ' इति प्रसिद्धाः, वेष्टिमाः=' वेढमी ' इति प्रसिद्धाः, वर्षोलकाः= खाद्यविशेषाः, चूर्णकोशकानि=चूर्णभूताः कोपकाकृतिका भक्ष्यभेदाः ' गूंजा ' ' कचौरी ' इति भाषा प्रसिद्धाः, पिण्डः = गुड्ढादिपिण्डः, शिखरिणी =' श्रीखण्ड इति प्रसिद्धाः, वर्त्तकं=' वड़ा ' इति भाषा प्रसिद्धम्, मोदकाः=प्रसिद्धाः, क्षीरं= दुग्धम्, दधि=प्रसिद्धम्, सर्पिः=घृतम्, नवनीतम्=' मक्खन ' इति प्रसिद्धम्, तैलमृदं प्रसिद्धम्, खण्डम्=' खांड ' इति प्रसिद्धम्, मत्स्यण्डिका=' मिश्री ' इति प्रसिद्धा, मधु=प्रसिद्धम्, एते पदार्था आध्यात्मिकं आदि दोषदूषिताः साधुभिर्वर्जनीयाः। तथा—खाद्यकाः='खाजा' इति भाषा प्रसिद्धाः, व्यञ्जनानि=तत्कादोनि-रसयुक्त-शाकपदार्था वा कद्दी' आदि भाषा प्रसिद्धाः, तेषां ये विषयः=पकायाः, एतेऽपि सदोषा वर्जनीयाः । एषां द्वन्द्वः, एते आदौ यस्य तत्तथोक्तम्, एवं विधं 'पणीयं' प्रणीतं=स्निग्धमशनं च कारणं विना वर्जनीयम् । एतत्सर्वं निर्दोषमपि—'उत्तमम्' भर्जित अग्नि में भुंजेहुए जो गेहूं आदि धान्य—निलपिष्ट, सूप-मंग आदि की दाल, शंकुली-पुड़ी, वेष्टिम-वेढमी, वर्षोलक-एक प्रकार का खाद्यविशेष, चूर्णकीशक-कचौड़ी, गूंजा, पिण्ड-गुड आदि, शिखरिणी-श्रीखण्ड, वर्त्तक वड़ा, मोदक-लड्डू, क्षीर-दूध, सर्पि-घृत, नवनीत-मक्खन, तिल, गुड़, खंड खांड, मत्स्यण्डिका-मिश्री, मधु-शहद ये पदार्थ यदि आध्यात्म आदि दोषसे दूषित हों तो साधुपुरुषोंद्वारा सदा वर्जनीय हैं। खाजा, तत्क आदि व्यंजन, अथवा रसयुक्त शाक पदार्थ जैसे कद्दीआदि, तथा इन भक्ष्य पदार्थोंके जो और भी भेद होते हैं वे सब भी यदि सदोष हों तो साधु को वर्जनीय हैं । तथा भोज्य ये ओदनादि रूप स्निग्ध पदार्थ निर्दोष भी हों तो भी साधु विना कारण के अपने उप-योग में इन्हें नहीं लेना चाहिये और इन सब निर्दोष भोज्यपदार्थों का

શેકેલ જવ, ઘઉં આદિ ધાન્ય, પલ્લ-ખાંદેલ તલ, સૂપ-મગ અદિની દાળ, શંકુલી-પુરી, વેષ્ટિમ-વેડમી, વર્ષોલક-એક પ્રકારનું ખાદ્ય, ચૂર્ણકોશક-કચૌડી, ગૂંજા, પિણ્ડ-ગોળ આદિ, શિખરિણી=શિખાંડ, વર્તક-વડા, મોદક-લડૂ, ક્ષીર-દૂધ, દહીં. સર્પ-ધી નવનીત-માખણ, તલ, ગોળ, ઘંડ-ખાંડ, મત્સ્યણ્ડિકા-મિશ્રી, સાકર મધુ-મધ. એ પદાર્થો જે આધ્યાત્મ આદિ દોષથી દૂષિત હોય તો સાધુઓએ તેમના ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે. તથા દારૂ અને માંસતો સર્વથા ત્યાગ્ય છે. ખાજા, તક આદિ વ્યંજન, અથવા રસયુક્ત શાક, કદી વગેરે પદાર્થ, તથા એ ભક્ષ્યપદાર્થોનાં ખીજાં પણ જે ભેદ હોય છે, તે બધાનો પણ જે તે સદોષ હોય તો સાધુએ ત્યાગ કરવો જોઈએ. તથા ભોજનને યોગ્ય તે ઓદનાદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થ નિર્દોષ હોય તો પણ સાધુએ આરણ વિના તેમનો

उपाश्रये=वसतो 'परचरे' परगृहे=गृहस्थगृहे 'रणे वा' अरण्ये=अटव्यां वा 'सुविहियाणं' सुविहिताम्=सुसाधूनां 'संविहिकाउं' संनिवीकर्तुम्=स्थापयितुम्, 'न कण्वइ' न कण्वते । तथा- 'जंपि य' यदपि च 'उद्विद्वद्वियरइयगपज्जन-जातपक्किणपाओकरणपामिच्चमीसगकीयगडं' उद्विष्टस्थापितरचितकपर्यवजातप-कीर्णं प्रादुष्करणपामित्यमिश्रकक्रीतकृतं, तत्र-उद्विष्टम्=दुर्भिक्षादौ पाखण्डिनः श्रमणान् अन्यथा भिक्षुमुद्दिश्य यत् कल्पितं तत्, स्थापितम्= श्रमणाययागच्छे-युक्तता तेभ्यो दास्यामीति बुद्ध्या रचितं यद्वतनादिकं तत्, रचितकम्= मोदकवर्णदिकं चूर्णं प्रताप्य पुनर्मोदकरूपेण निर्मितम्, पर्यवजातं = पर्यवोऽव-स्थान्तरं जातो यद्य तद्, कुरादिकमुद्दिष्टं दध्यादिना विमिश्रितं कर्म्यादिकं

(उपस्थान परचरे रणे वा सुविहियाणं संनिहीकाउं न कण्वइ) उपा-श्रय में अथवा पर के घर में-गृहस्थ के घर में अथवा जंगलमें साधुओं को आहार के निमित्त संग्रह करना नहीं कल्पता है । तथा (जंपि य उद्विद्वद्वि यरइयगपज्जवजातपक्किणपाओकरणपामिच्च मीसग कीयगडं) जो भी आहार उद्विष्ट हो-दुर्भिक्ष आदि के समय में दाखंडी साधुओं को एवं अन्य भिक्षुओं को उद्देश्य करके बनाया गया हो, स्थापित हो, 'श्रमण यदि आवेंगे तो उन के लिये इस आहार को मैं दूंगा' इस बुद्धि से जो पहिले से तैयार करके रख लिया गया हो रचित हो-मोद-कादिक फूटकर जो चूर्णरूप में हो गये हों उनका वह चूर्ण अग्नि से तपाकर बनाई गई पुनः मोदकरूप में परिवर्तित कर दिया गया हो, जो आहार पर्यवजात हो-भात आदि में छाल मिला कर बनाई गई राखड़ी की तरह साधु के उद्देश से अवस्थान्तर को प्राप्त कराया गया

उपयोग करवा लेऊँगे नहीं, अने अने जथा निर्दिष्ट कोल्य पदार्थोंमें "उपस्थान परचरे रणे वा सुविहियाणं संनिहीकाउं न कण्वइ" उपाश्रयमें अथवा गृह-स्थानता घरमें अथवा जंगलमें आहारने निमित्त संग्रह करवाना साधुने उद्दिष्ट नहीं, तथा "जंपि य उद्विद्वद्वि यरइयगपज्जवजातपक्किणपाओकरणपामिच्चमीसगकीयगडं" के आधार उद्विष्ट होय-दुष्करण आदिना समयमें पाखंडी साधुओं अने अन्य भिक्षुओंने निमित्त बनाये होय, साधु आदि आपसे तो तेसने आ आहार हुं आपीय अे विचारथी के पदेदेथी तैयार राख्यो होय, रचित होय, साधु आदिना लुके छुप गये होय अने ते लुकेने आप पर तापीने इरीथी तेने साधु आदिनां इथे परिवर्तन इरेव होय, के आधार पर्यवजात होय-जात आदिमां छाशनुं मिश्रण करीने बनावेव राख-डीनी जेभ साधुने निमित्त अवस्थान्तर-विशेषमें दाववामां आव्यो होय,

पर्यायान्तरमापादितमित्यर्थः, एते औद्देशिकभेदाः, तथा-प्रकीर्णम्=विभिक्षम्-
वि-छर्दितपरिक्षाणीत्यर्थः, अनेन छर्दिताभिधान-वर्णनादोषोऽभिहितः, तथा-
प्रादुष्करणम्=प्रादुष्क्रियतेऽन्धकारस्थानात्, प्रदीपसहायेन साध्वर्थं वहिष्क्रियते
यदशनादिकं तत्, प्रामित्यम्=यस्साध्वर्थमुच्छिन्नं गृहीतं शाकादिकं तत्, मिश्र-
कम्=मिश्रजातम्=साध्वर्थं गृहस्थार्थं च उपस्कृतम्, तथा-क्रीतकृतम्=क्रीतेन=
साध्वर्थं क्रमणं कृत्वा गृहीतं यद् वस्तु तत्, एषां समाहारद्वन्द्वस्तत्तथोक्तम्, तथा
'पाहुडं वा' प्राभृतं वा=उपायनरूपेण दत्तं वा, तथा-'दाणदृपुणदृपगडं वा' दाना-
र्थपुण्यार्थप्रकृतं वा=दानार्थं पुण्यार्थं च प्रकृतं=निष्पादितं वाऽशनादिकम्, तथा-
'समणवणीमगदृयाए वा' श्रमणवनीपकार्यतया वा, तत्र-श्रमणाः=शाक्यादयः,
वनीपकाः=भिक्षोपजीविनस्तेषामर्थतया=प्रयोजनाय वा 'कयं' कृतम्-तदर्थनि-

हो, ये उद्दिष्ट आदि पर्यवजात पर्यंत औद्देशिक आहार के भेद हैं ।
इसी तरह जो आहार देते समय प्रकीर्ण हो-फेंका गया हो, प्रादुष्कृत
हो-अंधकारयुक्त स्थान से दीपादिक की सहायता द्वारा साधु को देने
के लिये बाहर लाकर रखा हो, प्रामित्य हो-जो साधु के लिये शाकादिक
पदार्थ खेत आदि से उखाड़ कर या काटकर लाकर बनाया गया हो,
मिश्रक हो-साधु और गृहस्थ दोनों के निमित्त जो आहार बनाया गया
हो, क्रीतकृत हो-साधु के निमित्त जो आहार मोल लेकर के लाया
हुआ हो, तथा (पाहुडं वा) प्राभृत हो-भेंटरूप से दिया गया हो,
(दाणदृपुणदृपगडं) जो दानार्थ और पुण्यार्थ निष्पादित हों-जो आहार
दान के लिये और पुण्य करने के लिये बनाया गया हो तथा जो आहार
(समणवणीमगदृयाए वा कयं) शाक्यादिक श्रमणजनों को अथवा

आ दीते उद्दिष्टी लभते पर्यवजात सुधीना औद्देशिक आहारना लेते छे. अ ५
दीते आहार आपती वभते प्रकीर्णं होय, ड्रंक्वामां आण्यो होय, प्रादुष्यकृत
होय-अधारावाणा स्थानमांथी दीवा आदिनी महदर्थी साधुने आपवा भाटे
अहार लावीने भूक्यो होय, प्रामित्य होय-जे साधुने भाटे शाक आदि पदार्थ
जेतर आदिमांथी उणादिनि कर्षांनि लावीने बनाववामां आण्यो होय, मिश्रक
होय-साधु अने गृहस्थ अन्नेना निमित्ते जे आहार बनावायो होय, क्रीतकृत
होय-साधुने निमित्ते आहार खरीयो होय, तथा " पाहुडंवा " प्राभृत होय.
लेटउपे अपाथो होय, " दाणदृपुणदृपगडं " जे दानार्थ अने पुन्यार्थ
निष्पादित होय-जे आहार दानने भाटे अने पुन्य करवाने भाटे बनावायो
होय, तथा जे आहार "समणवणीमगदृयाए वा कयं" शाक्य आदि श्रमणजने

ष्वादितमित्यर्थः. 'पच्छाकर्म' पश्चात्कर्म, पश्चाद्-दानान्तर कर्म=भाजनपक्षा-
लनादि यत्राशनादी तत्, तथा 'पुरेकर्म' पुराकर्म = पुरा = दानात्पूर्व कर्म=
हस्तलाघवादि यत्र तथा- 'नितिगं' नैतिकम् = नित्यपिण्डं, दातृपोषणप्रमा
णं वाऽवस्थितम्, 'उदगमक्खियं' उदकप्रक्षितम्=उदकादिना, आदिशब्दात्-
सचित्तपृथिवीकायादिभिरवगुण्ठितम्, उक्तञ्च " मक्खियमुदगाण्णाउजं तुन्नं "
इति। 'अइरिं' अतिरिक्तम्=द्वित्रिंशत्, कवला आहारः पुरुषस्य कुक्षिपूरको
भवति, स्त्रियश्चाष्टात्रिंशतिः कवलाः, नपुंसकस्य चतुर्विंशति कवला आहारः। ततो
ऽधिक आहारोऽतिरिक्तमुच्यते। तथा- 'मोहरं' मौखरम्=पूर्वसंस्तवमातापित्रादि
पश्चात्संस्तवश्चभूरश्यालकादिना सह मौखर्येण=बहुभाषित्वेन यल्लभ्यते, तदशना-
दिकं मौखरमुच्यते। तथा 'सयंग्हाहं' स्वयं ग्राहम्=दायकेनादत्तं यदृण्यते तत्
याचक जनो को देने के प्रयोजन से बनाया गया हो, ऐसा आहार साधु
को लेना नहीं कल्पता है। इसी प्रकार जो आहार (पच्छाकर्म) पश्चात्
कर्म से युक्त हो, और (परेकर्म) पराकर्म से युक्त हो, तथा (निति-
गमुदगमक्खियं) नैतिक-नित्यपिण्ड हो, अथवा-दाता ने जिसे अपने
खाने के जितना ही बनाया हो, उदक मुक्षित हो-सचित्त उदक से
सचित्त पृथिवीकाय आदि से अवगुण्ठित हो (अइरिं) अनिरिक्त हो-
पुरुषों की अपेक्षा से बत्तीस ग्रास से, स्त्रियों की अपेक्षा अष्टाईस ग्रास
से और नपुंसक की अपेक्षा चौईस ग्रास से जो अधिक हो, वह आहार
भी मुनियों के लिये कल्पित नहीं है। इसी तरह (मोहरं) जो आहार
मौखर हो-पूर्वसंस्तव मातापिता आदि के साथ तथा पश्चात्संस्तव श्वशुर
श्यालक आदि के साथ अधिक वातर्चीत करने से प्राप्त होता हो, (सयं

अथवा याचकजनेने देवाने भारे बनावाये होय, जेवो आहार लेवो साधुने
कल्पतो नथी. जे न प्रमाणे जे आहार "पच्छाकर्म" पश्चात्कर्मधी युक्त
होय अने "पुरेकर्म" पुरा कर्मधी युक्त होय तथा "नितिगमुदगमक्खियं"
नैतिक-नित्य पिण्ड होय, अथवा दाताजे जे पोताने जाग जेटेलो न बना-
व्यो होय, उदक मुक्षित होय-सचित्त पाणीधी, सचित्त पृथ्वीकाय आदिधी
अवगुण्ठित होय, "अइरिं" अतिरिक्त होय-पुरुषोनी अपेक्षाजे बत्तीस
ग्रासधी, स्त्रीजोनी अपेक्षाजे अष्टावीस ग्रासधी, अने नपुंसकनी अपेक्षाजे
चौवीस ग्रासधी हरे वधारे होय तो ते आहार पण मुनियोंने कल्पतो नथी.
जे न प्रमाणे "मोहरं" जे आहार मौखर होय-पूर्वसंस्तव माता पिता
आदिनी साथे तथा पश्चात् संस्तव ससरा, साणा आदिनी साथे अधिक वात
र्चीत करवाधी प्राप्त थतो होय, "सयंग्हाहं" स्वयंग्राह होय-दाताजे जे न

स्वहस्तेनाशनादेर्ग्रहणमित्यर्थः, अयमपरिणताभिधानदोषोक्तः । दायकस्वदानेऽपरिणतत्वात् । तथा-आहडं 'आहतम्=स्वपरग्रामादेः साध्वर्थमानीतमशनादिकमाहृतमुच्यते । तदुक्तम्—'सग्गामपसग्गामा आणियं आहडं होइ' छाया—स्वग्राम-परग्रामादानीतमाहृतं भवति । इति । तथा—'मट्टिओवलित्तं' मृत्तिकोपलिप्तम्=मृत्तिकया, उपलक्षणत्वाज्जंतुगोमयादिना चोपलिप्तं सधदुद्धिद्यदीयते तत्, उद्धिन्नमित्यर्थः । तथा 'अच्छेज्जं' आच्छेद्यं, यदशनादिकं स्वामी भृत्यादिभ्य आच्छिद्य साधुभ्यो ददाति तदशनादिकमाच्छेद्यम् । 'चेव' चैव-चकारः पुनरर्थकः एवकारो निश्चयार्थः । 'अणिसिट्ठं' अनुसृष्टम्=अनेकस्वामिकं यदशनादिकम् एक एव ददाति तदनुसृष्टम्, तथा- 'जं तं' यत्तदशनादिकम्, 'तिहिसु' तिथिषु=शरत्पूर्णिमादि तिथिषु 'जण्णेषु' यज्ञेषु=नागपूजादिषु 'उत्सवेसु य' उत्सवेषु च=इन्द्रोत्सवेषु च 'अंतो व' अन्तर्वा=उपाश्रयस्याभ्यन्तरे वा, 'वहिं गाहं' स्वयंग्राह हो-दाता ने जिसे न दिया हो किन्तु अपने ही हाथ से जो उठाकर ले लिया गया हो, (आहडं) आहत हो-स्व और पर के ग्राम आदि से जो साधु के निमित्त लाया गया हो, (मट्टिओवलित्तं) मृत्तिकोपलिप्त हो जो आहार किसी कुंभ आदि में रखकर मिट्टी से, गोबर से, तथा लाख आदि से बंद किया हुआ हो और देते समय उस मिट्टी आदि को हटाकर बाहर किया गया हो, (अच्छेज्जं चेव) अच्छेद्य हो-भृत्यादिकों से छीनकर दाता जिसे साधु के लिये दे रहा हो-जिस आहार के अनेक स्वामी हो परन्तु एक ही व्यक्ति उसको साधु के लिये दे रहा हो, ऐसा आहार भी साधु को लेना कल्पता नहीं है । तथा (जं तं) जो वह आहार (तिहिसु) शरत्पूर्णिमा आदि तिथियों के समय में (जण्णेषु) नागपूजादिक यज्ञों के समय में और

दीधा होय पणु पोताने ज हाथे जे उहावी दीधा होय, "आहडं" आहत होय-स्व अने पारके ग्राम आदिमांहीं जे साधुने निमित्त लाववांमां आओये होय, "मट्टिओवलित्तं" मृत्तिकोपलिप्त होय, -जे आहार केहो पात्र आदिमां भूईने भारीथी, गोमयथी तथा लाख आदिथी अंध करेस होय अने आपत्ती वण्णते ते भारी अदिने उभेरी आहार कहेस होय, "अच्छेज्जं चेव" आच्छेद्य होय-नोकर अःहिको पासैथी छीनवीने दाता जे साधुने भारे आपतो होय जे आहारना भाविक अनेक होय पणु ओक ज व्यक्ति ते साधुने भारे आपी रही होय, ओयो आहार पणु देवानुं साधुने कइपतुं नथी. तथा "जंतं" जे ते आहार "तिहिसु" शरत्पूर्णिमा आदि तिथिओना समये तथा "जण्णेषु"

वा ' बहिर्वा' = उपाश्रयाद् बहिर्वा ' समणद्वयाए ' श्रमणार्थतया = श्रमणनिमित्त-
मित्यर्थः, ' ठवियं ' स्थापितं ' होज्ज ' भवेत्, " हिंसा सावज्जसंपउत्ते ' हिंसा-
सावज्जसंप्रयुक्तम् = हिंसया = षट्कायोपमर्दननेन सावज्जेन = सदोषेण कर्मणा च संप्रयुक्तं
' तं पि य ' तदपि च अशनादिकं ' परिवेत्तुं ' परिग्रहीतुं ' न कप्पइ ' न कल्पते ॥ सू० ३ ॥

कोटशमशनादि कल्पते ? इत्याह—' अहकेरिसयं ' इत्यादि ।

मूलम्—अह केरिसयं पुणो तं कप्पइ ? जं तं एगारसपिं-
डवायसुद्धं किण्णणहणण-पयण-कयकारियाणुमोयण--नव-
कोडीहिं सुपरिसुद्धं दसहिं य दोसेहिं विप्पमुक्कं उग्गम
उप्पायणोसणाहिं सुद्धं ववगयचुयचवियचत्तदेहं च फासुयं च
ववगयसंजोगमणिगालं विगयधूमं छट्ठाणनिमित्तं छक्कायपरि-
रक्खणट्ठं हणि हणि फासुएण भिक्खेण वट्ठियव्वं । जं पि
य समणस्स सुविहियस्स रोगायंके वट्ठुप्पगारम्मि समुपन्ने
वायाहिग -- पित्तसिंभाइरित्तकुवियतहसंणिवाए जाए तह
उदयप्पत्ते उज्जलवल विउलकक्खड पगाढदुक्खे असुभकडुय
फरुसचंडफलविवागमहव्वभए जीवियंतकरणे सव्वसरीर
परितावणकरणे न कप्पइ । तारिसे वि तह अप्पणो परस्स

(उस्सवेसु) इन्द्रोत्सवों के समय में तथा (अंतो वा बहिं वा) उपाश्रय
के भीतर अथवा उपाश्रय से बाहिर (होज्जसमणद्वयाए ठवियं) मु-
नियों के निमित्त स्थापित कर रखा हो ऐसा वह (हिंसासावज्जसंपउत्ते)
षट्कायोपमर्दनरूप हिंसा से एवं सदोष कर्म से संप्रयुक्त अशनादि (न
कप्पइ तं पि य परिवेत्तुं) वह भी आहार साधु को लेना नहीं कल्पता है सू० ३ ॥

नागपूजादिके यशोना अभये अने " उस्सवेसु " इन्द्रोत्सवोने अभये तथा " अंतो
वा बहिंवा " उपाश्रयनी अंदर अथवा उपाश्रयनी बाह्यर " होज्ज समणद्वयाए
ठवियं " मुनियोने माटे शांती भूडेको डाय ओयो ते " हिंसासावज्जसंपउत्ते "
छक्काय उपमर्दनइय हिंसाथी तथा सदोष कर्मथी युक्त अशनादि " न कप्पइ तं
पि य परिवेत्तुं " ते आहार पाणु साधुने देयो कइयतो नथी ॥ सू. ३ ॥

વ ઓસહભેસજભત્તપાણં ચ,તં પિ સણિણિહિકંયં । જં પિ
ય સમણસ્સ સુવિહિયસ્સ તુ પઠિગ્ગહધારિસ્સ ભવઙ્, ભાયણ
મંડોવહિ - ઉવગરણ-પરિગ્ગહો-પાયધંધણ - પાયકેતરિયા
પાયટ્ટવણં ચ પડલાઙ્ગં તિણિણ વરયત્તાણં ગોચ્છાઓ તિણ્ણિ ય
પચ્છાગા રઓહરણચોલેપટ્ટક મુલ્લખણંતગમાદીયં એયં પિ ય
સંજમસ્સ ઉવવૂહણટ્ટયાણ વાયાયવદંસમસગસીયપરિરક્ખણટ્ટ-
યાણ ઉવગરણં રાગદોસરહિયં પરિવહિયવ્વં સંજણ ણિચ્ચં
પઠિલેહણપ્પફોડણપમજ્જણાણ અહો ય રાઓ ય અપ્પમત્તેણં
હોઙ્ સયયં નિમ્મિલ્લવિયવ્વં ચ ગિણિહિયવ્વં ચ ભાયણમંડોવહિ
ઉવકરણં ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા-સંપતિ કીદશમશનાદિકં કલ્પતે? इत्याह-‘अह केरिसयं’ इत्यादि ।

‘अह’ अथेति प्रकारान्तरद्योतकः, अथ अकल्पनीयाहारकथनानन्तर
‘केरिसयं’ कीदृशं ‘तं’ तत्=अशनादिकं ‘कप्पइ’ कल्पते परिग्रहीतुम्? इत्याह
‘जं तं’ यच्चत् ‘एगारसपिण्डवायसुद्धं’ एकादशपिण्डपातशुद्धम्, एकादशभिः
पिण्डपातैः = आचाराङ्गद्वितीयश्रुतस्कन्धस्थितपिण्डैषणानामकप्रथमाध्ययनस्य
विधिप्रतिपादकैरेकादशभिस्तुद्धैः तत्रोक्तविधानैस्तिर्यर्थः शुद्धं तत्रोक्तदोषवर्जितमि-

अथ सूत्रकार साधु को कैसा अशनादि कल्पता है? सो कहते
हैं-‘अह केरिसयं’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ - (અહ) પૂર્વોક્ત આહાર અકલ્પનીય હૈ તો (કેરિસયં)
કિસ પ્રકાર કા આહાર સાધુ કો (કપ્પઇ) કલ્પતા હૈ ઇસ પર કહતે
હૈ (એગારસપિંડવાયસુદ્ધં જં તં) જો અશન ગ્યારહ પિણ્ડપાતોં સે શુદ્ધ
હો-અર્થાત્ આચારાંગ્ગ કે દ્વિતીય શ્રુતસ્કંધ કે પિણ્ડૈષણા નામક પ્રથમ
અધ્યયન મેં વિધિપ્રતિપાદક જો ગ્યારહ ઉદેશ હૈં ઉન સે જો આહાર

હવે સાધુને કેવાં અનશનાદિ કહે છે તે સૂત્રકાર કહે છે-“અહ કેરિસયં” ઇત્યાદિ-

ટીકાર્થ-“અહ” પૂર્વોક્ત આહાર અકલ્પનીય છે તો “કેરિસયં” કયા
પ્રકારનો આહાર સાધુને “કપ્પઇ” કહે છે? તો તે વિષે સૂત્રકાર કહે છે કે-
“એગારસપિંડવાયસુદ્ધં જં તં” જે આહાર અગિયાર પિંડપાતોથી શુદ્ધ હોય
એટલે કે આચારાંગના દ્વિતીય શ્રુતસ્કંધના પિંડૈષણા નામના પહેલા અધ્ય-
યનમાં વિધિ પ્રતિપાદક જે અગિયાર ઉદેશ છે તેમના વડે જે આહાર શુદ્ધ

त्यर्थः, यत्तत्तथा, तथा=किण्ण हण्णपयणकयकारियाणुमोयणनवकोडीहिं 'क्रयण हननपचनकृतकारितानुमोदननवकोटिभिः, तत्र-क्रयणं=मूल्येन ग्रहणम्, हननं=प्राणवियोजनम्, पचनम्=अग्निना, एषां यानि कृतकारितानुमोदनादि=स्वयं करणं परेण कारणं कुर्वतोऽनुमोदनम्, तान्येव नवकोटयः = नवविभागास्ताभिः 'सुपरिसुद्धं' सुपरिशुद्धं=निर्दोषम्, तथा-'दसहिं य दोसेहिं' दशभिश्च दोषैः शङ्कित्वादिभिः, 'विष्पमुक्कं' विप्रमुक्तं=रहितम्, तथा-'उग्गम-उप्पायणेसणाहिं' उद्गमोत्पादनैयणाभिः तत्र-उद्गमः=आधाकर्मोदिः-पोढवविधः, उत्पादना=धाव्या-शुद्ध हो, उन उद्देशों में जो आहार के दोष कहे गये हैं उनसे वर्जित हो, तथा (किण्ण-हण्णपयणकय-कारियाणुमोयण-नवकोडीहिं सुपरिसुद्धं) जो आहार क्रयण; हनन और पचन, की कृत, कारित और अनुमोदनरूप नवकोटियों से परिशुद्ध हो, अर्थात् जो आहार स्वयं मूल्य देकर न खरीदा गया हो, दूसरों से मूल्य देकर न खरीदवाया गया हो और न उसकी अनुमोदना की गई हो, ३ इसी प्रकार जिस आहार के निमित्त हनन-प्राणियों के प्राणों का वियोजन स्वयं न किया हो, दूसरों से न कराया हो और न इसकी अनुमोदना की गई हो ६, इसी तरह जो आहार अग्नि से स्वयं न पकाया गया हो, दूसरों से न पकावाया गया हो और न इसकी अनुमोदना की गई हो ९, इन नव कोटियों से निर्दोष हो, तथा (दसहिं दोसेहिं विष्पमुक्कं) शङ्कित आदि दश दोषों से जो रहित हो, तथा-(उग्गम-उप्पायणेसणाहिं सुद्धं) आधा-कर्म आदि सोलह प्रकार के उद्गम दोषों से-धाव्यादि सोलह प्रकार के होय, ते उद्देशोंमें आहारनां के दोषों मताव्या छे तेमनाथी रहित होय, तथा " किण्ण-हण्णपयण-कयकारियाणुमोयणनवकोडीहिं सुपरिसुद्धं " के आहार क्रयण, हनन अने पचननी कृत, कारित अने अनुमोदकइय नर प्रकारे परिशुद्ध होय, अष्टसे छे के आहार जते प्रीमत आर्याने परीक्षे न होय, जीज्ज्जे भारइत भूइय आर्याने परीह करवाये न होय, अने तेनी अनुमोदना पण न कराई होय, अने प्रमाणे के आहारने निमित्त हनन-प्राणीज्जेना प्राणोनी छत्या पोते न करी होय, जीज्जनी पासे करावा न होय, अने तेनी अनुमोदना पण न कराई होय, अने प्रमाणे के आहार अग्नि वटे पोते रांध्यो न होय, जीज्ज पासे रांधाव्यो न होय अने तेनी अनुमोदना पण न कराई होय, अने नव प्रकारे के आहार निर्दोष होय, तथा " दसहिं दोसेहिं विष्पमुक्कं " शङ्कित आदि दश दोषोथी के रहित होय, तथा " उग्गम-उप्पायणेसणाहिं सुद्धं " आधाकर्म आदि सोलह प्रकारना उद्गम दोषोथी, धाव्यादि

દિષોઢશવિધા, એપણા=દશવિધા, એપામિતરેતરયોગદ્વન્દ્વઃ તામિઃ, 'સુદ્ધ' શુદ્ધમ્, તથા-‘વવગયચુચચવિચચત્તદેહં ચ’ વ્યપગતચ્યુતચ્યાવિતત્યક્તદેહં ચ, તથા - વ્યપગતમ્=ઓષતશ્રેતનાપર્યાવાદચેતનતત્ત્વં પ્રાપ્તમ્, ચ્યુતમ્=જીવનાદિક્રિયાભ્યો વિનિર્ગતમ્, ચ્યાવિતમ્ = ચેતનાપર્યાયેભ્યો પૃથક્કારિતમ્, તથા-ત્યક્તદેહમ્=ત્યક્તઃ=પરિશ્ચકો જીવેન દેહો યસ્ય તત્ જીવસમ્બન્ધરહિતમિત્યર્થઃ, એવાં સમાહાર દ્વન્દ્વઃ, તદ્, ઉક્તાર્થે સ્પષ્ટયતિ-‘પાસુચં ચ’ પ્રાસુકં ચ=પ્રગતા અસવઃ પ્રાણા યસ્માત્તત્ત્યોક્તમ્, તથા ‘વવગયસંજોગં’ વ્યપગત-સંયોગમ્=સંયોજનાદોષવર્જિતમ્, ‘અણિગાલં’ અન્નદ્વારમ્=અન્નારદોષવર્જિતમ્, તથા-‘વિગયધૂમં’ વિગત ઉત્પાદન દોષોં સે, તથા દશવિધ એપણા દોષોં સે જો શુદ્ધ હો, તથા- (વવગય ચુચચવિચચત્તદેહં ચ) જો આહાર વ્યપગત હો, ચ્યુત હો, ચ્યાવિત હો ઓર ત્યક્ત દેહ હો, અર્થાત્ વ્યપગત-સામાન્યરૂપ મેં જો ચેતના પર્યાય સે રહિત હોકર અચેતનત્વ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત હુઆ હો-સચિત્ત ન હો કિન્તુ અચિત્ત હો, ચ્યુત-જીવનાદિ ક્રિયાઓં સે જો સર્વથા રહિત હો, ચ્યાવિત-ભ્રુત્યાદિ દ્વારા ચેતના પર્યાયોંસે પૃથક્કારાયા ગયા હો ઓર ત્યક્તદેહ-જીવ કે સમ્બંધ સે ચિદ્ગીન હો । હસી ઘાત કો સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરતે હેં-(પાસુચં) જિસ આહાર કો સાધુ અપને ઉપયોગ મેં લેવે વહ પ્રાસુક હોના ચાહિયે । પ્રાસુક મેં “પ્ર” રહિત અર્થ કા યોધક હૈ, અસુ પ્રાણ કા વાચક હૈ-અર્થાત્-જો આહાર પ્રાણોં સે-જીવોં સે રહિત હોતા હૈ વહ પ્રાસુક હૈ । તથા (વવગયસંજોગં) સંયોજનાદોષ સે વહ આહાર રહિત હોના ચાહિયે । (અણિગાલં) અન્નાર

સોગ પ્રકારના ઉત્પાદન દોષોધી, તથા દશ પ્રકારના એપણા દોષોધી કે શુદ્ધ હોય, તથા “વવગયચુચ-ચવિચચત્તદેહં ચ” કે આહાર વ્યપગત હોય, ચ્યુત હોય, ચ્યાવિત હોય, અને ત્યક્ત દેહ હોય, વ્યપગત એટલે સામાન્ય રીતે કે ચેતના પર્યાયથી રહિત થઈને અચેતનત્વ અવસ્થા પામ્યો હોય-સચિત્ત ન હોય, ચ્યુત એટલે જીવનાદિ ક્રિયાઓથી સર્વથા રહિત હોય તેવો, ચ્યાવિત એટલે નોકર આદિ દ્વારા ચેતના પર્યાયોથી અલગ કરાવેલ હોય, ત્યક્ત દેહ-જીવના સંબંધથી રહિત હોય, એવો આહાર સાધુએ લેવો જોઈએ. એ જ વાતને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે-“પાસુચં” કે આહાર સાધુ પોતાના ઉપયોગમાં લે તે પ્રાસુક હોવો જોઈએ. પ્રાસુકમાં “પ્ર” રહિત અર્થના યોધક છે, “અસુ” પ્રાણનો યોધક છે, એટલે કે કે આહાર પ્રાણથી-જીવથી રહિત હોય છે તે પ્રાસુક આહાર કહેવાય છે. તથા “વવગયસંજોગં” સંયોજના દોષથી તે આહાર રહિત હોવો જોઈએ. “અણિગાલં” અન્નાર દોષથી રહિત

ધૂમ=ધૂમદોષવર્જિતમ્, एतादृशम् अशनादिकं ग्रहीतुं कल्पते । साधुभिः-कथं वर्त्ति-
रव्यम् ? इत्याह—‘ छद्वाणनिमित्तं ’ षट्स्थाननिमित्तम्=षट्स्थानानि=आहार-
कारणस्य षट्कारणानि, तेषां निमित्तं=षट्कारणार्थमित्यर्थः । षट्कारणानि=वेदनं
=क्षुध्वेदनं वैयावृत्त्य=शुश्रूषा, ईर्या=गमनम्, संयमरक्षा, प्राणधारणं, धर्मचिन्तनं
च उक्तञ्च—

“ वेयण वेयावच्चे, हरियट्ठाए य संजमट्ठाए ।

तह पाणवत्तियाए, छट्ठं पुण धम्मचिंताए ॥ ” ॥ इति ॥

તથા—‘ છક્કાયપરિક્ષણઠ્ઠં ષટ્કાયપરિક્ષણાર્થમ્, ‘ હણિ હણિ ’ અહન્ય-
હનિ=પ્રતિદિનમ્ ‘ પામુણ્ણ ’ પ્રામુકેન ‘ મિક્ષેણ ’ મૈક્ષેણ=સામુદાતિકમિશ્યા,
‘ વટ્ટિયવ્વં ’ વર્તિતવ્યમ્, પ્રાણધારણં કર્તવ્યમિત્યર્થઃ । તથા—‘ જંપિ ય ’ યદપિ

દોષોં સે રહિત હોનાં ચાહિયે ઔર (વિગયધૂમં) ધૂમદોષ સે મી રહિત
હોનાં ચાહિયે । તમી જાકર વહ સાધુઓં કે લિયે કલ્પિત હો સકતા
હૈ । (છદ્વાણનિમિત્તં) છદ્વા કારણોં સે સાધુ આહાર ગ્રહણ કરતે હૈ—વે
છદ્વા સ્થાનરૂપ કારણ યહ હૈ—શુધાવેદના ૧, વૈયાવૃત્ત્ય ૨, ઈર્યા-ગમન ૩,
સંયમરક્ષા ૪, પ્રાણધારણા ૫, ઔર ધર્મચિન્તન ૬ । કહા મી હૈ—

“ વેયણ ૧, વેયાવચ્ચે ૨, હરિયટ્ઠાએ ૩ ય સંજમટ્ઠાએ ૪ ।

તહ પાણવત્તિયાએ ૫, છટ્ઠં પુણધમ્મચિંતાએ ૬ ॥ ૧ ॥ ”

તથા (છક્કાયપરિક્ષણઠ્ઠં) આહારગ્રહણ કરતે સે છક્કાય જીવોં કી
રક્ષા હોતી હૈ । ફલિયે સાધુ કો (હણિહણિ) પ્રતિદિન (પામુણ્ણ મિ-
ક્ષેણ) પ્રામુક ભિક્ષા સે (વટ્ટિયવ્વં) પ્રાણધારણ કરના ચાહિયે—અર્થાત્

હોવો ભેદએ અને “ વિગયધૂમં ” ધૂમ દોષથી રહિત હોવો ભેદએ. ત્યારે જ
તે સાધુઓને કહેવે તેવો અને છે. “ છદ્વાણનિમિત્તં ” છ કારણોથી સાધુ
આહાર અહણ કરે છે—તે છ સ્થાનરૂપ કારણ આ પ્રમાણે છે—(૧) શુધા વેદના
(૨) વૈયાવૃત્ત્ય, (૩) ઈર્યા-ગમન, (૪) સંયમ રક્ષા (૫) પ્રાણધારણ અને (૬)
ધર્મ ચિન્તન કહ્યું ગયું છે—

“ વેયણ ૧ વેયાવચ્ચે ૨ હરિયટ્ઠાએ ૩ ય સંજમટ્ઠાએ ૪ ।

તહ પાણવત્તિયાએ ૫, છટ્ઠં પુણધમ્મચિંતાએ ૬ ॥ ૧ ॥ ”

તથા “ છક્કાયપરિક્ષણઠ્ઠાએ ” આહાર અહણ કરવાથી છકાયનાં જીવોની પણ
રક્ષા થાય છે. તેથી સાધુને “ હણિ હણિ ” પ્રતિદિન “ પામુણ્ણ મિક્ષેણ ”
પ્રામુક ભિક્ષાથી “ વટ્ટિયવ્વં ” પ્રાણધારણ કરવો ભેદએ એટલે કે તે પૂર્વેકિત
છ સ્થાનરૂપ કારણોને ધ્યાનમાં લઈને છકાયનાં જીવોની રક્ષા કરતા થકા

सुविधिनी टीका अ०५ सू०४ कल्पनीयमरानाद्विनिरूपणम्

८६५

च औषधादि तदपि संनिधीकृतं न कल्पते इत्येवमन्वयः कर्तव्यः, कस्य न कल्पते? इत्याह—‘समणस्स’ श्रमणस्य=साधोः, कीदृशस्य तु श्रमणस्य न कल्पते इत्याह—‘सुविहियस्स’ उ’ सुविहितस्य तु = शोभनानुष्ठानसम्पन्नस्य, कस्मिन् सति? इत्याह—‘बहुप्पगारम्मि’ बहुप्रकारे=अनेकप्रकारे ‘रोगायंके’ रोगातङ्के=रोगो ज्वरादिः, आतङ्कः=सद्योपातीहृदयशूलादिः, अनयोः कर्मधारयः, तस्मिन् समुत्पन्ने’ समुत्पन्ने, रोगातङ्कानां बहुप्रकारत्वमेव स्पष्टयति—‘वायाहियपित्तसिंभाहरित्तकुवियतहसंणिवाए’ वाताधिक्य पित्तश्लेष्मातिरिक्तकुपिततथासन्निपाते तत्र=वातधिक्यं=वातस्याधिक्यं=पाचुर्यम्, तथा=पित्तश्लेष्मातिरिक्तं=पित्तश्लेष्मणोरतिरेकः=आधिक्यं, तत् कुपितम्=कोपावस्थां प्राप्तम्=कुपितवातपित्तकफानामाधिक्यमित्यर्थः, तथेति तथाभूतः=एतन्नित्यरूपः संनिपातस्तस्मिन्, जाते=समुत्पन्ने सति ‘तह’ तथा—‘उदयपत्ते’ उदयप्राप्ते=उदयावस्थां प्राप्ते सति, इन पूर्वोक्त छह स्थानरूप कारणों के ध्यान से बह्कायके जीवों की रक्षा करते हुए साधु को भिक्षा वृत्ति करना चाहिये । तथा—(जंपि य) जो औषध आदि हैं उनका भी संनिधि-संग्रह नहीं करना चाहिये सो कहते हैं—(समणस्स सुविहियस्स) सुविहित श्रमण के (बहुप्पगारम्मि रोगायंके समुत्पन्ने) बहुत प्रकार के रोगातंग उत्पन्न होने पर, जैसे—(वायाहियपित्तसिंभाहरित्तकुवियतहसंणिवाए) कुपितवात की अधिकता, कुपितपित्त और कुपितकफ की अधिकता हो तथा इन दोषों से अन्य उसे संनिपात भी (जाए) हो गग हो, तथा ऐसा दुःख कि जो (उज्जलचलविउल कक्खड पगाढदुक्खे) उज्ज्वल-सुख के लेशसे वर्जित हो, बल-बलवान् महाकष्टकारक हो, विपुल-आत्मा के प्रतिप्रदेश में नदी वेग की तरह प्रवर्द्धमान हो कर्कश-कठोर हो और प्रगाढ-प्रतिक्षण असमाधिजनक हो (तह) तथा ऐसे रोगातंग (उदयपत्ते)

साधुओं भिक्षावृत्ति करनी ज़रूरी थी, तथा “जंपिय” के औषध आदि गणाय छे तेनो पणु संग्रह न करवो ज़रूरी थे आत्मतामां सूत्रकार डंडे छे डे—
“समणस्स सुविहियस्स” सुविहित श्रमणने “बहुप्पगारम्मि रोगायंके समुत्पन्ने” अनेक प्रकारना रोगो उत्पन्न थतां, जेवां डे “वायाहियपित्तसिंभाहरित्तकुवियतहसंणिवाए” कुपित वायुनी अधिकता, कुपित पित्त अने कुपित कफनी अधिकता होय तथा ओ दोषोथी? तेने सन्निपात पणु “जाए” अथ गथो होय, तथा ओबुं दुःख डे ओ “उज्जलचलविउल कक्खडपगाढदुक्खे” उज्ज्वल-वल-लेश पणु सुख विनानुं होय, अतिशय कष्टकारक होय, विपुल-आत्मानां प्रति प्रदेशमां नदीना वेगनी ओम वधतुं जतुं होय, कर्कश-कठोर होय अने प्रगाढ-प्रतिक्षण असमाधि जनक होय “तह” तथा ओवां रोगातंग “उद-

કસ્મિન્ ? इत्याह—‘ उज्ज्वलबलविउलकवलपगाढदुखे ’ उज्ज्वलबलविपुल-
 कर्कशप्रगाढदुःखे, तत्र-उज्ज्वलं=मुखलेशवर्जितम्, घलं=बलयत्=महाकाष्ठजनकम्
 विपुलम्=आत्मप्रतिप्रदेशे नदीवेगवत्प्रवर्द्धमानम्, कर्कशं = कठोरम्, दुःसहत्वात्,
 प्रगाढं=प्रकृष्टं प्रतिक्षणमसमाधिजनकत्वात् यदुखं तस्मिन्, कथम्भूते दुःखे ?
 ‘ असुभकडुयफरुसचंडफलविवागे ’ अशुभकटुकपरुषचण्डफलविपाके, अशुभः=
 अशुभरूपः, कटुकनिम्बरस इवानिष्टः, परुषः=परुषस्पर्शद्रव्यमिवानिष्टः, तथा-
 चण्डो=दारुणो यः फलविपाकस्तादृशे, पुनः—‘ महभये ’ महाभये = महद्भयं
 यस्मात्तस्मिन्, महाभयजनके इत्यर्थः, पुनः—‘ जीवियंतकरणे ’ जीवितान्तकरणे=
 जीवितस्य=जीवनस्य अन्तकरणं=नाशो यस्मात्तस्मिन्, प्राणनाशसमर्थे इत्यर्थः,
 पुनः कीदृशे ? ‘ सखसरीरपरितावणकरणे ’ सर्वसरीरपरितापनकरणे=अङ्गप्रत्यङ्ग-
 सन्तापजनके, ‘ तद् ’ तथा ‘ तारिसेवि ’ तादृशेऽपि=यादृशः सोढुं न शक्यते
 तादृशेऽपि रोगातङ्कादौ ‘ अण्णो परस्स व ’ आत्मनः परस्य वा निमित्तं यदपि
 ‘ ओसहमेसज्जभत्तपाणं ’ औषधभैषज्यभक्तपानम् ‘ तं पि य ’ तदपि च

उदय प्राप्त हो रहे हो (असुभकडुयफरुसचंडफलविवागे) कि जिसका
 फलरूपविपाक अशुभरूप ही हो, निम्बरस के जैसा कटुक अनिष्ट हो,
 परुस-परुष स्पर्श द्रव्य की तरह जो अरुचिकारक हो, और चंड-दारुण
 हो तथा (महभये) महाभयंकर हो (जीवियंतकरे) जिसमें जीवन के
 नाश होने की भी संभावना हो रही हो, (सखसरीरपरितावणकरे)
 अंग, प्रत्यंग में जिसके कारण असह्य संताप बढ़ रहा हो (तद् तारिसे
 वि) ऐसे पूर्वोक्त प्रकार के रोगातंकों के समय में भी (अण्णोपरस्सव)
 चाहे ये रोगातंक अपने लिये हो रहे हों चाहे दूसरे साधु के लिये हो
 रहे हों उस समय अपने और पर के निमित्त जो (ओसहमेसज्ज-
 भत्तपाणं) औषध, भैषज्य एवं भक्तपान हो (तं पि य) वह भी उस

ચપ્પે ” ઉદય પામ્યા હોય ‘ અસુભકડુયફરુસચંડફલવિવાગે ’ કે જેના કળ-
 રૂપ વિપાક અશુભ રૂપ જ હોય, લીંબુ જેવો કટુક અનિષ્ટ હોય, પરુષ-કઠોર
 સ્પર્શદ્રવ્યના જેવો જે અરુચિ કારક હોય, અને ચંડ-દારુણ હોય તથા
 “ મહભયે ” અતિ ભયંકર હોય, “ જીવિયંતકરે ” જેમાં જીવનનો અંત આવ-
 વાની પણ શક્યતા હોય “ સખસરીર-પરિતાવણકરે ” અંગ, પ્રત્યંગમાં જેને
 કારણ અસહ્ય સંતાપ વધતો જતો હોય “ તદ્ તારિસે વિ ” ભલે તે રોગાતંક
 પોતાને માટે થતાં હોય કે ભલે બીજા સાધુને માટે થઈ રહ્યા હોય, તે સમયે
 પોતાને કે અન્યને નિમિત્તે જે “ ઓસહમેસજ્જમત્તપાણં ” ઔષધ, ભૈષજ્ય
 અને ભક્તપાન હોય “ તંપિય ” તે પણ તે પરિશ્રદ્ધ વિરક્ત સાધુને “ સંનિહિકય ”

‘संनिहिकयं’ संनिधीकृतं ‘न कण्ठ’ न कल्पते-परिग्रहविरतत्वात्तस्य। अथ यत्कल्पते तदाह-‘जं पि य’ यदपि च किञ्चित् ‘समणस्स’ श्रमणस्य ‘सुविहियस्स तु’ सुविहितस्य=शोभनाचारव्रतस्तु, ‘पडिग्गहधारिस्स’ पतद्ग्रहधारिणः=पात्रधारकस्य ‘भायणभंडोवहि उवगरणं पडिग्गहो’ भाजनभाण्डोपध्युपकरण-पतद्ग्रहः, तत्र-भाजनम्=उन्दकम्, भाण्डं=जलपात्रम्, उपधिःवस्त्रादिः, तद्ग्रं यत् उपकरणम्=सामग्री, तथा-‘पडिग्गहो’ पतद्ग्रहः=भोजनपात्रं ‘भवइ’ भवति। तथा-‘पायबंधणपायकेसरियापायट्ठवणं च’ पात्रबंधनपात्रकेसरिका-पात्रस्थापनं च, तत्र-पात्रबंधनं=‘झोली’ इति भाषा प्रसिद्धम्, पात्रकेसरिका=पात्रप्रमार्जिका, पात्रस्थापनं=यत्र वस्त्रखण्डे पात्रं स्थाप्यते तत्, एषां समाहार इन्द्रः, ‘तिण्णि य’ त्रीणि च ‘पडलाइं’ पटलानि=उपर्युपरिपात्ररक्षणसमये पात्र-परिरक्षणार्थं पात्राभ्यन्तररक्षणीयानि वस्त्रखण्डानि, तथा-‘रत्तयाणं’ रजस्त्राणं=

परिग्रह विरत साधु को (संनिहिकयं) संग्रह के रूप में अपने पास रखना (न कण्ठ) नहीं कल्पता है। उस परिग्रहविरत साधु के लिये अपने पास क्या २ वस्तुएँ रखना कल्पता है? सो सूत्रकार उन्हें बताते हैं—(समणस्स सुविहियस्स उ पडिग्गहधारिस्स) पात्रधारी उस सुविहित शोभनाचारसंपन्नश्रमण-साधुके पास (जं पि य) जो भी (भायणभंडोवहि उवगरणपडिग्गहो भवइ) भाजनउन्दक, भांड-जलपात्र, उपधि-वस्त्रादिरूप उपकरण, तथा पतद्ग्रह भोजन पात्र हैं ये, तथा- (पायबंधणपायकेसरिया पायट्ठवणं च) पात्रबंधन—झोली, पात्रकेसरिका-पात्रप्रमार्जिका, पात्रस्थापनवस्त्र, तथा (तिण्णियपडलाइं) तीनपटल-ऊपर ऊपर पात्रों को रखने के समय उन पात्रों की रक्षा के लिये पात्रों के भीतर रखे हुए तीन वस्त्र खंड, (रत्तयाणं) जलपात्र ढकने

अच्छेना इषमां पोतानी पास राखया “न कण्ठ” कल्पता नहीं, ते परिग्रह विरत साधुने भाटे पोतानी पास कयी कयी चीजे राखयी कइये छे? तो ते सूत्रकार कहे छे के—“समणस्स सुविहियस्स उ पडिग्गहधारिस्स” पात्रधारी ते सुविहित सदाचारयुक्त साधुनी पास “जं पि य” के कोइ “भायणं भंडोवहि उवगरणपडिग्गहो भवइ” भाजन-उन्दक, भांड-जलपात्र, उपधि-वस्त्रादिरूप उपकरण, तथा पतद्ग्रह-भोजन पात्र होय ते तथा “पायबंधण पायकेसरिया पायट्ठवणं च” पात्रबंधन-झोली, पात्रकेसरिका पात्र प्रमार्जिका, पात्रस्थापन वस्त्र तथा “तिण्णियपडलाइं” त्रयपटल-पात्रोने ओइ चीजोनी उपर भूखवाने पथते ते पात्रोनी रक्षाने भाटे पात्रोनी वन्धे राखेल त्रय वस्त्रभंड, “रत्तयाणं”

જલાદિપાત્રાચ્છાદનવસ્ત્રલ્પદમ્ , ' ગોચ્છઔ ' ગોચ્છકઃ=પ્રમાર્જિકા, તથા—'તિષ્ઠિ
ય પચ્છાગા ' ત્રયશ્ચ પ્રચ્છાદકાઃ, ' ચાદર ' પ્રસિદ્ધાઃ, તત્ર-દ્વૌ સૂત્રનિર્મિતૌ, એક
ઝર્ણનિર્મિતઃ, તથા—'રઔહરણચોલપટ્ટકમુહળંતકમાર્દ્યં ' રઔહરણચોલપટ્ટકમુહ્વાન-
ન્તકાદિકમ્, તત્ર-રઔહરણં પ્રસિદ્ધમ્, ચોલપટ્ટકં પરિધાનવસ્ત્રમ્, મુહ્વાનન્તકં=
સદોરકમુખવસ્ત્રિકા, એતાન્યાદૌ યસ્ય તત્તથા, ' એયંપિ ય એતદપિ ચ ' ઉવગરણં
ઉપકરણમ્ ' સંજમસસ ' સંયમસ્ય=સાવચયોગવિરતિલક્ષણસમદશવિધસ્ય ' ઉવવૂહ-
હણદ્વયાણ ' ઉપવૂહણાર્થતાયૈ, વૃદ્ધ્યર્થમિત્યર્થઃ, અત્ર સ્વાર્થે તત્પ્રત્યયઃ । તથા—
' વાયાયવદંસમસગસીયપરિરક્ષણદ્વયાણ ' વાતાતપદંશમશકશીતપરિરક્ષણાર્થતાયૈ,
તત્ર વાતાતપાદિ સંરક્ષણાર્થં, રાગદોસરહિયં ' રાગદ્વેષરહિતં યથા ભવતિ તથા ' ણિચ્ચં
નિત્યં ' પરિવહિયન્ત્વં ' પરિવોહ્યમ્=પરિધર્તવ્યં, ' સંજણં ' સંયતને । ' પઢિલેહ-
ણપ્પ્ફોહણપમ્જ્જણાણ ' પ્રતિલેખનપ્રસ્ફોટનપ્રમાર્જનાયામ્, તત્ર-પ્રતિલેખનં=
કા વસ્ત્ર, (ગોચ્છઔ) ગોચ્છક-પ્રમાર્જિકા, તથા (નિણિ ય પચ્છાગા)
ત્રીણ પ્રચ્છાદક-ચાદર (इनमें २ सूतके चादर और १ ऊनका कंबल
रहता है) (रऔोहरणचोलपट्टक-मुहणंतगमार्दयं) રઔહરણ, ચોલપટ્ટક,
મુહ્વાનન્તક, -સદોરકમુખવસ્ત્રિકા આદિ એ ઉપકરણ રહતે છે સો
(એયંપિ ય) એ ઉપકરણ ભી (સંજમસસ ઉવવૂહણદ્વયાણ) એ સ્વાધુ કે
સત્રહ પ્રકાર કે સંયમ કી રક્ષા કે નિમિત્ત એવં વૃદ્ધિકે નિમિત્ત હી
હોતે છે તથા—(વાયાયવદંસમસગસીયપરિરક્ષણદ્વયાણ) વાત, આતપ
-ધૂપ દંશમશક, ઔર શીત સે રક્ષા કરને કે લિયે છે । હસલિયં (સંજ-
ણં) સંયત કો (રાગદોસરહિયં) રાગદ્વેષ સે વિહીન હોકર (ણિચ્ચં)
સર્વદા એ ધર્મોપકરણ (પરિવહિયન્ત્વં) ધારગ કરના ચાહિયે અર્થાત્
અપને પાસ રાખના ચાહિયે । ઔર इनकी (पडिलेहणप्पफोहणपमज्ज-

જળપાત્ર ઠાંકવાનું વસ્ત્ર, “ ગોચ્છઔ ” ગોચ્છક-પ્રમાર્જિકા તથા “ તિષ્ઠી ય
પચ્છાગા ” ત્રણ પ્રચ્છાદક-ચાદર (તેમાં બે સૂતરના અને એક ઊનની કામલ
હોય છે) . “ રઔહરણ-ચોલપટ્ટક-મુહળં-તગમાર્દ્યં ” રઔહરણ, ચોલપટ્ટક,
મુહ્વાનન્તક-દોર સહિતની મુહપત્તી, આદિ ઉપકરણો રહે છે, વળી “ એયંપિય ”
તે ઉપકરણ પણ “ સંજમસસ ઉવવૂહણદ્વયાણ ” તે સાધુના સત્ર પ્રકારના સંય-
મની રક્ષાને માટે અને વૃદ્ધિને માટે જ હોય છે તથા “ વાયાયવદંસમસગ
સીયપરિરક્ષણદ્વયાણ ” વાત, તડકા, દંશ મશક અને શીતથી રક્ષણ કરવાને
માટે છે. તેથી “ સંજણં ” સંયતને “ રાગદોસરહિયં ” રાગદ્વેષથી રહિત
થઈને “ ણિચ્ચં ” સર્વદા તે ધર્મોપકરણ “ પરિવહિયન્ત્વં ” ધારણ કરવાં
જોઈએ, એટલે કે પોતાની પાસે રાખવાં જોઈએ. અને તેમની “ પઢિલેહણ

प्रत्युपेक्षणम्=चक्षुषा निरीक्षणमित्यर्थः, प्रस्फोटनम्=यतनापूर्वकमास्फालनम्, आभ्यां सहिता या प्रमार्जना तस्यां कृतायां सत्याम् 'सययं' सततं 'अहो य राओ य' अद्वि च रात्रौ च, 'भायणभंडोवहि उवगरणं' भाजनभाण्डोपभ्युपकरणम्, 'अप-मत्तेण' अप्रमत्तेन=प्रमादवर्जितेन संयतेन 'निक्खियव्वं' निक्षेपव्यं=यतनया स्थापयितव्यं च, 'गिण्हियव्वं च' यतनया ग्रहीतव्यं च 'होइ' भवति । एषा-चतुर्थसमित्याराधना विज्ञेया ॥ सू० ४ ॥

णाए) प्रतिलेखनाचक्षु द्वारा अच्छी तरह अवलोकन किया और प्रस्फोटन-यतना पूर्वक झटकारना रूप किया तथा प्रमार्जना कर लेने पर (अहो य राओ य) दिन में तथा रात्रि में जब कभी रखने और लेने काम पड़े तो इन (भायणभंडोवहिउवगरणं) भाजन, भांड और वस्त्रादि रूप उपधि को (अपमत्तेण) अप्रमत्त होकर साधु को (सययं) नित्य (निक्खियव्वं) यतनासे धरना चाहिये और (गिण्हियव्वं च होइ) यतना से उठाना चाहिये ।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने कैसा आहार मुनि को लेना चाहिये और क्या २ सामग्री अपने पास रखना चाहिये—यह सब प्रकट किया है । आचाराङ्ग के द्वितीय श्रुतस्कंध में जो पिण्डैवणा नामका प्रथम अध्ययन है उसमें ग्यारह उद्देशों में आहार के जो दोष प्रतिपादित किये गये हैं उन दोषों से जो आहार वर्जित हो, क्रयण आदि की कृत आदि रूप नौकोटियों से जो शुद्ध हो, उद्गम, उत्पादना और एषणा से जो शुद्ध हो, व्यपगत आदि विशेषणों वाला हो; प्रासुक हो, संयोजनादोष

पस्फोटनपमज्जणाए” प्रतिवेपना—आंघ पड़े सारी रीते अवलोकन अने प्रस्फोटन—यतनापूर्वक झटकारना रूप किया तथा प्रमार्जन कर्वा पछी “अहोय राओय” द्विये के रात्रे व्यारे पछु लेवा के भूक्षानी वरु पड़े ल्यारे ते “भायणभंडोवहिउवगरणं” भाजन, भांड अने वस्त्रादि रूप उपधिने “अप-मत्तेण” अप्रमत्त थरुने साधुअे “सययं” अहा “निक्खियव्वं” यतना-पूर्वक भूक्षवा लेअे अने “गिण्हियव्वं च होइ” यतनापूर्वक ठांचवा लअे

भावार्थ—आ सूत्र द्वारा सूत्रकार केवे आहार मुनिअे लेवे लेअे अने कयी कयी सामग्री पोतानी पसे राखवी लेअे ते अधुं यताव्युं छे. आचारांजना भीअ श्रुतस्कंधमां के पिण्डैवणा नामनुं पडेलुं अध्ययन छे तेना अगियार उद्देशोमां आहारना के दोषोनुं प्रतिपादन करवामां आव्युं छे ते दोषोथी के आहार रक्षित होय, कयलु आदिना कृत आदिअे नव प्रकार के शुद्ध होय, उद्गम, उत्पादना अने ओषणाथी के शुद्ध होय, व्यपगत आदि विशेषणुं पाणे होय, प्रासुक होय, संयोजना दोष विनामे होय, अंगार

સે હીન હો, અંગારા ઓર ધૂમ ટોપ સે વિગત હો એસા હી આહાર મુનિ કો ક્ષુધા વેદના આદિ છહ કારણોં કે નિમિત્ત કો લેકર છહકાય કે જીવોં કી રક્ષા કે અભિપ્રાય સે લેના ચાહિયે । તથા હસ પરિગ્રહ વિરત સાધુ કે લિયે કમી મી ચાહે કિસી મી પ્રકાર કા કેસા હી રોગાતંક ઉદય મેં આ રહ્યા હો અપને નિમિત્ત એવં પર કે નિમિત્ત ઔષધિ આદિ કા સંગ્રહ નહીં કરુના ચાહિયે । મુનિ કે લિયે આગમ મેં જિન ૨ ધર્મોપકરણોં કો રક્ષને કા વિધાન હૈ-વે ૨ ધર્મોપકરણ ઉસે શીત આતપ આદિ જન્ય વાધા કો નિવૃત્તિ કે લિયે ઓર સાવચયોગવિરતિરૂપ સત્રહ પ્રકાર કે સંયમ કી રક્ષા કરને કે લિયે વિના કિસી રાગદ્રેષપરિણતિ કે અપને પાસ રખના ચાહિયે । ઉનકી પ્રતિદિનયતના પૂર્વક પ્રમાર્જના આદિ કરકે દિન યા રાત્રિ મેં ઉન્હેં યતનાપૂર્વક ધરનો ઓર ઉઠાના ચાહિયે । સૂત્ર મેં જો “વચગયચુગ ચવિચચત્તદેહં” યહ પદ આયા હૈ ઉસકા શબ્દાર્થ હસ પ્રકાર હૈ-સામાન્યરૂપ મેં જો આહાર ચેતન પર્યાય સે રહિત હોકર અચેતન બન જાતા હૈ । વહ વ્યપગત કહલાતા હૈ । વિશેષ રૂપ મેં જીવન આદિ ક્રિયા સે જો વિનિર્ગત હોતા હૈ વહ વ્યુત કહલાતા હૈ । ચેતના પર્યાય સે જો ધૃત્યાદિ દ્વારા રહિત કરાયા જાના હૈ વહ વ્યાવિત કહા જાતા હૈ । એવં જો જીવોં કે સંબંધ સે રહિત હોતા હૈ વહ

અને ધૂમ ટોપથી રહિત હોય, એવો જ આહાર મુનિએ ક્ષુધાવેદના આદિ છ કારણોને નિમિત્તે છકાયના છવોની રક્ષાના અભિપ્રાયથી લેવો જોઈએ. તથા એ પરિગ્રહ વિરત સાધુએ ગમે તે પ્રકારનો રોગાતંકનો ઉદય થયો હોય તે પણ પોતાને માટે કે અન્યને માટે કદી પણ ઔષધિ આદિનો સંગ્રહ કરતો જોઈએ નહીં. મુનિને માટે જે જે ઉપકરણો રાખવાનું આગમમાં વિધાન છે, તે તે ઉપકરણ તેણે શીત, તડકે આદિથી નહીં મુરકેલીઓથી બચવા માટે અને સાવચયોગ વિરતિરૂપ સત્ર પ્રકારના સંયમની રક્ષાને માટે કેઈ રાગદ્રેષ પરિણતિ વિના પોતાની પાસે રાખવાં જોઈએ. તેની દરેકજ યતનાપૂર્વક પ્રમાર્જના આદિ કરીને રાત્રે કે દિવસે તેમને યતનાપૂર્વક મૂકવા તથા લેવા જોઈએ. સૂત્રમાં જે “વચગયચુગ ચવિચચત્તદેહં” આ પદ આવે છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-સામાન્ય રીતે જે આહાર ચેતન પર્યાયથી રહિત થઈને અચેતન બની બંધ છે તેને વ્યપગત આહાર કહે છે. વિશેષ રૂપે જીવન આદિ ક્રિયાથી જે વિનિર્ગત થાય છે તે વ્યુત આહાર કહેવાય છે. ધૃત્યાદિ દ્વારા જે ચેતના પર્યાયથી રહિત થાય છે તે વ્યાવિત કહેવાય છે. અને જે જીવોના સંબંધથી

સુશિક્ષિની ટીકા મ૦૫ સ૦૫ સંપત્તાચારપાલકસ્ય સ્થિતિનિરૂપણમ્ ૮૭

મૂલમ્-એવં સે સંજણ વિમુક્તે નિસ્સંગો નિપ્પરિગ્ગહરુઈ
 નિમ્મમે નિરિસણૈહવંધણે સઠ્ઠવાવવિરણ વાસીચંદણસમા-
 નકપ્પે સમતિણમણિમુત્તલેટ્ટુકંચણસમે સમે ય માણાવમા-
 નણાણ સમિયરણ સમિયરાગદોસે સમિણ સમિહસુ સમ્મ-
 દિટ્ઠી સમે ય જે સઠ્ઠવાણભૂણસુ સે હુ સમણે સુયધારણ
 ઉજ્જુણ સંજણ સુમાદુ સરણં સઠ્ઠભૂયાણં સઠ્ઠવજગવચ્છલે
 સચ્ચભાસણ સંસારતે ઠિણ્યસંસારસમુચ્છિન્ને સયયં સરણાણ
 પારણ પારણ ય સઠ્ઠવેસિં સંભયાણં પવયણમયાહિં અટ્ટહિં
 અટ્ટકમ્મગંઠી વિમોયગે અટ્ટમયમહણે સસમયકુસલે ય ભવહ,
 સુહદુહનિવિસેસે અબ્ભિતરવાહિરમ્મિ સયા તવોવહાણમ્મિ
 ય સુટ્ટુજુણ ધંતે દંતે ય હિયનિરણ ઇરિયાસમિણ ભાસા-
 સમિણ ઇસણાસમિણ આયાણમંદમત્તનિક્કલેવણાસમિણ ઉચ્ચા-
 રપાસવણલેલ--જ્ઞસિંધાણપરિટ્ટાવણાસમિણ મણગુત્તે વડગુત્તે
 કાયગુત્તે ગુત્તિંદિણ ગુત્તવંભયારી ચાઈ લજ્જુધણો તવસ્સી
 ધંતીધમે જિહંદિણ સોહિણ અણિયાણે અવહિલેસ્સે અમમે
 અર્કિચ્છણે છિન્નગંધે નિરુવલેવે સુવિમલવરકંસભાયણં ચેવ
 મુક્કતોણ સંલે વિવ નિરંજણે વિગયરાગદોસમોહે કુમ્મોહવ
 ઇંદિયસુગુત્તે, અચ્ચકળગં વ જાયરુવે, પુક્કલરપત્તં વ નિરુવ-

ત્યક્ત કહા જાતા હૈ । હસ તરહ હસ સૂત્ર દ્વારા ચૌથી સમિતિ કી આરા-
 ધના પ્રકટ કી ગઈ હૈ એસા જાનના ચાહિયે ॥ સૂ-૪ ॥

રહિત થાય છે તે ત્યક્ત આહાર કહેવાય છે, આ રીતે આ સૂત્ર દ્વારા ચૌથી
 સમિતિની આરાધના પ્રગટ કરવામાં આવી છે તેમ સમજવું જોઈએ ॥ સૂ. ૪ ॥

लेवे, चंदो इव सोमयाए सूरौव्व दित्ततेये, अचले जहमंदरे
 गिरिवरे, अक्खोभो सागरेव्व थिमिय पुढवी त्रिय सव्व-
 फासविसहे तवसावि य भासरासिच्छन्नेव जायतेए जलि-
 यद्दुयासणो त्रिव तेयसा जलंते गोसीसचंदणं पिव सीथले
 सुगंधीय हरओ त्रिव, समियभावे उग्घोसियसुनिम्मलं आयं-
 समंडलतलं व पागडभावेण सुद्धभावे, सोंदीरो कुंजरो व,
 वसभो व जायथामे, सीहोव जहा मिगाहिवे होइ दुप्प-
 धरिसे, सारयसलिलं व सुद्धहियए भारंडे चेव अप्पमत्ते
 खगिविसाणं एगजाए खाणू व उड्डकाए सुण्णागारेव्व अप्प-
 डिक्कमे सुण्णागारा वणस्संतो निवायसरणप्पइवज्झामणमिव
 निप्पकंपे जहा खुरोचेव एगधारे जहा अहीचेव एगदिट्ठी
 आगासं चेव निरालंवे विहगे त्रिव सव्वओ विप्पमुक्के कय-
 परनिलए जहा चेव उरए, अप्पडिवद्धो अनिलोव्व, जीवोव्व
 अप्पडिहयगई, गामे गामे य एगरायं णगरे णगरे पंचरायं
 दूइज्जंते य जिर्तिदिए जियपरिमुहे य निव्वमए विउसचि-
 ताचित्तमीसएहिं दव्वेहिं विरागयंगए संचयओ विरए मुत्ते
 लहुगे निरवकंखे जीवियमरणासविप्पमुक्के निस्संधं निव्वणं
 चरित्तं धीरे काएण फासयंते सययं अज्झप्पज्झाणजुत्ते
 निहुए एगे चरेज्ज धम्मं ॥ सू० ५ ॥

‘ एवं ’ इत्यादि—

टीका— ‘ एवं ’ एवम् = उक्तप्रकारेण साधुधर्मनिरतः ‘ से संजए ’ स सं-
 यतः=संयमी ‘ विमुत्ते ’ विमुक्तः संग्रहकरणाद् विमुक्तः ‘ निस्संगो ’ निःसङ्गः=

સુશ્કિની ટીકામ૦૫ સૂ૦૫ સંયતાચારપાલકસ્ય સ્થિતિનિરૂપણમ્

૮૭૩

આસક્તિવર્જિતઃ ‘ નિષ્પરિગ્રહરૂઢિ ’ નિષ્પરિગ્રહરુચિઃ-પરિગ્રહરુચિરહિત ઇત્યર્થઃ; ‘ નિમ્મમે ’ નિર્મમઃ=મમત્વભાવવર્જિતઃ ‘ નિસ્સિનેહબંધને ’ નિઃસ્નેહબંધનઃ=નિર્ગતં સ્નેહબંધનં યસ્માત્સ-સ્નેહબંધનરહિત ઇત્યર્થઃ; ‘ સત્ત્વપાવિરણ ’ સર્વ-પાવિરતઃ-કાયિકવાચિકમાનસિકસર્વવિધપાવવર્જિત ઇત્યર્થઃ; તથા-‘ વાસીચંદણસમાણકણ્ણે ’ વાસીચંદનસમાનકલ્પઃ; વાસી=‘ વસુલા ’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધા, સેવ-વાસી=તક્ષકત્વેન અપકારી, તસ્મિન્ તથા ચંદનમિવોપકારકત્વેન ચંદનમ્=ઉપકારી, તસ્મિંશ્ચ અપકારકે ઉપકારકે દ્વયોરપિ સમાનઃ=સદૃશઃ કલ્પઃ=આચારો યસ્ય સ તથોક્તઃ । યથોક્તમ્—

“ યો મામપકરોત્યેષ, તત્ત્વેનોપકરોત્યસૌ ।

શિરામોક્ષાદ્યુપાયેન, કુર્વાણ ઇવ નીરુજમ્ ॥ ૧ ॥ ”

‘ एवं से ’ इत्यादि-

ટીકાર્થ—(एवं) હસ પ્રકાર સાધુ ધર્મ મેં લવલીન બના હુઆ (સે સંજણ) વહ સંયમીસાધુ (વિમુક્તે) સંગ્રહ કરને સે વિમુક્ત બન જાતા હૈ (નિસ્સંગો) આસક્તિ સે વર્જિત હો જાતા હૈ (નિષ્પરિગ્રહરૂઢિ) પરિગ્રહ કી રુચિ સે રહિત હો જાતા હૈ (નિમ્મમે) મમત્વભાવ સે વિહીન હો જાતા હૈ (નિસ્સિનેહબંધને) સ્નેહરૂપબંધન સે મુક્ત બન જાતા હૈ (સત્ત્વપાવિરણ) કાયિક, વાચિક एवं માનસિક સર્વેપ્રકાર કે પાપોં સે વિરત હો જાતા હૈ (વાસીચંદણસમાણકણ્ણે) તથા વાસી (વસુલા) કે જૈસે અપકારક મેં ઔર ચંદન કે જૈસે ઉપકારક મેં એકસા આચાર વાલા બન જાતા હૈ । જૈસે કહા હૈ—

“ યો મામપકરોત્યેષ, તત્ત્વેનોપકરોત્યસૌ ।

શિરામોક્ષાદ્યુપાયેન, કુર્વાણ ઇવ નીરુજમ્ ॥૧॥ ”

ટીકાર્થ—આ પ્રકારે સાધુ ધર્મમાં લીન અનેલ “ સે સંજણ ” તે સંયમી સાધુ “ વિમુક્તે ” સંગ્રહ કરવાના કાર્યથી વિમુક્ત થઈ બચ છે, “ નિસ્સંગો ” આસક્તિથી રહિત બની બચ છે, “ નિષ્પરિગ્રહરૂઢિ ” પરિગ્રહની રુચિથી રહિત થઈ બચ છે, “ નિમ્મમે ” મમત્વ ભાવ વિનાનો બની બચ છે, “ નિસ્સિનેહ બંધને ” સ્નેહરૂપ બંધનથી મુક્ત થઈ બચ છે, “ સત્ત્વપાવિરણ ” કાયિક, વાચિક અને માનસિક એ સર્વ પ્રકારનાં પાપોથી વિરત થઈ બચ છે “ વાસી ચંદણસમાણકણ્ણે ” તથા વાસલા “ વસુલા ” ના જેવા અપકારક પ્રત્યે તથા ચંદનના જેવા ઉપકારક પ્રત્યે એક સરખા બની બચ છે. જેમકે કહ્યું છે—

“ યો મામપકરોત્યેષ, તત્ત્વેનોપકરોત્યસૌ ।

શિરામોક્ષાદ્યુપાયેન, કુર્વાણ ઇવ નીરુજમ્ ॥ ૧ ॥

અથવા—વાસી=કાષ્ટતક્ષકશસ્ત્રવિશેષ: ' વસુલા ' ઇતિ પ્રસિદ્ધઃ, તસ્યૈ ચન્દનસમાનઃ=ચન્દનતુલ્ય કલ્પઃઆચારો यस્ય સ તથોક્તઃ, યથાચન્દનં સ્વચ્છેદકશસ્ત્રમપિ સુગન્ધયુક્તં કરોતિ તથા સાધુઃ સ્વસ્થાપકારિણ્યપિ કોપં ન કરોતિ પ્રત્યુત તસ્યોપકારં કરોતિ, ઉક્તશ્ચ—

“ અપકારપરેઽપિ પરે કુર્વન્ત્યુપકારમેવહિ મહાન્તઃ ।

સુરભી કરોતિ વાસીં મલયજમિહ તક્ષમાણમપિ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

તથા—‘ સમતિળમણિમુત્તલેટ્ટુકંચણસમે ’ સમતળમણિમુત્તલેટ્ટુકાશ્વનસમઃ, સમા સ્તુલ્યા સ્તુળમણિમુક્તા યસ્ય સઃ । તથા—લેટ્ટુકાશ્વનયોઃ=મૃત્સવ્હસુવર્ણયોશ્ચ સમઃ, અનયોઃ કર્મધારયસમાસઃ । તથા—‘ સમે ય માણાવમાણાણ ’ સમશ્ચ માના-

જો મેરા અપકાર કરતા હૈ, વહ અપકાર નહોં કરતા કિન્તુ નશ મરોહકર નીરોગ કરને વાલે કી तरह ઉપકાર હી કરતા હૈ અથવા જિસ પ્રકાર અપને કો કાટને વાલે વસૂલા કો ચંદન સુગંધ યુક્ત કર દેતા હૈ ઉસી तरह સાધુ મો અપને અપકારી કે ડપર ક્રોધ ન કરકે ઉસકા ઉપકાર હી કહતા હૈ । જૈસે કહોં હૈ—

“ અપકારપરેઽપિ પરે કુર્વન્ત્યુપકારમેવ હિ મહાન્તઃ ।

સુરભી કરોતિ વાસીં, મલયજમિહ તક્ષમાણમપિ ॥ ૧ ॥ ”

જો મહાન્ પુરુષ હોતે હૈં વે અપકાર કરને મેં તત્પર હુણ પ્રાણિયોં કે ડપર મો ઉપકાર હી કરતે હૈં । જૈસે ચંદન અપનેકો કાટનેવાલે વસૂલેકો મો સુગંધિત કર દેતા હૈં (સમતિળમણિમુત્તલેટ્ટુકંચણસમે) તૃણ, મણિ, મુક્તા મિટ્ટીકા લંડ ઓર સુવર્ણ ઉસકી દૃષ્ટિમેં સમાન હી હોતે હૈં અર્થાત્ -ઉપેક્ષાભાવ કી અપેક્ષા સે વહ સાધુ હન સબ પદાર્થોં કો પક્ષપાત કી

જે મારા પર અપકાર કરે છે, તે અપકાર કરતો નથી પણ નસ યોગીને નીશાળી બનાવનારની જેમ ઉપકાર જ કરે છે. અથવા જે રીતે પોતાને કાપનાર વાંસલાને ચંદન સુગંધીદાર બનાવે છે એ જ પ્રમાણે સાધુ પણ પોતાના પર અપકાર કરનાર પર ક્રોધ કરતો નથી પણ તેના પર ઉપકારજ કરે છે. જેમ કે કહું છે કે—

“ અપકારપરેઽપિ પરે કુર્વન્ત્યુપકારમેવ હિ મહાન્તઃ ।

સુરભી કરોતિ વાસીં, મલયજમિહ તક્ષમાણમપિ ॥૧॥”

જેમ ચંદન પોતાને કાપનારને વાંસલાને પણ સુગંધિત કરે છે, તેમ જે પુરુષો મહાન હોય છે તેઓ અપકાર કરવાને તત્પર થયેલ પ્રાણીઓ પર પણ ઉપકાર જ કરે છે. “ સમતિળ-મણિ-મુત્તલેટ્ટુ-કંચણસમે ” તૃણ, મણિ, મોતી, માટીનું ઢેકું, અને સુવર્ણ તેની નજરે સમાન જ હોય છે. એટલે કે ઉપેક્ષા લાવની અપેક્ષાએ તે સાધુ એ બધા પદાર્થોને પક્ષપાતની નજરે જોતો

સુવર્ણિની ટીકા અ૦૫ સુ૦૫ સંયતાચારપાલકસ્થિતિનિરૂપણમ્

૮૭૫

પમાનનયોઃ, તથા-‘ સમિયરણ ’ શમિતરજાઃ=શમિતમ્=ઉપશાન્તં રજઃ=પાપં યસ્ય સઃ, અથવા-શમિતં રતં=વિષયેષ્વનુરાગો યસ્ય સઃ, યદ્વા-શમિતો રયઃ=વિષયો-ત્સુક્યં યસ્ય સઃ, તથા-સમિયરાગદોસે ’ શમિતરાગદ્વેષઃ=શમિતો રાગદ્વેષો યસ્ય સઃ, તથા-‘ સમિણ સમિર્દેસુ ’ સમિતઃ સમિતિષુ=પાંચસમિતિપરાયણ इत्यर्थः, ‘ સમ્મદ્દિટ્ઠી ’ સમ્યક્દૃષ્ટિઃ । તથા-‘ જે ય ’ યથ્ ‘ સવ્વપાણભૂણ્ણુ ’ સર્વપ્રાણ-ભૂતૈષુ=સર્વે ચ તે પ્રાણાઃ=દ્વીન્દ્રિયાદિત્રસાઃ, ભૂતાઃ=સ્થાવરાસ્તૈષુ ‘ સમે ’ સમઃ, ‘ સે હુ ’ સ સ્વલુ ‘ સમણે ’ શ્રમણઃ ‘ સુયધારણ ’ શ્રુતધારકઃ ‘ ઉજ્જુણ ’ વ્રજુ-કઃ=અવક્રઃ, અથવા-ઉદ્યુક્તઃ=આલસ્યવર્જિતઃ, ‘ સંજણ ’ સંયતઃ ‘ સુસાહુ ’ સુ-સાધુઃ=સુષ્ટુનિર્વાણસાધનપરઃ, તથા સવ્વભૂયાણં, સર્વભૂતાનાં બહ્વજીવનિકાયસ્ય

દૃષ્ટિ સે નહીં નિહારતા હૈ । (માણાવમાણણ સમે ય) માન ઓર અપ-માન મેં વહ્ હર્ષ વિષાદ સે વિહીન હોતા હૈ । (સમિયરણ) ડસકે પાપ ઉપશાન્ત હો જાતે હૈ । અથવા-વિષયોં મેં અનુરાગ યા ડસકા ઓત્સુ-ક્યભાવ ડસકા સર્વથા શાન્ત હો જાતા હૈ (સમિયરાગદોસે) રાગદ્વેષ શમિત હો જાતે હૈ । (સમિણ સમિર્દેસુ) પાંચ સમિતિયોં મેં વહ્ સમિત પરાયણ હોતા હુઆ (સમ્મદ્દિટ્ઠી) સમ્યક્દૃષ્ટિવાલા બન જાતા હૈ । ઓર (જે ય સવ્વપાણભૂણ્ણુ સમે) સમસ્ત દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોં પર ઓર સ્થાવરરૂપ સમસ્ત ભૂતોં પર ડસકા ભાવ ઇકસા હો જાતા હૈ । (સે હુ સમણે) ઇસાં વહ્ શ્રમણ (સુયધારણ) શ્રુતકા ધારક બન કર (ઉજ્જુણ) વ્રજ્ઞતા યા આલસ્ય સે રહિત (સંજણ) સમ્યક્ યતનાવાન હો હો જાતા હૈ ઓર (સુસાહુ) હરઇક પ્રકારકી અપની પ્રવૃત્તિકો યતના-ચારપૂર્વક કરનેકે કારણ વહ્ સચ્ચે અર્થમેં સાધુ-નિર્વાણ-મોક્ષકે સાધન

નથી. “ માણાવમાણણ સમે ય ” માન અને અપમાનમાં તે હર્ષવિષાદ રહિત બની બીય છે “ સમિયરણ ” તેના પાપ ઉપશાન્ત થઈ બીય છે. અથવા-વિષયો પ્રત્યેનો અનુરાગ કે તેમના પ્રત્યેની ઉત્સુકતા તદન શાન્ત થઈ બીય છે. “ સમિયરાગદોસે ” તેના રાગદ્વેષનું શમન થઈ બીય છે. “ સમિણ સમિર્દેસુ ” પાંચ સમિતિઓમાં તે સમિત-પરાયણ થઈને “ સમ્મદ્દિટ્ઠી ” સમ્યક્દૃષ્ટિવાળો બની બીય છે. અને “ જે ય સવ્વપાણભૂણ્ણુ સમે ” સમસ્ત દ્વિન્દ્રિયાદિક જીવો પર અને સ્થાવરજીવ સમસ્ત ભૂતો પર તેનો સમભાવ થઈ બીય છે. “ સે હુ સમણે ” એવો તે શ્રમણ “ સુયધારણ ” શ્રુતનો ધારક બનીને “ ઉજ્જુણ ” વ્રજ્ઞતા કે આગસથી રહિત “ સંજણ ” સમ્યક્ યતનાવાળો બની બીય છે અને “ સુસાહુ ” પોતાની દરેક પ્રકારની પ્રવૃત્તિ યતનાચારપૂર્વક કરવાને કારણે તે સાચા અર્થમાં સાધુ-

‘સરણ’ શરણમ્ ‘સઘ્વજગવચ્છલે’ સર્વજગદ્વત્સલઃ—સર્વજીવયોનિષુ કરુણાભાવયુક્તઃ, ‘સઘ્વમાસૃય’ સત્યભાષકશ્ચ, સત્યભાષાવિવેકતત્પરઃ તથા—‘સંસારંતે ઠિયે ય’ સંસારાન્તે સ્થિતાશ્ચ—ભાવિજન્મરહિતત્વાત્, ઇમમેવાર્થે શબ્દાયેન્તરેણાહ ‘સંસારસમુચ્છિન્ને’ સંસારસમુચ્છિન્નઃ=સંસારઃ=ચતુર્ગતિલક્ષણઃ સમુચ્છિન્નો યેન સઃ, અતઃ૽ ‘સયયં’ સતતમ્ ‘મરણાણં’ મરણાનાં ‘પારણ’ પારગઃ=મુક્તસ્યો સ્પૃચ્યભાવેન મરણાભાવાન્મરણપારગત્ત્વં વૌધ્યમ્ । તથા—‘પારગે ય’ પારગશ્ચ ‘સઘ્વેસિં સંસયાણં’ સર્વેષાં સંશયાનામ્=સર્વસંશયોચ્છેદક ઇત્યર્થઃ, તથા ‘પવયણ-માયાહિં અદ્વિહિં પ્રવચનમાતૃભિરષ્ટાભિઃ=પશ્ચસમિતિત્રિગુપ્તિ રૂપાભિઃ=સાધનભૂતાભિઃ

કરનેમેં તત્પર—બન જાતા હૈ । તથા(સરણં સઘ્વમૂયાણં) સમસ્ત ભૂતોં કારક્ષક બના હુઆ વહ સાધુ (સઘ્વજગવચ્છલે) સર્વ પ્રકારની જીવ યોનિયોં કે ઉપર અપાર કરુણાભાવ સે સહિત હો જાતા હૈ । (સઘ્વમાસૃય) ઉસકી ભાષા મેં સત્યવાદિતા કી છાપ લગ જાતી હૈ ઓર વહ (સંસારંતે ઠિયે) અગામી જન્મસે રહિત હોનેકે કારણ સંસાર કે અંત મેં સ્થિત હો જન્તા હૈ । હસી વાતકોં સૂત્રકાર શબ્દાન્તરસે સમજાતે હેં—(સંસારસમુચ્છિન્ને) ઉસ સાધુકા ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર સમુચ્છિન્ન હો જાતા હૈ । અત ઇવ (સયયં મરણાણપારણ) વહ સતત મરણ કા પારગામી બન જાતા હૈ । કયોં કિ મુક્ત જીવ કી ફિર સંસાર મેં ઉત્પત્તિ નહીં હોતી હૈ, હસલિયે ઉસકા મરણ ભી નહીં હોતા હૈ, અતઃ હસી ભાવ કો લેકર ‘વહ મરણ કા પારગામી બન જાતા હૈ’ ઇસા કહા ગયા હૈ । (સઘ્વેસિં સંસયાણં પારણ) વહ સમસ્ત પ્રકારકે સંશયોં કા ઉચ્છેદક

નિર્વાણુ સાધવાને તત્પર બની બધ છે. તથા “સરણં સઘ્વમૂયાણં” સમસ્ત જીવોનો રક્ષક બનેલ તે સાધુ “સઘ્વજગવચ્છલે” સર્વ પ્રકારની જીવ યોનિયો પર અપાર કરુણાભાવથી યુક્ત બની બધ છે. “સઘ્વમાસૃય” તેની વાણીમાં સત્યવાદિતાની છાપ લાગી બધ છે અને તે “સંસારંતે ઠિયે” આવતા જન્મથી રહિત હોવાને કારણે સંસારના અન્તમાં સ્થિત થઈ બધ છે. એ જ વાતને સૂત્રકાર બીજી રીતે શબ્દાદિક ફેરફારથી સમજાવે છે—“સંસારસમુચ્છિન્ને” તે સાધુને આરગતિરૂપ સંસાર સમુચ્છિન્ન થઈ બધ છે. તેથી “સયયં મરણાણપારણ” તે કાયમને માટે મરણનો પારગામી બની બધ છે, કારણ કે મૂક્ત જીવની સંસારમાં ફરીથી ઉત્પત્તિ થતી નથી, તેથી તેનું મરણ પણ થતું નથી. તેથી એ ભાવને કારણે “તે મરણનો પારગામી બની બધ છે” એવું કહ્યું છે. “સઘ્વેસિં સંસયાણં પારણ” તે સમસ્ત પ્રકારના સંશયોનો ઉચ્છેદક—નિવારક થઈ બધ છે.

સુદર્શિની ટીકા મં.૫ સુ. ૧ સંયતાચારપાલકસ્ય સ્થિતિનિરૂપણમ્ ૮૭૭

‘ અટકમ્મગંઠીવિમોયગે ’ અટકર્મગ્રન્થિવિમોચકઃ=અટ્ટો=અટ્ટસંખ્યકા યે કર્મગ્રન્થયસ્તેષાં વિમોચકઃ, તથા-‘ અટ્ટમયમહણે ’ અટ્ટમદમયનઃ=અટ્ટમદસ્થાનનાશકઃ ‘ સસમયકુસલેય ’ સ્વસમયકુશલશ્ચ=સ્વસિદ્ધાન્તનિપુણશ્ચ, ચકારાત્ પરસમયકુશલઃ ‘ ભવહ ’ ભવતિ । તથા-‘ સુહદુક્ષનિવિસેસે ’ સુખદુઃખનિવિશેષઃ=સુખદુઃખયોર્દર્શનોકાદિરહિત इत्यर्थः, ‘ અર્ઘિમત્તરવાહિરમ્મિ તવોવહાણમ્મિ ’ આભ્યન્તરવાહ્યે તપઉપધાને, તત્ર-ચિત્તનિરોધપ્રાધાન્યેન કર્મક્ષયણહેતુત્વાદ્માયશ્ચિત્તાદિપટ્ટકમ્-આભ્યન્તરમ્ । બાહ્યસરીરસ્ય પરિશોષણેન કર્મક્ષયણહેતુત્વાદનશનાદિપટ્ટકં બાહ્યમ્, અન્યોર્દ્વેન્દ્રઃ, તસ્મિન્, તપ ઉપધાને=તપએવ મોક્ષમાર્ગસ્યોપટ્ટમ્મકત્વાદુપધાનં તસ્મિન્, ‘ સયા ’ સદા ‘ સુદ્દુજ્જણ ’ સુદ્દુઘટઃ = સમ્યક્તયા તદારાધને તત્પર હો જાતા હૈ । તથા (પાવયણમાયાહિ અટ્ટહિ) પાંચસમિતિ, ત્રીન ગુણિ રૂપ અટ્ટ પ્રવચન માતાઓં કે ઘલ પર વહ (અટ્ટકમ્મગંઠીવિમોયગે) આઠ પ્રકારકે કર્મોં કી ગ્રન્થિયોં કો છોડાનેવાલા બન જાતા હૈ । (અટ્ટમયમહણે) શુદ્ધ સમ્યગ્દર્શન કા પાલનકર્તા હોનેકે કારણ વહ આઠ મર્દોં કા વિનાશક હોતા હૈ । (સસમયકુસલેય) સ્વસમયમેં પૂર્ણ નિષ્ણાત બન જાતા હૈ તથા ચકારસે પરસમયકા જ્ઞાતા ભી બન જાતા હૈ । (સુહદુક્ષનિવિસેસે) સુખ ઓર દુઃખ ઉસે ઇકસે પ્રતીત હોને લગજાતે હૈ । વહ ઉનમેં હર્ષ ઓર વિષાદ નહોં કરતા હૈ । (અર્ઘિમત્તરવાહિરમ્મિ તવોવહાણમ્મિ) ચિત્તનિરોધકી પ્રધાનતાસે કર્મક્ષયણ કે હેતુભૂત હોને કે કારણ પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ છહ પ્રકાર કે આભ્યન્તર તપ રૂપ ઉપધાન મેં તથા બાહ્ય મેં શરીર કે પરિશોષણ સે કર્મક્ષયણ કે હેતુ હોને સે અનશન આદિ બારહ પ્રકાર કે બાહ્ય તપરૂપ ઉપધાન મેં સદા (સુદ્દુજ્જણ) અઢી તરહ

“ પવયણમાયાહિ અટ્ટહિ ” પાંચ સમિતિ ત્રણગુણિધી આઠ પ્રવચન માતાઓના બળથી તે “ અટ્ટકમ્મગંઠીવિમોયગે ” આઠ પ્રકારના કર્મોની ગઠિને છોડાવનાર બની બાધ છે “ અટ્ટમયમહણે ” શુદ્ધ સમ્યગ્દર્શનનો પાલનકર્તા હોવાને કારણે તે આઠ મર્દોના વિનાશક હોય છે “ સસમયકુસલેય ” સ્વસમયમાં પૂર્ણ નિષ્ણાત બની બાધ છે તથા ચકારથી પર સમયનો બાહ્યકાર બની બાધ છે. “ સુહદુક્ષનિવિસેસે ” સુખ અને દુઃખ તેને સરખાં લાગવા માંડે છે. તે તેમાં હર્ષ કે વિશાદ કરતો નથી. “ અર્ઘિમત્તરવાહિરમ્મિ તવોવહાણમ્મિ ” ચિત્તનિરોધની પ્રધાનતાથી કર્મક્ષયના હેતુભૂત હોવાને કારણે પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ છ પ્રકારનાં આભ્યન્તર તપરૂપ હોવાને ઉપધાનમાં તથા બાહ્યમાં શરીરના પરિશોષણથી કર્મક્ષયના હેતુભૂત હોવાને કારણે અનશન આદિ ચાર પ્રકારના બાહ્ય તપરૂપ ઉપધાનમાં સદા “ સુદ્દુજ્જણ ” સારી રીતે તે તત્પર થઈ બાધ છે, એટલે

इत्यर्थः, तथा 'स्वते' सान्तः=क्षमावान् 'दंते य' दान्तश्च=इन्द्रियदमनकारी च, तथा-'हियनिरए' हितनिरतः=आत्मकल्याणपरायण इत्यर्थः, तथा-'इरियासमिए' ईयांसमितः, 'भासासमिए' भाषासमितः 'एसणासमिए' एषणासमितः 'आयाणमंडमत्तनिकखेवणासमिए' आदानभाण्डमत्रनिक्षेपणासमितः 'उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए' उच्चारपासवणखेल सिंघाणसमिए 'उच्चारप्रसवणखेलमसिंघाणजल्लपरिट्ठापनिकासमितः, 'मणगुत्ते' मनोगुप्तः-वयगुत्ते' वचोगुप्तः, 'कायगुत्ते' कायगुप्तः 'गुत्तिदिए' गुप्तेन्द्रियः, 'गुप्तवंभयारी' गुप्तब्रह्मचारी, एषामर्थाः पूर्वं व्याख्याताः । तथा वह तत्पर हो जाता है अर्थात् बाह्य और आभ्यन्तर तपों की आराधना वह बहुत अच्छी तरह से किया करता है। (स्वते) सय जीवों पर वह क्षमाभाव रखता हुआ (दंते) और अपनी इन्द्रियों का दमन करता हुआ (हियनिरए) आत्मकल्याण करने में परायण बन जाता है। तथा (इरियासमिए) ईयांसमिति से युक्त (भासासमिए) भाषासमिति से युक्त, (एसणासमिए) एषणासमिति से युक्त (आयाणमंडमत्तनिकखेवणासमिए) आदानभांडमत्रनिक्षेपणा समिति से युक्त तथा (उच्चारपासवणखेलसिंघाणजल्लपरिट्ठावणियासमिए) उच्चारप्रसवणखेलसिंघाणजल्लपरिट्ठापनिका समिति से युक्त (मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते) मनोगुप्ति, वचनगुप्ति कायगुप्ति इन तीन गुप्तियों से गुप्त-रक्षित आत्मप्रवृत्ति वाला बना हुआ (गुत्तिदिए) अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण अंकुश रखने वाला बन जाता है (गुप्तवंभयारी) ब्रह्मचर्यव्रत की नौ कोटि से सदा रक्षा करने वाला होता है। तथा फिर

કે બાહ્ય અને અભ્યંતર તપોની આરાધના તે બહુ સારી રીતે કર્યા કરે છે. “સ્વતે” શ્રેષ્ઠ છવે પર તે સમાનભાવ રાખતો “દંતે” અને પોતાની ઇન્દ્રિયોનું દમન કરતો “હિયવિરए” આત્મકલ્યાણ કરવામાં પરાયણ બની જાય છે. તથા “इरियासमिए” ઈયાં સમિતિથી યુક્ત “भासासमिए” ભાષાસમિતિથી યુક્ત, “एसणासमिए” એષણા સમિતિથી યુક્ત, “आयाणमंडमत्तनिकखेवणासमिए” આદાન ભાંડ મત્ર નિક્ષેપણા સમિતિથી યુક્ત તથા “उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए” ઉચ્ચાર પ્રસવણ ખેલ મંડલ સિંઘાણ પરિટ્ઠાવણિયાસમિ” ઉચ્ચાર પ્રસવણ ખેલ મંડલ સિંઘાણ પરિટ્ઠાપનિકા સમિતિથી યુક્ત મણગુત્તે વયગુત્તે કાયગુત્તે” મનોગુપ્તિ વચન-ગુપ્તિ અને કાયગુપ્તિ, એ ત્રણે ગુપ્તિઓથી ગુપ્ત-રક્ષિત આત્મ પ્રવૃત્તિ પાળો બનીને “गुत्तिदिए” પોતાની ઇન્દ્રિયોપર પૂર્ણ અંકુશ રાખનાર બની જાય છે. “गुप्तवंभयारी” બ્રહ્મચર્ય વ્રતની નવ કોટીએ સદા રક્ષા કરનાર

સુવર્ણિની ટીકા અ૦૫ સુ૦ ૫ સંયતાચારપાલકસ્ય સ્થિતિનિરૂપણમ્

૮૭૧

‘ ચાઈ ’ ત્યાગી સર્વસંજ્ઞત્યાગાત્, ‘ લજ્જૂ ’ લજ્જાવાન=સંયમી ‘ ધણ્ણો ’ ધન્યઃ — સમ્યક્જ્ઞાન સમ્યક્દર્શનસમ્યક્ચારિત્રરૂપધનલાભયોગ્યત્વાત્, ‘ તવસ્સી ’ તપસ્વી=પ્રશસ્તતપોયુક્તત્વાત્, ‘ સંતિક્કલમે ’ ક્ષાન્તિક્ષમઃ=લબ્ધ્યાદિ સામર્થ્યે સત્યપિ ક્ષાન્ત્યા-શ્રમાગુણેન ક્ષમતે=સહતે યઃ સ તથોક્તઃ, તથા-‘ જિઈંદિણ ’ જિતેન્દ્રિયઃ, ‘ સોહિણ ’ શોધિતઃ=શુદ્ધઃ — ક્ષાલિતમિથ્યાત્વાદિકર્મમલ-ત્વાત્, ‘ અણિયાણે ’ અનિદાનઃ-નિદાનવર્જિતઃ, ‘ અબહિલેસ્સે ’ અબહિલેશ્યઃ-‘ અ ’ અવિદ્યમાના વહિઃ=સંયમાદ્ વહિઃ છેડ્યા=અન્તઃ કરણવૃત્તિઃ, યસ્ય સોડવ-હિલેશ્યઃ, સંયમાન્તઃકરણ इत्यर्थः, તથા ‘ અમમે ’ અમમઃ-મમત્વવર્જિતઃ, ‘ અકિ- (ચાઈ) સર્વ સંગ કા પરિત્યાગ કર દેને સે વહ ત્યાગી કહલાને લગતા હૈ । (લજ્જૂ) લજ્જાવાન બન જાતા હૈ-વહ સદા હસ યાત કા ધ્યાન રખતા હૈ કિ કહીં એસી પ્રવૃત્તિ મુશ્કસે ન બન જાવે જો સંયમ માર્ગે કે ચિરુદ્ધ હોકર મુદ્ધે લજાને વાલી હો । એસા વહ સંયમી (ધણ્ણો) સમ્યક્ જ્ઞાન, સમ્યક્ દર્શન ઔર સમ્યક્ ચારિત્ર રૂપ ધન લાભ કે યોગ્ય હો જાને કે કારણ ધન્ય માના જાતા હૈ । તથા (તવસ્સી) પ્રશસ્ત-તપો કો આચરિત કરાને વાલા હોને સે તપસ્વી કહલાને લગતા હૈ, તથા (સંતિક્કલમે) લબ્ધિ આદિ રૂપ સામર્થ્યસંપન્ન હોને પર ખી વહ ક્ષમાગુણ સે સઘ કુદ્ધ સહને વાલા સ્વભાવ બન જાતા હૈ । હસ તરહ (જિઈંદિણ) જિતેન્દ્રિય, (શુદ્ધ) મિથ્યાત્વાદિ કર્મમલક્ષાલિત હોને સે શુદ્ધ (અણિયાણે) નિદાન સે રહિત, (અબહિલેસ્સો) અબહિલેશ્ય-સંયમયુક્ત અન્તઃ કરણ વાલા (અમમે) મમતા સે રહિત (અકિવણે)

થાય છે. તથા “ ચાઈ ” સર્વ સંગનો ત્યાગ કરી દેવાથી તે ત્યાગી કહેવાવા લાગે છે. “ લજ્જૂ ” તે અંદરથી તથા બહારથી દોરીના જેવો સરળ થઈ બીજા છે અથવા લજ્જાવાન બની બીજા છે. તે હંમેશા તે વાતની કાળજી રાખે છે કે મારાથી કદાચ એવી પ્રવૃત્તિ થઈ ન બીજા કે જે સંયમ માર્ગની વિરુદ્ધ હોવાને કારણે મારે લજ્જા પડે. એવાં તે સંયમી “ ધણ્ણો ” સમ્યક્જ્ઞાન, સમ્યક્ દર્શન, અને સમ્યક્ ચારિત્રરૂપ ધનલાભને યોગ્ય થઈ જવાને કારણે ધન્ય બનાય છે. તથા “ તવસ્સી ” પ્રશસ્ત તપો કરનાર હોવાથી તપસ્વી કહેવાવા લાગે છે, તથા “ સંતિક્કલમે ” લબ્ધિ આદિરૂપ સામર્થ્ય યુક્ત હોવા છતાં પણ તે ક્ષમાશુભ્રથી બધું સહન કરવાની વૃત્તિવાળો થઈ બીજા છે. આ રીતે “ જિઈંદિણ ” જિતેન્દ્રિય, “ શુદ્ધ ” મિથ્યાત્વાદિ કર્મબળનો ક્ષય થવાને કારણે શુદ્ધ, “ અણિયાણે ” નિદાનથી રહિત, “ અબહિલેસ્સો ” અબહિલેશ્ય-સંયમી અંતઃકરણવાળો “ અમમે ” મમતાથી રહિત, “ અકિવણે ” અકિવચન

વળે 'અકિચ્ચન:-નિર્દ્વ્યઃ, 'છિન્નગંધે' છિન્નગ્રન્થ:-વાહ્યાભ્યંતરપગિરહિતઃ, તથા-'નિરુવલેવે' નિરુપલેપઃ=રાગદ્વેષવર્જિતઃ, તથા-'સુવિમલવરકંસભાવણં ચેવ' સુવિમલવરકાંસ્યભાજનમિવ=સુવિમલં=નિર્મલં યદ્વરકાંસ્યભાજનં તદિવ 'વિમુક્તો' વિમુક્તોયઃ=જલલેપરહિત, શ્રમણપક્ષે સમ્બન્ધહેતુસ્નેહવર્જિત ઇત્યર્થઃ તથા-'સંલેવિવ નિરંજણે' શંલેવ ઇવ નિરંજનઃ, અયં ભાવઃ-યથા શંલેવો નિરંજનોઽર્થાચ્છુકો ભવતિ, તથા સાધુરપિ નિરંજનઃ=રાગાદિકૃષ્ણતારહિતો ભવતિ। અતઃ એવં 'વિગયરાગદોસમોહે' વિગતરાગદ્વેષમોહ, વિગતાનપ્ટા રાગદ્વેષ મોહાઃ યસ્માત્ સઃ તથા 'કુમ્મો ઇવ' કૂર્મ ઇવ ઇંદિય સુગુત્તે' ઇન્દ્રિયેષુ ગુપ્તઃ-યથા કચ્છપો ગ્રીવાદિ સ્વાજ્ઞાનિ સંગોપ્ય ગુપ્તો ભવતિ તથૈવ સાધુરપિ વિષયેભ્ય ઇન્દ્રિયાણિ સંગોપ્ય ગુપ્તો ભવતિ। તથા-'જચ્ચકળગં વ' જાત્યકનકમિવ=શુદ્ધકાચ્ચનમિવ 'જાયરુવે' જાતરૂપઃ=રાગાદિક્ષારરહિતત્વાત્, સ્વસ્વરૂપસંપન્નઃ, તથા 'પુક્કલરપત્તં વ'

અકિચ્ચન ભાવ સે યુક્ત, (છિન્નગંધે) વાહ્ય ઔર આભ્યંતર પરિગ્રહ સે વર્જિત, વના હુઆ વહ સાધુ (નિરુવલેવે) રાગ ઔર દ્વેષ સે નિર્મલ બન જાતા હૈ ઔર (સુવિમલવરકંસભાવણં ચેવ વિમુક્તો) નિર્મલ કાંસ્યપાત્ર કી તરહ જલ સે મુનિપક્ષ મેં સમ્બન્ધ કે હેતુભૂત સ્નેહ સે રહિત હોતા હુઆ (સંલેવિવ નિરંજણે) શંલ કી તરહ નિરંજન-શુક્ર અર્થાત રાગાદિક કી કૃષ્ણતા સે રહિત હો જાતા હૈ। હિસિલિયે વહ (વિગયરાગદોસમોહે) રાગ દ્વેષ ંવં મોહ સે રહિત હો જાતા હૈ તથા (કુમ્મો ઇવ ઇંદિય સુગુત્તે) કૂર્મ-કચ્છપ કી તરહ ઇન્દ્રિયગુપ્ત કહલાતા હૈ અર્થાત્ જિસ પ્રકાર કચ્છપગ્રીવાદિક અપને અવયવોં કો છુપાકર શરીર મેં ગુપ્ત હો જાતા હૈ ઁસી પ્રકાર વહ સાધુ બી વિષયોં સે ઇન્દ્રિયોં કો હટાકર સુરક્ષિત બન જાતા હૈ। તથા (જચ્ચકળગં વ જાયરુવે)

ભાવથી યુક્ત, “છિન્નગંધે” વાહ્ય અને આભ્યંતર પરિગ્રહથી રહિત બનેલ તે સાધુ “નિરુવલેવે” રાગ અને દ્વેષથી અલિપ્ત બની બાક છે, અને “સુવિમલવર-કંસભાવણં ચેવ વિમુક્તો” નિર્મળ કાંસાના પાત્રથી જેમ બળથી રહિત-મુનિપક્ષે ‘અસંધના હેતુભૂત સ્નેહથી રહિત-થઈને “સંલેવિવ નિરંજણે” શંખના જેવો નિરંજન-સફેદ એટલે કે “વિગયરાગદોસમોહે” રાગાદિકની કાળાશથી રહિત થઈ બાક છે, તથા “કુમ્મો ઇવ ઇંદિયસુગુત્તે” કાચબાના જેવો ઈન્દ્રિયગુપ્ત હોવાય છે. એટલે કે જેમ કાચબો પોતાના ગ્રીવાદિક અવયવોને શરીરમાં છુપાવીને ગુપ્ત થઈ બાક છે તેમ સાધુ પણ વિષયોમાંથી ઇન્દ્રિયોને હટાવીને સુરક્ષિત બની બાક છે. તથા “જચ્ચકળગં વ જાયરુવે” શુદ્ધ સુવર્ણની જેમ

સુદર્શિની ટીકા અ. ૫ સૂ.૫૫ સંયતાચારપાલકસ્યસ્થિતિનિરૂપણમ્

૮૮૧

પુષ્કરપત્રમિવ-કમલપત્રમિવ 'નિરુવ્લેવે' નિરુપલેપ:-ભોગગૃહિલેપાપેક્ષયા, તથા 'સોમાયા' સૌમ્યતા=સૌમ્યપરિણામેન 'ચંદો ઇવ' ચંદ્ર ઇવ, તથા- 'સૂરોવ્વ' સૂર ઇવ 'દિત્તે' , દીપ્તતેજા: = દીપ્ત તેજો यस્ય સ, તથા- 'ગિરિવરે મંદરે' ગિરિવરો મન્દર: 'જહ' યથા - ઇવ સકલપર્વતશ્રેષ્ઠમેશ્વરિવ 'અચલે' અચલ: =પરીપદ્માદો સત્યપિ નિશ્ચલ:; તથા- 'અક્ષોભે' અક્ષોભ: =ક્ષોભવર્જિત:- નિસ્તરંગ:; 'સાગરોવ્વ' સાગર ઇવ 'થિમિ' સ્તિમિત: =કપાયતરંગવર્જિન:; તથા- 'પૃથ્વી વિવ' પૃથ્વીય 'સન્વકાસવિસહે' સર્વસ્પર્શવિપદ:-શુભાશુભસ્પર્શેષુ સમચિત્ત ઇત્યર્થ? તથા- 'તવસા વિ ય' તપસાઽપિ ચ હેતુભૂતેન 'ભાસરાસિચ્છન્નેવ' જાતતે' , ભસ્મરાશિચ્છન્ન ઇવ જાતતેજા:; યથા-ભસ્માચ્છબો વહ્નિરુપરિ-

શુદ્ધ સુવર્ણા કી તરહ વહ રાગાદિકરૂપ ક્ષાર સે રહિત હોને કે કારણ અપને નિજરૂપ સે સમ્પન્ન હો જાતા હૈ। (પુસ્કરપત્રં વ નિરુવ્લેવે) કમલ પત્ર કી તરહ ભોગોં મેં ગૃહિરૂપ લેપ સે વહ રહિત બન જાતા હૈ। (સો-માયા ચંદોઇવ) સૌમ્યતા સે વહ ચંદ્ર કી તરહ (સૂરોવ્વદિત્તે) સૂર્ય કી તરહ વહ દીપ્ત તેજ ચમકને વાલા હો જાતા હૈ। તથા (ગિરિ-વરે મંદરે જહ અચલે) ગિરિ વર શુમેશ્વ પર્વત કી તરહ વહ પરિવહ આદિ કે આને પર અચલ સુસ્થિર બના રહતા હૈ। ઓર (અક્ષોભો સાગરોવ્વ) નિસ્તરંગ સાગર કી તરહ અક્ષોભ-ક્ષોભ સે રહિત બન જાતા હૈ (થિમિ) સ્તિમિત-કપાયરૂપતરંગોં સે રહિત બન જાતા હૈ। તથા (પૃથ્વીવિય સન્વકાસવિસહે) જિસ પ્રકાર પૃથ્વી સમસ્ત પ્રકાર કે સ્પર્શોં કો સહન કરતી હૈં ડસી પ્રકાર વહ બી શુભ ઓર અશુભ સ્પર્શોં મેં સમચિત્ત હો જાતા હૈં। (તવસા વિ ય ભાસરાસિચ્છન્નેવ

તે રાગાદિક ઇપ ક્ષારથી રહિત હોવાને કારણે પોતાના નિઃસ્પર્શી સંપત્ર થઇ જાય છે. "પુસ્કરપત્રં નિરુવ્લેવે" કમલ પત્ર જેમ પાણીથી અલિપ્ત રહે છે તેમ તે ભોગોથી અલિપ્ત થઇ જાય છે. "સોમાયા ચંદો ઇવ" સૌમ્યતામાં તે અન્દ્રતા જેવો "સૂરોવ્વ દિત્તે" સૂર્યની જેમ તે દીપ્ત તેજ-તેજસ્વી થઇ જાય છે. તથા "ગિરિવરે મંદરે જહ અચલે" ગિરિવર શુમેશ્વરની જેમ તે પરી-પદ્મ આદિ નહે તો પણ અચલ, સુસ્થિર રહે છે. અને "અક્ષોભો સાગરોવ્વ" તરંગરૂપી સાગરના જેવો તે અક્ષોભ-ક્ષોભ રહિત બની જાય છે. "થિમિ" સ્તિમિત-કપાયરૂપ તરંગોથી રહિત બની જાય છે. તથા "પૃથ્વીવિય સન્વકાસવિસહે" જેમ પૃથ્વી બધા પ્રકારના સ્પર્શોંને સહન કરે છે તેમ તે પણ શુભ અને અશુભ સ્પર્શોંમાં સમભાવવાળો થઇ જાય છે. "તવસા વિ ય ભાસ-

પ્ર ૧૧૧

દાહકત્વમપ્રકાશયસપ્યન્તર્જાજ્વલ્યમાનો ભવતિ, તથૈવ શ્રમણો વહિઃ શુષ્કો રુક્ષઃ કાન્તિરહિતોઽપ્યન્તઃ સ્તપોજનિતદીપ્ત્યાદેદીપ્યમાનો ભવતીતિ ભાવઃ । તથા- ‘ જલિયદ્વયાસળો વિવ ’ જ્વલિતદ્વુતાશનદ્વ=પ્રદીપ્તાનિવ ‘ તેયસા ’ તેજસા= જ્ઞાનરૂપતેજસા ‘ જલંતે ’ જ્વલન્=દીપ્યમાનઃ, ભાવતમોવિનાશકત્વાત્ ‘ ગોસીસ-ચંદ્વંશિવ ’ ગોશીર્ષચંદનમિવ ‘ સીયલે ’ શીતલઃ=મનસ્તાપોપશમનાત્ ‘ સુગંધી ય ’ સુગંધિના, સુરભિગન્ધેન શીલયોગન્ધ્યાત્ ‘ હરઓ વિવ ’ હ્રદક દ્વ=જલા-શય દ્વ ‘ સમિયભાવે ’ સમિકભાવાઃ=સમ એવ સમિકઃ, સ ભાવો યસ્ય સઃ, અયં ભાવઃ-યથા હ્રદો વાતાભાવે તરજ્ઞાભાવેન નિસ્નોન્નતરાદિત્યેન સમાકારતયા પરિ-

જાયતે) ભસ્મ રાશિ સે છત્ર અગ્નિ જિસ પ્રકાર ડાહ-કત્વ પરિણામકો પ્રકાશિત નહીં કરતી હુઈં બીં બીતરમ્ જાજ્વલ્યમાન રહા કરતી હૈં ઉસી તરહસે વહ સાધુ બીં વહિસે-શુષ્કકાય, રુક્ષ ઓર કાન્તિરહિત હોતા હુઆ બીં બીતરમ્ તપજનિત દીપ્તિસે દેદીપ્યમાન હોતા હૈં । તથા-(જલિય દ્વયાસળોવિવતેયસા જલંતે) પ્રદીપ્તવહિ જિસ પ્રકાર અપની પ્રભા સે ચમકતી રહતી હૈં ઉસી પ્રકાર વહ બીં ભાવતમ કા વિનાશક હોને સે જ્ઞાનરૂપ તેજ સે ચમકતા રહતા હૈં । (ગોસીસચંદ્વં-પિવ સીયલે) ગોશીર્ષ ચંદન જિસ પ્રકાર શીતલ ઓર સુગંધિત હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર વહ સાધુ બીં મનસ્તાપ કે ઉપશમન સે શીતલ હોતો હૈં ઓર (સુગંધીય હરઓવિવ સમિયભાવે) શીલ કી સુગંધી સે હ્રદ કી તરહ સમભાવવાલા અર્થાત્ જિસ પ્રકાર જલાશય વાયુ કે અભાવ સે તરંગોં કે ઉત્થાન પતન સે રહિત હોને કે કારણ ડાહ નીચા નહીં

રાશિચ્છન્નેવ જાયતે) શખના ઢગલા નીચે રહેલી અગ્નિ જેમ ઉપરથી પોતાની ઢાહકતા પ્રગટ કરતી નથી છતાં અંદર સળગતી પ્રકાશિત રહે છે, તેમ તે સાધુ પણ બહારથી શુષ્ક શરીર વાળો, રુક્ષ અને કાન્તિ રહિત હોવા છતાં પણ અંદરથી તપ જનિત તેજથી દેદીપ્યમાન હોય છે. “ જલિય દ્વયાસળોવિવ તેયસા જલંતે ” પ્રદીપ્ત અગ્નિ જેમ પોતાના તેજથી ચળકતી રહે છે તેમ તે પણ ભાવતમને વિનાશક હોવાથી જ્ઞાન રૂપ તેજથી ચમકતો રહે છે. “ ગો-સીસચંદ્વંશિવ સીયલે ” જેમ ગોશીર્ષ ચંદન શીતલ અને સુગંધિત હોય છે તેજ પ્રકારે મનનાં તાપનું ઉપશમન થવાને કારણે શીતલ હોય છે અને “ સુગં-ધિયહરઓવિવ સમિયભાવે ” શીલની સુગંધથી સરોવરના સમાન સમભાવ વાળો હોય છે, એટલે કે જેમ વાયુના અભાવે તરંગોના ઉત્થાન તથા પત-નથી રહિત હોવાને કારણે સરોવરની સપાટી ઊંચીનીચી લાગતી નથી પણ

સુરશિની ટીકાઃ અં ૫ સૂ.૫ સંયતાચારપાલકસ્ય સ્થિતિનિરૂપણમ્ ૮૮૩

લક્ષ્યતે, તથૈવ શ્રમણોઽપિ માનાપમાનયોરનનુભવાત્ હર્ષગ્લાન્યોરભાવાત્સર્વદૈકરૂપ
 एव भवतीति । तथा-उग्घोसियमुनिम्मलं 'माजित्तमुनिम्मलम्-माजित्तं=तलोपरि-
 स्थितमलापनयनेन. अतएव-मुनिम्मलं=सुप्रसन्नम्, 'आयंसमंडलतलं व' आद-
 र्शमण्डलतलमिव=आदर्शः=दर्पणस्तस्य यन्मण्डलतलं=मण्डलाकारं तलं तदिव 'पाग-
 ढभावेण' प्रकटभावेन=अमायित्वादिनिगूहितभावेन 'सुद्धभावे' शुद्धभावे=शुद्धः
 भावः स्वरूपो यस्य सः, तथा-'कुंजरो व' कुञ्जर इव 'सोडीरो' शौण्डीरः=
 परीषदसैन्यनिर्दलनसमर्थः, 'वसभो व' वृषभ इव 'जायथामे' जातस्थामा-
 यथा वृषभो भारोद्धहने सामर्थ्ययुक्तो भवति, तथैव स्वीकृतमहाव्रतभारोद्धहने साम-
 र्थ्यसंपन्न इत्यर्थः । तथा-'सोहो व' सिंह इव श्रमणः, अनुमेवार्थं स्पष्टयति—
 'जहा' यथा सिंह 'मिगाहिवे', मृगाधिपः—अथ च तैः 'दुप्पधरिसे' दुष्पधृ-

दिवता है किन्तु एकसा आकार वाला परिलक्षित होता है उसी प्रकार
 यह साधु भी मान और अपमान के अनुभव से रहित होने के कारण
 हर्ष और ग्लानि, इन दोनों प्रकार के भावों से रहित बन जाता है,
 अतः वह सर्वदा एक रूप में ही रहा करता है । (उग्घोसिय मंडलं
 आयंसमंडलतलं व पागढभावेण सुद्धभावे) मांजने से-ऊपर के मैल
 के हटा देने से-निर्मल बने हुए दर्पणमंडल की तरह इस का स्वरूप
 अमायी होने के कारण प्रकट रूप से शुद्ध रहता है । (सोडीरो कुंजरो
 व) कुंजर के जैसा यह शौंडीर-परीषदरूपी सैन्य के निर्दलन करने में
 समर्थ-होता है । (वसभोव जायथामे) वृषभ की तरह जातस्थाम-
 स्वीकृत महाव्रतरूप भार के वहन करने में शक्तिशाली होता है ।
 (सीहोव जहा मिगाहिवे होइ दुप्पधरिसे) सिंह जैसे मृगों का अधि-
 पति और उनके द्वारा अपराभवनीय होता है उसी तरह वह साधु भी

એક સરખી લાગે છે એ જ પ્રમાણે સાધુ પણ માન અને અને અપમાનના
 અનુભવથી રહિત હોવાને કારણે હર્ષ અને શોક એ બન્ને પ્રકારના ભાવોથી
 રહિત બની બચે છે તેથી તે હંમેશા સમભાવથી જ રહે છે. “ ઉગ્ગોસિયમંડલ
 આયંસમંડલતલં વ પાગઢભાવેણ સુદ્ધભાવે ” માંજવાથી - ઉપરના મેલ દૂર કરી
 નાખવાથી નિર્માળ બનેલા હર્ષભૂની જેમ તેનું સ્વરૂપ અમાયી હોવાને કારણે પ્રગટ
 રૂપે શુદ્ધ રહે છે. “સોડીરો કુંજરોવ” હાથીની જેમ તે શૌંડીર-પરીષદરૂપી સૈન્યનો
 કન્થધણી કાઢી નાખવાને સમર્થ હોય છે. “વસભોવ જાયથામે” વૃષભની જેમ
 તે સ્વીકૃત મહાવ્રતરૂપ બોબળનું વહન કરવાને શક્તિશાળી હોય છે. “સોહોવ
 જહા મિગાહિવે હોઈ દુપ્પધરિસે” જેમ સિંહ મૃગોનો અધિપતિ તથા તેમનાથી

વ્યય:-અપરિભવનીયો ' હોઈ ' ભવતિ, તથૈવ સાધુ:પરીપદૈરપરાજિતો ભવતિ । તથા 'સારયસલિલં વ' શારદસલિલમિવ=શરદ્દતુમસ્વન્ધિજન્મમિવ 'મુદ્દહિયણ' મુદ્દહદય: =સ્વચ્છાન્ત: કરણ इत्यर्थ:; તથા 'મારંડે ચેવ' મારંડ इव=મારંડપક્ષીવ 'અપ્પ-મત્તે' અપ્રમત્ત:=પ્રમાદવર્જિત: 'સ્વગ્ગિવિસાણં વ' સ્વદ્ધિવિપાળમિવ સ્વજ્ઞી= 'ગેંડા' इतिप्रसिद्धो वन्यश्वतुष्पदविशेष:, તસ્ય વિપાળં=શ્રુક્મિવ 'એગ જાણ' એકજાત:-યથા-સ્વદ્ધિન: શ્રુક્ષામેકં ભવતિ, તથૈવ સાધુરપિ રાગદ્વેષરહિત એકાકી ભવતિ । તથા- 'સ્થાણૂવ' સ્થાણુરિવ 'ઉડ્ડકાણ' ઉર્ધ્વકાય: કાયોત્સર્ગકાલે, તથા 'સુણ્ણાગારેવ' શૂન્યાગારમિવ અપતિકર્મા=શરીરસંસ્કારવર્જિત इत्यर्थ:, તથા 'સુણ્ણાગારાવણસંતો' શૂન્યાગારાવણસ્યાન્ત:=શૂન્યસ્યાગારસ્યાવણસ્ય ચ અન્ત:=મધ્યે 'નિવાયસરણપ્પદીવજ્ઞામણમિવ' નિર્વાતિશરણપ્રદીપધ્યાપનમિવ-નિર્વાતો=વાતર-હિતો ય: શરણપ્રદીપ:=મુદ્દપ્રદીપસ્તસ્ય ધ્યાપનમિવ=પ્રવચ્ચિતશિલેષવ 'નિપ્પકંપે' દેશવિરતિ શ્રાવકોં કી અપેક્ષા સકલસંગમ કા અધિપતિ ઓર પરિ-પહોં સે અપરાજિત હોતા હૈ । (સારયસલિલં વ મુદ્દહિયણ) વહ શરત્ ક્રતુ સંબંધી જલ કે સમાન સ્વચ્છ અંત: કરણ વાલા હોતા હૈ, (મારંડે-ચેવ અપ્પમત્તે) મારંડપક્ષી કે સમાન વહ પ્રમાદ સે વર્જિત હોતા હૈ, (સ્વગ્ગિવિસાણં વ એગજાણ) ગેંડો કે સીંગ કે સમાન વહ એક જાત હોતા હૈ-અર્થાત્ જૈસે ગેંડા કા શ્રૂંગ એક હી હોતા હૈ ઉસી તરહ સાધુ બી રાગદ્વેષ રહિત હોને સે એકાકી હી હોતા હૈ । (સ્થાણૂવ ઉડ્ડકાણ) સ્થાણુ જિસ પ્રકાર ઉર્ધ્વકાય હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર સાધુ બી કાયોત્સર્ગ કે સમય ઉર્ધ્વકાય હોતા હૈ । (સુણ્ણાગારેવ અપટિકમ્મે) શૂન્ય મુદ્દ જૈસે સંસ્કાર વિહીન હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર સાધુ બી શારીરિક સંસ્કાર સે વર્જિત હોતા હૈ । (સુણ્ણાગારાવણસંતો નિવાયસરણપ્પદીવજ્ઞામણમિવ

અર્થે હોય છે તેમ સાધુ પણ દેશ વિરતિ શ્રાવકોની અપેક્ષાએ સકળ સંય-મનો અધિપતિ અને પરીપહોથી અપરાજિત હોય છે. “સારયસલિલં વ મુદ્દહિયણ” તે શરદ ક્રતુના જળની સમાન સ્વચ્છ અંત:કરણવાળો હોય છે. “મારંડે ચેવ અપ્પમત્તે” મારંડ પક્ષીના જેવો તે પ્રમાદ રહિત હોય છે. સ્વગ્ગિવિસાણં વ એગજાણ” ગેંડાના શિંગડાની જેમ તે એકાકી હોય છે એટલે કે જેમ ગેંડાને એક જ શિંગડું હોય છે તે પ્રમાણે સાધુ પણ રાગદ્વેષ રહિત હોવાથી એકાકી જ હોય છે. “સ્થાણૂવઉડ્ડકાણ” સ્થાણુ જેમ ઉર્ધ્વકાય છે તેમ સાધુ પણ કાયોત્સર્ગના સમયે ઉર્ધ્વકાય હોય છે. “સુણ્ણાગારેવ અપટિકમ્મે” આલી મકાન જેમ સંસ્કાર વિહીન હોય છે તેમ સાધુ પણ શારીરિક સંસ્કાર રહિત હોય છે, “સુણ્ણાગારાવણસંતો નિવાયસરણપ્પદી

સુદર્શિની ટીકા અ૦૫ સુ૦૫ સંયતાચારણાકલરૂપ સ્થિતિનિરૂપણમ

૮૮૫

નિષ્પ્રકર્ય: = દિવ્યાશુપસર્ગસર્ગેઽપિ ધર્મધ્યાનાદૌ નિશ્ચલ इत्यर्थः, જહા સુરો 'યથા શુર: = શુર इव ' एगधारे चेव ' एकधारश्चैव, યથા શુરુપકધારસ્તથૈવ સાધુરુત્સર્ગ-રૂપૈકધારો ભવતિ, વર્તમાનપરિણામધારકइत्यर्थः, જહા અહીં 'યથાઽહિ: = અહિરિવ-સર્પ इव ' एगदिद्वी चेव ' एकदृष्टिश्चैव = મોક્ષે વદ્વલક્ષ્ય इत्यर्थः, તથા- ' આગાસં ચેવ નિરાલંબે ' આકાશમિવ નિરાલમ્બ: । યથાઽકાશઆલમ્બનર્વર્જિતસ્તથૈવ શ્રમ-ણોઽપિ ગ્રામદેશકુલાઘાલમ્બનરહિત इत्यर्थः, તથા- ' વિહગે વિવ ' વિહગ इव પક્ષીવ ' સન્વઓ ' સર્વત: ' विप्रमुक्ते विप्रमुक्तः નિષ્પરિગ્રહ इत्यर्थः, તથા- ' ઊરણ

નિષ્પ્રકર્યે) શૂન્ય ઘર ઓર શૂન્ય આપણ-દુકાનકે ખીતર નિર્વાન (વાયુરહિત) પ્રદેશ મેં રહે હુણ દીપક કી પ્રજ્વલિત લૌં જેસે નિષ્પ્રકર્ય હોતી હૈં ઉસી પ્રકાર સાધુ ખી દેવાદિકૃત ઉપસર્ગોં કે આને પર ખી ધર્મધ્યાન આદિ મેં નિષ્પ્રકર્ય નિશ્ચલ બના રહતા હૈં । (જહાસુરો ચેવ એગધારે) જેસે શુરા ઊસ્તરા-એક ધાર વાલા હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર સાધુ ખી ઉત્સર્ગરૂપ એક ધાર વાલા હોતા હૈં । અર્થાત્-સાધુ કે પરિણામ પ્રકૃષ્ટ વિશુદ્ધિ કો લિયે વઢતે હી રહતે હૈં, વે પ્રતિપાતી પરિણામોં વાલે નહીં હોતે હૈં । (જહા અહીં ચેવ એગદિદ્વીં) સર્પ જિસ પ્રકાર એક દૃષ્ટિ-વાલા હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર સાધુ ખી અપને લક્ષ્યરૂપ એક મોક્ષ મેં નિષદ્ધ દૃષ્ટિવાલા હોતા હૈં । (આગાસં ચે વ નિરાલંબે) આકાશકી તરહ વહ આલંબન-સહારા સે રહિત હોતા હૈં અર્થાત્ સાધુ કો ગ્રામ દેશ, કુલ આદી કા આલંબન નહીં હોતા હૈં । વહ ઇન સબ ગ્રામાદિ સે સર્વથા રહિત હી હોતા હૈં । (વિહગે વિવ સન્વઓ વિપ્રમુક્કે) વિહગ-પક્ષી કી તરહ વહ સર્વત: વિપ્રમુક્ત હોતા હૈં પરિગ્રહ સે વર્જિત હોતા

व इक्ष्माणमिब निष्प्रकये ” ખાલી ઘર અને ખાલી દુકાનની અંદર વાયુની અસર રહિત સ્થાનમાં રાખેલ દીવાની સમગતી જ્વાળા જેમ નિષ્પ્રકર્ય (સ્થિર) હોય છે તેમ સાધુ પણ દેવાદિકૃત ઉપસર્ગોં નડતાં છતાં પણ ધર્મધ્યાન આદિમાં અચલ રહે છે. “ જહા સુરો ચેવ એગધારે ” જેમ શુરા-અશ્વો એક ધારવાળો હોય છે તેમ સાધુ પણ ઉત્સર્ગરૂપી એક ધારવાળો હોય છે-એટલે કે સાધુની મનોવૃત્તિ પ્રકૃષ્ટ વિશુદ્ધિએને માટે વધતી જ રહે છે, તે પ્રતિપાતિ પરિણા-મવાળો હોતો નથી. “ જહા અહીં ચેવ એગદિદ્વી ” જેમ સાપ એક દૃષ્ટિવાળો હોય છે તેમ સાધુ પણ પોતાના લક્ષ્યરૂપ એક મોક્ષમાં જ લીન દૃષ્ટિવાળો હોય છે. “ આગાસં ચેવ નિરાલંબે ” આકાશની જેમ તે નિરાવલંબી હોય છે એટલે કે સાધુને ગામ, દેશ, કુળ આદિનું અવલંબન હોતું નથી. તે ગ્રામાદિ સમસ્ત અવલંબનોથી રહિત હોય છે. “ વિહગે વિવ સન્વઓ વિપ્રમુક્કે ” વિહગ-પક્ષીની જેમ તે સર્વ પ્રકારે મુક્ત હોય છે-પરિગ્રહ રહિત હોય છે. “ કચ-

જહા ' ઊરગો યથા-સર્પ ઇવ ' કથપરનિલપ્ ચેવ' કૃતપરનિલપ્ચેવ=કૃતઃ=આશ્ર-
યીકૃતઃ પરનિલપ્તો યેન સઃ, અયં ભાવઃ-યથા સર્પોઽન્યકૃતચિલ્લે તિષ્ઠતિ, તથૈવ
શ્રમણઃ પરકૃતગૃહે તિષ્ઠતિ । તથા- ' અનિલોવ્વ ' અનિલ ઇવ=પવન ઇવ 'અપ્પહિ-
વદ્ધો ' અપતિવદ્ધઃ-અપતિવન્ધવિદ્ધારીત્યર્થઃ, તથા ' જીવોવ્વ ' જીવ ઇવ ' અપ્પ-
હિહયગઈ ' અપતિહતગતિઃ= સર્વદેશવિદ્ધારીત્યર્થઃ । અત્ર સર્વત્ર ' ચૈવ ' શબ્દઃ
સમુચ્ચયાર્થઃ, ' ગામે ગામે ય ' ગ્રામે ગ્રામે ચ ' ' ઇગરાયં ' ' ઇગરાયં ' ' જગરે જગરે '
નગરે નગરે ' પંચરાયં ' પશ્ચરાયમ્, ' દૂહજ્જંતો ' દ્રવન=વિહરન્, નિવાસં કુર્વન્નિ-
ત્યર્થઃ, તથા ' જિહંદિપ ' જિતેન્દ્રિયઃ, ' જિયપરીસહે ' જિતપરિપદ્ધઃ, અતएव
' નિભમए ' નિર્ભયઃ ' વિઝુ ' વિદ્વાન=તત્ત્વજ્ઞ ઇત્યર્થઃ, ' સચિત્તાચિત્તમીસएહિં '

હૈ (કથપરનિલપ્ જહા ચેવ ઊરए) સર્પ કી તરહ્ વહ્ દૂગરે ને અપને
નિમિત્ત બનાયે હુए घर में रहना है, अर्थात् जिस प्रकार सर्प अन्य
चूहे आदि से बनाये गये बिल में रहता है उसी प्रकार साधु भी गृहस्थ
के बनाये हुए घर में रहता है । (अप्पहिवदो अनिलोव्व) अनिल
पवन-की तरह वह अप्रतिबद्ध - प्रतिबन्ध से रहित होता है अर्थात्
वह साधु अप्रतिबन्ध विहारी होता है । तथा (जीवोव्व अप्पहियग-
गई) जीव की तरह वह अप्रतिहत गतिवाला होता है-उसका विचरण
सर्वत्र होता है-उसे कीसो भी देश में विचरण करने का निषेध नहीं
होता है । (गामे गामे य एगरायं) वह हर एक ग्राम में एक रात्री
तथा (जगरे जगरे य पंचरायं) तथा प्रत्येक नगर में पांच रात्रि तक
(दूहज्जंते) ठहरता है । तथा (जिहंदिप) जितेन्द्रिय (जियपरिसहे य)
जितपरीषद् अत एव (निभमए) निर्भय (विजु) विद्वान्-तत्त्वज्ञ, वह

પરનિલપ્ જહા ચેવ ઊરए" સર્પની જેમ તે બીજાને પોતાના બાટે બનાવેલાં
ઘરમાં રહે છે, એટલે કે જેમ સર્પ ઉંદર આદિએ બનાવેલા ઘરમાં રહે છે
તેમ સાધુ પણ ગૃહસ્થે બનાવેલા ઘરમાં રહે છે. "અપ્પહિવદ્ધો અનિલોવ્વ"
અનિલ-પવનની જેમ તે અપ્રતિબદ્ધ-પ્રતિબંધથી રહિત હોય છે-એટલે કે તે
અપ્રતિબંધવિહારી હોય છે. "જીવોવ્વ અપ્પહિયગઈ" જીવની જેમ તે અપ્ર-
તિહત ગતિવાળો હોય છે. તેનું વિચરણ સર્વત્ર હોય છે. તેને કોઈ પણ પ્રદે-
શમાં વિચરવાનો વિષેધ હોતો નથી. "ગામે ગામે ય ઇગરાયં" તે દરેક ગામમાં
એક રાત્રી તથા "જગરે જગરે ચ પંચરાયં" તથા પ્રત્યેક નગરમાં પાંચ
રાત્રિ સુધી "દૂહજ્જંતે" રોકાય છે. તથા "જિહંદિપ" જિતેન્દ્રિય "જિયપરિ-
સહેય" પરીપકોને જીતનાર હોવાથી "નિભમए" નિર્ભય "વિઝુ" વિદ્વાન-

सुदर्शिनी टीका अ० ५ सू०५ संयताचारपालकस्य स्थितिनिरूपणम्

८८७

सचित्ताचित्तमिश्रकेषु 'द्वेर्वेहि' द्वयेषु 'विरागयंग' विरागतां गतः=मृच्छी-
रहित्यं प्राप्तः, 'संचयओ' सञ्चयतः-संवयकरणान् 'विर' विरतः 'मुत्ते'
मुक्तः=बाह्याभ्यन्तरपरिग्रहरहितः, 'लहुए' लघुकः-गौरवत्रयत्यागात्, 'निरवकंखे'
निरवकाङ्क्षः=आकाङ्क्षा वर्जितत्वात्, 'जीवियमरणासविप्पमुत्ते' जीवितमरणाशा-
विप्रमुक्तः=जीविताशमरणाशाभ्यां रहितः, 'धीरे' धीरः=बुद्धिमान्, 'निस्संधं'
सन्धिरहितं=चारित्र्यपरिणामव्यवच्छेदाभावात्, 'निव्वणं' निर्वर्णं=निरतिचारम्
'चरितं' चारित्र्यं-संयमं 'कायेण' कायेन=कायव्यापारेण न तु मनोरथमात्रेण
'फासयंते' स्पृशन्, तथा-'सययं' सततम् 'अज्झप्पज्झाणजुत्ते' अध्यात्मध्या-
नयुक्तः 'निहुए' निभृतः=उपशान्तः 'एमे' एकाः=रागादिमहापवर्जितः 'धम्मं'
धर्मं=श्रुतचारित्र्यक्षणं 'चरेज्ज' चरेत्=अनुपालयेत् ॥सू०५॥

साधु (सचित्ताचित्तमीसएहि द्वेर्वेहि विरागयंग) सचित्त, अचित्त
और मिश्र द्वयों में मृच्छी रहितपने को प्राप्त होकर (संचयओ विर)
संचय करने से विरक्त हो जाता है और (मुत्ते) बाह्य और आभ्यन्तर
परिग्रह से रहित हो जाता है। इस तरह (लहुए) गौरव त्रय के त्याग
से लघु बना हुआ श्रमण (निरवकंखे) आकांक्षा से वर्जित होने के
कारण (जीवियमरणासविप्पमुत्ते) जीवन की आशा और मरण की
भयसे रहित हो जाता है। इस प्रकार (धीरे) इन समस्त पूर्वोक्त
विशेषणों से विशिष्ट बना हुआ तत्त्वज्ञ श्रमण (निस्संधं) चारित्र्य-
परिणाम की संधि-व्यवच्छेद के अभाव से (निव्वणं) निरनिवार
(चरितं) चारित्र्यसंयम को (काएण) काय के व्यापार से, नहीं की
मनोरथ मात्र से (फासयंते) धारण कर (अज्झप्पज्झाणजुत्ते) अध्या-
त्मध्यान में लवलीन बनता हुआ (निहुए) उपशान्त भव से संपन्न

तत्त्वज्ञ भवे। ते साधु "सचित्ताचित्तमीसएहि द्वेर्वेहि विरागयंग" सचित्त,
अचित्त અને मिश्र द्वयेभ्यां समत्वं रहितताने प्राप्त करीने "संचयओ विर"
संश्रद्ध करवाथी विरक्त થઈ જાય છે અને "मुक्त" બાહ્ય અને આभ્યन्तर
परिग्रहથી रहित થઈ જાય છે. આ રીતે "लहुए" गौरवत्रयना त्यागથી લઘુ
अनेक श्रमण "निरवकंखे" आकांक्षाથી रहित होवाने કારણે "जीवियमरणा
सविप्पमुत्ते" જીવનની આशा અને મરણની આશાથી रहित થઈ જાય છે. આ
રીતે "धीरे" ते સધળા વિશેષણોથી યુક્ત અનેવ તત્ત્વજ્ઞ શ્રમણ "निस्संधं"
ચારિત્ર પરિણામની સંધિ-વ્યવચ્છેદને અભાવે "निव्वणं" निरतिचार "चरितं"
ચારિત્ર-સંયમને "काएण" कायના व्यापारથી-मनोरथથી જ नहीं-"फासयंते"
धारण करीने "अज्झप्पज्झाणजुत्ते" अध्यात्मध्यान लीन अंगीने "निहुए"

મૂલ્ય—ઇમં પરિગ્રહવેરમણપરિરક્ષણદ્વયાય પાવયણં
ભગવયા સુકહિયં અત્તાહિયં પેચ્ચાભાવિયં આગમેસિભદં સુદ્ધં
નેયાઉયં અકુડિલં અણુત્તરં સત્ત્વદુક્ષ્વપાવાણં વિડસમણં,
તસ્સ ઇમા પંચભાવણાઓ ચરિમસ્સ વયસ્સ હંતિ, પરિગ્રહ-
વેરમણરક્ષણદ્વયાય ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકા—‘ ઇમં ચ ’ इत्यादि—

‘ ઇમં ચ ’ इयं चापरिग्रहनामकं पञ्चमं संवरद्वारं ‘ परिग्रहवेरमणपरिरक्षण-
દ્વયાય ’ परिग्रहविरमणपरिरक्षणार्थतया परिग्रहविरमणस्य परिरक्षणमेव अर्थः प्रयो-
जनं यस्य तन् , तदेव तच्चा, तथा अत्र स्वार्थं तत्, परिग्रहविरतिपरित्राणायेत्यर्थः,

હોકર (એ) રાગાદિક ભાવોંસે વર્જિત હોનેસે એક, એસા જો દાંતા હૈ
વહી (ધમ્મ) ચારિત્રરૂપ ધર્મકો (ચરેજ) પાલન કરનેવાલા હો સકતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને ઇમ સૂત્ર દ્વારા યહ સ્પષ્ટ કિયા હૈ કિ પરિગ્રહ-
વિરત રૂપ સાધુ ધર્મ મેં લવલીન બને દુષ્ મનુષ્ય કી સ્થિતિ કેસી હો
જાતી હૈ । તથા જબ બહુ ઇસ સ્થિતિ સે સંપન્ન બનેગા તબ હી પૂર્ણરૂપ સે
વહુ શ્રમણ ધર્મ કે પાલન કરને કા અધિકારી બન સકતા હૈ અન્યથા
નહીં । સૂત્ર મેં યહી વિષય શબ્દાન્તરોં સે સમજાયા ગયા હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

ફિર મી કહતે હૈ— ‘ ઇમં ચ ’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(ઇમં ચ) યહ અપરિગ્રહ નામ કા પાંચવાં સંવર દ્વારારૂપ
(પાવયણં) પ્રવચન (પરિગ્રહવેરમણપરિરક્ષણદ્વયાય) પરિગ્રહવિરમણ

ઉપશાન્ત ભાવથી યુક્ત થઈ ને ‘ એ ’ રાગાદિક ભાવોથી રહિત હોવાથી એક,
એવો જે થાય છે તે જ “ ધમ્મ ” ચારિત્રરૂપ ધર્મનું “ ચરેજ ” પાલન કરનાર
થઈ શકે છે.

ભ.વાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં એ સ્પષ્ટ કર્યું છે કે પરિગ્રહથી વિરક્ત
થવા રૂપ ધર્મમાં લીન બનેલ મનુષ્યની સ્થિતિ કેવી થઈ બીજી છે તથા બ્યારે
તે આ સ્થિતિએ પહોંચે ત્યારે જ તે સંપૂર્ણ રીતે શ્રમણ ધર્મનું પાલન કરવાને
પાત્ર બની શકે છે બીજી કોઈ પણ રીતે નહીં. સૂત્રમાં એ જ વિષય યુક્ત યુક્ત
શબ્દો દ્વારા સમજાવવામાં આવ્યો છે. ॥ સૂ. ૫

વળી કહે છે—“ ઇમં ચ ” इत्यादि.

ટીકાર્થ—“ ઇમં ચ ” આ પરિગ્રહ નામના પાંચમાં સંવરદ્વારનું “ પાવયણ ” પ્રવચન
“ પરિગ્રહવેરમણપરિરક્ષણદ્વયાય ” પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની રક્ષાને માટે “ મગ-

સુવર્ણિની ટીકા અ૦૫ સૂ. ૬ સંયતાચારપાલકસ્ય સ્થિતિનિરૂપણમ્ ૮૯૧

‘ પાવયણં ’ પ્રવચનં ‘ ભગવત્યા ’ ભગવતા ‘ સુકલ્પિયં ’ સુકલ્પિતમ્ ; ‘ અત્તહિયં ’ આત્મહિતમ્ , ‘ પેચ્છાભાવિયં ’ પ્રેત્યભાવિકમ્ ‘ આગમેસિમહં ’ આગમિષ્યદ્ભદ્રં ‘ સુદં ’ શુદં ‘ નેયાઉયં ’ નેયાયિકમ્ ‘ અકુડિલં ’ અકુટિલમ્ ‘ અણુત્તરં ’ અનુત્તરં ‘ સન્વદુક્ષપાવાણં ’ સર્વદુઃસ્વપાવાનાં ‘ વિઉસમણં ’ વ્યુપશમનમ્ । ઘણં વ્યા-
રુધ્યા પૂર્વે ગતા । ‘ તસ્સ ’ તસ્ય-અપરિગ્રહનામકસ્ય ‘ ચરિમસ્સ ’ ચરમસ્ય=અન્તિ-
મસ્ય ‘ સંવરદારસ્સ ’ સંવરદારસ્ય ‘ હિમા પંચ ભાવનાઓ ’ હિમા=વક્ષ્યમાણા; પશ્ચ
ભાવના: ‘ હુંતિ ’ ભવન્તિ । કિમર્થં ભવન્તિ ? इत्याह--‘ परिग्राहवैरमणरक्खणद्व-
याए ’ परिग्रहविरमणरक्षणार्थतायै-अपरिग्रहपरिरक्षणार्थमित्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

વ્રત કી રક્ષા કે લિયે (ભગવત્યા સુકલ્પિયં) ભગવાન્ ને કહા હૈ । યહ
(અત્તહિયં) આત્મા કા હિતકારક હૈ । (પેચ્છાભાવિયં) પરલોક મેં બી
શુભ ફલ કા દાતા હૈ । ઈસી નિમિત્ત સે યહ (આગમેસિ મહં) અવિ-
ષ્યત્ કાલ મેં કલ્યાણ પ્રદ હૈ યહ (સુદં) સર્વથા નિર્દોષ હૈ । (નેયાઉયં)
વીતરાગ સર્વજ્ઞ એવં હિનોપદેશક પ્રભુ દ્વારા ભાષિત હોને સે ન્યાય
સંપન્ન હૈ । (અકુડિલં) ઋજુભાવ કા જનક હોને સે અકુટિલ હૈ ।
(અણુત્તરં) સર્વ શ્રેષ્ઠ હોને સે અનુત્તર હૈ । તથા (સન્વદુક્ષપાવાણં)
સમસ્ત પ્રકાર કે દુઃસ્વ જનક જ્ઞાનાવરણીય આદિ અઘ્રવિધ કર્મો કા
(વિઉસમણં) ઉપશમક હૈ । (તસ્સ ચરિમસ્સ સંવરદારસ્સ) ઉસ
અન્તિમ સંવરદાર કી (હિમા પંચભાવનાઓ) યે વક્ષ્યમાણ પાંચ ભાવ-
નાઈ હૈ જો (પરિગ્રાહવૈરમણરક્ષણદ્વયાઈ હુંતિ) પરિગ્રહ વિરમણ
વ્રત કી રક્ષા કરને વાલી હોતી હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

વચા સુકલ્પિયં” ભગવાને કહેલ છે “ અત્તહિયં ” આત્માનું હિતકારક છે. “ પેચ્છા
ભાવિયં ” પરલોકમાં પણ શુભ ફળ દેનારું છે. એ જ કારણે તે “ આગમેસિ
મહં ” ભવિષ્યકાળમાં કલ્યાણપ્રદાથી છે, તે “ સુદં ” તદન નિર્દોષ છે “ નેયાઉયં ”
વીતરાગ સર્વજ્ઞ અને હિનોપદેશક પ્રભુ દ્વારા કથિત હોવાથી તે ન્યાયયુક્ત છે.
“ અકુટિલં ” ઋજુભાવનું જનક હોવાથી તે અકુટિલ છે “ અણુત્તરં ” સર્વ-
શ્રેષ્ઠ હોવાથી તે અનુત્તર છે. તથા “ સન્વદુક્ષપાવાણં ” સમસ્ત પ્રકારના
દુઃખજનક જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોનું “ વિઉસમણં ” ઉપશમન
કરનાર છે. “ તસ્સ ચરિમસ્સ સંવરદારસ્સ ” તે અન્તિમ સંવરદારની “ હિમા
પંચભાવનાઓ ” આ પ્રમાણે પાંચ ભાવનાઓ છે જે “ પરિગ્રાહવૈરમણરક્ષણ-
દ્વયાઈ હુંતિ ” પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની રક્ષા કરનારી હોય છે ॥ સૂ. ૬ ॥

सम्मानि पञ्च भावना अभिधातुकामः प्रथमां भावनामाह—‘पंचमं’ इत्यादि—

मूलम्—पदमं सोइंदिएण सोच्चा सदाइं मणुणभद्गाइं,
 किंते, वरसुरयमुइंगपणवददुरकच्छभीवीण—विपंश्चिवल्लईबद्धी
 सक-सुघोस-णंदि-सूअर-परिवादिणि वंसतूणग पववय-तंती-
 तलताल-तुडिय-निग्घोस-गीयवाइयाइं णडणट्टगजल्लमल्लमु-
 द्विगवेलवंग-कहगपवगलासग-आइक्खग--लंख--मंख--तुणइल्ल
 तुंबवीणिय-तालायर-पकरणाणि य बहूणि महुरसगीयसुस्स-
 राइं कंची मेहलाकलावगपतरक--पतरेरुपाय -- जालकघंटिय
 खिंखिणि रयणोरुजालय छुदियनेउरचलणमालियकणगनिग'
 डजालकभूसणसदाणि लीलचंक्कम्ममाणाणुदीरियाइं तरुणीज-
 णहसिय भणिय कलरिभियमंजुलाइं गुणवयणाणि य बहूणि
 महुरजणभासियाइं अण्णेसु य एवमाइएसु सदेसु मणुणभद्-
 एसु न तेसु समणेण सजियव्वं न रजियव्वं न गिज्झियव्वं
 न मुज्झियव्वं न विनिघायं आवजियव्वं न लुभियव्वं न
 तुसियव्वं न हसियव्वं न सइं च मइं च तत्थ कुजा । पुण-
 रवि य सोइंदिएण सोच्चा सदाइं अमणुणपावगाइं किंते,
 अक्कोसफरूसखिसण अवमाणण तज्जणनिब्भच्छणं दित्तवयण
 तासण उक्कूजिय रुण्णरडियकंदिय निग्घुट्टरसियकलुणविल-
 वियाइं अण्णेसु य एवमाइएसु सदेसु अमणुणपावएसु-
 न तेसु समणेणं रुसियव्वं न हीलियव्वं न निंदियव्वं, न
 खिसियव्वं, न छिंदियव्वं न भिंदियव्वं, न वहेयव्वं, न दु
 गुंछावत्तिया वि लब्भा उप्पाएउं। एवं सोइंदियभावणाभाविओ

સુદર્શિની ટીકા અં. ૧ સૂ. ૭ 'નિસ્પૃહતા' નામક પ્રથમ ભાવના નિરૂપણમ્ ૮૧૧

भवइ अंतरप्पा मणुण्णामणुण्ण सुब्बिभदुब्बिभरागदोसे
पणिहियप्पा साहू मणवयणकायगुत्ते संबुडे पणिहिइंदिए
चरेज धम्मं ॥ सू० ७ ॥

ટીકા-‘પદમ’ પ્રથમાં નિઃસ્પૃહતા મિથેયાં ભાવના માહ-‘સોંદિણ’ શ્રોત્રેન્દ્રિ-
યેણ=કર્ણેન ‘સોચા’ શ્રુત્વા ‘સદાઈ’ શબ્દાત્, કીદશાન્ ? ‘મણુણમહગાઈ’ મનો-
જ્ઞમદ્દકાન્=મનોજ્ઞાઃ=મનોહરા અતઃપવ મદ્દકાઃ=કર્ણેન્દ્રિય સુલ્લજનકાસ્તાન્ ‘કિં તે’
કાંસ્તાન્=કથંભૂતાંસ્તાન્ ? इत्याह-‘ वरसुरयमुयंगपणवददुरकच्छभी वीणविपंचिव-
लइवद्वीसकसुघोसणंदिसुरपरिवादिणि वंसतूणनपच्चयतंततीतलउलतुडियनिग्गोस-

अथ सूत्रकार इस व्रत की पांच भावनाओं को प्रकट करने के
अभिप्राय से सर्व प्रथम उसकी प्रथम भावना को कहते हैं-‘पदमं’
इत्यादि० ।

टीકાર્થ—(પદમં) इस व्रत की पहिली भावना का नाम निस्पृहता
है, वह भावना इस प्रकार से है-(सोइंदिएण) श्रोत्रेन्द्रिय से, (मणु-
णमहगाई) मनोज्ञ अतएव मधुर ऐसे (सदाई) शब्दों को (सोचा)
सुन करके साधु का कर्तव्य है कि वह कभी भी उनमें आसक्ति न
करे रागभाव से उनमें न बँधे, उनमें वह गृद्धिभाव न करे और
मोहित न हो तथा जो द्वेष पैदा करने वाले हों उनमें वह रुष्ट न हो ।
इसी विषय को सूत्रकार इन नीचे की पङ्क्तियों द्वारा स्पष्ट करते हैं-(किं
ते) वे कौन २ से हैं-इस प्रकार की शंका करने वाले के प्रति वे कहते
हैं कि सुनो वे इस प्रकार से हैं (वरसुरयमुयंगपणवददुरकच्छभी वीण
विपंचि-वलइ-वद्वीसक-सुघोस-णंदि-सुर-परिवादिणि वंसतूणक-

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની પાંચ ભાવનાઓ પ્રગટ કરવાના ઉદ્દેશથી સીધી
પહેલાં તેની પ્રથમ ભાવના વિષે કહે છે-“ પદમં ” इत्यादि-

ટીકાર્થ-“પદમં” આ વ્રતની પહેલી ભાવનાનું નામ નિસ્પૃહતા છે, તે ભાવના
આ પ્રમાણે છે-“સોંદિણ” શ્રોત્રેન્દ્રિયથી, “મણુણમહગાઈ” મનોજ્ઞા ડોવાથી
મધુર લાગે છે “સદાઈ” શબ્દો “સોચા” સાંભળીને તેમાં આસક્તિ થવું
જોઈએ નહીં એ સાધુનું કર્તવ્ય છે, તેમાં રાગભાવ ન રાખે, તેમનામાં તેણે
ગૃહિભાવ કરવો જોઈએ નહીં, મોહિત થવું જોઈએ નહીં. એ જ વિષયને
સૂત્રકાર નિચેની લીટીઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે-“કિં તે” તે શબ્દો કયા કયા
કયા છે. એ પ્રકારની શંકા કરનાર તે કહે છે કે સાંભળો તે આ પ્રમાણે છે-“વર
-સુરય-મુયંગ-પાણવ-દ્દુરકચ્છમી વીણ-વિપંચિ-વલઇવદ્વીસક-સુઘોસ-નંદિસુર

गीयवाइयाइं ' वरसुरजमृदङ्गपणचदङ्कुरकच्छपी वीणाविपश्चीवल्लकी बद्धीशकसुयो-
षनन्दीसुस्वरपरिवादिनीवंशतूणकपर्वजतन्त्रीतलतालतुडितनिघोसगीयवाइयाइं ,
तत्र-वरसुरजाः=श्रेष्ठमृदङ्गाः, मृदङ्गाः=प्रसिद्धाः, पणवाः=लघुपट्टाः, दङ्कुराः=चर्मा-
वनद्धमुखाः कलशाः कच्छपी=कच्छपाकारी वाद्यविशेषः, वीणाविपश्चीवल्लक्य ए-
तास्तिस्रो वीणाभेदाः, बद्धीशकं वाद्यविशेषः, सुयोषा घण्टाविशेषः, नन्दिः=द्वाद-
शतूर्यसमुदायः, द्वादशविधतूर्याणि यथा—

“ भंभा १ मुकुंद २ मर्हल ३ कडंब ४ झल्लरि ५ हुडुक् ६ कंसाल ७ ।

कलह ८ तलिमा ९ वसो १० संखो ११ पणवो १२ यवारसमो ॥१॥ ” इति ।

सुस्वरपरिवादिनी=वीणाविशेषः, वंशः=वेणुः, तूणको वाद्यविशेषः, पर्वजो-
वंशपर्जनિर्मितो वाद्यविशेषः, तन्त्री=वीणाविशेषः, तालहस्ताः, तालाः=कांसिकाः,
पञ्चयતંત્રીन-ताल-तुडिय निगधोसगीयवाइयाइं) वरसुरजउत्तम एक
जात का मृदंग, मृदंग-सामान्य मृदंग, पणव-छोटाढोल, दङ्कुर-चमडे से
मड़े हुए मुखवाले कलश, कच्छपी-कच्छपाकार वाद्यविशेष, वीणा,
विपश्ची, वल्लकी-ये तीनों वीणा के ही भेद हैं, बद्धीशक-वाद्यविशेष,
सुयोषा-एक प्रकार का वाद्यविशेष घंट, नन्दि-बारह प्रकार के बाजों का
समूह वे इस प्रकार हैं-भंभा १, मुकुंद २, मर्हल ३, कडंब ४; झल्लर ५,
हुडुक् ६, कंसाल ७, कलह ८, तलिमा ९, वस १०, शंख ११, पणव
१२, सुस्वरपरिवादिनि एक विशेष प्रकार की वीणा वंश-बांसुरी,
तूणक-एक प्रकार का वाद्यविशेष जिसे हिन्दी भाषा में रमतूला कहते
हैं, पर्वज-वंश के पर्वों से निर्मित किया हुआ एक प्रकार का विशेष
वाद्य, तन्त्री-वीणा विशेष-जिसे हिन्दी में सारंगी कहते हैं, तल-

-परિવાદિજ-વંસતૂણક-પવ્વય-તંત્રીતલતાલ-તુડિય-નિગધોસ-ગીય વાઈયાઈ ” વર
સુરજ-એક જાતનો ઉત્તમ મૃદંગ, મૃદંગ-સામાન્ય મૃદંગ, પણવ-નાનો ઢોલ,
દકુર-આમઠાથી મઢેલ સુખવાળો કાશ, કચ્છપી-કાચખાના આકારનું એક
વાજિંત્ર, વીણા, વિપશ્ચી, વલ્લકી-એ ત્રણે વીણાના પ્રકારો છે, બદ્ધીશક-એક
પ્રકારનું વાદ્ય, સુયોષા-એક પ્રકારનો ખાસ ઘંટ, નન્દિ-ખાર પ્રકારના વાજિં-
ત્રોનો સમૂહ તે આ પ્રમાણે છે-(૧) ભંભા (૨) મુકુંદ, (૩) મર્હલ, (૪)
કડંબ, (૫) ઝાલર, (૬) હુડુકક, (૭) કંસાલ, (૮) કલહ, (૯) તલીમા,
(૧૦) વસ, (૧૧) શંખ, અને (૧૨) પણવ. સુસ્વર પરિવાદિની-એક પ્રકારની
વીણા, વંશ-બાંસરી, તૂણક-એક પ્રકારનું ખાસ વાદ્ય જેને હિંદી ભાષામાં
રમતૂલા કહે છે. પર્વજ-વાંસમાંથી બનાવેલ એક પ્રકારનું ખાસ વાદ્ય, તન્ત્રી-
સારંગી, તલ-હથ, તાલ-મંજીરા, અથવા તલતાલ-હથોથી પડાતી તાલી,

सुबंदिनी टीका अ०५ सू० ७ 'निस्पृहता' नामकण्ठमभावनानिरूपणम् ८९३

अथवा-तलतालः=हस्ततालः, वृटितं=वाद्यविशेषः, एषां यो निर्घोषो निनादः, तथा-गीतं=गानम्, चादितं=सामान्यवाद्यम्, एषां द्वन्द्वः, तानि तथोक्तानि, तथा 'नटनट्टगजललमल्लमुट्टिगवेलंबग-कहगपवगलासग-आइवखगलंखमंखतूणइल्ल-तुंबवीणिपतालायरपकरणाणि य' नटनर्तकजललमल्लमौष्टिकविडम्बक-कथक पल्लवकासकाख्यायकलङ्घनद्वतूणिकतुम्बवीणिक तालावरपकरणानि च, नट-नटाः=नाट्यकारिणः, नर्तकाः=नृत्यकारिणः, जल्लाः=चर्मरज्जूमवलम्ब्य क्रीडाकारकाः, मल्लाः=मल्लयुद्धकारिणः, मौष्टिकाः=मुष्टियुद्धकारकाः, विडम्बकाः=विदूषकाः, कथकाः='कथक' इतिप्रसिद्धा गान्धर्वविद्याविशारदाः, प्लवकाः=कूर्दनकारिणः, लासकाः='लास्य' इति नाटक विशेषकारिणः, अख्यायकाः=कथाकारकाः, लङ्घाः=महावंशाग्रभागमधिरुद्ध क्रीडाकारिणः, मङ्घाः=चित्रफलकहस्ताः क्रीडकाः,

हाथ, ताल-कंसिका-झांजे, अथवा तलताल-हाथों की ताल, वृटित-वाद्यविशेष, इन सब के निर्घोषों-शब्दों को तथा गीतों को एवं सामान्य वाजों की आवाजों को तथा (नट-नट्टगजललमल्ल-मुट्टिग-वेलंबग-कहगपवगलासग-आइवखग-लंखमंखतूणइल्ल तुंबवीणिपतालायर पकरणाणि) नट-नाटक करने वाले नटों के, नर्तकों-नृत्य करने वालों के, जल्ल चर्म रज्जू का अवलम्बन कर के क्रीडा करने वालों के, मल्ल-मल्ल युद्ध करने वालों के, मौष्टिक-मुष्टि से युद्ध करने वालों के, विडम्बक-विदूषकों के, कथन-गान्धर्वविद्या विशारदों के, प्लवक-उछल-कूद करने वाले मनुष्यों के, लासक-लास्य नामकनाटक विशेष को करने वालों के, आख्यायक-कथा कहने वालों के, लङ्घा-बड़े २ वंश के अग्र-भाग पर चढ़कर विविध प्रकार के खेल करने वालों के, मंख चित्र फलकों को हाथ में लेकर खेल तमासा करने वालों के तूणिक-तूण

वृटित-એક જાતનું વાદ્ય, એ બધાના અવાજને તથા ગીતોને તથા સામાન્ય વાદ્યોના અવાજને તથા " નટનટ્ટગજલ્લમલ્લમુટ્ટિગવેલંબગકહગપવગલાસગ આइवखग-लंखमंखतूण-इल्लतुंबवीणिय-तालायरपकरणाणि " नट-नाटक के नटार नटोना, नर्तको-नृत्यकरनारना, जल्ल-चामडानी होरी पर क्रीडाकरनारना, मल्ल-मल्लयुद्ध करनारना, मौष्टिक-मुष्टियुद्ध करनारना, विडम्बक-विदूषकोना, कथक-गान्धर्वविद्या विशारदोना, प्लवक-कूटका बनार भाणुसोनां, लासक-लास्यनामना એક ખાસ પ્રકારનાં નાટક કરનારના, આખ્યાયક કથા કરનારના, લંખ ઉંચા ઉંચા વાંસની ટોચે ચડીને વિવિધ પ્રકારના ખેલ કરનારના, મંખ-ચિત્રનાં ફલકો હાથમાં લઈને ખેલ તમાસા કરનારના, તૂણિક-તૂણનામનું વાદ્યના વગા-

तूष्णिकाः=तूष्णमिथानवाद्यविशेषवादकाः, तुम्बवीणिकाः=तुम्बवीणावादकाः, ताला-
चराः=तालं=हस्ताद्यतरूपमाचरन्ति ये ते तथोक्ताः-तालवादिन इत्यर्थः, एषां
द्वन्द्वः, तेषां यानि प्रकरणानि=प्रकर्षेण करणानि तानि तथोक्तानि, कानि तानी ?
त्याह— बहूणि ' बहूनि=अनेकप्रकाराणि, ' मङ्गलसरगीयसुस्तराणि ' मङ्गलस्व-
राणि=मङ्गलस्वरानां गायकानां गीतानि=गातानि च तानि सुस्तराणि । तथा—
' कंचीमेहलाकलावगपतरकपयरेकपायजालकघंटियखिखिणिरयणोरुजालयलुहिय
नेउयचलणमालियकणगनिगडजालकभूसणसहाणि ' काञ्चीमेहलाकलावगपतरक-
प्रतरेकपादजालकघण्टिकाकिङ्किणी-रत्नोरु-जालक-क्षुद्रिका-नूपुर-चरणमालिका
कनकनिगड-जालकभूषणशब्दान् । तत्र-काञ्ची=कटिभूषणम्, मेखलाऽपि कटिभू-
षणभेदः, कलापको ग्रीवाऽभरणम्, प्रतरेकाणि प्रतरेकाश्च आभरणविशेषाः, पाद-
जालकं=चरणाभरणम्, घण्टिका = प्रसिद्धा, किङ्किणः = क्षुद्रघण्टिकाः, रत्नोरु-
जालकम् रत्ननिर्मित जङ्घाभरणम्, क्षुद्रिका आभरणविशेषाः, नूपुरं=पादभूषणम्,
चरणमालिकाः-पादाभरणविशेषाः, कनकनिगडास्वर्णभूषणविशेषाः, जालकं चाप्या-

नामक वाद्यविशेष को बजाने वालों के, तुम्बवीणिक-तुम्बवीणा को
बजाने वालों के, तालाचर-ताली बजाने वालों के द्वारा अच्छी तरह
से किये गये (बहूणि) अनेक प्रकार के (मङ्गलसरगीयसु-
स्तराई) मङ्गल स्वरगमिन गीतकर स्वरों को, तथा- (कंची
मेहलाकलावग-पतर-कपय-रेक-पाय-जालक-घंटिय-खिखिणि —
रयणोरुजालयलुहिय-नेउयचलणमालियकणगनिगड-जालक-भूसणस-
हाणि) काञ्ची-कटिभूषण, मेखला, कलापक-ग्रीवाभरण-प्रतरेक, प्रते-
रक ये दोनों एक प्रकार के आभरण विशेष होते हैं, पादजालक-चरणा-
भरण, घण्टिका, किङ्किणी-छोटी २ घंटिकाएँ, रत्नोरुजालक-रत्ननिर्मित
जङ्घाभरण, क्षुद्रिका-आभरणविशेष, नूपुर-पादभूषण-बिड़िया, चरण-
मालिका-पादाभरणविशेष, कनकनिगड-स्वर्णनिर्मितभूषणविशेष, और

ऊपर द्वारा सारी रीते करवाया आवे। “ बहूणि ” अनेक प्रकारता “ मङ्गल
सरगीयसुस्तराई ” मङ्गल स्वरयुक्त गीतइय स्वराने तथा “ कंची मेहलाक
लावग-पतरक-पयरेक-पायजालक-घंटिय-खिखिणिरयणोरुजालय-लुहियनेउय-
चलण-मालिय-कणग-निगड-जालक-भूसणसहाणि ” काञ्ची-कटिभूषण, मेखला-
सेर, कलापक-डोकुं धरेलुं-प्रतरेक, प्रतरेक ये अने अनेक प्रकारता पास आबू-
पछो छे, पादजालक-पयणुं आबूपछो, घंटिका, बूधरी, किङ्किणी-नानी नानी
बूधरीओ, नूपुर-आंठर, बिड़िया, चरणभूषण, ओ गथा आबूपछोनां अवाजने

सुदर्शिनी टीका अ० ५ सू० १ 'निस्पृहता' नामक प्रथम भावनानिरूपणम् ८९५

भूषणविशेषः, एषामितरेतयोर्गद्वन्द्वः, एतान्येव भूषणानि, तेषां शब्दास्तौस्तथो-
क्तान्, तथा—'लीलचक्रम्ममाणुदीरियाइ' लीलाचक्रम्ममाणोदीरितान्=लीलया
चक्रम्ममाणानां=सलीलं गच्छन्तीनाम्, उदीरितान्=भूषणजनितान् शब्दान्,
तथा—'तरुणीजणहसियभणियकलरिभियमंजुलाइ' तरुणीजनहसितभणितकलरिभि-
तमंजुलानि=तरुणीजनस्य यानि हसितानि भणितानि, कलरिभितानि=मधुररण-
नानि=मंजुलानि=मनोहराणि च तानि तथोक्तानि, तथा—'गुणवयणणि य'
गुणवचनानि च=कामगुणवर्धकवचनानि च 'बहूणि' बहूनि=अनेकविधानि तथा
'महुरजणभासियाइ' मधुरजनभाषितानि=मधुराणि यानि जनभाषितानि=ताल-
स्वरत्युक्तानि गायकजनगानानि तानि श्रुत्वा, 'समणेण' श्रमणेन—साधुना
'तेसु' तेषु 'मणुणमहएसु' मनोज्ञमद्वयेषु 'सदेसु' शब्देषु तथा 'अण्णेषु
य' अन्येषु च 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु शब्देषु न 'सज्जियव्वं' न
सक्तव्यम्—आसक्तिर्न कर्तव्येत्यर्थः, तथा—'न रज्जियव्वं' न रक्तव्यं=रागो न
कर्तव्यः, 'न गिज्जियव्वं' न गर्हितव्यम्=गृद्धिभावो न कर्तव्यः, तथा—'न मुज्जि-

जालक—एक प्रकार का आभूषण विशेष, इन सब शब्दों को तथा
(लीलचक्रम्ममाणु दीरियाइ) लीलासहित जानी हुई स्त्रियों के भूषणों
के शब्दों को, तथा (तरुणीजणहसियभणियकलरिभियमंजुलाइ) तरु-
णियों के हसित, भणित, कलरिभिक और मनोहर, ऐसे (बहूणि गु-
णवयणणि) अनेक प्रकार के कामगुणवर्धक वचनों को तथा (महुरजण
भासियाइ) तालस्वरयुक्त गायकजनों के गानों को सुनकर के साधुको
(तेसु मणुणमहएसु) उन मनोज्ञ एवं मधुर (सदेसु) शब्दों में तथा
(अण्णेषु य एवमाइएसु) इसी प्रकार के और भी दूसरे शब्दों में (न
सज्जियव्वं) आसक्ति नहीं करना चाहिये, (न रज्जियव्वं) राग नहीं
करना चाहिये, (न गिज्जियव्वं) गृद्धिभाव नहीं करना चाहिये, अर्थात्

तथा “लीलचक्रम्ममाणुदीरियाइ” शीलासहित गीती स्त्रीशैलीनां आभूषणानां
अवाञ्छने तथा “तरुणीजण-हसिय-भणिय-कलरिभिय-मंजुलाइ” तरुणीशैलीनां
हसित, ज्वलित, कलरिभित अने मनोहर, शैलीनां “बहूणि गुणवयणणि”
अनेक प्रकारका काम वर्धक शब्दोने तथा “महुरजणभासियाइ” गायकानां
ताल स्वरयुक्त गीताने सांभालीने साधुके “तेसु मणुणमहएसु” ते मनोज्ञ
अने मधुर “सदेसु” शब्दोभां तथा “अण्णेषु य एवमाइएसु” शैली
प्रकारनां शैली शब्दोभां येषु “न सज्जियव्वं” आसक्ति करवी नैष्ठ्ये नही,
“न रज्जियव्वं” राग करवी नैष्ठ्ये नही, “न गिज्जियव्वं” गृद्धिभाव न

યવ્વં ' ન મોહિતવ્યમ્—તત્ર મોહો ન કર્તવ્ય इत्यर्थः, तथा—'विणिघायं' विनिघातः =तदर्थं चारित्र्यभंगः, आवज्जियव्वं' आपत्तव्यः=कर्तव्यइत्यर्थः, तथा—' न लुभियव्वं ' न लोभव्यव्यम्=लोभो न કર્તવ્ય इत्यर्थः, ' ન તુસિયવ્વં ' ન તોષ્ટવ્યમ્—મનોહશબ્દાદિષુ પ્રસન્નમનસા ન ભાવ્યમિત્યર્થઃ, તથા—' ન હસિયવ્વં ' ન હસિ-તવ્યમ્=વિસ્મયેન હાસો ન કર્તવ્યઃ, તથા—શ્રમણઃ 'તત્થ' તત્ર—મનોહમદ્દકશબ્દ વિષયે ' સહં ' સ્મૃતિ—સ્મરણં ચ ' મહં ' મતિ=બુદ્ધિનિવેશં ચ ' ન કુજ્જા ' ન કુર્યાન્ । ' પુણરવિ ય ' પુનરપિ ચામનોજ્ઞાદિ શબ્દવિષયે પ્રોચ્યતે—' સોહંદિણ' શ્રોત્રેન્દ્રિયેણ ' સોચ્ચા ' શ્રુત્વા ' સદાહં ' શબ્દાન્ કીદશાન્ ? ' અમણુણપાવગાહં ' અમનોજ્ઞપાપકાન્=અમનોજ્ઞાઃ=અમનોહરા અતएव—પાપકાઃ=અશુભાસ્તાન્ ' કિં તે ' લલચાના નહીં ચાહિયે, (ન મુજ્જિયવ્વં) ઉનમે મોહ નહીં કરના ચાહિયે, (ન વિણિઘાયં આવજ્જિયવ્વં) ઉનકે નિમિત્ત અપને ચારિત્ર કો ભ્રષ્ટ નહીં કરના ચાહિયે, (ન લુભિયવ્વં) ઉનમેં લુભાના નહીં ચાહિયે, (ન તુસિયવ્વં) ઉનસે પ્રસન્નમન નહીં ઘનાના ચાહિયે, (ન હ-સિયવ્વં) હંસના નહીં ચાહિયે; ઔર (ન સહં ચ તત્થકુજ્જા) ન ઉન મનોજ્ઞશબ્દાદિકોં કી યાદ કરના ચાહિયે ઔર ન ઉનમેં અપની બુદ્ધિ કો હી લગાના ચાહિયે ।

હસી પ્રકાર (પુણરવિ ય) ફિર (સોહંદિણ) શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય સે (અમણુણપાવગાહં) અમનોજ્ઞ અતएव અરુચિ કારક અશુભ (સદાહં) શબ્દોં કો (સોચ્ચા) સુનકર સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઉન પર દ્રેષ ઔ ન કરે—નાક મુંહ ન સિકોહે, હસી વિષય કો અવ સૂત્રકાર હન પંક્તિયોં દ્વારા સ્પષ્ટ કરતે હૈ—વે કૌન સે હૈં હસ શંકા કે સમાધાન

કરવો જોઈએ એટલે કે લલચાવું જોઈએ નહીં. " ન મુજ્જિયવ્વં " તેમનામાં મોહ કરવો જોઈએ નહીં. " ન વિણિઘાયં આવજ્જિયવ્વં " તેમના નિમિત્તો પોતાના ચારિત્રને ભ્રષ્ટ કરવું જોઈએ નહીં, " ન લુભિયવ્વં " તેમાં લલચાવું જોઈએ નહીં. " ન તુસિયવ્વં " તેમાં મનને પ્રસન્ન રાખવું જોઈએ નહીં. " ન હસિ-યવ્વં " હસવું જોઈએ નહીં, અને " ન સહં ચ મહં જ તત્થ કુજ્જા " તે મનોજ્ઞ શબ્દાદિકોને યાદ કરવા જોઈએ નહીં. અને તેમાં પોતાના મનને ખેંચાવા હેવું નહીં. એજ પ્રમાણે ' પુણરવિ ય ' વળી ' સોહંદિણ ' શ્રોત્રેન્દ્રિયથી ' અમણુણપાવગાહં ' અમનોજ્ઞ અને તે કારણે અરુચિકારક અશુભ " સદાહં " શબ્દોને " સોચ્ચા " સાંભળીને તેના પ્રત્યે દ્રેષ પણ ન કરવો જોઈએ તે સાધુનું કર્તવ્ય છે—તેના તરફનાં તિરસ્કારથી નાક કે મોઢું સંકેતવું બગાડવું જોઈએ નહીં, એજ વિષયને સૂત્રકાર આ પંક્તિઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે—તે કયા કયા પ્રકારના છે તે શંકાના નિવારણના માટે તેઓ તે અમ-

સુરશિની ટીકા અંક ૦૪ સૂંઝ 'પરિગ્રહવિરમણ'નામકપ્રથમભાવનાનિરૂપણમ્ ૮૧૭

કૌસ્તાન=કથમ્ભૂતાસ્તાન શબ્દાન્ ઇત્યાહ— 'અક્રોસ'ફરુસ'સ્વિસણ'અવમાણણ-
તજ્જણનિવ્મ્ભછળ'દિત્તવચણતાસણ'ઉક્કૂજિય'રુણ'રહિય'કંદિય'ણિ'ગુદુર'સિય'કલુણ'વિ-
લ'વિયાઈ' આક્રોશપરુપ'સ્વિસનાવમાનનતર્જનનિર્મત્સન'દીપ્તવચન'ત્રાસનો'ત્કૂજિતરુ-
દિતર'દિત'ક્રન્દિત'નિર્ધુષ્ટર'સિત'કરુણ'ધિલ'પિતાનિ-તત્ર—આક્રોશ:= 'રે દુષ્ટ !
પ્રિયસ્વે' ત્યાદિવચનમ્, પરુપં-રે મૂર્ખ ! રે ચૌર ! ઇત્યાદિ, સ્વિસનમ્=નિન્દાવ-
ચનં 'કુશીલોડસિ, નિર્લજ્જોડસી' ત્યાદિરૂપમ્, અવમાનનમ્=અપમાનજનકવચનં,
ત્વજ્જારાદિરૂપમ્, તર્જનમ્='ત્રાસ્યસિ રે દુષ્ટ ! મમાવજ્ઞાયા: ફલમ્' ઇત્યાદિરૂપમ્=
નિર્મત્સનમ્='અસર રે નિર્દય ! મમ દ્વિષ્પથાદિત્યાદિરૂપમ્, દીપ્તવચનમ્=કુપિ-
તવચનમ્=ત્રાસનમ્=અન્ધકારાદૌ ફેત્કારાદિરૂપ: શ્રુગલાદિશબ્દ:, ઉત્કૂજિતમ્=

નિમિત્ત વે ડન અમનોજ્ઞ પાપક શબ્દોં કો કહતે હૈ—(અક્રોસ-
ફરુસ-સ્વિસણ-અવમાણણ- તજ્જણ- નિવ્મ્ભછળ-દિત્તવચણ-તાસણ-
ઉક્કૂજિય-રુણ-રહિય-કંદિય--ણિ'ગુદુ-રસિય-કલુણ-વિલ'વિયાઈ')
'રે દુષ્ટ ! મર જા' ઇત્યાદિ પ્રકાર કે જો શબ્દ હોતે હૈં-વે આક્રોશ
શબ્દ હૈં, કટોર શબ્દોં કા નામ પરુપ હૈ-જૈસે-'ઓ મૂર્ખ ! અરે
ઓ ચૌર !' આદિ । નિંદાત્મક શબ્દોં કા નામ સ્વિસન હૈ, જૈસે-'તુ
બડે સોટે સ્વભાવ કા હૈ, તૂ વડા બે શરમ હૈ' ઇત્યાદિ । 'તૂ'
આદિ શબ્દ અપમાન જનક શબ્દ હૈં । જિન શબ્દોં સે દૂસરોં કો
હાટના હોતા હૈ વે તર્જના શબ્દ હૈ, જૈસે-'ઓ દુષ્ટ ! અવજ્ઞા કરને કા
ફલ મૈં તુજે બતાઁગા । તથા 'ઓ નિર્દય ! મેરે સામને સે હટ જા'
ઇત્યાદિ પ્રકાર કે વાક્ય નિર્મત્સન વાક્ય કહલાતે હૈં । કુપિત વચનોં
કા નામ દીપ્તવચન હૈ । અંધકાર આદિ મૈં ફુત્કાર આદિ રૂપ શબ્દોં કા

નોજ પાપક શબ્દોને બતાવે છે--“અક્રોસ-ફરુસ-સ્વિસણ-અવમાણણ-તજ્જણ-
નિવ્મ્ભછળ-દિત્તવચણ-તાસણ-ઉક્કૂજિય-રુણ-રહિય-કંદિય-ણિ'ગુદુ-રસિય-કલુણ-
વિલ'વિયાઈ” “હે દુષ્ટ ! મરી બા” ઇત્યાદિ પ્રકારના શબ્દોને આક્રોશ શબ્દ
કહે છે, કટોર શબ્દોને પરુપ શબ્દો કહે છે, જેવાં કે “અરે મૂર્ખ ! અરે ઓ
ચૌર” આદિ પરુપ શબ્દો છે. “તું ઘણા બરાણ સ્વભાવવાળો છે, તું ઘણો
બેશરમ છે” આદિ નિંદાત્મક શબ્દોને સ્વિસન કહે છે. “તું” આદિ અપ-
માનજનક શબ્દો છે. જે શબ્દો દ્વારા બીજાને ધમકી અપાય છે તે શબ્દોને
તર્જના શબ્દો કહે છે, જેવાં કે “રે દુષ્ટ મારી અવજ્ઞા કરવાનું ફળ હું તને
બતાડીશ”. તથા “અરે નિર્દય ! મારી નજરથી દૂર થા” ઇત્યાદિ પ્રકારનાં
વાક્યોને નિર્મત્સના વાક્ય કહે છે. ક્રોધયુક્ત વચનોને દીપ્ત વચન કહે છે.

અવ્યક્તમહાધ્વનિકરણમ્, રુદિતમ્=સાશ્વરોદનમ્, રટિતં=કલહાપિતં-કલહવાચ્ય-
મિત્યર્થઃ ક્રન્દિતમ્=ઇષ્ટવિયોગાદૌ ક્રન્દમ્, નિર્ઘુષ્ટમ્=ઉચ્ચૈર્નાદિકરણમ્, રસિતમ્
=શૂકરાદિવત્ શબ્દકરણમ્, કરુણવિલપિતમ્=પુત્રાદિમૃત્યૌ સ્વકરુણવિલાપકરણમ્,
एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तानि श्रुत्वा श्रमणेन 'नेसु' तेषु 'अमणुष्णपावएसु'
अमनोज्ञपापकेषु=અમનોજ્ઞાશુભેષુ, 'સદેસુ' શબ્દેષુ તથા- 'અણેસુ ય એવમાદેસુ'
अन्येषु च एवमादिकेषु समुपस्थितेषु शब्देषु 'न रुसियच्च' 'न रोषितव्यम्-रोषो
न कर्तव्यः, 'न हीलियच्च' 'न हीलितव्यम्=અવજ્ઞા ન કર્તવ્યેત્યર્થઃ, 'ન નિન્દિ-
યच्च' 'ન નિન્દિતવ્યમ્=નિન્દા ન કર્તવ્યા, 'ન સ્વિસિયच्च' 'ન સ્વિસિતવ્યમ્=

નામ ગ્રાસન હૈ । जिस प्रकार शृगाल आदि के शब्द होते हैं । अस्पष्ट
जोर २ से बोलने का नाम उत्कृजित है । आंशु निकाल २ कर रोने का
नाम रुदित है । कलहवर्धक वाक्यों का नाम रटित है । इष्ट के वियोग
आदि होने पर जो रुदन करते समय वचन निकलते हैं वे क्रंदित वचन
हैं । ऊँचे स्वर से जो बोलने में आते हैं वे निर्घुष्ट शब्द हैं । सूअर
आदि के जैसे शब्दों का बोलना इसका नाम रसित है । पुत्र आदि के
मर जाने पर जो करुण विलाप किया जाता है । और उस समय जो
शब्द मुँह से निकलते हैं वे करुण विलपित हैं । ऐसे शब्दों में तथा
(अण्णेषु य एवमादेषु सदेसु) इसी प्रकार के और भी शब्द जो
(अमणुष्णपावएसु) अमनोज्ञ अशुभ हों उन शब्दों में (समणेण)
श्रमण का कर्तव्य है कि वह उनमें (न रुसियच्च) रोष न करे ।

અધકાર આદિમાં કુલકાર આદિરૂપ શબ્દોનું નામ ગ્રાસન છે, શિયાળ આદિના
અવાજ તે પ્રકારનો હોય છે. બેર બેરથી અસ્પષ્ટ બોલતું તેને ઉત્કૃજિત શબ્દો
કહે છે. આંસુ પાડી પાડીને રડવાના અવાજને રુદિત શબ્દ કહે છે. કલહ-
વર્ધક વાક્યોને રટિત વાક્ય કહે છે. ઈષ્ટનો વિયોગ આદિ થતાં રુદનની સાથે
જે વચન નીકળે છે તેને ક્રંદિતવચન કહે છે. જાંચા અવાજથી બોલતા વચનને
નિર્ઘુષ્ટ શબ્દ કહે છે. સૂઅર આદિ જેવાં શબ્દો બોલવા તે રસિત શબ્દ
કહેવાય છે. પુત્ર આદિનું મત્સુ થતાં જે કરુણ વિલાપ કરાય છે. અને ત્યારે
જે શબ્દો મોઢામાંથી નીકળે છે તે કરુણ વિલપિત કહેવાય છે. એવાં શબ્દો
પ્રત્યે તથા “ અણ્ણેસુ ય એવમાદેસુ સદેસુ ” એવાં જ પ્રકારનાં બીજાં શબ્દો કે
જે “ અમણુષ્ણપાવેસુ ” અમનોજ્ઞ અને અશુભ હોય. તે શબ્દોથી “ ન
રુસિયચ્ચ ” રોષ ન કરવો “ સમણેણ ” તે શ્રમણનું કર્તવ્ય છે. “ ન હીલિય-
ચ્ચ ” તેમની અવજ્ઞા કરવી નહીં, “ ન નિન્દિયચ્ચ ” નિન્દા ન કરવી, “ ન

सुशिक्षिनी टीका अ०५ सू०७ 'परित्रिद्विरमण' नामक प्रथम भावनानिरूपणम् ८१९

परसमक्षं च निन्दा न कर्तव्या, 'न छिदियव्वं' न छेत्तव्यम्=अमनोज्ञ शब्दकर्तृ-
द्रव्यस्य छेदो न कार्यः, तथा-'न भिदियव्वं' न भेत्तव्यम्, तस्यैव न भेदः
कर्तव्यः, 'न वहेयव्वं' न हन्तव्यम्=तस्यानिष्ट शब्दकर्तृवधो न कर्तव्यः, तथा-
'दुगुंछावत्तियावि' जुगुप्सावृत्तिकाऽपि शब्दविषये स्वस्य परस्य वा घृणावृत्ति-
रपि, 'उप्पाएउं' उत्पादयितुं 'न लब्भा' न लभ्या-नोविता, यथा-स्वस्य परस्य
वा हृदि शब्दविषया जुगुप्सा प्रादुर्भवेन्न तथा कर्तव्यमिति भावः। अथ प्रथमभा-
वनानिगमनार्थमाह—एवम्=उक्तरीत्या 'सोईदियभावणाभाविओ' श्रोत्रेन्द्रिय-
भावनाभावितः श्रोत्रेन्द्रियं निरोद्धव्यम्, अन्यथा-महदनर्थसंभारः, इत्येवं रूपया
भावनया भावितः, 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवो 'भवइ' भवति, ततश्च 'मणु-
ण्णामणुण्णसुब्बिदुब्बिरागदोसे' मनोज्ञमनोज्ञपुरभिदुरभिरागद्वेषो=मनोज्ञमनोज्ञा
(न ह्रीलियव्वं) उनकी अवज्ञा न करे, (न निंदियव्वं) निंदा
न करे (न खिसियव्वं) उन पर खिसियावे नहीं—दूसरों के समक्ष
उनकी निंदा न करे (न छिदियव्वं) जो अमनोज्ञ शब्दों करने
वाला घिणादि द्रव्य है उसका वह न छेदन करे और (न भिदियव्वं)
न भेदन करे (न वहेयव्वं) अनिष्ट शब्द करने वाले मनुष्य आदि का
वध न करे। और (न दुगुंछा वत्तिया विलब्भा उप्पाए उं) न उन
अनिष्ट शब्दों के विषय में अपने एवं पर के घृणावृत्ति उत्पन्न करने की
कोशिश ही करे। अथ सूत्रकार इस प्रथम भावना का उपसंहार करने
के लिये कहते हैं—(एवं) इस प्रकार (सोईदियभावणाभाविओ)
श्रोत्रेन्द्रिय की भावना से भावित हुआ 'मुझे श्रोत्रेन्द्रिय का निरोध
करना चाहिये नहीं तो बड़ा भारी अनर्थ होगा' इस प्रकार की विचा-
रधारा से वासित हुआ (अंतरप्पा) अन्तरात्मा मुनि (मणुण्णामणुण्ण-
सुब्बिदुब्बि रागदोसे पणिहियप्पा) मनोज्ञ रूप शुभ और अमनोज्ञ-

खिसियव्वं " तेना पर खिसियावे नहीं-भील पासे तेनी निंदा करवी नेछम्मे
नहीं, "न छिदियव्वं" अमनोज्ञ अवाच्य करना वीक्षादि के वस्तु छेद्य तेनुं
ते छेदन न करे, "न भिदियव्वं" तेनुं भेदन न करे "न वहेयव्वं" अनिष्ट
शब्द करना मनुष्य आदिना ते वध न करे, अने "न दुगुंछावत्तिया विलब्भा
उप्पाएउं" ते अनिष्ट शब्द प्रत्ये पोते तृष्णा न करे ने भीलजोभां तृष्णा.
वृत्ति चेदा करवानी कोशिश न करे. हवे सूत्रकार आ पडेकी लावनाने उप-
संहार करतां कहे छे-" एवं " आ रीते " सोईदियभावणाभाविओ " श्रोत्रे-
न्द्रियनी लावनाथी लावित थयेत्त " भारे श्रोत्रेन्द्रिय पर अईश राखवे.
नेछम्मे नहीं तो धोखा भारे अनर्थ थये " अने प्रकारनी विचारधारथी प्रभावित
थयेत्त " अंतरप्पा " अन्तरात्मा-मुनि " मणुण्णामणुण्णसुब्बिदुब्बिरागदोसे पणिहि-

ये सुरभिदुरभयः=शुभा शुभाः शब्दास्तेषु यद्वागद्वेषं तत्र, 'पणिहिद्यप्पा' पणिहि-
तात्मा=संवृतात्मा 'साहू' साधुः 'मणवयणकायगुत्ते' मनोवचनकायगुप्तः, 'संवुडे'
संवृतः=संवरवान् 'पणिहिइंदिए' पणिहितेन्द्रियः=पणिहितः=वशीकृतः इन्द्रियो
येन तथाभूतः सन् 'धम्मं' धर्मं 'चरेज्ज' चरेत् ॥ सू० ७ ॥

द्वितीयां भावनामाह—'वीयं' इत्यादि—

મૂલમ્—વીયં ચક્ષુ ઇંદિયણ પાસિય રૂવાણિ મણુણમદ્ધ-
ગાઈ સચિત્તાચિત્તમોસગાઈ કટ્ટે પોત્થે ય ચિત્તકમ્મે લેપ્પકમ્મે

રૂપ અશુભ શબ્દોં મેં રાગદ્વેષ કરને કો પરિણતિ સે રહિત હો જોતા હૈ ।
હસ પ્રકાર કો સ્થિતિ સે સંપન્ન હુઆ (સાહુ) સાધુ (મણવયજ્ઞાયગુત્તે)
અપને મન, વચન ઔર કાય કો શુભાશુભ કે વ્યાપાર સે સુરક્ષિત કર
લેતા હૈ । ઔર (સંવુડે) સંવર સે યુક્ત બનકર (પણિહિંદિય) અપની
શ્રોત ઇન્દ્રિય કો વશ મેં કરકે (ધમ્મ) ચારિત્રરૂપ ધર્મ કો (ચરેજ)
પાલન કરને વાલા બન જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—હસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ને પરિગ્રહ વિરમણવ્રત કી પ્રથમ
ભાવના કા વિવેચન કિયા હૈ । હસમેં ઉન્હોં ને યહ કહા હૈ કિ સાધુકો ઇષ્ટ
શ્રોત્રેન્દ્રિય કે વિષય મેં લલચાના નહીંં ચાહિયે ઔર અનિષ્ટ વિષય મેં
દ્વેષ નહીંં કરના ચાહિયે । હસ પ્રકાર સે હસ ભાવના સે ભાવિતમુનિ અપને
વ્રત કી રક્ષા ઔર ઉસકી સુસ્થિરતા કરતા હુઆ સંવર સે યુક્ત બન જાતા હૈ
ઔર ચારિત્રરૂપ ધર્મ કી પરિપાલના અઢીં તરહ સે કરસકતા હૈ ॥સૂ.૦૭॥

વપ્પા ” મનોગ્રરૂપ શુભ અને અશુભ શબ્દોમાં રાગદ્વેષની પરિણુતિથી રહિત થઈ
બંધ છે. આ પ્રકારની રિયતિથી યુક્ત બનેલ “ સાહુ ” સાધુ “ મણવયકાયગુત્તે ”
પોતાના મન, વચન અને કાયને શુભાશુભ પ્રવૃત્તિથી સુરક્ષિત કરી નાખે છે.
અને “ સંવુડે ” સંવરથી યુક્ત બનીને “ પણિહિંદિય ” પોતાની શ્રોત્રેન્દ્રિયને વશ
કરીને “ ધમ્મ ” ચારિત્રરૂપ ધર્મનું “ ચરેજ ” પાલન કરનાર થઈ બંધ છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્રદ્વારા પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની પહેલી ભાવનાનું વિવેચન
કયું છે તેમાં તેમણે એ બતાવ્યું છે કે સાધુએ શ્રોત્રેન્દ્રિયના ઈષ્ટ વિષયમાં
લલચાવું બેઈ એ નહીં અને અનિષ્ટ વિષય પ્રત્યે દ્વેષ કરવો બેઈ એ નહીં
આ રીતે આ ભાવનાથી ભાવિત થયેલ મુનિ પોતાના વ્રતની રક્ષા તથા સુસ્થિ-
રતા કરતો કરતો સંવરથી યુક્ત થઈ બંધ છે, અને ચારિત્રરૂપ ધર્મનું સારી
રીતે પાલન કરી શકે છે ॥ સૂ. ૭ ॥

सुवर्शिनी टीका ५५ सू०८ 'चक्षुरिन्द्रियपंवर' नामक द्वितीय भावनानिरूपणम् ०

सेले य दंतकम्मे य, पंचहिं वण्णेहिं अणेगसंठाणसंठियाइं
 गंथिमवेढिमपूरिमसंघाइमणि य मल्लाइं बहुविहाणि य नय-
 णमणसुहकराइं वणसंडे पव्वए य गामागरनगराणि य
 खुड्डियपुक्खरिणी वावीदीहिय-गुंजालिय सरसरपंतिय सागर-
 विलपंतिय खाइय-नई-सर-तलाग-वप्पिणो फुल्लुप्पलपउम-
 परिमंडियाभिरामे, अणेगसउणमणमिदुणवियरिए, वरमंडव-
 विविहभवण-तोरण-चेइय-देवकुल-सभप्पवाचसह-सुकय-
 सयणासण-सीयरह-सगडजाणजुग्गय-संदणे नरनारिगणे य
 सोमपडिरूवदरिसणिजे, अलंकिय विभूसिय, पुव्वकय तवप्प-
 भावसोहग्गसंपउत्ते, नड-नट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-चेलंग-
 कहग-पव्वग-लासग-आइक्खग लंख मंख तूणइल्ल तुंववो-
 णिय-तालायर पकरणाणि य बहूणि सुकरणाणि अण्णेसु य
 एवमाइएसु रूवेसु मणुन्नभइएसु न तेसु समणेण सज्जियव्वं,
 न रज्जियव्वं, जाव न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा, पुणरवि-
 चक्खुइंदिएणं पासिय रूवाइं अमणुन्नपावगाइं, किं ते ? गंडि-
 कोढि-कुणि-उदरि-कच्छुल्ल-पइल्ल-कुज-पंगुल-वामण-
 अंधिल्ल-एगचक्खु विणिहय सप्पिसल्लगवाहिरोगपीलियं
 विगयाणि य मयककलेवराणि सकिमिणकुहियं च दव्वरासिं
 अन्नेसु य एवमाइएसु अमणुन्नपावगेसु न तेसु समणेण
 रूसियव्वं, जाव न दुगुंछावत्तियावि लब्भा उप्पाएउं, एवं
 चक्खुइंदियभावणाभाविओ भवइ अंतरप्पा मणुण्णामणुण्ण-

સુભિદુઃખિભરાગદોસે પણિહિયપ્પા સાહૂમણવચણકાયગુત્તે સંવુડે
પણિહિંદિણ ચરેજ્જ ધમ્મં ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘વીયં’ ઇત્યાદિ—

‘વીયં’ દ્વિતીયાં ચક્ષુરિન્દ્રિયસંવરામિથેયાં ભાવનામાદ— ‘ચક્ષુરિન્દ્રિયેણ’ ચક્ષુરિન્દ્રિયેણ ‘પાસિય’ દૃષ્ટ્વા ‘રૂવાણિ’ રૂપાણિ=આકારાન કીદશાણિ ? ‘મણુણભદ્ગાઈ’ મનોજ્ઞભદ્રકાણિ=મનોજ્ઞાણિ=મનોહરાણિ ચ તાનિ ભદ્રકાણિ=સુન્દરાણિ ચેતિ કર્મધારયઃ, તથા—‘સચિત્તાચિત્તમીસગાઈ’ સચિત્તાચિત્તમિશ્રકાણિ, તત્ર-સચિત્તાનિ=નરયુગ્માદીનિ, અચિત્તાનિ=તત્પ્રતિકૃતિરૂપાણિ, મિશ્રકાણિ=વસ્ત્રાભૂષણભૂષિતાનિ તાન્યેવ, કાષ્ઠપાપાણાદીનિ યા દૃષ્ટ્વા તેષુ શ્રમણેન ન સત્કવ્યમિત્યાદ્યગ્રેણ સમ્બન્ધઃ । કસ્મિન્ સ્થાને દૃષ્ટ્વા ઇત્યાદિ—‘કટ્ટે’ કાષ્ઠે=કાષ્ઠફલકે ‘પોત્થે ય’ પુસ્તકે ચ=પુસ્તકે ચ ‘ચિત્તકમ્મે’ ચિત્તકર્મણિ ‘લેપ્પક-

इस व्रत की द्वितीय भावना को कहते हैं—‘वीयं’ इत्यादि० ।

ટીકાર્થ—(વીયં) દૂસરી ચક્ષુરિન્દ્રિય સંવર નામ કી ભાવના હૈ વહ્ હસ પ્રકાર સે હૈ—(ચક્ષુરિન્દ્રિયેણ) ચક્ષુરિન્દ્રિય સે (મણુણભદ્ગાઈ) મનોજ્ઞ અતઃ સુન્દર એસે (રૂવાઈ) રૂપોં કો કિં જો (સચિત્તાચિત્તમીસગાઈ) સચિત્ત, અચિત્ત ઓર મિશ્રદ્રવ્ય સે આશ્રિત હો ઉન્હેં (પાસિય) દેખ કરકે સાધુ કો ચાહિયે કિં વહ્ ઉનમેં આસત્કચિત્ત ન બનેં, યહ આગે સે સંબન્ધ હૈ । નર નારી આદિ સચિત્ત દ્રવ્ય હૈં, ઉન કે પ્રતિકૃતિ-ફોટો અચિત્તદ્રવ્ય હૈં । વસ્ત્ર આભૂષણ આદિ સે વિભૂષિત નર નારી આદિ મિશ્રદ્રવ્ય હૈં । ઉનકે આશ્રિત જો મનોહર આકાર હોતા હૈ વહ્ મનોજ્ઞ ભદ્રકરૂપ હૈ । ઉન સર્વ કા આકાર (કટ્ટે) કાષ્ઠ કે

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની બીજી ભાવના બતાવે છે—“વીયં” ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—“વીયં” બીજી ચક્ષુરિન્દ્રિય સંવર નામની ભાવના છે. તે આ પ્રમાણે છે—“ચક્ષુરિન્દ્રિયેણ” ચક્ષુરિન્દ્રિયથી “મણુણભદ્ગાઈ” મનોજ્ઞ અને સુન્દર એવાં “રૂવાઈ” રૂપોને કે જે “સચિત્તાચિત્તમીસગાઈ” સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર દ્રવ્યને આશ્રિત હોય, તેમને “પાસિય” જોઈને તેમાં સાધુએ આસક્ત થવું જોઈએ નહીં. નર, નારી આદિ સચિત્ત દ્રવ્ય છે. તેમની પ્રતિકૃતિ-ફોટો અચિત્ત દ્રવ્ય છે. વસ્ત્ર, આભૂષણ આદિથી વિભૂષિત નર-નારી આદિ મિશ્ર દ્રવ્ય છે. તેમના પર આધાર રાખનાર જે મનોહર આકાર હોય છે તે મનોજ્ઞ ભદ્રકરૂપ છે. તે બધાનો આકાર “કટ્ટે” કાકડાના પાટીયા પર

સુવર્ણનીટીકા અં ૫ સૂ ૮ 'ચંદ્રુરિન્દ્રિયસંચર'નામકદ્વિતીયનિરૂપણમ્ ૧૦૩

મ્મે 'લેપ્યકર્મણિ મિત્યાદૌ, 'સેલે ય ' શૈલે=પાષાણે ચ ' દંતકર્મ્મે ' દંતકર્મ્મણિ=હસ્તિદંતાદિષુ યશ્ચરયુગાદીનામાકૃતિરુદ્ઘચતે તદ્દંતકર્મ્મ તર્મિશ્ચ ' પંચહિ વર્ણોર્હિ' પશ્ચભિર્વર્ણેયુક્તાનિ, 'અણેગસંઠાણસંઠિયાઈ' અનેક સંસ્થાનસંસ્થિતાનિ' અનેકાનિ=અનેકપ્રકારાણિ યાનિ સંસ્થાનાનિ=આકૃતયસૈઃ સંસ્થિતાનિ=યુક્તાનિ, તથા--' ગંધિમવેદિમપૂરિમસંઘાઈમાણિ ય ' ગ્રન્થિમવેદિમપૂરિમસંઘાતિમાણિ ચ, તત્ર-ગ્રન્થિમ=ગ્રન્થસ્તેન નિર્વૃત્તં માલાયત્, વેદિમમ્=વેદસ્તેન નિર્વૃત્તમ્ પુષ્પગેન્દુ-કવત્, પૂરિમ=પૂરણેન નિર્વૃત્તં, યન્ત્રે પિત્તલાદિ રમપૂરણેન નિષ્પાદિતં પુત્તલિકા-દિકમ્, સંઘાતિમમ્=સંઘાતેન નિર્વૃત્તમ્, કર્પર્દિકાદિસંઘાતેન નિષ્પાદિતં કુલકુટા-

પટિયોં પર ડકેરા જાતા હૈ (પોત્યે ય) પુસ્તકોં સે છાપા જાતા હૈ, (ચિત્ત-કર્મ્મે ય) કાગજ આદિ પર ચિત્રિત કિયા જાના હૈ સૃત્તિકા આદિ મેં બનાયા જાતા હૈ (લેપ્પકર્મ્મે) રંગ આદિ સે મિત્તિ આદિ પર લિખા જાતા હૈ (સેલે ય) પાષણ કે ઉપર અંકિત કિયા જાતા હૈ (દંતકર્મ્મે ય) હાથી દાંત પર સોદા જાતા હૈ । इन सब पदार्थों के ऊपर उकेरे गये उन २ आकारों को (पंचहिं वर्णोर्हि) पांच वर्णों से भरा जाकर बहुत ही सुन्दर रूप से आकर्षक बनाया जाता है । (अणोगसंठाणसंठियाई) भिन्न २ रूप में उन चित्रों को सजाया जाता है । इसी प्रकार (गंधिम-वेदिमपूरिमसंघाइमाणि य) माला की तरह गूँथ २ कर जो चित्र बनाये जाते हैं वे ग्रन्थिम, पुष्पगेंद की तरह जो वेष्टित करके चित्र बनाये जाते हैं वे वेष्टिम, किसी पदार्थ पर जो पुत्तलिकादि की तरह रंग से भरकर चित्र बन जाते हैं वे पूरिम, तथा कौड़ी आदि के परस्पर जोड़ने से कुक्कुट आदि के जैसा जो रूप बनाया जाता है वह संघातिम है । इन सब

ચિતરાય છે, “પોત્યેય” પુસ્તકોમાં છપાય છે. ચિત્તકર્મ્મેય” કાગળ આદિ પર ચિતરવામાં આવે છે, ગાટી આદિથી બનાવવામાં આવે છે, “લેપ્પકર્મ્મે” રંગ આદિથી દિવાલ આદિ પર આલેખાય છે, “સેલેય” પથ્થર પર કોતરાય છે, “દંતકર્મ્મેય” હાથીદાંત પર કોતરવામાં આવે છે, તે સઘળા પદાર્થો ઉપર અંકિત કરેલ તે આકારોને “પંચહિં વર્ણોર્હિ” પાંચ રંગો લગાડીને બહુજ સુંદર અને આકર્ષક બનાવાય છે. “અણેગસંઠાણસંઠિયાઈ” ભિન્ન ભિન્ન રીતે તેની સઘવટ કરાય છે. એ જ રીતે “ગંધિમવેદિમપૂરિમસંઘાઈમાણિ ય” માળાની જેમ ગૂંથી ગૂંથીને જે ચિત્રો બનાવવામાં આવે છે તે ગ્રંથિમ, પુષ્પના દડાની જેમ જે ચિત્ર વેષ્ટિત કરીને બનાવાય છે વેષ્ટિમ, કોઈ પદાર્થ પર પુતળી આદિની જેમ રંગથી ભરીને જે ચિત્ર બનાવાય છે તે પૂરિમ, તથા કોડી આદિને એક બીજામાં પસોવીને કૂકડા આદિ જેવો જે આધાર બનાવાય છે તે

दिस्वरूपम्, एपां द्वन्द्वः, तानि तथोक्तानि दृष्ट्वा, तथा—‘ बहुविधानि=अनेकप काराणि च=पुनः ‘ अहियं ’ अधिकम्—अर्थात् यथा स्यात्तथा ‘नयणमणसुहकराई’ नयनमनःसुखकराणि = नयनयोर्मनसश्च सुखकराणि=सुखोत्पादकानि ‘मल्लाई’ माल्यानि ‘माला’ इति भाषा प्रसिद्धानि तथा—‘ वणसंडे ’ वनपण्डान्=एकजातीयानामनेकजातीयानां च वृक्षाणां समूहान्, ‘ पव्वए य ’ पर्वतोश्च ‘ गोमा-गरनगराणि य ’ ग्रामाकरनगराणि च दृष्ट्वा, तथा—‘ सुदियपुक्खरिणी—वावी—दीहिय=गुंजालिय—सरसरपंतिय—सागर—विलपंतिय—खाइय—नई—सर—तलाग—वि-पिणो ’ क्षुद्रिका पुष्करिणी वापी दीर्घिका गुञ्जालिका सरः सरः पङ्क्तिका सागर—विलपङ्क्तिका—खातिका—नदी—सरस्वतागमनान्, तत्र—क्षुद्रिका=लघुजलाशयवि-शेषः, पुष्करिणी=कमलवती वर्तुलाकारा वापी=चतुष्कोणा, दीर्घिका=लम्बाकार-वापी, गुञ्जालिका=वक्राकारवापी, सरः सरः पङ्क्तिका=येषां मध्ये एकस्मात्तद्वा-गादपरस्मिंस्तडागे जलं समायाति, एतादृशजलाशयसमूहः सरसरः पङ्क्तिके-

को निहार कर, (देखकर) तथा (बहुविहाणि) अनेक प्रकार की (मल्लाई) मालाओं को कि जो (अहियं नयणमणसुहकराई) अधिक से अधिक रूप में नेत्र एवं मन को आह्लादकारक होती हों देखकर (वणसंडे) एक जातीय और अनेक जातीय वृक्षां के समूहों को (पव्वए य) पर्वतों को (गामागरणगराणि) ग्राम, आकर, नगरों को (सुदिय पुक्खरिणी—वावी—दीहिय—गुंजालिय—सरसर—पंतिय—सागर—विलपंतिय—खाइय—नई—सर—तलाग—विपिणो) क्षुद्रिका—लघु—जलाशय, पुष्करिणी—कमलों से युक्त गोल आकारवाली चावड़ी, वापी—चार कोनों वाली चावड़ी, दीर्घिका—लम्बे आकार वाली चावड़ी, गुञ्जालिका—वक्र आकारवाली चावड़ी, सरः सरः पंक्ति—एक तालाब से दूसरे तालाबों में जल जाने वाले तालाब के समूह, सागर—समुद्र विलपंक्ति—बिलोंके जैसे आकार वाले कूओं की,

संघातिम इडेवाय छे. ते पधाने जेऊने तथा “बहुविहाणि” अनेक प्रकारनी “मल्लाई” भाणाओ छे जे “अहियं नयणमणसुहकराई” आण अने मनने पधारेमां पधारे आनंददायक होय छे, तेभने जेऊने “वणसंडे” ओक जतना के अनेक जतना वृक्षना समूहोने “पव्वएय” पर्वतोने, “गामागरणगराणि” ग्राम, आकर, नगराओने “सुदिय-पुक्खरिणी-वावी-दीहिय-गुंजालिय सरसर-पंतिय-सागर-विलपंतिय-खाइय नई—सर—तलाग-विपिणो” क्षुद्रिका-नानुं जलाशय, पुष्करिणी-कमलोथी युक्त गोला-कारनी वाव, वापी-चार भुजावाणी वाव सरःसरःपङ्क्ति-ओक तणावमांथी भीज तणावोमां पाणी जतुं होय तेवां तणावोने समूह, सागर, विलपंक्ति-इरना

सुवर्शिनी टीका अ०५ सू०८ 'बभ्रुरिन्द्रियसंवर' नामक द्वितीय भावनानिरूपणम् १०५

त्युच्यते, सागरः=समुद्रः, विलपङ्क्तिः=विलानीव विलानि=कूपास्तेषां पङ्क्तिः
=कूपश्रेणिस्त्यर्थः, स्वातिका=परिखाः, नदी=प्रसिद्धा, सरः=स्वाभाविकस्तडामः,
तडामः=कृत्रिमः सरोवरः, वप्रः=धान्यक्षेत्राणि, एषामित्तरैरयोगद्वन्द्वः, तांस्त-
थोक्तान्, दृष्ट्वा, कीदृशानेतान् ? इत्याह-‘फुल्लुप्पलपउमपरिमंडियाभिरामे’ फुल्लो-
त्पलपन्नपरिमण्डिताभिरामान् तत्र फुल्लानि=विकासितानि यानि उत्पलानि=चन्द्र-
विकाशिकमलानि, पद्मानि=सूर्यविकाशिकमलानि च तैः परितः=समन्तान्मण्डिता
अतएव-अभिरामाः=मनोहरास्तांस्तथोक्तान्, पुनः कथम्भूतान् ? ‘अणेगसउण-
गणमिहणविचरिए’ अनेकशकुनगणमिधुनविचरितान्=अनेकानि-बहुविधानि यानि
शकुनगणमिधुनानि-पक्षिगणयुगलानि, विचरितानि=संचरितानि यत्र तान्, फुल्लो-
त्पलादिपदानि क्षुद्रिकादिवशान्तविशेषणानि । तथा-‘वरमंडव-विविह-भवण-
तोरण-चेइय-देवकुल-सभप्पवा-वसह-सुकयसयणासण-सीयरह-सगड-जाण-
जुग-संदणे’ वरमण्डपविविधभवनतोरण चैत्य देवकुलसभाप्रपावसयसुकृतशयना-
सनशिविकाराथशकटयानयुगस्यन्दनान्, तत्र-वरमण्डपाः=श्रेष्ठमण्डपाः, विविध-
भवनानि, तारणानि प्रसिद्धानि, चैत्यानि=उद्यानानि, देवकुलानि प्रसिद्धानि,
श्रेणि, स्वातिका-परिखाएं नदी-नदियाः, सर-सामान्यतालाव तडाम-
कृत्रिम सरोवर, वप्र-धान्य के खेत जो (फुल्लुप्पलपउमपरिमंडियाभि-
रामे) विकाशित-उत्पलों से, चंद्रविकाशिकमलों से सब और मंडित
हो रहे हों, और इसी कारण जिनसे मन में विशेष प्रफुल्लिता आती,
हो, तथा जो (अणेगसउणगणमिहणविचरिए) अनेक पक्षियों के युगल
जहां विचरण कर रहे हों इन सब को देखकर साधु इनमें आसक्ति न
करे । तथा (वरमंडवविविहभवणतोरणचेइयदेवकुलसभप्पवावसहसु-
कयसयणासणसीयरहसगडजाणजुगसंदणे) वरमंडप-श्रेष्ठमंडप, वि-
विधभवन, तोरण, चैत्य-उद्यान, देवकुल, सभा, प्रपा-पानीयशाला,

जैवां आकारेण कृवाञ्जेनी डार, आतिका-इरती आवेदी भाई ज्यो, नदीज्यो,
सर-सामान्य तज्यावो, तडाम-कृत्रिमः सरोवर, वप्र-धान्यता जेतरों जे “फुल्लु
प्पलपउमपरिमंडियाभिरामे” विकसित उत्पलपद्म-चंद्रविकाशी कमलपद्म ज्यो
तश्च धराधेवां डोय, अने जे न डारहे मनने वधारे प्रकृतिलत भनावतां
डोय, तथा “अणेगसउणगणमिहणविचरिए” अनेक पक्षीज्योनां युगल ज्यो
वियरतां डोय, ते ज्यु ज्येधने साधुज्ये तेथो आसक्ति करवी ज्येधने नही, तथा
“वरमंडव-विविहभवण-तोरण-चेइय-देवकुल-सभप्प-वावसह-सयणासण-सीयरह
सगडजाणजुगसंदणे” वरमंडप-श्रेष्ठमंडप, विविधभवन, तोरण, चैत्य, उद्यान,
देवकुल, सभा, प्रपा-परण, आवसथ-परिनाज्जोनां स्थान, आरी रीते सज्जव-

સમા=પ્રસિદ્ધા, પ્રપા=પાનીયશાલા, આવસથઃ=પરિવ્રાજકવસતિઃ, સુકૃતશયનાસનાનિ=સુકૃતાનિ=સુષ્ટુકૃતાનિ=વિદિતાનિ યાનિ શયનાનિ=શય્યાઃ, આસનાનિ=સિદ્ધાસનાનિ ચ તાનિ તથોક્તાનિ, શિવિકા='પાલકી'તિ પ્રસિદ્ધા, રથઃ=પ્રસિદ્ધઃ, શકટમ્='ગાડા'ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધમ્, યાનમ્=ગમનસાધનં રથાદિકમ્, યુગ્યમ્=અશ્વાદિવાહનમ્, સ્યન્દનો=રથવિશેષઃ. દામિતરેતરયોગદ્વન્દઃ, તાસ્તથોક્તમ્, તથા 'નરનારિગણેય' નરનારિગણાંશ્ચ=સ્ત્રીપુરુષસમુદાયોશ્ચ, દૃષ્ટ્વા, કથમ્ભૂતાનેતાન? ઇત્યાહ—'સોમપટિહ્રવદરિસખિજ્જે' સોમપતિરુપદર્શનીયાન્-સોમવત્ સૌમ્યતવા ચન્દ્રમ્ પતિરુપાઃ=સુન્દરાઃ, અવપ્રા-દર્શનીયાઃ=દ્રષ્ટું યોગ્યસ્તાન્ પુનઃ કથંભૂતાન? 'અલંકરિયવિભૂસિણ' અલંકૃતવિભૂષિતાન્=અલંકૃતાઃ=મુકુટાદિ-લક્ષ્ણરૈઃ વિભૂષિતાઃ વસ્ત્રાદિભિઃ સજ્જિતાઃ યે તાન્, પુનઃ કથંભૂતાન? 'પુવ્વકયતવપ્પભાવસોહગ્ગસંપડત્તે' પૂર્વકૃતતપઃ પ્રભાવસોભાવસંપ્રયુક્તાન્ પૂર્વકૃતતપઃ પ્રભાવેણ પ્રાપ્તં યસ્સૌભાગ્યં તેન સંપ્રયુક્તા યે તે તથા તાન્ દૃષ્ટ્વા, તથા-'નહ-નદ્દગ-જલ્લ-મલ્લમુદ્ધિપવેલંગ-કહગ-પવગ-લાસગ-આઈક્ષગ-લંઘ-મંઘ-તૂણ-હલ્લ-તુંબવીણિય-તાલાયર-પકરણાણિ' નદ નર્તક જલ્લમલ્લમોષ્ટિકવિદમ્બક-કથક-

આવસથ-પરિવ્રાજકોં કે સ્થાન, સુકૃત-અચ્છી તરહ સે સજાયે ગયે શયન, આસન, પાલકી, રથ; ગાડા, યાન-ગમન કે સાધનમ્ભૂત વાહન, યુગ્ય-અશ્વાદિકવાહન, સ્યંદન-રથવિશેષ, હન સવકો, તથા (નરનારિગણેય) નર ઓર નારી કે વૃન્દ કો ફિ જો (સોમપટિહ્રવદરિસખિજ્જે) ચન્દ્રમા કે જેવા સુન્દર આકાર વાલા હૈ ઓર હમી સે જો દર્શનીય બના હુઆ હૈં (અલંકરિયવિભૂસિણ) મુકુટ આદિ વિવિધ અલંકારોં સે एवं વસ્ત્રાદિકોં સે સુસજ્જિત હૈ, (પુવ્વકય તવપ્પભાવસોહગ્ગ સંપડત્તે) પૂર્વકૃત તપ કે પ્રભાવ સે પ્રાપ્ત સૌભાગ્ય સે જો યુક્ત હૈં હન સવ કો દેવકર કે તથા (નહ-નદ્દગ-જલ્લ-મુદ્ધિય-વેલંગ-કહગ-પવગ-લાસગ-આઈક્ષગ-લંઘ-મંઘ-તૂણ-હલ્લ-તુંબવીણિય-તાલાયર-પકરણાણિ)

ટવાળાં શયનસ્થાન, આસન, પાલખી, રથ. ગાડાં, યાન-મુસાફરીના સાધનરૂપ વાહન, યુગ્ય-અશ્વાદિ વાહન, સ્યંદન-ખાસ પ્રકારના રથ, એ બધાને તથા "નરનારિગણેય" નર અને નારીના સમૂહને કે જે "સોમપટિહ્રવદરિમ્ખિજ્જે" ચન્દ્રમા જેવાં સુંદર આકારવાળા છે અને તેથી જ જે બેવાં ગમે તેવાં છે, "અલંકરિયવિભૂસિણ" મુકુટ આદિ વિવિધ અલંકારો તથા વસ્ત્રોથી વિભૂષિત છે, "પુવ્વકયતવપ્પભાવસોહગ્ગસંપડત્તે" પૂર્વકૃત તપના પ્રભાવથી પ્રાપ્ત થયેલા સૌભાગ્યથી જેઓ યુક્ત છે, એ સૌને બોધીને તથા "નહ-નદ્દગ-જલ્લ-મલ્લ-મુદ્ધિય-વેલંગ-કહગ-પવગ-લાસગ-આઈક્ષગ-લંઘ-મંઘ-તૂણ-હલ્લ-તુંબવીણિય-તા

સુદર્શનો ટીકા અ.૧.સૂ.૧૮ 'ચતુરિન્દ્રિયતંત્ર'નામકદ્વિતીયભાવનાનિરૂપણમ્ ૧૦૭

પ્લવક-લાસકાચ્યાયક-લઙ્ઘ-મઘ્ઘ તૂણિક તુમ્થવીણિક તાલાચર પ્રકરણાણિ ચ, નટનર્તકાદિપદાનાં વ્યાખ્યાસ્યૈવપ્રથમભાવનાતોડગન્તવ્યાઃ, 'વહૂણિ' વહૂણિ-અનેકવિધાણિ 'સુકરણાણિ' સુકરણાણિ=શોભનક્રિયાયુક્તાણિ દૃષ્ટ્વા, નટનર્તકા-દીનાં વહૂવિધાત્ મનોહરવ્યાપારાન્ દૃષ્ટ્વેત્યર્થઃ, તેષુ તથા 'અણેસુ ય' અન્યેષુ ચૈતદ્વિન્નેષુ 'એવમાદ્દેસુ' એવમાદિકેષુ=એવંવિધેષુ 'મણુણમદ્દેસુ' મનોહ્રમદ્રકેષુ 'હ્રવેસુ' રૂપેષુ=વહુગ્રાંથવિષયેષુ 'સમણેણ' શ્રમણેન=સાધુના 'ન સઙ્ગિયવ્વં' ન સક્તવ્યમ્, ન રઙ્ગિયવ્વં ન રક્તવ્યમ્ 'જાવ' યાવત્-યાવત્કરણાત્ 'ન ગિઙ્ગિયવ્વં' ન ગર્થિતવ્યમ્ 'ન મુઙ્ગિયવ્વં ન મોહિતવ્યમ્, 'ન વિણિધાયમાવઙ્ગિયવ્વં' ન વિનિ-ધાતઆવત્તવ્યઃ તથા-'ન લુમિયવ્વં' ન લોમ્યવ્યમ્, 'ન હસિયવ્વં' ન તોષ્ટવ્યમ્,

નટ,-નર્તક, જલ્લ, મલ્લ, મૌષ્ટિક, બેલંચક, કથક, પ્લવક, લાસક, આચ્યાયિક, લંઘ, મંઘ, તૂણિક, તુમ્થવીણિક, તાલાચાર, इन सब के मनोहर व्यापारों को जो (वहूणि) अनेक प्रकार के होते हैं और (सुकराणि) शोभन क्रिया संपन्न रहा करते हैं उनको देख करके, तथा (अणेषु एवमाद्देषु ह्रवेषु मणुणमद्देषु) और भी जो इसी प्रकार के मनोह्रमद्रक रूप हों उन्हें देख करके (समणेण) साधु को (तेसु) उनमें (न सङ्गियव्वं) आसक्त नहीं बनना चाहिये। (न रङ्गियव्वं) राग नहीं करना चाहिये। यहां यावत् शब्द से (न गिङ्गियव्वं) गृद्धिभाव नहीं करना चाहिये-अर्थात्-उनमें ललचाना नहीं चाहिये। (न मुङ्गियव्वं) न मोह करना चाहिये, (न विणिधायं आवङ्गियव्वं) उनके लिये चारित्र का भंग न करे, (न लुमियव्वं) लोभ न करे, (न हसियव्वं) प्रसन्न मन नहीं होना चाहिये, (न हसियव्वं)

હાયર-પ્રકરણાણિ" નટ, નર્તક, જલ્લ, મૌષ્ટિક, બેલંચક, કથક, પ્લવક, લાસક આચ્યાયિક, લંઘ, મંઘ, તૂણિક, તુમ્થવીણિક, તાલાચાર, એ બધાનાં મનોહર વ્યાપારો કે જે "વહૂણિ" અનેક પ્રકારના હોય છે, અને "સુકરણિ" સુંદર ક્રિયા યુક્ત હોય છે, તેમને જોઈને તથા "અણેસુ એવમાદ્દેસુ હ્રવેસુ મણુણમદ્દેસુ" એ જ પ્રકારનાં બીલાં પણ જે મનોહ્ર ભદ્રરૂપ હોય તેમને જોઈને "સમણેણ" સાધુએ "તેસુ" તેમનામાં "ન સઙ્ગિયવ્વં" આસક્ત થવું જોઈએ નહીં, "ન રઙ્ગિયવ્વં" રાગ કરવો જોઈએ નહીં, "ન ગિઙ્ગિયવ્વં" તેમાં લલચાવું જોઈએ નહીં, "ન મુઙ્ગિયવ્વં" તેને માટે મોહ કરવો જોઈએ નહીં, "ન વિણિધાયં આવઙ્ગિયવ્વં" તેને માટે ચારિત્રનો ભંગ ન કરવો જોઈએ "ન લુમિયવ્વં" લોભ કરવો જોઈએ નહીં, "ન હસિયવ્વં"

‘न हसियव्वं’ न हसितव्यम्, तथा-श्रमणस्तत्र ‘न सइं च मइं च’ न स्पृति च मतिं च ‘कुज्जा’ कुर्यात् । एतत्सर्वमस्यैव प्रथमभावनायां व्याख्यातम् । ‘पुणरवि’ पुनरप्युच्यते श्रमणः ‘चक्खुइंदियण’ चक्षुरिन्द्रियेण ‘अमणुणपावगाइं’ अमनोज्ञपापकानि ‘रूवाणि’ रूपाणि ‘पासिय’ दृष्ट्वा ‘किं ते’ कानि तानि-कथम्भूतानि तानि रूपाणि ? इत्याह-‘गंडि-कोटि-कुणि-उदरि-कच्छुल्ल पइल्ल-कुज्ज-पंगुल-वामण-अंधिल्लग-एगचक्खु-विणिहय सपिसल्लग-वाहिरोगपीलियं’ गण्डिकुष्ठिकुण्डरिक्कच्छुल्लश्लीपदकुज्ज पङ्गुलवामनान्धिल्लकैकचक्षुरिनिहत सपिशा-चक्कव्याधिरोगपीडितं-तत्र-गण्डो-गण्डो=हि कण्ठरोगविशेषः, स च वातपित्त श्लेष्मसन्निपातैर्जायमानत्वाच्चतुर्विधः, स यस्यास्ति स गण्डी, गण्डमालवानित्यर्थः, कुष्ठी=कुष्ठमस्यास्तीति कुष्ठी-कुष्ठरोगवान्, कुष्ठमष्टादशविधम्, तत्र महाकु-

आश्चर्य से हंसना नहीं चाहिये, तथा (न सइं च मइं च तत्थकुज्जा) और न उनकी याद करना चाहिये और न उनमें अपनी बुद्धि को ही लगाना चाहिये । (पुणरवि) इसी तरह (अमणुणपावगाइं) अमनोज्ञ अशुभ (रूवाइं) रूपों को (चक्खुइंदियण) चक्षु इन्द्रिय से (पासिय) देखकर साधु को उनमें रोष-द्वेष नहीं करना चाहिये । (किं ते !) वे अमनोज्ञ अशुभ रूप कौन २ से हैं इस प्रकार की शंका का समाधान करते हुए सूत्रकार अब उन्हें इन निम्नलिखित पदों द्वारा प्रकाशित करते हैं- (गंडि-कोटि-कुणि-उदरि कच्छुल्ल-पइल्ल-कुज्ज-पंगुल-वामण-अंधिल्लग-एगचक्खु-विणिहय सपिसल्लग-वाही-रोग-पीलियं) गंडी-गंडमाल-रोगवाले, कुष्ठी-कुष्ठरोगवाले, कुणि-कुष्ठरोगी, उदररोगी, कच्छुल्लरोगी, श्लीपदरोगी, कुज्ज-कुवडा, पंगुल,

तेनाथी मनभां आनहं पाभवे नही, “ न हसियव्वं ” तेने जेधने आश्रयंथी हसवुं न जेधये, तथा “ न सइं च मइं च तत्थकुज्जा ” तेने याह करवुं जेधये नही के तेमां ध्यान परोववुं जेधये नही.

“ पुणरवि ” जे ७ प्रमाणे “ अमणुणपावगाइं ” अमनोज्ञ अशुभ “ रूवाइं ” जेधने “ चक्खुइंदियण ” अशुभिन्द्रियथी “ पासिय ” जेधने तेना प्रत्ये रोष-द्वेष करवे जेधये नही, “ किं ते ? ” ते अशुभ ३५ कथां कथां छे ते शंकातुं समाधान करवाने माटे सूत्रकार नीचेना पद्ये द्वारा तेमने जेहेर करे छे—“ गंडि-कोटि-कुणि-उदरि-कच्छुल्ल-पइल्ल-कुज्ज-पंगुल-वामण-अंधिल्लग-एगचक्खु-विणिहय-सपिसल्लग-वाहिरोग-पीलियं ” गंडी-गंडमालना रोगवाणा, कुष्ठरोगी, कुष्ठि-कुष्ठरोगवाणा, उदररोगी, कच्छुल्लरोगी, श्लीपदरोगी, कुवडा,

સુશ્રિનીટીકા ૪૦૫ સૂ૦૮ 'અધુરિન્દ્રિયસંવર'નામકત્રિતીયભાવનાનિરૂપણમ્ ૧૦૧

પ્લસ્ય સપ્તમેદાઃ । તથથા અરુણ-દુમ્બર-સ્પર્શજિહ્વ-કરકપાલ-કાકન-પૌંડરીક દ્વગ્નિ । ઇતિ, મહત્ત્વં ચૈવામસાધ્યત્વાત્ । સામાન્યકુષ્ઠસ્યૈકાદશ મેદાઃ, સ્થૂલામારુક ૧ મહાકુષ્ઠ ૨ રકુષ્ઠ ૩ ચર્મદલ ૪ વિસર્પ ૫ પરીસર્પ ૬ વિચર્ચિકા ૭ સિધ્મ ૮ કટિમ ૯ પામા ૧૦ શતારુક ૧૧ સંજ્ઞકાઃ । એવં સર્વાણિ કુષ્ઠાન્યષ્ટાદશ । યદ્યપિ સર્વ કુષ્ઠં સન્નિપાતજમેવ જાયતે, તથાપિ-વાતાદિદોષોત્કટતયા વામન, અંધિલુગ-જન્માન્ધ, ઇકચક્ષુ-કાના, વિનિહતચક્ષુ-જન્મ કે બાદ હોને વાલા અંધા, સપિસલ્લક-સપિશાચ-ભૂતાદિ આવેશ વાલા, અથવા સર્પિશલ્યક-ઘસીતે હુણે ચલને વાલા હૃદયરોગી, વ્યાધિ-પીડિત, ઇન સર્વ કો દેવકર ઇનમેં દ્વેષ તથા ઘૃણા નહીં કરનીં ચાહિયે ।

પૂર્વોક્ત પદોં કા અલગ-અલગ અર્થે ઇસ પ્રકાર હૈં-ગંડી-વાતપિત્ત ઔર સન્નિપાત-વાતાદિ ત્રિદોષ મિશ્રિત વિકાર સે ઉત્પન્ન હોને કે કારણ ચાર પ્રકાર કે કંઠ રોગવાલા, કુષ્ઠી-કુષ્ઠ અઠારહ પ્રકાર કા હોતા હૈ, જિસમેં સાત પ્રકાર કે મહાકુષ્ઠ હોતે હૈં ઔર મ્યારહ પ્રકાર કે સામાન્યકુષ્ઠ હોતે હૈં । (૧) અરુણ ૨ દુમ્બર ૩ સ્પર્શજિહ્વ ૪ કરકપાલ ૫ કાકન ૬ પૌંડરીક ઔર ૭ દ્વગ્નિ । એ અસાધ્ય હોને સે મહાકુષ્ઠ માને ગયે હૈં । સામાન્ય કુષ્ઠ મ્યારહ પ્રકારકે એ હૈં-૧ સ્થૂલામારુક ૨ મહાકુષ્ઠ ૩ રકુષ્ઠ ૪ ચર્મદલ ૫ વિસર્પ ૬ પરિસર્પ ૭ વિચર્ચિકા ૮ સિધ્મ ૯ કિટિમ ૧૦ પામા શતારુક ૧૧ । યદ્યપિ સર્વ હી કુષ્ઠ સન્નિપાત સે હી ઉત્પન્ન હોતે હૈં તથાપિ વાતાદિક દોષોં કી ઉત્કટતા સે ઇસમેં મેદ માના ગયા

લૂલા, વામન, જન્માન્ધ, કાણીયા, જન્મ પછી આંધળા બનેલા, સપિસલ્લક-સપિશાચ-ભૂતાદિ વળગાડવાળા, અથવા સર્પિશલ્યક-ઘસાડતા બાલના હૃદયરોગી, વ્યાધિપીડિત અને રોગ પીડિત. એ બધાને જોઇને તેમના પ્રત્યે દ્વેષ અથવા ઘૃણા કરવી જોઇએ નહીં. પૂર્વોક્ત પદોનો અલગ અલગ અર્થ આ પ્રમાણે છે—“ગંડી”—વાત પિત્ત અને સન્નિપાત-વાતાદિ ત્રિદોષ મિશ્રિત વિકારથી ઉત્પન્ન થવાને કારણે ચાર પ્રકારના કંઠરોગવાળા, “કુષ્ઠી”—કુષ્ઠ અઠાર પ્રકારના હોય છે, જેમાં સાત પ્રકારનાં મહાકુષ્ઠ હોય છે અને અગિયાર પ્રકારના સામાન્ય કુષ્ઠ હોય છે. (૧) અરુણ, (૨) દુમ્બર, (૩) સ્પર્શજિહ્વ, (૪) કરકપાલ, (૫) કાકન, (૬) પૌંડરીક અને (૭) દ્વગ્નિ એ સાતે અસાધ્ય હોવાથી મહાકુષ્ઠ ગણાય છે. અગિયાર પ્રકારના સામાન્યકુષ્ઠ આ પ્રમાણે છે—(૧) સ્થૂલામારુક, (૨) મહાકુષ્ઠ, (૩) એક કુષ્ઠ(૪) ચર્મદલ, (૫) વિસર્પ (૬) પરીસર્પ (૭) વિચર્ચિકા, (૮) સિધ્મ(૯) કિટિમ (૧૦) પામા, (૧૧) શતારુક. એ કે બધાં જ કુષ્ઠ સન્નિપાતથી જ ઉત્પન્ન થાય છે. છતાં પણ વાતાદિક દોષોની પ્રવળતાને

ભેદભાગ્મવતીતિ વિજ્ઞેયમ્ । તથા-કુણિઃ=કુષ્ટઃ, અયં હિ ગર્ભાધાનાદિ દોષાદ્ દ્વસ્વે-
કપાદો ન્યુનૈકપાણિર્વા ભવતિ । તથા - ઉદરી=ઉદરરોગવાન, ઉદરરોગા અષ્ટ-
પ્રકારાઃ તદુક્તમ્—

પૃથક્ સમસ્તૈરપિવાનિલૌઘૈઃ પ્લીહોદરં વદ્વગુદં તથૈવ ।

આગન્તુકં વેસરમષ્ટમં તુ જલોદરં ચેતિ ભવન્તિ તાનિ ” ॥ ૧૧ ॥

પ્રત્યેક જલોદરમસાધ્ય શેષાણિ તુ સાધ્યાનિ । તથા-કચ્છુલુઃ=કષ્ટહૃતિમાન્ ,
શ્લીપદઃ=શ્લીપદરોગયુક્તઃ, શ્લીપદલક્ષણમેવદુક્તમ્—“ પ્રકુપિતા વાતપિત્તશ્લેષ્મા-
ણોઽધોઽધઃ પ્રવજ્ઞા વક્ષસ્થલોરુજઙ્ગા-સ્વવતિષ્ઠમાનાઃ કાલાન્તરે પાદમાશ્રિત્ય શનૈઃ
શનૈઃ શોથમુપજનયન્તિ ” તદેવશ્લીપદમુચ્યતે । અન્યદપ્યુક્તમ્—

હૈં હન અઠારહ પ્રકાર કે કુષ્ટરોગવાલા, કુણી-કુષ્ટરોગી (૨) યહ
રોગ ગર્ભાધાનાદિ કે દોષ સે હોતા હૈં । હસમેં એક પૈર છોટા હો જાતા
હૈં યા એક હાથ છોટા હો જાતા હૈં । ઉદરરોગી-ઉદરરોગ આઠ પ્રકાર
કા હોતા હૈં, કહા ખી હૈં—

“ પૃથક્ ૧ સમસ્તૈ ૨ રપિ વાનિલૌઘૈઃ ૩ પ્લીહોદરં ૪ વદ્વગુદં ૫
તથૈવ । આગન્તુકં ૬ વેસર ૭-મષ્ટમં તુ જલોદરં ૮ ચેતિ ભવન્તિ
તાનિ ॥ ૧ ॥ ”

પૃથક્ ૧, સમસ્ત ૨, અનિલૌઘ ૩ પ્લીહોદર ૪ વદ્વગુદ ૫ આગન્તુક
૬ વેસર ૭ જલોદર ૮ ઉદરરોગ કે યે ૮ પ્રકાર હૈં । હનમેં જલોદર રોગ
અસાધ્ય હૈં, યાકી સબ સાધ્ય હૈં । કચ્છુલ-ત્વુજગ્રી રોગવાલા, શ્લીપ-
દરોગી-હસ રોગ કે લક્ષણ હસ પ્રકાર કહે હૈં—

“ કુપિ તાવાતપિત્તશ્લેષ્માણોઽધોઽધઃ પ્રવજ્ઞા વક્ષસ્થલોરુજઙ્ગા
સ્વવતિષ્ઠમાનાઃ કાલાન્તરે પાદમાશ્રિત્ય શનૈઃ શનૈઃ શોથમુપજનયન્તિ ॥ ”

કારણે તેમાં ભેદ માનવામાં આવ્યા છે. આ રીતે અઠાર પ્રકારના કુષ્ટરોગી,
કુણિ-કુષ્ટરોગી-આ રોગ ગર્ભાધાનાદિ દોષથી થાય છે. તે રોગમાં એક હાથ
કે એક પગ ટૂંકો થઈ બચ છે. ઉદરરોગી-ઉદરરોગ આઠ પ્રકારના હોય છે કહું પણ છે કે—

“ પૃથક્ ૧ સમસ્તૈ ૨ રપિ વાનિલૌઘૈઃ ૩ પ્લીહોદરં ૪ વદ્વગુદં ૫ તથૈવ ।

આગન્તુકં ૬ વેસર ૭ મષ્ટમં તુ જલોદરં ૮ ચેતિ ભવન્તિ તાનિ ॥ ૧ ॥ ”

(૧) પૃથક્, (૨) સમસ્ત, (૩) અનિલૌઘ, (૪) પ્લીહોદર (૫) વદ્વગુદ
(૬) આગન્તુક, (૭) વેસર અને (૮) જલોદર, એ આઠ પ્રકારના ઉદરરોગ
હોય છે. તેમ જલોદર અસાધ્ય રોગ છે, બાકીના બધા સાધ્ય છે “ કચ્છુલ ”
હાદર, ખરખરુ, ખસ, વગેરે યુજ્જીરોગો, શ્લીપદરોગી-(હાથીપગાનો રોગી)
આ રોગના લક્ષણો નીચે પ્રમાણે કહેલ છે—

“ કુપિતા વાતપિત્તશ્લેષ્માણોઽધોઽધઃ પ્રવજ્ઞા વક્ષસ્થલોરુજઙ્ગાસ્વવતિષ્ઠ-
માના કાલાન્તરે પાદમાશ્રિત્ય શનૈઃ શનૈઃ શોથમુપજનયન્તિ ”

સુવર્ણીની ટીકા અવળ સૂચક 'વધુરિત્થિયસંચર'નામકદ્વિતીયાવાચનાનિરૂપણમ્ ૧૧૧

‘પુરાણોદકભૂયિષ્ઠાઃ સર્વર્તુષુ ચ શીતલાઃ ।

યે દેશાસ્તેષુ જાયન્તે શ્લીપદાનિ વિશેષતઃ ॥ ૧ ॥’

પાદયો હૃસ્તયોર્વાઽપિ જાયતે શ્લીપદં નૃણામ્ ।

કર્ણોઽઘ્નનાસાસ્વપિ ચ, ક્વચિદિચ્છન્તિ તદ્વિદઃ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

હવં ચ ‘ફીલ પાંચ’ હાથી પગા’ ઇત્યાદિ નામભિર્લોકે પ્રસિદ્ધમ્ । તથા—
કુઞ્જઃ=નાહુલઃ કુવડા’ ઇતિ માપાપ્રસિદ્ધઃ । પક્કુલઃ=પક્કુઃ=ગમનાસમર્થઃ, વામનઃ=
સર્વઃ—હસ્તશરીર ઇત્યર્થઃ । एते કુઞ્જશમનાદયો માતાપિતૃશુકશોણિતદોષેણ
ભવન્તિ । તદુક્તમ્—

યહ રોગ પ્રક્રુપિત હોકર જબ વાત પિત્ત ઓર કફ નીચે નીચે
શારીરિક ભાગોં મેં પહુંચ જાતે હૈ ઓર વક્ષસ્થલ, ઉર, જંઘા, હનમેં
પ્રવેશ કર જાતે હૈં તથ વે કાલાન્તર મેં પૈર મેં પહુંચ કર ધીરે ૨ ઉસમેં
શોથ-સૂજન કો ઉત્પન્ન કર દેતે હૈં હસી કા નામ શ્લીપદ રોગ હૈ, હસ
રોગ કા નામ ફિલપાંચ હાથીપગા આદિ સીં હૈં । હસકે ઓર સી
લક્ષણ કહે હૈં—

“પુરાણોદકભૂયિષ્ઠાઃ, સર્વર્તુષુ ચ શીતલાઃ ।

યેદેશાસ્તેષુ જાયન્તે, શ્લીપદાનિ વિશેષતઃ ॥ ૧ ॥

પાદયો હૃસ્તયોર્વાઽપિ, જાયતેશ્લીપદનૃણામ્ ।

કર્ણોઽઘ્નનાસાસ્વપિ ચ, ક્વચિદિચ્છન્તિ તદ્વિદઃ ॥ ૨ ॥

યહ રોગ ડન દેશો મેં વિશેષ કર હોતા હૈ જિનદેશોં મેં પુરાના
પાનિ અધિક રૂપ મેં ભરા રહતા હૈ તથા જો સર્વ ઋતુઓં મેં શીતલ રહ્યા
કરતે હૈં, કિનત્રેક યહ સીં કહતે હૈ કિ યહ રોગ હાથ, પૈર, કાન,

બ્યારે વાત, પિત્ત અને કફ પ્રક્રુપિત થઈ મેં શરીરનાં નીચેના ભાગોમાં
પહોંચી બધા છે અને વક્ષસ્થળ, ઉર, જંઘા આદિમાં પ્રવેશ કરે છે ત્યારે
સમય જતાં પગમાં પહોંચીને ધીમે ધીમે તેમાં સોને ઉત્પન્ન કરે છે. તે રોગનું
નામ શ્લીપદરોગ છે. આ રોગનાં બીજા નામો ફિલપગા હાથીપગા આદિ
પણ છે. તેનાં બીજાં લક્ષણો પણ કહેલ છે—

“પુરાણોદકભૂયિષ્ઠાઃ, સર્વર્તુષુ ચ શીતલાઃ

યેદેશાસ્તેષુ જાયન્તે, શ્લીપદાનિ વિશેષતઃ ॥ ૧ ॥

પાદયો હૃસ્તયોર્વાઽપિ જાયતે શ્લીપદં નૃણામ્ ।

કર્ણોઽઘ્નનાસાસ્વપિ ચ ક્વચિદિચ્છન્તિ તદ્વિદઃ ॥ ૨ ॥

જે દેશોમાં પ્રાચીન પાણી વિશેષ પ્રમાણમાં ભરાઈ રહે છે તે દેશોમાં
આ રોગ વધુ પ્રમાણમાં થાય છે. વળી જે પ્રદેશ બધી ઋતુઓમાં શીતળ
રહે છે ત્યાં પણ આ રોગ વધારે પ્રમાણમાં થાય છે. કેટલાક એમ પણ કહે

ગર્ભે વાતપ્રકોપેણ, દોહદે વાગ્યમાનિતે ।

ભવેત્કુઞ્જઃ કુણિઃ પશુર્મુકો મન્મન એવ ચ ॥ ૧ ॥ શ્લોક ।

તથા—અંધિલ્લઙ્કઃ=જાત્યન્ધઃ, એકચક્ષુઃ=કાણઃ, એતદ્ દોષદ્વયં ચ ગર્ભગતસ્ય જાતસ્ય ચાપિ ભવતિ । ગર્ભગતો યથૈતદ્દોષદ્વયમાગ્મ્યમ્ભવતિ, તદેવ વિજ્ઞાતવ્યમ્—યદા હિ ગર્ભસ્થજીવસ્ય નેત્રદ્વયં તેજો ન પ્રતિપદ્યતે તદા સ ગર્ભસ્થો જાત્યન્ધો ભવતિ । યદા ચૈકં નેત્રં પ્રતિપદ્યતે નાપરં, તદા સ કાણો ભવતિ । તદેવ ઓઠ ઓર નાસિકા મેં મી હોતા હૈ । કુઞ્જ પંશુ ઓર વામન, યે માતા પિતા કે શુક શોણિત કે દોષ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈ, કહા મી હૈ—

“ ગર્ભે વાતપ્રકોપેણ, દોહદે વાગ્યમાનિતે ।

ભવેત્કુઞ્જઃ કુણિઃ પશુર્મુકો મન્મન એવ ચ ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—ગર્ભ મેં વાત કે પ્રકોપ હોને સે તથા દોહદ—ગર્ભિણી મનોરથ કી તર્ફ ધ્યાન નહોં દેને સે અર્થાત્ ઉસકા અપમાન કરને સે કુઞ્જક, કુણિ—કુણ્ઠ—પશુ ઓર લૂલે તથા તુનલાને વાલે બાલક ઉત્પન્ન હોતે હૈ । અંધિલ જન્માન્ધ, કાના યે દોનોં પ્રકાર કે વ્યક્તિ જબ ગર્ભ અવસ્થા સંપન્ન હોતે હૈ તબ ઉસ સમય યદિ દોનોં નેત્ર હનમેં સે કિસી એક કે તેજ કો પ્રાપ્ત નહોં કર પાતે હૈ તો વહ ગર્ભ જન્માન્ધ હોકર ઉત્પન્ન હોતા હૈ—યદિ એક હી નેત્ર તેજ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ દુસરા નહોં કર પાતા તો વહ ઉસ સમય કાના ઉત્પન્ન હોતા હૈ । વહી તેજ યદિ રક્તાનુગત હો જાતા હૈ તો શિશુ રક્તાક્ષ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, પિત્તાનુગત હોના હૈ તો શિશુ પિત્તાક્ષ હોતા હૈ ઓર યદિ શ્લેષ્માનુગત હોના

છે કે આ રોગ હાથ, પશુ, કાન, હોડ અને નાકમાં પશુ થાય છે. કુઞ્જ—પાંગળાપશુ અને વામનતા માતાપિતાના શુક તથા રક્તાનુદોષથી થાય છે. કહું પશુ છે.

“ ગર્ભે વાતપ્રકોપેણ, દોહદે વાગ્યમાનિતે ।

ભવેત્કુઞ્જઃ કુણિઃ પશુર્મુકો મન્મન એવ ચ ॥ ૧ ॥ ”

એટલે કે ગર્ભમાં વાયુનો પ્રકોપ થવાથી તથા ગર્ભિણીનો દોહદ—મનોરથ પૂરે નહીં કરવાથી, તેના દોહદની અવગણના કરવાથી કુબડા, કુણિ—કુપટ, ક્ષોભ, મૂંગા અથવા તોતડો બાળક જન્મે છે. અંધિલ—જન્માંધ, કાણુ, એ એ બંને પ્રકારનાં બાળકો બન્ધારે ગર્ભમાં હોય ત્યાં જો બંને આંખો તેજ પ્રાપ્ત કરી લેતી નથી તો તે બાળક જન્મથી જ અંધ પેદા થાય છે. જો એક જ આંખ તેજ પ્રાપ્ત કરી લે છે પણ બીજી આંખ તેજ પ્રાપ્ત કરી લેતી નથી તો તે જન્મથી જ કાણુ હોય છે. એ જ તેજ જો રક્તાનુગત થઈ જાય તો બાળક રક્તાક્ષ—લાલ નેત્રવાળું થાય છે, પિત્તાનુગત થઈ જાય તો બાળક પિત્તાક્ષ પીળી આંખવાળો જન્મે તે, અને જો શ્લેષ્માનુગત થાય તો તે શુકલાક્ષ પેદા

સુદર્શિની ટીકા અ૦૫ સૂ૦૮ 'ચક્ષુરિન્દ્રિયસંવર'નામકદ્વિતીયભાવનાનિરૂપણમ્ ૧૧૩

તેજો યદિ રક્તાનુગતં પિત્તાનુગતં શ્લેષ્માનુગતં ચ ભવતિ, તદા જાતકઃ ક્રમેણ રક્તાક્ષઃ પિત્તાક્ષઃ શુક્લાક્ષઃ ભવતિ । તથા—વિનિહતઃ=વિનિહતચક્ષુષ્ક इत्यर्थः; उत्पन्नयन्तरं यस्य नेत्रद्वयं नष्टं स विनिहत उच्यते । तथा 'सपिप्तल्लग' सपिप्ताचकः = पिप्ताचगृहीत इत्यर्थः । अथवा—सर्पिशल्यकः, इतिच्छाया । तत्र—सर्पी—सर्पतीति सर्पी, सर्पणशील इत्यर्थः । अयं हि पीठे समुगचिश्य तत् जङ्घायोः कट्यां च दृढं बद्ध्वा हस्तयोः पादुके आदाय, तदाश्रयणेन सर्पति= सरति, अत एवायं सर्पीत्युच्यते । अयं क्लિप्त गर्भरોषात्કર્મદોषाच्च भवति । शल्यकः=हृदयशलयादि रोगान् । उभयोः कर्मधारयः । तथा—व्याधिरोगपीडितः= व्याधिना—चिरस्थायिपीडया, रोगेण—सद्योघातिपीडया च पीडितो यः स तथोक्तः एषां समाहारद्वन्द्वस्तथोक्तम्, तथा—' विगयाणि य मयकलेवराणि ' विकृतानि च मृतकलेवराणि तथा—' सक्रिमिणकुट्टियं च ' सक્રिमિકुचितं च—सह कृमिभिः, है तो वह शुक्लाक्ष उत्पन्न होता है । विनिहत—विनिहतचक्षु उत्पत्ति के बाद जिसके नेत्र फूट जाते हैं वह विनिहतचक्षुक कहलाता है ऐसे प्राणी सपिप्तल्लग—पिप्ताचगृहीत अथवा सर्पिशल्यक—सर्पी—पीठ पर बैठ कर जो उसे दोनों जंघाओं से कटि पर मजबूती के साथ बांधकर और दोनों में दो काष्ठ आदि की पादुकाओं को लेकर उसके सहारे से सरकता है उसका नाम सर्पी है ऐसे सरकने वाले व्यक्ति को कि जो गर्भरોष से और अपने कर्म के दोष से—अशुभ कर्म के उदय से उत्पन्न होता है, ऐसा शल्यक—हृदय शल्यादि रोगवाला, व्याधिरोग पीडित—व्याधिरोग से पीडित प्राणी, अर्थात्—चिरस्थायी पीडारूप व्याधिसे तथा सद्योघाति रोगरूप पीडा से जो कष्ट पा रहा है ऐसे दुःखित जीव, इन सब को देख कर इनमें द्वेष तथा घृणा नहीं करनी चाहिये । (विगयाणिय मयकलेवराणि) विकृत हुए मृतक कलेवरों को, (सक्रिमिण

થાય છે. વિનિહત—વિનિહતચક્ષુ—જન્મ પછી જેની આંખો ફૂટી જાય છે તે વિનિહતચક્ષુ કહેવાય છે. સપિપ્તલ્લગ—પિપ્તાચગૃહીત અથવા સર્પિશલ્યક—સર્પી—પીઠપર બેસીને અથવા બન્ને લાંબાને કટિ પર મજબૂત રીતે બાંધીને અને બંને હાથનાં બે લાકડા આદિની થોડી લાંબને તેની મદદથી જે જમીનપર સરકે છે તેને સર્પિ કહે છે. એ રીતે સરકનાર વ્યક્તિ કે જે ગલદોષથી—અશુભ કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થાયછે, “શલ્યક”—હૃદયશલ્ય આદિ રોગવાળા, વ્યાધિ રોગપીડિતવ્યાધિ રોગથી પીડાતાં પ્રાણી એટલે કે દીર્ઘકાળની આલ્યા આવતા પીડાક્રમ વ્યાધિથી તથા હંમેશ રોગક્રમ પીડાથી પીડાતા દુઃખી જીવો એ બધાને બોધે તે મતના પ્રત્યે દ્રેષ કે ઘૃણા કરવી બોધાએ નહીં. “વિગયાણિય મયકલેવરાણિ” વિકૃત થયેલ મૃત શરી-

कुथितो दुर्गन्धयुक्तो यः स तथोक्तस्तै 'द्व्वरासि' 'द्रव्यराशि-पुरीषादिद्रव्यसमूहं च दृष्ट्वा 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु=एवं प्रकारेषु 'अमणुण्णपावणेषु' अमनोज्ञपाव-केषु, तथा-एभ्यः 'अन्नेसु' अन्येषु च 'तेसु' तेषु अमनोज्ञपावकेषु समुपस्थितेषु 'समणेण' श्रमणेन-साधुना 'न रुसियव्वं' न रोष्टव्यम्, 'जाव' यावत्पदान् 'न हीलियव्वं', न निन्दितव्यम्, न खिसितव्यम्, न छेत्तव्यम्, न भेत्तव्यम् न हन्तव्यम्, इति । पट्पदानि संग्राह्याणि । तथा-श्रमणेन, दुर्गुणवत्तियावि 'जुगुप्सावृत्तिकाऽपि 'न 'लब्भा' लभ्या 'उप्पाएउं' उत्पादयितुम् । एवम्=अ-

कुहियं च द्व्वरासि) कृमिसहित सड़े हुए दुर्गन्धित पदार्थ को और पुरीष आदि द्रव्य समूह को देख कर के इनमें तथा (अन्नेसु य एवमाइएसु) इनसे भिन्न और जो इसी तरह के (अमणुण्णपावणेषु तेसु) अमनोज्ञ अशुभ पदार्थ समक्ष उपस्थित हो उनके ऊपर (समणेण) साधुको (न रुसियव्वं) रोष नहीं करना चाहिये । यावत् पद से (न हीलियव्वं) अवज्ञा नहीं करनी चाहिये, उनकी (न निन्दियव्वं) निंदा नहीं करना चाहिये, (न खिसियव्वं) उनकी दूसरे के सामने निंदा नहीं करनी चाहिये । इसी तरह (न छिंदियव्वं) अमनोज्ञरूप आकृति का छेदन नहीं करना चाहिये । (न भिंदियव्वं) न भेदन करना चाहिये । (न वहेयव्वं) न अनिष्ट रूपवाले व्यक्तिका वध करना चाहिये । इसी प्रकार से इन पदार्थों के ऊपर साधु को (न दुर्गुणा वत्तियावि लब्भा उप्पाएउं) जुगुप्सावृत्ति भी उत्पन्न करना उचित नहीं है । (एवं) इस

शेने “सकिमिणकुहियं च द्व्वरासिं” कृमिसहित सड़ता दुर्गन्ध युक्त पदार्थोंने अने पुरीष आदि द्रव्य समूहने जोधने तेमां तथा “अन्नेसुय एवमाइएसु” ओ उपशंत ओ न प्रकारना पीअ “अमणुण्णपावणेषु तेसु” अभनोज्ञ, अशुभ पदार्थ पासे भोजूद होय तेमना पर “समणेणं” साधुओ “न रुसियव्वं” रोष न करयो जोधओ, “न हीलियव्वं” तेनी अवज्ञा न करयी जोधओ, “न निंदियव्वं” तेमनी निंदा न करयी जोधओ; “न खिसियव्वं” पीअनी आगण निंदा न करयी जोधओ, ओ न प्रमाओ “न छिंदियव्वं” अभनोज्ञ देभावनी वस्तुतुं छेदत करववुं नही, “न भिंदियव्वं” भेदन करववुं नही, “न वहेयव्वं” अनिष्ट रूपवाणी व्यक्तिते वध करववो जोधओ नही. ओ न प्रमाओ ओ पदार्थों प्रत्ये साधुओ “न दुर्गुणा-वत्तिया वि लब्भा उप्पाएउं” जुगुप्सा वृत्ति पणु राखयी ते थोअ नथी. “एवं” आ दीते “चक्खुइंदिय

સુદર્શિની ટીકા અ૦૫ સૂ૦૮ 'ચક્ષુરિન્દ્રિયસંવર'નામકદ્વિતીયભાવનાનિરૂપણમ્૧૧૫

નેત્ર પ્રકારે 'ચક્ષુરિન્દ્રિયભાવનાભાવિઓ' ચક્ષુરિન્દ્રિયભાવનાભાવિઓ 'મન્દ' ભવતિ 'અંતરપ્પા' અન્તરાત્મા=જીવઃ। તત્તથ 'મણુળામણુણસુન્નિદુન્નિરાગદોસે' મનોજ્ઞામનોજ્ઞસુરભિદુરભિરાગદ્રેષે, 'પણિહિયપ્પા' પળિહિતાત્મા 'સાહુ' સાધુઃ 'મળવયળકાયગુત્તે' મનોવચનકાયગુત્તઃ, 'સંવુડે' સંવૃતઃ 'પળિહિંદિંદિ' પળિ-હિતેન્દ્રિયો 'ધમ્મે' ધર્મે 'ચરેજ્જ' ચરેત્। ઇવાં પદાનાં વ્યાખ્યાસ્યેય પ્રથમ-ભાવનાયાં દ્રષ્ટવ્યા।।। સૂ૦ ૮ ॥

પ્રકાર સે (ચક્ષુરિન્દ્રિય ભાવનાભાવિઓ અન્તરપ્પા) જવ ચક્ષુરિન્દ્રિય કી ભાવના સે ભાવિત અંતરાત્મા હોતા હૈ તથ વહ (મણુળામણુણ-સુન્નિદુન્નિરાગદોસે પળિહિયપ્પા) મનોજ્ઞરૂપ ચક્ષુરિન્દ્રિય કે અશુભ વિષયમેં રાગદ્રેષ સે રહિત હોને સે વ્યવસ્થિત આત્માવાળા (સાહુ) સાધુ(મળવયળકાયગુત્તે) અપને મન, વચન ઓર કાયરૂપ યોગોંકો શુભ અશુભકે વ્યાપાર સે સુરક્ષિત કર લેતા હૈ ઓર (સંવુડે) સંવર સે યુક્ત બન કર (પળિહિંદિંદિ) અપની ચક્ષુરિન્દ્રિય કો વશમેં કર કે (ધમ્મે) ચારિત્ર રૂપ ધર્મ કા (ચરેજ્જ) પાલક બન જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્રદ્વારા પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતકી દ્વિતીય ભાવના જો ચક્ષુરિન્દ્રિય સંવર નામકી હૈ વહ કહી હૈ । હસ ભાવનામેં સાધુ કો એસા વિચાર કરના સરજામ્યા ગયા હૈ કિ વહ હસ પ્રકાર સે અપની ચક્ષુરિન્દ્રિય કી પરિણતિ કો એસી વિચારધારા સે સુદૃઢરૂપ મેં બાંધ કર રહે કિ જિસસે વહ ચક્ષુરિન્દ્રિય કે વિષયભૂત મનોજ્ઞ રૂપમેં

ભાવના ભાવિઓ અન્તરપ્પા ” વ્યારે અંતરાત્મા ચક્ષુરિન્દ્રિયની ભાવનાથી ભાવિત થાય છે ત્યારે તે “ મણુળામણુણસુન્નિદુન્નિરાગદોસેપળહિયપ્પા ” મનોજ્ઞરૂપ ચક્ષુરિન્દ્રિયના શુભ વિષયમાં અને અમનોજ્ઞરૂપ ચક્ષુરિન્દ્રિયના અશુભ વિષયમાં રાગદ્રેષથી રહિત થવાથી વ્યવસ્થિત આત્માવાળો “સાહુ” સાધુ “ મળવયળકાયગુત્તે ” પોતાના મન, વચન અને કાયરૂપ યોગેને શુભ અશુભ પ્રવૃત્તિથી સુરક્ષિત બનાવી દે છે અને “ સંવુડે ” સંવરથી યુક્ત બનીને “ પળિહિંદિંદિ ” પોતાની ચક્ષુરિન્દ્રિયને કાળમાં રાખીને “ ધમ્મે ” ચારિત્રરૂપ ધર્મ-ને “ ચરેજ્જ ” પાલક બને છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની ચક્ષુરિન્દ્રિય સંવર નામની બીજી ભાવના બતાવી છે. આ ભાવના દ્વારા સાધુને એ વિષય સમજાવવામાં આવ્યો છે કે તે એવી પોતાની ચક્ષુરિન્દ્રિયની પ્રવૃત્તિને એવા પ્રકારની વિચાર ધારાથી બાંધી રાખે કે જેથી ચક્ષુરિન્દ્રિય વડે દૃષ્ટિગત થતા

તૃતીયાં ભાવનામાહ—‘ તદ્યં ’ इत्यादि—

મૂલમ્--તદ્યં ઘાણિદિણ અઘ્વાદ્ય ગંધાઈં મણુન્નમદ્-
ગાઈં, કિં તે ? જલચર--થલચર--સરસ--પુષ્પલ--પાણભોયણ-
કુટ્ટ--તગર--પત્ત--ત્રોય--દમણગ--મરુચ--ણારસ--પક્કમાંસિ--
ગોસીસ--સરસચંદણ--કપ્પૂરલવંગ--અગુરુકુંકુમકક્કોલ ઉસીર
સેસચંદણ સુગંધસારંગજુત્તિવરધૂવવાસે ઉડયપિંડિમણિહારિ-
મગંધિણસુ અન્નેસુ ચ ઇવનાઈણસુ ગંધેસુ મણુન્નમદ્ણસુ ન
તેસુ સમણેન સજ્જિયઢ્ઢવં જાવ ન સઈં ચ મઈં ચ તરથં કુજ્ઞા,
પુણરવિ ઘાણિદિણ અઘ્વાદ્ય ગંધાણિ અમણુન્નપાવગાઈં,
કિં તે? અહિમહ--અસ્સનહ--હસ્થિમહ--ગોમહ--વિગ--સુણગ
સિયાલ--મણુચ--મજ્ઞાર--સીહ--દીવિચ--મય--કુહિચ--વિણટ્ટ-

તથા અમનોરૂપમેં રાગદ્વેષ ન કર સકે । મનોરૂપ સમક્ષ ઉપસ્થિત હો
તો उसे देख कर उसमें रागादि परिणतिसे उसे बंध नहीं जाना चाहिये
और अशुभ रूप हो तो उसमें द्वेष परिणति से अपने आपको दुःखित
नहीं करना चाहिये । दोनों प्रकारकी विषय संनिधानता में उसको सम-
भावी रहना चाहिये । जो ऐसा नहीं करताहै वह ग्रहान् अनर्थका भागी
बनता है । इस प्रकार चक्षुरिन्द्रिय की भावना से भावित हुआ वह
साधु अपने त्रियोगों को शुभाशुभ रूप व्यापार से सुरक्षित रखता हुआ
चक्षु इन्द्रिय को वशमें कर लेता है और चारित्र्यरूप धर्मका पालक बन
कर अपने परिग्रह विरमणरूप व्रतको सुस्थिर बना लेता है ॥ सू०८ ॥

મનોરૂપ તથા અમનોરૂપ રૂપમાં તેને રાગદ્વેષ ન થાય. જે તેની સમક્ષ મનોરૂપ
પદાર્થ હાજર થાય તો તેમનામાં રાગાદિ પરિણતિથી બંધાવું જોઈએ નહીં
અને જે અશુભ રૂપ હોય તો તેના પ્રત્યે દ્વેષ વૃત્તિ દાખવીને પોતાની જાતને
દુઃખી કરવી જોઈએ નહીં. જન્મે પ્રકરના વિષયો સમક્ષ તેને તો સમભાવ
યુક્ત રહેવું જોઈએ. જે તે પ્રમાણે કરતો નથી તે શક્ય: અનર્થને પાત્ર થાય છે
આ પ્રમાણે ચક્ષુરિન્દ્રિયની ભાવનાથી ભાવિતજનને તે શુદ્ધ પોતાના ત્રણે યોગને
શુભાશુભ પ્રવૃત્તિઓથી સુરક્ષિત રાખીને ચક્ષુ ઇન્દ્રિય પર કાળજી રખાવે છે અનેચારિ-
ત્રરૂપ ધર્મનું પાલન કરીને પોતાના પરિગ્રહ વિરમણવ્રતને સુસ્થિર બનાવે છે ॥સૂ.૮॥

સુવર્ણિની ટીકા મંપ સુ. ૧ 'પ્રાણેન્દ્રિયસંવર'નામકતૃતીયભાવનામિરૂપણમ્ ૧૧.૭

કિમિળ-વહુદુરભિગંધાઈ, અન્નેસુ ય એવમાઈએસુ ગંધેસુ અમ-
ગુન્નપાવએસુ ન તેસુ સમણેણ રુસિયઠ્ઠં ન હીલિયઠ્ઠં જાવ
પણિહિંદિએ ચરેજ ધમ્મં ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા—‘તદ્યં’ તૃતીયાં પ્રાણેન્દ્રિયસંવરણાભિવેયાં ભાવનામાહ—
‘પ્રાણિન્દ્રિય’ પ્રાણેન્દ્રિય ‘મણુભદ્રગાઈ’ મનોજ્ઞ ભદ્રકાન્ ‘ગંધાઈ’ ગન્ધાન્
‘અગ્વાઈય’ અગ્વાય ‘કિંતે’ કાન્ તાન્=કથમ્ભૂતાંસ્તાન્ ગન્ધાન્? इत्याह—
‘જલચર-થલચર-સરસ-પુષ્પફલભોગણ-કુટ્ટ-તગર-પત્ત-ચોય-દમણક-મરુચ-
-પ્લારસ-પક્કમંસિ-ગોસીસ-સરસ-ચંદણ-કપ્પૂર-લવંગ-અગર-કુંકુમકકોલ-
-ઝસીર-સેસ-ચંદણ-સુગંધસારંગ-જુત્તિવરધૂવવાસે’ જલચર-સ્થલચર-સરસ-પુષ્પ-
ફલ-પાનમોજન-કુષ્ઠ-તગરપત્રચર્યા દમનક-મરુકૈલારસ-પક્કમાંસી-ગોશીર્ષ-

અથ સૂત્રકાર પરિગ્રહ ચિરમણ વ્રત કી તીસરી ભાવના કો સમજાતે
હે—‘તદ્યં’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(તદ્યં) इस व्रतकी तीसरी भावनाका नाम प्राणेन्द्रिय संवरण
हे । इस भावनावाले साधु को प्राणेन्द्रियके मनोज्ञ भद्रक गंध को सूंघ
करके राग नहीं करना चाहिये और अमनोज्ञ पापक अशुभगंधों को
सुंघकर द्वेष नहीं करना चाहिये । इस सूत्रमें इसी विषय को सूत्रकार
विशेषरूप से स्पष्ट करते हैं (किं ते) वह मनोज्ञ भद्रक गंध कौन हैं
इस प्रकार की आज्ञाका का उत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं—(जलचर-
थलचर-सरस-पुष्पफल-पाणभोगण-कुट्ट-तगर-पत्त-चोय-दमणक-
मरुच-प्लारस-पक्कवमंसिगोसीस-सरसचंदण-कपूर-लवंग-अगुरु
कुंकुम-कंकौल-उसीर-सेसचंदण-सुगंध-सारंग-जुत्तिवर-धूववासे)

હવે સૂત્રકાર પરિગ્રહ ચિરમણ વ્રતની ત્રીજી ભાવના સમજાવે
છે—“તદ્યં” इत्यादि—

ટીકાર્થ—“તદ્યં” આ વ્રતની ત્રીજી ભાવનાનું નામ પ્રાણેન્દ્રિય
સંવરણ છે. આ ભાવનાવાળા સાધુએ પ્રાણેન્દ્રિયને માટે મનોજ્ઞ ભદ્રક ગંધને
સૂંધીને તેમાં રાગ કરવો જોઈએ નહીં. અને અમનોજ્ઞ પાપક અશુભ ગંધોને
સૂંધીને તેમના પ્રત્યે દ્રેષ કરવો જોઈએ નહીં. એ જ વિષયનું સૂત્રકાર વિસ્તારથી
સ્પષ્ટીકરણ કરે છે. “કિં તે” તે મનોજ્ઞ ભદ્રક ગંધ શેની શેની હોય છે તે
પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર કહે છે કે—“જલચર-થલચર-સરસ-પુષ્પફલ-
પાણભોગણ-કુટ્ટ-તગર-પત્ત-ચોય-દમણક-મરુચ-પ્લારસપક્કમંસિ-ગોસીસ-સરસચંદ-
ણ-કપૂર-લવંગ-અગુરુ-કુંકુમ-કંકોલ-ઝસીર-સેસચંદણ-સુગંધ સારંગ જુત્તીવર

सरसचन्दन-कर्पूर-लवङ्गागुरुकुङ्कुमककोलोशीरश्वेतचन्दनसुगन्धसारङ्गयुक्तिवरधूप-
वासान्-तत्र-जलचराणि=जले समुत्पन्नानि पुष्पादीनि, स्थलचराणि=स्थले समु-
त्पन्नानि सुगन्धिपुष्पादीनि, सरसानि-रसयुक्तानि पुष्पफलपानभोजनानि, कुण्डं=
सुगन्धिद्रव्यविशेषः, तगरः, धूपविशेषः, पत्रम्=तमालपत्रम्, 'चोयं' त्वचा=
सुगन्धिद्रव्यत्वचा, दमनकः=पुष्पजातिविशेषः, मरुकः='मरुआ' इति आपामसिद्धो
वनस्पतिविशेषः, एलारसः=एलायाः 'इलायची' इति प्रसिद्धाया रसः, 'पिकमंसी'
पक्वमांसी-परिपक्वगन्धद्रव्यविशेषः, गोशीर्षम्=एतन्नामकं चन्दनम्=सरसचन्दनम्
=श्रीखण्डचन्दनम्, कर्पूरः-प्रसिद्धः, लवङ्गानि-प्रसिद्धानि, अगुरु=धूपविशेषः,
कुङ्कुमम्='केशर' इति प्रसिद्धम्, ककोलः=फलविशेषः, उशीरम्=शीरगमूलं 'खश'
इतिप्रसिद्धम्, श्वेतचन्दनं प्रसिद्धम्, सुगन्धसारङ्गयुक्तिवरधूपवासः=सुगन्धानां=शो-
भनगन्धयुतां सारङ्गाणां=कमलपत्राणां युक्तियोजनं यत्रैतादृशो यो वरधूपवासः=
धूपद्रव्यविशेषः, एतेषामितरतरयोगद्वन्द्वः, तौस्तथोक्तानाम्नाय 'समणेन' श्रम-
णेन-साधुना 'उडयपिण्डिमणिहारिमगंधिणसु' ऋतुजपिण्डिमनिर्हारिमगन्धिकेषु=

जलचर-जल में उत्पन्न हुए सुगंधित पुष्पों की, स्थलचर-स्थल में उत्पन्न
हुए खुशबूदार फूलों की, सरस-रस युक्त पुष्प, फल, पान, भोजनों की,
कुण्ड-सुगंधित द्रव्य की, तगर-धूपविशेष की, पत्र-तमालपत्र की, चोय-
सुगंधित वृक्ष की छाल की, दमनक-पुष्पजानि विशेष की, मरुक-मरुआ
की, इलायची के रस की, पक्वमंसी-परिपक्वगंधद्रव्य विशेष की, गोशीर्ष
चंदन की, श्रीखंडचंदन की, कर्पूर की, लवंग-लोगो की, अगुरुधूप की,
कुङ्कुम-केशर की, कंकोल नामक फलविशेष की, उशीर-खश की,
खेनचंदन की, तथा जिसमें शोभन गंधवाले कमल पत्रों का योजन-
संमिश्रण-हुआ हो ऐसे उत्तम धूपविशेष की, सुगंध को सूँघ करके,
तथा (उडयपिण्डिमणिहारिमगंधिणसु) ऐसी सुगन्ध से युक्त द्रव्यों के

धूपवासे " जलचर-जलमां उत्पन्न थयेदां सुगंधित पुष्पानी, स्थलचर-जमीन
पर उत्पन्न थयेदां सुगंधित फूलानी, सरस-रसदार कुव, द्रव्य, पान, भोजनानी
कुण्ड-सुगंधित द्रव्यनी, तगर-एक जातना धूपनी, पत्र-तमालपत्रनी, चोय-
सुगंधित वृक्षनी छालनी, दमनक-एक जातना फूलनी, मरुक-उमरानी, इलाय-
चीना रसनी, पक्वमंसी-एक जातनुं सुगंधि द्रव्यना; गोशीर्ष चंदननी; श्री-
खंड चंदननी; कर्पूरनी; लवंगनी, अगुरु धूपनी; कुङ्कुम-केशरनी; कंकोल
नामना एक जातना फूलनी; उशीर-सुगंधिवाजानी श्वेतचंदननी; तथा जेमां
सुंदर गंधवाणा कमल पत्रानुं मिश्रण थयुं होय जेवां उत्तम प्रकारनां धूपनी
सुगंध सूंधीने तथा " उडय पिण्डिमणिहारिमगंधिणसु " जे द्रव्येमां श्रतुने

સુદર્શિની ટીકાનંબ ૦૫ સુ૦૨ 'ઘ્રાણેન્દ્રિયસંસ્થર'નામકતૃતીયભાવનાનિરૂપણમ્ ૨૧૨

ઋતુજઃ=કાલોચિતઃ પિષ્ઠિમઃ=પિષ્ઠિભૂતો=વહુલો નિર્હારિમો દૂરતરપ્રદેશગામી યો ગન્ધઃ, સ ત્રિધતે યેષુ તેષુ દ્રવ્યેષુ, તથા-‘ અણેસુ ય એવામહાસુ ગંધેસુ ‘અન્યેષુ ચૈવમાદિકેષુ ગન્ધેષુ, કથમ્ભૂતેષુ ?’ ઇત્યાહ ‘ મણુળમદાસુ ’ મનોજ્ઞમદ્રકેષુ ‘તેસુ’ તેષુ ગન્ધેષુ ‘ ન સજ્જિયવ્વં ’ ન સક્તવ્યમ્ ‘જાવ ’ યાવત્-યાવત્કરણાત્-ન રક્ત-વ્યમ્, ન ગદ્ધિતવ્યમ્, ન મોદિતવ્યમ્, ન ત્રિણિધાતઆપત્તવ્યઃ, ન લોચ્ચમ્, ન તોષ્ટવ્યમ્, ન હસિતવ્યમ્, ઇતિસંગ્રાહ્યમ્ । તથા-શ્રમણઃ ‘ તત્થ ’ તત્ત્વ ગન્ધવિષયે ‘સંઘં ચ મઘં ચ’ સ્મૃતિં ચ મતિં ચ ‘ન કુજ્જા’ ન કુર્યાત્ । ‘ પુણરવિ ’ પુનરપ્યુ-ચ્યતે-‘ ઘ્રાણિદિણ ’ ઘ્રાણેન્દ્રિયેણ ‘ અમણુળપાવગાઈ ’ અમનોજ્ઞપાપકાન્, કિં જિનમેં સુગન્ધ ઋતુ કે અનુકૂલ પિષ્ઠીભૂત હોકર રહ રહી હો ઔર દૂર પ્રદેશતક જિન કી વહ સુગંધ ફેલ રહી હો ઉપસ્થિત હોને પર ઉન મેં તથા (અણેસુ એવામહાસુ મણુળમદાસુ) ઉન સે મિત્ત ઇસી પ્રકાર કે ઔર ખી જો મનોજ્ઞ મદ્રક ગંધયુક્ત પદાર્થ હોં ઉનકે સમક્ષ મેં આને પર (સમણેણ) સાધુ કો ઉનકી (તેસુ) ઉનર મનોજ્ઞ મદ્રક ગંધોં મેં (ન સજ્જિયવ્વં જાવ ન સંઘં ચ મઘં ચ તત્થ કુજ્જા) આસક્ત નહીં હોના ચાહિયે-યાવત્ ઉનમેં સ્મૃતિ કો ઔર અપની મતિ કો નહીં લગાના ચાહિયે । યહાં યાવત્ શબ્દ સે “ ન રજ્જિયવ્વં ન મિજ્જિયવ્વં, ન મુજ્જિયવ્વં, ન ત્રિણિધાયં આવજ્જિયવ્વં, ન લુભિયવ્વં, ન તુસિયવ્વં ન હસિયવ્વં ” ઉન પદોં કા સંગ્રહ કિયા ગયા હૈ । ઉનકા અર્થ પહેલે કર દિયા ગયા હૈ વહાં સે સમક્ષ લેના ચાહિયે ।

ઇસી તરહ અમનોજ્ઞ પાપ ગંધ મેં રોષ આદિ ન કરના ચાહિયે ઇસી ઘાત કો કહતે હૈં-(પુણરવિ) ઇસી તરહ સે (ઘ્રાણિદિણ) ઘ્રાણેન્દ્રિય

અનુકૂળ સુગંધ ભરેલી હોય અને તેમની તે સુગંધ દૂર દૂરના પ્રદેશ સુધી ફેલાતી હોય; એવાં સુગંધિત દ્રવ્યો ભોજૂદ હોય તો તેમાં તથા “ અણેસુ એવામહાસુ મણુળમદાસુ ” ઉપરાંત તેમના જેવા જ મનોજ્ઞ મદ્રક ગંધવાળા જે પદાર્થો હોય તે પાસે હોય તો પણ “ સમણેણ ” સાધુએ તેમની “ તેસુ ” તે તે મનોજ્ઞ ગંધોમાં “ ન સજ્જિયવ્વં જાવ ન સંઘં ચ મઘં ચ તત્થકુજ્જા ” આસક્ત થવું જોઈએ નહીં ત્યાંથી શરૂ કરીને તેને યાદ કરવી નહીં કે તેનો વિચાર પણ કરવો નહીં. ત્યાં સુધી સમજી લેવાનું છે. અહીં યાવત્ શબ્દથી “ ન રજ્જિયવ્વં, ન મિજ્જિયવ્વં, ન મુજ્જિયવ્વં, ન ત્રિણિધાયં આવજ્જિયવ્વં, ન લુભિયવ્વં, ન તુસિયવ્વં, ન હસિયવ્વં ” એ પદોનો અર્થ ગ્રહણ કરવાનો છે. તેમના અર્થ આગળ આવી ગયા છે તો ત્યાંથી સમજી લેવા.

એ જ પ્રમાણે અમનોજ્ઞ પાપક ગંધ પ્રત્યે રોષ આદિ કરવા જોઈએ નહીં એ વાત સૂત્રકાર કહે છે-“ પુણરવિ ” આ રીતે ‘ ઘ્રાણિદિણ ’ ઘ્રાણે-

ગંધાણિ 'ગન્ધાન' અગ્ધાઇય 'આગ્રાય' 'કિં તે' કાંસ્તાન=કથંભૂતાંસ્તાન ગન્ધાનાગ્રાય ? इत्याह- 'अहिमड-अस्ममड=हस्तिमड- गोमड-विग-सुणगं- सियाल-मणुय-मज्जार- सी ह- दीवियमयकुहियविणट्टकिमिणवहुदुरभिगंधाई' अहिमृताश्वमृतहस्तिमृतगोमृतवृकशुनक-शृगाल-मनुज-मार्जार-सिंह द्वीपिकमृत- कुथितविनिष्टकृमिवेदवहुदुरभिगन्धान्=तत्र-अहिमृतानि=अहीनां सर्पाणां मृतानि =मृतशरीराणि, अश्वमृतानि=अश्वानां मृतशरीराणि, हस्तिमृतानि=हस्तिनां मृतशरीराणि, गोमृतानि=गवां मृतशरीराणि, तथा-वृकस्य=ईहामृगस्य 'कोक ईहामृगो वृकः' इत्यपरः, शुनकस्य=कुक्कुरस्य' शृगालस्य 'गीदड' इतिप्रसिद्धस्य, मनुजस्य=मनुष्यस्य, मार्जारस्य=बिडालस्य, सिंहस्य=केशरिणः, द्वीपिकस्य=चित्रकस्य च यानि मृतानि=मृतशरीराणि, कथंभूतानीमानि ? कुथितानि=शटितानि, अतएव-विनिष्टानि=विनष्टाकृतिकानि, कृमिवन्ति=कृदिसंकुलानि, तेषां बहुदुरसे (अद्यणुण पावगाई) अमनोज्ञ अशुभ (गंधाणि) गंध-दुर्गन्ध को (अगधाइय) सुंघकर के साधु को उसमें द्वेष-अस्मि परिशाम-अरति वृत्ति नहीं करनी चाहिये । (किं ते ?) दुर्गन्ध के विषयभूत पदार्थ कौनसे हैं इस प्रश्न का उत्तर देनेके लिये नूत्रकार उन पदार्थों में से किन नेक पदार्थों को प्रकट कटते हैं-जैसे-(अहिमड-अस्ममड-हस्तिमड-गोमड-विग सुणग-सियाल-मणुय-मज्जार-सीह-दीविय-जय-कुहिय विणट्ट किमिण बहुदुरभिगंधाई) अहिमृत्तक, सर्पका मृतकलेवर, घोड़े का मृतकलेवर, हस्ती का मृतकलेवर, गाय का मृतकलेवर, वृक का मृतकलेवर, कुत्ते का मृतकलेवर, शृगाल का मृतकलेवर, मनुष्य का मृतकलेवर, बिडाल का मृतकलेवर, सिंह का मृतकलेवर. चित्रक-चीते का मृतकलेवर, ये सब जय कुथित-सड़ जाते हैं, तब इनमें कीड़े पड़

નિર્યયથી “અમણુણપાવગાઈ” ” અમનોજ્ઞ અશુભ “ ગંધાણિ ” ગંધ-દુર્ગંધને “ અગધાઈય ” સુંઘીને સાધુએ તેના પ્રત્યે દ્વેષ-અસ્મિનેના ભાવ-અરતિવૃત્તિ કરવા બેધએ નહીં. “ કિં તે ” દુર્ગંધ યુક્ત પદાર્થો કયા કયા છે તેનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર તે પદાર્થોમાંથી કેટલાંક પદાર્થોનો ઉલ્લેખ કરે છે. જેમ કે “ અહિમડ-અસ્મમડ-હસ્તિમડ-ગોમડ-વિગ-સુણગ-સિયાલ-મણુય-મજ્જાર-સીહ-દીવિય-મય-કુહિય-વિણટ્ટ-કિમિણ-વહુદુરભિગંધાઈ ” અહિમૃતક-મરેલા સાપનું શરીર, ઘોડાનું મૃતશરીર; હાથીનું મૃતશરીર; વરૂનું મૃતશરીર; સિંહનું મૃત શરીર, કૂતરાનું મૃત શરીર; શિયાળાનું મૃત શરીર, માણસનું સડુ, ચિત્તાનું મૃત શરીર, એ બધાં બધારે સડે છે ત્યારે તેમાં કીડા પડે છે અને

સુવર્ણિની ટીકા અ૦૫ સૂ૦૧ 'પ્રાણેન્દ્રિયસંવર'નામકતૃતીયભાવનાનિરૂપણમ્ ૧૨૧

ભિગન્ધાન્=અત્યન્તામનોજ્ઞગન્ધયુક્તાન્ અઘ્રાય 'સમણેણ' શ્રમણેન-સાધુના 'તેસુ' 'તેષુ=પૂર્વોક્તેષુ તથા એવાદિપ્પસુ' એવાદિકેષુ-એવં મકારેષુ 'અણ્ણેસુ ય' અન્નેષુ ચ 'અમણુણપાવગેસુ' અમનોજ્ઞપાપકેષુ ગન્ધેષુ 'ન રુસિયઘ્વં' ન રોષ્ટવ્યમ્, 'ન હીલિયઘ્વં' ન હીલિતવ્યમ્, 'જાવ' યાવત્-યાવત્કરણાત્-'ન નિન્દિતવ્યમ્, ન સ્વિસિતવ્યમ્, ન છેદવ્યમ્, ન મેદવ્યમ્, ન હન્તવ્યમ્, ન જુગુપ્સા-વૃત્તિકાઽપિ લાભ્યોત્પાદયિતુમ્ । એવં પ્રાણેન્દ્રિયમાવનાભાવિતો ભવતિ અન્તરાત્મા =જીવઃ । તત્તથ્ચ મનોજ્ઞામનોજ્ઞસુરભિદુરભિરાગદેષે પ્રણિહિતાત્મા સાધુર્મનોવચનકાય-જાતે હૈં, ઓર उस समय उनकी दुर्गन्ध बहुत अधिक असह्य हो जाती है सो (समणेण) साधु को इनकी दुर्गन्ध में तथा (एवमाइप्पसु अन्नेसु तेसु अमणुण्णपावगेषु) इनसे भिन्न इसी तरह की और भी अमनोज्ञ उन अशुभ गंधों में (न रुसियघ्वं न हीलियघ्वं जाव पणिहिय पंचेदिण धम्मं चरेज्ज) रोष नहीं करना चाहिये, उनकी अवज्ञा नहीं करना चाहिये, यहां यावत् पद से "न निदियघ्वं, न स्विसियघ्वं, न छिदियघ्वं, न भिदियघ्वं, न वहेयघ्वं, न दुगुंछावत्तिपायिलब्भा उप्पाए उं एवं घाणिदिय भावणा भाविओ भवइ अंतरप्पा मणुण्णामणुण सुविभ-दुविभ रागदोसे पणिहियप्पा साह मणवयणकाय गुत्ते संवुडे" इन पूर्वोक्त समस्त पदों का संग्रह और अर्थ पहले की तरह कर लेना चाहिये । अर्थात् निंदा, खिसा, छेदन, भेदन, नहीं करना चाहिये और न उनके विषय में साधु को जुगुप्सा-पृणा-वृत्ति ही करनी उचित है । इस प्रकार प्राणइन्द्रिय की भावना से भविन्न अन्तरात्मा होता है तब वह मनोज्ञ

ત્યારે તેમની દુર્ગન્ધ ઘણી જ અસહ્ય થઈ પડે છે. તે "સમણે" સાધુએ તેમની દુર્ગન્ધ પ્રત્યે તથા "એવાદિપ્પસુ અન્નેસુ તેસુ અમણુણપાવગેસુ" તે ઉપરાંત તે પ્રદારની અમનોજ્ઞ અશુભ દુર્ગન્ધો પ્રત્યે "ન રુસિયઘ્વં ન હીલિયઘ્વં" જાવ પણિહિય પંચેદિણ ધમ્મં ચરેજ્જ" રોષ કરવો જોઈએ નહીં, તેમની અવજ્ઞા કરવી જોઈએ નહીં. આહીં યાવત્-શબ્દથી "ન નિદિયઘ્વં, ન સ્વિસિયઘ્વં, ન છિદિયઘ્વં, ન ભિદિયઘ્વં, ન વહેયઘ્વં, ન દુગુંછાવત્તિપાયિલભ્મા ઉપ્પાપું એવં ઘાણિદિયભાવણાભાવિઓ ભવઈ અંતરપ્પા મણુણામણુણસુવિભદુવિભરાગદોસે પણિહિયપ્પાસાહ મણવયકાયગુત્તે સંવુડે" પૂર્વોક્ત એ સઘળાં પદોને યથાશુ કરી લેવાના છે અને આગળ બતાવ્યા પ્રમાણે તેમનો અર્થ સમજી લેવાનો છે. એટલે કે નિંદા, ખિસા, છેદન, ભેદન કરવું જોઈએ નહીં અને તેમના પ્રત્યે સાધુએ જુગુપ્સા-પૃણાવૃત્તિ પણ રાખવી જોઈએ નહીં. આ રીતે ન્યારે અંત-રાત્મા પ્રાણેન્દ્રિયની ભાવનાથી ભાવિત થાય છે ત્યારે તે મનોજ્ઞપ્રાણેન્દ્રિ-

ગુપ્તઃ સંત્રતઃ, 'ઇસ્યેતેપાં સંગ્રહઃ, તથા- 'પણિહિંદિ' મણિહિતપશ્ચેન્દ્રિયઃ-પણિ-
હિતાનિ=વશીકૃતાનિ ઇન્દ્રિયાણિ યેન સ તથોક્તઃ સન્ 'ધર્મ્મ' ધર્મ 'ચરેઝ્જ'
ચરેત્=અનુતિષ્ઠેત્ ॥ સૂ. ૧ ॥

રૂપ ધ્રાણેન્દ્રિય કે શુભ ઓર અમનોજ્ઞ કે અશુભ વિષય મેં રાગદ્વેષ
કરને સે રહિત હો જાના હૈ । ઇસ પ્રકાર કી સ્થિતિ સે યુક્ત બના હુઆ
સાધુ અપને મન વચન ઓર કાયરૂપ યોગોં કો શુભ અશુભ વ્યાપાર સે
સુરક્ષિત કર હેતા હૈ ઓર ધ્રાણેન્દ્રિય કે શુભાશુભ વિષય મેં શુભાશુભ-
પરિણતિ જન્ય કર્મબંધન કી નિવૃત્તિરૂપ સંવર સે યુક્ત હો જાતા હૈ ઓર
(પણિહિંદિ ચરેઝ્જ ધર્મ) વશીકૃત ઇન્દ્રિયોં વાલા હોકર ચારિત્રરૂપ
ધર્મ કા પાલક બન જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને ઇસ સૂત્ર દ્વારા પરિગ્રહ-વિરમણ વ્રત કી
ત્રીસરી ભાવના કા ઉલ્લેખ કિયા હૈ । ઇસ ભાવનાકા નામ ધ્રાણેન્દ્રિય-
સંવરણ હૈ । ઇસમેં સાધુ અપની ધ્રાણેન્દ્રિયકો સુગંધ ઓર દુર્ગંધકે સંવંધ
હોને પર પક્ષપાતિની નહીં બનતા હૈ । યદિ વહ એસા કરતા હૈ તો મહાન
અનર્થ કા પાત્ર હોતા હૈ । ઉસે નવીન કર્મોં કા બંધક માના જાતા હૈ ।
સુગંધ ઓર દુર્ગંધ કે વિષયભૂત કિતનેક પદાર્થોં કો સૂત્રકાર ને ઇસ
સૂત્ર દ્વારા સમજાયા હૈ । અતઃ ચરિત્રધર્મ કો પૂર્ણરૂપ સે પાઠન કરનેકે
લિયે સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઇસ પ્રકાર કી જગર સ્થિતિ ઉસકે
સમક્ષ હો તો વહ સમભાવી બના રહે ॥ સૂ. ૧ ॥

થના શુભ અને અમનોજ્ઞરૂપ અશુભ વિષયોમાં રાગ અને દ્વેષથી રહિત થઈ
જાય છે. આ પ્રકારની સ્થિતિથી યુક્ત થયેલ સાધુ પોતાના મન, વચન અને
કાયરૂપ યોગોને શુભ અશુભ વ્યાપારથી સુરક્ષિત કરી નાખે છે, અને ધ્રાણે-
ન્દ્રિયના શુભાશુભ વિષયમાં શુભાશુભ પરિણતિજન્ય કર્મબંધનની નિવૃત્તિરૂપ
સંવરથી યુક્ત થઈ જાય છે અને “ પણિહિંદિ ચરેઝ્જ ધર્મ ” સંયમી
ઇન્દ્રિયવાળો થઈને ચારિત્રરૂપ ધર્મનું પાલન કરનાર બને છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પરિગ્રહ વિરમણવ્રતની ત્રીજી ભાવ-
નાનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. તે ભાવનાનું નામ ધ્રાણેન્દ્રિય સંવરણ છે. તેમાં એ
ખતાબુ છે કે સુગંધ અને દુર્ગંધનો સંબંધ થતાં સાધુ પોતાની ધ્રાણેન્દ્રિયને
પક્ષપાતી બનાવતો નથી. જો તે એવું કરે તો મહાન અનર્થને પાત્ર થાય છે,
તેને નવીન કર્મોના બાંધનાર માનવામાં આવે છે. સુગંધ અને દુર્ગંધયુક્ત
કેટલાક પદાર્થો સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં દર્શાવ્યાં છે તેથી ચારિત્રધર્મનું સંપૂર્ણ
રીતે પાલન કરવાને માટે સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તેણે ધ્રાણેન્દ્રિયના વિષયભૂત
સુગંધ તથા દુર્ગંધયુક્ત પદાર્થો પ્રત્યે સમભાવ રાખવો જોઈએ. ॥ સૂ.૦૬ ॥

સુર્વાશિની ટીકા અં.૫ સૂ.૧૦ જિહ્વેન્દ્રિયસંવરનામકચતુર્થભાવનાનિરૂપણમ્ ૧૨૩

ચતુર્થી ભાવનામાહ—‘ચત્તથં’ इत्यादि—

મૂલમ્—ચત્તથં જિહ્વિભદિણ સાહય રસાણિઝ મણુળ્લ
ભદ્ગાઈ, કિં તે ? ઝગ્માહિમ વિવિહપાળભોયળ ગુલકય ઘંડ-
કય તેલ્લઘયકયમ્કલેસુ બહુવિહેસુ લવળરસસંજુતેસુ, બહુ-
પ્પકારમજ્જિયનિટ્ટાળગદાલિયંબ સેહંબ દુદ્ધદહિ--સરયમજ્જ-
વરવારુણી સીદ્ધુકાવિસાચળ સાગટ્ટારસવહુપ્પગારેસુ ય મોયળેસુ
ય મણુળ્લવળ્લગન્ધરસપાસવહુદબ્બસંભિણ્ણેસુ અળ્ણેસુ ય
એવમાહિણ્ણેસુ રસેસુ મણુળ્લભદ્દેસુ ન તેસુ સમળેળ સજ્જિ-
યઠ્ઠં જાવ ન સઈં ચ મઈં ચ તત્થ કુજ્ઞા । પુળરવિ જિહ્વિભ-
દિણ સાહયરસાઈં અમણુળ્લપાવગાઈં, કિં તે ? અરસવિ-
વિરસસીયલુલ્લઘયળિજ્જપ્પમાળભોયળાઈં દોસી વાવળ્ણકુહિય
પૂહિય અમણુળ્લવિળ્ણટ્ટપ્પસૂય બહુદુભિમંધિયાઈં તિત્તકહુય-
કસાય અંવિલરસલિંદનીરસાઈં અળ્ણેસુ ય એવમાહિણ્ણેસુ રસેસુ
અમણુળ્લપાવણ્ણેસુ ન તેસુ સમળેળં રુચિયવઠ્ઠં જાવ ચરેજ્જ
ધમ્મં ॥ સૂ.૦૧૦॥

ટીકા—‘ચત્તથં’ ચતુર્થી જિહ્વેન્દ્રિય સંવરણલક્ષણાં ભાવનામાહ—‘જિહ્વિ-
દિણ’ જિહ્વેન્દ્રિયેળ ‘મણુળ્લભદ્દગાઈં’ મનોજ્ઞભદ્રકાન્ ‘રસાણિ ઝ.’ રસાંસ્તુ

અવ સૂત્રકાર હસ વ્રત કી ચૌથી ભાવના કો કહતે હૈ—

‘ચત્તથં’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(ચત્તથં) ચૌથી ભાવના કા નામ જિહ્વેન્દ્રિયસંવરણ હૈ । હસ
ભાવનાકે વશવર્તી હુણ સાધુકો જિહ્વા ઇન્દ્રિયકે મનોજ્ઞભદ્રક વિષયમેં ઔર
અમનોજ્ઞ અભદ્રક વિષય મેં રાગદ્વેષ નહીં કરના चाहिये-પ્રત્યુત સમભાવ

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની ચૌથી ભાવના બતાવે છે—“ચત્તથં” इत्यादि.

ટીકાર્થ—“ચત્તથં” ચૌથી ભાવનાનું નામ જિહ્વેન્દ્રિય સંવરણ છે.
આ ભાવનાનું પાલન કરનાર સાધુએ જિહ્વા ઇન્દ્રિયના મનોજ્ઞભદ્રક વિષયોમાં
અને અમનોજ્ઞ અભદ્રક વિષયોમાં રાગ દ્વેષ રાખવો જોઈએ નહીં, પણ સમ-

=વશ્યમાણપદાર્થેષુ સ્થિતાનં'સાહ્ય' સ્વાદયિત્વા=અવિરતગૃહસ્થાવસ્થાયામાસ્વાદ્ય,
'કિં તે' કાંસ્તાન્=કેષુ કેષુ પદાર્થેષુ સ્થિતાંસ્તાન્ ? इत्याह-‘उग्गाहिमविविह-
पाणभोयणगुलकयखंडकय तेलघयकयभक्खेसु’ अवगाहिमविविहपाणभोजनगुडकु-
तखण्डकुततैलघृतकृतभक्ष्येषु-तत्र-अवगाहिमानि अवगाहनेन=घृततैलादिषु बोलनेन
पाकतो निष्पन्नानि यानि तानि पकानानि खण्डखाद्यादीनि ‘अवगाहिमानि’
कथ्यन्ते, तथा-विविधानि=बहुविधानि पानभोजनानि, तथा-गुडकृतानि=गुडेन
निष्पादितानि, खण्डकृतानि=खण्डेन निष्पादितानि, तैलघृतानि=तैलेन घृतेन च

હી ધારણ કરના ચાહિયે, હસી વિષય કો સૂત્રકાર વિશેષરૂપે સે હસ
સૂત્ર દ્વારા સમજાતે હૈં-(જિર્ઝિમદિણ) સાધુ જિદ્દા હન્દ્રિય સે (મણુણ
મદ્દગાઈ રસાણિઠ) મનોજ્ઞ-મદ્રક રસકો (સાહ્ય) અસ્વાદિત કરકે
ઉસમેં રાગ આદિ ન કરે હસ પ્રકાર કા યહાં સંબંધ લગા લેના ચાહિયે,
(કિં તે) યદ્ મનોજ્ઞ રસ કિન ૨ પદાર્થોં કે સહારે રહતા હૈ, હસ
પ્રકાર કી આશંકા કા ઉત્તર દેને કે નિમિત્ત સૂત્રકાર યહાં ઉન કિતનેક
પદાર્થોં કે નામ નિર્દિષ્ટ કરતે હૈં (ઉગ્ગાહિમવિવિહપાણભોયણગુલકય-
ખંડકયતેલ્લઘયકયમ્કલ્લેસુ) ઘૃત, તૈલ આદિકા જિનમેં પહિલે ભોન
(તલા જાતા) દિયા જાતા હૈં ઓર ફિર વાદમેં જો ઉનમેં હી ચુરોયે જાકર
પકાયે જાતે હૈં એસે સ્વાજા આદિ પકવાન્ન અવગાહિમ કહ્લાતે હૈં તથા
અનેક પ્રકારકા જો પાન ભોજન હોતા હૈં વહ વિવિધ પાન ભોજન કહ્લાતા
હૈં ગુડ મિલા કર બનાયા ગયા ' એવં સ્વાંડ મિશ્રિત કર બનાયા ગયા
વિશેષ ભોજન ગુડકૃત ભોજન ઓર સ્વાંડકૃત ભોજન કહ્લાતા હૈં । તૈલ

ભાષ ૪ રાખવો બેઠએ. એ ૪ વિષયને સૂત્રકાર વિસ્તારપૂર્વક આ સૂત્રદ્વારા
સમજાવે છે “ જિર્ઝિમદિણ ” સાધુએ શ્રાવણી “ મણુણમદ્દગાઈ રસાણિઠ ”
મનોજ્ઞ-મદ્રક રસનો “ સાહ્ય ” આસ્વાદ કરીને તેમાં રાગ આદિ કરવાં બેઠએ
નહીં. “ કિં તે ” એ મનોજ્ઞ રસ કયા કયા પદાર્થોમાં હોય છે, તે પ્રશ્નનો
ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર અહીં એવા કેટલાક પદાર્થોનાં નામનો ઉલ્લેખ કરે છે
“ ઉગ્ગાહિમ-વિવિહપાણ-ભોયણ-ગુલકય-ખંડકય-તેલ્લ-વયકય-મ્કલ્લેસુ ” થી, તેલ
આદિનું જેમાં પહેલા જેમાં મોણુ દેવાય છે અને પછી તેમાં ૪ તળીને પક-
વવામાં આવે છે એવા ખાલ આદિ પકવાનને અવગાહિમ કહે છે, તથા અનેક
પ્રકારના જે પાન (પી શકાય તેવા) ભોજન હોય છે તેમને વિવિધ પાન
ભોજન કહે છે, ગોળ નાખીને ખતાવેલા ભોજનને ગુડકૃત અને ખાંડ નાખીને
ખતાવેલા ભોજનને આંડકૃત ભોજન કહે છે, તેલ અને ધીમાં ખતાવેલા લાડુ

સુવર્ણિની ટીકા અંબ સુ૦૧૦ 'જિહ્વેન્દ્રિયસંવર'નામકચતુર્થબ્રાવનાનિકુપણમ૯૨૫

નિષ્પાદિતાનિ યાનિ ભક્ષ્યાણિ=મોદકાદીનિ તાનિ, एषां द्वन्द्वस्तेषु તથોક્તેષુ તથા 'बहुविहेसु' बहुविधेषु-विविधप्रकारेषु 'लवणरससंजुक्तेषु' लवणरससंयुक्तेषु भक्ष्येषु=શાકપટાકાદિષુ તથા- 'बहुप्यगारमज्जिय-निट्ठाणगदालियंबसेहंबदुद्धदहि सरय-मज्जवरवारुणी सीहुकाविसायणसागट्टारसबहुप्यगारेसु' बहुप्रकारमज्जिकानिष्ठानक दालिकाम्लसंधाम्लदुग्धधिसरकमयवरवारुणी सीधुकापिसायनशाकाष्टादशबहुप्रकारेषु-तत्र-एतदास्वादंनं गृहस्थावस्थासु बोध्यम्, संयमावस्थासु सर्वथा तद्वर्जनात्, बहुप्रकारा=बहुविधा, मार्जिता=रसाला=दधिशर्करादिनिष्पादितसुगन्धद्रव्यवासित-खाद्यविशेषः, श्रीखण्डेतिभाषाप्रसिद्धः, निष्ठानकं=प्रकृतमूल्यनिष्पादितो भक्ष्यविशेषः तदुक्तम्- 'निष्ठानंति जा समयसहस्रं' इति, अयं भावः-पल्लवमुद्राभिर्निष्पाद्यते तद् भक्ष्यविशेषो निष्ठानमुच्यते । यद्वा-भक्ताद्यबोपसेचनेन संपादिते दध्यादिव्यञ्जने 'करंवा' इतिभाषाप्रसिद्धे, तथा दालिकाम्लम्=मरीचराजिकादि संस्कृतोद्विदलनि-

और घृतमें बनायागया मोदकादि भोजनीय पदार्थ तैलकृत और घृतकृत भोजन कहलाता है । इन खाद्य पदार्थों में तथा और भी (बहुविहेसु) अनेक प्रकारके (लवणरससंजुक्तेसु) लवणरसमिश्रित शाक, बड़ा आदि खाद्यपदार्थ विशेष है उनमें तथा (बहुप्यगार-मज्जिय-निट्ठाणग-दालियंब-सेहंब-दुद्ध-दहि-सरय-मज्ज-वरवारुणी-सीहु-का विसा-यण-सागट्टारस-बहुप्यगारेसु-भोग्येसु य) पहिले गृहस्थावस्था में उपयो-गमें लाये गये बहुविध भोजनीयपदार्थ जैसा मार्जिता-रसाला-दधि शर्करा आदिसे निष्पादित तथा सुगंधित द्रव्यसे वासित खाद्यविशेष कि जिसे श्रीखंड कहते हैं, उनमें निष्ठानक-एक लाख रुपये लगा कर निष्पादित किये गये भक्ष्य विशेषमें अथवा मेहरी-राबडी में, दालिकाम्लमें-मरीच राई में संस्कृत हुए तथा द्विदल चना आदि के आटे-वेसन आदिसे

આદિ ખાદ્ય પદાર્થોને તેલકૃત અને ઘૃતકૃત ભોજન કહે છે. એ ખાદ્ય પદાર્થોમાં તથા ખીબા પણ એ “ बहुविहेसु ” અનેક પ્રકારના “ लवणरससंजुक्तेसु ” લવણરસ મિશ્રિત શાક, વડા આદિ ખાદ્ય પદાર્થો છે તેમાં તથા “ बहुप्यगार-मज्जिय-निट्ठाणग-दालियंब-सेहंब-दुद्ध-दहि-सरय-मज्ज-वरवारुणी-सीहु-कावि-सायण-सागट्टारसबहुप्यगारेसु भोग्येसु य ” પહેલાં ગૃહસ્થાવસ્થામાં ઉપયોગમાં લીધેલ અનેક પ્રકારના ખાદ્યો જેવા કે ઠંડી, ખાંડ આદિમાંથી તૈયાર કરેલ તથા સુગંધિત દ્રવ્યથીયુક્ત એક ખાસ ભોજન જેને શિખંડ કહે છે. તેમાં નિષ્ઠાનક-એક લાખ રૂપિયા ખર્ચીને તૈયાર કરાવેલ ખાસ ભોજનમાં અથવા મેહરી-દૂધપાકમાં, દાલિકામ્લમાં-મરીચ, રાઈ, મેથી, છાંડ આદિનો વધાર કરેલ તથા અણા અદિના

अपादितोऽयञ्जनविशेषः 'कढ' इति भाषाप्रसिद्धोऽसेधाम्लम्=खाद्यविशेषः, पक्वं सद् यदम्लेन संस्क्रियते तत्खाद्यं सेधाम्लमुच्यते । दुग्धं दधि च प्रसिद्धम्, सरकः=गुड-धातकीपुष्पादिना सिद्धः 'सरकाः' इति भाषाप्रसिद्धाः, मद्यं-पैष्टं गोधूममधिसू-निष्पन्नम्, वरवारणी=श्रेष्ठमदिरा, सीधुः=आसवः-इक्ष्वादिजनितमद्यम्, कापिशायनम्=कापिशी नाम नगरी तस्यां जातं द्राक्षानिर्मितं विशिष्टमद्यम्, एतान्यपि मद्यानि गृहस्थावस्थासु समास्वादितानि न तु संयमावस्थायामिति बोध्यम्, तथा शाका अष्टादश-अष्टादशसंख्यकाः शाकाः, एषां बहुव्रीहिसमासे तानि तथोक्तानि, तानि च बहुप्रकाराणीतिकर्मधारयः, तेषु तथोक्तेषु 'मणुब्रवन्नगंधरसफासबहुद्वसंभिएसु' मनोज्ञवर्णगन्धरसस्पर्शबहुद्रव्यसंभृतेषु=मनोहरवर्णगन्धरसस्पर्शवद् बहुविधद्रव्यसंस्कृतेषु 'भोयणेषु' भोजनेषु च स्थितान् रमान् गृहस्थावस्था-बनाये गये "कढी" रूप व्यञ्जनम्, सेधाम्लम् पका कर के जो खटाई से संस्कृत किया गया हो, ऐसे खाद्यविशेष में, दुग्ध, दधिमें गुड़, धातकी पुष्प-महुआ-इन दोनों के मेल से बनाये गये सरका में, गोधूम-गेहूँके आटेसे निष्पन्न किये गये मद्य-पैष्ट मद्य में, वरवारणी-उत्तम मदिरा में मुनि अवस्था में नहीं, किन्तु गृहस्थावस्थामें उपयोग में लाई गई भेट मदिरा वराण्डी में, सीधु-आसव इक्षु आदिके रससे बनाये गये मद्यमें, कापिशायन-कापिशी नामकी नगरी में द्राक्षाओं से बनाये विशिष्ट मद्यमें तथा अठारह प्रकार के शाकों में, इत्यादि अनेक प्रकार के भक्ष्य पदार्थों में तथा (मणुब्रवन्नगंधरसफासबहुद्वसंभिएसु भोयणेषु य) मनोज्ञ वर्ण, गंध, रस और स्पर्शवाले अनेकविध द्रव्यों से निष्पन्न हुए भोजनों में स्थित रसों को गृहस्थावस्थामें आस्वादित करके उनमें, तथा

दोहमांथी अनावेल 'कढी' नामना व्यञ्जनमां, सेधाम्लमां-पकावीने अठाश उमिरवामां आवी होथ अेषां आद्योमां, इध, दहीमां गोण, धातकी पुष्प-महुआ अे अन्नेना मिश्रणशी अनावेल सरकामां, गोधूम-महुआ दोहमांथी तैयार करेल मद्य-पैष्टमद्यमां, वरवारणी उत्तम मदिरामां, मुनि अवस्थामां नहीं पण गृह-स्थावस्थामां उपयोगमां लीधेल श्रेष्ठ मदिरा-वरांडीमां, सीधु-आसव-शेरडी आदिना रसमांथी अनावेल मदिरामां, कापिशायन-कापिशी नामनी नगरीमां द्राक्षमांथी अनावेल अेक विशिष्ट मद्यमां, तथा अठार प्रकारनां शाकमां इत्यादि अनेक प्रकारनां आद्य पदार्थोमां तथा "मणुब्रवन्नगंधरसफासबहुद्वसंभिएसु भोयणेषु य" मनोहर वर्ण, गंध, रस अने स्पर्शवाला अनेक प्रकारनां द्रव्योमांथी तैयार करबेल दोहमांथी रडेल रसोनो गृहस्थावस्थामां स्वाद

सुदर्शिनी टीका-५ सू०१० जिह्वेन्द्रियसंवर'नामकचतुर्थभावनातिरूपणम् १२७

यामास्वाद्य तेषु तथा—‘अन्नेसु य’ अन्येषु च = एतद्भिन्नेषु ‘एवमाहणसु’ एवमादिकेषु = पूर्वोक्तसदृशेषु—‘मणुन्नभद्रणसु’ मनोन्नभद्रकेषु रसेषु कथं भूतेषु रसेषु ? तेषु=ये रसा अविरतगृहस्थावस्थायामास्वादितास्तेषु ‘समणेण’ श्रमणेन=श्रमणावस्थास्थितेन मुनिना ‘न सज्जियव्वं’ न सक्तव्यम् ‘जाव’ यावत्=यावत्करणात्-न रक्तव्यम्, न गर्दितव्यम्, न मोहितव्यम्, न विनिघात आप-त्तव्यः, न लोब्धव्यम्, न तोष्टव्यम्, न हसितव्यम्, एषामर्थः प्रथमभावनाया-मुक्तः ! न च श्रमणः ‘तत्थ’ तत्र-गृहस्थावस्थोपभुक्तरसेषु ‘सइं च’ स्मृतिं च=स्मरणमपि, ‘मइं च’ मतिं च=श्रमणावस्थायां तदुपभोगबुद्धिमपि ‘कुज्जा’ कुर्यात् । ‘पुणरवि’ पुणरुच्यते—‘जिम्भदिण’ जिह्वेन्द्रियेण ‘अमणुन्नपाव’

(अन्नेसु एवमाहणसु मणुन्नभद्रणसु) दूसरे और इसी प्रकारके मनोज्ञ भद्रक रसों में कि जो अविरत नित्य गृहस्थावस्थामें आस्वादित किये हुए थे (समणेण) श्रमण अवस्थामें स्थित हुए मुनि को (न सज्जियव्वं जाव न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा) आसक्तचित्त नहीं बनना चाहिये यावत् उसे उनकी स्मृति नहीं करना चाहिये और उनमें अपनी कि मैं श्रमणावस्थामें इनका भोग करूं इस प्रकार बुद्धि को भी नहीं लगाना चाहिये । यहां यावत् शब्द से “न रज्जियव्वं, न गिज्जियव्वं, न मुज्जियव्वं, न विणिघायं आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न तुसियव्वं, न हसियव्वं” इन पूर्वोक्त पदों का ग्रहण किया गया है । इन सबका अर्थ प्रथम भावना में लिखा जा चुका है । (पुणरवि) इसी तरह फिर (जिम्भदिण) जिह्वा इन्द्रिय से (अमणुन्नपावगाइं रसाइं) अरुचिका-

लब्धिने तेभनामां तथा “अन्नेसु एवमाहणसु मणुन्नभद्रणसु” ओ ७ प्रकारना जीव्वा लब्धे भनोअ रसेमां के ओनो गृहस्थावस्थाभां सहा स्वाद लेवातो हतो तेमां “समणेण” साधु अवस्थाभां रछेल मुनिओ “न सज्जियव्वं जाव न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा” “आसकत थपुं जेधओ नही” त्यांथी शइ करीने “तेणे तेभने याद करवा जेधओ नही. अने हुं श्रमणु - अवस्थाभां तेभने उंपलोअ कइं ओयो पिआर पाणु करवा जेधओ नही” त्यां सुधीना अर्थ अहणु करवाने छे.

अही ‘यावत्’ शब्दथी “न रज्जियव्वं, न गिज्जियव्वं, न मुज्जियव्वं, न विणिघायं आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न तुसियव्वं न हसियव्वं” ओ पूर्वोक्त पदो अहणु करायेल छे. ओ अधानो अर्थ पडेती भावनाभां अपाध गथे छे “पुणराप” ओ रीते “जिम्भदिण” ओलथी “अमणुन्नपावगाइं रसाइं”

वगाई” अमनोज्ञवायकान्=अरुचिकरान्, ‘ रसाई ’ रसान् ‘साइय’ स्वादयित्वा, ‘ किं ते ’ कांस्तान्=कथंभूतांस्तान् रसान् । इत्याह—‘ अरसविरससीयलुक्खणिज्जप्पपाणभोगणाई’ अरसविरसशीतलरुक्षनिर्याप्यपानभोजनानि, तत्र-अरसानि=रसरहितानि=हिङ्गुवादिस्कारवर्जितानि, विरसानि=विगतरसानि=पर्युषितानि, शीतानि=शीतलानि रुक्षाणि=घृतादिलेशवर्जितानि, निर्याप्याणि=बलवद्धनशक्तिरहितानि यानि पानभोजनानि तानि तथोक्तानि, तथा—‘ दोसीणवायन्नकुहिय-पूइय-अमणुन्नविणट्ट-पसूय-घहुदुग्धिभंगधियाई ’ दोषलव्यापन्नकुथितपूतिका मनोज्ञ विनष्टप्रदूतबहुदुर्गन्धिगतानि, तत्र—‘ दोसीण ’ ति-दोषान्=दोषा-रात्रिस्तत्र पक्वं यदन्नं, रात्रिपर्युषितमित्यर्थः, व्यापन्नं=विनिष्टवर्णम्, कुथितं=कोथयुक्तम्, शटितमित्यर्थः, पूतिकम्=गन्धयुक्तम्, अत एव-अमनोज्ञम्=असुन्दरम्, विनष्टम्=अत्यन्तविकृतावस्थामाप्तम्, ततः प्रभूतः=प्रादुर्भूतो यो बहु दुर्गन्धः=अतिदुर्गन्धः स जातो येषु तानि तथोक्तानि, तथा—‘ तिच्चकडुयकसायअंघिलरसलिंदनीरसाई ’

रक रसों का (साइय) आस्वादन करके उनमें साधु को राग द्वेषभाव धारण नहीं करना चाहिये । (किं ते ?) अरुचिकारक रस कौन २ से हैं इस प्रश्न का समाधान करने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं—(अरसविरससीयलुक्खणिज्जप्पपाणभोगणाई) अरस-हिङ्गु आदिके वधार से वर्जित, विरस—रस से बिहीन-पर्युषित, शीत-शीतल-ठंडे, रुक्ष-घृतादि के लेश से रहित, निर्याप्य-बल बढ़ाने की शक्ति से रहित, तथा (दोसीणवायन्नकुहिय पूइय अमणुन्नविणट्टपसूयघहुदुग्धिभंगधियाई) दोसीणरात्रिमें पकाये गये व्यापन्न-विनिष्ट वर्णवाले, कुथित-सड़े हुए पूतिक दुर्गन्धयुक्त, अतएव मनोज्ञ-असुन्दर तथा विनष्ट-अत्यन्त विकृत अवस्था वाले और इसी कारण जिनमें से अत्यन्त दुर्गन्ध निकल रही हो ऐसे तथा जो (तिच्चकडुयकसायअंघिलरसलिंदनीरसाई) मरीच-मिर्च के जैसा

अरुचिकर रसानुं “साइय” आस्वादन करीने तेभनामां साधुओ द्वेषलाव राणवेओ भेदओ नही। “ किं ते ? ” अरुचिकारक रस कथा कथा छे ओ प्रश्ननुं समाधान करवाने साटे सूत्रकार कहे छे—“ अरसविरससीयलुक्खणिज्जप्पपाणभोगणाई ” अरस-हिङ्गु आदिना वधारथी रहित, विरस-रसरहित-पर्युषित, शीत-शीतल-ठंडा, रुक्ष-घी विनानुं, निर्याप्य-रुण वधारवानी शक्तिथी रहित, तथा “ दोसिणवायन्नकुहियपूइयअमणुन्नविणट्टपसूयघहुदुग्धिभंगधियाई ” दोसीण-रात्रे राधेव, व्यापन्न-विनष्ट वर्णवाणुं-कुथित-सड़ेव, पूतिक-दुर्गन्धवाणा, तेथी अमनोज्ञ-असुन्दर तथा विनष्ट-अत्यन्त विकृत अवस्थावाणा अने ओ धारणे ओभांथी अत्यन्त दुर्गन्ध निकलती छाय तेवा, तथा ओ “ तिच्चकडुयकसायअंघिल

सुवर्णिनी टीका अ०५सू० १० जिह्वेन्द्रियसंहर'नामकचतुर्थभाष्यानिरूपणम् १२९

तिक्तकटुककषायाम्लरसलिङ्गनीरसानि = तत्र तिक्तं मरीचवत्, कटुकं-निम्बवत्, कषायम्=आमलफलवत्, आम्लरसम्=अम्ल 'इमली' कावत्, लिङ्ग=ससैवाल-पुराणजलवत्, नीरसं=विगतरसम् एषां द्वन्द्वस्तानि तथोक्तानि 'आस्वाद्य-उप-कारसविरसादि पानभोजनस्थितानमनोज्ञपापकान् रसानास्वाद्येत्यर्थः, 'समणेण' श्रमणेन-साधुना 'तेसु' 'तेषु=उक्तेषु 'अमणुजपावणसु' अमनोज्ञपापकेषु 'र-सेसु' रसेषु तथा-एवम् 'अन्नेसु' अन्येषु 'एवमाइसु' एवमादिकेषु=एवं प्रकारेषु च-अमनोज्ञपापकेषु रसेषु 'न रसियव्वं' न रोष्टव्यम्, 'जाव' याव-रक्षणान्-न हीलियव्वम्, 'न निंदियव्वं, न खिसियव्वं, न छेतव्यम्, न तिक्त हो-चरपरा हो, कटुक-नीम के जैसा कटुवा हो, आमले के जैसा कषाय रसवाला हो, कचको बैरी-अम्रिया के जैसा जो खटा हो, लिङ्ग-सैवालसहित पुराने जलके समान हो, विगतरस हो ऐसे इन उपर्युक्त अरस विरस आदि पान भोजनमें स्थित अमनोज्ञ पापक-अरुचिकारक रसों को आस्वादित करके (समणेण) भुनि को (तेसु) उन (अमणु-जपावणसु) अमनोज्ञ पापक-अरुचिकारक-रसोंमें तथा (अण्णेषु एवमाइसु रसेसु) इसी प्रकार के और भी इनसे भिन्न रसों में (न रुसि-यव्वं जाव चरेज्ज घम्मं) रोष नहीं करना चाहिये। "न हीलियव्वं, न निंदियव्वं, न खिसियव्वं, न छिंदियव्वं, न भिंदियव्वं, न बहेयव्वं, न दुग्गुंछावत्तिपावि लब्भा उप्पाएउं" उनकी अवज्ञा नहीं करनी चाहिये, उन्हें देखकर उनपर श्लिष्टगाना-परोक्ष में निंदा नहीं करनी चाहिये। तथा अमनोज्ञ रसस्थित द्रव्यका छेदन नहीं करना चाहिये, भेदन एवं

रसलिङ्गनीरसाई "मरीच-मठ्यां जेषां तीणां डोय, थरपरा डोय, कटुक-लीमडा जेषां डोय, आमला जेषां तुरा डोय, काथी केरी जेषां आटां डोय, लिङ्ग-जे शेवाणयुक्ता पुराणा पाप्पी जेषां डोय, विगत रस जेषां डोय, उपर कहेला अरस विरस आदि बोअनोमां रडेल अमनोज्ञ पापक-अरुचिकर रसेसुं आस्वादन करीने "समणेण" भुनिअे "तेसु" ते "अमणुजपावणसु" अमनोज्ञ पापक-अरुचिकर रसेसुं तथा "अण्णेषु एवमाइसु रसेसु" जे ७ प्रकारना भोजन रसेसुं पाणु "न रुसियव्वं जाव चरेज्जघम्मं" रोष करवे। जेअे नडीं। "न हीलियव्वं, न निंदियव्वं, न खिसियव्वं, न छिंदियव्वं, न भिंदियव्वं, न बहेयव्वं, न दुग्गुंछावत्तिपावि लब्भा उप्पाएउं" तेभनी अवज्ञा न करवी जेअे, तेभने जेअेने तेभनी परोक्ष रीते निंदा न करवी जेअे, तथा अरुचिकर रसवाणा द्रव्यनुं छेदन न करवुं जेअे, भेदन अने नाश न करवे।

ધેતુવ્યમ્ ન હન્તુવ્યમ્ ન જુગપ્સાદ્વૃત્તિકાઽપિ લભ્યા ઉત્પાદયિતુમ્ । एवं जिह्वे-
न्द्रियभावनाभावितो भवति अन्तरात्मा=जीवः मुनिः । ततश्च-मनोज्ञमनोज्ञसुरभि-
दुरभिरागद्वेषे प्रणिहित्वात्मा साधुर्मनोवचनकायगुणः संवृतः प्रणिहितेन्द्रियः-एषां
संग्रहो बोध्यः ' धम्मं ' धર્मे 'चरेज्ज ' चरेत्=अनुतिष्ठेत् ॥ सू० १० ॥

નાશ નહીં કરના ચાહિયે । ઓર ન અપને મનમેં ખી ડસ પર જુગપ્સા
વૃત્તિ જમેં એસી ચેષ્ટા હી કરની ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર સે 'જિહ્વાઈન્દ્રિય
મુઝે વશમેં કરની ચાહિયે અન્યથા મહાન્ અનર્થ કા ભાગી મુઝે હોના
પડેગા ' ઇસ પ્રકારકી જિહ્વા ઇન્દ્રિયકી ભાવના સે ભાવિત જબ મુનિ હો
જાતા હૈ તબ વહ મનોજ્ઞરૂપ એવં અમનોજ્ઞરૂપ સુરભિદુરભિ ઇસ મેં રાગ
દ્વેષ કરને સે રહિત બન જાતા હૈ । ઇસ પ્રકારકી સ્થિતિ સે સંપન્ન બના
હુઆ સાધુ અપને મન, વચન, ઓર કાયરૂપ ત્રીન યોગોં કો શુભ ઓર
અશુભ કે વ્યાપાર સે રહિત કર લેતા હૈ ઓર ઇસ ઇન્દ્રિય કે સંવરણસે
યુક્ત બન જાતા હૈ । ઇસ તરહ રસનેન્દ્રિય કે સંવરણસે યુક્ત હોકર વહ
ચારિત્રરૂપ ધર્મકા પાલન કરને મેં સર્વે પ્રકારસે દૃઢ હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—ઇસ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકારને ઇસ વ્રત કી ચોથી ભાવના કા
સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કિયા હૈ । ડસમેં ડન્હોંને યહ સમજાયા હૈ કિ સાધુકો
અપની રસના ઇન્દ્રિય કો રુચિકારક એવં અરુચિકારક રસોં કે
આસ્વાદજન્ય રાગદ્વેષકે પક્ષપાત સે રહિત કર લેની ચાહિયે, તખી જા
કર વહ રસનેન્દ્રિય વિજયી હો સકતા હૈ । એસા નહીં હોના ચાહિયે કિ

જેઠાએ. પોતાના મનમાં કે પારકાના મનમાં તેના પ્રત્યે જુગપ્સાવૃત્તિ થાય તેવું
વર્તન કરવું જેઠાએ નહીં, આ રીતે “ મારે જિહ્વા ઇન્દ્રિયને વશ રાખવી
જેઠાએ. નહીં તો મારે મહાન અનર્થને પાત્ર બનવું પડશે.” આ પ્રકારની
જિહ્વા ઇન્દ્રિયની ભાવનાથી બ્યારે મુનિ ભાવિત થાય છે ત્યારે તે મનોજ્ઞપ
અને અમનોજ્ઞ રૂપ, સુંદર અને અસુંદર દ્રવ્યો પ્રત્યે રાગ દ્વેષથી રહિત બની
બચ છે. આ પ્રકારની ભાવનાથી યુક્ત બનેલ સાધુ મન, વચન અને કાય,
એ ત્રણે યોગોને શુભ અને અશુભ વ્યાપારથી રહિત કરી લે છે. અને આ
ઇન્દ્રિયના સંવરણથી યુક્ત બની બચ છે. આ રીતે રસના ઇન્દ્રિયના સંવરણથી
યુક્ત થઈને તે ચારિત્રરૂપ ધર્મનું પાલન કરવામાં બધી રીતે દૃઢ બની બચ છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે આ વ્રતની ચોથી ભાવનાનું સ્વરૂપ
પ્રગટ કર્યું છે તેમાં તેમણે સમજાવ્યું છે કે સાધુએ પોતાની રસના ઇન્દ્રિયને
રુચિકર અને અરુચિકર રસોના આસ્વાદનને કારણે ઉત્પન્ન થતાં રાગદ્વેષને પક્ષ-
પાતથી રહિત કરવી જેઠાએ; ત્યારે જ તે રસનેન્દ્રિય પર વિજય મેળવી શકે

સુરશિની ટોકા અ ૪૧ સૂ૦૧૧ 'સ્વયંન્દ્રિયસંવર'નામ રૂપશ્રમભાષનાનિરૂપણમ્ ૧૩૧

પશ્ર્મી ભાવનામાહ—‘ પંચમં ’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—પંચમં પુણ ફાસિંદિણ્ણ ફાસિય ફાસાઈં મણુન્નમ્-
દકાઈં, કિં તે ? દગ મંડવ-હાર-સેયચંદણ-સીયલ-વિમલ-જલ-
વિવિહ-કુસુમસરથ-ઓસીરસુત્તિય-મુણાલદોસિણા પેદુણ
ઉક્કલેવગ-તાલિયંટવીયણગ-જણિય-સુહસીયલે ય પવણે
ગિમ્હકાલે, સુહફાસાણિ ય ધઠ્ઠુણિ સયણાણિ ય આસ
ણાણિ ણે થ પાઉરણાણે ય સિસિરકાલે, અંગારપ્પવાવણા

રુચિકારક રસ મિલ જાવે તો ચિત્તમાં ઉસકે પ્રતિ રાગભાવ ઉદ્ભૂત હો
જાવે ઔર અરુચિકારક રસ મિલ જાવે તો ઉસમેં દ્વેષભાવ ઉત્પન્ન હો
જાવે । દોનોં પ્રકારકે રસોં મેં સમતાભાવ ધારણ કરના સાધુ કા સર્વ
પ્રથમ કર્તવ્ય હૈ । હસી વિષયકો લેકર હસ સૂત્રમેં રુચિકારક રસકે
આશ્રયભૂત ઝગાહિમ આદિ કિતનેક પદાર્થોં કો તથા અરુચિકારક રસ
કે આશ્રયભૂત અરસવિરસ આદિ પદાર્થોં કો કહા ગયા હૈ । તથા સાથર
મેં ગઠ સમજાયા ગયા હૈ કિ ગૃહસ્થાવસ્થા મેં જિન રુચિકારક રસોં કા
આસ્વાદ લિયા થા વે રસ સાધુ અવસ્થા મેં સ્મરણ કરને યોગ્ય નહીં હૈ ।
કારણ કિ ઉનકી સ્મૃતિ સે જિહ્વા ઇન્દ્રિય મેં રસકે પ્રતિ લોલુપતા વઢતી
હૈ । હસ પ્રકાર સે રસના ઇન્દ્રિય કે વિષય મેં સમભાવ રખનેવાલા સાધુ
ચારિત્ર ધર્મકા નિર્બાંહ અઢ્ઠી તરહ સે કરનેવાલા હો જાતા હૈ ॥મૂ૦૧૦॥

છે એવું ન બનવું એટલે કે રુચિકર રસ મળે તો તેના પ્રત્યે ચિત્તમાં રાગભાવ
પેદા થઇ જાય છે, અને અરુચિકર રસ મળે તો દ્વેષભાવ પેદા થાય. બન્ને
પ્રકારના રસો પ્રત્યે સમભાવ રાખવો તે સાધુનું પહેલું કર્તવ્ય છે. એ વિષયનું
વર્ણન કરતાં આ સૂત્રમાં રુચિકર રસયુક્ત ઝગાહિમ આદિ કેટલાક પદાર્થોને
તથા અરુચિકર રસયુક્ત અરસવિરસ આદિ પદાર્થોને બતાવ્યા છે તથા સાથે
સાથે એ સમજાવ્યું છે કે ગૃહસ્થાવસ્થામાં જે રુચિકારક રસોનો સ્વાદ લીધો
હતો તે રસોનું સાધુ અવસ્થામાં સ્મરણ કરવું તે પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે
તેને યાદ કરવાની જિહ્વા ઇન્દ્રિયમાં રસના પ્રત્યે લાલસા વધે છે. આ રીતે
રસના ઇન્દ્રિયની આબતમાં સમભાવ રાખનાર સાધુ ચરિત્ર ધર્મનું સારી રીતે
પાલન કરનાર બની જાય છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

य आयवनिद्धमउय-सीय उसिणलहुया य जे उउसुहफासा
 अंगसुहनिवुइकरा ते, अन्नेसु य एवमाइएसु फासेसु मणुन्न-
 भइएसु न तेसु समणेण सज्जियव्वं, न रज्जियव्वं, न गिज्जि-
 यव्वं, न मुज्जियव्वं, न विणिघाय आवज्जियव्वं, न लुभि-
 यव्वं, न अज्जोववज्जियव्वं, न तूसियव्वं, न हसियव्वं, न
 सइं च मइं च तत्थकुजा । पुणरवि फासिंदिएण फासिय
 फासाइं अमणुन्नपावगाइं, किं ते ? अणेगवहवंध-तालणं-
 कण-अइभारारोवण-अंगभंजण-सुईनखप्पवेस-गायपच्छण-
 लक्खारसखारतेल्लकलकलंत---तउसीसककाललोह--सिंचण-
 हडिबंधण रज्जुनिगल-संकलन हत्थंडुयकुंभिपाकदहण-सीह-
 पुच्छण-सूलभेय--गयचलणमलण-करचरणकन्ननासोद्वसीसछे-
 यण-जिब्भच्छेयण-वसणनयण हिययदंतभंजण-जोत्तलयकस-
 प्पहारपादपणिहजाणुपत्थरनिवायपीलगक --- विक्कलुअगणि
 विच्छुयडक्कवायायवदंसमसगनिवाए दुट्ठणिसज्जदुन्निहिया
 कक्खड-गुरुसीयउसिणलुक्खेसु बहुविहेसु अन्नेसु य एवमाइएसु
 फासेसु अमणुन्न पावगेसु न तेसु समणेण रूसियव्वं, न हीलि-
 यव्वं, न निंदियव्वं, न गरहियव्वं, न खिसियव्वं, न छिंदियव्वं,
 न भिंदियव्वं, न वहेयव्वं, न दुगुंछावत्तियाविलब्भा उप्पाएउं
 एवं फासिंदियभावणाभाविओ भवइ अंतरप्पा मणुन्नामणु-
 न्नसुब्भिदुब्भिरागदोसपणिहियप्पा साहू मयवयणकायगुत्ते
 संवुडे पणिहिइंदिए चरेज धम्मं ॥ सू० ११ ॥

सुदर्शिनी टीका अ०५ सू०११ 'स्पर्शेन्द्रियसंवर' नामक पञ्चम भावनानिरूपणम् ९३३

टीका—'पुण' पुनः 'पंचमं' पञ्चमी स्पर्शेन्द्रियसंवरणाभिधेयां भावना-
माह—'फासिदिण' स्पर्शेन्द्रियेण 'मणुणमद्गाइ' मनोज्ञभद्रकान् 'फासाइ'
स्पर्शान् 'फासिय' स्पृष्टा 'किं ते' काँस्तन्-कथंभूताँस्ताय? इत्याह—'दगमंडव
-हार-सेय-चंदणसीयलविमलजलविविहकुसुमसत्थर-ओसीर-मुत्तियमुणालदोसिणा'
दकमण्डपहारश्चेतचन्दनशीतलविमलजलविधिप्रकुसुमसंस्तरोशीरमौक्तिकमृणालज्यो-
त्सनाः, तत्र-दकमण्डपाः=उदकमण्डपाः, जल यन्त्रस्थानानीत्यर्थः, हाराः प्रतीताः,
श्चेतचन्दनानि=श्रीखण्डचन्दनानि, शीतलविमलजलानि = शीतलानि = विमलानि

अथ सूत्रकार इस व्रतकी पांचवी भावना कहते हैं—'पंचमं पुण' इ०
टीकार्थ—(पंचमं पुण) पांचवीं भावना स्पर्शेन्द्रिय संवर नाम की
है। वह इस प्रकार से है—(फासिदिण) स्पर्शिन इन्द्रिय से (मणुण-
मद्गाइ फासाइ) मनोज्ञ भद्रक-स्पर्शिन इन्द्रिय को सुखकारक-स्पर्शों
को (फासिय) स्पर्श कर के साधु को उन में रुचिभाव-रागपरिणति
नहीं करना चाहिये, इस प्रकार से यहां संबंध लगा लेना चाहिये—
(किं ते?) रुचिकारक स्पर्श के विषयभूत कौन २ से पदार्थ हैं, इस
प्रकार के प्रश्नका उत्तर देते हुए सूत्रकार उन कितनेक पदार्थों को नाम
निर्देशपूर्वक कहते हैं—(गिम्हकाले दगमंडव-हार-सेयचंदण-सीयल
विमल-जलविविहकुसुमसत्थ-ओसीर-मुत्तिय-मुणाल-दीसिणा-पेहुण-
उक्खेवग-तलिघंट-वीयणग-जणिय सुहसीयले य पवणे) प्रीष्मकालमें
दकमंडप-जल के फुआरे जहां जल बरसाकर स्थान को ठंडा रखते
हों,—ऐसा जल यंत्र स्थान, हार श्वेतचंदन-श्रीखंडचंदन, शीतल, निर्मल

इसे सूत्रकार या व्रतनी पांचवी भावना बतावे छे—

“पंचमं पुण” इत्यादि—

टीकार्थ—“पंचमं पुण” पांचवी भावना स्पर्शेन्द्रिय संवर नामनी छे
ते या प्रमाण छे “फासिदिण” स्पर्शेन्द्रियथी “मणुणमद्गाइ फासाइ”
मनोज्ञभद्रक स्पर्शेन्द्रिय सुखकारक स्पर्शेनी “फासिय” स्पर्श करीने साधुओ
तेभना प्रत्ये इच्छिभाव-रागपरिणति करवी ओईओ नही

“किं ते?” इच्छिकारक स्पर्शबाणा क्या क्या पदार्थो छे ते प्रश्नो
उत्तर आपता सूत्रकार ओया डेटलाक पदार्थोनी उक्खेण करीने कडे छे डे—

“गिम्हकाले दगमंडव-हार-सेयचंदण-सीयलविमलजल-विविहकुसुमसत्थर-
आओर-मुत्तिय-मुणाल-दोसिणा-पेहुण-उक्खेवग-तलिघंट-वीयणग-जणिय सुहसी-
यले य पवणे” प्रीष्म ऋतुभां दकमंडप अथां पाणीना कुआरा पाणीने उडाडीने

=निर्मलानि च यानि जलानि तानि, तथा-विविधकुटुमसंस्तराः=विविधानाम्=अनेकप्रकाराणां कुसुमानां=पुष्पाणां ये संस्तराः=शय्यास्ते, तथा-उशीराणि=सुगन्धिवृक्षानि, 'खश' इति प्रसिद्धानि, मौक्तिकानि=मुक्ताफलानि, मृणालानि=पद्मनालानि, ज्योत्स्नाः=चन्द्रिकाः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, ताः, तथा- 'पेहुणउक्खेवगतालियंटीयगमज्जिपमुहसीयले' पिच्छोत्क्षेपकताळट्टन्तव्यजनकजनितमुखशीतलान्, तत्र-पिच्छोत्क्षेपकाः=पिच्छानां=मयूरपिच्छकानां ये उत्क्षेपकाः=व्यजनानि, तालट्टन्तानि=तालपत्रव्यजनानि, व्यजनकानि=वंशदलनिर्मितव्यजनानि तज्जनिताः सुखाः=सुखकराः शीतलास्तांस्तथोक्तान् 'पवणे य' पवनार्थं 'सिम्हकाले' ग्रीष्मकाले । तथा-'सुहकासाणि य' सुखदर्शानि च सुखः=सुखकरः स्पर्शो येषां तानि-स्पर्शसुखावहानीत्यर्थः, 'बहूनि-अनेकप्रकाराणि' सयणाणि आसणाणि य' शयनान्यासनानि च, प्रावरणगुणार्थं=मृदुस्पर्शान् शीतापहारकानुत्तरीयांश्च 'सिसिरकाले' शिशिरकाले=शीतकाले, तथा-'अंगारप्प-

जल, विविध प्रकार के पुष्पों से रचित शय्या, उशीर-शंख, मुक्ताफल, मृणाल-कमलनाल, और दोसिंगाचंद्रिका-चांदनी को, तथा पेहुणउक्खेवग-मयूर के पिच्छों के बने हुए पंखों की, तालपत्र के बने हुए पंखों की और वांस की शलाकाओं से बने हुए पंखों की, सुखदायक शीतल वायु को तथा-सुखप्रद स्पर्शवाले अनेक प्रकार के शयन और आसनों को, (सिसिरकाले) शीतलकाल में तथा (सुहकासाणि य) नरम-स्पर्शवाले शीतापहारक (बहूनि सयणाणि आसणाणि य) अनेक प्रकार के शयन और आसनों को, तथा (प्रावरणगुणे य) ओढ़ने के चदर आदि वस्त्रों को (अंगारप्पयावणा य) अग्नि के उष्णस्पर्श को,

ज्याने ठंडी शय्यता डेय, ओवां जलयंत्रवाणां स्थान, डार, श्वेत बंदन, शीतल, निर्मल जल, विविध प्रकारता पुष्पा बडे जनावेडी शय्या, उशीर-पश, मुक्ताफल, मृणाल-कमलनाल, अने दोसिंगा-चंद्रिका-चांदनीनी, तथा पेहुणउक्खेवग-मोरनां पीछांना जनावेल पंजाता, तालपत्रभांथी जनावेल पंजाता अने वांसनी सगीओभांथी जनावेल पंजाता, सुखदायक शीतल वायुनो तथा सुखप्रद स्पर्शवाणां अनेक प्रकारतां शयन अने आसनोनो स्पर्श करवे ओछेओ नडीं तथा "सिसिरकाले" शिवाजानां "सुहकासाणि य" नरम स्पर्शवाणां शीत दूर करतारां "बहूनि सयणाणि आसणाणि य" अनेक प्रकारता शयनो अने आसनोनो, तथा "प्रावरणगुणे य" ओढवानां आदर आदि वस्त्रोनो, "अंगारप्पयावणा य" अग्निता उष्ण स्पर्शोनो, "आयकनिद्धम-

सुदर्शनी टीका अ०५ सू०११ 'स्पर्शोन्मिद्यस्व' नामकपञ्चमभावगतिरूपणम् २३५

यावणा य ' शरीरस्य अङ्गारप्रतापनाश्च=गृहिनिषेणानि च, ' आयवनिद्रमउयसी-
यउसिणलहुया य ' आतपस्निग्धमृदुकशीतोष्णलघुकांश्च, तत्र-आतपः=सूर्यतापः,
स्निग्धाः=चिकणाः, मृदुकाः=कोमलाः, उष्णाः=ऊष्मयुक्ताः, लघुकाः=मनोज्ञाः,
एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, ' जे ' ये ' उउसुहफासा ' ऋतुमुखस्पर्शाः-ऋतुषु=हेम-
न्तादिषु सुखः=सुखकरः स्पर्शो येषां ते तथोक्ताः, ' अंगसुहनिव्वुहकरा ' अङ्ग-
मुखनिर्वृत्तिकराः=अङ्गसुखं=शरीरसुखं, निर्वृतिः=मनः स्वास्थ्यं च कुर्वन्ति ये ते
तथोक्ताः, ' ते ' तान् स्पृष्ट्वा, ' समणेण ' श्रमणेन=साधुना ' तेसु ' तेषु-पूर्वा-
क्तेषु ' मणुन्नभइएसु फासेसु ' मनोज्ञभद्रकेषु स्पर्शेषु, तथा-एभ्यः ' अन्नेसु य ' अन्येषु च ' एवमाइएसु ' एवमादिकेषु ' फासेसु ' स्पर्शेषु ' न सज्जियव्वं ' न
सक्तव्यम्=आसक्तिनैव कर्तव्या, तथा--' न रज्जियव्वं ' न रक्तव्यम्=रागो
न कर्तव्यः, ' न गिज्झियव्वं ' न गर्दितव्यम्=गृद्धिभावो न कर्तव्यः, ' न मुज्झि-
यव्वं ' न मोहितव्यम्-तत्र मोहो न कर्तव्यः, तथा-न ' विणिघायं ' विनिर्घातः=
तदर्थं चारित्र्यभ्रंशः, ' आवज्जियव्वं ' आपत्तव्यः-कर्तव्य इत्यर्थः, ' न लुभियव्वं ' न
लोभव्यम्=लोभो न कर्तव्यः, ' अज्झोववज्जियव्वं ' न अध्वुपपत्तव्यम्=तत्प्रा-

(आयवनिद्रमउयसीय उसिणलहुया य) सूर्य के ताप को, चिकणपदार्थ
को, कोमलपदार्थ को उष्ण पदार्थ को, हल्के पदार्थ को, कि (जे) जो उ
उ सुहफासा) ऋतु के अनुसार जिनका स्पर्श सुखजनक होता है और
(अंगसुहनिव्वुहकरा) शरीर को एवं मन को आनंद प्रदान करता है,
उनको शरीर से स्पर्श करके (समणेण) साधु को (तेसु) उन २ (मणु-
न्नभइएसु फासेसु) मनोज्ञभद्रक-रुचिकारक-स्पर्शों में तथा (अण्णे-
सु य एवमाइएसु फासेसु) इन से अतिरिक्त और भी स्पर्शों में (न
सज्जियव्वं, न रज्जियव्वं, न गिज्झियव्वं, न मुज्झियव्वं, न विणिघायं
आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न अज्झोववज्जियव्वं, न तुसियव्वं, न

यसीय-उसिण-लहुया य " सूर्यना तापनो, मुद्रायम पदार्थनो, कोमल पदा-
र्थनो, उष्ण पदार्थनो, हलका पदार्थनो, के " जे " के " उउसुहफासा " के
ऋतु प्रमाणे केनो केनो स्पर्श सुखदायक लागे छे अने " अंगसुहनिव्वु
हकरा " शरीरने तथा मनने आनंद आपे छे, तेभनो शरीरथी स्पर्श करीने
" समणेण " साधुअे " तेसु " ते दरेके " मणुन्नभइएसु फासेसु " तनेरुचिकर-
रुचिकारक स्पर्शोंभां तथा " अण्णेसु एवमाइएसु फासेसु " ते सिवायना भीअ
पण्ण स्पर्शोंभां " न सज्जियव्वं, न रज्जियव्वं, न गिज्झियव्वं, न मुज्झियव्वं,
न विणिघायं आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न अज्झोववज्जियव्वं, न तुसियव्वं,

પ્રત્યર્થ નૈવાધિકો ઘત્નો વિશેષઃ, ' ન હસિયવ્વં ' ન તોષ્ટવ્યં-તત્રપ્રાપ્તો પરિતોષો ન કર્તવ્યઃ, ' ન હસિયવ્વં ન હસિતવ્યમ્-પ્રાપ્તો વિસ્મયેન હાસો ન કર્તવ્યઃ । તથા શ્રમણઃ ' તત્થ ' તત્ર=પૂર્વોક્તધુક્તતદ્વિપયે ' સહં ચ ' સ્મૃતિ=સ્મરણં ચ ' મર્તિ=વુદ્ધિનિવેશં ચ ' ન કુઝ્જા ' ન કુર્ચાત્ । ' પુણરવિ ' પુનરપિ ઉચ્યતે-' ફાસિ-દિણ ' સ્પર્શેન્દ્રિયેણ ' અમનુણ્ણપાવગાહં ' અમનોજ્ઞપાપકાન્=અરુચિકરાનિત્યર્થઃ, ' ફાસાહં ' સ્પર્શાન્ ' ફાસિય ' સ્પૃષ્ટ્વા ' કિંતે ' કાસ્તાન્=અસ્મભૂતાસ્તાન્ ? इत्याह—'अणोगवह-बंध-तालणं-कण-अइभारारोवण-अण-भंजण-सईनखण्वेस

હસિયવ્વં, ન સહં ચ મહં ચ તત્થ કુઝ્જા) કમી બી આસક્તિ સે અપને ચિત્ત કો નહીં બાંધના ચાહિયે, उनमें रागभाव नहीं करना चाहिये । गुद्विभाव नहीं करना चाहिये । उन में क्षुब्ध नहीं होना चाहिये-उनके निमित्त अपने चारित्र का परित्याग नहीं कर देना चाहिये । उनमें लुभाना नहीं चाहिये । और न उनकी प्राप्ति के निमित्त प्रयत्न ही करना चाहिये । यदि ये अनायास प्राप्त हो भी जावें तो उनकी प्राप्ति में परि-तोष नहीं मानना चाहिये । और प्राप्ति में कोई विस्मय आश्चर्य ही नहीं करना चाहिये । तथा श्रमण को इन पूर्वोक्त अनुभवित स्पर्शों में अपनी स्मृति को एवं वुद्धि को भी नहीं लगाना चाहिये । (पुणरवि) इसी तरह फिर (फासिदिण) स्पर्शान इन्द्रिय से (अमनूण्णपावगाहं) अमनोज्ञपापक-अरुचिकारक-स्पर्शों को स्पर्श करके उनमें साधु को द्वेष नहीं करना चाहिये । (किं ते ?) वे अमनोज्ञ पापक स्पर्श किन् २ पदार्थों में रहते हैं, इस प्रकार के प्रश्न का उत्तर देने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि (अणोगवहबंध-तालणंकण-अइभारारोवण-

ન હસિયવ્વં, ન સહં ચ મહં ચ તત્થ કુઝ્જા ” કદી પણ આસક્તિથી પોતાના ચિત્તને બાંધવું નહીં, તેમનામાં રાગભાવ કરવો નહીં. તેની લાલસા રાખવી નહીં. તેમાં ક્ષુબ્ધ થવું નહીં, -તેને ખાતર પોતાના ચારિત્રને પરિત્યાગ ન કરવો જોઈએ. તેમાં લોભાવું ન જોઈએ અને તેની પ્રાપ્તિને માટે વધુ પ્રયત્ન પણ કરવો જોઈએ નહીં. જે તે અનાયાસે મળી જાય તે તેની પ્રાપ્તિથી પરિતોષ માનવો જોઈએ નહીં. તેની પ્રાપ્તિમાં વિસ્મય પણ બતાવવું જોઈએ નહીં. અને સાધુએ જે પૂર્વોક્ત અનુભવેલ સ્પર્શોનું સ્મરણ કરવું જોઈએ નહીં અને તેમને વિચાર પણ કરવો જોઈએ નહીં. “ પુણરવિ ” એ જ રીતે ‘ ફાસિ-દિણ ’ સ્પર્શેન્દ્રિયથી “ અમનૂણ્ણપાવગાહં ” અમનજ્ઞ પાપક-અરુચિકારક સ્પર્શોના સ્પર્શ કરીને તેમના પ્રત્યે સાધુએ દ્વેષ કરવો જોઈએ નહીં. “ કિં તે ? ” અમનજ્ઞ પાપક-અરુચિકારક સ્પર્શવાળા કયા કયા પદાર્થો છે, તે પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતાં સૂત્રકાર કહે છે કે “ અણેગવહંબંધ-તાલણંકણ-અइभारारोवण-

सुदर्शनी टीका अ०५ सू०११ 'स्वर्द्धोद्भियसेवर'नामकपञ्चमभावनानिरूपणम् १३७

-गायपच्छण लखवारस-खारतेल कलकलंत तउअसीसककाललोहसिचण हडिबंधण रज्जुनिगल-संकलहत्थंडुय-कुंभिपाकदहण-सीहपुच्छण-उच्चंधण-सूलभेय-गाय-चलणमलण-करचरणकजनासोट्टसीसछेयण-जिम्भछेयणवसणनयणहिययदंतभंजण-जोत्तलयकसप्पहार-पादपण्हि जाणु-पत्थर-निवाय-पीलण-कविकच्छुअगणि-विच्छुय डकवायायव-दंसमंसग-निवाए 'अनेकवधवन्धताडनाड्डनातिभारारोपणाङ्गमञ्जन-सूचीनखप्रवेश-गात्रप्रतक्षण-लाक्षारस खारतैलकलकलायमानवपुस सीसककाललो-हसेचनहडिवन्धनरज्जुनिगडसंकलहस्तान्दुक कुम्भीपाकदहनसिंहपुच्छोद्वन्धन-शूल-भेद-गजचरणमर्दन-करचरणकर्णनासौष्ठ शीर्षच्छेदनवृषणनयन हृदयदन्तभञ्जनयो-त्रलताकशाग्रहारपादपणिं जानुप्रस्तरनिपातपीडनकपिकच्छवग्नि-वृश्चिक-दंशवाता-तपदंशमशकनिपातान्, तत्र-अनेको बहुविधो यो वधः=यष्टयाद्यायातः, रज्ज्वा-दिभिर्वन्धः, ताडनम्=चपेटादिताडनम्, अङ्कनम्=तप्तायः शलाकादिना गात्रे चिह्नक-रणम्, अतिभारारोपणम्=प्रमाणाधिकभारसमारोपणम्, अङ्गभञ्जनम्=शरीरावयव-त्रोटनम्, 'सूर्जनखप्पवेस' सूचीनखप्रवेशः=सूचीनां नखेषु प्रवेशः=प्रवेशकरणम्, अंगभंजणसूर्जनखप्पवेस-गायपच्छण-लखवारस खारतेलकलकलंत-तउ-सीसककाललोहसिचण-हडिबंधण-रज्जुनिगल-संकलन हत्थंडुय कुंभि-पाकदहण-सीहपुच्छण-उच्चंधण-सूलभेय-गायचलणमलण-करचरणकजनासोट्टसीसछेयणजिम्भछेयण-वसण-नयणहियय-दंतभंजण-जोत्तल-यकसप्पहार - पादपण्हिजाणुपत्थरनिवायपीलणकविकच्छुअगणिविच्छु-यडकवायायवदंसमंसगनिवाए) वह अनेक प्रकार से यष्ट्यादि द्वारा आघात करने रूप वध, वंधण-रज्ज्वादि द्वारा बांधनेरूप बंधन, तालण-चपेटा-थप्पड आदि मारने रूप ताडन, अंकण-तपी हुई लोहे की सलाई से शरीर में चिह्न करने रूप अंकन, (अईभारारोवण) प्रमाण से अधिक भार का लादना, (अंगभंजण) शारीरिक अवयव को तोड़ना (सूर्जन-

अंगभंजण-सूर्जनखप्पवेस-गायपच्छण-लखवारस-खारतेलकलकलंत-तउसीसककाल-लोहसिचण-हडिबंधण-रज्जुनिगल-संकलन हत्थंडुयकुंभिपाकदहणसीहपुच्छण उच्च-ंधण-सूलभेय-गायचलणमलण-करचरणकजनासोट्ट सीसछेयण-जिम्भछेयण-वसण-नयण-हिययदंतभंजण-जोत्तलयकसप्पहार-पादपण्हि जाणुपत्थर निवाय पीलणकवि-कच्छु-अगणिविच्छुय-डकवायायवदंसमंसगनिवाए" ते अनेक प्रकारणी लाडडी आदिना प्रहारइय वध, बंधण-होराडा आदि बांधवाइय बंधन, तालण-थप्पड आदिना मार इय ताडन, अंकण-तपावेला लोढाना सणीया वडे शरीर पर ठाम देवाइय निशान, अङ्गभारारोवण-वधादे प्रमाणुभां भार लादये, अंगभंजण-शरीरना आंअनु छेदन. सूर्जनखप्पवेस-सोथने नयणभां सोड्डी देवी, गायपच्छण-

‘ गायपच्छण ’ गात्रपक्षणं=वास्यादिना शरीरच्छोलनम्, ‘ लक्खारसखारतेल-
कल्ललंततउभ-सीसकाललोहसिचण ’ लाक्षारसखारतैलकल्ललयमानत्रपुक्सी-
सककाललोहसेचनम्, लाक्षारसेन=लाक्षा=जतु तस्या रसेन=तत्पेन द्रवेण क्षार
तैलेन=क्षारपदार्थमिश्रिततैलेन, कल्ललयमानेन=अतितप्ततया शब्दायमानेन त्रपु-
केण=रक्षेण सीसकेन=‘ सीसा ’ इतिप्रसिद्धद्रव्येण, काललोहेन=कृष्णलोहेन च
यत्सेचनम् ‘ हडिबंधण ’ हडिबंधनम्=खोडकक्षेपः, ‘ रज्जुनिगलसंकलन ’ रज्जु-
निगडसङ्कुलनम्=रज्जुवा निगडेन च संकलनं=बन्धनम् ‘ हत्थंदुय ’ हस्तान्दुकम्=
काष्ठादिनिर्मितहस्तबन्धनसाधनेन यद्वन्धनं तद्वस्तान्दुकमुच्यते, ‘ कुंभीपाक ’
कुम्भीपाकः=कुंभ्यां=पात्रविशेषे पाकः=पचनम् ‘ दहण ’ दहनम्=अग्निना दाहक-
रणम्, ‘ सीहपुच्छण ’ सिंहपुच्छनं=लिङ्गचोटनम्, ‘ उब्बंधण ’ उद्बन्धनं=पाशो-
ल्लम्बनम्, ‘ मूलभेय ’ मूलभेदः, मूलेनभेदः=भेदनम्, ‘ गयचलणमलण ’ गज-
चरणमर्दकम्=गजचरणैर्मर्दनम्, ‘ करचणकन्ननासोदुसीसछेयण ’ करचरणकर्णनासो-

खण्वेस) सूईयों को नखों में भोंकना, (गायपच्छण) बसूला आदि से
शरीर के अवयवों को छोलना, ‘ लक्खारस ’ तपे हुए लाखके रससे,
(खारतेल) क्षारपदार्थ मिश्रित तपे हुए तैल से तथा (कल्ललंत) अत्यंत
उकलने से पिघले हुए (तउ) त्रपु-कथीर से, (सीसक) सीसे से (काल-
लोह) काले लोहे से, (सिचण) शरीर को सींचना-शरीर पर छिड़कना
(हडिबंधण) खोडे में डालना, ‘ रज्जुनिगलसंकलन ’ रस्सी और बेंड़ी
बांधना, ‘ हत्थंदुय ’ हथकड़ी में बांधना ‘ कुंभीपाक ’ कुंभी में पकाना,
‘ दहण ’ अग्नि में जलाना, ‘ सीहपुच्छण ’ लिङ्ग को तोड़ना, ‘ उब्बंधण ’
फांसी में लटकाना, ‘ मूलभेय ’ मूलीपर चढ़ाना, ‘ गयचलण ’-हाथी के
पैरो से कुचलना, ‘ करचरणकन्ननासोदुसीसछेयण ’ हाथ-पैर, कान,

वांसादि आदिथी शरीरनां अवयवोने छोलवानी किया, लक्खारस-गरम लाखना
रसथी खारतेल-क्षारयुक्त पदार्थथी तपावेला तेसथी, तथा कल्ललंत-अत्यंत
गरम डरवाथी ओगजेला “ तउ ” कधीरथी, “ सीसक ”-सीसाथी “ काललोह ”-
कालां लोहाथी, “ सिचण ”-शरीर पर डेउवानी किया, “ हडिबंधण ”-डोडां
पूरयु, “ रज्जुनिगलसंकलन ”-दोरां अने भेरी वडे बांधयु, “ हत्थंदुय ”-
हाथकडीं बांधयु, “ कुंभीपाक ” कुंभीं पकाययु, “ दहण ”-अग्निं आगयु
“ सीहपुच्छण ”-लिङ्गे तोडयु, “ उब्बंधण ” फांसीमे लटकययु, “ मूलभेय ”-
मूली पर चढाययु, “ गयचलण ”-हाथीना पग तगे अगडायु, “ करचरण-
कन्नकासोदुसीसछेयण ” हाथ, पग, कान, नाक, छोह अने भस्तकतुं छेदन कर-

सुदर्शिनो टोका अ०५ सू०११ 'स्पर्शोन्द्रियसेवर' नामक पञ्चमभावना निरूपणम् १३९

पृष्ठीर्षच्छेदनम् = 'जिभच्छेद्य' जिह्वाच्छेदनम्, 'वसणनयनहिययदंतभंजन' वृषणनयनहृदयदन्तभञ्जनम् = वृषणस्य = अण्डकोशस्य, नयनयोः, हृदयस्य दन्तानां च भञ्जनम् = विनाशनम्, 'जोत्तलयकसप्पहार' योक्त्रलताकशाप्रहारः = योक्त्रेण = रज्जुविशेषेण, लतया = वेत्रादिलतया; कशया च यः प्रहारः, प्रहारः, 'पादपण्हिजाणुपत्थरनिवाय' पादपार्णिजानुप्रस्तरनिपातः = पादयोः = चरणयोः, पार्णयोः = पादपश्चाद्भागयोः, जानुनोः = घुटना 'इतिभाषा प्रसिद्धेश्च प्रस्तरनिपातः = पाषाणपातः, 'पीलण' पीडनं = यन्त्रे पीडनम्, 'कविकच्छु' कपिकच्छुः = तीव्रकण्टकितकारकवनस्पतिविशेषः, 'अगणि' अग्निः, 'विच्छुयडक' वृश्चिकदंशः 'वायातवदंसमसगनिवाए' वातातपदंशमशकनिपातः = वातस्य आतपस्य दंशानां मशकानां च निपतेनम्, एतेषां द्वन्द्वः ताँस्तथोक्तान् स्पृष्ट्वा तथा- 'दुट्ठणिसिज्ज दुविसीहिया' दुष्टनिषद्यादुर्नैषेधिक्यः = दुष्टनिषद्याः क्षुद्रामनानि, दुर्नैषेधिकस्य = कष्टकर-स्वाध्यायभूमयस्ताश्चस्पृष्ट्वा, 'तेसु' तेषु-उक्तेषु 'अमणुजपावरोसु' अननोद्गपापकेषु

नासिका, होठ और मस्तक का छेदन करना, 'जिभच्छेद्य' जीभ का छेदन करना 'वसण-नयन-हियय-दंत-भंजन' अण्डकोश, नेत्र, हृदय और दांतों का भांगना, 'जोत्तलय-कस-प्पहार' चमड़े की रस्सी से, वेत्रादिलता से, तथा चाबुक से प्रहार करना, 'पादपण्हिजाणुपत्थरनिवाय' पांव, एड़ी, घुटना, इन पर पत्थर का गिरना, 'पीलण' यंत्र में पीलना, 'कविकच्छु-अगणि-विच्छुय-डक' करेंच की फली, अग्नि और बिच्छू का डंक-स्पर्श, 'वायातवदंसमसगनिवाए' शीतकाल में ठंडे पवन का लगाना उष्णकाल में धूप का लगाना, तथा डाँस और मच्छरों का शरीर पर गिरना इन सबके स्पर्श का अनुभव करके (दुट्ठणिसिज्जदुविसीहिया) कष्टकारक आसन और स्वाध्याय की भूमि के स्पर्श को अनुभव करके (तेसु

वसु), "जिभच्छेद्य" एतन्तुं छेदन करवुं, "वसण-नयन-हियय-दंत-भंजन" अण्डकोश, नेत्र, हृदय અને दांत तोड़ना, "जोत्त-लय-कस-प्पहार" व्यामजानी होरीथी नेतर-आदि लताथी तथा आयुक्थी इच्छाकरवुं, "पादपण्हिजाणुपत्थर-निवाय" पग, ओडी અને घूंटणु पर पत्थरतुं पडवुं, "पीलण"-यंत्रमां पीलवुं, "कविकच्छु-अगणि-विच्छुय डक"-करेंचनी इणी, अग्नि અને बिच्छीना डंण, "वायातवदंसमसगनिवाए" शियायायां ठंडा पवन लागवो, उनायायां तडंडा लागवो, तथा डांस અને मच्छरानुं शरीर पर पडवुं, ओ अथा स्पर्शने शरीर पर अनुभव करीने "दुट्ठणिसिज्जदुविसीहिया" कष्टकरक आसन અને स्वाध्यायनी भूमिना स्पर्शने अनुभववीने "तेसु अमणुजपावरोसु" ते

अरुचिकरेष्वित्यर्थः, 'फामेसु' 'स्पर्शेषु' एभ्यः, 'अन्नेसु' अन्येषु च 'बहुविहेसु' बहुविधेषु 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु—एवं प्रकारेषु 'कक्खडगुरुसीय-उसिणलुक्खेसु' कर्कशगुरुशीतोष्णलक्ष्येषु कर्कशः=रुग्निः, गुरवः=भाराः, शीताः=शीतलाः, उष्णाः=तापनाः, रूक्षाः=परुषाः, एषां द्वन्द्वस्तेषु तथोक्तेषु स्पर्शेषु च 'समणेण' श्रमणेन—साधुना 'न रुसियव्वं' न रोष्टव्यम्=रोषो न कर्तव्य इत्यर्थः, 'न हीलियव्वं' न हीलितव्यम्=भ्रष्टा न कर्तव्या, 'न निदियव्वं' न निन्दितव्यम्, स्वमनसि निन्दा न कर्तव्या, 'न खिसियव्वं' न खिसितव्यम्=परसमक्षे च निन्दा न कर्तव्या, 'न छिदियव्वं' न छेत्तव्यम्=छेदनं न कर्तव्यम्। 'न भिदियव्वं' न भेत्तव्यम्=भेदनं न कर्तव्यम्, 'न वहेयव्वं' न हन्तव्यम्=विनाशो न कर्तव्यः, तथा—तद्विषये 'जुगुंछावत्तियावि' जुगुप्सावृत्तिकाऽपि स्वस्य परस्य वा हृदि 'उप्पाएउं' उत्पादयितुं 'न लंभा' न लभ्या—नोचिता यथा पूर्वोक्तस्पर्शा—श्रयविषये स्वस्य परस्य वा हृदि जुगुप्सा प्रादुर्भवेत् तथा कर्तव्यमिति भावः।

अमणुजपावगेसु) उन अमनोज्ञपापक-अरुचिकारक-स्पर्शों में, तथा (एवमाइएसु बहुविहेसु कक्खडगुरुसीय उसिणलुक्खेसु) इन से भिन्न और जो कर्कश, गुरु, शीत, उष्ण, रूक्ष स्पर्श हैं उनमें (समणेणं न रुसियव्वं, न हीलियव्वं, न निदियव्वं, न गरहियव्वं, न खिसियव्वं, न छिदियव्वं, न भिदियव्वं, न वहेयव्वं, न जुगुंछावत्तियावि लब्भाउप्पाएउं साधु को रुष्ट नहीं होना चाहिये, उनकी अवहेलना नहीं करनी चाहिये। निन्दा नहीं करनी चाहिये। गर्हा नहीं करनी चाहिये। उन पर खिस-याना नहीं चाहिये। उस अमनोज्ञ स्पर्श के आश्रयभूत द्रव्य का छेदन नहीं करना चाहिये। भेदन नहीं करना चाहिये। नाश नहीं करना चाहिये। और न अपने तथा परके मन में उनपर ग्लानि उत्पन्न करने

अमनोज्ञ पापक-अरुचिकारक स्पर्शोंमें, तथा " एवमाइएसु बहुविहेसु कक्खड-गुरुसीयउसिणलुक्खेसु " ते उपरान्त धीमा पाथु ते कर्कश, गुरु, शीत, उष्ण, रूक्ष स्पर्श छे तेभना प्रत्ये " समणेण न रुसियव्वं, न हीलियव्वं न निदियव्वं, न गरहियव्वं, न खिसियव्वं, न छिदियव्वं, न भिदियव्वं, न, वहेयव्वं, न जुगुंछावत्तिया वि लब्भा उप्पाएउं " साधुके रुष्ट धपुं जेधये नहीं, तेभनी जेवहेलना न करवी जेधये. निन्दा न करवी जेधये. गर्हा न करवी जेधये. तेभना पर खिसियायुं जेधये नहीं, ते अभनंज्ञ स्पर्शवाणां द्रव्यनुं छेदन करयुं जेधये नहीं, छेदन करयुं जेधये नहीं नाश करवी जेधये नहीं अने पोतानां के अन्धना मनमां तेभना प्रत्ये ग्लानि उत्पन्न करवानी प्रवृत्ति न

સુવર્ણિની ટીકા અ૦૫ સૂ૦૧૧ 'સ્પર્શેન્દ્રિયસંવર'નામકપञ्ચમભાવનાનિરૂપણમ્ ૧૪૧

સમ્પત્તિ પञ્ચમી ભાવનામુપસંહરન્નાહ—एवम्=अनेन प्रकारेण 'फासिदियभावणा-
भाविओ' स्पर्शेन्द्रियभावनाभाविः, 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा-जीवो जीवः 'भवइ'
भवति । ततश्च 'मणुन्नामणुनसुन्निदुन्निमरागद्वेषपणिहितात्मा=मनोज्ञाऽमनोज्ञा ये
सुरमिदुरभवः=शुभाशुभस्पर्शास्तेषु यद्वागद्वेषं तत्र पणिहितात्मा=संवृतात्मा, 'साहु'
साधुः 'मणवयणकायगुत्ते' मनोवचनकायगुप्तः 'संवुडे' संवृतः=संवरवान् 'पणि
हिइंदिए' पणिहितेन्द्रियः, पणिहितः=वशीकृत इन्द्रियो येन तथाभूतः सन् 'धम्मं'
धर्मं=श्रुतचारित्र्यलक्षणं धर्मं 'चरेज्ज' चरेत्=अनुतिष्ठेत् ॥ सू० ११ ॥

કી ચેષ્ટા હી કરના યાહિયે । અવ સૂત્રકાર હસ પાંચવીં ભાવના કા ઉપ-
સંહાર કરતે હુપ કહતે હૈં (एवं फासिदियभावणाभाविओ अंतरप्पाम-
वइ मणुन्नसुन्निदुन्निमरागदोसे पणिहियप्पा साहु मणवयणकायगुत्ते संवुडे
पणिहिइंदिए धम्मं चरेज्ज) હસ પ્રકાર સે સ્પર્શ ઇન્દ્રિય કી ભાવના સે
ભાવિત જવ સુનિ હો જાતા હૈ તય વહ મનોજ્ઞ રૂપ શુભ સ્પર્શ મેં ઔર
અમનોજ્ઞરૂપ અશુભસ્પર્શ મેં રાગદ્વેષ કરને સે રહિત બન જાતા હૈ । હસ
તરહ ડનેમેં રાગદ્વેષ કરને સે સંવૃતાત્મા બના હુઆ સાધુ અપને મન,
વચન ઔર કાયરૂપ ત્રિયોગોં કો સ્પર્શ સંબંધી શુભ અશુભ કે વ્યાપાર
સે રહિત કર લેતા હૈ તથા હસ સ્પર્શન ઇન્દ્રિય કે સંવરણ સે યુક્ત બન
જાતા હૈ । હસ પ્રકાર હસ ઇન્દ્રિય કે સંવરણ સે યુક્ત બના હુઆ વહ સાધુ
ચારિત્રરૂપ ધર્મ કી આરાધના અચ્છી તરહ સે કરને લગતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા હસ પરિગ્રહ વિરમણવ્રત કી
પાંચવીં ભાવના કા સ્વરૂપ પ્રગટ કિયા હૈ । હસ પાંચવીં ભાવના કા

કરવી બોધએ. હવે સૂત્રકાર આ પાંચમી ભાવનાનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે.

“ एवं फासिदियभावणाभाविओ अंतरप्पा भवइ मणुन्नामणुनसुन्निदुन्नि राग-
दोसे पणिहियप्पा साहु मणवयणकायगुत्ते संवुडे पणिहिइंदिए धम्मं चरेज्ज ” આ
રીતે બ્યારે મુનિ સ્પર્શેન્દ્રિયની ભાવનાથી ભાવિત થઈ બન્ય છે ત્યારે તે મનો-
જ્ઞાણ શુભ સ્પર્શ પ્રત્યે તથા અમનોજ્ઞાણ અશુભ સ્પર્શ પ્રત્યે રાગદ્વેષથી રહિત
બની બન્ય છે. આ રીતે તેમના પ્રત્યે રાગદ્વેષ કરવાથી નિવૃત્ત થયેલ સાધુ
પોતાના મન, વચન અને કાયક્રિય ત્રણે યોગોને સ્પર્શ સંબંધી શુભ અશુભ
વ્યાપારથી રહિત કરી લે છે, અને આ સ્પર્શેન્દ્રિય સંવરથી યુક્ત થઈ બન્ય
છે. આ રીતે આ ઇન્દ્રિયના સંવરથી યુક્ત બનેલ તે સાધુ ચારિત્રક્રિય ધર્મની
સારી રીતે આરાધના કરવા લાગી બન્ય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા આ પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની પાંચમી
ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે તે પાંચમી ભાવનાનું નામ સ્પર્શેન્દ્રિય સંવરણ

इदं संवरद्वारमुपसंहरन्नाह—‘ एवमिणं ’ इत्यादि—

मूलम्—एवमिणं संवरदारं सम्मं संवरियं होइ सुप्पणि-
हियं इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरिखिएहिं
निच्चं आमरणंतं च एस जोगो नेयव्वो धिइमया अणासवो
अकल्लुसो अच्छिदो अपरिस्साई असंकिलिट्ठो सुद्धो सव्वजिण-
मणुण्णाओ । एवं पंचमं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं
तीरियं किट्ठियं अणुपालियं आणाए आराहियं भवइ । एवं णायमु-
णिणा भगवया पण्णवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धवरसासणमिणं
आघवियं सुदेसियं पसरथं पंचमं संवरदारं समत्तं त्तिवेमि ॥सू१२॥

नाम स्पर्शानेन्द्रियसंवरण है । इस भावना से भावित हुए मुनिजन को स्पर्शन इन्द्रिय के विषयभूत-आठ प्रकार के स्पर्श में चाहे वह रुचिका-
रक हो या न हो रागद्वेष करने का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये ।
गर्मों के समय में शीतस्पर्श की शिशिरऋतु में गरमस्पर्श तथा और
भी अन्य ऋतुओं में भिन्न २ प्रकार के स्पर्श की कामना साधु को नहीं
करनी चाहिये । सूत्रनिर्दिष्ट दृगमंडप आदि मनोज्ञभद्रक स्पर्श के विषय
में और अनेक वधबंधन आदि अमनोज्ञ पापक स्पर्श के विषय हैं अतः
साधु को दोनों प्रकार के स्पर्शों में समभाव संपन्न रहना चाहिये । यही
स्पर्शन इन्द्रिय संवरण नाम की भावना है ॥ सू० ११॥

છે. આ લાવનાથી લાવિત થયેલ મુનિએ સ્પર્શેન્દ્રિય વડે અનુભવતા આઠ
પ્રકારના સ્પર્શો પ્રત્યે રાગદ્વેષનો સર્વથા પરિત્યાગ કરવો જોઈએ-ભલે તે સ્પર્શો
રુચિકર હોય કે અરુચિકર હોય પણ તેમના પ્રત્યે રાગદ્વેષ રાખવા જોઈએ
નહીં. ગરમીના દિવસોમાં શીત સ્પર્શની શિયાળામાં ઉષ્ણ સ્પર્શની અને અન્ય
ઋતુઓમાં જુદા જુદા પ્રકારના સ્પર્શની ઇચ્છા સાધુએ કરવી જોઈએ નહીં.
સૂત્રમાં દર્શાવેલ દૃગમંડપ આદિ મનોરૂપભદ્રક સ્પર્શમાં તથા અનેક વધબંધન
આદિ અમનોરૂપ પાપક સ્પર્શની આગ્રતમાં સાધુએ સમભાવ રાખવો જોઈએ.
એ જ આ સ્પર્શેન્દ્રિય સંવરણ નામની લાવના છે. ॥ સૂ૦૧૧ ॥

સુરહિની ટીકા અં ૫ સુ ૦૧૨ અધ્યયનોપસંહાર:

૨૪૩

ટીકા—‘ એવમિણં ’ એવમ્=અનેન પ્રકારેણ દદમ્=અપરિગ્રહનામકં ‘ સંવર-
દારં ’ સંવરદ્વારમ્ ‘ સંવરિયં ’ સંગ્રતં=સંસેવિતં સન્ ‘ સુપ્પણિહિયં ’ ઉપણિહિતં સુ-
રક્ષિતં ‘ દોઢ ’ ભવતિ । ‘ મળવચ્ચણકાયપરિરક્ષિવર્ણિ’ મનોવચનકાયપરિરક્ષિતૈઃ=
યોગત્રયપરિરક્ષિતૈઃ ‘ ઇમેહિં પંચહિં ચિ કારણેહિં ’ એમિઃ પશ્ચમિરપિકારણૈઃ=પૂર્વો-
ક્તાભિઃ પશ્ચમિર્ભાવનાભિરિત્યર્થઃ, ‘ ણિચ્ચં ’ નિત્યમ્ ‘ આમરણંતં ’ આમરણાન્તં=
મરણપર્યન્તં ચ ‘ એસજોગો , એપ યોગઃ=અપરિગ્રહલક્ષણસંવરરૂપવ્યાપારઃ ‘ ધિદ્-
મયા ’ ધૃતિમતા=સ્વસ્થચિત્તેન ‘ મદ્દમયા ’ મતિમતા-દેયોપાદેયબુદ્ધિયુક્તેન ‘ ને-
યવ્વો ’ નેતત્ત્વઃ-વોદ્ધવ્યઃ-પરિપાલનીય इत्यર્થઃ । કીદશોડયં યોગઃ ? इत्याह-અયં
યોગઃ ‘ અણાસવો ’ અનાશ્રવઃ-નૂતનકર્મોગમનરહિતત્વાન્ , ‘ અક્કલુસો ’ અક્કલુ-
પઃ-શુભાધ્યવસાયત્વાન્ , ‘ અચ્છિદ્ધો ’ અચ્છિદ્રઃ-છિન્નસ્રોતસ્ત્વાન્ , ‘ અપરિસાદી’

અવ સૂત્રકાર ઇન પાંચવે સંવરદ્વાર કા ઉપસંહાર કરતે હૈ—‘એવમિણં’ ૬૦

ટીકાર્થ—(એવમિણં સંવરદારં) ઇસ પ્રકાર સે યહ અપરિગ્રહ નામ
કા સંવરદ્વાર (સમ્મંસંવરિયં) અછ્છી તરહ સેવિત હોને પર (સુપ્પણિ-
હિયં) સુરક્ષિત હો જાતા હૈ । ઇસલિયે (મળવચ્ચણકાયપરિરક્ષિવર્ણિ)
મન, વચન ઓર કાયરૂપ ત્રીન યોગોં સે પરિરક્ષિત હૈઈ (ઇમેહિં પંચહિં
કારણેહિં) ઇન પાંચ ભાવનાઓં કા (ણિચ્ચં) સદા (આમરણંતં)
મરણપર્યન્ત-યાવજ્જીવ (એસ જોગો) યહ અપરિગ્રહલક્ષણસંવરરૂપ વ્યા-
પાર (ધિદ્દમયા મદ્દમયા નેયવ્વો) ધૈર્યશાલી એવં દેય ઓર ઉપાદેય કે
વિવેક સે યુક્ત બુદ્ધિવાલે સાધુજન કો સેવન કરના ચાહિયે, કયો કિ
યહ યોગ (અણાસવો) નવીન કર્મોં કે આગમન સે રહિત હોને કે
કારણ અનાશ્રવરૂપ હૈ, (અક્કલુસો) શુભાધ્યવસાયરૂપ હોને સે અક્કલુપ
હૈ, (અચ્છિદ્ધો) ઇસમેં પાપકા સ્રોત છિન્ન હો જાતા હૈ ઇસલિયે અચ્છિદ્ર

હવે સૂત્રકાર આ પાંચમાં સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરે છે—

ટીકાર્થ—“ એવમિણં સંવરદારં ” આ પ્રમાણે આ અપરિગ્રહ નામના
સંવરદ્વારનું “ સમ્મં સંવરિયં ” સારી રીતે સેવન થતાં “ સુપ્પણિહિયં ” સુર-
ક્ષિત થઈ જાય છે. તેથી “ મળવચ્ચણકાયપરિરક્ષિવર્ણિ ” મન, વચન અને કાય,
એ ત્રણે યોગેથી પરિરક્ષિત થયેલ “ ઇમેહિં પંચહિં કારણેહિં ” એ પાંચે ભાવ-
નાઓનું “ ણિચ્ચં ” સદા “ આમરણંતં ” જીવન પર્યન્ત “ એસજોગો ” આ
અપરિગ્રહસંવરરૂપ વ્યાપાર “ ધિદ્દમયા મદ્દમયા નેયવ્વો ” ધૈર્યશાળી અને હેય
અને ઉપાદેયના વિવેકથી યુક્ત બુદ્ધિમાન સાધુએ સેવન કરવું જોઈએ, કારણ
કે તે યોગ “ અણાસવો ” નૂતન કર્મોના આગમનથી રહિત હોવાને કારણે
અનાશ્રવરૂપ છે. “ અક્કલુસો ” શુભ અધ્યવસાયરૂપ હોવાથી અક્કલુપ છે, “ અચ્છિદ્ધો ”

અપરિસ્ત્રાવી=કર્મજલપવેશરહિતત્વાત્, ‘અસંકિલિટ્વો’ અસંકિલિટ્વઃ=અસમાધિભાવવર્જિતત્વાત્ ‘સુદ્ધો’ શુદ્ધઃ=કર્મમલવર્જિતત્વાત્, ‘સવ્વજિનમણુણાઓ’ સર્વજિનાનુજ્ઞાતઃ-સકલપ્રાણિહિતકારકત્વાત્સર્વે રહિદ્વિરઙ્ગીકૃતશ્વાસ્તિ । एवम्=ઉક્તપ્રકારેણ ‘પંચમે સંવરદારં’ પંચમે સંવરદ્વારં ‘ફાસિયં’ મ્પુષ્ટં કાચેન, ‘પાલિયં’ પાલિતં-સતતમુપયોગેન સેવિતમ્ ‘સોદિયં’ શોધિતમ્-અતીચારવર્જનેન ‘તીરિયં’ તીર્ણ-તીર્ણં પ્રાપિતં સમ્યક્પાલનાત્, ‘કિદિયં’ કીર્તિતમ્-સ્તુતમ્=કલ્યાણકારકત્વાત્, ‘આરાદિયં’ આરાધિતમ્-ત્રિકરણત્રિયોગે, સમ્યવાચરિતત્વાત્, ‘આણાપ’ આજ્ઞાયા-સર્વજ્ઞવચનેન ‘અણુપાલિયં’ અણુપાલિતં=દૃઢમનસ્કત્વાચ્ચ

है. (अपरिस्त्राई) बिन्दुमात्र भी कर्मजल इसमें प्रविष्ट नहीं हो पाता हैं इसलिये यह अपरिस्त्रावी है। (असंकिलिट्वा) अस्ममाधिभाव से रहित होने के कारण यह असंकिलिष्ट है, और (सुद्धो) कर्ममल से वर्जित होने के कारण यह शुद्ध है। (सव्वजिणमणुणाओ) इससे समस्त प्राणियों का हित हुआ है और आगे भी हित होगा ऐसा जान कर ही समस्त अरिहंत भगवंतों ने इसे अंगीकृत किया है। (एवं पंचमं संवरदारं) इस उक्त प्रकार से जो इस संवरद्वार को (फासियं) अपने शरीर से आचरित करते हैं (पालियं) निरन्तर उपयोगपूर्वक इसका सेवन करते हैं, (सोदियं) अतिचारों से इसे रहित करते हैं, (तीरियं) पूर्णरूप से इसका सेवन करते हैं, (किदियं) दूसरों को इसके पालन करने का उपदेश देते हैं (आरादियं) तीनकरण तीन योग से इसकी भली प्रकार से अनुपालना करते हैं, (आणाए अणुपालियं भवइ) उनके द्वारा यह योग तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा अनुसार ही पालित

તેનાથી પાપના ઓત છિત્ત થઈ જાય છે તેથી તે અચ્છિદ્ર છે, “અપરિસ્ત્રાઈ” બિન્દુ જેટલું પણ કર્મજળ તેમાં પ્રવેશ પામી શકતું નથી, તે અપરિસ્ત્રાવી છે, “અસંકિલિટ્વો” અસમાધિભાવથી રહિત હોવાને કારણે તે અસંકિલિષ્ટ છે અને “સુદ્ધો” કર્મમળ વિનાનું હોવાથી તે શુદ્ધ છે. “સવ્વજિનમણુણાઓ” તેનાથી સમસ્ત પ્રાણીઓનું હિત થયું છે અને લવિષ્યમાં પણ હિત થશે એવું આણીને જ સમસ્ત અરિહંત ભગવાનોએ તેને માન્ય કરેલ છે. “એવં પંચમં સંવરદારં” આ સૂત્રમાં કહ્યા પ્રમાણે જે આ પાંચમાં સંવરદ્વારનું “ફાસિયં” પોતાના શરીરથી આચરણ કરે છે, “પાલિયં” નિરન્તર ઉપયોગ પૂર્વક તેનું સેવન કરે છે, “સોદિયં” અતિચારોથી તેને રહિત કરે છે, “તીરિયં” પૂર્ણ રીતે તેનું સેવન કરે છે “કિદિયં” અન્યને તેના પાલનનો ઉપદેશ આપે છે “આરાદિયં” ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી સારી રીતે તેની આરાધના કરે છે, “આણાપ અણુપાલિયં ભવઈ” તેમના દ્વારા તે યોગનું તીર્થંકર પ્રભુની

સુદર્શિનીટીકા અં ૫ સૂ. ૧૨ અધ્યયનોપસંહાર:

૧૪૫

भवति । एवम्=उत्तरूपं पंचमं संवरद्वारं, ' नायमुणिणा ' ज्ञातमुनिना=प्रसिद्ध-
त्रियवंशोद्भवेन मुनिना भगवता महावीरेण ' पणवियं ' प्रज्ञापितम्=शिष्येभ्यः
सामान्यतया कथितम् ' परुवियं ' प्ररूपितम्=भेदानुभेदप्रदर्शनपूर्वकं कथितम्,
' पसिद्धं ' प्रसिद्धम्=प्रख्यातम्, प्रमाणप्रतिष्ठितत्वात् ' सिद्धवरसासणं ' सिद्धवर-
शासनम्=सिद्धानां-निष्ठितार्थानां=कृतकृत्यानामितियावत् वरशासनं=प्रधानाज्ञारू-
पम्, ' इणं ' इदम् ' आघवियं ' आख्यातं=सर्वतोभावेन कथितम्, ' सुदेसियं'
मुदेशितम्=सदेवमनुजामुरायां सभायां सुष्ठूपदिष्टं ' पसत्थं ' प्रशस्तं ' पंचमं
संवरदारं ' पंचमं संवरद्वारं ' समत्तं ' समाप्तम् ' तिवेमि ' इति ब्रवीमि, अस्या-
र्थः पूर्वमुक्तः ॥ सू-१२ ॥

हुआ माना जाता है । (एवं) इस प्रकार से (नायमुणिणा भगवया)
ज्ञात नामक क्षत्रियवंश में उत्पन्न हुए मुनिराज भगवान् महावीर ने
(पणवियं) शिष्यों के लिये इस पंचम संवर द्वार को सामान्यरूप से
समझाया, (परुवियं) भेद प्रभेदपूर्वक उसका कथन किया है । (पसिद्धं)
प्रमाणप्रतिष्ठित होने से जिन वचन में यह प्रख्यात हुआ है, अर्थात्
जिनवचन के अनुसार ही आचार्यपरंपरा से इसका पालन करना इसी
रूप से चला आ रहा है । तथा (सिद्धवरसासणमिणं) भूतकाल में
जितने भी सिद्ध हो चुके हैं उनका यह प्रधान आज्ञारूपशासन है ।
(आघवियं) ऐसा भगवान् महावीर प्रभुने सर्वभाव से इसके विषय
में कहा है और (सुदेसियं) देवों, मनुजों तथा असुरों से युक्त परि-
षदा में इसका उपदेश दिया है । (पसत्थं) सर्व प्राणियों का हितका-
रक होने से मंगलमय है, इस प्रकार यह (पंचमं संवरदारं समत्तं)
पंचमसंवरद्वार समाप्त हुआ, (तिवेमि) ऐसा मैं कहता हूं । अर्थात्

આજ્ઞા પ્રમાણે જ પાલન થયું ગણાય છે. “ એવં ” આ રીતે “ નાયમુણિણા
ભગવયા ” જ્ઞાતુ કુળ નામના ક્ષત્રિય વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ મુનિરાજ ભગવાન
મહાવીરે “ પણવિયં ” શિષ્યોને માટે આ પાંચમાં સંવરદ્વારને સામાન્યરૂપે
સમજાવ્યું છે, “ પરુવિયં ” ભેદ પ્રભેદ પૂર્વક તેનું વિવેચન કર્યું છે, “ પસિદ્ધં ”
પ્રમાણ પ્રતિષ્ઠિત હોવાથી જિનવચનમાં તે પ્રખ્યાત થયું છે, એટલે કે જિન
વચન પ્રમાણે જ આચાર્ય પરંપરાથી તેનું આ રીતે પાલન થતું આવ્યું છે,
તથા “ સિદ્ધવરસાસણમિણં ” ભૂતકાળમાં જેટલા સિદ્ધો થઈ ગયા તેમનું આ
પ્રધાન આજ્ઞારૂપ શાસન છે, “ અઘવિયં ” એવું ભગવાન મહાવીરે સર્વ
ભાવથી તેને વિષે કહ્યું છે, અને “ સુદેસિયં ” દેવો, મનુષ્યો અને અસુરોની
પરિષદમાં તેનો ઉપદેશ દીધો છે. “ પસત્થં ” તે સર્વે પ્રાણીઓનું હિત કર-
નાર હોવાથી મંગલમય છે, આ રીતે આ “ પંચમં ” પાંચમું “ સંવરદ્વાર
સમત્તં ” સંવરદ્વાર સમાપ્ત થયું “ તિવેમિ ” એમ હું કહું છું. એટલે કે

પ્ર ૧૧૯

અથ સંવરપશ્ચક્રપુષ્પસંહારનાહ—‘ યયાઈ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—યયાઈ વયાઈ પંચવિ સુવ્યય મહાવ્યયાઈ હેઝસય વિવિત્તપુકલ્લાઈ કહિયાઈ અરિહંતસાસને પંચ સમાપ્તેણ સંવરા વિત્થરેણ ડ પળવીસઈ સમિણ સહિણ સંવુડે સયા જયણ ઘટણ સુવિસુદ્ધદંસને ણ ણ અણુચરિયં સંજણ ચરમસરીરધરે ભવિસ્સ-
તીતિ ॥ સૂ૦ ॥ ૧૩ ॥

॥ ઇય પંચમં સંવરદારં સમત્તં ॥

ટીકા—‘ યયાઈ ’ ઇત્યાદિ—

‘ સુવ્યય ’ સુવ્રત—દે શોભનવ્રત જમ્બૂઃ । ‘ યયાઈ ’ યતાનિ ‘ પંચવિ ’ પ—

હે જંબૂ ! હસ પંચમ સંવરદાર કા જૈસા કથન મૈં ને સાક્ષાત્ ભગવાન્ મહાવીર કે મુખ સે સુના હે વૈસા હી યહ મૈં ને તુમસે કહા હૈ । અપની તરફ સે હસમેં મૈંને કુછ બી મિશ્રિત કર નહીં કહા હૈ ।

ભાવાર્થ—હન પૂર્વોક્ત પાંચ ભાવનાઓં સે અચ્છી તરહ સેવિત હોને પર યહ અપરિગ્રહ નામક પાંચવાં સંવરદાર સ્થિર હો જાતા હૈ । હસ-
લિયે મુનિજન કો :હસકા પાલન હસ રૂપ સે કરના અવશ્ય હૈ । સમસ્ત તીર્થંકરોં ને હસે સર્વપ્રાણિયોં કા હિતકારક જાનકર પાલિત કિયા હૈ । યહ અનાશ્રવ આદિ વિશેષણોં વાલા હૈ । ભગવાન્ મહાવીર પ્રભુ ને બી હસકે પાલન કરને કા ઉપદેશ પરિષદાં મૈં જીવોં કો દિયા હૈ । એસા મંગલમય યહ પાંચવાં સંવરદાર સમાપ્ત હુઆ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

“ હે જંબૂ ! આ પાંચમાં સંવરદારનું કથન જે પ્રમાણે મેં સાક્ષાત્ મહાવીર પ્રભુને મુખે સાંભળ્યું હતું, એ જ પ્રમાણે તે હું તમને કહું છું. મારી તરફથી તેમાં કંઈ પણ ઉમેરવામાં આવ્યું નથી.

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત પાંચ ભાવનાઓંનાં સારી રીતે સેવન કરવામાં આવે તેા અપરિગ્રહ નામનું પાંચમું સંવરદાર સ્થિર થઈ જાય છે. તેથી મુનિજને તેનું તે રીતે પાલન કરવું અતિ આવશ્યક છે. બધા તીર્થંકરોંએ તેને સઘળાં પ્રાણીઓંનું હિતકારક સમજીને તેનું પાલન કરેલ છે. તે અનાશ્રવ આદિ વિશેષણોં વાળું છે. ભગવાન મહાવીરે પણ પરિષદાઓંના તેનું પાલન કરવાનો ઉપદેશ જીવોંને આપ્યો છે. એવું મંગલમય આ પાંચમું સંવરદાર સમાપ્ત થયું સૂ૧૨

सुदर्शनी टीका अ० ५ सू० १३ उपसंहारः

२५७

अपि 'वयाइं' व्रतानि-अहिंसादीनि 'महव्वयाइं' महाव्रतानि 'हेउसयविवित्त-
पुक्कलाइं' हेतुशतविवित्तपुक्कलानि=हेतुशतैः= उपपत्तिशतैः विवित्तैः=निर्दोषैः
कृत्वा पुक्कलानि=वितीर्णानि 'कहियाइं' कथितानि 'अरिहंतसासणे' अहिंसा-
सने-जिनप्रवचने । ते च 'संवराः' समासेण 'समासेन संश्लेषेण 'पंच' पञ्च-
पञ्चसंख्यकाः, 'वित्थरेण उ' विस्तरेण तु 'वण्णवीसइ' पञ्चविंशतिः-प्रतिसंव-
रद्वारं पञ्चपञ्चभावनासत्त्वेन पञ्चविंशतिसंख्यकाः भवन्ति । अथ संवरधारिणां
भाविनी दशा वर्ण्यते- 'संजए' संयतः-साधुः 'समिए' समितः-ईयांसमित्या-
दिभिः पञ्चविंशतिभावनाभिर्युक्तः, 'सद्धिए' सद्धितः-ज्ञानादर्शनाभ्यां युक्तः,
'संवुडे' संवृतः=रूपायेन्द्रियसंवरणयुक्तः 'सया' सदा 'जयणघडणसुविमुद्ध-

अब सूत्रकार पाँचों संवरों का उपसंहार करते हुए कहते हैं—
'एयाइं' इत्यादि ।

टीका—(सुख्य !) शोभनव्रत संपन्न हे जम्बू ! (एयाइं पंचवि मह-
 व्वयाइं) ये पांचों ही अहिंसा आदिक महाव्रत (अरिहंतसासणे हेउसयवि-
 विचपुक्कलाइं कहियाइं) अर्हत प्रभु के शासन में सैकड़ों निर्दोष युक्तियों
 से विस्तृत करके कहे गये हैं । (संवरा समासेण पंच) वे संवर संक्षेप
 से पांच हैं परन्तु (वित्थरेण उ पणवीसई) विस्तार से पांच २ अपनी २
 भावनाओं से सहित होने के कारण ये पचीस हो जाते हैं । (संजए)
 इन संवरद्वारों का पालन करने वाला संघत (समिए) ईर्ष्यासमिति
 आदि पच्चीस भावनाओं से युक्त (सहिए) ज्ञानदर्शन से सहित और
 (संघुडे) कषाय एवं इन्द्रियों के संवरण से युक्त होता हुआ (सया)
 सदा (जयणघट्ठण मुविमुद्धंसणे) अपने तत्त्वार्थ श्रद्धानुरूप दर्शन को

હવે સૂત્રકાર પાંચે સંવરોનો ઉપાંહાર કરતાં કહે છે....“ એવાહ’ ” ઇત્યાદિ.

પ્રીત્થઈ—“સુત્તવ્ય !” શોભનત્રત ચુકા હે જાંબૂ ! “આઈ પંચવિ મહઃ-
 વ્યવોઈ” આહિંસા આદિ તે પાંચે મહાત્રત “અરિહંસ સાસણે હેઠસયવિવિત્ત
 પુક્કલાઈ” કહિયાઈ” આહિંસા ત પ્રભુના શાસનમાં સેંકડો નિર્ભય યુક્તિઓથી વિસ્તાર
 રથી કહેવામાં આવ્યાં છે. “સંવરા સમાસેણ પંચ” તે સંવર સંક્ષિપ્તમાં પાંચ
 છે પણ “વિશ્વરેણ ડ ષણ્ણીસઈ” વિસ્તારથી પોત પોતાના પાંચ પાંચ ભાવ-
 નાઓ સંક્ષિત હોવાને કારણે પચીસ થાય છે. “સંજણ” એ સંવરદ્વારનું પાલન
 કરનાર સંયત “સમિણ” ઇર્થાસમિતિ આદિ પચીસ ભાવનાઓથી યુક્ત “સહિણ”
 જ્ઞાનદર્શનથી યુક્ત અને “સંતુલે” કષાય અને ઇન્દ્રિયોના સંવરણથી યુક્ત
 થઈને “સયા” સદા “જયજયજયસુવિસુદ્ધસણે” પોતાના તરવારથી શ્રદ્ધાન

‘દંસળે’ યતનઘટનમુવિશુદ્ધદર્શનઃ, યતનેન=પ્રાપ્તસંયમસંયોગેષુ પ્રયત્નેન, ઘટનેન=અપ્રાપ્તસંયમસંયોગપ્રાપ્ત્યર્થઘટનયા ચ મુવિશુદ્ધં દર્શનં=શ્રદ્ધાનરૂપં યસ્ય સ તથા, ‘एए’ एतान् उक्तरूपान् संवरान् अणुचरिय ‘अनुचर्य आसेव्य ‘चरिमसरीरधरे’ चरमशरीरधरः=અન્તિમશરીરધારી ભવિસ્સતીતિ-ભવિષ્યતીતિવિજ્ઞેયમ્ ॥૨૦૧૩॥

इति पञ्चमं संवरद्वारं समाप्तम् ॥

સામ્પ્રતં :દશમોક્તેઽસ્મિન્ કિયચ્છ્રુતસ્કન્ધાદિ તદ્દર્શયતિ ‘પળ્હાવાગર-
ળેળં’ ક્ત્યાદિ—

મૂલમ્—પળ્હાવાગરળેળં ઇગો સુચય્સ્વંથો દસ અજ્ઞયળા
એક્કસરળા દસસુ ચેવ દિવસેસુ અદિસિજ્ઞંતિ, ઇગંતરેસુ આયં-
યતન સે-પ્રાપ્તસંયમ કે સંરક્ષળરૂપ પ્રયત્ન સે તથા ઘટન સે-અપ્રાપ્તસંયમ
કી પ્રાપ્તિ કરને કી ઘટના સે મુવિશુદ્ધ રચતા હૈ । (એ અળુચરિએ)
હન પૂર્વોક્તરૂપ સંવરોં કો પાલન કરકે (ચરિમસરીરધરે) અન્તિમશરી-
રધારી (ભવિસ્સહ) હોવેળા । ઇસા જાન લેના ચાહિયે ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા સમજાયા હૈ કિ જોં મુનિ હન
પાંચોં સંવરદ્વારોં કા શાસ્ત્રમર્ઘાદા કે અનુસાર પાલન કરેળા ઓર
પચ્ચીસ ભાવનાઓંસે હન્હેં સ્થિર રચેળા, વહ ચરમશરીરી હોળા, અર્થાત્
ઁસકા પુનઃ જન્મ સંસાર મેં નહોં હોળા, વહ અવશ્ય હી મોક્ષ પ્રાપ્ત
કરને વાલા હોળા । યે સંક્ષેપ્તઃ સંવરદ્વાર પાંચ હી હૈં-પરંતુ વિસ્તાર કી
અપેક્ષા અપની ૨ પાંચ ભાવનાઓં સે સહિત હોને કે કારળ યે પચ્ચીસ
મી હો જાતે હૈં ॥ ૨૦૧૩ ॥

॥ पांचवां संवरद्वार समाप्त ॥

इयं दर्शनने प्रयत्नपूर्वक-प्राप्त संयमनां सरक्षयइयं प्रयत्नथी तथा घटनथी
अप्राप्त संयमनी प्राप्ति करवानी घटनाथी अत्यंत विशुद्ध राजे छे. “ए ए
अणुचरिय” ओं पूर्वोक्त संवरानुं पालन करीने “चरिमसरीरधरे” अन्तिम
शरीरधारी “भविस्सह” थरी ओं प्रमाणे समष्टि लैवुं.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા ઁ સમજાવ્યું છે કે ઁ મુનિ આ
પાંચે સંવરદ્વારોં શાસ્ત્રમર્ઘાદા અનુસાર પાલન કરશે અને પચીસ ભાવનાઓ
વડે તેમને સ્થિર રાખશે, તે ચરમ શરીરી થશે, ઁટલે કે તેને સંસારમાં
હરી જન્મ લેવો પડશે નહીં, તે અવશ્ય મોક્ષ પ્રાપ્ત કરશે. સંક્ષિપ્તમાં પાંચ
જ સંવરદ્વાર છે, પણ વિસ્તારની અપેક્ષાએ પોત પોતાની પાંચ. પાંચ ભાવ-
નાઓ સહિત હોવાને કારણે તે પચીસ પણ કહી શકાય છે ॥ ૨૦૧૩ ॥

॥ पांचवું संवरद्वार समाप्त ॥

સુવર્ણીની ટીકા અં ૫ સૂ૦૧૩ે દશમાઞ્જે શ્રુતસ્કંધાદિનિરૂપણમ્

૧૪૯

બિલેસુ નિરુદ્ધેસુ આઉત્તમત્તપાણણં અંગં જહા આચારસ્સ ॥સૂ૦૧૪॥

॥ ઇયં પળ્હાવાગરણં સંમત્તં ॥

ટીકા—‘પળ્હાવાગરણં’ ઇત્યાદિ—

પ્રશ્નવ્યાકરણે સ્વલુ એકઃ શ્રુતસ્કન્ધઃ દશ અધ્યયનાનિ, એતાનિ કીદશાનિ ?
એકસરકાણિ=ઉદ્દેશવિભાગાદિરહિતાનિ । એતાન્યધ્યયનાનિ દશસ્વેવ દિવસેષુદિ-
શ્યન્તે । તથા—એકાન્તરેષુ આચામ્લેષુ નિરુદ્ધેષુ=સ્વીકૃતેષુ સત્સુ આયુક્તમત્તપા-
નેન=મત્તપાને આયુક્તઃ—આયુક્તમત્તપાનસ્તેન તથા, અશનાદૌ દત્તોપયોગેનેત્યર્થઃ,
ઇદમજ્ઞમુદિશ્યતે । અસ્યાવશિષ્ટં સર્વં યથા આચારસ્ય=આચારાજ્ઞસ્ય તથૈવ વિજ્ઞેયમ્ ૧૪
॥ ઇતિપ્રશ્નવ્યાકરણં નામ દશમાઞ્જં સંપૂર્ણમ્ ॥

અથ સૂત્રકાર હસ દશવે અંગ મેં કિતને શ્રુતસ્કંધ આદિ હૈ યહ દિ-
ત્વલાતે હૈ—‘પળ્હાવાગરણં’ ઇત્યાદિ૦ ।

ટીકાર્થ—(પળ્હાવાગરણં) હન પ્રશ્નવ્યાકરણ મેં (એગો સુયત્ત્વંધો)
એક શ્રુતસ્કંધ હૈ । (દસ અઙ્ગયણા) દશ અધ્યયન હૈ । યે દશો હી
અધ્યયન (એક સરગા) ઉદ્દેશ વિભાગ આદિ સે રહિત હૈ । (દસસુ ચેવ
દિવસેસુ ઉદિસિઙ્ગંતિ) ઓર દશ હી દિનોં મેં હનકી વાચના કી જાતી
હૈ । (એગંતરેસુ આયંબિલેસુ નિરુદ્ધેસુ આઉત્તમત્તપાણણં) સભા મેં હસકી
વાચના કરને વાલે સાધુ કો દશદિન તક એકાન્તર સે આયંબિલ કરના
વાહિયે । આચામ્લવ્રત કરને મેં અશનાદિ સામગ્રી પર એષણાદિ શુદ્ધિ
કા વિશેષ ધ્યાન રખના વાહિયે । હસ સૂત્ર કા અવશિષ્ટ અંશ જૈસા
આચારાંગ સૂત્ર કા હૈ વૈસા હી જાનના વાહિયે ॥ સૂ-૧૫ ॥

॥ હસ તરહ પ્રશ્નવ્યાકરણ નામકા યહ દશવાં અંગ સમાપ્ત હુઆ ॥

હવે આ દશમા અંગમાં કેટલા શ્રુતસ્કંધ આદિ છે તે સૂત્રકાર ખતાવે
છે—“પળ્હાવાગરણં” ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—“પળ્હાવાગરણં” આ પ્રશ્નવ્યાકરણમાં “એગો સુયત્ત્વંધો” એક
શ્રુતસ્કંધ છે. “દશ અઙ્ગયણા” હસ અધ્યયન છે. તે હસે અધ્યયન “એકસરગા”
ઉદ્દેશ વિભાગ આદિથી રહિત છે. “દસસુ ચેવ દિવસેસુ ઉદિસિઙ્ગંતિ” અને દસ
દિવસમાં જ તેનું વાંચક કરી શકાય છે. “એગંતરેસુ આયંબિલેસુ નિરુદ્ધેસુ આઉત્તમત્તપા-
ણણં” સભામાં તેનું વાંચન કરનાર સાધુએ હસ દિવસ સુધી એકાન્તરે આયંબિલ
કરવા જોઈએ. આયંબિલવ્રત કરતાં અશનાદિ સામગ્રી પર એષણાદિ શુદ્ધિનું
ખાસ ધ્યાન રાખવું જોઈએ. આ સૂત્રનો અવશિષ્ટ અંશ જેવો આચારાંગ
સૂત્રનો છે તેવો જ સમજી લેવો જોઈએ ॥ સૂ ૧૫ ॥

॥ આ રીતે પ્રશ્નવ્યાકરણ નામનું આ દશમું અંગ સમાપ્ત થયું ॥

॥ अथ शास्त्रप्रशस्तिः ॥

सौराष्ट्रे मुनिभिः साकं, विहारं कुर्वता मया ।

चातुर्मास्यं सुखेनैव, नीतं जेतपुरे पुरे ॥ १ ॥

ततो विहरमाणोऽहं, धोराजीनाम विश्रुते ।

पुरे समागतः शेष, -काले तैर्मुनिभिः सह ॥ २ ॥

सप्ताधिके वैक्रमाब्दे, सहस्रद्वयसंख्यके ।

पौषे पुण्ये पौर्णमास्यां, शुभदे भौमवासरे ॥ ३ ॥

प्रश्नव्याकरणस्येयं, वृत्तिर्नाम्ना सुदर्शनी ।

रचिता घासिलालेन, શ્રોસંઘેન સમાદતા ॥ ૪ ॥

લિમડી સંઘસ્થાપિત-પૌષધશાલા ચ વિદ્યતે તત્ર ।

પ્રવચનરહસ્યપૂર્ણી, સેયં શિવસૌખ્યદા પૂર્ણા ॥ ૫ ॥

टीकाकार की प्रशस्ति

સૌરાષ્ટ્રદેશ મેં મુનિજનોં કે સાથ વિહાર કરતે હુણ મેં ને જેતપુર મેં આનંદપૂર્વક ચૌમાસા કિયા । વહાં સે વિહાર કર મેં ડન મુનિજનોં કે સાથ ધોરાજી નામ સે પ્રસિદ્ધ શહર મેં આયા । શેષ કાલ વહાં રહકર વિક્રમ સંવત્ ૨૦૦૭ કે પૌષ માસ, પૌર્ણમાસી નિધિ મંગલવાર ઔર પુણ્યનક્ષત્રકે દિન પ્રશ્નવ્યાકરણકી યહ વૃત્તિ જિસકા નામ સુદર્શિની હૈ મેં ને-ઘાસીલાલ ને-રચી હૈ । વહાં કે શ્રોસંઘ ને હસકા અઢલા આદર કિયા । ડસ શહર મેં લિમડી સંઘ કે દ્વારા સ્થાપિત કી હુઈ ઁક પૌષધ શાલા હૈ । ડસમેં ડહર કર પ્રવચન કે રહસ્ય સે પરિપૂર્ણ ઔર શિવ કે સુખ કી દાતા યહ વૃત્તિ પૂર્ણ હુઈ હૈ ॥

॥ टीकाकारनी प्रशस्ति ॥

સૌરાષ્ટ્રમાં મુનિજનોની સાથે વિહાર કરતાં મેં જેતપુરમાં આનંદપૂર્વક ચૌમાસું વ્યતીત કર્યું, ત્યાંથી વિહાર કરીને હું મુનિઓ સાથે ધોરાજી નામના પ્રસિદ્ધ શહેરમાં આવ્યો. શેષ કાળમાં ત્યાં રહીને વિક્રમ સંવત ૨૦૦૭ના પૌષ માસની પૂર્ણિમાની તિથિને મંગળવાર અને પુણ્ય નક્ષત્રના દિવસે પ્રશ્નવ્યાકરણની આ વૃત્તિ જેનું નામ સુદર્શિની છે, તે મેં-ઘાસીલાલે રચી છે. ત્યાંના શ્રી સંઘે તેનો ઘણો આદર કર્યો. તે શહેરમાં લિમડી સંઘ દ્વારા સ્થપાયેલ એક પૌષધશાલા છે ત્યાં રહીને પ્રવચનના રહસ્યથી પરિપૂર્ણ અને શેક્ષના સુખની ઠાતા આ વૃત્તિ મેં પૂરી કરી છે ॥ ૫ ॥

संघमहिमा-

घोराजी नगरस्य एष परमोदारो महाधार्मिकः,
 शुद्धस्थानकवासिधर्मनिरतः सम्यक्त्वभावान्वितः ।
 तत्त्वातत्त्वपयोषिवेचनविधौ हंसायमानः सदा,
 सर्वेषामुपकारको विजयते श्री जैनसंघोमहात् ॥ ६ ॥
 देवे गुरौ धर्मपथे च भक्ति र्येषां सदाचाररुचिश्च नित्यम् ।
 ते श्रावका धर्मस्ता उदाराः, सुश्राविकाः सन्ति गृहे गृहेऽत्र ॥ ७ ॥
 मङ्गलं भगवान् वीरो मङ्गलं गौतमः प्रभुः ।
 सुधर्मा मङ्गलं जम्बू-जैनधर्मश्च मङ्गलम् ।

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलि-
 तललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्माक- वादिमानमर्दक-
 श्रीशाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पद्भूषित-
 कोल्हापुरराजगुरु-वालब्रह्मचारि-जैनाचार्य- जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री
 घासीलालव्रतिविरचिता दशमाङ्कस्य श्री प्रश्नव्याकरणसूत्रस्य
 सुदर्शन्याख्या व्याख्या समाप्ताः

॥ शुभं भूयात् ॥

॥ श्रीरस्तु ॥

સંઘમહિમા—

ધોરાજી શહેર કા યહ મહાન્ શ્રી જૈનસંઘ અત્યંત ઉદાર હૈ, પર-
મધાર્મિક હૈ, શુદ્ધસ્થાનકવાસી ધર્મ મેં ળવલીન હૈં, સમ્યક્ત્વ ભાવ સે
યુક્ત હૈ, તત્ત્વ અતત્ત્વ કા ક્ષોર નીર કી તરહ વિવેક કરને મેં હંસ
કે જૈસા હૈ । સમસ્ત પ્રાણિયોં કા ઉપકારક હૈ, અતઃ યહ સદા જયવંતા
વર્તો ॥ ૬ ॥ જિનકી દેશ ગુરુ ઔર ધર્મ મેં નિત્ય ભક્તિ હૈ । તથા સદા-
ચાર મેં જિનકી રુચિ હૈ એસે ધર્મરત ઉદાર શ્રાવક ઔર સુશ્રાવિકાઈ
યહાં ઘર ૨ મેં હૈ ॥ ૭ ॥

અંતિમ મંગલાચરણ

અંતિમ તીર્થંકર ભગવાન્ મહાવીર મંગલરૂપ હૈં, ગૌતમપ્રભુ મંગલ-
રૂપ હૈં, સુધર્માસ્વામી મંગલરૂપ હૈ અંતિમ કેવળી જંબૂસ્વામી મંગલરૂપ
હૈં ઔર યહ જૈનધર્મ મંગલરૂપ હૈ ॥ ૮ ॥

॥ શ્રીસ્તુ-શુભં ભૂયાત્ ॥

સંઘમહિમા

ધોરાજી શહેરનો તે મહાન શ્રીસંઘ અત્યંત ઉદાર છે, ધણે જ ધાર્મિક
છે, શુદ્ધ સ્થાનકવાસી ધર્મમાં દૃઢ રીતે માનનાર છે, સમ્યક્ત્વ ભાવથી યુક્ત
છે, તત્ત્વ અતત્ત્વનો દ્વંધ અને પાણીની જેમ વિવેક કરવામાં હંસ સમાન છે,
સઘણાં પ્રાણીઓનો ઉપકાર કરનાર છે, તેથી તેનો સદા જય જયકાર હો ॥૬॥

જેમનો દેવ, ગુરુ અને ધર્મ પ્રત્યે નિત્ય લકિતભાવ છે, તથા સદાચાર
પ્રત્યે જેમની અભિરૂચિ છે એવા ધર્મરત ઉદાર શ્રાવક અને સુશ્રાવિકાઓ
અહીં દરેક ઘરમાં છે. ॥ ૭ ॥

અંતિમ મંગલાચરણ

અંતિમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીર મંગલરૂપ છે, ગૌતમપ્રભુ મંગલરૂપ
છે સુધર્માસ્વામી મંગલરૂપ છે. અંતિમ કેવળી જંબૂસ્વામી મંગલરૂપ છે, અને
આ જૈન ધર્મ મંગલરૂપ છે. ॥ ૮ ॥

॥ શ્રીસ્તુ-શુભં ભૂયાત્ ॥



कुमार बुकवार्ड-डींग बक्स
वीम.प्रो.दे.म.प्र.शा. ५५, अमदा राव.